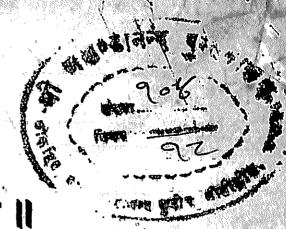


# ॥श्रीराधारमणो जयति ।

# श्रीमद्भागवतस्थविषयानुक्रमणिका॥



# अथ प्रथमस्कन्धकथाऽतुक्रमणिका।

| अध्या          | यः विषयः   | पृष्ठाङ्कः    |
|----------------|--|---------------|
| (१)            |  |               |
|                | भीभागवतस्य सर्वेद्यास्त्रेभ्यः श्रेष्ठत्वकथनम्   | 8             |
| 1              | स्तृतं प्रति शोनकादिमहर्षिकृतप्रश्नप्रकारः प्रथमे                                      | ક્ષ<br>હ      |
|                | स्तकत्रभगवत्रयाप्रशंसा द्वित्वेये<br>भगवतो नारायणस्य पकविशस्यवतारकथा                   |               |
| _ [ ₹ ]        |  | भ-<br>११      |
| / as \         | वर्णनघट्टः तृतीये  |               |
| (8)            | अनिवैचनीयद्वसापोत्पासें प्रति व्यासस्य परिचिन्त  | १६५<br>१३१    |
| · ·            | व्यासस्त्रिधी नारदागमनम् चतुर्थे<br>सर्वेभ्रमेभ्यो हरिकीर्तनं श्रेष्ठमिति व्यासचित्रम् |               |
| (4)            | दाय नारदकर्तकोपदेशः पश्चम  | ू <b>१</b> ७० |
| ren            | व्यासपुत्राय नारदेन निजपूर्वजन्मनि श्रीह   | _             |
| [8]            | कीर्तनसम्भूतसाभाग्यवर्णनम् षष्ठ  | -<br>२११      |
| [0]            | श्रीभागवतश्रोतुः परीक्षितो जन्मकथनाय सुप्त-  | **1           |
| Fal            | द्वीपदीपुत्रपञ्चकहत्तुरश्वतथाम्नः अर्जुनकृतपराभव                                       | <b>}</b> •    |
|                | क्या सप्तम   | २३१           |
| ( <b>[ 5</b> ] | कुपितद्रोणिमुक्तबसास्त्रतः गर्भसस्य परीक्षि  |               |
|                | आकृष्णेन परिरक्षणस   | २६५           |
|                | कुरतीकृतः कृष्णस्तवः   | २७३           |
| , i            | युधिष्ठिरस्य सुदृद्धधजनितशोकनिक्पणम् अष्टमे  | २७६           |
| [4]            | श्रुरतद्वरगतस्य भीष्माचार्यस्य सामिधि प्रति धर्मरा                                     | জ             |
|                | गयनम्  | 300           |
|                | युचिष्टिरसमीपे सीत्रमण इतसर्वधर्मनिरूपणम   | ३०४           |
|                | भीष्माचार्यकृतकृष्णस्तवः   | 388           |
|                | भीष्मस्य साक्तिवातिः नवमे  | इर६           |
| ृ[ १० :        | कृतकार्यस्य अकिष्णस्य इस्तिनापुरतो द्वारका   | •             |
|                | नगरी प्रति प्रस्थानकथा दशमे  | 355           |
| [ 88 ]         | बानर्त्तेस्स्तूयमानस्य श्रीकृष्णस्य नगरीप्रवेशपूर्वः                                   | ₹·            |
|                | बान्धवसमागमः महोत्सवसम्पन्नध्वसतोरणालङ्क   |               |
|                | तिजपुरप्रवेशस्य एकाद्शे ट  | 340           |
| ્રશ્વ          | पुरीचिज्जनमकथनम् द्वादश  | <b>३</b> ८२   |
| [ 83 ]         |  | 800           |
|                | निवस्तिवस्य अवस्ति ।   | . 966<br>985  |
|                | वनं प्रयान्तं पतिमन्वीक्ष्य भाग्वाबीक्सइगमनम्  | 2.00          |
|                | वा नगाः<br>गान्धारीधृतराष्ट्रयोः देहपरिसागः त्रयोदशे                                   | 450<br>450    |
| ( 88 )         | गान्धाराध्वराष्ट्रयाः ६६<br>उत्पातोत्पचिशक्कितस्य धर्मराजस्य परिजिन्तनस                | . 057         |
|                |  |               |

| अध्याय   | : विषयः  | पृष्ठ।ङ्कः |
|----------|--|------------|
|          | चिन्तयवि युधिष्ठिरे द्वारकात किपावजागमनम्          | કકક        |
|          | द्वारकानगरादागतं तमर्जुनं प्रति युधिष्ठिरकत-       | · · · ·    |
|          | द्वारकाकुग्रस्थः                                   | 884        |
| <u>,</u> | तथाविधार्जनस्सात् कृष्णतिरोधानभ्रषणम् चतु          | इशे ४५२    |
| ( १५ )   | युधिष्ठिरसमीपे श्रीकृष्णसंख्यमैञ्यसौद्धदादीन् सं   | स्म        |
| W 100    | रतोऽर्जुनस्य परिदेवनप्रकारः                        | ८५५        |
|          | भगविषयीं बदुकुळसंस्याश्च श्रुतवतो धर्मराज          | स्य        |
|          | <b>र</b> वळीक् जिगिसिया                            | કહક        |
|          | धर्मराजकृतपरीचित्पद्वाभिषेकघटः                     | ध्रदर      |
|          | धर्मराज्ञादीनां महाप्रस्थानगमनम् पञ्चद्दो          | ४८३        |
| (१६)     | खडु वयतोः पर्लिखसभूमिधमयोः समीपगम                  | ने :       |
|          | परीच्चितः षोडधे                                    | કસ્ક્ર     |
| ( १७.)   | प्रीक्षित्कर्तृककिलियहः सप्तर्शे                   | र्यश्र     |
| (१=)     | शमीकमहर्षितन्दनविस्षष्टपरीचिच्छापंकथा              | प्रक्ष     |
| ( 38 )   | परीक्षित् प्रायोपवेशघटः                            | ५८३        |
|          | क्रिक्ट कि श्रि श्रीत शुक्रमहूषर्गिभगक्या          | 450        |
|          | क्रीकार्यात्र कि प्रति प्रशिक्षित्प्रश्लानवद्दनम्  | ५९०        |
| Tak.     | क्रुतप्रश्ने परीक्षितं प्रांत शुकद्वस्य प्रातमापणक | 468        |
|          | इति प्रथमस्कन्धकथानुक्रमणिका।                      |            |
|          |  |            |
|          |  |            |
|          |  |            |

# ख्य्य दितीयस्कन्धविषयानुक्रमणिका ।

| 18         | भागवतकथात्रारमभघट्टः १                             |              |
|------------|--|--------------|
|            | मोत्त्रपायस्यनम् १३                                |              |
|            | महाप्रकृष्ट्वरूपस्य अक्षाय्डस्वरूपत्वनाभवणनम् १८   | ! .<br>!     |
| • •        | गम्ध्योर्भगवत्स्वरूपधारणायोगप्रकारकथनम् २७         | -            |
| ે ર ી      | भगवतस्व क्षपीरशनिवाधप्रतिपादनम् ३४                 | , <u>}</u> - |
| 3]         | उपासनाभेदनोपासकानामपि भिन्नफलमासिमीत्              |              |
|            | वादनघटः ६४   |              |
|            | भगवद्गुणानुवर्णनपूर्वेकतयाऽऽत्मतत्त्वस्वद्भपकथन-   |              |
|            | प्रपञ्चाद्भवादिवर्णनघट्टस्तृतीये ,                 | اور          |
| 8]         | परिविता श्रीहरेः खष्ट्यादिचेष्टाप्रश्रकरणम् शुकस्य | 7            |
| 2          | ब्रह्मनारदसम्बादकथनम् चतुर्थे                      | i<br>b       |
| <b>x</b> ] | नारवप्रयस्य ब्रह्मणो विराद्ख्यपादिकथनम्            |              |
|            | पश्चमें  | J            |

| अध्याः   | यः विषयः   | पृष्ठाङ्कः        | अध्याय       | ः विषयः पृष्ठाङ्कः   |
|----------|--|-------------------|--------------|--|
| [8]      | अध्यात्मादिभेदतो विराड्विभृतिकयनम् षष्ठे   | १२५               | 1            | तस्य नीललोहितस्य रुद्रादिनामकरणम् २८३  |
| [0]      |  | 3                 |              | नीलबोहितसृष्टीप्रगणं निशास्य तिश्वा-   |
|          | सप्तमे   | ?હશું.            |              | रणपूर्वेकं ब्रह्मणा कृत मरीच्यादिसृष्टिः २८६   |
| [5]      | परमात्मजीवात्मनोर्देहसम्बन्धमाचिपतः परी  | क्षितो            | .]           | चतुर्वेदचातुर्हे।त्रादिखाष्टिकमः २.६३  |
|          | व्यमुत्सितपूरणार्थविषयका बहुवः प्रश्ना अष्टमे  | २१२               |              | कायद्वेधेन योनी स्वायम्भुषमनुसर्गः च द्वादशे ३०२   |
| [ 4 ]    | तद्चरदानाय ब्रह्मसमीपे विष्णुना कि   | ात <b>₹</b> य     | ि १३ /       | लब्धपत्नीकेन सायम्भुवा किमकारीति मैत्रेयं प्रति  |
| _ ,      | ्श्रीभागवतस्य राजसमीपे <b>ग्रुकेन कीर्त्तनम</b> ्नव  | मि २३.२           | ļ. » · · · · | विदुरप्रश्नः ३०५   |
| [ 80     | तद्वाख्याद्वारा शुकस्य सुस्पष्टं राजप्रश्लोत्तरक   |                   | } .          | तेन खायम्भुवा प्रणतिपूर्वकं ब्रह्माणं प्रति माषणम् ३०७   |
| •        | रस्भः दशमे १५५%  | २७८               | ļ ·          | प्रजासर्जनायाद्वतस्य मनोहिसस्कायामाकस्मिका-  |
|          | इति द्वितीयस्कन्धविषयानुक्रमणिका ।   | 3                 |              | प्लुतां घरामुद्धर्तु श्रीयश्वराद्यावतारः ३१३   |
|          |  |                   |              | पादुर्भूतश्रीवराहदेवेन क्रतहिरगयाभवधः॥ ३२०   |
|          |  |                   |              | अयिश्ववराष्टं प्रति ब्रह्मादिदेवछत स्तुतिः च प्रयो-  |
|          | अथ तृतीयस्कन्धविषयानुक्रमणिका  | <i>3</i> <b>1</b> |              | दर्श ३२३   |
|          | तीर्थयात्राचरणदशायालुद्धवं प्रति विदुरकृतस्  | KIPP.             | ( (8)        | भूमिमुद्धरता हरिणा किमर्थे सुवो हिरज्याचस्याभू-  |
| (8)      | ताययात्राचरणद्यापाउच्च नाता प्रयुर्काहाः<br>दीनी कुर्राछवृत्तान्तपरिप्रसक्या प्रथमेऽध्याये | •                 |              | दिति पुच्छते विदुराय सद्धधनिदानकथनाय   |
| (n)      | श्रीकृष्णविच्छेदात् शोकात्तस्य उद्भवस्य विव  | •                 | ·:           | इच्छापूर्वकं सन्धार्या कर्यपादितोगेर्भघारणः<br>मित्यस्योक्तिः चतुर्देश   |
| (२)      | समीपे अक्तिष्णस्य बाल्यलीलावणनम्-द्वितीये  |                   | 1941         | वितिगर्भद्दवभैस्द्वरैः ब्रह्मसन्त्रियो स्वमनोदुः सनि-  |
| (३)      | अक्रिणेन वजानमधुरामागत्य कतस्य कंस   |                   | 1            | चेवनम् ३६३   |
| ( 4 /    | दिकस्य द्वारकायां छतानाञ्च कर्मणा व  |                   |              | तान् प्रति ब्रह्मणा जयविजययोहिरण्याक्ष   |
|          | तृतीये   | 48                | 1            | हिरएयकाशिपुत्वकपत्वेनीतपत्त्याचीभवणनक्यनम्   |
| (8)      | बन्धुनिधनं श्रुत्वा निर्विणणस्यात्मधानिकप्सो   | र्बिद्ध-          |              | पञ्चदशे ३६९  |
|          | रस्योखवापदेशेन मैत्रेयसन्निधी गमनम् चतु  | ુર્જે <b>દ્</b> દ | ( 88 ]       | सान्त्वितानामञ्जतप्तानां विप्राणां ती प्रति हरि  |
| (4)      | <u> </u>   | . ८९              |              | णाऽनुत्रहकरणम् ४१०   |
|          | भगवङ्गीलां पृष्ठवतो विदुरस्य मैत्रेयेन महत्  | रादि-             |              | जयविजययोस्सनकादिशापादसुरत्वपातिः षोडशे ४३६   |
|          | मिष्रिकथनम   | . 300             | ( 80 )       | ब्रह्मसान्त्वनेनोज्झितशङ्कानां देवानां खपुरनिवर्तनं,   |
| ر د رن   | महदादिकत श्रीहरिस्तवकथनम च पश्चमे  | <b>१</b> ११       | :            | हिरण्यहिरण्याक्षजननं, तयोजननमात्रेण उत्पात<br>दर्शनानिच ४३९  |
| (8)      | श्विराविष्ट्रेमेहदादिभिविराद्तनोः सृष्टिकथनम् भ  | श्यः<br>१२५ :     | 2 · 17       | दर्शनानिच<br>हिरगयाक्षस्य दिग्विजये वरुणकृत हरियुद्धोपदेशः   |
| - 7      | त्कृताभिदेवादिभेदकथनञ्ज षष्ठ   | 7 /               |              | च सप्तद्शे ४४६   |
| [a]      | संसारच्छेदिमुनेवेचः प्रतिनन्द्य पुनर्विविधप्रश्र   | १४७               | [ (= )       | तदुपदेशन रसातळं प्रविष्टस्य हिरण्याभस्य  |
| [=]      | विदुरस्य सप्तमे<br>जलशायिनो भगवतो नाभिकमलाद्वहाण उत्प                                      | -                 |              | भम्यस्तिवराहस्य च यसंवर्णना अल्पन  |
| [-]      | तद्शानात् जले बिभ्यता ब्रह्मणा तपस्यया   | भग-               | [ १-६ ]      | विरिज्ञ्यादिमार्थितेन वराहरूपेण भगवता कृत-   |
| <b>1</b> | वतस्तन्तोषणञ्चाष्टमे   | १७३               |              | ाहरण्याक्षवयः एकामा <del>वज्</del> ञा  |
| re 7     | खतपसा तुष्ट्रं नारायणं दृष्ट्वा ब्रह्मणो लोकर  | रेष्टि-           | [ 90 ]       | ब्रह्माण्डसाष्ट्रप्रवचनपूर्वकयच्चरच्चागणहेवतागणातिः  |
| F        | चिकीषया नारायणस्तवनम्  | १८६               |              | रवाष्ट्रकाया विशेष   |
|          | विषण्णचेतसं ब्रह्माणं प्रति पुनस्तपश्चरण   | ाय                | [ २१ ]       | स्वायम्भवमन् वरानिव्यानको 🛬 🖫 💮 💮  |
| · . ·    | भगवदाक्षापनम् च नवमे   | २२१               |              |  |
| [ 80 ]   | इत्थमाञ्चायान्तर्हिते भगवति ब्रह्मणा किमकारी   | ाते-              | [ ३२ ]       | विकासिद्यात कदमाय गर्ने  |
|          | व्यवस्य भन्यकाथतम्बद्धवन्तिः   | 442               |              |  |
|          | प्राक्तादिविभागन दश्चिषस्थिकणनम् [ दश  | म । २३६           | F 44 1       | तपायागामाभत क्षत्रे क्षत्राच्या विश्वास्था विश्वास्य विश्वास्था विश्वास्य विश्वास्था विश्वास्था विश्वास्था विश्वास्था विश्वास्था विश्वास्था विश्वास्य विश्वास्था विश्वास्य विश्वास्य विश्वास्था विश्वास्य विश्यास्य विश्वास्य विष्य विश्यास विश्वास्य विश्यास विश्वास विश्वास विष्य विष्य विष्य विष्य विष्य विष्य विष |
| ( ११ ]   | तरमाणवादिलचणेः कालस्य तद्शयुगमन्बन्ध   | तरा-              | * 1 A 1      | TO SECURE OF THE PROPERTY OF T |
|          | ्र <sub>ेस्ट</sub> , व्यक्षामानादश वर्षांचेन एकाल्या                                       | 244               | F 2. 1       |  |
| ( १२ ]   | मन्धतामिस्रादिसृष्टिः, सनकादिसृष्टिः   | २७७               |              | कपिलक्षेणाविश्वतं भगवन्तं प्रति ब्रह्मकृतस्तुतिः ,५-६१   |
|          | विज्ञास्त्रज्ञाश्चापणभारापणपाप लक्ष्मान् संपर्   | <b>T</b> o        | I            | भारत के किया कि अपने के अपने के किया के किया के किया किया किया के किया किया किया किया किया किया किया किया  |
|          | नादीन प्रति कुपितस्य ब्रह्मणो अमध्यात्रीकल   | त्रदृ             | [ 24 ]       | प्रविच्या च चतुर्विशे (६०६)  |
| 4        | हितोत्पत्तिः   |                   | P and        | जनन्या बन्धविमीचनं पृष्ठन क्रियलदेवेन भारते-   |

| अध्यायः विषयः  | अध्यायः विषयः पृष्ठाङ्कः   |
|--|--|
| ज्ञानमा पञ्जविशे ६२९   | तमीश्वरं प्रति ब्रह्मादिभिः कृतस्तुतिः   |
| िश्हें । प्रकृतिपुरुषविवेकाय सर्वभावविषयकसाङ्ख्यासद्धाः  | तत्रगतेन ब्रह्मणा कृत द्वादिजीवितार्ध्यमाद्राव-  |
| CO .   | જીતલાન્ત્વમન્ પછ   |
| ि ३७ ] सस्यग्बद्धसाधनयोगतः प्रकृतिपुरुषाविवकन भास-   | [ O ] Mandandord Surface   |
| • अतंत्रे विस्पणसःस्रावरा  | दक्षादिकतश्रीयन्नारायणस्तुतिः १०२  |
| िन । जानकोभिना यमनियमस्तिर्मणायामप्रत्याहारः   | वचिशवादिभिस्तुतस्य विष्णोः दक्षेण यञ्चनिष्पाः  |
| ध्यानधारणसमाधिकपेणाष्टाङ्गयागन सपापाय-   | दनम् सप्तमे १२२  |
| <u> </u>   | [ ८ ] कथितमञुवंशीयधुवेण विमातृवचनक्रोधमत्सरतः  |
| तत्राभितवात्सर्येकजल्घेभगवता दिन्याक्ष जनकः  | पुराक्षिगेतेन सम्प्राप्तनारदानुप्रहक्तथा १३६   |
| श्रीपंसनानिकपणम्   | नारदोपदेशन मधुवनक्रतस्य भ्रवस्य तपश्चरणा-  |
| ्र वर्षा वर्षा अस्ति ग्रीमां सेवार्ष तद्क्षंवराग्यात्पास-  | नुवर्णनम् १५०  |
|  | ध्रुवतपश्चरणेन कम्पितानां देवानां, भगवत्समीप-  |
| ्राष्ट्रकत्य देवहत्य तथा छच्ण  | गमनम् अष्टमें विकास  |
|  | [ ६ ] ततो भगवतो मधुवनगमनम  |
| के वर्ष के वर् | इंडर ध्रुवकृतभगवत्स्तुतिः हार्याः । वर्षाः   |
| THE TRUIT OF THE CONTROL OF THE CONT | भूवस्य भगवताकृतवरम्  |
| स्तानां बमयातानानुभवप्रकाराणाञ्चापपादनम्। त्रशं पद   | ल्डावरस्य प्रत्याग्तस्य भ्रवस्य पितृदत्तराज्य-   |
| [ ao ] मर्भोत्यांनिदिनमार्श्य तल्लच्यां कथन्म  | पालनकथा च नवमे   |
| नर्भवाजीवकृत भगवर्दतीतिः   | [१०] भ्रुव एक एक अलकापुरी गत्वा आतहन्तृत   |
| केंद्रिक्ट जेन्द्र जनता तरित्य विष्युक्तियानम् यका नच  | बबाम् इतवानित्यस्य विक्रमवर्णनम् दशमे १८३  |
| ी २२ र हाहिकारिणां परब्रह्मापासकाना च गातभाष   | [११] यक्षाणां शयं रष्ट्रा स्वयमेव मनोः घ्रवसमीपा-  |
| व्यासिटी   | गमनम् १९१  |
|  | तेन मनुना कृततस्वीपदेशः १९३<br>स्नोपदेशेन धुवं युद्धान्निर्वर्थ पुनस्त्वपुरगमनम् च   |
| े के क्या काराना अथाकारा<br>विकास काराना अथाकारा   | 202  |
| व्यान्य विकास स्थानि अविधा दिपालक यन स्था  | एकादशे   |
| तत्र यत्यापरापरापरापराचिषयानुक्रमाणिका समाप्ता।  | एकादश<br>[१२] ध्रुवं युद्धानिवृत्तं विश्वायागतेन धनदेनाभिनन्दिः  |
|  | [१२] ध्रुव युद्धााअष्ट्रस्य निर्वाचित्रयञ्चयजनपूर्वकं<br>तस्य पुरमागतस्य ध्रुवस्य निविषयञ्चयजनपूर्वकं  |
| अथ चतुर्धस्कन्धस्थविषयानुक्रमणिका ।  | हरिलोकगमनम् द्वादशे २०५<br>[१३] भ्रवान्वये पृथुजनमकथनाय तत्पूर्व वेनपितुर-   |
| केनेनेनाविद्यस्य विश्वपायमा  | । —— सम्ब्रामान वनगमनाकिः त्रपाद्या ४४४  |
| ्राध्यम् व्याप्याच्यायः । प्रशासन्ति । प्रशासन्ति । प्रशासन्ति । प्रशासन्ति । प्रशासन्ति । प्रशासन्ति । प्रशासन  | ि । । । विकास के स्थानिक वनकत क्षित्रवनस्थामिषकः।  |
| <u>्र</u> ्र   | — ====================================   |
| वितरिः प्रभावादिवणनपूर्वकेलामात्या प्रभाव  | [१५] विके: मध्यमानाद्वनबाहुतः पृथोजनम तस्याभिषे-   |
| ह भा चन्नम् श्वरयाविश्वासार्वात्वया  |  |
| दक्षद्वायकथनम् च । इताय  | [१६] सर्वलोकेशसरकतस्य सभार्यस्य पृथोम्नेनिप्रयुक्त-  |
| व्याप्तरीयमानाध्वरदर्शनाथं गच्छता वमार्ग   | गायककर्नुकस्तोत्रम् षोडशे २५८  |
| [ ३ ] देचणाचुठापरा । इत्रित्यक्षीत्सवः व्या  | [१७] प्रजाश्चधाप्रशमनस्योपायान्तरमपश्यतः पृथोप्रस्त-   |
|  | बीजात महीं इन्तुं यतः। भीतया तया पृथुस्तः  |
| भवणमः<br>पितृयद्वीत्सविद्वया गमिष्यन्ती सर्ती निवार-   | न्या सप्तदंशे २६८  |
|  | (१८) महीवचनानुसारेण पृथुप्रभृतिभिः वत्सपात्रादिभे-   |
| यित । श्री श्री सन्ति । प्रति क्या ४८  | नतस्तराहर्गम् अधादश  |
|  | 250  |
|  | [१९] पृथारम्यम् पराकाकरणम् तद्भवमेधसम्पत्तिमस्यमानेनेन्द्रेण तद्यवपशी हते  |
|  | तमिन्द्रं इन्तुं भन्नत्तस्य पृथोविधात्रा वारणस एकोः  |
| न नामाखात सतिदिहित्या आदुरान्या दुर्ज  | न्तिको १९४   |
| L '  | त्व प्रति विष्णोः सन्नाष्ठपढेशः ३०१  |
| वीरभद्रोत्पास्तम् वरद्धंसनं च पश्चमे ७१<br>तेन वीरभद्रेण दचाध्वरद्धंसनं च पश्चमे ७१  | NO 23  |
| तेन वीरमद्रेण दचाध्वरस्थन च पञ्चम<br>तेन वीरमद्रेण दचाध्वरस्थन च पञ्चम<br>तेन वीरमद्राविभिः परिभूतेदेवैः अस्समिपेकृतविश्वतिः ७५<br>६] वीरमद्राविभिः परिभूतेदेवैः अस्समिपेकृतविश्वतिः ७५  | वृशुकर्तकस्तवः वरदानम् परस्परभीतिश्च विद्या ३९०  |
| A THE AND ADDRESS OF THE PARTY  | and the second control of the contro |

| अस्यायः विषयः पृष्ठाङुः  | <b>अध्यायः</b> | विषयः  | पृष्ठाङ्कः            |
|--|----------------|--|-----------------------|
| or callar and a second a second and a second a second and |                | न्द्रतितिच्या पारमद्दंस्यञ्च पञ्चमे                  | ५३                    |
| [ २१ ] देवादीनां महायशे महासभायां पृथुकचेकप्रजा-   |                | भिमानशून्यस्य तस्य देहत्यागक्रमकणनम्                 |                       |
| शिक्षणम् एकविंशे   |                | रतस्य विवाहः, पुत्रोत्पादनम्, प्रजाप                 |                       |
| [ २२ ] हरेरादेशेन सनस्क्रमारस्य पृथवे परमञ्जानोपदेशः   |                | में हरिपूजनम, हरिक्षेत्रे हरिभजनश्च सप्त             |                       |
| द्याविशे ३४०   |                | च्णुभजनपरायणस्य तस्य अनाथहरिण                        |                       |
| [२३] समार्थस्य पृथोः वने नित्यसमाधिषभावेण विमान  |                | चुणे प्रसाकिः तत्रश्च तस्य हरिणयोनी जन               | म तहेह-               |
| नमारुख वेकुग्ठगमनम् त्रयोविधे ३६६  |                |  | •                     |
| [२४] पृथुवंशकथनम्, तत्प्रपौत्रात् प्राचीनबर्धिषः प्रचे-  |                | गिश्चाष्टम<br>रितस्य जडब्राह्मणत्वे रागासमावात् भद्र |                       |
| तासां जन्म, तेषां रुद्धगीताभवणश्च चतुर्विशे ३८०  | ( ) ,          | शुत्वेषि निर्विकारत्वामित्युक्तिः नवम                | 208                   |
| तासा जन्म, तथा .ख्युगाताजनगत्र पद्धानस र   | [So ] Fi       | छाद्गृहीतेन तेन रहूगणनामकस्य राज्ञः रि               | डोबिका-               |
| [ २५ ] प्रचेतस्सु तपस्यत्सु नारदस्य तव पित्रे प्राचीन-   | E 20 1 4       | इनम् तत्रापटवात् तस्य राजकत्तकम                      | uisui<br>Islaan       |
| बर्हिषे पुरञ्जनकथोपदेशतः आत्मबुद्धिसङ्गेन  | 9              | च्छुत्वा तत्त्वश्चोचितप्रत्युक्तिः ततश्च राश्चा      | निवात-                |
| विविधाः संसारा इत्युक्तिः पश्चविशे ४१०   | ;              |  | ,                     |
| [ २६ ] सृगवाच्छलेन स्वप्नजागरणोत्तवा सत्बुद्धियाग-   |                | रवेन प्रसादनम् च दशमे                                | ११४                   |
| तत्प्राप्तित्रयां संसारप्रपञ्जािकः पद्भविशे ४३४  | •              | रहुगणमहीभृता पृष्टस्य तस्य तस्वज्ञाने                |                       |
| [ २७ ॥ पुरञ्जनस्य कान्तापुत्राद्यासकिः   | प              | <b>काद्रशे</b>                                       | र्वे हैं              |
| गन्धवस्त्रह पुरञ्जनपुराध्यन्तस्य युद्धमः काल-  | ( १२ )         | ससन्देहं महीभृता पुनः पृष्टेन तेन राक्षः र           | तर्वसं <b>य</b> ः     |
| कम्याकथा ४५०   |                | ापनोदनम् ब्रादशे                                     | १३३                   |
|  | ( \$\$ )       | मजातवैराग्यं प्रति तस्त्रोपदेशो सुधेति रा            | हो वैराग्य-           |
| Malalallic open of cities and  | द              | क्याय सस्य भवादबी वर्णनम् त्रयोद्शे                  | १५४                   |
| [२८] पुरञ्जनस्य देहस्यागः । स्भीविचिन्तया स्नीत्वं   | [ 88 ]         | पूर्वीध्यायोक्तमावाटवीरूपकाणां स्थास्य               | <b>नम्</b>            |
| भासस्य तस्य पायमाप द्वापा जडापण  | ₹              | वर्दशे   | १६व                   |
| [ २ ह ] पूर्वपूर्वीद्ध्यायोक्तपुरञ्जनोपाक्यानीयपरोक्षायव्या-   | [ 88 ]         | भरतवंदारियनृपतिकथनम्                                 | १८७                   |
| ख्यानेन स्त्रीसङ्गात् संसारः परमात्मसङ्गान्सुकि  | िरु६ी          | जम्बूद्वीपकथनप्रस्तावे ऊँद्वीधः परितः सा             | <b>निवंशात्</b>       |
| विति इफर्ट संइत्य एकोनत्रियाँ ४५१  | i              | रोरवधानवर्णन्म षोडशे                                 | <b>१</b> - <b>१</b> % |
| ्र वे वे व्यवस्थार विश्वस्था प्रचतसा ब्राह्मापार   | [ es ]         | गङ्गागमनम् एवावृतवर्षे रहेण सङ्क्षण                  | संवनम्                |
|  |                | <b>ा</b> प्रकार                                      | २०५                   |
| ा १० व च्या व्यवस्य वनकृतीन्। भवतस्य गार   |                | मेरोः पूर्वादिकमतः त्रिषु वर्षेषु त्रिषु चो          |                       |
| दोक्तमार्गेण मोच्यायम प्यात्रिधे ५३४   | E 4-1          | सेव्यसेवक्षक्थनम्[तत्र] हरिवर्षस्थितन्               | संस्कृतिया।           |
| इति चतुर्थस्याम् ।   |                | गिवतः भद्रभवक्रतस्तुतिः                              |                       |
| शत चतुवस्याचनगरगर्   | à              | क्रिमालस्थित कामदेवस्बकापिणो भगवतः                   | तःकत-                 |
|  | • •            | तोत्रम   | २२७                   |
|  | 3              | उयकश्चितमस्यावशारकापेणो भगवतः                        |                       |
| अथ पञ्चमस्कन्धः।   |                | त्कृतकूर्माचतारस्तुतिश्च                             | <del></del>           |
|  | 1              | विरक्षकषु स्थितवराहकपिणो भगवतः                       | २३२                   |
| (१) मजुपुत्रस्य ज्ञानिनः प्रियवतस्य राज्यपरिपालनम्   | 1              | १ घटकुर्यकु । स्थल पराहकायणाः सगवतः ।<br>ग्रहाद्देशे |                       |
| ब्रानिकेश च प्रशस  |                |  | - 738                 |
| (२) तत्पुत्रस्य प्रसिद्धक्त्रेणस्याग्नाध्रस्य चरितम् पूर्वे  | F 22 1         | किम्पुरुषे भारतवर्षे च सेव्यक्षेत्रकथनम              | [] da ]               |
| चित्र्यां नामाप्सरस्छ नामिप्रभृति नचपुत्रशत्पाप्पाप  |                | किम्पुरुषवर्षास्त्रतस्य भगवतो रामस्य स्त             | ातः                   |
| वितीये   |                | गारतवर्षे बदारिकश्रमे तपश्चरतो न                     |                       |
| (३) तस्य नामेश्चरितम् तत्र पुत्रकामेन नामिना यश्च-   |                | तुतिः  | 286                   |
| इंग्लिस  |                | गारतवर्षेष्णपुण्यनदीनां नामानि भारत                  | • •                   |
| तराजसन्तोषितस्य भीविष्णोनीभितो मध्वत्य।  |                | तथनञ्च एकोनविशे                                      |                       |
| अन्य सतीये   | [ 59 ]         | रुचादिदीपणद्रश्यितिसमुद्रश्यितिळोकाळोव               | ताख्या                |
| क्षा नहरा ऋषभद्दात नामकरणम् अगाव्या  |                | दवणनम् विशे  | . २६१                 |
| व्यविण वर्षणम् नाभग्रासा ऋषभस्य गुरुङ्   |                | लिहं कालचकेण भ्रमती दवेगेसा राशि                     |                       |
| बासादिभरतादिशतपुत्रोत्पादनम् राज्यपाळनम्   | •              | लोकयात्रा तिक्कित्वण्य एकविधे                        | २७९                   |
| च चतुर्थे  |                | क्रमेण चन्द्रशुक्राविखाननिर्णयः तत्त्वद्र            |                       |
| क्ष्यास्य मोक्षधमापदेशदारा प्रवात्शासनम्   |                | नराणामिष्टानिष्टकधनश्च द्याविशे                      | 848                   |

|              |  |                                 |                       | 1         |   | <u> </u>                                      |   |
|--------------|--|---------------------------------|-----------------------|-----------|---|---|---|
| अध्यार       |  |                                 | ष्ट्राङ्कः            | अध्यायः   |   | विषयः   | पृष्ठाङ्कः                              |
| [ २३ ]       | ज्योतिश्चकाश्चयघ्रुवस्थानकथनम् शि<br>इरेरवस्थानकथनश्च त्रयोविशे          | शुमार <b>स्वरू</b> पेण          | ा∙<br>२ <del>१६</del> |           |   | रणहोमवशात् चुत्रास्                           |   |
| [ 58 ]       | रवेरवीक् राद्युप्रभृति स्थितिकवनम  | अत <b>ळादिस</b> प्त-            | •                     |           |   | र्देवैः कृतनारायणस्तु                         | · •*•                                   |
|              | विलस्वगंतित्रवासिविवरणम् चतुर्वि   | ग्रे                            | ३०४                   |           |   | य् <b>गृषेराश्चिनिर्मित्</b> मस्त्रं          |   |
|              | वतोऽधस्ताव अनन्तिस्थितिकथनम्   |                                 | ३२१                   | B .       |   | न्यन्द्रस्य सदेत्यसै                          | •                                       |
| [ ३६ ]       | ततोऽधस्तान्नरकस्थितिकथनमः षड्  | विशे                            | ३५८                   | 1         | युद्धम् दशमे                              |   | १७८                                     |
|              | इतिपञ्चमस्कन्धविषयानुक्रमणिका  | समाप्ता ।                       |                       | , -       | ~   | प इन्द्रं प्रति विविध                         | •                                       |
| ,            | •  |                                 |                       |           |   | य विषादः बृत्रोपदेश<br>धर्मसम्बादः वृत्रेन्य  | -                                       |
|              | े अथ षष्ठस्कन्धविषयानुक्रम   | ाणका।                           |                       |           | वधश्च द्वाद्शे                            |   | १स्८                                    |
| [8]          | पूर्वस्कन्धोपवर्णितनानाविधनरकपाप<br>पृष्ठवतः परीज्ञितस्तावत्तप आदि       | निस्तारोपायं<br>भेर्तियमैवेदनो- |                       | 1 .       | वृत्रासुरसंहारवञ्चा<br>भिवर्णनकथा         | दिन्द्रस्य पुनर्वहाहा                         | त्यासम्प्राप्य-<br>२१०                  |
|              | त्याचिमविबन्धकदुरितनिवृत्तिस्ततो व<br>त्याचिमविबन्धकदुरितनिवृत्तिस्ततो व | वेदनस्य-निष्प-                  | ,                     | •         | बद्धहत्याभयादिन्द्र<br>विष्णुना तद्रचणञ्च |   | <b>૨</b> ૧૨ <sup>*</sup><br>૨૧ <b>૫</b> |
|              | द्नाइलेषी तता ब्रह्मप्राप्तिस्ततः क्षे                                   | म इति निय-                      | •                     | [ ६८ ]    | असुरस्य वृत्रस्य                          | मारायणे कथं भी                                | करासीदिति                               |
|              | मान् दर्शयन् तन्नरकितरणोपाये   | भगवद्धकि-                       |                       |           | परीक्षित्रश्चः तद्भुत्त                   | रदानाय शकेन तत्प                              | र्वजन्मचरित                             |
|              | योग एव मुख्य इति कथनाय अजार्   |                                 |                       |           | कथन(रम्भः, ।चत्र                          | केतुनाम्ना राज्ञः क<br>नम् राज्ञास्य चतुर्दशे | च्छ्रलब्धपुत्र-                         |
|              | क्रथनम्  |                                 | ११                    | 1         |   | पन् पश्चास्य चतुद्दश्<br>तस्वोपदेशेन चित्रक   | •                                       |
|              | दूरे कीडासकं नारायणनामानं स  |                                 |                       |           | सनारदनााङ्गरला<br>लाघवीकरणस् पञ्च         |   | त्वाः शाक<br>२३८                        |
| ;<br>;::     | मजामिलं नेतुमागतैविष्णुद्तैर्यमदूत                                       |                                 |                       | 1.1       |   | वितवाचा विशाकी                                |   |
|              | तेवां सम्बादे धर्मतत्त्वलक्षणं पृष्ट                                     | वतां विष्णुः                    |                       | (१६)      | नारद्व तदायपुत्रन्<br>प्रति अनन्ततोषिण    | तिमहाविद्योपदेशः ष                            | ाडशे २५१२.<br>विशेष                     |
|              | बूतानां यमदूतोच्यमानधर्मादि  |                                 |                       |           |   | मोघसमृद्धि प्राप्य ग                          |   |
|              | च प्रथमें  |                                 | <b>१</b> %            | -         | चित्रकेतोगिरिशे द                         | ष्टा तस्प्रत्युपहासः                          | दुगायाश्शा-                             |
| 4. · · · · · | यमदूतात् प्रति विष्णुदूतानां हरिष्<br>कथनम्                              |                                 | १८                    | :         | पात चुत्रक्रपेणासुर<br>देश                | योगी' जन्म च फ                                | थ्यते सप्त<br>२ <b>८५</b>               |
| [ \$ ]       |  | रूतसान्त्वनम्                   | 38                    | ( 0 - 7 - |   | ाम्, दितेः कश्यपो<br>शक्रेणादितिगर्मे म       | क्तवतग्रहण,<br>हतां भेदनम्              |
|              | तृतीये   |                                 | 3€                    | i         | भिन्नाताश्च तेषां देव                     | त्वप्रदानञ्च अष्ट                             | ।(दशे ३०२                               |
| [8]          | दशकतहसगुद्धाख्यस्तोत्रम्   |                                 | ار ا                  | د [عو]    | हिन्नि प्रति कश्यपेन                      | हरितोषणाय यह                                  | तमुकं विद्व                             |
|              | तरस्तोत्रण पसन्नस्य भगवतो<br>प्रादुर्भावः                                | -                               | 9C                    |           | वृतिः ऐकोनविशे                            |   | ३२५                                     |
|              | तं दत्तं प्रति हरेहादेशः   |                                 | -ક                    |           | हति षष्ठस्कन                              | वविषया नुक्रमणिका                             |   |
|              | होस्तस्यान्तर्द्धानम् च चत्र्ये  |                                 | is (                  |           |   |   |   |
| ru T         | तारहवाक्येन वक्षपुत्राणां सर्गकर्मणो                                     | विरम्यापुन-                     |                       | <u>'</u>  | · ·                                       | viller ry                                     | <b>~</b>                                |
|              | राग्रमनाय गमनभ् तथा याकन व   | चस्य नारदं                      |                       |           |   | धावेषय। नुक्रमा                               |   |
|              | प्रति ग्रापदानम्, च पञ्चमे   |                                 | 90                    | [१] ह     | तत्र परीचित्रश्रान                        | न्तरं शुकस्य तदुत्त                           | रदानप्रसङ्गे 💮                          |
| [ ]          | र्चकन्यावंशकथनम्, विश्वक्रपोत्पत्तिः                                     | घ पष्टे १                       | 90                    |           | नारदयुधिष्ठिरसम्ब                         | दि। जुवादेन बहाशा                             | पन हिरण्य                               |
| [७]          | एश्वर्यमदादिन्द्रणावामतस्य गुराह्य<br>गुरामगर्भेनद्रस्य तद्द्वेषणावामी   | द्वरपातित्यागः<br>११८           | -११९                  |           |   | मक्रथनम्, सुरणम्स<br>मिथमाध्याय               |   |
|              | क्षांपर विचारणाय ब्रह्मोपर   | शक् १                           | 39                    | [2] f     | हेरण्यास्वधेन वि                          | <sup>च्</sup> णुं प्रतिकुद्धस्य हिन           | ्ण्यकशिपो-                              |
|              |  | CMI 257 GEI 24 LI - 7           | २६                    | a         | र्गिनवानिकरद्वारा र्                      | त्रेजगद्विश्वावनम्, त                         | डीकिकोप ·                               |
|              |  |                                 | 42                    | à         | शिन तस्वापदश                              | न च मातृश्रातः                                | <b>ग्ध्</b> पश्चतीनां                   |
|              |  |                                 | 88                    |           | शोकाषनीदनश्च हि                           |   | <b>३२</b>                               |
|              | द्वित्रक्रकतनवशादिन्द्रस्य हा  | अहत्यासम्प्रा-                  |                       | [3] {     | हर्ययकाशपास्तप                            | स्या, ततश्च जगत्त                             | षः. तदर्वः                              |

| अध्याय        | : विषयः पृष्ठाडु   | 1                                       |   | ंपृष्ठाङ्कः                  |
|---------------|--|---|---|------------------------------|
|               | लोकनात् विस्मितस्यागतस्य ब्रह्मणः हिरण्य-<br>कशिपुकर्तृकस्तवः वरप्रार्थनाच तृतीये ५७   | (4)                                     | पञ्चषष्ठममन्वन्तरकथनम्, विषयापाञ्चःश्रीकाण<br>देवानां हरिस्तवः                      |                              |
| โชไ           | ब्रह्मणा तस्मै प्रार्थितवरदान, वरदानद्दोन हिरण्य-  | ( g ]                                   | तत्स्तवतुष्टे हरावाविभूते पुनर्देवकर्तकतत्स्तवः                                     |                              |
|               | किशिपुना लोकपालपराजयः सुरहरिसम्वादश्च<br>चतुर्थे ७२  |   | तान् देवान् प्रति भगवदाज्ञापनम्<br>तन्मन्त्रणादसुरैस्सद्द देवानामसृतार्थे समुद्रमन  | ८४<br>थनो                    |
| rol           | प्रह्लादस्याध्ययनम्, विष्णुभक्तं स्वपुत्रं प्रह्लादं   |   | द्योगः च षष्ठे  | . 59                         |
| 1             | घातियतुं हिरण्यकशिपोर्विविधचेष्टा तत्रा-<br>सामर्थ्यं, पुनर्द्धयनाय गुरुसमीपे प्रेषणम् च   | (७)                                     | देवासुरैः कृतसमुद्रमन्थनम्  |                              |
|               | पञ्चम  |   | ततो विषोत्पत्तिः<br>अखिलजनस्तुतेन रुद्रेण तत्पानश्च सप्तमे                          | ્ <b>९</b> ६<br>ૂ <b>१૦૫</b> |
| re 3          | गुरी गृहकम्बांत्रे प्रह्वादेनानुकम्पया दैलाबालकेश्यो   | [5]                                     | ततस्सुराभेश्रभृतीनामुत्पत्तिः   | # 22.4                       |
| [a]           | नारदोक्तपरतस्वोपदेशः षष्ठे - ११३   |   | लक्ष्मिकर्तृकवरणम्  | <b>११३</b>                   |
| ۲ م ٦         |  |   | धन्वन्तरितोऽसृतक्लग्नेऽसुरैरपहृते हरेमोहिन  |                              |
| [७]           | काले स्वस्य नारदोक्तिभवणवर्णनम् तत्त्वकयनञ्च   |   | मूर्तिधारणम्  | ं १२१                        |
|               | सप्तमे १३१   | (९)                                     | मोहिनीमूर्जिना हरिणा मोहितैदेंसैरमृतङ्  | लंशे                         |
| [=]           | अतिकोधेन प्रहादं निम्नतो हिरगयकशिपोरावि  |   | ्दत्ते तद्वश्रनेन देवेश्यो ऽस्तत्वानस नवमे ः  | प्र १२४                      |
|               | भीवितन् सिंहाकतिना हरिणा निष्द्नम् ब्रह्मादि-<br>कर्तृकतस्तुतिश्चाष्टमे १५६  | ( 80 )                                  | मत्सराहेवेस्सइ देवेस्समरे पार्ण्ये वैत्यम<br>ाविषणोषु त्रिद्रशेषु हरेराविभावः दृशमे | त्रयाः<br>कः १३५             |
| [e]           | the state of the s |   | देवानां दैत्यहननम्  | ्र १४८                       |
| 7,<br>1, 2, 1 | ब्रह्मवेरितेन प्रहादेन कोपप्रशमनाय द्वसिहमूर्जे-<br>भगवतः स्तुतिः नवमे । -१८०  |   | नारहेन तन्निवारणम्  | ्र १५७                       |
|               | भक्तं प्रह्लादं प्रत्यनुगृद्धं ब्रह्माणं प्रत्युपदिइय<br>च मृहरेरन्तद्धानं प्रसङ्गाहुद्रम्प्रति हररनुप्रह  |   | शुक्रेण मृतदेखानां पुनरुजीवनम् एकादशे   |                              |
|               | करणश्च दशमे २२०  | 2                                       | मनोविभ्रमकथा द्वादशे  | 🕽 १६०                        |
| ( 33)         | मनुष्याणां साधारणधर्मकथनम्, स्त्रीणां वर्णानाश्च<br>विदेशवधर्मकथनम् एकादशे २४६   | - (; <b>१</b> ३:)                       | वैवस्वतसूर्यसावण्यीदिमनूनामितिहासवर्णनय<br>त्रयोदशे                                 | ् <i>१७८</i> ं ः             |
| [ १२ ]        | ब्रह्मचारिवनस्थधमेकथनम् चतुराश्रमसाधारण-<br>किञ्चिद्धमेकथनम् द्वादरो   |   | मन्वादीनां कर्मकथनम् चतुर्दशे<br>। बलेर्विश्वजिद्यागः                               | १८०<br>१८६                   |
| r an i        | यति अर्मकथनम्, अवधूतितिहासेन सिद्धावस्थावर्ण-  | \                                       | तस्य स्वर्गजयः  | <b>૧</b> ૦૫                  |
|               | क्रम सम्बद्धाः स्टब्स् ।<br>इ.स.च्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्या   |   | भयादेवानां निलयनञ्च पञ्चदशे   | १९७                          |
| [ \$8 ]       | गृहस्थिभिन्वधनम्, देशकालादिभेदेन भगस्य फल-   | ••                                      | पुत्राद्शैनेन शोचन्तीमदिति प्रति कश्यपस्य प<br>कथनम् षोडशे                          | यो वत<br>्र२७०               |
| [ yy ]        | विशेष्त्रतोक्तिः चतुर्दशे<br>सर्वधर्मसारसङ्ग्रहः पश्चदशे   | [ 80                                    | । आदितेस्तद्रतचर्यया तत्कामपूरणाय हरेस्तत्यु  | त्ररूपे                      |
| F 227         | इति सप्तमस्कन्धक्यानुक्रमणिका ।  |   | णावतारितुमङ्गीकारसंबद्ददेशे 💎 👙   | ु २१८                        |
|               | and a state of the | [ १द                                    | ) श्री भागवतो वामनक्षेणावतारः   |                              |
|               | ्राणामा इक्टान्ट्रिया विकास  |   | ्तस्यबल्लियश्चगमनम्   | •                            |
|               | अथाष्ट्रमस्कन्धविषयानुक्रमाणका ।   | - Irwa                                  | बिलिवामनेसम्बादश्चाष्ट्राद्यो करियो ।   |                              |
| (१)           | परीचितस्त्वमन्वन्तरिश्वातिप्रश्नः शुकस्य स्वायम्भुव-<br>स्वारोचिषाचमतामसेति चतुर्मनुक्पणम् प्रथमे  | [ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ | 9   |                              |
|               | ८ ह्याये   |   | वामनकृत पदत्रययाचनम्<br>वामनेन पदत्रयपरिमितभूमी याचितायां तस्मे                     | तहाः                         |
| (8)           | (गजेन्द्रीपाल्यानारम्म) गजीमिः क्रीडिती गजेन्द्रस्य  | . State                                 | तुमुद्युक्तं विल प्रति तस्वविश्वातृशुकाचार्यकृत                                     | ाह्यान<br>-                  |
|               | आहगृहीतस्य हरिस्मरणं द्वितीये  |   | निवारणं च एकोनविशे  | રેઇપ્                        |
|               | माह्यस्ति । तम् अस्ति । तम्  | [ २०                                    | रवग्रुपदेशेन हरेदछलं ज्ञात्वापि सर  | <b>यभङ्ग</b>                 |
|               | गजेन्द्रंस्तुतेन हरिणाविभूय ब्राह्माहाद्वजेन्द्रमोक्षः   |   | भीरुणा बालिना वामनाय कृतयथोक्तदानम्   | रपद—१५                       |
|               | णम देवलशापाद्वांहोद्धारणम् च तृतीय ४२<br>ग्राहस्य स्वगन्धर्वत्वप्राप्तिः गजेन्द्रस्य विष्णुपाप्ति  |   | वामनस्य विश्वक्रपत्वेन व्यापनकथा च विशे   | २४६                          |
| (8)           | श्च चतुर्थेचाये  | [ 58                                    | ] वामनेन बलेब्त्कर्षे ख्यापचितुं सुदीचरणस्था  | रपूरण-                       |

|                  | <b>विषयः</b>   | पृष्ठाङ्कः             | अध्यायः | ्विषयः  | पृष्षाङ्कः                    |
|------------------|--|------------------------|---------|---|-------------------------------|
| अंध्यायः         |  | २६७                    | (१८) ₹  | नहुषवंशवर्णने ययातिकथायां पुरी जग                           | ासङ्क्रमण <b>म्</b>           |
|                  | च्छलेन तस्य वरुणपाशबन्धनम् एकविशे  |                        |         | अद्यादशे  | રર્વે (                       |
| [ ૨૨ ]           | प्रसन्तेन भगवता वलेः पाश्वनधीवमोत्त्रणम्   | २७५                    | (88) 3  | प्रयातिवैराग्यं पुरुराज्याभिषेकः य                          | यातिमुक्तिश्चे॰               |
|                  | वरदानम् तस्य द्वारपालत्वकरणञ्च द्वार्विशे  |                        |         | कोनविशे   | ્ રૂંચ્હ                      |
| [ २३ ]           | बलेस्सुतलप्रसापनम् इन्द्रस्य स्वाराज्यप्रता  | पणम्<br>               | 1       | पुरुवंशकथने भरतकथा विशे                                     | २३७                           |
|                  | प्रह्लादस्य पौत्रसिक्षिधिगमनम् परिशिष्टवर्णव   | ाम् च                  | (20)    | परतवंशकथने रन्तिदेवादिकथाकथा                                | •                             |
|                  | त्रयोविंशे   | २८९                    | (22)    | दिवादासंवशवणनानन्तरम् ऋक्षवंश                               | कथनम् तत्र                    |
| [ રક]            | मत्स्यावतारलीलाव र्गनम् चतुर्विशे  | 300                    | ( 22 )  | जरासन्धपागडवादिवंशकथनम् द्वा                                | वेशे २६३                      |
|                  | इत्यष्टमस्कन्धकथोनुकमणिका समाप्ता।   | •                      | (53)    | यनुदुह्यतुर्वसुवंशकथनम् विदर्भजन्म                          | पियन्तयदुवंश                  |
|                  |  |                        | ( ( )   | कथनञ्च प्रयोविंशे   | २७६                           |
| :                | The second secon |                        |         | भीकृष्णजन्मपर्यन्तविदर्भव <b>शक्यन</b> म्                   | चन्द्रवंशवर्णन                |
|                  | अथ नवमस्कन्धविषयानुक्रमणिका  |                        | ( 40 )  | समाप्तिश्च चतुर्विशेऽध्याये                                 | · २८६                         |
|                  | तत्र वैवस्वतस्रुतवंशे सोमंबशप्रवेशकथनाय  |                        |         | - \   |                               |
| [ 8              | सुशुसस्य स्त्री त्ववणनम् प्रथमेऽध्याये   | <b>?</b>               |         | इति नवमस्कन्धकयानुक्रमणिका                                  | समासा                         |
| . <b>بنا</b> .   | मुषध्चरितं करवादिवंशात्पात्तिर्दितीये  | 23                     | 457     | -   |                               |
| [2]              | ्रवृष्णुचारतः क्षणाक्रमणाः साम्राज्यसम्  | तोपा-                  |         | अथ दशमस्कवाविषयनुक्रम                                       | ाणिका ।                       |
| [3-].            | शर्यातिवंशकथनम् शुकस्योपाख्यानम् रैव   | <b>२३</b>              | 1       |   | _                             |
| i te             | ख्यानश्च तृतीय   | <b>3</b> 3             | (8)-    | तत्र कृष्णावतारचरित्रश्रवणामृतानि                           | वृतस्य राज्ञः                 |
| [8]              | नमनकथा, अस्वर्गाषाच्यानञ्ज चतुर्थे   | <u>-</u> .             | -       | उाक्तजुवादेन पुनः प्रश्नः<br>श्रीभगवद्वतारकारणप्रवस्तावद्वः |                               |
| [4]              | अम्बरीषेण विष्णुचक्रं प्रसाद्य प्राणसङ्कटात्   | gai<br>go              |         | देवकीहननोद्युक्तं केसं प्रति वसुदे                          | वेक्स्वयामाराष्ट्रे-          |
| 1.               | संसोरत्वणम् पश्चमे   | ; -                    |         | देशः  | મકાલ <b>લામાલુ</b> ૧<br>38    |
| [8]              | अम्बरीपवंशकथनम्, इक्ष्वाकुवंशे शश  | ाद्।।द् ·              |         | निजमृत्युदेवकीसुताद्भावीति                                  | थाकानामा                      |
|                  | भारधातपरितानकपणम् सामारकथा च   | 48 99                  | 1       | श्चतेन वंसेन देवक्याः षट्                                   | जिल्हामारण <b>म</b>           |
| [9]F             | गान्धातृवंशकथने पुरुकुत्सोपाख्यानम् हरिश्च   | न्द्रापा-              |         |   | 43                            |
|                  | <b>ज्यानश्र सप्तम</b>  | .,                     |         | प्रथम कंग्रे  | नकत्रयहरूहन-                  |
| [=]              | रोहिताश्ववंशकथने सगरोपाख्यानम् कि  | ालाञ्च-                | (२)     | प्रलम्बबकचाणुरादिसहितेन कंसे                                | ५६                            |
| L J              | न्त्र स्वारसत्तीवनाश्रश्राष्ट्रम   | 50                     |         | कथनम्   | 1                             |
| [3]              | क्तंकशनप्रतावे भगीर्थस्य गडु   | गनयन-                  |         | देवकी सप्तमंगर्भ रोहिण्युद्रनिवेशन                          | ाय यागमाया-<br><b>५</b> ९     |
| •                | क्या खटवाङ्गावाधानरूपणञ्च नवम  |                        |         | म्प्रति भगवत्कताज्ञापनम्                                    | ~ · ·                         |
| T                | खद्वाङ्गवंशोपाख्याने श्रीरामादिजनमकथन  | म् तच्च-               |         | देवक्यास्सर्वान्तरात्मभूतभगवाद्विग्रह                       |                               |
| IL CO. 1         | रितवर्णने रावणवधः पुनरयोध्याग  | ।मनश्च                 |         | धारणम्  | <b>E</b> 9                    |
|                  | ं <b>दर्शम</b>   | १२३                    |         | देवकीगर्भस्थितश्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मेश                     | ानादिद्वगणः-                  |
| r og J           | रामस्ययज्ञादिकरणकथनम् एकादशे   | १धर                    |         | <b>कृत</b> स्तुतिः  | ७२                            |
| 1 (5.3)          | कुशवंशवर्णनम् शशाक्वंशवर्णनासमाप्तिद्वीव   | शे १५५                 |         | तैरेवदेधैः कृत देवकीसान्तवना च                              |                               |
| ( 3 < )          | इस्वाकुपुत्रनिमिकणा तद्वंशवर्णनम् स्यवंश   | कार्त्तन-              | (3)     | कृष्णावतारसमये देशकालादीनां                                 | प्रसन्नवर्णनम् १००            |
| (१३)             | समाप्तिस्रयोदशे  | १५९                    |         | श्रीकृष्णावतारघट्टः   | १०३                           |
|                  | Mannorth   |                        |         | श्रीकृष्णस्य दिव्यमङ्गलविश्रहवर्णन                          |                               |
| [ 88 ]           | चन्द्रवंशकथनमस्ताचे चन्द्रबुधपुरुरवश्चरित  | वणगम्<br>१ <b>६७</b>   |         | खसक्षेणाविभूतं भगवन्तं प्रति                                |                               |
| - <del>-</del> - | चतुर्देशे  | श्रीराम                |         | €तुतिः  |                               |
| ( 84 )           | चतुर्दशे<br>पुरुरवःपुत्रवंशोपाख्याने गाधिदोहित्रज पर   | .खुराम<br>१ <b>८</b> ३ |         | शृङ्खचकाद्यायुधसेवितचतुर्भुजत्वस्                           | <b>स्वरू</b> पेणाविभूतं       |
|                  | क्रवारम्भः कात्त्वीयस्तेज्ञ्चन्द्रेष्टः ।  | ररज्ञराः               |         | प्रमणुखं प्रति देवकीकतस्तुतिः                               | ्र <sup>े</sup> स्थापन स्थापन |
| (88)             | पुरुव । पुरुव का चीर्य सुतै जैमद्ग्ने विधः । परग्रुदामकथा का चीर्य सिन्न स्वरं विश्वामित्रवंशकथनम् । सेण चत्रवंशकथनम्  | ਾ <b>ਡ</b> ਾ<br>: ਰ    |         | भगवता निजिपतृश्यां खासाधा                                   |                               |
| -                | मण प्र   | १६५                    |         | विग्रहपदर्शननिमित्रोपाद्धातकपोतिः                           | हासकथनम् १३४                  |
|                  | षोडरो ->-वन्य पश्चम सने।   | क ग्रध्ये              |         | यशोदयाः योगमायाजननम्  | १४६                           |
| 190              | षाड्या<br>पुरुवसो ज्येष्ठपुत्रस्य पञ्चस सुते।<br>धत्रबृद्धादिचतुः पुत्रवंशवणनम् सप्तद्शे   | ३ मध्य<br>२६७          |         | कंसभितिन भगवदाद्वाकारिणा                                    | वसुदेवेन करा-                 |
| 120              | धत्रबद्धादिचतुः पुत्रवराराः भाष्य  |                        | T.      |   |                               |

| अध्या        | • • •  | पृष्षाङ्कः         | अध्याय       | ाः विषयः  | দৃ•দ্বান্ধ:            |
|--------------|--|--------------------|--------------|---|------------------------|
|              | श्रीकृष्णगोकुलन्यनं योगमायाप्रसानयनञ्ज       | नृतीये १४९         | 1            | प्रति कृपया श्रीकृष्णस्य बन्धनप्राप्तिः           | ,<br><b>३१७</b>        |
| (8)          | ततःश्रुतवालवरवैः द्वारपालैविदितवृत्तान्तं र  | चुतीगृ-            | ( 80 )       | बद्धस्यंव श्रीकृष्णस्य यमलार्जुनभञ्जन             |                        |
| 9            | इस्थं कंसं प्रति देवकीवचनम्                  | १५२                |              | नारदशापविनिर्मुक्तनलक्त्वरमणिप्रीव                |                        |
|              | भ्रुतचण्डिकावाक्येनातिभयाकुलिते <b>न</b> कं  | • -                |              | स्तुतिः च दशमे                                    |                        |
|              | देवकीवसुदेवनिगडविमोचनम्                      |                    | Г            | _   | ્ર <b>સ્પર</b> .       |
|              |  | १५८                | F 44 1       | <b>बृ</b> न्दावनप्रसापनकथाप्रारम्भः               | <b>३</b> ६४            |
|              | स्वमृत्युषतीकारमालोचयतः कंसस्य दुर्मिः<br>—— |                    | Í            | वत्सासुरवधघद्वः                                   | ३७२                    |
| . •          | णम्  | १६⊏                |              | वकासुरवधघट्टः चैकादशे                             | 305                    |
|              | कंसस्य तहुर्मन्त्रिमन्त्रतः ब्रह्मबलादिहिस्  | ने हित-            | [ १२ ]       | अघासुरवधारमभघट्टो द्वाद्शे                        | इंट्र                  |
| ·            | जनकताश्वानम् च चतुर्थे                       | १७४                | [ १३ ]       | ब्रह्मकुतवत्सवत्सपालहरणघट्टः                      | <b>४</b> १०,           |
| (4)          | ंनन्देन पुत्रस्य जातकर्मकरणम्                | १७८                |              | श्रीकृष्णस्य सर्वान्तर्यामिणः वर्षमेकं            | मायबा तत्त             |
| •            | नन्दस्य कंसकरप्रदानाय मथुरागमनम्             | १ूदर               |              | त्सर्वस्बरूपेणाञ्चवहारः                           | <b>४</b> १९            |
|              | तत्र नन्दवं सुदेवयोस्समागमः                  | १९२                | [ ६८         | वत्सवत्सपाद्यरणे भगवन्महिमाभिशेन                  | ब्रह्मणा कृत           |
|              | कृतवसुदेवसङ्गमसम्बादस्य नन्दस्य पुनः         |                    | _            | <b>स्तुतिश्चतुर्दशे</b>                           | 885                    |
|              | प्रतिगमनम् च पश्चमे                          |                    | १५           | पौगण्डावस्थावस्थितरामकृष्णकृतभेतु                 | पालनवर्णनम ५५७         |
|              |  | १६७                | •            | भीदामादिपार्थनया तैरसद् रामक्रण                   | _                      |
| ( <b>E</b> ] | (प्तनासंहारघट्टः) गोकुलं प्रतिगच्छतोनन्दर    | योत्पा-            |              | प्रवे <b>गः</b>                                   | <i>৭৩</i> ৪            |
| , .          | तागमशाङ्कितस्य हरिचिन्तनम् पूतनायास्         | द्वन्दरी-          |              |   |                        |
| . •          | रूपेण नन्द्गोकुलप्रवेशश्च                    | २०१                |              | बलरामक्तधेनुकासुरभञ्जनघट्टः                       | ४०४                    |
| \$           | भ्रीकृष्णञ्जतपूतनासंहारः                     | २०५                | •            | कालीयविषतः श्रीकृष्णेन कृतगोपरस्                  | •                      |
| , 'V'        | मारितायाः पूतनाया उरासि क्रीडतः क            | i                  |              | कालीयमर्दनघट्टः                                   | थ्रदद                  |
|              | मारितायाः पूर्वनाया उरासे क्रीडतः क          | च्यस्य २१४         |              | कालीयपत्नीकृतकृष्णस्तुतिः                         | ६०९                    |
| ·<br>·       |  |                    |              | नागपत्नीः प्रति कृष्णानुष्रहः                     | <b>E</b> 25            |
| , /          | नन्देन पाथ मृतराज्ञसीदरीनम                   | 220                |              | कृष्णादेशेन कालीयस्य पूर्ववस्तिरम                 |                        |
|              | व्रजोकसैः कृतपूतनाकलेवरदाहः तस्या            |                    |              | षोडशे   | ,698                   |
|              | प्राप्ति-                                    | ··: <b>२२२</b> ∫   |              | कालीयस्य रमणकद्वीपं परित्यज्य                     |                        |
|              | प्राप्तगृहस्य विदिततन्मरणवृत्तान्तस्य व      | नन्दस्य            |              | कारणकथनम्   | ६३७                    |
| 1            | विस्तयः च षष्ठे                              | २२७                | •            | हदादुत्थितं श्रीकृष्णमवलोक्य बन्धूनार             |                        |
| 9]           | भगवदितरावतारचेष्टितेश्यः श्रीकृष्णावतार      | चेष्टि-            |              | दःवाग्नितो गोपसंरक्षणघद्वश्च सप्तद्शे             |                        |
|              | तोंनां वैलक्षण्यं वदतो राज्ञः प्रश्नः        | २३१ ।              |              | प्रीप्ते रामकृष्णयोर्वनविहारः                     | gá é                   |
| ``\<br>      | शकटासुरभञ्जन वृत्तान्तः                      | २३४                |              | प्रजम्बासुरवधघष्ट्रश्चाष्ट्राद्देश                | ६५८                    |
| - 1 P        | चुणावर्त्तानराकरणवृत्तान्तः                  | २४२                | १९           | श्रीकृष्णस्य दावाश्रिपानवृत्तान्तः                | ६६७                    |
|              | र्यायसामराकरणवृत्ताताः<br>द्वेणावस्वयः       | २४७                |              | श्रीकृषीन दावानलं पीत्वा तसाहो।                   | पञ्चलरचणम्             |
|              |  | ोदाय               |              | चैकोनविशे   | ६७१                    |
|              | विश्वकपद्रशनघद्दश्च सन्तमे                   | રયૂર               | <b>\$0</b> 6 | वर्षर्तुवर्णनघट्टः                                | <b>६७६</b>             |
|              |  | ३५७                |              | रामगोपगोगणयुतस्य श्रीकृष्णस्य                     | वर्षासु वन             |
| <b>左</b> ]'; | नन्दगोकुलं प्रति वसुदेवप्रेषितगर्गागमनम्     |                    |              | विहारः  | 648                    |
| <b>\</b>     | गर्गकृतदेवकीपुत्ररोहिणीपुत्रयोनीमकरणम्       | २६२<br>२६ <b>५</b> |              | शरदतुवर्णनघद्दश्च विशे                            |                        |
| 4            | नन्दसमीपे कृष्णतस्वकथनम्                     | २७२                | २१ व         | त्ररक्तमनीयबुन्दाचने श्रीकृष्णकृतवेणु             | 843                    |
|              | भगवतः कासाञ्चिद्धालकी डानां वर्णनम्          |                    |              | वस्थार्यमायास्य गापाता हमानाः — ८                 | THE PERSON OF BUILDING |
|              | मुद्भच्चणाभियोगे पुत्रं मीषयम्से मात्रे यश   |                    | २२ व         | ोिपानां कात्यायनीवतानुष्ठानम्                     | भि तकावडा <b>८६</b> ६  |
| ί            | विश्वरूपप्रदर्शनम्                           | रूद्ध              |              | यमुनायां स्नातमाग्रानः 🗠 🔌                        | SYE)                   |
| Ţ            | एवं विथयको दानन्वभाग्योदयकारणं पुच्छते       | राशे               | 1            | पमुनायां स्नातुमागतानां गोपीनां वस्त्र<br>पारम्भः |                        |
|              | तत्कारणकथनम् चाष्ट्रम                        | न् २९६             |              | ताः प्रति सुर्णकतवरमदानम्                         | 985°                   |
|              | श्चिम-धनकाले कृष्णकृतभाष्ड्रभङ्गादि जिल      |                    | A a          | गापैरसह गोचारणम् चक्राविशे                        | \$ <i>00</i>           |
| <b>3</b> /   |  |                    | 23 4         | ामकणी प्रति क्यानिक                               | \$00                   |
|              | वशीदायास्तद्वन्धनोद्योगम्                    | <b>\$</b> १२       |              | ामकण्णी प्रति श्चित्राचीनां गोपानां श             | श्वयापशसन,             |
| 3            | वर्वासां बन्धमरज्जूनां व्यक्तुलापूर्तिः तता  | मातः ।             |              | प्रार्थना   | E#0 (                  |

| अध्या       | दः विषयः   | पृष्ठाङ्कः      | अध्यायः विषयः पृष्ट  | अहः         |
|-------------|--|-----------------|--|-------------|
|             | तदादेशात् यञ्चशालायां ब्राह्मणसकाशेऽश्रयाच्य           | i aer           | [ ३८ ] रामकृष्णानयनार्थमक्रूरस्य नन्दगोकुळप्रवेशघट्टोः   | •           |
| ,           | भगवत समीपे पुनर्गेषिः विपाणां तद्दानानङ्गीका           |                 | ८ छित्रिया १६  | ४७९         |
| *           | निवेद <b>नम्</b>                                       | 925             | [ ३९ ] श्रीकृष्णे मथुरां गच्छति गोपीनामुक्रयः १  | ४२०         |
|             | ्तत्पत्नीसकारो भगवदाइप्तैः गोपः कृताश्वभिच             |                 | अक्ररस्य कालिन् <mark>यां श्रीविष्णुलोकदर्शनघटः १</mark> ५   | थ३७         |
|             | चतुर्विधान्ननिवेदनाय प्राप्ताझ्यः विप्रपत्नीक्         |                 | [ ४० ] अकूरेण श्रीकृष्णस्य सगुणनिर्गुणभेदात् स्तवनम्   |             |
|             |  | ७ <u>२</u> ७    | 1  | प्र४६       |
|             | श्रीकृष्णकृतानुग्रहघट्टः                               | -               |  | 4190        |
|             | विप्राणाञ्च तद्दानाकरणात् पश्चात्तापश्च त्रियोविदे     | (1              | l  | ५८३         |
| ર૪          | ( इन्द्रयागभञ्जनगोवर्द्धनाचलोद्धरणघदः ) हेतुभि         | <b>+</b>   .    | रजकवधवायुकसुदामत्रिवकादीनां सम्मानवट्टः एक   |             |
|             | हेन्द्रयं निवर्त्य कृष्णस्य गोवर्द्धनयहोत्सवप्रवर्त्तन |                 |  | 456         |
|             | चतुर्विशे  | ८१६             | l  | Çoo         |
| <b>રૂ</b> લ | क्रोधादतिवर्षति शक्रे कृष्णस्य गोवर्द्धनघारणे          |                 | 1  | EOU         |
|             | गोकुलरक्षणम पश्चविशे                                   | ્               |  |             |
| २६          | श्रीकृष्णस्याद्भतकमाणि दृष्टा विस्तितान् गोपान् प्रा   | ति              |  | ६१०         |
|             | नन्दस्य गर्गोत्त्रयंतुवादपूर्वकं तदैश्वयवर्णन          | -               | 1 · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·  | ६१३         |
| , .         | षङ्घिरो  | <b>LE3</b>      |  | ६१७         |
| २७          | गोविन्दपट्टाभिषेकघट्टः सप्तविशे                        | <i>⊏</i> 08     |  | १६२१        |
| २८          | श्रीकृष्णस्य वरुणलोकगमनवृत्तान्तः                      | ८२७             |  | ६२७         |
| •           | श्रीकृष्णेन चरुणले कान्नन्दानयनम्                      | स्०१            |  | १६३८        |
|             | गोपानां वैकुण्ठदशनश्चाष्टाविशे                         | र०४             |  | १६४५        |
| 2.5         | ( रासकीडारम्भघद्यः ) तत्र रासाधे वेणुगीतारुष्टार्      | भे              |  | ६५९         |
|             | गाँपीभिः श्रीकृष्णस्योक्तिप्रत्युक्तयः                 | <del>८</del> १३ | · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·  | ६६२         |
| •           | रासारम्भे श्रीकृष्णस्यान्तद्धांनम् एकोनित्रदो          | १०८६            |  | द्ध         |
| 20          | विरहसन्तप्तगापीनां वने वने भ्रमन्तीनां श्रीकृष्णान     | वे              |  | ६६८         |
| ३०          | षणम त्रिरा   | १०-इ३           | पित्रोः बन्धनान्मोचनश्च चतुश्चत्वारिशे १   | eef-        |
| •           |  | 1.04            | [ ४५ ] मातापितृसाम्त्वनघट्टः १   | ६७२         |
| ३१          | (गोपिकागीतावारस्मः) निराशानां पुनः पुलिन               |                 |  | <b>E</b> 50 |
|             | मागतानां कृष्णं स्मृत्वा तदागमनप्रार्थना एकि ते        | १ १ स्टइ        | श्रीरामकृष्णयोदपनयनगुरुकुलवासादिकथारम्म-   | \           |
| ३२          | तासामने श्रीकृष्णस्याविभीवः [ रासकीडारम्भः             | ) १२५४          |  | <b>E</b> E0 |
|             | गोपीगण सान्त्वनञ्च द्वार्त्रिशे [ जलवनक्रीसावर्ण       | न               |  | <b>E9E</b>  |
| 10 - 12 H   | घट्टः 🕽  | १२८५            | रामकृष्णयोर्गुरुकुलात्सगृहप्रसागमनञ्ज पञ्च   |             |
| 33          | गोपीमण्डलमध्यगस्य हरेर्वनजलविहारैः गोपीर               | म               | चत्वारिशे १  | 900         |
|             | णम् त्रयस्त्रिशे                                       | १३००            |  | Go#         |
|             | देवयात्रां गतानां नन्दादिगोपाळानां राज्यां सरस्य       | ति-             | कुण्णस्यादेशाद्धन्दावनङ्गतेनोद्धवेन कृतयशोदानन्द्  |             |
|             | तीरवासम्   | १३८७            | armentira.   | ७२१         |
|             | तत्र कृष्णेनाहित्रस्तनन्दविमोचनम् १३                   |                 | Company TOTAL .  | 080         |
| 20          | अहिरूपधारिणस्सुदर्शनाख्यगन्भवस्य शापमोत्त्रणः          |                 | The second of th | ७८६         |
|             | शङ्खन्यूडवभघद्वश्च चतुरिस्रो                           | १३९९            | CONTROL TO THE TOTAL THE TAXABLE PARTY OF TAXAB | <b>-88</b>  |
|             | दिवाकाले श्रीकृष्णविरहम्भयुक्तगोपिविलापैः [ इ          | य               | THE PROPERTY OF THE PARTY OF TH | <b>540</b>  |
| <b>₹9</b> · | मेब युगलगीता   | १४०५            | OFF THE THE  | CYY         |
|             |  | W 7             | हस्तिनापुरं गन्सुमञ्जूरमति श्रीक्रणस्यादेशश्चाष्ट-   | -44         |
| ३६          | बृषभासुरवध्रघष्टः                                      | १४३५            |  | PC ◆        |
|             | मारदोत्त्या रामकृष्णी वसुदेवसुती झात्वा कंसेन          |                 | ्राव व अवस्य हिस्सिनाच्यास्य व्यापानिक विकास   | द६स         |
|             | बुन्दावने केशिप्रेषणम                                  | र्४४४४          | [ ४९ ] अक्र्रस्य हस्तिनापुरगमनम्, आतुः पुत्रेषु धृतराष्ट्रस्य  |             |
| ·<br>•      | नारदबोधितन कंसेन रामक्षणाह्ननायाक्रप्रेषण              |                 | विषम्यमिति ज्ञानम्, अक्रूरविदुरादिसम्वादः,   |             |
|             | घट्टः षड्विशे  | १४५०            | शृतराष्ट्रं प्रत्यक्षरस्योक्तिश्च  | <b>∓</b> ⊌₹ |
| -           | र धन्यां हार घड़:                                      | १४५८            | हितिनानगरात्प्रत्यागतेनाकूरेण रामकृष्णसमीये भृत  |             |
|             |  | र्वश्रद्ध       |  | 40          |
|             | अध्यानस्वधघद्यः सप्तिश्च                               | १५४७ ।          | इति दशमस्कन्धपूर्वार्श्वकथानुक्रमणिका ।  | . <i>t</i>  |

| अध्याय      | : विषयः  | ् पृष्ठाङ्कः   | अध्याः          | यः विषयः   | पृष्ठाङ्कः                 |
|-------------|--|----------------|-----------------|--|----------------------------|
| •-          | दशमस्कन्घोत्तरार्धस्यकथानुक्रमाण   | ोका।           | [ ६२            | (उषापरिणयक्षयाः,) उषाहरणकथारम्भः,  | उषया                       |
| F 40-       |  |                |                 | रममाणस्यानिरुद्धस्य बाणेन बन्धनञ्च   | ३स९                        |
| [ do        | ] कंसमहिषीक्ष्यां विदितवृत्तान्तेन्जरासन्<br>  | વન જાત<br>૦    | <b>│ [ ६३</b> . | ] ( बाणासुरयुद्धकथाप्रारम्भः ) बाणयादवयुः                                      |                            |
|             | मथुरानिरोधः<br>कृष्णजरासन्धयोर्युद्धवर्णनम्  | र<br>१५        |                 | बलपराजयः, वैष्णवज्वरेण शैबज्वरपीडन   |                            |
|             | श्रीकृष्णकृतजरासन्ध <b>पराभवः</b>  | . ૧<br>૨૪      |                 | ज्वरकृत कृष्णस्तुतिः बाणस्य बाहुच्छेदः, रुद्रे                                 |                            |
|             | कालयवनकृतमथुराक्रमणम्  | 38             | ( eu \          | स्तुतिः, वाणं प्रति तस्यानुप्रदश्च   | કર્ષ                       |
| • "         | द्वारकानिवेशनघट्टश्च पञ्चाशसमे   | 80             | (40)            | ( नृगोपाक्यानम् । कृष्णेन नृगोद्धारणम् नृ                                      |                            |
| પિશ         | मुचुकुन्तस्य श्रीकृष्णद्दीनादिकथाप्रारम्भः   | . 88           | (89)            | वृत्तान्तकथनम्<br>( बलरामस्य पुननेन्दवज्ञागमनकथा)गोकुर                         | स्ट                        |
|             | मुचुकुन्द्द्दष्ट्या कालयवनीनधनम्   | 85             | ( )             | गोपीभोरममाणस्य बलक्षेवस्य मदातः क  |                            |
| . ·         | , मुचुकुन्द्कथाप्रारम्भः   | 40             | 1               | कर्षणम्  | गल-५।<br><b>४</b> ६७       |
| •           | मुचुकुन्दकृतश्रीकृष्णस्तुतिः   | ६४             | [ es ]          |  | <del>-</del>               |
|             | तं प्रति श्रीकृष्णद्याच पक्पञ्चारो   | ક્ર            |                 | श्रीकृष्णकृतपौण्ड्ककाशिराजादिवधकथाप्र  |                            |
| [ પ્રરઃ]    | यवनसैन्यवधः, तद्धनानां द्वारकार्ष्ररणम्,   |                |                 | रैवतकपर्वते बलरामकृतद्विविद्वधादिकथाः  |                            |
|             | जरासन्धेनाक्रमणम्, तद्भयादिव ततः पर  | • •            | [ 6-1           | ्दुर्योधनसुतां लक्ष्मणां इरतः साम्बस्य के<br>निरोधः तन्मोचनाय बलदेवस्य हस्तिना | _                          |
| :           | जरासन्धस्य तदनुगमनम्, कृष्णरामयोः प्र  |                |                 | कारवंगण कृततद्तुनयः तान् प्रति बलस्या  |                            |
|             | तारोष्ट्रणम, जरासन्धेन तद्दाहः, तयोरेक   | विश्वयो•       |                 | सप्तषष्टितमे   | ख्रमध्य<br>५१ <del>६</del> |
|             | जनोच्छ्रितात पर्वतभागादवप्लवनम्, रा  | मऋष्णो         | (84)            | श्रीकृष्णं प्रतिनारदागमनकथा  | ५४३                        |
|             | दग्धाविति मन्यमानस्य जरासन्धस्य  | ततो            |                 | श्रीकृष्णस्य प्रतिमन्दिरं गाईस्थ्यं स्ट्वा वि                                  | • •                        |
| ¥           | निवृत्तिः, तयोद्वीरकागमनम् रुक्तिमणीह  |                | •               | नारदेन तत्स्तवः  | ः ५५३                      |
|             | रम्भः, कृष्णंप्रति द्विजस्य सक्मिणीसन्देश  |                | ( 90 )          | कृष्णस्याहिककर्म, जरासन्धरुद्धानां राज्ञां                                     | दूतस्य .                   |
| f 7         | हिएश्वाशत्ममें<br>रिक्का   | न्दर<br>       |                 | क्रणसन्निधाबुक्तिः, नारदागमनं, अमक्त्वश्र                                      | ं, नार-                    |
| [ 44 ]      | [ रुक्मिणीविवाहघट्टः ] कृष्णस्य विदर्भगम   | नम् ११३<br>१३५ | i,              | दम्य ततुत्तरदानम् उद्धवंप्रति श्रीकृष्णव                                       | गक्यञ्च                    |
| Γ τ         | रुक्मिणीहरणञ्च त्रिपञ्चाशासमे  |                |                 | सप्तति तमे   | ४६८                        |
|             | विषचपराजयः, रुक्मिणां वरूप्यकरणम्, पुर   | १४३            | [७१]            | उद्भस्य मन्त्रणया इन्द्रप्रस्थक्कते भगवति व                                    | ।ासुदेवे                   |
| ~ .         | रुक्मिण्याविवाहश्च   | _ •            |                 | •  | , ५२७                      |
| [ ४४ ]      | क्वरणतः प्रद्युम्नजन्म, शम्बरेण तदपहरणम्<br>प्रद्युम्नसम्बादः, प्रद्युम्नेन शम्बरवधः स्व | भाग्रेग        | [૭૨]            | युभिष्ठिरेण कार्य निवंदित श्रीकृष्णस्य   |                            |
| en egen     |  | १५६            | , î             | जरासन्ध्रघातनम्, जरासन्ध्रपुत्रस्याभि  | षेचनम्                     |
|             | रत्या सह पुरागमनम्   |                | r>7             | राजगणमाचनञ्च   | €5.0                       |
| [ se ]      | स्यमन्तकोपाख्यानम्, कृष्णस्य जाम्बतीस  | १९५            | [७३]            | तेषां च राज्ञां राजोचितभागैः स्वदेशप्रस्थ                                      | गपनम्,                     |
| C ma T      | विवाहः   |                | 7               | इन्द्रप्रस्थप्रत्यागमनञ्ज  | ६८८                        |
| [ Aa ]      | रामकृष्णयोः हस्तिनां गतवतोमणिलेशभात  |                | [98]            | युधिष्ठिरस्य राजस्ययजनम् अग्रपूजाप्रसङ्गेन                                     | ।<br>যিয়ু-                |
| w. <b>.</b> | धन्वना संत्राजिब्रेन्धः अक्रूरेमणि न्यस्य<br>धन्वनः पलायनम्, तयोई स्तिनातः प्रत्यागमः    | •              | · · · _         | र दे रचार्यच्यामञ्   | 'CC 0                      |
|             | शतभन्ववधः, अकुरस्य पलायनम्, द्वा   |                | ્ર [૭૪]<br>[૭६] | अवभूधसम्भ्रमः दुर्योधनमानभङ्गः पञ्चसह  | गतितमे ६८६                 |
| ·           | मरिष्टप्रादुर्भावः, अकुरानसनम्, अकुर ए   |                | [04]<br>        | ्रार्ययाप्यस्य द्वासः, गर्वित्रहाराचित्रव्यक्ताः                               | त्यक्त                     |
|             | धारयतु इति अङ्गीकारः कृष्णस्य, स्यमन   |                | [७७]            |  |                            |
| •           | ख्यानसमाप्तिश्च सप्तपञ्चारात्तमे   | २१८            |                 | नानामायाचिचचणस्य साल्वण्य अ  | ोक्र <b>ण्ल</b>            |
| rusi        | कुरणस्य हस्तिनापुरगमनम्, कालिन्दादिकन्य  | ।।पञ्चक        |                 | युद्धम, तद्धधः, सौभनामकतदीयनगर<br>सप्तसप्तातितमे                               | ध्वसश्च                    |
| r , j       | विवाह श्राष्ट्रपञ्चाशतमे   | २४३            | [७८]            | श्रीकृष्णेन उत्तर करिया  | ७१७                        |
| fuel        | श्रीकृष्णकृतनरकासुरवधः, पृथिवीकर्मृक श   | ोक्टब्ण-       |                 | श्रीकृष्णेन दन्तव अविदूरधहननम्, बा<br>स्तहननश्राष्ट्रसातिमे                    | अरामण                      |
| F xe        | स्तयः, तदपहृतकन्यानां द्वारकानयनम्, प  | रिजात-         | [ ७९ ]          | ब्रिजसन्तोबाम कर्  | , ७३६                      |
|             | हरणम, तांसां पाणिप्रहणम मनारथपूरणश्च   | <b>एकोन</b>    |                 | विजसन्तोषाय रामेण बत्वलवधः, तीर्थका<br>स्तद्दत्याजनितपापापनोदनश्चे कोनाशीतित्र | नाध्ना                     |
|             | वित्रमे  | २७१            | [ 독0 ]          | कुचेलोपाख्यानम् ] अर्थलिप्सं गृहागतं   | मानगर<br>भीनगर             |
| c a. 1      | · · ··································   | बहुः ३२३       |                 | नामकं खसस्र कश्चिद्राह्मणं सम्पूज्य  | तर्पति                     |
| [ go]       | श्रीहाकमणाक्र ज्यान परस्परमान्यम् सम्बन्धः   | प्रनिचन्द      |                 | क ब्लास्य गुरुकुलवासकथाप्रशः   | 19103                      |
| ( 28 )      | ्र वर्षेत्रका हिन्द्रम् व्याप्त विकास  | <b>39</b> 8    | (52)            | स्वपरे तरन्तपश्रकतप्रसास भक्ता सराधा   |                            |

| अध्याय        | : विषयःः                                      | पृष्षाङ्कः                  | अध्याय   | : विषयः प्रष्टाङ्कः   |
|---------------|---|-----------------------------|--|---|
|               | दुर्ल्भसम्पत्तिप्रकाशनम् एकाशीतितमे           | - 65E                       |  | सोक्तचतुर्विशतिगुरुषु गुर्वष्टकशिचणकथनम्                                |
| (독원)          | स्र्यंत्रहण श्रीकृष्णदानां कुरुक्षत्रगमनम्, त | त्र सर्वसु-                 |  | सप्तमे १८५  |
| ( ' ( )       | हृद्शनम्, परस्परं कृष्णकथाच द्वयशातित         | मे ५२०                      |  | अजगरादिभ्यो नवश्यदिशक्षणकथनम् अष्टमे २१८                                |
| (53)          | कृष्णकयोत्सवे द्वीपद्ये कृष्णभागाभिनिजा       | नेजपाणि                     | 181  | कुररादिभ्यादेशक्षणकथनम् यदोः कृतार्थताच<br>नवमे २३५                     |
|               | प्रहणवृत्तान्तकथनम् इयशीवितम्                 | 280                         | Год  | ि देहसम्बन्धादात्मनः संस्तिः नतु स्वतः मतान्तर                          |
| [ <8 ]        | मृतिसमृदसमागमे वसुदेवयंबात्साहः ब             | स्ध् <u>र</u> प्रस्थाः      | [ \ \cdot \c | निरासनेतद्वर्णतम ] २५३  |
|               | पनादिविवरणम् चतुरशीतितमः                      | . ५७३                       | [ 99 ]   | बन्धमुक्तयोः साधूनां भक्तेश्च लच्चणकथनम्                                |
| [ ८४ ]        | प्रार्थितयोः रामकृष्णयोः पित्रे तत्त्वश्चार   | तापदशः,                     | F 24-7   | एकादशे १७५  |
|               | मात्रे मताप्रजंपदानश्च पश्चारानितम            | ५१५                         | श्चि   | साधुसङ्गस्य महिमावणनम्, कर्मानुष्ठानम्, तत्त्यागव्य                     |
| ( 5€ )        | अर्जुनकृतसुमद्राहरणम्, श्रीकृष्णस्य मि        | थलागम                       |  | वस्थाच द्वादशे ३०७  |
|               | नम्, तत्र राजवित्री प्रत्यनुप्रदेश पडरा।।     | ततम ९४५                     | [१३]   | सत्त्वोद्देकाद्वियोदयक्रमः, ३२६   |
| (59)          | नारायणमहिषणां नारदोपदिष्टश्रातिगीतो           | पाख्यान,<br>॔ <b>९७</b> ⊏   |  | इंसोपाख्यानम् ३४०   |
|               | प्रारम्मः सप्ताशीतितमे                        | -                           | [ १४ ]   | ( भक्ति ध्यानयोगयोरभिवणनघट्टः ) मक्तः अष्ठत्व-                          |
| ( 55 )        | विष्णुसेवाप्राशस्यप्रतिपादनघटः                | ११६२<br>च चित्राचा          |  | वर्णनम्, संसाधनध्यानयोगकथनम् चतुर्दशे ३६१                               |
|               | शिवद्रीहकर्त्तुर्वकासुरस्य विष्णुमायाप्रभावे  | म (यमासा<br>१ <b>२०</b> ३   |  | धारणातुगसिद्धिक्थनम् मञ्जद्शे ३८६                                       |
|               | प्राप्तिघट्टश्चाष्टाशीतितमे                   | · ·                         |  | श्रीमन्नारायणमुर्त्तेर्विभूत्यभिवर्णनघट्टः षोडशे ४०६                    |
| ( <£ )        | त्रिमूर्सीनां तारतम्यपरी चार्थे ऋषिभिस्तत्त   | ख्याकाय<br>१ <b>२</b> १७    | ,  | व्रह्मचारिगृहस्थयोधर्मपतिषादन्षृद्धः सप्तद्शे , ४२८                     |
| ~ ·:          | प्रति भृगुमहर्षिप्रेषणकथा                     | *                           | ( १८ )   | वानप्रश्चयतिधमेकथनम्, अधिकारिभेदात् तद्गति ।<br>विदेशकथनञ्चाष्टादये ४५० |
|               | मृतकपुत्रस्य ब्राह्मणस्य चिन्तापनोदनकः        | यात्रारम्म<br><i>'</i> १२२७ | (00)   | द्यानस्तर्वाभिवर्णनघट्टः एकोनार्वेदो ४७३                                |
|               | श्चेकोननवतितमे                                | १२५२                        | \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \  | भक्तिशानिक्रियात्मकयोगस्वरूपाभिवर्णनघटः विशे ४-६७                       |
| ( %0 )        | श्रीकृष्णमूर्तः वंशानुक्रमाभिवर्णनघटुः        | •                           | २१   | भक्त्यादिपूर्वोक्तयोगत्रयानधिकारिणां कामिनां                            |
| •             | यदुवंशप्रस्तानामावन्त्यकथनञ्च नवतितमे         |                             |  | द्रव्यदेशादिगुणदोषप्रपञ्चः ५२१  |
|               | इति दशमस्कन्धकषानुक्रमणिका समा                | <b>ar</b>                   | २२   | तस्वसङ्ख्यानामविरोधविधा प्रकृतिपुरुष्विवेकः                             |
|               |   |                             |  | जन्ममृत्युविधादि द्वाविशे ५५४   |
|               | W   |                             | २३   | भिक्षुगीताभिवर्णनद्वारा यमनियमाद्यभिवर्णनघटः                            |
| 37            | थिकादशस्कन्वकथानुऋमणिका <b>ञ</b>              | 14 a. d.                    |  | तिरस्कारसहनोपायकथनम ५९०   |
| o( १ )        | ऋषिदेशपवद्यान्मुसलोत्पचित्रतिपादककथाः         | गरम्भघट्टः                  | २४   | साह्ययोगाभिवर्णनद्वारा मनोमोद्दनिवर्त्तनप्रति                           |
| <b>X X</b> // | प्रथमाध्याये ,                                | १                           |  | पादनघट्टः चतुर्विशे ६१०   |
| [२]           | भक्त्वा पृच्छते वसुदेवाय निर्मिजायन्तसम्ब     | ादानुवा                     | २५   | नैर्गुण्यप्रतिपादनचित्तवृत्यादीनामियवर्णनघट्टः पञ्च                     |
| F ~ 1         | देन नारदस्य भागवतधर्मकथनारम्भः द्वित          | विये १५                     |  | विशे<br>साधुसङ्गप्रभावोपष्टम्भकतयाभिवर्णितैलगीताद्यभि                   |
| ( <b>३</b> )  | जगत्स्रिष्टकमप्रवचनपुरस्करेण प्रलयानुवर्ण     | नम् तृतीये ५०               | २६   | वर्णनघद्यः पहित्रो ६५५  |
| (8)           | दमिलेनोपदिष्टनारायणोपाख्यानम्                 | ११२                         | २७   | चित्तप्रसादनहेतुकि कियायोगाभिवर्णनघट्टः सप्त                            |
|               | स्हमक्षेणावताराणामनुवर्णनम् च चतुर्थे         | १२३                         |  | विंशे ६७१   |
| [4]           | चमसकरभाजनकृतपरमार्थोपदेशः ] भा                | केहीनानां<br>               | २८   | श्चानयोगस्य पुनस्सङ्गहरूपेणाभिवर्णघट्टो छाविंदो ६२४                     |
|               | का निष्ठा युगेयुगे कः प्रतिधिः इति प्र        | श्र <b>द्धयस्या</b>         | ३९   | पुनस्तंत्रहरूपेण भक्तियोगाभिवर्णनघट्टः एकोन                             |
| •             | त्तरम् इतिनिमिजायन्तसम्वादः                   | १२-६                        |  | ्त्रिशे ७२६   |
| [8]           | श्रीकृष्णानयनार्थे ब्रह्मादीनां द्वारकां प्र  | त्यागमन•                    | 30   | स्वधाम गन्तुमिच्छुना भगवता निजकुलसहारणं<br>भिन्नी                       |
| ,             | कथाप्रारमः                                    | १६१                         | . 20   | भगवतः स्वधामगमनम्, वसुदेवादीनां तद्वुगम                                 |
| , ·           | ब्रह्मादिशिस्स्नात्वा इवलोकं गन्तुं निवेदिः   | तस्य हरः<br>विद्यार्थनाः    | 38   | नश्चेकत्रिरा ७७३  |
| .;            | महाविभिरकात्या                                | रपनायना<br><b>१८</b> १      |  | इत्यकादशस्कन्धकथानुक्रमाणिका समाप्ता।                                   |
|               | च पष्ठे                                       |                             |  |   |

#### अथ द्वादशस्कन्धस्थकथानुक्रमणिका। अध्यायः पृष्ठाङ्कः तत्र मागधवंशीयभाविराजगणकथनम्, सङ्करादि दोषेण तेषां मलीमसताकथनम् कलिमलवृद्धौ कल्क्यवतारात् अधर्मनिष्ठजनगण विनाशे पुनस्सत्ययुगप्राप्तिवर्णनम् कलियुगानुवर्णनम् २९ चतुर्विधलयस्वरूपाभिवर्णनपूर्वकं ( हरिकार्चनात् ) संसारनिस्तरणोपायप्रतिपाद्नघट्टः शुकेन सङ्क्षेपेण परब्रह्मज्ञानोपदेशात परीक्षितः तच्चकदहजनितमृत्युभीति।नेवाण्णम् परीक्षतो मोक्षेः, तत्सुतस्य सर्पयागादि, वेदवि-भागकषाप्रसङ्गे त्रयीव्यसनकथा 90 अधर्वविस्तारः, पुराणव्यसनम्, पुराणवक्षणादि, श्रीभागवत श्रवणफ् 🛪 🛪 १०4 मार्कण्डेयस्य तपश्चर्या, तस्य कामादि।भरसमोहः, नरनारायग्रस्तवनश्च १२१.. दिइक्षोर्मार्कगडेयस्य भगवन्मायाद्शनम् 9 580 · मुनिप्रति सन्तुष्टेन महादेवेन वरदानम् १५१ सहापुरुषवर्णनम्, रविञ्यूहकथनम् १८६ सविस्तारमुक्त पूर्व भागवतार्थ सङ्क्षेपः 250

अध्यायः 🕝 विषयः -: पृष्ठाकुः १३ यथाक्रमं पुराणसङ्खयाकथनम् श्रीमद्वागवतद्दान फलम् भागवतमाद्दात्म्यञ्च 205 इतिद्वादशस्कन्धस्थकशानुकमाणिका। समाप्ता । इति श्रीमद्नन्तनिगमान्तसिद्धान्ततत्त्वार्थप्रकाशकं अवष-पठन समनन्तरमेव निस्तिलभागवतिश्वारोमणीनां पर-ब्रह्मानन्द्ममन्दं सन्ददानं सकलकलिकलुष-निराकरणधुरीणम् श्रीमत्कृष्णद्वपायन मद्दर्षिप्रणीतं सक्तवपुराणाश्यद्वितः तमं द्वादशस्कन्धपरिमितं श्रीधरादिकतानेक-व्याख्यासहितम्। श्रीमद्भागवतम् सम्पूर्णम् । हरिः ओम श्रीकृष्णाय परव्रश्वोष क्यःः

श्री १०८ श्रीराधारमणो जयति । श्रीमत्पद्मपुराणान्तर्गत—

# श्रीमद्भागवतमाहात्म्यम्।



तदिदं,

वरमहंसपरित्राजकाचार्यपूज्यपादश्रीमत्स्वामिप्रकाशानन्दसरस्वतीप्रवराशिष्येण,

# श्रीनित्यस्ररूपब्रह्मचारिणा

सम्पादितम्।

बक्षदेशान्तर्गत ताडास भूपति श्रीराधाविनोद प्रेम सेवा परायण राजि राय

"श्रीवनमाछिराय बहादुरस्य"

सम्पूर्ण साहाब्येन

प्रकाशितञ्च।

तच्च काञ्चीमण्डलान्तर्वात्ते 'कान्दूर्' पंश्वीरक्वाचार्यद्वारा संशोध्य श्रीवृन्दावनधामानि

> स्वकीये ''श्रीदेवकीनन्दन" यन्त्राख्ये मुद्रापितम् । सम्बद्ध १९६४

# श्रीपद्मपुराणान्तर्गत-

# श्रीमद्भागवतमाहात्म्यम्॥

# अथ प्रथमाध्यायः प्रारम्भः।

स्रोकः

यं प्रवजन्तमनुपेतमपेतकलं द्वेपायनो विरहकातर आजुहाव। पुत्रेति तम्मयत्या तरवोऽभिनेदुस्तं सर्वभूतहृद्यं मुनिमानतोऽस्मि १॥

वैमिषे सुत्मासनिमाभेवाद्य महामतिम्। कयामृतरसास्वादकुराबः शीनकोऽव्रवीत्॥ २॥

शीनक उदाच।

अञ्चानध्वान्त्विध्वंसकोटिस्र्यंसमप्रभ । सुताख्याहि कयासारं मम कर्णरसायनम् ॥ ३॥ भक्तिक्वानविरागाप्तविवेको वर्द्धते कथम्। मायामोद्दनिरासश्च वैष्णवैः ऋियते कथम् ॥ ४॥ इह घोरे कळी प्राप्ते जीवश्वासुरताङ्गतः। क्केशाक्कान्तस्य तस्येव शोधने कि परायणम्॥५॥ श्रेयसां यद्भवेच्छ्रेयः पावनानाश्च पावनम् । कृष्णप्राप्तिकरं शश्वत्साधनं तद्वदाधुना ॥ ६ ॥ चिन्तामणिलीकसुखं खुरेन्द्रः खर्गसम्पद्म । प्रयच्छति गुरुः प्रातो वैकुण्ठं योगिदुर्लभम्॥७॥

सूत उवाच।

प्रीतिः शौनक चित्ते ते यतो वैचिमः विचार्य च। सर्वेसिद्धान्तनिष्पन्ने संसारभयनाशनम्॥८॥ भक्तोघवर्धनं यम रूप्णसन्तोषहेतुकम्। तदहं तेऽभिधास्यामि सावधानतया ऋणु॥९॥ कालव्यालमुखप्रासत्रासनिनीशहेतवे। श्रीमद्भागवतं शास्त्रं कलौ कीरेण भाषितम्॥१०॥ धतसाद्परं किश्चिन्मनः ग्रुद्धे न विद्यते। जनमान्तरे भवेत्पुगयं तदा भागवतं छभेत्॥ ११॥ परीक्षिते कथा वक्तुं समायां सुस्थित शुके। सुधाकुम्भं गृहीत्वेव देवास्तत्र समागमन् ॥ १२ ॥ शुकं नत्वा वहन् सर्वे स्वकार्यकुशालाः सुराः। क्यासुआं प्रयच्छस्व गृहीत्वैव सुधामिमाम्॥ १३॥ एवं विनिमये जाते खुधा राज्ञा प्रपीयताम्। प्रपास्यामो वर्य सर्वे श्रीमद्भागवतामृतम् ॥ १४ ॥ क सुधा क कथा लोके क काचः क मणिर्महान् ब्रह्मरातो विचार्योते तहा देवान जहास ह॥ १५॥

अभक्तांस्तांश्च विज्ञाय न ददौ स कथामृतम्। श्रीमद्भागवती वार्ती सुराणामपि दुर्लभा॥१६॥ राक्षो मोक्षं तथा वीक्ष्य पुरा धाता ऽपिविस्मितः। सत्यळोके ब्रुबां बध्वा ऽतोळयत्साधनान्यजः ॥ १७ ॥ लघुन्यन्यानि जातानि गौरवेण ६दं महत्। तदा ऋषिगणाः सर्वे विस्मयं परमं ययुः॥ १८॥ मेनिरे मगवदूपं शास्त्रं भागवतं चितौ। पठनाच्छ्रवणात्सद्यो वेक्कण्ठंफलदायकम् ॥ १६॥ सप्ताहभवणेनैव सर्वया मुक्तिदायकम्। सनकाद्येः पुरा प्रोक्ते नारदाय द्यापरैः॥ २०॥ यद्यपि ब्रह्मसम्बन्धाच्छुतमेतत्सुरर्षिणा। सप्ताहश्रावणविधिः कुमारैस्तस्य मापितः॥ २१॥

श्चीनक उवाच ।

लोकविग्रह्युकस्य नारदस्यास्थिरस्य च। विधिश्रवे कुतः प्रीतिः संयोगः कुत्र तैः सहं॥ २२॥

#### स्त उवाच।

अत्र ते कीर्तयिष्यामि मक्तिपुष्टं कथानकम् । शुकेन सम यत्रोंकं रहःशिष्यं विचार्य च ॥ २३॥ एकदा तु विशालायां चत्वारो ऋषयोऽमलाः । सत्सङ्गार्थे समायाता दरशुस्तत्र नारदम्॥ २४॥

कुमार ऊच्चः।

कथं ब्रह्मन् दीनमुखः कुतिश्चिन्तापरो भवान्। त्वारितं गम्यते कुत्र कुत्रश्चागमनं तव॥ २५॥ इदानीं शुन्याचित्तोऽसि गतावित्तो यथा जनः। तवेदं मुक्तसङ्गस्य नोचितं वद कारणम्॥ २६॥

नारद उवाच।

श्चिहं तु पृथिवीं यातो ज्ञात्वा सर्वे चमामिति। पुष्करञ्च प्रयागञ्च काशी गोवावरी तथा॥ २०॥ हरिक्षेत्रं कुरुतेत्रं श्रीरंगं सुतेबन्धनम्। प्वमादिषु तीर्थेषु भ्रममाण इतस्ततः॥ २८॥ नापश्यं कुत्रचिच्छर्भ मनःसन्तोषकारकम् । कलिनाऽधर्ममित्रेण धरेयं बाधिताऽधुना॥ २९॥ सत्यं नास्ति तपः शीचं दया दानं न विद्यते । उदरम्भरिणो जीवा वराकाः कूटभाषिणः॥ ३०॥

मन्दाः सुमन्दमतयो मन्दभाग्याः शुपद्वताः। पाषण्डानिरताः सन्तो विरक्ताः सपरित्रहाः ॥ ३१ ॥ तरुणी प्रभुता गेहे शालको बुद्धिदायकः। कन्यायाविकयो छोभाइम्पतीनाञ्च कल्कनम् ॥ ३२ 🏾 आश्रमा यवनैरुद्धास्तीर्थानि सरितस्तया। देवतायतनान्यत्र दुष्टैनेष्टानि भूरिशः॥ ३३॥ न योगी नैव सिद्धो वा न ज्ञानी संत्रियो नरः। किलदावानचेनाच साधनं मस्मतां गतम् ॥ ३४॥ \*अट्टशुळा जनपदाः शिवशुळा (१) श्चतुष्पथाः। कामिन्यः केशञ्चलिन्यंः सम्भवन्ति कलाविद्द ॥ ३५ ॥ एवं पश्यन् कलेदीयान् पर्यटम्नवनीमहम्। यामुनं तटमापक्षो यत्र लीलाइरेरभूत्॥ ३६॥ तत्राश्चर्यं मया इष्टं श्रूयतां तन्मुनीश्वराः। एका तु तरणी तत्र निषण्णा खिन्नमानसा ॥ ३७॥ द्वी बुद्धी पतितौ पार्थे निःश्वसन्तावचेतनी। शुश्रूषन्ती प्रबोधन्ती रुद्दन्ती च तयोः पुरः ॥ ३८ ॥ दश्चिद्धु निरीचन्ती रक्षितारं निजं वपुः। वीज्यमाना शतस्त्रीभिर्बोध्यमाना मुहुर्भुहुः॥ ३६॥ 'दृष्टा दूराद्वतः सोऽहं कौतुकेन तद्गितकम्। मां ह्या चोत्थिता बाला विह्वलाचाब्रचीद्वचः ॥ ४० ॥

#### बालोवाच।

भो भो साघो चणं तिष्ठ मिक्कन्तामि नादाय। दर्शनं तव बोकस्य सर्वथाऽघहरं परमः ॥ ४१॥ बहुधा तव वाक्येन दुःखशान्तिभीविष्यति। यदा भाग्यं भवेद्धरि भवतो दर्शनं तदा॥ ४२॥

नारदं उवाच ।
कासि त्वं काविमी चेमा नार्यः काः पद्मलोचनाः ।
वद देवि सविस्तारं स्वस्य दुःखस्य कारणम् ॥ ४३॥
बालोवाच ।

अहं अक्तिरित ख्याता इमी मे तनयी मती।
श्वानवैराग्यनामानी कालयोगेन जर्जरी ॥ ४४ ॥
गङ्गाद्याः सितश्चेमा मत्सेवार्थ समागताः ।
तथापि न च मे श्रेयः सेवितायाः सुरेरिप ॥ ४५ ॥
इहानीं श्रणु मवार्ती सिवन्तस्वं तपोधन ।
वार्ता मे वितताऽप्यस्ति तां श्रुत्वा सुखमानह ॥ ४६ ॥
उत्पन्ना द्रविडे साऽहं वृद्धि कर्नाटके गता।
कवित्कचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता ॥ ४७ ॥
तत्र घोरकलेर्यागात्पाषण्डैः खण्डिताङ्गका।
दुर्वलाऽहं चिरं जाता पुत्राध्यां सह मन्दताम ॥ ४८ ॥
वृन्दावनं पुनः प्राप्य नवीनेव सुक्रिपणी।
जाताहं युवती सम्यम्प्रेष्टक्षण तु साम्प्रतम् ॥ ४९ ॥

अष्टमसं शिवो वेदः शुलो विक्रय उच्यते। केशो भगमिति प्रोक्तमृषिभित्तत्ववृश्चिभिः॥ (१) द्विजाद्यः। इमौ तु शयितावत्र सुतौ मे क्लिश्यतः श्रमात्। इदं ष्यानं परित्यज्य विदेशं गम्यते मया ॥ ५० ॥ जरठत्वं समायातौ तेन दुः खेन दुः खिता। साइन्तु तरुणी कस्मात्सुतौ वृद्धाविमौ कुतः ॥ ५१ ॥ श्रयाणां सहचारित्वाद्वेपरीत्यं कुतः स्थितम्। घटते जरठा माता तरुणौ तनयाविति ॥ ५२ ॥ थतः शोचामि चात्मानं विस्मयाविष्टमानसा। वदयोगनिधे धीमन् कारणञ्चात्र किं भवेत् ॥ ५३ ॥

#### नारद उवाच।

क्वानेनात्मीन पद्यामि सर्वमेतत्तवानघे। न विषादस्त्वया कार्यो हरिः शं ते करिष्यति ॥ ५४॥

स्त उवाच । क्षणमात्रेण तज्ज्ञात्वा घाक्यमुचे मुनीश्वरः । नारद उवाच ।

श्रणुष्वाविद्या बाले युगोयं दारणः कलिः ॥ ५५ ॥
तेन लुप्तः सदाचारो योगमागस्तपांसि च।
जना अधासुरायन्ते शाख्यदुष्कर्मकारिणः ॥ ५६ ॥
इह सन्तो विषीदन्ति प्रहृष्यन्ति द्यसाधवः ।
धने धेर्ये तु यो घीमान् स घीरः पियडतोऽथवा॥ १७॥
अस्पृश्यानवलोक्येयं शेषभारकरी घरा ।
वर्षवर्षे क्रमाज्ञाता मङ्गलं नापि दश्यते ॥ ५८ ॥
नत्वामपि सुतैः साकं कोऽपि पश्यति साम्प्रतम् ।
उपेक्षितानुरागान्धेर्जर्जरत्वेन संस्थिता ॥ ५९ ॥
धृन्दावनस्य संयोगात्युनस्वं तरुणी नवा ।
धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च ॥ ६० ॥
अत्रेमी ग्राहकाभावात्र जरामपि मुञ्जतः ।
किञ्जिदात्मसुखेनेह प्रसुतिर्मन्यतेऽनयोः ॥ ६१ ॥

श्रीभक्तिरुवाच ।

कथं परीचिता राज्ञा खापितो हाशुचिः किलः। प्रवृत्तेतु कली सर्वसारः कुत्र गतो महान्॥ ६२॥ द्यापरेण हरिणाप्यधर्मः कथमीक्ष्यते। इमं मे संशयं छिन्धि त्वद्वाचा सुखिताऽसम्बह्म ॥ ६३॥

#### नारद् उवाच।

यदि पृष्टस्त्वया बाले प्रेमतः अवणं कुरु ।
सर्व वश्यामि ते भद्र करमलं ते गमिष्यति ॥ ६४ ॥
यदा मुकुन्दो भगवान् हमां त्यक्त्वा स्वप्वं गतः ।
तिहनात्कलिरायातः सर्वसाधनबाधकः ॥ ६५ ॥
हष्टोदिग्वजये राज्ञा दीनवच्छरणं गतः ।
न मया मारणीयोऽयं सारङ्ग इव सारभुक् ॥ ६६ ॥
स्त्फलं नास्ति तपसा न योगेन समाधिना ।
तत्फलं लभते सम्यक्कलो केशवकीर्तनात् ॥ ६७ ॥
पकाकारं काले हष्टा सारवत्सारनीरसम् ।
विष्णुरातः स्थापितवान् क्रिकजानां सुसाय म ॥ ६५ ॥

क्रकमीचरणात्सारः सर्वतो निर्गतोऽधुना । पदार्थाः संस्थिता भूमो बीजद्दीनास्तुषा यथा ॥ ६.६ ॥ विप्रभागवती वार्ता गेहेगेहे जनेजने। कारिता कणलोभेन कथासारस्ततो गतः॥ ७०॥ अत्युग्रभूरिकर्माणो नास्तिका रौरवाजनाः । तेऽपि तिष्ठन्ति तीर्थेषु तीर्थसारस्ततो गतः॥ ७१ 🛙 कामकोधमहालोभतुःणाव्याकुलचेतसः। तेऽपि तिष्ठन्ति तपासि तपःसारस्ततो गतः॥ ७२॥ मनसञ्चाजयाञ्चोभाद्दम्भपाषण्डसंश्रयात् । शास्त्रानभ्यसनाचैव ध्यानयोगफलं गतम् ॥ ७३॥ परिडतास्तु कलत्रेण रमन्ते महिषा इत्रा पुत्रस्योत्पाद्ने दक्षा अदक्षा मुक्तिसाधने॥ ७४॥ नहि वैष्णवता कुत्र सम्प्रदायपुरःसरा। एवं प्रखयतां प्राप्तो वस्तुसारः स्रलेसले॥ ७५॥ अयन्तु युगभमोहि वर्तते कस्य दूषणम् । अतस्तु पुगडरीकाक्षः सहते निकटे स्थितः॥ ७६॥

2

स्त उवाच।

इति तद्वचनं श्रुत्वा विस्तयं परमं गता । सक्तिकचे वचो भूयः ध्यतां तच्च श्रोनक॥ ७७॥ श्रीभक्तिकवाच ।

सुरवें त्वञ्च भन्योऽसि मद्भाग्येन समागतः।
साधूनां दर्शनं लोके सर्वसिद्धिकरं परम्॥ ७८॥
जयित जयित मायां यह्य कायाधवस्ते—
वचनरचनमेकं केवलं चाकलच्य।
भ्रवपदमिय यातो यत्कपातो भ्रवाऽयं—
सकलकुशलपात्रं ब्रह्मपुत्रं नताऽहिम॥ ७६॥

इतिश्रीषद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्रीभागवतमाहात्म्ये भक्तिनारदसमागमोनाम प्रथमोऽध्यायः॥१॥

# अथ हितीयाऽध्यायः॥

नारद् उवाच ।

श्या खेदायसे बाले अही चिन्तातुरा कथम्।
श्रीकृष्णचरणाम्मीजं स्मर दुःखं गमिष्यति॥१॥
द्रीपदी च परित्राता येन कीरवकरगलात ।
पालिता गोपसुन्दर्यः स कृष्णः कापि नो गतः॥२॥
त्वन्तु भक्ते प्रिया तस्य सत्तं प्राणतोऽधिका ।
त्वयाहृतस्तु भगवान् याति नीचगुहेष्विष ॥३॥
सत्यादित्रियुगे बोधवेराग्ये मुक्तिसाधके।
सत्यादित्रियुगे बोधवेराग्ये मुक्तिसाधके।
सत्यादित्रियुगे बोधवेराग्ये मुक्तिसाधके।
दिति निश्चित्य चिद्रूपः सक्षणं त्वां सस्जेह।
दिति निश्चित्य चिद्रूपः सक्षणं त्वां सस्जेह।
परमानन्द् चिन्मूर्तिः सुन्द्रीं कृष्णवल्लमाम्॥१॥

बन्ध्वाञ्चालि त्वया पृष्टं कि करोमीति चैकदा। त्वां तदाऽश्वापयत्कृष्णो मञ्जकान्पोषयेतिच ॥ ६॥ अङ्गीकृतं त्वया तद्वे प्रसन्नोऽभूद्धरिस्तदा। मुक्ति दासी ददी तुभ्यं ज्ञानवैराग्यकाविमी ॥ ७॥ पोषणं खेन रूपेण वैकुण्ठे त्वं करोषि च। भूमी भक्तविपोषाय छायारूपं त्वया कृतम्॥ ५॥ मुक्ति झानं विरक्तिश्च सहकृत्वा गता भुवि। कृतादिद्वापरस्यान्तं मद्दानन्देन संस्थिता॥ ६॥ कली मुक्तिः च्वयं प्राप्ता पाषण्डामयपीडिता । त्वदाक्षया गता शीघ्रं वैकुण्ठं पुनरेव सा ॥ १०॥ स्मृता त्वयाऽपि चात्रेव मुक्तिरायाति याति च। पुत्रीकृत्य त्वयेमी च पार्श्वे स्वस्यव रक्षितौ ॥ ११ ॥ उपेचातः कलौ मन्दौ वृद्धौ जातौ सुतौ तव। तथापि चिन्तां मुश्च त्वमुपायं चिन्तयाम्यहम् ॥ १२ ॥ कलिना सद्दाः कोऽपि युगो नास्ति वरानने। तिसान् त्वां स्थापयिष्यामि गेहे गेहे जनेजने ॥ १३॥ अन्यधमीत् तिरस्कृत्य पुरस्कृत्य महोत्सवान्। तदा नाहं हरेर्दासो लोके त्वां न प्रवर्तये॥ १४॥ तद्निवताश्च ये जीवा भविष्यन्ति कळाविह । पापिनोपि गमिष्यन्ति निर्भयाः कृष्णमन्दिरम् ॥ १५ ॥ येषां चित्ते वसेद्राकिः सर्वदा प्रियक्षिणी । न ते पश्यन्ति कीनाशंखप्रेऽप्यमलमूर्तयः॥ १६॥ न प्रेतो न पिशाची वा राक्षसो ज्वासुरो पिवा। भक्तियुक्तमनस्कानां स्पर्शने न प्रसुभवेत् ॥ १७॥ न तपोभिन वेदैश्च न ज्ञानेनाऽपि कर्मणा। हरिहिं साध्यते भक्त्वा प्रमाणं तत्र गोपिकाः॥ १८॥ मृणां जन्मसहस्रेण भक्ती धीतिहि जायते। कली भक्तिः कली भक्तिः भक्त्या क्रच्णः पुरः स्थितः॥ १९॥ भक्तिद्रोहकारा ये च ते सीदन्ति जगञ्जये। दुवीसा दुःखमापुत्रो पुरा मकिविनिन्दका ॥ २०॥ अलं वतरलं तीर्थेरलं योगेरलं मखैः। अलं ज्ञानकथालापैभिक्तिरेकैव मुक्तिदा॥ २१॥ सुत उवाच।

इति नारदिनिणीतं स्त्रमाहातम्यं निशम्य सा। सर्वाङ्गपुष्टिसंयुका नारदं वाक्यमत्रवीत्॥ २२॥ श्रीभिक्तिरुवाच ।

अहो नारद धन्योऽसि प्रीतिस्ते मिय निश्चला।
न कदाचित्रिमुश्चामि चित्त स्थास्यामि सर्वदा॥२३॥
कृपालुना त्वया साधो महाधा ध्वंसिता क्षणातः।
पुत्रयोश्चेतना नास्ति ततो बोधय बोधय॥२४॥

स्त उवाच ।
तद्या वचः समाकण्यं कारण्यं नारदो गतः ।
तयोर्वोधनमारेभे करात्रेण विमर्दयन् ॥ २५ ॥
मुखं संयोज्य कर्णान्ते शब्दमुखेः समुख्यत् ।
श्वान प्रबुद्धयतां शों हे वैराग्य प्रबुद्धताम् ॥ २६ ॥

वेदवेदान्तघोषेश्च गीतापाठैर्मुहुर्मुहुः। बोध्यमानौ तदा तेन कथश्चिष्वीरिथतौ बलात् ॥ २०॥ नेत्रैरनवलोकन्तौ जुम्भतौ सालसाबुभौ। बकवत्पलितौ प्रायः शुष्ककाष्ठसमाङ्गकौ ॥ २५॥ श्चरक्षामी तौ निरीक्ष्यैव पुनः खापपरायणो । ऋषिश्चिन्तातुरो जातः कि विधेयं मयेतिच ॥ २६॥ अही निद्रा कथं याति वृद्धत्वं च महत्तरम् । चिन्तयन्निति गोविन्दं स्मारयामास भागवम् ॥ ३०॥ व्योमवाणी तदैवाभूनमा ऋषे खिद्यतामिति। उद्यमः सफलस्तेतु भविष्यति न संशयः॥ ३१॥ एतदंधे तु सत्कम सुरवें त्वं समाचर। तत्ते कर्माभिधास्यन्ति साधवः साधुभूषणाः ॥ ३२ ॥ सत्कर्मणि कृते त्रसिन् सनिद्राबुद्धतानयोः। गमिष्यति चणाद्रकिः सर्वतः प्रसरिष्यति ॥ ३३॥ इत्याकाद्यवचः स्पष्टं सत्सर्वरिप विश्वतम् नारदो विस्मयं छेभे नेदं शातमितिश्वन ॥ ३४॥

#### नारद् उवाच।

अनयाऽऽकाशवाण्यापि गोप्यत्वेन निरूपितम्। किंवा तत्साधनं कार्ये येन कार्ये भवेत्तयोः॥ ३५॥ क भविष्यति स्नतस्ते कथं दास्यन्ति साधनम्। मयात्र कि प्रकर्तव्यं यदुक्तं ध्योमभाषया॥ ३६॥

#### स्त उवाच।

तत्र तावपि संस्थाप्य निर्गतो नारदो मुनिः। तीर्थे तीर्थे विनिष्कम्य पृच्छन्मार्गे मुनीश्वरान् ॥ ३७॥ वृत्तान्तः श्रूयते सर्वैः किञ्जिजिश्रित्य नोच्यते । असाध्यं केचन प्रोचुर्दुक्षेयमिति चापरे॥ ३८॥ मुकीभूतास्तथान्ये तु कियन्तस्तु पलायिताः। हाहाकारा महानासीत त्रिलोकीविस्रयावहा ॥ ३६॥ वेदवेदान्तघोषेश्च गीतापाठैर्विबोधितम्। भक्तिज्ञानविरागाणां नोद्तिष्ठञ्जिकं यदा ॥ ४०॥ उपायो नापरोस्तीति कर्णे कर्णे जपन् जनाः। योगिना नारदेनापि स्वयं न शायते तु यत् ॥ ४१॥ तत्कथं शक्यते वक्तुमितरैरिह मानुषैः। एवं ऋषिगणैः पृष्टैर्निणीयोक्तं दुरासदम् ॥ ४२ ॥ ततश्चिन्तातुरः सोऽथ वद्रीवनमागतः। तप्रधरामि चात्रेति तद्रथं छतनिश्चयः॥ ४३॥ ताबहदशे पुरतः सनकाद्यान् सुनीश्वरान् । कोटिसूर्यसमाभासानुवाच मुनिसत्तमः॥ ४४॥

#### नारदं उवाच।

इदानीं भूरिभाग्येन भवद्भिः सङ्गमास्त्रितः। कुमाना वदतां शीवं कृपां कृत्वा ममोपरि॥ ४५॥ भवन्ता योश्विनः सर्वे बुद्धिमन्तो बहुश्रुताः। पश्चहायनसंयुक्ताः पूर्वेषामिष पूर्वजाः॥ ४६॥ सदा वैकुण्डनिलया हरिकीर्तनतत्पराः ।
खीलामृतरसोन्मचाः कथामात्रेकजीविनः ॥ ४७ ॥
हिरः श्वरणमेवं हि नित्यं बेषां मुखे वचः ।
अतः कालसमादिष्टा जरा युष्मान्न बाधते ॥ ४८ ॥
येषां भूभङ्गमात्रेण द्वारपाली हरेः पुरा ।
भूमी निपतिती सद्यो यत्क्रपातः परङ्गती ॥ ४९ ॥
अहो भाग्यस्य योगेन दर्शनं भवतामिह ।
अनुप्रहस्तु कर्तव्यो मिय दीने द्यापरेः ॥ ५० ॥
अश्वरीरिगरोक्तं यत्तर्तिक साधनमुच्यताम् ।
अनुष्ठेयं कथं तावत् प्रज्ञवन्तु सविस्तरम् ॥ ५१ ॥
भक्तिक्षानविरागाणां सुखमुत्पद्यते कथम् ।
ख्यापनं सर्ववर्णेषु प्रेमपूर्वं प्रयस्तः ॥ ५२ ॥

#### कुमारा ऊचुः।

मा चिन्तां कुरु देवर्षे हर्षे चित्ते समावह। उपायः सुस्रसाध्योऽऋ वर्तते पूर्व एव हि॥ ५३॥ अहो नारद धन्योसि विरकानां शिरोमणिः। खदा भीकृष्णदासानामत्रणीर्यागभास्करः॥ ५४॥ त्विय चित्रं न मन्तव्यं भक्तवर्थमनुवर्तिनि। घटते कृष्णदासस्य भक्तेः स्वापनता तदा ॥ ५५॥ ऋषिभिर्वहवो लोके पन्थानः प्रकटीकृताः। श्रमसाध्याश्च ते सर्वे प्रायः स्वर्गफलप्रदाः ॥ ५६ ॥ वेकुण्डसाधकः पंथाः सतु गोपीषु वर्तते। तस्योपदेशा पुरुषः प्रायो भाग्वेन लक्ष्यते ॥ ५७ ॥ सत्कर्म तव निर्दिष्ट व्योमवाचातु यतुरा। तदुच्यते श्रुगुष्वाद्य स्थिरचित्तः प्रसन्नधीः ॥ ५८ ॥ द्रव्ययश्चास्त्रपोयश्चा योगवश्चास्त्रथा परे। खाध्यायद्वानयद्वाश्च तेतु कर्मविस्चकाः॥ ५९॥ सत्कमसुचको नूनं झानयझः स्मृतो बुधैः। श्रीमञ्जागवतालापः स तु गीतः शुकादिभिः ॥ ६० ॥ भक्तिज्ञानविरागाणां तद्धोषेण बलं महत्। व्यक्तिप्यति द्वयोः कष्टं सुखं भक्तेर्भविष्यति ॥ ६१॥ प्रलयं हि गीमण्यन्ति भीमञ्जागवतध्वने। कलिदोषा इम्रे सर्वे सिंहशब्दाहुका इव ॥ ६२ ॥ ज्ञानवैराग्यसंयुक्ता भाकिःप्रेमरसावहा। प्रतिगेहं प्रतिजनं ततः क्रीडां करिष्यति ॥ ६३॥

#### नारह उवाच।

बेदवेदान्तघोषेश्च गीतापाठैः प्रबोधितम्। भाकिक्षानविरागाणां नोद्तिष्ठश्चिकन्तु यत् ॥६४ ॥ श्रीमद्भागवतालापात्त्त्वशं बोधमेष्यति। तत्कथासु तु वेदार्थः स्ठोके स्ठोले पदेपदे ॥ ६५ ॥ छिन्दन्तु संशंब होन भवन्तो ऽमोघद्र्शनाः। विलम्बो नात्र कर्तव्यः श्वरणागतवत्सलाः॥ ६६ ॥

### कुमारा ऊचुः।

वेदोपनिषदां खाराज्ञाता भागवती कथा। अत्युत्तमा ततो भाति पृथन्भूता फलोन्नतिः॥ ६७॥ आमूलाग्नं रसस्तिष्ठन्ना स्ते न सादते यथा।
सम्भूय स पृथग्भूतः फले विश्वमनोहरः॥ ६८॥
यथा दुग्धे स्वितं सिर्पने स्वादायोपकलपते।
गृथग्भूतं हि तिह्वयं देवानां रसवर्धनम्॥ ६९॥
इस्लूणामपि मध्यान्तं शर्करा व्याप्य तिष्ठति।
गृथग्भूता च सा मिष्ठा तथा भागवती कथा॥ ७०॥
इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंगितम्।
भक्तिश्वानविरागाणां स्थापनाय प्रकाशितम्॥ ७१॥
वेदान्तवदसुस्ताते गीताया अपि कर्तरि।
परितापवति व्यासे मुखल्खानसागरे॥ ७२॥
तदा त्वया पुरा प्रोक्ते ब्रह्मस्रोक्तमा वतम्।
तदीयश्वणात्सद्यो निर्धायो बादरायणः॥ ७३॥
तत्र ते विस्मयः केन यतः प्रश्नकरो भवान्
श्रीमद्रागन्नतश्चावे शोकदुःस्वविनाञ्चनम्॥ ७४॥
नारद उवाच।

यहर्शनञ्च विनिहल्यगुमानि सद्यः

भेयस्तनोति भवदुः खद्वार्दितानाम् ॥

निःशेषिशेषमुखगीतकधैकपानः

प्रेमप्रकाशकतये शरणं गतोस्पि ॥ ७५ ॥

भाग्योदयेन बहुजन्मसम्मितिने—

सत्सङ्गमञ्च लभते पुरुषो यदा वे ॥

सद्यानहेतुकृतमोहमदान्धकार ।

नाशं विधाय हि तदोदयते भिवेकः ॥ ७६ ॥

γ,

इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरखगढे श्रीमद्भागवतमाहात्म्ये कुमारनारदसम्वादीनोम द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

# अथ तृतीयोऽप्यायः॥

नार्द् उवाचे ।

क्षानयशं करिष्यामि शुकशास्त्रकथो जवसम्।
भिक्तिश्वानियागाणां स्थापनार्थे प्रयत्नतः॥१॥
कुत्र कार्यो मया यद्यः स्थलं तद्वाच्यतामिह।
सिहमा शुकशास्त्रस्य वक्तव्यो वेदपारगैः॥२॥
कियद्भिर्दिवसेः श्राव्या श्रीमद्भागवती कथा।
को विभिन्तत्र कर्तव्यो ममेदं [१] वद्दतामिति॥३॥

शृणु नारद वश्यामी विषद्राय विवेकिने। गङ्गाद्धारसमीपेतु तटमानन्दनामकम् ॥ ४॥ नानाऋषिगणेजुषं देवसिद्धनिषेवितम्। नानात्रहळताकाणे ववकोमळवालुकम्॥ ५॥

[१] बद्ताधुना इति पाद्यान्तरम्।

रम्यमेकान्तदेशस्यं हैमपश्चसुशोमितम्।
यत्समीपस्थजीवानां वैरं चेतिसि न स्थितम्॥६॥
श्वानयश्चस्त्वया तत्र कर्तव्या द्यप्रयस्ततः।
अपूर्वा रसरूपा च कथा तत्र भविष्यति॥७॥
पुरस्थं निर्वलञ्चेव जराजीणकलेवरम्।
तह्वयञ्च पुरस्कृत्य भक्तिस्तत्र गमिष्यति॥८॥
यत्र भागवती वार्ता तत्र भक्तादिकं वजेत्।
कथाशब्दं समाकर्ण्यं तिञ्चकं त्रुणायते॥६॥
स्त उवाच।

एवमुक्ताः कुमारास्ते नारदेन समन्तृतः गङ्गातटं समाजग्मुः कथापानाय सत्वराः॥ १०॥ यदा यातास्तरं तेतु तदा कोलाइलाप्यभूत्। भूळींके देवलोके च ब्रह्मलोके तथेव च ॥ ११ ॥ श्रीभागवतपीयूपपानाय रसलम्पटाः। धाधन्तोप्याययुः सर्वे प्रथमं येच वैष्णवाः ॥ १२ ॥ शृगुर्वसिष्ठइच्यवमश्च गौतमो मेधातिथिदेवलदेवराती। रामस्तर्या गाधिस्रुतश्च शाकले। मृकण्डुपुत्रोऽत्रिजपिप्पलादयः योगेश्वरो व्यासपराहासील छायाशुको जावालेजह्नुमुख्याः॥ सर्वेप्यमी मुनिगणाः सहपुत्रशिष्याः— स्बल्लीभिराययुरतिप्रणयेन युक्ताः ॥ १४॥ वेदान्तानि च वेदाश्च मन्त्रासन्त्राः समूर्तयः। द्शसप्तपुराणानि षट्शास्त्राणि तहा ययुः॥ १५॥ गङ्गाद्याः सरितसत्र पुष्करादिसरांसि च। क्षेत्राणि च दिशः सर्वाः दण्डकादिवनानि च ॥ १६॥ नागादयो ययुक्तत्र देवगन्धविकित्रराः। गुरुत्वात्तत्र नायातान् भृगुः सम्बोध्यचानयत्॥ १७॥ दीचिता नारदेनाथ दत्तमासनमुत्तमम्। कुमारा वन्दिताः सर्वेनिषेदुः कृष्णतत्पराः॥ १८॥ वैष्णवाश्च विरक्ताश्च न्यासिनी ब्रह्मचारिणः। मुख्यभागे स्थितास्तेच तदग्रे नारदः स्थितः ॥ १९॥ एकमागे ऋषिगणास्तद्न्यंत्र दिवीकसः। वेद्रापनिषदोत्यत्र तीर्थात्यत्रीस्त्रयोत्यतः॥ २०॥ जयशब्दो नमःशब्दःशङ्कराब्द्रस्थिव च। च्यूर्णलाजप्रस्नानां निश्चेपस्सुमहानभृत्॥ २१॥ विमानानि समारु कियन्तो देवनायकाः। कल्पबृच्यस्नैस्तात्सर्वास्तत्र समाकिरन्॥ २२॥ स्त उवाच।

एवं तेष्वेकिन्तेषु श्रीमद्भागवतस्य जा माहात्म्यमुचिरे एपष्टं नारदाय महात्मने ॥ २३ ॥ कुमारा ऊच्चः।

अथ ते सम्प्रवस्यामो महिमा शुक्रशास्त्रज्ञः।
यस्य अवणमात्रेण सुक्तिः करते स्थिता ॥ २४ ॥
सदा सेन्या सदा सेन्या श्रीमद्भागवती कथा।
यस्याः अवणमात्रेण हरिश्चित्तं समाश्रयेत ॥ २५ ॥

ब्रन्थोऽष्टादशसाहस्रो द्वादशस्कन्धसामितः। परीचिच्छुकसम्बादः श्रुणु भागवतं च तत्॥ २६॥ तावत्संसारचेकेसिन् म्रमत्यक्षानतः पुमान्। यावत्कर्णगता नास्ति शुकशास्त्रकथा चुणम् ॥ २७ ॥ ार्के श्रुतेबेड्डिभः शास्त्रः पुराणेश्च म्रमावहैः। एकं भागवतं शास्त्रं मुक्तिदानेन गर्जति ॥ २८ ॥ कथा भागवतस्यापि निस्यं भवति यहुहै। तद्भृहं तीर्थेक्षपं हि वसतां पापनाशनम् ॥ २६ ॥ अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च। शुक्रशास्त्रकथायाश्च कलां नाहिन्ति षोडशीम् ॥ ३० ॥ तावत्पापानि देहोस्मन् निवसान्ते तपोधनाः। यावन श्रूयते सम्यक् श्रीमद्भागवतं नरैः॥ ३१॥ न गङ्गा न गया काशी पुष्करं न प्रयागकम्। शुकशास्त्रकथायाश्च फलेन समतां नयेत्॥ ३२॥ श्लोकार्द्धे श्लोकपाद्म्वा नित्यं भागवतोद्भवम् । पठस्व समुखेनेक यदीच्छसि परां गतिम् ॥ ३३॥ वेदादिवेदमाताच पीठप स्कमेवच। त्रयी भागवतं चैव द्वादशास्त्र एव च ॥ ३४॥ द्वाद्यात्मा प्रयागश्च कालः संवत्सरात्मकः। ब्राह्मणाश्चात्रिहोत्रञ्च सुरभिद्वीदशी तथा॥ ३५॥ तुलसीच वसन्तश्च पुरुषोत्तम एवं च। एतेषां तत्त्वतः प्राज्ञेन पृथग्भाव इप्यते ॥ ३६ ॥ यश्च भागवतं शास्त्रं वाचयेदर्थतोऽनिशम्। जन्मकोटिकतं पापं नश्यते नात्र संशयः॥ ३७॥ श्लोकार्धे श्लोकपादम्वा पठेद्धागवतं च यः। नित्यं पुरायमवाप्नोति राजस्याश्वमेश्वयोः॥ ३८॥ उक्तं भागवतं नित्यं कृतश्च हरिकीर्तनम्। तुलसीपोषणञ्जेच घेनूनां सेवनं समम्॥३९॥ अन्तकालेतु येनेव श्रूयते शुक्रशास्त्रवाक् । भीत्या तस्यैव वैकुण्ठं गोविंदोपि प्रयच्छति॥ ४०॥ , हेमासिहयुतश्चेतद्वैष्णवाय ददाति च । कृष्णेन सह सायुज्यं स पुमान् लभते भ्रुवस ॥ ४१ ॥ म्राजन्ममात्रमपि येन शहेन किञ्चित्— चित्तं विधाय शुक्रशास्त्रकथा न पीता। चाण्डालवश्च खरवद्दत तेन नीतं— मिथ्या स्वजनम जननीनिजदुःखभाजा ॥ ४२ ॥ जीवच्छवो निगदितः सतु पापकर्मा-येन श्रुतं शुक्रकथावचनं न किञ्चित्। भिक् तं नरं पशुसमं भुवि भारकप-मेवं वद्नित दिवि देवसरोजमुख्याः॥ ४३॥ वुर्लभैव कथा लोके श्रीमद्भागवतोद्भवा। कोटिजन्मसमुत्थेन पुगयेनैव तु लज्यते ॥ ४४ ॥ तेन योगनिधे धीमन् श्रोतव्या सा प्रयत्नतः। दिनानां नियमो नास्ति सर्वद् अवणं मतम्॥ ४५ ॥

सस्येन ब्रह्मचर्येण सर्वदा अवणं मतम्।
अश्वाक्यत्वात्कलौ बोध्यो विशेषोत्र शुकाक्षया॥ ४६॥
मनोवृत्तिज श्रिव नियमाचरणं तथा।
दीक्षाळूर्तुमशक्यत्वात्सप्ताहश्रवणं मतम्॥ ४७॥
श्रद्धातः आवणे नित्यं माघे ताविद्ध यत्फलम्।
तत्फलं शुकदेवेन सप्ताहश्रवणे कृतम्॥ ४८॥
मनसश्चाजयाद्रोगात्पुंसां चेबायुषः चयातः।
कत्वेदोषवहुत्वाच्च सप्ताहश्रवणं मतम्॥ ४६॥
यत्फलं नास्ति तपसा न योगेन सम्पाधना।
अनायासेन तत्सर्व सप्ताहश्रवणं लसेत्॥ ५०॥
यक्षात् गर्जति सप्ताहः सप्ताहो गर्जित वतातः।
यक्षात् गर्जति सप्ताहः सप्ताहो गर्जित वतातः।
योगाद्रजीत सप्ताहो ध्यानाज्ञानाच्च गर्जति।
योगाद्रजीत सप्ताहो ध्यानाज्ञानाच्च गर्जति।
विस्तान्ति व्यानाज्ञानाच्च गर्जति।

साश्चर्यमेतत्कथितं कथातकं — श्वानादिधमीन् विमण्डय साम्प्रतम् । क्रिक्टिंग्या निःश्चेयसं भागवतं पुराणं —

शीनक उषाच।

जातं कुतो योगविदादिस्चकस्॥ ५३॥ सुतः उवाच ।

यदा कृष्णो धरां त्यक्त्वा स्वपंद गन्तुमुद्यतः। एकादशं परिश्रुत्वा ऽप्युद्धधो वाक्यमत्रवीत्॥ ५४॥

#### उद्धव उवाच।

त्वनतु यास्यसि गोविनद् (१) भक्तकार्य विधाय च । मिंबत्ते महती चिन्ता तां भृत्वा सुखमावह ॥ ५५ ॥ आगतोयं कलिघोरो भविष्यन्ति पुनः खलाः। तत्सङ्गेनेव सन्तोपि गमिष्यन्त्युत्रतां यदा ॥ ५६॥ तदा भारवती भूमिगीकपेयं कमाअयेत्। अन्यो न दृश्यते त्राता त्वत्तः कमळळोचन्॥ ५७॥ अतः सत्सु द्यां कृत्वा भक्तवत्सल मा वज । भक्तार्थ सगुणो जातो निराकारोऽपि चिन्मयः॥ ५८ ॥ त्वाद्वियोगेन ते भक्ताः कथं सास्यन्ति भूतले। निर्गुणोपासने कष्टमतः किञ्चिद्विचारय॥ ५६॥ इत्युखववचः श्रुत्वा प्रभासेऽचिन्तयद्वरिः। अक्तावलम्बनार्थीय कि विधेयं मयेति च ॥ ६०॥ स्वकीयं यद्भवेत्तेजमत्वे भागवतेऽद्दाते । तिरोधाय प्रविष्टाय श्रीमद्भागवताणवम् ॥ ६१॥ तेनेयं वाड्ययी मृतिः प्रत्यक्षा वर्तते हरेः। सेवनात श्रवणात्पाठात द्शीनात्पापनाशिनी ॥ ६२॥ सल्पाइश्रवणं तेन सर्वेभ्योऽप्याधिकं कृतम्। साधनानि तिरस्कृत्य कवी धर्माऽगमीरितः॥ ६३॥ दुःखदारिद्रचदीभाग्यवापप्रक्षालनाय च। कामकोधजयार्थे हि कलौ धर्मीयमीरितः॥ देउ॥

[१] भक्ति।

भन्यथा वैष्णवी माया देवैरपि सुदुस्त्यजा। कथं त्याज्या भवेत्पुम्भिः सताहोतः प्रकृतितः॥ ६५॥

#### सुत उवाच।

पवं नगाहश्रवणोरधर्मे प्रकाश्यमाने ऋषिभिः सभायाम् ।
आश्चर्यमेकं समभूत्तदानीं तदुच्यते संश्चुण्योनक त्वम् ॥ ६६ ॥
भक्तिः स्रतो तो तरुणौ गृहीत्वा प्रेमैकरूपा सहसाऽपविरासीत्।
श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे नाथेति नामानि मुहुर्वदन्ति ॥६७॥
तां चागतां भागवतार्थभूषां सुचारुवेषां दृहशुः सदस्याः ।
कथं प्रविष्टा कथमागतेयं मध्यं मुनीनिमिति तर्कयन्तः ॥६८॥
अञ्चः कुमारा वचनं तदानीं कथार्थतो निष्पतिताऽधुनेयम् ।
पवं गिरः सा सस्तता निश्वस्य सनत्कुमारं निजगाद नम्ना ॥६९॥

भक्तिस्वाच ।

सविद्वरिधेव क्रतासि पुष्टा कलिपण्याऽपि कथारसेन ।
काहन्तु तिष्ठाम्बधुना बुवन्तु ब्राह्मधा इदं तांगिरम्चिरे ते ७०॥
भक्तेषु गोविन्दसुरूपधर्त्री प्रेमैककर्त्री भवरोगहन्त्री ।
सा त्वं च तिष्ठस सुधैर्यसंभ्रधा निरन्तरं वैष्णवमानुसेषु ॥७१॥
ततोऽपि दोषाः कलिजा इमे त्वां द्रष्टुं न शक्ताः प्रभवोपि लोके।
पत्रं तदाब्रावसरेऽपि भक्तिस्तदा निषण्णा हरिदासचित्रे ॥७२॥
सकलभुवनमध्ये निर्धनासेपि धन्या—
निवसति द्वदि येषां श्रीहरेभिकिरेका ॥
हरिरपि निज्ञलोकं सर्वथाऽतो विहायःप्रविशति द्वदि तेषां भक्तिस्त्रोपन्दः ॥ ७३॥

X

त्रिविशात हाइ तथा भाकास्त्रापत्तसः॥ ७३॥

ब्रूमोऽद्य ते किमधिकं महिमानमेवं—

ब्रह्मात्मकस्य भुवि भागवताभिधस्यः॥

यत्संश्रयात्रिगदिते जमते सुवक्ता
श्रोताऽपि कृष्णसमतामलमन्यधर्मः॥ ७४॥

इति भीपद्यपुराणे उत्तरखण्डे श्रीभागवतमाहारूये

भक्तिकष्टनिवर्तनो नाम

्र तृतीयाऽध्यायः ॥ ३ ॥

# अथ चतुर्थोऽध्यायः।

### ः स्त उवाच।

अय वैष्णविचित्रं हृष्टा भिक्तमलोकिकीम्।
निजलोकं परित्यज्य भगवात्र भक्तवत्सलः॥१॥
वनमाली घनइयामः पीतवासा मनोहरः।
काश्चीकलापकिचरो लसन्मुकुटकुण्डलः॥२॥
त्रिभक्तलितश्चाक्तीस्तुभेन विराजितः।
कोटिमन्मथलावण्यो हारिचन्दनचितः॥३॥
परमानन्दिचन्मृर्तिमेधुरो मुरलिघरः।
आविवेश खभकानां हृद्यान्यमलानि च॥४॥
वैकुण्ठवासिनो ये च वैष्णवा अद्यवाद्यः।
तत्कश्चाश्रवणार्थं ते गुढक्षणा संस्थिताः॥५॥

तदा जयअयारावो रसपुष्टिरलोकिको।
चूणप्रसुनवृष्टिश्च मुद्दः शङ्करवोप्यभूत्॥६॥
तत्सभासंखितानाञ्च देहगेहातमविस्मृतिमः।
दृष्ठा च तन्मयावखां नारदो वाक्यमञ्जवति॥७॥
अलोकिकोऽवं महिमा मुनीश्वराः—
सप्ताहजन्योऽघ विलोकितो मया॥
मृद्धाः शठा ये पशुपक्षिणोऽत्र—
सर्वेऽपि निष्पापतमा भवन्ति॥६॥
अतो नृलोके ननु नास्ति किञ्चित्—
वित्तस्य शोधाय कलो पवित्रमः॥
औद्योघविध्वंसकरं नथैव—
कथासमानं भुवि नास्ति चान्यत्॥९॥
के के विशुद्धान्ति वदन्तु मह्यं सप्ताहयक्षेन कथामयन।
कृपालुभिलोकिहितं विचानं प्रकाशितः कोऽपि नवीनमार्गः १०॥

कुमारा ऊचुः।

ये मानवाः पापकृतस्तु सर्वदाः सदा दुराचाररता विमार्गमाः॥ क्रोधाग्निदग्धाः कुटिलाश्च कामिनः— सप्ताहयक्षेन कली पुनन्ति ते॥ ११॥ सत्येन हीनाः पितृमातृदूषकाः— तृष्णाकुलाश्चाश्रमधर्मवर्जिताः॥ ये दाम्भिका मत्सरिणापि हिंसकाः— सप्ताहयद्येन कछै। पुनन्ति ते ॥ १२ ॥ पञ्चोत्रपापाच्छलक्क्सकारिणः-क्रुराः पिद्याचा इत्र निर्दयाश्च ये॥ ब्रह्मस्वपुष्टा व्यभिचारकारिणः— सप्ताह्यज्ञेन कली पुनन्ति ते॥ १३॥ कायेत बाचा मनसापि पातकं— नित्यं प्रकुर्वन्ति शठा हठेत ये॥ परखपुष्टा मलिना दुराशयाः— सप्ताहयक्षेन कली पुनन्ति ते॥ १४॥ अत्र ते कीर्तियिष्याम इतिहास पुरातनम्। यस्य श्रवणमात्रेण पापहानिः प्रजायते ॥ १५॥ तुङ्गभद्रातटे पूर्वमभूत्पत्तनमुत्तमम्। यत्र वर्णाः खधर्मेण सत्यसत्कर्मतत्पराः ॥ १६॥ आत्मदेवः पुरे तसिन् सर्ववेदविशारदः। श्रीतसातेषु निष्णातो द्वितीय इव भास्करः॥ १७॥ भिक्षुको वित्तवान् लोके तित्रया धुन्धुली समृता। खवाक्यसापिका नित्यं सुन्दरी सुकुलोद्भवा॥ १८॥ लोकवातीरता कूरा प्रायक्षो बहुजल्पिका। शूरा च गृह्छत्येषु ऋपणा कलहमिया ॥ १९॥ एवं निवसतोः प्रेम्णा दम्पत्यो(१)रनपत्ययोः। वर्धाः कामास्तयोरासन्न सुखाय गृहादिकम् ॥ २०॥

[ १ ] रममाणयोः इति पाठान्तरम् ।

पश्चाद्धर्माः समारव्धास्ताभ्यां सन्तानहेतवे।
गोभूहिरययवासांसि दीनेभ्यो यच्छतः सदा ॥ २१ ॥
धनार्थं धर्ममात्रे[गें]ण ताभ्यां नीतं तथापि च।
न पुत्रो नापि वा पुत्री ततश्चिन्तातुरो भृशम् ॥ २२ ॥
रकदा स द्विजो द्वःस्वाद्गृहं त्यक्त्वा वनं गतः।
मध्यान्हे तृषितो जातस्तदाकं समुपयिवान् ॥ २३ ॥
पीत्वा जलं निषरणस्तु प्रजादुःखेन कर्शितः।
मुद्दतादिप तत्रेव संन्यासी कश्चिदागतः॥ २४ ॥
स्था पीतजलं तन्तु विषो यातस्तद्गितकम् ।
नत्वा च पादयोस्तस्य निश्वसन् संस्थितः पुरः॥ २५ ॥

क्यं रोदिषि विपृत्वं का ते चिन्ता बळीयसी। वद् त्वं सत्वरं मह्य स्वस्य दुःखस्य कारणम्॥ २६॥ ब्राह्मण उवाच ।

ार्के ब्रवीमि ऋषे हुःखं पूर्वपापेन सञ्चितम ।

मदीयाः पूर्वजास्तोयं कवोष्णमुप्रभुञ्जते ॥ २७ ॥

महत्तं नैव गृद्धन्ति पीत्या देवा द्विजातयः ।

प्रजादःखेन शृन्योहं प्राणांस्त्यक्तुमिहागतः ॥ २६ ॥

प्रिग्जीवितं प्रजाहीनं धिग्गृहञ्च प्रजां विना ॥

धिग्धनं चानपत्यस्य धिक्कुळं सन्तर्ति विना ॥ २६ ॥

पाल्यते या मया धेनुः सा वन्ध्या सर्वधा मवेत् ।

यो मवाऽऽरोपितो कुक्षः सोपि वन्ध्यत्वमाश्रयेते ॥ ३० ॥

यत्फळं मद्गृहायातं ज्ञीवं तञ्च विशुध्यति ।

तर्माग्यस्यानपत्यस्य किमितो जीवितेन मे ॥ ३१ ॥

इत्युक्त्वा स रुरोदोश्चेस्तत्पाइवे दुःखपीडितः ।

तद्मा तस्य यतेश्चित्तं करुणाऽभूद्गरीयसी ॥ ३२ ॥

तद्माळाक्षरमाळाञ्च वाचयामास योगवात् ।

सर्वे ज्ञात्वा यतिः पश्चाद्विप्रमुचे सविस्तरम् ।

यतिरुवाच ।

सुञ्चान्नानं प्रजारूपं बिल्लां कर्मणो गतिः।

बिवेकन्तु समासाय त्यज्ञ संसारवासनाम् ॥ ३४ ॥

श्रृणु विष्य मया तेऽद्य पार्व्यन्तु विल्लांकतम्।
सप्तजनमावधि तव पुत्रो नेव च नेव च ॥ ३४ ॥

सन्ततेः सगरो दुःखमवापाङ्गः पुरा तथा।

से मुञ्जाद्य कुदुम्बाशां संन्याने सर्वथा सुखम् ॥ ३६ ॥

बाह्मण जवाच ।

विवेकेन भवेत्किम्मे पुत्रं देहि बलाइपि।
नोचेत्यजाम्यहं प्राणांस्वदंगे शौकम् कितः॥ ३७॥
पुत्रादिसुखदीनोऽयं सन्त्यासः शुक्क पव हि।
गृहस्यः सरसा लोके पुत्रपीत्रसमानतः॥ ३८॥
इति विपाग्रहं हृष्टा प्राव्यत्सि तपोधनः।
वित्रकेतुर्गतः कष्टं विधिलखविमार्जनात्॥ ३८॥
न यास्यास सुखं पुत्राद्यथा देवहतोद्यमः।
अतो हरेन युक्तोऽसि ह्यप्यिनं कि चदाम्यहम्॥ ४०॥

तस्याग्रहं समालोक्य फलमेकं स दशवान्। इदं भच्य पत्न्या त्वं ततः पुत्रो भविष्यति ॥ ४१ ॥ सत्य शौचं दबादानमेकभक्ततु भोजनम्।, वर्षांचि स्त्रिया कार्ये तेन पुत्रोतिनिर्मलः ॥ ४२ ॥ 🌝 🚟 एवसुक्त्वा ययौ योगी विप्रस्तु गृहमागतः। पत्न्याः पाणी फलं दत्वा स्वयं यातस्तु कुत्रचित् ॥ ४३ ॥ तरुणी कुटिला तस्य सख्यग्रे च रुरोद ह। अहो चिन्ता समोत्पन्ना फलं चाहं न भक्षये ॥ ४४ ॥ 🤊 🏗 फलमहाण गर्भरस्याद्गर्भेणोदरबुद्धिता। स्वलपमक्षस्ततोऽशक्तिगृहकार्ये कथं भवेत् ॥४५ 🏗 🏗 दैवाद्यार्ट बजेद्यामे प्रायेद्गर्भिणी कथम् । शुक्यनिवसेद्गर्भस्तं कुक्षेः कथमुत्स्जेत् ॥ ४६ ॥ तियंक् चेदागतो अभिस्तदा मे मरणं भवेत्। प्रस्तो दारुणं दुःसं सुकुमारी कथं सहे ॥ ४७ ॥ मन्दायां मिय सर्वस्वं ननन्दा सी हरेचदा 🚉 🕾 🥴 सत्यशोचादिभियमो दुराराष्ट्राः स्रोद्धवते ॥ ४८॥ लालने पालमे दुःसं प्रस्तायाम्य वर्षते । ्रावनध्या वा विधवा नारी सुखिनी चेति मे मतिः॥ ४९ 🌬 एवं कुतर्कयोगेन तत्फलं नैव भक्षितम्। पत्या पृष्टं फलं भुक्तं भुक्तेश्चीत तयेरितम् ॥ ५० ॥ एकदा भगिनी तस्यास्तद्गृहं स्वेच्छ्यागता। तद्ये कथित सर्वे चिन्तेयं महती हि मे ॥ ५१ ॥ 🐃 📑 दुर्बला तेन दुःखेन ह्युनुजे करवाणि किम्। 🔛 💯 साऽब्रवीन्मम गर्भोऽस्ति तं दास्यामि प्रस्तितः ॥ ५२ ॥ तावत्कालं सगर्भेव गुप्ता तिष्ठ गृहे सुखम् । वित्तं त्वं मत्पतिर्यंच्छ सते दास्यति बाजकम् ॥ ५३ ॥ षाण्मासिको मृतो बाल इति लोके वदिष्यति। तं बालं पोषयिष्यामि नित्यमागत्य ते गृहम् ॥ ५४॥ फलमर्पय घेन्वै त्वं परीचार्थे तु साम्प्रतम्। तत्तदाचीरतं सर्वे तथैव स्त्रीस्वभावतः॥ ५५॥ अथ कालेन सा नारी प्रस्ता बालकं तदा। आनीय जनको बालं रहस्ये धुन्धुली दृदी ॥ ५६॥ तया च कथितं भन्ने प्रसुतः सुखमभैकः। लोकस्य सुस्रमुत्पन्नमात्मदेव प्रजोदयात्॥ ५७॥ इदी दानं द्विजातिक्यो जातकर्म विधाय च गीतवादित्रघोषोऽभूताहारे मङ्गलं बहु॥ ५६॥ भर्तुरत्रेऽब्रवीद्वाक्यं स्तन्यं नास्ति कुर्व मस अन्यस्तन्येन निर्दुग्धा कथं पुष्णामि बालकम्॥ ५६॥ मत्स्वसायाः प्रस्ताया सृतो बालस्तु वर्तते । तामाकार्य गृहे रच सा तेऽभे पाषियण्यति॥ ६०॥ पतिना तत्कृतं सर्वे पुत्ररचणहत्तवे। पुत्रस्य धुन्धुकारीति नाम सात्रा प्रतिष्ठितम् ॥ ६६॥ त्रिमासे निर्गते चाथ सा घेतुः सुषुवेऽभेकम् सर्वाङ्गसुन्दरं दिव्यं निर्मलं कनकप्रभम् ॥ ६२ ॥

दृष्ट्रा प्रसन्नो विप्रस्तु संस्कारान्स्वयमाद्घे । श्रुत्वाश्चर्यं जनाः सर्वे दिदक्षार्थं समागताः ॥ ६३ ॥ भाग्योदयोऽधुना जात आत्मदेवस्य पद्यत । भेन्वा बाळः प्रस्तरतु देवरूपीति कीतुकम् ॥ ६४ ॥ न झातं तद्रहस्यं तु केनापि विधियोमतः। गोकर्णञ्च सुतं दृष्ट्वा गोकर्ण नाम चाकरात ॥ ६५॥ · कियत्कालेन तो जातो तरुणो तनयाबुभौ । गोकर्णः पण्डितो ज्ञानी धुन्धुकारी महाखलः॥ ६६॥ स्नानशोचिक्रियाहीनो दुर्भेची क्रोधसंयुतः। बुष्परित्रहकर्ता ह्व शवहस्तेन भोजनः ॥ ६७॥ चोरः सर्वजनद्वेषी परवेशमप्रदीपकः। ळाळनायार्भकात धृत्वा सदाः क्षे निपातयत् ॥ ६८॥ हिंसकः शस्त्रधारी च दीनान्धानां प्रपीहकः। चाण्डाळाभिरतो नित्यं पाशहस्तश्च सङ्गतः॥ ६९ ॥ तेन वेदयाक्कसङ्गन पैत्रयं वित्तनतु नाश्चितम्। एकदा पितरी ताड्य पात्राणि स्वयमाहरत्॥ ७०॥ क्षत्पिता क्रपणः प्रोच्चेधनहीनो रुरोद ह। वन्ध्यत्वन्तु समीचीनं क्रुपुत्रो दुःखदायकः ॥ ५१ ॥ क तिष्ठामि क गच्छामि को मे दुः खं व्यपोद्दयेत्। प्राणांस्त्यजामि दुःखेन हा कष्टं मम संश्वितम् ॥ ७२ ॥ ° तदानीं तु समामत्य गोकणी धानसंयुतः। बोधयामास् जनकं वैराग्यं परिदर्शयत् ॥ ७३॥ शसारः खलु संसारो दुःखरूपी विमोद्दकः। क्षुतः कस्य धनं कस्य खेहबान् ज्वलतेऽनिशम्॥ ७४॥ न चेन्द्रस्य सुसं किश्चित् न सुखं चक्रवार्तिनः। सुस्रमस्ति विरक्तस्य मुनेरेकान्तजीविनः॥ ७५॥ सुआज्ञानं प्रजारूपं मोहतो नरके गतिः। निपतिष्यति देहोयं सर्वे त्यक्त्वा वनं वज ॥ ७६ ॥ तद्वाक्षं जु समाकण्यं गम्लुकामः पिताऽव्रवीत्। किं कर्तव्य वने तात तत्वं यद समिस्तरम्॥ ७७॥ ब्रन्धक्रुपे ख्रेहपादार्वद्धः पङ्गरहं शठः। कर्मणा पतितो नूनं मामुद्धर दयानिधे॥ उ५॥

ाोकर्ण उवाच।

देहेऽश्विमांसर्घिरेशीमार्ति त्यज त्वं—
जायासुतादिषु सद्दां ममतां विमुश्च ।
पश्यानिशं जगिदं चणभङ्गनिष्ठं—
वैराग्यरागरिसको भव मिक्तिनिष्ठः॥ ७६॥
धर्म भजस्व सततं त्यज लोकधर्मान्—
ध्रेवस्व साधु पुरुषान् जिह कामतृष्णाम् ।
धन्यस्य दोषगुणि चन्तनमाशु मुक्त्वा—
स्वाकधारसमहो नितरां पिव त्वम् ॥ ८०॥
स्व सुतोकिवशतोऽपि वनं विहाय—
यवं सुतोकिवशतोऽपि वनं विहाय—
यातो गृहं श्चिरमित्रितषष्टिवर्षः।

युक्तो हरेरनुदिनं परिचर्ययाऽसौ— श्रीकृष्णमाप नियतं दशमस्य पाठात् ॥ ८१॥ इति श्रीमत्पद्मपुराणे उत्तरखण्डे । श्रीभागवतमाहात्म्ये विप्रमोक्षोनाम चतुर्थोऽध्यायः।

# पश्चमोऽध्यायः॥

स्त उवाच ।

पितर्युपरते तेन जननी ताडिता भृशम्। क वित्तं तिष्ठवे बूहि हिनेष्ये लत्तया न चेत्॥१॥ इति तद्वाष्यसन्त्रासाज्जनन्या पुत्रदुःस्रतः। कूपे पातः कृतो राश्री तेन सा निधन गता ॥ २ ॥ गोकर्णस्तिधयात्राचे निर्गतो योगसीखतः। न दुः ब न सुखं तस्य न वैरी नापि बान्धवः॥ ३॥ धुन्धुकारी गृहे तिष्ठत्पञ्चपर्यवधुवृतः। अत्युग्रकर्मकर्ता च तत्पोषणविमृहधीः॥ ४॥ एकदा कुलटास्तास्तु भूषणान्यभिलिप्सवः। तद्ध निर्गतो गेहात कामान्धो सत्युमस्तरम् ॥ ५॥ यतस्ततश्च संहत्य वित्तं वेश्म पुनगर्तः। ताक्योऽयच्छत्सुवस्त्राणि भूषणानि कियन्ति च ॥ ६॥ बहुवित्तचर्य दृष्ट्वाः रात्रौ नार्यो विचारयम्। चौर्य करोत्यसौ नित्यमतो राजा मृहिष्यति॥ ७॥ वित्तं हृत्वा पुनश्चेन मारायिष्यति निश्चितम् । अतोर्थगुप्तयं गृहादसाभिः कि न हन्यते ॥ ८॥ निह्लैनं गृहीत्वार्थे यासामो यत्र कुत्रचित्। इति ता निश्चयं कृत्वा सुप्तं सम्बन्ध्य रहिमिभः ॥ स पाशं कण्ठे निधायास्य तन्मृत्युमुपचक्रमुः। त्वरितं न ममारासी चिन्तायुकास्तदाऽभवन् ॥ १०॥ तप्ताङ्गारस्मूहांश्च तन्मुखे हि विचिक्षिणुः। अग्निज्वालातिदुःखेन व्याकुलो निधनं गतः॥ ११॥ तं देहं मुसुचुर्राते प्रायः साहिसकाः स्त्रियः। न ज्ञातं तद्रहस्यं तु केनापींद तथेव च ॥ १२॥ लोके: पृष्टा बदन्ति सा दुरं यातः प्रियो हि नः। आगमिष्यति वर्षेऽसिन् विसलोभविकर्षितः॥ १३॥ स्त्रीणां नैवतु विश्वासो मुतानां कारयेद्बुधः। विश्वासे यःस्थितो मृदः स वुःक्षेः परिभूयते ॥ १४ ॥ घ्रुधामयं बचो यासां कामिनां रसवर्षनम्। हृद्यं क्षुरधारामं प्रिया को नाम बोबिताम् ॥ १५॥ सहत्य वितं ता याताः कुलटा बहुमतुकाः। धुन्धकारी बभूवाथ महान्येतः कुकर्मतः॥ १६॥ वालाकपर्धरो नित्यं धावन्दशदिशोन्तरम्। श्रीतातपपारिक्षिष्टो निराहारः विपालितः ॥१७॥

न लेमे शरणं कुत्र हा दैवेति मुदुर्वदन् ।
कियत्कालेन गोकणों मृतं लोकादबुध्यत ॥ १८ ॥
अनाथं तं विदित्वैव गयाश्राद्धमचीकरत् ।
यसिस्तीर्येतु संयाति तत्र श्राद्धं प्रवर्तयन् ॥ १९ ॥
एवं म्रामंत्स गोकणीः स्वम्पुरं समुपेविवान् ।
रात्रा गृहाङ्गणे स्वप्तुमागतोऽलक्षितः परः ॥ २० ॥
तत्र सुतं स विश्वाय धुन्धुकारी स्ववान्धवम् ।
निशीये दश्यामास महारौद्धतरं वपुः ॥ २१ ॥
सक्तन्मेषः सक्रद्धती सक्रद्ध महिषोऽभवत् ।
सक्रदिन्द्रः सक्रद्धातिः पुनश्च पुरुषोऽभवत् ॥२२ ॥
वैपरीलमिदं हष्ट्वा गोकणीं वैर्यसंयुतः ।
अयं दुर्गतिकः कोपि निश्चित्याय तमन्नवीत् ॥ २३ ॥
गोकणे जवाच ।

कस्त्वमुद्रतरो रात्री कुतो यातो दशामिमाम । किंवा प्रेतः पिशाची वा राक्ष्मोऽसीति शंस नः॥ २४॥

स्त उवाच।

एवं पृष्टस्तदा तेन रुरोदोक्षः पुनःपुनः। अशको वचनोत्तारे संश्वामात्रं चकार ह ॥ २५ ॥ ततोञ्जलो जलं कत्वा गोकणस्तमुदीरयतः। तत्सेकाद्रतपापोसी प्रवक्तुमुपचक्रमे॥ २६ ॥

प्रेत उवास ।

अहं माता त्वदीयोऽसि घुन्धुकारीति नामतः।
स्वकीयेनैक दोषेण ब्रह्मत्वं नाह्यितं मगा॥२७॥
कर्मणां नाह्ति संख्या में महाझानविवर्तिनः।
ळोकानां हिंसकः सोहं स्त्रीभिर्दुः लेन मारितः॥ २८॥
अतः प्रेतत्वमापन्नो दुर्दशां च वहाम्यहमः।
वाताहारेण जीवामि दैवाधीनफलोदयात्॥ २९॥
अहो बन्धो कृपासिन्धो मातर्मामाशु मोचय।
गोकणी वचनं श्रुत्वा तसी वाक्यमथाव्रवीत्॥ ३०॥

## गोकर्ण उवाच।

त्वदर्थन्तु गयापिण्डो मया इत्तोवधानतः। तत्कथं नैव मुक्तोंसि ममाश्चर्यामिदं महत् ॥ ३१ ॥ गयाश्राद्धान्न मुक्तिश्चेतुपायो नापरस्तिवह। कि विधेयं मया प्रेत तत्त्वं वद सविस्तरम् ॥ ३२ ॥

प्रेत उवाच्या

गयाधाद्धशतेनापि मुकिमें न मिक्यित । उपायमपरं किञ्चित्तद्विचारय साम्प्रतम् ॥ ३३ ॥ इति तद्वाक्यमाकण्यं गोकणीं विस्तयं गतः । शतश्राद्धिनं मुकिश्चेदसाध्यं मोचनं तव ॥ ३४ ॥ इतानीं तु निर्वं स्थानमातिष्ठ प्रेतः निर्भयः। वन्मुकिसाधकं किञ्चिदाचरिष्यं विचार्यःच ॥ ३५ ॥ शुन्धुकारी निर्वं स्थानं तेनादिष्टस्ततो गतः । शुन्धुकारी निर्वं स्थानं तेनादिष्टस्ततो गतः । प्रातस्तमागतं देष्ट्रा लोकाः प्रीत्या समागताः। तत्सर्व केथित तेन यंजातं च यथा निशि ॥ ३७ ॥ 🌞 विद्वांसी योगनिष्ठाश्च श्वानिनो ब्रह्मवादिनः । तन्मुक्ति नैंच प्रयन्ति प्रयन्तः शास्त्रसञ्जयान् ॥ ३८ ॥ ततः सर्वैः सूर्यवाक्यं तन्मुकौ स्थापितं परम्। गोकर्णः स्तरमनं चक्रे सूर्यवगस्य वै तदा ॥ ३६॥ तुभ्यं नमा जगत्साचिन हूहि मे मुक्ति हेतुकम् ॥ ४०॥ तक्कृत्वा दूरतः सुर्यः स्फुटमित्यभ्यभाषत । श्रीमद्भागवतान्मुक्तिः सप्ताहे वाचनं कुरु ॥४१॥ इति सूर्यवचः सर्वेधर्मक्षं तु विश्वतम् । सर्वे ख़ुवन प्रयत्नेन कर्त्तव्यं सुकरान्त्वदम् ॥ ४२ ॥ मोकर्णी निश्चर्य कत्वा वाचनार्थे प्रवासितः। तत्र संभवणार्थीय देशमामाजना ययुः ॥ ४३ ॥ पङ्गन्धवृद्धमन्दाश्च तेपि पापचयार वै। समाजस्तु महान् जातो देवविस्तरकारकः ॥ ४४ ॥ यदेवासनमास्राय गोकणीऽकथयत्कथाम्। स प्रेतोपि तदा यातः स्थान पदयश्वितस्ततः ॥ ४५ ॥ सप्तप्रन्थियुतं तत्रापरत्कीचकमुच्छितम्। तन्मूलिकद्रमाविदयं अवणार्थ स्थितोहासी ॥ ४६॥ वातकपी स्थिति कर्तुमराको वंशमाविशत्। वैष्णवं ब्राह्मणं मुख्यं श्रोतारं परिकल्प सः॥ ४७॥ प्रथमस्कन्धतः स्पष्टमाख्यानं धेनुजोऽकरोत्। दिनान्ते रक्षिता गाथा तदा चित्रं वर्भूव है ॥ ४८ ॥ वंशैकग्रन्थिभेदोऽभृतसशब्दं पश्यता सताम्। द्वितीयेऽन्हि तथा सार्थ द्वितीयग्रन्थिभद्रनम् ॥ ४९॥ तृतीयेन्हि तथा साय तृतीयव्रन्थिभेदनम् । एवं सप्तदिनैर्वशस्त्रप्रनिथविभेदनम् ॥ ५०॥ कृत्वा पि द्वादशस्त्रन्धश्रवणात्र्येततां जही । विव्यक्तपधरो जातो तुलसीदाममगिडतः॥ ५१॥ पीतवासा घनश्यामी मुकुटी कुण्डलान्वितः। ननाम आतरं सद्यो गोकर्णमिति चात्रवीत्॥ ५२॥ त्वयाऽहं मोचितो बन्धो ! कृपया प्रेतकश्मलात् । धन्या भागवती वार्ता प्रेतपीडाविनाशिनी ॥ ५३ ॥ सप्ताहोऽपि तथा धन्यः कृष्णलोकफलप्रदः। कम्पन्ते सर्वपापानि सप्ताहश्रवणे स्थित ॥ ५४ ॥ अस्माकं प्रलयं सद्यः कथा चेयं करिष्यति। आर्द्र शुष्कें लघु स्थूलं वाङ्मनःकर्मभिः कृतमः॥ ५५॥ श्रवणं विद्देत्पापं पावकः समिधो यथा। अस्मिन् वै भारते वर्षे सुरिभिदेवसंसदि ॥ ५६॥ अकथाश्राविणां पुंसां निष्फलं जन्म की सितम्। किम्मोहतो रक्षितेन सुपृष्टेन बर्ळायसा ॥ ५७ ॥ अध्रवेण शरीरेण शुक्रशास्त्रकथी विना। अस्तिस्मं स्नायुवर्द्धं मांसद्दीणितलेपितम् ॥ ५० ॥ चमोवबद्धं दुर्गन्धं पात्रं मूत्रपुरिषयोः। जराश्चोकविपाकार्ते रोगमान्दरमातुरम्॥ ५९॥

वुष्पूरं दुर्घरं दुष्टं सदीषं चणभङ्गरम्। क्रमिविद्भस्मसंशान्तं शरीरमिति वाणितम् ॥ ६० ॥ अस्थिरण स्थिरं कमें कुतोयं साध्येष हि। यत्प्रातः संस्कृतं चान्नं सायं तच्चं विनश्यति ॥ ६१॥ तदीयरससम्पुष्टे काये का नामं नित्यंता। सप्ताहश्रवणाव्लोके प्राप्यते निकटे हरिः॥ ६२ ॥ अतो दोषनिवृत्यर्थमेतदेव हि साधनम्। बुद्बुदा इव तीयेषु मशका इवं जन्तुषु ॥ ६३॥ जायन्ते मरणायैव कथाश्रवणवर्जिताः। जडस्य गुष्कवंशस्य यत्र ग्रन्थिविभेदनम् ॥ चित्रं किसु तदा चित्तंत्रनियमेदः कथाभवात् ॥ ६४॥ भिद्यते दृद्यप्रनिथिच्छ्यन्ते सर्वसंशयाः। क्षीयन्ते चास्यं कर्माणि सप्ताहभवणे क्रते॥ ६५॥ संसारकद्मालिपप्रचालनपटीयसी। कथाती थें स्थित चित्ते मुक्तिरेव बुधैः स्मृता ॥ ६६ ॥ एवं ब्रुवति वे तसिन् विमानमगमत्तरा। वैक्कण्ठवासिभिर्युक्तं प्रस्फुरद्दीप्तिमण्डलम् ॥ ६७ ॥ सर्वेषां परयतां भेजे विमानं धुन्धुलीसुतः। विमाने वैष्णवान् विषयं मोकणी वाक्यमब्रवीत्॥ ६८॥

R

#### गोकण उवाच।

अत्रैव बहवः संन्ति भोतारो मम निर्मलाः। आनीतानि विमानानि न तेषां युनपत्कुतः॥ ६९॥ श्रवणं समभागेन सर्वेषामिह दृश्यते। फलभेदः कुतो जातः प्रबुवन्तु हरिप्रियाः॥ ७०॥

## हरिदासा ऊच्छः।

अवणस्य विभेदेन फलभेदोपि संस्थितः। श्रवणं तुं कृतं सर्वेने तथा मननं कृतम् ॥ ७१॥ फलभेद्स्ततो जातो भजनाद्पि मानद्। सप्तरात्रमुपी स्यैचै प्रतेन अवणंकतम् ॥ ७२ ॥ मननादि तथा तैन स्थिराचित्ते कृते भृराम्। महद्व हते द्वान प्रमादन हते अतम्॥ ७३॥ सन्दिग्धो हि हतो मन्त्रो व्ययमिको हतो जपः। अवैष्णवो हतो देशी हत श्राद्धमपात्रकम् ॥ ७४ ॥ हतमभोत्रिये दानमनाचारहतं कुलम्। विश्वासो गुरुवाक्येषु स्वसिन् दीनत्वमावना ॥ ७५ ॥ मनोदोषजयश्चेव कथायां निश्चला मतिः। प्वमादिकतं चत्याचदा वे श्रवणे फलम् ॥ ७६॥ पुनः श्रवात्ते सर्वेषां वैकुण्ठे वसतिश्वम्। गोंकणे ! तव गोविन्दो गोलोंक दास्यति स्वयमः॥ ७७॥ एवसुक्त्वा ययुः सर्वे वेकुण्ठं हरिकीतेनाः। आवणे मासि गोकणः कथामूचं तथा पुनः॥ ७८॥ सप्तरात्रवती भूयः श्रवणं तैः कृतं पुनः। कथासमाप्ती यज्ञातं श्रूयतां तम्ब नारद् ॥ ७९॥

विमानैः सह भक्तेश्च हरिराविर्वभूव ह। जयशब्दा नमःशब्दास्तत्रासन् बहवस्तदा॥ ८०॥ पाञ्चजन्यध्वनि चक्रे हर्षात्तत्र ख्यं हरिः। गोकर्णे तु समालिग्याकरोत्प्वसहशं हरिः॥ ५१॥ श्रोतृनन्यान् घनश्यामान् पीतकौशेयवाससः। किरीटिनः कुण्डलिनस्तथा चक्रे हरिः क्षणात् ॥ ५२ ॥ तद्ग्रामे ये स्थिता जीवा आश्वचाण्डालजातयः। विमाने स्थापितास्तिपि गोकर्णक्रपया तदा ॥ ८३ ॥ प्रोषिता हरिलोके ते यत्र गच्छन्ति योगिनः। गोकर्णेन स गोपालो गोलोकं गोपवल्लभम्॥ ८४॥ कथाभवणतः प्रीतो निर्ययौ भक्तवत्सलः। अयोध्यावासिनः पूर्व यथा रामेण सङ्गताः॥ तथा कृष्णेन ते नीताः गोलोकं योगिवुर्लभम् ॥ ५५ ॥ यत्र सूर्यस्य सोमस्य सिद्धानां न गतिः कदा । तं लोकं हि गतास्ते तु श्रीमद्भागवत श्रवात्॥ ८६॥ बूमोध्य ते कि फरुवृन्द्मुज्ज्वलं सप्ताहयञ्चन कथासु सञ्जितम् कर्णेन गोकर्णकथाक्षरा यैः पीतश्च ते गर्भगता न भूबः ॥८७॥ वाताम्बुपणीशनदेहशोषणैस्तपोभिरुप्रैश्चिरकालसञ्चितः। योगैश्च संयाति न तां गति वै संसोहगाथाश्चरणेन यान्तियाम् ८८ क्रतिहासमिमं पुषयं शाण्डिल्योपि मुनीश्वरः। पठत चित्रकूटस्थों ब्रह्मानन्दपरिप्लुतः ॥ ८९॥ आख्यानमेतत् परमं पवित्रं भृतं सक्तद्वे विद्देदघीष्ठम्। श्राद्धे प्रयुक्तं पितृतृतिमावहेशित्यं सुपाठाद्युनर्भवश्च ॥ स्०॥ इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरखगडे श्रीमद्गागवतमाहात्म्ये

गोकणवर्णनं नाम पञ्चमोऽच्यायः॥५॥

# षष्टोऽध्यायः ॥

कुमारा ऊचुः।

अथ ते सम्प्रवहयामः सप्ताहश्रवण विधिम्।
सहायर्वेसुभिश्चेव प्रायः साध्यो विधिः स्मृतः ॥ १ ॥
दैवश्चं तु समाह्नय मुहूर्ते पृच्छ्य यसतः।
विवाहे यादशं वित्तं तादशं परिकल्पयत् ॥ २ ॥
नमस्य आश्विनोजीं च मार्गशिषः शुचिनभः।
एते मासाः कथारम्मे श्रोतृणां मोक्षस्चकाः ॥ ३ ॥
मासानां विग्रहे यानि तानि त्याज्यानि सर्वणा।
सहाबादनेतरे चात्र कर्तव्याः सोद्यमाश्च ये ॥ ४ ॥
देशदेशे तथा सोयं वार्ता प्रेष्या प्रयस्ततः।
भविष्यित कथा चात्र आगन्तव्यं कुटुम्बिभिः ॥ ५ ॥
दूरे हरिकथा केचिद्दरे चाच्युतकीर्तनाः।
स्त्रियदश्क्षादयो ये च तेषां बोधो यतो भवते ॥ ६ ॥
देशे देशे विरक्ता ये विष्णवाः कीर्तनोत्स्वकाः।
तेष्वेव पत्रं प्रेष्यं च तिल्लावाः कीर्तनोत्स्वकाः।

सतां समाजो भविता सप्तरात्रं सुदुर्छभः। अपूर्वरसरूपैव कथा चात्र भविष्यति॥ ८॥ श्रीभागवतपीयुषपानाय रस्रलम्पटाः । भवन्तश्च तथा बीद्यमायात प्रेमतत्पराः॥ ९ ॥ नावकाशः कदाचिचेदिनमात्रं तथापि तु । सर्वथा गमनं कार्ये क्षणोऽत्रैव सुदुर्लभः॥ १० ४ एवमाकारणं तेषां कर्तव्यं विनयेन च। आगन्तुकानां सर्वेषां वासस्थानानि कल्पयेत् ॥ ११ ॥ तीर्थेथाऽपि वने वापि गृहेवा अवणं मतम्। विशाला वसुधा यत्र कर्तव्यं तत्क्यास्थलम् ॥ १२ ॥ शोधनं मार्जनं भूमेर्छेपनं धातुमगडनम्। गृहोपस्करमुद्धत्य गृहकोणे निवेशयेत् ॥ १३ ॥ अर्घाक् पञ्चाहता यतादास्तीर्णान प्रमेलवेत्। कर्तद्यो मण्डपः प्रोचैः कद्ळीसण्डमण्डितः ॥ १४ ॥ 🤊 फलपुष्पक्लेविंग्वक् वितानेन विराजितः। चतुर्दिश्च ध्वजारोपो बहुसम्पद्धिराजितः ॥ १५ ॥ ऊर्ध्व सप्तेव लोकाश्च कल्पनीयाः सुविस्तरम्। तेषु विपा विरक्ताश्च स्थापनीयाः प्रबोध्य च ॥ १६ ॥ पूर्व तेषामासनानि कर्तव्यानि यथोत्तरम्। वक्तुश्चापि तदा दिव्यमासनं परिकल्पयेत् ॥ १७ ॥ उदङ्मुखो भवेद्रका श्रोता वै प्राङ्मुखस्तद्।। प्राइमुखु खश्चेद्भवेद्धका श्रोताचाद इमुख्सदा ॥ अथवा पूर्वदिक् श्रेया पूज्यपूजकमध्यतः। श्रोतृणामागमे प्रोक्ता देशकाळादिकोविदैः॥ १९॥ विरको वैष्णवो विष्रा वेदशास्त्रविशुद्धिकत्। द्यान्तकुरालो धीरो वक्ता कार्योऽतिनिःस्पृद्दः ॥ २० n अने कर्धमिवभ्रान्ताः स्त्रेणाः पाषगडवादिनः । शुकशास्त्रकथो खारे त्याज्यास्ते यदि पण्डिताः ॥ २१ ॥ वक्तुः पार्श्वे सहायार्धमन्यः स्थादवस्तथाविधः। पण्डितः संशयच्छेचा लोकबाधनतंत्परः॥ २२॥ वका क्षीरं प्रकर्तव्यं दिनादर्वीकू वताप्तये। अरुणोद्देय इसी निर्वर्त्य शीचं स्नानं समाचरेत्॥ २३॥ नित्यं सङ्घेपतः कत्वा सन्धाद्यं सम्प्रयत्ततः। कथाविझविघाताय गणनायं प्रपूजयेत्॥ २४॥ पितृन् सन्तर्थं शुज्यर्थं प्रायश्चितं समाचरेत्। मगडळ अ प्रकर्तव्यं तत्र स्थाप्यो हरिस्तथा ॥ २५ ॥ कृष्णमुद्दिश्य मन्त्रेणाचरेत पूजाविधि क्रमात्। प्रविधानमस्कारान् पूजान्ते स्तुतिमाचरेत् ॥ २६॥ मं चारसागरे मग्नं दीनं मां करणानिश्चन कर्ममोहगृहीताङ्गं मामुखर भवाणवात्॥ २०॥ श्रीमञ्जागवतस्यापि ततः पूजा प्रयत्ताः। कर्तव्या विधिना प्रीत्या भूपवीपसमन्विता ॥ ३८॥ ततस्तु भीफलं धृत्वा नमस्कारं समाचरेत्। स्तुतिः प्रसन्निचित्तेन कर्तब्या केवळ तदा ॥ २६॥

श्रीमद्भागवताख्योऽयं प्रत्यत्तः कृष्ण एव हि। स्वीकृतोऽसि मया नाथ मुक्तार्थं मवसागरे॥ ३०॥ मनोरथो मदीयोऽयं सफलः सर्वधा त्वया। निर्विधेनेव कर्तव्यो दासोऽहं तव केशव ॥ ३१ ॥ एवं बीनवचः प्रोक्त्वा वकारं चाथ पूजयेत्। सक्रभूष्य वस्त्रभूषाभिः पूजान्ते तं च संस्तवेत् ॥ ३२ ॥ शुकरूप प्रवोधन्न सर्वशास्त्रविशारद् । पतत्कथाप्रकाशेन मद्ञानं विनाशय ॥ ३३॥ तद्रे नियतः पश्चात्कर्तब्यः श्रेयसे मुद्रा । सप्तरात्रं यथादात्त्वा [१] धारणः सर्व एव हि ॥ ३४ ॥ वरणं पञ्चविप्राणां कथाभङ्गनिवृत्तये। कर्तव्यं तैईरिजीप्यो द्वादशाचरविद्यया॥ ३५॥ ब्राह्मणान्वेष्णवांश्चान्यांस्तथा कीर्तनकारिणः। नत्वा सम्पूज्य दत्ताक्षः स्वयमासनमाविशेष् ॥ ३६॥ लोकवित्तश्रुमागारपुत्रचिन्तां व्युद्स्य च । 🦙 कथाचित्रःं शुक्रमातिः स लमेत्फलमुत्तमम् ॥ ३७ ॥ आस्योदयमारभ्य साधिव्वपद्रशन्तकम्। वाचनीया कथा सम्बक्क भीर कण्ट सुश्रीमता॥ ३८॥ कथाविरामः कर्तव्यो मध्यान्हे घटिकाव्यम् । तत्कथामनु कार्ये वै कीर्तनं वैष्णवस्तदा॥ ३.६॥ मक्रमूत्रजयार्थे हि लच्चाहारः सुखावहः। हविष्यान्नेन कर्तव्यो होकवारं कथाऽधिना॥ ४०॥ रपोष्य संतरात्रं वे शक्तिश्चेच्ह्रणुयात्तदा । घृतपानं पयःपानं कत्वा वै श्रेणुयात्सुखम् ॥ ४१॥ फलाहारेण वा आव्यमेकभुक्तेन वा पुनः। ख्रुखसाध्यं भवेद्यसु कर्तव्य अवणाय तत् ॥ ४२॥ भोजनं तु वरं मन्ये कथाश्रवणकारकम्। नोपनासो वरः प्रोक्तः कथाविझकरो यदि ॥ ४३॥ सप्ताइवितनां पुंसां नियमान् श्रुणु नारद्। विष्णुदीक्षाविद्यानां नाधिकारः कथाश्रवे॥ ४४॥ ब्रह्मचर्यमथःसुप्तिः पत्रावल्याञ्च भोजनम्। कथासमाप्ती भुक्तिश्च कुर्यान्नित्यं कथावती॥ ४५॥ द्विदलं मधुतेलञ्चागरिष्ठानं तथैव च। भाववुष्टं पर्युषितं जहात्रित्यं कथावती ॥ ४६॥ कामं कोधं सदं सानं मत्सरं छोभमेव च दस्मं मोहं तथा द्वेषं दूरयेच कथावती॥ ४०॥ वेदवेष्णवविषाणां गुरुगोत्रतिनं तथा। स्त्रीराजमहतां निन्दां वर्जयेद्यः कणवती ॥ ४८॥ रजललां त्यंजन्मले क्यपिततमातके साथा। ब्रिजब्रिट् चेदबाह्येश्च म चदेद्यः कथावती ॥ ४९ ॥ ससंः शौचं दयामीनमार्जवं विनयं तथा। उदारमानसं तद्ववेवं कुर्यात्कणावती ॥ ५०॥ दरिदश्च खरी रोगी निर्माण्यः पापकर्मवान् । अनपत्यो मोत्तकामः ऋणुयाच कथामिमास ॥ ५१ ॥

(१) धारणीधस्स एव हि इति प्राडान्तरम्।

अपुष्पा काकवन्ध्या च वन्ध्या याच मृतामेका। स्रवद्गर्भा च या नारी तया श्राच्यः प्रयत्नतः। एतेन विधिना श्रावेत्तदक्षय्यतरं भवेत्। अत्युत्तमा कथा दिव्या कोटियञ्चफलप्रदा॥ ५३॥ एवं कत्वा वत्विधिमुद्यापनमथाचरेत्। जन्माष्टमीवतिमैव कर्तव्यं फलकाङ्क्षिभः॥ ५४॥ अकिञ्चनेषु भक्तेषु प्रायो नोद्यापनामहः। अवणेनेव प्तास्ते निष्कामा वैष्णवा यतः ॥ १५ 🛙 एवं नगाहयञ्चे ऽस्मिन् समाप्ते श्रोत्तिस्तथा। 🗇 🦈 🦙 पुस्तकस्य च वक्तुश्च पूजा कार्यातिमक्तितः॥ ५६॥ प्रसादस्तुलसीमालाः अत्तिकाश्चायः दीयताम्। 🔻 🦠 मृदङ्गताबललिसं कर्तव्यं कीर्तनं ततः॥ ५७॥ जयशन्दो नमन्शन्दः शङ्खन्शन्दश्च कार्येत्। विप्रेम्यो याचकेश्यश्च वित्तमन्नश्च दीयताम् ॥ ५५॥ विरक्तश्चेद्भवेच्छ्रोता गीता वाच्या परेऽहनि। गृहस्यश्चेसदा होमः कर्तव्यः कर्मशान्तये॥ ५९॥ प्रतिश्लोकं च जुडुयाद्विधिना दशमस्य च। पायसं मधुसपिश्च तिलामादिकसंयुतम् ॥ ६० ॥ अथवा हवनं कुर्याद्गायज्या सुसमाहितः। तन्मयत्वात्पुराणस्य परम्स्य च तत्त्वतः॥ ६१॥ होमाशको बुधो हैम्यं द्यात्रं कलिस्ये। नानाविद्यद्रनिरोधार्थे न्यूनताभिकताख्ययोः॥ ६२॥ दोषयोः प्रयमार्थञ्च पठेन्नामसहस्रकम् । तेन स्यात्सफलं सर्वे नास्त्यसमाद्धिकं यतः॥ ६३ ॥ द्वादश ब्राह्मणान् पश्चाद्वोजयेन्मधुपायसैः। दद्यातसुवर्णन्धेतुं च वतपूर्णत्वहेतवे ॥ ६४ ॥ शकी पळत्रयमितं स्वणिसहं विधाय च। तत्रास्य पुस्तकं खाप्यं लिखितं ललिताक्षरम् ॥ ६५ ॥ सम्पूज्याबाह्माधैस्तदुपन्नारैः सविस्तरम्। वसमूषणगन्धाचे पूजिताय यतातमने ॥ ६६ ॥ आचार्याय सुधीदेत्वा मुक्तः स्याद्भवबन्धनैः। एवं कृते विधाने च सर्वपापनिवारणे॥ ६७॥ फलदं स्यात्पुराणन्तु भीमद्भागवतं शुभम्। भर्मार्थकाममोत्तीणी साधनं स्याप्त संशयः ॥ ६८॥

कुमारा ऊच्चः।

इति ते कथितं सर्वे कि भूयः भोतुमिच्छासि। भीमद्भागवतेनैव भुक्तिमुक्ती करे खिते॥ ६६॥

स्त उवाच।

इत्युक्तवा ते महात्मानः प्रोचुभागवतीं कथाम्। सर्वपापहरां पुण्यां भक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ॥ ७०॥ श्चावतां सर्वभूतानां सप्ताई नियतात्मनाम । यथाविधि ततो देवं तुष्ट्युः पुरुषोत्तमम्॥ ७१॥

तदन्ते शानवैराग्यमकीनां पुष्टता परा । तारुण्यं परसञ्जाभूत सर्वभूतमनोहरम् ॥ ७२ ॥ नारदश्च कृतार्थीभूत सिद्धे सीये मनोर्थे। पुलकीकृतसर्वोङ्गः परमानन्दसम्भृतः ॥ ७३ ॥ एवं कथां समाकण्यं नारदो भगवित्रियः। प्रेमगद्गद्या वाचा तानुवाच कृताञ्जलिः॥ ७४॥

### नारद उवाच।

धन्योस्म्यनुगृहीतोऽस्मि भवद्भिः करुणापरः। बद्य मे भगवान् लब्धः सर्वपापहरो हरिः॥ ७५॥ श्रवणं सर्वधर्मभ्यो वरं मन्ये तपोषनाः। वैकुण्ठस्थो यतः कृष्णः अवणाद्यस्य लभ्यते ॥ ७६॥

#### स्त उवार्च।

एवं ख़ुवति वे तत्र नारदे वैष्णवोत्तमे। परिभ्रमन समायातः शुको योगेश्वरस्तदा ॥ ७७ ॥ तत्राययौ षोड्यानार्षिकस्तदा-व्यासातमञ्जो शानमहाविध्रचनद्रमाः। क्यावासने निजलामपूर्णः— प्रेम्णा पठन् भागवतं शनैःशनैः॥ ७६॥ हृष्ट्वा सदस्याः परमोरुतेजसं सद्यः समुख्याय ददुर्महासनम् । प्रीता सुर्विस्तमपूजयत्सु के सितो प्रवेशस श्रेणुतामलां निरम्

# श्रीशुक उवाचे।

निगमकल्पतरोगेलित पलं शुक्सुसादमृतद्रवसंयुतम्। पिबत भागवंत रसमालयं मुद्रुरहे। रसिका भुवि भावुकाः॥ धर्मप्रोझितकैतवोत्र प्रसो निर्मेद्सराणां सतां-वेधं वास्तवमत्रवस्तुशिवदं तापुत्रयोनमूलनम्॥ श्रीमद्भागवते महामुनिकते किवा परेरीश्वरः। सद्योद्ध्यवर्ध्यतेऽत्र कृतिभिः ग्रुश्रुविभिस्तत्क्षणात् ॥ ८१॥ श्रीमद्भागवतं पुराणतिलकं यद्भेष्णवानां धनम्। यसिन्पारमहं स्यमेवममले बानं परं गीयते — यत्र क्षानविरागभक्तिसंहितं नैष्कर्यमाविष्कृतम्। तच्कुष्वन प्रवहन विज्ञारणपरो भक्त्वा विमुच्येत्ररः॥ ५१॥ खर्गे सत्य च कैठासे वें अण्ठे नास्त्ययं रसः। अतः विवाद सङ्ग्रिंग् मामा मुखत कहिनित्॥ हरे॥

### स्त उवाच।

प्रवस्त्रवाणे सति वादरायणे मध्ये समायां हरिराविरासीत्। प्रहादबल्युद्धवफाल्गुनादिभिः बृतः स्रराषित्तमपूजयस तान्॥ प्रशा हुष्ट्रा प्रसन्न महदासने हरि ते चाकरे कीर्तनमग्रतस्तदा। भवो भवान्या कमलासन्हतदा तत्रागमन् कीतेनद्रभेताय ॥ ६५॥

प्रहादस्तालधारी तर्जगतितया चोद्धकः कांसधारी वीणाधारी सुर्पिः खरकुशलतया रागकर्त्तान्तेनोऽभृत्। इन्द्रो ऽवादीनमृद्रक्षं जयजयसुकराः कीर्तने ते कुमारा-यत्रात्रे भाववक्ता रसिंधरचनया व्यासपुत्रो वभूव ॥ ८६ ॥ ननर्त मध्ये त्रिकमेव तत्रः भक्त्यादिकानां नटवत्सुवेजसाम् । श्रस्त्री किकं कीर्तनमन्तदीस्य-हरिः प्रसन्नोऽपि वन्नोऽज्ञवीसत्॥ ५०॥ मत्तो वरं भागवता वृणुष्वं— श्रीतः कथाकीर्तनतोशीस साम्प्रतम्। श्रुत्वेति तद्याक्यमतिष्रसन्नाः— प्रमाई विचा हरिमू विरे ते॥ ५८॥ नगाहगाथासु च सर्वभक्ते— रेभिस्त्वयाभाव्यमिति प्रयत्नास् । मनारथोयं षरिपूरणीय-स्तथेति चोक्त्वान्तरधीयताच्युतः॥८६॥ ततोऽनमखधरणेषु नारद्रातथा शुकादीनपि तापसाध्य । अथ प्रहृष्टाः परिनष्टमोद्दाः सर्ने ययुः पीतकथामृतास्त ॥९०॥ भक्तिः द्धुताभ्यां सद्द रिश्वता सा— क्रिकेट क्रिकेट शास्त्र खकीयेऽपि तदा शुकेन्। अतो हरिर्भागवतस्य सेवनात्— विश्व समायाति हि वैश्वचानाम ॥ ९१ ॥ दारिद्यदुःखज्वरदाहितानां-मायापिशाचीपरिमदितानाम्। समारसिन्धी परिपातितानां— क्षेमाय व सागवत प्रगजिति॥ ६२॥ शीनक उवाच ।

ऊचुकर्जे सिते पत्ते नवम्यां ब्रह्मणः सुताः ॥ ९६ ॥ इत्येतत्ते समाख्यातं यत्पृष्टोहं त्वयाऽनघ। कलो भागवती वार्ता भवरोगविनाशिनी ॥ ९७ ॥ कृष्णित्रयं सकलकदमलनारानं च-मुत्त्वेकहेतु इष भक्तिविलास्कारि। सन्तः! कथानकमिदं पिषतादरेण-ळोके हितार्थपरिशीलनसेवया किम् ॥ ६८ ॥ खपुरुषमपि । वीक्ष्य पाशहस्तं — 📜 🐪 💛 वदति। यमः किल तस्य कर्णमुले । 💛 🖰 🗁 🧺 परिहर[१] अग्रवत्कथासुमत्तान् 💛 🕬 💮 प्रभुरहमन्यनुणां निःवैष्णवानाम् ॥ ९९ ॥ः 🕾 यसारे संसारे विषयविषसङ्गाकुलियः--चणार्धः समार्थः पिवतः शुक्रगाथातुलसुभामः। किमर्थ व्यर्थ भी अजत अपुरे कुत्सितपरे । परीचित्साक्षीयच्छ्रवणगतमुक्त्युक्तिकथने ॥ १०० ॥ रसप्रवाहसंस्थेनः भौशुकेनेखिता कथा। कण्ठे सम्बद्धाते येन स. वैकुण्डप्रभुनेवेत्॥१०१॥ 🚉 इति च परमगुद्धं सर्वसिद्धान्तसिद्धं स सपदि निग्दितं ते शास्त्रपुतं विलोक्या। जगति शुककथानी निर्मेलं नास्ति किञ्चित् पिव प्रसुखहेतोद्दादशस्कन्धसारम् ॥ १०२ ॥ पनां यो नियततया शुणाति भक्त्या-यक्षेनां कथ्यति शुद्धवेषणवामे । ती सम्यग्विधिकरणात्फलं लभेते — याथाध्यांत्रहि भुवनं किमप्यसाध्यम्॥ १०३॥ इतिश्रीपद्मपुराणे उत्तरस्याहे श्रीमृद्गागवतमाहात्स्ये

ा १४ । **श्रेसणाविधिकणने नाम**े जान के हा है है है

्राप्त प्रष्ठोऽच्यायः ॥ स्वा ।

Linguist State of the Control of State States

The same of the sa

तसाद्पि कली प्राप्ते जिंशहर्षे गते सति।

शुक्रेनोक्तं कदा राह्ने गोकर्णन कदा पुनः। सुर्पये कदा बाह्मीदिच्छन्धि में संदायन्तियमम् ॥ ६३ ॥ स्त उवाच ।

A STATE OF BLACE

आरुष्णनिर्गमाञ्चित्राद्यप्रविधिगते कली। नवमीतो नमसे च कथारमं शुकाडकरोत्॥ ९४॥ परीक्षिच्छ्वणान्ते च कलौ वर्षतराद्वये। शुद्धे शुन्ती नवस्याञ्च धेतुजो इक्शयत्कथाम् ॥ ६५ ॥

[१] मञ्जस्यनमपनास इति पाठान्तरम्॥

इति श्रीभागवतमाहात्म्यं सम्पूर्णम हरि:श्रोम्। श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

# विज्ञापनम्।

# परपद्मार्गीरवज्ञः।

कार्य विचक्षणाः! अद्यातिप्रदर्षसमयो वरीवर्त्ति अहं तत्रमवद्भयो भवद्भयो ऽद्भुतप्रन्थं निवेदयामि यद्भन्यान्वेषणं सहस्राणिविद्वांसी ऽकार्षुः चातकारुखातिबिन्दूर्निव, तथा ऽपि तद्भन्थदर्शनमपि दुर्लभमभूत् तत्पाठनविचारगादि तु दूरापास्तमेवासीत् तमेव अन्थमत्याः लन्देन समस्तमारतवासिनां श्रीमतां सेवायां निवेदयामि यं ग्रन्थं 'शारीरकहाई संचयनामकं' कथर्यान्त, केचिन्तु परपक्षगिरिवज्ञाख्यम अञ्चासागिरिवज्राख्यमपि मुवन्ति, एष प्रन्थो वेदान्तिनां शिरोधाय्यों ऽस्ति, किश्च सर्वमनीषिगामितत्सुविदितमस्ति, निगमकरुपतरो रसन मयफलं वेदान्तशास्त्रमेवास्ति, यद्यपि वेदान्तशास्त्रस्य खखसिद्धान्तानामनुकूला अनेके यन्या मुद्रितास्तिन्ति, तथापीरशः को ऽपि प्रन्थोऽद्याविच न मुद्रितो ऽस्ति, यद्ग्रन्थावलोकनेनैव सर्वे सिद्धान्तक्षानं भवति, एतस्मिन् मन्थेऽद्भुतचमत्कारोऽस्ति एतद्वलोकनेनैव सर्वशास्त्रसिद्धानतज्ञानपूर्वकसत्यासत्यविचारो भवति, अन्यवेदान्तग्रन्थस्यावलोकनावश्यकता प्रपि न भवति, सर्वेषां विपश्चितामेतत् अन्यावलाकंतन पूर्यातन्दावातिर्भवति, एष च अन्थो विदुषां पठनपाठनादिषु प्रचारगीयो अस्ति, किम्बहुलेखनेनैतद्भन्थावलोकयितृगा ब्रह्मानन्दास्त्राद्मसुद्रस्तराङ्कित इव भवति, एतद्प्रन्थावलोकानेन विद्रन्भगडल्यां वाग्विलासि सङ्कोचः कदा ऽपि न भवति, एव च प्रन्थो निम्नलिखितप्रकर्शीर्विभूषितो ऽहित, पतिसम् प्रनथे चत्वारो ऽध्यायास्यन्ति, तत्र प्रथमे ऽध्याये विषयसम्बन्धगिरिनिपात-प्रयोजनाधि-कारिगिरिनिपात-अध्यासगिर्यधिष्ठानगिरिनिपातादीनि महाचिस्तीर्शानि अयोविश्वतिः प्रकर्गानि सन्ति. द्वितीये चाध्याये जिल्लास्यो-पपितिगिरिनिपातादीनि दश प्रकरणानि सन्ति नृतीयेऽध्याये साङ्ख्यगिरिनिपातादीनि दश प्रकरणानि सन्ति चतुर्थेऽध्याये जीवन्मुक्ति गिरिनिपातो ऽस्ति, एवं चत्वारिशत्मकरखैर्विभूषितो ऽष्टसहस्रश्लोकसंख्यापरिमितो मन्थोऽस्तीति विश्वेयं मनीपिभिरिति शम् ॥ मुख्यम रीटयकपञ्चकम ५)

# **पू**ल्यपादश्रीविश्वनाथचक्रवर्तिविरचितम् श्रीकृष्णाभावनामृतम् ।

श्रीकृष्णभावनामृतम् श्रीकृष्णचन्द्राष्ट्रकालिकसेवानिकपण्परम् क्रीडानिकुञ्जस्य किङ्करीशुक्रशारिकादीनी परस्परसेवानिकपण् पर सुस्पष्टपद्यातमकं महाकाव्यम् तदनुगुगामिताक्षरसंस्कृतटीक्षया समलङ्कृतम्, मृत्यम् रोप्यकत्रयम् ३)

श्रीजगन्नाथवञ्जभनाटकम् ।

इह खकु जगति विद्यास्थाने वनेकेषु पठनीयेषु सत्स्विप शास्त्रान्तराणां सहिष्णुवेद्यत्वेन सहममतिवेद्यत्वेन च तेष्वरपजनादरणीयेषु इह जल जारा विवास के सम्बद्धात के काल्यनाटकादी चेव मनुष्याणां समय्यापनयायानि तानि च भगवद्धिषयकाणि जातेषु इदानी स्थलमितिवद्यत्वेन सुकुमारबद्धात्वेन च काल्यनाटकादी च्या मनुष्याणां समय्यापनयायानि तानि च भगवद्धिषयकाणि जात्र इत्या रेन्याय क्रिया विचार्येदानी जगन्नाथवल्लभनाटकं सर्वजनसीकर्यायप्रकाशितम् इद् च नाटकं श्रीराधाकृण्णरहस्पन्नींडा विषये चद्धाक्तशास्त्र विवाद प्रतित्र विवाद किया निर्मित्त अत्र च पश्चिक्षः सन्तितत्र प्रथमेऽक्के नटनर्टास्त्रधाराणां संवादपूर्वकप्रस्तावना प्रतापरुद्ध सुपतित्रोषार्थं रामानन्दरायं कविना निर्मित्तम् अत्र च पश्चिक्षणाः स्वत्रप्रिक्षणाः स्वत्रप्रिक्षणाः स्वत्रप्रक्षित्रभाषाः स्वत्रप्रक्षित्रप्रकार्यः स्वत्रप्रकार्यः स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकार्यः स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम्यम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वत्रप्रकारम् स्वति अतापच्छ द्वाराधिकाया अभिन्नरणिक्रयानिरूपणम् ४ पश्चमे श्रीराधाकृष्णयाः सङ्गमनिरूपणम् असिन् ग्रन्थे मध्ये गीतवोधिन्द्वद्वाग-पशान्यपि विद्यन्ते ॥ मुल्यम् द्वादश आणकाः ॥।]

# वेदान्तसारः।

भो भो वेदवेदान्तसकलशास्त्रपरावारपारकृताः।

विदितमेव भवतां श्रीमद्वेय्यासिकस्त्रार्थयाथातम्यप्रतिपादको बालानामपि वेदान्तार्थसञ्चयनिवारणकरो वेदान्तसारोनाम प्रन्थः वादतमय गणा विकास स्थाप प्रतिस्था मुद्रितस्यन् जाज्वलीति. अतस्सर्वेऽण्येतद्प्रन्थरतं केवलेन सार्वे एकसूल्येन प्रहीत्वा मनानयनानन्दं प्राप्तुंबन्तु भवन्तः। अस्य मृ० ३]

श्रीश्रीनिम्बाकिद्दरीनम् नो भोः परिनिष्ठितविद्वांसः । ससन्मुद्रणालये अधावधि काष्यमुद्रितम् भाष्यत्रयोपेतम् श्रीमसिंग्यार्क वर्धानम्, समंत्र सम्मुद्रितं तस्वर्थतां त्रहणोत्सुकैः सप्तमुद्री-मूल्येन, पश्चाद्धिकेन लभ्यते इति विद्नुत सू० ७]

विहज्जन कृपाकाङ्की-भीनित्यस्तरूप ब्रह्मचारी श्रीदेवकीनन्दन प्रेस श्रीवृन्दावन-जिला मधुरा।

Minuspilli 14.

रेकों के करारी के के का कार्य के का प्राप्त के का प्राप्त के का प्राप्त के का कारण के कार्य के कार्य के कार्य के कार्य के कार्य के कारण के कार्य के कारण के कारण के कारण के कारण के कारण के कार्य के कारण के कारण के कार्य के कारण के प्रकृतिक होता व्हाना एक ए राज के प्रकान के कान निवासिक हो है हो ने हो ने होता हो है के स्थाप क्षा के राज है के से के ए साजने हुए के साथ है राजना हो ने के कि स्थाप कि है कि से साम कि से कि से साम से से के साम से के साम के ें जाता । असे कुलाने असनेत्रीय स्थानेत्र स्थाने क्या कितामा के सम्बद्धि विषयामि यूर्त में देशको ने स्थानित स्थ या क्यानिकार के सुद्धि अवस्था स्थान स्थान स्थान स्थानित स्थानित स्थानित स्थानित स्थान स्थानित स्थानित स्थानित The first of the first process of the state ीन्त्रकेषण विकास का निर्वेशकोष्ट्रिया धर्काच्याधिर्धत । यञ्च यस्य स्थायति । यञ्च व्यापित कारकेष भेपन्ति । १,५१६ व वर्षकाक्षण का हार हे हैं कि साम के स a grante to the contract of the state of the state of the contract of the cont े । अन् अभे**ॐ निक्को स्थानते जास्तुहोनाय क्र**ान्त्र अपूर्ण के व्याप्त क्रिकेश विकास

जन्मायस्य यतोऽन्वयादितस्त्रश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट् तेने ब्रह्म हदा य त्र्यादिकवये मुह्मान्त यत् सूरयः। तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसगीऽमुषा धाम्ना खेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि॥ १॥

अर्थेषु ( कार्य्याकार्येषु ) अन्वयादितरतरूच ( अन्वयव्यतिरेकाश्यां योऽस्ति ), ( अत्यव ) अस्य ( ज्ञातः ) जन्मादि ( जन्मास्थिति-मद्भ ) यतः ( भवति तं ), (ततः ) यः ( च ) अभिन्नः ( सर्वन्नः ) खराट् ( खतःसिद्धन्नानवान् ते ), यतः ( यस्मिन् वद्याता वेदे ) सूरयः (ब्रह्मादयोऽपि) मुद्यन्ति (तत् ) ब्रह्म (तं वेदं ) आदिकवये (ब्रह्मणे) हृदा (मनसेव यः ) तेने (प्रकाशितवान् ते ), (किश्च ) यथा तेजीवारिमृदां विनिम्यः (अन्यस्मिश्रन्यावमासः तेजीस वारिवृद्धिमृत्यायां मृदि कावादी जलवुद्धिरित्यादि तथा ) यत्र (शुद्ध मगवत्सक्षे ) त्रिसर्गः (मायागुगासर्गः भूतिन्द्रयदेवतारूपः ) वर्मुषा (सत्यः ) (मृषा वा ) (किश्व ) खेन घाम्ना ( तेजसा ) सदा निर्देतकुहकं सत्यं पर (परमेश्वरं ) धीमहि (धार्यम् ) इति समस्तान्वयः ॥ १॥

#### श्रीधरस्वामी।

ॐनमो भगवते परमहंसाखादितचरगाकमलचिन्मकरन्दाय भक्तजनमानसनिवासाय श्रीकरगाय । वागीशा यस्य वद्ने लक्ष्मीर्यस्य च वक्षसि । यस्यास्ते हृद्ये सम्वत् तं नृसिहमहं अजे॥ १॥ बिश्वसरोविसगोदि नवलक्षग्रास्त्रक्षितम् । श्रीकृष्णारूयं परं धाम जगद्वाम नमामि तत् ॥ २॥ माध्यवो माध्यवावीशो सर्वसिद्धिविधायिनो । वन्दे परस्परात्मानो परस्परतिप्रियौ ॥ ३ ॥ सम्प्रवायानुरोधन पौर्वापय्यानुसारतः। श्रीभागवतभावार्थदीपिकेथं प्रतन्यते॥ श्रे॥ काहं अन्दर्मतिः केदं मधनं क्षीरवारिश्वः। कि तत्र परमाणुर्वे यत्र मुज्जित मन्दरः॥ ६॥ मुक्त करोति वाचार्छ पङ्ग लङ्कारते गिरिम् । यत्रकपा तमहं वन्द्रे परमानन्द्रमाध्रवम् ॥ ६ ॥ श्रीमद्भागवताभिष्यः सुरत्यस्तासंकुरः सस्त्रातिः स्कन्धेद्योदश्मिस्ततः मिन्लस्यक्रियालवालोदयः। द्वात्रिशिक्तित्र यस्य विलस्पेष्णाकाः सहस्रागयलं पर्गान्यष्ट दशेष्टदोऽतिस्रलभो वर्विसे सर्वोपरि ॥ ०॥

अथ नानापुरागाशास्त्रप्रवासीश्चित्रप्रसक्तिमक्तममानस्तत्र तत्रापरितुष्यकारद्दोपदेशीतः श्रीमद्भगवद्गुगावर्गानप्रधानं श्रीमागवतशास्त्र व्यक्तिस्युर्वेदव्यासस्तरप्रतिषाद्यपरदेवतातुस्मरपालक्षर्याः मञ्जलमाचरति जनमाद्यस्योति । परं परमेश्वरम् । श्रीमद्वीति व्यायतेर्लिङ क्कान्द्रसं ध्यायेम इत्यर्थः ॥ बहुवचर्न ज्ञिष्याभिप्रायकम् । तमेव स्वरूपतटस्यलक्ष्मााश्यामुपलक्षयति । तत्र स्वरूपलक्षमां सत्यमिति । सत्यत्वे हेतुः यत्र यस्मिन् त्रयाणां मायागुणानां तमोरजःसत्त्वानां सगीं भूतेहिद्रयहेवतारूपोऽम्हणा सत्यः—यत सत्यंतया मिण्यासर्गीsिक्स्यवत् प्रतीयते तं पर्द सत्यमित्यये:। अत्र ह्यान्तः —तेजोवारिमुदां ग्रंगा विनिमयः व्यत्ययः (व्यत्यासः) अन्यस्मित्रान्यात्रमासः स्ययाधिष्ठानसत्त्वया सत्यवत प्रतीयते तद्वदित्यर्थः। तत्र तेजसि वारिबुद्धिमेशिचिकायां प्रसिद्धा सृद्धि च काचादी वारिबुद्धिरित्याहि स्र प्रणायश्रम् । यद्वा तस्यैव परमार्थसत्यत्वप्रतिप्राद्दनाय तदितरस्य ग्रिप्र्यात्वमुक्तम् । यत्र मुवेषायं त्रिसर्गो न वस्तुतः संवितिः । यथायमञ्जूषाधिमस्वन्धं वारयति खेनेव धारमा महसा निरस्ते श्रहकं कपटं यस्मिन् तम् । तटस्थलक्षणमाह जन्मादीति । अस्य यत्रत्यनेन प्राप्तमुपाधिमस्वन्धं वारयति खेनेव धारमा महसा निरस्ते श्रहकं कपटं यसिमन् तम् । तटस्थलक्षणमाह जन्मादीति । अस्य यत्रत्याः। विश्वस्य जन्मस्थितिमङ्गं यतो भवति तं भीमहि। तत्र हेतुः अन्वयादितस्तत्र्य अर्थेषु कार्येषु परमेश्वरस्य सञ्चेषाः ज्वयात् अकार्येश्यः विश्वस्य जार्यातरेकाच । यद्वा अन्वयशन्देनातुन्तिः इतरशन्देन स्थान्तिः । अतुन्तत्वास् सद्यं सम्र कार्यां सृतस्यमारियत् । खपुरुपादिभ्यस्तद्वयतिरेकाच । यद्वा अन्वयशन्देनातुन्तिः इतरशन्देन स्थान्तिः । अतुन्तित्वास् सद्यं सम्र कार्यां सृतस्यमारियत् । खपुरपान्द रण व्यावृत्तत्वातः विश्वं कार्य्ये घटकुगडलादिषादित्यर्थः । यद्वाः सावयवत्वादन्वयव्यतिरेकाश्यां यदस्य जन्मादि तद्यतो भवतीति सम्बन्धः । ( 29)

#### श्रीधरस्यामी।

तथान श्रुतिः यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जानानि जीवन्ति यद प्रयन्त्यभिस्विश्चन्तित्याशा । स्मृतिश्च—यतः सर्वाशा भूतानि भवन्त्यादियुगागमे । यस्मिश्च प्रकथं यान्ति पुनरेव युग्यस्य इत्याशा । तिर्दे कि प्रधान जगत्कारयात्वाद ध्ययमित्यमिमेतं नत्याद अभिक्षो यस्तं स ईक्षत लोकान्तुन्जा इति स इमान् लोकानम्जतेत्यादिश्चतेः ईक्षतेनांश्च्यमिति न्याया । तिर्दे कि जीवः स्याक्षत्याद् स्वराट् स्वेनेव राजते यस्तं स्वतःसिखद्वानमित्ययः । तिर्दे कि ब्रह्मा हिर्वयगमेः समवन्तेताप्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत् इति श्रुतेः । नत्याद्व ने इति । आदिकवये ब्रह्मयोऽपि ब्रह्म वेदं यस्तेने प्रकाशितवाद्ध । यो ब्रह्मायां विद्याति पूर्व यो वे वेदांश्च प्रदिश्चाति तस्मे तं द देवमान्त्रवुद्धिप्रकाशं मुनुश्चवे शर्यमादं प्रपण्च इत्यादि श्रुतेः । वश्यति हि प्रचोदिता येव पुरा सरस्तती वितन्यताऽजस्य सतीं स्मृति हृदि । सलक्षयाम् प्रापुरसूत् किलास्यतः स मे ऋषीयाम्वभः प्रसीदतामिति । नतु ब्रह्मा सुत्रपतिचुन्तस्यायेन स्वयमेव वेदगुपलभताम । नेत्याद्व यद्यस्मित् वर्षाया सुर्योऽपि मुद्यान्ति । तस्माद्वस्यायोऽपि पराधीनश्चानत्त्वात्त स्वतःसम्बद्धानः परमेश्वर एव जगतकारयाम । सत्यव सत्यः असतः सत्ताप्रदत्वाच परमार्थसत्यः सर्वद्वतेन च निरस्तकुद्दकस्तं धीमद्वीति गायस्या प्रारम्भेया च गायस्याख्यव्यक्षित्याक्षपमेतत पुरायामिति वर्शितम् । यथोक्तं मत्स्यपुरायो पुरायादानप्रस्तावे । यद्योधिकृत्य गायस्त्री वर्षयते धर्मविस्तरः । वृत्रासुरवर्षापेतं तद्धागवतीमध्यते । लिखित्वा तथा यो दद्याद्धमित्वसमित्वतम् । प्रोष्ठपद्यापेतं स्वत्यक्षयामिति ॥ प्रमुत्याच्वस्ति । प्रमुत्याचेतं प्रति श्रीगौतमवचनम्म । अम्बरीव श्रुक्षमोक्तं नित्यं भागवतं श्रुष्ठ । परस्व समुक्षेनापि यदिन्दिस् भवक्षयमिति ॥ अत्यव भागवतं नामान्यदित्यपि न श्रङ्कतीयम् ॥ १ ॥

#### दीपनी।

इह खलु परमकार्शामकः परमहंसपरिवालकाचार्यः श्रीश्रीधरयतीन्द्रः प्राद्रिप्सतायाः श्रीमद्भागवतदीकाया निर्विच्चन परिसमाप्तिप्रचयगमनिश्चाचारपरिपालनफलं विशिष्टाचारात्त्रमित स्मृतिपरिकिल्पतश्चितिवाधितकर्त्वन्यताकं स्वामिमतदेवतातस्वानुसन्धानात्मकः
मङ्गलमाचरित वागीशा यस्य वदने इति । देशा विभिनिषेष्रयोः जीवान् नियमयतीति वेदलक्षणा वाक् यस्य मुखे वर्षते । अनेन तद्वद्वानुसमरणात् अपराविद्यावाप्तिः वेनिता । यदुर्सिः श्रीहेमरेखाकपेणास्ते इति सिचनमूर्ती भगवित चिज्जदुमागाभावेन देहदेहिमाणसम्भवेऽपि यद्वदनादिस्मरणात् इष्ट्रसाधनसम्पल्लामसिद्धिः वेनिता।तावता विद्यालक्ष्मीश्यां जिवगेलामसिद्धेस्तद्वदनादि समरणात् जिवगेलामसिद्धिरिति । यस्य हृदये संविद्य परा विद्या आस्ते इति तद्भजनाद् वद्यात्मेक्पक्षानक्षपपराविद्यावाप्तिरिति मुक्तिसिद्धः । अत्र
लामसिद्धिरिति । यस्य हृदये संविद्य परा विद्या आस्ते इति तद्भजनाद् वद्यात्मेक्पक्षानक्षपपराविद्यावाप्तिरिति मुक्तिसिद्धः । अत्र
हृदयसंविद्येरभेदात पूर्ववद् व्यपदेशः । तं भगवन्तं श्रीनरिसहस्रुप्ति कीर्त्तनमनादिशिः सेवे इत्यर्थः ।

पर्व निर्मुणात्वेन प्रणम्य तमेव बहुश्रुनिस्मृतिसिक्द्दिरहराहैततप्रदर्शनपूर्वकं समुग्रात्वेनाभिवन्दिति माधवो माधवाविति । वन्द्रने कार्गा सर्वेदिक्षिविधायिनाविति । हेनुगर्भविद्येषणामेतत् । नन्विश्वर एक एव सर्वेद्याक्ष्मिकः कायमुभयोरी हात्वं बद्धतो व्याधातादिति कार्गा स्वेदिक्षिविधायिनाविति । वदस्यर्गतिष्ठिक व्योगिद्दस्ति क्ष्मिनं शक्तार्थयोरिव नाममान्नं तथोगिद्दस्ति क्ष्मिवेद्यविद्यावित्यर्थः ॥
भक्तकृतेनैकतरस्य नमस्कारेगोभौ क्षीतौ सवतः परस्परतादात्स्यादित्यर्थः ॥

भक्तकृतनकतरस्य गमरकारणामा आता सबतः परस्परतावारकार क्षेत्र सम्प्रदाय इति भरतः, । अनुरोधी अनुष्ति स्रवारः । स्राच्याक्षमं प्रतिज्ञानीते सम्प्रदायानुरोधेनेति । गुरुपरम्परागतसदुपदेशः सम्प्रदाय इति भरतः, । अनुरोधी अनुष्ति स्रवारः । तथान्य गुरुपरस्परागतसदुपदेशानुवन्ते वृतोऽस्मि किन्त्वेषं वृद्धेष प्रव नृत्ते तथान्य गुरुपरस्परागतसदुपदेशानुवन्ते वृत्ते। किन्नान्य सम्प्रदायविदः — सम्प्रदायोऽत्र मह्मादिपरम्परागतान्नेत्र स्वत्र वृत्ते प्रति प्रीवीपर्यान्त सम्प्रदायोऽत्र मह्मादिपरम्परागतान्नेत्र स्वत्र स्वत्र प्रति प्रति प्रति प्रति प्रति स्वत्र स्वत्य स्वत्र स्वत्र स्वत्य स्वत्य

#### होपनी ।

**अन्यमंदिममञ्जीनाय तद्ववीस्थाने सायोग्यतामाङ्कादमिति।।** अवस्थान प्रमाणिक के १९०७ । वे वेदारण के विकास के विस्तर्य

तत्र भगवदक्तपेया सर्व भवतीति स्वयन पुनस्तमाभवन्यति स्कृतिति । सूर्व सामान्यतो वाक्यकिहीनं श्रुवमिति वा । एक्सामान न्यतो गतिश्रोतिश्वन्यं अवश्रामिति वा मिदि पर्वतं स्वमेकमिति वा हिल्ला स्वार्थकार स्वार्थकार हिल्ला है। के प्रवार से स्वार्थकार स्वार्थकार स्वार्थकार है।

कथिततः पुराशां कपकारुद्वारेशा स्कन्धाध्यायादिसंख्यां सूचयन् स्तीति श्रीमदिति। श्रीमद्रेमागवताभिधाः स्रेरतका करप्रदेशा सर्वान वरि सर्वेद्यास्त्रोपरि वर्वेचि अतिदायन वर्चते । मधम्मृतः तारांकुरः । तारुः प्रग्राके सर्पय मंकुरः प्रशेष्टी यस्य साम सक्रानिः सतः नारायगात् जनिरुत्पत्तिर्यस्य सः। किञ्च द्वादश्मिः स्कन्धेः स्यूलशः सामिः ततः विस्तृतः। प्रविलसन्ती उद्विका या अक्तिः सा एव आलवालः तस्मिन्नव उदयी यस्य सं इत्यर्थः। आलवालक्ष तस्मूल जलरक्ष्यााय मृदादिरचितपरिधिविद्योषः। पुनस्तस्यैवार्थती विद्येष-शामाह द्वाप्रिशत्त्रिशत्त्र यस्य विलसच्छाखा इति । वर्सन्ते इति शेषः । तथाहि द्वाप्रयामधिका विशत् द्वाप्रिशत् शत्त्रे शत्रेश्व शत्रश्च शतानि द्वात्रिशम् अयथ्य शतानि च तेषां समाहारः द्वात्रिशत्तम् । एव सति पञ्चत्रिशद्धिकशतत्रयाध्यायाः (३३६) मवन्तिति महामहोपाध्यायगोपालभट्टाचार्यकतव्याख्यालेशाख्याटिप्पनी तत्रादी द्वात्रिशदित्यत्र शाकपार्थिवादयश्चेति समासः। तन् शतमित्यत्रैकशेषात् शतानीति । तता द्वात्रिशच त्रयश्च शतानि चति समाहारद्वनद्वेनैकत्वमिति क्षेयम् ।कञ्च-द्वात्रिशच त्रयश्च शतानि चिति त्रिपदद्वन्द्वः कपिञ्जलानालभेतेत्यत्रेवानिद्धौरितविद्येषं बहुत्वं त्रित्वं पर्यवस्यति । तेन पञ्चित्रं दादिधकद्यतत्रयसंख्यकाः शास्ताः इत्यर्थः । समाहारोत्तरहरुद्धे तु त्रिशतीति स्यादिति वत्साहरेगालीलारम्भे प्रपश्चितम् । एतेनाघासुरवधादाध्यायाभावाभिप्राये द्वात्रिशत् पदमिति केनचित्रुत्प्रेक्षितं प्रत्युक्तमिति भागवतदाकायौ धर्मसिद्धादिनिवन्धकारः श्रीकार्शानाथोपाध्यायः। अपि च-द्वाप्रिशदिति शासपार्थिवादीनां सिद्धये उत्तरपदलोपस्योपसंख्यानम् (पां २, १, ६०, ) इति वात्तिकेन मध्यमपदलोपि तत्पुरुषसमासं कृत्वा द्वाञ्यान मिश्रिका त्रिशांद्रति विग्रहे साधनीयम् । तश्च पृथक् पदम् । ततः शतमित्यत्रैकशेषात् शतानीति । ततः त्रयश्च शतानि चति वहुप्रकृति-कहुन्द्वे बहुप्रकृतिरेव द्वन्द्व एकविंदियनुशासनादेकत्वं तथाच त्रिशतमित्युत्तरं च शब्दस्थापि सार्थक्यम् । अथवा शतानीत्यत्र कपिञ्च-ला लभनन्यायेन अनिर्गातिबद्धत्वस्यानवस्याभिया त्रित्वमात्रे पर्थवसानात् त्रिशतमेव बेयमिति नव्यस्रिगाः । कंचिस् द्वात्रिकात्त्रिका-तमिति पदान्तर्गतशतशब्दस्य त्रित्वपर्यवसायित्वस्तिकारभीरवो दशमस्कन्धस्याधासुरबंधावि ब्रावशास्त्रभयागाम्भागवस्रतं मन्यन्ते । अहो किमेषां मनोराज्यविज्ञुम्भकाणां कूपमगडूकानां साहसः । तैः कि ऋग्वेदीयमन्त्रमागवतस्त्या वापदेवीयमुक्ताफलहरि-कीलादिग्रन्थोऽपि नाद्दि । पर्यन्तु तावत् ऋग्वेदीयमन्त्रभागवतस्य वृन्दावनकार्यहीय द्वितीयसर्गे हि क्रावति वसुपत्नी बस्नामि-त्यार्थ्य यस्मिन् वृक्षं मध्वदः सुपर्णानीनि (१०. ११, १२, १३, १४, ) मन्त्रान् तदीयं नीलकगठकतटीकाश्च किञ्च वापदेवीयमुक्ताफले विष्णुभक्तानामञ्जूतरसंकथने दशमाधङ्के तदस्तु में नाथ सं भूरिभाग इत्यादिना गृहीतान् दशमस्कन्धीय चतुर्दशास्यायस्य विश्वासम स्ठीकावधि चतुस्त्रिशत्तमस्ठोकपरयैन्तान् तदीय केवल्यदीपिकाल्यटीकाश्च तथा तदीयहरिलीलाग्रन्थे दशमन्कन्धवर्गानग्रधष्ट्रने बध्य वस्तवकयोस्त्याघासुरभोगिनः। वत्मचौरब्रह्ममोद्दो ब्रह्मगा स्तवनं हरेरित्येकाददादलोकम् मधुसूदनसरस्रतीकृततद्दीकाञ्च । वस्तुतस्तु तेषां मते द्वात्रिंशत्त्रिशतमिति पदान्तर्गतित्रिशतपदमेव न सिद्धात् शतत्रयबोधनाय समाहारद्वनद्वातिरिकान्यममासामाप्त्या तत्साध-नस्य जाराम्यङ्गायमाणात्वात् सकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्ट(पां २,४,१७,) इत्यनुशासनेन समाहारद्विगी द्विगोश्च (पां २, १, २३, ) क्ति कीपो दुवारत्वेन त्रिलोकी पञ्चश्रलीतिवत त्रिशतीति प्रयोगापत्तेः। किञ्चात्र बहुतरप्राचीनपुस्तकसम्मत द्वादशस्कन्धीयद्वादशाध्या योकनाघासुरवधो धात्रत्यादिलीलानुवादकनाष्टाविदातितमदलोकेनापि तल्लीलानुवादो एइयते। परमहस्त्रियादि प्राचीनटीकाकारागारं सम्मतिरपि दरीहर्यते। श्रीश्रीधरयतीन्द्रोऽपि ददामस्कन्धीयप्रथमाध्याये स्कन्धानुक्रमश्रीकाकथने कृता नवतिरध्याया इति एवं नवतिर्ध्याया इत्यनन च दशमस्कन्धस्य पुनःपुननवत्यध्यायान्वितत्वमुक्ता प्रोक्ताध्यायत्रयस्यापि व्याख्यानमञ्जाकर देति । तथाच व्याख्याल्यास्त्रीक्तरेत समीचीनेति सर्वे चतुरसम्। पुनर्थतो विशेषमाह सहस्रास्त्रीति। अष्टदशं च संहस्रास्त्रीत पृथक्पदे नान्वयः। समासे अष्टादराति स्यात् । अष्टदश सहस्राणि अलं भूषणखरूपाणि पणाति इलोकस्थानीयानि यस्य भवन्तात्यध्याहारः । अत्र तु समाल जहार गत् रवार । जहार सहसाय जल मुग्यालकाराय ग्रामा प्राप्त । जन तु सुविख्यातमहामारतादि टीकाकारमहामहोपाध्याय नीलकगठादि बहुपाचीनस्रिसमातः काशीकारमिरादि सहदेशाप्रचलितवेद-व्यासामिप्रताष्टादशसहस्रहोकसंख्याकमाऽयं प्रत्येकम् उवाचान्त एकेकश्लोकः आर्ग्यादि नानाविधच्छन्दसां गद्यानां पुष्पिकागाञ्च व्याज्ञादक्षरगंगानया ये अनुष्ट्रप्रलोका भवन्ति ते प्रसिद्धानुष्ट्रप्रलोकाश्चेति । कार्यानाथोपाध्यायेन चग्रहीसप्तरातीपाठकमेगापि अष्टादशसहस्रसंख्याः परिगश्चिता इति तद् व्याख्याने स्पष्टम् । पुनश्च कथम्भूतः इष्टदोऽति सुलमश्चिति ।

पर्व मङ्गलाचरगाविक कृत्वेतत्तपुरागाकथन व्यासस्य प्रवृत्तः कारगामाह अधात । नारकीपवेशतः एतत्रकम्धीय पश्चमाध्यायोक-प्रकारेगा नारदोपदेशादित्यथैः। परमित्यस्यार्थः परमेश्वरमिति स्वरूपतटस्थलक्ष्मेगाद्यां तस्येव बोधिसत्वासः। तथाचं श्रुतिः—तमीश्वर अना परमें महिश्वर ते देवतानी परमञ्ज देवतम । पति पतीनां परमं परस्तात विदाम देव सुवनेशमी उगमित ( श्वेताश्वतरापनिषाद ६ अं छ में )। ध्यायतेलिङ च्छान्दसमिति। अत्रोपाध्यायः—लिङ विधिलिङ छिन्दसमिति। ध्येचिन्तायामित्यसमात स्थल्ययो वहुळ-अ ए त / प्रसीपद्द्यत्यंगादात्मनेपदं छन्द्रयुभयथेत्युभयस्त्रायां सावधातुकत्वातं सीयुटः सकारलोपां आद्धेत्रातुकत्वाच्छवभावः ामात उ बाहुल्याः सविद्यार्थात्वाभावाद् बहुबचनमात्मनि सम्बगेव बस्मदी ह्योख (पा १, २, ५९) इति पक्ष तहिथानात् । तथाच श्रीधरसान खलु कर्षः विशेषकामिति न शहरीयम् । यतोऽस्मदो द्वयोश्चेति सूत्रम् अविशेषशास्मच्छन्दोत्तर बहुवचनप्रत्ययस्यकःवार्थः मिना । शर्टा वर्षाचा सम्बद्धित वर्षा वर्या वर्षा वर्ष लक्ष्याप्राहणाः व्याप्तात्रहग्रहग्रहण्य शास्त्रानिमस्यात्। किञ्च अविद्याषग्रहणास्यद् एकत्वस्पद्याययार्थेवत् वहुवचनं विहितं तदीप-सात राष्या पर । विद्या कि विद्या स्थापन । प्रविध स्थापन विद्या के स्थापन । विद्या स्थापन विद्या स्थापन । विद्या स्थापन विद्या के स्थापन । विद्या स्थापन स्थापन । विद्या स्थापन स्यापन स्थापन स्यापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्

### दीपंनी ।

स्पष्टमेव तस्य चारोपितरूपत्वादिति । अतएव धीमहीत्यत्र बहुबचनं विष्योमित्रीयमिति श्रीखरस्वामिति श्रीखरस्वामिति । कंमितिसुंमीचीनमिति दिस् तियोहि धांमहि ध्यांयमें समस्तितीयामित्रायणि बहुत्वसिति माग्यतच्याख्यालेशाख्यारिज्जन्यामाध्यलोके गायञ्यर्थव्याख्याने सुविख्यातमहामहोपाध्यायगोपालभट्टाचार्थः। श्रीसहीति बेहुवंचनं कालदेशपरस्परास्थितस्य सर्वस्याहिः तेलकार् व्यताभिप्रायेग्रामन्तकोदिब्रह्मार्यद्यान्तरयाभिग्राां पुरुषांग्राधिविभेर्यक्षेभगवत्येषु श्रेयानस्याभिधानादिति श्रीमद्भागवतसन्दर्भस्य द्वतीय-सन्दर्भे विख्यातवामा द्वेतवादाचार्यः श्रीजीवगोस्वामीणिधीमिहि ध्यांग्रमं ब्रह्मवस्रतेन कालदेशपरम्पराप्ताम् सर्वानेव जीवान् स्वान्त्री-द्वीकृत्य खाश्चिया तान् ध्यातमुपादशक्षेत्रः क्रोडीकरोतीति सारार्थदर्शिन्याख्यभागवतटीकायां विश्वनाथचक्रवर्त्ताः । खक्क्ष्यतदः स्थलक्षाणाश्यामिति । तदुक्तं--खरूपं तटस्थं द्विधा लक्ष्मां स्थात् खरूपे प्रवेशात् खरूपेऽनिवेशात् । खरूपस्य सिविद्धिधा लक्ष्मणाङ्गाः यथा काकवन्तो गृहाः सं विलश्च इति । स्वसम्पंत्तिसमप्रकत्वे सतीतरव्यावर्तकत्वं स्वरूपत्वम् । यद्वा यत् स्वरूपान्तगतं सत् इत्युक्ताः वृत्तत्या लक्ष्यं वोधयति तत् स्वरूपलक्ष्यां तथा गाः साम्बाश्यद्वादि । स्वरूपाप्रविष्टत्वे सति विशेषगान्तरं संसूच्य इतरव्यावर्तकत्वं तटस्थातम् । यद्वा यावलुक्ष्यकालमन्वस्थितत्वेन खरूपानन्तर्गतं सत् यलुक्ष्यं इतरव्यावृत्तं बोधयित तत्तटस्थलक्ष्यां यथा गोविद्योषस्य अलङ्कारविद्योषादि देवदत्तगृहस्थकाकादि वा । प्रकृते सत्यं ज्ञानमानन्दश्च परमश्वरस्वरूपमव सत् असज्जड्दुःसप्रपञ्चन्यावृत्ततया बोध-यतीति सक्षपलक्षमां सम्पद्यते । जगज्जनमादिकारमात्वं तु तदस्थलक्षमां न हि तत् सर्वदास्ति प्रलयादिकाले तहमावात् । अतः सक्रपा-नन्तर्गतं सदाकात्वादिव्यावृत्तमीश्वरं लक्षयतीति तटस्थलक्ष्मणामिति। तत्र स्वरूपलक्षणस्य मुख्यत्वात् आवृत्तिक्रममुलङ्क्य प्रथमं व्यान क्यायते तत्र स्तरूपलक्षग्रामिति । सत्यपद ज्ञानानन्दयोरपलक्षग्राम् । यत्र यस्मिन्नधिष्टाने इत्यर्थः । भूतेन्द्रियति । तम सर्गः आकाशादि-भूतपञ्चकं रजःसर्गः कर्मेन्द्रियपञ्चकं पागापञ्चकञ्च सत्त्वसर्गः ज्ञानेन्द्रियपञ्चकं प्रागापञ्चकञ्च सत्त्वसर्गः ज्ञानेन्द्रियपञ्चकम् अन्तः करण-चतुष्ट्यं तत्तादिन्द्रियाद्यधिष्ठातुदेवताश्चेति विभागः। उपाधिसम्बन्धमिति आधाराधेयभावम्। तथा सति द्वैतप्रसङ्गः स्यादिति भावः। खेनति । खेनेवः खखरूपेगावेलर्थः । धाम्नेलस्यार्थः महस्ति । महसा तेजसा चिद्रपंगाति यावत् । कं महासुखं पटते आच्छादयतीति कप्टम् अज्ञानमित्यर्थः । माययैव भेदो भवति सा च माया अज्ञाहिच द्व पे पत्स्मित् वस्तुतो नास्त्येव कृत उपाधिप्रसङ्ग इति भाषः। लक्ष्मान्तरं प्रतिजानीते तटस्येति। तत्र जन्मादीति जन्म उत्पत्तिराद्यिस्येति तष्रगुगासंविद्यानी वहुवीहिः। जन्मस्यितिभङ्गं समाहारः समासार्थः समाहारे नपुंसकत्वेकत्वयोः सत्त्वात । जन्मादीति नपुंसकेकवनम् । यत इति पञ्चम्यर्थे तसिनिमित्तोपादानोभयपरः। यस्मात् परमेश्वरात् कत्तुरुपादानाञ्च भवतीत्यथः। यत् इत्यव्ययनिर्देशेन कारगास्याविकतत्वं ध्वन्यते। तत्र परमेश्वरस्योभयविश्वकान रशात्वे हेतुः अन्वयादिति । यत्सत्त्वे यत्सत्त्वयः यदभावे यदभावो व्यतिरेकः यथा भृदः कुलालस्य वा सत्त्वे घटोत्पत्तिसत्त्वं तदः साब तहभावाधिकरया तन्त्वादी घटोत्पत्यभाव इत्यन्वयव्यतिरेकी प्रत्यक्षी मृदादेः कार्यात्वे घटादेः कार्यत्वे च मानम्। तथा यत्र यत्र सद्भेगा प्रामेश्वरस्य सत्त्वं घटः सन् इति प्रत्यक्षतो हर्यते तत्र कार्यत्वं यत्र ख्षुष्णादौ तहभावः खपुष्णं सत् खपुष्पमस्तीत्यस्थाः भावात तत्र। सार्द्यत्वस्याभाव इति अन्वयुद्धातिरेका ईश्वरस्य कार्गात्वं जगतः कार्यत्वश्च बोधयते इत्यर्थः । अत्रार्थपदेनी कार्यार्थकेत अन्वयप्रहाधिकरणामुपाद्धं व्यतिरेकप्रहाधिकरणं खपुष्पादिक्नतु व्यतिरेकार्थकादितरपदादाक्षेपलब्धमिति बोध्यम् । नेतु मुदादिव्यतिरेन जन्म अधा क्या क्या विकास स्वर्थ विष्णादिकं त्वलीकम् तुपाद्यं तस्य कथं व्यतिरेक्षप्रहाधिकरणाता इत्यपितोषादाह यहेति। न्त्रवास्त्रप्रभाव । प्रमुख्यादिरथे: पारिभाषिकः तं विहाय अवयवार्थयोगी यौगिकोऽर्थः परिगृह्यत् इत्यर्थः । अनुवृत्तिस्तादास्त्रयेन् प्रतितिः । ब्यांकृतिभेदः । अर्थेषु कार्यकर्गाषु कारणस्यानुवर्तमानत्वे कार्यस्य व्यावृत्तत्वश्च दश्यते तेन यदनुवर्तमानम् तत् कारण यह या वर्त तत कार्यमिति निश्चेतन्यम् । सुनगादि कारगां हि कारगावस्थायाम् अनुवर्तते इदं सुवर्गाकुण्डलं सुवर्गामिति यहत्याहरा प्रतीयमानत्वात् । कटककुराङ्कादि कार्यन्तु परस्परं कारगावस्थायाश्च नानुवर्तते कुगडले सुवर्गापिगडे च कटकादितादा-त्रविद्यभावात । अतः कुगुडलं कटकं न सुवर्गापिगडाः कटकं नेत्यवं भेदेन प्रतीयमानत्वात स्यावत्तत्वं कार्यस्य । एवं घटः सने पटः सन् इति विश्वकार्ये सद्पं ब्रह्मानुवस्ति । घटाहिकार्यन्तु पटादी कार्ये सृष्ट्युष्टे कारगावस्थायाश्च नानुवस्ति सृष्टिप्राक्कालिकं ब्रह्म सत् कार्याव नियावि भेदमतीतेः। अतो : व्याव्यत्वात विश्वं कार्यं सद्भूपं ब्रह्म कार्यामिति भावः। मनु सिद्धान्ते निमित्तोषाद्वान थया गायाविधवारगात्वं परमेश्वरस्येष्टम् । अतुवृत्तिश्चोपादानस्यैव मृदादेघटादौ रश्यते न तु निमित्तस्य कर्त्तुः कुलालादेः अतोऽज्ञुवाचि-त्वानाना कार्यकार्यामावसाधने परमेश्वरस्योपादानत्वमेव सिद्धत न तु कर्तत्वमपि किश्च पूर्वमीमांसकैः सृष्टिप्रह्यानश्चपाः ०पाष्टा १५०० विकास मार्थ क्यां तदस्थलक्ष्मां स्यादित्याशङ्कायामाह यहा सावयवत्वादन्वयाते । अत्रात्वयत्वरपदाः मात् जगतो जन्मादेशसिको जन्मादिकारमात्वं कथं तदस्थलक्षमां स्यादित्याशङ्कायामाह यहा सावयवत्वादन्वयाति । अत्रात्वयत्वरपदाः भाव अस्य अस्य अस्य विकास कार्याति । तेनार्थे विवति वहुव चनव्यक्षितंत्रकात्र सह चारितसावयवस्यादिहेतीरुध्याहारः प्रयाम । तथा खे अर्थेषु घटपटादिका ग्रेषु आत्मनि च गृहीतान्वयद्यतिरेकवातिकस्य सावयवत्वादिहेतोरस्येतिपद्वाड्यक्यति प्रक्षेत्रस्य स्रुच्यत । । सीविकार्गासामग्रीवळाद् यज्ञांत्मावि निश्चितं तद्यतो भवति तं श्रीमहीत्यत्वयः। तत्र हेतुपुरः सरा व्याप्तिः सन्ययव्याप्तिः साध्यासामपुरः सरा साह ना प्याति । तथा च प्रश्रोतः चरं विश्वं जन्माहिमत् सावंगवत्वात्। यत्र यत्र साव्यवत्वं घटापटादो तत्र जन्मादिमसम्। यत्र जन्माहि व्याताच्यापाः इसत्वाभावः सारमति तत्रासात्रप्रयत्नाभावः।तथा पृथिव्यादिजगतोऽपि सावयत्रत्वाजन्मादिमस्वसिद्धिः। एवं पृशिव्हिन्नत्वस्यस्वादिहेतुस्तः ।६भरवा नाचा । प्रमाणका । प्रमाणका । प्रमाणका । प्रमाणका । देशका । प्रमाणका । स्य प्याप्त साधनीयमियायः । तदाह्य तथा च श्रुतिरिति । यतो वा इमानीति तैत्तिशया श्रुतिः ( चरमवद्वया १ मनुवानयस्य )। श्रुत्यच राज्या शतानं म स्यतिरेकस्याप्तिकम् इति बेदान्तिमते स्यतिरेकपदेन स्थीपित्तर्भेशा तथा व सानयवत्वाद्यन्यश्रुपपत्या अन्वयवना तथा व सावयवत्वाद्यन्य इत्यर्थः । यतो निमित्तोपादानरूपात् परमेश्वरात् भूतानि आकाशादीनि स्थूलशरीरान्तानि जायन्ते आताः व यजन्मादि स्थित्वाति स्थूलशरीरान्तानि जायन्ते आताः चा यज्ञारणाच्या निविद्या पाष्यापाळनाविकं छमन्ते प्रयन्ति नश्यन्ति सन्ति यदमिसंविशन्ति परिमस्तादात्स्येन प्रविशन्ति तद् असेतिः नि सन्ति येत तीविद्या पाष्यापाळनाविकं छमन्ते प्रयन्ति नश्यन्ति सन्ति यदमिसंविशन्ति परिमस्तादात्स्येन प्रविशन्ति तद् असेतिः ांन सारत प्राप्त सम्ब त्यचामबदिति (तेनिरीयोपनिषदि आचन्छ्यां ६ अनुनातस्य ६ श्रुत्येकदेशः ) तदात्मानं स्वयमकुरुत ( उत्त

7

#### द्वीप्रजी

चलुर्वी १५ संगुवाकस्य त्यावाक्ष्रत्येकदेशः॥ेर्धत्याविश्वत्यन्तरसंयहः कविः। तत्र वस्त्रविक्रिप्युक्तक्विति । तामास् व्यवः सर्वाणीति र्वस्तानारतीयकास्तिमक्रीण वानेवसीक्षरे विष्णुसङ्ग्रमाममेकर्षे १३ विवर्तमः मा नतुः वयं श्रुसिरीश्वरस्य जगकुपासनस्वादिपरा विस न्तर्दयोगोहानंत्यार्दशेनान्द घटांदिकारके हिर्मुदाय वेतनोपोद्रातके ४६वरे केत सोहजारहे आहंमकलगतस्तत् सहशे विश्वां अधानमेच उपाह द्वित्यं क्षेत्रपुर्वषस्त्रिधानमात्रीण । प्रधानं ऐसंव्यमेत्रा ज्ञातीकारेणाः भेत्रक्तिकतंत्रः कर्तुरीध्वणपेक्षाः तस्मान् व्यतः प्रधानानः भूतानि सायम्बे प्रवानमेवारमाने जगद्राकीरेग्य किरुते महोत्रं भ्रातिभियेषि प्रथानमेव । जगत्कारग्रीत्वेन भ्रातिपाचते हति राज्यते त्रहाति । प्रधानं त्रिग्राणीत्सः क्षम् अस्येकामिरयर्थेणसिद्धीन्तमासः निति। अभिका असंक इसंप्रीण प्रमांग्रामिका इसित इसित इसित (वितरेयोपनिषादिण स्रोपकेण बाह्यग्रामा)म स सर्वेकः खामान्यादतमा एक अस्त्रा के ब्रुव को अपना कालो चित्रवाति ति । या बता वित्र के प्राप्त कालो सित्रवाति मार्योद्धनीयं सर्वकेमाध्वासाव्यात् । । त्रांप्राच्य श्रातिम् व्यापादार्था ज्ञातम् । ज्ञातम् व्यापादार्था ज्ञातम् । ज्ञातम् व्यापादार्था ज्ञातम् । कायेगोत्याक् व्लोकात् : अस्म प्रमृतिन् । व्याग्रिमिफकोपस्रोगेस्थानम्तान्वस्ताः स्विमेन्येथेशाःसंस्मानिति॥ ऐतरेये १ खंगते। राजार्धः ग्रामः)ग्राणतमारोध्य स्थ्रहमान् लीकार्त्रण्यमृंजतंष्क्तप्रयः पश्जैरात्कारणार्थ्य देशित्रश्रीयम्भिज्ञ देशे प्रशास्त्रमेनानाः स्वितिस्थे त्तामेन क्वंगरीकारेगांत्र क्रिकेट के बाद्यानांम केंग्रह में वादक्रयोगांद क्रिकेट का विवास क्यों क्रिकेट वादे हुए। तर्ने विवास वादे क्रिकेट क्यों विश्वमेरीकाडरव्छ्वाक्ष्मप :सर्पाविकामवानवंकिद दर्शनांवर्गावाविक्ष्मांक्वाविक (विश्वारी के कोर प्रोप्क) स्वेत्रेथानीस्ताः प्रक्रात्र भर्षात्रीमिनि तथाऽसुरात् सम्भवति विश्व "मित्यार्विश्वसा निजमहिसीरकस्यैकर्भिवरस्योगीर। तत्वसम्भवीक्तेश्रोतिः मानेः। विस्तरीऽत्राकरे कृष्टेयाणम्यायाः नेष्ठ्रत्यंवनियोग्यकसूत्रसम्दाया विद्वानियोग्यन्त्र अमिति दात्रियकमीमासायाम् आदिताः एश्वेमाधिकरयो सिद्धान्तेस्त्र अस्यार्थः—म साङ्ख्योभिमतं प्रधानं जगत्कारणामिति।प्रतिकाम सर्वश्राक्षिणिति।हेतुगर्भ विशेषणाम् अशोद्धत्वात् विद्शान्दाप्रतिपाद्यत्वाः दित्यथः कृतो वदशब्दाप्रतिपाद्यत्वमं इति शङ्कायामारू देशतेणिति। सं ईश्वतित्यारिश्वतिषु जगत्कारगास्येख्वगाश्रवगारिक्षगाम जहे प्रघाने न स्वभवतीति वेदशब्दाप्रतिपाद्यम् अतो न कारगामिति न्यायोक्तिः ईक्षणश्चतिरापैक्षणश्चति प्रधाने योज्यतत्वाहि शङ्कानिकरिनरासाया। नेस्क्रीत श्वरस्य कर्नुत्वादिकं वैषम्यादिदोषाप्रसङ्गार्थं जीवकर्मीपेक्षं वाच्यंजीबन्धायमादिकम्या कर्ना उपादानञ्जति कर्मद्वारेश्वरस्य स्ष्रश्चादिप्रयोजन कत्वेन जगदुभयविधकारगात्वं पर्यवसति लोके जयकर्तृयोधप्रयोजके जेतृव्यवहोर दर्शनात् व तथा च जीकी चेथः स्यादिति शङ्कते तहि क्रि जीव इति। समाधत्ते नेत्याहेत्यादि। अविद्यावृतज्ञानस्य जीवस्य ध्याने फलामावात स्वतः सिख्जानस्व ए धीमहोति भावः। नंत सिखाविस्य काव शत । जनाव त गर्नाव नाव । गर्नु जनाव । गर्नु जनाव भाव । स्थान स्थान । स्थान स्थान । स्थान स् पक्षः जातः सन्भूतस्यजीवादिसङ्गस्येकः पतिरासिदिति श्रुत्यर्थः । अत्रेश्वर्र्श्यम्यतः प्राप्त्यश्रवसात् तक्षिकानस्य ज्ञानस्यापि तथात्वाः वगतेबनावृतत्विमिति मात्रः। समाधत्ते नेत्याहेत्यादि । आदिकवये वहागा इति । तत्र जानाविधस्तोत्रैस्तुष्टस्तस्मै विदेशकाचित्रवान् इति व्यक्तियतुं कविपदं तत्स्तोत्राणां निर्देशत्वाय आदीति। य इति। यः प्रसंश्वरः पूर्व महाकलपादी महामां विक्थाति उत्पादसति देनिद् नकरणादी सुप्त प्रवोधयति यथा तस्मै ब्रह्मणा वेदान् प्राहिणोति दंदाति तद्वेद्वसी प्रकाशयतीत्यर्थः उभयंत्र भूतार्थे छट् । "त देवस साहम-वृद्धिप्रकारी देहान्ते देवः परं ब्रह्म तारकं व्याचर्छं इति (मृसिहतापनीयः) ख्रुक्तेः आहमज्ञानप्रदम् । ग्रह्म अहं ब्रह्मस्मीस्याद्विमहासाङ्ग्रह्म-व्याचीवृत्तित्वेन ब्रह्माकारबुद्धी स्वप्रकाशतया प्रकाशत इति तं है प्रसिद्धं मुमुश्चुमोकुमिरुकुरहें वे निश्चितं शर्गा प्रपचे तहेकुश्रास्मी महामीत्यरः। मगवच्छरगात्वविशेषः—तवैवाहं ममेवासी स प्रवाहमिति। त्रिधा । मगवच्छणगत्वं स्यात साधनाध्यासपाकतः॥ हति बचनेभावद्गीताटीकायां सर्वधर्मोन् परित्यज्येत्वत्र (भीता १८ अ० ६६ हर्जा०) मक्तिरसायनाच्यकस्यादी च पुज्यपादमञ्जूत्वत्रस्यस्यान् विभिरुक्तः ॥ तत्राधस्य मृदुत्वं द्वितीयस्य मध्यत्वं र्वृतीयस्याधिमात्रत्वमुक्ताः अभवशिषगीपीप्रहादप्रभृतयस्तत्रः तत्र भूमिकायामुदाहर्षास्याः इति बार्चितक्रीति चिन्त्यम्। मनसेवेति । मनस्येव प्रकाहितवाम् सप्तस्यये तृतीया । मनसि यथा वेदस्कृतिः स्यात्रया मनीवृति अवातिः यामास इत्यर्थः। अतेन बुद्धिवृत्तिप्रवर्त्तकत्वेनेति । समिष्टिजीवस्य ब्रह्मगो बुद्धिवृत्तिप्रवर्त्तकत्वेन 'व्यष्टिभृतानां जीवानामप्रि तस्प्रवर्त्तक्षेत्र विद्यम् । भगवता वृद्धामा हृदि प्रथमं वृक्तादातो वेद्दस्तन्मुखतः प्रातुर्भृत इत्यर्थ स्पष्टिम् द्वितीयस्कन्यस्य ( ४ अ० २२ ) अठोकमाहः वाक्य प्रतापका वस्त्रा है। अस्य अवास्त्राता वर्ता उत्तर वस्त्रा वस्ता वस्ता येन अभवता प्रेरिता संती वेदवासी महया । प्रचादितीत । पुरा कल्पाकी असस्य ब्रह्मस्सी हृदि सृष्टिविषयां स्मृति विसन्वता विस्तारयता येन अभवता प्रेरिता संती वेदवासी महया । प्रवास प्रसातः किल प्राप्ते स्थानि शिक्षावियुक्तानि ।लक्ष्यानि यस्योः । ऋषीयां क्षांनवदानी श्रष्ठ शति तद्रथः । पुनश्चोदयति ज्ञान स्थाता अवाक्षात्र प्रति । विषया पूर्वे शुराचारवी हेटमधीर्य सुल्वा परेशुः प्रस्ति एव वेट पहिती त्राह्माण । सहामारुपादी तु जातिसारवददष्टभिक्षेत्रातः कुरुपाम्तरामु छतमागिपासमवल्डण्यवहारवाधिकारः कल्पान्तरहर्भ वदे त्रश्रहाराष्ट्रीः । तत् परिद्वरति नेति । यस्मिन् ब्रह्माि वहे सुर्योऽधिका विमा ब्रह्मास्योऽपि सुद्यन्तीसर्थः । पूर्वोक्षस्मृतिपुरामास्याद त्राम्याः करणादी वेशविषये मोही निक्षीयते तेन सुतम्बुद्धम्यायस्य जातिसमरत्वकत्वनस्य च बाय इत्यर्थः। पूर्वपक्षोहिरमयगर्भश्रुती तुः अस्यन्तरोक्ता परमेश्वराज्ञानाष्ट्रिणाप्तिरुपसंह तेर्व्यति भावः उक्तश्रीकार्थ निगमयति अतप्येस्पाहिना । स्वतःसिञ्च जामस्य प्रसम्बर्धस्य अल्यापार । । प्रकारमा स्यानिन संद्यान प्रवृद्धे तस्येन प्रथार्थ सत्यतामाह असतः इति । प्रसारमा सत्यो भवितुमहाति असंतो प्रगतः सत्तीन प्रदेशकाय कारम्भण चेति । सर्वेगायश्रामन्त्रीःच्यभिचारिथीमहाति प्रसंचितितायत्र्यर्थे न वारक्रमेगोत्यर्थः । अत्यातसुगोप्यायाः सर्वेशे प्रकारिक्षाया गायद्याः प्रकार्यत्या प्रतानहेत्वाद्यि गायद्रयंत्रेन प्रार्थिन हति बीच्यम्। तन्मा शहरोत्यत्र समझा। सहयस्य सिवेस्छक्षाणः प्रान्था। क्ष्याक्ष्या सुवीधित्यदिवतुरीमास्त्रित्रः कृता त्र्वातिविदावत्वारम् । इया ह्याहिद्योत्ते व्यक्तियं प्रार्थित । जन्मासेस्य यत इत्यनेक व्यक्तिक्ष्यस्थाये उत्तः । यतः स्ति सविताः केत्र हिद्यतिप्रक्ष्याचेणुपञ्चाणि। परिमायनेत वरेणस्पर्ये उति अस्योगिप स्थितिक्ष्यस्थाये उत्तः । यतः स्ति सविताः केत्र हिद्यतिप्रक्ष्याचेणुपञ्चाणि। परिमायनेत वरेणस्पर्ये उति उसयोगिप साबतुष्यप्य । सत्यामत्यतेन मर्गपद्दस्यार्थः जकः यतो ब्रह्मेव सदम्बद्धसत्यमः। सत्पदार्थस्तु । विशेषग्रासयोः मा सतम्बः ॥ यद्या संस् श्रेष्ठवाचनात्वाते । सत्यामत्यतेन मर्गपद्दस्यार्थः जकः यतो ब्रह्मेव सदम्बद्धसत्यमः। सत्पदार्थस्तु । विशेषग्रासयोः मा सतम्बः ॥ यद्या संस् श्रिष्ठवाच्याप्त्या स्वाप्त्रवार्थ वकः यतो दीव्यति स्वतः प्रकाशते इति देशः सेनात्मते भातते शति स्वराद् । प्रकाशोऽश्री खातं तस्य (7)

7

#### दीपनी ।

द्यीतेजांककात्वाल् । यदुक्तं ज्योतिर्वज्ञानोनित्रमयनतीति तेन व्यव क्षित्रशानं स्वयकाशे अन्येर्पान्तु तंद्यीनप्रकाशः। तेन व्यवत्यादिपदः पञ्चकेन वियो यो नः प्रचोदयादिति वाक्यस्यार्थः उक्तः क्ष्यो हि वहार्गोऽपि वेदयदानेन प्रशासचालित सर् तु सर्वेषामसमार्क जीवानां बुद्धिन्नु जीं अवर्जवित न त्वन्य इति वास्यायाः। श्रीमदीजि तुरुयमेव । यदा बुद्धिन्तु तिप्रवर्षनेन पालनमुक्तः श्रेयः मर्माचरग्रीन निर्विदनः संसाहज्जानर्चनात् विपरीतप्रवर्तनेन संहारश्च अती जन्मस्थितिमें इति तात्पर्यार्थः। यहा इदित्यव्ययं तं भगी मा हिती बायां मुखमा खुर्ग सुलक् इत्यनेन तं भा परं ब्रह्म श्रीमहि भ्रायम । समस्ततीवासिपायेगा बहुत्वम । विभक्ति पुष्णाति पालयतीति मर्गम् भूक्षो गमादित्वात गः ब्राह्रक्याद् गुग्राव्यक् जग्रद्धिष्ठाने पालकश्चेत्युक्तम्। किश्च भूक्षाति नारायतीसि मर्गः सीगादिको गः निक्की छोप्रगुगी प्रकथकर्त्वारमित्यर्थः। कथं भूतं सिविद्यासवितारं जगदुद्भवकारगाम् । पूर्ववत् वष्टी । अनेन जन्माधस्य यतं इत्य-स्योधेक्ष्यकः। तदित्यस्यार्थः सत्यं परमित्यनेनेवोक्तात्र्यती ब्रह्मीवाबाधितं सत् अन्यवसत्। अगद्धिष्ठानत्वेन प्रत्यवाबितं तत्क्रचृत्व-श्चीकम्। कथंमूतं वरेगयं वृग्गोति सर्वे व्याप्नोति इतिः वरेगयस्तम् । अन्वयावितरतंश्चार्येश्वित्यनेन अयमर्थ उक्तः उपादानतया कार्यः जातव्यापनात् । वियतं प्रार्थतं चतुर्वर्गान् सर्वेत्रसीः इति घरेगयस्तं सर्वस्य दातारं सर्वेश्वरश्चेत्रयः । अतएव तस्येव ध्यानमुचित्तम् एतत् तु परमित्यनेनांकम् । एतेन यद्ब्रह्मा सृष्टिस्थितिवलयक्षारि जगद्यिष्ठानं जगद्वचापि सर्वेश्वरं तद्भावेमेखर्थः । एवमपि निर्केयस्वमाह देवस्येति । देवमित्यर्थः । पूर्ववद्धिमक्तिव्यत्य्रयः । द्रिविष्यति चोतते प्रकाशते देवः । नित्यं खप्रकाशत्वेन निरक्षनः । पतत् तु खरावित्यनेन धासा खेन सदा निरस्तकुहकम इत्यनेन जोक्काकिश्च देवयति असदिप सदूर्णेश प्रकाश्यतीति देवः एतत् तु यत्र त्रिसग्रीक्ष्येत्य-तेनोक्तं मिथ्यासूतस्यः मोयात्रिगुसास्त्रीस्य स्वस्त्रत्रेयाहित्वद्भतितिकरस्यात् । बुद्धिवृत्तिप्रवर्त्तकत्वेन तस्य मिकसुक्तिप्रवर्शाह धिय इसादि व्याख्यातम् । श्रियोः बुद्धिवृत्तीः । मुझोद्देशोत्कः प्रवृत्तियति । पतेन यः सृष्ट्यादिकत्ती सर्वेश्वरः सर्वव्यापी बुद्धिपवर्तकः तं व्यायम सत्कर्मसु नोऽस्मान् प्रवर्श सक्तिमुक्ति दवातु इति ब्राक्यार्थः। एतत् सर्व तेनेत्यादिपदैस्कम्। यद्या राहोः शिर इतिवत् सवितुरित्यत्रा-भद्देऽपि भद्दोपचारः सवितुर्ज्ञगतकार्थास्य तत्रातं भूगः भर्गे तेजःखरूपं ब्रह्मा श्रीमहीत्यन्त्रयः। अन्यत् सर्वे पूर्वचदिति गायज्याख्येति । गायज्ञोमन्त्रेण गायन्त्रिपेक्न ज्ञान्याक्यायते या महाविद्या सा रूप्यते प्रतिपाद्यते यतित तक्र्पं प्रतिपाद्यप्रतिपादकयोरभेवविवस्रया विद्या-खरूपमेच वा श्रीमेद्भागवतमिहपर्शिः।।यशोकितिसमेन प्रतिज्ञानं महस्यपुरायावचनस्दान्यति यनेति सार्कद्वाभ्याम्। अधिकत्यः आश्रित्य हेमसिहसमन्वितं सुवर्शासिहासती इंदम् । मोष्ठमद्यों साद्वीयायामः । पुरागान्तरे चेत्यनेन मंतिक्षातं वामनपुरागीयं स्कन्दपुरागीयक वज्नमाह प्रन्थोऽए।दशसाहकाहिकाछितंनोहिछोसीवझसविद्या ह्यप्रीवेगोका वसावद्या प्रहत्कन्धीयनवमाध्यायप्रसिद्धा इति । प्रश पुराग्रीयपातालखग्डनचनमाहोत्रस्वत्रिविक्सम्बोधनमा। शुकेत प्रोक्तं शुक्योक्तमिति। ननेतं सति शुकानुक्तस्य प्रथमस्कन्त्रस्य द्वादशः र्फेन्धीयपेष्ठाध्यायकदेशाविधिस्माप्तिपर्यन्तिस्याच अज्यस्य भागचतत्वासिक्तिति वाज्यस् अनागताख्यानेनैव गायस्यूर्यद्योतकुजन्माध स्येतारभ्यं विष्णुरातमभूशुव्यदित्यक्ताचा। अताविश्विद्धाद्या भागवतसंहिताया व्यासादध्ययनपूर्वकं परीक्षितं प्रति शुक्रेनोक्तत्वाद्ध । तथाहिक -यंत्रीचित्तरयं गायन्ति वर्णयतिश्वमीवस्तर्गाण्याश्वादशस्त्रहस्ताणि पुरागां तत् प्रक्रीतितस्त प्रन्थोऽष्टादशसाहस्रो द्वादशस्त्रहस्रसित्ताः। चन्नावरणय गापणा पर्वा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा । वर्षा वर्ष गायरत्। च लगारमार्थः । गायरत्। च लगारमार्थः । अस्मिन्ने विकेशिहासानां साहं साइं समुद्रुतस् । स तु संश्लावयामास् महाराजं प्रशिक्षतस् ( शहंकं ३०अ ४० आह्यामारा छण्या । इस्ति भागवाना वादरायमाः । इसी भागवती श्रीतः चंद्रितां वेदसम्मिताम् ( १२ इकं ४ आ ४२ हर्षेः) इति धरेत ७२ क्रिकेशिमा स्वाचित्रको महा सहाराजं भागवानाः वादरायमाः । इसी भागवती श्रीतः चंद्रितां वेदसम्मिताम् ( १२ इकं ४ आ ४२ हर्षेः) इति ०र्ग घरणप्रा । । प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त । जारे काथितं व्यासेनेति वेषः अश्वायात्रासः इतिवतः । तथाहि सस्मिति सामिवर्ती कत्वा∗ च । यद्या सुन्नानाम् अन्य अन्य अन्य अन्य अन्य । विद्यानि विद्याने सुनिः (ः १ इकः १ अ ८ इसे १) । अत्रातुक्रस्यशन्ते । वोश्वसित्वेति । क्षेत्रस्य । विद्याने । विद्यान भ्युक्तम्य जारमजन्य १९९४ गण्या विकासित । सर्वे प्रतिष्ठ सर्वे त्रोपेक्षको स्रतिः । कस्य वा हृह्होसेतामारमा एमः समक्ष्यसत् (११ हर्कः १० व्यो १६ श्लो १) सङ्गेषिता क्रिकेतिस्वाच्यम् । सञ्चे प्रतिष्ठ सर्वे त्रोपेक्षको स्रतिः । स्रतिः । सर्वे प्रतिष्ठ सर्वे त्रोपेक्षको स्रतिः । सर्वे प्रतिष्ठ सर्वे प्रतिष्व सर्वे प्रतिष्ठ स सक्षपण कल्यात वान्य का प्रत्यापर । अंध्यमानमहत्त (१ इसं १ सार्थ रहे) शास्त्र विरोधादिति । पदस्य समुखनाप्रीति। इरिक्रीणाक्षिण्तमितिमगवान् वान्यस्यापाः। अध्यमानमहत्त्व्यानामिति। हरगुगााक्षण्तमातमगवान् वण्यत्याच्याः । त्याकान्यावान् । अत्राप्तान्यावान्यावान्यावान्यावान्यावान्यायाम् । अत्रोपाच्यायाः ननु स्वस्ताः अत्राप्तायान्यावायावावायावाव्यावावायावाव्यावावायावाव्यावावायाव कत्र अपात्यनन त्रातानाभ्रमाञ्चाकाष्ट्रमाञ्चलका प्रदेश मागवतं भगवत इदं प्रतिपादकं आगवतमिति समाख्ययेव भागवतपदार्थकानेसक्यावाः मानुक्रीय दानश्चायाचित्रविभाने युक्तं भगवतां भोक्तं भागवतं भगवत इदं प्रतिपादकं आगवतमिति समाख्ययेव भागवतपदार्थकानेसक्यावाः मनुकुष वानश्रक्यात्वस्यात्वस्यात्वस्यात्वस्य स्थापनात्वस्य स्थापनाद्वेत्यर्थः। अयं भाषः लक्ष्यात्तिः विना भागवतं दद्यादित्येतं दानादिः हित्यतिहायामात्व अतंपवेतिः। लक्ष्यातिहायां दानादिः हित्याचाक्रम्यामाञ्च अतम्बातः। लक्ष्यामान्यम् वर्षान्यस्य । १३ हक्षं ४ श्र २४ क्ष्रो ) इत्युत्तयाः भगवद्यासप्रणीतत्वेन पुरागामात्रस्य भागवत्त्वः विद्यान प्रश्निक प्रश्निक प्रश्निक क्रमण्यक विद्यादक विष्णुद्वित पुराग्राहरेषि भागवतत्व सम्भवाच न साम अस्येन पदार्थिन ग्रीक स्वानिकात्राविष्यात्र प्राप्त प्रकारात्रात्र प्राप्त क्ष्यात्र त्यात्र त्यात्र त्यात्र त्यात्र त्यात्र त्यात्र तथाः वाभागवतं ज्ञात्र विक्षित्र प्रमुद्दासादिक्षेत्र स्थातः तथाको त स्थानेक तथानेकि विकार प्राप्त स्थानेकि विकार तथाः स्वामाग्रावतः नामाग्रावतः सम्बाद्याः सामाग्राम् । सामाग्राम् स्वाद्याः सम्बादः । रमुका भागवत्रभाषा । विषय क्षांत्रिया कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मिक क्षांत्रिया कर्मविद्या कर्मक कर्मविद्या कर्मक कर्मविद्या करित्य कर्मविद्या करित्य कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मविद्या कर्मविद्या कर्या न शहनीयस १त्याम अलाजना कमानुभागात्वा क्रमानुभागात्वाचेति सद्धितिसावनीयस् । तथा च गाउँ -अर्थोऽयं ब्रह्मस्यास्मात्वास्य यमित्याद्याः साक्षात्वास्य सामात्वाचेति सद्धितिसावनीयस् । तथा च गाउँ -अर्थोऽयं ब्रह्मस्यास्मात्वाः यमित्याद्याः साक्षात्वाक्षेत्राः । यमिलादोः । स्वाप्त्रभूतोऽसो बेदार्थपरिवृहितः । पुरागानां सामक्यः साक्षाद्भगवतोहितः । प्रन्थोऽष्टावृशसाहस्यः श्रीमद्भागवतो। थेविनिर्धायः। गायम्। नार्यस्य वस्तिवाह्यस्य अस्तित्राह्यस्य अस्ति । वेदेषु सामवत पुरागेषु श्रेष्ठत्वात् सामहपत्वम् । कस्म येन विभाविती-भिन्नः इत्यन्नतस्य अस्य प्राप्ता अन्य प्राप्ता कार्याक्षण्या अति भागवतामिति निरुत्तवा योगद्धतेऽयं भागवतामिति । इयक्षित्युप्रविद्याचा साक्षातः भगवद्धत्वस्य । अतः साक्षाक्षण्यता अति भागवतामिति निरुत्तवा योगद्धतेऽयं भागवतामि ऽयोगायुपस्तक्षा पाक्षक्षा निकाति । क्रिज्ञान प्रमहेलप्रदिश्वाकाचार्यसमाध्रमयतीन्द्रः— अय मागवतं सामान्यदित्यति योगिकः इति त विकायुरागाविभोगयतस्त्रमिति । क्रिज्ञान प्रस्केलप्रदिश्वाकाचार्यसमाध्रमयतीन्द्रः— अय मागवतं सामान्यदित्यति योगिकः हात न । पण्डित सिक्चताच्छक्का मामस्तिति अस्यते अन्यया न शहूनीयभिति किमशेमिति चेत् चडण्यते मामस्यदित्यति त शकूनीयमिति श्रीधर खासिक्चताच्छका मामस्तिति अस्यते अन्यया न शहूनीयभिति किमशेमिति चेत् चडण्यते मीमांसक्षेत्रियका त राङ्गनायामान आपर्या साधितमिति प्राप्येदापामाग्यशङ्काः स्थिता इति व स्थीकार्यभिति । वस्तुतस्तु श्रीधरस्वामिनां नायमाश्रेषः प्राक् विभिन्नेदस्य प्रामाण्यं साधितमिति प्राप्येदापामाग्यशङ्काः स्थिता इति व स्थीकार्यभिति । वस्तुतस्तु श्रीधरस्वामिनां नायमाश्रेषः प्राक् हिभिनेदस्य आमापन । तथाहि—सर्पादीनि द्रशलक्षगानि यत्रोक्तानि तद्रागवतामिति स्थिते हितीयस्कन्धस्य मागवतायमस्त

# । : हा**नीगरी** कि

काठककीश्वमादिसमाख्यावदंशेन पीरुषेयत्वमाशङ्क्ष्य तत्समाधातबद्वाचारमधिवादी स्मृतीनामप्रामाग्यमाशङ्क्य तिक्रिरासवत् स्थूगी-निखननन्यायनेतद्द्विकरग्रास्यावद्यकत्वात् दीकाकाराग्रामित्यवधियम्। अलमत्र विस्तरेग्राति ॥ १॥

# 

श्रीमतर्गमानुंजायनमः । चन्देवात्स्यमहोवलायतनयंवात्स्रह्ममानुंकिहिल्श्रीरोलेशसुरुश्चियः प्रतिमपिप्राचार्यपारंपरीम् । तुर्थिन्यूहमशेषहेतु मजितस्याजंत्युद्धसंग्रज्ञेहेनिर्भिष्वरं पराश्रास्तुतं न्यासं च वैयासितम् ॥१॥ श्रीरीलपूर्णादिखलेति हासपुराग्राजालं सम्बद्धासम्य येन । प्रावर्तिसन्दर्शयतेवशिष्यं भावं सुविलक्ष्मग्रामाश्रयेऽहम् ॥ २ ॥ श्रीरामानुजयोगि पूर्णकरुणापात्रंमहान्तंत्वः संभाष्ताखिलवेद्यविद्यमखिलान् योद्राविद्यान्तरात्। वेदांतान्कु रुकेश्वरं गुगानिधि श्रीविष्णु विस्तंग्रुरंवात्स्यं तं वरदंच वाग्विजयजं व्यासार्यमं डिगाहि॥ ३॥ श्रीमद्भागवतंपुरासमिक्तं व्याख्यातृशिक्यांकृतंव्यासार्येयति राजभाष्यवचसामहे बुधानांसुदे । मंदानामपि मादशामवगमा झाहतयाद्शितं पन्थानं समुपाश्चितोविवृणुयामत्साहसंश्चरयताम् ॥ ४॥

तत्रभगवान्पाराश्यंः सत्यवत्यांभवदंशेनावर्तागीत्रादरायगो ऽखिलहेयप्रत्यनीककत्यांगागुणेन परेगावहागाविराचितेऽहिमन् ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तेदेवमनुष्यप्रतिपादपस्त्रीपुंसञ्चातुर्वगर्यः चातुराश्रम्यादि भेदभिक्षेजगतितवुषकविपततदाराधनापयुक्तकरमाकलेवरान् परंपरावर्तिततः निः श्वसित्रह्मप्यमीर्थकाममोक्षपुरुषार्थचतुष्टयतत्साधनाववोध्यधीतवेदानपि स्वस्वकमेवासनानुवार्त्त वुद्धानुगुगामबुत्तकर्मानुगुगागभेजनमजरामरगादिः सांसारिकदुःखोपहतानवगतवेदार्थान् जनानवलोक्यानुकिम्पतमनास्तदुः जिजीन विषयातेषां दुर्वोश्वं प्रात्जनमहितोपदेशेन मातापित सहस्रेश्वः प्रतिवत्सलतमंभागद्वयातमकं वदन्याचिष्यासुरतावतस्वशिष्या सम्बताजीमिनिनामहर्षिगापूर्वभागं व्याख्याय्यस्वयमुत्तरभागं समीकीनैः शारीरकनयैद्योख्यायप्रायशः पूर्वभागोपहृहगातमकं पेचमवे-वन्यनप्रसिक्षं श्रीमहाभारताल्यमितिहासं निर्मायपाधान्यत् वेदान्तार्थोपत्रृंहगात्मकं श्रीमद्भागवताल्यपुरागा मलेचिकी धुरताविद्धदेवतो मासनात्मक्रमाचरित प्रथमक्राकेनज्ञन्माद्यादिनायद्यपिक्रीचिदिदं पुरागाशुककर्तृकमिति वदनियद्यपिचोपनिषद्धागोपवृहगापरेषु ॰ तत्रापिसात्विकत्याप्रत्यक्षश्रुत्यनुगुगार्थत्याचः प्रवृत्रेषु प्रवृत्धेषु वाशिष्टपौत्रप्रत्यस्यश्रुत्यभीष्टतम पचमश्रुतिपवर्त्तकभगवदेशपाराश्ये तनयपरमञ्जाषिप्रसीति पुरार्गाश्रीमद्भागवतमशेषजगत्मधितंपरमिति श्रेयमाश्यार्थिमिरत्यन्तमुपादयं यथापाचे भवराषप्रतिगातमनाकेम् अवरी-वशुक्रमोक्तंश्रणुमाग्वतंस्या, वदस्त्रसमुखेनापि, यदीज्ञस्मिभवश्रयमिति श्रीव्यासार्थस्त्रेश्च शुक्रक्त्रेत्रत्वमवगम्यते तथापि तत्र प्रगातिमित्यस्य मक्तिवामित्यथः पाराकार्यत्यस्य कृतितिशेषः तनयत्यस्यतिद्यादि अन्ययैतत्पुरागास्य वहुवचनविरोधापसः तथाहि-ताबद सिम्भेव प्रत्यवतीयाध्याये उत्तमकोक चितिचका स्मागवान् विः निः भ्रेयसायलोकस्य धन्यस्वस्त्ययनेमहत् तादद्रप्राह्यामासस्तिमात्म-विद्वांवरं हतिह्यास्कत्कत्वंस्पष्टंपतीयते तथा श्रीनारदस्याश्चयेतत्पुरागानिमागां तथास्मिश्चवस्कंधस्पष्टीभविष्यति अन्यर्थापसम्साक्षाः द्धियोगमध्रीक्षते लेकिस्याजानती विद्धांश्रकेसात्वतसंहितां इति तथाद्वितीय प्रथमेऽस्यायेहदं भागवतं नामपुराणं ब्रह्मसारमतं अधीतबान द्वापरादी वित्रद्वेपायनाद हमिति युक्तिकर पितन्वगस्यते तथानवमेद्वाविशे ध्याययस्यांपराशास्त्राक्षाद वर्तागों हरेः कलावेद-गुर्वामुनिः कृष्णीयतोश्हमिदमध्यगाँ इत्वास्वशिष्यान्पेळादीन्सगवान्वादरायिष्णः महोतुत्रायशांतायपरगुर्धामदेजगाधिति शुकांकश्चतद-वगम्यतं उदाहतत्यासारं श्रीस्तिगतहत्विभरेवास्य पुरागारतस्य प्रामाण्यमत्विपादयत्वं च स्पष्टमवगम्यतहति नतजास्मामिः कार यीयताः पुरागान्तरस्रवादाच तदनंतरमेनस्क्रुटीभविष्यति अत्रमायत्र्युपक्रमत्वे प्रतीयतेश्रीमहीति शब्दतः पदान्तरैरथेश्र तदुपक्रमत्वर्य-त्यभिक्षानात गायञ्चपक्रमत्वेत्रा स्यस्कांदे पुरागाउत्तरखंडे प्रन्थोऽष्टादशसाहस्रा द्वादशस्क्रन्थसाम्मतः हथप्रीवबद्धाविद्या यत्र हत्रवधस्तथा गायत्रयाच समारम्भोः यत्रभागवर्तविद्वरिति तथाचीकमात्स्य आरश्ययत्राायत्रीवर्ग्यतेष्ठमेविस्तरः वृत्रासुरवधश्चापि यश्चमागवर्त विदुद्धि तश्रक्तमाद्यस्य यत्रद्धि जगत्कार्यात्व मृतिपादनेन तद्यंकसचिताश्रद्धार्थं उत्तः वेदान्तप्रसिद्धिद्योत्यतायत्रद्धित पदेनतञ्च व्याध भारता स्वाद्यान्त वरेगयश्रद्धार्येतकः उक्तद्विसर्वज्ञैः साविजीविवरगोवर्गियवरेगयेतुवराष्यातार्द्वरिताहति तेनहत्यादिनादेवकः व्यापः चोत्रवः सर्वमावानांद्योतमानः स्वयंसका अञ्चानमञ्ज्ञित्वतितत्रीतं धनसग्रहयन् दाअवसहिनद्यतिनः प्रकाशकः जन्मान वार्यणा । प्रेरकावनभीप्रकोदनंकोतर्निधयोधीपुविकाश्रष्ठाः प्रेरणातः प्रचोदनहति हिनाओकं एवं प्रदर्शिततयोगायञ्चपका-

### श्रीवीरराधवः।

त्याप्रकृतिक विकास स्थापनिति । ज्यापनिति कार्यापनिति । ज्यापनिति कार्यापनिति । ज्यापनिति यक्कद्भनिजन्मादीतितद्रगुणासिक्द्रानीवद्द्वीदिः जन्मस्थितिलयं अन्यपदिथिः अत्यवनपुस्कमेक्वचनत्वम् अतुद्रगुणासिक्द्रानेवद्वमान् हित्वेस् विमार्गाहताऽसिद्धिः तथास्थितिल्ययारेवान्यपदार्थत्वेन्यस्यावर्थस्यविवचनान्तत्वेदद्दे। द्वचनामात्रप्रवास्यायास्यायास्य श्रसङ्गः तद्गुणास्तिवश्रानवहुवी हित्वपक्षेऽपिजनमादित्रयागामसमुहितानामन्यपुर्वायत्वजनमादिशस्य वहुव चनान्तः वापानः जन्मनः प्रवान्य प्रार्थत्वं समस्यमानपदार्थत्वं च विरुद्धं जन्मप्रत्येवतस्यादित्वाचुपपत्तिश्च अतोजन्मस्यितिलयसमाद्यारमन्यपदार्थे विवाधितत्वात जन्मादीतितद्गुणसम्बद्धानवहुब्रीहिपयुक्तः तस्यान्यगुणपदार्थगुणाविद्योषणानिसमस्यमानपदार्थहतियावत् तेषां समेत्यिकाकारसिद्यन श्चानं विशेष्यभूतान्यपदार्थान्तर्भावेनश्चानंयस्माद्वहुवीहर्लम्बक्योगितहत्यादिः सतद्गुर्णसम्बिश्चानावहुवीहिः तदिपरातिश्चित्रगुरित्यादित्व-तद्गुगासम्विद्यानः यतोजन्मादितद्यीमहीत्यनेनजन्मादिकारगात्वं व्यवस्थां विविक्षितं यतोवादमानीत्यादिश्रुतौप्रतिवाक्यं तद्वह्यात्य-नुक्तरनेकलक्षणवैयर्थाच जन्मादिसमुदायपकंलक्षणं नतुजन्मकारणत्वं स्थितिकारणत्वंलयकारणत्वं चेत्यनेकलक्षणम् अत्रसत्यंपरं ब्रह्मधीमहीत्येतावन्मात्रोक्तोब्रह्मशब्दस्य वृहन्महदादिशब्दपर्यायस्वानिधानेन प्रकृतिजीवादिपरत्वस्यापसम्भवात् तेषामेवात्रध्येयत्वप्रस-कंतद्ब्युदासायात्रध्येयस्यवहाग्गोनिरतिशयवृहत्वं खरूपगुगावृहत्वं तदेवबहाशब्दप्रवृत्तिनिमित्तं प्रकृष्टादिषुब्रहाशब्दस्वीपचारिकश्चेतिव-क्त्मत्रलक्षणामुच्यते तत्रचेकेनेवसमुदायलक्षण्यध्यस्यब्रह्मणोनिर्तिशयवृहस्वलाभात् ततएवप्रकृत्यादिव्युदासाम्नानेकलक्षण्यम् अन्य-यासृष्टिकारणत्वमात्रान्तरानुकुलक्षानदास्मिदिलाभेऽपिस्थित्याचनुकुलक्कानदास्म्याचलाभेननिरतिदायवृहस्वासिद्धिः नचित्रतयोकाचपिमो-चकत्वोपयोगिक्षानशं स्वाद्यलाभइतिवाच्यं मोक्षस्यस्थितिलयोन्यतरान्तभूतत्वेनतत्कारगो स्वीवतलाभात् स्थितिनीमानिष्टपरिहारपूर्वकेष्ट-प्राप्यारूपमो चकत्वं चतादशमेव यदि चायंमोक्षशात्यन्तिकनाशारूपदृष्टस्ति हिल्यान्तर्भूतः यत्वतिहितौपश्चमीन वुजनिकर्तुः प्रकृतिरित्यपादान-संज्ञायांपञ्चमी तथा सति स्थितिलययोरनन्त्रयः स्यात्जनिकर्तुः प्रकृतिसिति सुत्रेहि प्रकृतिशब्दलपादानकारगावाचीजायमानस्योपादान-मवादान संशक्तितितत्सुत्रार्थोत् अत्रतत्सुत्रविहितापादानसंशानिमित्तपंचम्यप्रयुपगमेजन्मकार्गात्वस्यलक्षगात्वलाभेऽप्यादिशब्दआश्चारिश-तिलियकारगात्वस्यलक्षगात्वाभावात् तयोरनन्वयः स्फुटप्वहेत्वयैपंचम्यान्तुहेतुत्वस्यानिमित्तोपादानसाधारगयात्तद्दन्वयउपपन्नः तत्रमा-प्रागवस्थायोगित्वमुपादानस्वानिमित्तत्वनीमकर्तृत्वप्रवेषात्रजगज्जनमादिप्रत्युपादानन्त्वनिमित्तत्वरूपोभयविधकार-गारवं ब्रह्मगोलक्षगाविवक्षितं नजुलोकेमृत्कुलालयाविभिन्नयोगेवीपादानत्वनिमितत्वदर्शनत्क्यमेकस्योभयविधकारगात्वमित्यभाह अन्य-यादितरतश्चार्थे विति अर्थे षुकार्यभूते षुदेवमञ्ज्यादिष्वनवयाद जुन्ने रुपादानत्वम् इतर्ती व्यतिरेकादनन्वयात्प्रकृतिपुरुषा श्याविस्यग्नीति तिश्चियनतृतयापृथगेवावस्थानाश्चिमित्तत्व चेकस्यैवब्रह्मगाउपपन्नमित्यथेः कुलालस्यासर्वशक्तेषेटादिषुमृत्कार्येष्वनन्वयान्नोपाक्षानत्वअचेतना यामृदस्तुव्यतिरेकाभावाञ्चिमित्तत्वं ब्रह्मण्डित्रपक्षादिप्रमाणान्तरानवगतस्य केवलवेदान्तेकसमधिगम्यस्य चिद्वविद्विलक्षणस्याभयविध कारगात्वोपयुक्तमार्वहयसवैराक्तियुक्तस्यान्वयव्यतिरेक्षयोविदान्ते अयोऽवगतत्वादुभयविधकारगात्वोपपत्तिरितिभावः वेदान्तिश्चिसविकरिव क्षेत्रहापत्रवारम्यमिदं सर्वेश्वयमात्मात्रहात्त्वमसीत्यादयोऽन्वयप्रतिपादकाःतदेशतयःपृथिव्यान्तिष्ठनपृथिव्यां शन्तरीयपृथिवनिवद्यस्यपृथि-करण प्राप्ति । प्रथिवीमन्तरोयमयतियथात्मनितिष्ठश्चात्मनीऽन्तरोयमात्मानवेदयस्यात्मानारीरयेथात्मानमन्तरोयमयतियथात्मनितिष्ठप्रतिषा द्काः यद्वैवन्विधातासुभयविधकारणत्वितिवृहिकान्वयव्यतिरेकप्रतिपादकानासुभयविधकारणत्वप्रतिपादकानासदेवसौम्यदमप्रशासिदेक भवादितीय-तदेशतबहुस्यांप्रजाययस-मुला सीम्येमाःसवीःप्रजाहत्यादीनांचिवान्तानांबश्चािप्रतिपातकत्याऽन्वयात्वेश्रेषेषुद्दतरेतोऽन्वयात् प्रकृतिपुरुषादिषुभयिवधकारगात्वप्रतिपदिकत्वनान्वयामाचाच्यवद्यवाभयविधकारगामित्यर्थः यथावद्यस्कप्रगुगादिकशास्त्रकसमिधिगम्य-न्तदुभयविश्वकार्गार्वक्रह्मग्येवशास्त्रभ्याऽवर्गत्वत्रवृत्रकृत्यादिश्वितिभावः अस्मिन्पक्षेत्रकन्वयादित्यनेनसमन्वयाध्यायप्रथमपदि।भेजकि। इतर-तहत्यतेत्रिपाच्याः बह्यकार्गामेवव्रक्षेवकार्गामित्ययोगान्ययाग्वयव्ह्येतेनकारगात्वहिसमन्वयाध्यायेसम्प्रितं पूर्वन्याख्यामेत्वनुर्द्वस्यतेतुं बुक्ति भ्यामुपादातत्वितिम्सत्वितवे हको भ्यान्ते दुभयविश्वकारगात्वे प्रसाधिते वर्षादेवप्रकत्यादीनामकारगात्वसिद्धरधीमान्ययोगान्यविष्ठिद्धाः वर्णादेवसिध्यतः यद्वासमन्वयादु मयविधकारगात्वस्यवद्वागयेवसङ्गतर्थिषुप्रकृत्यादिषुस्तरतोऽसङ्गतेश्ववद्वागाएवकारगात्वसित्यशैःएकमेवी-ब्रितीयमित्यननहिकत्रन्तस्यज्ञातपुक्षम्वामय्विधकार्यामवगतं तत्रप्रकृत्यादिषुमयविधकार्यात्वीपयुक्तसर्वकातित्वासमावस्थावस्थ गितद्वावस्य च श्रुतिश्यप्रवयः सर्वेशः सर्वेवत् संद्यकामः सर्यसङ्गृत्यः परास्यशक्तिविविधेवश्र्यते सामाविकीश्रानवलिक्रिया च श्रातीद्धाः प्याप्त । सृज्ञाबीशानीशी अज्ञानकोलोहितशुक्क कथापित्याविश्योऽवगमीतु भयविधकारयोष्ट्रदेवितमावः अस्मिनपक्षेसावस्थसवैशक्तितवाविश्याप्र-तियाद् कत्वेतवेदान्तानांब्रह्मग्यन्वयाचारमञ्जूभयविधकारणत्वापणच्चः ततुपपराश्चानमादिकारगात्वस्यलक्ष्मणत्वसिक्षणवगन्तव्या अस्मिन कृषिपक्षेअयोगान्ययोगव्यवच्छेदोशाव्योयद्वाबद्वाशोलक्ष्यान्यतिपत्तिव्यस् सतुमानेनोप्यवगन्तुराष्ट्रयस्यातः अप्राप्तिहिशास्त्रमध्वति शास्त्रिकप्र माशाकत्वेऽपितस्मिन्पवृत्तित्वस्युभयरहितवपुरुषार्थिखक्रपेशाविदान्तानीविधिकत्वेतान्वयः पुरुषार्थप्यवस्तानासम्मधार्वशास्त्रमाशामित्यत आह अन्वयादित्रत्वश्चार्थे विवृत्तिश्चत्रान्वयादित्यनेन समन्वयाधिकरणासिक्षान्ताथेडकः शास्त्रयोन्यधिकरणाध न्यं चिकरणास्य छस्या श्रिपपरिद्वारक प्रवेचनलक्ष्याक्यंत्रनेव तदाक्षिपपरिद्वारपंपचिवक्षितत्वमतीतेः सम्मन्यणाधिकरणान्तुवास्त्रिकार्याक्ष रणाश्चे प्रतिहित्य विभिन्न स्वयादित्यने नेपद्धिति सर्यस्मानः सतावदेनुमानं स्थित्रहातस्यास्य स्वात् स्थाप्यस्यविवित् स्वाह्मस्याद्यस्य स्थाप्यस्य विवित् स्वाह्मस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य विवित् स्वाह्मस्य स्थाप्यस्य स्याप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्यस्य स्थाप्यस्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्याप्यस्य स्थाप्यस्य स्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्य स्थाप्यस्यस्यस्य स्थापस्यस्यस्य स्थाप्यस्यस्य स्यस्य स्थापस्यस्य स्थापस्यस्यस्यस्यस्यस्यस्य स्थापस्य तः वार्यात्राच्यात्रायः कश्चित्ककातीवप्रवस्थात् तस्यद्वप्रतीत् तन्त्रीवण्डतीलायवमीश्वर्दकतोतीत्ववितिवश्वरत्तिकश्वरतिवासमामर्थयः विहेतनाऽत्तर्मीयमानायः कश्चित्ककातीवयस्थात् तस्यद्वप्रतीत्वेत्वस्थात् तन्त्रीवण्डतीलायवमीश्वर्षक्रितेत्वस्थात् व २० '' अ बत्वात्कण महामहाभराच्यक पृक्तवार्यात चेत्र व स्वाहे लक्षणापूर्यात्विशेषीपाचित्रशास्त्रिक विशेषात्व आसाम्बर्धात्व बत्वात्कण महामहाभराच्यक पृक्तवार्यात्व चेत्र स्वाहित्यक स्वाहित्य स्वाहित्य स्वाहित्य स्वाहित्य स्वाहित्य स्व ब्रावारणात्र्याम् वास्यास्य विद्यम् अन्य माध्यस्य विद्यमीनत्वा स्थानत्वा स्थानत्वा स्थानत्वा स्थानत्वा स्थानत्व

A

#### श्रीवीरराघवः ।

<del>श्चिभ्यम् ष्टिः प्रवर्षेतां िक्रमनेनतित्यक्षानचिक्षाप्रयसम्बद्धमाविकातीयतयापदिक्षविपतेन तथाचान्यथासिदिक्वपितानिकार्यसम्बद्धमान्।प्र-</del> -द्रेश्वरमेनुसाधुसंव्रभवं/त तर्हिसवेकार्यमेककर्भृषंकार्येत्वादिति साध्यावति चेचर्छनेककर्नुकेष्ठघटादिषु व्यक्षित्रारः अन्ययासिद्धिर्वात्रधे-क्तकर्तुं करकाभावेको िरविरोधस्यात् अनंककर्तृतंनस्रचतिकार्यस्यादिन्युकेण्यसमेत्रदोषः सरमादग्रमानानासनेकदोषद्वाष्ट्रसादोष्ट्रानासुन भा<del>यतेबाह्यक्ष</del>यांतावेपर्यार्थेकासुरुयेवेति लक्षयासुप्रप्रामितिनापि सन्तिनिन्दस्यन्त्रयविरक्षियो अद्यायोपुरुषार्थेक्रपन्त्रात्त्रत्नपुरुषार्थेष्ट्रसाधि-ः तांचेदांकानांच**ेतात्रप्रथेमितिव्यक्त्यं** । अस्वयाद्वदांतानांनिरतिशयपुरुषार्थेक्रपेद्वद्वाणितत्वक्रप्रपदितास्पर्यकृतवान्वयादित्रसङ्ख्यातिहिक्के-ः इत्यार्थेश्च पुरुषार्थाभातेषु प्रमुखाम् त्रपुरायन्तिकोषाः श्रीयतद्वतादिभिः प्रतिवेधासतत्रशास्त्रं प्रमासमेवेतिवद्यसाः पुरुष्केरात्वेतुन्नात्वेत्। <del>्यक्कव्यासंवद्याः सोवैषः रसं</del>ग्रेवायंलक्षानंदीभवति अदेषआकाश्यानंदोनस्यातः यपश्चेवानंदयतीत्यादिभिरवगतं निर्दिशयसुबुद्देशः व्यक्षपर्थत्वात् अथोगव्यवद्वंद्वदिकांसवेद्यादिसमादासाद्व अभिवश्ति अभितः सर्वत्रसर्वजानग्तीत्यभित्रः सर्वेद्वद्व सर्विद्वंनिमिज्ञकारुगो व्ययुक्तं तन्त्रोप्रादानकरण्यत्वोपयुक्तसर्वशक्तित्वस्याप्युपलक्ष्यां सर्वश्चत्वात्सर्वशक्तित्वात्तरयोभसविभक्षारणत्वसुपपत्रमितिभाष्ट्रः ज्ञासुर्व -श्यादिकं सुस्रतहेतुकंस्यादि त्येवंरूपंकर्मकर्य त्वमध्येयत्वादिकमाशंक्याह खराडितिखराद्खतंत्रः अक्रमेवस्यः कर्मवस्यतांभेरकः तस्माद्धा-्यप्वेतिभावः यद्वासार्वद्यादिकंसुकृतदेतु कंचेत सकतस्यतनमूलकसार्वद्वयादेश्चपरिमितत्वसंभावनयाकत्स्नुजगत्कार्गात्वासिदिः ततृश्चका-रगांतुक्ष्येयद्वति श्रुतिविदद्धं अकारगावस्तुध्यानमनुचितमित्यत्राह्म्बराहिति स्वनेवराजते प्रकाशते सर्वविषयीकरोति नतुकर्मग्रीतिस्वराह् - अनेनसार्वष्टयादिकं खद्धपातुवंधोनतुक्रमम् लक्षमित्युक्तं पवसार्वष्ट्यादि गुगावत्ताक्ष्यतेनवह्याप्रिकारगात्वव्यवञ्छेदद्भपोऽयोग्यव्यवज्छेद्द्रप्रकः सम्बदुनराक्षिप्यपरिक्षयतीतिनइत्यादिनाअत्रेयमाशंक्ययद्यपीश्वरः प्राक्ष्मृष्टरेकप्रवसन् सकलेत्रविलक्ष्मात्वेनसर्वार्थशक्तियुक्तः स्वर्थमेव-विचित्रंजगत्सृष्टुंशकोति तथापीश्वरकारणत्वं नसंभवति अप्रयोजनवत्वात् विचित्रसृष्टेरीश्वरस्यचप्रयोजनाभावात् वुद्धिपूर्वकारियासारं-अद्विविधंप्रयोजनंखार्थः परार्थोवा नंहिपरस्यवहाराः खभावतप्वाप्तसमस्तकामस्य जगत्सर्गिकिचित्प्रयोजनं अनवान्तमवाप्यतेनापिपरार्थः -अबाप्तसमस्तकामस्यपरार्थताहिपरानुग्रहेशाभवति नचेदशगर्भजन्मजरामस्यानरकादिनानाविधानतेतुः खवहुळंजगत्करुशावास् जतिप्रस्तुत-्सु सेकतानमेव जनयेज्ञगत्करुगायाहिसृजन् अतः प्रयोजनाभावान् नन्नह्मगाः कारगत्वमुपपद्यते इती मामाशकामघोदेवापनयञ्चाहते नहत्यादि-माहृदासाकल्येनाहिकवयेवहारोचतुर्भुखायब्रह्मधर्मादि पुरुषार्थतत्साधनादि।नेरातिशयपुरुषार्थस्कपगुरादिकंचावेदयातेइति तथातंवेदतेने-विस्तृतवान् प्रकाशितवान् प्रादादिति यावत्योवाह्मगां विद्धातिपूर्वयोवेवेदांश्च प्रहिगोतितस्मैहति श्रुत्ययोत्राह्मसंधेयः शास्त्रप्रवर्तनहितार्थ पवंच तुल्यन्यायतयाजगत्मृष्टिरपिहितार्थैवेतिसूचितं ततश्चकारुगयाचेतनानामपवर्गोपयुक्तज्ञानप्रवितिष्पाद्ककरमाक्रलेवरप्रदानायज्ञा-रमृष्टिः तद्पिपरिपूर्णत्वादितिच फलितंगर्भजन्मादिदुः खानुभवस्तुख्यकर्ममूलकइति नेश्वरस्यदोषद्दिनावः तेनद्रत्यादिनानामप्रपंचसृष्टि-कृच्यतेइतिकेचित् तत्रनामकरूपनस्यसृष्ट्यंतभांवेगापृथंगुसूचनपेक्षत्वात् नामकपव्याकरणांहिसृष्टिः नामकपेव्याकरवाणितन्नामकपाश्यां-च्याकियतइति श्रुतेर्वहाराज्दस्यनामध्यपर्यायत्वाभावाच सहिवेदपर्यायशब्दः ब्रह्मचसएवम्लंकृष्णोवहाच ब्राह्मणाश्रेति प्रयोगाश्रेति कवयद्यस्यानन्वयापत्तेश्च यच्छास्त्रप्रवर्त्तनेलिकिकितितिहतं तद्दीयन्विद्दानिष्टमुद्यतियंसूरयद्ति सूरयोद्यानवंतः उपासकायंप्रतिमुद्यंत्य-परिछेयवैभवत्वाद्वचाकुलीभवंतीत्वर्थः अपरिछिन्नवद्यानुसंधानंहिशास्त्रप्रवर्त्तनस्यपरमंप्रयोज्ञनं शास्त्रप्रतानाभावेशपरिछेयस्तरूपस्पगु-ग्विभृत्याद्दीन्माबांतरानवगमाश्विरतिशयपुरुषार्थरूपानवगंतुमशक्ताः सूर्योमुह्येयुरतएषांमोहोमाभूद्दित्येतदर्थेवहातेनइत्यर्थः यदितिपा-ठेयचस्माच्छास्त्रप्रवर्त्तनाभावेमुद्यंति अतोब्रह्मतेनइत्यन्वयः यद्वाआशीनेम्स्यियावस्तुनिर्देशोबापितनमुख्मित्यभियुक्तोक्तेश्चिक्तास्त्रप्र-विधार्थवस्तुनः शारीरकाष्यायचतुष्ट्यार्थकप्रस्यात्रप्रवंधादीनिर्देष्टव्यत्वे नतत्रतावत्कवयद्दयं तेनसमन्वयाध्यायार्थकपं वस्तुनिर्दिष्टं मुख्यती स्यादिनाविनिमयद्रत्यंतेनद्वितीयाध्यायार्थक्रपंचरतुनिर्दिश्यते सूरयद्रस्यनेनद्वितीयाध्यायाद्यधिकर्गाानांतृजोवारिमृद्रायतोविनिमयद्रस्यनेन तदाच्यायांत्यस्यसंज्ञामुर्तिकस्याधिकरगास्य चात्रप्रत्यभिक्षानात् पवंचायमर्थः सूरयः क्रिपलहिरगयगर्भकगाभक्षाक्षपादक्षपगाकिष्यसाद्यः स्थिययोगादितंत्रप्रणेतारः प्रकृत्याधुपादानत्वनिमित्तमात्रेश्वरवादिनोथंप्रतिमुद्याति ईस्वरस्यस्मिवदिविद्विशिष्टस्य जगद्रूपेगापरिगामं तातुपयुक्त सर्वशक्त्यादिगुगायोगंचाजानंतः प्रधानस्यीपादानत्ववदंतस्तिविद्वोदुचासमर्थाः व्याकुलीभवंतीत्यर्थः यदितिपाठेयस्मिन्विष्य अत्रवहार्गिमुखंतीत्यथेः सेनेबसहदायमादिकवयद्रत्येतदापिद्वितीयाध्यायाथेः निदंशपरमिति कश्चित्संप्रदायः तत्रनप्रयोजनवत्वाधिक-व्यार्थिप्रत्यभिक्षानात् यद्वाप्रतिपिपाविषितार्थप्रामास्यजिक्षासायांवेदांतानामेवतत्प्रमापकत्वंककुं कृत्कस्यवेदस्यानादिनि धनाविष्ठिक्ष-संग्रहायाऽसंभाव्यदोषगंधतांपूर्वतंत्रनिर्शातांसमारयतुं तेनव्रह्महृदायशादिकत्रयेदत्युक्तं प्रवेकार्गात्वासंविधव्यवच्छेदक्कपोयोगव्यवछेदक्कः अधानयेषु प्रधानाविषु कारगात्मसंबंधव्यवच्छेद्रपान्ययोगव्यवच्छेदाक्षेत्रपरिहारीस्चयत् ध्येयपरमात्मानंविशिनष्टितेजोवारिसृदायहो-वितिमयद्दति अत्रैवमात्रांक्यतेतावाषुक्वस्याकार्गात्वंनोपपद्यतेकार्णात्वात्रम्यात् तथाहितावदंताऽहमिसास्तिह्योहेवताअनेनजीवेनात्म-मार्बिमविद्यनामक्ष्पेच्याकरवाणिता सांत्रिवृत्तंत्रिवृत्ताभेकेकांकरवाणितित्रिवृत्करणानामकपव्याकरणेसमानकर्त्तृकेमतीयेतेत्रिवृतकरण् । च क्षित्राथगर्भक्षपसमधिजीवकार्षेकं चतुर्भकार्षेक्षसृष्टेष्वगडातवेत्यंग्न्यादिष्युपदेशात् अव्योगिदिकंष्तेजसस्तद्वप्रसित्यादिशः त्रिवृत्करग्रामान्यगरि स्य इति शुरुष्य च त्रिवरक्षिक्षक्षिकं मामकप्रयाकर्गामप्यंदाधिपति चतुर्धक गुक्तिमे मे समाक्षेत्रमाभिमे स्यसमाधसे से जोवा-रिस्वायतोविनिमयद्ति वितिमयः प्रस्परेमिश्रीकरगतिजीवारिस्हातेजीवस्तानांवितिमयः यतोत्रसम्। चतुर्यसाहित्यर्थः अयंभावः ाष्ट्रकृतिकार्याः होत्रसृष्ट्यर्थनानांशियाः गुण्यस्तास्ततस्तेसंहतिविनामास्य वृत्यताः श्राष्ट्रस्यसाग्रास्य स्वाराम्यान्यसंयोगं वाकार्यः सहवाधाविद्येषांतासंवत्वादयंतिहेहत्यादिष्यादादिव्यविहत्यावासात् अंद्रसूष्ट्यन्तरं वृहुर्मुखोत्पात्तः, तदंद्य-भावतीयंतरिमन्त्रजीस्वयंत्रहोतिस्मरणातः प्रवेषांचीतपत्तः साम्बनिष्ठःकार्यापरमात्मकात्रकोष्ठामक्षेत्रकामक्ष्यामकप्पत्याकरणामपि ्यावश्रयाम् । प्रतिवासीवनगरमार्गार्वमृतुनीयम्थानयोदित तर्दिययभगेदितंदस्यादि विश्वकरगोपदेगश्रुतिवरोधद्वति स्पेत्रव चरमार्गः । चरमार्गः । ब्राह्मतिष्यग्रेषाविष्ठं नित्रमुक्तस्त्रमार्थात्मस्यां स्थावीतांभूतव्यास्यकावशावस्य । विषयोग्योगितः पाद्ययाययाविनित्रयः सत्तःति ्रह्माद्रवाराण्याः नक्ष्विमापिनमञ्जूषारानकारम् तक्षिणयपगुणात्रक्षरमधिगम्यतेनिश्चित्रकलेशासिन्दवर्धन्रकान ( 2 )

## श्रीक्षीरराध्यकः।

मिनिकारमचगतं । व्हणस्निकारम् तिन्वयाञ्यवस्थाविद्यविद्योगम् । प्राणवस्थायोगित्वरूपं । तद्यवद्वायीनोप्रपद्यतित्यास्ति । वहास्योग्विकारमञ्जन -चित्वपन्ते रुक्तेश्रृतिविरोधप्रसंगोदित्यारीकाम्यपिप्रत्यार्कः यव्यविद्योगीमृषेतित्रयोगारे सत्वर्यंत्रस्तमसीसपैः मेनुस्यवहतिसप्रेशंकसंगिष्ठर्यः - इतियत्रभुग्तियम् एः प्रयं चायां सेमन्यत्स्वरूपेस्थामिष्यांनास्तातियावत् विस्मास्यादगुंग्मतत्वेनः जतस्यवद्यास्तर्पमतत्वामातिविक्रा--दोसावजितिभेगाञ्चितिवराञ्चातिभावकुण्णितम् विकारोश्चयत्वक्षपकारशात्वीनविभागत्वेचत्युभ्यणापरस्प्रशिवरक्षकथेभेकस्मिञ्चयत्वेचत्रे ्रप्रणुतीवद्राश्चरप्रधीमयोःसंक्रिंगम्देशः संवित्तिद्धांतसप्रतिपन्नः विश्वातीवश्वरेयोगेपिक्षरप्रधानमसृताक्षरहरा । अस्यातानिवासेदेवपन प्रयोनक्षेत्रक्षेपतिगुरो। शक्तकारीं करमाधिपाधिपोनचास्यकेश्चिक्षिक्षितिनचाथिपः शपतिविश्वस्यासेश्वरदात्र्यक्षिवमञ्चत्राक्षेत्रा-- यजीवीदानीदीनित्यानित्यानीचेतेनश्चतनानामेकोवहुनायोविद्धातिकामान्भीकाभोग्येष्रेरितारचमत्वातयोरन्यः - पिष्पल्खाद्वसकाश्चक-- स्वोक्षेत्रिचीर्क्षदेशिति<sup>ाः</sup> वृद्यमारमानांप्रेरितारचमस्वाजुष्टस्तेनामृतरचमार्च<sup>ा</sup>श्रेजामेकांलोहितशुक्क्रक्ष्णामित्यादीभेः ः स्वस्यस्यमायभेदः श्वीवितप्वेस्वेस्वरतेः स्वभावतञ्चात्यतिवेलक्षगायोः कार्यकारगाभियावस्ययोः प्रकृतिवुरुवयोः परमारमानप्रतिवारीरत्ययः पृथिकार्गित ष्ट्रन्यआत्मनितिष्टन्यो विज्ञवक्तमतरसंचरन् यस्याव्यक्तं राशिरयोक्षरमतरसंचरन्यस्थाक्षरशरीसमित्यादिभिः श्रिणवितेष्वं सर्वास्थ--तिचिद्वचिद्वस्तुशरीरतियतित्वकारः परमपुरुषपवकार्यावस्थकारमावस्यकार्द्वपेगावस्थितस्ति समर्थक्षापयितु क्राश्चनश्चनयः कार्यावस्थ ें कीर्याचिस्थिजगत्सिएं वैत्याद्धिः सिदेवसी प्येद्ग्रथासी देकमेवा द्वितीयतदेशतबहुस्थां प्रजाश्येतसत्यो तप्यतस्त प्रस्ति विम्स्य जीत्यार-भयसत्यचित्रित्वसत्यम्भवदित्याद्याः तदेवभोक्तृभोग्यनियतृत्वनविभक्तस्वभावान्प्रतिपाद्यभोग्यगतमुत्पत्यादिभंभोक्तिविप्रातिष्यात-स्थानत्युतिच्य प्रोतिपीच मीग्येभूतप्रधानगतमुत्यत्यादिकामीक्गतिचाः ऽबुरुषाधाश्रियम्बनियतिष्यतिष्यतस्यनियत्तिवेत्ति। सर्वे बर्दिसर्यसकेल्परविकरमाधिपाधिपरविविश्वस्यपतिरविच प्रितिपिधसविविस्थाबस्थितयोश्चिद्वितीस्तेप्रतिशाणिरत्वेतस्य । सारमत्वेप्रति पादित्यतः सर्वदाचिद्चिद्वस्तुशरीरतयातत्त्रकार्ववर्षतत्क्वदाचित्रस्मादःविभक्तव्यपदेकानद्वित्रमूक्षदेशापश्चविद्वचिद्धम्ब्रुशरीरीठिष्ठति तिसार्गावस्थं महाकदो चिचिविभक्तेनामरूपस्थूलचिद्धसितिसितिचकाण्यावस्थत्वकारगावस्थस्यकार्गावस्थावस्थावस्थावस्थान रेशिविहेथीयोश्चितिहोनस्य भीग्यत्वायशब्दादिसत्त्याख्यंश्वीम्यथाभीवस्यविकारोभवतिविद्यस्यचा संकुचित्रवानस्य च कम्फळ-विश्वभाक्तित्वायतं नुक्रपंक्षानसंक्षीचविकाशात्मकस्वमावान्यणीभावाक्षपविकागोन्यशामवति । उभागप्रकास्विधिकेनियेच्चीतवकस्थातव्य-ति है। विकास के किया है। के किया है कि किया के किया के किया के किया है। के किया है कि किया है कि किया है कि कि रत्त्व । वर्णा प्रमाण वर्णा प्रमाण वर्णा रतपुर्वत्याचान्यात्र । प्रतिष्यविद्यानित्यत्ववादिन्यश्चनजीयति स्थितहत्या द्याः विद्योगित्याना सित्याकाश्चिश्चेश्चने स्वरूपात्यशान-ावपना नुपान । - अद्वीपदि निद्वीपसंघीतस्योपदि नित्विपनि चिद्वितीवृद्धाश्रश्रसभाषासंकरोष्णुं पूज्यतरश्येथाशुक्र कृष्णारकते तुसे घाना पादानस्विपि चित्रपट-न्त्रहुगपाद्रागत्वापरपात्रापरपात्रापरपात्रापरित्वाधाविष्ट्यांचाध्रपिनस्वववर्शस्वराज्याच्छित्रवर्णस्वातापादानस्वपिजगतः कार्या-स्य तत्त्वत्तुत्तुत्र्वत्यस्यतत्तात्रात्र्वत्याद्यस्य । विद्यायामप्रमास्त्रित्वम्भार्यत्वीनियतृत्वाद्यस्यकं श्रेश्वत्वाद्यस्य सत्तेनायुग्रस् स्थातयोग्यानामवपुरुषे च्छयम्बद्धास्यत्यस्तानाकार्यात्वं कार्य-बस्थायामापमा कृत्वमान्यत्वाग्यप्रायप्रायप्रायप्रमेषु रेपदारी रक्तवमत्त्र्वम् तस्यव्यव्यविक्षां सम्बद्धाः वर्षाय वर ्त्वच ४६तु।चदाचताः स्वावर्थयाः परगञ्जात्र स्वावस्थितं स्वावस्थानं स्वावस्थानं स्वाद्धाः स्वाद्धाः स्वाद्धाः स्व भिद्दस्तद्भिकरश्चिद्धाः स्वावर्थयाः प्रविच्यसितिष्णस्यविद्धानाः स्वाद्धाः स्व भदस्तद्सकरश्चद्दशतदाष्ट्रातकयार्षुरुपः उत्तर्भाराम्यावस्थानस्कार्यस्थानस्य अवस्थातरापासिस्याद्दिकार्यति । सर्वमनवद्यमित ण्य स्वित्री श्रिप्रवित्ति वित्र ति । प्राप्त प्र प्त प्राप्त प्राप्त प्र प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्त ॰ च साचत्रा अभवत्तना त्रवृत्करशानामक पञ्या करणा त्र सणपु हर नाया । ॰ जित्वेश देखिरीशानियत्तक त्रात्वे समिथिते। ऐवेचिनिर्मादे कीर्यास्य वितिष्वद्वार्शाविक्षणीम् ते सिष्ट्यापिक्षणे हे स्वस्पर्स्य हे सुर्मादेखा । नत्त्र अस्य प्रयोगामत्त्र स्थायत् । यय चण्याप्य प्रविद्धा । स्थायत् । स्यायत् । स्थायत् । स्यायत् । स्थायत् । स्यायत् । स्थायत् । स्थाय लक्षणानत्य प्राप्त प्राप्त स्वरूपात प्रत्या भावस्य युगान्त । विश्व स्वरूपात स्वरूपात स्वरूप स्वरूप । विश्व स्वरूपात स्वरूप स्वरूप । विश्व स्वरूप स्वरूप । विश्व स्वरूप स्वरूप । विश्व स्व ्यातयासकारत्या व्याप्तात्वाकार्यायकत्वसमायातः गर्याः प्रतिकार्याविद्याम्याविद्याम्यात्वायाः । स्वाप्तिकार्यान् परिवापिद्याचित्रात्वाद्यां वद्रापलस्वकत्वादेशमात् विद्यानस्यानस्याविद्यामयाविद्यामयाविद्याम्यात्वस्य वद्यानस्त्रया-्रस्यापिक्षा खात्रपुर्व प्रत्या प्रत्याक्ष्याक्ष्यात्वा । वया प्रत्याचिक्षित्र विकायमीययत्रात्रिक्षित्र विकायमान्य । व्यवस्था विकायमान्य । विकायमान्य प्रत्या । विकायमान्य प्रत्या । विकायमान्य प्रत्या । विकायमान्य प्रत्या । विकायमान्य ् विश्वापत्य अन्याद्यार्थ अन्याद्यात्य क्ष्यान्य त्यान्य विश्वविद्यात्य विष्यविद्यात्य विषय विष्यविद्यात्य विषय विष्यविद्यात्य विषय विषय विषय विषय विषय विष ्रारतः अयुवतगारा प्रतिकार्याच्याच्यापार्याः । वाष्ट्राविकार्याः । ं नात् अतरण रहे । पदादि अयोज्याचित्रं में स्वादि स्वादि । पदादि । पदा व व परिवासी विश्व के स्थान विश्य के स्थान विश्व के स्थान विश्व के स्थान विश्व के स्थान विश्व के ं जार्थ पर्यात्वाकार साम्योजीना दिश्योबीजीत्यन्त्र स्थित्य विषय् विषयि । जार्थ पर्यात्वाका । जार्थ पर्यात्वाका विषयि । जार्थ पर्यात्वाका विषयि । जार्थ पर्यात्वाका । जार्य पर्यात्व व्यावरा प्राप्ति विद्यतिकार गत्विवाज रूपाधिक प्राप्ति नरस्ति हुन्तिकार्यरण जात्वाल तस्माद्धामिनरस्ति हुन्तिकारण नामाप-श्रमान्तर्था। इतिरसर्वन्यावसीमाति चेतुच्यतेचेजात्यसिति विभेगोनेराहित्यन्तचर्यातृत्तिकाश्रक्षार्यात्वनछात्रासिच्यात्रमाहकासामाध्य

## श्रीवीरराष्ट्रवःः।

तद्धमाभावश्राहिकाकिन्तुसुरमचिद्दचिद्विशिष्टस्यवद्धग्रोलक्षग्रामिदं जगजन्मादिकारगात्वमितिततोविशिष्टस्येतरञ्यावृत्तितद्वेजात्यंनिवास विशेषिकार्यः विशेषिकारः विशेषिकारः विशेषिकारः विशेषिकार्यः विशेषिकारः विशेषिकारः विशेषिकारः व बहारयपादानत्वस्याप्यवगमात् तस्य च मुदाद्वाविकारदिविषसंहचरितत्वदश्रेनाहृह्यायपारतत्र्ययुक्तद्राषसङ्गचवारेगायिकरमाधिकरु धामनिरस्तकु हुकत्वादिविशेषगात्र्यमिति न तहिय्यर्थशङ्कति । अत्रंधीम्नित्यादिविशेषगात्रयंगासत्येश्वामनेन्त्मिति विशेषग्राह्मीति । त्रयंत्रत्यिम् इत्याम् पद्नेन् इतिपद्स्यपरपद्निधिषयुवाचिनानन्तपदस्य संस्थपदेनतस्य च प्रत्यभिक्षानात् श्रीम्नात् असिनिस्यासंख्याच्या ज्ञानकपेगास्वनस्वामप्रविक्तनिरुपाधिकेनीत्यावत्, निर्दत्तकुर्दकंवचकविषयभूतंविस्त्वातयीवत् । तद्यस्यतिन्द्रपिकासंक्रिवतः थर्ममूत्रज्ञानेनावगतवस्तुरहित्।मेर्यथेः अनुनेमुक्तेजीवाव्यहित्ताःतेषामुक्तिदशोधावसंबुचितिज्ञानत्विप्तस्यपरमीत्मव्रसाद्धायतिक्रामा धिकत्वात् वद्धदशायामभावनित्यत्वाभावाचिसत्येषदानिहणाधिकसत्त्रोयोगिक धरमणुरुषमाहतेनविकारास्पदमचतनित्यत्वाभावाचिसत्येषदानिहणाधिकसत्त्रोयोगिक धरमणुरुषमाहतेनविकारास्पदमचतनित्यत्वाभावाचिसत्येषदानिहणाधिकसत्त्रोयोगिक नश्चव्यावृत्तः नामान्तरभज्ञनाई।वस्थान्तरयोगेनतयोनिरुपाधिकुसाक्षियोगेरहितिवात्। वर्षेक्षेत्राचिकिक्यानिर्वस्थानविर्वस्थानविर्विर्वि पूर्वपदद्वयव्यावृत्तकोटिद्वय्विलक्षिणाः सातिशयस्य एप्राणानित्यासद्धाव्यावृत्तिविश्वणानीत्यावत्तेकत्वात् विश्वम्याद्ध प्रत्यभिज्ञा गादेवविद्योष्यसम्पर्यसम्पर्विद्यमध्याद्वियते "एवंचज्ञगज्जन्मादिनालक्षण्नोचर्गतस्वर्र्कष्पंत्रहासकलेतरवस्तुविजातीयमिति कंष्यन्तवन देशपरिच्छेदोनामसर्वदेशावितित्वरूपः इदमेत्रमेवत्येत्रतुनमवतीत्यवभिवधः । कालेपेरिच्छेदंस्तिवदामदानीन्तुनभवतीत्येविधाः । वस्त परिच्छेदोनामसर्ववस्तुसमानीधिकर्णामावः विकासियोत्रृष्टवस्तुसिद्धावीवस्तुपरिच्छेद्रराहित्यन्तत्राद्येबस्तुपरिच्छेदराहिस्य विज्ञाहरू ख्र कपस्यवनतुत्रहु गानान्तत्स्व कपस्य सर्ववस्तु शरीरकत्वेनसर्व वस्तु सामानाधिकरणयसत्विपितद्वणानामसम्मवात् छितीयतद्गुगानामधि तत्सम्मवति त्रह्मगुगापेक्षयोउत्कृष्णुगानामभावादितिविवेकः सोमानाधिकर्ण्यश्चिद्विधिश्चर्यसामानाधिकरण्यमध्सामानाधिकरण्य चति तत्रवाद्यसामानाधिकरग्रेयतामभिन्नप्रवृत्तिमित्तानांपक्सिन्विकेष्यग्रंथवस्यायनीशमिधानमित्यर्थः यथानीलोत्पलशब्दयोः अर्थन सामानाधिकरणयन्तुभिन्नार्थनिमिकस्मिन्नर्थेवृत्तिः यथानीलत्वोत्पलत्विद्विनाय्यसम्पर्धगायाध्यात्रतोत्रसन्द्रस्यभावतोतिहस्तिन् खिलदोषमञ्ज्वधिकातिशयासङ्गर्येयकेल्याणागुणागणां पुरुषात्तममाहतयाचाभाऽपिभेगवद्भिः श्रीरामानुजसुनिभिः ब्रह्मशब्देनेचस्वमार्वतोः निरस्तनिखिलदेशिऽनविधिकातिरायासङ्खाचेयकस्यागागुगागणाः पुरुषात्तमाभिधीयतेवसस्यगुगायागेनाहिब्रह्मशब्दः ब्रह्मवश्चस्यस्पेगा-गुणीश्चयंत्रात्विधक्रितर्यस्थित्यमुख्यीर्थ इतितत्रस्वरूपेणागुणीश्चिनिरातिश्चवद्भविद्याद्यविद्यात्विक्षभावतद्दयादिविशेषणीद्धंग्रह पुणाल पुणाल में पुणाल में पुणाल के नित्र विश्व कि नित्र विश्व के विश्व के विश्व के विश्व के विश्व के विश्व के व बहा शब्द स्येषु है वो समिप रत्व प्रतिपाद में पियोगितयों के नतुप्रवृत्ति मिस्तियों वृह्य कि विश्व के विश्व के व परवहार्हत्वाद्वहण्यात्वाचात्रहारामिश्रीयते । इतिथातस्मृतिभयार्द्वहरूगात्वेउभेचप्रवृत्तिनिमित्ततयावगलेकश्रमिहरूहत्वमाञ्जेशकृति-निमित्तं उच्यतेगुंगातावृहत्ववृहगात्वस्याप्यन्तमेतत्वादिर्गतभावः सचीनन्यायम्बर्णते हितश्रुतिप्रसिद्धं सकलसङ्काचितवृद्धिन्तिम्बश्चिन क्षानिविकाशक्षपानन्यविद्देशिष्ट्रीत्वे तिस्यकलहेयप्रत्यमीकत्वक्षाप्तिकाह्ययादिमोक्षप्रदत्वौपयिकगुरावस्ववस्थयोगुरुद्धि-भगात्राश्रीतिवीसमाभ्यत् तयाचिसमध्यत्श्रीमतिगारुडपुराणा वहेमूरिप्रयोगाचित्राणिका क्रिणा तस्मिक्षेम्बद्धाराब्दोमुख्यव्योमहोसुने-क्षार भ्ययस्मिन् प्रयुज्यमान तुगुणायोगः सुपुष्कलः तत्रवमुख्यवृत्तार्यभन्यत्रहुचपचारतहतिअनेनजगत्कारणाभृतस्तुविकोषजिज्ञासामावेनजा विशेषावर्गम् श्रीमा देश विक्रिकारेगा सर्वविलक्षणांश्रियः पतिश्रीमाहित्यांसिषामहीत्यर्थः श्रियांक्रुयासमितिवश्रहेशीराव्यातत्करोतीतिग्रिः चिष्ट्रवद्भावात्प्रकृत्येकाजितिप्रकृतिमाचाहिलापामावेतस्मादाशिकिङिशिच । श्रीसात्मनपदेआग्रमशास्त्रस्यानित्यत्त्रादाभैत्वाद्वासीयुद्रोद्रो-मानुसारिनिटीतिसिलिपिन्धीमहिसपि वेदनीपसिनाध्यानानुसम्तिचिन्तिसस्यादिशद्यपर्यायस्यधीशद्यस्यध्यानमर्थः । विङस्यक्ष्रय निर्मा वार्ति । अनुनाशी निर्माश्चियाचे मतुनिर्देशोवेत्यभियुक्तो काशीश्चकता मवति पूर्वद्विकप्रतिपाद्याश्चरतम् अनुनाशी निर्माश्चरता वित्यादिशा-विनिमयद्देश-तेनक्रतः पुरस्तादवेद्दिति यत्रत्रिमगोम् वत्यनेनप्रकृतिपुरुषग्तदोषप्रसङ्गर्शाश्चारवर्गानीवदाष्रकीर्घानप्रतानीर्थप्रथम्पादार्थः जितस्य मिस्य दिविशेषमीनिच उपायिश्वक्षियानिर्देषः धार्मिनरस्तकुँहकाद्यनेकगुगाचिकिष्टवहागो। स्रेयन्त्रा क्या गुगापसहारपदार्थक्ष त्या प्रति । श्रीमहित्युक्तस्योषासम्यानसंस्थिनत्यापेक्षत्वयसिद्धचाअङ्गपादार्थश्चस्य विताः अध्याहतम्बागन्दभवन्ति । निमत्तभूतवृहत्वान्तभूत न्त्रा प्राप्त । विकास के स्वाप्त कि स्वाप्त कि स्वाप्त कि स्वाप्त के सम्बद्धा के समा के मृह्णात्व । विद्यवगन्तुव्य यत्रिसगामृष्यामिखादिगापरमिखन्तनंनिरस्तिनिखळदोजत्वकल्यागागुगाकरत्वकी त्तनास्सगुगीनिशुगाशुखोनः THE THE PROPERTY OF THE PROPER THE MINISTER WE SHOW THE PROPERTY OF THE PROPE

-- विम्यो क्षेत्र क्ष -ान्य स्थापना विकास के श्री क ्ध्यायामा । विश्व वित्तं प्रदेशकात्मानं स्वतं प्रदेशकात्मानं स्वतं स्वतं शहत्मम् ॥ २ ॥ यदीय कृतिरञ्जसा सुमनसा सुमानं सता सती ्विशुक्र व्याप्त स्वाहिष्ट के से संवह स्वाहिष्ट के से संवह से किया के स्वाहिष्ट के स्वाह ासक्रिक्षकार्णः मञ्चलदेवताः प्रणायविति स्विति(द्र)धातिवस्त्रः। विलस्तुरस्विमहृद्धितः, कुमलवनस्यः इवान्वहस् ॥ ४॥ जयतिवनकः ्यम् विकासः ज्या विकास विकास स्थानकार्ता । स्थानकार्ता । स्थानकार्ता । स्थानकार । स्थान

#### श्रीविजयध्यज्ञः ।

स्थाक ब्रेक्शवतां न मुवा कवित ॥ ५॥ हिमकरलसङ्विभवधीतः सुधा त्सिलित्वरी स ममस्वतान्वयादानन्वतीर्थमहासुनिः । मेथि-मग्रावराः श्रीगोह्धीय दवाधिसमुस्विवः शमदमगुणा धषीछसन्द्रिसन्द्रतमधिस ॥ ६॥ चरग्रानिकने वैत्यारातमवाग्रीवीचरसस्रीम । विश्वतं भक्ति महा महेन्द्रतीयेयतीभारः॥ ७॥ छ शब्दः काश्यासः श्रुतिरपि, गुरोः काश्रसरगाः समीक्षापीराशा क खलु विद्या सत्तरियः । तथापि व्यामोहाद्गुक्तुक्कटाहेष्ट, शरुला मनाग्व्याकुर्वेहं मागवतपुरागां प्रमहनम् ॥ ८॥ आचार्वरपरेरपि प्रवि-वतान्यागाञ्चनः खदतां खद्योतस्तपनप्रकाचितपदे कि तअकुर्यादिति। तन्यागांचुगमेन वाकचुमनः छुखिकिया ये ततः श्रीमद्भागवत प्राचीमतुं व्याकत्तंकामीय ते ॥ ९ ॥ तदस्यां प्रधायां झाटात कृतयात्रेमयि कृपां महान्तः कुर्वन्तो दिवि भूविवसन्तः सदयनाः । निरस्तास्या ये परमपद मक्तिक्षितिधरो भ्रह अहमीवाविपुलकरुगाः सर्वसुद्धः॥ १०॥ आनन्दतीर्थविजयतीर्थौ प्रगाम्यमस्करिवर-

बन्धी सयोः कार्ते स्फुटमुपर्जाः व्यप्रवश्वमिमागवतपुरागाम् ॥ ११ ॥

अथ किमलापनुत्तरे विधिभवपुरःसरैरमरवैरादरात् प्रार्थितादिति सुतवलमरपरिक्षिष्ठधरिगतले विरसमय समाचीगीतपसा सत्यवत्यां पराशरादवतीर्गो व्यासनामा मुरमथनः समुद्धृतसमुत्सन्ननिगमकल्पतवरल्पमतिमनुजदयालुः शास्रोपशासाभेदेन विभक्त-वेदस्तदर्थं निर्मायेच्छुर्विरचित ब्रह्मसूत्रस्तदनिधकारिजनापवर्गाय प्रकाशित पुरागासंहितो वेदान्तार्थप्रकाशिकां द्वादशस्कन्धसिम-साम् अष्टादशसहस्रसंख्योपेतां भागवतपुराणसंहितां चिकीर्षुः कालदोषेण पिहितान् भागवतधर्मानाविश्चिकीर्षुनिरन्तरापरोहित वहा-स्वरूपो निरन्तरायोऽपि प्रेक्षार्वाच्छक्षाय मङ्गलाचरगानामनेक प्रयोजनाय च सर्वेष्टदेवतां नारायगाख्याम् अनुसमरति। जन्माद्यस्य यत इति । अत्र यन्छव्द श्रुतेस्तन्छद्धोऽध्याद्दार्थः अस्य जगतो जन्मादि यतः यश्चार्येष्वभिक्षः यश्च खराट् यश्च ब्रह्महृदा आदिकवये तेने यं प्रति सुरयोमुह्यन्ति तेजो वारिमृदां विनिमयो यथा तथा त्रिसगीऽपि यत्र मृषा तं स्वेनधाम्ना सदानिरस्तकुहकं सत्यं पर श्रीमहीति समस्तान्वयः। तत्र प्रथमं परं धीमहीति व्यस्तान्वयः पश्चादाकाङ्कावशादादितः सर्वेषामन्वयः परं पूर्णी गुगौरिति शेषः -पृपालनपूरगायोरिति धातोः द्विविधा हि देवताग्रन्यारम्भेन नमस्कारादिमङ्गलाकियामहीति आधिकारिकी अभीष्टा चेति यथा ज्योति:-हो स्टिश्न हे असे स्टिश्न हे विकारिकी नमनादिकियाही परमप्रेमादिविषया हाभी हा चेति । भगवांस्तुभयरूप इत्यमिप्रायेगा पर मिलुक्तं परमात्माहि सकलप्राियानां संसारानमूलनायास्मिन् शास्त्रे प्रतिपाद्यते तदेतत् प्रेयः पुत्रात् प्रेयोऽन्यस्मात्सर्वस्मादन्तरं यहय-मारमिति श्रुतेः स एव परमप्रेमविषयः परोऽपि नारायगा एव नान्यः कश्चित् यदेतत्परमंत्रह्मवेदवादेषु पठचते । सदेवः पुगडरीकाक्षः स्वयं नारायगाः पर इति हरिवंशे सत्यतपः प्रश्नोत्तरत्वेन दुर्वाससः प्रतिवचने परस्य नारायगात्वोक्तेः ब्रह्मविदाप्नोति परमिति श्रुतेश्च श्वीमहि ध्यायम जन्माद्यस्य यत इत्यादि विशेषगौः प्रशद्वोक्तान् गुगान् विशिनष्टि। पाळनपूरगाञ्यां यथासम्भवं सृष्टशादयो वाच्या इत्यूहनीयम् अलौकिकवस्तुनो लक्षग्रीपदेशमन्तरेग् ज्ञातुमशक्यत्वात् शश्चिषाग्राकरुपं तदित्यतो वा लक्षग्रामाह् जन्माद्यस्य यतं इति अस्य प्रत्यक्षस्य जगतो जन्म आदिर्यस्य तज्जन्मादीति तद्गुणसंविज्ञानो बहुब्रीहिः यतो यस्मातः भवतीति शेषः आदिशस्ति भत शत जरप अरपकारप जाता अपने आपद अपद अपद अस्य । स्थितिसंहार्यानियम न ज्ञानाज्ञानवन्धमोक्षा गृह्यन्ते न केवलं स्थितिसंहारी श्रुतिस्मृतिविरोधात यथा सास्नादिमान् गौरिति वृद्धोपदिष्ट-ार्यात तथा जगजन्मादिकारणं परामिति श्रुत्याचारयोपदिष्ठं जनमादिकं प्रत्येतं साह्यादिमन्तं पदार्थमश्र्वादिक्थो व्यावृत्तं गोशब्दवाच्यं प्रत्येति तथा जगजन्मादिकारणं परमिति श्रुत्याचारयोपदिष्ठं जनमादिकं प्रत्येकं साम्रादिभन्त पदायम्पादिक विदान्तस्त्रेषु प्रतिपादितत्वात् नतु परस्य जन्मादिकारणात्वं कृत् इति तत्राह अन्वयादिति यतो वा इमानि परवहाळक्षण्या राज्य नरा अर्थे कार्ताति क्षेत्र स्वादिश्वतीनाम् । अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वे प्रवर्तते स्रष्टा पाता तथैवात्तानि खिलस्यक मृतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्तीत्यादिश्वतीनाम् । अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वे प्रवर्तते स्रष्टा पाता तथैवातानि खिलस्यक सूतानि जायन्त यन जाताम आन्यार्थात् उपक्रमोपसंहारादितात्पर्ध्येलिङ्गात् परं ब्रह्मीव जगत्कार्गां नान्यदिति भावः। प्रवत्वित्यादिश्चतिस्मृतीनां च जगत्कारग्रोहरावन्वयात् उपक्रमोपसंहारादितात्पर्ध्येलिङ्गात् परं ब्रह्मीव जगत्कारगां नान्यदिति भावः। प्रवात्वत्याादश्चातस्मृताना च जगरकार्यावरात्रात्रात्र कथं परस्थेवत्यवधार्यते उच्यते यद्यपि रुद्रादीनां वेदेकदेशप्रतिपाद्यत्वमस्ति वसु रुद्रादानामाप जन्मादिकार्यात्व श्रूपत सर्व वेदा यतपदमामनन्ति वेदैश्च सर्वेरहमेव वेद्य हत्यादिश्चतिस्मृति श्यः। नुसु तथाप्यनस्तवद्कद्म्वप्रातपादित्व ।वन्यार्य । या पर्याद्विकक्वपनेन तिन्ध्रियासावादतः परमाणुपुअस्यव कार्यात्विमिति तत्राह श्रुत्यादः ।पपाछिकादालापवत अभ्रमाणात्पार्या प्राचीत्र परब्रह्मणाः कार्यात्वं हायते समुदाय उभयहतुकोऽपि तदप्राप्तिरिति भगवता इतरत हात अत्यक्षागमाञ्चामनुगृहाता। इतरत्यात् । अत्र श्रुत्याद्यनुगृहीततकोभावात् केवलतकस्याप्रीतिष्ठितत्वात् । ननु कार्य्य कार्याः कृष्याद्विषायनेन परमाणुषुअवाहस्य निरस्तत्वात् । अत्र श्रुत्याद्यनुगृहीततकोभावात् केवलतकस्याप्रीतिष्ठितत्वात् । ननु कार्य्य कार्याः कृष्णम्पायनन परमाणुपुञ्जवाहस्य ।नरस्तत्वातः । जन दुः सिद्धिति चेत् सत्यं प्रधानादरचेतनत्वेन बुद्धिपूर्वककर्तृत्वासुपन पत्तरस्वातात्र्याच ।कात्याद्वातनकतृकत्व पारशायाच्या त्या । समुध्ये वेदानामपीरुषेयत्वेन कर्तृप्रसिद्ध्यमावादसिद्धियमाग्रात्वेत च शब्दः समुध्ये वेदानामपीरुषेयत्वेन कर्तृप्रसिद्ध्यमावादसिद्धियमग्रात्वेत चतनाहिष्णारुवप्रधत रात सुराकाऽय तकः समु। पठ प्रतिनाहिष्याती व्यक्तिकासा जन्माद्यस्य यतः शास्त्रयोनित्वात तत्तु तदनुगृहीततर्कस्यापि प्रतितर्कपराहितर्नाशङ्कनीयत्यस्मित्रर्थे वा अनेन अथातो व्रह्माजिक्षासा जन्माद्यस्य यतः शास्त्रयोनित्वात तत्तु तदनुगृहाततकर्यात्र नाततकपराहातनाशक्षनायत्यारमः । समन्वयादिति चतुःसुत्री च व्याख्याना जिल्लासेव धीमहीत्यनेनोत्यते वेदविचारनिर्गातगुगापसंहारकपत्वात प्रयानेव विशेषः समन्वयादात न्युः दः न्याच्याता ।जसारान्य विश्वयाद्याद्यात्र । वश्यक्यात्र श्रुवान्तकरणस्य ध्यानसन्भवादिति यस्तुश्रुतिसमृती अनादत्यः ध्यानम् कागरायाः ग्राप्त्यानस्यता वामर्थाः कैवलतर्तेगा ब्रह्मणो जन्माविकारणात्वः विघटण्यप्रत्यवतिष्ठते सोऽन्वयव्यतिरेकात्मकतर्केगाप्तिसत्तव्य द्वत्यतो वाह अन्वयादितस्त कवलताचा नक्षापा । प्रवास । प्रवास प्रवास । प्रवास प्रवास । प्रवास धात अन्वयात गान्य व्यासस्य प्रतिहतः स्वार्थे साध्यतीत्यतस्मित्रचे वर्तते मसु यद्यापयोग्वादेरं चेतनस्य स्पन्यनादिप्रशृतिहरीनाः मृहीतव्यात्रिकत्वेन वळीयत्वाद्यतिहतः स्वार्थे साध्यतीत्यतस्मित्रचे वर्तते मसु यद्यापयोग्वादेरं चेतनस्य स्पन्यनादिप्रशृतिहरीनाः गृहात्रव्यात्रात्र्य कार्गात्व कि न स्यादिति तत्राष्ट्र अर्थोध्वति अर्थेषु घटपटादिश्विमता सर्वतः अर्थेषाकार्गा आनातीत्यसिकः पात्रव पात्रव त्रामाश्रयत्वलक्षणासम्भवात्रितरात् न सर्वहत्वे विष्णोस्तु संवेहत्वे श्वत्मृतिसिद्धं यः सर्वहाः स सर्वहितः वान्यर्थ भवाणा न रवं वेत्य परन्तपत्यादि नन्बस्य हेतीः सर्वेश रुद्रादावपि वृत्तरसाधकत्वमिति व्रवेशि खराडिति खयमेव राजत इति वरप्याः स्वयमेव राजानान्योऽधिपतिस्ति था अये भाषा र कामयेतं तसुग्रं स्थामिति रुद्वादीनां श्रीमसादायसमानादिगुणसत्व खरा ६ व्यान प्रामित्युखन्तरिति श्रिषश्च विकासमुगृहीतश्चानित्मत्त्वय्थीनाद्विष्णी स्वनस्याधीनश्चानादिगुगावत्यासहतानां विशेषाश्चासन्

(Qt

## ্ৰান্ত চৰক <mark>মহানিধি</mark>ধি পি সাদিবনিধি ভিত্ত

स्तोत्रपक्षेसमागतस्यक्किष्टस्वमाद्यंक्यतयात्वेदतोत्रासंस्वानति विद्यर्थम् क्रमात्माद्यमाद्विद्देश्चित्रंत्यक्ष्ट्वोत्रेक्ठवेतिति तासांखरूपमज्ववित्रमावद्यित्यर्थप्रतियुत्पुत्नस्वादिनित्रात्वित्रपित्याद्वित्रपुत्रस्व स्वाद्वित्रात्याद्वित्रप्रतिवित्रप्रतिवित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतिवित्रप्रतिवित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतिवित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रप्रतियाद्वित्रपर्याः । ५ ॥

त्रभुर्यस्य ॥ ६ ॥ निषयपराआहुः भवायनस्त्वमितिहेविश्वभावन!सर्वानेवविषयसंवंधनभावयस्त्रिअधिकान्करोषिश्रतोऽस्माक्रमपिउद्भवायभवनस्त्वमिति यतोऽस्माकंत्वंस्वामीसर्वप्रार्थनायामनुचितत्वाभावायभगवातिषद्वर्मत्वंप्रतिपीदयतिमतिसादित्वमेवनामातात्वद्वभाव्यभगवातिषद्वर्मत्वंप्रतिपीदयतिमतिस्वमेवनामातात्वद्वभाव्यभगवात् उद्रस्थानांजीवानामेववहिः सृष्टेः ब्रह्मांडाख्येचोदरेसांप्रतमपि स्थितेः लोकप्रतीत्यातासांजरायुवरपोषकवंद्वाव्यतस्त्रमञ्जलावतो रोदनेन्वलाद्वात्वमेवप्रार्थनीयः किच अथसुद्धत् अविवेकदंशायायणात्वंप्रार्थनीयः अथतव्नतरिविवेकदंशायाम्। पत्वमेवप्रार्थः प्रतस्तं सुद्दिमर्त्र"द्वासुपर्गासयुजासखायावि"तिश्रुतेः सुखुदृद्यः सुदृत्पक्रिमेन्नेवदृद्येष्ठभयोःस्थितत्वात सुखुद्दरतीतिवासन्नेकलभोकृत्वात अतपवंयुक्त्यापिमगवानेवप्रार्थनीयः सर्वेफलदातृत्वात् किंचः असेवाद्यंपराधेनदगडनेऽपिभगवानेवः प्रार्थनीयः असेवाद्यंपराधेनदगडनेऽपिभगवानेवः प्रार्थनीयः सर्वेफलदातृत्वात् विचान गतिरस्मोकमस्तिययास्त्रयमनलंकतोऽपिभायोमलंकसोतिवहुभिराभस्यौः अलंकतेतुसंदेह्णवनास्त्रिभतस्त्वमहानस्मानलंकुर्वित्यर्थः किंच त्वमस्माकंपिताअतोजन्ममात्रेगौववयंतेदायभागिनः जगत्कर्तृत्वेनैवभगवतः श्रवगात्एवमैहिकसर्वफलदानार्थभगवद्भपमुक्तवापारलीकिक सर्वदानार्थमाहत्वंगुरुनः परमंचदैवतमितिप्रक्रियांतरत्वात् पुनस्त्वमितिप्रहणंपरलोकस्तुतदर्थविहितकमेश्वानभक्तिभिभेवतितत्रअज्ञाना द्न्ययाज्ञानान्मोहनार्थवापां बंडादिवहवोमार्गाजाताः तत्रसन्मार्गवकादुर्लभः संदेहेनविश्वासाभावाच्चत्वंत्वव्ययंज्ञानमितिवचनात्त्वमे-वगुरः जीवास्त्वसद्गुरवः त्वमेवसद्गुरुरितिअतोगुरुश्रुश्रूषयेतिवाक्यात् स्वसेवामेवशिक्षयेत्रथः एवंकर्मेणांफलमितिपक्षेगुरुसेवयेवक्रतार्थ तादेवताफलद्रानपक्षे फलमतउपप्तः॥३।२।३७॥इतिब्रह्मदानपक्षेऽपित्वमेवफलदातित्यर्थः।प्रामंचदेवतमितिदेवतादानपक्षेऽपिनांगदेवताः फलं प्रयच्छंति किंतु सहकारिगोभवंतिअतः परमित्युक्तंमध्ये चकारात्ब्रह्मपक्षेऽपिपरमात्मादेवताभवानेवदेवानांत्वदंशत्वात् ब्रह्मरूपत्वाञ्च अतस्तवाराधनमेवास्माकंकर्त्व्यम् अन्यत्तुस्वतग्वभाविष्यतीत्याहः यस्याजुन्त्येतिकृतमस्यास्तीतिकृतीसग्वदज्वित्वतिकृतस्यात्रेकेणकृतेनान्येन धर्मोदिनानकतीत्वंभवति धर्मः सरतिकीर्त्तनात् कत्रभनास्तिनिष्कृति रितिअतस्त्रवातु वृत्त्यर्थत्थास्पाद्वययथाकृतिनीवभूविमेत्यर्थः॥ ७॥

मक्ताश्राहुः अहोहति अहोहत्याश्चर्यविद्यस्केवपूर्णमनोर्णाः इतानीत्वम्यिमिळितहृत्याश्चयं अथवाश्रव्यायक्तिः कृतास्माभिः फळमहज्ञातिम्याश्चर्यभवतावयसनाथाः नारायणपराः सर्वेनकृतश्चनविश्चतितिन्यायेन अपेक्षामावात् नियतानापृक्ष्यते भगवतस्त् मक्ति विषयत्वेनैवर्गहर्णम् प्रवम्प्रिभगवानेवस्वसमुद्यस्यफळहानादिकं करोतिचेत् तद्वात्रस्त्राण्यस्विति तत्वाश्चर्यकरंभवति इहतुभवतावयं सनाथाः स्वयमागत्यस्वेनार्ये निर्वाहयसीत्यर्थः किंच इदंपुनः सर्वजनीनगुप्तत्याभक्तानाम्भवत्यस्त्रिक्तर्तितिविश्वर्यते अत्र तसाथाः स्वयमागत्यस्वेनातितिविश्वर्यते किंच यद्वयस्वदापरयमाहिमवेदाभगवान् सर्वः साक्षात् कियते तित्रवित्यदित व्यव्याभगवान् प्रवृत्यस्त्रितिविश्वर्यस्त्रमेनविष्यम् स्वयम्भवत्यस्त्रमेनविष्यमित्रभवित्यस्त्रमेनविष्यमित्रमेन्द्रमेनविष्यमित्रमेनविष्यमित्रमेनविष्यमित्रमेनविष्यमित्रमेनविष्यम्भवत्यस्त्रमेनविष्यमित्रमेनविष्यम् स्वयम्भवत्यस्त्रमेनविष्यम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्ति स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयस्य स्वयम्भवत्यस्य स्वयस्य स्वय

## यही म्बुजान्वापससार भो भवाने कुरून्मधून्वाध सुहृद्दिन्त्या।

कृत्य का क्षेत्रक क्षेत्रक क्षेत्रक क्षेत्र के किल्य किल्य के किल्य किल्य के किल्य क

जीवमें ते सुन्दरहालशोभित मपश्यमाना वदनं मनोहरम् ॥ १०॥

शृगवानोऽनुम्रहं दृष्ट्या वितन्वन् प्राविशत्पुरीम् ॥ ११ ॥ भूगवानोऽनुम्रहं दृष्ट्या वितन्वन् प्राविशत्पुरीम् ॥ ११ ॥ भूषु-भाज-देशा-र्हा-र्ह कुकुरा-न्यक-वृष्णिभिः ।

ार्वा । १२ ॥ चार्वाच्यात्मतुल्य वर्लेर्गुप्तां नागैर्भोगवतीमिव ॥ १२ ॥

श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

वैरिज्याः सनकादयः । परं परायगां परमाश्रयम् । यत्र अग्नि पंकजे परेषां ब्रह्मादीनां प्रभुरिष कालो न प्रभवेत् ॥ ६॥ भवाय क्षेमाय । "भवः क्षेसे व्य क्षंस्रारे" इति मेदिनी ॥ ७॥ त्रेपिष्टपानां देवानाम् ॥ ८॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

पितरममेकावालाइवस्त्रवृद्धहृद्दम्बिताररक्षकंश्रीकृष्णम् चः प्रजाइतिप्रकरणादन्वेति ॥ ५॥

कार वसर्वकारित

र प्रदेशका सुद्धान के <mark>जाने होते हैं।</mark>

्ट परि अक्षीक्ष्य । इ.स. विकेशसील्या स्टेक्टर

तदेवाह नताःस्मेतिपंचिमः इहप्राक्षेम्निम्ब्छतांपरायणंसर्वोत्कृष्टंशरणम् तेपदारिवन्दंनताःस्म यत्रयस्मिन् शरणेकृतेसितशरणापन्नेषु परेवामशरणापन्नानांप्रभुरिपकालोन्प्रभवेत् कथमञ्जवतेतांभवभयंतवयद्भकुिटः सृजातिमुहुिक्षणामि रभवच्छरणेषुभयामितिवस्यमाणात् ६ हेविश्वभावन ! जगदुत्पादकयस्यानुवृत्योपासनयाकृतिनः कृतार्थावभूविमजातावयंसत्त्वनोभवायोद्भवायभव ॥ ७ ॥

कृतित्वंवर्णायति अहोद्दति वयंभवतासनायाः स्मः यतः अहोत्रिविष्टपानामपिदूरेदर्शनंयस्यतस्यतवरूपंपर्येम कथंभूतंरूपं प्रेमपूर्वस्मि-तमन्दहस्तितंत्विग्धंसरसंनिरीक्षणं वयस्मिन्तदाननंयस्मिन्ततः सर्वेसपूर्णसोभगंयस्मिन्ततः ॥८॥

#### भाषा टीका।

हारिका के सब प्रजा प्रीति से प्रसन्न मुख होकर हुष से गद्गदवाणी से सबके छुहृद तथा रक्षक पिता के तुल्य श्रीकृष्ण की स्तुति

करत स्व ॥ ५ ॥ हे नाथ ! हम आप के अंब्रि पंकज में सदा प्रयात हैं । जिस अंब्रि पंकज को ब्रह्मा सनकादिक और सुरेन्द्र चंदना करते हैं जो क्षेम इच्छा करने घाळी का परम परायग्रा है । और जहां ब्रह्मादिकों का प्रभु काल भी अपना प्रभाव नहीं कर सका है ॥ ६॥

है विश्वमावन ! तुम हमारे मङ्गालार्थ हीही ? तुमही माता ही सुद्धत ही पति ही पिताही तुमही सहुरु और परम देवता ही जिनकी अनुवृक्ति से हम कतार्थ हुए हैं। ७ ॥

अहो ? हम सब आप से सनाय हैं। कि जो देवताओं के भी दूर दर्शन, प्रेम स्मित युक्त स्निग्ध निरीक्षण, आप के सर्व सी भग रूप हो हर्शन बरते हैं॥ ८॥

#### श्रीधरखामी।

अर्मका इव सकरणमाडुः। यहि यहा। भो अञ्चलाञ्च !। नो भवानिति पाठे न इत्यनादरे पष्टी अस्माननाइत्य । अपससार अपहाय जगाम । कुरून हस्तिनापुरम । मधुन् मधुरां वा । तत्र तदा राविविना आन्ध्यादश्योगेथा एवं तव नः त्यदीयानामस्माकमपी त्यर्थः॥ २ ॥ १०॥

( )入。

वो पुरसाधानीय कृतकोत्रास राज्या । ा १५ हि ६८६ छ। **श्रीवीस्रायवः ।** १७३५ वर्षाराम् ले

मोअम्बुजाक्ष ! भवान् सुदृद्दिदक्षयायदाकुरून्मधून्वाजनपदानपससारजगामतत्रतदा हेअच्युत ! नोऽस्माकंत्वामपदयतां रवेर्विनारविवि नाक्ष्मोः क्षमाकोऽव्दकोटिप्रतिमः सम्वत्सरकोटिकालतुल्योभवेत्॥ ९॥ १०॥

इतीत्यंप्रजानामुदीरितावान्वः ऋगवानाभ्कवत्सलोभगवानवलोकनेनानुग्रहीवतन्वन्पुरंप्राविशत्पूः शब्दोऽयंनतुपुरशब्दः ॥ ११ ॥ कथंभूतांपुरंमध्वादयोयादवान्तरविशोषाः तैरात्मतुल्यवलैः कृष्णातुल्यवलैर्नागैःकाद्रवेयादिभिर्मोगवतीमिवगुप्तांरिक्षतांभोगवतीनामना गानांपुरी ॥ १२ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

हेअंबुजास् । अयुयहियदामाधवः श्रीवल्लभोभवान्मधुविषयेभ्यः सुद्धदांपांडवानांदि इक्षयादर्शने च्छ्या कुरून्कुरुविषयान् कुरुविषये **अयोमधून्वां ऋतिगच्छति हे अच्युत** ! तत्रतस्यामवस्थायांतचेतिषष्ठीद्वितीयार्थे त्वांविनाकुरूगांमधूनांचनोऽस्माकंयथारविविनाक्शांतथैकः क्ष्रगाः काल अन्द्रकोटिप्रतिमः वृषेकोटिसमानः स्यादित्येकान्वयः॥ ४६॥

हप्रयाद शेनेन शृगवानः शृगवन् चशब्दाहंदिमागधादीनांगिरः॥ ४७॥

गुप्तांरक्षितां भोगवतीनामनागानांपुरी आत्मतुल्यवलैः परस्परमात्मनातुल्यवीर्येरिधकद्वष्टांतन्यायोवा ॥ ४८॥

## क्रमसन्दर्भः।

यहींति यदा यदेत्यर्थः तत्र तदा तदा क्षगोऽपि अन्दकोटिप्रतिमो भवति । तथा रवि विना अक्ष्गोर्यादश्यानस्यावस्था ताहश्यपि भवतीत्यर्थः । नो भवानिति पाठे नोऽस्माकं स्वामी यो भवान स त्वमित्यर्थः । तत्र मधून मथुरां विति व्याख्याय तदानीं तन्मराडले सुहृदो व्रजस्था एव प्रकटाइति तैरप्यभिमतम् । तत्र योगप्रभावेशा नीत्वा सर्वजनं हरिरित्यत्र सर्वशब्दप्रयोगात् । वलभद्रः कुरुश्रेष्ठ भगवान् रथमास्थितः । सुदृद्दिद्क्षुरुत्कंठः प्रययौ नन्दगोकुलमित्यत्र प्रसिद्धत्वात् ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १६ ॥ १६ ॥ १७ ॥ । १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

## सुवोधिनी।

विषयक्षे अप्रिख्यमेवजातद्दितस्मादेतन्महदाश्चर्यमितिस्त्रियः स्त्रीप्रधानाश्चाहुः एतानभगवंतंनवागुगान्जानंतिअपितुस्वानुंभवंत क्षवस्तुसामर्थ्यात्प्रजायतेतदमुवदंतियर्ह्योबुजाक्षेति हेकमलनयन । इष्टेचवामृतंपाययतीतितथासम्बोधनं नःअस्माननाइत्यिकमेताः मत्स्वरूपा विदः अतस्तत्रगामिष्यामियत्रमांजानंतीति इत्यपससारभवानितिगमनसमयायवयंसमुखतयानदृष्टाः कुरून्हस्तिनापुरदेशान् अथततएवप्र वितर्गातरेगामीष्मादिदर्शनार्यंकुरुक्षेत्रंतत्रताहमन्समयएकः स्रगाः अब्दकोटिप्रतिमोभवेत् यातनास्वेवंश्र्यतेक्षगामध्येवर्षसहस्रकृत्वाभोजयंती तितर्यवास्माकमनुभवः ननुसुखेऽपिश्र्यतेक्षण्मात्रेकल्पभोगान्भुंकद्दति तत्राह रवेर्विनाष्ट्यामिवविषयसंस्कारकत्वेनअधिष्ठातृत्वन चय तित्यवार्तिः प्रविश्वतितदाविषयप्रहण्समर्थेचक्षुभेवतितथास्माकमंतर्वहिश्चेत्भगवान्तिष्ठतितदासर्वकार्यक्षमत्वं अयमर्थः यथायोगिनः समा दारानः नामान्य वश्च निर्मालनंकत्वादेवतांस्ववशेस्थापिरवातिष्ठंतिक्षग्रेक्षग्रेम् र्छितामवाम्हतिजीवनंत्यच्युतहतिसंवोधनात् यथात्वमच्युतः तथावयमप्यस्मिन्नंशेजाताइतिद्योतितम् ॥ ९ ॥ १० ॥

त्यात्र । एवंचतुर्विधानांवाक्यमगवान्सत्यत्वेनसमर्थियत्वासत्यवाक्ष्यभ्रवगामङ्गलमनुभूयपुरंप्राविशदित्याहइतीति चकारादन्यान्यपिवहुविधानि भूजानामार्थाः वितन्वन्तथातासुद्धिः पतिताभगवान्श्वानादिसंपन्नः यथावत्तासांहृदयप्रविष्टः येमसुखितान किचितुक्तवत्यः ततः पुरी द्वारकांप्रकर्षेग्रमहतासंद्रमेग्राभविशत्॥ ११॥

प्रविद्यांतांपुरीवर्षायितप्रचिमः मधुमोजेतिविद्यायथात्यापुरीतिविद्यापयितुम् "अधिष्ठानेवहिश्चोर्ध्वमंतश्चांतार्विभेदतः सुंदर्भगवद्योग्य स्थानंनान्यत्कथंचन" तत्राधिष्ठातृन्वर्णयतिमधुभोजेतिषड्विधायादवाः मधवोभोजाः दशाहेत्रहोः कुकुराअधकावृष्णयश्चतेर्गुप्तासत्वरूप स्थापारा विश्व विश्व संरक्ष्यतेतदा भगवत्प्रवेशयोग्यंभवति इंद्रियैविषयाकुर्देशितवाक्यात् तेरेवनाश्रवणात् पुरीचगृहभेदेनद्यति भतः । अत्मतुत्यवलैः यथाआत्मदेहः तसुरुयंवलंयेषाम्आत्माचायुर्वा "अहंमतुरमवसूर्यक्षे"तिस्के अहंदेवतायाचायुभेदत्वात् महलमध्यत्वादस्य आत्मध्य स्वावासगवत्तुत्यसेना सर्वाप्रवेशेनहृष्टातः नागैरितिहारीरिमवर्षानागैः प्राणीःभौगवतीत्तुः प्राणायामैः संरक्षित्रायोगिततुं यथाभगवान् प्रविद्यातिभोगवतीगंगाप्रवाहोवारस्राभावदेवरपि साहियते ॥ १२॥

सर्वर्तु सर्वविभवपुग्य वृत्त्वेसताश्रमैः। उद्यानोपवना रामैवृतपद्मांकर श्रियम् ॥ १३ ॥ गोपुरदारमार्गेषु कतकौतुक तौरगाम्। चित्रध्वजपताकाग्रैरन्तः प्रतिहतातपाम् ॥ १४ ॥ संघाजितं महामार्ग रथ्या-पराकचत्वराम् । सिक्तां मन्धजलै रुप्तां फल पुष्पाञ्चताङ्कुरैः ॥ १५ ॥ द्वारि द्वारि गृहागां च दथ्य चतफलेक्ष्मभिः। म्रालंकतां पूर्णा कुम्भैर्वलिभिर्धपदीपकैः ॥ १६॥

## श्रीविश्यनाथचक्रवर्ती।

भो अम्बुजाक्ष !। नो भवानिति पाठे नोऽस्मान् अनाहत्य । कुरून् हस्तिनापुरम् । मधून् मथुरामगडलं नन्दब्रजमित्ययः नेतु मथुरापुरी तदानीं तस्यां सुहदामभावात् । तत्र योगप्रभावेशा नीत्वा सर्वजनं हरिरित्यत्र सर्वशब्दात् । तन आयास्य इति दौत्यकैरिति ज्ञातीन् वो द्रब्दुभेष्याम इत्यादि यद्भगवता उक्तं वर्ज प्रत्यागमनं तत् पाद्मादिपुरागोषु स्पष्टं सदिपि (तदिपि ) श्रीभागवते त्वस्मिन्नन्नेव ज्ञापितम्। तदा नस्तव त्वदीयानामस्माकम् ॥ ९ ॥ १० ॥

दृष्ट्या तान् प्रति दृष्टिक्षेपेगा ॥ ११ ॥ तां द्वारकां वर्णयति पश्चीभः॥ १२॥

## सिद्धांतप्रदीपः। 😁 🕫 🔆 🤫 🦠

कुरून्मधून्वादेशान् अपससारजगामतवतावकानांनोऽस्माकम्॥९॥ किंच तेवदनमपश्यमानाः कथंजीवेम॥ १०। ११॥ पुरीवर्णयतिमध्वितिपंचिभः गुप्तांपालिताम ॥ १२ ॥

ি নি কার্যনাক্রমের ক্রমেনাল প্রকর্মন । ক্রমেন্ট্রান্ট্রান্তর্মনে প্রকর্মন লিক্ষান্তর ক্রমেন্ট্রান্ট্রান্ট্রান্

## भाषादीका ।

हे अम्बुजाक्ष ? जब आप हम लोगों, को छोडकर अपने सहदों के देखने की इच्छा से कुच्देश वा मधुदेश में गमन करते हैं तब हम को एक एक क्षमा कोटि कोटि वर्ष के समान हो जाता है। हे अच्युत ? जैसे सूर्य के विना अन्धेकार में आंखों को पल पल कठिन हो

जाता है ॥ ९॥ हे नाथ ? आप के चिरकाल विदेश रहने से शरगागत जनों का तृष्णा तथा सब ताप का शोषक सुंदर हास से शोभित एवं मनो हर आप के श्रीमुख के दर्शन बिना हम लोग कैसे जीवेंगे॥ १०॥

भक्त वत्सल भगवान इन प्रजाओं के उदीरित वचनों की सुनते इष्टि से सब पर अनुपृह करते पुरी में प्रविष्ट हुए॥ ११॥ जो पुरी आत्मतुब्य बलवाले मधु भोज दशाह अहे कुक्कुर अन्धक और वृष्णिओं से नागों से मागवती के समान रक्षित है ॥ १२॥

कार तर ते के अपने के किया के क कुछ राज के अपने किया के किया क कुछ राज के अपने किया के किया के किया के किया के किया के किया किया के किया किया के किया के किया के किया के किया सर्वेषु ऋतुषु सर्वे विभवाः पुष्पादिसम्पदो येषां ते पुण्यवृक्षाः लताश्रमाः लतामगडपाश्च येषु तैरुधानादिभिः वृता ये पद्माकराः सर्वेषु ऋतुषु सर्वे विभवाः पुष्पादेशानम् । उपवनं पुष्पप्रधानम् । आरामः क्रीडार्थं वनस् ॥ १३ ॥

गोपुरं पुरद्वारम्। द्वारं गृहद्वारम्। कृतानि कौतुकैन उत्सवेन तीरगानि यस्यां ताम्। गरुडादिचिह्नांकिता ध्वजां जयप्रदयन्त्रांकिताः पताकाः चित्रागां ध्वजपताकानाम् अग्रैः अन्तःप्रतिहतः आतपो यस्यां ताम् ॥ १४ ॥

सम्मार्जितानि नि सारितरजस्कानि महामार्गादीनि यस्याम् । महामार्गी राजमार्गीः । रथ्या इतरमार्गाः आपशाकाः परविविधाः। धत्वराणि अङ्गनानि फलादिभिरुप्ताम अवकाणाम् ॥ १५ ॥ १६ ॥

## श्रीविजयञ्जूके ।

मन्तानां तैरक्षातृत्वास तेषां निरुपचरित्सर्वेष्ठत्वमतो नान्येषु तस्य हेतीव्येमिचार इति स एवं सर्वकर्रोति। म ते विष्णो जायमानः पुष सर्वेश्वर पुष मुवान्तिपतिरित्यादिश्वतिर्जन्याधिपतित्वे सर्वाधिपत्ये च मानं स्वय्टराजान्तररहित इति वा खराद खात्मानं ख्यामेव राज्यति प्रकाशयति न परेच्छयेति वा नदुः श्रुतीनामनंतत्वादेकत्र हरेरन्याधीनत्वकयनत्वसम्भवादतः कुतोनिश्चयः परोनान्याधीन इति। तनाह तेन इति यः पर बादिकवये , चतुर्धेकाय बहासाई वेदं हदा होहेन तेने विस्तारितवार तस्य सक्तुपदेशमात्रेशाशिकमहर्गाः साम्बर्धेऽपि वक्तव्यं ब्रह्मगुद्धमा चतुर्वोदस्यापि वेत्युपदेशशास्त्रमञ्जनृत्य देन इत्युक्तं शिष्याशक्षाये तथोपदेशसम्भवात, चतुर्शेसस्य बेदोपुदेशन हरेरजन्याधिपतित्वस्य क्रिमायातिमिति चेत्र मजापते जल्बदेतान्यस्यो विश्वा जातानि परिता वभूचेति श्रुती चतुर्सुखस्य निरित्रायमाद्दातमधाकथवात्तदुपदेवात्तस्यात्रपतित्वसिद्धः यो बद्धायां विद्धाति पूर्वे यो वे वेदांश्य प्रदिशोऽति तस्मा इति श्रुते: सकलवेद्दविद्योपदेशोऽपि सिद्धः आदि कवित्वं च बहागाः कविर्यः पुत्रः स इमाचिकेतेत्यादिश्रुतिसिद्धं बहावेदस्तपस्त वं बहा विद्यः प्रजापतिरित्यमिथानं हत्रक्षेहे मूनसि सिन्धे सहस्न्धी हरावपीति च न प्रहेलिकावतुपदेश इति द्योतनाय हदेत्युक्तं तेने ब्रह्मोति सुर्वे-इत्वे युक्तज्ञन्तरं वा सक्छचेतनराष्ट्रयसस्य ज्ञत्राननस्योपदेष्टुः शाङ्गपागाः सर्ववत्वं न्यायप्राप्तमिति भावः वेदाह से ते पुरुष्ट्रं महान्तमादित्यवर्शी तम्सः परस्तुदिति श्रती नारायगाविषयद्वाने स्वातन्त्रचाकणनात्ततुपदिएक्षानेनैव तज्ञानं कणं सङ्गच्छत इत्यादाङ्कर् यमैवेष वृण्ते तेन लक्ष्य इति श्रुवेः तत्प्रसादाय तक्षानेनैतद्विषयं कानं न तु स्वायत्तम् अन्ययाक्षानमेव न स्यादुक्तहेतोरित्यभिष्ठेत्याह-मुखान्ति यं सुरय इति भूतभविष्यद्वर्तमानवद्यादयो यत प्रसादमन्तरेगामुद्यान्ति मुद्द वैचित्य इति धातोश्चिति ज्ञानं न जानन्ति किचिद्र-न्यथा च जानन्तीत्यर्थः । तेनेत्युक्तेरसमाद्रसादिचेतनराश्यचित्त्यमहिमामहीधरः प्रसादाभावे इति प्रतीयते । नन्वीश्वरः सृष्ट्यादी प्रवर्तमानः प्रयोजनार्थी भवति अन्यथा वा न प्रथमः यत्प्रयोजनार्थे प्रवर्तते तस्य तत् पूर्वे तदभावादपूर्यात्वेनाशकत्वात् सृष्ट्यज्यपत्तेः न द्वितीयः प्रवृत्तिमात्रस्य स्वप्रयोजनोदेशेन दृष्टत्वादृष्ट्या तद्वुपपनेर्ती मायाम्यी सृष्टिरेष्टव्यत्यत आह तेजोवारीति । तेजो वारि मृदां विनिभयो यथा तथा विसर्गः यत्र यस्मिन् भगवितिविषये मृषैव पूर्वाप्राप्तप्रयोजनप्रापको न भवित कथं ति प्रवृत्तिरिति चेत् उच्यते देवस्येष स्वभावोयमाप्तकामस्य कास्पृहा लोकवत्तु लीलाकैवल्यामिति श्रुति सूत्रवलादाप्तसमस्तप्रयोजनस्य हरेः लीलग्रैक प्रवृत्तिरिति भावः जीवेश्वर जङ्गतां सर्गस्त्रिसर्गः यथा एकमेव मूलं तेजः खकार्थ्येषु पार्थिवादिपदार्थेषु बहुभा भूत्वां प्रविशति बहिस मथनादिनादिनाविभवति तथेश्वरोऽपि जगतसृष्ट्वा बहुरूपोभूयजगदन्तःप्रविद्यति बहिश्च भूतानुकम्पया वासुद्वादिबहुरूप आविभवति अयमीश्वरसर्गः। दीपाद्दीपान्त्रोतपत्तियुंशा तथेश्वर सर्गे इति वा यथा सूर्य्यादितेजसां जलासुपाधितिमितः बहुति प्रतिविस्क्रादि सुर्धिकान्तादीनि सुर्यादेः जीयन्ते । तथैव सुक्ष्मस्थूलशरीराद्यपाधिनिमित्तैः प्रतिविम्बभूताजीवाहरेरुत्पद्यन्ते । एष जीवसर्गः यथा कुलालो सृदमुपादानीकृत्यघटादीन सृज्ञित तथेश्वरो जड़प्रकृतिमुपादायमहद्दङ्काराद्यशेष जड़पदार्थान सृज्येष जड़स्तीः। अनेन मायाह मयीमृष्टिरित्यस्य किमायातिमिति चेदुच्यते । यथेश्वर इति विशेषगादिन्यत्रमुषामिश्या न भवति । तथाच योजना यथा तेजीसिहित मृदां विनिमयः कार्यम् अर्थिक् यायोग्यत्वात् सदसद्विलक्षणो न भवति । तथा यत्र यदाधारतया क्रियमाणिकसर्गी मिथ्या न भवति । सर्थिकियोपपित्तरेव मिथ्यात्ववाधिकेति भावः। नतु तेजःकार्य्य केशोगडूकादि वारिकार्य्य फेनादि मृतकार्य्य घटादि यथा मिश्या तथा यत्र जगन्मिथ्यत्यर्थः । स्यात्तथाच श्रुतिः । वाचारमभगा विकारः अनुमानं च विमतं मिथ्यादर्यत्वादित्यतो मायामयीसृष्टि रित्यत आहु आंग्रति। खेन धाम्ना खरूपहानमहिम्ना सदा नित्यं निरस्तं कुहकम इन्द्रजालादिमाया येन यस्य या स तथोकः तं। यः सर्वेद्यः अर्थेन माहुः सत्यक्षमेति । विश्वं सत्यमित्यादिश्रुतिविरोधादुदाहृतः श्रुतेः अर्थान्तरत्वसम्भव।दतुमानस्य व्यापिश्रत्यत्वन विद्योधामावाभित्यनिरस्तेन्द्रज्ञालो विष्णुमीयाम्भी सृष्टि न विद्धाति । किन्तु सत्यामेव लोके वाऽसमर्थः सन् इन्द्रजालादिक मुजति। त तु समर्थः विष्णुस्त नित्यपरिपूर्णाञ्चाकः किमर्थ तत्करोतीत्यर्थः। मुक्तव्यावृत्तये सदेत्युकं तेषां मुक्तेः पूर्व बन्धभारकत कुद्दकत्वसम्भवात । नजु विष्णाः सदानिरूस्तकुहकत्वेमुक्तव्यावृत्तिर्घते तदेव कुत इति तत्राह सत्यमिति । सत्य निर्दुः खनित्यनिर्दिः श्रायानन्द्रायनुमवरूपं सच्छन्द्र इत्तर्मं ब्र्यादातुन्द्रतीति व वदेत येति वानं समुद्दिष्टमिति वचनान्नित्यनिरस्तक्कहकत्वेनमुक्तव्याष्ट्रितः युंज्यत इति भावः। एतवुक्तं भवति । उपक्रमादितात्पर्थयुक्तयुपेत सर्वश्रुतिस्मृतितात्पर्थालाचनया जगत्सृष्ट्यादिकत्त्वातः स्वेश्वत्वादनन्याधिपतित्वाचतुर्भुंबङ्गानोपदेष्ट्रत्वात्। स्वातुप्रहमन्तरेगा दुश्चेयत्वात स्वप्रयोजनातुहरोन केवल्लीलयेव जगत्सर्जनादि-प्रवृत्तिमत्वातं स्वतं एव निरस्तेन्द्रजालद्वेतं सत्यमहिमत्वाभित्रं खनित्यनिर्तिशयान्त्वाचनुभवरूपत्वाच सर्वगुरापूर्यो विष्णुः सर्वे प्रवास करा करा करा है। स्वास करा प्राप्त करा जिस्सान करा उच्यते गायत्रीप्रतिपाद्यं नारायणा एवं परंत्रहीन न स्वयं तस्य चक्षाः स्वयं अता यति श्रुत्यात् वहुत्वा न स्वयं तस्य चक्षाः स्वयं अतायति श्रुत्यात् वहुत्वा न स्वयं वहुत्या वहुत्या अतायति श्रुत्यात् वहुत्वा न स्वयं या वहुत्या वहुत्या वहुत्या अतायति श्रुत्यात् वहुत्वा न स्वयं प्रवास करा वहुत्या व त्र्याद्यश्चाष्ट्रक्षणा प्रदेशते वा भीमहाति जान्य सम्पद्ध प्रायुक्षक अगन्नान वादरायगाः तथाच मत्स्यपुराणे पुरागादानमहात्म्य प्रस्तावन महात्म्याधिक्यप्रकटनायति वा भीमहाति जान्य सम्पद्ध प्रायुक्षक अगन्नान वादरायगाः तथाच मत्स्यपुराणे पुरागादानमहात्म्य प्रस्तावन महात्म्य तिल्लक्षणा प्रदेशते यत्राप्रिक्षणायत्री मण्यते प्रमेविस्तरः। वृत्राद्धरवध्यापि यत्त्र त्रागवते विद्धः॥ जिल्लाका तच्च यो महात्म्य तिल्लक्षणा प्रायोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि प्रायोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि प्रायोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रायुक्षणा स्वयोग्वर्ण प्रमाणि दशासाहका द्वारकत्यसमितः। हयप्रीव ब्रह्मविद्यायत्र वृत्रवश्रस्तथा। गायत्रया च समारक्ष्मो यत्र भागवतं विद्वाति गाउहे. अधादनारां आहतार्थविनिर्णयः। गायत्रीमाध्यक्षपेऽसी बेदार्थपरिवृद्धितः। पुरागानां सामक्षपः साक्षाद्भगवतादितः। च जना-व्यादशस्य स्थाद विक्रिट्संयुतः। ब्रन्थोऽष्टादशसाहस्रः श्रीसङ्गावताशिष्ठ । इति अन्ये चतुः विशस्साहस्रं भागवतमिति ब्रावशस्थान्य विद्या वन्त्रनमित्युपेक्षगाियं गायत्र्यग्रीऽत्यतेन स्क्रोकेन सुनितः तथाहि तत्सवितुर्देवस्थेत्यस्थार्थो जन्माधस्य यत वदान्त अराज्याः परिमत्यमिधानाद्वरेगयमित्यस्य काष्याने परिमति मति इत्यस्य व्याख्यानं प्राम्नाक्षेन सदा निरस्तक्षद्वकामिति इत्यादाात वान अक्षादात वान सर्वार सम्बद्धित स्थातीसपं तत्पवीधेत्याच्याने स्वराहिति धियो सी तः प्रचीविष्ठादित्यस्य विवर्शा तेने वहाहतास आहिताये

#### श्रीविजयध्वजः।

इति यः सनिता जन्मादिकर्तानः अस्माकं धियः धुर्मादिविषया बुद्धाः। उपलक्षमामेतत्। सर्वेद्धियागि स्त्यादि स्वतत्त्वविषयं क्षानं गुर्समुखनीपदिश्य तज्ञानसाधनानि सवाणि करणानि प्रचीदयात प्रचादियति सात्मविषयतया प्रिरेयति तस्य सवितुदेवस्य क्रीडादि-गुर्गी सम्पूर्णस्य नारायगास्य अनन्याधीनतया तत्तत्त्वाष्ट्रयाप्तत्वात्तद्वरेगर्यं सकलगुर्गाकरतेया परमिन्नेले मुगैः ज्यातीक्रपं भरगागमनयो-गाँते सर्वेद्धं वा वपुः ज्ञानादिगुगारचितकरचरगाधवयविमिति यावत धीमहि धार्यमेद्धानमेव तत्प्रीतिजनके ने कमीदिक तस्मात् तामिन्तन कर्त्तव्यमित्यर्थः यत्तु केनचिद्धेदसमिनतैवविधयन्यव्याख्यानारम्भसमय प्रजिल्पित पूर्वच्छेदः पदार्थोक्तिविग्रहो वाक्ययोजना अभिष्य समाधानमिति ज्याख्यानलक्षणम् अतिरिक्तं पर्दे स्याप्यं हीनं वाक्ये निवेशयेत् विश्वष्ठे च सन्दर्भयादानुपूर्व्य च कल्पयेत् लिंद्ध बीत विमक्तिं च योजयेची तुलामतः वाक्यार्थस्या तुसारिया तेषां च प्रत्यया अप चेति तदेतुंपासितप्रन्थसम्प्रदायवित्सज्जनचर्यो-रुपेक्षित्रमिति विदुषां परिषादसारस्यम् आधर्तन हि यथा वेदादावकरित्यत्राकरोदिति पर्मे अशक्यनिवेशनं तथात्राप्यातारिकं पर संस्थेज्यहीनमप्रयोज्यं यत एतद्व्याख्यानं तलक्षणं न भवति तस्माद्ययादिशतप्रन्यव्याख्यानमेव संज्ञनचित्तरज्ञनामिति सन्तोष्टव्यं नजु नायं क्लाकार्थः किन्त्वन्य एव तथाहि तं धीमहि नजु मृत्तिकत्येव सत्यमिति मृदादर्गि सत्यत्वं श्रूयते तद्वदस्यापीति तत्राह पर्यमित मृदादः कार्योपेक्षया सत्यत्वं अयं तु परमार्थिकः सत्यं तत्सत्यं स आत्मेति श्रुतेः परस्य सत्यस्याचाङ्मनोगोचरस्य कथं ध्यासृध्यान-ध्येथादिव्यवहारगोचरत्वामित्याशङ्कचाहे जन्मादिति अस्य जगतो जनमस्थितिभङ्गा यतः परात्सत्यात् तं श्रीमहीत्यर्थः यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते इति श्रुतिसिद्धजगत्कारगारूपेगावाङ्मनोगोचरस्यापिध्यातृध्यानादिव्यवहारो घटत इति भावः ननु ब्रह्मगाः सिद्धरूपत्वात्प्रमागा-न्तरागोचरत्व मतस्तत्र वेदान्तानामश्चवादकत्वादप्रामाणयामित्याराङ्कचाह अन्वयादिति वेदान्तानां ब्रह्मणयेवान्वयात्तात्पर्यादित्यर्थः तथाच श्रुतिस्मृती सर्व वेदा यत्पदमामनन्ति वेदैश्च सर्वेरहमेव वेद्य इति प्रमागान्तरसिद्धत्वेन ह्यननुवादकत्वं सिद्धमित्यपि ब्रातचं न कवलं श्रुत्यन्वयात् स्मृत्यन्वयाचेत्याह इतरश्चेति अहं सर्वस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्त्रवेति स्मृतितश्चेत्यर्थः अयुवा प्रतिपदोक्तविवक्षितार्थिसिद्धये हेतुमाह अन्वयादि तरतश्चेति अस्ति प्रकाशते इति ब्राह्मगाश्च कार्यप्रपश्चे मृदादेरिव घटादौ समन्वया-दितरतो प्रकाशव्यतिरेकेण कदाचिदपि कस्याप्यप्रति भासानमृदादिव्यतिरेकेण घटादेरिवेखन्वयव्यतिरेकी दर्शिती अथवा ब्रह्माणिका-रणापम्ने महदादिकार्यदर्शनादन्यथाऽदर्शनादिति सत्तास्थित्योरन्वयव्यतिरेकौ दर्शितौ नजु तर्हि सांख्यपरिकल्पितं प्रधानमञ् जबात्कारणमस्तु कि ब्रह्मणोति तत्राह अर्थेष्वभिन्न इति उत्पाद्यस्वपदार्थेष्वभिन्नः सः अभितः सर्वतः सर्विभदं जानातीति एविन्वधस्यैव कारगात्वं नेतरस्य प्रधानस्य जङ्त्वाच सर्वज्ञत्वं तथाच यःसर्वज्ञ इति श्रुतिः तहार्थेष्वभिक्षानां जीवानामेव जगत्कारगात्वमास्त्वित्याद्य-द्विचाह खराडिति खयमेव राजत इति खराद जीवानां परिच्छित्रज्ञानत्वेन पराधीनत्वात्र सण्डत्वं सम्भवतीत्यर्थः एष सर्वेश्वरः एष सर्वलोकपाल इति श्रुतः नन्वीश्वरस्यापि न तस्य कार्यं कारगां च विद्यत इति श्रुत्याकार्यकारगाद्यभावात् कयं सर्वज्ञत्वामिति तत्राह तेने ब्रह्मीति आदिकवये ब्रह्मां यः ब्रह्म ऋग्वेदादिलक्षां साङ्गं वेदंहदा मनसा मनोमात्रेण साधनान्तरनिरपंक्षतया तेने खर मात्रा वर्सा पद वाक्यादिक्रमेगा विस्तारितवान् ब्रह्मण उपाधिभूतां बुद्धि निर्माय तत्र नेदेशकाशितवानित्यर्थः अथवाहदोपनिषदासह सङ्कल्प-मात्रेगा कार्यकारगासम्बन्धरहितोऽपि भगवान् सर्वोन्तर्यामी ब्रह्मादिकोर्यकारगासाक्षित्वेन सर्वेश इत्यर्थः एवं जगत्कारगो सञ्चिन मात्रण कार्यपारणपूर्व निरवधे सर्वेश्वरे प्रेरुद्धाँद्धयदीषकलापि नास्तीत्यभिधत्ते मुद्यन्तीति यं प्रतिः सूरयः कपिलादयः शास्त्रप्रोतारः दानन्दात्मचा प्रभा ने विभी लिलेनाप्रामांगर्यो सिद्धिरोधियन्थो निस्तीत्यर्थः नानाऽसत्तर्भेकलिलान्तःकरगादुरवयहवादिनां विचा-सुबन्तात्व कार्यसम्बन्धात्यास्य भगवति कोऽनु दुर्घेट इति खोक्तः अतुः परमसंत्याद् व्युत्पन्नस्य जगतःकुतःसत्य त्वं किन्तु मिथ्यात्वमेवति द्शियति तेजीवारीति विनिमयः कार्यतेजो विनिमयः केशोगड्कादि वारिगी विनिमयः हिमकरकादिः मुदो विनिमयो घटादिः यथा येन प्रकारे-व स्थात तजावारात विभाग निर्माण कार्यस्य पृथक् सत्ताप्रतीति ग्रून्यत्वमेवात्र मिध्यात्वं तद्वत्तेजोवारिमृदामपि कारगासत्ताप्रतीति या तथा कारणास्त्राम्त्रतात व्यातर्पाय नार्यात्विमत्यर्थः कि च त्रिवृत्कृतानां चोभयेषां द्रष्टान्तदान्ष्टीन्तिकव्याजेन मिध्यात्वं कथितमिति सम्प्रदायविदामभिप्रायः ननु ब्रह्मणो जगत्कारणात्वे कियाकारकादिसम्बन्धादसङ्गो स्वयं पुरुष इति विरुद्ध्येतेत्यतो वाह तेजावारीति विसर्गस्य या तेजी वारिमृदां स्रा उपलक्ष्यां वैतत पश्चभूताना सृष्टिः यत्र मृषा कथं यथा तेजीवारिमृदां विनिमयो मिथ्या तथा जिसगस्त्रयाणा स्वाः तजीवारिसृद्। सा उपलब्ध पर्याः तथा । अथा । अथा तथा । अथा । अथा तथा । अथा । जगदाप मिन्यत्ययः वाचारमम्मा विकास गुणवन दे गुणवे नास्तीति दर्शयाति धामनेति । धामनाप्रकाशेन स्वनस्वरूपभूते निबन्धनं किञ्चिदपि चिद्वपपरमसत्यात्मके इंश्वरे स्वदृष्ट्यावस्तुगत्यापि नास्तीति दर्शयाति धामनेति । धामनाप्रकाशेन स्वनस्वरूपभूते नात्मचैतन्ये नापचारतः कारमात्वेन किर्यतेन सदास्वदानिरस्त निराकृतं कुष्कं कपटाख्यं येन स तथाकः तं सदिति । जीवाई छुस्रीय-वातम् वता व गाउना कार्यात । जावाइलक्षराय-प्रदर्शनाय अर्थादसङ्गलं कृटस्थलं च के तस्मादकमेव ब्रह्मापहितानुपहितमेदन द्ववाबह्मणोक्षपे मुत्तेश्वेवा मुत्तेश्वेति श्रुत्या प्रतिपाद्यते प्रदशनाय जन्म । त्रा प्रताप प्रतिपाद्य निर्मुगानहापिस्ती बुद्धिरुपतिष्ठते । ततश्च सकलं । खात्माने प्रयन्नातम्-तंत्र संगुण्या । अस्ति । इत्येषीथीनने प्रतिपाद्यते नापरीऽप्रामाणिक इति । तदेतत् कगठशोषगाप्रलापज्यले-व्यतिरिक्तं किश्चिद्वत्यपश्यक्तिगुण प्रवानितिष्ठते । इत्येषीथीनने प्रतिपाद्यते नापरीऽप्रामाणिक इति । तदेतत् कगठशोषगाप्रलापज्यले-ह्यातारक विश्व क्षेत्र क्षेत् नद्वालातुर्थानाता प्रत्यक्षादिप्रमाणप्रहरणप्रहताशार्यकृतावाचित्तंत्र तत्र निराकृतत्वाच्युत्यादीनां मिध्यात्वपरत्वे विरोधस्य दशितत्वा-पर्यार्थितात प्रत्यक्षावरणा वर्षावर्थित वर सम्प्रदाय विस्वमिति॥ १॥ ात करते । विकास के किया के प्रकार कर कार का का का THE PROPERTY OF THE PROPERTY O

त्रिश्चीक्रणाचेत्रत्र**मानस्य ।** स्रोतिक्रणाचेत्रत्रमानस्य स्वाधिक्रणाचेत्रस्य स्वाधिक्रणाचेत्रस्य स्वाधिक्रणाचेत्रस्य शहानितिमरान्धस्य ज्ञानाङमस्यास्या । ज्ञानुकारितं येन तस्य श्राण्यानमः॥ १ ॥ श्रीमद्भागवतं नीमि यस्यकस्य मसाव्याः।

1

## । क्रमशंस्कः।

श्रक्षातान्ति। ज्ञानाति क्रिस्त्रीः सर्वागमानिष्यक्रिक्षाः श्रीभागवतस्वर्मान् श्रीभक्षेष्णावतोत्रणीमः। इष्ठाःभागवंतस्याख्या लिख्यतेऽत्र यंशान् सति। श्रीच्याः स्विक्तिः किञ्चिक्षायतेऽनवधानतः । श्रेयं न तत्त्वसर्तृगां, समाहर्त्तुर्ममैवल्यतः । थेशीभोतेश्वाहनेनादिमाः प्रवृत्तिः स्वाहते। श्रेयं न तत्त्वसर्तृगां, समाहर्तुर्ममैवल्यतः । थेशीभोतेश्वाहनेनादिमाः प्रवृत्ति। स्वाहते। श्रीकार्यक्षेष्ठाः क्षाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहरूष्टिमाः विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहर्ति। विद्वाहरूष्टिमाः विद्वाहरू

कार श्रीमागवर्तको क्राहिताभिकाषपरतया श्रीभागवतसन्दर्भनामानं यन्थमारभमाशो महाभागवतने। दिवहिरन्तरे हिन एक्कित्भाषद्भाष निजावतार्प्रकारमंचारितस्वस्वद्भपभगवत्पदकमलावलम्ब दुर्लमप्रेमपीयूषमयगङ्गामबाहस्रहसं स्वसम्प्रदायसहस्राधिदैवं श्रीश्रीकांग-वित्र स्यद्वेषनामातं । अगवनतं कित्युगेऽस्मिन् वेष्णावजनोपास्यावतारतयाथैविद्याषाहि द्वितन श्रोभागवतस्वादेन स्तीति । "कृष्णवर्णी तितुकाकुषां साङ्गोपोङ्गास्त्रपार्षदम् । यक्षैः सङ्कीर्तनप्रायैयेजन्ति हि सुमेधसः॥" एकाद्रशस्त्रन्धस्य कलियुगोपास्यप्रसङ्ग पद्ममिद्रम्। अस्यार्थाविशेषस्तत्रिव दश्यते । तन्निगिलितार्थमाह । अन्तः कृष्णां वहिनीरं दिशिताङ्गादिवेभवम् । कलीः मङ्कीर्त्तनार्थः स्मः कृष्णाचैतन्य-माश्रिताः ॥ अथ निजगुरुपरमगुरू स्तौति । जयतां मथुराभूमौ श्रीलरूपसनातनौ । यौ विल्लायतस्तस्वज्ञापकौ पुस्तिकाामिमाम् ॥ तौ सन्तेष्यता सन्ती श्रीलक्षपसनातनी । दाक्षिणात्येन भट्टन पुनरतद्विवच्यत ॥ तस्याद्यं श्रन्यनालेखं क्रान्तच्युत्कान्तखारीडतम् । पुरुषीलोज्ञयाथ पर्व्यायं कृत्वा लिखति जीवकः ॥ पूर्वे यान्येव वाक्यानि धृतान्यर्थविद्योषतः । तानि मुलकमेगापि धार्यागि कमल-व्धयोतीः श्राष्ट्रपायर्थविशेषार्थमधृतान्यपि कानिचित्। तत्रेति शब्दः कर्तव्यः कचिद्व्याख्या। च केवला ॥ स्थानश्च मुहुरङ्काप्यां क्षेयं संदर्भवाक्ययोः । तत्रांकास्तत आशब्दात् तदङ्कादिष्वतीष्यताम् ॥ व्याशब्दात् तद्भतव्याख्यागतं तद्वाक्यमीयताम् । तथा पुनश्चिति शब्दा-द्वस्यात्रां कीति स्थ्यताम् ॥ यत्र व्याख्यागतं वाक्यव्याख्यानं तच्छिदाकृते,। द्वी तत्र प्रसावी लेख्यी तयोर्मध्यन्तु सृह्यताम् ॥ यः स्कन्धान ध्याययोरङ्कः स'तु तच्छिदकः स्फुटम् । न तत्र प्रणावापेक्षापीति सर्वत्र वीक्यताम् ॥ अत्र सर्वत्रन्यार्थे संक्षेपेण दर्शयत्रपि मङ्गल-मीन्तरति। यस्य ब्रह्मति संज्ञां कचिदपि निगमे याति चिन्मात्रसत्ताप्यंशो यस्यांशकः स्वैविभवति वशयक्षव मायां षुमांश्च । एक यस्यव क्षं विस्ति परमे व्योक्ति नारायगाख्यं स श्रीकृष्णो विधत्तां स्वयमिह अगतान् प्रेम तत्वादभाजाम् ॥ अथैवं सूचितानां श्रीकृष्ण-बान्ध्यवां चकतालक्षणासम्बन्धतद्भजनलक्षणाभिधेयतत्वेमलक्षणाप्रयोजनानां निर्णायार्थः पूर्व तत्त्वेसन्दर्भादिष्ट्सन्दर्भा निर्णापताः । अधुना तुःश्रीमद्भागवतकमन्याख्यानाय तत्रापि सम्बधाभित्रेय प्रयोजन निर्णय दर्शनायचा संतमः कमसन्दर्भोऽयमार्क्यते । श्रीभागवतनिध्यथी टीकाइष्टिरदायि यै: । श्रीधरस्वामिपादांस्तान् वन्दे भक्त्यकरक्षकान् ॥ स्वामिपादैने यद्व्यक्तं चोस्फुटंकचित्। तत्र तत्र च विश्वयः संस्था क्रियामकः ॥ (अथात्र परिभाषेयं ज्ञातव्या यद्यपेश्यते । मुलं सटीकमङ्गाद्धैः परिक्छद्यं सहानया ॥ अङ्का वाक्यान्त एवात्र देया षद्यान्तितीन तु । बहुपद्यैकवाक्यत्वे गभाङ्गा विन्दुमस्तकाः ॥ यस्मिन् पद्ये नास्ति टीका तट्यंङ्केने योजयेत् । एकपद्यान्यवाक्यत्वे संख्यान

शब्दास्तु कांद्रतकाः ॥ बहुपद्यकवाक्यत्वेऽप्यमीक्षेयास्तथाविधाः । यथाईकं युग्मकञ्च त्रिक्रीमत्याद्यदाहृतिः॥) ाक्षजन्माद्यस्यत्र श्रीश्रीधरस्वामिचरगानामयमभिष्रायः। परं परमेश्वरमिति॥ न पुनरभेदवादिनामिव चिन्मात्रं ब्रह्मत्यर्थः ध्येयध्यातुन ध्यानभेदावगमात् । सत्यमिति । तदुपलक्षत्वेन सत्य ज्ञानमनन्तं ब्रह्मात्युक्तलक्ष्माप्रित्यर्थः। अथ कस्मादुज्यते ब्रह्म हंहति हंहयति चैति श्रुतिःक्षेष्ट बृहत्त्वाद्वृंहगात्वाच्च यद्ब्रह्म परमं विदुरिति विष्णुपुरागोक्ताच्चात्रापिक्ष्याक्तिमेत्त्वेन वहाराष्ट्रस्य परमेश्वरवाचकत्वात्। तक असंस्थात्वसाधकं यत्र त्रिसगीं मुंबति। यत्र यदाश्रयतयेसंघः। अत्र इष्ठान्तः तिज्ञ इति । तद्वंद्यत्रारोपित इसर्थः। तदारोपकर्मृत्वं मास्माकं जीवानामेवेति लक्ष्यते।यत्रारोप्यते तच्च परं यद्यचेततं चेतनं चा स्योत्तदा जीवानामेवारोपकर्तृत्वेन तत्र खाद्यानस्य त्रिसगस्य क्षारंबन्यों न स्यात् किन्तु जीवेष्वेवे मरीचिकादाविव जलादेस्तद्भमहेत्वज्ञानस्य च । किन्त्वत्र तत्तु चतनम् अभिन्न इति योजियिष्य-साधात्वात्। तत्रैव स्वराङ्खिनेन ज्ञानरूपस्यापि स्वरूपज्ञानेनैव ज्ञातृत्वाङ्गीकाराज्य। ततो यद्वयष्ट्यंशोपाधिस्वेन जीवा भान्ताः स्युस्तक समण्डुचपाधित्वन स तु सुतरां तादशः स्यादित्याशङ्कामनूद्य सिद्धान्तयति यत्रेत्यनेनेति । महसेति स्वतःसिद्धपरमञ्चानशक्ति-रवितेसंबा तथात्र व्याख्यास्यमानत्वात् । स्वरूपमात्रे बाद्ये स्वशांद्वनिव वितिर्थता स्यात् । क्रयश्चित् तसात्रे वाद्येऽपि हेतुत्वलक्ष-सोत त्रितीयार्थे न तच्छ्किमेव वाध्यतः। द्वितीयादीनां प्रातिपदिकाधिकार्थे एव। विहितत्वातः। तस्य च ज्ञानोपाधिकपत्वे स्वशब्द-वैद्यर्थि स्यात् । कुहकमत्र मायोपाधिकतभूमप्रराभवः साद्याः इयुदस्य चिच्छक्त्या किवल्य हस्यतः आत्मनीति श्रीमद्रजनवचनात्। किन्तु यंत्रेत्यतेन लब्धस्य परमेश्वरस्य चिन्मात्रेगा स्वस्पाँहोन सतता तुभूयमानस्वामेदमेवावलम्बचभूमाधिष्ठानत्वं स्वीकृतं न तु जीवस्य ालप्छ । स्वाभेदमननांशेन । परमेश्वरस्य तु भातुरापिः (ध्यातुमापः ): प्रार्थतीयत्या स्वातुभवातीतत्वात्तरंकवस्तुत्वं व्याहन्यतेति विवेचनीयम्। स्था तत्त्व सर्वे अव्ययितुं तदस्यलक्षां जन्मायस्य यता इति। न तुः मरीचिकादी जेलादिवत केवलमारापितं स्वतस्त्वन्यत्र सिर्द्ध कार्य । तत्रीय यदारोपितत्वं तत्मात्रसिद्धत्याद्यत प्रवास्ये जन्मादीति तस्यति तस्यान्ते तस्यान्ति जन्माधस्य र्वतः इत्यस्य पुनवक्तत्वापातात् । ततोऽस्य जन्मादी हेतुः अन्वयादितरत्रश्चार्थेस्विति । तत्र प्रथमोऽर्थस्तु अन्वयेत तस्यव कार्यात्व-बोधकः व्यतिरंक्ता तदकार्यस्यासत्त्वबोधको ब्रेयः अत्र व्यतिरेकपदेनार्थेतरहाक्षेपलन्धम् । तच्च खपुष्पादकपमिति तथा व्याख्या-वास्त्राः द्वितीयस्तृतीयस्य तस्य कार्गात्वं विश्वस्यः कार्य्यतं बोधस्रति।। अत्र द्वितीये त्वर्थे शब्दः कार्यकारगापरः । कारगास्य हवाबस्यायां कार्यावस्थायाश्चानुवृत्तित्वम् । कीर्यागान्तुः पहस्परं कार्याावस्थेगिश्च व्यावृत्तित्वं क्षेयम् । एवं शुन्यवादारमभवादी क्षान्त्र । तथाच व्रहिर्मुखप्रवृत्त्यथे युक्तीः प्रदेइये अन्तर्मुखान् प्रति आख्योनित्वादिति न्यायेन श्रुतीर्देशयति तथा चेति । अत्र च वा दमानि स्तानि इत्यादि वाक्यवद्व्यतिरेकोऽपि होयाः कथ्मसतः सङ्गायतित्यादि । तत्र तस्य मरीचिकाद्द्यानेन प्राप्तमचेतनस्व यता था विवारयन् परमतं प्रधानश्च मत्याचष्ट तहीं त्यादिना। अभिन्न इति कित्राहित तावद्वेतनत्वम् अभि सर्वतो भावेन च तज्-ह्वष्टमं । निया । तत्त्विविचारात्मकत्वादीक्षणास्य । ईक्षवेत्रीचाद्वसिक्षह्यायमर्थः । परमतं प्रधानं विश्वकारणं न मचति हातृत्व अपाप प्रमाणं यत्र तथाभूतं हित्तत्। श्रुतोक्षण्डत्वं तस्य तत्राष्ट्र ईक्षतेशिति। सच्छन्द्वाच्यकारण्यापाराभिधायित्वन तः विद्यतः यान्यः । ईश्रण्ञः चेतनः पतः सहसविति प्रश्नाति वित्ति । त्रिस्ति आहोत्यते तद्भवत्यचेतनं यहत्वारोष-

### , क्रांमसन्दर्भः।

कत्ती जीवः स खलु सर्वारोपकत्वाधितनः सर्वेद्धश्च स्यात्। तस्य च बहुस्योमित्यादिवास्यं स्वादानकविषतत्वेन स्वानद्वव्यवत् स्वामेदापेक्षयेत्याशङ्क्ष्याद्य तर्हि कि जीवः स्यादिति । सिद्धान्तयति नेत्याहेति । परिसद्धक्षानत्वेन सर्वेक्षत्वे सर्वेक्षण्यत्वात् । तस्मादन्तर्थामिश्रुत्युकंतत्सिद्धशानत्वेनारोपगाकर्नृत्वमपि तत एव सिद्ध्यतीति कर्नृत्वमपि तस्यव स्थादिति भावः । तत्रीदीहरगान भासेन विरिश्चेः स्वतःसिद्धज्ञानत्वमाशङ्कचाइ तर्हि किमिति । सिद्धान्तयति नेत्याह । तेन इतीति । तदेवं ज्ञानप्रदत्वेन मोक्षप्रदत्वमपि दर्शितम्। एवं जीवस्य तद्शानस्य च तस्मादत्यन्तभेदप्राप्तावपि सिद्धान्तितं सत्यामित्यनेनैव। तत्सत्तयैव सर्वसत्तास्वीकारात्। तदेवं सर्वसत्ताप्रदं सर्वाधिष्ठानं सर्वदोषास्पृष्टं स्वरूपासिखसर्वेशानादिसमवेतं सर्वकर्तृमोक्षदातः च सत्यानन्तानन्दशानस्वरूपे पर्दे ध्येयमिति वाक्यार्थः। स्वतःसिद्धन्नानित्वं शारीरकमाष्यादी चंक्षतेर्नाशब्दिमत्यत्र स्वीकृतं प्रकृतिक्षोभात् पूर्वमीक्षगानुपपत्य।। मन्त्री चेमाबुदाहती। अपाशिपादो जवनो गृहीता पश्यत्यचक्षुः स श्रृगोत्यकर्गाः। स वेत्ति विश्वं न हि तस्य वेत्ता तमाहुरग्यं पुरुषं पुरागामिति। न तस्य कार्य्य करणाश्च विद्यते न तत्समञ्चाभ्याधिकश्च हृदयते। परास्य द्यांक विविधेव श्रूयते स्वाभाविकी द्यानवल-किया चेति च। अत्राद्वितवादिनः समाद्घते। यदि क्षेयं सत्यं स्यात् तदा तस्य क्षातृत्वमपि तथा स्यात् । त्रिसर्गस्याक्षानकविपत-त्वाद्वातस्य सत्तासत्ताभ्यामनिवेचनीयत्वाद्वानिनो जीवस्य च तेनावानेनैव पृथक् प्रतीतत्वात् सत्यत्वं नारूयेव ततो बात्त्वमपि तत्र नास्त्येव तथा शक्तचन्तरमपीति । वैष्णावास्तु तदभ्युपगमवादेनैवं वदन्ति । तर्हि मिध्येवेदं जीवानां भातीत्यपि ज्ञानं तस्याव्याभ-चारि स्यात्। येन च बानेन मुवा निरस्यते तस्य तु सत्यत्वमेव स्यात्। किश्च विश्वकार्य्यान्यशानुपपत्या यथा परमकारणक्षं तदः भ्यूपगम्यते तथा द्वित्कक्तिरापि स्वामाविक्येवाभ्युपगम्यते । कार्य्यविशेषोत्पत्ती किचित् करण्यत्वेनैव कार्णातया वस्तुविशेषाङ्गी-कारात किञ्चित्करगात्वमेव स्वामाविकशक्तिरिति । तदेवमज्ञानातिरिकस्वामाविकज्ञानेन स्वगतिवशेषत्वे प्राप्ते स्वामाविकी शान-बलिक्या चिति प्रतिपादितम् । तदेव स्वरूपशक्तिरिति सैव सर्वे भगवत्वं साधयेत् । तेने ब्रह्म हृदेति व्यञ्जितमस्येव महतो अतस्य निश्वसितमेतद्यंद्रग्वेद इत्यादिश्रुत्यन्तरम् । तस्य च निश्वसिस्याप्राकृतत्वव्यञ्जकं नासदासीको सदासीत् सं आसीदिति श्रुत्यन्तरश्च समुद्धितः सत्तस्याप्राकृतमृत्तिमत्त्वमपि व्यञ्जयित ततस्तान्निषेधस्तु प्राकृतपरिच्छिन्नानिषेधपर एवं । यथे के ब्रितीय स्कन्धे वैकुएठवर्णते । न यत्र मायेति । दशमे च दर्शयामास लोकं स्व गोपानां तमसः परमिति । अत्यवात्मारामागामिपि हिंच्छाकि वैभवानुमवे परमानन्दविशेषो जायते । आत्मारामाश्च मुनय इत्यादिश्यः । अतो जीवानां तादशशक्त येव तदीयशिम-नित्यसिद्धानां तन्मायावृत ज्ञानानां तज्ञानसिद्धये स एव ध्येय इति । तं धीमहीत्यादिप्रमाणाचने गायत्रीशब्देन तत्त्स्चकतद्व्यभिचारिधीमहिपदसम्बिततदर्थ एवेष्यते । सर्वेषामपि मन्त्रागामादिकपायास्तस्याः साक्षाहिष्यनान नहीत्वात्। तदर्थताच । जन्माद्यस्य यत इति प्रशावार्थः सृष्ट्यादिशक्तिमत्तत्ववाचित्वात्। यत्र त्रिसर्गी सृषेति व्याद्वतित्रयार्थः। उभयत्रापि लोकत्रयस्य तदनन्यत्वन विवक्षितत्वात् । स्वराडिति सवितृप्रकाशकपरमतेजीवाचि । तेने ब्रह्म हदेतिबुद्धिविषेरसा-प्रार्थना सूचिता । तदेवं कृपया स्वाध्ययनाय बुद्धिवृत्ति प्रेरयतादिति भावः। तच तेजः अन्तस्तद्धभौपदेशादित्यादिसंप्रातिपत्रं यन्सूर्य तदनाचनन्तम् र्तिमदेव वियोगिति। एवमिनपुरागो गायत्र्यार्थः श्रीभगवानेवाभिमतः। तद्वचनानि तत्त्वसन्दर्भे दंश्यानि । अत्रैवाग्रे राष्ट्राचितव्यानि। ।धर्मविस्तर इत्यत्र धर्मशब्दः परमधर्मपरः। धर्मः प्रोज् झितवेतबोऽत्र परम इत्यत्र प्रतिज्ञातत्वात्। सं च भगवस्या-वरावित्वार्याः प्रवेति व्यक्तिभविष्यति । वृत्रासुरवधोपेतमिति तस्य परम्रभागवतत्वात्तव्रथरूपचरितं श्रीभागवतलक्षणात्वेन धृतम् । णुरुक्तान्तरे वामनसंके व ह्यत्रीवनहाविद्यति हुत्रासुरब्धसाहचर्येगा नारायगावमैवोच्यते । हयत्रीवशब्देन हात्राश्वशिरा दर्शाचरेव खुर्थारावर जानगणका । वर्षा वर्षा वर्षा वर्षाविद्या । तस्याश्वशिरस्त्वं षष्ठे । यहा अश्वशिरोनामेत्यत्र प्रसिद्धं नारायगावर्भगो ळाचतः त्रवा व्याप्ता गायाच्याचा वर्ध्यक् ङाथर्वगास्तयोः। प्रवर्ग्यां ब्रह्मविद्याश्चा सत्कतोऽसत्यशङ्कित इति टीकोत्थापितवचने अक्षावधातका । अवता श्रुत्वा त्ववाचा विकासिकत्य गायत्रीमित्यादि । सारस्वतस्य कल्पस्य मध्ये ये स्युर्नरामराः। तद्वृत्तान्तो अधे चातः। एव क्वाक्क्यमालवयः ज्यान्यानि। अष्टादश् सहस्रागीत्यादीति। श्रीमद्भागवतस्य श्रीमद्भगवत्तिप्रयत्वेन भागवताः भाष्ट्रवित वेत्यवाजस्य महादस्यानुभूयतं । तत्र वञ्जूलीमाहात्मचे तस्य तिहमशुपदेशः। रात्री तु जागरः कार्यः श्रोतव्या वैशावी हरा चारत व्यायाम् अवस्थानुभूवत । तान पर्यायाम् स्तापकारणामिति । स्कान्य प्रहादसंहितायां आरकान कथा। भारा पान्य वर्ष अवस्ता अवसाम्बर्ध । जागरे तत्परं याति कुलवृत्त्यमन्वत इति । श्रीतत्त्ववादिभृते गारुइवचते माहात्मया अग्राप्ता नाम्या अञ्चलका अवता कारताया । जारा विवाधिया । जाराविका विवाधिया । अर्थोऽसं विवाधिया । अर्थोऽसं विवाधिया । अर्थोऽसं विवाधिया । पुरावालां सामस्य च पूर्याः का अस्यान्य म्हान्य महान्य महान्य सामा । सामान्य । प्रत्योष्ट्राव सामान्यः श्रीमद्भागवताशिधः इति । व्रह्मान्य सामान्यः साक्षाद्भावताशिधः इति । व्रह्मान्य सामान्यः साक्षाज्ञ । व्याप्त । व्याप्त व्याप्त । व्याप्त व्याप्त स्वतः विके त्रिमन् सत्यवीचीनमन्यदम्यद्भाष्यं स्वस्वकपोलकिएतं तस्यु त्वामका विकास कर्मा प्रमान स्वरं क्षेत्र कर्मा अवित्र कर्मा क्षेत्र कर्मा कर्म कर्मा करिया कर्मा कर्मा कर्मा कर्मा करिया कर्मा करिया कर्मा कर्मा करिया कर्मा करिया करिया कर्मा करिया करिया करिया करिया करिया करिया करिया कर्मा करिया करिया करिया करिया करिया करिया कर्मा करिया करिय गतमवाद वा विश्वानिक्षाणो स्त्रीत । गार्सक्षिक्षोत्यस्योऽसाविति । सन् सावद्याक्ष नमस्त इत्यादि गद्येषु तस्यत्वेत स्ट्येः स्तुना तत् प्रसातकः विश्वानिक विष्यानिक विश्वानिक विश्व त्वेत विश्वास्त्र विश्वास्त्र स्वास्त्र स्वास्त्र स्वास्त्र के विश्वास्त्र स्वास्त्र स्वास्य स् सुर्यम् त छ. विश्वासिष्ठ नितं मन्त्रे बरेगयराज्ये तात्र च प्रत्ये परमञ्ज्य परमित्र वर्षपर्यन्तर्तायाः विश्वास्य । तदेवमध्यप्रक्षाः सुर्यमण्डले । सार्य सवाजितं वस तक्षिणाः परमे परमिति। श्रीमद्वास्य । तदेवमध्यपुराधोऽप्युक्तसः सूर्यमग्रहलमा । श्रीमश्रहे भगवश्रामादेषिय। ताहशस्त्रामाविक्षशक्तिमा नित्ययोगे मतुष् । असः क्रिक्ति । भागवत्रके भगवस् कार्तन बुरुवाऽश्वत्र । श्रीमश्वं भगवश्वामादेषिय। तास्त्रास्त्राभाविकशक्तिमात्र्यम् । नित्ययोगे मतुष् । अतः सम्यत्तर्ययं निर्दिश्यः नीलोत्पलवृत्वः मृतिपात्रकार्यम् । अतः सम्यत्तर्ययं निर्दिश्यः नीलोत्पलवृत्वः मृतिपात्रकार्यम् । अस्यया स्विच्छाविध्यशिक्षाद्वीषः स्थात् । अस्ययोक्षे श्रीमद्वागवते । अस्यया स्विच्छाविध्यशिक्षाद्वीषः स्थात् । अस्ययोक्षे श्रीमद्वागवते । अस्यया स्विच्छाविध्यशिक्षाद्वीषः स्थात् । अस्यया मृतिवाद् करणार । अन्यया स्वचिष्णप्रविधयोशसाद्यायः स्यात् । अत्ययोक्तं श्रीमञ्जापते महाश्रुनिकृते इति। गारुके य अन्योऽधाद्याः स्वातं अत्या महते द्विस्ति। श्रीमञ्जापते अत्या महते द्विस्ति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञञञ्जापति। श्रीमञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञ्जापति। श्रीमञञञञञ्जापति। श सुद्धाभित्वमेव अवन्यानिक इति स्कान्द्रे च । श्रीसञ्चागपतं सत्तवा पठते इतिस्विधाचिति । दीकाकद्विराणि श्रीसञ्चागवताभिश्र स्ति \*

## िक्रमसंदर्भः ।

अतः कचित् केवलभागवताल्यत्वन्तु सत्यभामा भामेतिवत् । पुराशानां सामस्य इति । वेदेषु सामवत् पुराशेषु श्रेष्ठ इत्यर्थः । साक्षात् भगमनोदित हेति। कस्मै येन विभाषितोऽयमिखुपसंहारवाक्वानुसारेण क्षेयम्। शतिविच्छेदसंयुत हेति विस्तरभिया न विवियते। सम्बद्ध सरप्रदीपध्रेतस्कान्दंवचने । तदेवी श्रीमद्भागवती सर्वशास्त्रचकवतिपर्दमासमिति विश्वेत हमेसिहासनारहमिति तैर्यद्व्याख्याते तिदेव युक्तम्। अतः श्रीमद्भागवतस्यैवाश्यासावश्यकत्वं श्रेष्ठत्वश्चास्कान्दे निग्नितम्। शतशोऽय सहस्रेश्च किमन्यः शास्त्रसंग्रहेः। नियस्य तिष्ठते गेहे शास्त्रं मामवतं कली। क्यं संविधावी क्षेयः शास्त्रं भागवतं काली। गृहे न तिष्ठते यस्य संविष्ठः विषये विष भवेद्विम शास्त्रं मागवतं कली। तत्र तत्र हरियोति त्रिदशैः सह नारद् ॥ यः पठेते प्रयती निर्धि स्रोकं भागवतं मुने । अष्टादशपुराणीनां फलं प्राप्नोति मानव इति । तदेव परमायैविवित्सुमिः श्रीभागवतमेव साम्प्रतं विचारणीयभिति स्थितम् । सत्यव सत्खपि नानाशीस्त्र ध्वेतदेवोक्तम् । कली नष्टदशामेष पुरागाकि पुनिति इति । अकतारूपकेण तिद्विनी नान्येषा सम्यग्वस्तुप्रकाशकत्वमिति प्रतिपद्यति । यस्येव श्रीमद्भागवतस्य भाष्यभूतं श्रीहयशीर्षपश्चरात्रे शास्त्रक्षणनप्रस्तावे गणित् तन्त्रस्तु भागवताभिधं तन्त्रम् । यस्य साक्षात् श्रीहर्तु मद्भाष्य वासनाभाष्य सम्बन्धोक्तिविद्धत्कामधेतु-तत्त्वद्वीपिका-भावार्धदीपिका-पर्महेसप्रिया-शुकहृदयादयो व्याख्याग्रन्थोस्तिथा मुक्ताफलहरिलीलाभक्ति रत्नावल्यादयो निवन्धाश्च विविधा. एव तत्तन्मतप्रसिद्धमाहीनुभावकृता विराजन्ते यदेवचहेमाद्रिप्रन्थेस्य दानसगडे पुरागादानप्रस्तावेमत्स्य पुरागीयतलक्षमाधृत्या प्रशस्तम् । परिशेषस्य स्व कालीनगीये च कलियुगधर्मनिगाये कलि समा जयन्त्यार्था इत्यादिकं यद्वाक्यत्वेगोत्याप्य यत्प्रतिपाद्यधर्म एव कलाचङ्गीकृतः। संवत्सरप्रदीपे च तत्कर्ता शतशोऽथ सहस्रिश्चे-त्यादिकं प्राग्दर्शितस्कान्दवचनजातमुत्थाप्य सर्वेकलिदोषतः पाविज्याय कतिचिच्छ्रीमद्भागवतवचनानि लेख्यानीति लिखितानि । अतपव संवेगुगायुक्तत्वमस्यैव दृष्टं धर्मः श्रोज्झितकैतव इत्यादी । वेदाः पुरागी काव्यश्च प्रभुभित्रं प्रियेव च । वेषियन्तीति हि प्राह्न-ख्रिवृद्भागवतं स्मृतमिति मुक्ताफले हेमाद्रिकारघचने चेति। मत्स्यादीनां यत् पुरागाधिक्यं श्रूयते तत् त्वापेक्षिकमिति।

अथ स्वन्याख्या । जन्माद्यस्येति । अत्र पूर्वार्द्धस्यार्थः । अर्थोऽयं ब्रह्मसूत्रागामिति गारुडोक्तेरस्य महापुरागास्य ब्रह्मसूत्रा-कृत्रिमभाष्यात्मकत्वात् प्रथमं तदुपादायैवावतारः । तत्र पूर्वमथातो ब्रह्मजिक्सासेति व्याचष्टं तेजोवारिमृदामित्याद्यर्देन । योज-नायां प्राथमिकत्वादस्य पूर्वत्वम् । अत्र ब्रह्मजिज्ञासेति व्याचष्टे परं धीमहीति । परं श्रीभगवन्तं धीमहि ध्यायेम । तदेवं मुक्तप्रब्रह्या योगवृत्या वृहत्त्वात् ब्रह्म यत् सर्वात्मकं तद्वहिश्च भवति तत् तु निजरक्म्यादिश्यः सूर्य्यं इव सर्वेम्यः परमेव खतो भवतीति मूलरूप भगवत्प्रदर्शनाय परपदेन ब्रह्मपदं व्याख्यायते तचात्र भगवानेवेत्यभिमतं पुरुषस्य तदंशत्वात् निर्विशेषब्रह्मगो गुगादिहीनत्वात् उक्त हि श्रीरामानुजाचार्यचरगौः। सर्वत्र वृहत्वगुंगायोगेन हि वृह्यशब्दः प्रवृत्तः ! वृहत्त्वश्च खरूपेगा गुगैश्च यत्रानिधकातिशयः। सोऽस्य मुख्यार्थः। स च सर्वेश्वर एवेति। उक्तश्च प्रचेतोभिः। न ह्यन्तो यद्विभूतीनां सोऽनन्त इतिगीयत् इति।अतएव विविधमनोहरानन्ताकार-त्वेषि तत्तद्भकाराश्रयपरमाद्भुतमुख्याकारत्वमपि तस्य व्यञ्जितम् । तदेवं मूर्त्तत्वे सिद्धे तेनैव परत्वेन तस्य विष्णवाद्किपकभग-वस्त्रमेव सिद्धं तस्यैव ब्रह्मशिवादिपरत्वेन दर्शितत्वात् । अत जिज्ञासेत्यस्य व्याख्या धीमहीति । यतस्तिज्ञासायास्तात्पर्य्ये तद्भ्यान एव। तदुक्तमेकादशे खयं भगवता शब्दब्रह्माणि निष्णातो न निष्णायात् परे यदि। श्रमस्तस्य श्रमफलो ह्यथेमुमिव रक्षत इति। ततो धीमहीत्यनेन श्रीरामानुजमतं जिल्लासापदं निदिध्यासनपरमेवेति स्वीयत्वे नाङ्गीकरोति श्रीभागवतनामा सर्ववेदादिसाररूपोऽय प्रनथ इत्यायातम् । धीमहीति बहुवचनं कालदेशपरस्परास्थितस्य सर्वस्यापि तत्कर्तव्यताभिप्रायेगा । अनन्तकोटिब्रह्मार्यान्तर्यामिगाः पुरुषागामंशिभूते भगवत्येव ध्यानस्य विधानात् । अनेनैकजीववादजीवनभूतो विवर्त्तवादोऽपि निरम्तः । ध्यायतिरपि भगवतो मूर्त-त्वमेव बोधयति ध्यानस्य मूर्त्त एवोवकृष्टार्थत्वात् । सति च सुसाध्ये पुमर्थोपाये दुःसाध्यस्य पुरुषाप्रवृत्त्या स्तत एवापकर्षात् तदुपासक-स्यैव युक्ततमत्वनिर्णयाच । तथाच श्रीगीतोपनिषदः । मध्यावेश्य मनी ये मां निर्ययुक्ता उपासते । श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः॥ ये त्वक्षरमनिदृश्यमव्यक्तं पर्य्युपासते । ते प्राप्तुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः ॥ क्षेत्रगोऽधिकतरस्तेषामध्यक्तासक्तचतसाम्। अध्यक्ता हि गतिर्दुः खंदहवद्भिरवाष्यत इति ॥ इदमेव च विवृतं ब्रह्मणा । श्रेयं:सृति भक्तिमुदस्य तं विभो क्रिश्यन्ति ये केवलवोधलब्धये। तेषामसी क्रेंशल एव शिष्यते नान्यद् यथा स्थूलतुषावधातिनामिति । अत्प्वास्य ध्येयस्य स्वयं भगषत्त्वमेव साधितं शिवादयश्च ह्यावृत्ताः। तथा धीमहीति लिङा चोतिता पृथगनुसन्धानवहिःप्रार्थना ध्यानीपलक्षितं भगवद्भजनमेव परमपुरुषार्थत्वेन व्यनिक्त । ततो अगवतस्तु तथात्वं स्वयमेव सुव्यक्तम् । ततश्च यथोक्तपरममनोहरम् चित्वमेष्रं लक्ष्यते । तथाच साम्नि वृहद्वामं वृहत्पार्थिवं वृहदन्तरीक्षं न्या विकास विकास विकास विकास के किया विकास के स्वाधित त्रायराष्ट्र । अत इति तत्रक्रमतः समनन्तरप्राप्तप्रद्यकाग्डे तूत्तरमीमासया निर्धीयसम्यगर्थेऽधीतचरात् यत्किश्चिदनुसंहि-तार्थात् कुतः कुतिश्चिद्वाक्याद्वेतोरित्यर्थः। पूर्वमीमांसायाः प्रकृतार्थविराधितकीपन्यासकपपूर्वपक्षत्वेन उत्तरमामांसात्मके सम्यगर्थ-तायात कृत उत्तर अस्ति स्वासिक सम्याधिन स्वासिक क्षेत्र स्वासिक सम्याधिन सहायत्वात कर्मणः शान्त्यादिलक्षणसत्त्वशुद्धिहेतुत्वाच तद्वन्तरमित्येव लक्ष्यम । वाक्यानि चैतानि । तद् वयह कर्माजतो लोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुणयजितो लोकः क्षीयते । अय य
इहात्मानमसुविध वजन्त्येतांश्च सत्यकामां स्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारा मवतीति म स पुनरावर्तत इति स चानन्त्याय करूपत इति निरंति श्रीरामानुजेन शारीरके। मीमांसापूर्वभागर्वातस्य कर्मगांऽल्पास्थिरफल्लः तद्वपरितनभागावस्यस्य ब्रह्महातस्य त्वनस्ताक्षय्य-विवृति श्रीरामानुजेन शारीरके। मीमांसापूर्वभागर्वातस्य कर्मगांऽल्पास्थिरफल्लः तद्वपरितनभागावस्यस्य ब्रह्महातस्य त्वनस्ताक्षय्य-फल्लेनं श्रूयते। अतः पूर्ववृत्तात् फर्मकानाद्वस्तरं वेद्या शातव्यमित्यूकं भवति। तदाह सवाद्विवृत्तिकारो भगवाद्व वोधायनः। वृत्त्वत् फल्लेनं श्रूयते। अतः पूर्ववृत्तात् फर्मकानाद्वस्तरं वेद्यां शातव्यमित्यूकं भवति। तदाह सवाद्विवृत्तिकारो भगवाद्व क्रमाथानाप क्रिकार्य क्रिकायदगतेषु केषुचिद्रानयेषु सर्गाधानन्यस्य प्रस्तुविचारेशा दुःखरूपत्वस्यभिचारिसमाकत्वकानपूरकं हा या-

## क्रमसन्दर्भः।

स्वव्यभिचारिपरमानन्दत्वेन सत्यत्यब्राजमेन महाजिद्यासामां हेड्डिस्टाथात हत्यस्यार्थे लक्ष्ये तिष्ठितार्थमेनाहः सत्यमिति सर्वसत्तादावन इयभिचारितत्ताकामित्यर्थः। प्रमित्यनेतानुत्रयासः । सासं हाजमनस्तं यहा इत्यत्र श्रुतौ च वद्योत्पनेतःसदेवमन्यस्य तदिच्छाभीनस्नतांकत्वेव व्यभिनान्दिसत्ताकत्त्रमायाति । तदेत्द्रविधः व्यभिनारिसत्ताकमेव ध्यायस्तो वयमः इदानीः तुः अञ्यभिनारिसत्ताकं ध्यायेमेति । साधः । अयुःप्रत्वमेव व्यन्ति धाम्रोदेतात्र भुभाव व्यवते प्रकाशो वा गृहदेहत्विद्भावा धामानीत्वमरादिनानार्थवेगांव व तु स्वस् प्रम् । तथा कुहकराव्येनाम प्रतारमाकृदुच्यते तम जीवसंस्पावस्याविश्लेषकारित्वादिमा मान्नावैभवं क्षेत्रम् । तदुक्तं मार्या व्युदस्य चिन्छ-क्षेत्रति । तस्या अपि शक्तेसमन्तुकत्वे खेनेत्यस्य वैयर्थ्यं स्यात् खखफ्पेशेत्येव क्याल्याने तुःखेनेत्यनेनेव चरितार्थता स्यात् । यशा क्यश्चित् तथा व्याख्यामेऽपि कुहकनिरसन्वश्चमा शकिरेवापद्यते । सा च साधकतमताकृपा सुनीयया व्यक्तात । एतेन मायातत्कार्यन बिलक्षां यद्वस्तु तत् तस्य खरूपमिति खरूपलक्ष्यमिषः मम्यम् । तच सत्यं द्वानमनन्तं ब्रह्मति नित्यं विद्वानमानन्दं ब्रह्मति अतिप्र-सिद्धमेव एतत् श्रुतिलक्षकमेव च सत्यमिति विन्यस्तम् । तदेषं खरूपशक्तिश्च साक्षादेवोपक्रान्सा । अतः सुतरामेवास्य भगवस्यं स्पष्टमाः। अथ सत्यत्वे युक्ति दर्शयति यत्रेति । ब्रह्मत्वात् सर्वत्र स्थिते वासुदेवे मनवति यस्मिन् स्थितस्थयामां गुगानां भूतेन्द्रयदेवतातमको यस्यैवेशितुः सर्गोऽप्ययमस्या शुक्त्यासी रजतादिकमिवारोपितो न भवति । किन्तु यतो वा इमानीति श्रुतिप्रसिद्धे ब्रह्माि यत्र सर्वदा स्थितःवात् संज्ञामुर्त्तिकलृतिस्तु त्रिवृतकुर्वत उपदेशानिति न्यायेन यदेककर्मृत्वाच सत्य एव । तत्र इष्टान्तेनाप्यमृषात्वं साधयति तेज्ञ आदीनां विनिष्नयः परस्परांशव्यत्ययः परस्परस्मिन्नंशेनावस्थितिरित्यर्थः। स यथा मृषा न भवति किन्तु यथैवेश्वरनिर्माणं तथेत्यर्थः। इमास्तिक्रो देवतास्त्रिवृदेकेका भवति । यदमेरोहितं रूपं तेजसस्तद्र्पं यत् शुक्कं पदपां यत् कृष्मं तदकस्येति श्रतेः । तदवमर्थस्यास्य श्रुतिमूलत्वात कल्पनामुलस्त्वन्योऽर्थः स्वत एव परास्तः। तत्र च सामान्यतया निर्दिष्टानां तेस आदीनां विदेशित्वे संक्रमणं न शाब्दिन कानां हृदयमध्यारोहति। यदि च तदेवामंस्वत तदा वार्यादीनि मरीचिकादिषु यथत्येवावश्यत । किञ्च तन्मते ब्रह्मतस्यि मुख्यं ज्ञास नास्ति किन्त्वारोप एव जन्मेत्युच्यते स पुनर्भमादेव संबति समक्ष साहद्यावलम्बी साहद्यम्त काल्मेदेनोभयमेवाधिष्ठानं करोति र्जतेऽपि शुक्तिभ्रमसम्भवात्। न चैकात्मकं भ्रमाधिष्ठानं वह्वात्मकन्तु भ्रमकिष्पतिमित्यस्ति नियमः। मिथो मिलितेषु विदूरवित्तेषूमपर्वत-वृक्षण्वलगडमेघभ्रमसम्भवात्। तदवं प्रकृतेऽप्यनादित एव त्रिसर्गः प्रत्यक्षं प्रतीयते । ब्रह्मः च चिन्मात्रतया स्वत एव स्फुरदहित। तस्मादनाद्यमानाकान्तस्य जीवस्य यथा सदूपतासाद्द्येन ब्रह्मां त्रिसर्गभ्रमः स्यात तथा त्रिसर्गेऽपि ब्रह्मभ्रमः कथं न कदान्तितः स्याल् । ततश्च त्रत्या पवाधिष्ठानत्वमित्यानेर्णाये सर्वनाशावसङ्गः। ततश्च श्रुतिमूल एव व्याख्याने सिखे सोऽयमभिप्रायः यत्र हि युन्नास्ति क्षिन्त्वन्यत्रैव दश्यते तत्रैव तदारोपः सिद्धः। तत्रश्च वस्तुतस्तदयोगात् तत्र तत्सत्त्वा कर्त्तुं न शक्यते एव। श्चिमग्रीस्य तु तच्छिक्तिविशिष्टात् भगवतो मुख्यद्वरयैव जातत्वेन श्रुतत्वात् तद्वयितिरकेगा व्यतिरेकात् तत्रैव सर्वातमके सोऽस्ति। त्त्रस्तिस्मन् न चारापितश्च। आरापस्तु तथापि धाम्नत्यादिरीत्यैवाचिन्त्यशक्तित्वात् तेन लिसत्वाभावेऽपि तच्छङ्कारूप एव । तथाच प्कर्दशस्थितस्याग्नेज्योत्स्या विस्तारिशा यथेत्यनुसारेशा तत्सत्त्वा भवति। ततो भगवतो सुख्यं सत्यत्वं जिसगस्य च न मृषात्वमिति । तथा श्रुतिः सत्यस्य सत्यमिति तथा प्राणो वै सत्यं तेषामेष सत्यमिति प्राणाशब्दोदितानां स्थूलस्थमभूतानां व्यवहास्तः सत्यत्वनाधिगतानां मुलकार्गाभृतं परमसत्यं भगवन्तं दर्शयतोति । अथ तमेव तदस्थलक्षणेन च तथा व्यक्षयम् विश्वासर्थतया ब्रह्म-सूत्रीगामिव विवृतिरियं संहितोति विवोधियया च तदनन्तरं सूत्रमेव प्रथममृतुवहति जन्माधस्य यत इति। जन्माहीति सृष्टिस्थिति-अल्य प्रमानसाप्याचिन्त्यविविधविचित्ररचनारूपस्य यतो यस्मात् अखिन्त्यशक्त्या ख्यमुपादानरूपात् कत्तोदिक्पाच जन्मादि तं परं धीमही-त्यन्वयः। अत्र विषयवाक्यश्च शृगुर्वे वारुणिवरुणा पितरमुपससार अधीहि भगवी ब्रह्मति आर्थ्य यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते यन त्यन्वयः। अत्र ।वयपवायपत्र द्राप्तः । त्रि जिज्ञासम्ब तद् ब्रह्मति तत् तेजोऽस् जत्याद्वित्व । जन्मादिकमिहोपलक्ष्मां न तु विद्रोप्ताः जातानि जावन्ति यतं अयुग्यान्तरा । किञ्चात्र प्राण्याचित्राष्ट्रीत्र भवेत्राक्तिक प्रति । किञ्चात्र प्राण्याचित्राष्ट्रीत्र भवेत्राक्तिक प्रति । किञ्चात्र प्राण्याचित्राचित्र प्रविद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा । स्विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा । स्विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान्तरा । स्विद्यान्तरा विद्यान्तरा विद्यान् तत्रस्ताकान तत्र आवरात । या पुरुष स्ति । या सर्वेद्धाः सर्वेदित यस्य ज्ञानमयं ततः या सर्वस्य वशीत्यादिश्रुतः । तथा परावेद्धाः निरस्तास्विलहेयप्रत्यनीकस्वरूपत्व ज्ञानाद्यनन्तकल्यागागुगात्वश्च स्चितम्। न तस्य कार्ये करणञ्च विद्यत इत्यादिश्चतः। से ज निर्दिशेष वस्तु जिंबास्यमिति वदन्ति तन्मते ब्रह्मजिबासायां जन्माधस्य यत इत्यसङ्गतं स्यातः निर्दातशयं वृहत् वृहशाश्चिति निर्वचनात् तंत्र ब्रह्म जगजन्मादिकारसामिति वचनाच । एवमुत्तरेष्विप सुत्रेषु सूत्रोदाहृतश्चितिस्यो चक्षसान्वयद्शेनात् सूत्रामित् स्त्रोदाहृतः तच वस प्रमाणिम् । तक्षेत्र साध्यध्योदयोभचारिसाधनधर्मान्वतवस्तविषयत्वात् न निर्विशेषवस्तुनि प्रमाणम् । जगजनमहि श्रुतयश्च गार्थः विद्यापिक्ष ते च न निविधापवस्तुसिद्धिः सममूळमञ्जानसाक्षि बहोत्यश्युपगमात् । साक्षित्वं हि मकाशोकर-श्रमा यतस्तप्रमान । प्रकारतिवन्तुजेडाङ्ग्यायत्ते स्वस्व परस्य व्यवहारयोग्यतापादनस्वभावेन भवति । तथा सति सविशेषत्वम् । तद्भावे सत्याच्यत । त्राविष्ठ । त्रिञ्च तेजी वारिमृदामित्यनेतेव तेषां विवक्षितं सेत्स्यतीति जन्माचस्य यत इत्यप्रयोजकं स्थात प्रकाशतव गर्मा विशेष शक्ति पाय । शक्ति आत्तरङ्गा विदेश तरस्या चेति त्रिधा दर्शिता। तत्र विकासत्मकेषु जन-अतस्त्र प्रशासित विद्या पर्व स्थान शति सा मायाच्या चोपकान्ता तदस्था च वयं धामहात्यनेन । अथ यद्यपि भगवतो कात्र जन्मादि प्राप्त । विशेषाते पुरुषादेवास्य जन्मादि तथापि भगवत्येव तस्तिता पर्यवस्यति समुद्रेषदेशे यस्य जन्मादि तथापि भगवत्येव तस्ति । पर्यवस्यति समुद्रेषदेशे यस्य जन्मादि ततुपावानम्या व सन्मादीतियत । नथीकं प्रकृतिबस्यीपावानमाश्वारः पुरुषः परः । सतोऽभित्वश्रकः कालो वहा तश्चित्वयं तहस्य जन्मादि तस्य समुद्रते एवं सन्मादीतियत । नथीकं प्रकृतिबस्यीपावानमाश्वारः पुरुषः परः । सतोऽभित्वश्वकः कालो वहा तश्चित्वयं त्वहमिति । तस्य समुद्रत प्रमाणक्य यत इत्यमेनापि मस्तवमेव छक्षते । यतो मस्तस्य जगतो मस्तिशक्तिभिनकपतादशानन्तपरशक्तीनां तिथानक्ये तस्य भगवती जन्माणक्ये परमकार्यात्वाङ्गीकोरात । त च तस्य मसीखे सत्यम्यतो जन्मापकेच तस्य भगवता जारा । इसावित्याश्चित्यते तस्य परमकारगत्वाङ्गीकोरात । न च तस्य मसेखे सत्यन्यतो जन्मापतेत अनवस्थापसेरेकस्येवावित्येनाङ्गीकारात्वा इलावित्याक्षण्य स्थापा करणाधिपाधियो न चास्य कश्चित्रातिता स आधिय इति श्वतिमिषेयात अनादिःसिद्धामाकतस्य सा

## क्रमसंदर्भः।

विकामृत्तित्वन बस्य तत्मसिखेश्वा तदेवं मृत्तेत्वे सिखे सात्र मूर्ती विष्णुनारावशादिसाक्षाद्रकपकः श्रीभेगवानेव वान्यः गात्रशास्त्र विकास सर्वाभाः भृतानिः भवन्त्यादियुगागुमितः यस्मिक्षः प्रक्षां धान्ति पुनरेवः बुगक्षमं । इत्यादिकं तत्वितिपादकं सहस्रनामादी तत्रीव सु अतिर्देहयतेषुः श्रीमानिति । एक्क क्कान्ते क्रष्टा पाता ज्ञ संदेक्षे सं एको हरिरीर्श्वरा । क्रष्ट्रवादिक्रमन्येषां वाषयोगीत्र इंयते । एक्क-देशक्षियावत्वास्त्र तु सर्वातमनेहितम् । सृष्ट्यार्दिकं त्समस्तन्तु विक्षाोरेषः प्रश्नेविति । महोपनिषदि च । स वहासाः सृष्टितस् रुद्धेस्य विकापसतीस्यादिकम् । सर्तपस विवृत्तसः। निमित्तं परमीशस्य विश्वसर्गनिरोधयोः । हिरस्यगर्भः सर्वेश्चः कालस्याकपिन मास्त्रवेति । तव यो रूपरहितः कोलः कार्रक्षक्षिस्तस्य निमित्तमात्रत्वमिति व्यधिकरण एव पष्टेगौ । तथा आद्योऽवतारः पुरुषः ,परस्येत्यादि । यदंशतोऽस्य स्थितिजन्मनाधा इत्यादि च । तहेवमन्नापि तथाविधमुर्त्तिभेगवानवोपकाम्तः । तदेवं ,तरस्य-लक्षमोन परं निर्घार्थ्य तदेव लक्षणां ब्रह्मसूत्रे बास्त्रयोनित्वात् तत्तु समन्वयादित्येतत् सूत्रद्वयेन स्थापितमस्ति । तत्रः पूर्वसूत्रस्याधः कुत्मे ब्रह्मस्रो जगज्जनमादिहेतुत्वं तथाह शास्त्रं योनिर्ज्ञानकारगां यस्य तत्त्वात यतो वा इमानीत्यादिशास्त्रप्रमास्रकत्वादिति । नात्र दर्शनान्तरवत् तर्कप्रमाशाकत्वं तर्काप्रतिष्ठानादत्यन्तातीन्त्रिकत्वेन प्रत्यक्षादिप्रमाशाविषयत्वात् ब्रह्मशाश्च इति भावः । वैशेषिकान ग्राम्त्विवराधाध्याये तको लोकवन्तु लीलाकैवल्यमित्यादिना निराक्षरिष्यन्ते। अत्र तकीश्चैवं ईश्वरः कत्तां न भवति प्रयोजनशून्यत्वात् मुकात्मवत तनुभुवनादिकं जीवकर्नृकं कार्यत्वाद् घटवत् । विमतिविषयः कालो न लोकश्चन्यः कालत्वात् वर्त्तमानकालविद्तरयादि । तदेवं दर्शनान्तरानुगुगयेनेश्वरानुमानं दर्शनान्तरप्रातिकूल्यपराहतमिति शास्त्रेकप्रमासाकः परवहासूतः सर्वेश्वरः पुरुषोत्तमः। शास्त्रन्तु सकलेतरप्रमागापरिद्वष्टसमस्तवस्तुविजातीयसार्वेद्यसद्भक्ष्यसङ्करुपत्वादिमिश्रानवधिकानतिशयापरिमितोदारविचित्रगुगासागरं निखिलहेस-प्रत्यनीकस्वरूपं प्रतिपादयतीति न प्रमाणान्तरावसितवस्तुसाधस्यप्रयुक्तदोषगन्धः । अतएव खाभाविकानन्तनित्वमूर्तिमस्वमपि तस्य सिद्धाति । अयोत्तरसूत्रस्यार्थः । ब्रह्मायः कथं शास्त्रप्रमागाकत्वं तत्राह तत्त्विति । तुशब्दः प्रसक्ताशङ्कानिवृत्त्यर्थः । तच्छास्त्रप्रमागा-कत्वं ब्रह्मगाः सम्भवत्येव कुतः समन्वयात् । अम्वयव्यतिरेकाश्यामुपपादने समन्वयस्तरमात् । तत्रान्वयः सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मोति आगन्दो ब्रह्मोति एकमेवाद्वितीयं ब्रह्मोति तत् सत्यं स आत्मेति सदेव सीम्येदम् आसीदिति ब्रह्म वा इदमेकमेवाय आसीदिति आत्मा वा इदमेक पवात्र आसीदिति आत्मैवेदमत्र आसीत पुरुषविध इति पुरुषो ह वै नारायम इति एको ह वै नारायम आसीदिति तदेशत बहु स्यां प्रजायेयेति तस्माद् वा एतस्मादात्मनः आकाद्याः सम्भूत इति तत्तेजोऽसृजतेति यतो वा इमानि भूतानि जायन्त इति पुरुषो ह वै नारायगोऽकामयत अथ नारायगादजोऽजायत यतः प्रजाः सर्वाग्रि भूतानि नारायगः परं बहातस्व नास्यकाः परं ऋतं सत्य परं बहा पुरुषं कृष्यापिद्गलमित्यादिषु । अथ व्यतिरेकः कथमसतः सज्जायेतेति को हावान्यात् कः प्राणयात् यदेष आकाशं आनन्दो न स्यादिति एको ह वे नारायमा आसीन ब्रह्मा न च शक्कर इत्यादिषु । अन्योषाश्च बाक्यानां समन्वयस्त्रेन वस्यते आनन्दमयोऽभ्यासादित्यादिना । स चैवं परमानन्दस्वरूपत्वेनैव समन्त्रितो भवतीति तमुपलक्ष्यैव परमपुरुषार्थसिद्धेनप्रयोजनशून्यत्वमपि। तदेवं सूत्रद्वयार्थे स्थिते तदेतद्वराच्छे अन्वयादितरश्चार्षेषु इति । अर्थेषु नानाविधेषु वेदवाक्यार्थेषु सत्तसु अन्वयादन्वयमुखेन यतो यस्मादेकस्मादस्य जन्मादि प्रतीयते तथा इतरतो व्यतिरेकमुखेन च यस्मादेवास्य तत् प्रतीयत इत्यर्थः। अतएच तस्य श्रुत्यन्वयव्यतिरेकदर्शितेन परमसुखक्षप-रवन परमपुरुषार्थत्वश्च घ्वनितम् । एको ह वै नारायमा आसीहित्यादिशास्त्रप्रमामात्वेन प्राक्रियापितरूपत्वश्चेति । अमेक्षतेनीशब्दमिति व्याब्वष्ट अभिन्न इति। तत्र स्त्रस्यार्थः। इदमास्रायते छान्दोग्ये। सदेव सीग्येदम्त्र आसीत् एकमेवाद्वितीयं वहा तदेशत वहुस्यां प्रजाययेति तत्तेजोऽसृजतत्यादि । तत्र प्ररोक्तं प्रधानमपि जगलकारसारवेनीयाति । तच नेत्याह ईक्षतेरिति । यस्मिन शब्द एव प्रमासां न भवति तद्शब्दमानुमानिकं प्रधानमित्यर्थः । यतोऽशब्दं अतो न तदिह प्रतिपाद्यम् । कुतोऽशब्दत्वं तस्येत्याशङ्कयाह ईक्षतेः सच्छब्द-बाच्यासम्बन्धिव्यापारविशेषाभिधायिनः ईक्षतेर्धातोः श्रवणात् तदैश्रतेति ईक्षणां चाचतने प्रधाने न सम्भवेत । अन्यत्र चेच्छापूर्विकेव सृष्टि स ईक्षत लोकाबुसुना इत्यादी। ईक्षगाश्चात्र तदशेषसृज्यविचारात्मकत्वात् सर्वेज्ञत्वमेव कोडीकरोति तदेतदाह अभिज्ञ इति। नर् तद्विमिकमेवाद्वितीयमित्युक्तेस्तह्यक्षणसाधनं न सम्भवति तत्राहः स्वराडिति। स्वस्वरूपेण एव तथा तथा राजत इति। न तस्य कार्यं करगाञ्च विचतं इत्यादी स्वामाविकी, ज्ञानवलकिया चेति श्रुतेः। एतेनेक्षगावन्यू तिमन्वमपि स्वाभाविकमित्यायातं निश्वसित्-स्याप्यग्रं दर्शियण्यमास्यात्वात् । तच्च यथोक्तमेवेति । अथ शास्त्रयोनित्वादित्यस्यार्थान्तरं व्याचष्टे तेन इति । तचार्थान्तरं यथा कथं तस्य क्या प्रमादिक चृत्वं कर्यं वा नान्यतन्त्रोक्तरूष प्रधानस्य न चान्यस्थति तत्राह शास्त्रस्य वेदरुक्षणस्य योगिः कार्या तद्रपत्वात् । एवं वा और अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद् यद्गवदो यज्ञवेदः सामवेदोऽथवी कर्ष इतिहासः पुरागां स्वाग्यपस्त्राागा खिलान्य-पालिलानि चति श्रुते: । शास्त्रं हि सर्वप्रमागागोचरविधानन्तज्ञानमयं तस्य च कार्या बहीव श्रुयते हति तदेव सुख्यं सर्वेबस् । ताहकं स्वेज्ञत्वं विना च सर्वपृष्ट्यादिकमन्यस्य नापपद्यते इति मोक्तलक्ष्यां ब्रह्मीव जगत्कार्गा न प्रधानं न च जीवान्तरमिति । एतदेव विवु-स्याह तन बहा हहा य आदिकत्रय इति बहा घेदमादिकत्रये ब्रह्मणे ब्रह्मणे प्रति हदा अन्तः करणाहारैव न त वाग्रहारा तने आवि-भीवितवान । अत्र वृहद्वाचकेन ब्रह्मण्येन सर्वेश्वानमयत्वे तस्य ब्रापितम् । हर्दरत्रतेनान्तरयोमित्वं सर्वेशक्तित्वश्च भगवतो व्यपितं माविष्या इत्यतेन तस्यापि शिक्षानिदानत्वात शास्त्रयोनित्वश्चेति। श्रुतिश्चात्र यो ब्रह्मागां विद्धाति पूर्व यो मे वेदाश्च प्राहिशोति शादिकाय इत्यतेन तस्यापि शिक्षानिदानत्वात शास्त्रयोनित्वश्चेति। श्रुतिश्चात्र यो ब्रह्मागां विद्धाति पूर्व यो मे वेदाश्च प्राहिशोति तस्मे ते ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुश्चेत्ररामहं प्रपद्धे इति। अनेन च श्रायनहीत्वाव्याञ्चतिन्धात्मयवेदो ब्रह्मादिविद्धानुस्थान तस्म । प्रधानाभस्तदादिम् सिकः श्रीभगवानेवाभिहितः। विद्यतश्चेतत् प्रचादिता येन पुरा सरस्वतित्यादिना। अथ तस्त समन्वयादित्य-श्रयः प्रधानाभस्तदादिम् सिकः श्रीभगवानेवाभिहितः। विद्यतश्चेतत् प्रचादिता येन पुरा सरस्वतित्यादिना। अथ तस्त समन्वयादित्य-स्यायान्तरम् । यथा शास्त्रयोनित्वे हेतुश्च हत्यते इत्याद्व तस्विति । समन्वयोश्च सम्यक् स्वतामुखोऽन्वयो इयुत्पसिवदार्थपरिज्ञान स्थायाण्य निर्धास्त्र तिश्चीयतं इति । जीवे संस्थाद्यानमेत् नास्ति मधातस्त्रचेत्रसमेत्रीत सावः । स येति विश्वं न ज तस्य तस्त्रास्त्र तम् तस्त्रातः त्र अतेः । तदोतस्य तदीयसम्याद्वानं स्यतिरेक्षमुखेन क्षेत्रशितं जीवार्तां सर्वेषासपि तदीयसम्यग्रानासात्रसाहः सुद्यन्तीति बद्धा हत्यात्र । यतः यत्र शब्दमहाणि। तदेवतः विद्यतः स्तर्य समझताः कि विश्वते किमान्य किमन्य विकल्पयेत । इत्यस्या

## क्रमसंदर्भः ।

हृद्यं लोके मान्योमहोद कश्चनेति । अनेन च साक्षात मगवानेवाभिहितः। तथा दिशलक्षणार्थोऽप्यत्रैव दश्यः । तत्र सर्गविसर्गस्थान-निरोधाः जन्माद्यस्य यत इत्सत्रः। मन्यन्तरेशासुक्षये च स्त्रानान्तर्गते। पोषशं तेन इत्यादी । अतिर्मुह्यन्तीत्यादी । मुक्तिजीवानामिष तत्साक्षित्रे सति कुद्दकनिरसनिव्यक्षकेन धारनेत्यादी । आश्रमः परं सत्यमित्यत्र । स ब खयं मगवत्त्वेन श्रीकृष्ण एवेति पूर्वोक्त-प्रकार एव ब्यक्त इति । तदेवमस्मिश्रपक्रमवाक्ये सर्वेषु एदवाक्यतात्पर्येषु तस्य ध्येयस्य सविशेषत्वं मूर्तिमत्त्वं श्रीभगवदाकारत्वश्च व्यक्तम् । तच्च युक्तं स्वरूपवाक्यान्तरव्यकंत्वात् । समस्तवेदरतुत्यर्थे संग्रुह्यानुस्मारयि योऽस्योत्प्रेक्षक इति निभित्तकारण्यिस् । योऽस्योत्प्रेक्षक आदिमध्यनिधने योऽव्यक्तजीवेश्वरः यः सृष्टुदमनुप्रविश्य ऋषिगा चक्रे पुरः शास्तिः ताः। यं सम्पद्य जहात्यजामन् शयी सुप्तः कुलायं यथा तं कैवल्यनिरस्तयोनिमभयं ध्यायेद्जस्तं हरिमिति। अतो धर्मः प्रोज्झितेत्यादावनन्तरवाक्चेऽपि कि वापरैरित्या-दिना तत्रैव तात्पर्य्ये दर्शितम् । तथोपसंहारवाक्याधीनार्थत्वादुपक्रमवाक्यस्य नातिक्रमणीयत्वमेव । कस्मै येन विभाषितोऽयमित्या-दिना दर्शितं तस्य ताहशविशेषवस्वादिकम् । यथैवात्मगृहीतिरितरवदुत्तरादित्यत्र शङ्करशारीरकस्यापरस्यां योजनायामुपक्रभीक्तस्य सच्छद्धवाच्यस्यात्ममुपसंहारस्थादात्मशब्दात् लक्ष्यते तद्वदिहापि चतुःश्लोकीवक्तुर्भगवस्वं दर्शितं श्रीव्याससमाधावपि तस्यव ध्येयत्वम् । तदेव च खसुखनिभृतेत्यादि श्रीशुकहदयानुगतमिति । यद्वा पुनश्च विष्णुपुराशीयभगवच्छद्धनिरुक्तिवत् साक्षाच्छ्रीकृष्णा-भिधयत्वनापि योजयति जन्माद्यस्योति । नराकृति परं ब्रह्मोति पुरागावर्गात् । तस्मात् कृष्णा एव परो देवस्तं ध्यार्थादाति श्रीगोपाल-तापनीश्रुंतेश्च परं श्रीकृष्णां धीमहि। अस्य खरूपलक्षणमाह सत्यमिति। सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यमित्यादी सत्ये प्रतिष्ठितः कृष्णाः सत्यमत्र प्रतिष्ठितम् । सत्यात् सत्यश्च गोविन्दस्तस्मात् सत्यो हि नामतः। इत्युद्यमपर्वेशिक्षश्चयकृतं श्रीकृष्णानाम्नां निरूको च तथाश्रुतत्वात् । एतेन तदाकारस्याव्यमिचारित्वं दर्शितम् । तटस्थलक्षणमाह धाम्ना खेनेत्यादि । खेन खखरूपेण धाम्ना श्रीमथुरा-ख्येन। सदा निरस्तं कुहकं मायाकार्यलक्ष्यां येन तम्। मध्यते तु जगत् सर्वे ब्रह्मक्षानेन येन वा। तत्सारभूतं यद्यस्यां मथुरा सा निगद्यत इति श्रीगोपालोत्तरतापनीप्रसिद्धेः। लीलामाह आद्यक्ष नित्यमेव श्रीमदानकदुन्दुभिव्रजेन्द्रनन्दनतया श्रीमथुराद्वारका-गोकुलेखु विराजमानस्येव खस्य कस्मैचिदर्थाय लोके प्रावुभीवापेक्षया यतः श्रीमदानकतुन्दुभिगृहात् जन्म तस्माद्य इतरतश्च इतरत्न श्रीव्रजेश्वरगृहेऽपि अन्वयात पुत्रभावतः तदनुगतत्वेनागच्छत्। उत्तरेशीव य इति पदेनान्वयः। यत इत्यनेन तस्मादिति स्वयमेव लक्ष्यते । कस्माद्नवयात् तत्राह अर्थेषु कंसवश्चनादिषु तादशभाववाद्भः श्रीगोकुलवासिमिरेव सर्वानन्दकदम्बकाद्मिवनीरूपा सा कापि लीला सिद्धातीति तल्लक्षगोषु वा अर्थेषु अभिन्नः। ततश्च खराद्खेगीकुलवासिभिरेव राजत इति तत्र तेषां प्रेमवद्यातामापन्नस्याप्यव्याह-तिश्वध्यमाह तेन इति। य आदिकवये ब्रह्माणे ब्रह्माणे विस्मापियतुं हृदा सङ्कल्पमात्रेगीव ब्रह्म सत्यन्नानानन्तानन्दमात्रेकरसमृत्तिमयं वैभवं तेने विस्तारितवान् । यद्यतस्तथाविधलीकिकालीकिकतासमुचितलीलाहेतीः सूरयस्तद्भक्ता मुह्यन्ति प्रेमातिशयोदयेन वैवश्यमाध्न-वन्ति। यदित्युत्तरेगाप्यन्वयात्। यद्यत् एव तारशलीलातः तेजीवारिमृदामपिययाः यथावद्विनिमयो भवति। तत्र तेजसम्बन्दादेविन विषयो निस्तेजोवस्तुभिः सह धर्मपरीवर्तः। तच्छ्रीमुखादिरुचा चन्द्रादेनिस्तेजस्वविधानात् निकटस्थनिस्तेजोवस्तुनः खभासा तज-ानमया । गल्तजायरपुरा पर्यं विश्व किं भवति वेणुवाद्येन । मृतपाषागादिश्च द्रवतीति । यत्र श्रीकृष्णे त्रिसर्गः श्रीगोकुलमथुरा-द्वारकावेभव प्रकाशः अमृषा सत्य एवति ।

रकावमम् अवारा राष्ट्रा । । । । यथा व्रह्मसंहितायाम् । आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभिस्ताभिये । अथ श्रीवृन्दावने तदीयखरूपशक्तिप्राद्वभावाश्च व्रज्ञदेव्यः । यथा व्रह्मसंहितायाम् । आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभिस्ताभिये एव निजरूपतया कलाभिः। गोलोक एव निवसत्याखिलात्मभूतो गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामीति। ताभिः श्रीगोपिकाभिः कलाभिः एव निजरूपतया कलाम । गालाम उन गालाम कलाम । शक्तित्वश्च तासां पूर्वोक्तोत्तकर्षेश परमपूर्शाप्रादुर्भावाशां सर्वामामपि लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रम-शाकाभः। निजक्षपतया स्वायतया । सार्वास्त्र प्रमपुरुष इति च गोष्यो लब्ध्वाच्युतं कान्तं श्रिय एकान्तवल्लभमिति च ज्ञापयति । गोष्य एव संव्यमानामात ।श्रयः कान्ताः कान्तः परमञ्जय राजाः । एतदिभिप्रायेशीव स्वायम्भुवागमेऽपि श्रीमूलीलाशद्वेस्तत्प्रेयसीत्रयमुपदिष्टम् । श्रियः कान्तं मनोहरम् एकान्तवल्लमं रहोरमणम् । एतदिभिप्रायेशीव स्वायम्भुवागमेऽपि श्रीमूलीलाशद्वेस्तत्प्रेयसीत्रयमुपदिष्टम् । ाश्रयः कान्त मनाहरम् एकान्तवलम् र्वाराज्यः । तस्मालुक्मीत्वेऽप्यासां कुरुपागडवन्यायेन नायं श्रियाऽङ्ग इत्यादी लक्ष्मितोऽप्युत्कर्षवर्णनं परमञ्योमादिस्थिताभ्यस्तत्तन्नामा एव तस्मालुक्ष्मात्वऽप्यासां कुरुपागडवन्यायनं नाय । अपानज्ञ रूपाप्यानलक्षम्यस्त्वेता एवति । तास्तु नित्यसिद्धा एव । आसां महत्त्वन्तु प्रसिद्धाक्रयो लक्ष्मीक्ष्य आधिक्यविवक्षयेति मन्तव्यम् । श्रीवृन्दावनलक्षम्यस्त्वेता एवति । तास्तु नित्यसिद्धा एव । आसां महत्त्वन्तु प्रांसद्धाञ्या लक्ष्माञ्य आधिकयाववक्षयात नाराज्या । जाव प्रांति । आनन्दचिन्मयरसेनप्रेमरस्विद्यावेशा भाविताभिस्तत-ह्वादिनासार वृत्ति।वराषप्राधान्यात् तदुक्तमागुन्द।वराप्त्रियक्तस्य भमवतः श्रीकृष्णस्यापि तासु परमोह्वासप्रकाशो भवति येन प्राधानाभिरित्यर्थः अतएव तत्रप्रासुर्यप्रकाशेनाचिन्त्यानन्तशक्तियुक्तस्य भमवतः श्रीकृष्णस्यापि तासु परमोह्वासप्रकाशो भवति येन व्राधानामारत्ययः अत्यव तत्प्राचुय्यप्रकारामा जन्त्याप्तरा । जन्म वर्षेत्राचनमात्रं किन्त्वेताभिः समं परमप्रमोहासावधित्वमवग्रयते ताभीरमग्रीच्छा जायते तथैवाह् भगवानपि ता राह्मीरिति । न कवलमेतावनमात्रं किन्त्वेताभिः समं परमप्रमोहासावधित्वमवग्रयते ताभारमगाच्छा जायत तयवाह मगवानाप ता राजारात निवास ताभिरिति च । अय तासां नामानि श्रूयन्ते भविष्योत्तरे तथाह त्रेलोक्यलक्ष्म्येकपदं वपुर्दधिहित व्यरोचताधिकं तातिति तत्रातिश्रुश्चेन निवास में। गोपाली पाविक्र निवास श्रूयन्ते भविष्योत्तरे तथाह जलाक्यलक्ष्म्यकपद वपुद्धादात व्यराचतायक ताताप क्रिक्स निवाध में। गोपाली पालिका धन्या विशासा ध्यानिशिका।
मलुद्रादशीप्रसङ्गे श्रीकृष्णयुधिष्ठरस्वादे। गोपीनामानि राजेन्द्रप्राधान्यने निवाध में। गोपाली पालिका धन्या विशासा ध्यानिशिका। मलुद्वाहराप्रसङ्ग अञ्चलका वश्मी तथिति। तथेति दशम्यपि तारकानाम्न्यवत्यर्थः। स्कान्दे प्रह्वादसंहितायां द्वारकामाहातम्य श्रील-राधानुराधा सामाना तारका दरामा तथात । तथात वराजा पद्मा भद्रेत्येतान्यष्टेव गृहीतानि । अथ च वनिताशतकोदिभिरित्याग-लितीवाचित्यादिना लालता राज्या विशाला । मप्रसिद्धेरन्यान्याप लाजनारनारत्वथात । जन्म प्रमित्व क्षेत्राचिका तस्यामेव प्रेमोत्क प्रमावधित्वस्य दर्शितत्वात यत्र व तदेवं परममधुरप्रमहाराम्य । जार तत्साराम्य श्रीवन्दावने राधिकाया एवं परमलक्ष्मीत्वम् । अतएव सतीस्वन्यासु तास्ताप तत् प्रेमवाशास्य तत्रव न्यापा । अत्यय प्राप्त । अत्यय प्रमुख्याम । पाश्च च वृन्दावमाधिपत्यश्च दसे तस्य प्रतुष्यता । कृष्णीनान्यश्च द्वी मुख्यस्वाभिप्रायेगीव तस्य प्रतुष्यता । कृष्णीनान्यश्च द्वी मुख्यस्वाभित्रायणाव तर्पा विशेषतः श्रीराधायस्तिहरूत्वे पृहदुगीतमीये तथाहि श्रीवलदेवं प्रति श्रीकृष्णावाक्यं सस्य तथा तथाहि श्रीवलदेवं प्रति श्रीकृष्णावाक्यं सस्य तथा तु राधा वृन्दावन वन शत । जात्र प्राप्त कार्पणी सापि राधिका सम वेलमा प्रकृतेः पर एषाई सापि मध्यक्तिका । सार्पके कप्रा-वर्त्वश्च तत्त्वत्रयमहं किल । त्रितत्त्वकापणी सापि राधिका सम वेलमा प्रकृतेः पर एषाई सापि मध्यक्तिकापणी । सार्पके कप्रा-णरस्वश्च तस्वत्रयम् । पार्थः ॥ ब्रह्मणा प्रार्थितः सम्यक् सहमवामि युगे युगे । तथा सोई स्वया साई नाशायदेवताद्वहामित्याहि ॥

X.

## कृपीयां वेशी

सत्त्रं कार्ब्यत्वं तत्त्वं कारगात्वं ततोऽपि पर्त्वं चेति यत् तत्व्ययं तदहमिलार्थः। तत्रैवामे श्रीराष्ट्राषाः देवी कृष्णसयी मोक्ता राधिका परदेवता सर्वलक्ष्मीमथी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परति। ऋक्परिशिष्टभूतिया तथेवाह राधया मधिकी देवी माधवनेव राधिका। विभ्राजन्ते जनेप्वा इति विभाजनतीविभाजते आ सर्वत इति श्रुतिपदार्थीः । एतत् सर्वमिमिप्त्य मुर्धुन्यश्रोके तीह्योऽप्यर्थः सन्द्धे जन्माद्यस्योति। यतोऽन्वयात् अन्वेति अनुगच्छति सदा निजपरमानन्दशक्ति हपाया तस्या श्रीराधायामासकी भवतीत्यन्वयः श्रीकृष्णस्तादशाद् यस्मात् तथा इतरतः इतर-स्याख्य तस्य सदा ब्रितीयायाः श्रीराधाया पव यतौ यस्या आधस्य आदिरसस्य जन्म प्रादुर्भोवः यावेव आदिरसविद्यायाः परमनिधा-नमिलार्थः। अतएव तयोरत्यद्भुतविलासमाधुरीधुरीणतामुद्दिशति । य अर्थेषु तत्तविलासकलापेषु अभिक्षो विद्याः या च सिन तथा तथाविधेन आत्मना राजते विलसतीति खराट् अतएव सर्वतोऽप्याध्येष्येष्ठपयीस्तयोषेगीने मम तत्रक्रपेव सामग्रीत्याह आदिकवये प्रयम् तल्लीलावर्णनमारभमाणाय महां श्रीवेदव्यासाय हदा अन्तः करणदारैव बहा निजलीलाप्रतिपादकं शब्दबहा यस्तेने आरम्भस्यकालमेच युगपत् सर्वमिदं महापुराशां मम दृदि प्रकाशितवानित्यर्थः । एतंच प्रथमस्य सप्तम एव व्यक्तम् । यद् यस्यां व्रह्मादयोऽपि मुद्धान्ति स्वरूपसीन्दर्थगुगादिभिरत्यद्भता क्यमिति निवेन्तुमारव्धा निश्चेतुं न शक्तुवन्ति एवम्भूता सा यदि मयि कृपा निकिरिक्यत् तदा क्ष्यमाधवताहशक्तपस्यापि मम तैस्तैः परैस्तत्पदवीमन्बिच्छन्लांश्रतोऽवलाः । वध्वाः पदैः सुपृक्तानि विलोक्याक्तीः समञ्जवन् इत्यादिना तस्या लीलावर्शानलेशोऽपि साइससिद्धिरसी नामविष्यंदवेति भावः। तयोराश्चर्यक्रपत्वमेव व्यनिक तेजोवारिमृदामचेतनानामपि यथा येन प्रकारेश विनिमयः परस्परं स्वभावविपर्ययो भवति तथा यो विम्राजत इति शेषः । वाक्यशेषश्च भावाविभूतत्वेन न वक्तुं शक्तवा-निति गम्यते ।, तत्र तेजसश्चन्द्रादेस्तत्पदनखकान्तिविस्फारितादिना वारिमृद्वित्रस्तेजस्त्वधर्मावाप्तिवीरिग्रो नद्यादेश्च वंशीवाद्यादिना रव्यादितेजोवदुच्छलताप्राप्तिः।पाषागादेमृद्वच स्तम्भताप्राप्तिः। मृद्श्य पाषागाद्रेस्तत्कान्तिकन्दलीच्छ्रारितत्वेन तेजोवदुज्ज्वलताप्राप्ति-वैशीवाद्यादिना वारिवच द्रवताप्राप्तिरिति । तदेतत् सर्वे तस्य लीलावर्णाने प्रसिद्धमेव । यत्र यस्याञ्च विद्यमानायां त्रिधा सर्गः श्रीभूली-क्रोति शक्तित्रयीष्रादुभीवोऽथवा द्वारकामथुरावृन्दावनानीतिस्थानत्रयगतशक्तिवर्गत्रयप्रादुभीवो वृन्दावन एव रसन्यवहारेगा संहद्दा-सीनप्रतिपक्षनायिकारूपत्रिभेदानां सर्वासामपि वजदेवीनामेव प्रादुर्भावो वा मुषा वृथैव। यस्याः सीन्दर्थादिगुगासम्पदा तास्ताः कर्या न किञ्जिदिव प्रयोजनमर्हन्तीत्यर्थः। तत धीमहीति यच्छद्धलब्धेन तच्छद्धेनान्वयः। परमशक्तिशक्तिमस्वेनातिशयितमहाभावरस्न वा परस्परमिश्रतां गतयोरनयोरैक्येनैव विवक्षितं तदिति। अतएव सामान्यतया परामर्शात् नपुंसकत्वश्च । कथम्भूतं स्वेन घाझा स्वप्र भावेगा सदा निरस्तं खलीलाप्रतिवन्धकानां कुहकं माया येन तत्। तथा सद्यं ताहशत्वेन नित्यसिद्धम्। यद्वा परस्परं विलासादिभि-नेवरतमानन्दसन्दो हदाने कृतसर्वामच जातं तत्र निश्चलमित्यर्थः। अतएव परं अन्यत्र कुत्राप्यदृष्टगुगालीलादिभिः विश्वविस्मापकत्वात् स्वितोऽप्युत्ऋष्टम् । अत्र एकोऽपि धर्मो भिन्नवाचकतया वाक्ययोनिर्दिष्ट इत्युभयसाद्दश्यावगमात् प्रतिवस्तूपमानामालङ्कारोऽयम् । इयश्र मुहुरूपमितिभिति मालाप्रतिवस्तूपमा। तेन तैरुतैर्भिथो घोग्यतया निवद्धत्वात् समनामापि। एतदलङ्कारेगा च बहो परस्पर परस्मा-त् परमापि तान्मिथुनभूतं किमपि तत्त्वं मिथोगुगागामाधुरीभिः समतामेव समवाप्तमिति सकलजीवजीवातुतमरसपीयूषधाराधाराध-रतासम्पदा करमे वा निजचरणकमरुविलासं न रोचयतीति खतःसम्भवि वस्तु व्यज्यते।तदाहुः प्रतिवस्तूपमा सा स्यात् वाक्ययोगीम्य-स्रोभ्ययोः। एकोऽपि धर्मः सामान्यो यत्र निर्दिश्यते पृथगिति। इयं मालयापि इत्यते इति च । एवं समं स्यादानुरूप्येगा श्राघा योग्यस्य वस्तुन इति । तथा वस्तु वालंकृतिवीपि विधार्थः संभवी खतः । कवेः श्रीढोक्तिसिद्धो वा तिनवद्धस्य विति पट् ॥ षड् भिस्तैर्व्यज्यमान-स्त वस्त्वलङ्कारकपकः । अर्थशक्तयुद्धवी व्यङ्गो याति । इतः स्वेतोऽपि सान्द्रानन्दचमत्कारक श्रीवन्दावनेऽपि परमाञ्जूतप्रकाशः श्रीराध्या युगलितः श्रीकृष्णा इति । तदुक्तं राध्या माधवो देव इत्यादिना। तदेवं सन्दर्भचतुष्ट्येन सम्बन्धो देशास्यात त्राह्मकापि सम्बन्धे श्रीराधामाध्वरूपेशीच प्राहुभीचः तस्य समन्वितः परमप्रकर्षः एतदर्थमेच ब्यतानिष्मिमाः सवी अपि परिपाटीरिति भूगोः संस्वन्धः । शौरद्यामञ्चोज्ज्वलाभिरमलेरहणोर्विलासोत्सवेर्नृत्यन्तीभिरद्रोषमादनकलावेदग्धदिग्धातमाभः । अन्योन्यप्रियतासुधा-परिमळस्तामान्मदाभिः सदा राषामाधनमाधुरीभिरभितश्चित्तं ममाक्रम्यताम् ॥ १॥

## सुवोधिनीः।

॥ श्रीगगोशायनमः ॥

यहंदेशीकृषादितं सुरनरकाभितं वेदवेदानतं वेद्यं लोकंभक्तिप्रसिद्धेयंदुकुलजलधो प्रादुरासीहपारः।
यहंदासीद्दुपमेव त्रिभुवनतरको मक्तिवंक्षस्ततंत्रं शास्त्रस्पंत्रं लोकंप्रकृदेयित मुदायः सन्ते भृतिहेतुः ॥ १ %
सत्तोक्षः संकलस्य गोनिगमभः सर्वस्तरंपीद्धि सन्त सर्वस्त्यापि विधारणो विजयते निर्द्धां सर्वेष्टः।
योलीलाभिरनेक्ष्णाचि तस्तिक्षेत्रं तिलेक्ष्वलः सीर्यंपाचिममास्तु प्रणीप्राण्यः कृष्णावतारः पतिः ॥ १ ॥
श्रीमहल्प्ताध्याप्तिकस्ति व्यामाधिलामीद्यं तस्मेतातमद्दारांषा यहर्षे सुमानमः सिक्ष्यं॥ ३ ॥
श्रीमहल्पाध्याप्तः सुरत्तस्त्रं कार्तिकार्याप्ति स्वत्रस्त्रं विधायमित्रं स्वामाधिकार्यः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं क्षिप्तलेखं गतानापाभववि भवतस्त्रं वर्षाणिविषद्धमहत्तः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं क्षिप्तलेखं गतानापाभववि भवतस्त्रं वर्षाणिविषद्धमहत्तः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं क्षिप्तलेखं गतानापाभववि भवतस्त्रं वर्षाणिविषद्धमहत्तः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं विधायमाध्येतः सुरत्तस्त्रं विधायमाध्येतः स्वत्रं महित्रस्त्रं ॥ ५ ॥
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं विधायमाध्येतः सुर्वाविष्ठापितः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं विधायमाध्येतः सुर्वाविष्ठापितः।
श्रीमहागवतागमः सुरत्तस्त्रं विधायमाध्येतः सुर्वाविष्ठापितः।
श्रीमहान्त्रं विधायमाध्येतः सुर्वाविष्ठापितः।
श्रीमहान्ते सुर्वाविष्ठापितः।

## स्वोधिनी ।

अधिन समामि तत्त्वमाहत्यपूरणं । आर्थिकंत व्रवस्यामि परोक्षकवनाहते ॥ ६ ॥ अविरोधेन समामिश्रामि हसंगतिः । उत्तरोत्तरहोर्वस्यं वाद्यं सकावतः परं ॥ ६ ॥ भाषात्रयविरोध्रक्ष करूपभेदारस माहितः । भाषात्रयविभेदस्तु रुश्रग्रेहांप्यतेपुनः ॥ ८ ॥ अर्थत्रयत्वस्यामि निषंधेस्मिन् चतुष्टयं । अत्रसंतः ससंतोषेराहांयच्छन्तु सिद्धये ॥ ९ ॥

अथब्याख्याभगवदाभयाभक्ति जनिकां संहितामारभमागाः शिक्षार्थ मंगलमाचरन् । वीतमावनप्रथमंगाय इयथेशुपनिवर्षभ्र । जन्माधा-स्येति । अञ्चित्रहेकत्रयस्यासंगतिः । कथारूपंहिभाग्रवतं तसुनैमिषश्त्यादिना निरूप्यतेतन्नोच्यते । यत्राधिकृत्यगायत्रीद् गर्यते धर्मविस्तरः वृत्रासुरवधोपतं तद्भागवतमिष्यते । यथाहियद्भात्मकोष्ट्रत्रः तद्धधनयक्षाः प्रष्टृत्ताः । वेदेनिक्विताः तथात्रापिभक्तवात्मकोत्रुत्रः । तद्धधनिक्-पर्योनात्रम्किः प्रवर्त्तियज्यते । गामत्रीहिषेदमाताषेदत्रयार्थप्रितिपादिकाभनति । तद्योभागवते प्रथमं वीजार्थ निरूष्यते । यथावेदस्त्या भागवतिमिति । एकवीजत्वातः अतोगायप्रयर्थ निरूपग्रेनवेदविरोधोवेदादौर्वेल्यंच परिद्धतं । यथाद्विवेदयिवयाः पदार्थाः योगजधेरगाजु भयंते । फलसाधनसहिताः तथात्रापिचयोगजधर्मेण व्यासस्ययमगुभूतवान् पुरुषोमाययावंधोमोचनम्किहेतुकामिति अपश्यंतपुरुषपूर्मी मित्यादिना एपाहिसमाधिभाषातत्रहिपुरुषप्रपन्नोभक्तावेव माहात्म्यज्ञानपूर्वकस्तुसुरष्टः सर्वतोधिकः स्नेहोभक्तिरिति प्रोक्तस्तथासु-क्तिनेचान्यथेति बैष्णावतन्त्रवचनात् माहात्म्यज्ञानपूर्वक सुदृढसर्वतोधिकरनेहोभक्तिः सुदृढसर्वतोधिकस्नेहरुवात्मत्वेन झातेभवति माहा-त्म्यक्षानंतु सृष्ट्यादिभिः तत्रद्वयंसाधियतुमेषाभागवत संहिता यथाहियक्षाः ब्रह्मात्मावगतिश्चकाग्रहद्वयार्थः अन्योऽन्यहेत्भृतः तथात्रद्वय- / मिप्सिकिहेत्रिति निरूपियतुं गायत्रीवीजंवेद्दोवृक्षः भागवतंफलमिति निरूप्यते अतः काग्डद्वयार्थनिष्णातोपि अफलवृक्षद्दवव्यर्यस्ति भागवतारंभः तदत्रक्षोकत्रयंगानिरूप्यते यद्यपिप्रगावोध्याहृतयश्चत्याभवंति तथापितेषामर्थः स्पष्टोनिति गायज्यर्थोनिरूप्यते क्रिक अम्यप्रधानेति गायत्रीनियुक्ता तत्सवितुर्वरणय मित्याह प्रसूत्याइति तथामंदेहादिनि वारणाच गायत्र्याभिमंत्रिताभापऊद्धै विक्षिपंतीस्यान दिनातेनिगिर्विद्यांचाक् प्रस्वार्थं गायज्याभगवदुपस्थानंकुर्वागाः गायज्ययमात् तत्रगायज्यांजगत्मसवेन सर्वकर्तृत्वं षष्टी इयेननिक्रयते वर-ग्यमिति-भक्तिवीजं भगइति संसारनिवृत्तिः भक्षयत्यखिलांविद्यामिति अतस्तदेवधीमहीति आवृद्यकत्वंचाहिधयः सर्वेदियागयेवमन-सासहसंवदाप्ररयेखः समस्तानांतद्भानं सर्वथाहितमिति तदत्राप्याह जन्मादि अस्ययतइति जन्मशाद्यस्य आकाशस्ययतइति वातसमाद्धा-एतस्मादात्मनथाकाद्याः संभूतइति श्रुतेः गायत्यर्थेहि प्रसवमाद्यमुक्तंनिस्यति प्रलयीवरेग्यगर्भः शब्दाश्यांच पश्चात्स्चिती दतत्राद्यु-त्तराई सूचियव्यते अथवासूचितमप्यर्थमादायउत्पत्तिस्थिति प्रलयानिरूप्यते जन्मादिपदेनयतोचाइमानि भूतानि जायंतइत्यादिश्यतेः जन्मआदिर्यस्थाति भंगस्येति तद्गुणसंविज्ञानोवहुवीहिः उत्पत्तिस्थिति भंगस्यति वाऽतद्गुणसंविज्ञानः वदार्थप्रतिपादकादाज्ञादिन कपुनक्की अस्येतिव्रह्मांडकोटिकपस्यमनसाष्त्राकलाये तुमश्ययस्येति माहात्म्यंयतश्यव्ययनिर्देशः अविक्षतत्वायसर्वजगद्भाजमपि व्यानिश्वनिम्नामिति निरूप्यतं यथाकामधेनोः करुपवृक्षात् चितामग्रोमेत्रादेश्चजायमानाः पदार्थादश्यतेनिहतेबिक्ताभवंति अनेनक्ष्य-अस्तिनिरवयवत्वशद्यकायोवित पूर्वपक्षः परिदृतः यत्तवार्नित्यसंबंधेपि शब्दन्यूनतादोषपरिहारायु अध्याहारः कर्तव्योयद्यपित्यापि गायञ्चंतर्गततत् शब्दव्याख्यानरूपस्यसत्यंपरमिति पदद्वयस्यविद्यमानत्वात् नाध्याहारः तत्रवह्याः समवायित्वंप्रकृतेनिमित्तत्वभिति केचिवाद्यः विपरीतमित्यस्येकर्तृत्वमात्र मित्यपरेतत्सर्धानराकरणायाह अन्वयादितरतश्चेति अन्वेतीत्यन्वयः समवायिकारणा इतरत् । निमित्तकार्गायत्रयेनयतोयस्येतिस्रोकोक्ताः अनुकाश्चकारेगा परिगृहीताः अतः अभिज्ञनिमित्तोपदानंजगत् बह्मकारगाकमित्युक भवति स्थिति प्रलगादाविषयधापेक्षं ग्रह्मात् नसम्यायकयनदाषः । अथवा । वैनादाकप्रक्रियायाः अनंगीक्रीराक्षारोप्यस्यक्ति स्थितः सन् भवातास्थात प्रकश्चित्र विभिन्न मनाय्येषश्चास्यवप्रत्यक्षानुप्राहकान्वय्वपारा वास्त्र यह स्तिय चारतीति वाक्या च तस्मात् सर्वप्रकारेगापि वहावजगतकार्गामित्युकं स्यति जगत्कारणात्वेन तदुपयोगिसर्वज्ञत्वेसिद्धापिलोकवत् फलाज्ञानं संभवतीति तदाहार्थेष्वभिज्ञद्दति अनतिप्रयोजनायसप्तभीएकस्यान भवति जगत्कारगात्वेन तदुपयागिसवक्षत्वासक्षाप्राप्ताप्ताप्ता । प्रयोजनानां चनसमासः तेननहर्षविषादी अर्थशब्दः प्रयोजनदाची । अथवा पित्रयोजनस्य यहुप्रयाजनत्व ज्ञापायतु यहुवचन् भागराणाः न्याजनासर्वपुरुषार्थजगदित्युक्तं भवति एकस्यापिप्रयोजनस्य प्रयोजनका-अर्थेषुनिमित्तेषुचतुर्विधपुरुषार्थं सिध्यर्थं जगजननित्यर्थः सर्वजीवानांसर्वपुरुषार्थजगदित्युक्तं भवति एकस्यापिप्रयोजनस्य प्रयोजनका-अर्थे बुनिमस्त पुचतु विश्व पुच्या संध्येय जगजना निर्माण । स्वर्गा विश्व प्रचार । स्वराहित यद्यपि जीवाअपिसकः विकार तापर पुरागं ज्ञानमभिराद्यार्थः ज्ञानमार्गेकेश्वनस्वार्थमेव सर्वकरोतीत्याद्यः तिवराकरणायाद्य । स्वराहित यद्यपि जीवाअपिसकः र्घकारणापर पुराग शानमामशब्दायः शानमागमञ्जलायन राजा अथवाविराडंतर्गतः खरार्तेनपूर्वोक्तं सर्वेश्वतासम्भिताभवति अक् पभेव तथा।पत्रपा पत्रपा पता वता सपप्रपंचकार गास्त्र मुक्तं नाम प्रचंचकार गाम हतेने हत्या दिना यद्य विशेषे गा कार खार्च वक्तं शक्यं हाथिवास्वरूपानक्रमानक्रमानं नियार्गार्थ भेदेतोक्तंवंधमोक्षयोः प्रकारभेदेननिरूपगार्थे वेदजगतोभिष्ठात्यानिरूपगं जिविधारग्र-तथापिक्षपप्रपच जाराजा । विश्व त्पित्तिवैनास्त । वर्षात्र वर्षात्र प्रमान प्रम प्रमान प्र विकृतत्वायत्थाय पाएक विकास के वितास के विकास के योवेवंदांश्च प्राह्माता अन्ययावयस्यापत्तेः सत्द्रत्यस्यैवंसववाक्षेषु विभक्तिविपययेगायोजयितं शक्यत्वात् आदिसवयेवहार्योवंसववाकिरितिसावः शब्दरसामिकत्वायक्षित्र सर्वप्रकरवमायात व्याप्त आदिकार्यात्र कर्षेत्र विद्या विद्या कार्यात्र कार्यात्र कार्यात्र आदिकार्यविद्या विद्या विद्या कि विद्या कार्यात्र कार्य कार्यात्र कार्यात्र कार्यात्र कार्यात्र कार्यात्र कार्यात्र व्योगम् नहान्यस्तादशोस्तित्यादिपदंक्षविद्यापानावायकानाताविधस्तोत्रेगानासृत्योभगनात् तस्मेनदेपकाशितवानित्यादिकविषयप्रयोगः श्योबना नहान्यस्ताष्ट्रणा । विकास निर्मा नेते सूर्योपि मुझंतीत्यर्थः नदार्थन यहान्छीकिकान कलसंवधमा त्रेनेहिकान वहान्यकाः अन्येवांवेदानुपर्योगेहेतुमान मुझंतीतियस्मिन वेदे सूर्योपि मुझंतीत्यर्थः नदार्थन यहान्छीकिकान कलसंवधमा त्रेनेहिकान वहान्यकान अन्येषांविदानुप्याप्य अस्ति । प्राचित्राः प्राचित्राः प्रदेशियाः परंसद्वादिनोपि पुरुषप्रथंत्रस्थाः तेषुपुरुषोत्तर्भा विवेशितः वि वानामात्ममात्र ता तस्माद्धगवानेवत्त्रप्रसोवावेद।शीवतः वेदस्यसर्वस्माप्तरवातः कामतयाहिष्टप् माण्यसम्बद्धानि वेदमचारः क्रिमवर्वातः कामतयाहिष्टप् माण्यसम्मासिद्धार्थे वेदमचारः

À.

## ा तिका **खवो जिनी ।**

वेदतात्प्रयोद्यानात् अन्यथावेदार्थवकार उपेक्षम्यियाः प्रभेचेत्वं यः वेदवमोक्षः उभाष्यांदिः क्रीहतीतिमाहात्स्यं प्रवेप्रशेष्ठम् विक्रहत्व्यक्षः क्त्यानिद्रीपंचदन् मर्गशहार्थमाह तेजोबारीतिवरशीयत्वं,वाद्योधयति मायातत् क्रावसंबंधहेशसम्बद्धतिपादनस्य दोषासावपक्षेत् होषीन दिविधः स्तरपत्रपत्रापादकः सेवकात् द्वारोवा तत्राद्यासावमाह तेजोवाग्रीति देहेदियांतः कृत्याश्रमेसंबंधोवीयः सच्मत्येकमितिः दृष्टंतवाहुल्यां सात्तिकादिभेदनवा पृथव्यतेजसामन्योन्यस्मिन् अन्योन्यावभासोययामृषाद्रग्दुरेवत्यात्राद्धजनकः नृत्विष्यस्तादशहरू त्यथः तेजसिवारिवृद्धिः मरीचितोयवारिगापृथ्विष्ठिः तिष्ठस्थांजलादौतथामग्यादिव्यमित्रिः स्विकाचादौवारिवृद्धिः चेद्राकरः यावस्त्रबुद्धिः सजातीयाभ्रमाश्च युक्तिरजतादिषुते यथाजीवानांबुद्धिपरिकविपताः तथाचभगवितदेहेद्भियांतः करणवत्वभवताराविषुः मुवत्याह यत्रित्तर्गोमुवति यत्रेतिविमित्ताधिक्रम्यायाप्रहेशा ततागुगात्रयकायदहिद्भिमनासितद्वमाः तत्कारशं । वातदिधिकरस्यानिः तद्यांचा अध्यासेन संतीत्यर्थः केवलमिध्यात्वप्रतिपादनेय्वति वैयध्यापत्तः सर्वाधारत्वाच वस्राणः तेनसध्यासेनेवेतिवके व्यं एतद्धन मेवर्ष्टांतान'हलोकर्ष्ट्यप्तीतः अन्यस्मिन् ब्रह्माणिअन्यधमाणां दहेंद्रियादिधमागांप्रतीतिमिथ्यति प्रकृति प्रकाशतद्वाहित्यवैधम्यस्यः स्पष्टस्यापि सतोयथान्यस्मिन्नन्योन्याध्यासः केचिद्धगाचित दहेद्रियाणिपरिकल्यतेषांचिद्धानं दत्वं करुषयति केचित्रिदानंदे दहेद्वियाणि। किंचिचलकृष्योजडजीवसंवंधंकरपयंति जडजीव्विशेषवासामध्यं कविच्छरीरमायातद्वतोरध्यासंप्रकरपर्यात मायाविकि इस्वच्छयुक्तरारी रसंबंधंवा सर्वेषांतेषांबुद्धरेनम्।तानब्रह्माण्यशरीरद्भियसंबंधः यथापुमर्वहाणित्यवहारः तथोत्तरत्रवस्यतेष्वं भगवतिजङ्जीवधमीसूः षेत्युक्तं मायातत्का मंबंधलंदीभावात वराषीयंसुंदर्गिति स्वतादोषाभावउक्तः भजनीयगुगान् वदन्सेवकोद्धारमाहः धारनास्वेनेतिः खरूपस्कृत्यं वसर्वेषां सर्वाविद्यानाशक इत्ययः खरूपमेवाविद्यानाशकं प्रमेयवलमेततः सदिति नकालकालाहिः, प्रतिबंधकः कुष्टकंकाः पट्चंदहें द्वियानमभावहति यावत् तस्मिश्चराकृतेस्वष्टं स्वतप्वभविष्यति एतेनभज्यत्यिख्याविद्यामिति भगस्यस्यः सकारांतो स्यास्यान तः तुच्छद्ध्याचष्टेसत्यपरमिति कालत्रयावाधितं सर्वलोकप्रसिद्धं सत्यंपरंश्रेष्ठपुरुषोत्तम् ए सर्ववेदप्रसिद्धं धीमहिध्यायेमप्रीतिवाकुर्मह्-त्यर्थः इदमेकमेवांभयत्रपद्वीद्देकवोधनायअनेनवेदसामतं पुराशामित्युक्तं भवतिएवं बीजभावोतिकपितः ॥ १ ॥ हेन प्रत्याचन विकास

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती ।

कृपामुधादृष्टिभृतस्वभक्तिस्वर्धादिनीसेलितजीवनीवपद्मी । श्रीकृष्णाचैतन्यधनः स विद्युद्गिरो मनोव्योमनि नश्चकास्तु ॥ १ ॥ नित्यान नन्दाद्वेतचेतन्यमेकं तस्वं नित्यालङ्कतब्रह्मसूत्रम्। नित्यैभेकैर्नित्यतया भक्तिदंच्या भातं नित्ये श्रामि नित्ये भजामः॥ २ ॥ रूपं नामाः सनातनं गुरुक्तपान् नित्यान् गुगांस्तस्य तान् श्रामद्भागवतात्तथैव विदितान् जुणाचिरेगाश्रयन् । दृष्टा वैष्णावतोषणीं प्रभुमतं विकायः सन्दर्भतष्टीकां स्वाम्यनुकिम्पतोऽस्य विद्धे सारार्थसन्दर्शिनीम ॥ ३ ॥ न काचिन्मे वैदुष्यहह सुमहा साहस इह स्वमौढ्यं वा हतु-१ विष्णुधिक्रपा या (वा) भगवतः। प्रभुत्वं वा हीनेऽप्युदयति यदाद्ये प्रहासितं द्वितीये त्वानन्दं प्रतिपदिमिदं धोक्ष्यति सताम् ॥ ४॥ गोपरामाजनवागावयस्त्रतिष्रभूषाचे । तदीयप्रियदास्याय मां मदीवमहं ददे ॥ ५ ॥ सुरतरुफलदीपहिस्करब्रह्मधर्मान् यदिदमधित शास्त्र मातिचित्रं तहेतत्।/हरिचरितसुधानां पायनाय प्रपेदे सदिस सदसतां यन्मोहिनीत्वं स्तुमस्तत्॥६॥ इह खलु निखिलकल्यागागुगा-माधुर्यं करिधी महिष्वर्यसमाजि स्वयं भगवति परमभास्वत्यधिधरिशा यथासमयं विलस्यान्तर्हिते नानाशास्त्रपुरागोतिहासादीनां सर्व-जननिकासनायकत्वस्रपेष्वर्थेषु यामिकेष्विव कालेन दैवाव्वैगुग्यीदयादालस्थेनेव केषुचित् प्रसुप्तेषु तेष्वेव मध्ये केश्वित् प्रत्युत जुगुप्सितंः ध्रमञ्जूते जुकासतः स्वभावरकस्य महान् व्यतिक्रम इत्यादितो ऽवगतैरनथी कारैश्वीरेरिवो द्वयः तत्तत्र गोरुपर्यस्तानां सर्वेषां चित्रप्रसाद-क्रवेषु महाध्यनेष्विष्ठतेषु यदा यदाहि धर्मस्य कानिर्भवति भारत । अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहमिति । परित्रागाय साधूनां विनाशाय च हुन्कतामिति श्रीगीतोक्तनिमित्तलब्धलक्षणातया यादःसु महामीन इंच मुगेषु यज्ञवराह इव विहङ्गमेषु श्रीहंस इव नृषु स्वयं भागवान् श्रीकृष्या इत्र देवेषूपेन्द्र इव वेदेषु श्रीमद्भागवतास्यः शास्त्रचूडाम्याः। कृष्यो स्वधामोपगते धर्मज्ञानादिभिः सह । कली नम्हज्ञामेष पुराक्षाकोऽधुनोदितः। इति वचनव्याञ्चत श्रीक्रणाप्रतिमूर्तिकत्वेन ममाहमेवाभिक्षपः केवल्यादिति निरस्ततिहनान्यसाह्ययन त्याःश्रीशुक्षपरीशिद्भयां श्रीकृष्या एव ज्योतिःसु सहस्रांसुहिय पुरागोषु भास्ताम् द्वादश्रस्कन्धातमकोऽष्टादशसहस्रन्धदनो महाजनः वाङ्कित्रविक्रहपतम् रिवाबततारः। तत्प्रगोता प्रथमत प्रवाचार्यचूड्यम्थाः श्रीकृष्णाद्वैपायनः स्थाभीष्टदैवतध्यानलक्षगां मङ्गलमाचरति जनमाद्यस्थिति। परः अतिशयेन सत्यं सर्वकाछदेशवर्तिनं परमेश्वरं धीमहि ध्यायेकः। बहुत्रवनेन कालदेशपरम्पराप्राप्तान् सर्वाने जीवान् खान्तरङ्गीकृत्य खिद्यात्रात् धानगुपदिशक्षेव कोडी करोति । अनेनाथाशे व्रह्मिति स्वार्थः कलने विवृतः धान-स्येव जिल्लामायाः कळत्वात् । तस्य पारमेश्वर्यमात् अस्य जगतो जन्मादिः जनमहिश्रतिभद्धं यतो भवति तमाति कि कालं ध्यायथ । म । बाज्यस्य दित्रतिक्षाः अन्वयव्यतिरेकाष्ट्रयाः घटे खुदन्वय इय सुद्धिः घटव्यतिरेक इवेत्युपादितकार्गामस्ययं। अवकारात् स एव निमिन नकारमाश्चाः कालस्य तत्प्रभावकपत्वातं । यसा अस्वयातः प्रलये विश्वश्च प्रामेश्वरे अनुप्रवेशात् कारतस्य समें ततो विभागाचाः राकारमान्य कराव कराव वेत प्रव यो अधिष्ठानेकार मामित्यर्थः । यहा अन्वयात् कारमान्येन व्यक्तिकात् जनमक्रमेपल्याव पृथित्या विश्वति । स्थिति । संद्या के स्थेति । स्थानिक स्थानि त्वत सहक्रण्याः मार्थेश्चप्रदेशो होयः । तत्त्वाच्यस्य विश्वस्य तत्त्वस्य वार्यकः विश्विति । विश्वस्य वार्यकः विश्वस्य विश्वस्य वार्यकः विश्वति । विश्वस्य वार्यकः विश्वति । विश्वस्य विश्वस्य वार्यकः वार्यकः विश्वति । विश्वस्य विश्वस्य वार्यकः वार्यकः विश्वस्य विश्वस्य वार्यकः वार्यकः विश्वस्य विश्वस्य वार्यकः वार्यकः विश्वस्य वार्यकः विश्वस्य वार्यकः वा समान्त्रतत्वनाः । वकार्षसायाधानामा सद्विष्ठाच । एवं जनगासस्य यज्ञेशतः जत्तः समस्यमादिकि स्वयवस्थानस्य । गर्धः भवतः स्वरूपकार्याम् राज्यते विकारो दुर्वारस्तरमानः अस्तिकेनेप्राद्वानं परमेश्वरस्ताः निर्मासन्ति सुन्यताम् । मेन्न्यानं परमेश्वरस्ताः निर्मासन्ति । मेन्न्यानं परमेश्वरस्ताः निर्मासन्ति । मेन्न्यानं परमेश्वरस्ताः । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्न्यानं । मेन्न्यानं । मेन्न्यानं । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्न्यानं । मेन्यानं । मेन्या सम्भागस्याक्षा इति तर्वश्वतं बहुस्यां प्रकार्ययेत्यादिश्चति।भिन्धेततस्येयः जमत्तारवान्यमित्वमित्वपदिनात् प्रमेश्यकः प्रव जगतः उपादाते

## श्रीविश्वनीयचेकवर्ती।

निमित्तक्ष । तत्र प्रकृतः तत्क्कित्वात् वाकिवाकिमतौरभेदात् प्रकृतिहारकमेव तस्योपादनत्वम् । स्वरूपेगा तु प्रकृत्यतीतित्वीति ति निर्विकारत्त्रञ्ज । यथाकं भगवता । प्रकृतिर्यस्योपादानमाधारः पुरुषः परः । सनाऽभिव्यञ्जकः कालो अहा तात्रतय तिवहामात । प्रकृतिः स्वीतन्त्रयशाँपादानत्वमेष शास्त्रसम्मतम्। तस्मात् परमेश्वरः सर्वेष एव म्बानन्त्रयशा जगतकारशमुच्यत । न तु जडा प्रकार्तारत्यीर्ष अर्थेषु सृज्यवस्तुमात्रेषु अभिन्नो यस्तमित्यर्थः। अनेनेक्षतेनां शब्दमिति सुत्रार्थे उक्तः। स चायम्। प्रकान्त ब्रह्म जगतकारगां भवति । क्तः। ईक्षतः ईक्षयात् जगतकार्यात्वर्णानपादकश्रानवादचेषु तस्येव विचारविदेशपात्मकेश्र्याश्रवसात् । अते। ब्रह्म नाजवस् । अद्याद्ध-प्रमासाक न भवात किन्तु शब्दप्रमासाकमेवेति । अत्र श्रुतयः । तदेक्षत वहु स्थामिति सदेव मौम्येदमप्र आसीदिति । आत्मा वा इदमक एवात्र आसोदिति। तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भृत इति। यतो वा इमानि भृतानि जायन्त इत्याद्याः। स्मृतिश्च। यतः सर्वाणि भूनःनि भवन्त्यादियुगागमे । यस्मिश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षयं इति । नतु नदानी महदायनत्पत्तस्तस्य ईक्षणादिसाधन न सम्भवतीत्यत आह खरार् खखरूपेगाव तथा तथा राजन इति । न तस्य कार्य्य करगाञ्च विद्यते इत्यारी खाभागिकी ज्ञानवलेकिया तींच श्रुतः। ननु जगत्मृष्टी ब्रह्मणः स्वातन्त्रयमैश्वर्यं चावगम्यतं । हिरएयगर्भः समवर्गताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीदित श्वतः। स एव ध्यम्प प्रस्तिवत्यतः आह तेन इति। आदिकवये ब्रह्मारो यो ब्रह्म वेदं स्वतत्त्वं वा तेने प्रकाशयामासः। अता ब्रह्मारोऽपि पार-तन्त्रयम् । नतु ब्रह्मगोऽन्यता वेदाध्ययनाद्यप्रसिद्धं सत्यं तत्तु हृदा मनमेव तेन । प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती वितन्वताजस्य सनी स्मृति हृदि। खलक्षणा प्राट्रभृत किलास्यत इति। किंवा सुद्धं हृदि में तदेवत्यादेः। अनेन वुद्धिवृत्तिप्रवत्तिकृत्वेन गायन्त्रश्रश्च द्वितः। तवुक्तं मात्स्य। यत्राधिकृत्य गायत्रीं वर्णयते धरमविस्तरः। वृत्रासुरवधोपतं तद्भागवर्तामध्यते। पुराशान्तरे च। ग्रन्थाः उष्टादशसाहस्रो द्वादशस्कन्धसम्मितः। हयप्रीवब्रह्मविद्या यत्र वृत्रवधस्तथा। गायञ्चा च समारम्भस्तद्वभागवतं विद्वारित। नु स्तप्रतिबुद्धन्यायेन ब्रह्मा ख्यमेव वेदं तस्वं वा उपलभताम इत्यत आह यतः यस्मिन् वेदं तदीय तस्व वा स्र्योऽपि मुद्यान्त अतस्त-स्मिन् ब्रह्मगाः खतो न शक्तिः। पतन नेतरोऽनुपपत्तेरिति सूत्रायों विवृतः। ननु धीमहीति ध्यानविषयत्वेन तस्य साकारत्वमाभप्रेतम्। आकारागाश्च त्रिगुगास्त्र व्यात्वे चानित्यत्वं प्रस्कोदित्यत आह तेजोवारिसृदां यथा विनिमयः अन्यस्मिनन्यावभासः। यथा अन्यानां तर्जास वारीदामिति वारिणि स्थलमिति मृदि काचादो च वारीदमिति बुद्धिः तथेत्र यत्र पूर्णचिन्मयाकारे त्रिसर्गः त्रिशुणसर्गोऽयमिति बाद्धमृषा मिध्यवत्यर्थः। तमेकं गोबिन्दं सिच्चदानन्दविग्रहम्। वृन्दावनसुरभूरुहतलासीनामिति गोपालतापनीश्रुतेः। अद्धमात्रात्मको रामा ब्रह्मानन्दकविग्रह इति रामतापन्याश्च । ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं नृकेशरिविग्रहमिति नृसिहतापन्याश्च निर्दोषपूर्णागुराविग्रह आत्मतन्त्रो निश्चेतनात्मकशरीरगुगौश्च हीनः। आनन्दमात्रमुखपादमरोरुहादिरिति ध्यानविन्दृपनिषदश्च । नन्दवजननानन्दी सिश्चिदा-नन्द्विग्रह इति ब्रह्माग्डपुरागात् । सर्वे नित्याः शाश्वताश्च देहास्तस्य परात्मनः। हानोपादानरहिता नेव प्रकृतिजाः कि विदित्त महावाराहाच । खंच्छामयस्य न तु भृतमयस्येति च । ववन्ध प्राकृतं यथेति । त्वज्येव नित्यसुखबोधतनाविति । शब्दं ब्रह्म वपुदंधदिति । महावाराहाचा । अनिन्द्रिया इत्यादि श्रीभागवताद्यि तदाकारस्यामायिकत्वावगमात्। अनिन्द्रिया अनाहारा अनिष्ठियाः सत्यवानानातानान्या । प्रकारितनस्ते पुरुषाः श्वेतद्वीपनिवासिन इति नारायग्रीयात् । दहन्द्रयास् हीनानां विक्रगठपुरवासिनामिति सप्तम् खुनान्य पर्वाहिभर्मायकाकारत्व विक्राहिष्ट विक्रम् । तदाकारत्वे लब्धे अनिन्द्रया इत्याहिभर्मायकाकारत्वनिष्धात् । तदाकारस्यान स्थान्यान्य । पार्था । ननु तद्यत्र केचन वियदन्ते इत्यत आह घास्नित । धाम्ना खरूपराक्षणा खभक्तनिष्ठस्वानुभवप्रभाषेणा वा मायकत्व का रावावा गुरु । वा कि वा कि असाधारगोन सदा कालत्रय एवं निरस्ता कुहकाः कुतर्कनिष्ठा येन तम् । प्रातपदसमुञ्कलप साधुन्यस्व प्राचितः। अत्र यमेवैष वृणुते तन लक्ष्यस्तस्येष आतमा विवृणुते तनुं स्वामिति श्रुत्या स्वराब्देन तनोः एतन् विकामिति स्वार्थः स्वितः। अत्र यमेवैष वृणुते तन लक्ष्यस्तस्येष आतमा विवृणुते तनुं स्वामिति श्रुत्या स्वराब्देन तनोः एतन तकाप्रातष्ठानादात स्त्राया प्रतिक्षामात पूर्वमेव बहु स्यामिति स ईक्षतेत्यादिश्रुतिभिस्तदीयमनोनयनादेरमायिकत्वेवगमिते परास्य सक्ति-खक्षभ्रतत्व छन्ध तथा प्रकृतिक्षाभाव पूजने पर्द राजा-विविधव श्रूयते खामाविकी ज्ञानवलिक्या चात श्रुत्या खाभाविकत्वे प्रकटमुक्ते अचिक्त्याः खलु य भावा न तांस्तकेंगा योजयत्। विविधव श्रूयत स्वामाविका श्रानविक्षामा वात श्रुपा वात श्रुपा वात श्रूपा वात श्रूप प्रकृतिभ्या पर या तदा चन्त्यस्य छक्ष्मा भाव । जन गर्ना नामस्य विशुद्धार्थं नवानामिह छक्षम् मिति दशमस्य अयतस्य विशुद्धार्थं नवानामिह छक्षम् मिति दशमस्य अयतस्य स्थेवा-र्जाप पातच्यान्त तदा पतन्तु तरल सलापनात । अयो अ राज्य पर्याप्य प्रथमपद्यस्योचितीः भवत्यतस्तदेकपरस्य व्याख्यान्तरस्याच-क्रित्व तस्य व अञ्चलकार्य मुख्यत्व तद्सावार्याच्याः प्रपन्न इति श्रीकृष्याजन्मारम्भोक्तः। सन्ये प्रतिष्ठतः कृष्याः सत्य-कादाः तित्यया पत्यम् पत्यम् सत्यादा सत्यादा सत्यादा सत्या हि नामत इत्युद्यमपर्वशा सञ्जयकतक्षणागमनं निहक्तेश्च सत्यं श्रीकृष्यां मत्र प्रतिष्ठितम्। सत्यात् सत्यञ्च नोविम्द्रत्रमात् सत्यो हि नामत इत्युद्यमपर्वशा सञ्जयकतक्षणागमनं निहक्तेश्च सत्यं श्रीकृष्यां मत्र प्रांताष्ठतम् । सत्यायः सत्यत्र सावन्दरतस्मातः सत्या । । व परी वेवस्तं ध्यायदिति श्रीगोपालतापनीश्यश्च परम । स्वेन धारना धीमहि नराकृति परं ब्रह्मांत वहागडपुरागात् । तस्मातः कृष्ण एव परी वेवस्तं ध्यायदित श्रीगोपालतापनीश्यश्च परम । स्वेन धारना धीमहि नराकात पर मकाल नकाव दुरागात । तरनात र प्याप्त कहने जीवानामविद्या येन तम् । मण्यते तु जगत् सर्व प्रदार्भ श्रीमशुराख्येन स्वत्र तहानी कृपया द्वितेन श्रीवित्रहेगा च सदा निरस्तं कुहने जीवानामविद्या येन तम् । मण्यते तु जगत् सर्व प्रदार्भ श्रीमधुराख्येन स्वत्र तवाणा रूपया वारातन सावश्वया । इति गोपाली सरतापनीश्रसिद्धाः। अवगात् किसेनाद्धानात् प्यन्तेऽन्ते-शानेन येन वा । तत् सारणा प्रका मधुरा सा गानावता । गृह्द्रहत्वर्ष्णमावा धामानीत्यम्। कासनाद्धानात् प्रवन्तेऽस्ते ऽवसायिनः । त्व ब्रह्ममयस्येश किमुतेक्षाभमिशिन इति दशमात्तेश्च । गृह्द्रहत्वर्ष्णमावा धामानीत्यम्। वन्ति त्वहित्रहस्य प्रापित्र ऽवसायिनः। तच ब्रह्ममयरच्या गञ्जाताममाराग रात क्रिक्सिया प्रतिक्षेत्र विकास विकास क्रिक्सिया प्रतिक्षित । विकास विकास क्रिक्सिया क्रिक्सिय क्र कलाकरश्यत्वात् यद्यप्रदेश वाम्यान्ति । वाम्यान्ति । वहा विकार्षिक्ष येन तत्रित्यसृष्ट्रियस्ति । यथा प्रयाद्य विविध्य । वाम्यान्ति । वाम्यान्ति । वाम्यान्ति । वाम्यान्ति । वाम्यान्ति । वाम्यानिक । विविध्यति । वाम्यानिक । व विनिमयः परस्परामणा विस्य यत् अपिश्चिषेत्रपुरेईईानं तत् खल विचित्रलीलासाथिकया तिविच्छया पुरतक्येखकप्येम विसाद्य इत्ययः । प्रपञ्चातात्त्रपा । प्रपञ्चातात्त्रपा । प्रदेशक्षेत्रपा । तहन्येस्तु पुस्तकर्यसम्प्रमाचात् सन्मा पुरुषी प्रभवस्थित । प्रदेशकर्या । तहन्येस्तु पुरुषी प्रभवस्थित । प्रदेशकर्या । प्रप्ति । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प्रदेशकर्या । प्रपञ्चातिक । प् रसनिर्मरम्याण्डवाप्यस्थित्वास्थित्वास्थित्वा मृत प्रपृद्धितिमृतार्थः । तेऽग्नः स्वविक्षमाविनष्टतिमस्यस्यः। क्षेमः विक्षेकागुकर्थस्यः। क्षेमः विक्षेकागुकर्थस्यः। अन्ये च तन्मु ज तराग्य । सम विक्रमार्थं तत् कृपाया एवं महेश्वर्थं वापयतीति वेयम् । अत्यव भागवताम् तध्ते वारायगाध्यामन् यक्छिज्ञित्यतं।ऽहरूयस्यापि तस्य वरुश्यस्यं तत् कृपाया एवं महेश्वर्थं वापयतीति वेयम् । अत्यव भागवतामृतधृते वारायगाध्यामन

X

## श्रीविध्यमास्य सम्बन्धी ।

म्कृ[हात्स्राप्तया (स्वेङ्ग्रम्म्द्रायाः) सोऽभिन्युकी अवेशेक्षेत्रकृतिष्ठारः कर्ताशितः। एप्यमेक तासी विश्वे सक्षिति स्वाराण्याः हरियादिश्रतेमें सुन्ताता मात्रिक कामिदी ती हिर्यन्तम्। तर्तेस्य । यद्येद्रहर्यः चिन्निकं तर्वे निर्योग्य खिद्रियं सिर्वारिया सिर्वार मधतारस्क्षकारमां क्रियामेक्ट्या तस्य छोलामाह अस्य एतो यात्र बेस्त्वेच हो। जन्मावि। जन्मेश्वर्ययेक्टनपूर्वेदेसंक्यनावि। वर्तते इत्तरस्थे रतरम् च ते दिरोहे सेत् असात (अप्रमेवागरूकत्।) । किमयेमयाता । अयोषी । कंसवश्चनाविक विज्ञासम्बन्धियात्मर्था राजपेक । वि वाधियः क्रियान्यप्रतान्त्र रहियान्य सेतेव क्षाज्ञतं रातिकाया एके प्रिमादिमिः स्थीनन्दाचितिक्योतस्वार्धमिर्द्धमिणयञ्चानिक्षान्त्र सेति समुत्रिमाधीन्त्रयाः ताहरालीलावितिहरतेऽपिकतस्य सी ग्यासेव स्मित्राह्म विवाद विवादिकवरे स्वाची सिक्षा विवादसकी बत्सवायकी वि वित्राक्षारायामस्य विक्राक्ष्मात्रावेत्राक्ष्मात्रावेत्राक्ष्मात्रावेत्राक्षेत्राक्ष्मात्राक्ष्मात्राक्ष्मात्र प्रकार क्रिविवासक्षा संस्था स्वापित क्रियं । स्वापितिविधं । स्वापि सहिमानुभाषरं मिझोतिशक्तिमः। । वेत्रस्यस्य स्थानि संप्रभेषितं प्रमेषितं हिदीति। व्याक्यात् भाष्ट्रियस्य मिस्रसी और मेहसयाः अवस्रुति व प्रसारीकां श्राहाश्राप्रपोक्षीकार्वः वेद्रद्वर्त्वर्तिति समाधादीकात्ता का वेद्रहत्त्वारम्भे त्रिक्षाक्ष्रप्रदेशेका विकान्तदास्यावित्वः परिकरित्रियात्मेशरित्राम्यतिस्त्रियोत्राक्षेत्राम्यतिस्त्राम्यतिस्त्राम्यतिस्त्राधितः अनुयाविद्योत्ते स्वतिस्त्राधितः अनुयाविद्योते स्वतिस्त्राधितः । मोधारंयतां व्यवेष्ट्रता पुत्रस्यप्रितेस्मृत्रायकारीते । विद्रुप्या भीष्ट्रस्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्रास्य श्रिक्षारप्राप्ति । मिक्किपितिके सरीक्षितिक स्थानिति भाषाः। सन्तवाहित्से सोपातः ध्वावश्वकृषित्रक्रमानवित्रक्रमात्र्यासेयः तथ्यस्य राज्यात्र । स्वरूप्तात्र क्षेत्र क् स्त्रीत्य क्ष्मक्षक्रावात्यस्त्रेत्ववेनायम्भावत्या ल्रह्मस्येल्युस्त्रेत्राल्यस्योप्तिस्यतेश्विकाल्यस्योग्रावियोग्राभ्यकेलिक्षात्तिः हनप्रति-क्रोंगितं इसमें में महमाने प्रतिवाद नार्शकातारी क्रोंगिल। स्टब्रेत तथा स्टब्रेस नाम स्टिस्य एक्टिय क्रोंगितं प्रतिवेद्य मिलावर्ष महिलावर्ष महिलावर्ष भारता है त्या है त्या दी कि अहर सो ब्रिज्य वित्र प्रमुखे वित्र हिंदी है जिस्से के लिए कि कि अहर के कि अहर के कि क्राविक्त्रसंस्यात्तर्वात्वेते । रसस्येक्षत्रात्त्वोद्यांहनायसित्यकः । वेदस्तंवं त्यो। महोस्यम् । (वद्यप्तिः सावत्ये क्रवयो स्वान्तिः प्राकृते गुरुवाकारणायाम् । विकास भूताप्रणाम् पर्यम्प्रता समझारोष्ट्रिकाकोता असे काणि स्याता । अनेयत्री प्राव्यता महिला क्रिकाली क्रिका भून्य । भूक १८ वर्ष । स्वाद साक्षात्कार चमत्कारप्रभावेगा स्वन असाधारगोन निरद्धताः। इत्याहाल असाधारगोन निरद्धताः। इत्याहाल असाधारणाने विरद्धताः। इत्याहाल असाधारगोन निरद्धताः। इत्याहाल असाधारणाने विरद्धताः। अय तासामि मध्ये कस्याः पदानि चेतानि यातया नन्दस्तुनुना अनद्वाराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वर इत्यादिमिः परममुख्यायाः जय राजारा । साहित्येन परम एवं माधुटयोत्कर्षो भवत्यतुस्ततुपृदुर्शकोऽत्यर्थोऽस्मिन् आदिमे स्रोकेऽन्वेष्टव्यः । स यथा। यतो । अ। हुन्दा वर्ग वर्ग । सन्य जन्म प्रादुर्भावः । यावेव आदिरसंविधाया घरमनिधानमित्यर्थः । तत्र यश्च इतरतः इति ग्यव्छोपे पश्चमा । चरुगत्तारताः जन्दुः स्थार्थनिकान्तेत्यर्थश्यस्य तत्त्वं काशानार्थि सार्विकवये आदिते वसार्थक्षये कथये तत्त्वकाय श्रीद्यक्षित्र काशानार्थते सुद्धेः प्रेरुक्स्मय-स्यायागवान्तत्ययम्बन्दार्थाः । इत्यावावतं नामं पुराशां ब्रह्मसंस्मतमिति शुक्रमुखादमृतक्रवसंयुतमिति। शुक्रमात् स्तार्थाः स्वापित्रकः रास्त्र चत्र श्रीभांभवतात् यत्र रोस्ति(श्रा।) संति सुर्यो मुद्दान्ति एसास्त्राटजनितामानन्दमृत्ते प्रस्तुति विद्धार्थाः स्ट्राबोक्षकाः विद्धा सवः यतः आनानम्बर्धाः स्वान्त्राः प्रति । प्रत माक्या अन्या अन्या अन्या अन्य प्रत्य प्रत्य प्रत्य प्रत्य प्रत्य प्रत्य क्ष्मित्र क्षमित्र क्ष्मित्र क्षमित्र क्षमित्र क्ष्मित्र क्षमित्र क्षमित्र क्ष्मित्र क्ष्मित् तम क्ष्यार्यमञ्ज्याम् स्टब्स्य । वर्णमानक्ष्या प्रवासिक्षा वर्णमानक्ष्याम् । वर्णमानक्ष्यामानक्ष्यामानक्ष्यामान इत्यानक्ष्यीयचलत्वभनेत्वस्ययः । वर्णमानक्ष्याक्ष्याक्ष्याक्ष्यान्यक्ष्यान्यक्ष्याम् । स्त्रमण रवा विश्व । श्रीका । श्रीका । श्रीका । श्रीका अधिका । श्रीका । श्र तम वया । अस्ति स्वाप्य विकास के वितास के विकास अध्याः सत्यः । तीः निरस्तकुरुकं निरमपेर यथाः स्थानः स्थापंचनकः विद्यानः प्रशेषाः स्थानः प्रशेषाः स्थानः स्थानः क्रमानलया । इति शास्त्रस्यास्य विवेदो विवेदो विवेदो स्थान द्वात सार्थन्य मानियाण्ययोजनश्चर्यमन व्होसन स्मानियोगार्थयये मानित्यागार्थस्य सार्थन्तर्भन्तर्भन्तर्भन्ति । पद्म सामानावर । त्रिक्त सहा ते कुरेव । बहुत सं कुरेवसः को बादकी देता विक्र कि । त्रिक्त के सहा ते कि बहुत सं के कि कि सहस्त के स्वापन के कि सहस्त के स्वापन के कि सहस्त के स्वापन के स्वाप बद्यथा । नार्या सत्यो सद्भो हित्ते पुरमकत्योगार्थ्यमयं भक्तियोगिश्रीमहि । गर्वे कार्याणमिकिश्रीवर्याणिमिकिश्रीवर्याण्या । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्रीमहि । गर्वे कार्याणमिकिश्रीवर्ये । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्रीमहि । गर्वे कार्ये । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्री । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्री । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्री । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे भक्तियोगिश्री । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रमक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थे । वित्री प्रक्तियार्थ त्रमुयावायकः विविधिकः श्रद्धार्थको स्वस्ति । अस्ति स्वस्ति । अस्ति मात्राम श्राप्तामा । सिक्कार्याम् । सिक्कार्याम । सिक्कार्याम । सिक्कार्याम् । सिक्कार्याम । सिक्कार्याम । सिक वतानन्यमा व्याप्तिकार्मकामेवामकानवोगेषु कत्ववात् वत्साहित्याकावात्त्वत्ति हपासकषु अराजहाने प्राहुतीत्। त्याप्तित्तिकार्मकामेवानकान्यमेवामकानवोगेषु कत्ववात् वत्साहित्याकावात्त्वत्तिकार्मकाम् वत्सासक्ति अन्नाक्षां स्तारिककत्वाद्रश्राण्याम् सिकान्। ति त्याचान् व्यापिक संस्थात् स्त्राचिक । नते वस्त्राचान्त्राचार्यः कृत्याचार् क्षातिम् विक्रिकार्यः । असेवारमाम् सिकान्। ति त्याचान् व्यापिक संस्थात् । नते वस्त्राचान्त्राचार्यः कृत्याचार

## श्रीतिश्वनायसक्वली ॥

भेगवासामात्कारार्थमपि॰ भक्तियोगी॰ छानमपेसतामा दिवि चेत्रवाह विर्तेष्ट्रं स्वेतेष्ट्रं राजते एति सेट्रा सम्राहित स्वतन्त्रो सम्बद्धान्यधीन इत्यर्थः अकामः सर्वेकामो वा मोश्रकाम उदादेशो भितिविश मिक्रियोगन खजेते युक्ते परिवादि विविद्याक्यात्मेवाद्यीगिलतेन केवलेन सीराकिरगीनेवः बानाद्यमिश्रेगाति तीवेगीत्यस्यार्थः । तेत्राः। यतंक्रमेशियेश्वयसा बानवेगःयतस्य व एसवेशसङ्क्रियोगेन सदक्राल्यसे श्रिक्ता । परवादिवादयाचा । प्रत्यत्ये । तस्मातमङ् जिस्कास्य थो (गती । वे सदास्मतम् । व सत्य व व व व व प्रया अर्थे। संबद्धित । तस्मात सियतिषेधश्चवाराष्ट्रा । किञ्चेताहरा। भक्तियाँ । भक्ता तेपहो विता जी किपत है से एकि विद्या है वित्य कि स्वार्थ के स्वार्थ आदिकवये व्यासाय तिते क्रिपया धिकाशितः मिनतु सिवेशस्य स्थापि भक्तियोगशानमन्यायान कथे प्रतीमस्त्याह सहान्वाति । स्रोती विशिष्ठादेवाऽपियत्यसिन् दृष्टान्ते। गुणातीत भक्तियां। गुणजन्यानां वृद्धाःसंन्ताकरणानां स्रतणप्रवेशाशकाः साहसङ्गातीव क्राध्यवन्ति स्रथे। यन्क्रक्तयो वद्रहाँ वादिना वे विवादसंवादभुषी अवन्ति। क्रवेन्ति चेषो मुहुरात्मसीहं तस्मे नमोऽनन्तगुर्गीय भूग्ने हति हैसगुहोक्ते भारत मिक्योगी न केवल गुणातीत एवं तस्यापितृतीय कन्धे विगुणामयत्वहरीनादित्यत साह येथ विसर्गः विग्रणामध्ये मुषा अवस्तिव इत्यर्थी है। यथा तेजोबारिस्टा विनिमयो सिलनस्य कित्तिको प्रिक्तिजो प्रिक्तिको पि निर्वेलको पि केथे तसिस्ति जलवेहित मोलनोमिति तस्तकोलनाङ्ग्याति व्यापानियेव विगुणातीती भक्तियोगे। पुरुषविस्त्वादिगुणयोगीत् सात्त्विको राजसेतामसंख्याच्यते। नम् भक्तियोगस्य त्रिगुगातीतस्य विषयने विषयने तत्राह धारमा स्वेननि । स्वस्तरेगालीकितमाधुर्यमयन भक्तानमिनुभवगानिश्रते नेव निरस्ता क्रिहंका क्रितकेवन्ती येन वं न राजुम्यमानेऽये प्रमाणापेक्षति साचा । शहा किलाध्यात्मदीपमतितितीर्थतो तमोऽन्यामात्र । कसी येन निसाबिती प्रयमतुकी क्षानप्रदीप इत्याध्यां श्रीमागवतस्य प्रदीपत्यम् । पुरामाकि धुनोहित प्रशेननार्कत्वम् । निसमकत्पतरार्थ-लितं फलं रसमित्यनेन रसंभयफलेल्यम्॥ हरिलीलाकप्रामात्रामृतानित्त्तस्त सुर्भायनेन मोहिनीत्वश्च र्श्यतं । तत्रास्मिन् पद्ये प्रयमेन क्ति कार्यानेन हिप्ति वित्रियनार्किन्न कृतीयचतुर्थेपञ्चमन्। रेसमयफलत्वम्। रिक्केश्च पञ्चानामेवेषामयीनां प्रसम्बलमातिस्ताकृतेनामृतित्वात् मिकानामेव तित्सम्बद्दानभूतत्वेत देवत्वातं तत्तक्तिवस्य शास्त्रस्यास्य तत्परिवेष्टृत्वेन महिनदिवश्च वयस् । एकश्च यदापि सर्वस्य क्वादशंस्कन्धस्यव शास्त्रस्यास्य रसमयकलत्वाऽकत्वदीपस्वादीनि तद्यि भूगना व्यपदेशा मवन्तीति स्थायनसर्भि निरोधे स्वकावत द्वादशस्त्राची विश्ववासमात्रप्रकाशकत्वन। दीवत्वमः। विसर्गस्थानपोपंगादिक धर्मार्थकाममोक्षागामः अन्यप्राक्षाकावस्त्रामा प्रवृत्तितृत्विहित्तितिषद्धसाधनंत्रलानामपिः प्रकाशकृत्वेनाकृत्वेमाण्याश्रयतंत्वस्य भगवतस्तद्धकानाश्चाजनम्बर्मादिलालाश्वाकार्यादी अकृताल्य सम्बंधिकत्वम् वाण्तश्रातिको धन्यनुकृतिनार्थेन स्वमकवर्यानन्दनार्थे एतत्त्वपतिकृतिनार्थेनास्वरस्य स्वासिक्ति त्त्र व्याप्त में निर्मा स्थाप्त साक्षाक्र किरसमयस्य तत्त्र तत्त्व तत्त्र तत्त्व तत्त्र तत्त्र तत्त्र तत्त्व तत्त्र तत्त्व तत्त्र तत्त्र तत्त्र तत्त्व तत्ति तत्त्व तत्ति तत्त्व तत्तत्त्ति तत्त्व तत्ति तत्ति तत्त्ति तत्त्ति तत्त्ति तत्ति तत्त्व तत्ति तत्ति तत्त् त्त्रश्च भ्यापार्थि विविधाधिकारिक्कक्ष्याचेप्रहुणांची लस्वेशकिलिङ्गधक्षाशकत्वस्योजित्यात् स्मानास्यानारत्वन्य सामान्य मिन्द्रवामितिवदिति सेवे समझस्य ॥ शाम्बो व्यवसाय कार्ड क्ष्मं क्ष्मं क्षां वास्त्र कार्य कार्य कार्य कार्य कार्य अब शासाबांच ग्रें सम्बद्धाः प्रधान संतर्भ नचानुन्त जनगरानिन तुरं भगवात् रांतिज्य स्थातिका अस्तर्भा अध्यान्या audi: mean alegand 1 and विषया वर्षेत्र इसंप्रवर्ण गर्भाव वर्षेत्र वर्य वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्येत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत्र व कार्यन विक्रिया विक्रा स्वराहोत्व स्वराहोत्व सर्वस्थित । विक्रिया विक्रिया विक्रिया । विक्रिया विक्रिया । विक्रिय भागविषाः।। शिविषाः । शिविषाः । स्वार्थाः । स्व माध्ये महाकारतानमात्रायस्थानानश्चात्राच्यात्रच्यात्राच्यात्राच्यात्रचयात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात्रच्यात विद्याण्येकद्वे आप्रज्ञामकामतास्थाप्य स्थानिक व्यानास्ति स्थाना स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक व्यानिक स्थानिक स्थान वहन्यरक्षाकराक्षणात्रभावास्त्राह्म स्थाप्त्रभावास्त्रक्षणात्रक्षणात्रक्षणात्रक्षणात्रक्षणात्रक्षणात्रक्षणात्रक भावतच्यक्यासम्बद्धाः अवस्थात्रभावतः प्रतदेनवद्धात्र नुमाद्धः जन्मभूत्र संग्रेष्ट्यस्थात्रे वस्ति । वस्ति वस्ति वस्ति वस्ति वस्ति वस्ति वस्ति वस्ति । वस्ति विविधिकार परामान वरामध्यम् वर्षाम् इतरताऽनम्बमारपुर्वनाताञ्चलायाम् वर्णायाम् वर्णायाम् । स्वापाद्वात् । स्वापाद्वात् । स्वापाद्वात् । स्वापाद्वात मिन्सिरियात्यायानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्रवानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस् स्वतिविद्यात्यात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वानस्थात्वान भवति विश्वति । विस्ताविका विकास वार्य का का विकास के का का विकास के वित्र के विकास के वित्र के विकास के वित्र के वित्र के वित्र विवन्यया संशायमानवाणां विवन्य प्रमान्य प्रमान्य प्रमाने स्थान जात्र । स्थान जात्र प्रमानिक प्रमानिक प्रमानिक स्थानिक सार स्वरात्वात जनसम्बद्धात्र विश्वति । क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षित्व स्वराह्य क्षेत्र क क्वितित्वस्त्रीत्राकर्वस्त्रीत्राचित्राचीत्रम्भाजात्मवेत्रपतः स्त्रीकृष्ट्यात्राय्योग्यप्यजायते व्यवस्त्रेम्भाजात्रियात्रातित्वस्त्रीत्र विश्वविद्यात्रम् । त्राच्यात्रम् । त्राच्यात्रम् । त्राच्यात्रम् । त्राच्यात्रम् । त्राच्यात्रम् । त्राच्यात्रम्

. 7

**X**(

## । सिद्धान्तप्रतीपरा

व्योगाम इतिरोगाता मुद्रेयते इति सरीः क्षेत्रियाव इति युस्य उत्पद्य ते इत्यये असदेव सी स्येद मर्जना सी दिक्ति स्तिः भाषावादि नात् ये वे विस्ति सी क्रमायदमंद्यवयामिक्यांसीगोंपेसंत्यञ्जनम्बवित्रजेशतित्या श्रीमण्या विशेष्णाण्या प्रेरीमण्या प्रमाणिक विश्वविद्या प्राकृतिहानेत सदेवसीस्थेदमेप्रशासिदिल्शिदिश्चितिशोशात जेगत्सेत्येसर्प्रपद्रानक्षेत्राम् घटवर्तः इत्यत्वयास्य नयः सर्वपदिनिकेनत्तः सर्वेशक्षेत्रपति विक्यति देशका सहितो है। विद्योगा है अधा सी स्वी स्वी स्वी सिता स्वी सिता के स्वी सिता के स्वी प लितसर्वित्रगुग्रासर्गजन्यवाषास्पृष्टेस्तीमत्यर्थाः बहुमतेचेतत् एतदीशतभीशस्यप्रकृतिस्थो।पर्ववगुण्यतिस्थतेसदात्मस्पर्यदीविकस्तिवा श्चर्यति क्रिडायक्ष महेक्षेक्षेत्रेत्माद्यस्यमेत् इति बेदांतास्त्रोप्रत्यासे विद्यांतानीत्याधीमहीतित्तायश्चित्रीयन्यासञ्चार्यक्रमार्यक्रमार्यक्रमार्यक्रमार्थक श्रीसद्भागवतीर्विद्यातेयाति सत्यंत्वादिसत्ते सति। जगजनमादिहेतुन्तेमुख्यस्य यात्रिविषयस्थभगवतीर ब्रह्मण्येत्रसर्यमिति विकस् लक्षेत्रार्जन्मी शह्यं तित्र वस्य लक्ष्यांत्र ज्ञानंत्र कृति हिर्मिश्च क्ष्यां क्ष्यां क्षाति तिर्ध्यं के स्व क्ष्यां क्ष्य विस्ताहर्त्वाक्षीय के प्रतिक के विकास के वितास के विकास के वितास के विकास क जयमकाम प्रकृतिकार्यां वार्ते। महा के वार्ते के विकास के व णालं कार्यक्रमणावाशाण्य मान्यं तथा ह महा महाना संवाधार संवाधार हो एक किल्लामा विकास कार्या जिल्लामा विकास विकास । जाता विकास । जाता किल्लामा केल्लामा किल्लामा किलामा किल्लामा किल्लाम े क्रिकिक्या चर्चम तस्य नत्वा तस्य प्रसादता मध्यामाग्चतपधाना क्रिकिस्मावश प्रकार्यते ॥ अनुदिनमिदमायुः संवदासत्प्रसङ्गिष्ट-विश्ववरहापिः। स्वित्रते व्यथमेव ए हरिचरित्सुधामिए सिच्यमान तद्त्रत स्थामाप सफले स्यादित्यय में श्रमाऽन्।। वर्षा श्रीमहिम्सि सम्बन्धः । सत्यम् अवाध्यम् । तत् किविद् व्यवहारमात्राक्षाक्षे तह्यावस्तात् परमित् । पर्मार्थसत्यम् अत्यन्तीवध्य-बित्यर्थः हत्याच श्रुति। सत्यस्य सत्यमिति श्रामा वे सत्य तेषामेष सत्यमिति प्रामाचाक्रीवृतामा व्यवहारिती सत्यानामे आधिष्ठानमति परमार्थिसत्यमात्मान दश्चेयति । एवं सत्ये ज्ञानमनन्तं ब्रह्मपतदारम्यमिर्दं सर्वेतत् सत्ये स व्यातमात्ति स्वाति स्वतिरिप ब्रह्मात्मे व वर्षान्य प्रति । सर्वम्माधिष्ठनित्वति सर्ववाधीवधित्वीच प्रमार्थसत्यम् । नीह निर्धिष्ठानी भूमी प्रस्तिन वा निर्वाधिबीधः। त्र सर्व क्रमी श्रिष्ठातत्वे जहमाध्यस्य यस इत्यादिना देशित सर्ववाधावधित्वश्च तेजोवारिमृदा धर्या विनिमया यज तिस्ती मृषेत्यादिना । स नित्यासनम् । विद्यासने हिन्यवस्तुस्वरूपापेक्षप्रत्ययानन्तरित्वाद्यक्षानसन्ततिरूपम् आत्मा विधिरे द्रष्ट्याः श्रोतं व्यापन्तव्या निद्ध्याः मन्द्रभाषामान क्रिया च आत्मसाक्षा विकास विकास विकास क्रिया व आत्मसाक्षा कार्र साधनत्वन विकास कर्मा वस्त-भारता । इत्या । इत्या विकास के कार्या के स्थाप ज्याना । अस्ति । विश्व । विश् वरख्या विद्या निर्दे यहिद्मुपासति इति । हुद्धगीचराया हित्ते एविष्माजकरगाकत्वात् तस्वीपनिषदमित्यादि श्रुतेस्तस्या एव चावर्य-अक्षाप्तानाम् । प्रतिकृषुक्तान्त्र व्यक्तान्त्र विकास । प्रतिकृष्टि के मञ्जूल-भागाया । गार व्याप्त प्रमास के प्रमास के प्रमास के प्रमास के त्या के प्रमास के प्रमास के प्रमास के प्रमास के प रवस द्याप्याक्षां विस्तार्थ स्थापित स्थापित । स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित । स्थापित स्थाप माम् भ्यास्थास्थामानस्य जगतां जम्माद्य जगतां वा इमानि भवतीति त सत्य धीमहाति सन्बन्धि । तथा व श्रीतः चितो वा इमानि भतानि साम्राधानस्य जगता। जन्ममन् जन्मान्यालमङ्ग्यता भवता। त तत्य वामकात् । जामन्त्री व्यक्तानात् आनिन्द्रीय विवक्तम् भस्यिशंन्तीत्याद्याः आनेन्द्री ब्रह्मीत व्यजीनात् आनेन्द्रीय विविधानि भूतानि जायस्त जासका त्यमा जातामुक्त ज्यान प्रता व्यवस्था मलाव सन्तात्याचा जागत्या अवस्था प्रतिक त्री प्रतिकित्ति (प्राप्ति १ ४। ३०) पासि-इत्याद्याण्य क्रमकान्मा स्थापत्र व स्थापता व्यवस्था द्यायात्य यत शत अकता प्रश्चा प्रश्चा विकास निक्सर्थाणार ज्यानाच्यावराष्य्यसावकानार बहुवराहर स्वाद्यान स्वनामानाचा । वृद्धावस्तुहृत्याविश्वेश्वाणात्रकानार बहुवराहर स्वाद्यान स्वनामानाचा । वृद्धावस्तुहृत्याविश्वेश्वाणात्रकानाय स्वाप्ताव स्वाप्ताव स्वनामानाचा । प्रमानिकाति क्रिक्त के विकास कि विकास के असिता क्रिक्त के असिता क्रिक्त के क्रिक्त के क्रिक्त के क्रिक्त के असिता क्रिक्त के क्रिक्त के असिता क्रिक्त के क कारगास्त्र येते तिश्वाक्रिकास्त्र विश्वाक्ष्य स्थान्य क्रमान्य कार्याच्या अंगद्धाः श्रुक्ताव अग्रान्य स्त्र स्त्र म्यान्य विक्रिक्ति स्र्यान्य स्त्र प्राप्त विक्रिक्ति स्र्यान्य स्त्र स याजना थम् । जारपान्य प्रतिस्थ विक्रोद्यामाशक्योक्तिमत्त्रस्थिति । सर्थाहि विक्रोद्यानिक्ति । सर्थाहि विक्रोद्यानिक्यो क्रिक्यात । विक्रोद्यानिक्यो क्रिक्यो मित्युका नाष्ट्रभाषात्र विश्व विश्व के प्राप्त के प्राप्त के विश्व के प्राप्त के प्राप् अथानामा शतानामा स्वापान स् व्यानम् वापः वाद्यान्य । प्रतिविक्षानिवनं एवा जानका साम्य रहियात्। याभितः स्विपिक्षां स्विभित्यते विक्षेत्रते सर्व वस्तु जानाति । विक्षित्रते प्रतिविक्षानिवनं एवा जानका साम्य रहियात्। याभितः स्विपिक्षां स्विपित्यते विक्षेत्रते सर्व वस्तु जानाति । वित्र विकास के अपने स्थान के समितः । स्वित्रकार्यास्त्राम् विक्रिति सम्बन्धः । प्रविद्याम् सम्बन्धः । स्वयम् । स्वयम्यमः । स्वयम् । स्वयम्यमः । स्वयम् । स्वयम्यमः । स्वयम् । स्वयम् । स्वयम्यमः । स्वयम् । स्वयम्यमः । स्ययमः । स्वयम्यमः । स्वयमः । स्वयमः । स्वयमः । स्वयमः । स्वयमः । स श्रुवद्या वितात्त्वात्राण्यात्र हिन्द्र वितास्त्र प्रत्ये स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्व भूत सार्गात्त वितास्त्र स्वत्र भूत आण्याता प्राप्त स्वति । इति स्वराङ्गानपक्षा शकावाद्य । तथाद्य । तथाद्य । विश्वाद । विश्वाद स्वर्ति । विश्वाद स्वर्त

## श्रीमचुस्द्रनसरस्ति।

कत्लेत अविविध्यक्षामकप्रस्य विविधितत्वात म प्रश्रापस्याचितनस्य कारंगातावसक एत्यकः। वर्वक्रेकविद्यानेन सर्वेषिश्वानप्रतिकाः समर्थिता भवति अन्यया प्रधानविश्वानेन तत्कार्यशावसम्भवेऽपि तदकार्यातां पुरुषासां ज्ञानसम्भवति वद्याता विदिते तु पुरुषासां विदिते । त्रप्राचात् इतर्षाञ्च तथ् कारिपतत्वेतः सर्व्यतिरेकाद्व वृक्षाञ्चतं अतं अवत्यमतं मत्रप्रविद्यति विद्यातीमस्यादि श्रुत्या क्रस्मिषु सग्रवाद हिलाते अस्ति। विद्याति सम्तित्याद्यया आत्मति केव्यक् रहे श्रेते सते विद्याते दिन स्तित्याद्यया के अतिप्रदित्ति विद्याति सुर्वविष्ठात्रप्रतिक्षीपप्रसेः । तसु व्यसमार्याकोऽप्यक्षिक्षातेत सर्वविष्ठातप्रतिक्षीः नोपप्रति वेदस्यापीरवेद्यविकास्तातारयाऽसुप्रयोगीबन्तिस्य सस्मार्थित्वेपीयप्रेयत्वेनाप्रासावयप्रसङ्गतः विज्वसाः ब्रह्ममारणातायिन्द्रयक्यात्येता तस्मात् सङ्गीन्वतायोष्प्रतिवायोः सम्मार्थापेक्षया मुब्रात्मप्रि, ल्लान्नप्रसर्गित्याकक्ष्मण्यः तेते बत्यावि । वद्या वदं सक्तेनं विस्तादितवान् श्वास्त्रोश्वासादित्रहीलया आविभेषितवास् । तथास श्रुति हर् श्रह्म महतो भ्रतस्य निश्चाससमेतद् वदं ऋग्वेवो यज्ञेह इत्यचा वेदस्यापि वद्योगार्वातको दर्शयसि अत्यन्न सहकार्यत्ये सिक् हर्य पौरुषेयत्वं पुरुषमात्रजन्यत्वंऽपि पौरुषेयत्वे वर्षाानां नित्यत्वेऽप्यानुपूर्वविद्येषस्य पुरुषजन्यत्वातः सीमांस्यक्षमान्यस्यापि वृद्धायामनि ययप्रसङ्ग वर्गोनित्यतामात्रेगीवापीरुषयत्वव्यवस्थापने लीकिकवाक्यस्यापि तत्प्रसङ्गः तस्मान्मानान्तरंगार्थसुपरुष्य रचितत्वं पीक्षं-यत्वं सापेश्वत्वलक्षगाप्रामाग्यप्रयांजकं तत्व व वेदं वेदार्थस्य मानान्तरगोज्जरत्वास् । इदमव श्रुत्या निश्वसितरघान्तन दर्शितमः। यथा हि निश्वासः पुरुषाज्ञायमानोर्शय न पुरुषचिकीर्षाजन्यः सुषुप्तीविपि दर्शनीत् पर्वं वेदो व्रक्षमाः सकाशाज्ञायमानोर्शय न चिकीर्षाजन्यः तद्रथस्य, वेदातिरिक्तमानाविषयत्वात् । तथा वेदतद्रथंशानयोस्तुल्यमालत्वीम प्रधायाः सार्वश्यव्याघातो न वा वेदस्य पौरुषयत्वम् । प्रकृति सद्वेषाविकानेन सर्वेविकानमृतिका त ।सक्कोसनीयाः नाधकानावातः।।सक्तानेवस्यानेवस सद्यादानानेष्ठा कार्यगृत्मकाशनशाकित्वात् वश्चायाम्कशियात्रम्काशनशक्तिविति । यतो वेदोपावानवेतापि वस्राः सार्वस्यकि ब्रि: । केचित हिर्गयार्भ एव बेदपवका जगतमास्याभेट्याहरति स्वता स्र साहिक प्रमे स्ति। आदिक विदिर गयाभेस्तरमे हृदा सह यो वहा तत् अन्तः भर्गाः सहमप्रभाग्यस्त्राव्यस्तप्यावात्वपाने हिंद्रस्याभेहरः वेद्वार्धकातं कारितवानितक्षेत्रः। तथान श्रुति। न्यो वसामां विद्धाति, पूर्व यो वै वेदांश्च पहित्योति तस्मै ते ह देवमात्मखक्षिमकाशे समुखर्व वात्यामकं क्ष्पवं शति हि स्वयमंत हेदावि भावयोः परमेश्वराधानतां दृशयति तदपि हदः मनसाः पवः तेते। तत् त मचेताध्यापितसानिति सा । अनेत समेहतस्यामित्सं सर्धितम् त्याच श्रुतिः यः सर्वेषु भृतेषु तिष्ठत् सर्वेश्योः भृतेश्योऽल्के वं सर्वेश्योः भूतानिक निष्ठः अनुसः सर्वेश्योः भूतानि हारिहः यः सर्वोग्रि भू बहुबन्त्रा युम्यस्य त आत्मान्त्रयोभ्यस्तः इस्याचाः सर्वाह्त्रस्यक्तिः प्रासीत्मानं वितिमादयातः वितिन्ति दशहत्रभ्रतीनां व्यासि प्रामाण्यं म सम्भवाति ब्रह्मणः सिद्धत्वेत मानान्तरायोग्यत्वात् अन्ततः स्वरूपनीतत्वस्थैनं मानान्तरस्यात् तथाक हातसंवारे श्रातीता नामात्रमापकत्वलक्षणं मामाप्यं विस्वदि , तामाश्रितविषयस्मातः चतुरामश्रामाग्यं तथाचा प्रशानकारमानिकारमोत्रोवोधकमनुसान न्या विकारां, मृत्विष्य तीत्याह् मुझातिक यत्व स्ट्रम् इति ॥ यत् सूत्र सूत्र सूत्र सूत्रम् । विषये । अत्याद्याति । स्ट्रम् काद्या मुद्यान्तु माद्यम्बानम् अमृद्यो विविधन्। आवर्णान्योः विस्नेपर प्रशानस्याक्रमेशिक विस्नावस्याक्रमेश अभानावस्या कृपथोत् हिविधः तत्त्र-नास्त्र असं-व्यान्त्रभासते सेति किविधोऽपि कोशाः विहानतशास्त्रवित्रारेविमुखेरअभ्यते वेदानतशास्त्रविद्यार-प्रमाणाःत प्रोथ्वातेनास्त्रावर्गित्वसावर्थमानावर्गमानावर्गमानावर्गमानावर्गनाम्बर्गाताः वर्गनित्र क्षाप्त के तृह्मानावर्शातिवर्शक्रस्य साक्षात्कारस्य साम्रतात्यज्ञतिष्ठत्ति। प्रविश्वाविश्वेपावर्गाकार्यस्माविशेषस्य प्रविश्वायस्य अतुप्त के तृह्मानावर्गात्वर्थस्य । साक्षात्कारस्य साम्रति ह्वात, स्त्रू पचेतनस्य च तत्साभूकत्वेन तहत्तिवर्शकत्वात्तिकवृत्त्युत्तपादतेन वद्यान्तानां श्रीमाणप्रव्याहृतमेव। सिद्धत्वेष्ठित्र द्वापा क्षणाच्याचे क्षणाविहीतत्वेन व्युत्पादितं भाष्यकारप्रभृतिभिः। पत्रं पूर्वासेत तत्तपदवाच्यार्थमुक्ता परासेन त्रह्यसं वक्तमारमागाः अध्यारोपाष्ट्रवादाश्यां निष्प्रपञ्च प्रपंच्यत् इति त्यायेनाह् तेजोवादीत्यादिनाः यञ्च वद्यागाः त्रवागाः तेजोऽवश्वानाः स्रोह विक्रमारमायाः अस्यारापानवादात्रपाण सम्बद्धाः स्वापा अस्य । अस्य स्वापा अस्य स्वापाद स्वापाद प्राप्त प्राप्त विक्रमा स्वापाद स श्चिकरगान्यायेन तु पश्चमृतस्रों रति द्वष्ट्यस् । तिन्मश्यात्वे ह्यास्तमाहः तेजीवाधिमृदांः सथा विनिमय इति । विनिमयो व्यत्स्यः द्वास्त्रकार्यात्रात्रात्र व प्रश्निम् व व प्रति यात्र । तथात्र श्रातिः स्वतंत्रेणेहतं कपं तेजसस्तवृषं यच्छुष्ठं तद्यो यत्र हुआतं तदश्रस्यापागादकोरिक्तत्वं वाचारस्भगं विकारो नामधेयं श्रीमा क्रमागीत्येष सत्यमित्यादिना क्रम्मस्याप विकारस्थानतां हुआ त्युन हुना । क्षा प्रमाण क्षा परिशास्त्र वा सम्भवति । तथाहिन प्रमाणक प्रमाणक स्वरं संयुक्त सानी ह्रचणक मारभत इस्यस्युक दूशयात । तत्र ह्यणुकासमदाधिकार्याभृतः संयोगः प्रमागको कार्यक्षेत्र साम्याकादेकदेशेन वा । आद्ये प्राथमानुषपत्तिः । विसीय सावयवत्वापत्तिः। एवं परिकासोऽपि प्रशानस्य कार्तस्त्रोन मा एकत्रोनमा । अग्ये कारणिवनासापत्तिः। जिलीये सावयवत्वापत्तिः। न चेष्टमंबेततः सावयवत्वे तस्यापि जन्मत्वन मूलकाह्माखानपपत्तिः । एवं काल्यंमपि कारमाच्यापारातः प्राक्त सस्त सद् वा । आणे क्य न चेष्टमवतत् सावपत्र मान्य अपना मुख्या क्ष्या । आधा कर्य कार्यकारमा मान्यहः न हि खप्रधेमा सम्म कुर्याचक सम्बन्धो ग्रह्मते । तम्बन्धते घर इव प्रतियोगित्वेनासतो प्रिया सार्थत्वं सविद्यसीति कार्यकार्यामान्यकः गाप्त अस्ति प्राप्त कार्याक्ष्म आहे अशिक्षात्र क्रितीये सत्कार्यवाद्यापत्तिः प्राप्ताव्यति वत् । इत्त प्राप्तावप्रतियोगित्वं निराक्षमं साध्ययं वा आहे अशिक्षात्र विद्यान्य प्राप्ति । इत्त प्राप्तावप्रतियोगित्व प्राप्तावप्रतियोगित्वाभयः वत्। इत्तं प्राप्तावकारात्। म त्र साजाद्रयेवादोऽपि घटते कारगाद्रयाप्रीप्रवेशस्यापत्तेः आविमोत्रतिशेभावयोपपि सदसस्वविकत्य रवेतेव कार्यसत्त्वाका गाण्यात्राम्यात्राम्यात्राम्यात्राम्यायात्रिति विवर्तवाद्राप्राचिति। तथान्य अविधाववात् स्व वासात । तर्वार्थः । तन्वविद्यासार्थासाम्बद्धवर्षाः सविद्यासाः सद्यत्मस्त श्रातापि सावस्वात व्यवस्थात स्वतास्य वैतामासी मिध्येत्यर्थः । तन्वविद्यासाम्बद्धाः स्वत्यास्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्व द्वेतामार्था पार्वा विद्यार्था करणकारतसम्ब स्वत्था एव क्रियमस्वे आत्माश्चरत्वात अविद्याहतसाश्चरपामे सामवस्थानात तथार देतप्रविश्वातस्थात्रातः अतिमाञ्चापात्रश्चात्रकार्यात्र आहः भाषाः शिताः सद्यानिरस्तकारकार्याः विद्याहतसाश्चरपाम देतप्रयुश्च गुन् प्रविविद्यान् स्थानाः श्रीनसीक्षापा छुत्रेतम् अहि भाषाः सित्र निरस्तक्षक्षमानि । सदानिरस्तं निरमिक्षके क्षणं क्षणः

人

## 'भीमधुसुदनसरस्रती ।

मविद्यार्थं यस्मिन् तत्तथा । तत्र हेतुः खेन धाम्नेति । अखगडानन्दाद्वितीयचैतन्यरूपत्वात् इत्यर्थः । तथाच श्रुतिः—सर्देव सीम्यरमभ आसीदेकमेवाद्वितीयमित्यादिरन्येथानुपपद्यमानैरेकैवाद्वितीयशब्दैरसगडमेव घस्तु प्रतिपादयति। हग्हङ्यसम्बन्धानुपपत्या कन्पितत्वेनेषा-विद्यायाश्चीतन्यमास्यत्वनियमात्र एतस्या एव च खपरसाधारगाकल्पनामुलत्वान्नाविद्यान्तराध्युपगमदोषः । उत्पत्त्यनङ्गीकारेगा इतेश्च नित्यत्वेन नात्माश्रयदोषः । अनुदिभावत्वश्चात्मनो नित्यत्व प्रयोजकं न भवति किन्तु परमार्थसत्यत्वम् । अविद्यायाः सदसद्विलक्ष्यात्वात् **झाननिवर्त्त्ये**खोपपितः । तथाच मायातत्कार्य्यहीनः परमात्मा तद्पदलक्ष्योदर्शितः। एतेनैव त्वम्पदलक्ष्योऽपि दर्शितः तस्यापि मायातत्कार्य्य शरीरादिहीनत्वात् जात्रत्स्वप्नसुषुप्तिसाक्षिणस्तद्धरवाभावात्। एवश्चप दार्थक्वानपूर्वकवाक्यांघवाधेस ति तदारृत्तिरूपं निदिध्यासनमुपपक्षम्। अथजनमाद्यस्य यत इत्यनेनानन्द्रकपत्त्वं दर्शितम् आनन्दाद्ध्येव खिवमानिभूतानि जायन्ते इत्यादिश्रुतेः अन्वयादित्यनेन सङ्गपत्वं नित्यत्वं विभुत्वं च सर्वदेशकालान्वयंबोधनात खराड़ित्यनेन खप्रकाशक्षानरूपत्वं धाम्नाखेन निरस्तकुहर्कामत्यनेनाद्वितीय वं सत्यमित्यनेन पर-मार्थत्विमिति । सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म विक्षानमानन्दं ब्रह्मत्यादिवाक्यार्थो दर्शितः । अथ च त्वम्पदार्थोऽपि शक्यते अनेन श्रोकेन द्शीयतुं सुवालङ्कारस्यात्यन्तचारुताहेतुत्वात् । तथाहि-यो जीवः अस्य देहेन्द्रियादेर्जनमादिविकारजातम् अन्वयात् अनुगतवान् अविद्ययात्मन्या-रोपितत्वात् तं परं सत्यं धीमहीति सम्बन्धः । अस्य की दशस्य—यतः गच्छतः सर्वदापरिग्राममानस्यत्यर्थः जन्मादि गच्छत इति वा । नद् जातो देवदत्तो मृतो देवदत्त इति प्रतीतेः तद् यथा अग्नेः श्रुद्रा विस्फुलिङ्गा ब्युचरन्त्येवमेवास्मादात्मनः सर्वे एत आत्मानो ब्युचरन्तीति श्रुतेश्च स्तत एव जन्मादिमान् जीवोऽस्तुनेत्याह इतरतश्चेति । जन्माद्यथोग्यत्वादित्यर्थः । तथाच श्रुतः -- जायते च्रियते वा विपश्चि-आयं कुतिश्चिम बभूव कश्चित इति अजो नित्यः शाश्वतीऽयं पुरागो न इन्यते इन्यमाने शरीरे इत्याद्या स्मृतिश्च जीवस्य जनमविनाशी बारयति। कृतहानाकृताभ्यागमादिदोषप्रसङ्गादुर्पाध्युत्पत्तिमात्रेगौव ब्युश्वरन्तीत्यादिश्चत्युपपत्तेस्तद्गुग्रासारत्व।दित्यादिन्यायाश्चेति चका-रार्थः । देहमिन्द्रियं मनः प्रागाश्च केचिदात्मत्वेन प्रतिपन्नास्तान् निराकरोति अर्थेष्वभिन्न इति । न हि भौतिकानां देहेन्द्रियप्राग्यमनसां हातृत्वं सम्भवति घटादाविप तत्प्रसङ्गात् एतेषां चानित्यत्वात् आत्मनित्यत्वस्य च व्यवस्थापितत्वात् । एतेन विभुत्वमिप व्यास्यातम् । विभुत्वं हि मध्यमपरिमागात्वेनोपपद्यमानं परमाणुत्वे वा परममहत्त्वे वा व्यवतिष्ठेत पतेन देहाद्यतिरिक्तोऽपि देहपरिमागा पवात्मेति क्षपग्राकपक्षो निरस्तः। तत्र परमाणुत्वे सकलशरीरव्यापिसुखदुःखानुपलम्भप्रसङ्गात् सकलदेहव्यापकोऽस्तु तिहेदेहेन्द्रयातिरिको विमुरेवातमा ज्ञानाश्रयो न तु ज्ञानकप इति तत्राह स्वराडिति । स्वयमेव राजत इति स्वराट् स्वपकाशज्ञानकपः न तु ज्ञानाश्रय इत्यर्थः। अत्रायं पुरुषः खयं ज्योतिभवतीत्यादि श्रुतेः सन्देहविपर्थयाद्यविषयत्वेन सर्वदा भासमानत्वात् खजनमञ्जानविषयत्वे च कर्तृकर्मविरोधात् क्वोऽत प्रवेति न्यायात् क्वानरूप प्रवात्मेत्यर्थः। ननु जीवस्य स्वप्रकाशक्षानरूपत्वे जन्मादिशून्यत्वे च ब्रह्मणी भेदकाभावात् स्वत एव स अक्षाभिन्नत्वे शास्त्रारम्भो निरर्थकः अक्षाववोधस्य सर्वदाविद्यमानत्वादित्यत आह तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये शति । हृदा मनसा ततु-पाधिना तदात्म्यापन्नः सन् अब्रह्म ब्रह्मविपरीतं कर्तृत्वभोक्तृत्वादिलक्ष्मग्रां संसारं सन्तरग्राह्मपं विस्तारितवान् । तथाच श्रुतिः—स समानः सम्भौ लोकावनुसञ्चरति ध्यायतीव लेलायतीव स धीः शक्षो भूत्वेत्याचा सम्बन्धादसंसारिगांऽपि संसारितां दशैयति। तथा च ति बहुत्तये ब्रह्मात्मतोपदेशो युक्त इत्यर्थः । संसारस्य मोक्षहेतुतां दर्शयति—आदिकवय इति । आदिभूतं कं सुखं ब्रह्मानन्दक्षे मोक्स इत्यर्थः । तस्य वयःप्राप्तिस्तदर्थम् अयवय-गताविति स्मरगात् निमित्तात् कर्भयोगे (पा २।३२६ वां ) चयं सप्तमी चर्मगा द्वीपिनं इन्तीतिवत्। न हि संसाराभावे श्रवगामननादिसाधनानुष्ठानं सम्भवति न च तदभावे तत्प्रज्ञानोदयः न च तमन्तरेगा भनाचविद्या-निवृत्तिरिति मोक्षार्थमेव संसारं विस्तारितवानित्यर्थः। तथाच श्रुतिः—क्रपं प्रतिक्रपो वभूव तदस्य क्रपं प्रतिचक्षगायिति इन्द्रो मायाभिः पुरुद्धप इयत इति च ब्रह्म वा इदमप्र आसीदिति आत्मानमेव वेदाहं ब्रह्मास्मीति तस्मात्तत् सर्वमभवदिति च संसारद्वारा अविद्यानिष्टिकिए मोक्षं दर्शयति। नजु तर्हि भवतु खप्रकाशज्ञानकप आत्मा किन्तु नानन्दकपः प्रतिशरीरं भिष्तश्चेति सांख्यमतं तत्राष्ट् मुद्यान्ति यत सूर्य इति । यत यत्र यस्मिन् जीवस्तरूपे सूर्यः तार्किकाद्यपेक्षया सुधियोऽपि सांख्याः मुद्यान्ति शुद्धस्तर्प ज्ञानन्तोऽपि आनन्दरूपत्वं प्रतिदेहमेकत्वं ब्रह्माभिन्नत्वं चाजानन्तः। तथाच श्रुतयः—एष एव परम आनन्द इति एको देवः सर्वभूतेषु गृढ इति अयमात्मा ब्रह्मेति ताह्यपूर्वा जीवस्य वोधयन्ति । तदेतत् प्रेयः पुत्रात् प्रेयो वित्तात् प्रेयोऽन्यस्मात् सर्वस्मादान्तरं यद्यमात्मेति श्रुत्यन्तराश्च पर्प्रमारपदत्वादानन्दरूपत्वम् । नानात्वे भागव्यवस्थानुपपत्तेः प्रतिदेष्टमेकन्वम् । निह विभूनामात्मनां सर्वदेहसम्बन्धित्वा-विशेष कर्मादिकमपि भागनियामकं भवितुमहिति अविशेषात् । एकात्मवादे तु तदन्तः करगाविष्ठिन्न प्रदेशानां भिन्नत्व। दुपपद्यत प्रव क्यवस्था देह भेदादेव च प्रतिसन्धानामावः। एवश्च भेदकशून्यत्वात् ब्रह्माभिश्नत्वमपि निष्ठं लक्ष्यौक्यात्। एवं त्वम्पद्वाच्यांथ पूर्वी-क्रीन प्रतिपाद्य तल्लक्ष्यमुत्तरार्धेन वक्तुमध्यारोपापवादन्यायेनारभते तेजोवारिमृदां यथा विनिमय इत्यादिना । यत्र आत्मान त्रयागां स्यूख-सुक्षमकारणोपाधीनां जाग्रत्सप्तमसुषुप्त्यवस्थाहेतूनां सर्गः संसगीं मिथ्यैव न तु परमार्थतः स यसत्र किंचित् पश्यत्यनन्वासतस्तेन भवत्य-सङ्गो ह्ययं पुरुवद्दत्यादिश्चतित्रयः साध्यस्य साक्षिधमीजुपपत्तेः भास्यस्य घटादेभीसकदीपादिधमीत्वादर्शनात् । मिध्यात्व द्रष्टान्तः तेजो-बारीति। वारिणि करकारूपे मृद्बुद्धिः। एवं काचादिरूपायां मृदि तेजोबुद्धिरित्युदाहारयम्। तथाचेदमनुमानं सूचितम्—आत्मान बाग्रहाविबुद्धिर्मुषा तदभावबाति तद्बुद्धित्वात् तेजसि वारिबुद्धिवत्। तदभाववत्वश्चात्मनः श्रुतिस्मृतिन्यायैनिश्चितामिति नासिकिः। कार्यः । विश्वासिक्षत्वं दर्शयति धासा स्त्रेन सदा निरस्तकुहकमिति। पतदेव तत्पदार्थतदेवयकथनद्वारेशा शास्त्रस्य प्रवं छक्षांशिक्षयेन ब्रह्माभिक्षत्वं दर्शयति धासा स्त्रेन सदा निरस्तकुहकमिति। पतदेव तत्पदार्थतदेवयकथनद्वारेशा शास्त्रस्य एव एपः । तत्र श्रवगामननिरिध्यासनयोस्तृतीयश्च निर्दिध्यासनमिष्ठ प्रतिपाद्यते मननिरिध्यासनवती विजातीयप्रस्थवनिवारगा-विषया पा विषया पा विषया स्य मनागार्थाः । अन्वयादित्यनेत तत्तु समन्वयादिति अर्थेष्वभित्त इत्यनेन ईक्षतेनीशस्यमिति तेने व्रह्म हदेत्याहिना शास्त्रयोगित्वाहिति । स्वाक्षादव दारा । स्वानित पतेन सर्वे व्याख्याता व्याख्याता इत्यन्तो न्यायकलापः सूचित इति समन्ध्याध्यायो व्याख्यातः तेजोधारिन् मुद्यान्त यत पर पर निवास सम्भग्नाद्यादिश्य इत्यादिन्यायस्चनादविरोधाध्यायार्थः श्रीमहित्यनेन सद्द कार्थ्यान्तरविश्विपशेष तृतीयं

## श्रीमधुसूदनसरस्वती ।

तहतो विध्यादिविदित्यादिन्यायस्चनात् साधनाध्यार्थाः धाम्ना खेन सदा निरस्तकुह्कं सत्यं परमिति फलाध्यार्थाः 'अबिद्यातव् कार्य्यनिष्टस्युपलक्षितपरमानन्दक्षपावरोषात् । एवं सति पारमहंसी लंहितेति समाख्योपपद्यते परमहंसानां वेदान्तवाक्यार्थानिद्ध्यासन-क्रपत्वाद्यस्योपाख्यानानां तत्तात्पर्यकृत्वात् । एवं धायमिति पद्स्थाने धामहीति छान्दसप्रथोगात् नायत्रीक्ष्यत्वमस्याः स्वितम् । तत् सिवातुर्वरेणयमित्यस्यार्थः खराङ्ग्रितेन स्वितः । भगो देवस्य धीमहीत्यस्यार्थः जन्माद्यस्य यत इत्यादिना स्वितः । धये यो नः प्रचोदयादित्यस्यार्थत्वेने ब्रह्म हदेत्यादिना स्वितः । तथाच गायत्रीवदनिशं अप्तव्येषा संहितेति दर्शितम् । लक्षग्रश्च भीमाग्वतस्य स्वितम् । तथाच मत्स्यपुराग्रे पुराग्यदानमस्तावे—यत्राधिकृत्य गायत्री वर्ण्यते धर्मविस्तरः । वृत्राद्धरवधोपेतं तक्षेभागवतं विदुर्गित गायत्र्यपुरक्षमो लक्षग्रात्वेनाकः । पवञ्च सर्गादान्यपि दशलक्षणान्यनेन स्रोकेन स्वितानि—जन्माद्यस्य यत इत्यनेन सर्गविसर्गः स्थानानि तृतीय चतुर्थ पश्चमस्कन्ध-व्युत्पाद्यानि स्वितानि । तेने ब्रह्म हदा य आदिक्षव्य इत्यनेन मकानुष्रहरूष्टक्षग्रे पोषणां षष्ट्रस्तन्ध व्युत्पाद्यं स्वितम् । मुद्धात्ति यत् सूर्यनेन कर्मवासनाक्ष्या क्रातः सप्तमस्कन्ध-व्युत्पाद्या स्विता । मन्वन्तरेशानुक्षये अप्रमन्त्रवितम् । मुद्धात्ति यत् सूर्य इत्यनेन कर्मवासनाक्ष्या क्रातः सप्तमस्कन्धार्थे दर्शितः । धाम्रा स्वेन सद्य निरस्तकुद्दक्षमित्यनेन मुर्करम् प्रथमस्कन्धार्थे दर्शितः । तेनेव ध्यानोपलक्षितसाधनानुष्वानक्ष्यो हितीयस्कन्धार्थः । इति कृतस्वभागवतार्थसूचनम् । सद्येत् व्याख्यानमीपनिषदाय रोचते ।

सात्वतारुत वर्णायन्ति—पञ्चीकृतपञ्चमहाभूतोपहितं शुक्क्षेतन्यं तद्भिमानिनं विराड्न्तर्यामिक्षपम् आंतम् इत्यनिरुद्ध इति चास्यायते। एवमपश्चीकृतपश्चमहाभूतोपहितं शुद्धचैतन्यं तद्भिमानिहिरणयगर्भान्तर्थामिकपम् अनुशात इति प्रशुक्च इति चास्यायते। एवं स्थूल-सूक्ष्ममूतकारणीभूतं यन्मायात्मकम् अव्याकृतं ततुपहितं शुद्धचैतन्यं तन्निष्ठचिद्।भासोपलक्षितम् अनुका इति सङ्गर्थण इति चाल्यायते। अनुबहितन्तु चैतन्यं सर्वानुस्यूतसन्मात्रं सर्वसाक्षिपरमामन्द्घनम् अविकलप इति वासुदेव इति चाल्यायते । सङ्कर्षग्रमञ्जूकानिकस्थाना-मपि वासुदेवत्वं वर्तत एव । उपाधिकृतः केवलं नामविशेषः । एतः नृसंहतापनीयोत्तरभागे न्यास्यायते ओतानुकातानुकाविकालपैः स्थूलसूक्ष्मवीजसाक्षिभिरिति बहुकृत्वोऽभ्यासेन । अत्र च वासुदेवः परमात्मा सङ्कर्षशो जीवः प्रसुम्नस्तु मनः अनिरुद्धोऽहङ्कार इति पश्चिरात्रिकप्रक्रिया नादरण्या तहचनविरोधात् श्रुतिविरोधाच्चेत्याद्यत्पस्यसम्भवादित्यधिकरण्ये व्याख्यातम् । केवलं परमात्मवानुप-हितो वासुदेवः कारशोपहितः सङ्कर्षशाः सूक्ष्मभूतोपहितः प्रद्युम्नः स्थलभूतोपहिताऽनिरुद्धं इति यथा स्थानभेवादरशियम् श्रीत-त्वाद्पपन्नत्वाच्य । एवं स्थिते ऋोकयोजना—परं सत्यं वासुदेवाख्यं वयं धीमहि उपास्महे । ध्यानमञ्जेषासन्द्रपमेवाभित्रते चतुत्वपूह रचनाया उपासनार्थत्वात्। नन्वजुपहितस्य वाखुदेवस्य बुद्धावनारोहात् कथश्चपास्यत्वम् सत्यम् अनिरुद्धादिकपम्प्यविवक्षितोपाधि-संस्वन्धं वासुदेवात्मकमेव श्रोतकूपद्वारादिकमिवालक्षिततदुपाधिसम्बन्धमाकाशात्मकमेव विवक्षितोपाधिसम्बन्धं तु पृथगव्यपदेश-सम्बन्ध वासुद्वात्मकम् व अत्यस्य स्थानः । तथाच तद्वारा वासुद्वे मनोवृत्तिः कार्योति वक्तुमारभते जन्माद्यस्य यत इत्यादिना । अस्य सद् लभत न तु तावता वराया वराया । अस्य अस्य जन्मादिविकारजातं यतो भवति तं धीमहीति सम्बन्धः । तस्य जगद्विरचनयोग्यतामाह भारतश्चतुहराभुवनरचनात्मकस्य मधाप्यत्य । जात्रात्रात्रात्रात्रा । अद्याग्यात्राचिक्षणचिंदाभासी हि विराइजीवः अयन्तु अधिकाभक्ष द्वात । ब्रह्मायङ्गासभागानपाङ्गरामा स्वयम् । स्वयम् । प्रथमिक समीत्रमुका प्रसम्मजुकातमाह तेन ताह्यम्बभूतस्तद्नतथ्यामा स्वयमय राजा राज कार्य क्रिक्स क्रिक्स है । आदिकावये सूक्ष्मभूताविच्छन्नचिद्यासाय हिर्गयगर्भसूत्राहिसंबकाय जीवाय वहावेदं तदन्तरयापि-इता व आहिकचय हात । आहिकवय प्रवास प्राप्ता प्राप्ता प्राप्ता स्वास है स्वास्ति स्वास स्वास स्वास स्वास स्वास स्व स्वास रूपेशा विम्बभूतो यस्तन्यनस्थव तन हात । हरपपाणपण्या । त्रिशुशात्मकमायाप्रतिविम्बस्य जगत्कारशास्य विम्बभूते सर्वान्तर्यामिशा सङ्गर्पशास्य स्रयोऽपि भाम्यन्ति स्थूलस्यमप्रश्चेष्ठय त्रियुगात्मकमायार्पातांवम्बस्य जगत्कारगस्य ।वस्त्रपूर्व राजाताः । वासुदेवरूपतामाह तेजोवारिमुदां यथा विनिमयो यत्र जिसगो स्वति। स्वान्त्या करूपयन्ति प्रधानपरमागवादिक्षेगा वा भ्राम्यन्ति । वासुदेवरूपतामाह तेजोवारिमुदां यथा विनिमयो यत्र जिसगो स्वति। श्रान्त्या करूपयन्ति प्रधानपरमाग्वादिक्षप्या वा साम्यान्त । वास्तुष्वणणणणणणणण सर्वेथा असकेवेत्वर्थः । अपहनवचनो स्वावद्या विविधः सर्गः त्रिसर्गः आध्यामिक आधिमौतिक आधिदैविकश्चेति स यत्र मृषा सर्वेथा असकेवेत्वर्थः । अपहनवचनो स्वावद्या त्रिविधः सर्गः त्रिसर्गः आध्यामिक आध्रभातक आध्रदावकव्यात हो। तदेवसुपहितत्वेऽनुपहितत्वे खेन प्राप्ता सदा निरस्तकुहक त्रियागाम् अनिरुद्धमधुमुसङ्कर्षेगोपाधीनां सगः ससगा यत्र स्वात जार्यः वासुदेवास्यं ध्यायेमेति निर्गाहितोऽर्थः। अत्रानिरुद्धहर्षः निर्माविद्यातिकार्यविभ्वभूतत्वेनोपाधितद्धमेरसंस्पृष्टम् अतएव परं सत्यं वासुदेवास्यं ध्यायेमेति निर्गाहिताऽर्थः। अत्रानिरुद्धदुरुद्धा-तिवृत्ताविद्यातन्कार्यावम्यभूतत्वनीपाधितद्धमरसस्पृष्टम अतप्य प्रति एवं व्यक्तीमविष्यति। इतर्गामपि क्षं वस्यते विस्तरभार्य प्रक्रियायां मोक्षधर्मे नारायश्यिपाच्यान इति । तदतद्वचाच्यानं पौराश्चिकाय रोचते ।

प्रक्रियायां मोक्ष्यम नारायणायापाख्यान हात । तदन्र याख्यान पाराय योजयन्ति । सङ्घर्षणप्रद्यानि स्वानां स्वसमास्ययेव पृथगवतीकेन्नलर्माक्तरिकास्त्र केन्नलेन्यास्त्रे वावतारश्री छण्णामावपरतया योजयन्ति हतापि इत्यापत् भगवान् स्वर्गमात् । तस्म क्ष्मिक्त वावाद्यास्त्रे वावतार एक श्रीकृष्णां कार्ष्णीयाध्यातमाद्यास्त्रे अक्षिणां वयं ध्यायेम । तस्य सर्वप्रमात् । तस्म क्ष्मिक्त प्रत्येव सर्वाणा पदानि योजभीयानि ।—तं परं सत्यं वासुदेवातमकं श्रीकृष्णां वयं ध्यायेम । तस्य सर्वप्रमात् क्ष्मित्रा क्ष्मित्र व्याप्ति स्वाणामाद्य कार्याय पत्र हात । यतः श्रीकृष्णात् यस्मिन् श्रीकृष्णां वा भाष्यस्य रित्मावस्य वाद्यत्य पत्र हात । यतः श्रीकृष्णात् वस्मिन् श्रीकृष्णां वा भाष्यस्य हात्यस्य विद्याप्ति स्वाण्यामाद्यस्य कार्यायम् । तिर्वे भाष्यस्य कार्यात् । त्रिष्ठा क्ष्मित्यस्य कार्यात् । त्रिष्ठा क्ष्मित्यस्य कार्यात् व्याप्ति कार्यायाः प्रकृष्णित्यस्य कार्यायाः प्रकृष्णित्यस्य कार्यायाः व्याप्ति कार्यायाः विद्यायाः विद्याद्यस्य । त्रिष्ठा कार्यायाः व्याप्ति कार्यायाः विद्याद्यस्य । त्राप्ति कार्यायाः व्याप्ति विद्यायाः विद्यायाः विद्यायाः स्वाण्यायाः व्याप्ति विद्यायाः स्वाण्यायाः व्याप्ति विद्यायाः स्वाणाः क्ष्मित्यद्यां विद्याद्यस्य विद्यायाः विद्यायाः विद्यायाः स्वाणाः स्वाणा

## श्रीमचुसूदनसरस्यती ।

प्रेमापरिज्ञानेन विपरीतकार्यस्यापि दर्शनादित्यत आह अर्थेष्वभिक्र इति । सर्वेष्वर्थेषु मनोष्ट्रसादिक्रपेष्वपि सर्वप्रकारम् सः । एवश्च सार्वेष्ट्याचास्त्यक्षानकृतं वैयर्थ्यम् । प्रेमपरिक्षानेऽपि तदाश्रयजनोपकारास्त्रमर्थ्यमाशङ्कचाह स्वरादिति । स्वतन्त्रः सर्वेशक्तिरित्यर्थः । शक्तिद्वासे हि पारतन्त्रयं स्वात्। तथाच न असामध्येकृतं वैयध्यम्। नजु गोपवालकस्य कयं सर्वव्रत्वं सर्वशक्तित्वं चेत्यत बाह तेने असा हुदा य आदिकवय र्शत। आदिकवये ब्रह्मणे वत्साहरगाद्वारा स्वरूपिकशासवे ब्रह्म निजरूपं मत्यशानाविलक्षणं सर्वश्रक्तिच यस्तेने विस्तारितवान् प्रदर्शितवान् तदपि हदा सङ्कल्पमात्रगीचेत्यर्थः। तथाच वस्यति—तत्रोहहत् पशुपवंशशिशुत्वनाट्यं ब्रह्माह्रयं वरमनन्तमगाथवोधम् । वत्सान् सखीनिवपुरा परितो घिजिन्वदेकं सपाशिकवलं परमेष्ठचचष्टत्यादि । नतु ब्रह्मा ख्यमेव जानाति सर्व-इत्वात कि तज्झापनेनेत्यत आह सुशान्ति यत सूरय इति । यत् यत्र श्रीकृष्णस्वरूपे सूरयो ब्रह्मादयो मुद्यान्ति इदिमत्थिमिति निश्चयं कर्नु न शक्तुवन्ति तन्मायायाः सर्वमाहकत्वात् । तथास भगवताकं गीतासु नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः । सृदोऽयं नामिजानाति लोको मामजमव्ययमिति । ब्रह्मणो मोहे हेत्वन्तरं वदन् कारुणिकत्वं दर्शयति तेजोवारिमुदामित्यादिना । ब्रह्मणा वत्रसेष तत्पालकेषु तद्पकर्णाशिक्यादिषु च खसृष्टेषु भौतिकेष्वपहृतेषु यत्र श्रीकृष्णे त्रिसंग- त्रयाणां वत्सतत्पालकतदुपकरणानां सर्गः प्राद्भावी जात इति शेषः । तत्र द्रष्टान्तः तजावारिमृदां विनिमयो यथिति । त्रिवृत्कृता भूनारब्धो यथा ब्रह्मग्रा कृतो वस्सतत्पालकतदुप-कर्गारूपः सर्गस्तथैव भगवता कृतः सिखदानन्दस्बरूपरवेनाभौतिकोऽपि भौतिकवर्ष्यते इत्यर्थः। तथाच वस्यति—एवमैतेषु भद्ष चिरं ध्यात्वा स आत्मभूः सच्याः के कतरेगिति बातुं बेष्टे कथंचनित । तथाच के मया सृष्टा भौतिका के च भगवता सृष्टा अभौतिका कृति निर्णायासामर्थ्ये च ब्रह्मणो मोहा युक्त इत्यर्थः। ननु भगवता किमिन्यन्ये सृष्टाः ब्रह्मणा कृतानामेवानेतुं श्रक्यत्वादित्यत आह सूबेति। मर्वमां सृवा सहिष्णुतारूपा क्षमेत्यर्थः। खुषक्षमायामिति समरमात् । तथाच नक्यित ततः कृष्णो मुदं कता तन्यातृमां च क्रस्य च । उभयाथितमात्मानं चक्रे विश्वकृदीश्वर इति । तेषामान्यने ब्रह्मणोऽसन्तोषस्तहन्येषां तत्तुस्यानां करणे तद्वनधूनामिति विचार्य परमकारुशिकेन भगवता अन्य सृष्टा इत्यर्थः। ननु महासायेन ब्रह्मणा विहितां सार्यां कथं कृष्णो ज्ञातवान् ज्ञात्वा वा किप्रितं क्षान्तवाम् एताइशेऽपराश्चे कोपस्योचितत्वादित्याशङ्कचाह-धामा स्वन सदा निरस्तकुहकमिति। निरस्तं नितरां निराकृतं कुहकं कवर ब्रह्मगा कृतं मोहनं तिन्निमित्तकोपादिकंच येन इति तथा तम्। तत्र हेतुधामा खेन सदिति। ख्रह्मपेगा आत्मतत्त्वेन इनद्रपेशा प्रभुत्वेन सर्वनियामकत्वेन सद्दं सत् अवस्थानं स्वेन सत्त्रया धामा तद्र्पेशा प्रभावेशात्यर्थः। तथाचान्तर्यामित्वात परिज्ञानम् आत्मत्वाच कोधाभाव इति सर्वमनवद्यम् । एवंचै सर्वप्रियत्वेन परमानन्दरूपः सर्वशक्तिः सर्वमोहनः सर्वसुकप्रदः सर्वापराधसहिष्णुः संवीत्मा परमकारुगिको विद्यानरश्च श्रीकृष्णो भक्तिरसालम्बनत्वेन सम्पूर्णप्रन्थप्रतिपाद्य इति ध्वनितस् । विद्यावणाद्यारा विद्यालगेन पस्थितिश्चालङ्कारिकाय रोचतेतराम । साक्षादनमिथानंच आतिरहस्यत्वात । अर्थभेदः कथंचन प्रतिपस्यां विचित्रप्रवानां विनोहार्ये त्यलमतिविस्तरेगा । भक्तिरसन्तुभवप्रकारश्च सर्वोऽप्यस्माभिर्भक्तिरसायने अभिहितः । अत्रापि कियान् वस्यते ॥ १ ॥

## श्रीराधामोद्दनतक्षेवाचस्पति गोस्दामी भट्टाचार्यः।

and the contract of the contra ॐ नमोनन्दस्त्रवे ॥ श्रीकृष्णाचरम्योग्भाजे परानन्दामृताम्बुधी । मनोमधुव्रतोनित्यं रमतां मलताङ्कितः ॥ श्रीकृष्णभावलुष्यंन राधा-भोहन वामीणा । श्रीमद्भागवतस्यायं तत्वसारः प्रकार्यते ॥ अथ द्वापरे ज्ञान वेकर्ये पुनर्जानवर्त्वे प्रदर्शनाय व्रक्षाविदेवतेर्थितो भगनान् नारायमाः व्यासत्वेनावततार। ततश्चवेदान् वद्युश्चा विभज्यापि तज्ञानशकि विद्याना मन्दमतयोऽत्पायुषोलोकाः कलौभविष्यन्ति इति निश्चित्य क्वांशद्राह्मजनम्भूनां अपि निःश्रयसाय भारतं पुराशान्तराशि च कत्वा तथापि श्रीकृष्शागुगावर्शानमन्यध्रमाचनुकात्तितिमिति चिन्न प्रसन्ति मलममानोवेदव्यास्त्रोतारदोषदेशतः श्रीकृष्णागुगावशीन प्रधानं भागवतास्यं सकृतवेदान्तस् त्रव्यास्यानमयं प्रारिप्सुस्तत्प्रतिपाद्यम् प्रमासक्तं प्रन्थादीनिर्दिदेश जन्माद्यस्येतिपधेन ॥ तथाचरकान्दे । नारायगाद् विनिष्पक्षं झानंकत्युगहियतं । किञ्चित्तदन्ययाजात भारायांद्वापरे विलं। गौतमस्यऋषेः शापात् भानेत्वभानतांगते। संकीशीबुद्धयोदेवा अस्वरुद्धपुरस्सराः। शर्शयं शरशा जम्मुर्नारायस् मनामयं। तैर्विक्षापितकार्यस्तु भगवान् पुरुषोत्तमः। अवतीर्शो महायोगी सत्यवत्यां प्राह्मरात् ॥ उत्सन्नान् भगवान् वेदानुजहार -हार स्वयं । चतुक्षांव्यमजानांस्तुचतुर्तिवातिधापुनः। वातधाचैकधाचैव तथैवच सहस्रधा । कृष्णोद्धादवाधाचैवं पुनस्तस्यार्थ-वित्तये। चकारवहात्त्राणि येणं स्वार्थमञ्जसा ॥ प्रथमे। स्वीशृहवस्त्रवन्धूनां व्यक्तिश्वतिगोचरा। करमेश्रेयसि मुहान श्रेषः एव अवे-विह । इति भारतमाख्यांनं कृपयामुनिनाकृत । अय भारताविव्यपवेदोन कर्मकाग्रडवेदार्थमाविद्य परमार्थसाथन अव्यक्षानसाधन अति-विक् श्रीभागवतमहापुरागामाहं जन्माद्यस्यादिना । पत्रवाग्रेस्फुटीकृतं । भारतव्यगरेकोनह्यास्नागर्थः प्रवर्शितः । इत्यादिस पादवा अपनिवासिक अपनिवासिक । अपनिवासिक अपनिवासिक अपनिवासिक । येनैवासीन तुष्वत मन्येतहर्शनंशिक अपनिवासिक । येनैवासीन तुष्वत मन्येतहर्शनंशिक ख्यम्बार्याच्याचीमुनिवर्णानुकीसिताः। न तथा वासुदेषस्य महिमासनुवर्धितः। न यष्ठचिश्चित्रपदंहरेथेशो अगस् पवित्रं प्रणुशीत-यधा वरणा । तहायमं तीर्थमुशन्तमानसा नयबहंसाविरमन्तृशिक्षया ॥ तहाव्विसर्गोजनताघविष्ठवोयस्मिन् प्रतिस्राक्षमवध्यवस्यपिः। काहा पार । त्या विकास विकास का प्राणित का प्राणित का प्राणित का प्रवास । ते का स्थित विकास के वितास के विकास क नामान्यमराप्त विचारितं कर्मत्रस्यकार्यां ॥ अतो महाभागभवानमाधरक् द्यांचश्रवाः सत्यवताशृतवतः । उरुक्रमस्याचित-पुनः भाष्यवा सत्यवताधृतवतः । उरुक्तमस्याचित-भ्रम्भुताये समाधिनानुस्मरतिव्यिष्टितं । इति नारक्षेपसेशानन्तरं श्रीभागवतांख्यमहापुराशा प्रकटनादस्य परमार्थसाधनन्त्रं । तथाहि श्वन्धमुक्तय लगाः श्रम्भातिक्षां स्वाक्षाद्वियोगमधोक्षते । लोकस्याजानतोद्यासम्भक्षेसात्वतसंहितां । यस्यां वे श्रूयमाणायां कृष्णापरमणूक्षे । भाक्षास्त्र अवर्थोपदाम सारा । अत्रक्षणमकि रहेरयक्षणेत पर श्रीमहीत्यम परपदेन कृष्णप्योक्षः। पतेनाश्रीको महाजिहासंसि

## श्रीराधामोहनतर्भवाचस्पति गोखामी भट्टाचार्थः।

स्त्रंव्याख्यातं । तत्राथशब्दानन्तर्थार्थत्वः । आनन्तर्थश्च प्रागुक्तकर्मकाग्रङ पूर्व्वमीमांसाधीन सम्यक्करमेकाग्रङ्शानस्य । भारतादिकश्च पृद्वमीमांसानुसारीति । अतः शब्दहेत्वर्थः । तद्ययेहकर्माजितोलोकः क्षीयते एवमेवामुत्रपूर्णयजितोलोकः क्षीयते इत्यादितोवसात् । क्रम्मफलस्यानित्यत्व बोधनात् । ब्रह्मविदाप्नोति परिमति तमेविविदित्वाति मृत्युमेतिनान्यः पन्थाविद्यतेऽयनायर्शत श्रुत्या ब्रह्मा-बगतेर्नित्यफलत्ववोधनाश्च। कर्म्मक्षानानन्तरं ब्रह्मजिक्षासाइत्यर्थः। अत्र ब्रह्मणोजिक्षासेति कर्म्मपर षष्ठीतत्पपुरुषेगा ब्रह्मजिक्षास्थं शातुमिष्टमित्यर्थोलक्ष्यते ब्रह्मश्चानस्य इष्टत्वेच ब्रह्मश्चानमेष कार्य्यतयापर्य्यवस्यति । तथोक्तं समाधिनानुस्मरतद्विचेष्टितमिति तद्वश्च-विजिह्यासस्वरति श्रुती विजिह्यासस्वविजानीहि इत्यर्थः। अग्नक्षानस्यैवनिःश्चेयः साधनत्वेन विधेयत्वात् विह्यायप्रक्षां कुव्वीतर्दति-भूतेः । विद्वानेच्छायाश्च विद्वानेविधेयत्वावगमेनैवसम्पर्स स्तस्या अभिधेयत्वाच सन्प्रत्ययार्थीनविविक्षतः इति विद्वानत्वं समाधिक्षं तस्यैव साक्षात् परमेश्वरक्षानसाधनत्वात् अतएव रामानुजचरगौष्ट्रक्षाजिक्षासत्यत्रजिक्षासापदं निदिध्यासनपरमित्युक्तं अनेन च प्रन्थेन व्यासंप्रतिनारदापदेशेन कर्मकागडपरमारतादीना मनुपादेयत्वमस्यैवस्यपरत्वेनोपादेयतेत्युक्त्या परमवस्य श्रीकृष्णा एव जिल्लास्य इत्युक्तं। अथ पूर्व्वमीमांसाझानानन्तर मेवोत्तरमीमांसया ब्रह्माजिक्कास्यमित्येवाद्यातो ब्रह्माजिक्कासाइत्यत्राद्यश्रद्यन वोधितं तन्नसङ्गतं-भाति । प्रागनधीते धर्माशास्त्रस्यापि वेदान्तविचार प्रवृत्तेः । धर्मज्ञान ब्रह्मज्ञानयोः फलभेदाञ्च । न च मोक्षविरोधि ऋगात्रयापकर-शास्य ब्रह्मजिक्षासायामपेक्षितत्वेन तत्रच देवर्गास्य यक्षादिनिर्वत्यत्वात् यक्षादेश्च पूर्व्वमीमांसार्थावधारण सम्पद्यत्वात् आनन्तर्यक्रमो-विवक्षितः। तथाचश्रुतिः । जायमानोवै वाह्मग्रास्त्रिभि ऋगौ ऋगो जायते ब्रह्मवर्थ्यनऋषिश्यो यक्षेनदेवेश्यः प्रजयापितृश्यः एष वा अनुगोयः पुत्रीय यज्ञात्रहाचारीवासितेति । स्मृतिश्च । त्रमृगागित्रीग्यपाद्यस्य मनोमोक्षेनिवेशयेत् । अनपाकृत्य मोक्षन्तु सेवमानोवज-स्यध इति वाच्यं न यदिवा इथरषा ब्रह्मचर्यादंव प्रव्रजेत यदहरेवविरज्येत तदहरेवप्रव्रजेत । अथ पुनरव्रवीतीवाव्रवीतीवा किमर्थायय-मध्यामहेकिमर्थावयं यक्ष्यामहे कि प्रजयाकारिष्यामः। याञ्चवलक्यः प्रवद्याजये प्रजामीषिरेतेदमशानानि भेजिरे येप्रजानेषिरेऽमृतस्व भेजिरेइत्यादिश्रुत्यात्रम्णापकरणं विनापि ब्रह्मविविदिषोः सन्यासविधानात् ऋग्णत्रयापकरणः परश्रुत्यादीनामविविक्तविषयत्वात् । मचात्रायशब्दोमङ्गलार्थएव इति वाच्यं मङ्गलस्य प्रन्थ समाप्ति प्रतिकूलविदनविनाशस्य ब्रह्मजिक्षासाया मनपेक्षितत्वेनानन्वयात् । अर्थान्तरप्रयुक्तस्यायशब्दस्य एव मङ्गल कपत्वात्। सिसृक्षोः परमाद्विष्योः प्रथमं द्वीविनिःसृती । उँकारश्चायशब्दश्च तस्मात् ब्राथमिकीकमात्। तस्तेतुत्वं वदश्चापि तृतीबोऽतउदाद्दतः। अकारः सर्व्ववागात्मापरब्रह्माभिधायकः। तन्त्रीपाणात्मकीपोक्ती व्याप्ति-स्थितिविधायकौ । अतश्चपूर्व्यमुद्धार्थाः सर्वत्रतेसतांमताः । अथातः शब्दयोरेवं वीर्यमाक्षायतत्वतः । सूत्रेषुतु महाप्राज्ञास्तावेवादौ प्रयुक्षते । इति गारुड़ादितिचेदुच्यते । पूर्वमीमांसायां विद्धितस्य खर्गादिफलस्य परमपुरुषार्यः राङ्कायामुक्तरमीमांसायां खर्गादि-कलस्यक्षयिष्णुत्वेन हेयत्वमापाद्य निःश्रेथससाधनत्वेन ब्रह्मक्षानमेवोपादयमितिनिर्यातं तत्रच निरस्यक्षानापेक्षत्वात् सिद्धान्तस्येति निरस्य स्वर्गादिफलक पृथ्वमीमांसानन्तर्य्ये ब्रह्मजिक्षासायामिति तथोक्तं वीधायने । वृत्तात्कम्मीधिगमादनन्तरं ब्रह्मविविदिषेति। एवं तपसा कि विवयं हिन्त विद्ययामृतमश्रुते । ज्ञानमुत्रपद्यते पुंसां क्षयात् पापस्यकर्मगाइति स्मृत्या कर्मगां दुरितनाशद्वाराचित्त-शक्तव सम्पादनेन ब्रह्मक्षानोपकारकता इति । चित्तशुद्धिश्च । प्रशान्तचित्ताय जितेन्द्रियाय प्रक्षीगादोषाय यथोक्तकारिगो । गुगान्विता-यानुगताय सर्वदा प्रदेयमेतत् सततं मुमुक्षवे । इत्याद्युक्त्या । तथाचाधिकार सम्पत्त्यर्थे पूर्विमीमांसापेक्षा एवश्च कर्माचरिते चित्तशुद्धाद्य-वानुगताय त्रण्यस्य त्रवास्य । तदुक्तं गारुडे । आनन्तर्येऽधिकारस्य मङ्गलार्थे तथैवच । अथशब्दस्वतः शब्दो हेत्वर्थे समुदीरितइति । अधिकारिगामाह भागवततन्त्रे । आव्रह्यस्तम्वपद्यंन्तमसारश्चाप्यनर्थकं । विद्यायजातवैराग्योविष्णुपादैकसंश्रयः । संउत्तमाधिकारीस्यात् सम्मार्यास्यास्य नाग्यत्यात् । येषां कर्माजिश्वासां विनापि चित्तगुद्धि स्तेषां प्राक्तन साधनं लक्ष्यतद्दति । ब्रह्मपदश्च श्रीकृष्णापरं स्वयं-सम्भावस्ताखिलक्षम्मवान्द्रति । येना नानाजना सार्वस्त सम्भावस्य सम्भावस्य अत्रव्यक्षानशब्देन तत्साधनान्यपिलक्ष्यानीति । इत्थञ्जप्रक-क्षपत्वन तस्यवानगायत्वादित राजायगण्डातायम् राजायम् । अस्य अपक-दित सुत्रार्थकनारदोपदेश तात्पर्ययपर्यवसित भगवित्रिदिध्यासनं खाचरित परमभङ्गलमादौ शिष्यशिक्षार्थं निर्द्दिशति एरं धीमहीति। ाटत सूत्राधकनारदापद्दर्श तात्प्रथप्रथपात्त नगर्या गर्या । वहुवचनं शिष्याभिष्रायं । अथातः शब्दतात् पर्यप्रयंवसितंप्रतत्वध्यानहेतु-विद्येषणामाह सत्यमिति । अञ्यभिचारिसत्ताकं इत्यर्थः । सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मेति श्रुतेः । अत्र स्वामिचरणैञ्याख्यातमेव स्वरूपतटस्य-विश्वापमाह सत्यामात । अव्यामचारित राज राजन र स्वरूपलक्षणम् तटस्यं यावलुक्ष्यकालानवास्थतं विशेषणां तटस्यलक्षणा-कक्षमाभिया उपलक्षयतात सक्तप स्वमवलक्षमा व्यापताच । सत्यत्वेहेतुः पत्र यस्मिन् जिसमा-मित्यर्थः यथा पृथिव्यादेर्गन्धादिकं उत्पिकाले घटादी प्रलयकाले परमागौव्यभिचारेगातटस्थं । सत्यत्वेहेतुः यत्र यस्मिन् जिसमा-मित्यथः यथा पृथ्विष्यादेशन्थादिक उत्पासकाल बटावा नलपनाल पर्याद्या काट्यः भूतेन्द्रिय देवतारूपहृत्यर्थः । यत् सत्यतयामिथ्या इम्हुबासत्यः अतायतं रातरामः । अयागामायागुगामा तमाराज्या सम्बत्यादिरूपान्यसत्यं सत्यत्वेन प्रतीयमानं मिथ्याप्रपञ्चाधिन स्गापिसत्यवेष नवाचे पर तत्यामत्यवे । सत्यत्या नवावत्यु । अथवा आरोपाधिकरग्रास्य ब्रह्मग्राः सत्यत्वं विनाआरोप्य मिध्या-द्यानत्त्रात् । यथा प्राच्यान्य विश्वास्त्र विश्वास्त्र विश्वास्त्र । अथवाघटः सिन्नत्यादिप्रतीतिरिधष्ठान सत्तावलिवनी स्र्गस्यस्त्यत्वनभवात अग्नास्त्रज्ञपात भागा भक्षात । तेजसिजलप्रतीतिवदित्यनुमानेन ब्रह्माः सत्यत्वसिद्धिः पक्षश्चमाती अधिष्ठानस्त्रातिरिक्त सत्ताभाववति सद्भेद्विषयकत्वात्। तेजसिजलप्रतीतिवदित्यनुमानेन ब्रह्माः सत्यत्वसिद्धिः पक्षश्चमातीः अधिष्ठानस्त्रातार्थः सत्यत्वासाद्धः पक्ष अधर्मताः विद्यानस्तर्थः अन्यत्वासाद्धः पक्ष अधर्मताः विद्यादिति । तेजीवारिमृदां यथाविनिमय इतिह्वान्तं व्याकरोति अन्यस्मिन् अन्यावभाषः आरोपः अयंविनिमयशब्दार्थः । ननुष्रह्म-बलाहिति । तजावारकर नामान्य रातरप्टात जाराजा । तणाहि पारमार्थिकसत्ता व्यावहारिकसत्ता प्राति-सत्तायाध्यहिभानेन नीकपस्यापि व्रक्षमाश्चाश्चरातिस्यत स्त्रिश्वासत्तास्त्रीकारयो । तथाहि पारमार्थिकसत्ता व्यावहारिकसत्ता प्राति-सत्तावाधिद्यादमानग्राणकसत्ता व्यावहारिकसत्ता प्रातिन्व सत्ताविकसत्ते । तत्राधावध्यामध्याः द्वितीयाधदादेः प्रपञ्चस्य तृतीयारज्जुसपीदेः पारमार्थिकत्वञ्च ध्वंसप्राग्मावाप्रतियोगित्वं । स्यावः भाविकस्त्रात । तनावाज्य प्राप्ता अविद्याप्रयोज्याचेति । प्रातिभाविकीच अधिष्ठानगता आरोप्य प्रतिभावमाना । स्पादः हारिकीचार्थिकियोपयोगिनी अविद्याप्रयोगिनी आगन्तुकदोषप्रयुज्याचेति । आगन्तुकहोषाश्च हारिकीचाथाक्रयापपा प्रतिभाषमाता। रफदिर हिन्द्रीचाथाक्रयाचेति। आगन्तुकदोषाध्य प्राक्तिभाषमाता। रफदिर क्राही सिक्रिहित जवासीहिस्यवद व्यवहारानुपयोगिनी आगन्तुकदोषप्रयुज्याचेति। आगन्तुकदोषाध्य प्राक्तिकपाद्यः शक्तिकपाद्यी

<sup>\*</sup> ज्यावर्त्तकं — अभेरं।

<sup>\*</sup> पश्च—आश्रय।

## ं श्रीराघामाहनतकेवाचरपति गोखामी भट्टाचाच्यैः।

खुरनोपलक्ष्मगजाहोच निद्रादयःइति। घटादीचप्रातिमाधिकसत्त्रयेव सद्वयवहारे जलाहरगादि व्यवहारानुपपत्तः व्यवहारिक सत्तान्तरं खाकृतिमत्यादिकं आलोक्य कर्णान्तरमाह । यद्वातस्येच परमार्थसत्यत्व प्रतिपादनायतदितरस्यमिथ्यात्वमुक्तमिति । अत्र मिथ्यात्वे पारमार्थिकत्वाविकक्ष प्रतियोगिताकसंत्तात्यन्ताभाववत्वं। कार्य्यजातं मिथ्या ब्रह्मतरत्वात् रज्जुसपैवदित्यनुमान सिद्धप्रपश्चमिथ्यत्वि क्षापनात् मिध्यात्वप्रयोजक ब्रह्मतरस्यब्रह्मग्यसत्वेनमिध्याभावेनार्थायातं सत्यत्वमितिभावः । अथकालदेशे परिच्छेदहेतुनैव मिथ्यात्वे प्रपञ्च स्यानिशों यस्यच अस्यच अस्य तदमावाद्यमिण्यात्वम् इति श्रुतिश्च सदेव सीम्येदमश्रवासीदेकमेवाद्वितीयं इत्युपक्षस्य पतिदात्म्यमिण सर्वे तत्सत्यं सभात्मा तत्त्वमि श्वतकेतो इत्युपसंहरन्ती । ब्रह्मणःसत्यं स्वगत स्वजातीयभेदशून्यत्वरूपमेकत्वं । स्वगतिवजीतीय भद्रशून्यत्वरूपमिद्वतीयत्वश्च दर्शीयत्वा ऐतदारम्यमित्यनेन विश्वस्य ब्रह्मारोपितत्वं दर्शितवती । एवं वाचारम्भगां विकारनामध्येयं मृत्ति कत्यव सत्यं द्यात श्रुत्या वाचारम्भगत्वनानृतत्वं वर्शितं । एवं जगतोमिथ्यात्वं । घटादिप्रतीतिरारोपरूपैव सद्धिष्ठानमन्तरेगान स्तरमत्रति निराधिष्ठानारोपाभावात् तदधिष्ठानस्यासत्वे अनवस्थानादित्यवद्यं प्रपञ्चाधिष्ठाने सदित्यङ्गीकार्य्ये । तस्यसत्यत्वे तत्त्वकप्-मेव खानियतसत्ताकधर्मस्य खरूपानितरेकात् । अतः सत्यत्वं खंरूपलक्ष्यामित्युक्तं टीकायां । महसाखप्रकाश क्षानेन कपटे माया-वसवं जन्मादोति जन्मअ।दियस्यस्तितद्गुणसम्बिन्नान बहुन्नीहिना जन्मस्थितिभङ्गं इत्युक्तं । भङ्गं प्रलयः । मुलेस्तरतस्तिस्तरपदस्यः जन्मादीत्यनेन यत्रदृत्यनेनार्थाच्यत्वनचान्वयः। तत्रजनमादीत्यस्य इतरपदार्थान्वयेषष्ठेचर्थे प्रथमा इतरपदस्य च अत्यन्तामावपरत्वे। तर्थं जन्माद्यमाबात्इत्यर्थः । अर्थेष्वित्यस्य इतरपदार्थोन्वये पञ्चम्यर्थेसप्तमा । इतरपदस्य च भेदाविच्छन्नपरत्वं तसिलञ्चपञ्चमी समार-करवं तेनार्थतरे प्रयोजकार यें प्रया । यत इतस्य यस्य इति षष्ठचर्ये पश्चमी अवधित्व विषक्षयासाध्वी । अन्ययाभेद प्रतियोगिवाचकपद्देपव पश्चम्याइतरादिपदयोगेऽनुर्शाष्ट्रत्वात् पश्चम्यनुपपत्तः। सार्व्वविभक्तिकस्तसिलिति स्त्रानुस्मरगोऽनथेषु अकार्येषु इत्यपिस्यात् । इथ्ये-आकार्यं जन्माद्यमाव प्रयोजकाभाव प्रतियोगित्वसति कार्यान्वय प्रतियोगित्वं कार्यजनकतादिप्रयोजकं लब्धं । यत् तादशकार्यान्वय प्रातियांगित्दवत् तत्जगदुत्पत्तचादि जनकमितिव्याप्तचा जगदुत्पत्तचादि कार्यातया ब्रह्मसिद्धिरिति वापितं । ब्रह्मसो विवत्तोपादा-मत्वं नत्तपरिशामोपादानत्वं इतिवाधनाय सद्वपेशोतिपूरितं । परिशामोपादानत्वं उपादानसत्ता समानसत्ताक काय्योतपादः । विवत्ती-पादानश्च उपादानसत्ताविषयसत्ताक कार्योत्पादः। वन्तुतः जन्मादीत्यत्रादिपदनैवजन्माद्यभावउपस्थाप्यते तस्य च इतरत इत्यनेना-न्वयः। अर्थेषु सद्रूपेगान्वयात्। यतोस्यजनमादिइत्येकांऽर्थः। अनर्थेश्योयद्वयतिरेकात् जनमाद्यभावदत्यपरीऽर्थः। तथाचधूमेनहेतुना यथाकारणस्यबहुरचुमानं तथाकार्येगा जनमादिहेतुना जगतिपक्षे किश्चित् सदन्वयसाधने परिशेषात् वहागाः सिद्धिरित्यन्वयात् इत्य-नतेन सुचित । इतरतइत्यनेन च खपुष्पादिक किश्चित प्रतियोगिताकाभावप्रयुक्तव्यतिरेक प्रतियोगि जन्माचभावादित्यसुमानेन व्यति-रेक प्रतियागितयाब्रह्मगाः । सिद्धिरितिस्चिते । अत्र इतरतइत्येकपदोपस्यापितार्थानां अन्वयेव्युत्पत्तिविरोधः । अलीक संपुष्पादिमान विरोधश्चरयतीव्याख्यान्तरमाह टीकायां अनुवृत्तत्वात इति । समन्वयादित्यस्यार्थः । अन्वयश्चयत्पदार्थे ब्रह्माण अनुवृत्तत्वे व्यापकत्वे अनुसूचतत्वं भेदाप्रतियोगित्वं वा । तथाच जगद्वचापकत्वात् ब्रह्मग्रास्तत्कारगात्वं अनुसूचतत्वश्चजगतितवसत्तापदत्वात् । भेवाप्रति-योगित्वश्च अत्र जगन्निष्ठभंदाप्रतियोगित्वं तत्रप्रमाणं संब्वे खल्विदं ब्रह्मति श्रुतिः । जगतोब्रह्मस्वरूपत्वं ब्रह्मणोजगतुपादानत्वं विना न सम्भवति इतिजगतकारणां ब्रह्मति । नचब्रह्मानिष्ठभेदाप्रतियोगित्वेन ब्रह्मकारणात्वं ब्रह्मणाःस्यादितिवाच्यं तद्नयत्वेसतितिश्रष्ठभेदाः प्रतियागित्वस्यैव प्रयाजकत्वात् । वस्तुतस्तुजगतिब्रह्मभेदेवितेते तदस्वीकारेजगतः सत्तापत्तिरतोवस्यतिसत्रदसुत्यितं सदितिचेन्नतुः तकहत्तिमत्यादि। सर्वे खिल्वदे ब्रह्मदत्यादिशुत्या ब्रह्मतादातम्याध्यासेन जगतोब्रह्मविवनीपादानकत्वे वोध्यते। इथ्यंचानुस्यृतत्व व्यापकत्व वा अनुवृत्तत्वं वाध्यं अनुसूचतत्वश्चात्र भेदाप्रतियागितयाभानविषयत्विमिति । व्यतिरकतदत्यस्यार्थमाह व्यावृत्तत्वित् इत्य-स्यायननान्वयः व्यावृत्तत्वश्चानुवृत्त्वाभाव एवनच घटादिव्यावृत्तत्व पटादावेषीति घटादिकार्यत्वं पटादाविषस्यादितिवार्यं तत्त्वरूपत्वे-स्वति तद्वचानुसस्य तत्कार्यता प्रयोजकत्वात् तत्स्वसपमात्रस्य प्रयोजकत्वे स्वस्थापिस्वकार्यतापसः। अत्र च यत इति पश्चम्याःकार्गा-रवमेव प्रत्याख्याततान्त्रक्षपक्षमेवजन्मादीलभ्यते। नतुविश्विनष्ठकाच्यत्वमपीतिच्याष्ट्रसत्वातं इति अनन्वयापितिस्यतः कल्पान्तरमाह द्वायां सावयवत्वादिति । एतचपूरितं अन्वयद्यतिरेक प्रयोज्यकांक्षातिवृत्तये । अन्वयः कदाचित्सत्वे व्यतिरेकः कदाचिद्सत्वं । टावाया प्राचनित्यया प्राचित्यया । तथाच पृथिव्यादिकं सहतुक जन्मादिकं कदाचित्कत्वात् घटादिवादत्यनुमानेनं सहेतुकत्वसिद्धी मूळ्यत्याचात् । व्रद्धावसिद्धाति इति अवतात्पर्धे अत्राधी वत्यन्वयः अभिज्ञ इत्यननवीध्यः । नेतु श्रुतिसाहाय्यरहितमनुमानं न कुत्रचित् ॥ अन्यत्रपानः । प्रमाशान्तरमेव च । श्रुतिरसृतिसहायस्तत्प्रमाशान्तरमुत्तमे । प्रमाशापदवीगच्छेनात्र कारयेविचारशिति कूरमे-। गत्यत्राप्तः क्रियां वित्व स्वर्था च तन्त्रस्यां चतन्त्रयोक्तरेतद्श्रन्थस्यानुमानमात्रः ग्रूलकत्वेऽप्रोमार्गयशेकास्यादित्यतः श्रुतीः प्रमान पुराधान व गाः ज्ञादित यता वा इत्यादीः । इस्रतेनोद्दाद्दमितिन्यायाच इति स्रीख्यपरिकद्विपत सत्यादिगुरात्र्ययुक्तं प्रधानं न जगत्कारगां ब्रह्मयतोदद्वाद्धः शायात यता न अगळत्वश्चराळात्रीतपाद्यं। शब्दश्चात्रयती वा इमानि इत्यादि श्वतिवाक्यं। तथाच यता वा इत्यादि श्वत्या प्रधानस्य जनत्कर्षृत्वा-आराज्यत्व वर्गा व्यवस्थिति । नमु ताहराश्चरयेवकथे न प्रधानस्य जगतकनृत्ववाध्यते इत्यतआहं इस्रतेः इस्रगाकनृत्वश्चयाति स ऐसत वाधनाय ग्राप्त सन्ति प्रतिक्षम् कर्मुत्ववाधकश्रुतिघटितत्वादितियावत्। नवायं हेतुः राब्द् निष्ठः नतुप्रधाननिष्ठ इति खरूपासिक् बहुस्यान्यात् । १० गतुम्रधानानम् इति सक्षासम्बद्धाः । तृत्यविसित्वचतया प्रधानीप शब्दवाध्यत्वाभावः सिध्यतिइति । हात वाच्य राजार प्राप्त वामावः सिध्यताति प्रधानस्यतास्त्राह्याद्यस्याभावं प्रयोजकञ्च जड्त्वेनेक्षण् कर्मृत्ववाधण्य । विशेषेत्र्यः प्रधानस्यतास्याक्ष्याः प्रधानस्यतास्य प्रधानस्य प् प्रशानस्यताच्याचा प्रदेश्यः । जनतामिथ्यत्वि प्रमाणाभावः । न च प्रशासिक्तवमेचमाने भवन्मते ब्रह्णभिष्ठत्वसेचासिकः । मिथ्यानः भारते तहीक्षीक्षान्ति । सवन्यते जन्मिकः । सिथ्यानः भारते तहीक्षीकः । सवन्यते जन्मिकः । सिथ्यानः भारयं तहाकावा न अवस्थान स्वन्धतं जगतितद्वाधापरीद्वारात् । न च श्रक्षासम्बद्धाः गप्नमतः ब्रह्णामश्रत्वस्थैवासिदः । मिस्यान भिक्षाभिदाङ्गीबार्द्दापे । भवन्धतं जगतितद्वाधापरीद्वारात् । नचकारुद्धापरिच्छेदद्वतनेविभिन्द्यास्य साध्ये अप्रयोजकर्षात् । न च रङ्ख-धिमन्शाभद। प्राप्ता वर्ष वाद्ये । अयं सर्व इति रज्जुशाते धन्यत्र सर्पादरभे सर्पादरभे एत्वाही पुरीवस्ति । संस्थिति रज्जुशाते धन्यत्र सद्दर्भ सर्पादरभे स्वति । प्राप्ति । स्वति स्वविद्याद्वास्ति । स्वति स्वविद्याद्वास्ति ।

\* # ####: |

## श्रीराधामोद्दनतर्भवाचस्पति गोस्तामी सहाचार्यः।

मतुतत्र मिण्या रज्ज्वारोपित सर्पादेमीनं इति इष्टान्तासिक्षेश्च किञ्चारोपोहि प्रसिद्धेवस्तुनि अन्यत्रप्रसिद्धस्य दोववशाद्भवति जगती मित्यात्वे खपुष्पादितुत्यस्य तस्यारोपासम्भवः जगद्मानस्यारोपरूपत्वं रज्जुसपारोपवदर्थकियाकारित्वं घटादेर्नस्यात्। व्यवहारिक सत्वस्याङ्गीकारे तस्यमित्थ्यात्वे न तेन व्यवहार सिद्धः। तस्य सत्यत्वेच सिद्धे ब्रह्मातिरिक्तं इति। बुद्धाजीवोपाधेः सादित्वं प्राक्-तदृर्द्धादेरमावात् बुध्याद्युत्पाद्पवनस्यात्। नच युगपन्नसकलबुद्धादिष्टृष्टिः खीकियते पित्राद्यर्ष्टवशास पुत्रादिजीवोपाधिजनम-स्वीकियते इति वाच्यं । सदेवसीस्यदमप्रआसीदितिश्रुत्या अवान्तरप्रलये ब्रह्मातिरिक्तवस्तु मात्रत्वासत्व प्रतिपादनेनाविद्याया अभावात् । कुतः प्रवश्चसर्ग इति सृष्टि सहकारिमायास्वभावोद्दष्टादेस्तदानीं सत्तावद्यकतया सदेवेत्वेवकारेगा स्थूल प्रपञ्चसैवनिषेधात्। अविद्यालिङ्ग शरीरादीनां अनादित्वमङ्गीकार्य्ये। अनादित्वे च तेषां नित्यत्वमायाति अनादिभावस्यानित्यच्चित्रयमात् इतिद्वैर्तासद्यः। साक्षितया सन्वेत्र ब्रह्मावस्थानेन सर्वस्य ब्रह्मत्वमुक्तं श्रुत्यादाविति । इत्थश्च प्रपञ्चस्यनश्वरत्व मेवनतुमित्थात्विमात । सात्वतमतानु-सारेगा श्रीमत सन्दर्भ सम्मतःगाख्या लिख्यालिख्यते । यथाधीमहीति निध्विशेषवस्तुनोध्यानाशक्यतया मूर्तिमान भगवान् एव परशब्दप्रतिपाद्यइति स्चितं । निर्विवशेषस्यकथिकचद्ध्ययत्वेपि तद्ध्यानस्यवहुतरक्कंशसाध्यत्वात् फलस्यानितशयत्वाच तत्र प्रक्षाबताम-प्रवृत्तेः। तथाच भगवद्गीतासुः। मर्यावश्यमनोयमां नित्ययुक्ताउपासते । श्रस्यापरयोपता स्तेमेयुक्ततमामताः। येत्वक्षर मनिर्देश्यमन्यकं पर्थ्यपासते । तेप्राप्तुवन्तिमामेवसर्वभूतिहतेरताः । क्लेशोधिकतरस्तेषामव्यकासक्तचेतसां । अव्यक्ताहिगतिर्दुः खं देहर्वाद्भरवाप्यते । इति नैष्कर्मयमप्यच्युतभाववर्जितमित्यनेन मूर्त्तभजनस्यैव नित्यत्वमुक्तं इति । तद्भानेहेतुमाह सत्यमिति एतच प्राग्च्याख्यातं । परत्व-मेवव्यअयित धाम्राखेनेति । धामशब्देन तेजोवाचिना खप्रकाशत्व साधम्म्येगा खप्रकाशक्षानमुच्यते तदात्मकेन खेनरूपेगा निरस्तं क्रहकं मोहविक्षेपादिकारितया मायायस्मादिति धामशब्देन ज्ञानमधी शक्तिरुच्यते मायां ब्युछस्यविच्छाक्ताइत्युक्तेः।स्वेनेत्यनेनचिच्छके-रंतरङ्गत्वं निरस्तकुहकमित्यनेन मायायावहिरङ्गत्वं दर्शितं । तेन मायागुणराहित्येन निर्गुणानरञ्जनत्वादिक खरूपभूतगुणवत्वेन च सर्वे-शक्तिमत्वादिकं यः सर्व्ववः सर्व्ववित् यस्यक्षान्मयंतपः । यस्मादेतबह्यनामरूपमत्वश्चजायते । सर्व्वस्यवशीसर्व्वस्येशानः यः पृथिव्यान तिष्ठन् पृथिव्यायन्तरालं सोऽकामयतवहुस्यां तत्तेजोऽसृजं सत्यंश्वानमनन्तं ब्रह्मइत्यादि श्रुतेः। न तस्य कार्य्यकरगाञ्चविद्यते न तत् समन श्चाभ्याधिकश्चहरयते। परास्यराक्तिविविधैवश्र्यते खाभाविकीशानवलक्रियाचेतिश्रुतेश्च। हादिनीसन्धिनीसम्बिनुदर्येकासर्वसंश्रये। ह्यायायमारीमिश्रात्वियगुणवर्जिते इति विष्णुपुराणाच । सर्विवन्दतइति सर्विवित्सर्वेशक्तिरित्यर्थः । तपपेश्वरर्थ इति दिवादि-पिठत धातुनिष्पन्नत्वात् तपःशब्दंन ऐश्वर्यमुच्यते ज्ञानमयं इच्छाप्रधानं ज्ञानपदेनेच्छायामयद् प्रत्ययेन प्राधान्यस्याभिधानात् । अथवा-ज्ञानमयं चिच्छक्तिविलसितं इत्यर्थः। अथवा यस्यक्षानं यद्गोचरक्षानं तन्मयं तदात्मकंतपः। मायानिरसन्लक्षग्रतपःसाधनं तमेवविद्धिन त्वातिमृत्युमेतिनान्यः पन्थेतिश्रुतेः। ब्रह्मवेदं सर्वस्यवशी सर्विनयन्ताइत्यर्थः। अथवा धामशब्देनप्रभावउच्यते गृहदेहित्वद्प्रभावान धामानीत्यमरात् । सत्यत्वयुक्तिमाह यत्रेति तत्सृष्ट्यातदेवान्प्राविशत् इति श्रुत्यावोधित जगत्कार्गो अन्तर्यामितया सर्वत्रस्थिते यस्मिन् स्थितोयं त्रिसर्गोऽसृषासत्यः रज्जौसर्पोदिवदारोपितो न भवति किन्तु सत्यप्वअसत्यत्वे सत्कार्थ्यत्वानुपपत्तेः। अस्तिपवैद्यान सम्भवात् नियम्यत्वाधेयत्वयोरसम्भवाञ्च। एवमसतः सत्कारगात्वाद्यनुपपत्तः। सदेवब्रह्मकारगामन्तर्थामि जगदाधारङ्ख्युन्नेयं। सतः सज्जायतेइतिनियमात् सदसतोस्तात्म्यानुपपत्तेः। सतोबिवर्तः प्रपञ्चइत्यनुपादेयं तथाचोक्तं भगवद्गीतासु । नासतोबिद्यते सतःसकाराज्य गाउनाजा । वार्षेत्र वार्षित्र सत्यक्षेत्र सत्यक्ष्मिति सत्यं ह्येवेदं विश्वससीसृजते इति अतेश्व । सत्यस्य सत्यमिति प्राणाविसत्यं तेषामित्रसत्यमिति च श्रुतेः । अथैनमाहुः सत्यक्षमिति सत्यं ह्येवेदं विश्वससीसृजते इति अतेश्व । सत्यस्य सापानात त्राचावता । सत्यत्वनावगतानां मूलकारगाभूतं परम सत्यं वहोतितदर्थः। परन्तु भगवतः विषा प्राणा शब्दोदित स्थूलसूक्ष्मभूतानां व्यवहारतः सत्यत्वनावगतानां मूलकारगाभूतं परम सत्यं वहोतितदर्थः। परन्तु भगवतः त्वा प्रामा राब्दादित स्यूलपुरमपूराण न्याया गामा । तेन प्रपञ्चो नश्चर इति अमुषात्वेपिमित्थात्व प्रवादइतित्वोध्यं । सत्यत्वे-सत्यत्वानत्यत्यामुख्य अपञ्च तत्पत्यत्यामा पर्यत्व- सत्यत्व- सत्य- सत्य- सत् ह्यान्तिका तजावान्तिक यथावान्तिक प्रतिक्षां तद्श्वस्थिति । अथवा तेजीवारिमृदां यथा यथा वद्यनिमयः परस्परस्मिन् यद्ग्रेरोहितं रूपं तेजसः तद्रपं यच्छुक्कं तद्रपां यत्रुष्कां तद्श्वस्थिति । अथवा तेजीवारिमृदां यथा यथा वद्यनिमयः परस्परस्मिन् यद्वर्गाहतः रूप तज्ञानः तद्वप यञ्छक्षः तया । पर्वप्तानाः त्रयामां मायागुणानां कार्यक्षपः अमृषासत्यः यत्र यस्मन् परस्पराशः समाधारः रूपूलमण्याः पयापत् । पाता मृषामृषावत् नश्वरद्दर्यथः । तथाच ब्रह्मगाः सत्यत्वं विनाशासनकत्तृत्वानुपपत्तिर्शित । शासितारमवात तालावामहात्ययः। यहा रुगारुगार्थः । अम्बरान्तस्य आकाश पर्यन्तस्य सर्व्वस्यधृतेर्धारणात् ब्रह्मे-अत्रसुत्रह्यं अक्षरमस्वरान्तभृतेः। साचप्रशासनादिति तत्रतस्यायमर्थः। अम्बरान्तस्य आकाश पर्यन्तस्य सर्व्वस्यधृतेर्धारणात् ब्रह्मे-अत्रसृत्रक्षय जन्म प्रति । पतिसम्बक्षरेगार्थकोद्याततथ्य प्रतेश्वदति । उत्रिधातु पृथिवी मृतद्यामेकोद्धारमुवनानि विश्वभक्तीसन् वाक्षरं सत्य तथा न उपारमञ्जूषाणाचारायाच्या निर्माणाचारायाच्या । पृथिव्यादि प्रकृत्यन्तं भूतं भव्यं भव्ययत्। विष्णुरेकोविभूत्तीदं नान्यन् वियमाणा।वना व विष्णुरेकोविभत्तीरं नान्य-इतस्मात् क्षमोधृतो । साचधृति प्रशासनादित्याह द्वितीयस्त्रेणात्रश्चतिरिप एतस्यवाक्षरस्य प्रशासन गार्गि सुर्याचनद्वमसौविधृतौतिष्ठत स्तरमात् क्षमावृता । तेज आदितिसृत्तां समाहारमाह श्रुतिः सेयं देवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्रोदेवता अनेन जीवेनात्मना अनुप्रविष्य इत्यादि धृतिः पतनाभावः । तेज आदितिसृत्तां समाहारमाह श्रुतिः सेयं देवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्रोदेवता अनेन जीवेनात्मना अनुप्रविष्य इत्यादि भातः पत्नामान्य अन्त जिन्तमक्षेकांकरवाणीति। तिसृणां देवतानां तेजाऽवक्षात्मकानां मध्ये एकेकां देवतां जिन्त जिन्ति जिन्ति जिन्ति । जिन्ति क्षात्मकानां प्रयोगिकानां मध्ये एकेकां देवतां जिन्ति जिन्ति नामरूप व्याक्षरपार्या परमामादेवताकृतधृतीचेत्यर्थः । त्रिवृत्करग्राश्चतेज्ञोऽवधीनां एवाग्यामकैकं द्विधाविमज्य पुनरेकैकमागस्य द्विधानि त्रिक्षपांकरवासा। तर्वे स्थूलभागं पदित्यज्यक्षम्यदीयस्थूलभागयोरकेकभागस्ययोजनं । त्रिवृत्करसानां प्रतिक्षभागस्य द्विधाः विभागद्वश्चिद्धवियं स्थूलभागं पदित्यज्यक्षम्यदीयस्थूलभागयोरकेकभागस्ययोजनं । त्रिवृत्करसानां प्रतिकरसामेवलक्षितं । प्रस्तु विभागह्यस्व स्वाप्त प्रतियावात्याश्च सर्वचेष्ठाहेतुत्वेन सर्वाविनाभृतत्वात सस्यास्तेज आदिष्वन्तभीवं सिद्धवत्वत्य । अष्ट्व आकाशस्य सर्वावकाशतयावात्याश्च सर्वचेष्ठाहेतुत्वेन सर्वाविनाभृतत्वात सस्यास्तेज आदिष्वन्तभीवं सिद्धवत्त्वत्य । अष्ट्व आकाशस्य प्राप्त पत्रदेवतटस्यलक्षणविशेषणोन दृढयतिजनमाधस्य यन इति । अस्य विश्वस्य जनमादि यत इति तत्रप्रत्यमित्यणः। कर्णां भ्रताबुक्तमिति पत्रदेवतटस्यलक्षणे विश्वस्य जनमादि यत इति तत्रप्रत्यमित्यणः। कर्गां श्रुतावुक्तानः । व्यति वा स्मानीत्यादि विश्वंसंहेतुकं जन्मादि मधोधि जन्नादिमित्यदित्यतुमानमात्रप्रमागां। नतु रेश्वरोनकर्ताप्रयोजन गुन्य तथा सश्रुति:। यती वा स्मानीत्यादि विश्वंसंहेतुकं जन्मादि मधोधि जन्नादिमित्यादित्यतुमानमात्रप्रमागां। नतु रेश्वरोनकर्ताप्रयोजन गुन्य त्याचश्चातः । ना रेथ्वरोतकची प्रयोजन शून्य तथा च स्थापने परमेश्वरं जगत्क मृत्यातुमानं सन्धिग्धप्रामाण्यकं तथोकं तक्षीपतिष्ठानादित्यादि सूत्रेगोति।

## श्रीराधामोहनतर्कवाचस्पति गोस्वामी मद्दाचार्थः।

बास्त्रमेव प्रधानं प्रमाणं वकव्यं तथोकं. शास्त्रयोनित्वादिति सूत्रेगाशास्त्रयोनिःप्रमाग्रस्येति शास्त्रयोनिःतत्त्वात्। तत्र कथं शास्त्र-योनित्वमित्याद्याद्वसमन्वयादिति सुत्रान्तरमुकं तद्र्यभ्य तत्रास्त्रयोनित्वंत्तुराब्दः प्रशक्तादाङ्कानिवृत्त्यर्थः समन्वयः अन्वय-व्यतिरेकाञ्चामुपपादनं तस्मात् । तत्रान्वयेनउपपादनं सत्यक्षानमनन्तं ब्रह्मइत्यादिना व्यतिरेकेनोपपादनं कथमसतः सज्जायतेति । कांद्यंबान्यात्कःप्राययात्यत्येष आकाश्यानन्दोनस्यादित्यादिना प्रयोजनश्चन्यत्वेपि सृष्ट्यादिकर्त्तृत्वं श्वतिष्वानन्दरूपताप्रतिपादने नैवसमा-हित तथांकम् नारायग्रासंहितायाम् सृष्ट्यादिकं हरेरेव प्रयोजनमपेक्षते कुरुतेकेवलानन्दान्तुमत्तरयेव नर्तनं यथेति तद् एव शास्त्रयोनिवतः . बत्तुत्वात् तत्तुममन्वयादिति सुत्रद्वयार्थे प्रमागात्वेनाह अन्वयादितरतश्चार्थेष्विति अर्थेषु नानाविधेषु वेदवाक्यार्थेषु सत् सुअन्वयात् अन्व-यमुंखन व्यतिरेकतश्च व्यतिरेकमुखंन श्चांतवाक्येन यतोस्यजनमादि प्रतीयतेइत्यर्थः तथा च जनमादीत्यनन्तरं प्रतीयते पूरशीयं। अथवा इतरहाति सप्तम्यन्तं च अप्यथें तथा च इतरेषु अर्थेषु सत्स्विप अन्वयात् सर्व्ववेदवाक्यानां तात् पर्यावधारणात् तत्र तयो वा इमानिभूतानि जाधन्ते इत्यादि श्रुतीनां साक्षात्परत्वं अस्थूनमनन्वद्रुखमित्यादिवाक्यानां निषेधावधित्वेन इन्द्रमुपासीतत्यादिदेवतान्तरपराग्रामपि सर्वेषामंशीभूते तस्मिन् परमेश्वरे पर्यवसानेन येप्यन्यदंवताभक्त्वायजंन्ते श्रद्धयान्विताः तंऽिपमामेव कौन्तेयायजन्हिविधिप्रवेकम इति भगवदुक्तेः श्रुत्यघाये च कथम् यथा भवन्तिभुविदतुपदानिनृशां इति । एतं क्रियापराशामि वेदानां ज्ञानसाधने अगवत् प्रत्वं एवं जगत्कनृत्वादीनामन्यत्रवाधेन यत्र तात्पर्यावधारणादस्यविश्वस्यजगत्कर्नृत्वं निराकृतं।ननु ब्रह्माणिश्रुत्यन्वयोदिशतः तत्कथं संगुच्छतं ब्रह्मगोनिर्गुगात्वात् वेदस्यसगुगापरत्वात् । अतएव श्रुतिरपि यतोवाचोनिवर्त्तने अप्राप्यमनसासहइति । अशब्दमस्पर्शमरूप-मित्यादिच । इत्यतथाहस्वराट् स्वेषुस्वकीयेषुभक्तेषु राजतेप्रकाशतेइत्यर्थः । भक्त्वाहमेकयाग्राह्यइत्युक्तेः । भक्तेक्षग्राियत्वादेव श्रुतिगोच-ु रत्वमिति तथा च श्रुतिः तत्रीपनिषदं पुरुषं पृच्छामिइति । सतं परं पुरिशयं पुरुषमीक्षते इति च । एते न ईक्षतंनीशर्द्धामितिव्याख्यातं। व्यक्षितिपक्षःपूरणीयः ब्रह्मणाश्चदं न शब्दागोचरं इक्षतेः इक्षणविषयत्वादिति तदर्थादशब्दत्वश्च अनन्तगुणत्वात् अभक्तज्ञानागोचरत्वाच । ननुहिरगयगभादीनामस्तुजगत् कर्नृत्विमत्यत्थाह तेने ब्रह्महदेति । आदिकवये ब्रह्मगोपिब्रह्मब्रह्मप्रतयावेदं तेने उपादिदेश तं धीमही-त्यर्थः। एतेन जगत्कर्तृत्व वेदकर्तृवोधनेन हिरगयगर्भस्य वेदोपदेश श्रवगोन च नहिहिरग्यनभस्य तत्विमितिफलितं। एष वेदस्य वहावोधकत्वेन शास्त्रगम्यत्वरूप शास्त्रयोनित्वं प्राप्तं शास्त्रस्ययोनिः कर्गा इति ब्युत्तपत्तिकेव्धं शास्त्रयोनित्वादिति शास्त्रस्यार्थान्तरं वहावाधकत्वन शास्त्रभयत्वत्वत् । सचापदेशः हदान्तःकरणद्वारैवनतुवागद्वारा एतेनान्तर्यामितया बुद्धिवृत्तिप्रेरकत्बम् उक्तं । तथा च श्रुतिः यो व्रह्मामां विद्धातित्यादिः। अस्य महतोभूतस्यनिः श्वसित मेतद्दग्वेदोऽजायतद्दत्यादि च। स्मृतिश्चप्रतिमन्वन्तश्चेषा श्चितिरन्याविधीयते इति । निःश्वसित्श्च निर्विदोषस्यासम्भवादतो मूर्त्तिमदेव वस्तुलक्ष्यमनुमानश्चवेदः पौरुषेयम् वाक्चत्वादित्यादि। ननुवेदस्य ब्रह्मापरत्वे कथ क्षियामात्रपरत्वं जैमिनिप्रभृतयोवदाति इत्यत्थाह यतसूरयोपिमुह्यन्ति यत्र अनेन श्लोक्षेनगायत्र्वर्षोदिर्शितः। तथाहि जन्माधस्येत्यनेन साँवत-ामायामा वर्षे । परिमत्यनेन वरेगयमित्यस्यार्थः धाम्नास्वेनेत्यनंनभगेइत्यस्यार्थः स्वराङ्त्यिनेन देवस्यत्यस्यार्थः। नेन ब्रह्महृदेत्यनेनिधयो-

#### भाषा दीका।

हम \* उस परमार्थ सत्यक परतत्वको ध्यान करते है जिसकी सत्यतासै मिथ्या भूतभी मायाके गुगा त्रयका यह सर्ग सत्य प्रतीत होता है। मिथ्या सर्ग की सत्यता में यह इष्टान्त है—जैसे मरीचि का \*में जलकी प्रतीति होती है और मृत्तिका के विकार काचांदिक में जलकी भानित होती है। माया कार्य जगत के आधार होनेपर भी वह अपने खरूप से निरस्त कुहुक है ॥

जिससे अन्वयं और व्यतिरेक के द्वारा जगत की सृष्टि स्थिति प्रलय हाँती हैं। (इससे प्रकृति न समझना चाहिये क्योंकि वह) अभिक्ष है अर्थात ज्ञान खरूप है (प्रकृति जड़ है इसीसै जगत कारग नहीं है तब जीव समझना चोहिये क्योंकि ज्ञान मय है नहीं ) आमक ए । वह खत ! सिद्ध ज्ञान है—जीवती परत ज्ञान वान् है तव ब्रह्मा होगा नहीं ) जिसने ब्रह्माका भी वेद पढाया है। (ब्रह्मा का स्वराद । पर ती और से वेदाध्ययन प्रसिद्ध नहीं है ) जिसने मन से ही ब्रह्मा को वेदाध्ययन कराया है उसी पर तत्वको हम ध्यान करते हैं॥

आर ल पर जिसकी सत्ता से जिसकी सत्ता होना ( अन्वय ) जिसके अभाव में जिसका अभाव होना ( व्यतिरंक ) कहा जाता है। उदाहरण जिल्ला से घूपकी सत्ता होता है (अन्वय) सूर्यके अभाव में घूप नहीं रहती है यह है (व्यतिरेक्ष)। जगत का भी यही है स्थिया ते जगत की सत्ता है ब्रह्मके बिना जगत की कुछ सत्ता नहीं है ॥ १॥

Line of the contract of the co

地名的美国美国克勒斯 医多克斯氏 医多种性 医多种性 医多种性

<sup>#</sup> यहा ( हम ) से शिष्यों का अभिप्राय है। # यह। । २५ / ते जब मध्यान्ह के सुर्यका प्रकाश प्रखर होता है तब बालुका में जलकी सी तरंगें दिखाई देती है। उसे देखकर \* अप्याप प्रति होती है" उसे सुगतुष्णा वा ( मरीचिका ) कहते हैं सुगों को जलकी प्रतीति होती है 

<sup>#</sup> सत्यता खडूप लक्ष्मण है

<sup>\*</sup> यह तटस्थ लक्ष्मण है

# समर्पणम् ।

श्रीमद्वैष्णाबादि सर्वसज्जन समाराधनीय पूज्यपादश्री-मद्वल्लभकुल तिलकायमानपण्डित कुलपति विद्योत्साह विवर्धक श्रीहरिभक्तिपरायण गोस्वामि श्री १०८ देवकी-नन्दनाचार्य महाराजानां करकमले इदमष्टिकासमलं-कृतं श्रीमद्रागवतंहरिभक्तंचा समर्पितमभूत् ॥

समर्पयिताचास्य प्रगातदासः नित्यस्वरूपशर्मबृह्मचारी श्रीवृन्दावनम्

## भूमिका।

हे श्रीभागवतरसमिलिन्दाः।

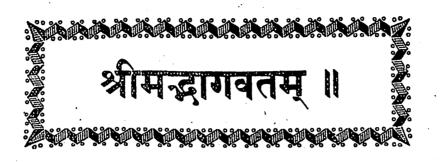
अयतामवतंसतां सतां तत्रभवतां भवतां संप्रत्यसौ सुप्रवृत्तिः प्रवृत्तिः विहायेमांवाचंयमतां कलयन्तुचातिहर्षगुञ्जितानि जितानिशे-तरध्वनीति इह खलु जगति पुरा किल श्रीभागवतकल्पद्रुमतया परिगातं यत्रिभुवनसौभाग्यं निखिलब्रह्मार्षे देवींष राजींष विहितानुष्ठान-समुदायफलं वा तात्कालिकपरम भागवतजनेतरदुष्करानवकर चिरसुकृतसुकृतपटलंवा श्रवणमनननिदिध्यासनशिक्षणद्वारा कलि-युगजनोद्धाराय करुणावशंवदाचिन्त्यानन्तशक्तिसंपत्र जगन्महानाटकसूत्रधारभगवन्नन्दनन्दनप्रेरितभक्तिदेवीस्वरूपमेव वा यस्य चवीजं परम कारुशिकैर्निसर्गधीरैएपि लोकनिष्तितारियणे खरिल्वैर्नित्ययुकैरपिनित्यमुकैर्महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायनचरगौर्विश्वानप्रदीपेन सततम-तिगहने सततमतिगहने निगमकोषेऽद्वितीयतयाकेनापि चतुरवरेण गापायितमपिप्रसद्यान्विष्य भवादशांहिकते शब्दब्रह्माणिप्ररोपितम् यदु-द्भृतोऽयंद्र्मः सिक्तोऽपि तथैतन्महर्षिसंभवयाभगवत्याभारत्या नवरसैर्युथाविरतमद्याविध वर्द्धमानो विविधावतारोत्साही ३वर इवानेक-रूपतां दघदर्शन पथमेत्युपासकानाम् । तथाहि यमिमं भवमहीपाँगैयार पाँग्प्रायगा परानौमतिककितिमत्वा अशिश्रीधरस्वामिपादैर्भावा-र्थदीपिका कूपद्रगडोनिरमायि रचिताच श्रीरामानुजस्वामिमतावंठवि श्रीवीरराघवाचार्यपदिरखिला भीष्टमें के वेतिविचार्य भागवतचं-द्विकानामसुकुञ्चिका प्रकाशितश्च वैकुग्ठमहापथिक सुलभ सरिगिस्त्यवगम्य श्रीविजयध्वज तीर्थपादैःपद्रत्नावलीनाम ब्याख्यानदीपः भवदारुण दवदहनविवीपगक्षम मुदिरतल्लजइत्यवेश्य विवरणपवमानः संचारितः श्रीमधुसूदनसरस्वतीपादैः प्रावन्धिचभावुकवर श्रीविश्वनाथचक्रवर्तिभिः प्रेमदुर्गपुरिखेति प्रतीय सार्राधि दक्षिन्युडुपोपायः दुरारोहगोलोकारोह्या शोभनसोपान परम्परेतिनिश्चित्य श्रीमहाकविजीव गोस्वामिपादैः क्रमसंद्रभावलम्बनयिदः समयोजि यस्यच प्रादुर्भूतान्ध्येनीलमगिकुसुमकलितो द्शमस्कधो बहिर्मुख-जनदस्युनेत्रच्छाया परिहारायेव तोषिगयापेटिक्यावृतः। यश्च मन्ये भगवदेकादशावतारोऽयमिति विद्वद्वरश्रीराधारमण्दासगोस्वामि-भिर्दीपिका दीपनदीपेनदीपितः श्रिविल्यमाचार्यपदि।स्त मक्तिचतचकीराचमनीयचन्द्रिकीतयप्रतिपद्यसुवाश्चिमी राकामाविरकुवन् । योहिद्दार्गलमिव निरयद्वारस्य निक्षोपलमिवसर्वसत्संप्रदायपुरदस्य दिनक्षदिवाज्ञान तिमिरस्य सालनमहौषधमिव सर्वदुरितमलस्य यश्चवेदाद्योऽपिवेदान्तमयःप्रकृतिज्ञान सहितोऽपिविष्रकृतिज्ञानसहितः समाध्याषाद्वन्युक्तोऽपि समाध्यापादनरहितः पूर्वमीमांसापरोऽप्य-पूर्वमीमांसापरः परमाणुवाद्विद्विरुद्धोऽपि नीपरमाणुवाद्विद्विरुद्धं इत्यसवद्दीनमयीऽपि न सर्वद्दीनमयः सोऽयंविरुक्षगाः कल्पतरुः यत्रवत्र कुसुमितचरोऽिपसांप्रतमङ्गोपाङ्क सनाथोवन्दावनेऽिधयमुनाक् एं परमेश्वरक्षपोदयैर्भदीयभागधेयैर्महोदार् सहायमहाशयोत्साहिश्चि रितरोहितग्रंन्थाविभाविश्वसह देवाक्षरमुद्रणमिषेण कुसुमितस्तदेतदीयां सौरभ संपत्तिमनुभवन्तु धयन्तुच मुक्रान्दमाधुरीममोधयन्तु च मनमुद्रणायासंभवन्तः सफ्लीकृत्रश्रायं मुद्रिश्रमः मुद्रण्यं त्रप्रदात्तेन श्रीमदेवकीनदनाचार्य वर्षेमुद्रणस्थलादि समस्तसाहाय्यप्रदानेन श्री राधारमणचरणचंचरीक श्रीमद्गोस्वामि श्रीमधुसूदनाचार्यप्रभृतिसमस्तश्रीगोस्वामिवृदेनच प्रसीदतुचानेन व्यापारेणसर्वान्तर्यामी भग-BELLEVELLE वान् श्रीराधिकारमण्डाति।

शोधकश्चास्य प्रनथरत्नस्य बुद्धावनिवासि पंडितश्रीलक्ष्मगाचार्यः॥

वैक्रमेऽब्दे १९५५ मिते। माघासितपंचमीतिथी॥

विनयभरभुग्नकन्धरो वृन्दावनस्थो । ब्रह्मचारिनित्यस्वरूपशर्मा ।

## ॥ श्री १०८ राधारमगोजयति ॥



---o(-\*-)o---

प्रथम स्कन्धः।

प्रथमाध्यायः।

---o\*o----

ॐ नमो भगवते बासुदेवाय॥

## धर्मः प्रोहिझतकैतवोत्रपरमोनिर्मत्तराग्णांसतांवेद्यंवास्तवमत्रवस्तुशिवदंतापत्रयोनमूळनं । श्रीमद्रागवतेमहामुनिकतेकिंवापरेरीश्वरः सद्योहृद्यवरुष्यतेत्रकृतिभिः शुश्रूषुभिस्तत्कागात् ॥२॥

### श्रीधरस्वामी ।

इदानीं श्रोतृप्रवर्त्तनाय श्रीभागवतस्य कांडलय विषयेभ्यः सर्व्वशास्त्रेभ्य श्रेष्ठयं दर्शयित धर्म्म इति अत श्रीमित सुन्दरे भागवते परमो प्रमों निरूप्ते। परमत्वे हेतुः प्रकर्षेण उज्झितं केतवं फलामिसिन्ध लक्ष्मणं कपटं यस्मिन् सः । प्रशब्देन मोक्षामिसिन्धरिष परमों विरूप्ते। परमत्वे हेतुः प्रकर्षेण उज्झितं केतवं फलामिसिन्ध लक्ष्मणं कपटं यस्मिन् सः । प्रशब्देन मोक्षामिसिन्धरिष तिरूतः। केवलमीश्वराराधनलक्ष्मणो धर्माः निरूप्ते। अधिकारितोपि धर्मास्य परमत्वमाह । निर्मात्सराणां परोत्कर्षासहनं मत्तरः तद्द्रहितानां सतां भूतानुकम्पिनां। एवं कर्ममकांड विषयेभ्यः शास्त्रेभ्यः श्रेष्ठचमुक्तं वस्तु वेखम् नतु वैशेषिकागामिव दृष्यगुणादिरूपं। यद्वा वास्तव शब्देन वस्तुनोंऽशो जीवः वस्तुनः शिक्माया वस्तुनः कार्य्य परमाक्ष्मेभूतं वस्तु वेखम् नतु वैशेषिकागामिव दृष्यगुणादिरूपं। यद्वा वास्तव शब्देन वस्तुनोंऽशो जीवः वस्तुनः शिक्माया वस्तुनः कार्य्य जग्झ तन् सन्वे वस्त्वे न ततः पुणिति वेद्यं अयत्नेव ज्ञातुं शक्य मित्यर्थः । ततः किमत आह शिवदं परम सुखदं । किञ्च आध्यात्मिकादि तापत्रयोन्मुलनञ्च । अनेन ज्ञानकांड विषयेभ्य श्रेष्ठयं दर्शितं । कर्तृतोपि श्रेष्ठयमाह महा सुनिः श्री वार्यगादिर्मा तेन प्रथमं संक्षेपतः छते। देवताकांडनत श्रेष्ठयमाह परैः शास्त्रैः तदुक्त साधनेदर्वा ईश्वरो हृदि किम्वा सद्यप्रवावरुध्यते । त्रस्म संक्षेपतः छते। देवताकांडनत श्रेष्ठयमाह परैः शास्त्रैः तदुक साधनेदर्वा ईश्वरो हृदि किम्वा सद्यप्रवावरुध्यते । तस्य इद्येशः । तस्मादत कान्दुलयार्थस्य च यथावर तर्वि किमिति सर्व्व सर्व्वशास्त्रभ्यः श्रेष्ठं अतो नित्यभेतदेव श्रोतव्यमिति भावः॥ २॥

## दीपनी \*

हृदानीं मंगलाचरणानंतरं कांडतयिषयेश्यः कांडतयं ज्ञान कर्मोपासना रूपं विषयः प्रवृत्युद्वेश्यं प्रतिपाद्यं येषुतेश्यः सर्व शास्त्रेश्य इत्तर्गाराश्चनलक्ष्याः ईश्वराधित वर्णाश्चम धर्मः निर्मत्सराणा मिति विशेषणस्वारस्यात्सञ्छ्येन भूतानुकंपिनामितिष्याख्यातं पर्व इत्तराराश्चनलक्ष्याः ईश्वराधित वर्णाश्चम धर्मः निर्मतः मेव विषयः प्रतिपाद्यं येषुस्मृति शास्त्रेषुतेश्यः, एवं ज्ञान कांड मेव विषयः प्रतिनिर्कतः धर्म वर्णान प्रकारेण कर्मकांड विषयेश्य कर्मकांड मेव विषयः प्रतिपाद्यं येषुत्रश्योपि पूर्वार्थं कर्महनुवेद वतावर जन्म लयो प्रसर मित्युक वुर्वयस्य बृह्याणी भेयत्वापित्तरतोयद्वित वास्तवश्चजीवः वास्तरपाद्यं येषुतेश्योपि पूर्वार्थं कर्महनुवेद वतावर जन्म लयो प्रसर मित्युक वुर्वयस्य बृह्याणी भेयत्वापित्तरतोयद्वेति वास्तवश्चजीवः वास्तरपाद्यं येषुतेश्योपि पूर्वार्थं कर्महनुवेदः वतावर जन्म लयो प्रसर मित्युक वुर्वयस्य बृह्याणी भेयत्वापित्तरतोयद्वेति वास्तवश्चजीवः वास्तरपाद्यं येषुतेश्योपि पूर्वार्थं कर्मान्तर्यः वास्त

अभावार्थ दीपिकायाः दिव्वसीयम् ।

वीच माया वास्तवं जगत् ऐषामेक भावो वास्तवं नपुंसकमनपुंसकेनेत्येकशेषः यथा शुक्कश्च शुक्कंच शुक्कमिती इतिवेद्यमितीति-शब्दस्याध्याहारः कथं भूतंतत्तापत्रयोन्मूलनं तत्बल्ख आध्यात्मिकं आधिभौतिकमाधिदैविकंच तत्नाध्यात्मिकं द्विविधं शारीरं मानसंच वात पित्तरलेमणां वैषम्य निमित्तं शारीरं काम क्रोध लोभ मोह भयेष्या विषयविशेषादर्शनिवंधनं मानसं ततः तादश ज्ञानात् अनेन तादश ज्ञान कथनेन महामुनिशब्दसय नारायण वाचकत्वे समुनिभूत्वा समर्चितयदिति श्रुतिः प्रमाणं ननुकांड त्याच्छ्रैष्टयेन वेद वाहयत्वप्रतीति रत आह तस्मादिति कांडत्वय वैशिष्टयात् अत्र श्री मित भागवते ॥ २ ॥

## श्रीवीरराघवः।

अथ विषय प्रयोजन संवंधाधिकारि रूपमनुवंध चतुष्टय माह द्वितीय इलोकेन । धर्मः प्रोन्झित कैतव इत्यादिना विषयोनाम प्रधान प्रतिपाद्यवस्तुरूपः सचात्र धर्मः सोपिसाध्यःसिद्धश्चेति द्विविधः सिद्ध रूपे वस्तुनि धर्म शब्दप्रयोगो महाभारतेदृष्टःयथा येच वेदविदो विप्रायेचाध्यात्म विदोजनाः तेवदंति महात्मानं कृष्णां धर्मे सनातनं इति तथाभियुक्तैश्चालौकिकत्वे सतिश्रेयः साधनत्वं धर्म शब्द प्रवृत्ति निमित्तं मन्वानैः सिद्ध रूपेऽर्थे धर्मशब्दः प्रयुक्तः । द्रव्यिकयागुगादिनां धर्मत्वंस्थापयिष्पते । तेषामैद्रियकत्वेपिन तद्वपेशा धर्मतिति तत्र सिद्धधर्मः परमात्मा अमृतस्पैषसेतु रित्यादि शास्त्रेशा तस्या कीकिकत्वे सितश्रेयः साधनत्वावगमात् साध्यधर्मस्तु परमातमा राधनात्मिका भक्तिः तत्र सतामित्यंतेन साध्य धर्म उच्यते वेद्य मित्यादिना तापत्रयोनमूळनमित्यंतेन सिद्धर्मः। ईश्वर इत्यादि ना प्रयोजन मुच्यते तचापि द्विविधं व्यवहितमव्यवहिंतचेति तत्रायन्नेनहृदी इवरावस्थापन मन्यहितंफलं तापत्रयनिवृत्तिस्तुभगवदनु भवपरंपरया व्यवहितं फलं संबंधोपि द्विबिधः साध्य साधन भाव रूपः प्रतिपाद्य प्रतिपादक भाव रूपश्चेति। तत्र प्रयोजनोक्त्या साध्य साधन भाव रूपः विषयोक्त्या प्रतिपाद प्रतिपादक भाव रूपश्चार्थो विवक्षितः। एवं सिसाधियषु प्रतिपिपत्सुरूपोममुक्षुरिधकार्यर्थतो।विवक्षितो वेदितव्यः। तत्र साध्य धर्म माह धर्म इति। अत्रास्मिन्पुराग्रो प्रोज्झितकैतवः परमो निर्मत्सराग्रां सतां धर्मः साध्यतयोच्यते इत्यर्थः।कैतवं बंचनं प्रोज्झितं नितरांत्यक्तं कैतवं यस्मिन् अनेन विप्रलिप्सामृलवाह्या गमोक्तचैत्यबंदनादिव्यावृत्तिः । निर्मत्सराणां सतामिति संबंध सामान्येषष्टी । निर्मत्सराणां सतां संबंधी धर्मोत्र साध्य तपोच्यत इत्यर्थः । संबंधइचानुष्टेयानुष्टान भाव रूपः निर्मत्सराणां सतां धर्म इत्यनेन वेदोक्ताभिचारादि ब्यावृत्तिः अभिचारादयोहि मत्सरादिमतामनुष्टेयाः । परमः सर्वोत्कृष्टः अनेन क्षुद्रफलपदकाम्प कर्मव्यावृत्तिः। यद्वा मत्सरशब्दः कामादीनां प्रदर्शनार्थः शमदमाद्युपेतानां मुमुक्षुणां धर्मः अनेनस्वर्गाद्यर्थं कर्मव्यावृत्तिः परमः सर्वेषामेव धर्माणां मुत्त मो वैष्णावो विधिरित्युक्त प्रकारेण भगवत्सन्तोषैकफलत्वात्परमः एवं साध्य धर्म रूपो विषय उक्तः अथैवंविधमोक्षैकप्रयोजनसाध्य धर्मसमाराध्यमेतत्पुरागावेदां परवृह्यात्मकं सिद्धधर्मरूपं विषय माह वेद्य मिति सता मित्येतत्काकाक्षिन्याया दत्रापि संबध्यते अत्रास्मि न्महामुनि कृते श्रीमद्भागवताख्ये पुरागो अन्वर्थमिदंनाम भगवतः स्वरूपरूपगुगाविभातिपादकत्वेन भगवत इदं भागवतामिति ब्युत्पत्तेः। सतां वेद्यं वस्तु वास्तवं शिवदंतापत्रयोनमूलनं वास्तवत्वादि गुगाविशिष्ट मित्यन्वयः महामुनिना श्रीवादरायगोन कृते भुनेर्महत्व मत्रासंभाव्यमानपौरूषेयदोषगंधापौरुषेयप्रत्यक्षः श्रुतिवाक्येन, सहोवाचव्यासः पाराशर्य इत्यनेनाप्ततमतयाश्रावितत्वरूपंविवक्षितं अनेनास्य पुरागास्य वक्तृवैलक्षगाचवत्वं सिद्धं अतपव प्रमागातमत्वंच इतरदेवतानामसद्गुगारोपेगा स्तोतव्यत्वात्तद्वचावृत्यर्थ वास्तवमित्युक्तं । वस्तुनोभावो वास्तवंयुवादित्वा द्वायनांत युवादिश्योणित्पण् ततोमत्वर्थीयोच् स्वाभाविकधमयुक्तमित्यर्थः शिव दं मंगलदं मीक्षानंदप्रदं अनेनेष्टप्रापकत्वमुक्तं तापत्रयोनमूलनं आध्यात्मिकादि तापत्रयोखित्तिकरं अनेनानिष्टनिवर्त्तकत्वमुक्तं यद्वा वास्तवशद्धेन शास्त्रांतराभ्युपेतावृद्धात्मक स्वतन्त्रप्रधानादेवेळक्षगाचमभिष्रेतं अवृद्धात्मकप्रधानादीनामप्रामाग्गिकत्वात् इतरिवशेष-गाइयेनशुद्रोपद्रव शतोपल्पुतपरिमित सुखप्रद्देवतांतरव्यावृत्तिः एवं मोक्षसाधनधमस्तत्समाराध्य पर देवताचास्पप्रबंधस्य विषय राष्ट्रपति यतपवेदमीदृश्विशिष्टविषयकस्तत एव न शास्त्रांतरै: प्रयोजन मस्तीत्याह किंवा परै रिति अपरै: शास्त्र जालै: किंवा न इत्युक्त यतपवद्माहशावाराष्ट्रावपवपारता रूप ग्राम्य । क्या मिन्य प्रमुषुभिः श्रवगोच्छामात्रवद्भि अतएव तत्क्षगात् कृतिभिद्धेन्यैः सद्यः प्तत्युर्णाण अवगानंतर मेव हृदीइवरोवरुध्यते श्रुतिपथेन हृद्यं प्रविशतित्यर्थः यत्नेनचित्तेविनवेशयंतिन्यायेन दुर्प्रहस्येश्वरस्याय-त्नेन हृचवस्थान मन्यवहितं फलं तापत्रय निवृत्तिश्च भगवदनुभवपरंपरयाफलीमत्युक्तं भवति । प्रयोजनेन साध्य साधनभाव हपः विषयेगा प्रतिपाद प्रतिपादक भाव रूपश्च संबंधोधिकारी चार्थ सिद्ध इति पुरस्ता देवोक्तं ॥ २॥

## श्रीविजयध्वजः।

ननुजन्माद्यस्ययतद्दयनेनसकलपुराणार्थस्यसंक्षेपतीर्दाद्यातत्वात्किमुत्तर्दलोकेनेत्यतोग्रंथारंभेमगलाचरणाद्यक्यानारायणस्य प्रस्तुत त्वंनतुसाक्षाद्विषयत्वेन, विषयस्वन्य प्वेति शंक्षानिरासार्थविषयतत्साधनाधिकारिप्रयोजनानि द्वितीयदलोके न दर्शयति धर्महित ननुयदिष्टसाधनत्वाबोधकं प्रायस्तदेवप्रमाणत्योपादेयं अतः कथमस्स्यग्रंथस्येत्यतोवाह धर्महित अत्रश्रीमद्भागवते प्रोहिशतकेतवः प्रमोधर्मः प्रतिपाद्यते अत्र श्रीमद्भागवतेनिर्मत्सराण्यास्त्रतं वेद्यवास्तविश्वदेतापत्योन्मूलनं वस्तुप्रतिपाद्यते किविशिष्टं महामुनिकृते अपरैः किवान्श्रश्रुमाः कृतिभिः अत्र श्रीमद्भागवते अभ्यस्यमानिदेवतः सद्यस्त्रस्थातं हृदिअवरुध्यतद्यकान्वयः अत्रास्मिन् श्रीमद्भागवते, श्रीमद्यामश्रुयमाण्यस्त्रणीयत्यार्थपर्यालेचेन्याचास्यतर्थः आधिन्यंतथाचोक्तं राजितेतावद्म्यानि पुराक्षानिसर्ताण्यो यावकदृश्यतेसाक्षा स्वृतिद्भागवते पर्यमितिश्रियत अनेन अधः पतन् पुरुषदित्रभः श्रीरयतितिधरोभगवानस्यमिति इति विश्वतिकर्तारे रमयित मनुतिहिनस्तिपामिति वा भगवतः प्राप्तिसाधनभूतः ननुधर्मोन्यत्रापि प्रीतपाद्यत किमन्नवेति तत्राह प्रोहिज्ञतक्षित्यः कितवमनुतिहिनस्तिपापमिति वा भगवतः प्राप्तिसाधनभूतः ननुधर्मोन्यत्रापि प्रीतपाद्यत किमन्नवेति तत्राह प्रोहिज्ञतक्षेत्रा कितवंपन सत्रथोक्तः कितवोनामलोकेमनस्यन्यदिभसंधायान्यदिभित्रते अन्यदेवाभिकराति तद्यद्वापि भगन्द्यावः केतवंपन सत्रथोकः कितवोनामलोकेमनस्यन्यदिभसंधायान्यदिभित्रते अन्यदेवाभिकराति तद्यद्वापि भगन्द्यावः केतवंपन सत्रथोकः कितवोनामलोकेमनस्यन्यदिभसंधायान्यदिभित्रते अन्यदेवाभिकराति तद्यद्वापि भगन्द्यादि

वत्र्यातिमंतरेण स्वर्गादिफलंमनस्य संधायमगवद्गु गाप्रतिपादनले लिपनिगमार्थे अन्यथावदन्स्वात्मनोदेहेद्रिया गामी दवराधि एतत्वमी-इवरनियम्यत्वं निगूहचहरेः कारयितृत्वंफलदातृत्वमापे अनगाच्याहमैवेदं करिष्येऽधीसमर्थेविद्वानहमेवस्वतंत्रइतिवुद्धचावायुक्तः कितवः तेन कियमार्गाधर्मकैतवइत्युच्यते अतोऽफलकामनयैवधर्मः कर्तव्यइत्ययमर्थोत्रप्रतिपाद्यत इत्यर्थः तत्कर्मयन्नवंधायसाविद्यायािवसुक्तय इतिश्री विष्णुपुरागो तर्ह्येतावतापूर्यत इतितत्राह परमइति यत्करोषियदैश्नांसियज्जुहोषिददासियत् यत्तपस्यसिकौंतेयतत्कुरुष्वमदेपेगा मि तिस्मृतेः भगवदर्पेग्रतः परमोभवतीत्यर्थः किंचपरः परमात्मामीयते <u>इ</u>नेनेत्येतदीभप्रायेग्रपरमइत्यभिधायि परोरिपरमात्मनोरित्यधिधा-नात् सपरः शतः संसारः मीयतेप्रछीयतेइतिवा मीङ्हिंसायां प्रमीयाहिंसाच संज्ञपनित्यभिधानं किंचयतोअधिकतमः सुखहेतुभेवतिस-परमोधर्मः सच्चमिक्तयोगलक्षराएव तथाच भारते भीष्मयुधिष्ठिरस्वादे कोधर्मः सर्वधमाराांभवतः परमोमतइतिपृष्टे एषमेसर्वधर्माराां धर्मोधिकतमोमतः यद्भक्तापुँडरीकाक्षंस्तवैरचैन्नरः सदेति उक्तंच एतावानेवलोकेस्मिन् पुंसांधर्मःपरःस्मृतः भक्तियोगोभगवति तन्नाम-श्रहणादिमिः नृणामयंपरोधर्मः सर्वेषांसमुदात्हतः त्रिरालक्षणवान्साक्षात्सर्वात्मायेनतुष्यतीतिस्वोक्तेः केषामधिकारः कदचसाक्षाद्विपय इतितताह निर्मत्सरागामित्यादिनाभावप्रधानीनिर्देशः निर्गतंमात्सर्ययेषांतेतथोक्ताः तेषांसतांप्रशस्तकर्भगांपुरुषागां सतामपिकचित्कचि न्मात्सर्यस्यात्तन्नकर्तेव्यं स्वोत्तमेष्वित्यतोनिर्मत्सरागामित्युक्तंश्चेयं कृद्योगेषष्ठीतिसतामिति वेदनंशानमेवनकर्मादिकमित्यतोवेद्यमित्युक्तं वास्तवंनित्यनिरस्तदोषंपूर्यागुर्या वस्तुअप्रतिहर्तानित्यंअप्रतिहर्तनित्यत्वेन वसनशीलत्वादित्यर्थः दःखनिवृत्तिसुखप्राप्तिलक्षणस्यपुरुषार्थ-त्वात्तदभावात्किमनेनेतितत्राह शिवदमिति परमानंदददातिच तापत्रयोनमूलनं आध्यात्मिकादिसकलढुः खनिवर्तकंच वेत्तावेद्यस्यसर्वस्य-मुनिःसद्भिरुद्द्वित्रत्यमिधानान्मुनयो वृह्यादयःतेश्योप्यतिरायितसार्वज्ञान्महामुनिर्व्यासः साक्षाज्ञारायगाः कृष्णद्वैपायनव्यासंविद्धिना-रायगां प्रभुमितिव्चनं तेनक्रतेप्रणीते नजुिकमितिईश्वरतुष्टिकरोभिक्तयोगलक्ष्रणोधर्मईश्वरश्चात्रप्रतिपाद्यो नधर्मादारित तत्राहींकवेति भक्तियोग्रह्मसाधर्मस्यहरेरपरोक्षज्ञानमुत्पाद्यतत्प्रसादांतरंगसाधनत्वेनापवर्ग लक्ष्मणानद्वरफलहेतुत्वाद्वहिर्मुखमनोरंजकत्वेन स्वर्गादि श्ल-यिष्णुवत्फलमुत्पाद्यसंसारावृत्तिहेतुत्वात् धर्मोदिकथनैः किवापयोजननिकमपीत्यतः तानंतरेगाभक्तियोगलक्षगाधर्मस्तद्विषयईश्वरश्चा-त्प्रतिपाद्यतइत्यर्थः ननुदृष्टफलप्रवृत्तिद्वाराऽदृष्टफलप्रवृत्तिदर्शनात् किमत्रदृष्टफलामितितत्राह ईश्वरद्दति अस्मिन् भागवतशास्त्रे सम्यगभ्य-स्यमाने कृतिभिः शिक्षितबुद्धिभिःशुश्रूषुभिः मनोवाकमीभिः गुर्वादिपरमपुरुषपरिचर्याकरगाकुशक्षैः साधनसामत्रयुपेतैरेभिः ईश्वरःलक्ष्मी शादि चेतनग्राहरउत्तमः तत्प्रवर्तनशीलोवा परमात्माहृदिदृदयकमले सद्यःशीध्रंतत्क्षणात्कालव्यवधानमंतरेशा अवरुध्यते भक्तिशृंखलयाब द्धोद्दर्यंतं इत्यर्थः अत्र सद्यः तत्क्षगाराब्दावाधिकीारीविशेषद्यतिकतयाप्रयुक्तायेसाधनसामग्रीमंतस्तेषां यस्मिन्क्षगोग्रंथोपकमस्तिस्मनक्ष-गाएव भगवान्द्रश्यते तदुक्तं शनकैभगवछोकान्नृलोकं पुनरागत्रहति येभविष्यत्साधनसंपत्ति संपादनयोग्या स्तेषामि सद्यः साधनसा-मग्रयांसत्यांदश्यते यन्नियतंकाळांतरमावितङ्झटिति भवत्येवेतिच वक्तुंशक्यत्वाद्भाक्तियोगळक्षगाधर्मेश्वरौ विषतयानिर्मत्सरसदाध-कारिभिः प्राप्तंनिद्धः खपरमात्मानंदाख्यंप्रयोजनमित्येतित्रितयमत्र प्रतिपाद्यत इत्यभिप्रायेगात्रेतित्रिशः कथितं नतुसगुगावृद्धतत्तुष्टिकरः परम धर्मः निराकारं निर्शुगांबृह्यचेति त्रितयाभिप्रायेगात्रेतित्रित्वमिति कर्मदेवबृह्यकांडार्थोप्यत्रैव निर्गातइतिवा धर्मइतिकर्मकांडार्थः निर्मत्स-रागांसतामिति देवताकांडार्थः देवतानामेवमात्सर्यराहित्यनमुख्यसत्वेनात्तमाधिकारित्वाच वेद्यमितिब्रह्मकांडार्थः तस्मान्नारायगावतारगा-स्वज्ञतमेनकृष्ण्द्वैपायनेनाप्ततमेन प्रणीतत्वेन प्रमाणतमत्वादिदं श्रीमद्भागवतं सर्वमुमुक्षुभिनिरंतरमभ्यसनीयमितिसिद्धं ॥ २ ॥

## क्रमसन्दर्भः।

अथ वक्ष्यमाण शास्त्रस्य कर्म्म ज्ञान भक्तिप्रतिपादकेश्यस्त्रिकांड विषयशास्त्रेश्यो वैशिष्ट्यं दर्शयन् क्रमादुत्कर्षमाह धर्म इति । अत यस्तावद्धम्मः निरूप्यते स खलु सबैपुंसांपरो धम्मों यतो भक्तिरघोक्षज इत्यादिकया अतः पुंभि द्विजश्रेष्ठा वर्गाश्रम् विभागशः। स्वनुष्ठितस्य अर्मस्य संसिद्धिंदितोषगामित्यन्तया गीत्या , भगवत्सन्तोषगौकतात्पर्येगा शुद्धभक्तयुत्पादनतयानिरूपगात्परम एवं अतः सोर्डिं तदेक् बात्पर्यातः प्रोज्झितः केतवः । प्रशब्देन सालोक्चादिसर्वप्रकारमोक्षाभिसन्धिरीपनिरस्तः । यत एवासी तदेकतात्पर्यत्वेन निर्मत्स्साणां फलकामुकस्येव परोत्कर्षासहनं मत्सर स्तद्रहितानामव तदुपलक्षणत्वेन पश्वालस्भने द्यालूनामेवच सतां स्वधमम् परम्णां विश्वीयते । एवमीदशं सप्रधमनुक्तवतः कर्मशास्त्रादुपासनाशास्त्राचास्य तत्तत् प्रतिपादकांशेऽपि वैशिष्ठचमक मुभयलवे परमध्यम्भित्पतेः। तदेवं साक्षाच्छ्यग्राकित्तनादिरूपस्य वार्तातु दूरत् एव आस्तामिति भावः। अत ज्ञान शास्त्रेश्योऽप्यस्य पूर्व सुन्यतः । ते व्यक्ति । ते व्यक्ति मगवद्भक्तिनिरपेक्षप्रायेषुतेषु प्रतिपादितमपि श्रेयःसृतिभिक्तमुद्रश्वेत्यादिन्यायेन वेद्यं निः वक्षा । वस्ति वस्ति । वस्ति नर्तस्य संशिक्तत्वमाह। तापत्वयं मायाकार्यमुनमूलयतितन्मूलभूताविद्यापर्यन्तेषंडयतीति स्वरूपशक्ता । त्या प्यामिति । न चास्य तत्तद्वुर्लभवस्तु साधनत्वे तादश् निरूपण सोष्ठवमेव कारण मणित स्वरूपमणीत्याह । श्रीमद्भागवत तु वाराष्ट्रवारा इति भागवतत्व भगवत् प्रतिपादकत्वं । श्रीमत्वं श्रीभगवन्नामादेरिव तादशस्वाभाविकशक्तिमत्वं। नित्ययोगे मतुप्। अत्पव समस्तत्येव इति भागवतत्वं भगवत् प्रतिपादकत्वं । श्रीमत्वं श्रीभगवन्नामादेरिव तादशस्वाभाविकशक्तिमत्वं। नित्ययोगे मतुप्। अत्पव समस्तत्येव निर्दिश्यं निर्होत्पलादिवत्तन्नामत्वमेव वोधितमन्यथात्वविमृष्ठविधयांशताद्विः स्यात्। अत् उक्तं गारुडे । ग्रन्थोऽष्टादशसाहस्रः श्री ानाद रथ । । । श्रीमद्भागवतं भक्ता, पठते हरिसन्निधाविति । टीकार्छद्भिरिप । श्रीमद्भागवताभिधः सुरत्हरिति । अतः क मद्भागवतार्थित ते सत्यभामा भामतिवत् । तादशप्रभावत्वे कार्गा परमश्रेष्ठकर्तृकत्वमप्याह । महामुनिः श्रीभगवान् तस्यव प्रकाशित'। वार्य प्रवार्थ शिरोमिशा श्रीमगर्वत् साक्षात्कारस्वर्वेव सुलेभ इति वदन् सन्वीर्द्धप्रभावमाह किवेति । अन्यैमीक्ष-ज्ञानशास्त्र परम रूप अपान किवेति । अन्यैमीक्ष-पर्यन्तकामनारहितेश्वराराश्चनलक्षणाश्चमम् वृद्धसाक्षात्काराविभिरुक्तैरनुक्तैरनि साध्यरत्रिकिवा कियदा माहात्म्यमुपपन्नमित्यर्थः । पर्यन्तकामनारहितेश्वराराश्चनलक्षणाश्चमम् वृद्धसाक्षात्काराविभिरुक्तैरनुक्तैरनि साध्यरत्रिकाणिक --------------षर्यन्तकामनाराहतस्व । वाज्यस्य साधनानुकमल्डधया भक्या कृतार्थः संग्रस्तिस्य । क्यां माहात्स्यसुपपन्नमित्यर्थः । यता य ईश्वरः कृतिभिः कथाञ्च साधनानुकमल्डधया भक्या कृतार्थः संग्रस्तिस्य हिंदि स्थिरोकियते । स प्यात्र

श्रोतुमिच्छद्भिरेव तत्क्षणमारभ्य सर्व्वदेवेति । तस्मादत् कान्डत्य रहस्यस्य प्रव्यक्त प्रतिपादनादेविशेषत ईश्वराकिषिविद्यारूपत्व्याश्व इदमेव सर्व्वशास्त्रेभ्यः श्रेष्ठं । अतपवात्रेति पदस्य त्रिविक्तः कृता सा हि निर्द्धारणार्थेति अतपव नित्यमेतदेवसर्व्वे श्रोतव्यमितिभावशाश्री

#### सुबोधनी ।

श्रमीशानंचसाधनं ॥ भगवदाविभीवः साध्यः तद्नुतत्रप्रवेशःफलं ॥एतत्सर्वे भागवतादेवभवतीति विशिष्टकल्पद्रमत्वं विधिसंबं घोधम लक्ष्मण चंदरचप्रमार्खं स यज्ञातमकोधर्मः वाचारोपिधर्मः पौराणिकः सत्याद्योपिधर्माः तपःप्रभृतयरच श्र व गा।दयँ च तत्रयोष्ठेषु पूर्वोक्त-न्यायेन अतद्भतोरीप फलसाधनतयोक्तरूपेण स्वर्गादिपद्भमजननाद्वाकापट्यसंभवति आचारेपिशुद्धाशुद्धविधीयेते समानेष्वपिवस्तुष्वि-त्यादिन्यायेन प्रवृत्तिसंकोचार्थ गुगादोषौविधीयेते इतिकापट्यं सत्यादिष्वपिव्यवहारस्यसंनिपात्त्वात् कापट्यं तपःप्रमृतिषुच कःक्षे-मांनिजपरयोः कियान्वार्थः स्वपरद्वहाधर्येण कर्षयंतः शरीरस्थं भूतप्राममचेतस इतिवाक्यात् कापट्यं सर्वत्र विहितानिषेधात् कापट्य-प्रतीति: न तथाश्रवणादिषु किचित्कापट्यमस्ति तद्धर्मकर्वृष्विपकापट्याभावः प्रशब्दार्थः प्रकर्षेणकैतवं उज्जितं यस्मात् सश्रवणादिधर्मेः भागवतप्रव परमञ्चायं भगवद्धभीत्वात परोमीयतइति भगवत्साक्षात्कारहेतुत्वाद्वा परमः कर्तृवैशिष्ट्यादिपधर्मोत्कर्षमाहिनमेत्सराखांसता मिति परोत्कर्शासहनं मत्सरोदोषः कृपालुत्वादिधर्मसंबंधोगुगाः दोषाभावगुगायुक्ताः अस्यर्धमस्य संबंधिनइत्युक्षषःअन्यत्र मात्सर्योदयः स्पष्टाप्य ज्ञानमप्यत्रेवत्याहेवय मित्यादि अत्र वास्तयं वस्तुवयं यज्ञबृह्यकालपुरुषा एव सर्वत्रवयाउकाः तेषामपिवस्तुस्वरूपोभगवानत्रवै वेयउक्त : तदेवहिवास्तवंरूपं सर्वेषां ॥ किंच ॥ स्वप्रकाशस्यापि वेयता अत्रैवशास्त्रेसिद्धानान्यत्र ॥ अन्यत्रवेद्यस्यावास्तवत्वं वस्तुनस्च वेद्यत्वमितिस्थितिः अविद्याविद्ययत्वंच भागवतेतु मुक्तानामधिकारः सर्वावेद्यस्यापि भगवतस्तीद्छ्याप्रागद्धेवद्यत्वं अन्यत्र पर्यवसित-व्दिनामेवतादशे अवास्तवत्वप्रतितिः सर्वेषांवावास्तवं रूपंवेद्यमिति यशादिषुकृतेषु श्रातेषुच नशांतपरमानंदावाप्तिः पारलीकिकत्वाचत-स्यफलस्य सांप्रतंदु:खानुभवश्च आत्मक्षानोपिशांततापरं नपरमानंदस्तस्यैव परमानंदत्वं शास्तृ विप्तिषिद्धं भगवत्साक्षाकारे तु अन्तततः सायुज्येवाशांतता परमानंदः तत्क्षणमेवतापत्रयसयोम् लनं तस्माद्त्रैवफलंसाधंनेचित ज्ञानोत्कर्षः शब्दरसाभिज्ञानामिप इदमेवोत्कृष्टिम-त्याह श्रीमतिलक्ष्मीयुक्ते भागवतेदशरसयुक्त इतियावत् काव्येष्वप्येतछायारूपमस्ति तथापि निदितत्वं कर्तदोषात् तदत्रशंकितमपिने-त्याह महामुनिकृतइति वेद्व्यासकृत इत्थर्थः समाधावनुभूयकृतत्वात् समाधिभावार्थः महामुनिकृतमित्युक्तः असाधारगामुपासनाकांडो-त्कर्थमाह मंत्रशास्त्रमुपासनाकांडः पंचरात्रंच तत्रमंत्रशास्त्रे देवतास्वाधीनाभवति परमेश्वररूपापंचरात्रेपि मंत्राधिष्टानस्वरूपेगीवस्वाधी-नता तथास्थानाधिष्टानेष्विप साक्षात्षुराराषुरुषस्त्वत्रैवहृद्यवरुष्यते अत्पवपरेभगवद्वचितिरमतप्रतिपादिते भेंदेनप्रतिपादितैर्वाकिनाकाचि-द्वित्यर्थः वाशब्दस्त्वनाद्रे अत्रतु ईश्वरः कर्त्तृमकर्तुमन्यथाकर्तुसमर्थः अदृष्टकालादिबाधकंपरिष्टृत्यकर्तु अदृष्टादिकृतं दूरीकर्तुच भूति-ष्विभिक्तेष्वत्यथाकर्तुंच समर्थर्देश्वर सद्यहति भागवतश्रवणमात्रेण हृदयारुढोभवति ॥ विचारचित्तन्व्यतिरेकेणापि अत्रप्रतिपादकानां महापुरुषत्वात् तद्वाक्यंदुर्बोधिमिति बोधनप्रकारमाह कृतिभिः गुश्रूमिरिति बुद्धेः कौशलंकतित्वं उक्तबोधोपयोगिश्रश्रूषातुकथनोपयोगिनी तदुभयसंपत्ती तत्स्रातादेवार्धरुध्यतद्दत्यर्थः ॥ अथवाभागवतस्योत्कर्षमाहिकवापरैरिति भागवतस्य उत्कर्षहेतुभिः अन्यैरुकैरलंवतयनाद्रे अर्थतः शब्दतः उत्कर्षप्रकारावहवः संत्येव तथाप्ययमहानुत्र्कपः यद्भगवानेवसद्योहृद्यवरुध्यतेकः अत्रशुश्रूषुभिः साध्रवगोछामहाभाग्यै-रेवेतचाह कृतिभि:कुश्ले: भाषात्र्य विरोधपरिहारेशा पदवाक्ययोभेगवत्परताहिक्कातव्या अन्यथाश्रुतमप्यश्रुतं भवति तत्स्रशादिति तदानी-मेवभगवद्धी प्रयत्नद्शीनात् तस्मात्सर्वोत्रुष्टं भागवतिमिति बस्तुनिर्देशः॥२॥

### श्री विश्वनाथचक्रवर्ती।

श्री भागवलस्य शास्त्र रूपत्वेत शास्त्राणांच जीवहिताहित प्रदर्शकत्वेन हिताहितयोश्चाधिकारिभेदाद्वादिभेदाच वैविध्ये सर्वे मुलभूतहितस्य निश्चयाशक्ते विधीदतः श्रोतृनानन्दयन्नस्मादेव सर्व्वतोपि सार एव पदार्थः सर्व्वरेव प्राप्तो भवतीति स्पष्टमाह धर्महित । अत श्रीमिति भागवते ईश्वर आश्रयतत्त्वं श्रीकृष्णः कृतिभि निर्मत्सरेरेव तत्मद्योक्तलक्षणाधिकारिभि रित्यर्थः श्रवणादिभिः सद्यप्य हृदि अवरुध्यते बशीक्रियत इति प्रेमा सुचितः तस्य प्रेमैकवश्यत्वात् प्रगायरसनया धृताङ्घ्रि पद्म इति । न रोधयित मां योग इत्यादि-भ्यर्च । ततस्य तत्क्ष्मादेव शुश्रुषुभिरिति । तत्क्ष्मामार्थ्य तेषां अवगार्ष्णच भवेदिति श्रद्धातः पूर्वमेव श्रवमो प्रेमा भवेते । कि पुनः श्रद्धायां सत्यामिति भावः। सकृद्पि परिगीतं श्रद्धया हेल्या वा भृगुवर नरमात्रं तारयेत् कृष्णनामेतिवत् । तथाद्यकमलीकिकपदार्था नां शक्तेरचिन्त्यत्व प्रस्तावे। यह स्वल्पोऽपि सन्बन्धः सिद्धयां भावजन्मन इति ईइवरेमनः स्थिरीकियते इत्येव परमपुरुषार्थं उच्यते। अत्र तु ईइवरो मनसि अवरुध्यते इति ततस्तिक्षिगमनासामध्ये तचावरोधनं सद्यपव बिनापिश्रद्धयेति कापिश्रीकृष्णाकविगीयं महाविद्येति गम्यते । अत्र कृतिभिरिति सद्य इति पदाभ्यामकृतिभि स्त्यसद्यः किन्चिद्विलम्बेनेति लभ्यते । भावुकाः पिवतिति संसारिणां करुणया हेत्युक्तिश्यामुभयेषामप्यत्राधिकारात्। इलेषेगा तस्य श्रीकृषणस्य क्षगादुत्सवाद्हेतो रिति प्रेममयेन हृदा अवरोधादेव तस्य परमानन्द उत्पद्यत इति तत्सुख तात्पर्योगा प्रेस्नो लक्षगामप्युक्तं । अतः किवापरः शास्त्रै स्तदुक्त साधनै वी, न किमपि फलमित्यर्थः पवमस्य शास्त्रस्य प्रयोजनवैशिष्ठचमुक्तं कर्त्तर्थिपि वैशिष्ठचमाह । महामुनिः श्रीभगवान् "समुनिभूत्वा समचिन्तयदिति" श्रुतेः । तेन कृते प्रथमे चतुः इलोकीरूपेगा संक्षेपतः प्रकाशिते कस्मै येन विभाषितोऽयमतुल इत्युक्तेस्ततः संपूर्णपव प्रकाशिते। श्रवगादिभिः किमश्र ज्ञायते प्रथपेक्षायामाह वेद्यमिति । वास्तवं आदिमध्यावसानेषु स्थिरं यहस्त तिम्रिक्तराणां वेद्यं विदितुं साक्षादनुमिषतुं शक्तं तित समत्स-रामान्ति श्रवमाचावृत्या मत्सरापगम पन्नेति तैरपि नात्र प्रयत्नाभावः कर्त्तव्यः तत्पक्षेपि वेद्यं वेवितुमहेमित्यर्थछामादितिभावः । तच भगवतः स्वरूपं नामरूप गुणादि वैकुंठाविधामानिच भक्ताइच भक्तिइचेति अन्यज्ञगन्। विस्वत्मवास्तवमस्थिरं विस्वत्मयो लग्धे वे-मण्या विस्तुत्वेषि वास्तवत्वावास्तवत्वाश्यां भेवद्य वोधितः । ततद्य मिध्याभूतव्युष्पादिकमेवावस्तु इत्यायातं । वेद् नेन

# श्रीविश्वनाथ्यक्रवसी।

कि स्यात् तत्राह । शिवदं प्रेमवत्पार्षदत्विमत्यनुसंहितं फलं तापत्रयविनाशो मोक्ष इत्यननुसंहितं फलम्च दर्शितं । अत्र किमनुष्ठेयामे-त्यपेक्षाया माह धर्म्म इति । प्रकर्षेण उज्झितं कैतवं फलाभिसन्धिलक्ष्मणं कपटं यस्मिन् स इति सकामकर्म्मयोगो व्यावृत्तः। प्रशब्देन मोक्षाभिसन्धिरपि निरस्त इति निष्काम कर्म्म शमदमाधङ्ग क्षान योगाष्टाङ्गयोगाश्च व्यावृत्ताः। परम इति सर्व्व श्रेष्ठत्वेन सर्व्वसुकर-त्वेन फलप्राप्तावप्यहेयत्वेनच शुद्ध मक्तियोगएव उक्त इत्यभिधेयतत्त्वं विषिष्य दर्शितं । स वै पुंसां परोधर्म्म इत्यिप्रमोक्तेरत्र पुं-मात्रस्यवाधिकारित्वं क्षेयं । तथा अत्रात्रेति पदस्य त्रिरुक्ति निर्द्यारणार्था । अत्रैवेश्वरोऽवरूध्यते नान्यत्र अत्रैव वास्तवं वस्तु वेद्यं नान्यत्र अत्रैव प्रोज्झितकैतवी धम्मी नान्यत्रेत्यन्ययोगव्यवच्छेदः। अत्रावरुध्यत एवेत्यादिरयोग व्यवच्छेद्कश्च क्षेयः॥ २॥

The fact that the construction of the state ्र **सिद्धान्तप्रदीपः** अधिकार सम्बन्धाः अधिकार्षे अधिकार्यः अधिकार्यः । १ वर्षः श्रीसर्वेश्वरावनमः एवं मंगलमिषेण श्रीमद्भागवत विषयभूतस्य मगवतोलक्षणमुक्ताञ्यश्रीमद्भागवतशास्त्रस्यविषयप्रयोजनसर्व-धाधिकारीनन्यशास्त्रेश्यः श्रेष्ठचंचाह ॥ धर्मदतिद्वाञ्यांदलोकाश्यांम ॥ श्रीमद्मागवते ॥ भगवत्स्वरूपगुणादिवर्णनरूपा श्रीविद्यतेयस्मि न्तच्छीमत् ॥ भगवतद्दं भागवतंत्वतवत् ॥ एवंविधेभगवच्छास्रे महामुनिकृते महामुनिनासर्ववेदार्थविदा भगवद्वतारेगा पाराश-र्थिग्रामयैवकृते ॥ कर्तृतोपिशास्त्रश्रेष्ठचकथनार्थमिव्मुकं नतुस्वप्रशंसार्थम् ॥ परोत्कर्षासहनादिद्षेषविजतानांसताम् निर्मत्सरागाम् प्रोव्झितकैतवः प्रकर्षेगोज्झितंकैतवं फलामिसंधिलक्षगां कपटंयस्मिन्सः परमोधर्मोमक्तिलक्षगोवेद्यः ॥ किंचात्रतापानामाध्यात्मिका-विदेविकाधिभूतानामुन्मूलनिर्नाशकम् शिवदंमुक्तिद्म् तापत्रयोपलक्षितकार्थकारग्रह्णतसंबंधातिकमपूर्वक भगवद्भावापत्ति लक्षगामोक्षप्रदं वस्तुलक्षगां श्रीकृष्णाख्यंतत्वंवेद्यम् ॥ किंचात्रवास्तवं वस्तुनस्तस्यैवसंबंधिचेतनाचेतनात्मकंपदार्थद्वयम् तत्रचेतनः पदार्थः ज्ञानस्वरूपोज्ञानाश्रयः कर्तृत्वभोक्तृत्वादिधर्मवान् अणुपरिमाणकोवद्मसुकादिभेदवाम्जीवः अचेतनपदार्थश्चप्रा-कृताप्राकृतकालभेदात्रिविधः ॥ एवंचिद्चिद्वह्याख्यं तत्वत्रयंवेद्यमित्यर्थः ॥ एवंकर्तृतोऽधिकारितोविषयतस्रकास्त्रश्रेष्ठचमुक्ता सद्य इष्टार्थ-प्रदत्वेनापितदर्शयति ॥ अत्रशुश्रुषुभिः श्रोतुमिच्छद्भिरेवपुगयकुद्भिरीश्वरः श्रीकृष्णः सद्योहृद्यवरुध्यतेस्थिरीकियते ॥ परै:शास्त्रेस्तद-क्त साधनैर्वाकिमवरुष्यते सद्योनेत्यर्थः ॥ किंचात्रपंचार्थापे अनेनैवइलोकेन प्रतिपादियतुंप्रतिश्वाताः ॥ तथाहि ॥ वस्तूपास्योर्थः ॥ चेतन-उपासकरूपोर्थः ॥ क्रपाफलरूपोर्थौ भगवद्भावापाचिलक्षणामुकिः चतुर्थोभिकरसः पंचमोर्थोविरोधिः सचपुरशब्देनसूचितः ॥ अन्य-शास्त्रागितदुक्तसाधनानितद्धिकारिगाश्च भागवत्रधर्भतत्फलादीच विरोधिनद्दतिभावः ॥ तेचोकापूर्वाचार्येगा ॥ उपास्यक्षपंतदुपासक-स्याच कृपाफलंभक्तिरसस्ततः ॥ परं विरोधिनोरूपमथैतदाप्तेईयाइमेथी अपिपंचसाधुभिरिति ॥ अपिविषयस्तत्वत्रयं पंचार्याश्चवाच्यवा-चकुभावः संबंधः॥ निर्मरसरोधिकारीमुक्तिः प्रयोजनमितिसंक्षेपार्थः॥ २॥

# 

ल प्रमुख्य पुर मुल्लेस्ट्रिक्स का एक्ट्रिकेट स्टाप्ट्रिकेट के जगत में जितने शास्त्र हैं सब ब्रिकांड विषयकहैं। अर्थात कर्मकांड शानकांड और उपासनाकांड, कर्मकांड में वेदसे लेकर कर्म-योग के समस्त ग्रंथ है। ज्ञानकांड मे उपनिषद से लेकर वेदान्त के समस्त ग्रंथ हैं। उपासनाकांड मे श्रुतिरहस्य से लेकर पंचरात और मिक के समस्त मंश्र हैं। इन तीनी कांडों के समस्त प्रन्थों से श्रीमद्भागवत की श्रेष्ठता इस इलोक मे प्रतिपादन करते हैं।

इस श्री भागवत में मत्सर (दूसरों के गुणों में दोष छगाना ) रहित साधु पुरुषों का नह परम धर्म वर्णित है कि जिस में और तुच्छ फलों की ती क्या मुक्ति वर्ष का कामना नहीं की जाती है। इसी से यह कर्मकांड विषयक शास्त्रों से श्रेष्ठ है ॥ शानकांड के शास्त्रों से श्रष्ठता की कारण यह है कि इस से बस्तु अर्थात श्री भगवान का अंश जीय, उनकी शक्ति माया, और उनका कार्य जगत इन तीनों की बास्तवता का ज्ञान होताहै अर्थात इन तीनी का श्रीभगवान से किस अंश में अमेद और किस अंश में मेदहैं यह सब अचिन्त्यभेदामेद तत्वअनायासमे ज्ञान होता है कि जिससे अध्यातम आधिभूत और अधिदेव, इन तीनी तापों का निर्मूखन होकर जीव को परम सुख होता है। । विशेष उत्तमता इसकी यह है कि जिस मांत ऋषियों के हृदय में प्रेराणकर श्रीमगवान में वेदादिकों को रचाहै इसको एसे नहीं रचाहै परंतु निज श्रीमुख से प्रकाश किया है।

उपासनाकांड के ग्रंथों से श्रेष्ठता का यह कारण है कि ओर और ग्रंथों के कथित साधनों से बहुत दिन मे ओर बड़ी कठिनता से विसी भात हुदय में श्रीभगवान की स्फूर्ति होतीहै, पर इसके तो सुनने की इच्छा होते ही श्रीभगवान हृदय में अटल माव से स्थिर किसा भाव कृत्य में स्थार किसी साधन की अपेक्षा ही नहीं रहतीहै। यदि एसा उत्तम और सरल साधन यह है तो सब इसे ही विकास जाति । अपने कहां से इसके खनने की इच्छा विता पूर्व जन्मों के सुकृत के होती ही नहीं हैं। २॥

enter enter en la la la la finanza de la companya de la finanza de la companya de la finanza de la companya de la comp La companya de la companya del companya del companya de la companya de la companya de la companya de la companya del companya de la companya de la companya del companya de la companya del companya del companya de la companya del companya de la companya del compa

rangan pigaritan da

mand in the first the statement of the action of the statement of the stat

# निगमकल्पतरोर्गिलितंफलंशुकमुखादमृतद्रवसंयुतम् ॥ पिवतभागवतंरसमालयंमुहुरहोरसिकाभुविभावुकाः ॥ ३ ॥

# 

इदानीं तुन केवर्छं सर्विशास्त्रेश्यः अष्ठत्वादस्य श्रवणां विश्रीयते अपितु सर्विशास्त्रफळक्षपिष् अतः परमादरेण सव्यक्तित्याह निग-मिति। निगमो वेदः समय कल्पत्रकः सर्विष्कषार्थीपायत्वात, तस्य फळिमिदं भागवतं नाम तत्तु वैकुंदगतं नारदेनानीयमधं दसं मयाच श्रुकस्यमुखे निहितं तच्च तन्मुखाद्भुवि गळितं शिष्यप्रशिष्यादिक्षपपृत्ञ्वपरम्परया श्रुनेरखण्डमेवावतीर्यो नत्त्च निपातेन स्फूटिति। त्यर्थः। पतच्च मविष्यदिष भुतविश्वाईष्ठं। अनागताख्यानेनेवास्य शास्त्रस्य प्रवृत्तेः। अतपवामृतक्षपेण द्रवेण संयुतं। लोकेहि श्रुकमुखन्युष्ठं फळममृतिमव स्वादु भवतीति प्रसिद्धं। अत्र श्रुकोमुनिः। अमृतं परमानन्दः स पवद्रवोरसः। रसो वे स रसं धेवायं लब्धानन्दी भवतिति श्रूतेः। अतः हे रसिकाः रस्त्राः तत्रापि भावृकाः रस्तविश्वेषभावनाचतुराः अहो भृवि गळितिमत्यलभ्यलामोक्तिः। इदं भागवन्तं नाम फळं मुद्धः पिवत। ननुत्वगष्टचादिकं विहाय फळाद्रसः पीयते कथं फळमेव पातव्यं तत्राह रसंरस्क्षं अतस्त्वगष्टचादेष्टेयांशस्यान्याम् प्रकृते कृत्सन्ति कृत्सनं पिवत। अत्र च रस्तादात्म्य विवक्षया रसवस्त्वस्याविविश्वतत्वात् अगुणा वचनेऽपि रस्तराब्दे मतुपः प्राप्तयभावात् तेन विनेव रसं फळमिति सामानाभिकर्यमं । अत्र फळमित्युक्ते पानासम्भवो हेयांशमस्तितश्चभवेदिति तिश्ववृत्यर्थं रसमित्युक्तं । रस्मित्युक्तेष ग्रित्तस्य रसस्य पानुमशक्यत्वात् फळमित्युक्ति त्रान्यत्वात् मागवतामृत्रपानं मोक्षेऽपि त्याज्यमित्याह आलयं लयोमोद्धः अभिविधात्राकारः लयमित्याच नहीदं स्वर्गादिसुखवन्युक्ते रुप्ति केव्यते एव । वस्यिति हि । आत्मारामाद्य मुनयोनिर्या अप्युक्तमे इत्यादि ॥ ३॥

# 

इदानीमिति निगमेति । नितरां गमयित धर्मोदिच्छुविधपुरुषाध्य साधनानि वोधयतिति निगमो वेदः । वेदफलरूपत्वादस्य प्रमाणत-मत्वमिप ध्वनितं । अनागताख्यानेनिति । यद्यप्येतद्यम्यमणयनोपक्रमदशायामस्य शुक्रमुखाद्भुवि गलितत्वं न विद्यते तथापि व्यासस्य सर्वेक्षत्वाद् भविष्य रिप भूतवृत् कृत्वा तेनेवमुक्तमिति भावः । अगुण्यवचनेअप अविशेषणोऽपीत्यर्थः । अत्र रसशब्दस्य विशेष्यत्वेऽपि रसवस्वे विषशामावात् न तदुत्तरं मतुपः प्राप्तरिति भावः । तेन विनेव मतुप्प्रत्ययं विनेव । सामानिधिकरण्यं विशेष्यविशेषणभावः ॥३॥

#### श्रीवीस्राघवः ।

पवं विषय प्रयोजन कथनेपिप्रामाययिक्थयं विनाश्रवणं नोप्रपद्यतहर्याशंक्यवेदांत मुल्तं वदन् चेतनानिभमुखयित तृतीय श्लोकं निगमकल्पतरोरित्यादिना हेरिसका रसक्षाः भावकाः भगवत्संशीलनपराः निगमोवेदः स पव कल्पतरस्तरपरलं फलरूपितं श्रीमाग्रवतं प्राणां आल्यमामर्गपुतः कृतिकत । निगमस्य कल्पतरत्विक्पणं धर्मोर्थकाममासपुरुषार्थचतुष्य तत्साधनाव बोधन द्वारा धर्मोदिफल्जनकृत्वातः भगवतस्त्रत्वरूक्ति निगमस्य कल्पतरत्विक्षणं धर्मोर्थकाममासपुरुषार्थचतुष्य तत्साधनाव बोधन द्वारा धर्मोदिफल्जनकृत्वातः भगवतस्त्रत्वरूक्ति विगमस्य कल्पतरत्विक्षणं धर्मोर्थकाममासपुरुषार्थचतुष्य तत्साधनाव बाधन द्वारा धर्मोदिफल्जनकृत्वातादिकपः कल्पतरकृत्वे नास्ति किंद्वकेवलंपयः कल्पनेपसप्तमप्तिपादिकप्रवादे प्रवादिकप्रवादे प्रवादिकप्रवादिकप्रवादे विगमदुमफल्लक्वास्यपुराणास्य स्वप्यान प्रतिपाद्यनिर्दिश्यानंत्रद्वानं प्रयावन्त्रद्वानं प्रवाद्यन्त्रद्वानं प्रवादिक्षणं विश्वप्रवादिकप्रवादिकप्रवादिक्षणं विश्वप्रवादिकप्रवादिकप्रवादिक्षणं प्रवादिकप्रवादिक्षणं विश्वप्रवादिक्षणं विश्वप्रवादिक्षणं प्रवादिक्षणं विश्वपत्रप्रवादिक्षणं प्रवादिक्षणं विद्यपत्रिक्षणं प्रवादिक्षणं प्रवादिक्षणं विद्यपत्रपत्रिक्षणं प्रवादिक्षणं प्रवादिक्षणं विद्यपत्रपत्रविद्यपत्रपत्रविद्यपत्रपत्रविद्यपत्रपत्रविद्यपत्रपत्रविद्यपत्रपत्रविद्य

#### श्रीविजयध्वजः।

एवंशातफलानामिपप्रेक्षावतांप्रशंसाविधिश्यांभागवतशास्त्र अवाहाश्यासेक्षिप्रप्रवृत्तिःस्यादितिप्रशस्यविधत्ते निगमकल्पतरोरिति भु-विभावकारितिकाः यिक्रगमकल्पतरोगेलितेशुक्रमुखादमृतद्रवसंयुतंभागवतंफलंतस्यरसमालयंमुहुःपिवतेत्येकान्वयः मर्त्यलोकेभवनशीलर सङ्गायुर्यनिगमयीतिनितरांश्रापयत्यपेक्षिताशेषपुरुषार्थानितिनिगमोवेदःसएवकल्पतरुःकल्पितंसंकल्पितंभक्ताकांक्षितेतरितिवितातिद्दातीति

#### विजयभ्वजः

कल्पतरः सुरपाद्यः उपस्रगः स्वयंघातु ही नमर्थप्रकाशयंतिनस्वतं उत्पाद्वतीति श्रीकारवचनदर्शनारातिर्दानार्थोपिभवति विश्राणनंवितरग्रंस्पर्शनमतिपाद्नं इत्यिभधाना स्व तस्माद्व्यासनाम्मामेयाग्रिलं प्रातितं शिवावतारस्यमत्युत्रस्यश्चकनाम्भेतुं स्वाव्यवद्वसंयुतं प्रधाञ्छकाचार्यमुक्षमवचनेनातीवद्वविकृतिम्त्यर्थः तथाचप्रभुराग्रेववर्षिप्रतिगीतमवचनं अवद्वित्यस्य प्रमानवतंत्त्वा पठस्वस्वमुक्षेनापियदी च्छितिमवक्षयमिति मागवतास्यं कर्णकिमप्रक्रितियावत् तस्यक्ष्यस्य प्रधार्मे स्वाव्यक्षेत्रस्य प्रदेशिक्ष प

# क्रमसन्दर्भः।

त्रिकांडतोऽपि श्रेष्ठचं तदीयावयवसारत्विनिर्देशेन दोषपरिहारपूर्वेकं कारणान्तरं योजयन पूर्वितोऽपि वैशिष्टचमाह निगमेति। हे भाबुकाः परममङ्गलायना ये रसिका भगवत्रिगितरसञ्चा इत्यर्थः।ते यूयं वैकुन्ठात् क्रमेशाभुवि पृथिब्यामेव गलितमवतीशी निगमकल्पतरोः सर्व्वफलोत्पत्तिभुवः शास्त्रोपशास्त्रामिवैकुंठमप्यध्यारुद्धस्य वेद्रूपतरोर्यत् सस्त्र रसरुपं श्रीभागवतास्य फलं तत् भुव्यपि स्थिता पिवत आस्वाद्यान्तर्गतं कुरुत श्रीभागवताख्यं यच्छास्त्रं तत्खलु रसवद्पि रसैकमयभावविवक्षया रसशब्देननिर्दिष्टं भागवत शब्देनैव तस्य रसस्या-न्यदीयत्वं ध्यावृत्तं। भागवतस्य तदीयत्वेनरसस्यापितदीयत्वाक्षेपात् शब्दश्लेषेगा च भगवत् सम्बन्धि रसमिति गम्यते। संच रसो भगवत्प्रीति मयएव।यस्यां वैश्रूयमाणायामित्यादि फलश्रूते: यन्मयत्वेनैव श्रीभगवति रसशब्दः श्रुतीप्रयुज्यते रसो वै स इति स एव च प्रशस्यते।रसं ह्ये-वायं लब्ध्वानन्दी भवतीति । अत् रसिका इत्यनेन प्राचीनार्व्वाचीन संस्कारागामेव तिह्नत्वं द्शितं । गलितमित्यनेन रसस्य सुपाकिम-त्वेनाधिकस्वादुत्वमुक्त्वा शास्त्रपक्षे सुनिष्पन्नार्थत्वेनाधिकस्वादुत्वंदार्शितं रसमित्यनेन फलपक्षे हेयांशरहितत्वं दर्शितं । तथाभागवतमित्य-नेन सत्स्वपि फलान्तरेषु निगमस्य परमफलत्वेनोक्त्यातस्य परमपुरुषार्थत्वं द्िशतं। एवं तस्य रसात्मकस्य फलस्य स्वरुपतोऽपि वैशिष्टचे सति परमोत्कर्षबोधनार्थे वैशिष्ट्यान्तरमाह । शुकेति । अत् फलपक्षे कल्पतरुवासित्वादलौकिकत्वेन शुकोऽप्यमृतमुखोभिप्रेयते । ततस्त-न्मुखं प्राप्य यथा तत्फलं विशेषतः स्वादु भवति तथा परमभागवतमुखंसंबन्धम् भगवदगुरावर्गानमपि। तत स्तादशः परमभागवतवृन्द्-महेन्द्र श्रीशुकदेव मुखसंबद्धं किमुतेति भावः अतएव परमस्वाद्धं परमकाष्टा प्राप्तत्वात् स्वतोऽन्यतद्य तृप्तिरपि न भविष्यतीत्यालयं मोक्षानन्दम्प्यभिव्याप्य पिवतेत्युक्तं । तथाच वस्यते । परिनिधितोऽपीत्यादि । अनेनास्वाद्यान्तरवक्षेदं कालान्तरेष्यास्वादक वाह्यव्येऽपि व्ययिष्यतीत्यपि दर्शितं । यद्या तत् तस्य रसस्य भगवत्प्रीतिमयत्वेऽ पि द्वैविध्यं । तत्प्रीत्युपयुक्तत्वं तत्प्रीतिपरिशामत्वं चेति । यथोक्तं द्वादशे कथारमास्ते कथिता महीयसां विताय लोकेषु यूशः परेयुषां । विज्ञानवैराग्य विवक्षयाविभोर्वचो विभूती नेतुपारमार्थ्य । यस्तूत्त-महलोकगुगानुवादः सङ्गीयतेऽभीक्षणममलङ्गद्भः तमेवनित्यं ऋणुयाद् भीक्ष्णं कृष्णेऽमलां भिक्तमभीप्समान इति। ततः सामान्यतोरसत्व-मुक्त्वा विशेषतीऽप्याह । अमृतंत्रलीलारसः । हिल्लिलाकथावातामृतानिवतसत्सुरमिति द्वावदी श्रीभागवतविशेषगात् ली-लाकथारसनिष्वगामिति तसर्वेव रसत्वनिर्देशाच्च सत्सुरमिति सन्तोऽत्रात्मारामाः इत्थं सतां ब्रह्मसुखानुभूत्येत्यादिवतः । त एवसुरा अमृतमात्रस्वादित्वात अत्रत्वमृत लीलारसंस्य सारण्वोच्यते । तस्मादेवं व्याख्येयं । यद्यपि जीतमयरस एव श्रेयान् तथाप्य-भट्ट विवेकः । रसानुभविनौधित् द्विविधाः । पिवतत्युपदेव्याः स्वतस्तद्नुभिवनोलीलापरिकराङ्च । तत्रः लीलापीरकरा पवरससारम-त्रभवन्ति अन्तरङ्गत्वान् । परे तु यतिकिञ्चदेव बिहिरङ्गत्वात्। यद्यप्येवं तथापि तद्युभवमयरससारं स्वानुभवमयेन रसेनेकतया विभा-नुभवन्ति अन्तरङ्गत्वान् । परे तु यतिकिञ्चदेव बिहिरङ्गत्वात्। यद्यप्येवं तथापि तद्युभवमयरससारं स्वानुभवमयेन रसेनेकतया विभा-व्यपिवत । यतस्तादशं तया तादशं शुक्रमुखादगिवतं प्रवाहरूपेगा वहन्तमितवर्थः। तदेवं भगवत्प्रीतः परमरसतापन्तिःशब्दोपान्तव । व्यापण । सर्ववेदान्तसारमित्यादी तद्वसामृततृतस्यत्यादेः एवमेवाभिष्त्य भावूका इत्यत्र रसविशेष भावना चतुरा इति दीका। अन्यत्व । सर्ववेदान्तसारमित्यादी तद्वसामृततृतस्यत्यादेः एवमेवाभिष्त्य भावूका इत्यत्र रसविशेष भावना चतुरा इति दीका। लग्नाः विक्रम्याः । द्वयत्वनं वाण वण्य स्थादि। अत् वेकुन्ठस्थितकल्पतरुपलस्य रसमात् रुपत्वज्य यथा श्रीहयशी तथा रण उठ । इन्यत्त्वं शुणु बृह्मन् प्रवश्यामि समासतः । सर्विभोगप्रदायत् पादपाः कलपादपाः । गन्धरूपे स्वादुरूपं विचराते प्रवत्विनिरूप्यो । देशांशानामभानान्त्र समासतः । सर्विभोगप्रदायत् पादपाः कलपपादपाः । गन्धरूपे स्वादुरूपं वपचरात् प्रवास्त्र । हेयांशानामभावांच्य रस्हपं भवेच्यतत् ।त्व्यनीजञ्ज्येव हेयांशं कठिनांशञ्चयद्भवेत्। सर्व्यतद्भौतिकं विद्यन्ति द्रव्य पुष्पाप्त । रसवद्मीतिक द्रव्यमत्रस्याद्रसरूपकमिति । अत् वैकुंठइति तत् प्रकरणाल्यं ॥ ३॥ भूतमयं हि तत्। रसवद्मीतिक द्रव्यमत्रस्याद्रसरूपकमिति । अत् वैकुंठइति तत् प्रकरणाल्यं ॥ ३॥

सुबोधिनी
काट्यवद्गृपक निरूपण्रेस्पष्टोथोंभवति यद्यपि तथापि मागवते तथा कथनमनुचितं सर्ववेदसारोद्धारत्वात् रूपकादिकंतुवृद्धिपरिकं काट्यवद्गृपक निरूपण्रेस्पष्टोथोंभवति यद्यपि तथापि मागवते तथा कथनमनुचितं सर्ववेदसारोद्धारत्वात् रूपकादिकंतुवृद्धिपरिकं विपंत अतीवाच्यार्थ एववक्तव्यः तत्र प्रमेयस्याप्रसिद्धाविष्यतद्धाक्यान्यथानुपपत्थाताद्द्यां प्रमेय मस्तीतिवोद्धव्यं तत्र व्यापक वैद्धं अप्रविद्यात्र अतिविद्धाविष्य सर्वेद्धाविष्य सर्वेद्धाविष्य मागवद्वतारे आदि मारायगावतारेवा सर्वेद्धाव व्यापक मूर्तिभूतदेवतात्मकतस्यक्ति रात्मके प्रमावविज्ञाविद्यत्वरास्तिततः व्यासाक्यमगवद्वतारे आदि मारायगावतारेवा सर्वेद्धाव व्यापक मूर्तिभूतदेवतात्मकतस्यक्ति रात्मके प्रमावविज्ञाविद्यत्वरास्तिततः

र्गाहरू गणा**स्ट**ावतीस सार्<sub>के स</sub>राज्या स्थापित

#### सुवोधिनी:

मानीतं तदत्र निरूप्यते मध्वादिवत् तत्र असीवाआदित्योदेवमध्विति स्वर्गस्थानां सूर्योमधुयथास्माकं सार्घतथास्वर्गे कल्पवृक्षवत् वैकुंठेपि वेदैकसमधिगम्येशव्दरसात्मकः कल्पवृक्षः नतुरुक्षगा वेदस्योत्कप्रेश्रार्थिकः नितरांगमयतिवृद्धवाश्रयतीतिपरमोपानिषत् निगमःस्र-प्वकल्पत्रः सर्वफलदानसमर्थः कल्पः सचासीत्रुश्चेति कल्पत्रः निगमप्यकल्पत्रः अतिपक्षहिफळंगलति स्वतप्वपतिति आगमनस-मयेपतितं वाशकुंतमिवफलं समानीतिमावः शुकोव्यासपुत्रः मुक्तत्वाद्धिकारी पितात्रहिउत्कृष्टं पुत्रमुखे प्रयक्कतिफलंचिवशेषतः तच्चर-सात्मकं निर्धरेजेलमिवसर्वेदियेसंवद्धं प्रेमरसं जनयति तदेकीमूतं हृद्ये हृद्द्वतिष्टति तत्र भागवतंसदिलष्टसत् भक्तिरसालोडितं मु-खान्निः सरतीति शुक्तमुखं प्राप्यअमृतं मोक्षमपि द्रावयतिशिथिलंकरोतीति भक्तिरसः अमृतद्रवः तैनसंयुतं अनेनरसाद्ध्युधिकरसंदक्तः यदिप वृक्षीत्कषेषवतावृद्याफळजननादायाति तथापि उत्कर्षेहेतुः फळजननमिति प्रकृतोत्कर्षः अथवा राज्यात्मके वृक्षे राज्यापि अपनि सुन र्ववेदार्थविचारे मगबध्ददयपवफलितं निर्द्धारितार्थ प्रतिपादक शष्टराशिः "शुद्धाश्चसुबिन श्चेवं ब्रह्मविद्याविशारदाः भगवत्सेवन् योग्या-नान्य इत्यर्थतः फलं असमर्थी गोप्योपि भक्तचितया परवशस्य भगवतो हृदयोदागत मिति गलितं अन्ये मगवदुपा अवताराअधिकारीगोवा अतोत्यंत विरके शुके ग्रंथार्थः फलित अतस्तहृदये भक्तिरसः स्थितः भागवतं वस्थितं सुखान्निगमनसमये समानाधिकर्या भक्त्यासह तिगच्छतीति तथेत्यर्थः सम्पग्योगोहि यथाकथंचि च्छ्वगोपि अधिकारि दृदये मक्त्रावैद्यात् पिवतेत्युपदेशः स्वाध्यायो ध्येतव्य इतिवत् विहः स्यितस्य इन्द्रियादि द्वाराअंतः प्रवेशनं पानंतत् द्रवद्रव्यस्येति रसमित्युक्तं भागवतमिति ग्रंथनाम भगवसं वद्धमितिवा शब्दअवशो न अर्थज्ञानं नेतरं रसास्वाद नमति रिक्तामिव भवति सीत्कारेण तस्यपानात् तथाभागवतं पातव्यं नतुश्रवणमात्रं कर्त्तव्य मित्यर्थ त्वगस्था दिकन्तुनास्ति निर्वीजदाडिमादि वत् रसात्मकान्यपिका निचित्फलानि संति यथापृथिव्यादिरसाउम्बीथांताः तथा रसात्मकस्य भगवतो भागवतंरसः ततः स्पर्शनमात्र योग्यंनभवति र्कितुपान योग्यभित्यधः अस्यरसस्य बह्यतामाह आलयमिति सर्वाधारभूतं आसमंताल योयस्मादिति सर्वप्रपंच लय हेतुभूतंवा आईष्छयो मोक्षो यस्मादितिवा मोक्षेछांपरि त्यज्यतत्पातव्य मिति मुहुरितिव्यासस्य परघश त्वमापाद्यति अन्यथारिसकाः स्वयमेव पास्यंतीतिब्यर्थ वचनस्यात् मुद्धः पानवाविधीयतेरसञ्चानाय प्राकृतकर्यौरापानतस्तद्वसास्वा-दनं नमवतीति वस्यतिच परस्परत्वग्दुगावादसीधुपीयूषनिर्यापितदेह धर्माइति अहोरसिका इत्याश्चर्येगा संवोधनं भवतामेवार्थे अयं-रसः समानीत इति भूमी भावुकाः भविष्णावः भावना चतुरावा विस्षृतेषि रसेभावनया रसाभि निवेशंकुर्वेतीति मुहु पानस भवति भुवि भाग्यवतांच वहुवचने नएकस्य रसाभिनिवेशोनभवतीति सूचितं एवं वीजमध्यभावफलक्षपतामुक्तवा श्रोतृनिभ मुखि कृत्यशास्त्र मारभते ॥ ३ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्सी।

एवमस्य शास्त्रिशोमगोरीश्वरावरोधकत्वादिप्रभावम्य मैश्वर्थमुक्त्वा माधुर्यञ्चाह निगमोते । निगमोवेदः स एव कल्पत्रः तस्य स्वाश्रितेश्यो वांच्छित विविध पुरूषार्थ रूप फलदायित्वेऽपि तरूत्वात् यत् साहजिकं तदिदं भागवतं फलं । रहेषेगा भगवतस्वामिकमिदं तेनैव स्वभक्तेश्यो दस्तमिति तान् विना न कस्याप्यान्यस्यात् सन्त्वारोपे शक्तिरिति भावः । गलितमिति वृक्षपकतिया स्वयमेव पतितं न त्व बलात् पातितमिति स्वादुसंपूर्णत्वं नचोच्च निपातनेन स्फूटितं नाप्यनित मधुरं चेत्याह शुकेति । परमोद्धेचुडातः श्रानारायगात् तु बलात् पातितानात स्वाकुरा रूपायां ततोऽध्रस्ताद्वचासशाखायां ततः शुक्रमुखं प्राप्य भातपान्मिध्ववअमृतद्वव संयुत् । शुक्रेनेव तेन स्वचं व्यव अमृतनिष्क्रमणार्थं द्वारमपि कृतं अथच तेन स्वादितत्वादितमधुरं ततः स्तादिशास्तातः शनः शनः पतनादसंडितं तेन गुरुप-रम्परां विना स्वबुद्धिवलेनास्वादने श्रीभागवतस्यखंन्डितत्वे पानाशक्तिः सूचिता । नवु कथं फलमेव पातव्यमित्यतं आह रसमिति । रमपरा विना स्वजास्वलमास्वारमञ्जार । एक्सेसिक्स सालाक्यादि जीवन्युक्तवं वा तमिकव्याच्य तत्र तत्र भगविद्धी-रसस्वरूपमृत्रद् पाल नाम त्याद्याप्य पानितः प्रलयोऽष्टमः सात्विक स्तत् पर्व्यन्ते पिवतत्यनेन पानस्तम्भाद्याः सात्विका भवन्ताति श्रया तथ अलय सात पानस्थास्पष्टत्याप नवादाधिवयमेवेत्यहो इत्यति विस्मय रसिकाः हे रसन्ना इति भक्तानामेव जातरतित्वादतेरव यक्षा भुद्धारात पातस्थाप पुनः पान रनाराजनात्र कार्नि किम्मियोगिनां कोपि दाय इति भावः । हे भावुका स्तत एव यूर्यमव कुरालिनो स्थायिभावत्वात स्थायिन एव रस्थमानत्वात् नात्र ज्ञानि किम्मियोगिनां कोपि दाय इति भावः । हे भावुका स्तत एव यूर्यमेव कुरालिनो स्थायसावत्वात् स्थायन एव रस्यमानत्वात् गान साम गाना । तथाहि भावकत्व व्यापारेशा भाव्यमानः स्थायी सुज्यते हति। अन्येऽमञ्जूला प्वति भावः । भावका हति पाठेभावकत्वव्यापारवन्तः । तथाहि भावकत्व व्यापारेशा भाव्यमानः स्थायी सुज्यते हति। अस्य अम् क्रिका प्रवाद नाव । मायका हात पाठना प्रवाद । तथाहि तैत्तिरीयकोपनिषदि । बृह्मविदाप्तीति प्रमित्युक्त्वा वृह्मगाः सका-भान आकाशादि क्रमेगाश्वयय विराहपुरुषपर्यन्तां सृष्टिमुक्तवा तस्य चान्तरन्तिः कर्मेगा तस्माद्वा एतस्मादन्य इत्यादिना अन्नमयुपागा-मयमनीमयविश्वानमयानन्दम्या आस्वायन्तेतेष्वपि आनन्दमयस्यैव आनन्दमयोऽभ्यासादित्यनेन ब्रह्मत्वं । मतभेदेच तत् पुच्छस्यैव आनन्द आत्मा बृह्मपुञ्छं प्रतिष्ठेत्यनने बृह्मत्वं बृह्ममा एव प्रतिष्ठात्वञ्च प्रतिपादिते । सदनन्तरञ्च रसो वे स रसं ह्यायं छञ्द्रानन्दी अविति श्रूयते । तत्र श्रुती च स इत्यनेन प्रकान्तआनन्दमयोवाततः पुच्छं ब्रह्म वा न परामृश्यते पृथक् पृथगुत्तराचरार्थ प्रकर्ष प्रितपा-दिकाषु अन्नमयादि श्रुतिषु अन्ते तस्याः पाठात् प्रक्रमभङ्गापत्तेः । ततद्य तस्या अयमर्थः स प्रसिद्धो वै निहिचतं रसपव आनन्दमयात् तथा बृह्मतोपि आन्तरः प्ररुष्टः बृह्मगोहि प्रतिष्ठाहिमित्यनेन श्रीकृष्णस्यैव बृह्मतः प्ररुष्टत्वं मल्लानामश्रानिरित्यत्र तस्मिश्चेव यौगपञ्चेन सर्वरसस्यसाक्षाद्धपळण्येस्तम च शृङ्गारादि सर्वरस कदम्ब मूर्तिभेगवांस्तदपिप्रायेगा व्भाविति श्रीस्वामिचरणानां ज्याख्यानाच्यतस्यव सर्वरस रुपत्वं चातः श्रीगीता श्रीभावगताध्यामेव रसदाब्देन श्रीकृष्णाएव व्याख्यातः तमेवायं विश्वानमयो लब्ध्वाश्रानन्त्रपदावाधि काष्टां पाप्नीति सेवानन्दस्य मीमांसाभवतीति तदुत्तर् श्रुत्या रसपव तस्मिश्नानन्दिचचारपर्ध्यवसानज्ञापनात्। यद्वाअयमानन्दमयोपि विजात्मजा पाप्राप में युवयो दिहश्चुगोति विस्मापनं स्वस्यच सोभग्र हेरित्यादिश्य स्तमेव लब्ध्वानन्दी भवतीति। ततस्य तं रसं श्रीकृष्णं फर्लं निगमकल्प-

#### विश्वनाथ चक्रवर्ती।

तरो स्तस्मात् सकाशात् गिळतं न तु तत्र साक्षात् स्थितमिति । तदर्थे निगमो नान्वेष्टव्यः किन्तु शुक्तमुखमेवेत्याह शुक्रमुखादिति । फळ-मिद्मति स्वादु श्वात्वा तत आकृष्य आनीय व्यासेन स्नेहात् स्वपुत्र मुखपव निहितमिति संभाव्यत इति भावः । किम्बा शुक्सुखादिति हेती पञ्चमी येषामहं प्रिय आत्मेत्यादि शुक्रवाक्यप्रामाण्यात्। भुषि वज्ञभुमाञ्चत्पद्य हे भावुकाः रसिकाः स्त्रियः सत्यं भागवतं भगवत्-स्वरुपमृतरसमाधुर्य पिवत । यद्वा मगवतः श्रीकृष्णास्य एसं आलयं लयः इलेष आलिङ्गनमिति यावत् तमभिन्याप्य । अमृतोऽनश्वरो या-द्वो मनोनयन द्रौत्यं तत् संयुक्तं पथास्यास् तथा पिषतेत्यधरपानं खुचितमिद्मेव निगमकल्पतरोगेळितं परिपक्षं फलमिति फलतो गोपीजनानुगतिमयी रागानुगाख्यामिकरादिष्टा। थतो निगमोपि तल्लोमादेच वृष्टद्वामनष्टशं ताष्ट्यीं मिन्ति विधाय वजभुमानुत्पद्य शतसर् स्त्रशो गोप्यो भूत्वा तद्वधरामृतरसं पपाविति ।वेदस्तुतौ दष्टाभिति अतिरहस्योऽर्थः । ननुवृद्धागोहि प्रतिष्ठाहिभत्येतत्केचिदन्यथा ब्याचक्षते सत्यं तद्प्राकरिशकत्वात् कल्प्यत्वादयुक्तमेव भन्तव्यं किन्त्वेवमेव युक्तं । तथाहि । माञ्च योऽव्यभिचारेश भक्तियोगेन सेवते । स गुगान् समतीत्येतान् ब्रह्मभूयाय फल्पते ॥ ब्रह्मणोहि प्रतिष्टाहममृतस्यान्ययस्य च । शाश्वतस्य च धर्मस्य सुसस्यैकान्तिकस्यचेति । अनयोरर्थः । ननु त्वद्भक्त्वा कथं निर्गुगाबद्धामाप्तिः सा तु अद्वितीयतदेषानुभवेन भवेत् तत्राह ब्रह्मगोहीति । हि यस्मात् परम प्रतिष्टात्वेन प्रसिद्धं श्रुतौ यद्बद्ध तस्याप्यहं प्रतिष्ठा प्रतिष्ठीयतेऽस्मिन्निति प्रतिष्ठा आश्रयः अन्नमयादिन्तु श्रुतिन्तु सर्वित्रेव प्रतिष्ठापदस्यतथार्थत्वात् । अतप्रवामृतस्य मोक्षस्याप्यहं प्रतिष्ठा तस्य सक्ष्मण्या स्वर्गादि परत्वं वार्यात अव्यय स्येति तथा शाश्वतस्य साधनफल-दशयोरिपिस्थितस्य धर्ममस्य अस्वाष्यस्य अहं प्रतिष्ठा तथा तत्रप्राप्यस्य पेकान्तिकस्य सुखस्य प्रेम्नश्च प्रतिष्ठा अतः प्रापाराचार । अत्र विवास निया कृतेन सद्मजनेन महािशा लीयमानी ब्रह्मधर्मप्रमीप प्राप्नोतीति । अत्र श्रीविष्णापुरागा-सञ्चरपार गर्मा । शुभाश्रयः सिंचत्तस्य सर्वगस्य तथात्मन इति । व्याख्यातम्य तथापि श्रीखामिचरगौः । सर्वगस्यात्मनः माप अलाखा । जुकां भगवता ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहमिति । तथा विष्णुधम्में प्रपि नरसद्धाद्शीप्रसङ्गे । प्रकृती पुरुषे चैव परम्बार्यपि च सप्रभुः।यथैक एव सक्वीत्मा वासुदेवो व्यवस्तित इति । तत्रैय मासर्क्षपूजाप्रसङ्के।यथाच्युतस्तं परतः परस्पात् स्वस्म्भूतात्प-ब्रह्मर्याप च प्रवाह प्राप्त के प्राप्त क्षा कार्य के स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स्वाह स् रतः परात्मा ।तथाच्युत त्वं कुरु वास्थितं तन्प्रमापदं चापहराप्रमेयेति । तथा हरिवंशेऽपि विष्रकुमारानयनप्रस्तावे अर्ज्जुनं प्रति श्रीभगवत्-रतःपरात्मा ।तयाण्युरा रव उर्प नार्या । समेव तक्षनं तेजो ज्ञातुम्हिस भारतेति ॥ ब्रह्मसंहितापि। यस्य प्रभा प्रभवतो जगद्यड-वाक्यं । तत् परं परमं ब्रह्म सर्व्वे विभजते जगत् । ममेव तक्षनं तेजो ज्ञातुम्हिस भारतेति ॥ ब्रह्मसंहितापि। यस्य प्रभा प्रभवतो जगद्यड-वापया पर्या पर्या निष्या विषय । तद्बह्य निष्याल्य मनन्तमशोषभूतं गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामीति। अतएव श्रुतिश्च गोपालतापनी योऽसी जाग्रत्खप्नसुबुप्तिमतीत्य तुर्थातीतो गोपालस्तस्मै वै नमो नम इति ॥ ३॥ .

# सिद्धान्तप्रदीपः।

निगमकल्पतरुफलक्षपत्वाद्स्यान्यशास्त्रिश्यः श्रेष्ष्ठमाह ॥ निगमेति ॥ निगमोवेदः सगवकल्पतरुः ॥ तस्यशुकमुखाद्गलितमिदंफलम् ॥ सर्ववेदसारंश्रीमद्भागवताल्यंमहापुराणामित्यर्थः ॥ सर्ववेदितहासानां सारंसारं समुद्धृतमितिवस्यमाणात् ॥ अखिलित्वस्चनार्थं फल-सर्ववेदसारंश्रीमद्भागवताल्यंमहापुराणामित्यर्थः ॥ सर्ववेदितहासानां सारंसारं समुद्धृतमितवस्यमाणात् ॥ अखिलित्वस्चनार्थं फल-सर्ववेदसारंश्रीमत्युक्तमः ॥ असारांशवार्जितत्वस्चनार्थरसमित्युक्तमः अमृतेनमोक्षरूपेणद्रवेणः रसेन प्रतिपादकत्यासंयुत्मः ॥ हे रसिकाः हे मित्युक्तमः ॥ असारांशवार्जितत्वस्यायामपिपवतेत्यर्थः भक्तिरसाखादकुश्वालाः॥ हेभावुकाः हेभावविशेषकुश्वालाः ॥ आल्यंमोक्षमभिन्याप्यपिवत मुमुक्ष्ववस्थामारभ्यमुक्तावस्थायामपिपवतेत्यर्थः मकावुपास्यो पासकस्वरूपमेदः ॥ सोश्चते ॥ सर्वान्कामान्वद्वाणोत्यादिश्वतिभिः ॥ प्रतिपादितगव॥ भुविगलितिमत्यनेन वैकुंठादेवेदंमुमुक्ष्-पकार्यभगवतावद्वादिद्वाराप्रवर्तितामित्यस्यशास्त्रस्य वेदसार भृतस्यिनत्यतासृच्यते ॥ ३ ॥

#### भाषा टीका।

अहो भावुक! रसिक! सज्जन गर्या ? यह वेदकल्प वृक्ष का रसमय फल श्रीमागवत पान कीजिये यह अमृत बृह्मधाम में था श्रुकदेवजी के मुख से पृथ्वी में गिरणया है। जैसा कोई शुक पक्षी बड़े आमको चींच में लिये जाता हो और वह वोझ से गिरपड़े इसी शुकदेवजी के मुख से पृथ्वी में गिरणवा के लिये श्रीमागवत अध्ययन कियाथा. पर उस से इतना आनन्द बढ़ा कि हृदय में म समाया भांत श्रीशुकदेव मुनी ने अपने आनंद के लिये श्रीमागवत अध्ययन कियाथा. पर उस से इतना आनन्द बढ़ा कि हृदय में म समाया भांत श्रीशुकदेव मुनी ने अपने आनंद के लिये श्रीमागवत अध्ययन कियाथा. पर उस से इतना आनन्द बढ़ा कि हि पर यह तब राजा परीक्षित को श्रवणा करा नहीं है। साधनदशा में हिए पद लाम का साधन भी यही है और सिद्ध दशा में मुक्त पुरुषों का फल रस रूपहें इस में कुछ हेय अंश नहीं है। साधनदशा में हिए पद लाम का साधन भी यही है और सिद्ध दशा में मुक्त पुरुषों का कल रस रूपहें इस में कुछ हेय अंश नहीं है। साधनदशा में हिए पद लाम का साधन भी यही है और पित्र दशा में मुक्त पुरुषों का कल रस रूपहें इस में कुछ होय अंश नहीं है सुतरां यही सब समय में पेय हैं इसी को बार वार पान कीजिये॥ ३॥ खान ही हिएगुणा गान करने का होता है सुतरां यही सब समय में पेय हैं इसी को बार वार पान कीजिये॥ ३॥

# अनैमिषनिमिषचेत्रेऋषयःशौनकादयः ॥ सत्रंखर्गायलोकायसहस्रसममासत्॥ ४॥

#### श्रीधरस्वामी ।

तदेवमनेन इलोकत्रयेन विशिष्टिदेवतानुस्मरगापूर्वकं प्रारिप्सितस्य शास्त्रस्य विषय प्रयोजनादि वैशिष्ठयेन सुससेन्यत्वेन च श्लोत्न्मिसुक्षीकृत्य शास्त्रमारमते। अनेमिशे इति। ब्रह्मगा विसृष्टस्य चक्रस्य मनोमयस्य नेमिः शीर्थ्यते कुन्ठीमवित यत्रतन्निमिशे नेमिशेमव नेमिशं तथाच वायवीये। पतन्मनोमयं चक्रं मया सृष्ठं विसृज्यते। यत्रास्य शीर्थ्यते नेमिः स देशस्तपसः शुमः। इत्युक्त्वासुर्य्यसङ्काशं चक्रं सृष्ट्वा मनोमयं। प्रिण्यत्य महादेवं विस्तर्कापितामहः। तेऽपि इष्टास्तदा विष्राः प्रशास्य जगतां प्रभुं। प्रययुस्तस्य चक्रस्य यत्र नेमिन्ध्रियीर्थ्यत। तद्वनं तेन विष्यातं नैमिशं सुनिपुजितामिति। नेमिष इति पाठेवराहपुराशोक्तं द्रष्टव्यं। तथाहि गौरसुस्मृषिप्रितमगवद्वाष्य एवं कृत्वा ततोदेवो सुनि गौरसुस्तत्वा । उवाच निमिषेणुंदं निहतं दानवं वलं। अरग्येऽस्मिस्ततस्वेतन्नेमिषार्थयसंद्वितं। मविष्याते यथार्थं वे ब्रह्मग्रानां विशेषकिति। अनिमिषः श्लीविष्णुः अलुप्त दृष्टित्वात् तस्य क्षेत्रे तथाचात्रेव श्लीनकादिवचनं क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णवेचयमिति स्वर्गाय इति स्वः स्वर्गे गीयते इति स्वर्गायो हरिः सप्य लोकः भक्तानां निवासस्थानं तस्मै तत्प्राप्तये इत्यर्थः। सहस्रं समाः सम्बत्सराः धनुष्ठानकाला यस्य तत् सत्नं सन्नसंत्रकं कर्म्भोदिष्यभासत उपविविद्यः। यद्वा आसत् अकुर्वतेत्यर्थः आलुभते निर्वपित उपयन्तीत्यादिवत् प्रत्ययोच्चारग्रामाक्षार्थत्वेन आसते धात्वर्थस्यविविक्षतत्वात् ॥ ४॥

#### दीपनी ॥

अवित । अकारश्चायशब्दश्च द्वावेती ब्रह्मणः पूरा । कगरं भित्वा विनिर्याती तस्मान्माङ्गलिकावूभावितिस्मरणाद्त्र प्रण्वोपन्यासः शास्त्रारम्भे मङ्गलार्थः । अनेनास्य द्यास्त्रस्य प्रण्वार्थविष्टतिष्पत्वमपि स्चितम् । विस्तरोऽस्यान्यत्र (अस्माभिः प्रकाश्यमाने श्रीभागवत रहस्य सन्दर्भे) द्रष्टब्यः । आलभत इति । पश्वालम्भनमालभते मासवापं निर्व्यपित क्र्शोपयमनम् उपयन्तीत्यादौ तिउर्थस्य कृत्यर्थ- मात्रस्य गृहण्वविद्त्यर्थः। प्रत्ययोच्चारणमात्रार्थत्वेनोते। मुख्यधात्वर्याविविद्यत्तित्वे दृष्टान्तः प्रकृतार्थान्वितस्वार्थान्वयवोधकत्वं प्रत्ययाना- मितिव्युत्पत्तिभङ्गोऽत्र स्वीक्रियते इतिभावः ॥४॥

#### वीरराघव;

तदेवमजुप्तित्रिविधमंगलप्रदर्शिताजुवंध चतुष्टयप्रामाग्याभगवान्वादरायग्रास्त्रेकालकोऽस्य चिकीर्षितस्य वेदांताथींपवृंहगारू-पस्य धुरागास्यपरीक्षिच्छीनकशुकस्त्तादि अष्टप्रतिवक्तु प्रदनोत्तरमुखेन भाविनी प्रेवृत्ति मालोच्य तत्र तेषां प्रदनोत्तररूपान् इलोका-ब् स्वयंभव तत्र तत्र निर्मित्सुस्तावदुपोद्धातरूपे ऽस्मिन्प्रथमस्कंघे प्रथमप्रष्टुः परीक्षितः प्रतिवक्तुः शुकस्यचेकत्रसमावेश प्रति-वक्तुः शुकस्य समागमं परिक्षितप्रक्रोद्योगहेतु प्रायोपवेशं तिन्निम्ति विप्रशापंचिववश्चः प्रायोपवेशात प्राक्तनं जन्माविधिकं पार्य-क्षितं वृतांतं ततः प्राक्तनंतिरपत्रादिवृतांतं तथेवतत्प्रबंधकर्तुः स्वस्यैवतित्रमीशानिमित्त दशैनसमागत देवपेश्चसंवादे तदाइयेतत्प्रबंध निर्माण्य शौनकसूत प्रदनोत्तरसुखेन विवश्वस्तावच्छीनकादीनां प्रश्नप्रकारंववतुंतदुपोद्धातमाह ॥ निर्मिषद्दति ॥ अत्रकेचिच्छीनकादि प्र-रन्रपाः रलोकास्तद्वीचीनैनिर्मायात्रतत्रतत्र निवद्यापरीक्षिदादि प्रश्नादि रूपास्तुसूतेनेति वदंतितदसारं ॥ त्रैकालझस्य प्रबंध प्रव-क्षुरेवत निर्मागोपपत्तेः नहिसद्विद्यानंद वल्लीप्रतर्दन विद्यादिषु श्वेतकेतु ही रुगोयशाहतदापितोवाच । भृगुर्वेवारुगा वरुगांपितरमुपस-सार अधीहिभगवोवहोति प्रतर्देनोहवैदैवोदासिरिद्धस्य प्रियंधामीपजगामेत्यादीनां प्रश्नोत्तररूपाणां श्रीतबचसामाधुनिकत्वं वक्तुं युक बतुवेदेकर्तुरभावाद्वेदएव प्रक्नोत्तररूपेण प्रतिपाद्यिषितानर्थान्त्रातिपाद्यतिअत्रतुपीरुषेयेन्य कर्तृकाणामपि वचासांसद्भेस्तत्र तत्र-बहोषावह इतिचेत् प्रवमपिकृत्स्नं प्रवंधस्यककर्तृकत्वासिक्धेः कृत्स्नस्य पुराग्रपंचस्य प्रकृतेत्व कानि प्रन्थकर्तुवेचांसिकानि चेतरेषामिति विभागस्या शक्यत्वाञ्च तस्माद्यथोक्तमेवयुक्तं । शौनकआदि येषातमुनयः ब्रह्मणाविशृष्टस्य चक्रस्यनेमिः शीर्यतेकुठीमव-तियत्रतिविधि तदेवनैमिषं तश्ववायुपुराशा प्रसिद्धं ॥ नैविशइति पाठेनिविद्यं अत्रमहर्षयहति निविधं तदेवनैविधं इत्यन्वर्थं नामनेविषाख्ये निमिषक्षेत्रे भगवत्सान्निच्यवतीतिभावः स्वर्गाय लोकाय स्वर्गीनिरितशयानंदः ताहशोलोकः परंपदंतस्मतत्वात्रये तत्साधनं सर्त्र सहस्र-सहस्रं संवत्सरमासता नुष्टितवंतः स्वगीलोकोत्र परभण्यमेवथनंते स्वगैलोकेऽजय्येष्रतिर्ताष्टतीति स्वगैलोकऽसृतत्वं भजंतइति श्रुत्यन्तरे घेनास्य निर्देशात् ॥ अन्यथाशीनकाद्य इतिनघटते ॥ दशाश्वमधी पुनरित जन्मकृष्णप्रग्रामी न पुनर्भवायेतिवदतः ॥ परम्माग्रवतस्य शीनकस्य प्रसिद्धस्वर्गीद्यार्थं त्वायोगात् ऋत्विजपवयत्र यजमानास्तत्सत्रं यद्वा सत्रशब्देन भगवद्गुगानुभवात्मकं बहासत्रं विविधितं तथाच तल्लक्षमां चक्षतिदशमेश्रुतिगीतायां तुल्यश्रुततपः शीलास्तुल्यस्वीयारि मध्यमाः अपिचकः प्रवचनमेषं शुश्रूषचोपरे इति अतएवा-सीनादीर्घ सन्नेगाति वश्यमाग्गोपपात्त ॥ ४॥

#### श्रीविजयध्वजः॥

#### कमसंदर्भः।

ततापि महापुराग्यस्यास्य प्रश्नोत्तराभ्यां श्रीकृष्णीकपरत्वं दर्शयितुमाह अ नेमिष इत्यादि टीकायामासंतेत्यस्य व्याख्यान्तरेत्विदं ह्रेयं । तत्तद्धात्वर्थं स्तत्र तत्न न सम्भवतीति धातुं विना च केवलप्रत्ययोद्धारगां न युज्यते इति प्रत्ययस्य तिवादेरर्थः प्रयोजनं यत्न ताहश तयाःधात्वर्थस्याविवक्षितत्वात् कृजर्थानुगत कर्त्तृवाचि प्रत्यथेन कृजर्थस्तु समप्यतं इति ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥

#### सुवोधिनी ।

अत्र भागवतस्य परंपरागताः सप्तार्थाः कथार्थतोतिरिकाभवंति अतोनान्यटीकासुते निरूप्यंते तेहि निवंधेशास्त्रे स्कंधे प्रकरगोध्याये वाक्येपदेक्षरे एकार्थसप्तधाजानस्रविरोधन मुच्यत ॥ इतिनिरूपिताः ॥ तत्रआनंदस्यहरेलीलाशास्त्रार्थः मिक्तजनिकाहि सीहता सृष्ट्या-द्यां छीलात्वेज्ञाते भक्तिभेवतिनकायत्वेकीतुकाधिष्टितेन अनायासत्वेन क्रियमाणं कर्म्छीलातदाहिमहत्वेनिर्दुष्टत्वंचभवति साच लीला-मुख्याद्शविधा अत्रसर्गोविसर्गश्चेतिश्लोकेननिरूपिता साच मृतीयादि दशमस्कंधैनिरूप्या श्रोतृवक्तृलक्ष्यां प्रथमे अंगनिरूपर्या द्वितीये अतोद्वेगौर्यालीले एवं द्वाद्श तत्र प्रथमेस्कंघे अधिकारलीलानिरूप्यते हीनमध्यमोत्तमत्वतः भागवतार्थे ज्ञानेप्रकारवोधनाय नहि-सर्वेरेकविधं भागवतं बुध्यते सूतशीनकाभ्यां बुद्धमेकविधं तथा नारद्व्यासाभ्यामपरिवधं ॥ तथा शुकपरीक्षिद्भ्याशुत्कृष्टं एवं त्रविध्य-निरूपगोन यथाधिकारमधीववोधो भविष्यति तत्र प्रथमं हीनाधिकार उच्यते अध्याय त्रयेन प्रश्नोत्तराभ्यां प्रष्णाएकविधः उत्तरद्विवध-मिति तत्र इलोकद्वयेन प्रदनसंगतिमाह स्वरूपसंगतिभेदेन तत्र स्वरूपमाह नैमिषइति पुग्यतीर्थे पुग्यक्षेत्रे यज्ञादिभिः शुद्धाः यज्ञरूपभग-दाबिष्टाः भगवत्प्रक्ते प्रथमाधिकारिगाः स्वरूपतोधिकारिगाः नेमिः शीर्यतद्ति नेमिषं नेमिषं नेमिषं प्रजापति सृष्ट्यमनोमयचक्रस्य इह पीं तपःस्थानक्षापनार्थे यत्रास्यनोभिः शीर्यतद्दति पुरायाधिकयमुक्तं नेभिषद्दितपाठं यत्ननिमषमात्रेमा दानवबलं निहतिभिति नेभिश स्वदीषनिवारकं तस्य क्षेत्रस्य विष्णुर्देवतत्याह अनिमिषक्षेत्रदित अनिमिषा विष्णुस्तस्यक्षेत्रे दोषाभावगुणावुको ऋषयोमंत्रदेशारः शीनकाद्य ॥ इतिप्रसिद्धाः ॥ ऋषिपरंपरायांसत्रं सहस्रसमितिनामयस्य सहस्रसंवत्सरे साध्ये, सत्रे समाना एव ऋत्विजध्वममीद्य-यत्रकर्मकुर्वितितत्सत्रं तत्रपूर्वं सहस्रसंवत्सरे सत्रं अलैकिकसगवदाविभीवोद्दष्टः विश्वसृजः प्रथमाः सत्रमासतत्यादी तथात्रापि-सहस्रसमे आरध्वे भागवतकपस्य भगवतआविभावोभविष्यतीति शात्वाऋषीशांसत्वारंभइत्यर्थः खर्गायभगवदानंदांशभूतः स्वर्गः लोका-रमकस्तुमहानैशःसहात्रफ्ठं नतुखर्गायतशति खर्गायोविष्णुः सचासीलोकश्चेति खर्गायवापतानि लोकायह्रयंतर्शत श्रुतिविरोधात् सच-सुखिवशेषशरीरः देवविशेषोलोकरूपः देवेभ्योवेखगीलोक स्थिरोभविद्यत्र तथा निर्णायात् सत्रे सर्वत्रआसितरेवकृतिवाची एव त्वांखक्पोत्कर्षउक्तः; संगतिमाह ॥ ४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती

र्थावगाहनेन खामीप्सितं सिध्यित इत्येतन्मात विवक्षया प्रथमत एव शाख्यस्य नैमिश इत्यन्चर्थपद्स्यन्यासो क्षेयः ॥ मुर्ज्रन्य वकाराम्तपाठे वराहपूरायोक्तं द्रष्टव्यं तथाहि गौरसुखमृषि प्रति मगवद्वाक्यं। एवं कृत्या ततो देवो सुर्मिगौरसुखं तदा । उवाच निमिषेगोदं निहतं दानवं वलं। अरायेऽस्मिंस्ततस्वेतक्षेमिषारगयसंक्षितं । मिष्यिति यथार्थं वे ब्राह्मकार्गां विशेषकमिति। अत्रापि पाठे यत्न कामादित् शाचून् शाम्रमेव निहन्तु प्रमवेत् तत्नेव वसेदिति विवक्षितं। स्वगोयेति प्रथमं शौनकादीनां सकामकर्म्मपत्य मेवासीत् । रोमहर्षग्रसंगेन ततो नानापूराग्यादि शास्त्र अवग्र मननादिभिर्तिक्षासुत्वमिति प्रसिद्धिः। तत्रश्च साथोक्ष्मश्चसः संगेन भक्तिरसेस्पृहा । यदुक्तं कर्म्मग्यिसमञ्जाश्चासे धूमधूम्रतमां भवान् । आपाययित गोविन्दपादपन्नास्तवं माध्विति तत्रश्च जिक्षासुत्वमिपि शिथिली कुर्व्वतं तेषां मक्ते प्रवेशे खर्गार्थकं सत्रं तच्च मिष्मेवाभूत्। यदुक्तं कथायां सक्षग्रा हरेरिति एतच्च श्रीमागवतश्चोर्षु तेषु कर्मित्र कर्मानिष्ठा व्यवधानेन भक्तेः प्रमाव घोतनं तथैव श्रीमागवतवकिरि श्रीशुक्षदेवोपि पैरिनिष्ठितोपि नैर्गुयय इत्यदिमि वृद्धा परिनिष्ठा व्यवधानेनेति । यद्धा खः खर्गे गीयते इति खर्गायो हिरः उक्तगाय इतिवत तस्य लोक्षो वैकुन्त स्तस्मै। अनिष्ठिषे विष्णुः तस्य क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णुवे वयमिति तेषासुक्तेः । सहश्चं समाः सम्वत्सराः अनुष्ठानकाला यस्य तत् सत्रसक्षं कर्माउदिद्य आसत उपविविद्यः। यद्धा आसत अकुर्व्वत अगिनश्चित्रीयपरोगालस्ममालस्यते । अमावास्थायां पितृभ्यः श्राद्धं निर्वपति । अष्टवर्षायाः कन्यायाः पागिग्रहण्यसुपयन्तीति वत् । धात्वर्थस्य वाधात् तत्सामान्य रुत्रर्थे एवालासथातु वर्षात्ततः॥ ४॥

# सिद्धान्तप्रदीपः

उक्तार्थं विस्तरतस्तत्तत्रप्रकोत्तरैर्वकतुंभगवान्वेदाचार्यः ॥ शास्त्रमाविःकरोति नैमिशेइति ॥ तपोवनपरीक्षार्थमृषिभः प्राधितेन ब्रह्मग्राविसृष्टस्यचक्रस्यनेमिः शीर्यतेकुंठीभवति यत्रतिन्निमेशिति वायुपुराग्राद्वगंतव्यम् ॥ वाराहपुराग्रेतु उवाचनिमिषेग्रोव निहतंदानवंवलम् ॥ अर्एयेस्मिन् ततस्तेन नैमिषारग्यसंक्षितिमत्युक्तम् ॥ अनिमेषक्षेत्रेविष्णुक्षेत्रे सहस्रसमं सहस्रसंवत्सरनिष्णाद्यम्
सत्रंकर्तारोवहवोयत्रहीज्यंतेवहवस्तस्था ॥ बहुभ्योद्दीयतेयत्रतत्सत्रमिधीयतेइति ॥ एवंभूतंकर्मोदिइयासतोपिषविद्युः ॥ कस्मैप्रयोजनायस्वर्गायलोकायस्यः स्वर्गालोकस्तत्रगीयतेइति स्वर्गायोभगवान् तल्लोकप्राप्तये यद्वा ये स्वर्गलोकोष्ठभृतत्वंभजते इतिश्रुतेः स्वर्गशब्दोभगवलोकपरः तस्मैस्वर्गायलोकाय सच लोकः सत्यलोकाद्वपरिप्रोक्तोमुद्दलोपाष्याने ॥ ब्रह्मग्राःसद्दनादृर्द्धतिद्वष्णोः परमपदम् शुद्धंसनातनंज्योतिः पर्वबृद्धोतियद्विद्वारिति ॥ जापकोपाष्यानेच एतेवैनिरयास्तातलेकस्यपरमात्मनः ॥ अभयंचानिमित्तंचनतत्क्षेशसमावृतम् द्वाश्यां
मुक्तंत्रिमि मुक्तमप्ताभि ख्विभि रेवचेत्यादि ॥ विस्तरस्तुवेदांतकौस्तुभे;द्रष्टव्यः ॥ ४ ॥

#### भाषा टीका

श्रीवेद्ब्यासमुनी प्रथमक्लोकमें मंगलाचरण कर हितीय क्लोकमें श्रंथके वर्ण नीय परधर्म का उद्देश कर तृतीय क्लोकमें श्रंथका स्वरूप निरूपण कर सूत शीनक संवादसे श्रंथका आरंभ करतेहैं

स्वरूप निरूपण कर सूत शामन राजन । अनिमिष श्रीभगवानके क्षेत्र नैमिषारएयमे (ब्रह्माजीके मनोमय चक्र की नोम जहाँ खिल गई थी) शौनकादिक साठसहस्र ऋषि गण स्वर्गमें गीत कीर्ति श्रीहरि की प्राप्तिकेलिये सहस्रवत्सर्र का सत्रयक्ष अनुष्टान करतेथे ॥ ४॥

# श्रीधरस्वामी।

प्रातःकाले हुता एव हुता अग्रयो यै; ते। अनेन नित्यनैमित्तिकहोमसाधकत्वं दर्शितं। इदं वश्यमार्गा आद्रात् पप्रच्छुः॥ ५॥

द्वीपनी ।

चक्ष्यमागास्य दुद्धा सिन्निहितत्वादिव्मानिहेश इत्याचार्थाशैळी ॥ ५॥ ६॥

त्वयाखलुपुरागानिसेतिहासानिचानघः। आख्यातान्यप्यधीतानिधर्मशास्त्रागियान्युतः॥ ६॥

### श्रीबीरराघवः

तइति ॥ ते भौनकादयोमुनयः कदाचित्पातर्षुतस्ताप्तयः हुतेत्यर्हार्थेकः ॥ हुतेनहोमार्देष्ठव्येष्पपयःसापरादिनासाधनेनहुताश्रप्रयः आहवनीयादयोयैस्तथाश्रुताः सत्कृतयथोचितं बहुमतमासीनमुपविष्टंच स्तामिदंबक्ष्यमाणमादरादादरपूर्वकं पप्रच्छुः ॥ ५ ॥

प्रश्नमेवाह ॥ त्वयेत्यादिनायावद्ध्यायसमाप्ति तावधुष्मत्प्रश्नोत्तरंवक्तुंनाहं समर्थहत्याशंकांनिराकुर्वेतथाहुः त्वयोति हे अनघशास्त्रार्था । श्वानिमित्तकम्रक्रपपापरहितजाति प्रयुक्तावमत्वरूपाघरहितेतिवा ॥ त्वयेतिहाससहितानि सर्वपुराग्णानि उत अपिचयानि धर्मशास्त्राग्णि मानवादीनि तानि सर्वाग्यधीतान्याख्यातानिच ॥ ६॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

ये सत्रयागेदीक्षितास्तेमुनयः सर्वज्ञाथिएकदाकस्मिश्चित्काले खाश्रमंत्रत्यागतं सत्कृतंतद्याग्यसत्कारेः पूजितमासीनं सुखंपीठेउप-विष्टसूतं इदंखवुद्धिस्थितं पप्रच्छुः किविशिष्टाः आहताः विनीताः तेनापिपृजिताइतिवा हुतंहविरश्नातीतिहुताशनोग्निः प्रातःकालेहुतः हुताशनोग्नेस्तेतथोक्ताःहुतेनपयअदिद्वव्येगा हुतोग्नियेस्तेहुतहुताग्नयइत्यसत् हुतशब्दस्यपयआदिष्वपाठात् तुलेकानुकंपाद्योतकः पृच्छते-द्धिकमेकत्वात् सुतिमदंपप्रच्छुरितिकमेद्वयंयुज्यते ॥ ५ ॥

प्रशंसितः प्रवक्तास्तः स्वप्रक्तोत्तरं संतुष्यसम्यग्वकातिहृदिकृत्वाप्रष्ट्वार्थपृष्ठतः कृत्वातंप्रशंसितिशानकादयहत्याह त्वयाखिल्विति अनध्य प्रशंसितः प्रवक्तास्त्तः स्वप्रक्तोत्तरं संतुष्यसम्यग्वकातिहृदिकृत्वाप्रष्ट्वार्थपृष्ठतः कृत्वातंप्रशंसितशानिकात्यादि अनध्य "द्वुः खेनोव्यसनेष्वयम्" इत्यिमधानान्निरूस्तसमस्तकार्यव्यसन् ? त्वयासितिहासानिभारतादीतिहाससिहतानिषुराणानिचशब्दादुपपुराणानि अधीतानिवेदवत्पितानिआख्यातानिव्याख्यातान्यपि यानिमनुयाद्ववल्क्यादिप्रणीतानिधमशास्त्राणि तान्युतअपिअधीत्यव्याख्यातानी-त्येकान्वयः ॥ ६ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

त्वयेति युग्मकम् । तत्त्वतो याथार्थ्येन । तत्तु गुद्यमिति चेत्तथापि वक्तव्यमित्याहुः ब्र्युरिति ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

# सुवोधिनी

उत्सर्गकालोयंदीक्षाकालोवानित्यनैमित्तिकसर्वहोमान् कृत्वाभगवत्कयाश्रवणायं सावकाशाजाताहृत्याह प्राप्तदुत्तहुताग्नयइति एकदेतिहरिगायोपगायनकाल्डकः तद्वेवस्तादीनामागमनमुनयइति अलोकिकपरिज्ञानमुक्तं येनस्तपरिज्ञानंभवति तत्प्रसंगेअन्येषांप्रइनव्यावृत्त्यथं
तहित्रातरेवहुतापवाग्नयः पुनर्हुतायेषांतेप्रातर्हुतहुताग्नयः नचवेद्विरोधः दाक्रनीयः तुश्व्यद्वेनपक्षांतरस्वीकारात् तथाकरण्यमननहेतुः
कालगुणाविशेषपरिज्ञानात् अतपवाग्रेवक्ष्यतिः कर्मणयस्मित्रनाश्वासद्दितं सत्कारंसंभाषणादिना ब्रह्मासनदानेनवास्तः पौराणिकः उत्रश्रवाः ब्राह्मणानांसद्सिअन्येषामनुपवेशनात् उत्थितस्यचपुनवेयग्यात्कथान्यूनभावाज्यतिश्चरणायआसीनमित्युक्तं भगवत्कथारश्रवाः ब्राह्मणानांसद्सिअन्येषामनुपवेशनात् उत्थितस्यचपुनवेयग्यात्कथान्यूनभावाज्यतिश्चरणाय सर्वत्रभगवत्कथायामांतरोभावोसाभिनवेशाद्दमहिमक्षयासर्वेः पृष्टद्दिवहुवचनं इदमितिवक्ष्यमाणंस्त्तस्यभगवतः तद्र्यवक्तारमभिनदातित्रिभिः ॥ ५ ॥
मुख्यः नतुवाक्यमात्रम् अत्रषद्प्रका भगवद्विषयकाः कर्त्तव्याः षड्गुणात्वाद्भगवतः तद्र्यवक्तारमभिनदातित्रिभिः ॥ ५ ॥

मुख्यः नतुवाक्यमात्रकः पुराणान्याकरस्थानि मुळसंहिताचतुष्टयं वा ॥ इतिहासोभारतं ॥ चकारादन्याश्च कथाः प्रगाथादयः विद्योन् स्विविविद्युतिव्यावृत्तिः पुराणान्याकरस्थानि मुळसंहिताचतुष्टयं वा ॥ इतिहासोभारतं ॥ चकारादन्याश्च कथाः प्रगाथादयः विद्योन् स्विविविद्युत्ते आख्यातान्यप्यश्चीतानिः पूर्वमधीत्यव्याख्यायपुनः पुनर्श्वीतानीत्यर्थः तदेविनःसंदेहः धर्मशास्त्राणिचार्धाः प्रजीवनंतकरीतीत्यन्वेत्युक्तं आख्यात्राचिष्णां जीवेश्वरविचारेणाद्विधातेहि निक्षिताः" तत्रेश्वरविचारिताश्चत्वारो वेदापव जीविचान् तानि "धर्मार्थकाममोक्षाख्याश्चत्वारोर्थामनीषिणां जीवेश्वरविचारेणाद्विधातेहि निक्षिताः" तत्रेश्वरविचारिताश्चत्वारो वेदापव जीविचान् तानि "धर्मार्थकाममोक्षाख्याश्चत्वारेणाविष्ठामाः सांख्यायनिद्युमोक्षः तत्रतावत् सर्वकृत्वन सर्वति यावद्भगवच्छास्त्रापरिक्षानं रितास्त्र स्मृतिषुप्रमः नीतिशास्त्रेअर्थः वात्स्यायनादिषुकामः सांख्यायनिद्युमोक्षः तत्रतावत् सर्वकृत्वन सर्वति यावद्भगवच्छास्त्रापि इति तद्यमाह धर्मशास्त्राणीति उत्यानि प्रसिद्धानि अर्थशास्त्राद्योनि छोकिकानि वा सूतपार्थयंण क्षातान्यवक्षातानि नतु वाद्यगोक्षातानि इति तद्यमाह धर्मशास्त्राणीति उत्यानि प्रसिद्धानि अर्थशास्त्राद्याक्षात्वानि वा सूतपार्थयंण क्षातान्यवक्षातानि नतु वाद्यगोक्षातानि इति तद्यमाह धर्मशास्त्राच्याद्व ॥ ६ ॥

तद्यमाह आसीत्र ॥ ६॥ शंकांवारियतुमाह ॥ ६॥

 <sup>#</sup> हुत हुताशना इति विजयध्वज पाढः ५

यानिवेदविदांश्रेष्ठोभगवान्बादरायगाः निवास अन्येचमुनयःसूतप्रस्करिवद्विवदुः आष्ट्रभाष्ट्रभ वेत्थत्वंसौम्यतत्सर्वतत्त्वतस्तदनुष्रहात्। **ह्युःस्निग्धस्यशिक्षस्यगुरवोगुह्यसंग्युतागुः हता** 

श्रीविश्वनायं चक्रवसीं।

· Like See Later of my make or

हुता एव हुता अग्नयो यस्ते ॥ ५ ॥ इतिहासो भारतादिः आख्यातानि व्याख्यातानि ॥ ६॥ इतिहासो भारतादिः आख्यातानि व्याख्यातानि ॥ ६॥ इतिहासो अध्यक्षिकारणान्य अध्यक्षिकारणान्य । विविधिकारणेषु । विविधिकारणेषु । विविधिकारणेषु विविधिकारणेषु विविधिकारणेषु

ाताता विश्वविद्यासम्बाद्धः त्यास्ति हे भागमञ्जा भ

प्रकार स्वरूपका स्वयोगका स्वयोगका । अस्ति ।

सिद्धान्त प्रदीपः।

प्रातः कालेडुतापवडुता अग्नयोयैस्ते ॥ आसीनंखस्थम् ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

#### भाषा दीका।

एकदिन प्रातः काल उन मुनिओंने नित्यहोम की अग्निमै यक्षके निमित्त का होमकर यक्षशाला के विस्तृत सभा मंडपमै विराजमान सूतजी का सत्कार कर आदर पूर्वक प्रश्न किया ॥ ५ ॥

हे अनव (निष्पाप) सूत ! तुमने इतिहास पुरागों को पढ़ा है ओर व्याख्यान भी कियाहै। धर्म शास्त्री को भी पढ़ा और वखानाहै ॥ ६॥

#### श्रीधरस्वामी।

विविदिषितान् अर्थान् प्रष्टुं सूतस्य सर्वशास्त्रश्चानातिशयमाङ्कः त्वयेति ब्रिभिः । इतिहासो महाभारतादिः तत्सहितानि । न केवल-मधीतानि अपि तु आख्यातान्यपि व्याख्यातानि च उत अपि यानि धर्मशास्त्राणि तान्यपि ॥ ६॥ किञ्च यानीति । विदां विदुषां मध्ये श्रेष्ठो यानि वेद परावरे सगुगानिर्शुगो ब्रह्मगी विदन्तीति तथा ॥ ७॥ वेत्थ जानासि । सौम्य हे साधो । तेषामनुष्रहात् । तत्त्वतोक्षाने हेतुमाहुबूँयुरिति । स्निग्धस्य शिष्यस्य प्रेमवतः उत एव रहस्यमपि ब्रूयुरेव॥८॥

# दीपनी ।

परावरेइति । परः त्रिलिङ्गः उत्तर इति अवरश्चरम इति च मेदिनी । अतएव श्रीश्रीधरस्वामिना ब्रह्मविशेषगात्वेन तदर्थमुकं सगुगा-निर्गुगा ब्रह्मगी इति केचित् ॥ ७॥ २३॥

# श्रीवीरराघवः ।

कानितानिषुरागाधर्मशास्त्रागात्यतञाहुः यानीति वेदविदांस्त्ररातोनुष्ठानपर्यतार्थतश्चवेदंविदंतीतितथा तेषामध्येश्रष्ठोभगर्यात् काणिता । तथाविधाअन्येच् जुनयः पराशरादयोमन्वादयश्च परावरविदः परंपरमात्म तत्त्वमवरंप्रकृति पुरुषतत्त्वतिद्वदः तत्त्वत्रययाया-बादरायसार प्राप्तानि धर्मशास्त्रासा चिवदुस्तान्यधीतान्याख्यातानि चेतिपूर्वेगान्वयः वेदविच्छेष्ठोवादरायगो उन्येचमुनयोगानिविद रित्यनेनस्मृतीति हासपुरागानां वेदमुल्त्वं अत्यवप्रामाग्यं चद्शितम्॥ ७॥

अ ≥ अ क्रीडेक्स सम्बो दलकर के प्रमुख्य करू. उत्तर र

। जिल्लामान प्रतिस्थितिक स्थानिक विद्या

नन्वपश्चद्राधिकरणान्यायेनअनिधकृतशारीयकीहै इतिहासपुराणां व्ययनजापातप्रतिमिन्किय मेख्रत्रश्चनस्योत्तरं वक्तुंप्रभुरितीमां-शंकांवारयंतआहुः वेत्थेति हे सीम्यसद्जुब्रहात्सतो व्यासस्याजुब्रहात् पुराणाद्यर्थक्षपं वस्तुयथावद्वेत्सिनत्वापाततइति भावः सद्जुब्रहा-दपि कथशारित्काध्ययनिर्णोतव्यं वस्तुतत्त्वमहंविद्यामित्यतआहुः ब्रेयुरिति स्निग्धस्याजुरक्तस्यत्वाहशस्य शिष्यस्य गुरवोवाद्रायणा-दयोगुद्यमिवस्यः शारीरकमुखेनाजुक्त्वा केवलमुपद्रिशेयुरितिभावः ॥ ८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

तस्यक्षानेयत्तांवदंतीत्याह् यानीति।वेदविदांश्रेष्ठःबादराणो भगवान्यानिवेद् अन्येचपरापरिवदःमुनयःतान्येवविदुः किच तेमुनयोवे-दादन्यत्रयानिविदुःहेसीम्यत्वंतत्त्वतःतत्सर्ववेत्येत्येकान्वयः वेदवादरतानांवादिनामाश्रयत्वाद्वादरायणः बवयोःसावण्यात् बादरायणसं-वंधियत्वादरंअयनंस्थानंयस्यसतथोक्तइतिवा परंबद्धअपरंबद्धविदंतीतिपरापरिवदः अतीतानागतिवदोवाहेसौम्यभिक्कशानलक्षणसोमा-हे विद्कृतावितिधातोःभगवान्यानिवेदचकार अन्येचमुनयोयानिचकः तत्सर्वजानासीतिवा गुरवःस्निग्धस्यस्नेहलक्षणभक्तिसंपन्नस्य-शिष्यस्यगुत्यमप्यतिगोप्यमिष्वूयुरुतअपितत्संभावितमित्यन्वयः ब्र्युरिपरेवेत्यर्थइतिवा॥ ७॥॥ ८॥

# सुवोधिनी।

धर्मार्थकाम्।:सूतपारंपर्यगापिक्षायंते मोक्षशास्त्राग्नित्र ब्राह्मग्रेवतत्रसूतस्याक्षान संभवित तिन्नवृत्त्यर्थमाह ॥विद्रांश्रेष्ठोक्षानिनांश्रेष्ठः यानि वेदेतिमोक्षशास्त्राग्नि सर्वाग्ति नजुतानिकथंव्यासस्तस्मै कथयेदित्याशंक्याह ॥ भगवानिति भगवतः सर्वसंभवतितथाप्यनिधकारिगेक्षथमाहेत्याशंक्याह ॥ वाद्रायग्राहित ॥ अतितपसातद्धिकारसंपाद्नशक्ति क्ता "नह्यकस्मात्गुरोक्षानं शिक्षितंस्यात् सुपुष्कलमिति
वाक्याद्सार्वद्द्यमित्याशंक्याह अन्येचमुनयहित तेच मननशीलाक्षानिनः अक्षानादुपदेशहित नमंतव्यंयतः सूतः असिद्धः इतिपुनः संबोधनं
र्वाहकथमुपदेशहत्यतआह परावरविदोविदुरिति परेब्रह्माद्यः अवरेअस्मदाद्यःभूतभविष्यत्कालावातान्जानंतीति ईश्वरेच्छा तथैवकालअत्रथेति बोधनार्थं तथावचनं फलितमाह ॥ ७ ॥

शिष्यगुणानाह ॥ सौम्येति हेशांतसेवादिगुणानां साधारण्येपि असुरत्वाच्छूद्रस्यक्रौर्यादयः संभवंति तदभावश्चेत् सिद्धा अन्येसद्-गुणाइतिभावः स्तेति संबोधनात् वेदव्यतिरिक्तमिति ज्ञातव्यं आपाततोज्ञानंवारयति तत्त्वतइति उपदेशेपि कथमनिधकारिणोज्ञान-मित्याशंक्याह तदनुत्रहादिति गुरूणामनुत्रहात् सर्वभवतीत्यर्थः एवंसार्वज्ञ्यमुक्त्वाप्रथमतःफलंपृच्छंति तत्रतन्नेति ॥८॥

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ती।

विदां विदुषां परावरे सगुगानिर्गुगो ब्रह्मगी विदन्तीति ते ॥ ७॥

स्निग्धस्य गुरुविषयकस्नेहवतः शिष्यस्य गुरुवो गुद्यमपि ब्र्युरिति विधिलिङेवत्विय स्निग्धे शिष्ये तेषामवश्यमेव रहस्यप्रकाश-कत्वं तव च सर्व्वरहस्यविद्यत्वमवगम्यते । अतस्तानिप प्रति सं मतमेवोत्कृष्य ब्रुवतो मुनीन अपहाय सर्व्वमतवक्ता त्वमेबास्माभिः पृच्छ्यसे इति भावः ॥ ८॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

विदांमध्येश्रेष्ठः वादरायगो यानिवेदश्रेष्ठत्वेहेतुः भगवानिति द्वेबद्वग्रागिवेदितव्येद्यद्ववद्वापरेचयत् ॥ शब्दब्वह्वाणिनिस्नातः परंबद्वाधि-गच्छतीति स्मृत्युक्तेब्रह्वागीविदंतीति परावरिवदेश्वेचयानिविदुः ॥ तानित्वयाआख्यातान्यप्यधीतानीति पूर्वेग्णान्वयः ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

#### भाषा टीका ।

वेद वेताओं में श्रेष्ठ भगवान वादरायण व्यासजी जिन प्रथों को जानते हैं एवं पर अवर के वेत्ता और और मुनी गगा जिन प्रथों को जानतेहैं ॥ ७॥

१ पदापरविदः इति विजयभ्वज पाउः। ७। २ सदनुप्रहात् इति वीरराधव पाठः॥८॥

\*

# तत्रतत्राञ्जसायुष्मन्भवतायद्विनिदेचतम् । गुनामकान्ततःश्रेयस्तत्रःशंसितुमर्हतिः ॥ १८ ॥ १८ ॥ १८ ॥

্ত্ৰে বিষ্ণাৰ বিষ্ণাৰ প্ৰতিশ্ৰমান কৰি ক্ৰি**ল্ডাৰ ক্ৰিয়াৰ প্ৰতিশ্ৰমান ক্ৰিয়াৰ ক্ৰিয়াৰ কৰি লিছে চৰ্চাৰ প্ৰতিশ** তেওঁ ক্ৰিয়েল ক্ৰিয়েৰ ক্ৰিয়াৰ প্ৰতিশ্ৰমান কৰি ক্ৰি**য়াৰ প্ৰতিশ্ৰমান ক্ৰিয়াৰ ক্ৰিয়াৰ কৰি কৰি কৰি কৰি কৰি কৰি কৰি ক** 

हे सौम्य तुम उन्ही मुनीगगा के अनुप्रहसे उन समस्त प्रन्थों का तत्त्व जानतेही। क्यों कि गुक्जन अपने प्यारे शिष्यों को गुत्व (गोपनीक) तत्त्व भी समझा दिया करतेहैं॥८॥

श्रीधरुखामी।

अञ्चला प्रत्यार्जवेन एकान्ततः श्रेयः अव्यभिचारि श्रेयः साधनम् ॥ ९॥

श्रीवीरराघवः।

एवं तस्य प्रतिवचन सामर्थ्यमा विष्कृत्य प्रष्टव्यं पृछंति तत्रेति हेआयुष्मन्पुंसामे कांततो नियमेन निरितशयं श्रेयोयत् यतः साधना च्छेयो भवेत्त द्भवता तत्र तत्र पुराणादिषुनिश्चितं निर्णीतंनोऽस्मभ्यं शंसितुंप्रस्तोतुमहिसिएवमुकसाधनभूतो धर्मः पृष्टः किं-निरितशयं श्रेयः कोवातत्साधनभूतो धर्म इति प्रश्नार्थः ॥ ९॥

#### श्रीविजयध्वजः।

इदानीमभिमतार्थमाहुरित्याह तत्रेति आयुष्मन्प्रशस्तायुष स्तमवतातत्र पुराशादिष्वंजसाऋजुमार्गेशायत्षुंसामेकांततःश्रेयोनिश्चितंत-न्नःशंसितुमर्हसीत्यन्वयः॥९॥

क्रमसंद्रभः।

पुंसां कलिभाविपर्यन्तपुरूषागाम् ॥ ९॥

# सुबोधिनी ।

फलार्थ हिसाधनं मृग्यते अतः किफलं किमफलमिति भवति विचारणा अभ्युद्योगिःश्रेय संवाभवति फलं ॥ अन्यद्वा ॥ सर्वत्र दूषणा न्यग्रेवस्यते अतः संदेहात्प्रदनः तथापिप्रमाणवलिवारेण निर्णायस्तदाह अंजसा प्रथाजेवेन आयुष्मित्रत्याशीर्भयाभावो वा सृच्यते ॥ गुरूणामन्योन्यांविप्रतिपत्ताविष बहुगुरुत्वेन बुद्धि वैषद्यात् स्वतो निर्द्धारणी सभवतीत्याह भवतायिद्विनिद्वितमिति पुंसांस्वतंत्राणां एकांततः श्रेयः कदापि सर्वान् प्रति श्रेयस्त्वं नत्यजतीत्यर्थः स्विगिणां पुत्रादिषुनश्रेयस्त्वं तथा मुक्तानां मुक्ताविति किमनेकांततः श्रेय इत्यर्थः तदस्मभ्यं शंसितु महेसि ॥ द्वितीयं प्रश्नमाह ॥ प्रायेणेति सार्धाभ्यां साधनविषयको यंप्रदनः स्वस्य ऋषित्वेन चिरजीवित्वात तद्वचितरेकेणाह ॥ ९ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती

तिह तत्तत् सर्वमेव व्रवीमिति किं तत्राहुस्तत्रेति । आयुष्मितिर्तं । त्वया बहुकालं व्याप्य तान्यधीत्य विचारितानीतिभावः । अअसा श्रीष्ट्रं । तत्र तत्र झाटित्यर्थवोधकवाषयेष्वत्यर्थः । एकान्ततः एकान्तेन सर्व्वथत्यर्थः । यद्वा प्रथमान्तास्तिः । एकं अद्वितीयव्य तारत-श्रीष्ट्रं । तत्र तत्र झाटित्यर्थवोधकवाषयेष्वत्यर्थः । एकान्ततः एकान्तेन सर्व्वथत्यर्थः । यद्वा प्रथमान्तासिः । एकं अद्वितीयव्य तारत-श्रियागानायामन्तर्भृतत्वच यतोष्ट्रविक अयोगस्त्रीत्यर्थः । तच्च प्रेमेच न तु स्वर्गापवर्गादिकं ब्रह्मपरमात्मभगवत् सुमुद्धवस्यभगवत् स्यापि वशीकारकत्वादित्यित्रमत्रन्थे व्यक्तीभविष्यति ॥ ९॥

# प्रायेगाल्पायुषःसभ्यकलाबस्मिन्युगेजनाः।

ार्ता करोहार प्रात्त के प्राप्त कर<mark>्मा सुमहद्भवयोसहरूसायाह्माहुताः नीटरिश्लीर</mark> कर्मा कर्मा कर्मा कर्मा कर्मा कर्म एने सम्लेखनेताल हेन्यों नाम सम्माण सम्माण वर्षा है। विसेष्ट हैन्यों ॥ दूरे ॥ -मार्ग्यो ! विवेश विक्र वाप्रकृति स्वासी स्वास क्रिस्ट स्वासी स् Accompanies de la companie de la com

भंजसा अनायासेन शास्त्रापीडनेन ॥ एकांततः श्रेयः अध्यमिचारिश्रेयः साधनंनोऽ स्मर्भ्यं हे आयुष्मन्संशितुमहीस्र्यूहीत्युपाय

प्रइनांतरं कर्तुं कर्नृकर्मगारन्योन्यवैशस्यमाहुः प्रायेगोतिसार्द्धन ॥ १० ॥ अतः कर्तृकर्मग्रोरन्योन्यानर्द्दत्वाद्धेतोः॥ अत्र शास्त्रे सारम् सर्वशास्त्रनिष्पन्नं प्राप्यम् ॥ ब्र्हीति उपेयप्रइनः ॥ ११ ॥

#### ं भाषा टीका 🖃

हे आयुष्मन् ! उन सव शास्त्रोंमें अञ्जसा अर्थात विनाकिसी कष्ट कल्पना वा अर्थान्तर करनेके सरस अक्षरार्थ, ओर मनके निष्पक्ष भावसै तुमने जोकुछ मनुष्योंका एकान्त श्रेय (परम पुरुषार्थ) निश्चय कियाहो, वह हमसे कथन करना चाहिये॥ ९॥

#### श्रीधरखामी।

अन्येऽपि बहुना कालेन बहुशास्त्रश्रवगादिभिविनिश्चिन्वतु नेत्याहुः प्रायेगाति । हे सभ्य हे साधो अस्मिन् युगे कली अल्पायुषा जनाः तत्रापि मन्दाः अलसाः तत्रापि सुमन्दमतयः तत्रापि मन्दभाग्याः विझाकुलाः तत्राप्युपद्रुताः रोगादिभिः॥ १०॥ नच बहुशास्त्रश्रवगोऽपि तावतैव फलसिद्धिरित्याहुः भूरीगिकमीगयनुष्ठेयानि येषु तानि । समुद्धृत्ययथावदुङ्त्य । येन उद्धृतवच-नेन आतमा बुद्धिः सुप्रसीद्ति सम्यगुपशाम्यति ॥ ११ ॥

# श्रीवीरराघवः।

अथ त्रिवर्गसाधनानामश्रोतव्यत्वं सूचयंतस्तित्नष्ठानां दौर्भाग्यंतैः श्रोतव्यानां बहुत्वंच वदंतः सर्वशास्त्रार्थसारभूतं सुक्तिसाधनमेव पृछिति प्रायेगोति साद्धीश्याम । सश्यास्मिन्कली युगे जनामानवाः प्रायेगाल्पायुषः अनियतशत्वर्षायुषः । अनेनकतादि युगेष्विव यथेष्टं भीगानंतरं मुमुक्षोदयाऽ संभवतकः। मंदा मंदप्रकृतयः निवरांमंदबुद्धयः उपद्वताः तापत्रय वर्गत्रय तृष्णाभ्यामितिशेषः सुमंद मतय इ-त्यतेन झटितिश्रेयस्तत्साधनानवग्रमः सचितः । मंदा इत्यनेन श्रेयः साधनोपसंहाराऽसामध्ये सचितमः। उपदुता इत्यनेन कचिच्छ्रेयः सा-साधनोद्योगस्यानेकांतराय विहतत्वम । अतपन ते जना मदभाग्या दुर्भगा इत्यर्थः ॥ १०॥

हियस्मादुपदुता अतपव तैर्विभागशः स्वस्तापेक्षित धर्मादि साधन भेदेन श्रोतश्यानि भूरिकमीणयायासबहुलानि कर्माशा बहूनि संतीतिपाँडरीकवाजपैयादि भेदेन भूरीिशा एककस्मिन्ननेकात कर्त्वव्यता कलाप वस्वेन भूरि कर्माशीतियतएवमतोत श्रोतब्येषु मध्ये यत्सारमनिष्टिनिवर्त्तकमिष्टप्रापकं सारं साधनं तन्मनीषया सूक्ष्मया धिया समुद्धृत्य दक्ष्नो घृतमिवोद्धृत्य श्रद्धानानां नोस्माकं ब्र्हि । सारं विशिषंतियेनेति।येन सारेगात्मा चित्तं संप्रसीद्ति रागादिभिरकलुषस्यात्तत्सारं ब्रूहीत्यन्त्रयः प्रायेगोत्यल्पायुरादिभिः प्रत्येकं संव-सारायाः मेंदा इत्यादिनातेन "मनुष्याणां सहस्रेषु किच्यति सिद्धये" इति भगवद्धचनार्थः स्मारितः। येनात्मा संप्रसीदतीत्यनेनात्मप्रसा व्यत ना ना ना प्रमुख्य प्रमुख्य । सित्चातम प्रसाद "प्रसाद सर्वदुःखाना हानिरस्योपजायते प्रसन्न चेतसोह्याशुबुद्धिः पर्यवतिष्ठति" इत्यु-करीत्या दु:खहान्यादिरथादेव भवतीति सूचितम्।यद्वा येनसारभूतेनसाधनेनातमासंग्रसीदितिप्रसन्त्रोभवतीत्यर्थः एवंच "किमल्झं भगवति कारात्पा अ सन्त्रभागपार्थः । यद्यपि कर्माययपि फल्बारा हानायस्व रूपेगोपादानायच श्रोतव्यान्येव ॥ अन्यथा सांसारिक फलनिवेदासंस मश्रात्वयाः साधनाववीध्याध्यातम् शास्त्र शुश्रूषाया एवासंभवात् परमात्मोपासनस्यान्तिः एलकर्मोपकार्यत्वज्ञानाभावश्रसंगाधः वनिनःश्रेयः साधनाववीध्याध्यातम् शास्त्र शुश्रूषाया एवासंभवात् परमात्मोपासनस्यान्तिः एलकर्मोपकार्यत्वज्ञानाभावश्रसंगाधः वैनानः अप र अस्ति प्रतिस्त्याज्यान्यु पासनागतया यथाशक्त्यानुष्ठेयान्येतावदेव श्रोतब्यं मुस्विभ प्रायेगीवमुक्तम्॥ ११॥ तथाप्येक येवीक्त्या सर्वाणि फलतस्त्याज्यान्यु पासनागतया यथाशक्त्यानुष्ठेयान्येतावदेव श्रोतब्यं मुम्हविभ प्रायेगीवमुक्तम्॥ ११॥

# ब्र्हिभद्रायभूतानामिति विजयध्वज श्रीवल्लभयोःसंमतःपाठः । ११ ।

# श्रीविजयभ्वजो । १९५५ वर्ष १० १९५५ ।

ननुकिमितिसंक्षिप्यकथनंविस्तरेणिकनस्यादितितत्राहे प्रायेशिति अस्मिन्किश्विगिजनाः अन्पायुषः अतपवमत्याः मरणशीलामंदाः कमकरणशक्तिशून्याः सुमंदमतयः अत्यलपत्रक्षा मंदभाग्याः अन्पपुर्यस्भागितः क्षेष्ठभगंदरादिन्याधिकिरुष्दुताः प्रायेशितिप्रत्येकमिसंब-ध्यते बहुलमेवंकिश्चिदेवोक्तार्थेअन्यथास्यादित्यर्थेवर्ततेहत्यन्वयः ॥ १० ॥

अल्पायुष्यादिभिः अत्यंतंदुर्बलानांश्रेयः साधनशास्त्राणिहित्वाअयादिविषयानेकशास्त्रश्रवणिषुः शक्तिमत्याद्विरित्याह भूरीणोति। विमाग-शः प्रत्येकंविभक्तानितथाभूतानिभूरीणिबहूनिभूरिकर्माणिव्यापाद्वंतिश्रोतव्यान्यर्थादिविषयशास्त्राणिसंतितयदित्यन्वयः प्रक्तार्थेनिगम यति अतद्दति अतप्वमर्थादिविषयशास्त्रश्लानंदुः शकंश्रेयः परिपंथिचआयुरादिकचाल्पमतः साधोद्दीनजात्युत्पन्नत्वेपिनिदाष अतेषुशास्त्रेषुय

त्सारंतन्मनीषयाबुद्धचासमुद्धृत्यइदमेवोपादेयमितिनःबूहि किमर्थंभूतानांभद्राययेनभवदुक्तसारश्रवर्शेनात्माहारिराशुप्रसीदति अनुप्रहो-न्मुखोभवतीत्येकान्वयः ॥ ११ ॥

ए**कमसंदर्भः।** वर्षे पर्वत्रः १०० वर्षेत्रम् वर्षेत्रम् वर्षेत्रम् वर्षेत्रम् वर्षेत्रम्

লাল্যক বিবাহ সাহিত্যকালী কৰা সাহাজ্যক ক্ষুত্ৰ কি বিশ্বকাৰ কৰিছে সংখ্যাল বিশ্বকাৰ সংখ্যালয়ৰ বিশ্বকাৰ সংখ্যালয়ৰ সংখ্যাপতিক সংখ্যাপতিক

किंपुरुषानेव वर्णयति । मन्दभाग्याः खल्पपुरयाः ॥ १० ॥ भूरीगीति सार्थकम् । श्रोतव्यानि शास्त्राणि । ब्रूहि भद्राय भूतानािमति कचित् पाटः ॥ ११॥

## सुबोधिनी।

अयंवाह्योदोष: "नहिकश्चित क्षणमि जातु तिष्ठत्यकमें कृदिति लोकिक कर्म व्यापृताः ततोपि विहित कर्म व्यापृताः तत प्रमाण विचारेप्रकरण्याः धर्मादिशास्त्राणि ज्ञातव्यानितानिच भूरीणि कर्माणि येष्वित भूरिकर्माणि नच अवण्यात्रेण कृतार्थता किंतु तदुका विचारेप्रकरण्याः धर्मादिशास्त्राणि ज्ञातव्यानितानिच भूरीणि कर्माणा ग्रुपायं कथ्येत्याहुः अत इति प्रत्युप कारापेक्षाभावाय संबोधनं निकर्माण्यपि कर्त्तव्यानि ततो महान दोषो वाह्यः एवं त्रिदोष प्रहाणा ग्रुपायं कथ्येत्याहुः अत इति प्रत्युप कारापेक्षाभावाय संबोधनं साधो इति परदुः खदूरी करणा साधोरावश्यकमिति भावः अन्यार्थमुकस्य प्रासंगिकस्य वा साधनस्य निराकारणायाह अतिति एतादश दोषे अन्नापिवहृति साधनानिचेत यत्सारं तत् समुद्धत्य वक्तव्यम्यत्रवोनित्य संबंधान्नाध्याहारदोषः यदिति प्रसिद्ध वा सारं पार्पयं फल व्यभित्यादि दोष रहितम् पक्रवचनेन आसाधारण्यं सुगमत्वं चोक्तं प्रकर्णाम विधयो वध्येत इतिन्यायेन यद्यपि सर्वं प्रकर्णामु सुसंबद्धं तथापितत्तत्त स्थानादुद्धत्य वक्तव्यमित्याह समुद्धत्येति प्रकरणाषु तद्धमं ग्रुन्यत्वाभावायमनीषयेति दुद्धौवोद्धरणं नकृतितत्तम् नस देषा मनीषा मनश्चांचव्यनिवारिका वुद्धिः प्रार्थनायां प्राप्तकाले वा लोद मद्रं कल्याणां त्रिविध दुःखाभाव पूर्वक महासुखावार्तिः तद्भगगवत्त्रसादादिति चत्त्राह येनात्मा सुप्रसीदतीति येनेव हेतुना आत्मा भगवान् सुप्रसीदिति तर्वह तथेव कथ्येत्यर्थः भूतानामिति पिशाचवज्ञीवानां परिभूमण् बोधनेन द्यास्चिता पवं फलसाधन प्रश्ते निक्तिति तत्राविभूतो भगवानेच फलसाधन चत्याद्यं मगव-द्यतारो लेखानामधे वेति संदेहात् अवतार प्रयोजनं पृष्ठांत स्तजानासीति॥ ११॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

नतु मन्मुखात्ततत् सन्वे श्रुत्वा युष्मदाद्य एव श्रेयो निश्चित्वन्तु तत्नाहुः हे सभ्य देशकालपात्रश्च अस्मित् कली प्रायेश जनाश्चर एवं यदि कथिन्वद्दीर्घायुषस्ति मन्दाः परमार्थेष्वलसाः यदि किचित्रिरलसा अपि तिहि निर्वुद्धयः यदि सुबुद्धयोऽपि स्युद्धवर्षः विवायुष एव यदि कथिन्द्रित्यः विवायुष्पद्वविद्याः रागायुपद्वविद्याः ताहशसायुसङ्गहीनाः यदि लब्धसुसङ्गा अपि तदा उपद्वताः रागायुपद्वविद्यात् तन्मुखात् श्रीतं श्रुत्वा वा स्वश्नेयोनिश्चित्यः सन्द्रभाग्याः ताहशसायुसङ्गहीनाः यदि लब्धसुसङ्गा अपि तदा उपद्वताः रागायुपद्वविद्यात् तन्मुखात् श्रीतं श्रुत्वा वा स्वश्नेयोनिश्चित्यः तत्तदग्रुष्ठातं नावकाशं लभगतं इति । यद्या अल्पायुषस्तत्रापि मन्दा इत्यादि ॥ १० ॥

# सूतजानासिभद्रतेभगवान्सात्वतीपतिः । देवक्यांवसुदेवस्यजातोयस्यचिकीर्षया ॥ १२ ॥ तत्रःशुश्रूषमागानामहस्यकानुवीगितुम् । यस्यावतारोभूतानां तमायचभवायच ॥ १३ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

น และ ค. พ.สพริเวททหลังคลักสหหารทาง การพระวันแทนจะ โดยกลังเกินเลยเลือนเหตุ และ ค.ศ. ที่ เป็นโดยที่นั้นส่นหนึ่ง

ताहरास्य श्रेयसः साधनेषु मध्ये यन्मुख्यं कलिकालवर्त्तिमिर्जनेः सुराक्यञ्च तत् साधनं वदेति पृच्छन्ति । भूरीणि कर्माण्यनुष्ठे-यानि यत्र तानि श्रोतव्यानि साधनानि ताहरासाधनप्रतिपादकानि शास्त्राणि वा । येनात्मा बुद्धिः प्रसीदिति । तश्च श्रवणकीर्त्तनादिक भेगेत्यग्रेश्वास्यते ॥ ११ ॥

# भाषा टीका।

हे सभ्य ! इस कलिकालमें प्रायः मनुष्य अल्पायु हैं। इस अल्प आयुमें भी कुछ शास्त्रका अभ्यास कर सकतेहैं पर आलसी हैं। जिन को आलस नहीं वे मंद बुद्धि हैं कुछ समझ नहीं सकते. जो कुछ बुद्धि वालेहें वे रोग शोक दारिद्रय से ज्याकुल हैं॥ १०॥ और इस संसार में श्रोतब्य शास्त्र अनेक हैं और उन शास्त्रों के निर्दिष्ट कम भी विविध हैं। उन सबको पढ़ कर व गुरुमुख सै

और इस संसार में श्रोतव्य शास्त्र अनेक हैं और उन शास्त्रा के निर्देष्ट कम मा विविध है। उन सवको पढ़ कर व गुरुमुख सै सुनकर उनका सार निकालना वड़ा कठिन है अतः हे साधो ! अपनी वुद्धिसे उन समस्त शास्त्रों का सार सार उद्धार कर श्रद्धा वान हम सब मुनियों से कहो । जिससे हमारे आत्मा को प्रसाद अर्थात् संतोष शांतिहोय ॥ ११ ॥

#### श्रीधरखामी।

प्रश्नान्तरं स्तेति पञ्चाभिः । भद्रं ते इत्यात्सुक्येनाशीर्व्वादः । भगवाित्ररितशयेश्वर्थादिगुगाः । सात्वतां सच्छन्देन सत्त्वसुर्त्तर्भ गवान् स उपास्युत्याविद्यते एषािभित सत्वन्तो भक्ताः स्वार्थेऽग् राक्षसवायसादिवत् । तस्य वाश्रवग्रामार्षम् । तदेवं सात्वदिति भवति तेषां पतिः पाद्यकः । यस्यार्थविशेषस्यचिकीषया वसुदेवस्य भार्यायां देवक्यां जातः ॥ १२ ॥ अङ्ग हे स्त तन्नोऽनुवर्णयितुमहेसि । सामान्यतस्तावद्यस्यावतारो भूतानां क्षेमाय पाद्यनाय समृद्धये ॥ १३ ॥

#### श्रीवीरराघवः

प्वं मुक्ति साधनं पृष्ट्वाञ्यतद्तुयाहकेषु प्रधानतमं "श्रवणं कीर्तनं विष्णों स्मरणमित्यादिषु प्रथमोपात्तं भगवचरित्र श्रवणं चिकी-र्षवस्तत्रापि साधुपरित्राणायावतीर्णं समनंतरश्रीरूष्णावतार चिरतं पृच्छीत । सूतद्दत्यादिषद्भिः । हेस्ततुश्यं भद्रंकल्याणमस्तु । सात्वतां भक्तानां पितः पालियतामगवान् वसुदेवस्य अपादानस्य संबंध विवक्षयाषष्ठी । वसुदेवात्तद्भार्यायां देवक्यां यस्य विकीर्षया यत्कर्म कर्तुमिच्छ्या जातोऽवतीर्णः । तत्संवत्वंजानासीति ॥ १२ ॥

यत्कम कार्या विद्या विद्या । तिवृति । त्र्छी कृष्णाचरितं श्रोतु मिच्छतांनोस्माकं बाँगितुमंगहे स्ताहिसि । अहसित्यनेन सद्जुगृहीतः तस्माद्वकृतमहसीत्याहुः । तिवृति । त्र्छी कृष्णाचरितं श्रोतु मिच्छतांनोस्माकं बाँगितुमंगहे स्ताहिसि । अहसित्यनेन सद्जुगृहीतः कृष्टिनेन तम्मादित्र वेदीत्वं वक्तुं प्रभुरिति सूचितं महोपकर्नृत्वात्त्वतारः चरित्रमवद्यं शुश्रूषितव्यमित्यिभप्राये । त्रवतारंविद्यां भूतानां विभवाय योगीपर पर्याय इष्टोदयायक्षेमाय तत्पालनायच । भक्तानामित्यज्ञक्त्या यस्येति यस्य भगवतोऽवतारः । श्रीकृष्णा रूपः भूतानां विभवाय योगीपर पर्याय इष्टोदयायक्षेमाय तत्पालनायच । भक्तानामित्यज्ञक्त्या यस्येति यद्तामयमभिप्रायः । शत्रुगामपि दमनपूर्वकमपवर्गदायित्वेन महोपकर्त्तेतिकिमुवक्तव्यं तद्वतारो भूतानां योगक्षेमार्थ भूतानामिति वद्तामयमभिप्रायः । शत्रुगामपि दमनपूर्वकमपवर्गदायित्वेन महोपकर्त्तेतिकिमुवक्तव्यं तद्वतारो भूतानां योगक्षेमार्थ सृतानामिति वद्तामयमभिप्रायः । शत्रुगामपि दमनपूर्वकमपवर्गदायित्वेन महोपकर्त्तेतिकिमुवक्तव्यं तद्वतारो भूतानां योगक्षेमार्थ सृतानामिति वद्तामयमभिप्रायः । शत्रुगामपि दमनपूर्वकमपवर्गदायित्वेन महोपकर्त्तेतिकिमुवक्तव्यं तद्वतारो भूतानां योगक्षेमार्थ सृति ॥ १३॥

#### श्रीविजयभ्वजः

सारश्चहरेःकृष्णावतारकथैवेत्याशयमेतःपुनराहुरित्याह स्तेति भोस्तजानासिस्रकलमितिशेषः तेतुभ्यंभद्रंमंगलमस्तु तेतविषय-भृतंभद्रंसर्वमंगलंभगवंतंज्ञानासीतिवा सात्त्वतांपतिभेगवान् यस्यकार्यविशेषस्यचिकीर्षमात्रसुदेवस्यसकाशाहेवक्यांजातः तद्ग्राण प्रकाशितः ॥ १२ ॥

यस्यावतारोभूतानांक्षेमायेहिकामुष्मिकसुर्वायविभिन्नांयाभिन्देश्वयम्बति अगहेवस्य तस्यम्पूर्वादेशिकायेवशेषंचिरत्रापरपर्यायंशुभू- विमाणानामस्माकमनुर्वाणानुसम्यग्वकतुमहेसीत्येकान्वयः सात्वतांभिति सन्यवस्थित्याद्वयस्यम्भूष्मस्तितिसत्वंतःतपवसात्वंतः प्रधा-दित्वात्वार्थेभण्तस्यादर्शनंछांदसम् यद्वासातिःसौत्रोधातुःस्रवार्थः चासकपन्यायेन्किपिसात् सक्तपरमात्मासपपामस्तीतिसात्वंतोम-कास्तेषांपितःमरुत्वतामितिवत्सात्वतामितिकपित्रिद्धः श्रात्वतांपंचरात्रोक्तिमित्रिक्तिंत्रां विक्रितिक्रिक्तिक्षेत्रिक्तिं विक्रितिक्षित्रिक्तिक्षेत्रिक्तिक्षेत्रिक्षित्रिक्षेत्रिक

- एकुक्सिक्स मामान्य । उनेदानम् संस्कृतिको १००० । अ**क्षमसन्दर्भः** को गणाणी । जानाने वासकेश १० १० एक विकास सामानु

स्तेत्यादि नवकं नानावतारावतारिष्विप सत्सु महापुरागाप्रारम्भ एव श्रीशीनकादीनां श्रीकृष्णीकतात्पर्यमिवम् यथा । अत्र पूर्ष्वं सामान्यतोऽस्माभिरेकान्तश्रेयस्त्वेन सर्व्वशास्त्रसारत्वेन आत्मसुप्रसादहेतुत्वेन च यत् पृष्टं तदेतदेवास्माकं भाति यत् श्रीकृष्णालीलाव-ग्रानिमत्यभिष्रत्याद्यः स्तेति । भद्रं त इति श्रीकृष्णालीलाप्रदेनेन सहादरौत्सुक्येनाशीर्व्वादः । भगवान् स्वयमेवसम्पूर्णेश्वर्णादियुक्तः । सात्वतां सात्वतानां । सुद्रभाव आर्षः । यादवानामित्यर्थः । जातो जगद्दद्यो वभूव ॥ १२ ॥

सामान्यतस्तावत् यस्यावतारमात्रं क्षेमायेत्यादिः।। १३॥

### सुवोधिनी।

इदंत्वित गृढ मितिको वेदनजानातिति संदेहात्पृछंति जानासीति मुख प्रसादंह्या जानातिति क्षात्वा हर्षेणाशीराहुः भद्रंत इति अस्ति त्यर्थात् महित क्षाने। पदेशे दक्षिणा त्येषा श्रुतमस्ति देवक्यां जातः कृष्णो भगवानिति तत्रसंदेहः भगवतः षड्गुणेश्वयं संपन्नस्य बम्हणः कार्यकारण्यं नदेह संवंधोपेक्षते जीवधर्मास्त्रवहाणि नसंत्येवप्रादुर्भाव प्रकारस्तुजीवानामिवअतः संदेहः किंच सात्वतांपितः सत्त्वेकनिष्ठाः सात्वंतः देवामुक्तावा तत्पित्त्यज्य मनुष्येषु कथमाविभावः पितत्वात्तेषां पित्यागोनुचितः किंचदेवाः मुक्ताः सनकादयो वातेपि बम्हणो देहान्मनसोवा उत्पद्यंतेनस्त्रियां तत्रापिकस्यचित् कन्यायां देवक्यामिति देवकस्य कन्यादेवकी ॥ तथाच ॥ अप्सुनारायणावतारवन्न भ-वित तत्रापिविशेषः वसुदेवस्येति वसुदेवस्य भार्यापराधीना भगवद्वतारे न भार्यादिविशेष संबंधः किन्तु संबंधमात्रमिति षष्ठी मात्र प्रयोगः अतस्ताहशस्य ताहशावतारे किंकार्यं तिर्हितथान भविष्यतीत्याशंक्याहजातः कंसादिवधस्त्वन्यस्मादिष भवतीत्यभिष्रायः अतः यस्य चिकीषयाजातः तन्नः कथयेति संबंधः अनेन प्रासंगिकं प्रयोजनं निवारितं कालादि साध्यताच नन्वस्त्येव प्रयोजनं कारण दर्शनात् योगेनच तज्ञानंतीत्याशंक्याहुः तन्नः शुश्रुषमाणानामिति ॥ १२ ॥

बहुनामस्माकं अवगोच्छापूरणायकथनीयं निह्नअवगोच्छायोगे निवर्त्तते नवायोगः सर्वैः कर्त्तुद्राक्यते नवायोगेन भगवदीयः अपदाथीं बातुंद्राक्यः अवगाव्यतिरेकेण अतपवभगवद्राक्यपरंपरयावा भगवन्तुखोक्तं गुरुमुखाच्छ्रुतम् अनुपश्चाद्वर्णयितुमहिस पिठतस्य हि अनुवचनमावश्यकं भंत्रादाविप परमधिकारविशेषेतच्छ्रुश्रूषमाणानांवक्तव्यमेव अगितकोमलसंवोधनम् अगत्वेनस्वाधीनत्वायअसाधारणांतुप्रवचनमावश्यकं भंत्रादाविप परमधिकारविशेषेतच्छ्रश्रूषमाणानांवक्तव्यमेव अगितकोमलसंवोधनम् अगत्वेनस्वाधीनत्वायअसाधारणांतुप्रयोजनं पृच्छ्यते साधारणां तु ज्ञायत इत्याहुः यस्यावतारहत्यादिसाई स्त्रिभः तत्रप्रथममवतारद्वाराह्मप प्रयोजनमाह यस्योति यस्यसामायोजनं पृच्छ्यते साधारणां तु ज्ञायत इत्याहुः यस्यावतारहत्यादिसाई स्त्रिभः तत्रप्रथममवतारद्वाराह्मप प्रयोजनमाह यस्योति यस्यसामाव्यतोष्यवतर्गाद्वेवतियङ्नरादिषु अलोकिकतेजसः संक्रमणं भूतानां जातमात्राणां स्थावर्जगमानां क्षेमायपेहिकसर्वसुखायचकारात्
सर्वदुः खनिवृत्तये भवायमोक्षायचकारादिविद्यानिवृत्तये भूसत्तायामिति सन्मात्रत्वायेत्यथः "चितितन्मात्रेणतदात्मकत्वात्"।४।४।६।६ति
चैतन्येश नुप्रवेशोवाचकारार्थः एवं सर्वेषामभ्युद्यिनः श्रेयसार्थं भगवद्यतारहत्युक्तम् उत्पत्स्यमानानांतुनाम्चापुरुषार्थसिद्विरिति तन्माद्यास्थमाहआपक्षद्वि॥ १३॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

तच साधनसारं श्रवणकी र्तनादिकं श्रीकृष्णयशोविषयकमेव वाचियतुं पुनः पृच्छिन्तं स्तेति । भद्रं त इत्यातसुक्येनाशीव्यदिः । सन्तो भक्ता एव खिचुत्वेन वर्त्तन्ते यस्य स सत्वान् विष्णुः स एव भजनीयो येषामिति भक्ताविति स्त्रेग्णाण्।सात्वता वेष्णावास्त्रषां पनितुं डभावस्त्वावर्षः।किम्बा सातिः सुखार्थः सीत्रो धातुहितुमग्णायन्तः। अनुपसर्गार्छिम्प॥३।३।१३८॥इति स्त्रोक्तस्तस्माद्वासरूपन्यायेन किपि सात् परमात्मा स सेव्यतयाऽस्त्येषामिति मतुपि सात्वन्तो भक्तास्तेषां प्रतिरिति। वसुदेवस्य देवक्यां भार्यायां यस्य चिकीषया तच्च ख्वाद्यापनमेव तस्येव नतु भूभारहरणादिश्चिकीषयेतिवस्तुतः सिद्धान्तसिद्धं "श्रवणस्मरणाहांणि करिष्यिति कुन्तीवाक्यपयवसानात् तस्य जिज्ञासया कि फलमिति चत् श्रुत्वा आत्माने कतार्थीकरिष्यामद्रयाद्धः यस्येति साद्धेस्त्रिक्षः। यस्यावतार एव श्रेमाय मोक्षाय

भवाय भूत्ये सम्पन्नये कि पुनः स इत्युर्धा ॥१२॥ १३॥ १३॥ १०० १०० १०० १०० ।

A

आपन्नःसंसृतिंघोरांयन्नामविवशोगृशान् । ततःसदोविमुज्येतयहिमेतिस्वयंभयम् ॥ १८ ॥ ५(१) कार्याः । । यत्पाद्संश्रयाःसूत्मुनयःप्रश्नमायनाः । सद्यः पुनन्त्युपस्पृष्टाः स्वधुन्यापो ध्नुसेवया ॥ १५ ॥ (२)

#### सिद्धान्तप्रदीपः

स्रतेति ॥ सात्वतांपतिः ॥ सात्वतंवेष्णावं शास्त्रं तदाचक्षते इति सात्वतस्तेषापतिः । गिविकिपिगिलोपेरूपम् ॥ १२ ॥ ॥ तदिति ॥ यस्यचिकीर्षयाजातस्तद्वर्शिणतुमर्हसीत्युपेय चिकीर्षितप्रदनः ॥ ननुजन क्षेमादि चिकीर्षयाजातदत्यत्रक्षेमादेरन्यथा सिद्ध-त्व मुक्त प्रश्नदाद्ध्यार्थमाहुः यस्यत्यादि प्रथेन यस्यदेवक्यांजातस्ययः किश्चद्यवतारः। क्षेमायामुण्मिक सुस्राय भवायहिकसुस्राय ।१३।

#### भाषा टीका।

हे सूत ! तुम्हारा मंग्र हो ! सात्वतों के पति श्री भगवान वसुदेवजी की भाषी देवकी के गर्भमे जिस इच्छासे अवतीर्गा हुए थे ? वह तुम जानतेही ?॥ १२॥

हे अंग ! जिन भगवान का अवतार जीव को क्षेम ओर मंगलके निमित्त है उनकी लीला कया श्रवण करनेकी हमें वडी अभिलाषा-हेवह तुमको हमारे आगे वर्शन करना चाहिये॥ १३॥

#### श्रीधरस्वामी।

तत्प्रभावमनुवर्गायन्तस्तद्यशःश्रवणौत्सुक्यमाविष्कुर्व्वन्ति आपन्न इति त्रिभिः। संसृतिमापन्नः प्राप्तः विवशोऽपि। ततः संसृतेः अत्र हेतुः यद्यतोनाम्नः भयमपि स्त्रयं विभोति ॥ १४ ॥

किञ्च यस्य पादी संश्रायी येषां अतएव प्रशमोऽयनं वर्तम आश्रयो वा येषां ते मुनयः उपस्पृष्टाः सन्निधिमात्रेण्यसिवताः सद्यःपुनिन्त स्वधुनींगङ्गातस्याआपस्तु तत्पादाम्निसृताः न तु तत्रेव तिष्ठन्ति अतस्तत्सम्बन्धेन पुनन्त्योऽपि अनुसेवया पुनन्ति तत्रापि न तु सद्य इति मुनीनामुत्कर्षोक्तिः॥ १५॥

#### श्रीवीरराघवः।

यतस्तकामैवानिष्ट परिहारेष्ट प्रापा क्षममेवेत्यभिष्रायेगा नाम प्रभाव माहुः आपक्ष इति । घोरांगर्भजन्म जरामरणादि रूपां संसृति मापन्नः प्राप्तः पुमान्राञ्जरपि विवदाः पारवदयेनापीत्यर्थः । यस्यश्रीकृष्णास्ययच्छव्दानाकोवा भगवतस्तस्यत्युत्तरत्रान्वयः नामगृगान्तु च्चरन्देहाऽ वसान इतिशेषः। ततःसंसृतेः सद्यप्व विमुच्येत मुक्तोभवेत् । कर्यं पारवश्येनाप्युचारणः मात्रेणापि शत्रुरपि मुच्येतेत्यत्रोचार-शीं विशिषति । यद्विभेतिस्वयं भवदति यन्नामोचारणं प्रतिभवः संसारः स्वयंविभेति । मयमिति पाठेपि जन्म मरणादि भयहेतुत्वाद्भव क्षाचार्यक्षेत्र विवक्षितः। देहावसान कालिक भगवन्नामोधारग्रास्याव्यवधानेन मुक्ति साधनत्वीमतरकालिकस्यतु कर्मज्ञान योगादि वद्-भक्ति योगानुष्राहकत्वेन तद्द्वारेति विवेकः एतचपष्ठेऽजामिलोपाल्याने प्रपंचयिष्यते ॥ १४॥

आस्तां ताबद्वताराणां नाम माहात्म्यं तदीयानां माहात्म्यमेव वाङ्मनसागोचरमित्यभिष्रायेणाहुः यदिति । हेस्त यस्य भगवतः पादसंश्रयाः पादावेव प्राप्यत्वेन प्रापकत्वेनसंश्रयंत इति तथा । मुनयस्तत्पदार्रावेद मननशीलाः प्रशमायनाः शमदमादि गुणानामाश्र-पाद पाद पाद पाद पाद पाद पाद पाद स्पर्धा मात्रेगापीति भावः सद्यव्य पुनितिरोषः पर्वतत्पाद संबंधिन्याः स्वर्धन्या-याः पत्राचा आपोष्यमु सेवयास्तान पानादि रूपया सेवया पुनति। स्वधुन्यापस्त्वमुसेवया पुनति मुनयस्तदीयास्तूपस्पर्शमात्रेगापिपुनंतीतिके-चिद्वचाचक्षते। यथा स्वर्धुन्यापोत्रसेवया पुनित तथा मुनयोप्युपस्पृष्टाः पुनिति दर्षाती वाभिषेतः ॥१५॥

#### श्रीविजयध्वजः॥

सार्त्वात्कृष्णचरितमेवानुवर्णनीयंनान्यद्यतस्तस्यवासुदेवादिनामोश्वारणाद्विल्बंधनिवृत्तिः तत्रकिवक्तव्यंतश्वरितश्रवण्यमनना-सारत्याप्परः तत्राक्षवक्तव्यतश्चारत्रव्याप्पनानान्यात्राचार्यापः तत्राक्षवक्तव्यतश्चारतश्रवशामनना-क्यामित्याद्यार्थवंतआहुरित्याह आपन्नइति भवःसंसारः अहंकारक्षपेणाबंधकोरुद्रोवा येप्रतिविभेतिभयादपसृतोभवति यसामयस्यनाम-(२) ऋषयःप्रदामायनाइति श्रीवल्लभपाठः॥

(१) स्वयंभवः इति विजयध्वज बीरराघवयोः पाठः

गृणान् उच्चारयन्विवशः वहभ्यासात्घोरांसंसृतिमाषशःपुरुषःततं विर्ससाणात्सर्धस्तदानिभूवृचिमुच्येतविशिष्टांमुक्तिमाप्ताति ॥ १४ ॥ किंच यत्पाद्संश्रयाः यस्यपादावेवसंश्रयोयेषांतेतयोक्ताः मुक्तुः श्रमोभगविश्वश्रेवायन्मेश्रयोयेषांतेमश्रमायना मुनयः यैःप्राणि-भिरुपस्पृप्टास्तान्सद्यःपुनंतिपविश्वश्रेवति यत्पादसंश्रयादितिपाठे यचारणानिषविण्यातितयेथः तन्ननिदर्शनमनुसेवयाश्रम्भ वनेननिषविण्योगन्उपस्पर्शनस्तानाचमनादिनास्वर्धुनीगंगेवयथालीकपुनितितयेत्यन्वयः स्वर्धुन्यापद्वतिपाठेगंगाजलपरमाणवः चिरकालसेव-या मुनयःसद्यद्वतिशेषः ॥ १५ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

विवशोऽपि विशेषेण पराधीनःसम्नपि । यस्य श्रीकृष्णस्य नाम । तस्य सर्वोवतारित्वाद्वतारेनाम्नामपि तत्रैव पर्य्यवसानात् । अत-एव साक्षाच्छ्रीकृष्णादपि तत्तम्नामप्रवृत्तिः प्रकारान्तरेण श्रूयते श्रीविष्णुपुराणे । तत्र त्विखलानामेव भगवन्नाम्नां कारणान्यभविन्नति हि गद्यम् । तदिदञ्च वासुदेवदामोदरगोविन्द केशवादिनामवज्ञेयम् ॥ १४ ॥

किञ्चयतपादिति । यस्य श्रीकृष्णस्य पादौ सम्यगाश्रयौ येषाम् । अतएव प्रद्यमायनाः । द्यमोभगवित्रष्ठबुद्धिता । "द्यमो मित्रष्ठतावुद्धिति स्वयं श्रीभगवद्यास्यात् । स एव प्रकृष्टः प्रद्याः । साक्षात्पूर्णभगवच्छीकृष्णसम्बन्धित्वात् प्रद्याम एव अयनं वर्त्मशाश्रयो येषां ते श्रीकृष्णलीलारसाकृष्टिचत्ता मुनयः श्रीशुकदेवादयः सद्यः पुनिन्त सवासनपापेश्यः द्योधयन्ति । स्वर्धुनी गङ्गा तस्या आपस्तु . "योऽसौ निरञ्जनो देवश्चित्रस्वरूपी जनार्दनः । स एव द्वरूपेण गङ्गाम्भो नात्र संद्याः "। इति स्वयं तथाविधरूपा अपि साक्षाच्छीवामन-देवचरणान्निःसृता अपि अनुसेवयासाक्षात् सेवाश्यासेनेव तथा द्योधयन्ति न सन्निधिमात्रेण सेवया साक्षात् सेवयापि न सद्य इति । तस्या अपि श्रीकृष्णमाश्रितानामुत्रकर्षात्तरस्योत्कर्षः । एवमेव ततस्तद्यद्यससोऽप्याधिक्यं वर्ण्यते । "तीर्थं चक्रे नृपोनं यद्जिन यदुषु स्वःसिरित् पाद्द्यौचामिति । दीका च । इतः पूर्वं स्वःसिरिदेव सर्वतोऽधिकं तीर्थमित्यासीत् इदानीं तु यदुषु यद्जिन जातं तीर्थं श्रीकृष्णकीर्तिरूपं पाद्द्यौचं तीर्थमूनमल्पं चक्रे इत्येषा ॥ १५ ॥

# सुबोधिनी

घोरां संस्टातं सर्पादियोनि भूतांमहाव्याध्यादि रूपांवाआपन्नः यस्य अवतारस्य नामविवशः परवशः वेः कालस्य वशोवा गृणान्जुचरक्षेवततः सद्योविमुच्यते तत्राह अंतकाले कालंस्याधिकारी भयनामा कश्चित् मृत्यु पाशेनसर्वानेवगृह्णाति यचतुर्थस्कंधे वस्यतेसैनिका भयनाम् इत्यत्र सद्यस्तस्यपाशान्मुच्यतद्दर्यथेः ननुकथंसनामकथनमात्रंणपाशान्मुंचिति तत्राह यद्विभेति यस्मान्नान्नोभयंख्यं विभेतिस्वरूप नाशेनविभेति नतुविहः पदार्थनाशेनपवंहि भगवन्नाममाहात्म्यंयत् श्रोतृन् मुक्तान् करोति तत्रोभयमपि मुच्यते इत्यर्थः अथवास्वरूप भूतं भयमपिमुच्यतद्दर्यथः द्वेतद्दिर्थन्छिति "द्वितीयाद्वेभयंभवतीतिश्रुतेः अतः अन्नेउत्पत्स्य मानानांनाम्नामुक्तिः ॥ १४ ॥

ननुनाग्रोश्वारण सामर्थ्य रहितानां बृक्षपश्वादीनां कागितिरितिचेत्तनाह यत्पादसंश्रयाइति ॥

मक्तर्पर्शेणितिप मुच्यंतइत्यर्थः यस्यभगवतः पादांसंश्रय भूतीयेषां भगवतः समाश्रयणं ज्ञानमागिप भवति यथाच्ञ्ञानिनां देहाध्या सामावात् तत्तर्पर्शेननमुक्तिः किंतुतदुपदेशेनिति तद्वचाहृत्यर्थं पादपदप्रयोगः पादसंश्रयणं मिक्तमागं एव गुरुत्वप्रकार व्याहृत्यर्थं समुप्यमं स्तेतिसंबोधनंपाविञ्यानुभवञ्चापनार्थं यथास्तोपिसन् महापुरुष कृपया ब्राह्मण्येश्वादिष्विप संव्यवहारं संभजते ऋषयो मत्र दृष्टारः प्रशामायनाः ज्ञानिनः प्रकृष्टः श्वामः अयन्येषामितिते उभयेपि यत्पादसंश्रयाः पुनंतिति योजना अथवा पादसंश्रयाः ऋषयः प्रशामायनाश्च भूत्वा ज्ञान कर्मणीति प्राप्य त्रितय संपन्नाः सर्वेपाविञ्चहेत्वोमवित स्वयंहिशुद्धाः संतः परान् पुनंति अतः खशुद्धार्थं ज्ञान कर्मणी युक्तेनतु साक्षात्पावन संवधस्तयोः उपस्पृष्टाः सर्मीपदेह संवधमात्रेण पुनंतित्यर्थः कालव्यवधानेनिह सर्वत्रपावनं दृष्टमः "त्रःस्वाप्यवद्यमधीयीतित्रपत्रं वा सावित्रीं संवत्सरादेवात्मानं पुनंति दृष्टापिः मुनयइति पाठेपि मननं कर्मयोगोवा क्रीर्यादिना स्पर्शव्याद्वयः र्थ उपित अग्रेण वा संवधः तेषां तुद्दश्चा दिनापि पावनं संभवित खर्षुन्यापा गंगाजलमनुसेवया पुनाति भगवत्सवकानेवपुनतित्यर्थः "प्रायश्चित्तानि चीर्णानीति वाक्यात् सद्यः पुनातिगागयमित्यपि नारायण् संगुष्टी करण्यद्वारा पुनंति अथवा उपस्पृष्टाः खर्षुन्यापः सद्यः पुनंतिति दर्षातः इति वितर्केभगवद्रभक्ताः गंगाच पुनंतोपि भगवत्सेवयापुनंति नान्यथेति वितर्कः आपाततः पावनंतुनात्र विविश्वतं परम्मपावनंतु माया स्पर्शामावः॥ १५॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्सी।

ततः संस्तृतेः । अत्र घोरामिति विवश इति सद्य इति पदवयेगा अजामिलाद्यः स्चिताः । यत् यतो नामः एकस्मादिष स्वयं भयं स्वयं भगवानितिवन्मूलभूतं भयं महाकाल एव बिभेति कि पुनर्मृत्युर्यमध्य किमुततमा यमद्ता इति भावः ॥ १४॥

# कोवाभगवतस्तस्यपुण्यश्लोकेड्यकर्मभूगः। शुद्धिकामोनशृणुयाद्यशःकिष्टमलापहम् ॥ १६॥ तस्यकम्माण्युद्वारागिपरिगीतानिसूरिभिः।

ह्रहिनःश्रद्दधानानांळीळयाद्घतःकळाः ॥ १७॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

यत्पादावेव संश्रित्येव वर्त्तमानाः सद्य इति स्मृतमाता एव पुनन्ति अविद्यामालिन्यानि शोधयन्ति कि पुनर्देष्टाः स्पृष्टाः सेविता वेति व्याख्येयम् । "येषां संस्मरणात् पुंसः सद्यः ग्रुद्धन्ति वै गृहाः । किं पुनर्दर्शनस्पर्श्वपादशौचासनादिभिरित्यनेनैकार्थ्यप्राप्तेः। खर्धुन्याआप-इत्यत्रापि तस्याः सकाशाद्दूरदेशं नीता इत्येव व्याख्येयम् । "मुक्तिस्त्वदर्शनादेव न जाने स्नानजं फलमिति वाक्यार्थविरोधात् । किञ्च स्वर्धन्या दर्शनादेव साधूनाञ्च स्मरणादिप मुक्तिरिति । तदिप साधूनामेवोत्कर्षो क्षेयः । ततश्च तास्तत्पादान्निसृता एव अतस्तत्स-म्वन्धेन पुनन्त्योऽपि उप उपरिस्पृष्टाः सत्यः पुनन्ति । तुर्विकल्पे सेवया प्रगत्यादिना वा आहता वा खर्धुन्याप इति समासान्ताभावः आर्षः ॥ १५ ॥

#### सिद्धान्त प्रदीपः।

संसृति संसार लक्ष्मणाम् । ततः संसृतेर्विमुच्येत मुक्तो भवति ॥ १४ ॥ १५ १६ ॥

#### भाषा टीका।

घोर संसार को आपन्न पुरुष विवश होकर श्री जिनका नाम ग्रहण करनेसे शीघ्रही मुक्त होजाता है। जिन भगवान से भय अर्थात मृत्यु को भी भय होताहै ॥ १४॥

हे सूत ! प्रशमायन अर्थात शांति निष्ठ मुनि गण जिन श्रीभगवान के चरण का आश्रय करने से गंगाजी से भी अधिक महिमा वाले होते हैं। क्योंकि गंगाजी ती वहुकाल सेवा करनेसे पवित्र करती हैं। और ये हरिजन दर्शन स्पर्शन लाभ से जीवों को पवित्र करते हैं ॥ १५ ॥

पुग्यइलोकैरीङ्यानि स्तव्यानि कर्माणि यस्य तस्य । यशः कलिमलापहं संसारदुःखोपशमनम् ॥ १६॥ प्रद्नान्तरं तस्येति । उदाराणि महान्ति विश्वसृष्ट्यादीनि । सूरिभिनीरदादिभिः । कला ब्रह्मरुद्रादिमूर्त्तीः ॥ १७॥

#### श्रीवीरराघवः।

उक्तरन्येश्चगुर्गोस्तंविशेषतस्त चरित्रमवश्यमात्मशुद्धिमच्छद्भिः श्रोतव्यमित्यभिप्रायेगाहुःकोवेति । तस्योक्त विधस्यपुर्यस्य उक्तरपञ्च । तस्यक्त विधस्यपुर्यस्य । अत्यव सचासाविडिंग्स्तृत्यं कम चरित्रं यस्य तस्य भगवतो यशः किल-भृगवता नरः । जतस्य सचासावाडयस्तुत्य नाम चार मलापहं कलिप्रयुक्त पापहंतृचिक्तशाद्धिकामः कोवापुमान्न शृगायात्सर्वी पिशृणुयादेवेत्यर्थः॥ १६॥

प्रवालीलया नतुकर्मग्रोतिभावः कलाः मूर्तीरवतारांतररूपाः द्घतस्तस्योदाराग्रि विपुलानि सूरिभिनीरद्पराशरपाराश्योदिाभिःपरि-अतालालया गणुनानयाः अद्यानानांनोऽस्मभ्यं ब्रहीति लीलयेत्यनेनावताराणामकमम् लत्वमुक्तम् कलाद्धतद्दत्यनेन श्रीकृष्णास्या-गीतानिच कर्माणि चरितानि श्रद्धानानांनोऽस्मभ्यं ब्रहीति लीलयेत्यनेनावताराणामकमम् लत्वमुक्तम् कलाद्धतद्दत्यनेन श्रीकृष्णस्या-गितानिच क्याप्य विवादतं सूचितं तेनैवावतारांतर कथाप्रश्नश्च कृतइत्यर्थः॥ १७॥ वतारित्वप्रतीत्यापूर्णावारत्वं सूचितं तेनैवावतारांतर कथाप्रश्नश्च कृतइत्यर्थः॥ १७॥

# श्रीविजयध्वजः।

पुरायद्यक्षेत्रेद्धादिभिःईडचंस्तृत्यंकर्मकंस्वधादिचरितंयस्यसत्तथाः पुरायद्यक्षेत्रश्चायमीडचकर्मेतिवातस्यहरेःकिलमलापर्हकालिनिमि त्तंमलंपापलक्षर्यामपद्दंतीतियदाश्चारितापरपर्यायं द्याद्धकामः अतःकरणानिर्मेलतांकामयमानःकोवाषुरुषःनश्चणुयादित्येकान्वयः ॥ १६ ॥ नक्षेवलंकृष्णकथेववक्तव्यामत्स्याद्यवतारांतरकथापीत्याद्यं तस्यकर्मार्गाति लीलयामत्स्यादिकलाःद्रथतःतस्यहरेःस्रिभिक्षेद्धादिभिः परिगीतान्युदाराययक्तिष्टान्युद्दतदोषाणिवाकर्माणिब्रहीत्येकान्वयः ॥ १७ ॥

### कमसन्दर्भः।

एतस्य दशमस्कन्ध्रस्येव संवादितां व्यनिक को वेति । शुक्षिकामोऽपि यतः कलियुगस्यापि मलापहं यस्मादेवं तस्मात् ॥ १६॥ तस्येति । उदाराणि परमानन्ददात्त्विणि जन्मादीनि । स्वयं परिपूर्णस्य लीलया अन्या अपि कलाः पुरुषादिलक्षगा द्घतः तत्तदंशा-जप्यादाय तस्यावतीर्श्यस्य सत इत्यर्थः ॥ १७॥

### सुबोधिनी ।

भगवधराः श्रवणे नास्माकं हृद्येस्वतः स्फुरितम् अतः सामान्यतोन्नातं विशेषार्थं प्रश्नः यद्यपि भक्तिभावात् स्वतः पुरुषार्थत्वनभगवद्यशः श्रवणं न भवित तथापि सन्मार्ग वर्तिनां श्रुद्धिरपेक्षत इति तद्ये श्रवणं विशेषतः कठौदेशकाल द्रव्य कर्तृ मंत्र कर्मणांषण्यामण्य
शुद्धकरणात् स्वातंत्र्यव्यावृत्त्यर्थेक इति वेत्यनादरे अश्रोतारो दैत्यांशानगण्यंत प्रवेति जीवानांस्वत उत्छ्व्या वाह्मणा प्रव शुद्धिः भगवत इत्युक्तं तस्यत्यवर्तार्णस्य सुलभत्वाय लीकिकं प्रभुस्तोत्रवत् अन्नाद कर्तृकव्यावृत्त्यर्थमाह् ॥ पुरुपश्लोकेडच कर्मण्यदित पुरुपा
इलोका कीर्तियेषां कीर्त्तन कर्तृणामिष कीर्तियंत्र सर्वान् पुनाति तत्रिकं वक्तव्यं कीर्तनस्य सर्वपावकत्वंतानि पुनातीति वातेषांपावि
प्रयापेक्षानास्तीतिवा अनेन कीर्तिः पवित्रेष्वेत प्रतिष्ठितेति बोधितं कर्मसामान्य प्रद्यापुरुत्कर्षाधायक कर्मव्यतिरिक्तान्यपि कर्माणि
पावनानित्युक्तं पुरुपश्लोक वचनादेवंकायते कीर्तिमद्भिः सहसंबंधः प्रायेण सर्वेषां भवित तेच मगवंतमेव कीर्त्तयंते अतो भगवत्कीति श्रवणं सुलभिति अत्र आपाततोषि शुद्धः श्रवणेन तत्र शुद्धिकामः कथं न शृणुयात् आधारोत्कर्षाधायकसर्वलोकालहादकविसपि
गुणः कीर्तियंशः कठौ सर्वेषां अपहतपाप्मत्वामावान्नतैः किर्विषितिवृत्तिः भगवतस्तु कालात्परत्वात्तत्वितेरिपितत्परत्वं अतः किलदोष निवर्तकिमिति ॥ १६ ॥

एवं प्रयोजन प्रइत्माह ॥ तस्यकर्माणीति ॥
तादशप्रयोजनस्यश्चतस्यहृदयसमागमनार्थकर्माण्येव पृच्छंति तस्य कर्माणीति कर्मश्रवणेनसत्फलं भगवतादेयमित्यपिनास्ति अन्या तादशप्रयोजनस्यश्चतस्यहृदयसमागमनार्थकर्माण्येव पृच्छंति तस्य कर्माणीति उदारादिविशेषणानि नन्यावर्त्तकानि किंतु-निचफलानिकर्मवपात्रापात्र विवेचनन्यतिरकेशावअन्यभ्योपिबहुप्रयच्छंतित्याह उदाराणीति उदारादिविशेषणानि नन्यावर्त्तकानि किंतु-कर्मोदेशेनोदारत्वादिविश्रीयते प्रथमत एव विशेष्यनिर्देशात् अवांतरफलप्राप्त्यर्थमुदारत्वनिर्देशः मुख्यं फलं भगवतएव तेषामज्ञानाभाव-कर्मोदेशेनोदारत्वादिविश्रीयते प्रथमत एव विशेष्यनिर्देशात् अवांतरफलप्राप्त्यर्थम्ययाक्षयन्यव्याहितः तिह शौनकादीनामपि सुलभमाह परिगीतानि स्त्रित्यानिर्देशात्रिया स्वर्वाद्वर्षण्यमानिर्देशात्राहः लीलया त्याद्वर्षण्याद्वर्षणात्राहः अद्यानानामिति श्रद्धयाहि पुनः पुनः श्रवशोच्छानिरूपिता कदाचिद्पिष्टयभाषोनास्ति त्रयमाणा चेष्टालीला तयानूतनाप्यकलाः प्रतिक्षणांश्चियंते भगवता यथातथा तत्कर्भणामिप चंद्रस्येव दिवतः कलाहति अनायासेनहर्षात् कियमाणा चेष्टालीला त्यानूतनाप्यकलाः १७॥ ॥ १०॥ नृतनकलासंवंथात् कदाचिद्पिनास्त्रिः इदंहिविशेषणां पूर्वोक्तनिर्वाहकम् ॥ १७॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

शुद्धिरात्मप्रसादः येनात्मा सुप्रसीदतीति पूर्वोक्तेः । यशः ब्रह्मस्ट्रेन्द्रजयादिकं रासकीड़ादिकंचात्रासाधारणमेव ॥ १६ ॥ कम्माण्यवतारान्तरसाधारणान्यसुरवधादीनि । उदाराणि भक्ताभीष्टप्रदानि । कला अवतारान् दधत इति वर्त्तमानकालेन तदवता-राणां नित्यत्वं तस्य च पूर्णत्वमायातम् ॥ १७ ॥

सिद्धान्तप्रदीपः।

प्रदनांतरंतस्यांत उदाराणिविश्वजनमादीनि॥ १७॥ प्रदनांतरमयोति॥ १८॥

अथाख्याहिहरेधीमत्रवतारकथाःशुभाः । लीलाविद्यतःस्वरमीश्वरस्यात्ममायया ॥ १८॥ वयन्तुनवितृप्यामउत्तमःश्लोकविक्रमे । यच्छृण्वतांरसज्ञानांस्वादुस्वादुपदेपदे ॥ १९॥

#### भाषा टीका।

आत्मशुद्धि की कामना करने वाला संसार में ऐसा कीन है जोभगवान का उस किल मल नाशन यशको श्वा नकरे॥ नलयुधिष्ठरादिक पुरायश्लोकगर्ण जिनके कर्मों का स्तव किया करते हैं उन भगवानके कलिकलुष विनाशन यशको आत्मशुद्धिकी कामना करनेवाला कीन न श्रवर्ण करेगा॥ १६॥

जो भगवान अपनी लीला के द्वारा ब्रह्मा शिव आदिकरूप धारण करते हैं उनके नारदादिक सूरिओं करके गायेगये उदार कमें को श्रद्धावान इनसव मुनियों के आगे वर्णन करी॥ १७॥

#### श्रीधरखामी।

प्रश्नान्तरं अधिति । अवतारकथाः स्थित्यर्थमेव तत्तद्वसरे ये मत्स्याद्यवताराः तदीयाः कथाः । खैरं लीलाः कुर्व्वतः ॥ १८॥ श्रीकृष्णावतारप्रयोजनप्रश्नेनेव तद्यरितप्रश्नोऽपि जात एव तथाप्यौत्सुक्येन पुनरिप तद्यरितान्येव श्रोतुमिच्छन्तस्ततात्मनस्तृ- प्रश्नमावमावेदयन्ति वयन्त्विति । योगयागादिषु तृप्ताः स्मः । उद्गच्छिति तमो यस्मात् स उत्तमास्तथाभूतः श्लोको यशो यस्य तस्य विक्रमे तु विशेषेणा न तृष्यामः अलिमिति न मन्यामहे । तत्र हेतुः यिक्षक्रमणं श्रण्वताम् । यद्वा अन्ये तु तृष्यन्तु नाम वयन्तुनेति तृश-च्यान्वयः । अयमर्थः । तिथा ह्यलं वृद्धिर्भवति उद्गादिभरणेन वा रसाक्षानेन वा खादुविशेषाभावाद्वा । तत्र श्रण्वतामित्यनेन श्रोत्र-स्याकाशत्वाश्वभरणिमत्युक्तम् । रसक्षानामित्यनेन चाक्षानतः पश्चवत्तृतिरित्वता । इक्षुभक्षणवद्गसान्तराभावेन तृप्ति निराकरोति पदे पदे प्रतिक्षणं खादुतोऽपि खादु ॥ १९ ॥

#### श्रीबीरराघवः

ळीळयेत्यनेनावतरागामकमम्मूळत्वमुक्तम्। अथावतारचेष्टितानामकमम्मूळत्वंवदंतः कात्स्न्येन तद्वतारचरित्रागि पृछित। अथेतिहेधीम-न्नात्ममायया आत्मनः स्वस्यमाययाआइचर्यशक्ति युक्तेन । आइचर्यत्वं मायाशब्द प्रवृत्तिनिमित्तं संकल्प रूपक्षानेन वा "मायावयुनम् इति नै-बंदुकाः "माययासततंवित्त प्राग्तिनां चशुभाशुभ मिति क्षानेऽभियुक्त प्रयोगः स्वैरं यथातथा लीळाश्चेष्टा विद्धतः कुर्वत ईश्वरस्य सर्वनि-यंतुर्हरेराश्चित दुरितहरस्य भगवतः शुभाः श्रग्यवतांवद्तांच शुभावहाः अवतार कथाः। अथकात्स्न्येनाक्यहि कथय। "मंगलानंतरारंभ प्रश्नकात्स्न्येक्वयो अथेतिनैघंदुकाः । आत्म माययास्वैरं लीलाविद्धत इत्यनेन देवमनुष्यादि जातीयानामवतार चेष्टानामात्मीय संकल्प मूळत्वमकमेवश्यत्वप्रयुक्तत्वंच स्चितम् ॥ १८॥

तन्वाभीक्षण्येन श्रुतापव भगवद्वतार कथाभवद्भिरतस्ताः किमर्थे पृच्छ्यंते तत्राष्टुः वयंयदुतमक्लोक चरितं श्रुग्वतामिप रस्त्रानां पद्पदे क्ष्राोक्षणो पुनः पुनर्वास्वादु रुचिजनकं भवति पूर्वपूर्वश्रवणापेक्षयोत्तर श्रवणातीव रुचिकरमेव भवति इति श्रुतमापि पुनः पुन-र्नवमेव भवतीतिभावः यद्यस्मात्पदेपदे स्वादुतःस्वादुतदुत्तमक्लोक विक्रमेन वितृष्याम इत्यन्वयः ॥ १९ ॥

#### श्रीविजयध्वजः

तदेवास्माकंवर्गानीयमित्यभिषेत्याहुरित्याह अधेति यतपवयच्छ्रद्धानानामस्माकंकिलमलापहमधतस्मादात्ममाययास्करपभूतेच्छ-यास्वैरंयथेष्टंलीलाःप्रलयजलविद्यादिकीडाःविद्धतर्देश्वरस्यस्वतंत्रस्यहरेः शुभाःमंगलाअवतारकथाः हेधीमन्नस्माकमाख्याहीत्येका-

न्वयः ॥ १८ ॥ भवतांबहुराःश्रुतहरिकथानांकिमित्ययमुत्कंठाविशेषहत्यतउच्यते वयमिति वयमुत्तमहलोकस्यहरेविकमैःश्रुतैनेवितृष्यामः अन्येषां-भवतांबहुराःश्रुतहरिकथानांकिमित्ययमुत्कंठाविशेषहत्यतउच्यते वयमिति वयमुत्तमहलोकस्यहरेविकमैःश्रुतैनेवितृष्यामः अन्येषां-मृतिरस्तुवानास्माकमलंबुद्धिरित्येतस्मिन्नथेतुराब्दः यहिकमजातंश्युगवतांरस्विवेकविदुषांस्वादुस्वाह्यतिमधुरंभवतित्येकान्वयः "रसोरागे-विवेवीर्येतिकादीपारदेव्रव , इति तहिशेषहावारसङ्गाः ॥ १९॥

#### तमसन्दर्भः

अथेति । श्रीकृष्णस्य तावनमुख्यत्वेन कथय । अय तदन्तरं आजुबङ्गिकतयेवेत्यर्थः । हरेः श्रीकृष्णस्य । प्रकरणवलात् अवताराः पुरुषावताराः गुणावताराः लीलावताराश्च तेषां कथाः लीलाः मृष्ट्यादिकम्मेद्धपाः भूभारहरणादिकपाश्च । आत्ममायया निजेच्छारूपया शक्ता । "आत्ममाया तदिच्छा स्याद्गुणमाया जङ्गिकति महासंहितातः ॥ १५॥

टीकायामिश्चमक्षणविद्ति । इश्चमक्षणे यथा स्वादिवशेषामावो भवति तथावनेत्यर्थः । भगविद्वक्रममात्रे तु न तृप्याम पव । तत्रापि "तीर्थ चक्रेनृपोनमित्याद्यक्तलक्षणस्य सर्व्वतोऽप्युत्तमक्लोकस्य श्रीकृष्णस्य विक्रमे विशेषेण न तृप्यामः ॥ १९ ॥

### सुबोधिनी ।

एवमेकोपक्रमेगा प्रयोजन कर्मगी पृष्टे अथिमिन्नोपक्रमेगा अवतारकथां पृछन्ति ॥ अथाख्याहीति ॥ यद्यपि केचनअवताराः सत्तदुपा-ख्यान अवगोपक्रमेगा सर्वेऽवताराः सिवदेशपान्नातव्याः अतऔत्सुक्यात् पृथक् पृष्टः अथितिभिन्नोपक्रमेहरेरिति सामान्यतोवतारे परदुः स्व दूरीकरगां निमित्तमित्युक्तं अवतारस्वरूपस्य दुर्शेयत्वात् नसर्वजनानां तज्ञ्ञानमिति विदेशेष संबोधनं धीमिन्निति अवतारागांकथाः कथ-मवतारः कस्यावतारः कुत्रावतारहित ॥ चतुर्थाकथावक्तृश्रोतृप्रवर्त्तकानांशुभफलप्रदाः वस्तुतोपिशुभाः लोके पुत्रजन्म कथावत् यत्रापिये-प्ववतारेषुस्वेच्छ्यालीलावताराः तेवक्तव्या इत्याहलीला विद्धत इति स्वरोमिति मर्यादातिक्रमेगापितत्र हेतुरीदवरस्येतिसर्वभवन सामर्थं माया अन्यथाकरणानिर्वाहे दोषाभावेचहेतुत्वेन निर्दिष्टाआत्मेतिनान्येनज्ञातुमुल्लंघितुंवाद्यक्या ॥ १८ ॥

नन्वें विशेषेग्यसर्वार्थपरिक्षानवतां किंपुनः श्रवगोनेत्याशंक्याह वयंत्विति ॥ येपुनः भगवत्कथारूपानिभिक्षाः तेकियत्कालंश्वरतानिवर्तते नह्य त्रस्त्रानिवर्त्तते तरमाद्येनिवर्त्तते तेतृप्ताः संतरतेनिवर्त्ततांवयंतुपुनः निविद्ध्यामप्रवक्कतोनिवृत्तामिवष्यामः निवृत्तिस्त्रेधासंभवित इतो प्रयुत्कृष्टेरसांतरे संभवित अस्याप्यभावेवारसाक्षानाद्वा तत्र आद्येनिराकरोति उत्तमश्लोकविकमहित उत्तमेमुक्तैः व्रह्मानंदानुभव युक्तैर्प श्लोक्यतेभगवान् तद्यथातथेत्थं भूतगुग्रोहिरित्यत्रवक्ष्यते तस्मान्न भगवत्कथारसादिधकोरसः कश्चिद्दिव्यद्धानंदरसोपिन्यूनइतिअनेनेव दुर्कभतापिनिवारिता तस्यचिवशेषेग्रा क्रमः पादविश्लेषो यत्रसपराक्षमः विशेषग्रिक्षयाशक्त्याविर्मावः सचपूर्णः सर्वत्रतस्मान्नदुर्कभता त् नियंनिराकरोति यच्छृग्वतामिति रसक्षानंच श्रवगादेवभवति यथाहिलोके सूपकारविद्यासुनेच्छानिवृत्तः किंपुनर्मूतत्वादुदरपूरगोन निवृत्तः तथाश्रवगोपि विशेषोप्युक्तः श्रवगोनगृहीतस्यासूर्त्ततात् किंच रसाभिन्नाः सर्वथाततोनिवर्त्तते रसस्यानिवर्त्तकत्वात् अस्य वर्षाश्ववगोपि विशेषोप्युक्तः श्रवगोनगृहीतस्यासूर्तत्वात् किंच रसाभिन्नाः सर्वथाततोनिवर्त्तते तथातथा भगवद्वसाखादे वर्षास्थायाः पूर्णत्वात् अल्परसाखादः ततः प्रथमश्रवगोकाचिद्विद्यानिवृत्ताचेत्तता भवतियथा यथाद्वारिविर्मोके द्वस्वप्रथमप्रयोगेहि अविद्यायाः पूर्णत्वात् अल्परसाखादः ततः प्रथमश्रवगोकाचिद्विद्यानिवृत्ताचेत्तता सर्वात्वया यथाद्वार्तताः प्रविप्तमेष्ताः सर्वथायुक्तानाम् ॥ किंच ॥ प्रथमवाक्यसमुदायेभगवान्प्रतितः पुनः प्रत्येकवाक्षयेषुततः पदिपिपद्यते यिप्रकोरता एवसुत्तर्वादेवन्यस्थाने विद्यययश्चतेनअक्षरार्थत्वेनकातोभगवानितरसप्रदह्त्यर्थः ॥ १९ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ता ।

शुमा अमायिकीर्विद्धत इति वर्तमानकालेन लीलानां नित्यत्वम् । आत्ममायया योगमायया ॥ १८॥ उत्तमः अर्वश्रेष्ठः इलोको यशो यस्य सः । यद्वा । उत्तमः इलोक्यते कीर्त्यते इति तस्य विक्रमे तु विशेषेण न तृप्याम अलमिति न उत्तमः अर्वश्रेष्ठः इलोको यशो यस्य सः । यद्वा । यद्विक्रमणं श्रणवताम् । यद्वा । अन्येतृप्यन्तु नाम वयं तु नेति तुशब्दस्यान्वयः । मन्यामहे । तेन यागयोगादिषु तृप्ताः स्म इतिभावः । यद्विक्रमणं श्रणवताम् । तत्व श्रणवतामित्यनेन श्रोत्रस्याकाशत्वात् अयमर्थः । त्रेष्ठा द्यलं बुद्धिर्भवति । उदरादिभरणेन वा रसाज्ञानेन वा स्वादिवशेषाभावाद्वा । तत्व श्रणवतामित्यनेन श्रोत्रस्याकाशत्वात् अयमर्थः । त्रेष्ठा द्यलं बुद्धिर्भवति । उदरादिभरणेन वा स्वादु- विक्रमस्य चामूर्त्तत्वात् न भरणम् । रसज्ञानामिति रसाज्ञानेन पश्चवत्वतिस्य द्व्यद्वर्गडादेरिव न नीरसत्वेन हेयत्वं प्रत्युतातिस्वादुत्वेन परमोपादेयत्विमिति ॥ १९॥ तोऽपि स्वाद्विति चिंवतस्य इश्चद्वराडादेरिव न नीरसत्वेन हेयत्वं प्रत्युतातिस्वादुत्वेन परमोपादेयत्विमिति ॥ १९॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

भगवद्गुगाश्रवगोश्रदातिशयंभगवत्तस्वाभिद्यत्वं भगवद्गुगाश्रवगोप्राप्तावसरत्वंचाहुः क्रमाद्वयमित्यादित्रिभिः इलोकैः ॥ उसम-इलोकायशांसियस्यतस्यविकमेचरित्रे ॥ १९ ॥

#### माषा टीका।

और हे श्रीमन् ! जो भगवान् अपनी मायासे ध्वेर लीलाओं को विधान करते हैं उनकी शुभ अवतार कथा वर्णन करों ॥ १८ ॥ यह मतजानना कि ये कथा सुनते सुनते तृप्त होगये होंगे। हम लोग उत्तम रलोक मगवान के विभन सुनने में कभी ध्रुप्त नहीं हैं। व्या कि रिसक श्रोताओं को पद पद में खादु खादु होता है॥ १९॥

कृतवान् किलकम्माशिसहरामे शाकेशवः। अतिमर्त्यानिभगवान्गूढःकपटमानुषः ॥ २० ॥ २ कलिमागतमाज्ञायत्तेत्रेशसमन्वैष्णवेवयम् । आसीनादीर्घसत्रेगाकथायांसत्त्वगाहरेः ॥ २१ ॥

#### श्रीधरखामी।

अतः श्रीकृष्णचिरतानि कथयेत्याशयेनाहुः कृतवानिति । अतिमर्त्यानि मर्त्यानितिकान्तानि गोवर्द्धनोद्धरणादीनि मनुष्येषु असम्भा-वितानीत्यर्थः॥ २०,॥

ननु यजनाध्ययनादिव्यत्रागां कुत एव कथाश्रवणावकाराः स्यात्तत्राष्टुः कलिमागतं क्षात्वा तद्भियाविष्णुपदं गन्तुकामाः दीर्घस-तेगा निमित्तेनात्रासीनाः हरेः कथायां सक्षगाः लब्धावसराः ॥ २१ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

युक्तं चैतदित्यभिप्रायेणाहुः कृतवानिति कपटमानवः छद्ममानवः मृतुष्यवत्प्रतीयमान इत्यर्थः एवमपि भगवान्पूर्णाषाङ्गुणयः तथापि मूढः तत्त्वतोयमीश्वर इति केनापिनज्ञातः केशवः "क इति ब्रह्मणोनाम ईशोहं सर्वदेहिनाम्। आवांत्वदंगसंभूततौ तस्मात्केशवनामवानिति रुद्रनिरुक्त केशव पदपुष्कल प्रवृत्ति निमित्ताश्रयः श्रीकृष्णोबलराम सहितः अतिमर्त्यान्यति मानुषाणि मनुष्यैः कर्तुमशक्यानीति यावत वीर्याणि चेष्टितानि कृतवानवेति प्रसिद्धिः मानुषाणि हिकमीणि सकृच्छुतानि पुनः पुनः शुश्रूषां जनयेयुः भगवद्वीर्याणयतिमानुषत्वा-द्विलक्षण विशयत्वादेवस्वविषयां शुश्रूणामप्युत्तरोत्तराधिकां विलक्षिणां जनयाति तत्रकि मुवक्तव्यमित्यर्थः अतस्तत्रनवितृष्याम इतिभावः अतोभगवत्कर्भ श्रवणेश्रदावतां नोतानि कथयेत्यर्थः॥ २०॥

ननुभगवद्वीर्याणि बहूनिमहताकालेन श्रोतन्यानिभवतां तुनित्यंतपश्चरतांकोऽवसर इत्याद्वःकलिमिति । कलितपोविघकरंकलियुग-मागतं प्रवृत्तंविज्ञायालक्ष्यवयमुपायांतरेशा कलिजेतुमशक्ताहरेः कलिकृतदोषहरस्य भगवतः कथायांनिमित्त भूतायां कथाश्रवशार्थमित्यर्थः सक्षगाः सावसराः लब्धावसराइति यावत् अस्मिन्वैष्णावे विष्णोः संबंधिनितत्सान्निध्यवतिक्षेत्रेनैमिशाख्ये दीर्घसतेण सहस्रवत्सरपर्य-

तेनब्रह्मसत्रेशा अध्ययनेनवसतीतिवद्धेत्वर्थे तृतीया दीर्घसतार्थमित्यर्थः आसीनाउपविष्टावयंभवामः॥ २१॥

# श्रीविजयध्वजः।

संप्रतिकृष्णावतार्चरितश्रवणएवउत्कंठाविशेषद्वयिभेप्रत्याहुरित्याह कृतवानिति स्वमहिस्रागृढःकपटमानुषःकेशवोभगवान्रामे-शासहयानिमर्त्यवीर्यमनिकम्यविद्यमानानिवीर्याशिपराकमलक्षशानिकतवान् किलतान्यस्माकंब्र्हीत्येकान्वयः मानुषेष्वपिकंसुखंपटितप्रा-प्रोतीतिकपटमानुषः इत्यर्थीपित्राह्यइति ॥ २०॥

॥तपारकाञ्चार्यस्य ना राज्यस्य ॥ ५२ ॥ दीर्घसत्रेदीक्षितानामस्माकंहरिकथाश्रवगावसरोस्तीत्याहुरित्याह कलिमागतमिति आगतंप्रविष्टंकलिमान्नायास्मिन्वैष्णवेक्षेत्रेदीर्घस

त्रेशासीनाव्यापारांतरंविद्दायवयंहरेःकथायांकथाश्रवग्रोसक्षग्राःसावसराइत्येकान्वयः॥ २१॥

# क्रमसन्दर्भः।

मतु कथम्बा मातुषः सन्नतिमत्योनि कृतवान् तत्राह कपटमातुषः। पाधिवदेह विशेष एव मातुषशब्दः प्रतीतः तस्मात् कपटेनैवासौ नगु पायप्या गाउँ । वस्तुतस्तु नराञ्चतेरेव परब्रह्मत्वेनासत्यपि प्रसिद्धमानुषत्वे नराञ्चतिनरलीलत्वेन लब्धमप्रसिद्धमानुषत्वमस्त्येव । तत् तथा भाषात्वच । तर् एक्ष्यमप्रास्त्वमानुषत्वमस्त्येव । तत् पुनर्देश्वर्याव्यावातकत्वान्न प्रत्याख्यायत् इति भावः । अतएव स्यमन्तकाहर्गो प्राहृतं पुरुषं मत्वेत्यनेन जाम्बवतोऽन्यथाञ्चानव्यञ्जकेन पुनर्देश्वर्योव्यावातकत्वान्न निविध्यपरुषत्वं स्थाप्यते । एकं "नामान्यस्त्र — निविध्यपरुषत्वं स्थाप्यते । एकं भाषात्व । पुनरिश्वय्याव्यावापनात्ताः । प्रमान्य जाना । जतस्य स्थमन्तकाहरणा आष्ठण उत्तर नत्यत्यनन जाम्बवतोऽन्यथाञ्चानव्यञ्जकेन वाक्येन तस्य प्राकृतत्वं निविध्यपुरुषत्वं स्थाप्यते । एवं "मायामनुष्यस्य वदस्य विद्ववित्यादिष्वपिन्नेयम्। यस्मात् कपटमानुषः तस्मादेव वाक्येन तस्य प्राकृतत्वं भगवानिति ॥ २०॥ २२॥ २२॥ वाक्यण । एव "मा गृहः। स्वतस्तु तद्रपतयैव भगवानिति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

१ वीर्यागीति श्रीवलुभ वीरराधवयोः पाठः (२) कपटमानवद्दति वीरराघव सिद्धांतप्रदीपपाठः।

#### सुवोधिनी।

किंच ॥ विशेषाकारेग्यरुष्णावतारकथाश्रोतव्येत्यभिप्रायेग्याहरूतवानिति ॥ किलेतिप्रसिद्धेशाश्चर्येग्यात्रप्रसिद्धिरूकाश्चवस्थासाधनं विरहेपिवीर्यकरगात् अतः कृष्णावतारवीर्याग्यिकिलशलीकिकानि किंच एकत्रेकदाश्चविशेषेग्यावतारेग्यचिर्याग्यानिकयंतेश्वतुरामेग्यस हेत्युभयक्षपकरगामुक्तम् किंच सर्वेष्ववतारेषुव्रह्मेशयोर्नसुखवानंत्रयोरिपगुग्याधिष्ठातृत्वनस्पर्द्वादिसंभवात्त्रयोर्थेहिताकरग्यात्तद्भक्तव धाञ्चतद्वत्रकिमिपनास्तीत्याहकेशवद्दि कश्चर्रशश्चकेशोकेशयोर्वममृतंयस्मादितितयोरप्यानंददायीवीर्याग्यामुत्कर्षमाह अतिमत्यानीतिश्चति कात्मत्ययेश्वयद्दिविश्वयेश्वयोहिपुनर्नमर्त्यशर्द्वादेश्वयद्दित्वार्वश्चर्यश्चर्यदिविश्वयेश्वयोहिपुनर्नमर्त्यशर्दितं अथवामर्त्यमतिकांतानिश्चानंदमात्रकरपादमुखोदरादित्वात्तत्रहेतुभगवानिति नमगवद्वतारद्दत्यर्थः तर्हिकयंशरीरप्रतीतिस्तत्राह गृढःकपटमानुषद्दिश्वयंलोकोहिगुप्तः स्तरिद्धान्यदेक्षरतानप्रकाशयतितश्चहेतुभूतांचि श्वग्वांकपटमानुषद्दिकपटेनलोकानांबुद्धिमोहनप्रकारेग्यमानुषः तदेवक्षपमानुषक्षपवत्रप्रतिभासयतीत्यर्थः॥ २०॥

तस्मात्त्वयावक्तव्यमितिसिद्धेश्रवणस्वाधिकारमाहुः द्वाभ्याम्॥ कलिमागतमिति। कलौतुसर्वधर्माणांनिवृत्तिरितिसूतकेसावकाश्यवक्ष लोसावकाशाः धर्माधिकारेहिसितिधर्मत्यागमयात्वैयग्यंकरंणवासंभवातिमर्थादातिक्रमेषुनः पापबाहुल्यात्मगवत्कयाक्विरेवनिवृत्तामविति तस्मात्सर्वदेषिनवर्तकः कलिरिति तस्मिन्नागते कथायां सक्षणावैष्णवद्दितयत्रकिवत् कथाश्रवणेदैत्येवेदिनाशः संभिततद्दासंवन् स्येत् तित्रवृत्त्यर्थक्षेत्रेस्मिन्नित्युक्तम् किंच सत्रवेदिर्ण्येषाततोपिनदैत्यसंबंधद्दति अस्मिन्नितिनिर्देशः कलिकालादेःस्मार्चत्वात्कथं वैदिक्त विचारेणानिधकार इत्याशंक्याह् आसीनादीर्धसत्रेणेति तथाचदीक्षितानामन्यकर्मनिवृत्तिः श्रोतात्समाप्तौपुनः कर्मसंबंधात् दीर्धसत्रारंमः तस्मात्सर्वथा सावकाशादत्याह कथायां सक्षणादित यदिकथासमारभ्यते तदासहस्र संवत्सरितः कालः क्षणायतद्दिक्षणपद प्रयोगः नसर्वत्र सक्षणाः किंतुहरेः कथायामेव ॥ २१॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

विक्रममेव स्पष्टीकुर्व्वन्ति कृतवानिति । अतिमर्त्यानि नराकृतिपरब्रह्मत्वात् मर्त्योऽपि मर्त्यानितिकान्तानि गोबर्द्धनोद्धरणादीनि तात्कालिकमनुष्येष्वसंभावितानीत्यर्थः । तद्पि गृढः । तत्र हेतुः कपटमानुषः । कपटं भक्तहितार्थं ब्रह्मवेशादिना प्रार्थनलक्षणं मानुषेषु प्राक्ततेषु जरासन्यादिषु यस्य । तथा कपटं प्रेमविलासार्थं धम्मोपदेशादिलक्षणं मानुषेषु वेणुनादाक्रप्टगोपीकुलेष्वप्राकृतेषु यस्य सः गङ्वादित्वात् सप्तम्याः परनिपातः । तेषां तेषां मायामोहनात् प्रेम्णा मोहनाचैवं कपटी नेश्वरोभविमतुर्हतीति प्रत्यायनाद्गृढइत्यर्थः ॥ २०॥
ननु याश्विकानां युष्माकमीदशं कृष्णायशःश्रवणीतसुक्यमिताचित्रं सत्यं सम्प्रतित्वस्माकं याश्विकत्वं प्रथामात्रमेव जातमितिजा-

ननु याज्ञकाना युष्माकमादश कृष्णयशास्त्रवात्रात्र । २१॥ कर्णधारो नाविकः ॥ २२॥ नीहीत्याद्वः किलिमिति । सक्षणा लब्धावसराः सोत्सवा वा ॥ २१॥ कर्णधारो नाविकः ॥ २२॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

कउत्तमक्लोकइत्यपेक्षायामाहुः ॥ कृतवानिति ॥ भगवान् षडैक्वर्यवान्केशवः "कइति ब्रह्मणोनामर्दशोहं सर्वदेहिनाम् ॥ आवांतवांग-संभूतीतस्मात्केशवनामवानिति हरिवंशेशिवेनैवोक्तत्त्वात् ॥ ब्रह्मेशजनकः मरणधर्मानितकांतानिवीर्याणिकृतवान् ॥ यःसउतमक्लोकः नन्वेविमित्रदेकुतोनज्ञानंतीत्यतआहुः गृढः ॥ मायामोहितेर्दुर्श्वयः । कुतः यतः कपटमानवः ॥ कपटानांमायाश्रितानां मानवः मनुष्यवत्प्रतीय-मानः ॥ बक्ष्यतिच"मायाश्रितानांनरदारकेणोति ॥ २० ॥ २१ ॥

# भाषा टीका।

मनुष्य नाव्यमें गृढ़ श्री केशव भगवान ने श्रीवलदेवजी सिंहत जोसव अतिमानुष कर्म किये हैं वो हमारे आगे कथन करो॥ २०॥ हम समस्त मुनिगण कलियुग आया जानकर इस वैष्मव क्षेत्र मैं दीर्घ सत्र के उद्देश से एकत्र होकर वैठेहें। यहती हमारा निर्मित्त मात्र है। हरि कथा श्रवण करने हीको यह अवसर हमने निकाला है॥ २१॥

# श्रीधरखामी।

अस्मिश्च समये ख़द्दीनमीश्वरेगीव सम्पादितमित्यभिनन्दन्ति त्वं न इति । कार्कि निस्तिरितुमिह्छतां अर्थावं निस्तितीर्पतां कथाया-

त्वंनःसन्दर्शितोधात्रादुस्तरंनिस्तितीर्षताम् । किलंसत्त्वहरंपुंसांकर्णाधारइवार्णवम् ॥ २२ ॥ टूहियोगेद्वरेकृष्णोवहाण्येधम्मवर्माणा । (१) स्वांकाष्ठामधुनोपेतेधम्मःकंशरणांगतः ॥ २३ ॥

> इति श्रीमद्भागवते महापुराग्ये पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे नैमिशीयोपाख्याने ऋषिप्रदनो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १॥

#### श्रीधरस्वामी।

षुनः प्रश्नान्तरं ब्रूहीति । धर्म्मस्य वर्म्मणि कवचवद्रक्षके । खां काष्टांमर्यादां खरूपमित्यर्थः । अस्यचात्तरं कृष्णे खधामोपगते इत्यादिश्लोकः ॥ २३ ॥ इति श्रीमद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

#### श्रीवीरराघवः

किंच पुंसां सत्त्वहरतप आदिसारहरमतएवदुस्तर मुपायांतरैस्तर्तुजेतुमशक्यंकांळ निस्तितीर्षतांतर्तुमिच्छतांनोऽस्माकमर्णवं सागर निस्तितीर्षतां जनानांकर्ण्यारहवत्वं धालाईहवरेणसंद्धातः उपायत्वेनेतिशेषः दैववशादिदं संपन्नमितिभावः॥ २२॥

्वस्ववर्णाश्रमधर्मेणैवकार्लतरतः किहरिकथा श्रवणेनेतिइमांशंकांनिराकुर्वतः प्रश्नमुपसंहर्रत । ब्रह्मित । ब्रह्मिण्वह्मकुलेसाधुः स्वस्ववर्णाश्रमधर्मेणैवकार्लतरतः किहरिकथा श्रवणेनेतिइमांशंकांनिराकुर्वतः प्रश्नमुपसंहर्रत । ब्रह्मित । ब्रह्मिण्वह्मकुलेसाधुः ब्रह्मित्यं किहर्णेन्यमं किहर्णेने किह

# श्रीविजयध्वजः।

पुंसांसत्त्वगुगाहरे दुस्तरंत तुंमदाक्यं कि निस्तिती र्वतांनितरांत तुंमिच्छतांनः हेस्तत्वं धात्रादेवेनसंदर्शितः कद्व दुस्तरमधेवंनिस्तिती

र्षतांसांयात्रिकाणांकर्णाथार इवकर्णाधारः यूपकात्र स्थायीपुरुषः ॥ २२ ॥ प्रद्वांतरं कुर्वेतीत्याह बूहीति अधुनाधर्म रूपाणिकर्माणियस्य सः धर्मकर्मातिसम् ब्रह्मण्येब्राह्मणहितकारिणि अणिमाद्य प्रियोग्थ्य से प्रद्वांतरं कुर्वेतीत्याह बूहीति अधुनाधर्म रूपाणिकर्माणियस्य सः धर्मकर्मातिसम् ब्रह्मण्याद्वा स्थायिते, इतिवचनात्सचिद्वानंद रुक्ष किञ्चान रुक्षणायोगेवायोगिश्वरेवा "कृषिर्भूवाचकः शब्दोग्ध्यान्त्र निर्वेष्य प्राण्याप्र्योख्य स्वस्य स्वस्य स्वाप्य स्वत्य स्वाप्य किष्य स्वाप्य स्वाप्य स्वाप्य किष्य । १ ॥ ब्र्ह्म द्वाप्य ति प्रत्य पात्मविषयः ॥ १ ॥ अर्हस्य गानुवर्णित विषयः ॥ ६ ॥ प्रवेष द्वाप्य स्वाप्य स्वाप्य किष्यः ॥ १ ॥ ब्रह्म द्वाप्य ति प्रत्य विषयः ॥ ५ ॥ ब्रह्म द्वाप्य स्वाप्य किष्य । ॥ १ ॥ व्य प्रदेष द्वाप्य स्वाप्य स्व

# क्रमसंदर्भः।

ब्रुहीति । स्वां काष्ठां दिशं निजनित्यधामेत्यर्थः ॥ २३ ॥ इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृत कमसन्दर्भे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

#### सुबोधिनी

अत्रश्चेकासामग्रीन्यूनासा भगवता संपादितेत्याह ॥ त्वनःसंदर्शितइति धात्रासर्वकर्त्राभगवताब्रह्मणावा कथारसाभिक्षेनत्वंचनः अस्म-दीयःस्वाधीनस्वकथाभावेदुस्तरः किलःदुःखेनतरस्तरणयस्येति ननुकथारिहताअपिकलितरिष्यातिऋषयःकोभवत्सुविशेषइत्यतआह सत्त्व-हरमितिविवेक धैर्यक्षानहरं सत्त्वगुण्यातेरजस्तमोक्ष्यांलस्त्रिक्षेपावेव अतस्तेषांसर्वस्वनशे न कलेस्तरणं भविष्यतीतिभावः अभाष्टकाले अ-भीष्टदेश संबंधाभावः कर्णाधाररहितसमुद्दे तथाभक्त्यभावेकली ॥ २२॥

किंच धर्मेण सहपूर्ववयंस्थिताः वयंत्वत्रसमागताः कथायांनियुक्ताः धर्मस्यकावार्तेतिषष्ठं प्रक्तमाहुः बूहियोगेश्वरइति॥एतच्चबूहिधर्म-स्यिहिण्डानीतद्रक्षार्थं समगवानवतरित "यदायदाहिश्चर्मस्येतिवाक्यात् योगोपिधर्मरक्षकः "अयेहिएरमोधर्भ" इतिवाक्यात् तस्यापाद्यं रू प्रो व्राह्मणाश्रीपधर्म प्रतिपालयंति तत्रयोगावतार ब्रह्मण्यक्षे भगवतिकृष्णेखां काष्ठांवेकुण्ठगते धर्मस्य संभावितशरणाभावात् भगविद्यष् यकबुद्धेः धर्मकार्यक्षपायाविद्यमानत्वात् धर्मोस्तीतिप्रतीतेः धर्मः कशरणात्र इतिप्रप्णः॥ २३॥

इतिश्रीभागवत सुबोधिन्यांलक्ष्मगा भट्टात्मज श्रीवल्लभ दीक्षितविरचितायांप्रथमस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

धर्मस्य वर्मिणि कवचवद्रक्षके । तत्र हेतुः योगेश्वर इति सामध्यं ब्रह्मण्य इति दयालुत्वम् । स्वांकाष्ठां स्वीयां स्थिति मर्थ्यादाम् । सा च स्वाविभीवात् सपादशतवर्षान्ते प्रापञ्चिकजनदृष्ट्यविषयता एव । काष्ठोत्तकर्षे स्थितौ दिशीति मर्थ्यादाधारणा स्थितिरिति चामरः ॥ २३ ॥

इति सारार्थद्शिन्यां हर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । प्रथमे प्रथमोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १॥

#### सिद्धान्तप्रदीपः

नन्वहंभवद्भिः कुतोज्ञातद्दयतआहुः त्वमिति ॥ २२ ॥ प्रदनांतर्रबूहीति ॥ २३ ॥ इतिश्रीमद्भागवतेसिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कंधीयेप्रथमाध्यायार्थप्रकाराः ॥ १ ॥

#### भाषा टीका।

पुरुषों के धेर्य धर्म आदिक वल हरने वाले दुस्तर किल के तरने की हमारी इच्छा है सो विधाता ही ने हमको तुम्हारा दर्शन करा दिया है। जैसे समुद्र के पार जानेवालों को अकस्मात कर्णा धार (जहाज का कंहारी) मिलजाय ॥ २२॥ यहभी हमसे कही कि परम ब्रह्मराय धर्म के कवच के समान रक्षक योगेश्वर श्रीकृष्ण जब अंतर्धान होगये तब धर्म किस की शर रा मै गया॥ २३॥

प्रथम अध्यायः समाप्त ॥

# बितीयोऽध्यायः।

ं श्रीव्यासउवाच ॥ इतिसंप्रश्नसंहृष्टोविप्रागांरौमहर्षगाः। प्रतिपूज्यवचस्तेषांप्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ १ ॥

सूतउवाच ।

यंप्रवजन्तमनुपेतमपेतकृत्यम् इपायनोविरहकातरआजुहाव। पुत्रेतितन्मयतयातरवोर्गभेने दुस्तं सर्व्वभूतहृदयं मुनिमानतोर्गस्म ॥ २ ॥ (२)

# श्रीधरखामी।

तदेवं प्रथमाध्याये षट् प्रश्ना मुनिभिः कृताः । द्वितीये तृत्तरं सूतश्चतुर्णामाह तेष्वथ ॥ १ ॥ विप्राशामिति । एवम्भूतेः सम्यक्पश्नैः सम्यक् दृष्टो रोमहर्षणस्य पुत्र उत्रश्रवाः तेषां वचः प्रतिपूज्य सत्कृत्य प्रवक्तुमुपका-

प्रवचनस्योपक्रमो नामात्र गुरुदेवतानमस्कार इति तमाह यमिति त्रिभिः । तत्र स्वगुरोः शुकस्यैश्वर्यं तच्चरितेनैव द्योतयन्नाह यं प्रव्रजन्तं सन्न्यस्य गच्छन्तमनुपेतं मामुपनयस्वेत्युपनयनार्थमनुपसन्नम् । यहा केनाप्यनुपेतमननुगतम् एकाकिनमित्यर्थः । तत्र हेतुः अपेतकृत्यं कृत्यग्रुन्यं विरहात् कातरो भीतः पुत्र इति प्छतेनाजुहाव आहृतवान् । दूराह्वाने प्छते सत्यपि सन्धिरार्षः । तदा तन्मयतया शुकरूपतया तरवोऽभिनेदुः प्रत्युत्तरमुक्तवन्तः । पितुः स्नहानुबन्धपरिहाराय यो वृक्षरूपेगोत्तरं दत्तवानित्यर्थः । तं मुनिमानतोऽस्मि । तन्मयतोपपादनाय विशेषगां सर्वभूतानां हन्मनः अयते योगबलेन प्रविशतीति सर्वभूतहृद्यस्तम् ॥ २॥

#### दीपनी।

पुंसामेकान्ततः श्रेयश्चावतारप्रयोजनम् ! तस्य कर्म्मारयपि तथा चावतारकथा अपि । १ । कृष्णावतारचरितं धर्मः कं शर्गा गतः । इत्येवं प्रथमेऽध्याये षट् प्रश्ना मुनिभिः कृताः ॥ २॥ इत्युदीची ॥ १॥ २॥ ३॥

#### श्रीवीरराघवः।

एवंसंपृष्टिनःश्रेयससाधनतदनुष्राहकप्राधान्यतमश्रीकृष्णचरित्रंसूतःशीनकादीनांप्रश्नानभिनंदयंस्तेषामुत्तररूपंश्रीभागवतार्थयपुराण महित्याहवादरायगाः इतीति । अत्रश्रीसूतउवाच इतिसंप्रदनसंपृष्टद्दातिकचित्पाठोदश्यतेसचासंगतः इतीत्यादिश्लोकस्यस्तोक्तित्वा भावात् यप्रवर्जनित्यादि हिस्तोक्तिरतस्ततः प्रागवसूतउवाचेतिपिठतुं युक्तिमहतुश्रीव्यासउवाचेति । इतीत्यविप्राणांशोनकादीनांतैः प्रइनैः संधृष्टीरीमहर्षिणः रोमद्षेणस्यापत्यंषुमानसूतः तेषांविप्राणांवचः प्रद्नात्मकंवचः प्रतिपूज्याभिनंद्यप्रतिवक्तुप्रीतवचनरूपपुराण्मिद्वकतु उपचक्रमेश्रारेभेविशागामित्यनेनसापेक्षस्यापिसंप्रइनराव्दस्यनित्यसापेक्षत्वादार्षत्वादार्ममासः तेषांविप्रागांवचः प्रतिपूज्येतिवान्वयः संप्रइनसंहर्ष्ट्रातिपाठांतरंतदासमोचोनः प्रश्नोयस्यतस्मैप्रतिवचनायसंपृष्टप्रत्युत्तरंवक्तुहर्ष्ट्रस्यर्थः। यद्वा विप्राणामित्यस्यवचइत्यनेनैवा न्वयः संशोभनाः प्रश्नायेषातैः शौनकादिभिः सप्टष्टइत्यर्थः ॥ १॥

विक्तां प्रदेशां स्वाप्त के कार्य के प्रतिकार के स्वाप्त के त्या के स्वाप्त के त्या के स्वाप्त के स्वाप्त के स अक्षां स्वाप्त के स् क्षपगुरुनमस्कार तचरणातमकं मंगलमाचरतिस्तः यंत्रवजतमितिद्वाभ्यांद्वेपायनः श्रीव्यासः विरहकातरः सन्यंपुत्रेत्याजुहावाहः-्रह्मपगुरुगन् रातः हित्यान् तदातन्मयतयातरवोभिनेदुःतंसर्वभूत हृदयमुनिमानतोऽस्मीत्यन्वयः कथंभूतंप्रव्रजतं दैवपेत्रादोन्परित्यज्यवजंतम् । अनुपेतसुपेतर-तवान् तपातः । अपेतंकृत्ययस्यतंकत्तेवयां शराहेतांनिष्पन्नब्रह्मोपासनत्वात्कृतकृत्यमितिभावःप्रवजतिमत्यनेन देहानुविधित्यागउक्तः । हितमसहायमित्यर्थः । अपेतंकृत्ययस्यतंकत्तेवयां शराहेतांनिष्पन्नब्रह्मोपासनत्वात्कृतकृत्यमितिभावःप्रवजतिमत्यनेन देहानुविधित्यागउक्तः । हितमल्बाजाराहित्यंफलितम्।अनुपेतामत्यनेनासहायत्वमुक्तम् अनेनदेहपोषकसहायांतरराहित्यस्यचतंतनचदेहात्मभूमरूपाहंकारराहित्यं-अन्नम्भा । विषायनीविरहकातरआजुहावेत्यनेन द्वेपायनाद्व्यतिशीयत्ज्ञानवत्त्वंसूचितम् । यद्यपिषुत्रत्यस्यदूरादाह्वानीवषयवाक्यत्वात् दूरा-फिलिम् । द्वेपायनीविरहकातत्वसातव्छतप्रग्रह्याअभिविक्तम् । १००० । १००० विकास विकास विकास विकास विकास विकास विकास फालतम् । अन्य न्यान्य । अन्य । अन् द्भृत्व ॥ प्राप्ता विभाग्यसर्वस्य प्रतस्य वेकालेपकत्वा अयुपगमात्॥ अग्नीत्येषशीप्रस्य व । ८। २२ इतिस्त्रे सर्वः प्रतः साहसमिनि छता इत्यत्र प्राप्ता व महाभाष्यकारोक्ते अप्रतामावपक्षेमित्र स्व प्रतामाव क्षेत्र स्व व । ८। १२ इतिस्त्रे सर्वः प्रतः साहसमिनि छता व । ८० व । इत्यत्रप्राचामात्रः विभाषाकर्राव्यक्षति महाभाष्यकारोक्तेश्चव्छताभावपक्षेसंघिःसुलभएवेतिवोध्यंसाहसंशास्त्रत्यागस्तद्निच्छता शास्त्रमनुर्वधानेनत्यर्थहाति

<sup>(</sup>१) संप्रइनसंपृष्ट इतिवीग्राधवविजयध्यजयो पाठः

<sup>(</sup>२) अपिनेदुरितिविजयध्वजपाटः

#### श्रीबीरराघवः

हरदत्तीव्याख्यदितिकोचित्। वस्तुतस्त्वितशब्दस्येववाक्यांतत्वेनपुत्रशब्देप्छतप्रसंगएवनास्ति। अनुकार्यस्यपुत्रशब्दस्य संबोधनविषयत्वे पुत्रानु करणस्यतस्यतद्यावा चतन्ययतयेत्यत्रययय्प्राचुर्ये संबंधमात्रे वातत्प्रचुरत्या तत्संबंधितयावातरवोर्शमनेदुः शुकात्मकावयमित्येवं रूपेणाप्रतिद्ध्वनुरित्यर्थः तत्प्राचुर्येचतरूणां शुक्तेनव्याप्त्याधिष्ठतत्वाद्वगंतव्यम् संबंधमात्रेमयद्पक्षेऽपिक्षानद्वाराधिष्ठेयमावरूप्यवसंव धोवोध्यःखरूपेणातविधिष्ठातृत्वासंभवात् "एषोऽणुरात्मा आरात्रमात्रोद्यवरोपिद्दष्ट"इत्यादिभिः श्रुतिमिर्जावस्वरूपस्याणुत्वावगमात् । तत्स्व रूपेणानेकाधिष्ठातृत्वासंभवात् । यद्यपिधमभूतक्षानस्यापि "सचानन्त्यायकत्यत्य श्रुतिमिर्जुक्तिद्शायामेवानंत्यमवगतं तथापिशु कस्यपरिनिष्पत्त बृद्धाोपासनत्वेनमुक्ताना मिव निवृत्तक्षानसंकोचक कर्मरूपावरणत्वादपरिच्छित्रधर्मभूतक्षानद्वाराऽनेकतविधिष्ठातृत्वमुक्त म् । यतप्वतन्मतयातरवोभिनेदुरत पवसर्वभूतहृद्यसर्व भूतानांदृद्यिते गच्छितिक्षानद्वाराव्याप्रोतीति सर्वभूतहृदयस्तम् । अयगताविति धातुः यद्वा सर्वभूतानांदृदयं यस्यक्षानद्वारा व्याप्यंससर्वभूतहृदयस्तम् । यद्वा द्वययाव्येनभूतंक्षानमधिष्ठानं यस्यसतम्भुनिस्वात्मपरमात्मयाधात्म्यमननशीलंश्रीशुक्तमिति विशेष्यमध्याद्वार्यम् । आनतइतिक चिरिक्तः नमस्कृतवानस्मीत्पर्थः ॥ २ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

शौनकादिविप्राणामितिपूर्वोक्तैःषड्भिःसमीचीचैःप्रश्नैःसम्यक्षृष्टःरोमहर्षणस्यअपत्यंरौमहर्षणिः सूतस्तेषांशौनकादीनांवचः प्रतिपू

ज्यप्रवक्तुंव्याख्यातुमुपचक्रमइत्येकान्वयः एतद्वचास्वचनम् ॥ १ ॥

शौनकादिप्रश्वपरिहारतयाभागवतपुराणंव्याकर्तुकामः उरुश्रवाः स्वेष्टगुरुंरुद्रावतारंश्रीशुक्तमुनिप्रण्मित यमिति विरहकातरः पुत्रवियोग्यानकाति स्वित्र विरहकातरः पुत्रवियोग्यानकाति स्वित्र विरहकातरः पुत्रवियोग्यानकाति स्वित्र स्वेष्ट्र सिव्याप्त सिव्यापत्य सिव्यापत्य

# क्रमसन्दर्भः।

( टीकायां पर परना इति । तत्न तत्राञ्चसा इत्यादिना सूत जानासीत्यन्तेन कृष्णावतारप्रयोजनकृष्णाचरितयोः परनौ । वयन्त्वित्यादि इयं सूत जानासीत्येतत् प्रश्नस्यैवानुवादः । तत्रोभयत्रोत्तरम् । भावयत्येष सत्त्वेनित लोकपालनं हि तच्चरित्रमपि । एवमेव हि प्रथमा- ध्याये टीकाप्रतिज्ञाताः षर्प्रश्ना उपपद्यन्ते । द्वितीयेऽध्याये चत्वारि उत्तराणि । चतुर्थस्य तत्प्रश्नोत्तरस्य तत्रान्यत्रादर्शनात् । तस्य कम्माणित्यादिना विश्वसृष्ट्यादिलीलाप्रश्नः तस्योत्तरं स एवेदं ससर्जात्रे इत्यादिना । अथाख्याहीत्यादिना अवतारकथाप्रश्नः । तस्योन्तर् तृतीयोऽध्यायः । ब्रह्म योगेश्वर इत्यादिना धर्माश्रयः प्रश्नः । तस्योत्तरं कृष्णो स्वधामोपगते इत्यादं तृतीयाध्यायपद्यमेव ॥ १॥

श्राप्तान्याव । श्राह याग्य्यर इत्याविषा वर्णावता वर्णावता । तत्र यमित्यत्र तन्मयतयेति तच्छ्व्देन तत्तादात्म्यापन्नः परमात्मी अथोपक्रमे खगुरं नमस्कुव्वेन तत्त्साद्गुग्यं स्मरित द्वाश्याम । तत्र यमित्यत्व तन्मयतयेति तच्छ्व्देन तत्तादात्म्यापन्नः परमात्मी च्यते । स हि तदानीं ध्यानावेशेन प्राप्तसर्व्वान्तर्यामितादात्म्यः । हष्ट्वानुयान्तिमत्यादिवक्ष्यमाणात् । यत एव तस्य तदुत्तरदानानुसन्धान- राहित्ये सित तत्पक्षपातेनान्तर्यामिणीव खयं तरूणामिप द्वारा तदुत्तरं दत्तमिति । यद्वा न केवलं सर्व्वात्मव्यानिष्ठत्वान्त्रर्थे । एतच्यत्वानिष्ठत्वानिष्ठत्वानिष्ठत्वान्तर्यः । किस्रतान्ये वित्व हिनग्यो जातः अपि त तर्वोऽपि जाता इत्याह तन्मयतया तद्वतस्नेहमयतया तर्वोऽपि अभि तदाभिमुख्येन नेदुः । किस्रतान्ये जीवा इत्यर्थः । एतच्य तत्प्रभावादेवेति क्षेयम् । अतएव सर्व्वभूतानां हृद्यं यस्मिन् तम् । अन्येतिमिति चित्सुखपाठान्तरम् ॥ २॥ जीवा इत्यर्थः । एतच्य तत्प्रभावादेवेति क्षेयम् । अतएव सर्व्वभूतानां हृद्यं यस्मिन् तम् । अन्येतिमिति चित्सुखपाठान्तरम् ॥ २॥

# सुबोधिनी ।

श्रीकृष्णायनमः ॥ कथाश्रवणमात्रेणमनोर्थमहार्गावे। निमग्नान्स्तदानेनह्युज्जहारऋषीत्रहरिः॥ १॥ फलसाधनरूपाणांनिर्णयः कर्मणां मि। त्रयाणांवक्ष्यतेऽध्यायेव्रितीयेऽन्यत्रशिष्णाम्॥ २॥ प्रथममुत्तराग्णिवकृतदेवतागुन्दमस्कारमंगलमभिनंदनंच स्तः करोतितिव्यास्त्रा मि। त्रयाणांवक्ष्यतेऽध्यायेव्रितियाप्रणाविद्यायेक्षा ॥ २॥ प्रविद्यायेक्षायेक्ष्यतेष्य स्वत्र स्वत्य स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्र स्वत्य स्वत्य स्वत्य स्वत्र स्वत्य स्व

ૡૢ૽૽ઌૢૡ૱ઌ૽ઌઌૹ૽૽ૢઌ૽ૺઌૢ૽૽ૼ૽ૺઌઌઌ૽ૢઌ૽૽ઌ૽૽ઌૻ૽ઌૻ<mark>ૢઌઌઌઌઌૢૡૢૡ૽૽ૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢૢ૽ઌ૽</mark>૽૽૽ૢઌઌઌ૽૽૽ઌઌઌઌૣઌઌ૿ૢઌ

क्रमानुरोक्षांत्क्षेत्रेत्विमनद्नेनसामान्योत्तरत्वेतक्षात्व्यप्रवर्षतुर्मित्रिस्वबुद्धानिद्धीरितथिमागवत्त्रेवकतुर्मुपंचकमेदेवतागुरुनमस्कारंच क् सवान्तत्राद्वीगु इतमस्कारमाहद्वाभ्यांवैराग्यवानाभ्यांवत्रप्रथमंथैराख्यमाहर्यप्रवजंतमिति॥अञ्चित्रथाविरकस्त्थातथाधिकारीतत्रशुकस्यपू र्वजनमन्यवंश्वनिसंहितत्वांक्योग्यदेहाथीविष्णाव्यसिस्यसिकाशाहिहीपाप्यवैभयसिपत्तीसेगतनाशभयात्पूर्वसंस्कारस्यहढत्वात्हदानीमनुपनी तपवप्रवज्ञतिक्यासस्याधिकारित्वादेहादिधर्माः प्रवर्ततेविलष्ठस्यहिभयाभावः वलंभगवतपवेतिकोपादिनागमनंवारयतिपुत्रेतिनिवारसोहेतः अनुपेतमिति गमनेहेतुःअपेतकृत्यमितिकार्येविद्यमानेहिउपनयमं विष्णोःसकाशाज्ञातस्यपुनः संस्कारोनापेक्षतेमोहेहेतुः द्वैपायनइतिद्वि र्गताआपोयत्रतत्द्वीपमयनंजन्मस्थानंयस्ययमुनांतर्जलेतथोत्पत्रत्वात्पराशरध्यातभगवदवृताराद्वासर्वसुस्थनारदोपदेशात्पूर्वीवस्मृतात्मत्वा द्विरहकातरः विरहेणकातरोदीनः पुत्रेतिआहानं कृतवान् प्रेम्णासन्न कंठत्वात् प्छताभावस्ततः संधिः "ससर्वमभवदिति ब्रह्मक्षाने फळस्योक्तत्वा स्सर्वभावः स्फुरितयोगेनप्रवेशोपिसंभवतिकर्तुः प्राधान्येपियच्छन्देनकर्मसंवंधात्तच्छन्देनकर्मैवोच्यतेयामिति॥ तन्मयतयाश्चिकमयतयावि ष्णाः सकाशादुत्पन्नास्तरवः शुकोपिवैष्णवीवैवन्स्पतइतिश्रुतेः एकोपादानकत्वात्तन्मयत्वमभिनंदनंप्रतिध्वानक्रपम् ॥ अथवा॥ "वाग्देवे क्योपाक्रमद्यशायातिष्ठमानासावनस्पतीन्प्राविशत्सैषावाग्वनस्पतिषुवदतीतिश्रुतेः वृक्षेश्यएवशन्दोत्पत्तिः तेषांकथनेहेतुंवदन्श्कस्यम समावमाह सर्वभूतहृद्यमिति सर्वभूतानांहृत्अयतेप्रेरयतिप्रेरणार्थगच्छतीतिसर्वभूतेषुहृद्यंयस्येतिप्रेरणसामध्यवागतस्यत्रणींभावनिवा रयतिमुनिमितिवृद्धात्मभावंविचारयंतमासर्वतोनतोऽस्मिसर्वत्रतस्यविद्यमानत्वात्॥२॥

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

तत्र पुंसामेकान्ततः श्रेयस्तन्नः शंसितुमईसीति । सर्वशास्त्रसारं बूहि नः श्रद्धधानानां येनात्मा संप्रसीदतीति । देवक्यां किमधे जातस्तन्नः शुश्रूषमागानामहेस्यङ्गानुवार्णितुमिति। तस्य कम्माणि ब्र्हि नः श्रद्धानानां लीलया दधतः कला इति। अथाख्याहि हरे-र्घीमञ्जवतारकथाः शुभा इति । ब्र्हि योगेश्वरे कृष्णे धर्माः कं शरणं गत इति । षडेव प्रश्नाः । एतत् प्रत्युत्तरारयेव स प्रसङ्गानि श्रीभागवतमिति विवेचनीयम्।

द्वितीये त्वभिश्रेया श्रीभक्तिः प्रेमा प्रयोजनम् । विषयो भगवानत्रेत्यर्थत्रयनिरुपग्राम् ॥ ० ॥

रोमहर्षग्रस्य पुत्र उत्रश्रवाः॥१॥

अत्रैवं सुतस्य परामर्शः । एतत्प्रइनस्योत्तरं सर्व्वशास्त्रसारं किमीप वस्त्वहंब्वीमि । तेन चेदेषामात्मा न प्रसीदेत तर्हि कि भवि-ष्यित येनात्मा सुप्रसीद्तीत्युक्तत्वात् । ततश्च सारेष्विप मध्ये यस्यात्मप्रसाद्कत्वं भव्यैर्निक्रिपतं सोऽन्वेषशायः । तत्रापि केषाश्चिन्मते-सांख्यस्येव केषाश्चिन्भीमांसादेः केषाश्चिदुपनिषदामेव केषाश्चित्तदर्थतात् पर्य्यानर्शायकानां वेदान्तसूत्राणामेवात्मप्रसादकत्वमस्ति यद्यपि तद्यि न तत् प्रत्येतव्यं तेषामपि मुख्यस्य तत्तत्सव्वमतिवदुषोऽपि कृतवेदान्तसूत्रस्य श्रीकृष्णाद्वैपायनस्यापि चित्ताप्रसाद्दृष्टेः। सतश्च यदाविभीवेन तस्यापि आत्मा प्रसीदित स्म । परीक्षिन्महासदिस तस्थुषामेव तेषां सर्वसारवादिनां महाज्योतिषामग्रपव परीक्ष-योत्तीर्णे शुद्धं जाम्बूनदिमवात्मप्रसादकत्वे निर्विववादमेव यत् स्थिरं व्यराजत तदेव श्रीभागवतं मम वक्तव्यमभूदिति। ततस्तद्धकारं श्रीशुकदेवं शर्गां यामीति तंत्रगामति यमिति । प्रवजन्तं संन्यस्य गच्छन्तम् । अनुपतं निकटमप्यप्राप्तम् । अपेतकृत्यमुपनयनादिरहितम् । हे पुत्र इति प्छतेनाजुहाव । न केवलं परमनिरपेक्षेऽपि तस्मिस्तत्पितैव स्निग्धोऽभूदपि तु "येनार्चितो हरिस्तेन तपितानि जगन्त्यपि । रज्य-न्ति जन्तवस्तत्र स्थावरा जङ्गमा अपीतिपाद्मोक्तेस्तरवोऽपीत्याह तन्त्रयतया शुक्रमयतया तरवोऽपि आमिमुख्येन हेतुना हे पुत्र इति प्रतिध्वनिमिषेण व्यासवदाजुहुनुः। यो हि यस्मिन्नासजाति स तन्मय उच्यते। यथा स्त्रीमयः कामुकहति । ततश्च सर्वेषां भूतानां हृद्यं मनी यर्सिम्हतम्। तेन सर्वमनोहरे भगवद्विग्रहे इव तस्मिन् स्नेहोऽयं न प्राकृतमोह इति । व्यासस्याप्यविवेकोऽयमिति दोषः प्राहतः। यद्वा तदा तन्मयत्या शुकरूपतया तरवोऽभिनेदुः प्रतिध्वनिमिषेण हे पुत्र इति प्रत्युत्तरं ददुः । यदि तवाहं पुत्रस्तदा त्वमिष मे पुत यहा पर इत्यतः। "कस्य के पितृपुत्राद्या मोह एव हि कारण्म्। इति तत्त्वमविशाय किमिति मुह्यसीति व्यक्षयामासुः। तन्मयत्वोपपादनाय विशे-इत्यतः । वर्षा सर्वभूतानां हत् मनः अयते योगबलेन प्रविश्वति सर्वभूतहृद्यस्तम् । तेन स एव ममाप्यन्तः प्रविष्यमन्मुखेनेव श्रीभागवतं वदेतु । यो हि जडानिप वृक्षान् प्रविश्य प्रत्युत्तरेशा पितरमपि समाद्धी स एव चेतनं मां प्रविश्य श्रीभागवतेनैव एषां श्रोत्तृशामात्मानं प्रसाद-बत्विति प्रवचनकाले श्रीभागवतस्य वकान्योऽऽपि ध्यायेदिति विधिश्च सूचितः॥२॥

ेर्ट्स के भी के का का प्राथम का प्राथम के किस क

सिद्धान्तप्रदीपः। उपायोपयमगविश्वकीर्धिततदुद्रारकमैविषयाणांचतुर्गोष्ठक्नानामुत्तराथीयमध्यायआरक्ष्यतहतीति इतिसेप्रक्नसेहृष्टः इत्येवमुक्तप्र उपायाच्या शतसप्रश्निःसम्यगृहष्टः "रोमाणिहर्षयांचक्रेश्रोत्हणांयः सुभाषितः ॥ कर्मणातेनकथितोरोमहर्षणाइत्युतं" ॥इत्युक्तं करिः बड्भिः त्रिप्राणांचः उप्रश्रवाः प्रश्नोनांविस्तरत् उपर्याचित्रः । कर्मणातेनकथितोरोमहर्षणाइत्युतं ॥इत्युक्तं कारें: षड्। मर्पान्य पुत्रः उम्रश्नवाः प्रदेशीमां विस्तरत उत्तरभूतश्रीमद्भागवतशुश्राविषष्ठः तिषावचः मुनयः साधुष्ट्योहमित्यननप्रति अस्तास्य प्रति । स्त्यास्य प्रति । स्त्रिप्रति । स्त्यास्य प्रति । स्त्यास्य । ळक्षणास्यरामध्यामध्याप्रमेः इत्याद्यस्यायद्वयेनसङ्गेपतः षश्याप्रदेनाममुत्तरेवकतुम् उपचक्रमयप्रवर्गतित्यादि। प्रविदिनमस्कार्द पूज्यप्रवर्षते "सर्विपुसांपरीधर्मः इत्याद्यस्यायद्वयेनसङ्गेपतः षश्याप्रदेनानामुत्तरेवकतुम् उपचक्रमयप्रवर्गतित्यादि। प्रविदिनमस्कार्द कपमुपक्रमंकृतवानित्यर्थः॥ १॥ na myrtej nagot **grad s** 

# यःस्वानुभावमखिलश्चितिसारमेकमध्यात्मदीपमतितितीर्धतांतमोऽन्धम् । संसारिशांकरुशयाहपुराणगुद्धम्तंव्याससूनुमुषयामिगुरुंमुनीनाम् ॥ ३॥ नारायशांनमस्कृत्यनरश्चेवनरोत्तमम्।देवींसरस्वतीञ्चेवततोजयमुदीरयेत्॥ १॥(१)

# सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रखगुरंत्रग्रामिति ॥ यमिति यंत्रहत्तकमृत्यागित्वाद्पेतकृत्यम् अनुपेतम् एकािकनम् प्रव्रजंतम् "अधकारेप्रवेष्टव्यद्यिपायलेनधायं वामितिद्वैपायनोपदेशादेवप्रवृत्ति मार्गत्यस्कागच्छंतम् भागवतपुत्रस्यातिद्वर्छभत्त्वाद्विरहकातरः द्वेपायनोभगवान् हेपुत्रेत्याज्ञहावः आहूतवान् यदातदात्त्मयतयात् वाभिनेदुः शुकेतिव्यासेनोक्ते स्तिभोरितिशुकेतप्रत्युत्तरेदत्तेद्वमादयोपिभोरितिशुक्तवद्भिनादं वक्कुरित्यर्थः एतन्सोक्षधमेद्वप्रव्यम् तमुनिमानतोस्मि "यस्यदेवेपराभक्तिर्यथादेवत्यागुरी तस्येतकाथितात्वर्थाः प्रकाशंत्रमहात्मन्तः" इति श्रुत्यर्थानुस्तरेषा गुरोविद्यदेवाभितत्त्वमाद्व सर्वभूतहद्यभाति सर्वेषांत्रसादिस्तंवयर्थतानांहदिव्यापकतयाऽयतेगच्छतीतिस्रत्यस्य स्वयं गतावित्यस्यक्षम् सर्वेतिर्योगिणंवासुदेवमित्यर्थः आचार्यमाविज्ञानीयादिति वश्यमाग्राच्छन्। २॥

#### भाषा टीका।

ह्यासजी बोले । रोमहर्षेण सूतजी के पुत्र उग्रश्रवा ब्राह्माणों के इन प्रश्नों से आनंदित होकर उनके बचन की प्रशंसा कर ग्रंगका चरण करने वाले ॥ १ ॥

सूत जीबोले । जोश्रीशुक्तदेवजी जन्मलेतेहीउपनयनश्रादिक संस्कारीकीकुछ अपक्षानकर संन्यासीहोकरचले और व्यासजीउनकेपीछे-पीछे 'हेपुत्र 'हेपुत्र पुकारतेचले. उससमयव्यासजीकेशोक निवारशकारोको शुक्तदेवजीकी शक्तिसंचारसे वृक्षानेउचरित्या ऐसेयोग शक्तिसे प्राशीमात्रकेहृदयमे प्रवेशकरित्यमन करनेवालेमुनिको मै प्रशामकरताहुं ॥ २ ॥

#### श्रीधरखामी।

तत्क्रपालुतां दर्शयनाह यः खानुभाविभिति। अन्धं गाढं तमः संसाराख्यम् गतितरितुमिच्छताम् । पुराणानां मध्येगुद्यं गोप्यम्। तत्र हेतुत्वेन चत्वारि विशेषणानि । खः निजः असाधारणः अनुभावः प्रभावो यस्य तत् । अखिलश्चतीनां सारम् । एकम् अद्वितीयम् अनुप-ममित्यर्थः । आत्मानं कार्य्यकारणसंघातमधिकृत्य वर्त्तमानम् आत्मतत्त्वमध्यातमं तस्य दीपं साक्षात् प्रकाशकम् । उपयामि शर्यं मजामि ॥ ३॥

# हीपनी ।

(तरः भगवद्वतारिवशेषस्तम् । तस्य विशेषयां नरोत्तममिति श्रेयम् ॥ ४—५ ॥ )

# भीवीरराघवः।

यहति । यः करुणयापुराणगुत्यम् "विशेषणंविशेष्यणवहुलम् ॥ २।१। ७ ॥ इतिषहुलप्रहणात् विशेष्यस्यापिपुराणशब्दस्यपूर्वाने प्रातः गुत्यंपुराणां । पुराणकथभूतंसानुभावंसेनधुकेनानुभावकम् । पुराणकथभूतंसानुभावंसेनधुकेनानुभावकम् । पुराणकथभूतंसानुभावंसेनधुकेनानुभावकम् । प्राणकथभूतंसानुभावंसेनधुकेनानुभावकम् । प्राणकथभूतंसान्यप्रात्मेनप्रात्मेनस्पर्वापाद्यस्य अविश्वप्रात्मेनस्पर्वापाद्यस्य अविश्वप्रात्मेनस्पर्वापाद्यस्य अविश्वप्रात्मेनस्पर्वापाद्यस्य । अध्यात्मद्योपम् । आत्मन्यधीत्यध्यात्मभितिविभक्षयेष्ठव्य अवश्वप्रात्मेनस्पर्वापाद्यस्य अवश्वप्रात्मेनस्य अवश्वप्रस्य अवश्वप्रस्य अवश्वप्रस्य अवश्वप्रस्य अवश्वप्रस्य स्यात्मेनस्य स्याप्यस्य स्या

\$ \$00,000 \$0,000 \$ \$6.000 \$100 \$

#### भीवी स्राघवः।

# श्रीचिजयध्वजः

दृष्टदेवतांशास्त्रगुर्वाद्वीन्प्रणमति नारायण्मिति नारायण्यास्त्रप्रतिपाद्यं तथातमेवशास्त्रकर्तृत्वाद्गुरंव्यासंचनमस्कृत्य सकलभा इष्टदेवतांशास्त्रगुर्वाद्वीन्प्रणमति नारायण्मिति नारायण्यास्त्रप्रास्त्रप्रतिपाद्यं तथातमेवशास्त्रप्रतेष्प्रणम्यततस्तेषांप्रसादात्त्रश्रीभागवताष्यं श्यात्मिकांश्रियंदेवीतथापरमगुर्वनरोत्तमंवायुतथा विद्याभिमानिनीसरस्वतीतथोपसाथकंनरंशेषप्रणम्यततस्तेषांप्रसादात्रश्रीभागवताष्यं प्रयमुद्रीरयेव्याख्यास्ये भवत्प्रदनपरिहारित्वेनेतिशेषदृत्येकान्वयः ॥ श्रीभागवतादिसर्वशास्त्रप्रवक्तृश्रोतृभिस्तेअवद्यंनमस्कार्याद्यतिद्योत

वितुमेवेत्युक्तिः॥ ४॥

# क्रमसन्दर्भः।

श्रती य पवं साक्षाच्छीकृष्णद्वेपायनेऽपि खपितयंनुसन्धानरहित आसीत् स पव श्रीभगविद्धालायांनमयश्रीमद्भागवतनामैतद्धस्थावेदीनेदशोऽपि द्यात इत्याह य इति । तदेतच्छीस्तस्य शास्त्रोपक्षमाय श्रीगुरुप्रपत्तिरूपं वाक्यं खसुलिनिसृतत्यादिना तदुपसंहाराय
सद्देणा वाक्यनेकिकित्य व्याल्यायते । यः खल्ठ "हित्वा खिहाण्यान् पेळादीन् भगवान् वादरायणः । मद्यं पुत्राय शान्ताय परं गुद्धामदं
स्नावित्यायनुसारेण पुराणगुद्धामदं श्रीमद्भागवताल्यमाह गिरा प्रकाशयामास । तं तत्राभवद्गगवान् व्यासपुत्र इत्यस्य पृद्धांतरप्रघट्टस्नादित्यायनुसारेण पुराणगुद्धामदं श्रीमद्भागवताल्यमाह गिरा प्रकाशयामास । तं तत्राभवद्गगवान् व्यासपुत्र इत्यस्य पृद्धांतरप्रघट्टस्नाह निगमकल्पतरोरित्यायनुसारेणाखिळश्रुतिसारं । पुनः कीहरां तत्राह निम्नानां यथा गङ्गेत्यायनुसारेणा पुराणानां मुल्यं । पुनः
तत्राह निगमकल्पतरोरित्यायनुसारेणाखिळश्रुतिसारं । पुनः कीहरां तत्राह निम्नानां यथा गङ्गेत्यायनुसारेणा पुराणानां मुल्यं । पुनः
कीहरां तत्राह खसुलिनभृतचेता इत्यायनुसारेणात्मानं स्वचित्तमिष्ठत्य वत्ते यत् परमरहस्यमिजतकचिरळीळाच्यं तत्त्यं तस्य दीपं
प्रकाशकं । नन्वयं चेत्र कथं तीई प्रकाशयत् तत्नाह अन्यद्भर्यां यत्तमः सन्वांवरक्षमङ्गानं तत्तरीत्रिमच्छतां संसारिणां करुणया तेषु यत्
प्रकाशकं । नन्वयं चेत्र कथं तीई प्रकाशयत् तत्नाह अन्यद्भर्यां यत्तमः सन्वांवरक्षमञ्जातं तत् प्रकाशयामासेत्यहो
कार्ययं तद्भरतियत्यथः । यद्यप्यितिकचिरळीळारसुष्टं न ते जानन्ति तथापि तत्पयंन्तप्रकाशका तत् प्रकाशयामासेत्यहो
कण्याया विद्या दश्यतामिति भावः । सेयश्च तस्य करुणा त्रिज्ञानुभवेत तत्त्वभावद्यामान्त्राते न स्यादेविति च ॥ ३॥
किविद्यसम्बन्त्रसम्बन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्यन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्बन्तरात्रसम्यम्यविति च ॥ ३॥

केविद्भजन्त्यभजतः क्षतः । नाष्प्राचाना धार्यकामा अकृतका गुरुद्र हात आगण्य । विद्यानित्यत्र शास्त्रपात च ॥ ३॥ नारायणामित्यत्र शास्त्रस्यास्य नरनारायणाविधिष्ठातृदेवते निर्द्धि । चकाराच्छ्रीकृष्णोऽस्य देवता सरस्वती शक्तिः । चकाराद्वयास नारायणामित्यत्र शास्त्रस्य नरनारायणाविधिष्ठातृदेवते निर्द्धि । चकाराच्छ्रीकृष्णोऽस्य देवता सरस्वती शक्तिः । चकाराद्वयास नारायणामित्यत्र शास्त्रमात्र पाठेस्पष्ट एव । धीजं तु प्रणाव एव ह्रेयः अन् निमिश हत्युक्तत्वात् । छन्दोऽत्र गायत्री ह्रेया तयेवारव्यत्वात् । तस्माक्त

नग्रस्या इति भावः॥ ४॥

# सुवोधिनी।

#### **सुब्रोधिनी**ो। हे

व्याससमीपागमनंभागनतमादश्वार्थाख्यस्य स्वतंतद्वभागनतस्याभिनिन्धस्य प्रादेशित्तद्वाह्य स्वतंत्रस्य स्वतंत्रस्य स्वतंत्रस्य स्वतंत्रस्य स्वतंत्रस्य स्वतं स्वतंत्रस्य स्वतं स्वत

असाधारग्रांमंगलमुक्त्वासर्वैः कर्त्तव्यंसाधारग्रांमंगलमाहनारायग्रामिति॥"जयोनामपुराग्रादिकृष्ण्द्वैपायनेरितः अष्टाद्शपुराग्रानिमा रतंतत्प्रकीित्तंतंनारायग्राव्यासहितवाच्यवक्तृस्वरूपकः एकएवपरोत्द्यात्माआदावंतिनविशितः उपसाधकोनरश्चोक्तश्चकारात्गुरुवानिष्ठ वश्यमवकारग्रास्त्रात्माचनरोत्तमः देवीभाग्यात्मिकानृग्रांवाक्यरूपासरस्वतीसर्वेतेभगवद्रपास्तस्मान्नम्याहितसदा"व्यासनिक्रयमाग्रातुन मस्कारनव्यासपदप्रयोगः सरस्वतीसमीपेचकारः तद्वकारंवोधयतितस्मात्पाठद्वयमपिलोकेव्यवस्थयावोद्धव्यम् ॥ ४॥

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

अस्मिन्नर्थे तस्य कृपाछत्वमेव हेतुरस्त्येव इत्याह य इति । संसारिणां करुण्याहिति । न केवलमयं परीक्षिदेव तारियतन्यः किन्त्वन्येऽपि जिन्यमाणाः संसारिणोऽनेनेव तरिन्त्वित तदेव सर्व्वान्द्विनान् सस्मारेविति भावः । अन्धं गाढं तमोऽविद्याम् अतिश्येन सुखेनेव तरीतुमिच्छताम् । आत्मिन अधिष्ठितानि तत्त्वानि महदादीनि तेषांदीपं प्रकाशकमिति मुमुभू णामिववक्षयायोऽमुसंहितं फलमुक्तं शुद्ध म
कानाश्च अखिलानां श्रुतीनाम् उपनिषदां सारं श्रुतेषण् श्रुतीनां अवणानां श्रोतेन्द्रियस्य आस्वाद्यानां सारिमिति । अतः पूर्वोक्तं निगमकत्पतरुफलत्वप्रेवास्य सूचितम् । अतप्व स्वः शुक प्रवानुभावः रसोत्कर्षप्रभावज्ञापको यस्य तं स्वसुखनिश्वतेता इत्यत्र अजितरुचिरलीत्पतरुफलत्वप्रेवास्य सूचितम् । अतप्व स्वः शुक प्रवानुभावः रसोत्कर्षप्रभावज्ञापको यस्य तं स्वसुखनिश्वतेता इत्यत्र अजितरुचिरलीलाकुष्णासार इति हरेर्गुणाक्षिप्तमितिर्व्याख्यानं यद्यीतवान् इत्यादिश्यः । यद्या । स्वस्यानुभावः प्रभावो यस्मात् तं । तद्वयाख्यानादेव
लाकुष्णासार इति हरेर्गुणाक्षिप्तमितिर्व्याख्यानं यद्यीतवान् इत्यादिश्यः । मुनीनां परीक्षित्सभोपविष्टानां नारद्व्यासादीनामपीद्शुकस्य सर्व्वमुनिश्योऽप्युत्कर्षोऽभूदिति भावः । एकमनुपममद्वितीयमित्यर्थः । मुनीनां परीक्षित्सभोपविष्टानां नारद्व्यासादीनामपीद्सश्चत्वरमिव जातमिति तानिप श्रीशुकदेव उपदिदेश देश्यमिति सन्दर्भः ॥ ३॥

गुरुं नत्वा देवतादीन् प्रशामित नारायश्मिति।देशाधिकारित्वेन नरनारायशावस्याधिष्ठातृदेवते निर्दिष्टे । नरोत्तममिति । पुरुषोत्तमः गुरुं नत्वा देवतादीन् प्रशामिति नारायश्मिति।देशाधिकारित्वेन नरनारायशावस्याधिष्ठातृदेवते निर्दिष्टे । नरोत्तममिति । पुरुषोत्तमः श्रीकृष्शोऽस्य देवता सरस्वती शक्तिश्चकाराद्वयास ऋषिः । व्यासमितिपाठे स्पष्टएव । वीजन्त्तुप्रशावो श्रेयः । छन्दोऽत्र प्राधान्येन श्रीकृष्शोऽस्य देवता सरस्वती शक्तिश्चकाराद्वयास ऋषिः । व्यासमितिपाठे स्पष्टएव । वीजन्त्तुप्रशावो श्रेयः । छन्दोऽत्र प्राधान्येन सायञ्चव श्रेयो तथैवारव्यत्वात । तात्रमस्कृत्य जयेति क्रियापदमाक्षेपल्डधं श्रीकृष्शासम्बोधनकम् । उदीरयेदिति खयं तथोदीरयन्त्रन्यानिप पौराशिकानुपशिक्षयति । जयत्यनेन संसार्गमिति जयो ग्रन्थिमिति वा । अत्र स्त्वाप्रत्ययेनैवानन्तर्थ्ये सिद्धे तत इति कर्त्तृविशेष्यां क्रप्रव त्ययान्तं श्रेयमिति केचित् ॥ ४॥

# सिद्धान्तप्रदीपः

मुनयःसाधुपृष्टोऽहंभवद्गिर्छोकमङ्गलम् । यत्कृतःकृष्णसंप्रश्नोयेनात्मासुप्रसीदति ॥ ५ ॥ सवैपुंसांपरोधम्मीयतोभक्तिरधोत्तजे । अहैतुक्यप्रतिहताययात्मासुप्रसीदति ॥ ६ ॥ (१)

#### भाषा टीका।

जिन्होने असाधारणप्रभाववाला. समस्तश्रुतिओंकासार अद्वितीय और अंधतमकेपारजानेकी इच्छावाले संसारिओंको अध्यात्मतत्त्वके प्रकाशकरनेमें दीपककेसमगुद्य श्रीमागवतपुराणको जीवेंपरकृपाकर प्रकाशकियाहै, और जोस्नमस्तमुनिओंके गुरूहें उनशुकदेवजीकी मे शरणहूं ॥ ३॥

नारायमा को नरोत्तमनर को देवी सरस्वती को और ब्यासमुनी को प्रमाम कर जय (जिससै संसार जीतांजाय ऐसे ) ग्रंथ का

#### श्रीधरस्वामी।

तेषां वचः प्रतिपूज्येति यदुक्तं तत् प्रतिपूजनं करोति हे मुनयः साधु यथा भवति तथाहं पृष्टः यतो छोकानां मङ्गलमेतत् । यतः कृष्णविषयः संप्रदनः कृतः । सर्व्वशास्त्रार्थसारोद्धारप्रदनस्यापि कृष्णो पर्यवसानादेवमुक्तम् ॥ ५ ॥

तत्र यत् प्रथमं पृष्टं सर्व्वशास्त्रसारमेकाान्तिकं श्रेयो ब्रहीति तत्रोत्तरं स वै इति । अयमर्थः । धम्मों द्विविधः प्रवृत्तिलक्ष्याो निवृत्ति-लक्ष्याश्च । तत्र यः स्वर्गाचर्थः प्रवृत्तिलक्ष्याः सोऽपरः । यतस्तु धम्मोत् कृष्णो श्रवणादिलक्ष्या भक्तिर्भवति स परो धम्मेः स पवैका-न्तिकं श्रेय इति । कथम्भूता अद्देतुकी हेतुः फलाभिसन्धानं तद्रहिता । अप्रतिहता विद्रीरनभिभूता ॥ ६ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तद्वं "मङ्गलाचारयुक्तानांनित्यं चप्रयतातमनाम् । जपतां जुह्वतांनित्यं विनिपातोनविद्यतं "इत्युक्तरीत्याकृतगुरुद्वेवतोपासनात्मकमंगलस्ता वत्प्रदनमभिनदंति। सुनयइतिहेसुनयः भवद्भिः साध्यथाभवित्तथालोकमंगलमितिप्रदनसाधृत्वेहेतुः लोकमंगलविषयकत्वात्प्रदनः कृतः मेलानां चमंगलमित्युक्तरीत्या निर्रातदायः मंगलस्वरूपकृष्णविषयकसंप्रदनः कृतस्ततोलोकमंगलमहंपृष्टद्दत्यर्थः कृष्णां सप्रदनस्यलोकमंगलविषयत्वमे चोपपादयति येनकृष्णोनतद्विषयकप्रदेननवाहेतुनाचात्माचित्तं सुष्ठप्रसन्धं भवित प्रदनोत्तराश्यां सस्वरूपगुगाविभूतिः कृष्णोऽनुसंहिताश्चित्तगत मालिन्यमपनयति चित्तप्रसादादेवलोकानां सर्वाणिमंगलानिसुलभान्यवेतिभावः ॥ ५॥

इतिकिनिरितशयंश्रेयःकोवातत्साधनभूतो धर्म-तत्रयत्तावतपृष्टं "भवतायद्विनिश्चितंषुंसामेकांततःश्रेयस्तन्नःशंसितुमहिसि" दानुभवात्मकोमोक्षएवनिरातिरायंश्रेय: निवृत्ति पूर्वक ब्रह्मानं इतितत्रगर्भजरामरगाद्यनर्थरूपसंस्टति तत्साधनभूतधर्मश्च परब्रह्मोपासनात्मिकाविजातीयप्रत्ययान्तराज्यवहिताप्रत्यश्चतापन्नाप्रीत्यात्मिका तद्भक्तिरेव "तिन्निष्पत्तिश्चानाभ संहितफलैर्वर्गाश्रमधर्मेश्चीनयोगशमद्मादिमिः सत्संगत्यादिप्रगाल्याचभगवद्गुगाश्रवगादिखचिजननद्वाराभवतीतिवक्तुंतावद्भक्तियोगा श्रेष्ठस्तद्न्यस्विभसंहितफलः पुनःसंस्टितहेतुत्वेनानर्थावह इत्याहसवाहीतीत्रीभः यतोऽनिभसं-तुप्राहकएववर्गाश्रमप्रयुक्तोधर्मः**ः** हितफलाद्धर्भाद्वर्णाश्रमानुगुणावनुष्ठितावधोक्षजेभक्तिभवतिस्यवधर्मः परउत्कृष्टःभक्तिमपिविशिनष्टि **अहैतुकीफलोपाधिरहिता** अप्रतिहताअंतरायानुपहता अव्यवहितेतिपाठांतरंतदाविजातीयप्रत्ययांतराव्यवहिता ययामक्त्याआत्मासुप्रसीद्तिपूर्वाल्पभाक्ति रुत्तरभक्ति प्रकर्षोपयिकमनोनैमेल्यहेतुरित्यर्थः यद्वा ययात्मासुप्रसीद्तिइत्यनेनप्रीत्यात्मकत्वमुच्यते अनुकूलक्षानेनैचहिचित्तप्रसादः प्रतिकूले-अध्यवहितत्यनेनतैलधारावद्विच्छिन्नस्मृतिसंतानरूप नतुचित्तविक्षेपएवअनुकूलज्ञानमेवह्यानंदः सुखंप्रीतिश्चेतिपर्यायांतरैरुच्यते त्वमुक्तम्॥६॥

#### श्रीविजयध्वजः।

संप्रतिस्तःशीनकादिप्रश्नसंहष्टस्तत्प्रश्नंस्तौतीत्याह मुनयहति कृष्णविषयःसभीचीनःप्रश्नःकृतहतियद्यस्मात् अतोऽहंभवद्भिः सा भुसर्वसाधनेषुत्तमसाधनप्रतिषृष्टःनकेवलमुभयेषामस्माकंसाधु किंतुलोकंमगलयतीति अवण्यमननाश्यांकल्याण्यजनकत्वादित्यर्थः कुतःये मकृष्णसंप्रश्नेनात्मापरमात्मामनोवाप्रसीदतितस्मादित्येकान्वयः॥ ५॥

(१) अहैतुक्यव्यवहितेति विजयध्वज वीरराघवयोः पाढः

#### श्रीविजयध्वजः

भगवद्भक्तिजनकत्वात् कृष्णसंप्रदन्यवपरमधमेदत्याद् सवाद्दति यतःकृष्णसंप्रदनात् अधोक्षकेश्रहेतुकीअव्यवदिताभिकभेवति पुंसांपरमधमःसवादत्येकान्वयः अक्षजन्यक्षानमधः कृत्वाऽतीत्यवर्ततद्दत्यधोक्षजः भगवत्प्रसादसंतरे स्काम्यफले तृ श्रून्याद्देतुकी विदेष पादन्यप्रसंगादिव्यवधानश्च्याऽव्यवदिता सन्वान्योसावन्यो हमस्भीतिनाविष्णुः क्षित्येद्विष्णुमित्यादिश्रुतिस्मृतिनिषिद्धत्वात् भेदबुद्ध्य परप् र्यायव्यवधानश्चन्येत्यर्थद्दति "व्यवधानतिरोधानमथोव्यत" दृत्यभिधानविरोधात् नचश्चितस्मृतिविरोधः अनयोः अन्यार्थत्वात् अविष्णुः नाष्णुर्यस्यसत्तथाअतद्भक्तद्वर्यथः अन्यः स्वतंत्रः अप्रतिहतितिपाठे अस्यक्षितेत्यर्थः ययाभक्त्याआत्मात्राग्रुप्रसीदिति समुद्धत्यमनीषयेत्यु क्तंदर्शयति सद्दति सप्तवपरोधमः यतोधर्माद्घोक्षकेभिक्षिवतित्वा ॥ ६ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

इतिसंप्रश्नसंहृष्ट इत्याद्यन्तरं नारायणं नमस्कृत्य इत्याद्यन्तेत पुराण्यमुपक्षम्यैवाह मुनय इति । टीका च तेषां वचः प्रतिपूज्येति यदुक्तं तत् प्रतिपूजनं करोति हे मुनयः साधु यथा भवति तथाहं पृष्टः यतो लोकानां मङ्गलमेतत् यतः कृष्णविषयः संप्रश्नः कृतः सर्व्व-शास्त्रार्थसारोद्धारप्रश्नस्यापि श्रीकृष्णे पर्यवसानादेवमुक्तमित्येषा । यदिति । अत्यवोत्तरेष्वपि पद्येषु अधोक्षजवासुदेवसात्वतांपतिक्व-शाशब्दास्तत् प्राधान्यविवक्षयेव पिठताः । अत्र श्रेयः प्रश्नस्याप्युत्तरं लोकमङ्गलमित्यनेनैव तावद्दां भवति तथात्मसुप्रसादहेतोश्च येनातमा सुप्रसीदतीत्यनेन । समिति कचित् पाठः ॥ ५ ॥

तदेवं सर्वशास्त्रसारस्य श्रीकृष्णाष्यस्वयंभगवदाविभीवप्रश्नलक्षिततद्भक्तिलक्षणस्य श्रेयसः परमसर्व्वोत्तमत्वं बोधियतुं भगव-दाविभीवमात्रस्य भक्तेः सर्व्वोत्तमश्रेयस्वमाह स वै इत्यादिना अतो वै कवय इत्यन्तेन ग्रन्थेन । यतो धर्मात् अधोक्षजे भिक्तः तत्कथा-श्रवणादिषु रुचिभीवति । धर्माः स्वनुष्ठित इत्यादौव्यितरेकेण दर्शयिष्यमाणत्वातः । स वै स एव । "स्वनुष्ठितस्य धर्मास्य संसिद्धिहिर-तोषणामिति वश्यमाणारीत्या तत्सन्तोषणार्थमेव कृतो धर्माः परः सर्व्वतः श्रेष्ठः न निवृत्तिमात्रहक्षणोऽपि वैमुख्याविशेषात् । तथाच श्रीनारद्वाक्यं नेष्करम्यमपीत्यादौ "कुतः पुनः शश्वद्भद्रमीश्वरे न चापितं कर्म्म यद्प्यकारणमिति । ततः स पवैकान्तिकं श्रेय इत्यर्थः। अनेन भक्तेस्तादशधर्मतोऽप्यतिरिक्तत्वमुक्तमः। तस्या भक्तेः स्वरूपगुणमाह स्वतप्व सुखक्षपत्वादहेतुकी फलान्तरानुसन्धानरिहता अप्रतिहता तदुपरिसुखदपदार्थान्तराभावात् केनाप्यवबोधियतुमशक्या (केनापि व्यवधातुमशक्या ) च ॥ ६॥

# सुबोधिनी।

अभिनंद्नंवद्न्प्रइनानांनिर्द्वारितार्थमाहमुनयइति ॥ फलंकृष्ण्एवस्विप्राण्धिनामैहिकामुष्मिकफुलदाताचसएवभुक्तिमुक्तिचलिलाञ्च व्यागिन्द्रं विद्यानिर्द्वार्थिक स्थाप्यदेवप्टक्येतत्रे ताराश्चधमरक्षकश्चसएवअतः वर्णाप्रइनानांसप्वार्थः द्वितीयप्रइनेद्वितीयंफलमेश्यएवभवतिहेमुनयःनिर्द्वारितार्थाः यद्याप्यदेवप्टक्येतत्रे ताराश्चधमरक्षकश्चसएवअतः वर्णाप्यदेवप्टक्येतत्रे वित्यदेवप्रवाप्यदेवप्टक्याः पृक्कित्रे वित्यदेवप्याप्यदेवप्याप्यक्षित्रे वित्यदेवप्याप्यक्षित्रे वित्यदेवप्यक्षित्र अत्रतुसाप्रइनैरेवेतिप्रइनएवशास्त्रसमितः ॥ ५॥ अविदेशप्रसादः इदंसामान्योत्तरंशास्त्रात्रस्याप्यक्षिकारानुसारेण्यक्षिकारानुसारेण्यक्षिकारानुसारेण्यक्षिकारानुसारेण्यक्षेत्रस्य स्वाप्यक्षिक्षाय्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षिक्षक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षिक्षक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षेत्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेण्यक्षित्रस्य स्वाधिकारानुसारेणक्षित्रस्य स्वाधिकारस्य स्वाधिकारस्य

इदानींफलसाधनेएकीकृत्यस्वाधकारानुसारणाराज्यापार पार्य पार्य

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती

तेषां वचः प्रतिपूज्येति यदुक्तं तत् करोति । हे मुनयः साधु पृष्टः कुतः यतो लोकमङ्गलमेवाहे पृष्टः तदेव कुतः यद्यस्मात हन्या

<sup>\*</sup> अथयोन्यांदेवतामुपास्तेऽन्योसावन्योद्दमस्मीतिनसवेदयथापशुरितिवृहद्यारायकवाक्यम् ॥ तस्ययंपरकीय्व्याख्या ॥ धःकश्चित् अब्ह्यवितस्वात्मनोव्यातिरिक्तांदेवतामन्योद्दमुपास्यदेवतायाःअन्योसीमत्तः उपासमीयोदेघःइत्येवंभेददृष्टयोपास्तेसउपासकःउपासकः अब्ह्यवितस्वात्मनोव्यातिरिक्तांदेवतामन्योद्दमुपास्यदेवतायाःअन्योसीमत्तः उपासमीयोदेघःइत्येवंभेददृष्टयोपास्तेसउपासकःउपासकः । अब्ह्यतिविष्णुभिन्नस्यविष्णुक्षीर्तनकर्तृत्वमिषद्भितं कर्तातद्भि यःस्तत्वंववंदेति ॥ तथाचात्रभेद्द्यानिव्यातिस्वयोऽभिमतद्दिभावः ॥ स्मृतीविष्णुभिन्नस्यविष्णुक्षीर्तनकर्तृत्वमिषद्भितं कर्तातद्भि यःस्तत्वंववंदेति ॥ तथाचात्रभेद्द्यानिव्यातिस्वयातिस्वयातिस्वयातिस्वयातिस्वयातिस्वयातिस्वयातिस्वयात्रयः ॥

#### श्रीविश्वनाथं चंक्रवर्ती।

विषयः सम्यक् प्रश्नः कृतः सर्विषव प्रश्नः श्रीकृष्णविषयः कुतोऽवसितस्तत्राह् येन प्रश्नेनैव आत्मा प्रसीद्तीति श्रीकृष्णस्यैव सद्य आत्मप्रसादकत्वमस्मद्तुभवसिद्धामिति भावः॥ ५॥

सर्वेशास्त्रसारमैकान्तिकं श्रेयो ब्रूहीति प्रश्तद्वयस्योत्तरमाह स वै पुंसांपुम्मात्राणामेव धर्मः पराः परमः श्रवणकीत्तनादिलक्षणः यदक्तम् । "एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुँसां धर्माः परः स्ष्रतः । भक्तियोगो भगवति तन्नामश्रवणादिभिः" । इत्यतः परशब्दविशेष्यो धर्मा मिक्तियोग एव भवेदिति तथात्र मतुप्प्रत्ययेनैवकारेणचैतदन्यस्य परधर्मपदवाच्यत्वश्च निषिद्धम् । यतो भक्तिः प्रेमलक्ष्णाभवेत् । अहैतकी हेतुं विनैवोत्पद्यमाना इति सगुणा व्यावृत्ता । ननु महानयमपलापः क्रियते । मैवम् श्रयणकीर्त्तनादिरूपो यो घर्माः स भक्ति-रेव साधननाम्नी सेव पाकदशायां प्रेमनाम्नी । ते द्वे अपि भक्तिशब्देनैवोच्येते । तदिप ''भक्त्या संशातया भक्त्या विभृत्युत्पुलकां तनुमिति यतो भक्तिरधोक्षजे इत्यादिषु उत्तरस्या भक्तेः पूर्व्वा भक्तिः कारणं पकाम्रस्य कारणं आमाम्रमितिवत् स्वादभेदनिवन्धनमेव तस्य कारगात्वं,वालवोधनार्थं काल्पनिकमेव न तु वास्त्वम् । न ह्येकस्यैवं पुरुषस्य वाल्ययौवनाद्यनेकावस्थावतो हेतुहेतुमद्भावस्तात्विक इति। घटपटीदनादिषु मृत्तराडुलादीनां नामरूपलाप इवेति न तादशत्वमत्र व्याख्यातुं शक्यमित्यवसेयम् । न च भक्तेः प्रसिद्धो हेतुः साधुस-क्रपवास्तीति वाच्यम् । तस्यापि "आदौ श्रद्धा ततः साधुसङ्गोऽथ भजनिक्रयेत्यादौ भक्तेद्वितीयभूमिकात्वेनोक्तत्वात् भक्तित्वमेव स्यान्मह-त्सेवया विषा इत्यम्रेऽपि तथाव्याख्यास्यमानत्वाच । किञ्च दानत्रततपोहोमादिनिष्कामकर्मयोगञ्च श्वानाङ्गभूतायाः सात्विषया एव भक्तेः कथि अद्वेतुर्भवति न तु निर्भुगायाः "यन्न योगेन सांख्येन दानवततपोऽध्वरैः। व्याख्यास्वाध्यायसन्न्यासैः प्राप्नुयाद्यत्नवानपीत्ये-कादशोक्तेः। न च निर्गुशाया भक्तेभगवत्रुपेव हेतुरिति वाच्यम् । तस्यापि हेतावन्विष्यमाशो अनवस्थानात् । न च सा निरुपाधिरेव कोवलाहेतुरित्यपि वाच्यम् । तस्या असार्व्वत्रिकत्वेन भगवति वैषम्यप्रसक्तेः । किञ्च भक्तकृपैव हेतुरित्युक्ते न किञ्चिदसामञ्जस्यम् । उत्तमभक्तानां वैषम्याभावेऽपि 'प्रेममैत्रीकृपोपेक्षा यः करोति स मध्यम' इति मध्यमभक्तलक्ष्मो वैषम्यस्य द्र्शनात्। ततश्च भगवतो भक्ताधीनत्वात् भक्तकृपानुगाभिनी भगवत्कृपा हेतुरिति सिद्धान्तः । ननु तर्हि कथं भक्तेरहैतुकत्वमभूत् । उच्यते । भगवत्कृपाया मक्तकपान्तभूतत्वादुक्तकपायाश्च भक्तसंगान्तभूतत्वादुक्तसंगस्य भक्तयंगत्वाद्हेतुकत्वमेव सिद्धम् । किञ्च भक्तकपाया हेतुभक्तस्यैव तस्य हृदयवर्त्तिनी भक्तिरेव तां विना कृषोदयसम्भवाभावात्। सर्व्वप्रकारेगापि भक्तेभिक्तरेव हेतुरिति निर्हेतुकत्वं सिद्धम्। भक्तिमते मक्तिभक्तभजनीयतत्कृपादीनां न पृथग्वस्तुत्वमिति भक्तेः स्वप्रकाशकत्वेन भक्तिप्रकाश्यत्वेऽपि भगवतः स्वप्रकाशकत्वं नानुपपन्नमिति। अप्रतिहता केनापि निवारियतुमशक्या। तथाहि तल्लक्षाणे । "मनोगितरियविच्छन्ना यथा गङ्गाम्भसोऽम्बुधाविति वक्ष्यते। उक्तञ्च श्रीक्रप-गोस्वामिचरणैः। "सर्विथा ध्वंसरिहतं सत्यपि ध्वंसकारणे" इति । ज्ञानकर्मादिभिरनावृतेति वा। यथा भक्त्या आत्मा मनः सम्यगेवप्र-सीदतीति कामनामालिन्ये सति मनः प्रसादहेतुत्वासम्भवादस्या भक्तेनिष्कामत्वं खत प्रवायातम् ॥ ६॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

हेमुनयः भवद्भिरहंसाधुयथाभवितयापृष्टःयतः कृष्णसंप्रदनः कृतः जातावेकवचनम् उपायादिप्रदनानां सर्वेषां श्रीकृष्णे पर्यवसानादेक वचनम् येन प्रदेननभवतां प्रच्छकानां ममवक्तुश्चकाकथा छोकानां श्रोतृ स्थाप्ति सगवद्गानभिक्त द्वारापरभानदं प्रामोतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ नातिहि वक्तारं प्रच्छकंश्रोतृत् तत्पादस्ति छं यथिति येनात्माजीवः सुष्ठुप्रसन्नो भवति भगवद्गानभिक्त द्वारापरभानदं प्रामोतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ प्रथमप्रदन्त्योत्तरमाह सदित यतोऽघोक्षजेतत्कथाश्रवसादौद्द्वपुत्पादनद्वारा "अक्तिरवेनवर्द्वयति भक्तिरवेनं वर्षायतिभक्ति वदाः पुरुषः भक्तिरवभूयसीत्यादिश्रुतिप्रोक्ताभक्तिभवत्त्वत्वत्र त्याद्वयाद्वार्थः स्वर्गायभिसं भक्तिरविद्यादिश्वत्वक्तं व्यव्यवक्तं प्रमिविद्यानिष्ठिपरद्वति भक्तिविद्यानिष्ठं अद्वेतुकी अनिस्तिहितक्र यद्वा श्रीकृष्णके पेतरहेतुरिहता अप्रतिहताविरो विप्रमिन्नभ्यस्नाययापरमोपायभृतयाअत्माजीवः वद्यमास्य सुपंत्रप्राप्ततद्भावापनः सन्प्रसीदितिष्ठसक्तोभवित तदुक्ते मोक्षप्रमे "ज्ञा स्वारम्हर्यहर्ति वेवननिवर्तितितेऽव्ययाः । प्राप्यतत्परमंस्थानमोदंतिक्षरमव्ययमिति ॥ ६ ॥

# माषा टीका।

हैं मुनिजनों । आपने मुझसे साधु (समीचीन-उत्तम) प्रश्निकया है। यह समस्त लोक का मंगल रूप है। क्योंकि आपने कृष्णा विषयक प्रश्न किया है। जिससे आत्मा की प्रसन्नता होती है॥ ५॥ विषयक प्रश्न किया धर्म है जिससे अधीक्षज मगनान में अहैतुकी (जिसमें किसी फल की इच्छा नहीं हो ) और अप्रति हता पुरुषों का नहीं परम धर्म है जिससे अधीक्षज मगनान में अहैतुकी (जिसमें किसी फल की इच्छा नहीं हो ) और अप्रति हता पुरुषों की नहीं परम धर्म है जिससे अधीक्षज मगनान में अहैतुकी (जिसमें किसी फल की इच्छा नहीं हो ) और अप्रति हता पुरुषों की नहीं विकास से कक नज़ाय) भक्ति हो। जिस भक्ति से आत्मा का प्रसाद होता है ॥ ६॥ (जो किसी विकास से कक नज़ाय) भक्ति हो। जिस भक्ति से आत्मा का प्रसाद होता है ॥ ६॥

वासुदेवभगवतिभक्तियोगःप्रयोजितः । जनयत्याशुवैराग्यंज्ञानश्चयदहैतुकम्॥ ७ ॥ धर्म्भःस्वनुष्ठितःपुसांविष्वक्तेनकथासुयः । (१) नोत्पादयेद्यदिरतिंश्रमएवहिकेवलम् ॥ ८ ॥

#### श्रीघरखामी।

नेतु "तमेतमात्मानं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिपन्ति यश्चेन दामेन तपसा अनाशकेनेत्यादिश्वतिश्यो धर्म्मस्य ज्ञानाङ्गत्वं प्रसिद्धंतद कुतो भक्तिहेतुत्वमुच्यते सत्यम् । तत्तु भक्तिद्वारेणेत्याह वासुदेव इति । अहेतुकं शुष्कतकोद्यगोचरम् औपनिषदमित्यर्थः॥ ७ ॥

व्यतिरेकमाह धर्म्म इति । यो धर्म्म इति प्रसिद्धः स यदि विष्वक्सेनस्य कथासुरति नोत्पाद्येत् ति स्वनुष्ठितोऽिपसन् अमोक्षयः ननु मोक्षार्थस्यापि धर्मस्य अमत्वमस्येव अत आह केवलं विफलअम इत्यर्थः । नन्वस्तितज्ञापि स्वर्गादिफलिमत्याराङ्क्य पवकारेगा निराकरोति क्षयिष्णुत्वान्न तत् फलिमत्यर्थः । नन्वक्षय्यं ह वे चातुर्मास्ययाजिनः सुकृतं भवतीत्यादिश्रुतेनं तत्रफलस्य क्षयिष्णुत्वीम-त्यादाङ्क्य हिराब्देन साधयित । "तद्यथेह कर्म्मजितो लोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुर्याजनो लोकः क्षीयत"इति तकानुगृहीतया श्रुत्या क्षियिष्णुत्वप्रतिपादनात् ॥ ८॥

#### द्वीपनी।

यज्ञादीनां विशेषगामनाशकेनेति । कामानशनमनाशकं तेन निष्कामेनेति यावत् ॥ ७ ॥ विष्वक्सेनस्येति । विस्ची व्यापिका सेना यस्य स विष्वक्सेनः भगवन्नारायगानामविशेष इति तस्येत्यर्थः ॥ ८ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

नन्वव्यविहितेत्ययुक्तंशब्दादिविषयासक्तमनसाऽकामेनापिमध्येमध्येविषयांतरानुध्यानव्यविहितत्वप्रसंगादितिशंकांनिराकुवेन्नुक्तभक्तेरेविवशेषणांतरमाह । वासुदेवहति । भगवतिषाङ्गुग्यपरिपूर्णवासुदेवप्रयोजितोभक्तियोगः वैराग्यमाशुजनयाते । "सर्वत्रासोसमस्तंच वसत्यत्रैववैयतः । ततः सवासुदेवितिविद्धद्भःपरिगोयते"हातान्वक्तवासुदेव शब्दनसर्वातरात्मत्वसर्वाधारत्वभगवच्छब्देनषाङ्गुग्यपूष्तं वसत्यत्रैववैयतः । ततः सवासुदेवितिविद्धद्भःपरिगोयते"हातान्वक्तवासुदेव शब्दनसर्वातरात्मत्वसर्वाद्यादिलोक्तिकविषयेभ्योवलक्षग्यम् श्रोक्ता । सर्वातरात्मकत्वेननिरितशयत्वलब्धम् । आत्मेवहिनरितशयाप्रयः । शब्दादिविषयेष्वनासिक्तर्यवरायमाशुजनयति । किस्मिश्चिद्विषयेष्वनासिक्तर्याणांतिश्चयाव्यविषयांतरवैत्वत्यावहत्वदर्शनात् । तस्माद्मिक्तयोगानिष्ठमनसः शनोवेषयांतरवैतृष्णयस्याथादेवोदयाद्विषयात्वर्यातरात्मक्त्याविषयात्वर्यविषयावहत्वदर्शनात् । तथायदहेतुकम् । "नाह्वेद्नतपसाहत्युक्तरीत्याभिक्तव्यतिरिक्तहत्वंतरालभ्यंशा वसाक्षात्कारात्मकत्वच्यति अनेनभक्तेः साक्षात्कारात्मकत्वविशेषणामुक्तम् ॥ ७॥
नसाक्षात्कारात्मकत्वजनयति अनेनभक्तेः साक्षात्कारात्मकत्वविशेषणामुक्तम् ॥ ७॥

### श्रीविजयध्वजः।

भक्तिरिपवराग्यद्वारेग्यथपरोक्षण्ञानसाधनामित्याह वासुदेवइति वासुदेवेभगवितप्रयोजितोभक्तियोगः वैराग्यंयद्देतुकंशानतध्यजनयं तित्येकान्वयः वस्तिसर्वत्रस्वस्मिन्सर्ववास्यतीतिवावासुः क्रीडादिकरगाद्देवःवासुश्चासौदेवश्चेतिवासुदेवःतस्मिन् भक्तिलक्षण्याद्यायः तित्योगः वैराग्यंविषयेष्वसारताबुद्धि अकारवाच्यविष्णुप्रसाद्यवहेतुर्निमत्तंयस्यतत्त्रथोक्तं द्रव्यलाभादिहेतुसंबंधाद्रजालादिशानं नभवतीतिवा॥ ७॥

<sup>(</sup>१) कथाश्रयामिति विजयध्वज पाठः

#### श्रीविजयध्वजः।

ननुनित्यनैमित्तिकादिधर्माणांसत्त्वात्कथमस्यवपरमत्विमत्यादांक्य तेषामपिकृष्णकथारतिजनकतयातत्साधनत्वेनपरमत्विमत्याह ध मेंइति यःपुरुषेः खनुष्ठितोधभैःविष्वक्सेनकथाश्रयांर्रिनोत्पादयेत्तर्हिपुंसांसकेवलश्रमणवहीत्येकान्वयः शास्त्रोक्तसदाचारद्रव्यदेशका लादिमिनियतत्वयासुष्टुनुष्ठितःयन्नाम्निकीर्तितेविष्वक्सर्वतःअंचितिदैत्यसेनामितिविष्वक्सेनस्तस्यकथासुर्पते निरंतराभ्यासक्रपां केवलं श्रमप्विक्रयाकालेउत्तरकालेपितुःखस्वरूपत्वादायासप्वेत्यर्थः हिशब्देनानेवंवित्महत्पुगयंकर्मकरोतितद्वास्यांततःक्षीयतइतिश्रुतिप्रसिद्धि र्ख्यायति ॥ ८ ॥

#### क्रमसन्दर्भः।

जातायाञ्च तस्यां रुचिलक्षगायां भक्तां तयैव श्रवगादिलक्षगासाधनभक्तियोगः प्रवर्तितः स्यात् । ततश्च यस्यास्ति भक्तिभगवत्य-किञ्चनित्याद्यनुसारेख भगवत्स्वरूपादिश्चानं ततोऽन्यत्र वैराग्यञ्च तदनुगाम्येव स्यादित्याह वासुदेव इति । अहैतुकं श्चानम् आशु ईषकः

च्छ्वग्रामात्रेगा जनयति । ज्ञानश्च यदहैतुकीमति पाठः क्वित् ॥ ७ ॥

वासुदेवतीयगाभावेन यदि तत् कथासु तल्लीलावर्गानेषु रति रुचि नोत्पादयेत् तदा श्रम एव स्यात् न तु फलम्। कथारुचेः सर्वन त्रवादात्वात् श्रेष्ठत्वाच सेवोक्ता । तदुपलक्षगात्वेन भजनान्तररुचिरप्युद्दिष्टा एवराब्देन प्रवृत्तिलक्षगाकर्मफलस्य खर्गादेः क्षयिष्णुत्वम्। हिराब्देन तत्रैव "यथेह कर्मजितो लोकः क्षीयते" इति सोपपत्तिकश्रुतिप्रमागात्वम् । "निर्गीते केवलमित्यमरकोषात् । केवलमित्यव्ययेन निवृत्तिमात्रलक्षराष्ट्रभेफलस्य ज्ञानस्यासाध्यत्वं सिद्धस्यापि नश्वरत्वं तत्रापि तेनैव हिशब्देन "यस्य देवे परा भक्तिरित्यादिश्चितिप्रमान शात्वम् । "नैष्कम्म्यमप्यच्युतभाववार्ज्ञतमित्यादि श्रयः सृति भक्तिमुदस्य ते विमो इत्यादि आरुह्य कुच्छ्रेगा परं पदं ततः पतन्त्यधो नाइत-युष्प्रदृङ्घ्यं" इत्यादिवचनप्रमागात्वश्च सूचितम् । इलोकद्वयेन मिकिनिरपेक्षा श्वानवैराग्ये तु तत्सापेक्षेइति लक्ष्यते।तदेवं भक्तिफलत्वेनैव धर्मस्य साफल्यमुक्तम् ॥ ८॥

### सुवोधिनी ।

मुद्भक्तिविषयत्वेप्रयोजनंचाह वासुदेवेदति ॥ शुद्धसत्त्वात्मकेअंतः करगोआविर्भूतोबासुदेवः सत्त्वविशुद्धमितिवाक्यात्सचध्यानादि भद्नउपहतावादुः संगादिभिः तदापिनधर्मत्वंदेवतांतरादिवलेनान्यापिभवतितद्वचावृत्त्यर्थमाहभगवतीतिरुचिमात्रत्वनिराकरणायपरंपरा सिद्धययोगइतिभक्तिरेवयोगः प्रकर्षेहिद्धिकालाद्र नैरंतर्यतस्यपरमफलभगवत्प्रसादः सर्वत्रानुवर्तते अन्यद्रप्याहजनयतीति आशुर्शाध्रं

विषयेषुवैराग्यमात्मनिचज्ञानंतचाहेतुकं नानुमानगम्यंकिंतुसाक्षात्कारकपम् ॥ ७ ॥

एवंश्वर्मादिज्ञानांताराकापरंपरानिरूपिता तस्याअपिनिर्द्धारिकामन्यांपरंपरांवक्तुंधर्मस्यतदनुजननेवाधकमाहधर्मः खनुष्ठितइति ॥ धर्मः साध्यंकथारुचिः साध्यातत्रस्ररूपोपकारीधर्मोऽग्रेवक्तव्यः अदृष्टद्वारोपकारिग्गांव्यभिचारसभावनायाविद्यमानत्वात्निदातिसम्यगनुष्ठितो प्रकृति । । पिस्तानादिधर्मः विष्वक्परितः सेनाआज्ञावायस्यअनेनरत्यभावेसर्वमन्यथामवेदित्यत्रहेतुरुक्तः प्रासंगिकत्वाभावायसप्तमीवहुवचनसामा न्यत्वासवीयभावायकथेतियइतिधर्मस्यस्वरूपमाहश्रमएवहिकेवलमिति यथामलानांगात्रचालनाद्यभ्यासः तथास्नानाद्यभ्यासोऽपिगवअन्य व्याकृत्यथे स्वकारः तेनना दृष्टमुत्पचत इत्यर्थः हियुक्तोऽयमर्थः फलव्यभिचारात् नतुश्रमेवल वृद्धिमेलादिषु दृष्टातथात्रापिलौकिकां कि चिद्भाविष्य वित्याश्रेलयाहकेवलमिति फलांतरस्यादशनीत्प्रतिष्ठापिनसद्भिनिरूप्यतेखर्गोदीनांतुफलत्वमग्रेनिराकरिष्यतेषवंसाधारगाधर्मस्यवैयर्थ्यमु कं पुत्रीदिकामत्याकियमायो। धर्मार्थमण्यनभवतिफलस्याविद्याकार्यत्वेनदुः खरूपत्वातार्कतुभृत्यादिकृतिवन्नीमित्तिकमेवतत्रयज्ञत्यादेरनुवा दः चित्रशुद्धभावनिर्धिकाराभावाद्न्यथाकरणात्देवतिधिष्ठानाभावात्रिक्रयायालैकिकत्वंफलंसाधनंचसामान्यतः पूर्वमेवप्रतितंतथाचऔ ब्रुवादिवत् गृतीययाकरणात्वमात्रेवी ध्यतयज्ञतिस्तुव्यर्थः तस्मान्नधर्मत्वम् ॥ ८॥

### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

नतु स एवं किमीकार आत्मप्रसाद इत्यपेक्षायां सर्वदुर्विषयवमुख्यापादकमगवद्रूपगुणमाधुर्यानुभवज्ञानमय एवायभित्याह बासु देव इति । प्रकर्षेण योजितः सम्बद्धः दास्यसख्यादिसम्बन्धयुक्तः कृत इति यावत् । इत्रेषेण प्रयोजनीकृतः भक्तियोगस्य भक्तियोग द्व राया युव प्रयोजनं नान्य इत्येव विचारित इत्यर्थः । जनयतीति ज्ञानवैराग्यार्थं पृथक् यत्नी भक्तैन कर्राच्य इतिभावः । आशु शीधं तत्काल पव नेपार । यह स्यते । मिक्तः परेशानुभवो विरक्तिरन्यत्र चैषत्रिक एककालः । प्रपद्यमानस्य यथाइनतः स्युस्तुष्टिः सुद्धिः क्षुद्रपायोऽन प्रवास । वह तर्हि ज्ञानानमोक्ष एव भावीतितत्राह अहेतुकम् । अन्नस्य हेतीर्वसित इतिवद्धेतुः प्रयोजनं तदत्र सायुज्यं तन्नाईतीति लुका का अपना प्रति । जन्म का का नमा बातम् । प्रति च चतुर्थेऽपि वश्यते । "बासुरेवे मगवति मक्तियोगः समाहितः। सभीचीनेत तन भगवद्वपगुणामाधुर्यातुभवमयमेव कानमाबातम् । प्रति चतुर्थेऽपि वश्यते । "बासुरेवे मगवति मक्तियोगः समाहितः। सभीचीनेत तन गण्य । भागपाना समाहतः। सभाचाना समादः खलु मोक्षाद्भिलान्तराशिलन्वराहित्यमेचेति स्याख्यास्यते । "सोऽचिरादेवराजर्थे वैराग्यं ब्रानश्च जनायः अवशास्यते । "सोऽचिरादेवराजर्थे वराष्य कर्णात्वाश्रयः । श्रुरावतः अवधानस्य नित्यद्वास्थात्धीयतं इत्यनन्तरवाक्ये तत्कारगाञ्च स एव देष इति । एवञ्च भक्तेः कारगाँ स्यादच्युतकथाश्रयः । श्रुरावतः अवधानस्य नित्यद्वास्थात्धीयतं इत्यनन्तरवाक्ये तत्कारगाञ्च स एव देष इति । एवञ्च भक्तेः कारगाँ प्रयोजनश्च भक्तिरेवेति व्यवस्थितम् ॥ ७॥

धर्मस्यद्यापवर्गस्यनाथोंऽर्थायोपकल्पते । नार्थस्यधरमैंकान्तस्यकामोलाभायहिस्मृतः ॥ ९॥ कामस्यनेन्द्रियप्रीतिर्लाभोजीवेतयावता । जीवस्यतत्त्वजिज्ञासानाथोंयश्चेहकर्मभिः ॥ १०॥ (१)

#### श्रीविश्वनायंचकवर्ती

नतु वर्गाश्रमाचारलक्षगो धर्माः कथं न परस्तत्राह धर्मा इति । यः पुंसां विप्रादीनां सुष्ठु अनुष्ठितो धर्माः स विष्वक्सेनकथासु-रात नोतपादयेत् । "कर्म्मगापितृलोक" इति श्रुतेः कर्मगणां रत्यनुत्पादकत्वश्च । कर्माभिर्वात्रयीप्रोक्तैरित्यादौ न यत्रात्मप्रदो हरिरिति चतुर्थे नारदोक्तरेव व्यक्तम् । यदि च रितं नोत्तपादयेत् तर्हि केवलं श्रम एव पितृलोकादेर्नश्वरत्वात् तस्मात् खधर्मे त्यक्त्वा श्रवगाकी-र्त्तनादिलक्ष्याः पूर्वोक्तः परो धर्म एवानुष्टेय इति भावः । यद्वा ननु च "अस्मिन् लोके वर्त्तमानः खधर्मस्थोऽनघः शुचिः । ज्ञानं विशु-द्धमाप्नोति मद्भक्तिश्च यदच्छयेति श्रीभगवदुक्तेनिष्कामकर्म्मयोग एव मक्तेहेंतुरस्ति तत् कथं भक्तिरहेतुकीत्युच्यते। सत्यम्। तत्र कर्म्म-थोगस्य ज्ञानजनकत्वमिव न साक्षात् भक्तिजनकत्वं व्याख्यातुं शक्यं मध्ये यदच्छयेति पदोपादानात् । तत्रश्च तत्र पुंसि भक्तेर्यदच्छा स्वैरिता यदि स्याद्दैवादन्यनिरपेक्षण्व शुद्धभक्तेः प्रवेशः स्यात् तदा तामपि स प्राप्नोतीति तत्रार्थः। "यदच्छास्वैरितेत्यभिधानात्। कष्ट-करुपनया व्याख्यानान्तरे भक्तेः खप्रकाशत्वं न सिद्धोदिति तदनादृतमित्यतो निष्कामोऽपि कर्मयोगो न भक्तेहेतुरित्याह धर्म्भइति । य इति । स वै पुंसां परो धर्म्म इति पद्योक्तात् परमधर्म्भादन्यो यो वर्गाश्रमाचारलक्ष्मणः खनुष्ठितो निष्कामोऽपि धर्म्मो विष्वक्सेनकथा-सर्ति प्रीति नोत्पादयेत् स केवलं श्रम एव । यदीति गहायां श्रमजनकत्वाद्गहितइत्यर्थः। "यदि गही विकल्पयोरिति मेदिनी। यद्वा असन्देहेऽपि सन्देहवचनं यदि वेदाः प्रमाशामितिवत् । "घत्ते पदं त्वमविता यदि विद्यमुद्र्नीत्यत्र यदीति शब्दो निश्चय इति श्रीस्वामि-चरणानां व्याख्यानाच । यहा नतु प्रसिद्धधम्प्रोद्धि कचित् हरिकथासुप्रीतिरुत्पद्यते इति श्रूयते । सत्यम्।तया विनाधम्मे फलाप्राप्तेः सा खल्वीपाधिक्येव न तात्विकीत्याह धर्म्म इति । य इति । स प्रसिद्धी धर्मः काम्यो नित्यो वा विष्वक्सेनकथासु रितं प्रीति यदि नोत्-पाद्येत तदा श्रम एव । अयमर्थः । यथा कर्षकार्णां नृपे प्रीतिं कृषिरेवोत्पाद्यत्यन्यथा तस्याः फलाप्राप्तरेवमेव धम्मीं प्रि विष्वक्सेनक-थासु प्रीति विना खस्य वैफल्यदर्शनायैव तत्र विवेकिनां प्रीतिमुत्पादयेदेव स यद्यविवेकिनां नोत्पादयेत् तदा केवलं अम एव । यथा नृपं प्रीति विना कृषिफलस्यालाभात् अमण्य तथैव हरौ भिक्त विना प्रवृत्तनिवृत्त्रधर्मफलयोः खर्गादिशानयोरलाभात् अमः। यदक्तमः "कुतः पुनः राश्वद्भद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म्म यद्प्यकारणामिति । यथा च कृषौ प्रीत्यनुरोधादेव नृपे प्रीतिः न तु वस्तृतस्तथैव धर्मे प्रीत्यतुरोधादेव तत्कथासु प्रीतिर्न तु तत्र वस्तुत इति विवेचनीयम्। अतएव प्रह्लादेनोक्तम्। "नान्यथेहावयोरथीं राजसेवकयोरिवेति॥८॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

त्यागण्विहसर्वेषांमोक्षसाधनमुत्तमम् । त्यजतेविहतज्क्षेयंत्त्यक्तुः प्रत्यक्परंपदमिति भालिविश्रुतिप्रोक्तंसंसाराद्वैराग्यंजनयित यद्हेतुकं भक्तीतरोत्पादकशून्यम् ऋतेज्ञानात्रमुक्तिः ब्रह्मविदाप्तोतिपरिमत्यादि श्रुतिप्रोक्तंज्ञानंतच्च जनयित प्रथमउपायोधर्मस्ततोहरिकथाश्रवणा भक्तीतरोत्पादकशून्यम् ऋतेज्ञानात्रमुक्तिः ब्रह्मविदाप्रोत्तिपरिमत्याज्ञायतद्दतिफलितोऽर्थः॥ ७॥ विष्वक्सेनकथासु उक्तलक्षणाहरिभक्तिसाधनकृषेषुहारिकथाश्रवणादिषुभक्तिभेदेष्वित्यर्थः॥ ८॥

#### भाषा टीका।

वासुदेव भगवान मैं प्रयोजित भक्तियोग, शीघृही वैराग्य को उत्पन्न करता है और शुष्क तर्कादि शुन्य शुद्ध ज्ञान को भी उत्पन्न करताहै ॥ ७ ॥ मनुष्यों का भिलमात अनुष्ठित भी धर्म यदि विष्वक्सेन भगवान की कथा मैं रित न जन्मावे तो वह निश्चय केवल श्रमही है। ८।

### श्रीधरस्वामी।

तदेवं हरिमिक्तिद्वारा तिवतरवैराग्यात्मक्षानपर्यन्तः परो धर्ममे इत्युक्तम् । अन्ये तु मन्यन्ते धर्म्मस्यार्थः फलं तस्य च कामः फलं तस्य चिन्द्रयप्रीतिः तत्प्रीतेश्च पुनरपि धर्मार्थादिपरम्परेति । यथाद्वः "धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थ न सेव्यते" इत्यादि तिवराकरोति धर्मस्योति द्वाभ्याम् । आपवर्ग्यस्य उक्तन्यायेनापवर्गपर्यन्तस्य अर्थाय फलत्वाय अर्थो नोपकल्पते योग्यो न भवति । तथा अर्थस्याप्यवन् धर्मस्योति द्वाभ्याम् । कामो लाभाय फलत्वाय न द्वि स्मृतो मुनिभिः ॥ ९ ॥

<sup>(</sup>१) जीवस्यातत्त्वजिज्ञासोरितिविजयध्वजपाठः

4,

### 

कामस्य विषयभोगस्य इन्द्रियप्रीतिलोभः फलं न भवति किन्तु यावता जीवेततावानेव कामस्य लाभः जीवनपर्याप्त एव कामः . सेव्य इत्यर्थः । जीवस्य जीवनस्य च पुनः कर्माभिर्धर्मानुष्ठानद्वारा य इह प्रसिद्धः स्वर्गादिः सोऽर्थो न भवति किन्तु तत्त्वजि-ज्ञासेव॥ १०॥

#### दीपनी ।

आपवर्ग्यस्येति । निवृत्तिलक्षणो धर्म्म एव सेव्यः न तस्य फलमर्थ इति भावः ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

#### श्रीवीरराघवः

तदेवमनभिसंहितफलोभगवद्गुणश्रवणादिरुचिजननद्वाराभाक्तियोगानुत्राहकएवधर्मः परोऽन्यस्तुश्रमफलकइत्युक्तम्। अथोक्तविधध र्मानुद्रात्यभगवद्भक्तियोगसाध्यमोक्षस्यैवनिरातिश्यपुरुषार्थत्वमितिदर्शयितुंधर्मार्थकामानांस्वतः पुरुषार्थत्वंधर्मस्यार्थार्थत्वमर्थस्यकामा भ्रत्वंकामस्येद्रियतृप्त्यर्थत्वभिद्रियतृप्तेर्जीवनस्यपुनर्थर्मार्थत्वमित्यादिरूपांचकवत्परिवृत्तिलौकिकाभिमतांचनिरस्य धर्मादीनामपिपरंपरया-निरतिशयपुरुवार्थरूपमोक्षसाधनमिक्तयोगानुत्राहकत्वमाह । धर्मस्येतित्रिभिः । तत्रधर्मस्यफलमर्थः अर्थफलंकामः कामफलमिद्रियतृप्तिरि तिलीकिकानांमतम् तत्रधर्मफलत्वमर्थस्यनिरस्यतिधर्मस्यत्यर्धेन। आपवर्ग्यस्यापवर्गसाधनस्यअनाभसंहितफलत्वेसतिपरंपरयानिरातिशय पुरुषार्थरूपमोक्षसाधनीभविष्यतोधर्मस्यार्थायप्रयोजनायार्थः धनंनप्रकल्पतेधनंधर्मस्यफलंनभवतीत्यर्थः धर्मस्यार्थफलकत्वरूपलोक्तिकम तानुवादेनैवस्वतः पुरुषार्थत्वमिपानिरस्तंवेदितव्यम् । एवमुत्तरत्रापिद्रष्टव्यम् एकस्यैवदान्यागादिरूपस्यधर्मस्यफलाभिसंध्यनभिसंधिरू पाकारभेदेनोत्कृष्टापकृष्टफलसाधनत्वे ऽवगतेस्रतितत्रानभिसंहितफलत्वरूपाकारानाद्रेगासहेतरपुरुषार्थाक्षपार्थार्थत्ववादरूपंलोकिकानांमत मतीवानादरणीयमितिभावः अर्थकामस्यार्थफलत्वंनिरस्यति । नार्थस्येति । धर्मैकांतस्यधर्मैकप्रयोजनस्यार्थस्यवित्तस्यलाभायप्रयोजनाय कामोनस्मृतः । अर्थस्यप्रयोजनंनकामोभवतीत्यर्थः अत्रकामशब्देनकाम्यतेइतिकामइतिब्युत्पत्त्यान्नपानादिरुच्यते ॥ ९ ॥

.... अथकामस्येद्रियतृप्तिफलकर्त्वानिरस्यातिकामस्योतियावतान्नपानादिनाकामेनकाम्यमानेन वस्तुनाजीवतितावतोन्नादेर्भोग्यवस्तुनः लाभः फलंनेंद्रियतृप्तिः किन्तु देहधारगामेवाजपानादिकामफलमित्यर्थः अथजीवनस्यपुनर्धर्मार्थत्वं निरस्यति । जीवस्यजीवनस्यप्रयोजन तस्वजिज्ञासेवनतुइह लोके यः कर्मभिः खाध्योधर्मः सोर्थः प्रयोजनम् । अत्र धर्मार्थकामजीवनानां क्रमेगार्थकामेद्रियतृप्तिधर्मार्थत्वं निरस्य तेषां क्रमेगापवर्गधर्मदेहधारग्रमात्रतत्त्वजिज्ञासार्थत्वोक्तेरयंभावः । सतिवित्तेतेनानभिसंहितफलं धर्म संपाद्य तेन धर्मेग्रापवर्गसाधनभूतं

भक्तियोगमुपकुर्यात् । सतितुकामेतेनदेदधारगामात्रोपयुक्तेन देदधृत्वातेन देहेनभजनीयतत्त्वजिज्ञासाकार्येति ॥ १०॥

#### श्रीविजयध्वजः।

ननुधर्मस्यभगवत्कथारत्यजनकत्वेकथंश्रमैकफलत्वंधर्मादथींऽर्थात्कामःकामात्सुखीमत्यर्थशास्त्रादीप्रसिद्धरितितत्राह धर्मस्येति अप वर्गीमोक्षःतत्साधनमापवर्ग्य तस्यधर्मस्यइहार्थःकांचनादिद्रव्यमर्थायफलायनकल्पते हियस्मात्तरमाद्वरिक्थारितजनकत्वमेवफलमित्य शब्दोहेती ॥ ९ ॥

कामस्येद्रियप्रीतिर्लाभोनभवति तर्त्वशनाच्छादनाद्यभावेश्चधादिनामरगामेवस्यात्तत्राह जीवेतेति यावतार्थादिनाजीवतिशरीरयात्रा निर्वाहकोभवति तस्माद्रथेशास्त्रादौप्रतिपादितक्रमोबिहर्मुखानामितिभावः ब्रह्मार्पगाबुद्धाअस्तरस्यकर्मग्रोभगवत्कथारितसाधनत्वमित्या तिवाहकारान्यः । विकास स्वादिक्षा । तिवाहकारा विकास निवास । विकास निवास । विकास विकास । विकास विकास विकास । विकास विकास

कर्मभिःफलमेहिकामुष्मिकंनस्यादितिभावः ॥ १० ॥

### क्रमसंदर्भः।

तल यदन्ये मन्यन्ते धर्मार ार्थः फर्ल तस्य कामः तस्य चेन्द्रियप्रीतिः तत्प्रीतेश्च पुनर्पि धर्मादिपरम्परेति तश्चान्यथैवेत्याह द्वाप्रयाम् । वर्षाः प्रशासिक्योगलक्ष्मणो नानागतिनिमित्ताविद्यात्रान्थवन्यनद्वारेण यदा हि महापुरुषपुरुषपुरुषपुरुषप्रसङ्ग इति पश्चमस्कन्धगद्यानुन् वासुदेवेऽतन्यनिमित्ताक्षः । तथाच स्कान्दे रेवाखण्डे ।"निश्चला त्वारा भिक्तान्वेव माकिर्जन्येन । वासुद्वऽतन्याणाः । तथाच स्कान्दे रेवाखण्डे ।"निश्चला त्विय मिक्तर्यासीव मुक्तिर्जनाईन । मुक्ता एव हि मकास्ते तव विष्णो सारेण अपवर्गी भिक्तः । तथाच स्कान्दे रेवाखण्डे ।"निश्चला त्विय मिक्तर्यासीव मुक्तिर्जनाईन । मुक्ता एव हि मकास्ते तव विष्णो

#### क्रमसंदर्भः।

यतो हरे"इति । तत उक्तरीत्या भक्तिसम्पादकस्थेत्यर्थः ॥ ९ ॥ तदेवं तच ज्ञानं यस्या मक्तेरवान्तरफलमुक्तं सैव परमं फलमिति भाषः ॥ १० ॥

#### सुबोधिनी।

किंच तुष्यतुर्वुजनइतिन्यायेनअर्थेनकामः साध्यतांसिकयान्कामः कीदशश्चजीवनमात्रपर्यवसितश्चेत्सचथाबद्धातृग्रास्तंवपर्यतंस्वतः सिद्धानार्थसाध्यः अर्थेद्वियप्रीतिरूपः अनलत्वात्तस्यनपूर्त्तरस्ति "नजातुकामः कामानामितिवचनात् अनुभवाश्चप्रवृत्तिस्तुभूंत्यातथाचका मोविषयमोगः इदियप्रीतिहेतुन्भवति लाभपदंदेहलीप्रदीपन्यायेनोभयत्रसंबध्यते तस्मात्क्रमः साधनपरंपरारूपः कामे नजीवनमर्थरूपंजी वनेध्रमः शानंचतेनचमोक्षइत्यभिप्रायेगाह जीवस्यतत्त्वजिश्चासेतिजीवस्यजीवनस्यतत्त्वजिश्चासातत्त्वविचारः इच्छापूरकशानसाधकः जीवस्यतत्त्वजिश्चासालाभइतिपूर्वेग्यसंवधः कर्मभिः साध्यः यः कामोवाअर्थीवाधमस्तुनकेवलंकमसाध्यः किंतु श्रुतिबोधितकर्मसाध्यः तत्रापिइहक्मिभिःसाध्योनपुरुषार्थः संसारविषयकः योवादैवगत्याप्राप्तः सोपिनभवतीतिचकारार्थः॥ १०॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

किश्चात्र लोके चतुर्विधा जनाः कर्मिमगो ज्ञानिनो योगिनो भक्ताश्च । तत्र "धम्माद्र्यश्च कामश्च स किमर्थ न सेव्यते" इति दृष्ट्या धर्मस्य अर्थः फलं अर्थस्य कामः कामस्य इन्द्रियप्रीतिः इन्द्रियप्रीतौ च सत्यां तद्र्यं पुनरिप धर्मादिपरम्परा यथा कर्मिमगां न तथा उत्तरेषां लयाग्ञामित्याह धर्मस्य रामद्माद्र्यमनियमादेः श्रवगाक्षीत्तादेश्च अर्थः सर्व्वथा भवक्षि अर्थाय फलत्वाय न कल्पते तमनुस्यायतत्त्वप्रवृत्तेः । यतः आपवर्गस्य अपवर्गप्रयोजनकस्य । तद्रस्य प्रयोजनिमत्यथें स्वर्गोदिश्यो य इति स्वार्थिकाग्रान्तात् यप्रत्ययः । तन अपवर्ग एव अनुसंहितं फलमिति मावः । ज्ञानियोगिनोर्मते अपवर्गो मोक्षः । मक्तमते प्रेमभक्तिः । यथावर्गाविधानमपवर्गश्च भवित्योऽसौ भगवित वासुदेवे अनन्यनिमित्तभिक्तयोगलक्ष्मगो नानागितिनिमत्ताविद्याप्रन्थिवन्धनद्वारेग्य यदा हि महापुरुष पुरुषप्रसङ्घ इति पश्चमस्कन्धात् येनापवर्गास्थमदभुद्विदित्यादौ कोन्द्रध्वजपादम्लमिति प्रथमस्कन्धाच । निश्चला त्विय भक्तियो सेव मुक्तिनेवाहेग मुक्ता एव हि भक्तास्ते तव विष्णो यतो हरे इति स्कान्दरेवाखगुद्धाच । तथा अर्थस्य कामो लाभाय फलत्वाय न यतो धर्मीकान्तस्य धर्मा एव अनुसंहितं फलमितिभावः । तथा ज्ञानियोगिनोः शमदमादियमिनयमाद्यनुक्ले करिमञ्चन धर्मविद्रोषे अर्थस्य विनियोगः । भक्तस्य तु भगवतो भगवतानां वा सेवायां स स्पष्ट एव ॥ ९॥

कामस्य विषयभोगस्य इन्द्रियप्रीतिलीभः फलं न भवित किन्तु यावता जीवेत तावानेव जीवनपर्याप्तः कामः सन्यत इत्यर्थः। अत्र कामस्य विषयभोगस्य इन्द्रियप्रीतयो ज्ञानयोगयोरानुषङ्गिकंफलानि कर्मफललवेनेव व्यपदिइयन्ते । ज्ञानयोगयोस्तयोनिष्कामकर्मपरि- ज्ञानिनां योगिनाञ्च दृष्टे सुखदुः के कर्मफले एवाच्यते । भक्तानां स्वर्थकामेन्द्रियप्रीतयो भक्तरेवानुषङ्गिकफलानि। भक्ती ग्रामत्वादतो ज्ञानिनां योगिनाञ्च दृष्टे सुखदुः के कर्मफललवव्यपदेशः। अतो भक्तानां दृष्टं सुखं भक्तिफलमेव। दुःखन्तु "यस्याहमनुयह्णामि हिष्यत्व कर्मपरिणामत्वाभावात् न तेषां कर्मफललवव्यपदेशः। अतो भक्तानां दृष्टं सुखं भक्तिफलमेव। दुःखन्तु "यस्याहमनुयह्णामि हिष्यत्व कर्मपरिणामत्वाभावात् न तेषां कर्मफललवव्यपदेशः। अतो भक्तानां दृश्चदुः खितिमत्यादिभगवद्यचनात् भगवदुत्यं भक्तपराधफलञ्जेति यथायोग्यं विवेद्यनिष्य । द्वतं शनेः । ततोऽभनं त्यजनत्यस्य स्वजना दुःखदुः खितिमत्यादिभगवद्यचनात् भगवदुत्यं भक्तपराधफलञ्जेति यथायोग्यं विवेद्यनिष्य । द्वतं शनेः स्वर्गदिः स नैव ॥ १०॥

### वदंतितत्तत्त्वविदस्तत्त्वंयज्ज्ञानम्बद्धयम्।

प्यंधियवासक्वापम्याते ॥ कानवाण्यं पत्रवास्यात्मात्व्यानामां प्राप्त हैं जिल्ला हैं जिल्ला हैं जिल्ला हैं के स्व कार्यात्रका वासनीनी यांचित्रका ने पत्रका हैं के स्वाकृति हैं जिल्ला हैं के स्वति के स 

#### सिद्धांतप्रदीपः।

तदेवकर्मश्चानवैराग्यमक्तिभेदाद्वद्वुविधउपायइत्युक्तम् इदानींतुजीवनफलं धर्मस्तत्फलमर्थस्तत्फलंकामस्तत्फलमिद्रियपीतिः पुन र्जीवनंपुनस्तत्फलंधर्मद्दयेवंचक्रवत्पौनःपुन्यंकेचिन्मन्यंते तिक्षराकरीति धर्मस्येतिद्वाभ्याम् आपवर्ग्यस्योक्तरीत्यापवर्गसाधनस्यधर्म स्य अर्थः भोग्यपुदार्थः खर्यादिः अर्थायफल्त्वायुनकल्पतेयोग्योनभवति धर्मेकांतस्यनियमेन्धमसाधनस्य अर्थस्यकामः भोगःलाभायफल त्वायनहिस्मृतः॥ ९ ॥

यनिहस्तृतः॥ ९॥ कामस्येद्रियप्रीतिः लुमःफलंनुकित्यावृताकामेनंजीवृततावृतः कामस्यलासः जीवनंफल्लामित्यथः जीवस्यजीवनस्ययः कमेभिः साध्यः सनार्थः फुछनुमुवृति जीवनस्यथमेद्वाराखगीविः फुछनुभवतीतियावृत् कितुत्त्वजिक्षासाफ्छभवति तत्त्वजिक्षासाधाव्यस्यलक्षण्या तत्त्व कृति एक का वार निक्रियन के इस कर्ने वर्डनावन विकास कार्य के लिए का स्वास करें के स्वास करें है। अपने कार्य कर

# क नर्यसार पूर्व के तीर है जो के असे का सम्बद्धाना कार कार्य का किस्तान के तीर के किस के किस कार्य कार्य कार्य क

कु है के भोड़ा सम्बद्ध के <del>प्रदेश कर है। है कि कि के के के के के कि के कि के के कि के कि के कि के के के के के के</del>

as as an entre de la completa de la La completa de la completa del completa de la completa de la completa del completa de la completa del la completa del la completa de la completa del la completa अपवर्ग ( मुक्ति ) साधक धर्म का अर्थ (-धन ) मात्र फूल नहीं है । और न धर्मार्थ अन् का काम ओग मात्र फुल है काम ओग का फल इन्द्रिय सात्र नहीं है किन्तु जीवन धारण है। और जीवन का फल तत्त्व बात प्राप्त करना है। जीवन का फल कर्म करना में हैं। में इंकर हैं की अधावान प्रतिकारी प्रक और उस का फल भोगना मात्र नहीं है ॥ ९ ॥ १० ॥

### श्रीधरखामी।

मनु तत्त्वजिश्वासा नाम धर्मजिश्वासैवधर्म एव हि तत्त्वमिति केचित् । तत्राह घदन्तीति । तत्त्वविदस्तु तदेष तत्त्वं घदन्ति किं तत्त् वत् श्रानिनाम । अद्वयमिति श्राणिकविशानपक्षं व्यावतीयति। नतु तत्त्वविदोऽपि विगीतवचना एव । सैवम् । तस्यैव तत्त्वस्य नामान्तरैरामिधाना-दित्याह औपनिषद्वैश्रहोति हैरगयगर्भैः परमात्मेति सात्त्वतैभगवानिति शब्दाते अभिधीयते ॥ ११ ॥

तम्ब तत्त्वं संपरिकर्या अत्त्वा एव प्राप्यते इत्याह तम्बेत्यन्वयः। ज्ञानवैराग्ययुक्तयेत्यत्र ज्ञानं परोक्षं तम्ब तत्त्वम् आत्मानि क्षेत्रज्ञे पर्याते कि तत भारमानम् परमात्मानम् । श्रुतेन वेदान्तश्रवगोन गृहीतया प्राप्तया इति भक्तेदीव्यमुक्तम् ॥ १२ ॥

तिति। तिदित्यस्य एतत्पधीयपरपादोक्तं चकारेगा अन्वय इत्यर्थः । (एवमत्र श्रद्धधाना इत्यनेन श्रद्धोक्ता सा तु वेदान्तवाक्येषु विश्वासः। द्वानं नित्यानित्यवस्तुविवेकः वैदाग्यमिहामुत्रफलभोगविरागः एतद्युक्तया परमश्वरातुरागलक्षणया भक्त्या जीवब्रह्मैक्यरूपं सस्यं साक्षाद्विन्दन्तीत्यर्थः)॥ १२—२२ ्रेड क्षेत्र क्षेत्री सुरावस्थितः अस्तर्भः । १९८५ । १९६५ । १९६५ मा स्थिति

# ्रियात्रक्ष वे त्याप्त्रमाञ्चलेल केल्याच्या क्षेत्रका । विश्वास्त्र केल्या केल्या केल्या केल्या केल्या केल्या क कार्याक्षणेत्र केल्याका क्षेत्रका के**ल्याच्या अविद्याचनः ।** स्थानका स्वयं केल्या केल्या केल्या केल्या केल्या केल्या

क्षीयस्यप्रयोजनंतत्त्वाजिशासिवत्युक्तमः। कित्तत्वयिजिशासितव्यमित्यत्याह। वदंतीति। यज्ञानेश्चानस्वरूपेश्चानगुणकंच अद्वयस्थितुर्वयोज्य धिकवस्त्वंतररहितमवयवभेदरहितंवाजात्यादिभेदरहितंवाब्रह्मपरमात्मभगवच्छव्दाभिहितंतदेवतत्त्वमितित्त्वविदोवदंति । ब्रह्मपरमात्म भगवच्छब्दाः सामान्यविद्योषद्याब्दाः प्रयुक्ताः प्वंप्रयुंजानस्यसदाकाद्यादिशब्दाअपिकारणवाक्यगताभगवत्पराइत्यभिप्रायः ॥ ११ मध्य प्रविष्यमीदिवगस्यापिपरंपरया उपवर्गसायनत्वप्रसंगादभजनीयबस्कस्वरूपंचीकम् । अथयद्विवक्षितमोक्षपवनिरतिशयश्चर्यस्तत्सा-श्वनंतुर्मित्रे वतित्रस्पत्तिश्चवर्णाश्चमधर्मित्रानयोगसमाधिमिरितितवुपपादयितितिद्वयोदिमिः सार्वेदशिमः । तत्तस्माद्मकियौगार्द्वभाद 

क्षेत्राच्या सुरवास्त्राच्या अर्थिकार अञ्चलका स्थापनी स्थापनी स्थापनी संस्थित है।

ું 🕶 મેં

#### वर्षे तामस्यानिद्दार्षं उर्गानिद्दार्थं भारति

देश्रुतत्वाचेनगृहीतयाऽनुगृहीतयाशानवैराग्याभ्या युक्तयाभक्ताश्रीतम्भितिहात्पुर्वास्यत्रेष्ट्रीत्वास्यत्रेष्ट्री प्वंविधयाम त्त्रापदंयति ॥ भ्रानशब्देनप्रत्यगात्मयाथात्म्यभानुगोहोष्टित्रश्चित्राक्षित्रश्चीत्राक्ष्यक्षेत्रके कृतयामक्त्याभात्मनिस्थितंपरमात्मानं पश्यंति साक्षात्कुर्वेतिहत्यनेनमक्रेरेव परमात्मवर्शनसम्बत्तरमाविमेक्सिसाधनत्वमुक्तम्।कर्मयोगक्षान-योगयोः शमादीनांच मिकयोगांनुप्राहकत्वे च मिधते हृदयम्यारिति श्रुत्यातद्यानुचादिनावस्यमार्यारेलोकेन च मोक्षस्यदर्शनानंतरमा-वित्वमवगतम् एवंचभक्तापद्यंति इत्यस्यद्दीनरूपापन्नायामक्तेरव्यवधानेन मोक्षसाधनत्वमित्यभिप्रायः ॥ १२ ॥

व्यक्तां का

द्वानीता क्षेत्रकार वर्षेत्रकार स्थानीता स्थानी तवेबाजवैजानवैजानवैजायम्बिने महाह्युविषडणायाह्युनास यांत्रवेतिबारनाम आराम रेहरोस रीजार मोलाधानहराहा है द्वीयनंगुन्तरनाकेथकैप्रयेवचणायस्योवःषुर्धकेष्टिर्द्धान्तरे

लादिषुरृंहितत्वात्सर्वातर्यामित्वादेश्वर्यादिगुगावत्वात्वह्योतिपरमात्मेतिभगवानितिश्रान्यते ॥ ११ ॥

र्वातर्यामित्वादेश्वयादगुणवत्त्वात्मक्षातपरमात्मातमगवाानातराःचत् ॥ १६ ॥ संस्तामात्रतुर्यत्वित्त्वत्त्वदस्त्रिचाविरोषणाम् । उमाप्रयमिष्यितस्तिक्षाद्वर्गवनिकेवलःसमृतः ॥ १२ ॥ जिल्हाः स्व

यश्चसत्तामार्जकवर्णनेददेहमतएवयात्किचिछोकविरुक्षणतत्तत्त्तत्त्ववदतीतित्रिकारुप्यनन्यथामूतमेकविधेबुवते नेवृह्यणोश्चानस्वरुप्तवेयु क्तिमल्लोकेश्वानस्यविषयांपक्षयोत्पत्तिविनाश्वधर्मद्शेनादस्यापितथात्वेनानित्यत्वप्रसंगादितितत्राहे सद्सदिति सत्कार्यमसत्कार्यांच अवि द्रावगुंनस्वनियत्विदेशवापाद्कंयस्येतिदेशेषःविषयापेक्षयाअनुत्पाद्यमितिउभाभ्यांसद्सद्भ्यांभाष्यते मृत्स्रष्ट्रघटस्रष्ट्रमुज्ज्ञातृघटज्ञात्रित्याद्या-मंतकार्यकारणविशिष्टतयाब्यवहिते अतोभगवान्साक्षात्केवलःप्रकृतिसंवंधविधुरःस्मृतः ॥यद्विषयक्षानंभक्तियोगंजनयेत्तत्वह्याकिप्रमाण् गोचरःउतागोचरः गोचरश्चेद्धटादिवदब्रहात्वमगोचरश्चेन्नास्त्येवत्यारांक्योभयदोषपरिहारायाह वदंतीति नवयंप्रमागौरनुमिमीमहेनचैवता-वतानास्तिकिताई यत्क्षानमद्वयं क्षातृक्षेयलक्ष्यारहितंतत्त्विवदस्तत्तत्वंजगदाकारेणविवर्ततइतिवदंतितदेववेदांतिभिर्वद्वोतिपरमात्मोतिभग-वानितिराज्यतेत्र्रायविभागः वृहर्वात् बृह्यतिवेदातिनः परकेवलमादानादिककृत्वादात्मितियागिन विद्यार्युकत्वाद्भगवानिकिपोरितियोकाः त त्रापिकितत्सत्यीमितितंत्रहि सन्तेति तस्मादत्रसगुर्गापमागावेद्यनिर्गुग्मितिरास्त्रिमिथतार्थः।तिकिचिद्वज्ञाचेक्षेतेतिवस्तिरम् अजैवपूर्वीपरवि जीर राष्ट्रीका फुट कीरवार राज नहीं है। १९॥ इन ॥ क्यार्थपर्यालोचनयास्वविगोधात् ॥ १२ ॥

### ं केमसन्दर्भेः।

वदन्तात तुन्या निर्मा कि तत्त्वमित्यपेक्षायामाह वदन्तीत । ज्ञान चिदकरूपम । अद्ययत्व चास्यस्वयसिद्धतादशातादशत्वान्तरा-यम्म पन छ प्राप्त । त्रिक्त परमाश्रयं तं विना तासीमसिद्धत्वांच । तस्वामति परमपुरुषार्थताचीतनया परमसुखरूपत्व तस्य ज्ञानस्य भावात खुरास्त्रोकसहायत्वात परमाश्रयं तं विना तासीमसिद्धत्वांच । तस्वामति परमपुरुषार्थताचीतनया परमसुखरूपत्व तस्य ज्ञानस्य भावात खरण्या । अतंपव तस्य नित्यत्वश्च द्वितम् । अद्वयमिति तस्याखग्रङ्खं निद्धियोन्यस्य तदनन्यत्वविवस्या तच्छिक्तित्वमवाङ्गीकरोति । वाच्यत । अत्यन प्रति कि कि कि कि कि विद्नयत्रापि तर्देक तत्त्व त्रिधा शब्दचते । कि विद्वे कि कि वित् परमात्मित कि विद्भेगवानित च किन्त्वत्र श्रीब्याससमाधिलब्धाद्वेदात् जीव इति च शब्धते इति नोक्तिमिति क्षेयम् । तत्र ब्रह्मभगवतोर्ब्यालयोः परमातमा स्वयमेष च किन्त्वत्र क्राप्ता वर्णना वर्णना स्वयम्य क्रियाख्यातो भवतीति प्रथमतस्तावेव प्रस्तुयेते । मूलानुक्रमाहैशिष्ट्यद्योतनाय तथा विन्यासः । अयमर्थः । तदेकमेवाखगडानन्दस्वरूपं तस्वं शुत्कतपारमेष्ठचादिकानन्द्समुदायानां परमहंसानां सार्धमेवर्शात् तत्तादात्म्यमापन्ने सत्यपि तदीयस्वरूपशक्तिवैचित्र्यांशप्रहणा-तस्य अर्थः स्वास्त्रम् व्या मामान्यतो लक्षितं तथैव स्फुरद्विविकशक्तिशक्तिमत्त्वभेदत्याप्रतिपाद्यमानं बह्मेति शब्दाते । अथ तदेव तत्त्वं स्वरू-प्रमुख्येव शक्त्या क्रमपि विशेष धर्त परासामपि शक्तीना मुलाश्रयरूपे तदनुभवनिन्दसन्दोहान्त्रभावितताहराबद्धानन्दाना भागवतपरस-भूत्रभाव तथानुभविकसाथकतमतद्यिखरूपानन्दशक्तिविशेषात्मकभक्तिभावितष्वन्तविहरपीन्द्रियेषु परिस्फरद्विविक्ततादशशक्ति-हसाम प्राप्त । तत्र शक्तिवर्गलक्षात्र भगवानिति शब्धते इति । परमात्मा सुतरां व्याख्यातः । तत्र शक्तिवर्गलक्षगति समातिरिक्तं केवलं क्षानं ब्रह्मात राज्यता । अस्ति । अस्ति विशुद्धं परमात्ममेकमनन्तरं त्वविधिक्षा सत्यम् । प्रत्यक् प्रशान्तं भगवच्छन्दसंश्चं यद्वासुदेवं कवयो वदन्तीति । श्रीजड़ भरतन । कार्या परमात्मन क्षां परमात्मन इत्यत्र वहगाकृतस्तुती टीकी च पिरमात्मने सर्विजीवनियन्त्रे इत्येषा । ध्रुवं प्रति श्रीमनुना च । "तस्मै नमी भगवते वहां परमात्मन इत्यत्र वहगाकृतस्तुती टीकी च पिरमात्मने सर्विजीवनियन्त्रे इत्येषा । ध्रुवं प्रति श्रीमनुना च । "तस्म नमा माजा मावत्वत्वतः अतिन्द्रमात्र उपपन्नसमस्त्राकाविति । अत्रानन्द्रमात्रं विशेष्यं समस्ताः शक्तयो विशेषणाित विशि-"इवं प्रत्यात्मिति तदा भगवत्वत्वते आनन्द्रमात्र उपपन्नसमस्त्राकाविति । अत्रानन्द्रमात्रं विशेष्यं समस्ताः शक्तयो विशेषणाित विशि-इते प्रत्यात्मित्यायातम् । भगवञ्चन्तर्थश्च श्रीविष्णुपुराणे शक्तः । "ज्ञानशक्तिवरुश्वर्यवीयतेजांस्यशेषतः । भगवञ्चन्द्रवाञ्यानि विना

हा मगवाना । १९ विकास के प्रति तत् पूर्वाण क्या स्वारमजाभ्यां ताभ्यां स्वितया । अत्यव ते पृथक च विशिष्टं च स्वच्छ्या पश्यन्तित्यायाति ॥ १२॥

## अतः पुंभिद्देन अष्ठावर्मा अ**यन्धित्या**द्याः ।

भित्र भारतारका त्यानिवसम्बद्धाः वा विषयान्याति <del>वारामाद्याद्या । वर्</del>ष्णाः

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

तत्त्वमेव किं तत्राह वदन्तीति । यदद्वयं द्वानं तत् तत्त्वम् । ज्ञानमेव किं तत्राह ब्ह्योति । शब्द्वयते ब्ह्योति पदेन यदुच्यते द्वानिभिस्तज्ञानम् । तन्मते द्वानं विद्यक्तारं द्वातृक्षेयादिविभागग्रत्यं चित्रद्वामान्यं चिद्विरोषाणां भगवद्धामादितां वृद्धन्यत्वमन्तात् । ज्ञावमाय्योस्त्रद्विद्धत्वेन तदेक्ष्यादिदङ्कारास्पदस्य कार्यस्य विश्वस्य कारणामात्रात्मकत्वादद्वेतम् तथा परमात्मेति योगिभिर्यदुच्यते तज्ञानम् ।
पत्नमते प्रमात्मन्त्रिवदेक्षद्वाव्याव्यानात्रत्वं द्वानमात्रत्वेऽपि साक्षित्वादेवानिकायस्याव्याप् । युम्पणिर्वापाद्यात्रात्वेष्णत्वाप् ।
पत्नमते प्रमात्मन्त्रविद्यावकारे प्रदेशमात्रं पुरुषं वसन्तमित्यादेः साकाद्व्यभ्रमायायाः शक्तिव्यानमादिकान्
नाश्च तद्वन्यत्वाज्ञीवस्य तद्विभिन्नांशत्वात् ततो द्वितीयत्वाभावादद्वयत्वम् । तथाभगवानिति भक्तेयंदुच्यते वृज्ञानम् । पत्नमते प्रवृत्वजन्
वानमात्रत्वेऽपि भगशब्द्वाच्यपदेश्वयेस्यापि । अप्राकृतत्वेन चिन्मात्रत्वात् तद्वपत्वम् यदुक्तं विष्णुपुराणे । "पेश्वयस्य समप्रस्य वीर्यस्य
यशसः श्रियः । ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षग्णां भग इतीङ्गना ॥ ज्ञानशक्तिवहेश्वयेवीर्यतेजांस्यशेषतः भगवच्छव्यवाच्यानि विना हेयेर्गुणा-

दिभिरिति। तथैव द्विभुजत्वचतुर्भुजत्वादिविविधचिद्धनाकारैवेहिरन्तर्वात्तत्वेऽपि नच्यवन्ते च यद्भक्ता महत्यां प्रलयापदीति स्कान्दा-दिवाक्यैः सदैव सेव्यसेवकसेवादिविभागेऽपि अद्वयत्वं पूर्ववत्तं च्छक्तीनां चिदादीनां तद्विलासानां च वेकुण्ठादीनां तदिभन्नत्वमननात् ततो-भिन्नत्वभावनैवाद्वयपदेन व्यावृत्ता। एवञ्च भगवतः सामान्यस्कष्मात्रस्थापोदयत्वे भानिन्यधिकारिणि वस्त्रामित्वादिवित्रधम्भेन्यस्थिकारिणि परमात्मेति। अचिन्त्यानन्तचिदानन्दमयस्कष्णकप्रमुख्यलिलायनेक्षधम्मेवस्वस्य प्रहणायोग्यतायां भक्ते-ऽधिकारिणि भगवानिति स एवेको भाति। "किञ्च यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णे ब्रह्म सनातनमिति। कृष्णाय परमात्मेन इति। मदीयं महिन्मानेञ्च परमानन्दं पूर्णे ब्रह्म सनातनमिति। कृष्णाय परमात्मेन इति। मदीयं महिन्मानेञ्च परमानन्दं पूर्णे ब्रह्म सनातनमिति। कृष्णाय परमात्मेन इति। मदीयं महिन्मानेञ्च परमान्दे परमानन्दं पूर्णे ब्रह्म सनातनमिति। कृष्णाय परमात्मेन इति। मदीयं महिन्मानेञ्च परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव क्षित्रस्ति । ब्रह्माचीनिक्ष परमात्मेव परमात्मेव कृष्णा सक्तानं स्वावत्य परमात्मेव परमात्मेव कृष्णा सक्तानं स्वावत्य परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव कृष्णा कृष्णा परमात्मेव परमात्मेव परमात्मेव कृष्णा परमात्मेव कृष्णा परमात्मेव परमात्मेव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा परमात्मेव कृष्णा विक्राव कृष्णा कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा विक्राव कृष्णा क

तत्प्राप्तिसीयनमाह तिज्ञान त्रिक्ष मुनयो मननशीछो ज्ञाननी योगिनी मक्ताश्च भक्ता पश्चिन्त । तत्र ब्रह्मेति मते आत्मान ज्ञाननी त्रिक्ष व्यक्ति । तत्र ब्रह्मेति मते आत्मान ज्ञाननी विद्यारमान त्रिक्ष विद्यारमान त्रिक्ष पश्चिन्त चित्र प्राप्ति मते आत्मान त्रिक्ष पश्चिन्त चित्र प्राप्ति मते आत्मान पश्चिन पश्चिन चित्र विद्यान प्राप्ति मते आत्मान मनत्र पश्चिन चित्र विद्या प्राप्ति । भावानित मते आत्मान मनसि चकाराद्विष्ट्र स्प्रार्गित मते आत्मान स्वर्णाचनाश्चामेव तन्माधुर्यमास्त्रीत । भावानित मत्त्र प्राप्ति पश्चित प्राप्ति प्राप्ति पश्चिन चित्र । भावानित प्राप्ति प्राप्ति

## अतःपुंभिर्द्धिजश्रेष्ठावर्णाश्रमीवेभागदाः।

सन्धितस्यधरम्स्यसंसिद्धिर्हारितोषगाम् ॥ १३ ॥ तस्यानासस्य संस्थानासायाः । १३ ॥

तस्मदिकेनमन्त्राभगवान्ताव्यतांप्रतिकामन्त्रवर्णान्यवन्त्रामान्त्रवर्णाकाव्यतांप्रतिकामन्त्रवर्णाकाव्यत्यत्रवर्णाकाव्यत्रवर श्रीतव्यःकीतितव्यश्चध्येयःपूज्यश्चनित्यदा॥ १४॥ विकार विकार

. . क्षेत्रम १८५ मणण्डा वेक राजनेम्ह्युयमध्येत्यक**्षोत्रमण्डात्वेद्धाः** ८०० तम् युक्ते स्थापन पण्डा संस्कृतेस्वासम जीवनस्यफ्लंतत्त्वविचारएवेत्युक्तम् ॥ इदानींतत्त्वमपिचित्यते तत्रतायत्केचिदादुरात्माजढहति । अन्येत्वादुःक्षग्रिकः अपरेक्रमीग-मात्मानुमाद्यः केचिदाहुः परमात्मानास्तिनानात्मानः खतंत्राःसंतीति । केचिव्यक्तिविकतिभिन्नं पुर्करफलासवद् संगनिर्धमेकं पुरुषंवद्दि तेसर्वेवेदवाहाः । खकापोलकरिपतत्ववादिनः । श्रेयस्कामेर्गुमुश्चिमिर्दूरतोहेयाइत्याह वदंतीति । अत्रैकैकस्यविशेषग्रस्यपरपश्चिमिर्गुकृत् गात्वादितिशब्दावृत्तिः यत्रसनास्तितत्रापियोज्यः।तत्त्वविद्वस्तुयच्छव्यते शब्दैरनादिसिक्वैवेदैर्यद्भिधीयते तत्तत्त्वंवदंति। "सर्वेवदायसम् दमामनंतितंत्वीपनिषदं पुरुषं पुरुक्रामीति श्रतेः। विदेश्यसर्वे रहमेववेदारतिस्मृतेः शास्त्रयोनित्वातः ॥१।१।३॥ इति स्वास्। क्यं स्तंवकंति हानुस् शातृत्ववत्त्वेसितिशानस्वरूपमितिवदंतिनतुजडम् अद्यम् अग्रिकविशानप्रवाहविपरीतमेकमनादिसिद्धशानरूपमिति बृद्धेति वृहद्भरतुस्ते वदंति नतुजीवकर्तृककर्मीगम् । प्रमात्मेति सर्वेभ्योजीवेभ्योहि उत्कृष्टंवदंति । भगवानिति षाङ्गुगर्यासधुंवदंतिनपुनर्निधमकम् ॥ ११ ॥ तद्वेदेकसमधिगम्यंतत्त्वं हानवैराग्ययुक्तया भक्त्यैवसाक्षात्कियतइत्याह । तच्छ्दधानाइति ॥ १२ ॥

#### भाषा टीका। स्यानेय के न समास सम्बन्धीय । कार्या विश्व संस्था । सामके वा कृष्ण को को को को को विश्व के महिल्ल क

तत्त्ववेसाजन अद्धयक्षान हीको तत्त्व कहते हैं। धर्म कमीदिकों की नहीं। उस अद्धय क्षान तत्त्व के तीन नीम हैं बुद्ध परत्मा मन वान ॥ जोनिविशेष सत्ता मात्र स्फूर्ति होती है जैसी सूय की घूप उस की शान कोड में वृक्ष कहते हैं ॥ जो माया साक्षी संवीतयोगी रूपसे स्फूर्ति होती है उसको योग मार्गादिक में परमात्मा कहते हैं ॥ जो सर्व रसमय षडेश्वय संपन्न दिव्य मेंगल विश्वह रूप से स्फूर्ट ति होती है उसे मिक्क पथमें भगवान कहते हैं ॥ ११ ॥

श्रक्तावान् मुनिजन गुरु मुखसे शास्त्र अवरा कर प्राप्त ज्ञान वैराग्य युक्त भक्ति के द्वारा उसपर तस्य को अपने मे आप देखते हैं। स्वा 

entrantification of the control of t अवगाविगृहीतधर्मस्य फळं भक्तिः नार्धकामादिकमितीममर्थमुपपाद्योपसंहरति, अत इति । हे द्विजश्रेष्ठा हरितोषगां हरेराराधनं संसिद्धिः फलम् ॥ १३॥ व्यवस्थाः । उत्तर प्राप्त स्थानिक विकास वितास विकास वितास विकास वितास विकास विकास

अरुपस्माञ्च भक्तिहीनो धर्माः केवलं श्रम एव तस्माद्भक्तिप्रधान एवधर्मोऽनुष्ठेय इत्याह तस्मादिति । एकेन एकाग्रेश मनसा ॥ १४॥ 

श्रुतगृहीतयेत्यनेनवर्णाश्रमधर्मस्यभक्तियोगानुत्राहकत्वमुक्तं धर्मः खनुष्ठितः पुंसामित्यादिनाधर्मस्यभक्तियोगानुत्रहपकारुक्तुः इदा श्रीमन्यथापि तद् नुप्रहमकारंदशेयति अतद्दति । यतोभक्तरेवसाक्षान्मुक्तिसाधनत्वमतो हे द्विजश्रेष्ठाः पुरिभवगाश्रमविभागश्रश्रह्मकार् स्यतिशेषः तद्वर्गाश्रमानुगुगास्यत्यर्थः वर्गादिभदेनास्थितैः पुंभिरिति वा सम्यगनुष्ठितस्य पंचमहायञ्चादिकपस्यसंसिद्धिः फुलहरितो-स्यातश्य । अर्थभावः खनुष्टिता समोद्रमक्तियोगप्रतिवधनिष्टत्यनुकूलसंकल्पहेतुईरितोषः ततश्चमक्तियोगसंपन्नप्रतिवधपापश्चयस्ततोम्कि-योगनिष्यत्तिरिति यद्वाहरिस्तुस्यते येनानुध्यानेनतद्वरितीषगाम।तदेवधमस्यखनुष्ठितस्यसंसिद्धिः फलम्।भक्तियोगोत्पत्तिवधनिरसनद्वा-राहरितीषहेतुभक्तियोगनिष्यत्तिरेवध्रमस्यफ्लमित्यर्थः अन्यथा "धर्मगापापमपजुदति अविद्ययामृत्युंतीत्वेत्यादिश्रुते ई्रमस्यभक्तियोगीत्प्यि-प्रतिवंधक पापनिरासकत्वं वदंत्याविरोधापत्तः धर्मस्यवहरितोषफलकृत्वेभक्तेवयथ्योपत्तेश्च । ननु श्वानाग्निः सर्वकर्माग्राभस्मसात्कुरुतुः प्रातप्यम् । । ज भागाद्या स्वक्रमार्थात् । भक्तियोगवद्धभ्रस्यापिहरितोषहेतुत्वमेवयुक्तमिति चेच्छुणुप्रापकप्रतिवधकं प्राहितः जुनाउ । अतिवंश्रकं चेतिव्रिविधंदुरितम् । तत्रप्रापकस्यमक्तियोगस्ययदुत्पत्तिप्रतिवंधकंदुरितंतद्भपनोद्यम्। एवंधमनिरस्तप्रतिवंधके भगवत्मा भक्तियोगेनिष्यम्नेतेनयद्भगत्प्राप्तिप्रतिवंधकं दुरितंतद्पनोद्यतेतद्भिप्रायकाग्निश्चानित्यादीनि वचनानि ॥ १३॥

े । जिल्लाम<mark>िकिक वर्ते</mark> स्थापार सामा सामा स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार स्थापार

प्वंवर्णाश्रमधर्मस्यमिकयोगोपकारस्तत्प्रकारश्च मिकयोगप्रतिबधित्रस्तेनमंगचंद्गुणादिश्रवर्णार्वजनकद्वारावेतिद्वधासंव्धितः स्यतुल्यन्यायतयामगवद्गुणस्क्रपादिश्रवणादीनामापि भिक्तयोगोपकारकत्वमुपकारप्रकारंच वक्तुं तेषामवश्यकत्तेव्यतां तावदाह । तस्मादिति द्वाश्यामतस्माद्धर्मस्यमिकयोगानुष्राहकत्वतत्प्रकारप्रवृश्चेत्वोदेषतुल्यन्यायतयामगवद्मिकयोगोपकारकत्वेनसात्वतां भक्तानां तस्मादिति द्वाश्यामतस्माद्धर्मस्यभक्तियोगानुष्राहकत्वतत्प्रकारप्रवृश्चेत्वत्यः पूज्यश्चष्यानमतश्चतार्थप्रतिष्ठापनात्मकंमननापरपर्यायस्म पतिभगवानेकनेकाग्रेशा मनसानित्यदा श्रोतव्यः कीर्त्तितव्यः ध्येयः समर्तव्यः पूज्यश्चष्यानमतश्चतार्थप्रतिष्ठापनात्मकंमननापरपर्यायस्म स्यां विवक्षितम् । मत्त्वात्मकस्यश्चवणाद्यनंतरमावित्वंहिवस्यते ॥ १४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

तदाह तदिति एवमुक्तप्रकारेग् ब्रह्मपरमात्माद्यनंतवैदिकादिपद्वाच्यतयासगुगः सर्वजगत्कर्तापरमात्मैवतत्त्विमितियस्मात्तस्मानमुन योक्षानिनः श्रद्द्धानाः शास्त्रोक्तवस्तुगत्यास्तिक्यद्धद्भियुक्तश्रुतिगृहीतयावदांतश्रवग्रोनदृढगृहीतयातत्त्वक्षानेनिवष्यवैराग्येग्ययुक्तश्रामक्त्रा विभवात्मानंपरमात्मानमात्मिनद्धदिपश्यातिचकारः "स्वात्मन्यवात्मानंपश्यदितिश्रुतिप्रासिद्धिद्योतकोनत्वात्मिनिक्षेत्रक्षेजीवेशात्मानंपरमात्मानं विभवात्मानंपरमात्मानमात्मिनद्वीव्यार्थः॥ तस्माज्जगदाकारेग्यविर्वातंत्रतत्त्वमन्यिश्रंगुग्रमन्यत्तत्त्वमितिनार्थः॥ १३॥ विस्माज्जगदाकारेग्यविर्वातंत्रतत्त्वमन्यिश्रंगुग्रमन्यत्तत्त्विमितिनार्थः॥ १३॥ विस्माज्जगदाकारेग्यविर्वातंत्रतत्त्वमन्यिश्रंगुग्रमन्यत्त्विमितिनार्थः॥ १३॥ विद्यत्रश्रेष्ठाः संसिद्धिः फलम् ॥ १४॥

#### क्रमसंदर्भः।

तदेवं श्रुतगृहीतया मुनयः श्रद्धाना इति पदत्रयेश तस्या एव भक्तेदीर्लभ्यं द्वितम् । सहुरोः सकाशात् वेदान्ताद्यखिलशास्त्रायं-विचारश्रवग्रद्धारा यदि खावश्यकपरमकर्त्तव्यत्वेन ज्ञायते । पुनश्च "भगवान् ब्रह्म कात्क्षेयनित्ररन्वीस्य मनीषया । तद्ध्यवस्यत्र कृष्टस्थो रतिरात्मन् यतो भवेदितिवद् यदि विपरितभावनात्याजको मननयोग्यतामनगभिनिवेशौ स्थातां ततः श्रद्धधानैः सा भक्तिरुपान् सनद्वारा लक्ष्यत इति । अतः श्रुतिरिप तद्र्थमागृह्णाति "आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निद्ध्यासितव्य इति । अत्र निद्ध्यान् सनद्वारा लक्ष्यत इति । अतः श्रुतिरिप तद्र्थमागृह्णाति "आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निद्ध्यासितव्य इति । अत्र निद्ध्यान् सनमुप सनम् । दर्शनं साक्षात्कार उच्यते । सा चैवं दुर्लभा भक्तिः श्रीहरितोषणे प्रयुक्तात् खाभाविकश्चमोद्दिष्ठ तत्प्रयोगोऽतीवाशुक्त त्रोवग्रामेव तस्य परमं फलमित्याह् अत इति । खनुष्टितस्य बहुप्रयत्नेनाच्छिद्रमुपाज्ञितस्यति तुच्छे खर्गादिफले तत्प्रयोगोऽतीवाशुक्त

सात नायः ॥ १२ ॥ तस्मादिति तैर्व्याख्यातम् । तत्र भक्तिविद्दीन इति । भक्तिः श्रवणादिख्विस्तद्विद्दीनस्तद्वृत्पादक इत्यर्थः । तस्माद्गक्तिप्रधान इति सक्तिः श्रवणादिख्विरित्यर्थः । यद्वा यद्येवं श्रीहरिसन्तोषकस्यापि धर्मस्य फलं श्रवणादिख्विलक्षणा भक्तिरेव तत्प्रवित्ति श्रवणादिख्या भक्तिरेव कर्त्तव्या कि तत्तदाग्रहेगोत्याह तस्माद्गिति । एकेन कर्माधा-द्वानवैराग्यादिगुणा इत्यायातम् । तदा साक्षात् श्रवणादिख्पा भक्तिरेव कर्त्तव्या कि तत्तदाग्रहेगोत्याह तस्माद्गित । एकेन कर्माधा-ग्रह्यून्येन । श्रवणमत्र नामगुणादीनाम् । तथा कित्तवश्च ॥ १४॥

### सुबोधिनी।

एवंद्वितीयप्रकारेण्यानमुकं तत्रद्वितीयेधमस्यसंवंधमाह अतः पुंभिरिति ॥ धर्मसामान्यस्यप्रथमसाधनताउका विशेषस्यतुद्वितीयेव वोमगवत्प्रसाद्व्यतिरेकेण्यानातः करण्यु विनेवाचिः अतः धर्मस्यमुख्यंफलंभगवत्प्रसादः वीजसंस्कारसंस्कृताः कुर्वेतिधर्मपोषकभगविद् च्छ्यावाममैवकामोभूतानामितिवाक्यात पुंभिरितिकर्मण्यिप्रयोगेणेवहापितमनुष्ठानेक्तर्मवाप्रधीयांनकर्तेति तदेविहमगवत्प्रसादः अन्ययाक कछ्यावाममैवकामोभूतानामितिवाक्यात पुंभिरितिकर्मण्यिप्रयोगेणेवहापितमनुष्ठानेक्तर्मण्याभगवान पुष्यतीतिस्वितंवर्णधर्माः शमदमादयः मेगीवफलमिति द्विजश्रेष्ठादिद्विजश्र्यः श्रेष्ठाः त्रिजनमानः अनेनभवद्धिः कियमाणेवक्रभणाभगवान पुष्यतीतिस्वितंवर्णधर्माः शमसमादयः कालेद्रव्यविद्वात्वर्णक्षेत्रभूतिस्वित्वर्णक्षेत्रभूतिस्वित्वर्णक्षेत्रभूतिस्वित्वर्णक्षेत्रभूतिस्वित्वर्णक्षेत्रभूतिस्वित्वर्णक्षेत्रभूतिक्षेत्रभूतिस्वत्वर्णक्षेत्रभूतिक्षेत्रभूत्वविद्वर्णक्षेत्रभूतिक्रभूतिक्षेत्

লা । এই তেওাই ভা ১৯৫৫ ইয়া **মে কর্**টি প্**নাদর বাবের** তা সমূল জ

### यदनुध्यासिनायुक्ताःकर्म्भत्रन्थिनिबन्धनम् । (१) - छिन्दन्तिकोविद्वास्तस्यकोनकुर्यात्कथारितम् ॥ १५ ॥

#### লাল্ড ইল্ড **স্থানী হিল্ল** লাল্ড লাল্ড লাল্ড হৈছে হয় হয় হয় হয় কৰিছে স্বায় কৰ্মকাৰ হয় হয় হয় হয় হয় কৰিছে

न्या के विकास के अपने के विकास के किया है। विकास के अपने के अपन रः श्रवगांशकितात्पर्यनिकारवोधनंकीर्जेनंतथाशातानांवास्वतपवोचारणम् उभयंसंगृहीतं वकारेण्यन्यनिकीह्कत्वं व्रतद्वेवस्यते 😥 र्द्वयंवात्वेदियसाध्यम् आंतरमाह ध्येयःपूज्यश्चेतिध्यानंभगवितिवित्तास्थिरीकरशं भगवन्युत्तेरतुसंधानवापूजावाद्यांतरभेदेनद्विधाचकारे या संगृहीता व्यासंगांतराभावायनित्यदेति तस्मादयमेवमुख्योधमेः सर्वथाकर्त्तव्यःइति ॥ १४ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

तदेवं धर्माः खनुष्ठित इत्यादिना कर्मगाः श्रमत्वमेव ज्ञानयोगयोरपि "श्रयः सृति भक्तिमुद्स्य ते विभोइति । नैष्करस्यमप्यच्युत-माववर्जितमिति । पुरेह भूमन बहवोऽपि योगिन" इत्यादिश्यो भत्त्वा विना श्रमत्वमेव । भक्तेस्त कर्म्ययोगज्ञानाद्यमिश्रिताया प्रव शुद्धाया आत्मप्रसादकत्वं प्रकरणतोऽचगतम् । तत्रैवं शङ्कते । ननु ज्ञानयोगयोरप्रवृत्तौ न काचिच्चिन्ता । कर्मगणम् तु नित्यानामकरण महान् प्रत्यवायो दुर्गतिहेतुस्तत्र का वार्तेत्यत् आह् अतः पुंभिरिति । यत उक्तन्यायेनोत्कृष्टाविष ज्ञानयोगी भक्तीव सिद्धी भवेताम् भक्तिस्तु तांश्यां विनापि खयं सिद्धाति । अतो हरितोषगां भक्तीव क्षातं चेत् तदा धर्मस्य संसिद्धिः । यो यत्नाद्बुष्टितोऽपि कर्मिमगां साङ्गोपाङ्गतया प्रायः सिद्धो न भवति सोऽपि भक्तिमताम् अननुष्ठितोऽपि सम्यगेव सिद्धो भवति । "यत्कर्माभियत् तपसा ज्ञानवैराग्य-त्रश्च यत्" इत्यादी "सर्व्व मद्भक्तियोगेन मद्भक्तोलभवेऽअसेति श्रीभगवदुक्तेः। तेन कर्माकरणजनितप्रत्यवायो भक्तानां पराहतः। नतु यदि भक्त्या धर्माः संसिद्धस्ति धर्माफलमि तैर्लक्ष्यतां सत्यम् सकामत्वे सित लक्ष्यते एव निष्कामत्वे सित तेषां नैष्कर्म्यते भवति । तथाच श्रुतिगीपालतापनी । "भक्तिरस्य भजनं तदिहामुत्रोपाश्रिनैरास्येनामुन्मिन् मनः कल्पनमेतदेव नैष्कमर्भ्यम् । तदेवं "यथा तर्रार्भूल-निषचनेनेति न्यायेन भक्तीव धर्माः संसिद्धा एवातो भक्तानां कर्माएयधिकार एव दूरीकृतो भगवतायदुक्तम् । "तावत कर्माणि कुर्वित न निर्विद्येत यावता। मत्कथाश्रवणादी वा श्रद्धाः यावत्र जायत" इति । "धर्मान् संत्यज्य यः सन्वान् माम भजेत् स च सत्तम इति सर्वधरमीन परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेति । (तथा सति यथा तरोर्भूलिनेवचेनेत्यादै। यथैव सर्वाईणमच्युतेज्वा इत्यत्र यथाच्यु-तपुजनमेव सर्वेषां देविपत्रादीनामईग्रारूपं भवति तद्वदंत्र हरितोषगामेव खनुष्ठितधर्मस्य सम्यक् सिजिक्षं भवतीत्यर्थः । तथा चाच्यतस्य पूजने तोष्णो च जाते देविपत्रादीनां पूजनरूपस्य खनुष्टितधर्मास्य संसिद्धिः खयमेव जातेति भावः । प्रवमेव इष्टान्तेऽपि तरोमूं लिवेचनेनेव शाखापल्लवादीनां संचनम खयमेव जातमिति शेयम ) तद्पियत् प्राच्यादिभक्तानामनन्यानामपि करिमकुलसंघट्टगत-स्वेनैव तद्तुरोधवशादीषत् कर्माकरणं तत् कर्माकरणमेव तत्र श्रद्धाराहित्यात्। "अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतश्च यत्। असिव-स्युच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य नेह चेति भगवदुक्तेः॥ १३॥ ्यस्मादेवं तस्मादेवेत कर्माश्चानाचनुतिष्ठासाग्रन्येन ॥ १४॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

अतः धर्मस्यापवर्यत्वात् संसिद्धिःफलम् ॥ १३॥ पस्माद्धमेस्यहरितोषगांफलंतस्मात् एकेनहरितोषगाफलकथर्मप्रधानेन ॥ १४ ॥

### भाषा टीका ।

अतः हे ब्रिजश्रेष्ठ शीनकादि महाशयां ! वर्गाश्रम विभाग से पुरुषोंके खनुष्ठित धर्म की यही सिद्धि है कि जो उनसे श्रीहरि सम ्रिस्सि एकाप्रममन से सात्वतों के पति भगवान ही नित्य श्रोतव्य करि तब्य ध्येय और पूज्य हैं॥ १४ ॥

#### श्रीधरखामी।

भक्तिविद्यानी धर्माः केवलं श्रम इत्युक्तम इदानीश्च भक्तेमुक्तिपळत्वं प्रपश्चयति यदिति । यस्य अनुध्या अनुध्यानं सेव असिः व्यक्त सन युक्ता विवेकिनः ग्रन्थिमहङ्कारं निवध्नाति यत् कर्मा तत् छिन्दन्ति तस्य कथायां रति को न कुर्यात् ॥ १५॥

## शुंश्रुषोःश्रद्दधानस्यवासुदेवकंशास्त्रिः। हार्वाहरू स्यानमहत्तेवयाविम्रशुण्यतिर्धाने वेवगात् ॥ १६ ॥

### श्रीघ्रखामी।

ननु सत्यमेव कर्मानिर्मुलनी हरिकथारितः तथापि तस्यां रुचिनेतिपयते कि कुर्मास्तत्राह शुश्रूबोरिति । पुगयतीर्थनिषवणादिभिः विष्णेपस्य महत्त्सेवास्यात् तया च तद्धमाश्रद्धा । ततः श्रवशेच्छा ततो रुचिः स्यादित्यर्थः ॥ १६ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

यस्यभगवतोनुध्याअनुध्यानं भक्तिः सेवासिः खड्गस्तेनयुक्ताः सहिताःकोविदाः कुशलाः कर्मवग्रंथिस्तद्र्पं निवंधनं वंधनं छिदंति कर्मणोत्रीयत्वरूपणांत्रीयवद्दमीच्यत्वात् दुर्विमोच्येन कर्मणानिबध्यत इतिनिबंधनंकमीयत्तः संसारस्तंछिदंतिइतिवातस्यकथासुरति को-गापुमाश्रक्षर्यात्सर्वोपिकुर्यादेवेत्यर्थः। यस्यभिक्तरनर्थावहसंसृतिनिरासहेतुस्तस्य महोपकर्तुभक्तियोगस्यानुप्राहकतया तत्कथासुरितसर्वो ऽपिजनः कुर्यादेवत्यर्थः ॥ १५ ॥

यद्यपि धर्मः खनुष्टितः पुंसामिति धर्मस्यवासुदेवकथारुचिजननद्वाराभिक्तयोगानुग्राहकत्वोक्त्यैवकथारुचिजनकत्वमप्युक्तमेव भवति-तथापि न साक्षादेवश्रमः कथारित हेतुरपितुसत्संगादिद्वाराहेत्वंतरेगाचेत्याह ॥ श्रुश्रूषोरिति श्रोतुमिच्छोः स्वधमनिरस्तश्रुश्रूषाप्रतिबंधः कर्यत्यर्थः ॥ श्रद्धायुक्तस्य पुँसः वासुदेवकथायां रुचिः हे विश्राः महताम सेवया पुणयतीर्थानां गंगादीनाम् निषेवणाच भवति ॥ १६ ॥

#### श्रीविजयध्वजः

कृष्णासंत्रस्यपरमधर्मत्वीनगमयति तस्मादिति यतःकृष्णासंत्रश्चरयेवपरमधर्मत्वंतस्माद्वेतोः एकेनएकाश्रेण चकारीपरस्परसमु खयार्थं श्रवगादितत्तत्कालेकर्तव्यं नकचित्कालोवृयायापनीयइत्यस्मित्रर्थेनित्यदाशब्दः॥ १५॥

क्रिल्यं वर्षात्र्यं प्राप्त वर्षात्र वर्यात्र वर्षात्र वर्यात्र वर्यात्र वर्यात्र वर्यात्र वर्यात्र वर्यात्र व युकाःमनीयोगयुकाः कर्मपाशेननितरांबंधनंततार्छद्वि तस्यकयाद्धरितकोनकुर्यात् अतःश्रवणादिफलमपरोक्षकानद्वारामुक्तिरेव ॥ १६॥

### क्रमसन्दर्भः।

तत्र चान्तिमभूमिकापर्यन्तां सुगमां है। हीं वक्तुं धर्माविकष्टनिरपेक्षेण युक्तिमात्रेण तत्रप्रथमभूमिकाम श्रीहरिकथारुचिमुत्पाद्यन् तस्य गुगं स्मारयति यदिति । कोविदा विवेकिनः । युक्ताः संयतिचत्ताः । युस्य हरेरनुध्या अनुध्यानं चिन्तनमात्रं सैवासिः खड्गः तेन ग्रन्थिम नानादेहेष्वहङ्कारं निवध्नाति यत् तत् कम्मं छिन्दन्ति । तस्यैवम्भूतस्य परमदुःखादुद्धर्तुः कथायां रति रुचिम् को न

शुश्रूषोरिति तैद्योद्यातम् । तत्र पुणयतीर्थनिषवणादिभिरिति अयमप्यकोमार्गः स्यात् । त पुनन्त्युरुकालेनेत्यादिना । सद्यः पुनन्त्युप-स्तृष्टा इत्यादिना च । ऋजुमार्गोऽप्यस्ति अतएव यद्वा नन्वेवमि तस्य कथारुचिर्मन्दभाग्यानां न जायत इत्याराङ्क्य तत्र सुगमोपायं रहरू ने पार्च नेष्ठिकमक्तिपर्यन्तां मिक्तमुपदिशति पश्चीमः। तत्र शुश्रूषोरिति। "भुवि पुरुषुगयतीर्थसद्नानृचषयोविमदा" इत्याद्यतुन सारेगा प्रायस्तत्र महत्सङ्गो भवतीति तदीयटीकानुमत्या च पुण्यतीर्थनिषेवज्ञा छेतोर्छ्या यहच्छ्या या महत्सेवा तया वासुदेवकथा-कृतिः स्यात । कार्यान्तरेगापि तीर्थं भ्रमतो महतां प्रायस्तत्र भ्रमतां तिष्ठतां वा दर्शनस्पर्शनसम्भाषगादिलक्षगा सेवा स्वतएव संपूद्यते वाजा निर्माविमा तदीयाचरमा श्रद्धा भवति । ततः तदीयस्वाभाविकपरस्परभगवत्कथार्या किमेते संकथयन्ति तत् श्रम्भोमीति तदिन्छ। स्वायते । ततश्च तच्छवर्गोन तस्यां रुचिर्जायत इति क्रमः । तथाच महद्भच एव श्रुता झटिति कार्यकरीति भावः । तथा च श्रीकर्पिलदे बायपा। "सतां प्रसङ्गानम्म वीर्थसंविदो भवन्ति हृत्कर्णारसायनाः कथाः । तद्भोषणादाश्वपवर्गवर्तमनि श्रद्धा रितभेकिरचुक-मिष्यतीति ॥ १६॥

### सुवोधिनी ।

त्रवापिरत्यभावात्कथमेतत्सेत्स्यतीत्याशंक्याहयद्नुच्यासिनेतिसर्वत्रालीक्षेषुपदार्थेषुमाहात्म्यश्रवशाद्भाचिहत्पघतेतत्रभगवस्त्र न्तुत्वाप्ति विशादिनांप्रास्त्वत्वालेमावद्धानंत्रिसिद्धतस्याच्येवंमाहात्स्यमंगभूतस्याप्रीत्यस्यवयोगः यस्यात्रध्यातंस्रवासिः बनापि क्रियप्रिसिद्धत्वप्रयोगः सस्यात्रध्यातंस्रवासिः बनापि ह्यक्ष्याप्रास्य अवस्थान स्वार्थित कर्मा क्षेत्र क्

## शृण्वतांस्वकथाः रूष्णाः गुण्यश्रवगाकीर्त्तनः । हृद्यन्तः स्थोद्यमिद्राणिविधुनोतिसुहृत्सताम् ॥ १७ ॥

#### सुबोधिनी

राजेनात्कमिविच्छदः कठिनःतद्पिध्यनिनभगवतीति छिदंतीत्युकंननु किर्कभेच्छद्दनमात्रेणजीवमावस्यविद्यमानत्वादित्याद्राक्ष्याह्रप्रंथिनिवं प्रमितिग्रंथिरिवद्यवाचिद्विद्रंथिः मोह्रप्रंथिश्चतित्रत्यंवध्नातीतिग्रंथिनिवं धनं पूर्ववासनारूपेणविद्यमानस्यकमेणविद्यक्षित्रणम् अतस्तद्दन् भावसाऽपिगमिष्यतीतिभावः धुनाक्षरन्यायंवारयतिबद्धवचनम् अत्रहिनेपुण्यमपे स्यते अनुध्यानस्यान्यत्रविनियोगसंभवात् अतोयोगसिद्धिमनपेक्ष्यज्ञानेनाविद्यामेवनिवर्तयंतितेकोविदाः तत्रध्यानस्यखतोमाहात्म्यजनकत्वंनास्तिविषयध्यानस्यस्तरांवं धहेतुत्वात् अतोभगवन्माहात्म्येनै
वतस्यतत्त्वमित्याह् तस्येति तादशस्यत्यर्थः यत्रतद्धमेणापिकार्यासिद्धिःतत्रयदाकथाभिः सप्वचित्तेयुक्तोभवतीत्यभिप्रायेणाह् कोनकुर्यान्विति ॥ १५॥

अकर्त्तृ गांमाहात्म्यज्ञानाभावः पवंद्वितीयाभाकिार्निकापिता पवंज्ञानभक्तीमध्यमेनिकाप्यउत्तमेनिकाप्यति श्रुश्रूषोरित्यादिसप्तभिः अत्रान्हिकामुखानिसाधनानिनिकाप्यते येषुव्यभिचारशंकापि नास्तिवैराग्यंचहेतुः तत्रायंक्रमः आद्दौगृहत्यागेनतीर्थपर्यटनम् अन्यथागहत्सेवा ग्रामुद्वेगःस्यात्ततोमहत्संगः ततस्तेषांसेवाततोभगवत्कथाश्रव्याततःकथाश्रवः ततः कथायांतेषुचश्रद्धाततःश्रुश्रूषेतिपवमेतादश्यमेण स्वकृषोपकारिगाव्यभिचारिगाश्रुश्रूषा उत्पद्यतेअत्र पूर्वपूर्वसाधनानांदढत्वात् नोत्तरेषांनिवृत्तिः तादशाधिकारोदुर्लभइति स्वितंशुद्ध-स्वत्याविभूतस्यश्रवग्रेसद्यश्रित्तप्रसादद्दति वासुदेवेत्युक्तम् अस्यांगीकारायमहत्पद्प्रयोगः पुरायक्रपंतिर्थेषुर्ययतीर्थेकुरुक्षेत्रंगंगाचतयोन् वितरांसेवनदेववज्जलस्यसेवनम् ॥ १६॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

नतु च "मत्कथाश्रवणादो वा श्रद्धा यावश्र जायत इति श्रद्धालुमें कथाः श्ररविश्वति जातश्रद्धो मत्कथाखित्यादि भगवदुकेः कथायाम् श्रद्धावानेव भक्ताविधकारीत्यतः श्रद्धा कथं स्यादित्यत श्राह यदिन्वति । यस्यानुध्यानमेवासिः खड्गस्तेन युक्ताः सिहताः ज्ञाः प्रन्थितवन्यनं श्रन्थितवन्यनं श्रन्थितवन्यते येन तत् कर्मा । यद्धा खसश्चितघनेश्यः पृथक्कृत्य किञ्चिन्मात्रमेकैकदिनभोगार्थे जनाः ख्रिश्रन्थो निवध्निते यथा तथैव श्रन्थिनबन्धनं वर्त्तमानजन्मभोग्यम् प्रारब्धं कर्मा तद्पि छिन्दिन्त तस्य कथायां रितं प्रीति को नृष्क्षियोदिति तत्कथायां श्रीतिरिप सहसा जायते कि पुनरिधकारव्यिक्षका श्रद्धेति भावः ॥ १५ ॥

तद्पि कथायाम् प्रीतेरेवाविर्भावे प्रकारं श्रणुतेत्याह शुश्रूषोरिति । महत्तसेवया यादिन्छकमहत्रकृपाजनितया महताम सेवया श्रद्ध-धानस्य जातश्रद्धस्य पुंसः पुरायतीर्थे सद्गुरुस्तस्य निषेवणां चरणाश्रयणां स्यात् । "निपानागमयोस्तीर्थमृषिज्ञष्टजळे गुरावित्यमरः । तस्माच शुश्रूषोस्तस्य वासुदेवकथासु रुचिः स्यादित्यन्वयः ॥ १६ ॥

#### सिद्धान्तप्रदीपः।

अतुःयासिनाध्यानसङ्गेनकर्मछिदंतिकथंभूतम् ग्रंथिनिबंधनंदेहादावात्मत्वसुद्धादिक्षपंत्रीथनिवध्नातीतितत् ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७॥ १८ ॥

#### भाषा टीका।

जिन भगवान के ध्यान रूप खड्ग को लेकर चतुर जन कमें ग्रंथि का छेदन करते हैं उन भगवान की कथा में कीन रित न क

(कर्म निर्हारिणी हरि कथा मै रित होने का उपाय यहहै) पित्र तीथों के सेवन करने से महत संग होता है महत्सेवासे श्रद्धा होती है श्रद्धा से श्रवण करने की इच्छा होती है उस बासुरेख की कथा मै रुचि होती है ॥ १७॥

### श्रीधरखामी।

तत्रश्च श्राचतामिति पुग्ये श्रवगाकिते यस्य सः। सताम सहत हितकारी हवि यान्यमदाग्रि कामादिवासनाः शनि वाकः स्थः हदयस्थः सन् ॥ १७॥

### नष्टप्रायेष्वभद्रेषुनित्यंभागवतसेवया । भगवत्युत्तमःश्लोकेभक्तिभवतिनिष्ठिकी ॥ १८॥

#### श्रीधरस्वामी।

ततश्च नष्टप्रायेष्विति सर्व्वाभद्रनादास्य क्षानोत्तरकालत्वात् प्रायग्रहण्य । भागवतानां भागवतदास्त्रस्यवा सेवया । नैष्ठिकी निश्चला विक्षेपकाभावात् ॥ १८ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

श्रवाहिनां भक्तियोगोपकारप्रप्रकारं दर्शयित श्रावतामितिहाश्याम् ॥ पुरायं श्रावतां कीर्त्तयतां च पुरायावहं श्रवणं कीर्तनं च यस्य स कृष्णः स्वक्यांश्रावतां सतां साधूनां हृदयांतः स्थितः सन्नभद्राणि भक्तियोगोत्पत्तिप्रतिवंधकानि दुरितानि विधुनोति ॥ सुदृदिति हेतुगर्भमिदं सुदृत्वाद्भनोतीत्यर्थः ॥ १७ ॥

ततः किमतबाहनष्टप्रायेष्वितिनित्यम् भागवतानां सतांसेवयातत्सेवापूर्वकभगवद्गुणश्रवणेनेत्यर्थः अभद्रेषुनष्टप्रायेषु सत्सुउत्तमश्रो-केभगवति नैष्ठिकीदढाभक्तिर्भवति ॥ नष्टप्रायेष्विति प्रायग्रहणेन भक्तियोगापनोद्यं प्राप्तिप्रतिवंधकमुत्तरपूर्वाघरूपं त्वविश्वयतद्दित सूचि तम् पर्वतुल्यन्यायतयास्वधर्मेणाप्युपायोत्पत्तिप्रतिवंधकमात्रमेव निरस्यतद्दित सम्यगुक्तंप्राक् ॥ १८ ॥

### श्रीविजयध्वजः ।

हरिकथारितःकेनस्यादितितत्राह गुश्रूषोरिति हेविप्राःशुश्रूषोर्गुर्वादिपरिचर्याशीलस्यवेदादिषुश्रद्दधानस्यमहतांसेवयापुरायतीर्था नांभागवतादिसच्छास्त्राणांगंगादितीर्थानांच नितरांसेवनाचवासुदेवकथारितःस्यादित्येकान्वयः ॥ १७ ॥ श्रवणाफलमाह श्रयवतामिति सुद्ददिनिमित्तबंधुःपुरायेश्रवणकीर्तनेयस्यसतथा ॥ १८ ॥

### क्रमसन्दर्भः।

कथाद्वारा अन्तः स्थो भावनापदवीं गतः सन् । हृदि अभद्राणि वासनाः ॥ १७ ॥ नष्टप्रायेषु न तु ज्ञानमिव सम्यक् नष्टेष्वेवेति भक्तेनिरर्गेलखभावत्वमुक्तम् । भक्तिरतुध्यानरूपा । नैष्ठिकी सन्ततेव भवति ॥ १८॥

### सुबेधिनी

नन्ववहेलनंकथं चिद्दिपततः किमतआह श्रग्वतामिति । एतादशसाधनेनोत्पन्नायांशुश्रूषायां न श्रवणादिनिवृत्तिः कदाचिदिति श्रग्वतामित्युक्तम् । स्वकथामिति। स्वक्ष्मभूताः कथाः स्वीयकथात्वे भगवतः स्वतंत्रत्वान्नकार्यकारणांसंभवति कथायांस्वस्यापिस्तोमाहा-रुम्येतृतयेववशीकृतः सर्वेकुर्योदिति एतादशकथाबाहुव्यं कृष्णावतारण्वेति कृष्णादृत्युक्तं भक्तियोगविधानार्थचावतारः निरंतरमुत्पन्नानं पापानांनिवृत्तौनान्यदपेस्यतेसाधनं किंतुश्रवणाकीर्तनाभ्यामेवभवतीतिशुद्धं हृद्यंभगवान् प्रविशतीत्यभिप्रायेणाहपुण्यश्रवणाकीर्त्तनः श्लोतृवकृदोषीनश्रवणाकीर्त्तने संबध्येतेअपहतपाप्मत्वात्त्ययेश्वयाकीर्त्तनेउत्पद्यमाने पापसामानाधिकरण्येनोत्पचेतेषव सूर्योदया श्लोतृवकृदोषीनश्लावत् श्रवणासंभावनायामेवपापिनवृत्तिरित्यर्थः वहिः स्थितस्यक्ष्रेशामानाचिह्यं त्रस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं त्रस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेशामावाचिह्यं तिस्थितस्यक्ष्रेणावतः । विस्यत्यकरोति हृद्यदेष्ठित्रशां यथाजलक्ष्रमञ्चव प्रवर्गेत्वं त भवति तथेत्यर्थः तथाचित्सम् पक्षेप्रधमश्रङलाक्ष्याध्वतीयामगव-

विस्मरणसंभावनापिनस्तित्यतास्थतहत्युक्तमताहशस्यतथाकरणमुचितामतिमापः पान्यप्यमादिन पापस्यप्यमधानवृत्तत्वात् । विशेषणाधूननं शिथिलीकरणं यथाजलकश्मलवत् पुनर्मेलनं न भवति तथेत्यर्थः तथाचास्मिन् पक्षेप्रथमश्रङ्खलाखसाध्याद्वितीयाभगव-विशेषणाधूननं शिथिलीकरणं यथाजलकश्मलवत् पुनर्मेलनं न भवति तथेत्यर्थः तथाचास्मिन् पक्षेप्रथमश्रङ्खलाखसाध्याद्वितीयाभगव-तसाध्यातदेवतृतीयाभवतिति क्रमेणबोध्यते कामादीनामशिथिलत्वे भक्तिनौत्पत्स्यतद्दित नजुभगवतप्रवक्तरणेकोहेतुस्तश्राह । सुद्धत्सता-तस्याध्यातदेवतृतीयाभवतिति व्यवत् ॥ १७ ॥ मिति सुद्धत्सहकार्यकर्त्तामिति यावत् ॥ १७ ॥ तदारजस्तमोभावाःकामलोभादयश्चये । चेतएतरनाविद्धंस्थितंसस्वेप्रसीदित ॥ १९॥ एवंप्रसन्नमनसोभगवद्गक्तियोगतः । भगवत्तत्त्वविज्ञानंमुक्तसङ्गस्यजायते ॥ २०॥

### सुबोधिनी।

सुद्दत्तः श्रवणाद्यपदेशेन प्रथमपरंपरायां कृतायां द्वितीयां चेद्रगवाष्ट्रकुर्यात्तदामित्रत्वं मज्येतेति धृतेषुकामादिषुतत्स्याणदार्द्धं नष्टप्रायेष्वित । धृतापवकामादयोननाशिता इतिकचित् कचित्तेषां सत्त्वंप्रतीयते श्रवणे आग्रहह्व प्रतिबंधेकोधपव तत्संबंधेलोमप्रमवेदि त्यादिवोधियतुंप्रायग्रहणं तथाच तेषांप्रतिबंधकत्वाभावात् भगवत्कथायानित्यम् श्रवणं भगवद्गक्तानांच सेवनं च नित्यं भवतीत्याह् नित्यमिति पूर्वकथायाः श्रवणमेव इदानीं देववत्संभावनमिति सेवार्थः एवं कथायां क्रियमाणायां भगवतिप्रेमोत्पद्यत् इत्याह भगवतीति अत्रसर्वत्रभगवच्छकेद् च द्युदं परं ब्रह्मोच्यतेउत्तमः श्लोकइति उत्तमेः श्लोक्यतहित उत्तमावाश्लोकायस्थेति साद्धिः कथयाचसहितेभक्तिभवती त्यर्थः ततश्च जातायामपि भक्तोसंतः कथाश्चनत्यजंतहित भावः महतापिवाधकेनाचलनंनिष्ठा निष्ठांप्राप्तानेष्ठिकी तथाहि कालाद्युपद्रवा नस्फुरिक्यंतीत्यर्थः ॥ १८ ॥

### श्रीविश्वनांथचक्रवर्ती।

ततश्च श्रुगवतामिति क्रमेण श्रवणकित्ते उक्ते । ततश्च हृदि यान्यभद्राणि पापानि तान्यन्तःस्थः सन् विधुनोतीतिस्मरणम् ॥१७॥ भागवतानाम् वैष्णवानां भागवतस्य शास्त्रस्य च । नष्टप्रीयिष्विति नामापराधलक्षणस्याभद्रस्य कश्चन कश्चन प्रवलो भागः क्षीण-त्वं गच्छन् रतिपर्यन्तोऽपि भवतीति भावः । नैष्ठिकी निष्ठा चिक्तैकात्रचं ताम् प्राप्ता ॥१८॥

#### भाषा टीका।

सज्जनों के सुदृद पुराय श्रवण कीर्तन कृष्ण कथा सुनने वालों के दृदय मैं स्थित होते हैं। और उनके समस्त अमद्रों ( अमंगलों ) को नाश करते हैं ॥ १७ ॥

श्रीभागवत पुराशा और भागवत जनो की नित्य सेवा करते करते जब प्रायः अभद्र नाश होते हैं तब उत्तम श्रोंक भंगवानमें नेष्ठि की भक्ति होती है ॥ १८ ॥

#### श्रीधरखामी।

रजश्च तमश्च ये च तत् प्रभवा भावाः कामाद्यः एतैरनाविद्धम् अनिभृतम् । प्रसीद्ति उपशास्यति ॥ १९॥ भगवद्गक्तियोगतः प्रसन्नमनसः अत एव मुक्तसङ्गस्य ॥ २०॥

#### श्रीवीरराघवः

कथमभद्रेषुनष्टेष्विपमिकभेवतीत्रज्ञाह तदेति नृगांसततंत्रहत्सेवैवधमस्तस्मादभद्रेषुनष्टेषुतन्मूलाः चित्तविक्षेपावरगाहेतवोरजस्त मसोभीवाधमीःकार्यमूताइतियावत्येकामलोभादयःसंति आदिशब्दश्राह्याःकोधमोहाद्यस्ते सर्वेनश्यंतिनष्टेषुचरजस्तमोभावेषुपते रजस्तमोभावेरनाविद्धमविक्षिप्तमिवमूढंचातपवसत्त्वेरजस्तमोभ्यामनभिभूते सत्त्वगुंगोस्थितंसत्त्वप्रधानसत्तिस्थरं सदितियावत्र्यसीदिति प्रसन्नेचचेतसिनैष्ठिकीभक्तिरप्युद्भवतीतिभावः॥ १९ ॥

तदेवाह्यविमिति ॥ पवमुक्तरीत्याप्रसन्नंमनोयस्यतस्यविरक्तस्यपुंसः नैष्ठिकीभक्तिभवतीतिशेषः तस्माचभक्तियोगाद्भगवक्त विज्ञानंभगवत्स्वरूपगुण्यायायात्म्यसाक्षात्कारात्मकंज्ञानंजायते दृष्टदृत्यनंतरोक्तेः तश्चक्षानंपरभक्तेःफलम् "भक्तचात्वनन्ययाद्याप्ययद्यविविद्योर्जुन ॥ क्षातुंद्रष्टुंचतत्त्वेनप्रवेष्टुंच परंतपेतिवचनात् ॥ २०॥

#### श्रीविजयध्वजः।

सर्वामंगलनाशफलमाह नष्टेति लिंगशरीरमंगपर्यंतममद्राणांसंभवातप्रायेष्वित्युक्तं नैष्ठिकीअचला उत्तमःउद्गतदोषःइलोकःकीर्ति-र्यस्यसतथोकःतस्मिन् ॥ १९ ॥

मिक्तफलमाहतदेति यदाहरावचलामिकस्तदायेरजभादयोभावाः एतैरनाविद्धमसंसक्तंशुद्धसत्त्वेस्थितंवा बल्ज्ञानसमाहारविति ह रौस्थितंवाचेतःप्रसीदित सकलदोषविधुरतयानिरंतरंपरमात्मानंस्मरतीत्यर्थः रजस्तमोश्यांभावउत्पत्तियेषांतेतथोकाः कामलोभादयः चकारात्प्रमादादयइतिवा ॥ २० ॥

#### क्रमसंदर्भः।

तदैव "त्रिभुवनविभवहेतवेऽप्यकुगठस्मृतिरित्याधुक्तरीत्या सब्वेवासनानाशात चित्तं शुद्धसत्त्वमग्नं सत् भगवत्तत्त्वसाक्षात् कार-योग्यं भवतीत्याह तदेति ॥ १९ ॥

एवम् पूर्व्वोक्तप्रकारेण प्रसन्नमनसस्ततो मुक्तसङ्गस्य त्यक्तकामादिवासनस्य भक्तियोगतः पुनरिप क्रियमाणात् तस्मात् विश्वानम् साक्षात् कारः मनिस विद्वर्वा भावनाम् विनेवानुभवी यः स जायते ॥ २०॥

#### सुबोधिनी।

पतावत्पर्यतपुरुषप्रयतः अग्निमस्त्यमेवभवतित्याह तदेतित्रिभिः ॥ तदातु वित्तस्यखरूपं नश्यित त्रिगुणात्मकं हितत् तथाच खखकार्यगुणाः कुर्वत्येव तथाच तद्धृद्यंकदाचिद्पिभगवदासक्तं न भवित यदापुनः रजस्तमसोः कारणभूतयोः सत्त्वताभवित यथास्पर्शमिर्णस्पर्शेणताम्नलोहयोः सुवर्णता तथाच त्रिभिनिर्मितं पात्रं सर्वखर्णभवित तथाभक्त्वास्पृष्टं चित्तं सर्वसत्त्वंभवित रजस्तमोभावाः
कामकोधादयः कामलोभादयश्चमिश्रत्वभावाः चकारान्मिश्रा अन्येपिभावाः ते तदस्थतयानिर्दिष्टा येचप्रसिद्धामोहादयस्तान् सर्वात्गतकामकोधादयः कामलोभादयश्चमिश्रत्वभावाः चकारान्मिश्रा अन्येपिभावाः ते तदस्थतयानिर्दिष्टा येचप्रसिद्धामोहादयस्तान् सर्वात्गतक्वानिवनिर्दिश्चति अत्तप्वनप्रथमार्थे कियासंबंधः नन्नतेआगंतुकंप्राप्ताअपिपूर्ववासनयाकथं चित्तेननसंवध्यते इत्यतआह चेतद्दित एतेहि
स्वक्षपाः मुलगुणाव्यतिरेकेणानवेधनसमर्थाः अतप्तैरनिवद्धं चित्तं स्थितंभवित तदालयावस्थांप्राप्नुवद्यपि चित्तं निरंतरोत्पन्नभक्तग्चस्वक्षपाः मुलगुणाव्यतिरेकेणानवेधनसमर्थाः अतप्तैरनिवद्धं चित्तं स्थितंभवित तदालयावस्थांप्राप्तिकाः ॥ १९ ॥
रोधेनभूतसत्त्वनिमित्तं भगवदावेशेनप्रसीदित प्रसादोहितेनकार्यकर्त्तृणां सर्वकार्यसिद्धि हेतुप्रकाशविशेषः ॥ १९ ॥

राधनभूतलायाम् व नायपात्रावात्रावात्रावात्रावात्रावात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्राव्यात्रात्रात्र विवयज्ञातं तदाह प्रविमिति । प्वंपूर्वोक्तप्रकारेग्णं स्थिरसाधनपरं प्रयाप्रसम्भमनोयस्यमनसः सत्त्वात्ममवद्गक्तियोगत इतिअंतः करणा मिति सर्ववस्तूनांतत्त्वज्ञानं भवतिनतुभगवत्स्वरूपज्ञानंतस्य गुणातात्त्वेन गुणाकार्यगम्यत्वाभावात् अतआह भगवद्गक्तियोगत इतिअंतः करणा मिति सर्ववस्तूनांतत्त्वज्ञानं भवतिनतुभगवत्ज्ञानं "भक्त्वामामिभजानातीतिवाक्यात् तत्त्वपदेन यावानित्याद्यथः परिगृहीतः विपदेनकरतलामलक् प्रसादोभक्त्वार्थभवभक्तियाये "भक्त्वामामिभजानातीतिवाक्यात् तत्त्वपदेन यावानित्याद्यथः परिगृहीतः "विषयाविष्टिचनानां विष्णवा भावत्रकान्त्रविष्ठाः अत्रसंन्यास्यकारणात्वम् ॥ २०॥ वदाः सुदूरत"इतिन्यायेन परित्यागव्यतिरेकेण नभगवदावेदाः अतोनसाक्षात्कारइतिसंन्यासस्यकारणत्वम् ॥ २०॥

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

रजस्तमोश्यां भाव उत्पत्तिर्येषां ते विश्लेपलयादयः । आदिशब्दात् कोधमोहमात्सर्याशा अनाविद्धम् अविकृतं भवति तेन विषये-ध्वरुच्या श्रवणकीर्त्तनादिषु खादुत्वभाणलक्षणा विचर्भवतीत्यायातम् । तेन पूर्वदशायां कामलोभाद्यस्तीक्षणशरायितराविद्धं चेतः कथं प्रसीदतु कथं वा कीर्त्तनादेः सम्यगाखादं लभताम् न हि व्यथाजर्जरितस्यामादिकं सम्यक् रोचते इति भावः । ततश्च सत्व शृद्धसत्त्वमुत्तीं भगवति स्थितम् आसक्तम् ॥ १९॥

शुक्षस्त्वपुत्र । प्राप्ति पूर्विकं प्रतिक्षणं भगवतः कृष्णस्य भजनं कुर्वतः प्रसन्नमनसः उत्पन्नरतेरित्यर्थः रत्या विना सर्व्धा एवमनेन प्रकारेणासिक पूर्विकं प्रतिक्षणं भगवतः कृष्णस्य भजनं कुर्वतः प्रसन्नमनसः प्रमातस्माश्च भगवतस्तन्त्वस्य खरूपगुण- विषयासंस्पर्शस्य विश्वानमनुभवः इत्यनुसंहितस् भक्तेः फलमुक्तम् । "जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानश्च यद्हेतुकिमिति यत् पूर्विमुक्तम् तिदि- कृषिक श्वयम् । मुक्तसङ्गस्य उत्पन्नवैराग्यस्य ॥ २० ॥ इसेव श्वयम् । मुक्तसङ्गस्य उत्पन्नवैराग्यस्य ॥ २० ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

वरज्ञआदयः वेचतज्जाः कामाद्याः पतैः अनाविद्यम् अनिभूतंचेतोयदाभवति तदासत्त्वेस्थितंसत्प्रसीदाति ॥ १९ ॥२०॥२१ ॥ २२ ॥

### भिद्यतेहृदयग्रन्थिश्छिद्यन्तेसर्व्वसंशयाः । चीयन्तेचास्यकर्मागिदृष्टएवात्मनीश्वरे ॥ २१ ॥ अतोवैकवयोनित्यंभक्तिंपरमयामुदा । वासुदेवेभगवातिकुर्वन्त्यात्मप्रसादनीम् ॥ २२ ॥

#### भाषा टीका i

तव रजो गुगा तमो गुर के विकार काम लोमादि कों सैं चित्त विद्ध नहीं हो सक्ता है। सक्त गुगा में स्थित होकर प्रसन्न होजाता है ॥ १९ ॥ नवीं

इस भांत जब भगवान को भक्ति के योग से मन प्रसन्न हो जाता है तब मुक्त संगजन को भगवान के तत्त्व का ज्ञान होजाता है।२०।

#### श्रीघर्द्समी।

श्वानफलमाह भिद्यत इति । हृदयमेव त्रन्थिः चिज्जडग्रन्थनरूपोऽहङ्कारः । अतएव सर्व्वे संशयाअसम्भावनादिरूपाः । कर्माण्यनार-व्यक्तलानि । आत्मिन आत्मस्वरूपभूते ईश्वरेदष्टे साक्षात् कृते सित । एवकारेशा ज्ञानानन्तरमेवेति दर्शयति ॥ २१ ॥ अत्र सदाचारम् दर्शयसुपसंहरति अत इति । आत्मप्रसादनीं मन; शोधनीम् ॥ २२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

एवंसाक्षात्कारपर्यंतभगवद्भक्तियोगसाध्यंफलमाह भिद्यतइति आत्मनिपरमात्मनीश्वरेभगवितहष्टएवहष्टमात्रेसत्येवास्यद्रष्टुः पुंसःसर्वकर्माणिभगवत्प्राप्तिप्रतिवंधकानिउत्तरपूर्वाघरूपाणिक्षीयंतेनश्यंत्यतप्वतन्मुलकाःस्वसंशयाःनश्यंति सर्वशब्देनान्यथाञ्चानिवपरी तञ्चानाञ्चानसंग्रहः ततस्तन्मूलकोहृद्यग्रंथिवद्निर्मोच्योऽहंममाभिमानोभिद्यतेसमूला संसृतिर्निवर्ततेतिन्निवृत्तौचब्रह्मप्राप्तिस्तद्गुभवश्चा यत्निसिद्धइतिभावः॥ २१॥

उक्तार्थस्यानुष्ठानंदर्शयति अतइति यतोमोक्षपविनरितशयपुरुषार्थस्तत्साधनंतुमाक्तरेवातःकवयोनिरितशयश्रेयस्तत्साधनाभिङ्गाः परमयामुद्दाभगवति वासुदेवेमिक्तमात्मप्रसादिनींकुर्वति ॥ आत्मप्रसादिनींभिक्तकुर्वतीत्यनेनारुष्यभिक्तयोगस्यचित्तप्रादोपिशनैःश-नैः मिक्तयोगादेवभवतीतिसुचितम् ॥ २२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

निरंतरंहिरस्मरगाफलमाह एविमिति भगवत्तत्विज्ञानंखिंबि।परोक्षविज्ञानम् ॥ २१ ॥ अपरोक्षज्ञानफलमाह भिचतइति आत्मिनित्हत्कमलकांगिकामध्येखिंबेसर्वेश्वरेदृष्टपच तिस्मन्क्षगाएवत्हद्यग्रंथ्याख्यिलगंमनोभिचते अपरोक्षज्ञानफलमाह भिचतइति आत्मिनित्हत्कमलकांगिकामध्येखिंबेसर्वेश्वरेदृष्टपच तिस्मन्क्षगाएवत्हद्यग्रंथ्याख्यिलगंमनोभिचते तिस्मन्भित्रेक्षसितिईश्वरादितत्त्वविषयाः सर्वसंशयाः छिद्यंते तेषुछिन्नेषुस्तसुपूर्वकृतपापकर्मागिक्षीयंते उत्तरागिनिक्षिण्यंतहत्येकान्वयः संसारच्छेद्वनमेवापरोक्षज्ञानफलमितिभावः आत्मिनिजीवेईश्वरेबद्धागिजीवेद्देचेतिपरस्परभेदिनिरासेनाहमेवब्रह्मेत्येवंदृष्टेव्यतिहारन्याक्षेन त्हद्यग्रंथिरहंकारःभिचतइतिकेचित्तद्युक्तं श्रुतिस्मृतिविरोधात् सत्यमात्मा सत्योजीवः द्वासुपर्णावित्यात्मिनिभिदाबोधः भेदमृष्टव भिमानेनेतिभागवतज्ञानादद्वेतज्ञाननिषेधाच ॥ २२ ॥

### क्रमसंदर्भः।

तस्य च प्रमानन्दैकरूपत्वेन खतः फलरूपस्य साक्षात्कारस्यानुषङ्गिकं फलमाह भिद्यत इति । हृद्यग्रन्थिरूपाद्यहङ्कारः । सर्व्यसं-रायादिल्लद्यन्त इति श्रवणामननादिप्रधानानामपि तस्मिन् दृष्ट एव सद्वें संशयाः समाप्यन्त इत्यर्थः । तत्र श्रवणोन तावज्ञेयगतासम्भा-वना ल्विते । मननेन तद्गतविपरीतभावना । साक्षात्कारेणात्मयोग्यतागतसम्भावनाविपरीतभावने इति न्नेयम् । श्रीयन्ते तदिन्छामा-नेशीव तदाभासः किश्चिदेव तेष्वविशिष्यत इत्यर्थः ॥ २१ ॥

त्रेगीव तदामाल । नाम अप्रति । न केवलमेतावद्गुगात्वं तस्याः किश्च परमया मुदेति कम्मीनुष्टामवस्य अत्र प्रकर्गाार्थेसदाचारम् दर्शयन्त्रपसंहरति अत इति । न केवलमेतावद्गुगात्वं तस्याः किश्च परमया मुदेति कम्मीनुष्टामवस्य अत्र प्रकर्गाार्थेसदाचार्थे वा भक्तवन्त्राचार्थेतावत् साधनकाले साध्यकाले वा भक्तवन्त्राचार्थेतावत् साधनकाले साध्यकाले वा भक्तवन्त्राचार्थेतावत् साधनकाले साध्यकाले वा भक्तवन्त्राचार्थेतावत् साधनकाले साध्यकाले वा भक्तवन्त्राचार्थेतावत् साधनकाले साधन

## सत्त्वंरजस्तमइतिप्रकृतेर्गुगास्तैर्युक्तःपरःपुरुषएकइहास्यधने । स्थित्यादयेहरिविरिक्किहरेतिसंज्ञाःश्रेयांसितत्रखळुसत्त्वतनोर्नृगांस्युः॥ २३ ॥

#### खुबोधिनी।

प्वंविद्यानेजाते यत्फलंतदाह भिद्यतहति चिद्विचंद्रथिरिबद्याकार्यतत्ञ्ञानेनिवर्तते यस्मिन् ह्याते सर्वमिदं विद्यातं भवतीति सर्ववस्तुनायथार्थक्षानेसर्वे संदेहा निवर्तते मिथ्याञ्चान सिललासिकायामात्मभूमौकर्म बीजंप्रराहित नतुतत्त्वज्ञान निदाधनिष्पात सिललतयोषरायामितिकर्मार्यपिक्षीयंते पतत्सर्वेनयेनकेनापिप्रकारेण जातज्ञानकार्य किंतु ब्रह्मात्मेन्याजुभवकार्यमित्याह हृष्टपवेति आत्मत्वेन भगवद्जुभवेनान्यथेत्येवकारार्थः आत्मनोद्यनिश्वरत्वेनजाताः पदार्था ईश्वरत्वेनानिवर्तते अन्यस्येश्वर्यत्वे ज्ञातेऽपि नह्यन्यस्येश्वरत्वेत् ज्ञातं क्षानंस्वस्यसंसारहेर्त्भवित ॥ २१॥

पवंसर्व प्रकरणार्थं निरूप्यकुत्र पुरुष प्रयत्नः पर्यवसितइति संदेहं प्रयत्न विषयमाह अतोवे कवयश्ति ॥ शुद्धेसत्त्वातमके अंतः करणे आविर्भृते भगवति परम प्रेमकर्तव्यमिति प्रयत्न निष्कर्षः तेन भगवत्प्रसादः अंतः करणे भगवत्साक्षात्कारोवितिफलंवे निश्चयेन स्वस्यै वंनिश्चयः कवयः शब्दतात्पर्यभिक्षाः शब्दबल विवेकादेवमर्थप्रत्यय इतिभावः साधनस्यसुखात्मकत्वाद्पिसदा भक्तिकुर्वतिक्षग्रोक्षग्रे प्रातिक्षग्रां भगवदाविर्भावेन परमा मुच्चोत्त्पद्यते विषयस्तु सत्त्वगुणाविर्भृतः भक्तिश्चज्ञान जनिका प्रयत्न भक्तौ साधनत्वेनेति शब्द बलविवेकश्च इति प्रथमाधिकारः ॥ २२ ॥

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

हृद्यग्रन्थिरविद्या भिद्यत इति कर्मकर्त्तरि प्रयोगेणाविद्याध्वंसो भक्तानामनतुसंहितं फलम् । एवमेव छ्द्यन्ते सर्व्वसंशयाः असम्भान् वानादिरूपाः । आत्मनीति ईश्वर इत्यस्य विशेषणाम् । यद्वा आत्मन्येव मनस्येव दष्टे किम् पुनः साक्षाद्द्दष्टे सतीति स्फूर्निसाक्षात्कारा-बुक्तो । "सतां कृपा महत्सेवा श्रद्धा गुरुपदाश्रयः । भजनेषु स्पृहाभक्तिरनर्थापगमस्ततः ॥ निष्ठा रुचिरथासक्तीरितः प्रेमाथ दर्शनम् । हरेर्माधुर्यातुभव इत्यर्थाः स्युश्चतुर्दश् ॥ २१ ॥

परमया मुदेति साधनदशायामपि कष्टाभाव उक्तः॥ २२॥

#### भाषा टीका।

जब अपने आत्मा में भगवान का दर्शन होजाता है तब इस के हृदय की गांठ खुळ जाती है. सब संशय छिन्न होजाते हैं. सब कमी का क्षय होजाता है ॥ २१ ॥ इसीसें कविजन नित्यही परम आनंद से, वासुदेव भगवान में आत्म प्रसादनी भक्ति करते हैं ॥ २२ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

वासुदेवे मिक्तं कुर्वन्तिति भजनीयविशेषो द्शितः तदेवोपपादियतुं ब्रह्मादीनां त्रयागाम् एकात्मकत्वेऽपि वासुदेवस्याधिक्यमाह शक्तिमिति । इह यद्यपि एक एव परः पुमान् अस्य विश्वस्य स्थित्यादये स्थितिमृष्टिलयार्थे संक्षाः केवलं भिन्ना धत्ते । हरिविरिश्चिहरा इति वक्तव्ये सन्धिरार्षः । तत्र तेषां मध्ये श्रेयांसि ग्रुभफलानि सत्त्वतनोवीसुदेवादेव स्युः ॥ २३ ॥

#### द्वीपनी।

सत्त्वमिति । (सत्त्वं सत्वमिति च द्विविध एव शब्दः कोषादिषु प्रसिद्धः ।) अयम्भावः ब्रह्मविष्णुमहेशानां भेदस्तावन्नास्त्येव एकः-परः पुरुष इत्युक्तेः । तथापि यत् सत्त्वतनोद्वासुदेवादेव श्रेयांसि स्युरित्युक्तम् तद्वस्तुतारतम्यान्न किन्तु गुणतारतम्यादेव । एवश्च सत्त्वोपाधिबद्धाणो हरस्य च सेवया श्रेयांसि स्युरेवेति विचारितम् दशमस्कन्धे (८८ अध्याये) हरिहि निर्गुणः साक्षादिति पश्चमश्लोक्तिवायाम् स्वामिपादैरिति व्याख्यालेशः ॥ २३॥

#### श्रीवीरराघवः।

ननुसृष्ट्यादिकारगेषु ब्रह्मरुद्वादिवेवेषु सत्सुकथं वासुदेवअकिरेव मोक्षोपायत्त्वेनोच्यत इतिशंकायामाह सत्त्वमित्यादिनायावद्घ्याय तत्रमगवान्वासुदेवहिरएयगर्भरुद्राख्यजीवशरीरकतयास्वावतार रूपेगाचजगत्मा शिस्थाति द्वासुदेवभक्तिरेवमेाक्षेापायभूतातच्छरीरभूतहिरएयगर्भादिभक्तिस्क"यायायांयांतनुभक्तइत्याद्युक्तरीत्यातत्तव्लोकादिप्राप्त्युपायः यद्यपि हिरएयगर्भादिजीवशरीरकतयातद्रपेणावस्थितः परमात्मैवतथापिकर्तृत्वभोक्तृत्वादिकं जीवगतमेवन परमात्मगतम् धर्मागांशरीरिग्रिप्रसिक्तरित्ययमार्थोऽत्रप्रतिपाद्यतेसत्त्वमितिसत्त्वादयस्त्रयःप्रकृतेर्गुगाः प्रकृतेरितिसावधारगंविवाक्षितंप्रकृतेरेव गुगानित् जीवस्येश्वरस्यवेत्यर्थः तैः सत्त्वादिभिर्युक्तः परःपुरुषःपरमपुरुषः योगोऽत्रशरीरात्मभावरूपोविवक्षितःएक सृष्टेःप्रागितिशेषः "सदेव एकत्वंचकार्यद्शा वस्थानामरूपविभागप्रयुक्त बद्धप्रतिसंबंधिनामरूपविभागाभाव सीम्येदमग्रआसीदित्यादिश्रत्यनुरोधात् ॥ प्रयुक्तविभागानर्हसूक्ष्मचिद्चिच्छरिकत्वं सृष्टेःप्राक्नाम रूपविभागा नर्हसूक्ष्मचिद्चि च्छरीकतये कएवसन्नित्यर्थः चिद्चिद्गत्मकस्यजगतः स्थित्याद्येस्थितिसृष्टिलयार्थम् स्थितिप्राथम्यं भगवत्प्राथम्य विवक्षया परमपुरुषपवब्रह्यसूपेगातन्मध्ये स्वावताररूपेणस्थितिसृष्टचादिकृद्धरिविरंचिहरेतिसंज्ञाबद्धविष्णुष्द्रसंज्ञाःइतिःप्रकारार्थः तेनरूपसंप्रहः हर्यादिरूपाणितद्वाचकानि बिमर्त्तितत्रसत्त्वंततुः शरीरमधिष्ठेयं यस्यतस्मात्सत्वप्रवर्त्तकाद्विष्णोरेवनृणां भजतांश्रेयांसिक्षाननिष्पत्ति भवनिवृत्तिपरप्राप्तिरूपाग्णिस्युः खलुसर्वकारणत्वात्सर्वस्मात्परत्वात्सम्यक्ञानवर्द्धकसत्त्वप्रवर्त्तकत्वाचवासुदेव भक्तिरेवमोक्षप्रदेत्यर्थः नन्वेकपवहर्यादि संज्ञाधत्तेइत्येननहर्यादीनां परस्परंसंज्ञाभेद पवनवस्तुभेद इतिप्रतीत्या त्रयाणामैक्यमेवद्रष्टव्यंमतथाचश्रूयते "ब्रह्मा नारायगः शिवश्चनारायग्राइति स्मर्थतेच ब्रह्मानारायगाख्योसीकल्पादौ भगवान्यथा प्रजाःससर्जभगवान् ब्रह्मानारायगात्मकः ततःसमगवान्विष्णु रुद्ररूपधरोज्ययः । ततःकालाग्निरुद्रोसोभूत्वासर्वहरोहरिः सर्गस्थित्यंतकारिखीं ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकाम संभा संयातिभगवानेकपवजनाईनइति ॥ ततश्चवासुदेवस्य सर्वस्मात्परत्वनोपपद्यते किंचेकएवहर्यादि संज्ञाधत्तद्दर्यनेननहर्यादिश्यः परंतत्त्वमस्तीत्यवगम्यते युक्तंचैतत् अतप्वविष्णुर्भन्वादयःकालःयस्मिन् ब्रह्माबिष्णुरुद्रेद्राः सर्वसंप्रस्रयंतेतेनेदंपूर्शीपुरुषेगासवेम ततोयदुत्तरतरंतदरूपमनामयम्यपतद्विदुरमृतास्तेभवंतीति विष्णोरिपपरतत्त्विवभूतित्वंतत उत्पत्तिःपुरुषशब्दिनिर्देष्ट नारायगातिरिक तत्त्वस्यमे। क्षहेतुत्विमत्यादिकंसंवैश्रूयमाग्रांसंगच्छते ॥ किंचामृतस्यैषसेतुरिति सेतुवद्भगवते। ऽन्यप्रापकत्वोकेश्च त्रिमृत्युंचीग्रामेव सर्व जगत्कारगामिति नारायगास्यनपरत्वंनापितद्भजनान्मुक्तिःकारगांतुध्येयमितिश्रुतिबिरोध प्रसंगादितिचेदत्रीच्यते ॥ नतावित्रमूर्येक्यमुपपश्रं नारायगाद्रह्याजायते नारायगाद्रद्वोजायते नारायगाद्वादशा दित्यारुद्रावसवः सर्वागिछंदांसि नारायगादेवसमुपद्यते ॥ एकोहवैनारा-यगाआसीन्नब्रह्मानेशान एकोहवै नारायगाआसीन्नब्रह्मानचशंकरः ॥ समुनिर्मूत्वा समर्चितयत्ततएते व्यजायंताबेश्वे हिरगयगर्भोग्निर्य मवरुण्हद्रेंद्राः यन्नाभिपद्माद्भवत्सहमहात्मा प्रजापितःत्त्रब्रह्मा चतुर्मुखोजायत सोग्रेभूतानां मृत्युमसृजत ॥ ज्यक्षेत्रिशिरस्कंत्रिपादं संडपरशुम् ॥ ब्रह्मणःपुत्राय ज्येष्ठाय ब्रह्मादक्षादयःकालस्तथैवाखिलजंतवःबिभूतयो हेरेरेताजगतः सृष्टिहेतवेः रुद्रः कालांतकाद्या श्चसमस्ताश्चैवजंतवःचतुर्विधाश्चतसर्वेजनार्दनिवभूतयः॥ अद्योनारायगोदेवस्तस्माद्रह्माततोभवः॥ परोनारायगोदेवस्तस्माज्ञातश्चतुर्भुखः तस्मादुद्रोभवदेवीकइतिब्रह्मग्रोनाम्हशोहंस्वदेहिनाम् आवात्वदंगसंभूतीतस्मात्केशवनामभाक् ॥ तवांतरात्माममचयेचान्येदेहिसं क्षिताः ॥ सर्वेषांसाक्षिभूतोऽसीनग्राद्यः केनचित्कचित् ॥ पतीद्वीविबुधश्रेष्ठौप्रसाद क्रोधजीस्मृतौ ॥ तदादार्शितपंथानौसृष्टिसंहारकारकौ ॥ विष्णुरात्माभगवतोभवस्यामिततेजसः ॥ सृष्टिततःकरिष्यामित्वामाविश्यप्रजापते ॥ हरोहरतितद्वशःइत्यादि श्रुतिस्मृतिभ्यःब्रह्म रुद्रयोः परमपुरुषसृज्यत्वतद्विभूतित्वतद्वरत्वतत्प्रसादायत्तज्ञानवत्त्वतच्छरीरत्वादिधम्मागांतदेभयविरुद्धानामवगतत्वात्रह्मानारायगाः रुद्रयाः परमपुरुषसृज्यत्वताद्रन्यापापन्य प्राप्तापापन्य करिष्यामित्वामाविश्यप्रजापते हरोहरतितद्वशहतिप्रमाणांतरानुगुरुयेनांतरा शिवश्चनारायग्रहत्यादि सामानाधिकग्यस्यचसृष्टिततः करिष्यामित्वामाविश्यप्रजापते हरोहरतितद्वशहतिप्रमाणांतरानुगुरुयेनांतरा ग्राप्यमारापण्याप्याप्य त्यामाणाच्या विवास विद्यारियर्थतत्वेनाष्युपपत्तेः॥ बहुप्रमागावगतभेदस्यनिर्वाहासंभवाच नापिनारायगादुत्ती ग्मतयाआद्यत्यायकरणान्यायकरार्वात्याः राजाः । पर्तिविश्वस्यात्मेश्वरम् यमंतः समुद्रेकवयोवयंतिनतस्येशेकश्चनतस्यनाममहद्यशः ॥ णीतत्त्वांत्तरमस्तिविश्वमेवदंषुरुषस्तिद्वश्वमुप्जीवति॥पर्तिविश्वस्यात्मेश्वरम् यमंतः समुद्रेकवयोवयंतिनतस्येशोकश्चनतस्यनाममहद्यशः ॥ णतत्त्वात्तरमास्तावश्वमवद्पुरुषस्ताद्धत्वपुरुषानाः । परात्परयन्महतोमहातम् नतत्समश्चाभ्यधिकश्चहर्यते अग्निरवमोदैवानांबिष्णुःपरमः मत्तःपरतरंनान्यत्किचिद्स्तिधनंजय आभू त्रात्परयन्महतामहातम् नतत्त्तमञ्चारमान्यासत्वारायमाः स्मृतः नपरः पुंडरीकादृक्षाश्यतेषुरुषर्भः । परंहिषुग्डरीकाक्षान्नभूतो पालक्ष्मान्त्रभ्रान्त्रभ्रतामहान् प्कार्त्तभाषाम् । वासुदेवात्परमस्तिदैवतम् नवासुदेवंप्रशिष्यसीदिति देशतःकालतोव्याप्तिर्मोक्षदत्वं । नमिवष्यति नविष्णोःपरमोदेवोविद्यतेनृपसत्तम् नवासुदेवात्परमस्तिदैवतम् नवासुदेवंप्रशिष्टान्यस्ति । विष्णोःपरमोदेवोविद्यतेनृपसत्तम् नवासुदेवात्परमस्तिदैवतम् । नविष्णोःपरमोदेवोविद्यतेनृपसत्तम् । नवस्त्रभ्रता तथैवच हरेविम् तिमात्रं तुकेवलं संप्रभाषितम् नदेवः केशवात्परः राजाधिराजः सर्वेषांविष्णुर्बह्ममयोमहान् परः पराणां सकलानयत्रहेशा द्यःसंतिपराचरेशहत्यादिभिर्बहुभिःप्रमासैर्विष्णोः सर्वोधिकत्वप्रदर्शनपूर्वकंतदिधक देवतांतरिनेषेधात ब्रह्मविष्णुरुद्रेद्रास्तेसर्वे वयारायात्राचारायात्। सब्द्वास्यमाणाव न्याः संप्रस्थंतइत्यत्रतिष्णोक्तपत्तिरवतारद्धपास्वसंकलपमूलोच्यतेनतुब्रह्मब्द्वादीनामिवक्मेमूला कारणावाक्येष्वेकस्यवकृत्स्रजगत्कारणाः त्त्रव्यापारम् । अयागांसमुचित्यकारग्रत्वानुपपत्तेः कारग्रत्वोपास्यत्वबोधकवाक्यगतानांशिवशंश्वादिसामान्यशब्दानांछागपशुन्यायेनावे-त्वावपनाभः वर्षाः भराष्याः वर्षाः श्रोषवाचिनानारायगाराः वर्षाः पर्यवसानोपपत्तेः अचितः सर्वकारगत्वानुपपत्तेरीक्षगाद्यथेविरोधाचरुद्रादीनाम् अनपहतपाप्मावाः अहमस्मी त्यादिनाकार्यत्वकर्मवश्यत्वादिश्रवणाद्वासुदेवादिपदवाच्यस्यकुत्रापिकर्भ वश्यत्वाद्यश्रवगात् तदुत्पत्तेश्चअजायमानोबहुधाविजाय त्यादणणणाः अजायमान्द्रविकर्मायत्तोत्पत्तिविधाचकर्मस्तत्वस्यापोदितत्वाचेतरोत्पत्तेस्तथापवादकाभावाच ततोयदुत्तर त्रिमृत्तिमध्येरक्षकत्वेनावतीर्ग्यस्य नारायग्रस्य अस्येशानाजगतोविष्णुपत्नीत्यादिनावगतस्याद्भयः तरमित्यनेनाकिमुच्यतेइतिचेतुच्यते महापुरुषत्वंवदाहमेतिमत्यनेनैववाक्येनप्रत्यभिज्ञाप्य तस्यश्रियःपतित्वमहापुरुषत्वादिश्रवणात्तमेवस संभतद्दयत्रपूर्वनुवाकोक्तं संस्थार पर्वे विश्व क्षेत्र क् सर्वव्यापीचभगवानितिसहस्रशीर्षत्वादिधर्मान्त्रत्यभिक्षाप्यतयोविषय सर्वाननशिरोत्रीवः सर्वभूतगुहाशयः अत्यापाः यो रिध्येप्रयुक्तस्य ततोयवुक्तरतरमितिवाक्यस्यसंदंशन्यायेन नारायगापरत्वस्यावस्यकत्वात्तत्वस्यस्यशब्दतोऽर्थतश्चप्रत्यमिकापिततस्य ज्यतिरिक्तंपरमुत्कृष्टंनास्तीतिपूर्ववाक्येनाक्तम् पुरुषमवपरामृश्यतद्वयितिरक्तस्यो

ij

1

#### श्रीवीरराघवः

त्तरत्वप्रतिपादनेपूर्वापरव्याघातप्रसंगाचततउक्तितुभ्यःयत्पुरुषराब्दवाच्यंतत्त्वंतदेवीत्तरं तत्त्वमितिषमृतस्यैषसेतुरित्यनेनापिविष्णोर्नत स्वांतरप्रापकत्वमुच्यते अपितुस्वप्राप्तौस्वयमेवहेतुरितिदिक् ॥२३॥

#### श्रीविजयध्वजः

निगमयतियतइति अतोनिःशेषदुःखनिवृत्त्यलंबुद्धिगाचरसुखानुभवलक्षणमोक्षाख्यपुरुषार्थलाभाद्धिकवयःपरमयामुदाआत्मप्रसादनीं मिक्कवासुदेवेभगवतिकुर्वतीत्येकान्वयः आत्मप्रसादनींमनसोनैर्मल्यापादनींविष्णुप्रसादजननींवा मुक्तामुक्ताश्चेत्युभयेऽपिहरौभक्तिकुर्वती त्येतस्मिन्नर्थेवैशब्दः॥

### क्रमसन्दर्भः।

तदेवं कर्मज्ञानवैराग्ययत्नपरित्यागेन भगवद्गिकरेव कर्त्तव्येति मतम् । कर्मविशेषक्पं देवतान्तरभजनमि न कर्त्तव्यमित्याह् सप्तिमः। तत्रान्येषाम् का वार्त्ता सत्यिपि श्रीभगवत एव गुणावतारत्वे श्रीविष्णुवत् साक्षात् परब्रह्मत्वाभावात् सत्त्वमात्रोपकारकत्वा-मावान्तः। प्रसुत रजस्तमोवृंहण्यत्वाच ब्रह्मशिवावपि श्रेयोश्यिमिनीपास्यावित्याह् सत्त्वमिति द्वाश्याम् । इह ययप्येकप्त पुमान् अस्य मावान्तः। प्रसुत रजस्तमोवृंहण्यत्वाच ब्रह्मशिवावपि श्रेयोश्यिमिनीपास्यावित्याह् सत्त्वमिति द्वाश्याम् । इह ययप्येकप्त पुमान् अस्य विश्वस्य स्थितावृं स्थितिसृष्टिच्यार्थे तेः सत्त्वादिभिग्रुकः पृथक् पृथक् तत्त्वचिष्ठाता तथापि परः तत्त्वसंक्रिष्टः सन् हरिविरिश्चि-हरेति संक्षा भिन्ना धन्ते । तन्तद्वपृणाविभवतीत्यर्थः । तथापि तत्र तेषां मध्ये श्रेयांसि धर्मार्थकाममोक्षभक्तवाष्ट्यानि ग्रुप्तात्वाने स्थाविष्ठितसत्त्वशक्तेः श्रीविष्णापेव स्थुः । अयं भावः । उपाधिदृष्ट्या तौ द्वौ सेवमाने रजस्तमसोधीरमृहत्वात् भवन्तोऽपि धर्मार्थकामातिस्थान्त्र मानितिद्वाक्ष्यस्थानित्वः। तथोपाधित्यागेन सेवनाने भवन्ति। वश्च तत्र तत्र साक्षात् परमात्माकारेणाप्रकाशात् तस्मान्तःश्यां श्रेयांसि न भवन्तीति । अथोपाधिनदृष्ट्यापि श्रीविष्णुं सेवमानेसत्त्वस्य शान्तत्वात् धर्मार्थकामाअपि सुखदाः। तत्रनिष्कामत्वेन तु तं सेवमाने सत्त्वात्संजायते ज्ञानमिति केवव्यम् सात्त्विकम् ज्ञानमिति चोक्तेममोक्षश्च साक्षात् । अत उक्तम् स्कान्ते । "वन्धको भवपाशेनमवपाशाच्च मोचकः । केवव्यदः परम् ब्रह्म विष्णुरेव सनातनः, इति । उपाधिपरित्यागेन तु पश्चमः पुरुषार्थी मिक्तरेव भवति । तस्य परमात्माकारेगीव प्रकाशात् । तस्माच्छीनिष्णीरेव श्रेयांसि स्युरिति ॥ २३ ॥

### सुबोधिनी ।

तत्रविषये संदेहाः कोयंनियमः सत्त्वसूर्णावेव भक्तिःकर्त्तव्येति रजस्तमोसूर्ताविप भक्तिकरणं ब्रह्मज्ञानसाधकं तथाचिषणु भक्तिविष्ठिवादि भक्तिरिप ज्ञानसाधिका ब्रह्मणास्तुल्यत्वादित्यादोक्त्य तत्रनिर्द्धारमाह पंचिभः सत्त्वमित्यादिभिः ब्रह्मणो विशेष भक्तिविष्ठवादि भक्तिरिप ज्ञानम्बद्धारा तथासित उच्चावच त्वाभावेपि उपाधिबैदिष्ट्येनफल वैदिष्ट्यं नतुचैतन्य स्वरूपं भिद्यतेकेषां चिद्वैष्णावानां मतद्द्वतेपि गुणानब्रह्मणः तथासित उच्चावच त्वाभावेपि उपाधिबैदिष्ट्येनफल वैदिष्ट्यं नतुचैतन्य स्वरूपं भिद्यतेकेषां चिद्वैष्णावानां मतद्द्वतेपि गुणानब्रह्मणः तथासित उच्चावच त्वाभावेपि उपाधिकत्वेन स्वरूपमपि विलक्षणं स्यातकार्य बद्यात्त्रवायं व्यातकार्यं व्यातक

#### सुबोधिनी।

तस्माद्गुणप्रेरण्या तत्तत्कार्यकरणं संमवितप्रकृतेऽपितयाचेत गुणांतरपरं परयावनवस्थास्यात ततः क्षिचित्सहजागुणसंबन्धोवकव्यः तथासित स्वरूपमपि मिद्येतेतिचेत अत्रहिवहवोवादिनः पृथक २ निरूपयंति सांख्यास्तुनित्यसंबन्धं प्रकृतेसहः अन्यतुनास्त्येव संबन्धः प्रमादेवप्रतीयतहत्याहुः भागवत सिद्धांतेतु भगवतिसहजं कर्तृत्वं तत्रिकिचिद्वृपं प्रकृतिपुरुष विभेदेनद्विरूपत्वमापद्यते यथामौतिक निर्माणेभूतापेक्षा तथाप्राकृतनिर्माणे करण्येवनप्रकृत्यपेक्षानेतावता स्वरूपेदोषोवा संभवतिति एकपवपुरुषोऽस्य जगतः उत्पन्तिस्थ ति प्रकथार्थं गुणात्रयप्राददानः परपवपुरुषो ब्रह्मभूतः हरिविरांचे हरइति "सर्वोद्वद्वोतिमाषापकवद्भवति, इतिन्यायेन संज्ञात्रयंत्रपत्ति सुप्रमाणः सर्वत्राभिसंवध्यतेसंज्ञायाः स्वरूपप्रात्रत्वात्र प्रत्ययोत्पत्तिः यथादेवद्गेति संज्ञा इतिशब्दः प्रकारार्थश्चतेन अन्यापिसंज्ञा एकस्यवह्वयः संतीत्यर्थः तथाद्वेतेगुणाः कार्यार्थकरण्यत्वेन गृहीताअपिनिरंतर प्रहृणादुपाधि रूपा जाताः तेनयद्भजनंतदुपाधावेवपर्यवसितं भवतीतिसत्त्वोपाधिरेवसेव्य इत्यमिप्रायेणाह श्रेयांसीतितत्रेवंनिर्णयः सेवकः सेव्यं यादशंरूपं पश्यतिस्वस्यापितादशंरूपं संपादयतिसाधनानिचतानि यद्यपिअपहतपाप्मानंभगवंतम् अन्यथाकार्त्तुनशक्तव्यवित्ते तथापिजीव मन्यथाकुर्वत्येव ततश्चयादशेनरूपं साधनेनवानान्यथामावः तादशरूपवानेवद्यवार्ययोपासतद्वत्यत्र तथानिर्णायतः श्रेयांसिशुभफला नितत्रभजनीयरूपेषु खिवतिसंगतिः सोपपत्तिकासानिर्वात्त सत्त्वनोरिति ननुशब्दात् दृष्टोपाधित्वपुकंनृणांसाधारणजिवानां नित्यतानांतुतेन सहोपाधिरिति सर्वसुस्थम॥२३॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

एवं कर्मिक्षानादिकमतिक्रम्य भक्तेरेव यथाकर्त्तव्यत्वमुक्तम् । तथेव देवतान्तरोपासनामप्यपहाय भगदानेवोपास्य इत्युच्यते । स च भगवानेक एवापि क्रीडयावतरत्रनेकोऽपि भवति वहुभूत्यैकमूर्तिकमितिदशमात् । तस्यावताराद्विविधाः चिच्छक्त्वा मायाशक्त्या च । चिच्छत्त्वा मत्स्यकूर्मादयो भजनीया एव मायाशक्त्वा च ये सत्त्वरजस्तमोर्भिविष्णुब्रह्मच्द्रास्तेषु विष्णुरेव भजनीय इत्याह सत्त्व-मिति। इह यद्यपि एक एव पुमान आदिपुरुष: अस्य विश्वस्य स्थित्यादये स्थितिसृष्टिलयार्थे तैः सत्त्वादिभिर्युक्त एव हरिविरिश्चिहरा इति संज्ञा धत्ते । सन्धिरार्षः । पर इति गुर्गोर्युक्तोऽपि अचिन्त्यशक्त्या तेश्यो विहः पृथगवस्थित्यैव तेषामस्पर्शनात् परः अयुक्त इत्यर्थः । तदपि श्रेयांसि भक्तानामभीष्टानि । तत्र तेषु मध्ये सत्त्वतनोः । "भेजिरे मुनयोऽथात्रे भगवन्तमधोक्षजम । सत्त्वं विशुद्धं क्षेमाय कल्पन्ते येऽतु तानिहेत्युत्तरश्लोकदृष्ट्या विशुद्धसत्त्वात्मकशरीरात् हरेरेव स्युः। "साक्षी चेताः केवलो निर्शुगाश्चेति । सत्त्वाद्यो न सन्तिशे यत्र च प्राकृता गुगा इति हर्रिह निर्गुगाः साक्षात पुरुषः प्रकृतेः पर,, इत्यादिश्रुतिस्मृतिविरोधात्। हरी मायागुग्रस्य सत्त्वस्य युक्त-त्वेऽपि तस्ययोग एव । सत्त्वस्य प्रकाशरूपत्वादीदासीन्याच तेन सचिदानन्द्वस्तुनी महाप्रकाशस्योपरागासंभवात प्राकृतसत्त्वस्य न हि हरिशरीरारम्भकत्वम् । रजस्तमसोस्तु विक्षेपरूपत्वावरगारूपत्वाभ्यामुपकारकत्वापकारकत्वाभ्याश्च ताभ्यामानन्दस्य विक्षिप्तत्वमा-वृतत्वमित्युपरागसंभवात् ब्रह्मरुद्रयोरजस्तमस्तनुत्वमेवेति तयोः सगुगात्वं हरेनिगुगात्वश्च युक्तिसिद्धमेव । निगुगात्वंऽपि प्राकृतसत्त्वस्य प्रकाशरूपेण तत्समीपवर्त्तितया तत्र स्थितत्वाद्विश्वपालनलक्षणस्तद्धभीश्रीदासीन्येन हरी प्रतीयते। न च तेन तस्य निर्गुणत्वम व्याह तमिति वाच्यं संयोगसमवायसम्बन्धाभ्यां प्राकृतसन्वस्य तत्रासमभवात् । सामीप्यसम्बन्धेनैव तत्र स्थितत्वादिति । समितिज्ञानस्फू-क्ति साक्षात्कारादिदानेनैवासत्त्रीव। स्वभक्तपालनं तु स्वरूपभूतस्य शुद्धसत्त्वस्य धर्मोक्षेयः। किश्चात्र। ब्रह्मगो हिरगयगर्भत्वात्॥ नेतरो-ऽनुपपत्तः १।१।१७॥इति न्यायेनतस्येश्वरत्वाभावात्जीवत्वेनतद्वतिरजसिपरमेश्वरस्ययोगात्तत्रावेशादेवावतारत्वम् यदुक्तम् ब्रह्मसंहि-तायाम् । "भास्त्रान् यथारमसकलेषु निजेषु तेजः स्वीयं कियत् प्रकटयत्यपि तद्वदत्र । ब्रह्मा य एव जगदगडविधानकर्ता गोविन्दमादिपु-रुषं तमहं भजामि,, इति । शिवस्य तु जीवत्वाभावाद्गुशायुक्तेश्वरत्वमेव । यदुक्तं तत्रैव, क्षीरम् यथा द्धिविकारविशेषयोगात् संजायते न तु ततः पृथगस्ति हेताः। यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्याद्गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामीत्यतो ब्रह्मशिवयोर्मध्येशिवस्येश्वर-त्वमिति केचिदाहुः । केचित्तुतैर्युक्त इति नियामकसम्बन्धेन संयोगसम्बन्धेन सामीप्यसम्बन्धेन च योगो क्षेयः । तत्र सत्त्वादीनां निया-मकसम्बन्धन योगे सित पुरुषः स्वस्त्रक्षेण स्थितो निर्गुण एव भवति । रजसि तमसि च संयोगसम्बन्धेन योगे स एव पुरुषो ब्रह्म रुद्ध सगुगा एव भवति । सत्त्वे सामीप्यसंबन्धेन योगे स एव पुरुषो विष्णुः खरूपेगा स्थितो निर्गुगा एव भवति याचक्षते। अतएव योगो नियामकत्या गुगाः सम्बन्ध उच्यते । अतः स तैने युज्यते तत्र खांशः परस्य यः इति भागवतामृतकारिकार्थ उपपद्यत इति॥२३॥

### सिंद्धान्तप्रदीपः।

16

पार्थिवाद्दारुगोधूमस्तस्मादिशस्त्रयीमयः। तमसस्तुरजस्तस्मात्सत्त्वंयद्वह्यदर्शनम् ॥ २४ ॥ भेजिरेमुनयोऽथाय्रेभगवन्तमधोत्त्वजम्। सत्त्वंविशुद्धंत्त्वमायकल्पन्तेयेऽनुतानिह् ॥ २५ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

द्वांधरते तथैवसंहारार्थमपरेगाक्षेत्रक्षेनस्वकीयसंहारशाकिलेशोपगृंहितेनतमोगुगाधिष्ठात्राहरहितसंबांधने तथाजीवानांविश्वपालनाधिकार योग्यतामदृष्ट्वास्वावतारेग्रास्थित्यर्थसत्त्वगुगानियंतृतयाहिरिरितसंबांधत्तेपवमकंचंद्रेद्राद्याअपिवासुदेवेनैवतत्तद्धिकारेषुनियुकाइतिक्षेयम् तथाचोकं विष्णुधर्मोत्तरे विष्णुपुराग्रे च "ब्रह्माशंभुस्तथेवाकिश्चंद्रमाश्चशतकतुः पवमााद्यास्तथेवान्येयुक्तावेष्मावतेजसा जगतकार्यावसाने तृवियुज्यंतेचतेजसा निहपालनसामर्थ्यमृतेसर्वेश्वरंहिरम् स्थितौस्थितंमहाप्राक्षभवत्यन्यस्यकस्यचिदिति वश्यतिच सृजामितिष्रयुक्तो हृंद्दरोहरातितद्वशहित तत्रतेषुत्रिगुगाधिष्ठातृष्टुमध्येनृगांश्वेयांसितुसाधनसंपत्तिवंधिनवृत्तिपरमपदप्राप्तिकपािण सत्त्वतनोः सत्त्वनियंतुः सकाशादेवस्युः तस्यवासुदेवावतारत्वात् अतः सर्वकारगः सर्वशक्तिः सर्वज्ञः परमकारुगिकः समानातिशयग्रन्यः श्रीवासुदेवपव मजनीयः ॥ २३॥

#### भाषा टीका।

यद्यपि सत्त्व रज तम ये तीनों प्रकृति (माया) के गुगा हैं और इन्ही को लेकर परम पुरुष भगवान जगत की स्थिति (पालन) मृष्टि और लयके निमित्त. हिर ब्रह्मा और शिव का रूप धारगा करते हैं. सुतरां तीनो एक ही हैं परंतु जीवों का श्रेयतो सत्त्व मूर्ति श्री हिर ही से होता है ॥ २३॥

#### श्रीघरखामी।

उपाधिवैशिष्ट्येन फलवैशिष्ट्यं सहष्टान्तमहिपाधिवादिति। पाधिवात्स्वतः प्रवृत्तिप्रकाशरहिताद्दारुगः काष्ठात्सकाशाद्भमः प्रवृत्तिस्व मावस्त्रयीमयो वेदोक्तकर्मप्रचुरः। ईषत्कर्मप्रत्यासत्तेः। तस्माद्प्यग्निस्त्रयीमयः। साक्षात्कर्मसाधनत्वात्।पवं तमसःसकाशाद्रजोबद्धाद्शेनं मावस्त्रयीमयो वेदोक्तकर्मप्रचुरः। ईषत्कर्मप्रत्यासत्तेः। तस्माद्द्यग्रीमयः। साक्षाश्चान्तेत्वेत्वन किचिद्धद्धाद्शेनप्रत्यासानिमात्रमुक्तं न तु सर्वथा बद्धा प्रकाशक्तम् । तुशब्देन लयात्मकात्तमसः सकाशाद्रजसः सोपाधिकज्ञानहेतुत्वेन किचिद्धद्धाद्शेनप्रत्यासानिमात्रमुक्तं न तु सर्वथा तत्मका शक्तवं विक्षेपकत्वात् । यत्सत्त्वं तत्साक्षाद्धह्यद्शेनम् । अतस्तद्धग्रोपाधीनां ब्रह्यादीनामिष यथोत्तरं वैशिष्ट्यमिति भावः॥ २४॥ वासुदेवभक्तौ पूर्वाचारं प्रमागायति । भेजिर इति। अथातो हेतोरग्रे पुरा विशुद्धं सत्त्वं सत्त्वमृति भगवन्तमधोक्षजम् । अतो ये तान वुवर्तन्ते त इह संसारे क्षेमाय कल्पन्ते ॥ २५॥

### दीपनी।

प्रवृत्तिप्रकाशरिक्ति । प्रवृत्तिः कर्मारम्भः तस्य हेतुः प्रकाशः दीप्तिः तद्रहितातः न हि केवलदारुसान्निध्ये होमप्रत्यासितः। एवम् लयात्मके तमसि ब्रह्मज्ञान्नेशोऽपि नास्ति । मध्यमानाद्वारुगाः सकाशातः धूममुंत्पन्नं दृष्टाग्न्युत्पत्त्याशंसया होमारम्भप्रत्यासत्तेः दृषदिति । एवं कर्मस्वभावे रजसि कर्मगा शुद्धस्य ब्रह्मज्ञानाशंसा रजसो विक्षेपकत्वातः न तथा सर्व्वदा ब्रह्मप्रकाशकत्वं किन्तु ईष-दिति । प्रकाशस्त्रभावे तु सत्त्वे साक्षात् ब्रह्मप्रकाशः यथा अग्रौ होमः इत्यर्थः । एतदुपाधिविषयविशेषः दशमस्कन्धीयाष्टाशीतितमा-द्विति । प्रकाशस्त्रोकीयस्त्रामिकतदीकायां द्रष्टव्यः ॥ २४—२७॥

#### श्रीवीरराघवः।

ननुप्रकृतिगुणात्वेनसमानेऽपिकथंसत्त्वंमोक्षहेतुः कथिमतरीगुणीतदहेत्सर्वमिषमोक्षहेतुनेवास्यादितिशंकायांद्रष्टांतेनगुणानांवेषम्य मुप्रवादयतिपार्थवादिति दावणाद्द्रतिषंचमी पार्थिवात्पृथिवीपिरणामकपाद्दावणः काष्ठात्तावद्भाः उत्पद्यतेत्समाद्भादनंतरिमत्यष्याः मुप्रवादयतिपार्थिवादिति दावणाद्द्रमादनं तरमित्वकत्पद्यतेसच्चत्रयीमग्रः यथापार्थिवदाकत्पन्नत्वविशेषोऽपिषूमो न प्रकाशकः नचस्वगी द्वियतिष्ट्रमोह्यग्रेः पूर्वमुत्पद्यतेतस्माद्रमादनं तरमित्वकत्पद्यतेसच्चत्रयोमग्रेतिष्ट्राद्यक्ष्यतिस्वद्यत्विष्ट्रमोह्यग्रेतिस्वयाद्वित्वक्षः प्रवस्यत्वमोन्द्यीपिकः अग्निस्कप्रकाशकः व्रवीपिवकः तद्वत्यंमनसोनाविल्यवेद्वर्यत्सन्तं तद्वव्यद्वर्शनसाधनमितिकार्यवीचित्रयोपपिसिरित्यर्थः ॥२४॥
गुणानंतरंदनः तद्वतंतरंमनसोनाविल्यवेद्वर्यत्सन्तं तद्वव्यद्वर्शनसाधनमितिकार्यवीचित्रयोपपिसिरित्यर्थः ॥२४॥
गुणानंतरंदनः

#### श्रीवीरराघवः ।

यतःसत्त्वस्यैव ब्रह्मदर्शनत्वंततश्चसत्त्वप्रवर्षकाद्विष्णोरेव नृगांश्रेयांस्यत एवसत्त्वतन्नंविष्णुमेवमुनयोऽमजिबत्याह ॥ भेजिरहति अधतस्मादग्रेपूर्वकालेमुनयः विद्युद्धंरस्तमोष्ट्रयामनजुविद्धंसत्त्वंसत्त्वशरीर कंतत्प्रवर्षकंभगवंत मधोक्षजंभोजिरेउपासांचिक्ररेएवमि-हतानमुनीननुसृत्यसत्त्वतनुभगवंतयेजनाउपासतेहत्यर्थःतेक्षेमायकव्पंतेश्रेयोयुक्ताभवंतीत्यर्थः रजस्तमः प्रधानीब्रह्मयद्गीमजंतस्तुनक्षे मायकव्पंतेपित्वंतवत्फलभाजोभवंतीतिमायः ॥२५॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

नतुत्रयाणां गुगानां प्रकृतत्वाद्विशेषोकथंसत्त्वस्यैवश्रेयः प्रतिहेतुत्विमत्याशंक्यसात्त्विकानामेवोत्तमत्वेनब्रह्माविद्या धिकारित्व प्रतिपादनायगुगितिये सत्त्वगुग्गस्योत्तमत्वंसोदाहरग्णमाह पार्थिवादिति अत्रोत्तमपदमध्याहृत्यव्याख्येयम्पार्थिवातपृथिवीकार्याद्वाश्चाते पार्थिवात्वग्नितये सत्त्वगुग्गस्योत्तमत्व पार्थिवात्वग्नित्तम्य क्षित्र पार्थिवोग्नित्तमः कीहशःत्रय्यांप्रतिपाद्यतद्वतित्रयीमयः सकलपदार्थमकाशकः अत्रयथावृक्षधूमाग्नीनांपार्थिवात्वश्वशेषेप्याग्निराधानेनसंस्कृतोविशिष्टपुरुषार्थिसद्वयेयािक्षकेरुत्तमत्वेनपूज्यते तथाप्राकृता समस्त्रमोगुगाद्रजोगुग्गुजन्मः तस्मात्सत्त्वंपरंबद्घादिसकलदेवतातत्त्वप्रकाशकः यद्यस्मात्सत्त्वगुगाद्वद्यद्वांनवह्मक्षानं भवतीतिशेषः यत्सत्त्वव्रह्मदर्शयत्यपरोक्षयतीति तस्मात्सात्त्वकाप्य ब्रह्मज्ञानाधि कारिग्गइतिसिद्धम् अनेनचेतनानामपवर्गनरक्तमः प्राप्तियोग्यानां श्रेविध्यंमृचितम् ॥ २४॥

उक्तार्थेशिष्टाचारंदर्शयतिभेजिरइति अथतस्मात्सान्विकानांउत्तमाधिकारत्वात्अग्रेपूर्वमुनयो श्वानिनोब्रह्माद्योधोक्षजंभेजिरे तस्माः

विद्युगोषुविशुद्धंसत्त्वंक्षेमायमाक्षायकरपते नेतरीतमारजागुगोभुक्तयेनकरपेतेइत्येकान्वयः॥ २५॥

#### क्रमसंदर्भः।

अत्र तु यत् त्रयाणामभेदेवाक्येनोपजसमतयो विवद्नते तत्रेद ब्रूमः । यद्यपि तारतम्यमिदम्धिष्ठानगतमेव अधिष्ठाता तु परः पुरुष एक एवेति भेदासम्भवात सत्यमवाभेदवाक्यम तथापि तस्य तत्र तत्र साक्षात्त्वासाक्षात्त्वभेदेन प्रकाशेन तारतम्यम दुनिवारमेवीत सहयान्तमाह पार्थिवादिति। पार्थिवात् न तु धूमवद्ंशेनाग्नेयात् । तत एव वेदोक्तकर्मणः साक्षात् प्रहत्तिप्रकाशरहितात् दारुणः यज्ञीयात् मन्थनकाष्ठात् सकाशात् अंशेनाग्नेयो धूमख्यीमयः । पूर्वापेक्षया वेदोक्तकम्मीधिक्याविभीवास्पदम् । तस्माद्पि स्वयमग्नि-स्त्रयीमयः । साक्षात्तदुक्तकम्मीविभीवास्पदम् । एवं काष्ठस्थानीयात् सत्त्वगुण्विदूरात् तमसः सकाशात् धूमस्थानीयम् किञ्चित् सत्वसिक्षिहितम् रजोवहादशेनम् । वेदोक्तकर्मस्थानीयस्य बहागास्तु तत्तद्वतारिणः पुरुषस्य प्रकाशद्वारम् । यद्ग्रिस्थानीयम् सत्त्वं तत् साक्षाद्बह्यां दर्शनम् । साक्षादेव सम्यक् तत्तद्गुगारूपाविभीवद्वारम् । अत्र दारुस्थानीयं तमः धूमस्थानीयं रजः अग्निस्थानीयं तत लालाप्रण्यानीयं व्रह्म। पार्थिवादिति । यथा धूमोंऽशेनाग्नेयो भवति दारु तु तथा निति। तत्र खल्पं त्रयीमयत्वं भवति । एवं रजसः सत्त्वसिन्नहितत्वं तथा तमसो नेति ब्रह्मसिन्नहितत्वं खल्पं न्नेयम् । ततश्च त्रयुचक्तकरमं यथान्नावेव साक्षात् प्रवर्तते नान्ययोस्त-रजसः सत्त्वसाकारता पत्रा पत्रा प्राचित्र वान्ययास्त-.द्वत् परव्रह्मभूतो भगवानिप सत्त्व एवेत्यर्थः । अतो ब्रह्मशिवयोर्द्धयोरसाक्षात्त्वं श्रीविष्णोस्तु साक्षात्त्वं सिद्धमिति भावः । तथा च श्रीवा-. इत् परव्रक्षम्ता भगवाना पार्य प्राप्त विष्णोर्महात्मनः । ब्रह्मणि ब्रह्मरूपः स शिवरूपः शिवे स्थितः । पृथगेव स्थितो देवो विष्णुरूपी । मनपुराग्रो "ब्रह्मविष्यवीशरुपाग्रि त्रीग्रि विष्णोर्महात्मनः । ब्रह्मणि ब्रह्मरूपः स शिवरूपः शिवे स्थितः । पृथगेव स्थितो देवो विष्णुरूपी मनपुरामा अक्षाव प्रवास विभाग निर्मा विष्णुक्षपा जनाईन, इति । श्रीदशमे च । शिवः शक्तियुतः शश्वत त्रिलिङ्गो गुमसंवृत इत्यादी हिराईं निर्मुमाः साक्षात् पुरुषः प्रकृतेः परः । स सर्वेदगुपद्रष्टा तं भजित्रगुंगो भवेदिति । अतएव श्रीविष्णोरेव परमपुरुषेण साक्षादभेदोक्तिः । सृजामि तिन्नयुक्तोऽहमित्यादिना सन्वरगुप्रदेश ते मजाश्रगुणा मपाराप । अतिश्च पुरुषो ह वै नारायगोऽकामयत अथ नारायगादजोऽजायत । यतः प्रजाः सर्वागि भ्रतानि । नारायगाः परम् ब्रह्म तत्त्वं नारायगाः परम् । ऋतं सत्यम् परम् ब्रह्म पुरुषं कृष्णापिङ्गलमिति । एको नारायगा आसीस ब्रह्मा न भूतानि । नारायमाः परम् बहा तस्व नारायमाः परम् । गुडा स्ति नारायमा आसाम ब्रह्मा न च शङ्करः । स मुनिर्भृत्वा समिचन्तयत् तत पवैते व्यजायन्त विश्वो हिरगयगर्भोऽग्निव्वेरुगारुद्रेन्द्रा इति च । एवं त्रिवेदी परीक्षायामपि श्रीविष्णोरिवाराध्यत्वं स्पष्टम् । एवं भगवद्यतारानुक्रमणिकासुत्राणाम् भद्मङ्गीकृत्येव केवलश्रीदत्तस्य गणाना सोमदुवीससोस्त्वग-श्राविष्णारिय सर्वित्कर्षे स्थिते यदन्यत्र श्रीविष्णुशिवयोभेदे नरकः श्रूयते तदनैकान्तिकवैष्णावशास्त्रत्वादनैकान्तिकवै-गाना । तद्य क्रान्य । तद्विपरीतं हि श्रूयते पाद्मोत्तरखगडादी । यस्तु नारायगाम् देवम् ब्रह्मरुद्राद्दिवतैः । समत्वेनव वीक्षेत स पाषगडी भवेद्भुविमत्यादि । तथा च विष्णुधम्मोत्तरान्ते लिङ्गस्फोटनृसिहोपाष्यानम् । विष्वक्सेननामा विप्रः कश्चिदेकान्तविष्णुभक्त आसीत्। भवद् श्रुवान्याप्त । अनुनारापाया । अनुनारापा तस्य पृथ्यवा व्यापालका प्रतासावका अवस्था । त्या प्रतास्य महादेवस्य निर्मालम् । पवमुक्तः प्रत्युवाच वयमेकान्तिनः श्रुताः। चतु-द्वतायतगर्भ गाउँ प्रावुभीवगतोऽथवा । पूज्यामश्च नैवान्यम् तस्मात्त्वं गच्छ माचिरमित्यादिका । ततो प्रामाध्यक्षपुत्रे तस्य विष्ववसेनस्य शासा हार दे । तता प्रामाध्यक्षपुत्र तस्य विचारयामास । भवतुत्रत्रेव गच्छाम इति । ततो लिङ्गसमीपं गत्वा तस्मिन्नधिष्ठाने शिरविष्युविष्य नम इति पुष्पाञ्चली विक्षिप्ते तत् श्रुत्वा पुनः शिरविज्ञमुद्यतस्य तिलक्षं स्फोटियत्वा निर्गतेन श्रीनृसिहेन सपरिवादस्य श्रीनृसिहाय नम इति पुष्पाञ्चलीति । को काले । शिवशास्त्रेष नम्यासं भ श्रानासहात्र निर्मास विद्यातीति। तदेतदुक्तम स्कान्दे। शिवशास्त्रेषु तद्श्राद्यं भगवच्छास्त्रयोगि यदिति । मोक्षधम्मं नारायणी-ब्रामाध्यक्ष ना विष्युश्च योगश्च सनातने हे घेदाश्च सर्वे निषिछेऽपि राजन् । सर्वेः समस्तैर्श्वषिभिनिक्को नारायगो विश्वमिद्धम पुरा-योपांख्याने । सांख्यश्च योगश्च सनातने हे घेदाश्च सर्वे निषिछेऽपि राजन् । सर्वेः समस्तैर्श्वषिभिनिक्को नारायगो विश्वमिद्धम पुरा-योपांख्याण । प्राप्ति । यस्तु विष्णुम् परित्यज्य मोहादन्यमुपासते । स हेमराशिमुत्सृज्य पांशुमुष्टि जिघृति ॥ अतपवोक्तम् श्रीनारदेन । श्रीमात । महाभारते । यस्तु विष्णुम् परित्यज्य मोहादन्यमुपासते । स हेमराशिमुत्सृज्य पांशुमुष्टि जिघृति ॥ अतपवोक्तम् श्रीनारदेन । शामित । महाकारण प्राप्त कामें खेनेव लाभेन समं प्रशान्तम् । विनोपसपत्यपरम् हि वालिशः श्रवलङ्गुलेनातितित्ति सिन्धुम् ॥ शाहिर-

#### कमसंदर्भः।

क्षेत्रो । हरिरेव सदा ध्येयो मवद्भिः सत्त्वसंस्थितैः । विष्णुमन्त्रं सदा विप्राः पठध्वं ध्यात केशवमिति । अत एव विष्णुमन्त्रजापकस्या-धिक्यम् श्रीन्सिहतापन्यां श्रुतौ । अनुपनीतशतमेकनोपनीतेन तत्समम् । उपनीतशतमेकमेकेन गृहस्थेन तत्समम् । गृहस्थशतः भेक्षमेक्षेन वानप्रस्थेन तत्समम्। वानप्रस्थशतमेक्षमेक्षेन यतिना तत्समम्। यतीनां शतम् पूर्यामेक्षेन रुद्रजापकेनतत्समम् रुद्रजायक शतमेक मेकनाथव्वाङ्गिरसिशसाध्यापकेन तत्समम्। अथर्वाङ्गिरसिशसाध्यापकरातमकमेकेन मन्त्रराजाध्यापकेन तत्सममिति। मन्त्रराजस्य श्रीन सिंहमन्त्र एव। अतएवोक्तम् वाराहे। जन्मान्तरसङ्शेषु समाराध्य वृषध्वजम्। वैष्णावत्वं लभेखीमान् सर्व्वपापक्षये सतीति। यसु श्रीभागवत एव । त्रयासामेकभावानाम् यो न पश्यति वै भिदाम् । सर्वभूतात्मनां महान् स शान्तिमधिगच्छतीत्यादि । तत् खलु श्रीविष्योः सका-शात् अन्यास्वातन्त्र्यापेक्षयेव । तदुक्तं श्रीब्रह्मणा । सृजामि तिन्नयुक्तोऽहं हरो हरिन तद्वराः । विश्वं पुरुषरूपेण परिपाति त्रिशक्तिध-गिति । श्रीदाङ्कषेगो च । ब्रह्माभवोऽहमपि यस्य कलाः कलाया इति । यत्पादिनः मृतसरित्प्रवरोदकेन तीर्थेन मुखुर्चिधकतेन शिवः शि-क्षोऽमृिवति च पतद्भिप्रत्यैवाक्तं पाद्मेऽपि । शिवस्य श्रीविष्णोयं इह गुणनामादिसकलं धिया भिन्नं पश्येत स खल हरिनामाहितकर इति । अत्र श्रीविष्णुनेति तृतीयाया अनिर्देशाद्त्रैय श्रीशब्ददानाच श्रीमतः सर्वशक्तियुक्तविष्णोःः सर्वव्यापकत्वेन तन्नास्नस्तस्माद् थः शिवस्य गुगानामादिसकलम् धिया भिन्नं स्वतन्त्रं परयेदित्यर्थः । अतो मार्कगडेयं प्रति श्रीशिववाक्यश्चेद्भेव । न ते मय्यच्युतेऽजे च मिदामग्विप चक्षते । नात्मनश्च परस्यापि तद्युष्मान् वयसीमहि । तत्तेश्योऽपि सर्व्वत्र समद्दिश्यो वयम् युष्मानेव ईमहि प्रियत्वेन जिलाम इति । अथ भागवता यूर्यं प्रियाःस्थ भगवान् यथा । न मद्भागवातानाञ्च प्रेयानन्योऽस्थि कार्हिचिदिति चतुर्थे तस्यैवोक्तेः । अतएव तत्पूर्वम् । नैवेच्छत्याशिषः कापि ब्रह्मिषमें क्षमप्युत । भक्ति परां भगवति लब्धवान् पुरुषेऽव्यय इति श्रीशिवोक्तमहिमभक्त्वा भगवति समाधिस्थस्य तस्य देव्यै महिमदर्शनार्थे हृदि च्छलेन खयम शिवे प्रविष्टे विरतिर्ज्जाता । यथोक्तं किमिदम् कुत एवेति समाधेविवरतो मुनिरिति। तचान्यथा न सम्भवतीति। श्रुतौ च श्रीविष्णोरेव सन्वीतकर्ष उक्तः यम कामये तसुम्रं कृःणोमि तम् ब्रह्माणम् तं सुधा-मित्यादिना । तस्मात्तदीयत्वेनैव ब्रह्मरुद्रभजने न दोषः । स आदिदेवो भजतां परो गुरुरिति । वैष्णवानां यथा शम्भुरित्याद्यङ्गीकारात् । यथानुष्ठितं श्रीप्रहलादेन । ततः सम्पूज्य शिरसा वयन्दे प्रयोष्ठिनम् । भवं प्रजापतीन् देवान् प्रहलादो भगवत्कला इति । श्रीयुधिष्ठिरेशा च । क्रतुराजेन गोविन्द राजसूयेन पावनीः । यक्षे विभूतीभेव तस्तत् सम्पादयनः प्रभो इति । खतन्त्रत्वेन भजने भृगुक्षापो दुरत्ययः । यथा चतुर्थे। भृगुः प्रत्यसृजच्छापं ब्रह्मद्रसंडं दुरत्ययम्। भवव्रतधरा ये च ये च तान् सम्बुव्रताः। पाषिराङ्गस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरि-पंन्थिन इत्यादि । वेदविहितमेवात्र मबब्रतमनूद्यते । अन्यविहितत्ये पाषिग्डत्वावधानायोगः स्यातः पूर्वत एव पाषिग्डत्वसिद्धेः । तस्मात् स्वतन्त्रत्वेनवोपासनायामयं दोषः । यतश्च तत्रेच तेन श्रीजनाईनस्यैच वेदमुलत्वमुक्तम् । एष एच हि लोकानाम् शिवः पन्धाः स्नातनः । यं पूर्वे चानुसन्तस्थुर्यत् प्रमागाम् जनाईन इति । एष वेदलक्षणः । यत् प्रमागां यत्र मूलीमत्यर्थः । स्वतन्त्रोपासनायाम् तत् प्राप्तिः श्रीगीतोपनिषत् स्वेव निषिद्धा । येऽण्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रन् यान्विताः । तेऽपि माभेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥ अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च । न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्चयवन्ति ते ॥ यान्ति देवव्रता देवान् पितृन् यान्ति पितृव्रताः । भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि मामिति । अवज्ञादिकन्तु सर्व्वथा परिहर्गीयम् । यथा पाञ्चे । हरिरेव सद्गराध्यः । मुलाप जाए दे..... । इतरे ब्रह्मरुद्राद्या नावक्षेयाः कदाचन ॥ श्रीभगद्वाक्यञ्च । यो माम समर्थयेकित्यमेकान्तं भावमास्थितः । विनिन्दन् देवमीशानं स याति नरकं ध्रुवम् ॥ गौतमीये च । गोपालं पूजयेद्यस्तु निन्दयेदन्यदेवताम् अस्तु तावत् परो धर्मः पूर्वधरमों विनश्यति । हयरापा मान्य पाय व पर्वारापायाय जाता परमात्मभक्तिसन्दर्भी हश्यो । ततुक्तं ब्रह्मसंहितायाम् भाखान् यथाश्मसक्तेषु निजेषु तेजः मानिन्मिति । अत्र विशेषजिक्षासा चेत् परमात्मभक्तिसन्दर्भी हश्यो । ततुक्तं ब्रह्मसंहितायाम् भाखान् यथाश्मसक्तेषु निजेषु तेजः भागमानात । जन विरावाजकार्या वर्ष प्रशास वर्ष प्रशास कर्मा गाविन्दमादिषुरुषं तमहं भजामीति । दीपार्श्वरेव हि दशान्तरम-स्वाय निष्युत्य समान्यत्यात्र तक्ष्य न मुका च उन जात्र राजाताता. क्युपेत्य दीपायते विष्टतहेतुसमानधम्मा । यस्ताहगेव हि च विष्णुतया विभाति गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामीति । क्षीरं यथा दिधिव-भ्युभाष्य पार्चित । व च दिश्वदृष्टान्तेन विकारित्वमायाति "तस्य श्रुतेस्तु शब्दमूळत्वादिति न्यायेन मुद्धः परिद्वतत्वात् । यथोक्तं यत उदयास्त-कारत्याव । । ज पानविश्वापात्राचनायात तस्य स्वत्य राज्यात्राचार्यः । सूर्यकान्तस्थानीये ब्रह्मोपाधी सूर्यस्थेच तस्य किञ्चित्प्रकादाः। म्या । । । । विद्यानीय शम्भूपाधी क्षीरस्थानीयस्य न ताडगिप प्रकाशः । वशान्नरस्थानीय विष्णूघापी तु पूर्ण पत्र प्रकाशः ॥ २४॥

र्शिक्थानाय राज्याचा राज्याचार प्रमाण्यति—मेजिर इति । सत्त्वं विद्युद्धं विद्युद्धस्वात्मकामृत्तिम् । सगवन्तं प्राक्तत-

द्वतारा । तस्य विवृतं भगवत्सन्दभं सप्तद्शाधिकशततमवाक्यामाभ्य द्रष्टव्यम् ॥ २५॥

### पुर्वाधिनी

धायमर्थीगृढइति दृष्टांतमाद्द्रपाधिवदिति ॥ प्रकाशापेक्षिणोद्दितोमुग्यतेतश्राच्य विसाध्येष्वाक्तः सवलोकदारुपतिष्ठितः तानिपुनः पृथिवीप्रकृतिकानितेषांपूर्वरूपंपृथिवीसंवंधः वृक्षकपृद्दतियावत् तत्र छेदनेनशोपणावाकाष्ट्र ताजलाशकत्वेनधूमजनकत्वं तेजोशेनाग्निजनक व्यक्तिति तत्राप्यलेकिकाद्दवनीयादिदेवतासंवंधे वेदप्रतिपाद्यत्वंतत्रलोकेकालां तराग्नीच्छायांसाद्धेभूसंबद्धकाष्ठसंग्रहः ततः पार्थिवशक्ते व्यक्तिति तत्राप्यलेकिकाद्दवनीयादिदेवतासंवंधे वेदप्रतिपाद्यत्वंतत्रलोकेकालां तराग्नीच्छायांसाद्धेभूसंबद्धकाष्ठसंग्रहः ततः पार्थिवशक्ते व्यक्तिति तत्राप्यलेकिकाद्यते व्यवक्ति व्यवक्रित्व व्यवक्ति विश्ववः ॥ २४ ॥ विश्वविक्ति व्यवक्ति व्यवक्ति विश्ववः ॥ २४ ॥ विश्वविक्ति विश्ववः ॥ २४ ॥ विश्वविक्ति विश्ववः सर्गोतिविद्येषः सर्गोतिविद्येषः सर्गोतिविद्येषः सर्गोतिविद्येषः सर्गोतिविद्येषः सर्गोतिविद्येषः विष्वविक्ति क्रिक्ति विश्ववः ॥ २४ ॥

#### स्रवेधिनी

अत्रसदाचारं प्रमाण्यतिमेजिरेइति ॥ आत्मार्थमजनेभगवंतमेव मेजिरेइत्यात्मने पदात्बद्धवचनादाचार दार्ढचकर्तृदोषाभावमाद्यमुन यद्दतिमननपर्यतं पदार्थानुष्ठानेनसत्त्वमुक्तम् अथेत्यक्षानदशायांभजनं निवारितंमुनयोमूत्वा पश्चाद्भजंतरस्वर्थः अग्रेसत्ययुगेपुरातनयुग मगवंतमघोक्षजमितिः उपाधेर्मुख्यताप्रतिपादनार्थसत्त्वमितिसामानाधिका-इत्यादिवाक्यात्ब्रह्मरूपतामलीकिकरूपतांचाहपद्वयेन ररायेन प्रतिपादनंविद्यसमिति ब्रह्मादिषुविद्यमानसत्त्वनिवृत्तिः तेषां**क्षिं**फलंजातमितिजिद्यासायां किंततेषांफलंबक व्यंतत्से वका अपिमुच्यंतइत्याह कर्ल्यंतइतिताननुयेतत् सेवकायेतन्मार्गवर्त्तनोवाते पिक्षेमायस्वक्रपानंदायकरूप्यंतइत्यर्थः तस्माच्छीश्रद्धफल साधकत्वात् सत्त्वरूपमेवसेव्यमित्युक्तम् ॥ २५॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

आवरणिविक्षेपप्रकाशधर्माणां तमोरजःसत्त्वनां यथोत्तरं श्रेष्ठयं तथासत्त्वस्य शुद्धसत्त्वे प्रातिकृल्याभावश्च सदद्यान्तमाह । पाधि वात् स्ववृत्तिप्रकाशप्रवृत्तिरहितात् धूमः प्रवृत्तिस्वभावः श्रेष्ठस्तस्माद्प्यग्निः प्रवृत्तिप्रकाशधर्म्भकः वेदोक्तकर्मसाधनत्वाञ्चयीमयः । एवं तमसो लयात्मकात् रजो विक्षेपकं श्रेष्ठम् । तस्माद्िप सत्त्वं लयविक्षेपश्चन्यं ब्रह्मदर्शनम् । सत्त्वात् संजायते क्षानमित्यादेः शुद्धसत्त्वे तस्य प्रातिकृत्यामावेनोपरागाभाव उक्तः। तेन ब्रह्मदर्शने तस्य व्यवधायकत्वाभाव एव साधकत्वमीपचारिकं भक्त्वा विना ब्रह्मदर्शनासम्भव इत्यक्रिमग्रन्थे प्रतिपादनात् । पवश्च अनन्दो ब्रह्मग्रो रूपमिति परमेश्वरस्यानन्दरूपत्वात् । माया परैत्यभिमुखे च विलज्जमाना इत्यादेमी यागुणानां रजःसत्त्वतमसां परमेश्वरस्पर्शे खतः सामर्थ्याभावात परमेश्वरेणीव खेच्छया तत्रस्पर्शे खिक्कतेऽपि ब्रह्माण विक्षेपविशिष्टो विष्णो प्रकाशविशिष्टः शिवे आवरणविशिष्ट आनन्द इत्यत आनन्दस्य प्रकाशयुक्तत्वे न क्षतिरिति विष्णुरेवोपास्य इति विवेकः । अत्र दाहिशा शुद्धतेजस उपलब्धेर्धूमे तु तदनुपलब्धेर्धू मस्थानीयाद्रजसः सकाशात् दारुस्थानीयं तमः श्रेष्ठं तत्कार्य्यशुषुप्ताविप केवलात्मा नुभवादिति रजस्तमोगुणवतोर्बह्मरुद्रयोर्भध्ये रुद्र एव श्रेष्ठ इति केचिदाहुः। अतो भगवद्वतारत्वे त्रयाणां साम्यम गुणोपरागानुपरा-गाभ्यामसाम्यश्चेत्यभेदभेदप्रतिपादकानि पौराशिकवाक्यानि सङ्गमनीयानि । अत्र असङ्गोद्ययम् पुरुष इति श्रुतेः । परमात्मा जीवात्मा च यद्यपि खरूपतो गुणसङ्गरहित एव भवति तदपि प्रमात्मनश्चिन्महोद्धित्वात् परमेश्वरत्वात् खातन्त्र्यात् खैरलीलत्वाच । खेच्छ-यैव स्वर्कतृकेगा गुगास्पर्शेन शम्भुत्वे सति गुगाकार्यक्रोधादिमत्त्वेऽप्यात्मारामत्वमसंसारित्वं स्वाक्षानापचयश्च भवति । जीवात्मनस्त चित्कगात्वाद् लपप्रकाशकत्वादीशितव्यत्वाद् स्वातन्त्रयाद् लपवलत्वाच गुणकर्तृक पव तत्रस्पर्शे सित स्वज्ञानलोपः संसारश्च भवतीति विवेचनीयम् ॥ २४॥

अथ अत एव विशुद्धं सत्त्वं स्वरूपभूता चिच्छक्तिरेव तन्मयम् विद्याविद्याभ्यां भिन्न इति गोपालतापनी श्रुतेः। छायातपौ यत्र न भय अत प्रवापशुष्प पान विश्व श्वापति । छायातपा यत्र न गृभ्रपक्षाविति स्मृतेश्च । सत्यक्षानानन्तानन्दमात्रैकरसमूत्त्रेय इति दशमाच । विष्णुवषुषो मायातीतत्वात् मायाशकिवृत्तिविधैव विशु-द्धसत्त्वराब्दवाच्येति न व्याख्येयम् । ये तान् मुनीननुवर्त्तन्ते ते इह संसारे मोक्षाय कल्पन्ते ॥ २५ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

रजस्तमोऽधिष्ठातुभ्यांसत्त्वाधिष्ठातुः वासुदेवावतारतयोश्रयः प्रदत्वेनश्रेष्ट्यमुक्तमिदातीरजस्तमोभ्यां सत्त्वस्यश्रेयोद्वारत्वेनश्रेष्ठय रजस्तमाऽाधष्ठातुभ्यासत्त्वा। यष्ठावुः वाज्ञः । जः । वाक्याःकाष्ठात् धूमोऽग्निप्रत्यायकस्तस्माद्ग्निःश्रेष्ठः यतस्त्रयोमयऋक्यज्ञः सा मारु पाचवादित्यादना पायवाद राजना स्वाप्त हो । स्वंबह्मदर्शनंबह्मसाक्षात्कारद्वारभूतम् ॥ २४॥ स्विबह्मदर्शनंबह्मसाक्षात्कारद्वारभूतम् ॥ २४॥

अभिश्वरुरः प्रवतमसम्तुरजस्तस्मात्त्र प्राप्त स्वस्यचश्रेष्ठत्वात् अग्रेयमुनयः सनकप्रभृतयः तेसस्वसत्त्वनियंतारिवशुद्धविशेषतः अथशब्दोहेत्वर्थः अतोहेतोः सत्त्वाधिष्ठातुः सत्त्वस्यचश्रेष्ठत्वात् अग्रेयमुनयः सनकप्रभृतयः तेसस्वसत्त्वनियंतारिवशुद्धविशेषतः अथराष्ट्राहत्वयः अताहताः सत्त्व॥थठाउः शुद्धंप्राक्तत्वोषास्पृष्टमधोक्षजंभगवंतम् भेजिरेउपासांचिकिरे इह येतान्मुनीनजुतद्गुवार्त्तेनः क्षेमायमोक्षायकल्पंते ॥ २५॥

#### भाषा टीका ।

इस बिषय को इच्टान्तसे समझाते हैं॥ ध्ला । वर्षेत्र वर्षेत्र वर्षेत् जड़ ) काष्ट्रसे कि जिसमें न प्रवृत्ति है न प्रकाश है घूम अर्थात् घूंआ उत्तम है क्योंकि उस में प्रवृत्तिहैं और उसमें भी त्रयी मय अर्थात वैदिक कर्म प्रधान अग्नि श्रेष्ठहैं क्योंकि उसमै प्रवृत्ति और प्रकाश दोनोही है। इसीमांत प्रशासक नाम तमो गुणसे धूमको समान रजोगुण श्रेष्ठ है और उस से भी अग्नि के समान प्रकाशक साक्षात ब्रह्म दर्शन सत्त्वगुण श्रेष्ठ है। सुतरां इसी भांत शिव ब्रह्मा और विष्णुको क्रमशः श्रेष्ठ जानना चाहिये॥ १४॥ हसी कारण से आगैसे मुनिजन सव, अधोक्षज (इन्द्रिय जन्यसे ऊपरहे ) ज्ञान जिनका शुक्कसत्वमय मगवान का मजन करते आते

हैं। अवभी जोजन उन मुनियों का अनुसर्गा करते हैं क्षेमको प्राप्त होते हैं ॥२५॥

मुमुच्चवोघोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ । नारायगाकलाः शान्ता भजन्ति द्यनसूयवः ॥ २६ ॥

रजस्तमःप्रकृतयः समशीला भजन्ति वै।

पितृभूतप्रजेशादीन् श्रियैश्वर्यप्रजेप्तवः ॥ २७ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

नन्वन्यानिप केचिद्धजन्तो इश्यन्ते । सत्यम् । मुमुक्षवस्त्वन्यान्त भजन्ति किंतु सकामा एवेत्याह् । मुमुक्षव इति द्वाभ्याम् । भूतपतीः निति पितृप्रजेशादीनामुपलक्षग्राम् । अनस्यवो देवतान्तरानिन्द्काः सन्तः ॥ २६

रजस्तमसी प्रकृतिः खमावी येषाम् ते अतएव पितृभूतादिभिः समं शीलं येषाम् ते । श्रिया सह ऐश्वर्यश्च प्रजाश्चेप्सन्तीति -तथा ते ॥ २७ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

ननुकेचिद्रह्मारुद्राद्युपासका अपिद्दर्यंतेसर्वेऽपि विष्णुमेविक्तंनभजंतद्दिर्शकायामुपासकानां स्वस्वगुणानुसारेणोपास्यदेवतावि-षयकोपासनायां रुचिर्जायतद्दत्याद्द मुमुक्षवद्दातिद्वाभ्याम् मुमुक्षवः सत्त्वगुणप्रधानाःअनस्यवः घोरकपान्भूतपतीन्ररुद्रादींस्तमःप्रधानां न्हित्वाद्यांताः शुद्धसत्त्वप्रबर्त्तका नारायणस्यकलाअवतारान् भजंतिअनस्यवद्द्यनेनिविष्णुभक्तानां देवतांतरेषुतवुपासकेषुचास्या राहित्यंदेवतांतरभक्तानांतु विष्णौतत्परेषुचास्यावत्त्वचास्तितिसूचित्म ॥ २६ ॥

रज्ञस्तमः स्वभावास्तुजनाः समसीलान्रजस्तमः स्वभावान्पितृभूतेशानुद्रादीन्प्रजेशान्हिरययगर्भादीन् आदिशब्देन संकीर्ण देवताः सरस्वतीप्रभृतीश्च "प्रेतान्भूतपर्तीश्चान्ये यजंतेतामसाजना" इत्युक्तान्भजांतिकथंभूताःश्रीमञ्जेश्वयमाधिपत्यंचप्रजाः पुत्रादयश्चतार्शेष्सिन् ताआप्तुमिच्छंतीतितथाभूताः अनेनविष्णुभक्तानामनन्यप्रयोजनत्वमनंतिस्थरफलप्राप्तिरन्येषात्वंतवत्रफलप्राप्तिश्चितिस् वितस् ॥ २७॥

#### श्रीविजयध्वजः

इदानीमिपसदाचारंदर्शयति मुमुक्षवद्दति ब्रह्मादिपरमसात्त्विकावासुदेवंभीजरद्दति यस्माद्थतस्मादसूयादिदोषरिहतातुस्तरसंसारा त्मुमुक्षवःवर्त्तमानभविष्यत्सात्त्विकाअपिघोररूपान्राजसतामसान्भूतपतीन्रुद्रादीन्हित्वा शांताःपरिपूर्णसुखात्मिकाः वासुदेवकलाः भगवन्मूर्तीः संप्रतिभजंतिभजिष्यंतिहिचेत्येकान्वयः॥ २६॥

इदानींप्रसंगात्तामसराजससेव्यानाह रजइति श्रियेश्वर्यप्रजेप्सवः रजस्तमःप्रकृतयःपुरुषाःसमशीलान्पितृभूतप्रजेशादीन्भजंतीत्येका न्वयः"निर्दोषंहिसमंब्रह्मोतवचनात् समंब्रह्मतच्छीलान् सेवकस्ययच्छीलंसेव्यस्यापितच्छीलमस्तीतिवासमशीलान् । श्रीकामःप्रजेशानेश्व र्यकामःभूतपतीन्प्रजाकामःपितृन्श्रियंचपेश्वर्यचप्रजांचप्राप्तुमिच्छंतःश्रियेश्वर्यप्रजेप्सवः॥ २७॥

### क्रमसंदर्भः।

नन्वन्यान् भैरवादीन् देवानिप केचिद्धजन्तो दृश्यन्ते। सत्यम्। यतस्ते सकामाः किन्तु मुमुक्षवोऽप्यन्यान्न भजन्ते किमुत तद्धको-कपुरुषार्थो दृत्याद्द मुमुक्षव इति ॥ २६ ॥ नतु कामलाभोऽपि लक्ष्मीपतिभजने भवत्येव तर्दि कथमन्यांस्ते भजन्ते तत्राद्द रज इति । रजस्तमः प्रकृतित्वेनैव पित्रादिभिः समस्

नतु कामलापान समर्शालत्वादेव तन्नजने प्रवृत्तिरित्यर्थः॥ २७॥

### सुबोधिनी

द्दानींरजस्तमसोः सेवकभजनफलानां भेदेनस्वरूपंवकुंसत्त्वस्यस्वरूपमनुवदितमुमुक्षवहित ॥ अथकालप्राधान्यात् सत्ययुगे सन् त्वस्यभजनमस्तुनामकथं वेतादिषुतद्भजनिमत्याशंक्याहसत्त्वस्यफलंमोक्षः सङ्गानसाध्यः ज्ञानंचशांतांतःकरणसाध्यभजनीयंचक त्वस्यभजनमस्तुनामकथं वेतादिषुतद्भजनिमत्याशंक्याहसत्त्वस्यफलंमोक्षः सङ्गानांपरित्यज्य घोररूपांश्चपूर्वमोक्षसाधनत्वे कुला पंत्रीयंतिनघोररूपध्याननिचत्तमपितथाभवतिअतः अभेदेपिसत्त्वमूर्त्तरिपघोरागिक्षपागिपरित्यज्य घोरक्षपांश्चपूर्वमोक्षसाधनत्वे कुला पंत्रीयंतिनघोरक्षपद्मानानिकत्तमित्रजनंगुणानां स्वरूपज्ञानानंतरंपरित्यज्य अथिमक्षक्रमेगाब्रह्मांडांतर्वित्तत्वात्पुरुषक्षकपनारायणकलाः चारेगाश्रस्यावाप्राप्तराजसीदिभजनंगुणानां स्वरूपज्ञानानंतरंपरित्यज्य अथिमक्षक्रमेगाब्रह्मांडांतर्वित्तत्वात्पुरुषकपनारायणकलाः वासुदेवपरा वेदा वासुदेवपरा सिखाः । वासुदेवपरा मोगा वासुदेवपराः क्रियाः ॥ २६ ॥ व्यक्ति वासुदेवपरं तपः । विकास विकास विकास वासुदेवपरं वासुदेवपरा गतिः ॥ २९ ॥

### सुवेशिधनी

थर्मावताराः ज्ञानिक्रयाद्यक्तिकपाःमत्स्याद्यवतारान् रामाविक्रपांतरेषुतुष्ठेषुद्धि रहिताभजंतद्द्यर्थः नेदंभक्तिमार्गमजनंकितुजीवानांस्वपुष-पार्थितिद्धयेधर्ममार्गेग्रातथासतिसर्वथानिःसंदिग्धमेवभजंतेनन्त्रसिंहादिक्षपं भक्तिमार्गेतुविषयस्यप्राधान्यातप्रयोजनस्य दुर्वेलत्वात्सर्वा गयेवक्रपाश्चिमजनीयानि ॥२६॥

रूपांतरेमजनसामात्रचाः स्वरूपमाहरजस्तमइति ॥ शरीरगुण्खभावभेदेनगुण्यास्त्रिविधाः तत्रखाभाविकाअनुलंघनीयाःशरीरक्षपां मौद्यद्शायामेववलिष्ठाः धर्मक्षपास्तुसंगशास्त्रैविधेतेचतत्रये विवेकिनोपिसच्छास्त्रंसत्संगंशात्वापि खभावतोराजसास्तासाश्चतादशा-नेवमजंतेमजनंहि सख्यपर्यवसायितचसमानक्षपप्यभजंतीति समानशीलानेवभजंतइतिनिश्चयार्थः तयोःपरिकरोपितादशइतिहापिय नुपितरोभूतानिप्रजाश्चतेषामीशाः कालशिवब्रह्मक्षपः तेआद्भिन्तायेषांतान्श्चद्रदेवान्भजंते तत्रश्राद्धादिनापितृभजनेशिकभजनेचधन प्राप्तिः फलम्ह्रदेववरभजनेत्वैश्वर्यप्राप्तिः प्रजेशभजनेप्रजायाःतत्रापिसेवाप्राप्तिस्तुवुर्छभादानृण्यांतामसत्वात् ॥ २७ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवत्ती ।

भूतपतीनिति पितृप्रजेशादीनामप्युपलक्षसाम् । अनस्ययः तत्तद्देवानिन्दकाः ॥ २६ ॥ प्रकृतिः स्वभावः अतप्य पितृभूतादिभिः समम् शीलं येषां ते श्रियेति सहार्थे तृतीया ॥ २७ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

लोकेवेदेचवासुदेवोपासकः ब्रह्मच्द्रायुपासकाश्चद्दयंतेत्त्राधिकारिभेदाद्वचवस्थामाह मुमुक्षवद्दयादिद्वाभ्याम् भूतपतीन् रुद्रादीन् वहुवचनेनपितृप्रजेशादीनांत्रहराम् ॥ २६ ॥ समक्षीलाः पितृभूतपत्यादिभिः समंशीलंथेषांते ॥ २७ ॥

### भाषा टीका ।

इसीसे मुमुश्च ( मुक्ति की वाछा करने वाले ) जन, घोर रूप वाले भूतपतिओं को छोड़कर नारायण की शान्त कला ( मूर्ति ) ओं का भजन करते हैं ॥ २६ ॥

का मजन करत ह ॥ ५५ ॥ जिनकी रजोगुण तमोगुण की प्रकृति है वे पुरुष,अपने समान खभाव वाले राजस तामस भूत पितर प्रजापित आदि देवताओं का भजन करते हैं,क्योंकि उनको धन पुत्र ऐश्वर्यकी कामना रहती है ॥ २७ ॥

# त्र प्रति क्षेत्र कर्ण के क्षेत्र कर कर कर कर के कि **अधिर्देखाओं।**

अतो मोक्षप्रदत्वाद्वासुदेव एव भजनीय इत्युक्तं सर्व्वशास्त्रतात्पर्यगोचरत्वादपीत्याह द्वाभ्याम् । वासुदेवः परस्तात्पर्यगोचरो येषां ते । नजु वेदा मखपरा दश्यन्ते इत्याशङ्कच तेऽपि तदाराधनार्थत्वात्तत्परा एवत्युक्तम् । योगायोगशास्त्राणि तेषामप्यासनप्राणायामादि ति । नजु वेदा मखपरा दश्यन्ते इत्याशङ्कच वासामपि तत्प्राप्त्यपरत्वमुक्तम् । इति इति श्रातः स्वर्गादिष्यम् । नजु तज् स्वर्गादिप्रमित्याशङ्कच गम्यते इति गतिः स्वर्गादिष्यम् । मुक्तमः तपोऽत्र द्वातम् । धम्मी धम्मेशास्त्रं दानव्रतादिविषयम् । नजु तज् स्वर्गादिष्यशिष्याशङ्कच गम्यते इति गतिः स्वर्गादिष्यम् । मुक्तमः तपोऽत्र द्वातम् । धम्मे धम्मेशास्त्रं दानव्रतादिविषयम् । नजु तज्ञात् सर्व्वशिष्याश्चात्राणाः वासुदेवपराणात्युक्तम् । नजु तेषाम् सायि तद्वातन्दात्रस्यत्वात् तत्परवित्युक्तम् । यदा वेदा इत्यन्तियागि तत्परत्वमुक्तमिति द्रष्टव्यम् ॥ २८—२९ ॥ मखयोगिक्रयादिनानार्थपरत्वात्र तदेकपरत्वामत्याशङ्कच मखादीनामपि तत्परत्वमुक्तमिति द्रष्टव्यम् ॥ २८—२९ ॥

5

### <sup>्राधि</sup>दे<mark>गिफी</mark> ।

वासुविव इति । वसिति भूतेषु अन्तयीमितया शित बासुः इध्यिति धीतते न कापि सक्तते इति देवः । सं चासौ स देवि सर्वत्र नियाममतया तिष्ठश्रपि कापि न सक्त इत्वर्थः । यहा वसत्यव अतानीति आसुः सं म वैवः संब्वतिविद्यानि नोपश्चित्रकः । यहा वसुदेव शुद्धसत्त्व प्रकाहात इति वासुदेवः शैषिकआग्रां । वस्यति हि चतुर्थस्कन्धे (३ अ० २३ अ००) सत्त्वं विश्वद्धम अग्रदेवशब्दितं यदीयते तत्र पुमानपावतं इति व्याख्यालेशः ॥ २४ -- २०॥

### श्रीवीरराघवः।

कत्वातपुववद्यः ॥ २०॥ अथ वेदांतार्थोपहंहणार्थतयाप्रवृत्तकपिलाद्यागमोक्तप्रकृतिषुरुषविषयकज्ञानमपि प्रकृतिपुरुषशरीरकपरमात्मविषयकमेवेत्याह वासु-देवपरंज्ञानमिति ज्ञानं प्रकृतिपुरुषविषयकं वासुदेवविषयकंविशेषणवुद्धिशब्दयीविशेष्यपर्यंतत्वादित्यर्थः । कपिलादिभिस्तुतथानवुद्धभिति भावःतथावेदांतार्थोपहंहणापरंगन्वादिस्मृत्युक्तरुक् चांद्रायशानशनादितपश्चवासुदेवाराधनक्रपमित्याह वासुदेवपरंतपद्दति । किवहुनासर्वे भावःतथावेदांतार्थोपहंहणापरंगन्वादिस्मृत्युक्तरुक् चांद्रायशानशनादितपश्चवासुदेवाराधनक्रपमित्याह वासुदेवपरंतपद्दति । किवहुनासर्वे

मावःतथावद्।तायापपृष्ठवापरमप्तापर्देश्व वास्तुद्वाधीनाइत्याह वास्तुद्वपरोधर्मीवासुदेवपरागतिरिति॥ २९॥

### श्रीविजयध्वजः ।

संकर्णास्तात्पर्यपर्यालोचनयासकलेरवर्यसेव्यःश्रीनारायण्यवेत्यभिष्ठेत्याह वासुनेवपराइति अत्रवेदावासुदेवपराइत्यादिशतिपाद मन्वेतव्यम् वासुदेवगुणोत्कर्षप्रतिपादनतात्पर्यवंतः मलाः संसार्मदेखनंतीतिनारायंतीतिमखाः अग्निष्टोमादयः वासुदेवोद्देश्याः नान्योद्दे मन्वेतव्यम् वासुदेवगुणोत्कर्षप्रतिपादनतात्पर्यवंतः मलाः संसार्मदेखनंतीतिनारायंतीतिमखाः अग्निष्टामादयः वासुदेवोद्देश्याः नान्योद्दे इयाः योगाः अर्थाः वासुदेवविषयाः श्रुतिस्मृतिविद्वित्तं स्थोपासनादिकाः क्षियाः ॥ २८ ॥ इति व्याप्तिकार्यक्षेत्रात्वेद्देशास्त्रमुख्यविष् व्याप्तिकार्यक्षेत्राः धर्मोदानादिः गम्यतद्दति गतिः फलंपरलोकः अनेनहरेरिक्षलन्त्रः विद्यास्त्रमुख्यविष् यत्वेनसर्वोत्तमत्वमुक्तमः ॥ २९ ॥

### क्रमसंदर्भः।

अती वासिवंव एवं मजनीय इत्युक्तमे । सञ्चेशास्त्रतात्पर्यश्च तत्रैवेत्याह द्वाश्याम । अत योगादीनां कथश्चिद्धक्तिसचिवत्वेनेव तत्त-परत्वं मुख्यं द्रष्टव्यम । वेद्रानाश्च क्रम्मकागडगतातामेव क्रियम । केषाश्चित साक्षाद्धक्तिपरत्वमपि हश्यत इति । "यस्य देवे परा सिक्त-र्यया देवे तथा गुरी । तस्यते कथिता हाथीः प्रकाशन्त महात्मनः इत्यादेः ॥ २८—२० ॥

### सुबोधिनी।

त्रेवसर्वप्रमाधानिकानंसीवविषक्षप्रपाद्यः तत्रेवसर्वप्रमाणानांसार्थनानां अतत्रेवविषक्षमापित्याहः ॥ वासुदेवविषक्षिकेह्यैव प्रवासिकारेखवगुणामयिमितिज्ञानंमुख्येयुक्तेः प्राधान्यात्अतः सत्त्ववर्षत्वंसर्विष्ठामितित्ववेदाः सान्त्रिकंप्रमाणायक्षास्थ्यात्विकार्योनाः प्रथमाधिकारेखवगुणामयिमितिज्ञानं आचारःस्वर्गश्चसात्त्विकः अन्यप्राधान्यप्रतिपादकानितुशास्त्राणानि कितुराजसानितामसानिववं स्ताना विक्तियाश्चद्यानेतवः अर्चयद्यमाधिकारः प्रतप्रवमस्यमाधिकारकर्गो अन्यथावक्तव्याः ॥ साजनान्यपित्वं सर्वसात्त्विकभावः कर्त्तव्यद्दतिप्रथमाधिकारः प्रतप्रवमस्यमाधिकारकर्गो अन्यथावक्तव्याः ॥ साजनान्यपित्वं सर्वसात्त्विकभावः

#### सुबोधिनी।

उत्तमाधिकारेचसर्वेषामेषांचर्यतः करणशोधकत्वात्सत्त्वपरत्वं सुख्यकल्यायसुखस्यसात्त्विकत्वात्रशुद्धांतः करणस्पुरितव्यानंद स्यापिसात्त्विकत्वंसर्वाणि पंचशास्त्राणिश्रुतिसांख्ययोगपशुपतिवैष्णवाख्यानिसुख्यानिसंगभूतंचधर्मशास्त्रं सर्वेषांतह्रेदेवष्णवंशास्त्रंपशुप तिमंततुपरमतोपन्यासेनोक्तम् अपेक्षितरूपेगाप्रमागां नतुसर्वधातत्रयाचदन्येषांत्रयागां धर्मशास्त्रस्यचनैकवाक्यतातावश्च वैष्णावशा स्त्रस्यदाढर्चमित्येक वाक्यतानिकप्यतेतत्रप्रथमं वेदवेदार्थोयक्षश्चतथासांक्यंतदुक्तंपरमसा धनंतपश्चधर्मशास्त्रं तदुक्तंचगतिश्चतदेतत्सर्घ-वासुदेवपरमित्यर्थः॥ २८—२९॥

#### श्रीविश्वनायचक्रवर्ती

ननु वेदैरेव पित्रादयो भजनीयत्वेनोच्यन्ते तेषां को दोषस्तत्राह । वासुदेव एव परस्तात्पर्यगोचरो येषाम् ते"कालेन नष्टा प्रलये वाशीयं वेदसंक्षिता । मयादी ब्रह्मशो प्रोक्ता धम्मी यस्याम मदात्मक" इति । किम् विधक्ते किमाचष्टे इत्यतो माम् विधक्तेऽभिधक्ते मामित्यादि भगवदुक्ते स्ते वेदतात्पर्यमबुद्धैव पित्रादीन् भजन्तीति भावः नतु वेदानां मखयोगादिपरत्वम् तत्र तत्र प्रकटं हश्यते। सत्यम् "स्वं लोकम् न विदुस्ते वै यत्र देवो जनाईनः। आहुर्धूम्रिधयो वेदम् सकर्मकमतिहद्"इति श्रीनारदोक्तर्मेखयोगादौ वेदस्य तात्पर्यामा-वात् धम्मों यस्यां मदात्मक इति श्रीभगवदुक्तेः। "तेपुस्तपस्ते जुहुबुः सस्तुरायो ब्रह्मानू चुर्नाम गृगान्ति ये ते" इति श्रीदेवहृत्युक्तेः। "यथा तरीर्भूलनिषचनेनिति नारदोक्तेश्च वासुदेव एव तात्पर्यावगमाच सर्व्ववेदार्थः केवला भगवद्गकिरेवेति । यद्वा मलस्य वासुदेवभुजाद्य-कृतिमृतीन्द्रादिवेवताराधनम्यत्वेन वासुदेवपरत्वमादिभरतचरिते प्रसिद्धम् । योगस्यापि भगवद्धानादिपरत्वं कापिलेये प्रसिद्धम् । कर्म्मग्रामि तत्समर्पग्रम् विना फलासिङ्केस्तत्परत्वम् ॥ २८॥

ञ्चानतपसोब्रह्मपरत्वमेव कर्मयोगस्य पूर्व्वश्लोकोक्तेः धर्मपदेन परमधर्मः श्रवगाकीर्त्तनादिगतिस्तत्प्राप्यप्रेमापवर्गादिस्तयोस्त

वासुदेवपरत्वमेव ॥ २९ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

पुंसामेकांततः श्रेयस्तन्नः शंसितुमर्हेसीत्युपायप्रश्लेकते उपायाकांक्षायांसत्यामतः साधोऽत्रयत्सारंसमुद्धत्यमनीषया श्लाहनःश्रद्धाना णामत्त्रुपवानापा क्रिक्ता विदेश्वसर्वेरहमेववेदाइति श्रीमुखवचनाच पूर्वोक्तःसपरिकरोभक्तियोग्डपायः सर्वशास्त्रसारंवासुदेवतत्त्वं "सर्वेवेदायत्पदमामनंतीतिश्रुतेः वेदेश्वसर्वेरहमेववेदाइति श्रीमुखवचनाच पूर्वोक्तःसपरिकरोभक्तियोग्डपायः सर्वशास्त्रसारंवासुदेवतत्त्वं सववद्।यत्पद्नामाराणाः विवानां नार्थपरत्वमाशंक्यवेदोक्तरीत्यैवसर्वश्रुतीनांवासुदेवेसमन्वयमाहः वासुदेवपरामखाः मखायक्षाः विवित्सो तद्वापयामातमावः वदाराणाः विवादाणां विविदिशंति यक्षेनदानेनतपसानाशकेनेतिश्रुतेः योगाः इंद्रियसंयमादयः वासुद्वपरा त्पादनद्वारावासुद्वपराः तमेवमात्मानं व्राह्मणांविविदिशंति यक्षेनदानेनतपसानाशकेनेतिश्रुतेः योगाः इंद्रियसंयमादयः वासुद्वपरा त्पादनद्वारावासुद्वपराः तम्प्रमाणाः नास्यान्य वासुद्वपराः । प्राप्तान्य एव "यदापचावातष्ठतज्ञानानिमनसास्य अञ्चलकार्या विराग्ययोगोगृत्यते क्रियाः सर्वाः वेदोक्ताः वासुदेवपराः "यत्करोषियद नार्थः बहुवचनेन"यदहरेवविरजेत्तदहरेवपरिव्रजेदितिश्रुत्युक्तः वैराग्ययोगोगृत्यते क्रियाः सर्वाः वेदोक्ताः वासुदेवपराः "यत्करोषियद आसियज्जुहोसिददासियत् यत्तपस्यसिकौतेयतत्कुरुष्वमद्रपेणमिति श्रीमुखोक्तेः॥ २८॥

सुदेवपरः गतिर्राचरादिमार्गक्रपावासुदेवपराएव ॥ २९ ॥

### भाषा टीका ।

वासुदेव ही मोक्ष दाता हैं उससे मुमुक्षुओं को उनका ही भजन करना चाहिये. यहती सिद्ध कर चुके. अव समस्त शास्त्रों का तात्पर्य भी वासुदेव ही हैं इससे भी बेही भजनीय हैं यह स्थापन करते हैं।-

क उनहीं के आराधन रूप हैं। योग शास्त्रभी बासुदेब पर है "योगशास्त्र में तो आसन प्रासायाम आदि किया है" किया भी बासुदेब कि उनहा के जार के निर्मा शास्त्रमा बास्त्रमा वास्त्रवेव पर है। तपभी वास्त्रवेव पर है। धर्मशास्त्र भी वास्त्रवेव पर है "धर्में पर है व्यांकि उनकी प्राप्ति का उपाय है। ज्ञान शास्त्रभी वास्त्रवेव पर है । व्याप्ति का उपाय है। ज्ञान शास्त्रभी वास्त्रवेव पर है "धर्में वास्त्रवेव पर है । वास्त्रवेव पर है "धर्में वास्त्रवेव पर है "धर्में वास्त्रवेव पर है । वास्त्रवेव पर है । वास्त्रवेव पर है । वास्त्रवेव पर है "धर्में वास्त्रवेव पर है । वास्त् थर ए जा । । । वासुदेव ही हैं ॥ २८॥ शास्त्र में ती दान व्रत आदि कि गति भी वासुदेव ही हैं ॥ २८॥

ब्र म ता वार्य हैं । ता का प्राप्त हैं प्राप्त हैं प्रवेश कर नियमन करता है उसी का सव शास्त्र प्रति पादन करते हैं जगत् की मृष्टि स्थिति प्रलयका कारगा, और जो जगत् में प्रवेश कर नियमन करता है उसी का सव शास्त्र प्रति पादन करते हैं सब वासुदेव पर क्यों होंगे ? वह वासुदेव ही है। उसी विभु और अगुगा अर्थात प्राकृत गुगा रहित भगवान ने अपनी गुगामयी कार्य

कारग कपा माया से आगे इस जगत को सृजा है ॥ २९॥

-5衛

स एवेदं ससर्जामे भगवानात्ममायया । सदसदूषया चासौ गुगामय्याऽगुगाविभुः ॥ ३०॥ तया विळसितेष्वेषु गुगाषु गुगावानिव । अन्तःप्रविष्ट आभाति विज्ञानेन विज्वंभितः ॥ ३१॥

#### श्रीधरस्वामी।

मनु जगत्सर्गप्रवेशनियमादिलीलायुक्ते वस्तुनि सर्वेशास्त्रसमन्वयो दृश्यते कथं वासुदेवपरत्वं सर्वेस्य। तत्राह स प्रवेति चतुर्भिः प्रतेरेव श्लोकेस्तस्य कर्म्माययुदाराणि बृहि इति प्रश्नस्योत्तरम् । सदसङ्क्षपया कार्यकारणात्मिकया । अगुग्रश्चेत्यन्वयः । स्रतो निर्गुणो-प्रतिरेव श्लोकेस्तस्य कर्म्माययुदाराणि बृहि इति प्रश्नस्योत्तरम् । सदसङ्क्षपया कार्यकारणात्मिकया । अगुग्रश्चेत्यन्वयः । स्रतो निर्गुणो-

भगवतो जगत्कारणत्वमुक्तम् प्रवेशनियमलक्षणां हीलामाह तयेति । विल्सितेषु उद्भूतेषु गुगोषु आकाशादिषु अन्तः प्रविष्टःसन् । भगवतो जगत्कारणत्वमुक्तम् प्रवेशनियमलक्षणां हीलामाह तयेति । विल्सितेषु उद्भूतेषु गुगोषु आकाशादिषु अन्तः प्रविष्टःसन् । भगवतो जगत्कारणत्वमुक्तम् प्रवेशनियमलक्षणां हीलामाह तयेति । विल्लितेषु उद्भूतेषु गुगोषु आकाशादिषु अन्तः प्रविष्टःसन् ।

#### दीपनी

प्रश्नस्य पूर्व्योध्यायान्तर्गतसप्तदशस्त्रोकोक्तस्य उत्तरं मवतीति शेषः॥ ३०--३१ ।

#### श्रीवीरराघवः।

माण्यावस्थायम् त्रवृत्यू विद्यानित्यातः त्रात्यात्याच तद्रूपेणावस्थानमुक्तम् । अथोभयावस्थप्रकृतिसंसृष्टजीवशरीरकतयातद्तराएवंसम्षिच्यष्ट्यवस्थाचिदंतर्यामितयातः त्रयति । तयात्ममाययाविल्लितेषु रचितेषु एषुपरिदृश्यमानेषु गुण्याच्दोलाक्षणिकः गुण्रमतयातद्रूपेण वासुदेवस्यैवावस्थितिमाह तयेति । तयात्ममाययाविल्लितेषु रचितेषु एषुपरिदृश्यमानेषु गुण्याच्दोलाक्षणिकः गुण्रमतयातद्रूपेण वासुदेवस्यवर्यतेष्वित्यर्थः विज्ञाननजीवेन "विज्ञानयंत्रत्वत्यात्मानितिष्ठन्यो विज्ञानितिष्ठित्रित्रित्रित्र्यात्यात् तेन विज्ञिम्तः 
कार्यभूतशब्दादिस्तंवपर्यतेष्वत्यर्थः विज्ञाननजीवेन "विज्ञानयंत्रत्वत्यत्यात्रमानितिष्ठन्यात्यात्रमान्यस्य विज्ञानित्यात्यात्रमान्यस्य विज्ञानित्यात्यात्यात्रमान्यस्य विज्ञानित्यमानवात्यस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानित्यवात्यस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानिति । तथातस्य विज्ञानित्रस्य विज्ञानिकष्यविक्ष्यति । तथातस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानिकष्यविक्ष्यति । विज्ञानित्यस्य विज्ञानित्यस्यस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानित्यस्य विज्ञानित्यस्य व

### श्रीविजयध्वजः।

अत्रहेतुमाहस्यवेति यःसर्ववेदांतादिमुख्यविषयः परमसात्विकत्रह्यादिष्टदेवता वासुदेवः सोसावेवागुगाःसत्त्वादिगुगाविधुरः अत्रहेतुमाहस्यवेति यःसर्ववेदांतादिमुख्यविषयः परमसात्विकत्रह्यातिमित्त कारगाक्षपयासद्सद्व्पया व्यक्ताव्यक्तस्पया मुख्यकारगांवा विभुव्यातःभगवाष्ट्रारायगाः अत्रेमृष्टेःपूर्वमात्ममाययास्वेच्छयातिमित्त कारगाक्षपयासद्सद्व्पया व्यक्ताव्यक्षस्पया विद्याम्वयःअतोविष्णुरेवसत्यजगत्रन्नष्टृत्वात्सवीत्तमइत्यर्थः३० गुगामय्यासत्त्वादिगुगात्मिकजडप्रकृत्योपदावकारगाह्य तयेतिसहरिःतयासद्सद्व्पया विद्यस्तितेषुभूतभौतिकदेहिद्वयाद्यात्मना परिगातेष्वेषुगुगोषुअतः विश्वत्वमपितदेकिनश्वमातिअञ्चानामितिशेषः कुतःविद्यानेनविजृंभितः विद्यानपूर्णः इदंहेतुगभैविशेषग्रानानकमेविपाकिनांजीवानां-प्रविद्याग्रावान्द्रजीवद्वाभातिअञ्चानीमितिशेषः कुतःविद्यानेनविजृंभितः विद्यान्यम्यत्वेतेषामितिभावः ॥ ३१ ॥ विद्यानाभावादस्यपरिपूर्णात्वात्रेननियम्यत्वेतेषामितिभावः ॥ ३१ ॥

#### कमसन्दर्भः।

( तदेवं तद्भजनस्येवामिधेयत्वम् दर्शयित्वा पूर्वोक्तम् सर्वेशास्त्रसमन्वयमेव स्थापयति स एवेदमिति । ) नतु भवतु स्वयम् मग-वतो वासुदेवस्य ताहशत्वं गुगावतारस्य विष्णोः किमायातिमत्याशङ्कच तत्पर्यन्तांनामन्येषामि तद्भिष्ठत्वं दर्शयितुं प्रकसंति स एवेति पश्चिमः । इदं महदादिविरिश्चिपर्यन्तम् एवम् प्रवेशादिकापि उत्तरश्लोकेषु द्रष्टव्या । तत्र स एवेति महत्स्रष्टा तद्भिष्ठत्वेन दर्शितः॥ ३० ॥

तयेत्यग्रहसंस्थितः पुरुषः ॥ ३१ ॥

### सुबोधिनी।

निर्मातितृतीयंकृष्णावतारप्रयोजनप्रइनंप्रथमाधिकारात् अवतारतुल्येनात्रानुकत्वाप्रश्चाद्वतारे **एवंसोपपत्तिकंफ**लसाधनस्वरूपं ष्वेवकथिष्यतिततश्चचतुर्थः प्रकाः तस्यकर्माणितितत्रो नरमाहसप्वेदमितिपंचिभः सृष्टिप्रवेशनानात्वभोगरक्षारूपाः पंचलीलाःक्रमेगा पंचिभःप्रतिपाद्याः सगुणानिर्गुणयोभैदाभावायस्पवेति सृष्टिस्त्वगुणादेषगुणत्रयेणापिसृष्टिः रजामिश्रितेनतत्तमोमिश्रितेनत्रयेणापि संहारः तथासत्त्वमिश्रितेनपालन्मितिशुद्धास्त्वधिष्ठातृदेवताश्रीरद्धपाः इदंजगत्तदृश्यस्यसर्वस्यापिजगतः कार्यत्वंनत्वाकाशादेनित्यते-तिअग्रेप्रथमम् "पतस्माज्ञायतप्राणामनः सर्वद्रियाणिचखंवायुज्येतिरापः पृथिवीविश्वस्यधारिणीति श्रुत्त्यासाक्षात्सर्वकारणंप्रथमासृष्टिः संतितेनिबंधेनिकपिताः भगवानितिवैष्णावशास्त्रेपवेयंप्रथमासृष्टिः वैदिकेतुस्वधर्मत्वशक्तिकालकर्मस्वभावानां सृद्धिः प्रथमा । अतोऽनंतगुगापूर्णपवभगवान्स्वस्यमायया शक्त्वासर्वभवनसामध्येरूपया इद्मात्मभूतंजगत्सृष्टवान् मायास्वरूपमाह साह्युचनीचस्वप्रतिकृतिकपातस्यामात्मानंसंयोज्यप्रकटीकुवन्जगद्रूपेगाजायते एवंसितसुगमासृष्टिभेवति सदस्यूप्यात । साहिभगविद्यकटेतिष्ठति निद्रापिशक्तिःसाजीवंभगवत्समीपेनयति तत्रमायापर्यतंगमनेस्वप्नः भगवत् । पर्यंतंगमनेसुषुप्तिः पुनक्चसायथास्थानमानयति विद्यातुभगवत्समीपमेवनयति नानयतिएवमनंताः शक्तयोभगवतः वेदेतुमायासा घटितपूरगापात्रभेदवदेदिकपौरागिकजगतोर्भेदः थनराहित्येनैवस्वतप्वात्मानं जगद्र्**पंकरोती**त्युच्युते चकाराद्नयेपिसृष्टिप्रकाराः स्च्यंते असाविति भगवद्धर्मनिरूप्रोनहृद्येस्फुरितंभगवंतंषहिः पश्पिष्ठवांगुल्यानिर्द्दिशति । स्वस्यानंत गृगास्पर्शेगातादशाकृतिरूपागुणमयीभवाति । तेषामुत्तमभध्यमनिकृष्टभेदेनित्रराशित्वात्सस्वरजस्तमोगुण वाच्यता । अस्याः पुनःस्प-प्यगुगास्तत्राह विभुरितिसर्वसमर्थेइत्यर्थः॥ ३०॥

प्यंसद्रूपेगाजगत्सृष्टिमुक्तवाआनंदरूपेगांतर्यामिसृष्टिमाह तयेति तयामाययाआकारसमर्पग्रेनविस्सितेषुचित्रेषुदेवादिदेहेषुभूतेषुचगु-याषुयेषु परिदृश्यमानेषुगुगावानिवतेषां तेषांतत्रेवप्रवर्त्तनात् खदिरांगाररिक्तमेव अंतःप्रविष्टःसण्याभाति अयोगोलकनिविष्टाग्निः गाषुयषु पारदृश्यमाग्रपुर्वातायः अयागवादाना विद्याना विद्

मिगाः सर्वत्रस्यजीवंस्वत्रप्रेरयतः तद्विधज्ञानवतः कार्यविशेनस्फुरग्रामिवविज्ञंभातद्वानित्यर्थः॥ ३१॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

किश्च ये पितृभूतप्रजेशादयो भजनीयास्तेषामपि स्नष्टा वासुदेव एवेति स एव सेवाई इत्याह स एवेति । सद्सदूपया कार्यकारणा-तिमक्या । स्वयंत्वगुगाः ॥ ३० ॥

मुज्यानां तेषाम स एवान्तर्यामीत्याह त्रिभिः। गुगोषु गुगोपाधिकजीवेषु तया मायया विलासविषयीकृतेषु गुगावानिव गुगासंब-र्भवानिव माति न तु तथा यतो विक्षानेन चिच्छत्त्वा विजृम्भितः अत्यूर्जितः ॥ ३१॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

श्रयतस्यकर्माग्युदाराणिबृहोतिप्रश्नस्योत्तरमाह सपवेतिचतुभिःसपववासुदेवः विभुः असीममहदिभासमानः आत्ममाययास्वरा-किभूतया सदसद्र्पयास्थ्लस्यसपया गुगामय्यासत्त्वादिगुगाप्रसुरया अगुगास्तद्गुगास्पृष्टस्वरूपः इदं चिद्चिद्र्पमग्रेससज्जे सुरम-विद्विच्छिक्तिरेक्कप्वविभुदेशकालवस्तुपरिच्छेद्शुन्यः सजातीयविजातीयभेद्शून्यः अविच्छिक्ति सूक्ष्मक्षपामहदादिस्तम्बप्य्यतस्थूलाका-ाचर। इतयासृष्टिसमयेप्रसायाचिच्छाक्तंजीवाल्यांदेवमनुष्यादि नानादेहरूपायांस्थूलावंस्थापन्नायांप्रस्तायथाकर्मसंस्था प्यदंविश्वंशक्तिद्वयात्म-रतया पृष्टा विद्यस्य शक्तित्वेन मिन्नत्वेपिशक्तिमद्भिन्न स्थितिप्रवृत्त्यसंभवाच्छक्तिमतोऽभिन्नत्वंश्चेयमेवं सितशक्तिमतोजगदुपादानकारः कंससर्जी शक्तित्वयस्य शक्तित्वेन स्वत्या के स्थापनि सिन्नति । प्रति ॥ विद्या के सितशक्तिमतोजगदुपादानकारः कल्पण स्वाति जगत्कर्त्त्वेन स्वाभाविकगुगावस्व चोपप्यते इति ॥ ३०॥

वात्रिगुणात्र विश्वरचनात्मकंकमेद्रीयित्वा प्रवेशलक्षणं कमेद्रीयति । तयति । तयागुण्मय्याविलसितेषुरचितेषु गुणकारेषु मह एवमगवतः । प्रमानविद्यानेन ज्ञानस्वरूपेणस्वाद्यान जीवेनस्वकृतपुर्यापुर्यकर्मफलभोगाय विज्ञिम्तः प्रवर्तितः यद्या विक्रानिन द्यादिस्तंवपर्यतेषु भगवान्विद्यानेन ज्ञानस्वरूपेणस्वाद्यानेन ज्ञानिक अविद्यानिक क्षानिक क् दादिस्तवप्यतः विज्ञिमतः प्रवित्तः श्राम्याः आप्राप्यक्षणपुष्यापुष्यक्षमफलभोगाय विज्ञिमतः प्रवित्तः यद्वा विक्रिन जीवकर्मफलद्वानायस्वसंकरपेन विज्ञिमतः प्रवित्तः श्रांतः प्रविष्टः गुणवान्दव वैषम्यनैष्टृणयलक्ष्यालोकिकगुणयुक्तदव कामाति-

X.

यथा ह्यवहितोवहिर्दारुष्वेकः स्वयोनिषु । नानेव भाति विश्वातमा भूतेषु च तथा पुमान् ॥ ३२ ॥ असौ गुणमयैर्भावैर्भृतसूक्ष्मेन्द्रियात्मभिः। स्वनिर्मितेषु निर्विष्टोभुङ्के भूतेषु तहुगान् ॥ ३३ ॥

#### भाषा टीका।

उसी माया से उत्पन्न आकाश आदिक गुणों में प्रविष्ट होकर गुणवान से प्रतीत होते हैं. वास्तव में खयं विकान मय विच्छिक से पूर्या हैं॥ ३०॥

भीमगवान् तिससदसदूप माया करके प्रकाशमान इन गुर्गों में भीतर प्रवेश होकर गुगावाले के सदश प्रकाश होते हैं वस्तुतः

अनुभव रूप झान से विशेष प्रकाशित हैं ॥ ३१॥

#### श्रीधरखामी।

बहुरूपत्वलीलामाह यथेति । खयोनिषु खाभिव्यञ्जकेषु । अवहितो निहितः । विश्वातमा पुमान् परमेश्वरः । भूतेषु प्राणिषु । अन्त-

र्योमिग्गोऽपि प्रतियोगिनानात्वेन नानात्वमिवोच्यते । क्षेत्रहरूपेग्ग वा ॥ ३२ ॥

भेगक्यां लीलामाह असाविति । असी हरिः भूतस्क्षाणि च इन्द्रियाणि च आत्मा मनश्च तैः स्वयं निर्मितेषु भूतेषु चतुर्विधेषु इति भोगे स्वातन्त्रयं द्योत्यते । तद्गुगान् तत्तदनुरूपान् विषयान् इच्छया भुङ्के भोजयतीति ग्रिजर्थो वा श्रेयः । पालयतीति वा । तदान त्वात्मनेपदमार्षे भुजोऽनवने ॥ १।३।६६ ॥ ६ति स्मरणात् ॥ ३३ ॥

### दीपनी

प्रतियोगिनानात्वेन उपाधिनानात्वेनेति पूर्वांचार्याः॥ ३२॥ भुजोऽनवने इति पाशिनीयव्याकरशास्य प्रथमाध्यायीयतृतीयपादस्य षट्षिटतमं सूत्रम् ॥ ३३॥

### श्रीवीरराघवः

एतदेवदृष्टांतमुखेनोपपादयति।यथेति । अभिव्यक्तिस्थानमात्रं योनिशब्देनोक्तम् नतुत्तु पादानंनिहप्रकृतिर्जीवस्योपादानं नवावन्हेर्दा-प्राचनविष्ण विस्ता । अने रापः अद्भारः पृथ्वीतिहि सृष्टिकमः यथादारुभ्योविन्हरविहतः व्यतिरिक्तं प्रवावसन्स्वयोनिषु स्वाभिव्यक्ति ब्रुपादान क्षित्र क्षानिक भेवसाति ज्वलित अग्नित्वस्थैक रूपत्वेऽपितार्गापार्गा बादिभेदवान् भातिएवं प्रकृतिपरिग्रामक पदे हे प्वभिव्यक्तोजी -स्थल्य प्रमान्यकाजाः । प्रमान्यकाजाः । प्रमान्यकाजाः । प्रमान्यकाजाववाचीतच्छरीरपरमात्मपर्यतः पुमान् विश्वा-बाह्मानानव्य प्राप्त प्र प्राप्त प्राप्त प्र प्राप्त प्र प्राप्त प्राप्त प्र प्राप्त प्र प्राप्त प्र प्राप्त त्मा जावरा । जावरा प्रशासन प्र कत्ववक्रत्वादि भेदश्चदारुगतप्रवनाभ्रिगतः तथादेवत्वाभ्रत्वतुः खित्वादिभेदोऽपिनविश्वात्मगतः किन्तु देवादिशरीरदारुभेदस्तद्गततच्छरीरक-कृत्ववक्रात्याच्याः । विन्हिविश्वात्मेत्येकत्विनिद्दोनिश्चित्विश्वात्मनोऽपि सर्वत्राविधितस्यखरूपतः स्वभावतोवानावस्थांतरापित्तिरित आवगतराप के विशेषः दारुष्विशेः साक्षादिभव्यक्तोनानाभातिदाष्टीतिके जीवद्वारिदेवादिकपेशानानाभाति इतिजीवविशिष्टदेवादि-शरीरासामिवाधिष्ठेयत्वात ॥ ३२॥

रागाम्या । यथाविश्वातमनः स्वद्यारीरभूतप्रकृतिपुरुषद्वारादेवादिरूपेगा नानाभानमेवसुखः दुः खादिभोक्तृत्वंतिश्रीमंत्तककृत्वंचस्वद्यारीरभूतजीवद्वा-यथावित्वार्थः । असावितिअसीविश्वात्मागुणमयैः सत्त्वादिगुणपिरणामक्पत्वेनतत्प्रचुरेभूतस्हमादिकपैभीवैः पदार्थे-रैवस्वतस्कतदुभयरहितद्दन्याहः ॥ असावितिअसीविश्वात्मागुणमयैः सत्त्वादिगुणपिरणामक्पत्वेनतत्प्रचुरेभूतस्हमादिकपैभीवैः पदार्थे-स्तत्रभूतानिश्यव्यादाः देव विविधः जीवद्वारानुप्रविष्टः तद्गुणान्षृथिव्यादिभूतगुणान्गंधादीन्विषयान्भुं जीवद्वाराविषयान् भिःस्वेनैवक् श्लीनिर्मितेषुभूतेषुदेवादिषुनिर्विष्यातं विविधान् विविधानं विधानं वि भिःस्विनवकत्राणानपञ्च रूपः । अत्रिवसमध्यातंकक्तित्वमध्यत्र विवक्षितंजीवद्वारापुरायापुरायद्भागाण कर्माणाचकरोतीत्यर्थः ॥ अत्रिव्धातमेसु भेकिनतुस्वतहत्यर्थः भोकृत्वसमध्यातंककृत्वविवक्षितम् ॥ ३३॥

#### श्रीविजयध्वजः।

नचस्थानमेदादद्वयस्यहरेमेदाशंकाकार्यत्याह यथेतियथैकोवन्हिःखखयोनिषुखस्यव्यक्तिस्थानेषु दारुषुव्यवहितः भूतानामहत्य तयास्थितः नानेवमातिमथनादिनेतिशेषः दाढ्यामानंत्यात्तयैकोविश्वात्माविश्वव्याप्तः पुमान्भूतेषुप्रविष्टोनानेवभाति नहुनाना "नेहनानास्तिर्किचनेतिश्रुतेः अग्नेःकश्चिद्विशेषसंभवोपिनास्यकश्चिद्विशेषद्रतिह्वशब्दार्थः ॥ ३२ ॥

नचतुर्भगशरीरेषुप्रविष्टस्यजीववत्तुः स्वभोगः संभाव्यतद्त्याद्द असावितिअसौपरमात्मास्त्वादिगुण्मयैः सत्त्वादिगुण्विकारैः मृत सूक्ष्मेद्रियात्मिमः पंचमहाभूतपंचतन्मात्रादशेद्रियमनोभिभीवैः तत्त्वैष्पादानक्षपैः स्वनिर्मितेषु स्वेनतत्त्वेषुप्रविष्टेनविरचितेषु भृतेषुनिर्विष्टः योगैश्वर्यादसंगतयाप्रविष्टस्तद्वुणानानंदादीनेवभुक्ते नतुदाषिनिमत्तदुः खादीन् तस्प्राद्दुर्भगशरीरस्थत्वेऽपिनदुः खादिभोगस्तस्यस्वातं ज्यादित्यर्थः ॥ ३३ ॥

#### कमसंदर्भः।

यथेति । सर्व्वभूतस्थः पुरुषः ॥ ३२ ॥ असाविति तत्तल्लीलावान् ॥ ३३ ॥

#### सुवोधिनी।

एवमन्तर्यामिमावंनिरूप्यजीवभावंनिरूप्यन्नानात्वलीलामाद्य यथेतिअवस्थितेरितिकाशकृत्यः॥१।४।२२॥ इतिवत् केनचिद्र्पेणावस्थिः
तोभगवानेवजीवद्दति तद्र्पमुच्यतेदारुषुयथावन्दिस्तथाभूतभौतिकेषुजीवः सचैकः उपाधिव्यतिरेकेणाखतोवेलक्षययाभावात् यथामयक्ष
व्यतिरेकेणकाष्ठेष्वार्भनेप्रतीयते तथायोगव्यतिरेकेणांतःकरणोजीवः यथाकरचरणाद्यवयवाः शरीरेभ्योनिमधंते तथामहाकाष्ठे सर्वेषेक्षप्य
विद्यामानोमथनस्थानेपूद्रच्छिति तथाप्रतीयतेचभेदः सचनप्रामाणिकः महाकाष्ठेपकस्यैववन्देः सिद्धत्वाच्याकाष्ठवद्धत्वेष्यनुमंतव्यम्पवंस्
विद्यामानोमथनस्थानेपूद्रच्छिति तथाप्रतीयतेचभेदः सचनप्रामाणिकः महाकाष्ठेपकस्यैववन्देः सिद्धत्वाच्याकाष्ठवद्धत्वेष्यनुमंतव्यम्पवंस्
विद्युसर्वेषुभूतेषुचितरोहितः समवस्थितः सजीवदितिहराच्दार्थः किंच यत्रहिआविभवित तत्र तिष्ठतीतिनिश्चितं योगेनक्षानेनवाऽयंसर्वे
प्रशाविभवित अतस्तानिभूतानियानिरूपाणि तेष्वकपववन्दिनीनाप्रतीयतदस्यश्चैः किंच विश्वातमाचायविश्वस्यैकमेविद्यक्षपंपकवचनप्रयो
प्रशाविभवित अतस्तानिभूतानियानिरूपाणि तेष्वकपववन्दिनीनाप्रतीयतदस्यश्चैः किंच पुमानयंब्रह्यांडवित्रहः खरादपुरुषपकपवस्यन्त्रव्याव्यवभूतानिमध्यस्थानिभूतानिभौतिकानिच तेषांभदप्रतीताविष्युरुषोनिभवते यथाकरचरणादिषुनानाभेदप्रतीताविषयिष्ठातु
तस्यचावयवभूतानिमध्यस्थानिभूतानिभौतिकानिच तेषांभदप्रतीताविष्युरुषोनिभवते यथाकरचरणादिषुनानाभेदप्रतीताविषयिष्ठिष्ठातु
भेदः तथासर्वत्रवद्धांडेपुरुषस्येति॥ ३२॥

मदः तथासवत्रव्रकाडपुर्वर्वातः । यद्यासवत्रव्रकानित । तद्वपेग्रीवभोगलीलेखाइ । असाविति चतुर्विधाहिसद्द्यसृष्टिः अतःकरग्राएकएव सर्वत्रगुप्तोनानेव प्रतीयमाना जीवइत्युक्तंभवति । तुर्ग्यामयत्वकथनात् स्वांद्यार्क्षपतानिक्षपिता । तैनिमित्तेषु देवतीर्थञ्चरामिन्द्रियाणि तन्मात्राणिभूतानिचेति । तानित्रिगुग्रात्मकानि । गुग्रामयत्वकथनात् स्वांद्यार्क्षपतानिक्षपिता । पतावताभोगसृष्टिभेद्उक्तोदिषु भूतेषुनितरांविष्टः अनध्यासेनिस्थतोभुंक्ते । विषयानात्मसात्करोति भोगमुक्तरत्रस्पष्टीकरिष्यामः । पतावताभोगसृष्टिभेद्उक्तोविषयु भूतेषुनितरांविष्टः अनध्यासेनिस्थतोभुंक्ते । विषयानात्मसात्विनां करग्रात्वंकर्तृत्त्वंस्वस्मित्रामितेषु स्वार्थवानिर्मितेषु स्वेनवानिमवति । साक्षात्रसृष्टेः पूर्वनिक्षपग्रात् मायाकरग्राकरग्राक्षतानीदियाणि । राजसतामसानि तन्मात्राग्रितामसानिभूतानिचेति ।
मितेष्वितगुग्रास्त्रयः । तत्रसात्त्विकमंतःकरग्रम् । सात्त्वकराजसानीदियाणि । राजसतामसानि तन्मात्राग्रित्वामस्यक्षत्रमुक्ये
धर्मार्थकाममोक्षचतुर्विधपुरुषार्थसिद्धार्थचतुर्द्वाभेदः । देहेनधमः तन्मात्रैर्यः इदियः कामः अतःकरग्रानमोक्षइति । तत्रजीवस्थकत्रमुक्ये

धमोथेकाममोक्षचतुविधपुरुषाथासद्भयचतुक्राम्यः। प्रतायसः साम्यः । प्रतायसः स्वायस्य । ३३॥ तयास्थितोअन्येद्यंगभावम् प्राप्नुवंति । अतप्वतहुणान्चतुविधपुरुषार्थक्पान्भुंकहत्युक्तम् ॥ ३३॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अवहितः सदास्थितो यथा तथा विश्वातमा अन्तर्यामी भूतेषु प्राणिषु । यदि तेष्वेवाग्निर्मथनेन प्रकटीकृतः स्यात् तदा तान्येव दा-कृशा दहति एवमेव अवगादिभिः साधनैः साक्षात् कृतः प्रमातमा मायिकमुपाधिम् जीवस्य दूरीकरोतीति ध्वनिः ॥ ३२॥

कागा दहात प्याप अवस्थाता सावगा ताया। स्वाप सावगा ताया। च आतमा मनश्च तैर्गु स्वाप स्वप स्वाप स्व

### सिद्धान्तप्रदीपः।

अथप्रेरगारूपंकर्मभगवतोदर्शयति यथेति आईशुष्कोत्तमा धमादिषुखयोनिषुखाभिव्यक्तिस्थानेषुदारुषु वन्हिरेकपव अवहितः समा-क्यतः नानेवभाति तत्तरकाष्ट्रखभावाजुसारेगासर्वप्रतापकोपि अल्पानल्पप्रात्वाग्रात्वतयानानेवभाति नतुनानातथाविष्वात्मासर्वातमा क्यितः नानेवभाति नतुनानातथाविष्वात्मासर्वातमा क्यान्यविष्यप्रदेशकतयानाने प्रमपुरुषः भूतेषुरुथावरजंगमेषु हन्यहंत्रादिषु पक्षपविषयभाक्षितः तत्तरकमीजुगुययात् अन्योन्यविष्यप्रदेशकतयानाने वृमान् परमपुरुषः ॥ ३२ ॥ व्यतीयतेनतुनानेत्यर्थः ॥ ३२ ॥

73

# भावयत्येष सत्त्वेन छोकान् वै छोकभावनः । (१) छीछावतारानुरतोदेवतिर्यङ्गरादिषु ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुरायो पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कम्धे नैमिषीयोपाख्याने श्रीभगवद्गुमाववर्यानं-माम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

### सिद्धान्तप्रदीप:1

अयसम्जवश्वितिनोबासुदेवस्यसमकापितपदार्थमोगकपंकमैदर्शयति असाविति असीविश्वातमा मृतस्हमेद्रियातमभिः भृतस्हमा-स्विस्तमनस्कानिवागादीनियानीदियागिचजीवरूपा आत्मानश्चतैःगुगामयैः सस्वादिगुगापच्दैः जीवानामिपगुगामयोभयदेह योगासन्म यस्वमुपचर्यते प्रविविधिश्चदिचद्रपैभीवैः स्वेनभगवतानिर्मितेषु भृषुब्रह्मादिस्तंवपर्यतेषुनिर्विष्टः तद्गुगान् भुक्ते "अहंहिसर्वयद्वानांभोकाः चप्रसुदेवच पत्रपुष्पंफळंतोयंयोमेमच्याप्रयच्छति तद्दंमक्युपद्यतमक्ष्नामिप्रयतात्मन"हति श्रीमुखोक्तेः॥ ३३॥

#### भाषा टीका।

बहुरूप लीला कहते हैं जैसे अपने प्रकाश निमित्त कारण अनेक कालोंमे लिपाहुआ अग्नि एकही अनेकसा प्रतीत होता है तैसेही अनेक जीवोंमे व्यापक प्रमुख्य भी अनेक से प्रतीत होते हैं॥ ३२॥

मोगरूप छीछा कहते हैं यह परमात्मा त्रिगुगा विकार जो पंचभूतों की सूक्ष्म अवस्था औ क्षानेंद्रिय कर्मेद्रिय मन इनकरके खयं बनाये शरीरों मे प्रवेश होकर तिन विषयों को भोग करते हैं॥ ३३॥

### श्रीधरम्बामी।

इदानीं सूत जानासीति प्रश्नस्योत्तरमाह । भावयित पालयित । एतत्तु सन्वीवतारसाधारण प्रयोजनं विशेषतः श्रीकृष्णावतारस्य इन्तिस्तुती वस्यते । लोकभावनः लोककर्त्ता । देवादिषु ये लीलावतारास्तेषु अनुरतः अनुरक्तः ॥ ३४॥ इति श्रीमद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २॥

### दीपनी।

भावयतीति श्लोकेन सूत जानासीति द्वादशादिश्लोकोक्तप्रश्रद्वयस्योत्तरमुक्तमिति श्लेयम् । श्लीकृष्णावतारप्रयोजनकथनेन तन्मुलकत-

### श्रीवीएराघवः

#### ्र श्रीबीरराधवः १ १९९७ वर्षे

तदेवहच्दांतेनोपपादयति ययेति ययेक्प्यविद्धः स्वयोनिषुस्वाभिन्यक्तिस्थानेषुत्यापाणीदिष्वभिन्यकोनानेवभाति तार्णात्वपाणी-त्वादिमेदेनमाति इवशब्देनवस्कतोविन्दित्वेनकपेग्रीक कप्यवपवंविश्वात्माविश्वस्थाचेतनजातस्थातमा पुमान्जीवोपिभृतेषुदेवादि शरीरेषुनानेवभातिदेवोद्दं मनुष्योद्दमित्यादिकपेग्रा नानाभातिवस्कतोक्षानेकाकारेग्रीककप्रवेद्यर्थः ॥ पुमानितिजात्यिभप्रायकप्यत्वनि देशः "पकोब्रीद्दिः सुसंपन्नः सुपुष्टंकुरुतेप्रजाइत्यत्रव्रविद्दाब्दवत्पवंचजीवैकत्वस्मानकार्यः ॥ दृष्टांतेपिषन्दित्वेनकिपिनव्यक्तिभेदोभिष्रेतः विवेक्षेकस्यजीवस्यदेवादिशरीरस्थस्य युगपन्नानाप्रतिमानाभावद्दितवाच्यम् पेककप्वजीवःक्रभेग्रादेवमनुष्यादिशरीराग्युपाददानः देवोद्दमनुष्योद्दिमत्याभातीत्येवमभिप्रायात् निद्दष्टांतेपितागीस्यवन्देःपाग्रीत्वनभानमस्ति ॥ स्व ॥

प्रभावन्य प्राथन्य सत्त्वादिगुगात्रयात्मकभगवन्मायापरिग्रामक्षेः पृथिव्यादिभूतगंधादितन्मात्राक्षानेद्रियकमेद्रियांतः कर्गे। असीजीवःगुग्रामयेः सत्त्वादिगुग्रात्रयात्मकभगवन्मायापरिग्रामक्षेः पृथिव्यादिभूतगंधादितन्मात्राक्षानेद्रियकमेद्रियांतः कर्गे। भीवैःपदार्थः स्विनिर्मितेषुस्वकर्मानुसारेग्रा निर्मितेषुभूतेषुदेवादिशरीरेषु निर्विष्टःगुग्रान्शब्दादिविषयान् भंकेतिषिमित्तानिकर्माणिच पृथयापुग्यकपाशिकरोतीतिचविविष्ठातेदितव्यम् यद्वातयाविलसितेष्वत्यादिभिः केवलंपरमात्मैवप्रतिपाद्यतेतदाविक्षानेनेत्यस्यसंकल्प-

कपश्चानेनेत्यर्थः पुमान्परमपुरुषः गुणान् भुंके इत्यस्य लीलारसरूपान् गुणान् भुंके इत्यर्थः ॥ ग ॥

तदेवंपुंसामेकांततः श्रेयस्तश्वःसंसितुमईसीत्यस्योश्चरमुक्तम् ॥ स्तजानासिमद्रंतेइत्यादिना श्रीकृष्णावरंतश्चरित्रंतदितरावतारतश्चरिन्त्रविदेवंपुंसामेकांततः श्रेयस्तश्चरित्रादिकंविद्दिष्यद्शमेकादशस्कंधाश्यांसर्वावतारांस्तश्चरीत्राणिचविधिष्यतत्रतत्रवत्रविद्यादिषुविषश्रादिकंचपृष्टंतत्रश्रीकृष्णावतारंतश्चरित्रादिकंविदिष्यद्शमेकादशस्कंधाश्यांसर्वावतारांस्तश्चरीत्राणिचविधिष्यतत्रतत्रवत्रविद्यादिषुविषश्रुस्तावत्समासतः सर्वावतारसाधरणांप्रयोजनमाह भावयतीति एषसर्वेश्वरोलोककस्वष्टृत्वेनलोकान्मावायत्कर्मवद्यांश्चेतनानुष्ठीः
श्रुस्तावत्समासतः ग्रुद्धसत्त्वमूर्त्तिःतिर्यङ्नरसुरादिषुलीलावतारेष्वनुरतोभवतिभावयतीतिपाठेलोक भावनोलोकस्वष्टाप्वसर्वेश्वरः
विर्यगादिषुमत्स्यादिषुमध्येयेलीलाया अवतारास्तेष्वनुरतः लीलावतारेभकेष्वनुरतोवासत्त्वेनलोकान् भावयतित्रायतिसाधुपरित्राणायमतर्यगाववतारंधत्तद्दर्यथः ॥ ३४ ॥

इतिप्रथमेटीकायां द्वितीयः ॥ २ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

उत्तराध्यायेश्रथाख्याहीतिप्रश्नंपरिहरिष्यन्तद्रथंसंक्षेपतोदर्शयतिभावयाश्चिति लोकभावनःजगदुत्पादकःसत्त्वेनगुगोनरतरगुगानिभ् विलेखित्रश्नंपरिहरिष्यन्तद्रथंसंक्षेपतोदर्शयतिभावयाश्चिति लोकभावनःजगदुत्पादकःसत्त्वेनगुगोनरतरगुगानिभ् यलोकान्भावयन्पालनेनवर्धयन्नेषपरपुरुषस्तर्यङ्गरसुरादिषुतिर्यग्वराहादिजातिषुनरेषुमनुष्येषुदेवेषुभादिशब्दात्स्तंभादिषुलीलावतारानु यलोकान्यभावयान्यप्रतिन्यभावतीतिविश्लेषगान्वयःलीलयेवावतारान्यनुगच्छिति । नतुपूर्वकर्मगा योयोवतारोजगद्वनादावनुकूलःस्यात्तंतमवतारंगृहगातिन्यभावतीतिविश्लेषगान्वयःलीलयेवावतारान्यनुगच्छिति । नतुपूर्वकर्मगा योयोवतारोजगद्वनादावनुकूलःस्यात्तंतमवतारंगृहगातिन्यभावतीतिविश्लेषगान्वयःलीलयेवावतारान्यनुगच्छिति । नतुपूर्वकर्मगा योयोवतारोजगद्वनाद्रवावनुकूलःस्यात्तंतमवतारंगृहगातिन्यभावतीतिविश्लेषगान्वयःलीलयेवावतारान्यनुगच्छिति । नतुपूर्वकर्मगा योयोवतारोजगद्वनाद्रवावनुकूलःस्यात्तंतमवतारंगृहगातिन्यभावतीतिविश्लेषगान्वयः ॥ २ ॥

### क्रमसन्दर्भः।

भावयतीति विष्णुरिति श्लेयम् । एतेन पूर्वोक्तेषु ब्रह्मत्वादिषु त्रिषु परमात्मत्वं दर्शितम् । अन्ये द्वे दर्शयिष्येते ॥ ३४॥ इतिश्री मद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृत क्रमसन्दर्भे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २॥

### सुबोधिनी

पर्व भोगलक्षणलीलामुपपाद्यतत्सिक्षयेपालनलक्षणलीलामाह । भावयतीति । भावयति पालयति एष एव जीवक्षपेण अभिन्नः पालनेसत्त्वगुणपकप्यकरणं लोकान्भुवनजनरूपान् अथवा । सत्त्वेनभावयति । सत्त्वयुक्तान्करोतीत्यर्थः । उभयन्नहेतुमाह । लीलावतारानुतर्दति । अवतार्रेदेत्यानां वधंविधायस्वंलोकान् पालयति । अवतारेश्चरित्राणि विधायस्वान् लोकान् सत्त्वयुक्तान् करोतिमुक्तये ।
तर्दति । अवतार्रेवाक्षयं पालनं । तत्राह । लोकभावनद्दति । लोकभावनं यस्येतिमुक्तिप्रकारः । अवताराणामविद्यमानननु सत्त्वमात्रेणाक्रथंमुक्तिः अवतार्रेवाक्षयं पालनं । तत्राह । लोकभावनद्दति । लोकभावनं यस्येतिमुक्तिप्रकारः । वेषामवदुः विवारणाय
दशायामि भावनेवस्वानिष्टिनवृत्तेः पालनित्यर्थः । अथवालोकान् भावयतीति । सर्वेदालोकानांचितया । तेषामवदुः विनवारणाय
दशायामि भावनेवस्वानिष्टिनवृत्तेः पालनित्यर्थः । अथवालोकान् भावयतीति । यथाजीवास्तत्रतत्ररताः रितव्यतिरेकेण ताद्द्यश्चः
अवतारान्कृत्वापालयतीत्यर्थः । ननुकथंतमः प्रकृतिषुलीलेत्यत्र आह् । अनुरतद्दि । यथाजीवास्तत्रतत्ररताः रितव्यतिरेकेण ताद्द्यश्चः
श्वावाभात् । तद्वज्वयमिपरतद्दत्यर्थः । देवाद्यः सत्त्वित्रेवाः आदिश्चलेनिमश्चमेदाः अनेनायुक्तेष्वित पर्वेषुभगवद्वतारोक्षातव्यः ।
दिश्चित्रवाभात्व । अवताराह्यसंख्येयाद्दि देवेषुवामनः तिर्यक्षुमत्स्याद्यः नरेषुरामाद्यः मिश्चेषु नृसिहाद्यद्दिति ॥ ३४ ॥
दिश्चित्रच । अवताराह्यसंख्येयादित देवेषुवामनः तिर्यक्षुमत्स्याद्यः नरेषुरामाद्यः भिन्नेषु नृसिहाद्यद्दिति ॥ ३४ ॥
दिश्चित्रच । अवताराह्यसंख्येयादित देवेषुवामनः तिर्यक्षुमत्स्याद्या भावत्रत्वाद्यः भावत्रत्वाद्या । ३ ॥

### श्रीविश्वनाथ चकवर्ती।

प्वमन्तर्यामियाः प्रतियोगिनानात्वेन नानात्वमौपाधिकमुकम् । भगवतस्तु विनेवोपाधिम् नित्ययैव लीलया सक्रपेगीव नानात्वमाह । स्वनन्त्र नाजनात्रात्रात्र नाजनात्रात्र विकास क्षेत्रमञ्जूकांत् करोतीति सर्वावतारसाधारग्रयोजनम् । छोकमावनः यतो s court is ळोककर्सा ॥ ३४॥

इति आर्थेयेवृद्धिन्यां इषिययां मक वैतसांम ा द्वितीयः प्रथमेऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम ॥ २॥ CONTROL TO THE THE PARTY OF THE

श ६ ११ द्वार्थ के स्वांतप्रदीपः। अयसूतजानासिमद्रंते मगवान्सात्वतांप्तिः देवक्यांवसुदेवस्यजातोयस्यचिकीर्षयेति प्रश्नस्योत्तरमाहभावायतीति लोकभावनः अयस्त्रणानात्त्वम् व नामान्याः व नामान्याः अस्य स्वर्थाः अस्य स्वर्थाः व न्यायः व व स्वर्थाः व स्वर्थाः व स्वर कोकान् भावयति । उत्पादयतीति सतथासर्वकोककारणभूतः "यदायदाहिष्टमस्य ग्लानिभवतिभार्त्त अभ्युत्थानमधर्मस्यतदात्मानंसृजा-ळाणात्रभावपातः। अत्याप्त्रपात्तः अस्य विश्व क्रितामिति श्रीमुखबचनात् देवतीर्यक्नरादिष्वाविभावस्थानेषुसत्त्वेन नियम्यगुगोनोपळ-म्यहः पारत्रात्यायकापूराण्यात्रात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात्र्यात् । एवंभवद्भिदंवक्यांवसुदेवस्य श्वितः लीलावतारातुरतः लीलावतारैवामनवराहादिकपैरतुरतस्तत्तत्त्वालेधमेत्राणाद्यर्यमुद्यतोभवतियः । एवंभवद्भिदेवक्यांवसुदेवस्य ाक्षतः लालावताराञ्ज्या विकीषितं पृष्टंसमगवान् लोकान्मावयतिस्मदेवक्यांजातः सिक्षित्रिशेषः॥ तत्रकांश्चित्पुत्रत्वादिनासुखय जातोयस्यविकीर्षयेतियस्यविकीषितं पृष्टंसमगवान् लोकान्मावयतिस्मदेवक्यांजातः सिक्षित्रिशेषः॥ तत्रकांश्चित्पुत्रत्वादिनासुखय माविमीवप्रयोजनंकुतीस्तृतीद्रष्टव्यम् ॥ ३४॥ १८ इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतसिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कंधीयेद्वितीयाध्ययार्थप्रकाशः ॥२॥

#### भाषा टीका।

सव लोकों के कर्सा यह मगवान देवता मनुष्य तिर्थग्योनियों मे लीला के अवतारों मे अनुरक होकर सत्त्व गुण से सव जीवों को पालन करते हैं ॥ ३४॥ इति प्रथम स्कंध का तुसरा अध्याय ॥ २ ॥

and the second of the second o The state of the s

The state of the s

# तृतीयोऽध्यायः ।

सूत उवाच।

जगृहे पौरुषं रूपं मगवान् महदादिभिः। सम्भूतं षोडशकलमादौ लोकतिसृचया ॥ १॥ यस्याम्भित शयानस्य योगनिद्रां वितन्वतः । नाभिह्नदाम्बुजादासीद्ब्रह्मा विश्वसृजाम्पतिः ॥ २ ॥

### श्रीधरखामी।

अवतारकयात्रक्षे तृतीये तृत्तराभिधा। युक्षाद्यवतारोत्त्वा तत्त्वचारित्र्यवर्शनैः॥ ०॥

यदुकं अथाक्वाहि हरेथीमञ्जवतारक्याः शुभा इति तदुत्तरत्वेनावताराननुक्रमिष्यन् प्रथमं पुरुषावतारमाह जगृहे इति पश्चिमः। महदादिभिमहदहंद्वारपञ्चतनमात्रैः सम्भूतं सुनिष्णम्यपकादशेन्द्रियाणि पञ्चमहाभूतानि इति षोडशकला अंशायस्मिन् तत् । यदापि मन गविद्रप्रहो नैवम्भूतः तथापि विराइजीवान्तर्यामिग्राो भगवतो विराड्रह्मेग्रा उपासनार्थमेवमुक्तमिवि द्रष्ट्यम् ॥ १॥

कोऽसी मगवानित्यपेक्षायां तं विशिवष्टि यस्येति । यस्याम्मसि एकार्यावे शयानस्य विश्वान्तस्य तत्र योगः समाधिस्तद्रूपां निद्रां वि-स्तारयतः नाभिरेवहृदः तस्मिन् यदम्बुजं तस्मात् सकाशात् ब्रह्मा आसीत् अभूत् । पान्ने कल्पे स पीरुषं कपं जगृहे ॥ २ ॥

### दीपनी।

ं मयाख्याहीति पूर्वाध्यायस्य मष्टाविश्वस्थोकः॥ १—८॥

# श्रीवीरराघवः ।

तदेवंप्रथमेध्यायेष्रदनःकृतः द्वितीयेतुसर्वेष्रवर्त्तंकमगवद्भक्तेरेवमोक्ष प्रदत्वाद्भगवदीयप्रवंधएवश्चोतन्य इतिस्थापितमवतारप्रयोजनं तद्वप्रयमध्यायप्रकारण्याः । स्वाप्त्याप्त्र । स्वाप्त्याप्त्र । स्वाप्त्र । स्वाप्त्याप्त्र । स्वाप्त्याप्त्र । स्वाप्त्र । स्वाप्त इत्यादिनाअवतारात्र्याक्षाचनार पञ्चनपात्रात्रा । १०० । हावधान पितान्वकुंतददुयोगित्वेन प्रथमंचेतनमिश्रंप्रकृतिप्राकृतजातमेकंश्रुद्धसत्त्वमयमपरं चेतिरूपद्धयंभगवतोस्तीतिविवस्नन्पूर्वे प्रकृतिप्राकृता पितान्वकुतद्दुयागत्वन अयन्यतम्बद्धाः क्षेत्रज्ञास्तत्संबंधिपौरुषंतिमश्रमित्यर्थः एकाद्शेद्रियपंचभूतात्मकः षोडशकलायस्मिस्तत्त्रथामहन् त्मरूपपोरत्रहमाह ॥ जण्डहरावपुरपार प्राप्ताः । प्रापताः । प्राप्ताः । प्

ांडतद्वातकायजातालपृक्षयालप जाउदराजना । अथस्वासाधार्णकपमाहयस्येतिप्रथमस्योतिशब्दस्ययोथःसतद्वाद्दातितच्छन्देनपरामृश्यतेद्वितीयंतुयस्येतिपदंचतुर्मुखपरचंतुमुखशरीरा अथसासाधारणक्षप्रवाद्यप्रवाद्यप्रवाद्यप्रवाद्यवसंस्थानेथेच्छरीरावयवपरिणामैदेवमनुष्यादि लोकविस्तरः सब्रह्माविश्वसृजांमरीच्या द्दीनापातः यस्यामार्यस्यापर्यमाणात्रः। न्यापर्यस्यापिक्छ्यत्वंसर्वावतार्यनिदानत्वंचाह्यस्याभसीतिसाञ्चेन यद्वाजगृहह्त्यादिश्लोकानामेवमर्थः श्रीकद्वयस्यकवानयम् तर्वकारवकारवन्ता । अयमस्यदेवादिष्वनुप्रवेशह्रपत्वात्तत्रवक्तव्यस्वभावात्स्वेनहृत्यादिश्लोकानामेवमयः अजडेष्वनुप्रवेशहृतेषाचिष्ठावतारेतत्र प्रथमस्यदेवादिष्वनुप्रवेशहृत्यात्त्रभावात्स्वेनहृत्यादिश्लोकानामेवमयः अजडेष्वनुप्रवेशहृत्यात्त्रभावात्स्वेनहृत्यादिश्लोकानामेवमयः अजङेष्ट्राचन्त्रभावात्स्वेनहृत्यादिश्लोकानामेवमयः द्यरीरभूतप्रकृत्येकदेशपरियामेळींकविस्तरः मयमूर्जितमुत्कृष्टमित्यर्थः ॥ ३ ॥ कविपतस्तस्यभगवतोक्रपंशुक्तसत्त्वः

# श्रीविजयध्वजः।

भावयन्नेषसत्त्वेनेतिद्वितीयाच्यायांतेसुचितानवतारात्कययितुंप्रथमतःपरमपुरुषाख्यभगवद्भिव्यक्तिप्रकारमाह जगृहदृति ॥ अगवा भावयत्र परित्र स्थाप्त क्षेत्र स्थाप्त क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र का क्षेत्र का स्थापति का स नादालापार रहें । नतुविराङ्कपंमहदादिभिः प्रळयकालेखोद्दिनिविष्टैर्महद्दंकारादिसप्तप्रकृतिविक्ठतिभिः शरीरस्थानीयादिभिः संभूतंसहिते कला

#### श्रीविजयध्वजः

श्चपंचभूतानिद्यानकर्मेद्रियाणिच पंचपंचमनश्चेतिषोडशोक्तामहार्षिभिरितिषोडशकलामंतर्गतायस्मिषितितत्षोडशकलम् । "यस्मिषेताः षोडशकलाःप्रमवंतीतिश्चतेःप्राणादिषोडशकलासहितंवा ॥ सिसृक्षयासृष्टीच्छया। यःप्राक्जगत्संहृत्यसूक्ष्मरूपतयास्वोदरेनिवेश्य प्रल योदक्षेश्रीपर्यकेश्रीभुजांतर्गतः प्रकृतिमयतमसानिगृढःस्थितःसप्वपरमपुरुषः पुनरूपितकाले स्वगृहकंतमःपीत्वाऽऽत्मानप्रकाशितवानि त्येतदेवात्रपुरुषरूपप्रहणामिप्रेतं रामकृष्णादियलोक्त्यक्त्यभिप्रायोपीत्युक्तंभवति॥१॥

एवंस्वगृहकतमःपानेनप्रकाशितः परमपुरुषःमहदादितत्त्वान्युत्पाद्यतेर्व्रह्मांडंसृष्ट्वातदंडांतःप्रविद्यांतरुदकेशेषपर्यकशायीनाभेर्लोकात्मकं-पद्मनिर्माय पद्मनामनामाभूत्वातस्मात्पद्माश्चतुर्भुखमस्राक्षीदित्याह यस्येति अंभसिशयानस्ययोगनिद्वांवितन्वतः यस्यभगवतःनाभिद्र-

दांबुजाद्विश्वसृजांदक्षादीनांपतिर्वेद्वायासीत् ॥ २ ॥

### कमसंदर्भः।

नतु पूर्वे ब्रह्मादितया त्रिधैव तत्त्वमेकमुक्स । तत्र ब्रह्माः किम लक्षमां भगवत्परमात्मनोवी तत्र तत्र विशेषः कश्चिद् वा किमस्तीति श्रीशौनकादिप्रसमाशङ्कय ब्रह्मेति परमात्मेत्यत्र यो भगवान् निर्दिष्टः स प्वेदिमत्यादौ च यस्यैवाधिमावा महत्त्रप्राद्यो विष्णुपर्यन्ता निर्दिष्टाः स भगवान् स्वयं श्रीष्ठष्ण प्वेति पूर्व्वदिशितशौनकाद्यमिष्टिनज्ञाभिमतस्थापनाय परमात्मनो विशेषानुवादपूर्व्वकम दर्शयितुं तत्रप्रसङ्गेनान्यानवतारान् कथियतुं तत्रेव ब्रह्म च निर्देष्टामारमते जग्रह इति । यः श्रीभगवान् पूर्णपर्वेश्वयंत्वेन पूर्वं निर्दिष्टः स प्व पौवषं कपं पुरुषत्वेनाम्नायते यद्रपं तदेवादौ सर्गारम्भे जग्रहे प्राष्ट्रतमल्ये स्वस्मन् लीनं सत् प्रकटतया स्वीकृतवात् । किमर्थम् तत्राह लोकसिस्पृक्षया । तस्मिन्नेव लीनानां लोकानाम् समष्टिव्यष्ट्रपृष्टिजीवानाम् सिस्पृक्षया प्रादुर्भावनार्थमित्यर्थः । कीदशं सत् तद्रपं लीनमासीत्तत्राह महदादिभिः सम्भूतं मिलितम् । अन्तर्भूतमहदादितत्त्विमत्यर्थः । "सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापनेत्यादौ हि सद्भवितिमिलनार्थः । तत्र हि महदादिनि लीनान्यासिन्निति । तदेव विष्णोस्तु त्रीभिः कपाणि पुरुषाल्यान्ययो विदुः । एकन्तु महतः स्वद्म द्वितीयं त्वयद्यसंस्थितम् । तृतीयं सर्व्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते (ति। नारदीयतन्त्रादौ महत्सष्टृत्वेन प्रथमं पुरुषाल्यम् कपं यद्म श्रूयते (तिसमन्नाविर्मूलुङ्गे महाविष्णुर्ज्ञगत्पतिरित्यादि । नारायणाः स भगवानापस्तस्मात् सनातनात् । आविरासन् कारणाणीनिधिः सङ्गर्थणात्मकः । योगनिद्राम् गतस्तिसन् सहस्रांगुः स्वयम् महानित्यादि ) यश्च ब्रह्मसंहितादौ कारणार्थावशायिसङ्कर्थणत्वेन श्रूयते । तदेव प्रतिपादितम् । पुनः कीदशम् तद्भुपं तत्राह षोदशक्ते तत्तसृष्ट्यपयोगिपूर्णश्चिक इत्यर्थः । तदेवं यस्तद्रूपं जग्रह स भगवान् । यत्तु तेन गृहीतं तत्त स्वसृज्यानामाश्रयत्वात् परमात्मिति पर्यवसितम् ॥ १ ॥

तस्य पुरुषक्षपस्य विसर्गनिदानत्वमपि प्रतिपाद्यितुमाह सार्धेन । यस्याम्भसि शयानस्येति । यस्य पुरुषक्षपस्य द्वितीयेन व्यूहेन ब्रह्माग्डं प्रविश्य अम्भसि गर्भोद्के शयानस्येत्यादि योज्यम् । अत्र टीकायाम् पाद्म इत्यत्न ब्राह्म इति वाच्यम् (पुरुषावयवैलीक-

रचनोकेः )॥२॥

1

# सुबोधिनी ।

आद्यासृष्टः । अतानाः की हशस्यकर्तृत्वमित्यतथाहयस्यांभसीति ॥ नेदंदैनंदिनप्रलयशयनं कितुवैप्णवतंत्रोक्तं अतुभूतिसृष्टिहेतु भूतनारातनुकातुपपन्तिः की हशस्यकर्तृत्वमित्यतथाहयस्यांभसीति ॥ नेदंदैनंदिनप्रलयशयनं कितुवैप्णवतंत्रोक्तं अतुभूतिसृष्टिहेतु भूतनारातनुकातुपपन्तिः कासीतुद्वारगुणावारिधिरित्यादौ सहस्र्वोद्दरस्थान्जीवान् निर्मातित्रेतित्रभेतिस्वर्णाः महान् क्रेशहत्याश्रीक्यश्रयानादेवसर्वजातस्यात् अतोब्रह्मां इरूपेद्वितीयंकोशमुत्पाचतत्रसर्वोन्तस्य अस्यात् अतोब्रह्मां इर्णात् भगवान्शयानपवस्थितः असीतिश्रात्यानस्यातः असीतिश्रयानस्यातः असीतिश्रयानस्यातः असीत्रयानस्यात्रभेतिस्वर्णानस्यातः असीत्याद्यान्यत्वत्रस्यानस्यात्रस्यात्यस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस्यात्रस

### सुबोधिनी।

तद्र्यप्रयतमानैरेवसृष्टिः क्रियतद्दातिभावः तथाभगवत्यपिजातिमत्याद्द् नाभिष्ठद्रांवुजादितिउद्दर्भ्यजगज्ञापनायनाभिपदंपंकजाशोषाय-हृदः अवुजंचत्रेलोक्यात्मकंतेनमगवतो माहात्म्यमपिस्चितं प्रथमकार्यत्वात्वव्याच्यण्वकर्तृत्वेनस्वातंत्र्यख्यानायपरंपुिलगिनिर्देशः तत्रायरीच्याद्योपिजाताःतेषाययमाञ्चापकश्चजातद्वत्याद्द् विश्वसृजांपितिरितिपितशब्देन अनुक्षंष्यातस्यावेतिस्चितम् अनेनिद्दशयना-देवसर्वलोकाउत्तपन्नाद्दयुक्तम् ॥२॥

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

अवतारकथा ब्रहीत्यस्योत्तरतयोज्यते । भगवान् जन्मकर्मभ्यां तृतीयेऽनेकमूर्त्तिमान् ॥ ० ॥ पूर्व्वाघ्यायान्ते लीलावतारानुरत इत्युक्तम् । तत्र कास्तस्य लीलाः के वा अवतारा इत्यपेक्षायां प्रथमं पुरुषावतारमाह जगृह इति पञ्चिमः। पौरुषं पुरुषाकारं पुरुषसंक्षं वा । ननु जगृहे इति चेतुच्यते ति तद्रूपं पूर्व्वम् नासीदित्यवगत्या तद्रूपस्यानित्यत्वं प्रसक्तमित्यत आह सम्यग्भूतं परमसत्यम् पूर्व्वपूर्व्वन् प्रिष् सदेव सक्ष्येण स्थितमेव । तत् जगृहे लोकसृष्ट्यथमुपादने प्रहण्णस्य विद्यमानवस्तुविषयत्वात् । घटस्याविद्यमानत्वे घटं जन्नान् हेति प्रयोगादर्शनाचराजा सेनान्यम् दिग्विजगिषयास्यसङ्गे जन्नाहेतिवत् । "युक्ते क्ष्मादान्तते भूतं प्राण्यतीतेसमे त्रिष्वित्यमरः उत्तरत्रापि स पव प्रथमं देव इत्यादौ सर्व्वत्र सम्भूतिमिति पदमनुवर्त्तनीयम् । महदादिभिर्महत्तत्त्वाहङ्कारादिभिर्लोकानाम् समष्टिव्यष्टीनाम् भवन्तानां वा या स्रष्टु मिच्छा तया पोडशैव कला यस्मित्रिति राकाचन्द्रमिव मत्स्यकूर्म्माद्यवतारानपेक्ष्य परिपूर्णमित्यर्थः। "कला तु षोन् हशो भाग" इत्यभिघानात् । अत्र योऽयं भगवान् स परव्योमाधिनाथः। तेन गृहीतंयत् षोडशक्तं कपम् स महाविष्णुः प्रकृतीक्षणकर्तान्ति सङ्किष्णांशः कारणार्णवशायी प्रथमः पुरुषो भगवतामृतोक्तयुक्त्या क्षेयः॥ १॥

यस्य पुरुषस्य अम्मसि खरोमकूपस्यब्रह्माग्रङान्तरे एकैकप्रकाशेन प्रविद्य खमृष्टे गर्भोदे शयानस्य योगः समिधिस्तद्भूपां निद्राम् विस्तारयतः । यस्य नामिहदाम्बुजस्य अवयवानां संस्थानः प्रदेशविशेषेळोकविस्तरः पाताळादिसत्यान्तभुवनविन्यासः । इत्ययम् पद्मनाभः प्रद्युम्नांशो गर्भोदशायी द्वितीयो क्षेयः । यस्तु पूर्व्वाध्याये हरिविरिश्चिहरोति संज्ञा इत्यत्र हरिरिति पठितः स क्षीरोदशायी अनिवद्धांशस्तृतीयः पुरुषो न्नेय इति पुरुषत्रयम् । अत्र प्रथमः प्रकृतेरन्तर्यामा । द्वितीयः समिष्टिविराजः । तृतीयो व्यष्टीनामिति । त्रय प्रवाशनान्तर्यामिग्गः । तदुक्तं । 'पक्षन्तु महतः मृष्ट् द्वितीयं त्वग्रहसंस्थितम् । तृतीयं सर्व्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यत इति । पत्रश्चेन तत्वाकरग्रव्यिक्ता महाविष्णोर्ळालकथापरिपाटी चयम् । यदैव तस्य पुनरिप प्रदेशविशेषे शयनेच्छा अजिनष्ट तदा कारग्राग्रीवे शयान पव खिनिश्वासनिष्कमग्रा प्रथमक्षेय खशाकि मायामिक्षष्ट । तया च तिदिङ्गतन्नया तिद्व्यावळाळाळाचामाण्ययेया महत्तत्वादिन तत्वानि खत एव निष्काश्य ब्रह्माग्रङं तैः सृष्ट्रा खप्रभुविज्ञाप्यते स्म हे नाथ शियतुमागच्छेति । ततोऽसी तत्र गत्वा निमेषमात्रं शियत्वा यदैव पुनरागतवान् तदैव तद्ब्रह्माग्रङं शयनमन्दिरं निर्माल्यमिव माययेव स दूरीचकार । पुनरिप नवीनमन्दिरं तं शायियतुमेवश्च ब्रह्मग्यः परार्क्द्वयं गच्छित स्म । यदुक्तं तृतीये निमेष उपचर्यत इति ॥ २॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

अथाक्याहिहरेथींमञ्चवतारकथाः शुमाइत्यस्योत्तरमाह जगृहेइत्यादिनामगवान्खामाविकैश्वर्यादिगुणवान् महदादिमिः संभूतं-संजातम् षोडशकलम् एकादशेदियाणिपंचमहाभूतानिषोडशकलाः अंशाःयास्मिन् तत् पौरुषंपुरुषाः क्षेत्रज्ञास्तत्संविधिनिखिलवद्धजी वालयम् पुरुषस्यखावतारस्यानयम्यंवा समष्टिकार्यात्मकंव्यष्टयुपादानभूतम् रूपम् लोकसिसृक्षयाजगृहे तस्यिहिपुरुषावतारस्यशरी-रत्रयंश्चेयम् तत्रैकंस्कां अतःपरंयद्व्यक्तमितिवक्ष्यमाणम् द्वितीयंविराडाक्यम् तृतीयमप्राकृतम् तस्यचपुरुषनारायणानिरुद्धादीनिना-मानिविराद्शरीरेवर्तमानत्वात्सएववैराजइत्युच्यते शरीरतद्वतोरभेद्दविवक्ष्ययाविराडित्युच्यते एतत्सर्वे द्वितीयस्केधे स्फुरीभाविष्यति।१। तत्वपवबद्योत्पत्तिमाह् यस्येति तदुक्तंभोक्षधर्मेश्रीमुखेन तपोयश्चश्चस्रष्टाचपुराणः पुरुषोविराद् अनिरुद्धइतिप्रोक्तोलोकानांप्रभवा-प्ययम् ब्रह्मेतिरात्रिक्षयेप्राप्तेतस्यद्यमिततेजसः प्रसादात्प्रादुरभवत्पद्यपद्यान्भेक्षण् ततोबद्धास्त्रमभवदित्यादि ॥२॥

# भाषा दीका।

सूतजी बीले भगवान ने प्रथम लोक सृष्टि इच्छा से महान् अहंकार पंच तन्मात्रों से वना हुआ ग्यारा इंद्रिय पंच महाभूत इन सी-रह अंशों वाळा पौरुष रूप को धारण किया ॥ १ ॥ रह अंशों वोळा पौरुष रूप को धारण किया ॥ १ ॥ स्रो कीन हैं स्रो कहते हैं जिनके एक समुद्र में शयन के समय तथा योग निद्रा विस्तार के समय मे नामि रूप ह्रमे उत्पन्न कम-ल में से प्रजापतिन के पति ब्रह्मा उत्पन्नहोते भये ॥ २ ॥ 4

यस्यावयवसंस्थानैः कल्पितोलोकविस्तरः । तद् वे भगवतोरूपं विशुद्धं सत्त्वमूर्जितम् ॥ ३ ॥ पश्यन्त्यदोरूपमदश्रचक्षुषा सहस्रपादोरुभुजाननाद्भुतम् । सहस्रमूर्द्धश्रवणाक्षिनासिकं सहस्रमौल्यम्बरकुण्डलोल्लसत् ॥ ४ ॥

### श्रीधरस्वामी।

कीदशं कपं जगृहे तदाह यस्येति । नजु कीदशो विष्रहस्तस्य योऽम्भिसिशेते स्म । तदाह । तत्तस्य भगवतो कपं तु विशुद्धं रजआ-द्यसम्भित्रम् अतपवीर्ज्जितं निर्रातशयं सत्त्वम् ॥ ३॥

पतच योगिनां प्रत्यक्षमित्याह पश्यन्तीति । अदभ्रम् अनल्पं भ्रानात्मकं यचश्चस्तेन । सहस्रम् अपरिमितानि यानि पादादीनि तैरद्भुत-म् । सहस्रं मुर्द्धादयो यस्मिन् तत् । सहस्रं यानि मौल्यादीनि तैरुछसत् शोभमानम् ॥ ४॥

### श्रीवीरराघवः।

यश्यतीतियतपतदानिरुद्धाख्यं रूपमदम्रचक्षुषाऽनरुपक्षानेनमनसापश्यंति "मनसातुविशुद्धेनदृश्यतेत्वग्य्याबुद्धचासूक्ष्मयासूक्ष्म-द्शिमिरित्याद्युक्तरीत्यायोगपरिशुद्धमनसापश्यंतीत्यर्थः प्रत्येकंसहस्त्रसंख्याकैः पादादिभिरद्भुतंतथाप्रत्येकंसहस्त्रमूर्द्धादयोयस्मिस्तत्तत-त्रश्चवर्षाश्रोत्रेसहस्रेग्णमोलिभिः किरिटैरंबरैर्वस्त्रैश्चकुंडललैश्चोपशोभमानंद्धपंभवतीति॥४॥

### श्रीविजयध्वजः।

पदवान वा राजपाज्यका पराया । र । इतोपितन्मतमयुक्तमित्याह पर्यंतीति अद्भ्रचक्षुषःपूर्ण्ञाना ब्रह्माद्यः अदोक्षपत्रयंपर्श्वति कीहरांसहस्रशब्दोऽनंतत्ववाचीप्रत्येक इतोपितन्मतमयुक्तमित्याह पर्यंतीति अद्भ्रचक्षुषःपूर्ण्ञानानितैरद्धतं सहस्रंभू वश्रवणाक्षिनासिकायस्मिन्तत्तथोक्तं सहमिर्भवध्यते सहस्रंपादाक्ररवश्चभुजाश्चश्रानानिचसहस्रपादोरुभुजाननानितैरद्धतं सहस्रंभू वश्रवणाक्षिनासिकायस्मिन्तत्तथोक्तं सहमिर्भवध्यते सहस्रंपादाक्ररवश्चभुजाश्चश्रानानिचसहस्रपादोरुभुजाननानितैरद्धतं सहस्रंभू वश्रवणाक्षिनासिकायस्मिन्तत्ववाचीप्रत्येक
मिर्मिवयंवरकुंड छैरुह्मस्कोममानं निरस्ताऽविद्यैरुक्तमाधिकारिभिर्वद्यादिभिरपरोक्षतयाद्वष्टत्वाक्षेतद्रपत्रयंमायाकित्यति भावः॥ ४॥

# क्रमसंदर्भः।

व्यक्तत्वं प्राकट्यम् प्रद्युम्नादिति शेषःस्तेन त्वभेदविवस्या प्रद्युम्नः पृथङ्गोकः । धिष्णोस्तु त्रीणि रूपाणितिवत् संयं प्रक्रिया द्वितीयस्कन्यस्य षष्ठे दृद्यते यथा । स एष आद्यः पुरुष इत्यादि पये दीका । स एष आद्या भगवान् यः पुरुषावातारः सन् सृष्ट्यादिकं करोतित्येषा । एवमाद्योऽवकारः पुरुषः परस्येतस्य च दीका । परस्य भूम्नः । पुरुषः प्रकृतिप्रवक्तकः । यस्य सहस्रशीषंत्याद्युक्तो करोतित्येषा । एवमाद्योऽवतार इत्येषा । तथा तृतीयस्य विशे दैवेनेत्यादिकं सोऽन्वित्यन्तं सदीकमेवप्रकरण्यात्रात्रात्रुसन्ध्येयम् । तस्मादिक्तिलाविष्णदः स आद्योऽवतार इत्येषा । तथा तृतीयस्य विशे दैवेनेत्यादिकं सोऽन्वित्यन्तं सदीकमेवप्रकरण्यात्रात्रात्रुसन्ध्येयम् । तस्मादित्यत्र तद्वपम् न व्याख्यातं तस्माच वासुदेवस्थानीयो भगवान् पुरुषादन्य पर्यत्यात्रात्म । अथ तस्य रूपद्ययस्य सामान्यत एकत्वेन राष्ट्रत्वेन तद्वपम् न व्याख्यातं तरमाच वासुदेवस्थानीयो भगवान् पुरुषादन्य पर्यत्यात्मा । अथ तस्य रूपद्ययस्य सामान्यत एकत्वेन स्वरूपमाह तदिति । तत् श्रीभगवतः पौरुषं रूपम् । वे प्रसिद्धौ । विशुद्धौर्तित्र्यक्ति शक्तियम् पुरुषवन्यवृद्धमिष्ठत्य स्वरूपत्य तद्वपस्य । नातः पर्यपरम यदुवतः स्वरूपिमत्यत्व । विशुद्धं जाड्यां शेनापि सर्थः । उक्तश्च द्वितीयम् पुरुषवन्यवृद्धत्यो सर्वते वर्षवन्यवायातम् ॥ ३॥ स्वर्षप्राक्तिवृत्तित्वात् साक्षाद्भगवद्भपे तु केमुत्यमेवायातम् ॥ ३॥ स्वर्षिति श्रृतेः । तस्मात् साक्षाद्भगवद्भपे तु केमुत्यमेवायातम् ॥ ३॥ स्वर्षदिति श्रृतेः । तस्मात् साक्षाद्भगवद्भपे तु केमुत्यमेवायातम् ॥ ३॥

### कमसन्दर्भः।

तदेवम् पुरुषस्य द्विधा स्थानकर्मगा उद्घा सक्रपवदाकारत्वैकप्रकारमाह पश्यन्तीति । अदः पौरुषं रूपम् । अद्भ्रचक्षुषा भक्त्याख्येन । "पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लक्ष्यस्वनन्ययेत्युक्तेः । "भक्तिरेवैनं नयतिमिक्तिरेवैनं दर्शयतीत्यादिश्रुतेश्च । तत्रप्रथमपुरुषस्यसहस्रपादादित्वं परमात्मसन्दर्मे व्यञ्जितम् । तृतीयस्य चतुर्थे तु द्वितीयम् पुरुषव्यूहमुपलक्ष्य वेणुभुजाङ्चिपाङ्च्रोरिति दोर्देग्डसहस्रशाखमिति किरीटसाहस्रहिरण्यश्वङ्गमिति च । तथा नवमस्य चतुर्देशे सहस्रशिरसः पुंसो नाभिद्रदसरोग्रहात् । जातस्यासीत् स्रुतो धातुरित्रः पितृसमोगुर्णोरिति ॥ ४॥

### सुबोधिनी।

तेषांस्थानंवकुं लोकराष्ट्रस्यस्वनवा चित्वात्तेषांजङ्खेनखतोजननाभावात् निद्धितस्यतज्जननिमत्याशंक्यपुरुषशरीर स्थूलावयवा प्रतिथाविधाजाताइत्याद् यस्यावयवसंस्थानेरिति ॥ सच्युक्त्यामध्येभावेतिष्ठतीतिक्षायते वस्तुतस्तुजीवात्मकः सर्वकार्येषुनिर्विष्टद्वित अयमुर्द्धगोलोदेहः यैर्येर्थयायथास्थितेर्थेर्येलोकास्तानभ्रवस्यति पातालमेतस्यिद्विष्ट्यस्त्रलीत्यादिभिः शरीरेलोकनिर्माणेलोकानामनित्यत्व माशंक्यनिराकरोतिविस्तरद्दति प्वंभुवनजननिर्माणेनावतारप्रयोजन मुक्त्वाब्रह्यांडांतरवत् इदमिषकेवलंजडिमत्याशंक्यपूर्वोक्तमवतार क्ष्यमुप्तंद्वारार्थमनुवद्विततद्वेभगवतद्दिततत्पूर्वोक्तमवतार क्ष्यमुप्तंद्वारार्थमनुवद्विततद्वेभगवतद्दिततत्पूर्वोक्तंब्रह्यांडरूपसुक्तो पपित्तिवैद्यदेनोच्यतेतद्भगवतपवरूपंनान्यितकिचिद्त्यर्थः ननुभगवतः प्राकृतंक्रपभेवनास्तिशुद्धसत्त्वात्मकमेवभवति तत्कथंब्रह्यांडस्यदेद्दत्वमतआह विशुद्धंसत्त्वमितिशुद्धसत्त्वात्मकमेवभवति तत्कथंब्रह्यांडस्यदेद्दत्वमतआह विशुद्धंसत्त्वमितिशुद्धसत्त्वात्मकमेवस्तर्थः हर्षेणोत्पुल्लताऊर्जः तद्वजोगुण्वतिरेकेणापिभगवदावेशेनभवति॥ ३॥

ननुब्रह्मांडस्यपरिग्रहः करण्यत्वेनापिसंभवतितत्कथमेकांततो देहत्वमित्याशंक्याहपश्यंतीति ॥ योगिनांयोगजधर्मसाक्षात्कारएव भगवद्वतारत्वेप्रमाणं प्राकृतचक्षुषाभगवतः प्रतिकृतिरूपत्वेनवेदप्रतिपाद्यस्यसंवंधेशरीरमि विश्वतश्रक्षुरितिश्रुतिप्रतिपादित्रूप-वत्रध्यंजातमित्याहसहस्रपादोरुभुजाननाङ्गुतमितिसहस्रमित्यपरिमित नामअनेकवक्रनयनमितिगीता प्रतिपादितरूपवत्रसहस्रपादो रुभुजाननैःअत्यद्भुतम्अत्रक्रियाशक्तिप्रधानानिचत्वार्यगानिनिक्षपितानिगतिश्रसृष्टिजननं गातिश्रपरिभाषणमितिश्रान प्रधानान्याह-सहस्रमूर्द्वश्रवणाक्षिनासिकमिति सहस्रमूर्द्वस्रथवणोभिश्रणीनासिकेच यस्यत्रीणयेवद्विदेवत्यानिश्रानांगानिप्रसिद्धानि नवार्हेरासनेदियं त्वांतरमेवआननपदेनवसंगृहीतंत्वचोननात्व परिकरमाहसहस्रमील्यंवरकुण्डलोल्लसदितिसहस्रमीलयः मुकुटानिअंवराणिकुंडलानिचते रुल्लसदितिशोभायुक्तमित्यर्थः परिकराणामवरोहप्रकारेणप्रतीतत्वाद्यथाक्रमंनिद्देशः ॥ ४॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

तन्मूर्त्तीनामप्राकृतत्वमाह । विशुसं रजआद्यमिश्रम् अतपवोर्ज्ञितं श्रेष्ठम् अप्राकृतं सिखदानन्द्घनमित्यर्थः ॥ ३॥ एतच भक्त्या सिस्रानां प्रत्यक्षमित्याह पर्यन्तीति । अद्भ्रमनल्पम् अप्राकृतं यचक्षुस्तेन ॥ ४॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

यस्यस्थूलशरीरावयववसंस्थानैः लोकविस्तरः किंविपतः यद्विशुद्धमप्राकृतंतस्तुभगवतामुखंबरूपम् ॥ ३ ॥ अद्भूचक्षुषाअनल्पक्षानेनसद्दश्चेगाप्रत्येकमनंतैः पादादिभिरङ्गुतमः सद्दशंप्रत्येकमुद्धीद्योयस्मिन्ततः प्रत्येकसद्दशेगामौल्यादिभिरङ्ग सत्शोभमानम् ॥ ४ ॥ ५ ॥

### भाषा टीका।

जिन भगवान के अवयव संस्थानसे (कर चरगादिकों से पृथवी अंतरीक्ष आहिक लोकों का विस्तार कल्पना कियागया है वहीं ऊर्जित सत्य सम उनका विशुद्ध (मायाऽस्पृष्ट) रूपहें ॥ ३॥ वहां ऊर्जित सत्य सम जनका विशुद्ध (मायाऽस्पृष्ट) रूपहें ॥ ३॥ पूर्गोक्षान मय चक्षु से, योगीजन उस रूपको देखतेहैं । वहरूप सहस्रों चरगा सहस्रों जानु सहस्रों उरू सहस्रों पूर्गोक्षान मय चक्षु से, योगीजन उस रूपको देखतेहैं । वहरूप सहस्रों चरगा सहस्रों जानु सहस्रों उरू सहस्रों मुकुट वस्त्र और कुगडलोंसे परम अद्भुत है ॥ ४॥ सहस्रों अवगा सहस्रों नेत्र सहस्रों नासका सहस्रों मुकुट वस्त्र और कुगडलोंसे परम अद्भुत है ॥ ४॥

एतन्नानावताराणानिधानम्वीजमत्ययम् ।
यस्यांशांशेन सृष्यन्ते देवतिर्ध्यंद्भरादयः ॥ ५॥
सएव प्रथमन्देवः कौमारं सर्गमास्थितः ।
चचार दुश्चरं ब्रह्मा ब्रह्मचर्धमखण्डितम् ॥ ६॥
दितीयन्तु भवायास्य रसातलगताम्महोम् ।
उद्धरिष्यन्नुपादत्त यज्ञेशः सौकरं वपुः ॥ ७॥
तृतीयमृषिसर्गञ्च देविधित्वमृषेत्य सः ।
तन्त्रं सात्वतमाच्छ नैष्कम्मर्चं कर्ष्मणां यतः ॥ ८॥

### श्रीधरखामी।

यतत्तु क्रस्थं न त्वन्यावतारवदाविर्मावितरे।भाववदित्याह । एतदिति । एतदादि नारायग्रह्णम् । निधीयतेऽस्मिनिति निधानम् कार्यावसाने प्रवेशस्थानमित्यर्थः । वीजमुद्रमस्थानम् । वीजत्वेऽपि नान्यवीजतुस्यं कित्वव्ययम् । न केवलमवतारागामेव बीजं किंतु सर्वप्राश्विनामपीत्याह । यस्यांशो ब्रह्मा तस्यांशो मरीच्यादिस्तेन् ॥ ५॥

सनत्कुमाराद्यवतारं तच्चरित्रं चाऽऽह । स एवेति । कौमार आर्षः प्राजापत्यो मानव इत्यादीनि सर्गविशेषनामानि । यः पीठ्यं रूपं जगृहे स एव देवः कौमाराख्यं सर्गमास्थितः सन् ब्रह्मा ब्राह्मग्रो भूत्वा ब्रह्मचर्ये चचार । प्रथमद्वितीयादिश-

वराहावतारमाह । द्वितीयमिति । अस्य विश्वस्य भवायोद्भवाय महीमुद्धरिष्यन्निति कर्मोक्तिः । एवं सर्वत्रावतारस्तत्कर्म चोकमित्यनुसंधेयम् ॥ ७ ॥

वाकामरपञ्चानतरमाह । तृतीयमिति । ऋषिसर्गमुपेत्य । तत्र च देवर्षित्वमुपेत्येत्यर्थः । सात्वतं वैष्णवं तन्त्रं पञ्चरात्रागममा-वाद्योक्तवात् । यतस्तन्त्रात् । निर्गतं कर्मत्वं बन्धदेतुत्वं येश्यस्तानि निष्कर्माणि तेषां भावो नैष्कर्म्यम् । कर्मणामेव मोचकत्वे यतो भवति तदाचष्टेत्यर्थः ॥ ८॥

### श्रीवीरराघवः

पत्तवनिरुद्धार्ख्यंरूपंनानाविश्वानामवतारासा। निदानंमूलकारसंवीजंक्तस्त्रजगद्वीजभूतं कृत्स्नजगत्सृष्ट्वतुर्मुकोत्पत्तिस्थानत्वादिति-भावःभव्ययमपक्षयविकाररहितमनेनाष्ट्राकृतत्वमुकंयस्यतियस्यभगवतानिरुद्धस्यांशांशनशरीरभूतविद्वित्तत्त्वेकदेशेनदेवाद्यःसृज्यंते ५

सदेवः परमपुरुषपवन्नद्याचित्रभृति विद्यानिकः सन्प्रथमंकौमारसगसनत्कुमारादिसगमारिथतः सनकादिकपेगावतीर्गाहत्यः अखेि सिविव क्षेत्रवः परमप्रतिविद्योष्ट्याचित्रमे सिविव क्षेत्रवाद्याच्या क्षेत्रमे सिविव क्षेत्रमे क्षेत्रमे

भगवद् अभ्यासहावतारमाह द्वितीयंत्विति अस्यजगतः भवायाभ्युद्यायरसातलगतां महीपृथ्वीमुद्धरिष्यन्यश्रेशोभगवान् द्वितीयंसीकरंबा-अथवासहावतारमाह द्वितीयावतारहत्यर्थःअयंचस्त्रेनरूपेगावतारः यश्चेशहत्यनेनयश्चाराध्यत्वतत्फलद्त्वयोः कथनात्तस्त्ररीरकत्वायुक्तः

बहुरुपाद त्रीतवपुर्मातपरिग्रहोकेः अस्यभवायेतिकेत्रलसाधुपरित्रागार्थत्वसूचनाच ॥ ७॥

मपुर्वपाद प्राप्त त्रियमिति तृतीयंवपुरुपादानमृषिसर्गः ऋषिरूपजन्मत्यर्थः तत्रतृतीयेवतारेसभगवान्देविधित्वंनारदरूपमापधनार त्रारदावतारमाहतृतीयमिति तृतीयंवपुरुपादानमृषिसर्गः ऋषिरूपजन्मत्यर्थः तंत्रविशिनिधयतस्तंत्रात्कर्भगानिवृत्तिधर्मवतानैष्क वार्ष्यजीवमनुप्रविश्वंप्रवृत्तिधर्माणामकत्त्रेव्यतावगम्यतद्दति ॥ ८ ॥ न्धिनिवृत्तिधर्मीवरहंप्रवृत्तिधर्माणामकत्त्रेव्यतावगम्यतद्दति ॥ ८ ॥

### श्रीविजयप्वजः।

त्रयाणांकपाणांमध्येपण्यनामाख्यंक्रमम्बतारकारणामित्याद् पतिदिति यत्क्षीराणीवद्यायिपण्यनामामिधंकपं पतन्मत्स्यादिनानावतारा णांबीजंव्यंजकं निधानम्अततोत्रसर्वावतारानिधीयंतेपकीकियंतदितं नव्यतीत्यव्ययं यस्यपण्यनामस्याद्योद्योतसामध्येकदेशेनदेवादयः सृ-ज्यते सपण्यनामप्रवसर्वावतारहेतुरित्यर्थः॥ ५॥

स्पवपद्मनामोदेवःप्रथमंखस्मादेवकीमारमसनत्कुमारामिधमवतारम् शास्थितः ब्रह्मावृद्धितः खतःपूर्णोविशिष्टजनशिक्षणायान्येर्दुः अस् ब्रह्मचर्यमकंडितमप्रतिद्दतंयथामवितिर्थाचचारेत्यर्थः सनत्कुमारोन्यःसनेकादिषुपठितः ॥ ६॥

रसातलगतांमहीमुद्धरिष्यशुद्धर्तुकामोयश्रेष्ठाः श्रीनारायणोऽस्यजगतःभवायतु स्थित्यर्थमेव सीकरंसुकरस्यवराहस्यविद्यमानंवपुरुपा-

इत्तेयन्वयः ॥ ७ ॥

ऋषिषुसर्गोभिव्यक्तिर्यस्यसतयोकः ऋषीर्णास्त्रभावोयस्यसतंतृतीयंमिहदासाभिधावतारमुपेत्यदेवार्षत्वंचोपेत्यसमगवांस्तत्रावतारेसात्वतंपंचरात्रंनामग्रंथविशेषमाचष्टव्याचण्योनारदादेरितिशेषः यतःसात्वततंत्रोक्तानुष्ठानात्कर्मगांनैष्कर्मयमेक्षसाधनत्वंस्यादित्यन्वयः

"सर्गःस्वभावनिर्मोक्तिश्चयाध्यायसृष्टिष्वित्यभिधानं श्रुत्यादिप्रसिद्धिद्योतकेनवैशन्देनदेवार्षत्वंनारदत्वमुपेत्येत्यपव्याष्यानमपद्दस्तितमि-

तिश्वातव्यं मोशोनकादयः तृतीयमृषिसगैवित्तेतिवा तद्वतारप्रयोजनमाह देविषत्विमिति ॥ ८॥

### कमसन्दर्भः।

तत्र श्रीमगवन्तं सुष्ठु स्पष्टीकर्त्तु गर्भीदकस्यस्य द्वितोयस्य पुरुषव्यूहस्य नानावतारित्वं विवृश्णोति एतदिति । एतद्ब्रह्माग्रडस्थ-क्रित्यर्थः । निधानम् सागराशां समुद्र इव सदैवाश्रयः अतएवाव्ययम् अनपक्षयम् । वीजम् उद्गमस्थानम् ॥ ५॥

अथ प्राचुर्येगा तदवतारान् कथयन् तदैक्यविवक्षया तदंशांशिनाअप्याविभोवमात्रं गरायित विशस्या । तत्र स पवेति । योऽम्मसि शयानो यश्च सहस्रपादादिरूपः स पव पुरुषाच्यो देवः । पते चांशकलाः पुंसः इत्युपसंहारस्यापि संवादात् । कौमारं चतुः सनस्तपम् ॥ ६—७॥

तृतीयमिति । ऋषिसर्गमुपेत्य तत्रापि देविषत्वं श्रीनारदत्वशुपेत्य कर्म्मणां कर्माकोरेणापि सतां श्रीभगवद्धमीणां यतस्तन्त्रात् नैकर्मयं कर्मावन्यमोचकत्वेन कर्मभ्यो निर्गतत्वं तेभ्योऽभिन्नत्वं प्रतीयत इति शेषः ॥ ८—९ ॥

### सुबोधिनी

नतु "वाचं श्रेतु सुपासीतेतिवत् उपासनाप्रकारेणभगवद्र पत्वेन जगतोध्यानसंभवात् कथभेकांततोवतार इत्याशंक्याह एतकानावतारा णामिति अयमर्थः अवताराणां मूलंभगवानमूलावतरणं वा तत्रतत्त्विभितत्वाक्षभगवान् तद्यववतारक्षपमिष्नभवेत् अवताराणां सूल मिष्नभवेत् अवताराणां सूल मिष्नभवेत् अवतारार्थां सूल मिष्मभवेत् अवतारात्रक्षेश्चअतः पुरुषस्यावतारत्वेनसंदेहः नानावताराणां मत्स्यादीनां निधीयतेऽस्मिक्षितिनिधानंस्थानं वीजसुद्गमे- मिष्मभवेत् अवतार्थिक्षअतः पुरुषस्यावतारत्वेनसंदेहः नानावताराणां मत्स्यादीनां निधीयतेऽस्मिक्षितिनिधानंस्थानं वीजसुद्गमे- हेतुः तच्चाविनाशिकंदवदंकुरोत्पत्तीननश्यतीत्यर्थः अवतार्थयोजनंस्यतितं विस्तार्यतियस्यांशांशेनेति अंशोबद्धातस्यमरीच्यादिः ज्ञावनादयोवादेवादयः सात्त्विकादिप्रधानाः ॥ ५॥

प्रवेपुषावतार्या सारविकारिन वार्या में प्रवेपुषाविद्या विद्या वि

चरणम्मास्य प्रामित्राणि अस्यप्रपंचस्यभ्यस्त्वं तमविदिति वराहेणभूम्युद्धरणि द्वितीयम् एषामवताराणि वारोद्वितीयस्कं धेकारिष्यते अत्र स्वर्गादोजगिति वराहक व्यवस्थित वराहक व्यवस्थित वराहक व्यवस्था स्वर्गात वर्षात वर्

-≰

# तुर्धे धूर्मकछासर्थे महनीरायगावृशी । ं भूत्वात्मोप्रामिषेतमकरोहु इचर तप्रा

नारदेहिमगवदावेशः ऋषयोहिमंत्रद्रष्टारः तेचकर्मीग्र्ताइति रितीयत्वं द्रव्य देवतामन्त्रभेदेववास पुरुषपवप्रथमतो ऋषिसर्गम-पेत्यततावतारकार्यमपश्यन्ततो देविषत्वमुपत्यनारदेआवेशंपाप्यसात्वतं वैष्णावंतंत्रंपंचरात्ररूपम् आचष्टभगवत्परिचर्यानिरूपगांनभ-गवद्वचितरेकेगान्यराक्यमितिकर्मगां प्ररोहनाशास्त्रेनेतिपिचर्यायां सर्वाधिकर्माधिजंगमावंभजंतेपरिचर्यायाभगवद्गकित्वेनभगवत्त्वे सर्वेषामेवनैष्कर्म्यम् ॥ ८॥

### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

षोडशकलत्वेन यत् पूर्णत्वमुक्तं तद्दरीयति एतदिति । वीजत्वेऽपि नान्यवीजतुल्यं किन्तुनिधानं निधिराशीभूतमित्यर्थः । वस्यमाणा अंवतारा एतस्यांशाइति भावः । न व्येतीत्यव्ययं नित्यम् यस्यांशो बद्धा तस्यांशो मरीच्यादिस्तेनेति । देवादयो विभूतय उक्ताः ॥ ५॥ सनत्कुमाराध्वतारं तक्वरितं चाह स एवेति । यस्यांशांशेन देवादयः सृज्यन्ते स एव पग्ननाभ इत्यर्थः । कौमारं सर्गमाश्रितः कुमारेषु प्रादुर्भावं प्राप्तः सन् ब्रह्मा ब्राह्मणो भूत्वा ब्रह्मचर्य चचार खयमाचरन् लोकेषु प्रचारयामासेत्यर्थः । प्रथमद्वितीयादिशन्दां निर्देशमात्रापेक्षया॥६॥

भवाथ क्षेस्राय । उद्धरिष्यित्रिति कम्मोक्तिः । एवं सर्व्यत्रावतारस्तत्कर्म्सचोक्तस्रित्यनुसन्धेयम् ॥ ७॥

ऋषिषु सर्गं प्रादुर्भावयः उपेत्य तत्र च देवर्षित्वं नारदत्वमुपेत्येत्यर्थः । सात्वतं पश्चरात्रागमं । यतस्तन्त्रात् कर्माणां तत्रोक्तानामः नैष्कर्स्य कर्माबन्धमाचकत्वम् ॥ ८॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

श्रीकुमारावतारमाह सप्वेति सप्त्रमगवान्कौमारंसर्गप्रादुर्भावमास्थितः ब्रह्माब्राह्मणोभूत्वा असंडितंदुश्चरंनेष्ठिकंब्रह्मचर्यसंप्र-दायप्रवृत्त्यर्थेचचार पतेनावतारप्रयोजनमप्युक्तम् प्वमुत्तरत्रापिद्रष्टव्यम् प्रथमद्वितीयादिशब्दाः निर्देशमात्रापेक्षया॥६॥

अथवराहावतारमाह द्वितीयमिति अस्यजगतः भवायउद्भवाय उपाद्त्रजगृहे ॥ ७॥ नारदावतारयाह तृतीयमिति सःभगवान्तृतीयम् ऋषिसर्गम्ऋषिजनम् उपादन् तत्रदेविषत्त्वमुपेत्ययतस्तंत्रात् कर्मगानिवृत्तलक्ष-गानाम नैष्कर्म्यक्षायते निर्गतंकमसंसारहेतुस्वयेभ्यस्तानिनिष्कर्माणितद्भावोनेष्कर्म्यम् तत्तंत्रसारवतंवेष्णावम् अवोचत् ॥ ८॥

### भाषा टीका।

यह रूप नाना अवतारों का निधान अर्थात लयस्थान है और अब्यय बीज है कि जिसके अंशांशों से देवता तीर्यक और मजुष्यादि-कों कि सृष्टि होती है ॥ ५॥

का कि ए। देव प्रथम कोमार सर्ग का आश्रय कर बाह्मण रूप धरकर सनत्कुमार सनातन सनक सनंदन चार रूप में अवतीर्गी हुए। और अज़राड ब्रह्मचर्य आचर्सी किया ॥ ६॥

ख़िल्य \*अवतार में इस जगत के मंगल के अर्थ रसातल में डूबी हुई पृथवी को उद्घार करनेके अर्थवाराह रूप धारण किया ॥ ७॥ द्वितिय \*अवतार में इस जगत के मंगल के अर्थ रसातल में डूबी हुई पृथवी को उद्घार कर तफ्टेकारिक ६०० धारण किया ॥ ७॥ द्वातयक्रणविष्या से देवऋषि नारद रूप धारण कर सात्वततंत्र श्रीनारद पंचरात्र का उपदेशिदया कि जिस तंत्र के अनुसार कत तृतीय ऋ। परा परा परा पर का वारण कर सायतात्र आगार होने से वेही मुक्ति के साधन होजाते हैं ॥ ८॥ कर्म, नैक्कर्म्य अर्थात् मुक्ति के साधन होते हैं । कर्म यद्यपि बंधन है परंतु भक्तांग होने से वेही मुक्ति के साधन होजाते हैं ॥ ८॥

त्रस्तारायसावतारमाह । तुर्य इति । तुर्ये चतुर्थेऽचतारे । धर्मस्यकला झंदाः आर्थेत्यर्थः । "अर्थो चा एव आत्मनो यत्पती" इतिश्चतेः । हस्याः समें। ऋषी भूत्वेत्येकावतारत्वं दर्भयति ॥ १ ॥ 

पश्चमः क्रिपेछोनाम सिद्धेशः काळविष्ठुतम् । प्रोवाचासुरये सांख्यं तत्त्वप्रामविनिर्गायम् ॥ १० ॥ पष्ठे अत्रेरपत्यत्वं वृतः प्राप्तोऽनसूयया । आन्वीचिकीमळकीय प्रहादादिभ्य ऊचिवान् ॥ ११ ॥ ततः सप्तम आकृत्यां रुचेर्यज्ञोभ्यजायत । स यामादयेः सुरगगौरपात् खायम्भुवान्तरम् ॥ १२ ॥

### श्रीधरखामी।

कियावतारमाह । पञ्चम इति । आसुरये तन्नामे ब्राह्मणाय । तत्त्वानां ब्रामस्य सङ्घस्य विनिर्णयो यस्मिन्शास्त्रे तत्साङ्ख्यम् १० दत्तात्रेयावतारमाह षष्टमिति । अत्रेरपत्यत्वं तेनैव वृतः सन् प्राप्तः अत्रेरपत्यमभिकांक्षते आह तुष्ट इति वश्यमाण्यात् । कथं प्राप्तः अनस्यया मत्सहशापत्यमिषेणा मामेवापत्यं वृतवानिति दोषदृष्टिमकुर्व्वन् इत्यर्थः । आन्वीक्षिकीमात्मविद्याम् । प्रह्लादादिश्यक्ष आदिपदात् यदुद्देहयाद्या गृह्यन्ते ॥ ११ ॥

यद्मावतारमाह । स यद्मः यामाधैः खस्यैव पुता यामा नाम देवाः तदाधैः सह खायम्भुवं मन्वन्तरं पालितवान् तदा खयमिन्द्रोऽ

मृदित्यर्थः ॥ १२ ॥

### द्यीपनी ।

भार्येति । धर्मेस्य मार्यायाम् मूर्तिनाम्न्यामिति शेषः ॥ ९ ॥ आसुरिस्तावत् तत्रभवतः कपिछदेवस्य आद्यशिष्य इतीश्वरक्रःशीयसांङ्क्षचकारिकायां सुस्पष्टम् ॥ १० ॥ अत्रेरपत्यमिति द्वितीयस्कन्धीयसतमाध्यायस्य चतुर्थन्छोकः । अन्वीक्षते आत्मा इत्यन्वीक्षातामधिक्तत्य कृताम् । तामेवाह स्वामिन् पादः आत्मिविद्यामिति ॥ ११—१२ ॥

### श्रीवीरराघवः

तुर्यहति धर्मकलासर्गिधर्मात्पितुः कलासर्गेदेहजनमरूपेत्येचतुर्थाचतारे नरनारायगाल्यावृषी भूत्वाभातमोपशम इंद्रियनिश्रहःतेनो

पेतंदुश्चरमइतरश्चर्तप्रश्चतपश्चकार॥९॥

मासुरयप्रावाचआसुरिनामासद्भु न्यार्पाः म्युत्रोभवेत्यत्रिगावृतद्दत्यर्थः अनसूययाऽत्रेभीर्ययाप्राप्तः तस्यःपुत्रोदत्तात्रेयास्यो म्र्वेत्ययेः अलकायप्रहलादादिश्यश्चान्वीक्षिकीमध्यात्मविद्याम् चिवात्तंषण्ठमवतारं विद्यादितियत्तक्कव्दाध्याहारेगाःन्वयः विद्यादितयत्तिक्यः । ११ ॥

ततइति । ततःसप्तमेऽवतारेरुवेस्तद्रार्यायामाकृत्यांव्यजायत सचयबद्दतिप्रसिद्धः सयबःयामबाद्योयेशंतैः सुरगर्धाः सदस्ताये-भुवमन्वतरमपात्पाळयामास ॥ १२ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

रतुावश्यावस्य । प्रतिद्वेशःकपिलःकालबलेनितरोहितंतस्वानांचतुर्विशितसंख्याकानांप्राप्तः समूहःतस्यविशेषाः पंचमावतारोपिकपिलोनामःसमूहःतस्यविशेषाः पंचमावतारोपिकपिलोनामःसमूहःतस्यविशेषाः विशेषावत्याः । सांख्यंभगवज्ञानप्रतिपादनपरंवेदार्थपरिबृहितंनामाश्रासुरयेसिक्किष्यायप्रोवाचेतिपद्मावन्वयः विशेषाविश्वावन्वयः विशेषाद्वावेषाः । स्वाद्यास्य । स्वाद्यास्य स्वाद्यास्य स्वाद्यास्य स्वाद्यास्य स्वाद्यास्य स्वाद्यास्य स्वाद्य स्वाद्य

# श्रीविजयम्बज्ञः।

यःपद्मनामः अनस्ययाअत्रिपत्यावृतःअत्रेत्रेष्ट्रेपरनस्यायामपत्यत्वेषाप्तःआन्वीक्षिप्तितस्विवासकर्षायप्रहादादिश्यस्थोचिवान् सम-पतारंपष्ठावित्त ॥ ११ ॥

वतःसपद्मनाभःसप्तमोरुचेःबाकूत्यांपत्न्यांयक्षोभ्यजायतजातःसयक्षोनामायामाआद्यायेषतितयातैः सुरगर्योःसद्दसायंभुवमन्वंतरम-पाद्यस्भवित्यन्वयः प्रतिमन्वंतरंदेवानांनामभेदाद्यामाइत्युक्तम् ॥ १२ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

पञ्चम इति । आसुरिनाम्ने विद्याय ॥ १० ॥

पष्टमिति । आत्रात्या तत्सदशपुत्रोत्पत्तिमात्रं प्रकटं याचितिमिति चतुर्थस्कन्धाद्यभिप्रायः । पतद्वाक्यनानस्यया तु कदाचित्

साक्षादेव श्रीमदीश्वरहयेव पुत्रभावो हृतोऽस्तीति लक्ष्यते । उक्तश्च ब्रह्मागडपुराग्रो पतिव्रतोपाख्याने । "अनस्याववीद्यत्वा देवान् ब्रह्मे
शक्तिश्वावन् । यूयं यदि प्रसन्धा मे वराही यदि वाप्यहम् । प्रसादाभिमु ब्राः सर्वे मम पुत्रत्वमेष्यथेति श्रीविष्णोरेवावतारोऽयम् ॥ ११ ॥
॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

### सुवोधिनी

मरनारायग्रायोश्वत्रयाश्रमधर्मप्रतिपादकत्वेनतुरीयत्वम् अथवाब्रह्मचर्ययश्वभगवत्परिचर्योपशमाः क्रमेग्राश्रमधर्माः धर्मकराः धर्मस्त्वेदमूलइतिमूर्त्याऋषिरूपेग्राविर्भृतौषारमहंस्यधर्मोद्विविधइतिसहस्र क्रम्बचय्यार्थमित्यन्यत्रनारायग्रावतारः नरंआवेशः तयोस्तपोश्चानसहितमित्याह आत्मोपशममितिआत्तनः उपश्मभःशांतिः श्चानंश्चानसाध्याः क्रम्बचय्यार्थमित्यन्यत्रनारायग्रावतारः नरंआवेशः तयोस्तपोश्चानसहितमित्याह आत्मोपशममितिआत्तनः उपश्मभःशांतिः श्चानंश्चानसाध्याः वासर्वत्रहितपः क्रोत्रसहितः शांतिसहितस्तुलोक्षेत्रुर्लभइतिदुश्चरमित्युक्तम् ॥ ९ ॥

सांख्यस्यवेदानंतरभावित्वात् श्रमानंतरत्वेनपंचमत्वम् पूर्विहिपुराग्रोषुसांख्यंसिद्धंतत्पुराग्रानामप्रचारात्योगादिभिः सांकर्याश्च सांख्यस्यवेदानंतरभावित्वात् श्रमानंतरत्वेनपंचमत्वम् पूर्विहिपुराग्रोषुसांख्यंसिद्धंतत्पुराग्रानामप्रचारात्योगादिभिः सांकर्याश्चरं संन्यासस्यचांगभूतस्याभावात्सांख्यं कालेनविष्ठुतंपुनःकालविष्ठवद्यांकांवारयतिसिद्धेशद्दति सिद्धियुक्ताःसिद्धाःतेषांमनः सिद्धी-धनप्लुतंमविष्यतीतिभावः आसुरिद्धाविः इवंक्षानंस्त्रीशूद्रसाधारग्रामितिप्रवर्त्तकस्यतादशंनामसंख्यादि पदार्थानामसांकर्यप्रतिपादिकाभवति

धनप्लुतमावण्यतातमावः वाद्धारकारायस्यार्थः द्वारायस्य हर्षे । स्वायम्यविधम्भेद्धपातस्याः फलमाहतत्त्वयामविनिर्धायमिति तत्त्वानांसमूहस्यविशेषग्रानिर्धायकम् ॥ १०॥

योगस्यग्रन्थत्वात्तत्प्रवर्तकमाह षष्ठमिति । अनस्यामत्साद्दयत्याजेनमामेववृतवतीतीर्ष्योभावेनमात्रावान्नीक्षिषीयोगपुरः सरात्मविद्याअलक्षीराजासिंहराजसः तत्रशास्त्रपरिनिष्ठायाः संदिग्धत्वात्प्रह्लादादिश्यउक्तवान्प्रह्लादस्तुरूपष्टः॥ ११॥

सरातमिवद्याअलकौराजासाहराजसः तत्रशास्त्रपारानण्डापाः ताप्त्रपारानण्डापाः ताप्त्रपारानण्डाम् तत्रशास्त्रपारानण्डाम् तत्रशास्त्रपारानण्डाम् एवंब्राह्मणानाविद्वित्रत्वमुक्तम् षद्कर्माणित्राह्मण्डामिद्धानित्रीणिक्षत्रियेतद्ध्यत्रीनाहयक्षक्रपान्शञ्चलाविद्वाह्मणेः क्षियमाणः वितित्रष्ठप्रतिष्ठितम् अतोभिन्नप्रक्रमंवक्तंत्रत्वाह आकृतिर्मगुकन्या सचयज्ञः रुवेर्जातोपियुत्रिकापुतः यज्ञोहिवाह्मणेः क्षियमाणः वितित्रष्ठप्रतिष्ठितप्रक्रियमाण्डाः प्रथममन्वंतरदेवादिभिश्चतुर्विद्वैःसमंतप सिस्थितमगुरक्षांविधायतदंतरंपालितवानित्रवतारप्रयोजने सित्रियमाण्डात्वेत्रप्रयोजने प्रथममसमर्थाद्धयप्रेष्ठपपादिष्यते॥१२॥
प्रयवताद्यस्तुकरूपांतरराजानः प्रथममसमर्थाद्वयप्रेष्ठपपादिष्यते॥१२॥

# श्रीविश्वनाय चकवर्ती।

तुर्वे चतुर्थेऽवतारे धर्मस्य कला बंदाः भावेत्यर्थः। "अद्धी वा एप आत्मनी यतपत्नीति श्रुतेः। तस्यां सर्गे प्रादुर्भावे ऋषी मृत्वेति

श्रासुरये तन्नाम्ने ब्राह्मगाय ॥ १० ॥ अनस्यया अत्रेः पत्न्या वृतः सन्नपत्यत्वं प्राप्तः । यदुक्तम् ब्रह्माग्डपुराग्रो पतिव्रतोपाख्याने । "अनस्याववीन्नत्वा देवान् ब्रह्मोकश-बान् । यूयं यदि प्रसन्ता मे वराहा यदि चाप्यहम् । प्रसादाभिमुखाः सन्वे मम पुत्रत्वमेष्यथेति । आन्विक्षिकीमात्मविद्याम् प्रह्लादा-वित्रयद्ये ॥ ११ ॥ स्यक्षः यामादीः स्वस्येव पुत्रा यामा नाम देवास्तदादीः सह स्वायंभुवं मन्वन्तरं पाछितवान् तदा स्वयमिन्द्रोऽमृदित्यर्थः ॥ १२ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

मरनारायगावतारमाह तुर्येइति धमैकलासर्गतपोलक्षगाधमभागार्थसर्गे॥ ९॥ कितावतारमाह पंचमद्दिति आसुरयेशिष्याय हेयसांस्यप्रवर्तकोन्यद्द्याकरेस्यितम्॥ १०॥ कितावतारमाह प्रमपुत्रोभवेत्यनस्ययाद्द्याः सन् तन्नर्तुरक्षरपत्यत्त्वंषष्ठंजन्मप्राप्तः आन्वीक्षिकीम् अध्यात्मविद्याम्॥ ११ ॥ द्वात्रेयावतारमाह प्रमपुत्रोभवेत्यनस्ययाद्द्याः सन् तन्नर्तुरक्षरपत्यत्त्वंषष्ठंजन्मप्राप्तः आन्वीक्षिकीम् अध्यात्मविद्याम्॥ ११ ॥ द्वात्रियावतारमाह समप्रकोऽवतारे समगवान् यामःआद्योयेषातेः सहस्वायंभुवंमन्यंतरम् अपात्पालयामासः॥ १२॥ विद्यावतारमाह ततद्वति स्ववधेऽवतारे समगवान् यामःआद्योयेषातेः सहस्वायंभुवंमन्यंतरम् अपात्पालयामासः॥ १२॥ विद्यावतारमाह ततद्वति स्ववधेऽवतारे समगवान् यामःआद्योयेषातेः सहस्वायंभुवंमन्यंतरम् अपात्पालयामासः॥ १२॥

अष्टमे मेरुदेव्यान्तु'माभेर्जात उरुक्रमः। ं प्रतिकार कर्मा वर्षा धीराशां सर्वाश्रमनमस्कृतम् ॥ १३ ॥ ऋषिभियांचितोभेजे नवमं पार्थिवं वपुः। दुग्धेमामोषधीविंप्रास्तेनायं स उज्ञात्तमः ॥ १४॥ **(2)** रूपं स जगृहे मात्स्यं चाक्षुषोद्धिसंष्ठवे। नाव्यारोप्य महीमय्यामपाद्वैवस्वतं मनुम् ॥ १५ ॥ सुरासुरागामुद्धिं मधतां मन्दराचलम् । दघे कमठरूपेशा पृष्ठ एकादशे विभुः ॥ १६॥

### भाषा टीका।

चतुर्थ धर्म की कला अर्थात् अंश रूपापत्नी मै नर नारायरा ऋषि होकर उपशम् सय दुश्चर तप किया ॥ ९॥ पश्चम, कपिलनाम सिद्धेश होकर आसुरि ऋषि को फाल विन्छत तत्त्वत्रामितिसायक सांख्यशास्त्र, का उपदेश किया ॥ १० ॥ पश्चम, का प्रत्य क्रप्स वरे भगवान, दोष दृष्टिनदार षष्ठ दत्तात्रेयनःमसे अवतीशे हुए । और अलर्क राजा प्रल्हादादिकों स्नो आत्मविद्या का उपदेश किया ॥ ११ ॥

मावधा को उपर पान का का कि में यह रूपसे अवति शिंहुए। याम नामक देवगरा को छेकर खायं अव मन्वंतरमे इनहीं कर

त्रिलोकी की रक्षाकी ॥ १२॥

### थीयरखामी।

ऋषभावतारमाह । सर्व्वाश्रमनमस्कृतम् अन्त्याश्रमं पारमहंग्यम् वर्त्मे धीराणां दर्शयन् नाभेः आसीअपुत्रात् ऋषमो जातः ॥ १३॥ पृथोरवतारमाह<sup>ै</sup>। पार्थिवं चपुः राजदेहं पृथुरूपम् । पार्थविमित पाउ पृथोरिदं पार्थवम् । ओषधीरित्युपलक्षणम् । इमां पृथ्विम सर्वाणि वस्तूनि दुग्ध अदुग्ध। अडागमाभावस्वार्यः। हे विप्राः तेन पृथ्वीदोहनेन सोऽयमवतार उशत्तमः कमनीयतमः वशकान्ता-वित्यस्मात् ॥ १४ ॥

यस्मात् ॥ १० ॥ मत्स्यावतारमाह । चाश्चषमन्वन्तरे य उद्धिसंप्रवस्तिसम् । यद्यपि मन्वन्तरावसाने प्रलयो नास्ति तथापि केनचित् कौतुकेन षान् । वैवस्वतमिति भाविनी संशा ॥ १५ ॥

क्रुम्मावतारमाह । कम्रठः क्रूम्भेस्तद्रूपेगा एकाद्ये अवतारे विसुद्धेदधार ॥ १६॥

# दीपनी ।

ब्रह्मभति । द्वितीयस्कन्धीयसप्तमाध्यायस्य दशमकोके द्रष्टव्यः॥ १३—१४॥ अकागडे इति । असमये इत्यर्थः । एति इशेषध हादशस्कन्वे नवमाध्याये द्रष्टव्यः ॥ १५-१७॥

# श्रीवीरराघवः

अष्टमेऽवतारेउरुकमोमग्वान्नाभेः स्वायंभुवपौत्रस्यभार्याच्यांमेरुदेव्यांजातः सचऋषभाख्यः धीराणांयोगीद्वराणांवत्मांनु देर्यधर्मः अध्यमञ्चतार् उर्वामानगवात्रामः स्वायभुवपानरम् । अस्ति । अस्ति

द्रायन्दराायपुराण्यात्राचा परमावाशाण्य स्वात्राचा । १३॥ ऋषिभिरितिहुं कारैवेनंहतविद्धः ऋषिभियांचितः जगत्पालनार्थयाचितोभगवान्नवमं पार्थिवपृथोः संवैधिवपुर्भेजेप्राप्तः अशेनानु-ऋषामारावडणार्यः अध्यानपारः विद्याः शीनकाद्यःसइमांपृथ्वीगोरूपंषृतवतीम् औषधीर्दुग्यदुदोहअङमाघआषः प्रविष्टंपृथ्वास्यजीवानुप्रवेशेनपृथुरूपेशावतीर्गाद्यय्येः हिविप्राः शीनकाद्यःसइमांपृथ्वीगोरूपंषृतवतीम् औषधीर्दुग्यदुदोहअङमाघआषः यतोऽदुग्धतेनकारगानसपृथुख्यात्तमः सर्वेषामिष्टतमोवभूवत्यर्थः ॥ १४॥

ऽतुग्धतनकार्यः रूपमितिचाश्चवांतरंचाश्चग्मन्वंतरंतत्रयः संयुवः म्रह्मयः तास्मन्तभगवान्यारारस्यंदशम्रह्मपंजगृहे । अवतारप्रयोजनमाह नावीतिषेषस्य तंमगुंवेवस्त्रमगुरूपेगाजनिध्यमागांसत्यवतं महीमर्थापृथ्वीरूपार्थानाव्यारोध्यापादरश्च ॥ १५॥

(१) पार्थवमिति दुग्धवनिति च विजयः वजः॥ ।

# श्रीविजयप्वजः

यउक्कमःनामेरासीधपुत्रात्मेव्रदेव्यांपत्मांजात्ः सूर्वोश्रमतम्हकतंशीराणांविद्यारतानांवरर्मप्रमदंस्याश्रमंददरीयक्रमूक्तस्यसोऽष्टमो-श्वतारःनशुक्रशोशितमिश्रतयास्यजननं किंतुद्वारमात्रमित्यस्मिश्वर्येतुराब्दः॥ १३॥

भ्रुषिमिःप्रार्थितःपग्रनामःनवमावतारंपार्थवंपृथुचक्रवर्तिशरीराविष्टं पंमेते हेविप्राःशानिनः गोरूपिरयाःभुव क्षोषधीःक्षीरात्मिका दुष्ववान्इतियेनतेनकर्मगाऽयंमगवानु शत्तमः सत्यकामे दुश्रेष्ठः श्राच्दायां चक्ष्योद्रोह । कर्मगोऽमानुषत्वंद्योत्यति ॥ १४॥

समगवान् चाक्षुयांतरसंष्ठवे चाक्षुषमन्वंतरप्रळये मात्रयं तस्यस्यविद्यमानंकपं अगुहे किंचमहीमय्यांनावि तरीस्थानीयभूमौवैव-स्वतंमनुमारोप्यापादित्यन्वयः ॥ १५॥

द्विचिति ॥ १६ ॥

### कमसंदर्भः।

रूपमिति । चाश्चपमन्वन्तरे तदन्ते ये उद्धिसंग्रवस्तिसम् । पैवस्तत् इति भाविनी संक्षा सत्यवतस्य । प्रतिमन्वन्तरावसानेऽपि प्रसार क्या श्रूपते विष्णु बन्मीत्तरे प्रथमकार है। "मन्बन्तरे परिक्षिणे कीहरी। द्विज जायते" इत्यादि श्रीवज्रश्वस्य मन्वन्तरे परिक्षिणेइत्यादि धीमार्कराडेयदत्तोत्तरे । "अर्मिमार्श महावेगः सर्व्यमानृत्य तिष्टति । भूरुकिमाश्रितम् सर्वे तदा नश्यति यादव । न विनश्यन्ति राजेन्द्र विश्रुताः कुळपब्वताः । नौर्भृत्वा तु मही देवीत्यादि । एवमेव मन्वन्तरेतु संहार इत्यादि प्रकरणम् श्रीहरिवंशे तदीयटीकासु च स्पष्टमेव। सतसाक्ष्रोत्युपलक्ष्माभेव भेयम् ॥ १५ ॥ १६ ॥

### सुबोधिनी

खस्थेहिदेशकालेसर्वाश्रमधर्माइतियशानंतर सृषभक्षधापूर्वीकक्षमस्योत्तरत्नविविक्षतत्वाद्ष्टमादिपद्रप्रयोगः। मेरुदेवीमेरुदुहितामातुः पुत्रत्वंवारियतुंतुशब्दः प्रतिपक्षशंकाभावार्थेवा अयंतुशुणावतारस्यविश्योरवतारस्तदाह उरुक्रमइतिऋषभ निक्षितसन्यासधर्मे पुरुषंधैर्यसाध्यं साधनम् अंत्याश्रमत्वाच सर्वाश्रमनमकृतम्पषाहिपराकाष्ट्रानिवृत्तिमार्गे नत्त्वन्याश्रमित्वेनपाषंडत्वसंभावनेतिनमस्कृतं श्रेयः प्रजापालनमेवराह्मामितिवचनात्सर्वात्मकत्त्वाच्यभगवतः षूर्यस्वाधेशीपृथोः संवंधिवपुर्शितवचनाच अयंपुमानवसद्दितवचनात् सर्वहितकारीधर्मःऋषभधर्माद्प्युत्तमइतिपृथोर्भवमत्वम् ॥ १३॥

नजुक्यंवेदनादवतारः तत्राहः ऋिभियाचित्रति तत्रापिनसाक्षात्रितृपृथुरारीरेदुग्धाअदुग्धदोग्धावा अलैकिकत्वार्थछांदस मनुकायपर गार् । पद्मयोगः इमामोपधीरितिद्विकर्मत्वं कर्भद्वयस्याप्यभीष्टत्वात् एवं सर्वेषु द्विकर्मकेषुवोद्धव्यं विशेषेसपूरकाइतिसंवोधनेभवद्भिरेवबहुदोहनेन सर्वेषूरितमितिज्ञापितंदोहनभेवावतारकार्यंनजीवसाध्यामितितेनायंसः तेनहेतुनापृथुर्नारायग्राइत्यर्थः विशेषमाहउशक्तमः एवंसर्वोपकारः

ष्मवांतरेष्विपदुर्छमद्दातेअतिकमनीयद्दयर्थः ॥ १४ ॥

तिर्ध्वापदुक्षमद्दात्रभातवाममावर्षात्र । १२ ॥ एवंक्षत्रियम,वेन,त्रितयं निरूप्यवैदयभावेनचतुष्टयमाहरूपमित्यादित्रिभिः। वचनेनकार्यसिद्धिवैदयतासत्यानृतंतुवाशिज्यमितिवचना इक्रवचक्रमपरमावपरातव चाळु मानवरामार प्रशासान स्थार मानविक्र हो भवतिकरपेषुसात्त्विकादिविभेदान्मुख्यस्यप्राथस्यं सात्त्विकानि परिवालनमञ्जारवर्भः वेत्रस्त्रतमञ्जितिभाविनीसंज्ञा ॥ १५ ॥

दरियालग्न नेता । कापटचेनैत्रामृतप्रयत्रांश्रेत्रवृत्तः कूर्मस्यापित्रंचकहितकारित्वाद्त्रप्रवेदाः पूर्वकलपस्थत्वान्मत्स्यस्यनकमोवाधकःवचनाधिक्यात्एकादशत्वः कापटचेनैत्रामृतप्रयत्रां स्वत्यसम्पादं केन्द्रसम्बद्धाः स्वत्यसम्बद्धाः स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस् कापट्यात्राचिउद्विमध्नतां सुरासुराणांसंविधिमथनसाधनंग्रद्शाचलंघृतवान् कमठः कच्छपः पृष्ठेनधारणमवतारसाध्यंजलंद्यनाधारेनस इतमुत्तरत्राचिउद्विमध्नतां संगन्नित्रवादिक्षण्याः १००॥

पुष्ठस्यपिक्क उत्वात् कथंवारणं संनवतितत्राहविधुरित ॥ १६॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

मामेराद्रीधपुत्राहषमी जातः॥ १३॥

नामराभाक्ष्य विश्व राज्ञदहं पृथुरूपम् । पार्थविमाति पाठे पृथुसम्बन्धि । ओषधिरित्युपलक्षगाम् इमाम् पृथ्वीम् सक्ष्वीग्रि वस्तुनि दुग्ध थाय के प्राप्त कार्थः। तेन हेतुना सोऽयसवतार उदातमः कमनीयतमः वदाकान्ताविद्येतस्मात्॥ १४॥ अदुग्ध । अद्यान्तरे य उद्धिसंग्रवस्तिहिन् । चाक्ष्रवानतरसंग्रव इति च पातः महीमच्याम क

क्छ । अर्ज मह्यन्तरं य उद्धिसंप्रवस्ति । चाश्चषान्तरसंप्रव इति च पाठः महीमय्याम् निव नीकारूपायां मह्यामित्यर्थः । अपात् 

धान्वन्तरं द्वादशमन्त्रयोदशममेवच । अपाययत् सुरानन्यान्मोहिन्या मोहयन् स्त्रिया ॥ १७ ॥ चतुईशं नारसिंहं विश्रहैत्येन्द्र मूर्जितम्। ददार करजैर्वचस्येरकांकटकृद्यथा ॥ १८॥ पञ्चदशं वाम नकं कृत्वागादध्वरं वलेः। पदत्रयं याचमानः प्रत्यादित्सुश्चिष्टिपम् ॥ १९॥ अवतारे घोडहामे पदयन ब्रह्महुहे। तृपान्। त्रिःसप्तकृत्वः कुपितोनिः चत्रामकरोन्महीस् ॥ २० ॥

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

यथा मार्कवडेयायेति श्रीयरखामिपादाः। विष्णुधम्मेत्तिरे तु। "मन्वन्तरे परीक्षीग्रो की दशी द्विज जायते"। इत्यादिवज्रप्रश्नान्ते प्रार्क-पया नाजपञ्जाताः । अर्थापत्र विश्वमान्तः सर्वमान्त्य तिष्ठति । भूलोकमाश्रितं सर्वे तदा नश्यति यादव । न विनश्यन्ति राजेन्द्र विश्वताः एडेयोत्तरम् । अर्थिमगार्था महावेगः सर्वमान्त्र विश्वताः कुलपब्वताः । नौर्भूत्वा तु महीदेवीत्यादिः । पवमेव मन्वन्तरं तु संहार इत्यादि प्रकरण्मतपव भागवतामृते प्रतिमन्वन्तरान्त पव प्रलय उकः। श्रीहरिवंशे तदीयटीकासु च। तद्यत्र चाश्चुष एवोकः सत्यवतस्य मनोर्मत्स्यदेवपरममकत्वाद्भकोत्कर्षादेव मगवत्रादुर्माव-स्याप्युत्कर्षात् भक्तेच्छोपात्तदेहायेत्यादिभिर्युक्तिसिद्धात् सर्व्वमन्वन्तराग्येवोपलक्षयित ॥ १५॥

सुरासुराखाममृतोद्रपादनार्थामिति शेषः। कमठकपेखा कच्छपकपेखा ॥ १६॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

ऋषमावतारमाह अप्रमहति सर्वाश्रमनमस्कृतम् सर्वोश्रमेभ्यः उत्कृष्टम् पारमहंस्यंवर्तमे ॥ १३॥ पृथ्ववतारमाह पार्थिवंवपुः राजदारीरम् भेजेप्राप्तः इमांपृथिवीम् थोषधीः दुग्धअडभावआर्षः तेनपृथिवीदोहनेन उदासमः कमनीयतमः १४ द्धारात्स्यं क्षपंजगृहे पक्षीभूतत्त्वाश्चक्षुषात्राह्याः चाक्षुषाउदधयः तैः संप्लवः प्रलयस्तिसम् "आसीद्तीतकवर्षातेश्रद्धानौक्षी जिस्ही क्रयहतिवस्यमागो वैवस्वतम् तद्रुपेगाजनिष्यमागाम् सत्यवतम् अपात्रक्षितवान् ॥ १५॥ कमठकपेणकूर्मकपेणद्धेदधार ॥ १६॥

### भाषा टीका।

अष्टम, नामि राजा की पत्नी भेरु देवी में ऋषम रूपसे अवतीर्गा हुए। और समस्त आश्रमोको वंदाधीरों का मार्ग पारमहरण का आचरणा किया।। १२।। ऋषियों की प्रार्थनासे 'नवम' अवतारमे पृथुद्धप घर कर इस पृथवी कपागीसे औषधि धान्यादिकों का दोहतकिया। हे विम्र माश्रम का आचरमा किया॥ १३॥ गगा ! इसीसै यह अवतार वड़ा सुन्दर है ॥ १४॥ ा रतात यह अवतार वड़ा खुन्दर है । भे । चाश्चष मन्वंतर में जब समुद्रों के बढ़नेसे प्रलय होगयाया तब भगवानने मत्स्य रूप प्रहणाकर वैवखत को पृथवी रूपनीकाम कर उराका रकाका ॥ १५॥ एकादश कूर्म अवतार है कि जबसुर असुर समुद्र मथन करतेथे और मंद्राचल ह्व गयाया तबलसको पीठपर धारमाकियाया ॥१६॥ वैठाकर उसकी रक्षाकी ॥ १५॥

### श्रीधरखामी।

धन्वन्तर्यवतारमाह । धान्वन्तरं धन्वन्तरिरूपम् । द्वादशमादिप्रयोगस्वार्षः । त्रयोदशमेव रूपम् तश्चरितेन सह दर्शयति अपायः बन्वन्य सुधामित्यध्याहारः । मोहिन्या स्त्रिया क्षेणा अन्यानसुरान् मोहयन् धन्वन्तरिक्षेणामृतमानीय मोहिन्या स्मायन मृसिंहावतारमाह । नारसिंहं रूपं विमृत् । एरका अव्यन्थितृगाविशेषः ॥ १८॥

मारायात्माह । बुष्टानां मदं वामनयतीति वामनकं रूपं इस्वं वा । शत्यादित्सुः तस्मादाच्छिय प्रहीतुमिच्छुः ॥ १९॥ वामणान्याः तर्भाद्याच्छ्य प्रहातु। त्रिः त्रिशुणं यथा भवति तथा सप्तकृत्वः सप्तवारात्र् एकविद्यतिवारात्र् एवर्थः ॥ २०॥ वरशुरामावतारमाह् अवतार इति । त्रिः त्रिशुणं यथा भवति तथा सप्तकृत्वः सप्तवारात्र् एकविद्यतिवारात्र् इत्यर्थः ॥ २०॥

# ३ १९७५ १९८५ में **्रियनी ।** १००५ वर्ष करण करण

( कटक्रविति । कटः पुंसिकिलिब्जक इत्यमरः । तत्कृतत्त्याविशेषेगास्तरम्निस्मतित्यर्थः ) १८ ॥ ( पदत्रयमिति । अत्र पदशब्देन छछः पदं स्थानं पृथिव्यादिपादपरिमितम्मित्र इति व्याल्या हेशः ) १९—२७ 🛭

### श्रीवीरराघवः।

द्वादशांमवपुस्कथान्वंतरंथान्वंतराख्यजीवातु प्रवेशक्रपमित्यर्थः त्रयोदशमंक्षपंतुयनमोहिन्याख्ययाऽन्यानसुरान्मोहयनसुरानमृतमपाय-यत् तदेवमोहिनी रूपंत्रयोवशमित्यर्थः ॥ १७॥

नारींसहं चतुर्दशं क्रपंविस्रदूर्जितंवलिष्ठंदैत्येंद्रंहिरगयकशिपुंवक्षसिकरजैनंखैर्ददार यथाकटकदास्तरणकदेरकांस्तदर्थतृणाविशेषा

धामनकंवामनाख्यंपंचदशंवपुः कृत्वाभृत्वावलेरध्यरंयक्षवाटमगाज्ञगाम प्रयोजनमाहत्रिविष्टपंप्रत्यादित्सुराहृत्येद्रायदातुमिच्छुः पद्-श्रयपद्त्रयव्याजेनत्रिलोकीयाचमानः याचिष्यमागोऽध्वरमगादित्यन्वयः॥ १९॥

षोडशमेऽवतारेभार्गवरामाख्योनृपान्कार्त वीर्यादीन्बद्धाद्वुहः ब्रह्मकुलद्रोहकान्जुपान्कुपितः त्रिसप्तकृत्वःपकविशतिवारमहीनिःक्षतां क्षत्रवीजरहितामकरोत् ॥ २०॥

### श्रीविजयध्वजः।

द्वादशमवतारंधान्वंतरंधन्वंतर्यां ख्यरूपंसंवंधिनंविदुः सहरिर्यस्मिन् अवतारेमोहिन्यामोहकशक्तिमत्यास्त्रियास्त्रीमुत्यांऽन्यानसुरावुमोन ह्यनुसुधामपाययमं त्रयोदशममेवविदुरित्येकान्वयः चशब्दोमोहयश्रित्युक्त्यामायामयंतद्रूपमितिशंकातिरासार्थः॥ १७॥

नरसिंहसंबंधिवित्रहंबिभ्रत्सभगवान्करजैर्नखैरूजितंहिरणयकाशिषुग्र ऊरीअंकेनिपात्यतथाददार यथाकटक सृग्णास्तरगाकर्ता परकान् *ढी* घीकारांस्तृगाविशेषान्ददारदारयति तमवतारंचतुर्दशंविद्दरिसेकान्वयः ॥ १८ ॥

सपद्मनाभः पंचद्रामवतारंवामनसंबंधिनंक-त्रिविष्टपंत्रेलीक्चंप्रत्यादित्सुःवलेराच्छियदंद्रायेदंदातुकामःतदर्थंबलिपदत्रयंयाचमानः रवाबलेरध्वरंयक्रमगादित्यन्वयः॥ १९॥

षोडरामेअवतारेसभगवान् जमद्गिनसुतो भूत्वाबसद्भा ब्रह्मद्रोहिस्योन्प्रपान्यच्छ्यू ब्रन्त्विः सप्तकृत्वः एकविशतिवारं महीनिः स्वित्रयां क्षात्रियजातिरहितामकरोदित्येकान्वयः । कुपिताकारंदर्शयम्नतुकुपितः । नहिईश्वरस्यकोपः संभवत्यशक्तस्यसः कामःकोथस्तथालोभस्त स्मादेतन्नयंत्यजेदितिहेयत्वात्तस्येति ॥ २० ॥

# क्रमसंदर्भः।

धान्वन्तरमिति । विम्नदित्युत्तरेगान्वयः । द्वादशम् धान्वन्तरं रूपं विम्नत् । त्रयोदशश्च मोहिनीरूपं विभ्रत् सुरानपाययत् सुधामिति होवः केन रूपेण मोहिन्या स्त्रिया तद्रूपेणोत्यर्थः । किम कुर्वन् अन्यानसुरान् मोहयन् धन्वन्तरिरूपेण सुधाश्चोपहरिन्नति शेषः । अजि॰ सस्यावतारा पते त्रयः ॥ १७ ॥ १८ ॥

वश्चद्शमिति । कृत्वा प्रकटयन् ॥ १९॥ अवतार इति । अवतारे श्रीपरशुरामाभिधे ॥ २०॥

# सुबोधिनी ।

एकस्यद्विक्रपमाहधान्वंतरमिति । अत्रमादेशर्छांदसः द्वादशेमातीतिवाधन्वंतिरपदेनैव आयुर्वेदप्रवर्त्तनादे:स्पष्टत्वात् प्रकृतेत्वन्यार्थ एकर नाम स्वाद्य स्वाद्य के श्रान्य तरमेवस्योद शम् एवं च शब्दो संदे हि विरोधनिवारको धान्यं तरे संविधिदेवकर्त् कपानकर्म कथनात्नावतार्प्रयोजनिमस्य कं श्रान्य तरमेवस्योद शम् एवं च शब्दो संदे हि विरोधनिवारको धान्यं तरे संविधिदेवकर्त् क्यनात्रगायाः । विषयित्रयोजकं कर्त्तरिसुराएयकर्तृत्वेनोक्ताः अर्थादमृतमत्रत्रयोदशस्यै वचरित्रसुच्यतेअपाययादीतिअन्यानसुरात् स्वादमृतस्यनमगवत्कार्यमितिप्रयोजकं कर्त्तरिसुराएयकर्तृत्वेनोक्ताः अर्थादमृतमत्रत्रयोदशस्यै वचरित्रसुच्यतेअपाययादीतिअन्यानसुरात् स्वादम्तरपाम्तयाभ्योद्द्यितं अयमभित्रायः निह्नभगवान्स्त्रीरूपेणसर्वेद्द्यते सुरैभगवदूपेणवह्रयते राहुसूचनाच्यतोवस्तुतो स्त्रियाकरणभूतयाभ्योत्रयोधनंतुसामध्योत अम्बन्द्रम्भार्थाः स्त्रिभगवान्स्त्रीरूपेणसर्वेद्द्रयते सुरैभगवदूपेणवह्यते राहुसूचनाच्यतोवस्तुतो स्त्रियाकरण्य आकृत्यंतरवोधनंतुसामध्यात् अमृतहस्तस्यनिर्गतस्यविच्छेदेनास्यरूपस्यद्शेनात् अयोददात्वम् ॥ १७॥ धन्वंतिर्द्भिक्तक्त्रक्तिक्त्रक्ति

धन्वंतारक्षपमप प्रवेचतुष्ट्यंतिक्ष्यपुतरन्येनोत्कृष्ट प्रकारेशापरंपरांनिकप्रयितुं नारायगावत्नुसिंहनिक्षप्यतिषुष्टिमागायभिति पूर्वस्माद्विद्येषः प्रवेचतुष्ट्यंतिक्ष्यपुतरन्येनोत्कृष्ट प्रकारेशापरंपरांनिकप्रयितुं नारायगावत्नुसिंहनिक्षप्यतिषुष्टिमागायभिति पूर्वस्माद्विद्येषः प्रवेचत्रमस्यविविक्षितत्त्वाभातुर्देशत्वं नरसिहसर्विधनारसिंहक्षं विक्षपत्वेनालोकिकत्वात्पुष्टित्वम् अत्रहिमकिरेवमुख्यायतः स्रीयमपि प्रवेच्यक्रमस्यविविक्षतत्त्वाभातुर्देशत्वं वदंद्रपरेनावध्यताचस्वितावधेनेतक्षित्वमितिकर्जनेतिः पूर्वस्यक्रमस्याववापाः । विक्रित्वादित्यं च इंद्रपदेनावध्यताच स्वितावधे हेतुक् जितिविक्त तेनिक्षे । करावितिव्रक्षवाध्यसंत्यकरका स्वायमिष्यका । इत्यातदी यंपाछितवान् देशे देशे करावितिव्रक्षवाध्यसंत्यकर आर्थिसपरका । इत्यातदी यंपाछितवान् विक्रित्र विक्रित्र का करक्ष्य थेतिलोक हितार्थत व्रव्यक्तिक विक्रित्र विक्रित विक्रित्र विक्र विक्रित्र विक्र विक्रित्र व हत्वातदायपाप्य नसेर्दायोष्ट्रांतः कटकृष्यथेतिलोकहितार्थतस्य इतिस्वितम् ॥ १८॥

**)** 

ततः सप्तद्शे जातः सत्यवत्यां पराशरात्। , चक्रे वेदत्रोः शाखा दृष्ट्वा पुंसो द्रुपमेष्ट्रसः ॥ २१ ॥ २१ ॥ १ 🚁 🔑 🤃 मस्देवत्वमापन्नः सुरकार्याचिकीर्षयाः। 🐃 🐃 🔻 समुद्रनिय्रहादीनि चक्रे वीर्घाण्यतः परम् ॥ २२ ॥

# सुबोधिनी।

प्वंमक्तिमार्गेनवावतारान्कययन्त्रथमंत्रइलादरक्षको नृसिंहोमुख्यइतिमुलत्वेनकथितः ततोब्रह्मभावेनत्रयः त्रयश्रक्षत्रभावेनएको वैद्यमावेनपुनरिव्रमस्यमूलक्पमेकेनेतिनवधानिरूपएं भक्तिरनविक्तिश्वानीनवर्त्ततः ति सायुज्यसेवारंभवत् कलेरिव्रमारंभइतिहेत्ः फश्यपादिद्यांजातोवामनेनरूपेगावद्याचारी पंचदशः । अवामनोपिवामनकंरूपंकृत्वावलेरध्वरमगादिति भक्तहितार्थस्यस्यधर्मस्यचा-म्यथाकरखंपूर्वस्माद्विशेषः प्रत्यादानंदत्तस्यपुनर्प्रहणाम्इहपरमात्मनः पदत्रयंगमनेकामितोर्थे उत्तरार्द्धनिकपितःचरित्रंतुगमनमेव ॥ १९ ॥ क्षतियायांजातंपरशुरामरूपंषोडशम्। सप्तधाजननेतिवीजत्वंजातंपुनर्श्रीह्मणादुत्पन्नाःसमृद्धाःपुनः सप्तधापवमेकविशतिधानिःक्षत्रिया पृथिवीकृतापित्वधस्यनिमित्तत्वेपिवद्वारक्षेवहेतुः॥ २०॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

धान्वन्तरं धन्वन्तर्यवतारखरूपं द्वादशमं भवतीत्यन्वयः । सुधाकलसानयनं चास्य कर्मा क्षेयम् । द्वादशमादि प्रयोगस्त्वार्षः । श्रयोदशमं रूपं विम्रत् सुरानपाययत् सुधामिति शेषः । केन रूपेण मोहिन्या ख्रिया अन्यानसुरान् मोहयन् ॥ १७॥

प्रका निर्प्रनिथतुगाविशेषः॥ १८॥

प्रत्यादित्सुस्तस्मादाच्छिद्य प्रहीतुमिच्छुः॥ १९॥

सप्तकृत्वः सप्तवारान् । कीहशान् त्रिः त्रिशुशितान् । अत्र सप्तकृत्व इति कृत्वसुचाभिहिताया अभ्यावृत्तिकियायाः पुनरभ्यावृत्ति-गरानिन सुच् प्रत्ययः॥ २०॥

and the free terms of the contracting the contracting and the contracting of the contracting of the contracting

a spak vitike domyh kilovel z 1984.

H 173 H KARTIAN SPINE I SHIPPINGA

man with the last action with

# सिद्धांतप्रदीपः।

नारसिंहरूपंविम्नत् दैत्येद्रम् हिरएयकशिषुम् एरकानिक्रीयस्तृगाजातिः॥ १७॥ १८॥ बामनावतारमाह वामनकम् ह्रस्वंरूपंकृत्वा प्रत्यादित्सुः आदातुमिच्छुः॥ १९॥ भरश्यामावतारमाह अवतारे इति ॥ २०॥ milion ( page 1) ( modernism property ) in the supplicate ( ) and 1 of Course w -ভা**ঠি**ৰ শ্ৰমন্ত্ৰ **চ্চিত্ৰি** ক্ষাৰ্থক প্ৰাৰ্থক প্ৰাৰ্থক ক্ষাৰ্থক ক্ষাৰ্য ক্ষাৰ্থক ক্ষাৰ্থক ক্ষাৰ্থক ক্ষাৰ্থক ক্ষাৰ্থক ক্

# भाषा टीका।

द्वादश अवतार धन्वंतरि है कि जो अमृत का कलसलेकर समुद्र से निकले थे और त्रयोदश मोहनी अवतार है कि जो सुंदरस्त्री क्रवसै असुरों को मोहकर सुरगग को अमृतपान कराया ॥ १७ ॥ ल लुख्य ना नावनार खर्गाया का अस्तपान कराया । । । । । विदारमाकिया जैसा चटाई बनानेवाला एरका ( जिसमे वीचमे चतुर्दश, नृसिंह रूप धारमा कर परम प्रवल दैत्यकी नृखीं से विदारमाकिया जैसा चटाई बनानेवाला एरका ( जिसमे वीचमे गांठनहीं होती ) तृगा को विदीर्गा करता है तेसी ॥ १८॥ ाठनहा हाला / देन का न्यांचा करता ह तरा । के और खाँ पर्यंत होने के इच्छासे तीनपाम गुशकी याचनाकी ॥ १९ में क्रिक प्रमान के स्वास्त्र के स्त्र के स्वास्त्र क

# श्रीधरखामी।

व्यासावतारमाह । तत इति । अवपमेश्वसोऽल्पप्रक्षान्पुंसी हृष्ट्रां तदनुष्रहार्थे शाखाश्चके ॥ २२ ॥ नमावतारमाह । नरेति । नरदेवत्वं राधवक्षपेण प्राप्तः संज । अतः परमधादशे ॥ २२ ॥ p. Strike in the first of the f

ស្រុក្ស មានសមារាធិបានក្នុង សមាលាស្រុសពីស្បាន

化 经工具 海绵 医下孔

एकोनविंशे विंशातिमे चृष्णिषु प्राप्य जन्मनीः। रामक्षााविति भुवोभगवानहरद्रसम् ॥ २३॥ ततः कलौ संप्रवृत्ते संमोहाय सुरद्दिषाम् । बुद्धोनाम्राजनसुतः कीकदेषु भविष्यति ॥ २४ ॥

# श्रीधरखामी।

रामकृष्णावतारमाह । एकोनेति । विंशतितम् इति वक्तव्ये तकारलोपश्छन्दोऽनुरोधेन । रामकृष्णावित्येवं नामनी जन्मनीप्राप्य ॥ २३॥ बुद्धावतारमाह । तत इति । अजनस्यसुतः । जिनसुत इति पाठे जिनोऽपि स एव । कीकटेषु मध्ये गयाप्रदेशे ॥ २४॥

### श्रीवीरराघवः।

ततः सप्तदशेऽवतारेपराशरात्सत्यवत्यांजातोवादरायगाशतिप्रसिद्धः अल्पमेधसःकृत्स्नवेदतदर्थावगमोपयुक्तबुद्धिश्च्यान्युंसःपुरुषान्

द्युविद्यवत्रक्तस्यशाखाश्रकेऋण्यजः सामाद्भिदेनतद्वांतरभेद्नचविभक्तवानित्यर्थः॥ २१॥ नरदेवत्विमितिअतःपरमष्टादशेऽवतारेसुरकार्यरावण्यवधरूपंकर्त्तुमिच्छयानरदेवत्वंक्षत्रियत्वंप्राप्तः श्रीरामक्रपेणावतीर्णादत्यर्थः समुद्र

विषयकोनिग्रहः आदिर्येषांतानिवीर्याणिकर्माणिचके ॥ २२ ॥ पकोनविशेविशतिमेचावतारे भगवान्वृध्यिषुयाद्वेषुराकृष्णावितिजन्मनीरामः वलरामः कृष्णश्चेतिद्वेजन्मनीप्रादुर्भावरूपे प्राप्यभु-

चोभारमहरत् रामस्त्वेकोनविशःकृष्णग्तुविशतितमोवतारइत्यर्थः॥ २३॥

ततःकलीयुगेसंप्रवृत्तेसतिसुरद्विषामार्द्धतानामसुराणांवासंमोहनार्थमगवान् कीकटेषुजिनस्यसुतोभविष्यतिनाम्नावुद्ध १ति प्रसिद्धः अयमेव विशोवतारः॥ २४॥

# श्रीविजयध्वजः

ततःसहरिः सन्तद्शेऽवतारेपराश्रास्तत्ववत्यांजातोऽल्पमेयसः अल्पप्रज्ञान्पुरुषान्दष्टा वेदत्तराःशाखाश्र्यक्रेकृतवान्पामावतारात्पूर्व

ाराप्रयारस्य प्रकृतस्य । रहे । ं अतःपर्स्यत्वद्यात्परंपश्चाद्याद्यावतारेदेवकार्यकर्गोच्छ्यानरदेवत्वराजत्वंप्राप्तः समुद्रनिप्रहादीनिसेतुंबंधनपूर्वागिवीरकर्मागि व्यासावतारसत्त्वंशेयम्॥ २१॥

समगवानेकोनविशेविशतितमेऽवतारेवृष्णिषुनाम्नारामकृष्णावितिजन्मनीप्राप्यभुवो भरमसुरपृतनालक्षणमहरदित्येकान्वयः जन्मनी-

इतिद्विवचनाद्वलभद्रेविशेषावेशोज्ञातव्यः॥ २३॥ ततःकलीयुगेसंत्रवृत्तेसति सुरद्विषांत्रिपुरवासिनांदैत्यानामयोग्यानांवेदमार्गेप्रवर्त्तमातानांमोहायनास्नावुद्धः कीकदेषुप्रगाधविषयेषु parties and programme to the second of the s जिनस्तः जिनेनसुतत्वेनवृतः भविष्यतीत्यन्तयः॥ २४॥ क्षा करूर के करता है है। इस एक्स एक्स एक्स एक्स कर वर्ष के ए क्षा है। इसिया एक्स के स्वाप है।

# क्रमसन्दर्भः।

ततः सप्तदश इति स्पष्टम् ॥ २१ ॥ नरदेवत्वभिति । अस्य स्कान्दे श्रीरामगीतायां विश्वरूपं दर्शयती ब्रह्मविष्णुरुद्रकृतस्तुतिः श्रूयते ॥ २२॥ प्रकोनविंदा इति । भगवानिति साक्षात् श्रीभगवत प्रवाबिभोषोऽयं न तु पुरुषसंबस्यानिरुद्धस्येति विद्रोषप्रतिपत्त्यश्चे तम्र सस्य सा-धाद्रपत्वात श्रीकृष्णा किया विकास पत्वाद्वासक्षेणा पि भारहारित्वं भगवत प्रवेत्युभयत्रापि भगवानहर हर्गमिति शिष्टमेत्र। अतो राम-स्थाद्र प्रतिकद्वावतारत्वं प्रत्याद्य तम् । श्रीकृणास्य वासुदेवत्वात् श्रीरामस्य च सङ्घर्णाकपत्वात् युक्तमेव च तदिति॥-२३॥२४॥२५॥

# सुबोधिनी ।

ततः उपित्चरवसीः मत्स्यगर्भाजातार्यादासीकन्यार्यातथापराद्याद्याद्यात्वो वेदव्यासः सप्तद्शः प्रकृतेतृतीयः वेदस्यतत्त्वंपूर्विनिकपितं ततः उपारचरणाः प्रकाम् तियावतावेदभागेनप्रतिपाद्यते सापकाशासास्प्वमन्याश्चयद्यपि ब्राह्मणेनसर्वविदः पठनीयस्तस्थापि अतंतम् तेर्वविद्याद्यस्थितः सर्वतिक्षितं अतंतम् तेर्वविदः सर्वतिक्षित्रं सर्वतिक्षित्रं अतंतम् तेर्वविदः सर्वतिक्षित्रं सर्वतिक्षितिक्षित्रं सर्वतिक्षितिक्षितिक्षितिक्षित्रं सर्वतिक्षितिक्रितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षितिक्षिति स्तंतम् त्यश्च्यम् । विद्यान्तिः सर्वास्तियहत्य्वमेत्रसोषिषुकृष्ण्यविद्याम् सर्वायापान्ति । सर्वायापान्ति । सर्वायापान्ति । सर्वायापाने । सर्वयापाने । सर्वायापाने । सर्व

अधारी युगतन्त्र्यायां दस्युप्रायेषु राजसु । जनिता विष्णुयशसो माम्ना कल्किर्जगत्त्रपतिः ॥ २५ ॥ अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्त्वनिधिर्द्वजाः । यथाविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥ २६ ॥

### सुवोधिनी।

ि मिन्नप्रक्रमार्थेरघुनाथादिरूपत्रयंवक्तुं ततःपरिमत्युक्तमक्षत्रियभावोत्रविवक्षितः । यद्यपिसोमसूर्यभावेनद्विविधः तथापिसोमस्यवृद्धिः क्षयरूपत्वेनद्विरूपत्वाचेधानिरूपर्णंनरदेवत्वंराज्ञत्वं सुरक्षार्यरावणवधः अवतारचरित्रंसमुद्रनिग्रहः । तथामरुस्थलीकरणंपरशुरामजयः वालिवधश्चेत्यादिशब्दार्थः ॥ २२ ॥

अतःपरमष्टादशेवलरामेआवेशःकृष्णावतारः । एकोनिविशेविशितमे । अत्रतकारलोपःछांदसःवस्तुतः सोमस्यैकत्वादेकश्लोकेन निरूपणंवार्षोयद्दतियक्तव्ये अञादयास्तद्राजाद्दतिद्राजसंशायां तद्राजस्यवहुषु ॥ २ । ४ । ६२ ॥ इति प्रत्ययलोपेवृष्णिष्वत्युक्तम् । अत्र हिचतुर्णामवताराणांकृष्णुरूपंस्थानं नारायणांशस्यकेशस्यसुतपावृष्णिप्रसन्नस्य भगवतश्चतत्रैकमेवरूपंवहुवृष्णिषुप्राप्तिरूपत्वेनिवव क्षितंवलरामस्त्वेकप्वप्वंवावताराः जन्मद्वयंतदुक्तंवृष्णिषुप्राप्त्रयज्ञनमिश्चिततत्रञ्चलोकेनामद्वयं प्रसिद्धमित्याहरामकृष्णावितिजन्मविशेष्यांकार्यतुभगवतेव कृतिमत्याहम्भवानहरद्भरमितिभूभारहरण्य अवतारकार्यसामान्यतोलोकप्रसिद्धम् ॥ २३॥

भित्रप्रक्रमार्थेकलीसम्यक्ष्रवृत्तेतद्वर्भप्रचारेजाते सुरद्विषांदैत्यराक्षसानांवैदिकेषूत्पन्नानांवेदत्यजनार्थेकीकटदेशेषुजिनस्यअजिनस्य बासुतोबुद्धोजातद्दत्यर्थः ॥ २४ ॥

### श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

थरूपमेश्वसोऽरूपज्ञान् । चके व्यासः ॥ २१ ॥ नरदेवत्वं श्रीरामत्वं समुद्रनिग्रहादीनि समुद्रनिग्रहरूयैवाद्यापि सतुबन्धरूपेण एदयमानत्वात् तत्नैव च महैश्वर्याविष्काराण तस्यैव प्राधान्येन निर्देशः ॥ २२ ॥

विश्वतितम इति वक्तव्ये तकारलोपश्छन्दोऽनुरोधेन । रामरूष्णाविति नामभ्यामित्यर्थः । जन्मनी प्रादुर्भावद्वयम् प्राप्येत्यर्थः ॥२३॥ अञ्जनसुतोऽजिनसुतश्चेति पाठद्वयम् । कीकटेषु मध्ये गयाप्रदेशे ॥ २४॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

श्रीमद्भेदव्यासावतारमाह ॥ ततइति ॥ २१ ॥ श्रीद्रामावतारमाह ॥ नरदेवत्वमिति ॥ २२ ॥ एकोनविशेविशतितमे अवतारे रामकृष्णावित्येवं जन्मनीप्राप्यभुवोमरमहरत्रामःएकोनिधःः श्रीकृष्णःविशतितमःअवतारः॥ २५ ॥ एकविशः अवतारःकीकटेषु अजिनस्यसुतः नाम्नाबुद्धोभविष्यति ॥ २४ ॥

# भाषा टीका ।

सप्तदश अवतारमें पराशर ऋषींसे सत्यवती मैअवतीर्शाहो पुरुषों को अरुप छुद्धि देखकर वेदरूप बुझकी शासाविमागिकया ॥२१॥ देवताओं के कार्य सिद्ध करनेकी इच्छाकर नरदेव रूपअर्थात श्रीराम रूपधरकर समुद्र वंधन आदिक अतिमानुष कर्मिकये॥ २२॥ इन विश्व और विश्व अवतार मै यदुवंश मै राम (बलदेवजी) रूप्ण रूपसे प्रकट होकर भगवान ने सूमिकामारहरणिकया ॥२५॥ जब कल्यिया प्रवृत्त होजायगा तब देवरूपी दैत्यों को मोह करने को कीकट देश मै जिन के (अथवा अंजन के) पुत्र बुधनाम से अवतीर्शा होंग ॥ २४॥

### श्रीधरखाँगी।

estation for the first of the state of the

# ऋषयोमनवोदेवा मनुषुत्रा महीजतः।

ार्क्स क्लाः सर्वे हरेचे सप्रजापतयः समृताः॥ २०२॥ व्यापात्र वर्षे एते चांशकलाः धुंसः कृष्णस्तु भगवानं स्वयम् ।

इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे युगे ॥ २८॥

### श्रीधरस्वामी ।

अनुक्तसर्वसंग्रहार्थमाह । अवतारा इति । अलंख्येयत्वे इष्टान्तः । यथेति । अविदासिनः अपक्षयशून्यात् । दसु उपक्षय इत्यस्मात् स्ररसः सकाशात्कुल्याः श्चद्रप्रवाहाः ॥ २६॥

विभूतीराह। ऋषय इति॥ २७॥

तत्रविशेषमाह । एते चेति । पुंसः परमेश्वरस्य केचिदंशाः केचित्कलाविभूतयश्च । तत्र मत्स्यादीनामवतारत्वेनसर्वेशत्वसर्वशक्ति मस्वेऽियथोपयोगमेवज्ञानिकयाशस्त्राविष्करणम् । कुमारनारदादिष्वाधिकारिकेषु यथोपयोगमंशकलावेशः। तेषुकुमारादिषु ज्ञानावेशः प्रध्वदिषु शक्त्वावेशः कृष्णस्तुभगवान्साक्षाक्षारायगा एव । आविष्कतसर्वशक्तित्वात् । सर्वेषां प्रयोजनमाह । इन्द्रारयी देत्यास्तैन्याः कुलमुपद्भवं लोकं मृडयन्ति सुबिनं कुर्वन्ति ॥ २८॥

### द्रीपनी ।

एते चांशकला इति । तथा च ब्रह्मसंहितायाम् । रामादिमूर्तिषु कलानियमेन तिष्ठतः नानावतारमकरोतः भुवनेषु किन्तु । कृष्णाः स्तयं सममयत् परमः पुमान् यो गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि । इति व्याख्यालेशः॥ २८—३१ः॥

### श्रीवीरराघवः।

अधासीजगत्पतिःभगवान्युगयोः किल्हत्युगयोः संध्यायांसंधीराजसुद्दस्युप्रायेषुचीरप्रायेषुकेवलमधर्मबहुलेषुसत्सुतद्वधार्याचिष्णुय श्रुसुंजिनिता विष्णुयशसः पुत्ररूपेगावतरिष्यतिसचनाम्नाकविकरिति प्रसेत्स्यति ॥ २५:॥

दिङ्मात्रमेतद्दींशतिमलाभिप्रायेगाहअवताराइतिहेद्रिजाः सत्त्वनियेः शुद्धसत्त्वमूर्त्तभगवतोऽनिरुद्धादेतेऽवताराअन्येप्यसंख्येयाः स्युः

प्रवर्त्तते यथाअविद्यासिनोऽशोष्यात्सरसः सहस्रशःकुल्याःस्युः स्पंदंतेतद्वत् कुल्याःश्चद्रनद्यः॥ २६

केतदस्यतभाहऋषयः इतिऋषयोमंत्रद्रष्टारोवशिष्ठादयो सुनयःकेवलस्वात्मपरमात्भयाथात्म्यमनन्शीस्त्राः शुकादयः देवाइंद्रादयःमञ् प्रवाःप्रियवतादयः महोजसः महाप्रभावाः सप्रजापतयः दक्षादिभिः सहिताः प्रजापतयश्चेत्यर्थः तप्तेसर्वेहरेरेवकलाः स्मृताःभगवदेशेनै

वसंभूताइत्यर्थः तथाचे कंभगवता "यद्य विभूतिमत्सत्त्वंश्रीमदूर्जितमेववा तत्त्रदेवावगच्छत्वंम्मतेजोंऽरासंभवमिति ॥ २७॥

्र ( श्रीकृष्णायनमः ) ॥ एतद्वचनार्थमेवाहएतइतिएतेऋषिप्रभृतयस्कपुंसोऽनिरुद्धाख्यस्यांशकलाःअंशांशसंसूताः रुप्णस्कभगवानस्यय मितिश्रीकृष्णस्यपूर्णावतारत्वमुक्तम् उदाहृतभगवद्यचनेन विभूत्यादिमत्रांजंतूनांममत्वेनानिर्द्दिष्टश्रीकृष्णस्य तेजांशसंभवत्वंश्रीकृष्णस्य पूर्णात्वंस्थापितम्अत्रापिमगवानित्यनेनपूर्णपाङ्गुगयत्वमवगतम् यद्वाअत्रैतदित्यनेनपूर्वोक्तेषुहिरगयगर्भसनकादिषुकेषांचिद्वराहनारायग्रा भूतस्यकूर्ममोहिनीनृसिंहवामन श्रीरामावताराणांपूर्णानांसत्त्वेपि द्वित्रिन्यायेनसर्वेप्यवताराः प्राम्धश्यंतेतत्रपूर्णात्वंनामषाङ्गुरायपूर्णान् मत्रपञ्च । स्वेनक्रपेशासाक्षादवतीर्थात्वम्अंशांशसंभूतत्वंनामतत्त्वजीवांतरात्मतयावास्थितस्यषाङ्गुगयपूर्णस्यभगवतः केनाप्येश्वयंवीर्यादिगुगालेशेन स्वन्छ । जीबद्वाराविभूतेनविशिष्टतयासंजातत्वं निरंशस्यब्रह्मस्वरूपस्यैकदेशभेदेनाविभावासंभवात् ननुधर्मस्वरूपेकदेशवाचिनोशशस्यक्षयं जाबद्धारा विशेष अपृथक्सिद्धविशेषग्रास्याप्यंशशाब्दवाच्यत्वाद्विशिष्ट्यस्वेकदेशत्वस्यैवांशप्रप्रमृतिनिमित्तत्वाद्विशिष्ट्यस्यकथ गुगापरत्वमितिचेन्न अपृथक्सिद्धविशेषग्रास्याप्यंशशाब्दवाच्यत्वाद्विशिष्ट्यस्वेकदेशत्वस्यैवांशप्रप्रमृत्यात्रां गुगापरानः इतिवंचिविदेशियम्बिदेशियम्बिदेशतयाद्वयोद्ध्यविद्याद्वयाद्वादाद्वात्वात्याण्याद्वतत्तत्तत्तुरागादिश्यम्बावशंतत्वं सर्वावसारसाधादणे हारव ना सुवसंहरति इंदिति इंदिपिमेर खरादि सिव्यों छलसुपहुतं लोकं युगेयुगेप्रतियुगमुहयंति ॥ २८ ॥ and the first of t

# श्रीविजयध्वजः

श्रयबुद्धावतारादनेतरमसीजगत्पतिः पश्चनाभायुगसंध्यायांप्राप्तायाराजसुद्स्युप्रायेषुबद्धुलंचोरेषुसत्सु नाम्नाकविकनाम्नाविष्णुयशसो विप्राज्जनितीत्पतस्यतीत्येकान्वयः॥ २५॥ ere en la companya de la companya d

ज्ञानतार्यामनंतत्वादनंतपुरुषायुषापिसमापाचेतंतास्माकंशक्तिरस्तीत्यभिन्नेत्याद्यं अवतारास्ति। हेव्रिजाः सत्त्रनिधेषेठशासादि हरे दवताराव्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः सत्त्रविष्ठे व्यवाद्याः स्वत्रविष्ठे व्यवाद्याः स्वत्रविष्ठे व्यवाद्याः स्वत्रविष्ठे व्यवेदि

# ाः १९ क्रि. **प्रिमेनिवास्त्रकाः ।** विकास विकास

यथाविदासिनउत्रतस्थलात्भित्राद्वीतर्थः-सहस्रद्वाकुर्वेश सिद्दीनयःस्युचितिः । इदंरीदंगतिनिपर्योक्तेनतुयोगिनः । क्षुद्रनदीनातैः संख्ये यत्वेपिनहरेरवताराः संख्यातुंशक्यंतृद्ध्युद्धोद्धद्भन्वद्वारार्थिमितिकातव्यस् ॥ २६॥

इदानींप्रातिबिवांशानाह ऋषयहतिमनुपुत्राः प्रियवतादयः । प्रजापतिभिद्देशादिभिः सहितापतेऋष्यादयः हरेः कलाः मिन्नांशाः

स्मृतिषुउकाः ॥ २७ ॥

र्तीहकस्वरूपांशाइतितत्राह एतइति सएवप्रथममित्यारभ्याथासावित्यंतेनप्रोक्ताएतेशेषशायिनः परमपुरुषस्यस्वांशकलाः स्वरूपांशा वताराः नतत्रांशांशिनांभेदःप्रतिविवांशवत् किमुक्तंभवति रूप्णोमेघश्यामःशेषशायीमुलरूपीपद्मनाभाभगवान्स्वयंतु स्वयमेव मशास्त्रि शास्त्रावत्भेवाभेदोपीतिभावइत्याह इन्द्रारिभिर्दैत्येव्यक्तिलंजनंतत्स्थानचयुगेयुगअवतीर्थमृडयंतिरक्षंतीत्यन्वयः ॥ २८॥

# कतसन्दर्भः।

अय श्रीहयप्रीव-हरि-हंस-पृत्रिगर्भ-विमु-सत्यसेन-वैकुण्ठाजित-सार्व्यमीम-विष्वक्सेन-धर्मसेतृ-सुधाम-योगेश्वर-वृहद्भाग्वादीमां शुक्कादीनाश्चानुकानां संग्रहाधमाह अवतारा इति। हरेरवतारा असंख्येयाः सहस्रवाः सम्भवन्ति । हि प्रसिद्धी । असंख्येयत्वे हेतुः। सत्त्वनिथेः सत्त्वस्य स्वप्रादुर्भावशक्तेः सेवधिरूपस्य । तत्रैव रृष्टान्तः यथेति । अविदासिनः उपक्षयशुन्यात् सरसः सकाशात् कुल्या-स्तत्स्वभावकृता निर्वारा अविदासिन्यः सहस्रशः सम्भवन्तीत्यर्थः। अत्र ये अशायतारास्तेषु चैप विशेषी क्षेयः। श्रीकुमारनारदादि-ष्वाधिकारिकेषु ज्ञानभक्तिशक्तां संशोवशः । श्रीपृथ्वादिषु कियाशक्तांशावेशः । कचित्तु खरमेवावेशः तेषां भगवानेवाहमिति वचनात्। अथ श्रीमत्स्यदेवादिषु साक्षादंशत्वमेव । तत्र चांशत्वं नाम साक्षाद्भगवत्वेऽप्यव्यभिचारितादशतदिच्छावशात् सर्ववैवैकदेशतयैवाभि-स्यक्तशक्त्यादिकत्यमिति श्रेयम् । तथैवोदाहरिष्यते । रामादिमूर्तिपु फलानियमेन तिष्ठधानावतारमकरोदित्यादि ॥ २६॥

अथ'विभूतीराहं ऋषय इति। कलाः विभूतयः अल्पशक्तेः प्रकाशाद्विभृतित्वं महाशक्तिस्वावेशत्वमिति भेदः॥ २७॥

तदेवं परमात्मानं साङ्गमेव निर्दार्थ प्रोक्तानुवादपूर्वकं श्रीभगवन्तमप्याकारेगा निर्दारयति एत इति । एते चाँशकला इत्येव पाठः स्वामिसम्मतः। अननवतितमे तथा टीकायां दर्शनात्। ततश्च पते पूर्व्योक्ताः चशब्दादनुकाश्च प्रथममुद्दिष्टस्य पुंसः पुरुषस्य अंशकलाः केचित् अशाः स्वयमेवांशाः साक्षादंशत्वेनांशांशत्वेन द्विविधाः। केचित्वंशाविष्टत्वादंशाः। केचित्तु कला विभूतयः । इह यो विश्तित-मावतारत्वेन कथितः स कृष्णास्तु भगवान् एव एव पुरुषस्याप्यवतारी भगवानित्यर्थः । अत्र "अनुवादमनुत्तुव न विधेयमुदीरयेदिति दशनात् श्राष्ट्रभ्याप्य नापान्य प्रति । प्रति व व्यनिक व्यमिति । तत्र च स्वयमेव भगवान् न ते भगवतः प्रादु-क्सत्व ।सन्द भूलत्वन्त । राष्ट्रा प्रवासनित्यर्थः । न चावतारप्रकर्णो पठित इति संहायः । पीव्यपिये पूर्विदेविवयं प्रकृतिविदिति न्यायात्। यथा भूततया न तु वा मणव वाज्यार प्राचीत यजेत यदि प्रतिहत्ती सब्बेस्बद्धिमोनेति भुतेः । तयोश्च कदाचिद्द्योरपि विच्छेदे प्राप्ते विक-आग्नष्टाम यद्युद्धाता ।वाष्ट्रध्यापरमचे च परमेव प्रायश्चितं सिद्धान्तितं तद्वदिहापीति । अथवा कृष्णस्तु भगवाम् स्वयमिति श्रुत्या द्वयोः प्रायश्चित्तयोः समुच्चयासम्भवे च परमेव प्रायश्चितं सिद्धान्तितं तद्वदिहापीति । अथवा कृष्णस्तु भगवाम् स्वयमिति श्रुत्या द्धयाः प्रायाश्चलयाः लशुन्वपार्वाराम्यमाप्ये । "श्रुत्यादिवलायस्त्वाच न वाधइति सूत्रे ते हेते विद्याचित प्वति श्रुतिर्भनश्चिदादीनाम-प्रकरणस्य वाश्वः । यथा राज्ञः राज्ञः । अत्याद्यविद्याः विद्यात्वेनैव स्थातन्त्रयं स्थापयति तद्वदिहापीति । अत एतत्प्रकरग्रेऽप्यन्यन् श्रीनी प्रकरणप्राप्तं क्रियानुप्रवेदालक्षणमस्त्रातन्त्रयं वाधित्वाः विद्यात्वेनैव स्थातम्यात्वात्रकारम् । अत एतत्प्रकरग्रेऽप्यन्यन भाना प्रकरणायास ।काथा छुन्य राज्य समयानिति भगवागहर इरमिति कतवान् । ततश्चास्यावतारेषु गणाना तु स्वयं भगवानप्यसी स्व-त्र का चदाप भगवन्छव्यमरात्वा एउपा प्राचित्र स्वान्यसार कियापि माधुर्यः निजजनमादिलीलया पुष्पान् कदाचित् सकललोकहर्यो क्यस्थ एव । निजपरिजनवृन्दानामानन्दविशेषचमत्काराय कियापि माधुर्यः निजजनमादिलीलया पुष्पान् कदाचित् सकललोकहर्यो रूपस्थ एव । । नजपारजनपुन्दाणाना पर्याद्याम् । रामादिमूर्तिषु कलानियमेन तिष्ठशानावतारमकरो सुवनेषु किन्तु । कृष्णाः स्वयं मवतात्यपेक्षयवत्यागतम् । यथाक् अक्षरार्थः तमहं भजाशीति । अवतारश्च प्राकृतवैभवेऽवतरशामिति कृष्णसाहचर्येशा रामस्यापि समभवत परमः पुमान् या गावित्व माप्य उपमान्य एस्थ सकाशात भगवती वैलक्ष्ययं वोधयति । यहा अनेन तुशब्देन सविधारणा पुरुषाशत्वात्यया इयः। अत्र तुशब्दा अवाजा पाउँ । श्रुतिरिधं प्रतीयते । तत्रश्चान्यारमा। श्रुतिब्वलवतीति न्यायेन श्रुत्मेव श्रुतमध्यन्येषां महानारायमादीनां रुचयं भगवस्य गुमाभूतमा श्रुतिरय प्रतायत । तत्रश्चान्यारणा श्रुपा-न्यारणा । अस्त । त्य शब्दद्वयस्य तत्सहोदरेशा तेनैव चशब्देन प्रतिनिद्देशात् तावेव खेल्व-पद्यतः। एव पुरुद्धातः भगवानातः च प्रथमनुपर्याप्य विद्वादिके एव शब्दः प्रयुज्यते तत्समो वा । यथा ज्योतिष्टीमा-तावात स्मार्यात एक रामातान इयान मताति प्राप्त । व्यातिष्टामान विषयो भवतीति । इन्द्रारीति प्रधासे त्वत्र नान्वति । तुराब्देन याक्यस्य धिकार वसरत ज्यातम यजतत्वत्र ज्याति राज्य ज्याति । ज्याकि एवाकि रिष्यत । तत्थेन्द्रारीत्यत्र अर्थात् तएव पूर्वीका मुख्यन्तीता-याति । अत्र विशेषजिज्ञासायां कृष्णासन्दर्भो दृश्यः । तत्तत्रप्रसङ्गे च दर्शयिष्यते ॥ २८॥

# TOTAL PROPERTY.

सुबोधिनी । विश्वास्त्रातीकार का कुल्ले के किल्ले के अथेतिमहान्भिन्नक्रमः कूर्ममारभ्यवुद्धांतनपुरुषस्यावताराः कर्व्कतिपुरुषस्यावतारहत्याह असावितिअञ्चूर्भः आहिक्तमस्यवन्यतरि अयाताः क्षित्वा त्रस्यवामने विष्णा विश्वान रह्यपरशु समिषणा स्यवस्थानः । व्यासी विष्णा श्रीकिष्णा श्रीकिष्णा स्व विद्या ? या सावधार्य जाता । यासमानायां नसः येवयोजानः भूणिक्षश्चणयातेषाचि विद्यानां अपिराजानां इत्येवः यायप्रहण वास्त्र वस्त्र वुष्ट इतियुगस्याण्याजाता । यासमानायां नसः येवयोजानः भूणिक्षश्चणयातेषाचि विद्यानां अपिराजानां इत्येवः यायप्रहण

विष्गुभक्तिप्रतिपाद्कत्राह्मण् संगेनकेपांचिद्तयात्वमितिभतप्त्रविष्णुयशानामशंभलप्रामविष्णवस्तस्यपत्न्यांभविष्यतीत्यर्थःजगत्पतिरित्य चतारप्रयोजनं जगतः शास्त्रास्तरमातः पुनस्यवकत्त्रस्यर्थः॥ २५॥

रप्रयाजनः जगतःसाणत्वातः पुनस्द्रवकत्तत्ययः ॥ २५ ॥ अवतार्गणामेतावस्यनिवारयति अवताराहति ॥ सत्त्वनिधेरितिहेतुः पालनोद्धवादेरावस्यकसस्वद्विजाहतिसमत्यर्थसेवोधनेवहुकाल वित्वात् अवतारासां खरूपमाह यथाविदासिनइति अविदासिनः अक्षयज्ञलस्यकुरुयाः क्षद्रप्रवाहादक्षिंगादेशेप्रसिद्धाः ॥ २६॥

सर्वेषांसामान्यतः खरूपंप्रहतिफलं चाहऋषयइतिहाश्यामऋषयः अर्थमादयः मनवः खायं भुवादयः देवाः वस्तादयः भनुपुत्राः प्रियंवतादयः महाजिसः अन्येप्यतिवीर्यवंतः एतेसर्वेसत्वमुर्त्तभगवदोविष्णारिरक्षिपोः कलाधमविशिनइति अर्थः प्रजापतयो मरीप्यादयः चकारणान्य संवंधवारयतिस्पृताइतिप्रमाणं पूर्वीकाःक्रमारादयस्तुकेचनअंशाः कचनकलाःतेचायतारावेशभेदेननिरूपिताः चकारादनुकांआपेपुंसो नारायग्रास्यवद्यांडमूर्त्तः अंशाः कलाश्चकृष्णितितथात्वंसामान्यतः प्राप्ततुशन्देनव्यावर्त्तयतियस्यांशाः पुरुषादयःसभगवान् छणाइत्यर्थः सामान्यतः प्रयोजनमाहइन्द्रेतिदंद्रारयोदैत्याःतैर्व्याकुलंजगनमृडयंतिसुलयंतिप्रतियुगंचैतेऽवताराः प्रतिकल्पंचतुर्दशमन्वंतराशीवअसंख्या तानामुकत्वात् यथाप्रयोजनं सर्वत्रावतारइतिवोद्धव्यम् ॥ २७ ॥ २८ ॥

# श्रीविश्वनायचक्रवर्त्ता ।

विष्णुयशसो ब्राह्मणात् सकाशात् ॥ २५॥

ह्यग्रीवहंसाद्यनुक्तसर्व्वसंग्रहार्थमाह अवतारा इति । असंख्येयत्वे हेतुः सत्त्वानां शुद्धसत्त्वचिदानन्दानां निधेः सेवधिरूपस्य। तत्र दृष्टान्तः यथेति । अविदासिनः उपक्षयशून्यात् । दसु उपक्षय इत्यस्मात् सरसः सकाशात् कुरुवास्तत्स्वभावकृता निर्वाराः आवि-दासिन्यः सहस्रादाः स्युः असंख्याता इति श्रेषेगीते पुरुषाद्या प्यावताराः ख्याताः अन्ये तु न सम्यक् ख्याता वर्त्तन्ते एवेति ज्ञाप्यते । यदुक्तं प्रह्लादेन । "इत्थं नृतिर्थगृषिदेझवपावतारैलोंकान् विभावयसि हिस जगतप्रतीपान् । धम्म महापुरुष पासि युगानुवृत्तं छन्नः कठौ यदभवस्त्रि युगोऽध सत्वमिति छन्नत्वादेवासंख्यात इत्यर्थः॥ २६॥ 

अवतारामुक्ता विभूतीराह ऋषय इति ॥ २७ ॥

नन्वेषांसर्वेषां तुल्यत्वभववा अस्ति वा तारतम्यमित्यपेक्षायामाह एते चेति । एते पूर्वोक्ताः चराव्दादनुकास्य पुंसः प्रथमनिर्दिष्टस्य पुरुषस्य अंशकलाः। केचिदंशाः मत्रस्यक्रमीयराहाद्याः। केचित् कलाः कुमारतारदादयः आवेशाः। यदुक्तं भागवतासृते। "क्षानशक्ता-दिकलया यत्राविष्टो जनाईनः। त आवेशा निगद्यन्ते जीवाएवमहत्तमाः। वैकुर्गरेऽपि यथा शेषो नारदः संबकादय" इति। तथा पाचे । आविष्टोऽमृतः कुमारेषु नारदे च हरिविभुः। तथा तत्रैव। आविवेश पृथुं देशः शङ्की चलुर्भुज रति। पतत्ते कथितं देवि जामद्श्रेर्भ-हात्मनः। शत्त्वावेशावतारस्य चरितं शाङ्गियाः प्रभोरिति। कलेरन्ते च संप्राप्ते किल्कनं ब्रह्मवादिनम् । अनुप्रविदयः कुरुते वास्तुदेचो जगत्स्थितिमिति। तत्र कुमारनारदादिषु ज्ञानभिक्शक्त्यंशावेशः। पृथ्वादिषु कियाशक्त्यंशावेशः। ते चावेशा महाशक्त्या अल्प्शक्त्या स्रिति द्वित्र्याः। प्रथमाः कुमारनारदाद्याः अवतारशब्देनोच्यन्ते । द्वितीया मरीचिमन्वाद्याः विभूतिशब्देनेति भेदो हेयः । इह यो विश-तितमावतारत्वेन कथितः स कृष्णास्तु भगवान् न त्वंशः न चांशी पुरुषः किन्तु भगवान् । जगृहे पौरुषं रूपं भगवान् महवादिभिरिति पद्योक्तो यः पुरुषस्यावतारी अगवान् स एवेत्यर्थः। "अनुवादमनुक्तेव न विधेयमुदीरयेदिति दर्शनात् कृष्णस्यैव अगवस्वलक्ष्णो अधर्मः पचावा न अवन्द्याचता वात्रात्र तेन कृष्ण एवं भगवान मूलभूत इति । एतदेवः पुनः स्पष्टीकुर्वश्नाहः स्वयमिति । तेन पुरुषावतारिणो भगवतो महानारायगाद्षि कृष्णस्योत्कर्षः साधितः। अत एव छान्दाग्ये पश्चमप्रपाठके ॥ ज्यायां श्रां पुरुषः सद्वे खिल्वदं ब्रह्मः यत् प्रा-मा आदित्या इत्यासुक्षा पश्चादुपसंहतं रूष्णाय देवकीपुत्रायत्यादिना तेनात्र पुरुषादिश्योऽपि श्रेष्ठो देवकीपुत्र एव होयः। तद्व्यवतार-मा जारिक र जा उन कि का क मध्य पर्य स्ति । "स होवाचाजयोनिरवतारामां मध्ये श्रेष्ठोऽवतारः को भविता येन लोकास्तुरयन्ति देवास्तुष्टा भवन्ति । यं स्यु-च गारा अस्मात् संसारात् तरन्तीति । ननु"तन्नांशेनावतीर्णस्य विष्णोवीर्याणि शंस न इति । दिष्टचारव ते कुक्षिगतः परः पुमानंशेन त्वा शुणा म्यायन"इति । ताविमी वै भगवतो हरेरंशाविहागतावित्यादि वहुवाक्यविरोधे कृष्णास्तु भगवान् स्वयभित्येकेनैय वाक्येन सारा अर्था विश्व क्या व्यवतिष्ठताम् । अत्रोद्ध्यते । श्रीभागवतशास्त्रारमी जन्मगुर्हीध्यायोऽवं सर्व्यभगवद्वतारवाक्यानां स्चकत्वात् कृष्ण प्रम । तत्र चेते चांशकलाः पुंसः कृषास्तु भगवान् स्वयमिति परिभाषा सूत्रम् । यत्र यत्रावताराः श्रूपन्ते तत्रान्यान् पुरुषांशत्वेन सूत्रमः। पर्मान्तु र्वयं भगवत्वनिति । प्रतिहारूपमिदं सञ्बन्नीपतिष्ठते । परिभाषाः होकदेशस्थाः सक्तकं शास्त्रमभिप्रकाशयति यथा जानायात र प्राप्त । सा च शास्त्रे सहदेव पठचते नत्वभ्यासेनेति वाक्यानां कोटिरापे अनेनेकेनापि महाराजचक्रवर्तिनेत् शासनीया वेदम प्रदीप इति प्राप्तानानां तेषां वाक्यानामेक्य क्षासनीया बेदम प्रदाप राज महाराजचक्रवाचानित शासनीया अविद्या प्रदान प्राप्त क्षेत्र तेषां वाक्यानां प्राक्ष शिक्ष तेषां वाक्यानां वाक्यान भविद्यताव्यक्ष्यात् । श्रुविलिङ्गवाक्यप्रकरणस्थानसमाख्यानां सम्बाये पारदोवेल्यमधिवप्रकर्णदिति १ न्यायेन तान्येवार्था-श्रुविक्पत्वेत प्रावित्यति । न तुं तद्युरोधेनैतित्यतः श्रीधार्यकाविणवैत्रति वत्र तत्र तथेय समार्थे-क्रिकार्थिति १ न्यायेन तान्येवार्था-श्रात्य ते अभिकार प्राप्त । न तुं तद्गुरोधनेतिद्स्यतः श्रीधरंस्वामिपादेरपि तत्र तत्र तथेव समाहितमिति । न तु तद्गुरोधनेतिद्स्यतः श्रीधरंस्वामिपादेरपि तत्र तत्र तथेव समाहितमिति । न तु मत्स्यक्र्मीचवताराणां नत्रत्यं। संगमनीयानि । न तु मत्स्यक्र्मीचवताराणां नत्रत्यं। संगमनीयानि । न तु मत्स्यक्र्मीचवताराणां नत्रत्यं। संगमनीयानि । न तु मत्स्यक्र्मीचवताराणां न्तरतया स्वानाया स्वानाया एकस्येव जीवस्य कालभेदेनाल्पशक्तिकवहशक्तिकानन्तनश्वरस्वभिन्नविग्रहण्याः । मेवस् विद्वर्मस्य कालभेदेनाल्पशक्तिकानन्तनश्वरस्वभिन्नविग्रहण्याः । मेवस् विद्वर्मस्य कालभेदेनाल्पशक्तिकानन्तनश्वरस्वभिन्नविग्रहण्याः । मेवस् विद्वर्मस्य कृष्णास्य च । अञ्जाति विश्व जीवस्य कालभेदेनाल्पशक्तिकवबुशक्तिकानन्तनश्वरस्वभिक्षविग्रह्मारितं प्रतीयते । एवमेकस्यैवेश्वरस्य क्षिति दशमाद्यथा एकस्येव जीवस्य कालभेदेनाल्पशक्तिकवबुशक्तिकानन्तनश्वरस्वभिक्षविग्रह्मारितं प्रतीयते । एवमेकस्यैवेश्वरस्य क्षिति दशमाद्यथा विन्यशक्ति योगपयेनेवानन्तनित्यस्वाभिक्षविग्रह्मारित्वम् । जीवानाम्ब कामिति दशमाध्या विन्यशक्त्या योगपयेनैयानन्तनित्यसाभिन्नविद्यहधारित्यम् । जीयानामनन्तानामानन्त्यम् ईश्वरस्यैकस्यैयानन्तानासिति सर्वेद्यापकस्याचिन्त्यशक्ति प्रतीयते । प्रयोकस्यैयेवानन्त्यमाति सर्वेद्यापकस्याचिन्त्य प्रतिव्य इति । नन्यानन्यमात्रस्य चिष्ठस्त्रनो व्यापकस्य प्रतिकत्त्वम् ईश्वरस्यैकस्यैयानन्त्यमाति स्विद्यापकस्या प्रश्वरस्य प्रत्येतव्य इति । नन्यानन्यमात्रस्य चिद्यस्तुनी व्यापकस्य प्रमेश्वरस्य कि नामांशित्वमंशत्व वा परि-

### श्रीविश्वनायंचकवर्ती।

िळ बस्यैव वस्तुनो भागविभागदिसम्भवात । यदुक्तं महावाराहे । सब्बें नित्याः शाश्वताश्च वेहास्तस्य परासमः । हानोपादानरहिता नैव प्रकृतिजाः कवित् । परमानन्दसन्दिहितानमित्राश्च सब्वेतः । सब्बें सब्बे सुग्धैः पूर्णाः सब्वेदोषिवर्जिता दिति । सस्यम् ॥ तदिए तस्य मायुर्वेश्वर्यकारुगादिशक्त प्रकृतिजाः कवित् । परमानन्दसन्दिहितानमित्राश्च सब्वेतः । सब्बें सब्बे स्वाधि प्रयोदिशहे दीपान्निपुञ्जयोः । शिताद्यात्तिस्ये चान्निप्तास्यो नित्ययात्र्यके स्वाधि प्रवादिशहे दीपान्निपुञ्जयोः । शिताद्यात्तिस्य चान्निप्तास्य चान्निप्तास्य स्वाधि । शक्ते व्योद्धि प्रवाद्धि स्वाधि । स्वाधि प्रवाद्धि । स्वाधि प्रवाद्धि । स्वाधि । स

### सिद्धांतप्रदीपः।

कल्क्यवतारमाह अधिति युगसंध्यायाम् युगस्यकलेः युगस्यसंध्यायामादै।शास्तामविष्यतिकलेर्भगवात्त्युगांते इतिवस्यमाणात् कलेरंतेतथाचकलिकतयोः संधावित्यर्थः विष्णुयशसः ब्राह्मणात्सकाशात् जनिताजनिष्यते दस्युपायेषुवधाहेषुसत्सु ॥ २५॥

विदाशोऽपक्षयस्तद्रहितात्सरसः सकाशात् ॥ २६॥

विभूतीराह ऋषयइति ऋषयः भृगुविशिष्ठादयः मनवःखायंमुवप्रभृतयः देवावासवादयः मनुपुत्राः प्रियवतेश्वाकुप्रभृतयः महौजसः शिवादयःसप्रजापतयः वहाकश्यपदक्षादिभिः सहिताः प्रतेसवेहरेरेवकलाः "यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेववा तत्त्वदेवावगच्छत्वंमसते जोशसंभवमिति श्रीमद्भगद्वचनाच ॥ २७ ॥

प्रतेषुंसःपुरुषावतारस्य अंशकलाः छित्रिणोयांतीतिन्यायेन केचिदंशाः केचित्कलाः केचित्रिभृतयः केचित्र्वरूपावताराशित्वो ध्यम् प्रतेषुंसःपुरुषावतारस्य अंशकलाः छित्रिणोयांतितियागुक्तोयस्यपुरुषोप्यवतारःसभगवान्श्रीकृष्णद्दयर्थः महत्स्रष्टुरिपपुरुषस्यश्री कृष्णास्तुभगवान्वयमित्यन्वयः जगृहेपोषंरूपंभगवानितिप्रागुक्तोयस्यपुरुषोप्यवतारःसभगवान्श्रीकृष्णद्द्याद्यास्यवीर्थधन्तेमहांतिमवगर्भममोधवीर्यः सोयंत्यानुगत्भात्मन्यां केकोशंहमस्पर्जविद्यावरणि कृष्णावतारत्वंत्वतः पुमान्समित्रगस्यययास्यवीर्थधन्ते मेत्रयभगवन्त्रव्यः सर्वकारणकारणे दृत्येवश्रीपराश्चरादिभिव्योख्यातः प्रतिमत्येकाद्शेप्रसिद्धमेव "ग्रुद्धमहाविभृत्याख्येपरवद्धाणिवर्तते मेत्रयभगवन्त्रव्यकारणकारणे दृत्येवश्रीपराश्चरादिभिव्योख्यातः प्रतिमत्वान्ति प्रतिमुद्धाने स्वयंभगवान्ति विविद्यविद्यावान्ति स्वयंभगवान्ति विविद्यविद्यावान्ति स्वयंभगवान्ति विविद्यविद्यावान्ति ।। १८॥

# साम्रा टीका ।

क्रियुग की संघ्या अर्थात शेष काल में जब राजा सब दस्य प्राय होजायमें तब विष्णुयशा ब्राह्मण के यहां जगत्पति कल्की नाम से अवतीर्था होंगे॥ २५॥

से अवतामा हागा। २५॥ हे श्रोनकादि दिजगमा ! सरवितिधि भगवान के असंख्य अवतार हैं जैसा सजीवन सरोवर से हजारों छोटी छोटी भारा निकला करती हैं ॥ २६॥

कला करता है ॥ २५ ॥ अइब्रि मनु देवता महोजस मनु पुत्र और प्रजापति ये सबही श्री हिर की कला है ॥ २७॥।

यह सब पूर्वीक ऋषि मन्वादिक अनिरुद्ध पुरुषके अंश भी कला रूप हैं श्रीकृष्णतो स्वयं अगवान है यह सब अवतार शुगयुगर्भ देखों करके व्याकुछ लोकको सुखी करते हैं॥ २८॥

是是不是**是**的,但是是一个人的,但是是一个人的,但是是一个人的。

जन्मगृद्यं भगवतोयएतत् प्रयतोनरः ।
सायं प्रातर्ग्रग्न भक्तवा दुःखग्रामाद्विमुच्यते ॥ २९ ॥
एतद्रूपं भगवतोद्यरूपस्य चिदात्मनः ।
मायागुगौर्विरचितं महदादिभिरात्मिन ॥ ३० ॥
यथा नभित मेघौघोरेणुर्व्वा पार्थिवोऽनिले ।
एवं द्रष्टरि दृश्यत्वमारोपितमबुद्धिभिः ॥ ३१ ॥
अतः परं यद्यक्तमन्यूढगुगावृद्दितम् ।
अदृष्टाश्रुतवस्तुत्वात् स जीवोयत् पुनर्भवः ॥ ३२ ॥

#### श्रीधरखामी।

एतत्कीर्तनफलमाह । जन्मेति । गुह्यमितरहस्यं जन्म । प्रयतः शुचिः सन् । दुःखग्रामात्संसारात् ॥ २९ ॥

विमुच्यत इति यदुक्तं तत्र कथं देहद्वयसंबन्धे सित तद्विमुक्तिरित्याशङ्कचदेहद्वयसंवन्धस्य भगवन्मायोत्थाविद्याविरुसितत्वादेतच्छ्र चगादिजनितविद्यया तिश्ववृत्तिरुपपद्यत इत्याशयेनाऽऽह । पतिदिति पञ्चत्भः । अरूपस्य चिदेकरसस्यात्मनो जीवस्यैतत्स्थूलं रूपं शरीरं भगवतो या माया तस्या गुगौर्भहदादिरूपैविरिचतम् । क । आत्मनिआत्मस्थाने शरीरं कृतिमत्यर्थः ॥ ३० ॥

कथिमत्यपेक्षायां खरूपावरगोन तद्ध्यासत इति सदृष्टान्तमाह । यथेति । यथा वाय्वाश्रितो मेघोघो नभस्या काशेऽबुद्धि भिरक्षेरारोपितः । यथाया पार्थिवो रेणुस्तद्गतं धूस्तरत्वाद्यनिले । एवं द्रष्ट्यात्मनि दृश्यत्वं दृश्यत्वादिधमकं शरीरमारोपितिमत्यर्थ ॥ ३१॥

किंच। अतः स्थूलाद्र्पात्परमन्यद्पि रूपमारोपितमित्यनुषङ्गः। कथंभूतं तत्। यदव्यक्तं स्हमम्। तत्र हेतुः। अन्यूढगुणान्यूहितम् न्यूहः करचरणादिपरिणामः। तथा अन्यूढा अपरिणाता ये गुणास्तैन्यूहितं रचितम्। आकारिवशेषरिहतत्वादव्यक्तमित्यर्थः। एतदेव क्रूतस्तत्राह्। अदृष्टाश्चतवस्तुत्रात्। यचाऽऽकारिवशेषवद्वस्तु तदस्मदादिवदृश्यते। श्रूतये वा इन्द्रादिवत्। इदं तु न तथा। तिर्हे तस्य क्रुतस्तत्राह्। अदृष्टाश्चतवस्तुत्रात्। यचाऽऽकारिवशेषवद्वस्तु तदस्मदादिवदृश्यते। श्रूतये वा इन्द्रादिवत्। इदं तु न तथा। तिर्हे तस्य सत्त्वे कि प्रमाणं तत्राऽऽह्। सजीवो जीवोपाधिः। 'जीवो जीवेन निर्मुक्तो' 'जीवो जीवं विहाय' इत्यादी जीवोपाधी लिङ्गदेहे जीवशब्द प्रयोगात्। जीवोपाधितया कल्प्यत इत्यर्थः। ननुस्थूलमेव भोगायतनत्वाज्ञीवस्योपाधिरस्तु किमन्यकल्पनयेत्यत आह्। यचस्मात्सूक्ष्मा त्युनर्भवः पुनर्जन्म। उत्क्रान्तिगत्यागतीनांतेन विनाऽसंभवादिति भावः॥ ३२॥

# दीपनी।

जीवो जीवेनेति एकाद्शस्कन्धीयपश्चविंशाध्यायस्य षट्त्रिशस्त्रोकः ॥ उत्क्रान्तिगत्येति । उत्क्रान्तिगतिर्देहत्यागः तथा गतीनां देहान्तरासाम् असम्भवात् स्थूलस्य ध्वस्तत्वात् । गम्यन्ते प्राप्यन्ते इति गतयः । इति व्याख्यालेशः ॥ ३२ । ३३ ॥

### श्रीवीरराघवः

अवतारकीर्चनादिफलमाहजन्मगुद्यमिति यःकश्चिष्ठरोभगवतः एतज्जन्मगुद्यमवताररहस्यम् सायंप्रातः समाहितचिते।भक्त्या गृगान्कीर्चयन्दुःख जाताद्विमुच्यतेसंसारान्मुकोभवतीत्पर्थः जन्मगुद्यमित्यनेनभगवज्जन्म न जीवजन्मवत्कर्ममूलमपितुखसंकल्प-

मूलिमत्यभिवतम् ॥ २८॥

पूलिमत्यभिवतम् ॥ २८॥

तदेवद्शीयिष्यन्रूपप्रसंगान्नकेवल मवतीर्शमेवरामकृष्णाद्याख्यं भगवतोरूपमितृपरिदृश्यमानंप्रकृति गुगावेषम्यसूलमहदादिकृतं तदेवद्शीयष्यन्रूपप्रसितिविदातमनः ज्ञानस्यरूपस्यातपवारूपस्यामूर्तस्यरूपमगवतः मायागुगोर्गुगापरिगामरूपैमंहदादिभि जगद्यितद्रपमित्याहप्तद्रूपमितिविद्यमानंजगदातमकंरूपंचिद्वित्त्वम्भातमित्यनेन रूपशब्देनचजगतोभगवद्रपत्वसुपपादितंशरीरस्या रात्मन्यात्रारभूतेस्वस्मित्रेतरपरिदृश्यमानंजगदातमकंरूपंचिद्वित्त्वम्भातमित्यनेन रूपशब्देनचजगतोभगवद्रपत्वसुपपादितंशरीरस्या रात्मन्यात्रारभूतेस्वस्थितत्व ॥ ३०॥

त्मनोद्यायत्वानयमातः ॥ २० ॥
त्मनोद्यायत्वानयमातः ॥ २० ॥
त्मनोद्यायत्वानयमातः ॥ २० ॥
त्मनोद्यायत्वानयमातः ॥ २० ॥
त्मनोद्यायत्वानयमातः । त्मनावानयमात्वान्यत्वेसतिजीवानां केवलंदवीहंमनुष्योहिमत्यिममानिनीभ्रमप्वेत्याहयथोतियथामे
त्मन्धान्याद्याकाशेऽबुद्धिभिराकाशयाथात्म्याविद्धिरारोपितायथाच पृथिव्याः संबंधीरण्धिलिर्गलेतद्याथात्म्याविद्धिरारोपितायथम्
त्मस्मूहानमस्याकाशेऽबुद्धिभिराकाशयाथात्म्याविद्धिर्द्रप्रतिवेद्दर्थत्वमारोपितंद्वादिश्रारीरजातमहं ममाभिमानिविषयत्वेनारोपितमित्यर्थः अतोनदेवादि
त्मस्मूहानमस्यावात्मयाथात्मयाविद्धिर्द्रप्रतिवेद्यादिशरीपतंद्वादिश्रारीरस्यतद्भिमानिजीवेनधार्यत्वानं प्रतिक्रपत्वमस्त्येवतथापि"यआत्मनितिष्ठन्यस्यात्याद्यातंजीवस्वक्रपमितिभावः यद्यपिष्रमपुरुषधार्यत्वानमुख्यधारकत्वपरमात्मनिष्ठभेवति तंप्रत्येवद्वाद्यवेतनजातं मुख्यकपदेद्वात्मनो 
त्याद्यारीरिमत्याद्युक्तरीत्याजीवस्यापिषरमपुरुषधार्यत्वानमुख्यधारकत्वपरमात्मनिष्ठभेवति तंप्रत्येवदेवाद्यवेतनजातं मुख्यकपदेद्वात्मनो 
[ ३५ ]

### श्रीवीरराघवः

रुभयोरिपरमपुरुषधार्यत्वक्षानंभ्रमरूपंत्रकृतिपुरुषयोखद्यात्मकत्वक्षानं प्रकृत्यादौचात्मामिमानः स्वातंत्र्याभिमानः प्रकृतेः प्रसंगादात्मे कथार्यत्वाभिमानश्चाबुद्धिकृतद्दयभिप्रायः॥ ३१॥

नजुददयधमस्तिस्मित्रारोपितश्चेत्सजीवः कीदराइत्यत्राह्अतइतिअतः अचिदात्मकद्दयप्रपंचात्मरंविलक्षगांतत्त्वंसजीवः परत्वमेव दर्शयितुंविशिनष्टिअव्यक्तंवाह्यद्रियद्रेष्ट्रमशक्यं कुतद्दयपेक्षायांद्रेतुरदृष्टाश्चतवस्कत्वादिति तत्रहेतुमाहअव्युदगुगावृद्दितमितिव्यूदैगुंगे वंद्रधाविमक्तेर्गुगोवृद्दितंस्यूलीकृतंयस्मभवतितद्व्यूदगुगावृद्दितम् अनेनाचिद्वचावृत्तिः कारगादशायामस्यूलमचेतनंकार्यदशायांदिव्यूदैगुंगाःसत्त्वादिभिश्चान्वितंस्यूलीभवतिनतथेत्ययः अतपवाद्दष्टाश्चतवस्कत्वात्तदन्यार्थत्वात्तत्रद्रष्टंकार्याविस्थितमचिद्द्रव्यंश्चतंतुकारगावस्थम् 'अचेतनापरार्थाचनित्यासततिविक्षयेत्यादिशास्त्रैःश्चतंतदुमयविलक्षगावस्तुत्वाद्व्यक्तम्'अव्यक्तेग्यमीचत्योयमीवकार्योयमुच्यतद्दितिह्नभग वतागीयते एवंभूतंयद्वस्कसजीवःयःपुनर्भवः प्रकृतिसंगात्पुनः पुनर्जन्मभागित्यर्थः यत्पुनरितिपाठेयतेगयत् संबंधात्पुनर्भवस्ततः परिमत्यन्वयः॥ ३२॥

### श्रीविजयध्वजः।

फलमाह जन्मेति प्रयतःप्रकर्षेणिनिजितेद्रियप्रामोयोनरोजन एवमुक्तप्रकारेण जन्मरहस्यंसायंप्रातभेक्त्वागृणन्पठन्सांसारिकदुः स्वसमूहात्मुच्यतइत्यन्वयः॥ २९ ॥

इदानींप्रतिमारूपमाह एतदिति मायागुगौःप्रकृतिविकारैः महदहंकारादिभिरुपादानकारगौः आत्मनिसर्वगतेहरिगाविरचितमेतत् जडंब्रह्मांडमरूपस्यप्रकृतिविकृतिरूपरिहतस्यचिदात्मनः केवलज्ञानखरूपस्यभगवतोरूपंप्रतिमास्थानीयहिहेतोर्यस्माज्जडंतस्मात्प्रतिमैव नसाक्षात्स्वरूपंचिदेकरूपस्यभगवतोमायाकिएतसत्त्वादिगुगौर्भहदाद्याकारेगापरिगातैरेतत्प्रतीयमानं विराट्रूपमात्मनिचिद्रूपेकलिपतम् अतएवतन्मिण्याअतिस्मिस्तद्बुद्धेरितियैःकैश्चिदुच्यते तन्नयुक्तं प्रमागाविरोधादित्यस्मिन्नर्थेवाहिः॥ ३०॥

प्रतिमात्वकरणनामंतरेगासाक्षाद्रपत्वं किनस्यादित्याशंक्यसाभ्रांतिरितिसोदाहरगामाह यथेति यथामेघौघानभस्यारोपितामेघौघान् दृष्ट्वायमाकाशइतिकरण्यंतिविवेकशून्याः यथाअनिलेवायौपार्थिवोरेणुरारोपितः वायुनोद्भ्यमानम् ध्वेमुखंरेणुंदृष्ट्वाऽयंवायुरिति आकाशवा- य्वोश्चाश्चुषत्वाभावाद्भांतिरेवसा एवंद्रप्टरिसर्वगेभगवितप्रतिमांदृष्ट्वामनुष्यदृष्ट्यगोचरेअबुद्धिभरश्चेभ्रांत्यादृश्यत्वंजडरूपत्वमारोपितंकिष्प- तंतस्मात्तदृश्चांतमतोनसाक्षाद्रपं प्रतिमैवेतिभावः ॥ ३१ ॥

पवंहरेर्वासुदेवादिपरमंरूपंत्रहांडाख्यंप्रतिमारूपंचिनरूप्यजैवंरूपमाह अतइति यज्जैवंरूपमतउक्तयोःजडेश्वररूपयोः परंयदव्यक्तंसूक्षम पवंहरेर्वासुदेवादिपरमंरूपंत्रहांडाख्यंप्रतिमारूपंचिनरूपये विक्षान्य प्राण्यापृश्चिपश्चाददृष्टाश्चतवस्तुत्वादश्चतामतानुपासितान परोक्षितपरमा मन्यूढगुर्गावृंहितम् अनादिकालात्कदाचिद्य्यनपगतसत्त्वरज्ञस्तमोगुर्गापृश्चिपश्चाद्यश्चितवस्तुत्वादश्चतामतानुपासितान परोक्षितपरमा तमस्यूरुपावृंहितम् अत्याद्यक्तं यद्वानिव्यक्तं रूपादिव्यक्ति कारणसाधनैः शून्यमञ्चूरुपानिव्यक्तं गुर्गानांवृंहितंकार्ययस्मिन्तद् अतःकार्यरूपात् परंव्यतिरिक्तं यद्व्यक्तं यद्वानिव्यक्तं स्पासिद्धोजिवोयद्यसात्पुनभेवतीतिपुनभेवः देहादिप्रपंचलक्ष्यणः संसारोयस्माद्भव-व्यक्त्यात्वाविव्यक्तं स्पासिद्धोजिवोयद्यसात्पुनभेवतीतिपुनभेवः देहादिप्रपंचलक्ष्यणः संसारोयस्माद्भव-तितिवत्वत्कारणमितियद्वचाख्यानं तद्दद्वप्रश्चतवस्तुत्वादितिहेत्विभिधानंविद्ययतेतिस्मन्पक्षेयदद्वप्रदिविद्येषगौर्विशिष्टंतद्वस्तुमूलकारगा-मितिवक्तव्यं प्रकृतानुपयुक्तं चअत्रदेवादिप्रपंचस्यिमध्यावाचिषदंप्रक्षेप्यमतोयित्किचिदेतत् ॥ ३२ ॥

### क्रमसंदर्भः।

जन्मेति । स्पष्टम् ॥ २९ ॥ तद्वमेतानि साक्षाद्रपाग्याविष्टरूपाग्ति चोपदिश्य उपासनार्थं शास्त्रेगा भगवत्यारोपितं रूपमुपदि-शति एतद्रूपमिति । अरूपस्य प्राकृतरूपासम्बद्धस्य मायागुगीर्व्वरचितमेवैतज्ञगदाकारं रूपम् । तच्चात्मिनि जीव एव विरचितं तत्स-म्बन्धतयैव किल्पूतं न तु परमेश्वरसम्बन्धतयेत्यर्थः । असङ्गादनासङ्गाचेति भावः ॥ ३०॥

म्बन्धतयव काल्पत न तु परमश्वरसम्बन्धतयत्ययः। जातात्र क्षेत्र विद्यादिना च तथा वर्णायितव्यम् । उच्यते अङ्गदृष्ट्यपेक्षया तदुपा-ति कथं तस्यतद्रूपमित्युक्तम् । पातालमेतस्य हि पादमूलमित्यादिना च तथा वर्णायतव्यम् । उच्यते अङ्गदृष्ट्यपेक्षया तदुपा-सनार्थं तद्ध्यासेनैवेत्याह यथेति ॥ ३१ ॥

तस्य यथा स्थूलं रूपं तथा सूझमपीत्याह अतः परमिति। अतः स्थूलाद्रूपात् परम् अन्यदिष यद्व्यक्तं सूझमं तस्य रूपम्। सूझमत्वे हेतुः अद्वर्द्धति। अद्युलं रूपं तथा सूझमपीत्याह अतः परमिति। अतः स्थूलाद्रूपात् परम् अन्यदिष यद्व्यक्तं सूझमं तस्य रूपम्। सूझमत्वे हेतुः अद्वर्द्धति। अद्युलं त्यादिन् व्यवस्थिति। यद्व्यक्तादेव रूपा देतोः यदंशावेशेनेत्यर्थः। स जीवोऽपि पुनर्भवो भवति पुनः पुनर्ज्जन्मादिकं लभत इत्यर्थः। तद्पि मायागुगौव्विरचितमिति पूर्वेगाः द्वाः। पूर्विवदुपासनार्थमेवेदं रूपमारोपितमिति भावः। वस्यते च"अमुनी भगवद्वृषे मया ते ह्यनुविग्राते। उभे अपि न गृह्णन्ति मार्यान् मृद्दे विपश्चितं इति ॥ ३२॥

### सुबोधिनी

कृष्णावतारप्रयोजनंनोक्तमितिस्वस्याद्यानदोषंनिवारयश्ववताराणां दुर्श्वयत्वमाह् जन्मगुद्यंभमवतइतिभगवतः कृष्णस्यजन्मगुद्यंगो-प्यंनप्रकटतयावक्तव्यामित्यर्थः । तर्हिकथंनिस्तारदृत्याशंक्याह् यप्तदिति प्तद्वतारक्षपंसामान्यतोऽस्मदुक्तंप्रयतः सावधानःशुचिःशुद्धः सायंप्रातभक्तवास्तोत्रपाठंकुर्वन्दुःस्वप्रामात्दुःस्तसमूद्दाद्विशेषेणमुच्यते । जन्मरहस्यक्षानाभावेपिकेवलंजन्मकीर्तनमात्रेणापिसर्वदुःस्तिनृन् तिरित्यर्थः । श्रद्धयागृह्णन्मुच्यतप्व ॥ २९ ॥

पवंपुरुषावतारं स्वांशावतारेः सपिकरं निरूप्यतस्यविचारमाह पतद्रूपिमत्यादिपंचिभः पतद्रूपंत्रह्मां डात्मकं मगवतो रूपंपूर्णं ब्रह्मण्यविस्त्योगिहितस्य सत्योगिहितस्य सत्योगिहितस्य सत्योगिहितस्य सत्योगिहितस्य सिर्मे विद्यात्म निर्मे निर्मे

नेजुकथमन्यस्मिन्नन्यधर्माध्यारोपइत्याशंक्याह । इष्टांतं । यथानभिसमेघौघइति वस्कतस्त्वाकाशोऽहश्यः ततश्चतदाधारत्वेनकथं मेघाहश्याभवेयुः । येषामिपमतेहश्यस्तेषामापमतेनाकाशमेघाः किन्तुवायावेव तत्रयथान्यत्रस्थितानामन्यत्रप्रतीतिः अत्रविशिष्टप्रतीति रारोपितेनसहतथानास्तीति दष्टांतांतरमाह । रेणुर्वापार्थवोऽनिलद्दति यथावात्यादीत्विद्विशिष्टरेणुप्रतीतिः ततोश्चांताःवात्याद्दीतेरणुं मन्यंतेवस्तुतस्कपार्थिवोरेणुः ॥ ३१ ॥

एवंप्रपंचेजडबुद्धिर्माताभगवद्धुद्धिर्मुख्योतिनिरूप्यजीवेऽपिभगवद्बुद्धिरेवमुख्यानजीवबुद्धिरितिनिरूपयितअतःपरिमितिअतोब्रह्मांडिवय्र हात्सुर्हमंसर्वेदियागोचरम्अव्यक्तापरपर्यायंकरचरणाद्याकारेणापरिग्रातेर्गुणेःस्वाभाविकैव्याप्तम् अस्तीतिसंवंधःतत् किमित्याकांक्षायांस जीवपवजीवजडभगवद्वचितरेकेगाचतुर्थपदार्थस्याभावात्ननुतथापिजीवत्वंकुतः अतआहअहष्टाश्चतवस्कत्वादिति यदितज्ञांस्यात्रहर्यं स्यात्यदिवाभवगद्भूपंस्यात्वेदादीश्चतंस्यात् । नवानिः स्वभावंशश्चीग्वत्वस्कत्वात् तस्मात्पारिशेष्याज्ञीवपवकेचनतंजीवोपाधिमन्यं तेतथाप्राप्तविवेकेनभगवद्वचितिरुक्तर्यज्ञीवस्याभावात्कस्योपाधिःस्यात्त्रसमाज्ञीवपवसः किंचयस्मात्रपुनर्भवः पुरागोलोकेचैवं प्रतीयते पूर्वमयदेवःस्थितः इदानीमनुष्यत्वमापन्नइति अतः पुनर्भवान्यथानुपपत्त्याभगवद्वपाधिः सूक्ष्मोजीवः कश्चिद्स्तीतिमंतव्यम् ॥ ३२ ॥

### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

पतत् कीर्त्तनफलमाह जन्मेति। गुह्यमितरहस्यं यो गृगान् कीर्त्तयन् भवेत्॥ २९॥

नतु पातालमेतस्य हि पादमूलमित्यादिना द्वितीयस्कन्धादौ योऽयं विराङ्क्ष्पी भगवान् प्रथमसुपास्यत्वेनोक्तः स कथमवतारमध्ये न गियातस्तत्राह । एतत् समष्टिव्यष्टिविराडात्मकं जगिचदात्मनश्चिन्मयविष्रहस्य अत्यवाक्ष्पस्य प्राकृतक्ष्परहितस्य भगवतो क्षपं स्थूलं शरीरं किन्तु मायागुर्शोमहत्तत्त्वादिभिः पृथिव्यन्तैस्तत्त्वीर्वरिचितम् आत्मिन स्वस्मिन्नेतदन्तर्योमिन्यधिष्ठाने स्थितमित्यर्थः । अतो विशु-द्वसत्त्वरूपमत्स्यकुम्माद्यवतारमध्ये मायिकरूपी विराडेष न पठित इति भावः ॥ ३० ॥

कस्मिन् किमिवेत्यत आह । यथा नमसि आकाशे मेघसमूहः । अनिले च पृथ्वीविकारो रेणुस्तथैव आत्मिन एति इराड् रूपिमिति पूर्वित्यीवान्वयः । तेन मञ्चस्थः पुरुषो यथा मञ्ज उच्यते तथा भगवित स्थितो विराडिप भगवानुच्यते इत्यर्थः । एवमेवाधिष्ठितधम्मों इश्यत्वमिप द्रष्टिर भगवत्यदृश्येऽपि आरोपितिमित्यर्थः । अबुद्धिभिः अल्पबुद्धिभिः । यथा अदृश्ययोरिष नभोऽनिलयोनीलं नम इति धूसरोऽनिल इति मेघरेणुधम्मों नीलिमधूसर्त्वलक्ष्मणं दृश्यत्वमारोपितं तत्रश्च भगवानयं विराट् दृश्यः प्रथमदृशास्थैयोगिभिराराध्य इत्युपपन्नम् ॥ ३१ ॥

तथा स्थूलं रूपं भगवदूपत्वेनोक्तमि योगिमिरुपास्यमिप मायागुणैविरिचतं तथेव सूक्ष्मिपि रूपम् अमुनी भगवदूपे इत्यनेन भगवन्त्र तथा स्थूलं रूपं भगवदूपत्वेनोक्तमिए यागिमिरुपास्यमिप मायिकमेवेत्याह । द्रृपत्वेन प्रयुक्तमिप कर्णौ दिशः श्रोत्रममुष्य शब्द इति । सर्व्वात्मनोऽन्तः करणां गिरित्रमित्याद्युक्तेयोगिमिरुपास्यमिप मायिकमेवेत्याह । द्रृपत्वेन प्रयुक्तम्यत् अव्यक्तं सूक्ष्मम । तत्र हेतुः । अव्युद्धाः करचरणादित्वेनापिरणाता ये गुणास्तैवृद्धितं रचितम् आकारिवशेषरिति । मत्यर्थः । पत्रदेव अदृष्टाश्चतवस्तुत्वात् । यचाकारिवशेषवद्धस्तु तद्ममदादिवहृद्यते श्रूयते वा इन्द्रादिवत् इदन्तु न तथा । नतु तस्य सत्त्वे कि प्रमाणं तत्राह । स जीवः जीवोपाधिः ।" जीवो जीवेन निर्मुक्तो जीवो जीवं विद्याय चेत्यादौ जीवोपाधी लिङ्गदेहे जीवशब्दम्यत्वे कि प्रमाणं तत्राह । स जीवः जीवोपाधिः ।" जीवो जीवेन निर्मुक्तो जीवस्योपाधिरस्तु किमन्यकल्पनया इत्यत आह् । यद्यस्मात् योगात् जीवोपाधितया कल्प्यत इत्यथः । नतु स्थूलमेव भोगायतनत्वात् जीवस्योपाधिरस्तु किमन्यकल्पनया इत्यत आह् । यद्यस्मात् स्थूलन्यान्ति प्रमात् पुनर्भवः पुनः पुनर्जन्म उत्तकान्तिगत्यागतीनां तेन विना असम्भवादिति भावः । तेन च समष्टिव्यस्थितिराजां जीवत्यात्तरस्थूल-सूक्ष्मात् पुनर्भवः पुनः पुनर्जनम् उत्तकारित्येव न तु साहिजकमिति भावः । यदुक्तम् । "विराट् हिर्पयगर्भश्च कारणं चेत्युपाधन्त्वात्ति पर्योमीयिकत्वात् तत्व चेश्वरत्वमारोपितमेव न तु साहिजकमिति भावः । यदुक्तम् । "विराट् हिर्पयगर्भश्च कारणं चेत्युपाधन्त्वः यद्विभिर्द्धानं तुरीयं तत् प्रचक्षात्वः । अत्रापि वक्ष्यते। "अमुनी भगवद्वपे मया ते ह्यनुवािते। उमे अपि न गृह्णनित मायान्यः । र्वत्विविद्यति । ३२ ॥ सृद्धिति विपश्चितः विद्यति ॥ ३२ ॥ सृद्धिति विपश्चितः विपश्चितः विद्यति ॥ ३२ ॥

यत्रेमे सदसदूषे प्रतिषिद्धे स्वसंविदा । अविद्ययात्मिनि कृते इति तद्दह्मदर्शनम् ॥ ३३ ॥ यद्येषोपरता देवी माया वैशारदी मितिः। सम्पन्नएवेति विदुर्महिम्नि स्वे महीयते ॥ ३४ ॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

अवतारकीर्तनादिफलमाहजन्मेति जन्मेतिकर्भोपलक्षणम् उक्तप्रकारंजन्मकर्मरहस्यमित्यर्थः गृण्णित्युपलक्षणंजन्मकर्मगुह्यश्रवण् मननादेः दुःखत्रामात्संसाराद्विमुच्यतेमुक्तोमवति उक्तंच श्रीमुखेनापि "जन्मकर्मचमेदिव्यमेवयोवेत्तितत्त्वतः त्यक्त्वादेहंपुनर्जन्मनैति मामेतिसोऽर्जुनेति ॥ २९ ॥

अथैवंदर्शितस्यभगवज्ञनमकर्मरहस्यस्यवेदगुद्यत्वं कविश्वेयत्वंचवस्यन्प्रसंगाज्ञीववंधमोक्षप्रकारमाह पंचिमः स्रोकैः ननुजन्मगुद्यं गृगान् योदुः खत्रामाद्विमुच्यतेतस्यतावत्वंधः कथमस्तित्यतभाह पतद्वपिमिति चिदात्मनः जीवस्यपतद्वपम् इदंस्थूलंशारीरम् भगवतः प्रकृतिगुगौर्महदादिभिविरचितम् आत्मिनितत्स्थानेकृतम् अनादिकमवश्येनजीवेन आत्मतयास्वीकृतमितिफलितोऽर्थः ३०॥

नन्वनात्मात्मतयाकथंस्त्रीकृतइत्यतआह् यथेति वाय्वाश्रितोपिमेघः यथाअबुद्धिभिनेभिसआरोपितः यथावाअनिलेवायुस्थानेपार्थिवो

रेणु:रेणुसंघः आरोपितः एव प्रज्ञानादेवा ध्वुद्धिभिर्द्र ष्टरिहश्यिवलक्षगोजीवेहश्यत्वंशरीत्त्वम् आरोपितम् ॥ ३१॥

अतः इतिअतःस्यूलशरीरात्परमुत्कृष्टम् अधिककालस्थायि अव्यक्तमस्क्षमम् अव्यूढैः सूक्ष्मैर्गुगौः गुगाकार्थैः एकादशेद्वियपंचतन्मात्रैर्वृहितम् रिचतम् यत्येनानुवर्त्तमानेनपुनर्भवः पुनःपुनर्जन्मभवित तद्गिसजीव्हत्यबुद्धिभः स्थूलदेहपरित्यागग्रहणांतराले आत्मत्वेनारोपितिमिति पूर्वेगौवान्वयः तहहेतुमाह इतरेतरपृथक्तयाऽदृष्टाश्रुतानिवस्तूनि आत्मानात्मपरमात्मस्करूपाणियैस्ते अदृष्टाश्रुतबस्त
यस्तेषांभावस्तत्वं तस्माददृण्टाश्रुतवस्तुत्वादित्यर्थः एतेनयेषांदेहदेहिज्ञानंनास्तितेषां परमात्मज्ञानंनास्तीतिकिमुचक्तव्यम् किचानेनोभय शरीरमूलभूतायास्त्रिगुणायाः प्रकृतेः संगश्चोकः तदित्यंतत्त्वत्रयाविवेकाद्नादि मायापरियुक्तरूपत्वाज्ञीवात्मनोवंधइतिकलितोऽर्थः॥ ३२॥

### भाषा टीका।

जो नर सावधान होकर यह भगवान का गुप्त जन्म को सायंकाल मे प्रातः कालमें पाठ करताहै सो दुःख समूहसे छूटजाताहै २९। यह रूप चैतन्य खरूप प्राफृत रूपरहित भगवान ने महदादिक माया गुगों से अपने खरूप में खयं हीरचा है ॥ ३०॥

जैसे आकाश में मेघ समूह और पवन में पृथिवी का रेणु आरोपित किया हो तैसे द्रप्टात्मा के विषय में अज्ञानी पुरुषों ने हर्य

त्व आरोपित किया है ॥ ३१ ॥ इस अचिद्रूप देहादिक से भिन्न इंद्रियों से अप्रकट अष्टुष्ट अश्रुत बस्तु के होने से बहुधा विभक्त गुगों से स्थूलिकया हुआ जो न होय जिसका फिर २ जन्म होता रहता है सोही जीबतरव है ॥ ३२ ॥

# श्रीधरखामी।

तदेवमुपाधिद्ययमुक्ता तदपवादेन जीवस्य बहातामाह । यहेति । यत्रयदाइमे स्थूलसूक्ष्मे रूपे स्वसंविदा श्रवगामननादिभक्त्वा खरूप सम्यग्हानेनप्रतिषिक्वे भवतः । ज्ञानेन प्रतिषेधार्हत्वे तमेव हेतुमाह । अविद्ययाऽऽत्मनि कृते किल्पते इति । हेतोः । तद्रह्मः । तदा जीवो ब्रह्मेव भवतीत्यर्थः । कथंभूतम् । दर्शनं ज्ञानैकस्वरूपम् ॥ ३३ ॥

तथाऽपि भगवन्मायायाः संमृतिकारगाभूताया विद्यमानत्वात्कथं ब्रह्मता तत्राऽऽह ॥ यदीति । यदीत्यसंदेहे संदेहवचनम् । 'यदि वेदाः प्रमागांस्युः' इतिवत् । वेद्यारदी विद्यारदः सर्वज्ञ ईश्वरस्तदीया देवी संसारचक्रेगा क्रीडन्ती एषा माया यद्यपरता भवति किमित्युपरता भवेत्तताऽऽह । मितिविद्या । अयं भावः । यावदेषाऽविद्यात्मनाऽऽवरगाविक्षेपौ करोति तावक्षोपरमति । यदा तु सेव विद्या किमित्युपरता भवेत्ततातदा सदसद्भपं जीवोपाधि दग्ध्वा निरिन्धनाग्निवत्स्वयमेवोपरमेदिति । तदासंपन्नो ब्रह्मस्वरूपं प्राप्त एवेति हिविद्दस्तत्वज्ञाः क्रियतः । यद्येवं स्वे महिम्न परमानदस्वरूपे महीयते पूज्यते विराजत इत्यर्थः ॥ ३४ ॥

प्रतः। यथा जीवस्य जन्मादि माथा, एवमीश्वरस्यापि जन्मादि मायेत्याह । एवमिति । अकतुः कमीशि । अजनस्य जन्मानि ।

हत्पतरन्तयोमिशाः ॥ ३५ ॥ तर्हि जीवादिश्वरस्य को विशेषः । स्वातन्त्र्वमेव विशेष इत्याह । स वा इति । षाङ्गींकिमिन्द्रियषङ्घर्गिधषयं जिल्लाते दूरादेव गन्धवद् गृह्गाति नतु सज्जत इत्यर्थः । कुतः । षड्गुगोशः षडिन्द्रियनियन्ता ॥ ३६ ॥

एवं जन्मानि कर्माशिह्यकर्त्तुरजनस्य च। वर्णयन्तिस्म कवयोवेदगुद्यानि हृत्पतेः ॥ ३५॥ स वा इदं विश्वममोघलीलः सृजत्यवत्यत्ति न सज्जतेऽस्मिन् । भूतेषु चान्तर्हित आत्मतन्त्रः षाड्वर्गिकं जिघ्रति षड् गुगोहाः ॥ ३६ ॥

द्यीपनी।

किमिति किं रूपेगोत्यर्थः । विद्यति विद्यारूपा सतीत्यर्थः ॥ ३४ । ३५ ॥

इन्द्रियषड्वर्गः ज्ञानेन्द्रियपञ्चकं मनश्चेति ॥ ३६—४३ ॥

### श्रीवीरराघवः।

तिहिकेनोपायनप्रकृतिमूलसंशकपुनर्भवस्यानेवृत्तिः। कीदशंवानिवृत्तपुनर्भधजीवरूपामत्यत्राह यत्रेतिद्वाश्यामसद्सन्छन्दीकार्यकारण परी"असद्वाइदमप्र आसीत्ततोवैसद्जायत"इतिप्रयोगात्कारणावस्थाश्वप्रत्यवद्शाततश्चायमर्थःयत्रात्मनीमेऽचिद्गतंसदसद्रपेउत्पत्तिविना-शाबित्यर्थः अविद्ययाऽक्षानेनात्मिनिकृतेआरोपिते च तस्मिन्नात्मिनस्वसंविदा स्वशरीरकपरमात्माविषयसम्यग्ज्ञानेनप्रतिषिद्धानिवृत्तेभवतः अनेनखसंविदेवपुनर्भवनिवृत्तिहेतुरितिद्धितम् इतिशब्दःप्रकारवाचीइत्येवंविधंखसंविश्विवृत्तोत्पत्तिविनाश्मित्यर्थः प्रकृतिसंगवियुक्तकेवलपरिशुद्धारमस्वरूपक्षानंयत्त्रद्धगुगातोवृहत्वाद्रह्मशब्दबाच्यममुक्तात्मस्वरूपं"ब्रह्मभूयायकल्पते'ब्रह्मगोहिप्रातिष्ठाह-मितिमुक्तात्मन्यपिब्रह्मशब्दप्रयोगोद्दश्यते ॥ ३३ ॥

॥ यदीति ॥ यदियदाएषाचैशारदीमहदादिकार्यमुखेनविपुलाएषामायातन्मूलामतिरभिमतिः देहात्माभिसानादिरूपाचोपरतानिवृत्ता मदित उपरितरत्रसंबंधविरहः "नित्यासततविकियागौरनाद्यतवतीतिमाया शब्द्वाच्यायाः प्रकृतेनित्यत्वावग्रमेनविनाशायोगात्एवत्य स्यतदेत्यादितदैवसंपन्नेपरमात्मप्राप्तचाअभिव्यक्तेस्वेखकीयेमहिसिगुगाष्टकरूपेमुक्तेश्वर्यात्मके महिग्निमहीयतेमहपूजायांमहशब्दादाचा रक्यजंताःकर्भरायात्मनेपदंस्वकीयमहिमलब्धाहेतुनापरमव्योमवासिभिर्बहुमतोभवतीतिविदुःमुक्तात्मस्कूपयाथात्म्यविदः यद्वा संपन्नइति प्रथमांततयाछेदेखमहिसिमुक्तैश्वर्यसंपन्नःतलुब्धासमृद्धः महीयतहतिनिरवशेषत्वेनप्रकृतिसंवंधतत्कार्यनिवृत्ताचाविर्भूतगुणाष्टकयुक्तःपर ब्रह्मानुभवन्परमञ्जोमनिवासिभिर्बहुमतोवतिष्ठतेइत्यर्थः अपहतपाप्मत्वादिगुगाष्टकमिहिम्न "प्रकार्यतेनजन्यंत"इत्यादिशास्त्रेश्यःस्वाभा

विकत्वावगमात्स्वमहिम्नीत्युक्तंभवति ॥ ३४॥

तदेवंग्रसकानुग्रसकतयाजीवस्थरूपंस्थितम्अथपरमप्रस्कतस्यभगवज्ञन्मनोविलक्ष्यात्वमाह। एवमितिअजनस्यजीववत्कमीयत्तजनन रहितस्याकर्त्तुस्तद्वदेवपुग्यपापात्मककर्मगहितस्यहृत्पतेः हृदयकमलमध्यावस्थानेनपातिसर्वाशिभूतानिनियमयतीतिहृत्पतिः तस्यसर्वीत रात्मनोभगवतः प्रवमुक्तविधानिजन्मानिकभीशिकवयोवेदगुह्यानिवर्श्ययेतिकवयोशानाधिकाः "नमुह्याचितयन्कविरितिप्रयोगात्वेदगुह्या निवेदरहस्यानिवर्णायंति अजायमानोबहुयाविजायते तस्यधीराःपरिजानंतियोनिमित्यादिहिवेदतात्पर्यविषयविभागप्रदर्शन पूर्वकंयाहशा-निभावयतितादशानिवर्शायंति तत्रह्यजायमानइत्यनेनजीवस्ययाकर्मायत्तोत्पत्तिः सेश्वरस्यप्रतिषिध्यतेवहुधाविजायतइत्यनेनाकर्मायत्ता नहिंस्याद्भृतानिपशुमालभेतेत्यादिचद्विधिनिषेधयोभिन्नविषयत्वावश्यंभावात्तयोरेकविषयत्वे स्वसंकलपमुलाचोत्पत्तिवीं व्यते क्तरव्यावातापक्तः पवमुत्सर्गापवादसामान्यविशेषन्यायादिभिनिर्गोतव्यमिममर्थकवयपवजानंतीत्यभिप्रायेगोक्तंतस्यधीराः परिजानंतियो निमितितस्यप्रस्कतस्यभगवतीयोनिमधिष्ठेयंशरीरंधीराः परिजानंतिअकर्मायत्तत्वस्वेच्छोपात्तत्वाजहत्स्वभावत्वादि रूपेगाधीराएवजानंती-त्यर्थः अकर्तुःकर्माणिवेदगुद्यानिइत्यनेनकमेविधिनिषेधवादिन्यो "निष्कियंनिष्कलंयस्यचैतत्कर्मसर्ववेदितव्य"इत्यादिश्वत्योपकविभिनि-र्मात्वयोविषयविभागोद्रष्टव्यः इतिस्विचतमइदंसगुणनिर्गुणसशरीराशरीर विकाराविकारजीवब्रह्मभेदाभेदश्चितिवेषयविभागस्याप्युपल-स्याम एवं चजन्मकर्भगु गाशिरविकारभेद्पतिपादकानां वेदांतवाक्यानां तत्प्रतिषेधपरैर्वाक्यैर्वाध्यत्वं मृषावादिभिक्कमनाद्रशाियमितिभा-स्रायाः वार्त्यवार्द्यवार्द्यक्तिः "यद्वद्यागोगुणशरीरविकारभेदकर्मादिगोचरिषयः प्रतिषेधवाचः अन्योन्यभिन्नविशयानविरोधगंधमहिति वात्रभागाः प्रतिवेधवाध्या"इतिअकर्तुःकर्माणिवेदगुद्यानिइत्यनेनभगवचेष्टितानांजगद्वचापार रूपाणांजीवचेष्टितसजातीयत्याचितयितुम तम्रविध्यः प्रतिवेधवाध्या"इतिअकर्तुःकर्माणिवेदगुद्यानिइत्यनेनभगवचेष्टितानांजगद्वचापार रूपाणांजीवचेष्टितसजातीयत्याचितयितुम तम्राव वर्षे मूलकतर्द्वाचितृत्वे त्त्वाकुबुद्दीनां भगवजन्मकर्मादियाथात्म्यावेदित्वं चस्चितिमिति ॥ ३५॥

विवेगिपपाद्यितंताव्रद्भगवतस्तचेष्टितस्यजीवतचेष्टिताभ्यांवैजात्यंद्शेयति सवाद्यतिसवैभगवानमोघलीलः अमोघावितथालीलाय-स्यसः १५ । मुक्तमः अनेनप्राचीनकर्मवासनानुगुणप्रवृत्तवुद्धानुगुणकेवलसुखदुःखाद्यर्थजीवकर्मव्यातृत्तिः अमोधपदेननिर्विद्यसमापि वदताप्यनेकां मुकामः अनेनप्राचीनकर्मवासमानुगुणप्रवृत्तवुद्धानुगुणकेवलसुखदुःखाद्यर्थजीवकर्मव्यातृत्तिः अमोधपदेननिर्विद्यसमापि वदताप्यनेकां मुकाम तरायोपहतजीवकमेवैजात्यमुकंसमुदायेनजीववैजात्यंविश्वंभृजत्यवत्यत्तीत्यनेनसर्गादिकमेगाः कत्स्नजगद्धिषयकत्वोत्त्वानलपत्वमवगतम् अस्मिश्रसज्जतइतिसंगनिषेधनसंगहेतुकरागेद्वषादिशाहित्यंलक्षंतेनवैषम्यनैष्टृगयाभावः एवंचजीवव्यावृत्तिः अनेनात्यल्पजीवव्यावृत्तिः श्रातेनात्यर्थणात्रकार्वः । विस्या द्भतानीत्यदाविवात्रभूतशब्दोऽचेतनसंसृष्ट्चतनवाचीश्रंतीहतःअंतरात्मतयाविश्यतोऽपिभूतरविश्वात क्षित्वभूतेषुचिद्विद्वापकैर्छश्राणिविश्वायतहतिततोव्यावृत्तिः । श्रात्मतंत्र । विश्वायतहतिततोव्यावृत्तिः । श्रात्मतंत्र । विश्वायतहतितते । श्रात्मतंत्र । विश्वायतहतितते । श्रात्मतंत्र । विश्वायतहतितते । श्रात्मतंत्र । विश्वायतहति । श्रात्मतंत्र । श्रात्मतंत्य । श्रात्मतंत्र । श्रात्मतंत्र । श्रात्मतंत्र । श्रात्मतंत्र । श किंचभूत्रधाच्या प्रतिक्षणीर्विद्यायतइतिततो व्यावृत्तिः आत्मतंत्रः खतंत्रः जीवस्तकालकामेदैवादिपरतंत्रः इत्यर्थः जीवस्त्वनुमापकेलक्षणीर्विद्यायतइतिततो व्यावृत्तिः आत्मतंत्रः खतंत्रः जीवस्तकालकमेदैवादिपरतंत्रः इत्यर्थः जीवस्तवावाणां गुणांगामीशः अधिपतिराश्रयङ्गतियावतः निवस्तवावाणां गुणांगामीशः अधिपतिराश्रयङ्गतियावतः निवस्तवावाणां गुणांगामीशः अधिपतिराश्रयइतियावत्जीचरकतिद्वपरीतगुगाश्रयः षाड्वागिकंषडिद्वियवेधंशस्त्वादिकंभुंके

केश्वर्यवीयतेजसांषग्गांगुगांगमीशः ळश्वयवायपार्याः स्वतिजीवस्कसुख्यतिदुः ख्यतिमुद्यतिस्वतिभावः ॥ ३६॥ त्नळीळारसमञ्जभवतिजीवस्कसुख्यतिदुः ख्यतिमुद्यतिस्वतिभावः ॥ ३६॥

### श्रीविजयध्वजः ।

जीवस्यैवंविधानादिवंधनिवर्तकंब्रह्मक्षानमेवनकर्मादिकामित्यभिष्ठेत्याह् यत्रेति यत्रपरमात्मनिसद्सद्र्पेव्यक्ताव्यक्तमितिष्रकृतिष्राकृ-तरूपेख्वसंविदास्वरूपक्षानेनष्रतिषिद्धेअनादितप्वनिवृत्ते अविद्ययाअक्षानेनआत्मनिजीवेकृतेइतियद्द्शेनंक्षानंतद्रह्मक्षानंसंसारनिवर्तकर्मिति-द्यापद्दयेकान्वयः ॥ ३३ ॥

कंठोत्त्वाऽऽह यदिति यदिसम्यगपरोक्षश्चानोदयसाध्योत्तमप्रसादक्षेषा विशारदस्यहरेविद्यमाना देवीद्योतमानामितश्चीनक्षण माये-च्छा अपरोक्षश्चानदानेननेनंजीवंसंसारयामीत्युपरतातस्मान्निवृत्तार्ताहेतंजीवंसंपन्नण्वेतिपरंब्रह्मप्राप्तप्वेतिविदुःकिंच खखक्षपेश्चानांदा-द्यात्मकेमिहिस्निस्थितःखावरमुक्तजनेमेहीयतेपूज्यतद्दयन्वयः महीयतद्दत्युक्त्वापषाकार्यकारग्रलक्ष्मणप्रपंचविवर्तक्षपादेवस्यविष्णोःसंबं-धिनीमायावैशारदीविघटमानसंसारक्षपामितर्वुद्धिर्यद्युपरतातदाखात्मक्षपंब्रह्मसंपन्नतद्देक्यमापन्नविदुरित्तेतन्निरस्तं भेदनिष्ठत्वात्पूजक भावस्येति भावः ॥ ३४ ॥

हरेरेवंविश्रावतारकर्मभिराप्तकामत्वेनप्रयोजनाभावेपिजीवानांप्रयोजनमस्तीत्याह एवमितिअनन्याधीनकर्तृत्वात्फलोद्देशाभावाद्वाऽक-र्तुरजनस्यजनविलक्षणस्यवाद्वत्पतेःमनःप्रेरकस्यविष्णोरेवंविश्वानियेद गुह्यानिउपनिवत्प्रतिपाद्यानिजन्मानिकर्माणिचकवयःसंसारमो-क्षायवर्णयंतिस्म हिशब्देनहरेःसाकल्येनिक्रियाराहित्यंप्रतिषेधितअन्यथोत्तरङलोकविरोधादित्येकान्वयः तस्माज्जीवानांसंसारमोक्षणव भगवद्वतारपराक्रमप्रयोजनमित्यर्थः॥ ३५॥

फलाभिसंध्यभावादकर्त्तंनकर्त्त्वाभावादितियत्तत्स्पष्टमाह सवाइति अमोघलीलः सत्यकामलक्ष्माक्रीडः सपद्मनाभएवइदंविश्वंमृजतिअवितरक्षित अत्तिसंहरित नरुद्रादिः तथाप्यस्मिन्जगितनसज्जतेलोकिककर्तृवत्फलासक्तोनभवित अतोऽकर्ता नतुकर्त्त्वाभा
वात् अभोक्तृत्वमिपदुःखाभोगादेव नतुभोगाभावात् सुखभोक्तृत्वसंभवादित्यभिप्रेत्याहभूतेष्वित पंचभूतैःसंभूयोत्पन्नत्वात् भूतेषुशरी
रेष्वंतर्हितःमनः श्रोत्रादिषडिद्रियर्बग्राह्यशब्दादिविशयसारंजिन्नतिश्वंत्रकेनतुदुःखादिकं कुतःआत्मतंत्रः नहिस्वतंत्रस्यदुःखादनंघरते।
इतोपिनत्याह षडिति षड्गुग्गेशः षडिद्रियविषयेशः अतश्चसारभुक् तस्मादभोक्तृत्वंनामदुःखाभोगएवनतुभोक्तृत्वाभावादित्यर्थः॥ आतमतंत्रदृत्यनेनविशेषग्रोर्वश्वरपवदेहप्रविष्टोजीवोभवित नान्यद्द्रत्यर्थः सवाइद्मित्यनेनसमर्थ्यतद्दत्येतत्द्र्षितं नहिसुखमेवस्यादःखमग्रव
पिनस्यादितिकर्तुसमर्थईश्वरः सुखदुःखपात्रीभूतंजीवत्वमभिकांक्षतिईश्वरत्विरोधात्॥ ३६॥

### क्रमसन्दर्भः।

अथ जीवस्वरूपे भगवत्स्कूषे च तत्सम्बन्धं वारयित पूर्वाध्यायोक्तं ब्रह्म च लक्ष्यित यत्रेति द्वाश्याम् । यत्र यस्मिन् द्रश्ने स्थ्-लस्थे क्षपे शरीरे स्वसंविदा जीवात्मनः स्रूष्णानेन प्रतिषिद्धे भवतः । केन प्रकारेण वस्तुत आत्मिन ते नस्त एव किन्त्वविद्ययेवालस्थे क्षपे शरीरे स्वसंविदा जीवात्मनः स्रूष्णानेन प्रतिषिद्धे भवतः । ब्रह्मणो द्रश्नेनं साक्षात्कारः । यत्र स्वसंविदेत्युक्त्या त्मानि कृते अध्यस्ते इति एतत्प्रकारेणेत्यर्थः । तद्ब्रह्मद्रश्नीमिति यत्तद्देरानमिति यत्तद्देरानमिति व्यत्ति च ज्ञापितम् । तत्रश्च जीवत एवाविद्याकिएतन् जीवस्वरूपज्ञानमिति तथा केवलस्यसंविद्यात्व ते निषिद्धे न भवत इति च ज्ञापितम् । तत्रश्च जीवत एवाविद्याकिएतन् मायाकार्य्यसम्बन्धिमध्यात्वज्ञापकजीवस्वरूपसाक्षात्करणाताद्दात्म्यापन्नब्रह्मसाक्षात्कारो जीवन्मुक्तिविशेष इत्यर्थः । ईदृशमेव तन्मुन्मायाकार्यसम्बन्धिमध्यात्वज्ञापकजीवस्वरूपसाक्षात्करणाताद्दात्मयापन्नब्रह्मसमात्राणामनाभिनिवेशेनैव भोगः । एवमेवोक्तं "तत्र किलक्षणं श्रीकापिलेये मुक्ताश्रयमित्यादि चतुष्टये द्शितम् । तस्मादस्य प्रारब्धकर्ममात्राणामनाभिनिवेशेनैव भोगः । एवमेवोक्तं "तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपद्यत्रव्यत्वात्व ॥ ३३॥

को मोहः कः शाकः एकत्वमनुपर्यत रात " रूर " अथानित । एषा जीवन्मुक्तिद्शायां स्थिता । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन् अथानितमां ब्रह्मसाक्षात्कारलक्षणां मुक्तिमाह यदीति । एषा जीवन्मुक्तिद्शायां स्थिता । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन् अथानितमां ब्रह्मसाक्षात्कारलक्षणां मुक्तिमात् । विशारदेन सा यदि उपरता निवृत्ता भवति तदा माना मितिर्विव तद्रूपा माया ख्रह्मपश्चित्र सुविव स्वह्मपत्ति । विदुर्मुनयः । तत्रश्च तत्त्सम्पत्तिलाभात् स्वे मिहिम्न स्वह्मपत्तम्पत्ति विदुर्मुनयः । तत्रश्च तत्त्सम्पत्तिलाभात् स्वे मिहिम्न स्वह्मपत्तम्पत्ति । विद्यानि स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन् स्वह्मपत्ति । विद्यानि स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन् स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन स्वह्मपत्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा । विशारदेन परमेश्वरेगा दत्ता । देवी छोतन्ति । विशारदेन परमेश्वरेगा । विशारदेश । व

त्तावाप महायत पूज्यत प्रकृष्टप्रकाशा नवतायवा । एतं प्रकृष्टि क्यं जन्मगुह्यमित्यादिना तत्कीर्जनमात्रेण एवं भगवत्वं द्र्शियत्वा ब्रह्मत्वं द्र्शितम् । ननु ब्रह्मानुभवेनैव यदि मुक्तिः स्यात्तिं ब्रह्मानुभवसम्पत्ती भवतः । एवं प्राकृतजन्मकम्भरम् संसारिवमोक्ष उक्तस्तत्राह एवमिति । यथैवाव्यवाहितपूर्व्वाक्ताविद्यामायोपत्तावेव ब्रह्मानुभवसम्पत्ती साधकानां हितस्य हृतपतेः सर्व्ववुद्धगोचरस्य जन्मानि कम्मीणि च कवयो वर्णयन्ति । तथोक्तं श्रीभगवता । "जन्म कर्म्म च मे दिव्यमेवं यो भवतः इति मन्यन्त इत्यर्थः । सम्पत्तिरत्र साक्षालुव्धिः । अतपव वेदगुह्यानीति । तथोक्तं श्रीभगवता । "जन्म कर्म्म च मे दिव्यमेवं यो वित्त तत्त्वतः । त्यक्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्ज्जनेति । तथैव तेषु श्रीशुकदेवादीनामिप ब्रह्मनिष्ठापरित्यागेनापि रागतः प्रवृत्तिन तत्त्वतः । त्यक्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्ज्जनेति । तथैव तेषु श्रीशुकदेवादीनामपि ब्रह्मनिष्ठापरित्यागेनापि रागतः प्रवृत्तिन वर्धायिष्यते द्वादशे ख्रप्यक्विमृतचेता इत्यादौ । अतो ब्रह्मवत्तिविद्यासनेनैव संसारदुःखोपक्षयः स्यात्तद्गुभवसम्पत्ती च भवत इत्यर्वाधिव्यते द्वादशे ख्रप्रकृतिविद्याग्रीविद्याग्रीविद्याग्रीक्षिणाण्यक्तिक्तिम्य

र्थः। पृथगथरत्वासङ्गरहितस्यानन्दैकलीलत्वमाह स इति। बड्भिरैश्वर्थादिभिर्गुर्गौर्भगाख्यैरीष्टे यः स षड्गुगोराः पाड्विगकं जिन्नति अथ प्राकृतासङ्गरहितस्यानन्दैकलीलत्वमाह स इति। बड्भिरैश्वर्थादिभिर्गुर्गौर्भभाष्टियर्गिरः यः स षड्गुगोराः पाड्विगकं जिन्नति अथ प्राकृतासम्भित्वाद्वर्गात्मकेषु चरति। यद्गकानां भक्तिसुखम् । यद्वा त्विनिति प्रविद्या क्ष्यां कथान्ति विनिति पडङ्गया कि भक्ति जनः परमहंसगती लभेतिति श्रीमत्प्रह्लादसम्मत्या षडङ्गवर्गसंसेवातः संजातं यत् प्रमयाम् । संसेवया त्विय विनिति पडङ्गया कि भक्ति जनः परमहंसगती लभेतिति श्रीमत्प्रह्लादसम्मत्या षडङ्गवर्गसंसेवातः संजातं यत् प्रमयाम् । संसेवया त्विय जिन्नति अभिन्नत्व जिन्नति त्विष्ट्य आस्वाद्यतीत्यर्थः। ततश्च न चास्यति तादशत्विलानि सुष्टु सङ्गतानि स्युः॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥ ३८॥ ३८॥ तत्त्वस्य भक्त्वेकानुभवनीयत्वे सङ्गमनीयम् । अत्तयव अथेह धन्या इत्यादीनि सुष्टु सङ्गतानि स्युः॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥ ३८॥ ३८॥ तत्त्वस्य भक्त्वेकानुभवनीयत्वे सङ्गमनीयम् । अत्यव अथेह धन्या इत्यादीनि सुष्टु सङ्गतानि स्युः॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥ ३८॥ ३८॥

# सुवोधिनी।

किम ते।यद्येवंतत्राह्यत्रेमेइतिइवस्कतस्क सर्वोभगवानेवनजीवोनापिजडः प्रतितिस्त्वावियकी । यदापुनः खस्मिन्नेवाधिष्ठानेइमे स्थूलस् इमेब्रह्मानु मेवनप्रतिषिद्धे भवतश्चेत् प्रतिषेधेहेतुमाह्श्रविद्ययात्मिन्छतेइति ब्रह्मानुभवन्यतिरेकेगात्मिन्छतेशात्मस्थानेतत्प्रप्रतियत्द्रत्यर्थः इतिशब्दोहेतोतत्तदेवब्रह्मदर्शनं ब्रह्मानुभवोभवतीर्थः सर्वत्रब्रह्मप्रतीतिस्तिष्ठति जडजीवप्रतीतिर्गच्छतीतिभावः॥ ३३॥

किंतावताकदावाप्रतीतिरेखागच्छतीतितत् द्वयंनिरूपयतियद्येषेति एषामायाभगवतोविशारदस्यसंवंधिनी देवीदेवतारूपापूर्वावस्था-चेदुपरताभवतितथापितस्यानेतिखभावत्वंभवेत किंतुसामितरूपाभवतियदाप्रकृतिरूपाभवति तदामायानिवृत्तिरूपामितिरिति विशेषः तदाऽयंजीवः स्वमिहिम्निसंपन्नएयखरूपंप्राप्तद्ववमहीयते खाराज्यंकरोतीत्यर्थः एवंसर्वहरिरित्येतदर्थसपरिकरः पुरुषावतारोनिरूपितःएवम

न्यत्रापिकृष्णेपुरुषोत्तमेजनमकर्मनिरूपगांतस्यभगवत्तत्त्वज्ञानार्थमेवेत्यर्थः ॥ ३४॥

पविभिति ननुउपदेशातिदेशयोः कोविशेषद्व्यतआह अजनस्यजनमानिअकर्त्तुःकर्माणिति विरुद्धधर्माश्रयत्वेनमाहात्म्यंविशेषः "यतावानस्यमहिमेतियचनात्पवमेवहिकवयोवर्णयतिविरुद्धधर्माश्रयत्वेनमाहात्म्यंविशेषः ननुकथंप्रतीतिराविरोधेनतत्राहवदेगुह्यानीतिवे देपि गोप्यानिश्चांतानांविरुद्धवत्प्रतीत्यर्थतथावचनंवस्तुतस्तुसर्वे भवनसम्थेब्रह्माणिविरोधपवनास्तिकिचहृत्पतेः सर्वेषांहृद्यानांसपविभे रकः तत्रयथाअनेकविश्वंप्रेरयतितथाऽनेकविधोभवतीत्यर्थः॥ ३५॥

कथंवर्षायंतिकावातस्यठीलाकिस्वरूपंकथंशायते इत्याकां स्वायामाहसवा इदामिति विभिः । अथवास्त जानासीत्यस्यवाउत्तरं सपुरुषो तमः वैनिश्चयेनकालादीनां तत्प्रेर्यत्वात इद्विश्वमिति प्रपंचे भेदोनिवारितः अक्षरकालक मस्य मावप्रकृतिपुरुषेः क्रियतेजगदितियत् वहुत्यानिक पितंत द्वस्तुतो भगवाने वकरोतित त्रहेतुः अमोघलील इतिकेवल मक्षरादिभिः कृतस्वतंत्रस्य भगवत इन्छा भावेसितिक याव्यां स्यात् कार्यव्यावृत्तत्वेनसम्यक् स्कुर्याभावाच भगवतस्तुलीलासाजगतो भोग्यत्वात्र विश्विष्ठा स्वायः त्रवास्ति लक्षराणाक याव्यात्र कर्वायावृत्तत्वे त्रवास्त्र कर्वायावृत्त विभाव स्वायः विभाव स्वायः विभाव स्वायः विभाव स्वायः विभाव स्वायः विभाव स्वायः विभाव स्वयः स्वायः विभाव स्वयः स्वयः

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती .

नन्वेंच चेदिदं सब्वें वस्तुतो मायादर्शनमेव ब्रह्मदर्शनं कि तदित्यांकाङ्क्षायामाह । यत्र भगवित इमे सदसदूषे उक्तलक्ष्णो मायिकें स्थूलक्षूक्ष्मक्षे प्रतिषिद्धे भवतः तेनामायिकन्तु रूपं तस्य न प्रतिषिद्धिमिति भावः । केन खेषां भक्तानां संविदा अनुभवेन । ते कथं भन्गवित न स्त इत्यत आह । अविद्यया आत्मिन जीवे एवकते अध्यस्ते न त्वीश्वरे । यदुक्तम । "देहाहङ्करणाहेहाध्यासो जीवे ह्यविद्यया । न तथा जगदध्यासः परमात्मिन युज्यते" इति । तत् ततश्च तस्य ब्रह्मणो दर्शनं साक्षातकारः स्यात् । यद्येषा माया देवी उपरता स्यात् तथा वैद्यारदी विद्यारदी भक्तानां हिते निषुणो भगवानेव तदीया मतिर्मामयं पद्यत्वित कृपामयी तदिच्छा यदि प्रवृत्ता स्यात् तदैव नान्यथा । "यमेवेष वृणुतेतेन लक्ष्यस्तस्येष आत्मा विवृणुते तत्तुं स्वामिति श्रुतेः । यद्वा वैद्यारदी भगवद्विषयिणी मितिः पुरुषस्य स्यात् ३३ सम्पन्न एव तन्मतिमानेव पुरुषः सम्पन्नोऽन्यस्तु द्रिद्व इत्यर्थः । विदुस्तत्त्वज्ञाः । स्वे महिन्नि स्वीये माहात्म्ये वर्त्तमानः स महीयते

पूज्यते । अन्यथा स्वमाहातम्याद्भ्रष्टः स निन्धत इति भावः ॥ ३४॥

पूज्यतं । अपने । एवमने किर्याप्रकारेण मायिकशरीर इयमिति धेनेत्यर्थः । अजनस्य जन्मानि । "अजायमानो वहुधाभिजायत" इति श्रुतेः । अक् एवमने नोक्त छक्षणप्रकारेण मायिकशरीर इयादी खाभाविकी ज्ञानवलिकया चेति श्रुतेः । नजु जीवस्यापि वस्तुतोऽजनस्यैवाकन् कुरं किम्माणि । "न चास्यकार्थ्यं करणश्च विद्यते" इत्याद्दी खाभाविकी ज्ञानवलिकया चेति श्रुतेः । नजु जीवस्यापि वस्तुतोऽजनस्यैवाकन् कुरं जन्मानि कम्माणि दश्यन्ते । सत्यम् । तस्य तानि मायासम्बन्धेन अस्य तु तानि मायाप्रतिषेधेनेत्येष एव भेद इत्याह । वेदेषु वेदैन् वर्षा प्रमाणि रहस्यत्वेन परमोपादेयत्वेन च संवृत्य स्थापितानि तात्त्विकानि । जीवस्य तु तानि मायिकत्वेन हेयान्यवास्तवानीत्यर्थः । वर्षा गुह्यानि रहस्यत्वेन परमोपादेयत्वेन च संवृत्य स्थापितानि तात्त्विकानि । जीवस्य तु तानि मायिकत्वेन हेयान्यवास्तवानीत्यर्थः । यदुक्तं गीतोपानषदा । "जन्म कम्म. च मे दिव्यमेवं यो वित्त तत्त्वत" इति । हत्पतेरन्तर्यामिणः अतोविराङ्कपस्यैवम्भूतत्वाभावाद्वतान्यस्य तस्य न गणानिति प्रकरणार्थः ॥ ३५ ॥

रमध्य तस्य । अगवतस्त्वन्यान्यापिततो वैलक्षण्यानि बहूनि सन्ति तत्र प्रथमं निरङ्कुरामेश्वर्थमाह स वा इति। षाड्वार्गकामेद्रियषड्वर्गविषयं जिद्यति भगवतस्त्वन्यान्यापिततो वेलक्षण्यानि बहूने सन्ति तत्र प्रथमं निरङ्कुरामेश्वर्थमाह स वा इति। षाड्वार्गकामेद्रियषड्वर्गविषयं जिद्यति । अग्रात्व विषय प्रकार्णका । यहा पड्सिर्गुर्गोर्भगराष्ट्रवाच्येरैश्वर्याचेरीशः द्वादेव गार्न्थं सुखमनुभवति ॥ ३६॥ अतः षडेश्वर्यवर्गोर्न्थं सुखमनुभवति ॥ ३६॥ अतः षडेश्वर्यवर्गार्न्थं सुखमनुभवति ॥ ३६॥

नचास्य कश्चित्रिपुर्गान धातुरवैति जन्तुः कुमनीष ऊतीः। नामानि रूपाशि मनोवचोभिः संतन्वतो नटचर्यामिवाज्ञः॥ ३७॥ स वेद घातुः पदवीं परस्य दुरन्तवीर्यस्य रथाङ्गपागोः। योऽमाययां सन्ततयानुवृत्त्यां भजेत तत्पादसरोजगन्धम् ॥ ३८ ॥ अथेह घन्या भगवन्त इत्थं यद्वासुदेवेऽखिललोकनाथे। कुर्विन्ति सर्वित्मकमात्मभावं न यत्र भूयः परिवर्त्त उप्रः ॥ ३९ ॥ इदं भागवतं नाम पुरागां ब्रह्मसम्मितम्। उत्तमःश्लोकचरितं चकार भगवानृषिः। निःश्रेयसाय लोकस्य धन्यं खुस्त्ययनं महत् ॥ ४०॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

मोक्षप्रकारमाहयत्रेतिद्वाभ्याम् यत्रयस्मिन् कालेजनमनिवा भगवज्जनम्कर्मकथन अवगाविषयेदत्यर्थः यत्रमगवज्जनमकर्मकथन अवगा मननादि नास्त्रस्योपास्यभूतस्ययद्विज्ञानेनसर्वविज्ञानं भवतीत्येवंभूतस्यसंविज्ञानंस्यात् तेनज्ञानेनपूर्व मविद्ययाअज्ञानेन आत्मनिकृते आत्मत्वेनस्वीकृते इमेसदसद्व्रपस्थूल सूक्ष्मरूपेप्रतिषिद्धे आनात्मत्त्वेननिवारितेभगवतः चिद्चिच्छक्तिमद्रक्षश्चानेनैवात्मानात्मश्चानोदया

त्तदाइति इत्येवंप्रकारेगातद्बह्मदर्शनंभवति तत्परब्रह्मज्ञानंभवति ॥ ३३॥

यदियदैवएषाकार्यकारसात्मिकादेवस्यशक्तिरूपामायाउपरतास्यात् । तदैववैशारदीमतिः विशारदः सर्वज्ञः परमपुरुषस्तद्विषयमा-मतिः। ध्रुवार्स्मृतिभवति तद्वंतरचप्रारव्धकर्मक्षयेसित्प्रकृतिसंबंधवियुक्तः । अपहतपाप्मत्वादिगुणसंपन्नः एवभवति । तदाखेमिहि भगवद्भावापित्तिलक्ष्योमहीयते । पूज्यतेपरमधामवासिभिः सन्कृतोभवतीत्यर्थः । महपूजायामित्यस्यरूपम् इति इत्येतत्सर्वतत्त्वज्ञाविदुः । एवंवद्धस्यभगवज्ञनमकर्मरहस्यकथनश्रवणादिनामुक्तिभवतीति प्रासंगिकप्रकरणार्थः । तदुक्तं भगवतापूर्वाचार्येण "ज्ञानस्वरूंपचहर-रधीनंशरीरसंयोगवियोगयोग्यम् । अणुंहिजीवप्रतिदेहभिन्नंज्ञातृत्ववंतंयद्नंतमाहुः। अनादिमायापरियुक्तरूपं त्वेनंविदुवैभगवत्प्रसादा-

प्रासंगिकंसमाप्यप्रकृतंसमापयम् खमतेबहुकविसंमति दृशयिति। एवमिति हृत्पतेरंतर्यापिवासुदेवस्य अजनस्य देहेजाते भारताणकराना प्रत्य स्थाप विश्व स्थाप विश्व स्थाप विश्व कि स्थाप विश्व कि स्थाप विश्व कि स्थाप विश्व कि स्थाप व जातमन्यतत्त्रज्ञानः जात्रः वास्त्रः वास्त्राज्ञावस्ताद्धश्राह्म । जगृहेपौरुषं रूपमित्यादि-स्यकमीशिचवेदगुह्यानि । "अजायमानोबहुधाव्यजायतयस्यचैतत्कर्भसवेदितव्य"इत्यादिवेदगोत्यतयास्थितानि । जगृहेपौरुषं रूपमित्यादि-रयकमार्खा जनपञ्चामा । नाजन्मगुद्यंमगवतो यपतत्प्रयतोनरःसायंप्रातभृगान्भक्त्या दुःखग्रामाद्विमुज्यतइत्यंततोजीवजन्मकर्भविसदशानिमयावाशितानि । यथापव मन्येपिकवयः क्रांतद्शिनोवर्ण्यंतीत्यन्वयः ॥ ३५॥

मगवताजाननम् १६ रवनावराज्यवात्रियात्रात्रात्रात्रात्रात्रात्रवाद्धं मुमुश्चंचेतिजीवद्वैविध्यंचाह । सवैद्दितित्रिभिः षाद्वर्गिकमिद्रियषद्भवेद्यम् । जिझित तंत्रत्वादिनापुनरुत्कर्षःकोमुच्यते कश्चनत्याकांक्षायांवद्धं मुमुश्चंचेतिजीवद्वैविध्यंचाह । सवैद्दितित्रिभिः षाद्वर्गिकमिद्रियषद्भवेद्यम् । जिझित

मुंके यतः षडिद्रियेशः। यद्वाज्ञानशक्तिवलैश्वर्यतेजओजसामीशः॥ ३६॥

# भाषा टीका ।

जिस ज्ञानदशा मे यह अचेतन गत कारण कार्या वस्था मे उत्पत्ति विनाश रूप दोनो माव अपने अज्ञान से आत्मामे काविपत किये हुये निवृत्त होजाते हैं वही मुक्तात्मा का दर्शन है ॥ ३३ ॥ निवृत्त हाजात ह वहा मुक्तात्मा का दशन ह ॥ ३३ ॥ जव यह सर्वेश ईश्वरकी शक्ति कीडा करने वाली माया निवृत्त होकर मित दिव्यशान रूप होजाती है तव वह पुरुष कृतार्थ होकर

अपने दिव्य खरूप में पूजित होता है यह वात तत्त्व ज्ञानी पुरुष जानते हैं॥ ३४॥

ताद्व्य स्वरूप म प्राणत हाता ह यह वात तरव शाम उ इस प्रकार से अंतर्यामि अकर्ता के कर्म तथा अजन्मा के जन्म जो वेदों में भी गुप्त हैं तिनको दिव्यज्ञानी वर्गान करते हैं ॥ ३५॥ इस प्रकार स अवयाम अकता क कम तथा अजण्या गाँउ हैं रक्षा करते हैं संहार करते हैं तौभी इसमें लिप्त नहीं होते हैं प्राश्चियों सोई परमातमा अव्यर्थ लीलावाले इस संसार को मृजते हैं रक्षा करते हैं संहार करते हैं तौभी इसमें लिप्त नहीं होते हैं प्राश्चियों साइ परणारा रेतन होने से ओबादिक छैइंद्रियों के नियंता होने से छैविषयों को दूरही से ग्रह्मा करते हैं॥ ३६॥

श्रीधरखामी । नतु किमीश्वरस्य सृष्ट्यादिक्ममेभिः विषयभोगैव्वी तत्राह न चेति। यातुः जगहित्यातुः हेश्वरस्य ऊतीः लीलाः कुमनीषः कुबुद्धिः नियुगोन तर्कादिकीशलेन न अवैति न जानाति । मनसा रूपाणि वचसा नामानि । सन्तन्वतः सम्यक् विस्तारयतः । वचोभिरिति यहः नियुगोन तर्कादिकीशलेन । मनेवचोभिः समेनि वा ॥ २०॥ वचनं श्रुत्यभिप्रायेगा । मनोवचीभिः सहेति वा ॥ ३७॥

(१) निपुर्गा विधातुः ऊतिमितिच विजयध्वजः॥

### श्रीधरखामी।

भक्तस्तु कथिश्चज्ञानातीत्याह स वेदेति। अमाययाअकुटिलमावेन सन्ततया निरन्तरया अनुवृत्त्या आनुकूल्येन भजेत ॥ ३८॥ भक्तिमार्गे प्रष्टुचानृषीनभिनन्दति अथेति । यतो अक्त एव भगवत्तत्त्वम् जानाति अथ अतो भगवन्तः सर्व्वशाः भवन्तो धन्याः कृतार्थाः । कुतो यद्यस्मात् इत्यं प्रश्नैः वासुदेवे आत्मभावं भनोषृत्ति कुर्व्वन्ति । सर्व्वात्मकमैकान्तिकम् । यत्र यस्मिन् भावे सित भूयः परिवर्त्तो जन्ममरगाद्यावर्त्तो न भवति ॥ ३९ ॥

सूत किमेतत् शास्त्रम् अपूर्वे कथयसि तत्राह इदमिति । ब्रह्मसिमतं सर्ववेदतुल्यम् । उत्तमः श्लोकस्य चरितं यस्मिन् तत्

ऋषिर्व्यासः॥ ४०॥

### श्रीवीरराघवः

नेति यतप्वमतप्वास्यमनसासंकल्पेनवचोभिर्वेदात्मकैश्चनामानिदेवमनुष्यादिनामानिक्षपाणिदेवादिक्रपाणिचनटचर्यामिववितन्वतः द्धतोधातुरीश्वरस्योतीर्गतीः अवतेर्गतिश्चार्थः पद्वीः प्रकारानितियावत्रनिषु योनभावप्रधनोनिर्देशः नैपुरयेनापिजंतुः नावैतिनावगच्छतिअनव-गतीहेतुंवदन्जंतुंविशिनष्टिकुत्सितामनीषावुद्धिर्यस्यशब्दादिविषयासक्तवुद्धिरज्ञःअहंममाभिमानाभ्यांखात्मपरमात्मयाथात्म्यानभिज्ञः मनो वचोभिनीमानिक्षपाणिचवितन्वतइत्यत्रमनसासंकल्पेनक्षपसृष्टिवेदवचोभिनीमकल्पनमितिविवेकः "नामक्षपंचभूतानांकत्यानांचप्रपंचनम् वेद्राब्देश्यपवादौदेवादीनांचकारस"इतिवचनात्नटचर्यामिवेति चिद्वचिद्गतदोषराहित्यंविवक्षितंयद्वानटचर्यामिवनटोयथाविचित्रवेषा-नुपादत्ते तद्वद्रपाणिमत्स्यकूर्मोदीनितन्नामानिचसंतन्वतः विभ्रतोऽस्यधातुर्जगत्स्रष्टुरीश्वरस्योतीर्गतीर्जनुर्मनसावचोभिश्चनिपुण्नेनतन्ननेपु-अत्रपक्षेनटचर्यामिवेतिदृष्टांतेनेदंविवक्षितम् नटस्यानेकवेषपरिश्रहेऽपियथास्वस्वभावात्यागः वेषाणांचेष्टामुलत्वं चर्यामाश्चलीलात्वंतद्वदस्यापीतिकुमनीषोऽशोजंतुर्नावैतीत्यनेनशब्दादिषुविरकःस्वात्मपरमात्मयाथाम्यमननशीलस्त्ववैत्येवेतिसूचितं॥३७॥ तदेवाह सइति यःपुमानमाययामायागुणकामादिरहितया संततयाअनुस्यूतयादुरंतवीर्यस्यापारवीर्यस्यरथांगपागोरनुष्ट्रत्यासेवयात-

स्यरथांगपार्याः पादसरोजगंधंभजेतानुभवेत संधातुरथांगपार्याः पदवींवद्जानातितथाचोक्तंभगवता "भक्त्यात्वनन्ययाशक्यअहमेवंविधो

ऽर्जुन क्षातुंद्रष्टुंचतत्त्वनप्रवेष्टुंचपरंतपति॥ ३८॥

. एवंमयोपपादितंभगवद्वतारादिरहस्यममायिकाविच्छिन्नभगवद्भक्तियोगनिष्ठावंतोजानंत्येवात्रनविप्रतिपत्तिस्चितम्श्रोतृगांशौ नकादीनांकृतार्थतांसहेतुकामाविःकरोति अथेति भगवंतइतिसंवोधनंयूयमित्यध्याहारः यद्वाहेमुनयः भगवंतःपूज्याभवंतःधन्याःकृतार्थाः कुतः हियस्मादि हलोके ऽ खिललोकनाथेवा सुदेवे सर्वात्मकं सर्वप्रकारकं करणात्रयेणापीत्यर्थः सर्वात्मक इतिपाठे सर्वस्यात्मनि सर्वशारिके वे तिवासुदेवविशेषग्राम्आत्मभावंभावःयोगः आत्मनोभावः आत्मकर्तृकःसर्वात्मनइतिपाठे आत्मनामनसायोभावोभक्तिस्तंकुर्वतिततोधन्या इत्यर्थः कथंभक्तियोगमात्रकर्तृकत्वेनथन्यतेत्यपेक्षायामात्मभावंविशिनिष्ट यत्रयस्मिन्नात्मभावेउग्रः गर्भजन्मजरामरगादिवुःखहेतुत्वेन घोरःपरिवर्त्तःसंसारपरिवृत्तिर्भूयोनभवति ॥ ३९॥

तदेवंषुंसामेकांततः श्रेयस्तन्नःशंसितुमहसीत्यादीनांशीनकादिप्रश्नानां संग्रहेगोत्तराग्यभिषायार्थेतच्छुश्राविषितभागवताख्यपुरा-ग्रामुखेनतान्येवविस्तरतः प्रतिपिपादियेषुस्तावदेतत्पुरागानिर्माग्रप्रकारंनिर्मातुर्वोदरायगास्यनिर्माग्रप्रवृत्तिनिर्मित्तंनिर्मितस्यपुनःशुकंप्रत्य ध्यायनंतेनाधीतस्यराक्षेश्रावणंचसहेतुकंप्रष्टुमवसरप्रदानायभगवान्वादरायग्रास्तिद्वंपुराणंनिप्रीयपुत्रमध्याप्यतन्मुखेनप्रवर्त्तयामासतद-हंतत्त्रन्मुखेनाधिगतिमदंषुरागांवः आविषयामीत्याहसूतः इदिमितिइदंभागवतिमितिप्रसिद्धंपुरागांब्रह्मसंमितंब्रह्मवेदस्तेनसंमितंसमीकृतंवेद् तुल्यमित्यर्थःयद्वाबह्वापरंबह्वातत्सम्यक्मीयतेऽनेनेति ब्रह्मसंमितंबाद्वलकात्करगोकःपरंब्रह्मप्रमापकामित्यर्थःयद्वासम्यक्मीयतेप्रमीयतद्दति-तुर्थाम् प्रमाह्म । ८। ३। ३२ ॥इतिङमुद्दा कर्मग्रेयवक्तः अस्ति । । ३। ३२ ॥इतिङमुद्दा गमः ब्रह्मसम्यागितमवगतंथेनयस्माद्वातद्ब्रह्मसमितंतत्रहेतुंवद्वाविशिनष्टिउत्तमश्लोकस्यभगवतश्चरितं चरितप्रतिपादकंप्रतिपादकं योरभेद्दिवक्षयोत्तमस्रोकचरितमित्युक्तम्एवंविधंपुराग्रंभगवानुषिनिखलिनगमद्रष्टाव्यासञ्चकार ॥ ४० ॥

### श्रीविजयध्वजः।

एवंविधमिध्याद्वानीतत्स्वरूपाद्वानाद्भगवद्भजनादायनधिकारीत्याह नचेति वचोभिःसंकीर्तनयोग्यानिनामानि मनोभिःस्मरगायोग्यान प्याप्त सम्यक्तन्वतःविस्तारयतःमनोवचोभिनीमरूपात्मकंप्रपंचंमृजतोवा सतांनिपुग्रांभद्रंविधातुःअस्यहरेःमतिमभिप्रायंगतिवा क-निरूपाण प्राप्त कीद्दशःकुमनीषःमिथ्याञ्चानी जंतुःकृमिसदशः जंतुरितिषुनर्जायमानोष्ट्रियमागाःमिश्रबुद्धिःसंसारी कुमनीषइ-ति कुः त्यादिकथात्मिकांयथानजानातितथायमितिभावः ॥ ३७॥ वर्षीभरतादिकथात्मिकायथानजानातितथायमितिभावः ॥ ३७॥

तिहुँतरयाप्रवाहरूपयाअनुवृत्त्यासेवया हत्कमलमध्यनिवासिनस्तस्यपादसरीजयोगैधंभजेत अत्रैवास्वाद्यमग्रमनाभवेत् सपुरुषः दुर्तनिवाहितरयाप्रवाहरूपयाअनुवृत्त्यासेवया धातुःपोष्ठगादिकर्तः रथांगपाग्रोःश्रीनारायग्रास्य प्रकार निद्धंतरयाप्रवाहरूपणा परस्यपूर्णस्य धातुःपोषगादिकर्तुः रथांगपाग्यःश्रीनारायग्रस्य पद्वीमार्गस्य परस्यपूर्णस्य धातुःपोषगादिकर्तुः रथांगपाग्यःश्रीनारायग्रस्य पद्वीमार्गस्य प्रदेशतेवेदेत्येकान्वयः वीर्यस्य असंख्यादित्यतःपरस्येति चतुर्भुखपरत्वमण्यक्षरस्यास्तियत्वार्थागपागितित चन्निकार्यस्य वीर्यस्य असं ख्यात प्राचित्यतः परस्येति चतुर्भुक्षपरत्वमण्यक्षरस्यास्ति आतीर्थां गपाणिरिति तस्माद्भागवतापवभगवदापरीक्षं स्थेते । भ्रातिरित्युक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्मुक्तेचतुर्म्। ३८ ॥ नेतरइतिसिद्धम्॥ ३८॥

### श्रीविजयध्वजः

भागवताअपिभवादशाएवेत्याशयवानाह अधेति हेभगवंतःपूजांवंतःभाग्यवंतोवा यत्रयस्मिन्भगवत्यात्मभावेखामिभृत्यभावेकियमा-ग्रोसितभूयःपुनःउंच्द्रमिपश्रसतीतिउश्रःक्करःपरिवर्तःसंसारःमरग्रावानस्यात् तस्मित्रखिललोकनाथेसर्घात्मकेसर्वातर्यामिणिवासुदेवेद्दय-मुक्तप्रकारेग्गात्मभावंकुर्वतीतियत्यस्मात् अथतस्मादिह्वेतनराशौयूयंधन्यानिरपेक्षगुग्गपूर्णाःकृतकृत्याद्दवेकान्वयः यत्रयस्मित्रात्म-भावेकियमाग्रापरिवर्तोनस्यात् तमात्मभाविमितिवा ॥ ३९ ॥

धर्मःकंशरग्रांगतइतिप्रश्नंपरिहरति इदमित्यादिना ऋषिःसर्वक्षोव्यासोभगवान् ब्रह्मग्राविदेनसंमितंतुलितम् उत्तमश्रोकस्यहरेश्चरितानि-

यस्मिन्संतितत्तथोक्तम् इदंबुद्धिस्थंभागवतंपुरागांचकार ॥ ४०॥

### क्रमसंदर्भः।

तल्लीलामयत्वादेवास्य पुरागास्य सर्व्वशास्त्रसारत्वमाह इदमिति सार्द्धकम् । ब्रह्मसिमतिमिति । नराकृतिपरब्रह्मगा श्रीकृष्णेन तुल्यातिमि वा । कृष्णो स्वधामोपगते इत्यादि वस्यमागात्वात् । धन्यं सर्व्वपुरुषार्थावहम् । अतएव खस्त्ययनं सर्व्वमङ्गलावहम् । महत् सर्व्वतः श्रेष्ठश्च ॥ ४० ॥

### खुबोधिनी

वस्तुतस्तुनसम्यक्श्रायतप्वेत्याह नचास्येति अयमभिप्रायः सर्वरसास्त्राद्वंभगवतउक्तंतेचरसाउत्कृष्टाः अपकृष्टाः स्वतः आ धारतः अधिकारिभेदेनचभवंतितेचभगवताअनुभूयंतेनवेतिसंदेहः सर्ववस्तुषुरसरूपेग्राभगवतप्वप्रविष्टत्वात्नस्वात्मानंप्रतिउत्कृष्टता-अपकृष्टतावास्वरूपताचिद्वितीयापिकोटिः चकारात्प्रमाग्गांतरस्यापिनिवृत्तिः प्रवंनिरूपग्रेगनमक्त्राभगवदाविभीवात्पश्यकाह यश्येति कृष्णस्यकश्चिदितिब्रह्मापिनिपुग्रेगनापिप्रमाग्गाकर्ग्योनतत्रहेतुः धातुरितिउत्पादकोहिभगवान्तदुपादानकोपलंभकःकस्मैप्रयोजनायकथंमृ-प्रवानितिकथमन्योविज्ञानीयात्कृमितुल्यः अहापोहकौशल्यरहितः भगवतोपिनस्वाभाविकाः कियाः कितुअतीः निपातप्रयोगश्चावांतर प्रवानितिकथमन्योविज्ञानीयात्कृमितुल्यः अहापोहकौशल्यरहितः भगवतोपिनस्वाभाविकाः कियाः कितुअतीः निपातप्रयोगश्चावांतर भेदापरिज्ञानायसर्वथाज्ञानहेतुः मनोवचोभिः सहनामानिवेदानुरूपाग्रिसहिषयान् संतन्वतोविस्तारयतः "चतुर्भश्चमहारोगैर्व्याप्ताअतीनं ज्ञानते नटवच्चापिकरग्रामन्यथाप्रतिभासनात्, प्रमाग्रावलेनहिष्यिक्षानंप्रमाग्राव्याप्राह्मवेत्रस्वातिकार्यत्रक्रिकं क्राप्तिक्षेत्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यस्त्रस्व प्रविक्रम्यस्त्रस्व प्रविक्रम्यामन्त्रस्व प्रविक्रम्यस्य प्रविक्रम्यस्त्रस्व प्रविक्रम्यस्ति स्वत्रस्य प्रविक्रम्यस्य प्रविक्रम्यस्य प्रविक्रम्यस्ति स्वत्रस्य स्वत्रस्य स्वत्रस्य स्वत्रस्य स्वत्रस्य स्वत्रस्ति स्वत्रस्ति स्वत्रस्ति स्वत्रस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य स्वत्

नागानस्थलपः । १२ ॥
तार्हिकथंनिस्तारहत्याह संवदेतिधातुरितिपूर्ववत्सतुनज्ञातष्यअज्ञायमानस्रक्षपत्वात्कार्यंतुलौकिकंतन्मार्गपरिज्ञानेसमागमनं वुध्वासहमावात्कार्याणांतरचं ज्ञायतेहिततस्यगितमांगांज्ञातव्यःलौकिकवैदिकप्रमाणाज्ञानभावेहेतुमाह परस्येतिस्वप्रमाणात्तदूरेवर्नमानस्येत्यर्थःकदा
मावात्कार्याणांतरचं ज्ञायतेहिततस्यगितमां विचकालस्येवपरिज्ञानंसंभवितत्रवकालवकंपाणांयस्यकाल मिपिस्थरीकृत्यतिष्ठतिअथवा
वितदुरंतताप्रलयानंतरंतुज्ञातेवनास्तितिभावः किंचकालस्येवपरिज्ञानंसंभवितत्रवकालवकंपाणांयस्यकाल मिपिस्थरीकृत्यतिष्ठतिअथवा
वितदुरंतताप्रलयानंतरंतुज्ञातेवनास्तितिभावः किंचकालस्येवपरिज्ञानंसंभवितवक्षकालवकंपाणांयस्यतेवस्तिभावः किंवकालस्यविद्याच्याम्यविद्याच्याम्यविद्याच्यामाय्याभावोप्यं सर्वोहिलौकिकोविदिकश्चमाययाभगवंतभजतेपविहरूतेअयमस्मभ्ययि
नहेतुरित्याह्योमाययेतिदीर्घकालाद्ररेनंतर्यसेवायांमायाभावोप्यं सर्वोहिलौकिकोविदिकश्चमाययाभगवंतभजतेपविहरूतेअयमस्मभ्ययि
दिमहदास्यतितिवुद्धाभगवतः सकाशात्पदार्थोनमहिलुभगवद्वस्वार्थभयत्वकर्णात्वभगवाद्यस्वतिवेद्याभगवतः सकाशात्पदार्थोनमहिलुभगवद्वयाद्यअव्याव्याच्याचेतिविद्याभिवत्ययेवः संततानिरंतराअनुपश्चाद्वतिरितिगितपश्चाद्ववाकिः दीर्घकालादरीवोधितीचरणपरिज्ञानंहिमार्गज्ञानेहेतुः तदेव
विचारामायेतिपर्यायः संततानिरंतराअनुपश्चाद्वतिरितिगितपश्चास्यआव्याणार्थाचेत्रस्यभगवात्स्वच्छंदेशतेवहिरिद्वियाणिचगं
पंकजतस्यगंत्रभगवतः शयनेपादसंवाहनेऊर्द्वमुक्षस्यवर्यास्यआव्याणेष्यामिकमार्गः सचंगुद्धविद्यति करण्याविद्यति । ३८ ॥
रोजतत्रयाद्यस्यभग्वतिस्यभग्वनंनिरंतरानुवृत्तिरिति ॥ ३८ ॥
रोजतत्रयाद्यस्यभग्वतिस्यभग्वनंनिरंतरानुवृत्तिरिति ॥ ३८ ॥

राजतत्रगधः सतः प्रमवातस्यभजनानरतराष्ठ्यः पार्ति प्रश्नेनेवज्ञायतेभवंतोभगवात्रिष्ठाइति इहसंसारेभगवंतोभवंतः योयच्छव्दः एवंप्रासंगिकमुक्त्वाभिक्षोपक्रमेणप्रस्तुतमाह अथिति प्रश्नेनेवज्ञायतेभवंतोभगविष्ठाध्यभन्वसरमवसराक्तत्यत्ममुखाद्पि परमाद स्ववसहितवचनात् धन्याइतिधनंभगवद्गाक्तिज्ञांनंवाअहितितिधन्याः इत्थिमितिहानमिपसंवोध्यअनवसरमवसरीक्तत्यतम्मुखाद्पि परमाद रेगाश्रवणोनेवंप्रकारः वासुदेवहतिदेवतांतराभजनंनिक्षितम् अखिललोकनाथइतितस्यसर्वेश्वरत्वंचज्ञात्वा वेदांतवेद्यतांच एवं माहात्म्यज्ञानार्थे सुदढंदनेहार्थचविद्येषणाद्वयमुक्तवारुच्यर्थमातमपदं प्रयुज्यभावंदेवत्वेनरितं कुर्वेति यतःअतोधन्याइतिपूर्वेशासंमाहात्म्यज्ञानार्थे सुदढंदनेहार्थचविद्येषणाद्वयमुक्तवारुच्यर्थमात्मपदं प्रयुज्यभावंदेवत्वेनरितं यथाभवतुतथितिषुनः शब्दार्थः अनादरावंधः अस्यफलंपुनः कालसंसारचक्रेमहावर्त्तक्षेपुनः पतनाभावः एतदेहावसानपर्यतं यथाभवतुतथितिषुनः शब्दार्थः अनादरावंधः।

भावायोग्रद्दात ॥ ३९ ॥ कुतद्दमुद्धृतिमत्याकांक्षायामाह इदंभागवतिगति भगवतः सर्वसंवधिभागवतंनामेतिप्रसिद्धंपुरातनंपुराणामितिजातिद्दाब्दोवावेदेन कुतद्दमुद्धृतिमत्याकांक्षायामाह इदंभागवतिगति भगवतः सर्वसंवधिभागवतंनामेतिप्रसिद्धंपुरातनंपुराणामितिजातिद्दाब्दोवावेदेन सम्यिक्ष्मतंमतांतरिष्वनात्रवेदाविप्रतिषेधः वस्तुनिरूपणार्थप्रासंगिककथापिपुरुषोत्तमकथैवेत्याह उत्तमश्रोकचरितामितिउत्तमश्रोकस्य चरितंयत्रसर्वज्ञानेनभगवान्वदेच्यासः अनुभूयआह ॥ ४० ॥

# श्रीविश्वनाथं चकवर्ती।

ज्ञानाद्यगम्यत्वमाह न चेति । निपुणेन ज्ञानयोगादिनेपुण्येन उतीर्लीलाः नामानि रूपाणि सनोचचोद्दिनिर्मानैति मनोचचसोरग-म्यत्वादिति भावः । कुमनीष इति जन्तुरिति यो हि भक्तिहीनो ज्ञानी नामरूपवद्यस्तुमात्रमेव मिथ्येत्याचछे तं प्रत्ययमाञ्चेपः । सन्तन्वतः

तदिदं ग्राहयामास सुतमात्मवतां वरम्। सर्ववेदेतिहासानां सारं सारं समुद्रुतम् ॥ ४१ ॥ स तु संश्रावयामास महाराजं परीक्षितम् । प्रायोपविष्टं गङ्गायां परीतं परमर्षिभिः ॥ ४२ ॥ कृष्योस्वधामोपगते धर्मज्ञानादिभिः सह । कलौ नष्टहशामेषः पुरागार्कोऽघुनोदितः ॥ ४३ ॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अवतीर्यावतीर्यं कृपया तानि विस्तार्यतः । अक्षाने इष्टान्तः । नटस्य चर्यी पाग्यादिभिरभिनीयमानस्य गीतपदार्थस्य चन्द्रकमलादे-नीमरूपादि प्रदर्शनां यथा अक्षो नावैति । अतो नाखादं लभते ततश्च रसममूलकं ब्रूते विक्षः सभ्यस्तु सकलसद्दयसाक्षिकं रसं साक्षा-भक्तिगम्यत्वमाह स वेदेति॥ ३८॥ देवानुमवतीत्यर्थः ॥ ३७ ॥

अन्याः । अवस्त्रीया स्वाम् ता भवामेति विषीदतः शौनकादीनाह् अधेहेति । भगवन्तः सर्वेद्धाः । "वेसि विद्यामविद्याश्च स वाच्यो भगवानिति वैष्णवनिरुक्तेः। सर्व्यात्मकमैकान्तिकम् आत्मनो मनसो भाव यत्र सति परिवर्त्तो जन्ममरगाद्यावर्त्तः॥ ३९॥

स्तुत किमिद्मपूर्व्यमश्रुतचरं शास्त्रं कथयसीति तत्राह इदिमिति। ब्रह्म श्रीकृष्णस्तत्तुरुयम्। ऋषिर्व्यासः॥ ४०॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

नामानिरूपाणिमनोवचोभिः संतन्वतः मनसासंकल्पेनचेवचोभिर्वदरूपैः । नामानिदेवम् उष्यादिपदानि । रूपाणिपदार्थभूतानि देव-मनुष्यादिशरीराणिविस्तारयतः ऊतीर्गतीः पदवीरित्यर्थः कुत्सितामनीषाविषयप्रवणाबुद्धिर्यस्यसनिपुणेनतकीदिकौशलेनापिनावैति । नावगच्छति नटचर्याम् अश्वइवभगवत्पद्व्यनभिश्वानां नित्यवद्धानां जीवानां तज्जनमादिरहस्यश्रवणाद्यसंभवात्संसाराद्विमुक्तिनांस्बीति-भावः ॥ ३७ ॥

मुमुक्षुस्तुकयंचिद्वगच्छतीत्याह । स इति अमाययादंभादिदोषशून्ययासंततयानिरंतरया अनुवृत्या॥ ३८॥ अञ्च मुसुक्षवइतिमुनीनभिनंदति । अथेति । हेभगवंतः इह्लोके भवंतः धन्याः कृतार्थाः । तत्रहेतुमाह यदिति । यतः इत्थंप्रश्रश-ब्देन भगवद्नन्यविषयेन वासुदेवे आत्यभावंचित्तैकात्रचं सर्वात्मकम् संपूर्णम् कुर्वति यत्रयस्मिन्भावेसति । उत्रोतुःसहः भूयः

विपुलः परिवर्तः जन्ममरगाप्रवाहः नभवति ॥ ३९ ॥ अथ"ब्रुहियोगेश्वरेकुष्णेब्रह्मरायेधर्मवर्मणि स्वांकाष्टामधुनोपेतेधर्मः कंशरणंगत"इति । षष्टस्यप्रश्नस्यसर्वशास्त्रोत्तममिदंश्रीमद्भागवतं-पुरागांधमः शरगांगतदृत्युत्तरंदर्शयम् षग्गाांप्रश्नानां विस्तरतः प्रत्यत्तरागिप्रतिपिपादयिषुः श्रीमद्भागवतंश्रावयिष्यामीतिचप्रतिज्ञानन्सं-अपतः प्रतिवचनार्थकाध्यायद्वयार्थमुपसंहति इदमित्याद्यध्यायशेषेगा ब्रह्मसंभितंवेदतुल्यम् । यद्वा परंबद्धासम्यक् मीयतेयत्रतद्वह्यसं-मितम कर्मशिकः॥ ४०॥ ४१॥

### भाषा टीका।

संकल्प रूप मन से औ वेद रूप वचन से नाम औ रूपोंको विस्तार करते भये इस विधातापरमात्मा के लीलाओं को कुबुद्धि वाला पुरुष चतुराईसे भी नहीं जान सकता है जैसे नटकी लीलाको अज्ञानी नहीं जानता है ॥ ३७॥

उस महा पराक्रमी चक्रपाणि विधातापरमात्मा के मार्गको वह पुरुष जान सकता है जो निष्कपट निरंतर सेवासे उनके चरण क-

यल गंधकों भजेगा ॥ ३८॥ गथवा राज्य मुनिवरों आपलोग धन्य हो जोकि सकल संसार के खामी वासुदेव के विषय में सब प्रकार से प्रेमको लगाते.

हीं जिस प्रेम के होने से फिर कठोर संसार नहीं होता है ॥ ३९॥ जस अन्य । यह भागवत नामक पुरासा वेद के तुल्य है उत्तम इलोंक नारायस का चरित्रहै तिसको परम ऋषि वेदव्यासजीने बनाया है जीव के लिये धन कल्यामा कारक उत्तम है॥ ४०॥

# श्रीधरस्वामी।

तत्संप्रदायप्रवृत्तिमाह तदिदमिति। सुतं गुकम आत्मवतां घीएगां मुख्यम् ॥ ४१॥ 

# तत्र कीर्त्तयतो विप्राः विप्रषेभूरितेजसः। अहञ्चाध्यगमं तत्र निविष्टस्तदनुग्रहात्। सोऽहं वः श्रावयिष्यामि यथाघीतं यथामति ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराग्रे पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां . प्रथमस्कन्धे नैमिषीयोपाख्याने जन्मगुह्यं नाम तृतीयोऽध्यायः॥३॥

### श्रीधरखामी ।

ह विप्राः विप्रर्षेः सकाशात् अध्यगमं शातवानस्मि । तत्र कीर्चयतः तत्र निविष्ट इति चान्वयभेदेन तत्र पदावृत्तिरदोषः । यथाधीतं न तु स्वमतिविलसितम् । तत्र तु यथामति स्वमत्यनुसारेगा संक्षेपतः कथितं विस्तरेगा आविष्यामि ॥ ४४ ॥ इतिश्री मद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कन्धे तृतीयोऽध्यायः॥३॥

### दीपनी।

संक्षेपत इति । संक्षेपव्याख्यया सह कथितं मूलं वाहुल्यव्याख्यानेन सह श्रावियण्यामीत्यर्थः॥ ४४॥

### श्रीवीरराघवः

किमर्थेलोकस्य श्रग्वतोजनस्य निःश्रेयसार्थतदेवदर्शयितुं विशिनष्टिधन्यंसम्यन्ज्ञानजननद्वाराकृतार्थत्वावहं स्वस्ययनमंगलास्पदम्। "पवित्राणांपवित्रंयोमंगलानांचमगलम्"इस्युक्तरीत्यानिस्तिशयमंगलावहं भगवत्स्वरूपरूपादिप्रतिपादकत्वेन मंगलास्पद्मित्यर्थः।तदुक्तवि धमिदंपुरागामात्मवतां ज्ञानिनांश्चेष्ठंसुतं श्रीशुकंश्राहयामासाध्यापयामास ॥ ४१॥

पुराग्रामेवविशिनिष्ट । सर्वेषांपूर्वोत्तरभागात्मकानां वेदानां इतिहासानांच सारं सारं समुद्धतम् एतत्पुराग्राक्षपेग्राति शेषः सारं सारां-शुराबानवावावावावावाव । राजा क्या सार्व सार्व सार्व सार्व समुद्धृतामित्यनेन वेदेतिहासादिसिद्धस्यार्थशरीरस्यक्रमविशेष निवेशनंवेदाद्यर्थ-शः समीचीनन्यायेः परिष्कृतोऽर्थइति यावत सार्व सार्व समुद्धृतामित्यनेन वेदेतिहासादिसिद्धस्यार्थशरीरस्यक्रमविशेष निवेशनंवेदाद्यर्थ-या समाचानन्यायः नार्यकृतान्यसः सत्वधीतैतत्पुरागाः शुकस्तुपरीक्षितं महाराजमिदं संश्रावयामासश्रगोतेः शब्दकर्मगोगयंत-कर्तुः परीक्षितः ग्रीगतिबुद्धीतिकर्भसंज्ञायां द्वितीयापवंत्राहयामास सुतमित्यत्रीप तत्रप्रहेरपिशब्दकर्मकत्वात् ॥ ४२॥

ः पराक्षितः ग्रागातबुद्धातिकमस्यापा व्यापाद्यापा । परीक्षितं कथंभृतं गंगायां प्रायोपविष्टमनशनव्रतदीक्षितमृषिभिः परीतंपरिवेष्टितं तत्र परीक्षितः सनिधौ भूरितेजसोविपर्षेः शुकस्य

कीर्त्तयतः श्रावयतः सतः हे विप्राः॥ ४३॥

तयतः श्रावयतः सतः ह ।वप्राः ॥ ०२ ॥ अहमितितत्रनिविष्टोऽहंतद्नुत्रहाच्छुकानुत्रहाद्ध्यगमगधिगतवानिस्मपुराग्रामितिरोषः । गमेर्लदित्वाद्ङिअध्यगममितिरूपं सतद्नु-अहाद्धिगतैतत्पुरागोऽहं च यथाधीतं यद्वा अधीतमिति भावेकः यथाध्ययनमध्ययनमनतिक्रम्याध्ययनानुसारेगोत्यर्थः यथामतिश्राव-यिष्यामि यथामतीत्यनेनपुरागास्य दुरवबोधत्वस्च्यते ॥ ४४ ॥

पुराण्यस्तात क्रम्णशतक्रण्ण मगवात वमकानादानः त्रवर्णमामकोद्ये सितद्दिः स्वविषयग्रहण्यसमयोभवत्येवंरात्रिकपेकलीनध-प्रज्ञानां पुनरेतत्पुरागार्कोद्येन प्राज्ञावर्त्तत इत्यर्थः ॥ ४५ ॥

इतिश्री प्रथमे तृतीयः ॥ ३॥

# श्रीविजयध्वजः।

किमर्थलोकस्यनिःश्रेयसायमोक्षाय धन्यंपुष्टिकरं खस्त्ययनंसर्वमंगलानामालयम् अर्थतःशब्दतोऽपिमहत् यदेवंविधंतदिदंसव्यासया-त्मवतांवरंवशीकृतमनसांवरंसुतंशुकंत्राह्यामास्॥ ४१॥ तिवरवर्गारुपार्याद्वितितत्राहं सर्वेति वेदाद्दिसर्वशास्त्रोत्तमत्वादिदमेवत्राहितमितिभावःसतुशुकःप्रमऋषिभिःपरितंसमन्वितंगंगा-कुतप्तदेवात्राहयदितितत्राहं सर्वेति वेदाद्दिसर्वशास्त्रोत्तमत्वादिदमेवत्राहितमितिभावःसतुशुकःप्रमऋषिभिःपरितंसमन्वितंगंगा-कुतप्तव्यात्राहतामातिभाव कृतप्तव्यात्राव्यायाया । ४२ । ४३ ॥ यांप्रायोपविष्टमनदानव्रतमाचरंतपरीक्षितंनाममहाराजंचकवर्तिनश्रावयायास ॥ ४२ । ४३ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

किंच अहंच हेविप्राःतदनुष्रहात्तत्रगंगायांतदंतिकेनिविष्टःयोग्यस्थानेउपविष्टः भूरितेजसः क्षात्रसामर्थ्योपेतस्यब्रह्मापरोक्षक्षानवतोवा तस्यराज्ञथरर्थेकीर्तयतः शुकाद्व्यगमंपिठतवानस्मि योऽहंतवाध्यगमं सोऽहंतत्रेत्यादिप्रश्रपरिहाराय सर्ववेदेतिहासादिसारत्वेनभगवता-कृतं श्रीभागवतंयुष्माकंश्रावियष्यामि यथापिठतंयथाप्रक्षमित्येकान्वयः॥ ४४॥

यत्पृष्टंधर्मः कंशरग्रांगतइतितत्रोत्तरं धर्मझानादिभिः सहरूष्णे स्वधामवैकुंठंप्राप्तेसितिकलियुगेनष्टझानानांपुंसांसर्वसद्धर्भप्रकाशकश्रीमा-गवतपुरागाकोऽमुनावेदव्यासेनउदितःउद्यंप्रापितःतस्मात्सधर्मःसच्छास्त्रैक्षीनसद्धर्मप्रवर्तकंतमेषव्यासरूपिगांकृष्णांशरगांगतइतिभाषः४५

इतिश्रीभागवतेमहापुराग्रेप्रथमस्कंधेटीकायांतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

### क्रमसंदर्भः।

तदिदं तल्लीलामयं महापुरागां ब्रह्मानुभविगुरुगा। श्रीशुकेनाप्युपादेयत्वेन यहीतमित्येव जन्मानि कर्मागीत्यस्योदाहरगात्वेनाह त-दिदमिति । वस्यते च परिनिष्ठितोऽपीत्यादि । हित्वा ख्रिष्यान् पैलादीनित्यादि च । तस्मात्तज्ञन्मकर्मालीलामयनानेन दुःखप्रामाद्विमु-च्यतः इत्येतावन्मात्रं किं वक्तव्यम् । किन्तुः तद्विधानामपि परमपुरुषार्थं इति भावः । अतपवाह सर्ववेदेतिहासानां समुद्धतो यःसारः

सारस्तद्रूपमिति ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

तदिदं पुराग्रां न तु शास्त्रान्तरतुर्वं किन्तु श्रीरुष्णाप्रतिनिधिरूपमेवेत्याद्य रुष्णा इति । खस्य रुष्णारूपस्य धाम नित्यलीलास्थान-मुपगते सति श्रीक्रणो तत्र च धर्मः प्रोजिझतकैतवोऽत्रेति नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितमिति चानुसृत्य परमप्रकृष्टतया अन्य सम्भेभगवज्ञानादिभिरपि सह स्वधामोपगते सति कलौ नष्टहशां ताहशधम्मेशानविवेकरहितानां कृते तदिदं पुरागामेवार्कः । नतु शास्त्रान्तरवद्दीपस्थानीयं यत्तथाविधोऽयं पुरागार्कं उदितः । तादशधर्मज्ञानादिप्रकाशनात्तत्रप्रतिनिधिरूपेगाविर्वभूव । अर्कवत्तत्र-प्रेरिततयैवेति भावः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

इतिश्रीमद्भागवतप्रथभस्कन्यस्य श्रीजीवगोस्वामिकृत क्रमसन्दर्भे तृतीयोऽध्यायः॥३॥

### सुवोधिनी।

य्रंथप्रवृत्तिःसर्वमुक्तयेधनप्राप्तिः कल्याग्रंचलक्ष्म्याः समागतायाः भक्तायाः श्रवगात्महदितिवस्तुतो गुगातोऽर्थतश्चस्यज्ञानार्थपरं-शुकंवेद्वत्पाठितवान्गोप्यत्वायसुतिमितिजितेद्रियताशानंचात्रांगंतस्योत्कर्षेभागवतंफलतीत्यर्थेपरंपरामाह वर्तावरमिति प्रमार्गातरिवतानकर्त्तव्येत्याह त्रैवर्गिकागामुद्धारार्थवेदः स्त्रीशूद्रागामितिहासः उभयसारोद्धारत्वात्सर्वोद्धारकम्परंपरा

माह सर्वेति ॥ ४१ ॥ प्रायोमर्गाप्येतमञ्जीनवृत्तिः गंगायामितिदेशोत्कर्षः परमर्षिमिरितिसत्संगः ॥ ४२ ॥ स्वस्यप्राप्तिप्रकारमाहतत्रेति विप्राइतिसंबोधनेनसर्वपूरकत्वात्शुकः प्रथमंपूरितवान् अधुदापुनः स्मरगोनभवंतः पूरयंतीतिलीकिक त्वासावायऋषिरितिअसंदिग्धमर्थकथनायोत्तरत्रप्रकाशनायचभूरितेजसइतिभूरितेजोज्ञानप्रकाशोयस्यब्रह्मावित्वेनतेजोविशेषोवासर्वेत्रत्वाय ततः सर्वतोमुखं भागवतंजातमित्याह अहंचेतिसर्वपवाधीतवंतः अहंचतत्रउपदेशसभायांप्रसंगान्नश्रुतंकितुशुकानुप्रहात्तत्नोपिवश्यअनु-व्रहंप्राप्यतत्रनिविष्टः सोऽहमुपदेशात्प्राप्तं भागवतंवोयुष्मान् अध्ययनमननिक्रम्यतन्मध्येयथामति खबुद्ध्यनुसारेगा अनेनगर्वपरिहारः-उक्ताद प्यधिकोऽथींस्यास्तीतिक्षाप्यते ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

नांनत्वंधानांस्वतोदुष्टानांपुनधर्मादिक्षापनार्थपुराग्रारूपोकोऽधुनोदितः स्थितपवलोकेप्रकटीसूतइत्यर्थः ॥ ४५ ॥ इतिश्रीभागवतसुबोधिन्यांश्रीलक्ष्मगाभद्दात्मजश्रीवल्लभदीक्षितविरचितायां

प्रथमस्कंधेतृतीयाध्यायविवरणम् ॥ ३॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

व्धिमधनातुः दूर्तं नवनीतमिव यहेदादीनां सारं सारं वस्तु तदेवेदं श्रीभागवताख्यं स्नेहेन सुतं शुकं श्राह्यामास वेदादिद्धिमधन-दाधमया उर्दे अप प्राह्यामास वेदादिर्दा अस्त्र व्याप्य कत्रोपचेदां गोहोहमास्य हित्त । "प्रायो मत्युपर्यन्तानशनं तं व्याप्य कत्रोपचेदां गोहोहमास्य हित्तवत । "प्रायो मत्युपर्यन्तानशनं तं व्याप्य कत्रोपचेदां गोहोहमास्य 

नी ॥ ४८ ॥ वि बहुना यह्युष्माभिः पृष्टं धर्मः कं शर्गा गत इति तदिदमेव बुद्धाखेत्याह छुष्णे इति । खधास्रो द्वारकातः सकाशातः उपस-कि बहुना अष्ट्र नार्ता । स्वधाम्नो द्वारकातः सकाशातः उपस-कि बहुना अष्ट्र नार्तः वद्भिरेश्वर्यः सह तत्नान्तर्वधाने सतीत्यर्थः । तल्लीलाया मक्तक्षोमकारित्वात स्पष्टतयानुकिः।

[36]

### श्रीविश्वनायचकवर्ती।

नष्टरशां लप्तकानानां जनानाम् । अत्र रंक्पवेन तत्र चैकदेशान्ते रिष्टः प्रनष्टा तमसि प्रविष्टेति प्रयुक्तेन रुष्णास्य सुर्यत्वं मथुराया उदयशैलत्वं प्रमासस्य अस्ताचलत्वं शिष्टानां चक्रवाकत्वं दुष्टानां नीहारत्वं पापानां तमस्त्वं भक्तानां कप्रलवनत्वश्च बोधितम् । अतस्तृतीये। कृष्णाद्यमिण निम्लोचे इति सूर्यतया स्पष्टोक्तिः। एष पुराणार्के इति कृष्ण सूर्येऽस्तमिते सति पुराणसूर्योऽयमुदित इति स्र्यस्य प्रतिमुर्त्तिः स्र्यं एव भवेदिति भावः ॥ ४३ ॥

तत्र समायां कीर्नेयतो विप्रर्षेः शुकदेवात् सकाशात् अध्यगमम् इदं शास्त्रमधिगतवानस्मि । तस्यानुप्रहमवाप्य तत्र समैकदेशे निविष्ट एतां वक्ष्यत्यसी सूत इति द्वादशोक्तेः। यथाधीतं न तु स्वक्षपोलकिष्यतं तत्रापि यथामति स्ववुद्धा यावदवधृतं तावदेव सर्वन

मर्थजातं तु स एव शकदेवो वेदेति भावः॥४४॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिएयां भक्तचेतसाम् । तृतीयः प्रथमेऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ ३॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

परमवैराग्यस्चकेनमृत्युपर्यतानशनेनोपविष्टम् ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ प्रायोपविष्टम् सुतंश्रीशुकम् ॥ ४२॥ पुरागार्कः इति । अन्येषुगुगेषुहाईतमोनिर्नाशकः वेदार्कं आसीत् अधुनेदानीकलौतुतद्दोषवाहुल्येननष्टदशां भ्रानाभावात् । तन्मुखार्थप्रकाशकः पुराग्यरूपोऽर्कउदितः ॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतप्रदीपे प्रथमस्कन्धे तृतीयाध्यायार्थप्रकाशः॥ ३॥

### भाषा टीका।

सर्व वेद इतिहासों का सार सार निकाल हुये इस भागवत को आत्म वेत्ताओं मे श्रेष्ठ अपने पुत्र शुकदेवजी को प्रहण कराया ॥४१॥ तिन शुकदेवजी ने गंगाके तटपर अनशन वत धारण किये हुये परम ऋषियों करके वेष्टित महाराज परीक्षितजी को अवण कराया ४२ हे विप्रो तहां परम महातेजस्वी विप्रार्थ श्रीशुक्देवजी के कीर्तन करते समयमे मैनेभी तिनके अनुग्रह से तहां वैठकर अध्ययन किया ४३ सो मेरी जैसी बुद्धि है और जेसे मै पढा हों तैसा आप को सुना ओंगा ॥ ४४॥

श्रीकृष्ण भगवान् जव धर्म ज्ञानादिकों के सहित खधाम को पधारे तव कलियुग मे अज्ञानी पुरुषों के लिये यह पुराग रूप सूर्य

उदय किया है ॥ ४५ ॥

इति प्रथमस्कंध का तृतीयाध्याय ॥ ३ ॥

शौनक उवाच

# चतुर्थोऽध्यायः ।

इति ब्रुवागां संस्तूय मुनीनां दीर्घतत्रिगाम । वृद्धः कुलपतिः सूतं वह्वृचः शौनकोऽव्रवीत् ॥ १ ॥ सूत सूत महाभाग वद नो वदतांवर। कथां भागवतीं पुण्यां यदाह भगवाञ्छुकः ॥ २ ॥ कस्मित् युगे प्रवृत्तयं स्थाने वा केन हेतुना । कुतः सञ्चोदितः कृष्णाः कृतवान् संहितां मुनिः ॥ ३ तस्य पुत्रो महायोगी समद्विक्विकल्पकः। एकान्तमतिरुन्निद्रो गूढो मूढ़ इवेयते ॥ ४ ॥

### श्रीधरस्वामी ।

तुर्ये भागवतारम्भकारणात्वेन वर्ण्यते । व्यासस्यापरितोषस्तु तपः प्रवचनादिभिः॥०॥

इत्येवं प्रसन्नतया श्राविषयामि इति ब्रुवागाम् । सुनीनां बहूनां मध्ये एकेन् वक्तव्ये यो वृद्धः वृद्धेष्विप वहुषु यः कुलपितः गण-

मुख्यः तेष्वपि बहुषु यो वह्वृचः ऋग्वेदी तेन वक्तव्यम् । अत एवम्भूतत्वात् शौनकोऽव्रवीत् ॥ १॥

कस्मिन् वा स्थाने । केन हेतुनेति महाभारतादिधम्मेशास्त्राणि कतवतः पुनरेतत्संहिताकरणे कि

कारगामित्यर्थः। कुत इति सार्व्वविभक्तिकस्तिसः केन प्रवर्त्तित इत्यर्थः। कृष्णां व्यासः॥ ३॥

यदुक्तं स तु संश्रावयामासेति तत् शुकस्य व्याख्यानादिकं कथं घटितमिति प्रष्टुम् तस्यासङ्गोदासीनतामाह तस्येति द्वाभ्याम् । समदक् समं ब्रह्म पर्यात । अतो निर्विकल्पकः निरस्तभेदः । किञ्च एकस्मिन्नेच अन्तः समाप्तिर्यस्यास्तथाभूता मितर्यस्य सः। यतः उन्निद्रः मायाशयनादुद्धुद्धः "या निशा सर्व्वभूतानां तस्याभित्यादिस्मृतेः। अतएव गूढः अप्रकटः मूढः इव प्रतीयते ॥ ४॥

# दीपनी ।

कुलपतिरिति । ऋषीगाां गगोषु मुख्यः कुलपतिरित्युच्यते । तल्लक्षगां यथा । मुनीनां दशसाहस्रं योऽघदानादिपोषगाति । अध्या-वयति विप्रिषरसी कुलपतिः स्मृतः ॥ १ ॥ २ ॥ स त्विति पूर्वाध्यायस्य ४२ स्रोकः ॥ ४॥ ( इयं संहिता । तत "संहिता श्रुतिजीविकेति राज्दरत्नावालेः ॥ ३॥ )

# श्रीवीरराघवः।

इत्थेलब्धासरःशौनकःपृच्छतीत्याहव्यासः इतीतिअत्रव्यासउवाचेतिपठचतेयुक्तंचैतत् कृत्स्नप्रबंधस्यव्यासोऽक्तिक्तपत्वेऽपिपरीक्षिच्छुक शानकरूपः स्रोकाद्द्रयंतेतेषांसर्वेषामादौ शौनकसूतप्रश्नोत्तरत्वज्ञापनायतेषांस्रासोक्तित्वज्ञापनायचतदादौत्यासउवाचेत्य-त्तरप्रकारानुकारक्रपाः स्रोकाद्द्रयंतेतेषांसर्वेषामादौ शौनकसूतप्रश्नोत्तरत्वज्ञापनायतेषांस्राक्तित्वज्ञापनायचतदादौत्यासउवाचेत्य-स्तरप्रकाराज्ञ । स्वाचित्रवाकाचित्रवर्थातस्तर्यविविक्षितत्वाच्छीनकादेर्याचिनस्यनियतप्रष्ट्रंतरादेरभावादेवासुकउवाचेतिपाठायोगात् ॥ स्यपाठावद्यंभावात्काचित्रकातेनकाष्यस्य वास्तिकार्यस्य । स्वाचित्रकात्रका क्रिक्तिकार्यस्य । एतेनात्रैवव्यासउवाचेतिपठ्यतेनकाष्यन्यत्रास्मिन्युराग्रोतत्रम् लंग्यमितिकोषांचिदादांकाप्रत्युक्ता इतीत्थंबुवागांसूतंसंस्तूयदीघेसत्रिगां ग्तन। त्र प्राचित्रानां मुनीनां कुलस्यसमूहस्यपतिः कुलशब्दस्यनित्यसापेक्षत्वोद्दवदत्तस्यगुरुकुलमित्यादाविवसमासः बृद्धः ज्ञानेनवयसाच-ब्रह्मसंत्रेगादीक्षितानां मुनीनां कुलस्यसमूहस्यपतिः कुलशब्दस्यनित्यसापेक्षत्वोद्दवदत्तस्यगुरुकुलमित्यादाविवसमासः बृद्धः ज्ञानेनवयसाच-वृद्धःवहुचःऋग्वेदीशौनकोऽत्रवीत्॥१॥

ःबहुन्न का विकास के स्वत्याद्या के स्वत्य का विकास स्वत्याद्य के स्वत्य के तद्वारुप्य क्रिंग्यस्मागवतपुरागाप्रतिपाद्यां कथांनोस्मभ्यंवद्भागवतंविधिनिष्टयद्भागवतं भगवान् शुक्तआहपरीक्षितइतिशेषः हेवद्तांवरभागवतिश्रीमद्भगावतपुरागप्रतिपाद्यां कथांनोस्मभ्यंवद्भागवतंविधिनिष्टयद्भागवतं भगवान् शुक्तआहपरीक्षितइतिशेषः

हवर । कथानीर वृतस्यापिभागवतस्यबुद्धानिष्कृष्टस्ययदित्यनेनपरामर्षः ॥ २॥ स्यापिमाणपा उँ । प्रविसामान्यतःपृष्ट्वाविशेषतः पृच्छाति कस्मिक्षितिइयंमागवतीकथाकस्मिन्युगेप्रवृत्ताइत्येकः प्रश्नःकस्मिन्स्थागेइत्यपरः केनहेतुनेतिः प्रविसामान्यतःपृष्ट्वाविशेषतः केष्णोपितिवैषायवः स्यांसंहितांभागवतस्यांकत्रवार्कः

त्वसामान्याः वेतः केनपुंसासंचोदितः कृष्णोद्धनिद्धैपायनः इमांसंहितांभागवतक्षांकृतवानितिचतुर्थः ॥ ३॥ तृतीयः कृत कस्माद्धेतोः केनपुंसासंचोदितः कृष्णोद्धनिद्धैपायनः इमांसंहितांभागवतक्षांकृतवानितिचतुर्थः ॥ ३॥ तृतीयः कृत कस्माद्धेताः कार्याद्धतामात्रवाभागितेत्ववद्याभागितेत्ववद्धतामात्रवाभागितेत्ववद्याभागितेत्व यः कुत पर्णाः विवासिक्षात्रां विवासित्र विवासिक्ष विवासिक्य विवासिक्ष विवास यदुक्तस्तुस्याप्तानिकार्यामाश्रेष्ठः श्रेष्ठत्वमवाहसमध्कसविदेवमञ्जष्यादिशारीरजातंप्रधानपरिशामकपत्येनपराक्तवेनचरीवानै कृष्णास्यमुनिः पुत्रः सुकोमहायोगोश्रेष्ठः श्रेष्ठत्वमवाहसमध्कसविदेवमञ्जष्यादिशारीरजातंप्रधानपरिशामकपत्येनपराक्तवेनचर्णवाने कृष्णास्यमुनिः पुत्रः सुकोमहायोगोश्रेष्ठः श्रेष्ठत्वमवाहसमध्कसविदेवमञ्जष्यादिशारीरजातंप्रधानपरिशामकपत्येनपराक्तवेनचर्णवाने

7

#### श्रीवीरराघवः।

काकारत्वेनसर्वत्रानुस्यूतंपरमात्मानंसत्यक्षानादिकल्याणगुणाकरत्वेनचेत्येवंरूपंसमंपद्यतीतिसमहक् एवसमिवधमेवसमद्शित्वं विद्या विनयसंपन्नेष्ट्राह्यागिवहस्तिनि शुनिचैवश्वपाकेचपंडिताः समद्शिनः" इत्यादावण्यधीयते निर्विकल्पकःभेदानुसंधानरहितः देहगत विकल्पानांदेवमनुष्यत्वादीनामात्मिनिनारोपयिता यद्वा अबद्धात्मकस्वतंत्रवस्करहितः एकांतमितः एकांताऽव्यभिचारिग्णीनिश्चितेतियावतः मितिभगदितयस्यतथाभृतः उन्निद्धः जागरूकः "यानिशासर्वभृतानांतस्यांजागितसंयमीत्युक्तविधजागरूकहत्यर्थः गूढःस्वमाहात्म्यानाविष्का रशीलः मृद्धोऽक्षद्द्येयतेहदयतद्द्यर्थः ॥ ४॥

# श्रीविजयध्वजः ।

सोऽहंत्रःश्रावयिष्यामीतिस्तेनोकोऽपिशौनकः श्रीभागवतश्रवग्रेश्रद्धालुत्वदर्शनायविशेषप्रश्रायस्तमाह इतीति दीर्घसत्रिणांदी-र्घकालीनंसत्रमेषामस्तीतितेषांमध्यक्षानवयोद्ददःऋषिकुलाचाररक्षकःबहुचःऋग्वेदेषुनिष्णातःशौनकः इतिब्रुवाणांस्तंसंस्तूयस्तमब्रवी-दित्यन्वयः ॥ १ ॥

महाभाग भाग्ययुक्त स्तस्तेतितात्पर्योद्धिरुक्तिः एकत्रपुरयकर्भवासनेतिवा शुकोभगवान्पूजावान्पुनातीतिपुरयांयांभागवतींकथां-आह परीक्षितइतिशेषः हेवदतांवर तांकथांनोस्माकंवदेखन्वयः॥२॥

विशेषप्रश्नंदर्शयति कस्मिन्निति चतुर्गायुगानांमध्येकस्मिन्नियंप्रवृत्ताकस्मिन्वास्थानेदेशेकेनवाकारग्रोनकस्माग्रेतोःसंचोदितःकृष्ण

द्वैपायनइमांसंहितांकृतवानित्यन्वयः॥३॥

शुकःपरीक्षितंश्रावयामासेतित्वद्वचनमनुपपन्नमेवकेनापिश्रीशुकावगमनस्यासुलभत्वादित्याशयवानाह तस्येति तस्यव्यासस्यपुनः शुकःमहायोगीमहान्नानिमहाध्यानीवाअतपवसर्वदेशकालवस्तुषुन्नानादिसर्वगुगौः सममेकप्रकारंब्रह्मपश्यतीतिसमहक् मयाश्रियासहव-तंतद्दतिवासमं अतपविनिर्वकलपकः इदंमदीयंतत्त्तदीयमितिभेदबुद्धिमपहायसर्वमीश्वराधीनमितिस्थितः अतपवपकपवांतः एकांतः तस्मिन् स्रिंगिनसः संततगतिर्यस्यत्या अतपवोद्वतानिद्वाश्रज्ञानादिदोषपरंपरायस्मात्सतथा भस्मनावग्रदः मूदहवअन्नद्वश्यतेष्ठभेनोति-शेषः तस्मान्तदर्शनमसुलभमितिमन्यहत्यन्वयः ॥ ४॥

## सुबोधिनी।

तुर्यभागवतारंभकारणत्वेनवगर्यते व्यासस्यापरितोषस्कतपःप्रववनादिभिः (क) एवंभागवतार्थस्यानिर्द्धारस्वाधिकारतः त्रिभिःकृतोद्वितीयेतुत्रिभिस्त्याज्यसमान्वतः (ख)

मध्याधिकारेयच्छास्त्रंतदत्रविनिरूप्यते नारदस्याधिकारित्वाच्छ्रोतुर्श्चिताकुलत्वतः (ग)

तत्राध्यायेचतुर्थेतुव्यासचितानिरूप्यते उत्तमप्रक्रियापश्चाद्वसुर्हेतुनिरूपणात् ( घ )

पूर्वप्रकरणेखाधिकाराजुसारेणशास्त्राथाँनिरूपितः तत्रमुलत्वेनभागवतमुक्तमः यस्मिन्भागवतेश्रुतेस्त्रस्यायंशास्त्रथः प्रतिभातःतदेवा स्माभिरपिश्रोतव्यमित्रायेणशौनकः स्तंपृच्छतीत्याह व्यासउवाच इति (ङ)

इतिब्रुवागामितिसर्वत्रहिवक्तुर्वाक्यसमाप्त्यनंतरंश्रोतुःप्रश्नाः अत्युत्कंठेत्विहासमाप्तावेवप्रश्नइत्याह ब्रुवागामितिसंभावनमाश्रेगापृष्टे इतिब्रुवागामितिसर्वत्रहिवक्तुर्वाक्यसम्यक् स्तोत्रंकृतवंतदत्याह संस्त्येति संस्तवनंत्रथाह्यहिःपूर्वमाकांक्षायाः प्राबल्यात् सर्वेरेवपृष्टं अमलेशास्त्रार्थेनिकपितेवक्तरिमहत्याश्रद्धयासम्यक् स्तोत्रंकृतवंतदत्याह संस्त्येति संस्तवनंत्रथाह्यहिःपूर्वमाकांक्षायाः प्राबल्यात् सर्वेरेवपृष्टं अधुनाकिचिद्युत्कृष्टमध्यर्थसहस्रसंवत्सरेचभगवद्वतारिनश्चयात्तदर्थमेवच सत्नारंभात्कोलाहले सम्यक् श्रवगां न भविष्यतीति सर्वेषु श्रग्वत्सु तत्संवंथी देवतास्वरूपाभिन्नः शोनकः पृच्छतीत्यर्थः । वृद्धो ज्ञानवृद्धः कुलस्य ऋषिकुलस्य पितिनियामकः बुद्धेनिद्धारो ज्ञानवृद्धे भवति उत्तरत्र प्रचारार्थं वचनविश्वासः कुलाचार्ये भवतीति वृद्धः कुलपतिरिति पद्वयेन ज्ञापितम् ॥ १ ॥

ज्ञानकृष्य प्रभा । भागवतविषयकः कर्तृविषयको वक्तृविषयकः श्रोतृविषयकश्चेति । तत्र प्रथममाह । सूत स्तेति आदरे विद्या । तव तु महाभाग्यं यद्भागवतं श्रुतवानसीति महाभागेति संबोधनम् । नः अस्मभ्यं न श्रोतृत्वमात्रमस्मासु किंतु अस्मभ्यं भागवतं विद्यामिति चतुर्थीप्रयोगः । वदतां मध्ये श्रेष्ठ निर्द्यासासः । वदतां मध्ये त्वमेव श्रेष्ठः । यस्यां कथायां श्रुतायां त्वयेव शास्त्राशों विद्यासानेव कथां वद । पुग्यां धर्मकृषां विद्यितत्वाद्यागवत् । श्रुद्धाधिक्ये हेतुः यद्यस्मात् कार्गात् भगवान् शुक्त आह । शुक्त इति मुक्तः । भगवानिति पूर्णगुगाः ॥ २ ॥

मुकः । नगर्या । कस्मिन् युगइति । कर्तुः परिकरापेक्षत्वात् कर्तृप्रश्चे परिकरागामि प्रश्चः कालदेशहेतवो हि परिकराः प्रयोजक हितीयं प्रश्चमाह । कस्मिन् युगे इयं प्रवृत्ता कस्मिन् वा स्थाने केन वा हेतुना यथाऽत्रचित्तवैयग्यं तद्भावो हेतुः। कर्ता च त्रिषु प्रवृत्तो वा हेतोः प्रेरितः प्रवृत्तीत्रयः प्रश्चाः करगो चैकः मुनिरिति मननप्रतिविधकायाः संहितायाः कथंकरगाम है। केन वा प्रेरितो भवतु । तस्य पत्रहति । तस्य पत्रहति

कित वा आर्था तृतीयमाह पंचिमः। तस्य पुत्रहाते। वक्तृत्वेन पृष्टत्वात् नाध्येतृत्विनिम्तसंदेहा इहोच्यंते ते चाग्ने वक्तव्याः। महायोगी समाधिस्यः तृतीयमाह पंचिमः। तस्य पुत्रहाते। वक्तृत्वेन पृष्टत्वात् नाध्येतृत्विनिम्तसंदेहा इहोच्यंते ते चाग्ने वक्तव्याः। महायोगी समाधिस्यः प्रथमं योगो दुःखदोपि भवति। प्रवृद्धस्तु सुखदः। ताहशस्य कथाकथनमयुक्तमिति भावः। किंचसमहक् ब्रह्मविदित्यर्थः। उद्यावच प्रथमं योगो दुःखदोपि भवति। किंच। निर्विकल्पकः। सांख्यप्रोक्तज्ञानसक्तिसिद्धः निर्गता विकल्पाः प्राकृतायस्य। किंच प्रकांतमितः विक्रकः वुद्धसाध्यं च प्रवचनम् । किंच उन्निद्धः उद्धता निद्रा यस्येति स्वप्नहण्टारिष्टिनवृत्यपेक्षारिहतोऽपि। किंच गूढः संगाद्धश्रमुद्धिजमानः । अत-एकाते मितर्थस्य। किंतु भूढ इव ईयते ज्ञायते॥ ४॥

दृष्ट्वानुयान्तमृषिमात्मजमप्यनमं देखोह्निया परिदृधुर्नसुतस्यचित्रम्। तद्दीक्ष्यपुच्छतिमुनौजगदुस्तवास्ति स्त्रीपुन्भिदानतुसुतस्यविविक्तदृष्टेः॥ ५॥ कथमालचितः पौरैः संप्राप्तः कुरुजाङ्गलान्। उन्मत्तमूकजडवद्विचरन् गजसाहुये ॥ ६ ॥ कथं वा पाण्डवेयस्य राजर्षेम्नीनेना सह। संवादः समभूत्तात यत्रेषा सात्त्वती श्रुतिः॥ ७॥

#### श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

तुर्येऽस्य शास्त्रवर्यस्य वक्तुः श्रोतुश्च सर्व्वतः । श्रेष्ठचं व्यासाप्रसादश्च कथ्यते यद्विनैव हि ॥ ० ॥ वृद्धो वयसा कुलपतिरिति कुलेन च वहुच इति वेदाभ्यासोत्थेन ज्ञानेन चेति शौनक एव प्रश्नकर्तृत्वेन तैर्व्यवस्थापित इतिभावः १ स्त स्तेति हर्षेगा द्विरुक्तिः। यत् याम ॥ २॥

कुत इति सार्व्वविभक्तिकस्तिसः केनेत्यर्थः। कृष्णो व्यासः॥ ३॥

निर्दिवकल्पकः निर्भेदज्ञानवान् । एकस्मिन्नेवान्तः समाप्तिर्यस्याः सा मतिर्यस्यसः । निद्रा अविद्याः तस्याः सकाशाःदुद्गतः । "या निशा सर्व्वभूतानां तस्यां जार्गीत संयमीति स्मृतेः। ईयते प्रतीयते॥ ४॥

## सिद्धान्तप्रदीपः।

वः श्रावियष्यामीति ब्रुवागाम् । वब्ह्वः ऋग्वेदी ॥ १॥

यत् याम् ! शुक आह परीक्षिते इति शेषः । तांनोवदेत्यन्वयः ॥ २ ॥

कस्मिन् युगे । संहिताप्रवृत्ता कस्मिन्स्थाने केनहेतुनाकुतः । केनसंचोदितः रुष्णः श्रीव्यासः संहिताकृतवानित्यन्वयः कुतः ।

इति सार्वविभक्तिकस्तिसः॥३॥

सतुसंश्रावयामासहहाराजं परीक्षितमित्युक्तम् । तत्र शुकस्यव्याख्यानादिकमघटमानिमवाभिष्रेत्याह । तस्येति तस्यव्यासस्यपुत्रः शुकः चिद्चिद्रपमिदंविश्वमेकस्यैवानंतराक्तेः कार्यनात्र किचिदुपेक्षणीयमाद्रणीयं वेति समप्रयतीतिसमद्दर् । अतप्वकार्यस्यशरी-ब्रह्मैवेदंसंघीमितिविज्ञानाश्चिविकल्पकोभेदानुसंघानरहितः । रेगाभिन्नत्वेपिकारगाव्यतिरिक्तस्थिति प्रवृत्त्याद्यभावाद्वसाभिन्नत्वेसित स्वार्थेकः एकांताभगवद्ध्याननिष्ठामितर्थस्यसः एकांतमितः अतएव उन्निद्रः जागरूकः "यानिशासवैभूतानां तस्यांजागितसंयमीति स्मृतेः गूढः गुप्तविद्यः। अतएव मृढ इवेयते प्रतीयते॥ ४॥

#### भाषा टीका।

व्यास जी बोले ऐसे वोलते भये सूत जी कों सुंदर स्तुति करके दीर्घ काल तक यज्ञ करने को बैठे हुये मुनियों के मध्य मे बुद्धसब के मुख्य ऋग्वेदी श्री शीनकजी वोलते भये॥ १॥

हे सूतजी हे बडभागी हे बक्ताओं मे श्रेष्ठ जिस पुग्यभागवती कथा को शुक भगवानने कहा है ताको हगसे कहो ॥ २॥ किस युगमे किस स्थान मे किस हेतु से वह कथा प्रवृत्त भई किसके कहने से व्यास मुनि जीने इससंहिताको किया है॥३॥ विस् अपन जीके पुत्र तो महा योगी सम दृष्टि वाले भेद दृष्टि रहित एकांत मतिवाले संसार निद्रासे रहित गुप्त हैं और मूढ सरी के अज्ञानियों को माळूम होते हैं॥ ४॥

# श्रीधरस्वामी।

निर्विवकल्पकत्वम् प्रपश्चयति रष्ट्रीति । आत्मक्षं शुकं प्रवजन्तम् अनुयान्तम् अनुगन्छन्तम् ऋषि व्यासम् अनग्रमपि रष्ट्रा जले की-निव्यक्षण्या । हिया लजाया परिद्धुः वस्त्रपरिधानं कृतवत्यः । अनग्रमपीत्यनेनाथीत् तत्सुतो नग्न इत्युक्तम् । नग्नस्य पुरतो इत्या त हिया न परिद्धुः । तिक्षित्रम् वीस्य । इयं श्ली अग्रम प्रमानिति भिदा भेटस्त्र नाथीत् । वसस्य पुरतो इन्त्यो द्वा जा किया न परिद्धुः। तिश्चित्रम वीस्य । इयं श्री अयम पुमानिति भिदा भेद्स्तवास्ति स्तर्य पुनर्भेदमितनीस्ति । उत्तर्य पुमानिति भिदा भेद्स्तवास्ति स्तरस्य पुनर्भेदमितनीस्ति । उत्तर्य पुनर्भेदमितनीस्ति । विविका पूता दृष्टियस्य ॥ ५॥ वका पूरा हाड़ । प्रवस्भृतोऽसी कथमालक्षितः ज्ञातः । कुरवो जङ्गलाश्च देशविशेषाः तान् संप्राप्तः प्रथमम् । ततो गजसाहवये विचरतं गजेन सहित एवम्भृतोऽसी कथमालक्षितः ज्ञातः । कुरवो जङ्गलाश्च देशविशेषाः तान् संप्राप्तः प्रथमम् । ततो गजसाहवये विचरतं गजेन सहित एवम्भूता वर्ष तस्मिन् हस्तिनापुरे हस्ती नाम राजा तेन निमितत्वात्॥ ६॥ आह्वयो नाम यस्य तस्मिन् हास्तिनापुरे हस्ती नाम राजा तेन निमितत्वात्॥ ६॥

# स गोदोहनमात्रं हि गृहेषु गृहमेधिनाम् । अवेत्तते महाभागस्तीर्थीकुर्वस्तदाश्रमम् ॥ ८॥

#### श्रीधरखामी।

एवम्मूतेन मुनिना सह । यत्र संवादे एषा सात्वती भागवती श्रुतिः संहिता ॥ ७ ॥

एतद्वर्वाख्यानं बहुकालावस्थानापेक्षम् तस्य त्वेकत्रावस्थानं दुर्छभिमत्याह स इति । गोदोहनमात्रकालं प्रतीक्षते तद्पि न भिक्षार्थम्

किन्तु तेषामाश्रमं गृहं तीर्थीकुर्वेन् पवित्रीकुर्वेन् । तस्मादेवम्भूतोऽत्र वक्तेत्याश्चर्यम् ॥ ८ ॥

#### दीपनी।

देव्यः अप्सरस इति । देवीशब्देन अप्सराजातेर्प्रहणां कथामिति चेत् पश्यन्तु तावत्—तस्याम् क्रीडन्त्यभिरतास्ते चैवाप्सरसाम् गणां इति महाभारतीयशान्तिपर्व्वाणि ३५३ अध्यायवचनम् ॥ ५—७॥ गोदोहनकालो मुहूर्त्ताष्टमभागः पश्चदशकलात्मकः स्मृत्यादौ प्रसिद्धः ॥ ८॥ ९॥

#### श्रीवीरराघवः

तस्यक्षानाधिक्यमेव व्यंजियतुंकंचिदितिहासमाहदृष्ट्वेत्यनेनकदाचित्किचिद्देविश्रयः नग्नाजलेविह्रंत्यः पुरतोगच्छंतंशुकमालोक्यवासां सिनपिदिश्वस्ततः पृष्ठतः आयांतं व्यासमालोक्यतुह्रियापिदिश्वः तिद्वंचित्रमवलोक्यश्रीव्यासेपृच्छितिशुकमवलोक्यापिवासांसिकिनपिदिश्वर्यमांत्वत्रलोक्यपिधित्यथेतितदाताऊचः तवतुस्त्रीपुरुषविवेकोस्तितवस्त्रतुपरमात्मिनिष्ठेकमनसस्तद्वचितिरक्षानाभावेनस्त्रीपुंविमागोनास्ति अतस्तमवलोक्यापिलज्जारिहतानपिद्धीमोतिसोऽयमत्रोच्यते आत्मजमनुयांतमन्ग्नपिद्धाविव्यासंदृष्ट्वादेवानांस्त्रियः हियालज्जयापिदिश्वः वासांसीतिशेषः स्तरस्यनग्नस्यापिद्शेनेनपिद्धः तिद्विवेवंविश्यमुनौ व्यासेपृच्छितसित जगतुःदेव्यद्वयनुन्वंगःकिमितितवस्त्रीपुंभिद्दास्त्रीपुंभेदोस्तित्वत्स्यतुनास्तितत्रवहेतुः विविक्तेत्रकृतिपुरुषविलक्ष्योपरमात्मन्येवःद्विध्यस्यतथाभूतत्वाक्तद्वर्शं नेनापिनास्माकंलज्जावभूवेति ॥ ५ ॥

मनापिनास्मापाळकात्पर्यात स्वान्ध्यात्रात्र्य स्वान्ध्य स्वत्य स्वान्ध्य स्वान्य स्वान्य स्वान्य स्वान्य स्वान्ध्य स्वान्ध्य स्वान्ध्य स्वान्ध्य स्वान्ध्य स

पिसादितिव्युत्पत्तः सप्रातपाद्यतयास्तातिसात्पताम् जुनस्त्रम् अत्याद्वा स्वाद्वा स्वाद्वा स्वाद्वा सप्रातपाद्वा सप्रातपाद्वा स्वाद्वा स्वा

# श्रीविजयध्वजः

कुरुजांगलंकुरुविषयंप्राप्तः गजसाहवयेहस्तिनापुरेकचिदुन्मत्तवत्कचिन्मूकवत्कचिज्जडवद्विचरन्मुनिः पुरवासिभिःकथमालक्षितः शुकत्वेनेतिशेषः पौरैरपियज्ज्ञानंदुःशकंकिपुनरंतः पुरनिवासिभिः॥ ५॥

शुकत्वनातरान्य पर्यापापुरस्यापपुरस्यापुरस्यापुरस्यापुरस्याद्यायायवानाह कथंवेति यत्रययोः संवादेसात्वताहरेस्तत्संध-क्विचपरीक्षितः तद्दर्शनानंतरकालीनस्तेनसहसंवादः स्वतरामसुलभइत्याद्ययानाह कथंवेति यत्रययोः संवादेसात्वताहरेस्तत्संध-धिनीसात्वतीश्चितिवर्ततेतेतादद्यःसंवादः पांडवेयस्यराजेषःपरीक्षितः तेनमुनिनासहकथंवा समभूत्नकथमपिघटतद्द्येकान्वयः ॥६॥ इतोपितस्यतेनसहसंवादोदुर्घटद्द्याद्ययवानाहस्रति तदाश्चमतेषांगृहस्थानांसतांगृहंतीर्थीकुर्वन् स्वपादकम्योनपवित्रीकुर्वन्महान

इतोपितस्यतनसहस्रवादावुधदेइत्याद्ययानाहस्रात त्यात्रमत्याष्ट्रहर्यास्यतम् इतोपितस्यतनसहस्रवाद्यतम् स्वपादकमग्रोनपवित्रीकुर्वन्महान् भागः गृहमेधिनांगृहंगत्वापाग्रिभिक्षामाचरन् गोदोहनमात्रं ततोनाधिकम्अवाङ्मुखतयकमनास्तिष्ठितपरमन्यतो यातिहियसमात्तद्दन् क्रिनिम्ह्यकमित्येकान्वयः॥ ७॥

द्रोनमसुलमान्य अभिमन्युसुतंपरीक्षितं भागवतश्रेष्ठंप्राहुः किमितितत्राह तस्येतितस्येति तस्यपरीक्षितःमहाश्चर्यश्रोतृशामितिरोषः जन्मकिवंधनादीनिकमीशिचअस्माकंगृशीहीत्यन्वयः॥८॥

4

# कमसंदर्भः।

र्द्वेत्यादी मय्यनग्रत्वस्यापरिधाने हेतुत्वं तेन मर्यादावत्त्वस्य लक्षितत्वाभिकटागमनर्राष्ट्रियाद्यसम्भावनया तासाम् युक्तम् । सुते तु नग्नत्वस्य तद्वैपरीत्येन परिधाने हेतुत्वं युक्तमिति यद्यपि स्यात्तथापि यन्मदर्शने परिद्धुनं तु तद्दर्शने तिचत्रम् । तस्माद्मुम् न दृह्युरिति निश्चित्याप्युत्करठया कथश्चिद्दद्युरेवेति सम्माव्य तासामपलापखरडनार्थे दर्शनमेव भङ्गचा निश्चित्य पृच्छति श्रुतिर्वेदसारः॥ ७॥ सतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥

अवेक्षते प्रारन्धामासेन न तु तत्राप्यावेशेनेति शेयम् । स्त्रीपुंभिदाज्ञानस्याप्यभावात् । अत एव तीर्थीकुर्विति स्वभावतः एव ॥८॥

११९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

## सुबोधिनी।

किंच सर्वदा असंप्रज्ञातसमाधिस्यः वहिःसंवेदरहित इति वक्तुमुपाख्यानमाह । इष्ट्रांऽनुयांतमिति । अत्र ह्येवं कथा । क्वित्सरोवरे नग्नाप्सरसः स्नांति तत्र नग्नं शुकंपुत्रमनुयांतं व्यासं दृष्टा वस्त्राणि पर्यधुः। ततो व्यासस्य संदेहोजातः। कथं मां वृद्धमनग्नं दृष्टा वस्त्राशि परिद्धित पुत्रं तरुशं नग्नं दृष्टा नेति संदेहात्ताः पृष्टवान् । तासामुत्तरं तवास्ति स्त्रीपुंभिदा न तु सुतस्येति । यद्यपि शाब्दं क्यानं वेदव्यासंस्य निर्विचिकित्सं खरूपशानं च तथाऽपि बहिःसंवेदनमस्ति । अधिकारित्वात । पुत्रस्य तु नित्यारूढसमाधित्वान्न बहिः संवेदनमस्ति । तदाह । विविक्त दृष्टेरिति । विविक्ता अनात्मस्पर्शरहिता दृष्टिर्थस्येति । एवमष्टगुणानां भगवत्कथाबाधकानां विद्यमान त्वात् कथं कथा प्रवचनमिति । यद्यपि प्रवाजकधर्मकरणात् "कीटवत्पर्यटेन्महीमिति" वाक्यात् समाधेरुत्थितः कैश्चिद्घ्टः प्रार्थितो निर्वधेनकथांकथयतीति न मंतव्यम् । ५। लोकानां ज्ञापकधर्मी महानयमिति नास्मिन्विद्यतइत्याह । कथमालक्षित इति। कुरुजांगलान् हस्ति नापुरदेशं आसमंताच्छुकोऽयमिति। पौरेरितिपुरवासाद्बुद्धिवेका भवति। ज्ञानं हि तथा भवति । बहिः स्थैयोदिनाःवचनेन सदाचारेगा च । तित्रितयं नास्तीत्याह । उन्मत्तमूकजडविति । गजेन समानः आह्वयो नाम यस्य तद्गजसाह्वयं नगर नामनिरुक्त्या तत्रत्या मत्ता इति लक्ष्यंते । अतएव ज्ञानभयाभावात्तीर्थविशेषत्वात् शुकस्य परिभ्रमण्म ॥ ६॥

अस्तु वा नगरे केषांचित ज्ञानं तथाऽपि राज्ञा सह संवादः अनुचितः । राज्ञो राजार्षेत्वात् अनाचारिषु श्रद्धाभावः। शुकस्य च मुनित्वात् सर्वेश्वत्वेन संवादसंभावनायां गमनाभावः । स च संवंधो वहुकालसाध्यः तदाह । यत्रैषा सात्वती

श्रुतिः वैष्णावो वेदः॥७॥

अस्तु वा तथापि गोदोहनकालादिधिककाले गृहस्थगृहे संन्यासिनो वासोऽनुचितः। सोऽपि वासो न रागात् । तथासित रागपू-त्येर्थे चिरकालमपि वासः संभाव्यते किंतु गृहस्थानामाश्रमं तीथींकुर्वन् । गृहेमेघा बुद्धिः अतिप्रवृत्तिनिष्ठा तथातेषामेव चाग्रे संन्यासः तथासति पूर्व दोषस्य विद्यमानत्वात् नाधिकारः संगदोषाच । अतः परमहंसैः गृहस्थाश्रमः अतीर्थोऽपि तीर्थीकियते ततो दोषद्वयं-गच्छतीत्याह । स गोदोहनमात्रमिति । यथा हि गौर्धमेदोहार्थं तावत्कालं निर्वधं सहते तथा जगन्मित्रैरिप सोढव्यमिति हिशब्दार्थः । द्रयमवस्था महाभाग्येन प्राप्यतइति महाभागइति विशेषगाम्॥८॥

# श्रीावश्वनाथचकवर्ती ।

निर्विकल्पकत्वं प्रमाण्यति दृष्ट्वति । आत्मन्नं शुकं प्रवज्य यान्तम् अनुयान्तम् ऋषिं व्यासम् अनग्रमपि दृष्ट्वा देव्यो जलकीडनादु-त्थिता लजाया परिदधुः खखवस्त्रागीत्यर्थः न तु सुतस्य शुकस्य दर्शने इत्यर्थः। तिचित्रम् अतो युवानं तत्रापि नग्नं तत्रापि सर्वत्र स्पष्टं विलोकयन्तं मत्पुतं वीक्ष्य पता न लिजाताः मां तु वृद्धे सवसनं इतो युवतयः खेलन्तीति तिहिशि हशमण्यद्दानं विलोक्य लजन्ते स्पष्ट । प्रधानित कारणम् पृच्छामीति मुनौ पृच्छति सति जगतुः इयं स्त्री अयम पुमानिति तच स्त्रीपुंभिदा अस्ति न तु तच स्म। तापः । स्तर्य। ननु कथमेतज्ञानं तत्राहुः। विविक्ता पूता दृष्टियस्य तस्येति। वयं युवतिजनाः कलाभिन्नाः स्त्रीपुंसयोर्नयनद्शेनेनैव तद्नत-स्तत्त्वं सन्बे ज्ञातुं प्रभवाम इति भावः ॥ ५॥ कुरुजाङ्गलान् देशविशेषान्। गजेन सह आह्वयो नाम यस्य तस्मिन् हस्तिनापुरे विचरन्॥ ६॥

पागडवेयस्य परीक्षितः। मुनिना शुकेन । श्रुतिः संहिता ॥ ७ ॥

पाय जन र । वहुकालावस्थितिरेतद्वचाख्यानुरोधेनैव संभवेन्नान्यथेत्याह । स गोदोहनमात्रं कालं भिक्षामिषेगा प्रतीक्षते वस्तु-त्युनार्यः तीर्थीकुर्वन् । तत्रत्यजीवमात्रेश्योऽपि सद्गति प्रदातुमिति भावः॥ ८॥ तस्स्तु तेषामाश्रमं तीर्थीकुर्वन् । तत्रत्यजीवमात्रेश्योऽपि सद्गति प्रदातुमिति भावः॥ ८॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

तस्यसमद्शित्वेन निर्विकल्पत्वंदर्शयति । दष्ट्रेति "धर्मपुत्रनिसेवखसुतीक्ष्णीचहिमातपी । श्रुत्पिपासेचवायुंचजयनित्यं जितिद्विय"इ-त्येषंविष्ठैः श्रामद्य्याराणः विद्यापरिद्धुः । वासांसीतिरोषः नत्वात्मजंदञ्चा परिद्धुः तद्संगत्वंचित्रमङ्गुतम् पुत्रस्यवीस्य किमस्य स्त्रीपुंभिदास्तितवेतिमुनौ देव्यः हियापरिद्धुः । वासांसीतिरोषः नत्वात्मजंदञ्चा परिद्धुः तद्संगत्वंचित्रमङ्गुतम् पुत्रस्यवीस्य किमस्य स्त्रीपुंभिदास्तितवेतिमुनौ अभिमन्युसुतं सूत प्राहुर्भागवतोत्तमम् ।
तस्य जन्म महाश्चर्यं कर्म्भाणि च गृणीहि नः ॥ ९ ॥
स सम्राट् कस्य वा हेतोः पाण्डूनां मानवर्ष्ठनः ।
प्रायोपविष्टो गङ्गायामनादृत्याधिराट्श्रियम् ॥ १० ॥
नर्मान्त यत्पाद्निकेतमात्मनः शिवाय हानीय धनानि शत्रवः ।
कथं स वीरः श्रियमङ्ग दुस्त्यजां युवैषतोत्स्रष्टुमहो सहासुभिः ॥ ११ ॥
शिवाय लोकस्य भवाय भूतये य उत्तमःश्लोकपरायणा जनाः ।
जीवन्ति नात्मार्थमसौ पराश्रयं मुमोच निर्विद्य कुतःकलेवरम् ॥ १२ ॥

#### सिद्धान्तप्रदीपः।

श्रीव्यासेषृच्छितसितिविविक्ते दृष्टिः विविक्तजगिद्धिलक्षणे ब्रह्माणि दृष्टियस्यतस्यतवस्रुतस्यपुंभिदानास्तीति देव्यः जगदुरित्यन्वयः ॥ ६॥ प्रवंभूतः कुरुजांगलान्देशान्प्राप्तः गजसाह्वये हस्तिनापुरे उन्मत्तमूकजडवत् विचरन्पौरेः कथमालक्षितः ज्ञातः॥ ६॥ असिकस्यविरक्तेनसंवादो दुर्घटइत्याह । कथमिति राजषः परीक्षितः एवंभूतेन मुनिनासहकथं संवादः संवभूव । यत्न संवादे श्रुतिः तत्तुल्या सातयित सुखयतीति सात्भगवान्सातेः सौत्रस्यग्यं तस्यिकिपिरूपम् सविषयतयास्या अस्तीतिसात्वती एषा संहिताप्रवृत्तााश स्थायिनो यायिनासंवादोदुर्घटइत्यभिप्रायेगाह । सद्दित गोदोहनमात्रम् यावताकालेनगौर्वुद्यते तावंतकालम् तीर्थीकुर्वन्पविद्वी-कुर्वन् ॥ ८॥

#### भाषा टीका।

एक समय में श्री शुकदेव जी नग्नहीं आगे चले जातेथे पीछे से वेद्ब्यास जी वस्त्र पहर कर जाते थे तब किसी सरोवर में देव स्त्री नग्न स्नान करती थीं शकदेव जीको देख कर उन्हों ने वस्त्र नहीं पहरे व्यास जीको देखकर लजा से बस्त्र पहरे वह आश्चर्यदेख कर व्यासजीने जब पूछा तबउन स्त्रियों ने कहा कि आपको स्त्री पुरुष का मेद बानहै शुद्ध दृष्टिवाले तुम्हारे पुत्र शुकदेवजीकोनहीं है॥५॥ कर व्यासजीने जब पूछा तबउन स्त्रियों ने कहा कि आपको स्त्री पुरुष का मेद बानहै शुद्ध दृष्टिवाले तुम्हारे पुत्र शुकदेवजीकोनहीं है॥५॥ ऐसे शुकदेवजी जब कुरु जांगल देश में आये तब पुरवासियों ने उनको कैसे जाना जो पागल गूंगा विकल सरीके हस्तिनापुर ऐसे शुकदेवजी जब कुरु जांगल देश में आये तब पुरवासियों ने उनको कैसे जाना जो पागल गूंगा विकल सरीके हस्तिनापुर

( दिल्ली ) मे विचरते थे ॥ ६ ॥
परीक्षित राजर्षिका वह मुनिके साथ कैसे संवाद भया जहां कि यह सनातनी श्रुति रूपकथा भई ॥ ७ ॥
परीक्षित राजर्षिका वह मुनिके साथ कैसे संवाद भया जहां कि यह सनातनी श्रुति रूपकथा भई ॥ ७ ॥
वह मुनि तो महा भाग्यवान हैं गृहस्थों के गृह मे उनके स्थान को पवित्र करने के अर्थ गउ दुहने के काल पर्यतहीप्रतीक्षा करते हैं ॥ ८ ॥

# श्रीधरखासी।

श्रोतुस्तु चिरतमतीवाश्चर्यम् !! अतः कथयेत्याह,अभिमन्युसुतं सूत इति पश्चभिः गृशाहि कथय ॥ ९॥ सम्राट् चक्रवर्ता । वेति वितर्के । कस्य वा हेतोः कस्मात् कारशात् । अधिराट् किवन्तः अधिराजां श्रियं सम्पद्मनाहत्य ॥ १०॥ यस्य पादनिकेतं चरशापीठम् । ह स्फुटम् । धनान्यानीय शत्रवो नमन्ति । अङ्ग हे सूत । युवा तहशा एव । ऐषत ऐच्छत् । अत्रार्ष- मात्मनेपद्म् । असुभिः प्राशीः सह ॥ ११॥

मात्मनपद् । प्राची परिति चेत्तत्राह शिवायेति । लोकस्य शिवाय सुखाय भवाय समृद्धये भूतये ऐश्वर्याय च ते जीवन्ति न तु विरक्तस्य कि धनादिभिरिति चेत्तत्राह शिवायेति । लोकस्य शिवाय सुखाय भवाय समृद्धये भूतये ऐश्वर्याय च ते जीवन्ति न तु आत्मार्थम् । एवं सिति असी राजा निर्विद्य विरज्यापि परेषामाश्रयं कलेवरं कुतो हेतोर्मुमोच नहि परोपजीवनं स्वयं त्यक्तमुचितः मित्यर्थः ॥ १२ ॥

# दीपनी।

( प्रायोपविष्ट इति । प्रायेगा मरगापर्यन्तानशनेनेति । परन्तु अयनम् आयः प्रकृत्यः आयः प्रायो मरगा भावे घञ्चप्रत्ययः । मरगार्थ-मुपविष्ट इत्यर्थः । इति बुधरञ्जनी ) ॥ १० ॥ १३ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

अन्यखपृच्छति अभिमन्युस्तामिति हेस्तअभिमन्योः स्रुतंपरीक्षितंमद्दाभागवतंप्राद्यः अतस्तस्यमद्दाश्चर्यंजन्मकर्माणिचनोस्माकं-गृह्याहिकथय ॥ ९ ॥

सद्दि पांडवानांपांडुवंशजानांमानंप्राशस्त्यंवर्द्धयतीतिवद्धनेःनंदादित्वात्कर्तारिल्युः सम्राट्सार्वभौमःसपरीक्षित्कस्यहेतोःकस्माद्धेतोर धिराद्श्रियमधिराज्यसंपदमनाहत्यगंगायांप्रायोपविष्टः ॥ १० ॥

नमंतीित रात्रवः आत्मनः स्वस्यशिवायात्मनांयोगक्षेमायधनान्यानीयादायसमध्येत्यर्थः यस्यपरीक्षितः पादनिकेतंपादपीठंनमंति हेत्याश्चार्येसवीरः परीक्षिद्यवासम्नपिदुस्त्यजांश्रियमधिराट्श्रियमसुभिः प्राग्तीःसहोत्स्रण्दुंत्यकुमैषतेच्छत् अहोअत्याश्चर्यमेतत् ॥ ११ ॥

नजुमहाभागवतंप्राहुरितित्वयैवोक्तत्वाद्भागवतानांच देहतदनुवंधिषुविरक्तेः खाभाविकत्वाचनेदमाश्चर्यमित्यतआह शिवायेतियद्यपि भागवताविरकास्तथापिउत्तमश्लोकोभगवानेवपरमयनंप्राप्यः प्रापकथाधारश्चयेषांतेजनाभागवतानात्मार्थजीवंतिर्कितुलोकस्यशिवायमंग-ळायभूतयेश्रियमवायतस्याउत्तरोत्तरोदयायचजीवांति एवंपराश्रयंपरैलोंकैः शिवाद्यर्थमाश्रयणीयपरोपकारकित्यर्थः कलेवरंकुतोहेतोान् विद्यहेयंमत्वामुमोचतत्याज ॥ १२ ॥

#### श्रीविजयध्वज:

तस्यवैराग्यहेतुंपृच्छति ससम्राडिति पांडवानामभिमानवर्धनः ससम्राट्अप्रतिहताश्च्यक्रवतींकस्यवाहेतोरिधराट्श्रियंचक्रवातसंप-दंळक्मीमनाइत्यतृगावत्कृत्वा गंगायांप्रायोपविष्टोभूदित्यन्वयः॥ १०॥

एवंविधर्श्रासंगत्यागेमहत्कारग्रोनभवितव्यंतिकमित्याशंक्याह नमंतीति शत्रवःमंडलपतयःआत्मनःशिवायस्वकल्याग्रायधनानिचा-नीययस्यपरीक्षितःपदयोर्निकेतंपीठाख्यस्थानंनमंतीत्यन्वयः अंगसूत सधीरःअसुभिःसहदुस्त्यजांश्रियं अधिराजसंज्ञामुत्स्रष्टुंहातुंइयेष-येच्छदहोत्राश्चर्यमेतदतोमहताहेतुनाभवितव्यंतिकिमितिभावः ॥ ११ ॥

पुनरपितदेवपुच्छति शिवायेति येउत्तमश्लोकपरायगाजनाः तेलोकस्यशिवादिप्राप्तयेजीवंतिनस्वार्थेजीवंतीत्यन्वयः तस्मात्परार्थे कजीवनोऽसौकस्मात्कारगात्परामुत्कृष्टांश्रियंनिर्विद्यविरज्यकलेवरंदेहंमुमोचेत्यन्वयः ॥ १२ ॥

इहास्यामवस्थायां प्रश्नराशीयितिकचितप्रश्ररूपंषृष्टस्वंतत्सर्विकिचनेत्यनुर्वरीकृत्यसम्यगाचक्ष्व कुतः छांदसाद्वेदविषयादन्यत्रपुराग्णा-दीवाचांविषयेकातंनिष्णातंमन्यइतियस्मात्तस्मादिखन्वयः ॥ १३ ॥

# सुबोधिनी

श्रोतुः प्रश्नमाह चतुर्भिः । अभिमन्युसुतिमिति । "पितृनाम्ना महत्त्वं हि मातृनाम्नातुहीनता । इति सर्वत्र बोद्धव्यश्रीमद्भागवतेऽपि च" अभितः परितो ( सर्वतो ) मन्युर्यस्य नत्वंतः क्षत्रियस्य चायं धर्मः । अतः क्रोधाभावाद्य वैष्णवः । स्तेति संबोधनं वृत्तांतपरिज्ञानाय । ळोकवृत्तपरित्यागेन भगवदेकपरायगो महाभागवतः। " विसृजति हृद्यं न यस्येति " वा प्राहुरिति सर्वलोकप्रसिद्धः। पूर्वमेव ताद-शस्य भागवतेन यो विशेषस्तरपरिश्वानाय पूर्व विशेषं पृच्छंति । तस्य जन्मेति महदाश्चर्य यत्र मृतस्य गर्भात्पतितस्य पुनर्जीवनिमिति भारतादिष्वेवमेव कथा कलिनिग्रहादीनि कर्माग्रि॥ ९ ॥

वैष्णवस्य प्रायोऽनुचित इत्यिमप्रायेगाह । स इति । परीक्षिति लौकिकोऽप्युत्कर्षीऽस्ति । सम्राट् चक्रवर्ती । पांडूनामिप मान वर्द्धयति । पांडवप्रतिष्ठया नास्य प्रतिष्ठा किंतु विपरीतेत्यर्थः । गंगयैव च सर्वपुरुषार्थेसिद्धिः कि गंगायां प्रायोपवेशनेन । पराजयस्वसं-भावित एव यतः अधिका राज्ञामपि श्रीर्शृहे यस्य वर्त्तते तामप्यनाहत्य। एवं लोकवैष्णवाश्यां प्रायोऽनुचितः ॥ १०॥

किंच लजा तु सर्वतो महती। विशेषतः खेषु तत्कथं राज्ञां मध्ये प्रायोपवेशनमित्यभिप्रायेगाह । नमंतीति । पादयोर्निकेतं पादपीठं पादुके वा । सर्वत्र देशेष्वस्य सिंहासने गत्वा स्वापराधमार्जनार्थे धनानि आनीय हेत्याश्चर्ये शत्रवोऽपि नमंपि । आत्मनः शिवायेति । क्षास्तु पूर्वमेवापहृतः खयं च संकटे पतिताः पुनः खदेशप्राप्तयर्थे धनानि प्रयच्छंतीत्यर्थः। असमर्थस्तस्य पुरुषार्थो न भवतीति न मंतन व्यम् यतो वीरः । वीररसस्य विद्यमानत्वात् । वीरस्य हि प्रायोपवेशेन मरगां लजाकरं भवति । किंच धनाद्यर्थे प्रायश्चित्तार्थे वा लोके व्यायोपवेशनं सिद्धं तत्सार्वभौमश्रियास्त्यागविषयत्वात् धनार्थं न भवति । तदर्थत्वे च कथं श्रियं त्यक्तवानिति । तत्रापि प्राणीः सह को श्रायाप्यति । लोके हि प्रागापेक्षयाऽपि धनं दुस्त्यजम् तस्करादिषु निर्मायात् । तत्रापि यूनः इच्छामात्रमपि दुर्लुमं कि पुनः करगां। स्तत्यवानीयामहोइत्याश्चर्यम् ॥ ११ ॥

प्रायश्चित्तादिना तु परलोकसाधनार्थं वैष्णावस्य प्रायोपवेशनं न भवति किंतु जीवनमेवेत्याह ।शिवायेति । प्रमादान्महापातकसंबंधे प्राथान्य स्था विद्याग उचितः। तेषांखतः सेवासामर्थ्याभावेऽपि तान् रष्ट्रा लोकातां करणां संभवति अतस्तेषां जीवनमेव सर्वेषां-प्राप व पान कि व होतं सुलं भवः उद्भवः लोके पुत्रपीत्राद्यभिवृद्धिः। "अमोघवीयो हि नृपा" इति वाक्यात्। भूतये ऐश्वर्याय। शिवाय भवति। कि नाक्यात्। भूतये ऐश्वर्याय। शिवाय गराज । शत वाक्यात् । भूतये ऐश्वयोय । अतः सर्वेषां पुरुषार्थसाधकस्य देहस्य त्यागोऽनुचितः । अशिमाद्यक्षेश्वयं भगवत्सेवायां, प्रासंगिकं "महापुरुषपूजाया" इति वचनात् । अतः सर्वेषां पुरुषार्थसाधकस्य देहस्य त्यागोऽनुचितः । निर्वेदन द्हाप गाप्ति । स्व क्षेत्रसम् । अस्यिक्षदेवहि धर्मस्य हेतुत्वं कले च अव्यक्तमधुरे वरमिति नामनिरुक्तवा अव्यक्तमः होति । निर्वेदहेतुरेव परित्यक्तव्यो न तु कलेवरम् । अस्यिक्षदेवहि धर्मस्य हेतुत्वं कले च अव्यक्तमधुरे वरमिति नामनिरुक्तवा अव्यक्तमः होति । निर्वेदहेतुरेव परित्यक्ति । स्व च मित्रस्य अन्यस्य केल्किकेको प्रामिक्षकाः द्येति । निवद् ७५ । विश्व सिक्ति । स्र च मिक्तिरसः अन्यस्य लेकिवेदयोः प्रसिद्धत्वात् । अतो मिक्तिरसाविर्मावके दारीरं रसाविर्मावे ॥ १२॥ कथं त्यक्तवानित्यर्थः॥ १२॥

सूर्त उवान्य

तत्सर्विनः समाचक्षु पृष्टोयदिह किश्चन। मन्ये त्वां विषये वाचां स्नातमन्यत्र छान्दसात् ॥ १३ ॥ द्वापरे समनुप्राप्ते तृतीयेयुगपर्यये। जातः पराशराद्योगी वासव्यां कलया हरेः ॥ १४ ॥ स कदाचित् सरस्वत्या उपस्पृत्रय जलं शुचि। विविक्त एक आसीन उदिते रविमण्डले ॥ १५॥ परावरज्ञः स ऋषिः कालेनाव्यक्तरंहसा । युगधर्म्यतिकरं प्राप्तं भुवि युगे युगे ॥ १६॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

अधिकृत्य राजन्तीत्यिधराजो युधिष्ठिराद्यास्तेपामपि श्रियं प्राप्तामनादृत्य ॥ १०॥ गृगाहि कथय॥९॥ पादनिकेतं पादपीठम् । ह स्फुटम् युवा न तु वृद्धः । ऐषत एंच्छत् । असुभिः प्रागौरिष सह ॥ ११ ॥

लोकस्य शिवाय मङ्गलाय । तदेव द्विधाभूतं विवृश्गोति । भवाय भवः संसारस्ति वृत्त्ये मशकाय घूम इतिवत् । यक्षा भवं संहर्त्त क्रियार्थोपपद स्वेत्यादिना चतुर्थी । भूतवे सम्पत्त्ये । पराश्रयं परेषामुपकारि । न हि परोपजीव्यम् वस्तु निर्विद्यापि त्यक्तुमुचितिमिति भावः ॥ १२॥

#### .सिद्धान्तप्रदीपः ।

सम्राट् । सार्वभौमः गंगायांकस्मात्प्रायोपविष्टः ॥ १०॥ नोस्माकम् गृगोहिकथय॥ ९॥ युवैवतरुगापवकथंकस्मात्असुभिः प्राग्णैः सहश्रियम् उत्स्रष्टुम् ऐषतपेच्छत् ॥ १२॥ शिवायकत्यागाय भृतयेपेश्वयीय भवाय पेश्वर्यस्योत्तरोत्तरोदयाय॥ १२॥

#### भाषा टीका ।

हे सूतजी अभिमन्यु के पुत परीक्षितजी को महातमा लोक भागवती से उत्तम कहते हैं उनके महाआक्षर्य रूप जन्म तथा कमी को 

मरगा पर्यंत उपवासवत को घारण किये॥ १०॥

जिनके चर्गा पांदुका को रात्रुलोग भी अपने कल्यागा के वास्ते धनों को लाकर नमस्कार करते हैं वह वीरराजा युवा होकर है सूत अत्यंत दुस्त्यज लक्ष्मी को प्राणों के सहित कैसे छोड़ने कों इच्छा किया अहो आश्चर्य है ॥ ११॥

अस्यत पुरुष अपने वा नाया ना ता नाया ना ता नाया ना ता नाया ना ता नाया के सम्बद्धिक लिये पेश्वर्यकेलिये जीते हैं अपने लिये नहीं ऐसे परोपकारी

द्यारीरकों विरक्त होकर क्यों त्याग किया ॥ १२ ॥

#### श्रीधरखामी ।

यत् किञ्चन पृष्टोऽसि तत् सर्व्व नोऽस्मक्यं समाचक्षु। यद्यस्मात् वाचां विषये गिरां गोचरे अर्थे स्नातं पारक्रतं त्वां मन्ये छान्दसादम्यत वैदिकाद्वचितिरेकेशा अञ्जविशाकत्वात ॥ १३॥

कस्मिन् युगे इत्यादिप्रश्नानां व्यासजन्मकथनपूर्वकमुत्तरमाह द्वापरे समनुप्राप्ते इति । कदैत्यपेक्षायामाह तृतीये युगस्य पर्यये पार

वर्ते। वासत्यां उपरिचरस्य वसोवींर्याजातायां सत्यवत्यां योगी ज्ञानी त्यासो जातः॥ १४॥

श्रमम् स्थानं स्चितम् ॥ १५॥ म रवा के कियुंगधर्मव्यतिकरादिकं वीक्ष्य सन्वेवर्णाश्रमाणां यद्धितं तत् द्धाविति त्तीयेगान्वयः। प्रायवितः वितीतानाग-तत्र च त गूर्ण विशेषान्वयः। प्रशास्त्र तत्र विशेषान्वयः। प्रशास्त्र विश्यः। तथा भुवि युगे युगे ॥ १६॥ तिवित् । अध्यक्तं रहोवेगो थस्य तेन कालेन युगधर्माणां व्यतिकरं सङ्करं प्राप्तम् वीस्य । तथा भुवि युगे युगे ॥ १६॥

#### · दीपनी ।·

( तृतीय इति । तृतीयत्वं फिलमादाय वैपरीत्येन गणनया त्रेतायुगावसाने इत्यर्थः । इति व्याख्यालेशः । ) परिवर्ते समाप्तिकाले सन्धावित्यर्थः । इति बुधरञ्जनी ॥ १४—२१॥

#### श्रीवीरराघवः

प्रदनमुपसंहरतितदिति नेस्माभिःपृष्टस्त्वंतदेतत्पृष्टंसर्वंसम्यगाचक्ष्वाख्याहि यदपिकिचनापृष्टमस्तितदिपसमाचक्ष्व यदसीतिपाठेयद्यस्मात्पृष्टस्त्वंततः पृष्टंतदेतत्सर्वमन्यदिपिकिचित्समाचक्ष्वत्वामन्यत्रछांदसाद्वेदवाक्यं विनावाचामितिहास पुरागादिद्भपागांविषयेस्नातंपारंगतमिषकृतंवामन्येवेदवाक्यव्यतिरिक्तेतिहासपुरागादि अवग्रे त्वामेवाधिकारिग्रंव्यासानुष्रहात्रोमहर्षासुतंमन्यदृत्यर्थः॥ १३॥

एवमापृष्टः स्तः कंह्मिन्युगेश्र हुत्तेयंमित्यादिप्रश्नान्प्रतिविवश्चस्तावन्तदुषोद्धातरूपंजनमप्रभृत्येतत्पुराणोद्योगावधिकं श्रीव्यासचरित्रंत तद्वप्रयुक्तंश्रीनारदहन्तांतंचाह्यापरदृत्यादिनायावत्षष्ठाध्यायसमाप्ति द्वापरेयुगेसमनुप्राप्तेतत्रापितृतीयेऽस्ययुगस्यपर्यायेऽवसानेपराश

राहवर्वासव्यामुपरिचरवसुवर्यिजातायांसत्यवत्यांहरेः कलयांशेनयोगीश्रीव्यासोजातःजञ्जे॥ १४॥

सन्यासःकदाचित्सरस्वत्यांनद्यांशुचिपवित्रंजलमुपस्पृश्याचम्येदंनित्यकर्मोपलक्ष्यां रविमग्डलेउदितेसिवपकोऽसहायः विविक्तेनिर्जने-

देशेआसीनउपविवेश ॥ १५ ॥

ऋषितिष्विल्ञानिगमद्रष्टापरावरङ्गः प्रकृतिपुरुषेश्वरूषपोत्कृष्टापकुष्टतत्त्वयाथात्म्यवर्शीसन्यासः अन्यक्तरंहःवेगोयस्यतेनदुर्निरीक्ष्यवेगेन कालेनहेतुनाभुविभूलोकेप्रतियुगंप्राप्तंधर्मन्यतिकरं धर्मन्यत्यासंकृतादियुगक्रमेगाप्राप्तं धर्मस्यवृद्धिद्रासादिकामित्यर्थः॥ १६॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

कस्मिन्युगेइतिप्रदर्नपरिहरति द्वापरइति कृतयुगापेक्षयातृतीयेद्वापरेयुतेयुगपर्यवसानेसमनुप्राप्तेसितहरेः कलयांद्रोनपराद्यारात्पराकृतः द्वारोहिंसायेनसतथोक्तः तस्माद्वासव्यांवसोरुपरिचरस्यपुत्र्यांसत्यवत्यांयोगीनित्यज्ञानीनाम्नाव्यासोजातोऽवतीर्गोऽतोद्वापरेयुगपर्यवसाने भागवतप्रवृत्तिरितिमावः ॥ १३ ॥

अवतारप्रयोजनमाह सकदाचिदिति सन्यासोभगवान्शुचिःशुद्धः कदाचित्सरस्वत्यानद्याजलमुपस्पृश्यसंध्याक्रियादिकंनिर्वर्त्यपश्चा-

इविमंडलेउदितेसतितत्तरेविविकेएकांतेस्वाश्रमएवासीनएकाकी ॥ १५॥

परावरज्ञःकालत्रयज्ञानीसः सर्वतःसारःसर्वोत्तमः ऋषिकुलावतीर्थाः परावरज्ञत्वेद्देतुर्वा विकालदर्शित्वाद्वा अव्यक्तरेहसाअनभिव्यकः

वेगेनसुवियुगेयुगेप्राप्तं युगधर्मव्यतिकरंयुगधर्मसांकर्यम् ॥ १६॥

तथातत्कृतंकालकृतंभीतिकानांभूतकार्यागांभावानांपदार्थानांशिक हासंचात्रप्यजनांश्चाश्रद्दधानान् तात्पर्यश्चन्याकिःसत्त्वान्निकत्साहा नृदुष्टामेधायेषांतेदुर्भेधास्तान्धारगाशकिश्चन्यान्वा एधशब्दवद्यमप्यकारांतः हसितायुषः अल्पायुषः ॥ १७ ॥

# क्रमसंदर्भः।

छान्दसादिति वेदपुराणायोबिक्किपिरिवाजकवद्भेदाभेद्व्यवस्थयोक्तम् । माध्यन्दिनश्रुतौ च वेदपुराणेतिहासानामपौरुषेयत्वेनाभेदनिद्धैशः इतः । यथा "एवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतग्रहःवेदो यज्ञव्वेदः सामवेदोऽथव्वीक्तिरस इतिहासः पुराणं विद्या
उपनिषदं इत्यादिना । ब्रह्मयज्ञाध्ययनेऽपि विनियोगो दृश्यतेऽमीषाम् । यद्ब्राह्मणानीतिहासपुराणानीति । अनेन च प्रणावादिमयं छन्दः
सर्वाण यद्वाक्यमत्रास्ति तत्रापि तस्याधिकारित्वं द्शितम् । किन्त्वत्र कश्चिदुच्चारो भेदको गम्यः । यः खलु स्वरण्लतादिवैशिष्ट्यमयो
वैदिकस्तदभावात् । न चैवं स्ताधिकारात् पुराणादीनां न्यूनत्वमाशङ्क्यम् । सकलिगमवल्लीसत्पत्रले श्रीभगवन्नाम्नि सव्वेषामधिन
कारात् सर्व्यक्षाद्यधिकश्चीभगवद्भक्त्वन्तरवत् । श्रीभागवते तु आत्मारामशिरोमणोः श्रीशुकस्यापि सर्व्यस्वदावेशात् ॥ १३ ॥

युगस्य तस्य द्वापराख्यस्य तृतीये पर्यये युगत्रयम्यद्विकम्यातिकम्य वैवस्वतमन्वन्तरादितस्तृतीय आगम्भने सतीत्यर्थः "पर्ययोऽति-

क्रमस्तिस्मिन्नितिपात उपात्यय "इत्यमरः॥ १४॥

स इत्यस्य टीकायां वदारिकाश्रमस्थानं स्चितमिति सरखत्यास्तत्र श्रवणात्। शम्याश्राश इत्येव तु तस्य नाम वस्यते ॥ १५ ॥ परावर्श्व इति त्रिकम् ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

# सुबोधिनी ।

एवं प्रश्नचतुष्ट्यमुक्त्वोपसंहरति । तत्सर्वमिति । उत्तरोत्तरप्रश्नेऽपि पूर्वस्य न दौर्वस्यम् । तदाह । सर्वमिति । नमु भागवतार्थेऽ-स्माकं परिचयः नान्यत्रेति न वक्तव्यमित्याह । मन्य इति । अत्रैवाशिकत्वाद्वेद्वे परं न परिचयः । तदाह । अन्यत्र छांदसादिति ॥ १३॥

#### सुबोधिनी।

प्रथमप्रदनस्य स्कंधांतरेषूत्तरं तृतीयचतुर्थयोक्तमप्रकरणे अतोहतुभूतत्वात् द्वितीय प्रदनस्योत्तरमाह । द्वापरहति । भागवतिर्माण्याः धेमेव मुख्यतया तस्यावतार इति प्रथमं जन्माह ब्रह्मकल्पस्य प्रथममन्वंतरस्य तृतीययुगपर्यावृत्तौ व्यासस्य जन्म । प्रथमं युगपर्यायोन् झानस्यससाधनस्य कालः । द्वितीयः कर्मणः । तृतीयस्तु भक्तः । तथापि धर्माणां बाधकत्वात् कृते त्रेतायां च न जन्म किंतु धर्मस्य द्विपरतायां संदेहे सर्वेषामेव संदेहः संशब्दार्थः । पराश्वरस्य भक्तत्वं पुराणांतरेष्वेवं सिद्धम् । मार्केडेयनमस्कारे वयोवृद्धवचनात् । उपित्यरवसोः पुत्री वासवी मत्स्यगर्भे जाताऽपि वीजधर्मयुक्तेव । अवतारप्रयोजनं योगीति योगः प्रवर्त्तनीयः । तत्रापि हरेः कलया । सर्वे दुःखदूरीकर्तुर्क्षानकलया । योगस्तु भक्तियोगः । झानस्य त्ववतार।देव तस्यापि फलं भक्तिः प्रयोजनं एवंभक्तिप्रवर्त्तनार्थमेवावतार इत्युक्तं भवति ॥ १४ ॥

तस्य प्रासंगिकमाइ। स कदाचिदिति। सभक्तार्थमवतीर्श एव कदाचिनमार्गत्रय नाशे सित खस्यापि ज्ञानविस्मर्शो सरस्वत्याः शुचि जलमुपस्पृश्य तेन प्रवुद्धसार्वज्ञः पापपराजितमिव न भवतीत्याइ। शुचीति अनेन ज्ञानकलायां धर्माशा एवाभिव्यक्ताः ततः स्वान्यतारप्रयोजनं विचारयत् सर्वेषां हितार्थे धर्ममपश्यदित्याइ। विविक्त स्त्यारभ्य कृपया मुनिना कृतमित्यंतम्। विविक्ते एकांते मनःस्थै-र्यार्थमेतत्। तदा एकः आसीनः। मौतिकदैविकात्मीयदोषत्रयाभाव उक्तः। उदिते रिवमंडलइतिआवश्यककर्मकालाभाव उक्तः पुरायन्वक्षत्रस्य कालगुगानां च ज्ञापकं वा॥ १५॥

परे कालादयः अवरे अस्मदादयः करिष्यमाग्रेऽथें कालादीनां प्रतिबंधकामवं प्राग्तिनां तथाऽद्दष्टं च ज्ञातवानित्यर्थः। एतद्नंतरं-स् ऋषिजातः। धर्माशस्यैव प्रकटत्वातः। कालोहि महानिधकारी भगवतः सर्वकर्ता सर्वनियंता च। एवं सित व्यर्थः प्रयासोऽन्येषामिति कालिन्यंतुर्भगवतोऽवतार इतिज्ञापयितुं कालकृतमुपद्रवं प्रथमत आह। कालेनाव्यक्तेनाक्षरेग्य रही वेगो यस्येति अव्यक्ते वा प्रकृती रही वेगो यस्येति प्रकृतिप्रभृतीनांकालाधीनत्त्वमुक्तं अक्षरसंमितिवां। अव्यक्तो रही यस्येति वेति प्रतिक्रियाऽकरणार्थे हेतुरुक्तः। एतावता भगवद्वचितिरकाः तद्धीनास्तद्नुगुणावेति निक्षितं। फलितमाह। युगधर्मेति। चतुर्युगानां धर्माः तपोयञ्चस्वाध्यायदानादयः तेषां व्यति करो नाशः। अनिधकारिषु वा प्रवृत्तिः। सच व्यतिकरो नाकस्मिकः किंतु नियतः भुव्येव न स्वर्गे नाकस्मिकं किंतु युगे प्राप्तमः॥ १६॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

स्नातं पारगं वक्तुमतिसमर्थमित्यर्थः । छान्दसात् वैदिकाद्वाक्यादन्यत्र तत्रानिधकारादित्यर्थः । न वैवं सुताधिकाराद्वेदेश्योऽस्य शास्त्रस्य न्यूनत्वमाशङ्कर्यं सकलिनगमवल्लीसत्पले श्रीभगवन्नाम्नि सर्वेषामधिकारात् । निगमकल्पतरोः फलमित्यसिलश्रुतिसाराम्नि त्यत्रैवोक्तेः ॥ १३ ॥

कस्मिन् युग इत्यादि प्रश्नानामुत्तरं वक्तुं व्यासजन्मकर्माणयपि संक्षेपेणाह द्वापर इति । युगानां सत्यादीनां बहूनां पर्ययोऽतिक्रमोन्यत्र तिस्मिन् । "पर्ययोऽतिक्रमस्तिमन्नतिपात उपात्यय" इत्यमरः । बहुयुगादिक्रमे यद्वापरं तिस्मिन् । तश्च रूप्णावतारसम्बन्ध्येव क्षेयम् । तद्वतारश्च वैवस्वतमन्वन्तरियाष्ट्राविंशतितमे द्वापरे व्याख्यास्यते । कीहरो तृतीये सन्ध्यारूपयुगरूपसन्ध्यांशरूपाणीति सर्वयुन् गानि त्रिरूपाणि भवन्त्यतस्तृतीये सन्ध्यांशरूपे । वासव्याम् उपरिचरस्य वसोवीर्याज्ञातायां सत्यवत्याम् ॥ १४ ॥

उपस्पृद्य आचम्य सर्ववर्गाश्रमागां यद्धितं तद्दध्याविति चतुर्थेनान्वयः ॥ १५ ॥ परावरक्षः अतीतानागतविक्षः युगधम्मागां व्यतिकरं कालेन नाद्यम् ॥ १६ ॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

नोस्माभिर्थार्देकचित्प्रष्टोऽसितत्सर्वसमाचक्ष्वसर्वमाख्याहियतः छांदसात् वैदिकवाक्यात् अन्यत्रवाचाम् इतिहासाहिरूपागाम् विषय प्रतिमाद्यर्थेस्नातंकृतसमाधित्वांमन्ये ॥ १३ ॥

प्रतिमाध्यप्रमान्त्रेयमित्यादिप्रश्नानामुत्तरंवकुंतावद्वचासजन्मादिकमाहद्वापरेशति द्वापरे "अष्टाविशेमविद्वीत्वद्वापरेमत्स्ययानिषु शति हिंदंशे सत्यवतीजन्मस्प्रराणात्तत्रेवअष्टावतारानुक्त्वा "नवमोद्वापरेविष्णुरष्टाविशेषुराभवत् वेदव्यासस्तथाजक्षेजातुक्रययेषुरस्कृतं हिंते हिंदंशे सत्यवतीजन्मस्प्रराणाचसमनुप्राप्टवेत्तस्वति तृतीयेयुगपर्ययेयुगस्यद्वापरस्यत्रेतानंतरः दिव्यसेवत्सरशतद्वयात्मकः प्रशिवदव्यासजन्मस्प्रराणाचसमनुप्राप्टवेत्तस्यानुपश्चाद्वतेसितं तृतीयेयुगपर्ययेयुगस्यद्वापरस्यत्रेतानंतरः दिव्यसेवत्सरशतद्वयात्मकः प्रयाप्ताः तृतियः पर्ययः संध्यांशलक्ष्याः सिद्धादितः वर्ययः द्विसद्वस्वदिव्यसंवत्सरात्मकोद्वितीयः पर्ययः मिवष्यति स्वाद्यतिमहात्मानोराजानः प्रथिताभुवि तेषांत्वतः प्रस्तानांकुलभदो मिद्धिवतः कालस्तिसम् "पुनस्तिव्यसेपति स्वयस्यति स्वयस्यति । स्वयस्यति स्वयस्यति । स्वयस्यति स्वयस्यति । स्वयस्यति । स्वयस्यति स्वयस्यति । स्वयस्यति । स्वयस्यति स्वयस्यति । स्

# कृतज्ञता प्रकाशः।

---):\*:(----

सुविदितमस्तुविद्वदरागामिदं श्रीमद्भागवतमष्टरीका समछंकतं पूर्वं मुद्रण समये विध्नितमिप पुनईस्तावछंव-नदानेन वंगदेशांतर्गत तडाश भूपति श्रीराधाविनोद सेवा परायगा श्रीराधासरस्तीर निवासि परम भागवत राजिषं श्रीयुक्त वनमाछी राय बहादुर वर्यण १५००) मुद्रापदानेन मुद्रणे प्रचाछित मिति तस्य कृतज्ञतां प्रकाशयामः सराजा भगवत्कपया भक्त श्चिरंजीवीच भूयादिति।

प्रकाशकः संपादकः॥ श्री नित्यस्वरूप ब्रह्मचारी॥ भौतिकानान्तु भावानां शक्तिहासश्च तत्कृतम्। अश्रद्यानान् निःसत्त्वान् दुर्मेघान् हसितायुषः ॥ १७॥ दुर्भगांश्च जनान् वीक्ष्य मुनिर्दियेन चक्षुषा । सर्ववर्गाश्रमागां यदध्यौ हितममोघदक् ॥ १८॥ चातुहोत्रं मर्म्भशुद्धं प्रजानां वीक्ष्य वैदिकम्। व्यद्धाद् यज्ञसन्तत्यै वेदमेकं चतुर्विधम् ॥ १९॥ ऋग्यजुःसामाथव्वीख्या वेदाश्चत्त्वार उद्धृताः । इतिहासपुरागाञ्च पञ्चमोवेद उच्यते ॥ २० ॥

#### भाषा टीका।

इसविषयमे हमने जोकुछ पूछाहै सो सब हमसेकहो आप को वेदों से विना और सब शास्त्रों में परिपूर्ण हम जानते हैं॥ १३॥ सत्ययुग के अपेक्षां से तीसरा पर्यव सान द्वापर युगके प्राप्त होने पर श्रीहरिके अंशसे वासवी (सत्यवती ) के गर्भ मे पराशरजीसे श्रीव्यासजी उत्पन्न मये ॥ १४॥

वह श्रीवेदव्यासजी सूर्यमंडल के उदय के समय में सरखती का पवित्र जलसे आचमन करके एकांतमे वैठेथे तब ॥ १५॥ भूत भविष्यत् के ज्ञानी वह मुनि नहीं जानाजाता है वेग जिसका ऐसे काल भगवान् से युग २ मेधर्मी का विषयेय भाव पृथिवी मे

प्राप्त भया देखकर ॥ १६॥

#### श्रीधरस्वामी।

मौतिकानां भावानां शरीरादीनाम् । तत्कृतं कालकृतम् । निःसत्त्वान् धैर्यशून्यान् । दुर्मेधान् मन्दमतीन् । ( हसितायुषः हसितमा-अमोघरक् सर्वज्ञानसम्पन्नः॥ १८॥ युस्तेजो येषां तान् )॥ १७॥ ततश्च होत्रोपलक्षिताश्चत्वार ऋत्विजश्चतुर्होतारः तैरनुष्ठेयं कर्म्भचातुर्होत्रम् । गुद्धं ग्रुद्धिकरम् । यश्चसन्तत्यै यश्चानामवि-च्छेदाय ॥ १९ ॥ चातुर्विध्यमेवाह ऋगिति । उद्भृताः पृथक्कृताः ॥ २०॥

श्रीवीरराघवः । तथातत्कृतंथमंकृतंभौतिकानामाकाशादिभृतपरिग्णामरूपागां देवादिशरीराग्णांभूतानांतत्सृष्टानां जीवानांच शक्तिहासंशक्तिक्षयं॰ चतथाजनानभिविष्यक्षंभूतानश्रद्धभानान् श्रद्धामकुर्वाणान्सस्ववृण्णाश्रमानुगुण्धमानुगुण्धमानुगुण्यान्यकृत्वरारहितान्निःसस्वान् दुर्वला-न्सत्यामपिश्रद्धायां दुर्वलान्सत्त्यपिसत्त्वेदुर्मेधान्ह्सितंसंकुचितमायुर्येषांतान्नुष्ठानोपयुक्तज्ञानायूरहितान् ॥ १७॥ थानापुत्रभूषा दुवलाग्सर्यापस्त्रवदुमधान्हासतसकु।चतनाञ्जपत्रातापुत्रमातापुत्रमात्र दिव्येनचश्चुषायोगपरिशुद्धेनमनसान अतपवदुर्भगान्भाग्यहीनान्मुन्दिःपरमात्त्माशात्म्यमननशीलः अतप्वामोघद्दगवितथसंकर्त्यः दिव्येनचश्चुषायोगपरिशुद्धेनमनसान

सर्वेषांवर्गानामाश्रमाणांचहितंदध्योचितितवाद्चितापूर्वकं चकारेत्यर्थः॥ १८॥ त्रवावसानामाञ्जनासाचाहतद्व्यााचाततवानाचतापूर्वक चकाराज्यः ॥ १००० । . तदेवाह प्रजानांत्रेवाशिकानांसंवंधितयाश्रयः साधनतयाऽनुष्ठेयंवैदिकंवेदपूर्वभागवोध्यमतएव विशुद्धंभ्रमविप्रलंभादिपुरुषदोषान तद्वाह नुभागानुमान्यावायात्रप्रमान्यावायात्रप्रमान्य सावनत्यान्य निष्यप्रजानाम् गुष्ठेयमालोच्यतावद्यक्षानांसंतत्यैकत्तव्ययक्षकलापादिबिन - स्पृष्टविधिबोधितं चातुर्हीत्रंचातुर्होत्रशब्दवाच्यमंत्रप्रकाश्यं कर्मवीक्ष्यप्रजानाम् गुष्ठियमालोच्यतावद्यक्षानांसंतत्यैकत्तव्ययक्षकलापादिबिन

रह ना । विश्व विष्युर्वमेकरूपेगा वस्थितवेदमृग्यजुःसामाथवभेदेनचतुर्विर्धविद्धेव्यभाक्षीत् ॥ १९॥ कवावावप्रवर राजाना प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त विश्व क्षेत्र प्राप्त के क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र के क्षेत्र क् चाषु।चचाः चाषु।चचाः इतिहासःपुराग्णानिचउद्धतानीत्यनुषंगः कालेनविष्लुतानिमत्स्यादिपुराग्णानीतिहासाश्चोद्धृताइत्यर्थःइतिहासंपुराग्णानिचविशिनािस्टपंचमो वेद्यच्यतेपंचमवेद्त्वेनप्रसिद्धांतइत्यर्थः॥ २०॥

# श्रीविजयध्वजः।

बुष्धाग्यान्वीस्यमुनिर्मीनवान्दिव्येनचश्चभाश्यपशेक्षकातेनसर्वाश्रमाशांत्रदितंतिक्षरंदश्योचितितवानिस्रेकात्वयः सर्वेकस्यविद्धान दुष्टना न्या त्रुष्टमोहनायचेतिक्षातस्यम् अमोघरक्भवंध्यक्षानः॥ १७॥

#### श्रीविजयध्वजः

किहितमपश्यिदितितत्राह चातुर्होत्रमितिचत्वारोहोतारोहोत्रध्वर्यूद्वातृब्रह्माग्गोयस्मिस्तत्तथोक्तंदशहोत्रादिचातुर्होत्रपर्यंतैर्मत्रैःप्रका-श्यंवामग्निष्ठोमादिकंकमप्रजानांवैदिकीनांशुद्धंशुद्धिकरं रागादिवर्जितंवा वीक्ष्ययक्षसंतत्येआग्निष्ठोमादियक्षपरंपराप्रवर्तनायएकमित्रकं-वेदसृगादिभेदेनचतुर्विधंव्यदधादित्येकान्वयः आदिमध्यावसानेषुद्दिरसृत्यातत्पूज्यत्वेनिक्रियमाग्गंकमप्रजानांक्षानद्वाराशुद्धिकरमपश्यिद-तिमावः ॥ १९ ॥

कथंविभक्ताइतितत्राह ऋगिति वेदव्यासेनमूळवेदसमुद्रात् ऋग्यजुःसामाथर्वाख्याश्चत्वारोवेदाः उद्धृताः नतुकृताः तद्रथं श्वानायकृतम् इतिहासपुराग्यं चवेदार्थावेदकत्वात्पं चमोवेदइत्यु च्यतेपं चमोवेदइत्यु के इतिहासादी नांशब्दतोरचनं नत्वर्थतः तस्यनित्यत्यादि तिश्वातव्यम् १९ तत्रतेषां वेदानां मध्येऋग्वेदप्रवर्तकः पैलोभूदितिप्रत्येकमन्वयः जैमिनस्यापत्यं जैमिनः सामगायतिशिष्येषुगमयतिप्रवर्तयतीतिवासामगः कविः सूक्ष्मश्चानी ततोजिमिनेरनं तरमेकः प्रधानः वैश्वापयनप्वयज्ञवेदानां निष्णातः प्रवर्तकतयेतिशेषः प्रवशब्देनसूर्योदन्यः प्रतिषिध्यतेनतु सूर्यस्त्रथासिवक्ष्यमाण्याविरोधात्॥ २०॥

## क्रमसंदर्भः।

इतिहासीत । तथा च साम्नि कौधुमीयशाखायां छान्दोग्योपनिषदि ऋग्वेदं भगवोअध्योमि यजुर्व्वेदं सामवेदमाथर्व्वेगां चतुर्थमिनितहासपुरागां पश्चमं वेदानां वेदमित्यादि । अन्यत्र च वेदानध्यापयामास महाभारतपश्चमानिति । अन्यथा पश्चमत्वं नावकल्पेत समजानितात्वात्संख्यायाः ॥ तृतीयस्कंधेचवक्ष्यते ॥ "इति हासपुरागानिपंचमंवेदमीश्वरः सर्वेश्यपववक्षेश्यः समृजे सर्वदर्शन" इति पश्चमत्वे कारगां वायुपुराग्यो स्तवाक्यम्—एक आसीद्यज्ञव्वेद्स्तं चतुर्द्वात्यकल्पयत् । चातुर्होत्रमभूत्तिसम् तेन यश्चमकल्पयत् ॥ आध्वर्यवं यज्ञाभिस्तु ऋग्भिहीत्रं तथैव च । उद्गात्रं सामभिश्चेव ब्रह्मत्वं चाप्यथर्व्विभः ॥ आख्यानैश्वाप्युपाख्यानैर्गाथाभिद्विजन्समाः पुराग्यसंहितां चक्षे पुराग्यार्थविशारदः । यच्छिष्टन्तु यज्ञव्वेद इति शास्त्रार्थनिर्ग्वेयः ॥ इति । स्कान्दमाग्नेयमित्यादिसमाख्यान्स्तु प्रवचननिवन्धनाः काठकादिवत् ॥ २०॥

## सुवोधिनी।

कालेन धर्मनाशमुक्तवा पदार्थनाशमण्याह । भौतिकानामिति । भौतिकानामस्मदादीनां चकाराङ्ग्तानां शक्तिः । खाध्यायादीनां कृषिवृष्टयादीनां वा तत्कृतम् । कालकृतं कर्तृदोषानाह । अश्रद्धधानानिति । सर्वत्र श्रद्धारितान् । सत्त्वं बलं विवेको वा । दुर्भेधान् बुद्धि-रितान् । चित्तमनोबुद्धिनाशा उक्ताः । अंतःकरगोष्वहंकार एव पुष्ट इत्यर्थः अतएव आयुषोऽण्यपचयहत्याह ॥ १७

कर्मगा हि भाग्यसुत्पद्यते तत्कालादीनां शुद्धितारतम्येन महाभाग्यजनकत्वं द्वापरादौ तु षग्गां दुष्टत्वात् दुर्भाग्यत्वम् । एतत्सर्वे न तिक्तितम् कित्वार्षज्ञानेन प्रमितं तथासत्युपायज्ञातं भवतीत्यर्थः । पाखंडधर्माः खतप्वोत्पद्यंतद्दति तद्वचावृत्त्यर्थमाह । सर्ववर्गाश्रमागा-मिति । चकारात् अवांतरदेशादिधर्माः । अनेन वर्गाश्रमदेशव्यतिरिकाः धर्माः पाखंडा द्दितिन्दितितम् । तेषामपाखंडानामिदं दध्यौ । सत्यसंकल्पात् हितं स्पुरतीत्यत आह । अमोधदगिति ॥ १८ ॥

सत्यस्कल्पात । इत स्पुरतालत नाह । जमावदागात गुक्तिरपेक्षते । युक्तिस्तु आधिदैविकः कालो वा मौतिककालकृतदोषदूरीकर-यज्ञ एव सर्ववर्गाश्रमिहतकर इत्याह । आर्षज्ञानत्वाच्च युक्तिरपेक्षते । युक्तिस्तु आधिदैविकः कालो वा मौतिककालकृतदोषदूरीकर-ग्रासमर्थः । अथवा कालियामको विष्णुः । तदुभयात्मकत्वाच्च स्य च श्रीतो विष्णुः प्रमागाांतराच्च वेदो बालिष्ठः सर्ववेदैकवाक्यतां वक्तुं तस्य खरूपमाह । चत्वारो होतारो यत्रेति । ते ग्रागायका होतृशब्देनोच्यंते । अध्वयुप्रमृतयः अथवा दश होता चतुहाँता एचही-ता षहोता सप्तहोतिति चतुहाँतारः ते अग्निहोत्रादीनां मूलिमिति । चातुहाँत्रमग्निहोत्रादिपंचकं यत्कर्भ कर्मितिनामधेयम् । तद्धि सस्याधनं नित्यमिति कालास्पर्शाच्छुद्धं । प्रकर्षेण् जातानां । तत्र वेदः प्रमागामित्याह । वैदिकमिति । तेषां यज्ञानां विस्तारार्थं वेदं चतुर्था कृतवा-नित्याह । व्यद्धादिति । अक्तशरतया निरूपगात् बुद्धिसीकर्येण यज्ञसंतितः अभिन्नेष्वंशभेदव्यवस्थया वा ॥ १९॥

नित्याह । व्यवधादात । अक्तरारतया निरूपणात बुष्डिलापात विकास करोति यज्ञवेदेनाध्वर्धः सामवेदेनोद्गाता चतुर्थेन ब्रह्मा । तत्तत्कर्म-तान् भेदानाह । ऋग्यज्ञः सामाथर्वाख्या इति । ऋग्वेदेन होता करोति यज्ञवेदेनाध्वर्धः सामवेदेनोद्गाता चतुर्थेन ब्रह्मा । तत्तत्कर्म-प्रतिपादकानां मंत्राणां ब्राह्मणानां च खंडा उद्धृता वेदशब्दवाच्या जाताः तेषामपेक्षितधर्मप्रतिपादकः पंचमो वेदः इतिहासपुरा-गााब्यः ॥ २० ॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

भौतिकानां भावानां शरीरादीनां। तत्कृतं कालकृतम् । निःसत्त्वान् रजस्तमोमयान् ॥ १७ ॥ १८ ॥ तत्थ्यः ज्ञान्योगभक्तव्योग्यानांः सम्बन्धिम् प्रजानां कर्मेव शुद्धं शुद्धिकरम् । कीइशं होता उद्गातां अध्ययुविद्धेति वत्वारोशी होतारस्तिवित्रित्तं चातुर्होत्रम् । यज्ञानां सन्तत्यै अविच्छेदाय ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ तत्रग्वेदघरः पैछः सामगो जैमिनिःकविः।
वैशम्पायन एवेको निष्णातो यजुषामुत् ॥ २१ ॥
अथव्वीगिरासामासीत् सुमन्तुर्द्दारुणोमुनिः।
इतिहासपुराणानां पिता मे रोमहर्षणाः ॥ २२ ॥
त एत ऋषयो वेदं स्वं स्वं व्यस्यन्ननेकघा।
शिष्येः प्रशिष्येस्तिच्छिष्येर्वेदास्तेशािखनोऽभवन् ॥ २३ ॥
त एव वेदा दुर्मेधैर्घार्यन्ते पुरुषेर्यथा।
एवश्रकार भगवान् व्यासः कृपणावत्सलः॥ २४ ॥

#### सिद्धान्तप्रदीपः।

सर्ववर्गाश्रमाणांयद्धितंतद्ध्योद्दर्युक्तम् । तत्रत्रेविणिकहिताचरणमाह चातुर्होत्रमिति । प्रजानां त्रेविणिकानांसंविधिवैदिकम् । चातु-हींतम् । चातुर्होतृसंक्षकाः "चितिस्रुक्चितमाज्यिमत्यादयोमंत्रास्तत्पूर्वकम् अग्निहोत्रादिसोमांतम् प्रवृत्तंकमं वीक्ष्य आलोच्य यक्षसंत-त्ये यक्षानामविच्छेदाय । "योवे वेदांश्चप्रहिणोतीति श्रुतेः । अनादिसिद्धापवसर्वेवेदाः पूर्विमिश्रिताः आसन् । तमेकंसर्वसमुदायभूतं वेदं-चतुर्विधंव्यद्धात् व्यभांक्षीत् ॥ १९ ॥

चतुर्विध्यमाह । ऋगिति त्रैवर्शिकानामन्येषांचिहताय । इतिहासः पुराग्णानिचउद्धृतानि । तेषांसमुदायः पश्चमोवेदइत्युच्यते । तत्रा-यंविवेकः महाभारतः प्राचीनएवकालविष्लुतः "सूर्याचद्रमसीधातायथापूर्वमकल्पयदितिवदुद्धृतः । एवं पुराग्णान्यपीतिसंक्षेपः ॥ २० ॥

#### भाषा टीका।

और उसी कालका किया हुआ शरीरादिकों का भूतों का शक्ति हासकों देखकर विना श्रद्धा वाले विना धेर्य वाले दुईद्धि अल्पा-

दुर्भाग्य वाले मनुष्यों को दिव्य चक्षुसे देखकर दिव्यदृष्टि वाले मुनि सर्व वर्गा आश्रमों के हितका चिंता करते भये ॥ १८ ॥ प्रजाओं के लिये चतुर्होत्र वैदिक कर्मकों सुंदर जानकर यहाँ के विस्तार के वास्ते एक वेदकों चार प्रकार से विधान किये ॥ १९ ॥ ऋक् यज्ञर साम अथर्व नामक चार वेद उद्घार किये इतिहास और पुरागा यह पंचम वेद कहाजाता है ॥ २० ॥

# श्रीघरखामी।

निष्णातः पारम गतः ॥ २१ ॥ दारुणः अथर्व्वोक्ताभिचारादि प्रवृत्तेः ॥ २२ ॥ शाखाविभागमाह त पत इति । व्यस्यव विभक्तवन्तः ॥ २३ ॥ विद्विभागप्रयोजनमाह त इति । ये पूर्वमितिमेधाविभिर्धार्थन्ते त एव ॥ २४ ॥

#### दीपनी।

(अथव्वाङ्गिरसामित्यस्यार्थः अथव्वाणिमिति। निष्णात इति पूर्वेणान्वयः। अथव्ववेदोक्तमन्त्रेषु निष्णात आसीदित्यर्थः। गङ्गाधरभूत्रर इत्यादिवदत्र कर्म्मणः शेषत्वविवक्षायां षष्ठीति विवेकः॥) दारुणः भयानक इत्यर्थः ( इतिहासपुराणानामिति। अत्रापि
धरभूत्रर इत्यादिवदत्र कर्म्मणः शेषत्वविवक्षायां षष्ठीति विवेकः॥) दारुणः भयानक इत्यर्थः ( इतिहासपुराणानामिति। अत्रापि
धर्म्भूत्रयं विनत्याति इत्यनुष्ठजनियः। नतु अध्येतव्यं न चान्येन ब्राह्मणं क्षत्रियं विनत्यादिपुराणावचनात् कथ स्तर्याध्यापनाधिकारः
पूर्व्यवत्वताधिकारो वेति चेन्मैवं तस्य भगवद्वतारिवशेषत्वात् । तथाहि कूर्मपुराणीयत्रयोवशाध्यायवचनानि—वेणपुत्रस्य वितते
पाठकत्वेनाधिकारो वेति चेन्मैवं तस्य भगवद्वतारिवशेषत्वात् । तथाहि कूर्मपुराणीयत्रयोवशाध्याणं धर्मिको गुणावत्सरुः। तं मां वित्त मुनिश्रेष्टाः
पुर्वाङ्गतं सनातनम् । एतिस्मिन्नन्तरे व्यासः कृष्णाद्वेपायनः स्रयम् । आवद्यामास सम्प्रीत्या पुराणं पुरुषोत्तमः॥ मदन्वये च य स्साः
पूर्वाङ्गतं सनातनम् । तथां पुराणवक्तत्वम् वृत्तिरासीद्वजाव्या इत्यादीनि।)॥ २२—३३॥
सम्भूता वेदवर्जिताः। तथां पुराणवक्तत्वम् वृत्तिरासीद्वजाव्या इत्यादीनि।)॥ २२—३३॥

#### श्रीवीरराघवः ।

तत्रऋगादीनांमध्येऋग्वेदधरः पैलःअध्ययनपूर्वकमृग्वेदंपैलोमुनिर्दधारेत्यर्थः कविविद्यान्जीमिनिस्तु सामगःअध्ययनपूर्वकमृगाध-राशिसामानिजगावित्यर्थःवैशंपायनएकएवऋषिर्यजुषांनिष्णातः पारंगतः मतः स्मृतःअवांतरमेदा- भिष्रायेगायज्ञषामित्युक्तम् ॥ २१ ॥ एवमथर्वीगिरसामित्यत्रापितेषांनिष्णातः दृरुगोपत्यंदारुगाःसुमंतुर्नाममुनिरासीत् अथर्वाख्यानांगिरांसितेषामितिहासानांपुरागानांच

निष्णातस्कमेममस्तस्यिपतालोमहर्षगाः॥ २२॥

सर्वपवैतेभगवतोव्यासस्यानुग्रहादेवनिष्णाताबभूवुरित्यर्थतोद्रष्टव्यम् ततस्तपतेपैलादयः संस्वेवेदंशिष्यैः प्रशिष्यःशिष्यागामपिशि इयस्तेषामिपशिष्येश्वशिष्यादिद्वारेत्यर्थः अनेकधाव्यस्यन् व्यभांक्षुरित्यर्थः ततस्तेवेदाः शाखिनोऽभवन् व्यस्तशाखायभवंस्तत्रऋग्वेदएक

विंशतिशाखाभेदंप्राप्तः यजुर्वेदस्कएकाशतधासामवेदस्कसहस्रधा आर्थवग्रास्तुनवधेतिविवेषः॥ २३॥

किमर्थमेवमात्मनाशिष्यादिमुखेनचव्यभांक्षीदित्यपेक्षायांप्रयोजनंदर्शयन्व्यासनामनिर्वक्तितद्दति दुर्मेधेरलपप्रक्षेःपुरुषेस्तएतेवेदायथा धार्यतेयथासंनिवेशितेषुत्रार्थतेएवंतथाचकारभगवान् श्रीव्यासस्तत्रहेतुः कृपणेषुवत्सलःवात्सल्ययुक्तःयतोवेदान्ब्यस्यत्व्यमांश्लीदतएव व्यासइतिप्रसिद्धोवभूवेतिभावः ॥ २४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

वारुगोवरुगापुत्रःसुमंतुर्नाममुनिरथर्वीगिरसाम् अथर्ववेदानांप्रवर्तकआसीत् मेपितारोमहर्षगाः इतिहासपुरागानांप्रवर्तकः ॥ २१ ॥ भगवदाक्षाप्रवर्तकंचतुर्गाविदानांशाखोपशाखाभे देनऋषिकृतविभागमाह तपवेतितपवपैलादयःऋषयः संसंवेदमनेकधाव्यस्यन्व्यम-जिल्लास्यन्वयः तेवेदाःशिष्यप्रशिष्यादिभिःशाखिनःत्रशामपूर्वशाखावंतोभवन्नित्यन्वयः॥ २२॥

ब्यासनामनिवेचनायाह तपवेति दुर्मेधैःअल् प्रक्षैःपुरुषैःतपववेदायथाधार्यतेपठिताःअवधृतार्थाःक्रियंतेपवंतथाशिष्यप्रशिष्यादिभिः

शाखोपशाखाभेदेनव्यवस्यत्चकार तस्मात्व्यासङ्गति किमर्थमितितत्राह कृपगावत्सलःदीनजनिक्षग्धः॥ २३॥

एवंभगद्गकानांत्रैविश्वकानांवैदिककर्मानुष्ठानेनशुद्धांतःकरणानामधोक्षजोपासनाजनितज्ञानेनमुक्तिः स्यादितिव्यासेनस्थापितंतदनधि-कारिणांस्त्रीग्रद्भादीनांहारिभजनंकुत्रोक्तमुपायेनेत्याकांक्षायामाह । स्त्रीग्रद्भेति । वेदोक्तकर्भाष्यश्रेयसिपुरुषार्थसाधनेमूढानामतएवानिध-कारिगांस्रीशुद्रद्विजाधमानांत्रयीत्रयोवेदाःश्रोतुंनयोग्याः इतितस्मादतप्वंमयाकरिष्यमाणभारतादिशास्त्रोक्तविधिनाइहजनेश्रेयोभघेदिति-नारिकार्यास्त्रास्त्रास्त्राचनात्रात्रवान्यत्रात्र्यात्र्यात्रवाद्याः अत्रैतत्प्रमेयमवगंतव्यम् स्त्रीश्चद्रादिक्रपयाभगवताभारताख्यानस्यकृतत्वात्तेषामेव-राजाणात्व वर्षा प्राप्त का स्वास का सम्बद्ध स्वास प्राप्त का अपने के स्वाधिकारोनान्येषामितिशंकामाभूत "इतिहासपुरागाश्यांवेदंसमुपं हृद्धेदितिवचनात्वाह्यण्याद्वीनामिषिवेदार्थपरिक्षानायभारताच प्रयास-स्यथावश्यकत्वेनोक्तत्वादुभयत्नाधिकारोयुज्यते तेषांस्त्रीग्रद्भावीनांतुगत्यंतराभावात्तदुक्तानुष्ठानेनमुक्तिरितिभावः ॥ २४ ॥

# क्रमसंदर्भः ।

एक एवेति पैपलादिष्वप्यन्वितम् ॥ २१ ॥ अथव्वीङ्गिरसामाथव्वगाम ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ १९ ॥

# सुवोधिनी।

सिम्नेष्वराप्रतिष्ठापनार्थमाह । तत्रेति । अत तु कमो मंत्रागामिति न विरोधः। पैलादयः ऋषयः॥ २१॥

सुमंतुर्दारुश इति आभिचारिकबाहुल्यादिति केचित । वस्तुतस्तु स्वामाविकदुष्टत्वात् अग्रे यहेषु तस्याप्रवेश इति । तक्षाप्रियाउने

हेतु: । मुनिरिति । इतिहासपुरागानां सर्वाधिकाराय रोमहर्षेगा उक्तः ॥ २२ ॥

तै: पश्चभिरपि खांदाः खंडशो बहुधा व्यस्त इत्याह । तपतइति । ऋषित्वत्खंडशो व्यासे न दोषः । शाखानां शाखित्वं । बहुधाव्य\* तः पत्राप्ता प्राप्ता प्राप्ता शासाना शास्त्र । तप्त्रेति दुर्मेधेः बुद्धिराहितैरिप यथा यथावत् अर्थश्वानाभावेऽपि लक्ष्याः समानादिभिः स्ताऽप्यका राजा अथशानाभावेऽपि लक्ष्याः समानादामः वहुकालाभ्यासेन कथंनिद्धार्यत्रेतमेवं कृतवान् । तत्र हेतुः भगवानिति । भगव बहुकालाम्याप्य प्रतिवास । तत्र हेतः भगवानित । तर्हि न कर्त्तव्यम् स्यात् अवतानर्थन्नधारम् वेदानां निर्वीर्थत्वप्रसंग इत्यत्वाह । व्यास वतः तयप्यप्या विवासित्यर्थः । तथाऽपि सहतोऽधिकारिगोऽपि नान्यथाकरगामुचितमित्यतः आह् । कृपगावत्सरु इति । अपहतपापात्वान इति व्यापारम्य तार्वन्मात्रेशापि कतार्थता भविष्यतीति प्रजासु दयया कृतवानित्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ २४ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।

दारुगः अभिचारादि प्रवृत्तेः॥ २२॥

व्यस्यत् विभक्तवन्तः ॥ २३ ॥ २४ ॥

स्त्रीशूद्रदिजवंधूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा।
कर्मश्रेयित मूढानां श्रेय एवं भवेदिह।
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम्॥ २५॥
एवं प्रवृत्तस्य सदा भूतानां श्रेयित दिजाः।
स्त्रवात्मकेनापि यदा नातुष्यदृद्यं ततः॥ २६॥
नातिप्रसीददृदयः सरस्वत्यास्तटे शुचौ।
वितर्कयन् विविक्तस्थ इति प्रोवाच धर्मवित्॥ २७॥
धृतव्रतेन हि मया छंदांसि गुरवोऽययः।
मानिता निर्व्यक्षिकेन गृहीतं चानुशासनम् ॥ २८॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

यज्ञुषामिति बहुवचनंखगतप्रकरणभेदाभिप्रायम् अथवांगिरसामिति । बहुवचनंपूर्ववत् अथवसंह्यानि अंगिरसारष्टानि । आंगिरां-सिप्रकरणानितेषाम् ॥ २१ ॥ २२ ॥

ति पैलाद्यः व्यस्यन् विभक्तवंतः तेचवेदाः पैलप्रभृतिशिष्याधैर्व्यस्ताः । शाखिनोऽभवन् । तत्र ऋग्वेदेपकविशतिशाखाः यजुर्वेदप्-कोत्तरशतसंख्याकाः सामवेदेचसहस्रसंख्याकाः अथर्वगोतुनवैवशाखाः इतिविवेकः ॥ २३ ॥ दुर्मेधेर्मद्प्रक्षेः ॥ २४ ॥

#### भाषा टीका।

तहां ऋग्वेद के प्रहण करने वाले पैलऋषि भये सामगान करनेवाले कि जैमिनि भये एक वैशंपायन यजुर्वेदमे प्रवीशा होतेभये २१ कूर सुमंतुमुनि अर्थवेवेद के अध्येता भये हमिर पिता रोमहर्षगाजी इतिहास पुराणों के वक्ता होते भये ॥ २२ ॥ इनसव ऋषियों ने अपने २ वेदों को अनेक प्रकार विभाग किया उनके शिष्य प्रशिष्यों से वे वेद नाना शासा वाले होगये ॥ २३ ॥ इनसव ऋषियों ने अपने २ वेदों को अनेक प्रकार विभाग किया उनके शिष्य प्रशिष्यों से वे वेद नाना शासा वाले होगये ॥ २३ ॥ वेही वेद जैसे दुर्वुद्धि पुरुषों से धारण किये जांय तैसे दीनोंके दयाल भगवान श्रीवेदव्यासजी ने करित्या ॥ २४ ॥

# श्रीधरखामी।

किश्च स्त्रीश्चद्देति । द्विजवन्धवस्त्रैविशिकेष्वधमाः तेषां कर्मरूपे श्रेयसि श्रेयः साधने । एवं भवेत् अनेनैव प्रकारेशा श्रेयो भवत्विति ॥ २५ ॥

मूतानां श्रेयसि हिते। सन्वीत्मकेनापि ( अनेकोद्देशवतापि ) कर्मगा। १६॥ नाति प्रसीदत् हृद्यं यस्य सः। चित्ताप्रसक्ती हेतुं वितर्कयन् इद्मुवाच खगतम् ॥ २७॥ मानिताः पूजिताः॥ २८॥ २८॥

# श्रीवीरराघव

## श्रीविजयष्वजः

केनहतुनाकुतः संचोदितइति प्रश्नंपरिहरिष्यन् प्रायः कृतावतारकार्यस्यदुर्जनान् मोहयतो व्यासस्य लोकानुकरगाप्रकारमाह एव-मित्यादिना हे द्विजाः भूतानांसदाश्रेयसिनित्यमुक्तिसाधने एवंप्रकृत्तस्यापियदाद्वदयंसर्वात्मकेननातुष्यत् मेमनोवतारप्रयोजनेन सर्वप्र-कारेगालिमत्यलंबुक्तिनापततस्तदा ॥ २५॥

धर्मज्ञानीनातिप्रसम्बद्धदयः अवतारप्रयोजनानलंबुद्धिमान् सरस्वत्यास्तटे तत्रापि शुचौदेशे विविक्तस्यएकांतेतिष्ठन् लोकदृष्ट्याऽनलं-

वुद्धिकारसंकिचेतिविविधं तर्कयन् विचारसिवदंवस्यमासमेवात्मानं प्रत्युवाचेत्यन्वयः॥ २६ ॥

धृतव्रतेनलीकिकाचारोपेक्षयावेदव्रतथारगावतामयानिव्यंलीकेन निर्व्याजेनचेतसेतिशेषः छंदांसिवेदाः। गुरवोऽध्यापकाः त्रेताग्रयः

मानिताः सत्कृताः अनुशासनमाशाचगृहीता हिशब्देनविपादिभिवेदवतादिवैदिककर्मावश्यंकर्तव्यमिति दर्शयति ॥ २७॥

यत्र भारतेस्त्रीश्चद्रादिभिरिप त्रैवर्शिकेरतानुष्ठेयोधर्मोद्दरयते । तस्यभारतस्यकरग्रोनाम्नायार्थः वेदादिसंप्रत्ययार्थः प्रदर्शितोहि। तत्र किचिदुर्वरितंनाह्नतीत्यर्थः ॥ २८ ॥

# स्रवोधिनी।

अन्येषामुपायमाहस्त्रीश्चद्रविज्वंधूनामिति । यश्चद्वारा हि वेदे स्त्रीगामुपयोगः अवीरवतीनां तु तदभावात् स्त्रेविश्वस्त्रीगामिप वेद श्रवगानिषेश्वः ग्रद्धाः खतंत्राः नतु सेवकाः त्रैवर्गािकयाहिकसेवकानां तदत्रभक्षगोन वेदार्थोपयोगिना मापाततोवेदश्रवगास्यावश्यकत्वात् द्विजबंधवः कुंडगोलकाः संस्काररिहताश्च । तेषामपि श्रुतिश्रवर्णे नाधिकारः । गोचरशब्दस्तु नियतपुर्लिगः ! केचन गोचरेति छांदसत्वा त् पठंति । कर्मश्रेयसिकर्मसाध्येश्रेयसि पुत्रखर्गादौ मुढानाम् साधनश्चानरहितानाम् । एवं मनसिविचारितेन प्रकारेण इह अस्मिन्नवार्थे यद्यपि अलौकिकप्रकारेण वेदसाध्यं फलमपि अलौकिकमिति नान्येन तिसिद्धिः अथाप्यर्द्धलौकिकन्यायेन भट्टेष्विवपुरासेऽप्यर्द्धलौकिक न्यायेन वा भारतादिना कार्य सेत्स्यतीति भावः । एवमभिष्रेत्य यत्कृतवान् तदाहः। इति भारतमिति । भरतवंशोत्पन्नानां संवंधि भार-तम् । आख्यानमितिवचनात । न केवलं ग्रंथनाम कित्वन्यार्थतेन भारतश्रवणात् मायामोद्दाभावाद्धर्भादीनां तत्तत्त्वावगतिः सुगमेतिमनना-नादवगम्यपरदुः खप्रहागोच्छया कृतमित्यर्थः ॥ २५ ॥

एवं व्यासस्य परोपकारलक्षाणो धर्मो महान वेदव्यासे सिद्धः। धर्मस्य चान्तःकरगापरितोषः फलम् । तदभावे धर्मः श्रम इति पूर्व-मुक्तम् । अत्र दुःखहेतुरिति वक्तुम् पूर्वोक्तस्मारगार्थं द्विजा इति संबोधनम् अधीतावधारगां हि द्विजधर्मः। किंच केवलं धर्मव्यभिचारेऽपि शानसहितस्य न तथात्वम् । इह तु ताहशोऽपि नांतः करणसुखजनको जातइत्याह । सङ्गीत्मकेनापीति । सर्वत्र आत्मायेन तत्सर्वात्मकंशानं

अथवा द्यावत् अन्ये प्रकाराः सर्वे कृताः सर्वप्रकारेगापिधर्मेगोत्यर्थः॥ २६॥

अधिकारित्वात्फलाभावो जात इत्याह । नातिप्रसीदखृद्य इति । धर्मात्खस्यापि फलाभावे कथमन्यस्य भविष्यतीति सर्वनाशाद-प्रसादः। भगविद्च्छा काचिन्दयथा वर्ततइतिज्ञानावतारत्वेन ज्ञात्वा किचित् प्रसीद्खृदयो जातः नत्वत्यतं प्रसीद्खृद्य इति पूर्वेषत् श्रसादः। मगवादच्छा जार्यस्तरम् । श्रुचाविति पापसंबंधाभाव उक्तः। एवं शुद्धदेशे स्वार्थे चिंतायां तर्केगाकश्चिक्षिधिर-कानाद्या नाय प्रतास । उत्पन्न इत्याह । वितर्कयन्निति । विविक्तस्थः एकांतस्थो महाधिकारित्वात् । इदं वस्यमागां । धर्मवित् धर्मस्याव्यभिचारिसाधन-त्वं जानातीत्यर्थः॥ २७॥

जानातात्यथः ॥ २० ॥ तत्र प्रथमं धर्ममाह । धृतव्रतेनेतिद्वाक्ष्याम् । ब्रह्मचर्यव्रतानिचेदव्रतानि च धृतानि येन छंदासि चेदाः तेषां सन्माननं तदुक्तार्थस्य ह्या-तत्र प्रथम धममार । रूपाय सुद्धताः । पतदेव सन्माननं व्यलीकं कपटम् ईश्वरवल्लोकप्रवेत्तनार्थे पासंडिवद्वचनार्थे वा ।

अनुशासनमध्यापनम् ॥ २८॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

द्विजवन्धवः त्रैवर्शिकेषु हीनाः । कर्मक्षे श्रेयसि श्रेयः साधने ॥ २५ ॥ सर्व्वात्मकेन सर्व्वात्मना खार्थ कः ॥ २६ ॥ अतिशयेन न प्रसीदखृदयं यस्य सः। चित्ताप्रसत्ती हेतुं वितर्कयन् उवाच खगतम्॥ २७॥ २८॥ २९॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

स्त्रीश्रद्रद्विजवंधूनांत्रयी श्रुतिगोचरानभवति अतएवकमेश्रेयसिवेदोक्तकमें हेतुकेकल्यासो मुढानामिहलोके एवं महाभारतादि स्त्रायद्रायः पूर्वामामहलोके एवं महाभारता । उपलक्ष्यांचेतत्पुरागानाम् ॥ २५ ॥ प्रतिपादितेन धर्मेगाश्रेयोभवेदिति । कृपयामुनिनाभारता ख्यानम् कृतम् । उपलक्ष्यांचेतत्पुरागानाम् ॥ २५ ॥ प्रतिपादितेन धर्मेगाश्रेयोभवेदिते भतानांश्रेयिससदाप्रवृत्तस्य यदाहृदयंनात्रस्यतः ===-

पादितन वर्णा । २५ ॥ सर्वात्मकेनापि संपूर्णनापियत्नेन भूतानांश्रेयसिसदाप्रवृत्तस्य यदाष्टदयंनातुष्यत् नजवर्षततस्तदनंतरंनातिप्रसीदङ्घः इद्रमुखा

गुत्तरम्। ग्वनः । नातिप्रसीदत् प्रसम्भद्धद्यंयस्यतथाभूतः सन् असंतोषहेतुंचितर्भयन् इदंबक्ष्यमागामुबाच ॥ २०॥ नातिप्रसीदसृद्यः नातिप्रसीदत् प्रसम्भद्धद्यंयस्यतथाभूतः सन् असंतोषहेतुंचितर्भयन् इदंबक्ष्यमागामुबाच ॥ २०॥ नाप पूजिताः ॥ २८॥ निर्व्यक्षीकनिष्कपटभावेनमानिताः पूजिताः ॥ २८॥

भारतव्यपदेशेन ह्यामायार्थश्च दिशितः।

हश्यते यत्र धर्माद्दिः स्त्रीशूद्रादिभिरप्युत् ॥ २९ ॥

अभापि बत मे देह्यो ह्यात्मा चैवात्मना विभुः।

असंपन्न इवाभाति ब्रह्मवर्चस्यसत्तमः॥ ७० ॥

किम्वा भागवता धर्मा न प्रायेगा निरूपिताः।

प्रियाः परमहंसानां त एव ह्यच्युतप्रियाः॥ ३१ ॥

तस्यैवं खिलमात्मानं मन्यमानस्य खिद्यतः।

कृष्णास्य नारदोऽभ्यागादाश्चमं प्रागुदाहृतम्॥ ३२ ॥

तमभिज्ञाय सहसा प्रत्युत्थायागतं मुनिः।

पूजयामास विधिवन्नारदं सुरपूजितम्॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे नारदागमनं नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

\_\_:-\*-:---·

#### भाषा टीका।

स्त्री श्रद्धिजाधम इनोंके कर्णगोचर वेद नहीं होसके हैंकमें रूपि साधन में मोहित इनोंका कल्याण इस प्रकार सेहोगा इस हेतुसे श्रीव्यासमुनि ने भारत आख्यान को रचना किया ॥ २६/॥ हे द्विजो इस प्रकार से प्राण्यियों के हितमें सदा सब प्रकार से प्रवृत्त होने परमी जब हृहय संतोष न भया तबतो ॥ २६ ॥ हे द्विजो इस प्रकार से प्राण्यियों के हितमें सदा सब प्रकार से प्रवृत्त होने परमी जब हृहय संतोष न भया तबतो ॥ २६ ॥ अल्यंत मनको खिन्न कियेहुये सरस्त्रती के पवित्र किनारे पर एकांत में विचार करते हुये धर्मक व्यासजी यह वोले ॥ २० ॥ अल्यंत मनको खिन्न कियेहुये सरस्त्रती के पवित्र किनारे पर एकांत में विचार करते हुये धर्मक व्यासजी यह वोले ॥ २८ ॥ मेने नियमों को धारण करके वेद गुरु अग्नि इनोंका निष्कपट से मान्य किया है और इनोंकी आज्ञा को भी प्रहण किया ॥ २८ ॥

# श्रीधरखामी।

देह्यो देहे भवः आत्मा जीवः वस्तुतो विभुः परिपूर्ण एव आत्मना खेन रूपेण असम्पन्नः तादात्म्यमप्राप्त इवाभाति । ब्रह्मवर्ष्यसं व्रह्मणः श्रवणाध्यापनोत्कर्षजं तेजः तत्र साधवो ब्रह्मवर्ष्यस्याः तेषु सत्तमः अतिश्रेष्ठोऽपि । यद्वा न केवलमसम्पन्न इवाभाति प्रत्युत्त ब्रह्मवर्ष्यस्यापनोत्कर्षजं तेजः तत्र साधवो ब्रह्मवर्ष्यस्याः तेषु सत्तमाऽपि ॥ ३० ॥ ब्रह्मवर्ष्यस्य व्रह्मवर्ष्यस्य इवाभाति । ब्रह्मवर्ष्यस्य इति पाठे कमनीयतमोऽपि ॥ ३० ॥ असम्पन्ती हेतुं स्वयमेवाशङ्कृते किम्बेति । प्रायेण भूयस्त्वेन । हि यसमात् त एव धम्माः अच्युतस्य प्रियाः ॥ ३१ ॥ असम्पन्ती हेतुं स्वयमेवाशङ्कृते किम्बेति । प्रायेण भूयस्त्वेन । हि यसमात् त एव धम्माः अच्युतस्य प्रियाः ॥ ३२ ॥ क्रिलं न्यूनम् । खिद्यतः खेदं प्राप्तुवतः । कृष्णस्य व्यासस्य । प्रागुदाहृतं सरस्वतीतीरस्थमः ॥ ३२ ॥ तं नारदमागतमभिन्नाय सहसा प्रत्युत्थायं विधिवत् पूजयामासेति ॥ ३३ ॥ इति श्रीमद्रागवतभावार्यदीपिकायां प्रथमस्कन्धे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

#### श्रीवीरराघवः

किन्यारतव्यपदेशेनभारतव्याजेनाम्नायानांवेदानामर्थश्चद्शितः भारतेविशिनष्टियत्रभारतेस्रीश्चद्रादिभिरिष धर्मो इद्यतेस्वसापे-क्षितश्चेयःसाधनः स्वानुरूपोधमाँदृद्धः देद्दस्या विभुः प्रभुरात्माप्रत्यगात्मात्रात्मनातः करणेनसह यद्वा देशोविभुरात्मातः करणमात्मनान् अथार्थवंस्वतिवेतिस्वतेषिक्षेत्रमास्वतेषिक्षेत्रमासांताविधरिनत्यत्वात् ध्वहित्वत्यावर्वसः ॥५।४।७८॥ इत्यजभावः उशक्तमः धुद्धतमोद्धर्मः स्वयंद्वस्वतिक्षेत्रस्वाध्यायनिमित्तेतेजसिसमासांताविधरिनत्यत्वात् ध्वहित्वत्यावर्वसः ॥५।४।७८॥ इत्यजभावः उशक्तमः ध्वत्रह्वत्वभातिव्यवस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्व स्वयंद्वस्य स्वयंद्वस्य

#### श्रीवीरराघवः।

दयमेवभागवतधर्मानिकपण मेवासंतोषहेतुर्मवितुमईतीत्यभिप्रायेणानिकपणस्यासंतोषहेतुत्वमुपपादयति प्रियाइति सर्वातरा तमनिमगवतिप्रीतेसतिहि तिषयाम्यस्यमनसस्तोषः सच भगवान्मागवतेषुतुष्टेषु सत्सुखयंतुष्यति तेषांचसंतोषहेतवस्तपव-भागवतधर्मापवतदिनिकपणादुःचितपवासंतोषहातिमावः प्रायेणेत्यनेनकचित् कचिदेवभारतेमागवतधर्मनिकपणमितिस्चितम् ॥ ३१ ॥ पवित्थमात्मानंखिलंन्यूनमन्यमानस्यातपविषयतस्तस्यकृष्णस्य व्यासस्यप्रागुदाहृतंपूर्वमुकसरस्वतीतीरस्याक्षमंप्रतिनारदोऽभ्या गाद्ध्यागच्छत्॥ ३२ ॥

तमागतमभिक्षाय चिन्हेर्नारदमुनि श्रात्वासहसात्वरयाविधिवत्पूजयामासकथं मृतंसुरैःपूजितंपूज्यमानं "मतिषुस्रिपूजार्थे भ्यम्य ॥३।२।१८॥ इतिवर्तमानेकः ॥ ३३ ॥

इतिप्रथमे चतुर्थः ॥ ४॥

# श्रीविजयध्वजः ।

अथापिमारतकृत्यात्रास्त्रायार्थप्रदर्शनानंतरमिष्वैद्योदेहरूपत्रात्मात्रात्मनास्त्रतप्व विभुव्याप्तोमेममात्मात्रवतारप्रयोजनासंपत्त्यात्रसंप क्रोऽप्राप्तप्रयोजनइवामाति कीहराःब्रह्मवर्चस्त्रिसत्तमःवृत्ताध्ययनसंपन्नानांमध्येश्रेष्ठइत्यन्वयः ब्रह्मवर्चस्यसत्तमइतिपाठेण्ययमेवार्थः ॥२९॥ प्रायइदमेवानलंबुद्धौकारणमाह किवेति भागवताधर्माःप्रायेगानिरूपिताःकिंचभारतेनिरूपिताःअपिपुनःशास्त्रांतरेग्रानिरूपग्रीयाइन्त्यतःप्रायेग्रोत्युक्तं किविशिष्टाःपरमहंसानांप्रियाः ततःकि तेपरमहंसापवाच्युतिप्रयाहियस्मादसंपन्नइवाभातीतिभावः॥३०॥

केनचित्प्रेरितएवमहापुरुषःस्वकार्येप्रवर्ततद्दतिन्यायात्भागवतकृतिरेवालंबुद्धिहेतुरितिनिश्चयवानिपनारद्प्रेरितः भागवतमकार्षीदिति-नारदस्यलोकेमहतीकीर्तिःस्यादितिभक्तवत्सलत्वान्नारदागमनमाकांक्षमाग्रांव्यासंप्रतितदागमनमाह तस्येति स्वित्रम्थनलंबुद्धिमाप्तम्ययतः-स्विद्यतःखिद्यमानस्यथनलंबुद्धिगतस्य ॥ ३१ ॥

अभिक्षायसंक्षापूर्वकंविक्षायसहसाकालक्षेपमंतरेगा सरखतीतीरवर्तिखाश्रमस्थितोभागवतधर्मक्षापनहेतोनीरदेनचोदितःश्रीकृष्णोभा-गवतसंहितामकरोदितिशोनकप्रश्नपरिहारः॥ ३२॥

इतिश्रीमागवतेप्रथमस्कंधेटीकायांचतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

# क्रमसंदर्भः।

विभुः स्ततः शानादिसम्पन्नोऽपि आत्मना भगवता असम्पन्न इव तस्तितुकसम्पन्तिविशेषमप्राप्त इवामाति । यो हि वस्यते श्रीनारवेन इमं स्तिनगममित्यन्तेन ग्रन्थेन । उशक्तम इतिपाठे ब्रह्मवर्षसीति श्रेयम् ॥ ३० ॥

खयमपि तथैवाह प्रिया इति ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृत क्रमसन्दर्भे चतुर्थोऽच्यायः॥ ४॥

# सुबोधिनी।

भारतकरणं च धर्मार्थमेवेत्याह । भारतव्यपदेशेनेति । वस्तुतःकल्पस्त्रवत् वेदार्थप्रतिपादकएवद्दतिहासवाचकशब्दकरणं तु ब्या-जमात्रम् । तदाह । भारतद्दति व्यपदेशमात्रम् अन्यथा ग्रद्धादीनामधिकारो न स्यादिति हिशब्दार्थः । आम्नाये दृष्टांतार्थमुक्तोधर्मः लीकिकोऽत्र प्रयुक्तानतुयज्ञादिः धन्वन्निव प्रपाऽसीत्यादी यथा । अतएव वेदे प्रतिपादितधर्मा न ग्रद्धादिभिन्नीतुंशक्यः अत्र तु शक्य दृत्याह । दृश्यतद्दति । उपदेशव्यतिरेकेगापि ज्ञायतद्दत्यर्थः ॥ २९ ॥

# सुवोधिनी।

क्षातयात्मद्मानांनतरं परमात्मदिदक्षा साधमैरेवसंपद्यतइति ननु तथापिकोऽयमत्याग्रहस्तत्राह तपवहिअच्युतप्रियाइति तपवधर्मा पविद्यति आत्मपर्यवसानात् । यदितेपरमहंसास्तवापारंपर्थाद्गीग्राता भगवती भगवदीयानांच प्रियाइत्यर्थःपासंडनिवृत्तयेस्वाश्रमपदप्रयोगः मुख्येसंप्रत्ययहतिच ॥ ३० ॥ ३१ ॥

पतादशेविषयेनारवस्याधिकारात्कथमागतदृत्याह तस्येति खिलंन्यूनंखतपवमगवद्धमैनिरूपगातुपूर्वोक्तमारतादेरस्यचिरोधात् विरुद्धवक्तृत्वेनाप्रामाग्यंस्यात् अतः खिद्यतानारदवचनात्त्रयाकथनेनविरोधः कृष्णस्येतिवाच्यनाम्नोत्तमवकृत्वंवोधयति अथवाकृष्ण-स्यनारवद्दतिप्रागुदाहृतंसरखतीतटे ॥ ३३ ॥

ं साकांक्षस्यकृत्यमाहतमभिक्षायेति॥नारदेतिस्वकार्यसाधकहितवासहसेति अनभ्युत्थानकालेपिमुनिः अकालाभ्युत्थानयोर्गुग्रदोषद्रप्रा विधिवत्गुरुजनपूजायांयोविधिः अथवाविधिमिवनारदस्यब्रह्मपूजेवशुद्धसात्त्विका नामपिकिचिज्क्षेयमस्ति अतपवदेवैर्नारदपूजनम् अतप वस्तस्यापीतिनात्रालोकिकंकिचित्॥ ३३॥

इतिश्रीभागवतसुवोधिन्यांश्रीवलभदीक्षितविरचितायां प्रथमस्कंधविवरग्रो चतुर्थोध्यायविवरग्राम् ॥ ४॥

## । श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

देशः देहस्यः आत्मना खरूपेगा विभुस्तपोशानादिभिः परिपूर्गोऽपि असम्पन्न इव अपूर्ण इव । न केवलमसम्पन्न इव किन्तु ब्रह्म-वर्चसं वेदश्रविशाध्यापनोतक्षेजं तेजस्तद्वानीप असत्तम इव । उशत्तम इति पाठे कमनीयतमोऽपि । तथा समासांताभावे मत्वर्थीयविन् प्रत्ययेन ब्रह्मवर्षस्वी असत्तम इति उशत्तम इत्याभ्यां वकारवत्संयोगे<sup>न</sup> पाठद्वयम् ॥ ३०॥

असम्पत्तौ हेतुं स्वयमेवाशङ्कते किम्वेति । प्रायेण भूयस्त्वेन । त एव परमहंसा एव । अत्र भागवतधर्मपदेन ज्ञानं व्याख्यातुं न शक्यते किन्तु भक्तिरेव नामान्यनन्तस्य यशोऽङ्कितानीति भवतानुदितप्रायं यशो भगवतोऽमलमित्यादेः । ततश्च परमहंसपदेन भका एवोच्यन्ते नतु ज्ञानिनः । अतः पारमहंसी संहितेयं श्रीभागवतिमिति ज्ञानिभिरत्र स्वत्वं नारोपणीयम् ॥ ३१॥

खिलं न्यूनम् । कृष्णस्य व्यासस्य आश्रमं प्रागुदाहृतं सरस्वतीतरस्थम् । अत्र भगवद्वतारत्वाद्सम्भाविनावप्यसर्वेद्यताचित्ताप्र-सादी व्यासस्य स्वयं भगवता श्रीकृष्णेनेव स्वसद्दशस्य सर्विशास्त्रशिरोमणेः श्रीभागवतस्य प्रादुर्भावार्थमेव वलादुपपादितावित्यव-सीयते । यथा ब्रह्ममोहनप्रस्तावे स्वलीलासीन्दर्थार्थं वलदेवस्थापि असर्विद्यता कल्पिता । नारदोपदेशात् प्रादुर्भूते च सित यस्मिन् सर्वि मङ्गित्रयोगेन मङ्गको लभतेऽञ्जलेति । किम्बा योगेन सांख्येन न्यासस्वाध्याययोगि । किम्वा श्रेयोभिरन्येश्च न यत्रात्मप्रदो हरि-रिति वाक्याश्यां सर्विषुरुपार्थमुख्यो मोक्षोऽपि भक्तीव लक्ष्यते नतु साधनान्तरेगोति सर्विशास्त्रविलक्षगोऽर्थः सर्वेरेव हृष्टो भवतीति वाक्याश्यां सर्वेषुरुपार्थमुख्यो मोक्षोऽपि भक्तीव लक्ष्यते नतु साधनान्तरेगोति सर्वेशास्त्रविलक्षगोऽर्थः सर्वेरेव हृष्टो भवतीति वाक्या ॥ ३२ ॥

विधिवत् विधि ब्रह्माशामिव । इव वत् वा व साहश्ये इत्यिभधानम् । अत्र वत्शब्देन सह समासः ॥ ३३ ॥

इति सारार्थद्धिन्यां द्धिणयां भक्तचेतसाम्।

चतुर्थः प्रथमेऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम ॥ ४॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

मारतव्यपदेशेन मारतव्याजेनयत्रभारते स्त्रीशृद्रादिभिः स्त्रीशृद्रद्विजवंधुभिरिष धर्मादि धर्मार्मकाममोक्षंदश्यते ॥ २९ ॥ वतेतिखेदे अहोकएम देखोदेहस्थोविभुः ब्रह्मवर्चेसिशब्दब्रह्मश्रवगाध्ययनोत्कर्षजेतेजसि उशत्तमःकमनीयतमोपि आत्मनास्त्रयम् संपन्नः असमृद्धश्वाभाति ब्रह्महस्तिभ्यांचर्चसङ्ख्यामावः समासांतविश्वरानित्यत्त्वात् ॥ ३० ॥

# भाषा टीका ।

और भारत के निभित्त से वेदका अर्थकों भी दिखाया है जिस भारत मे स्त्री श्रृद्रादिक भी धर्मादिकों को स्त्रयंदेखसकते हैं ॥२९॥ देसाहै तीभी हमारा देह वाला आतमा ब्रह्मतेज वालों मे श्रेष्ठ है तीभी मनके सहित असंतुष्ट्रसा मालूम होता है ॥ ३०॥ अथवा हमने प्रायक्तरके भागवत धर्मोंका निरूपण नहीं किया जीकि धर्म परमहंसों के प्रिय हैं वे अच्युत भगवानके प्रिय हैं ॥ ३१॥ अथवा हमने प्रायक्तरके भोगवत धर्मोंका निरूपण नहीं किया जीकि धर्म पर्वोक्त आश्रम को श्रीनारदजी आते भये॥ ३२॥ इस प्रकार ज्यासजी उन नारदजी को आये जान शीझही उठकर देवतों के पूज्य नारदजी को विधि पूर्वक पूजा करते भये॥ ३३॥ वह मुनि व्यासजी उन नारदजी को आये जान शीझही उठकर देवतों के पूज्य नारदजी को विधि पूर्वक पूजा करते भये॥ ३३॥

# पश्चमोऽध्यायः।

(3

सृतउवाच ।

अथ तं सुखमासीन सुपासीनं हबृच्छ्वाः।

देविषः प्राह विप्रिषे वीगापागिः स्मयन्निव ॥ १ ॥

नारद उवाच

पाराशर्य्य महाभाग भवतः किञ्चदात्मना । परितुष्यित शारीर आत्मा मानस एव वा ॥ २ ॥ १ जिज्ञासितं सुसम्पन्नमिष ते महदद्भुतम् । कृतवान् भारतं यस्त्वं सर्वार्थपरिबृहितम् ॥ ३ ॥

जिज्ञासितमधीतश्च ब्रह्म यत्तत् सनातनम् ।

तथापि शोचस्यात्मानमकृतार्थ इव प्रभो ॥ १ ॥

#### श्रीधरखामी।

पश्चमे सर्व्वधम्में भ्यो हरिकीर्त्तनगौरवम्। व्यासिचत्तप्रसादाय नारदेनोपदिश्यते॥०॥

उप समीपे आसीनं विप्रार्ष (व्यासम् ) वृहच्छ्वाः महायशाः । स्मयन् ईषद्धसन् । इवेत्यनेन मुखप्रसत्तिर्धात्ये । यद्वा इवेत्यन-धिकारांर्थम् अहो महानिप मुद्यतीति स्मयमानः ॥ १॥

शारीरः शरीराभिमानी आत्मा आत्मना तेन शरीरेश किचित किं परितुष्यति मानस आत्मा मनोश्मिमानी तेन मनसा परितुष्यति किचित्रो वा॥२॥

ते जिज्ञासितं ज्ञातुमिष्टं धर्मादि यत् तत् सर्व्वं सुसम्पन्नं सम्यग्ज्ञातम् । अपिशब्दादनुष्ठितञ्चेत्यर्थः । अयीति पाठे सम्बोधनम् । सुसम्पन्नत्वे हेतुः महदद्भुतमित्यादि । सर्वेरथैर्धम्मोदिभिः परिवृह्तिं परिपूर्णम् ॥ ३॥

किश्च यत् सनातनं नित्यं परं ब्रह्म तश्च त्वया जिज्ञासितं विचारितम् अधीतम् अधिगतम् प्राप्तश्चेत्यर्थः । अथापि शोचिस् तत् विमर्थमिति शेषः ॥ ४ ॥

# दीपनी।

महद्क्षुतमित्यादि । महद्वन्थतः अद्भुतमर्थतः ॥ ३—१०॥

# श्रीवीरराघवः।

अथयथावत्यूजानंतरं सुखमासीनः वृहच्छ्वःकीर्त्तिर्यस्यवीगापाग्रीयस्य सदेवर्षिनीरदः स्मयन्निषस्वाश्चयाआसीन्रभुपविष्टं विप्रिष्टियासंप्राह ॥ १

तदेवाहपाराशर्येतित्रिभिःअसंतोषमालक्ष्याहकचिदिति इष्टप्रश्लेहेपाराशर्यहेमहाभागभवतःस्वात्मनास्वयंशारीरआत्माक्षेत्रज्ञःमानसः

मनःसंबंधीमनः करगाकः समनस्कद्दतियावत्परितुष्यत्येवहिकाचित् ॥ २ ॥

तत्वयाजिज्ञासितंज्ञातुभिष्टंसर्वेसुसंपन्नमियअपिशब्दः प्रश्नद्योतकः ज्ञातमेवहित्यर्थः पद्गतीगत्यर्थावुद्धार्थाः उपवृद्धितंयेनतदितिचा अन् तत्वयाजिज्ञासितंज्ञातुभिष्टंसर्वेसुसंपन्नमियअपिशब्दः प्रश्नद्योतकः ज्ञातमेवहित्यर्थः पद्गतीगत्यर्थावुद्धार्थाः उपवृद्धितंयेनतदितिचा अन् तप्वमहद्विपुलमत्यस्त्रृतंशब्दतोऽर्थश्चित्रंभारतं कृतवानतःसुसंपन्नजिज्ञामितिभावः ॥ ३॥

त्राचित्रज्ञासितमितियत् सनातनमनादिनिधनाचिच्छित्रसंप्रदायंब्रह्मवेदस्तमधीतं जिज्ञासितंचसनर्थस्त्वाचेवक्षितः विचारि-तिचित्रज्ञासितमितियत् सनातनमनादिनिधनाचिच्छित्रसंप्रदायंब्रह्मवेदस्तमधीतं जिज्ञासितंचसनर्थस्त्वाचेवक्षितः विचारि-तिमितिवापूर्वीत्तरमीमांसयोः प्रशायनप्रशायनाभ्यामितिभावः तथाप्येवंकृतकृत्योपित्वमकृतार्थः अकृतकृत्यद्दवहेप्रभोद्योचिसिकोचित्र-वलक्षसद्द्रवर्थः ॥ ४॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अथार्ध्यपाद्यादिसमईग्रानंतरंखुकमुपविष्विस्तृतकीर्तिःवीग्रामहतीनामपाग्रोयस्यस्तरथोकः संदिसतंकुर्वविषयसम्बद्धादेवारिः समीपउपविष्ठंतंविप्रवित्यासंप्राहेत्येकान्वयः॥ १॥

#### श्रीविजयध्वजः

विक्षातमगवद्मिप्रायःतद्वुकारणानुगुणानुकारणवासारदोनित्यकुश्हंतस्यसंज्ञानन्नपितद्नुवद्निवकुशलंपुच्छतीत्याह पाराशयेति महाभागपेश्वर्याद्यनंतभाग्यनिधे पाराशयपराशरपुत्र भगवतःशारीरःमानसोवाशरीररूपोवाभेदाभावादेवमुक्तिः आत्मावतारप्रयोजनंक त्वाआत्मनास्वतप्वपरितुष्यातिकचित्स्वतंत्रतयाकृतावतारकार्यत्वात्परितुष्यतीत्येवकारार्थः ॥ २ ॥

कुतइतितत्राह जिल्लासितमित्यादि यस्त्वंधमीदिसर्वपुरुषार्थवृहितंपूर्गीभारतंकृतवांस्तेत्वयासुसंपन्नसुखपूर्णमद्भतंसर्वसमादाश्चर्यतमं असारुद्रो वस्माद्भवतितदद्भुतंवा महद्देशतःकालतोगुगातश्चापारिच्छित्रंब्रह्माजिश्चासितंविचारितं अपिचशब्दीवस्यमागासमुचये शब्दतो-र्थतोपिमहत् अद्भुतंगहनं व्यवहारेश्वनेशास्त्रेवस्तुहेतुनिवृत्तिविचनात्तश्र्यायेनार्थशब्दस्यद्विरावृत्त्यासवेशास्त्रार्थपरिवृंहितंस्रुतवानि-तियस्मात्तस्मात्तेनलोकानांशातुमिष्टंसुष्ठुसुपूर्णमभूदितिवा ॥ ३॥

किंचयचोपाध्यायपरंपरयाभवताधीतंसनातनंनित्यंवेदात्मकंशब्दब्रह्मतद्पिजिज्ञासितंविचारितं तस्मात्कृतावतारकार्योपिततपवनातु-च्टिकारशंपश्यामीत्यर्थः तथाप्येवमपिकृतावतारकार्योपिअकृतावतारप्रयोजनइचात्मानंशोचसिप्रकाशयसिद्देप्रभोप्रभूतज्ञानेत्यन्वयः॥४॥

# क्रमसंदर्भः।

कृतवान् भारतमित्यस्य यद्विरोधि मात्स्ये श्रूयते "अष्टादशपुरागानि कृत्वा सत्यवतीसुतः। भारताख्यानमस्त्रिलं चके तदुपहृहित-मिति। तत्र स संहितां भागवतीं कृत्वानुकम्य चात्मजम्। शुक्रमध्यापयामास निवृत्तिनिरतं मुनिमिति सप्तमाध्यायवाक्येन समाधानम् स्थित । प्रथमतः सामान्यतया कृत्वः नारदोपदेशानन्तरम् अनुक्रम्य तत्सन्मत्यानुक्रमेगा विशेषतः कृत्वेति ह्यत्रार्थः भवतद्दति । यशोवर्शानाभावमयेन ब्रह्मज्ञानेनापि खिलमिति भगवदाख्यपूर्शतत्त्वाविभीवाभावात् ॥ ३--८॥

# सुबोधिनी ।

चतुर्वसर्वधर्माणांसंदेहोविनिकपितः निक्ण्यतेमक्तिमार्गेपंचमेतस्यनिर्णायः उद्दंकग्रामध्यमत्वात् इष्टांतस्यप्रदर्शनम् आदावंतिनर्णया श्रीहेतुत्वाद्युस्तर्स्याहि पूर्वाध्यायांतेनारदः पूजितदृत्युकं तत्रप्रतिपूजनादिकमछत्वाभिन्नप्रक्रमेगापृच्छति अथेति तंपूर्वोक्तधर्मवतमुत्तर परिज्ञानात् निर्भयः सुखमासीनः उत्तरप्रदनार्थमुपासीनमहतोन्यूनताप्रदनः साधारणस्यनघटतइत्याहबृहच्छवाः वृहत्कीत्तित्वादुक्तं विश्वा सार्थवादेवऋषिः देवानामपिदेवप्रतिपादकमंत्रद्रष्टासह्यलौकिकोभवतिविप्रपिधमवुद्धीनामुपायवकारंसर्वपूरकाणां पूरकंवाभागवत धर्माणामुत्तमत्वं ख्यायपन्नितिवीगापागिः स्वावसंप्राप्यऊर्जितोविकसन्मुखःलोकेहसन्निव ॥ १॥

रणाय प्राप्त । इष्टामहानिपमुह्यतीतिमिच्छतोमूलमपिनष्टमित्यभिष्रायेगास्वाभाविकंकुरालंपूच्छतिपारार्श्यइति पराशरस्त्वतिवैष्णावस्तत्पुत्रः कथंभन गवनमार्गेसंदिग्धइतिपितृनाम्नासंवोधनेनतदुद्वोधितंसमर्थस्याधिकारेभगवनमार्गवोधनस्भवात् कृतार्थत्वमाहहेमहाभागेतिकाचिदितिको-मलप्रइनेशारीरआत्माआत्मनाभवतः स्वेनवाभवतःइतितुसमुदायः विषयाप्राप्तीतुस्वेनवापरितोषः भगवतातुअनेनअलौकिकमलौकिकं-

वानिमित्तपृष्टभवतिएवंमानसः एवशब्देनपूर्वरूपेगौगातासूचिता ॥ २ ॥ उत्तरार्थतत्कृतंपूर्वपक्षेनाभिनंदतिजिज्ञासितमिति विचारितंसर्वलोकहिताचरग्रांसुष्टुसंपन्नमेककृत्येवआकल्पकरग्रासिद्धेः अपीत्या-अयोभगवतोपिप्रत्येककृत्यपेक्षातवतुतद्पिनास्तीत्याह इतितेमहद्द्धुतमितिइतीतिसमाप्ती अद्भुतस्यवमहत्त्वंसंपत्तिमेवाहकृतवानितिएकः-हिशास्त्रमेकपुरुषार्थप्रतिपादकं भारतंतुधर्मादिचतुष्टयप्रतिपादकमित्याह

द्धाभत्ययः ॥ र ॥ स्वामाविकथर्मैर्विशेषमाह जिज्ञासितमिति ब्रह्मप्रब्रह्मचेद्श्चतत्रैकंजिज्ञासितमप्रमधीतंचकारादध्यापितंधमेश्चजैमिनेरपितदुक्ता संवद्धमित्यर्थः ॥ ३ ॥ यत्तिअतिप्रसिद्धंसनातनमविकृतंब्रह्यशब्देनबृहत्वमेवोक्तं र्थपरिवंधनात अथवा प्रथमजिज्ञासावद्यविषयिगी द्वितीयावेदस्य श्रेषारविध्नाप यात्रा प्रत्या प्रत्या प्रत्या प्रत्या । हतायायप्रत्य प्रत्या प्रत्या । इतायायप्रत्य प्रत्या प्रति हत्या । इतायायप्रत्य प्रतिमुद्धमानइतिच ज्ञानधर्मसंप्तीशोकाभावः श्रुतिसिद्धः क्लिविपर्ययेगादृषयतितथापीति "तरितशोकमात्मविदितिश्रुतेः अनीहयाशोचितिमुद्धमानइतिच ज्ञानधर्मसंप्तीशोकाभावः श्रुतिसिद्धः अत्रोत्तरकथनसामर्थ्यतवास्तीत्यतआहप्रभोइति ॥ ४॥

# श्रीविश्वनाथचर्मवर्ती।

पश्चमे ज्ञानकम्मादिवैयर्थ्यमुपपादयम् । मिक कीर्त्तनमुख्याङ्गां नारदस्तमुपादिशत् ॥ ०॥

उपासीनमातिष्यार्थमासनार्थपाद्यादिभिः उपासनां कुट्नेन्तमेवाह । समयित्रव ओष्ठाधराक्ष्यां स्मितं निष्क्रमन्निव सर्वेद्यतया त उपाराणाः । समय जपाराणाः प्रसादं नानाप्रथकोतुकार्थमवहित्थया गोपियमुमराकनुवित्थर्थः ॥ १॥ प्रत्यन्तः प्रसादं नानाप्रथकोतुकार्थमवहित्थया गोपियमुमराकनुवित्थर्थः ॥ १॥

त्तः प्रसाद गाणाः वारिरः शरीराभिमानी आत्मा आत्मना तेन शरीरेगा कि तुष्यति । मानस आत्मा मनोऽभिमानी तेन मनसा काश्चिति प्रश्ने किम् वारिरः शरीराभिमानी आत्मा आत्मना तेन शरीरेगा कि तुष्यति । मानस आत्मा मनोऽभिमानी तेन मनसा कश्चिति प्रश्ने किम् द्वारारः राया पारावार्यिति महाभागत्याभ्यां पैतृकाखीयमहाप्रभाववती भवतोऽपि कोऽयं विषाद इति विस्मयो व्यक्तितः ॥ २॥ परितृष्यिति नो चा। परिवर्धिति महाभागत्याभ्यां पैतृकाखीयमहाप्रभाववती भवतोऽपि कोऽयं विषाद इति विस्मयो व्यक्तितः ॥ २॥

व्यास उवाच अस्त्येव मे सर्व्वमिदं त्वयोक्तं तथापि नात्मा पीरतुष्यते मे। तनमूलमव्यक्तमगाघवोधं पृच्छाम हे त्वात्मभवात्मभूतम् ॥ ५॥ स वै भवान् वेद समस्तगुद्यमुपासितो यत् पुरुषः पुरागाः। परावरेशो मनसैव विश्वं सृजत्यवत्यत्ति गुगौरसङ्गः ॥ ६ ॥ त्वं पर्यटन्नकं इव त्रिकोकीमन्तश्चरोवायुरिवात्मसाची । परावरे ब्रह्माि धर्मतोब्रतैः स्नातस्य मे न्यूनमलं विचक्ष्व॥७॥ भवतानुदितप्रायं यशो भगवतोऽमलस् । नारद उवाच येनैवासौ न तुष्येत मन्ये तद्दर्शनं खिलम् ॥ ८॥

## विश्वनाथ चक्रवर्ती।

न च तव शास्त्रज्ञानं किश्चिद्पेक्षित्व्यं तदलब्धिमुलकोऽयं विषाद् इति वाच्यम्। यतो जिज्ञासितामित्यादि ॥ ३॥ न चानुभवक्षानम्पेक्षितव्यम् इत्यपि वाच्यम् । यतः सनातनं नित्यं ब्रह्मव्यापकं निर्विशेषस्वरूपं यत्त्वपि जिल्लासितं वेदान्तस्त्रकः न चानुन न केवलं जिल्लासितमेव अपि तु अधीतमवगतमनुभवगोचरीकृतमित्यर्थः । अत अधीतम् अधिगतं प्राप्तामित्यर्थे इति

#### सिद्धान्तप्रदीपः।

अथेति पूजानंतरम् सुस्रमासीनः वृहच्छ्वाः वृहत्कीर्तिः अहोपरोपकारायमहांतएवयतंतीतिहर्षेगास्मयन्निव देविर्धभगवान्नारदः उपसमीपेआसीनम् विप्रार्थे श्रीव्यासंप्राह् ॥ १ ॥

शारीरः शरीराधिष्ठातामानसोमनोनियंताऽऽत्माऽऽत्मनास्वतः परितुष्यतिकि चिदितीष्टप्रश्ने॥ २॥

तेजिज्ञासितम् ज्ञातुमिष्टम् सुसंपन्नंगत्यर्थस्यपद्गतावित्यस्य ज्ञानार्थत्वात् सुन्दुज्ञातम् यत्यतः महद्द्भतम् शब्दार्थाभ्यांविचि-त्रम् । सर्वार्थपरिवृहितम् । "धर्मेचार्थेचकामेच मोक्षेचभरतर्षभ । यदिहास्तितद्ग्यत्र यश्नेहास्तिनतत्कचिदिति तत्रैवोक्तेः सर्वैःसांगोषांगैः धर्मादिभिरर्थैः परिवृहितं पूर्गाम् ॥ ३ ॥

यत्सनातनं ब्रह्मवेद्रूपम् । तत्त्वयाशब्दतो ऽधीतमर्थतश्चित्रज्ञासितम् ॥ ४ ॥

#### भाषा टीका ।

सूतजी वोले सुखपूर्वक आसन पर वैठे भये वडे यशसी नारदँजी हायमे वीगाकों लिये इसते हुये समीप वैठे भये व्यासजी से वोलते भये ॥ १ ॥

त्त भय ॥ १ ॥ नारदजी बोले हे पराहार पुत्र महा भाग्यवन क्या आपके मनके सहित शारीर अथवा मानस आत्मा संतुष्ट होता है कि नहीं। २ ॥ नारदंजा वाल ह पराशर पुत्र महा नारकर आपने सव अर्थों करके युक्त महान् अद्भुत भारत को रचना किया ॥ ३॥ अपने जानने का इंग्टमी संपूर्ण होगया जिन आपने सव अर्थों करके युक्त महान् अद्भुत भारत को रचना किया ॥ ३॥ आपक जानन का इष्टमा सपूरा हागया जिल्ला कार्या है। जो सनातन बद्धा तत्त्व सोभी तुमने विचारा और जानातीभी अकृतार्थ के सरीके आप अपनी आत्मा को शोचते हो ॥ ४ ॥

# श्रीधरस्वामी।

आतमा शारीपो मानसश्च । तन्मूलं तस्यापरितोषस्य कारगाम । अव्यक्तम् अस्फुटम् । हे नारद् त्वा त्वां पृच्छाम । आतमभवो बह्या तस्यात्मनो देहादुः द्रूतम् अतपवागाधोऽतिगम्भीरो बोघो यस्य तं (त्वाम्)॥ ५॥

शितमा ५६ ७ ४ ४ ५ ५ ५ ५ ५ ५ १ ५ १ ५ १ ५ ६ वेगु हाजाने हेतुः । यद्यस्मात् पुरागाः पुरुषः उपासितस्त्वया । कथम्भूतः

परावरेशः कार्यकारणनियन्तामनसैव संकल्पमात्रेण गुणैः कृत्वा विश्वं सृजतीत्यादि ॥ ६॥

वर्शः का ज्यानाम्य । किञ्च त्वं त्रिलोकी पर्ययक्षकं इव सर्व्वद्शी । योगवलेन प्रामावायुरिव सर्वप्रामामन्तश्चरः सम्नात्मसाक्षी बुद्धिवृश्चित्रः। अतः परे ब्रह्माि धर्मतो योगेन निष्णातस्य । तदुक्तं याद्यवल्ययेन इज्याचारदया। हसादानस्याध्यायकर्मगाम् । अयन्तु परमो धर्मी ययोक पर प्रकार । अवरे च ब्रह्मीमा वेदाच्ये वतैः स्वाध्यायनियमैः निष्णातस्य मे अलम् अत्यर्थे यत् स्यूनं तिह्नचश्व वितर्भय ॥ १० ॥ तम् र प्रायम् अनुक्तप्रायम्। भगवद्यशो विना येनेव धर्मादिक्षानेन असी भगवान् न तुष्येत तदेव दर्शनं क्षानं खिलम् न्यूनम् मन्येऽहस् ८

# श्रीवीरराघवः।

पवमापृष्टबाह्यासः ॥ अस्तीत्यादिभिस्त्रिभिः त्वयोक्तंसर्वमिदंजिश्चासितंस्रुसंपन्नमित्यादिनोक्तम् ममास्त्येवतथापिममात्मान-तस्यासंतोषस्यम् छंनिमित्तमव्यक्तंनमयाश्चातमतस्त्वामेवागाधबोधमपारश्चानंसर्वश्चमितियावत् आत्मभवोब्रह्मातस्यात्मनः श्चारीरादुत्संग्रादुद्धतंपृच्छामहे ॥ ५ ॥

नाइंजानामीतिमानोचइत्यभिप्रायेगाह सवाहति सवैद्यानिनामप्रगािभैगवान्समस्तंगुशंदेहिनामंतर्गतंवेदजानाति कुतःयद्यस्मात्त्वयापुरागाः पुरुषःसर्वजगत्कारग्राभृतः सर्वज्ञः परमपुरुषउपासितः कथंपरमपुरुषोपासनमात्रेगाहंजानीयामित्यत्राह परावरेशः परेब्रह्मादयोऽवरेयस्मा रसचासावीराःसर्वेनियंतामगवान्मनसैवसंकल्पमात्रेगीवविश्वंसृजत्यवत्त्यासिसंहरतिच अथापिगुगौः सत्त्वादिभिर्नसञ्जतेइत्यसंगः स्वसं-करुपकृतजगद्भदयविभवलयलीलस्य सर्वेनियंतुः सर्वप्राग्यंतर्गतवस्कवेदित्वाद्यथाकतुरस्मिन्लोकेपुरुषोभवतीतिन्यायेनेश्वरवत्सर्वमुक्त प्रायस्त्वमपिजानास्येवेतिभावः ॥ ६ ॥

एतदेवोपपादयन्नसंतोषनिमित्तंवदेत्याह त्वमिति त्वमर्कः सूर्यद्वित्रहोकीं पर्यटन्वहिष्ठवस्तुद्रश्रावायुरिवांतश्चरः ज्ञानव्याप्तचासर्वे-षामंतश्चरक्वात्मसाक्षी आत्मनोतः करणस्य साक्षीद्रष्टाहरूतार्थवेदीत्यर्थः। अतः परंचावरंचतयोः समाहारस्तस्मिन्ब्रह्मशिपरे ब्रह्मशितदा-वेदके वेदास्ये ब्रह्मागा च विषये धर्मतोनिवृत्तिधर्मैः व्रतैः कांडवतादिभिश्चकातस्यपारंगतस्य समाप्तधर्मवतस्येत्यर्थः । ममन्युनमसंतोष-पमलंविचक्ष्वन्यूनशब्दस्तसेताखुपचाराद्वर्ततेन्यूनहेतुंविचक्ष्वचिक्षदर्शनेपि वर्त्ततेपश्यालोचयेत्यर्थः । अलंद्रष्टुं सप्तर्थहत्वम् यद्वा न्यून-मिति मावप्रधानीनिर्देशः अलमधिकं न्यूनम् न्यूनत्वंविचक्व अथवा चिक्षर्भाषणार्थएवन्यूनताहेतुंविचक्वेत्यर्थः इत्थंप्रचोदितआह भगवाषारदःयावदध्यायसमाप्ति ॥ ७ ॥

किंवा भागवताधर्मानप्रायेगा निरूपिता इतितदुत्प्रेक्षितसेवतावदसंतोषहेतुमाह भवतेतिहाश्याम् अमलंश्यग्वतां वदतांचाखिलदुरि-तापहं भगवतोयशः भवतानुदितप्रायं प्रायेगाविशातिमत्यर्थः । प्रायप्रहणेनभारतेप्रासंगिकत्या ऽप्राधान्येनभगवद्यशः कचित्कचिद्वदि-तंनतुरुखप्रबंधानुस्यृतत्वेन प्राधान्येन चोदितमिति सूच्यते येन भगवधशोऽननुवर्शितेनैवासौतवात्मानतुष्येत असौतवात्माभगवान्वान-तुष्येत भगवद्परितोषेऽपि सतितिश्चियम्यं त्वदीयमंतः करणमिपनतुष्यत्येवेतिभावः । यद्वा येनैवकार्गोननतुष्येतासीतवात्माभगवान्वा-तत्कारगां किमिति चैत्सिलंन्यूनंतद्दर्शनमेव भगवद्दीनमेव भगवत्स्वरूपगुगाविभूतियाथात्म्यक्षानपूर्वकं प्राधान्येन तद्वर्गानाभावएवेतिम-न्यइत्यर्थः ॥ < ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

पत्तनारदेनपृष्टोऽपरिमितक्क्षानस्वरूपोपिअञ्चवत्दुष्टजनमोहनायतत्कारगांतमेवपृच्छतीत्याह अस्त्येवेति हेनारद त्वयोक्तमिदंसर्वमेअ-स्येव निकिचिदवशिष्टमस्ति तथापिमेवात्मामनःनपरितुष्यतेनालंबुद्धिप्राप्नोति तुष्यतीतिवक्तव्यतुष्यतद्दतिप्रयोगात्अज्ञजनमोहनार्थमे-वहरिगाप्त्रश्चःक्रियते नाह्यानादितिमहान्विशेषोविश्वायते आत्मनोविष्गोभेवतीत्यात्मभवोव्रह्मातस्यात्मनःशरीरादुङ्कृतउत्पन्नआत्मभवा-तमभूतबद्यापुत्रइत्यर्थः आत्मनिभवतीतिवा त्वेति त्वामव्यक्तंस्हमंतस्यापरितोषस्यमूरुंकारणंपुच्छामहे अल्पन्नश्चेत्प्रश्नोत्तरंकथंब्रूयादि-तितत्राह अगाधित अपरिमितज्ञानंप्रश्लोत्तरवचनसमर्थमित्यर्थः अत्रापिसमित्युपसर्गमंतरेगापृच्छतेरात्मनेपदप्रयोगेगानारदस्यज्ञानं चुलू-कजलपरिमितंव्यासमानंत्रलयसमुद्रवद्परिमितमितितात्पर्यशब्दक्षेरेवक्षायते आत्मभुवात्मभूतमितिकेचित्पर्वतितत्रोवङादेशश्छांद्सः।५।

नारदस्यखातमानलंबुद्धिहेतुवेदनकारगांवक्तीत्याह सवाइति योगुगाविरचितशरीरगतसुखदुःखफलसंगरहितोविश्वंमनसैवस्वतंत्रसा-धनांतरनिर्पेक्षतयामृज्ञत्यवतिसंहरतिसपरावरेशोमुकामुकप्रपंचयोरीशहतिपरावरेशः जगदुत्पत्तेःपुराप्यस्तीतिपुरामाः पुरमामतीति-वा पुरुशिकमें फलानिसनोतिददातीतिषुरुषः उपासितइति अतः भवान्समस्तगुद्यंवेदेत्यंकान्वयः एतवुक्तं भवति चतुर्भुखिपयपुत्रत्वात्तवेव-सर्वजगत्मृष्ट्यादिकर्तभगवदुपासकत्वेनसर्वज्ञत्वात्तत्प्रसादादस्मदनलंबुद्धिहेतुवेदनमस्तीति॥ ६॥

तवभगवत्त्रसादेनजनितापरोक्षश्चानेनसर्वत्राव्याहतगतिकर्भगाचियोगप्रभावेनसर्वप्राणिशरीरांतश्चरणेनचानलंबुद्धिहेतुवित्त्वमित्याह त्वमिति त्रिलोकीपर्यटन् अकेश्वित्रलोक्यां अञ्याहतगतिः सर्वप्राग्यंतश्चरोवायुरिवात्मसाक्षीसर्वजीवबुद्धिवर्तिवृत्तक्षः त्वं परेब्रह्मािणतथाअव-रवानाप । रेतत्प्रतिपादकवेदाख्यशब्दब्रह्मांग्रि धर्मतोवेदोक्तमगवद्धमांनुष्ठानेनतद्धिकारोपपादकवेदव्रतादिभिश्चानुष्ठापितैःलोकमोहायचमयानुष्ठितैः स्नातस्यकृतकृत्यस्यमेथवतारप्रयोजनंन्यूनंनितरामुर्वरितमलंयथाभवतितथाविचक्ष्वविशिष्टतयाबूहीत्येकान्वयः॥ ७॥

नारदोषिसर्वज्ञस्यव्यासस्यद्वदिश्विताभिप्रायंविद्वान्तत्वसादमादित्सुरवतारप्रयोजनवक्तीत्याह भवतेति हेव्यासभवताभगवतोहरे-रमलंयशोऽनुदितप्रायंबद्धत्वेननप्रतिपादितंयेनानुदितेनयशःप्रतिपादकशास्त्रगासीभवतआत्मानवतुष्येत अहंतस्ययशसःप्रतिपादकशास्त्रं-बिलमुर्वरितंमन्यइत्यन्वयः॥ ८॥

प्रमाण्यकाविचारकाणांनात्रोत्तरस्कृतिरित्याह अस्त्येवति साधनस्यर्भकव्यमिचारयन्म् लेतद्व्यक्तंनप्रकृतिकवेदयारिक्यत्वात जुमाण्यवणाः अतः अगाध्यवेष्ट्रित्वापृच्छाग्रहे अगाध्यमाणागम्यं तत्राषिप्रमेयवलाद्वाधः तदाह आत्मभवात्मभूतमितिआत्मानारायणाः तद्भचोब्रह्मात-अतः अगाध्यवेष्ट्रित्वापृच्छाग्रहे अगाध्यमाणागम्यं तत्राषिप्रमेयवलाद्वाधः तदाह आत्मभवात्मभूतमितिआत्मानारायणाः तद्भचोब्रह्मात-श्रतः श्रगाध्यायः वर्षाः इतः श्रगाध्यायः वर्षाः इतः श्रगाध्यायः वर्षाः भ्रमिवातस्वाधनवा हैमगवद्यतास्थात्मवित्"श्रह्णविद्यस्वीवभवतीतिश्रुतेः आत्मवजातः श्रह्णाधनसर्वश्रीचास्रुचितः इयात्मनोदेहाज्ञातम् श्रारमेभवातस्वाधनवा हैमगवद्यतास्थात्मवित्"श्रह्णविद्यस्यवित्रभवतीतिश्रुतेः आत्मवजातः श्रहाधनसर्वश्रीचास्रुचितः

#### सुवोधिनी।

भगवत्सेवकंवाभूतानिविप्णोः सुरपूजितानीतिवाक्यात् ॥ ५॥

तस्यप्रमेयवलमाहसवैभवानिति वेदानांसमस्तंगुत्धंभवानितिवाउभयत्रापिहेतुः उपासितइतिपुरागात्वमुत्तमत्वायतेनपुरुषोत्तमःसिवि+ तइतिकालादिनिरपेक्षःसेव्यसामर्थ्येन सेवकसामर्थ्येवकुंभगवद्गुणानाइपरेतिसर्वेश्वरत्वंसर्वकर्तृत्वंचर्चितनमात्रेणगुणाः॥ ६ ॥

नारदस्यखतोऽपिसामर्थ्यहेतुमाह । पर्यटिश्विति । विहरंतः सर्वपरिश्वानार्थे हष्टांतद्वयमपेक्षितरूपंचित्रयया सर्वलोकगमनं योगेनांतः प्रवेशः श्वानेन सर्वसाक्षित्वम् एवं सार्क्षश्लोक्षेनभक्त्यादिभिः सर्वसामर्थ्यप्रतिपाद्यस्तसंदेहंपृच्छति परावरेश्रद्धागीति परंवेदांतप्रतिपाद्यम् अपरं वेदः तत्र क्रमेशीवधर्मतः यक्षादिकरणात् ब्रह्मशि निष्णातः ततुभयनिष्णातस्ययन्मूलं तद्विचारयआपाततोविचारितं नभविष्य-तीत्याद्य अलमिति॥ ७॥

नारदस्तुविचारितमेव वर्त्ततइति सिद्धवत्कारेगाह । अग्निहोत्रसुवर्णस्त्रीज्ञानसङ्गावेऽपि यथादीपसूर्यादिव्यतिरेकेग्गनविहः प्रकाशः तथामगवद्यशोव्यतिरेकेगानांतः प्रकाशः भगवदीयास्तुधर्मा नज्ञानादिभिः प्रकाश्याः तेचमहांतोवहवश्चयद्विषयंव्याप्यतिष्ठति सचविषयो नक्षानादिभिः प्रकाइयते यद्यपि भारते भगवद्यशः प्रतिपादनंगीतायांच विशेषतः तथापि इतरशेषत्वेन प्रतिपादनात् व्यामोहकलीलात्वेषि हृद्येतथैवावेशात् पूर्वकांडशेषत्वेनोत्तरकांडनिरूपणेन वेदांतैः खातंत्र्येणब्रह्मप्रतिपादनं तथाभगवद्यशोऽपि गीतादौतदेवाह । अमलंयश-स्तेनैवांतः करगादोषाभावः तद्वचितरेकेगापि सर्वे भविष्यतीति ज्ञानेखिलता ॥ ८॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

तस्यापरितोषस्य मूलं कारणम् अव्यक्तमस्माभिर्दुक्षेयं त्वां वयं पृच्छाम । अत्र हे इति सम्बोधनेन न चाहमपि न जानामीति वाच्यम् । यत आत्मभवो ब्रह्मा तस्यात्मनो देहात् भूतं जातमिति पैतृकप्रभावः अगाधबोध इति स्वीयश्च प्रभावस्तज्ज्ञाने कारग्रामस्त्ये-वेति भावः॥५॥

त्वया यत् पुराणः पुरुष उपासितः तेन पराशरपुक्रत्वेन महामागत्वेन चतुर्वेदक्षत्वेन ब्रह्मानुभवित्वेन च त्वयाहमुक्तस्त्वं तु ब्रह्मणः पुत्रोऽगाधबोधः सर्व्वको भगववुपासक इति मत्तः सर्व्वधैवातितरामेव विशिष्ट इति भावः। परावरेश इत्यादिविशेषग्रकः स वै निश्चितं भवानेव भगवद्वतारत्वात्। अतो भवान् समस्तानां समस्तश्च गुद्यं वेद ॥ ६॥

सर्वलोकहितार्थमेव पुरागापुरुषस्त्वद्र्पेगावितार्ग्यस्तन्ममाद्यहितं कुरुष्वेत्याह । त्रिलोकी पर्ययम् अर्क इव सर्विदशी । वायुरिवा-न्तश्चरः। आत्मेव साक्षी बुद्धिवृत्तिक्षः। अतः परे ब्रह्मणि धर्मतः योगेत निष्णातस्य । ततुक्तं याश्चवल्ययेन—इज्याचारदमाहिंसादान-स्वाध्यायकर्मगाम् । अयन्तु परमो धम्मी यद्योगेनात्मद्र्शनमिति । अवरे च ब्रह्मणि वेदाख्ये वतैः स्वाध्यायनियमैः निष्णातस्य असम-त्यर्थे यन्न्यूनं तद्विचश्व वितर्कय ॥ ७ ॥

नतु मया ब्रह्ममीमांसाशास्त्रं वेदान्तद्शनं कृतं तत्राह येनेति । तह्शनं दर्शनशास्त्रमपि खिलं न्यूनमेव मन्ये । तह्शनकर्तुरेव तवापि चित्ताप्रसादश्चेत् तर्हि अधीत्याधीत्य तद्दर्शनाभ्यासिनामिप कथं चित्तं प्रसीद्तिवत्यत्र भवानेव प्रमाणिमिति भावः॥८॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

हे इति । हे नारद तत्तस्यापरितोषस्यमूल हेतुंत्वात्वाम् ॥ ५॥

यद्यस्मात् त्वयापुरुषः उपासितः मनसैवसंकल्पेनैव॥६॥ त्वमकेश्वत्रिलोकीपर्यटन् आत्मसाक्षी शरीर्रूपात्मद्रष्टावाह्येद्रियवृत्तिद्रप्टेत्यर्थः वायुरिवातश्चरः सन् आत्मसाक्षी । अंतःकरणान् वृत्तिद्वष्टा परेब्रह्मिशा धर्मतः निवृत्ति धर्मतः अवरेशब्दब्रह्मिशावतैः तद्ध्ययनार्थकौर्नियमैः स्नातस्यकृतावगाहनस्यमे अलंअत्यर्थन्यूनम् आचक्ष्व ममतपोव्रतज्ञानप्रयत्नादिषु अपूर्णियदस्तितदालोचय॥ ७॥

भवताभगवतः अमलम् आवियतृगां श्रोतृगांचमलघ्नम् यश अनुदित प्रायमवर्गितप्रायम्। येनैवभगवद्यशोवर्गनमंतरगा द्र्यनेन असीतवात्मानतुष्येततत्तेद्र्यनं ज्ञानंखिलमपूर्णमन्ये॥८॥

## भाषा टीका।

व्यासजी बोले आपने जो वात कहा सो सब हमारे हैं तथापि हमारा आत्मा परितुष्ट नहीं होता है तिसका कारण अ प्रगट है सी अति गंभीर बुद्धि वाले ब्रह्मा के पुत्र आपको मै पृछता हीं ॥ ५॥

र्मा आप सब गुप्त वार्तोंको जानते हो जिस कारगा आपने पुरागा पुरुष परमात्मा का उपासना किया है जो परमात्मा कार्य कारगा स्रो आप सब गुप्त वार्तोंको जानते हो जिस कारगा आपने पुरागा पुरुष परमात्मा का उपासना किया है जो परमात्मा कार्य कारगा

सा जार प्राणिसे पृथक होकर मनहीं से संसार को रचते हैं पालते हैं संहार करते हैं ॥ ६॥ के नियामक गुणों से पृथक होकों में घमते को नगके तथ्य सबके अंड करते हैं ॥ ६॥ नयामक थुला । दें बाप सूर्य के तुल्य तीनो लोकों में घूमते भये वायुके तुल्य सवके अंतःकरण में बीचरते साक्षी हो ब्रह्म औं वेदमें धर्मसे वर्तसे आप सूर्य के तुल्य तीनो लोकों के घूमते भये वायुके तुल्य सवके अंतःकरण में बीचरते साक्षी हो ब्रह्म औं वेदमें धर्मसे वर्तसे

आप खूप न जो को जोकुछ कमती हो सो संपूर्ण कहो ॥ ७॥ प्रवीगा जो में तिस मेरे को जोकुछ कमती हो सो संपूर्ण कहो ॥ ७॥ ाण जो में तिस्त भर ना अपने भगवानका निर्मेळ यशका कथन नहीं किया है जिससे वह भगवान संतुष्ट नहोस सह जान न्यून

**ଶ है || ८ ||** 

यथा धम्मीदयश्रार्था मुनिवर्ग्यानुकीर्तिताः ।
न तथा वासुदेवस्य महिमा द्यनुवर्गितः ॥ ९ ॥
न यद्वचित्रत्रपदं हरेर्यशो जगत्पवित्रं प्रगृगीत किहिचित् ।
तद्वायसं तीर्थमुशन्ति मानसा न यत्र हंसा निरमन्त्युशिक् त्वयाः ॥ १० ॥
तद्वाग्विसर्गो जनताघविष्ठवो यस्मिन् प्रतिश्लोकमवद्ववत्यपि ।
नामान्यनन्तस्य यशोऽङ्कितानि यत् शृण्वन्ति गायन्ति गृगान्ति साधवः॥ ११ ॥
नैष्कम्म्यमप्यच्युतभाववर्ज्ञितं न शोभते ज्ञानमलं निरक्षनम् ।
कुतः पुनः शाश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कम्मी यद्प्यकारगाम् ॥ १२ ॥

#### श्रीधरखामी।

नतु भगवद्यश एव तत्र तत्रातुर्वाणतं तत्राह यथेति । चशन्दासम्मोदिसाधनानि च । तथा धम्मोदिवत् प्राधान्येन वासुदेवस्य महिमा न ह्युक्त इत्यर्थः ॥ ९ ॥

वासुदेवव्यतिरिक्तान्यविषयशानवदेवान्यविषयं वाक्चातुर्यश्च खिलमेवेत्याह नेति । चित्रपदमपि यद्वचो हरेर्यशो न प्रगृगीत तद्वायसं तीर्थं काकतुल्यानां कामिनां रितस्थानम् उशन्ति मन्यन्ते । कुतः मानसाः सत्त्वप्रधाने मनिस वर्त्तमाना हंसा यतयो यत्र न निरमन्ति किहिचिदपि नितरां न रमन्ते । उशिक्क्षया उशिक् कमनीयं ब्रह्म क्षयो निवासो येषां ते । यथा प्रसिद्धा हंसा मानससरिस चरन्तः कमनीयपद्मषग्ढनिवासाः त्यक्तविचित्रान्नादियुक्ते उच्छिष्टगर्ने काकक्रीडास्थाने न रमन्ते इति श्लेषः॥ १०॥

विनापि पदचातुर्ण्य मगवद्यशः प्रधानं वचः पवित्रामित्याह तद्वाग्विसर्ग इति । स चासौ वाग्विसर्गश्च वाचः प्रयोगः जनता जनसमृहस्तस्य अद्यं विष्ठावयित नाशयतीति तथा । यस्मिन् वाग्विसर्गे अवद्धवत्यपि अपशब्दादियुक्तेऽि प्रतिश्लोकम् अनन्तस्य यशसा अङ्कितानि नामानि भवन्ति । तत्र हेतुः यत् यानि नामानि साधवो महान्तः वक्तरि सति श्र्यवन्ति श्रोतिर सति ग्र्यान्ति अन्यदा तु स्वयमेव गायन्ति कीर्चयन्तीति ॥ ११ ॥

भिकिहीनं कर्मा तावत् श्रुन्यमेवेति कैमुत्तिकन्यायेन दर्शयित नैष्कर्म्यमिति। निष्कर्मा ब्रह्म तदेकाकारत्वाश्चिष्कर्मताक्षपं नैष्कर्म्यम् । अज्यते अनेन इत्यञ्जनमुपाधिस्तिश्चित्तकं निरञ्जनम् । एवम्भूतमिष ज्ञानम् अच्युते भावो भिक्तस्तव्यक्षितं चेदलमत्यर्थे न शोन्मते सम्यक् अपरोक्षाय न कल्पते इत्यर्थः। तदाशश्वत् साधनकाले फलकाले च अभद्रं दुःखक्षपं यत् काम्यं कर्मा यद्प्यकारणमकाम्यं तस्त्रिति चकारस्यान्वयः तद्पि कर्मा ईश्वरे नार्पितं चेत् कुतः पुनः शोभते वहिर्मुखत्वेन सत्त्वशोधकत्वाभावात् ॥ १२ ॥

# दीपनी।

जनतेति । तस्य समृहः ( पा० व्या० ४ । २ । ३७ सू० ) इत्यधिकारे ग्रामजनबन्धुक्ष्यस्तल् ( पा० व्या० ४ । २ ।४३ ) इति सूत्रेगा जन शब्दात् समृहार्थे तल्प्रत्ययो वोद्धव्यः ॥ ११ ॥ नैक्कम्यामिति । निष्कर्मगो मोक्षस्य साधनं वा नैष्कम्म्यम् । अज्यत इति । अज्यते स्रक्ष्यते इत्यर्थः ॥ १२—१४ ॥

#### श्रीवीरराघवः

प्रायशब्दाभिप्रेतंव्यनक्ति यथेतिहेमुनिवयेधमीदयोधमीर्थकामादयोथीः पुरुषाधीः यथाससाधनैरनुकीर्त्तितामारतेहतिशेषः तथावा-द्युदेवस्यमहिमातेत्वयानाजुवर्गितः ॥ ९ ॥

सुद्वस्थानायः वितिवुत्प्रेक्षितमेवासंतोषहेतुंद्रहीकृष्याथियाः परमहंसानांतपवद्यच्युत्रप्रयाद्दिततुत्प्रेक्षितमेवद्दिकर्त्तुभागवतधर्मप्रतिपादकस्य प्रमहंसेरनाद्रणीत्विमत्याह नेति तिष्वत्नाणिपदानियस्मिन् अधेविच्च्यस्याप्युलक्षण्यमेतदेवंविधमिपयद्वः वाक्यंप्रमुवंधस्य प्रमहंसेरनाद्रणीत्विमत्यादकंहरेर्यद्वाः क्षचिद्रिपनप्रमृहीतनोपाददीतचेन्नप्रमृणीतेत्प्रक्षम् यद्वा यश्चित्रपदमापिवचस्तत्रहरेर्यद्वानप्रमृणीतेत्युक्तम् यद्वा यश्चित्रपदमापिवचस्तत्रहरेर्यद्वानप्रमृणीत्वेत्यव्यमप्रमृणीतेत्युक्तम् यद्वा यश्चित्रपदमापिवचस्तत्रहरेर्यद्वानप्रमृणीत्वेत्वयमप्रमृणीतेत्युक्तम् यद्वा यश्चित्रपद्वा प्रमृणीविद्वा प्रमृणीतित्युक्तम् यद्वा यश्चवायसंतीर्थमानसाहंसाद्वाद्वा क्षयाः क्षमन्त्रयनिवासः नित्रमंतिमानसाह्यः विवायसर्तीर्थतुत्वयमिन्द्वात्वा स्थानविद्वा स्थानविद्य स्थानविद्वा स्थानविद्वा स्थानविद्वा स्थानविद्वा स्थानविद्य स्थानविद्वा स्या स्थानविद्वा स्थानविद्य स्थानविद्वा स्थानविद्य स्थानविद्वा स्थानविद्य स्थानविद्य स्थानविद्य स्या स्थानविद्य स्या स्थानविद्य

#### श्रीवीरराघवः।

तदेवंभगवद्यशोऽनंकितप्रवंधस्य शन्शतोऽर्थतश्चित्रपदस्यापिभागवतानुपादेयत्वमुक्तमः अयतदंकितस्य वैचिन्न्यरहितस्या पिप्रत्युतश्च व्दतोऽर्थतश्चदुष्टस्याप्यतीवतदुपादेयत्वमाह तदिति प्रतिश्लोकमवद्भवत्यपिशब्दतोऽर्थतश्चदोषवत्यपियस्मिन्प्रवंधेऽनंतस्य भगवतोयशसां-कितानिचिह्नितानिभगवद्गुग्यप्रत्यायकानिनामानिनारायग्यवासुदेवरुष्णादिनामानिहश्यंतेहातिशेषः तद्वाग्विसगः सवाक्ष्मृष्टिक्षः प्रवंधः जनताजनानंसमूदः "प्रामजनवंधुश्यस्तल् ॥४।२।४३॥ इतिसमूहार्थेतल्प्रस्ययः तलंतिस्त्रयामितिस्त्रीत्वंतस्याथघंपापंविष्ठवयतिनाशयतीति विष्ठवः अंतर्भावितग्यर्थात् प्रवेः पचादित्वादच् यद्वा भावेश्वद्वारेष्ण ॥३।३।५०॥ इत्यप्जनतायाथघस्य विष्ठवोनाशोयस्मात्स तथाकतप्व भागवताउपाददत्वद्विवदन् विशिनष्टियच्छृग्वंतिहतियद्वाग्विसगेसाधवः श्रग्वंतिश्रावयित्रसद्वावेगुग्रांतिकथयंतिश्रोतृसद्वावेतुभयान्भावेकवलंस्वयंगायंति सामान्याभिप्रायेग्रयत्वतिनपुंसकनिर्देशः शब्ददोषोनामानुपस्थाप्यार्थीभप्रयोगः यथास्वहत्यस्यक्षाति-धनाभिप्रायेग्रप्रयोगः अर्थदोषोनामानुपस्थापकशन्दोपस्थाप्यत्वेयथात्मात्मीययोः स्वशब्दोपस्थाप्यत्वेतदेवंत्रवर्गतत्साधनप्रतिपादकंप्रवर्वयात्मात्मीययोः स्वशब्दोपस्थाप्यत्वेतदेवंत्रवर्गतत्साधनप्रतिपादकंप्रवर्वयात्मात्मीययोः स्वशब्दोपस्थाप्यत्वेतदेवंत्रवर्गतत्साधनप्रतिपादकंप्रभाववतानुपादेर्यानिदित्वाभगवद्यशः प्रतिपादकस्यैवतदुपादेयत्वमुक्तमः॥ ११॥

ननुधर्मादितत्साधनानामिणुरुषाभिलिषितत्वेनहितत्वात्तिक्षरपणमप्यर्थवदेवेत्याशंकायांविषमिश्रपयः प्रशंसातुर्वतिक्षरपणभित्यभित्रायेणिश्वर्यकैवन्यतत्साधनानांपुरुपार्थत्वतत्साधनत्वंप्रतिक्षिपति नैष्कर्म्यमितिनिर्गतंकर्मणोनिष्कर्मनिष्कर्मवनैष्करम्यां र्यञ्जकर्मणोन्विर्मूतंकर्मेतरदात्मयाधात्म्योपासनात्मकक्षानमित्यर्थः तिष्वरंजनरागद्वेषाद्यंजनरितं तेषाविभिरत्नुपप्छतमप्यन्युतस्य भगवतोभावेनभित्रयोगेनवर्जितं वेद्क्षानानांमध्येमलवद्धीनमतप्यनशोभते यद्वा नैष्मर्म्यनिरंजनंक्षानमप्यन्युतभाववर्जितं वेषालंशोभतेनातीवशोभतद्यर्थः "सर्वेन्यवनधर्माणः प्रतिवुद्धस्कमोक्षभागितिकविलनोऽपिपुनः न्यवनधर्मोक्तेस्तान्तेष्वर्यस्यनपुरुषार्थत्वंनापितत्साधनयोगस्य पुरुषार्थसाधनत्वमितिभावः यतोनेष्कर्मयक्षानयोगमेवनशोभतेकुतः पुनः तत्कर्मशोभतेकियत्तर्कर्मकृत्वर्वापितमनिपत्तमभसंहितार्थकामादिफलमन्युत भाववर्जितंवेत्यर्थः अतप्यशभ्वत्सदाफलानुभवदशायामनुष्ठानदशायांचाभद्रंदुः स्वयस्मित्तदनुष्ठानदशायामभद्रवत्वकायक्केशाद्यावहत्वेनदुष्टमेवफलदशायामपिषुनः पतनभयशंकयाऽभद्रवत्त्वमवगंतव्यस् यद्प्यकार्यानिष्कामकर्माप्यन्युतभाववर्जितंवेष्नशोभते अयमर्थः क्षानयोगः कर्मयोगश्च भगवद्भक्तिवर्जितोनशोभतेकार्यकर्मनशोभतेहितकेषुत्यन्यायसिद्धमिति॥ १२॥

#### श्रीविजयध्वजः।

भारतादिशास्त्रेषुहरियशसोबद्ददितत्वात्कथंखिलंमन्यश्त्युच्यतश्तितत्राह यथेति हेमुनिवर्यसर्वेश्वतम मुनिभिः वियतश्तिवा मुनि-वर्षप्राप्यश्तिवास्त्रेषुहरियशसोबद्ददितत्वात्कथंखिलंमन्यश्त्युच्यतश्तित्र यथेति हेमुनिवर्यस्व स्मान्यस्माद् वर्षानियः धर्मादीनाम-वरप्राप्यश्तिवामुनिवर्यधर्मादयः पुरुषार्थाः यथानुवर्णितास्तथावासुदेवस्यमहिमाना वर्षात्रेष्ठात्र वर्षात्र वर्षात्र यथान्यस्य स्मान्यस्य स्मान्यस्य स्मान्यस्य स्मान्यस्य स्मान्यस्य स्थानिवर्तत्र स्थाद्य स्थाद्य स्थादिश्व स्थादिश्व स्थादिश्व स्थादिश स्थाद्य स्थादिश स्थित स्थादिश स्थादिश

धर्मादीनामल्पकथनेनकथंपूर्तिःस्यादितितत्राह नेति यद्वचोजगत्पावनकरंहरेर्यशोनग्रणीतकार्हिचिद्दिष्पिनप्रतिपादयेत्तश्चित्रपदमापिचिन्त्राणिपदानियस्मिस्तत्त्तयोक्तं तत्वचःशास्त्रं स्वत्रतात्र्यश्चेः कुतःतद्वायसंवयोमात्राचुजीवितार्थशास्त्रमुशंतिइच्छंति यत्रकाकोच्छिष्टतीर्थेन्त्राणिपदानियस्मिस्तत्त्तयोक्तं तत्वचःशास्त्रं साःपरमहंसाः धवलपक्षावाजलपयोविवेककारिणः मिमक्षयाविचारलक्षण्कानेच्छयान्मानसाः प्रेक्षावेतः मानसाख्यसरोविहारिणोवाहंसाःपरमहंसाः धवलपक्षावाजलपयोविवेककारिणः मिमक्षयाविचारलक्षण्कानेच्छयान्मानसाः प्रदेशावित्रविवेतिपत्रंति नप्रविश्वंतितियथातथायत्रयस्मिन्तिर्थेमानसाः ब्रह्मणोमनसोजाताः सनकादयः हंसाः निर्लेपाइतिवा तस्मात्सक्षनानान्वरणीयत्वेनधर्मादीनामल्पकथनेनपूर्तिरितिभावः विरमत्युशिक्ष्रयाउशिक्षयां विष्यंत्रयस्थानयेषांतेतथोक्ताः शुद्धं ब्रह्मतदेवस्रयोयषांतेतयोन्त्रस्तिवितिपिठित्वाकेचिद्वचाचक्षतेततिर्भित्यम् ॥ १०॥

वासुदेवमिहस्रोऽतिकथितस्यापिकथंनपूर्तिरितितत्राह सवागिति यस्मिन्नवंधेप्रतिश्लोकमप्राष्ट्राद्यबद्धवत्यपिशाब्दिकेर्जुगुप्सिते देशकालगुग्रीरनंतस्यहरेःपारिजातहरणाद्यात्मकयशोलांणितानिनारायणादिनामानिसंति साधवःपरमभागवताः शुकादयोयश्चश्चर्यति गायंतिगृग्रांति सःजनतायाःजनसमूहस्याधपापंविष्ठावयतिनाशयतीतिजनताधविष्ठवःवाचांविसर्गः विशिष्टरचनाविशेषद्वयेकान्वयः यार्वितगृग्रांति सःजनतायाःजनसमूहस्याधपापंविष्ठावयतिनाशयतीतिजनताधविष्ठवःवाचांविसर्गः विशिष्टरचनाविशेषद्वयेकान्वयः यार्वितगृग्रांति सःजनतायाःजनसमूहस्याध्याविस्मिन्द्याविष्ठावयतिनाश्चरत्वयान्ति। जनतापापविनाशहेतुत्वाद सजनग्राः सम्मित्रशस्तिपद्वमाहात्म्यप्रतिपादकमेवशास्त्रं नान्यदतस्तदेवशास्त्रप्रगोतृभीरचनीयामितिभावः ॥ ११ ॥ हितत्वाश्ववासुदेवमाहात्म्यप्रतिपादकमेवशास्त्रं नान्यदतस्तदेवशास्त्रप्रगोतृभीरचनीयामितिभावः ॥ ११ ॥

नक्षेवलंवासुदेवमहिमद्योतकयशोंकविधुरशास्त्ररचनमेवमोधिकंतुहरिमिकविरिहतिनिर्निमक्त्रानकर्मश्वीव्यपिनिष्कलेपवेति विक्षाप्रवेति तीत्वाह नैष्कर्म्यमिति नैष्कर्म्यस्तोनिष्कर्मश्वोमकेःसाधनम् अलंनिरंजनंविषयसंमाजनमलरितम् अत्यंतिवरिक्तमद्वेद्दार्थविषयपिक्षिक्षाने तित्वाह नैष्कर्म्यमिति नैष्कर्मयस्ति हरावच्युततयानिरंतरभावनयामनोयोजनेनरिहतंवानशोमते अधिकारिश्वोभिष्ठफलंनप्रकाशियवित्व मध्यच्युतभाववित्तं भगवद्गिक्षाक्षेत्रक्षाक्षायित्वं मध्यच्युतभाववित्रवित्ताक्षाक्षेत्रकर्मनशोमतहित्वकृतः पुनःकिमुवक्तव्ययद्यव्यकारशोफलकामनाविविधुतंत्रकारित्यर्थः धक्तयाश्वत्त्वत्यक्षेत्रक्षाक्षेत्रकार्मन् क्षिवक्तव्यक्ष्यस्त्रमन् स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्त्रमन् स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्त्रमन् स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्त्रमन् स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्ष्यस्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्ति स्तिकिवक्तव्यक्षित्तिस्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिकिवक्तवित्तिक्षायते । स्तिकिवक्तवित्तिकिवक्तवित्तिकिवक्तिकिवक्तिकिवक्तिकिवक्तिकिवितिकिवितिकिवि

# क्रमसन्दर्भः।

तथा तद्वद्पि॥९॥

यत्र तत्सम्बंधमात्रं नास्ति तत् पुनरतिनिन्दितंमित्याह न यद्वच इति। कर्षिनित् कुत्रचिद्पि न प्रकर्षेण केनाप्यंशेन गुर्गाति ॥ १०॥ वर्ष वर्षा वर्षात्र वर्यात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्

तद्वं व्यतिरेकेण तद्यशः स्तुत्वा अन्वयेनापि स्तौति। स वाचां प्रयोगो जनपरम्पराया अपि अधिवष्ठवो यसमात् तथाविधः। कीष्टशोऽपि यस्मिन् इलोकं दलोकं वर्णनं वर्णनं प्रति अवस्वत्यपि तत्तत्व्छ्ले।कमात्रयत्कि चित्रप्रतीतिसंकेतादित्वादसम्य-गर्थवोधकेऽपि तस्य यशोवर्णानलेशसंयोजितानि नाममात्राणि सन्ति न तु वर्णनचातुर्व्याणि तादशोऽपि। अहो तस्य नामाभासमात्र-सिद्धजनताधिवष्ठवमात्रत्वं कियन्नाम माहात्म्यं यत्तादशकातिष्ठवाग्विसर्गमयमपि यशः साधवः पूर्वोक्तप्रोज्झितकेतवा अपि भक्ताः परमानन्दावेशात् विविधतयानुशीलयन्तीत्याह यच्छृगवन्तीति॥ ११॥

तदेवं हरियशोवर्शानोपलक्षितमिकतो ब्रह्मज्ञानस्यापिन्यूनत्वे सकामनिष्कामकर्म्मन्यूनत्वं किमुतेत्याह नैष्करम्यमिति तैः॥ १२॥ १३॥ १४॥

# सुबोधिनी।

सर्वेषामेवभूतानांपितामातासमाधवः तमेवशरणंयातशरणयं कौरवर्षभाः अच्युताच्युतमामैवंव्याहरामित्रकर्षण पांडवानां भवान्नाथो भवंतं चाश्रितावयं करिष्येवचनंतवेत्यादि इलोकसहस्रेः स्वातंत्र्येणभगवद्यशसः प्रतिपादनात् कथमुच्यते नुदितप्रायमितितत्राहयुथोति सत्यंप्रतिपादितं तथापिप्रकरणाभावात्प्रकरणेनविधयोवध्यंत इतिन्यायात् तत्रत्यानांतच्छेपत्वं आनुशासनिकेपिभगवद्धभीणांधर्मत्वे नप्रतिपादनंतयशस्त्वेनतदाह धर्मार्थकाममोक्षायथाप्रकरणभेदेनप्रतिपादिताः नतथाभगवन्महिमाप्रकरणभेदेनप्रतिपादितहत्यर्थः॥ ९॥

ननुप्रतिपादकानांकथंनफलसाधकत्वंतत्राह नतद्वचिश्चत्रपद्मिति कीहशमत्रफलंगृग्यते अंतःकरण्यसादः परमानद्श्चेतिचेत्नत स्यदंतिर्थिकितुकाव्यवत् रंप्टगारादिरसाविष्टानांकामिनामाश्चर्यरसजन कत्वं काकानामिवोच्छिष्टगर्तः प्रमाणवलंदुर्वलमिति वक्तुमाह चित्रपदमितिअर्थिमितिअर्थिविशेषामावेपद्वित्रताहीनत्ववोधिकाशब्दचित्रं वाच्यित्रत्रव्यंग्यंत्ववरंरमृतिमितिवाक्यात्विषपत्रभेशं जन वज्ञतत्रत्यंप्रमेयंनहरिक्षंकित्तरुष्टत्त्वेनप्रतिपादितं तदाह हरेर्थशक्षतिजगत्पवित्र मितिसाधारणानांहि भारतंपावित्र्यजनकंनपति तानांनवाशुकादितुल्यानां तेननसर्वाकांक्षापूरकं इदंतुजगत पवपवित्रं वच्यहित्राब्दमात्रं तेनसामरागादीनामिपिनवृत्तिः किहिचिदिति मुख्यगीशालक्ष्मणा प्रकरणादिभदेषु एकस्मित्रव्यंशे भगवत्प्रतिपादनेनदोषः इतिस्चितं॥ तत्रकाकवत् पदार्थप्रतिपादकं वायसंतीर्थं, काकतीर्थं मितियावत्वायसावृद्धाः काकाःलोकेचतुराश्च तथाकामिनोराजपुत्राद्यः नत्वन्येषां काकानांचनततोधिकदोषिनवृत्तिः नवातावश्चगर्तिनिर्मातुः तत्रश्चनिवृत्तिः हंसत्वाच्च तस्यउद्यतिवदितिमानसाहति मनस्येवितिष्ठतिनदेहादै।देहिहतकरंचभारतेच अहंचदित्रव्यात्रमुद्धिः तद्युकाः परोक्षेणहंसाइत्युच्यंते क्षीरनीरिवविकिनश्चसहजिसद्यमिपसंदर्शेषंत्रयाजयंतिनतुसंदर्शवजनकेरमंते पुंसांकिलेकांत धियामितिवाक्यात्मगवच्चरित्रताहशेष्ठशिक्रमनीयक्षयेतिमानस्य वेषां यथायथाक्रमनीयता स्वरूपतोज्ञानतश्च तथात्रयात्रमावच्चरित्रताहकार्यक्रमनीयक्षयेतिमानस्य वेषां यथायथाक्रमनीयता स्वरूपतोज्ञानतश्च तथात्रयाद्यमानस्य

पूर्वीकविपरीतमस्मदादीनांवचनिमत्याहतहागिति स्वासीवाग्विसर्गहचसहितप्रसिद्ध्य भक्तकः भाषाशितगोविदादिरिपजन तायाः प्राणिमात्रस्यअधिवशेषणाष्ठावयतिसर्वथात्रशब्द्वलमप्रयोजकिमत्याह यस्मिन्निति यस्मिन्वाग्वसर्गभाषाग्रंथइलोकेषुत्याकरणादुष्टस्यप्रयोगः अवस्मानार्थवाअस्प्रयोगःअभ्युपगमेन वामूर्वहद्येतत्रहेतुः नामान्यनंतस्येति एकरिमन्नप्यथे वहूनिना
मानिप्रयुज्येते यथात्रिभवनात्मभवनेत्याहि सर्वतोनंतस्य अनंतान्येवनामानिभवंतिनकेवलंसंन्नाप्रतिपादकानि किन्तुयशसाअंकितानिभ्र
विशेष्टितः यस्मिन्यस्माद्वावक्तरिसति श्रगवंतिभ्रोतिस्तिगायंतिअन्यथाचय्रणंति एतश्चपूर्वोक्तहंसादिसतांकृत्यभगवत्संवधिनां धर्माणां
भगवतासह अभेदात् यत्रकविद्वतीर्शोभगवान् यथासेत्यते ताथ क चिद् पिस्थितानिनामानिश्र्यंते इत्पर्थवलम्॥ ११॥

प्रवेशन्ति प्रमावन्ति स्वान्ति स्वान्त

#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

नतु पुराग्रेषु पाग्रादिषु मगवद्यशो विधातमेवेति तत्राह यथेति । चकारोऽष्यर्थे । धर्माद्योऽपि वासुदेवमहिमतोऽतिनिक्छा अपि यथा अर्था अनुकीर्तिताः पुरुषार्थत्वेनोक्ताः तथा बासुदेवस्य महिमा न विधातः पुरुषार्थिदिताः पुरुषार्थत्वेनोक्ताः तथा बासुदेवस्य महिमा न विधातः पुरुषार्थिदिताः पुरुषार्थत्वेनापि न विधातः विधातः विधातः पूर्वित्ते मूरिशस्तत्र तत्र तन्महिमा अन्ततो मोक्षसाधनत्वेनोक्तः । अतोअत्याद्रश्रीयस्य वस्तुनः आद्राभावश्चित्तस्याप्रसाद-मिष् किं न करोत्विति मावः । नतु अन्यत्र पुरवित्रेषु मुक्तिरेव महाफलम् मुक्तैः प्रार्थाः हरेर्भकिमेथुरायाद्य लक्ष्यत इति अद्यासूतः प्रसन्नातमा न शोचिति न कांक्षति । समः सर्वेषु भूतेषु मद्गिकं लभते परामित्यादिभिस्तत्र तत्र किचन्मोक्षोपर्थिष मिक्तकेत्यत आह अन्विति । अन्वनु पौनःपुन्येन न वर्शितः आनन्दमयोऽध्यासादित्यत्र अध्यासस्यैव शास्त्रतात्पर्थकापकत्वेनोक्तन्त्वात् । अतो मगवन्महिम्न एव फलत्वेनोत्कर्षे पौनःपुन्त्रेन स्पष्टतया यदा वर्णियिष्यसि तदैव ते चित्तप्रसादो भावीति भावः ॥ ९॥

बासुदेवमिहमवर्गानाभावे कविकृतिमाबस्यैव जुगुप्सितत्वमेवाह न यदिति । यहचः कर्नृ चित्राणि गुगालंकारयुक्तानि पदानि यत्र तत् ख्रेशेग्रा चित्रस्य विस्मयस्य स्थानमपि हरेयेशो न प्रगुणीत कीहरां। जगदपि पवित्रयतीति तत् स्थ्रोत्वक्त्राद्यासकं सर्व्व जगदपि पुनाति कि पुनः स्वमिति । जीवनतुल्येन तद्यशसा विना कविवचोऽलंकारादियुक्तं मृतशरीरिमवापित्रत्रं भवतीति मावः। तद्यायसं तीर्थम् उच्छिप्टविचित्रात्रादियुक्तं गर्तविशेषं काकतुल्यानां कामिनामभिल्वणीयत्वात् उशन्ति मन्यन्ते । कुतः मानसा मानससरोवरस्या हंसाः पक्षे मानसा हरेमंनसि स्थिता भक्ता यत्र न नितरां रमन्ते न सर्व्वयेष रमन्त इत्यर्थः। साधवो हृदयं मधं साधृनां हृदयं त्वहम् इति भगववुक्तेः। यहा मानं तद्यचस् आदरम् अरमगात् स्यन्ति नाशयन्ति । यहा मानसाः सनकात्य इत्युक्तिति सर्वायस्य । यतः उशिक् कमनीयं सरो भगवदाम च क्षयो निवासो येषां ते । अत्र वचःशब्देन वाक्ये अभिधीयमाने नाभागो नभगापत्यं यं ततं भ्रातरः कविम् । यिष्ठं व्यस्तत् द्रायं वहाचारिग्रमागतिमत्यादिनां श्रीभागवतीयानामपि पृथग्वाक्यानां वायसतीर्थत्वं प्रसक्तेत । शास्त्रेशभिधीयमाने व्यासादिकृतेषु पुरागादिषु न कुत्रापि हरियशः सामान्याभाव इति न कस्यापि वायसतीर्थत्वं स्थात् तस्मात् कलिमलसंहितकालनोऽक्रिलेशो हरिरितरम् नगीयते ह्यभीस्त्रम् एवाच्यति । स्रावश्चेते। परिपितिरेतोऽत्रपदं कथाप्रसङ्गेरिति । द्वादशोक्तिस्त वचश्चित्वेतोक्तिस्त्रादौ वाव्यक्ति। सर्वाययेवोपाल्या नानि हरियशोऽलंकतान्येव । अन्यत्र पुरागादौ वहन्येवाख्यानानि हरियशोरिहतानि वायसतीर्थान्येवेति सङ्गितः ॥ १०॥

व्यतिरेकेगोक्त्वा अन्वयेनाह तहागिति। स चासी वाग्विसर्गो वाचः प्रयोगश्चेति स जनतायाः जनसमूहस्याधं विश्लावयिति नाश्यतीति स प्रतिश्लोकमद्भवत्यि वंधोऽपिगाढः शिथिलो वा कापि श्लोको यत्न नास्ति कि पुनरलंकारादित्यिर्थः । अप-शब्दवत्यपीति स्वामिचरगाः। तथाभूतेऽपि यत्र वाग्विसर्गे उपाख्याने नामानि सन्ति । किंच यद्यदेवोपाख्यानं श्रग्वन्ति श्रुत्वापि पुनर्गयन्ति न तु तृष्यन्तिति भावः। यद्या वक्तरि सति शृग्वन्ति श्रोति सति, ग्रग्यन्ति अन्यद्या स्वयं गायन्ति ॥ ११ ॥

न केवळं वचोमात्रमेव भक्तिरिहंतं व्यर्थम् अपितु श्रीतवचसापि प्रतिपाद्यमपरोक्षं कान्मपि भक्तिरिहंतं व्यर्थे किमृत परोक्षं कानं किमृत तरां निष्कामकर्ममें किमृततमां सकामकर्ममें व्यर्थमित्याहं नैष्कर्म्यमिति । अव्युते भाविद्यदानन्द विष्ठहत्वभावन्या या भक्ति स्तर्हाज्ञतं चेज्ञानं न शोभते । तेनतस्मिन् मायाशवळताळक्षणापक्षभावनया भक्तिस्तर्वशेषि मोक्षसाधकं न भवतीत्यर्थः । या भक्ति स्तर्हाज्ञतं चेज्ञानं न शोभते । तेनतस्मिन् मायाशवळताळक्षणापक्षभावनया भक्तिसत्वशेषः । न च वाच्यमुपाद्यमावे मोक्षस्यासम्भावना नास्तीति । भगवतोऽचिन्त्यशक्ता नष्टस्याप्युपाधेः पुनःपुनः प्ररोहात् । तथाहि वासनामाप्यपृतं परिश्चिष्ट- वचनम् जीवन्युक्ताः अपि पुनर्वधनं यान्ति कर्माभिः । यद्यचिन्त्यमहाशको भगवत्यपराधिन हति । तत्रैवान्यत्र च जीवन्युक्ताः प्रयद्यन्ते कवित् संसारवासनाम् । योगिनो न विळिप्यन्ते कर्माभिभगवत्परा हति । तथा क्षानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुतेऽज्ज्ञेनिति क्षानकार्यः नैष्कर्म्यमपि न शोभते । तथाहि रथयात्राप्रसङ्गे विष्णुभक्तिचन्द्रविष्यपृतं पुराणान्तरवचनम् नाजुक्रज्ञति यो मोहाद्यजन्तं जगदीश्वरम् क्षानग्रिद्रधक्तम्मोपि स भवेद्वद्यप्राक्षस्य हति । अत्रप्वाये वश्यते—आरुह्य कृत्येण परं पदं ततः पतन्त्यथोनाटृतपुष्मदङ्ग्य इति । ज्ञानस्याप्यच्युतभावविज्ञत्वे तस्मन् भगविति ॥ स्थानकाले अभद्रं दुःखक्त्यं कर्म्य प्रवृत्तिवार पव । पवञ्च यवि तादशभक्तिहीनं क्षानमपि विषठं तदा कुतः पुनः श्राश्वत् प्रवृत्ताति ॥ स्थानकाले अभद्रं दुःखक्त्यं कर्मे प्रवृत्तिपर्यक्षरस्य कर्मा ईश्वरे अन्तितं सत् न शोभते साफल्याय न भवतीति ॥ स्था

# सिद्धांत प्रदीपः॥

नतु भगवान्वासुदेवश्चवयर्थतेत्रसनातमः तिप्रतिकापूर्वकंमगवद्गुण्यस्वकपादिवा महाभारते वाणातमेव कथं ममदर्शनमपूर्णिम त्यतआह् यथेति॥९॥

## सिद्धांतप्रदीपः

वासुदेवेतरिवष्यवचोपिखिलमेवेत्याह नेति चित्राणिपदानि यस्मिन् तिधित्रपदमिपयहचः जगतः पवित्रत्वापाद् कम् हर्रयदाः नप्रमृश्वीत नवदेत् । तत्वायसंतीर्थवायसगुण्यसुकामंकामिनारितस्थानं मानसावासुदेवमननप्रवर्णेमनसिस्थिताः उशिक्क्षयाः उशिक्कमनीयं प्रसिद्धमानसाख्यसरोवरोपमंभगवद्यशः प्रतिपादकंशास्त्रक्षयोरमण्स्थानं येषां ते हंसाविवेकिनः । उ उद्यतिमन्यते अतपव यत्ररथ्यांबुगतीपमेकाकोपमज्जनप्रियेमगवद्यशोऽप्रतिपादकेवचिस कर्षिचिदिपनिनरमंति नितरां-नरमंते ॥ १० ॥

वासुदेवेतरमितपादंकवचिद्वध्वपदमिविवेष्यनुपादेयीमस्युक्तं वासुदेवप्रधानंतुपदचातुर्यविजितमिपमहतादरेशातेषासुपादेयमित्याह तिदितिसः वाचोविसर्गः जनताघिविष्ठवः जनतायाजनसमूहस्यअघंपापंविष्ठावयतीतितथा । जनताघिविष्ठवत्वेहेतुमाह । यिसमिश्रिति यिसम्प्रितिश्लोकमवस्रवत्यपिदोषयुक्तं पिवाग्विसर्गे अनंतस्यनामानिसंतिअतोयत्यंवाग्विसर्गमसाधवः गुर्वादिश्यः श्टर्णवंतिशिष्यादिश्योग्र स्ति कथयंतिस्वयंगायंति च ॥ ११ ॥

यथा धर्माद्यश्चार्थामुनिवर्ध्यां तुक्षीर्तिताः इत्यनेनधर्मादिषुमुमुक्षुजनापेक्षया अविचरका तत्रशतसाहस्त्रांसंहितायां योधर्मः प्रोक्तः काम्योहिस्त्रः सिहिवशेषतोऽविचि हेतुः सभागवतेर्भुक्षुभिरनुपादेयः यश्चनिष्कामोपिमगवद्भाववींजतः सोप्यसम्यगवयश्वकपिलपतंजालिमतानु काम्योहिस्त्रः सिहिवशेषतोऽविचि हेतुः सभागवतेर्भेक्षुभिरनुपादेयः यश्चमागवतजनानुष्रहकामेनभगवद्गीतानुसारेगोक्तमः। मुद्गलोपा व्यानादिषु वार्षोयाच्यातमादिश्वकरेगोषुकर्मकान्वेराग्यभिक्तरहस्यं तत्यसर्वपरमादरेगोपादेयमित्याशयेनाहनैष्कर्भे मिति निर्गतानिकर्माण्यायस्ति विच्यार्थेष्य । निरंजनंरागद्वेषादिदोषश्च्यमेवं अच्युतस्यभावेनयोगनवींजतंचेत्र अल्यत्यं तत्रशास्त्र तद्विच्यार्थेष्य । निरंजनंरागद्वेषादिदोषश्च्यमेवं अच्युतस्यभावेनयोगनवींजतंचेत्र अल्यात्वेत्राभते तद्वश्चर्भद्रं सद्वोपक्रमकाले अनुष्ठानकालेक्षलकालेच्युः खावहंनचस्वकर्मवेगुग्यापह ईश्वरेपितंयत्क में काम्यतत्कृतः पुनःशोमते । यदप्यकार्यामकाम्यंतदप्यच्युतभाववींजतंचेत्रशोमते । मगवद्भाववींजतोक्षानयोगोनिष्कामकर्मयोगश्च यद्वानशोभते तद्वाकाम्यकर्मभगयद्भावविज्ञतंनशोभते इतिकिमुवक्तव्यमः॥ १२॥

Agency of the Market of the State of the Sta

granding for the compartment was proportionally and the compared to the compar

# 

and the contract of the contra

हे मुनिवर्य आपने जैसे धर्म अर्थ कामादिकों का प्राधान्य से वर्णन कियाहै। और उनके साधनोका वर्णन किया है एसा वासुदे-व की महिमा का वर्णन नही किया है॥ ९॥

चित्र विचित्र पद विन्यास मय भी वचन हो और उस मै जगत पवित्र करनेवाला भगवान का यश वर्णन न हो तौ वह वायस तीर्थ अर्थात अमेध्य उच्छिए मय गर्तके समान है. जिस मै कामी जनकही कीडा करते हैं। ब्रह्मनिलय परम इंस जन कभी उस मै रमस नहीं करते हैं॥ १०॥

वी वागी की रचना जनों के पाप की नाश करती है जिस मैं चाहै प्रति इलोक मैं अशुद्ध भी हो परंतु अनंत भगवानके यश सै अंकित नाम हो, जिनको साधुजन अवगा करते हैं, गान करते हैं, और कीर्तन करते हैं ॥ ११॥

नैष्कर्म्य अर्थात् ब्रह्मतादात्म्य का कारण होने से कर्म रहित और निरुपाधि ज्ञानभी अच्युत मक्ति वर्जित हो तो शोभित नहीं हो-ता है. तब साधन और फल दोनों में बुःखमय कर्म श्रीभगवानके अर्पण किये बिना कव उत्तम हो सकता है ॥ १२॥ अथोमहाभागभवानमोघदृक्शुचिश्रवाः सत्यरतो घृतवृतः ।
उरुक्रमस्याखिळवन्धमुक्तयेसमाधिनानुस्मरतिद्वचेष्टितम् ॥ १३ ॥
ततोन्यथा किंचनयदिवच्चतः पृथग्दृशस्तत्कृतरूपनामभिः ।
नकिंचित्कापिचदुः स्थितामितिर्छभेतवाताहतनौरिवास्पदम् ॥ १४ ॥ 
जुगप्सितंधर्मकृतेनुशासतः स्वभावरक्तस्यमहान्व्यतिक्रमः ॥
यद्वाक्यतोधर्मइतीतरः स्थितोनमन्यतेतस्यिनवारशांजनः ॥ १५ ॥

## श्रीधरस्वामी ।

तदेवं मिक्तिशून्यानि ज्ञानवाक्चातुर्यकर्मकोशलानि व्यर्थान्येव यतः अतो हरेश्चरितमेवानुवर्शायत्याह अथो इति । अथो अतः कारणात् । अमोघा यथार्था इक् धीर्यस्य । शुचि शुद्धं अवो यस्य । सत्ये रतः । धृतानि व्रतानि येन स भवान् एवं महागुणास्तावत् । अत उरुक्रमस्य विविधं चेष्टितं लीलां समाधिना चित्तैकात्र्येण अखिलस्यवंधस्य मुक्तये त्वमनुस्मर स्मृत्वा यर्शाये त्यर्थः एतच वाक्यांतरामिति मध्यमपुरुषप्रयोगो नानुपपन्नः ॥ १३ ॥

विपक्षेदोषान्तरमाह ततउरुकमिवचेष्टितात्पृगग्दृशःअतपवान्यथाप्रकारान्तरेगायत्किञ्चदर्थान्तरंविवक्षतःतयाविवक्षयाकृतैःस्फुरि तैःरूपैर्नामभिद्यवक्तव्यत्वेनैवोपस्थितैःदुःस्थिताअनवस्थितासतीमितिःकदाचित्क्वापि विषयेआस्पदंस्थानं नलभेत वातेनाहता।आधूर्गिता नौरिव । तदुक्तंगीतासु व्यवसायात्मिका दुद्धिरेकेहकुरुनन्दन । वहुशाखाद्यनन्ताद्यबुद्धयोऽव्यवसायिनामित्यादि ॥ १४ ॥

तदेवहरियशोविनाभारतादिषुकृतंधर्मादिवर्णानम्अिकव्चित्तकर मित्युक्तंप्रत्युतिवरुद्धभेव जातिमत्याह । जुगुिप्सतंनिन्द्यंकाम्यकमीदि स्वभावतप्वरक्तस्य तत्ररागिणः पुरुषस्यधर्मकृतेधर्मार्थम् अनुशासतस्तव महानयंद्यतिकमः अन्यायः। कुतद्द्यत आह । यस्यवाक्यतोऽ-यमेव मुख्योधर्मदिति स्थितः इतरः प्राकृतोजनः तस्यकाम्यकर्मादेः अन्येन तत्त्वक्षेनिकयमाणं निवारणं स्वयमेववात्वयािकयमाणं यद्वा "नकर्मणानप्रजयाधनेनत्यागेनेकेऽमृतत्वमानशुरित्यादिश्रुत्यािकयमाणं निवारणं यथार्थमेतिदितिन मन्यतेिकन्तुप्रवृत्तिमाणं निधकतिवषयं तिवित्तकत्याति। तदुक्तंमतांतरोपन्यासेभद्दैः तत्रैवंशक्यतेवकतुयेऽन्धपङ्कादयोगराः गृहस्थत्वनशक्यते कर्तुतेषामयंविधिः ॥ नैष्ठिकत्रवद्या तिवित्तकत्याित। तदुक्तंमतांतरोपन्यासेभद्दैः तत्रैवंशक्यतेवकतुयेऽन्धपङ्कादयोगराः गृहस्थत्वनशक्यते कर्तुतेषामयंविधिः ॥ नैष्ठिकत्रवद्या वर्षे वा परिवाजकतािपवा। तैरवश्यगृहीतव्यातेनादावतदुच्यते इत्यादि ॥ १५॥

# दीपनी ।

न कर्मगोति । कैवल्योपनिषदि चतुर्थत्राह्मगम् । तत्र धनेनेत्यत्र पूर्वनकारस्यानुषद्गः । एके महात्मानः आनशुः आनशिर प्राप्ताः । इति श्रीमच्छंकरानदस्वामी ॥ १५ ॥ १६ ॥

# ॥ श्री बीरराघवः

तदेवं लोकि हितार्थे प्रवृत्तस्यतवकेवलित्रवर्गतत्साधनिक्षण्णमनुचितिम्युक्तंभवतियतः त्रैवर्गिककर्मणोऽनथेगभेत्वमतस्त्वमाखिलीन्तम् विद्यरिहारेण्यायेण्यभगवद्भक्तियोगनिष्पाद्कतच्चे ष्टित् वान्तमकं प्रविधं कुर्वित्याह अहो इति हे महाभागभगमत्रभगवद्शभूतत्वमिक्तिन्तम् विद्यरिहारेण्यायेण्यमगवद्शभूतिहतं ति स्मन्दतः नकेवलं सत्यरत्यवापित्वमो घडक् सत्यमूलममो घमिवतथेप स्यतीतितथा भूति हता चार्णाय व्रद्रिक्ष इत्यर्थः कथमेवमहोभाग्ये बायते इत्यतो विशिवाधि श्राचिश्रविश्वाः श्रुचिविश्य देश्रवः लोकि हितार्थमवती गार्विव्यासः इत्ये विधाय प्रविध्या व्यव्या व्यव्या स्थाप स्वयं विश्व स्थाप स्याप स्थाप स्याप स्थाप स्याप स्थाप स

#### श्री वीरराघवः॥

यः चेत्वदात्मन्यसंतोषिनवर्तेतनान्यथेत्याह्यतः विश्वान्यथोरुकमचेष्टाकथनाद्वन्यथावैप्रित्येनतत्रुतरूपनामिनः पृथ्यस्यः पृथ्यभूता नसंवंधरिहतानर्थान्विवक्षतः वर्ण्यतस्तवातपवदुः स्थितामितः कदाचिद्पिक्षचिद्पियत् किचिद्प्यास्पदमन्याकुलतामितियावन्नलभतेष्रस्य तथ्याकुलैवभवतीत्पर्थः यद्याततोऽन्ययायर्दिकचनिवक्षतेचेष्ठानाविधार्थद्विं नस्तेमितः कापितत्रुतरूपनामिनः कृत्द्दिम् विभावेकः कर्मेत्पर्थः तस्योक्षक्षमस्यक्रमेरूपनामिनः हेतुभिरास्पदंप्रतिष्ठांनलभतवुद्धरन्याकुलत्वंनामभगवत्कम्रूपनामगोचरत्वंतप्रसिध्यतीत्यर्थः यथावातेनवा युनाह्वतोत्पर्थनितानारास्पदंनलभतेतद्वत्यद्वाऽतः उरुक्षमादन्यशासत्वेनउरुक्षमानात्मकत्वेनावह्यात्मकस्यतंत्रवस्कत्वेनितयावत् यिक्षक्षवान्यशासत्वेनउरुक्षमान्यस्य स्वतंत्रवस्य प्रथावत्य विभावत्य यात्रिक्षवान्यस्य विभावत्य वर्णायत्विक्षतं वर्णायत्व वर्णायत्

भूतिहताचरणार्धेप्रवृत्तस्त्वमिवकृतवानसीत्याह जुगुष्सितमिति स्वभावरक्तस्यत्यस्यार्थकामयोरित्यादिर्थकामयोः स्वभावतपवरक्तस्यजनस्यभ्रमेकृतेर्थकाम साधनधर्मार्थमनुशासतः भारतिनर्भाणद्वाराबोधयतस्त वायंमहान्व्यतिक्रमः चिकीिषतिवपरीताजुष्टानरूप
द्वापित्वः भूतिहत्तेचिकीिषतमधुनातद्विपरीतमेवकृतमित्ययंमहान्व्यतिक्रमहत्यर्थः अतहदं जुगुष्सितंनिदितंकृतंस्वभावतपवार्थकामपारवश्य
मूळकृतापत्रयाभिहतंजनंप्रतिपुनर्थकाम साधनमेवाजुतिष्ठेत्यज्ञ शासनंनिदितमितिभावः नजुमयैवमनुशासनेकृतेपिस्वरूच्यनुसाराक्षोक्रोनिः श्रेयससाधनपवप्रवर्ततांभारतेपिकचिवर्थं कामयोर्हेयत्वेनोक्तत्वाश्रदेगस्थात्यत्वभावयत्वति ॥ परः कृत्सवेदीतरस्ततोर्वाचीनो
क्रिकृत्स्वविज्ञनः यस्यतववाक्या दर्थकामसाधनमेवधर्महतिस्थितः अर्थकामाववित्रतिश्रयपुरुषार्थौ तत्साधनमेवितरितशयधर्महत्यध्यवसाय
युक्तः तस्यत्रिवर्गस्यनिवारणं नमन्यतेत्वयात्रिवर्गस्यविस्तरंणं प्रतिपादितत्वाञ्चिवर्गस्य निवारणंत्वद्भिप्रतिमितिजनोनजानातीत्यर्थः ॥१५॥

# श्रीविजयध्वजः।

अधुनालंबुद्धिहेतुंविद्यापयतीत्याह अतहति हेमहाभागअपिमितभाग्यनिधेउक्तप्रकारेग्यक्रमेज्ञानयोहिरिभक्तिरिहतयोतिष्फलल्याद्ध मित्रिमामल्पक्तयनेनापिपूर्तिभगवन्मिहम्नातिकीयतेनाप्यपूर्तिरेवेति यतःसाक्षाच्छुन्धिश्रवाःविष्णुरेवातप्वसत्येनिर्दुखानंदानुभवेरतः धरगा गतपालनादिश्रृतंत्रतयेनसतथा अतप्रवामोध्रज्ञानोतप्वभवानपूज्यस्त्वंसक्तलस्वजनसंसारवंधनविष्वंसनायउक्तमस्यवहुपराक्रमस्यत्वय जन्मत्वाद्धिपालनिद्धिविद्याद्धविद्याद्धियात्रक्ष्माध्यात्रक्षम् विद्याद्धिपालनिद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्यात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्धियात्यक्षम् विद्याद्धियात्रक्षम् विद्याद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्यात्यक्यात्यक्षम् विद्याद्यात्यक्यात्यक्षम् विद्याद्यात्यक्षम् विद्याद्यात्य

केवलधर्मीदिविषयशास्त्रकृत्यानथोंपिमवतीतिश्चापयतीत्याहअतोन्यथेति अतपवभगवन्मीहम्नोन्यथाविरुद्धतयायद्धमीदिपुरुषार्थकथ नायविविक्षितंतिकचनयिकिचिन्नपुरुषार्थोपयोगि कुतस्तत्कृतक्षपनामिभस्तिस्मन्ग्रंथेधमीदिफलत्वेनप्रतिपादितस्वगीदिगतलावग्यादिक् पमदनकिलेकेत्यादिनामवत्पदार्थैःपृथग्दशस्तेममसुखहेतवद्दीतवस्त्वयथाधश्चानिनोरागादिदोदुष्टत्वेनदुःस्थितामितः किंचित्कवापिकिस्मि दिचद्विषयेपिससुद्रेवातेनवायुना आहताविघीटतानीस्तरीवास्पद्माश्चर्यनलभेतित्येकान्वयः तस्मात्केवलधर्मादिविषयशास्त्रकृतिरनर्थका रिविभावः । अतोन्यथाश्चीभागवतकृतिमंतरेगायिकचनग्रंथकरग्रंविविक्षितंतत्वग्रन्थतत्किष्टिपतक्षपनामिभर्मुग्थस्येतिवा । चशब्दान्नरक पातफलमेवस्यादिति स्चयति ॥ १४॥

नकेवलमन्धंकार्यवभवेदन्येषांनिदित्। अमकारीचेतिज्ञापयाति जुगुष्सितमिति स्वतप्वप्रवृत्तिश्रमोदिषुरागिगोऽज्ञस्यप्रवृत्तिश्रमोदिकृते नकेवलमन्द्रिति । स्वत्रमान्द्रवृद्धितिप्रेर्गाजुगुष्सितंत्वाद्दशेरितिशेषः नकेवलमिद्दितां क्षेत्रमहान्द्यतिकमः वृक्षाद्धः पति तस्य दं हेनता हनविद्धः सीमीऽन्यायः मुद्धासनं कृति । स्वयः स्वयः

#### सुवोधिनी।

विपरितेवाधकमाह ततोन्यथेति अभिधेयापर्यवसानं हिसर्चयस्तुषुमरीचिकाविषयतत्वाभावात्भगवतोगुणानामनंतत्वेपिनियतत्वस् अतः कार्य समाप्तिरांकया प्रथमत पव तत्रारंभणायं किंच विचारदशायामपितुः खात्मकत्वात् तिष्ठचारिकार्षुक्ररिप दुःखिता भवति। तदाह । अन्ययेति । तता भगवच्चरित्रात् यद्यपि सर्वमेव भगवच्चरित्रत्वेनानिक्षपणात् तत्वेपिन तथात्व मित्वाह । अन्यति किंच नत्यव्यय समुदायः यिकिचिदित्यर्थः अनादर्णायमितिवाक्यसमाप्तिः तद्दनूष्यदूष्यतियद्विवक्षतदिवचनानंतरममेवेदुः खंभविष्यतिति किंचक्षव्यत्वस्त्रत्व विचानंतरममेवेदुः खंभविष्यतिति किंवकथ्यत्वस्तु मिन्वत्यानिक्षपणमावद्यके तथाच्यभवद्यमी स्कुरणाद्वस्यत्रोत्वर्णभावात्वश्रविष्याच्यक्षयां विद्वर्षः स्थाभवत्वस्ति ॥ किंच ॥ तत्कृतानिष्ययद्यन्तिक्षपणमावद्यक्षर्णनामानिमणवत्कृत्यान्त्रयत्रोत्वर्णभावात्व स्थिकृत्वास्वयंनिक्षपणस्यमेवप्रवस्तान्तिक्षिक्षद्याम्यदेवस्य स्थिकृत्वास्ययंनिक्षपणस्यमेवप्रवस्तानितिक्षिद्वस्य स्थित्वाद्यस्य स्थिकृत्वास्ययंनिक्षपणस्य स्थिकृत्वास्य स्थिक्ष स्थिक्ष स्थिकृत्वास्य स्थिकृत्वास्य स्थिकृत्वास्य स्थिकृत्वास्य स्थिकि स्थिकिष्य स्थिकृत्वास्य स्थिकृत्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकृत्य स्थिकिष्य स्थिति स्थिकिष्य स्थिति स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्याप्य स्थिकिष्य स्याप्य स्थिकिष्य स्याप्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य स्थिकिष्य

इदानींप्रतारकशास्त्रवत्अन्यकथनंपापहेतुरित्याह ॥ जुगुप्सितिमिति ॥ यथाअपेयपानादिकंधर्मद्दिवोधकस्यनरकपातस्तथादेहादि बा-त्माध्यासंकृत्वातिन्नविहार्थयतनीयमितिवक्तुनरकपातः तनुदुष्टत्वात्स्वत्पवलोकोनप्रवर्त्ततिकथनेनानिष्टस्यादित्यतआहस्वभावरकस्य अनुरक्तोगुगान् बूतेविरक्तोदूषगान्यपीतिन्यायात्रागेविद्यमानेनदोषस्पूर्तिःतस्यचास्वाभाविकत्वेज्ञातेकदाचिकपवर्त्ततिविद्यायात्रागेविद्यमानेनदोषस्पूर्तिःतस्यचास्वाभाविकत्वेज्ञातेकदाचिकपवर्त्तते क दाचिद्रपिनिवक्तेतितभगवदाज्ञोल्लंघनरूपोमहाम्ब्यतिकमः कूपेंधपातनेववन्वन्योनिवारयतुतथाचकलभावाक्यातिकभोभविष्यतीत्यतआ हयद्वाक्यतद्दितदरः स्वतोविचाराक्षमः पुरातनचक्रविद्वासात्ध्रभोयमितिनिदिचतवुद्धिः अन्यनअस्मदादिनािकयमाग्रांनिषेधनमन्यतेयतोज्ञ ननधर्माजनन प्वाभिरतः बहुधाश्चत्वापिनिषेधकध्वरेतसांप्रदांसेतितथा चमद्दाः येथ्यंग्वादयोनरागाहेस्थ्यानहीः तेसन्यासादाविधकरिगादति विकल्पोवाउभयंत्राह्मणमितिवत् ॥ १५॥

# क्रमसन्दर्भः।

तदेवं हरियशोगोगीकृत्य भारतादिष्कृतं जुगुिसतकाम्यकर्मादिवर्णनमाचुर्येलोकानांतदेकनिष्सिष्ठत्वायजातामित्याह जुगुिसतमितिव्यं भावरक्त स्यअनादिविषयवासन्यास्त्रभावतप्त्वकामनापरस्यपुरुषस्य अमेर्द्रतेभगवद्ध मेप्येतस्य निष्कामस्यधर्मस्यकृतेभगवद्ध भेमेवतत्रप्रयं वसायियतु मजुनिरंतरमेवनिर्धकाम्यं कर्मशासतः उपिद्देशतोनतुवदेशवर्तनार्थतत्रप्रयेवन्यायतिकचिद्द नृद्धमुहुरप्यद्तः कर्स्यीच्द्रत्यस्यीप्त महात्व्यतिक्रमोवेदतात्पर्यालेखेकान्यायः स्यात्भवतः स्यादितितुक्षथंत्रवाशितमावः नचुवेदेपितादशक्तमेकथनस्यनिर्वतरहिर्द्यते त्रवाह्यद्वाक्ष्यतिक्रमोवेदत्व स्यादित्य स्यादि वित्रक्षयं वाष्ट्रविद्यार्थनिर्मात्यव्यविद्य स्याद्व स्थाद्व स्याद्व स्याद्व स्याद्व स्याद्व स्याद्व स्थाद्व स्थाद्व स्थाद्व स्थाद्व स्थाद्व स्याद्व स्थाद्व स्थाद्

#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

सत्यं तर्श्वच्युते माव एव संदर्गत्रहण्त्वेन तवाभिमतः स च तन्नामलीलाक्षीर्त्तनथवणादिमिरेव मवित तत्र नाम रामकृष्णेत्यादि प्रसिद्धमेव लीला कीहर्रा तवाक्षिमता तामुपिद्देरत्यपेक्षायामाह अथो इति । अमोघहक् अव्यर्थन्नाः श्रुचि शुद्धं अवो यशो यस्य तथाभूतो मवान् मवित । अतः सत्ये रतो हढ्मतश्च सन् अखिलानां जनानाम् अखिलस्य वंधस्य वा विमुक्तये तस्य विविधं चेष्टितं लीलां समाधिना चित्तेकाम्येणा स्मर । लीला हि मिक्तमित शुद्धे चित्ते खयमेव स्फुरित तस्याः खप्रकाशत्वाद्दंतत्वाद्दिरहस्यत्वाद्द्यया केनापि वक्तुं प्रहीतुं चाशक्यत्वादिति भावः । स्मृत्वा च वर्ण्य । तदेवामोघहक्त्वं शुद्धयशस्त्वम् अन्यथा नैवेति भावः । यद्वा अमोघे हशो नेत्रे यस्य शचिनी अवसी कर्णो यस्येति काचित् लीला नेत्राप्त्यां हृष्टा काचित् कर्णाप्त्यां श्रुता च तथा सत्यरत इति धृतवत इति आसिकिनिश्चयस्त्विताप्त्यां मनोबुद्धिभ्यामपि काचिद्दित्रहस्या अहष्टश्रुताप्यवकलितेव सा सा सम्प्रिति चित्तेकाम्येण समर्थतां स्मृत्वा च वर्ण्यताम् । अत्रानुस्मरेति मध्यमपुरुषो वाक्यभेदात् ॥ १३ ॥

अन्वयेनोक्त्वा व्यतिरेकेगाह तत इति । तत उरुक्रमचेष्टितात् अन्यथा यत् किञ्चनापि कि पुनर्वहु विवक्षतः वक्तुमिच्छतोऽपि कि पुनर्वद्दतः वदतोऽपि कि पुनस्तनमुखात् श्रुत्वा तदनुतिष्ठतः । सर्वत्र हेतुः पृथग्दशः तच्चेष्टितात् पृथग्वस्त्तन्येव दक् दृष्टिस्तात् पर्य्य यस्य तस्य अतस्तत्कृते कपैनिकपणीयरर्थेनामिभस्तद्वाचकैः शब्देश्च दुःस्थिता अनवस्थिता मितः । कदाचिदिपि काले कापि देशे। आस्पदं स्थानम् । वाताहतनीरिवेति वातेन धूर्णियत्वा नानास्थानं नीत्वा आहता व्याहता अन्ततो निमज्जते एव यथा तथा तैर्श्वानकरमकाव्यकौदालादिभिरिति ॥ १४ ॥

नतु मया भगवद्यशा एव प्राहियतुं भारतादिशास्त्रं कृतम् । किंतु कामिलोकानां भगवद्गिक्तमिनच्छूनां शास्त्रे प्रवर्तनार्थमेव प्रथमं प्राम्यसुखप्रक्षेपो दत्तः । न तु मे तत्र तात्पर्यम् । मुनिविवक्षुभगवद्गुणानां सखापि ते भारतमाह कृष्णाः । यिनमन्तुणां प्राम्यसुखानुवादैमंतिर्गृहीतानुहरेः कथायामिति विदुरोक्तिरेव प्रमाणिमिति चत् । सत्यम् उपकारे प्रवृत्तात् त्वत्त एव लोकानामपकार प्रवामूहित्याह जुगुप्सितमिति । धर्ममकृते विदुरोक्तन्यायेन भगवद्धम्मप्रहणार्थमेव जुगुप्सितम् अनुशासतः काम्यधम्मानुपिद्यातस्त्वतः सकाशादेव स्वभावरक्तस्य विवयेषूत्पत्तित एव रागिणो लोकस्य महान् व्यतिक्रमः उपष्ठवो जातः । कृतः इत्यत आह् यद्वाक्यतो वेदव्यासवाक्यतो धर्ममं इति इतरः प्राकृतो जनः देवान् पितृत् समभ्यव्यं स्नाद् मांसं न दोषभागित्यादि विधावेव स्थितः तस्य धर्मस्य निवारणां सर्व्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणां व्रजेत्यादिवाक्येन क्रियमाणां न मन्यते किंतु प्रवृत्तिमार्गानिधिकृतविषयमेतद्वाक्यमिति कल्पयति । तदुक्तं मतान्तरोपन्यासे भट्टैः—तत्रैवं शक्यते वक्तुं येऽन्ये पङ्गादयो नराः गृहस्थत्वं न शक्यन्ते कर्त्तुं तेषामयं विधिः ॥ नैष्ठिकं ब्रह्मचर्यं वा परिव्राज्ञकताथ वा। तैरवर्यं ब्रहीतन्या तेनादावेत्दुच्यते वृहस्थत्वं न शक्यन्ते कर्त्तुं तेषामयं विधिः ॥ नैष्ठिकं ब्रह्मचर्यं वा परिव्राज्ञकताथ वा। तैरवर्यं ब्रहीतन्या तेनादावेत्दुच्यते इत्यादि ॥ १५ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः

यतोभगवदीयानिज्ञानकर्मवाक्चातुर्यागिमुमुक्षूपकारकाणि अथोअतः कारणात् उरुक्रमस्यउरवः वहुविस्तृताः क्रमाः चरणावि-न्यासायस्यतस्ययत् विचेष्टितंचरित्रम् चरित्रप्रतिपादकंषुराणमितियावत् अखिलानांमुमुस्रूणांवेधविमुक्तयेतत् समाधिनात्वमनु स्मरतन्निर्माणार्थमितिशेषः ननुतत्रममकाशक्तिरित्यतआह हेमहाभाग भवानमोघहगस्ति अमोघहक् शुचिशुद्धंश्रवोयस्यसशु चिश्रवाःसत्येत्रह्मणिरतः सत्यरतः धृतानिलोकहितावहानित्रतानियेनसधृतव्रतः एवंभूतस्यतविक्रमसाध्यमितिभावः॥१३॥

भगवृद्धिविधविष्ठितवोधकपुरागानिर्वागांतवात्माऽसंतोषापहंमयोपिद्धमन्यथातुत्वदात्माऽसंतोषिनवृत्तिनीस्तीत्याह अतइति अत उरुक्रमचरित्रबोधकपुरागाप्रकाशनात् पृथग्दशः अन्यदृष्टेः अन्यथोक्तोपायाद्वैपरीत्येन आत्मासंतोषिनवर्तकंयात्किचनार्थातर्रावव उरुक्रमचरित्रबोधकपुरागाप्रकाशनात् पृथग्दशः अन्यदृष्टेः अन्यथोक्तोपायाद्वैपरीत्येन आत्मासंतोषिनवर्तकंयात्किचनार्थातर्रावव अतः वर्गायतस्तव तत्कृतकपनामभिः तयाविवश्चयाकृतेः संकल्पितः कपेनामभिश्चदुःस्थिताः अविषयेप्रवृत्ताव्यामोहितासती अतः किविवित्कदाचिद्पिकचित्कस्मिश्चद्पिविषये आस्पदंस्थानंनलभेत वाताहतनौरिव ॥ १४॥

तद्वमुध्वेबाहुविरोम्येतन्नकश्चिन्मेश्यगोतिवैश्वमदिर्थश्चकामद्वसकस्माभ्रैवसेव्यते इत्याद्याग्रहेगाभारतादिषुश्वमोदिप्रतिपादनम्नुभित तद्वमुध्वेबाहुविरोम्येतन्त्रमुभूक्ष्व्यत्यनुवित्मस्तु बुभूक्ष्वजनोपकारार्थेतुकथंचिदुवितंभवतु ब्रोमासोतुमंवन्तिर्देशितृगगणस्यहत्रीन्मासानाविकेतेष मेवत्युक्तंतन्मुमुश्चन्यत्यनुवित्मस्त्रीयतिपेवैवपितरीनृप वराहृनतुष्गमासान्मस्त्रविद्याद्वनेतृ मासानद्वीपार्षतेनरीरवेननवेवतु गवयस्यतुमासन् वातुमिह्यदेशितं आद्यक्तदेशितं प्राप्तिकेतिव्यतिक्रमाहिष्यते आद्यक्तदेशित्मासान्वदेशितं प्राप्तिकेतिव्यत्रिमाहिष्यते अत्यत्यत्वस्य नित्मासान्वदेशितं प्राप्तिकेत्रमासान्वदेशितं प्राप्तिकेतिव्यत्रिम्पत्रमार्थम् अनुदासतीभवतः महान्द्यतिक्रमः ननुमदानास्वामीविक्रमवृतिनिवृत्योनियमार्थमिद्यमुक्तं पुनःसदुपदेशेन श्रमे कृतिपित्दपोवग्राख्यम् यदिति यद्यस्यतववाक्यतः इतरः लोकिकोजनः धर्मोयमिति इदविश्वासनिस्थतः तस्यदिन्द्रवक्रमेणासाद्धः तिक्रवार्गाद्यमत्यास्यते ॥ १५ ॥

क्रियमार्गानिवारग्रानमन्यते ॥ १५ ॥

क्रियमार्गानिवारग्रानमन्यते ॥ १५ ॥

प्रवर्तमानस्य गुणैरनात्मनस्ततोभवान्दर्शयचेष्टितंविभोः॥ १६ ॥
त्यक्त्वास्वधमंचरणांबुजंहरेर्भजन्नपकोथपतेन्नतोयि ।

पत्रक्रवाभद्रभभूदमुष्यिकंकोवार्थ आसोभजतांस्वधमंतः ॥ १७ ॥

तस्यवहेतोः प्रयतेतकोविदोनलभ्यतेयद्भमतामुष्यधः ।

तल्लभ्यतेदुः खवदन्यतः सुखंकालेनसर्वत्रगभीररंहसा ॥ १८ ॥

नवैजनोजातुकथंचनाबजेन्मुकुंदसेव्यन्यवदंगसंसृतिम् ।

समरन्मुकुंदांष्ट्युपगूहनंपुनविंहातुमिच्लेन्नरसम्महोयतः ॥ १९ ॥

इदंहिविद्यंभगवानिवेतरोयतोजगत्स्थानिरोधसंभवाः ।

तिद्धस्वयंवेदभवांस्तथापिवैप्र।देशमात्रंभवतः प्रदर्शितम् ॥ २० ॥

#### भाषा टीका।

अतएव हे महाभाग ? आपस्वयं अव्यर्थज्ञानात्म हैं पवित्रयशयुक्त हैं सत्य में अनुरत और धृत वत हैं। आप समाधिद्वारा उरक्रम भगवान् की लीलाओं को स्मरण कोजिये और समस्त जीवों के वंयन मुक्त होने के लिये उनहीं लीलाओं को वर्णन कीजिये॥ १३॥

क्योंकि भगत्रान की लीलाओं को छोडकर जो और कुछ वर्षान करना चाहता है उस प्रथग्दर्शों की बुद्धि वर्षानीय विषयके रूप औ र नाम से चंचल होकर कहीं भी स्थिर नहीं होती है तीव पवन में कंपित नाका के समान सर्वथा आस्थर हाजाता है॥ १४॥

श्री भगवान के यशके अतिरिक्त धर्म का वर्णन अकिंचित कर हीनहीं है. विरुद्ध फल भी करता है। जुगुण्सित काम्य कर्ममें खभा व सेही जीवकाअनुराग है। उसी कर्म को धर्मकह कर जो आपने उपदेश किया है यह वडा अन्याय है तुमारे ही वाक्यसे काम्यकर्मा दिकोंको मुख्य धर्म मानकर जीव अब न तुम्हारे किये निवारण को मानता है। न और किसी तत्वज्ञ का निवारण मानता है ॥ १५॥

# श्रीधरखामी।

नतु यद्येवं प्रदृत्तिमार्गे निन्दाते तर्हि निवृत्तिमार्गे सर्व्यक्रियात्यागेनेव पारमेश्वरसुखस्करपानुभूतिः कि तद्यशःकथनेनापि तज्ञाह विचक्षणोऽितिनिपुणः कश्चिदेव निवृत्तितः सर्व्विक्रयानिवृत्त्या अस्य विभोः सुखं निर्विवकरपक्षसुखात्मकं स्वरूपं वेदितं बातुमहोति । व पुनरिवचक्षणः प्रवृत्तिस्वभावः विभुत्वे हेतुः त अन्तः कालतः पारञ्च देशतो यस्य तस्य विभोश्चेष्टितं ततः कारणात् हे विभो अनात्मनो देहाद्यभिमानिनः अतपव गुणीः सन्तादिभिःप्रवर्त्तमानस्य जनस्य दर्शय। भवानिति त्विमत्यर्थः। भविष्ठिति पदि ति सम्बोधनम् ॥ १६॥

पवं तावत् काम्यकम्मीदेरनथेहेतुत्वात् तं विहाय हरेलीलैव वर्गानीथेत्युक्तम् । इदानीन्तु नित्यतेमिचिकस्वध्रमीतिष्ठामणि अनाहत्य केवलं हरिमिक्तिरेव उपदेष्ट्येत्यारायेनाह त्यक्त्वेति । नचु स्वध्ममत्यागेन भजन् भक्तिपरि पाकेगा यदि कृतार्थी अधित् अनाहत्य केवलं हिम्मिक्तेरेव उपदेष्ट्येत्यारायेनाह त्यक्त्वेति । नचु स्वध्ममत्यागानिमिक्तोर्थाः स्यादित्याराक्र्याहः ॥ तती तदा न काचिक्तिन्ता । यदि पुनरपक पव मियेत वा यदि तदापि भक्तिरस्किस्य कम्मोनधिकारात् नानर्थदाकाः ॥ अक्रीक्रत्याच्याह भजनात् पतेत् कथित्वत्य अर्थेत् मियेत वा यदि तदापि भक्तिरस्किस्य अमद्रमभूत् कि नाम्देवत्यर्थः । अक्तिवासनासद्भावादिति । वाराव्दः कटाक्षे । यत्र क वा नीचयोनावपि अमुष्य भक्ति रसिकस्य अभद्रमभूत् कि नाम्देवत्यर्थः । अक्तिवासनासद्भावादिति । वाराव्दः कटाक्षे । अत्र केवलं स्वध्ममतः को वार्थः आसः प्राप्तः अभजनामिति पष्टी तु सन्वधमात्रविवस्त्याः॥ १७॥ नवः भावः । अभजद्भिः केवलं स्वधम्मेतः को वार्थः आसः प्राप्तः अभजनामिति पष्टी तु सन्वधमात्रविवस्त्याः॥ १७॥ नवः भावः । अभजद्भिः केवलं स्वधम्मेतः को वार्थः आसः प्राप्तः अभजनामिति पष्टी तु सन्वधमात्रविवस्त्याः॥ १७॥ ।

#### श्रीघरस्वामी ।

नजु स्वधम्ममात्रादिष कर्मग्या पितृलोक इति श्रुतेः पितृलोकप्राप्तिः फलमस्येव तत्राह तस्येति । कीविदो विवेकी तस्येव हेतास्तदर्थं यस्नं कुर्य्यात् यत् उपरि ब्रह्मपर्यन्तम् अधः स्यावरपर्यतश्च समिद्धर्जीवैने लक्ष्यते । पष्ठी तु पूर्व्ववत् । भगवद्भक्ति सुलार्थमेव प्रयतेत तस्य दुर्लमत्वादित्यर्थः । तत्तु विषयसुखमन्यत एव प्राचीनस्वकर्मग्या सर्वेत्र नरकादाविष लक्ष्यते । युःखबत् वंथा युःसं प्रयत्नं विनापि लक्ष्यते तद्वत् । तदुक्तम्-अप्राधितानि युःस्नानि यथैवायान्ति देहिनाम् । सुस्नान्यपि तथा मन्ये देवमत्रातिरिच्यते इति ॥ १८ ॥

यदुक्तं यत्र क वाऽमद्रममृदिति तदुपपादयित न वै इति । मुकुन्दसेवी जनः जातु कदाचित् कथञ्चन कुयोनि गतोऽपि संसृति नामजेत् नाविशेत् । अङ्ग अहो । अन्यवत् केवलकर्मानिष्ठवत् इति वैधम्हूर्ये दृष्टांतः । कुत इत्यत् आह । मुकुंदाक्ष्रे रुपगृहन-मालिङ्गनं पुनः स्मरन् विहार्तुं नेच्छेत् । यतोऽयं जनो रसम्रहः रसेन रसनीयेन गृह्यते वशीकियते । यद्वा रसे रसनीये ग्रह् आग्रहो यस्य । तदुक्तं भगवता—यतते च ततो मूयः संसिद्धी कुरुगंदन पूर्वाप्र्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि स इति ॥ १९॥

तदेवं मगवर्ष्ठीलां प्राधान्येनातुवर्णाय इत्युक्तं तत्र को भगवान् का च तस्य लीला इत्यपेक्षायामाह । इदं विश्वं भगवानेव स तु अस्माद्विश्वस्मादितरः ईश्वरात् प्रपञ्चो न पृथक् ईश्वरस्तु प्रपञ्चात् पृथगित्यर्थः तत्र हेतुः यतो भगवतो हेतोर्जगतः स्थित्याव्यो भवन्ति । अनेनैव लीला अपि दर्शिता यद्वा इदं विश्वं भगवान् इतर इव यः स जीवोऽपि भगवान् चेतनाचेतनप्रपञ्चस्तद्वयातिरेकेगा मास्ति स प्रवेकस्तत्विमत्यर्थः हिशब्देन सर्व्वे खिव्वदं ब्रह्मेत्यादिश्चतिप्रमागां स्वित्तम् । तिद्व स्वयमेव भवान् वेद । प्रादेशमात्र-मेकदेशमात्रम् आचार्य्यवान् पुरुषो वेदेत्यादिश्चत्यर्थसम्पादनाय प्रदर्शितम् ॥ २०॥

#### दीपनी।

ख्रङ्ग अहो इति । अङ्ग सम्बोधने हर्षे सम्म्रमास्ययोरपीति मेदिनी ॥ १९ ॥ भगवानेवेति । सत्रत्य प्वराज्यः खलु मूलोक्त इवराज्यस्यार्थभूतः ॥ २० ॥ २१ ॥

# श्री बीरराधवः ॥

तन्तकृत्सनिक्कानातुनामकृत्काषित्वुममाभिष्रायंजानात्येवत्यतभाह विचक्षाण्यति यदण्यस्यविभोभेगवतः अनंतपारस्यक्रभेशिष्ठ विचक्काण्यति वदण्यस्यविभोभेगवतः अनंतपारस्यक्रभेशिष्ठ श्रीयअपार्ट्चिष्टितिव्यक्षिणः निष्ठणाव्यक्षित्रं तिवृत्तिव्यक्षिणः निष्ठणाव्यक्षिण्यादि विचक्षाण्यादे विचक्षाण्यादे विचक्षाण्यादे स्वाप्ति स्वापति स्वापत

यहुकंकुतः पुनः दाश्वदभद्रमीश्वरेनचापितंक्रमीतिकवैगोऽभद्रगर्भत्वेभगवद्गतियोगस्यदाश्वद्भद्रगर्भत्वेच तदुभयमुपपादयि॥ ह्य-वस्तित पतिदिश्विदारीरपातीकिः देश्वरेनचापितं स्वधमस्त्रसमीहितंफलसाधनंघमत्यक्षताहरे अरगांवुजंभजन्भजमानोयःस्वपक्षपा वर्षिति पतिद्विदारीरपातीकिः देश्वरेनचापितं स्वधमस्त्रसमिति चिद्यपित्यर्थेः सहिक्च्याग्राहत्किश्चार्माति सम्बद्धार्थे। स्वप्ति स्वप्ति

प्रमाण अस्ति क्वार्थियोः स्थान्य इस्तामीभवणभेत्वे प्रतिपादितेऽश्रतस्म त्योक्षणयात्वालभ्यत्वेवद्गन् उपायातरेऽश्यस्तु सुन्नान् विद्यम् गान्य हिन्द्र स्थान्य स्

#### श्रीपीरराघवः।

यत्रकवामद्रमभूदमुष्यिकमितिकाकास्चित मिमायंसिहावलोकनन्यायेनविष्ट्योति नवाहित अंगहेवाद्रायगामुकुंद्सेवीमुकुंद्मको-जनः कदाचिद्पीकथंचिद्पिसंसृतिनावजेतिकातुततोमुच्येतेवेत्यर्थः इदंनिष्पक्षमिक्योगनिष्ठपुरुवाभिप्रायकंतस्यतावदेचिरंयावकाविमोक्षे-अयसंपत्स्यहितश्चतेः आनिष्पन्नमाक्तयोगोपिजनः अन्यवत्केवलकाम्यक्षमिवस्रसंसृतिवजेत्नहिकल्यागाकुत्कश्चिदित्याद्यक्तरीत्याकार्यमिवस्य-ग्रामेवप्राप्नोतीतिमावः तदेविवशद्यतिस्मरिकतिमुकुंदां घ्युपगूहंनगुहसंवरगाहितधातुः मुकुंदांघ्युोः संवरगासम्यग्वरगाप्रपद्नमितिया वत्तत्स्मरन्योवदेहिकंस्मरिक्षत्यर्थः तत्पु निवहातुंत्यकुंनेच्छत् कुतः यतोमुकुंद्सेवीजनः रसम्रहः रसोवैसः रसंद्रेवायलब्धनिमवती त्युक्तरीत्यानिरितशयानंदात्मक रसक्षप परमात्मानगृहीतवानित्यर्थः तथाचोक्तंभगवता तत्रतंबुद्धिसंयोगलभतेपौर्वदेहिकं यतनेचत्रते।भूषः संसिद्धौकुद्यनंदन पूर्वाप्रयासेनतेनेवाह्रियते ह्यवशोपिसहत्यादिना ॥ १९ ॥

नतुकतेभगवद्गुणायेमयावर्णनीयाइत्यपेक्षायांतेषामानं त्याक्षमयोपवेष्टुंशाकल्येन त्वयावर्णयितुंबाशक्याः किंतुसंब्रहेणतान्दर्शया भीत्याह इदमिति यतोयस्माजगित्थितसंहारसर्गाः प्रवर्ततसभगवानिदंबिश्वं एवमितरइवेतरप्यवायथैवेवैवमितिवश्व्यस्यप्येवशब्द् पर्यायत्वानुशासनात् विश्वाभिन्नोपिवश्वविलक्षणाइत्यर्थः यतइति जन्माणस्ययत्वस्त्यत्रेवहतौपंचमीभगवानिद्मित्यनेनसर्वस्विवदंबद्धत् स्वलानितिश्रुत्यर्थोभिन्नेतः पवंजगद्भुपादानत्वजगित्रमित्तत्वतदुभयाक्षिप्तसर्वशिकत्वंषपादानकारणाश्चिप्तसर्वोत्तरात्मत्वविद्विज्ञाहीश्चर्य तम्भूलकजगद्भिन्नजगद्विशेष्यत्वतम्लकतद्विलक्षणत्वकारण्याक्षप्तापाद्यस्य स्वयावर्णनियाद्यतिभावः तिम्वजगद्विश्वतम् स्वयावर्णनियाद्यस्य प्रविश्वतम् प्रविश्वतम् स्वयावर्णनियाद्यत्वमात्रम् प्रविश्वतम् यद्यपिजगदुपादात्त्वविद्वान्तम् यात्रम् स्वयावर्णनियास्यत्वमात्रम् प्रविश्वतम् यद्यपिजगदुपादात्त्वविद्वान्तम् यात्रम् स्वयावर्णनियास्य स्वयावर्णनियास्य स्वयाद्यस्य स्वयावर्णनियास्य स्वयाद्यस्य स्वयाद्यस्य स्वयावर्णनियास्य स्वयाद्यस्य स्वयस्य स्वयाद्यस्य स्वयस्य स्वयाद्यस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्यस्य स्वयस्य स्वय

#### श्रीविजयभ्वजः।

समाधिमाषात्मकप्रथेधिकार्यभावादुपरम्यतइतिनवक्तव्यमितिविक्षाण्यति विचक्षग्राइतिनिवृत्तितोगुगौःप्रवर्तमानस्यानात्मनौस्याने त्याग्रह्मात्मावेद्वाने विचक्षग्राइतिनिवृत्ति विचक्षग्राविद्वाने विचक्षग्रीविद्वाने विचक्षग्रीविद्याने विचक्षण्यात्रीति विचक्षग्रीविद्याने विचक्याने विचक्षग्रीविद्याने विचक्याने

द्द्रतिपप्रवृत्तिधर्मोपदेशाभिवृत्तिधर्मोपदेशोवरीयानित्याहृत्यक्ष्त्वेति अधस्वधर्मत्यक्ष्त्वाहरेश्चरणां वृज्ञंभजंस्ततः यद्यपक्षः पत्तिज्ञाश्चमुख्यः यत्रक्षवाभद्रसभूतः स्वधर्मभजतांकोवाअर्थआप्तप्वेत्येकान्वयः भगवद्यविषयस्वधर्माजुष्ठानात्मक्ष्रवृत्तिः धर्मत्वातिवृत्तिः धर्मविष्यायकशाः स्त्रोक्षाचारैः हरेः पादपर्वस्वनामानः पुरुषस्तस्मादनधिगतापरोक्षक्षानादिस्तत्फलपरिपाकोरागाद्यत्तरायविहृतः स्वलेत्त्रशाद्यसुष्यपुत्तः श्चिः अभवतिधर्मात्मेत्यादिष्यमाणाद्यत्रकवाजन्मातरेश्चीमदादिक्षलोद्धत्तिः धर्मोत्मक्षेत्रस्ति स्वतिधर्मोत्वेत्रस्त्रस्ति विद्यात्रस्ति स्वतिधर्मोत्वेत्रस्ति स्वतिधर्मात्रस्ति स्वतिधर्मात्रस्ति स्वतिधर्मात्रस्ति स्वतिधर्मात्व स्वतिधर्मात्रस्ति स्वतिष्ठातिधर्मात्रस्ति स्वतिधर्मात्रस्ति स्वतिष्ठातिष्रस्तिष्ठातिष्ठातिष्ठातिष्ठातिष्रस्तिष्ठातिष्रस्तिष्ठातिष्रस्तिष्ठातिष्ठातिष्रस्तिष्रस्तिष्रस्तिष्यातिष्रस्तिष्ठातिष्रस्तिष्यातिष्रस्तिष्यातिष्रस्तिष्रस्तिष्यातिष्ठातिष्ठा

तस्माहिविकनाप्रवृत्तिधमेविहायनिवृत्तिधमेपवाद्यष्टेयहत्याह् तस्येति क्रोविहरतस्येवहतोः प्रयतेत् इपर्धधोश्चमतायक्षलध्येते गभीरतंत्तं साकालनान्यतः सर्वत्रभद्ध खनत्तु खंलप्रकान्वयः अनंतपारस्येतिहर्षे प्रथमाद्द्याद्भावस्य सर्वेद्रविद्धानान्य तः सर्वत्रभवहतानान्य तः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः अन्तर्भावत् प्रवृत्तिधमेष्यक्षयान्य तिवृत्तिधमेष्यक्षयान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यत् सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धान्यत्वतः सर्वद्धान्यतः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धानः सर्वद्धा

### श्री विजयध्वजः

्रहतोपिनिवृत्तिधर्मपवश्रेयानित्याहः नवाइति धंगहेमगवन्मुकुंदसेवीजनोन्यवन्मुकुंदासेवमानवज्ञातुषदिविदिषकथंचनकस्माधिश्विम सात्संसृतिनवजेद्वैराव्देननहिकल्याग्राकृत्कश्चिद्दुर्गतितातगच्छति इतिवाक्यंप्रमाग्रायतिकुत्तइतितत्राहः स्मरन्निति मुकुंदस्यमनसाचरग्रा रविदार्किगनसुकंस्मरन्नतुमवन्रसहोजनः पुनर्विहातुंनेच्छेदित्यन्वयः॥ १९ ॥

मुकुंद रूप माह । इदमिति स भगवानिदं विश्वमिवनतुविश्वं किंतु इतरः विलक्षण लक्षणःकुतःजगत्स्थानिनरोधसंभवाइति यतः जनत्स्थापयितिनिरोधयितसंहरितसंभावयित उत्पादयतीतितथोक्तः जत्स्वित्वदि लक्षणलिक्षतसार्वश्यसंवद्धांत्रत्र्यसंवेशक्तिसर्वस्वा मित्वादिगुणपूर्णत्वादसंवद्धात्वादिगुणविशिष्टाज्जगतोभेदोन्जभवसिखइतिहिशब्दः किंच भगवान्स्वयंतद्वेलक्षणयंवेदजानातिहियसमादे क्यक्षथंनप्रमाणविकद्वमिति भावः तथापिभवतःसर्वेसिद्धंनमयावक्तव्याशोस्ति तथाप्युपाध्याय पुरोबालवद्व्याकृताकाशसहशक्षानवतः मर्चतःकेवलप्रादेशाकाशपरिमितंद्धानप्रदर्शितंमयेतिशेषहत्यन्वयः ॥ २०॥

### खुबोधिनी।

ननुतथापि मीमांसाद्वयनमार्गद्वयस्यसिद्धत्वात् किमनेनतृतीयनेत्यतथाह विचक्षगाहित आत्मसुखंहिनिवृत्तिमार्गे प्रकटीभवति ॥ ब्रह्म सुद्धंच परंशक्षवत्सर्वपरित्यागेनवैराग्यंचनेदानींसंभवति तद्र्यंचनूतनप्रयत्नेनतद्वेतोरवास्तुकितेनितन्यायेन स्वतंत्रपवार्यमार्गोतिस्वत्य परंशक्षवत्सर्वपरित्यागेनवेराग्यंचनेदानींसंभवति तद्र्यंचनूतनप्रयत्नेनतद्वेतिर्वाद्वापरं तितनुसुखंविद्वनुमहंतित्ववतापिनकार्यक्षित्व भिष्ठायेगाहि विचक्षगाः किवदेव अस्य जगदनंतपारस्यदेशकालापरिच्छन्नस्यसंवेष्ठापरं तितनुसुखंविद्वनुमहंतित्ववतापिनकार्यक्षित्व सिद्धाद्विभारितिअनात्मनोदेहादेःगुगाविषयेःप्रवर्तमानस्यनतत्सुस्वमितिपूर्वेगासंवधःनेत्यध्या हारःअथवातस्यानिव्यन्तिस्तत्संगाभावेननस्य तिष्ठामितिक्षत्वाधिक्षत्वाधिक्षत्वाधिक्षयोस्मर्थःयद्वा प्रवर्तमानस्यार्थेतत्संवधीवाभवान्तद्र्ययत्वकरणात् तदुद्धारार्थभगवद्गुगावक्तव्याद्वत्यर्थःनिर्वाहकः महित्यसीकिति ॥ १६ ॥

एवंचतुर्भिः इलोकैः उपक्रमोपसंहाराभ्यांचरित्रकथनेविधिनिरूपितः तस्यमीमांसामाहद्वाभ्यां त्यक्त्वेति नजुमगवत्कथाकेनश्रीतव्याकि धर्मकर्तिभिर्लीकिकैःअधमेकर्तिभिर्वातत्राद्यस्यानवकादाः द्वितीयस्यलाकिकव्यापारेनाविष्टस्यनप्रवृत्तिः तृतीयदुष्टाधिकारित्वादसङ्ख्यास्त्र तास्यात् सर्वाधिकारित्वात्रानिवृत्तिमार्गानिष्ठत्वतथासतिवाथवक्तव्यमितितत्राच्यतेधमेकर्तृभिरेवश्रोतव्यपरंधमेपरित्यागेनजन्मात्तरसङ्ख्यास्व तिवासयात्यथानिवृत्तिमार्गे धर्मपरित्यागः तथात्रापिताबत्कर्माशिकुर्वतितिभगवद्वाक्यात्वाधकानांवाचिरकालसाध्यानांवापरित्यागः तथाच त्युक्तवेतिविधिःस्यात्ताहेशेषुधर्मत्यागवचनइत्यत्रोक्तार्थीनुसंधेयः तत्रहेतुःअस्वधर्म मितिदेहादिधर्मतद्धिकारेगावाप्रभृतंस्व स्यतुजीवस्यतासत्वात्भगवत्सेवैवस्वधर्मःदाशिकतवादिकमप्यधीयतपकेष्रहादासाष्ट्रहाकितवाद्दिददंविस्तृतमस्माभिःअशोनानाव्यपदेशा दित्यत्र हिर्भगवतः परवद्यागः भक्तिमार्गानुसारेगाचरगासेवाजीवानांस्वाभाविकोधमः अंशत्वेपिअशिनः सेवः मुख्यायेषाम् प्येतद्वास्तवतेषा मिष्टिहासम्पिक्षयाअतरंगंअत्रमतांतरमन् चद्षयति यद्यप्रकदितिअथयदिपतेदिति जीवस्यदासत्वेनस्वधर्मत्वात्पतनशंकैवनास्तभगवत्सा माभाषक विकास करिया कर्मित स्थाप कर्मित स्थाप कर्मित स्थाप कि कि स्थाप करिया स्थाप कर्मित स्थाप कर्मित स्थाप कर युद्ध समाधनत्वा स्थाप के स्थाप कर्मित स्थाप कर्मित स्थाप करिया करिया करिया करिया करिया करिया करिया करिया करिया शुक्रवात् अथाभित्रशक्तमे सामिन स्वापित स्वापित स्वापित स्वापित तथासितपतेत पुनर्जीवभावं प्राप्त वतापिभजनात् नात्यत इत्याह त्रतहाति । एवमप्कपक्षत्रहासावाचम्रशापक्षमन् चदु पर्यातयत्रकवित साक्षाद्भगवत्सागुज्यहेतुमगवत्सेवारामपियदिपातः तदाकसाधनांत तत्त्वात्रात्वा । रतस्यभद्धं भीवष्यतिसाधनीहपूर्वावस्थासाध्यमेववेत्यनादरेकापिसाधनेतस्यमद्रनमविष्यतित्यर्थःयदास्वामाविकमजनज्ञानादीनांनपुरुषार्थः दतस्य नाम । पर्यवसायित्वतदाद्राणास्तमन्यधर्मामामित्याहकोवार्थआप्तोमजतांस्वधर्मतहात्यमजतामसेवकानांकवलदेहाद्यध्यासनप्रवृत्तानांले।किकानां पुर्यवस्ता यहवतम् । पुरुष्य वाह्याणाः इसस्यस्थानप्राप्तिःतद्वतेव्रह्माङ्गञ्छतिस्पद्वीस्यादयश्चनियताःविधमेः परधमश्चक्षामास्वरमाछ्लः अधमेशाखाःपंचेमाधमेशाधमेवस्यजेत् 

### सुचोधिनी

स वीत्यि निभि संसार ग्रात्वात्तत्रोच्यतेकालसाच्यपवकर्भस्व मावयोः प्रदृत्तिः नाकालसाच्ये। किंच। अद्दर्शनमपूर्वजन्मनिकृतकर्मग्री। वात्रच्या पारकप्रभाषम् अस्व संग्रात्व स्थानिक प्रमाण किंच। किंच। कर्मगां प्रति हेती वी मायस्तु नाद्दे जनयति द्वि नेव मगवत्र्याति जननात् फलविपर्य यस्त्व संगतः। निप्रिति हेतोः अफलत्वेनतद्र्य नव्य पारजननं संगवति ॥ किंच॥ कर्मगां प्रति हेकस्व मावत्वात् जन्मनो नाति मत्वसाधकत्व मुश्रीत् मेच जन्मी निम्ना विद्यात् जातके पिर्धमे कपसे वायाप्य फलत्व नचु भन्न हे क्रायमान त्वेतस्मादन न्यसि स्व स्वा स्थान स्थान

तत्रतकमाह नवैजनोजात्विति ननुवैकुंठगतानामिषजयविजयादिनांपुनरागमनश्रवणात्ननेकांततोभिकः फलसाधनभगवतीष्यवतरणात् तत्संगनावतारसंभवाध्यपराधीनत्वेनापराधसंभवाध्यतस्माद्धमंबद्धाकिरापिनोत्कृष्टफलेति तत्राह नवैजनोजात्वितिवंगीकृत्यापिपरिहारः वस्तु तस्तुजयविजययोः धर्ममार्गानुसारेणकृत्रिमवैकंठपाप्तिः अत्यवत्रवेववर्णनायांयेनिमिक्तनिमक्तेनधर्मेणाराधयन् हारिवैकुंठः कल्पितोयेनेतिच्यम् तस्तुजयविजययोः धर्ममार्गानुसारेणकृत्रिमवेकंठपाप्तिः अत्यवत् व्याभगावतानांभगवत्सेवकसेवकानांदृषणामगीकृत्यापिपरिहारज्ञयते य्याभरतादिः वतोमुकुंद्सेवीसंवक्रयोमोक्षदातुः सेवकः अन्यवत् यथासत्यवादीवाद्यायः तत्रहेतुः समरीव्यतिवाक्रशीरमक्त्यभावेषिकामुकस्यकाभिनीसमर् विवपरमानंद्रकप्त्रपार्थिं प्रतिविज्ञाते विवपरमानंद्रकप्त्रपार्थिं प्रतिविज्ञातं विवपरमानंद्रपार्थितं विवपरमानंद्रकप्ति १९

प्रबंसीपतित्तकंभगवन्मार्गस्यात्कष्टतंप्रतिपाद्यभगवतो दुर्छभवेतच्चरित्रसम्यस्त्वकथनं चानुपप्तामितिको वाभगवानित्याकां साय्याप्य आचार्यवान् पुरुषो वेदितिच शास्त्रां यस्त्र वान्य यस्ति । भगवत् स्वक्षं चरित्र चित्र कर्मो यत् द्वरंभेद निक्ष्यमीयं तथासित चरित्रस्यानात्मत्वेन नत् द्वावायां संसारः स्यात् अतो द्वयममेदेन निक्ष्यपित् इति हे व भगवात् विश्व व भगवत् व विश्व व भगवत् व व भगवत् व व भगवत् व भगवत्

# muere de la company

पुर्वमाभिन्नतं यद्योवग्रांतमेव स्पष्टमुपदिशति विज्ञक्षणी हाते। विज्ञक्षणी मवात् इत्यन्वयः। हे बिभी यतो विज्ञक्षणी भयात् सर्विता तिवृत्तिग्रुव्वेकमस्य विभीः श्रीमगवतः सम्बन्धि सुर्वं भाकिक्ष्यं वेदतुमहाति याग्यो भवति ततो हेतीरनात्मनः पारमाधिक-क्षिक्ष विवृत्तिग्रं वित्रक्षणीयस्ति तदे प्रयोगि जिल्लाक्षणीयस्ति व्याप्ति जनस्य कृते तस्य चित्रं लीलामेव त्वं वर्णेया निहत्तवेषस्पतिप्रमानादः विवेशकात्रक्षणीयस्ति तद्यास्यनायासन् तत्रक्षणात्रस्य विवेशकात्रस्य स्विति स्वाप्ति । सर्विति प्राप्ति स्वाप्ति स्वाप्ति स्वाप्ति स्वाप्ति स्वाप्ति । सर्विति प्राप्ति स्वाप्ति प्रवित्यापि प्रविवत्य ॥ १६॥। स्वाप्ति स्वाप्त

Service Control of the Control of th

### कमसन्दर्भः।

अधुना स्वधन्मे परित्यागेऽपि दोषं परिहरति त्यकेत्वति । अयमर्थः । स्वधन्मैत्यक्त्वायोभजन्स्यात् अमुष्याभद्वंतावजभवत्येव देविष भूताप्तनृगामित्यादेः। तत्रयदि मगवत् प्राप्त्ययोग्यः स्यात् आयुः क्षयेगा। वित्रकेतुवत् अपराधेन वादेद्दान्तरंप्राप्तुयात्। भरतवत् तस्मित्रे वदेहेऽपिवाअन्याविष्टः स्यात् । तदातद्भवत्यमावसमयेऽपियः स्वधर्मत्यागस्तेनापिनाभद्रं भवेत् ।भक्तिवासनायास्त्वतुञ्छित्तिधर्मकः त्वात् ततश्चयत्रकाप्यवस्थयां तस्यामद्भेनस्यादेष । अभक्तानान्तुको वा अर्थः सततमव्यभिचारी स्यादिति ॥ १७॥

तस्येव हेनोरिति। कर्मगा योऽर्थः आप्यते स पुनरर्थाभास एव नार्थ इति भावः। लक्षुभ्यत इति। तस्मादेहिकार्थ सुतर्श कर्म न कर्त्तव्यमिति मावः। कालोऽत्र प्राचीनकर्ममोगावसरः॥ १८॥

ताई कि संसारध्वंस एव पुरुषार्थ इत्यादांक्य तत्राप्यस्ति वैदिष्टिचमित्याह स्मरन्निति। यस्तु तक्किरसम्रहः स पुनिरत्यावयः वश्यते च सिमुचनविभवदेतवेऽप्यकुग्ठस्मृतिरजितात्मसुरादिभिविमृग्यात् । न चलति भगवत् पदारिवदासुवनिमिषार्द्धमिष स वैष्णावाग्य इति । न पारमेष्ट्यं न मेहन्द्रिषण्डयमित्यादि ॥ १९ ॥

ननु सर्व्य खिटवरं ब्रह्मेति श्रूयते । ब्रह्म च भगवदेकरूपमेव । ततः कथं भगवत एतारशत्वं तत्राह एदं हीति । हि यस्मादिदे विश्वं भगवानिव नतु मगवानेव स्यात यतोऽसी विश्वस्मादितरो विरुक्षगाः। कथं विश्वं भगवानिव कथं वा भगवान् विश्वसमादि-तरस्त्रजाह यत इति । विश्वस्य तत्कारथेरूपत्वात केनचिद्देशेनैव तद्र्पत्वं निरूप्यते । भगवतस्तु तत्कारणत्वात् परत्वम् । न तत्समञ्चाप्रयधिकाम इस्यते इदि श्रुत्यन्तरात् । तत्र सञ्बेशस्यापि भवतः सम्पति अपरितोष पवायं प्रमाग्रामित्याह तदीति । मया तु यसिकिचिवेवोपिव्दयत इत्याह तथापीति । तदेवमपि परमात्मसन्दर्भे यदन्यथा व्याख्यातं तत्तु नातिहृद्धीमिति मन्तव्यम् ॥ २०॥

# भीविश्वनाथचक्रवर्ती । -

and the state of the

किञ्ज त्रविप त्वं धर्मान्तरं विनिन्य भगवद्यशायव वर्णयेत्याह विचक्षण इति। इतरः प्राकृतो विवेक शूर्णोजनः स्थितहत्युक्तम विचक्षणः ात्रिवेकी जनस्तु अस्यविभोः सुखं निवृत्तितः तदितरप्राम्य सुखं निवृत्त्या वेदितुः महेति। तत्र हेतुरनन्त पारस्य न अन्तः काळतः एव मेव पारेच प्रमागावी यस्य तस्य । तेन सान्ताद हेप प्रमागाच विषय सुखाक्षिपृत्य अमन्तमपार प्रमागाञ्च विमोः सुखं विदित्वा तक्ष्य भक्तिकसुमहैतीति भावः । तत्थः विचक्षम् जनस्य भक्ता प्रवृत्ति मालाक्य । यद् यदा चरति श्रेष्ठस्तत्तः देवे तरोजन । इतिन्यायेता विचक्षम्मोऽपि तत्रीव प्रवर्तते इत्यवस्तवध्यमित भगवञ्चरित्रं वर्षीयस्याह । गुर्गोः प्रवर्तमानस्य अतपवानात्मना बुद्धि विवेक शूर्ययस्य जनस्यः वन्धविमुक्तये चेष्टितं हीलांक्रीय । हे विशो तत्र समर्थ यतोऽसाविष सवेती निष्टत्य शुकां मकि कत्वा तदीय सुखं लगतामिति भावः । यदा प्रवस्वतारसी-खार । वतु यदि विवारणा जनीन सन्यंत तही धुनापि त्यलुपदेशे ताध्यारव्धेन तत्तत् सर्व मत् निवर्तक भक्तिमात्र प्रवर्तकेन शास्त्रेगालम् भारत । १९७८ भोराम् न ह्यस्मितः जगति सर्व एवा विवेकिनो विवेकिनोऽपि संतीत्याहः विचक्षण इति । विभोऽकथम्भूतस्य अनैत पारस्य । तत्रकालतेष्ठ सावनः व अवस्थितः प्रकृषेत्वा ध्वनापि वर्तमानस्य तेन तस्य तस्थितस्य भूत प्रवासात्रत्वं न श्रेयमिति भावः प्रमाणतोऽन्ताभावमाहः । गुर्गाः स रवादिभिने अवत्यात्मा देहो प्रस्य चिदानन्द मय बिग्रहस्यत्यर्थः नहिंचत चित्रस्त केनापि प्रमाति घक्यत इतिभावः ॥ १६॥

तत् म बुद्धिभेवजनियद्वानां कमेसंगिनामः। जोष्येतसर्वकमोशिविद्यात्युक्तःसमाचरितिश्रीगीते।पनिषद्वाक्येजकमेत्याजनिविद्यस सत्यम्। त्याशानापंतरण्यस्विश्यसेवशानस्यान्तः करणाशास्यभावत्वात्तरुषु सतानिष्कामकमाधानत्वात्तभक्ते स्तुस्वतः पाबल्याद्यन्ते करणाशिक्षः ष्युरुवातः । तस्मतिसर्वयसान् परित्यज्यसामेकरारवीयज्ञिति श्रमान्सत्यवययः सर्वात्सात्मजेतः सर्वसत्तम् इत्यादिसमवद्धान्यवलाः निवयत्तमहाति ॥ तस्मतिसर्वयसान् परित्यज्यसामेकरारवीयज्ञिति श्रमान्सत्यवययः सर्वात्सात्मजेतः । सर्वसत्तम् इत्यादिसमवद्धान्यवलाः । अ.च.च्याक्षेत्रका कार्या अतिष्टा याञ्च पित्याजनये बसेवले बहारिस किरुपदे स्टब्यत्याचायेना हत्यक्षेत्रकि ॥ क्रवापत्ययेनसजनार समझायासपि सर्सा क्षित्यनै विदित्य स्वयंत्रीतिष्टा याञ्चित्रका विद्याजनये बसेवले बहारिस किरुपदे स्टब्यत्याचायेना हत्यक्षेत्रका व ार्यः वृद्धितिषिद्धाः ॥ स्वयमित्यक्षत्रायोत्पत्तत्त्रस्यादक्षुण्यासम्बद्धात्रस्यात्रम् ताततृगांपितृगामित्यादेः ॥ यदिपुनरपद्धायायस्याप्त्ययो तुष्टाराणाः सुर्वासियंतजी बन्ने बंबाक्षायम्बिन्ने स्वतिस्वासक्ष्यास्त्याः वा पतेत्वतिषि कर्मत्यापातिमिन्नसभद्गे न अविद्यसक्षित्वासनायास्त्वत् स्यासियंतजी बन्ने बन्नाक्ष्यक्रमान्यस्यानस्य स्वतिस्वति । स्वतिस्वति कर्मेन्स्य स्वतिस्वतिस्वति । स्वतिस्वतिस् व्यासिक्षा । अपन्य प्रमाणिक के अपने के विक्री के अपने िर्ह्णा विकास के कि होते होते हैं है है है जो है जो कि साथ कि स्वास के स्वास के स्वास के कि स्वास के स्वास के क है होते हैं के स्वास हवाती गुण्य अस्ति। भक्ति कुरस्यावहरा भाष्य पत्र पुणा फलावित्या वितिभावः । अत्रभवे दित्यनुक्त्या भूत दिहेशो वाहिनः अत्याक्षेपं भी नगववात्रयादमोधः भक्ति क्तुस्त्रथभतः कीवा अर्थ आन्त्रोनकोऽणिक्यो ॥ १७॥ ख्या मण्ड चुचर्याते अभजवास अभजव्ह स्तुस्त्रथंभेतः कोचा अर्थः आग्वोतकोऽपीत्यर्थः ॥ १७॥ चुचर्याते अभजवास

### श्री विश्वनाथचक्रवत्ती।

नतु कर्मणा पितृलोक इति अपाम सोमममृता अभूमेत्यादयः श्वतयोऽहृष्ट्यांदिसुले तथा कापिवाणिज्यादयो हृष्टे च सुले जनान् प्रवर्त्तयन्ते तत्तत्त सुक्रमनपेक्ष्य स्वधमी त्यक्तवा कथंभक्ती जनाः प्रवर्त्तन्तामिति चत् ! सत्यम् । कोविद्दस्तु नेव तैः प्रतारितः स्यादित्यत आह तस्यैवेति । कोविदो विवेकी तस्यैव हेतोः प्रयतेत प्रयत्नं कुर्ध्यात् यद्वस्तु उपि मह्मपर्ध्यन्तम् अधः स्थावरपर्धि-तृष्ट्य स्मतां समद्भिजीवेनं लक्ष्यते । तत्तु विषयसुस्तम् अन्यतः प्राचीनकम्भेत एव सर्व्यत्र नारकशूकरजन्मादाविष लक्ष्यते । तद्कुक्तम् अप्राधितानि दुःसानि यथेवायान्ति देहिनाम् । सुस्नान्यपि तथा मन्ये दैन्यमत्रातिरिच्यते इति ॥ १८ ॥

यदुकं यत्र क वाऽमद्रमिति तदुपपादयति न वे इति । मुकुंदसेवी जनः जातु कदाचिद्दि कथञ्चन दुरमिनिवेशादिवशादिष मन्यवत् कर्मिमजनादिवत् कर्म्मफलमोगमयी संमृति नावजेत् । किंतु मगवदुत्थशुमाशुमभोगमयीमेवेत्यर्थः । तस्य मगवदुत्थशुमाशुमफलमोगवत्वात् तदुत्थशुमाशुमयोर्गुयाविगुगान्वयानिति स्वत्यक्षे मफलमोगवत्वात् तदुत्थशुमाशुमयोर्गुयाविगुगान्वयानिति स्वत्यक्षे न कर्म्म वंघनं जन्म वेष्णावानाञ्च विद्यते इति पायोक्षेश्च । तत्रश्च पूर्वाप्र्यासादेव मुकुंदस्याङ्ग्र्योद्धपगृहनं मनसा परिष्वद्धं स्मरत् पुनस्त्यक्तुं न इच्छेत अत्राङ्घां स्मरित्यनुक्त्वा तदुपगृहनमिति पुनरिति पदाप्र्यां एकद्वित्रिवारं स्वच्छयेव दुर्गमिने वेशवशाद्धजनं त्यक्त्वापि कियतः समयादनन्तरं स्वपूर्वापरदश्योस्तत्स्मरगासुक्षमस्मरगादुःकञ्च स्मृत्वा कृतानुतापो हेत हेत दुर्बुद्धिरहं किमकरवं मवतु नाम अतःपरं तु न प्रमोभजनं हास्यामीति पुनरिप मजनगरमत एवत्यर्थः । अत्र विज्ञह्यादित्यनुक्त्वा विद्यति नेच्छेदित्यनेन तस्य गर्व्वपदित्यं स्वितं मजनं न हास्यामीतीच्छामात्रं मया क्रियते तत्रिव्वाहस्त्वीश्वरस्थेव पाग्राविति तत्राह्माः। तत्र हेतुः । रसे ग्रह आग्रहो यस्य रस एव प्रह इव यं न त्यजतीति वा । अयमर्थः । मजनमेव निष्ठाण्वयासक्तवन्ते रितद्यायां साक्षादेव रसो मवेदतो मजनस्य प्रथमारंमिदनेऽपि प्रच्छक्षतया रसांशत्वमस्येव ॥ यदुक्तं—भक्तिःपरेशानुमवो विद्यित्र तृष्टिः पुष्टिः क्षुद्धपायोऽनुधासमिति ॥ स च स्वादविशेषो भक्तेन दुस्त्यज्ञस्तेन च मुक्त इति ॥ तत्रश्च मजनस्याविच्छेवे उत्पद्यमाने मजनीयस्य मुकुन्दस्याचिरादेव प्राप्तिरित्यत्र कः सन्देह इति मावः ॥ १९ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः

एवंतावद्भगवद्भिवर्जितंकमोदि सर्वमशोभनमतोभगवर्षोद्धतंदर्शयेत्युक्तंसंप्रत्येतहाढशोयकमैनिरपेशहरि भजनस्यायया वद-तुष्टितस्यापिभद्रप्रदत्वं हरिभजनित्रपेक्षस्यकमेगोनिरथंकत्वंचाह् श्रीमक्षागदः त्यक्त्वेति अभजतामभजद्धिः॥१७:॥

नत् कर्मगापित्तलीकहित श्रातिः कर्मफलमाह कथमुच्यते कीवार्थभाष्ट्रीभजतीस्वयमतहत्यत्रहरिभजनीतरातिशायनित्यप्राप्तलहाः नद्रकलककर्मकलतुस्वर्गीदिसातिशयमित्रियदेवात्सलभं चेत्याययेनाह तस्येवेति भ्रमताभ्रमिद्धः तत्वर्भफललस्व अन्वतोदेवतः कथसूतं नद्रकलककर्मकलतुः व्यवत् बहुदुः वयुक्तमतद्वकंभगवता यहिसंस्पर्धजाभोगादुः वयोनयप्रवते भाषातवतः कात्यनतेपुरमतेनुध्यति॥ १८ ॥ तरसुकं दुःववत् बहुदुः वयुक्तमत्वदुकंभगवता यहिसंस्पर्धजाभोगादुः वयोनयप्रवते भाषातवतः कात्यनतेपुरमतेनुध्यति॥ १८ ॥

भजनफ्लमुप्रयंधोभ्रमद्भिणप्रश्वकभ्यतेत्विशतिश्वविश्वानंतानंदस्यं कमेफलंतुः सोदकंमित्युक्तं तदेवप्रयंचयति नेति अन्यः कमेनिष्टः भजनफल्मुप्रयंधोभ्रमद्भित्तित्तम् मरगप्रवाहक्ष्यांपुनः 'प्राप्नोतिगत्वाचांद्रभसंलोकंसोमपापुनरेष्यती।तेवचनात् 'आबद्यभुवनालोकाः सहिकनिकलभागानंतरं संस्थितितस्य मरगप्रवाहक्ष्यांपुनः 'प्राप्नोतिगत्वाचांद्रभसंलोकंसोमपापुनरेष्यती।तेवचनात् 'आबद्यभुवनालोकाः

### सिद्धांतप्रदीपः।

षुनरावितनोऽर्ज्जनइति भगवद्वचनाच्य तद्वतमुक्तंद्रसेवीतुमुक्तंदंपाप्यवैनिश्चयेनजातुकदाचिदिषक्षधचनकेनापिप्रकारेणसंसृतिनाञ्चजेत् मा मुपेत्यतुकातियपुनर्जन्मनविद्यतेद्दति भगवद्वचनात् सुकुंदांघ्रयुपगुद्दनमालिंगनंस्मरन्स्वयंविद्दातुंनेच्छेत् यतः कारणात् पुनश्चरसेनरसम्प्रीते-नामुकुंदेनापिगृह्यते ॥ १९ ॥

नतुकोमुकुंदोयः सेव्योयत्सेवीसंसारंनव्रजति कश्चतेनस्वसेवकस्यसंसारस्यचसंबंधइत्यतआह इदमिति यतः उपादानिनिमसक्पात् जगत्स्थानिरोधसंमवाः समगवादमुकुंदःसेव्यः कारग्रंतुष्येयमितिश्रुतेः जगत्कारग्राव्यविरिक्तमुपास्यंनार्स्तातिभावः तेनसहिचद्चिदात्म-कस्यसर्वस्यवस्तुजातस्यसंबंधमाह इदंकार्यक्षंचिद्वचिदात्मकंविश्वंतदुपलिश्वंतकालादिकंच भगवानेवछंदोनुरोधेनैकारस्थानेइकारः नतु मगवतः परिग्रामित्वंप्रसज्येतइत्यत्आह स्वरूपतोविश्वंतरः भिन्नः तदेवंचेतनाचेतनयोबद्धाग्यासहभेदामेदः संबंधः "अंशोनानाव्यपदेशा दन्यथाचापिदाशकितवादित्वमधीयतपके उभयव्यपदेशादिकुंडलवत्, इत्यादिस्त्रेप्रयः विस्तरस्तुवेदांतकौस्तुभेद्रष्टव्यः तदेतत्पूर्वोक्तं सर्वभवानिष्वदत्याप्रग्रादेशमात्रमेकदेशमात्रेप्रदर्शितम् ॥ २०॥

### माषा टीका।

शास्त्रोक वर्गाश्रमाचार रूप अपने निज धर्मको त्याग कर हरिचरगारिवन्द का भजन करता पुरुष यदि हरि भजन में असिङ्क हो-कर भी पतित हुं। जाय ( अर्थात भजन के पथसे अष्ट हो जाय ती चाहे इस जन्म में चाहे जन्मांतर में कहीं क्यों नहीं क्या उसका कुछ -असङ्गळ हो सक्ता है ? कमीनहींतब हरि भजन छोड कर निज धर्म के निमित्त ब्यग्र पुरुषों को क्या पुरुषोर्थ प्राप्त होता है ॥ १७॥

चतुर पुरुष उस वस्तुके लिये यत्नकरे कि जो ब्रह्मासे आदि लेकर तृगापर्यत्न ऊंचे नीचे शरीरों में भ्रमने वाले जीवोंको नहीं प्राप्त होता है। पेल्द्रियक सुखेकीलये प्रयत्न नहीं करना चाहिये क्योंकि वह गंभीर वेगकालके द्वारा विनाही उद्योगके मिलताहै जैसाकि दुःख अर्थात दुःखके लिये कोई भी यत्ननहीं करता और वह विनाही यत्नके आजाताहै। इसी भांत पेन्द्रियकसुखभी बिना प्रयासके मिलजा ताहै ॥ १८ ॥

अंग है व्यासजी मुकुन्द सेवीजन झारों के समान कभीभी संसार को नहीं प्राप्त होताहै क्योंकि वह मुकुन्द भगवानकेचरगाकमल के जुपगमत के सुखको समग्राकर उस चरगारावद को छोड नहीं सकता है क्योंकि जीवका स्वभाव ही रस प्राही है ॥ १९॥

यह समस्त विश्व भगवान काही खरूप है और भगवान इस विश्व से भिन्न हैं। जिन भगवान हीसे इस जगत का स्थितिनिर्ध्य , और सम्भव होता है। आप यद्यपि यह संव तस्त्र जानते हैं तथापि गुरु मुखसे श्रवण बिना स्फूर्ति नहीं होतीहै इसलिये यह आदेश मान • क्रायोह्य निद्दर्शन मान आपको दिखाया गया है॥ २०॥ त्वमात्मनात्मानमवेद्यमोघहक्परस्यपुंसः परमात्मनःकलाम्। अजंप्रजातंजगतः शिवायतन्महानुभावाभ्युदयोधिगण्यताम्॥ २१॥ इदंहिपुंसस्तपसः श्रुतस्यवास्विष्ठस्यपूर्त्तस्यचबुद्धिदत्तयोः। अविच्युतोर्थः कविभिनिरूपितोयउत्तमश्लोकगुणानुवर्णनम् ॥ २२॥

### श्रीघर खामी

न च तवाचार्यापेक्षापिई इवरावतारत्वादित्याह त्वमिति । हे अमोघहकत्वमात्मनास्वयंश्रात्मानमजमेषसन्तंजगतःशिवायप्रजातमचेहि कुतःपरस्यपुंसःकलामअंशभूतम् । तत् तस्मात्महानुभावस्यहरेःअभ्युद्यःपराक्रमोऽधिअधिकंगगयतांनिरूप्यताम् ॥ २१॥

अनेनेवतप्रवादिसर्वतव सफलं स्यादित्याह इदमिति । श्रुतादयोभावेनिष्ठाः । इदमेवहितपःश्रवगादेरविच्युतःनित्यःअर्थःफलम् कि तत्उत्तमः इलोकस्यगुगाजुवर्णनमितियत् ॥ २२ ॥

### वीपनी।

( खिष्टस्य शोभनयहस्येत्यर्थः । स्कस्य सामान्यतः शोभनोक्तेवेदाङ्गात्मक विशेषोक्तेव्वेति । बुद्धदत्तयोः श्रानदानयोरित्यर्थः ॥ २२-३४॥

### श्री बीरराघवः॥

नाहंजानामीतिमावोचइतिवक्तुंत्वमात्मानं भगवदंशसंजातंजानीहीत्याहत्वमिति अमोघरक्अमोघंसत्यं सर्वयथावत्पश्यतीत्यमोघरक्त्यं परम्यपुंसः परमपुरुषस्यकामेशमजंकमी यत्तोत्पीचरहितमथापिजगतः शिवायहितायसेक्छ्याजातमात्मानमात्मनास्वयमेशावेहिकलाशस्य परम्यपुंसः परमपुरुषस्यकार्याचिशेष्यमविशेष्यभावउपपत्तेः यतोऽमोघरग्भगवदंशसंभूतः तस्मादंवभूतेनत्वयामहानुभावस्यभगवतोऽभ्युत्यः स्यतित्यस्यितित्याचतः प्रवेचेत्कृतकृत्यस्यत्वात्मेन्यसंतेष्यितिः शेष्टिक्ताक्ष्मेगुणादिगिधगगयतांकथ्यतामितियाचतः प्रवेचेत्कृतकृत्यस्यत्वात्मेन्यसंतेष्यितिः शेष्टिक्ताकृतेष्टिक्ति। पर्वचेत्कृतकृत्यस्यत्वात्मेन्यसंतेष्यितिः शेष्टिक्ताविशेष्टिक्ति। । २१॥

नतुमहानुभावाभ्युदयाधिगगानमात्रेगाकथंकतकत्यत्वंकथंतरामसंतोषनिवृत्तिश्चेत्यतभाहद्विपितिष्ठ त्तमक्लोकस्यगुगानामनुवर्गानीम नतुमहानुभावाभ्युदयाधिगगिनमात्रेग्वाक्षित्र विद्यान्ति । प्रयोजनंकविभितिरित्रायप्रधोजि तियत्तिद्विभवक्षत्विभिति । प्रयोजनंकविभितिरित्रायप्रधोजि तियत्तिद्विभवक्षत्विभित्रित्र । प्रयोजनंकविभित्रित्र । प्रयोजनंकविभित्रित्र । प्रयोजनंकविभित्रित्र । प्रयोजनंकविभित्र । प्रयोजनंकविभित्र । प्रयोजनंकविभित्र । प्रयोजनंकविभित्र । प्रयोजनं । प्रयोजनंत्र विद्याने । प्रयोजनंत्र । प्रयोजनंत्र विद्याने । प्रयोजनंत्र । प्रयोज

# श्री विजयध्वजः

तश्चिम्बर्गनेदेरगुक्तं विविच्यविद्यापयिते त्वमिति हैअमीघ**रकत्वमजमात्मानंपरमात्मनःपरस्यपुर्ताः कर्णजगतः**शिवायप्रजातमात्मानाऽ तश्चिम्बर्गनेद्यादानादिकतुःपरमणुरुषस्यारामवतीर्यास्वतप्रयेपरोपदेशमतरेगाजानाम्नि अत्रलार्ग्नस्य अन्यशाऽमोघरअव्याधानुषपर्यस्याः वैद्यासम्बद्धाः विविच्यास्य स्याक्तमहानुभावाभगुद्यः तस्यतवमहासामध्येलक्षण्यारितोद्यक्षिलोकहितायगर्यस्योः प्राधान्येनसंस्थाय ति विद्यास्य विवजगतःशिवंभवती त्याभिप्रायः॥ २१ ॥ कथ्यताम् वेवजगतःशिवंभवती त्याभिप्रायः॥ २१ ॥

भगवन्महिमाश्युवयवर्गानात्कर्यजगतः शिवंस्याद्वितित्राह द्रवमिति प्रदुत्तमहलोकस्यहरेशुमानुवर्गानंदरहिष्टुंशस्तप्रभवरोक्षणानं भगवन्महिमाश्युवयवर्गानात्कर्यजगतः शिवंसपितः हिराप्योक्षपार्गादेतीताः तपःकारक्लेशलक्षयां श्रुतेशास्त्रश्रवसीस्वपं द्वासकस्य बारामाक्षमाधनत्वात्काविभिरोद्यानं एवहिसाद्विमाद्वस्योनेनसर्वस्याधिवसभवात्त्वदेषस्ययाकतेव्यामातिभावः ॥ ३२॥ तयायजनं स्रुत्तमध्ययम् बुद्धकातं दक्षदानं एवहिसाद्वमाद्वस्योनेनसर्वस्याधिवसभवात्त्वदेषस्ययाकतेव्यामातिभावः ॥ ३२॥

### सुबोधिनी

किंच खावतारप्रयोजनंजानीहि किमथेमवतीणोंऽसि। भगवान्ख्यमवतीर्य सर्वमकोद्धाराधे खात्मख्यापनार्थखांशक्षानकलाक्ष्यं भगवंत मवतारितवान् । अतश्चरिवाक्यने तथावतारो निष्पयोजन इति भगवादिच्छया चांतःकरण्यविषादः अतो भगवदाक्षां परिपालय खजन्म साफव्यं चेत्याह । त्वमात्मनात्मानमिति । त्वमात्मानं परस्य पुंसः कलामवेहि । जीवस्य ब्रह्मोपदेशवत् अयमुपदेश इति निराकर्त्तुमाह । कलामिते । साधनं च तव खक्षपमेव द्वातं खक्षपं तथा द्वापियव्यतीत्यर्थः तत्र सामध्यमाह अमोधहागिते नतु सर्वे जीवाः भगवदंशक-लाः कोऽयं मियि विशेषस्तत्राह परस्य पुंसः पुरुषोत्तमस्य अन्येत्वक्षरस्य पुरुषस्य वा नन्वक्षरपुरुषयोरीप भगवस्थात्को विशेषस्तत्राह पर मात्मन इति परमश्चासावात्मा चेति गंगाजलदेवतयोरिवात्मपरमात्मनोः खक्षपमिति भावः तीर्ह कथं ममोत्तपत्तिस्तत्राह अजं प्रजातामिति। अनुत्यन्न एव त्वं आनंदमात्रकरपादशुक्षोद्धादिव्यासक्षयेणावतीर्गाः अतः सर्वस्यापि जगतः शांतसुक्षाय महानुभावस्य भगवतः अञ्चन् दयः चरित्रं अधिकं गण्यताम । उद्देशमावेगोच्यताम् अस्य मगवतश्चरित्रं मकः संबंधिसंविधिव्विपिरममनुभावंसभावयतीर्तिमहानुभावः । तस्याप्रयुद्यःपरमोत्सवःतस्याधिक्यं वानादिष्ठयः अवाक्षमनोगोचरत्वादिवामध्यतया निक्षपण्यामावस्यतः उद्देशमात्रं कर्त्तव्यामिति॥ २१॥

ननु धमसिहतं चित्रमुपदेष्ट्यं केवलं वितिशंकायामाह । इदं हीति । इदं चरित्रश्रवणं तपशादिमिस्तृत्यं फलतः खक्षपतः साधनत श्रामवत्त्वातः । सर्वस्यापि तानि भगवानिति तत्र धमीविशेषो वर्णाश्रमंषु प्रतिष्ठितः तत्र तपः वानप्रस्थेषु सन्यासिषु वा श्रुतं श्रवणं वदांतानां तत्सन्यासिषु । खिष्टं गृहस्ये सुक्तमध्यनं ब्रह्मचारिषु क्षत्रियवैश्ययोः वृद्धिदाने एवं सर्वेद्धंमैर्यभविति तानि च अविद्युतोऽर्थः न विच्युतः अर्थोयेन । शास्त्रसिद्धावपि लोकसिद्धिनं भविष्यतीत्यतं आह् ॥ क्षविभित्रितः तित्रामितियुक्तिसहितम् उत्तम्रवर्णामनु वर्णानमनूयाविच्युतार्थत्वविधीयते । अत एकेनेव सर्वसिद्धंने तेषां पृथक्करणं नाष्यकरणामिति सिद्धांतः निषिद्धं तु न कर्त्तव्यस् ॥ २२॥

# क्रमसंद्रभः।

तदेव विशिष्याह त्वमिति। हे अमोधहरूत्वमात्मना खयमात्मानं खंपरस्यपुंतः कलामंशभूतमवेहि अनुसंघेहि पुनश्चजगतः शिवाया-भुनेव श्री कृष्मा रूपेमा यथ्याजोऽपि प्रजातस्तमवेहि । तदेतद्ध्यंशात्वा महानु भावस्य सर्वोचतारा चतारिवृत्वेश्योऽपि दक्षित प्रभावस्य तस्य श्री कृष्मास्येवं अञ्चदयो लीला अधि अधिकं गग्यताविकप्यताम् ॥ स्वयमीश्वरोऽपि भवात् निजाशानकपां मायां त प्रकट यात्विति-भावः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

# विश्वनाथ चक्रवर्ती।

्रस्तयं चेदेति चतुक्तं तदुपपादयति त्वसिति ॥ हे असोधशान तत् तस्मात् सहानुसावस्य हरेएश्युद्धः परम् मेगलेयसः अधि अधिक गण्यतां निरूप्यताम् ॥ २१ ॥

तदेवं धर्मीत् परित्यस्य भक्तयेव कृतार्थी भवती स्युक्तम् इदानीं कस्यचित् भक्तस्य केषु चिद्धमेषु यदिसपृद्दा स्यात् तदाते धर्मी अपि सक्त्रीव्यक्ष भवन्ती त्याद्व इदिहीति । पुंसस्तप आदीनाम् अविस्युताऽव्यक्तिवारी अर्थी हेतुः इदं उत्तमः दलोक गुणाज वर्णनमेव निरूपितः । अर्थी विषयार्थनयोधंनकारणावस्तुषु । अभिष्येयेच शब्दानां निर्द्धानेच प्रयोजने इतिमेदिनी । यत् कर्माभियेत् तपसा इत्यादि भगवद्याक्ष्या द्वापत्या तप आदि फलानामपि सिद्धिभेवत् कि पुनस्तपाम् ॥ स्मर्तव्याः सतत् विष्णु विस्मर्भव्यो नजातुन्वित् ॥ सर्वविधि निषेधाः स्युरेत्त्यो रव किक्याः इत्यावि वाक्यतः सर्वपामपि धर्माणां कि पुनस्तप आदि मात्राणामिति पद्याः तपस्यति तपः श्रुताविधायकः श्रुति वाक्यानां भगवद्भति विधान एवतात् पर्यात् इरिकीर्त्वतं मेवा विष्णुतोऽयोऽभिष्याः । धर्मीयस्यां मदात्मकः इति भगवद्भतेः सर्वयास्य वाक्यानां श्री भगवद्भवे वात्, पर्यामिति श्री मधुस्यत्तं सरस्वती व्याख्यानाः ॥ २२ ॥

# सिद्धानसप्रदीप

तिस्थियवेद्दभवानित्यंत्रहेतुमाह त्यमितिहे यमे।धरखपरमारणनःकलामजमानेजगतः शिवायक्षव्यागायप्रजातप्रवेहि तसस्मेपयोजन तस्मिथ्यवेद्दभवागियमहातुभाजाभ्युत्यः प्रमातस्तः प्रयोक्तमः भिष्ठग्रायताम् भिष्ठकानिक प्रयोगम् ॥ २१॥ धनगतः कृष्यागायमहातुभाजाभ्युत्यः प्रमातस्तः प्रयोक्तमः भिष्ठग्रायताम् भिष्ठकानिक प्रयोगम् ॥ २१॥ अहंपुरातीतभवेऽभवंमुनेदास्यास्तुकस्याद्यनवेदवादिनाम् । निरूपितोवालकएवयोगिनांशुश्रूषग्रेपावृषिनिर्विवित्तताम् ॥ २३ ॥ तेमय्यपेताखिलचापलेभंकेदांतेऽधृतक्रीडनकेऽनुवर्तिनि । चक्रुः रूपांयदयपितुल्यदर्शनाः शुश्रूषमाग्रेमुनयोऽल्पभाषिग्रि ॥ २४॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

हरिपराक्रमश्रवग्रेनजगतःकल्याग्रंभवतीतिवर्शितंत्रत्युततद्वर्ग्रोयतुरीपतप्रवादिसर्वस्रकलंस्यादित्याह इदमिति अविरुयुतः अस्बलित अर्थः फलम् ॥ २२ ॥

### भाषा टीका ।

दे समोध हक ? आप अपनेको परम पुरुष परमात्माकी कला जानों अजन्मा होकर भी जगत के मंगल के निमित्त तुमने जन्म लियाहै सत्तपन महाजुमान भगनानके अञ्चदय अर्थात लीला गुर्गों के उत्कर्ष को वर्गान कीजिये ॥ २१ ॥

पुरुष के तपका श्रुत अर्थात् तदादि शास्त्रों के श्रवगा कास्तिए अर्थात् यथा विद्वित यक्षादि कर्म का सूक्त अर्थात् अच्छी उक्तिका बु द्विका और दानका अविच्युत अर्थ कवियोंने यही निरूपगा कियाहै कि जो उत्तम इलोक भगवानके गुगाका वर्गान कियाजाय॥ २२॥

### े श्रीधरं खामी महाराष्ट्र के कि महाने के लेखा.

सत्संगतोद्दरिकयाश्रवणादिफंठंखवृत्तान्तेनप्रपश्चयाते अद्दमिति अद्दंपुरापूर्धेकरुपेअतीतभवेपूर्वजन्मनिवेदवादिनांदास्याःसकाशात्अ= भवजातोऽस्मि । निरूपितःनियुक्तःक्व योगिनांगुश्रूषणेप्रावृषिवर्षोपरुक्षितेचातुर्मास्येनिविविद्यांनिवेशमेकत्रवासंकर्रुमिच्छतास् ॥ २३॥

अपेतानिअखिलातिचापलानियस्मात्त्रिसम्द्रान्तेनियतेन्द्रिये । अधृतक्रीडनकेत्यक्तकीडासाध्रनकेथतुवर्तिनिअनुक्ले॥ २४॥

# श्रीबिर्वविवः

ततः विस्मत्याह तेमयोतियद्यपितेयोगिनस्तुल्यदर्शनाः समद्शिनस्तथापिमयिक्षपांचकः कृपाकरयोहेतुंबद्शाः मानंविशिनां एअसेकेबालेऽधाप्यपे ततः विस्मत्याह तेमयोतियद्यपितेयोगिनस्तुल्यदर्शनाः समद्शिनस्तथापिम्यक्षिणां कृष्णिकानिकाद्यकाद्याः मानंविशिनां एअसेकेबालेऽधाप्यपे तत्यकामिक्षकेच्युश्रूषमायातदनुशासनश्रुश्रूपापूर्वकसेवांकुर्वत्यल्पभाषिशिमितभाषिशि॥ २४॥ अतुवितिअनुक्रूलेखुश्रूषमायातदनुशासनश्रुश्रूपापूर्वकसेवांकुर्वत्यल्पभाषिशिमितभाषिशि॥ २४॥

# श्री विजयध्वजः

इत् निहिक्ष्याश्रवगादिशिवकस्मितिवर्त्तु खातीतजन्मकथनपूर्वकंखस्यभागवतसंगतिप्रकारमाह अहमिति पुराशब्दस्यातीतकालसा मान्यवाखित्वनितश्चयातुदयात्तदर्थमतीतेत्युक्तं अनंतरातीतजन्मनीत्यर्थः तुशब्दश्वरदासीजातिवैशिष्टशद्यातनार्थःयोगिनांसंन्यासिनां कनः मान्यवाखित्वनितश्चयादिदीषगहितीवालःप्राञ्चिवर्षाकालेनिविश्वतांस्कत्रस्थितिमिड्छताम् ॥ २३ ॥ प्रत्ययात्रश्चेसायां लेलियादिदीषगहितीवालःप्राञ्चिवर्षाकालेनिविश्वतांस्कत्रस्थितिमिड्छताम् ॥ २३ ॥

विषयपुणिनतेषांप्रसृत्तिमाहं तहति निरस्तसमस्तचंचलसमाचेजिहावीषिदयितमहत्वाते अत्यवनिरस्तवालकोहासाधनेअनुकलवाति विषयपुणिनतेषांप्रसिमाधियामपितोषातित्रोषाः सहलक्ष्यपांकपोचकुरित्यत्वयः किविशिष्टास्तुल्यदरीताः यदापितुल्ययुग्धियाकपैः परिचराति अत्यलप्रातिवर्वत्वर्त्तिकानोवातयापीतिशेषः ॥ २४॥ समेवसपर्वतः स्थाहियत्वस्तुत्रीकानोवातयापीतिशेषः ॥ २४॥

### सुबोधिनी ।

पर्व सामान्यत उपदेशमुक्तवा आदिसाधनमारस्य फलपर्यंतं पदार्थानां क्रमं वक्तुं निवर्धाने खचरित्रमाह समदश्रामः। अहमिति। अतिहीनस्यात्युत्कृष्टपद्मामिर्स्मित्रेव मार्गे न मार्गातरहित शापेनग्रद्भत्वं प्राप्तस्य देविष्त्वं निक्ष्यते। अतितमेवे पूर्वजन्मिन नेकट्यप्रमव्याद्वत्यर्थं पुरेति। पतज्जन्मनोऽजरामरत्वष्यापनाय । मुनहस्युक्तविष्वासाय संवादातः। पिनृनाम न गृहीतं तदानीमझानात् पिनुहीनत्वख्यापनाय वस्तुतस्तुवाह्यसाः। अन्यथा अनुमोदनादिकं न संमवित कस्याध्विद्यपितद्वायाः अन्यथाआदरः संमवेत्ततो वेधः। त्रिनास्मिन्मार्गे यथा यथा निरादरत्वं तथा तथा कार्यसिद्धिरित। वेद्यविद्यादिनः भ्रोत्रियाः। अनेन भगवन्मार्गापरिद्यानमुक्तमः। आग्रमिन्यासिनामयं धर्मः यन्मासाद्यकं कीटवत्पर्यटनं विधाय आषाद्ध्यां यत्र गच्छिति तत्र वाह्यसानिर्मितविविक्तस्थाने तिष्ठतीति। तथा दैवि योगान्नारदास्थितिस्वर्देव प्रार्थनया वह्यसानुङ्गया भाविसनकादयद्यत्वारः परमहंसाः स्थिताः। अपृथग्धमेत्रीलत्वाचतुर्यासंगः। योगितिष्ठा इच्च । अतः सेवापेक्षा। तेषां गुर्थूवसार्थं वाह्यसौरेवाहं निक्षितस्वमेतेषामेव सेवां कुरु नान्यीत्किविदिति नियुक्तः मत्सक्रपमङ्गात्वार्थम् वाह्यकः प्रवाह्यस्थानिर्मात्रेष्ठः यागिनाश्च श्रूवार्थं "स्थास्यामश्चतुरोमासानिति,, मासचतुष्टयमेकत्रेव नितरां बासमिन्कतासः। प्रवमेकेन सत्सब्धा उक्तः सेवार्थं सत्संग इति प्रथमं साधनमः॥ २३॥

ततस्तेषांक्रपामह । ते मयीतिसत्सेवकयोग्यदोषामावा अत्र निरूप्यते । सतां गुण्ययं क्रपालुत्वं ब्रह्यविद्या मननं चेति धर्मोद्वानं सा धनं चोत्त भ्रमोद्वानं सो सेवकस्यदोषामावाक्त्यः गुणाश्चत्वारः। चपलतादोषः। तद्देहेद्वियांतः करणानां प्रयत्नदाख्यां भावातः चपलतादोषः सहजः स आदौ रह प्रयत्नेन निवारणीयः । तद्दाह । अपेतानि अक्षिलानि चापलानि यस्मादिति । अभेकत्वंदीनत्व दीधको गुणाः। तद्दनु दोषाभावद्वयमाहः। दांते अधृतकीडनके इति । इन्द्रियाणां विषयाकांक्षाराष्ट्रित्यकरण्यद्मः। नधृतानि कीडनकानिये नइन्द्रियकालकती नियतौ दोषी विषयसंबंधः कीडासाधनपरिष्रहश्च । तद्भावे सर्वदेशिनश्चिः। तत्तेतरंतं गुणामाह । अनुवर्तिनीति ॥ प्रवे स्वतः पंचसु संपन्नेषु तेषां परदुःस्वप्रहाणोच्छावाता । परदुःसं दृष्ट्य दुःखितस्य कार्वणाकस्य तिषदानोच्छेवने तृष्णा भवतीति । जन्वेत दृष्ट्यस्विद्योऽनुचितं तत्राह । यद्यपि नुत्यदर्शना इति । निदार्थ हि समं ब्रह्म नुत्यदाव्यव्यव्यक्त । स्वप्रहाणा भवतीति । जन्वेत दृष्ट्यस्वव्यक्ति तत्राह । यद्यपि नुत्यदर्शना इति । निदार्थ हि समं ब्रह्म नुत्यदाव्यव्यक्ति सा । स्वप्रयोः सुखदुःस्व समस्वद्यानं तृत्यं तस्य दर्शनं येषामिति परदुःसं दण्ट्या तत्रहाणोच्छेव जाता । न झानमन्यया जातमित्यर्थः । दुर्बलत्वादिच्छास्त्रस्व समस्वक्रानं तृत्यं तस्य दर्शनं येषामिति परदुःसं दण्टा तत्रहाणोच्छेव जाता । न झानमन्यया जातमित्र्यर्थः । दुर्बलत्वादिच्छास्त्रस्व स्वत्वद्वर्यत्वं स्वत्वत्या । नन्वनपक्षायाः कथं वद्यताहेतुत्वं तत्राह । मुनय इति । मननवाधकनिवर्तिका सेवार्यक्ष्यत्व सेवायां सांसार्गको दीर्थे। वदुभाषर्थे अभाष्यां वा । तदुभयनिवर्तिको गुणाः अवपमाष्याम् । अनेन निर्देष्टा सेवा द्वितीयं साधनमिति ॥ २४ ॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती ।

श्वाकिळकी भगवद्भक्त रूपेव शुद्धाया उक्तळक्षणाया भक्ते हेतुनीन्यक्तपश्चादिकमिति बक्तुं खपूर्व्वष्ट्वतान्तमाह अहमिति। पुरा श्वाकिळकी भगवद्भक्तरमित्र वेदवादिनां कस्याश्चन दास्याः सकाशादभवं जातोऽस्मि । प्राष्ट्रावि वर्षाकाळे निर्विविश्वतां निर्वेद्धाः पूर्व्वक्रवेप अतीलमवे पूर्व्वजन्मित वेदवादिनां कस्याश्चन दास्याः सकाशादभवं जातोऽस्मि । प्राष्ट्रावि वर्षाकाळे निर्विवश्वतां निर्वेद्धाः प्रकल्ज बासं कर्त्तुं मिञ्छतां योगिनां तत्रान्वहं कृष्णकयाः प्रगायतामित्यमे वश्यमाग्रात्वाद्धक्तियोगवतां शुश्चको निर्वादक्तियाः निर्वेद्धाः कोशस्मि ॥ २३ ॥

दान्ते नियतेन्द्रिये । अञ्जत क्रीडनके बाल्योन्तित क्रीडनमध्य कुर्वति । यद्यपि ते तुल्य द्रशेनाः सुर्शालेषु च सत् कुर्वतस् विरस्कुर्वतस् च सदानारेषु असदानारेषु ज जगजनेषु यद्यपि समस्ययः क्रोवा तेषा मनुमाद्यः क्रोवा नियाद्यः सद्यपि क्रपांचकः निरम्हित् करत् प्रत्यादिक मनपस्येव प्रथमं क्रपां सर्वत्र सान्यविष्ठ महत्त्व सर्वे प्रत्यादे प्रथमं क्रपां क्रां निर्माद्यादे महत्त्व सान्यविष्ठ महत्त्व सान्यविष्ठ महत्त्व स्वाद्यादे प्रथमं क्रपां क्रां निर्माद्य स्वाद्यादे प्रथमं क्रां निर्माद्य स्वाद्यादे स्वाद्याद्य । त्रे यद्यपितुत्ववर्षानास्तद्यपिअन्वापत्यादिगुणविद्याद्याये । कृषाहि द्विधा गुणामणी निर्मापां तत्राद्यास्त्रे प्रथम कृषायाध्य निरम्पादित्यं नस्यादिति तथा व्यास्याये । कृषाहि द्विधा गुणामणी निर्मापां तत्राद्यास्त्रे सांसारिकारणा व्याद्याद्ये मन्यादिति तथा व्याद्याये होषे प्रथम कृषायाध्य निर्मापां ताद्यास्त्रे प्रथम कृषायाध्य मन्याद्य स्वाद्य स्वाद्य स्वाद्य गुणापाये तक्षाय्य होषे प्रथाद्य । क्रितीयात्र तिस्तीयो संसाराणां ताद्यासात्रं परम् मणि सर्वे गुणापायिका यया संभवं मवेत गुणापाये तक्षाय्य होषे प्रथा मान्यव्य । विद्याप्य क्रवेति । साध्यन्तः करणस्य गुणा क्रवायाः करोरतायां भगद्र-काले क्रांति । साध्यन्तः स्वातं त्रये द्वी भावं माणादितं तजेवान्तः करणां साविभवत् यदुक्तं शिक्षास्त्राम् प्रय कृदस्य भाव उच्यते कृति । वर्वे स्वतं स्वतं तये द्वी भावं माणादितं तजेवान्तः करणां साविभवत् यदुक्तं शिक्षासमाम्यय कृदस्य भाव उच्यते कृति । वर्वे स्वतं कृषा महित्सवा अद्या गुर पदाश्यय कृति मृण्यासाच तुष्ट्यं स्वित्य ॥ २४ ॥

# सिद्धितप्रदीषः ।

 उञ्छिएलेपाननुमोदितोहिजैः सक्त्ममभुंजेतदपास्तिकिल्बपः। एवंप्रवृत्तस्यावेशुद्धचेतसस्तदमंएवाभिराचिः प्रजायते ॥ २५॥ तत्रान्वहंकप्राकथाः प्रगायतामनुष्यहेशाशृगावंमनोहराः॥ ताः श्रद्धयामेऽनुपदंविशृण्वतः प्रियश्रवस्यंग्रममा भवद्रातेः॥ २६॥

#### भाषा टीका ।

हें मुने पहले करण में अतीत जन्म में बेदवादी बाह्यगों की किसी दासी से उत्पन्नहुआ। था, और उस ने मुझ बालक ही को चातु-मास्य में एकत्र निवास करने वाले योगियों की शुश्रुणों में निरूपण करदिया ॥ २३॥

यद्यपि वे मुनि तुल्य दर्शी थे तथापि मुझपर छपा की क्योंकि में शुश्रूषा करता था. चंचलता से अपेत था बालक तो था पर दान्त या खिलीनाओं से नहीं खेउता था उन मुनियों का अनुवर्ती था और अल्प मारगा करता था॥ २४॥

# श्रीघरस्वामी ।

उच्छिष्टस्य लेपान् भिक्षापात्रलमान् तैर्द्धिजैरनुद्धातः सन् भुञ्जे स्म । तेन भोजनेन अपास्तकिदिवषो जातोऽस्मि । तेषां धर्मो प्रदेशेश्वर भजने एवं आत्मनो मनसः रुचिः प्रजायते स्मेत्यनुषङ्गः ॥ २५ ॥

अञ्गावं श्रुतवानस्मि । मे श्रद्धया ममैव स्वतःसिद्धया न त्वन्येन वलाजनितया अतो ममेत्यस्यापीनरुक्ताम् । अनुपदं प्रतिपद्भा । प्रियं श्रवो यशो यस्य तस्मिन् ॥ २६ ॥

### श्रीबीरराधवः।

कुपाफलंबद्शातमानंबिशिन्छिङ्चिछ्छेति।द्विजैयाँगिभि रनुमोदितःतेदैनालुच्छिष्टलेपान्भुका।बशिष्टानशाद्धानसङ्ग्रेजेस्मभुकवानस्मिते नभोजनेनापास्तानिकिल्बिषाणिभागवतध्रमेरुचिप्रातिबंधका।नियस्यतयाम्तथासंपर्वभागवतशुरूषणेप्रशृत्तस्यातप्वविशुद्धभागवतध्रमरुचि प्रतिश्वरहितेचेते।यस्यतस्य प्रमतद्यमेप्रयत्मन्यंतःकरगोरुचिःप्रजायतेपाजायत् ॥ २५ ॥

त्रज्ञात्मञ्ज्ञोजातायांसत्यामन्बहमनुदिनंक्षणास्यभगवतःकयाःस्यधगायतांकथयतोयोागिनामनुष्रहेगामनोहरामनोक्षाःकयाःअशुगावश्चतवान् नास्मिताः कृष्णाकथाश्चनुस्यनंत्रिकालश्चक्रयाःविश्वगवतोमम् अगहेन्यास्तिष्यश्चीतृयांमीत्यावहंश्चवःकीर्तियस्यतासमन्भगविद्यतिरनुखगो भावसभूवं ॥ २६ ॥

### श्रीविजयध्वजः ।

कित्रच्छुप्पाकमीतितशह उच्छिष्टेति ब्रह्मकुलेद्धबानामेवचतुर्याश्रमहित प्रकाशनायद्विजैरितिकथिते । उच्छिष्ट्यात्रोद्धरगरामया दक्षतमाजनेवातत्स्यलेलेपनंतत्रानुवातः नहिण्द्रस्यतदनुक्षानामावेद्धच्छिष्ट्यर्शनस्यतंत्रप्रदेशस्यतं प्रकाशनस्य दक्षतमाजनेवात्त्रस्य । उद्घादिष्यते स्वर्धन्य । दक्षतमाजनेवात्त्रस्य । उद्घाद्धिक्षयते स्वर्धनिक्षयते । उद्घाद्धिक्षयते । उद्घाद्धिक्षयते । उद्घाद्धिक । उद्घादिक । उद्घाद्धिक । उद्घादिक । उद्घा

आभिरुच्या केचातामीतितत्राहं तत्रिति तत्रतत्सकारीमनोहरा कृष्णकथाश्रन्तिपातः सवनावनतरप्रणायतांकीतेयतांपरमहेसानांसहश हृक्ष्यात्रिमहेगाश्रभ्य गुवामित्यन्त्रयः अगश्रीवेदच्यास तदाश्रप्य यातुसर्वत्रिमध्यमापिताःकथाविश्वयवत्रोमे मातः ध्यामलक्ष्यणोपासमाध्यस्य हिष्यरममेगलकोतीहराचभवदित्यन्त्रयः ॥ १६६ ॥

### सुबोधिनी ॥

ततो यज्ञातं तदाह । उचिछ्टदेति । पापनाशस्त समैविश्व ततोऽप्यंतरंगं साधनम् । उच्छिट्टं भोजनशेषः । लेपः पात्र्यां लग्नमध्य चतुर्ग्यां तानेकीकृत्य सकृद्धस्यां पापस्रयसाधनम् । नतु " न शृद्धाय मति दयासोच्छिष्टं न ह्विष्कृतमित्यादि " मनुवाक्येनिषिद्धमुच्छि चतुर्ग्यां तानेकीकृत्य सकृद्धस्यां पापस्रयसाधनम् । नतु " न शृद्धाय मति दयासोच्छिष्टं न ह्विष्कृतमित्यादि " मनुवाक्येनिषिद्धमुच्छिष्टं पाद्धिमानं पाष्टि-प्यामीति तत उच्छिष्टं हच्द्र्या मोदो जातस्तत्र प्रार्थनायामनुमोदनमात्रं कृतं न तु ख्वयमुखम्य दत्तमिति । न चायं सर्वथा सृद्धः ब्रह्मस्यात्वात् यृहस्थानांचायं धमः तत्रापि साधार्याष्ट्रं सेवाच पुष्टिमानं सस्नेहा कृपाफलं चत्त्व यथाष्ट्रीनजीर्ग्यनिवृत्तिस्तथाऽन्नमथस्य वेहस्य तवात् यृहस्थानांचायं धमः तत्रापि साधार्याष्ट्रं तदाह तदपास्तिकृत्वष इति उच्छिष्टमाजनैकिनियमेनापि दोषनिवृत्तिलेकासिसे उच्छिष्टान्नसाधितदेहेन दोषसंतानिवृत्ति रित्यथः तदाह तदपास्तिकृत्वष इति उच्छिष्टमाजनैकिनियमेनापि दोषनिवृत्तिलेकासिसे उच्छिष्टमानिवृत्ति । रोचकृद्वयेगादिविवृत्ति सिर्वेश्वयिविवृत्ति । रोचकृद्वयेगादिविवृत्ति । राष्ट्रस्येति निर्वेशक्यमे । रोचकृद्वयेगादिविवृत्ति चात्रस्याद्य । विद्यमेन चित्तं शुद्धं जातमित्याह । विद्यस्य न्यायसिद्धत्वक्यनाय लद्पयोगः ॥ २५ ॥ विद्यमेन प्रवृत्ति साच वृत्ति प्राप्तेत्यर्थः । अस्य न्यायसिद्धत्वक्यनाय लद्पयोगः ॥ २५ ॥

प्यमांतरं दोषामार्थं गुगां चोषत्वा विद्युंग्यमाह । तत्रित । अन्वहमित्यशृग्यवमित्यनेन संबध्यते । परमहंसानां वा नित्योऽयं धर्म इति स्थापयितुमः । कृष्णपदात्परमृहंसा अप्यते मक्ता इति शापितमः । गामं प्रेमाधिषयातः । प्रकृष्णानं तद्भावेन । अनुप्रहेगोत्याज्ञया श्रवणां वोध्यते न तु प्रासंगिकम् कथापनोरमपदाश्यां अर्थमभिष्रायं ते बोधयंतीति लक्ष्यते । निर्वधेन श्रवणामावायाह । मनोइमा इति श्रवणां वाध्य । प्रवमेका श्रवणामाकः सिद्धा । तस्या नारहःवपर्यतं फलम् । ततः कीर्तनमिति । सापतं तु कीर्तनमः । प्रवमेष्र मनसो रमणां याध्य । प्रवमेका श्रवणामाकः सिद्धा । तस्या नारहःवपर्यतं फलम् । ततः कीर्तनमिति । सापतं तु कीर्तनमः । प्रवमेष्र समरणादिष्यते ताविद्धः कर्षाः नयविधसाधनमको सिद्धायां प्रेग्णा मगवःसायुद्धं भवतीति शास्त्रार्थः । तत्र श्रवणाक्रमाह । ताः समरणादिष्यते ताविद्धः । तदेव हि कीर्तने अधिकारः । श्रव्यादिनां नाष्ट्रद्धारा फलसाधकत्वमः । कितु स्वरूपेणव । फलं च मगवधायार्थज्ञानमः । तदेव हि कीर्तने अधिकारः । अद्यादिना हि पूर्वस्थावसानम् । अतः श्रवणस्य नैरत्यं कर्तव्यमः । तदाह । ताः कथाः अत्यादरेग् । अनुपदामिति पदार्थोक्षरार्थ- स्वर्णस्थादिनां हि श्रवणमः । ततो मगवित राचः परं श्रवणद्वारा । तदाह प्रयश्चसिति । प्रियं श्रवः श्रवणं कीर्तिवां यस्य । अंगेति साहतेन वाक्येन हि श्रवणमः । ततो मगवित राचः परं श्रवण्यादारा । तदाह प्रयश्चसिति । प्रयं श्रवः श्रवणं कीर्तिवां यस्य । अंगेति क्रामलासंत्रणम्प्रतारणाय । प्रमाणवलं परित्यज्य इद्वियाणां स्वाभाविकविषयग्रहणं कितः ॥ २६ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

तत्रेति । कृप्पाक्याः श्रीनन्दनन्दनस्य जन्मादिहीलाः। यच्छूग्वतोऽपेखरतिवितृष्पोत्यादेः प्रियं सञ्जेषां श्रीतिविषयं श्रवः कीक्षियंस्य ॥ २६ ॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

त्वाक्षा ज्ञान्किएस्य लेपान तेषां भाजनमात्र लग्नान् आदमान् सकृदेकवारं भुक्ष सम । कीएराः व्रिजैस्तेस्तद्धे मया प्राधितरनुमोदितः तत्क्षा ज्ञान्किएस्य लेपान् किल्विषाणि भक्तिप्रतिष्ठेषका अनथो यस्य सः तत्क्षा नित्यमेव भुकतदुष्किएस्य मम अवगा-द्वानुष्ठाः तेनेव अपास्तानि विनएनि किल्विषाणि भक्तिप्रतिष्ठेष्टं या भुक्ति तस्य तेषामेव ध्रमी क्रीतिनस्मरणात्मिका मक्तिरनायासेनेवाभवदित्याह । एवं प्रवृत्तस्यान्यस्यापि जनस्य भक्तानामु किएं यो भुक्ति तस्य तेषामेव ध्रमी क्रीतिनस्मरणात्मिका मक्तिरनायासेनेवाभवदित्याह । एवं प्रवृत्तस्यान्यस्यापि अन्तर्याप्यान्यस्ति । एवं भजनेषु स्पृहा भक्तिरत्योपगमस्तिः निष्ठा कविरिति पञ्च अवगाक्षीक्षेत्र स्विता श्रयाः ॥ २५ ॥ भक्तिका अनेत दलाकार्थेत स्विता श्रयाः ॥ २५ ॥

ताः श्राद्वयित श्रद्धापदेनासकिर्देशभी भूमिका। अनुपदं प्रतिक्षगां प्रतिसुन्तिङ्गतं पर्व वाः। मे मम प्रियं श्रवो यशो यस्य तस्मितः विद्यश्रवित रूप्यो मम रतिरभूदित्यतो ममेत्यस्यापीनठक्त्वम । कृष्यो रतिरित्येकादशी ॥ २६॥

सिद्धांतप्रदीपः।

तनेन अञ्चिष्ठण्ठेपादिना तस्रमेमांकेयोगादी ॥ २५ ॥ अञ्चलवम् त्रिकालम् प्रियभवति वासुदेवे ॥ २६ ॥

# भाषा टीका ।

उत हिजीकी आज्ञाने उसके उच्छिए लेपको एक बेर भोजन करता था उसी थे मेरा समस्त किल्यिक तारा द्वोगया था इसी प्रका उत्त हिजीकी आज्ञाने जिस होने से उसी धर्म में अपनी रुखी होगई ॥ २५॥ इ. प्रकृत और विशुक्त विस्त होने से उसी धर्म में अपनी रुखी होगई ॥ २५॥

ह प्रश्नुत आर विष्युक्त प्राप्त कार्यों जाने कारते हुए ऋषियों के अञ्चलक से में भी मनोहर कृष्ण कथा सुनता था अझा पूर्वक प्रति पर सुन वहां प्रतिदिन कृष्ण क्षणा भावान में मेरी भी एसा के गई।। २६॥ ते सुनते प्रियं भवा भगवान में मेरी भी एसा के गई।। २६॥ तिसमस्तदा छव्धरुचेर्महासुने प्रियश्रवस्यस्विछिता सितर्मस । ययाहमेतत्सदसत्स्वमायया पश्ये मिय ब्रह्माग्रा कल्पितंपरे ॥ २७॥ इत्थं शरत्प्रावृषिकावृत् हरेविशृण्वतो सेऽनुस्तवं यशोऽसळं। संकीर्त्यमानं मुनिभिर्महात्मभिर्भक्तिः प्रवृत्तात्मरजस्तमोपहा ॥ २८॥

### श्रीघरखामी।

तस्मिन् मगवति लन्धरचेमम् अस्वलिता अप्रतिष्ठता मतिरभविद्यसुषङ्गः। यथा प्रयो पर प्रपञ्चातीते ब्रह्मरूपे मिय सदसत् स्थूलं स्थमञ्ज पतन्त्ररीरं खमायया खाविद्यया फल्पितं न तु वस्तुतोऽस्तीति तत्क्षग्रामवे पर्य पश्चामि ॥ २७ ॥

प्यं शुद्धे त्वम्पदार्थे झाते देहादिकतिवक्षेपनिष्टचेस्तत्कारणभूतरजस्तमोनिवर्तिका इढा भक्तिजीतेत्याह इत्थमिति ॥ हुरेथेदाः। अनुसर्व त्रिकालम् ॥ २८ ॥

### श्रीवीरराघवः

तदात्तिमिन्त्रियश्रवसिवद्वारुचिर्यनतस्यममहेमहामतेप्रियश्रवसिमतिरस्वालितास्थिरावभूव अस्वलितांमितिविद्यानिष्ट ययामत्य परे वद्वातिपरव्रक्षयार्थमियवर्तमानमेतत्सदसत्कार्यकारणत्मकजगत्स्वमाययास्वसंबंधिन्याप्रकृत्याक्षित्वित्तात्म्वतद्वस्य एइथेदृष्टवा नस्मि तद्यथारेषुनेमिर्रापतानाभावराआर्पतापवमेवताभूतमात्राः प्रशामात्रास्वर्षिताःप्रशामात्राःप्राणेपिताः जीवभूतांमहाबाह्यययेद्धार्थे तज्ञगत् "इत्युक्तप्रकृरियाप्रकृतिश्चेतनधार्याचेतनःपरमात्मवार्यकृतिदेहात्मभेदमात्मपरमात्मसंबंधच्यातवानस्मीत्यर्थः॥ २७॥

इत्यंशरत्प्रावृषिकोशरत्प्रावृषोऋत्अनुसवमम्हमहात्मिर्भिनामिःसंकीस्प्रमानंहरेयेशोविश्यपवतोममात्मिनियेश्जस्तमसीतयोशपहंजी मक्तिःप्रवृत्तावमूव ॥ २८ ॥

### विजयभ्वजः

अखंडस्मरणोपासनाफलमाह् तस्मिन्निति रागा घवधैरनुपहतत्वा दस्खलितानिरंतरंस्थिरतयाऽखंडोपासनमभन्नदिखन्वयः अहंय-याऽखंडोपासनयापतत्सदसत्कार्यकारणात्मकंजगन्मियस्थितेविवभूतेवश्चाणपूर्णेहरौतत्मृष्टंतत्पालितंतत्संहतेचेतिपद्थै कथेभूतंस्वसाथ याखेच्छ्यामदनुप्रहाभिमुख्यायत्रस्थीयताभितिकविपतंसंकविपतमित्यन्वयः ॥ ब्रह्मग्यध्यस्तंजगत्पद्यदृत्यंगीकारोमिथ्याद्वानित्वंशसद्धाते मृद्धिभुक्त्यध्यस्तरज्ञतंपद्रयन्यथार्थेशानीभवति कितुनेदंरजतंशुक्तिरवितपद्यंस्तथानेदंजगतिकतुब्रह्मैवेति वचात्रतथेत्यस्मित्यस्योत् ॥ ३७।

सक्त्युपासन्योरन्योन्यनिमित्तकभावोस्तीत्यभिष्रेत्याह इत्यमिति इत्यमुक्तप्रकारेगामुनिभिः सम्यक्कीत्येसान्यमलेहरेथेशअनुसन्नेशेर त्यकृषिकाञ्जत्विशेषेगाश्रृयवतोममहरौतदितरविरागवती आत्मनोमनसारजीगुग्रातमोगुग्रानिभित्तरागाद्यन्यथाञ्चानादिदीषह्यसहस्वज्ञान ङक्ष्यामिक्तिः प्रवृत्ताभूदित्यन्वयः ॥ २८॥

# सुबोधिनी

ततः फियत आह । हास्मितित । इत्या हि भगवदग्रमवार्थ यतो लोकसिदः । स च यत्तो हानात्मक इति तद्गाह इतेः करस्य कालांतएवं व्यावक्षेयित । इते हेदित्वायलधीत महामुने शति संबोधतं इचिमत्यानियमार्थ शोषितभर्तुकावदिमाध्यानम्भ मितिः इग्रिकातो वा पार्थाध्यक्षातम् ॥ तद्भावत्ववद्धमाध्यानम्भ मितिः इग्रिकातो वा पार्थाध्यक्षातम् ॥ तद्भाविद्यक्षात् । विद्यावद्यक्षात् । विद्यवद्यक्षात् । विद्यावद्यक्षात् । विद्यवद्यक्षात् । विद्यवद्यक्यक्षात् । विद्यवद्यक्षात् । विद्यवद्यक्षात् । विद्यवद्यक्षात् । व

णवं भगवद्वावमाण्यस्य निर्ततरमञ्ज्ञांतमानध्रवर्णन ज्ञानभाक्तिश्यां प्रसिद्धों ज्ञात इत्याह इत्यामिति । श्रवशास्य भेदांतरात्या संतीति तिश्वर्यथीमित्यमिति शर्याविकावृत् मासचलस्य पंचकं चा । देशांदिकशस्यास्पुररणमाहः ॥ हरिवितः विशेषण शृगवत संती श्रवणाखुरितः न यतः कुर्वाश्चव तथा सांति निर्मात्वातः फर्लं न साध्येतः । अतो सुनिभिमेशात्माभः संकीत्यमानमिति । सुनिभिमेशात्माभः संकीत्यमानमिति । सुनिभिमेशात्माभः संकीत्यमानमिति । सुनिभिमेशात्माक्षात्माभः संकीत्यमानमिति । सुनिभिमेशात्मानस्तु मां पार्थितः " श्रवोकश्चयार्थाश्चाउन्। किति स्वप्ते श्रवणावत् भनतं ज्ञानसाधनम् ॥ कीर्वणाजुरत्यथं महात्माभिविते ॥ " सहात्मानस्तु मां पार्थितः " श्रवोकश्चयार्थाश्चाउन्। आत्मरज्ञात्माभिविते ॥ " सहात्मानस्तु मां पार्थितः " श्वोकश्चयार्थाः ॥ २८॥ स्वयं ॥ स्वयं

तस्यैवं मेश्नरकस्यप्राश्रतस्यहतैनसः। श्रद्दघानस्यवाळस्यदांतस्यानुचरस्यच् ॥ ३९ ॥ ज्ञानं गुद्धतमं यतत्ताचाद्रगवतोदितं । अन्ववीचन् गमिष्यंतः कृपया दीनवत्सलाः ॥ ३० ॥

### कमसन्दर्भः।

ततश्च स्वस्मिन् मगवति चापरमार्थारोपस्य मृषात्वदशकः परमपरमार्थतदीयस्वरूपक्रपग्रुगाचिन्तनावेशो जात इत्याह तस्मिषिति हाभ्याम यया मत्याहमेतत् सदसङ्गिष्टसमध्यात्मकं यज्जगत् तद्व्यष्ट्यंशं मयि जीवक्रपे खविषयकमगवनमायया किल्पतं पञ्चे। परे ब्रह्माशा तु समष्ट्यात्मकं तया कल्पितं पश्ये शातवानस्मि । तत्र तत्सम्बंधः पुनर्भम नास्फुरदेवेत्यर्थः ॥ २७॥

ततः कि वृत्तिमत्याशंक्याह इत्यमिति। या पूर्वोक्ता रजस्तमोऽपद्दा मतिरूपा भक्तिः सेव प्रवृत्ता। नदीव प्रकरेगा मुहुर्वर्त्तमाना मुदित्यर्थः ॥ २≤ ॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवसी ।

लञ्चहचे कैन्यासाद विशेषस्य स्वलनश्रन्या मातिरसूत् । स्वमायया हेतुनामयि वर्षमानं यदेतत् स्थूलं स्वस्मश्र शरीरं तत् यया मृत्या परे ब्रह्मार्गा श्रीकृष्मो विषये एवं किंदिर पश्ये पश्यासि । किंदिरतं क्लृतीकृतं स्थापितमिति याचत् । तथाहि स्थूलं शरीरं भगवज्ञलकल्स-बहुनद्रग्रह्मत्रवाद्यादी त तु स्वीये व्यावहारिके कापि कृत्ये। सूक्ष्मं श्रवणानयनमनोबुद्ध्यादिक तदीयगुणक्रपमाधुर्यास्वादालेक कत्वपतं नतु वैक्यिके कापि समोग्ये वस्तुनि इति । पश्ये इति यत् पूर्वि वद्वायासेनापि भगवति कल्पतं नासीत् तदैव मनोनयनाहिक रती जातायां स्वं स्वं वहुकालाभ्यस्तमपि विषयं त्यक्तवा तत्रैव क्लृप्तमिति साक्षाद्नुभवामीत्यर्थः॥ २७॥

ऋतुद्वर्यं व्याप्य । अनुसर्वं प्रतिसमयम् । भक्तिः प्रेमा । आत्मनां जीवमात्रासामि रजस्तमसी अपहुंतीति सा ॥ तद्वा तां भगवद्भिक रूप्यतामन्येषामाप रजस्तमसोनीशोऽभ्दित्यर्थः भूभिक्षंय द्वादशी । ततो दर्शनसाक्षान्माधुर्यानुभवानुस्य सिक्यान्तप्रद्रीपः

# 8.800 NO. A CO. W. A CO. CO.

अस्विलिताऽविचलामममितवभूव ययामत्यामपिच्यातरिविस्फुरमाग्रायरेध्येयेत्रहाग्राजगतकारग्रोभगवति । एतत्सदसत् स्थूलस्मात्य क्रम खमाहायां खकीययात्रकत्यामगाबञ्ज्यस्याकि विपतिनिष्पादितं पश्येद्रष्टवानिसम् ॥ १८॥। १८॥

# भाषादीका ।

है महा सत उत्त भगवान से जब में लब्ध रुची हुआ तब प्रिय श्रवा भगवान में प्रेरी अस्खादिता मती होगई कि जिसके कारण स इस समस्त सद सत जगत की अपने में और परब्रह्म स्वरूप में माया करियत देखना है ॥ २७ ॥

हुआ प्रकार बन्नी और शाद ऋता में निकाल सहात्मा सुनि गर्गों के कीर्तित हुए भगवान के निम्मेल यश सुनते सुनते आत्मा के ह जी गुगा तसी गुगा की नाश करने वाली भकी सुसकी प्राप्त होगई ॥ २८॥,

# शिधरखामी ।

क्षरेविभिति। तस्य बातग्रहत्तम्पदार्थस्य इस्मिकिमतो मे । प्राध्वतस्य विनीतस्य ॥ २९ ॥

गुरातमास्मित्। साधनस्तर्थस्यत्वधारां गुरुषः। ,तत्साध्ये विविकात्मधानं गुरातपम्। मगवतोद्दतं मामवतासम्। अन्यः विकित उत्पादिष्टवाता (1180 ) अप्रतीता स्वाति प्रदर्शीका स्थान्पदार्थकानामियेकेन वर्षणित येनेवेति ॥ अश्रिदं ज्ञातवानस्य ॥ ५१ ॥ तदेव स्नाति प्रदर्शीक स्थान्पदार्थकानामियेकेन वर्षणित येनेवेति ॥ अश्रिदं ज्ञातवानस्य ॥ ५१ ॥

त्राप्यात्र थरमाण्डस्यंच स्त्राचितं पत्राप्ति । सापत्रयस्य आधात्मिकादेषिकित्वतं शेष्ठां विज्ञानके सर्वर्धेशकासित वास्त्रायतं थरमाण्डस्यंच स्त्राचितं समाधितं यत कर्य सन सर्वत्ये स्तरात्व केंग्ये स्तराह्म तत्त्वार्थः । अगवति भावितं समापितं यत् कमे तत् कथयूर्वे मरावति कृष्यरे सर्वनियन्तरि एवमाप च अद्याण अप्रच्युता यावत् । क्षित्रातः ॥ ATURAL II SE III

येनैवाहं भगवती वासुदेवस्य वेघसः।
मायानुभावमिवदं येन गच्छंति तत्पदं ॥ ३१ ॥
एतत्संसूचितं ब्रह्मम् स्तापत्रय चिकित्सितं ॥
यदीदवरेभगवतिकर्भब्रह्मशिभावितं ॥ ३२ ॥

### श्रीबीरराघवः

तस्यप्रमृत्तमकेर्तुरकस्यवालस्यापिप्रश्रितस्याविशीतस्यहतमेनः पापंयस्यश्रद्धायुकस्यदांतस्यजितेद्वियस्याजुकार्तनोमेम-ह्यम् ॥ २९ ॥

यद्भगवातासाक्षादुदितंज्ञानंतद्गमिष्यंतःगंतुमुद्यतादीनवत्सलाःये गिनःक्रपयाऽनवोच्चञ्जपदिदिशुरित्यर्थः ॥ ३०॥

क्षानंविशिनष्टि येनक्षानेनाहंभगवतोवेथसः विश्वविधातुर्वासुदेवस्यमायानुभावंत्रिगुगात्मिकप्रकृतिमहिमानमविदंक्षातवानिस्मञ्जनेनवि विरोधिस्वरूपक्षानमुक्तंयेनचक्षानेनतस्यबासुदेवस्यपरंस्थानंगच्छंतिअनेनप्राप्यप्रापकविषयक्षानमुक्तंत्रर्थपंचकक्षानमुपर्दिद्शुगिर्तिफालितं॥३१

### श्रीविजयध्वजः।

नतुसद्गुरूपदेशमंतरेगाकेवलंयशःश्रवगोनैवकथंशानोदयशतिचेत्तत्राह तस्यति ॥ २९ ॥ गामिष्यतश्रतमास्यानंतरम् ॥ ३५ ॥॥ ३१ ॥

प्तन्मयोक्तंश्वानंतापत्रयात्मकसंसारिनवर्तकौषधंसमीचीनंसूचितंळोकस्येतिशेषःतस्मादेताहशेश्वानमेवापाद्यमितिसावःतिहकभेकरकी व्यर्थेमितितवाह यदीति यायज्कैः कियमाणमिनष्टोमादितदिषयदिव्रह्माण्यणिक्छित्रगुणोईष्ट्रवरेषशादिषपरेहरोभावितम्भितंतिहित्रास मुल्बद्धाते तेनतापत्रयव्यक्तितितं पददुक्तंभवति ब्रह्मापेणबुद्धचाकियमाणनकमेणाशुद्धातः करणस्यविषयविरक्तिद्वाराभगवितिहीव्यण भक्त्याजनितापरोक्षशानेनतापत्रयात्मकः संसारोनिवर्ततद्दति यत्त्रह्माणभावितयत्कमेतदेतत्तापत्रयिविकत्सितंसंसूचितमित्यकानवयाः वा ॥ ३२ ॥

# क्रमसंदर्भः ।

तस्येति युग्मकम् । एतद्दनन्तरं परमरहस्यमन्यदृष्युपदिविश्रित्याह ज्ञानमिति । ज्ञानविज्ञानादिसम्ब्रितं चतुश्लोकीकर्णमन्यर्थः। तस्य रहस्याच्यमक्त्येकतात्पर्यत्वादिति भावः । साक्षाज्ञगवतीदितमिति पुरा मया प्रोक्तमजायत्यादिकं स्मार्याते ॥ युद्धातमं ब्रह्मज्ञान् नादिपि रहस्यतम् ॥ २९ ॥ ३० ॥

नावाप १८० अविदं हेयत्वेन शांतवानस्मि । स्वमते मायाशब्दस्य चिच्छिक्तियाचित्वे तृपादेयत्वेत । तत्पदं तस्य चरगारिकदं गच्छान्त वरमभीत्वा साक्षात् कुर्द्वित । इमें स्वानगममित्यादिवश्यमागात् श्रीनायद्ववपाप्ती तत्फलपराकाष्ट्रावर्शनाम् ॥ ३१ ॥

तदेवं खर्चारतद्वारा सन्वेनिरपेक्षमहद्द्वारकश्रीभगवदयदाःश्रवणमेव परमश्रेयस्त्वेनोक्तम् । तत्र यत् पृद्वेम् इदं हि पुंसस्तपसः श्रुतक्येत्यादिना तपश्रादिजन्यमुक्तमः स्रोकगुणानुवर्णनमुक्तं तत्तु तस्य तदासकामां तद्वाराविभोषित्वमेवेति वापितम् । अथ तस्य श्रुतक्येत्यादिना तपश्राद्वायानिविश्वपरमतत्त्वाविभीवे समर्पितस्य करमेणो माद्वारस्यमाह प्रतदिति शिभिः । संस्वितं द्वारमवैः । तदत्युपपादियां तस्मिन् वा सगयति वा वक्षिण वेत्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ची ।

तस्थेवम्भूतस्य मे मम उत्पन्नप्रेममक्तेः। साक्षाज्ञगवता देवकीनंदनेन उदितम्। श्वायतेऽनेनेति श्वानं श्वानशासम्। तच्च केवल-श्वानप्रधानात् मिकिमिथशानप्रधानं शास्त्रं गुद्धम्। ततोऽपि श्वानिभ्रमिकप्रधानं गुद्धतस्य। ततोऽपि केवलमिकप्रधानं गुद्धतमम्। यदुद्धवं ब्रह्माराश्च प्रति श्रीमागवतम् अर्ज्कुनं प्रति श्रीगीतामिधश्च। गमिष्यंतः श्वी वयं यास्याम इति विभाव्य अन्ववीचन् उपदिष्ट-वन्तः॥ २९॥ ३०॥

येनेव श्रीमागवतेन मगवतो मायायाश्चिक्क रेश्वर्थमाधुर्थक्षानस्य कृपाराके खिगुगामायाराकेश्च अनुमावं कार्य्य प्रभावं वा अविदं श्चातवानस्मि। त्रिगुगातिमकाय क्षानश्च विष्णुराकिस्तथेव च। मायाराब्येन भगयंते राष्ट्रतत्त्वार्थवेदिभिरिति राष्ट्रमहोद्धिः। माया च वयुनं श्वानमिति निधगदुः। मायास्थाक्काम्बरीवुद्द्रध्योरिति त्रिकागडशेषः माया दम्भे कृपायाञ्चेति विश्वः। अत्यव स्वरूप-भृतया नित्यरात्त्वा मायाव्यया युतः। अतो मायामयं विष्णुं प्रवद्ति सनातनामित माष्ट्रभाष्य प्रमाणिता श्रुतिश्च। एवमप्रिभे- ६वि प्रन्थेषु मायाराब्येन यथासम्भवं चिक्किकित्रगुगाराक्त्वादयो वाचनीयाः॥ ३१॥

पवश्च शुद्धां निर्शुगां मिक मिय प्रेमपर्श्यतां प्रवर्त्यअनुमात्य च भक्तेः साक्षाद्वाचकं भगवतुकं श्री मागवतशास्त्रश्चोपिद्धय क्षान-कारगां क्षानश्च मोक्षप्रयोजनकमित्रवासवेऽि यश्चं सम्प्रति वास्त्रस्य वयोवस्यावायत्यां कदाचित् जिक्षासा जनिष्यते वेति विभाज्य निष्पेक्षार्थं मञ्ज्ञां क्षापितमित्यास पतिदिति । संसूचितं न तु साक्षातुकं मत्प्रयाजनामावादितिमावः । किंतत् तापत्रयस्याध्यात्मिकादेः विकित्सितं भग्नजं निवर्णकम् । तदेव कियत् सस्त्रभावानुसारेगा ईश्वरे परमात्मिन वा भगवित षडेश्वर्यवित वा वस्ति। तदीय-निविशेषस्वरूपे वा कम्मे भावितं समर्पितम् ॥ ३२ ॥

# सिद्धान्तप्रदीपः

प्रश्चितस्यविनीतस्य ॥ २९ ॥ यत्साक्षाद्धगवतोषितंगुश्चंपुरायागुश्चं स्क्ष्मंश्रीभागवतंतेभ्योयोगिभ्यः उपिदृष्टम् श्वानंतद्रथेशानम् तत् तदेवसंप्रदायप्राप्तम् अन्ववी-चम् उपिदृष्टिगुः ॥ ३० ॥

येतेवार्यतः खरूपतश्चमुनिभ्यः प्राप्तेनस्भमागवतेनवेधसोनिक्षिलविधातुर्वासुदेवस्यप्रायानुभावम् माययाप्रकृत्यास्वशाक्तिभूतयाविः श्वसृष्टिनाशादिकौशलात्मकमनुभावम् अविदम्बातवानस्मि पर्वदेवर्षेभगवद्वतारागांश्रीव्यासादीनामप्युपदेष्टु रस्योपदेष्ट्वसनकादीन् देवार्वगुरूत् वेदमसिद्धात् विद्यायपाकृतायोगिनस्तदुपदेष्टारोनकल्पनीयाः उपास्थतपरित्यागेऽनुपस्थितस्वीकारेवमानाभावात्॥ ३२॥

किन एतद्विपसंस्वितम् तैर्योगिमिरितिशेषः कितत्यद्भगवतिभावितसमितिकर्मतत्तापत्रयचिकित्सितम् आध्यात्मकादिदुःसप्र तिकारकामिति ॥ ३२॥

# भाषा टीका ।

हिस अनुसारी विनीत निष्पाप अद्यावान दान्त बालक और अनुचर को ॥ २६ ॥

जाते के समय दीन वत्सल मानियों ने रूपाकर वह ज्ञान मुझको उपदेश किया जो परम गुरु साक्षात श्री भगवान ने कहा है ॥३०॥ जिस ज्ञान से में भगवान वास्त्रवेब ज्ञान स्वरूप की माया का अनुभाव इस सब जगत की जानगया और जिस ज्ञान से उनके पर की फ्रान्ति होती है ॥ ३१॥

है ब्रह्मत यही ताप्रवयका चिकित्सित भापको स्थित किया कि जो ईश्वर भगवान ब्रह्म में कमे भावन किया जाय (अर्थात सम पैगा किया जाय )॥ ३२॥

# श्रीशंखामी ।

क्षमारहेतोः सम्मेदाः सधं तापत्रयान्यनेकत्त्वं सामग्रीभिद्देन घटन होते सरण्यान्तमाद द्वाप्रयास् यश्चाययः होनः चेन जुनादि-भग्न समारहेतोः क्षेत्रद्वमासयकारियामृतं क्रुव्यंताम् आमयं मं पुनाति नः निवर्त्तप्रवीत्पर्यः किन्तुं त्रिकित्सितं क्रुव्यान्तरेशोषितं सन् ना जायते तर्वे केवद्यमासयकारियामृतं क्रुव्यंताम् आमयं मं पुनाति नः निवर्त्तप्रवीत्पर्यः किन्तुं त्रिकित्सितं क्रुव्यान्तरेशोषितं सन् ना जायते तर्वे केवद्यमासयकारियामृतं क्रुव्यंताम् आमयं मं पुनाति नः निवर्त्तप्रवीत्पर्यः किन्तुं त्रिकित्सितं क्रुव्यान्तरेशोषितं सन् ना जायते तर्वे केवद्यमासयकारियाम् त्रिक्तिः आमयं मं पुनाति ने निवर्त्तप्रवीत्पर्यः किन्तुं त्रिकित्सितं क्रुव्यान्तरेशोषितं सन् आमयो यश्चभूतानां जायते यनसुत्रतः ।
तदेव द्यामयं द्रव्यं न पुनाति चिकित्सितम् ॥ ३३ ॥
एवं नृगां कियायोगाः सर्वे संसृति हेतवः ।
त एवात्मविनाशाय करंपते किएताः परे ॥ ३४ ॥
यद्गत्र क्रियते कर्म भगवत्पारतोषण्यम् ।
ज्ञानं यत्तदधीनं हि भक्तियोगसमन्वितम् ॥ ३५ ॥
कुर्वाणा यत्र कर्माणि भगवाङ्किसयासकत् ।
गृगांति गुगानामानि कृष्णास्यागुरुमरांतिच ॥ ३६ ॥

### अधिरखामी।

आत्मिवनाशाय कर्म निवृत्तये करूपन्ते समर्था भवन्ति। परे ईश्वरे किल्पता अपिताः संतः। अत्र च प्रथमं महत्सेचा ततस्ततः कृपा ततस्तद्धम्भेश्रद्धा ततो भगवत्कथाश्रवणं ततो भगवति रितः तया च देहद्वय विवेकान्मज्ञानं ततो हढा भक्तिः ततो भगवत्तस्य-कृपा ततस्तत्कृपया सर्व्वज्ञत्वादिभगवद्गुणा।विभावः इति क्रमो दिशतः ॥ ३४॥

नतु च ज्ञानेनाज्ञानप्राप्तकर्मानाशः तच ज्ञानं भक्तियोगाद्भवति कथं कर्म्याण कर्मनाशः स्यात् तत्राह् यदिति॥ ३६॥

भगवद्र्पेशोन क्रियमां कर्म भक्तियोगं जनयतीति सदा चारेशा दर्शयति क्रुविशा इति । यत्र यदा भगवतः शिक्षया कर्मीशि कुर्विन ग्राभवन्ति तदा श्री कृष्णास्य गुगानामानि गृगोन्ति अनुस्मरेति च कृष्णाभित्यर्थः। इयोहि भगविद्यक्षा "यत् कर्णावि यद्द्रवासि युवजुद्देशि व्दासियत् । यत् तपस्यसिकौतेय तत् कुरुष्व मद्र्पेशामिति ॥ ३६ ॥

# दीपनी ।

यदितीति । अत्र कम्भेभूमी मगवद्रेशीन भगवत्परितोषगां भगवर्त्रीतिकरं यत्कमी क्रियते यद्गक्तियोगसमिन्वतं क्षाने तत् तद्र्याञ्च तस्य कर्मभगः अधीनं हीत्यर्थः ॥ ३५ ॥ ३७ ॥

#### श्रीवीरराघवः

त्रेविश्विक्तभंगास्तापत्रयहेतुत्वंवक्तंतावद्दृष्टांतमाह । आमयद्दतियद्याष्ट्रवृद्धाहृतश्चातिस्सृतिवचोभिःपापस्येत्रतापत्रयम् लत्त्रस्भिचतंत्वयाष्ट्रित्रविक्तं श्वातिस्सृतिवचोभिःपापस्येत्रतापत्रयम् लत्त्रस्भिचतंत्वयाष्ट्रित्वविक्तं स्वातिक्रक्षम् विद्यापत्रयाम्योत्ते स्वातिक्रक्षम् विद्यापत्र विद्यापत्य विद्यापत्य विद्यापत्र विद्यापत्य विद्यापत्य विद्य

हर्णांतेनाभिमतमधैदाधीतिकेनुगमयति एवमिति एवमपथ्याश्रादेशमयकारमावश्रूमां सर्वे।क्रियायोगाअनभिसंहितफलक्ष्मिळालिएका सर्वेश्वेचिर्गकाः क्रियायोगाः संस्कृतेहैतसः अतएवपरस्मिन्नात्मन्यकल्पिताः असमापेताआत्मीविनाशायकल्पेतेआत्मकः अतल्ख्याबल्लक्षावि नाशायकल्पेतेसंपन्नाभवति ॥ ३४ ॥

तिहिंपरस्मिन्कार्टिपताः कियायोगाः किवासाक्षाः श्रेयसहेतवः नभक्तियोगानिष्पादनद्वारेत्याह यदिति भगवान्परितुष्यतेभक्तियोगोत्प तिहिंपरस्मिन्कारिपताः कियायोगाः किवासाक्षाः श्रेयसहेतवः नभक्तियोगान्द्रगवत्परितोषग्रायत्कर्मात्रदेकित्रयते अञ्चक्षियत् विविधित्याद्यम् निप्रतिवधकित्यार्थार्थातं कियतेतद्धीनंतत्कर्माधीनंति श्रिष्पाद्यमेवभक्तियोगसमान्वतं श्रानस्म ध्यानसाध्येदश्चीत्यक्षितं "श्रकत्यात्वनं अञ्चर्यतत्यार्थार्थातं विधोर्जन श्रातुद्रप्रच्वतद्वनप्रवेष्ट्रचपरंतपत्युक्तत्वात् ॥ ३५ ॥ विद्याशिक्यअहमेवविधोर्जन श्रातुद्रपरंचतद्वनप्रवेष्ट्रचपरंतपत्युक्तत्वात् ॥ ३५ ॥

नके बल्यानत्वित्विष्णात्मकंकभैवभक्तियोगानुप्राहकमापित्भगवद्गुण्भवणादिकमपित्याहिङ्ग्रेणाहिति भगविद्धिश्रया पंतकणीयि नके बल्यान्या स्वाधिकमी शिक्तन्य स्थेत्या स्वक्त भगविद्धिश्रया अस्त हत्क्षणी शिवणीश्रमानुक्षणिति स्वाधिक वैद्या यह द्वासियोज्ञ हो सिमियस वैद्यापानि स्थापित्र स्थेति स्वाधित स्थापित्य स्थेति स्थापित्य स्थिति स्थिति स्थिति स्थिति स्थापित्य स्थिति स्थापित्य स्थिति स्थापित्य स्थापित्

### श्रीविजयध्वजः।

ननुकर्मगांवधसमावात्कथंतापत्रयमेषज्यमितितत्राह आमयहति सुस्रमेवव्रतंथेनसत्तथातस्यसंवुद्धिः हेसुश्रत सत्यसंकल्पादिव्रतोन पेलेतिवा येनद्रव्येगाभृतानामामयंत्रामयः इलेप्माधोजायतेतदेवामयकारगांद्रव्यंचिकित्सितमौषधीकृतंतद्रोगलक्ष्मांपुनातिपरिहरितहि तदिदमनुमविसद्धमितिहिशव्यार्थः पवकारस्तुतस्यप्राधान्यधोतनार्थः नतुद्रव्यांतरिनषेधार्थः कुतः औषधीकरगाग्यद्रव्यातरसंयाग-दर्शनाच्यशब्दउपमार्थःसयथा॥ ३३॥

एवंतथानृणांसंसारिणांकियालक्षणायोगाउपायाःस्तः संसारहेतवःतपचिक्रयायोगाः परेपूर्णेवहाणिकिएताः आत्मविनाशाय आर्पताः ॥ अनेकजन्मसंचितदुष्कर्मस्वरूपनाशायकल्पंतेतस्मात्केवलंकर्मयंथकंब्रह्मापेश्चेनौषधीकृतंभिक्तज्ञानद्वारासंसारास्यरोगनिवर्तकमितिसावः ३४

ज्ञानद्वाराकर्मगोमोचकत्वमाह यदिति अवकर्मभूमीभगवदर्पगोनभगवत्परितोषगायत्कर्रजीवैः क्रियतेयद्भित्तयोगसर्यान्वतं प्रोह्णा-वरोक्षोपपदंज्ञानंतज्ज्ञानं तस्यकर्मगोधीनंहि कर्मगाज्ञानमातनोति ज्ञानेनामृतीभवति अथामृतानिकर्मागीतिश्रुतेः कर्मगाज्ञानंजायते हि-यस्माचस्मात्कर्म ज्ञानद्वाराबंधनिवर्तकमितिभावः अञ्ञाग्निष्टोमादिकमेसुयत्कर्मभगवत्परितोषगामितिवा ॥ ३५ ॥

कथंकारंकर्मगाक्षानमुत्पद्यतहतितत्राह। कुर्वागाइतियत्रयस्ययजमानस्यार्थेयस्मिन्यक्षेद्दवनादीनिकर्मागाकुर्वागापिदकाऋत्विगाद्यः "स्मते यः सततंत्रिन्गुर्विस्मतेव्योनजानुन्विदितिभगविष्ठिश्चयाऽसक्षत्रिरंतरंश्रादिमध्यावसानेषुवाकुरगास्यगुगान्स्मरंतिनामानिगृगाति ३६

### खुवो धिनी

अत्र हि भगत्रदावेशव्यतिरेकेणाविभीवा न भविष्यंतीति तेषां कृपया तज्ञातिमत्याह । तस्यैवमिति द्वाभ्याम् पूर्वजातसाधनानां वासुंदवपर्यतं अनुवृत्तिः कारणीयोति ताननुवदति । अनुरक्तस्यति । अनुवृत्ति । अनुवृत्ति । शुश्रूषालक्ष्मणो विनयः भिन्नप्रक विग्रोति पृथगुक्तः तथापापनिवृत्तिः अत्युपकारित्वादीनत्वस्यपृथगुक्तिः । अनुक्तसर्वसमुखयार्थे चकारः । अनुवादे कमोपक्षाऽभावा द्विपर्यथमा कथनं न दोषः ॥ २९ ॥

आस्त किचिज्ज्ञानं सर्ववेदांतप्रतिपाद्यं पंचरात्राद्यागमैदच गुरूपदेशेन च यदिमव्यज्यते । यथा के बहा के बहात्युपाद्याने यस्मिन् ज्ञाते पुमान् बहाविद्ववातं सर्ववस्ते ज्ञाने । ततीऽपि महोपनिषद्यतिपाद्यं देवगुद्यात्वाद्रद्यातरं ततोऽपि पुरुषोत्त्वाद्यं "मन्यिसम् ज्ञातं पुमान् बहाविद्वातं सर्ववस्ति । त्रिक्षा सामिन् ज्ञानीति,, रूपं यस्मिन्न संहिते भगवद्यविद्यां भवत्येव तद्वद्यतम्म । साक्षाद्भगवताकृष्णोनोक्तम् । यक्तदिति । विद्यास्ति । विद्यासि । विद्यास्ति । विद्यासि । व

ततस्त्र कि जातं तहक्वयमित्याकांक्षायामाह । येनेवाहमिति । भगवतो बासुदेवस्येनिहृदये विद्यमानस्यैव । अहो इत्याश्चर्य विद्य ग्रानः प्रकारामान एव न स्कुरतीति मायानुमावः । लेखनद्शाऽनुसंधया । येन गच्छंति तत्पदमिति कममात्रशा हेनुनान तु तत्र कश्चन ह्यापारामृख्य होते भावः ॥ ३१ ॥

ण्वं भगवत्पद्धाक्षिपयतं पदार्था निरुपितास्तत्रेवं संदेहः "ते मण्यपेताखिलचापहेऽभेके, इत्यादिसाधनानि कुतो भवंतीति कर्मका ल्वा भगवत्पद्धानां प्रतिवंधकत्वातः । तत्र कालस्य प्रतिवंधकत्वासाय उपायमाह । प्रतिदिति । कथारत्यमावे अशानाद्धः प्रतिवंधका इष्टाई लाहां प्रतिवंधका द्वाहां प्रतिवंधका द्वाहां प्रतिवंधका द्वाहां प्रतिवंधका द्वाहां प्रतिवंधका द्वाहां त्वाह स्वतिवंधका । तत्र व्यवपात्व । स्वतिवंधक स्वाधितत्व । प्रतिवंधक तथापि व्यवपात्व । तत्र व्यवपात्व । प्रदेश व्यवपात्व । प्रतिवंधक । व्यवधात्व । व्यवधात्व । त्रविवंधक । त्रविवंधक । व्यवधात्व । व

तिशेषमाह । आमय इति । थेनेव कर्मग्रा नाशः शंकनीयः तदेच भगवति भावते।यमिति । आमयः कफपिलादिः येन माप्रादिना सुत्रीति संबोधनात् ताहरां तु तव नास्ताति तम महस्राग्यमिति प्रशंसा । तदेच चिकित्सितं आमयद्रव्यं न कि लु अन्यद्रपि सुर्वातर सुत्रीति संबोधनात् यतेव कमेग्रा वधस्तदंव कर्म भगवति भावितं पुरुषं पुनातीत्पर्थः ॥ ३३॥ पूर्वभक्तिते पुनाति अतो येतेव कमेग्रा वधस्तदंव कर्म भगवति भावितं पुरुषं पुनातीत्पर्थः ॥ ३३॥

नतु पूर्वहृतममंग्रां बाधकानां विद्यमानत्वाक्षेत्वापत्रयजननाच किमग्रिमेगा माधितेनित तत्राह । एवं नृगामिनि । नतु पूर्वहृतममंग्रां सबदिन कर्मगा नापक्षमनाद्यः एवस्य पूर्वकर्मगामिनि भगवित समपेगात्वपूर्वस्थरपनाद्यां स्वति तापाद्यवरपादफत्वात् यथा भगवित समाधिकारां द्यातितः । सर्वे पुण्यजनका आफिसंस्वृतिहेतवः जतनमन्ग्राहेतचः । तप्त सर्वे योगाः पर कविपताः धर्मापता आ कृगामिति कर्माप्रकारां द्याप्रवर्वकर्मने लगादि । कृतहत्वस्य नापजनकत्वभित्यर्थः ॥पत्रं स्वामादिकार्तां लाकिकानां ससारहेतुभूनकर्मगां स्वावनाद्यायं कविपते स्वापियोगं उक्तः ॥ ३४॥ कृतहत्वां क्रियमागानां च वितियोगं उक्तः ॥ ३४॥ कृतहत्वां क्रियमागानां च वितियोगं उक्तः ॥ ३४॥ कृतहत्वां क्रियमागानां च वितियोगं उक्तः ॥ ३४॥

### सुवोधिनी

अधुनाविद्दितानां मगवत्प्रीत्यर्थे क्रियमाणानांकिफॐमित्याकांक्षायामाद्द यद्वेति यशः खधीतंगुर वः प्रसादिता, इत्यत भगवत्प्रसादद्देतुन्वेन प्रार्थनात् नियतफलत्वाच्च एकस्य त्ममयत्वे संयोगपृथक्तवन्यायेनद्दध्यादिचवुमयसाधकं स्या चथासति संसारः । पूर्वोक्तानुमयरूपत्वात् । तत्रोच्यते । अत्र निर्णाये यत्कमं भगवत्परितोषणं क्रियते भगवत्परितोषार्थं क्रियते तन कर्मगा भगवद्मिकिञ्चाने उत्पद्धते । "ततो ज्ञानानिः सर्दकर्भगाति,, न्यायेन सर्देकर्भक्षयः इत्यामप्रायेगाद्द । ज्ञानं यत्प्रसिद्धं माक्तयोग समन्वितं तत् तद्धीनं तादशकर्माऽधीनं द्दीति "सर्वापेक्षा च यज्ञादिश्रुतरश्ववत् इति न्यायः स्चितः ॥ ३५॥

ननु पंचरात्रोक्तकर्मगां भगवदाक्षया अर्जुनादिभिः कृतानां युद्धादीनां च का गतिस्तत्राह् । बुर्धागा यत्रोते । यह कर्मनिर्गाये विषये वा भगविद्धक्षया कुर्वागा भवंति तत्कर्म भक्तिजनकं भवतीत्याह । तदा ते पुरुषाः असक्षद्वारंवारं कृष्णस्य गुणनामानि पांडवरक्षकद्री पदील्डजनिवारकगोवर्धनोद्धरलेत्यादीनिग्रगाति । अनु पश्चास्मरंति च कृष्णम् । अतुस्तेषां कीर्तनस्मरगार्भाकहेतुत्वात् सर्वोत्कृष्टमे व तत्कर्म । न तेन संसारशंकाऽपीत्यर्थः ॥ ३६ ॥

### कमसन्दर्भः।

एवमिति । आत्मराब्दोऽवकर्म जातिपरः ॥ ३४॥

अया मनवतः परितोषगात्मकस्य तस्य माहात्म्यं विशेषत आह यदत्रेति । भक्तियोगः कीर्चन स्मरगादि हराः तत्समन्दितं तेनसम-वेतं यज्ञानं भागवतं तदपि तदधीनं तदव्यभि चारिफल मित्यर्थः ॥ ३५॥

क्यं तत्राह कुर्वाणा इति । भगदिञ्जक्षया यत् करोषि यद्श्नासीत्यादि कया यत्र भगवत् सन्तोषणे निमिन्ते कर्मागर्याप कुर्वाणा-स्ताहरा कवि स्ताभाव्येनासकत् गृणान्तीत्यादि । श्री शौनकादि वदिति भावः॥ ३६॥

### विश्वनाथचकवर्ती

नतु संसारहेतोःकर्मगाःकथतापत्रयानिवर्तकत्वम् सत्यम् सामग्रीभेदेन घटतहतिसहष्टान्तमाहद्वाभ्याम् यथामयोदेताःयेनघृतादि नाजायते तदेवघृतादि द्रव्यं चिकितसितमीषधान्तरवासितं सत्थामयंनपुनातिनरक्षतिनाश्यतीतियावत् पुनातिहत्र रक्षगार्थं को क्षयः ॥ ३३॥

क्रियायोगाः कर्मयोगाः सर्वेनित्याःकाम्याः नैमित्तिकादचनिष्कामाः परमेश्रवरेकारिपताः समर्पताः सन्तः आत्मविनाशायकर्भनिवृत्तं श्री कर्णते समर्थाभवन्ति ॥ ३४॥

तंद्वेद्वदार्षितंक्रमेस्त्वशोधकत्वात्कानसाधनंभवतीत्याहः मगवदार्षितत्वातः भगवतः परितोषग्रीनिष्कामंयत्क्रमेतद्धीनेक्षानंतज्ज न्यत्वादित्यर्थः कीहरायद्भक्तियोगसमन्वितम् अन्यस्यभक्तिरहितस्यक्षानस्यतुमोक्षसाधकत्वाशकः नेष्कस्यमप्यच्युतभाववाजतामत्यादि जातिरहकार्यवद्धः ॥ ३२ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

कर्मगोवसंसारः भगवतसमर्पितंतुकर्मसंसार्तिवर्तकमितिसहर्ग्धातमाह द्वाप्रयाम तत्रहर्ग्यातमाह आवयश्चति येतव्योग य आ कर्मगोवसंसारः भगवतिसमर्पितंतुकार्तिनिवर्तयति। स्त्रिकिस्तिवव्याति गामिश्चितंतुपुनात्येष ॥ ३३ ॥ वयोजायतत्रव्यसमामयनपुनगतिनिवर्तयति। स्त्रिकिस्तिवव्याति गामिश्चितंतुपुनात्येष ॥ ३३ ॥

स्यान्य स्थान । तथाकमेंगीवर्षसार अगवतिस्थापितंतुकमेसंस्थारंतिवर्तयत्यवेखाह एवामिति प्रोप्रसात्मिक काल्पताः समिपताः आत्मविनारणय तथाकमेंगीवर्षसार्थात्तियाशांकारिष्यते पत्येवरूकस्थात्मनःक्षमेप्रवाहर्ष्याविद्याकप्रस्थनादणसङ्गत्येकद्धतेसम्योभवति ॥ ३४ ॥ आसिद्याकमेसंज्ञान्यातृतीयाशांकारिष्यते पत्येवरूकस्थात्मनःक्षमेप्रवाहर्ष्याविद्याकप्रस्थनादणसङ्गतयेकद्धतेसम्योभवति ॥ ३४ ॥ ओंनमोभगवतेतुभ्यंवातुदेवायधीमहि॥
प्रयुम्नायानिरुद्धायनमः संकर्षगायच ॥ ३७॥
इतिमूर्त्यभिषानेनमंत्रमूर्तिममूर्तिक म्।
यजतेयज्ञपुरुषंत्रसम्यग्दर्शनः पुमान् ॥ ३८॥
इमंस्वनिगमंत्रह्यान्नवेत्यमदनुष्ठितम्।
अदान्मेज्ञानमैद्रवर्यस्वास्मिन्भावंचकेशवः॥ ३९॥
त्वमप्यदभ्रभुतविश्रुतंविभोः समाप्यतेयेनविदांबुभुत्तितम्।
प्रख्याहिदुःखर्भुत्तविश्रुतंविभोः समाप्यतेयेनविदांबुभुत्तितम्।

### सिद्धांतप्रदीप:

उपादेशेषाधनखतुष्कंसंक्षिष्यवर्षायति। यदिति अत्रसाधनापेक्षायांयद्भगवत्परितोषग्राम् भगवान्परितुष्यतेयेनतत्तकर्मक्रियतेस्वीक्रिय तेनत्वेहिकामुष्मिकमागसाधनम् अनेनमर्भवैराग्यात्मकसाधनद्वयमुक्तम् यसद्धीनभगवद्दधीनभगवद्विषयकंतज्ञानमिकयोगसमन्वितं क्रियतद्दितिचसाधनद्वयमुक्तम् ॥ ३५॥

एतदेवशिष्टाचारकथनेनदर्शयति। कुर्वागाद्यति यत्रयस्मिन् कालेशास्त्रप्रसिद्धाःशिष्टाः "यस्करोषियदद्यासियङ्कुद्दोसिद्दयासियत्॥ यस पर्यासिकोतेयतत्कुरुष्वमदर्पग्रामिति मगविष्ठक्षयाकर्माणिकुर्वागाः कृष्णास्यगुग्रानामानियुग्रांतिगायतिकृष्णमनुस्मर्गतिष्यानेतदसाह्यात्का रेकुर्वति ॥ ३६ ॥

### सावा दीका ।

हेसुबत जो घृतादि गुरुपाक द्रव्य जीवों के आमादिक रोगों को उत्पन्न करता है क्या वही चिकित्सा के योग से उसी रोग को नि इस नहीं करता है ॥ ३३ ॥

्रह्मी प्रकार मनुष्या के समस्त किया योग संसार धंधन के हेतु हैं। वेही यादे परपुष्ठव भगवान के अपैशा किये जाय ती आत्मवि जारा ( अर्थातः जीवोपाधि लिंग शरीर के विनाश ) पूर्वकसंसार मुक्ति के कारण होते हैं ॥ ३४ ॥

यहां जो कुछ करमें कियाजाता है मगवान के परितोष का हेतु होता है और मिक योग समन्वित धान मी तक्षीन होता है ॥ ३५ यक्कपोषि यदास्तासि तत्कुरुवमदर्पग्रम रस भगवान की शिक्षा के अनुसार जो कमें करते हैं थे बार बार श्रीकृष्ण के गुग औरतामों को कीर्फ्रम करते हैं और समस्या करते हैं ॥ ३६॥

# श्रीघरसामी ।

की चेनसारग्रहणमध्यक्तितृत्वयुक्तमः। बावहेनुत्वमाह ब्राज्यामः। ॐ नमः इति । नयो धीर्माह मनसा नमतं कुर्वीसहि ॥ ३७॥ अमु चित्रो विश्रोक्तव्यतिरिकस्पतिष्ट्यम् । यजते पुजयति । स पुमान् सन्यंग्वर्षानी भवति ॥ ३८॥

ार्यक्ष छत्वति प्रयि हरिः खलस्यं शतादिकं वृत्तवानित्याह । इसं स्वतियमं स्वेष्ट्यं मन्त्रिकं मरावृष्टितम् अवेत्य सात्वा ।

भाव प्राप्त के के कि कि कि स्थापित । अब से अनलपे सते यस्य हैं अवस्थात विभौतियहते यशः प्रस्थाहि कथ्य । यन विस्तिन अतस्यमध्येषं कुर्वियत्याह त्यमिति । अब से अनलपे सते यस्य हैं अवस्थात विभौतियहते यशः प्रस्थाति कथ्य । यन विस्तिन विद्या विद्या द्वित्या द्वित्र विद्या स्थापित क्षेत्र समान्यते तत् । यतो दुः हैः पीडितारमनो संक्षेत्रशाति प्रकारांतरेगा न मन्यन्ते ॥ ४० ॥ ह दुवन विद्या

हति स्रीमद्वागयतमाबार्यद्वीपिकायां प्रथमस्केष्ठे पञ्चमीञ्चायः ॥ ५ ॥

# 

मुत्तर्वभिधानेनेति । मुर्तिवाचफेन मंत्रेगोत्यर्थः ॥ ३८ ॥ ४० ॥ 🖓 📉 📉 📉

# श्रीवीरकायचः

इतिइत्यममृतिकंकमेवदयप्राकृतमृतिरहितंमंत्रमृतिमोमित्यासुक्तमंत्रप्रकाम्यामृतिरप्राकृताः अकर्ममूलाखेच्छोपानाचयस्यतंमत्रदारीरकं-वाभिच्यायन् श्रोमादिनामान्यतुगृग्राञ्चयक्षाराध्येपरमपुरुषयोयजतेस्वधर्मेगाराश्रयतिसपवपुर्मान्सम्यग्वर्शनः "क्षानीत्वात्मैवमेमतमित्युक्त विश्वीधिकारीत्यर्थः ॥ ३८॥

प्वं यजतामाशुमिकयोगोनिष्पंचते इत्यभियायेगात्मानेष्ष्टातयति इमिमिति हेवसन्मद्नुष्ठितीममस्यभगवतोनिगममञ्जूशासनम्ब-त्यस्याकेशवः स्वस्मिन्भावंभक्तितत्साध्यंदर्शनात्मकंशानमैश्वर्यचदेविषत्वोचितमस्विद्याचित्यर्थः ॥ ३९॥ ः

ं उत्तरमुपसंहरति। त्वमिति हे अदग्रश्रुतानल्पकीर्तेत्वंविभोर्भगवतोविश्चृतंयशः प्रख्याहि प्रवस्तीदियेनविश्चतप्रयानेन विदावोद्धृगाांवुभु-त्सिनंबोद्धिम्हंसमाप्यते आपूर्यतेननिरवशिष्यतइतियावत् यञ्कूतस्यजिश्वासितव्यंनावशिष्यतेतथाविधमाख्यानंकुवित्यर्थः किचदुः खोर्ख-भिस्तापैर्सेहुर्सेहुरिंद्देतः पीडितः आत्मामनोयेषांतेषांक्लेशनिर्वागांक्लेशायाध्यात्मिकादयस्तेनिर्वाग्यंतेश्पनोद्यंतेयेन अन्यशेषायांतरेगाहान-निवास्यते तथाविधययोशंतिअतीबाद्रियंते ताहशंप्रख्याहीत्यन्वयः ॥ ४०॥

# इतिश्रीवीरराघवियेप्रथमेपंचमः॥ ५ ॥

### श्री विजयध्वजः

योयजमानः खयंचनित्यमोनमोभगवतः त्यादिमूर्शभिधानेनमृतिबाचकेनमंत्रेगामंत्रप्रतिपाधमृतिम् अमृतिकंप्रकृतिवैकृतिविग्रह विधुरंवासु-देवादिकपंयक्षपुरुषं "चत्वारिशृंगात्रयोअस्यपादां"स्त्यादिऋक्पतिपाद्याकारंभगवतं उदिश्ययजते सपुमान्यज्ञमानः परोक्षापरोक्षकानवान् सम्बत्ति तेचे ऋ रिवंगाद्यः संस्येग्द्रश्नाः समीचीतशास्त्रविक्षानाः सर्वकाश्चसस्यगमगवंतद्शीयंतिकाप्यंतीतिसस्यग्दर्शनाः सर्वेषाहारिपरायग्रात्वात् असर्वगुगापूर्णसर्वजनरंजकेतिवाओमित्येवहर्ष भगवतेषङ्गगापूर्णायतुक्यंनमः सर्वेत्रवसतिक्षीव्यतीतिबासुदेवः क्लंकानरुप्रताहेत्यनिरसन क्रीलक्वातकीडांशीळत्वाद्वातस्मेधीमहिस्मरेम प्रकृष्टं धुरनं हिरग्यमेवरूपंयस्यसः प्रधुमनः "हिरग्यश्मश्लाहिरग्यकेशआश्चातसर्व एव सार्वाचार्याः इतिश्रुतेः तस्मे नकेनापिनिरुद्धः स्त्रोमुख्यप्रामाः सोस्यास्तीत्यनीतेनानिनामुख्यपामा प्रसादवतापुरुषेगारुद्धः वद्यीकृत सुवया इतिश्रुतः तस्म नक्षनापान्यस्य । इतिवाशानिरुधः संसारमुक्तास्तान्दधातिधारयतिपोषयतीतिवा अनिरस्तमुकार्ण्यनामधत्तइतिवा"तस्योदितिनामोतिश्रुतेःतस्मैसम्यकपापक इतिवाआनरुधः सुसारमुक्तास्तान्द्यात्वार्याः वैगारीलित्वारसंवर्षेणः समिचिनकरसमितिद्वतिहतिवातसमे चराब्दः प्रत्येकपृथकप्रवत्वद्यतिनार्थः इतिराब्दः प्रमृतिवचनः तस्माहत्वि मादि सिवेष्णिये वेजमानी मगर्वेतमाजानाज्ञानवेती भवंतीतिभाषः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

खानुभवासिक्रमेतदितिविद्यापयति इमिति केशयःमद्रनुष्ठितमिम्खयमैनियममवेत्यपेश्वर्थमीश्वराविषयंद्यानंखासम्बन्धावं साक्तिच-भेमहाः अदादित्यन्वयः ॥ ३९ ॥

इदानीमवतारमयोजनाळंगुक्कित्रगाविद्यापनमुपसंहरुति त्वामिति हेअद्भश्चतं "श्रोताभंतेत्यादेःसंपूर्णश्चोत्तत्वादिगुगासंपन्न त्वमी भूदानाभवताक्ष्यपाजनाळ्यु। इका त्या प्रकार अपन्य स्वयादेवाः येनतत्कातिमभ्रम्भयक्रमानिवद्वतिविद्वतिविद्वाचानळाभकामाः भूवतिपिक्षेत्रमीदिनुगासंप्रभदवेताम्ह्यार्थविधुरोपि सजनवात्स्रत्यादेवाः येनतत्कातिमभ्रम्भयकामानिवद्वाचानळाभकामाः येह्यन्वयः तस्मादन्येषाभागवतकस्याशकस्य मावात्तःकृतिरेवाल्हुदिकार्या।मितिसाबुः॥ ४०॥ यद्भाग्यामा प्राप्त विकास क्षेत्र क

# The hand the factor of the second of the sec

# THE REPORT OF THE PARTY OF THE क्र<del>मसम्प्र</del>ी।

The transportation to the contract of the second property of the second अय पश्चमात्रवक्तः श्रीनागयगादेतज्ञमनि लब्धं सप्राग्यं संप्रस्वीपदिशाति ॐ नस इति । चतुःशृहात्मको अगवानेवात्र देवता । अय पश्चराज्य । अतिरुक्षो वासदक्षिणायोमे अति । प्रयुक्तः सङ्गर्षणस्य दक्षिणे । अतिरुक्षो बास्रुदेवस्य वासे । सङ्ग्रेणाः तत्र श्री वास्त्रवसङ्गरेणो वासदक्षिणायोमे अति इति इति । प्रयुक्तः सङ्गरेणास्य दक्षिणे । अतिरुक्षो बास्रुदेवस्य 

## कमसन्दर्भः

मंत्रमुन्तिं तद्यक्तमृन्तिं तथाप्यमृन्तिकं प्राकृतमृनिरहितस् । यहापुरुषं पूजायां स्थेयाकारमित्यर्थः । दर्शनस्य सम्यक्षस्य आ मगवदाविभावात् नतु ब्रह्मदर्शनवद् विलल्वमिति॥३८॥

स्वनिगमं निजांतरंगपरमवेदरूपम् । प्रथमतो झानं स्वाज्यमधं ततः प्रेश्वर्य्य स्वाणिमादिरूपं ततस्तत्रानासुकौ आनं स्वमहाग्रेमा-याञ्च ॥ ३९ ॥

चि ॥ ३९ ॥ यस्मादेवं मम तदेतत्पर्यंतं सन्वे तद्गुगाश्रवणानिदानकं तच्छ्वणमेच तपश्रदीनां परमं फलं तस्मालवमपीति ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृतक्रमसन्दर्भे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५॥

### खुबोधिनी १७०७ ३००० ८

यानितुपुनः पंचरात्रेमंत्राराधन प्रकारेगापुरश्चरगादीनिकमीगितेकांनिशीयमाहः द्वाध्यामः नमोभगवतइति इयेष्ट्रिभगवद्वायनी ना-दिवास्याक्षत्रचतुर्मृतीनाम भिधानेधीमहीत्यर्थाश्चतुर्भृतीध्योयेमतस्यफलं चतुर्मृतिःतद्विपनभोगार्थः किंतु नमनार्थेतद्वपिनप्रयोक्षतद्वाः किंतुप्रत्यक्षतयाचत्रूक्षपस्यापि चत्रूक्षपमिभगवानित्यर्थः चकारादन्यात्यपिक्षपाग्वित्यानिहयग्रीवादीनि ॥ ३०॥

अस्यागायत्र्याविनियोगमाह एवंरूपेगामूर्त्यभिधानेनमूर्तिवाचकेन मेत्रणकरग्रेनमंत्रमृतिः शरीरंयस्यमंत्रार्थकपममूर्तिकं मंत्रोकस्यन तिरिक्तप्राकृत मूर्तिरहितंयश्चपुरुषंयश्वरूपं पुरुषंवायोयजते जपहामादिनासम्यक्दर्शनीभवति भगवंतसाक्षात्करोतीत्यर्थः॥ ३८॥

अत्रफलंग्रयानुभूतमिति संदेहाभावायाहर्षमंस्वनिगममिति स्वस्यनिगमोवेदः आहेतियावनसाक्षाह्यामयाकताययोक्तः पंचरात्रमागोः चुक्रितः पूर्वकल्पण्यतदामद्येशानं दत्तवान्ऐश्वर्यचभक्तिचयथावद्याशिवयोः तदाह केशवरतिकेशयोवसुसंयस्मादिति ॥ ३९ ॥

ण्वसर्वेषांकर्मगांनिर्गायउकः इतिसर्वमुपपाद्यउपसंहरन्तिर्द्धारितमुपदेशमाहत्वमपीति यथामयातस्याक्षापरिपालितानयात्वमपिष्ठीर-पालयआक्षापरिपालने सामर्थ्यसिद्धवत्कारेगाहअदग्रश्चतक्षति अनल्पवेदादीनांश्रवगांयस्येतिषिभोः विश्वतंकीितः विद्धामितियावदमध्ये-चरिवस्यमाहात्म्यमाहयेनविश्वतनवेदांतक्षानिनांवुमुत्सितंभगषतस्वरूपकानेच्छासमाध्यते 'यावत्यश्चास्मियादशक्कित्वसुत्साकाषरम्भाक्ति-जन यित्वानजीतातितस्मात्तदाख्याहि किंच निस्तारार्थसर्वेर्यानः कत्त्रेयः संक्लेशाभिभूतैः कर्त्तुमशक्यतिक्लेशनिवृत्यर्थचाख्याहि आ-ख्यानेनैवदुःखेर्मुद्वरद्वितानांसंक्लेश निवारगा मुशंतिसर्वेप्रमाणिवदः अत्रउपायांत्रस्तिहृष्टानांक्रेशनाशकंतदाह नान्यथेति ॥ ४०॥

इतिश्री भागवत सुबोधिन्यां श्री मलक्ष्मण भट्टात्मज श्री मद्रलभदीक्षितविरिवतायांप्रमस्कंध विवरणोपंचमाध्यायविवरणम् ॥ ६॥

# श्रीविश्वनाथचैकवर्ती।

तथेव भक्तिशिक्षितानां ज्ञानकरमोदीनां नैष्कमर्योत्यादिना निन्द्या सर्वया हेयत्वसुक्त्वा त्यकत्वा स्वध्यसंभित्यादिस्रोकवरमा प्रस्तोन् वादेयां शुद्धां निर्मुणांभक्ति स्तृत्वा शहं पुरातीतभवे इत्यादिस्रोकवरकेन तस्या एवं भक्तेणविमावयकारं प्रमपस्यन्तां वृद्धिक्वांक्रवा हिंदिकाणिविशेष पुनरपदियं भक्तिमिश्रं ज्ञानं तते। ऽधिकां कर्ममिश्रां भक्तिक्वांक्रवा स्वावी ब्रुयुः क्रिय्यस्यशिष्यस्य गुरुवो गुरुविश्वरं गुरुवे गुरुवे

द्वित मूर्तीनां वासुद्रेवादीनाम् अभिधानेन नामचतुष्ट्येन यज्ञते पञ्चराञ्चोक्तिविधिना वासुदेवाय नमः प्रश्नमनाय नम इत्येवं शोड्षां प्रज्ञावेशंः पूज्यते। मंत्रमृत्तिं मंत्रधानेकसृत्तिं मंत्रणाव जिपतेनाविभवित मृत्तिः शरीरं यस्येति वा। अमृत्तिकं शास्त्रक्रमृत्तिम् प्रज्ञाविश्वः पूज्यते। संत्रप्रदेशं शास्त्रक्ष्म् सम्यव्देशंनः तेद्द्वाथन्येऽपिकतार्थामवन्तात्पर्यः अकाठिनस्याद्देशितिवा मृत्तिः काठिन्यकाय्यात्रियम् यद्द्वाद्द्वात्राद्देशितिवा मृत्तिः काठिन्यकार्थातिकप्रतिवादक्षेपञ्चराज्ञादिसम्यक्ष्मन्यमात्मप्रसादकरवात् नतुयेनेवासीनतुष्यत्य यद्धाद्द्वीनक्षान्यस्यक्ष्मत्यक्षाप्रसादकरवात् नतुयेनेवासीनतुष्यत्य प्रक्रविद्वात्वाद्द्यीनस्यापित्रवायमात्मानवेपास्तुष्टः ममतुरुतप्रभ मन्येतद्द्वीनिक्विमान्यस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वात्मस्यापस्यविद्वातिभावः॥ ३८॥

#### श्रीविश्वनायचकवर्ती

स्वनिगमंनिज्ञान्तरंगवेदोक्तम् कानंप्रयमतःस्वानुभवंततऐद्वर्यस्वाग्रिमादिक्षंततस्तत्रममानासकिमभिप्रत्यभावंस्वमहाप्रेमाग्रश्रव दात् ततद्वमग्रामपीममन्त्रकृपयोपदिशेतिप्रार्थितेनश्रीनारदेनव्यासस्तमेवमन्त्रमुपदिष्टद्दतिसुधीभिवाँस्व्यम् ॥ ३९॥

हे अद्मश्चात्रज्ञनत्ववेदशास्त्रहे सर्वक्षेत्यर्थः विमोविश्चतंयशः प्रख्याहिकयययेनविश्चतेनवुद्धेनविदांविदुषांवुभुत्तसितंयोसुमिच्छासमाप्यते तद्यशोऽमृतास्वादनिमग्नानांसदातदेकमक्तिमतांद्वानायस्पृहेचनमचेदित्यर्थः अन्यथाप्रकारान्तरेखदुः खैः पीडितानांजीवानांक्लेशशान्तिन उद्मन्तिनमन्यन्तेविवेकिनः ॥ ४०॥

इतिसाराधेद्दिन्यांइपिययांमक चेतसाम् । प्रथमेपश्चमाऽध्यायःसंगतः संगतः सताम् ॥ ५॥

### सिद्धांतप्रदीपः

नतिपूर्वकंसुख्यं मववत्माप्त्युयायंध्यानयजनंचदर्शनंचउत्तमाधिकारिग्रांस्तौति द्वाप्त्यात् वासुदेवायमगवतेनमः प्रद्युम्नायश्रनिषदाय संकर्षग्रायचनमः मगवनतुभ्यंत्वदर्थत्वांधीमहिध्यायेम ॥ ३७॥

हताति इत्धंमूर्त्यभिधानेन अमृतिकंपाक्रतम्।तिश्न्यम् मंत्रमृतिकम् मंत्रः वाज्यवाचकयोरभेदातः बासुदेवादिनाममेत्रवाज्यामृति वैस्यसमेत्रमृतिकोऽप्राकृतमृतिः तयषपुरुषयोयजेतससम्यग्दर्शनः॥ ३८॥

प्यंनितपूर्वकच्यानयज्ञनपराणां मगवतोदर्शनंमिकिङ्चप्राकृतदेश्वियोग पूर्वकाप्राकृतदेश्यातिश्व भवतीतिस्ववृत्यंतकथनेनम्चयति हे ब्रह्मक् स्वनिगमंस्रोपदेशंमयानुष्ठितमवेत्यावधार्यकेशवः ब्रह्मशिवजनकः ज्ञानस्वस्मिन्भावंभक्तिम् ऐश्वर्ण्यं अप्राकृतदेशादिकमप्रिमाध्या ध्रवस्यमाग्रमदात् ॥ ३९॥

हेअदम्मश्रुतहेविपुलकोर्ते त्वमिषियमेःविश्वतंयराः प्रख्याहि श्रीमागवतिनवंधेनकथय येनविश्रुतप्रवंधेनविदांशुमुत्सितंबोद्धिमञ्जा समाप्यते यद्यत अन्यया दुःकैर्मुहुरहितात्मनांक्षेशनिवार्यान उशितनममन्यते ॥ ४०॥

### माषादीका

हम श्री भगवान बासुदेव को नमस्कार ज्यान करते हैं प्रशुक्त जी को सनिरम्जी को संकर्षण को नमः ॥ ३७ ॥ इस भूतियों के आभिधान से अमूर्नि अर्थात प्राकृत मूर्ति रहित और मंत्र मूर्ती यह पुरुष भगवान को जो यजन करता है वही पुरुष काम्यक्रारीन अर्थात पूर्ण हानवान होता है ॥ ३८ ॥

सम्बद्धारीन अथोद्ध पूरा। झानवान हाता ७ " र हे ब्रह्मन इसी स्व निगम अर्थाद अपनी आज्ञा को मुझ से अनुष्ठान की हुई जानकर केराव मगवान ते मुझको कान और पेश्वर्थ ओर अपने में माव मकी दी ॥ ३९ ॥

े हैं अन अश्रत ? व्यासजी तुम भी विशु श्री मगवात में विश्वत अधीत प्रगट यश को प्रस्थान करों कि जिससे बानी पुरुषों की समस्त बोध इंड्डा पूर्ण होती है और जिस यशकीर्तन को बारम्बार दुः को से अहित जीवों के संक्लेश का निवारण होता है । क्योंकि विना भगवन यश कीर्तन के और किसी प्रकार भी जीव का कप्य निवस नहीं होता ॥ ४०॥

प्रयम स्कंथ की पंचस अध्याय ॥५॥

the second throughout the state of the second throughout the second

# षष्ठोऽध्यायः।

सूतउवाच

एवंनिशम्यभगवान्देवर्षर्जनमकर्मच ।

भूयः पप्रच्छतंब्रह्मन्व्यासः सत्यवतीसुतः ॥ १ ॥

श्रीव्यासंज्ञाच

भिक्षुभिविप्रवसितेविज्ञानादेष्ट्रभिस्तव ।

वर्तमानीवयस्याचेततः किमकरोद्भवान् ॥ २ ॥

स्वायंभुवकयावृत्त्यावर्तितंतेपरंवयः ।

कथंचेदमुदस्माचीः कालेप्राप्तेकलेवरम् ॥ ३ ॥

प्राक्कल्पविषयामेतारमृतितेसुरसराम ।

नहोषव्यवधात्काळएषसर्वनिराकृतिः॥ ४॥

### श्रीधरस्वामी।

व्यासस्य प्रत्ययार्थेच षष्ठे प्राग्जन्म सम्भवम् । ख्रिमाग्यं नारदः प्राह् कृष्णासंकीर्तनोद्धवम् ॥ १ ॥

ख्यनिष तथा चिक्रीर्षुर्गुरूपदेशांतरभावि तचारितंपृच्छतिभिक्षुभिषिति जिभिः विष्रवासितेदूरदेशगमनेकृतेसाति । विज्ञानस्याद्दर्शिः उपदेशकर्तृतिः॥२॥

हेर्वायम्भुवतेत्वयापरंवयः उत्तरमायुः ( कथं ) वर्त्तितंनीतम् । इदमितिदासीपुत्रभूतंकठेवरं ( कथम् ) उद्घाक्षीः उत्सृष्ट्

। इत्र गाउँ । विवक्तरणान्तरुक्षणाः कालः तेस्मृतिकथंनव्यवधात्नखरिडतवान् । अडागमाभावस्त्वार्षः । हियत्तप्रकालः सर्वस्यानिकारुतिः अपला we shall be a facility of the first of

दीपना ।

ा शाहा

### श्रीवीरराघवः

अन्त्रजो चन्गमिष्यंतः क्रपयादीनधारसला इत्युक्तंतत उपरितनंदेवार्षेत्रक्तांतंजिशासुः पृच्छतित्यासङ्ग्याहसूतः एव मिति इत्थेवार्शितंदेवर्षे जैन्सकमें चाषीविदेशिक तिराम्यस्तवस्याः सुतीसग्वान्श्री त्यासः तंदेविदेवद्यान्शीनकभ्यः पुनः पप्रच्छ ॥ १ ॥

प्रकृतमेवाहासिक्ष्मिदितित्रिभिः तत्रविज्ञानादेष्ट्रिभिविज्ञानोपदेष्ट्रिभः भिक्षुभिः सन्यासिभिविष्यसिक्षेचातुम्हिस्यांतेऽन्यत्रगतिसातितत्तः

प्रशाद्भवानादीवयसिवर्तमानः क्रिश्तवान् ॥ २ ॥

्र हुस्बायमुवतस्वयापरंत्रयः भिक्षुविप्रवासप्रभृतिवयः कयावृत्त्यावर्त्तितने।तंकथवाप्राप्तकोलक्ष्दंक्षलेवरमुद्धाक्षीरतस्य

माणिकल्यारेवृत्तीतकथनमुखेनप्रस्कृतत्वादिद्मितिसन्निहिततयापरामुद्रपते ॥ ३॥

हेनुनिसस्यमाक्करपनिषयांपूर्वफरपीयामेतांभिष्ठपदेशप्राप्तांभगवत्स्मृतिमपकालोनव्यवश्रामितिरोहितवान् अडभावआर्षः आतास्राम्स ्रियानित्यत्वाद्वानव्यवधात्किमितिप्रश्नोविविधतः व्यवधायकत्वस्चनायकालविधिनाष्ट्रिष्णकालः सर्वेतिराकृतिः सर्वेविनाशकः॥ ४॥

# श्री विजयध्यज्ञः

अत्रव्यासनारदःसवादोषाख्यानंस्तः शोकादिभ्योग्नवीदितिविकापयितुमाह एवमिति हे बहान् सत्यवनीसुताव्यासाः देवपैजन्यकम ज्ञ (व्यंश्रुत्वापुतरपितंनाग्वंपप्रश्रुत्यकान्वयः ॥ २ ॥

ष्यत्र । अ जार्द स्तहणाज्ञा ज्यारा ख्यापनायचसर्वज्ञोणिव्यासस्तद्वयः दोषवृत्तिपृष्ठ्छति । सिक्षाभिरिते तवविशिष्टशानोपदेष्ट्रभाभिक्षाभिज्ञानाभि

शादानकी केविप्रवसितदेशीतरंगते आधेबाउँवयसिवतमानाभवान्तकनतर्गकमकरो।देखेका न्वयः॥२॥ शादानकी केविप्रवसितदेशीतरंगते कार्यक्षेत्रका कार्यका कार्यका कार्यका कार्यका विद्यानकी द्यान्यापुरुवित स्वायंभुविति स्वयंभुवीब**सम्मः पुत्रतेत्वं परंज्ञानीपदर्शन्त**िक्षालीनेत्रयः क्रयाहर्सावृतितं संस्माकालेशांतेरदं-ेत्रविविविवस्यपुरुविति स्वायंभुविति स्वयंभुवीबसम्मः पुत्रतेत्वं परंज्ञानीपदर्शन्तिः क्रयाहरसावृतितं संस्माकालेशांतरदं-

द्यारी वेवाजव्साक्षी व्यस्तिवानिर्वात्येकान्वयः ॥ ३ ॥ रवा पर राज्य । इतिवापूर्वजन्मसंभावनितिराक्तितिराक्तरण्यस्मात्सर्वनिराक्तिरेषकालः सुरस्नित्रभातिश्रेष्ठः त्वातीत्वस्यकरपविषयामेतासम्बर्धः सन्य र र प्रतिकारियोद्धितांनेयाकरीत् आरुख्यमतितृत्यस्मित्रशिक्षकृतः एतकारस्त्रवयास्याश्याः॥४॥ इतिनेत्रस्यवधातिकोदितांनेयाकरीत् आरुख्यमतितृत्यस्मित्रशिक्षकृतः एतकारस्त्रवयास्याश्याः॥४॥

### कमसंदर्भः

विशेषद्यानार्थेभूयः प्रमच्छ ॥ १ ॥ मिश्चमिर्विप्रवसितेभिश्वणाविशेषेणप्रवासेजातेसतीत्यर्थः॥२॥ इदंसम्प्रतिवर्णयमानम् ॥ ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ ॥

# धुवीधिनी

मध्यमेनाधिकारेगापदार्थाविनिकपिताः । श्रवगास्यफलंचांतर्कानरूपं प्रदार्धितम् १ पष्ठेत्वाद्येतस्वैनकीर्त्तनावधिवगर्यते । बाह्याभाधित्वांतरस्य व्यर्थतेतिनिक्षण्यते २ पूर्वाध्यायांतेअदान्मेश्वानमैश्वर्यामित्युक्तंतत्रसंदेहः अवगामेवनिक्रपितमवांतंरक्षानंच कितदानीमेवभगवतापर्वरेद संकालां तरेवेतिश्रीतव्यविषयनिद्भपकस्यफलकथनार्थं म्वतिविचारगा अतः गृच्छतीत्याद्दपविमिति। नारदोक्तीयथार्थत्विमत्यवगतीहेतुमाह् मगवािनिति असंमानितत्वंनिराकरोतिदेवर्षेरिति हेन्नसन्राीनक भूयःप्रश्नस्त्र्याभावात आदराधिक्येक्वातपविदेशेष कथनात्भगवत्कप्रयापताव ज्ञातमितिकथितोपिपुनः प्रदनः अनितिपयोजनंपुच्छतीतिचसत्यवत्रोसुवद्वयुक्तमः ॥ १ ॥

प्रवनमाहित्रिमिः मिश्रुमिरिति प्रकृतिशरीरत्यागक्षानन।शाभावः ब्रह्मचित्रोनिकिचित्कर्त्तव्यमिति योगे वेवशरीरत्यागामोक्षद्रिकाल्स्त्वन

विक्रमगीयश्तिपृष्टः॥ २॥

प्तायं सुवेतीदांनीतनसंबोधनं वृत्तिजीविकाशरीरनिर्वाहिकाकथामितियोगादिप्रकाराः वार्थविशेषेषुनरित्यर्थः कालेप्राप्तेअप्राप्तेवेतिप्रश्नः हद्भितिबुद्धचापुरः स्थितंवेतिपाठेऽत्यनादरः कालजन्यंकालोगृहगातीतिवाभाहकालहाति ॥ ३॥

प्तांस्मृतिसंस्कारनाद्दानपूर्वकलपविषयेभ्यः व्यवहितांकधनक्षयंकृतवान्तदाइयंस्मृतिः शब्दसूलास्यात्तदवानातुप्रत्यक्षम्लेतिदेवानां भक्तामा (सतांस्मृतिकालोनाशयतितवतुनेत्याश्चर्येगासंचोधनंअल्पस्याण्येतद्भावामान्यवकारः कार्यद्शनाधुकताहिशाद्दार्थः कालमाहा स्यंज्यत्यक्षसिद्धंमगवस्वात्कालंसाक्षात्कृत्वाह्एषइति ॥ ४॥ 

# श्रीविश्वताथचक्रवर्ता

षष्ठेगत्वावनंकृष्णादर्शनंतद्वचः श्रुतिः। तद्दन्तिचन्मयतनोर्नार्यरुगातिरुग्यते ॥ १ ॥ विप्रवासितेतस्मात्प्रवासतोविच्युतेसंप्रसार्गाभावधार्थः । किमक्ररोदितित्विच्छप्योऽहमपितयाचिकीक्षेत्रीतिभावः ॥ ३ ॥ इदंदासीपुत्रभूतंकलेवरंकथम् उत्सृष्टवानासि ॥ ३॥ नव्यवधात्व्यवधायनस्रिडतवान् अडागमाभावआर्षः। निराकृतिर्विनाराः॥ ४॥

# ः १५०७ **स्थित्वर्गतप्रदर्शतप्रदर्शनः** । १९०० वर्षाः १५७ । १९७० वर्षाः १५७० ।

The analysis of the property of the state of

Standard Hills Charles Commencer

विप्रवासिवेचातुर्मास्यांते इन्यूचनामनेकृते ॥ २ ॥ ावधवास्त्रवास्त्रवास्त्रवास्त्रवयः उद्घाक्षीरत्सृष्टवानास् ॥ ३ ॥ पाद्ययः गुरुविद्यागोत्त्वरवासेवयः त्रव्यवयात् नितिकोष्टितवात्यंडमावआये ॥ ४ ॥ त्रव्यवयात् नितिकोष्टितवात्यंडमावआये ॥ ४ ॥ 

yfyddingenniaeth ferst gare se se se

स्तुजी बाल हे बोनिक जो इसप्रकार से नारद जी के जन्म तथा कमें की सुनकर सत्यवती के पुत्र श्री ज्यास जी फिर मी पूछते भया॥ १ रहत्त्र । त्यास उद्याच । तुमका विज्ञान उपदेश करेन वाले मिश्रजन चले गये। तब बालक अवस्था में थे थापने क्या किया ॥ २॥ ट्यास उवाच ॥ अर्था हिस्स शापकी सब परमवयव्यतीत हुई। और किस प्रकार से काल प्राप्त होने पर आपने इस कठेनर का त्सारी किया ॥ ३ ॥। है सुद सातम ! समस्त वस्तुओं के नाश कर देने बाले इस काल ने आपकी पूर्वकरूप विषयक स्मृतिको क्यो नहीं नाश किया ॥ ४॥

# and the state of t श्रीभृत्वासी ।

अकार्षकृतवान्हम् । रेफ्षकारयोविष्ठेषर्छन्दोऽसुगोयेल ॥ ५॥ अञ्चारभ्य । तत्रतानवाकि चित्कालवभेवआवृष्येहयत्रितीन्यवस्तिस्याहणकेतिभिभिः॥ एकण्याहमात्मज्ञा यस्यः सायोषिदितिस्वितिस्वितिस् वान्यहर्षुः ॥ ६ ॥

भाष्य । किंका वित्यास्थार्थेवप्रचयविस्वेति॥ अस्यतंत्रासाञ्चतेविकल्पानसम्योशासीत् ॥ सारमयीयोषेत्यतिपारवास्येल्यानतः ॥ ७॥ ाराकाः वर्षसारमहश्चके अहंचितिगादिण्वनाभिकः अंतस्त्रीयस्यवसामित्याहः श्रहश्चातस्मित्वहार्के लेतस्यमातुः स्पेहासुवन्धस्यापस्याकदानिरः तर्षसम्बद्धाः क्ष्यां स्थापना के स्थापना विकास के स्थापना । प्रश्नात यमः प्रश्नात ॥ ६ ॥। विकास स्थापना विकास विकास । प्रश्नात यमः प्रश्नात ॥ ६ ॥। 

THE RESIDENCE OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY

( अध्यायः )

श्रीनःस्दुउवाच

भिक्षाभिविप्रवासितविज्ञानादेष्ट्रभिर्मम । वर्तमानोवय ध्याद्येतत् एतदकारषम् ॥ ५ ॥ एकात्मजामेजननीयोषिनमूहाचिकंकरी । मध्यात्मजेनन्यगतौचके नेहानुवंधनम् ॥ ६ ॥ सास्ततंत्रानकल्पासीत्योगच्चमंममेच्छती । ईशस्यहिवशेलोकोयोषादारुमयीयथा ॥ ७ ॥ अहंचतद्वह्राकुलेजिपवांस्तदवेच्चया । दिग्देकालाव्युत्पन्नोबोलकः पंचहायनः ॥ ८ ॥

दीपनी

योगक्षेत्रमञ्जलकामलक्ष्यपरिरक्षगारूपमित्यर्थः॥ ७--११॥

### श्रीवीरराघवः

एवमापृष्टः यथावत्स्ववृत्तांतंवकुमारेमेनारदः भिश्वभिदितितत्तद्धंतस्यपूर्ववदेवार्थः एतंद्रस्यमाग्रामकारपमकार्षकृतवानिति॥ ५ ॥ तदेवाहएकात्मेत्यादिनाकरणांतदत्यतः प्राक्तनेनग्रंथेन एकोहमात्मजः पुत्रीयस्याः साममजननीमातायोषेतिस्वभावोक्तिः जननीत्यनेनैवर्छाः त्वाक्तेः अतप्वमृद्धार्किकरीअनेनपराधीनत्वमुक्तम् अनन्यगतीगतिः पोषशोषायअनन्यपोषकेमय्यात्मजेस्नेहानुवधनस्नेहणास्वद्यंचक्री॥६॥ स्नाममजननीअखतंत्रार्किकरीत्वादतएवममयोगक्षेममिञ्छत्यपिनकरुपनसमर्थावभूवयोगश्चक्षेमश्चतयोः समाहारः योगोअस्वध्यस्म

स्वामम्बर्गनाः जलारमान्यः लब्बपिरक्षगारहित्विवर्द्धनंतस्यपात्रेप्रतिपादनंचक्षेणः॥ ७॥ लब्बपिरक्षगारिहत्विवर्धः पंचवर्षवयस्कोवालकः अतपविदिग्देशकालाव्युत्पन्नः दिश्देशकालस्य माचानमिन्नःतद्वेक्षयामात्रवेक्षयातदेशावसान प्रतिक्षगोनहेतुत्वेनेव्यर्थः तस्मिन्बह्यकुलेबाह्यगागृहेउषितवानस्मि ॥ ८॥

### श्रीविजयध्वजः

विञ्चातस्वकीर्तिः वितरपाव्यासाभिप्रायोगारदस्तत्प्रद्रनंषरिहराति भिक्षभिगिरिति उक्तार्थः इलोकोयम् ॥ ५ ॥ स्वस्यसंन्यासीनामनतुगमनेकारपामाहः एकात्मजेति अहमेकपव्यात्मजोपत्ययस्याः स्वतया योषितामध्येमुढाविवेककानञ्ज्या कि करीदासीत्वएवंतियामप्रजननी नअन्यागितिराश्रयोयस्यसीनन्यगतिः तस्मित्रात्मजे मियस्नेहानुवैधनैवकदत्येकान्वयः ॥ ६ ॥

कार्यकात्र वात्र वात्र वात्र वात्र वात्र वात्र वात्र वात्र विकासित्याह सेति समयोगक्षेमंमप्राप्तस्यप्राप्तयुपाययोगे प्राप्तस्यप्रतिषालनेक्षेमसिन् केवलेक्षेहमेववद्भवतित्ववात् वसनादिवानपूर्वकात्र्वयः कुतोलोकः सेवको तनः ईदास्यस्वामिनीवहोत्वियस्मान्तस्मादित्यर्थः ईद्यावास्य-इतिश्चतित्र्यत्वित्राप्त्यप्रभिनाकरणसम्योगस्योगस्य क्षित्र विकासितायोषायथाज्ञ प्रवर्तकर्यत्रपुरुषाधीनात्रथेत्यन्वयः॥ ७॥
स्रितिश्चतित्रास्यप्रमेश्वरस्यतित्रा कथितवदारुमयीकाष्ठनिर्मितायोषायथाज्ञ प्रवर्तकर्यत्रपुरुषाधीनात्रथेत्यन्वयः॥ ७॥

ामाणश्रुविक्यानिक विक्यां अहिमिति चशब्द्षवार्थः पूर्वेग्यसमुचयार्थीवा शहंतस्याः मातुरपेक्षयातस्मित्रबह्यकुरुपवबाह्यग्ना-रुष्टिकिमितिक चयास्वरितचाह अहिमिति चशब्द्षयोग्पीत्यभिधातीत् तत्रवासेहेत्वत्यमाह दिगिति दिगाधनभिज्ञानेकारग्रामाह गृहण्यकिषिकानित्यन्ययः कुरुवंदेश्रृहेनार्थेकातिसांकर्ययोग्पीत्यभिधातीत् तत्रवासेहत्वत्यमाह दिगिति दिगाधनभिज्ञानेकारग्रामाह बाह्यहर्गति पंचहायनाःसंवत्स्याःयस्यसंतर्थोक्तः योहेदिगाधनभिज्ञाः अहायनोबारुकः सोहमित्येकान्वयः ॥ ८ ॥

सुबोधिनी

शास्त्रार्थं द्राढ्यांद्वाप्रथमप्रदनेव सरमाहभिश्वभिष्ठिमिरियादिना एवं हप्यामतेरित्यंतेनप्रहाविद्रोधियावद्र्ययनः कर्सच्याहभिश्वभिष्ठिमावदितद्वाः व्यक्तियंत्रप्रदेवमगवदितद्वाः व्यक्तियंत्रप्रदेवमगवद्यास्त्रपाद्रभावत्याद्वाः व्रतियतेपूर्वावधारणात्यवद्यप्रवस्य माग्रांत्रिभः प्रतिवधकतामकनामावंज्ञाहभगवानतुप्रयाध्येद्रप्रमावस्थास्त्रपाद्र जीवित्रान्ययाः ॥ ५॥

ज्ञायातनान्यात्वाः । नागदस्तुभागवत्प्रतीक्षयास्थितहत्याहिष्रासिः एकात्मजेति एकएवशात्मजीयस्याः साक्षासकत्याधिकयेहेतुः मेजनतीतिएवीवस्थास्युत्वाः नागदस्तुभागवत्प्रतीक्षयास्थितहत्याक्षप्रदेशाभावायोक्तं किकरीतिउपदेशायस्याभावः स्वितः आत्रज्ञेशनन्यगताचितिस्वाभाविकोपाधिकहेत् जनयित्रीयोषितामपिमध्येष्ट्राङ्गदेशाभावायोक्तं किकरीतिउपदेशायस्याभावः स्वितः आत्रज्ञेशनन्यगताचितिस्वाभाविकोपाधिकहेत्

स्तेहर्गांतरापता ॥ ६ ॥

इतेहर्गांतरापता ॥ ६ ॥

इतेहर्गांतरापता विश्वनंतर्गरनेहोनुविधनसेवजातंनकार्य अन्यथापिवयेग्गममाणिवयः स्यादित्यभिप्रायेग्गाह सामाताअस्यतंत्रा स्तेहर्ग्यविव्यक्षाद्वात्मनार्वेश्वनंतर्गर्भात्रात्वात्मक्ष्यां के इतिहर्गां विश्वास्य विश्वा

स्वातंत्र्याग्व यमञ्जानात् प्रथामाता इत्रवरा बीतित्वाहमापिभिन्नत्या प्रह्माविशेषतस्त्वधीनत्वाल्तद्वसम्बुलस्वामिव्यासम्बन्धिक अनेनान्नदो विश्वातस्वात् विकाशिक्षण्यामात् कृत्रप्रतिविध्यानिक स्वादिक्षः पूर्वादयः स्ववेशादयः कालीः विनयाविष्यस्तयः तेनकवस्थातस्यामितिवि बातिव्याहितः त्रवेशस्यामात् कृतमितिवेथकास्मविष्यस्याकालकशीतविषयस्यविधासामः एकहायन्हितप्राधीनतास्य ॥ ८ ॥ वेस् रहितः अनेनलेशिककापरिवानं अतस्तेनापिनवेधात्मविष्यस्याकालकशीतविषयस्यविधासामः एकहायन्हितप्राधीनतास्य ॥ ८ ॥

Constraint the constraint of t

推翻性情報法

एकदानिगंतागेहाइहेतीनिशागंपथि। सर्पोदशत्पद्दास्पृष्टः कृपणांकालचोदितः ॥ ९ ॥ तदातदहमीशस्यमक्तानांसमभिष्सतः। अनुग्रहंमन्यमानः प्रातिष्ठंदिशमुत्तराम् ॥ १०॥ स्फीतान्जनपदांस्तत्रपुरयामबूजाकरान् । खेटखर्वटवार्टीश्चवनान्युपवनानिच ॥ ११ ॥ चित्रघात्विचित्राद्रीनिभभयभुजद्भान्। जलाशयान्शिवजलान्नलिनीः सुरसेविताः ॥ १२ ॥

श्री विश्वनाथचकवर्ती।

अकारयमितिरेफपकारविश्लेयः छन्दोऽनुरोधेन । यदुक्तमऊई्वरेफाविकरुग्नेछन्दोभगभयादिहेति ॥ ५॥

एकोऽहमेवात्मजोयस्याः सा ॥ ६॥ अस्वतन्त्राअतोनकल्पानसमर्था ॥ ७ ॥

तद्रपेक्षयातत्कत्रीकायाअपेक्षातयासामांनत्यजतीत्यहमप्यवसामित्यर्थः॥ द ॥

सिद्धांतप्रदीपः

अकार्षम् कृतवानहम् ॥५।६।७॥ ऊषिवान् वासंकृतवान्॥८॥

भाषा टीका ।

नारद उवाच ! मुझे विज्ञान उपदेश करने वाले भिक्षुजन चले गये तब आद्य अवस्था में वर्तमान भी में था पर मैंते यह किया॥ ५॥ मेरी मा स्त्री खभाव ही से मूढ थी और दासी थी में उसका एक मात्र पुत्र था मुझ अनन्य गति बालक में उसने बड़ा खेह किया ह वह मेरे योग क्षेम ( अप्राप्त का पालना प्राप्त का पालन ) की इच्छा करती थी परंतु परतंत्र होनेके कारण असमर्थिश क्योंकि यह स्मारत जगत हैं स्वर के वश है जैसे नयनि वाले के आधीन काठकी पुतली नाचती है ॥ ७॥

स्व जराब र र पा आर देशका से उसी ब्रह्म कुछ में रहा क्योंकि पांच वर्ष का बालक था और देशकाल दिशा कुछ नहीं में भी माता के खेहानुबंध की अवेक्षा से उसी ब्रह्म कुछ में रहा क्योंकि पांच वर्ष का बालक था और देशकाल दिशा कुछ

जानता था ॥ ८॥

भिहासिभितांगांदु हंतीहेतीरातृप्रत्ययः दोग्धुं (दोहयितं ) निर्गतामित्यर्थः। प्रदापादेनआसपृष्टः ईषदाक्रान्तः अद्रात्आसादल् ॥ ९ ॥ त्तत्मातुर्मरणम् । दाकल्यागामभीप्सतः ईशस्यानुग्रहंमन्यमानः प्रातिष्ठप्रदिशतोऽस्मि ॥ १०॥

स्कीतान्जनपदादीनतियातः सन्महाविपिनमद्राक्षमितिचतुर्धेनान्वयः। जनपदादिषुनानागुगादोषयुक्तेषुसमङ्ख्यः सन्मतोऽहामिति रुराज्यायुक्यान्यः । त्राप्तान्यः । तत्रतस्यादिशि । पुरमामध्याकणन्तत्रपुराशिराजधान्यः । मामाभृगुप्रोकाः विशास्त्राविप्र तातप्रयोधाः स्फीतान्यमृद्धान् जनपदान्देशान् । तत्रतस्यादिशि । पुरमामध्याकणन्तत्रपुराशिराजधान्यः । मामाभृगुप्रोकाः विशास्त्राविप्र लालभयानः रूपा पर्याप्य प्राप्ता । ११ कि. जाता विश्व विश्व विश्व विश्व कार्यासुन्त । विश्व विष्य विश्व भृत्याश्चायवज्ञवन्ता पति पति पति । कार्यायम् पति । विद्यासम् । मिश्रन्तुखबर्टन्∥मनद्गिगिरिसमाधयमिति । वार्यः पुरापुष्पादीनां खबरागिरितरमामाः भृगुमोक्ताचा एकतोयत्रतुमामानगरचेकतः (स्थतम् । मिश्रन्तुखबर्टन्∥मनद्गिगिरिसमाधयमिति । वार्यः पुरापुष्पादीनां वादिकास्ताः वनानस्त्रतः सिद्धवृक्षायांसमूहाः। अपवनानिरोपितवृक्षयांसमूहाःतानिच ॥ ११॥

टकारणाः ज्ञानस्य प्रवर्णस्य । इ.स.संग्नाभुजाः शाखायेषामतेषुतान् । शिवानिसद्वासाजलानियेषातास् । निर्छ

नाः सरसीः ॥ १२॥

त्रहिनीः प्रवासक्तेत्रंगाः क्रमाविन्यांत्रहित्यान्स्यावितिषयिनी सुवाहत्यमण्कोषाभिभानात्त्वातित्यथेः॥ अतुक्वतस्यार्थः सरस्तितिस्त्रामीः तत्रसर्मीः सरोबचनवृहज्जलारायानितियावत् ॥ १२॥

#### श्रीवीरराघवः

पर्वस्थितकदाचिक्रिशिगेहान्त्रिगैतांगांदुहेतीदोग्धुंप्रवृत्तांकृपग्यांमयमातरंपथिमार्गेपदापादेनस्पृष्टः कालचोदितः कालशरीरकेगादैवेन चोदितः सर्पः अद्दशददंशतसाप्रमियतेत्यर्थतोद्वष्टव्यम् ॥ ९ ॥

तदाई तन्मरगांमकानांशंसुसमभीप्सतः कामयमानस्येशस्यभगवतोतुष्रहरूपंमन्यमानउत्तरांदिशंप्रतिपातिष्ठंप्रस्थितवानस्मि॥ १०॥

तत्रप्रस्थानेस्फीतान्समृद्धान्जनपदान्देशान् द्वितीयांतामामतियातइत्युपरिष्टादन्वयः पुराशिपट्टशानिप्रामान्दहरहितान्वजान्गोपाल निवासान्आकरान्रत्नाद्युत्पन्तिस्थानानिखेटान्क्षीवलप्रामान्खवेटान्निषादााद्यामान्वाटीःपुष्पवाटिकाःवनान्यरययद्वपशिषुपवनानिक त्रिमवनानिच ॥ ११ ॥

तयाचित्रेर्नानाविधेर्यातुमिर्गिरिकादिमिर्विचित्रात्नदीपर्वतान् इमैर्गजैभेग्नाः विच्छित्रामुजाः शाखायेषांतान्द्रुमान्शिवानिविशुद्धाः निज्ञहानियेषु तान्जलाशयान्सरांसितथासुरैः सेविताः कीडिताः निलनीयाकरान्कथंभूताः चित्रानानाविधाः खनायेषांतैः पत्ररथैः पत्राशितद्रुपात्मकाः पक्षारथारथवत्गमनसाधनानियेषांतैरित्यर्थः पक्षिभिः संकुलाइतिशेषः भ्रमद्भिर्भ्रमरैःश्रीःशोमायासांताः॥ १२॥

### श्रीविजयध्वजः

क्रियंतंकालमवारसीदिति प्रश्नस्यमातृमरगापर्यंतमवात्समिति परिहारमभिष्रेत्याह एकदेति स्पृशउपतापइतिधातोः आक्रमग्रेनतप्तः गांगोमतिल्लकाम् अद्शत्अमक्षयत् कालेनमृत्युनाचोदितःप्रेरितः॥९॥

सोहतदामातुरंत्यंकमेकृत्वा तन्मरग्रांभकानामभीष्टमीशस्यातुत्रहं मन्यमानउत्तरांदिशंप्रातिष्ठःमित्यन्वयः॥ १०॥

प्रकण्वसहायरहितः अहंतत्रोत्तरस्यांदिशिदेशान्समेतानतीत्ययातक्षेत्चतुर्थक्लोकेनान्वयः व्यालाश्चदुष्टगजाश्चउल्कारचिश्चाः श्रृ गाल्यश्चव्यालोलूकशिवाः तासामजिरंकीडास्थानंप्रतिभयाकारंमृत्युमाव्हयदिवास्थितमत्त्वे घोरमहद्यारंविपिनमद्राक्षमित्येकान्वयः मर्वर्तुसंप्रत्यास्कीतान्समृद्धान् पुराश्चित्रप्रामाश्चवज्ञज्ञाकराश्च्युरप्रामवज्ञाकराः पुरंशज्ञाश्रयः प्रामोवहुजनाकीर्याः गोपालानांगवां- सर्वर्तुसंप्रत्यास्कीतान्समृद्धान् पुराश्चित्रप्रामाकरः खेटान्मृगयोपजीवनप्रदेशान् पट्टनानिवाटयद्वज्ञतास्तथोक्तास्ताः पट्टनवाटीः जलस्थ- कार्यातास्थ्यानायाज्ञघानीपट्टनं पुष्पोपजीविनांनिवासस्थानवाटी वृक्षसमुदायोवनम् आरोपितवृक्षसमुदायउपवनम् ॥ ११ ॥ कार्यातास्थ्यानाम् अरोपितवृक्षसमुदायउपवनम् ॥ ११ ॥

इचेर्गजिभग्नायुजदुमाभूर्जवृक्षायेषुतेतथोक्ताः "भूर्जपत्रेभुजोभूर्जेमृदुत्वक्चर्ममछिकावि" तियादवः इसभग्नाः सुजाः शाखायेषांतेतथो-काः इसभग्नभुजदुमाः येषुतेतथोक्ताइतिवा तान् विचित्रधातुभिः नानाविधगैरिकहरितालादिभिः चितावाश्चर्यक्रपावद्भयः गिरयः तान् शिन् वजलान्गुरुत्वादिदोषगहितान्जलाशयान् सरोवरादिजलाधाराज् देवनिषेवितानिलनीः पुष्करिगीः ॥ १२ ॥

# सुबोधिनी

भगवतापिकिचित्विकार्थप्रतिबंधःस्थापितःजातेतुविवेकततर्गीकृतवानित्याहणकदेति यदासर्वेपिगृहस्थाःस्वस्कार्येव्यावृत्तागेहाकिर्ग् भगवतापिकिचित्वविकार्थप्रतिबंधःस्थापितःशुद्धिश्चगोरपर्शेदुहंतीमितिसर्वसिकयाव्यावृत्तत्वेपथिस्थितःसर्पः भगवत्प्रेरगायासमागतः भग-तामितिगृहाकिर्देरगाक्लेशोपिनिवारितःशुद्धिश्चगोरपर्शेदुहंतीमितिसर्वसिक्तयाव्यावृत्तत्वेपथिस्थितःसर्पः भगवत्येप ताक्षकत्वविकाणितायपदासपृष्टःहतितस्याथपराधिककः वस्तुतस्तस्याथपिनदोषःनवातस्येत्याहकालचोदितहिष्कालाद्योभगविद्वेच्छालुसारे ग्राकार्यकार्तारः॥ ६ ॥

मयापिसमग्वदुपकारः इतिशात्वातथैवकृतमित्याह तदातद्हमीशस्येति सर्वदाहिमगवान्यकानामेवकृष्याणमीष्टेतथापिकदा।चित्रप् मियापिसमग्वदुपकारः इतिशात्वातयदितद्पिकुर्यात्तदामहानद्वप्रहोयमितिशात्वाचिकीर्षितेनविल्प्यः कर्तन्यद्द्यमिपायेगाहअनुप्रहंमन्य तिवंधकानामण्यात्मत्वातनद्रपीकरोतियदितद्पिकुर्यात्राहिता" तिश्रुतेः ॥ १०॥ मानहतिङ्चहामिति " एषावदेवसम्बुष्याग्रांशांतादिति" तिश्रुतेः ॥ १०॥

भगवत्कृतेनप्रतिबंधद्वातेबापयितुंभ्जलद्वमातिकममाह स्कीतानितिसार्धद्वाध्याम् तत्र्वेकेनभूमिविद्योषानाहस्कीतान्सस्यादियुक्तान्ज नषदानमालवादिवयुरान्तनगरान्स्यूलान्प्रामाःस्थ्यावासाःव्रजागवांस्यानानिआकरालवसादिनांखेटाःकृषीयलप्रामाःखर्यटायानिहातॄसास्य नषदानमालवादिवयुरान्तनगरान्स्यूलान्प्रामाःस्थ्यावानिस्यद्यानानिसहजानिङ्यानानिआरोपितवृक्षासांचकारात्खलादीनि॥ १११॥ पक्षतोनदी अपरतः तारदाः वाटीः पुष्पादिवाद्यःयनानिसध्यस्थानानिसहजानिङ्गात्राम्यानिकारोपितवृक्षासांचकारात्खलादीनि॥ १११॥

बृक्षसंहितपर्वतानामितिक्रमसाहिचत्रधात्विति चित्रैधौतुभिः विचित्रानद्गान्तेषामैवविशेषणाम्हभैभैग्नाभुजायेषांताहशाद्धमायेषासि तिरागभयनिमित्तेउकेविश्रामनिमित्तानिजलान्याहजेलाशयान्महापुष्करिणीः तासामेवविशेषणांशिवज लान्शीतलंशेगाद्यनुष्णादकजलं तिरागभयनिमित्तेउकेविश्रामनिक्रियाः सुरसेविताः देवालयादिसहिताः ॥ १२ ॥ चिवनिलिनीःकमलादियुक्तदेववाताः सुरसेविताः देवालयादिसहिताः ॥ १२ ॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवती

हतन्त्रीयोग्धमः ॥ ९ ॥ हत्मातुमक्षामक्ष्यसम्बद्धम्हं मन्यमानः मातिष्डसंभक्ततत्त्रसाम्प्रतयिकाविधिरैवगतवार्परस्मैपदमार्धेमः ॥ १० ॥ तत्मातुमक्षामक्ष्यस्थानम्बद्धम्ह

a was participal parti

चित्रस्तनैः पत्ररथैविश्वमङ्गमराश्रियः। नछवेणुरारस्तंवकुराकीचकगद्वरम् ॥ १३॥ । एकएवातियातोश्हमद्वान्तंविपिनंमहत्। घोरंप्रतिभयाकारंव्याखोळूकाशिवाजिरम्॥ १४ ॥ परिश्रांतेद्रियात्माहंतृद्परीतोबुभुाचितः । र्नात्वापीत्वाञ्हदेनद्याउपस्पृष्टोगतश्रमः ॥ १५ ॥ तस्मित्रिर्मनुजेऽरण्येपिप्पलोषस्थआश्रितः। आत्मनात्मातमात्मर्थंयथाश्चरमचितयम् ॥ १६ ॥

### श्रीविश्वनायचकवर्सी

जनपदादीनतियातः सन्महद्विपिनमद्वाक्षमितिचतुर्थेनान्ययः। तत्रपुराशिराजधान्यः प्रामाभृगुप्रोक्ताः। विप्राक्षाविप्रमृत्याक्षयप्रचेव वसन्तिते । सतुत्रामद्दतिप्रोक्तः शूद्राणांवासपवचेतिवजागोकुलानि । आकरारत्नासुत्पत्तिस्थानानि । खेटाः कर्षकप्रामाः। खर्षेट्यागिरितर प्रामाभृगुप्रोक्तावा । एकतायश्रतुप्रोमोनगरश्रेकतः स्थितमः । मिश्रन्तुसर्वदेनामनदीगिरिसमाश्रयमिति । बाद्यः पूगपुष्पवादिकाः। बनानिस्य तः सिद्धवृक्षसमृद्धाः उपवनानिरोपितवृक्षसंघाः॥ ११ ॥

चित्रैर्घातुभिः सुवर्धारततार्धैर्विचित्रान् अद्रीन् । इभैभेग्नासुजाः शाखायेषातेतुमाथेषुतान् । निल्नीः सरसीः ॥ १२ ॥ The same of the sa

# सिद्धांतप्रकृप:

tenta de tradicio de la companya de गांदुहर्तीहर्तीशतागेहाश्रिशिगांदी ग्धुंनिर्गताम पदास्पृष्टः पादेनास्पृष्टः ॥ ५ ॥

शांसुखमभीप्सतः कामयमानस्यं तन्मातुमर्गाम् अहमनुष्रहं मन्यमानः प्रातिष्ठम् ॥ १०॥

स्फितान्समृद्धान् जनपदान्देशान् तत्रतेषुजनपदेषु पुरुष्टामवजाकरान् पुराशिषदृशानि क्रामान्तहर शून्यानाविक्षादिनिवासान् । ब्रजानगोपनिवासान् आकरान् रत्नाद्यालयान्षेटान् कर्षकिनिवासान् सर्वटान् निषादादि।निवासान् बाटीः पृष्पाद्याः वनानि अरगयरूपाणि उपवनानि कृत्रिमाणिवृक्षस्थानानि ॥ ११ ॥

निलनीः सरसीः॥ १२॥ aren 88 a

# भाषात्माकार

क्ष दिन मेरी मा राजिकी घर से बाहर गोदोहन के निसित्त गई थी कि काल पेरित सर्प पर उसका पादस्पश्रह या और उस विचारी को सर्पने इस लिया ॥ ९ ॥ 

मिन उस समय उसको भक्तों के कट्यामा कायना करने वाले भगवान का अनुबह मानकर उसर दिशा को प्रस्थान किया ॥१०॥

वहां विस्तृत जन पद् (देश ) पुर (गाजधानी ) प्राम (गाम ) वज (गी के स्थान ) आकर ( खाने बोहने वाली के निवास ) बिट (वितिद्वर्शों के तिवास्त ) खर्चट ( तदीतट और पर्वतों के पड़ांच ) वाष्टी ( बाडी ) वन उपवन ॥ ११ ॥ वर्ष वर्ष व

चित्र भातुओं से विचित्र पर्वत हाथियों के भंग किये शाखा मशाखा युक्त हुस, पवित्र जल जलाशय देवगंगा संवित नलना (सर-वित्रकारिक कि कि मिल्ला वित्रक वित्रक वित्रक **411) III (\$2.11** THE PARTY OF THE P

# How the Conference of the Conf

Andready and a contract of the second se वित्राःखनायेषातेः पत्ररथेः पश्चिमः तम्रादमञ्जूषेरितस्तृतीविभ्रमद्भिर्भारः श्रीःशोभायास्तृताः नालनीवात्यातः अतिमञ्जातः सर्व ाचनाः महक्रिपिनवनमहाश्चम् । क्रीहर्शनलेबेणुशरस्तम्वैः कीचकेश्चगहवरेहुरीयम् ॥ तत्रवेणुजातयप्रविषुलान्तरगर्भाः कीचकाः धार्यः सहस्र प्रतिभयाकारमयंकरकपमयालादीनामजिरकीडास्थानस् ॥ १३॥ १४॥

मया परिश्रांतानीदिश्याशियात्मात्राहरूपमस्य । तुषापरीतीव्याषाः । उपस्पष्टशासान्तः ॥ १५ ॥ ः । । । । । । । । । । । । । पारम पुज्यको प्रदेश मध्य त्यामूल आश्रित अपनिष्टः ॥ श्रारमना श्रुक गाआस्मात्यक दिस्यम् आस्मान्तेष्य मात्मानम् ॥ १६ ॥ 

### वृीपेनी ।

मः विकास सन्दिन्द्रवंशाःतथाचरघी"सकीचकैम्मांकतपूर्णरन्धैः क्षेत्रद्भिरापादितवंशकृत्यमिति ॥ १३ ॥ १४ ॥

### श्रीवीरराघवः ।

अतियातोऽतिकांतः एकीऽसद्दायएवाद्दंनलादिभिगेद्द्यरमद्द्विपिनवनमद्राक्षेत्रस्टवानस्मितत्रनलोप्रयिपगीविगावःस्थलवद्याः सद्यास्ताः कीचकाःसूक्ष्माः सचित्राः शरस्तवाः अश्ववालाःकुशाःप्रसिद्धाः विपिनमेवविशिनाध्योरमुप्रंदुःप्रवेशमतपवव्यालानांदुष्टगजानामजगरा ख्यसपांगांवाउलूकानांशृगालविशेषागां चत्वरंकीडास्थानम्यतीवप्रतिमयाकारंप्रतिमुखगच्छतांमयापादकम् ॥ १३। १४॥

तत्राहंपरिश्रांतानीद्रियागयात्मादेवश्र्ययस्यत्पपिपासयापरीतःव्याप्तः बुभुक्षितःश्रुधितश्चनचाह्रदेस्नात्वोपस्पृष्टः कर्मरिकःआचातः पीत्वाजुलमितिशेषः गतः श्रमोयस्यतथाभृतः ॥ १५ ॥

तस्मित्रिर्मेतुच्येऽरगयेविपुलस्याश्वत्थस्योपस्थेमूलेमाश्चितउपविष्टःआत्मस्थंजीवात्मनिस्थितंद्वदयकमलस्यंचाआत्मानंपरमात्मानमात्म नामनसाऽचितयध्यातवानस्मि ॥ १६॥

### श्रीविजयष्वजः

चित्रस्वनिर्गानाविधस्वरमधुरैः पत्ररथैः पक्षिभिः सहविभ्रमेतः इतस्ततस्यलेतः भ्रमराभृगाः विभ्रमङ्गमराः विभ्रमङ्गमरागांश्रीः शी-भासमृद्धिर्वायास्त्रयोक्तास्ताः शरागांस्तवा शरस्तवाः नलानिचवेगावश्चशरस्तवाश्च स्रशाश्चतेतयोक्ताःतैर्गव्हरः निविद्धीऽरगयः विशेषः वायुनाउद्भृतस्वतः स्वनाः वेगावः कीचकाउच्यंते ॥ १३ ॥ १८ ॥

तृषापरीतः पानीयपानेच्छुः बुभुक्षितो अन्नकामः अतपवपरिश्रांतेद्वियदेछोई तत्रमहारक्येनछाङ्कदेउपस्पृष्टः कृतपादप्रकालनादिकः-कात्वातर्पेगादिसकलाः क्रियाः विधायस्वाद्दकंपीत्वातेनहेतुनागतश्रमोऽपगतालस्योभूत्वा ॥ १५॥

मनुष्यसंचा ररहितेऽरग्येपिष्पलोपस्थेअश्वत्यमुलेआश्रितः खस्तिकासन्डपविष्टः समाहिताचित्तोभूत्वाक्षात्मनाविषयेऽयः आहुतेनम्न साष्ट्रदिसंस्थितमात्मानं प्रत्यंगात्मानंयथापरमद्देसेभ्यः श्रुतंतथाअचितयमित्येकान्वयः ॥ १६ ॥ Territoria in principalità de la compania del compania del compania de la compania del compania

### क्रमसंदर्भः

परिशान्तेतियुम्मकम् ॥ १५ ॥ १६ ॥ Edistriction and the contract of the contract

# सुवोधिनी

आश्चरिस्तायाह चित्रः खनोयेषांतादशैःपक्षिभिः स्हविशेषस्रमगायुक्तानांस्रमराग्रांश्रियोयासुपवमन्चतेषामतिकमगामाहनळवेगास् रागांस्तवाः कुशाः कीचकाः संरघाः स्थूलावेगावःस्तेगहरमहद्रनम् ॥ १३॥

The second the second s

एकपंकातियातोहं कियहे शातिकमोऽत्रविवक्षितः अथवापूर्वीकानामेवातिकमः पूर्वीकान् अतियातीहे पूर्वपथिकाअन्ये स्थिता विज्ञतास्था रमहाद्विपिनंतुएकप्रवेशद्राक्षंतस्यभयजनकृत्विपिनममभयजातमित्याशयेनाहधीरव्यात्रविदारितमासादि।भःभ्यस्यापिप्रतिभयजनकः आकृ रमहाक्ष्याचाह्याचाह्याचात्रात्यो। मध्ये अवस्थि अवस्थि स्थापि अयानक इत्याह व्यालो लूक शिवाजि रेव्यालाः सपीः उल्काः दिवा भीताः शि-वाःश्वाराकाः तेषामंगगात्वेनतद्वक्षितमांसादियुक्तंपूर्वभगवाधितनेनगतस्याप्यातभयानकदर्शनावः॥ १४॥

बहिषुखत्वेजातेपरिश्रातिन्द्रयात्मापरिताश्चांतानिद्यंद्रियाग्रिआत्मादेहश्चयस्यतयात्तृदूपरीतः बुसुक्षतश्चजातः कस्याश्चिन्नद्याः पाचित्याः मावञ्चा संबुक्षादिनाशीतलोभप्रतितप्रस्मात्माचपीत्माचपुतरात्मचितनार्थमुषस्पृष्टः आचम्यचितनमात्रेगोर्चातः करगाक्लदानिवृत्तिः कृत्रङ्भतादृदः सबुक्षादिनाशीतलोभप्रतितप्रस्मात्माचपीत्माचपुतरात्मचितनार्थमुषस्पृष्टः आचम्यचितनमात्रेगोर्चातः करगाक्लदानिवृत्तिः देखद्वियाणांत्रस्तानपातादिना ॥ १५ ॥

कृत्रसाम्बद्धानीमूर्वामनुष्यसंवधामावमात्रेगाकोलाहलपापादिसंबधामावात् उत्तमहेनार्गयंतत्रापिपिप्पलोपस्थेआस्थितः आधितः पात्रकारिक प्रमान्य क्रिक्त स्वाप्त के विकास के क्षेत्रकार के क्षेत्रकार के क्षेत्रकार के क्षेत्रकार के क्षेत्र विकासिक क्षेत्रकार के क वशास्त्राधारकः एवंद्रियमकाद्याहमञ्जानानंतरंपुनर्गृढोपदेवासमरग्रोनयस्याहमात्मापीठभूतः सकोयमितिजिज्ञासायांआत्मन्यवप्रकाशमानंभगवद्वंपहण्यातस्मात् एवंद्रियमकाद्याहमञ्जानम् अन्याधानम् अन्यासम्बद्धातस्य सिक्टन्यश्चातस्य मत्यन्नायां स्थानम्यास्य यवास्त्रामानसीम् त्रिः यथाश्रुतमितिवचनात् तह्युरुवाचितायामरिव्धायामिकरत्पन्नातस्यामुत्पन्नायांचरगांभोजभ्यानमारव्धमः॥ १६ The second of th

# श्रीविश्वनाथानकवर्ती

数2147年中的一个人的一个大学的一个 क्रिजी। पत्र रथे। पश्चिमिहेतुम्तेविश्रमेकः प्रवृक्ष्य इतस्तत्रश्चलद्भिमेगेः श्रीः शोमायासीताः अतियातः भतित्रस्ययातः स्वन काहरूः । स्वादिभित्रोह्नरंशिपनमङ्गक्षमित्रान्त्रयाः । स्तम्बोगुच्छस्त्यादिनः वेगावःकोचकास्तस्युयस्वनत्यनिलोकतास्त्यसरः धोरेकुप्रस्यसः । यतः प्र स्वादिभित्रोह्नरंशिपनमङ्गकाराः । स्यालाहीनाम् अजिल्कीहास्यानम् तेषतेषवत्राचस्ययास्यत्रस्यास्य । स्वतः प्र कार्ति। मण्या । व्याकार्तिनाययज्ञिके हिन्यानम् तेषुतेषुवद्याचेष्ययं पुनीत्यास्पद्युचि स्टब्स्याः धीरेषुष्पेस्यसः। यतः प्र तिस्याकारम्यवक्ताप्रयमात्राचिष्टत्वादि।तिभाषाः॥ १३ ॥ १४॥ १५ ॥ तिसयाणः मन्मतहास्त्राचनमाञ्जयमात्राविष्टत्वादितिमात्रः ॥ १३-॥ १५ ॥ १५ ॥ मन्मतहास्त्रवामगचनमाञ्जयमात्राविष्टत्वादितिमात्रः ॥ १३-॥ १५ ॥

ध्यायतश्चरणांभोजंभावनिर्जितचेतता।
औत्कण्ळाश्चकलात्तस्यहृद्यासीन्मेशनैर्हारैः॥१७॥
प्रेमातिभरनिर्भिन्नपुलकांगोतिनिर्वृतः।
आनंदसंष्ठवेलीनोनापश्यमभयंमने॥१८॥
रूपंभगवतोयत्तन्मनः कांतंशचापहम्।
अपश्यन्सहसोत्तस्थेवैक्लब्यादुर्मनाइव॥१९॥
दिदृक्षुस्तदहंभूयः प्रशिषायमनोहृदि।
वीष्यमाशोपिनापश्यमवितृप्तइत्रात्रः॥२०॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ती।

पिष्पलोपस्थे अश्वत्थमुले आश्रितः आविष्टः । आत्मनावुद्धचाआत्मस्थम् उत्पन्नप्रेमत्वान्मनस्यविच्छदेनेवकृतवासमात्मानपरमात्मान-म् । तथापियथाश्रुतंमन्त्रोपदिष्टच्यानमनातिकम्यअचिन्तयम् ॥ १६ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः

कथंभूतानिल नीःपत्ररथैः पिक्षिभिरुपलिक्षताः विभ्रमिद्धिभ्रमरैः श्रीःशोभायासांताः स्फीतान्जनपदादीन्निल्यंतान्भावान्भितयातः सत् विपिनमद्राक्षिमित्यनेनान्वयः कथंभूतंविपिनम् नलादिभिर्गव्हरम् दुर्गमम् तत्रविपुलांतरालगर्भः वेणुभेदः कीचकः ॥ १३ ॥ प्रतिभयाकारम् भयंकररूपम् व्यालादीनामिजरंकीडास्थानम् व्यालोद्धृष्टगजः सर्पावा "व्यालोद्धृष्टगजेसपेँद्दिमीद्दिनीकरकोशात् ॥१४॥ नद्यास्तद्विपिनगतायाः ॥ १५ ॥ आत्मानपरमात्मानम् आत्मिनहृदि आत्मनाचेतसाअचितयम् ध्यातवान् ॥ १६॥

### भाषादीका

विचित्र स्वन वाले पक्षी और भ्रमरों से शोभित सरोवरी, नल (नरसल ) वेणु सरकंडों के स्तंभ और कुश की चकों के गण्हरों को ॥ १२ ॥ अंकेले ही अंतिकम कर मैने एक बड़ा विपिन देखा कि जो बड़ा भयंकर और घोर था और व्याल उल्लूक शिवाओं का कीड़ा

ह्थान था ॥ १३ ॥ मेरा शरीर और सब इंद्रिये परिश्रांत थी में तृषा और क्षुधा से व्याकुल था नदी के हूद में स्नान आवमन कर जलपान कर गत-श्रम हुआ ॥ १४॥ उस मनुष्य ग्रन्यवन में पीपल के नीचे बैठकर अपने आप यथाश्रुत आत्मा का चिंतन करने लगा ॥ १५॥

# श्रीधरस्वामी ।

माविनअक्टानिर्जितवशीकृतंयचेतस्तेनऔत्कारहेयनाश्चकलायुक्तेशक्षिणीयस्य ॥ १७ ॥ प्रमणोऽतिकारेणानिभिन्नपुलकानिर्थगानियस्य । आनन्दानांसंप्लवेमहापूरेपरमानन्दे । उभयम्आत्मानंपरञ्च ॥ १८ ॥ मनसःकान्त्रमभीष्टम् । शचाशोकस्तामपहन्तीतित्यातत् उत्तस्थउत्थितवानस्मि ॥ १९ ॥ इदिमनःप्रणिधायस्थिरिकृत्य । अवितृप्तोऽहम्भातुरहच्यभवमितिशेषः ॥ २० ॥

दीपिनी

महापूरेमहाप्रवाहेहत्यर्थेः ॥ १८॥ २१ ॥

## श्रीवीरराधवः।

मार्वानिर्जितेनाश्यासवरीकृतेनचेतसाचरणांभोजंध्यायतः चितयतः श्रीत्केठ्यात्र्रेमपूर्वकानुष्यानास्कोरधूणामानंद्रजनेवजलानंकला विद्वीययोस्तेवक्षिणीयस्यतस्यमेममङ्गदिशक्तैः हरिरासीदाविरासीत् ॥ १७ ॥ विद्वीययोस्तेवक्षिणीयस्यतस्यमेममङ्गदिशकाः पुलकारोमांचायस्मिस्तदंगरारीरतस्यस् अतीवतिष्ठेतः सुखितः आनंद्रसम्बे आनंद्रमव तवाममाधिक्येनहेतुनानिर्मिषा अभिन्यकाः पुलकारोमांचायस्मिस्तदंगरारीरतस्यस् अतीवतिष्ठेतः सुखितः आनंद्रसम्बे आनंदमव हर्मानोममः हेमुनेदभयदेहमात्मानेचनापर्यनप्रदेवागस्मि ॥ १८ ॥

### श्रीवीरराघवः।

यदाविर्भूतंमनः कांतमनसोतीव वियमतएवशुचापहंशुचायाः शोकस्यापहंतु भगवतोक्षपंतत्पुनरपश्यन्वैक्रव्याचह्रशैनकृताद्धाष्ट्यो द्खितमनाः सहसाभाग्रतस्याबुत्थितवानस्मिकवल्यादितिपाठांतरम् ॥ १९॥

तदाऽसहायत्वात्तवृ्वंभूयः पुनः द्रष्टुमिच्छुरहंहृदिमनः प्रशिधाय।स्थरीकृत्यवीह्यमास्थितयत्रीपनापश्यमतप्वातुरह्वविषयातुरह्वा विवृत्तां इभवमिति ॥ २०॥

### श्रीविजयध्वजः

यथाश्रृतमचितयामित्येतद्दर्शयितुंजाग्रदाद्यवस्थाखरूपंनिरूपयति खप्नदिति खप्नाद्यवस्थाआत्मनः परमात्मनः सकाद्यादात्मनी-जीवस्योत्पद्यंतेइत्यन्वयः तंत्रेगोपासत्वादात्मशब्दस्यद्विरावृत्तिः कर्तव्या जीवमनः स्थितमायास्यद्वष्टश्रुतवस्तुसंस्कारोपादानकोजाश्र-त्वदार्थसङ्शकरित्रगाद्यनेकपदार्थङष्टिकपः खप्नः सर्वेन्द्रियोपरतिकपत्वात्खप्नजागरित विषयप्रहण्रहिताशय्यापरपर्यायासुषातः नामकपिकयासुवृत्तिर्यस्यसतथोक्तः आभासः प्रत्ययः नामकपिकयाविषयप्रत्ययोजात्रत् एतदवस्थात्रयं कार्गावहानमृदादिवतकायाः नुस्यृतं किंतुततोविलक्षगांतदित्यभिप्रेत्याह संविदिति समीचीनाप्रकृतिप्राकृतमिश्ररहिताविज्ञानं यस्यतत्त्रथोक्तं सम्यक्निदीषगातमान नवेन्ति संवित् "तदात्मानमेववेदाष्ट्रंब्रह्मास्मी"तिश्रुतेः शास्त्रंसर्वनियंतृ पद्यतद्दिपदंपरममुत्तमंप्राप्तव्योत्तम् एवंजाग्रदाद्यवस्थाकतृत्वे-नात्मादिक्योत्यते पकारकंविशिष्ट श्वानघनंसर्वीनर्यामि प्राप्तब्योत्तमंतुर्येबह्यस्वरूपंश्रुतंतदेवाचितयमितिभावः ॥ १७॥

व्हद्वविविचयदर्शयति नेति चित्रमाश्चर्यस्पं चित्रमविमिश्रम्शानात्मकंवा चित्तंचेतनंजीवंत्रायतः तिवा चित्रशानंतनोतिरातिशानिः नांबद्धिकारं।तितदन्येषांददातिगुरुमुखेनेतिवा चित्तरतंवा "सिह्सर्वमनोष्ट्रत्तिप्रेरकः समुदाहत 'इतिस्मृतेः चिनोतीतिचित्रचेतास्र हाबह्या तित्वित्वतित्ववर्तते चिनातिसृजतिरमयतिवा तस्मादुत्तममितिवा भगवदैश्वर्यादिगुगासामग्रीमत्पदंरूपंहरेरितिशेषः तत्ततं व्याप्तंसगन वतः हरेः पदंवापवंविधंतत्प्रकृत्यादिस्ंबंधविधुरत्वादिंद्रियार्थे जाप्रदवस्थांनानुगच्छेत्रस्वप्नावस्थांनसुषुप्त्यवस्थां चितितोर्थोमनोर्थः इत्यभिधानात् नमनोरथमतएवननिरोधंमरगामनुगच्छेदित्यस्यप्रत्येकमन्वयः चराब्दोमिथः समुचयार्थे ॥ १८॥

नजुकालतोषिखण्ना द्युत्पत्तिद्शेनात्तत्कर्तृत्वंहरेः कथमित्याशंक्यसकलप्रपंचकर्तृत्वेनमुख्यकर्तृत्वात्तद्तःपातिखप्नाद्यवस्थाक कुल्वेकि वक्त व्यक्तित्यामि प्रत्यप्रपंचमृष्ट्यादिकर्तृत्वमाह । सइति । सृष्ट्यग्रेसपकोभगवानासीदित्यवातरान्वयः । सपुनःसिसृक्षःश्रेतयासितयाञ्चन वार्ध्यक्तीाडिष्यम् क्रीडितुमिच्छेत्रात्मनः स्वस्माखोदरात्वद्यादिपरमाणुप्यतिमदंजगत्सृष्ट्वा अंतर्यामितयाप्रविदय प्रादुभावेश्यावहत्यपुनश्च त्रज्ञाध्वासिहृत्यप्रलयकेवल एकाकी उदास्ते जीवप्रवृत्तिप्रत्युदासीनोवर्ततइत्यन्वयः जग्ध्वाउदास्तइतिसंध्यभावः प्रकृत्यादिसाधनात्यस् तरेगा विस्तर्दुराक इतिमाहात्म्यंद्योतायितुं सृष्टिस्थितिसंहारकर्तृत्वमवनज्ञानादिकर्तृत्वंचास्तीति ॥ १९॥

इद्वानीसुपास्तिफलमाह ध्यायतइति भावेनभक्त्यानिर्दृतंपरमानदमाप्तंचेतोयस्यसत्यातस्याजत्केठायाः जातानामश्रूगांबाष्पागांकला भिविद्युमियुक्ते अक्षिणीयस्य सतथातस्य शनैरव्यत्रेणस्वचरणकमळध्यायतोमेहदिहरिरासीत्प्रत्यक्षोभूदित्येकान्वयः॥ २०॥

# कमसंदर्भः

ध्यायतहाति ॥ शतैः सीर्ङ्यादिकमेगा द्यासीत्स्वयमेवाविर्भृतवान् ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

# सुवोधिनी

त्तत्रश्राणांभीजभक्त्वानिजितचेतसाध्यायतोभक्त्वानंदुः पूर्गोजातः तेनप्रेमौत्कंठचात्रश्रांनदाश्रुप्रभृतयेजाताः ततअत्युत्कंठचाश्रकलाक्ष क्यहृद्यसर्वेथाविद्देशेनामावेचितनानुनृत्यथेभगवान्शनेराविरासीतः॥ १७॥

मानस्कृतिपत्रम्त्तीश्रभ्यंतराद्रगवदाविभीवेमानसाविभूतयोरेक्ययज्ञातंतदाह । प्रेमातिभरेति । भयंहिभगवत्साक्षात्कारः एवसवब्रह्य भाषात्वकासियथाशंगाजलेदेवतारूपायागंगायाध्याने कियमाग्रोसाक्षाद्भगवत्पद्याविभवति तथासर्वेषामात्मनामात्मभूतेथात्मस्यभगवति स्वाक्षावीका पान । १८०० ति । १८०० ति । १८०० ति । १८०० ते । १८० ते । ध्यायमाण्यात्रात्रात्रात्रात्रपरमप्रेम्णः अतितरांमहापूरः सांतिध्यक्षणानामुत्तरेअत्युत्कृष्टत्वात्तेनपूरेणानिभिन्नाः पुलकाः रोमांचाः तस्य माणिवास्त्राचा विक्रित्तातरत्यर्थः प्रवसर्वागेआनंदेपूर्णीपरमानिवृतिर्जाताशांतानदमयोजातरत्यर्थः सचपुनरानंदसंप्रवेगागातप्रवोद्धतकल्याजल सोमक्ष्रकारणविक्रित्तम्यवातितथा आनंदसंप्रवेजीयः वस्त्रभवनात्रं भगनंववर्णमंत्रपर्यतापश्यहेमनेशतिसंकोजन शासकुष्या । इत्रागायांप्रक्षिण्तंसत्रागिवभवतितथा आनंदसंप्रवेलीनः तदाआत्मानं भगवंतंचउभयंनापश्यंहेमुनेशतिसंवोधनंसम्वादार्थेकदाचिन्सुनीना विभावः आनंद्वेतन्यभावः प्रविष्टः न चित्त्वेनस्फुरितइत्यर्थः॥ १८॥

वर्षाः तुर्तीभगवृद्धिः छ्याभगवृतितिरोमृतेखस्याप्यानदांशितिरोभृतेमातस्यपिमृतिस्तिरोभृतावळ्षत्याह्याभभवात् तदाशगवतारूपंसनस्थाभकृत्वे त्ताभाषामाः तताभाषामानस्वतुः खनाराकमपश्यनकि चिदितोगतशतिवृद्धचासहसो तस्थो उत्थितवानस्मिनव्यतः पदार्थस्यकुले विविधनसंभावनातआह मणकार्यमानस्वतुः खनाराकमपश्यनकि चिदितोगतशतिवृद्धचासहसो तस्थो उत्थितवानस्मिनव्यतः पदार्थस्यकुले विविधनसंभावनातआह मंग्रकारामाणः - अ मंग्रकारामाणः - अस्ति स्वत्यान्य के विकलताहिसचेविसमाहिका । किंच । दुर्मनाहवज्ञातः दुर्गतमनोयस्ययथासचिस्ताहोसवस्याविष्ट विक्रह्यात् विक्रवत्यानस्याधावन्यसीतस्यविस्ञातिष्टिस्टल्वं । पतः कियतकालसमाधानज्ञातवानकालकार्यसमाधानज्ञातवानका विहारगाताब्रह्म । प्रमाणकार्यस्य विद्याचित्रकातामानिद्रपट्वं । पुनः कियतकारुसमाधानेकातवात् भगवानाविभूतः इतिवेनचेतवानवेजा चित्रंत्रहाभियमवातितथाभगवन्म् स्तिवेनचेतवानवेजा विभिन्नि ॥ १५ ॥

# मुबोधिनी।।

ततः सावधानोभूत्वापुनर्भगवद्दर्शनार्थध्यानमारव्धवानित्याद्ददिद्धुस्तदहंभ्यदि।तद्भगवत्स्वद्भपमाविभूतंदिदेधुःतत्रभगवद्भानमेव साधनीमीतद्भात्वापुनमेनाधृदिमगवत्म् चिव्याप्तेस्थिरीकृतवान्ततोमानसीम् निपश्पत्रापिनभगवंतंदृष्टवान्तदाद्यः । वीक्ष्यभागाोपिनापद्यः मितितदासंतापउत्पन्नद्दर्याद्यः अवितृप्तद्दवातुरदितयथात्वातुरः ज्वरादिरोगवान् कदाचितद्राक्षादिकदेत्ते अवितृप्तः सत्पुनः प्रार्थनायांन प्राप्नोतिततस्वरसामिविष्टोमदद्दुःखंप्राप्नोतिनदिज्वरितस्यवद्वीद्वाक्षातुपथ्यायाकितुरोचिकामार्गस्य संवादेनसत्यत्वद्वानात् अगवद्वविभीदाः धकाचित्रतृप्तिजीतेवसुक्तवांतवत्तव्यापिनविशेषग्रतृत्यः॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ती

भावनिर्जितेनप्रेमवंशीकृतेनचेतसामनसाहृदिमनस्येवध्यायतोममहिरः शनैः क्रमेशासीत्आगत्याग्रेवभूव । यद्वाशनीरितिप्रथमहृशादि-वेभूवततोहृद्वृत्तिषुतिसृषु नासिका श्रोत्र चश्चः ज्विपस्वांग सौरक्ष्य नृपुर सीस्वर्य श्रामुख सौन्दर्य ग्राहशार्थमाविर्वभूव । कीष्टशस्यमम् श्रीत्कंठयेनअश्रूशिकलयतो धारयतोऽक्षिशीयस्यतस्य ॥ १७ ॥

प्रेम्गोऽतिमरेगा अत्याधिक्येननिर्मिन्नानिअभिन्नातिपुलकयुक्तानिचअंगानियस्यसः । प्रेमकपायथेवसर्वाययंगानितदानीमभूविन्नित्यर्थः। यद्वानिःशेषेगाभिन्नानिविदिग्गिनिववोदुमसामध्यदिवेतिभावः । आनन्द संप्लवेलीनोलस्थानन्दीमुरुर्छ इत्यर्थः ! उभयम्आत्मान्परञ्चनाप इयम् ॥ १८ ॥

जुनक्चसहसैव तद्रूपम् अपश्यन् उत्तर्थे व्युत्थितोऽस्मि । यथाप्राप्तच्युतिनिधिर्जनोदुर्मनाभवतितथैवेत्यर्थः ॥ १९॥ प्रशािधायस्थिरीकृत्य ॥ २०॥

## सिद्धांतप्रदीपः

भावेनहरिभक्तियोगेननिर्जितं यतस्ततोनिवार्यचरणांभोजेस्थापितंयचेतस्तेन ॥ १७॥

ततः किंवृत्तमित्यत्राहं प्रेम्गोऽतिभरेगाधिक्येननिर्भिन्नाः पुलकायेषुतानि अंगानियस्यसः निर्वृतः अत्यतसुखसंपन्नः आनंदसंष्ठुवेलीनः उत्तरीत्तरशतसंख्ययानंदवल्यांपठितानामानंदानांप्लवोऽविधभूतपूरः तस्मिन्लीनः सन्तुभयंध्यात्ध्यययुग्मेनापश्यम् नहष्टवानस्मि ॥ १८॥ तदनंतरं किंवृत्तमित्यत्राह यत्पूर्वेदष्टं भगवतोऽ साधारग्रं रूपंहिरगयसम्भुहिरगयकेश इत्यादिश्चतिप्रोक्तमनसोऽतीवहष्ट्युत्तंशोक्तमष्ध्तीति शुकापहं तदपत्रयन् वैक्रव्यादधाष्ट्यात् दुर्मनाइवोत्तस्थाबुत्यितोस्मि ॥ १९ ॥

ततः किनुसमित्यत्राहः स्तन्यामृतपानतः अवितृष्तद्वं यथावालः तथारूपद्दीनाद्वितृष्तोऽतपवातुरः सन्भूयः दिस्सः द्रष्टुमिष्ड्यः सनोद्धदिप्रीग्राधायस्थिरीकृत्यवीक्ष्यमाग्रोपिनापद्यं नदण्टवानस्मि ॥ २०॥

### भाषारीका

भाव मिक्त से निर्जित चित्त से जब में श्री भगवान के चरण कमलों का ध्यान करने लगा और उत्कंठा से अश्रुओं की कला जेजों में बहुने लगी तब मेरे हृदय में हाने: श्री भगवान का उदय हुआ. ॥ १७ ॥

बहुत लगा तब पर कर पर प्रेस के अतिमर से मेरा शरीर रोमां चित होतेपर में परम सुखी हुआ आनंद के संप्लव में दूब गया मुझे इस लोक घरलीक अपने कुछा की कुछ खबर न रही ॥ १८॥

प्रधाय का अर्थ है। फिर मनः कान्त शोकहारी भगवान के उस रूप को जिसको में ध्यान में देखता था सहसा न देखकर विकलता से दुःखित अन् होकर उठ खंडा हुआ ॥ १८॥

किए में उस रूप के देखने की इच्छो कर हृदय में मन को प्रशिधान कर देखने का शत करता था पर न देखकर तब में बड़ा आबि चुन्न होकर आतुरसा हो गया ॥ २०॥

# श्रीधरस्वामी

तिसमाचिरःसंवेदनस्याविषयभूतक्ष्यरः ॥ २१ ॥

हन्तेतिसातुक्तम्पसम्बोधने । साहातिमाद्दःदुंसाअर्द्दति । यतोऽविषकाअद्गधाःकणायामलाःकामाद्देशीरेणतियांकुर्योगिनाव्यानि-दर्यन्त्रयोगानामः ॥ १२ ॥

कृतस्तिहिराणोऽसितभारः । साक्षद्रत्वित्यस्यतियस्यतम् कामायसियम्सरागायः । स्वस्कामेनकिमिस्यत्यास्यः । मनुकासः पुसारः । इञ्छ-स्यतकामान्द्रः ॥ २३ ॥

The Property of the State of th

**建设施**发展的原始的现在分词是一个

एवंयतन्तंविजने मामाहाग्रोचरोगिराम् । गम्भीरखद्रशायावाचाशुंचः प्रशमयन्निव ॥ ३१ ॥ हुन्तास्मित् जन्मनिभवात् मामाद्रष्टुमिहाहेति । Mary garden, see a chia estare त्र्यविपक्रकषायागाां दुर्दशीं ऽहंकुयोगिनाम् ।। २२ ।। । सक्यदार्शतं रूपमेतत् कामायतेऽनघ । मत्कामःशनकैः साधुः सर्वान् मुज्जति हुन्क्रयान् ॥ २३ ॥ सत्सेवयादीर्घयापि जातामयिहढामतिः। हित्वावद्यमिमं लोकं गन्तामज्जनतामिस ॥ २४ ॥ मतिर्मिय निबद्धेयंनविषयेतकाहिंचित्। प्रजासर्गनिरोधेऽपिस्मृतिश्वमदनुप्रहात् ॥ २५ ॥ श्रीधरस्वामी ।

अद्भिर्धयापिसतांसेवया । अवद्यमनिद्यम् । लोकंदेहम् । मज्जनतांमत्पार्षद्वांगन्तासि ॥ २४ ॥ प्रजानांसर्गेसृष्टौनिरोधेसंद्दारेऽपिप्रजासर्गस्यनिरोधेइतिवा ॥ २५॥

# दीपिनी।

कुरोगिनामिति कुशब्दोऽयम्ईषद्थेनतुकुत्सायाम् । ईषद्योगयुक्तानांतत्कालयोगप्रवृत्तानामित्यथेः। योगमार्गपवृत्तस्यकुत्सायायमावाः वितिन्या स्थाने सः ॥ २२ = २५ ॥

# The state of the second of the second of the second second of the second per a mate shall transfer to be the children of a symbol of the contract of th

एवद्र रहेपुनः पुनः यत्ततयत्नंकुर्वतमामुहिइयगिरामगोचरः यद्वाचोननिवर्ततेइत्युक्तरीत्यावागविषयः अपरिच्छेद्यत्वादितिभावः अहत्यः स्क्रितितात्वयमगवानितिविद्योष्यमध्याहर्त्तव्यंगगनेगंभीरयावाचाश्चः शोकान्प्रशमयिवाह ॥ २१ ॥

अक्तमेबाहृहंतेतिचतुर्मः इहलोकेऽस्मिन्जन्मिनभवान्मांद्रण्डुंमाहितिनाईतीतिमाशब्दीयंनञ्**पर्यायः अतोमाङ्**लिङ्गिङ्गितलुङभागः दश्जेना नहेत्सहेतुंबद्दकात्मानीविधिनष्टि अविपकोऽविनष्टःकषायःदर्शनप्रतिबंधकःपुरायपापात्मकःकषायःकषायवहुरपनेयःकर्मीपाधियेषातिषांकुयी गिनामकं दुर्देशे हुः खेनापिद्र र्युमश्क्याः ॥ २२ ॥

नामक्षक्रभागुः अनाणप्रभावन्य ॥ २० ॥ तिहिसकत्कर्यस्थारमात्र्यत्राहसकदिति।हेअनघसकद्र्पमदीयदर्शितमितियत्तत्त्वमत्कामायमद्भिषयकदिङ्सायै एतत्कामायतेइतिपाठांत र्वतंत्रतेतुक्यस्य स्वादातं क्रम्प्रतत्कामायद्र स्टुमितिरोषः निष्टत्तपेरगात्स्वार्थग्रिजतात्कमेरेतुमग्रिणचिशाचश्चतिवैकार्थपरस्मैपदेकिकाममा केत्राह्यत्याहमस्कामः महिष्ठुकामयमानः साधुर्चीरतः पुमान् रानैः सवीन् हृ च्छ्यान् हृद्रतान् रागादिदीपान्सु चितानर स्यति ॥ २६ ॥ विताहयत्यकाहमस्कामः महिष्ठुकामयमानः साधुर्चीरतः पुमान् रानैः सवीन् हृ च्छ्यान् हृद्रतान् रागादिदीपान्सु चितानर

यतस्वेतवादीर्धियाऽव्पक्तिक्रयेवसर्तासेवयाम्यिद्धामितः जातातस्मादिममवद्यंलोक्यतद्दिलोकोदेहस्तंश्द्रदेहिमेख्थेःहिस्वात्य वस्वामज्जनतामकृत्यतागितागीमध्यासकल्पातरइतिशेषः॥ २४॥

यद्युग्रहाद्वेती क्राहिचित्रज्ञासरीतिरीधेप्रलयकालेपितवम्यितिबद्धानिश्चितेयमति स्मृतिश्च नविप्रचेतननश्येतकहि चित्मियितिबद्धाः मातिः प्रजासगिनिरोधिमपि स्मृतिश्चनविष्येतेयिवान्वयः ॥ २५॥

# श्रीविजयध्वजः

होस्या।विद्याधितंसारियानिभिन्नः समुद्रलसम्जातः पुलकः ग्रेसांचः प्रेमातिभागीतिभागीतिभागोताधिन्नपुलकोऽग्रेयस्यसत्थाः आनेद्ससम्लबेसुस्रप्रल वीहकारानाहं तसेवापरसम्भवंदितीयसमाधिकशानापरसंस्थानामत्वादित्यन्वयः ॥ २६ ॥

त्वाःपर्यक्षितम् द्वितित्राहः कप्पितिः मनःकार्वमनोहरीहरेथेद्वपमद्वाक्षेतत्वहःसाक्षप्रयत्वकार्याः वुःवितातः कर्याः मुक्तिमाः त केवल्यान्सोक्षादियोत्तर्थावृद्दिष्टामित्यन्थयः॥ २२॥

्रा हो कपोदि रहा हित्समः प्रशासियतः आतु केलेगिनाक्षावित्सः असंतुष्टोबीक्षमार्गोऽध्यहेनापस्यमित्यन्वयः ॥ २३ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

हुरेभकिवात्सल्यमाश्चर्यमितिदर्शयति एवमिति गिरांवाचामगोचरोऽविषयोऽहरूयोगंभीरयाअगाधयाश्वरयायामधुरयावाचामानसीः श्चांचः प्रदामयन्निव नष्टाःकुर्वन्निवस्थितोहरिरंवविजनेजनसंचाररहितेद्रष्टुंयतमानमाहेत्येकान्वयः॥ २४॥

किमाइइरिरितितत्राइ इंतेति इंतिवस्मये भवानिइभूलोकेअस्मिन्जन्मनिशूद्रयोनीमांद्रश्रुंनाईति कुतः क्रवेशामोगेनायतेगच्छतीतिकः वायःपापं अमुक्तपापफलानां कुयोगिनांजन्मनाऽनिभक्षानेनवाकुत्सितःयोगोध्यानादिकप्यामस्तीतिकुयोगिनः ॥ तेषांपुंसांदुईर्शः द्रष्टु मदाक्यः॥ २५॥

### क्रमसन्दर्भः।

हन्तेति । मक्तिः प्रवृत्तात्मरजस्तमोऽपहा इत्युक्तत्वात् कषायेऽत्र सात्त्विको वनवासाद्यात्रहः । वनंतु सात्त्विको वासोप्रामोराजसङ-च्यते । तामसंद्यूतसद्दनं मन्निकेतन्तु निर्गुग्रामित्युक्तेः । उत्कग्ठावर्धनार्थञ्चेदम् ॥ २२ ॥

तथैवाहसकृदिति । येनकषायाव्यपि नश्यन्तीत्याहं मत्काम इति । हृञ्छयान् अन्यवासनाः ॥ २३ ॥ मतिरिति अस्खलितामतिरिति खयमुक्ता या सैव । मतेः फलमाह हित्वेति ॥ २४ ॥ ननु पद्यन्तरा एवसा नश्येत् तर्हि कि कर्त्तव्यं तत्नाह मतिर्मयीति । मतिरिति कि वक्तव्यं स्मृतिश्चैतज्जनमविषया॥ २५ ॥ २६ ॥

### सुबोधिनी।

तथापियत्नंनत्यक्तवान्दत्याह।एवंयतंतिमिति।विजनइतिमनुष्यांतरवाक्यसंभावनाभावःकोयंसहत्याकांक्षायामाहं अगोचरोणिसामिति य तोवाचोनिवर्त्तत "इतिश्रुतेः तत्स्थावरंत्रह्मभगवच्छास्रसिद्धमितितस्यवाक्यमाहगंभीरङ्क्ष्रग्रायावाचागंभीरत्वेननप्रतिष्वनिः इक्ष्रग्रत्वाञ्चा कारापुरुषस्यवागितस्य शोकोयं किमयाभ्रमात्किचिद्नुभूतं आहोस्वित्स्वप्रदित्यास्तिनशास्त्रंप्रमाग्रामितिमहत्तुः खंदिदस्याकृतंचपवे नाविधाःश्रुचःताः प्रश मयश्रिवअस्तित्वेनशमनमग्रेपवसंभविष्यतिहदानीनास्ती तिचतस्मादाहशमयश्रिवेति ॥ २१ ॥

भगवद्वाक्यमाह। हंतास्मिश्चिति हंतेतिस्नेहेनदुः खितस्यसंवोधनम् अस्मिन्जन्मिनमाद्वेष्ण्यवाहितिनवाहहेति अन्ययामरगाप्यतमञ्जव नगवद्वाक्यमाह। हंतास्मिश्चिति हंतेतिस्नेहेनदुः अवियककषायागांनिविशेषेगापकारागादयोयषामहदानीं भिक्तिकानिदेशद्वमाल्याभि तिष्ठेत अतोविक्तं ठेन्यत्रवाजन्मांतरे भविष्यतिहहादर्शनेहेनुः अवियककषायागांनिवशेषेगापकारम्यतहाति कषायपाक्तः कर्मागांतिश्चतेः पाचक भूतास्तिरोहितास्तिष्ठंतिपुनः कालांतरेनिभिन्तांतरमासाद्यप्रबुद्धाभविष्यंतिअतस्तेषांपाकोम्यतहाति कषायपाक्तः कर्मागांतिश्चेतः पाचक भूतास्तिरोहितास्तिष्ठं अपकेपिकषायसाधनेष्वतिनिर्वधश्चेत् कदाचित्रदुः खेनद्रष्टुशक्येतापितदाहदुदेशहतिकुयोगिनाभित्रअत्वर्णयेवि कर्मागांकर्णकष्टि अपकेपिकषायसाधनेष्वतिनिर्वधश्चेतः कर्मागांकर्णकष्टि । अर्थे ॥ २२ ॥ हतानांतस्पात्रकषायपाकपूर्वासिद्धः ॥ २२ ॥

सकृद्दर्शनंतुप्रमेयवलादित्याह।सकृद्यद्दितिरूपमितियदिदंरूपंसकृत्द्दितितत्तेकामोत्पत्त्यर्थतद्गतेक्काभिशोषार्थयेनकाभैननात्रस्थातुन सकृद्दर्शनंतुप्रमेयवलादित्याह।सकामदितमयिकामःशनकैरितिकामद्वारायथायथाद्वप्रविष्टः तथातथाकामान्युचतीति॥केच।प्रथमतः शक्तुयातकामनायांकिस्यात्तदाह।मत्कामदितमथिकामःशनकैरितिकामद्वारायथायथाद्वप्रविष्टः तथातथाकामान्युचतीति॥केच।प्रथमतः साधुभवितसाधुभिरेवप्राप्यत्वात्रागादिभिश्चसाधुत्वापगमात्ततः सर्वानेवहृद्द्वयान्यादिन्मुचिति॥ २३॥

रावनाः वातानभागावान्य वात्रां क्षांतवदर्शनं । तत्राह । मितमियिनिवर्द्धयमिति इदमेवज्ञानंतदाय्यनुवित्रिध्यतेनाञ्च क्षांतवदर्शनं । तत्राह । मितमियिनिवर्द्धयमिति इदमेवज्ञानंतदायनुवित्रध्यतेनाञ्च क्षांत्रकानाः न्यां क्षांनादीनामियम् ज्ञानमिवतद्पिभविष्यतीत्यनुष्रहस्तद्भाह् स्त्ये व्यामायिनितर्धस्य व्यामत्यायुज्यज्ञीवानामिविद्ययानितर्थाम् स्मृतिश्चोति सर्वपदार्थानां पूर्वानुभूतानां स्मर्गाचनविष्यात्य क्षित्रविद्याविद

# श्रीविश्वनाथचक्रवती ।

थातृध्यभद्यम् किमाहेत्यतआह । हन्तिवसानुकम्यसम्बोधनम् । अस्मिनजन्मनिसाधकदेहसाइतिमद्रिष्ट्रनाहिति । निविषकाःनद्ग्याः क्रवायाभकाकाः किमाहेत्यतआह । हन्तिवसानुकम्यसम्बोधनम् । अस्मिनजन्मनिसाधकदेहसाइतिमद्रियाद्वाधनिस्य ।। २२॥ महियोयेतवाकुयोगिनाम् अहेतुर्देशः अद्रश्यतुष्ट्योनद्त्रामेवेतित्वेतुकुयोगीनभवसीतिभावः ॥ २२॥

### श्रीविश्वनाथचकवत्ती

तर्हिहाहापुनरप्येकवारेदर्शनंदेहिहत्यतभाहसकृदिति। पतदेकवारदर्शनम् ।तेकामायत्वन्मनोहयं साधियतं योग्यमित्ययंः नतुमुहुर्दर्शनम् अतिकारठगस्यानितवृद्धरामेषा ऽप्यनितवृद्धरेतस्यतारुपयं नस्यादितिभावः । अत्यवज्ञात्रभेमग्रोमकायसाधकदेहेपकवारमेषदर्शन द्वामीतिममनियमः । यथासाधकदेहेवालभूतः प्रेमावियोगीत्कगठग्रेनलञ्घातिवृद्धिः सिद्धदेहेत्वग्राः सन्द्वाधारमक्षमुहुरपिमादर्शयतिस्य क्षातिसमित्रयिक्षम् । यथासाधकदेहेवालभूतः प्रेमावियोगीत्कगठग्रेनलञ्घातिवृद्धिः सिद्धदेहेत्वग्राः सन्द्वाधारमक्षमुहुरपिमादर्शयतिस्य क्षातिस्यविवयितविविवयमक्षमे । यथासायतिमात्रमहमेवजानामिनतुमे स्वभक्तहातिमावः । मत्कामः योहिमाकामयतेमात्रमहर्शनालाभेऽपीत्यर्थः हर्ज्यान् विवयवासनाः । अत्रापिसर्वात्रमेश्यपिद्धञ्ज्यानित्यज्ञकोरदंश्रातिनेदंवाक्यंकिन्तुस्वभक्तेःस्वभावंतंक्षापयामासेत्येवात्रतस्यम् । सर्वमिदंदैन्यक्र्द्वनार्थमित्येके ॥ २३ ॥

अद्धियाअल्पयापि । अवद्यनिन्द्यलोकंसांसारिकजनावासंत्रिभुवनभेवत्यक्त्वामज्जनतांमत्पार्यदत्वंगन्तासि ॥ २४॥ निविपद्येतयतोमयिनिवद्धामयिवद्धास्थापिताप्रेम्गोवेत्यर्थः । ममनित्यत्वात्मतिरपिनित्यैवेत्यर्थः ॥२५॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

धगोचरोगिरामिति"सर्वेवेदायत्पदमामनंतिवेदैश्चसर्वैरहमेववेद्य" इत्यादिश्चृतिस्मृतिश्यांवेदविषयगवद्दयत्तानविष्ण्यस् हरिः एवंमूयोम्योयतंत्रमांगंभीरयादलक्ष्णयावाचाशुचः शोकान्शमयिवाह ॥ २१ ॥

तदेवद्शैयतिहैतेतिचतुर्भः हेतेतिवात्सव्यस्चकेसंबोधने माहिति नाहिति अविपक्षकषायागामदग्धदर्शन प्रतिबंधककर्मगाम कु-योगिनामप्रक्योगानाम दुर्दशेः दुर्घटदर्शनः॥ २२॥

स्थतिहिसकुद्भवतारूपंदिशतमत्राह सकृदिति भेमयासकृद्धद्र्पंदिशतंतदेतत्कामाय प्रतिसन्नेवरूपेरुच्युत्पाद्दाय॥२३॥
सदिति "याहित्वंशूद्रतासाशुनष्टश्रीः कृतहेलनः तावद्दास्यामहंजन्नेतत्रापिबद्धवादिनामिति " विद्वसृष्क् शापरूपमवद्यम्दमंपांच्य भौतिकदेहंचहित्वाअप्राकृतदेहभावरूपांमजजनतांमत्पार्षद्रतांलोकमभीष्टं चगतासि तदानितनोदेहस्त्ववद्योनभवति तदापिसत्सेवायां वासुदेवेदद्वायांमतोसर्वपरित्यागपूर्वकभगवद्धयानेभगवद्दश्चेनचहेत्रत्वेनभगवतोऽतिप्रियत्वात् अन्यया " अहोवत्वत्वपञ्चोऽतोगरीयाद्य- जिल्लाक्षेत्रविद्यायांमतोसर्वपर्यस्थात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् स्थिपचेत्स्यद्वाद्यात् सम्यग्व्यवसितोहिस,इतिस्ववचनविरोधश्चस्यात् ॥२४॥

निवपद्यसनिवनस्येत् ॥ २५ ॥

五四 操作的知识的证券的证明 推 中心

# भाषादीका

इस प्रकार निर्जन बन में यत्न करत भये मुझसे बाग्रीके अगोचर परमेश्वर गंभीर मधुर वचनसे शोकोंको नाश करतेहुये बोले।२११ हन्ते । आप मुझे इस जन्म में नहीं देख सक्ते हैं। क्योंकि अविषक कषाय कुयोगियों को में दर्दशे हूं ॥ २२ ॥ हे अज्ञा । एक बर जो तुझको रूप दिखाया था वह तेरी कामना बृद्धि के निमित्त था. मेरी कामना जिसको होती है वह साधू श

नैः वातैः और समस्त बासनाओं को छोड़ देता है ॥ २३ ॥ द्वीर्घ काल की सत्पुरुषों की सेवा से तेरी मुझ में इढ मित हो गई है । अब इस निय देह को छोड़कर तू मेरा जन ( परि-

कर ) होगा ॥ २४॥ यह पुत्रा में निबस तेरी मित कभी भी नाश न होगी यहां तक कि प्रजाओं की सृष्टि और प्रलय में भी और मेरे अनुमह से यह सब स्मृति भी तुझ को रहेगी ॥ २५॥

# श्रीधरखामी।

तत्त्रमसिद्धंसहद्भृतम् "अस्यमहतोभृतस्यिनश्वसितमेतद्यस्त्वेष्"स्त्यदिश्रुतेःकोदद्यमर्श्यारंसवेनियन्तः । नभसिलिगंमृतियेस्यतस्रभौन तत्त्वमसिद्धंसहद्भभृतम् अस्यिलिगम्तर्सेमअद्षयायश्रवनामप्रगामिवद्धेकृतज्ञानद्दमः । तेनानुकम्पितःसन् ॥ २६ ॥ किंगमः ॥ सिन्नोहितसपिनिलिग्यत् स्यालिगम्तर्भे अद्यक्तिल्याः । विमन्तसरोज्ञातोऽस्मीतिद्योषः ॥ २७ ॥ (अनन्तस्यनामानिष्ठिभियानवर्षतग्रगान् ॥ इतत्रपःत्यक्तल्याः । विमन्तसरोज्ञातोऽस्मीतिद्योषः ॥ २७ ॥

तिहर्षु द्रासमानतम् । वित्रमानम् । हित्नानम् कोक्षं तम्हासज्जनतामसीति या भागवती भगवत्पापेद्रकृषा गुद्धा सत्वस्थी तम् भावन्य । प्रति प्रति क्ष्मानता सथि प्रयुज्यसाने नीयमाने सारम्भं यत् क्षम् तत् तिन्वायां समाप्तं यस्य आरम्भनस्याो तिन्वायासिय तिन्वायां श्रुता तां भ्राति भगवता सथि प्रयुज्यसाने नीयमाने सारम्भं यात् क्षम्भं तत् तिन्वायां समाप्तं यस्य आरम्भनस्याो तिन्वायासिय तिन्वायां श्रुता तां भ्राति भगवता सथि प्रयुज्यसाने नीयमाने सारम्भं प्रति वास्ति भ्राति भ्राति । अनेन प्राप्तिकत्र तानमकस्मीरम्भनं श्रुद्धार्थं तित्यत्यस्य स्कृतितं भवति ॥ २९ ॥ स्वर्थाति वास्ति वास्ति । १९ ॥ स्वर्थाति वास्ति वास्ति । भ्राति वास्ति । १९ ॥

एतावदुक्त्वोपररामतन्महद्भूतंनभोछिंगमछिंगमिश्वरम् । अहंचतस्मेमहतांमहीयसेशिष्णांवनामंविदधेनुकंपितः ॥ २६ ॥ नामान्यनंतस्यहतत्रपः षठन्गुद्धानिभद्राणिकृतानिचस्मरन् । गांपर्यटंस्तुष्टमनागतस्पृहः काछंप्रतीत्त्वन्विमदोविमत्तरः ॥ २७ ॥ एवंकृष्णामतेब्रह्मन्नसक्तस्यामछात्मनः । काछः प्रादुरभूत्काछेतडित्सोदामनीयथा ॥ २८ ॥

कालः प्रादुरभूत्कालेतिहत्सौदामनीयथा ॥ २८ ॥ प्रयुज्यमानेमियतांशुद्धांभागवतींतनुम् । आरब्धकर्मनिर्वाणोन्यपतत्पांचभौतिकः ॥ २९ ॥

### दीपिनी

महद्भुतमितिभगन्नामप्रथमेकवचनम् । तत्रप्रमाणम् अस्यमहतोभूतस्येत्यादिश्चृतिः । अस्येत्यादिकर्तरिषष्ठी । महतोऽनचिञ्चिस्यपर-मात्मनः प्रकृतस्यभूतस्यईश्वरस्येतियावत् । निश्वस्रितंनिश्वासवदप्रयत्नेनैवजातमित्यर्थः ॥ २६ - २७ ॥

भारमग्रेष्ट्रपारच्याः तेनेकदिक्दातिस्त्रंपाणिनीयव्याकरणस्यचतुर्थाध्यायीयतृतीयपादेद्वादशाधिकशततमम्।सुदाम्नाअद्विणाएकदिक्सौदामनीद्वतितस्य महोजिदीक्षितकृतावृत्तिः।यद्वेति। अस्मिन्पक्षेताडेत्सौदामनीत्यत्रसप्तमीतत्पुरुषसमासोश्चेयः। नैरुकेतिवैदिकमन्त्राणामर्थश्चापकोभगव महोजिदीक्षितकृतावृत्तिः।यद्वेति। अस्मिन्पक्षेताडेत्सौदामनीत्यत्रसप्तमातितस्यस्मरणादित्यर्थः॥ २८ - २९॥ द्यास्कमुनिविरचितोवेदांगशास्त्रविशेषोनिरुक्तस्तत्रत्यवचनंनैरुक्तमितितस्यस्मरणादित्यर्थः॥ २८ - २९॥

### श्री बीरराघवः।

अर्छिगंकमेदेहरहितं नभोछिगमाकाशशीरकमीश्वरं सर्वनियंतृपेश्वरमितिपाठेईश्वरशब्दवाच्यम् तन्महत्सर्वेद्यापकंभूतंस्वाधीनसमाधि करहितंमहद्वस्न "तस्य हवापतस्यमहतोभूतस्यनिः श्वसितिम"तिश्चतेः पतावदुक्त्वाविररामत्र्भीमासततो महसांतेजस्विनामपिमहित्यसे तस्मैमहतेभूतायतेनानुकांपितोहमवनामं प्रणामविद्धेकृतवानस्मि ॥ २६॥ तस्मैमहतेभूतायतेनानुकांपितोहमवनामं प्रणामविद्धेकृतवानस्मि ॥ २६॥

तस्ममहतभूतायतनानुकापताहमपापत्र । एउन्भद्राणिलोकानांमंगलावहानि गुद्धानिवदगुद्धानिजन्मानिकमीणिचस्मरन्णांभूमिपर्यटन् ततोऽनंतस्यभगवतो नामान्यहंगतलजाः पठन्भद्राणिलोकानांमंगलावहानि गुद्धानिवदगुद्धानिजन्मानिकमीणिचस्मरन्णांभूमिपर्यटन् तद्धमनोयस्यगतास्पृहा शब्दादिविषयायस्यविगतोमत्सरोभूतविषयको यस्यविगतः मदोदेहपारवदयरूपोयस्यसः अपद्क्षतिपाठऽनिकेतः तुद्धमनोयस्यगतास्पृहा शब्दादिविषयायस्यविगतोमत्सरोभूतविषयको यस्यविगतः मदोदेहपारवद्ययस्य ।। २७॥ कालदेहावसानकालप्रतिक्षत्रासमिति क्रियापदमध्याहाययावत्कल्पावसानं जीवितवानस्मीत्यर्थः ॥ २७॥

कालदृहावसानकालकारायः है ब्रह्मतृक्वणोभगवत्येवमतिर्यस्यातप्रवामलोविशुद्धः आत्मामनोयस्यातप्रवशब्दादि विषयेष्वसक्तस्यममकालेदहारंभकपारच्यावसा है ब्रह्मतृक्वणोभगवत्येवमतिर्यस्यतोवभूव मृत्युकालस्यक्षणिकत्वद्योतनायदृष्टांतमाह सौदामिनीसुद्दामनः पर्वतस्याद्रभवासौदामिनी नकालकालः मृत्युकालःप्रादुरभूदुपस्थितोवभूव मृत्युकालस्यक्षणिकत्वद्योतनायदृष्टांतमाह सौदामिनीसुद्दामनः पर्वतस्याद्रभवासौदामिनी नातुर्द्यिकोऽण्यक्रितिप्रकृति भावनांतत्वात्रकीप्सौद्दमिनीत्यपिपाठः ॥ २८॥ चातुर्द्यिकोऽण्यक्रितिप्रकृति भावनांतत्वात्रकीप्सौद्दमिनीत्यपिपाठः ॥ २८॥

चातुरायका>ण्ञाजाप्य व्यापाय स्तामित्यर्थः शुद्धामप्राकृतांभागवतीमनिष्दद्धां व्यातनुप्रतिमयिप्रयुज्यमानेसंहिलण्यमाग्रालयंप्राप्तुमुख्य तद्दातांप्रसिद्धां सर्वजीवलयाधारभूतामित्यर्थः शुद्धामप्राकृतांभागवतीमनिष्दद्धां व्यापतिम् विकार्यस्य स्वाप्तिको देहोन्यपतत् ॥ २९ ॥ किस्तित्यर्थः आरब्धकर्मिनिर्वाणः तद्देहावस्थितिनिमित्तस्यप्रारब्धकर्मणः निर्वाणमवसानयस्यसपांचभौतिको देहोन्यपतत् ॥ २९ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

तर्हिकिामितिदर्शितमितितत्राह सकृदिति अन्धसांसारिकदुःखर्हित तेत्वकामाय अथकदानुपश्येयमित्युत्कंडाये॥ त्याकिक्छम भूदितितत्राह मत्कामहति मद्रकःपुरुषःक्रमेगासवीन्द्रच्छयान्प्राकृतान्कामान्साधुमुंचतीत्यन्वयः॥ २६॥

भूद्। तत्र नार्ष्य प्रमहंससेवाफलमाह सदिति दीर्घयाबहुकालीनयासतांपरमहंसानांसेवयापरिचर्ययामयिहदामतिः मननलक्ष्याअक्तिजीलावैयस्मा परमहंससेवाफलमाह सदिति दीर्घयाबहुकालीनयासतांपरमहंसानांसेवयापरिचर्ययामयिहदामतिः मननलक्ष्याअक्तिजीलावैयस्मा दतः अवद्यंदोषरूपग्रद्धातां क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र प्रचानां क्षेत्र क्या क्षेत्र क्षेत्

किश्चनाचपद्यतं करणायुः र्थ्वरमर्श्वानशीलंसकलजनप्रवर्तनशाक्तिमत् अलिंगजडशरीररहितेषद्वादन्यद्वा र्थ्वरमित्युक्त्वा भूतविष्रहृवानहरूहातैशेकानियासार्थेवा र्थ्वरमर्श्वानशीलंसकलजनप्रवर्तनशाक्तिमत् अलिंगजडशरीररहितेषद्वादन्यद्वा र्थेव्यतम् तेनानुकंषितः कृषा अलिंगमित्युक्तं नभः लिंगगमकदृष्टांतत्वेनयस्यतत्त्वयोक्तम्भाकाश्चावत्सवेगमित्यस्यारं विद्वेषकृतवानित्यन्वयः॥ १९९॥ पात्रीकृतः अहंचमहतांमहीयसेतस्मेमहाभृताय शीर्षाणशिरसा अवनामनमस्यारं विद्वेषकृतवानित्यन्वयः॥ १९९॥

### क्रमसम्बर्भः ।

गुद्यानि गोप्यानि यानि भद्रािण सर्व्वोत्तमानि कतानि प्रेयस्यादिभिः सद्द प्रेमपरिपाटीमयलीलास्तानि तु यथाधिकारं समरश्चेव नतुप्रकाशवन् । तत एव तुष्टमनाःस्पृहान्तरशून्यश्च सन् पूर्वत एव तु विमदो विमदसरश्च सन् केवलं कालं तत्कृपावसरं प्रतीक्षमाणोऽ इं वभूबोति शेषः ॥ २७ ॥

कोलस्तरकृपावसरः प्रादुरसूत् यथा वृष्टिप्रतिवन्धकावष्रद्वश्चये तिहत्सीदामिनीति । गोवलीवईन्यायेन चानिधकार्थमिदस् ॥ २८॥ सागवतींभगवदंगज्योतिरंशरूपास् । शुद्धांप्रकृतिस्पर्शशून्याम् । न्यपतिदितिप्राक्तनिलमश्चिपश्चिरभंगोऽपिलक्षितःतादशमनविष्ठिप्रारुष्य कर्मपर्यतमेवतत्तिस्थतः । इत्थमेवटीका वक्षनेनपार्षदतनूनामित्यादि ॥ २९ ॥

## सुबोधिनी।

प्तावत् अग्रेडपायमनुक्त्वैवअनुकंपयैवखतः स्फुरिष्यतीतिपूर्वोक्तमात्रमुक्त्वाविररामप्रामाययार्थवकारंविशिनाष्टिविशेषतः अञ्चानाः पुंसकपद्प्रयोगः तदित्यनुवादः महङ्ग्रतमिति अस्यमहतोभूतस्यनिः श्वसितमि तिवेदोद्गममुलभूतंप्रामाययार्थमेवमहंजातमितिआकाशपुरुषंव्यायक्त्रयतिनमोलिगमिति आकाशंनुभगवतअनुमापकंप्रथमकार्यत्वात् तथाकथनेवाहेतुः यतस्त्रकार्यमपितथाकथयतीति अलिगनिहे मगवाननुमानगम्यः आत्मत्वेनप्रत्यक्षत्वात् अतिरिक्तकपेपुनव्याप्त्यादीनांभगविश्वयामकत्वंतदाह ईश्वरिमातिअन्यथाकरणसामध्योत्त्नहेतु वन्ह्यादिरिवभगवान्तिखद्यतीत्यर्थः पवंसर्वप्रमाणातीतः सर्वप्रमाणितत्युकंमयापितदुकंकतित्याह अहंचेति तत्रनिर्विष्नार्थभगवंतं नमस्करोतितस्मैपूर्वपरिचयात् ईश्वरफलदानपक्षेपियथाफलंप्रयच्छेत् तदर्थमुकं । ननुनमस्कारमात्रेणतत्वकथंकुर्योक्तत्राह । महतामिहीयस्व इतिअतिमहत्तिवावदेवकर्चव्यमितिवहिःशब्दश्रवणात्वहिःस्यतोभगवानितिवहिः शिष्णावनामसार्थागनमस्कारंकत्वान् युक्तंचैतत्यतो भगवान्महर्तिक्रपांकृतवान्तदाह अनुकंपितहति॥ २६॥

कषायपाकसाधनंकरोमीत्याह नामानीति कषायास्त्रिविधाः साक्षाद्रागादयस्तामसाः तेषामिपवासनारूपाराजसाः अविद्यारूपाः तेसकमात्कर्मग्रामत्त्वाश्चानेनचनादयंतेतत्रचाधिकाराः पृथक्पृथक्अतोनैकेननैकदाकर्त्तुराक्याः तस्मादेतेषांत्रयाग्रामेकोनुकल्पः कर्त्तव्यः तद्भगवत्कृपयासत्स्फुरितंतस्कृतवान् "चक्रांकितस्यनामानिसदास्वेत्रकीर्त्तयेदि"तिवाक्यात् नामसुनदेशकालयोरपेक्षाएकवचननामनाव त्त्रेतीयंब्रह्मविदःसर्वेरेवरूपैर्भगवत्सेवनस्यश्रुतिसिद्धत्वात्एकनाम्नश्रावृत्तौरूपविशेषस्यतिनसर्वैःसर्वत्ररक्षास्यात्श्रोतुर्वकुश्चपरिच्छेदुबुद्धिः पार्वंडतार्शकापिस्यात्तत्रहेतुमाह अनंतस्येति अनंतरूपस्यतथासत्यनंताएवभगवद्धर्माः नामसुरमृताभवंति अलोकिकंहिलोकसध्येकुर्वन् गुसंकरोतिलोकोपहासभियादेहकुलांतः करगाधमीश्चलज्जाभवतिविहितत्वेपिलोकोपहासात् तथासतिलोकबुद्धचानभगवातिह्युकोभावोभवे त्यातस्तान्त्याजयतिहतत्रपद्दतिहत्वानपुनर्जीवनिक्रियाकममध्ये अधिकारिपदात्नामोश्चारग्रापवहतत्रपत्वंस्वाधीतानामर्थानुष्ठानपूर्वक्रमुखे रुद्धारगांपठनंशतृप्रत्ययेननिरंतरताचोकाचित्तस्यचंचलत्वात्तस्यभिन्नमवलंवनमाहगुद्धानीतियानिचरित्रागिगुद्धानिलोकस्पष्टतयावक्तुस युक्तानिपुष्टचाकृतानिद्रौपद्यज्जुनादिषुदायनस्थानादिषुदायनस्थानादीनिभद्राणिमनोहरादीनिस्वस्यावंधकानिकृतानिचेतिस्पष्टत्याकृतानि अथवाकृतानिकरिष्यमामानिचभगवत्कृपयातत्रस्फुरमां शरीरकृत्यमाहगांपर्यटाश्वितिअत्यंतसंयोगेद्वितीया गोशब्दाद्गोसेवावद्धमेजनकत्व षाहितः अटनस्थनेनऋजुतयाएकमार्गेगादेशातिकमोनिवारितः एकमंगंसाधनसाधनत्वेनोक्त्वापंचांगानिफलसाधनत्वेनाह । तुष्टमना इत्यादि भूमिष्यद्वत्यद्यान्यार्थस्यात्तत्वामनसानतावनमात्रेगाप्रितोषः स्यात्अतस्तुष्टमनाभवेत् पर्यटनमेवफलत्वेनजानीयात् यद्यापितथापर्यटनेनली किकालीकिकानिफलानिमवंतितथापितेषुस्पृहानकर्त्रत्यातदाहनन्वपरिच्छिन्नानिकर्माग्याकर्त्तुमराक्यानि अतपवद्वितीयाध्यायेकर्मभेदोनिस वितः तत्रपरिच्छेद्कःदेशः कालोवाभवतिततश्चापरिच्छेदकदेशकालसंबंधे किंकुर्यादित्यतथाहकालंपतीक्षत्रितिशतृपत्ययेन आदितआर ५य कालप्रतिक्ष्याकर्त्वव्याततः शरीररक्षादिसाधनासावे वाधकेवानांतः करगोक्केशोभवतिदैवगत्यासन्माननेप्राप्तेषिगर्वोनकर्त्तव्यः नहिपूजनन तस्यमहत्त्वं प्रत्युतत्त्वाप्रकं जनेनाभिमतोयोगसिद्धिनविदती"तियाक्यातः विषयाप्राप्तीनवामत्सरः कर्त्तव्यः प्रत्युतकालसाधकत्वेनतेषा मुपुकार्षोमत्वयः नवाविपरीतोमत्सरः कर्त्तव्यः अवाधक विषयप्रापकेषुमगवदाशानिवीहकत्वातः निषद्धपापकेषुत् वाधकवत्सहनम् ॥ २७॥

एवंषडंगसहितेनामोचारणपूर्वकं भूपयेटनंकषायपाकहेतुः तस्यकिष्ठष्टद्वाराअष्ठष्टद्वारावाकषाय पाकहेतुत्वमित्याकांक्षायामाह । एवं क्रियामहिति। तदैवविषयेष्वसंगः यदाकृष्णोरोचते तदैवविषयानरोचतेत्रह्यान्नितिसंवोधनमिपसंवादाय क्रियामहिति। तदैवविषयेष्वसंगः यदाकृष्णोरोचते तदैवविषयानरोचतेत्रह्यान्नितिसंवोधनमिपसंवादाय क्रियास्यमत्याविषयासंगेजातेतदैवातः करणांशुद्धंजातंतदैवकषायाः पकाद्द्यश्चः पाकार्थमवद्यरित्वात् पक्षेचकषायेशरीरस्यप्रयो क्रियास्यमत्याविषयासंगेजातेतदेवातः करणांशुद्धंजातंतदेवकषायाः पकाद्द्यस्याविषयासंगेजात्रविषयः कालेवर्षाकालेतिदितिन्नित्र जनांत्रयामावात्तद्वप्रहणायकालः प्रावुरभूतकालेशरीरप्रारम्भकाद्द्यसमाप्त्री शापसमाप्त्रीवादस्यवाद्यमत्यविष्ठ्यामाप्त्रीवस्तज्ञातातिहेत् सौदामिनीत्येकवापदं तद्विवर्षात्रद्यादावेकदेशप्रयोगःयथाप्रथमतप्वस्तनिविद्यस्य विषयः ॥ २८॥ इष्ट्रीविद्यत् तथाश्चरीरनाशकरोगायपेक्षयाकालोजीवप्रयोताप्रथमतप्वप्रावुर्भूतद्वत्यर्थः ॥ २८॥ इष्ट्रीविद्यत् तथाश्चरीरनाशकरोगायपेक्षयाकालोजीवप्रयोताप्रथमतप्वप्रावुर्भूतद्वत्यर्थः ॥ २८॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

महद्भतिमितिक्लीवर्लिगंभगन्नाम "अस्यमद्दतोभृतस्यनिश्वसितमेतद्यस्यवेद्" इत्यादिश्रुतेः। तेनयस्यनिश्वसितमेवचत्वासेवेदास्तस्य ंवचनंततोऽप्यतिष्रमाग्रामितिमावः।ईश्वरम्अतिनिकृष्टायदास्तीषुत्रायापिमधातथावरप्रदानयत्श्वमपित्स्यैकमीश्वरत्वमितिभावः। नभसिः आकाशेपविलगंचिन्हंश्रीमुखवचनरूपंयस्यतत् । यतोनिलग्यतेनलस्यतेचक्षुभ्यामहष्टत्वाद्रिणम् ॥ २६ ॥

कृतानिचरित्राणि । कालंब्रतीक्षनुसकालोमेकदामविष्यतियत्रतत्पार्षदृतायास्यामीति । भगवतुपार्षदोमविष्यामिकोऽन्यवराकोमतुस-महत्येवमद्मत्सरीममनामृताम् ॥ २०॥

काले ममस्यूलदेह्भंगसमयेकालः प्राहुरभूत् । यंकालंपतीक्षमार्गाः पूर्वेचिरादभूवंसदत्यर्थः । राक्षागमनसमयेतस्यागमनसमयद्विवत् वुद्धिशिगावतीयमेदेऽपिभेदंजनयतीत्यतुन्यासः । कालयोस्तयोरकस्माद्युगपदेवाधाराधेयत्वेनपादुर्भावेद्दष्टान्तः तिङ्किति । विद्याति सौद्धामिनीयथा । एकस्यांसीदामिन्यांतदैवान्यासीदामिनीकदाचिद्यथामवितियेवममपाञ्चमीतिकदेहमंगकालेपवशुद्धपार्वदेहस्यादितका लोऽभृदित्यर्थः ॥ २८ ॥

तांपृष्योंकांहित्वावद्यमिमंलोकंगन्तामज्जनतामसीतिमगवता प्रतिश्चतांशुद्ध सत्त्वमयीयतोमागवतीनतुमायिकीत्तनुंपतिमायेप्रयुज्यमा नेभगवतेवनीयमानेस्तिमम्पाश्चमीतिकोदेद्दोन्यपतत् । गोषुतुद्धमानासुगतद्दतिदोद्दनगमनयोरिवमम भौतिकदेद्दत्यागिचनमयदेद्दप्राप्तयो स्तुल्यकालत्वमेवा भूदित्यर्थः हित्वावद्यमिमंलोकमिति भगवतुक्तीक्त्वाप्रत्ययस्तुल्यकालेएव । यदुक्तंकाचित्तुल्यकाले प्रिपंजपशिह्यभू क्ते हागात्कृत्य पतित्वश्चः संमील्यहस्तिमुख्यादाय स्विपतीत्यादिकमुपसंख्येयमिति भाषावृत्ती । अनेनपाषद्तन्त्रमा क्रम्मीर्ज्यत्व शक्य स्वित्वित्वितिमिति श्रीधरस्वामिचर्याः । अत्रार्व्धानां कर्म्यांतापकत्विद्यानां निर्वाणोनाशोयत्रसद्दतियहु ब्रीहिगानकेवलं तदानीमेव प्रारब्धनाशइतिलभ्यतेदेहपातात पूर्वकालेऽपि तत्रांशेतत्प्रयोगसिक्षेः । नचजातप्रेग्गो मकस्यापिप्रार व्यं तिष्ठनीतिशुद्धमक्तानां मतसाधनदशायामेवतन्नाशात् । यद्धस्यतेप्रियवतकथायां — नैवंविधः पुरुषकारपरक्रमस्यपुसांतदंधिरज साजितपङ्गुगानाम् । चित्रविद्रविगतः सकृदाददीतयन्नामधेयमधुनासज्ञहातितन्वामिति । अस्यार्थः एवंविधणीद्धनचित्रेचित्रसन्ते तदेव । कितदित्यतथाह । विदूरिवगतोऽन्त्यजोऽपियन्नामधेयंसकदाददीत याः सः अधुनानामग्रहणसमकाले एवतन्वंतनुंजहाति। अञ तार्व । । नारार्व । विकास के स्वारम्भकं प्रारब्धकर्मवत्तुशब्देनलभ्यते इत्येकप्राहुः अपरेतुभक्तिसम्पर्कात स्पर्शमायान्यायेनिक नामभ्रहणसम्बद्धाः । प्रतन्त्र गुरामयात् तुर्वा त्रप्रकाराः । प्रशासायाः व्यवस्थितः सम्बन्धाः । प्रशासायः । प्रशासायः । प्रशासायः विवादः स्व त्रप्रभक्षायभ्यतमा च अगापा । स्व क्षेत्राक्षणा स्वामिचर्योः यद्ब्रह्मसाक्षावरुतिनिष्ठयापिनिनासमायातिनिनानभोगैः। द्विप्रारन्धकर्मनाशोभक्त्वारम्भेषवन्यास्ययः। यदुक्तश्रीरूपगोस्वामिचर्योः यद्ब्रह्मसाक्षावरुतिनिष्ठयापिनिनासमायातिनिनानभोगैः। दापप्रार्ण्यकम्गाराम् प्रार्ण्यकर्मेतिविदाैतिवेदइति । प्रार्ण्यनाद्योपवदेदपातदृत्यभिप्रायेप्रार्ण्यकर्मेनिर्वाग्रान्यपत्तत्पांचभौतिकद्यतिसम्तर्यः अपैतिनासस्मरग्रानतत्त्रेप्रार्ण्यकर्मेतिविदाैतिवेदइति । प्रार्ण्यनाद्योपवदेदपातदृत्यभिप्रायेप्रार्ण्यकर्मेनिर्वाग्रान्यपत्तत्पांचभौतिकद्यतिसम्तर्यः अपातनामस्भरणगत् प्रभारत्व प्रमाणाः । इतमेवपदंप्रयुज्यतेहत्यवधेयम्।तद्प्रयुज्यबहुब्रीहिप्रयोगेगाभक्तानांप्रार्व्धकर्मनिर्वागाधिकरगीभूतएषदेहः पतेश्वनुततोऽन्यङ्गतिञ्चापितस्य ॥२०॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

"अस्यमहतोभूतस्यनिश्वसितमेतरम्वेद" इतिश्रुतिप्रसिद्धंयज्ञन्महद्भृतंशक्षनभोलिङ्गंनभसिहद्याकाशै "अगुष्टमात्रपुरुषंमध्ये आत्मानिति अस्यमहणा प्राप्ता अस्यमहणा प्राप्ता अक्ष्यादित्यहिर गमयः पुरुषो हर्यते "इतिश्च ते बिंगम् निर्यस्यतत् अलिगम् प्राक्तम् तिविज्ञितम् ईश्वरंसर्वेनियः " ष्ट्रती "तिश्चते नभोगतेस्येवा" सप्तवादित्यहिर गमयः पुरुषो हर्यते "इतिश्च ते बिंगम् किरोस्यतत् अलिगम् प्राक्तम् है प्रताबद्कत्वाविर्गमत्र्याविभूव अहंचतेनानुकंपितोऽनुगृहीते।वनासंतस्मप्रणामाविद्धेकतवान् ॥ २६॥

प्ताचयुर्वे । तत्यकिङ्कमित्यपेक्षायामाहं नामानीति गतामञ्जनतामसीतिभगवत्योक्तकालंप्रतीक्षणामादैः पं।ठगद्कुमेन् विमत्तर्थासम्॥ ३७॥ ततः।करुनामत्यप्रकारम् असकस्य संसाराद्विरकस्य कालेपारभ्यक्षभवसातसमयेकालोसृत्युःप्राहुरमृत् आचिवसूत्रअकस्यान्मृत्यूपास्थ क्रुंस्यामतस्त्य्रकस्य असकस्य संसाराद्विरकस्य कालेपारभ्यक्षभवसातसमयेकालोसृत्युःप्राहुरमृत् आचिवसूत्रअकस्यानमृत्यूपास्थ बोहर्स्टातमाह सोदामिनीतिहत यथासुदाम्नोगिरेः प्रतिभवाविद्यदिव ॥ २८॥

ब्हातमाह सादणार्थः शुद्धांसर्वकीषवितांभागवतींभगवत्पार्षेद्ररूपामप्राकृतां नित्यांतनुमाविः कर्तुभगवतामयिष्ठयुज्यमनिप्रारव्धकमेगोः निवासामवसान शुद्धासवत्॥धवाऽतः यस्यसर्गाचभौतिकोन्यपतत् । अयमर्थः नित्यशरीरवान् सात्त्वतत्त्वकत्ताश्रानास्यः॥केनापिकोतुकेनगंधर्वशरानेवश्रद्धितशापवशासाहित्वा यस्यसर्गाचभौतिकोन्यपतत् । अयमर्थः नित्यशरीरवान् सात्त्वतत्त्वकत्ताश्रानास्यः॥केनापिकोतुकेनगंधर्वशरानिश्रद्धितशापवशासाहित्वा ह्यासीषुत्रस्वप्राप्तस्तक्दित्वास्त्रकीयात्तत्तुमाविश्रकारं ॥ २० ॥

## भाषादीका ।

वह नमेरिंग अलिंग महाभूत ईश्वर इतना कहकर ऊपर तक हो गया मैंने भी उसका अनुप्रह प्राप्त हो कर बड़ों के भी बड़े ईश्वर को माथ से प्रणाम की ॥ २६॥

मार्थ (तन्त्रंतर ) में निलंज होकर मह और गुहा अनंत के नामों की पढ़ता. और उनके कमी की स्मर्गा करता सन्तुष्ट मनसे गुधिया ्र तर्गाः । एमस्या कुछ भी स्पृष्टा न रही में मदमत्सर राष्ट्रित हो। कर अपने काल की प्रतिक्षा करने लगा ॥ २७॥ पूर्वरंग करने लगा, मुझकी कुछ भी स्पृष्टा न रही में मदमत्सर राष्ट्रित हो। कर अपने काल की प्रतिक्षा करने लगा ॥ २७॥

न करन ए..... अपन लगा ॥ २७॥ जे ब्रह्मर्स्य यो छच्या में सेरी मति थी कहीं मेरी आसक्ति नथी अमल मन था समय पाकर सौदामनी विस्तृत के समान मेरा कार

आ पहुंचा ॥ २८॥ पहुंचा ॥ र जुल शुद्ध आतावती ततु मह पर प्रयोग की गई अथीत जिल्या चित्मय पार्षक् शरीर जुल मुझको मिला तब प्रारक्ष क्रेसी से मिला जा पर अधितक प्रास्तत सरीर गिर गया, सर्थात तहर हो गया ॥ २९ ॥ वेरा पाँच भीतिक प्रास्तत सरीर गिर गया, सर्थात तहर हो गया ॥ २९ ॥

कल्पांतइदमादायशयानेऽभस्युदन्वतः।

शिशयिषोरनुप्राग्विविशेंऽतरहंविभोः ॥ ३० ॥

सहस्रयुगपर्यंतउत्थायेदंसिसृज्ञतः।

मरीचिमिश्राऋषयः प्रागोभ्योऽहंचजितरे ॥ ३१ ॥

स्रांतर्विहिश्वलोकांस्त्रीन्पर्यम्यस्कंदितव्रतः ।

्रस्रनुप्रहान्महाविष्णोरविघातगतिः क्वित् ॥ ३२ ॥

### श्रीधरस्वामी।

इदं त्रेलोक्यम् आदाय उपसंष्टृत्य उदन्वत एक।शावस्य अम्भसि शयाने श्री नारायग्रो शिशयिषोः शयनं कर्त्तुमिच्छोविभोर्बह्यग्राः अन्तर्मध्यम् अनुप्रागां निश्वासेन सह विविशे प्रविष्टोऽहम्। "ततोऽवतीर्य्य विश्वातमा देहमाविश्य चिक्रगाः। अवाप वैष्णार्वी निद्रामकीभूयाथ विष्णुने" ति कूम्मोंकेः। खायने अम्भसीति पाठे खायने खस्याश्रये अम्भसि। शिशयिषे ब्रह्माण इति श्रीनारायणे नाभेद्विवक्षयोक्तमिति गमयितव्यम् ॥ ३० ॥

प्रागोक्य इन्द्रियेक्यः अहं मरीचिमिश्रास्तन्मुखा ऋषयश्च जिन्तरे ॥ ३१॥

यं किर्मिगास्ते वहिने यान्ति तपआदिभिर्वहालोकं गतास्त्वन्तनं यान्ति । अहन्तु महाविष्णोरनुप्रहात् अखगिउतब्रह्मचर्यव्रतः सन्नन्तर्विहिश्च पर्योमि पर्यटामि । कविद्पि अविद्याता अप्रतिहता गतिर्यस्य सः॥ ३२॥

#### श्रीवीरराघवः।

प्रवंप्राकृतीयदारीरपाताविधवृत्तांतः कृथितः अथतदुपरितनवृत्तांतमाहकल्पांतदृत्यादिना । तदाकल्पांतेददंजगदादायस्वस्मिन्प्रविलाप्यउ-प्रल्यार्गावस्यांभिसरायानेऽनिरुद्धाख्येभगवितिशिहायिषोस्तन्नाभिषग्नोशिरायिषोविभोश्चतुर्मुखस्यांतः प्रागामनुविविशेऽनुप्रवि-प्टवानस्मिसनर्थस्त्वविवक्षितः॥ ३०॥

सहस्रयुगावसानउत्थायनाभिकमलादितिदेषः इदंव्यष्ट्यात्मकंजगत्सिसृक्षोश्चतुर्मुखस्यप्राग्रेष्यः प्राग्गादिभ्यःमरीचिमिश्राऋषयोव-

शिष्ठादयः अहंनारदश्चजित्रेउद्वभूवुः अहंचजित्रईतिपुरुषविपरिगामेनान्वयः ॥ ३१॥

ततोमहाविष्णोरनुग्रहात्कचिद्प्यविघाताऽप्रतिहतागतिर्यस्यास्कंदितमसंडितंत्रतंत्रह्मवर्ययसोऽहंत्रिलेकानंतर्वेचिश्चपर्यमिपरितः संचरामि ॥ ३२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

गतत्रपः लज्जारहितःअनन्तस्यहरेःकृतानिकर्माणिविकमलक्ष्यणिनगांभूमितुष्टमनाः यदच्छालाभेनालंबुद्धिमान् गतस्पृहः परवस्तुस्पृ हारहितः । परमतावितिधातोः परोगतिः नविद्यतेगतिरिश्वराद्न्योयस्यसोऽपरः अनन्यगतिरित्यर्थः असंगतोविरक्तइतिवा कंथादिप्रावरगार-हितोवा अआअंअःपुरागाविरितिवाक्यात्अइतिसंबोधनंवा हेव्यास पटःसमर्थः। अपटोनिकेतरहितइतिकेचित्तिवित्रत्यविमत्सरः विगत मात्सर्यः एवंविधोहंमरगाकालंप्रतीक्षमागां।ऽभवमितिशेषः ॥ ३०॥

कृष्णिपरमानंदबलात्मकेहरीमतिर्यस्यसतथातस्यकालः मरगाण्यः प्राष्ट्रकालेप्राप्तेसीदामिन्याण्याविद्यवयासहसापद्यतेतथेत्यथेः ति

द्वीत्रशतह्रदासीदामिन्यैरावतीचतद्भेदेष्यभिमंत्रणमितिवचनात्करुपांडववत्पृथगुक्तिर्युज्यतइतिभावः ॥ ३१॥ मयिशुद्धांनिदीषांमागवतीतनुंहरिमूर्तिमेवप्रयुजानेध्यायतिसातिफलदानायप्रारब्धकमीवनाशवान्पंचभिभूतैर्निर्मितोदेहोन्यपतादित्यन्व-

यः ॥ ३२ ॥

## क्रयसन्दर्भः।

विविशे इत्यादि लीलयैवेति शेयम् ॥ ३०॥ विवस रें । युगराब्दीऽत्र चतुर्युगपरः । जिल्लमहे इति वक्तव्ये जिल्लरे इति आवम् । मरीचिमिश्रा इत्यस्यायं भावः—यथा मरी-सहस्रथुणाय उ सहस्रथुणाय उ रूपितां ब्राह्मकल्पादनुवृत्तानां सम्प्रति सुप्तप्रबुद्धतैष जन्मोच्यते तथेति श्रेयम् । अत्रेदं विवेचनीयम्—सर्वेषु वैकुग्ठेषु सर्वेषु च्यादाना श्राष्ट्रापण नित्यता श्रूयते इति यद्यपितम् घटते तथापि नित्यश्रीनारदसाद्ध्यादिमं प्राप्तं महाभागध्यं जीवविद्योषम्बलम्बय त इ।त " रो " अस्किन्दितव्रतः निश्चलभगवद्गिनियमः। क्वित् वेकुराठादाविष ॥ ३२॥

### 🦙 सुबोधिनी ।

ति ब्रह्मणः सकाशात् कथमुत्पत्तिस्तदाह । कल्पांतद्दतिक्षाञ्चाम । यदाकल्पांतो मवति तदा सर्वे स्वकृतमुर्रीकृत्य नारायणः शेते ब्रह्माऽपि नाभिद्वारा उदरं प्रविशति ततो नारायणेन सहैक्यं प्राप्यशेत सहस्रयुगपर्यतं तदा नित्यत्वादस्मच्छरीरस्य श्यगार्थमहमपि ब्रह्माणे नासापुरवायुना सह अंतः प्रविष्टः । वायोरेव गमनाऽऽगमने अहं तु तत्रैव स्थितः । प्रविष्टधारणसामर्थ्यमाह । विभोरिति ॥ ३०॥

अंतः स्थितस्यकालः सहस्रयुगपर्यतम् । तदा राजसकल्पे मगवान् तिरोहितः ब्रह्मातु निर्गतः निर्गत्य शयनादुःथाय इदं जगत्पूर्ववत् स्रब्दुमियेष तदा सिमृक्षतस्तस्य अवयवेश्यः मरीचिमुख्या ऋषयः अहं च जित्तरे तत्र "उत्संगान्नारदो जित्ने" इतिवचनात् भगवतो भक्त त्वाद्यमुत्संगे स्थापितः । ततः प्रजापतावंतः प्रविष्टत्वात् ब्रह्मगाः प्रागाद्भपेश्यो भगवदंशेश्यस्तत्तत्स्थाने स्थितेश्यो जाता इत्यर्थः ॥ ३१॥

सा कृपा जातेऽपि तथैवानुवर्त्ततइत्याह । अतर्विहिरिति । यथा वालकः पुत्रः गृहमध्ये विहरिप परिभ्रमित तथा ब्रह्मांडांतर्विहिश्चित्रिले क्या वांतर्विहिश्च साधारणान्यायेन वांहः परिभ्रमणे वा संभवत्यंतिरित्युक्तम् । द्वितीया त्वत्यंतसंयोगे । ननुिकमेतावता अचेतनानां वाय्वा दीनामि तथात्वात् अस्कंदितव्रत इति नस्कंदितं भगवदर्शनलक्षणं व्रतं यस्येति भगवतः सर्वत्र विद्यमानत्वादेशिवशेषाविवक्षायां भक्तः सर्वत्र दर्शनं कर्त्तव्यम् ततश्च यत्रैय भगवंतं न पद्येत् तत एव व्रतहानिभेवेत् अतो मम सर्वत्र परिभ्रमणेन भगवद्देशनाम् व्रतहानिरित्य थः । ननु मशकादि हृदयेऽपि भगवतो विद्यमानत्वात् कथं ताहशेषु तव गतिरिति तत्राह । अनुब्रहान्महाविष्णोरिति । व्यापकस्तु देशकालपिरिच्छन्नः महाविष्णुस्तु वस्त्वपरिच्छिन्नोऽपि तस्यानुब्रहोऽपि ताहश एव अतः न विद्यते विद्यातो यस्याः ताहशी गतिर्यस्येति । किविद्यित्यर्थे कचित् ॥ ३२ ॥

#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

्तित्यतन्ते कथमस्मिन् कर्शे खायम्भुवे "उत्सङ्गान्नारदो" जज्ञे इति ब्रह्मणः सकाशात् तव जन्मप्रसिद्धः। सत्यम्। नित्यतनोरेव भगवतो लीलाविशेषार्थं देवक्यादिगर्भे प्रवेश इव ममापि ब्रह्मपुत्रत्वलीलार्थे पूर्विकल्पान्त एव ब्रह्मशरीरे प्रवेशोऽभूदि-त्याह कल्पान्त इति। इदं त्रेलोक्यमादाय उपसंहत्य उदन्वतः एकार्यावस्याम्भिस शयाने श्रीनाराय्यो शिशयिषोः शयनं कर्त्तुमिच्छो-विभोब्रह्मणः अन्तर्मध्यम् अनुप्राग् विविशे प्रविष्टोऽहम्। "ततोऽवतीर्थं विश्वात्मा देहमाविश्य चिक्रगः। अवाप वैष्ण्यवी निद्रामे-किभ्याय विष्णुने" ति कूम्मोक्तः। खायनेऽम्भसीति पाठे खस्याधिकर्गोऽम्भसीति नाराय्योनाभेदविवक्षयेति मन्तव्यम्॥ ३०॥

सहस्रयुगस्य पर्यन्ते परिसमाप्ती पूर्वकल्पान्ते एतत्फल्पादावित्यर्थः! मरीचिमिश्रा मरीच्याद्याः। प्राग्रेश्यः। इन्द्रियेश्यः।

जिश्चमहे इति वक्तव्ये जिश्चरे इत्याषम् ॥ ३१ ॥

न च मरीच्यादयः प्राकृताः खखकम्मेपितताः इवाहं कापि कर्मिणि नापि सनकाद्या इव क्षानेऽपि नियुक्तः। किन्त्वहं प्रवृत्तितृन् ति धर्मातीतो हरि भजन्नेव खच्छन्देन वर्त्ते इत्याह अन्तरिति ये किर्मिण स्ते विह ने यान्ति अशक्तेः तप आदिभि विद्यालोकं गताः अन्तर्नयान्ति कर्मवन्धभीतेः। अहन्तु अखिषडतस्वभक्तिनिष्टः सम्मन्तर्विहिश्च पर्थ्येमि पर्य्ययमि। यद्वा विह विद्याग्रहात् महा विकृण्ठादिप अत एवोक्तं नार्र्सिहे। "सनकाद्या निवृत्ताख्ये तेच धर्मे नियाजिताः प्रवृत्ताख्ये मरीच्याद्या मुक्तवैकं नार्दं मुनिमिति॥ ३२॥

## सिद्धांतप्रद्वीपः

कर्वातेचतुर्मुखाहरंते उदन्वतपकावस्थांभासि इदंत्रैलोक्यमादायखस्मिन्प्रविलाप्यशयानेपुरुषावतारेशिशायिषोविभोःशयनं कर्तुमिच्छो ब्रह्मगोंऽतमेध्यम अनुप्राग्रंप्राग्यमतु अहमपिबिविशेप्रविष्टवान् विभुत्वंतस्यसमिष्टिशरीगाभिप्रायम् कर्णातेब्रह्मग्रोहरौ प्रवे शाउकोहरिवंशे "ब्रह्माग्राम्ब्रतः कृत्वाप्रभवविश्वतोमुखम् सर्वेद्वगग्राश्चेवत्रयित्रश्चिश्चं प्रविशेतिमहायोगि हरिनारायग्रं प्रभुमि"-

ति ॥ ३० ॥ सहस्रयुगपर्यतेसहस्रयुगसंख्यक राज्यवसाने उत्थायेदंत्रैलोक्यंसिमृक्षतः पद्मजस्यप्रागोक्ष्यः इंद्रियेक्ष्योऽहंमरीचिमुख्याः ऋषय श्चजाक्षरेउद्वभूबुः ॥ ३१ ॥

अस्कंदितमस्बिलतंब्रह्मचर्ययस्यसःपर्येमिपर्यटामि ॥ ३२ ॥

## भाषाटीका

(प्रलय का भी समय था) इस समस्त जगत को अपने में लेकर प्रलय काल के समुद्र में शयन करते हुये नारायण के अंग में ब्रह्मा जी के इवास के साथ में भी प्रविष्ट हो गया ॥ ३०॥

सहस्र युग परिमित काल शयन करने के अनंतर उठकर जब ब्रह्मा जी इस जगत को सृजना चाहते थे तब उनकी इंद्रियों से म-

भ महा विष्णु के अनुप्रह से अखंड ब्रह्मचर्य वत त्रिलोकी में और त्रिलोकी के बाहर भी विचरता हूं कहीं भी मेरी गति का विघा-त नहीं है ॥ ३२ ॥ देवदत्तामिमांवीशास्त्रब्रह्मविभूषिताम् ।

मूर्च्छियित्वाहरिकथांगायमानश्चराम्यहम् ॥ ३३ ॥

प्रगायतः संवीर्याशातीर्थपादः प्रियश्रवाः ।

श्राहूतइवमेशीघंदर्शनंयातिचेताति ॥ ३४ ॥

एतद्ध्यातुराचित्तानांमात्रास्पर्शेच्छ्यामुहः ।

भवित्तेषुष्ठवोद्दष्टोहारिचर्यानुवर्णानम् ॥ ३४ ॥

यमादिभिर्योगपथैः कामलोभहतोमुहः ।

मुकुंदलेवयायद्दत्तथात्माद्धानशाम्यीत ॥ ३६ ॥

#### थीधरखामी ।

किमिति पर्य्यटिम्नतिर्दृश्वराञ्चयालोकमङ्गलार्थमित्याहचतुर्भिः। देवेनर्दृश्वरेगादत्ताम् खराः निषाद्र्षभगान्धारषड्जमध्यमधैवताः पंश्यमश्च द्दिसप्ततप्वत्रह्मत्रह्माभिव्यंजकत्वात्तनिवभूषितांस्वतःसिद्धसप्तस्वरामित्यर्थः मूर्च्छयित्वामूर्च्छनालापवतींकृत्वा ॥ ३३ ॥ स्वप्रयोजनमाहप्रगायत इति ॥ ३४ ॥

परप्रयोजनमाह एतद्वीति । मात्राविषयास्तेषांस्पर्शाभोगास्तेषामिच्छ्याआतुराशिचित्तानियेषांतेषांहरिचर्यानुवर्शानंयत्एतदेवभव-सिन्धोः प्रवःपोतः नकेवलंश्रुतिप्रामारायेनिकन्तु अन्वयव्यतिरकाश्यांद्दष्टपवेत्यर्थः ॥ ३५ ॥

एतदेवेत्युक्तमवधारणमनुभवेन दृढयति । यमादिभिस्तथा न शाम्यतियद्वत् (यथा) मुकुन्दसेवया अद्धासाक्षात्आत्मामनः शा-म्यति । कथश्चिन्मुकुन्दसेवामात्रेणशाम्यतिर्किपुनस्तद्गुणवर्णनेनेतिभावः ॥ ३६ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

दैवेनभगवताब्रह्मणावाद्त्तांखरानिषाद्र्षभगांधारपङ्जमध्यमधैवतपंचमाख्याः सप्ततपवब्रह्मतेनविभूषितां स्वरैः सन्निधापितनब्रह्मणा भगवताविभूषितामिमांपाणिस्थां वोणांमूर्च्छयित्वाधादांयत्वा मूर्च्छावीणादिवादनं "धादनेमूर्च्छनामतेतिवैजयंतीकोशात् हरिकथांगायमानोह् मेवचरामि ॥ ३३ ॥

प्रियंभक्तानांप्रीत्यावहंश्रवः यशोयस्यतीर्थोपवित्रोगंगादितीर्थाश्रयावापादीयस्यतीर्थपादेयस्येतिवा सभगवानस्ववीर्याण्यशांसिप्रगा यतोममचेतस्याहृतइवशीप्रंदर्शनंयातिहष्टोभवतीत्यर्थः॥ ३४॥

तदेवमापृष्टंयथावद् तुवर्ण्याथसर्वथात्वंहरिचरित्रारयेवानुवर्ण्येत्यभिप्रायेण्यतापत्रयातुरजनानांभगवद्गुणवर्णनानुश्रवण्यंतरेण्यतप्य त्रयविद्यातकंनोपाणंतरमस्तीत्याहष्तदितिहाश्याम् असक्तन्मात्रास्परीच्छयामात्राः शब्दादिविषयास्तासांस्परीच्छयानुभवतृष्णयाआतुरं विद्यात्रिक्षेत्रयांत्रम्वस्थिः प्रवः पूरःसिहयस्मात्कारणाद्दष्टोद्दष्टोभवतितदेवकिहरिचर्यायाअनुवर्णनमिति ॥ ३५ ॥

मुद्रुःकामलोभाभ्यांहतआत्मामनः यद्वधयामुकुंदसेवयागुणानुश्रवणादिकपयाऽद्वास्फुटंशाम्यतिकामादिरहितोभवतितथायथातथाय-मादिभियीगमार्गैर्नशाम्यति ॥ ३६ ॥

## श्रीविजयध्वजः।

हरिद्यायन् मुक्त स्त्वंकंलोकंगतइतितत्राह करणांतइति।अहंकरणावसानेखमृष्टिमदंविश्वमादायखोदरेनिवेश्यउदन्वतोंऽभिसशेषपर्यकेश यानेहरीशिशिषणः शियतुमिच्छोविरिचस्यअंतरनुप्राग्णंमतर्गच्छच्छ्वासमनुविवेशप्रविष्टवानस्मीत्यन्वयः॥ ३३॥ यानेहरीशिशिषणः शियतुमिच्छोविरिचस्यअंतरनुप्राग्णंमतर्गच्छच्छ्वासमनुविवेशप्रविष्टिवानस्मीत्यन्वयः॥ ३३॥ सहस्रयुगपर्यतेचतुर्युगसहस्रपरिमितखनिशावसानं विष्णांष्ठत्थायोत्पाद्यमिदंसिमृक्षतोविरिचस्यांकादहंजक्षेमरीच्यत्रमुख्याऋषयश्च तस्यप्राग्णेक्षयोज्ञिष्ठिरद्येकान्वयः॥ ३४॥

तस्यमार्थः । विष्णोरनुप्रहादप्रतिहतगमनो ऽस्खलितब्रह्मचर्यादिव्योहंत्रीन्लोकानंतर्वाहेश्चपर्यमिपर्यटामीत्येका नवयः ॥ ३५ ॥

नवयः ॥ र तदेवाह । दंवतिस्वरब्रह्मविभूषितांसप्तस्वरलक्षणांवेदेनालकृतांनाम्नादेवद्शामिमांबीणांमुच्छीयत्वास्वराणामारोहणावरोहणकमामूच्छी तदेवाह । दंवतिस्वरब्रह्मविभूषितांसप्तस्वरलक्षणांवेदेनालकृतांनाम्नादेवद्शामिमांबीणांमुच्छीयत्वास्वराणामारोहणावरोहणकमामूच्छी मूर्च्छनांगातिकारियत्वाहरिकथां गायमानांऽहंचरामीत्यन्वयः ॥ ३६ ॥

### कमसन्दर्भः।

देवः श्रीकृष्ण्यव । लिंगपुराग्रेउपरिमागेतेनैवतस्य स्वयंवीग्णाष्ट्राश्चिष्ठमस्य स्वराग्यां ब्रह्मत्वमन्नतस्यो वीग्णायांविन्यस्ता नांतेषांसहसाश्रीकृष्ण्स्कोरकताशक्तेः । साचस्वरब्रह्माग्रिनिर्मातहषीकश्चपदाम्बुजामितितद्विधानुभाषात् । देवदत्तामितिकृतोपकारितायाः समर्थमाग्रात्वेनतमनुसन्धायेवतदुक्तेः ॥ ३३ ॥

श्रीभगवतः प्रियश्रवस्त्वंनामश्रतः सर्व्वेषांसुस्रमेवभवतातः नेतरिदित्रयामात्रापेश्चरानतुस्वप्रतिष्ठंच्छयेतिविवेचनीयम्अत्रयद्रूपेणवी ग्राग्नाहितातद्रूपेणवचेतिसदर्शनंस्वारस्यलब्धम् ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

इतिश्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्यश्रीजीवगोस्वामिकृतक्रमसन्दर्भेषष्ट्राऽध्यायः॥६॥

### सुबोधिनी ।

एवं सत्संगेन श्रवग्रामारभ्य सर्वत्र भगवद्श्वनपर्थतंभेका श्रवग्राभक्तिक्का । द्वितीया भगवत्कृपया समारव्धेत्याह देवदत्तामिति । भिक्तमार्गे दंवकृतोऽपि विद्याः कदाचित्संभाव्येतेतिशंकानिवृत्यर्थकीर्त्तनांगभूतां वीग्रां दत्तवंत इति देवदत्ता श्रुतिपूरिका हि सातत्रांगु-व्यादिचालनप्रयासोऽपि निवारितः । खरब्रह्मोति खराः षडजाद्यः नादब्रह्मात्मकत्वात् तदेव ब्रह्म तेनविशेषेग्रभूषितां तादशीं मूर्च्छना संगीतशास्त्रसिद्धा तां प्रापयित्वा तथा सति रसाऽऽविभावात् अश्रांतं संकीर्तनं भवतीति तथा कृत्वा हरिकथां गायमानश्चरामि । परिभ्रमग्रां तु कीर्त्तनेऽप्यंगम् ॥ ३३

ननु पूर्वस्मात् कोऽत्र विशेषो जातस्तत्राह! प्रगायत इति पूर्वयद्दर्शनार्थ भूयान् यतः कृतः सहदानीं स्वत एव भवति। तत्र हेतुः प्रगायत इति। यस्तु स्ववीर्याणि प्रकर्षेण गायित तस्याप्रे वीर्यास्फुरणं मा भवित्वित स्वयमेवतत्रस्फुरणार्थे विषयांतरसंचाराभावाय शी घूं चित्ते समायाति। ननु श्रोतुरभावात् अनंगं कित्तंनं कथं फलायेति तत्राह्। तीर्थपाद् इति। तीर्थानि संतःपादे यस्य सर्वे हि संतः सा युद्धं प्राप्ता भगवत्पादे वर्तते अन्येऽपि भक्तिवशात्। ताहशो हि भक्तिगुणाः। पादं च हृदि स्थापियत्वा गायतीति सतां श्रोतृणां विद्यमान्त्वात् कीर्त्तनं नांगविकलम्। ननुकथमेवं। भगवान् सर्वो सामग्रीं संपादयतीति तत्राह। प्रयश्रवा इति। प्रयं श्रवः कीत्तियस्य तत्संपा दनार्थं सर्वे संपादयतीति भावः। अग्रे वीर्यास्फुरणे भगवतः स्मरणमाद्वानिव संजातं प्रयत्वादाद्वाने च समागमनम्॥ ३४॥

एवं कीर्तनं सपरिकरं निरूष्य सर्वत्र लोके तात्सिख्यर्थं तद्विषयवर्णनं त्वयाकर्तव्यामित्याभेपायेण कीर्त्तनमनुवादेन स्थिरीकरोति । एतद्वीति मात्रास्पर्शेच्छ्या आतुरचित्तानां हरिचर्यानुवर्णनमेव भवसिधुप्रवः हष्टः । एतदिति खिकियमाणसमानम् हीति पूर्वोक्ता हेतव उक्ताः । मां मायां त्रायंतद्दित मात्रा विषयाः तेषामि स्पर्शमात्रम् । शब्दव्यंग्येन च महापातकत्वं सृचितम् । हरिचर्यानुवर्णाने तेषां अववर्णां भविष्यति । अन्यथा महारोगस्य संजातत्वात् कापि परलोकसाधने नप्रवृक्तिः । प्रवृत्ताविष तस्य रोगजनकत्वं ज्वरमध्ये भक्षितप्रविष्यदि । अवशास्य तु न मात्रासाधकत्वं प्राप्ते पि विषये इच्छाया निवृत्तत्वात् मुद्दुरित्युक्तम् । अयं च सुखेनैव संसारतारको मयैव ह व्यादोरिव । अवशास्य ह त न मात्रासाधकत्वं प्राप्ते पि विषये इच्छाया निवृत्तत्वात् मुद्दुरित्युक्तम् । अयं च सुखेनैव संसारतारको मयैव ह व्यादोरिव । साधनतामनूच रूपमाह । हरिचर्यानुवर्णनमिति ॥ ३५॥

तस्य इष्टोपायत्वं वदन् साधनानामतथात्वमाह । यमादिभिरिति । चित्तसाधनार्थमेवयोगः प्रवृत्तः "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" यो० ११२। इति तथापि स्वस्थे चित्ते तत्संभवः प्राणिनां त्वंतःकरणं मृतमास्तिकामेन ज्वालितो लोभेन प्रावितः तस्य हि मृतसंजीविकया विद्यया जीवनं सवित यमादयश्च योगमार्गास्तत्र यश्चलितुं शक्तस्तस्येष्टसिद्धिः । मृहुश्चायं हत इति कामलोभपरवशत्वम् । उभयोधींजमंतः कोधादेवं हिरिति तयोग्रेहण्यम् । संसारमग्नानां मोक्षदातृत्वात् मृतसंजीवकत्वं मुकुंदत्वम् । सेवा तु रोगनिवर्तिका । अवणेन च अंतः प्राविशतिभ भगवान् तत्र चित्तं सेवां भावयित अतः अवणाप्रकरणे पि सेवोक्ता । यद्यपि भगवदाश्चितो योगोऽपि क्रमेण तथा करोति सेवा त्वद्धा साक्षात् । योगसंवापेक्षया पि योगेशसे वाया उत्तमत्वात् । आत्मेति सजातीयस्य शिवशामकत्विमिति अंतःकरणस्योत्मपद्मयोगः ॥ ३६

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

स्वर्गापवर्गाविलक्षणात्मव्वेरन्येर्दुर्लभाममभोगसामग्रीतुसदासर्व्वत्रेत्याहद्वाभ्याम् । देवेनश्रीकृष्णेनदत्तांलिंगपुराणेतंनैवस्वयंतस्यवीणाः ग्राहणांहिप्रासिद्धम् । स्वराःषड्जाद्यःपवब्रह्मस्कोरकत्वाद्ब्रह्म । मूर्च्छयित्वामूर्च्छनावलवतीकृत्वा ॥ ३३ ॥

रुगाहित्रा तथा । प्रशास्त्र प्रत्याद्वाद्वात्र यत्र यशोगानंतत्रायाति तीर्थपादइतियत्रायातितत्तीर्थभवतिआहूतइवआह्वानंविनापीतिभगव-

तोमिक्तवद्यत्वमुक्तमः ॥ ३४ ॥
प्रकरणार्थमुपसंहरितएतिहिति । मात्राविषयास्तेषांस्पर्शामोगास्तिदिच्छयाच्याकुलिचनानांयोभविसन्धुस्तस्य प्रवः पोतः हुण्टः मयान् प्रकरणार्थमुपसंहरितएतिहिते । मात्राविषयास्तेषांस्पर्शामागार्थसेति । प्रतदेविकहिरिचरितस्यानुवर्णानमः अत्र सर्वेत्रैव वहुंगायाअपिभक्तेः कीर्त्तनस्यमुख्यत्वातः सर्वेवभक्तिक्षेया ॥ ३५ ॥
कीर्न्तनीपलक्षिता सर्वेवभक्तिकेतिकार्थस्य ।

कीन्तनापणारणाः भक्तिसन्त्राव एवनिस्तारहितिकारेऽपियथाकेवलयाभक्त्वाआत्मासाक्षात्शाम्यातिनतथाभिक्तामेश्रीयाँगज्ञानाविभिरित्याह । यमाविभि भक्तिसन्त्राव एवनिस्तारहितिकारेऽपियथाकेवलयाभक्त्वाआत्मासाक्षात्शाम्यातिनतथाभिक्तामेश्रीयाँगज्ञानाविभिरित्याह । यमाविभि स्तथातशाम्यतियद्वनमुकुन्दसेवयाअकासाक्षादेव । अत्रपुरेहभूमित्रत्यादिनानैष्कार्यमित्यादिनास्यागादीनांभिक्तरहित्यवयश्चीज्ञितिमेश्री **d** 8

सर्वतदिदमाख्यानंयत्पृष्टोऽहंत्वयानघ । जन्मकर्मरहस्यंमेभवतश्चात्मतोषगाम् ॥ ३७॥ एवंसंभाष्यभगवात्रारदोवासवीसुतम् । स्रुतउवाच 🔢 **ऋामंत्र्यवागाांरगायन्ययौयाद्द**िक्क कोमुनिः ॥ ३८ ॥ ऋहोदेवर्षिर्घन्योऽयंयत्कीर्तिशार्क्चन्वनः ।

> इति श्रीमद्भागवते महापुराग्रे पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे व्यासनारद-संवादां नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६॥

गायनमाद्यत्रिदंतंत्र्यारमयत्यातुरंगुज्त ॥ ३६ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ती ।

रेव यमादिभिरिति छभ्यते। ततस्तैरात्मा यद्यपि शाम्यति तदिपि यद्वन्मुकुन्दसेवया यमादिविनाभूततत्वात् केवछयेत्यर्थः। अत्र भवतानुदित प्रायमित्यादिना तथात्माद्धा नशाम्यतीत्यन्तेन प्रन्थेन भक्तरेव निस्तारोपायत्वेनोक्तत्वेऽपि तस्या स्त्रीविध्यं दृश्यते केवलत्वं प्राधान्यं गुगाभावश्च । त्यक्त्वा स्वधर्ममित्यादिषु । अहं पुरातीत भव इत्यादिषु च केवलत्वम् । कुर्वागा यत्र करमाणि भगविच्छक्षया सकृत्। गृण्यानित् गुण्यानामानि कृष्णस्यानुस्मर्रान्तचेत्यादिषु प्राधान्यम्। यदत्र क्रियते करमे भगवत् परिताषग्राम् । ज्ञानं यत्तदधीनं हि भक्तियोगसमन्वितमित्यत्र गुगाभावः। तत्र केवलत्वे निष्कामाधिकारिणां भक्तिरनन्या शुद्धा निर्गुगा उत्तमा अकिञ्चनेत्यादि नाम्नी प्रेमफला भवति प्राधान्ये कर्ममिश्रा ज्ञानिमश्रा योगमिश्रेत्यादि नाम्नी भक्तिः ज्ञान्ताधिकारि-गां रतिफला कस्यचिन्मोक्षफलापि भवति दास्यादि भाववत् साधुसङ्गवशात् कस्यचित् दास्याद्यभिलाषिग्रो भक्ते रित प्राधान्य सत्येश्वर्थं प्रधान दास्यादि भावपदा प्रेमफ्लापि भवति । गुगाभावेतु स्वीयं नाम फलं चाप्रकाशयम्ती कर्मा ज्ञान योगादीनां तया विना प्रति खफलं सम्यक् साधियतुमसमर्थानां तत्र साहाय्यमात्रं कुर्वती खयं तटस्थेव भवति। ततश्च भक्तिमिश्रं कर्म ज्ञानं थोगश्च मोक्षं साध्ययतीत्यतोऽत्र शास्त्रे भिक्तिद्विविधेव ॥ केवला प्रधानीभूता चेत्येतत् सन्त्रे नारदेनोपिदिष्टो न्यासो द्वादशसु स्कंधेषु प्रपञ्चिय्यतीति ज्ञेयम् ॥ ३६ ॥

## सिद्धांतप्र**दी**पः

खरब्रह्मविभूषिताम "खतोरंजयित श्रोतुश्चित्तं सखरउच्यत"इतिखरः निषाद्षभगांधार्षड्जमध्यमधेवतपंचमभेदःसएवब्रह्मतेनवि-भूषिताम खतः खराभिव्यं जवादनेमू छेनाचेतिवैजयंतीकोशात्वाद्यित्वा॥ ३३॥ ३७॥

#### भाषादीका

भगवान की दी हुई उस खर बहा भूषिता वीगा को मुरुछना आलाप युक्त कर हरि कथा गान करता हुआ में विचरता हूं॥ ३२॥ तीर्थ पाद प्रियश्रवा भगवान के वीर्य को जब मैं गान करता हूं तब पुकार कर बुलाये के समान शोध ही वह मेरे चित्त में आक-

विषयों के भोग की लालसा से मुहुर्मुहु आतुर चित्त पुरुषों के इस दुरन्त भवसागर से पार जाने का यही एक मात्र प्लव (वेडा)

देखा गया है कि जो श्री हरि भगवान की लीलाओं का वर्णन करना ॥ ३४॥ काम लोभादिकों से मुहुर्मुह उपद्रुत चित्त यम नियमादिक योग पथ से वैसा शुद्ध नहीं होता है जैसा साक्षात मुकुन्द सेवा सं वाहत होता है॥ ३५॥

## श्रीधरस्वामी

भवतोमबःपरितोषकारग्यश्चव्याख्यातम्॥ ३७॥ आमन्त्रयअनुज्ञाय । याद्दिछकः स्वप्रयोजनसङ्कलपशून्यः ॥ ३८॥ हरिकयागायकभाग्यं रेलाघते अहोइति । माद्यम् हृष्यम् । तन्त्रयावीगाया ॥ ३१ ॥ इतिश्रीमद्भागवद्भावार्थदीपिकायांप्रथमस्कन्धेषष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

### श्रीवीरराघवः।

प्रदनस्योत्तरमुपसंहरतिसर्वमिति। हेअनघत्वयाहंयत्प्रति पृष्टस्तदेनत्सर्वमाख्यातमित्यन्वयः ॥ ३७ ॥

्रव्यासनारदसंवादमुपसंहरति सूतः एवमिति एवमित्थंसंमाष्यमगवश्रारदोमुनिः वासवीस्रुतमुपरिचरवसुवीर्यजायाः सत्यवत्याःसुतं

व्यासमामंत्र्यापृच्छ्यवीर्गार्ग्यय्यार्राच्छकः खेच्छानुचारीययौ ॥ ३८॥

देविषस्तौतियहो इतिधन्यत्वंस्वस्यपरस्यचसुस्रापाद्कत्वंतदेवाहयोदेविषः शार्क्कभन्वनोभगवतः कीर्तिगायंस्तंत्र्यावीश्यामाधन्मदं-प्राप्तुवन्खयंवीग्रास्वनजहर्षमग्नः सिन्नत्यर्थः आतुरतापत्रयातुरंजगदिपरमयतिसुखयति ॥ ३९ ॥

इति श्रीवीरराघवटीकायां प्रथमेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

तीर्थंगंगाख्यंपादेयस्यसतीर्थपात्तस्यवीर्याणिचरितलक्षणानिप्रकृष्टंगायतः चशब्दपवार्थे एवसुपासकस्यैवममचेतासिप्रियश्रवाः भग वान् आहूतइवशीघ्रमविलंबितंदर्शनंयातिअपरोक्षोमवतीत्यन्वयः॥ ३७॥

हरिचर्यानुवर्गानंसमाधिभाषयाभगवश्चरितवर्गानंयत्तदेतत्मुहुर्मात्रास्पर्शेच्छ्यातत्प्राप्तिनिमित्तमातुरिचत्तानांक्षिष्टमनसांपुंसांभवसिधु

ष्ठवः संसारसागरतरीविशेषः दृष्टः साक्ष्यादिप्रमागौरितिशेषः इतियस्मात्तसात्विकहितायसैववर्णनीयेतिभावः॥ ३८॥

तिहियमादियोगानुष्ठानविधानंव्यर्थमितितत्नाह यमादिभिरिति मुकुंदकथासेवयायथात्मजीवोऽजसाशाम्यनिभगविष्ठषुद्धिमान्भवति तथाकामलोभाभ्यांवैरिभ्यांहतः पीडितोनुष्ठितैयोगमार्गियमादिभिरद्धानशाम्यति तस्माद्धरिकथासेवैवसंसारतरीत्येकान्वयः॥ ३९॥

उपसंहरति सर्वमिति अतीतजन्मविषत्वाद्रहस्यंममजन्मकर्मप्रत्यहंत्वयापृष्टः तिदद्सिर्वमाख्यातंतुभ्यमितिशेषः । कीद्दरांनित्यसंतुष्ट स्यतवापिभवतः आत्मनोमनस्तोषगांतुष्टिजनकं भवतथाख्यातमितिवा चशन्दः जन्मकर्मगाः समुचये श्रोतृगामात्मनांजीवानांतृप्तिजनक

सुतः व्यासनारदसंवादंशीनकादीनव्रूतइत्याह एवमिति वासवीसुतंसत्यवत्याः पुत्रव्यासंएवंपूर्वोक्तप्रकारेगासंभाष्यउक्त्वागच्छामीति

आमंत्र्य आज्ञांगृहीत्वावीगाांरण्यन्ध्वनयन् १यौ याद्यच्छिकः अतिर्कतद्गमनागमनः यतिर्निर्जितेद्वियत्रामः ॥ ४१ ॥

शार्क्षधन्वनाहरेः कीर्तिमाध्व्यामधुरयागिरातंत्र्यावीण्यागायन् आतुर्राक्षष्टंजगद्रमयतियः सोयंदेवर्षिनीरदः धन्यः कृतकृत्यः अहो आश्चर्यमेतत् शूद्रयोनेरप्येतादशमाहात्म्यममूदिति नारंश्वानंददातीतिनारदः अरदोदोषदोनभवतीतिवा आरवदंगारकवदायु खंडकोनभव तीतिवा दोअवखंडने ॥ ४२ ॥

रतिश्रीभागवतेप्रथमस्कंधेविजयध्वजटीकायांषष्ठोध्यायः॥ ६॥

## सुबोधिनी।

इतोऽपि किंचिद्रहस्यं भविष्यतीत्याशंक्योपसंहरति । सर्वे तदिति ।स्वतं पव नारदो महानिति लोके प्रसिद्धिः मया त्वेतावान् केशोऽ इताअप क्षाप्तर । कार्यस्त विचोद्वेगे हेतुरकः । सर्वत्र भगवान् हेतुरिति कथने हेतुः आत्मतोषगामिति । भगवत्प्रीतिहेतुरंतः सुखजन-कं वा॥ ३७॥

ता ॥ ३७ ॥ नारदस्याऽद्यापि साधनपरत्वमितिख्यापयितुमाह । एवमिति । भगवानिति प्रत्युपकारानपेक्षा । वासवीसुतमिति अनुगमनाद्यभावात् नारदस्याञ्चाप ताचाराता अनुगमनाधमावात् पूर्वोक्तं संभाषकाशेषत्वेनान्य आमंत्र्य गच्छामीत्युक्तवा भक्तिमार्ग एव मार्ग इति ख्यापियतुं वीक्षां रक्षायन् ययो । याद्वच्छिक इति पुन-

रागमनसंभावनाऽभावः । मुनित्वात् कार्यं सर्वे कृत्वागतः ॥ ३८॥

मनसमावनाउनायः । जुन्त्यार्थः । समार्थः समागत इत्याभिष्रायेशा नारदवर्शानमाह । अहो इति । देविधिरिति दृष्टफलसिद्धिः । गायः

न्माद्यस्तिति स्वतंत्रभक्तिः। अयमेव परोपकार इति शातवान् तदाह । रमयतीति ॥ ३९॥

इति श्रीभागवत सुवोधिन्यां श्रीलक्ष्मग्राभट्टात्मज श्रीवल्लभदीक्षितविराचितायांप्रथमस्कंधेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

सर्व्व भक्तेराविभीवप्रकारो वृद्धिः फलं तद्वतो जनस्य चेष्टा प्रारब्धकर्मनाद्याः साधकदेहत्यागप्रकारोऽकर्मारब्धचिन्मयदेहप्राप्तिश्च। रहस्यं वेदान्तदर्शिभिर्प्यगम्यम् ॥ ३७॥

त्यं वदान्तवाराः। आमन्त्रयं अनुज्ञाप्य। यहच्छ्या चरतीति याहच्छिकः हेतुशून्य गमनादिक्रिय इत्यर्थः। तेन च भक्तिर्याहच्छिकी भक्तीअप 

अतो विस्मयं प्रकाशयन्नाह अहो इति

इति सारार्थदिशिन्यां हिष्नयां भक्त चेतसाम् । षण्ठोऽयं प्रथमेऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सतामः ॥६॥

निर्गतेनारदेसूतभगवन्वादरायगाः। शौनक उवाच ॥

श्चतवांस्तदभिप्रेतंततः किमकरोद्दिभुः ॥ १ ॥

स्रुत उवाच ॥

ब्रह्मनद्यांतरस्वत्यामाश्रमः पश्चिमेतटे ।

सम्याप्रासइतिप्रोक्तऋषीगांसत्रवर्द्धनः ॥ २ ॥

तस्मिन्खन्त्राश्रमेव्यासोवदरीषंडमंडिते ।

त्र्यासीनोऽपउपस्पृत्रयप्रशिदध्यौमनः स्वयम् ॥ ३ ॥

भक्तियोगनमनाससम्यक्प्राशिहितेऽमले ।

ऋपदयत्पुरुषंपूर्गीमायांचतदुपाश्रयाम् ॥ ४ ॥

### सिद्धांतप्रद्विपः।

याद्यच्छिकः कृष्णेतरवस्त्वनाशक्त्यायदच्छाचारि ॥ ३८ ॥ माद्यन् कृष्णावेशेनद्रष्यन् ॥ ३९॥

इति श्रीसनत्कुमारसंततिप्रवर्त्तक भगवानिवाकिचरणचितकशुकशुधीपणीतेश्रीमस्भागवतसिकांतप्रसीपे प्रथमस्कंधीये षष्ठाध्यायार्थप्रकाराः ॥ ६॥

### भाषाटीका।

हे अनव तुमने जो कुछ मुझ से पूछा वह मैने यह अपना जन्म कर्म रहस्य सब आख्यान किया और तुझारे मनके संतोष का कारण भी कहा ॥ ३६ ॥

( स्तोवाच ) भगवान नारद जी वासवी सुत व्यासजी से यह संभाषण कर और पूंछकर जैसे आये थे वैसे ही चले गये क्योंकि

इनका विचर्गा प्रयोजन ग्रन्य केवल परोपकार के निमित्त है ॥ ३७॥

अहो ? ये देवर्षि परम धन्य हैं कि जो शार्क धन्वा भगवान की कीर्ति को गान करते और आनंदित होते बीगा बजाकर इस आ-तुर जगत को रमगा कराते हैं ॥ ३८॥

प्रथम स्कंध की छटी अध्याय ॥ ६ ॥

#### श्रीधरखामी

अथ भागवत श्रोतुर्जन्मवर्त्तुं परीक्षितः। सुप्तवालवधाद्द्रोगोर्द्रगडः सप्तम उच्यते॥०॥

तस्य नारदस्य अभिप्रेतं श्रुतवान् सन् ॥ १॥

ब्रह्मनद्यां ब्रह्मदेवत्यायां ब्राह्मग्रीरान्वतायां वासत्रं कर्म वर्द्धयीतितथा॥ २॥

वदरीनांषगडेन समुहेन मांगडत । मनः प्राग्रिदधौ स्थिरीचकार समाधि नातु स्मरति नारदोपदिष्टं ध्यानं कृतवानित्यर्थः॥ ३॥ बद्दराना पर्वा । पूर्व । विद्या अपार पूर्व प्रथम पुरुषमीश्वर मपश्यत्। पूर्णमिति वा पाठः । तद्पा अयाम् ईश्वरा अयांत-द्धीनां मायाञ्चापर्यत्॥ ४॥

## दीपिनी।

11011911 ( शस्याप्राश इति पाठे शमीभिः आ सर्वतः प्राश्यते व्याप्यते बेष्ट्यते वा असी शस्याप्राशः । इति व्याख्यालेशः ॥ २ ॥ ) समाधिनेति पश्चमाध्यायस्य त्रयोदशक्लोकः ॥ ३—५॥

#### श्रीवीरराघवः।

वासवीसुतमामंत्र्यनारदोयया वित्युक्तंततउपरितनंव्यासवृत्तांतपृच्छितिशोनकःनिर्गतइति हेस्तृततद्भिप्रतिकवाभागवताधर्मानप्रायेख्-वास्त्वा छ्वाना । वास्त्वा छवा । वास्व

#### श्रीदीरराघवः।

इत्थमापृष्टबाह्मूतः ब्रह्मनद्यादिभिःसप्तभिःब्रह्मनद्यांब्रह्मांबिभिः सेवितायांनद्यांसरस्वत्याख्यायांपश्चिमेतटेशम्याप्रासहित प्रसिद्धोच्या सस्याश्रमः सर्वेषीत्यांसत्रवर्द्धनः सत्राणिवर्द्धतेस्मित्रितितथा ॥ २ ॥

तस्मिन्वदरीणांवृक्षाणांसंडैमेडिते आश्रमेशम्याप्रासेव्यासोऽपउपस्पृश्याचम्यस्वयमात्मनामनः प्रिणद्धयौविषयांतरेभ्यः प्रत्याहृत्या-मस्थमकरोदित्यर्थः ॥ ३ ॥

भगवद्भक्तियोगेनामलेमनसिसम्यक्प्राणिहितेसमाहिते पूर्वतावत्पुरुषंपरमपुरुषमपश्यत् ततस्तद्पाश्रयांपुरुषापाश्रयांतदाधेयांत-च्छरीरभूतामितियावत्मायामपश्यत् ॥ ४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

भगवतकारणापदेशेनभवगतिभक्ति स्तन्माहात्म्यंचप्रतिपाद्यतेस्मिष्णध्याये निर्गतइति तद्अभिष्रेतंभागवतकरणंतस्यनारदस्यवा ततो नारस्तिर्गमनानंतरम्॥ १॥

लकुर्टाकृतराम्यानामयश्रीयतरुरााखापतितस्थलेकृतशालांतर्यश्रकरणात्रशम्याप्रासद्दतिलोकेकृतिः सत्रवर्धयति अधिकफलंकरोतीति

सत्रवर्धनः ॥ २ ॥

ऋष्युपयोगयोग्यफलबदरीवृक्षसमूहालंकतेऋषिसामान्याश्रमे अतीतानागतवर्तमानानंतकोटिब्रह्मांडबाह्याभ्यंत्रवर्त्यपरिमितपदार्थान शोषविशेषैः सहकरतलामलकवत्सततमपरोक्षीकुर्वतश्चिरंमनः प्रशिधानमसुरजनमोहनायेतिबोद्धव्यम् ॥ ३॥

ध्यानेनिकिलन्धमभूदितितत्राह भक्तीति भक्तियोगेनसम्यगकात्रतयाहरौप्रशिहितेसस्यक्स्थापिते अमलेरागादिदोषरिहतेसतांपुरुषाशां मनिस्प्रत्यक्षीभवंतपूर्यो देशतः कालतोगुशातश्चापिरिन्छन्नंपुरुषंपरमात्मानं जीवानांसंसारकरीं मायांबंधकशक्ति चतदपाश्रयांतस्यहरेरधी नामपश्यदित्येकान्वयः प्रकृतिपुरुषौविविकतयाद्रष्टुंलोकानांमनिससम्यक्ष्रशिहितेसितशक्यावित्यपश्यदितिवापतदिभप्रायेश्वतद्पाश्रया मित्युक्तं ततोपगत्याश्रित्यस्थितां स्थातुमीक्षापथेमुयेतिवस्यित ॥ ४॥

## क्रयसन्दर्भः।

## सुबोधिनी ।

एवंत्रिभिर्मध्यमस्य खातं त्र्येगा निरूपगात्। नारद्व्यास संवाद निरूप्यात्थे।तमाभिधा ॥ १ ॥ त्रयोदशिमप्रध्यायैः साधकीयं प्रजापतिः। खतंत्र उत्तमस्यैव साधकीयं निरूप्यते॥ २ ॥ द्वांदशां तश्च सिहतो ह्यधिकारो निरूप्यते। हेतुः षड्भिराक्तिश्च तथा खातं अमंतिके॥ ३ ॥

#### सुबोधिनी।

त्पासिप्रवृत्तीभक्तानांमनोरथपूरणं च निरूप्यते तत्रप्रथमंशीनकः भागवतोत्पत्ति प्रश्नमाह भगवानिति सहजशक्तिः वाद्रायण इति आगंतु कतपः शक्तिः वद्रफलेनवर्त्तमानः वाद्रायगाः तद्मिप्रायं भगवद्गुगानांयाथातम्यप्रतिपाद्क प्रथकरग्रम् ॥ १॥

नारदवचनांनंतरंभगवदिच्छानिर्सारार्थे समाधिकतवान्तत्रशुद्धेदेशेभगवदाविभीवः शुद्धवचदेवयजनमिति व्यासनिवासस्थानस्यदेव यअनत्वमाह । ब्रह्मनद्यामिति । सामीप्येसप्तमीब्रह्मदैवत्यांसरस्वत्यामिति तत्रैववेदादिविद्यास्फूर्तिः सहसापश्चिमेत्तदेइतिपुरतोनदीदेवय जनेभवतिपुरोहाविश्वतद्वेवयजनम्। किंच। शम्याप्रास्यते अस्मिन्नितिशम्याप्रासः "तद्ग्रेःप्रियंधामभवतितद्वेवाभ्रिः खस्यानात् आशास्यायता शादपक्षायतियदिपरस्तरामपक्षायेदितिवा शम्याप्रास्यतेअस्मादितिवातस्यस्थानस्यवलमाह ऋषीगांसत्रंवर्द्धयतीति॥२॥

देवयजनत्वंनिरूप्यतत्रव्यासस्य समाधिमाहतस्मित्रिति। खाश्रमइति अपराधीनत्वेननिर्भयचित्तप्रसादहेतौ व्यासइत्यधिकारीवदरीखंड मितिपाठः बदरीअमृतदरी परमानंददायिनी तस्यखंडः समूदः खंडोवातेनचमंडिते अनेनतपः स्थानंमोक्षस्थानं च तदितिसूचितंभवति तस्मिन्नासीनः सर्वदेवताप्रसादायचाचमनं "यिश्वराचामितिनेन्द्रचःप्रीगाती"तिथुतेः योगेन साधितंमनः तदुक्तमार्गव्यतिरेकेगा स्तंत्रतया यद्त्रभगवताऽमीष्टंतत्र्फुारिष्यतीति बुद्धास्त्रयंमनः स्थिरीकृतवान् ॥ ३॥

तदासमाधिभाषाविषयाः पदार्थाः स्फुरिताइतितान् वर्णायितुंप्रथमंतदाधारंवर्ण्यति मक्तियोगेनेति । वायुवशात्स्थिरीभृतश्चेन्नारद्वत् स्क्रींतरितितदाह । भक्तियोगेनेतिनिःकामत्वादमलेतत्रयव्रष्टवान् तदाह अपश्यदितिद्वयेनसाकारं ब्रह्मशुद्धहिमायातच्छिकिरसमातयां . सर्वत्रसंमोहः साक्षाद्रिकश्चमोचिकेति पूर्णपुरुपंपुरुपोत्तमं जीवराशिभिराक्षीर्णब्रह्मांडकोटिभिर्वामायांचापश्यत् भगवदेकशरणाम् ॥ ४॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

सप्तमे सर्व्वशास्त्रार्थे समाधी व्यास ऐक्षत । व्रह्मास्त्रस्योपसंहारो द्रौगोर्दग्डश्च कथ्यते ॥०॥०॥१॥ ब्रह्मनद्यां वेदानां विष्राणां तपसां परमेश्वरस्य वा सम्बन्धिन्यां नद्याम् । "वेदस्तत्त्वं तपो ब्रह्म ब्रह्मा विष्रः प्रजापित" रित्यमरः ॥ २ मनः मनसा प्रशिद्ध्याविति "समाधिनानुस्मर तद्विचेष्टितमिति नारदोपदेशात् ॥ ३॥

प्रिताहिते निश्चले । अत्र हेतुः भक्तियोगेनामले । पुरुषं पुरुषाकारम् । पूर्गी श्रीकृष्णामित्यर्थः कृष्यो परमपूरुषे इत्याव्रमोक्तेः । पूर्वमितिपाठे "पृथ्वमेवाह मिहासमिति तत्पुरुषस्य पुरुषत्विम"ति प्रौढिनिर्ध्वचन विशेष पुरस्कारेगा च स एवोच्यते । पूर्णिमिति पद्न तस्य खरूपभूतां चिच्छिक्तम् अंशकलावतारान् पूर्विलिगेन ब्रह्म च अपस्यदिति गम्यते। पूर्यीचन्द्रमपश्यिदत्युक्ते चनद्रस्य कान्तेरंशकलानाव्य पूर्तेश्च दर्शनं स्वत एव अवेदित्यर्थः। किन्तु तस्य विहरंगायाः शक्तंभीयायास्तिद्वपरीतधर्भवत्यास्तह्शेने दर्शनं न भवतीति तां पृथगुल्लिखित मायां चेति । तस्य अप अपरः पश्चिममाग एव आश्रयो यस्यास्तां "विलक्षमानया यस्य स्थातुः मीक्षापथेऽमुये "त्यनेन तस्या मगवत्पृष्ठदेशाश्रयत्वेनोक्तेः॥ ४॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

ततः किंवृत्तमिति पुच्छतिशौनकःनिर्गतेइति ॥ १॥ ब्रह्मनद्याम ब्राह्मशासेवितायाम सत्रंकर्मवर्द्धतेऽस्मिन्सतथा॥१॥ वद्री गांचंडेनसम्हेनमंडितेमनः प्राणिदध्योस्थिरीकृतवान् ॥ ३॥

हरिमिकियोगेनामलेऽतएवसम्यक् समाहितेमनसि पूर्शीपुरुषंपरमातमानमपद्यत् परमातमनोलक्षासमुक्तंपूर्वोचार्येश "स्वभावतोपास्त समस्तदीषमदोषकल्यासाग्रुसौकराशिम् व्यूहांगिनंबह्मपरंषरेस्ययायमकृष्णंकमलेक्ष्यांहिरिम"ति ततुपाश्रयांतच्छाकिमूतांमायांचापद्यत् साचाच्युकापूर्वाचार्येगा मायाप्रधानादिपदप्रवाच्यंशुक्काविभेदेश्वसमपितंवेति॥४॥

### भाषाटीका

(शीनक उवाच ) हे खूत ! नारद के गमन के अनंतर, उनका अभिप्राय सुनकर, विभुमगवाम वादरायमा ने क्या किया ॥ १॥ ( खूत उवाच ) ब्रह्म नदी सरस्वती के पश्चिम तट पर ऋषिओं के सत्र कर्म का वर्डन करने वाला शम्याप्रास नाम आश्रम है ॥२॥ बद्दी वृक्षों के समृद्द से मंडित उस अपने आध्रम में बेठे व्यास जी ने उपस्पर्श ( जला चमन ) कर स्वयं मन को प्रशिधान किया ॥ ३॥

भक्ति योग के द्वारा सम्यक् स्थिरी कृत अमल मन में पूर्ण पुरुष श्री भगवान को देखा, और तब तदाश्रय (तद्धीना वहि रंगा) माया शक्ति को देखा ॥ ४॥

यया सम्मोहितो जीव स्रात्मानं त्रिगुगात्मकम् ।
परोऽपि मनुतेऽनर्थं तत्कृतञ्चाभिपद्यते ॥ ६ ॥
स्रमर्थोपशमं साचाद्मिक्तयोगमधोच्चजे ।
लोकस्याजानतो विद्दांश्चके सात्वतसंहिताम् ॥ ६ ॥
यस्यां व श्रूयमागायां कृष्णो परमपूरुषे ।
भक्तिरुत्पद्यते पुंतः शोकमोहभयापहा ॥ ७ ॥
स संहितां भागवतीं कृत्वाऽनुक्रम्य चात्मजम् ।
शुकमध्यापयामास निवृत्तिनिरतं मुनिः ॥ ८ ॥

### श्रीधरस्वामी

ईशमायाकृताश्च जीवानां संसृतिमपश्यिदित्याह । यया मायया सम्मोहितः खरूपावरणेन विक्षिप्तः परोऽपि गुणत्रयाद्व्याति-रिक्तोऽपि तत्कृतं त्रिगुणत्वाभिमानकृतम् अनर्थश्च कर्त्तृत्वादिकं प्राप्तोति ॥ ५॥

अनर्थमुपरामयित योऽघोक्षजे साक्षाद्धिक्तयोगः तञ्चापरयत् । एतत् सर्व्व स्वयं दृष्ट्वा एवमजानतोलोकस्यार्थेसात्वतसंहितांश्रीमागव ताष्यां चक्रे तदनेनश्लोकत्रयेगामागवतार्थः संक्षेपतोद्दिातः एतदुक्तंभवितिविद्याराक्त्यामायानियंता नित्याविर्भूतपरमानंदस्वरूपःसर्वज्ञः सर्वराक्तिरिश्वरःतन्माययासंमोहितिस्तरोभूतस्वरूपस्तद्विपरीतधर्माजीवः तस्यचेश्वरभक्त्याल्ञध्वानेनमोक्षइतितदुक्तंविष्णुस्वामिना"ह्या विन्यासंविदाश्विष्टः सचिदानंदर्श्वरः स्वाविद्यासंवृतोजीवः संक्षेरानिकराकरः तथा "सर्वरोयद्वरोमायासजीवोयस्तयाऽदितः स्वाव-भूतपरानंदः स्वाविर्भूतसुदुःसभूः स्वादगुत्थविपर्यासभवभेदजभीशुचः यन्माययाजुषन्नास्तेतिममंनृहरिनुम" इत्यादि ॥ ६॥

संहितायाअनर्थीपशामकत्वंद्रशयति । यस्यांवीश्रूयमाणायामेव किंपुनःश्रुतायामित्यर्थः॥ ७॥

अनुक्रम्य शोधियत्वा॥८॥

## दीपिनी।

तश्च अपरयदिति भक्तियोगेनेत्यादिपूर्व्वरलोकोक्तियायामन्वयः । ह्रादिन्येति । ह्रादिनी परमानन्दमयी राक्तिः तया संविदा ज्ञानेन । स्वाविद्या स्वाज्ञानम् । रलोकान्तरश्च । "अनात्मन्यात्मबुद्धियो अस्वे स्वमिति या मितः साविद्या तत्कृतो वन्धस्तन्ना- शो मोक्ष उच्यते" इति । श्रतिश्च कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वर इति ॥ ६—९॥

### श्रीवीरराघवः।

मायांचिशिनिष्टययोति । परोऽपिमायाख्यप्रकृतेर्विलक्षणोऽपिजीवोययामाययामोहितः त्रिगुणात्मकंगुणत्रयपरिणामात्मकंशरीरमेवातमा नमनुतमन्यतेतत्कृतदेहात्मभ्रमकृतमनर्थचतापत्रयखरूपंप्रतिपद्यते ॥ ५ ॥

किंच अनर्थोपरामंतापत्रयरूपानर्थोपरामनात्मकमुपायमजानतोलोकस्याधोक्षजेमक्तियोगमेवानर्थोपरामंविद्वान्सर्वज्ञानवान् व्यासोऽप-इयदित्यनुषंगः भगवद्भक्तियोगमेवानर्थोपरानोपायत्वेनीनाश्चितवानित्यर्थः ततः सात्वतसंहितांश्रीभागवतरूपांसंहितांसंहितासंदर्भावद्योषः सात्वतराब्दस्तुपुरस्तादेवनिरुक्तः॥ ६॥

तामेवविशिनिष्टि यस्यामिति। यस्यांसात्वतसंहितायांश्रूयमाणायांशोकाद्यपर्हतिरपरमपुरेषकृष्णोभक्तिरुत्पद्यतेततोमोहोनाम"अनात्मन्यात्म बुद्धिर्याअस्वेस्वामितियामितिरित्युक्तविधः शोकोवाह्यक्षेशः दुःखमान्तरः भयमागामिदुः खद्शेनजंप्रतिकूलंक्षानंपूरुषदातिदीर्घश्छांद्सः॥ ७

सव्यासांऽनुक्रम्यविवक्षितार्थान्कमविद्येषण्यविन्यस्यतद् नुक्रमंगीवेमांसंहितां कृत्वासुतंशुक्रमध्यापयामासप्रदनावेसरदानायशुक्रिवीदी-निष्टिनि वृत्तिनिरतंसांसिरिकधमेवेमुख्यद्वाराकेवलिचत्तिकाग्यावहः शमदमादिभिार्नेवृतिः तत्रानिरतंमुनिपरवद्वायायात्यमनन्द्रीलम् ॥ ८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अनिर्वाच्याविद्यामायानामअतः कथंवंधकशक्तिरियमित्याशंक्यअनिर्वाच्यायाः अर्थकियायोगादस्यास्तद्दर्शनादत्रवंधकशक्तिरेवोच्यत इत्यभिष्रेत्याद्द्र ययेति परोऽपित्रिगुणात्मकप्रकृतेरन्योपि ययासंमोदितोजीव आत्मानंत्रिगुणात्मकंत्रिगुणोपादानकदेहरूपं भनुते तत्कृतं मायाकृतंतादशमानकृतंवा जननमरणाद्यनर्थमहंकर्तेत्यनर्थंचाभिपद्यतहत्यन्वयः तस्मादेवंविधमायावधिनवर्तकमपरोक्षण्ञानद्वाराभक्ति-योगमद्राक्षीदितिभावः ॥ ५ ॥

ततः किमकरोदितितत्राह अनर्थेति तन्निवृत्तिसाधनमाहेतिवाअनर्थेति साझादाहेतीष्टानिष्टप्राप्तिपरिहारोपायमजानतोलोकोकस्यसा-त्विकप्रकृतेर्वधकर्शाक्तिनिमित्तमनर्थमुपरामयितनाशयितहत्यनर्थोपराममधोक्षजेभिक्तयोगंविद्वान् महत्त्वज्ञानपूर्वकप्रेमलक्षणभक्तियोगप्रद्-र्शानायसात्वतसंहितांचकहत्येकान्वयः ॥ ६ ॥

अनयाकथंभक्ति रूपयतइतितत्राह यस्यामिति॥ ७॥

अनुक्रम्यसंशोध्यनत्ववद्यवुद्धचा निवृत्तिनिरतिमत्यस्यफलाभिसंधिरहितिमत्यर्थः॥८॥

### कपसन्दर्भः।

अथ अभिधेयस्य प्रयोजनस्य च स्थापकं जीवस्य खरूपतएव परमेश्वराद्वेलक्षरयमपदेयदित्याह ययेति । यया मायया संमोहितो जीवः खयं चिद्रपत्वेन त्रिगुणात्मकाज्जडात् परोऽपि आत्मानं त्रिगुणात्मकं जडं देहादिसंघातं मनुते। तन्मनन कृतमनर्थे संसारव्यसन-श्चाभिपद्यते। तदेवं जीवस्य चिद्रपत्वेऽपि यया संमोहित इति मनुत् इति स्वरूपभूतक्षानशालित्वं व्यनिक । प्रकाशैकरूपस्य तेजसः खपरप्रकाशनशक्तिवत्। "अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तव" इतिश्रीगीतादिभ्यः। तदेवमुपाधरेव जीवत्वं तम्नाशस्यैव च मोक्षत्विमिति मतान्तरं परिद्वतवान् । अत्र यया संमोहित इत्येनन तस्याएव तत्र कर्तृत्वं । भगवतस्तु तत्रोदासीनत्वं मतं । वश्यते च "विल्रज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया। विमोहिता विकत्थंते ममाह मिति दुर्धियः" इति। अत्र विल्रज्जमानयेत्यनेनेदमायाति। तस्या जीवसंमोहनं कर्म श्रीभगवते न रोचते इति यद्यपि सा स्वयं जानाति तथापि "भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्यादीशाद्येतस्य विपर्ययोऽस्मृति"रित्यादिदिशाजीवाना मनादिभगवद्शानमयवै मुख्यमसहमानास्वरूपास्फुरगामखरूपावेशंचकरोति। श्रीभगवांश्चानादित एव भक्तायां प्रपञ्चाधिकारिएयां तस्यांदाक्षिणयंलंघितुंनशक्नोतितथातद्भयेनापिजीवानांखसांमुख्यंवांछ्घुपदिशति "दैवी होषागुगामयीमम मायादुरत्यया । मामेवयेप्रपद्यन्तेमायामेतांतरंतिते"इति । "सतांप्रसंगान्ममवीर्यसंविदोभवन्तिहृत् कर्णरसायनाः कथाः।तज्ञोषणादाश्व-पवगवर्मनिश्रद्धारतिभेक्तिरनुक्रमिष्यती"ति च । लीलयाश्रीमद्वचासरूपेगातु विशिष्टतयातदुपदिष्टवानित्यनन्तर मेवायास्यति । अन-र्थोपरामंसाक्षाद्धिक्तियोगइति तस्माद्वयोरिपतत्तत् । समंजसंक्षेयं। ननुमायाखलुराक्तिः । शाकिश्वकायश्रमत्वतच्चधमविदेशिः तस्यकथं-लज्जादिकं उच्यते पवंसत्यपिभगवतितासां शक्तीनामधिष्ठातृदेव्यः श्रूयन्ते । यथाकेनोपनिषदिमहेन्द्रमाययोः संवादः । तदास्तांप्रस्तुतंप्र-स्तूयते । तत्रजीवस्यतादद्याचिद्रपत्वेपि परमेश्वरतोवैलक्षग्यं । तद्पाश्रयामिति । ययासंमोहितइति च द्रीयतियर्ह्यवयदेकंचिद्रूपब्रह्ममा-याश्रयताविलतं विद्यामयंतर्ह्धेवतन्मायाविषयतापन्नमविद्यापरिभूतं चेत्ययुक्तमितिजीवेश्वरविभागोऽवगतः । ततश्रस्रक्रपसामर्थ्यवैद्यक्ष-ग्थेनतद्दितयंमिथोविलक्षगुस्वरूपमेवेत्यागतंनचोपाधितार तम्यमयपरिच्छेदप्रतिविम्वत्वादिब्यवस्थयातयोविभागःस्यात्तत्रयद्युपाधेरना विद्यकत्वेनचास्तवत्वंतर्द्यविषयस्य तस्यपरिच्छेदविषयत्वासम्भवः निर्द्धमेकस्यव्यापकस्यनिरवयवस्यच प्रतिविम्वत्वायोगोऽपिउपा-धिसम्बन्धाभावात् विम्वप्रतिविम्बभेदाभात् दृश्यत्वाभावाच् उपाधिपरिच्छिन्नाकाशस्थज्योतिरंशस्यैवप्रतिविम्बोद्दश्यतेनत्वाकाशस्य-हृश्यत्वाभावादेवतथावास्तवपरिच्छेदादौसतिसामानाधिकरणयज्ञानमात्रेगानतत्त्यागश्चभवेत्तत्त्पदार्थप्रभावस्तत्रकारगामितिचेदस्माकमेव-मतंसन्मतंउपाधेराविद्यकत्वेतुतत्र तत्परिच्छिन्नत्वादेरप्यघटमानत्वादाविद्यकत्वमेवेतिघटाकाशादिषुवास्तवोपाधिमयतद्दर्शनयानतेषाम-वास्तवस्वप्नदृष्टांतोपजीविनांसिद्धान्तःसिध्यतिघटमानाघटमानयोःसंगतेःकर्तुमशक्यत्वात्ततश्चतेषांतत्तत्तसर्वमविद्याविलासएवेति स्वरूप मप्राप्तेनतेनतेनतत्त्वचवस्थापयितुमशक्यमिति ब्रह्माविद्ययोः पर्यवसानेसतियदेत्रब्रह्मचिन्मात्रत्वेनाविद्यायोगस्यात्यंताभावास्पद्त्वाच्छुद्धं तदेवतद्योगादशुद्धाजीवः पुनस्तदेवजीवा विद्याकिष्पतमायाश्रयत्वादीश्वरस्तदेवच तन्मायाविषयत्वाजीव इतिविरोधस्तदवस्थ एवस्यात् तत्रचशुद्धायांचित्यविद्यातद्विद्याकिल्पतोपाधौतस्यामीद्वराख्यायांविद्येतितथाविद्यावस्वेऽिपमायिकत्वामित्यसमञ्जसाच कल्पना स्यादित्याद्यनुसन्धेयम्किञ्चयद्यत्राभेद्वाद्पवतात्पर्यमभविष्यत्तर्हेकमवब्रह्मअज्ञानेनभिन्नंज्ञानेनतुतस्यभेद मयदुःखंविलीयतद्दर्यपर्यदित्ये॰ वावश्यत्तथाश्रीभगवलीलादीनांवास्तवत्वाभावे सतिश्रीशुकदृदयिवरोधश्चजायतेतस्मात् परिच्छेद्प्रतिविम्बत्वादिप्रतिपादकशास्त्राग्यपि कथिश्चनत्त्राहर्यनगौग्यैववृत्त्याप्रवन्तेरन् "अम्बुवद्ग्रह्णात्नतथात्वंवृद्धिहासभाक्त्वमन्तर्भावादुभयसामञ्जर्यादेवमितिपूर्व्यात्तरपक्ष-

刀

### क्रमसन्दर्भः।

त्तीयानि । तदेवंमायािश्रतत्वमायामोहितत्वाभ्यांस्थिते तयोभेदेतद्भजनस्यैवाभिधयत्वमायातं । अतः श्रीभगवतपवसर्वहितोपदेष्ट्रत्वात् सर्वदुःखहरत्वात्ररदमीनांसूर्यवत्सर्वेषां परमखह्रपत्वात्सर्वोधिकगुणशालित्वात् परमप्रेमयोग्यत्वमितिप्रयोजनश्चस्थापितम् ॥ ५ ॥

तत्राभिधयश्च तादरात्वेन दृष्ट्वानिष । यतस्तत् प्रवृत्त्यर्थं श्रीमागवताक्यामिमां सात्वतसंहितां प्रवित्तित्वानित्याह् अनर्थित । भक्ति योगोऽत्र अवगाकीर्त्तनादिलक्षगाः साधनभक्तिः नतु प्रेमलक्षगाः । अनुष्ठानं ह्यु पदेशापेक्षं प्रेम तु तत्प्रसादापेक्षमिति । तथापि तस्य तत्प्रसादहेतोस्तत्प्रेमफलगर्भत्वात् साक्षादेवानर्थोपशमनत्वं न त्वन्यसापेक्षत्वेन । "यत् कम्मीभर्यत्तपसेत्यादेः । ज्ञानादेस्तु भक्तिसापेक्षत्वमेव "श्रेयः सृति भक्तिमुद्रस्येत्यादेः । अथवा अनर्थस्य संसारव्यसनस्य तावत् साक्षात् अव्यवधानेनोपशमनम् । सम्मो-हादिद्वयस्य तु प्रेमाख्यस्वीयफलद्वारेत्यर्थः । अन्यत् तैः । तत्र स्वाहगृत्थेति । स्वाहक् स्वाह्मानं तेनोत्थितो यो विपर्यासः स्वद्धपान्यथान्नानं तद्भवो यो भेदः भिन्ने देहादावहं ममताहृष्णः तस्मात् जाता या भीःशुचश्च ता जुषमागा आस्ते इत्यर्थः ॥ ६॥

अय प्रयोजनञ्च स्पष्टियतुं पूर्वोक्तस्य पूर्णपुरुषस्य च श्रीकृष्णरूपत्वं व्यञ्जियतुं प्रन्थफलिन्देशिद्वारा तत्र तद्नुभवान्तरं प्रति-पादयन्नाह यस्यामिति । भक्तिः प्रमा श्रवण्यूष्पया साधनभक्त्या साध्यत्वात् । उत्पद्यते आविभवति । तस्यानुषङ्गिकं गुण्यमाह शोकेति । अत्रेषां संस्कारोऽपि नश्यतीति भावः । "प्रीतिनं यावन्मिय वासुदेवे न मुच्यते देहयोगेन तावदि" ति श्री ऋषभदेववाक्यात् परमपुरुषे पूर्वोक्ते पूर्णपुरुषे । किमाकारे इत्यपेक्षायामाह कृष्णे । "कृष्णस्तु भगवान् स्वयमि"त्यादिशास्त्रसहस्रभावितान्तः करणानां परमप्रया तत्त्रसिद्धमध्यपातिनांचासंख्यलोकानां तन्नामश्रवणमात्रेण यः प्रथमप्रतीति विषयः स्यात् तथा तन्नामनः प्रथमाक्षरमात्रं । मन्द्वाय कल्पमानं यस्याभिमुख्याय स्यात्तदाकार इत्यर्थः । आहुश्च नाम कौमुदीकाराः । कृष्णाशब्दस्य तमालश्यामलिविष श्री यशोदास्तनन्थये परविद्वाणि रूढिरिति ॥ ७॥

अथ तस्यैव प्रयोजनस्य ब्रह्मानन्दानुभवाद्पि परमत्वमनुभूतवान् । यतस्तादृशं शुक्रमपि तदानन्दवैशिष्ट्य लम्भनाय तामध्याप यामासेत्याह संहितामिति । कृत्वानुक्रम्य चेति विवृतमस्ति । ब्रह्मानन्दानुभवनिमग्नत्वाश्ववृत्तिनिरतं । सर्व्वतोनिवृत्तौ निरतं तत्राव्यभिचारिग्रामपीत्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥

### सुबोधिनी।

तस्याः कार्यचापस्यत् ययासंमोहितइति। यद्यपित्रपंचोऽपितस्याःकार्यतथापितत्रकारगात्वेनतस्याथन्वयःसमोहनेतुकनृत्वेनस्वातंत्र्यात् एतदेवाहययेतिवस्तुतोजीवोपिब्रह्मैवेतिपरोपि प्रकृतेनियामकोपित्रिगुगात्मकं गुगात्रयमावापन्नं जडक्रपंमन्यतेतत्कृतं च अनर्थ जन्म मरगादिप्राप्नोति ॥ ५ ॥

नजुिकमनयासंहितयापदार्थशानेवांकि साधनकथनेपिप्राशिनां तथाधिकारा भाषात्व्यर्था संहितेत्याशंक्यतस्याः फलमाहयस्यांवैश्र्यः मागायामिति।भक्त्युत्पत्तिपर्यतमियंश्रोतव्याइयंचदृष्टद्वाराभक्तिजनिकादृष्टेसंभवातिश्रदृष्टकल्पनायाञ्चत्याव्यत्वात्यथाचास्यादृष्टोपयोगःतदुः पपादितं प्रथमश्लोकेकृष्णेआविभूतेभगवतिपरमपूरुषे सर्वप्रमागासमन्वयेकालादिनियंतिरवाभक्तिरुत्पद्यतेस्वतंत्रस्यशोकमोहभयानिरजस्तमः तत्वकार्यागितान्यपहंतीतितथा अनर्थनिवृत्तिदृरंगुगाकार्यमात्रं पवनिवर्त्ततद्वयर्थः॥ ७॥

एवंभागवतस्योत्पित्तमुक्काप्रचारमाहससंहितामिति संहितांभागवतीमित्यनुवादः बहुसंहिताकरणादन्यव्यावृत्यर्थः अनुक्रमेणशोध यित्वा आनुपूर्व्येणावाहदमन्येननप्रसृतंभविष्यतीति स्वसद्दंपुत्रमध्यापयामासद्दं दोषवतानप्रसृतंभविष्यतीति मननाद्वगत्यसुनं शुक्रमध्या यित्वा आनुपूर्व्येणावाहदमन्येननप्रसृतंभविष्यतीति स्वसद्दंपुत्रमध्यापयामासद्दं दोषवतानप्रसृतंभविष्यतीति मननाद्वगत्यसुनं शुक्रमध्या ययामासमुक्तोपिळीळयाळोकानुवर्त्तादेश्वरवत् तेनापिनास्यप्रचारोभविष्यतीतितद्यमाह निवृक्तिनिरतमिति ॥ ८॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

ततु भगवद्रपगुण्ळीलामाधुर्यवर्णनार्थं भगवद्दर्शनमपेक्षणीयमेवव्यासस्माया दर्शनं किमर्थं तत्राह् यया सम्मोहित इति । अयमर्थः यद्धं श्रीमागवतमारिष्सितं सजीवो मायारोगग्रस्तः कथंखयं खादयतु तन्माधुर्यम् अतस्तस्य रोगदर्शनं विनाविचिकित्सानभवति-तथा च विना रोगिसास्तस्य कथ मौषधि पथ्ययोर्व्यवस्थेतिमायाजीवाविप द्रुष्टुमवश्यमेवापेक्षसीयावितियया सम्मोहितः खरूपाव रस्यविक्षपाञ्यां भ्रमितः परोऽपितस्यामायायागुसाश्रयातिरिक्तोऽपितत्कतंगुसाकृतमन्थैतदाभ मानेन प्राप्नोति॥ ५॥

तस्य यदौषधं तद्पि इष्टमित्याह अनर्थ मुपरामयति यस्तं भक्ति योग आपर्यत् । अत्र दर्शनेऽयं क्रमोक्षेयः । प्रथमं भगवन्त मप-इयत्। पूर्गोति पद प्रयोगा दंशान्विना कथं पूर्ण त्विमिति तदंशान् पुरुषावतार गुणावतारादीन् अपस्यत्। पूर्ति मनु पूर्णत्व-मिति पार्ची रूपं ब्रह्मं अपरयत् । तत्कांति मृतां विमलोत् कर्षिणयाधनेक प्रभेदवतीं चिच्छक्तिम परयत् । पृष्ठेव हिरंगां माया शंक्ति मपश्यत् । तया मोहितां जीवशिक तदन्तरमपश्यत् तस्यास्तनमोह निवर्तिकां सर्वतोऽपि महतीं चिच्छिक्तमुख्यां भाक्ति रूपां शक्ति मनुत्र ह शक्ति विलास भूतां भगवतोऽपि वशियत्रीं भगवत्येषापश्यत् । तदेतत् सर्वे खयं हष्ट्वा अजानतो लोकस्स्यार्थे सात्वत संहिताम् । एतत् सर्व तत्त्व प्रकाशिकां श्रीभागवताख्यां चके । ईशः खतंत्रश्चित् सिन्धुः सर्व व्याप्येक एवहि जीवाऽश्रीनश्चित् कणोऽपि खोपाधि व्यापि शक्तिकः। अनेकोऽविद्ययोपात्तस्यका विद्योऽपि कर्हिचित्। मामात्वचित् प्रधानश्चा विद्याविद्येति सात्रिधा। ईश्वर जीवमाया जगतां स्व रूप शक्तेर्भक्तेश्च लक्ष्मण प्रमादिकं वेदस्तुति व्याख्यायां व्यक्ती मविष्यति॥ ६॥

संहितायाः प्रेमसाधनत्वमाह । यस्यां श्रूयमाणायामेव कि पुनः श्रुतायां किन्तरां कीर्त्यमानायां किन्तमां कीर्त्तितायां । भक्तिः प्रेमा ईश्वरः सद्यो हृद्यवरुद्धातेऽत्र कृतिभिरित्युक्ते रिश्वरावरोधस्य फलस्य प्रेम्गाः एव लिङ्गत्वात् भक्तानामनुसंहितं फलं संसारनिवृत्तिः साच भक्तानामेव भवतीत्याह शोकत्यादि॥ ७॥

अय तस्यैव प्रयोजनस्य प्रेम्मा ब्रह्मानन्दानुभवाद्पि परमत्वमनुभूतवानेव यत स्तादृशं शुक्रमपि प्रेमानन्दस्य वैशिष्ट्योपलम्भनाय तामध्यापयामास लोकेहि खादितापूर्व्वमिष्टवस्तुकः पित्रादिः स्वस्य मेव पुत्रादिकं तत्तदास्वादयितुं प्रयतते इत्याह स संहितामिति कृत्वानुक्रम्यचेति प्रथमतः स्वयं संक्षिप्तभक्तिकं कृत्वा पश्चात्रारदोपदेशादनुक्रमेशा श्रीभगवद्भक्त्येकप्रधानतया अनुक्रम्य संशोध्येत्यर्थः र प्राचित्र । श्रीकृष्णान्तर्द्धानानन्तरं परीक्षित् कर्नृक किलिग्रहात् पूर्व्व क्षेयस्तदैव किल्ना स्वाधिकारारम्भे स्वपावस्य प्रकटनात् थार्मिकागामिपशास्त्रदर्शिनामप्यधर्मेप्रवृतेःयतपवव्यासस्यिचित्ताप्रसादः। यदुक्तं। जुगुप्सितं धर्मेकृतेऽनुशासतइत्यत्रनभन्यते तस्यनिवा रगां जनइति । कलियुगात् पूर्वमेव चित्ताप्रसादे नमंस्यत इतिप्रयुज्येत अतस्त दैव पूर्व निर्मितस्यैव श्रीभागवतस्यामुक्रमगां । यस्कः । क्र च्योस्वधामो पगते इत्यत्र पुरागाकोंऽधुनोदितइति । अतपवेदंशीमद्भागवतं भागवतानन्तरं यदत्र श्रूयते यचान्यत अष्टादश पुरागान-न्तरं भागवत मितितद्वयमपि संगतं स्यात् । निवृत्तिनिरतं ब्रह्मानु भविन मपि॥८॥

## सिद्धांतप्रदीपः

जीवःपरमात्मनोंऽशभृतःपरोऽपिदेहादिविलक्षणोपिययामोहित आत्मानंत्रिगुणात्मकंदेहंमनुतेमन्यते जीवलक्षणमुक्तंपूर्वाचार्येगा। ''क्षा-नस्वरूपंचहरेरधीनंशरीरसंयोगवियोगयोग्यम् अणुंहिजीवंपतिदेहिभिन्नंज्ञातृत्ववंतंयद्नंतमाहुः अनादिमायापरियुक्तरूपत्वेनंविदुर्वेभगव-त्प्रसादादिति विस्तरस्तुसूत्रभाष्येवेदांतकौस्तुभेद्रष्टव्यः तत्क्थंदेहात्माभिमानकृतमनर्थमभिपद्यतेप्राप्नोति॥ ५॥

अनर्थम् । जन्ममरगादिसंतापमुपशमयतीत्यनर्थोपशमंभक्तियोगं चापश्यत् "मङ्गक्तएतद्विज्ञायमङ्गावायोपपद्यते"। इतिश्रीभगवदुक्तं । तद्भावापत्तिरूपंफलमप्यपद्यत्साधनस्यसाध्यलक्षकत्वात् । तथाचोपास्यपुरुषं तदुपासकंजीवमायांतद्माप्तीविरोधिनीं भक्तिरसंफलंचेत्य त्र विवास । अन्येपिसाधनादौविरोधिनोमायोपलक्षिताञ्चेयातेचाग्रेस्फुटीभविष्यंति। इत्येवमर्थपंचकमजानतोलोकस्यार्थे। सञ्जगवानु यपच्यास्त येषांतेसत्वंतः सत्वंतएवसात्वताः राक्षसवायसादिवत्स्वार्थेअण्तेषांसंहिताभागवतक्षपातामर्थपंचकवोधिनीसात्वतसंहितां चक्रेवस्यति च । "श्रीमद्भागवतंषुराणातिलकंयद्वैष्णवानांधनामि"ति ॥ ६-७-८ ॥

#### भाषादीका

जिस माया से मोहित होकर जीव (माया से पर भी है परंतु) अपने को त्रिगुगात्मक मानलेता है, और मायाकृत अनर्थ (संसार)

को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ कर विद्वात व्यास जीने अज्ञ लोगों के हित के अर्थ सात्वत संहिता वर्णन की ॥ ६॥

जिस सात्वतसंहिता के सुनने से परम पुरुष श्रीकृष्ण में जीवों की माक्ति होती है। जिस मिक्त से शोक मोह जरा सबका विताश

हा है ॥ ७ ॥ ख्यास जीने वह भगवती संहिता वर्णन की और शुद्ध कर निवृत्ति मार्ग में निरत मुनि, अपने आत्मज शुकदेव की पदायदिया ॥ ८॥

D,

शौनक उवाच

स वै निवृत्तिनिरतः सर्वत्रोपेत्तको मुनिः।

कस्य वा वृहतीमेतामात्मारामः समभ्यसत् ॥ ६॥

सूत उवाच

अत्मारामाश्च मुनयो निर्मन्था अप्युरुक्रमे ।

कुर्विन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्यम्भूतगुगाो हरिः॥ १०॥

हरेर्गुगाचिप्तमतिभगवान् वादरायगिः।

त्र्राध्यगानमहदाख्यानं नित्यं विष्णुजनप्रियः ॥ ११ ॥

परीचितोऽय राजर्षेजन्म कर्म्म विलापनम् ।

संस्थाश्च पाग्डुपुत्रागां वक्ष्ये कृष्गाकथोदयम् ॥ १२ ॥

### श्रीधरस्वामी।

कंस्यवाहेतोः वृहतीं वितताम् ॥ ९॥

निर्श्रन्थाः त्रन्थेभ्यो निर्गताः । तदुक्तं गीतासु । "यदा ते मोहकाछिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति । तदा गन्तासि निन्धेदं श्रोतद्यस्य श्रुतस्य चे" ति । यद्वा त्रन्थिरेव त्रन्थः निवृत्तः क्रोधाऽहंकारक्ष्पो त्रन्थि येषां ते निवृत्तहृद्यग्रन्थय इत्यर्थः । ननु सुक्तानां कि भक्त्येति सर्वक्षिपपरिहारार्थमाह इत्यं भूतगुगोहरिर्रात ॥ १० ॥

भक्ति कुर्वितु नाम पतच्छास्त्राभ्यासे शुकस्य कि कारगामित्यतथाह हरेरिति । अध्यगादधीतवान् । विष्णुजनाः प्रिया यस्येति व्याख्यानादि प्रसंगेन तत् संगति काम इति भावः । पतेन तस्य पुत्रो महायोगीत्यादिना शुकस्य व्याख्याने प्रवृत्तिः कथामिति यत् पृष्टं तस्योत्तरमुक्तम् ॥ ११ ॥

यदन्यत् पृष्टं परीक्षितः प्रायोपवेदोन श्रवणं कथमिति तस्य जन्म महाश्चर्यमित्यादिना तस्योत्तरं वक्तुमाह परीक्षित इति विलापनं मुक्तिं मृत्युं वा। संस्थां महाप्रस्थानं श्रीकृष्णकथानामुद्दयो यथा भवति तथा॥ १२॥

#### दीपनी।

ततः अधोक्षजे मक्तियोगं च अपश्यत् । एतत् सन्वे हन्द्वा एवम अजानतो लोकस्य हिताय भागवतीं संहितां चक्रे ॥ ६॥

### श्रीवीरराघवः।

तत्रलब्धावसरः पृच्छिति शौनकः सङ्तिवाङ्त्यवधारग्रो निवृत्तिनिरतः मुनिरतएवसर्वत्रश्रोतब्येष्वध्येतव्येषुचोपेक्षकः आदररहितः आत्मारामः परमात्मेकपरः एवंविधःकस्यवाहेतोरिति । शेषः कस्माद्धेतोर्वृह्तीविषुलामेतांसंहितामस्यसद्धीतवान् कथमेकाश्रचितोसग वनमननपरस्तिद्वरोधिनी मेतांबृहतींसंहितामभ्यसदितिप्रश्नाशयः॥ ९॥

नेयंसंहिताभगवन्मननिवरोधिनीप्रत्युततदुपयुक्त भगवत्स्वरूपगुणिविवरण्ररूपत्वादतोधीतवानित्युत्तरं वक्तुंतद्भक्तेः स्वरूपगुणाविषयं कतामाहसूतः आत्मारामाइति यद्यपिमुनयआत्मारामाः परमात्मेकनिष्ठाअतपवानिर्प्रथाः लौकिकार्थप्रवंधधारण्यहिताः अनिर्प्राह्याद्विषया- ठेअशिक्षणीयाअपरप्रेक्षाः निरपेक्षाइत्यर्थः तथापितेउरुकमे भगवत्यहैतुकीमनन्यप्रयोजनांभिक्तिकुर्वतिस्विषयायाभक्तेः स्वरूपमाहद्वत्यामे तिद्दत्थंभूताप्वविधागुणायस्यातथाविधोहिरितिप्वविधांभिक्तिकुर्वतीत्यन्वयः हिर्देवविविधगुण्यकचित्स्वरूपकद्वतिसमनुध्यानानात्मकत्या द्विस्तत्रभजनीयस्वरूपगुणाविषयकञ्चानस्यापेक्षितत्वात्तिद्विधरण्यामिनितभावः॥ १०॥

तदेवाह।हरेरितिहरंगुणैवंदांतेश्योऽवगतैरनुभूयमानैगुंणैराक्षिप्ताआकृष्टामातिर्यस्यसभगवान्वादरायाणिःशुकःनिसंविष्णुजनिप्रयःमहद्वि माण्मानमध्यगादश्वीतवान्हरेरितिहरेगुणाक्षिप्तमित्वेष्णुजनिप्रयहितादंविशेषणाद्वयंहेतुगर्भविष्णोर्जनाभक्ताः प्रियायस्येतिबहुवाहिः अयं भावःयद्ययनुभगवद्गुणावेदान्तेऽश्योवगतास्त्रथापि"स्वाध्यायाद्योगमासीतयोगात्स्वाध्यायवान् भवेदि"त्युक्तरीत्याभगवद्गुणापितिवादक्रम्भावःयद्यायद्यावह्यापेक्षितत्वात्कात्स्नेपास्यप्रवंधस्यभगवद्गुणप्रितिपादकत्वात्सावतारतद्गुणाकस्तिवभूतिकसभाक्तितद्गुणाभगवतीऽस्ये वयुभाव्यत्वाद्वतारतद्गुणानां विशिष्यवेदान्तेश्योऽवगतानांवेदांतावगतगुणोश्योप्यतिश्यितश्यितानमास्मादाद्यानाद्वगमादिदमध्यगादिति अनेनप्रबंधप्राशस्त्रयंसूचितम् ॥ ११ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

#### श्रीविजयध्वजः।

अविद्वानिवशौनकश्चोदयित सवाइति आत्मिनरमतइत्यात्मारामोः मुनिः सर्वक्षोमोनीवा अतएवसर्वत्रशिष्यसंत्रहणादा वुपेक्षकउदा-सीनबुद्धिनिवृत्तिनिरतः शुकः कस्यफलस्यार्थेवृहतीं महतीमेतां समभ्यसद्वाइत्यन्वयः चतुर्षुपुरुषार्थेषुकस्यपुरुषार्थस्येतिविकल्पार्थोवाश-व्दः शुक्रगतावितिधातोः परब्रह्मण्यव्याहतवुद्धिगतित्वाच्छुकः॥९॥

परिहरतीत्याह आत्मारामाहति चशब्दोऽप्यर्थे आत्मारामाःखरूपसुखपवरममाणाअप्यतपविनर्माद्याः निरुपादेयाः मुनयः उत्तमाधि-कारिगाः उरुक्तमेउरवःक्रमाःपादविक्षेपाः यस्यसतथातिसम् अहैतुर्कीप्रयोजनिवधुरामानंदरूपांभिक्तकुर्वति किपुनवहुजन्मस्वपरोक्षितपर-तस्वाः यभक्त्यादिसाधनातिशयनमुक्तानंदातिशयमाकांक्षमाणाः शुकादयाः उरुक्रमेभिक्तकुर्वतितिकवर्णनीयमित्येकान्वयः इत्यंभूतगुणः निरपेक्षमुक्तमनोवशीकरणक्षमः किमुतामुक्तमनोवशीकरणक्षमगुणइतिवाच्यमितिभावः ॥ १०॥

अतः शुक्केनभागवता भ्यमनं कृतिमित्याह हरेरिति हरेरित शयहानानं दादिगुणै राक्षिण्ता आकृष्टामितर्थस्य सतथे। कः वादरायगासुतो-भगवान् नित्यं भागवत जनहृद्यं गमं महदाख्यानं आख्यायते भगवन्महिमा डेनेनेत्याख्या नं भागवतपुरागामध्यगादं न्यां श्राख्यापयामास चेत्ये कान्वयः ॥ ११ ॥

कित्मन्युगइत्यादिशीनकप्रश्नंपरिहरतीत्याह परीक्षितइति अथपरीक्षितोराजर्षेर्जन्म कर्म विलापनंमरणं वश्ये तद्र्येप्रथमतःपांडुपुत्रा ग्रांसंस्थांखगीरोहणं युद्धादुपरितनमहाभिषेकादि महाप्रस्थानांतांसंस्थांस्थितिचवक्ष्ये कीहशींसंस्थांकृष्णकथायाउद्योयस्यांसान् तथोकाताम् ॥ १२ ॥

क्रमसन्दर्भः। तमेतंश्रीवेदव्यासस्य समाधिजातानुभवंश्रीशौनकप्रश्लोत्तरत्वेनविशदयन्सर्वात्मारामानुभावेन सहेतुकंसंवादयति आत्मारामाश्चेति । तिर्प्राह्याःविधिनिषेधातीताः। निर्गताऽहंकारत्रन्थयोवा।अहेतुकींफलाभिसन्धिरहिताम्।इत्थमितिआत्मारामाणामप्याकर्षणस्वभावोगुणो

यस्य स इत्यर्थः ॥ १० ॥
तमेवार्थं श्रीशुकस्याप्यनुभवेनसंवादयित हरेरिति । श्रीव्यासादेवयत् किञ्चित् श्रुतेनगुगोनपूर्वमाक्षित्रामंतिर्वह्यानन्दानुभवोयस्य सः तमेवार्थं श्रीशुकस्याप्यनुभवेनसंवादयित हरेरिति । श्रीव्यासादेवयत् किञ्चित् श्रुतेनगुगोनपूर्वमाक्षित्रामंतिर्वह्यानन्दानुभवोयस्य सः पश्चाद्ध्यगात् । महत्वविस्तीर्ग्वमापं ततश्चतत्स्यत्कथासौहार्देनित्यं विष्णुजनाः प्रियायस्यतथाभूतोवातेषांप्रियो वा स्वयमेवाभवित्यश्चेः । पश्चाद्ध्यगात् । महत्वविस्तीर्ग्वाप्त्वतावद्यं गर्भमारभ्यश्चिरुणास्यस्वैरितयामायानि वारकत्वंज्ञातवान् । ततः स्वनियोजनयाश्चीव्यासदेवेना वित्यतस्यदर्शनात्तिश्चारगोस्ति कृतार्थम्मन्यतयास्ययमेकांतमेवगतवान् । तत्रश्चीव्यासदेवस्तुतंवशीकर्त्तं तदन्यसाधनं श्चीभागवतमेव वित्यतस्यदर्शनात्तिश्चप्रकाशमयांस्तदीयपद्यविशोषान् कथिञ्चच्छावित्वातेनाक्षित्रमातिकृत्वातदेवपूर्णमध्यापयामासेति श्चीभागवतमित्रमा वित्ययः प्रोक्तः ॥ ११ ॥

मुख्याकथानामुद्यो यत्रतद्यथाभवतीतिमुख्यतयातेनपृष्टानां सुद्धाकथनारम्भोऽपिस्चितः ॥ १२।१३।१४।१५।१६।१७।१८।१९।२०॥

## सुबोधिनी।

कदाचिदपिप्रवृत्तिस्त्रभावत्वेतद्दोषेगासंवैधात् नभक्तिजानिकास्यात् विषयावैद्दाविष्णवावैद्दायोविरोधात् एतस्रमननाद्वगतमितिविचा रेगानाया ततःप्रतिपन्ने।तदाह । मुनिरिति ॥ ८॥

रशानाया विकास विवास विवास विवास के स्वास विवास के स्वास विवास के स्वास विवास विवास

र्थाव वोध पूर्वक स्वाधानाचारणप्यत गण्याप्यत्य प्रच कालुका । ज्याच्या प्राप्यताचात् ॥ ९॥ श्रांव वोध पूर्वक स्वाधानाचार विद्यानिवर्त्तक त्वेत्र क्ष्यास्य विद्या स्वाधानाचार क्ष्यास्य क्ष्यास्य क्ष्यास्य कारावन्य के क्षियत इति निक्तित ति क्ष्यास्य कारावन्य के क्ष्यास्य कारावन्य के क्ष्यास्य कारावन्य के क्ष्यास्य कारावन्य कारावन

## सुबोधिनी ।

वृत्तितात्पर्याच्चउरुक्रमहति अलैक्किसामर्थ्यं अलौकिकींभिक्तिकुर्वतीत्यनुवादः तत्रोपपितः इत्यभूतगुणोहरिति भगवद्गुणाः प्रवृत्तिक्रपा निवृत्तिस्वभावाः परमानंदरूपाश्चक्षानरूपाश्चतस्माद्यः कश्चित्यत्रकुत्रचित् आसक्तोभगवद्गुगोषुरमतप्वसर्वप्रतिकृतिरूपत्वात्गुगानां ञ्चानवशीकरग्रस्वभावाच ॥ १०॥

नन्वस्तुभगवद्गुगानांताद्दशत्वंप्रंथेकिमामतमित्यतथाहहरेर्गुगाक्षिप्तमतिरिति।गुगानामनुपनिवद्धानांस्वबुद्धवास्मरगाकल्पनयाक्लेशः उपनिबंधनेतुसिद्धत्वात् सुलमंस्मरणमिति भगवद्गुणैर्वशीकृतमतिः सन्आक्षेपान्नान्यत्रवृत्तिः मतिरितिफलं गृहीतंतेनान्यत्रविषयेद्वियसं-योगेऽपिनब्युत्पनिरितिमावः एतर्ज्जावविचारेगोकंवस्तुतस्तुशुकोमहादेवः तदाह भगवानितिकृतिप्रवृत्त्यथैविष्णुमहादेवश्चावतीरगावितितदा हवादरायिगिरिति अतोमहद्वप्याख्यानमधीतंवातः नन्वनाहूतःस्वयंगत्वाकथंप्रचारितवानः तत्राहः नित्यंविष्णुजनिप्रयहितनित्यंविष्णुजनाः प्रिया यस्य कामः कामिनीमिवभगवष्गुकाः खप्रतिष्ठार्थं भक्तं प्रापयंति अतः सर्वदायेभगवद्भक्ताः अक्रात्रमनित्यवैष्णवास्तेप्रिया यस्येति नहिस्नेहः संगहेत्वंतरमपेक्षते ॥ ११ ॥

एवं भागवतस्योत्पत्ति प्रवृत्ती निरूप्यश्रोतुः सर्वथा भगवदीयत्वाभावे न प्रतिष्ठितं भवेदिति गर्भ संस्कारमारश्य भगवतैवस्वतेजसा परिपालितमिति वक्तं पूर्व रूपस्य ब्रह्मास्त्रेगादाहं निरूपियतुं तादर्थ्यमपिवैष्णवग्वेति तेषां पांडवानां संतत्यतरस्यदाहं निरूपयन् अक्न-परीक्षितोऽथेत्यारभ्ययावद्ध्यायसमाप्ति अश्वत्थाम्नोमहदपमानंहेसु पुत्रांतरदाहस्तूभयतसंरक्षायामपमानेनच अपृष्टंनोच्यत इति पृष्टमनू द्यप्रतिजानीते परीक्षित इति। अथ भागवतिन रूपगानंतरंत छोतुः परीक्षितः वीजसंस्कारार्थे जन्मकर्मधर्मरक्षार्थ भगवत्कार्यकरणात्विलायनं भागवतश्रवणार्थे पुरुषत्रय शुङ्चर्थं अप्रतिबंधार्थं च संस्थांपांडुपुत्राणां प्रथमतएव चकारात् धृतराष्ट्रस्यापिङ्ग मुक्तत्वान्नसहोक्तिः प्रतिवंधकत्वं भातृगामेकजातानामित्यभिप्रायेण मुक्तावप्यतिदोशाचकारेण प्रहगं अतएव पांडुपुत्रागामित्युक्तंन पांडवानां कृष्णाकथाप्रतिपादकत्वादेतेषांवचनम् अन्यथात्वसंगतिः तदाह कृष्णाकथेति कृष्णाकथापाउदयो यत्रेतिनहीयंभगवतः स्वतंश्चरित्र रूपाकितुनैमित्तिकीअतोहेतुनिमित्तंस्वरूपोपकारिहेतुरितितन्निरूप्यतइतिभावः॥ १२॥

### श्रीविद्वनाथचक्रवर्ती।

## कस्यवाहेतोः॥९॥

निर्यन्थाजिज्ञासितग्रन्थेक्योनिर्गताः । यदुक्तं। "यदातेमोहकालिलंबुद्धिव्यतितरिष्यति तदागन्तासिनिर्वदंश्रोतव्यस्यश्चुतस्य च ,,इति । ानप्रन्थाजिशास्त्रप्रत्यायायायायाः । "भिद्यतेहृद्यप्रन्थिरिति, । यहाविधिनिषेधप्रन्थातीताः । यदुक्तं चरद्विधिगोचर्दात । यहाप्रन्थिरेवप्रन्थः निर्गताहंकारप्रन्थयः यदुक्तं । "भिद्यतेहृद्यप्रन्थिरिते, । यहाविधिनिषेधप्रन्थातीताः । यदुक्तं चरद्विधिगोचर्दात । तथाभूतामिषअहैतुकीं फलाभिसन्धिरहितां। भिक्तंकुर्विति। भक्त्याङ्गानंङ्गानान्मुक्तिः ततोपिभिक्तिरित्युकःश्रेष्ठः एवकमोयिस्मन् तस्मिन्। तयामूतामायज्ञहतुया नारणार्थः त्याप्त्र तार्यम् । तयामूतामायज्ञ सेव्यसेवकलक्षणेनाभि मानेनविधिनिषेधातीतानां कि-ननुमुकानाकमनत्याकरणात्राचा । व्यापादा । इथंभूतः आत्मारामागामप्यांकर्णशालोगुगो यस्यसः । तेनमूलतप्व भाकप्राचान्यात्रवात्त्रवात्त्रवात्त्रवात्रवात्त्रवात्त्रवात्त्रवात्त्रवात्त्रवात्त्रवात्यात्रवात्यात्रवात्यात् भगवतोभक्तानां वाकप्रयायैरात्मारामेस्तद्गुणानु भवयोग्यतात्रव्धातएवहितुकीभक्तिकुर्वतिअन्यत्वात्मारामाः सायुज्यायीभक्तिकुर्वतीत्य-र्थःअहैतुकीपद्व्यावृत्तिरनुसंधेया यदुक्तं। " ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मानशोचित न कांक्षति।समः सर्वेषुभूतेषुमद्भक्तिलभतेपराम् भक्त्यामामभिजान नातियावान्यश्चास्मितत्त्वतः । ततोमातत्त्वतोज्ञात्वाविदातेतद्नंतरमिति,, ॥१०॥

नारद कृपया व्यासस्येव व्यासकृपया शुकस्यापि तद्गुगामाधुर्यानु भवो विशेषत एश्वाभूदित्याह हरेरिति हरेर्गुगोन आक्षित्र नारद रूपना ज्याराद्यन क्यात्मरूपना रूपा अस्मित यत ईहरो भगवद्गुरा माधुर्यो सत्यिप एतावान् कालो ब्रह्मानुभवेन मया आक्षपावषया शता नाम नकानुनवा यन तर । प्रति । विष्णुजना एव नतु केवला आत्मारामाः प्रिया यस्य सः षण्डीसमासो वा । अत वृथव यापत रात । तत्व तत् कयासाहार । । अत्र विव स्वादा । विविक्तार एये सदा समाधिस्थमिष शुक्षं श्रावया । विविक्तार एये सदा समाधिस्थमिष शुक्षं श्रावया व्यास एवं नगपर् अस्तार्थन जाना वात्रार्थ । जाना प्राप्त श्रीवर्ष स्ताहरां समाधिमण्याक्षिण्य सर्वेद्यतया तान् इलोकान् श्रीभागवतीयान् । अस्ति तस्थतच्छत्त्वेव भगनसमाधि स्तन्माधुर्याकृष्ट चित्त स्ताहरां समाधिमण्याक्षिण्य सर्वेद्यतया तान् इलोकान् श्रीभागवतीयान् बास्व तस्थतण्याचा तान् व्यापावुन्तव्य श्रीभागवतमध्येष्टोति ब्रह्मवेवकां बुसारेगा कथा क्षेया । तदेवं ब्यास शुकी ज्ञात्वा तत् अकाराणा अपा तद्वा अपास शुका पिताषुत्री ब्रह्मानुभवि चूडामणी अपि विजित्य भक्तिरेकच्छत्रामिव सर्व्वजगतीं चक्रे । तहिप ये तां तथा मन्यन्ते कुपथमामित श्रीस यमेनेव दग्डचा इति ॥ ११॥

तव ५५७ पः रे. एतेनतस्यपुत्रोमहायोगीत्यादिनाशुकस्यव्याख्यानेप्रवृत्तिः कथमितियत्पृष्टंतस्योत्तरमुक्तंयदन्यत् पृष्टं परीक्षितः प्रायोपवेशेनभवशौ एतनवर उ प्रतनवर उ जन्ममहाश्चर्यमित्यादिनातस्योत्तरमाहपरीक्षित इति विलापनंमृत्युं यहा लपेगर्यन्ताल्ल्युद् श्रीभागवतक्ष्याद्वाच कथिमिति तस्य जन्ममहाश्चर्यमित्यादिनातस्योत्तरमाहपरीक्षित इति विलापनंमृत्युं यहा लपेगर्यन्ताल्ल्युद् श्रीभागवतक्षयाद्वाच कथामात प्रति । लप्याना कृष्णाकथानामुद्यायत्रतद्यथास्यादिति श्रीभागवतस्यतत्रेव नात्रपर्यात् ॥ १२॥ निमत्यर्थः संस्थामहाप्रस्थानं कृष्णाकथानामुद्यायत्रतद्यथास्यादिति श्रीभागवतस्यतत्रेव नात्रपर्यात् ॥ १२॥

### सिद्धांतप्रदीपः

सर्वत्रोपेक्षकः सर्वाध्ययनाध्यापनशून्यः कस्यहेतोः॥९॥

आत्मारामाः परमात्मध्याननिष्ठाः ध्यानविरुद्धेश्योत्रथेश्योनिर्गताअपि । उरुक्रमेनुभक्तिध्यानादिरूपांकुर्वत्येव।भक्तिस्वरूपयाथात्म्यवो धार्थभिक्तवोधिनीसंहितानिष्टक्तिनिरतैरवश्यमुपादेयेतिभावः। यस्यांवैश्रूयमाशायां कृष्णेपरमपूरुषे। भक्तिरुत्पद्यते इतिप्रागुक्तेः इत्येकः संहिताध्ययनेहतुरुक्तः । अधैवंभूतभगवत्प्रतिपादकंप्रंथनिवृत्तोवाकः शर्गाव्रजंदितिहत्वंतरमाह । इत्यंभूतगुणोहरिति ॥ १० ॥

द्वितीयंहेतुंविष्ट्याोति । हरेर्गुगाक्षिप्तमितर्महदाख्यानमध्यगादधीतवानिति।हेत्वंतरगर्भविशेषगामाह । नित्यंविष्णुजनप्रियइति । विष्णु जनसंगतिसिद्धयेपिमहदाख्यानमध्यगात् ॥ ११ ॥

तदित्थं "कस्मिन्युगेपवृत्तेयंस्थानेवाकेनहेतुनैत्यादि प्रश्नानामुत्तराग्युक्तानिसंप्रतितस्यपुत्रोमहाथोगीत्थादिपश्नोत्तरंवस्यम् । तावदाभी मन्युसुतंसूतप्राहुर्भागवतातमं तस्यजन्ममहाश्चयं कर्मााग् च गृगीहिनः इतियत्पृष्टंतदुत्तरंवक्तुमाहपरीक्षितइति जन्मकर्माणिचविला कथंभूतंकृष्णकथोदयम् कृष्णकथानांभक्तपरित्राणादि रूपाणामुदयोयस्मानत् भगवदावेदान यनंभगवत्प्राप्तिश्चतेषांसमाहारस्तत् सर्वपरित्यागपूर्वकरारीरविसर्ज्ञनरूपांसंस्थांचकारंगाभगवत्प्राप्तिं वक्ष्येलिगव्यत्ययेनकृष्णाकथोद्यां संस्थामित्येत्रयोज्यस् ॥ १२॥

#### भाषादीका

( शौनकउवाच ) शुकदेव मुनि निवृत्तिनिरत और सबकी उपेक्षा रखते थे आत्माराम थे उन्हों ने किस कारण से इतनी बडी सं-

...... ( सुत उवाच ) निर्प्रेथ और आत्माराम मुनि जन उरुक्रम भगवान में अहैतुकी भक्ति करते हैं । हरि के गुगा गगा ऐसेही हें अर्थात्

आत्माराम गगाकर्षा है ॥ १० ॥

भगवान् वादरायण तंदन शुकदेव ने भी हरि के गुगों से आक्षिप्तमति होकर इस महत् आख्वान को पढा था, क्योंकि वे नित्यही

अथ अनंतर परीक्षित राजर्षि का जन्म कर्म और मुक्ति वर्णन करूँगा पांडु पुत्रों की सस्था वर्णन करूँगा कृष्णा कथा के उदय

*व*सहित ॥ १२ ॥

#### श्रीधरस्वामी

तत्र परीक्षितो जन्म निरूपयिष्यन् आदौतावद्गर्भस्य एघाश्वत्थाम्ना ब्रह्मास्त्रातः श्रीकृष्णोन परिरक्षित इति वक्तं कथांत्रस्तो ाति यदेत्यादिना । यदा द्रौणिरश्वत्थामाकृष्णासुतानां द्रौपदीपुत्राणांशिरांस्युपाहरत्तदातन्माता अरुदत् । ताञ्चसांत्वयन् किरीटमा-ली अजनः आहेतितृतीयनान्वयः। किमितिवालानां विशिसि उपाहतवान् इत्यपेक्षायामाह् मध्ये युद्धे । यद्यापेपागडवाअपि कीरवा एव तथापि सृञ्चयवैराजो घृष्टद्युम्नः पाग्डवानां सेनापतिः इतिसृंजयानामित्युक्तं । वीरगति खर्ग अथोअनन्तरं वृकोद्रेगा अविद्धायाः क्षिण्तायाः गदायाः अभिमर्षेण घातेन भग्नावूरुद्गडौ यस्य तथा भूते धृतराष्ट्र पुत्रे दुर्योधने सित ॥ १३॥

भर्तुर्दुर्थ्योधनस्य । स्मेति वितर्के । इत्येवं प्रियं स्यादिति मश्यन् तस्यविष्रियमेवति वाक्यान्तरं । विष्रियत्वे हेतुः जुगुप्सित-

मिति॥ १४॥

त ॥ ४० ॥ घोरंदुःसहं यथा भवति वाष्यस्य कलाभिर्विन्दुभिः। आकुलेब्याष्ते अक्षिग्री यस्याः सा। किरीटस्यैकत्वेपि तस्यात्रागांबाहुल्या

त् किरीटमालीत्युक्तम् ॥ १५॥ कराटमाळार्ड भारता २३ ॥ शुच्चः शोकाश्रूगित्रमृजामि परिमार्जयामि यत् यदाबह्मबन्धोर्बाह्मगाधमस्यआततायिन इति। "अग्निदोगरदश्चैवशस्त्रपागिर्घनापहा । शुचाराणकारीच षडेतेआततायिन, इतिस्मरणात् । अत्रतुआततायीगस्त्रपाणितेनचपुत्रहन्तृत्वं लक्ष्यतेगागडीवाद्वनुषोमुक्तैविशिखेर्वाणै कपाहरेत्वत्समीपमानयामि । यच्छिरः आक्रम्यआसनीवधायद्ग्यपुत्रासती ।। १६॥

वलावीरम्याविचित्राजलपा भाषगानि तैः सः अर्जुनः अच्युतप्विमत्रं सूतश्चयस्य । दंशितः वद्यकवचः । उत्रंधनुरुचापोयस्य । कपि-

हेनुमान् ध्वजेयस्यगुरोः षुक्षरथेनअन्वाद्मवत् अन्वधावत् ॥ १७॥

द्यीपिनी।

॥ १३ । १४ । १६ । १६ । १७ ॥

### श्रीवीरराघवः।

तावत्परीक्षितोजनमेकमीदिकं वक्तंपांडुणुत्राणांसंस्थानमाहयदेत्यादिनायावत्पंचदशाध्यायसमाप्ति तत्रपरीक्षितोजनम्डपोद्घातग्वात तावत्पराप्ताः तत्रपराक्षताज्ञ यमेतिविवेषः यदेत्यस्यतदातृतीयेनान्वयः मध्येयुद्धेकौरवाणां सृंजयानां चवृरिगतिवीराणां गतिगतेषु -भीव्योच्यतेकमीदिकंतुतत्वपरितनप्रथेनेविवेषः यदेत्यस्यतदातृतीयेनान्वयः मध्येयुद्धेकौरवाणां सृंजयानां चवृरिगतिवीराणां गतिगतेषु -भीट्याच्यतकानाच्याः प्रशास्त्र विश्वास्त्र विश्वस्ति । १३॥ प्राप्तेषु स्तर्मा प्रमुक्त स्तर्भ विश्वस्ति । १३॥ प्राप्तेषु स्तर्मा प्रमुक्त स्तर्भ विश्वस्ति । १३॥

*)* 

यदामृधेकौरवसृंजयानांवीरेष्वथोवीरगतिंगतेषु । वृकोदराविद्वगदाभिमर्शभय्नोरुदंडेघृतराष्ट्रपुत्रे ॥ १३ ॥ भर्तुः प्रियेद्रौशिरितिस्मपदयन्कृष्णासुतानांस्वपतांशिरांसि । उपाहरद्विप्रियमेवतस्यजुगुप्सितंकर्मविगर्ह्यंति ॥ १४ ॥ माताशिशूनांनिधनंसुतानांनिशम्यघोरंपरितप्यमाना । तदाऽह्दद्वाष्पकलाकुलाचीतांसांत्वयन्नाहिकरीटमाली ॥ १५ ॥ तदाशुचस्तेप्रमृजामिभद्रेयद्रह्मवंधोः शिरन्त्राततायिनः। गांडीवमुक्तेर्विशिखेरुपाहरेत्वाक्रम्ययत्स्नास्यसिद्ग्धपुत्रा ॥ १६ ॥ इतिप्रियांवल्गुविचित्रजल्पैः सप्तांत्वियत्वाऽच्युतमित्रसूतः । ऋन्वाद्रवद्दंशितउप्रधन्वाकिपध्वजागुरुपुत्रंरथेन ॥ १७॥

#### श्रीवीरराघवः।

द्रौशिरश्वत्थामास्त्रचिकोषितभर्तुर्धृतराष्ट्रस्याप्रियमपिप्रियमितिपद्यन्मन्यमानः स्वपतांद्रायानानांकृष्णायाः द्वौपद्याः स्रुतानां शिरांसिअपाहरत्छित्वानीतवान्इदंकर्मतस्यधृतराष्ट्रस्यविप्रियमेवथद्वातस्याश्वत्थाम्नः कर्मविप्रियमेवसर्वलेकस्यापीतिशेषः अतएवजु-गुप्सितीवर्गहंयतेअधुनापिविनिदयति ॥ १४ ॥

यदैवंतदामाताद्रौपदीशिश्चनांसुतानांघारंनिधनमरगांनिशम्यदृष्ट्वापरितप्यमानाघाष्पराकुलेअक्षिगायस्यातथा भूतावभूवेति तदातां द्रीपदीं सांत्वयन्तुपच्छंदयन् किरीटमालीकीरीटानांराजांतरिकरीटानांमाश्चापवमालाअस्यास्तीतिकिरीटमालीअर्जुनः वीह्योदराकीतगण्यत्वाद्री

ह्यादिभ्यश्चेतिमत्वर्थीयइनिः इदंवस्यमाग्रामाह ॥ १५ ॥

तदेवाह। हेभद्रेवद्वावंधोर्वोद्धणाधमस्याततायिनः "अग्निदोगरदश्चेवशस्त्रपाणिर्धनापहः क्षेत्रदारापहर्ताचषडेतेआततायिन"इतिशस्त्रपा गोराततायित्वस्मरगादाततायिनइत्युक्तं शस्त्रपाशिनामशस्त्रधारगोननिरपराधिप्राशिघातुकःतस्यशिरोगांडीवनमुक्तैविशिखेवागार्यचदा आहरेयंयद्यदावाहृतंशिरः पादेनाक्रमपद्ग्धपुत्रात्वस्थास्यसितदातेतवशुचः विमृजामिमार्जयामि ॥ १७॥

इतीत्थंत्रल्गुभिः सुद्रैः विचित्रेश्चज ्लेभाष्णैः प्रियांद्रीपदींसांत्वयित्वाअच्युतः कृष्णोमित्रंस्तः सारिशश्चयस्यसारशीकता च्युतइत्यर्थः दंशितः कवितः उग्रंधनुर्गीडीवंयस्योकपिध्वजः हनुमश्चिद्गितः ध्वजीयस्यसोऽर्जुनः रथनसाधननगुरोद्रीगाचार्यस्यपुत्र मश्वत्थामानमन्वाद्भवदन्वधावत् ॥ १७ ॥

#### श्रीविजयध्वजः

अयोकथांतरंनिरूप्यते यदेति कीरवपांडवानांमुधेयुद्धेभीष्मादिषुवीरेषुवीरगतिस्वर्गगतेषु धृतराष्ट्रपुत्रे दुर्योधनेवृकोद्रेगाविद्धावाध्रांता यागदाया अभिमर्षेशासम्यक्ताडनेनभग्नउहदंडोयस्यसतथोक्तःतस्मिन्सतिदुर्योधनपातमारभ्य॥ १३॥

प्राचा नाममवर्णसम्यक्तानगरम् । भर्तुः खखामिनोदुर्योधनस्यमयाप्रियंकार्यमितिस्मपदयिकरूपयन्द्रौणिर्यदाखपतानिद्रांकुर्वतांकृष्णासुतानांद्रौपदीपुत्रागाांदिारांस्यपा

हरतदा ॥ १३॥

त्रा ॥ ५२ ॥ स्रुतानांमाताद्वीपदीशिश्चनांस्रुतानांनिधनंनिद्यम्यघोरंयथाभवतितथापरितप्यमानानिधनंविश्रंभगांचातस्यद्वौगोर्जुगुप्सितानिदितंपतिष्ठ शुनिधनार्ख्यंकमाविगर्हयंती अरुद्दित्येकान्वयः कीदृशंकमदीगोरेवविप्रियंनतुदुर्योधनस्य भारतेपांखिभषेकादिनाप्रियत्वोक्तेः इदानी द्रौणिनाशिश्वादिवधात्पूर्वदृष्टस्वप्नमाह तामिति किरीटमालीअर्जुनः सांत्वयन्दुः संशामयन्तांद्रौपदीमाह ॥ १५॥

गांडीवनिः सृतैर्विशिष्वैः विविधशिष्वैः शरीरंखनित्वाविशंतीतिवा शरैराततायिनः हनिष्यन्मरिष्यामीतिकूरिकयाकारिणः ब्रह्मबंधो व्रीह्मणाधमस्यद्रीणः पुरतः स्थितंपदाक्रम्यपुत्रवधतुःखनिमित्तनयनजातैर्जलेः स्नास्यासिस्नानंकरिष्यसीतियस्मात्तस्मात्हेभद्रेमाशुचः शास्त्राचनमाकुरु अश्रुपाणिनानिरुजन् हेमद्रेमारुदेत्यसांत्वयदित्यन्वयः श्रुचोनैनेतिवा अग्निदोगरदश्चैवशस्त्रपाणिर्धनापहः "क्षेत्रदारहरश्चै वषडेतेह्याततायिन" इति "आततायिनमायांतहन्यादेवाविचारयन्" इतिस्मृतेः ॥ १६॥

सकिपिध्वजइति वल्गवोमनोहराः विचित्राविविधाश्चर्य भूताजल्पावाग्विशेषायेतेतथोक्ताः तैः प्रियांमायीसात्वियित्वारथेनगुरुपुत्रमध्य द्रविद्यन्वयः अच्युतएविमत्रमनिमित्तवंधुः सूतोयंतायस्यसतयोकः दंशितः कवितः उग्रंभयंकरंधन्वायस्यसतयोकः॥ १७॥

## क्रमसन्दर्भः।

कृष्णा कथानामुद्यायत्र तद्यथाभवतीति मुख्यतयोतनपृष्टानां कृष्णा कथाना मारम्भोऽपिस्चितः ॥ १२ ॥ १६ ॥ १६ ॥ १६ ॥ म १७॥ १८॥ १९॥ २०॥

### सुबोधिनी।

तत्रपुत्रांतराणांमारणंवकुंहेतुमाहयदामृधइति । सृंजयवंशोत्पन्नोधृष्टचुम्नः पांडवानांचमूपतिरितिख्तः पांडवानांकौरवत्वेपिविरोधनिमित्तद्रापदीति पांडवानांधृष्टचुम्नप्रवेशात् अयुक्तपरिहारायचसृंजयानामित्युक्तंतेषांसंबंधिनांचमुक्तिरितिनिरूपयतिवीरगतिमिति"द्वौसंमताविहमृत्यू"इतिवाक्यात् अनेनपुत्राणामेवअन्यायमरणामितिशोकहेतुः सूचितः अथोइतिमध्येभिन्नप्रक्रमवचनात् "पार्थास्त्रपूताःपद्मापुरस्ये"तिचिनक्रिपितंदुर्योधनस्या युक्तमरणामाहवृकोदरेतिवृकोदशिवशः प्राण्यउदरेयस्यतिष्ठतिसवृकोदरहत्युक्तो भगवत्कार्यसाधकइतिवाक्यात् भीमस्रेनप्रक्षिप्तगदायाआभिमर्षणानभग्नेउक्रपवदंडौ यस्यदंडइतिताडनहेतुः द्वौपद्या प्रदर्शनेदुःखजनकत्वात् धृतराष्ट्रपुत्रइतिअंधपुत्रत्वादिवविकित्वमुक्तम् ॥ १३ ॥

अतएव तत्सेवकोप्यविवेकीजातइत्याहभर्तुरिति द्रौशिगिरितिवैरानुवंधेमूलहेतुः मातृपुत्रत्वात्स्वापः अनेनैकपुत्रत्वान्मातुर्प्रहर्गा अत-एवभगवान्वंशार्थतेनरक्षितः कृष्णाद्रौपदीप्रसवमात्रंतस्याः नोजारइतिसुतानािर्मातकृष्णोति पदं "योयच्छ्द्रःसएवस"इतिवाक्यात् तद्भावा-पात्तम् चयतिप्रदर्शनार्थतिरसामुपाहरणंतेनार्द्धदाहादितदुः खंदुर्योधनस्यापितन्मारणमभीष्टलोकवाच्यतानदुर्योधनेस्थिताइदंतुलोकािवगर्ह

यंतीति तदाह विप्रियमिति ॥ १४॥

माताद्रोपदीरादनमातृत्वमेवहेतुः शिश्चनामितिस्नेहाधिक्यं श्रवणादधिकक्लेशः घोरमितिरात्रीसौषुष्तिकपर्वकथा सूचितायदाअरुदत् तांसांत्वयित्रितिसंबंधः किरीटमालीअर्जुनः एकस्मिन्नपिकिरोटिकिराटवाहुल्यप्रतीतिः वहुपुरुषवत्युद्धकरणाद्वास्त्रीवशा अपिभक्ताभगवता-परिपालयन्तेहति अर्जुनस्यप्रतिक्षानमाहअथवातांसांत्वयित्रातिवचनान्न यथार्थत्वप्रतिक्षायाः ॥ १५ ॥

शोकापनोदनंस्त्रियाः भत्रीकरणोयं तत्रतृष्णींप्रों छन्मशक्तिवषयं अप्रतीकार्येचतत्रमृतानां जीवनमशक्यमारकवधस्तुशक्य इति तत्कृत्वा तत्राश्च्रप्रों छनंकक्तं व्यामित्याहतदेति क्रूरोहक्रूरमश्चर्रो छ्यतेशुच्छतिशोकाश्चर्णणुनुष्ट्रमायंहतुशब्दवाच्यतान गुविपरीतो किमुक्तं रतत्राह भद्रेष्ट्र- ति तवविधव्यलक्ष्रणाभावात् नतथाभविष्यती तिभावः व्रह्णवंधो इतिव्रह्णवाह्यण्यातिः वंधुरेवकदा चिदागच्छितिकदा चित्रेतिनसदातस्य - व्राह्मण्यंतिष्ठतिदेविद्योधित्वादसुरावेशाच्च "देव्योवेवर्णवाह्मणः असुर्यः श्चर्द्षक्षेत्रोः किच आततायिनः "अग्निदोगरदश्चे "तिवाक्यात् "आततायिनमायांतमिपवेदांतपारगम् जिघांसंतं जिघांसीयात्रतेनव्रह्महाभवोद्देतिस्मृतंश्चनतह्नधेदोषः वाणैरेविछत्वासमानयनं स्पर्धः दुष्टत्वा त्रत्याकरणेसामर्थ्यमाहगांडी वमुकौरितिशिरसभाकम्यस्नानं स्वित्रयधर्मत्वेनवैरित्यातने उक्तं दृष्यपुत्रेतिसौष्तिकण्वदाहः संस्कारदाहोवा प्रयमतः शोकाधिक्यहतुः हितीयः स्नानहतुः यदास्नास्यसितदाशुचः प्रमृजामीतिसंबंधः क्षत्रियत्वाद्मान्यत्स्वभावतः शोकः काम पराणामेवतन्नकोधपराणाम् ॥ १६॥

पवंकथनहेतुः प्रियामितिवल्गुमनोहरंआकम्यस्नास्यसीतिविचित्रं विशिखेरूपाहरइति जल्पौरितिस्त्रेशावाक्यंतत्तत्स्याआपक्षाक्षियत्वा त्तसम्यक्सांत्वनम्पताहराकार्यसिद्धौहेतुः अच्युतमित्रस्तद्दति अच्युतत्वेनस्वरक्षास्तत्वात्कार्यसिद्धिः अनुपश्चादाद्रवर्शापलायनंशंकया पश्चादेवकवचपरिधानंश्रनुषश्चत्रहर्शां धनुषउत्रत्वंवधपर्यवसायित्वात्कपिध्वजद्दत्यतिसामर्थ्यं साचितम्अथवादंशितद्दतिस्वरक्षाउत्रत्वाद्ध नुषः कपिध्वजत्वाद्ध्यस्यागुरुपुत्वमित्यनर्थपर्यवसायित्वंरथेनेतिनस्वाशिक्तः॥१७॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

तत्र गर्भस्थ पवपरीक्षित् श्रीकृषाद्शंनं प्रापेति वक्तं कथां प्रस्तौति । यदा द्वाशारश्वत्थामा कृष्णास्तानां द्वापदी पुत्राणांशि रां स्युपाहरत् तदा तन्माता अरुद्दिति तृतीये नान्वयः । कौरवाः दुर्थोधनाद्याः सृजयवंशोद्धवस्यशृष्टयुम्नस्यपांडवसेनापतित्वात् सृञ्जयपदेन पागडवा लक्ष्यन्ते । वीरगति भीष्मो क्रयुक्त्या मोक्षं स्वर्गश्च । वृकोद्रेशा आविद्धायाः क्षिष्तायाः गदाया अभिमर्षेण घातेन भक्तंदुर्थो धनस्यपवं प्रियं स्यादिति पश्यन् वस्तु तस्तु तस्य दुर्थोधनस्य विप्रियमेव तत् प्रथमं शञ्जवध श्रवणेन हर्षोद्यात् पश्चात् स्पर्शेन भीमादीनां स्वरात्र्णामवध ज्ञानात् वालवधा च कुरुवंश लोपश्रवणाच विशादोत्पत्ते हर्षविषादाश्याश्चतःमृत्युपापतेरितिभावः अत्यवाह जुगुप्सितमिति किरीटाग्राणांबहुत्वात् किरी टस्थामाला वा यस्यास्तिस किरीटमाली अर्जुनः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

ह्युचः शोकान् यत् यदा ब्रह्मवन्धार्षाह्माणाधमस्याततायिनः शस्त्रपाणोः "अग्निदोगरद्श्चैवशस्त्रपाणिर्द्धनापहः क्षेत्रदारापहारीच षडेतेआततायिनः" इतिस्मरणात् ॥ १६॥

अच्युतदवमित्रंस्तश्चयस्यसः दीशतोत्रद्धकवचः॥ १७॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रपरीक्षितोजन्मवश्यत् तित्पतामहादीनांकथामाह यदेति यदेत्यस्यतदाकिरीटमाळी आहेतितृतीयेनान्वयः। कुरुसृंजयानांकुरुखां भीक्मादीनांसुयोधनपक्षीयानां सृंजयानां धृष्टसुम्नादीनां युधिष्ठिरपक्षीयाणां। मृधेयुद्धेउभयपक्षीयेषुवीरगितगतेषुसृत्सुसुयोधनमहारथेष्व विशिष्टेषुकृषकृतवर्मद्रौशिष्ट्वन्यत्र विद्वतेषुसृत्सु अवशिष्टेनसैन्येनसहकृष्णोषुपांडवेष्वविश्यतेषुसृत्सुभीमसुयोधनयोगदायुद्धे अथानंतरम् विशिष्ट्रकृष्णाप्रेरितेनवृक्षोदरेगा विद्यायाः क्षित्रायाः गदायाः अभिमर्शेनघातेन भग्नीउक्रयवदंडीयस्यतथाभूतेष्र्तराष्ट्रपुत्रेसुयोधनसित ॥१३॥ तद्वतंतरंजितकाशिषुपांडवेषुकृष्णाक्षयाशिविरविहायान्यत्रनकं विश्वास्यमानेषु कृपकृतवर्मभ्यांसहागत्यद्रौणिः सुयोधनस्य तत्रस्यस्य त्रित्रं सर्वाः सर्वेः सर्वेः सर्वेः सर्वेः सर्वेः सर्वे। सर्वे सर्व

तमापतंतंसविबक्ष्यदूरात्कुमारहोद्विग्नमनारथेन । पराद्रवत्प्रागापरीप्सुरुव्यीयावद्रगमंरुद्रभयाद्यथार्कः ॥ १८॥ यदाऽशरगामात्मानमैत्ततश्रांतवाजिनम्। त्र्रस्त्रंब्रह्मशिरोमेनेत्र्यात्मत्रा**गांदिजात्मजः ॥ १९ ॥** अर्थोपस्पृत्रयसलिलं संदधेतत्समाहितः। **ऋजानन्नुपसंहारंप्रागारु**च्छुउपस्थिते ॥ २० ॥ ततः प्रादुष्कृतंतेजः प्रचंडंसर्वतोदिशम् । प्रागापदमाभेप्रेत्यविष्णुंजिष्गुरुवाचह ॥ २१॥ कृष्णाकृष्णामहावाहोभक्तानामभयंकर । त्वमेकोदह्यमानानामपवर्गोऽसिसंसृतेः ॥ २२ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

वाष्पकलाभिराकुलेअक्षिग्रीयस्याः साकृष्गाऽरुदत् तदाकिरीटमाली इंद्रदत्तस्यिकरीटस्याप्राग्रांबाहुल्यमाश्चित्येदमुच्यते किरीटानी मालापवमाला अस्यास्तीतिसतथा अर्जुनइदंवक्ष्यमार्गमाह ॥ १५ ॥

यद्यदाऽऽततायिनः शस्त्रपाग्रोः " अग्निदोगरदश्चैवशस्त्रपागिर्धनापहः क्षेत्रदारहरश्चेवषडेतेयाततायिन,, इतिस्मृतेः ब्रह्मवंधोर्बाह्मगा धमस्याद्दीरः आहरे आनयामि यदाहृतंद्दिरः आक्रम्य आसनं विधायदम्धपुत्रास्नास्यसितदाशुचः शोकाश्रूशिप्रमृजामि मार्जया मिअच्युतोमित्रंसूतश्चयस्यसः दंशितः धृतकवचः॥ १६॥ १७॥

### भाषाटीका

जब कौरव और मृंजयों के संप्राम में बीर सब बीर गति को प्राप्त हो गये. और भीम की आविद्ध गदा से धृटराष्ट्र पुत्र के ऊक् भंग हो गये ॥ १३ ॥

तब द्रोगा पुत्र अइवत्थामा भर्ता दुर्योधन का प्रिय देखकर रात्रि को सोते हुए द्रौपदी के पुत्रों का शिर काट कर ले आया

यह उसका कर्म दुर्योधन को भी अप्रिय हुआ और सब इस कर्म की निंदा करते हैं॥ १४॥

माता द्रौपदी अपने शिशु छुतों का घोर निधन देख कर वाष्पकला कुल नेत्रोंसे रोदनक करने लगी तव उसका सान्तव करने को किरीट माली अर्जुन ने कहा ॥१५॥

ाट माला अजुन न कहा ॥९५॥ भद्रे ! मै तब तेरे शोक के आसूओं को पोंछूंगा जब उस ब्रह्म वंधु का शिर गांडी व मुक्त बाग्गों से काट कर ले आऊंगा. कि तू दे-

ग्धपूत्रा उस शिर को आक्रमगा कर स्तान करेगी॥ १६॥

्त्रा उस । शर का आक्रमण कर राजा का सांत्वन कर अच्युत ही है मित्र और सूत जिस के वह उग्र धन्वा अर्जुन कवच धारण कर ऐसी मनोहर विचित्र वार्तो से प्रिया को सांत्वन कर अच्युत ही है मित्र और सूत जिस के वह उग्र धन्वा अर्जुन कवच धारण कर रथ से गुरु पुत्र के पीछे दौडा ॥ १७ ॥

## श्रीधरस्वामी ।

आपतन्तं थावंतं सद्रौशिःकुमारहा वालघातीउद्धिग्नमनाःकम्पितहृदयः । प्रागापरीप्सुःप्रागांलुब्धुमिच्लुः । नतुकीति यावद्गमंयावद् गन्तुंशक्यं । तावदुव्यापराद्रवत्अपलायत । कोब्रह्मा मृगोभूत्या सुनां जुंभितुमुद्यतः सन् रुद्रस्य भयात् यथा पलायतेस्म । अर्के इति पाठे वामनपुरागाकथासूचिता तथाहि विद्युनमाली नाम कश्चिद्राक्षसो माहेश्वरः तस्मै रुद्रेगा सौवर्गी विमानं दत्तं। ततो ऽसावकस्य पृष्ठतो भ्रमन् विमानदीष्त्या रात्रि विलोपितवान् । ततोऽर्केण निजतेजसा द्रावियत्वा तद्विमानं पादितं तच्छुत्वाकुपिते रुद्रे भयादकः पराद्रवत्। ततोरुद्रस्य कूरया दृष्ट्या दंदह्यमानः पतन् वाराणस्यां पतितो लोलार्फनामा विख्यातद्दति ॥ १८॥

अशरर्गा रक्षकरहितं ननु पछायनमेव रक्षकमस्ति न तस्यापि कुणिठतत्वादित्याह श्रान्तावाजिनो यस्यतं । ब्रह्मशिरोऽस्त्रं ब्रह्मास्त्रं द्विजात्मज इति अदीर्घदर्शितामाह ॥ १९॥

तद्ब्रह्मास्त्रं समाहितः कृतध्यानः उपसंहारमजानतोऽपिसंघानेहेतुः प्रागाकृच्छ्र इति ॥ २०॥

ततोऽस्त्रात् सर्वतोदिशं प्रादुष्कृतं प्रकटीभूतं तेजः अभिप्रेश्य ततः प्रागापद्श्राभिप्रेश्य ॥ २१॥

व्रस्तुत विज्ञापयितं प्रथमं स्तौति कृष्ण कृष्णिति चतुर्भिः। संसृतेईतो देशमानानां तस्या अपवर्गः अपवर्जयिता नाशक इत्यर्थः ॥ २२ ॥

**4** 

7.0

### दीपिनी।

सुतः सार्राथरित्यर्थः ॥ १८ ॥ २१ ॥

तस्याः संसृतेः संसरणस्येत्यर्थः ॥ २२ ॥ ४७ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

सोश्वरथामाउद्विग्नंभीतंमनोयस्य तथाभूतः आपतंततमजुनंदू**रादे**घ विलक्ष्यप्रत्यभिश्रायकुमारहाकुमारघाती प्राखान्त्राप्तुमिच्छुजिजीविषुरित्यर्थः उर्व्याभूमीयावद्गमंयावद्गंतुंशक्यंतावद्गथेनसाधनेनपर।द्रवत्पलायितवान् कोदक्षः यथा रुद्र स-यात्तद्वत् ॥ १८॥

यदाऽश्र्रणंरक्षकरहितंश्रांतावाजिनोयस्यतमेक्षतपर्यालोचितषान तदासद्विजात्मजोद्रौशिरात्मात्रायतेऽनेनेत्यात्मत्राशंस्वरक्षगापायंब्र-. ह्यारारोनामकमस्त्रमेनेऽवबुध्यते ब्रह्मारीरोऽस्त्रेगार्जुनहत्वात्मानरक्षिष्यामिहत्यध्यवस्तिवानित्यर्थः ॥ १९ ॥

अथसलिलमुपस्पृदयाचम्यसमाहितः अस्त्रप्रयागापयुक्तमनः प्रांशाधानयुक्तः सहारमस्रापसंहार मजानन्प्राशाकुच्छ्रेप्राशापयुपस्थि-तायांतद्रह्मशिरोस्त्रंसद्धेप्रयुयोज ॥ २० ॥

ततः सर्वतोदिशंसर्वदिश्चपादुः कृतंपादुर्भूतंप्रचंडमुत्रंतेजः प्रागापदमभिष्रेष्ट्यप्रागाविपितकारित्वनउत्प्रेष्ट्यजिष्णुरुर्जुनोविष्णुश्रीकृष्ण

तदेवाहरूषाकुण्गात्यादिपंचिभः प्रादुः कृतंतेज्ञायाथात्म्यात्तदुपसंहारागामञ्जसतदुपज्ञापनायभगवंतंकुष्गांप्रष्टुकामोनाह्मपिवेद्याति मावीचइत्यभिप्रायेस्तावद्भगवंतंस्वाभाविकेर्द्धमः स्तीतिचतुभिः हेरूष्ण "कृषिभूवाचकः शब्दोस्थानिर्वत्तिवाचक,,इत्युक्तकृष्णाशब्दोपस्था पितसर्वलोकसुखावहत्वरूपगुणानुसंघानकृतसंभ्रमाद्विरुक्तिः हेमहावाहो"वाहूराजन्यः कृत"इत्युक्तरीत्याराजन्यकुलप्रभववाहोभकानाभयं करातीतितथाभूतस्तस्यसबोधनद्द्यमानानांसंसृतेरपर्वाः पारभूतः संसाराद्विमोचकइतियावत् स्वमेकगव कृत्स्नजगत्सुखाव स्यतत्रापि मकानामम गंकरस्य संसृतिरूपमहाभयक्षपगाक्षमस्यतविकयानेतदुपस्थितभयापनयेने प्रयासद्दिभावः॥ २२॥

#### श्रीविजयध्यजः

कुमारहाकुमारान्हतवान्द्रौशिष्टर्व्याभूमौ यावद्गमंगतुशक्यं तावद्रथेनपराद्रवदित्यन्वयः किञ्जत्वाक्षापतंतंतमर्ज्ञनंदूराद्विलोक्यउद्वि ं ग्रमनाः संभ्रांतचेताः प्राग्रापरीप्सुर्जीवनलाभेप्सुः कइवरुद्रस्यभयात् आर्किरर्कपुत्रः शनैश्चरः पुरायथारुद्रस्यतृतीयनेत्रस्यतेजसोभयादा ाकः परिधावतितथेतिवायुपुराग्गांतरप्रसिद्धमिर्दे यथाकइतिकेचित्रपठेति ब्रह्मपंचमिशरदेखेदनायप्रवृत्तंखद्रेदृष्ट्वावद्वापरिधावतीत्येतद्द्युर जनमोहायतिशातव्यम् ॥ १८ ॥

अदारग्रंपालकरहितम् आत्मत्राग्रं आत्मानंत्रायतइति ब्रह्मदि।रोनामास्त्रम् ॥ १९ ॥

ब्रह्मास्त्रप्रयोगइतिकर्तव्यतामाह अथेति अथईक्षगानंतरमुपस्पृदय आचम्य संहारमुपसंहारम् अपिशब्देनविद्याया असंकल्पंदर्शयति तर्हिकिमर्थेसंद्धहितत्रशह प्राग्राति ॥ २०॥

ततस्तस्मादस्त्रादुरपन्नंसर्वतोदिशंप्रापतद्वचाण्युवत्प्रचंड मभिष्रेश्यदृष्ट्वा जिष्णुः अर्जुनः हेत्यनेनमनस्यास्त्रर्येकृत्वेतिदर्शयति ॥ २१ ॥ कृष्ण सदानंदात्मक कृष्णा दुः खकर्षणशील संसृतेजीतेनतापाग्निनादह्यमानानां पुंसांत्वमेकपवसंसृतेरपवर्गीऽसि दुःखनाशकरोऽसी त्यन्वयः ॥ २२ ॥

## क्रमसन्दर्भः।

सर्वतोदिशमितिसर्वतद्दयस्ययोगेद्वितीयादिशमितिजात्यैकत्वं दिशासर्वश्रेत्यर्थः सार्वविमिक्तकर्तीसल्वा सर्वीदिशमित्यर्थः ।२१।२२।

## सुबाधिनी।

इच्टेडिपनगितमिदाजाताततोर्वधपर्यवसायित्वं ज्ञातंतदाह आपतंतिमिति सापराधत्वात दूरादेवदर्शनं क्षत्रियधर्माश्चितस्य युद्धोप-स्थिती प्रोत्साहोभवतिवालवधात्तरयपापेनमनसउद्वेगः युद्धसाधनरथः पलायनसाधनंजातमिति रथेनेत्युक्तं पलायनहेतुः प्राशापरीप्सुरिति येषांरक्षणार्थं नीचसंवापितृवधः अन्याय्यकरणंचांगीकृतं तेषांरक्षार्थपलायनं किमाध्यर्यमितिउच्यांयावद्गतंशक्यते यावन्नद्यादिकं नेष्मव धायियागमंत्रादिनालोकांतरगमनेऽपिनिस्तारोन भविष्यतीति दण्टांतमाहरुद्रभयाद्यथार्कहित यथार्कःविद्युन्मालिनराकरगोकतस्व सक्तार्वह द्रस्यक्रोधोजातः ततः श्रुहमुद्यम्यअर्कवधार्थप्रवृत्तः ततोऽर्कः प्रहायन्भूमौपतितः कात्र्यांहोलाकंसंबोजातः ॥१८॥

तथायमापिलोकांतरेऽपि परिख्रमन्यतेत्वतः सूमावेवयावद्रतुंशक्यते तावत्पलाियतवािरत्यर्थः तदाभयात्रारशान्वेषशोभगविस् गच्छतीति कोऽपिमहादेवादिनेशरणासमृत पलायनं च कर्तुमशक्तः अभ्वानांश्रांतत्वात् तदाश्रद्धारारः ब्रह्मास्त्रआत्मनः शर्गामविष्यतीति गच्छताः ज्ञातवान् नविद्यतेशरणं यस्यस्थशरणः श्रांतावाजिनोयस्य"आध्यात्मकं चाधिदैवंब्रह्यासंद्विविधंस्मृतं निवर्त्यमनिवर्त्यचमन्त्रयोः सुम्रतिष्ठत १-यथार्किरितिविजयघ्वजः

[ £.5 ]

### सुबोधिनी।

द्रोगाचार्येगास्मैब्रह्मास्त्रद्वयंदत्तम्उपसंहारस्तुनिशक्षितःशरीरेविद्यमान एवमृग्योःपालयिष्यतीति इदानीमस्यउपसंहारज्ञानामावेऽपिष्रयोगे 🥻 🖰

ततः पलायनंत्यक्त्वाभिन्नप्रक्रमेगाआचमनंविधाय समाहितःसन्देवतासान्निध्यार्थे उपसंहाराज्ञानेसंधानेलेकिक्षयान्महत्पापंचभविष्य तीति ज्ञात्वापिप्रागाकुच्छ्रउपस्थिते अयुक्तमप्यापदिकर्त्तव्यमितिवुद्धचातत् संद्धे॥ २०॥

ततोयज्ञातंतदाह ततः प्रादुरभूत्तेजइति प्रचंडमप्रतिक्रियं प्रचंडिमत्यादिभिन्नंवाक्यं सर्वतोदिशंअर्जुनस्य अतएवप्राणापहम् ॥ २१॥ द्रौगोरिद्मस्त्रमित्यक्षात्वाक्तिचिद्ग्यदेवदैवयोगान्नाशक मुपस्थितमितितद्पनोदनार्थं तत्रस्क्षपन्नानार्थं च भगवंतप्रस्तुं प्रथमस्तौतीति चतुर्विध पुरुषार्थसिद्ध्यर्थंचतुर्भिः शलोकस्तौतिकष्णकृष्णोत्यादिभिः आद्रवीष्साभयाद्वाद्विरुक्तिः महांतोवाहवोयस्यइंद्रादयो वाहवो यस्यअनेनिक्रयाशक्ते राधिक्यमुक्तंपालकत्ववासामान्यतः सर्वेषांपालकत्वमुक्तमक्तान् प्रतिविशेषणपालकत्वमाह भक्तानामभयंकरेति अन्यषामुपस्थितभये परिपालनंकरोतिभक्तानांतु अभयमेवोपस्थापयितनभयं किच त्वक्तोदृरेस्थितादह्यमानाभवांति दाहेष्विपमहान्संसा रदाहः जन्ममरण्कपः तस्यत्वमपवर्गः संसृतेर्हेतोर्देश्वमानानामेकस्त्वमेवापवर्गः "आवद्य भुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्ज्जुन मामुपे द्रियायकीतेवपुनर्जन्मनिवद्यते इति"॥ २२॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

कोव्रह्मासृगोभूत्वासुतांजभितुमुद्यतः सन्रुद्रस्यभयात्यथापलायते स्मअर्कइतिपाठेवामनपुराग्यकथान्नेयात्तथाहिविद्युन्मालीराक्षसः श्रीवः शिवदत्तेन सौवर्गोनविमानेनअर्कस्य पृष्ठतोभ्राम्यन् विमानदीप्त्यारात्रि विलोपितवान्ततः कुपितोऽर्कोनिजतेजोभिद्रीवयित्वातद्वि मानंपातयन् तदैवायातस्य रुद्रस्य भयात्ततः पलायमानः पतन्वाराग्यस्यांलोलाकोवभूवेति ॥ १८ ॥

अद्यार्गं रक्षक रहितम् आत्मत्राग्रम्आत्मरक्षोपायंद्विजात्मजद्दत्यदीर्घदर्शित्वंस्चितम् ॥ १९ ॥

संमाहितः कृतेष्यानः ॥ २० ॥ २१ ॥

अपवर्गो मोक्षरूपोऽसितेनास्माकं संसृतेमीक्षमिपदास्यसि किमुतास्मात् अग्रेस्त्राग्रमात्रमितिभावः॥ २२॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

विलक्ष्यप्रत्यभिज्ञायपाग्पपितृसुः प्राग्णान्प्राप्तुमिच्छुः यावद्गमंयावद्गंतुंशक्यम् तावद्भमौपराद्ववत् पलायितवान् यथारुद्रभयादकः एवंहिवामनपुराग्रे कथास्तिविद्युन्मालीराक्षसः शिवभक्तः सहिप्रसन्नाच्छिवात्सीवर्ग्णीवमानंप्राप्यार्कवन्मेरोः परितः भ्रमन् रात्रिवि-लोपितवान् लोकहितिचिकीर्षुरर्कस्तिद्धमानंपातयामास ततोभक्तपक्षपातिनिरुद्रेकुपितेऽर्कः पराद्ववित्यादि ॥ १८॥

ऐक्षतपर्यालोचितवान् आत्मात्रायतेऽनेनतदात्मत्राग्म ॥ १९॥

तदस्त्रम्॥ २०॥

ततोऽस्त्रात् प्रादुःकृतंप्रादुभूतम् ॥ २१ ॥

ति। स्त्राप्ति विज्ञापियतुंतावत्कृष्णोतिचतुर्भिभगवंतंस्तौति संभ्रमेद्विरुक्तिः हेकृष्ण "कृषिभूवाचकः राष्ट्रोणश्चिनिर्वचिकः वि-ष्णुस्तद्भावयोगाञ्चकृष्णोभवतिशाश्वतः" इत्युद्योगोक्तनिरुक्तेः हेपरमसदानंद पुनर्हेकृष्णकर्षतिस्वानन्यभक्तं स्वसाधम्यप्रापयतीति हेस्व-साधम्यप्रदएकः निःसमानातिशयः दह्यमानानांसंसारिणांससृतेः संसारस्य अपवर्गोनाशकः ॥ २२ ॥

#### भाषाटीका

वह कुमार हा अश्वत्थामा दौंडे चले आते अर्जुन को देख उद्घिग्न मन हा रथ में सवार प्राण वचाने की इच्छा से पृथवी में जहां-उसकी गम दूर भागा। जैसे रुद्र के भय से ब्रह्माजी भागे थे (१) वा जैसे रुद्र के भय से सूर्य भागे थे (२) ॥ १८॥

जब उस द्विजात्मज के अश्व श्रांत हो गये हैं तब अपने को अशर्या देख उसने वहा शिर अस्त्रही को अपना परित्रामा माना ॥ १९ अथ अनन्तर जल स्पर्श कर समाहितहो यद्यपि उसका संहार नहीं जानता था तथापि प्रामा कृष्क उपस्थित देखकर वहास्त्रिका धान किया ॥ २०॥

तदनन्तर सर्वतोदिश प्रादु स्कृत प्रचंड तेज प्राग्रों का नाश करने वाला देख कर जिष्णु ( अर्जुन ) विष्णु ( श्री कृष्णा ) से जोले ॥ २१ ॥

(अर्जुन उवाच) हेक्रणा ! हे कृष्णा ! हे महा वाहो ! हे भक्तों के अभयंकर ! इस संसार में दश्यमान पुरुषों के एक तुम ही अपवर्ग अ (भय वर्जन) हो ॥ २२ ॥

१ प्रागापहमाभिष्रेत्येति सुबोधिनी।

.(१) मृग रूप धर मृगी सरस्वती का अनुगमन करते ब्रह्मा की शासन करने की जब रुद्र दौडे तब ब्रह्मा उनके भय से

भागा था॥
(२) विद्युत्माली शिव भक्त राक्षस शिवदत्त सुवर्णा विमान में बैठकर सूर्य के पीछे पीछे घूम कर जब रात्रि की दिन करने ल-गा तब सूर्य ने अपने तेज से उसका बिमान गलाकर गिरा दिया यह सुनकर मेहादच त्रिशूल ले सूर्य के मारने की चले तब उनके भय से सूर्य भागाथा॥ त्वमाद्यः पुरुषः सात्वादी इवरः प्रकृतेः परः ।

मायां व्युदस्य चिन्क्रक्त्या कैवल्ये स्थित स्नात्मिनि ॥ २३ ॥

सएव जीवलोकस्य मायामेहितचेतसः ।

विधत्से स्वेन वीर्य्येण श्रेयो धन्मादिलत्वणम् ॥ २४ ॥

तथायश्चावतारस्ते भुवोभारजिहीर्षया ।

स्वानाश्चानन्यभावानामनुध्यानाय चासकृत् ॥ २५ ॥

किमिदं स्वित् कृतोवेति देवदेव नवस्यहम् ।

सर्वतो मुखमायाति तेजः परमदारुणम् ॥ २६ ॥

#### श्रीधरस्वामी ।

यतस्त्वमीश्वरः साक्षात् कुतः यतःप्रकृतेःपरःपुरुषः तत्कुतः यतः आद्यःकारणं कारणत्वेष्यविकारितामाह मार्यांव्युदस्य अभिभूय कैवल्यस्वरूपेआत्मन्येवस्थितइति ॥ २३ ॥

्रिवर्गदातापित्वमेवेत्याह सर्दात यस्त्वंम:यामभिभूयस्थितः सण्वमायाभिभूतस्यजनस्य धर्मादिफलमुपासितः सन्विधत्से वीर्येगा प्रभावन ॥ २४ ॥

तथाचानेनावतारेगानतवसाधुपक्षपातोलक्ष्यतद्दत्याहतथेति किभूभारहरग्रांमदिच्छामात्रेगानभवतितत्राह खानांबातानामनुध्यानायचत थाऽनन्यभावानामेकांतभक्तानांच ॥ २५ ॥

एवंस्तुत्वाप्रस्तुतंज्ञापयाति किमिति किमात्मकामिदंकुतोवाआयातीति स्वित्वितके ॥ २६ ॥

दीपनी ।

॥ २३ ॥ २६ ॥

### श्रीवीरराघवः।

नन्ववंविधस्त्वीश्वरोनाहामित्यतआहृत्वाम्रीतित्वमेवसाक्षादीश्वरः यतिकचिदीशितव्यत्वापेक्षया सर्वोपिलोक्देश्वरएत्वेतीतरसाधा रेगीर्द्वमेरामग्रेतमोश्वरामतरस्साद्वयावत्त्रयतिआद्यआदोभवः निांखलजगत्कारग्रत्वनौवस्थितः पुरुषः सर्वातरात्मतयास्वप्रशाशितृत्वन-सर्वहृद्वयांत्वेतीत्यर्थः आधापिप्रकृतेः परः "भूमिरापोनलावायुः खमनो वुद्धिरेव्च अपर्यामतस्त्वन्यामित्यादिश्रांकद्वयोक्तप्रकृतिद्वया विलक्ष्माःपुरुषशब्दिन्तं (पूः संक्षेवेशरीरिह्मन्द्रायनात्पुरुपोहिरिं तिनिष्कतेनसर्वतिरात्मत्वंसर्वाधारत्वंचफलितंप्रकृतेः परइत्यनेनप्रकृतिगतध्व मास्पर्शश्चनन्वोश्वरश्चसर्वधारकश्चनस्याक्षेत्रस्यप्रकृतियमी स्पर्शश्चनन्वोश्वरश्चसर्वधारकश्चनस्याक्षेत्रस्यप्रकृतियमी स्पर्शश्चनन्वोश्वरश्चसर्वधारकश्चनस्याक्षेत्रस्यप्रकृतियमी स्पर्शश्चनन्वोश्वरश्चसर्वधारकश्चनस्याक्षेत्रस्यप्रकृतियमी स्पर्शश्चत्वविद्यस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्व विशेषग्रत्वाचिष्ठक्रस्य विशेषग्व विश्वराचिष्ठक्रस्य विशेष्ठत्व विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच विश्वराचिष्ठ विश्वराच विश्वराचिष्ठ विश्वराचिष्ठ विश्वराच विश्वराचिष्ठ विश्वराच्या विश्वराचिष्ठ विश्वराचिष्ठ विश्वराचिष्ठ विश्वराचिष्ठ विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच विश्वराच्या विश्वराच विश्वराच्या विश्वराच्या विश्वराच विश्वराच

तदेवाहयद्दति उक्ताविधर्दश्वरएवत्वंमाययादेहात्मभूमखतंत्रात्मभूमादिरूपमायाकार्येगामोहितंचेतोयस्यतस्यजीवलोकस्यधर्मादिलक्ष गांधर्मार्थकाममोक्षरूपपुरुषार्थ चतुष्टयरूपंश्रेयस्तद्विपर्ययरूपमश्रेयश्चतत्तत्कर्मानुगुग्येनस्वनस्वेनवीर्येगास्वाभाविकानामच्युतेनमहात्म्य नोपलक्षितः विधत्सेप्रयच्छासि ॥ २४॥

नक्षेबलमंतरात्मतयवंविधत्सेऽपित्ववतारमुखेनापीत्यभिष्रेत्याह तथेति भुवोभारभूतानांदु ब्कृतजिहीर्षयासंहारेच्छयाऽनन्यभावानाम नन्यप्रयोजनभक्तियागनिष्ठानांस्वकीयानामसकृदनुध्यानायचायंतवावतारः॥ २५॥

प्वं संस्तुत्यप्रकृतंपृच्छितिकिमिति इदंतेजः किस्विदितियाथात्म्यप्रद्भः कुतोवितिहेतुप्रद्भः कुतोवाआगच्छितिकुतश्चरामिष्यतिइत्यर्थः स्वस्यत्वेतद्श्चानमावेद्यतिनवेद्ययहामितिताहिकिज्ञानासीत्यत्राह सर्वतोमुखंपरमदारुगातेजः आयात्येतावदेववेद्यीत्यर्थः॥ २६॥

#### विजयध्वजः।

अतिष्टपरिहारसामध्येतवास्तीत्याह त्वमिति पापानिश्रीषद्दहितिपुरुषः "सर्वान्पाप्मनश्रीषत्तस्मात्पुरुष"इतिश्रुतेः पुरुबहुसरतीतिवा सर्वेषामादीभवनादाद्यः साक्षादीश्वरः निरुपचरितेश्वर्योपेतः । तत्कथिमितितत्राह । प्रकृतेरिति चित्प्रकृतेरप्युत्तमः एवंविष्यस्वं
तिवा सर्वेषामादीभवनादाद्यः साक्षादीश्वरः निरुपचरितेश्वर्योपेतः । तत्कथिमितितत्राह । प्रकृतेरिति चित्प्रकृतेरप्युत्तमः एवंविष्यस्वं
विच्छक्त्यास्वरूपज्ञानशक्त्यामायांविष्यकशिक्तिनरस्यक्षेत्रस्य प्रकृतिप्राकृतविष्यरिहिते आत्मिनिस्वरूपोस्थितोयतोतद्वर्यन्वयः "सम्भवाद्यविच्छक्त्यास्वरूपितिष्ठेतद्दिस्वेमिहिस्नी" तिश्रुतेः ॥ २३ ॥
किस्मन्प्रतिष्ठितद्दिस्वेमिहिस्नी" तिश्रुतेः ॥ २३ ॥

**D**.

#### श्रीविजयध्वजः।

सप्रकृतिप्राकृतसंत्रं यरिहतएववं व्यकशक्त्यामोहितयुद्धे जीवलोकस्यस्वरूप वीर्येगाधर्मादिलक्षग्रंश्रं योविधितसुरवतरतित्यन्वयः ॥ २४॥ भगवद्वतारास्तेयथापुंसामनुष्यानादिनामोक्षहेतवस्तथा भुवोभारिजहीर्षयाकृतोऽयं चावतारक्षानन्यभक्तानां स्वानामसकृदनुष्यान्नायस्यादित्यतोमोक्षं साध्यतस्तवभक्तेहिकदुः सन्तिवारकृत्वेष्ठिवत्रकृतोवित्रभावः भूभारानुष्यानयोः समुखयेचशब्दः ॥ २५॥ यत्तेजःपरमदारुगंसर्वतोमुस्रमायाति हेदेवतदिदं किस्वित्रकृतोविति अहं नवेद्शोत्यन्वयः ॥ २६॥

## क्रमसन्दर्भः।

मायाहेतुकायाः संसृतेः नाशकत्वेनमाया तोविलक्षणांशिक्दशंयितत्विमितित्वंसाक्षात् पुरुषोभगवान्तथायद्देश्वरः अन्तर्याभ्याख्यः पुरुषःसोऽपित्वमेवतद्वमुभयस्मित्रपिप्रकाशप्रकृतेः परस्तद्वसंगःन्तुकथं केवलानुभवानन्दस्यापितद्वुभावित्वंयतोभगवत्त्वमिष्ठिक्ष्येतक यमीश्वरत्वात् प्रकृत्यिधिष्ठातृत्वेऽपितद्संगित्वंतत्राहमायांच्युद्दस्योतअव्याभेचारिययाखरूपशक्त्या तामाभासशिकदृरेविधायतयेवस्यकृष्याक्ष्रविच्यापापरमञ्जास्तेकेवेव्यस्यकृष्ठितः । केवलानुभवानन्दसंदोहोनिरुपाधिकदृत्येकादशोक्षरीत्या केवल्याख्यकेवलानुभवानन्द आत्मिन्दक्षपंस्थितः अनुभूतस्वरूपसुखदृत्यथः । तदुक्तपष्टेदवेरिपस्वयसुपवन्ध निजसुखानुभवोभवानितं । सदाहशब्देनचैकादशेविचत्रीद्विता साचशिक्षवेविच्यादेवभवतीति अतप्यमस्त्येव स्वरूपशाक्तः प्रकृतिनीमात्रमायायाख्येगुण्यम् प्रवमेवशिकत्रयविवृतिः श्रीखामिभिरवद्विता परंप्रधानपुरुषमित्यादिदेवहूतिवाक्यं अत्रपुरुषस्यापिमायान्तः पातित्वंतद्विष्ठानात्तरयोपच्य्यते पववस्तुतः तस्यनुतस्याः परत्वं यथा श्रीकपिलवाक्ये-अनादिरात्मापुरुषो निर्गुणःप्रकृतेः परः प्रत्यग्धमाख्यंप्रयोति विश्वयेनसमिनिवर्तामिति
विश्वक्तिक्रपण्णिवशेषितिश्वास्याचेत्र भगवत् संदर्भोद्दयः अथवा त्वमाधहत्यादि मुलपद्यमेवमवतार्यम् श्रीवेकुण्ठेमायां निषेधन्नपिसाक्षात् स्वरूपशितिकमेवाहत्वमिति केवल्यमोक्षाच्ये श्रीवेकुण्ठलक्ष्योआत्मानिखाशेष्ट्यस्थतः किकुत्वतत्रातिविराजमानयाचिच्छक्षत्या
मायाद्दरस्थितामपितिरस्कृत्येवमतंचैतन्मयाधिकंनिष्यताश्रीशुकदेवेन प्रवर्ततियाद्यस्यस्यत्वः सत्त्वंवस्यत्वात्वाद्यस्य । १३ ॥ २४ ॥
यथान्य पुरुषाद्याद्यतारस्तथायमवतारः साक्षाद्मगवतः कृष्णाल्यस्यत्रवेवप्रकृष्यस्यत्यवेवप्रभ्रक्षयान्वातिर्वात्रातिर्वात्रवार्याद्यस्य

षांस्वानांभक्तानामसकृच मुहुरनुध्यानायनिजभजनसौख्यायभवति ॥ २५ ॥ ३० ॥

### सुबोधिनी।

अत्रोपपत्तिश्रोकद्वयेनाह सवैपतिः स्यादितिन्यायेनप्रथमतः खस्यदोषाभावः तद्युपरस्यदोषद्रीकरण्मिति तत्रदोषाः पंचविधाः कर्मजाः कालजाः खभावजाः पापाद्भवाः देशोद्भवाश्चेतितेकमेण्णिनवार्यते कर्मापेक्षयाप्याद्यत्वात् खतंत्रत्वेनतद्धीनत्वाभावाञ्चनतिस्मन् कर्मजाः किंच सवेषामयनियामकः भगवान्साक्षादात्मनामिष्यतः कालस्यापिनियामकदृत्युक्तं भवतितेननकालजाः प्रकृतिनियामक त्वाञ्चनप्राकृताः भगवतस्तुबद्वयः शक्तयः संतिअन्योन्यविरुद्धाः तत्तत्त्वकार्यार्थिनिर्मताः तत्रयस्यामेवआसक्त्वाक्षीडायां क्रियमाणायांतद्दो षप्राद्धभावः सभाव्यतेतदेवतद्विरुद्धशक्तिप्राद्धभावनेनपूर्वानदूरीकरोति तथाचिच्छक्त्वामायांव्युदस्यतिष्ठतीतिनमायिकदोषसंबंधः देशदो षस्तुनसंभाव्ययवसर्वधर्मास्पृष्टेकवेलः एवात्मिन विद्यमानत्वात् अतः स्वतः पंचविधदोषरहितः ॥ २३॥

अन्येषांदोषद्रीकरगंकैमुत्यन्यायेनाहसएवेतिपूर्वीक्तगुण्युक्तप्बमायामेहितचेतसोजीवस्यम्रांतस्यभ्रांत्यायदेवम्रांत्यायदेवप्रार्थयतेत तस्मैप्रयच्छसीतिसर्वाभीष्टदातृत्वमुक्तंअन्यथासर्वेषामभजनीयः स्यात् ॥ २४ ॥

पर्वस्थितिकिमिद्रमकस्मादाविभूतिमिति तत्कथयत्याद्दसर्वदिशत्वात् कुतोवितिनक्षायते कुत्रवामुलमितिअवतारेपि तवनिकिचिद्कातं देवकार्यसाधनत्वात् तदाद्ददेवदंविततथात्वमपीत्याशंक्यअब्रह्मत्वाक्षादंवद कीत्र्युपपत्तिः अत्रनसंभवतियतः सर्वतोमुख स्वरूपशक्ति-त्वात्त्वतिस्थतंवस्तुतप्वतिमावः॥ २६॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

ननुत्वन्मातुलेगोऽहंत्वत्समपवमेवंवादीरित्याहृत्वमिति । ननुत्वंप्रकृतेः परइति कि प्रकृति शब्देनाविद्यांमायां वा बूषे तत्राह । चिच्छं कत्या स्वरूप भूतया शक्त्यासुमगया पट्टमहिष्येवमायां विद्याविद्याति वृक्तिस्थवतीं दुर्भगामित्र स्वशक्तित्वात् प्राप्तां व्युद्स्य दूरीकृत्य तया शक्त्या सहित एवत्वम्आत्मिनस्वचिन्मयस्वरूपेस्थितः । ननुचिच्छ क्त्येत्यस्याः कार्गात्वेन मक्तोभिष्मतया स्थितत्वं कथं ममात्मिन स्थितत्वमित्यतआहकेवच्यद्दति । केवलस्य भावः केवल्यं तिस्मन् इतितया सहितत्वेऽपि तव केवल्य मेव तस्यः स्वरूप भूता चिच्छाकः स्थात्वक्तः सदाअभिष्मेवत्वदेहंन्द्रियपरिकराविरूपेगातिष्ठति "परास्य शक्तिवेहुधैवश्रूयते स्थाभाविकी ज्ञानवल कियाचेति" श्रुतेः । मायाष्ट्र स्वद्रस्वरूपत्वात् ज्ञानाज्ञान गुगामयजगद्भपेगावर्त्ततेइतित्वक्तोभेदएवतस्या मायायास्त्वच्छक्तित्वात् कचिव्येदेऽपीति निष्णामित्र क्रिक्षा सा शक्तिरित्यर्थः । मायेव शक्तिरेका नाम्यति मतं परास्तमेव ॥ २३ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥

वेत्येदं द्रोगापुत्रस्यबाह्यमस्त्रं प्रदर्शितम्

नैवासौ वेद संहारं प्रागावाघ उपस्थित ॥ २०॥

नहास्यान्यतमं किंचिदस्तं प्रत्यवकर्षाम् ।

जह्यस्रतेजउन्नद्रमस्त्रज्ञोह्यस्रतेजसा ॥ २८॥

स्तउवाच ॥

श्चत्वा भगवता प्रोक्तं फाल्गुनः परवीरहा । स्पृष्टाऽपस्तंपरिक्रम्य बाह्यं ब्राह्माय संदधे ॥ २९ ॥

संहत्यान्योन्यमुभयोस्तेजसी शरसंवृते।

**ज्रावृत्य रोदसी खं च ववृधातेऽर्कवद्विवत् ॥ ३० ॥** 

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

सपवकैवल्येस्थित एव ॥ २४ ॥ तथातेनैवं प्रकारेण व्युद्स्तमायस्वचिन्मयस्वरूपेणअयमवतारःप्रापंचिक लोकेप्राकटचम् ॥ २५॥ . एवंस्तुत्वाप्रस्तुतं विश्वापयाति किमिद्मिति ॥ २६ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

आद्योविश्वहेतुत्वेनसर्वेक्यः पूर्वः पुरुषः सर्वीतरात्मा साक्षादीश्वरः स्वयंत्रभुः प्रकृतेः "भूमिरापोऽनलोवायुः संमनोबुद्धिरेव च अहंकार-इतीयंमेभिकाप्रकृतिरष्ट्याअपरेयमितस्त्वन्यांप्रकृतिंविद्धिमेपराम् जीवभूतांमहावाह्यययेदंधायतेजगदि"ति भगवदुक्तायाः अपरायाःपराया-अवरप्रकृतिमत्तयोत्कृष्टः पतदेवाह यायामपरांप्रकृतिचिच्छक्त्याधमभूतज्ञानरूपयाद्युदस्यामिभूयस्थितः पराप्रकृतितः परमोत्कृष्टत्वं-दर्शयतिकैवल्यस्वार्थेष्यञ् आत्मनिखस्मिन्नेवखयंस्थितः "प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्शुग्रेशः अग्रोरग्रीयान्महतोमहीयानि"त्यादिश्रुतिश्यः॥ २३॥ पतदुपपादनायपुरुषार्थप्रदत्वंभगवतोदर्शयति सपवेति सपवंत्रिगुगाप्रकृतिमोहितचेतसः पराप्रकृतेर्जीवस्यधर्मार्थकाममोक्षाख्यंश्रेयो-विधरसेप्रयच्छिस ननुमायामयेलोकेमायामोहितेषुजीवेषु मध्येत्वदुक्तलक्षरणस्य ममावतरग्रं किमर्थमित्यतथाह तथेति ॥ २४ ॥ २५॥ अथ प्रस्तृतंविज्ञापयति किमिति ॥ २६ ॥ २७ ॥

### भाषाटीका

तुम आद्य पुरुष हो. प्रकृति से पर साक्षात ईश्वर हो चित्र शक्ति द्वारा माया को पराभव कर कैवल्य आतमा में स्थित हो ॥२३॥ वहीं तुम, इस माया मोहित चित्त जीव लोक का धर्मादि रूप श्रेय अपने प्रभाव से विधान करते हो ॥ २४ ॥ वैसे ही आप का यह भी अवतार पृथवी के भार हरण करने की इच्छा से है। और अपने अनन्य भाव भक्तों के निरंतर अनुध्यान के निमित्त है ॥ २५॥

हे देव देव यह क्या है ? मैं कुछ नहीं जानता. पर मदारुश सर्वतो मुख तेज चला आता है ॥ २६ ॥

## श्रीधरस्वामी

इदंद्रीगापुत्रस्यबाह्ममस्त्रं तेनचप्रागाबाधेपाण्तेप्रदर्शितंकोवलं नतत्प्रयोगेकुशलइत्यर्थः यतोऽसाबुपसंहारंनवेद एतध्वत्वं वेत्यजाना सि ॥ २७ ॥

॥ २० ॥ प्रत्यवकर्षमां कुशत्वकरं निवर्त्तुकमित्यर्थः अतः तद्ख्यतेजङ्ग्रद्धमुत्कटं ब्रह्मास्त्रतेजसैवजहि घातय त्वत्प्रयुक्तंचास्त्रतदुपसंद्वत्य स्त्रयमुपशाम्येत् यतस्त्वमस्त्रज्ञोऽार्सं ॥ २८ ॥

परेशत्रवस्तपववीरास्तान् इंतीतितथाफाल्गुनोऽज्ञेनः अपः स्पृष्ट्वाआचम्य तंश्रीकृष्णंपस्किम्यप्रदक्षिगीकृत्य ब्राह्मास्यनि-वर्त्तियतुम् ॥ २९॥

ततश्च अयोब्बह्यास्त्रयोः तेजसी शरैः संवृतेसंविध्िते परस्परीमिलित्वाववृधाते अवर्धेतांकिकत्वारोदसीद्यावापृथिव्यौक्षमंतिरक्षंचा बृत्य यथाप्रलयसंकर्षणमुखाग्निः उपरिस्थितिऽकश्चसहत्यवधैतेतद्वतः॥ ३०॥

दीपिनी।

॥ २७॥ ३०॥

### श्रीवीरराघवः।

इत्यंसंस्तुतोविक्षापितश्चभगवान्सर्वेत्र आह्वेत्थेतिद्वाभ्याम् प्रागावाधउपस्थिते सतिद्रोगापुत्रस्येतिकर्तरिपष्ठी तेनप्रदर्शितंप्रयुक्तंब्रह्मा-स्त्रमिदंतेजोवेत्थजानीहिश्रसोद्रोगापुत्रः संहारंप्रयुक्तब्रह्मास्त्रोपसंहारंनवेदनजानाति ॥ २७ ॥

तर्हिकथिमदमुपसंहर्तव्यमित्यत्राह नेति अस्यद्रोगापुत्रप्रदर्शितस्यब्रह्मास्त्रस्य प्रत्यवकर्षकंप्रतिभटमस्त्रंततोऽन्यतमंकिचिद्िपनिविद्यतेऽ-तोऽस्त्रज्ञः ब्रह्मास्त्रप्रयोगोपसंहाराभिश्वस्त्वमस्त्रतेजसाब्रह्मास्त्रतेजसैवोश्वद्यमुद्रिक्त मस्त्रतेजः ब्रह्मास्त्रतेजोजहित्वमपिब्रह्मास्त्रेगीवतद्भिभाव यत्यर्थः ॥ २८ ॥

इत्यंभगवताप्रोक्तमस्त्रसंहारोपायंश्रुत्वा परवीरहाफाल्गुनोऽर्जुनः अपआचम्यतंकृष्णंपरिक्रम्यप्रदक्षिणी कृत्यब्रह्मास्त्रायप्रतिभटंबाह्म-मेवास्त्रंसंदधेप्रयुयोज ॥ २९ ॥

ततस्तयोरुभयोरस्रयोस्तेजसीशरैर्व्याप्तेऽन्योन्यंसंहत्यसंगत्यरोदसीद्यावापृथिव्यौखमाकांशचावृत्यावेष्ट्यार्कवद्गीइव वृष्ट्यातेवृद्धि-गते ॥ ३० ॥

### श्रीविजयध्वजः।

यत्तेजः तिद्दंद्रोगापुत्रस्यवाह्यमस्त्रंवेत्थेत्यन्वयः कीदृशंप्राण्वाधेजीवाधिष्ठितदेहनाशेउपस्थितेआसम्नसितप्रदर्शितं प्राण्वाध्यस्त्ये तत्कुतोवाऽवगतमितितत्राह नेति असीद्रौणिः अस्यअस्त्रस्यसंहारंनवेदयस्मादतोक्षायते प्राण्वाधेमुक्तमिति ॥ २७ ॥

अस्त्रागामन्यतमंकिंचिदस्त्रमस्यप्रत्यवकर्षगांप्रतीकारसमर्थिनिवर्तकंनाहि अतोऽस्त्रज्ञः विसर्गोपसंहारपूर्वकमस्त्रज्ञस्त्वमस्त्रतेजसाउच्च द्वमुद्धतमस्त्रतेजो जहित्यन्वयः हिशब्दोहेती॥ २८॥

परेवांशत्रू गांसंवंधिनोवीरान् हंतीतिपरवीरहाशत्रुवीरानितिवा तंकृष्णंपरिक्रम्यप्रदक्षिणीकृत्य ॥ २९ ॥

उभयोः शरसंवृतेतेजसीअन्योन्यंसंहत्यसंघट्टनंकृत्वारोदसीद्यावापृथिज्योखमाकाशंचावृत्यार्कविद्ववत्ववृधातेद्दत्यत्वयः॥ ३०॥

क्रमसन्दर्भः।

॥ २७॥ ३०॥

### सुबोधिनी।

भगवानाहवेत्थेति गुरुपुत्रत्वाद्गुरुणाब्रह्मास्त्र मस्मैद्त्तंतदस्त्रं मत्तस्त्वंवेदतदेवेदमितितुर्जोनीहि ननुब्रह्मास्त्राण्यपिवहूनिहष्टानि प्रयु कानिचकदाचिदपि नैवंदष्टिमितिचतत्राहनैवासौवेदसंहारिभिति अतअनभिज्ञनप्रयुक्तत्वात सर्वतोमुखमायातितिहिकथंप्रयुक्तवान् तन्नाह प्राणकृद्धेउपस्थि तहति यावद्द्यमपिभिन्नंभिन्नं वाक्यम् ॥ २७ ॥

तर्हिकिकर्तव्यंतत्राहनहास्येति ब्रह्मास्त्रव्रह्मास्त्रमेवप्रयोक्तव्यंनान्यत्तत् प्रतीकारमहितिअतः अस्त्रज्ञोभवान्उन्नद्धं ब्रह्मास्त्रतेजसैवजहित्व-यापिप्रयुक्तमेतादृशमेवतेजोभविष्यति येनास्यप्रतीकारःस्यादिति ॥ २९ ॥

यापिप्रयुक्तमताहरामवतज्ञामाव ज्यार ज्यार प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्रयोक्तमताहरामवतज्ञामाव ज्यार प्रयोक्तमताहरामाव ज्यार प्रयोक्तमताहर प्रयोक्तमताहरामाव ज्यार प्रयोक्तमताहरामाव ज्यार प्रयोक्तमताहर प्रयोक्तमताहर प्रयोक्तमताहर प्रयोक्तमत्र प्रयोक्तमताहर प्रयोक्तमताहर

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

प्रदर्शितमिति इष्ट्यैव किं न परिचिनोषि किं मां पृच्छसीति भावः संहारमस्योपसंहारं न वेद तर्हि कथमेतत् प्रयुक्तवा नित्यत बाह प्रामावाय इति ॥ २७ ॥

बाह प्रागावाध इति ॥ २७ ॥ तार्हि वारुगास्त्रादिना विह्नमुपशमयामीति चेत्तत्राह नहास्येति प्रत्यवकर्षगां निवर्त्तकं तस्मात्त्वम् अस्त्रतेजसा स्वप्रयुक्तब्रह्मास्त्र तेजसैव ब्रह्मास्त्रतेजो जिह यतो अस्त्रज्ञोऽसि ॥ २८ ॥

तं श्रीकृष्णं व्राह्माय व्रह्मास्त्रं निवर्त्तयितुम् ॥ २९ ॥ उभयो व्रह्मास्त्रयो स्तेजसी द्वारेः संवृते संवेष्टिते परस्परं मिलित्वा वब्धाते रोदसी द्यावापृथिन्यौ यथा प्रलये संकर्षणा मुसारिनः उपरिस्थितो ऽर्करच ताविव ॥ ३० ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

अस्यवद्यास्त्रस्यअन्यतमतोऽन्यतमप्रत्यवकर्षग्रांनिवारकंनहि अतोऽस्त्रतेजसा व्रह्मास्त्रतेजसेव ॥ २८॥

तश्राकृष्णप्र ॥ ११ ॥
उभयोरस्थयोः शरसंवृतेतेजोमयशरसंयुक्तेतेजसी अन्योन्यंसंहत्यरोदसीद्याषापृथिव्यौषमा काशंचातृत्यप्रस्रयेऽकेविद्ववत्ववृधातेअवर्धे
तामित्यन्वयः ॥ ३० ॥

दृष्ट्वाऽस्रतेजस्तुतयोस्त्रीं हो नान्प्रदहन्महत् । दह्यमानाः प्रजाः सर्वाः सांवर्तकममंसत् ॥ ३१ ॥ प्रजापञ्चवमालक्ष्यलोकव्यतिकरंचतम् । मतं च वासुदेवस्य संजहारार्जुनो द्वयम् ॥ ३२ ॥ तत त्र्यासाय तरसा दारुगां गौतमीसुतम् । वबंधामर्पताम्रात्तः पशुं रशनया यथा ॥ ३३ ॥ शिविराय निनीषंतं रज्ज्वावद्ध्वा रिपुं वलात् । प्राहार्जुनं प्रकुषितो भगवानंबुजेक्षराः ॥ ३४ ॥

#### 'भाषाटीका

(श्री मगवानु वाच) यह द्रोगापुत्र का प्रदर्शित अस्त्रहै तू जानताहै वह इसका संहार नहीं जानता है परन्तु प्रागा वाधा उपस्थित होने से उसने ब्रह्मास्त्र संघान किया है॥ २७॥

और कोई अस्त्र इसका प्रत्यव कर्षण ( शांत करने वाला ) नहीं है । तू तौ अस्त्रज्ञ है अपने अस्त्र से इस उन्नद्ध अस्त्र तेज को

संहार कर॥ २८॥

का संघान किया॥ २९॥

धार संवृत दोनों ब्रह्मास्त्रों के तेज अन्योन्य मिलकर द्यावाण्यवी को आवरण कर प्रलयानल और सूर्य के समान बढने हमे॥ ३०॥

### श्रीधरखामी ।

तयोद्वीं शिकालगुनयोः तेनद्वमानाः सांवर्तकंत्रलयाग्निममंसतः मेनिरं ॥ ३१॥

लाकानांव्यतिकरं व्यत्ययंनाशमित्यर्थः वासुदेवस्यमतंचालक्ष्यब्रह्यास्त्रद्वयमुपसंहतवान् ॥ ३२॥

गीतमवंशजागीतमीकृपी तस्याः सुतं अमर्षेगाकोपेनताम्रेअक्षिगीयस्यसः निष्कुपत्वेद्दष्टांतः पशुंयथेति तस्यवधनधमः स्व

यथायाधिकः पशुमिति रशनयारंज्ज्वा॥३३॥

शोकरोषादियुक्तस्यार्जुनस्य धर्मानिष्ठाख्यापनाय श्रीकृष्णवाक्यं तदाहषड्भिः शिबिराय राजनिवेशाय नेतुमिच्छंतं प्रकुपितइ-वंति ॥ ३४ ॥

## दीपनी।

#### श्रीवीरराघवः।

किंचततस्त्रीं छोकान्प्रवहत्त्रयोद्रीं गर्यजुनयोरस्रतेजसोः तत्प्रयुक्तास्त्रतेजो इष्ट्वातेनद्द्यमानाः सर्वाः प्रजाः सांवर्तकंप्रस्याग्निममंसता-

सन्यंत ॥ ३१ ॥ हा । र भे । लोकव्यतिकरंलोकोपमर्दनरूपंप्रजोपद्रवं वासुदेवस्यमतम्भिप्रायंचालक्ष्यार्जुनः द्वयंत्रह्यात्वद्वयंसंजहार उपसंहतवान् ॥ ३२॥ 

यथारज्ज्वापशुंतद्वत् ॥ ३३॥

रिपुंद्रीशिवलाद्रज्ज्वावध्वाशिविरायराजनिवेशमयंशिविरंप्रतिनिनीषंतंनेतुमिच्छंतमर्ज्जनंभगवानंवुजेक्ष्याः कृष्णः प्रकुपितशाहधर्मपरी-आर्थमितिभावः॥ ३४॥

### श्रीविजयध्वजः

संवितकंप्रलयकालीनदाहम् अमस्तिनयह पयन् ॥ ३१॥ इयतिकरोनाद्याः अस्त्रोपसंहारस्रक्षांवासुदेवमतम् ॥ ३२॥ गीतमीसुतंक्रपीपुत्रं रशनयारज्वा॥ ३३॥ गायपा उप व सेनानिवेशनस्थानायेतियावत् निनीषंतंनेतुमिच्छंतम् ॥ ३४॥

### क्रमसन्दर्भः।

हण्ट्वेति प्रवहत् दग्धुमारममाण्य । दश्चमानाः दग्धुमारभ्यमाणाः । वर्त्तमानसामीप्ये वर्त्तमानवद्वेति पाणिनिस्त्रम् ॥ ३१ ॥ मतं चेति । प्रथमं श्रीभगवतास्त्रप्रतिघातनमात्रं समादिष्टं न तु संहरणं । तश्च नूनं परास्त्रं न संहर्त्तं शक्यिर्मात स्वशस्त्रे-णैक्यं विधाय संहरणाभिप्रायेणा । तत्तु तदाञ्चामात्रेणा कृत्वापि पश्चात् प्रत्युत ताभ्यां वृद्धाभ्यामुपद्रवे सति स्थगितायमान-मर्ज्युनं प्रतिसंहारोऽनुमत इति भावः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३८ ॥ ३८ ॥ ३८ ॥ ३८ ॥

### सुवाधिनी।

ततोयज्ञातंतदाहसंहत्येति उभयोस्तेजसीअन्योन्यंसंहत्यमुलदाढर्यायशरयोः संवेष्टितेमूत्वाद्यावापृथिव्यौअंतरिक्षं चावेष्ट्यसंव-र्तकंसूर्यसंकर्षणमुखानलवत् सर्वनाशार्थववृधाते ॥ ३१ ॥

एतयोर्निवृत्तौहेतुमाहदृष्ट्वास्त्रतेजइति मिलितत्वादेकवचनंप्रजादक्षादयः अन्येऽपिभगवत्संनिध्यात्॥ ३२॥

अतःपरमनुपसंहारेप्रलयोभविष्यतीति भगवद्भिप्रायंचज्ञात्वालोकानांनाशं भूरादीनांचसर्वोपकारार्थं एकगुरुत्वात् इयमात्मन्येवोप-संइतमित्याहसंजहारोतिसंजहार उभयोस्तेजसीशरसंवृते आवृत्यरोदसीखंचववृधातेकविद्विति पूर्वोक्तदाहलक्षगांचकारात् सस्यापि तेजोलाभात्भगवतः संवंधाद्प्येतन्मतिमत्याहवासुदेवेति ॥ ३३॥

ततःस्वस्मिन्तेजोद्वयसंक्रमणानंतरंआसाद्य निकटेगत्वाद्राद्वारुणपाशादिभिर्वधनेनमहान्क्केशोभवतीतितरसाशीघ्रंप्रतिक्रियामवस-रायदारुणमितिवंधनेहेतुः मरणशापमारणंवाईश्वर भजनादिनावाकुर्यादिति नजुगुरुपुत्रंक्षथंववंधतत्राह गौतमिसुतिमित नायंगुरोः सम्मतः पुत्रः गौतमीतस्यमाता गौतमवंशोत्पन्नत्वात् अनेनपुत्रस्नेहसंवद्धभायीप्रार्थनया राजसंवधोमरणंसूचितंअमर्षताम्रास्हति अनेनब्रह्मग्या-दयो नस्फुरिताअवद्यंवंधनीयहति हष्टांतमाहपशुमिति ॥ ३४ ॥

### श्रीविश्वनाचक्रवर्ती ।

तयोद्रींगयर्ज्जनयोः साम्वर्त्तकं प्रलयाग्निम् ॥ ३१ ॥ लोकानां भूरादीनां व्यतिकरं नाराम् ॥ ३२ ॥ गौतमवंराजा गौतमी कृपी तस्याः सुतम् ॥ ३३ ॥

शोकरोषादियुक्तस्याप्यर्ज्जुनस्य लोके धर्मानिष्ठाख्यापनाय प्रकर्षेगाह पश्चश्लोकी अरुग्रेक्षगा इत्यनुक्त्वा अम्बुजेक्षगा इत्युके विहरिव प्रकुपित इति गम्यते ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

## सिद्धांतप्रद्वीपः।

तयो द्वीरयर्जुनयोः अमंसतमेनिरे ॥ ३१ ॥ प्रजायाउपप्रवमुपद्रवम् लोकानांव्यतिकरंसंहारंवासुदेवस्यमतमभिप्रायं चालक्ष्यास्त्रद्वयंसंजहार उपसंहतवान् ॥ ३२ ॥ गौतमवंशात् शरद्वतोजातागौतमीकृपीतस्याः सुतम् तरसावलेन ॥ ३३ ॥

श्चोकाद्याचिष्टस्याप्यर्ज्जुनस्यधर्मपरीक्षार्थभक्तप्रियोभगवान् शिविरायसेनानिवेशस्थानायरिषुंनिनीषंतंनेतुमिच्छंतमाह ॥ ३४ ॥

### भाषाटीका ।

त्रिलींका को प्रदहन करते दोनों ब्रह्मास्त्रों के उस तेज को देखकर दह्यमान सब प्रजा ने प्रलय काल ही उपस्थित माना ॥ ३१ ॥ उस लोक व्यतिकर प्रजा के उपस्रव को देखकर वासुदेव का मत जानकर अर्जुन ने दोनों शस्त्रों को सहरमा किया ॥ ३२ ॥ तब दारमा गीतमी सुत को सहसा पकड कर अर्मर्षताम्र लोचन अर्जुन ने बांध लिया जैसे पश्च को रसना से बांधते हैं ॥ ३३ ॥ दियु को वलात रज्जु से बांधकर अर्जुन जब शिविर को लेचला तब अंबुज लोचन भगवान कुपित होकर अर्जुन से बोंले ॥ ३४ ॥

## श्रीथरस्वामी ।

अनागसोनिरपराधान् ॥ ३५॥

रिपोरिपसुप्तस्यवालस्यचवधोनेधर्भइत्यन्यार्थैर्द्शयति मत्तंमद्यादिना प्रमत्तमनवहितं उन्मत्तं प्रहवातादिना जडमनुद्धमं प्रपन्नद्या

तद्वधोदंडरूपस्तस्यैवश्रेयः पुरुषार्थः यद्यतोदंडप्रायिश्चत्तरिहतादोषात्सपुमानधोयातीति तथाचस्मरंति 'राजिभश्वेतदंद्वास्तुकृत्वा' पापानिमानवाः ॥ विधूतकलमपायातिस्वर्गसुकृतिनोयथा" ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३८ ॥ 重

नेनं पार्थाहिसि त्रातुं ब्रह्मवंधुमिमं जिह । योसावनागसः सुप्तानवंधीन्निशि बालकान् ॥ ३४॥ मनं प्रमन्तमनं सुप्तं वालं स्त्रियं जहम् । प्रपन्नं विरणं भीतं न रिपुं हंति धर्मवित् ॥ ३६॥ स्वप्राणान्यः परप्राणोः प्रपुष्णात्यघृणः खलः । तहधस्तस्य हि श्रेयोयदोषाद्यात्यधः पुमान् ॥ ३७॥ प्रतिश्चतं च भवता पांचाल्ये शृणवतो मम । स्त्राहरिष्ये शिरस्तस्य यस्ते मानिनि पुत्रहा ॥ ३८॥

दीपिनी।

॥ ३५॥ ३८॥

#### श्रीवीरराघवः ।

तदेवाहनैनमितिपंचभिःहेपार्थइमंब्रह्मवंधुंत्रातुंजीवियतुंनैवाहिसिकिंतुजहि "वाततायिनमार्यातहेचाविचारयन्नि"तिस्मृतेरितिभावः तदेवाह योसीब्रह्मवंधुर्निशिवालकांस्तत्रापिसुप्तानवधीत् ॥ ३५ ॥

धर्मवित्पुमान्मत्तादिरूपंरिपुंनहंतिपवंतुधर्मस्थितिरित्यर्थः तत्रमत्तंमधुनाप्रमत्तमनविद्यस्य स्वित्तादिनाजडं केवलमञ्चम् ॥ ३६॥ योऽघृशाः निष्कपावानतपवस्तलोदुरात्मायः पुमान्परेषांप्राशोः स्वप्राशान्त्रपुष्शातितस्यवधस्तस्यैवश्रेयस्करः अन्यथामनस्कादकृतप्राय श्चित्तादीषात्पुमानधः नरकोपतिति ॥ ३७॥

किंच ममश्टरवतः सतोभवतापांचाल्यैद्रीपद्यैप्रतिश्चतंप्रतिकातंकिमितिहेमानिनियस्तवपुत्रहंतातस्यशिरवाहितस्यामीति॥ ३८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

हेपार्थब्रह्मबंधुंब्राह्मगाध्यममेनमश्वत्थामानंत्रातुं नीहासि किंतुयोसीनिशिरात्रौसुप्तात्वालकान्भवधीदितीमंजिहहनेत्यन्वयः अनागसः अकृतापराधान् तत्राश्वत्थास्नोवध्यत्वेथनागस्त्वं सुप्तत्वं वालकत्विमितिहतुत्रयमनादृत्य तद्धननंकारणमितिहातव्यम् "भनागसंत्रसुप्तच्यवालकं इतियो नरः सखंडशोनिशातव्यद्तयेवमनुरव्यविद्यतिस्मृतेः॥ ३५॥

रिषुगानितेहंतव्याहत्याह मलमिति मलमदादिपानेनमदांधं प्रमल्तविस्मृतिमंतम् उन्मलंग्रहमस्तं जर्डस्वतोविवेक शानशून्यं सुप्तनिद्वितं वाळंविशेषानिभक्तं स्त्रियंवाव्येताहर्णयेवाधंकेचपराधीनवृत्ति प्रपन्नश्चरागागतं विरथंरथादिसाधनराहितं विपथंयुद्धमार्गाद्पकातामितिकोचि त्रपठित्वाव्याचक्षते तद्भयचलनये।रितिधातोः भीतंचलितंयुद्धमार्गाद्पसृतमित्यनेनपुनहक्तं नचकंपितार्थत्वं पाठविरोधादतोनुपासितगुरु चरगौहत्प्रेक्षितमित्युपेक्षग्रीयम् ॥ ३६ ॥

खलइंद्रियारामः अष्टृगाः द्यारहितः तद्वधः तस्यहिसकस्यहननंश्रेयः साधु क्रुतः येषांहिसादिदोषादधोनरकंयातीतियस्मात्तस्मा विति ॥ ३७ ॥

प्रतिज्ञाचरक्षणियेत्याह प्रतिश्रुतामिति हेमानिनिमानाहे यस्तेतव पुत्रान्हतवान् तस्यशिरवाहिरण्यहतिममश्रयवतः सतः पांचाल्ये द्वीपद्यैप्रतिज्ञातंचयस्मात्तस्मादित्यन्वयः॥ ३८॥

क्रमसन्दर्भः।

॥ ३५ ॥ ३८ ॥

## सुबोधिनी।

महिमराजितः शत्रुः अवध्वात्यक्त्राक्यते रशनयावधनं ध्वजस्तंभेचेतिनीत्वाचपरोक्षमारशांचतद्भिप्रेतंतस्यशिविरेनयनमजुचित मितिमगवाचिषेधयितिशिविरायेति सर्पद्वायंनस्पृष्टव्यः स्पृष्टश्चेन्मारशियग्वअपकृतस्तुसर्वथामारशियः तत्रगतेचमरशंभविष्यतिमग-वाचिषेधयितिशिविरायेतिअतोऽत्रेवमारशियदत्यभिप्रायेशाहनीतिकार्यविचारेमारशियः धर्मविचारेवधनीयोपिनरिपुश्चगृहेननेयः वलाखन वाचिषेधयितिशिविद्यकुर्यादिति शिविरंकरकोत्तरशास्थानंभगवानितिसर्वमारकत्वंस्यचितम्अंबुजेक्षशाद्दिमक्तरक्षकत्वंस्यवितंतस्मा वयःतत्रअस्यविसुद्यमितिनोचेष्ठहुकर्तव्यमित्यभिष्यायः॥ ३४॥
दितद्विद्यस्विसुद्यमितिनोचेष्ठहुकर्तव्यमित्यभिष्यायः॥ ३४॥

देतद्वाहनेनिमिति पृथासंविधिनीभक्ताचेतितथावचनमारगोऽपि दोषाभावेहेतुद्वयमाह ब्रह्मबंघुरिति अवधीदिति पित्रादिभिरप-तदेवाहनेनिमिति पुत्रस्यवध्वानयनमुचितं न मारगां छुण्तस्यकस्यापिमारगामनुचितंनिधिचौरपवमारयातिनसाधः बालकास्तुसर्वेषामेव-कृतेअनपराधिनः पुत्रस्यवध्वानयनमुचितं न मारगां छुण्तस्यकस्यापिमारगामनुचितंनिधिचौरपवमारयातिनसाधः बालकास्तुसर्वेषामेव-

अवध्याः ॥ ३५ ॥

di,

### सुबोधिनी।

विचारेगास्यवध्यतां वक्तुं वध्यावध्यनिर्गायमाहमस्मिति शत्रवोपिदशविधाअवध्याः मसोमिदिरादिना प्रमत्तःअसावधानउन्मत्तः पिशाचादिभिः जडः स्वमावतः अयंतुदशानांनान्यतरः तस्माद्धध्यः किंच सुप्तवालयोर्वधात् अधर्मयोद्धा ॥ ३६॥

नन्वस्यभवत्वधर्मः अयंकथंवध्यः व्राह्मगादारीरस्यपुरुषार्थसाधकत्वात्तरमादस्यसर्वपुरुषार्थवधेखस्याधर्महतितत्राहखप्रागानिति यद्यंनवध्यतेतत्रकोहेतुः प्रमागानिषेधस्तुनास्ति "जिघांसंतंजिघांसीयादि"तिब्राह्मगोधर्मः प्रतिष्ठितइतियद्यवध्यः तदास्मिन्धर्मोनास्तिदय-याचेदवध्यः तदैतद्वधेबहूनांप्राणिनांजीवनंभवति अवधेत्वस्यैवकश्चनदेहादिनाउपकारोभविष्यतीतितदपिनास्ति तदाह तद्वधस्तस्य हिश्रेयइतिप्राग्णापानैजीवनंयस्यतत्रप्राग्णैःप्राग्णजीवनमुकंधर्मेतुयुक्तम्उभयतारकत्वात्अवश्यमेकस्यवाह्यग्रस्यसंक्षयेस्वस्यैवयुक्तःधर्मात् दुष्टशरीरेगतेशरीरांतरेगाधमीं अवतीतिपूर्वजीवनस्याधमैंकसाधनत्वात्॥ ३७॥

किंच । महतांप्रतिज्ञापालनं महान्धर्मः त्वयाचप्रतिज्ञातिमत्याहप्रतिश्रुतिमति अर्थतोयमनुवादः आहरिप्यइति ॥ ३८॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ती ।

मत्तं मद्यादिना । प्रमत्तमनवाहितम् । उन्मत्तं ग्रहवातादिना ॥ ३६॥ मरा मधाप्या । तथा च स्मरंति—"राजिभिष्टृतदण्डाश्च कृत्वा पापानि भानवाः ! विधूतकल्मषा यांति खर्ग सुकृ-तिनो यथे" ति । अन्यथा यद्यतो दोषात् ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३८ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

सत्तंमद्यादिना । प्रमत्तंधनादिना । उन्मतंत्रहादिना । जडंपूर्वबुद्धिकापराधवार्जितम् । तत्रद्रौिगाः सुप्तदनः॥ ३५ ॥ ३६ ॥ तद्वधस्तस्यैवश्रेयः । तथाचस्मृतिः । "राजभिष्टृतदग्डास्तुकृतपापानिमानवाः । विधूतकलमषायांतिस्वर्गसुकृतिनोयथे"ति । यद्यतः राजदगडादिप्रायश्चित्तरहिताद्दोपादघोनरकम् ॥ ३७॥ - पांचाल्येद्रौपद्ये ॥ ३८ ॥

## भाषादीका ।

हे पार्थ इसकी रक्षा नहीं करनी चाहिये उस ब्रह्मबंधु को दमन करना चाहिये। जिसने निरंपराध सोते हुये वालकों को रात्रि में ए ह ॥ ३५ ॥ मत्त ( मद्य पान किये को ) प्रमत्त ( असावधान को ) उन्मत्त ( ग्रह वातादि पीडित को ) सुप्त ( सोये हुए को ) बालक स्त्री जड मारा है॥ ३५॥

शर्गागत और विरथ शत्रु को भी कोई धर्मक नहीं मारता है॥ ३६॥

ग्णागत आर बरथ रात्रु का मा कार जारा पुष्ट करता है उसका बध करना उसही का श्रेय है। अन्यथा वह उस दोष से जो निर्दय खल पुरुष पराये प्राम्मों से अपने प्राम्म पुष्ट करता है उसका बध करना उसही का श्रेय है। अन्यथा वह उस दोष से मिति पाता है ॥ ३७ ॥ और मेरे सुनते तैंने पांचाली से प्रतिज्ञा की थी कि ( हे मानिनि ) जिसने तेरे पुत्रों का बध किया है मैं उसका शिर काट लाऊं-अधोगति पाता है ॥ ३७ ॥

गा ॥ ३८ ॥

### श्रीधरस्वामी ।

यद्यपिचोदितः तथापिंहंतुंनैच्छत् आत्महनंपुत्रहंतारमपि यतोमहान् ॥ ४०॥ गोविन्दः प्रियः सार्थश्चयस्यसः आत्म्रजान्शोचंत्यै॥ ४१॥ गाविन्दः । प्रयः साराथश्चयस्यसः आत्मभार्यः तथापरिभवेनात्हतमानीतं कर्मग्रोजुगुिद्सितेनद्वेषेग्णावाङ्मुखम् अपकृतमपकारिग्रांकृपयानिरीक्ष्य बामःशोभनः स्वभावीयस्याःसा ४२

॥ રૂર્ ॥ કર્ ॥

## श्रीबीरराघवः।

तत्रयस्माद्सीपापात्माआतताय्यात्मनस्तवबंधुहाकुमारघातीहेत्रीरमर्तुर्धृतराष्ट्रस्यविप्रियमिदंकमैकृतवान्कुलपांसनः कुलदूषकश्चाती~ त्ताम् ॥ २८ ॥ इत्थंधमैपरीक्षताधर्मपरीक्षार्थं मेवंकृतवताकृष्योनचोदितोऽपिपार्थोऽर्जुन आत्मजद्दनमपितुत्तद्दनमपितं गुरुसुतंद्रौर्शिदंतुंनैष्छत् यतोऽर्जुनो व्याहकतोपकाराभिन्नः॥ ४०॥

तदसौ वध्यतां पाप त्रातताय्यात्मवंधुहा ।
भर्तुश्च विप्रियं वीर कृतवान् कुलपांसनः ॥ ३६ ॥
एवं परीक्षता धर्म पार्थः कृष्णोन चोदितः ।
नैक्छद्वंतुं गुरुसुतं यद्यप्यात्महनमहान् ॥ ४० ॥
त्र्र्णोपेत्य स्विशिविरं गोविंदप्रियसारिषः ।
निवेदयनं प्रियाय शोचंत्ये त्रात्मजान् हतान् ॥ ४१ ॥
तथाहतं पशुवत्पाशवद्यमवाङ्मुखंकर्मजुगुप्सितेन ।
निरीक्ष्य कृष्णाऽपकृतं गुरोः सुतं वामस्वभावा कृपया ननाम च ॥ ४२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

ततोगोविदःप्रियः सारिधश्चयस्यसोऽर्जुनः खशिविरमागत्यहतानात्मजान्प्रतिशौचंत्यैप्रियायैद्रौपद्यैतंद्रौगिंग्न्यवेदयत् ॥ ४१ ॥ तथाहृतमानीतंपशुनातुरुयंपशुवत्पाशेन वद्धंपशुर्यथापाशेनवध्यतेतद्वद्धदंकमेगाः खक्तस्यज्ञगुष्सितेनज्ञगुष्साशब्दात्खार्थं सम्नताद्भा वेक्तः निद्याहेतुनाअवाङ्मुखमपकृतमपकारिगामर्जुनेनापकृतंवा गुरोः स्नतमश्वत्थामानंनिरीक्ष्यदृष्ट्वाद्रौपदीवामस्वभावाहेतुगर्भमिदंसुस्व भावत्वान्ननाम ॥ ४२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

"आत्मवंधुःस्रुतस्तोकःषुत्रोंगजउदाहृत" इत्यभिधानादात्मवंधून्स्रुतान्द्दतवानित्यन्वयः तस्मादसौपापः विप्रियंतुलोकदृष्ट्योति

क्षातव्यम ॥ ३९ ॥
हिरिणाऽर्जुनंप्रतिद्रौणिवधप्रतिपादनमर्जुनस्यधमेपरीक्षणाभिप्रायमेवनतुवधाभिप्रायमिति कथनपूर्वकमर्जुनस्यभक्त्वतिशयंकथयित हिरिणाऽर्जुनंप्रतिद्रौणिवधप्रतिपादनमर्जुनस्यधमेपरीक्षणाभिप्रायमेवनतुवधाभिप्रायमिति कथनपूर्वकमर्जुनस्यभक्त्वतिशयंकथयित प्रवामिति पार्थः गुरुसुतंहतुंनैच्छदित्यन्वयः कथंभूतः यद्यप्येवंधमेपरीक्षताकृष्णोनचोदितः तथापिनैच्छत् कथंभूतम् आत्मानहतवंतं अयम पिकश्चिद्धेतुः पुनरिपकथंभूतः महानुमहापुरुषः महत्त्वाक्षेच्छदितिभावः ॥ ४० ॥

काष्ट्रपुष्ट अपनिष्ट प्रयश्चसार्थिश्चयस्यसतथोकः सपार्थः खशिविरमुपेत्यद्गौणि नाहतानात्मजान्पुत्रान् प्रतिशोचत्यैप्रियायद्भौपद्यैतंन्य

वेदयदित्येकान्वयः ॥ ४१ ॥ वेदयदित्येकान्वयः ॥ ४१ ॥ वामस्वभावामृदुस्वभावा चारुतरशीलेतियावत् कृष्णा तथाहृतं तदेवाह् पशुत्वात्पाशेनबद्धंकर्मेजुगुप्सितेनकर्मेणालज्जयावाङ्मुखं अपकृतंपुत्रहत्ययाऽपकर्तारमपिगुरोः सुतंनिरीक्ष्यकृपयाननामेत्येकान्वयः ॥ ४२ ॥

## क्रमसन्दर्भः।

अपकृतमिति किवन्तम् ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

## सुवोधिनी।

तस्मात्सर्वथाअयंवध्यद्युपसंहरतितद्सावितिआत्मनः पुत्रान्तद्वंधूंश्चहंतीतिस्वामिहिताचरगामिपनजातिमित्याहभर्तुश्चेतिवंशोविद्य-

मानेतस्याप्युपकारोभवेतकुलद्वयकलंकजननाञ्चतस्माद्स्यवधेकस्यापिनापकारः ॥ ३९ ॥
तत्रैतानिवचनानिधमेपरीक्षकानीतिसृतज्ञानातस्तआहणविमितिवस्तुतस्तुवंधनमेवायुक्तंधमेपरितर्धक्षितावार्धश्वरवचनोल्लंधनाभावायवाथजीवेनतथाज्ञातमितितदुक्तं "कामतोवाह्यणवधेनिष्कृतिनिविधीयते"इतितुधमेः त्रयोद्यत्रसंतिभगवानज्ञनअश्वत्थामाचेतित्रिष्वप्येकैकोवध्यहेतु
रस्तिपरीक्षाभगवितमहत्त्वमर्जुनेशिष्टेगुरुपुत्रत्वमिति ॥ ४० ॥

रस्तिपराक्षामगवातम् व पान्य पान्य पान्य पान्य । उ ॥ प्रकारांतरेण्यां नेर्गृहेसमागमनमाहअधेतिकार्यसिखीहेतुपदंगोविदोतिउपसंहारेष्युक्तमअयंतुराञ्चहस्तेपतितोमृतगवदेहस्तुवाणस्थानीयः प्रकारांतरेण्यानेर्गृहेसमागमनमाहअधेतिकार्यसिखीहेतुपदंगोविदोतिउपसंहारेष्युक्तमअयंतुराञ्चहत्तित्वेद्वनाणस्थानीयः प्रमेशानिमितिशोचंत्याहत्युक्तंभार्योहितार्थेतुमारणंतत्त्वात्संदेहाद्त्रे प्रातिशातंतुर्शिरः समानीतिमितिन्यवेदनाभिष्यमः॥ ४०॥

वसमानीतः आज्ञायांमारणियद्दातानवद्नाभिप्रायः॥ ४१॥ वसमानीतः आज्ञायांमारणियद्दातानवद्नाभिप्रायः॥ ४१॥ तस्यास्तुतथाहरणमेवअनभिप्रेतंदूरेमारणामित्याह तथादूतमितिकमीणिजुगुप्सितंयुद्धेवालकमारणांतेनमुखाप्रदर्शनाद्वाङ्मुखत्वंकृ तस्यास्त्रीपदीवामोमनोहरः स्वभावोयस्याः सर्वहितभावनात्महत्त्वबुद्ध्यानमनाभावेऽपिअहोकष्टंबाह्मगयमेतादशेस्थानेपतितामितिकप्रयाननाम -द्याद्रिपदीवामोमनोहरः स्वभावोयस्याः सर्वहितभावनात्मस्त्रतथात्वम्॥ ४२॥ तस्यापितदः सदूरीकरणोच्छाकृपाआश्वासनहेत्त्वान्मनस्यतथात्वम्॥ ४२॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

धर्मी परीक्षमाणेन यद्यपि चोदितः तदपि हंतुं नैच्छत् । आत्महनं पुत्रहंतारमपि । यतो महान् कृष्णस्य स्वभावाभिक्षः । तस्य चायं स्वभावः स्वयं सर्व्वकोऽपि धर्मादिनिष्ठाख्यापनाय तष्ठतो भक्तान् परीक्षते हति । तत्र नैनं पार्थाहंसि त्रातुमित्यादिना रौद्र-रसं प्रदर्श्य धर्मावन्तमर्ज्जुनं यथा परीक्षते स्म तथा भर्त्तुः शुश्रूषणं स्त्रीणां परो धर्मा हत्यादिना भवतानां वियोगो मे न हि सर्व्वात्मना इत्यादिना अहं हि सर्व्वभूतानामादिरन्तोऽन्तरं विहिरित्यादिना च कर्माक्षानयोगी प्रदर्श्य प्रेमवतीगोपीः । वरञ्च मत् कञ्चन मानवेन्द्र वृण्णीष्वत्यादिना वरं वृण्णीष्व भद्रं ते कामपूरोऽस्म्यहमित्यादिना च भोगेश्वर्थादिन् प्रदर्श्यक्तिमतः पृश्रुप्रव्हादादीन् दी यमानं न गृह्णान्तीत्यादिना अन्यानपि भक्तान् परीक्षाञ्चकारैवेति । तदीयसिद्धभक्ता अपि तथा परीक्षन्ते । तथाहि शुक एव षष्ठस्कन्धे पाप निस्तारार्थे पृष्टः प्रायश्चित्तमात्रमुक्त्वा परीक्षितः सिद्धांताभिक्षतां नवमे श्रीकृष्णालीलां संक्षेपेणोक्त्वा लीलीत्रसुक्यं द्वादशे ब्रह्मक्षान मुपिक्षित्य भक्तिनिष्ठां परीक्षां चक्रे इति । न तत्र तत्र स्पष्टेऽर्थे तात्पर्थम् ॥ ४० ॥

न्यवेद्यत् अयं ते पुत्रहन्ता आनीत इत्युक्तवान् ॥ ४१ ॥

तथा तेन प्रकारेण आहृतम् आनीतम् कर्म्मजुगुप्सितेन कर्म्मणो जुगुप्सया। अपकृतमिति किवन्तम् अपकारिणम्। कृपया निरीक्ष्य। वामः शोभनः। ननाम च उवाच चेति चकाराक्ष्यां संग्रमः सूचितः। सती तद्वन्धनासहत्वादियं भगवता धार्मिकत्वे परीक्षितादर्ज्जुनादिप साधुत्ववतीत्यर्थः॥ ४२॥ ४३॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

मर्तुः सुयोधनस्यराज्यांसुप्तान्हत्वाताच्छिरइशतशः पातनेनाप्रियंकृतवान् । आत्मनस्तववंधुहा ॥ ३९ ॥ आत्महनंपुत्रव्नम् ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥

तथावज्ञापूर्वेकमाहृतमानीतम् सुप्तवधरूपकर्मजनितद्येषेगावाङ्मुखमपकृतमर्जुनेनावमानितम् वामः सुशोमनः स्वभावोषस्याःसा ।४२

### भाषादीका.

इससे इस पापी का वध कर यह आतताई है इसने हमारे वंधुओं का वध किया है। और इस कुल पांसन ने अपने खामा दुर्योध-न का भी प्रिय नहीं किया है ॥ ३९ ॥

इस भांत धर्म की परीक्षा करने की कृष्ण ने अर्जुन से बहुत कहा किन्तु अर्जुन ने गुरुपुत्र के मारने की इच्छा न की सद्यपि उस ने अपने पुत्र मारे हैं, तथापि अर्जुन की उसके मारने की इच्छा न हुई क्योंकि अर्जुन महा पुरुष था ॥ ४० ॥

्राोबिन्द प्रिय सार थी अर्जुन अपने शिविर मैं आकर उन पुत्रें। को सोचती द्वौपदी के संमुख उस अपराधी को निवेदन किया॥४१॥

खें परा भव से लाया गया, पशू के समान पाश बद्ध, जुगुप्सित कर्म से अवाङ्मुख और अपकृत गुरुसुत को देखकर वाम खमावा कृष्णा (द्वीपदी) ने प्रणाम किया और बडे संभ्रम से कृपायुक्त होकर बोली ॥ ४२ ॥

### श्रीधरस्वामी

ननामचउवाचचेतिचकाराभ्यांसंभ्रमः सूचितः वंधनानयनमसहमाना॥ ४३॥

सरहस्यः गोप्यमंत्रसहितः बिसर्गः अस्त्रप्रयोगः उपसंहारः ताश्यांसहितोऽस्त्रसमृहश्च ॥ ४४ ॥

किश्च तस्य द्रोगास्यात्मनो देहस्यार्स कृपी आस्ते । "अधत्वे हेतुः पत्नी । अधीं वा एष आत्मनो यत् पत्नी" इति श्रुतेः जाया-पती अग्निमाद्धीयातामित्यादि श्रुतेः उभयोरेककारकत्वावगमाच । ननु भर्त्तरि मृते कथं सा जीवति तत्राह । नान्वगात् भर्त्तारम् यतो वीरस्ः पुत्रवती ॥ ४५॥

तत् तस्मात् गीरवं गुराः कुलं मवाद्भः कर्नृभिवृजिनं दुःखं प्राप्तुं नाहिति किन्तु पूज्यं वंदाश्च ॥ ४६॥

टीपंसी ।

产于60 计二种技术经历的解析模型的重要不多位的表示100

उवाच चासहंत्यस्य बंधनानयनं सती । मुच्यतां मुच्यतामेष ब्राह्मणो नितरां गुरुः ॥ ४३ ॥ सरहस्यो धनुर्वेदः सविसर्गोपसंयमः। त्रस्रयामश्च भवता शिक्षितो यदनुप्रहात् ॥ ४४ ॥ सएव भगवान्द्रोगाः प्रजारूपेगा वर्तते । तस्यात्मनोर्द्धपत्न्यास्ते नान्वगाद्वीरसूः कृपी ॥ १५ ॥ तद्धमंत्र महाभाग भवद्भिगीरवं कुलम् । वृजिनं नाहीते प्राप्तुं गूज्यं वंद्यमभीक्षाशः॥ ४६॥

### श्रोवीरराघवः ।

अस्यगुरुसुतस्यवंश्वनेनानयनंवंश्वनपूर्वकमानयनं वंश्वनमानयनंचवा अस्यार्ज्जनस्यार्ज्जनकर्नृवंश्वनानयनमितिवा असहतीसतीद्रीपदी उवाच उक्तिभवाह मुच्यतामित्यादिमः सार्द्धःपचांभः एपद्रागामुच्यतांमुच्यतांत्वरयाद्विरुक्तिः मोचनीयत्वेहेतुंदर्शयंतीविशिनाष्टेत्राह्मण स्तत्रापिगुरुः ॥ ४३ ॥

नह्यंत्रगुरुरित्वस्यायंपितेत्यतथाह सरहस्यइति भवतायस्यानुग्रहाद्रहस्येनसिहतो धनुर्वेदः सविसर्गोपसंयमः सहितास्त्रग्रामः अस्त्रसमुदायश्चाशिक्षतः ॥ ४४ ॥

सभगवान्द्रोगाप्यैषप्रजारूपणवर्नते एतण्छन्दोद्रोगास्यैवाकारांतरेगावस्थितिपरामर्शकः"आत्मावैषुत्रद्दति"श्रुतारितिभावः पुत्रविषयाप कारेशापितवापितवापितवापितवादः ननुसस्यातः इत्यवाह तस्यातितस्यद्वांशास्यातमनः शरीरस्याद्धेमद्वीशक्षपातत्पत्नोक्वपीवोरसः पुतव त्यास्तेनान्वगान्नानुसामरगांकृतवती अर्द्धमितिसमांशाभिप्रायेगानपुंसकानरेशः "अर्द्धोवापषआत्मनोयत्पत्नी"तिश्रुत्यभिप्रायेगार्द्धमित्युक्तं द्रे। गास्यस्वर्गतत्वे अपतद दे शरीर भूतातत्पत्न्यपिक येते वेतिभावः ॥ ४५ ॥

तत्त्रसात्रहेथमंश्रमदुक्तथर्माभिश्च हेमहाभागगुर्वेपमानराहित्यरूपमहाभाग्ययुक्तभवद्गिगुर्रेरुगांयहुमंतृभिगोरवंकुलंगुरोः संवंधिकुलंगुजि नंदुःखंप्राप्तुंप्रापयितुं भवद्भिर्हेतुभिर्वृजिनप्राप्तुांमतिवानार्हातिकित्वभीक्ष्णशः पौनःपुन्येनपूज्यंवदनीयंचभवद्भिरित्यतुषंगः॥ ४६॥

### श्रीविजयध्वजः।

अस्यद्रौरोविधनेनानयनमसहमानासती प्रशस्तसौरील्यादिगुग्वती उवाचंति नकेवलनत्वात् प्राामभूरिकतुवचनं चोवाचेत्याह ब्राह्मग्रुप्ववगानांगुरुः अयचनितरांयुष्माकंगुरुः ॥ ४३ ॥

अतिशयितगुरुत्वमाह सरहस्येति सरहस्यः सकीलकः धनुर्वेदः सविसर्गोपसंयमः प्रयोगोपसंहारसहितः अख्यप्रामः ब्रह्माचस्त्र समृहः यस्यद्रोगास्यानुत्रहात् भवताशिक्षितः अभ्यस्तः ॥ ४४ ॥

सएषद्री गोभगवान्प्रजारू पेशा "आत्मावैषुत्रनामासी" दितिश्रुतेः पुत्ररूपेशावर्तते यतीगुरुपुत्रस्यगुरुवत्पूजाई त्वादितिभावः फितुअन्यो पिहतुरस्तीत्याह तस्येति तस्यद्वागास्यात्मनः शारीरस्याईम्अर्थीगीसतीवीरस्ः वीरपुत्रवतीकृपीसंप्रत्यास्तेपतिनान्वगात् अनुगमननकृत वतीयतो ऽतागुरुपत्नीभस्याचमुच्यतामितिभावः॥ ४५॥

नकेवलंगुरुभक्तिरेवात्रहेतुः अन्योप्यस्तीत्याह तदिति गुरौगुरुपुत्रेषुवाचारनमनलक्ष्याोयोधर्मः तंजानातीतिधर्मज्ञः हेधमेन्न भगानां भाग्यानांसमुद्यायाभागः महान्भागायस्यसत्थातस्यसंबुद्धिमहाभाग अभ्वत्थास्रोदुः खेसतितस्मातुरिपदुः खंस्यात्तेनतत्कोपेनास्मत्कुलस्या माण्यापारवित्रियस्मात्त्रस्यादभीष्याद्याः संयदासर्वैः पूज्यवंद्यगारवंकुलं भवाद्वित्रीतंपापतित्रिमित्तंदुःखवाप्राप्तुंनाहेतियोग्यंनभवति ॥४६॥

## खुबोधिनी।

वहिदुः खदूरीकर्गा थमुवाचचअसहंतीपरदुः खंद्रष्ट्राख्यमपि दुःखिता देहधमीद्धमीमहानितितस्याः कृपाधिक्यमुक्तं सतीतिधमे वार्य अर्थायम्य विश्व विष्य विश्व विष्व विश्व व स्वमावत्व । । । विश्व विभाव विश्व विष्य विश्व व एवद्राक्षण र निर्मास्त्र विकास क्षेत्र क्षेत् भगवन्मुखस्यात्यंतगुरुत्वाश्वितरांगुरुः ॥ ५३॥

### सुबोधिनी।

न्यायविरोधे धर्मोद्रबेलइति तदावरोधं वदन्तीलौकिकन्यायेनापिगुरुत्वमाहसरहस्यइति रहसिभवोरहस्योमंत्रः विसर्गः अस्त्राणांमो-चनप्रकारः उपसंयमः उपसंहारः पुत्रादिष्विपतथाअवचनात् अस्त्रप्रामश्चब्रह्मास्त्रादयः नह्यतत् पाठमात्रेगास्फुरातिकितुक्रपयेति तदाह यद्नुत्रहादिति ॥ ४४ ॥

सद्वागोनायमित्यत आहसएपहातितस्यैतदूपत्वेहत्वंतरमाह भगवानितिब्रह्मविदोहिस्वेच्छयादेहत्यागः तत्रभवतामुपकारायदेहत्यागदशा यांहतंपुत्रश्रुत्वातन्माभूदितितदूपेशौवाहंजीविष्यामीतिपितृशरीरं त्यक्तवान् अतः सपवायद्रागाः "आत्मावेपुत्रनामासी"तिश्रुतेः प्रजारूपेशा वःनिवृत्तिधर्माविरोधीचधर्मोनयुक्तइति करुणामाहतस्यात्मनोद्धीर्मति सूलरूपेण्यात्मनोद्धीपत्न्यास्तेपुत्ररूपेण भक्तीजीवतीतिपुत्रवतीनां नहिगमनंततः पुत्रवधेतस्याअतः तस्याः कृपीतिनामव्यलीकंकापट्यंतद्पिधर्मेवाधकं तस्मादस्यमाचनंनिव्यलीकामिति॥ ४५॥

तदाह तद्धमंत्रेतियदिकेनापिप्रकारेणगुरुकुलेदुः खप्रापणं तदाकृतागुरुसेवालक्षणोधमः सकपटाभवति तथा धमें कापटवजा-नम्नपियस्तथाकरोतिसनधर्मकः त्वंतुतद्धर्मकः अतोहंधर्मक किंच महाभाग्यनगुरूणांसेवाकरणसामध्यंभवति तज्जातेपिसामध्येयदि सवांनकुर्यात्तदामहद्भाग्यंत्वंतुतद्विपरीतइति महाभागः किंचअन्यैगुरुकुलेर्नुजिनेप्राप्तं भर्वाद्धस्तत्त्रंदुरीकर्त्तव्यंतत्रतद्विपरीतंददयतेभवद्भिरे-वगौरवंकुलंबृजिनप्राप्नोतितन्नयुक्तं तत्त्रथानाहितितत्रहेतुः पूज्यंवंद्यीमितिस्वथामहद्भिगौरवंकुलंपूजामेवाहितितत्प्रसादादेवमहत्त्वस्यजात-त्वात् किच अनम्रतयापूजामिपनाहैतिकितुसर्वदानमनमध्यहैतीत्यर्थः किंच धर्मेज्ञानाभावीपिवाधकः "यदेवविद्ययाकरोती"तिश्रुतेः ततः स्वस्मिश्रवास्मिश्रापयः सुखदुः खसमेपश्यतितत्कृतोधमः अन्यस्तु विषयधियारिचतायश्तिवाक्यात् अधमेप्रायः॥ ४६॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

सरहस्यः गोप्यमंत्रसहितः विसर्गोपसंहाराज्यां सहित इति यदि ब्रह्मास्त्रस्य विसर्गोपसंयमावेतत्रिपतुः सकाशाश्राह्मस्यस्तदा क्योंममं वध्वा त्वमानेष्य इत्यक्तज्ञता ध्वनिता ॥ ४४ ॥

प्रजारूपेगा आत्मा वे जायते पुत्र इति न्यायेन । आत्मनो देहस्याई रूपी पत्नी "अर्द्धो वा एष आत्मा यत् पत्नी"ति श्रुक्तः । अतएक भर्त्तारं नान्वगात् यतो वीरसुः ॥ ४५ ॥

गौरवं गुरोः सम्बंधि कुलं कर्नृ भवद्भिः करगौः वृजिनं दुःखं प्राप्तुं नाहिति यतः पूज्यमिति ॥ ४६॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

वंधनपूर्वकमानयनमसहंती ॥ ४३॥

😚 'सरहस्यः संगुह्यमंत्रः सविसर्गोपसंयमः सप्रयोगोपसंहारः॥ ४४॥ सभगवान्द्रोगाः एषः प्रजारूपेगावर्तते "आत्मावैपुत्रानामासी" तिश्चतेः तस्यद्रोगास्य आत्मनोर्छशरीरस्यार्छपत्नीकृपीआस्ते । "एष

आत्मनोयत्पत्नी"तिश्रुतेः नान्वगाद्धर्तारम् । यतोवीरस्ः पुत्रवती ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

## भाषाटीका 1

इसके बंधन पूर्वक ले आने को नहीं सहकर सती ( द्रीपदी ) बोली। इसे छोडदो छोडदो ! ब्राह्मगा है विशेषतः गुरू !॥ ४३॥ ं रहस्य सहित घनुर्वेद शस्त्रों के बिसर्ग और संयम अस्त्रग्राम आपने जिसके अनुग्रह से सीखा है ॥ ४४ ॥

वहीं भगवान द्रोगा यह पुत्र रूप से वर्तमान है इसीसे उनकी अर्द्धीगी पत्नी रूपी भी उनके अनुगत नहीं हुई है क्योंकि वह चीर माता है ॥ ४५ ॥

ह धर्मक्ष ! हे महाभाग ! आपसे गुरुकुल दुख प्राप्त होने को योग्य नहीं है क्योंकि गुरुकुल की निरंतर पूजन और बंदना करना चाहिये॥ ४६॥

## श्रीधरस्वामी 🏴

मृतवरता रूपअग्र विपक्षे दोषमाह यैरिति। तेषा राजन्याना कुंहं कर्मा। कथंभूते सानुवंधं सपरिवारे शुचा शोकनापितं व्याप्तक्ष । व्याकुरुं कर्तृ प्रद्हिति॥ ४८॥

मारोदीदस्य जननी गौतमी पतिदेवता । यथाहं मृतवत्सार्ता रोदिम्यश्रुमुखी मुहः॥ ४७॥ यैः कोपितं ब्रह्मकुलं राजन्यैराजितात्मभिः। तत्कुलं प्रदहत्याशुसानुबंधं शुचार्पितम् ॥ ४८॥ धर्म्यं न्याय्यंसकरुगांनिव्यं लोकं समं महत् । राजा धर्म्मसुतोराङ्याः प्रत्यनंदद्वचो द्विजाः ॥ ४६ ॥ नकुलः सहदेवश्च युयुघानोधनंजयः। भगवान् देवकोपुत्रोयेचान्ये याश्वयोषितः ॥ ५० ॥

सूतउवाचे ॥

#### श्रीधरस्वामी

अस्योमत्यादयो वचसः षड्गुगाः पूर्व्वक्लोकषट्के द्रष्टव्याः। तत्र धम्मर्थे धम्मीदनपेतं मुच्यतां मुच्यतामिति । न्याय्यं न्याया-दनपतं सरहस्य इत्यादि । सकरुगां तस्यात्मनाऽद्धं पत्नीति । निर्वेलीकं तद्धम्मेक्षति । सम मा रोदी दिति दुःखसाम्योकः । सहत् येः कंापितमिति निष्ठुरास्त्रा हितापदेशात्। एवम्भूतं राष्ट्रया वचः हे द्विजाः प्रत्यनन्दत् अनुमोदितवान् ॥ ४९ ॥ नकुलादयश्च प्रत्यनन्दन् । युयुधानः सात्याकिः॥ ५०॥

# दीपनी ।

कुलं कम्मेंति । कुलमिति पराईऋोकोक्तपदं कम्मे द्वितीयैकवचनं कम्मेपदमित्यर्थः॥ ४८॥ धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते (पा व्या ४।४।९२) इति सूत्रेगा धर्माशब्दात् अनपेतिमत्यर्थे यत्प्रत्ययोऽवगन्तव्यः॥४९॥ (भगवान् देवकीपुत्र इति । सर्वेषां सत्त्वपरीक्षार्थे प्रथमं किश्चित्रांक्त्वा पश्चादनुमोदितवान् । भगवान् दुर्शेयाभिप्रायः प्रथम-मर्ज्जुनस्य तद्वधाय प्रवर्त्तनात् पश्चाद्द्रीपदीवचनानुमोदनाच्च । इति व्याख्यालेदाः ॥ ५०-५६ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

एतद्विषयात्कत्यात्कपीनितरामहामि वदुःखिता स्यात्तत्तवानुचितमित्यभिप्रायेगाह मृतावत्साः पुत्रायस्याः साऽतपवार्ताहं मुहुर्मुहुरश्रुमु खीयथारोदिमितथास्य ब्राह्मग्रस्यजननीपतिरेवदेवतायस्याः सागौतमीगीतमस्यदुहिताकृपीमारोदीत् ॥ ४७॥

किचेदंकमीस्मत्कुलस्याप्यनर्थकारीत्याहयौरिति अजितात्मभिरजितः क्राधपरवशआत्मामनोयेषांतैर्येशाजन्यैर्वहाकुलं विप्रकुलं कोपितं कोपविषयीकृतमत्पव शुचाशोकेनापितंप्रापितंदुःखितंसदित्यर्थः तेषांराजन्यानांकुलंसानुवंधमनुवंधसहितमादहति अत्रप्रदहनिकयाकर्तृ

ब्रह्मकुलंकर्मतुराजन्यकुलम् ॥ ४८॥ चुल्यामञ्जासम्बद्धाः । उत्तरः । विषयः व हेद्विजाद्दर्थंधर्म्यंधर्मोद्नपेतंन्याय्यंन्यायात्रीतेरनपेतं सकरुगांकरुगायुक्तं निर्व्यक्षीकमनृताप्रियरहितं सममविषममनुरूपंमहदारायगं

भीरंचराइयाद्रौपद्यावचोनिशम्यधर्मसुतो युधिष्ठिरः प्रत्यनंदत्॥ ४९॥ तथानकुलादयः येचान्येतद्वयितिरिक्ताः पुरुषायाश्चित्र्यः सर्वेतेप्रत्यनंदिन्नितिवचनविपरिगामेन पूर्वेगान्वयः॥ ५०॥

# श्रीविजयध्वजः।

यथाअश्रुमुखीमृतवत्सामृतपुत्रा अतपवाचीहमुहुरनिशंरोदिमि तथापितरेवदेवतायस्याः सातथागीतमीकृपी अस्याश्वत्थास्रोजननी मातामारोदीदित्येकान्वयः तस्माद्समत्कुलहितायवामुच्यताम् अयंगुरुपुत्रइत्यर्थः॥ ४७॥

विपक्षेवाधकमाह यैरिति अकृतात्मभिरिशक्षितबुद्धिभिर्यैराजन्यैर्वाह्मगाकुलेकोपितंतत्कुपितंशुचार्पेतंप्राप्तशोकं सातुवंधसमूलभूतं

तेषां शक्षांकुलंतत्क्ष्यामेवप्रदह्तीत्यन्वयः॥ ४८॥ दाक्षा कुळ्या स्वास्त्र । प्रतिवास विदेश स्वास विदेश के समिश क्षेत्र में विदेश स्वास के अधितोमहत् ॥ ४९ ॥ विदेश के समिश के समित्र के समि धम्यवनार् । अपतामहत् ॥ अपत

### क्रमसन्दर्भः।

यैरिति । शुचा शोकेन अर्पतं खस्मिन् प्रापितं व्याप्तमित्यर्थः । यद्वा शुचा शुक् तस्यामपितं निमक्कितं तया व्याप्तमि त्यर्थः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥

### सुवोधिनी।

ततएकपुत्रमरगोनस्दतांप्राागिनांयथान्योविनस्येत्तद्वदिदमित्याहमारोदीदिति तदःखेनाहमतिदुः खिताअतएवमारोदीदितिप्रार्थना गीतमीतिऋषिवंशाद्भवत्वात्तद्रोदनमहाननर्थद्रतिस्चितंस्वरूपतोपिसामहती तदाह पतिद्वतेतिपतिव्रतायानयनजलंभूमीपतेश्वत्तदा-निर्वीयीभूमिभवतीतियथा ननुपातिव्रवासर्वतस्वद्याअतोनरोदनंकारिष्यतीतितत्राह यथाहिमिति विषयएताहशोनतस्वद्यानंनानवर्कतह-त्यर्थः ॥ ४७ ॥

यथावहेर्दाहकत्वेज्ञातोपिदाहेवेदनाभवत्येवेतिभावः धर्मस्तुईश्वराविरोधीभवतितत्रधर्मप्रवर्तकत्वात् ब्राह्मणाईश्वरापवतचेदन्यैः क्ष- 📆 त्रियादिभिः कोपयुक्तः क्रियंततदाअन्येषांकुळंसानुवंधांधनश्यतीतिमहतामुपदेशात् महद्वाक्याविरोधेनचधर्मः कर्त्तव्यर्शत तस्माच्छोच्र मुच्यतामितिासिद्धम् ॥ ४८ ॥

सुतस्तुद्रीपदीवाक्यम नूद्यसर्वसंमत्यातथितिस्थापयितधर्मयिमितिद्वाभ्यांधर्मादनपेतंधर्मयम्पदंन्याय्यंनिव्यंलीकंनिः कपटंसमसमबुद्धाः कंमहद्राजवदुक्तम् एवंचाक्येषङ्गुगाः तत्रतत्रेषनियताः प्रथमतोराक्षोऽभिनंदनेहेतुः धर्मपुत्रइति इयमिपतद्भायेतितदाहअत्रसंमत्यर्थेद्विजाइ तिसंवे।धनम् ॥ ४९ ॥

नकुलः सहदेवश्चेतिचकाराचथायुयुधानः सात्यिकः अर्जुनशिष्यः अर्जुनश्चगुरुशिष्ययोरेकत्रसंमतिकथनतथेवधर्मनिर्गायइतिष्याप् नार्थमगवतोत्राभिनंदनंभक्तक्षपया तदाहदेवकीनंदनइति दंवकीनंदनपदं भक्तवद्यताज्ञापनार्थ सर्वजनीनोथेधर्मइतिख्याप्यितुंसर्वस्त्रीपुरुषा गांसंमतीमत्याहयेचान्यहीतयोषित्पदमपिमृदृत्वज्ञापनार्थम् अतोनपुनरुक्तिः धर्मोद्विविधः तत्त्वसहितः प्रमागासहितश्चेतितत्रप्रामागिकाः व्यवहारे तत्त्वसहितं धर्मनमन्यते तत्र प्रमाशामृलमासन्यः सूत्रात्मकत्वात् अतः सूत्रभूतवाय्ववतारोशीमः॥ ५०॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

मा रोदाद मा रोदितु॥ ४७॥

John Same

144

सानुबन्धं सपरिवारं शुचायामर्पितं शोकव्याप्तं तत्कुलं कम्मे प्रश्हित ब्रह्मकुलमेव कर्त्तृ ॥ ४८॥

धर्म्यामित्याद्यां वचसः षड्गुणाः पूर्वेदलोकषट्के द्रष्टब्याः। तत्र धर्म्यं धर्माद्नपेत मुच्यतां मुच्यतामिति। न्याय्यं न्याया-द्नेप्रतं सरहस्य इत्यादि । सकरुणं तस्यातमनोऽर्द्धमिति । निर्व्यलीकं तद्धम्मेश्चेति । समं मा रोदीदिति दुःखसाम्योक्तः । महत् यैः कोपितमिति निष्ठ्रोक्त्या हितापदेशात्॥ ४९॥

नकुलाद्यश्च प्रत्यनन्दन् । युयुधानः सात्यिकः ॥ ५० ॥ ५१ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

ब्रह्मकुलंकर्तृतत्कुलंराजन्यकुलंदहाति ॥ ४८ ॥

हेद्रिज्याः राह्याः स्वभार्थायाः राजायुधिष्ठिरः प्रत्यनंदत् । अनुमोदितवान् ॥ ४९॥

नकुळाचाः प्रत्यनंदन् युयुधानः सात्यकिः॥ ५०॥

# भाषाटीका

अपने बालकों की सृत्यु के कारण से में आर्त होकर बार बार अश्रुमुखी होकर रोदन करती हूँ ऐसे पति देवता गौतमी इसकी मा मत रोवे॥ ४७॥

जिन अजित चित्त राजन्यों ने ब्रह्म कुल को कोप कराया है उनके सानुबंध कुल को शोक संतप्त ब्राह्मग्रा कुल शिव्रही दाह करदेता है ॥ ४८॥

(स्त उवाच ) धर्म संयुक्त न्याय युक्त करुगा सहित निर्व्यलीक (कपट शून्य ) और सम द्वीपदी के बचन को राजा धर्म युत्र और सब ब्राह्मगा ने अभिनन्दन किया ॥ ४९॥

तकुल सहदेव स्नात्यकी अर्जुन और भगवान देवकी पुत्र ने भी अभिनन्दन और अन्य स्नीयों ने भी द्रीपदी के बचन का समितन्दन किया॥ ५०॥

तत्राहामिंदितोभीमस्तस्य श्रयान् बधः स्मृतः ॥
न भर्तुर्नात्मनश्रार्थे योऽहन् सुप्तान् शिशून् वृषा ॥ ५१ ॥
निशंम्य भीमगदितं द्रौपद्याश्च चतुर्भुजः ॥
त्राबोक्य वदनं सख्युरिदमाह् हसन्निव ॥ ५२ ॥
ब्रह्मबंधुर्नहंतव्योद्याततायी बधाईगाः ॥
मयैवोभयमाम्नातं परिपाद्यनुशासनम् ॥ ५३ ॥
कुरु प्रतिश्चतं सत्यं यत्तत्तांत्वयता प्रियाम् ॥
प्रियंच भीमसेनस्य पांचाल्या मह्यमेवच ॥ ५४ ॥

#### श्रीधरखामी:।

तस्य तथा विधस्य द्रौगो र्वध एव श्रेष्ठः । अन्यथा तस्य नरकपात प्रसङ्गः स्यात् । तत्राह न भर्त्तुरिति । अहन् ज्ञान ॥ ५१ ॥

चतुर्भुजोक्तेरयं भावः। भीमे तं हंतुं प्रवृत्ते द्रौपद्याश्च सहसा तिषवारणे प्रवृत्तायाम् उभयोः संवरणायाविष्कृतचतुर्भुज इति। सन्दिहानस्य सख्युरज्जेनस्य ॥ ५२ ॥

वधार्ह्याः वधार्हः। मयैव शास्त्रकृता ब्राह्मणो न हन्तव्य इति तथो "अतितायिनमायान्तमपि वेदान्तपारगम् । जिघांसंत जिघांसीः याम्न तेन ब्रह्महा भवेदि"ति च वदता। ततुभयमप्यनुशासनं परिपालय ॥ ५३॥

तव च प्रतिश्चां प्रपूरयेत्याह । प्रियां सांत्वयता त्वया यत् प्रतिश्चतं हननं तच्च सत्यं कुरु प्रियञ्च कुरु । मह्यं मम । तत्र बश्चे भीमस्य प्रियं भवति अवधे द्रौपद्याः द्वये श्रीकृष्णस्य ॥ ५४ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तत्रभीमस्त्वमर्थित आह किमितितस्यब्रह्मवंधोद्रौं शोर्वधपवश्रेयात्रस्मृतः कृतः यतोऽयंभक्तिशृहेतराष्ट्रस्यात्मनः खस्यचार्येप्रयोजनायनस्रप्तात्र शिशुक्र्इतवान् किंतुवृथेवहतवानिति ॥ ५१ ॥

भी मेस्यद्रौ । याश्चगदितं वाक्यं श्रुत्वाचतुर्भुजोभगवान्श्रीकृष्णः सब्युर्जुनस्यबदनमालोक्यईषद्वसन्निवेदंवक्ष्यमाणमाह ॥ ५२ ॥ तदेवाहब्रह्मचंचुरितिद्वाभगंब्रह्मचंचुरितिहेतुगर्भब्रह्मचंचुरितिहेतुगर्भब्रह्मचंचुरितिहोतुगर्भब्रह्मचंचुरितिहोतुगर्भब्रह्मचंचुरितिहोतुगर्भब्रह्मचंचुर्वाद्वेवाद्वेवचेत्युभयमाप्रेसहेतुकामिति अनुशासनमद्वयासनम्बद्धाणाह्य्यात् अतितायिनमायां तहन्यादेवाविचारयन्नित्यादिशास्त्रानुमतामिदमुभयंपाहिपालयनाति क्रमस्त्रवैतदुभयंपालितंस्यात्तथा कुवित्यर्थः॥ ५३॥

तन्नान्यतरकरगोऽन्यदकृतं स्यात्तत्तवानुचितमित्यभिप्रायेगाहकुविति प्रियांद्रीपदींसांत्वयतात्वयायत्प्रतिश्रुतंप्रतिकातीशरिङ्ख्यामितित द्विपसत्ययथार्थकुरुमीमादीनांप्रियंचकुरु ॥ ५४ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

तत्रतस्यामवस्थायाममर्थितोभीमः आहेत्यन्वयः योभर्तुर्दुर्योधनस्यात्मनः स्वस्यचनार्थेसुप्तान्शिशून्वथाऽहन्हतवान् । वृथाशब्दी बद्यविषयः बद्यानामर्थेचनभवति तस्यब्धस्तस्यैव श्रेयान्स्मृतः नास्माकंपापमितिभावः ॥ ५१ ॥

चतुर्भुजः भीमंगदितंश्रुत्वाद्रौपद्याश्चवचनमितिशेषः सख्युरर्जुनस्यवदनमवलोक्यमंदस्मितंकुर्विशिदमाहेत्येकान्वयः॥ ५२॥ ह्यननहत्तेत्युभयं मयैवाम्नातम् अभिहितं यस्मात्तस्मादनुशासन् मात्मवचनंपरिपाहीत्यन्वयः॥ ५३॥ ५४॥

# क्रमसन्दर्भः।

खतुर्भुज इति तैः। यद्वा मयैवोभयमाम्नातमिति खादेशमाननाय द्शितेश्वर्थ्य इति मावः॥ ५२॥ ५३॥ दिकायां तव च प्रतिज्ञामित्यत्र च शब्दाद्मीमादीनामिच्छाश्चेति वयम ॥ ५४॥

₹

# জিলালা **প্রথাধিনী এ**ই চর্ল্ল চাই চেল্লালালা লাভ করে লাভ

द्वीपद्यक्ततत्त्वसहितंधम्मनंगीं छत्यस्वयस्वतंत्रधर्मेनिकपर्यानतद्वधार्यप्रवृत्तदत्याह । तत्रिति । अधमप्रतिपक्षत्वात्कोधः दर्शनेनैवदैत्यभयं जनयतीतिभीमः तस्यरक्षगापेक्षयावध्रपवश्रेयान्यतीऽयं निशिष्टेयवसुन्तान्शिशृन्अहनतः पर्वमन्यदप्यविचारितंकरिष्यतीतिवधः श्रेया नित्यर्थैः भगवांस्तूभयरूपंधर्ममुक्तवानिति ॥ ५१ ॥

द्वीपदीभीमयोः परस्परिवराधडमयसमाधानायिकियादाक्तिद्वयविभीवायभुजचतुष्टयाविभीवकृतवानित्याहिनदाम्येति चतुर्भुजोजात इतिभिन्नवाक्यमपरस्परिवरोधेहिनप्रकारांतरस्थितिर्नेकतापिविरुद्धानामुक्तिमात्रविरोधेहतिपरस्परकार्यजननाय खयंतावेवस्तंभितवान् अर्जे

नस्तुसख्यपर्यंतमागतइतितन्नहापयिवुंतन्मुखंविलोक्याभित्रायमाहअर्जुनोऽपिसंमोहितइवजातः॥ ५२॥

इतिहसिन्नवोक्तम् अन्यथा द्वीपदीवाक्यस्याभिनंदितत्वात्सन्मानंकृत्वेवतं विसृजेत्भीमवाक्यवाश्रुत्वामारयेत् तथापिनानर्थोभवेत्अत उभयाकरणात्मगवान्मोहयश्रिवाहएकंचेश्रकरोषितर्हिउभयात्मकंकुरु नचुविरुद्धंकयसुमयं कर्तुदाक्यमितिचेत्रत्राह मयैवोभयमाम्नातमिति भगवतासुभयात्मकंवस्तुद्दष्ट्वाउभयमाम्नातम्भन्यथा अनात्मत्वप्रसंगात् तञ्चक्षात्वामयासमाम्नातंतत्कात्वामत्सिकत्वात्त्वयापिकर्तव्यम् अन्यशासिखत्वनस्यादित्यभिप्रायेगाद्यपरिपाद्यनुशासनमितिपरिपालयमदाशाम् ॥ ५३ ॥

प्तावतासर्वेषांसंमतंमविष्यतीत्याहकुरुप्रतिश्रुतमितिस्वप्रतिश्रुतंशिरसः समाहरगोतिङ्छरोमगिहरगोनपालितं भविष्यतिभीमसेनस्य-प्रियं बधनतद्वपनादिनापालितं भवतिद्रीपद्याश्चप्रियं मोचनेनतद्पितेनैवपालितं भवतिमस्यचप्रियम्भयात्मककरणेन ॥ ५४ ॥

### श्रीविश्वनायचक्रवर्सी।

चतुर्भुज इति भीमे तं इंतुं प्रवृत्ते द्रौपद्याश्च तिष्वारणे प्रवृत्तायामुभयोर्वारणार्थे भुजचतुष्टयं प्रकटयामास्ति भावः । इसिष्ववैति

सखे त्वदृबुखेरद्य सूक्ष्मत्वं परीक्षिष्ये इत्येतदृष्यञ्जकं स्मितमात्रमाविष्कुर्व्वेत् नतु हास्यमित्यर्थः ॥ ५२ ॥

ब्राह्मग्रो न हन्तव्य इति "आततायिनमायान्तमि वेदान्तपारगम् । जिद्यांसन्तं जिद्यांसीयान्नदोषो मनुरब्रवीदि"ति उभयमेवाम्नातम् आम्नायकृता मयैवानुङ्गातं शासनं परिपालय । तेन ब्राह्मग्रात्वं वर्त्तते एव इदानीं शस्त्रपागित्वाभावात् आततायित्वं न वर्तते इत्यश्व-त्यामा न हन्तव्य इति मम मतम् । यत्तु ब्रह्मबन्धुमिमं जहीति पूर्वमुक्तं तत् तव धर्म्मपरीक्षार्थमेव । तत्रापि ब्रह्मबन्धुमिमं मा जहि त्रातुमहीस तथा विरथं भीतं रिपुं धर्माविश्व हन्तीति तथा तद्वधस्तस्य हि श्रेय इति न तु बधकर्त्तुरिति तथा तदसौ वध्यता वस्थनिबषयी भूतः क्रियतामिति तत्र तत्र वास्तवोऽथोंऽपि मयापित इति ॥ ५३॥

त्वया यत् प्रतिश्रुतं प्रतिक्षातम् आहरिष्ये शिरस्तस्येति तदस्य शिरइछेदं वधं कुरु। तमेव भीमसेनस्य प्रियं कुरु। पाश्चाल्याः 💥

प्रियमवधं च महां मम च मदादीनां मत्त्रियत्वादुभयमपि प्रियं कुरु ॥ ५४ ॥

द्रीपद्याःमुच्यतां मुच्यतामिति । भीमसेनस्यब्धः श्रेयानितिगदितंनिदाम्यसंख्युर्जुनस्यबदनमालोक्याह ॥ ५२॥ अराष्ट्रा अर्था सुर्थतामात । नाम राष्ट्रियो में स्थेवो भयमास्नातं तदनुक्लंबास्यानेवहतव्यहति "आततायिन मार्थातंहन्यादेवाविचार यित्र"ति । अनुशासनंशास्त्रं च परिपाहिपालय ॥ ५३॥ ५४॥

### भाषाटीका

तब अमार्षित भीमसेन ने कहा जिसने न अपने किसी खार्थ सिद्धि के लिये न भर्ता की प्रीति के निमित्त किंतु वृथा सोते हुए बालकों का बध किया है उसका बध करना ही उत्तम है ॥ ५१ ॥

यह कहकर भीमसेन ख्यं उसका मारने को उद्यत हुए द्रीपदी उनको रोकने को उठी दोनों की प्रवृत्ति रोकने को भगवान चतुर्भुज होकर मध्य में स्थित होकर अर्जुन का मुख देखकर हँसते से यह बोले॥ ५२॥

श्वार गर्ने प्राप्त श्वार अञ्चन का मुख प्राप्त आतताई का बंध करना यह दोनों शास्त्र मुख से मेरे ही वाक्य हैं। तुम इसी शासन हैं -

का प्रतिपालन करो ॥ ५३॥ द्रीपदी के सान्त्व करने में जो प्रतिश्वा की थी उसको सत्य करो, भीमसेन का भी प्रिय करो द्रीपदी का भी प्रिय करो और मेरा

# श्रीधरस्वामी

हाईमिम्प्रायम् आज्ञाय ज्ञात्वा न श्वश्ववय्रभुभयं विद्वयादतोऽसमिमास इति ज्ञात्वेत्यर्थः । असिना सङ्गेन । सूर्वन्यं सर्वनि जातम । सहमूर्जं सफोराम ॥ ५५ ॥

सूत उवाच

ऋर्जुनः सहसाऽऽज्ञाय हरेहाईमणासिना ॥ मिं जहार मूर्डन्यं दिजस्य सहमूर्डजम् ॥ ५५ ॥ विमुच्य रसनावद्धं वालहृत्याहृतप्रभम्॥ तेजसा मिगाना हीनं शिविरान्निरयापयत् ॥ ५६ ॥ वपनं द्रविगादानं स्थानान्निर्यापगां तथा ॥ एषहि ब्रह्मबंधूनां बघोनान्योस्ति दैहिकः ॥ ५७ ॥ पुत्रशोकातुराः सर्वेपांडवाः सह रुष्णाया ॥ स्वानां मृतानां यत्कत्यं चक्रुनिर्हरगाादिकम् ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुरागो पारमहस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीक्षिते द्रौशिद्यडो नाम सप्तमोऽध्यायः॥७॥

श्रीधरस्वामी।

मारीना च हीनं निरयापयत् निःसारितवान् ॥ ५६ ॥ अनेन च श्रीकृष्णोक्तं सर्वे सम्पादितवानित्याह वपनिमिति ॥ ५७ ॥ निर्हरगां दाहार्थे नयनम् ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतमावार्थदीपिकार्या प्रथमस्कन्धे सप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

#### दीपनी ।

विष्वपनिति सर्व्वमुण्डनमित्यर्थः॥ ( द्रविग्रास्य धनस्य आदानं ग्रहग्रां द्रविग्रादानामिति )॥ ५७॥ ५८॥

#### श्रीवीरराघवः।

ततप्वमुक्तोऽर्जुनोभावश्रोहरेर्हार्देवृद्गतमभिषायमाश्रायासिनाखद्गेनसाधनेनद्विजस्यद्रौर्णमूर्द्धन्यमूर्व्द्रिधारितमणिमूर्द्धजैः केशैः सहितं

यथातथाजहारहृतवान् ॥ ५५ ॥

ततोरसनांविमुच्यपूर्वमेववालानां हत्ययाहताप्रभायस्यतंतेजसा तेजःपदेनमिशानाचहीनंराहितंसुतरांहतप्रभंशिविरान्निरयापयद्वहिनिः

नन्वेवमपुखप्रतिश्रुतंभीमगदितंचनकृतमेवेत्यादांकमानंशीनकं प्रत्याहसूतः वपनमितिवपनंमुंडनंद्रविगादानंधनापहरगांस्थानान्त्रिया प्राचित्येषएवहिष्णस्यवंष्ट्रांबधः अन्योदैहिकः शिरःपाग्यादिच्छेद्रह्मपः नास्तिहितत्रैतन्न्यमपिकृतमेवतेनैवबधोपिकृतप्रायएवेतिमावः॥ ५७॥ ततः सर्वेपांडवायुधिष्ठिराद्यः कृष्णयाद्रीपद्यासहशोकपीडिताःसंतेामृतानांखानांपुत्रवंधूनांयत्कर्तव्यंनिर्हरणादिकंतचकुः॥ ५८॥

इतिश्रीवीरराघवटीकायां प्रथमे सप्तमः॥ ७॥

# श्रीविजयध्वजः

अर्जुनः सहसाझटितिहरेः त्हिंदियतम् आज्ञायसम्यक्कात्वाक्षुरधारेण असिनाद्विजस्यसहमूर्थजं केरीः सहितमूर्धन्यं मूर्भासहोत्पक्षं मिंगिजहारित्यन्वयः॥ ५६॥

तुज्ञसासामर्थ्यनशरीरकांत्यावारत्नेनचरहितं शिश्चनांवधेनहतप्रभम् अलक्ष्मीनिधानंरज्ज्वाबद्धं विशुच्यशिविराश्चिरयापयत् शवनिर्ग-

मनवन्निष्कासयामासेत्यकान्त्रयः॥ ५६॥

ब्रह्मबंधूनां प्राग्यत्यागलक्ष्मामरगा प्रतिनिधिरयंवधइत्याह बंधनामिति ब्रह्मबंधूनामेषण्ववधः वधप्रातिनिधिः अन्योदैहिकोनेत्रोत्पाटना-दिको नास्तीत्यन्वयः शास्त्रविद्यितोनास्तीतिभावः कोऽसावितितदाह बंधनमिति पाशेनकरौपृष्ठेकृत्वाबंधनं द्रविगादानंहिरणयाहरगां स्थानाश्चिर्याप्यां खदेशाश्चिर्यापणां तथाशब्दः प्रत्येकमिसंबंधियतव्यः ॥ सांत्वयश्चित्यारश्चनान्योस्तिदेहिकइत्यंतयदुक्तंतिददंद्रौत्य नास्त्रप्रेहप्रंसंकथितं ॥ अन्यथाय्रंथांतरिवरोधः तत्रभीमेनकृतमित्युक्तत्वादितिक्षातव्यम् ॥ ५७॥

इति श्रीभागवते प्रथम स्कंधे विजयध्वज टीकायां सप्तमीऽध्यायः॥ ७॥

u 医克勒特氏 ( 東京市

#### क्रमसन्दर्भः।

अर्जुनः सहसाऽऽद्यायेत्यस्यायं भावः । श्रीकृष्णेनानेन ब्राह्मणो न हन्तव्य इत्येषा श्रुतिब्रह्मबन्धुनं हन्तव्य इत्येन स्पष्टीकृता । तत्र ब्रह्मबन्धुरपीति हि तस्यास्तात्पर्थम ब्रह्मबन्धुत्वं चास्याततायित्वेनेव विविद्यतम् । ब्रधाईगात्वं त्वाततायिमात्रेण विहितम् । तत्र व्रायान्तं जिघांसन्तिमिति विशेषण्वेयर्थात् । अत्यव प्रतिद्यातत्वेन तुल्यस्वेऽपि द्रोगास्योद्यतस्य बर्धोऽनुमतो बद्धस्य तु नास्य । आततायित्वं न्याये युद्धेऽपि मतम् आततायिनो मे इति श्रीभीष्मवचनात् । यत्तु परिपाद्यनुशासनमित्युक्तं तत्व ब्रह्मबन्धुमिमं जहीति पूर्वोक्तानुसारेण्वेव । तदेवमस्यानुशासनश्यस्य द्रीपदीभीमयोभियोविरुद्धवाक्यद्वयस्य स्वप्रतिक्षायाश्च युगपत् समाधायकं मिण्हरणादिकमेव करिष्यामीति ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृतकमसन्द्रभे सप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

#### सुवोधिनी ।

भगवत्क्रपयाश्रज्ञैनः सर्वेरूपमेकंशात्वातथाकृतवानित्याद्दद्वाभयाम् श्रज्ञेनद्दतिकृत्वादेसहसेतिश्रथतद्दनेतरमेवविमोचनात्पूर्वम-सिनाखड्गेनद्दिरसद्द्युडामग्रिमद्भिखासदितं द्विजस्यद्वतवान्द्दं ह्युभयात्मकतद्रश्रेवक्ष्यतित्रसगत्वादुभयात्मकस्य ॥ ५५ ॥

तृतीयमाहिबमुच्योतिपूर्वरशना यद्धंतस्यतूर्ध्याभावेहतुः वालहत्याहतप्रभमितितंजसामित्यानहिनमितितृतीयसमीपद्वयारनुवादः शिवि रात् स्वकटकात् निरयापयदिति सर्तास्थानाकियोपणंनसवेत्रवसत् सुतस्यप्रवेशोनभविष्यतीतिश्चापेतम् ॥ ५६ ॥

कृतस्यसर्वरूपस्यतथात्वं विवृश्णाति वपनमितिहोतिपूर्वीक्तप्रमाशादयोऽतुसंघयाः ब्रह्मवधूनांदृत्यांशब्राह्मशानां देहिको देहच्छेदना तमकः ॥ ५७॥

प्रासंगिकेगतेप्रस्तुतमुपसंहरतिपुत्रेति ॥ ५८॥

इतिश्रीभागवतस्रवाधिन्याश्रीलक्ष्मग्राभद्यात्मजश्रीवलभदीक्षितीवरचितायांप्रयमस्केधसप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ता ।

हाईमिभिप्रायम् आक्षाय ज्ञात्वेति आहरिष्ये शिरस्तस्येति मया प्रतिज्ञातोऽस्य शिरइछेद एव कुरु प्रतिश्रुतं सत्यमिति वदता भगवता-प्यभिप्रतः पुनश्च पाश्चाल्याः प्रियं कुर्विवित वदता शिरसो न छदश्च विहितः न ह्यशक्यमुभयं विद्ध्यात् अत एवं मया कर्त्तव्यमिति निश्चित्येत्यर्थः । मूर्ज्वन्यं मूर्विच्च भवम् मूर्वेजाः केशास्तैः सिहतं चिच्छेद तेन शिरस्थमपि वस्तु लक्षण्या शिरःशब्देनोच्यते इति शिर-इछेद एव अभिधेयस्तेन शिरइछेद इत्यश्वत्याम्नो षधोऽवधश्च कृत इत्यर्थः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

तेन शास्त्रोक्तं धम्ममेव कृतवानित्याह वपनं शिरोमुण्डनम् ॥ ५७ ॥

निर्हरणं दाहार्थं नयनम् ॥ ५८॥

इति सारार्थ दर्शिन्यां हर्षिएयां भक्तचेतसाम् । प्रथमेसप्तमोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ ७ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

सृद्धेन्यमुद्धेनिजातम् । जहारद्वतवान् ॥ ५५ ॥ विज्ञित्यास्त्रयापयत् निःसारयामास ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

निर्देश्यादिकंम्रतानांयत्क्रत्यंदाहार्थेनिः सारगादिकंतचकुः ॥ ५८ ॥

इतिश्रीमद्भागवत सिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कंधीयेसप्तमाध्यायार्थं प्रकाशः॥ ७॥

#### भाषा टीका।

(सूत उवाच ) अश्वत्थामा के विना मारे भीमसित की प्रिय नहीगा मारने से द्वीपदी का प्रिय न होगा भगवान मारने की और न मारने की आज्ञा देते हैं दोनों कार्य किस भांत होंगे। यह मगवान का अभिप्राय जानकर अर्जुन ने खड़ से अश्वत्थामा का मस्तक से सूद्ध जों (केसों ) को मुड़कर उसके मुद्धस्य मांगा की हरिलया॥ ५५॥

वाल हत्याहत प्रभ रसनावद को खोल दिया और तेज हीन मिशा हीन ब्राह्मण को शिविर से शहर निकाल दिया ॥ ५६ ॥ हिए मूंड़ देना धन छीन लेना स्थान से निकाल देना यही ब्रह्म बंधुओं का बंध है उनको दैहिक प्रांश इंड नहीं है ॥ ५७ ॥ खुत्र शोकातुर संबरे पांडकों ने द्रीपदी सहित अपने मृत बंधुओं का जो कुछ निरहरणादिक कृत्य था सो किया ॥ ५८ ॥

प्रथम स्कंध का सन्तम अध्याय ॥ ७ ॥

# **ऋष्टमो**ध्यायः

सूतउवाच ॥

ऋषते संपरेतानां स्वानामुदकमिन्छताम्। दातुं सक्ष्याा गंगायां पुरस्कृत्य ययुः स्त्रियः ॥ १॥ ते निनीयोदकं सर्वे विलप्य च भृशं पुनः । **त्र्याप्लुता हरिपादाव्जरजः पूतसरिज्ञले ॥ २ ॥** तत्रासीनं कुरुपतिं धृतराष्ट्रं सहानुजम्। गांधारीं पुत्रशोकानां पृथां कृष्णां च साध्वः ॥ ३ ॥ सांत्वयामास मुनिभिईतबंधून् शुचार्पितान् । भूतेषु कालस्य गतिं दशयत्रप्रतिक्रियाम् ॥ ४ ॥

#### श्रीधरखामी ।

अष्टमे कुपितद्रीगोरस्राद्रक्षा परीक्षितः। कृष्णेन ततस्तुतिः कुन्त्या राज्ञः शोकश्च कीर्त्यते॥०॥ ने पागडवाः सम्परेतानां मृतानां गङ्गायामुदकंदातुम् । सकृष्णाः कृष्णेन सहिताः । स्त्रियः स्त्रीः पुरस्कृत्य अत्रतः कृत्वा तिस्मिन् काय्यं स्त्रीपुरःसरत्वविधानात्॥१॥ उदकं निनीय दत्त्वा । हरिपादाब्जरजोभिः पूता या सरित् गङ्गा तस्या जले । पुनप्रहणात् आदाविप स्नाता इति गम्यते ॥ २ ॥ कुरुपति युधिष्ठिरम् । सहानुतं भीमादिभिः सहितम् । (पुत्रशोकार्त्तामिति तिसृगां विशेषग्रम् )॥३॥ मुनिभिः सह ॥ ४ ॥

#### दापना !

110118-411

#### श्रीवीरराघवः।

अयतेपांडवाः सपरेतानांखानामुदकतिलोदकम् एतच्छादादीनामप्युपलक्षगाम् इच्छतांत्रेतक्रपेगाकामयमानानांदातुमुदकदातुंस्त्रियः द्वीपचादिस्त्रीः पुस्कृत्यकृष्णेनसिंहतागंगांययुः॥१॥

तत्रतेसर्वेपांडवादयोभृशंपुनः विलप्यसंपरतानामुदकंनिनीयप्रदायहरेः कृष्णस्यपादाब्जयोरजसापूर्तेसारतः गंगायाजलेकाम्लुताः

स्नात्वाविशुद्धावभूव्रित्यर्थः ॥ २ ॥

तत्र गंगातीरवासीनमुपविष्टंसहानुजंकुरुणांपति धृतराष्ट्रंपुत्रशोकात्तोमिति गांधारीकृष्णयोविशेषणं तत्रगांधारीधृतराष्ट्रमायापृथाकुती कृष्णाद्रौपदीमाथवः कृष्णः सांत्वयामास्त्युत्तरेगान्वयः सहानुजमित्यत्रानुजशब्दः पांडुसुतूधमराजादानामुपलक्षकः तेषामप्यत्रशोकात्त त्वेनसांत्वनीयत्वान्नतुविदुरपरः तस्यपूर्वमेवधृतराष्ट्रेण निर्यापितत्वाद्यादयक्षयानंतरमागामिनस्तदावस्थानासमवात एतचास्मिन्तृती यस्क धेरुकु टीभाविष्यति॥ ३॥

हताबंधवोयेषांतानतएवगुचाशोकेनापितानार्देतान् धृतराष्ट्रादीन्बंधून्भृतेषुलोकेषुनावैद्यते प्रतिक्रियाप्रत्युपायोयस्यास्तांकालस्यगति जन्मसरगाद्युत्पादनरूपांदर्शयन् मुनिभिः सहसांत्वयामास माधवद्दतिकर्नृपदमनुषंगेगायोजनीयम् एवमुत्तरत्रापिक्षेयम् ॥ ४॥

श्रीविजयध्वजः।

\* भक्तिविधानार्थं भक्तवात्सल्याद्यचित्यमाहात्म्यं मुरारेनिक्ष्यतेऽस्मित्रध्यायेतदर्थं मृतानांयत्कर्तेव्यंलीकिकतत्त्उच्यते पुत्रशोकिति सर्वे पांडवाः मृतानांप्राणावियागं प्राप्तानांस्वानांबंघूनांयत्कृत्यं निष्ट्रेगादिकंतसकुरित्यन्वयः ॥ १॥

\* भामहतान्दर्शयद्दतिपुरायत्मतिश्चृतं तद्रयद्भौपद्यनिशामयामासदर्शयांचकारेत्यन्वयः॥२॥ \* हराश्चिततवअरिदारावृश्चश्चमार्थाः एकमृथजान्मुककेशीः भीमस्यगृदयाभग्नाऊरवः उत्सगाश्चवक्षांसिचयेषांतेतथोकाः उक्षणिवि

क्तीर्गानिवक्षांसीतिवा ॥ ३॥

 अद्योनिशामयामासकृष्णायमगवान्युरा ॥ पतितायाः पादम्लेखदंत्यायतप्रतिश्रुतम् ॥ २ ॥ \* पद्यराद्द्यारदारांस्तेरुदतोमुक्तमूर्धजान् ॥ आलिग्यस्वपतीन्भीमगदाभग्नोरुवश्नसः ॥ ३॥

स्तुत्ववाच ॥ पुत्रशोकातुराः सर्वेपांडवाः सहक्रणाया ॥ स्वानांसृतानांयत्कृत्यंचकुर्निहरणादिकम् ॥ १॥

亡

### श्रीविजयध्वजः।

स्त्रियः पुरस्कृत्यसंपरेतायुद्धेमृताः सकृष्णाद्रौपद्यासहिताः कृष्णेनथाद्वेद्वेशासहितावा ॥ १ ॥

तेपांडवास्तिलोदकंनिनीयदत्त्वाभृशांविवलप्यपरिवेदनलक्षगां रोदनंकृत्वापश्चाद्धरेः पादपग्रपरागेगापूर्तेशुद्धेसरितोगंगायाः जलेकाप्लताः स्नाता अभविभारयन्वयः ॥ २ ॥

**अनुजेनसंजयेनसहवर्तमानम् ॥ ३ ॥** 

सुनिभिः सह हताः पुत्रायेषांतेतयातान् भूतेषुत्राणिषुकालक्षपस्यहरेः गतिविकममप्रतिकियामपरिहार्योदर्शयन् ॥ ४॥

कमसन्दर्भः।

मुनिभिद्वीरभूतै:॥४५५॥६॥

# सुबोधिनी ।

एवंहिस्तर्वभक्तानांभगवद्वाक्यानिष्ठता स्वेहेतुकयायेचसप्तेमीचीनक्षीपत १ अष्टमेयस्यवाक्यस्यकरणाद्यद्विज्ञायते दोषश्चेत्तसमाधानगुण्य ह्वे दाहपोषण्य २ पूर्वाच्यायांतेअश्वत्थाम्नोपमननं निक्षिपतम् अनिवर्त्यश्रद्धास्त्रप्रक्षेपहेतुत्वेनअष्टमेतुपदार्थचतुष्टयं निक्ष्यतेभगवतोद्भृतकर्म निक्षपण्यायद्वद्धास्त्रद्धाः तस्यरक्षाततोद्भृत कर्मनिर्णयस्तोत्रं ततोद्भुतकर्मतत्रप्रथमं ब्रह्मास्त्रप्रसंगमाह्ययोते शक्कांतर्वाह संकारः कर्त्वव्यः साचशुद्धिर्वात्धाभ्यंतरभेदेन द्विधोतिप्रथमं वात्यशौचमाहद्वयेन मृतानांप्रतत्विमोक्षेष्टिश्वावतांशीचं ततस्तेषांप्रथमतद्विमो कहेतुक्रियामाह दाहंकुरुक्षेत्रपवकृत्वाहिस्तनापुरे जलदानांथं सर्वेगताः ब्रह्मदंबहताअपियज्ञलस्पर्शमात्रेण विमुच्यंतेतत्रधर्मयुद्धहताः मुच्यंतद्विक्षिवक्तव्य "प्रत्तंजलंत्रयंजलमात्मजेनप्रतस्यतापंप्रशमं करोती"ति तापापनोदार्थं जलमपेक्ष्यतेतथाचमूलभूततापत्रयनिराकरणार्थम पिष्कहेल्याजलंदेयमितिनिश्चित्यगंगायांगताइतिनिक्ष्यतेअधेत्यवैरमावेनसंपरेतानामितिसामान्यतः सर्वेषातत्रापिस्वानांबहुपुरुषसंवद्धानाम पितत्रापिउदकदियनांसप्तपुरुषसंवद्धनांतेषांमुक्तिद्वानार्थभगवतासहितिसकृष्णाइत्युक्तिस्त्रयः पुरस्कृत्येतिलोकाचारः॥१॥

उद्कंनिनीयप्रेतेभ्योजलंदत्वा"रोद्नाप्रियाःपितर"इतिविल्यते येष्विपयेषांनसेदः तेपिविहितत्वात्सर्वेपिविलापनंकृतवतः भृशमितिपुन विलापाभावायचकारादन्यदीपकर्त्तव्यंकृत्वापूर्वजलदानार्थकृतस्नानाअपिपुनः सर्वगुद्धार्थभत्तर्यश्चनाधिकारार्थगगयांस्नातंवतइत्याहआप्छुता इतियद्यपिपूर्वमेवतत्र्यापंक जावनेजनारुणार्कजलकोपरंजितोतिषचनात्र्यातुः कमंडलुजलिमितवचनाम्यसर्वमेवगंगाजलंतादशंभवतित्यापि अनेतित्वित्रकालंतरस्पर्शसंभावनयापूर्वस्नातजलंतादशंभवतिनवेतिसंदित्यउपरिभागभगवंतंस्थापियत्वातम्बर्णोदकेनस्नातंवतद्वय्यः अनेनते तदीयादितस्वेषाशापितम् ॥ २॥

प्वंसविकत्तेव्येकृतेताहशेषुभगवतायत्कत्तेव्यतदाहतत्रासीनीमितिद्वाश्याम् आसीनीमत्यव्ययत्वायकुरुपति युधिष्ठिरसहानुजंविदुरसहितं भीमादिसहितंवातीर्थोटनकथाकल्पांतरीयास्त्रियः सर्वापवपुत्रशोकात्तीः अतः पुत्रशोकात्तीमितिविशेषःसर्वत्रकृष्णाद्रीपदोचकारात्सुभद्रादयः स्त्रीर्गासात्वनहेतुः माधवहतिमायाधवः सर्वासामवलक्ष्म्यंशत्वात् ॥ ३॥

सांत्वनंवस्तुयाथात्म्यज्ञापनेनमुनिभिरितिसंवादार्थहतावांधवायेषांशोकापनोदनं तत्त्वज्ञानाद्भवित नन्वीश्वरेशासांत्वनमनुचितंसर्वकर्तृ-त्वादित्याद्यांक्यस्थापितकालरूपाधिकारिशास्तद्गृहेजातेषु दंडादिकमीश्वरस्याप्यप्रतीकार्यनहिस्त्रीपुत्रादिताडनेराजदंडो भवतिकालस्थापि । भक्तत्वात् कदाचिदपि भक्तानप्युपेक्षतेद्दमांसिद्धांततामाहभूतेष्वितिकालेजातेषुकलयतीतिकालः गतिप्रवृत्तिनिवद्यते प्रतिक्रियायस्याः ॥ ४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

पुनर्वह्यास्त्रतोऽरक्षत् तान् गर्भे च परीक्षितम् । कृष्णाः स्तुतश्च पृथया राष्ट्रः शोकस्तवाष्टमे ॥ ०॥

स्त्रियः पुरस्कृत्योते तस्मिन् कार्य्ये स्त्रीपुरःसरत्वविधानात् ॥ १ ॥

निनीय दत्त्वा ॥ २ ॥

कुरुपति युधिष्ठिरम् । सहानुजं भीमादिसहितम् ॥ ३॥

मुनिभिः सहितः॥ ४॥

# सिद्धांतप्रदीपः 🎚

अयेतिगंगायाम् उद्कंदातुंसकृष्णाश्रीकृष्णसहिताः ययुः॥१॥ निनीयद्त्वा॥२॥ कुरुपतियुधिष्ठिरम्॥३॥४॥ ولاي

साधियत्वा जात शत्रोः सं राज्यं कितवैर्दृतम् । घातियत्वा सती राज्ञः कचस्परीक्षतायुषः ॥ ४ ॥ याजियत्वा अवमेधैस्तं त्रिभिरुत्तमकल्पकैः । तद्यशः पावनं दिक्षु शतमन्योरिवातनोत् ॥ ६ ॥ ऋामंत्र्य पांडुपुत्रांश्च शैनेयोद्धव संयुतः । द्वैपायनादिभिविपैः पूजितैः प्रतिपूजितः ॥ ७ ॥ गंतुं कृतमति ब्रह्मन् द्वारकां रथमास्थितः । उपलेभे अभिधावंती मुत्तरां भयविद्वलाम् ॥ ८ ॥

#### भाषा टीका।

(सूतउवाच ) तहनन्तर वे सव स्त्रियों को आगे कर अपने जल इच्छा करते मृत वांधवों को जलंदने को गंगा पर गये ॥ १ ॥ वे सब अपने मृत बांधवों को जल देकर अत्यंत विलाप कर हीर पादाब्ज रज से पवित्र गङ्गा नदी के जल में नहाये ॥ २ ॥ वहां भीमसेनादि भ्राताओं सिहत बैठे कुरुराज युधिष्ठिर धृतराष्ट्रपुत्र शोकार्त गांधारी कुंती और द्रौपदों को एवं और समस्त हतब थु शोकार्त वाधवों को मुनि जनों के सिहत माधव भगवान ने जांबों में कालकी अप्रति किया गति दिखाकर सांखना को ॥ ३ ॥ ४ ॥

#### श्रीधरस्वामी

कितवैर्ध् तें हुं यो प्रनादि मिः । द्रौपद्याः कं सप्रह गादिनाक्षतं नष्टमायुर्येषां तान् ॥ ५ ॥ याज्ञियत्वेत्यादिना भाविकयासंक्षेपः । शतमन्योः शतकतोरिव ॥ ६ ॥ द्रौनेयः शिनेनेप्ता सात्यिकः तेन चौद्धवेन च संयुतः ॥ ७ ॥ रयमास्थितः सन् उत्तरीं परीक्षिन्मातरं (भयेन बिह्वलां व्याकुलाम् ) अभिमुखं धावन्तीम् उपलेभे ददर्श ॥ ८ ॥

#### दीपनी।

उत्तमिति । उत्तमः कल्पो येषु यद्वा मुख्यः कल्पो येषु तैः । कल्पो विधानं कल्प्यतेऽनेन कल्पोऽङ्गं स उत्तमो येषु । यहाकल्पयन्तीति कल्पकाः अनुष्ठातारः ते उत्तमा येषु तीरिति व्याख्यालदाः ॥ ६—११ ॥ )

#### श्रीवीरराघवः।

कितवैरक्षण्यायुर्पयनवंचकोर्दुर्योधनादिभिर्वृतमजातशत्रोर्युधिष्ठिरस्यखंराज्यं साधायित्वाराष्ट्रयाद्रौपद्याः कचस्परानकशपाश्चासहरानेव क्षतंक्षीरामायुर्येषांतानसतोदुष्टान्दुःशासनादीन्घातयित्वाअर्जुनादिभिरितिशेषः॥ ५ ॥

उत्तमकलपकेर्मुख्यकल्पैरन्यूनमन्त्रदक्षिगौः त्रिभिरश्वमेधैः युधिष्ठिरयाजयित्वापावनं पवित्रं तस्ययुधिष्ठिरस्ययशः शतमन्योः शक्रस्य यशद्वव्यतनोद्धिस्तारयामास ॥ ६ ॥

ततःपांडुपुत्रान्चराब्दादन्यांश्चआंमञ्यापृच्छ्यशैनेयः शिनॅनेप्तासात्यकिः शैनेयोद्धवाश्यांसात्यक्युद्धवाश्यांसहितः आत्मनापूजितैः क्वैपायनआदिमुख्योयेषांतैर्विप्रेः प्रतिपूजितैद्वीरकांप्रतिगंतुकृतमतिर्निश्चितमतिर्हेब्रह्मन्रथमास्थितः अधिष्ठितः॥ ७॥

तदामिधावंतींभयेनविद्वलामुत्तरामभिमन्युपत्नीमित्यंविद्वापयंतीमितिशेषः उपलेभेपथिद्दरीत्यर्थः यद्वाऽभिधावंतीविद्वापनपूर्वकमतु-वर्तमानाम्र उपलेभइत्यन्वयः ॥ ८ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

द्यातियत्वाबधंकारियत्वापांडवैरितिशेषः कचानांकेशानांस्पर्शेनद्दतानिनष्टानिआर्यूषियेषांतेतथातान् अजातः सुयोधनः श्रेष्ट्रयसः विष्टातियात्वाति "सुयोधनाद्यः सर्वेत्वजाताजिक्षरेषटात् व्यासेनानतषीर्येशामार्तेडाधिकतेजसा"इतिप्रयोगात् नजातः श्रेष्ट्रयस्यसत-तथाकः तथाचोकः कितवैश्लोरप्रायेर्द्रयोधनादिमिः॥ ५॥ योकद्दतिकोचित् कितवैश्लोरप्रायेर्द्रयोधनादिमिः॥ ५॥

李

#### श्रीविजयम्बजः।

मध्यमाधमकल्पयो रुत्तमकल्पकः शतमन्ययः कतयोयस्यसत्या तस्येष्ट्रस्ययशो वामनावतारे हार्र्ययाततोनतथाश्तनोत् तजु

विस्तारे॥६॥७॥ भगवान्यदाद्वारकांगंतुंकृतमतिः रथमास्थितः तदापाहिपाहीत्यादिवादिनीभयेनविवद्यामात्मानमुद्दिदयानकातींमुत्तरांमुपलेभेददर्शेत्य-न्त्रयः यत्रमर्त्यलोकेपरस्परंमृत्युः तत्रत्वदन्यमभयमभयप्रदंचनपद्ये खस्याभिमतप्रकाश्चनायात्मनेपदप्रयोगः॥८॥९॥

क्रमसन्दर्भः ।

अय संक्षेपेगोक्त्वा पुनः प्रस्तुतमाह सामन्त्र्येत्यादिना॥७॥८॥९॥

# सुवोधिनी।

एवमपितदानीमाक्रियमागामपिमकानांहितमेवकरोतीतिक्षापयितुंलौकिकप्रतीत्यापियद्धितं तत्करिष्यमागामपिभगवदिच्छायांजातायां-कृतमेवलाकेनाभिव्यक्तमितिसिद्धांतक्षापनार्यतन्निरूपयतिसाधायित्वेतिद्वाप्रयाम नजाताः शत्रवोयस्योते मकावुत्तमाधिकारोद्योतित दानहेतुः स्वराज्यमितितत्रापिहेतुः कितवैर्द्धतिमितिकपट्यूते दुर्योधनादिभिर्धृतहस्तिनापुरमपि तदापांडोरेवराजत्वात् अतप्वकितवैरिति बहुवचन नतुकालस्याप्रतिक्रियत्वेतेषा मायुषोविद्यमानत्वात कथंतद्वातनंतत्राह्यातियत्वेति सर्वेद्यसंताराजानः दुःशासनेनसहपेक्यमावात कच स्पर्शोद्रीपद्याः तेनेवश्रतमायुः सर्वेषां निरपराधायाभक्तायाः प्राग्णानामुत्तमादायुषः शिरसिविद्यमानत्यात् विल्छप्राग्णेनदुर्वलानां क्षत

"तरतिमृत्युंतरतिपाप्मानंततराते ब्रह्महत्यामि" तिश्रुतेराहार पृथक्त्वपक्षेनाश्वमेधत्रयकरणम् उत्तमकल्पकेः उत्कृष्टसाधनसिंहतैः उत्तमे वाकल्पयंतीतिप्रायश्चित्तरूपैः खसांनिध्यात् त्रिभिरेवदाताश्वमेधसमानयद्योजनकत्वं त्रेलोक्येपितस्वयदाः अनेनैकोपक्रमेगावश्वमेधत्रयंकृत

मितिशातव्यम्॥६॥ एवं भगवतोऽत्रत्यलेकिकसर्वधर्मसमाप्तिसूचनायाभ्यनुज्ञामाहसार्द्धनआमंत्र्येति बांधवाऋषयश्चअभ्यनुज्ञाकर्तारः पृथगुकाः चकारा

द्रम्येसर्वेदीनेयः सात्यिकः द्वैपायनादीनांखस्थत्वात् अभ्यनुशातुल्येऽपिपूजनमधिकम्॥ ७॥

ब्रह्मिति ब्राह्मणस्यमहाकोधइति सूचितम्रणारोहणापर्यतंस्विकया । अग्रेयतुरश्वानांच भक्तस्यकार्येउपस्थितेप्रारब्धमपि स्वकार्यत्यज तीतिज्ञापियतुं तस्मिन्समयेउत्तरांदृष्टवान्दृत्याह उपलेभइतिसाहिभक्ताबुत्तराउत्कृष्टेत्यथं अत्यवश्रद्धास्त्रदर्शनं तस्याः प्रथमंमुख्यमेवास्त्रम् । आयसदोरगासंवद्ममुत्तरांप्रतिगच्छिति तदनुतस्मातुद्गताः पंचशराः पांडवान्प्रतिगच्छंतिमुकोच्छेदेऽधिकव्यापारात अकौरववदपांडवमपि जायल राज्य । जार विकास अपनिष्ठ विकास करा विकास के अपनिष्ठ के विकास के अपनिष्ठ के स्वास के अपनिष्ठ के अप द्युतकः॥८॥

श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

द्रौपद्याः कचत्रहणादिना श्रतमायुर्येषां तात् ॥ ५॥ याजयित्वेत्यादि भाविकणासंक्षेपः॥ ६॥ शैनेयः शिनेनेप्ता सात्यिकः॥ ७॥८॥

उत्तरामाभिमन्युभार्याम्दक्री ॥ ८॥

सिद्धांतप्रदीपः।

किच कितवैर्दुर्धृतदेविभिः शकुनीसुयोधनादिभिः असतः सुयोधनदुः शासनजयद्रयप्रभृतीन् कचस्पर्शक्षतायुषः दुःशासनकते नद्रौपदीकेशत्रहणेनविनष्टजीवितान् ॥ ५॥ ६॥ शैनेयः शिनः पौत्रः युयुधानः॥ ७॥

# माषाटीका

धूर्त दुर्योधनादिकों ने जो अजात शत्रु का राज्य हर लिया था वह फिर युधिष्ठिर को साधन कर, द्रीपदी के कच स्पर्श से हतायुव ्रूप उन्ने परवाकर, उत्तम करुप के तीन अश्वमेधों से युधिष्ठिर की पूजन कराकर, उनका पवित्र यश इन्द्र के समान सब दिशाओं में विस्तृत किया ॥ ५॥ ६॥ पांडु पुत्रों को आमंत्रमा कर सात्यकी और उद्धव संयुक्त पूजित द्वेपायनादि आहामों से प्रात पूजित हो, द्वारिका जाने की रथ में

विराज । उसी समय भय से बिहुल दोड़ी चली आती उत्तरा को देखा ॥ ७॥ ८

उत्तरीवाच ॥

पाहि पाहि महायोगिन देवदेव जगत्पते।

नान्यंत्वदभयंपदये यत्रमृत्युः परस्परम् ॥ ६ ॥

ऋभिद्रवति मामीश शरस्तप्तायसो विभो।

कामं दहतु मां नाथ मा मे गर्भो निपात्यताम् ॥ १० ॥

स्तउवाच ॥

उपधार्य वचस्तस्या भगवान् भक्तवत्नलः। **अप्रांडवमिदं कर्तुं द्रौगोरस्रमबुध्यत ॥ ११ ॥** तहींव च मुनिश्रेष्ठ पांडवाः पंच सायकान् ।

**ऋात्मनोऽभिमुखान् दीप्तानालक्ष्यास्त्राग्युपाद्दः ॥ १२ ॥** 

#### श्रीधरस्वामी ।

उत्तरा श्रीकृष्णं प्रार्थयते पाहि पाहीति द्वाभ्याम् । अन्यस्तु प्रार्थनायोग्यो नास्तीत्याह । त्वत् त्वत्तः अन्यम् अभयं भयरहितं न पश्या-मि। यत्र लोके परस्परम (अन्योन्यं) मृत्युभवित ॥ ९॥

अत्र प्रस्तुतं भयमावेदयति । अभिद्रवति अभिमुखमायाति । तप्तमायसं लोहमयं शब्यं यस्य सः ! अतिकार्पग्यमाह काममिति कामं यथेष्टम् ॥ १० ॥

पराभवेगातिकुपितस्य द्रौगोः अपागडवं पागडवशून्यमिदं विश्वं कर्त्तु प्रवृत्तं ब्रह्मास्त्रमबुध्यत ॥ ११ ॥ अतएव वहुमुखं ब्रह्मास्त्रं तदागतमित्याह तहाँवेति ॥ १२ ॥

#### दीपनी ।

( एकस्येव ब्रह्मास्त्रस्य बहुमुखत्वात् पञ्च सायकात् इति ॥ १२ ॥ )

#### श्रीबीरराघवः।

भिक्षापनमेवाहपाहीतिद्वाभ्यामहेदेवानामपि देवहेजगत्पतेनिाखिलजगञ्चातः हेमहायोगिन्सूक्ष्मार्थदर्शिन्पाहिपाहिनविद्यतेभयंयस्मात्तवा भूतंत्वस्वसोऽन्यंनपद्येअदर्शनहेतुं वदंत्यन्यान्।विशिनाष्टियत्रत्वद्वचाति।रिकोषु परस्परंमृत्युः मृत्युत्रस्ताइत्यर्थः नहिस्वयमृत्युवदयोऽन्यमृत्यो स्त्रातंत्रमु रितिमावः ॥ ९ ॥

ननुर्कितवभयमुपस्थितंयस्मात्त्वंमयारक्षणीयेत्यत्राह अभिद्रवतीतिहेईशविभोतप्तश्चासावायसोऽयसोविकारःशरः,मामभिद्रवतिअभि

• मुखमागच्छतिहेनायसशरोमांकामंयथेच्छंदहतुममगर्भश्चयथामानिपात्यतांतयानुगृहाग्रोत्यर्थः ॥ १० ॥

तस्याउत्तरायावचोऽयधार्याकगर्यभक्तवत्सलोभगवानवबुध्यताध्यवस्यतः किमितिअपांडवंपांडवामावकर्त्तुामेदशरूरूपेगाद्रवत्द्रौगोरस्त्र द्रींगिप्रयुक्तंब्रह्मास्त्रमिति॥ ११॥

यथाभगवानेवमबुध्यततिहतथैवहेशृगुश्रेष्ठशौनकपांडवाअपिआत्मनोभिमुखमागच्छतः दीप्तान्पंचसायकान् शरानालक्ष्यास्त्राणिउपाद दुःजगृहुः॥ १२॥

## श्रीविजयध्वजः।

अयसोविकारः आयसः तप्तश्चासावायसश्चेतितथोक्तः शरः हननदीलोवागाः शरीरविनाशनशक्तिप्रकाशनायशायसेति अपरिच्छि ज्ञस्यतवगर्भरक्षगाश्चयसाधनमितिद्योतनायविभोइति नाथपेश्वर्थशक्तियुत मांयथष्ट्रदहतु जितिहि ममगर्भोमानिपात्यतामिति ॥ ९ ॥ १०॥ अगवानस्याउत्तरायावचउपधार्यश्रुत्वानिश्चित्यइद्मवानिमस्डलमपांडवंपांडुपुत्ररहितंकर्तुमुक्तंद्रौगोरस्त्रमबुध्यतेत्यन्वयः॥ ११॥ अप्यान्ति । १९॥ अथतर्श्चिबतदानीमेवपंचपांडवाः आत्मनोऽभिमुखान्ज्विलतान्पंचसायकानंतकरान्वाणानालक्ष्यानंतरमेवास्त्राण्युपाददुरित्ये कृष्ट अपूर्वालताम् समितंकुर्वतीतिसायकाः स्बुळ्यायादेशस्य ॥ १२॥

#### क्रमसन्दर्भः।

अभिद्रवतीत्यादी यान् प्रति प्रयुक्तः शरेस्त एव तं पश्यन्तीति शेयम् ॥ १०॥ उपधार्य्य सावधानं श्रुत्वा। तत्र हेतुर्भक्तवत्सळ इति॥ १२॥ १२॥

### सुवोधिनी।

तस्याभयोद्विद्यायावाक्यमाह । पाहिपाहीति । कायघान्श्यामेकाघपिद्यावनायनकमे निक्षपण्ठाव्दतः किंतु आत्मानपदश्यन्ती पाहीतिवचनात् आत्मानपहित्युक्तंभयितमहायोगिन्नितिसामध्ये प्रकारचवोधयतीवसंबोधयति सर्वात्मकत्वेनशरपक्षपातेपिसांप्रतदेवहिन्तकर्त्वेनतित्रराकरण्युक्तमित्याह देवदेवेतिरश्रकाभावाखाराजकराज्यसर्वरक्षायं चगमोरक्षणीयहितसंबोधयतिजगत्पतहितकर्थश्रवशुरादि कुविद्यमानेषुमामेवप्रार्थयसेहत्यतभाह नान्यामितिजगतित्वत्तः अन्यममयंभयर्गहतमेवनपद्यमृत्युव्याप्तत्वात्अभीतोहिक्तरण्योग्यः किंच् समानशीलव्यसनानांसक्यमपेक्ष्यते तत्रपरक्षपत्र्यातकत्वमत्याक्षयं ततोङ्गायतेकिश्चित्सर्वत्राविद्योमारयतीतिनतेषांशरण्यमनप्रयोजनापेक्षे त्याह यक्षमृत्युरितिअतक्त्वमेवशरणार्श्वहितमावः ॥ ९॥

प्रस्तुतमाहअभिद्रवतीतिईशेतिप्रतिकियायांमूलकानेचिवभोरितिसंघोधनद्वयंमृत्योरप्रतीकार्थपक्षेसमृत्युर्मोदहतुमेगभोमानिपात्यतांयोग

वलाद्वर्भपालयअनेनभक्तरक्षागर्भरक्षेवमुख्यानमद्रक्षेति बापितम्॥ १०॥

तप्तायसः द्वारः सत्यमागत इतितस्याः वचः उपघार्यनिश्चित्य उपघारग्रेहेतुर्भगवानितिप्रातिक्रीवायांहेतुर्भक्तवत्सल्इतिअपमा निताऽश्वत्यामातयाकृतवानित्याह अपांडविमिति इदंजगद्दपांडवंकर्त्तुद्रोग्याण्यातस्यभ्रम्भमवुध्यतेत्यर्थः अथवा एतस्यब्रह्मशिरसोयदस्त्रत्वक्षेपगा

धर्मत्वम् अपांडवंकर्त्तुमितिउभयषापिपांडवनाशार्थमस्त्रंप्रयुक्तमिति ज्ञातवानित्यर्थः ॥ ११ ॥

तस्मिन्नेवसमये व्यसनांतरमण्यागतमित्याह तहींवेति तहींवेत्यव्ययसमुदायः परमाश्चयंबोधकः मुनिश्रेष्ठेतिसंवोधनंविश्वासात् संवादहेतुः पंचेत्युभयत्रसंवदंतथासत्येकैकः सायकः पक्षेकस्थानेसमागतइत्युक्तंभवतिआलक्ष्यदृष्ट्वाद्योगोरितिबुद्धावा अस्त्रारयुपादबु रितिपरलोकशुद्ध्यर्थप्रतिक्रियार्थवाअस्त्राणिवद्धास्त्रादीनि ॥ १२ ॥

#### श्रीविष्वगाथचक्रवनीं।

त्वलोऽन्यम् अभयं न पश्यामि । परस्परम् एकस्य मृत्युरन्यस्तस्य मृत्युरपरस्तस्याप्यन्य इत्येवम् ॥ ९ ॥ नन्वभिमन्युना तेन पत्या विनापि जीवितं प्राथयसे न स्जासे तत्राह काममिति ॥ १० ॥ इदं विश्वमपाग्डवं कर्त्तुं प्रकृत्तस्य द्रौँशीः ॥ ११ ॥ पाग्डवा इति । यो यो हि पाग्डुवंशजः स पत्र पश्यति नान्य इति श्रेयम् ॥ १२ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

त्वत्रवत्तोऽन्यमभयं नपश्येवत्रत्वद्दन्ये ब्रह्मादिस्वतंषुपर्यतजनेपरस्परं सृत्युर्भवति सत्वद्दन्योजनः मांपातुं कथं शक्रुयादितिभावः॥ ९॥ तप्तमायसंश्रात्ययस्यसः मामभिद्रवितमामभिमुखमागच्छिति कामयथंच्छम् ॥ १०॥ बाक्षेवद्यास्त्रम् ननुगर्भमात्रविनाशेनिविश्वंपांडवशून्यंक्षयंभवेदित्यत्रास्त्रस्यवहुमुखत्वं सूचयिततर्ह्यवेति ॥ ११॥ १२॥

### भाषाटीका ।

हेदेवदेव हे जगत्पते हे महायोगिन पाहि पाहि। तुमसे भिन्न में इस जगत में किसी को अभय वहीं देखती क्योंकि जहां घरस्पर सब की मृत्यु होती है।। ९॥

विभोः तप्त लोहमय वाण मेरे अभि मुख दोड़ता है नाथ मुझे भलेही जलादे परंतु मेरे गर्भ को पात न करे।। १०॥ उसका वचन सुनकर मक्त वत्सल भगवान जानगये। कि यह इस जगत को पांडव शून्य करने को अध्यत्यामा का अस्त्र है।। ११॥ उसी समय पांडवों ने भी अपने सन्मुख आतं दीप्त पांच बाणों को देखकर अपने अपने अस्त्र उठाये।। १२॥

# श्रीधरस्वामी

व्रह्मास्त्रस्य अस्त्रान्तरैरनिवर्त्त्येत्वात् बुष्परिहरं व्यसमं वीक्ष्य । न अन्यविषय आत्मा येवां स्वैकिनिष्ठानामित्यर्थः ॥ १३ ॥ वैराट्या उत्तरायाः अन्तःस्यः सन् नव्भेमावृतवान् । तत्र हेतुः यसः आत्मा अन्तर्यामी । योगेश्वर इति विहःस्यस्यापि प्रवेशः घटनार्थमुक्तम् । कुरूशां तन्तवे सन्तानाय । पागडवानामपि कुष्वंशजत्वादैयमुक्तम् ॥ १४ ॥ यसनं वोक्ष्य तत्तेषामनन्यविषयात्मनाम् ।
सुदर्शनेन स्वास्त्रेशा स्वानां रत्तां व्यघादिभुः ॥ १३ ॥
स्र्यंतःस्यः सर्वभूतानामात्मायोगेश्वरो हारः ।
स्वमाययाऽवृश्गोद्गर्भं वैराव्याः कुरुतंतवे ॥ १४ ॥
ययप्यस्त्रं ब्रह्मशिर स्रमोधं चाप्रतिक्रियम् ।
वैष्णावं तेज स्रासाय समशाम्यद्रभूदहः ॥ १५ ॥
मामंस्था स्नेतदाश्वर्यं सर्वाश्वर्यमयेऽच्युते ।
य इदं मायया देव्या सृजत्यवति हंत्यजः ॥ १६ ॥

श्रीधरखामी।

खमोघम् अप्रतिकियश्च । समशाम्यत् संशान्तमासीत् ॥ १५॥ एतद्त्रसास्त्रशमनम् बाह्मर्थ्यं मा मंस्था न मन्यस्व ॥ १६॥

#### दीपिनी ।

सुदर्शननेति युधिष्ठिराद्दीनामेव श्रेयम्। परीक्षितस्तु गदया—अस्त्रतेजः स्वगदया विधमन्तिमिति भ्रामयन्तं गदां मुहुरित्युत्तरत्र यस्यमाखीन वाक्येनकवाक्यत्वात्। बहा स्वास्त्रपदेन गदा वाच्येति व्याख्यालेशः॥ १३॥ १४॥) (भृगुवंदयानाम् उद्वहः श्रेण्टः। भृगुद्वहः शीनक इत्यर्थः॥ १५॥ १६॥

#### श्रीवीरराघवः।

तदाऽनन्यविषयआत्मामनीयेषांतेषामत्रचरक्षकाणांपांडवाबांतद्वचसनंदुःसमबलोक्य विभुः कृष्णः स्वासाधारणेनसुदर्शनेनास्त्रण स्वानांपांडवाबांरक्षांव्यधादकरोत् सुदर्शनेनतान्सायकाधिरस्यपांडवान्ररक्षेत्यर्थः॥१३॥

ततः सर्वोतरात्मतयाऽवस्थितः आत्मांतः प्रविष्यधारकश्चभगवानतएवयोगेश्वरः निरतिशयस्स्मार्थदशींउत्तरागर्भप्रविष्टपांडवा ततः सर्वोतरात्मतयाऽवस्थितः आत्मांतः प्रविष्यधारकश्चभगवानतएवयोगेश्वरः निरतिशयस्समार्थदशींउत्तरागर्भप्रविष्टपांडवा स्वद्शींत्यषेः हरिः कृष्णाः कुरुततवेकुरुवृद्धाविस्तारार्थयैराट्याविराटपुत्र्याउत्तरायागर्भस्ययमात्मनेवावृक्षोद्धैगट्याउदरंस्वयंप्रविश्यतद्ग-

भीयथाब्रह्मास्त्रेग्णनहसेत्तथावृग्गोद्धभमासाद्यसुदर्शनेनास्त्रीच उद्धदत्यथः॥ १४॥ क्षयंग्रतिमदेवस्यात्रेम् स्वाद्यस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयंग्रतिमदेवस्य क्षयं क्

#### श्रीविजयध्वजः।

नअन्यविषयभारमायेषांतेऽनन्यविषयात्मानः तेपाम्अन्येषुभगवद्वातीरहितणीवषयेषुशब्दादिषुआत्मामनोनगच्छातियेषांतेरधोकास्तेषा-भितिवा पांड्यानांतद्वयसनविध्याविमुः सुदर्शमाख्यस्वास्त्रगास्वानांपांडवानांरक्षांव्यधादित्येकान्वयः॥ १३॥

सर्वप्राणिनामंतर्द्वदिसंस्थितः अत्माआदानादिकर्तायोगेश्वर्यवान्सहजाणिमादियोगेश्वर्यवान् सर्वोपायानामोश्वरोवाहरिःससारदुःखह सर्वप्राणिनामंतर्द्वदिसंस्थितः अत्माश्वरावादिकर्तायोगेश्वर्यवान्सहजाणिमादियोगेश्वर्यवान् सर्वोपायानामोश्वरोवाहिः ससारदुःखह रण्यदिलः कुरूणांसंतत्यविच्छेदायवैराटचाःविराटपुत्र्याः उत्तरायाः गर्भस्वमायवास्वयोगसामध्येन यथाब्रह्यास्त्रात्वे व्याव्याक्ष्मणेत्र आत्मा वृहितमकरोवित्वेकान्वयः ॥ १४ ॥

ग्राहतनपा । १५॥ यद्यपित्रह्माश्चारोऽस्त्रंत्वम्रोधमव्यर्थमप्रतिक्रियंप्रतीकाररहितंचतथापिवैष्णवंतेजआसाधसम्यगश्चाम्यदित्येकान्चयः॥१५॥ यद्यपित्रह्माश्चार्थव्यमानयार् च्छयात्रह्मादेजनत्त्र्वति संहरति स्वमंजनमादिरहितस्तिस्मन्सर्वाभ्ययंस्वक्रपेयच्युते विनाशरिह योमाययादेव्याद्यामानयार् च्छयात्र्यमामस्यानिचतयत्येकान्वयः॥१६॥ तहरीयतत्त्रह्मास्त्रोपशमनलक्ष्मामाश्चर्यमामस्यानिचतयत्येकान्वयः॥१६॥

医视觉性 化甲基磺胺甲基 的复数

# कमसंदर्भः ।

तत् इदित्यशक्यसमाधानं व्यसनं विपदम् ॥ १३॥

सर्वभृतानामात्मा परमात्मेत्यन्तःस्थः। तर्हि कथं चहिष्ठः तत्राह योगेश्वर इति। स्तेषु पारडवेषु या माया कृपा तथा। तामेव दर्शयति कुरुतन्तवे इति तैः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

# सुवोधिनी।

अत्रमगवतोपिकियासामर्थात्दूरापास्तपांडवानामितिवक्तुंभगवान्स्वभक्तानांरक्षामेवकृतवान्नास्त्रस्यप्रतिकियामित्याह नअन्योविषयः आत्मनियेषांस्वभावेन सर्वेविषयाभवंतुनामचित्तेतुभगवलुक्षण एवविषयस्तेषामस्ति अत"स्तद्वैतान्भूत्वाऽवती"ति विषयार्थमेवतेराक्षिताः तत्रसुदर्शनचक्रमलातचक्रवत्रारपांडवानांमध्येपरिभ्रमतिअतस्तेनतेषांरश्लाकृतवान्स्वानामितितेषांरक्षायांहेतुः विभुरितिसामध्येस्त्रास्त्रप देनबुद्धिपूर्वकरक्षाकरगात्वंसुदर्शनस्यसूचितम् ॥ १३ ॥

र्यानउत्तरागर्भेत्रकारांतरेगारक्षामाह अंतस्यइति गर्भेप्रविष्टस्यार्थस्यगर्भरक्षार्थमोषधेत्रायस्वैनमितिवत्माययागर्भशरीरमावृतवान् तत्र बहिःस्थितस्य आवरगांनसंभवतीतितदर्थे चन्वारिविशेषगाानिचतुर्विधमायाव्याप्तिप्रतिपाद्कानितत्रमध्यपवमगवान्स्यितः सुवर्णतेज्ञो वत्तंपालयतीत्याह अंतस्यइति सर्वभूतानांमध्येस्थितः।किंच अन्यस्यान्यपालनं सर्वथान संभवतीति गर्भरूपोभूत्वापालित वानित्याह किंच वहिरपितच्छरीरस्रार्थमाहयांगेश्वरइतियोगवलेनस्वयंतत्रशरीरास्त्रयोर्मध्येस्थित्वापालयतीत्यर्थः अन्यवाब्रह्मास्त्रशरीरसंबंधेदोषोवासंक्रमेदि ाते नतुकिमित्येवंप्रकारैःपालयतीतिचेत्तत्राह हरिरितिसर्वेषांदुःखहरगास्त्रभावत्वात् समुदायरक्षात्वेतत्तसाध्यास्वमाययास्वाधीनमायया ब्रह्मांडकोटिभ्रमानिवर्त्तकज्ञानाग्न्यावरकरूपत्वान्मायायास्तयावरणंयुक्त वैराट्याइतिसंवंधात्तस्योदरदाहोपियथानभवतितथाकृतवानितिल क्ष्यतेउभयवंशयोर्भकत्वात्पपारक्षितेत्याह वैराट्याः कुरुतंतवेशतितंतुः परंपरापालकोवा ॥ १४ ॥

ननुब्रह्मास्त्रंगभेष्रयुक्तंदाहकैकस्वभावत्वात् तत्रासमर्थमन्यत्कुतानदहति तत्राह यद्यप्यस्त्रमिति सत्यमुक्तंसर्वदाहकमेतत्महादे वस्यापि पिशाचत्वंयतोजातंतत्त्रह्याशिरः ब्रह्मगाःपंचमंशिरः तस्यगुगाद्वयसहजममोधंसर्वदाकार्यकरोतीत्यर्थः अप्रतिक्रियंचनविद्यतेप्रति क्रियाप्रतिक् लिक्याव्याव त्तकियावायस्येति तथापि किचिद इतं जातमित्याह वैष्णावंते जआसा होति यथा व्याघोमंत्रवलेनगौर्भवति तथा परम सात्त्विकविष्णवंतेजः आसाद्यप्राप्यसम्यगशाम्यतशांतमभूत्प्राकृतं देहंप्रज्वाल्यभगवद्भावापन्नंबेष्णवंदेहंज्वालयितुंप्रवृत्तंसत्म-ध्ये वैष्णवंतेजआसाद्यतद्रूपंसत् तदैक्यंप्राप्तवादित्यर्थः तत्रविश्वासार्थमाह हेभृगुद्वहेतिसृगुणांहिपूर्ववैष्णवानिर्णयः कृतः अन्ययाराज सास्तामसाश्चभक्त्याभगवत् संबंधेप्राप्यसात्त्विकाभृत्वाकथंसायुज्येप्राप्नुयुः॥ १५॥

नन्वस्त्वजीवानां मुक्तियोग्यानांशास्त्रसिद्धस्तात्तयास्वं ब्रह्मतेजस्त्वचेतनंदेवताधिष्ठितंमंत्राधिकारिरूपंकथमन्यथाभवेत् तथा सित भगवतायुद्धे प्रयोज्यमानानांत्रह्यास्त्रादीनांतथात्वंनस्यात् अत्रचपरीक्षितः पांडवानांचरक्षगात् महदाश्चर्यमिदंवृत्तमित्याशंक्याहमामंस्था इतितदाश्चर्यमामंस्याः एतदाश्चर्यमामंस्याः कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तु समर्थत्वात्नहिस्रष्टांतव्यास्यादिनामगवतिपदार्थं निर्णायः कर्तुशक्यते "अलैकिकास्त्येभावान तांस्तर्केण्योजयेदि"तिवाक्यास् किंच सर्वाश्चर्यमयेविरुद्धसर्वधर्माणामाश्चर्य अगवतिअलैकिकसर्वपदार्थमये किमार्श्वयनहोतद्नयस्याच्यते किंचच्युतिरहितः स्वयमात्मनएवात्मानं सर्वच्युतंकरोति तत्रकिमेतदाश्चर्यमिति किंच मायानामकाचिच्छाक्तः पूर्वितिरूपितासाचदेवतामायास्त्ररूपभूतातया किलविश्वं मृजतिअवतिहंतिचपकंवस्तु असहाय एकस्यैवअनेकभाव संपादयतीत्यर्थः किंच अत्रव जायतेविरुद्धधर्मसंबंधेऽपिनपूर्वधर्मनिवृत्तिः॥ १६॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

ब्रह्मास्त्रस्यास्त्रान्तरेर्निवार्ष्यत्वात् तथा एकेन ब्रह्मास्त्रेगा पूर्व्ववदर्ज्जनप्रयुक्तेनापि प्रतिजनाभिमुखमागतस्य पृथक्पृयग्ब्रह्मास्त्रस्य दुर्निवारत्वात् तत्प्रयोगीदिकालंविलम्बासहत्वाद्य व्यस्तं दुष्परिहरं वीक्ष्य विचार्य्यं न्यस्तरास्त्रोऽपि सुदर्शनेनेत्यादि । तेन स्वप्रातज्ञा-अङ्गेनापि भक्तवात्स्वयनामानमसाधारणं स्वधमी ररक्षेति भावः॥ १३॥

अन्तःस्थ इति वैराट्या अपि अन्तर्यामिरूपेगा स्थितोऽपि योगेश्वरः योगवलेन हरिरिति कृष्णारूपेगा प्रविश्य गर्थमावृगाति आवृत्य स्थितो ररक्षेत्यथः। स्वमायद्या योगमाययेति वैराद्या तु तथाभूतत्वेनाविज्ञात इत्यर्थः। कुरूगां तन्तवे सन्तानांय। पागडवा अपि कुरुवंशजा एवेत्येवमुक्तम् ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

# सिद्धांतप्रदीप।

क्षंचिद्रज्ञनः खात्मानं पूर्ववद्रक्षितुं राक्नुयद्विनान्येशकुयुरित्यतस्तेषां श्रीमत्सुद्शीनेनरक्षां व्यथादकरोत् ॥ १३ ॥ हिरि: स्थानन्यजन्तुः खहरणस्त्रभावः योगश्वरः। द्रुरस्यभक्तमनोरथ सपादनदक्षोपि सर्वभूतानामात्मातयोमी। सर्वत्ननित्यंप्राप्तः अतएव अक्तवात्सव्येनगृहीतः । सूक्ष्ममंगलमूर्तिः प्रतिगृहीतचक्राद्यायुधः वैराट्याः विराटपुत्र्याः । अंतः स्थः प्रवकुरुतंतवेतत्संतानायस्वयग्रभ

आमीयमनिष्फलम् । अप्रतित्रियमप्रतिभदम् । वैष्णावंतेजः सुद्दीनादिक्षमासाद्यसमशास्यत् । सम्यक्शांतमासीत् ॥ १५ ॥ अभावणाः सर्वमाश्चर्यमयंयस्मिन्सतथातस्मिन् । एतवुद्रे । आविभूयगभरक्षणां वहुमुखब्रह्माख्यसमनमाश्चर्यभिति । सामस्यामन्यस्य । इद्देशिचित्रं

विश्वमाययाखशकिभूतया॥ १६॥

कुंत्युवाच ॥

BERTHARD TO THE STATE OF THE ST

**建筑的** AND THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE

The state of the s

Managam Malitary and the Control of the Control of

ब्रह्मतेजोविनिमुक्ती रात्मजेः सह रूपाया । प्रयागाभिमुखं कृष्णमिदमाह पृथा सती ॥ १७ ॥ नमस्ये पुरुषं त्वाद्यमोश्वरं प्रकृतेः परम्। ऋबक्षं सर्वभूनानामंतर्वाहर वस्थितम् ॥ १८॥ मायाजवनिकाञ्चनम् ज्ञाघोऽक्षजमव्ययम् । न बस्यसे मूढहरा नहीं नाट्यघरा यथा ॥ १९ ॥ तथा परमहंसानां मुनीनाममदात्मताम्। भक्तियोगविधानार्थि कर्णं पद्यमहि स्वियः ॥ २० ॥

# or distribution in the state of the state of

A THE STATE OF THE PROPERTY OF THE STATE OF अपने ( अगवान ) सो छोड़कर नहीं जाता है अन्य विषय में मन जिनका उन पांडवां का व्यसन देखकर । अपने सुदर्शन अस्त से यपने मक्ता की एसा विधान की ॥ १३ ॥

सर्व भूतातमा योगीश्वर अंतस्य हार ने कुरु वेश के विस्तार के निमित्त विसट तनया उत्तरा के गर्भ को अपनी प्राया से आवरता 上行近1755年建设的军门军队。 的复数数据数据数据 医多克尔氏征 医皮肤病

हें भुगुढ़ह ! यद्यपि ब्रह्म शिर अस्त्र अमोघ है और उसकी प्रात किया किसी शस्त्र से नहीं होती है तथापि वैच्यावतेज को प्राप्त and the state of the second होकर शान्त होगया ॥ १५॥

सर्वाध्ययय अञ्युत मे तुम इसका कुछ आश्चर्य मत मानो । जो भगवान देवी माया से इस जगत को सुजते हैं रक्षा करते नाश करते हैं उनेमें यह पया आश्चर्य है ॥ १६ ॥ Extended of the control of the contr

# भारता के कार्य के किया किया के किया किया किया किया किया किया क

त्वात्वां नमस्य नमस्करोमि। नजुकानेष्ठं मांकण नमस्करोपितत्राह आरापुरुषम् कुतः प्रकृतेः परम्। तत्कृतः इंश्वरंप्रकृतेरपिनियंतारम् भत्रपद्म सर्वभूतानामस्तर्विहिश्चपूर्यात्वेत्रावस्थितं तथाष्यलस्यम् ॥ १८॥ २०००

तत्रहेतः सायैवजविकातिरस्करिणी रूपावयाभाच्छत्रं ( प्रतिच्छत्रमः ) अतोऽहमहामक्तियोगानभिक्षा केवलनमस्यामि। अप्रामधजन देद्वियज्ञानेयस्मात् तम् अध्ययम् अपरिन्छित्रम् । तत्प्रपंचयति सूदस्यादेदाभिमानिनापुसात्वनलक्ष्यसेत्॥ १९ ॥

किञ्चपरमहस्तानाम् आत्मानात्मविवेकिनांततोमुनीनांमननशीलानामपि ततश्चामलात्मनां जिल्लन्तरागादीनामेपि तथातेननिजमहिसान लक्ष्यसे । अतोसक्तियोगीविधार्तुं स्वावयंख्रियः कर्यहिपद्येम । यद्वापरमहस्तानामपि भक्तियोगविधानाय त्वामआत्मारामान्मुनीनपिअधित्य निजगुर्वा बक्र स्थमिक योगं का रायतुम् अवतीर्वामत्यर्थः ॥ २०॥

THE RESTRICT OF THE PROPERTY O

अव्यक्तिकानिक्तिकानिक्तिकानिक्तिकानिक्तिकानिकार्यः॥ १९ ॥ २१ ॥

# श्रीवीर्राववः।

March March 1988 And Charles of the March 1988 And 1988 A तताबद्यांतजसाबद्यास्त्रेणाविनिर्मुकौरातमजेर्युधिष्ठिराविभिः सच्यायाद्रीपद्याच्यसहस्रतीपृथास्त्रंतीधयाणाभिसुचेकृष्णमस्यं वस्यमागामासः १७ तदेवाहिनमस्यदेतिराहिंगात्याप्रयागामिमुलंकुषामवलोक्यताहरूक्षमसहम्रानातंततोर्गनवर्त्तयित्लौकिकोऽपिकश्चिद्रगाहर्यापुमानाशिता श्रहातुमुत्सहत् परममारणस्यस्यात्रशास्य विविधविचित्रशक्तः स्वर्णमात्राणकृताद्वयेदिष्यतनाराश्रितवात्सल्यजलश्रेराश्रितार्त र्वा स्थात प्रतिकायसुस्व स्थयोगपार गृह्यमनसेवगोच रस्याविद्यातिचकीर्षितस्य सर्वतारीयकस्यस्य सहतो ऽचित्यविविधाविचित्र चेष्टितस्या त्रतावस्याचनारस्यतवपदांचुत्तधेतंष्णतास्माक्षशर्याम्भवत्यतः क्षयमनेन्यात्मकोस्मातिवहायगंतुस्यक्षेत्रको विश्वापयतितञ्चनायकोष्टिकपुरुपवे जासकापनायानिकः साधारगोर्डसर्वि राष्ट्रनमस्कर्णित नमस्यशति आर्णसन्त्रभाकादगामकतः परमपुरुषमा इनस्त्वातमस्यरासि नमस्यशति आर्णसन्त्रभाकादगामकादगाम । पूजयामीत्यथः तमः राश्चात् "शक्षवेरकळहास्रकण्वसेधध्यः कर्त्यो हत्यतः करण्यहत्यत्वतंत्रात् "नमाचारविश्वत्रङः क्यस् "इतिक्रणेत्यथेकयञ्या सत्याचाः सत्याचाः त्रामित्युक्तमः अनमः प्रसाकि चित्रमत्त्रविषद्यपतेश्रयतेषिया अतुर्विष्ठस्य त्रिक्षाण्यनारायाः दियतः होतश्रुतिरुपवृद्धिसामचीन अजनहे कराविरो तामत्यः वामत्यः भामवभागिम्हानिष्ठानिष्ठातिस्यावरातानामेतविष्ठिश्वस्यान्यनियंतृतयावस्थितमित्यर्थः प्रकृतेःपरत्येतेत्रकात्वव्यत्रस्यतेवरूपः भामवभागितिस्य ते हर्यक्षस्य असमिहरू जावस्थितमञ्ज्यसम्मासस्यम् ॥ १८ ॥ [ ## ]

#### श्रीवीरराघवः॥

न्त्रहतुःमायःअवनिकाच्छन्नंमायैवजवनिकानेप्थ्यंतद्वत्तिरोधायकत्वात्तत्याजीयाद्वानरूपयाहेतुत्रृतयाद्धन्नातिरोहितीर्मोद्वयाविषयामिति यावत् कि सर्वेवामध्यतिदियंनेत्याह् अक्षेति अक्षजाद्देदियदृत्तयभधोऽभ्रजायस्मात्सोऽधोक्षजः देदियदृत्यविवयः अक्षेतामनुपासकानाम ञ्राक्षजमञ्जाषोऽभ्रजंतत्रहेतुर व्ययमिति नव्येतिविविधंविकारंगच्छतीत्यव्ययं विविधविकारमाजप्रवाह्यसुकाविष्णयत्वोद्धकारेगध्यज्ञहत्येषः अनेनेतरस्च्यतेयोगविशुस्मनस्। नुद्राह्य इतितथाचश्रृयते"नच्युगएश्यतिकभ्रानेननमांसचश्रुरभिवीक्षतेतंरद्यतेत्वग्यूयाबुद्धाास्क्रम्यास्क्रम् द्वशिभिः इदामनीषामनसामि प्रत्यव्वविश्व" रित्यादितदे शहनलक्ष्यसमृदृहश्चीतयोगापरिशृञ्जधियानलक्ष्यसेनस्रयसेननुसर्वैरपिष्टश्यप हासीइत्यत्राह नटोनाट्यथ्रशेयथानटोयथाहर्यतेतथाहरयसङ्ख्यशेः यद्धामुद्धसाजानताषुसानाट्यथ्रशेनटोयथानलस्यते अयमेदं विधरति नशायते कित्नाटचोपयुक्तवेषविशिष्टत्येवदस्यतेतद्वतः अनेनाशाधासजहत्यनेनचयोगपरिशुस्त्रमनोप्रास्रोऽपरिशुस्त्रमनसात्वप्राह्य एति तत्र नलक्ष्यसेद्रत्यनेनाम्राह्यत्वमुपपादितम् ॥ १९ ॥

अथपरिशुद्धमनोत्राह्यत्वंवदंतीयोगानधिकारिगयोऽपरिशुद्धमनसःस्त्रियोवयकग्रजानीमहत्याहः तथेति तथातथाहीत्यर्थः सुनीना सदा त्वत्स्व ६ एमन नेशीलानाममलात्मनीविशुद्धमनसीपरमहंसानीमिकयोगीविधानार्थम् अर्थशब्दोऽत्रविषयोभूतपदार्थवाची भक्तियोगप्रपञ्चस्या धीववयभूतं भक्तियोगरद्यंत्वां स्थियोवयं कथपद्येमहिजानीमहि तर्हिकिजानासीत्यपेक्षयानर्टनास्यथरंनारयोपयुक्तनामस्यादिविद्याष्ट तयैवजानतेनतुतस्वतो ऽयभेतज्ञातिनामरूपगुणकद्दिततद्वदस्मित्रवतारेयानिकृष्णावासुदेवदेवकीनंदनादिनामानि यदवपंकजनामाध्वयदो पेतंतान्येवसर्वेषामेव समानानिकवलंजानीमध्य्यभिप्रायेगा उक्तनामरूपविशिष्टं नमस्कारोतिकृष्णायेति स्त्रोकद्वयं निगदेनैवन्यास्या सम् ॥ २०॥ २१ ॥ २२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

ब्रह्मास्त्रतेजोमुकेरात्मजेर्येषिष्ठिरादिभिः पुत्रैः संह संतीसाध्यो ॥ १७॥

साराज्यावृत्तयेआद्यंपुरुषमिति हिरगयुगर्भव्यावृत्तयेई श्वरमिति जगत्मुष्ट्यासैश्वर्यवत्त्वनततोव्यावृत्तमित्यतः प्रकृतेः प्रसिति एततत्स र्वकुतहत्युक्तमलस्यामिति लक्षगायावृत्यापिक्षातुमराक्यं तहिंशून्यप्रायमित्यतं उक्तं सर्वमावानाम् अतविहिष्यतत्सवीम तिश्चते बाह्यस्यक्रथ्य तर्वहिश्चव्याप्यस्थितत्वमित्यतंउक्तं भूतप्रलयेऽपिश्चवंनित्यमविनाशितम् ॥ १८॥

द्वांनमस्येदृत्यप्रोक्षतयोक्तस्यक्षयमलभ्यत्वमितितत्राह् मायेति हेअधोक्षजवशीक्षतेन्द्रियजीवस्वगुगाच्छादक्षपरमाच्छादकोभयविध मायास्यतिरस्कारिगयाच्छक्रस्त्वंमूदद्वाविपरीतक्षानयामर्थयामयालस्यमागोऽपिनलस्यते यथानाटचधरोनटोसस्यमानापितसंगुरुयासभिन -थळक्षितकथाविशेषाञ्चेननरेगानलस्यतेतथा तस्मादलस्यस्वमित्यर्थः॥१५॥

क्षितकथाविशेषाञ्चनन्रग्रानलस्यततथा तस्मादलस्य राजागाजनः ॥ ८०॥ इतोऽपिमादशीनांत्वदर्शनमसुशकामिन्याद्द तथेति अमलात्मनाम् अविधाकामकमोदिमलगहितमनसां मुनीनांसर्वेद्धानां प्रसद्देसानांसनका क्रीनांभक्तियोगविधानार्थभक्तियोगकरगाविषयंत्वांतेऽपिपद्यंति तथारागाविमस्यःस्त्रियोवयंक्रणस्त्रांपद्येग्रहीत्येकान्ययः स्त्रीषुतारतञ्चिक्र षद्योतनार्थमात्मनेपदप्रयोगः॥ २०॥ -and the state of the first of the state of t

क्रमसन्दर्भः। क क्षानातीतस्त्रात् सर्वत्र स्थितत्वेऽपि । अव्ययं तन सह नव्येतीति। मार्यत्येतत् प्रपंचयति नर्लक्ष्यस हतिसाक्षकम् ॥१९॥ तथिति तथाच सतीस्यर्थः। अमहात्मनां भुनानां मध्येये परम हंसा आत्मारामास्तेषां स्वप्रम संपादन प्रयोजनक त्वास ॥ २० ॥

ne de la companya del companya del companya de la companya ण्यं भगवतासर्वेरक्षिताः अत्रक्त्यादीनामेवंप्रमजसात्राः वयंसर्विवषयार्थेरक्षिताइतितयास्मित्रवर्णेरक्षशामितिमत्वासक्त्युपयोगार्थेनेतद्वव विवारीमार्थोयतेमगवंत क्रेतेतुम्पक्रमतंद्रत्याह ब्रह्मतेजावितिम् विभागतीतुस्यसेवकतार्थीकरिष्याते उत्तरांच अतोक्रोपद्यासंहर्षके ात्वावभागां भिष्युष्यम् अकेकार्यकृत्वागच्छ्नं वस्यमागामाहः तत्रहेतुः सतामितिसतामयंवर्भः यद्भक्तार्थभवसर्वजीवनाहि ॥ १०॥

चक्रपगुर्याठी लादि बुधदुर्धेयत्वलक्ष्योः जन्मकारम् निर्माएफलदैन्य निर्मार्थने हुपोके राष्ट्रथास्ताषीश्रमस्कापुर सरम् सक्वात्रक्षतस्यात्रा अवेद्धणान्ये अविविद्धांतत्रस्य प्रमाशिवासे अस्य हित्यात्वां प्राते येनमस्कारस्या नुवितत्वसाश्चाक्यस्य प्रमाहपु सर्वद्धणान्ये अविविद्धांतत्रस्य प्रमाशिवासे अस्य हित्यात्वां प्राते येनमस्कारस्या नुवितत्वसाश्चाक्यस्य प्रमाहप स्यसर्वोत्त्रस्वाद्धस्वोध्यमग्रस्याराचो वित्यमाद्यास्यास्यास्याते प्रवमहात्वात्रात्मस्वनहातुमेवनमामीत्यर्थः हर्यसानावेक्षयात् चित्रवाहेवार्याः प्रार्थकथना वृद्धपत्रिया श्रीक्यहर्यमां तप्रधानं तुरू यं चवदन्तमस्थती तिभावः आध्यमुरू मृत्येवयमितियाचतः स्वयुक् प्रार्थकथना वृद्धपत्रियाचे विकास स्वयुक्तमा स्थानी तिभावः आध्यम् रूप्तिवयम् सितियाचतः स्वयुक्तमा सितियाचतः स्व भारताहरूम् । प्रतिविद्यास्य स्वकारसात्वां सपितु कपत्थमुक्तं स्वाभीष्ट सिद्धार्थकप्रयमाहरूभ्य रेष्ट्रकृतेः प्रतमितिर्देश्यस्यमिति । कल्यान्तवप्रकृतेः स्वाभितिर्देश्यस्यमिति । कल्यान्तवप्रकृतेः सार्थाः क्रक्तित्वम् पताद्यक्यसर्वजनीमत्वसर्वमुक्तिप्रस्ताः वेदानविष्यध्येजस्यादितत्वर्थमात् अलक्ष्यः सर्वभूतानाधितिप्रत्यस्ति। मुद्रमित्यतः क्रक्तित्वित्वत्वरायस्य । 

## सुबोधिनी ।

स्वप्रकाशं गुरुशाचालस्यतद्दति "आचार्यवान्युरुषोवदे तिश्चतेः ततश्चनवेदवैयर्थ्यनवास्त्रेमुकिरित्यर्थः वस्तुतस्वायं दुर्हेयः ससाधनांत तराभावादिति "यस्यामततस्यमतंमतंयस्यनवदसः अविद्यातंचिजानतांविज्ञातमविज्ञानता" मितिश्रुतेः यस्यब्रह्मचक्षेत्रचरभेभवतओदनः मृत्य्यंस्योपसे चनंक इत्था वेदयत्रस" इतितस्मात् वृद्धेयण्यमगवान् कितत्त्रप्रार्थनयेतितत्रा इसवैभूतानामतर्वहः स्थितमितिभगवान्सर्वत्रवर्षः त्ञानंचतस्यसुलभंबापकगवदुर्लभः सर्ववस्तुनिवस्तुखकपत्वात्सर्वञ्चकप्रमंत्रीवरुक्षभंवीघायतस्मात्सवेत्रविद्यमानस्वाद्भगवज्ञानंसु लभमिति॥ १८॥ 🐃

नचुत्रथास्तिकथनसर्वः प्रत्यक्षीक्रियतेषटादिवत्तिष्ठोहमायाजवनिकाच्छक्रमितिमायैवजवनिकातिरस्करिग्रीअंतः पटइत्यर्थः तया आद्यक्षसर्वयस्तुनिवस्तुस्वकपत्विपियाययाम्यथामासमानत्वात्नप्रत्यक्षीक्षियतद्वर्यथेः अतप्यममापिवहिर्मुखत्वात्नक्षानमित्यक्षा नेजुनसर्वे सर्वत्रभ्रांताः कितुकचिदेवकाश्चित्रवाषसद्दक्षतेद्रयजन्यत्वाद्भ्रमस्यथतः कदाचित्रिर्दुर्द्धरिद्वियैर्घटचद्गुह्यतेतिचेचत्राह्यधोक्षजमितियधः ्रथक्षज्ञानयस्मात्इंद्रियजन्यक्षानंभगवंतंनविषयीकरोति"परौजिखानिव्यत्गातस्वयंगूः तस्मात् पराङ्गपदयतिनौतरात्मन्कश्चिद्धीरः प्रत्यगा त्मानमेक्षदावृत्तं बक्षुरखतत्वामञ्छामि"तिश्रुतेः अतोवस्तुस्वकपत्वोपनोद्वीयप्रत्यक्षत्वंगमवतः ननुसर्ववस्तुनिवस्तुस्वकपत्वमञ्जपणंसर्ववस्तु नांनाराप्रतियोगित्वात्कारणात्वेपिकारणात्वंगच्छेत्याधारत्वम्थाधयत्वेष्याधयत्वमितिवतो ऽधमेक्रपेण्यमेक्रपेण्वात्ययसंबंधसंमवातः क्षर्य ब्रह्मत्वमत्रबाह् अञ्चयामितिसर्वेरूपत्वेपितव्ययेविनाशित्वेषिकस्यमेत्वेनाकत्वात् तस्माभितुंष्टेपूर्गागुर्गावप्रहत्वीनमस्यरति नेसुतारशप्वस गवाहं चेदवर्ताणः तदास्वप्रत्यक्षमांकथन्त्रानीयुः धर्माणामपिखप्रकाशत्वात्तत्राहनस्यसर्शतमूहरशानस्यसेननुप्रत्यक्षः कथेनल ह्यतेत त्राहनटोना स्यघरोयथेतियधानटः स्त्रीरूप्रकटयन्वहिमुखेनेह्नायतेपुरुषद्वितधानटमाचेप्रकटयन्थाविभूतोभगवस्वेननहायतहत्यर्थः 11 28 11

नुआविभीवान्यवानुपपत्यासर्वेषांकापनार्थमेवाविभूतः इतिकथमुच्यतनकायसङ्गिनिहिसग्बान्यंचनार्थमाविभूतोरसजननायवेत्यार्श क्याहतकापरमहंसानामितिमग्वान्मीक्तयोगार्थमाविभूतः वेदान्क्रपीश्चावतार्थित्वातैः ससायवेश्चानेउत्पक्षयदिश्चमकार्यतमर्थमवतीर्धाः तत्वानेसन्यासीऽगयतः सर्यावाधकत्वात्"सन्यासयोगात्यतयः शुक्रसत्वा"इतिश्रुतेः अष्ठाहद्रीषाजनना चतद्रत्यमननमगश्चिमव निष्पत्रत्वात्तव तुनिदिध्यासनयुक्तानांचनिदिध्यासनेहिचिसेकाप्रयंतत्रभगवृद्धिर्घारोवातत्रांतरंगभगश्चातः करणोतेषांकानाधिकारिकांकाताः क्षानानांवाभक्तियोगव्यतिरेकेगाभगवज्ञानंसायुज्यवानभवतीतितयाथवतिर्गोमत्यर्थः हंसास्तुविविककाक्षानवंतः केवलमात्मानमेवशेपद्य तितेषस्महंसाः यद्यपिसर्वेनित्यपद्वतिनथापिरसिकानाभेवरसीत्पत्तिः नाहेनपुंसकानीस्त्रीगावास्त्रीरूपेगानृत्येकियमागार्थमारस्सर्वत्वया ्र प्रत्युतस्वसमानधर्माविष्कारंकत्वाविदंवयतीतिखेदंउत्पद्यतेतयासाधारगास्त्रीपुरुषागादियांशानांचरसीनंबार्माकार्यकार्यतेत्वस्वनार्यन्दळी " ळांकहोतीतिस्त्रियोत्वर्धतानीमः प्रत्युतळज्ञाकार्योचस्महोषहेतुरूपंप्राक्षळ्यात्वीषयुक्ताः परभविष्यामद्रत्यर्थः॥ २० ॥

# the state of the s श्रीविश्वनाथचक्रवसी ।

🖰 ्क्याया द्रीपद्मा सह । सती वैष्मात्री ॥ १५॥..

ज्ञात लान् कालिक श्रीकृष्ण सर्व हत्या कुती हृद्य दितस्य तन्महैश्वर्थस्य वेशं सोहुमगार्यती स्तौति तमस्ये इति । कि भाक्षेयं सा नमस्यसि तकाह पुरुषम्।ननु पुरुष प्रवासिमकोऽश संदेह स्तवाहश्रायम् । ननुदेहानामेवागमा पायित्वं पुरुषो जीवस्त्वाद्य प्रवस्तिस्तञाह र्दृश्यरम्।। ततुस्वर्णे ६न्द्र। चन्द्राच्या भूमी राजानोऽपि ईश्वरा उच्यन्ते तत्राह प्रकृतः परमाक्रिसहम् अन्तरीमि पुरुषः। न । अलस्यम् । अत बामि बुद्धावादि प्रकाश स्टब्स एव ॥ कि ब्रह्म न ॥ अन्तर्वाहिश्च अवस्थितम ॥ १८ ॥

यस्मायन्तरक्षु स्थायानम् स्थायानम् अर्थास्य स्थापमा स् त्राक्नोमीत्याह । मायैवजवनिकातिरस्करियातयामाञ्ज्यम् नजुकिमायामामावृद्योति तत्राहशक्कामेघाञ्छत्रं सूर्यमहंनपद्यामीतिवन्साय ्रामहुरस्याच् आदनात् रहास्यवाच्छक्रपश्यामीरयथः यतोऽधाक्षजं अधः रियतमक्षजं ब्रानयस्यतिपद्वियक्कानयस्याधः रियतमेवकस्प्रब्द्वमभ जारा है। वाही त्याह मेर्नियु वक्षणानवती अवैव भचमार शनिकुष्टजननाक्षे यत्ये तवकापिक्षतिदित्याह अञ्चयमिति । नतुमांसाक्षात् पश्यसिस्तोषिप्रकृतेः अवार्ण विकास स्वार्थका स्वारमानं विमितिनिवसि इत्यतश्राहन्स्यसी इति नाट्यधरः मीवमानगीतप्रवायोभिनयरसाचुकपन्त्यताङादि प्रत्येमजानासितव्यवासित्यासमानं विमितिनिवसि इत्यतश्राहन्स्यसी इति नाट्यधरः मीवमानगीतप्रवायोभिनयरसाचुकपन्त्यताङादि प्राप्त कार्या है। विकास कार्या कार्या कार्या है। विकास कार्य के कार्या कार्या कार्या कार्या कार्या कार्या कार्या कार्या कार्य कार्या ावार्यः । ह्यपुर्विगोवान्वयः। पाग्डवात्स्यस्मकान्यालयश्रापसब्दिनस्मित्सपिसुहुरस्यश्र्वत्यामादि पाग्डववधार्थमस्त्रं त्राहरासिस्सर्यस्य स्तरास्त्रोऽपिअस्त एन इन्यान्य विष्णुकार्यक्षेत्र सीष्माकृत्से हाएयसि द्वीपद्वास्य विस्तृत्वकृषि तृत्युत्राम्यात्यस्त्येवमादिकात्वलीलार्कितत्वेत्यहं मृह्यास्य विष्णुकालम्बद्धनोशीय सीष्माकृत्से हाएयसि द्वीपद्वास्य विस्तृत्वकृषि तृत्युत्राम्यात्यस्ति विष्णुकार्य लंडा भूमारियां ।। १९॥

क्षीजातेमम्कानातीसर्वेशासुनयः परमहस्ताथपियञ्जालामायुर्येनकृष्याभजन्ययतद्भजनतस्वमण्य विक्रस्तिलालाम्भीकार्यतीतयाह वहमिति ॥ अमुळीत्सनांगुर्याम्यमारिष्याचिष्कांतानां जीचन्युक्तानामित्यके । तेषामविभाक्तयोगविभानमधीः प्रयोजनंबस्यते यदुक्तस्—आरमाः वहमिति ॥ अमुळीत्सनांगुर्यामयमारिष्याचिष्कांतानां जीचन्युक्तानामित्यके । तेषामविभाक्तयोगविभानमधीः प्रयोजनंबस्यते यदुक्तस्—आरमाः रामाभाष्यादो सुर्वस्य हेत्वनी परिकामिति॥ २०॥ 

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनंदनायच । नंदगोपकुमाराय गोविंदाय नमोनमः॥ २१ ॥ नमः पंकजनाभाय नमः पंकजमालिने। नमः पंकजनेत्राय नमस्ते पंकजांघये ॥ २२ ॥ यथा ह्षीकेश खलेन देवकी कंसेन रुद्धा सुचिरं शुचार्पिता। विमोचिताहं च सहात्मजा विभो त्वयैव नाथेन मुहुर्विपद्गगात् ॥ २३॥ विषान्महाननेः पुरुषाददर्शनादसत्सभाया वनवासकुच्छूतः । मृधे मृधेऽनेकमहारथास्त्रतो द्रौग्यस्त्रतश्चास्महरे भिरक्षिताः॥ २४ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

षृथाकुतीइदंवक्यमाग्रामाह ॥ १७॥

स्वात्वांनमस्येऽहं । नमस्करोमि । नजुन्नातृपुत्रंयुधिष्ठिरभीमाभ्यांस्वपुत्राभ्यामपिकनिष्ठंकस्मान्नमस्करोषितत्राह । आधामिति । किंप्रवानं नेत्याह । प्रकृतेः परंपुरुपमिति । किंकमिपजीवविशेषेनत्याह । ईश्वरमिति । नजुजीवेषुकेचिदीश्वरा अपिसंतितनमस्करोषिकिनेत्याह सर्वभूतानामंतर्वहिरवस्थितमिति"अतः प्रविष्टः शास्ताजनानां यश्वकिचित्र जगत्यस्मिन्दस्यतेश्चयतेपिवा अतर्वहिश्चतत्सर्वेद्याप्यनारायगा स्थितः म्यिसर्विमिदं प्रोतंस्त्रेमणिग्गाइवे"त्यादिश्चतिस्मृति प्रतिपाद्यंपरंतत्त्वमित्यर्थः तिहसर्वेत्रकुतोमांजनानपर्यतितत्राहः। अलक्ष्यमिति साधारगौश्रश्चरादिभिरप्राद्यमित्यर्थः "नचक्षुपापश्यतिकश्चिदेन" मित्यादिश्वतेः । योगशुद्धैः करगौस्तुभवदनुप्रहमाजनोभवंतपश्यत्येवेति भावः "तमकतुपदयतिवीतशोकोधातुः प्रसादानमिहमानमीशं हश्यतेत्वग्ययाबुद्धशासूक्ष्मदाशिभि" रित्यादिश्चतिश्यः॥ १८॥

भायावृतत्वेनालपद्यत्वेनात्मनोदैन्यंनिवेद्यंती। अनावृतत्यासगवंतेविशिनिष्टः। मायात्रिगुणासैव"अंतेसिराजवनिकास्यात्स्यासिरस्क रिम्मोचसे" तिकोशाज्जवनिकाच्यवधानपदीतया अञ्चलमनाञ्चतम एतदीशनमीशस्यप्रकृतिस्योपितद्गुमाः नयुज्यतेसदात्मस्थैर्ययातुः द स्तदाश्रयेति । विल्जामानयायस्यस्थातुमीक्षापयेमुयेतिचवक्यमागात् अधोक्षतम् । अधोऽक्षतमिद्रियजन्यंशानयस्मात्तंसवैश्वम् । अव्य यं निर्विकारम् अहमशाअल्पशाजीवस्यमायाद्यतस्याश्चोजातुरित्याविवास्यैरश्चत्वावगमात् । नमस्येशतिपूर्वेगान्वयः । ननुधृतराष्ट्राविभिस्त्व त्युत्यः पांडवकृतेपंचप्रामयाचनायसभायां प्रविद्धतद्रप्रदानेनासत्कृतंमांकिमेवंनमस्करोषीत्यत्राह नेतिनाट्यधरः मुढहर्ण्यनादानायस्बन्नगति चेष्टावान् नटः खरूपेणैवावस्थितः सृदृढशानलस्यते यथातथात्वमपितस्यदुर्शतस्यैश्वर्ये जिहीर्षुः खरूपेणैवावस्थितः सर्वेश्वरोयमिति मुद्धशानलक्यसेस्म ॥ १९ ॥

किचेतावस्थेनतुकोपित्वांनजानातीत्याहः तथेति यथानंताचित्यस्वरूपगुगाराज्ञाद्याश्रयस्तथा परमहेसानाम् आत्मामात्मविवेकवर्ता त्र वर्णवर्षणावर्यणावर्षणावर खुरा गञ्जुत्पद्यतेनमनोनविद्योयथैतवनुशिष्यादिश्चतेः नमेविदुःसुरगगाः प्रभवनमद्द्येयद्यति श्रीमुखोक्तेश्च ॥ अतः खियोवसं गण्या गण्युरपयत्मनगणप्रमाप्तरप्रप्रयोग । अश्रयदिपरमहंसैकश्वात्मादि विवेशैनेकश्यसेतर्हि विवेशार्थमननपरैनेलक्ष्यसेहति भक्तियोगबिधानार्थमक्तियोगंविधातुंत्वांकर्थपश्येम । अश्रयदिपरमहंसैकश्वात्मादि विवेशैनेलक्ष्यसेतर्हि विवेशार्थमननपरैनेलक्ष्यसेहति किसुवक्तव्यमित्येवसुतरोत्तरंकीमृत्यन्यायोक्षयः॥ २०॥

# आषा टीका।

. अध तेज विनिमुक्त अपने आत्मजों की और द्रीपदी को संग लेकर प्रयाणाभि मुख श्रीकृष्ण की कुंती देवी ने यह कहकर

र पान का अपने का का का ती हैं।। १८॥ ﴿ श्री कुत्युवाच ( आदाई श्वर प्रकृतिसे पर पुरुष अलक्ष्य सर्व भूतोंने अंतर्व हिस्य तुम को नमन कर ती हूं।। १८॥ स्तव किया ॥ १७ ॥ ए अन्य कुल्युनाच ए आद्यक्रमर प्रकारण ने अ मायारूप जवनि कासे छक्त अधी क्षज आप को अज्ञा में केवल नमन करती हूं मृद्ध रुष्टि अभिमानी, पुरुषों से आप नहीं लखे जा

तह । जैसे नाट्यपर नट को मृद नहीं छख सके हैं ॥ १९ ॥ । जला गाट्यवर गट का मृद नहा छल राजा । ऐसेही परमहत्त अमलमन मुनि जनों को भाकि योग विचानार्थ आप प्रगट हैं तब सक्ति योग विचानके अर्थ हम खीय आपको कैसे हेव सकती हैं॥ २०॥

# श्रीधरस्वामी

क्षानभ्रत्तवीरशक्याकमुक्तवापुतः केवर्जनसंस्करोति ग्रन्थायेतिहाङ्ग्याम् ॥ २१ ॥ काराज्यामीयस्य । पंकजानां मालास्तियस्य । पंकजावत् प्रसावेतेत्रेयस्य । पंकजाकितावंद्रीयस्यतस्य ॥ २२ ॥ प्रकारणात्त्रकृत्यम् । अग्रम्थः स्मानुताऽपि मञ्यधिसातवश्रीतिः । तथादिद्देद्दपीकेश यथा देवसीकंसेन्द्रहा हत्र्यम्बन्यः पुत्राहिष्ठताः अस्तिकान्योत्तायस्तस्याः अहत् विषद्गामातः तत्रापिसृदुः श्रीघ्रं वसारमजा च त्वयैवसाधेनेति ॥ २३॥ चित्रापत्तीत्रचतस्याः पुत्राहिष्ठताः अस्तिकान्योत्तायस्तस्याः अहत् विषद्गामातः तत्रापिसृदुः शीघ्रं वसारमजा च त्वयैवसाधेनेति ॥ २३॥ स्ति। प्रमाणकार्यस्य । विवादः सीमस्यविवसीवनवानातः । महाग्रेः जतुमृहदाहातः । पुरुषावाहिडिवादयोगक्षसास्तेषां वदानात् । विवद्गतामवद्गीयति । विवादः सीमस्यविवसीवनवानातः । महाग्रेः जतुमृहदाहातः । पुरुषावाहिडिवादयोगक्षसास्तेषां वदानात् । अस्त स्थापाद्मतस्थानात् । अभितापश्चिताधास्मश्चमवामः॥ २५॥

∽<del>ङ्</del>

#### द्वीपनी ।

जगत् कारगता माह । नमः पंकजनाभायेति । पंकजंलोकात्मकं पर्धानाभीयस्य अपरिष्लेद्यतामाह पंकज मालिने इति। एवंभूतानां पंक क्रानां माला श्रेगी। यस्यास्ति अशेष ब्रह्मागडाधार इति व्याख्यालेशः॥ २२॥ ३६॥

# श्रीवीरराघवः।

नन्बवतारदशायामयोगपरिशुद्धमनोभिरपिस्वैर्देश्यमानस्यभगवतः कथमलस्यमहाधोक्षजंनलस्यसेमुद्धशेत्युक्तम् "नमांसचक्षरीभवी अतितनचक्षुपार्यतिकश्चनैनामित्यादिभिः श्रुतंचाहदयत्वमिति चेश्वसंवैदेवमनुष्यादिसाजात्येनहद्यमानत्वेऽपित्वद्विलक्ष्यात्वेनाहद्यत्वाद्विः स्रतितनचक्षुपापद्यतिकश्चनैनामित्यादिभिः श्रुतंचाहद्यत्वमिति चेश्वसंवैदेवमनुष्यादिसाजात्येनहद्यमानत्वेऽपित्वद्विलक्ष्यात्वेनाहद्यत्वाद्वि ्र लक्ष्यादश्वनमेवह्यलक्ष्यमित्यादिमिः प्रतिषिच्यतेनदरुष्टांतेनापितदेवावगतव्यंजानत्याअपिकथंपद्येमहिस्त्रियदत्युक्तिलॉकपरिपाट्यभिप्रायिकाय तस्त्वसाक्षात्प्रकृतेः परः परमपुरुषईश्वरस्तृतप्वास्यामवतारदशायामपिस्वभावमजहत्स्वासाधारगान्धर्मान्दर्शयसीत्यमिप्रायेगाह यथेति हेह की केश खलेनदुरात्मनाक सेनचिर शुचादा किनापितानित्यापिताशोक प्रापितितियावत्याचे देवकी यथाविमोचितातथा ऽहमपिसपुत्राहे विमोस वैशक्तित्वयैवनाथेनविपदांगगान्मुद्वविमोचितार्षिकिमेतस्यनेत्यादिविमोचितेवत्यर्थः अनेनस्वार्थनिरपेक्षपरदुःखनिराचिकीर्षोक्षपंछपाछत्वम् आश्चितानिष्टपरिद्दर्तृत्वंनिम्नोन्नतानादरेगााि तमातपश्चपातित्वंचप्रदर्शितमितिफिलितम् ॥ २३॥

कोऽसो।विपद्रगाः यस्मारवंविमोचितत्यत्राहिषुषादिति महाग्रेलीसागृह्यनेः पुरुषादानांराक्षसानांदर्शनाद्रयात्वनवासकुरुष्ट्रतः वनवास क्छेशात् मुश्रेम्हघेप्रतियुद्धमहारथानामस्रेश्यः द्रीणयस्रतः ब्रह्मान्त्राद्धहरेरक्षिताःस्म अभवाम विषादिश्योरक्षग्राप्रकारोमहामारताद्वगं तच्यः विस्तरभयाचात्रालिख्यते ॥ २४ ॥ STATE AND THE SERVICE STATE OF THE SERVICE

# श्रीविजयध्वजः ।

्र ताहर्खीगाभिगवदुपासताभावनतत्त्रानाभावानमोक्षा भावइत्याराज्यतत्स्तृतिरेवअपराक्षणानजनकतयाभोक्षसाधिकेत्यभिन्नत्यकृषास्ती तिकृष्णीति ॥ कृषतिविक्षितिदारयतिमोहपटलमितिकृष्णाःतस्मैनमोनमः नीलोत्पलदलश्यामलायवा वसुनादीन्यतीतिवसुदेवः आनकर्ह राष्ट्र स्थापा है। कुभिः तृष्ट्राण्ड्रण्यासुदेवःतस्पैशक्षित्वसञ्चाच्छादनशतिधातोः इदंजगद्दाच्छाददीव्यतीतिवासुदेवः तस्पैशतिवा बलासदेत्यनिरसन् शीलकीडा ्रियापासंपञ्ज वाराइतिवा देवकोल्ह्मीःतानद्यतुर्शालमस्येतिदेवकोनदनः तस्मैनदगोपनाम्नोराष्ट्रःकुत्सितंकुष्टमार्यतिनाशयती ्रिनंदगोपकुमार । तस्मेपुरागांतपसिद्धार्थमवलंग्यकीयतोयमथेः धन्यःप्रसिद्धः गर्वाविदेलाभोयस्यसत्यातस्मे गर्वाविदेनलक्ष्यसंद्राति गोबिन्दरतिवा ॥ २१ ॥

पंकर्जनाभीयस्यसत्यात्समे पंकाज्जनंजननंयस्यतत्पंकजनंपदातत्काभवतिवाभिभवति वासातित्वा पंकजनाभःतस्मैपंकजे रिवितामा काइस्यास्तीतिपंकजमाळीतस्मै पंकजदळवन्नेत्रेयस्यसत्यातस्मै पंकजैएचितारेखातस्कांऽब्रियस्यसत्योक्तस्तस्मै ॥ २२ ॥ हाथीं कहा हो हिया गानिय कि सिताया मिति धातोः कंसेन हिसादा छिनख छेन हो है या एमे गानि खिर कारा गृहे रुखा शुन्या पितादेवकी त्युवायण

विमोचिता हिविसोसहात्मजापुत्री सहिताऽहत्वयैवनायेनविपद्रगात् मुह्विमोचितेत्येमान्वयः॥ २३॥ विषद्गणीविविज्याह विषादित्यादिना हेहरे वयं भीमायदत्तात्कालकूटविषात इत्युह्वाहप्रत्युक्तमहापनेः पुरुषादानाहिङ्विषक्षिमी श्राद्धीनांदेशनाङ्गस्यावस्तांदुर्योधनादीनांद्रोपदीकेशग्रहणादिनिदितकमेणांसभायाः वनवाससंकटान्मृधेमृधेरगोरगोश्रनेकेषांमहारथानां तामाद्यकातः तथाद्यवत्थाम्नाब्रह्मास्त्राम्बल्ययाऽभिरिक्षताऽऽस्मदृत्येकान्वयः तस्माद्रहमद्यत्यारारांगताऽस्मीतिवाक्यशेषः॥ २४॥

# **क्रमसन्दर्भ**ाः

तदेवं भूतोऽपि त्वमहो अस्माक मित्थं सुखदं स्तापहारीच संवृत्तोऽसीति तत् तत्स्मृत्वा नमस्करोति कृष्णायेति ॥ २१॥ हरू । के सुखदत्व तापद्याशित्वरूपं निजस्यभावं प्रकटयश्चित्र पंकजाभैतिजांगैर्वियाजसे इत्याद नम इति । पंकजाकारं भगवछ हस्सा ह्यादी यस्य । पंछजे इव अझीयस्य ॥ २२ ॥ ।। एटर प्राप्ति । स्थाति। त्वरोमेति वलदेवस्थाप्यस्थन्न पक्षपात दशेतेन खपुत्रादि साहारयमपि त्वदनुष्रहेग्रीतिसावः॥२३॥ स्वताप हारित्वमेव दशेयति पथेति। त्वरोमेति वलदेवस्थाप्यस्थन पक्षपात दशेतेन खपुत्रादि साहारयमपि त्वदनुष्रहेग्रीतिसावः॥२३॥

असत् सभाया द्रोपदी वंख वर्धनिदना ॥ २४॥.

# हिंही हिंती ।

वर्वस्य क्षेत्रस्थारायान्त्रवद्दती सर्वसंबेधेतनमस्यतिक्षणायितं नामात्राचपुत्रत्वयात्येतसम्बर्गायानिकपाणितान्यवसगवाद्यविकाः वर्वस्यक्षणस्थारायान्त्रवद्दती सर्वसंबेधेतनमस्यतिक्रणायिति नामात्राचणुत्रत्वयात्येतसम्बर्गायानिकपाणितान्यवसगवाद यवश्यक्षक्षण्य प्रस्कृत्यावतीर्थोशित ज्ञातेनन्मस्करणीयामि भवतियथामद्दाः प्रश्लीपादशायां सेम्बक्तेलज्जयानमस्कारकहोतिलोकः वार्थस्यसर्वेतवयाम् प्रस्कृत्यावतीर्थोशित ज्ञातेनन्मस्करणीयामि भवतियथामद्दाः प्रश्लीपादशायां सेम्बक्तेलज्जयानमस्कारकहोतिलोकः वार्थस्वरम्बद्धतिवयाम् प्रस्कृत्यान् मलमगणिहस्यअनिकपरोक्तनस्कारशीर्थोत्यक्रिकेन्द्रस्थान्तिलोक्ति 

# सुबोधिनी ।

तरमोचयन्तद्भगिनीमिपमोचयेदितितथादेवकीनदनायेतिदेवकीमोचयन् तम्रनन्दामिपमोचयेदितिचकारात्पितुभामकमोचयन्तरपत्नीमापे भोचयेदितिपांडवीप्रयायेतिनमस्करग्रीयंरूपंतथादूरसंबंधेऽपिमोचयेदितिवस्चदेविमत्रसंबंधमाहनंदगोपकुमारायेतिकुमारः पालकपुत्रः स्कांदे तथोपळब्धेः गोपसंबंधेनापिमोचयेदितिगोपपदं सन्मार्गवर्त्तिनांसर्वेषामेवसर्वामोष्टप्रदेशति गवामिद्रायद्दन्द्रनस्त्वाभिषेक्ष्यामहाते वचनात् गाविदायेतिनिगमादस्यसिद्धिः निगमनिरुक्तव्याकरग्रीक्षेधापदसिद्धिः गोविन्दइतिचाश्यधादितिनिगमस्थानीयंवसतीवरीवत् निगमनाद्वेराक्त रादरात् अनेनसंबंधमोचकत्वंगुर्खोऽप्युक्तः॥ २१॥

गुणांतरानाहनमः पंकजनामायेति जगत्कारणत्वभूषितत्वरूपाश्रयत्वसुखसेव्यत्वगुणैनमस्यतिनमनंहिस्वरूपेगुणेवानलीलादौरसावेशा त्पंकजनाभीयस्थेतिवद्यपितृत्वंपंकजमालिनेइतिलक्ष्मीपितत्वंसाहिविवाहेनवपंकजमालां प्रक्षिप्तवतीपंकजनेत्रायेतिसर्वपातत्वंवद्यतास्या दकत्वेनामृतवर्षगाद्वापंकजांद्ययद्दतिभक्तिप्रवर्तकायसर्वजनकत्वेनसर्वमुत्पाद्यापिप्रयञ्छेत्ऐहिकामुष्णिकप्रयञ्छितमक्तिचातिगुगाः॥ २२॥

लीलामाहित्रिमिः यथेति मुख्यलीलाहृषीकेशेतिसर्वेषामिद्रियागांनियामकत्वेनभर्तृवद्रमगात्त्वत्तः सर्वेन्द्रियप्रीतिमनुभूयतद्वसाभिनि विष्टाः केवानतमेयुरित्यर्थः किंच तवेषामहतीलीलामातरंपितरंचखलेनवंधनंकारियत्वावहुकालं च तुःखानुभवंचकारियत्वापश्चानमाचय सीतिअतस्तद्पेक्षयावयमेवकृतार्थोइतितवैषालीलावकुमण्यशक्याभक्तमोचकस्यगुगात्वेऽपिलीलागुह्यागुगापवत्यात्वेतकर्त्तवः यथासल्न कंसेनदेवकी च रुद्धासतीत्वयाबिमोचिताअतिचिरंशुचार्पितापिविमोचिताशोकमपिदूरीकृतवान्तथाहचचकरात्यशोदानंदयोरपिमाथिषुन विशेषोऽप्यस्तीत्याहसहात्मजाअनेनममात्मजाआपिमोचिताः तस्यास्तुभवानेवात्मजइतिनात्मजांतरापेक्षाअथवातस्यावहवःपुत्रामारिताः म मत्वेकपवेति तद्विपरीतत्वंमयिकथमेवं करगांतत्राहविभोइति हेसर्वकरगासमर्थे किंच त्वयैवनाथेनत्वमेवनाथोभूत्वामोचयसे अथवा नाथेनसहसामोचिताअत्रतृतदभावात्त्वमेवनाथइत्यर्थः तवनाथभवननाथमोचनयोराद्यप्रवश्रेयानित्यहमुत्तमालीलायांविपशितकथनमध्युत्त मम् किंच विपद्गगात्मुद्धः सानमोचिताकितुवारद्वयमेवअहंतुवाव्यादारभ्यवारंवारंविमोचितेति किंच विपद्गगात्मविपदांसमूहात्यक स्यासापदिगगाशोष्यन्याक्षापदः समायांतिताभारतेप्रसिद्धाः॥ २३॥

ताआपदोगगायतिविषादित्यादिः भगवत्वेनसर्वेकर्तृत्वात् विषादाविपमोचकत्वमुक्तंविषात् विषमोदकात् सपैविषाचमहाग्निक्षांसागृहे हिडिवादयः पुरुषादाः तेषांदर्शनेजातेऽपिरिक्षताः असत्सभायाद्रीपदी निग्रहेकवरेकेशाकर्षगादौ वनवासकुच्छतः द्रौपदीहरगादुर्वासः प्रसृती नावनवासकुच्छतः इतिवनेऽपिराज्येश्वर्यदानात् तद्वयुद्धे मुधेगोग्रहणामारभ्यअद्यावधियावतः संग्रामाजाताः अनेक्यान्यस्थानियावयः ापपापाप र प्रथा र प्रथा । वास का का कि का के ता के वास वास का सार साम प्रथान प्राप्त का का का का का का का का क तेषांत्रहास्त्रादिभिः भगदत्त्वकर्णादीनांत्वप्रतीकार्यताभवद्रक्षाचतत्रैवसिद्धासारक्षानप्रार्थनयावाधकस्वकृपात्रानात् अत्रवाहित्यस्ति । तौरक्षिताः स्मः ॥ २४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अतः सर्वावतारेषुमध्येत्वमेवातिश्रेष्ठइत्याह कृष्णायति । तत्रापियाँस्त्वेस्वीकरोषितैष्वपिप्रेमवत्सुधन्येषुमध्येमद्भाताआतेष्यस्योगस्ते अतः सवावतार्युम् व्यापार्याः । अधिकप्रेमवतीदेवकी धन्यायातेमातित्याह । देवर्कीनन्दयसितदीयगभैस्थित्वातां सर्वते।ऽपिसमृद्धिमती पितत्याहवासुदेवायति । ततोऽ पिअधिकप्रेमवतीदेवकी धन्यायातेमातित्याह । देवर्कीनन्दयसितदीयगभैस्थित्वातां सर्वते।ऽपिसमृद्धिमती पितत्याहवासुद्वायात । तता । प्राचनात्र विश्व । नन्दगोपस्यकुमारायकीमारलीलामाधुर्ययस्पवास्वादयामास्पतिभावः । ततीऽपिक करोषीत्यर्थः । ततोऽप्यधिकप्रेमवान्नन्दोधन्यइत्याह । नन्दगोपस्यकुमारायकीमारलीलामाधुर्ययस्पवास्वादयामास्पतिभावः । ततीऽपिक कराषात्यथः । तता अया वयानगरा प्राप्त । तताशिष्ठातोऽपिवजस्थस्यतवकैद्योरलीलामाधुर्यमधिकमित्याहगाविदायिति । केद्योखसम्पवा मवताधन्यायशादत्यात्रमत्राकवश्यतः । नापा मिन्नेकानन्तरं गोविदः नाम ख्यातेः तदेव गाः सर्वेषां सर्वेन्द्रियागि विदसे आरुष्य प्राप्नोसीत्यर्थः । असाधारणयन तदास्वादकजनास्तु रहस्यत्वेन स्वीयरसास्वादना नौचित्येनच नोट्टंकिताः॥ २१ ॥

अहंतुतेषां मध्ये नगगानीया तरपि मन्नेत्र सुखदोऽसीत्याह नमः पंकजेति । तव नाभि माला नेत्राहिषु पतितामे हिष्टः सुखर्गितला भवतीति भावः ॥ २२॥

किश्चीहमातिदीना त्वरा मातेव पाछितेत्याह यथेति । हे हपीकेशेति मदन्तः वस्यां त्वमेव जानासीति भावः । अरुश्च तथा सोजिला किन्न सहात्मजीत मिथ विशेषेण तब द्या। तत्र हेतुः शुचापिता शुचायां शोक एव मत्करमणा अहमपिता इति तस्याः सकाशाद्रण्य किन्तु सहात्मजीत मिथ विशेषेण तब द्या। तत्र हेतुः शुचापिता शुचायां शोक एव मत्करमणा अहमपिता इति तस्याः सकाशाद्रण किन्तु सहात्माप्य । किञ्च त्वयेव नाथेनेति तस्यास्तु नाथो घसुदेवो विद्यते इत्यपत्यान्तरोत्पत्तिसंभावनाया विद्यमानत्वात् त्वञ्चापत्य-हमांतदुः।खनात्वाः। विष्याः। विषयः। विश्वाः। किश्वाः पुतः पुनरपि यो विषदः गुणस्तस्मानमोचिताः सा तुः चुलामिष्याः जिन्यते स्ति चन्नेत्वन चनिताः सा तुः चूडाभाणारभूरण । विष्दुगन्ध एवं तस्मादेव मोचिता तत्रापि मद्गर्भे प्रसेश्वरी जनिष्यते हति मनीऽनुलापसुखासिमानचत्याः सकृदेवं बासहेतुको यो विष्दुगन्ध एवं तस्मादेव मोचिता तत्रापि मद्गर्भे प्रसेश्वरी जनिष्यते हति मनीऽनुलापसुखासिमानचत्याः सकृदाव वाल पड़ । इतो विषद्गम्बोऽपि तदनन्तरं विपत् कापि तस्या नामृदेवेति अहमेव सर्वतोऽज्यतिदीतेति मयि तव दीनवनधुत्वादेव द्या न स्वहं इतो विषद्गम्बोऽपि तदनन्तरं विपत् काणि तस्या नामृदेवेति अहमेव सर्वतोऽज्यतिदीतेति मयि तव दीनवनधुत्वादेव द्या न स्वहं विवकीवनविध वेमवती भाग्यवती वेति भावः॥ २३॥

कावपः। विषद्गरामिष दर्शयति । विषाद्मीसस्य विषमोदकदानात् । महाप्रजेतुगृहदाहात् । पुरुषादा हिडिस्वादयो पाक्षसाः । असःस-

भाया द्युतस्थानात् ॥ १४॥

विपदः संतु नः शश्वतत्र तत्र जगद्गुरो । भवतो दर्शनं यत्स्यादपुनर्भव दर्शनम् ॥ २५ ॥ जन्मेश्वर्य श्रुत श्रोमिरेषमान मदः पुमान्। नेवाहत्यभिघातुं वै त्वामाकेंचन गोचरम् ॥ २६ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

अतो"ब्रह्माचेदाप्रोतिपरम् क्रांत्वामांशांतिमृच्छती"त्यादि श्रुतिस्मृत्यनुसारेग्राभगवंतंक्रात्वाप्रेम्ग्रानमस्करोति।कृष्णागेतिद्वाभ्याम्।२१।२२। अध्ययितिद्वाभ्यां भगवत्कृतोपकारान्समरति । यथात्वयादेवकीविमोचितातथाहंचविमोचितेतिसामान्योाकः तत्रविशेषदर्शयति सात् शुंचापिताकसहतपुत्रशोकव्याप्ताशुचिरंखलेनदुरात्मनाकंसेनरुद्धांसर्तासकृद्धिमोचिता । अहंतुविपद्गगात्सहात्मजामुहुः । शीघ्रं च विमो ु चित्रतिमानुतस्तवमयिक्रपातिशयदातिभावः॥ २३ ॥

तदेवाह । विषातकामकोष्ट्याख्येगंगायांस्थाने द्वयांधनेनभीमायदत्तात् । महाग्नेर्वारगावतेत्रामेजतुगृहदाहात् । पुरुषाददर्शनात्पुरुषा दानां हिंडिववक्रजटासुरादीनांदर्शनात् । असत्सभायाधूतस्थामात् । बनवासकच्छ्तः बनवासेप्राप्तात् । बहुविधारक्षेशात् । मधमुधेऽनेका महार्थास्त्रतः । प्रतियुद्धमनेकानां महारथानां भगदत्तादीनांविष्णवस्त्रादिश्यः । द्रीयथस्त्रतः । छत्रनापितरहत्तदृष्ट्वाप्रसुपितनद्रौाणनासवेषां नाशायप्रादुष्कृतान्नारायगास्त्रात् ब्रह्मास्त्राच । हेहरत्वयाभितः परितोराक्षिताः । आस्मभवामः ॥ २४ ॥

#### भाषा टीका।

कृष्णा वासुदेवको देवको नंदन को नंद गोप कुमार को गोविंद को नमी नमः॥ २१॥

पङ्कजनाम कोनमः पङ्कजमाली को नमः पङ्कज नेत्र को नमः पङ्कज समान अग्नि को नमः॥ २२॥ हिंहिषी केश ! बल कंसने चिर काल से रुद्ध की और शुवा पित देवकी की जैसे आप ने रक्षा की थी क्या ऐसी ही मेरी रक्ष की है नहीं मुझपर देवकी से बहुत अधिक छपा है मुझे पुत्रों सहित तुम्हीं नाथ ने बड़े बड़े विपद्गा से रक्षा की है॥ देवकी की जार काल के पकही बेर रक्षा की है मेरी वार २ की है उसके पुत्रों की रक्षा नहीं की थी मुझे पुत्रों सहित रक्षा की है उसे वसुद्व भैयाने प्रमुख्या किया। था। मेरे तुम्हीं एक नाथ हो जब जब विपद हुई हैं तुम्हीं ने रक्षा की है। माता से भी अधिक मुझपर तुम्हारी कृपा है २३ र है हैं ! भीमसेन को विष के छड़्डू खिला दिये थे उसमें लाहा भवनकी महाश्रानिसे हिडिवादि राक्षसों से चूत समा से बनवास

क बहुत से कुशों से और संग्रामों में अनेक महारथों के शस्त्रों से और वहां आरवत्थामा के ब्रह्मास्त्र से आपने हमारी रक्षा को है ॥ २४ 🖟

# श्रीधरसामा ।

युत् यासु विषद्सु । कीहरां दर्शनं नास्ति पुनरापे भवदर्शनं यस्मात् तत् ॥ २५ ॥ भू । अभियातं-श्रीकृष्ण गाविदेति वक्तुमधि सम्बद्धते । जन्मादिभिरेधमानी मदो यस्य सः । अभियातं-श्रीकृष्ण गाविदेति वक्तुमधि श्रक्तिवनानां गोचरं विषयभूतम् ॥ २६ ॥

# श्रीवीरराम्ब किल्ला कार्या

्यद्वति । विषद्भागिना एकत्वन्तदेवच्चविषयद्थादेवति अञ्चलोरत्याभिष्रायेगाह विषद्दति हेजगदगुरोतच्चारेवत्सदातास्त्वयानिरसनीयाथाः श्रितानांविषदः संतु असतांनतित्रसम्ताययत्नस्वयाकायद्तिभावः यद्यचपुनर्भवदर्शनभवतावर्शनस्यात्नविद्यतेपुनभवस्यसंसृतेर्दर्शनयस्याः श्रिवाणाः विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्रस्थात्। विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्ते। विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्ते। विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्ते। विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्ते। विषद्ः संतुनामअशोदेवतांत्रपुत्ते। विषद् शासूरामान्यः । जन्महम्भाश्वरश्चनाहित्वामवसर्वेऽपिमामेवविधंकिनवदंतीत्यतथाहजन्मेति ऐश्वर्यशब्दीधनपरः श्रुतशब्दोविद्यापरः जन्मश्वयंशुर नन्त्रप्रमान्यति विद्यानिष्ठाभिः समृद्धिभिरेधमानः मदोयस्यसपुगांस्त्वामभिधातुनचाहिति त्रिमदोन्मत्तत्वेनश्वरपरयास्थात्म्यावन्त्री सत्कुलप्रसम्बद्धताविद्यानिष्ठानिक्षितिविद्याक्षित्रपाकित्रमानिक्षित्रपाकित्वनाः निःकामोस्तेषांगोञ्चनः सत्कण्याः अतहतामवस्यायित्विशिनाण्टभकिचनगोचरनारिताकचनयेषात्वाकचनाः निकामास्तेषांगोचरम् ॥ २६॥

# अनिजयध्यज्ञ ।

भगवत्स्वरयाबिसेशिसापृत्परेपर्यायाः भगवद्देशनकरविपृत्परेपरैवश्रेयसीभगवद्दरीनहेतुत्वादतः संपद्श्योभेषद्देशनकरिष्ट अगमण्डा । १९ १५ । भवदशतकाष्ट्रित । हेजगरपतेनोऽस्याकैतञ्जलञ्जासासि। स्किट्यापालेशुनिरंतरं विषदः संतु यासुयासुविषस्य रिस्पिनसाक्षाः कर्तित्वाताविज्ञापयाति । विषयस्य विषयस्य स्थिति । विस्थास्य विषयस्य स्थिति । विस्थास्य स्थापालेश्वर । १६ ॥ कसम्बाद्याः । वर्षां संस्थादिति यद्यस्मात्तसम्बद्धाः स्युरितिवाक्यशेषः ॥ २५॥ वर्षायतीत्यपुत्तभवद्यानस्यातिवाक्यतिवाक्यतिवाक्यत्वातिवाक्यतिवाक् वतात्यश्रणाः संपद्धनानिषद् श्रयस्त्वकुतइतितत्राहः जन्मेति अभिजतेश्वयशास्त्रश्रवगाजानिताविद्याश्रवश्रीमवैद्येमानमद्ः पुमान्श्यानावस्यः संपद्धनानिषद् स्रात्यत्वामित्रात्वामिभभात्वसम्मणलक्षमामेननस्मतिवानाकैः वैग्रस्यास्तरम्

संवज्ञ या। वार्यस्थापितास्थित्वासीभभातुवस्य प्रवस्थापेतन्तस्य विवस्यास्य स्थातस्य स्यातस्य स्थातस्य स्य स्थातस्य स्यातस्य स्थातस्य स्यातस्य स्थातस्य स्यातस्य स्थातस्य स्यातस्य स्थातस्य स्थातस्य स्थातस्य स्थातस इतियानः ॥ २६ ॥

### क्रमसंदर्भः।

विपद् इति।दर्शनमवलोकनम् यत् यासु । अपुनर्भवम् अन्यत्रकुत्रापि ईष्टशमाधुर्योभावात् पुनर्ने जातं दर्शनं सम्यक्पतीर्तियस्य तत् अपूर्विमित्यर्थः ॥ २५ ॥

महिधसम्पदस्तु त्वत्सम्बन्धमात्रपरिपन्थिन्य इत्याद्य जन्मेति ॥ २६ ॥

# सुवोधिनी।

पर्वनानाविध्वलिया भगवत् छतांरक्षांप्रतिपाद्यलीलायाञ्च तकर्भवक्तुं रक्षापेक्षयाञ्चापद् ग्वसमीचीनाइति क्षुधितस्याज्ञभाजनसुस्र वत्विपत्पीडितानांभगवद्दर्शनानंदोदुर्लभइति लोकानांविपदामनिष्टत्वे ऽपिमक्तानामिष्टसाधनत्वात्ताः प्रार्थयतेविपद्इति एषाभगवतो विपरीतलीलाञ्चापत्सुपरमानंदंप्रयच्छतितद्भावेपरमानंदितरोभावंकरोतीति तत्रयत्रैवस्थीयतेगम्यतेच नतुकथमेवं निर्द्धारः क्रियतेविपद् ग्वसंत्वितिकुतः शिक्षितमेतत्तत्राहजगद्गरोइतित्वत्तप्तत्तिशिक्षतंयद्विपदः समीचीनाइतिअंतर्थामितयाप्रेरणाद्वीहरण्युपपत्तिद्देशनाञ्चयद्या सर्वप्रागीनांसिक्षितप्रकारमाहभवतोदर्शनंयतस्यादितियाभ्योविपद्भयः दर्शनंयस्यस्यात् तवेवफल्कपदर्शनान्वयन्यतिरेकाभ्यामिदमवगतम्

नविद्यतेपुनर्भवस्यदर्शनंयस्मात् पुनः शरीरंनपश्येदित्यर्थः अथवा अपुनर्भवानांजीवन्मुकानांदर्शनंयस्मात् ॥ २५ ॥

एवमद्भतळीलामुपपाद्यदुष्टदुर्श्वेयत्वमाहचतुर्भिःजन्मैश्वर्यति भगवतोहिनवप्रकाराधमीश्वेयाः नवविधमिकहेतवः खरूपगुणादिप्रका देगाभित्राः तत्रखरूपेशातेश्रवग्राभवीतगुणेषुश्रातेषुकीतंनमवतिलीलायांशातायांस्मरणस्पवमेकःसंद्धः द्वितीयसंदेसमीपगमनपूजनवंदनदास्या नितृतीयसख्यात्मनिवदनेतत्रदुष्टदुर्शेयत्वादीनांतत्रतत्रकारणतामुपपादियण्यामः तत्रप्रथमतावत्दुष्टदुर्शेयत्वनिरूप्यते तत्रजन्मसांकुले के व्यर्थराज्यादां अपितेर्ने शायतेतावत दुष्टानांवाधककायवाङ्मनोव्यापारासांदर्शनात्मगयत्समिपंनगच्छेत् शातेतुपुनः अधीनपद्यतीति अक्ष क्षाताऽपिनद्रष्टव्यमितिवत् अस्मद्रुद्धीनांवाधप्रतीतिरितिद्वितीयेखंडेप्रवर्त्ततेशतः पद्सेवनार्धेदुष्टदुर्श्वयत्वंनिरूप्यते तत्रजन्मसत्कुरूपेश्व उर्युराज्यादौश्चतंशास्त्रादौ श्रीः संपत्पताभिरेधमानोमदोयस्यअयमर्थः यथातं बुलादेस्तुंदनद्वारापितृदेशमनुष्यादीनां स्तिजनकावनामृतात्वेऽ पिमदापेक्षिणांस्वमलत्वेनपर्यवसानात्मादकत्वंतयासातिसत्कुलोत्पन्नहातिनतस्यसंग्रहः कर्तव्यः एवमुत्तरत्रापिइसमैवातं 'विद्यामदाधनमद' इतिवाक्यंप्रवृत्तंपुमानिति स्वातंत्र्येगागुरुभिरनियम्यइत्युक्तम्भत्वव्यामभिषातुनाहिति यथापूर्ववाह्मागोऽपिजात्यंतरमापश्रोमादिरामचो वद्पिंठतुंनाहितिषठनेप्युनमत्तप्रलिपतमेवतन्त्रश्चोतव्यम् यद्यपिभकौसर्वेऽधिकारिणस्तथापिकत्रिममदिरादिसंबंधेवेदाधिकाराभाववत्मादक स्यनभगवच्छव्दोच्चारणाधिकारः अतस्तदाचाराञ्चकाचिद्वचवस्थानतु "जन्मकर्मावदातानामि"तिवदाधिकारोक्तस्तादशस्यवेदानधिकारो भवतुनामभगवतः पुनः सर्वात्मकत्वात् "चक्रांकितस्यनामानिसदासर्वत्रकीर्तथीद"तिस्मृतेश्चपतितःस्खलित"इतिवाक्याचमहापातिकनाऽपि व्यायश्चित्तत्वेनोक्तत्वाश्चक्यंमत्तरयनाधिकारदातिचेत्तत्राह अकिचनगाचरमितिअकिचनाः पूर्वोक्तरहिताः तेषांगोचरोगस्यः अयस्य जता ह्हास्याधिकारइतिनस्वरूपतो ऽधिकारोनिवार्यतेकित् फलतः भगवानेवहृदयेनायाति भगवद्गुगाश्चमुखेआगःइछतेह्यवहारस्वेना गच्छ 🕍 तिशीचेगंगाजलवत्यकिचमगोचास्वभाषत्वात्यदापि लोकेसवेसभाष्यंतेनमत्ताः अत्र तेषुकदाश्चिद्वपिभगञ्चत्सानिष्यासावादनश्चिमार इत्युक्तम् ॥ २६ ॥

# श्रीविश्वनायस्क्रवर्ती ।

किञ्च ता विपद एवं में सम्पद एवत्याह विपद हाते। हे जगतांगुरो हितकारित्वेन खिरुपोत्थविपद्ञनप्रदृष्टीन सम्पत्पमादघुर्याध्ये सिन् यत्यासु विपत्स भवतो दर्शनम् । भीरशं नास्ति पुनरपि भवस्य संसारदुःखस्य दर्शनम् यतः॥ २५॥ लोके सम्पद्दप्र विपद् हत्याह जन्मेति । अभिधातुं कृष्णागोविन्देत्यभिधानमपि वक्तम् ॥ २६॥

# सिद्ध तिप्रदीपः।

णासुभगवत्स्मरगादशैनादिकंस्यानाविपदोऽपियुक्ताः यासुननस्याताः संपदोऽप्ययुक्ताद्वत्याह । विपदद्यविद्याभयाम् । हेनगद्गुरीता विद्याऽपितत्रवद्यनम्मनिकन्मनि सः स्युः काः यवयासुभवतोदशैतस्यावः कीद्दक्दर्शनंतत्राहः अपुतर्भवदर्शनीमेवि नासितपुनसपिमे बह्यमगतोदर्शनंयस्मावः॥ २५॥।

स्त्रभा । हेकुच्योतिबन्तमपिताहिति ॥ २६ ॥

#### **भाषादीका**

पति । किन्द्रा आर्रि यही चाहते हैं कि—हे जगद्गुयो हमको निकतर विषद ही हों। जब जब विषद होती हैं तब ही तब आपके दर्शन होते हैं (१ /दर्शनी से ) फिर मब दर्शन नहीं होता है। २५॥

जन्म पेर्च श्रुत और श्री से जिसको मह चढ़ रहा है वह पुरुष आपका नाम भी नहीं ले सकता है। क्योंकि आप हो। अकिवनी

क्षा के सम्बद्धा रहे ॥

नमो ऽकिंचन विनाय निवृत्त गुगा वृत्तये। स्रात्मारामाय शांताय कैवल्य पतये नमः॥ २७॥ मन्यत्वां कालमीशान मनादि निधनं विभुम्। समं चरंतं सर्वत्र भूतानां यन्मिषः किलः॥ २८॥

#### श्रीधरखामी।

प्रस्तुतमनोरथपूरणाय प्रणमित नम इति अकिचना भक्ता एव वित्तं सर्व्यक्षं यस्य तस्मै। ततः कि निवृत्ता गुणवृत्तयो धर्मार्थकाम विषया यस्मात् तस्मै। तत् कुतः आत्मारामाय तत् कुतः शांताय रागादिरहिताय। किच कैवल्यपतये कैवल्यं दातुं समर्थाय॥ २०॥ नतु देवकीपुत्रं मां कथमेवं स्तौषि तल्लाह । मन्येत्वां कालं नतु देवक्याःपुत्रम् । तत्र हेतवः ईशानं नियन्तारम् । अनादिनिधनमाधन्त श्रुन्यम् । विभुं प्रभुम् । समं यथाभवित्तं तथा सर्वत्र चरन्तम् । नतु पार्थसारथेमम कयं साम्यं तत्राह यद्यतस्त्वत्तो निमित्तभूतात् भूतानामेव मियः कलिः कलहो भवति नतु स्वतस्त्वाये वैषम्यम् ॥ २८॥

#### श्रीवीरराघवः।

अन्येश्चचिद्विद्वयावर्त्तं केरिश्वरासाधारण्धर्मेविशिषन्तीनमस्करोतिनमइति अकिचनानांवित्तायविद्वृत्ताभेइतिधातुः विद्यतेल्ण्यते इतिवित्तः तस्मैनिवृत्तागुणानांरज्ञथादीनांवृत्तयः कामक्रोधादयोयस्यतस्मैअनेनाचिद्वयावृत्तिः शांतायोमिषद्करिहतायअशनापिपासाशोक मोहजरामृत्यवः षद्वर्मयः अनेनबद्धजीवव्यावृत्तिः तत्रहेतुरात्मारामायस्वानुभवैकपरायकेवल्यंप्रकृतिसम्बन्धराहित्यंमोक्षइतियावत्ततस्य पतिस्तस्मैमोक्षप्रदायानेनमुक्तनित्यजीवव्यावृत्तिः ॥ २७ ॥

भातरवरनमध्यार विश्व कि विधानत्वहमित्यत्राह मन्यइति ईशानंब्रह्मादीनिपचवशीक्षवीग्रांकालंत्वांमन्येकालशरीरकंत्वांमन्य नतुत्रह्मरुद्रेद्राद्यन्यतमः कश्चिदुक्तविधोनत्वहमित्यत्राह मन्यइति ईशानंब्रह्मादीनिपचवशीक्षवीग्रांकालंत्वांमन्य कर्यां अत्यवकालकृतजन्ममरणादिरहितं नन्वहमिपप्राकृतवद्वेषम्यादिमानेवततः कालंविशिनिष्ट सर्वत्रसमंचरंतकालयंतयद्वसमात्का कर्यां अत्यवकालकृतजन्ममरणादिरहितं नन्वहमिपप्राकृतवद्वेषम्यादिमानेवतः कालंविश्व सर्वाति सूचितंयिन्मयःकलिरिन्यने लिनिष्ठाद्वितम् स्वाति स्वाति स्वात्यत्वित्यक्षेत्र क्षित्र क्षित्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्र क्षित्र क्षित्र क्षित्र क्षित्र क्षित्यक्षेत्र क्षित्र क्

#### श्रीविजयध्वजः।

श्रीकृष्णाद्दन्यत्किचनोपादेयंनविद्यतयेषांते अभिचनास्तपविवत्तंयस्यसतथा तस्मै निवृत्ताः सत्त्वादिगुणानांवृत्तयोजाप्रदाद्यवस्थाय स्मात्सतथाकः तस्मै अभिचनेश्वीतायेतिवा निरंतरंवृत्ताज्ञानादिगुणानांवृत्तिः स्थितियंसिमन्सतथोकः तस्मै अत्रिचनेश्वीतायेतिवा निरंतरंवृत्ताज्ञानादिगुणानांवृत्तिः स्थितियंसिमन्सतथोकः तस्मै अत्रिचनेश्वीतायेतिवा निरंतरंवृत्ताज्ञानादिगुणानांवृत्तिः स्थितियंसिमन्सतथोकः तस्मै आत्मनां चेतनानां आरामायकीडाकृत्रिमभवनाय अत्रप्तवद्यातायसुखपूर्णायातपवक्षेवव्यपतयेमुक्तिनाथायनमद्द्यात्मारामः तस्मै आत्मनां चेतनानां आरामायकीडाकृत्रिमभवनाय अत्रप्तवद्यात्मस्त्र

्वयः । विद्यतेश्वादिनिधनेयस्यमतथातमनादिनिधनम् अनस्यप्राग्णस्यजन्मलयकर्तारमितिवा ईशंशिवमानयितचेष्टयतीतिईशानः तसर्वेश्वरंवा जगञ्चष्टाशास्त्रमतंवा परंसर्वस्मादन्यं सर्वत्रस्वपरेषुसमयथा योग्यंचरंतत्वांकालंसंहर्त्तारंमन्येकुरुपांडवादिभूतानांयद्यस्मात्त्रंमिथोऽन्योऽन्यं कालिः कलहस्तत्वास्पितिवाक्यशेषः ॥ २८॥

# क्रमसन्दर्भः।

नतु अकिञ्चनवित्तत्वेन कियन्माहात्यं जातं तत्राह निवृत्तेति । गुगावृत्तिरहितस्य तव यद्भक्तवित्तत्वं तत् परममहदेवेति मावः । तदि अकानां निर्गुगात्वं सर्वगुगामयादुत्कृष्टत्वञ्च व्यनक्ति । आत्मारामायत्यनेन तताऽप्याधिक्यम् आत्मारामस्यापि तद्वित्तत्वात् । पवं शांता

्राप्त । प्रमानस्तर्भागोचर प्रवेत्याह मन्ये इति चतुर्भिः । कालमंतर्थामिशाम ईशानं वाहिश्च सर्व्धनियन्तारम् । यद्यत्र येषु भावेषु सत्तु तव सुस्वभावस्तर्भागोचर प्रवेत्याह मन्ये इति चतुर्भिः । कालमंतर्थामिशाम ईशानं वाहिश्च सर्व्धियारे प्रवास वाहिश्य कालभेवति तेषु समं चरन्तम् । अत्र प्रथमे समत्वे द्वितीये समत्वेऽपि भक्तत्व्येषिशोरनुप्रहितप्रहरूपचरितत्वम् तृतीये भूतानां भिष्यः कालभेवति परम आवेशः चतुर्थेत् तत्रापि परम इति ॥ २८ ॥ २९ ३० ॥ विश्वास्ति। विश्वस्थितिक्षीलावतारे परम आवेशः चतुर्थेत् तत्रापि परम इति ॥ २८ ॥ २९ ३० ॥

#### सुबोधिनी।

नतु शिष्टरिपनिक्षायते भगवतो अवित्यमाद्दिमत्वात्सत्यं तथापिनकायतद्दि क्षायते तद्राह्नमो अकिवनवित्तायेति आकिवनावित्तं यस्यअकिवनानांवावित्तं वित्तंह्र्छपितिष्ठति वहिरपीति वित्तवतांतथातेषुभगवान् भगवतिचतेअतस्तेयवजानंतिनान्यद्द्रत्यर्थः तत्र हेतुमाह निवृत्तगुग्रावृत्तयद्दिति निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययदि निवृत्तगुग्राय्ययद्दे वथाचक्षुर्गम्ये नरसगम्यत्वं तत्रापिहेतुः आत्मारामायेतिआत्मन्येवारामो यस्यअनेनस्वापेक्ष भावउक्तः परापेक्षायामपिशांतायशांतस्त्रपत्वात्रकृरिरपेक्ष्यतद्द्रत्यर्थः किंच यरपेक्ष्यतेतेमोक्षार्थमपेक्ष्यते नियतफलत्वात्तस्य अन्यत्तकात्रत्वात्रकृति कदाचित्रवित्रवित्रगोमोक्षपितत्वन्मुक्त्विकारिमरेवसेव्योनान्येरित्यर्थः॥ २७॥

पवंत्रसंगातस्वरूपंक्षययंती तन्मनस्कापुनः प्रकृतंदुष्टदुर्क्षेयत्वप्रकारांतरेगाऽऽहमन्यइतिदुष्टाद्विविधाः विषयपराः पूर्वोक्ताश्चतत्रपूर्वोका नामगम्यतानिरूपिताविषयपरागां चागम्यतामाहसंमावनया पवंहिसंमाव्यते यदिविषयपराभगवंतं जानीयुस्तदाकालप्रस्तानभवेयुरि तिभगवतयवकालत्वात्क्षातेपुनक्षांनीप्रियतमोमत इतिवाक्यात्स्वप्रियंनभक्षयेत्कालः अतः कालव्याप्तेःनभगवंतानंतितिमन्ये नद्यका लस्यक्यंभगवत्वंतत्राहर्दशानमिति सर्वत्रतस्येश्वर्यात्नह्येतत्वभगवत्त्वेसंभवित किंच "सदेवसीम्येद्मप्रआसीदित्यत्रनासदासीक्षो सदासीत्तदानीमि"त्यत्रच अग्नेतदानीपदवाच्यः कालः तस्याभगवत्त्वेवाक्यार्थोवाध्येत अत्यवअनादिनिधनत्वात्कालोभगवान् किंच । कालवशात्सर्वभवतिअन्यथाशीतादिपुर्किनिमित्तंस्यात् अतः सर्वभवनसमर्थत्वात् कालोभगवान् किंच निर्दोपहिसमंब्रह्योतिवचनात् समत्वभगवद्धमेः सचकालेवत्तदिभगवानित्याह समंचर्तत्सर्वत्रेतिसर्वत्रकालः समानेनैवब्रह्यक्षपेगप्रविशिततत्रोत्पित्तः यत्यस्मात् कालात्मियः परस्परंभूतानामिपकलहः पूर्वमेकप्राग्यभूताअपिकालमेवनिमित्तमासाद्यकलहेर्नाम्चयंतदृत्यर्थः एवंत्वमेवकालइतिकालग्रासाद्वगम्यवेनकोऽपित्वांजानातीति ॥ २८ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अकिश्चना न विद्यते किंचिन्मात्रं प्राकृतं वस्तु अपि तु त्वछक्षणं पूर्णिचिदानन्दस्वरूपं वस्तु अस्ति येषां ते एकान्तभक्ता एव वित्तानि धनानीवातिप्रेमास्पदानि सर्व्वतः संगोपनीयाश्च यस्य तस्मै तेषां वित्तायेति वा । नन्वाकचना दिद्रा उच्यन्ते । सत्यम् । भगवद्भक्तानां मायागुगावृत्त्युत्याः सम्पदो न भवन्तीत्याह । निवृत्ता गुगावृत्तयो विषयभोगा यस्मात् तस्मै अकिचनभक्तेष्वेवासिक्तमुक्त्वा अन्यत्र त्वौ दासीन्यमाह आत्मारामायेति । भक्तानाम अपराधे सत्यपि न त्वं कुष्यसीत्याह शांताय समक्तेष्वनुष्रहाय मुमुक्षुभक्तेषु उपकारकत्वमाह कैवल्येति ॥ २७ ॥

भक्तापराधिषु संहारकत्वमाह कालमिति। तथा तथा सामर्थ्ये कारणमाह ईशानमिति तथारूपत्वेन सर्वेकालदेशास्यातमाह अना दीति विभुमिति। नत्वासक्त्यौदासीन्योपकारकत्वापकारकत्वेरिपत्वियवेषम्यमित्याह सममिति यत्यत्र मिथः कालिः कलहः ईश्वरो दुःखदः सुखदः समो विषमो निर्धृगाः सपृगा इत्यादि॥ २८॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

पुनः भगवद्गुणान्वकुंतावत्प्रणमिति निवृत्ताः रज्ञभादि वृत्तयोयस्मात्तस्मै कैवल्यंकार्यकारण् रूपप्रकृतिसम्बन्धराहित्यंतत्पतयेतद्दा तुसमर्थाय ॥ २७ ॥

नजुनिवृत्तगुणवृत्तित्वादात्मारामत्वंशांतत्वंत्वतपुत्रसारथ्यादिकमैचकथघटतेतत्राह ।मन्येशति। त्वांकालं "यः कालकाल" इतिश्रुति प्रसिद्धं कालशिक्तं कालशिक्तं विद्यात्ति । त्यांकालं "यः कालकालं दितिश्रुति प्रसिद्धं कालशिक्तं कालशिक्तं विद्यात्ति । त्यांकालं विद्यात्वे । विद्या

# भाषा टीका।

आप अकि बनों के धन हैं आपको नमः गुगावृत्तियों से निवृत्त, आत्माराम शांत और केवत्य के पति आप हैं आप की नमः १७०० अनादि निधन विभु और ईशान कालमें आपही को मानती हूँ। आप तो सर्वत्र समान चरते हैं जिनको निमित्त कर भूतों मेपरस्पर कलह होता है ॥ २८ ॥ न वेद कश्चिद्गगर्व श्चिकीर्षितं तवेहमानस्य नृगां विडंवनम् । न यस्य कश्चिद्द्यितोऽस्ति किहिचिद्द्रेष्यश्च यस्मि न्विषमा मितनृगाम् ॥ २६ ॥ जन्म कर्म च विश्वात्मन्नजस्या कर्जुरात्मनः । तियङ्नृषिषु यादःसु तदत्यंत विडंवनम् ॥ ३० ॥ गोप्याददे त्विय कृतागिस दाम तावद्याते दशाश्चक्रिकांजनसंभ्रमाक्षम् । वक्रुनिनीय भयभावनया स्थितस्य सा मां विमोहयित भीरिप यद्दिभेति ॥ ३१ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

ननु निग्रहाऽनुग्रहरूपं मयि प्रसिद्धं वैषम्यम् अत आह न वंदेति नृगां विडम्वनमनुकरणमीहमानस्य कुर्वतः यस्मिन् त्विय विषमा मितः अनुग्रहनिग्रहरूपा भवति ॥ २९ ॥

अजस्य जन्म । अकर्त्तुः कर्म्म । तिर्द्येश्च वराहादिरूपेण नृषु रामादि रूपेण । ऋषिषु नरनारायणादिरूपेण । यादः सु मत्स्यादि

नरविडम्बनमत्याश्चर्यमित्याह गोपीति। गोपी यशोदा त्विय कृतागसि दिधभांडस्फोटनं कृतवित यावत दाम रज्जुम् आददे जन्नाह तावत तत् क्षग्रामेव ते तव या दशा अवस्या सा मां विमाहयित। किम्भूतस्य अश्विमः काललं व्यामिश्रम् अंजनं ययोः ते च ते सम्भ्रमे व्याकुले अक्षिग्राी यस्मिन् तद्वक्तं निनीय अधःकृत्वा ताड्यिष्यतीति भयस्य भावनया स्थितस्य। यत् यतः त्वत्तः भीरिप खयं विभेति तस्य ते दशा॥ ३१॥

#### श्रीवीरराघवः।

नन्वहमिषतांश्चिद्वगुह्णन्वांश्चित्रिगृह्णत्वथंवैषम्यादिरहितद्दत्यतभाह नेति हेभगवत्रृणांविंडवनमनुकारमाहमानस्यकुर्वाणस्य तव चिक्तींषतंनकोऽिपवेद कविष्मग्रहाऽप्यंततोऽनुग्रहरूपत्याफलतीतिनवैषम्यादिकमीस्त पूतनाशकर्यमलाज्ञेनधेनुककेशिकुवलयापीड चाणूरमुष्टिकतोसलकंसादिविषयानेग्रहस्यांततस्तेषांनिरातेशयपुरुषांग्रह्णसपमुक्तिहेतुत्वदर्शनादितिभावः यतप्वमतप्वत्वयिवेषम्यादिराहि चाणूरमुष्टिकतोसलकंसादिविषयानेग्रहस्यांततस्तेषांनिरातेशयपुरुषांग्रह्णसपमुक्तिहेतुत्वदर्शनादितिभावः यतप्वमतप्वत्वयिवेषम्यादिराहि तितदापाद्यतांनृणांमतिरेवाविषमेत्याह नयस्येति कार्हिचिदिपद्यितः प्रियोद्धेष्यश्चनास्ति यस्मिन्नृणांमतिर्वेषमारजस्तमोन्वयादययार्था तितदापादयतांनृणांमतिरेवावषमेत्याह नयस्येति कार्हिचिद्यितः प्रियोद्धेष्यश्चनास्ति यस्मिन्नृणांमतिर्वेषमारजस्त्रमोन्वयादययार्था भवति नृणांविद्यनमीहमानस्येत्यनेननरचेष्टानुकारमात्रमेवनतुसर्वयातत्सजातीयचेष्टितम् "जन्मकर्मचमेदिव्यमिति" भगवतैचोक्तत्वात् स्विमृचितम् ॥ २९॥

विडंबनत्वमेवान्यथानुपपत्याद्दवयतिजन्मेति अजस्यजन्मरिहतस्यकर्मायत्तोत्पत्तिरिहतस्याकर्त्तः प्राचीनकर्मानुरूपप्रवृत्तवुद्धार्थानकर्मः विडंबनत्वमेवान्यथानुपपत्याद्दवयित्रजन्मेति अजस्यजन्मरिहतस्यक्षायत्ति। विडंबनमेव अन्यथाऽजस्याकर्त्त्ररात्मनश्चतन्नघटतद्दतिभावः रिहतस्यात्मनः सर्वीतरात्मनस्तविर्यगादिषुजन्मतत्स्यजातीयंकमंचेतियत्तदत्यत्विद्धवनमेव अन्यथाऽजस्याकर्त्त्ररात्मनश्चतन्नघटतद्दतिभावः तत्रतिर्यक्षुवराहादिषुऋषिषुभागवदत्तात्रेयकार्द्दमादिषुनृषुराघवयादवादिषुयादस्सुमत्स्यकूर्मादिषुजलोकः सुविडवनमात्रम् ॥ ३०॥

नचेदंघटतइत्यभिप्रायेणाऽऽहगोपीति तावद्यथात्वियकृतमागोऽपराधोयेनत्याभूतेसितगोपीयशोदादामरज्जुमाददेत्वद्वन्धनार्थपरिजगृहे तदाश्चिमः कालिलकञ्जीषतमंजनययोस्तेसंभूमेभयसूचकाटोपयुक्तेऽक्षिणीयस्यतद्वक्रंनिनीयउद्यीयउत्ताम्य अश्चकलिलेत्यादिक्रियाविशेषणां तदाश्चिमः कालिलकञ्जीषतमंजनययोस्तेसंभूमेभयसूचकाटोपयुक्तेऽक्षिणीयस्यतद्वक्रंनिनीयउद्यीयज्ञानस्थतस्ययादशासामां वाअश्चकलांजनसंभूमाक्षयथात्यावक्रांनिनीयप्रापय्थेत्यर्थः यस्माद्यतोभीरिपिविभेतितस्यतवभयभावनयाभयाभिनयेनस्थितस्ययादशासामां विमोहयतिअत्रभीशद्यनस्थितस्यवेद्यर्थः यस्माद्यातः पवतेभीषोदितस्र्यः भीषादिग्रश्चेन्द्रश्चमृत्युद्धावितपंचम"इत्युक्तविथस्या विमोहयतिअत्रभीशद्यत्वमाद्यतिम्द्रांकरोति पश्चान्तुनरचेष्टानुकारमात्रीमदिमितिज्ञापयतीतितावच्छन्दाशयः ॥ ३१ ॥ भयस्यतवेत्यर्थः तावद्विमोहयतिमूढांकरोति पश्चान्तुनरचेष्टानुकारमात्रीमदिमितिज्ञापयतीतितावच्छन्दाशयः ॥ ३१ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

समंचरंतिमत्येतिद्ववेचयित नवेदेति यस्यतवयोग्यतातिरेकेणकिंचित्किश्चिद्वयितोनास्ति कश्चिद्वेष्योनास्तीतिशेषः एवमियस्मि समंचरंतिमत्येतिद्वेवचयित नवेदेति यस्यतवयोग्यतातिरेकेणकिंचित्किश्चिद्वयित्वाभाश्यांवदूपचितपुर्यद्वेषांनचयावग्याच्य हेभगवन् स्त्वियन्गामासुरप्रकृतीनांमितिविषमा अर्जुनोऽनुगृहचोऽयंदुर्योधनोद्वेष्यदित्वनास्यत्वकश्चितपुरुषः चिकीिषतंकर्त्तुमिष्टंनवेद्धः नजाना नृगांविद्यंवनमनुकरणमीहमानस्यचेष्टमानस्यद्विषंतंनैवभोजयेदित्यादिवचनात्तस्यत्वकश्चितपुरुषः चिकीिषतंकर्त्तुमिष्टंनवेद्धः नजाना नृगांविद्यंवनमनुकरणमीहमानस्यचेष्टमानस्यद्विषंतिनेवभोजयेदित्यादिवचनात्रस्यत्विषमाश्चस्यद्वियतोऽयमस्यद्वेषीति नभवास्त्राद्वरस्यतः तित्येकान्वयः अथवालोकेयस्मिन्दुंसियोग्यतातिरेकेणस्त्रहेषकारिणिनृगांमितिविषमाश्चरविष्यते।

समचारीतिवैदिकाइति ॥ २९ ॥ अधुनाऽनिदिनिधनत्वेसमधेयते जन्मेति हैविश्वारमन्सर्वीतयामिन् अजस्याजातस्यानायासेनफलानपेक्षयाअकर्तुगत्मनास्त्रये-अधुनाऽनिदिनिधनत्वेसमधेयते जन्मेति हैविश्वारमन्सर्वातयामिन् अजस्याजाति। स्तवतियेङ्नृपशुषुयादः सजलजंतुषु यज्जन्म तज्जात्यनुकारिकमेच तद्तिशेयनविद्यंवनमतोऽनादिनिधनोऽसीतिमावः अजस्यात्मनस्तिये-साहिषुयज्जनमाकत्तुंशतमनस्तज्जात्यनुसारियत्कमेतदुभयमत्यंतिवदेवनमितिवायोजनाः॥ ३०॥ साहिषुयज्जनमाकत्तुंशतमनस्तज्जात्यनुसारियत्कमेतदुभयमत्यंतिवदेवनमितिवायोजनाः॥ ३०॥

Fritz in which is bloom a

#### श्रीविजयध्वजः।

इदंचातिविद्धंबनंविदुषामिपमोहकामित्यामिप्रेत्याह गोपीति त्वियक्ततागसिदिधिमांडंभित्त्वानवनीतापहारिशिसित यदागोपीनाम्नायशो दानित्यमुक्तंत्वांबद्धंदामआददे तावत्तदायंत्वांप्रति भीः सर्वजनस्यमयकारिशोद्धगोपिविमेति यस्यभयभावनयाअश्वभिः किल्लंकछषं अजनयस्यतत्त्रथोक्तं अश्वकिल्लांजनंचतत्संभ्रमयुक्तंअक्षियस्यतत्त्रशोक्तं वक्तंविनम्यावाचीनतयाकृत्वास्थितस्यतेतवयादशाऽवस्थासामां विमोह्यतीत्येकान्वयः तस्मात्तद्वकारगांबिदुषामिपमोहकमितिभावः ॥ ३१ ॥

#### क्रमसंदर्भः।

गोपीति । अत्र भीरपि यद्विभेतीत्युक्त्या तस्या पेश्वर्यंद्वानं व्यक्तम् ततो यदि सा भीः सत्या न भवति तदा तस्या मोहोऽपि न संभवेदिति गम्यते । स्फुटमेव चान्तभयमुक्तम् भयभावनया स्थितस्येति ॥ ३१ ॥

# सुवोधिनी।

एवंदुष्टदुर्श्वेयत्वंनिरूण्यलक्षगां निरूपयितद्वाभ्यांजन्मकर्मचिति भगवतः सर्वानुकरगारूपोधमःलक्षणामसाधारगाधिमः नटादिरपिकि-चित्द्रव्यांतरसंवंधेनतथास्वात्मानप्रकाशयितभगवांस्तुकेवलं अविकियमाण्यवायमानंदरूपप्यनरदेहेद्वियरूपेण्यहरयरूपेण स्वात्मानेष्या पर्यातप्तद्भगवतोऽसाधारगांलक्षगाम्पतद्भानेकोपिमगवंतनपूजयेत् नवाऽस्यमोहकत्वं लक्षणात्वात्अन्यथासर्वेषामिपमोहांभवेत् तस्माद् मुकरगांभगवल्लक्षगामितिश्चेयं तत्रचेत्प्रमः पूर्ववतस्वदोषेणावदुष्यितनभगवतः कश्चिद्दोषदृत्यथेः ननुयुक्तिवाधितंनवेदोऽपिवाध्यतीति कथं भगवतोऽनुकरगांसभवित तत्राह विश्वात्मिश्चितिययाभगवानिर्वाक्रयमाण्यविश्वरूपोजातस्तस्यानुकरगोक्षःभयासद्द्रात्मावः अजस्यक्ष नमअकर्त्तुःकमपुरुषोत्तम्वयातमनोद्यापकस्येतिर्यक्षवराहादौक्षापषुवामनादौयादः सुमत्स्यादौतत्तद्रपेणास्पुरुणामत्यंतमनुकरगां पुरुषा तमत्वमिष्कापयत्ममनुष्यत्वादिकमपिकापयतिर्विश्वास्मस्तुकातेजगत्त्वननक्षायते तस्मादनुकरगालक्षगांअसाधारगोभगवद्धमेः अतोनाननापि सगवतिसंदेहोयुक्तद्दित्तिस्यम् ॥ ३० ॥

ननुविशेषदर्शनात् संदेहोगिमण्यतिकितद्धमेवन्वेनज्ञापनेनतत्राहगोण्यादद्दति एताद्दशमनुकरणंभगवतः यद्विशेषद्शेनेऽपिजातेम्म ननुविशेषद्शेनात् संदेहोगिमण्यतिकितद्धमेवन्वेनज्ञापेजातेम्म मुत्पाद्यतितत्राहमेवदण्टांतःकदाचिदहंगतागोकुलेत्वांद्रण्टुंतिस्मन् समयेगोपीयशोदाशिलापुत्रेणभांडभेदनेकृतेकृतागिसत्वायदामआददे सत्पाद्यतितत्राहमेवयातेदशाजाता ननुसास्वभावतपवदशाभवित तत्राह अश्रुकलिलांजनसंभ्रमाक्षमिति अश्रुभिः कलिल्यदंजने तदातावत्त्वताम्मयक्म्मयुतेअक्षिणीयस्येतितादशंमुखंनीचतयास्यापियत्वास्थितस्यत्वेतिपूर्वेणसम्बन्धः एवंसवैज्ञातंसवयाभीतद्दित नन्ववभेजास्त्रका विद्यमानेकस्यचिद्धयंसंभवति॥११॥ दोषद्वित्वस्यत्वस्य स्वत्वस्याद्विभावति।।११॥ दोषद्वित्वस्यत्वस्य स्वत्वस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्यस्यस्य स्वत्यस्यस्यस्यस्यस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्यस्य स्वत्यस्यस्य

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

नतु तत्र फलहे तत्त्विश्चायकः को भवेत तत्र न कोऽपीत्याह न वदित द्वाभ्याम नृगां शास्त्रविवादिनां तेषां विष्मवि ज्ञानविकत्यम् ईहमानस्य इच्छतः । यद्वा रामकृष्णाद्यवतारे स्त्रीयेन नरत्वेन नृगां नरमा त्रागामेव विष्मवनम् ईहमानस्य तादशसीन्दर्यसाद्गुर्यस् चिरत्राद्यदर्शनात् अन्ये नरा विष्मित्रा एव भवन्तीतिभावः । नृगाम अञ्चलनाम् । विषमा मितिरिति यथा सुर्यस्य सुर्यकानते विष्णायां स्वतुल्यधर्मत्व प्रदानेनासको अन्धेषु औदासीन्यं चकवाकेषूपकारित्वे घूकतस्करान्धकारादिष्वपकारित्वे लक्ष्यमागाऽपि न तस्यविष्मयं किंतु तत्र तत्र प्रसुत्ताद्गुर्ययवेगुर्याद्येव कारगामिति वोध्यम् ॥ २९ ॥

किश्च यदिए तबसाम्यवैषम्यकर्मृत्वाकमृत्वजन्मवस्वाजत्वादिषु सिद्धांतानिर्विद्य लीलेवास्वादनीयेत्याह । अजस्य जन्म अकर्तुःकमे । तन्नापि तिर्थ्यगादिषु तस्व तस्व तस्व सर्व्वात्कृष्टस्थेश्वरस्थात्यन्तविद्मवनमः । तत्तजातियाषार्थ्यंन आत्मनो स्यूनत्वांगीकाणवः तथाहि वाराहे जन्मिन"व्यागेन पृथ्व्याः पद्यी विजिन्नन्निः त्यादिना सर्व्ववत्वेऽपीश्वरत्वेऽपि वास्तवग्रकर एवासूर्यमवलोक्य जहास चाहावन वाराहे जन्मिन पृथ्वयाः पद्यी विजिन्नन्नि स्थादिना सर्व्ववत्वेऽपीश्वरत्वेऽपि वास्तवग्रकर एवासूर्यमवलोक्य जहास चाहावन वाराहे मृग इत्येवमतत्त्वशास्त्वां वास्मोधीनं जीवमेव मन्यन्ते इति भावः । अत्राजत्वाकर्तृत्वयोरेव सत्यत्वे जन्मकर्मोलक्षणायांलिक्यामिन गोवरो मृग इत्येवमतत्त्ववाद्मवाद्मग्रामग्राचित्ताकर्षण्यस्यासंगतिः। "जन्म कर्म्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वत इति" भगवतुः ध्वात्वम । तथात्वे च तथा गुजदेवाक्यासम्भावाद्मग्राविद्यास्यान्तवग्राक्तिमतो मगवतः को वेद तत्विपति ॥ ३०॥ तिश्च जन्मकर्मग्राः सत्यत्वे अजत्वाकर्मृत्वयोरसङ्गतिरिति तस्मादार्वित्यानन्तवग्राक्तिमतो मगवतः को वेद तत्विपति ॥ ३०॥ तिश्च जन्मकर्मग्राः

केचिदाहुरजं जातं पुग्यदलोकस्य कीर्नये ॥ यदोः प्रियस्यान्ववाये मलयस्येव चंदनम् ॥ ३२ ॥ ऋपरे वसुदेवस्य देवक्यां याचितो अयगात्। त्र्यजस्त्वमस्य चेमाय बधाय च सुरद्विषाम् ॥ ३३ ॥

#### श्रीविश्वनाथचकवर्त्ती।

त्रस्मात् तव लीलामेवास्वादयामीत्याद । गोशी यशोदात्विय कृतागिसद्धिमन्थनीस्फोटनं कृतवित सित यावदाम रज्जुम् आद्दे जग्राह तावत तत्रश्रामेव ते तव या दशा अवस्था सा मां विमोहयति । किंतुतस्य अश्रुभिः कलिलं व्यामिश्रम् अंजनं संभ्रम आवेगश्रा क्ष्मीर्थत्र तद्वक्रं निनीय अत्रः कृत्वा ताङ्यिष्यतीति भयस्य भावनया स्थितस्य यद्यतस्त्वत्तः भीरिप स्वयं विभेति तस्य त दशा । तेन पूर्वीकान्तदगापाद प्यतिष्रेमवती यशोदा धन्या यया तवैव तादशो वशीकार इति सूचितम् । अत्र भीराप यद्विभेति इत्युक्तीव कुत्या के विश्वर्यञ्चानं व्यक्तीभूतं भयभावनया स्थितस्येत्यन्तर्भयस्य च तया सत्यत्वैभवाभिमतम् अनुकरणमात्रत्वे ज्ञाते तस्या मोहो न संभवे दिति क्षेयम् । अतएव तवेहमानस्य नृणां विडम्बनमित्यादौ विडम्बनमनुकरणमिति व्याख्यान्तरं परास्तम् ॥ ३१॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

ननुदेवराजः सब्रजोमांहंतुंयत्नंकृतवान् नृपतयोजरासंघचैद्यप्रभृतये।बहुशोममाच्बांकृतवतस्तिद्दंसमंचरंतंसर्वत्रेत्यादिभवत्यावचनंक थमर्थवत्स्यादत्राह नवेदेति हेभगवन् । षडैश्वर्थसंपन्ननृणांविडंवनमनुकरणमीहमानस्य तत्त्वक्रानुरूपंचरितंकुर्वाणस्यतविकीर्षि तं तत्तत्कर्मानुसारेगाकर्तुरभीष्टंकश्चिदिपनवेद एवंस्वतोयस्मिन्त्रियात्रियरहितत्वियविषमामितिर्नृगामज्ञानाद्भवति॥ २९॥ अजस्यकीमजन्मोत्पत्तिग्रन्यस्य स्वेच्छयाजन्मअकर्तुः सत्त्वादिगुगाहेतुककर्तृत्वग्रन्यस्यस्वेच्छकंकर्मचात्यंतंबिडंवनमनुकरगामतत्रतिर्यक्षव राहादिक्रपेगानृषुरामादिक्रपेगाऋषिषुभागवादिक्रपेगायादःसुमत्स्यादिक्रपेगा॥ ३०॥

साक्षादवंतारिगास्तवप्रादुभावयश्चेष्टितंतदत्यंतंमांविमोहयतीत्याहएकदेशकथनेन गोपीतित्वयिकृतागीसद्धिभांडस्फोटनंकृतवतिगोपी श्रीयशोदायावद्दामाददेरज्जुंजग्राहतावत्कालमेवतेतवयादशा ऽवस्थासामांविमोहयतिदेहगेहस्मृतितश्चालयति कीदशस्य अश्रुकालिलांजन संभ्रमाक्षं अश्रुव्यामिश्रांजनेसंभ्रमेभयस्चकवेक्रव्ययुक्ते अक्षिगीयस्यतद्वक्रंभयभावनयानिनीयास्थितस्य यद्यतोभीरापिविभेतितस्य ॥ ३१ ॥

#### भाषादीका ।

हेभगवन् ! आप मनुष्य लीलाकी चेष्टा कर देतेही, आप का चिकीर्षित कोई नहीं जानता है न आप का कोई प्रिय है न आप का कोई द्वेष्य है। तब भी आप में मनुष्यों की विषम बुद्धि होती है॥ २९॥

हे विश्वातमन् ! तिर्येक् (पशुपक्षी) ऋषि और जल जन्तुओं मै जो अज आप का जन्म और अकर्ती आत्मा का कर्म यह अत्यन्त

विडंवन है ॥ ३० ॥ (नर विडम्बन अति चमत्कार है) जब तुमने अपराध किया और गीपी (यशोदा) ने तुमै बांधने को दाम (रहंसी) प्रहगा की उस समय की तुम्हारी वह दशा 'जो तुम भय की भावना सै. अश्च युक्त संभ्रम तयन मुख नीचाकर खडे थे' मुझै वडा विमोहित करती है। भय भी तुम से भय खाता है तुमै भय क्या !॥ ३१॥

# श्रीधरखामी।

अतएव जगन्मोहनतया वुर्क्षेयत्वात तव जन्मादि बहुघा वर्णायन्तीत्याह केचिदिति चतुर्भिः पुग्यश्रोकस्य प्रियस्य युधिष्ठिरस्य कीर्त्तये। यदोरेव कीर्त्तये इति वा। अन्ववाये वंशे। मलयस्य कीर्त्तये वंशे वा चन्दनं यथा॥ ३२॥

तथा वसुदेवस्य देवक्यां भार्यायाम् अज एव त्वमभ्यगात् पुत्रत्वमिति द्येषः । प्रथमपुरुषस्त्वार्षः । अभैत्वमिति पाठः सुगमः । ताश्यामेव पूर्वं सुतपःपृश्चिरूपाश्यां याचितः सन् । अस्य जगतः क्षेमाय ॥ ३३ ॥

# श्रीवीरराघवः।

यतोविडंवनमात्रंनतुतात्विकमतएवत्वद्वतारप्रयोजनानिमित्तंचेदमेवेतिनिश्चेतुमशकचातत्रनानातकयंतीत्याहकेचिदितिपंचाभिः केचि॰ यताावडवनना नाजुः । चतावडवनना नाजुः । चत्वतारप्रयोजनिर्मायप्रवृत्तानांमध्येअजमित्वांप्रियस्यभक्तस्यपुर्ययक्षीकस्ययदोः कीर्त्तयेतद्वंशोजातमाहुः यदुवंशकीर्त्तिजननायतत्रत्वां चत्वतारप्रयोजनिर्मायप्रवृत्तानांमध्येअजमित्रव्यकीर्त्तयेचंत्रतंजातंववंतितवत ॥ ३२ ॥ चाववतार्यः यथामलयस्यपर्वतस्यकीर्त्तयेचंदनंजातंवदंतितद्वत् ॥ ३२॥ जातमाहुरित्यर्थः यथामलयस्यपर्वतस्यकीर्त्तयेचंदनंजातंवदंतितद्वत् ॥ ३२॥

#### श्रीवीरराघवः।

अपरेत्वत्रसाषुलोकस्यक्षेमायसुरद्विषांबधायचजातस्त्वंवसुदेवस्यदेवक्यांताभ्यांपूर्वजन्मनियाचितःअभ्यगात् पुत्रत्वंप्राप्तइत्याहुः वसु देवस्येत्यपादानस्येवशेषत्वविवक्षयापष्ठी ॥ ३३ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

इदानीमेवंविधस्यतवदेवक्यांजन्मानुकरग्रोनिमित्तंविद्वांसोऽनेकधावदंतीतिविद्यापयित केचिदित्यादिना केचिद्विद्वांसः पुरायकीचेभेगव-द्धक्तस्ययदोःराञ्चोऽन्ववायेतस्यकीर्चयेजातंत्वामाहुरित्यन्वयः नाम्नामलयस्यपर्वतस्यकीर्चयंवनिमव ॥ ३२ ॥ अपरेबुधाःदेवैर्याचितोऽजस्त्वमस्यसज्जनस्यक्षमायसुरिद्वषांबधायचवसुदेवस्यसकाशादेवक्यामध्यगादाविभूतइतिष्ठ्वते ॥ ३३ ॥

क्रमसन्दर्भः।

कोचिदिति चतुष्कम् ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

## सुवोधिनी।

प्वंभगवितिविरुद्धधर्मत्वंतत्संवंधादन्यत्रापिविरुद्धधर्मत्वामिति लक्षसामुक्तंजन्मकारगानिद्धारमाहकेचिदाहुरितिचतुर्भिःनमनार्थंजन्मनि द्धारःकर्त्तव्यः देहांतः करणात्मनामुत्तरमुत्तरंश्रेयः ततोदेहत्वेनानमनीयत्वेऽपिभगवद्वतारत्वेक्षातेनमनीयत्वंसिद्धातितत्रताहशस्यकथम् नमनीयदेह इतिशंकातत्रऋषिमेदेनस्वयोगजधर्मभेदात्परमार्थतोभगविद्व्छाक्षानाध्वनुर्विधान्नकृषयः स्वस्वबुद्धचनुसारेगादेहसंवंधप्रयोन् जनंकथयंति "वंशकर्त्तापिताचेवमुख्योदेहनिकपकौ दुःखाभावश्वमोक्षद्वद्वावर्था विहसंमतौ" अर्थद्रव्यविराधे अर्थोवलीयानितितदयं मतमेदः अर्थस्यगुग्गभावदेहे मुख्यत्यामतद्वयम् अर्थप्राधान्येचमतद्वयमस्तितत्रवंशकर्त्तां महत्त्वाधतदीयत्वख्यापनेनतस्यकी तिर्मिवतितिधर्मप्राधान्येनयदुवंशेऽव तीर्गाहरूयाहकेचिदाहुरितिकजंजातिमिति पूर्वविह्नक्षधर्माश्रयत्वम् पुग्यश्लोकस्ययदोः अत्यवत्रथै वशास्त्रार्थोनिर्धारितहतितत्रांशेनाव तीर्गाह्यत्युक्तंप्रयस्यतिपुष्टिमार्गभक्तत्वात्मलयस्यवचंदनिमिति यथावंदामहेमलयमेवत्यादिमलयस्य यशः प्वंयदोरितद्वंद्यानां भगवत्संनिधानेनभगवत्साक्ष्यात् ॥३२॥

अपरेपुनर्दूरसंवंधमसहमानाः प्रसंगादिपिकीर्त्तिसंभवात्कृतप्रयत्नत्वाचवसुदेवस्यनिर्दुष्टत्वाचअर्थपुरः सरंप्रवर्तमानाऋषयः वसुदेवस्य संविधन्यां देवक्यां पुत्रत्वेन याचितः सम्नज एव जात इत्याहुस्तदाह अपरद्दति । सोऽजस्त्वमेवेति पृथग्योजना । "पित्रोः संपद्यतोः सद्य" इति प्राकृतरूपप्रदर्शनाद्धिष्टदाका स्यात् साऽप्यनेन निवारिता तत्र हेतुः अस्य क्षेमायेति । जगतः युधिष्ठिरस्य वा । अत्यव "जातः कंस बधार्थाय" इत्यादिवाक्यानि । अनेन द्वयं प्रयोजनं भिन्नमिति ज्ञापितं देवानां भिन्नतया हितकरणात् । चकारात्तेषामपि कृतार्थत्वाय सुर देवित्वेन स्वतो मुक्त्यभावात् । अनेन भगवतो दोषाभावो निरूपितः अत्यवोभयोः कार्यता । अन्यथा वैषम्यं स्यात् ॥ ३३ ॥

# 'श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

एवंचत्वं न चेत् प्रादुरभाविष्यस्तदा जगन्मोहनी इयं लीला केन वाखादयिष्यतेति प्रादुर्भावकारगामेव मतभेदेन वहुप्रकारमाह केचि दिति पुरायश्लोकस्य युधिष्ठिरस्य "पुरायश्लोको नलो राजा पुरायश्लोको युधिष्ठिर" इति पुरायश्लोकत्वेन तदानी तस्यैव प्रसिद्धे यदोरन्व वाये वंशेयदो रेव कीत्तेये इति वा। मलयस्य कीर्त्तये वंशे वा चन्दनं यथा॥ ३२॥

अज एव त्वमभ्यगात् पुत्रत्विमिति देशिः। प्रथमपुरुषस्वार्षः। अर्भत्विमिति पाठः सुगमः ताभ्यामेव पूर्वे सुतपः पृश्चिरूपाभ्यां याचि तः सन्। अस्य जगतः क्षेमाय ॥ ३३ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

भगवतः खरूपगुणादेर्द्वेत्रेयत्वमुक्तं तत्प्रादुर्भावप्रयोजनमपि दुर्त्तेयमित्याहं केचिदितिचतुःभैः अन्ववायेवंशे ॥ ३२ ॥ बसुदेवस्यपत्न्यांदेवक्यागर्भत्वमञ्चगात्प्राप्तः याचितः ताञ्चांप्राणितः ॥ ३३ ॥

# भाषादीका ।

तुम्हारी लीला जगत की मोहन करने वाली और दुवेंय है इसी से तुम्हारे जन्मादिकों को भी बहुत्रा वर्गन करते हैं कहते हैं पुरा हलोक (युधिष्ठिर) की कीर्त विस्तार करने को प्रिय यह के वंश में मलय में चन्दन के समान अज आप का जन्म हुआ है ॥ ३२॥ पुरा हलोक (वुधिष्ठिर) की देवकी में उन्हीं होनों से याचित होकर अज भी तुम इस विश्व के क्षेम के और देव देवीओं के (देखों) के वर्ष के लिये उन के पुत्र हुए ही ॥ ३३॥

भारावतारगाायान्ये भुवो नाव इवोदधौ। सीदंत्या भूरिभारेगा जातोह्यात्म सुवार्थितः ॥ ३४ ॥ भवेऽस्मिन् क्लियमानानाम विद्याकाम कर्माभेः। श्रवगा स्मरगा हांगा करिप्यन्निति केचन ॥ ३५ ॥ शृग्वंति गायंति गृगांत्य भीक्ष्माशः। स्मरंति नंदंति तवेहितं जनाः ॥ तएव पत्रयंत्य चुिरेगा तावकं भवप्रवाहो परमं पदांवुजम्। ३६ ॥

#### श्रीधरस्वामी

आत्मभूवेति ब्रह्मप्रार्थनस्य प्राधान्यविवक्षया मतान्तरम् ॥ ३४॥

परमानंदस्वरूपाझानमविद्या ततो झानाद्यभिमानात् कामः ततः कर्मााशि तैः क्षित्रयमानानां तन्निवृत्तये अवशाद्यशिशा कर्मााश

अस्य पक्षस्य सिद्धांततामभिप्रेत्य श्रवणादिफलमाह् शृणवन्तीति नन्दन्ति अन्यैः कीर्त्यमानमभिनन्दन्ति ये जनाः ईहितम् चरितं तावकम् त्वदीयं पदाम्बुजं त एव पश्यंत्येव अचिरेगोवेति सर्वत्रावधारगामः । कीरदां भवप्रवाहस्य जन्मपरम्पराया उपरमो यस्मिन् तत् ॥ ३६ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

अन्येतृद्धीयर्गावेनावइवभूरिभारेगासीदंत्याः क्लिश्यन्त्याभुवोभारापहारायात्मभुवाचतुर्मुखेनाधितोभगवान्जातइत्याहुः॥ ३४॥ केचनअस्मिन् लोकेअविद्यादिभिः क्लिश्यमानानांजनानांअवगास्मरगाद्यहोगाचेष्टितानिकरिष्यन्कर्तुजातहत्याहुरित्यर्थः अविद्यादेहा रमभूमादेनिमित्तमज्ञानं कामस्तनमूलकशब्दादिविषयाभिलाषः कर्माणितदनुकूलब्यापारात्मकानि ॥ ३५ ॥

अविद्यादिभिः क्लिश्यमानानांजनानांश्रवगाद्यर्हागाद्यदेगमगवश्चेष्टितानां क्लेशापहर्नृत्वंसूचितंतश्चनसाक्षात्कितुसंसृतिनिवर्तकस्या वर्षरंगारविंदसाक्षात्कारावहभक्तियोगनिष्पादनद्वारेत्यभिप्रायेगाभगवश्चेष्टितश्रवगादिपरागामेतश्चरणांवुजसाक्षात्कारानान्येषाः मित्याह शृंगवंतीति येजनास्तवेहितंचेष्टितंशृगवंतिवकृसांनिध्येगृगांतिश्रोतृसांनिध्येतदुभयासंनिधौचस्वयंगायंतिसमरंतिनंदंति तएवभवप्रवाहस्य संसारप्रवाहस्योपरमायस्मात्तत्तावकत्वदीयपदांबुजमचिरोगपश्यति ॥ ३६ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

अन्येप्राज्ञाउदधौहिरणयाश्चादिभूरिभारेणसीदंत्याआसन्नमज्जनायानाव इवदुः सहासुरजनभारेणपरिविन्नायाभुवः आत्मभुवाप्राधितः मारावतारगायजातोऽसीत्याचक्षते ॥ ३४ ॥

केचनपंडिताअस्मिन् भवेसंसारेअविद्याकामकर्माभेः क्लिश्यमानानांदुःखेनपरिभूयमानानांश्रवणार्हाणिनामानिस्मरणार्हाणिकपाणिक

रिध्यन्नवातरादितिवदिति ॥ ३५॥ ।

कर्मगांश्रवगास्मरगौ किफलमितितत्राह श्रुगवंतीति येजनास्तवेहितंचेष्टितमभीष्गादाःश्रुगवंतिगायंतिगृगांतिसमरतिनंदंतितपवाचि रेग्राक्षिप्रंभवप्रवाहोपरमंसंसारप्रवाहस्यउपरमोनिवृत्तिःविनाशोयस्मिन्तत्तावकंपदांबुजंपश्यंतीत्येकान्वयः तस्मात्त्वत्कमेश्रवगादिफलं मुक्तिरवितिभावः॥ ३६॥

# क्रमसन्दर्भः।

भ्रायनितीति भवेऽस्मिन्नित्यस्य पूर्वपद्यस्यैवोपोद्धलकत्वेनोक्तम् । ततु अस्यैव स्वमतत्वेन श्रीयुधिष्ठिरादीनां परमभक्तानां सम्बन्धे नेव तत्तिलीलाश्रवगादिकम् अन्येषां भवतीति प्रत्युत तत्र तत्रैव मुख्यत्वमवसीयते। तदेवं तत्तन्मतसमाहारेगा समुदायस्य कारणत्वे नव प्रपट्ट । उच्चवान्तरतारतम्यं विवेचनीयम् । मम तु गोष्याद्दे इति वर्षािता श्रीयशोदैव सर्वोत्तमतया भातीति श्रीकुंतीदेव्यभिप्रायः ॥ ३६॥ ३७॥

# सुबोधिनी।

अन्ये पुतः कालांतरीयत्वात वसुदेवस्यापि "अथों वलीबान्" इति न्यायं पुरस्कृत्य कामप्रधाना भूमिभारहरसायि भगवानागत अन्य उप - प्राप्त । नतु भगवति सपरिकरे समागते परमधिको भारी भवति न तु भारावतरग्राम् । भारकदेषु भूमी हा वलत्वेन इत्याहुः । तदाह भारेति । नतु भगवति सपरिकरे समागते परमधिको भारो भवति न तु भारावतरग्राम् । भारकदेषु भूमी हा वलत्वेन इत्याहुः। वपाय । भारकतृष्णमधः पातन वेषमां मुकिवाने पूर्वीक्तप्रमाविशेषः स्वतंत्रकलता च स्यादिति चेत्र। प्रावष्टे भारताश्च स्वतंत्रकलता च स्यादिति चेत्र। प्रावष्ट भारण । तहा हि प्राविधा हेतुको मानसः सीऽण्यतिभावनया वैहिक इव भवति । तत्र भूमी भगवति सम्रागते तत्र चित्रे जाते अयं भारो न देहिकः कि तृष्ट्रतचेष्टा हे आर आरोपितः। कीर्य प्रतिकारकरणायाः === — माने भारति सम्रागते तत्र चित्रे जाते अयं भारा न राष्ट्रण । रहे । बुद्धा हि भार आरोपितः। शीर्घ प्रतीकारकरणायाद्द नाव द्रवादधाविति अनेन विषम्यात्कालस्यापि

# सुबोधिनी।

मज्जनहेतुत्वं सुचितम् । यथा तरंगादिराधारदोषस्तथा धर्मक्षयादिरपि कालदोषः । तस्मात्कालाधारायाः पृथिव्या आधाराधयोभयदोष संभवाच्छीघ्रं प्रतीकारः कर्त्तव्य इत्यर्थः । अन्यया पुनर्भूमेरुद्धारः कर्तव्यः पतित सृष्टिश्चं अतएव ब्रह्मगाः प्रार्थनेत्याह । आत्मभुवाऽथित इति । आत्मभुवेति खस्यापि ब्रह्मजननं पततीति भावः । स्त्रीपुत्रार्थनया कृतिमिति कामत्वाद्भगवतोऽनिभिष्रेतत्वं सूचितम् । अवसादनन विशीगातायां पुनर्निर्मागां कर्तव्यं स्यात् । तथा चैकदशनिर्मागासंभवात् नृतनब्रह्मांडनिर्माणमप्यापतंत् अतो भगवतेवं कृतमिति एकपक्षे इतरप्रयोजनं प्रासंगिकमिति द्रष्टव्यम् । अन्यथा अर्थभेदादवतारभेदो भवेत् ॥ ३४॥

एतेषां पक्षाणां पूर्वपक्षत्वान्न पर्यवसानकथनम् । केचन पुनर्भगवद्विचारेण त्रेवांगकार्थस्य हीनत्वं विचार्य भगवत्कियमाग्रोनेव हेतुना सर्वमुक्तार्थं भगवदवतार इत्याहुः । तदाह भवेऽस्मिन्निति । स्वाभिन्नेतत्वं तु स्वरूपनिरूपग्रएवोक्तम् मुक्तिप्रकरणे अवगादीनां धर्मत्वन मक्तित्वामिति विशेषः । भवद्दति । निरंतरात्पत्तिमार्गात् गमनेन अस्मिन्निति अनेकतुःखदर्शनात् स्थित्यापि क्रंशस्यासह्यता निरूपिता अविद्या खरूपा ज्ञानं ततः कामः विषयेच्छा नहि परमानंदे स्फुरद्विविषयेच्छाभवात ततस्तद्धित्रिविधानिकमाश्चि अवगादेः कम्गाः अविद्याकामकमनिवर्त्तकत्वं पंचमाध्यायोनेरूपितं श्रवगास्मरणयोभगवद्धमे परत्वेष्राकृतवाह्याभ्यंतरसंगाभावात् नजन्मक्कं शः अर्थ विवक्षया च स्थितौसर्वस्यभगवत्त्वन झानात् न दुःखदर्शनक्केशांऽपि अन्यथा परमकारुशिको भगवान्कूपेंधपातनन्याये नलोकानां त्रेवांग नाशांभवोदिति श्रवणादोनांवैयर्थ्यस्यात् अतोभगवान्मुक्तार्थमवावतीर्णशतिसिद्धम् अवतीर्णएवभगवत्यहेताभवाते श्रवणादि।वेषयस्य ३५

एवं जन्मकारर्गानिद्धारमुक्त्वाफलनिर्द्धारमाह श्रूपवंतीतिदास्येहिफलनिर्गायः कर्त्तव्यः धर्मादिवद्वचभिचारिफलत्वेपरंपराफलत्वे अन्यफलत्वेवास्तरः सेवां कःकुर्यात्यद्यपिस्तरूपनिरूपगोनैतत्सिद्धचाति परब्रह्मत्वेभगवतः सस्यचजीवत्वेदासत्वाद्दास्यसिद्धिरिति तथापियोग्यतामात्रं सिद्धचेत्नफलमुखतयाअतः अवर्णाादिभिर्यादपद्दपद्दयेत् तदेवदास्यंकुर्यादितियुक्तं फलीनरूपण्म ईहितंचाष्टतंम गवत्त्रयत्नमात्रीनष्पन्नमित्यर्थः तवत्यवतीर्गास्यययासर्वेपदार्था जगतितत्रतत्रसिद्धाः तथासंतोभगवत्कथाच गंगावद्दशीवशेषीनयताः तथाचर्गगायांस्नायादित्यत्रनगंगायामागतायांस्नायादिति । किंतु । स्वयमुद्यम्यतीर्थमुङ्खमहताप्रयत्नेनांतः प्रविश्यस्नायादितिपवमत्रा पिवक्तरिस्रतिश्रपवंतीतिनिकतुसतांस्थानेगत्वायथावदंतितथोपायंविधायसमनस्केद्रियः सम्यक्शक्तितात्पर्य निर्णयः कर्तव्यइत्यर्थः कृतेचिनिर्णायेतदानं देहृद्याविभूतेरसेनगायांति ततारसपरवशाः संतःअन्यान्पुरस्कृत्यगृगांतिउपदिशांति एतेषांहृतुहेतु । मञ्जवाऽप्रवक्तव्यः ततःसर्वेषांपदार्थानां भगवत्संवंधित्वनश्चतत्वातः यंकंचनपदार्थेदृष्ट्वार्द्दाहितमेवस्मरंतिततः स्वतंत्रफलत्वात्आनंदहेतुत्वाच स्वतप्यनंदिति अंतरानंदयुक्ताभवंतीत्यर्थः एवंश्रवसाकीत्तंनानिसावांतरफलानिनिरूपितानि अतोमहाफलनिरूपसायअवांतरफलवतामेव महाफलिम तिनिरूपयतितप्वपद्यंतीति अचिरेगोतिपदादेवअयोगोव्यविद्यक्षः कालस्याहेतुत्वादेवनकालविलंबोबाधकः यथाकश्चित् समुद्रमज्जन्त त्तीरंपर्येत् तथाभवप्रवाहस्यउपरमोयत्रतादशतीरभूतं पदांबुजंपर्येत्॥ ३६॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ता ।

आत्मभुवेति ब्रह्मप्रार्थनस्य प्राधान्यविवक्षयेति सर्व्वं मतान्तरम् ॥ ३४॥

आतमसुवात ब्रह्मनायगर- गामः ततः कम्माणि तैः क्षित्रयमानानां सांसारिकाणामपि प्रेमभक्तिसिद्धचर्थमेव कम्माणि करिष्यन् क्रेशनिवृत्तिस्वानुषङ्गिको उत्तर्रश्रोके पदाम्बुजदर्शनस्यैव श्रवणादिफलत्वोक्तेः । तद्दर्शनन्तु प्रेमलभ्यमेव ॥ ३५॥

त्रवात्त्रवातुवाक्षया उत्तरका । त्राप्त व्यवन्तीति । ते एव न त्वन्ये पश्न्यत्येव नतु न पश्यन्ति अचिरंगाव नतु चिरेगा तावकमेव अस्य पक्षस्य त्रिक्षा विकास । विकास विकास पदाम्बुजमेव नतु तव निर्विवशेषं खरूपमिति अर्थसीन्दर्श्यलामाय षडवधारगानि द्रष्टव्यानि ॥ ३६॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

आत्मभुवाब्रह्मगा ॥ ३४ ॥

आत्मभुवाश्रक्षणा ॥ २२ ॥ अविद्याऽऽत्मानात्मपरमात्मज्ञानाभावस्ततः कामोविषयाभिलाषस्तन्निमित्तैः कर्माभिः क्षिरयमानानांजनानांक्रेरानिवृत्तयेश्रवणस्मर गाद्यहींगि चेष्टितानिकरिष्यन्जातः इतिकेचनमन्यंते ॥ ३५ ॥

चरमपक्षस्यसिद्धांतत्वंस्चयन्श्रवणादिफलंदर्शयति श्रगवंतीति तवेहितंचेष्टितंगुरोः सकशात् श्रगवंतिशिष्यादीव् प्रतिगृणी ति कचित्रगायंतिस्मरंतिनंदंतिचते प्वमवप्रवाहोप्रमंसंसार्गनवर्त्तकंपदांवुजमचिरेगाप्रयंति॥ ३६॥

# भाषा टीका।

कोई कहते हैं समुद्र में नावके समान भूरिभार से दुःखित पृथिका भार उतारने को आत्मभू ब्रह्मा की प्रार्थना से तुम अव तीर्ण हुए हो ॥ ३४॥

कोई कहते हैं इस संसार में अविद्या और काम कर्मों से क्लेश भोगते जीवोंको सुख देने के उन लोगों के अवशा स्मरण योग्य कर्म

करने को तुम्हारा औतार है ॥ ३५ ॥

त का अप के इंगितों (लीलाओं) को श्रवण करते हैं गान करते हैं निरन्तर (कीर्तन) करते हैं स्मरण करते हैं आभि नन्दन करते हैं वही शीघ्र आप के पदाम्बुज दर्शन करते हैं। जिन पदाम्बुजों से मन प्रवाह का उपरम होता है।। ३६॥

**ऋप्यद्यनस्त्वं स्वकृतेहित प्रभो जिहासासि ।स्वित्सुहृदे।ऽनुजीविनः ।** येषां न चान्यद्रवतः पदांवुजात् । परायगां राजमु योजितांहसाम् ॥ ३७ ॥ के वयं नामरूपाभ्यां यदुभिः सह पाग्डवाः । भवतोऽदर्शनं यहिं हृषीकागा मिवेशितुः ॥ ३८॥ नेयं शोभिष्यते तत्र यथे दानीं गदाधर । त्वत्पदै रंकिता भाति स्व लत्त्रण विलक्षितैः ॥ ३६ ॥ इमे जनपदाः स्वृद्धाः सुपक्षौषिवीरुधः ॥ वनाद्रिनयुद्दन्वंतो होधंते तव बीच्चितैः॥ ४०॥

#### श्रीधरस्वामी ।

इदानी तवास्मत परित्यागोऽनुचित इत्याशयेनाह अपीति चतुर्भिः । हे प्रभो ! सुद्वदोऽनुजीविनश्च नोऽच अपि खित् कि खित त्वं जिहासिसि । येषाम् अस्माकम् अन्यत् परायगां नैवास्ति । कुतः राजस् योजितमंहो दुःखं यैस्तेषाम् । स्वानां कृतमीहितम् अपेक्षितम् थेन तस्य संवोधनम् स्वकृतेहित इति । विसर्गान्तपाठे त्वं पद्विशेषग्राम् ॥ ३७॥

नतु तुव वन्धवो यादवाः पुत्राश्च पांडवाः श्वराः समर्थाश्च तत् किं कार्पग्यं भाषसे अत आह के वयमिति। यहि भवतोऽदर्शनं यदा न्वसस्मान न पश्यिस तदा (नामरूपाभ्यां ) नामा विख्यात्या रूपेण सम्द्र्या च यदुाभिः सहिताः पांडवानाम् केवयं न केऽपि अतितुच्छा इत्यथः। ह्यीकाग्रामीशितुः जीवस्यादरीने यथा न किश्चिन्नाम च रूपश्च तद्वत् ॥ ३८॥

किश्च यथेदानीमियमस्मत्पाल्या भूमिः खैरसाधारगौर्वजांकुशादिभिलक्षिगौर्विलक्षिते श्चिहितैस्वत्पदैरिङ्कता सती भाति तत्र तदा त्वयि निर्गते सति न शोभिष्यते ॥ ३९ ॥

अपि च इमे जनपदा देशा स्वृद्धाः सुसमृद्धाः सन्तः॥ ४०॥

### द्वीपनी।

योजितमिति । राजानो ह्यस्माभिर्दुः खं प्रापिता अतस्त्वत्तो ह्यन्य आश्रयो नास्त्येवत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ३९ ॥ (सुपका ओषधयो बीह्याचा वीरुघो लतास्र येषु ते एघन्धे बर्द्धन्ते ॥ ४० ॥ ४१ ॥ )

# श्रीबीरराघवः।

तदेवंसंस्तुत्याधुनाप्रयागामुपसंहरेतिसूचियंतुत्वत्पदांभोजैकशरगानस्मान्हातुं उत्सहसेकिमितिकाकाऽऽहअपीतिषड्भिः स्वकृतेस्वार्थे त्वमपीहितः विप्रवृत्तः किमित्यर्थः यद्यसमञ्ज्ञेष्ठमोसुहवोऽनुजीविनोभृत्यांश्चनोऽस्मानधुनाजिहाससिहातुमिच्छासिहित्यागानहतांसूचायतुं ्रवन्त्राहरू , आत्मनोविशिनिष्टियेषांभगवतःपदांबुजादन्यत्परायग्रांश्रेयः प्रापकंप्राप्यंचनास्तिश्रतपवराजसुराशांमध्येयोजितांहसांयोजितदुःखानांयेषामन्य त्पस्यगानास्तितानस्मानित्यन्वयः॥ ३७॥

सर्वसिदंनिर्हेतुकयात्वत्रकृपयेवसंपर्धनश्वसमझतगुगानिरीक्षगिनत्यभिमायेगाह् कहति नामरूपाभ्यामुपलक्षितस्येतिसेषःमजुष्यसजाही अनामरूपाश्यामुपलक्षितस्यतवदर्शनंहृपीकागामिद्रियागांमीशितुः करगाधिपस्यक्षेत्रह्नस्यदर्शनिमवयहिंयदायेषांजातंते पांडवावयंयदुभिः यनानकार्यः । अवावययद्वामः स्वतंत्राप्रित्वत्वतं । क्षेत्रत्वत्कप्रयेवत्यंजातमितिभावः तेवयंनामक्रपाश्यांकइतिवान्वयः कित्वदर्शनाञ्चण्यादि नाम्नातापसादिकपेगावान्विताइत्यर्थः ॥ ३८ ॥

हुगद्धाधराश्चनाइयंभूमिः स्वैः स्वासाधारणैः लक्षगीश्चिद्धेः ध्वजवज्ञांकुद्यादिरखाद्धपैविलक्षिताभिक्षेस्त्वत्पदैरंकितासतीतथातत्रत्वद्रमना नंतरकालेनाशोभिष्यत्॥ ३९॥ 

र कारण तबबीक्षितेरेवयेजनपदादेशाअधुनास्युद्धाः सुसामृद्धाः स्वृद्धत्वमेयाद्यस्यपेषाय्योवीक्थः गुल्मानिचयेषु तथावनानिचाद्रयम्यमञ्जयोदन्यंतः तववारः अवस्ति ॥ ४० ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

स्वात्मादिभ्योऽत्यंतहितकरत्वात्त्वद्विरहोऽस्माकमतिदुःसहइत्यभिष्रत्याहः अप्यद्येति प्रमोराजसुयोजितांहसांकृतापराधानांयेषामस्माकं भवतःपदांबुजादन्यत्परायग्रांनास्ति त्वंतान् सुदृदोऽनुजीविनःकिकरानृत्वद्भुक्तभोजनीसक्थसेविनोनोऽस्मान् जिहाससियपिस्वित् द्वारकाग मनन्याजेनत्यकुरिमच्छिसिकिस्वित्।कीरशस्त्यंस्वकृतेहितःस्वतंत्रचेष्टितः स्वार्थेमृत्यार्थेहितोवाभृत्यप्रयोजनायकृतचेष्टावा चशब्दपवार्थे ३७

तत्कुतइतितत्राह तइति यदाईशिर्तुरिद्रियस्थामिनोदशैनंतदैवहृषीकाग्गाभिद्रियाग्गांदर्शनादिशक्तिरन्यदानास्तीतियथा तथायद्नाम-स्माकंयर्हियदामवतोदर्शनंतदातेतवसकाशाद्यदुभिःसहपांडवाःकथंनामरूपाञ्यांयुधिष्ठिरादिनाम्नाशुक्लादिरूपेगाचयुक्ताइतिशेषइत्यन्वयः यदायेषांयदूनामस्माकंचभवतोदर्शनंतदातेयाद्वाः वयंपांडवाश्चतेवयंनामरूपवंतद्दतिवा केवयमितिकेचित्पठंति याँईभवतोऽदर्शनं तदा नाम्नायशसाबछेनरूपेगाबलकोशाद्यात्मनायदुभिःसहवयंकेअसत्कल्पापवेतितस्मात्त्वद्विरहोऽस्माकंमरगाकल्पइत्यर्थः ॥ ३८॥

भोगदाघर इयंराजधानीइदानीं ध्वजादिलक्षगौर्विशेषेगाचिान्हतैस्त्वत्पदैरांकतायथाभातित्वियद्वारकांगवेतथानशोभिष्यतइत्येकान्वयः।

अथवाइयंभुःत्वत्पदै रंकितायथाभाति त्वीयवैकुंठंगतेतथाशोभिष्यतइतिवा॥ ३९॥

नकेवलमस्माकमेवत्वद्गमनंदुःखकरमेषांजनपदादीनामपीत्याह इमइति इमेजनपदादयः तवसन्निधानात्सुष्ठुऋद्धाः त्वत्कारुगयामृत **दृष्ट्रचावीक्षिताःएधंतेहियस्मादित्येकान्वयः ॥ ४०** ॥

पांडवाः पांडुसम्वन्धिनः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

क्रमसन्दर्भः।

#### सुवोधिनी।

एवंफलंनिरूप्यदैन्यंनिरूपयतिअप्यद्येतिचतुर्भिः सख्येहिदैन्यनिवृत्तिः दैन्यंद्यंतःकरग्राधर्मः सयदास्फुरतिसदीनः सचत्वयिस्तिविष यामावे न स्फुरितः इदानीं पुनःप्राप्तेविषये त्वद्गमनं भावयन्नेव स्फुरितस्तस्मादस्मात् दीनान् मात्यजेतिप्रार्थयते । अन्यदा हिस्गावान् कार्य सरोषं कृत्वागच्छति । इदानीं कार्यस्यानिःशेषत्वात् पुनर्नागमिष्यतीति आभि प्रायेगास्मान् त्यक्त्वागच्छति । हेस्वकृतेहित !स्वानामेव कृतं कार्यं तस्मिन्नेव ईहितंयस्य भक्तकार्यकर्तः इत्यर्थः । त्वदपरित्याग एवास्मत्कार्यं तत्रैवतवेहितं भवत्विति भावः । अपीति संभावना याम् । अद्येति किमस्मत्त्यागदिनमित्यर्थः । नोऽस्मानथवा नस्त्वमिति । परित्यागः सर्वथा भाव्यद्दति न वक्तव्यमन्यथाऽपि त्वया कर्तुराक्य तइतिप्रभो ! जिहाससिस्वित् । स्विदिति किमर्थे । एतावता कालेनवयं शुद्धहृदया जाताः परिष्रहृदशायां च कथत्यागः । किंचदासाश्च जाताः। अनु पश्चाजीवोऽस्यास्तीत्यनुजीवीदूरे गतेजीवनमेव न भविष्यतीत्यर्थः। किंच येषामस्माकं तवपदांषुजव्यतिरेकेगा, नान्यत्पराय गामस्तितत्र हेतुः राजसु सर्वेषुयोजितांहसां योजितापराधानाम इदानींवयं सर्वविरोधिनो जाताः अतस्त्वद्रश्राव्यातिरेकेगा न जीवामः

नचवयं खमावत एव महांत इति शंकनीयं त्वदर्शनेनैव महत्त्वंनान्यशा केवयंनामा रूपेशा चिवख्याताः यदुभिः सहपांडवाः यहि भवतः अद्दर्शनं नामचरूपं चगमिष्यतीत्यर्थः यदुत्वं पांडवत्वं चतत्रहेतुभूतं इष्टांतमाह । हृषीकाणामिद्रियाणामीशितुः प्राण्स्याद्दर्शने ।

एकैकेंद्रियव्यतिरेकेणांधबधिरा इव जीवंति प्राग्तितृगते सर्वमेव गच्छेदित्यर्थः ॥ ३८॥

किचअयं देशोऽपि नसुखदो भविष्यति। यथेदानींत्वत्पदैरंकिताऽतिशोभायुक्ता भाति इयमेवाग्रे नशोभिष्यते। स्वानि असाधारणानि लक्षणानि ध्वजादीनि तैर्विशेषेण लक्षितैः । शोभाहि सर्वात्वत्संवंधाधीना । गदाधरेति । भूमेः पादस्पर्शे सात्विकभावस्वेदोद्गमे कर्द्गात्वं भवतिकर्दमे चक्षेत्रे सर्वोहि साधारोगच्छतीति गदाधरत्वमुक्तमिदमलीकिकं मया दश्यतइति तथा संबोधनम् ॥ ३५॥

र्तिचसर्वेऽपि रात्रुजयेन प्राप्ता देशा नास्माकंसुखकरा भविष्यंति अप्रे सस्याद्यभावादिदानीं तुसस्यादिसंपत्तिभगवद्दर्शनाधीनेत्याह इमेजनपटा देशाः सुष्ठुऋद्धाः सुष्ठुपक्षाः ओषध्यो वीह्यादयो वीरुधो द्राक्षादयश्च येषाम् । वनानि अद्रयो नयउद्न्वतश्च तवैव वीक्षितै रेघंते तस्मात्त्वत्परित्यागे न किचिद्भविष्यतीत्यर्थः॥ ४०॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

अस्माकं सुखदुः खे त्वद्दीनाद्दीने एव नान्ये तत्र सुखसमयोगतः संप्रति दुः खसमयोऽयमायातीत्याह अप्यद्येति । अद्य नोऽस्मान् अपि स्तित त्वं जिहासिस यतोऽद्य त्वं द्वारकां यातुमिच्छसीति भावः नतु बहुदिनमत्रावसं संप्रति द्वारकां याम्येव तत्र ममावश्यं किचित कृत्यमस्ति अनुशां देहीत्यत आह स्वकृतेहितः स्वेनैवकृतं निष्पादितम् ईहितं चिकीर्षितं यस्य सः त्वंकृतकर्त्तव्योऽसीति भावः निर्विसर्गपाठे संबोधनान्तरम् राजसु योजितम् अंहस्तत्पित्रादिबधन वैरं यैस्तेषाम् । अनुजीविनो मत्पुत्रात् अधुनापि रक्षक्रवे तिष्ठेति भावः॥ ३७॥

नतु भीमार्ज्जनादयस्ते पुत्रामहाबलिष्ठा एव राजातु साक्षाद्धम्मे एव यादवाश्च बान्धवा इति न ते कापि चितत्यत आह के वयमिति

नाम्ना ख्यात्या रूपेण सामध्येन च । ईशितुर्जीवस्यादर्शनेहपीकाणां यथा न किचिन्नामरूपश्च तद्वत् ॥ ३८ ॥

यदि त्वमितो यास्यसि तत्र तदा इयं भूमिः खलक्षगी ध्वेजवज्रादिभिविलक्षितैवैलक्षग्यं प्राप्तेः॥ ३९॥ ४०॥

त्र्रथ विश्वेश विश्वातम न्विश्व मूर्ते स्वेषेषु मे ॥
स्नेहपाश मिमंद्धिधि दृढं पांडुषु वृष्णिषु ॥ ४१॥
त्विय मेऽनन्यविषया मित मधुपते सकृत्॥
रितमुद्धहतादद्धा गंगेवौधमुदन्वति॥ ४२॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

खकीयानांखञ्चतमवेक्षितं येनतस्यसंबोधनेहेखञ्चतेहित हेप्रभात्वराजसुयेजितांहसांयोजितदुःखानामतग्व येषामस्माकंभवतः पदा म्बुजादन्यत्परायग्रं श्रेयः प्रापकंनैवास्ति तान्सुहृदोह्दहर्नहाननुजीविनोनिजशृत्यान्नोऽस्मानद्यजिहासस्यपिस्वित हातु मिञ्छासिकम् ॥३७॥

नन्वत्रागमनेयादवानांतत्रगमनेयुष्माकंतुःखोदयस्तत्राकेकारणमत्राह केशतिहृषोकाणामिद्रियाणामीशितुर्मुख्यस्य प्राणस्यादर्शन मिव भवतोयिह् अदर्शनंतदायदुर्भिः सहपांडवाः नामरूपाभ्यामुपलक्षिताः नकेऽपिअतिदोनागवेत्यर्थः ॥ ३८ ॥

र्वा नार्वे । इर् ॥ इयमस्मत्परिरक्षिताभूमिः स्वस्तदसाधारगौर्छक्षगौ ध्वजादि।चिह्नौर्वेळाक्षितौर्भूम्यां चिह्नितैर्ययेदानीशोभतेतयातत्रत्वियिनिर्गतेसाति न शोभिष्यते ॥ ३९ ॥

किंचेदानींस्वृद्धाः सुसमृद्धाः सुपकाः ओषध्योवीरुधश्चयेषुतेश्मेजनपदाः देशाः वनादयश्चतववीक्षितैरेधंतेवर्द्धतेत्वयिनिर्गतेतुनीते पूर्वेग्णान्वयः ॥ ४० ॥

#### भाषा टीका।

हे स्वकृते हित ! (भक्तों के निमित्तही आप सब चेष्टा लीला करतेही) हे प्रभी। हम सब आप के सुदृद और अनुजीवी हैं आप के पदाम्बुज से अतिरिक्त हमारा और कोई परायगा (आश्रय) नहीं है। समस्त राजाओं का युद्ध विश्रह द्वारा हमने अंहः (अपराध) किया है। अब क्या आप हमको त्यानकर जायने ?॥३७॥

हम पांडव और हमारे वांघव यादव, हम सब बडे २ नाम रूप से प्रख्यात भी कुछ नहीं हैं यदि आप का दर्शन न हो। जैसे जीवके विना इन्द्रिय सब वृथा है ॥ ३८ ॥

हे गदाधर ! यह हमारी पालित भूमि जैसी अब तुम्हारे ध्वज वजादि चरण चिन्हों से अंकित होकर शोभित होती है । तव (आपके गमनके अनंतर ) ऐसी शोभित नहोगी—॥ ३९॥

ये हमारे समस्त जन पद् ( नगर ) सुंद्र पक्ष औषधि वीरूध वन नदी पर्वत समुद्र तुम्हारी दृष्टि से वार्द्धित होते हैं ॥ ४०॥

#### श्रीधरस्वामी।

गमने पांडवानामकुशलम् अगमने च यादवानाम् इत्युभयतो व्याकुलचित्ता सती तेषु स्नेहनिवृत्ति प्रार्थयते अथेति । विश्वेशत्यादि संवीधनानि स्नेहच्छेदे सामर्थ्यक्यापनाय दढं सन्तम् ॥ ४१ ॥

ततः किम अत आह त्वयीति अनन्यविषया सती मे मितः रितमुद्धहतात् अनविच्छन्नां प्रीतिं करोत्वित्यर्थः । ओघं पूरम्, यथा गंगा प्रतिवर्धं न गणयति एवं मितरिप विष्नान् न गणयत्विति भावः ॥ ४२ ॥

दीपनी ।

पूरः प्रवाहस्तमित्यर्थः ॥ ४२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

मदिभिप्रायंजानास्यत्येवेत्यभिप्रायेणसंवीधयतीत्याह अथशब्दःप्रश्नदोतकः हे विश्वेशसर्वीतः करणानियंतः हे विश्वातमन्सर्वीतरात्मच विश्वशरीरकस्वेषुपांडवेषुमेमियिविभिक्तिव्यत्ययभाषेः बृष्णिषुयादवेषुचेमंद्रहेस्नेहणवपाशः तेष्ठिधियहावृष्णिषुपांडवेषुचत्वत्स्नेहपाशः इत्य भिप्रायेगामहत्युक्तमः ॥ ४१ ॥

ाममाज्ञात्रार्थयतित्वयीति है मधुपते यादवानोमेवमाधवादितनामातरंत्रधनवमस्प्रदीमविष्यति त्वय्यनन्येविषयादितराजविष-तदेवंद्रयंजयंतीप्रार्थयतित्वयीति है मधुपते यादवानोमेवमाधवादितनामातरंत्रधनवमस्प्रदीमविष्यति त्वय्यनन्येविषयादितराजविष-यामममितरसङ्ख्रुद्धाउदन्वतिसमुद्रेगंगाजलीधमिवउद्भद्धतातं यधागंगासमुद्रमप्रार्थयस्वजलीधं वरोख्रुमक्षमासमुद्रप्राप्येवस्वजलीधं वहित यामममितरसङ्ख्रुद्धाउदन्वतिसमुद्रेगंगाजलीधमिवउद्भद्धतापत्रथेथैः॥ ४२॥ एवंद्यामप्राप्य रंतुमक्षमामेमितस्वय्येवरितमुद्रदतापत्रथेथैः॥ ४२॥

#### श्रीविजयध्वजः।

पांडवयादवेषुमागवतत्वेनस्नेहआवद्यकइतिजानंत्यिपपुत्रमित्रादिस्नेहःसंसारहेतुत्वाद्धेयइतिह्यापयितुमाह अथेति अवानंतरमेतदनु गृहाग्य किंतदिति हेविद्वेद्यविश्वात्मन्विश्वव्यापिन्विश्वमूर्त्ते अनंतिविद्यहस्वकेषु स्वीयत्वेनाभिमतेषुपांडवेषुपांडवसंबंधिषुयाह् वेषुचममगाढंपुत्रमित्रादिस्नेहपाद्यांछिधित्यन्वयः पुत्रादिस्नेहपवच्छेद्योनतुभागवतस्नेहः तस्यद्यास्त्रेकर्त्तव्यत्वेनविहितत्वादित्यभिष्रेत्योक्त मिममिति॥ ४१॥

नकेवलंबिषयविरक्त्याऽलंकितुत्वय्यनपायिनींरतिं त्वंवितरेत्याह त्वयीतिहेमधुपतेश्रानन्दनायनान्य विषयारुद्रादिविषयाश्रनन्यविषयाः ओघंजलप्रवाहचेगंउदन्वतिसमुद्रे ॥ ४२ ॥

#### क्रमसंदर्भः ।

अथेति तैरवतारितम् । प्वमप्युभयेषां तादशतदेकालखनतादर्शनेन तेष्वधिकभगवत्प्रीत्याधारत्वं खस्याधिकस्नेहहेतुरिति तेषु स्नेह ष्छेदव्याजेनोभयेषामपि त्वद्विच्छेद प्व कियतामिति च व्यज्यते । ततश्चोत्तरत्र सूतवाक्ये तां वाढमित्युपामन्त्रयेत्यत्र श्रीभगवद्श्युपगमो ऽपि सर्व्वत्रैव सङ्गच्छते ॥ ४१ ॥

सम्वन्धवशादनन्यविषया त्वाये या मितः सैवासकृदनवच्छेदेन रितमुद्रहतात् । जातया रत्या प्रतिवन्धं निराकरोत्वित्यर्थः । तदेतत् दृष्टान्तेन स्पष्टयित गंगवीधमिति । सा यथा महाप्रवाहद्वारा तथैवेत्यर्थः । उभयोरिप प्रतिवन्धे सत्यधिकोच्छलनकृतिसाम्यात् ॥ ४२ ॥

#### सुवोधिनी ।

पवं बिहर्मुंखतया दैन्यं प्रतिपाद्य अंतर्मुखतया भिन्नप्रक्रमेण, द्वयं प्रार्थयते अथेति द्वाश्याम् द्वयमेव हि साध्यम् असंग आत्मव्यतिरिक्ते भगवति रितइच तत्र आत्मव्यतिरिक्तेऽसंगो विचार्यते किमात्मव्यतिरिक्ते कि चिदिहत न वेति। अहितत्वे मगवतः सर्वात्मत्वं भग्येत नास्तिचेत् केन सहासंगः। ननु प्रतितेनितिचेत्त्त प्रतीतं भगवानन्यो वा उभयथाऽपि पूर्वोक्त एव दोषः। अन्य-यात्वेन प्रतितेनेतिचेत् यद्यपि तत्रापि पूर्ववद्विकल्पः संभवति तथापि ज्ञानिनोऽसंगो न कर्तव्यः स्यात् तस्मात् प्रवमेकं रूपं वक्तव्यं यया शास्त्रार्थपरित्यागौ संगती भवतः तदाह विश्वेशविश्वात्मान्निति। विश्वं कार्ये स्वयं सर्वकारणमत ईशः अनेन स्वार्थं सर्वे सृज्ञ-तिति मुख्यसिद्धांतो ज्ञापितो भवति। ततो भगवदर्थे कृते जगित स्वस्यादंताममतायां भगवद्विरोधेन वंधः स्यात् किश्वंभात्मन" इति वाक्यात् अतो यथा अक्ष्णोरिद्वंद्वारयोर्लक्षमीनारायग्रयो रमग्रार्थं निद्वा सृष्टा तथेव परित्यागः मृष्ट इत्यर्थः। इदानीं सर्वात्मत्वं साध्यति विश्वात्मिति। विश्वस्यातमा स्वरूपं यदैव आत्मत्वेन यदेव न स्कुरति तस्यैव परित्यागः। ननु वस्तुतः आत्मत्वे कि स्कुरग्रोनेतिचेत् न यतोऽयमातमा। उद्देश्यविधेयभावस्योक्तत्वात् उद्देश्यस्कुरग्रो त्यागः। बोधतारतम्यप्व सर्वसाधनानामुप्योगात् । न च विश्वात्मत्वमीपचारिकं भद्रसेनो ममात्मेतिवत्तत्राह विश्वमूर्त्ति। विश्वं मूर्ती यस्य विश्वस्मित् वा मूर्तिर्यस्य वेश्वादितः विश्वयद्वार्यौ स्तिद्देश्य प्रेतिरस्य प्रेत्रार्थेते मायाकृतस्तुरुनेहो न भगवद्वयतिरेक्षेण्य अन्यस्माद्पगच्छिति "मामेव ये प्रपद्यते" इति वाक्यात् क्रिते पुनर्योजनाभावः। इद्वमिति। इद्वग्रेथित्वाद्विमोकः॥ ४१॥

एवमुद्देश्ये वैराग्यमुक्त्वा विधेये भगवति साक्षादवतीर्गो स्नेहं प्रार्थयते त्वाय मेऽनन्यविषयति । यद्यपि भ्रातृपुत्रत्वेन रक्षकत्वेत च स्नेहोऽस्त्येव तथापि स देहसंबंधनान्यविषयकः । आत्मसंबंधी हि त्वनन्यविषयः । परमात्माऽपमात्माऽधिष्टात्री देवतेति सतिः परमां प्रीतिमुद्धहतात् । ज्ञानेन भक्तिभवत्वित्यर्थः प्रतिबंधकागगानायां रतेभगवद्भेदे च दृष्टांतः परंपरासंबंधाभावे च ओवं प्रवाहमुद्दन्वति समुद्दे ॥ ४२ ॥

# श्रीविश्वनायचक्रवत्ती।

and the rower open reduced because of

गमने पांडवानामकुरालम् अगमने च यादवानामित्युभयतो व्याकुलिचत्ता सती तेषु स्नेहिनवृत्ति प्रार्थयते अथेति । यस्त्व सर्वेषामेव विश्वेषाम् ईशो भवसि । आत्माचेतियता । तद्रूपोऽपि खखानुवर्त्तिनां वृष्णिपांडूनां कल्याणाय कुपासिन्धुस्त्वमेव सावधानः सदैवासि अहं किन्ततकुरालचितया वृथेव म्रिये इति भावः ॥ ४१ ॥

ति क्षि ब्रह्मज्ञाने स्पृहावती अवसि वृष्णिषु क्षेष्ठच्छेदे मय्यपि स्नेष्ठच्छेदात तम्र नेत्याह त्विय मितः रित प्रोतिम उत्कर्षेण ब्रह्मति अनवच्छित्रत्या दघातु । किन्त्वनन्यविषया त्वद्भक्तास्वदिभन्ना एवं तेषु प्रीति विना त्वच्यपि प्रोतिन सिक्षग्रेत त्वं प्रसीद्दशित्यपि नित्यहै जानम्येव अतस्वत्तस्वद्भक्ते भ्यश्चान्यत्रममत्वश्च्या । तदिप पांडवेषु यादवेषु त्वद्भक्ते भ्वपि यत् क्षेष्ठस्य छेद्दे प्रार्थयेतस्य स्वव्यवस्यात् पूर्वते जानम्येव यत्वस्य स्वेष्ठः प्रवृत्तस्तरयेव नतु त्वत्वप्रियत्वनिबन्धनस्य अतप्रव वंधकत्वेन स्व मया पाश्चरपक्षण प्रयुक्त एवं देहसम्बन्धेन थे। व्यवहारमयः स्नेष्ठः प्रवृत्तस्तरयेव नतु त्वत्वप्रियत्वनिबन्धनस्य अतप्रव वंधकत्वेन स्व मया पाश्चरपक्षण प्रयुक्त एवं देहसम्बन्धेन थे। व्यवहारमयः स्वेष्ठः प्रवृत्तस्य स्विम् । व्यथा च इति भावः । अतप्रव गंगा यथा उदन्वत्यक्षिलनद्वनद्दीनामाश्चये आव पूर्व वहित तथा मितरपि सर्वमक्ताश्चयप्रीये त्विय रितमः । वश्चा च इति भावः । अत्यव गंगा यथा प्रवृत्ति प्रविम् । ग्रायात्विति भावः ॥ ४२ ॥ गंगा प्रतिवन्धमः न गर्गायति प्रवं मितरपि विद्वान न गर्गायत्विति भावः ॥ ४२ ॥

स्तउवाच ॥

श्री कृष्ण कृष्णसख वृष्ण्यृषभाविन्धुप्राजन्यवंशदहनानपवर्गविर्य । गीविंद गोद्विजसुरानिं हरावतार योगेश्वरा खिलगुरो भगवत्रमस्ते ॥ ४३ ॥ पृथ्येत्यं कलपदेः परिशाता खिलोदयः ॥ मंदं जहास वैकुंठो मोहयन्तिव मायया ॥ ४४ ॥ ताम्वादिमित्युपामंत्र्य प्रविद्य गजसाव्हयम् ॥ स्त्रियश्चस्वपुरंयास्यन्प्रेम्शा राज्ञा निवारितः ॥ ४४ ॥ व्यासाचै रीश्वरेहाज्ञैः कृष्णोनाद्भुतकर्मशा ॥ प्रबोधितोऽपीतिहासैर्ना बुध्यत शुचार्षितः ॥ ४६ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

उभयकुलवंधूपलक्षितात्प्रपंचाद्वैराग्यंप्रार्थयते अथेति ॥ ४१ ॥ भगवातिभक्तिप्रक्रियार्भाति त्वयीति हे मधुपते उदन्वतिसमुद्रेओधपूरंगंगेवमेमितः त्वयिभनन्यविषयाऽव्यभिचारिखीसतीरतिमनुरक्ति मसकृत्प्रतिक्षणमद्वासाक्षादुद्वहतात् ॥ ४२ ॥

#### भाषाटीका ।

(श्रीकृष्ण के गमन में पांडवों को कष्ट है. अगमन में यादवों को यह विचार कुंती प्रार्थना करती है ) हे विश्वेश! हे विश्वातमन् विश्वमूर्ते ! यह जो अपने अपने कर पांडव और याद वों में मेरी इढ लोह पासहै इसे आप काट दीजे ॥ ४१ ॥ विश्वमूर्ते ! यह जो अपने अनन्य विषयामित असकृत (वार वार) आपमेही रित उद्वहन करे जैसे गंगाजी का प्रवाह समुद्र में हे मधुपते ! मेरी अनन्य विषयामित असकृत (वार वार) आपमेही रित उद्वहन करे जैसे गंगाजी का प्रवाह समुद्र में श्रवेश करता है ॥ ४२ ॥

# श्रीधरखामी।

एवमभ्यर्थं पुनः प्रणामति । हे श्रीकृष्ण ते नमः । उपकाराननुस्मरन्ती वहुधा संबोधयति कृष्णसख अर्ज्जनस्य सखे वृष्णीनाम् ऋषम श्रष्ट । अवन्ये भूम्ये द्रुद्यन्ति ये राजन्याः तेषां वंशस्य दहन। एवमपि अनपवर्गिवीर्थ्यं अक्षीणप्रभाव । गोविन्द प्राप्तकामधेन्वेश्वर्थं गोद्विजसुराणाम् आर्त्तिहरोऽवतारो यस्य इति ॥ ४३ ॥

गाद्धिजसुरासाम् आक्तहराञ्वतारा यस्य शत ॥ ०२ ॥ कलानि मधुरासा पदानि येषु तैर्वाक्यैः परिणुतोऽखिल उदयो महिमा यस्य सः। णुस्तुतावित्यस्मात् परिणुतेति वक्तव्ये दीर्घइछ्न्दो ऽनुरोधेन । मन्दमीषत् । तस्य हास एव माया । वक्ष्यति हि—हासो जनोन्मादकरी च मायेति ॥ ४४ ॥

उनुराधन । नापनापर । तर्प हाल प्य नापा। पर्यात हि हो। त्विय मेऽनन्यविषया मितिरिति यत् प्रार्थितं तद्वाढिमित्यङ्गीकृत्य रथस्थानात् गजाह्वयमागत्य पश्चात्ताञ्च अन्याश्च सुभद्राद्याः स्त्रिय उपामन्त्र्य अनुज्ञाप्य स्वपुरं यास्यन् राज्ञा युधिष्ठिरेण प्रेम्गणा अत्रैव कश्चित् कालं निवसेति सम्प्रार्थ्यं निवारितः ॥ ४५॥

उपामन्त्रय जनुसाय जनुसाय जन्न अपाय अपाय जन्म अपाय प्रति व्यासाधीः प्रबोधितोऽपि शुचा व्याप्तः सन् नाबुध्यत विवेकं न प्राप । कुत अय भीष्मनिर्याणोत्सवं वक्तुम उपोद्धातकयां प्रस्तौति व्यासाधीः प्रबोधितोऽपि शुचा व्याप्तः सन् नाबुध्यत विवेकं न प्राप । कुत अय भीष्मनिर्याणोत्सवं वक्तुम उपोद्धातकयां प्रकाशित विद्याय अत्रैः स्वभक्तभीष्मनिर्याणमहोत्सवाय राज्ञा सह कुरुक्षेत्रं गन्तव्यं तन्मुखेनैवायं प्रवोधिनीय इतिहाश्चराभिप्रायः कार्यद्वयः । श्रीकृष्णोनापि प्रबोधितो नावुद्धचत । तत्र हेतुः अद्भुतकर्मग्रोति । यथा कुरुपांडवसंधानार्थं गतोऽपि यथो विद्यायकः तमजानद्भिरित्यर्थः । श्रीकृष्णोनापि प्रबोधितो नावुद्धचत । तत्र हेतुः अद्भुतकर्मग्रोति । यथा कुरुपांडवसंधानार्थं गतोऽपि यथो विद्यायकः तमजानद्भिरित्यर्थः । श्रीकृष्णोनापि प्रवोधितोधियस्वोधमेव इढीचकारेत्यर्थः ॥ ४६ ॥

# दीपिनी।

वंशस्येति । यथा वायुररगये वंशेषु परस्परसङ्घर्षेण विद्वमुत्पाद्य तेन तानू नाशयित एवं राजन्यवंशेषु परस्परकलहवशाद्वेरमुत्पाद्य तेन तानू नाशयित एवं राजन्यवंशेषु परस्परकलहवशाद्वेरमुत्पाद्य तेन तन्नाशकस्विमिति वंशवहनपदेन स्चितम् ॥ ४३ ॥ त्र ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ हासदित द्वितीयस्कंथस्य प्रथमाध्यायीयेकत्रिशस्त्रोकः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ हासदित द्वितीयस्कंथस्य प्रथमाध्यायीयेकत्रिशस्त्रोकः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ हासदित द्वितीयस्कंथस्य प्रथमाध्यायीयेकत्रिशस्त्रोकः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ उपोद्धातः । "चिन्तां प्रकृतसिद्धचर्यामुपोद्धातं विदुर्वभा" इति उपोद्धातेति वक्ष्यमाध्यामये मनसि निधाय तद्येम् अर्थान्तरवर्धानम् उपोद्धातः । "चिन्तां प्रकृतसिद्धचर्यामुपोद्धातं विदुर्वभा" इति उपोद्धातेति वक्ष्यमाध्यमये मनसि निधाय तद्येम् अर्थान्तरवर्धानम् उपोद्धातः । "चिन्तां प्रकृतसिद्धचर्यामुपोद्धातं विदुर्वभा" इति

वहाश्रामात् ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

स्वामिप्रेतक्षत्वमनुमता"वंजलिःपरमामुद्राक्षिप्रदेवप्रसादिनी"त्युक्तविधांजलिरेवोपायोनततोऽन्योऽस्तीत्यभिप्रायेगाकेवलमितरासाधारग्र गुगाविशिष्टंसंवोध्यंनमस्करोति श्रीकृष्णोति हे श्रीकृष्णासर्वलोकसुखकरकृष्णोऽर्जुनस्तस्यसखाकृष्णासखः तत्संवोधनमवृष्णीनासृषभश्रेष्ठ अवनिद्वृहामवन्युपलक्षितलोकोपद्रवकारिणां राजन्यानांवंशस्यदह्नोयषा वेणूनांदहनोऽग्निर्नाशकः तद्वद्राजन्यकुलनाशकः अनपवर्गमनं तंत्रीर्थ्ययस्यहेगोविदगवांद्विजानांसुरासांचार्त्तिहरो ऽवतारोयस्ययोगेश्वरसुक्ष्मदोशत्रखिलगुरोहितोपदेष्टः ॥ ४३ ॥

इत्थं कलानिमधुरागिपदानिवचांसितैः पृथयाकुंत्याकर्र्यापरिणूतः परिगीतोऽखिलउदयोमहिमायस्यसवैकुएठः श्रीकृष्णः मायया हासात्मिकयाऽऽश्चर्यरात्त्वालोकं मोहयन्निवमंदमीषज्जहासहसितवान्मंदमितिकियाविदोषग्रम् ॥ ४४ ॥

तावत्खपुरंयातुमुद्युक्तोभगवांस्तांपृथामन्याः स्त्रीश्चवाढमोमित्युपामंत्र्यांगीकारपूर्वकमनुक्षाप्य प्रेम्णाराज्ञायुधिष्ठिरेण च निवारितः गजाह्वयंहास्तिनपुरमेवपुनःप्राविशतः प्रविश्येतिपाठेप्रविश्यतत्रवकंचित्कालमुवासेतिशेषः॥ ४०॥

तदाईश्वरेहाज्ञेरीश्वरचेष्टाभिक्षेव्या साधैरद्भतंकर्भचेष्टितंयस्यतेन श्रीकृष्णोनभगवता च इतिहासैः प्रतिबोधितोऽपिधर्मसुतः अतएव शुचार्पितःनाबुघ्यतकालस्यगतिरीदशीतिनविजन्ने ॥ ४६॥

#### श्रीविजयध्वजः।

स्तुतिसुपसंहरतिश्रीकृष्णोति श्रियाअतिसकाकुसुमसदशया कृष्णा नीलवर्ण कृष्णासखअर्जुनसखनृष्णिनुष नृष्णि अश्रेष्ठ नृष्णिवत्रमेघ वद्भक्ताभिमतवर्षण् 'वृष्णिःकुलिवशेषेतुवर्षनमेघेऽपिकथ्यतं वद्भक्षानम् अवनिद्रुहां भूकंटकानां राज्ञांवंशमन्वयं दहतीत्यवनिध्यक्राजन्यवंश दहनः अवानिधुप्राजन्याख्यवेणुदाहकइतिवा तस्यसंबुद्धिरवनिधुप्राजन्यवंशदहन अमरवंद्यवीर्यदेवस्तुत्त्यपराक्रम गोविदवेदवासीलक्ष्य विभव गवांद्विजानांसुरागामार्त्तिहरोऽवतारोयस्यसतथोकःतस्यसंबुद्धिःगोद्विजसुरार्त्तिहरावतार योगेश्वयंयुक्ताखिलगुरोयथायोग्यंज्ञानीप देशकर्तःतेतुअयंनमइत्यन्वयः॥४३॥

विकुंठानामकाचिद्विषपत्नीतत्पुत्रत्वेमजातः वैकुंठपुरनाथोऽिपवैकुंठइतिवा पृथयाकुंत्याकलपदैःस्रीत्वाव्यक्तवर्णमधुरपदैःयोगमायया

स्वरूपशक्त्या ॥ ४४ ॥

यत्त्वद्भीष्टंतथास्त्वितवाद्धमितितामुक्त्वाद्रीपदीपूर्वाःस्त्रियश्चद्वारकांग्मिष्यामीत्युपामंत्र्यगंगातीराद्गजसाह्वयंप्रविश्यस्वपुरंद्वारकांया स्यन्गामिष्यन् प्रेम्णासंप्रतिनगतव्यमितिराज्ञानिवारितः पांडववात्सत्यात्तत्रैवावात्सीदित्येकान्वयः॥ ६५॥

इतिश्रीभागवतेमहापुराखेप्रथमस्कंधे विजयध्वजटीकायामण्टमोऽध्यायः॥ ८॥

# क्रमसंदर्भः ।

गोविन्देति नित्यप्राप्तपरमगोलोकाधिपत्येत्यर्थः ।यद्वा अया विश्वेदोत्यादिपद्यत्रयस्यैवं योजना—तत्प्रियवर्गे स्वसम्बन्धहेतुकां प्रीति गाविन्दात ।नत्यभारपरमगाळापणा प्रतिस्था प्राति । तत्र निषेधः प्रथमेन । अध्यर्थनाः निषिध्य श्रीमगवत्येव तामध्यर्थ्य पुनस्तत् प्रियवर्गे तदाधारत्वेनैव प्रीतिमङ्गीकरोति अथेति त्रिभिः । तत्र निषेधः प्रथमेन । अध्यर्थनाः निषिध्य श्रीमगवत्येव तामध्यर्थ्य पुनस्तत् प्रियवर्गे तदाधारत्वेनैव प्रीतिमङ्गीकरोति अथेति त्रिभिः । तत्र निषेधः प्रथमेन । अध्यर्थनाः ।नाष्ट्रय श्रामगवत्यव तामग्यव्य उपराप्ते सक्ति । अत्र श्रीकृष्णासक्षेत्यादिसम्बोधनैस्तत् प्रीत्याधारत्वेनार्ज्जनादिष्वपि प्रीतिरङ्गीकृता ॥ ४३॥

परिणुतेति तीदादिकण् शिस्तवन इत्यस्य रूपत्वेन दीर्घत्वम् । माययेव मोहयन्निति मोहनमात्रांशे दृष्टान्तः । "हासोजनोन्मादकरी पारगातात तादाादकर्गा शास्तवन क्ष्यर । इति वाक्यालंकार इव शब्दस्तदा मायाशब्दोऽपि कृपावाचक पवेति। "माया दम्मे कृपायाओं"ति च माये" ति तुविराङ्गतमेव । यदि वाक्यालंकार इव शब्दस्तदा मायाशब्दोऽपि कृपावाचक पवेति। "माया दम्मे कृपायाओं"ति कोषकाराः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

व्यासाधैरिति । नाबुद्ध्यत प्रत्युत शुचा व्याप्त प्वासीदित्यर्थः । ईश्वरस्य ताहगिच्छयेव तेषां युक्तिः प्रतिहतशक्तिकाकृतेति स्वास्य व्यासाचारात । नाबुद्धात प्रत्युत शुचा व्यासाचाः राजाऽयं स्त्रोपदेशं न मस्यत इति जानंत्येव तथाप्य इतकर्ममय्या ईश्वरेहाया विजेरिष सिद्धः सम्बोधित इति ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

# सुबोधिनी।

एवं नवधा भगवंतं स्तुत्वा शास्त्रार्थत्वेन नवविधभत्तवनंतरे सेहे जाते माहात्म्ये च ज्ञाते पुनः पुनर्भगवदाविभीवे कि कर्तव्यमित्याकी स्राथा नावारा । विशेषणानि भगविष्ठिति विशेष्यं तत्र श्रीकृष्णिति खरूपं "कृषिभूवा चकः शब्दो ग्राश्च निर्वृतिवाचकः । तयोरेक्यं पर श्राक्षण्या प्रत्यिभिधीयते । साकारत्वासु सींवर्ण्ये श्रीशब्देनाभिधीयते" कृष्णसंबेति गुणाः कृष्णोऽर्ज्जनस्तस्य सजाः समानशीयते ब्रह्म कृष्ण रूपा कृष्णाः स्विताः। सीलामाह वृष्णिवृषेति कपटमानुषलीलास्चिता। वृष्टवुर्वेयत्वमाह अवनिश्चमान्यवित् व्यसनकथनात् गांभीर्थावयो गुणाः स्विताः। सीलामाह वृष्णिवृषेति कपटमानुषलीलास्चिता। वृष्टवुर्वेयत्वमाह अवनिश्चमान्यवित्र व्यस्तर्याः । उत्तर्याः । असाधार्यां धरममाह अन्पवर्गवीर्थेति । न विद्यते अपवर्गी यस्य ताहरा वीर्थे यस्य हर्वेहि नात । १ । १ । । अपवार्ष विन्द्य । जन्मकारमानिक्वीरमाह गोविदीति सदक्षाऽनतारमयोजनम् । फक्रमाहः गोविजसुराजिहरावतारितः । पुरुषोत्तमस्यासाधारम् विन्द्वम् । जन्मकारमानिक्वीरमाह गोविदीति सदक्षाऽनतारमयोजनम् । फक्रमाहः गोविजसुराजिहरावतारितः ।

### सुवोधिनी।

गावोद्विज्ञाः सुराश्च तेषामार्तिहरोऽवतारो यस्य अनेन धर्मग्लानिनवृत्तिरुक्ता भवति । देवतोद्देशेन मंत्रकरणको हविस्त्याग इति त्रया-ग्यां निरूपणं धर्ममेमूलकत्वादन्येषां न पृथक् निरूपणम् । देन्यनिवृत्त्यर्थमाह योगेश्वरंति एतदति देन्यं यद्यांगेनसर्विक्रियते न स्वतइति निज्ञ प्रार्थनामाह अक्षिलगुरो ? इति । प्रमाणासिद्धं मद्यं देयमिति पूर्वोक्तधर्मे वान्न सगुणः कि तु भगवानिति भगर्वान्नति । "नमो नमपता वत्सदुपशिक्षित्मिति" नमस्कारः ॥ ४३ ॥

पवं स्तुते भगवत्कर्त्तव्यमाह । विषयभोगार्थमेव ह्यातावत्कृतं न तु वैराग्यभक्तार्थमन्यथाऽरण्यादेव तथा कुर्यात् तस्माद्यः कश्चित् य-तिक्रिचित्रप्रार्थयतां नामभगवांस्तु प्रकांतं स्विवचारितमेव प्रयच्छिति अतोऽद्भुतकम्मैनिरूपणे मोहंदत्तवानित्युच्यते। कलपदेर्गद्रदक्तंठेनोच्चा-रितैः अव्यक्तमधुरैः पदेः परिणूताः परितः स्फुरिताः सर्वे उदया यस्य गुणानामन्योऽन्यिमश्रणान्नवधा तदभावएकधिति "एकधा दशधा चैव दश्यते जलचंद्रचिति" श्रुतिरण्येवमभिप्राया तथा लीलाश्च। णू स्तुताविति धातुरूकारांतः कविकल्पद्रुमे निर्कापतः अतो न दीर्घ-रखांदसः । मंदं जहास मोहनस्याप्यक्षानार्थे वैकुंठहित सांप्रतं रक्षायां स्थितः जयविजयपातनाद्वा मोहयित्रविति । अञ्चतकम्मत्वादिति " खक्रपेण कृतार्थत्वं मायया च विमोहनम् "॥ ४४॥

अंतःकृतिमुक्त्वा वहिः कृतिमाह तां वाढिमिति। तां कुंतीं प्रार्थितां वा बाढिमित्यंगीकारे वचनम्। यस्वया कर्त्तव्यं वक्तव्यं वा तन्ममापि संमतं न तु मया अपूर्व किचित्कर्त्तव्यमिति ज्ञापितम्। इत्येवंप्रकारेगोपामंत्र्य पूर्वगमने राकुनाभाविमव लक्षयित्वा पुनर्हस्ति नापुरं प्रविश्य तत्रत्याः स्त्रिय आमंत्र्य चकारादन्यान् द्वारकां यास्यन् भगविद्वच्छ्या प्राकृतेष्रमोद्गमात् विस्मृत्यमाहात्म्यं संवंधस्त्रेहा द्याधिष्ठिरेशा गमनान्निवृह्यितः॥ ४५॥

इयं ह्यद्भुतलीला मैंगवतो मुक्तस्य बंघो वद्धस्य मोक्ष इति अतो युधिष्ठिरस्यमोहं प्रपंचयित सप्तिभः व्यसनानां तथात्वात् "स्विस्मि न्यदैवकरण्यमुक्तमस्याधमस्य वा । तदैव मोहः कृष्णे तु ज्ञानिमलेष निश्चयः"। व्यासाद्यैरिति । ननुमोहोऽधिकारिणः प्रमाणान्निवक्ततेतत्र युधिष्ठिरोऽधिकारी अन्यथाअग्रेविज्ञानानुद्यः स्यात्प्रमाणं वेदाःतत्कक्तारोव्यासनारदादयः तैवाध्यमानस्यापिज्ञाननोदेति भीष्ममुखादेवा येबोधनीयइति भगवदिच्छातः योगजधर्मेण्ञानशक्तात्वान भगवदिच्छाज्ञात्यते इच्छाजिज्ञासायांतु चिक्तस्यभगवत्यरत्वेविषय विस्मरणात् निम्तामाविजिज्ञासानद्येत्अतः सर्वज्ञाअपिसत्त्व व्यवधानभगद्वताराध्यभगवदिच्छांनजानंतित्याह ईश्वरेहाज्ञीरिति भगवताऽपिवोधितोनाचु-ध्यतत्रवेतुः अङ्गुतकर्मणोति यथासंध्यर्थगतः सर्वस्मर्योविग्रहंकृत्वाआगतः एवंवोधनार्थवाक्यानि वदन्अवोधसंपादितवानिल्यधः इतिहासैः युरावृत्तकथतेः नचतेषांवाक्यानामबोधकत्वंतत्राह प्रबोधितोऽपीतिप्रबोधो दूरेपत्युत्रशोके नार्पितः समर्पितोमिन्नित इत्यर्थः ॥ ४६॥

## श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

स्तवान्ते सर्वसुखदत्वेन स्मरन्ती प्रगामित। कृष्णास्य अर्ज्जनस्य सखा। अवन्यै द्रुद्धान्ति ये राजन्यास्तेषां वंशा एव वंशास्तेषां दहन अनपवर्गवीर्य हे अक्षीगापराक्रम। हे गोविंद् प्राप्तकामधेन्वैश्वर्थ्य ॥ ४३ ॥

परिण्तिति तीदादिकण् शि \* स्तवन इत्ययं दीर्घास्त एव । माययेव मोहयन् न तु मायया किन्तु प्रेमणे नेत्यर्थः ॥ ४४ ॥

त्वयि मे अनन्यविषया मतिरिति यत् प्रार्थितं तत् वाढिमित्यङ्गी कृत्य रथस्थानात् गजसाह्वयं प्रत्यागत्य पश्चात् ताञ्च अन्याश्च सुभद्रा प्रमुखाः स्त्रिय उपामन्त्रय अनुज्ञाप्य खपुरं यास्यन् राज्ञा युधिष्ठिरेण प्रेमणा अत्रैव कश्चित् कालं निवसेति सम्प्रार्थ्य निवारितः। तेन च जान्ना प्रेमणः सर्वतोऽपि वशीकरणत्वातिशयो व्यञ्जितः॥ ४५॥

यद्यहमिदानीमिहैव स्थितोऽभूवं तर्ह्यासम्मरुगुमालं मह्रीनं विना मर्नुमनिच्छन्तं भीष्मं खमकमात्मानं सपरिकरमेव सन्दर्य सुख यामि लोकं तदुत्कर्ष ख्यापियंतुं तन्मुखेनैव राजान्य प्रवोधयामीति भगवदिभप्रायं व्यंजयन्नाह ईश्वरस्य कृष्णस्य ईहाया उक्तलक्षणस्य अभिप्रायस्य अभैविक्षेवां। अद्भुतकर्मगोति इदमस्याद्भुतं कर्म्मयत् खयमेवास्य हृदिप्रविश्य अविवेकम् उत्थापितवान् वाहिश्च खकर्नृकेशा व्यासादिकर्शृकेशापि प्रवोधेनावोधमेव दृढीचकार तेन च भीष्ममुखोदितेन तत्त्वेन तं प्रवोध्य व्यासादिश्योऽपि मत्ताऽपि मदेकान्तभको भीष्मोऽतिशयेन धर्मज्ञानतत्त्वन्न इति लोकं विख्यापयामास किंच युधिष्ठिरस्य तु ततोऽपि प्रेमाधिक्यादाधिक्यं यत् तद्वुरोधेनैव द्वारकाम गड्छंस्तत्व स्थितः तत पव तन्निकटं गत्वा तथा चक्रे इति विवेचनीयम्॥ ४६॥

# । सिद्धांतप्रदीपः।

संसारेविरक्तिव्रह्मगयगुरक्तिमभ्यथ्येतद्वाद्यार्थिपुनः प्रमामति श्रीकृष्मीति हे श्रीकृष्माहेश्रीयुक्तसदानंदस्वरूपतेनमः अनपवर्शमपग मनानर्हस्याभाविकंवीर्थयस्यसत्यातत्संबोधनेशनपवर्गवीर्थे॥ ५३॥

मनागर कलपर्देर्मधुरपदैर्वाक्यैः पृथयापरिण्तः परिगीतोऽखिलोदयेतिखिलमहिसायस्यसः द्वीघीकारद्दछांदसःमंदंयधास्यासयामध्य याजहासहितवान् ॥ ४४ ॥ त्र्राह राजा धर्मसुत श्विंतयन्सुहृदां वधम् ॥
प्राकृतेनात्मना विप्राः स्नेहृमोहवशंगतः ॥ ४७ ॥
त्र्राहो मे पद्रयताज्ञानं हृदि रूढं दुरात्मनः ।
पारक्यस्यैव देहस्य वह्नयो मेऽच्नौहिग्गीर्हताः ॥ ४८ ॥
वालद्विजसुदृन्मित्र पितृश्चातृगुरुद्रुहः ।
न मे स्यान्निरयान्मोक्षो त्यपिवर्षायुतायुतैः ॥ ४६ ॥
नैनोराज्ञःप्रजामर्नुधर्मयुद्धे वधो द्विषाम् ॥
इति मे नतु वोधाय कल्पते शासनं वचः ॥ ५० ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

स्नेहपाशंछिधीतित्वियमेमितमुद्रहतादिति चयत्प्राधितं तद्वाढिमित्यंगीकृत्यरथस्थानाद्वजसाह्वयं प्रविश्यतांपृथामन्याः सुभद्राद्याः स्त्रियश्चोपामत्र्यानुकाप्यस्वपुरंयास्यन् राक्षायुधिष्ठिरेगानिवारितः॥ ४५॥

शुचार्पितः सुदृद्धश्रोकव्यातः कृष्णानप्रबोधितोऽपिनाबुध्यतेत्यत्रहेतुंस्चयन्विश्वानिष्ट अञ्जतकर्मणोति स्वैभक्तकार्यसिखयेस्वयं कालयवनमविजित्यस्वभक्ततेजसेवतंघातियतुंतत्रतमनयत् एवंधर्मसुतप्रबोधनार्थप्रवृत्तेनापिश्वीकृष्णोनस्वभक्तस्यभीष्मस्यसमीपेसवैंशुंधि छिरादिभिः सहैवगंतुंकामेनस्वेच्छयैव न प्रबोधितः सः एवंविधानि अद्भुतानिकर्माणियस्यस तथा तेनेत्ययः॥ ४६। ४७॥

### भाषा टीका।

हे श्रीकृष्ण ! हे कृष्णसखा ! (अर्जुन वंधो) हे दृष्नि ऋषम ! (यदुश्रेष्ठ) हे अविन भ्रुक् राजन्यवंशदहन ( ष्टथवी विद्रोही राजाओं के वंश के जलाने वाले ) हे अन पर्वगवीर्य ! (अक्षीण प्रभाव !) हे गोविंद ! हे गोद्विज सुरों की आर्ति हरणावतार ! हे योगेश्वर हे अखिल गुरो ! हे भगवन् ! तुमै नमः ॥ ४३ ॥ (सूतउवाच ) ऐसे मधुर पदोंसे कुंती ने भगवान की समस्त महिमा कीर्तन की—तव वैकुंठ भगवान मायासे मोहन सा करते मंद

् ( सूत्रडवाच ) एस मधुर पदास कुता म मगमाग ... रागरा गाएमा माराग मा राग पडाड गामाग गामारा मा मंद हँसने लगे ॥ ४४ ॥

न्य वर्ता क्या । २०॥ कुंती की प्रार्थना को स्वीकार कर हस्तिनापुर में प्रवेश कर रानियों सहित स्वपुर में जात मगवान को प्रेम से राजा ने निवारस किया ॥ ४५॥

्भिष्मिनिर्याण महोत्सव का उपोद् घात करते हैं ईश्वर की ईहा (चेष्टा) के अन भिन्न व्यासादि मुनियों ने अद्भुत कर्मा कृष्ण ने अनेक इतिहासों सै राजा युधिष्ठिरकोसमझाया परंतु शोकसंतप्तरा जा को बोध नहुआ॥ ४६॥

# श्रीधरखामी।

अबोधमेव प्रपञ्चयति आह इति षड्भिः। प्राकृतेन अविवेकव्याप्तेन आत्मना चित्तेन। हे विप्राः॥ ४७॥

पारक्यस्य श्वश्रालाखाहारस्य देहस्यार्थे। मे मया। अक्षीहिग्धाः अक्षीहिग्यः। अक्षीहिग्धाप्रमाग्धं व्यासेनोक्तम्—अक्षीहिग्धाप्रसं-च्याता रथानां द्विजसत्तम। संख्यागगानतस्वक्षेः सहस्राग्येकविंशतिः॥ शतान्युपरि चाष्टी च तथा भूयश्च सप्ततिः। गजानाश्च प्रसंख्या नमेतदेव प्रकोत्तितम्। क्षेयं शतसहस्रं तु सहस्राग्धि नवेव तु। नराग्धामपि पश्चाशत् शतानि श्रीग्धि चैर्वे हि। पंचषिरसहस्राग्धि तथाऽ श्वातां शतानि च। दशोत्तराग्धि षद् प्राद्वः संख्यातस्य विदो जनाः एतामक्षीहिग्धीं प्राद्वियावदिह संख्ययेति॥ ४८॥

सुहृदः सम्बन्धिनः । मित्राणि सखायः । पितरः पितृव्याः ॥ ४९ ॥

द्विषां बधः पनः पापं न भवतीति यत् शासनं शिक्षारूपं वचः । कुतो न कल्पते यतस्तद्वचः प्रजाभर्नुरेव । अयं भावः—स्वप्रजानाम न्यतो वाधे प्रसक्ते तद्वधोऽनुकातः दुर्थ्योधनेन तु प्रजायां पाल्यमानायां मया केवलं राज्यलोभेन इतत्वात् पापमेवेदमिति ॥ ५० ॥

#### ्र शीपनी ।

ह्यां गजरधनराश्वानां साकल्येन २, १८, ७०० परिमिताम् । तत्र २१, ८७० रथाः, २१, ८७० रथाः, २१, ८७० रखाः, १, ००, ३४० नराः, ६५,६५० अश्वा ॥ ४८ ॥ ५२ ॥

मिहिणी:

29268 """ 20 <del>- 240</del> 2239

### श्रीवीरराघवः।

किंतु हे विद्याः वंधुषुस्नेहमोहयोर्वशंप्राप्तः अतप्विषाकृतेनदेहेनतद्वुवंध्यादिश्रवग्रेनमनसासुहदांवधमेवचितयन्धर्मसुतोराजायुधिष्ठि-रःअबर्वात् ॥ ४७ ॥

तदेवाहयावत्समाप्ति अहो दुरात्मनोममदृदिद्धमङ्गानंपर्यततदेवदर्शयितपारक्यस्यश्वश्रमालादि भक्ष्यस्यदेहस्यैवदेहसुखार्थमेवमे मयावद्यः अझोहि ग्रीरक्षोहिगयः हताः॥ ४८॥

बालादिद्रुहः वालादिहंतुर्ममवर्षायुतानामयुतैरिपिनिरयान्मोक्षोनिह भवेत्॥ ४९॥

नतु "शौर्यतेजोधृतिर्दाक्ष्यंयुद्धेचाण्यपलायनं धर्म्याद्धियुद्धाच्छ्रेयोन्यत्क्षात्रियस्यनाविद्यत् "इत्यादि शास्त्रैर्द्धर्मयधर्मत्वावबोधनास्त्रंह तान्त्रति किशोचसहत्यतआह नेतिप्रजा भर्त्तुः पोषणाधिकतस्यराक्षो युद्धेद्विषांवधोधर्मादनपेतः नैनः नपापंकितुधर्मपवेतियद्तुशास-नात्मक वचोभगवद्वचः तन्ममवोधायविवेकायनकल्पतेविवेकं जनयितुमसमर्थमित्यर्थः धर्मयुद्धस्यधर्मत्वेऽपितद्वुषांधितयामहतः पाप-स्यवप्राप्तत्वादितिभावः॥ ५०॥

### क्रमसन्दर्भः।

नैन इति । राज्ञो धर्ममुद्धे द्वियां बधः एनः पापंन भवतीति यत्शासनं वचः तत्तु न में बोधाय कल्पते । यतः तद्वचः प्रजाः पालयंत मेव राजाने प्रति न तु छन्धं प्रतीति वाक्यार्थः । भावार्थस्तु टीकावदेव ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्थस्य श्रीजीवगोस्वामिकतकमसन्दर्भे अष्टमोऽध्यायः॥८॥

# सुवोधिनी।

अत्यवस्थिकव्याप्तस्यवाक्यमाह् । आहेति । राजारजोगुगान्याप्तः धर्मसुतः प्रार्थनयाधर्माजातः विहर्मुखंधर्ममुररीकृतवान् अतएव सुदृदांवधं चितयन्पूर्वकृतंशोचिति अंतःकरगामिपसमीचीनं भगवताकृतिमत्यभिप्रायेगाह् देहादिवुषयाविष्राहतिसंवोधनं भगवतीऽसुत कर्मत्वभावनार्थस्नेहोमृतेषुमोहोजीवत्सुः॥ ४७॥

विपरीतबुद्धि विस्तारयति अहो इति । देहोपभोगार्थे महतोऽन्यायस्य करगामद्वानजन्यं हृदि प्रकृढं नास्यप्रतीघातः शक्यो जातः तत्र हेतुः अंतःकरगाशुद्धिः । तदेवाज्ञानमाह पारक्यस्येति । श्वसृगालादिभक्ष्यस्य । अक्षाहिगीः अक्षोहिगयः मे मदोया हता इत्यज्ञानं वस्तु-तस्तु भगवताभूभारहरगार्थे लीलया वा हताः ॥ ४८ ॥

अनेन इह लोको गतइत्युक्तं परलोकोऽपि नास्तीत्याह बालेति। बाला अभिमन्युप्रभृतयः द्विजाः द्रोगादयः सुद्धदः शल्यादयः मित्रागि कर्गादयः पितरो भोष्मादयः भ्रातरो दुर्योधनादयः एतएव वा गुरवः अन्ये च। एकस्याप्रि महापातकस्य बुद्धिपूर्वकं कृतस्यन प्रायश्चित्तं तस्मान्नरके वासो यावदाभूतसंष्ठवमित्यर्थः ॥ ४९॥

नतु युध्यमानानां वधः को वा दोषाय सत्यं "श्रेयः प्रजापालनमेव राज्ञामिति" प्रजारक्षार्थं राज्ञवधश्चेत्तदा न दोषः प्रकृते तु दुर्योधने प्रजापालने कियमाण्यव मया खलोभार्यमेव सर्वे हताः अतो राज्ञो धर्म्मयुद्धे द्विषां वधः प्रजाभत्तुंनैनः न दोष इति नीतिवचनं मांबोधयि-तुं न राक्नोतीत्यर्थः॥ ५०॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

अयोधमेव प्रपश्चयति । प्राकृतेनातमना चित्तेन वस्तुतस्तु तस्यातमा धप्राकृत एवेति । तदपि प्राकृतत्वारोपो भगवदिच्छयैवोक्तप्रायोजना यति क्षेयम ॥ ४७ ॥

यात रूपा श्वर्था श्वर्था निक्या देहस्यार्थे अक्षीहिशीरक्षीहिश्यो हताः । अक्षीहिशीप्रमाशं व्यासेनोक्तम्—अक्षीहिशी प्रसंख्याता पारक्यस्य श्वर्था निक्या गणानतस्यक्षेः सहस्राय्येकविशतिः । शतान्युपरिवाद्यो च तथा भूयश्च सप्तिः। गजानाञ्च प्रसंख्यानमेतदेव र्यानां द्विजसत्तमाः । संख्यागणानतस्यक्षेः सहस्रायोकविश्वातिः । शतान्युपरिवाद्यो च तथा भूयश्च सप्तिः। गजानाञ्च प्रसंख्यानमेतदेव प्रकीर्तितम् । क्षेयं शतसहस्रन्तु सहस्राशि नवेव तु । नश्यामिष् पञ्चाशतः शतानि विश्वि चेव च । पञ्चषितसहस्राशि तथाश्वानां शता प्रकारितनम् । क्षेयं शतसहस्राशि पद्माद्वाः संख्यातस्य विश्वास्य सिख्ययेति ॥ ४८॥ ति च । दशीत्तराशि षद् प्राहुः संख्यातस्य विदेशनाः । पतामक्षीहिशीं प्राहुर्यथाविद्व संख्ययेति ॥ ४८॥

सुद्धदः सम्बन्धिनः । मित्राणि सखायः । पितरः पितृज्याः ॥ ४९ ॥

सुष्पः पतः पापं न भवतीति यत् शासनं शिक्षारूपं वचः । द्वतो न कल्पते यतस्तवचः प्रजामनुरेव । अयं भावः—स्वप्रजानाम द्विषां वधः पतः पापं न भवतीति यत् शासनं शिक्षारूपं वचः । द्वतो न कल्पते यतस्तवचः प्रजामनुरेव । अयं भावः—स्वप्रजानाम द्वयतो वधि प्रसक्ते तद्वश्रोश्रमुद्वातः दुर्योधनेन तु प्रजायां पाल्यमानायां मया केवलं राज्यलेभेन इतत्वात् पापमेनेद्रम् मम जातसिति ॥५०॥ स्त्रीगां मद्धतबंधूनां द्रोहो योऽ साविहोत्थितः ॥ कर्मभिर्गृहमेधीयैनांहं कल्पो व्यपोहितुम् ॥ ५१ ॥ यथा पंकेन पंकांभः सुरया वा सुराकृतम् ॥ भूतहत्यां तथैवैकां न यज्ञैर्मार्षुमहिति ॥ ५२ ॥

इतिश्रीमद्रागवते महापुराग्राप्रथमस्कंघे युधिष्ठिरानुतापोनामाष्टमो ऽध्यायः ८

### सिद्धांतप्रदीपः।

पारक्यस्यशृगालादिभक्ष्यस्यार्थेमेमया ॥ ४८ । ४९ ॥

धर्मयुद्धोद्विषांवधः राक्षः एनः पापंनेतिशासनंशिक्षाभूतंवचोमेवोधायनकल्पतेयतस्तादेशंवचः प्रजाभर्त्तुरेवप्रजापालकस्याधर्मयुद्धेद्विष द्वधएनोनभवति धृतराष्ट्रेप्रजामर्तारिविद्यमानेममप्रजाभर्तृत्वाभावात् द्विषद्वधएनएवेत्याशयः॥ ५०॥

#### भाषादीका ।

अहो मेरे दुरात्मा के हृदय रूढ अज्ञान को देखों कि इस पारक्य देह के निमित्त मैंने बहुतसी अक्षौहिशियों का वध किया ॥ ४७ ॥ राजा मन में यह सोचते थे (अहो मैं कैसा दुरात्मा हूं मेरे हृदयमें कैसा दुरंत अज्ञान आरूढ होरहाहै जो मैंने इस पराये देह के निमित्त वहुतसी अक्षौहिशीओं का बधकिया ॥ ४८ ॥

वालक ब्राह्मण सुहत् मित्र पितृ भ्रातृ और गुरु शोंसे मैने द्रोह कियाहै अयुता युत वर्षों में भी मेरा नरकसे उद्धार नहोगा ॥४९॥ "प्रजा पोषणके निमित्त धर्म युद्ध में राजा को पाप नहीहोता है" यह शास्त्र वचन भी मेरे बाध को नहीं है ॥ ५० ॥

## श्रीधरस्वामी

किञ्च युद्धे पुंसां वधोभवृतु नाम धर्माः स्त्रीणां तु मया हता वन्धवो यासां तासां योऽसौ द्रोहोऽनुहिष्टोऽण्युत्थितः त व्यपोहितुम् अपाकर्त्तुं कल्पः समर्थो नाहम्। गृहमेधीयैः गृहाश्रमविहितैः॥ ५१॥

नतु च "सर्व्वपाप्मानं तरित तरित ब्रह्महत्यां योऽश्वमेधेनयजते" इति श्रुतेः पापमश्वमेधेन नश्येदेवत्याशंक्य अविवेकविकृम्भितं हेतुवाद माश्रित्य निराकरोति ! यथा पंकेन पंकाम्भो न मृज्यते यथा सुरालेशकृतमपावित्र्यं वह्नचा सुरया न मृज्यते तथेव भ्तैहत्यामेकां प्रमादतो जग्तां बुद्धिपूर्व्वकहिंसाप्रायेथेझैर्माष्ट्रम् शोधियतुं नाईतीति ॥ ५२॥

इति श्रीमद्भागवतभावार्षदीपिकायां प्रथमस्कन्धे अष्टमोऽध्यायः॥८॥

# श्रीवीरराघवः।

ननुधर्मार्थे यतमानस्यावर्जनीयतयाप्रसक्तमिपापंवर्णाश्रमधर्मैरपोहितुमशक्यमेव "धर्मेणपापमपनुदती"तिशास्त्रादित्यतथाह स्त्रीणा मितिमयाहताबंधवः पतयोयासांतासांस्त्रीणांयोसीद्रोहः पापात्मकः इहधर्मयुद्धेप्रवृत्तेमच्युत्थितः तमहंगृहमेधीयैर्गृहाश्रमिणाः कर्त्तव्यै ईमैंव्येपोहितुंनकल्पः नप्रभुः बहुकालानुभाव्यफलोविपुलोद्रोहोऽल्पकालनिवर्त्येर्गृहमेधीयैः कर्मिभिनीपोहितुंकल्पः कर्मगाकर्मनिहीर-श्रायुक्तइतिभावः॥ ५१॥

एतदेवसदृष्टांतमुपपादयातियथेति पंकांगंसपंकमंगंपंकेनैवयथामार्ष्टुंशोधियतुंनाईतिलोकः यथाचसुराकृतंसुराकृतदोषदूषितंभांदयतः सुरयैवमार्ष्टुंनाईति तथायक्षेरेकामपिभूतहत्यांनमार्ष्टुंमहीति पंकांकइतिपाठेपंकांकितपादाद्यवयवः पुमान्पंकेनेवातमानमार्ष्टुंनाईतितद्वदित्य-थै: पंकांकमितिद्वितीयांतपाठेपंकस्यांकोयस्मिस्तदंगंपंकेनमार्ष्टुनाईतितद्वत् ॥ ५२ ॥

इतिश्रीवीरराघवटीकायां प्रथमेऽष्टमोऽध्यायः॥८॥

# सुवोधिनी।

नतु प्रायश्चित्तं क्रियतां किंशोकेन तत्राह स्त्रीग्रामिति। पापस्य हि रोगबत्प्रतीकारः स च प्रत्यग्रीत्पन्नस्य प्रथमे कर्त्तंद्यः पश्चात्युवातं नानाम्। प्रत्यहं च सहस्रं स्त्रियः मसतान् भर्तृन् गृहीत्वा शोचत्यो मियंते स द्रोह इहैव महाचुपस्थितः। नन्वस्यैव तहिं प्रायश्चित्तं क्रियं नानाम्। प्रत्यहं च सहस्रोति। अस्त्यत्र प्रायश्चित्तं सर्वपरित्यागः शरीरपरित्यागो वा न तुं गृहमेधीयैः क्रमेभिः द्रव्यमधैर्मुतहिसात्मकैः यद्यपि तां तत्राह कर्मभिति। अस्त्यत्र तथापि मम नाधिकारः तथाविधसाधनाभावात्॥ ५१॥

### सुवोधिनी।

अयथाविधसाधनैस्तु अजीर्गो भोजनवत् सर्वनाशक इति न तादशयक्षेन निस्तार इति सद्दष्टांतमाह यथेति । कर्दमजलक्षालनार्थे यथा पंकलेपः भित्त्यादिलेपनवत् अधिकमृत्संपादको भवति । अस्य द्रष्टांतस्य न परलोकनाशकत्वमित्याशंक्य द्रष्टांतांतरमाह सुरया वेति । यथा सुराविदुस्पर्शे महत्या सुरयाप्रक्षालनं परलोकनाशकं भवति एवमेवैकामिप ब्रह्महत्यां बहुभिरिप यक्षेः पशुमारकैः दूरीकर्त्तुं कोऽपि नार्ह-तीत्यर्थः । वस्तुतः पूर्वकांड विचारकैर्निर्मथितं ज्ञानं मोहज्ञानामिति निक्षितम् । एवं भगवतोऽद्भुतकर्मत्वं सिद्धम् ॥ ५२॥

इति श्रीमागवत सुवोधिन्यां श्रीमलक्ष्मण्मृद्दात्भज श्रीमद्रलभदोक्षित विरचितायां प्रथमस्कंध विवरणे अष्टमाध्यायविवरण्म ॥८॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

मया हता वन्धवो यासां तासाम् । कल्पः समर्थः ॥ ५१ ॥

नतु च "सर्वे पाष्मानं तरितरित ब्रह्महत्यां योऽश्वमंधेनयजते" इति श्रुतेः पापमश्वमेधेन नश्योदिदि चेत् तत्राह।यथा घनपङ्केन पंका म्मो न मृज्यते यथा वा सुरालेशकृतमपावित्र्यं बह्वचा सुरया न मृज्यते । यक्षेः बुद्धिपूर्वकिंहिसाप्रायैर्व्वहुभिर्यक्षेः ॥ ५२ ॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । अष्टमः प्रथमेऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ ८॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

किंच धर्मयुद्धेद्विषद्वधः पापमास्तु इदंपापंतु"धर्मेगापापमपनुदती"तिश्रुत्याज्ञयागृहाश्रमोचितेनकर्मगाऽपिनिराकर्तुमशक्यमित्याह स्त्री गामिति मयाहतावंधवः पतिपुत्रादयोयासांतासांयोऽसौद्रोह उत्थितस्तंगृहमेधीयैर्गृहाश्रीमसाध्यैर्व्यपोहितुमपाकर्त्तुमहंकल्पः सम र्थोनास्मि ॥ ५१ ॥

क्तिच "सर्वपाप्मानंतरित्रव्यहाहत्यांयोश्वमेधेनयजतेयदुवैनमेववेदे" तिश्रुत्युक्तमापिकम्बानपूर्वकगुर्वादिवधरूपातिघोरतरपापभयाविष्टो धर्मराजोममत्राग्गायनेत्याद्ययेनाह यपति यथापंकेनंपकांभः यथावासुरयासुराकृतमपावित्र्यंनमुज्यते तथाभूतहत्यांद्रोग्गादिरूपप्राग्गिवधं जन्यामितघोरामेकामिपबहुिभर्यक्षैमद्विधोमार्ण्युनार्हिति अवार्यदेवोभवे त्यादिवदोक्तधर्ममितिलंघ्यातितुच्छदैहिकसुखिसद्धचर्यगुर्वादिघाति नंवदोक्तमपिकम्क्रियंपवित्रीकुर्यादितिभावः ॥ ५२ ॥

इतिप्रथमस्कंधीये सिद्धांतप्रदीपेऽष्टमाच्यायार्थप्रकाशः॥ ८॥

#### भाषादीका ।

जिन के पति पुत्रादि वंधु मेरे हेतु मारे गये हैं उनिस्नर्यों का जोयह घोर द्रांह उपस्थितहुआहै इस को गृहमेधीय कर्मोंसे मै नहीं अपा करण (द्र (कर सक्ताहों ॥ ५१ ॥

जैस कीच से कीच नहीं धोई जासकी है सुरापान की माद कता फिर सुरापान से नहीं निवृत्त होसकती है ऐसी ही प्रमाद से हुई इस युद्ध की हिसा को अब बानपूर्वक फिर यहाँ में हिसा कर किसतरह मार्जन कर सकता है ॥ ५२ ॥

प्रथमस्कंघ का अष्टम अध्याय समाप्त

# नवमो ऽध्यायः।

इतिभीतः प्रजाद्रोहात्सर्वधर्म विवित्सया ॥
ततो विनशनं प्रागाद्यत्र देवव्रतोऽ पतत् ॥ १ ॥
तदाते भातरः सर्वे सदश्वैः स्वर्गाभूषितैः ॥
त्यन्वगञ्छन्रधैर्विप्रा व्यासधौम्यादयस्तथा ॥ २ ॥
भगवानपि विप्रर्षे रथेन सधनंजयः ॥
स तैर्व्यरोचत नृपः कुवेर इवगुह्यकैः ॥ ३ ॥
दृष्ट्वानिपतितं भूमौ दिवश्च्युतिमवामरम् ॥
प्रगोमुः पांडवा भीष्मं सानुगाः सहचक्रिगा ॥ ४ ॥

#### श्रीधरखामी ।

युधिष्ठिराय भीष्मेण सन्वं धर्म निरूपणम्। कृष्णस्तुतिश्च मुक्तिश्च नवमे तस्य वर्णयते॥०॥

यद्थं तस्यविवेकः श्रीकृष्णेन संवाद्धंतस्तद्दर्शयति इतीति । सर्वेषां धम्मीणां विवित्तसया वेदितुमिच्छया । विनशनम् कुरुक्षेत्रम् । देवव्रता भीष्मः ॥ १ ॥

सन्तः श्रेष्ठा अश्वा येषु ते रथैः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

द्गिपनी।

० ॥ १ ॥ ११ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

ततइतीत्थंप्रजाद्रोहाद्गीतोयुधिष्ठिरः स्वाज्ञातधर्मान् वोस्तुमिच्छ्याविशसनं विशासिताहिसितायत्रवंधवः तद्विशसनंकुरुक्षेत्रप्रायात्प्रतस्य विशसनंविद्धानिष्ट यत्रदेववतोभीष्मोऽपतत्भीष्माद्धर्मान् वोस्तुप्रययावित्यर्थः ॥ १ ॥

तदातस्ययुधिष्ठिरस्यभ्रातरोभीमादयः सर्वेसंतोऽश्वायेषांतैः खर्णभूषितैरथैरन्वगच्छन् तथाहेविष्ठाः व्यासघौम्यादयश्चान्वगच्छन् ॥२॥ हेविष्ठपैसघनंजयः सार्जुनोभगवान्श्रीकृष्णोऽपिरथेनान्वगच्छत्तदास नृपोयुधिष्ठिरोव्यरोचतः यथागुह्यकैर्यक्षेः कुवेरस्तद्वतः॥ ३ ॥ दिवः खर्गाच्च्युतममरमिवस्थितं भूमौनिपतितंभीष्मंदष्ट्वासानुगाः सभृत्याः पांडवाश्चिकिग्राश्रीकृष्णोनसहप्रगोसुः॥ ४ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

ह्वानंदानुभवलक्षणोमोक्षःसकलपुरुषार्थोत्तमःसचभगवदपरोक्षज्ञानलन्धविषणुप्रसादलभ्यहत्ययमधःप्रतिपाद्यतिसम्बद्धाये तत्ज्ञाप यितुमुपोद्धातंरचयति व्यासाद्यैरित्यादिना स्वराज्येऽभिषिक्तोऽपि ज्ञातितद्जुवंधिवधात्यापबुद्धचाराज्यानिच्छुर्युधिष्ठिरोराजा नाबुध्यत् अयंधर्महतिज्ञानंनावेदित्यन्वय कथंभूतः ईश्वरस्यईहांसृष्टचादिलक्षणांचेष्टांजानातीतीरवरेतत्कथाविशेषेःप्रकर्षण्योधितोऽपिज्ञात्यादिम-रणानिमित्तशुचाविद्धः॥१॥

हृत्यंवोधितोऽिपधर्मेअधमेबुद्धिः किंचकारेतितत्राह आहोति हेविप्राः शृणुतेतिशेषः प्राकृतेनात्मनाधर्माधर्माविवेकविधुरेगामनसा तत्का द्वामाह स्नेहाज्जातोमोहोभूमः स्नेहमोहस्तस्यवशंगतः तस्मात् तिन्निम्तमाह सहराह्मातितद्वयुवधिनांवधमहिनशं वितयन्धमेसुतहत्थ प्राहित्येकात्वयः स्नेहमोहवर्गातहत्येकात्वयः स्नेहमोहवर्गातहत्येकात्वयः अधिक्षेत्रकात्वयः स्नेहमोहवर्गातहत्येकात्वयः अधिक्षेत्रकात्वयः स्नेहमोहवर्गातहत्येकात्वयः अधिक्षेत्रकात्वयः । २॥

पास्तम् ॥ २ १ किमाहितितत्राह् अहोइति मेहिद्रिरूढमेंकुरितमञ्चानेतन्तुपदयत् अहोआश्चर्यं कथंमेपारक्यस्यपरकीयस्यश्वशृगासभोग्यस्यमेदेहस्यार्थे बह्नचीऽक्षीहिस्मीरक्षीहिस्योहतापत्रयस्मान्तस्मादितिद्योषः ॥ ३ ॥ **y** 

#### श्रीविजयध्वजः।

तत्फलमाह नमइति मेनिरयान्मोक्षोवर्षां गामयुतायुतैः नस्याद्धि कथंभूतस्यमे बालान्सौभद्रादीन्द्विजान्द्रोग्रादीन्सुदृदोद्धुपदा दीन् मित्राशिधनदानिनष्टान् भटावेशेषान् पितृन्भूरिश्रवः प्रभृतीन्भ्रातृन्दुर्योधनादीन्गुकन्भीष्मादीन्द्रोहितवान्हिंसितवान्हितवालाद्विज सूद्धनिमत्रपितृभृतिगुरुधुक्तस्य ॥ ४॥

प्रजामर्जुः प्रजापालकस्यराक्षोहरिद्धिषांवधोनैनः पापनमवाते प्रत्युतयुद्धेवैरिग्णांराक्षांवधोधर्मोधर्मसाधनमितियत् "यः पदातिहंति

समवतिचातुर्मास्ययाजीत्या"दिशाश्वतंनित्यंवेदवचोमेवोधायभ्रमंनिरस्ययथार्षक्षानायनकल्पतइत्यन्वयः तुशब्दपवार्थे॥५॥

कुतोनकल्पतइतितत्राह स्त्रीम्णामिति मस्तवंधूनांमयाहताबंधवोयासांतास्तथातासां मित्रिमित्तहताबंधवोयासामिति वास्त्रीगांयोऽसौ द्रोहोदिसालक्ष्रगोविधव्यप्राष्त्यामय्यन्वितः संपृक्तःतमहंहयमेधीयैरश्वमेधसम्बन्धिभिः कर्मभिव्यपोहितुंनकल्पोनसमर्थहत्येकान्वयः॥६॥

तत्रहर्णतमाह यथेति पंकांभः कर्दमजलंपकेनकर्दमेनयुक्तं द्रव्यंशोधियतुं यथानशक्नोतियथा सुरा सुरयामिश्रीकृतं दोषंव्यपोस्य शुद्धंकर्त्तुनशक्ता स्वयमशुद्धत्वात् तथैवयक्षोहिंसारूपत्वादेतांभूतहत्यांमार्ष्टुं मार्जियतुंनाईतीत्येकान्वयः क्षानपक्षमाश्रित्ययुधिष्ठिरेशायक्षो निदितोनत्वकर्तृत्वबुद्धचा ब्रह्मार्पगांब्रह्महविरित्यादौ ब्रह्मार्पगाबुद्धचाकर्तव्यत्वेन विहितत्वात् कर्मगाक्कानमातनोतीत्यादेश्च ॥ ७ ॥

प्रजाद्गोहादितिभीतः युधिष्ठिरःसर्वधर्मञ्चानेच्छ्याततोहरितनपुरातः विशसनं युद्धस्थानंकुरुक्षेत्रं प्रायात्तत्रापियत्रदेवव्रतो भीष्मोऽपतं

दित्येकान्वयः ॥ १ ॥

तस्ययुधिष्ठिरस्यभ्रातरः भीमादयः संतःप्रशस्ताअभ्वायेषांतेतथातैः तथाव्यासादयोद्विजाअन्वगच्छन्नित्यन्वयः॥२॥

स्थनंजयः सार्जुनः गुह्यकेर्यक्षैःकुवेरोवेश्रवगाः खरोचतंत्रराजत रुचदीप्तौ ॥ ३॥ सहचिक्रगाःकृष्णेनसहिताः दिवःखर्गात् च्युतंसमागतं देवमिवद्योतमानम् ॥ ४॥

### क्रमसंदर्भः।

श्रीभीष्ममहिमदर्शनार्थे मगवदिच्छ्येव तंत्रत्रभावावरणमपि जातमित्याह इति भीत इति चतुभिः ॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥

# सुवोधिनी।

लोकप्रतित्या कृष्णस्य यदा कार्यसमापनम् । तदा मागवतश्रोतुँ इरक्षा निरूप्यते ॥ १ ॥ पेहिकामुध्मिकफल भक्तानां स्थानमार्थयोः । सर्वेष्टाऽपूर्णां चैव भगवत्कार्यसंग्रहः ॥ २ ॥ श्रीमद्भागवतश्रोत् रक्षापूर्वकियाऽिखला । निरूपिता ततो मध्ये भगवत्कार्यवर्णनम् ॥ ३ ॥ एवं परिक्षितः शरीररक्षाप्रस्तावे रक्षापूर्वकार्य मायावेष्टनमुक्वा इतरकार्यानिरूपण्येकाग्र्येण रक्षाऽसमवान्मध्ये भगवत्कार्य निरूपण्येतं तत्र कार्यं चतुर्विधं सर्वमक्तानामहिकसर्व फलदानपूर्वकभिक्तदानमहिकामुष्भिकयारेकसंबंधाय निर्वेदश्च प्रथमम् । क्षानसंदेशपूर्वकपरममकि प्रावुभावन मुक्तिद्वित्यम् । सर्वमक्तिचत्तसमाधानपूर्वक स्वस्थानप्राप्तिस्तृत्येयम् ॥ तत्रत्यानां सर्वसुखवदानोप संहारश्चनुर्यम् । तत्र मुक्तिदानमेवोत्तमतत्कार्यमेहिकफल दानादितत्पूर्वागमिति निश्चित्य रक्षापूर्वागेन सहैकस्मिश्च्यायेऽष्टमे निरूपितम् । नवमे द्वितीयं कार्यमिक्तिवानमेवोत्तमतत्कार्यमेहिकफल दानादितत्पूर्वागमिति निश्चित्य रक्षापूर्वागेन सहैकस्मिश्च्यायेऽष्टमे निरूपितम् । नवमे द्वितीयं कार्यमिक्तिवाने सर्वस्थाये प्राप्ति । नवमे स्वस्य भिन्नतं प्राप्ति निर्वाचितः । स्वामितिकार्यस्य प्राप्ति निर्वचित्तः ॥ २ ॥ भक्तोऽपि भगवद्दिमाचरश्चरकं अनेत् । इति दर्शयितुं भोषमशरपंत्ररसंस्थिति । विष्ता । विष्ति सर्वस्थाये सर्वस्थाये सर्वस्य सर्वसंदेहिनिद्वत्ति । विष्ति प्रजाद्वोहि किमस्मत्कतं न वा अधमेजनकत्वमस्ति नवेति सर्वहात् प्रजाद्वोहस्य भयहेतुत्वमतप्य सर्वक्रस्य सर्वसंदेहिनिद्वति सर्वतत्वज्ञानार्थे सर्वेषां धम्मोणां वेदिनुमिच्छ्या ततोहिस्तनापुरात् विन्धान कुरुक्षेत्रं प्रागात् तत्रापि यत्र देववतोऽपतत्। देववद्वतं यस्य भगवता यद्यापति सर्वेषां प्रमाणां वेदिनुमिच्छ्या ततोहिस्तनापुरात् विन्धान कुरुक्षेत्रं प्रागात् तत्रापि यत्र देववतोऽपतत्। देववद्वतं यस्य भगवता यद्यापति सर्वाचावि सोऽपि भगवतोऽद्वत्वादित्रस्याद्वतत्व ॥ १ ॥

गवतः अभागाः अतदा भीष्मपुरस्कारार्थं सर्वेगता इत्याह तदा तइति । ये म्रातरः प्रजाद्रोहादि कृतवंत इति सर्वेऽन्येऽपि । विषा अपि गतास्ते वेद्व्यास

पांडवकृतपुराहितधीम्यादयः॥ २॥

पाडवकृतपुराख्यान्य । विप्रवे ! इति सम्बोधनं मगवतोऽनुवृत्तिर्शं सहैव गत इत्याह भगवानपीति । विप्रवे ! इति सम्बोधनं मगवतोऽनुवृत्तिर्शं भगवानपि मुक्तिदानार्थं रथेन सधनंजय इति । गरुडध्वजमारुह्यार्जुनेन सार्यावाऽन्वगच्छादिति लक्ष्यते । तेषां भात्रादोनां गमनेऽपि लात्वात् न दोषायेति ज्ञापनार्थं रथेन सधनंजय इति । गरुडध्वजमारुह्यार्जुनेन सार्यावाऽन्वगच्छादिति लक्ष्यते । तेषां भात्रादोनां गमनेऽपि लात्वात् न दोषायेति ज्ञापनार्थं स्वत्याद्व स तेरिति । नृपत्वात् परं तैः रोचनं वस्तुतस्तु अंतररोचनं सद्दर्शंतमाह । यथा गुह्यकैः सह कुवरः राह्यो बहिरेव सुखं नांतरमित्याह स तेरिति । नृपत्वात् परं तैः रोचनं वस्तुतस्तु अंतररोचनं सद्दर्शंतमाह । यथा गुह्यकैः सह कुवरः

कुत्सितं वेरं अक्षि यस्य अनेन बहि:प्रकाशो महान् अंतस्त्वंधतुल्यस्तथाऽयमि शोकप्रस्त इत्ययंः ॥ ३॥

एवं सर्वेः सह गमनमुपपाद्य संभाषणाञ्यतिरेकेणीव दर्शनमात्रेणीव नमस्कारं कृतवन्त इत्याह ह्येति। पिततस्यापि महती कांतिरिति
सहयांतमाह । भूमी तस्य स्पर्श प्वायुक्तः कि पुनः पातस्तथा भीष्मस्य पराजय प्वाशक्यः कि पुनरेवंभावः । यादशोऽपि देवो मनुष्याणां
नमस्करणीयस्तथा भीष्मोऽपि भगविद्वरोधाचरणोऽपि नमस्करणीय इत्यर्थः । पांडवा इति । भ्रात्रयपुत्रत्वाक्षमस्कारयोग्यता सूचिता। भीष्मोपदि
त्वात तथा भीष्मोऽपगतदेहोऽपि ज्ञानपूर्णत्वात नमस्करणीय इत्यर्थः । पांडवा इति । भ्रात्रयपुत्रत्वाक्षमस्कारयोग्यता सूचिता। भीष्मोपदि
त्वात तथा भीष्मोपित्र सर्वेषां प्रहणसिद्धे समागतानां सर्वेषां नमनमिति सानुणाइति । "आगत्य नमनं यत्तु लोकान्नकस्तया न चेत् । विपरीत
इयमानधर्मस्य सर्वेषां प्रहणसिद्धे समागतानां सर्वेषां नमनमिति सानुणाइति । चिक्रणोति पदं घातककप्रवानार्थमद्भुतकर्मत्वाय ॥ ४॥
त्वमापन्नः कथमेवं भवेदिति ॥ सर्वेः सह नमस्कारस्ततो भगवता कृतः" । चिक्रणोति पदं घातककप्रवानार्थमद्भुतकर्मत्वाय ॥ ४॥

तत्र ब्रह्मर्थयः सर्वे देवर्षयश्च सत्तमाः ॥
राजर्षयश्च तत्रासन्द्रष्टुं भरतपुंगवम् ॥ ५ ॥
पर्वतो नारदो धौम्यो भगवान्वादरायणः ॥
वृहद्श्वो भरद्वाजः सशिष्यो रेग्नुकासुतः ॥ ६ ॥
विशिष्ठ इंद्रप्रमद स्त्रितो गृत्समदो असतः
कत्तीवान् गौतमो अत्रिश्च कौशिको व्य सुदर्शनः ॥ ७ ॥
त्रुत्येच मुनयो ब्रह्मन् ब्रह्मरातादयो अमलाः ॥
शिष्येरुपेता त्र्याजग्मुः कश्यपांगिरसादयः ॥ ८ ॥

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

नवसे खप्रभुं भीष्मो ददर्शाय तदाज्ञया। धर्मानुक्तवा बहु स्तुत्वा तमेव प्राप भक्तितः॥०॥

यद्यपि तवाविवेको नापयाति तदा सर्व्वधर्मातत्त्वक्षं भीष्ममपि पृच्छेति युक्तियदा सर्व्वसम्मताऽभूत् तदा राजा तत्रैव ययावित्याह इतीति विवित्सया विचारेच्छया । विनशनम् कुरुक्षेत्रम् । देवव्रतो भीष्मः ॥ १ ॥ २ ॥

भगवानप्यन्वगर्छत् ॥ ३॥ ४॥ ५॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

प्रबोधयितुंप्रवृत्तेनापिश्रीकृष्णेनयदर्थनप्रबोधितस्तदर्शयितुंनवमाध्यायआरभ्यते स्त्रीगांमद्धतबंधूनांद्रोहउत्थितदतीत्थंप्रजाद्रोहाद्गीतः त तस्तदनंतरंसर्वधर्मविवित्सयासर्वान्धर्मान्बोद्धिमच्छ्यायत्रदेवव्रतोभीष्मः रथादपतिह्निश्चनंसरस्वत्यंतर्दिकौतुकस्थानंकुरुक्षेत्रांतर्गतंस्थानं प्रागात् ॥ १॥

संतोविशिष्टाः अभ्वायेषुतैरथैः॥२॥

भगवान्श्रीकृष्णोऽपिरथेनान्वगच्छत् सयुधिष्ठिरःतैर्भाचादिभिः॥३॥

दिवः स्वर्गाद्भृमिच्युतममरमिवस्थितं चिक्रिगाधर्मसंस्थापनकामेनसहप्रग्रामुः॥ ४॥

# भाषाटीका ।

(सूतउवाच) ऐसे प्रजाद्गोह से भीतहोकर सब धर्मों के जानने की इच्छा करके विनशन (कुरुक्षेत्र) को गये जहां देवव्रत भीष्य रारशस्या पर पहे थे ॥ १ ॥

शरशब्या पर पड़े थे ॥ १ ॥ तब युधिष्ठिर के सब भ्राता भीमसेन को आदिले सदश्वों से युक्त सुवर्गा भूषित रथों से राजा के पीछे गये और ध्यास धौम्यादिक

ऋषि गरा भी साथ चले ॥ २ ॥ हेविप्रर्षे ! भगवान गो विद्यमी धनं जय सहित रथ मै वैठ कर पश्चारे । इनसर्वो से वेष्टित राजा की वड़ी शोभाहुई जैसे गुद्धा की से कवर की होतीहै ॥ ३ ॥

से कुंबर की होतीहै ॥ ३॥ स्वर्ग सें च्युत देवता के समान पृथवी पतित भीष्म को देख कर पांडवों ने भीष्म को प्रशाम किया पांडवों के समस्त अनुगतों ने और श्री रुष्ण ने भी प्रशाम किया ॥ ४॥

# - श्रीयरदामी ।

तत्र तदा तत्रासन् तत्रश्यमेवागता इत्यर्थः । भरतपुद्धवं भीष्ममः १ ५ ॥ के रेणुकासुतः परशुरामः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ब्रह्मरातः शुक्तः । ब्राक्रिरसो ब्रह्मपतिः ॥ ८ ॥

### श्रीबीरराघवः।

तत्रभरतपुंगवंभरतवंश्यश्रेष्ठंदेविषप्रभृतयभासन्नागत्यस्थितवंतः ॥ ६ ॥ तानेवकोश्चिदाहपर्वतहतिद्वाभ्यामरेणुकासुतोभार्गवोरामः कौशिकोविश्वामित्रः ॥ ६ ॥ ७ ॥ हेब्रह्मज्ञन्येचब्रह्मरातः आदिर्थेषांते अमलामुनयः शिष्येष्ठपेताः कश्यपाद्यश्चाज्ञम् ॥ ८ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

तत्रतदासर्वेदेवर्षयः नारदादयः ब्रह्मर्षयोव्यासादयः राजर्षयःविश्वामित्रादयः भरतपुंगवंभीष्मद्रष्टुमायाताः आसन्नित्यन्वयः ॥ ५॥

तेषांनामान्याह पर्वतहत्यादिना रेणुकासुतः श्रीपरशुरामः॥ ६॥

कौशिकोविश्वामितः॥ ७॥

ब्रह्मरातः शुकः पर्वताद्याआंगिरसांतामुनयः आजग्मुरित्यन्वयः॥ ८॥

### सुवोधिनी।

सर्वज्ञा ऋषयो भीष्मोगृढं तत्त्वं वस्यतीति समागता इत्याह तत्रति । ब्रह्मर्षयो भृग्वादयो देवर्षयो नारदादयो राजर्षयो मन्वादयस्ते हित्रिविधधर्ममंत्रद्रष्टारः सर्वथा देहेद्रियादिस्वास्थ्ये शुद्धो धर्मादः स्फुरित नान्यथेति धर्मतत्त्वं झात्वा भीष्मे धर्मः परिनिष्ठितो न वित द्रष्टुमागताः "दौष्यंतिरत्यगान्मायामिति" भरतस्य मायापगमनादेहदृष्ट्या धर्मे न वस्यति तद्वंशोद्धवश्रेष्ठत्वात् स्वार्थदर्शनाञ्च भवाति संदेहोऽत एव ऋषीणां मतेषु बाधक विषयत्वम् ॥ ५॥

राजसादि विभेदेन एते भेदास्तान् गगायित त्रिभिः। सात्विकाः प्रथमं प्रोक्ता राजसास्तदनंतरम्। तामसा दोषिनहारासुल्यास्ते राज मिर्मताः॥ १॥ पर्वत इति। न देविषत्वमात्रं भगवानित्युक्तम्। रेणुकासुतः परशुरामः सोऽपि सिशिष्यः एते सप्त सात्विकाः देवर्षयः। विसिष्ठादयो दश राजसा ब्रह्मपयो वस्ततस्तु नत्नैव। अथेति भिन्नप्रक्रमेगा सुदर्शनस्यात्रे कथनात् सुदर्शनः अन्यं च राजिषभेदाः ब्राह्मगा अपि तत्त्वेन निर्दिष्टाः ब्रह्मरातः शुकः। तथां तामसादिदोषा भावमाह् अमला इति। बहिरेव ते तामसाः अतस्तु निर्गुगाः इति तन्मध्ये ब्रह्म-रातादयः श्रेष्ठाः कश्चपादयो मध्यमाः आंगिरसः वृहस्पतिः॥ ६। ७।८॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

रेणुकासुतः परशुरामः ॥ ६ ॥ ७ ॥

ब्रह्मरातः शुकः । आङ्गिरसो बृहस्पातिः ८

# सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रतिस्मिन्वनशने तत्रयुधिष्ठिर भीष्मसमागमकालेभरतसत्तमभीष्मद्रण्डंबद्धार्घ्यादयथासन्प्रादुर्घभृतुः॥ ५॥
पर्वतोसागिनेयस्तन्मातुलोभगवदवताराज्ञैष्ठिकादन्योनारदः गृहस्थो महाभारते प्रसिद्धः॥ ६। ७॥
ब्रह्मरातःशुकः आदिनाश्रीकपिलाद्याः आंगिरसोवृहस्पतिः आदिनाश्रीनारदप्रभृतयः॥ ८॥

### भाषा दीका।

हुसत्तम! वहां सव ब्रह्मार्थ देवार्षे और राजार्थ भरत पुंगव भीष्मको देखने को आये ॥ ५ ॥ पर्वत नारद धौम्य भगवान वादरायमा वह दश्व भरद्वाज सिष्यों सहित रेणुका छत (परशुराम)॥ ६॥

विश्विष्ठ इन्द्र प्रमद त्रित गुत्समद असित कक्षीवान गीतम अत्रि कोशिक (विश्वामित्र) सुदर्शन हेन्रहान और भी ब्रह्मरात ह्युकदैवजी को आदिले निर्मल सुनिगण अपने अपने शिष्यों सहित आये कश्यप आंगिरस आदिक ॥ ७ ॥ ८ ॥

तान्समतान्महाभागानुपलभ्य वसूत्तमः ॥ पूजयामास धर्मज्ञो देशकालविभागवित् ॥ ६ ॥ कृष्णांच तत्प्रभावज्ञ ऋसीनं जगदीइवरम् ॥ हृदिस्थं पूजयामास माययोपात्तिवगृहम् ॥ १०॥ 🕝 पांडुपुत्रानुपासीनान्प्रश्रयप्रेम संगतान् ॥ **च्य्रभ्याचष्टानुरागास्त्रैरंधीभूतेन चक्षुषा ॥ ११ ॥** 

भीष्मउवाच ॥

\* ऋहोकष्टमहोऽन्याय्यं यद्य्यं धर्मनंदनाः। जीवितुं नार्ह्य क्लिष्टं विप्रधर्माच्युताश्रयाः ॥ १२ ॥

### श्रीधरस्वामी ।

वस्त्रमा भाष्मः॥९॥

हृदिस्थं सन्तं पुरत आसीनं पूजयामास ॥ १०॥

उपासीनान् समीपे उपविष्टान् । प्रश्रयो विनयः प्रेम स्नेहः ताक्यां संगतान् उपसन्नान् । सन्नतानिति पाठे ताक्यामवनतान् । अक्याचष्ट अभ्यभाषत । अनुरागास्नैः स्नेहाश्रुभिः अन्धीभृतेन चक्षुषा उपलक्षितः ददर्शेति वा ॥ ११ ॥

अभिभाषग्रामाह अहो इत्येकादशभिः। हे धर्मनन्दनाः क्लिष्टं यथा भवत्येवं जीवितुं नार्ह्य यूर्यम इति यत् एतदहो कष्टं जुगुप्सितम् आहो अन्याय्यं चैतत् । यतो यृयं वित्रो धम्मीऽच्युतश्च आश्रयो येषां ते ॥ १२ ॥

### दीपनी।

धम्में ग नन्दयान्त ये ते तथा। नन्दिम्रहिपचादिश्यो ल्युगिन्यचः (पां ३।१।१६४) इति कर्तुरि ल्युः॥१२--३१॥

### श्रीवीरराघवः।

तान्बह्यार्षप्रभृतीन्समेतान्समुदितानुपलभ्यामिश्रायधर्मश्रो देशकालविमागश्रश्रवसूत्तमोमीष्मः यथार्हपूजयामासपूर्वजनमनिवस् त्वाद्वसूपम इत्युक्तम् ॥ ९ ॥

तथाक्यमां च तत्त्रमावाभिक्षोद्यभिसंपूजयामास ध्यानेनहृदिस्थंकृत्वामानसैरुपचारैः पूजयामासेत्यर्थः कथंमूतमासीनमप्रतउपविष्ट जगदीश्वरंमाययासंकलपरूपज्ञानेनोपात्तांविग्रहायस्यतम् ॥ १० ॥

तत्रउपासीनानुपविष्यननुवर्त्तमानान् प्रश्रयेगाविनयंनप्रेम्गा च संगतान्पांडुपुत्राननुरागास्त्रेरनुरागजैरश्लाबंदुाभिरंघीभूतेनचक्षुपाअभ्या च्रष्टद्शीं उवाचच चक्षेरमयार्थकत्वात् अत्रतंत्रं गांभयमिषविवक्षितम् ॥ ११॥

तत्रोक्तिमाह अहोइतिद्वादशाभः हे धर्मनन्दनअहोइदंकष्टजीवनमन्याय्यमितिच्छेदः संधिरार्षः ओदितिप्रकृतिभावत्वात्यस्माद्विप्रा धर्मोऽच्युतोभगवांश्चाश्चयायेषांतेविप्राद्यज्ञवर्त्तिनोयूयंक्ष्ठिष्टकच्छ्रंयथातथाजावितुनाहेथ ॥ १२॥

### श्रीविजयध्वजः।

महाभागोवसूत्तमोभीष्मः समेतान्संगतान्तृपादीनुपलक्ष्यदृष्ट्वामनसाप्रतिगम्यवा पूजयामास कथंभूतः देशकालविभागविद् देशः कुरु क्षेत्रं कालः शरतलपरायनलक्ष्मणः तयोविभागमीचित्यवेत्तीतिप्रत्युत्थानिद्वदनिद्युजायामशक्तत्वान्मानसीवाचिकीआंजलिकी चापूजांकतः वानित्यर्थः अन्यत्रतहेशतत्कालविभागं जानातीतिधर्मकः आपत्संपद्धर्मोजानातीतिधर्मकः धर्मशब्दवाच्यंभगवंतंजानातीतिवाधर्मकः॥ १॥६

कृत्वांचपूज्यामासेत्यकान्वयः कथंभूतः तस्यकृष्णास्यप्रमावंसामध्ये जानातातितत्प्रभावशः कथंभूतंतत्रासीनंजगतईश्वरं माययास्व च्छ्यापितृत्वनांगीकृतवसुववशरीरं हृदिमनसिस्थितं ध्यानलक्षणोपासनयाशरीरमध्ये पुंडरीककर्णिकायांदीपवदीप्यमानंवा॥ १०॥

प्रथयगुगोनप्रेमगुगोनसम्यक्तान्समापंनिषग्गान्पांडीः पुत्रान्तेषुअनुरागयुक्तैरस्त्रैबोष्पैरधीमृतेनचक्षुषायुक्तः इत्यमूत्रलक्षांग्वतीयाति मूत्रातः अभ्याचष्टभाहभाभिमुख्येनापस्यदित्यन्वयः॥ ११॥

अहोऽन्याय्यमिदं कष्टमितिवीरराघवपाठः

### श्रीबिजयध्वजः।

भोधम्बन्दनयुधिष्ठिरयूयेक्षिष्टंक्लेशयुक्ततयाजीवितुंनाईय विपादिष्वेकोऽपिसुखजीवनायालंकिमुबद्दुत्वमित्यभिप्रायेखोक्तंविप्रधर्माच्युताश्च याइति यत्विलष्टजीवथ तत्कष्टमन्याय्यमहो आश्चर्याद्याश्चर्यमहो अन्याय्य।मितिप्रग्रह्मसंज्ञा मंगोलोकद्दष्टिमपेक्ष्यवोक्तोनतुपांवानांदः स्त्रमस्तीति तेषांभूमारावतारणायावतीर्णानामसुरजननिधनेनवनवासादिष्वपिनित्यसुखित्वादितिविशेषधोतनार्थः धर्मस्यनंदनः धर्मनदय तीतिवा धर्मपवनंदनोयस्यसतथेतिवा धर्मेगासुखक्रीडायस्यसतथेतिवातस्मान्नंदनंसुखनंदनंयस्यसतथेतिवा ॥ १२ ॥

# क्रमसंदर्भः।

कृष्णामिति । सदाखेषां हृदिस्यं हृदयस्थमपि मायया कृपया उप नेत्रसमीपेऽपि आत्त आनीतो वित्रहो येन तम् ॥ १० ॥ यया भीष्मादीनां खापराश्रमननशङ्कया मुनीनां खस्यापि शिक्षग्रीन युधिष्ठिरी न शास्यति स्म तामेव शङ्कां तस्मिस्तस्य क्रिग्धतादशे नया तद्द्वारा द्रोशादीनामपि तथाभावव्यंजनया दूरीकर्त्तु तत्सिश्रावानीतवान्सोऽयंश्रीभगवानिति पूर्वाभिप्रायमेव व्यक्तीकर्त्तमाह पांडपुत्रानिति ॥ ११॥

अहोकप्रमितितैः । तत्रइतियदितितदेतद्यद्भवद्विचारितमित्यर्थः । ततेविप्रादीनांहिसाभांत्यामाक्लेशंमन्यस्रोतिभावः । विप्रधर्मेति षष्ठीतत्पुरुषोवा । यद्वाधर्मानंदनाअपियद्यूयंजीवितुंनार्हथ जीवितुंयोग्यानभवामेति मन्यध्वेतदहोकष्टमन्याय्यंच । तत्रापिविप्रधर्माञ्युता नामाश्रया अपियूयं यत् तथा मन्यध्वे ततश्चिक्छिमातिपुर्व्ववदेवान्याय्यंकष्टश्चेत्यर्थः यूयमिति श्रीयुधिष्ठिरंप्रत्येवगौरवतः सम्वोधनम् ॥ १२ ॥ ४३ ॥ ४८ ॥

# सुवोधिनी।

अत्रोत्तमाधिकारे धर्मनिर्गाये तदुक्तेषु तरतमभावज्ञानार्थं गगाना एवं त्रयः समागताः पांडवा भगवानृषयश्चेति । तत्रऋषिषु कृतमाह तान् समेतानिति । महान् भागो यस्येति धर्मज्ञानादिसमूहः भागः । वसूत्तमो भीष्मः भूमौ हि वसवो मोच्यंते तथाऽन्येऽन्यत्र तद्गृहे पुष्टिभक्तत्वव्यावृत्त्यर्थमाह । देशकालयोर्विभागः देशकालविभागो वा प्राकृतत्वाद्दषीगामनुत्तमस्याप्यपूर्वस्य प्रथमं पूजनमित्यादि । विधान विदितिपाठेऽपि स पवार्थः॥९॥

एवंमुनीन्मनसा वचसा धर्मीपयोगित्वेनपूजयित्वा मगवन्तमपितथैव पूजितवानित्याह कृष्णंचेति नतु भगवंतंकथंपूजितवानित्या कांक्षायामाह तत्प्रभावज्ञइति पूर्वोक्तानुत्थितानेव दर्शनमात्रेगा पूजितवान् भगवंतंतु आसीनंपूजायांभावनया सर्वोत्तमत्वप्रकारंशापियतुं स्वीकृतोवित्रहोयेनप्राकृतगराने जगदिश्वरमित्युक्तंद्वदिस्थमित्यंतर्यामिगां तस्यविहर्भानेहेतुः माययोपात्तवित्रहमितिमाययाशत्त्वा द्रियादिना अहंकारगाचजीवानां देहग्रहणं भगवतस्त्खशक्त्यैव देहनिर्माणमापिमायात्वादन्यथाभासयित जीवसंवंधित्वेनपुत्रत्वादि नाके चिद्धीजमेवमाययागृहीतमाहुः एवंलोकानुसारेगा भीष्मबुद्धानुसारेगा भगवान्।निरूपितः वस्तुतस्तुयथा भगवान् तदुत्तरत्रनिरूप यिष्यते ॥ १०॥

एवमुभयोः पुजनमुक्त्वाप्रथमोक्तान् पांडवान्अपूजयित्वैव स्रोक्तार्थप्रहगासिद्धये शोकापनोदनपूर्वकस्वशोकामावकथनेन सहमग वंतंनिक्रप्यफलंप्रार्थयते पांइपुत्रानित्यादि चतुर्दश्विः भ्रातृपुत्रत्वेनस्नेह शिक्षायोग्यताउपासीनानिति धर्मयुक्तान्पश्रयप्रेमसंगतानिति श्चानीपदेशहेतुः विनीतेषुस्निग्धेषुहिश्चानमुपदिश्यते भगवद्दर्शनात् कूरमावेऽपगतेस्निग्धभावेनवदतीत्याह अनुरागास्नीरिति अधीभृते नचक्षुषासहितः लक्षितीवास्निग्धइतिस्वक्षेशेनसहितं परदुःखंरोदनेहेतुः सर्वेहिभगवताव्यामोहिताः पतेऽपिक्केशंप्राप्तवंतो वयमपी

तिषाक्किशमनुवद्तिद्वयेनअहोकष्टमिति अहोइत्याश्चर्यतेषांवनवासक्केशं स्मृत्वानिरन्वयमेतत् प्राप्तमित्यहोकष्टेहेलनकचप्रहिणादिकं स्मृत्वाअहोअन्याय्यमितिपूर्वेवत् 'वीजस्वभावक्षेत्राणां धर्माधर्मस्तथापुमान् सुखंदुः खंचलभते कर्ममार्गेणनान्यथा"तत्रयद्भवद्भिः प्राप्तंदुः सं क्रिशाच्छारीरम् अन्यायान्मानसंतत्कर्मजन्यं नभवतियस्मात्य्ययंधर्मनंदनाः यद्यपियुधिष्ठिरएवधर्मपुत्रः तथापितत्प्राधान्येन स्थिताइति क्षराप्य । स्वतिक्षति । स्वतिक् वुष्टाहित्रेधाधर्मनाश्रयंते धर्मोहित्रिविधः नीत्यविरुद्धः स्वभावशुद्धः ईश्वरसंवंधीचतत्रविप्राश्रितानां सर्वनीतिज्ञानात्नीतिविरोधामावः वुटारिक युद्धेस्थाषयतिअच्युताश्रयत्वाच ईश्वरसंबंधीधर्मः स्फुरतिएकैकाश्रितोऽपितक्केशं प्राप्नोतिकिमुतित्रितयाश्रितः त्रयाणामे क्रभावात्रधर्ममार्गेचेयंव्यवस्था कालमार्गेग्रिभिन्नतयावस्यतिमगवनमार्गेग्रच॥ १२॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती ।

वस्तमो भोष्मः॥९॥ वस्त्रमा गाः । माय्यवीपासी गृहीतो विव्रही युधिष्ठिरेण सार्के प्रवीधाप्रवीधहेतुकी विवादी येत तम् । यद्वा । मायया क्रपणा उप नेत्रसमीपे आती बती निजदेही येन तम्॥ १०॥ अभ्याच्य अभ्यभाषत ॥ ११ ॥

संस्थिते ऽतिरथे पांडी वृथा वालप्रजा वधः।
युष्मत्कृते वहून्क्लेशान् प्राप्ता तोकवती मुहः॥ १३॥
सर्व कालकृतं मन्ये भवतां च यदिप्रयम्॥
सपालो यद्दशे लोको वायो रिव धनावितः॥ १४॥
यत्र धर्मसुतो राजा गदापाशिर्वकोदरः।
कृष्णोऽस्त्री गांडिवं चार्षं सुहृत्कृष्णास्ततो विपत्॥ १५॥
नह्यस्य किहिचिद्राजन्पुमान्वेद चिकित्सितम्॥
यदिजिज्ञासया युक्ता मुद्यंति कवयोऽपि हि॥ १६॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अहो कष्टमहोऽन्याय्यमिति राजन्यतिदेश एवान्यायकष्टे खलु न सम्भवतस्तत् किमत्रार्थे सर्व्वविश्वस्थितिकर्त्तरि विष्णावेवान्यायः समभूदिति भावः क्लिष्टं यथा स्यात्तया यूयं जीवितुं नार्हेष अन्ये तथा जीवन्ति चेत् जीवन्त्विति भावः॥ १२॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

वसुषूत्तमोमुख्योवसुर्वशिष्ठशापाद्भीष्मत्वेनस्थितः !। ९॥ श्रीकृष्णपूजनेविशेषमाह कृष्णंचद्वदिस्थंपूजयामास नतुविह्यश्चरोद्वदिकयंस्थितोभवेत्तेनचसकुतोक्षातस्तत्राह माययाकृपयाद्वदिउपात्त आवि कृतोविग्रहोयेनतंसचतद्तुभावंसर्वत्रव्यापकतयाभक्तेच्छ्याऽऽविभवनसामर्थ्यवेत्तीतितथा॥१०॥

ं उपासीनान्समीपस्थान्प्रश्रयप्रेमसंनतान्विनयस्नेहाभ्यामवनतान्पांडुपुत्रान् अनुरागास्नैःस्नेहाश्चिमः अंधीभूतेनचक्षुषोपलक्षितः अभ्याच-ष्टदर्शः अभ्यभाषतचस्नेहाश्चिमः चक्षेष्ठभयार्थस्यक्षपंतंत्रादिनार्थद्वयस्यिवविक्षितत्वात् ॥ ११ ॥

अभ्यभाषतेत्युक्तंतदेवाहअहोइत्येकादशभिः हेधर्मनंद्नविप्रादयआश्रयायंगंततथा पवंभूतायूयंक्लिष्टंयथास्याक्तथाजीवितुंना य यदिदं साश्रयमपिक्किष्टंजीवनंतदहोकष्टंगहनमहोअन्याय्यंन्याय्यविपरीतं अहोइत्योदंतिनपातस्यओदितिप्रगुद्यसंशायांप्रकृतिभावपाप्तीसंधिराषेः १२

#### भाषादीका ।

वसूत्तम भीष्म ने उन समेत ऋषियों को प्राप्तहोंकर पूजन किया क्योंकि ये देशकाल के विभाग के वेत्ता हैं॥ ९॥ अपने हृदिस्थ जगदीश्वर श्रीकृष्णजी अपने सन्मुख विराजमान हैं "जिन्हों ने कृपा से ही यह विश्रह प्रकाश किया है " उनका भी पूजनाकिया क्योंकि भीष्म श्रीकृष्ण का प्रभाव जानते हैं॥ १०॥

विनय और स्नेह युक्त अपने पास में वैठे पांडु पुत्रों से भीष्म अनुराग के आंसुओ से डव डवाये नेत्रों से वोले ॥ ११॥

हे धर्म नंदन ! तुम क्लेश पूर्वक जीवन के योग्य नहीं हो क्योंकि विप्र धर्म और अच्युत के आश्रय हो तथापि जो तुमको क्लेश है यह वड़ा अन्याय और बड़ा कष्ट है ॥ १२॥

# श्रीधरस्वामी

किञ्च संस्थित मृते । वालाः प्रजाः (पुत्राः) यस्याः सा वधूश्चेति दैन्यं दर्शितम् । तोकान्यपत्यानि तद्वती अपत्यैः सह कलेशान्
प्राप्तित्यर्थः ॥ १३ ॥
कालकृतत्वेन शोकं वारयति सर्व्वमिति द्वाभ्याम् । भवतामपि । यद्वशे यद्वशवत्तीं ॥ १४ ॥

कालक्षप्ताना राजा । अस्ति । क्ष्याोऽज्ज्ञीनः अस्ति । ततस्तत्रापि विपत् । पुरस्कारीरवलकास्त्रनेपुरायशस्त्रदेवता

सम्पत्तावपीत्यथेः ॥ १५ ॥ नजु कृष्णं कयं कालोऽतिक्रमेदिलपेक्षायामाद्द न हीति । अस्यश्रीकृष्णस्येति अंगुत्या दर्शयति। विधित्तसितं कर्मुमिएस । यस्य विधि रिसतस्य विजिक्षासया ॥ १६ ॥

### श्रीवीरराघवः।

अतिरथेपांडौसंस्थितेमेतेसतिवालाः प्रजाः पुत्रायस्याः सावधूश्चपृथाकुंतीतोकवत्यपत्यवतीसत्यपियुंग्मदर्थेबहृन्सुहुर्मुहुः क्लेशान्प्रा-प्ताहि॥ १३॥

भवतांयद्प्रियंदुः समभूदेतत्सर्वेकालकृतंकालो द्वसदेवकृतंमन्ये कोऽसीकालः यत्कृतंमदाप्रियंतत्राह वायोर्वशमेघपंकिरिवयस्यवशेस

र्चोलोकोवर्ततेसप्वकालः ॥ १४ ॥

अत्यंता संभावितमिद्मभविदितिविस्मयतेयत्रेति यत्रधर्मसुतादयः तत्रविपदितिचित्रमित्यर्थः आद्यः कृष्णशब्दोऽर्जुनपरः द्वितीयस्तु-भगवत्परः तद्विशेषगां सुद्दितिधमसुतादीनांसुदृतस्त्रीशब्देन कृष्णास्त्रीद्दीविवक्षिता धमसुतादीनामन्यतमप्वसर्वविपक्षक्षपगा-क्षमेसतिसंभूयसर्वेषामवस्थानेऽपि विपद्भवदिंतिएतद्तिचित्रमिति इदंसर्वेकालकृतमेवेतिमावः सुहृत्कृष्णाइत्यनेनसुहृद्िपकृष्णाः का-लमेवान्ववर्ततोतिस्चितम् "द्रव्यंकर्मचकालश्चस्वभावोजीवगवच यद्नुत्रहतः संतिनसंतियदुपेक्षये"त्युक्तविधस्यतत्रापिभवतामतीवसुद्ध-दः कृष्णस्यविपन्निमित्तकर्मोद्वोधकालानुवार्तत्वादेवोपेक्षासंगतानान्ययेत्यादायः॥ १५॥

ननुयद्वशेलोकः सकालोऽपिश्रीकृष्णोयत्रसत्रादिमांश्चेत्ताहैंकालानुवृत्त्याकिमस्यचिकीर्षित मित्यत्राह नेतिहराजन्नस्यकृष्णस्यविधि-

रिसतंबातुंप्रवृत्ताः कवयोब्रह्माद्योऽपिसुस्रांति ॥ १६॥

## श्रीविजयध्वजः 🕼

अतिरथेपांडे।संस्थितेस्वर्गगतवितसत्यतोकवतीपुत्ररहितायथाबहुक्छेशवतीभवति तथाबालप्रजायुष्मन्मतुष्प्रत्ययः । पुत्रवतीपुत्रपो षगादावतिष्ठेशं प्राप्नोतिययातेषत्यन्वयदृष्टां तोवेत्येकान्वयः ॥ १३ ॥

एवंविधयुष्मदप्रियेभवदारब्धकमिनियामको हरिरेवहेतुरित्यभिष्रेत्याह सर्वमिति भवतांयदाप्रियंदुःखादितत्सर्वयुष्मत्प्रारब्धकमीनया मककालाख्यहरिकृतंमन्ये वायोर्वशंगताघनावलिरिवजडाजडलोकोयस्य भगवतोवशेवर्ततेसनारायगाः सर्वगुगापूर्णत्वात्कालदृत्युच्य

यकान्ययानुपर्यत्ततोऽप्ययंहेतुः सिध्यतीत्याह यत्रेति यत्रराजारंजकः धर्मस्यसुतः यत्रचतस्यराज्ञः कनिष्ठः क्षितिभारायितदितिसुत शोखित्दिग्धांगदांपाणोवि भ्रत्भक्त्वावशीकृतपरब्र्धावृक्षोदरः तथायत्रचेद्रावतारः कृष्णोऽज्ञुनोऽस्त्रोद्रोगातुपात्तास्त्रत्रामः तस्यचकरीर चूर्णांपूयशोशितवमनकारि गांडीवाख्यंधतुः यत्रचेषांसर्वसुपर्वाधिराजोराजपक्षोऽनंतवलवीर्याद्यनंतगुरणार्श्ववः श्रीमान्वासुदेवः वसुदे ·वेपुत्रः कृष्णाः सुहृदनिमित्तवंधुस्तत स्तत्रविपत्तेषांप्रारब्ध कर्माभावविपत्कुतः स्यादास्तिचतस्मादित्यकान्वयः॥ १५॥

सुत्ददस्तस्याविपत्करत्वंकय मितितत्राह नहीति अपरिच्छिन्नत्वाद्यस्यस्यस्पित्रज्ञासयायुक्ताः कवयोऽपिमुह्यातिअयमित्यं भूतद्दीतिनिर्देष्ट्रं नजानंति हेराजंस्तस्यास्यविधित्सितंकर्तुमिष्टंकश्चिदपि पुमान्कदाचित्रवेदहि यस्मात्तसर्वेषांस्वकृतादृष्टानुसारिफलदातुरस्यभवत् सुत्दत्त्वेऽपिप्रारब्धकर्मानुकूल्येनाविपत्करत्वयुक्तमित्येकान्वयः ॥ १६ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

यद्यस्माकं विपत्ति कालकताममत्वा खकतामेव तु मत्वा दुःखं लभसे तर्हि कथं भवतां सा जातेत्यभिष्रत्याह यत्रेति॥ १५॥ न हीति । अत्र तेषामात्तिद्वारेण खस्मिन्नावेशार्थं तत्त्वगडनजनितहर्षद्वारेण च खस्मिन् वेमवर्द्धनार्थं तथा विधित्सितमिति गूढो ऽभिप्रायः॥ १६॥

# सुवोधिनी।

एवंखभाववीजदोषौपरिद्वस्यूक्षेत्रद्रोषाभावायाहसंस्थितेति संस्थितः स्वधर्मपरिपालनं सूचितम् अतपवयुष्मत्कते धर्ममार्गेगाभवद्रक्षार्थ 

दोषः द्रष्टंत्वद्रष्टसापेक्षमिति अद्रष्टाभावेद्रष्टमप्यस्मदादिरूपं नहेतुरितिज्ञापितम् ॥ १३॥ : इष्टत्वदृष्टपानकाराः अकारग्रकार्योत्परयभावात् किंकारग्रामित्याकांक्षायामाह् सर्वकालकृतमिति सर्वमाध्यात्मिकादि अस्मत्कृतंवासर्वकालकर्तृकं नतु अकारणवारपार । अकारणवारपार । अकारणवारपार । अकारणवारपार । इतिवाक्यातस्वमनिश्चितं वदितकालएव दुःखहेतुज्यी-तः शास्त्रपानाः । प्रतिकालकृतमेवमन्ये यद्यदिति प्रसिद्धनैतादुशंकम्भवतांजन्मांतरेऽपीतिस्चितम् प्रकृतोपयुक्तकालस्यसामध्यमाहसपालशति अतः पारिशेष्यात्कालकृतमेवमन्ये यद्यदिति प्रसिद्धनैतादुशंकम्भवतांजन्मांतरेऽपीतिस्चित्रम्यान्येन्यसामध्यमाहसपालश्चित अतः पार्या नार्या । उपनालस्यसामध्यमाहसपालकृति । विद्याप्त । विद्यापत । वि स्वाधारवरवात्राः । स्वाद्यातकार्यकारणानाद्योऽपीति दर्षातमाहवायोरिति यथावार्यार्वद्यायनपक्तिः सर्वमासेषुसमागच्छतामेघाः वायुनेव

तिनभवात ॥ १० ॥ कालकृतेपूर्वोक्त कर्मादिनिराकरगोचतर्कमाह यत्रेति सर्वोदष्टसामग्रीवर्तते दुःखाभावहेतुः पुत्रेपालयतिसर्चराजास्वयं पालिती अन्यान् कालकृतेपूर्वोक्त कर्मादिनराकरगोचतर्कमाह यत्रेति सर्वोदष्टसामग्रीवर्तते दुःखाभावहेतुः पुत्रेपालयतिसर्चराजास्वयं पालिती अन्यान् पालयेत्वृकाव्शावयः माण्यप्राप्ताः अस्त्रीगोडीच धतुषाब्रह्मास्त्रादि प्रयोगसमर्थः चापस्याक्षयत्वंनाम्नासुचयति अभ्यनुनाशायोग्यं भगवांश्चसुद्दत्वितान्वेषी एतपविचायमागोदुःसहेत धतुषाब्रह्मास्त्रादि प्रयोगसमर्थः

## सुवोधिनी ।

वोजाताः तथाहिपांडुनापूर्व मेर्वपुत्रंपार्थ्वस्थापयित्वा राज्यत्यागः इतश्चेत्तदानदुःखशंकामीमस्यवामहावलत्वाभावेनदुःखंभवेत् अर्जुन स्यवाराधावेधाद्यकरग्रंथाशयाभावान्नदुःखंभवेत् अग्निनावासाधनानिनदत्तानिचेत् इंद्रेग्रसहकलहाभावात् भगवतासाहाय्यंनकृतंस्यात् तदादिनदययादुःखदातृभिर्दुःखंनदत्तंस्यात्तस्मात् सुखसाधनत्वेनयेगृहीताःतेश्चंत्तदुःसंतदाकालकृतमित्येवनिश्चयः ॥ १५ ॥

नन्वेवंसितकालस्यविल्छतासूचिता तथाकथंभगवंतंकालोऽतिकामेत्तत्राहनह्यस्येति अस्यविधित्सितंकोऽपिनवेदयद्यपिकालोभगवदाङ्गा कारित्वात् भगवादिच्छायांसत्यांनप्रवर्त्ततेपरंभगवादिच्छेवशातुमशक्याभगवाश्वसुखदुःखहेतुः तथासतिसर्वत्रसर्वस्यस्यात् कितुभगवदिच्छा साकार्येकोन्नेयानकार्यात् पूर्वमवगंतुंशक्यानन्वेवसातभगवान्कथांविश्वसनीयः तत्राह योद्वजिक्षासयेतिभगवान्पांडवेक्यः किंदुःसंदत्त वान् निर्वेदार्थंवासुखंदत्तवान् भगवत्परिपाछितत्वज्ञानेनभक्तिवादत्तवान् कौरवार्षांवाहितं कृतवान् इतिविचारे कियमा से सर्वेत्रयाक्तिसंभवात् अतयवेकवयोऽपिमुद्यति अवाङ्मनसागीचरेयुक्तिनेवर्त्ततद्दातेशव्दार्थः ॥ १६ ॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

नमु कि क्लिप्टं तत्राह । संस्थित सृते । वालप्रजा इति वालप्रजस्त्वदशायामेकाकिन्येव क्लेशान् प्राप्ता । युष्माकं प्रौढवयस्त्वे सति तु तोकवती पुत्रेर्युष्माभिः सहितापि कष्टान् प्राप्तेत्यर्थः ॥ १३॥

नतु तर्हि कथमस्माकं क्लेशस्तत्र तत्कारणं प्राचीनार्व्वाचीनं किमपि पापमप्रयत् वक्तुमसमयं एव लोकोक्तिरीत्यैवाह सर्व्वमिति। नतु कालो हि प्रारब्धसुखदुःखभागयोरेवाधिकरणमेवति सहकारित्वादुपचारेगीव कालकृतं मन्ये इति वूषे प्रारब्धपापकृतमिति स्पष्ट कयं न वदसीत्यत आह भवताश्चेति । युधिष्टिरो हि साक्षाद्धमीवतार इति प्रसिद्ध एव धर्मस्यापि प्रारब्धं पापमस्तीति चेन्मन्तव्यं तार्ह कर्य धर्म्मस्य धर्मत्वम् अतोऽतिप्रवलोऽतिदुर्निवारो दुस्तर्कः काल एव कारग्रामित्याह सपाल इति ॥ १४ ॥

ननु—"न किंहिचिन्मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो मेऽनिमिषो लेढि हेतिः। थेषामहं प्रिय आत्मा स्रुतश्च सखा गुरुः सुद्धदो दैवामिष्ट मि"ति कपिलदेवोक्तेः कृष्णे दास्यसख्यवात्सख्यवतः पांडवान् कथं कालोऽतिक्रमेत इत्यतोऽतिविस्मर्यान्वतः कारणं विनेव कम्मीत्पत्ति रूपं विभावनालंकारं भावयन्नाह यत्रोति । कृष्णोऽजुंनः अस्त्री धन्वो । ततस्तत्रापि विपत् पुरायवलशारीरवलनेपुरायवलशस्त्रहद्वल सम्पत्तावपीत्यर्थः ॥ १५॥

तहात्र किं निर्द्धारयामि सामान्यतस्तावदयं सिर्द्धांतः सर्व्ववादि सम्मतो यत् कृष्णस्य चिकीर्षितमन्यथाकर्त्तुं न कोऽपि समर्थतिश्च कीर्षितं किमिति अद्यापि कोऽपि न वेत्तीत्याह न ह्यस्येति । किहिचिदपि काले कोऽपि पुमान् ब्रह्ममवादिः कोऽपि न वेद अहं का वराक इति भावः । नतु कार्राप मा जानांतु जिज्ञासा तु अवस्यमेव जायते । तत्रास्मासु तुःखदानमेव कि चिकीर्षितं सुखदानमेव वा उभयदान मेव वा। तत्रार्धं न भक्तवात्सल्यगुगास्य लोपानीचित्यात् । द्वितीयमपि न अदद्यत्वादेव । तृतीयमपि न तत्सीहाईलोपापत्तः। तर्हि जिज्ञासा नैव कर्त्तुमु वितिर्णयन्नाह यद्विजज्ञासयेति । युक्ता विवेकिनोऽपि कवयः सर्व्वशास्त्रज्ञा अपि मोहमेव प्राप्तुवन्ति सिद्धा-तालामादिति भावः। अत्र भीष्मस्य महाविश्वस्योक्तौ कवय इति मुह्यान्ति इति पदाश्यां युधिष्ठिरादयोऽपि भगवद्गक्ताः प्रारब्धं भुअते इति मतं प्रास्तम् ॥ १६ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

किंचसंस्थितेमृतेवालाः प्रजाःपुत्रायस्याःसातोकवतीसपुत्रामुहुःक्केशान्प्राप्ता ॥ १३॥

कर्मफुळपदानपरमेश्वरप्रवृत्तीनिमित्तभूतेनकालेनकृतमन्ये॥ १४॥

धर्मदेहिकवलास्त्रनेपुग्यदिव्यास्त्रादियागः किंवहुनापरमेश्वरश्चतत्तत्कालेशुमाशुभप्रदहत्याशयेनाह यत्रेति यत्रधर्मसुतादयस्ततस्तत्रापि विपादित्यन्वयः ॥ १५ ॥

कालप्रभावमुक्त्वातन्नियंतुः परमेश्वरस्यप्रभावमाह नहीति अस्यश्रीकृष्णस्यचिकीर्षितंकर्तुमिष्टम् ॥ १६ ॥

# भाषादीका ।

अतिरथ पांडु महाराज की मृत्यु के अनंतर विचारी पृथा वधू ने तुम्हारे निमित्त बहुत से क्लेश बार बार पाये थे । क्योंकि संतान तुम सव गालक थे॥ १३॥

यह जो सब तुमको दुःख हुआ है में इसको काल कर मानता हूं क्योंकि वो काल हो सबका पालन करता है। और जैसे मेघ बाय

से बस रहता है यह समस्त लोक काल के बरा हैं॥ १४॥

काल का वड़ा तुर्घट करनी यह है। देखो । जहां साक्षात धर्म पुत्र राजा, हकोदर गदा पागि, अर्जुन धनुर्धर गांडीव धनुष, श्रीरूपण

सुहत्, और तब भी विपद् ॥ १५॥ त, जा । राजव १ इन श्रीकृष्णा को क्या कर्तक्य है यह कोई पुरुष कभी भी नहीं जानता है जिन के कर्तक्य के जानने की इच्छा से कवियों को मोह होता है॥ १६॥

तस्मादिदं दैवतंत्रं व्यवस्य भरतर्षभ ॥
तस्यानुविहितो नाथा नाथ पाहि प्रजाःप्रभो ॥ १७ ॥
एष वैभगवान्साचादाद्योनारायगाः पुमान् ॥
मोहयन् मायया लोकं गूढ श्ररित वृष्गिषु ॥ १८ ॥
ऋस्यानुभावं भगवान्वेद गुह्यतमं शिवः ॥
देविषिनीरदः साचाद्रगवान्किपलो नृप ॥ १६ ॥
यं मन्यसे मातुलेयं प्रियं मित्रं सुहृत्तमम् ॥
ऋकरोः सचिवं दूतं सौहृदादथ सार्शिम् ॥ २० ॥

#### श्रीधरखामी।

(इदं सुखादि) दैवतन्त्रमीश्वराधीनं व्यवस्य निश्चित्य। तस्येश्वरस्यानुविहितः अनुवर्त्ती सन् कर्त्तरि कः। हे नाथ कुलपरम्परागत स्वामिन् प्रभो समर्थ अनायाः प्रजाः पाहि॥ १७॥

अनुविधेयः परमेश्वरश्च श्रीकृष्ण पवेत्याह । एष एव भगवान् सञ्बेश्वरः । यत आद्यः पुमान् ! तच कुतः यतो नारायणः साक्षात् १८

तदुपपादयति अस्येति । अनुभावं प्रभावम् ॥ १९ ॥

त्वमञ्चानात् यमेवं मन्यसे। (मातुलेयं) मातुल्याः देवक्याः सुतम् प्रियं प्रीतिविषयम्। मित्रं प्रीतिकत्तीरम्। सुदृत्तमम् उपकारान पेक्षोपकारकम्। सोदृदात् विश्वासात् अकरोः कृतवानसि। सचिवं मन्त्रिगाम्॥ २०॥

#### श्रीवीरराघवः।

अस्त्वेवंप्रकृते किमित्यत्राह तस्मात्सर्वलोकस्यकालायत्तसुखादिमत्त्वात्कर्मादेश्चकृष्णायत्तत्वात्कृष्णस्यकालाचनुवर्तितत्वाश्च हे मरत्वेभद्दंसुखदुःखादिकंसर्वेदैवतंत्रंदैवायत्तंव्यवस्यानिश्चित्य दैवमत्रकालकर्माद्यद्वोधयितातदनुवर्तीचेश्वरः कृष्णोविवक्षितः तस्य-दैवस्यानुविहितः तस्येतिकर्तरिषष्ठी तेनवार्ततस्त्वं हे प्रभो नाथ अनाथाः प्रजाः पाहिपालय ॥ १७ ॥

एवतमनुशास्यलोकानुम्रहकाम्ययाश्रीकृष्ण्यायाथात्म्यमावेदयति एषद्दति एषश्रीकृष्णः साक्षाद्भगवान्षाङ्ग्ययपरिपूर्णः आद्यो जगत्कारणभूतः परमपुष्पोनारायण् एवसन्माययालोकंमोहयन्गृदः तिरोधापितस्वकीयवेषः वृष्णिषुयादवेषुचरिकश्चिद्यादवद्दवा-जुकरोति ॥ १८ ॥

त्वमेवइममित्रंथजानासितथापितस्यतत्कृतंनवैषम्यमस्तीत्याह् यमितिद्वाभ्याम् यंकृष्णामातुलेयमातुलपुत्रंप्रियंप्रीतिविषयं च मित्रंखतुल्यं च सुद्धत्तमंमहोपकारकं चमन्यसे यंचत्वं सचिवं मंत्रिणं च कदाचित्ददूतं कदाचित्सीद्वद्वातिशयात्सार्थिचाकरोः कृतवानसि ॥ १९ ॥

तस्यानुभावं भगवान् शिवोवेदेतिपूर्वेगान्वयः देवर्ष्यादयोविदुरितिचहेनृपयुधिष्ठिर ॥ २० ॥

# श्रीविजयध्वजः।

विवक्षितकथनंनिगमयति तस्मादिति तस्मादुक्तहेतुभ्योदेवस्यहरेस्तंत्रमधीनंजगिष्ठिश्चित्यतस्यहरेरनुकूलयाश्चातिस्मृतिलक्ष्यायाथाञ्च याभगवद्ग्रिट्रतदनुविधिनम्रहिशेष्टजनपरिपालनाख्यंस्वकमिविहितं विधिमनुवर्तमानःतत्राधमेबुद्धिमपहायहेभरतकुलश्चेष्ठप्रभोसमर्थनाथभन् नाथास्त्वदनन्यनाथरहिताःप्रजाःपाहित्येकान्वयः॥१७॥

व्यावत्कालमीश्वरंपरोक्षतयाऽभिधायेदानीमपरोक्षतयाहस्तग्राहेग्रानिर्दिशन्निवनिर्दिशाति प्षवाहतियःसाक्षादाधोनारायग्रोभगवान्सप्ष व्यावत्कालमीश्वरंपरोक्षतयाऽभिधायेदानीमपरोक्षतयाहस्तग्राहेग्रानिर्दिशन्निविष्याषुचरितवेयस्मात्तस्माद्यमेवकालास्यहत्येकान्वयः १८ वुमांल्लोकमञ्चलनेयथार्यक्षानाच्छादिकयामाययामनुष्यहतिमोहयन्गृहोऽविक्षातोष्ट्रिक्षणुचरितवेयस्मात्तस्माद्यमेवकालास्यहत्येकान्वयः १८

तर्हिकएनंयथावद्वेदेतितत्राष्ट्र अस्येति हेनृपसदाशियोभगवानस्यहरोां श्वतममनुमावंषेद तथादेविविनीरदः साक्षात्कपिलोमगवानाप

ज्ञानातीत्यकान्वयः ॥ ६० " त्वंयंकृष्णामातुलस्यवसुदेवस्यापत्यंत्रियंवंधुंमित्रंसंकदेषुमित्वाद्यात्वारक्षितारंसुहत्तमम्भितिशयेनसुहदंमभ्यसेयंचत्वंसीहादोतः सज्जिषं त्वंयंकृष्णामातुलस्यवसुदेवस्यापत्यंत्रियंवंधियंतारमकरोस्तस्यास्यतिषूर्वेशासंबंधः ॥ २०॥ मंत्रिगोदृतंसंदेशहरंसार्थियंतारमकरोस्तस्यास्यतिषूर्वेशासंबंधः ॥ २०॥

# क्रमसन्दर्भः ।

तस्मादस्याशानुसारात्॥ १७॥ 🗸

म च नरलीलाइष्ट्या साधारगाइष्टिरत्र कर्त्तव्येलाहं एष इति । साक्षादेव खयं भगवान्। यः खल्वाद्यः पुमान्महत्स्रष्टा सोऽप्ययमेव

यश्चाद्यो नारायगाः परमन्योमाधिपतिः सोऽपीति ॥ १८ ॥ १९ ॥

अस्यानुभावाञ्चानसद्भाववतामपि भवतां सम्बन्धविशेषमयसन्त्रीच्छादकमाधुर्यञ्चानात्मकप्रेमविशेषेगा वशीकारित्वं तु तैरिप वुर्लभ मिलाह यमिति त्रयेगा। सीहदात्ताहराप्रेमगा एव हेतोः यं मातुलेयं मन्यसे अथं सार्राधं सारिषमपीत्यर्थः स एव साक्षाद्भगवानित्यादि पूर्वेगान्वयः। टीकायां मातुल्या इत्यादिकं स्त्रीभ्यो ढक्-सिद्धर्थमित्थं व्याख्यातम्। मातुलस्यापत्यं मातुलायानिरित्येव स्यात् बृद्धादपत्ये फिञ एव सम्भवात्॥ २०॥

# सुवोधिनी ।

तर्हिअतः परंकः प्रतीकार इत्यत आहतस्मादितियस्मात् सर्वेकालाधीनं सचकालोभगवान् तदेवचदेवराब्दवाच्यंकालातिकमश्चप्रकारांतरेशा संभावनीयः तस्मादेतदनुविहितः एतदाश्चाकारीसन् अनाथाः प्रजाः पाहिआश्चाकरगोनस्वधर्मेगाचभगवान्परितुष्यतीतिमर्यादायद्यापिवि शेषतः प्रमेयवलिवचारेगामगवान् केनतुष्यतीतिनकायतेतयापिप्रमागाविद्वचारेगावतदुक्तं पूर्वेदुर्योधनादयोनाथाःस्थिताः इदानीमनाथाः

प्रजाअथवात्वयिनाथेऽपिनायत्वाभिमानाभावात्दययाकेवलंताःप्रजाःपालनीयाःसमर्थत्वात् ॥ १७ ॥

ननुतस्यानुविहितइति पूर्वपरामशीत् पूर्वकालस्यनिकपितत्वात् दैवतंत्रमित्यनेनततोऽपिपूर्वकृष्णस्यनिकपितत्वात् कस्यानुविहिता भवेदितिसंदहेकालस्यसर्वाधीनत्वकयनात्तद्धीनत्वमनृद्यप्रजापालनंविधीयतइत्यायातिनस्वस्थेतिवाक्येचपूर्वकृष्णानिरूपणात् कालाधीनत्वे निरूपितेतन्निवारणार्थंतद्विधित्सितसंदहोनिरूपितः तत्रिकिरुष्णःकालाधीनोनमवतीतिनिरूप्यतेकालकारणत्वंवानिवार्यतेकालरुष्णयोर्घास हभावेनदुःखकारगात्वंनिरूप्यतेत्रिष्विपक्षेषुकालात् कृष्णस्यभेदःसमायाति ततश्चकालपक्षःपूर्वापरविरुद्धइत्याशंकातित्रराकारगार्थकाल एवकुणाः सचभगवानितिकृष्णस्यभगवत्त्वंनिरूपयतिएषवैभगवानितिएषः कालरूपः कृष्णः वैनिश्चयेनउपचाराभावेतक्षानद्वाराभावेनचसाक्षा द्भगवान् नतुकिमस्यकृष्णस्यकालक्षपस्यभगवत्वेतन्नाहः आद्योनारायणःपुमानितियआद्यःपुरुषोत्तमःसपवनारायणःब्रह्णागडवित्रहःसपुमान् स्वराद्अनेनकालस्यकृष्णात्वंतस्यभगवन्वंभगवतःपुरुषोत्तम्त्वंपुरुषोत्तमस्यनारायण्तंवनारायणस्यस्वराद्पुरुषत्वमितिस्वशरीरेभारप्रीतभाने तिश्ववारणार्थिसमागतः यदुषुप्रविष्टोवर्त्ततेयथाऽऽत्मानंकांऽपिनजानातितथामाययानरचेष्टाभिर्छोकंव्यामोहयन्सवेथाभगवत्वंसंगोप्यसर्वान्भ क्षयितुंचरतीत्यर्थः॥ १८॥

शिवएवजानातियः तस्मरन्भक्षयन्तिविश्वःकल्यागारूपोभवति तथाचदेवऋषिनीरदः सर्वत्रप्रविश्यसर्वान्मारयन् सर्वहितत्वेनप्रतिभातित्था प्याप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त कारणात्वंनिक्षण्यपुरुषकारणात्वंनिवार्यसर्वहेतुः सन्सर्वहेतुःवंनिवारयति अतःसात्विकेषुराजसेषुतामसेषु साक्षात्भगवान्कपिलःप्रकृतेरेवकारणात्वंनिक्षण्यपुरुषकारणात्वंनिवार्यसर्वहेतुः सन्सर्वहेतुःवंनिवारयति अतःसात्विकेषुराजसेषुतामसेषु

गुगातीतत्वेनोकास्त्रयपवजानंति ॥ १९ ॥

तातत्वनाचास्त्रवयप्रभागातः । क्रियंप्रामवान्द्रत्याह यंमन्यसद्दति वसुदेवगृहेअवतारात्तमातुलपुतंमन्यसे किंच प्रियंप्रीतिविषयंमन्यः अन्येतुबहुधाश्चत्वाऽपिनं जानंतियथाभवान्द्रत्याह यंमन्यसद्दति वसुदेवगृहेअवतारात्तमातुलपुतंमन्यसे किंच प्रियंप्रीतिविषयंमन्यः अन्यतुष्कुवाञ्चरपात्रात्रात्रात्रात्रात्रात्रात्रावष्यमन्य ससम्बन्धनात्मीयत्वेनमित्रम्रउपकारित्वनं गुर्ह्यानिरंतरोपकारित्वनद्वीपद्यादिदानात्रसुद्धत्तमं चसुद्धतसङ्गावयुक्तः कदाप्यकपटः परीक्षेप्रत्यक्षेच ससम्बन्धनात्मीयत्वेनमित्रम् उपकारित्वनं गुर्ह्यानिरंतरोपकारित्वनद्वीपद्यादिदानात्रसुद्धत्तमं चसुद्धतसङ्गावयुक्तः कदाप्यकपटः परीक्षेप्रत्यक्षेच लाकात्परपरपाचितात्रपाचात्र । प्रतिविद्यकर्गासीहाद्दीत् अत्यवसार्गिकृतवान्रथस्यरक्षकःसारिधर्नियतः केवलसारथ्यव्यावृत्त्यर्थः॥ २०॥ कार्यसाधकःव्यवहारेसमस्यापिहीनत्वकर्गासीहाद्दीत् अत्यवसार्गिकृतवान्रयस्यस्यरक्षकःसारिधर्नियतः केवलसारथ्यव्यावृत्त्यर्थः॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

इदं सुखतुःखादिकं दैवतन्त्रम् ईश्वराधीनमेव व्यवस्यनिश्चित्य कितु तक्षिधित्सितस्य तुर्श्वयतोक्तेः खमकाय तत्प्रदानादिकं दुर्शेय

प्रयोजनकामित्यपि निश्चित्य तस्य कृष्णस्य अनुविद्वितोऽनुगतः हि गती अनाथाः प्रजाः पाहि ॥ १७ ॥

जनकानत्यात्र । नाव्यत्य तस्य क्षम्यास्य अञ्चानार्यः ज्या द्र्षे ईश्वरः सम्प्रति तव साक्षाद्वरर्येव इत्यत इमं कृष्णामेव पृष्टा कथं सन्दे नन्यात्र प्राप्तात्र पाळावपालतन्तु ग पर्यात्र स्वाव सम्बद्धा किमहमतितत्वज्ञ इत्यादि वाचा वश्चयन् न वस्यति । कथ तस्य न वेत्सीत्यत आह एष इति । मायया मोहयत्रिति पृष्टो हि भीष्मादपि किमहमतितत्वज्ञ इत्यादि वाचा वश्चयन् न वस्यति । कथ चिद्वदन्निप मोहयिण्यत्येव इत्यसावनुवर्त्तनीय एव न तु जिज्ञासनीय इति भावः॥ १८॥

द्रदश्राप गाष्ट्राच प्रत्यावनुवत्तात्र प्रत्यावनुवत्तात्र वेद न तु विधित्तासितं सहपं प्रभावं वेत्यर्थः । तथाहि रसशास्त्रज्ञाः प्रथममनु ाक्षत्र जर्गाञ्जातिकं वेद तेन च स्थायिभावश्च अनुभावस्य वैशिष्ट्यतारतस्याश्यां स्थायिभावस्यापि वैशिष्ट्यतारतस्यश्च । तथेक भाव स्तरमाण्य वामवन्धनादिक्षपम् अर्ज्जनगुधिष्ठिरोत्रसेनादि सार्थ्यदास्यादिकपञ्च पारवश्यम् अनुभावं वेद । तेन च अस्य यशोदादिगोपीषु अस्य दामवन्धनादिक्षपम् अर्ज्जनगुधिष्ठरोत्रसेनादि सार्थ्यदास्यादिकपञ्च पारवश्यम् अनुभावं वेद । तेन च अस्य सवश्वरस्य प्रमापा चर्चा मानाविशेषवात् स्वविषयाश्रययोश्चेतोविद्वावकः प्रमप्रविशोकारकश्च प्रमाभिश्चात् एव प्रमपुरुषार्थं ध्यास्तं इत्य व्यक्तिमानि व्यक्ति । किंच वस्तवाक्षेत्रेषेम एकिन्स्य विकास प्रमाभिश्चात् एव प्रमपुरुषार्थं चूड़ामाण ना प्राप्त साधकमकेषु पतक्षक्तिमाव कष्ट्रमदानं भाक्तिवृद्ध पर्थमेवेति सिद्धांतं निश्चिनोति च शिव एव नारद एव कपिल प्रमाधिक्यमनुमाय सिद्धसाधकमकेषु पतक्षक्तिमाव कष्ट्रमदानं भाक्तिवृद्ध पर्थमेवेति सिद्धांतं निश्चिनोति च शिव एव नारद एव कपिल प्रमाधिक्यमञ्जान । त्रीपद्यादिषु कष्टाधिक्यात प्रमाधिक्यश्च रष्टम । तथा—यस्याहमनुगृक्षामि हरिण्ये तन्द्रतं शतः।ततोऽधनेश्यजत्यस्थ देव प्रवेति । अतप्रव द्रीपद्यादिषु कष्टाधिक्यात प्रमाधिक्यश्च रष्टम । तथा—यस्याहमनुगृक्षामि हरिण्ये तन्द्रतं शतः।ततोऽधनेश्यजत्यस्थ

सर्वात्मनः समदशो ह्यदयस्यानहंकतेः॥ तत्कृतं मतिवैषम्यं निरवद्यस्य नक्वचित् ॥ २१ ॥ तथाप्येकांतभक्तेषु पश्य भूषानुकंपितम् यन्मे ऽसंस्त्यजतः साचात्कृष्णोदर्शनमागतः ॥ २२ ॥ अक्तयावेदयमनोयस्मिन्वाचा यन्नाम कोर्नयन् त्यजन्कलेवरं योगी मुच्यते कामकर्मभिः ॥ २३ ॥ सदेवदेवोभगवान्प्रतीक्षतां कलेवरं यावदिदं हिनोम्यहम् ॥ प्रसन्नहासारुण लोचनोल्लसन्मुखांवुजोध्यानपथश्चतुर्भुजः ॥ २४ ॥

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

स्वजना दुःख दुः खितमित्यादि श्रीमुखवाक्येन च भक्त फष्टस्य हितैषिणा भगवतैव दीयमानत्वात् न कर्मारव्यत्वम् किंचैतद्पि न सार्वित्रिकं क्कचित् कचिद्वष्टेनापि स्वमक्तमिक वर्द्धयतीति विधित्सितन्तु न कोऽपि वेदेत्युक्तमः। अनुभावन्तु शिवनारदादिरेव वदः। अन्य पुनर्मदा द्वामवन्ध्रनादिकमप्यनुकरणात्वेन व्याचक्षाणा अनुभावमपि न विदुरिति ॥ १९ ॥

अनुभावमेव दर्शयति यमिति । सर्वेश्वरस्यापि युष्मत् सचिवत्वदौत्यादिकं प्रेमवश्यत्वानुभाव इत्यर्थः । अत्र यमित्यस्य अस्यानुभाव

मित्यनेन पूर्वेशीवान्वयः॥ २०॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

यस्मात्कीहरीकर्मफलंकस्मिन्कालेकुण्णोदास्यतीति ज्ञानाभावास्रेतोरिदंसवेदैवतंत्रकृष्णायत्तंव्यवस्यनिश्चित्यतस्यकृतस्यानुविहितोऽनुव चींसन् हेनाथ प्रजाःपहिपालय॥१७॥

आद्योनारायगाः सर्वेषामयताराणां प्रुलभूतस्यनारायणस्यापिम्लभूतः विश्वहेतुः साक्षाद्भगवानेवश्रीकृष्णएव माययासंकल्पक्षेपणव युनेन ॥ १८ । १९ ॥

अकरोः कृतवान् ॥ २० ॥

# र्ता विकास के समित्र **भाषादीका ।** से कुला है कि विकास

अत्राय हे भरतर्षम । यह सुख दुःखादिक दैव तंत्र है यह निश्चय कर, ईश्वर के अमुवर्ती होकर हे नाय ? हे प्रमी इस अनाथ प्रजा का पालन करो॥ १७॥

यह श्रीकृष्ण ही आद्य नारायण साक्षात् भगवान् हैं। यह अपनी माद्या से इस लोक को मोहित करते वृष्णिओं में गृढ रूप से वि चरते हैं॥ १८॥

इन के गुद्धातम प्रभाव को भगवान शिव जानते हैं, साक्षात देविंध नारद जानते हैं। हे नृप ? कपिल जानते हैं॥ १९॥ जिनको तुम अपनी मामी का पुत्र जानते हो प्रिय मित्र और सुहृद मानते ही जिनको सचिव बनाते ही दूत बनाते ही विशेष सीह-द से सारथी बनाते ही ॥ २०॥ **德国家国家国家国家国家**国家

### श्रीधरस्वामी

नन्वीश्वरश्चेत कथं नीचे सारध्यादी प्रकृतः तत्राह सन्वैति। तत्कृतं नीचोश्चकर्मकृतं मस योग्यमयोग्यमिति मतिवेषस्य कविद्धि मास्ति। कृतः निरवद्यस्य रागादिश्रन्यस्य । तत् कुतः अअहंकते । तश्च कुतः अव्यस्य ।। तहिष कुतः समहशः । तत्रापि हेतुः सर्वस्या हमनः। यथेष्टं वा हेतुहेतुमद्भवः॥ २१॥ त्यापि समत्वेऽपि । हे भूप । अनुकस्पितमञुक्रमपाम ॥ २२ ॥

इरानी दहत्यामवर्यते श्रीकृष्णावस्थानं प्राथयते भक्तोति द्वाभ्याम् ॥ २३ ॥ याचिति थिलम्बं द्यातयति । अहं हिनीमि स्पनामीति स्वातंत्र्यमः । एदमिस्यनात्मत्वेन ज्ञातमः । प्रसन्नहासेन अस्मालोचनाभ्याञ्ज यावावापः यावावापः महास्त्राच्यानस्य प्रधानस्य पन्था विवयः थे।ऽन्यरन्तश्चिन्यतं केषले सोऽप्रतः स्थितः सन् मां प्रतीक्षलामित्यर्थः॥ २४ ॥ बहुत्तत् शीभमानं मुखान्युजं यस्य। ध्यानस्य पन्था विवयः थे।ऽन्यरन्तश्चिन्यतं केषले सोऽप्रतः स्थितः सन् मां प्रतीक्षलामित्यर्थः॥ २४ ॥

### श्रीवीरराघवः।

यद्यप्येवमन्यसेऽकरोश्चतत्कृतंदौत्यसारथ्यादिकियाकृतंमितवैषम्यंकदाचिद्य्यस्यनिवधते मितवैषम्याभावे हेतुंबदन्विशिनष्टि सर्वात्मनद्दातिसर्वात्मनद्दातिसर्वात्मनद्द्राते मात्रकेयादीनमन्वानस्यदूतंसाराथं च कुर्वतस्तवाप्यंतरात्मतयायद्दूतत्वादिकारणायत्वामप्यचोद्दयद्द्रातिभावः अथाप्यनवद्यस्यनियाम्यगतावद्यासंस्पृष्टस्यतत्रहेतुरनहंकृतेदेहात्मभ्रातिरहितस्य क्विचाद्वयस्यद्वितीयवस्तुरहितस्यव्याप्यस्वतंत्रवस्तुरहित स्येत्यर्थः अतप्वसमदशः सर्वमिपप्रकृतिपुरुषाद्यात्मकम् उचावचंस्वशरीरतयास्विनयाम्यतयाचैकरूपंपश्यतः उक्तगुणविपरीतस्यविद्वि वृंसोमितविषम्यमितिभावः ॥ २१ ॥

सर्वातमनः इत्यनेनसर्वस्यतत्र्रीतिविषयत्वमवगतंशरीरं ह्यात्मनः प्रीतिविषयं यद्यपिसर्वेचिद्विदात्मकं जगच्छरीरभूतं प्रियंक्षपाविषयं च तथापिक्षेत्रज्ञानुजिष्टृक्षयाजगद्वज्ञापारे प्रवृत्तस्य स्वस्यवैषम्यनैष्टृणयादिपरिहारायकर्ममात्रापेक्षिणः स्वानुवीतनोनितरां प्रियाः कृपाविषयाश्चेति तदेवदर्शियतुं भक्तस्यमुमूर्षो मेमचक्षुः विषयतां गतहत्याहः तथापीतियद्यपिसर्वात्मासमदर्शी च तथापि हेभूपपकां तभक्तेष्वनन्यप्रयोजनेष्वनु कंपितम् अनुकंपास्यसंजातेत्यनुकंपितः तारकादित्वादितच् अनुकंपायुक्तंपश्यावेहि तत्रिक्षिंगमाहयद्यस्मात्कृष्णोऽसून्प्राणांस्त्यजतस्त्यकु मुद्यक्तस्यमम ताक्षादर्शनंप्राप्तः ॥ २२ ॥

कितत्यद्दर्शनजंफलमाह भक्त्योत यस्मिन्भक्त्वामनोनिवेश्यवान्त्रायस्यभगवतोनाममात्रमेवकीर्त्तयन् कलेवरंत्यजन्योगीकामकर्मभिः काम्यतद्दितिकामाः शब्दादिविषयास्तेषांनिभित्तभूतैः कर्मभिः पुगयपापात्मकैः कर्मभिश्चेतिवामुच्यतेसंसृतिबंधान्मुच्यतेद्दत्यर्थः यच्छब्द स्यसकृष्णाद्दत्यध्याद्दततच्छब्दवतापूर्वेणान्वयः सदेवद्दयुत्तरेणवानामकीर्तनमेवकामकर्मविमोचनद्वारा निःश्चेयसफलकंकिमुसाक्षाद्दर्शन मितिभावः॥ २३ ॥

यतप्रवसतोयावन्मत्प्रयाण्तावद्भगवान्प्रतिक्षतामितिप्रार्थयते सद्दति यावदिदंकलेवरंदारीरंहिनोमित्यजामिविमुक्तोभवामीतिभावः ता वत्प्रसन्नेनप्रहासेनारुणलोचनाभ्यामुल्लसन्मुखांबुजंयस्यसचतुर्भुजोभगवान् श्रीकृष्णः देवानामिपदेवोध्यानपणः ध्यानविषयभूतः सन्प्रतिक्ष तां चक्षुः पथत्वप्राप्तपवध्यानपथोर्पपभवित्वत्यभिष्रायेण्ध्यानपण्दत्युक्तम् यद्वाद्विभुजत्वेनध्यानपथोभवित्वत्यभिष्रायेणतदुक्तिः तत्रत्यानां द्विभुजत्वेनचक्षुः पथोऽपिखस्यचतुर्भुजत्वेनचक्षुः पथस्तेनैवक्षपेण्ध्यानपथोस्त्वत्यभिष्रायेणवाध्यानपण्यत्रमुजदत्यकम् ॥ २४ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

बंधुरित्यादिवाक्याद्वंध्वादिषुस्थित्वावंध्वादीनांबंध्वादित्वापादकत्वेनमुख्य बंध्वादित्वात्बंध्वादिसर्वक्षपत्वात्सर्वात्मनोवा समदशःयथा वस्तुतयासर्वपदार्थान्जानतः अद्ययस्यसमाधिकरिहतस्य अनहंक्रतेः प्राकृत वैकृतशरीररिहतत्वादेहायदं बुद्धिरिहतस्यातपविनरवद्यस्य रागादिदेषरिहतस्येत्येतेहेंतुभिरस्यकृष्णास्यतत्कृतं सारिथत्वादिकृतिनिमित्तं त्वियमितिवषम्यंकचिदिपनास्ति अनेकविधानांजीवानांहित दित्येकान्वयः ॥ २१ ॥

तथाप्यस्याहोसर्वोत्तमोऽहमनेनसारियत्वादिषुविहितइतिविषमाबुद्धिनांस्तीत्याह सर्वातमनद्दीत सर्वातयोमिणः । पितामातासुहत्त एवंविधविषममितिष्वस्मास्वस्यसंसर्गकारणां किमित्याद्दांक्ययुष्मद्विधमक्तभक्त्याद्रवीकृतमनोऽनुकंपैवकारणामित्याह तथापीति हेमूप एवंविधविषममितष्वस्मास्वस्यसंसर्गकारणां किमित्याद्दांक्ययुष्मद्विधमक्तभक्त्याद्रवीकृतमनोऽनुकंपैवकारणामित्याह तथापीति हेमूप तथापिएवमुक्तप्रकारेणाकृतकृत्यस्याप्यस्यपकांतभक्तेषुअव्याभिवीर्णामित्तम् अन्यस्याप्यस्यपकांतभक्तेषुअव्याभिवीर्णामित्यस्य स्वाप्यस्य स्वाप्यस्य स्वाप्यस्य । कुतद्दिति प्राणात्यागकालेप्रायः स्वेनपुष्टापुत्राद्योऽपिपूर्वमेविवमुखागच्छन्त्यहोअस्त्रप्राणांस्त्यजतोमेममस्वामीश्रीकृष्णाःसाक्षाद्रद्यांनदिष्ट तत्राह्य यदिति प्राणात्यागकालेप्रायःस्वाप्यस्य स्वाप्यस्य स्वाप्यस्य । १२॥ विषयमागतद्दित यद्यस्मात्तद्वति यद्यस्मात्तद्वते यद्यस्मात्तद्वते यद्यस्मात्तद्वते विषयमागतद्वति यद्यस्मात्तद्वते विषयमागतद्वति यद्यस्मात्तद्वते विषयमागतद्वति विषयमागत्वस्य स्वयस्य स्ययस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्ययस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्ययस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्वयस्य स्य

प्रामात्यागकालेहरिदर्शनफलमाह भक्त्येति भक्त्याहरीमनथावेश्यवाचायस्यहरेर्नारायमादिनामकीत्त्रेयन्कलेवरंशरीरंत्यजन्योगी प्रामाक्रमिनुंच्यतेमुक्तःस्यात्तंप्रत्यक्षतोद्दृष्ट्वाम्रियमागास्यमेमुक्तिः किवर्णनीयेतिवाक्यशेषः तस्मात्तत्प्रीतिकृद्धमीऽतस्तदुक्तप्रकारेगाखधमे धर्मबुद्धिहित्वात्वराज्यंकुर्वितिपरमतात्पर्यार्थः॥२३॥

वन्तुः ज्यान्त्रिया विद्यानिष्य च्छन्दमृत्युर्भीष्मजत्तरायणासमयपर्यतं भगवतोऽत्रस्थानंप्रार्थयते सद्दति अहंयाविद्दंपंचमूतरिचतंकलेवरं युधिष्ठिरंप्रत्यिभिधायेवानिष्यः कथंभूतःप्रसन्नद्वाः कथंभूतःप्रसन्नद्वाः कथंभूतःप्रसन्नद्वाः कथंभूतःप्रसन्नद्वाः कथंभूतःप्रसन्नद्वाः विद्यानिष्यः विद्यानिष्यः

# क्रमसंदर्भः।

ननु भवतु प्रीतिविशेषेशास्माकं तस्मिस्तवा मितः तस्य सर्वेषांपरमात्मनस्तस्मादेव समस्यः परमात्मत्वादेव सर्वेषां तञ्जिकवेमव स्पाशामात्मनां तद्दनन्यत्वादद्वयस्य तस्मादेव मातुलेयमित्याधिममानग्रन्यस्य तथा निर्दोषस्य च क्रयमहमस्य मातुलेयो न त्वतुत्वेत्या स्पाशामात्मनां तद्दनन्यत्वादद्वयस्य तस्मादेव मातुलेयमित्याधिममानग्रन्यस्य तथा निर्दोषस्य च क्रयमहमस्य मातुलेयो स्पाशामात्मनां तद्दनन्यत्वादद्वयस्य तस्मादेव मातुलेयमित्याधिममानग्रन्यस्य तथा निर्दोषस्य च क्रयमहमस्य मातुलेयो न त्वतुत्वेत्या दिक्षपं मातुलेयत्वादिकृतं मितवेषम्यं स्यादिति पूर्व्यक्षोद्वज्ञनपूर्वेकं सिद्धांतयित सर्व्यत्मन इति । दीकायां समस्य समः सर्वत्रा दिक्षपं मातुलेयत्वादिकृतं मितवेषम्यं स्यादिति पूर्व्यक्षोद्वे हेतुत्वं न घदते ॥ २१ ॥

### क्रमसंदर्भः।

यद्यि ताहरास्य तन्न सम्भवति तथापि हे भूप पकांतभक्तेषु युष्मासु अनुकंपां पश्य! येषां भक्तिविशेषेण परवशः सन्नसावपि तथा तथाऽऽत्मानं वाढमेवामिमन्यते इत्यर्थः। यःखलु शरीरस्यापि सम्बन्धे हेतुः सोऽभिमान एव हि सम्बन्धहेतुर्मुख्यः न शरीरम्। सित त्वावि भीवादिना शरीरसम्बन्धेऽपि तस्यमातुलेयत्वादिकं सुतरामेव सिद्धचतीति तात्पर्थ्यम् । तत्र हेतुः यन्मेऽस्निति । यद्यस्मात् युष्मत् संवधादेव हेतोः। तदेवं परमोपादेयत्वक्षानादेव तत्संवधात्मक एव श्रीभगवानुत्कांतावि मुहुरेव निजालंबनीकरिष्यते—विजयसंखे रितिरस्तु मेऽनवद्येति पार्थसखे रितिममास्त्विति विजयरणकुदुम्ब इत्यारभ्य भगवति रितरस्तु मे मुमूर्षोरिति च ॥ २२ ॥

भक्त्योति युग्मकम्।यांगी समाहितान्तः करणः सन् यस्मिन् भक्त्वामन आवेश्यवा वाचा नाममात्रं कीर्त्तयन् वाक्वेवरेम्त्यजन्मुच्यते २३ प्रसन्नहासेत्यादिना तद्दर्शनबहुकालतार्थमेव शरीरत्यागे विलम्बः कृत इति लक्ष्यते। तत्रश्च शरीरांतरप्राप्ती सत्यां कद् वा दर्शनं स्यादित्युत्कण्ठाविष्टत्वादिति गम्यते। यावन्न मे नवदशा दशमी कुत्रेऽपीत्यादिकं हि श्रीलीलाशुकस्यापि प्रार्थनं श्रूयते॥ २४॥

### सुवोधनी ।

नन्वम्येभगवंतंमाजानंतुभगवान्स्वात्मानंजानन् कथंहीनेकभीशिप्रवर्ततेतत्राहसर्वात्मनइतिस्विस्मिन्नात्मायस्यअनेनस्वार्थभेवकरोति कथंवै अस्यंस्यात् वेदादिप्रमाण्यव्वाद्यश्चिमत्रोदासीनेषुसमबुद्धिः अतो ऽिपनवैषम्यंक्ति भेददर्शनेसत्यवंभवतितस्यतुस्वमात्मेवभासतेअतोनिवि द्यतेद्वैतंयस्यताहशस्यकथंवैषम्यंस्वक्षपेणप्रमाशोनप्रमेथेनिनराइतंवैषम्यमवतारेतुनिरहंकिययातनौनिवद्यते अहंकतिर्थस्यतत्कृतमुद्यनीत्र कर्मकृतंसर्वमेवा किंचित्कर्त्तव्यमितिकरोतितत्तृत्कृष्टमितिननुहीनकर्मणाक्षयंनदोषः स्यादत्यश्चाहिनरवद्यस्यति अपहतपाप्मनइत्यर्थः अपहत् पाप्मत्वंनदेशकालाविज्ञन्नमित्याहनकचिदितितस्मादयमेवस्वभक्षकः प्रकानादुपचरितः ॥ २१ ॥

एवंकृतवानित्युक्तेभयमसेव्यताचप्रतिभातातिश्वराकरण्यंमाहतयापीति यद्यप्येवमेव तथाप्येकस्तिसम्बसाधारण्येगुण्योऽस्तियद्भक्त कृपामजनीयत्वेहेतुरभयेकारण्यं सचाव्यभिचारिनित्यफलश्चभूपेतिसंवोधनंराज्ञामप्येवं कदाचिद्भवतीतिसंवादार्थे कृपायाभव्यभिचारित्वं स्वदृष्टान्तेनाहयन्मेऽसूनितिनहिममसदशोऽपराधीकश्चिदस्तिभवहेलनकर्त्ताभक्तद्रोहिद्विष्टपक्षपातीचतथापिकदाचिष्ठामप्रहात् भक्ताभासंपुर स्कृत्यप्राणात्यागसमयेभक्तोनमुक्तोभवेत दुष्ट्दितशंकयास्वयमागत्यभात्मसाक्षात्कारंकार्ययत्वाकृतार्थेकृतवानित्यर्थः तस्मादन्यभक्ताःकृता श्वीभविष्यन्तीतिकिवक्तव्यमितिभावः ॥ २२ ॥

ननुदूरेभगवत्साश्चात्कारान्मुक्तिरितिभगवदाविभीवव्यितरेकेगापिभगवदंगैर्मानसरूपनामभिर्मुक्तिभेवतीत्याह भक्त्यावेश्येतिभक्त्येति विद्वितभक्त्यिकारियाः प्रत्युक्तंवस्तुतस्तुययाकथीचन्मनोनिवशनभेवमुक्तिहेतुः इंद्रियव्यापारमपि भगवन्नाम्नाकुर्वन् पूर्वयोगाभ्यासर विद्वितभक्त्यिकार्मिकार्गेग्राश्चर्यात्र भगवन्नामनाकुर्वन् पूर्वयोगाभ्यासर तोऽपिददानीभक्तिमार्गेग्राशरीरंत्यजन् सकायवाङ्मनोभिः तामसराजससात्विकमिषकर्मकुर्वन् पूर्वकामकर्मकः कृतेर्मुच्यतेपभिःकर्मभिः तानि कर्माग्रास्यभावप्रापितानिमुक्तिहेतवोभवंतित्यर्थः॥ २३॥

क्माणास्त्राचित्राचित्राचित्राचित्राचित्राचित्राचित्राम् विकल्पनाद्याकेः अतिमोच्छ्वासपर्यतंभगवित्यित्रियत्राचेयतेसदेवदेवद्दित्रभमत्कृपाया एवभजनीयमगवद्गुणानुक्त्वास्वस्यमनसामूर्तिकल्पनाद्यकेः अतिमोच्छ्वासपर्यतंभगवित्यित्राचित्रस्याचिद्देशरीरमयात्या अन्योऽपिद्देतुरस्तिनकेवलिसदानितिसयावदिदंशरीरमयात्या अन्योऽपिद्देतुरस्तिनकेवलिसदानितिसयावदिदंशरीरमयात्या उत्तावित्रहेतु न मध्येशरीरं गृह्णातुमारयतु इदमिति जीर्णम् अहमिति सामर्थ्य "येथथामांप्रपद्यते" इतिवाक्यानुसारेण मातिष्ठतुकितु प्रस्ते स्वाक्षमाया मोद्दः लोचनयोर्क्ण त्वान्मत्पापदूरी करणंतयो प्रसन्तिहासः अक्ष्योचलोचने ताश्यामुललसन्मुखांभोजंयस्यहासस्य प्रसन्न त्वान्नमाया मोद्दः लोचनयोरक्ण त्वान्मत्पापदूरी करणंतयो प्रसन्तिहासः अक्ष्योचलियामयि सर्वगुणा निधानं मुखांवुजस्य तादशत्वेन स्वपद् प्राप्तिः ध्यान प्रयत्वेनाणिमादयः चतुर्भुजत्वेन पुरुषार्थं चतुष्ट्यसिद्धिः॥ २४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

नतु परमेश्वरस्य भक्तिवशीकृतत्वे दौत्यसारध्यादिरपक्षं एव तस्मिश्च सित कथं प्रेमा परमेश्वरस्य सुखपद इत्यत आह सर्वातमन इति । निरवद्यस्य निर्दोषप्रेमवतोऽस्य कृष्णस्य तत्कृतं दौत्यादिकृतं मितविषम्यंन। अत्र हेतुः सार्वकालिकं स्वतः सिद्धं महेश्वर्थ्यमेवेत्याह सर्वति। अवर्ज्यनस्याप्यातमा स पविति स्वयमव सार्थी रथी चेति । अत्र व समहशः समं तुल्य मात्मानमेव सर्वत्र पर्यतः । सर्वतिमत्वादेवाद्ययस्य । द्वितीयामावादेव अनहंकृतेर्गविश्वत्यस्य । किंच महेश्वर्यहीनोऽप्यन्यः प्रेमी प्रमत एव हेतोरात्मनो नीचक्रमीत्यः मपक्षेवं कलेशंच दुःसत्वेत न मन्यते । अस्य तु महेश्वर्यादेरानन्दमात्रस्य कुतः प्रेमतो दुःसम् तस्माद्युष्माकमेवोत्कर्षो यत पतादशो परमेश्वरो भवतां दृत्यादिकं करोतीत्याहो वशीकारकत्वं प्रेमण इति भावः ॥ २१ ॥

अयापीति।यद्यपि युष्मनुवयो नमिवतं राक्षोमीति भावः। अनुकिम्पितम् अस्य मध्यनुकम्पां पर्यययाऽयमानन्दमयसाक्षाद्श्रह्मखरूपा अयापीति।यद्यपि युष्मनुवयो नमिवतं पर्यापित इत्ययमध्येकोऽनुभावोऽनुभूयतामिति भावः।युष्माकं त्वयमवानुकम्प्य इतिमावः २२। २३ ऽत्यंताहरां वीभत्ति मत्रसमीपस्थानं पर्यापित इत्ययमध्येकोऽनुभावोऽनुभूयतामिति भावः।युष्माकं त्वयमवानुकम्प्य इतिमावः २२। २३ अतिक्षतां क्षणामत्रेव तिष्ठतु यावदद्धं किचिद्धिलम्प्य चक्षुक्र्यामात्र्यामेव सीन्द्र्यामृतम् पिवन् स्वस्य मनोऽनुलापं प्रकाशयन स्वी अतिक्षतां क्षणामत्रेव तिष्ठतु यावदद्धं किचिद्धिलम्प्य चक्षुक्र्यामात्र्यामेव स्वेत स्व प्रसम्बद्धानेत्यादिक्षपोऽस्मिन्नन्तकाले सामान्यवन मिति भावः। मम उपास्यत्वाद्धानस्य प्रमा विषयीभूतो यः सर्वकालमेव मवत् स्व प्रसम्बद्धानेत्यादिक्षपोऽस्मिन्नन्तकाले सामान्यवन मीति भावः। मम उपास्यत्वाद्धानस्य प्रमान्यवन्तम्य तथात्वमवगमयति ॥ २४ ॥

कायवाङ्मनसेरित्युचितः पाठः

सूतउवाच।

युधिष्ठिरस्तदाकार्य शयानं शरपंजरे ॥
त्रपृष्क्रिद्दिविधान्धर्मानृषीगामनुशृग्वताम् ॥ २५॥
पुरुषस्वभावविहितान्यथावर्गा यथाश्रमम् ।
वेराग्यरागोपाधिभ्यामान्नातोभयलन्तगात् ॥ २६॥
दानधर्मान्राजधर्मान्मोन्तधर्मान् विभागशः ।
स्त्रीधर्मान् भगवद्धर्मान्समासव्यासयोगतः ॥ २७॥
धर्मार्थकाममोन्नांद्रच सहोपायान् यथामुने ॥
नानाख्यानेतिहासेषु वर्गायामास धर्मवित् ॥ २८॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

सर्वात्मनः।चिद्रचिच्छाक्तिमतः अतप्वाद्वयस्यैकस्य तादशपदांतराभावात् अतप्वसमदशःपरकीयपदार्थाभावाद्विषमद्वपिद्यस्यतत्हृतं दोत्यादिकर्मकृतंमतिवैषम्यकचिदपिनविद्यते ॥ २१ ॥

तथापिसर्वस्यतदीयत्वेऽपि हेभूपपकांतभक्तेषु अनुकंपितंजातानुकंपंपदयालीचययद्यस्मादसून्त्यजतोभेममकृष्णोदर्शनंदक्षपथमागतः प्राप्तः॥ २२॥

अधुनास्ववांछितंप्रार्थयतेभक्त्येतिद्वाभ्याम् यस्मिन्मनः समावश्ययोगीकामकर्मभिः ससारप्रदैः कर्ममिर्मुच्यते ॥ २३ ॥ प्रसन्नेनहासेनअरुगालोचनाभ्यांचोल्लसन्मुखांबुजयस्यसः ध्यानस्यपंथाआश्रयः अन्यैश्चित्यतेकवलंसचतुर्भुजःपुरः स्थितःसन् यात्रतक लेषरिहनोमित्यजामितावन्मांप्रतीक्षताम् ॥ २४ । २५ ॥

### आषाटीका ।

सर्वीतमा समद्शीं अद्वय अन हकार श्रीकृष्ण को इन कमीं से कुछ मित वैषम्य कभी भी नहीं होता है क्योंकि वह निरवद्य अर्थातः निर्दोष है ॥ २१ ॥

तथापि हे भूप ! देखो एकान्त भक्तों पर कैसी रूपा है कि जो मेरे प्राग्ण परित्याग करने के समय साक्षात श्रीकृष्ण दर्शन देने की

भक्ति से जिन में मन व्यविष्ट कर और वाणी से जिनका नाम कीर्तन करता योगी, कलेवर को त्यागता काम कर्मी से मुक्त ही जाता है ॥ २३ ॥

यह प्रसन्न हास अरुगा लोचन प्रफुल मुखाम्बुज ध्यानपथ चतुर्श्वज देव देव भगवान्, जवतक में इस कलेवर को त्याग कर्द बहाँ प्रतीक्षा करें ॥ २४॥

# श्रीधरस्त्रामी ।

तत सानुकंपं वाक्यमाकर्ण्य ॥ २५ ॥

是由这种的"大声"。 的数据的是人的最后,但是此种的是人物是人的的人的。

新疆海南南部。2016年在1916年11日1日1日1日

पुरुषस्य खमावेन विहितान् नरजातिसाधारगान् (धम्मोन् ) वर्णयामासेति तृतीयेनान्वयः । यथावर्णं वर्णधम्मान् यथाश्रमग्राश्रम् धम्मोश्र । वराग्यरागाश्यामुपाधिकयां क्रमेगाम्नातमुभयं निवृत्तिप्रवृत्तिकपं लक्षणं येषां तान् ॥ २६ ॥

पुनस्तमेव विशेषमाह दानेति । मोक्षधम्मान् शमदमादीन । भगवसम्मान् हरितोषकान् ब्राह्ह्यादिनियम् एपन् समासव्यासी सम्प विस्तारी तावेव योगाञ्जूषायी ततस्ताक्ष्याम् ॥ २७ ॥

अर्मादीश्च ययाधिकारं प्रतिनियतोपायसहितानः। यथा ययावतः। नानाख्यानेषु ये इतिहासास्तेषु यथा सन्ति तथा वर्षायामास ३५

# श्रीवीरराववः।

order to the state of the first state of the first of the state of the

तद्भीष्मव चोनिशम्य युधिष्ठिरः शरूरं अरेशयानंभीष्मसृषीशांश्यवतांसतांनानाषिधार्थभाँ मण्डल्लः ॥ २५॥ धर्मान्विशानेष्ठ पुरुषस्वभावः श्रव्वावत्वशक्तत्वाशकत्वादिक्षेशाविद्याविद्यानक्षेत्रस्वयाविश्ववोधितान्य ध्ववर्गीयशाश्रमंद्राधाविवर्गाः धर्मान्विश्वविद्यान्य धर्मान्विश्वयाच्यां चर्याया विद्यान्य प्रमाणां चर्याया प्रमाणां चर्याया श्रव्याव्या श्रिक्ष चर्याया प्रमाणां चर्याया प्रमाणां चर्याया प्रमाणां चर्याया प्रमाणां चर्याया प्रमाणां अर्थाया प्रमाणां प्रमा

, X

### श्रीबीरराध्वः।

आम्नातानित्यनेनवैदिकधर्मानपुच्छदितिसूचितम् तथास्मान्धभानपुच्छदित्यभिभायेगाह् दानधर्मानितिराजधर्मानीतिशास्त्रोकाः मोक्ष धर्माः पंचरात्रादितत्राकाः तत्राप्यवांतरमदाभिप्रायेगापुरुषस्वभावभेदाभिप्रायेगाविभागप्रायदृत्युक्तं भगवद्धमीस्तच्छ्वगाकीन्तनादयः समासव्यासयोगतः संश्लेपविस्ताराभ्यायुक्ताः शास्त्रषुप्रतिपाद्यतयेतिसमासव्यासयोगाः सार्वविभक्तिकस्तिसः समासव्यासयोगात् य-द्वासमासव्यासयोगात्सक्षेपयोगाद्विस्तरयोगाचापुच्छत् संक्षिप्तत्वेनविस्तृतत्वेनचापुच्छदित्यर्थः॥ २७॥

द्वितीयांतानांवर्णयामासेत्युत्तरत्रान्वयः हेमुनेसहोपायान् ससाधनान् धर्मार्थकाममोक्षानिपयथावन्नानाविधेष्वाख्यानेष्वितिहासंषुच

यत्त्वतद्गीष्मावर्णयामास ॥ २८॥

### श्रीविजयध्वजः ।

अययुधिष्ठिरोभीष्मोक्तमाकगर्यशरतल्पेशयानंभीष्मविविधान्धर्मानपृच्छिदित्यन्वयः पृच्छतेष्ठिकमेकत्वाद्भीष्मंधर्मानितियुज्यते ॥२५॥ धर्माग्गांतत्त्विवद्भीष्मः पतान्ध्रमीश्वानाष्यानात्मकेष्वितिहासेष्वग्र्यामासेत्यन्वयः तान्कधभूतान् वग्रयंपुरुपस्यैतेनिजत्वेनिविहता धर्मास्तदाश्रमिपुरुषस्येतेविहिताइतिविवच्ययथावर्णीयथाश्रमवर्णिनामाश्रमिग्गांपुरुषाग्गांस्त्रभावविहिताश्वित्तविहतान् धर्मान्वेराग्यां पाधिनारागांपाधिनाच्यतेनिवृत्तिधर्मापतेषवृत्तिधर्मोहतिनिष्कामहानपूर्वमित्यादिवचनैःप्रतिपादितोभयविधलक्षग्रान् ॥ २६ ॥

विभागशःपृथक्पृथक्भगवतःसर्वजगतस्रष्टृत्वादिधर्मान् ॥ २७॥

तथाधमार्थकाममोक्षांश्चतत्तत्ताधनसहितान्समासव्यासयोगतःसंक्षेपविस्ताराभ्यांययाययावत् तात्त्विकदेवात्तमयुधिष्ठिरादिबोधने मीष्मस्यासामर्थ्यात्मीष्मस्यकीत्त्यंथैतिसमस्तत्कालंविद्येषाविष्ठश्रीकृष्णाश्चर्षांडवप्रद्यान्याचल्यावित्यस्यार्थेयथात् ॥ २८॥

### क्रमसंदर्भः।

तत् निजीचरस्थितिप्रकाशकं श्रीभीष्मस्य वचनमाकगर्य ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

# सुवोधिनी।

एवं सर्व पुरुषार्थदानाय सर्वाभिव्यक्तिकुर्वम् विषयांतरसंचाराभावायप्रकटिस्तष्टिति प्रार्थना मध्ये मावकाशं ज्ञात्वायुधिष्ठिरः स्वं सर्वे पुरुषार्थदानाय सर्वाभिव्यक्तिकुर्वम् विषयांतरसंचाराभावायप्रकटिस्तष्टिति मित्यवगत्यस्वस्थकारण्यत्वाभावात्वधादिदोषा स्वसंदेहंबारियत्वृष्ट्वानित्याहः युधिष्ठिरः दित ननु युधिष्ठिरः पूर्वोक्तं सर्वे भगवताकृत मित्यवगत्यस्तिभाष्मः शर्पंतरेपतितस्ति भावं विनिश्चित्यापि कथंपृच्छती त्यतथाह तदाकगर्यापि शर्पंतरे शयानिमिति यदिभगवानेव करोति किमितिभीष्मः शर्पंतरेपतितस्ति प्रवित्यक्ति भगवान्तयास्ति अतिप्रसंगः स्यातदुः सर्वेजनीनत्वात् भगवतः सर्वेकर्तृत्वस्यच श्रीतत्वात् सर्वेषामेव प्रवित्यक्ति भगवान्तयास्ति अतिप्रसंगः स्यातदुः सर्वेजनीनत्वात् भगवतः सर्वेकर्तत्वस्यच श्रीतत्वात् प्रवेष्ठ दुवेष्ठताभावापिक्ति प्रवित्यक्ति सर्वेद्वात् प्रवेष्ठ दुवेष्ठताभावापिक्ति प्रविक्तव्यक्ति संदेहादिपप्रश्चरतदाह विविधानीति ॥ २५ ॥

धर्मास्त्रिविधाः श्रोताः पौराग्यिकाः पुरुपार्थ साध्यत्वनान्वयव्यतिरेकसिद्धालोकिकाश्चतान् सर्वान्भीष्मः क्रमेगाहेत्याह पुरुपस्त्रभावे विश्विविधाः श्रोराधिकारेगा प्रवृत्ताः वर्गाश्चमरूपेगा वाद्यधर्मेगा चप्रवृत्ताः वराग्याद्यांतर धर्मेगाचतत्रपुरुषस्वभाविश्व तित्रिमिः तत्रवैदिकास्त्रिविधाः शरीराधिकारेगा प्रवृत्ताः वर्गाश्चमरूपेगा वाद्यधर्मेगा चप्रवृत्ताः वराग्योपाध्यः उत्तरकांडोक्ताः ॥ २६॥ हिताः स्वतंत्रारक्षादयः वर्गावर्माज्ञानादयः आश्चमधर्माः अध्ययनादयः रागोपाधयः पूर्वकांडोकाः वराग्योपाधयः उत्तरकांडोकाः ॥ २६॥

दानधर्मादयः पौराणिकाः गोदानादयः तृळापुरुषादयोवाराजधर्माः कार्तिकव्रवादयः समासन्यासकथतात् वृद्धिभवित्वैरियरा अतः संक्षेपविस्ताराक्ष्यामाहसमासेति ॥ २७॥

पुरुषार्थचतुष्टयसाधनीभूतधर्मानाहधर्मेति पुरुषार्थानांखरूपं साधनानिप्रकाराश्चयया यथावत्सुनइति संवोधनात्नविस्तरेगोच्यते मननविद्यत्या दितिआख्यानं राज्यप्रधानं तैरेवमुक्तमित्यादि इतिहासः पुरावृत्तं तैरेवमुक्तमेवं जातमितितथानिः रांककथनेहेतुः प्रतावता मननविद्यत्या दितिआख्यानं भवतिसगुगाकर्मगा वंधः निर्गुगाकर्मगामां छोकेफलसाधकत्वज्ञानं भवत्विति यमधः उपरिवानिनीषतित सर्वसंदेहा निघारिताइत्युक्तं भवतिसगुगाकर्मगा वंधः निर्गुगाकर्मगामां छोकेफलसाधकत्वनाविकं काल विलंब देवनत्व नेनपुरुषार्थं मसाधुसाधुवाकर्मकारयतीति ईश्वरस्यसर्वकर्तृत्वजीवस्य दुःखाद्यनुभवश्चाको भवतिधर्म प्रवचनाविकं काल विलंब देवनत्व नेनपुरुषार्थं सिद्धिरिति ॥ २८॥

# The first of the control of the cont

ग्रीधिष्ठिरस्तदाक्रणयेति तर्षि मां पाः प्रवीयविषयतिति व्ययोऽपूच्छत् । रायाने रायेति । यद्यपि तदशायो मक्षानावियं तद्यपि गर्यहरा भावादिति भावः ॥ २५ ॥

धर्म प्रवदतस्तस्य स कालः प्रत्युपस्थितः। यो योगिनश्कंदमृत्योवीिक्कतस्तूत्तरायगाः ॥ २६ ॥ तदोपसंद्वत्य गिरः सहस्त्रणीविंमुक्तसंगं मन त्र्यादिपूरुषे । कृष्णे लसन्पतिपटे चतुर्भुजे पुरःस्थिते मीलितदृग्व्यधारयत् ॥ ३० ॥ विशुद्धयां घारगाया हताशुभस्तदीक्षयैवाशु गतायुघव्यथः। निवृत्तसर्वेद्रियवृत्तिविभ्रमस्तुष्टाव जन्यं विसृजन्जनार्दनम् ॥ ३१ ॥ इति मतिरुपकल्पिता वितृष्णा भगवति सात्वतपुंगवे विभूमि । स्वसुखमुपगते कचिद्विहर्तुं प्रकृतिमुपेयुषि यद्भवप्रवाहः ॥ ३२ ॥

॥ भीष्मउवाच ॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

पुरुषस्वभावेन विहितान् प्रथमं नरजातिसाधारणान् धर्मान् वर्णयामासेति तृतीयेनान्वयः । ततो यथावर्णे वर्णयोग्यधर्मान् योग्यतायाम्व्ययीभावः। ततो यथाश्रमं ततो वैराग्यरागाभ्यामुपाधिभ्यां क्रमेगाम्नातमुभयं निवृत्तिप्रवृत्तिरूपं लक्षगां येषां तान्।अयमधः नहि ब्रह्मचर्यादय आश्रमधर्माः सर्वेरेव द्विजैः सर्वे क्रमेगीवानुष्ठेया इति नियमः। किन्तु वैराग्यं चंत् सदैव भिक्षवो भवेयुस्तदा रागश्चेद् गृहस्या एव सदेति॥ २६॥

ततश्च तत्रैव विशेषतो दानधर्मानित्यादि सर्वान्ते च भगद्धमीन् भक्त्यङ्गानीति मोक्षधर्मेश्योऽप्यस्य पार्षक्यं श्रेष्ठगञ्च व्यंजितम् समासः

संक्षेपो व्यासो विस्तरश्च तदृद्वयोर्योगेन युक्ततवा ॥ २७ ॥

एवञ्चोक्ताः सर्वे धम्माञ्चतुर्षु वर्गेषु एव पर्यवस्यन्तीत्युक्तपोषन्यायेन तानेवाह धर्मोति। उपाया धर्मादिसाधनानि । यथा यथावदेव । नानाऽऽख्यानादिषु ये ये इतिहासास्तेषु प्रदर्श प्रमागाहितानित्यर्थः ॥ २८॥

# सिद्धान्तप्रदीपः।

पुरुषाणांस्वभावैः सात्विकराजसतामसैविद्वितान्वर्णयामासेतितृतीयेनान्वयः यथावर्णवर्णानांयोग्यान् वैराग्यरागाभ्यामुपाधिभ्यां क्रमेख आम्नातोभयलक्ष्मणान् प्रतिपादितनिवृत्तिस्तरूपान् ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २८ ॥

### भाषा टीका।

( सृतडवाच ) यह सुनकर शर शय्या पर शयान भीषा से युधिष्ठिर ने सब ऋषियों के सुनते विविध धर्म पूछे॥ २५॥ पुरुषों के खमाव विहित धर्म, वर्ण आश्रम धर्म. वैराग्य और रागके भेदसे वेदोक्त दानों प्रकार के धर्म, दानधर्म, राजधर्म, मोक्षधम, स्त्रीयमें, मगबद्धमें,। संक्षेप और विस्तार से धर्मअर्थ काम मोक्ष और उनके उपाय,। ये सव राजा ने पूछे ॥ हे मुने ! तत्त्ववेता मीज्य ने यह सब नाना आख्यान और इतिहासीं में वर्णन किया ॥ २६॥ २७॥ २८॥

# श्रीधरखामी।

छन्देन इच्छ्यामृत्युर्यस्य ॥ २९ ॥ सहस्राणियुदे समीपस्थान सहस्रं रथिनोनयति पालयतीति सहस्राणीःभीष्मः। सहस्रिणीरिति पाठे सहस्रार्थवतीर्गिरः। छसतौ पीतौ पटी यस्य तस्मिन्। अमीलितस्गेव मनो व्यधारयत्॥ ३०॥

अत्येव विशुद्धया धारगाया इतमशुभं यस्य सः। तस्य श्रीकृष्णास्येक्षया कृपाइष्ट्येव यता आयुधश्रमा यस्य सः। अतश्च निवृत्तः

सर्वेन्द्रियवृत्तीनां विभ्रमः विविधं भ्रमग्रं यस्मात् सः। जन्यं देहम्॥ ३१॥

परमफलरूपां श्रीकृष्योरति प्रार्थयितुं प्रथमं खकतमपेयति । इति नानाधम्मीद्यूपायैम्मेतिर्मनोधारगालक्षामा उपकृष्टिपता समर्पिता। क सात्वतानां पुद्भवे श्रेष्ठे भगवति । वितृष्णां निष्कामा । शवितृष्णोति वा छेदः शवितृसा इत्यर्थः । विगती भूमा यस्मात् तस्मित् यद्ये क रार्पा राज्या । तदेव परमेश्वर्णमाह खसुलं खरूपमूर्त परमानंदम उपगते प्रान्तवत्येव। क्षचित कदाचित विक्रित कार्दित स्रयात्पत्र । अत्रवाद्यं स्त्रीकृतवति नतु स्तरूपतिरोधानेन जीववत् पारतन्त्रयमित्यर्थः। विद्यक्तं मित्युक्तमः प्रपञ्चयति यसतः प्रकृतेः महम्पत्रहः प्रकृतिम् उपेयुप्ति । १२०॥ सृष्टिपरम्परा मवति॥ ३२॥

### दीपनी ।

अवितृप्तेति दर्शने अलंबुद्धिराहित्यादिति भावः ॥ ३२—३५ ॥

# श्रीवीरराघवः।

एवंपृष्टान्धर्मान्प्रवदतः ये.गिनः छंदमृत्योः खच्छंदानुसारीमृत्युर्यस्यतस्यभीष्मस्ययोवांछितउत्तरायगः सकालः प्रत्युपस्थितः यद्वा तस्यसकालः प्रत्युपस्थितः यद्दछंदमृत्योयोगिनः वांछितः सचापिकउत्तरायग्राइत्यन्वयः ॥ २९ ॥

तदंति यदासकालः प्रत्युपिस्थितः तदासहस्राणीः सहस्राणांकुरुपांडवादिरूपाणांनायकःसहस्रंखवश्यानांनयितसङ्गतिप्रापयतीतिवा स भीष्मः गिरउपसंद्वत्यविरम्यमुक्तः संगोदेहतदनुबन्ध्यादिसंगोयस्यतन्मनः पुरः स्थितेलसंतीविलसंती पीतीपटीयस्यतस्मिन्कृष्णोय्यधारयत् कर्यभूतः निमीलितेदशौद्धीयेनसः निमेषणामप्यकुवेन्कृष्णभेवपश्यन्तद्विष्रहध्यानैकप्रवर्णाविक्तमकरोदित्यर्थः॥ ३०॥

विशुद्धयाधारणयामगवद्धिप्रहातुध्यानात्मिकयाहतंनिरस्तमशुभंभगवत्प्राप्तिविलम्वावहंप्रारब्धंयस्य तदीक्षयैवभगवद्दर्शनेनैवाशुगैता निरस्तावायुधप्रहारजाव्यवायस्यनिवृत्ताः सर्वेषामिद्रियाणांवृत्तयोविभ्रमः देहात्मादिभ्रमश्चयस्यसः भीष्मःजन्यंजननयोग्यंदेहंविमृजन्त्य

क्यन्जनार्दनंसर्वजनदुःखहरंश्रीकृष्गांतुष्टाव ॥ ३१ ॥

स्तुतिमेवाइइतीत्यादिभिरेकादशिमः तावत्परमव्योमस्थंवेदांतवेद्यांदिष्यात्मस्कर्षप्रकृतावतारक्रपंतत्प्रयोजनंचानुसन्धायतिमन्स्वमितं दार्ह्यप्रार्थयतेइतिवस्यमागाप्रकारेगामममातिभेगवितिवितृष्णाऽलंबुद्धिराहितासतीउपकिलिपताप्रतिष्ठितामवतु यद्वाइतिहेतोमितिवितृष्णाइति वस्मान्तसमाद्भगवत्युपकिलिपताभवित्वत्यर्थः कथंभूतेसात्वतपुंगवेसात्वतानं यादवानांपुंगवेश्रेष्ठभागवतानांनायकेवाविभूमिन विलक्ष्यो भूमिन वागादिश्यः प्राणाशस्त्रवाच्याज्जीवाच विलक्षगोऽपारिच्छक्षेभूमशस्त्रवाच्यद्दर्यथः "भूमात्वेवविजिक्षासितव्यः योवेभूमातत्सुखंनाल्पेसुस्य मस्ती" तिहिश्रूयतेतदाहस्वसुखमुपगतइति स्वंस्वाभाविकसुखमुपगतवत्यपरिच्छित्रस्वाभाविकानंदशालिनीत्यर्थः क्विद्देशेविहर्त्तप्रकृति विग्रहमुपेयुषियद्भवप्रवाहः संसारप्रवाहोभवति यत्संकल्पमुलाक्षेत्रक्षानांसंसारप्रवृत्तिस्तिकृत्यर्थः॥ ३२॥

#### श्रीविजयध्वजः।

स्वच्छन्द्मृत्योःस्वेच्छ्यामरग्रंकुर्वतोयोगिनोवांब्छितउत्तरायग्राख्यःकालोयःसभीष्मस्यप्रत्युपस्थितइत्यन्वयः उत्क्रमिष्यतोज्ञानिनःका-

केऽनुगुगार्विचित्सुखाधिक्यंभवति नान्ययोमुक्त्यभावइत्येतमर्थतुशब्दोवक्ति ॥ २९ ॥

तदोत्तरायगोप्राप्तेसितसहस्राणीः समुक्तिसमयेस्वोपिद्देशनेकजननेता । एकादशाक्षीिहिणीनायकस्यबलवतांसहस्रसंख्यावतांनायकत्व कणनमनित्यत्वादुपेक्षणीयं अमीलितहक्प्रपुल्ललोचनः । विशेषतउच्छ्वसितज्ञानोवा । भीष्मोगिरंविषयसंबंधिनीमुपसंहत्य विमुक्तोविषय संगीयेनतत्त्वयोक्तंतन्मनः पुरास्थितप्रत्यक्षचतुर्भुजेउपलब्धेशोभमानिपशंगवस्त्रेआदिपुरुषेनारायगावतारेश्रीकृष्णव्यधारयत्विशेषेगाचल तयाऽधारयदित्येकान्वयः मीलितहक्अर्धमुकुलितचक्षुर्वा ॥ ३० ॥

विशुद्धयाफलरागादिदोषरहितयाहरौनिरंतरमनोधारणयाहताश्वभःनिरस्तपापःतस्यकृष्णस्यक्षयानिरीक्षणेनैवनान्येनाशुतत्क्षणंविनष्टा युधिनिमित्तव्यथाऽतारवतदितरःनिवृत्तःनिरस्तःसर्वेषामिद्वियाणांवृत्तीनांव्यापाराणांविभ्रमोविलासोयस्यसतयोक्तः निवृत्तसर्वेद्वियवृत्तिश्चा विवातभ्रमश्चायमितिवा पद्यमयंजल्पंवचनंविमृजन्रचयन्व्यर्थवचनंमुचन्वा जनंजननमर्दयतिविनाशयतीत्युपलक्षणमेतत्मरणंचजनन

मरगाना शकत्वेननित्यमुक्तिदासृत्वाज्ञनार्दनस्तंतुष्टाचेत्येकान्वयः ॥ ३१ ॥

ननुिकमियंस्तुतिमानसीवाचिकीवाइतिमितिरिति इतिशब्दोहेत्वर्थः प्रकरणार्थोवा समाप्तिवचनोवा यतएवंभगवान्सकलप्रवर्त्तकः
तस्मान्तिमन्मितमननशीलवुद्धिरुपकिपतातद्विषयीकृता सकलशास्त्रप्रकरणेवश्यमागाप्रकरणेवा समाप्तीमरणकाले। किंविशिष्टे विभूमिन परिपूर्णे अपरिच्छेदलक्षणपूर्णत्वंदेशकालयोरप्यस्तीति अतउक्तंभगवतीति । निरवधिकेश्वयादिगुणविति यःकश्चिद्दिषसत्तमोनिर्दिश्य तिइतिशंकामाभूदित्याह सात्वतपुंगवेयादवेश्वरे स्वसुखेखक्षपानंदेउपगतेयागतेश्वतिनकटवर्तिनीतिवा "निलीनोहंपकृतौसंसारमेतीति"श्चतेः तिइतिशंकामाभूदित्याह सात्वतपुंगवेयादवेश्वरे स्वसुखेखक्षपानंदेउपगतेयागतेश्वतिनकटवर्तिनीतिवा "निलीनोहंपकृतौसंसारमेतीति"श्चतेः यस्याःसकाशाज्जीवानांससारप्रवाहोभवति कचित्रमृष्टिकालेनानावतारकपैर्विहर्त्तुमहदहंकारादिजगत्स्वरुकामांतांप्रकृतिश्चियंजडातिमकांच यस्याःसकाशाजजीवानांससारप्रवाहोभवति कचित्रमृष्टिकालेनानावतारकपैर्विहर्त्तुमहदहंकारादिजगत्स्वरुकामांतांप्रकृतिश्चियंजडातिमकांच हपेयुषिप्राप्तवतिकीदशिमातिःवितृष्णाविषयतृष्णारहितावौहरौतृष्णायस्याःसात्रणवा "विःपक्षिपरमात्मनो"रिलीभधानम् ॥ ३२॥

# क्रमसंदर्भः।

यो योगिन इति तेषां तथेव व्यवसायमात्रं श्रीभीष्मस्य तु श्रीभगवहर्शनदीर्घत्वाय व्याजमय एव स इति क्षेयम् । वस्येत च श्रीस्वा-मिभिरिप द्वितीये—स्थिरं सुखं चासनमित्यादौ देशे च काले च मनी न सज्जयेदित्यत्र देशे पुग्यक्षेत्रे काले च उत्तरायगादौ मनी न सज्जयेत न सङ्गं प्रापयेत् । न देशकाली योगितः सिद्धिहेत् किन्तु योग एवेति ॥ २९ ॥ ३० ॥ सज्जयेत न सङ्गं प्रापयेत् । तदागमनसमयादेव लब्धयेति प्रथमवृत्तमुक्तम् ॥ ३१ ॥ तदीक्ष्मयेविति तत्रकर्मकेक्षया तदागमनसमयादेव लब्धयेति प्रथमवृत्तमुक्तम् ॥ ३१ ॥

तदीक्षयवात तत्रक्रमकाराः । । । । त्याप्त विशेषणां न त्पलक्षणमिति श्रेयम्। विभूमिन विशेषणा भूमातिशयो यस्मिन तत्र भुरताक्य । सात्वतपुंगवे इति धारणाविषयस्य तस्य विशेषणां न त्पलक्षणमिति श्रेयम्। विभूमिन विशेषणा भूमातिशयो यस्मिन तत्र भूरताक्य । सात्वतपुंगवे इति धारणाविषयस्य तस्य विशेषणां न त्पलक्षणामिति श्रेयम्। विशेषणां स्वाप्त विशेषणां स्वाप्त

### सुवोधिनी।

समागतेकाले सर्वमुपसंहतवानित्याह धर्मप्रवदतइतिद्वाज्याम् उत्तरायम् कालस्योत्तमत्वेऽपिपूर्व कालस्याने कृष्टत्वादतद्दोष संवधे निदुष्टतानभवोदि।तितद्व्यावृत्त्यर्थे धर्मप्रवदतइत्युक्तं योगिनामुत्तरगतेनियतत्वात् सूर्यमंडलमध्यस्थमागत्वात् उत्तरायम्पषस्यूर्यगतुंदाक्य ते छंदमृत्योरिति योगजधर्मेगाकालस्य वर्शाकृतत्वात् खच्छंदमृत्युत्वम् ॥ २९ ॥

तस्मिमकालेयत् कर्त्तव्यंतदाह् तदोपसंद्वत्येति सर्वपरित्यागेनमगवाचितनंकर्त्तव्यंतन्मौनेनमनस्थ्यांचल्यपरिहारेण्याक्रिययाचभवति तत्रशरीरिक्रियामावः पूर्वमेवासिद्धः वाङ्कियमनमाह् गिरः उपसंद्वत्येतिसहस्राणीः सहस्रयोद्धावायुद्धेनवचनेनवानयित्वाधीनान्करंतिः तिव्यधर्भोत्कर्षउक्तः मनसोविनियोगमाहिवमुक्तसंगद्दतिविशेषेणामुक्ताः अंतर्विहः संगायंनआदिपुरुषेव्यधारयार्दत्युक्तंमानस्यांप्रतिमायांव्यवधारणामुकं मवितिक्षिराकरणाय्यलौकिकप्रकारमाहकृष्णेपुरःस्थितद्दित्ति क्षिद्धारःप्रत्यगात्मानमेक्षाद्धः तिचक्षुरंतर्गीत्वातेनद्रष्टव्यपद्य विद्वहत्विपरितंमनश्चतुद्धाविहरानीयतेनमगवंतपद्यतीति कृष्णः आविभूतोभगवान्विहःस्थितत्वक्षापनार्थवस्त्रादिपरिकरमाकारं चाहलस्य त्पीतपदेचतुर्भुजद्दतिलसत्पीततदाहोत्तीर्णक्रपतादेवकीप्रार्थनयायत्प्राकृतंक्षपंकृतंतत्विरत्यागेनसहज्ञमेवक्षपप्रदर्शितवानित्यर्थः पुरः स्थितइतिकल्पनाक्लेशाभावः अमीलितद्दगितिनिमेषादिनाव्यवधानंनिराकृतम् ॥ ३०॥

मनसोधारणासर्वावयवस्थिता अतएविवयुद्धाअपहतपाप्मविषयत्वात्तेनैवसर्वपापक्षयः भगवदपराधजनकमिपपापमपराधेनजनितं प्रतीकाराकरणोनोपेक्षाजनितंचतत्सर्वगुद्धसेवकभावेन निवारितंभगवितचशुद्धभावेभगवानिपक्षपयावेदनांचदूरीकृतवानित्याह तदीक्षयेति' तस्यभगवतः दोषनिवर्त्तकहष्ट्यवेवगताआयुधव्यथायस्यनिवृत्ताः सर्वेद्रियवृत्तिषुविभ्रमायस्यअनेनांतर्वहिदेशिमावउक्तः जनप्रकृतिसमूद्दं जनांप्रकृतिमर्द्द्यतीतिजनार्द्दनः॥ ३१॥

यावत्प्रकृतिर्नेपीडितास्यात्तावत्स्वकार्ये मनिवर्तयेदितिमर्यादानुसारेण्यंतेभगवातियत्कर्त्ते व्यंतद्रश्चिनिक्ष्य्यतेतत्रप्रयमंसर्वसमप्रेण्ं निक्तपर्यात्वत्र्वाति स्तोमाहात्म्यक्षानपूर्विकाभगवातिरातः तत्रआत्मसमप्रण्मिति आद्यंतयोरक्षेक्षमध्यमाहात्म्यभक्तीनवतत्रप्रयमसर्वसमप्रण्मिति आद्यंत्राति हातिशब्दः समाप्तिवाचकः तत्प्रमेश्वराद्विभक्तस्यअनंतकोटिजन्मिभः यत्कृतंयद्स्तिवातद्विचायमेनितेवास्मदीयतावद्विषयिण्याम्यक्ति । त्राव्यं स्तुयाम्याभित्रपदार्थास्तुभगवदीयाः सर्वेअतोऽस्मदीयाबुद्धित्वभगवतिसमप्रण्णाया तदाह इतिमतिरितिअतिमोच्छ्वासपर्यतंमदीयमितिप । दार्थ स्तुयास्माभिः संपादिताबुद्धिः साचभगवतिउपकाविपताफलार्थत्वनिवारयतिवितृष्णाति यद्यप्यवभगवतिसमप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिम्यतेतिस्मप्रण्णेनिक्षात्रिक्षात्रिम्यतेतिम्यत्रिक्षात्रस्मात्रप्रकृतिस्वयमेववितृष्णाभवति अतस्तामविनेषेधितभगवतिब्रह्णाण्यात्रवाद्विष्ठश्चर्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षस्यविव्यक्षम्यविव्यक्षस्यविव्यक्षस्यविव्यक्षस्यविव्यक्षम्यविव्यक्षम्यविव्यक्षस्

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

धर्मे प्रवदत् इत्यादि । छन्देन इच्छ्येव मृत्युर्यस्य तस्य ॥ २९ ॥

युद्धे समीपस्थान् सहस्रं रिथनो नयति परिपालयतीति सहस्राणीर्भीष्मः । सहस्रिणीरिति पाठे सहस्रार्थवतीर्गिरः उपसंहत्य अन्यतः प्रत्याहत्य अमीलितदंगव चक्षुषी स्पष्टम् उन्मिल्यैव व्यधारयत् आनखारीखं प्रवेशयामास ॥ ३० ॥

तदीक्षया श्रीकृष्णकर्तृकेण कृपावलोकेन । विभ्रमो विविधभ्रमणमस्थैर्यमित्यर्थः । जन्यं स्थूलदेहं माथिकप्रपश्चंच ॥ ३१॥

इति मतीत्यादि । इति ममायुःसमाप्तौ मितर्भगवित उपकिष्णता मत्प्रभौ मदन्तकाले कृपापरविश्वतयेव मत्समीपमागते किश्चिदुणा मृनं दातुमुचितं तत्र सम्प्रति ममाहंतास्पदममतास्पद्योर्मध्ये समीचीनं किमप्यन्यन्नास्तीति हेतोरेणं मितरेवोपायनत्वेन किथिता । नतुः उपायनदायिनो लोके किश्चित्विप्रस्वो दश्यन्ते तत्राह वितृष्णा निष्कामा । भगवित षड्रेश्वर्थेपूर्णे । कि नारायण्यवेन प्रसिद्धे । न । सात्वतपुद्धवे यदुकुलोत्तं सत्वेन प्रसिद्धे । नतु नारायण्यस्येव भगवत्वेन महती प्रसिद्धिश्च सार्व्वकालिकी तत्राह विभूमनीति । विगतो भूमा यस्मात् तस्मिन् यमपेक्ष्यान्यत्र महत्त्वं नास्तीति नारायण्यस्याप्यवतारिणित्यर्थः । तदिष स्वर्थोदवपांडवेरेव सह सुसं प्रमानदम् उप आधिक्येन प्राप्त इतिस्कर्णलक्षणमुक्तम् । तदस्थलक्षणमाह प्रकृति मायामीक्षणेन महत्त्वासुत्पादकतया उपेयुषि । यतः प्रकृते भवप्रवाहः सृष्टिपरम्परा तेन पुरुषाद्योऽप्यस्यैवावतारा इति भावः ॥ ३२ ॥

# क्रा **सिद्धांतप्रदीपः।**

यदोत्तरायगाः कालः प्रत्युपस्थितस्तदासहस्रं जनामयतिभगवलोकंतद्धमीपदेशेनप्रापयतीतिसहस्रागीभीष्मः गिरउपसहत्यविरम्यपुर तस्त्रचतुर्भुजेशादिपुरुषेजगत्कारगोश्रीकृष्णोश्रमीलितद्दगेवसीदर्थदर्शनविष्ण्वेदभयेनीनमेषगामप्यकुर्वेन् मनोध्यधारयत् ॥ ३०॥

त्रिभुवनकमनं तमालवर्गी रविकरगौरवराम्वरं दधाने । वपुरलककुलावृताननाब्जं विजयसखे रतिरस्तु मेऽनवद्या ॥ ३३ ॥ युत्रि तुरगरजोविधूम्विष्वक्कचलुलितश्रमवार्यलङ्कतास्ये। मम निशितशरैविंभियमानत्वचि विलसत्कवचे अस्तु कृष्णा स्रात्मा ॥ ३४ ॥ सपदि सखिवचो निशम्यमध्ये निजपरयोर्वलयो रथं निवेदय । स्थितवति परसैनिकायुरक्ष्णा हृतवति पार्थसखे रितर्ममास्तु ॥ ३५ ॥ व्यवहितपृतनामुखं निरीक्ष्य खजनबघादिमुखस्य दोषबुद्धा । कुमतिमहरदात्मविद्यया यश्चरणारतिः परमस्य तस्य मे इस्तु ॥ ३६ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

स्तुतिमेवाह इतीत्येकादशिमः तत्रादीश्रीकृष्णेनिष्काममिकंप्राययितुं शानस्यैर्य्यप्राययते इतिइयंभगवद्गुणस्वरूपादिविषयमितिश्री नारिसकावितृष्णानिष्कामाभगवतिश्रीकृष्णांकिल्पताप्रतिष्ठिताभवतुतत्स्वरूपगुणादियाथात्म्यंदशीयतुं विशिनाष्टि सात्त्वतपुंगवे सात्त्वतानां श्रीनारदादीनामुपास्येतदेवाहावभूम्नीति विगतोभूमायस्माधतोभूमानास्तितिसम् "भूमात्वेवविजिह्यासितव्योयोवभूमातत्सुस्विम"तिश्रति प्रासिद्धेः तदेवाह खसुखमुपगतहीत खंखाधारगांसुखमीपगतवति "यतावाहमानिभूतानिजायते" हतिश्रुतिमुपवृंहयति कचिद्विहत्प्रैप्रकृति मुपेयुषिइतियद्भवप्रवाह इतिच क्वित्सृष्ट्युपक्रमसमयेविहतुंनानाभवनलीलांकतुप्रकृति निजामचेतनशक्ति "मायांतुप्रकृतिविद्यानमाथिनत् महेश्वरामि"त्यादिश्वतिप्रसिद्धा मुपेयुषि अधिष्ठायस्थितवतियत् यताहेतोर्भवप्रवाहस्तास्मन् ॥ ३२॥

### भाषाटीका ।

धर्म कहते २ मीष्म जी को वही काल आकर उपस्थित होगया, जिस उत्तरायगा को खट्छंद मृत्यु योगी वांछा किया करते हैं ॥ २९ तव सहस्रगी (सहस्रों योधाओंके अधिपति) भीष्म ने वागी का संहार (मीन) कर खुले नेत्रों से विमुक्त संग अपना मन लसत्पी-

त्तपट. चतुर्भुज अपने पुरः स्थित श्रीकृष्ण में घारण किया॥ ३०॥

विशुद्ध धारण से जिनके सगस्त अशुम नाश होगये हैं और (तत्) भगवान की ईक्षा (दर्शन) से जिनकी समस्त आयुधों की इयथा शीब्राह गत हो गई है. समस्त इंद्रियों की वृत्तियों के विभ्रम जिनके निवृत्तहोगये हैं वह भीष्मजी जन्य (शरीर) को त्यागते ज-बार्दन की स्तुति करने छगे ॥ ३१ ॥

(भीष्मउवाच) (इति) इन धर्मादिक नाना उपायों से. वितृष्णा अपनी मित मैने सात्वत् (पुङ्कव) श्रेष्ठ विभूमा भगवान मै अपगा की।जो भगवान खसुख प्राप्त हैं तथापि कर्म विहार करने को प्रकृति माया को स्वीकार करते है। जिस माया से यह भव प्रवाह है ३२

# श्रीधरंखामी ।

इंदानी श्रीकृष्णमूचि वर्णयन् रात प्रार्थयते । त्रिभुवन कमनं त्रिलोकर मिकमेव यत् कमनीयं तद्वपुर्देधाने रतिमें उस्तु । (कथंभूतं वपुः) समालवन्नीली वर्गो यस्य तत् प्रातःकालीना रवेः करा इव खत एव गीरे प्रीति करे निर्मले अम्बरे यस्मिन् तत् । अलक्कुलैरुपर्यावृत माननाब्जम यस्मिन् तत् । विजयसके पार्थसारयो अनवद्या अहेतुकी फलाभिसन्धिरहिता रितरस्तु ॥ ३३ ॥

विजयसंबत्वमेवानुवर्णयन् रति प्रार्थयते । युधि युद्धे तुरगामां खुररजस्तुरगरजः तेन विधूमा घूसरास्ते च ते विष्वश्च इतस्तत्रश्च लक्तः कचाः कुन्तलास्तैर्छिछितं विकीर्यो अमवारि खेदिविदुरूपं तेन भक्तवात्सल्यद्योतकेनालंकतमास्यं यस्य तस्मिन् श्रीकृष्यो मम आत्मा मनोऽस्तु रमतामित्यर्थः । पुनः किम्भूते मदीयैर्निशितैस्तीक्ष्यौः शरीर्विभिद्यमाना त्वक् यस्य तस्मिन् । शरैरेव विलसत् ( श्रुट्यत् ) कवचं यस्य तस्मिन् ॥ ३४॥

किंच सपदीति। "सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युतं। यावदेतान्निरिक्षेऽहं योद्ध कामानवस्थितान्" इति सच्युरर्ज्जुनस्य वचो निशस्य सपिंद तत्वक्षणमेव स्वपरयोर्वलयोः सैन्ययोर्भध्ये स्थिते पार्थसस्त्रे रिरस्तु। तत्र स्थित्वा कृतं सख्यं दर्शयति । परस्य दुर्योधनस्य ।नराप्त भागायुरक्षणा कालहब्खा हतवति असी भीषाः असी द्रोणः असी कर्णः इति तत्तत्रप्रदर्शनव्याजेन हब्ख्येव सर्वेषामायुराकृष्या

र्जुनस्य जयं कतवति ॥ ३५ ॥ स्य अन्य कर्णा । व्यवहिता दूरें स्थिता या पृतना तस्या मुखमिव मुखम अश्रे । व्यवहिता दूरें स्थिता या पृतना तस्या मुखमिव मुखम अश्रे त पार्य स्थाप पार्थ । पूर्वना तस्या मुखमिव मुखम अमें स्थितान भीष्मादीन निर्माह्मे स्वानवधााद्वमुखस्य निवृत्तस्य । तदुक्तं गीतासु—एवमुक्तवार्जुनः सख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।विमृत्य स्वारं वापं शोकसंविग्नमानस-इति कुमतिमहं हन्तेत्यादि कुन्नकिम ॥ ३६॥

#### दीपनी।

पृतना ( स्त्रीं ) सेना यत्र । २४३ गजा।२४३ रथाः।७२९ अश्वाः।१२१५ पदातिकाः । एपामेकीकृतसंख्याः २४३०।इत्यमरभरती ३६।३७

### श्रीवीरराघवः।

प्रकृतंरूपमनुभूयमतिदार्ढ्येप्रार्थयते त्रिभुवनकमनंत्रिभुवनकमनीयंत्रिमुवनसुंदरमितियावत् तद्वपुर्दधानेविजयसस्रेऽर्जुनसस्रेश्रीकृष्णे ऽनवद्यानिर्दुष्टाऽनन्यप्रयोजनेतियावत्रममरतिरं नुरागोऽस्तुकथंभूतं वपुस्तमालस्येववर्णोनीलोयस्य रवेः करः किरणसमुदायद्वगौरंवरं चांवरय स्मिन् अलक्षकुलै:कुंतलजालैरावृतमाननाव्जंयस्यतथाभृतम् ॥ ३३ ॥ 🕟

युद्धदशावस्थितमनुसन्धायप्रार्थयते युधीति रुष्णोभगवतिममात्मामनःअस्तुइढंभवतुतिष्ठतुकथंभूतेयुधियुद्धेतुरगरजोभिरश्वगफोत्थित रजोभिर्विधूम्रेर्विथूसरैःविश्वग्विलम्बमानैःकचैरलकैःसुललितैःस्रबद्धिःश्रमवारिभिः श्रमस्वेद्विदुभिश्रालंकतमास्ययस्यनिशितैःशरैविभि द्यमानात्वग्यस्यातप्वविलसत्क्षतजेनविलसत्कवचोयस्मिस्तत् ॥ ३४ ॥

युद्धप्रारम्भदशावस्थंरूपमनुसन्धायप्रार्थयतेसपदियुद्धप्रारम्भसमयसब्युरर्जुनस्यवचः "सेनयोरुभयोर्मध्येरथंस्थापयमेऽच्युत यावदेता न्निरीक्षेऽहंयोद्धकामानवस्थितान्"इत्यादिरूपंवचोनिशम्यनिजपरयोः पांडवकौरवयोर्वलयोर्भध्येरथंनिवेश्यस्थापयित्वास्थितवतिअस्पीवहिष्ट मात्रेगीवपरसैनिकानां दुर्योधनादीनामायुर्द्धतवति पार्थस्यार्ज्जनस्यसस्रातस्मिन्ममरतिरस्तु ॥ ३५ ॥

गीतोपनिषदुपदेशावस्थंरूपमनुसंधायप्रार्थयते व्यवहितीत व्यवहितायानातिदूरस्थायाः पृतनायाःशत्रुसेनायाः मुखंपुरोभागमवलोक्य दोषवशात्स्वजनवधाद्रिमुखस्यार्जुनस्येतिविशेष्यमध्याहर्त्तव्यं कुमितहष्ट्वेमंस्वजनेकृष्णेत्यादिनातेनैवाविःकृतांबंधुहत्ययापापमाशंकमानां कुमितमात्मविद्ययागीतोपदेशेनयोपहृतवान् तस्यपरमस्यपरोमायस्मात्सपरमः सर्वाभ्यधिकस्यभववतश्चरगायोरितर्ममास्तु ॥ ३६ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

विजयोऽर्ज्जनःसखायस्यसतथातिस्मन्छण्योममञ्जनवद्यारागाद्यवद्यविधुरारितरस्तु रितरनवद्यानिर्दुष्टास्त्वितिवान्वयः कथंभूतेत्रिभुवने बुकमनंकमनीयं त्रिभुवनानांकमनमिच्छायस्मिस्तत्तथोक्तमितिवा तमालपुष्पवद्वर्शोयस्यतत्तथातमालवर्शो वरंचतत्अंबरंचवरांवरंनवस्य र्वेरादित्यस्यकरःकिर्णाइवगौरमरुणांवरांवरंयस्यवपुषस्तत्तथीक्तं"गौरोऽरुणेसितेपीतेस्वच्छेचपरिकीर्लतं"इत्यभिधानम् अलक्कुलैःकुंतलकु कै:आवृतमाच्छन्नमाननाब्जंयस्यतत्तथा एवंविधंवपुर्दधाने ॥ ३३ ॥

ममात्मामनः कृष्णे अस्त्वत्यन्वयः कथंभूते विलसच्छोभमानंकवचंयस्यसतस्मिन् विलसन्सर्पोऽनन्तः कवचंशय्यास्यानीयंयस्यस्ततथा तिसम्बद्दतिवा अच्छेद्यत्वाभेद्यत्वेऽप्यसुरमोहनायमम्निशितैःश्रैविभिद्यमानेवत्वग्यस्यसत्थोक्तस्तिसम् वीत्युपसर्गाद्भिद्यमानत्वगप्याम द्यमानैवेतिज्ञातन्यम् निशितशरैरप्यविभिद्यमानत्वगितितात्पर्यार्थः विभियश्तिवदः युद्धेतुरगाणांखुरनिपातोत्यितैरजोभिर्विशेषेणाधूम्रवर्गी अतिर्विध्याद्गिःपरस्परमाष्नद्भिःकचैःकेशैर्छिलितैः कलुषितैःश्रमवारिभिःश्रमनिमित्तस्वेदोदविदुभिरलंकतमास्यमुखयस्यसत्योक्तस्तिसम् ३४

पार्थसलेकुष्णाममरतिरस्वित्यन्वयः "सेनयोक्भयोर्मध्येरथंस्थापयमेमुच्यते"तिसल्युर्ज्जुनस्यवचोनिशम्यसपदिवचः श्रवणानन्तरंति जपर्योः पांडवकौरवसंवंधिवलयोः सैन्ययोमध्येरथप्रवेश्यस्थतवति अक्ष्णानिरीक्षणेनपरसैन्यानामायुर्जीवलक्ष्रणंहृतवति ॥ ३५॥

यः प्रमः वीरः खर्गप्राप्तुंयुद्धायव्यवस्थितयोःपृनतयोःसेनयोःमुखंभीष्मादिकंनिरीक्ष्य हत्वार्थकामांस्तुगुक्रनिहैवेतिदोषबुद्धचानयोतस्य इत्यक्त्वास्वजनहननाद्विमुखस्यार्जुनस्यकुमतिदुष्टीनप्रहिशष्टपरिपालनलक्षगाव्यापारबुद्धेर्विपरीतबुद्धिमशोच्यानन्वशोचस्वमित्यादिकप्या तमविद्ययाऽहरत करिष्येवचनंतवेतिदुप्टिनहेरगोधर्मेबुद्धिकारितवान्मेतस्यपरमस्यचरगायोःस्मरगोनज्ञानसाधनयोरवयविद्येषयोःरितर स्त्वित्यन्वयः ॥ ३६ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

अय प्राक्तनं खापराधं तस्मिन् दैन्येन विद्यापयन्नपि रतिमेव प्रार्थयते युधीति । मम निश्चितेत्यादिकं तु मायिकलीलावर्शनमेव एवं वदन्ति राजर्षे ऋषयः के च नान्विताः इत्यादिन्यायेन वास्तवत्विविरोधातः। तथाहि स्कादे असङ्गश्चाव्ययोऽभेद्योऽनिप्राह्योऽत्य एव वदाः । जन्म विद्योऽसृगाचितो वद्ध इति विष्णुः प्रदृश्यते ॥ असुरान् मोहयन् देवः क्रीड़त्येष सुरेष्वपि । मानुषान् मध्यया दृष्ट्या न मुक्तेषु कर्य च । पर्या - वृत्ति । श्रीभीष्मस्य युद्धसमये दैत्याविष्टत्वात् तथा भानं युक्तमेव । किन्त्वधुना दुःखप्तदुःखस्येव तस्य निवेदनं कृतमिति हेयस् । किन्त चनात । जन्म निश्चतित्यन्तैर्विशेषगौस्तथाप्यर्जुनसाहाय्यापरित्यागात् तस्य भक्तवात्सल्यं दर्शितम् खस्यापराधित्वेशपि साम्प्रतं तदस्य तुरगेत्यादि मम् निश्चतित्यन्तैर्विशेषगौस्तथाप्यर्जुनसाहाय्यापरित्यागात् तस्य भक्तवात्सल्यं दर्शितम् खस्यापराधित्वेशपि साम्प्रतं तदस्य गृहीतत्वंज्ञापितम् ॥ ३४॥

सपदीति । तत्राक्ष्मा आयुर्हरगोन प्रारब्धहरत्वमपि दर्शितमः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

### सुवोधिनी ।

इदानींरतिंप्रार्थयते त्रिभुवनकमनामिति कदाचिदभेदादंतर्यामिणिस्वरूपेवारतिप्रार्थयेदित्याशंक्याद्वपुर्देधानद्दतियत्रपृकृतानामिपप्रतीतिः शरोरीतितादशणवममरतिरस्तुप्रमाण्यवलमपेक्ष्यकेवलंप्रमेयवलेनेवममयस्कार्यभवति तदेवभवत्वितिकेवलंप्रतीत्यायन्मतंतदेवानुवद्तिवपुर्द धानर्शतविषयसींदर्येगौवचित्तंप्रविशत्वितिरूपवर्गानांत्रभुवनंत्रैलाक्येतदेवकमनंलोकरष्ट्यैवसुंदरंनतुशास्त्रसंस्कारेगामीत्यातयाविधंतयासीन बुद्धाफ्रलंतदल्पंलीकिकेतुवस्तुनः शक्त्वाफलंतमालवर्णामिततमालवद्वर्णीयस् तिपत्तिकोनिरतिशयः सदेकविधः तमालः वृक्षेषुनीलवर्णः अने नवर्गोनैतज्ङ्यापितंसर्वथा ५रहितजनकामितिरविकरगोरवरांवरमितिरविकरवतयद्गौरवरमंवरंयस्यभगवतः सर्वमुक्त्यर्थप्रादुर्भृतस्यपीताम्वर-माच्छादकामितिदुप्रत्वमारांक्यतन्निवृत्त्यर्थमाहर्रावकरंतिसूर्यरङ्मयाघटादापतिताःप्रकाशयंत्यवनतदाच्छादकाभवंतितथापीतांवरंपरमानंदेपका शयत्यवनत्वाच्छादयात्रयथावेदार्थप्रकाशयत्यवगोरमीषद्रक्तपातंनीलोवर्गीवर्गातरेगाप्रकाश्यतइतिवदानांप्रार्थनयास्मदावेष्टिता भवान्तिष्ठत् इतिअस्त्वत्युक्तेपातांवरत्वमापन्नाःभगवंतमाच्छार्घातष्ठतीातवररूपमवरं अनंनव्यापकताप्युक्ताअप्राक्तत्वंचरविकरैर्वागौरवरमाकाशः वपु रितिआकाशशरीरब्रह्मत्युक्तभवति पूर्वावशेषग्रद्धयमाकाशपक्षेऽपिस्पष्टमेवअलककुलावृताननान्जमितिअलकाःचूर्गाकुंतलाःतेषांकुलैः आवृत माननाञ्जमुखकमलंयस्यअलमत्यर्थककुलेरानंदसम्हैः आवृतमासमंताद्वाष्टतंकरचरणादिरूपेण स्थितमाननमासमंतात्ननंसदूपम्अब्जस्य चंद्रनक्षत्रलक्ष्मा विद्युनमेघादिरूपमानंदावयवेआकाशशरीरेष्ठद्यागाद्तनेत्रभावापन्नानिसूर्यादीनिअस्येत्युक्तं भवतिवममृतंपुष्णातिसर्वेश्यःप्रय-च्छतीर्विवपुः परमानन्दस्वरूपम् अलम्त्यर्थकंयेषांतब्रह्मावदः तेषांकुलैर्वातप्ववातेतरावृतमग्निब्राह्मग्रह्माननमञ्जमाननकमलेयस्यसनकादि मित्रोह्मणैर्देवक्षांनादिमिश्चपत्रेषुरिथतेः आवृतंकाणिकारूपमासनामत्युक्तंभवतिअञ्जपदेनचसूर्यादिवेष्टनसहितत्वलक्ष्यतेएतादशेवपुः दधान ताइशोऽपिभक्तवत्सलइतिविजयसखेसख्यपर्यत्दत्तवानिर्तिवजयोऽर्जुनः विशिष्टाजयोयेषांमतःकरणादिजतारःतसखायोयस्यतेषांवासखातत्र रतिः प्रोतिः अनवद्याअलोकिकीपरमाप्रीतिरलौकिकासर्वदुर्लभाभगवदेकिनिष्ठातस्वपवभवर्तातिनोत्तरत्रविरोधः॥ ३३॥

एवसत्त्वमिश्रसत्त्वावस्थाउकारजामिश्ररजावस्थामाहयुधातिसर्वावस्यासुरतिः प्रार्थतं युक्तेतुरगागामश्वानांसुराप्रविक्षितरज्ञोभिः विशेषेगाधूमाः धूसरवर्गाः विष्वक्परितयिकचाःतैः छुक्तियच्छ्रमवारितनालुकतमास्ययस्यनील्मुखाब्जेमुक्ताफलसदद्याविदवःशोभातिशयं कुर्वतिसाभीष्प्रस्यत्वक्चमादिकयुद्धाविशेषण्वाराजसराजसावस्थायाः शाभेवसाअथवायुद्धार्थमिद्रियादिभिः सहतुरगाणांवेदसूर्यादीनांवा उत्पादकामः । यद्गुजः कामः रजोगुणांवाविश्रू माविदोषेणाश्रूसराः यसकामाः कालवशाद्वासकामाः कालपरिच्छं दकाह्यग्न्यादयः आग्नविद्धत्यादिश्रुतिभिः ते-षांतुरगत्वंवेदानांचांकपुत्रदाहादातंचतविष्वकचाश्चवद्यावदः सूर्यादमागंगामिनःभिन्नावातदातेषांचसमुखयः इतरेतरयोगोवातेनछिलताः मिलिताः ऐक्यमावंवाप्राप्ताः तेचतेश्रमवार्यलेकताश्चगंगाजलपूताः ब्रह्मशिवादयः तेऽपिश्चानंनयस्येतिशासमंताद्वपेवाश्चनेनमहासामर्थ्यसूचि तिकालुक्रपत्वंचिकचमेममश्रहंकारविदेषेगायानिशातामिताः अहंकारगाज्ञानप्राप्ताइतियावत्तंचतेशराश्चपरभदकाः तैर्विदेषेगाभिद्यमाना त्वचः छदांसियस्यातियस्माद्वा पाषंडप्रवृत्तांक्लीवासंजातेगत्यतराभवात् भगवतश्चतद्दोषाभावेहेतुः विशेषगालसत्कवचंधमादित्रयंयस्य पतादशेक्वणां आत्माअत करणां मेऽस्तुभक्ति अतः करणासाध्याआत्मसाध्यावातदुभयभगवतिचेत्तदाभक्तिस्तत्रभवति अतः पूर्वदेलोकार्थे अयहेतुः ॥ ३४॥

तृतोयावस्थामाह सपदोति सपदितत्रक्षमामेव सखिवचोऽज्जैनस्यवचः "सेनयोरुभयोर्मध्येरधंस्थापयमेऽच्युते"तिनिजपरयोः सेनयोर्मध्ये

पक्षपातो ऽन्यार्थेऽभ्यघातनंचतृतीयोगुगाः परसेनिकानामायुश्च अक्ष्णाकालदृष्ट्या पृथायाः पुत्रस्यचसख्यौपूर्ववन्मतिरस्तु ॥ ३५ ॥ सत्वमिश्ररजोवस्थामाह व्यवहितेति व्यवहितदूरिस्थते येपृतनंविशेषेण अवहिताश्चेतिवामुखमाग्रमभागः तत्रबांघवाएवतिष्ठांतितह श्रव्यतिरेकेगान साधारगावधाऽपिसंभवति अतःस्वजनवधमकृत्वानिवृत्तः परिहंसादोषइति नापितेनक्षौरवदत्रसमाधानम् भारायमागाः क्षत्रियाः इमश्वादिकपाः अर्जुनश्चनापितरूपः आत्मविद्यास्त्रस्यविद्याममैवह्रियतममचहि तंतेमयिजडांशगवदूरी क्रियतेमुक्तिसानार्थामित तस्मादंवविधनदोषः अतएवगुरुत्वाचरग्रारतिप्रार्थयते परोमीयतेऽनेनेतिपरमः तस्येतिसग्वपरः तदवस्थांप्राप्तस्येतिवा ॥ ३६ ॥

श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

नबु इति मतिरुपकरिपतेत्युका या सा किमाकारा मतिस्तत्राह त्रिभुवनेति । विजयस्य अर्जुनस्य सख्यो म्मानवद्या फलाभिसधान रहिता रितः प्रेमास्तु । कीददो त्रिभुवनस्य अर्ध्वाधोमध्यलोकस्थजनसमुदायस्य कमनमभिलाषो यत तद्वपुर्दधाने । रवेः करैगीरवरं अति राष्ट्रण । । तत् अर्जुनरथोपरिस्थितस्य कृष्णस्य पीतांवरद्वयं सूर्यकिरणसम्पर्कादितचाक्राचिक्यवस्वेन तदानीमितपीतं मया दृष्टं तेन पार्थसार्राथत्वेनांपलब्धमहासाँन्दर्येकृष्णं रति प्रार्थनामयी मतिमयात्राह्मन्नेवोपकिष्पतंति भावः। अत्र चाप्रिमेष्विप श्लोकं मथा ६० ... बु साक्षाद्वर्तिन्यपि भगवति प्रार्थनायां युष्मत्पद्वयोगाभावः आस्वादितचरं सांग्रामिकवीररसावशमये तन्माभुरुये एव चित्तस्यासिक बोधयति ॥ ३३॥

अलककुलैरावृतमाननाव्जं यदुक्तं तन्माधुर्यमेव त्यक्तुमसमर्थः पुनरिपविशिष्यास्त्रादयति युधीति। तुरगरज इति सुन्दरे किमसुन्दर मिति न्यायन् । विष्वश्च इतस्ततश्चलन्तः कचा इति आवेगसूचकम् । श्रमवारीति भक्तवातसल्यद्यातकम् निशितैस्तीक्ष्णैर्विभिद्यमानत्व निष्य क्षाविष्टस्य पुंसः प्रगत्भकान्तादन्ताघातैः सुखमेवेतिवद्युद्धरसाविष्टस्य महाबीरस्य कृष्णस्य मद्वलसूचकशराघातैः चीति कन्द्रपरसाविष्टस्य पुंसः प्रगत्भकान्तादन्ताघातैः सुखमेवेतिवद्युद्धरसाविष्टस्य महाबीरस्य कृष्णस्य मद्वलसूचकशराघातैः सुखमेविति। नात्र मम युद्धरसोन्मत्तस्यापि प्रेमशून्यत्वं मन्तव्यम्।नहि खप्रागाकोट्याधिके प्रेयसि सुरतसमरौद्धत्यकृतनिर्भरनखरदशना सुखनपाप । अपन्य प्रत्य इति भावः।अत्र तु विभिद्यमानत्वचि नतु विभिन्नत्वचि यतो विलस द्विराजमानं कवचं यस्य तस्मिन्निति । विलस् । अपन्य प्रत्यः ॥ २४

ईषद्भेदमात्रमुक्तम् । आत्मा मनः ॥ ३४ द्भद्रभावणु । सेनयोद्दमयोर्मध्यं रथं स्थापय मेऽच्युत । यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्ध कामानवस्थितानिति संख्युरर्जुनस्य वचः। ाकञ्च प्रत्याः सैनिकानां आयुरह्णा असौ भोषाः असी द्रोगाः असौ कर्णा इति तत्तत्प्रदुरीनव्याजेर्न रष्ट्या एव इतवित तन च प्रस्य दुर्योधनस्य सैनिकानां आयुरह्णा असौ भोषाः असे। द्रोगाः असौ कर्णा इति तत्तत्प्रदुरीनव्याजेर्न रष्ट्या एव इतवित तन च परस्य क्रुना विश्वितम् यिह निरोक्ष्य गता गताः सक्रपमिति तेषां मोक्षोक्तेः ॥ ३५ ॥

स्विनगममपहायं मत्प्रितिज्ञामृतमिषकर्जुमवप्छुतो रथस्थः । भृतरथचरणो अन्ययाच्चवद्गुर्हिरिरिव हन्तुमिभं गतोत्तरियः ॥ ३७ ॥ शितविशिखहतो विशीर्णदंशः चतजपरिप्छुत स्नाततायिनो मे । प्रसममिससार मद्वधार्थं स भवतु मे भगधान् गतिर्मुकुन्दः ॥ ३८ ॥ विजयरथकुदुम्व स्नात्ततोत्रे भृतहयरिमिन तिष्क्र्येच्चणीये । भगवति रितरस्तु मे मुमूर्थोप्यिह निरीक्ष्य हता गताः स्वरूपम् ॥ ३६ ॥ खिलतगतिविलासवल्गुहासप्रणायिनरीच्चणाकित्यतोरुमानाः । कृतमनुकृतवत्य उन्मदांधाः प्रकृतिमगन् किख यस्य गोपवध्यः ॥ ४० ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

ततम्ब व्यवहिता दूरे स्थिता या पृतना सेना तस्या मुखमिव मुखम् अप्रे स्थितान् भीष्मादीकिरीक्ष्येत्यर्थः, खजनवधाद्विमुखस्येति यदुक्तम् "प्वमुक्तार्जुनः संख्ये रथोपस्य उपाविशत् । विसृज्य सशरं चापं शोकसंशिग्नमानस" इति कुमित सांप्रतिकीं युधिष्ठिरस्यव तदानीन्तनीमर्जुनस्यापि खयं भगवतैवोत्थापितां तस्य नित्यपार्षदत्वन्नरावतारत्वाम् कुगतेरसम्भवात् जगदुद्धारकखतत्त्वनापकश्रीगीता शास्त्रमाविभीवायितुमिति शेयम् । आत्मविद्यया खनिष्ठन्नानेन ॥ ३६॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

अधुनाश्रीमृतिंवर्णयम् भिक्तप्रार्थयते विजयसखेऽर्जुनसखेश्रीकृष्णे अनवद्याश्रीकृष्णितराविषयप्रयोजनरूपदोषशून्या मरतिरनुरक्तिर स्तु क्रयंभूतेत्रिमुवनकमनंत्रिभुवनेषुऊर्ध्वाधोमध्यलोकेषु कमनंकमनीयमतिसुंद रमतमा व्रवर्णीतमालस्येवनीलो वर्णायस्यतत् रवेः कराः किरणाद्वगीरेश्रेष्ठेचांवरेयस्मिन् अलककुलैः कुंतलकलापैरावृतमाननाव्जं यस्यतद्यावृतंवपुर्दधाने ॥ ३३॥

युधिसंम्रामेतुरगशकोत्थितरजोभिर्विधूम्राविधूसराः रथगतिवशाद्धिष्वंचः सर्वतश्च छंतः कचाः कुंतलास्तैर्लुलितानिविकीर्गानिश्रम् जातानिर्विदुभूतानिभक्तवात्सल्यसूचकानिवारीणितैरलंकतमास्यंयस्यतिसम् िरीनिष्यं त्रांशकानांमहारथानांनिशितैः हारैः विभिदि विगतभेदे तत्रहेतुगर्भविशेषग्राम् अमानत्वचि वेदेतरप्रमागाविषयविष्रहे त्वक्शब्दास्यविष्रहोपलक्षगत्वात् शरवैष्यप्रविक्रत्या येनदर्शयति विलसत्कवचेदति अखंडतयाविलसत् कवचंयस्यतिसम्बश्चीक्रष्णाममभ्यत्मास्मर्पितोऽस्तु ॥ ३४ ॥

"सेनयोरभयोर्मध्येरथंस्थापयमेच्युते"ति सिखवचानिशस्यसपिदतत्क्षणमेव पांडवकी रवसैन्ययोर्मध्येरथंनिवेदयास्थतवतिकौरवस्तिन

कानामायुः आयुषोपलक्षगोनपुग्यकीत्यादिकंसर्वमध्योवद्वतवान् अर्जुनसर्वमम्यतिरस्तु ॥ ३५॥

व्यवहितायाः किचिद्वचवधानेनस्थितायाः पृतनायामुखंसेनापितत्वेनाचार्यन् शादिनाऽश्रभागंभीष्मद्रोगादिसमुहंनिरीक्ष्यस्वजनवधाद्धि-मुखस्यनयौत्स्येस्वजनंकृष्णोत्याद्युक्त्वानिष्टत्तस्यार्ज्जनस्यकुमतिस्वधर्मत्यागस्वतंत्रकर्तृत्वदेशात्मवुद्धित्यादिविषयामात्मविद्यया श्रीमुखनीतोष देशेनाहरत् यस्तस्यचरणयोर्मेरितरस्तु ॥ ३६ ॥

# भाषा टीका।

त्रिभुवन कमनीय (मनोहर) तमाल वर्गा रविकर गौर वर अंबर धारी वपुधर अलक कुलावृत्त मुख पद्म विजय सख सगवान में यह मेरी निर्दोष रित हो ॥ ३३ ॥

युद्ध में घोड़ाओं की रज से घूम्र विखरे कुटिल केशों से शोभित श्रम जल क्या से अलंकत मुख मेरे निशित वागों से मिद्यमान त्वक विलिस्त कवच कृष्ण में मेरा मनहो ॥ ३४॥

शीव्यही अपने सखा (अर्जुन) का वचन सुन कर अपनी और पर (कीरवों की) सेना के मध्य में रथको लेजाकर जो स्थित थे. और अपनी काल दृष्टि सेही जिन्हों ने पर सैनिकों की आयु को हर लिया था उन पार्ध सारशी में मेरी रित हो ॥ ३५ ॥

दूरस्थित सेना मुखको देख कर स्वजनों के वधमें दोषजानकर स्वजन वधसी विमुख अर्जुनकी कुमतिको जिन्होंने आत्म विद्या उप देश कर हरण किया उन्हीं परम पुरुष के चरणों में मेरीरित हो ॥ ३६॥

# श्रीधरखामी।

मम तु महान्तमनुप्रहं कृतवानित्याह हाज्याम । स्वनिगमम अशस्य पवाहं साहाय्यमात्रं करिष्यामीत्येवस्भूतां स्वप्रतिक्षां हित्या श्रीन् कृषां शक्तं प्राहायिष्यामीति प्रवेक्षणं मत्प्रतिक्षाम ऋतं सत्यं यथा भवति तथा अधि अधिकां कर्त्तुं यो रथस्यः सम्बद्धन्तः सहसैवाव-तिथाः सत् अश्ययात् अभिमुखमधावतः । इसं हत्तुं हरिः सिंह इव किम्भूतः भृतो। स्थानस्थानमाः । तहा च सरम्भेण मानुषं नास्यविस्मृतेयवरस्थमवेभुवनभारेण प्रतिपदं चलद्गुः चलन्ता गीः पृथ्वी यस्मात्। तेनेश सरम्भेण पथि गतं प्रतितमुक्तियं वसं यस्य। स मुद्धवो मे गतिभवित्वत्युत्तरेशान्वयः ३७॥ स मुद्धवो मे गतिभवित्वत्युत्तरेशान्वयः ३७॥

### 'श्रीधरस्वामी ।

एवं यदाश्ययात्तदा स्मयमानस्याततायिनो धन्विनो मे निशितैस्तीक्ष्मीविशिखैद्दतः अतो विशीर्मादंशः विध्वस्तकवचः क्षतजेन विधिरेण परिप्लुतः व्याप्तः सन् प्रसमं वलाद्वारयन्तमञ्जेनमप्यतिकम्यमद्वधार्थमभिससार अभिजगाम । एवं यो लोकरष्टार्जुनपक्षपातीव लक्षितः वस्तुतस्तु ममैवानुप्रद्वं कृतवान् (यनमञ्जकंनोक्तं वचो मा मृषास्तु इति ) स भगवान् मे मम गतिर्भवत्वित्यर्थः ॥ ३८॥

तदेवमन्यायरिपि भृत्यरक्षाव्यम् श्रीकृष्णे रितमाशास्ते विजयोऽर्जुनः तस्य रथ एव कुटुंवः अकृत्यैरिप रक्षणीयो यस्य तस्मिन् । व्यानं तोत्रं प्रतोदां यन तस्मिन् । धृताश्च ये हयानां रक्षमयः प्रश्रहास्ते सन्ति यस्य तस्मिन् श्रीह्यादिश्यश्चेत्यनकारांतादिप रिश्मिशब्दादिनिः तिष्क्रिया सारथ्यश्चियेक्षणीयं शोभमाने । मुमूषोंमंनुप्तिच्छोः । ननु अन्यायवर्त्तिनि किमिति रितः प्रार्थ्यते अत आह भगवति अचित्येश्वयं तदाह इह युद्धे हताः सर्वे यं निर्राह्य सक्ष्प तत्समानक्षं गताः प्राप्ता इति दिव्यहष्ट्या पश्यन्नाह ॥ ३९ ॥

क्षान्त्रधम्में सा युक्तधमानास्तत् सहपं प्रापुरित्येतम् चित्रं यत उन्मदान्धा अपि प्रापुरित्याह लिलतर्गातश्च विलासश्च रासादिः मंडु गत्यादिमिरात्मीयैस्तदीयैर्वा कल्पित उर्ह्महान् मानः पूजा यासां ताः। अत उत्कटेन मदेन अन्धाः। अतएव तदेकचित्तत्वेन तस्य कृतं कर्म गोवर्द्धनोद्धारसादिकम् अनुकृतवत्यो गोपवध्वः यस्य प्रकृति स्वह्णपमगन् अगमन् मकारलोपस्वार्षः। किल प्रशिद्धम्। तस्मिन्नेव रितरस्तुद्दिति पूर्वेशीवान्वयः॥ ४०॥

### दीपनी।

अमुग्रहं मद्वचःसत्यत्वापादनलक्ष्रगाम् ॥ ३८ ॥

ब्रीह्यादिश्यश्चेति सूत्रं पागिनीयव्याकरगास्य पंचमाध्यायीयद्वितीयपादे षोड़षाधिकशततमम् । ब्रोह्यादिगगो यथा—ब्रीहि। माया। शाला। शिखा। माला। मेखला। केका। अष्टका। पताका। चर्मन् । कर्मन् । वर्मन् । दंष्ट्रा । संज्ञा। वड़वा। कुमारी। नी। वीगा। शाला । शिखा। माला। मेखला। किका। श्रीर्थाक्षयः इति। यद्यप्यत्र रिमशब्दो न दश्यते तथाप्याकृतिगगां मत्वा ऊहनीयः। यद्वा लेखक बलाका। यवषद् । नी। कुमारी। शीर्थाक्षयः इति। यद्यप्यत्र रिमशब्द स्वादर्शनमनुमेथं सकलकोविदगगाश्चित्रास्पदाचार्यश्चीमत्श्चीधरस्वामिना बीद्यादिगगो तत्पाठस्याङ्गीकारादिति ३९-४९ प्रमादात् रिमशब्द स्वादर्शनमनुमेथं सकलकोविदगगाश्चित्रास्पदाचार्यश्चीमत्श्चीधरस्वामिना बीद्यादिगगो तत्पाठस्याङ्गीकारादिति ३९-४९

### श्रीवीरराघवः।

सार्थ्यदशावस्थितं रूपमनुसन्धायास्मिन्रतिदाद्वीप्रार्थयतेविजयिति विजयस्यार्जुनस्यरथः कुतुम्वः कुतुम्वः कुतुम्ववदक्षग्ययोग्यायस्य आत्तंतोत्रं सार्थ्यदशावस्थितं रूपमनुसन्धायास्मिन्रतिदाद्वीप्रार्थयतेविजयस्यार्जुनस्यर्थः कुतुम्वः कुतुम्वः कुतुम्वः कुतुम्वः कुतुम्वः स्वार्थः स्वर्थः स्वार्थः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्यः स्वर्थः स्वर्यः स्वर्

त्रकेत्रक्षेत्रिश्ययुद्धेहताएयस्वरूपं गताआपितृतत्कामेनतमनुवर्त्तमानाअपीत्याशयेनाहलालितेति ललितयासुंदरयागत्याविलासेनवल्गु-त्रकेत्रलेत्रक्षीरीक्ष्ययुद्धेहताएयस्वरूपं गताआपितृतत्कामेनतमनुवर्त्तमानंबहुमानंथासांतागोपवध्यः उन्मदेनोद्दिक कामेनांधाःस्वपर हासेन्द्रहत्तरहासेनमन्दिसतेनप्रण्य निरीक्षणां नवकलिपतमुर्वधिकंमानंबहुमानंथासांतागोपवध्यः उन्मदेनोद्दिक कामेनांधाःस्वपर हासेन्द्रहत्तरहासेनमन्दिसतेनप्रण्या निरीक्षणां नवकलिपतमुर्वधिकंमानंबहुमानंथासांतागोपवध्यः अनुकृतवत्यःअनुकुर्वत्यःसत्यः विवेकरिताःकृष्णमात्मानंमन्यमानाइत्यर्थः अतप्यमगवत्कृतंभगवतश्चेष्टिवस्यत्वतिरित्तरित्वितपूर्वेणान्वयः ॥ ४०॥ एतश्वरुद्धीमविष्यतियस्यप्रकृतिस्वभावसाधम्यमगमन्किलेतिप्रसिद्धिर्धोत्यतेतिस्मन्भगवतिरितरित्वितपूर्वेणान्वयः ॥ ४०॥

# श्रीविजयध्वजः।

अध्युद्धेआयुधंनप्रहिष्यामीतिस्वनियमंप्रतिश्वालक्षणंविहाययोभकानुकंपी आयुधंप्राहिषण्यामीतिमत्प्रतिश्वामृतमधिसत्ये स्थितांक्र्तुं भृतर्थवरणः उद्युतसुदर्शनचक्रःरथस्थोरथादवण्लुतोऽवतीर्गाःगतोत्तरीयवासाः ऋषितोत्तरीयवासाः हिरः सिहःइभंगजीमवबलाप्रेषभ भृतरथवरणः उद्युतसुदर्शनम्ययात् ॥ ३७॥ योः सनयोःपुरतोमांद्रतुमभ्ययात् ॥ ३७॥

याः सनयाः पुरताना वर्षाः । वर्षाः स्वात्तायना प्रतिविद्यात्रिया । वर्षाः वर्षाः वर्षाः । वर्

बावतरमाञ्मणमात्रात्व विजयस्य अर्जे मान्य स्वाप्त स्वाप्त स्वर्णे के विजयस्य अर्जे मस्य प्रयोग स्वर्णे के विजयस्य अर्जे के विज्ञे के विजयस्य अर्जे के विज्ञ के विज्ञे के विज्ञ के विज

### श्रीविजयध्वजः।

यस्यलिलानिगतिविलासादितिनतथोक्तानि लिलतगित्रश्चविलासश्चवलाहासः मदस्मितंचप्रग्रायेननिरीक्षगांचतथोक्तानि तैःकलिपत मुरुपृथुमानंयासांताःतथोक्ताः लिलतगत्यादिभिःकृष्णोकलिपतसमिपितमुख्मानं महापूजायाभिस्तास्तथोक्ताइतिवा अतपवउत्कृष्टेनमदेनांघाः कृतपूतनावकादिपराक्रममनुकृतवत्यः कृष्णायमानत्वेनानुकुर्वागाः गोपवध्वःगोपिक्षियः यस्यप्रकृतिजङशरीरंविहायस्वभावाविर्मावलक्ष ग्रामाक्षमगुःकिलतिस्मन्कृष्णोरितरिस्त्वितपूर्वेगान्वयः॥ ४०॥

### क्रमसंदर्भः।

्र स्वनिगमेति युग्मकम् । ऋतमिति ऋतरूपामित्यर्थः । ऋतश्च स्नृता वार्गाति भगवदुक्तावजहिं छगत्वश्रवणात् । चलद्गुत्वं संरम्भेगा किचिद्रावाविष्कारात् ( किचिद्धाराविष्कारात् ) ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

विजयेति युग्मकम् मर्यादातिक्रमेऽण्यदाषाय सामर्थ्यमाह भगवतीति । यथा रुद्रोऽव्धिजं विषमितिन्यायात् तदातिक्रमे च स्वाभाविकं कारुग्यमेव कारणिमिति दर्शयति यमिहिति । अतांऽस्मिन्नेव रितर्ममास्तु ॥ ३९ ॥

तत् स्वभावमहिम्नः सारूप्यप्रापण्तवं नाम कियानुत्कषः यत एतावतेऽपि प्रेम्णा जनकत्वं दृश्यते इत्याह लिलति । अत्रकृतानुं करणं नाम लीलाख्यो नाथिकानुभावः । तदुक्तम् प्रियानुकरणं लीलेति । प्रकृति स्वामवष्टभ्यति न्यायात् संसिद्धिप्रकृती त्विमे स्वरूपश्च स्वभावश्चेत्याद्यमरकोषाच्च प्रकृति स्वभावम् । तादशः प्रमावेशो जातः येन तत् स्वभावनिजस्वभावयोरैक्यमेव तासु जातमित्यर्थः । यथोज्वलनीलमणौ महाभावोदाहरणम्—राधाया भवनश्च चित्तजतुनी स्वेदैर्विलाप्य क्रमात् युञ्जन्नद्रिनिकुञ्जकुञ्जरपते निधूतभेदभ्रमम् । वित्राय स्वयमन्वरञ्जयदिह ब्रह्मांडहम्योदरे भूयोभिनवरागहिंगुलभरैः शृंगारकारुः कृतीति ॥ ४० ॥

### सुवोधिनी।

तमोमिश्ररजोवस्थामाहस्विनगममपहायेति स्वस्यिनगमः प्रतिशाशस्त्र संन्यासः दंतवक्रेसभ्रातिरहतेभगवताशस्त्रसंन्यासः कृतः तत् पुनस्तृतीयित्नयुद्धेनवमेचभीष्मवधार्थं चक्रंगृहीतंयुद्धागमनसमयेचप्रतिशाकृता अयुद्धचमानोऽहमेकतइतिमयाचप्रतिशातं सर्वथाशस्त्रंग्राह यिष्यामीतितत्रमत्प्रतिशानृतं कर्तुरथस्थएवसश्रवण्छतः अधिकाचप्रतिशाकृता शस्त्रमेवगृहीतं नतुमारितवानित्यर्थः रथस्यैवचक्रेसुद र्शनावेशः भगवतः प्रतिशात्यागेभूमेः कंपोजातः तदाहचलद्भुरितिचलंतीगौभूमिर्यस्यहष्टांतेनदोषा भावमाह यथाहरिः सिंह इभिमव "यस्य व्रह्मचक्षत्रं चउभेभवतओदनिमि"तिश्रुतेः सायुज्यदानार्थभिष्ममंतः प्रवेशियतुभगवान्प्रवृत्तः तावताउत्तरीयंपिततम्उपित्रआच्छादनार्थम् नोरिक्षितः सभूमावागत्यपिततः अतोवधोनजातइतिउत्तरीयाभावेचभोजनं निषिद्धंतदाहिभीष्मोऽहंकारयुक्तः अतस्तस्यशानस्पूर्त्यं भावात् तदानमारितइतिभावः अत्ररितप्रार्थनाभावोभगवतप्वरितकार्यकर्तृत्वात् ॥ ३७ ॥

रज्ञीमश्रतमोऽवस्थामाहि शतिति नवमिदिनस्येदं रूपं पूर्व इलोकेतुनृतीयिद नस्येतिनपुनरुक्तिः शितास्तिक्ष्णाः विगतिशखाः पाषंडिनोयेन विशीर्णदेशः क्षतजपरिष्ठुतः विशीर्णादेशायस्मिन् कालेवर्षा व्यतिरिक्तकालेमासाष्टकं तत्रक्षताजातायेषांतेक्षतजाताः परिव्राजिनः क्षत्रि योत्तमावातैः परिव्याप्तः अधर्मनिवारको धर्मकदृत्युक्तं भवति अतपवआततायिनंपापिष्ठं मांदृतं प्रसममिससारअयुध्यमानयुद्धात् पापि नमिपयोमोचियतुं प्रवृत्तः कितुमुक्तिदानार्धमित्याह मुकुंदइति ॥ ३८ ॥

सत्विमश्रतमोऽवस्थामाहविजयरथकुदुम्बद्दित अर्जुनस्यरथः सर्वथापरिपाल्यः अतएवतस्यरथःकुंदुम्वंयस्यविविधोजयोविग्तोवाजयो यस्येतिविजयः अर्जुनःजयद्रथवधेहियुद्धे अशक्तद्रवजातः तदास्वयंतोत्रंगृहीत्वाअश्वानांरद्रमीश्चगृहीत्वाजित्यतः सन्कर्णादीनामस्त्राणि रथचालनेनैवद्रीकुर्वन् तदानीतनिश्चयाईक्षणीयः अतिसुन्दरः तादशेमुमूर्षोरेवमितरस्तुनतुपूर्वविस्मरणानंतरंतैः किमृतन्यायेनफलमाह यमिहनिरीक्ष्येतिद्दअस्मिन्नवसरेअंतकालेयद्देवमुक्ताः तत्रांतकालेस्नहस्तिविकवक्तव्यमित्यर्थः ॥ ३९॥

तमोमिश्रमत्वावस्थामाहललितेतिललितायागितः तत्रयोविलासःहंसगजगितवत्पदचालनंमनोहरश्चहासः स्नेहपूर्वकंचिनिरीक्षणतम्।
रजःसत्वभावकार्याणितैःकिलपतः उरुअधिकः भगवन्माहात्म्यमध्यविचार्यप्रवृत्तोमःनोयासांकिंचनकेवलमंतः स्थितएवदोषः कित्तिदोष कार्यमपिवहिविहिः कुर्वतित्याहकृतमनुकृतवत्यद्दतिकृतंभगवचित्रपूर्तनापयः पानादितदनुकुर्वतितिएवमिपसितिलीकिकमिपिज्ञानंनिवृत्तामिन् त्याह् उन्मदांघादितुद्वगतेनमदेनभगवदारोहणार्थमपियतंतद्द्यंघाः सर्वथाअचिकित्स्यित्रदोषाः तत्रापिगोपवध्वः तालास्वभावनचदुष्टाः ताअपियस्यसम्वयात् प्रकृतिस्वरूपमगमन्नात्रसंदेहःकर्त्तव्यःकिलित्रसिद्धे ॥ ४० ॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

सहमादि स्वभक्त मुत्क पेयतीति यच्छुतं तन्मया स्वस्मिन्नेव साक्षादृष्टमित्याह द्वाभ्याम् । स्विनगमम् अशस्य एवाहे साहाध्यमान्नं कारिष्यामीति स्वप्रतिन्नां हित्वा श्रीकृष्णे शस्त्रं प्राहियणमित्येवं रूपां मत्प्रतिन्नाम ऋतं सत्यं यथा भवति तथा अधि अधिकां कर्त्तं र्यस्थः सम्वाव व्हतः इत्यतिलाधवेनाव व्हतिमतस्तर्य रथाद्वि रलेषः केनापि न लक्षित इति भावः अलक्षितप्रकाशोनेकेन रथरक्षार्थं स्थितं स्विति संववित्रं स्वाववित्रं सालेला एव स्वाभाविक्येव नतु मद्गुरोधेनेव कृतितं भावः। भृतो रथचरणाश्चकं येन सः। अभ्ययात् अभिमुखमधा वा। ऋतिमिति सालीलाविक्यतिन्महावल्यास्थलन्ती गौःपृथ्वि यसमात् सः। गतं पतितमुत्तवित्रं यस्य सः। अति संदर्भगोचित्रं वर्ते। श्वावतेनातिसंरभगाविक्यतिनमहावल्यास्थलन्ती गौःपृथ्वि यसमात् सः। गतं पतितमुत्तवित्रं यस्य सः। अति संदर्भगोचित्रं वर्ते। श्वावतेनातिसंरभगाविक्यति वर्त्यपे नानुसन्दर्थान इत्यर्थः। अत्र कृष्णितं स्वभक्तवात् सल्यगुग्रस्य दुस्त्यज्ञस्य युद्धासामध्ये गान्नात् पतितम् अस्ति नास्ति वर्त्यपे नानुसन्दर्थान इत्यर्थः। अत्र कृष्णितं समक्तवात् सल्यगुग्रस्य दुस्त्यज्ञस्य स्वत्रस्य युद्धासामध्ये गान्नात् पतितम् अस्ति नास्ति वर्त्यपे नानुसन्दर्थान इत्यर्थः। अत्र कृष्णितं समक्तवात् सल्यगुग्रस्य दुस्त्यज्ञस्य युद्धासामध्ये गान्नात् पतितम् अस्ति नास्ति वर्त्यपे नानुसन्दर्थान इत्यर्थः। अत्र कृष्णितं समक्तवात् सल्यगुग्रस्य दुस्त्यज्ञस्य स्वत्रस्य प्रदेशसामध्ये गान्नात् पतितम् अस्ति नास्ति वर्त्वाति सत्ति वर्त्वाति सत्ति वर्ति नास्ति वर्त्वाति सत्ति वर्ति सत्ति वर्त्वाति सत्ति वर्ति सत्ति सत्ति वर्ति सत्ति सत्

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

साति स्वप्रतिक्षामपि त्यक्त्वा स्वयमेवार्जनस्य रक्षार्थ शक्षेण योत्स्यते एव तद्यार्जनस्यासामर्थ्य प्रापणमन्येर्दुःशकमित्यतः क्षणमर्जुनं परामृयास्य युद्धं मक्तवात्सल्यद्योतकं द्रक्ष्यामीति मीष्मस्य खमनोरथसिद्धचर्षेव प्रतिक्षेत्यतः खप्रतिक्षामङ्गेनार्द्धने खप्रेमाग्रं तं दर्श-यित्वा भीष्मं प्रमोध तस्योत्कर्षे च लोके विख्यापयामासेति तत्त्वम् ॥ ३७॥

किंच यदैव रथाद्भगाववप्छ तस्तदैव क्षतजैः रुधिरैः परिष्लुतः सांग्रामिकरुधिरनद्या विन्दुत्याप्तः । नतु कवचस्य विद्यमानत्वात् क्यं तथात्वं तत्राह । मम शितैर्विशिक्षैर्धतस्तस्य संरम्भसुखवर्द्धनार्थे तदिष मया हन्यते समैवेतिभावः । यतो विशीर्याकवचः प्रवनात् प्रागेवासवदित्यर्थः । प्रसमं वलात् वारयन्तमर्जुनमप्यतिकम्य मद्धधार्थम् अद्य खहस्तेनैव भीष्मं विधिष्यामीत्यभिप्रायेगोत्यर्थः । अभिससा रेत्यत्राभिराब्देनाभिसरंतं नायकमालोकितवत्या नायिकाया इव तदानीं मम सुखमपारमेवाभूदिति द्योत्यते । न अन्येपां मुकुन्दो मुक्ति प्रदोऽपि मम तु गतिस्तथाभूतत्वेनैव प्राप्यो भवत्विति हे कृष्णा त्वामहमेतदेव प्रार्थये इति भावः ॥ ३८॥

तदेवमन्यायैरपि भक्तरक्षाव्यग्रे कृष्णो रतिमाशास्ते। विजयस्य अर्जुनस्य रथ एव कुटुम्वोऽकृत्यैरपि रक्षगीयो यस्य तस्मिन्। तोत्रं प्रतोदः। रइययः प्रग्रहाः भृता हयरइमयो यस्य सन्तीति बीह्यादित्वात् इनिः। इक्षणीयेति वामहस्ते अश्वधारण्यज्जुः दक्षिण्यहस्ते प्रतोदः मुखारविंदे हुं हुमिति तन्नोदनशब्द इति शोभया यन्माधुर्यमीक्षणीयं तन्मयैव तदा खचक्षुर्थामीक्षितं न त्वर्जुनेनापि इति भावः तस्मिन् भगवति मम ड्डा सम्पर्धेरिति । अतएवाई संप्रति मर्त्तुमिच्छामि यन्मृत्वा तदेव माधुर्य मुहुर्दश्यासंजीवंस्तु तत् कथं द्रष्टुं प्राप्स्यामि प्रकटप्रकाशे तस्या लीलाया भगवता समाप्तीकृतत्वादिति भावः। अत्र म्रियमागास्यत्यनुकत्वा सन् प्रत्ययेन इच्छाधीनमृत्योभीष्मस्य भगवतः सका-शादिष तल्लीलायां अतिलोभो व्यज्यते । तेन च सा युद्धलीलापि नित्येत्यन्यस्या लीलाया नित्यत्वे केमुत्यमानीतम् । नतु सत्यं तस्यामेव में सार्थ्यलीलायां त्वमत्यासको यत् प्रतिश्लोकमेव तामास्वादयंस्तामेवोद्गिरंस्तलीलाविशिष्टे एव मयि रितं प्रार्थयसे किन्तु संप्रति मृत्वैव तल्लीलाप्राप्तौ तव कि प्रमाण मित्यत्र मरणे या मितः सा गतिरिति प्रसिद्धात प्रमाणादिप तव दर्शनमेव परं प्रमाणिमत्याह च्यान पट्याचा । अदे अन्येनापि हताः सन्तः असुरस्वभावा अपि तादशक्षानिनाम् अपि सरूपं सायुज्यमुक्तिं प्राप्ताः । अदं तु भक्तस्तत्रापि मरगाकाले ताददामितमांस्तं त्वां साक्षादृष्ट्वा मृत्वा कथं न तां लीलां प्राप्स्यामीति भावः। अत्र नरसारथ्यमनिधकारिश्योऽप्रि सायुक्ष्यदायित्वमिति युगपदेवानैश्वर्थस्वीकारलक्ष्यां महामाधुर्थं सर्वभगवत्स्वरूपासाधारणमेव तदानीमुदितमिति श्रेयम् ॥ ३९॥

्तु यत्सारथ्यसम्बधिन्यै लीलायै सञ्बतत्त्वक्षोऽपि त्वं स्पृह्यसि सोऽज्जुंन एव तर्हि मम सञ्बेषु प्रेमवत्परिकरवृन्देष्वेको मुख्य होति निर्द्धार्थ्यते । मैवम् । ततोऽप्यज्ज्जेनादप्यतिमुख्यतमाः सर्व्वतोऽिष प्रेमोत्वर्षवन्तो य तव प्रियजना वर्त्तन्ते न तेषां पदवीं प्रार्थ-यितुमपि कोऽपि साहसं धत्ते । भवतु तदपि तदुदेशेनाप्यस्मिन्नन्तकाले कृतार्थीभवामीत्याह लिलतेति । ललितगतिश्च राजनृत्यादिवै-द्राधी कायिकी विलासश्च धीरलालित्यादिवैदग्धी मानसी वल्गुहासश्च परिहासवैदग्धी वाचिकी प्रणयनिरीक्षणञ्च प्रेममयस्ववैभावव्यं-जककटास्रवेदग्धी चाक्षुषी च तैरुपकिष्पतो दत्तः उरुमीन आदरः पूजा वा याभ्यस्ताः। तेन स्वस्मिस्ताः प्रसाद्यितुं स्वीयानसाधार-गान् सर्वानेव साद्गुगयभावांस्तासु विनियुक्तवान् । अतस्तासां निरुपाधिकस्य प्रेमातिशयस्य फलं यत् स्वसाद्गुगयसर्वस्वापगापूर्वन कत्वतकर्जुकानुरंजनप्राप्तिः सा ह्ययन्त्रणीवोभयतः सुखमयमहाबशीकारव्यंजिका अर्ज्जुनस्य तु प्रेम्गणः फलं वशीकारव्यंजिका सारथ्य-दृत्यादिमात्रप्राप्तियां सा त्भयतो यन्त्रणामपीति न तत्समकक्षतां प्राप्तुमहत्यज्ज्ञुन इति भावः। अत्रैव तृतीयान्यपदार्थे वहुवीही ताभिरिष स्वीयसाद्गुणयसर्वस्वापेणोन सोऽनुरंजित इति परस्परानुरंजनसुखमयं सख्यं व्यंजितम् । ततः पवासाधारणसीभाग्यप्रदान-माह । कृतं रासे नृत्यं गीतं वा वादनानि च यथा तथैव ता अप्यनुकृतवत्यः तत्साहित्येनैव रासे तासां तथा नृत्याद्युक्तः । न च तासां तत्ति इक्षगाङ्ग्यासः कोऽण्यासीदित्याह । उन्मदेन महाप्रेमोत्थेनान्धाः व्यवहारमात्रमदृष्टवत्यः । अतः किलेत्याश्चर्ये यस्य प्रकृति स्वमा वसवागच्छन् भगवतो नृत्यगीतादिवैदग्ध्यादयः स्वाभाविकाः असाधारणाः अनन्ता एव ये गुणास्तान् सर्व्वानपि तेन दत्तान् प्रापुरित्यर्थः। अङ्गुनाय तु स्वमसाधारमं तदपेक्षितं विष्ठष्टत्वमपि भगवता न दत्तमिति। यद्वा कृतं गोवर्धनधारमादिकम् । उन्मद उन्माद इति विरहश्च दर्शितः। एवं चातिमन्दास्तावत् सायुज्यं प्रापुः। अत्युत्कृष्टाः प्रेम्गाः परां काष्ठाम्। अहं तु तयोर्मध्यवर्ती स्वाभीप्सितां तव सारध्यलीलां कयं न प्राप्स्यामीति मातः॥ ४०॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

श्रीकृष्णोगतिर्भविवतिप्रार्थियतुं तत्कृतमनुत्रहंवदति खनिंगममिति सहायमात्रं करिष्यामिनशस्त्रयुद्धमित्युद्योगे कृतं प्रतिकः पुनर्युद्धकाले मयाप्रतिदिनं दशसहस्रपुरुषघातिना पांडवसैन्येविमिषते सितधनं अर्थप्रति जातकोधः स्वयमस्मत्पराजयाय प्रवृत्तस्तांस्व पुनयुक्षकाल स्वाराज्यामायुर्वत्राहिषयामीतिमत्प्रतिक्षामृतंयथास्यात्तथा ध्यधिकंकत्तुरथस्यस्ततोऽवप्छतोऽवतीर्गास्सन् धृतरथचरणः प्रातक्षामपश्यमा । ज्ञानिक्षण्या । अभिमुखमधावत् कथंभूतः चल्नतिकुपिताद्गीता गीर्धरणीयस्मात्सः गृहीतसुदर्शनः हिरः सिंहइभंगजंहंतुमिव अभ्ययात् । अभिमुखमधावत् कथंभूतः चल्नुः चलंतीकुपिताद्गीता गीर्धरणीयस्मात्सः गृहात छ्वराः । वास्ति अपन्य भारतिस्तेलधीतरितितिष्गीविशिषेवीगीर्हतोऽप्यविशीगादंशः क्षतजपरिप्लृतेवेशे अर्जुनेनस्वप्रतिक्षांपालय भगवन्द्रसेयंवादिनाः वा पद्भार पार्थित स्वार्थिमानोऽपिप्रसभेषलान्मद्वधार्थमभिससारसमुकुंदः मुक्तिप्रदः मेआततायिनोगितः स्वारमप्रदोमवतु ॥ ३८॥ विजयरणकुरुम्बे अर्जुनरथः कुटुंवः कुटुंवहवरक्षणीयोयस्यतस्मितः आत्ततोत्रेगृहीतप्रतीवेगृहीताश्वप्रप्रहेश्वणीये इहयुक्रेयनिरी विजयरणकुरुम्बे अर्जुनरथः कुटुंवः कुटुंवहवरक्षणीयोयस्यतस्मितः आत्ततोत्रेगृहीतप्रतीवेगृहीताश्वप्रप्रहेश्वणीये इहयुक्रेयनिरी क्ययेम् रश्रवः अन्यत्परार्णः समित्रात् अज्ञतानिहोत्रयाजिन्समतुत्योभच गुरुहोत्तमागयान् इति प्रवस्तेसगवतिमेरितरस्तु ॥ ३९ ॥ भाति अञ्चार्णः सुरवृषमैरपीभ्यमाणाःतान्क्षिपं अज्ञतानिहोत्रयाजिन्समतुत्योभच गुरुहोत्तमागयान् इति प्रवस्तेसगवतिमेरितरस्तु ॥ ३९ ॥

मुनिगगानुपवर्यसङ्कुलेज्नःसदिस युधिष्ठिरराजसूय एषाम्। ऋईगामुपपेद ईक्षगाियो मम दशिगोचर एष ऋविरातमा ॥ ४१ ॥ तमिममहमजं शरीरभाजां हृदि हृदि धिष्ठितमात्मकाल्पितानाम्। प्रतिहशमिव नैक्धार्कमेकं समधिगतोऽस्मि विधूतभेदमोहः ॥ ४२ ॥

कृष्ण एवं भगवति मनोवाग्दृष्टिवृत्तिभिः। ॥ सूतउवाच ॥

त्र्यात्मन्यात्मानमावेदय सोज्तःश्वास उपारमत् ॥ ४३॥ सम्पद्यमानमाज्ञाय भीष्मं ब्रह्माि निष्कले । सर्व्वे बभूवुस्ते तूर्णीं वयांसीव दिनात्यये ॥ ४४ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

किंच लिलतयासुंदरयागत्याविलासेनरासादिनावल्गुनासुंदरेगाहासेनप्रगायनिरीक्षगोनाविनयपूर्वकेगावलोकनेन च कलितः बहुमा नोयासांताः अतप्वोन्मदांघाः अतप्वभगवतः कृतंचेष्टितमनुकृतवत्यः किलगोपवध्वः यस्यप्रकृतिस्वभावमगन्नगमन्ततिस्मन्भगवित्से-रतिरस्त्वितपूर्वेगान्वयः ॥ ४० ॥

#### भाषा टीका।

अपनी निगम (प्रतिज्ञा) को त्यागकर मेरी प्रतिज्ञा को सत्य और अधिक करने को रथ से उतर कर रथ चरण ( चक्र ) है। ये मे लेकर जो मुझे मारने को जैसे हाथी पर सिंह दौडता है दौडे थे, जिनके भार से पृथवी चलायमान होती थी उत्तरीय गिराजाता है। उन भगवान मैं मेरी रति हो ॥ ३७॥

शास में ने राज्य के स्वर्ण वाणोंसे आहत, शीर्ण कवच, और क्षतज परिष्छत जो श्रीकृष्ण हठात मेरा वध करने कों दौडे थे वही सुकुंद मेरी गीत हों ॥ ३८ ॥

अर्जुन का रथ जिनका कुदुम्ब है तोत्र (चाबुक) हस्त और सारणी की शोभा से दर्शनीय श्रीभगवान में मुमूर्ष मेरी रित हो | जिन भगवान का दर्शन कर हत बीरजन उनके समान रूप-अर्थात सायुज्य मुक्ति को प्राप्त हुए हैं॥ ३९॥

जिनकी लिलत गति; विलास, वल (मनोहर) हास, और प्रणय कटाक्ष से कलिपत बहुमान गोपवधू गणा, उन्मदान्ध होकर, भी जि-नकी लीलाओं का अनुकरण करती जिनके स्वरूप को प्राप्त हुई उनभगवान में मेरी रित हो ॥ ४० ॥

# श्रीधरखामी।

जगत्पूज्यतामनुस्मरन्नाहं। मुनिगगौर्नृपवर्येश्च संकुले ब्याप्ते अन्तःसदिस समामध्ये युधिष्ठिरस्य राजसूये । एषां मुनिगगादिनाम् ईक्षणीयः अहो रूपमहो महिमेत्येवमाश्चर्येणावलोकनीयः सन् उपपेदे प्रापः। एष जगतामात्मा मम हिशागोचरः दृष्टिविषयः सन् आविः प्रकटो वर्त्तते अहो मे भाग्यमिति भावः ॥ ४१ ॥

सोऽहं कृतार्थोऽस्मीत्याह तमिममिति । इममजं सम्यगधिगतः प्राप्तोऽस्मि । सम्यक्त्वमाह विधूतभेदमोहः । तद्यै भेदस्योपाधिकत्व माह आत्मकालिपतानां स्वयंनिर्मितानां शरीरभाजां प्राणिनां हृदि हृदि प्रतिहृदयं धिष्ठितम् अधिष्ठितम् । अकारलोपस्वार्षः । नैकथा अनेकथा अधिष्ठानमेददिनेकथा भातमित्यर्थः। अत्र दृष्टांतः सर्वप्राणिनां दृशं दृशं प्रति एकमेवाकमनेकथा प्रतीतमिवेति ॥ ४२ ॥

मनोवाग्दछीनां वृत्तिभिः। परमात्मनि श्रीकृष्णे । अन्तरेव लीनः श्वासी यस्य सः ॥ ४३॥

निष्कले निरुपाधीः संपद्यमानं मिलितम् आज्ञाय आलक्ष्य ॥ ४४ ॥

### श्रीवीरराघवः।

य्धिष्ठिरराजस्यसभास्य रूपमनुसंघायतस्यखचश्चविषयतांप्रार्थयतं सुनीतिहे युधिष्ठिर राजसूये सुनीनांगर्योनेपश्रेष्ठेश्वसंकुल्या सन द्यसिसभामध्ये यंगवां युधिष्ठिरकतमुनिगगाद्यभिमतं चार्हणामप्रपूजाविकमुपपेदेप्राप्तः गर्वक्ष्मग्रीयोसदे तुरात्माश्रीकृष्णः समहाशिमोच रोहिष्टिविषयः सन्नाविभेवतुयावत्तनुत्यामचित्रष्टिवितिभावः यद्याशाविसात्माप्रकाशस्त्रक्षणः दशिगोस्यरोऽस्त्वित्यन्वयः॥ ४१॥

अध्सर्वात रात्मा ममुर्भधाय उक्तविधामन् वर्त्वप्राप्तोऽस्मीत्याहतमिति तसुक्तविधमात्मना मगवतास्वेनैयतल्लक्मोनुक्पंकिएतानां देस भाजांहदिहदिप्रतिहृद्यंबस्तुत्यक्रमेवप्रतिहृद्यंनीकथावस्यतमकै सूर्यमिवधिष्ठतम्भिष्ठितं सम्भिगतोऽस्मिकथंभूतः विद्यतः अदमोहः -,16<u>.</u>

### श्रीवीरराघवः।

अब्रह्मात्मकस्ततंत्रवस्तुभेदशानात्मकोमोद्दपंकरूपेबात्मनिदेवमनुष्यादि भेदमोद्दश्चयस्यतथाभूतः यथादिविष्ठः सूर्यः एकपवसन्प्रतिद शंहशाहशावारिगतेनापिनयनेनाभिमुखंतत्त्वादीभासमानः जलादिगतमुद्धिहासादिदांषागोचरः व्याप्यवस्तुगतदोषसंगरिहतोऽर्कस्तमिवहः दिद्विधिष्ठितमितिद्वष्टांतार्थः अन्यथाऽकेद्दष्टांतोनघटतेऽतीयंतिदेषित्वेद्दष्टांतः "वृद्धिद्गासभाकत्व मंतभीवादुभयसामंजस्यादेवंदर्शनाच ३।२।२० इतिहिसुत्रितंतत्रहि"नस्थानतोऽपिपरस्योभयिलगम्।११।इत्यनेनपृथिव्यदिष्वतरात्मतयावस्थितस्यापिपरमात्मनो निखिलानिरस्तदोषत्वसम स्तकल्यागागुगाकरत्त्वरूपोभयलिंगश्रवगात्पृथिव्यादिगतदोषसंस्पर्शभावमभिधाय"अतएवतूपमासूर्याकाशादिव १८इत्यनेनयतोनानाविधे षुस्थानेषुस्थितस्यापिपरस्यव्रद्यागो नतत्त्रयुक्तदोषभाक्तवमपिततपवजलदर्पणादिप्रतिविवितसूर्योदिवत्परमात्मातत्रतत्रावस्थितो ऽपिनिर्दोष इति शास्त्रेषूपमाक्रिये "आकाशमेकंहियथाघटादिषुपृथग्भवेत् तथात्मैकोद्यनेकस्थोजलाधारेष्विवांशुमान् एकएवहिभूतात्माभूतेभूतं व्यवस्थित एकधाबहुधाचैवरस्यतेजलचन्द्रव"दित्यादिष्वित्यभिधायपुनः"अंवुद्वदग्रहणात्तुनतथात्वम्१९इत्यनेनसूत्रेणांबुद्रपेणादिषुयेषासूर्यमुखादयो र्युंद्यंतेनतथापृथिव्यादिषुस्थानेषुपरमात्मागृञ्चते अम्ब्वादिषुहिसूर्योदयांभ्रांत्यातत्रस्थाइवगृञ्चंते नपरमार्थतस्तत्रस्थाइहतु 'यःपृथिव्यातिष्ठन्य आत्मनितिष्ठन्त्रि"त्येवमादिनापरमार्थतपवपरमात्मापृथिव्यादिषु स्थितागृह्यते अतः सूर्यादेरंबुदर्पणादिप्रयुक्तदोषानुषं गस्तत्रतत्रास्थित्यभावा देवातोनतथात्वंदार्ष्टोतिकस्यनदृष्टांततुल्यत्वामातिपारिचोद्यवृद्धिहासभाक्त्वमित्यादिसूत्रेगापृथिव्यादिस्थानांतर्भावात्स्थानिनः परब्रह्मगाःखरू पतोगुगातश्चपृथिव्यादिस्थानगत वृद्धिद्वासादिदोषभाक्त्वमात्रंसूर्यादिदृष्टांतेननिरस्यते कथिमत्यवगम्यते उभयदृष्टांतसाम मंजस्यादेव मिति निश्चीयते आकाशमेकंहि यथाघटादिषुपृथग्भवेत जलाधारेष्विवांशुमानितिदोषवतस्वनेकेष्ववस्थिते स्तस्याकाशस्यवस्तुतो नवस्थि तस्यांशुमतश्चद्वष्टांतस्योपादानंहिपरमात्मनः पृथिव्यादिगतदोपभाक्त्वनिवर्त्तनमात्रेप्रतिपाद्यसमंजसंभवति घटकरकादिषुवृद्धिहासभाक्षुपृ थक्युज्यमानम्याकाशंवृद्धिह्।सादिदोषैर्नस्पृश्यतेययाचजलाधारेषुविषमेषुदृश्यमानोष्यंशुमांस्तद्गतवृद्धिह्।सादिभिर्नस्पृश्यते तथायंपरमा तमापृथिव्यादिषुनानाकारेष्वंचेतनेषुचेतनेषुचस्थितः तद्गतन्नादिकृत्सादिदोषैरसंस्पृष्टः सर्वत्रवर्त्तमानोऽप्येकग्वास्पृष्टदोषगंधकल्यागागुगाक एवयथाजलादिषुवस्तुतोऽनवस्थितस्याप्यंशुमतोहेत्वभावाज्जलादिदोषानभिष्यगस्तथापृथिव्यादिष्वव स्थितस्यापिपरमातमनोदोषप्रत्यनीका कारतयादोषहेत्त्वभावाचनदोषगंघइतिभाषितम् ॥ ४२ ॥

इत्थंभगवित्रुष्णापरमात्मिन मनावाग्द्दश्चीनांवृत्तिभिर्व्यापारैरात्मानं प्रत्यगात्मानमावेश्यतेनसंयुक्तमनुसंघायत्यर्थः सभीष्मोक्तत्वासों

तुर्लीनः प्राणवायुर्थस्यतथाभूतउपारमञ्जरीरविहायार्चिरिदगत्यापरमपुरुषप्राप्तइत्यर्थः॥ ४३॥

तलानः प्राग्णवायुयस्यतयासूत्रवपारमञ्ज्ञरायवर्षा पराप्याय स्वेतत्रत्यात्र्व्णविभू बुर्ययादिनात्ययेरात्रीव-तदाभीष्मंनिष्कलेनिर्देषिब्रह्माग्रिसंपद्यमानं सर्वोपाधिविधूननपूर्वकंब्रह्मप्राप्तवंतमभिज्ञाय सर्वेतत्रत्यात्र्व्णविभू बुर्ययादिनात्ययेरात्रीव-यांसिपक्षिग्रास्तद्वतः ॥ ४४

### श्रीविजयध्वजः।

मुनीनांगग्रीः नृपाग्रांवर्येश्चसंकुलेनिविडेयुधिष्ठिरराजसूयेयक्षे अंतः सदिसयेषामृष्यादीनांमध्येयोऽईग्रामप्रपूजामभिपेदेपाप्तवान्युधि ष्टिरपृष्टभीष्ममुखेनायमेवाप्रपूज्यद्दतिशास्त्रत उपपाद्यादत्तेतिवा सप्पश्चात्मापरमात्मा मत्कादग्यान्मरग्रासमयेममद्द्रिगोचरः दक्षि विषयमाविरभूदहोममभाग्यमितिशेषः आविरात्माप्रकाशरूपद्दतिवा ॥ ४१ ॥

आत्मत्वाविवरण्यूर्वकंस्तौति तामिमामिति चक्षुरिममानित्वेनप्रतिहर्श हरां हरांप्रतिनैकधाचक्षुरिद्वियानियामकतया अनेकरूपंस्थितम क्षियथेकमेवसमधिगच्छितिवानी तथाअहमप्यात्मनाकिप्तानांमृष्टानांशरीरमाजांजीवानांहृदिहृदिविष्ठितंविविधंवहुरूपंस्थितं तामिममजं कृष्णम्पकृत्वसंख्याविशिष्टं नाहित्वोपेतं समधिगतोऽस्मिबातवानिस्म कीहशोऽहंविधूतभेदमोहः अवतारगुणादिषुनिरस्तभेदभ्रमञ्जिष्ट् य श्वास्थितवस्तुविद्यानीवा अधिगंत्रधिगमनाधिगम्यानांभेदस्याबाधितानुभवसिष्दत्वादन्योऽहंकृष्णोऽन्यइतिभेदमोहनिरासवचनं निजदर्शनदु शास्थितवस्तुविद्यानवित्यात्मत्यपदप्रयोगेणानिरस्तम् अन्यथातस्यवैय्यर्थस्यात् शरीरभाजामित्यनेनचेतनबहुत्वसिद्धेश्च "नित्योनित्यानां शासहित्रक्षेतनानामि"तिश्रुतेः ॥४२॥

इतुतिमुपसंहरति क्षितिभरमिति श्वसनइववायुर्यथावंशेषुवेणुषुमिथः संघर्षणाद्वह्निमृजतितथाऽ यंश्रीकृष्णः क्षितिभरंभूभारम्बसुर वळ्ळक्षणमवरोपितुमवतारियतुंकुक्षणामक्षवंशे वाह्रियूताख्यदहनममृजद् तिमममनुव्रतानांभक्तानामातिहतवानार्तिहाअंब्रियस्यसतथोक्त

वल्लस्यान्य वार्षः । ४३ ॥ स्तमजं श्रीकृष्णांहादेपरिश्यमत्यनीं मरण्यभेशरीरंजहामिसकृष्णोऽत्रानुग्रहंकरोत्वितिवाक्य शेषः ॥ ४३ ॥

स्तमज आश्वास्त्राही स्वाद्या स्वाद्या

### क्रमसंदर्भः।

तदेवं सर्वश्चभावःवमुक्त्वा सर्वपूज्यत्वसर्वमनोहरत्वसर्वदुर्लभइर्शनत्वान्याह मुनिगणिति आत्मा परमात्मा ॥ ४१ ॥ तदेवं सर्वश्चभावः तत्र विभूगत्वं हर्शयत् स्वमत्युषंकवेषत्मेवोपसंहरति तमिति । तभिमममत्रतः एवोषविष्टं श्रीकृष्णां व्यष्टचन्तर्थामि परमात्मत्वस्थापनायः तत्र विभूगत्वं हर्शयत्वे स्वमत्युषंकवेषत्ते विद्याचकारो प्रावेशयात्रे पुरुषं वसन्तमित्युक्तविशाः तत्तव्यूपेणा भिष्य-स्पेणा निजांशेन शारीरभाजांष्ट्रवि हर्षि विष्ठितं-केव्यि स्ववद्वित्तवित्याचकारो प्रावेशयात्रे पुरुषं वसन्तमित्युक्तविशाः तत्तव्यूपेणाः भिष्य-स्पेणाः निजांशेन शारीरमाम्भविषेषे समीधगतोऽस्मि । अयं परमानन्यविष्ठहः एव व्यापकः स्वान्तभूतेन विज्ञाकार्यविशेषणान्तर्थामि-स्वतिव्यवसन्तमपि एकमसिक्तम् विभेव समीधगतोऽस्मि । अयं परमानन्यविष्ठहः एव व्यापकः स्वान्तभूतेन विज्ञाकार्यविशेषणान्तर्थामि-

### कमसन्दर्भः।

तया तत्र तत्र स्फुरतीति विद्यातवानिस्म । यतोऽहं विधूतभेदमोहः अस्यैव कृपया दूरीकृतो भेदमोहः भगविद्वग्रहस्य व्यापकत्वासम्भान्वनाजनिततत्रानात्वक्षानलक्ष्मणो मोहो यस्य तथामृतोऽहम् । तेषु व्यापकत्वे हेतुः । आत्मकिल्पतानाम् आत्मन्येव परमाश्रये पादुष्कृतानामा अत्र दृष्टान्तः प्रतिदिशमिति । प्राण्यानां नानादेशस्थितानामवलोकनमवलोकनं प्रति यथैक एवाको वृक्षकुष्यायुपरिगतत्वेन तत्रापि कृत्रविद्वयवधानः संपूर्णत्वेन सव्यवधानस्त्वसंपूर्णत्वेनानेकधा दृश्यते तथेत्ययः । दृष्टान्तोऽयमेकस्यैव तत्र तत्रोदय इत्येतन्मात्रौशे । वस्तुतस्तु श्रीमगविद्वग्रहोऽचिन्त्यशक्त्या तथा तथा भासते सूर्यस्तु दूरस्थविस्तीर्णात्मातास्थावेनोति विशेषः । अथवा तं सूर्वविधान्तस्त्रप्त इममग्रत एवोपविष्ठं शरीरभाजां दृदि दृदि सन्तमि समधिगतोऽस्मि । यदप्यन्तयामिरूपं तस्माद्रपादन्याकारं तथाप्येतद्रप्तम् मेवाधुना तत्र तत्र पश्यामि सर्वता महाप्रभावस्यैतस्य रूपस्याग्रतोऽन्यस्य रूपस्य स्फुरणाशकोरिति भावः । अत्र दृष्टान्तो देशभेदंऽप्यभिद्वाधनाय क्षेयः नतु पूर्णपूर्णत्वविवक्षाये । अमीलितदृग्वधारयदिति कृष्ण एवं भगवति मनोवाग्दिष्टवित्तिमिरित्युपक्रमोपसंहारादत्र अभिवग्रह एव प्रस्तूयते । ततो नेदं पद्य ब्रह्मपरं व्याख्येयमिति ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

सम्पद्यमानमिति । निष्कलब्रह्मशब्देन मायातीतो नराकृतिपरब्रह्मरूपः श्रीकृष्ण प्रवोच्यते तस्मिन् सम्पद्यमानता च तत्समितिरेव तथांकं सप्तमे—अधोक्षजालम्भमिहाशुभात्मनः शरीरिणः संसृतिचकशातनम् । तद्ब्रह्मानिर्वाणसुखं विदुर्वेधास्ततो भजध्वं हृदये हृदोश्वरमिति । अत्र भीष्मस्य वसुत्वात् "यावदिधकारमवस्थितिराधिकारिकाणाम् ॥३।३।३२॥इत्यधिकरण्विरोधः स्यादिति चेत्। न । लीलया स्वांशेन तत्राप्यवस्थिति सम्भवात् । "तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवती"ति मुक्तिविशेष प्रतिपादकश्रुतः । प्रवमेव महामारता

विरोधोऽपि स्यात् ॥ ४४ ॥

# सुवोधिनी ।

रजोमिश्रसत्त्वावस्थामाहमुनिगणोति मुनीनांगणाः नृपश्रेष्ठाश्चसात्विकाराजसाः नतुतामसाः अंतःसर्दाससभामध्येसर्वतोमध्यस्थाने आभिषचिनकेश्वहिनसदस्यपूजायांयः सर्वोत्तमः सपूजनीयदृत्यस्मदादिभिष्ठकेष्ठणणंपुरुषोत्तमंमत्वायेषांसर्वेषामेवसंभावितत्वात् अतः सर्वेषांपूजांस्वयमेवगृहीतवान् तदाचसर्वेषामेवदेश्वणीयोजातः सददानींममदिशगोचरः तत्सौंदर्यसांप्रतंपद्यामितस्यप्रकटात्मत्वमाह आविरात्मेतिसोप्ययमवनत्वेतिसमन् ॥ ४१ ॥

पगता ॥ २२ ॥ एवंस्वमनिसस्फ्रिरितप्रमेयमनू द्यअन्तस्वकृतमात्मसमर्पणंचानू द्यशरीरंत्यक्तवानित्याहकृष्णा इतिकृष्णे भगवतिमूलाविभावस्रपेपवकाय पवस्वमनीसस्फ्रिरितप्रमेयमनू द्यअन्तस्वकृतमात्मसमर्पणंचानू द्यार्थिकात्मनस्तुआत्मन्येवयोजनम् इहैवसमवलीयं तेप्राणा"इत्यथे को

भवति अंतः इवासः अंतरेवश्वासोस्यसउपारमत्दह्त्यकवात् ॥ ४३ ॥
तथाचसर्वेषामिपतथाप्रतीतिर्जातेत्याहसंपद्यमानमिति अंतः स्थितोभगवान् प्रकटीभूतः तत्तस्यसायुज्यवृत्तं महतीकाचित्प्रभानिर्गताः
तथासर्वेर्षातंभीषमोत्रह्याग्रासंगतहतितदापरमपुरुषांथिविष्नोमाभूदितिसर्वेत्ष्णीभूताः श्रोत्रेन्द्रियस्यानावृतत्वात् विषयिरिन्द्रियद्वारामनस्यः
आकर्षणासंभवात् तद्द्वाराचजीवस्ययथासुषुष्तीवयांसीवेतियथासंध्यापगमेतत्तत्स्यानेस्थितः।पक्षिणः अश्वस्तनद्वाद्विचारशून्याः पूर्वोत् सन्धानरहिताश्चनिद्वाभावेतुष्णींभवन्तित्वयासर्वेद्वाभावंश्वत्वादद्यान्तंचद्वप्रद्वातंचकव्याभावात्वद्वाभूतापवंतूष्णींजाता इत्यर्थः॥ ४४॥
सन्धानरहिताश्चनिद्वाभावेतुष्णींभवन्तित्वयासर्वसदेवद्वाभावंश्वत्वादद्यान्तंचद्वप्रद्वातंचकव्याभावात्वद्वाभूतापवंतूष्णींजाता इत्यर्थः॥ ४४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

किश्च सम्प्रति प्रत्यक्षीकृतं मद्भाग्यमेव तत्प्राप्तेरावदयकत्वं कथयतीत्याह मुनीति । अन्तःसदिस सभामध्ये युधिष्ठिरस्य राजम्यै एवां मुनिगगादिनामीक्षणीयः अहो रूपम् अहो महिमेत्येवमाश्चर्येग् विलोकनीयः सन् उपपेदे प्राप यः स एव ममात्मा मत्प्राणनीयः सम्प्रति मम हिशागोचर एव मत्प्रार्थितं दद्दान एवास्ते इति ॥ ४१ ॥

सम्प्रात मन दार्थ निर्दिश्वयि मे रितरिश्वत्येकवारमपि युष्मत्प्रयोगेगा न बूषे किन्तु प्रतिद्देशोकमेव विजयसके विजयर प्रकृतु मे रितरस्तु जरगारितः नतु कथं ति हिश्वयि मे रितरस्त जरगारितः नतु कथं ति हिश्वयि मे प्रविद्देश मे रितरस्तु जरगारितः विजयस्थ ने प्रविद्देश में रितरस्तु जरगारितः विजयस्थ निर्देश स्थानितः । तं पार्थसारियः प्रविद्देश में रितरस्त क्षित् विजयस्थ निर्देश स्थानितः । तं प्रविद्देश स्थानितः । तं प्रविद्वेश स्थानितः । तं प्रविद्देश स्

-y£ \

### ्श्रीविश्वनाथचकवर्सी ।

अपि तु युद्धात् पूर्व्वमपि खाभाविकेन मनोर्थेन मम इदि तथा भात आसीदेवेति भावः। तेनात्र न मम दोषः किन्तु हृदिस्थः परमे-श्वरो यं यथा स्फोरयति भद्रममद्रं वा स तथैवाशास्ते इत्याह शरीरमाजां जीवानां हृदि हृदि घिष्ठितम् अकारलोपइछान्द्रसः। आत्मनां खयमेव कल्पितानां—"यथाग्नेः क्षुद्रा विरुफुलिंगा व्युधारन्ती"ति श्रुतेः । न चाई हृदिस्यं तत्पदवाच्यं पार्थसारियमन्यं तथा पुरस्यम् इदंपदवाच्यं चतुर्भुजम्यं जानामीत्याह प्रतीति। आकाशस्थमेकम्कमिषि जनानां प्रतिहशम् अवलोकनं प्रति नैकथा अनेकथा अयं मनमूर्द्धोपरि अर्क इति प्रतिमूर्द्धोपरिस्थमर्के तत्तदृष्टिमेदादनेकथा मातमिवेति । विधूतो दूरीकृतो मेदरूपो मोहो येन सः । अयमर्थः मम हृदि तथा युधिष्ठिरादीनां वसुदेवादीनां उद्धवादीनां नन्दादीनाम् गोपिकानांच हृदि मावभेदेन प्रेमतारतम्येन च पृथक्पृथक्लीलयेव युद्यपि र रित तद्य्येक एव कृष्ण इति जानामि । तथा तेषां तत्तत्र्येम्गां तत्तद्भावानां चोत्कर्षतारतम्यं सर्वमहं जानाम्येष । तदिषे मे पार्थसारथावेव स्वामाविक्यासक्तिस्तां त्यक्तुं नैव शक्तोमि । पुरस्थितेऽस्मिश्चतुर्भुजक्रपे धारगापि कृता साप्यकिचित् करैवाभृदिति ४२

एवमात्मनि हृदि स्थिते कृष्णे पार्थसारथावित्यर्थः। आत्मानं स्वम् आवेदय आवेदायुक्तं कृत्वा । अन्तरेव लीनः स्वासो यस्य सः।

वृद्धिवृद्धेरुपरराम ॥ ४३ ॥

एवं भीष्मः स्वाभिलिषतं पार्थसारिष प्राप । लोकास्तु तदिवहांसी भीष्मो ब्रह्मणि लीनो वभूवेति जानन्ति स्मेत्याह सम्पद्येति अञ्चाने दृष्टान्तः वयांसि पक्षिगाः दिनस्यात्यये अवसाने सति दिनं न दृष्टमिति दिनस्य स्वरूपध्वसमेव ज्ञात्वा यथा तूर्णीं भवन्ति न शब्दायंते इत्यर्थः । नतु वस्तुतो दिनं नदयति तत्रक्षगोऽपि वर्षान्तरे तस्य स्थितरवगमात् यामचतुष्टयानंतरं तत्रापि पुनरागमात् । एवं भीष्मस्याप्यत्यये भीष्मो मुक्त इत्यक्षा विदन्ति । विक्षास्तु तदैवप्रकटप्रकाशे रथचरगापाणिना कृष्णेन भूमी धावता सह भीष्मो युद्धयत प्वेति पुनरागामिकृष्णावतारे तेन सह भीष्म आविभेविष्यत्येवेति जानन्ति।यद्वा निष्कं पदकं लातीति तस्मिन् ब्रह्मशि श्रीकृष्णो इत्यर्थः। ब्रह्मसायुज्य प्राप्तिस्तु न व्याख्यया नित्यपार्षदभीष्मेगा फलाभिसन्धिरहिताया रतेर्वाध्छितत्वात् मोक्षस्याकामितत्वात् भगवनापि वलाद कामितफलदानानौचित्यात्॥ ४४॥

### सिद्धान्तप्रदीपः।

ब्रह्मर्स्योदिपूज्यत्वं भगवतोदर्शयन्खभाग्यातिशयं सूचयतियुधिष्ठिरराजसूये मुनिगगौर्नृपवर्येश्वसंकुलेंऽतः सदिससभामध्येगषांमुनिगगा नृपवयोद्दीनामीक्षणीयोः ऽर्हणमप्रपूजादिक्यंउपपेदेप्रापं सप्यविश्वात्माममहिश्गोचरो दृष्टिविषयः सन्थाविः प्रकटोऽस्तिभाग्यवानस्मी

तमिति॥ तमिममुक्तिविधमजंकमीधीनजन्मशून्यंश्रीकृष्णम् आत्मकाविपतानाम् तत्तत्कमीतुसारिगाम् आत्मनाश्रीकृष्णेनैवदेवमनु च्यादिशरीरेषुस्थापितानां शरीरभाजां हृदिष्टदिप्रतिहृदयम् एकमेक्प्रतिष्ठशंतत्तदृक् प्रकाशकतयानेकथा ऽकमिवधिष्ठितंसमधिगतोऽस्मि दृष्टांतप्रभाव्याप्त्यातत्तदृष्ट्रकाशकतयाधिष्ठितत्त्वं दार्ष्टीतिकेतुस्वरूपव्याप्त्यातत्त्वक्रीरिप्रेरकतयाधिष्ठितत्वमितिविवेकः नन्यस्तुभगवत प्रकस्यैवतदंतर्यामित्वंभवान्केनसंबंधेनतंसमधिगतइत्यत्राह विघूतभेदमोहइति विघूतोभेदविषयकोमोहोयस्यसः अयमर्थः किंजीव वर्षस्योरस्यंतभेदः किंवोपाधिकृतोऽभेदो वस्तुतोभेदः अथवास्ताभाविकोभेदा भेदस्तयोः संबंधः नाचः पक्षः "तत्त्वमस्य"दिवाक्य विरोधात "क्षेत्रक्रचापिमांविद्धो"तिश्रीमुखवाक्यविरोधाच नद्वितीयः "क्षाक्षीद्वावजात्रीशानीशा"विर्त्यादिवाक्यप्रतिपादितयोरक्षसर्वेक्षयोर्जीवपरयोरत्यं ततां देशकासंभवातः नतृतीयः उपाधिर्मिथ्यात्वेसत्यवस्तु भेदकत्वासंभवातः सत्यत्वे उपाधिनास्वसामर्थ्याजीवपरयोभेदः कृतउतपरेष्ण्या वारा सम्यमुपाधिकोऽपिनिराकर्त्तेन क्षमः स्यात् द्वितीयस्वेच्छयातत्कृतभेदंप्राप्यपुनरभेदमिच्छन्मुग्धवदनाप्तः स्यात् तस्मादंशांशिनो जाय रेप्स्यानुगात्वत्कार्यकारणवत् स्वामाविकः सर्वशास्त्रसंमतोभेदाभेदः संवंधइति तथाह भगवान्सूत्रकारः "अंशोनानाव्यपदेशादन्य यात्वापि दाशिकतवादित्वम श्रीयत एके ॥२।३।४३॥ इत्यादिअतएवाविश्वस्यचिद्वचिद्र्पत्वे नस्वरूपतोवद्यभिन्नत्वेऽपितज्जत्वादिनातद्भिन्नत्व माम्नातं छांदोग्येशांडिल्यब्राह्मणे "सर्वेखल्विदं ब्रह्मतज्जलानितिशांतउपासीते"तिशांतउपासीतेत्येवंविधायामुपासनायांकंटकभूतवेषम्यवार गाय सर्वस्य बहात्वमुक्तंतस्य खरूपेगा बहात्वासंभवा च जन्त्वादिना बहात्वेहेतुमाह ततपवजायते तत्रैवलीयतेतेनेवाऽनितचे स्तेहिति जलान् भावान्तावारम्यसंवंधेनाहंतंसम्यगधिगतोऽस्मीत्यर्थेः॥४२॥

एवमुक्तलक्षणोनसंबंधेनसभीष्मः आत्मिन अंशिनिभगवतिश्रीकृष्णो मनोवाग्द्रष्टिवृत्तिभिभेजनप्रकारैः "ममैवांशोजीवलोकेजीवभूतः स्नातन"इति भगवदुक्तं तदंशभूतमात्मानम् आवेद्यतदंशतयातदंतर्गतमनुसंधाय अतःश्वास अतपवलीनः श्वासीयस्यसः प्वभूतउपार

रमहे हं हित्वाश्री कृष्णां प्राप्त इत्यर्थः ॥ ४३॥

निष्कलेप्राष्ट्रतकलारहिते श्रीकृष्णां उक्तप्रकारेणसंपद्यमानमाद्यायद्वात्वा ॥ ४४ 🏃

# भाषाटीका ।

मुनिगर्या और नृप वर्यों से संकुल युधिष्ठिर की सभा में राजसूय यह का प्रथम अर्देश जिनको प्राप्त हुआ है वह सर्व लोचन लोस भीय आत्मा मेरे हिंह गोचर है अहो । धन्य मेरा भाग्य है ॥ ४१ ॥ अातमा गर्वा विद्यादिकों में प्रतिविधित सूर्य के समान, प्रत्येक शरीर धारी के हृदय में अधिष्ठित आज मगवान को विद्युत मेंद भिन्न भिन्न जलाधार घटादिकों में प्रतिविधित सूर्य के समान, प्रत्येक शरीर धारी के हृदय में अधिष्ठित आज मगवान को विद्युत मेंद मोह होकर में प्राप्त हुआ हूं ॥ ४२॥ [ 43 ]

तत्र दुन्दुभयो नेदुर्देवदानववादिताः । शशंद्धः साधवो राज्ञां खात् पेतुः पुष्पवृष्टयः ॥ ४५ ॥ तस्य निर्हरणादीनि सम्परेतस्य भार्गव! ।

युधिष्ठिरः कारियत्वा मुहूर्त्त दुःखितो अवत् ॥ ४६॥

तुष्टुवुर्मुनयो द्रृष्टाः कृष्णां तहुह्यनामभिः।

ततस्ते कृष्णाहृदयाः स्वाश्रमान् प्रययुः पुनः ॥ ४७॥

ततो युधिष्ठिरो गत्वा सहकृष्णो गजाह्वयम् ।

पितरं सान्त्वयामास गांघारीश्च तपस्विनीम् ॥ ४८ ॥

पित्रा चानुमतो राजा वासुदेवानुमोदितः।

चकार राज्यं धर्मेगा पितृपैतामहंविभुः ॥ ४६ ॥

इतिश्रीमंद्रागवतेमहापुराग्रे प्रथमस्कंधेयुधिष्ठिरराज्य प्राप्तिर्नाम

नवमोऽध्यायः॥ ६॥

#### भाषाटीका ।

(सूत उवाच) इस प्रकार मन और वाशी की वृत्तिओं से आत्मा कृष्ण भगवानमें अपने आत्मा को प्रवेश कर मीत्मजी अन्त इवास होकर उपरत होगये॥ ४३॥

भाष्म को निष्कल ब्रह्म में संपद्यमान जान कर दिन की समाप्ति में पिक्ष यों के समान वहां के सवजने चुपहोगये ॥ ४४॥

### श्रीधरस्वामी।

देवैमांत्रवैश्च वादिताः। राज्ञां मध्ये ये साधवः अनुसूयवः॥ ४५॥ निर्हरगादीनि संस्कारादीनि सम्यक् परतस्य मुक्तस्यापीत्यर्थः॥ ४६॥ ४७॥ पितरं धृतराष्ट्रम् । तपिखनीं सन्तापवतीम्॥ ४८॥ राजा युधिष्ठिरः॥ ४९॥

इति श्रीमद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कम्धे नवमोऽध्यायः॥ ९ ॥

### श्रीवीरराघवः।

तत्रतदादेवैर्मानवैश्ववादितादुंदुभयोनेदुः दध्वतुः साधवेशागवताः दादांसुरहोभीष्मस्यभाग्यंमाहात्म्यंचानितरसाधारग्रामितितुष्दुवुः राह्यांदुष्पवृष्टयः, स्नादुपरिदेशात्पेतुः पतिताद्दत्यर्थः ॥ ४५ ॥

है भागवसंपरेतस्यपरलोकंप्राण्तस्यभीष्मस्यनिर्हरणादीनिदाहादिकमाणिकारियत्वायुधिष्ठिरोमुहूर्त्तेतुःखितोवभूव ॥ ४६ ॥ तथामुनयोष्ट्रष्टाः कृष्णांतस्यकृष्णास्यगुद्धां स्वरूपयायात्मयं धेदांतवेद्यंतत्प्रकाशकेनीमभिस्तुष्टुबुः ततस्तेमुनयः कृष्णापवहृद्दयंयषात् । थाभृताः पुनराभ्रमात्त्रययुः ॥ ४७ ॥

ततः कृष्णेनसहितोयुधिष्ठिरोहास्तिनपुरगत्वापितरंधृतराष्ट्रंतपास्तिनीपतिव्रतांगांधारीचसात्वयामास ॥ ४८ ॥

ततः पित्राधृतराष्ट्रेगानुकातोवासुदेवेनभगवतानुमोदितश्चविभुर्युधिष्ठिरः पित्रादिकमप्राप्तराज्यधर्मेगाचकारचाद्वासः॥ ४९०॥ व

# श्रीविजयध्यजः।

समागतास्तेसर्वेनिष्कलेषोडशकला वर्जितब्रह्मणिहरी संपद्यमानंप्राप्तवंतं भीष्ममाज्ञायतूर्धावभूतुः कथमिव । दिनात्ययेसंध्यासम वेवयांसिपक्षिगाइवेत्यम्वयः ॥ ४५ ॥

तमिममित्यस्थानंतरम् ॥

क्षितिभरमधरोपितुंकुरुगांश्वसनद्वामुजदेशवदावाहिम्। तमिममजमनुद्रतातिद्दाद्विष्टृदिपरिरभ्यजदामिमत्यनीद्वम्॥ दृत्यधिकः स्रोकस्तस्य द्वीका विजयध्वजे॥

## श्रीविजयध्येजः।

तत्रभष्मस्यानयार्गसमयकादाकाशात् भीष्ममूर्ज्ञीतिशेषः ॥ ५६ ॥ 🖓 📉 🖂 👵 🦠 🖟

संपरेतस्यमृतस्यनिर्देरखादीनि शवसंस्कारपुरः सराधिकमीधिकत्वामीमादिमिश्चकारायित्वा ॥ ४७ ॥

भगवन्महिम्माह्रष्टरोमांचितसर्वी गास्तस्यकृष्णस्य गुद्धनामाभः वेदशिरोगतात्वंतरहस्यनामाभः कृष्णाहृद्याः कृष्णोह्दयेयेषांतेतथा कृष्णोहृदयंमनोयेषामितिवा ॥ ४८ ॥

गजाद्वयगजसमाननामानंहस्तिनपुरं पितरंघृतराष्ट्रम् ॥ ४९ ॥

अनुमोदितोऽनुहातः पित्राधृतराष्ट्रेणच पितृपैतामहंपितृपितामहागतं धर्मशास्त्रोक्तवर्त्मना विभूराज्यकरुणशक्तिमान् ॥ ५० ॥ इतिश्रीमागवतेष्रथमस्कंधेविजयध्वजटीकार्यानवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

#### कमसंदर्भः।

तत्रेति राश्चां समायामिति शेषः । साधवो मुन्यादयः ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ गुरानाभिम दुस्तर्क्यमहिमव्यञ्जकनामिनः कृष्णागोविदेत्यादिभिः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कंथस्य श्रीजीवगोखामिकत कमसन्दर्भे नवमोऽध्यायः॥ ९॥

## सुवोधिनी।

देवानांसर्वञ्चत्वात् अस्मदीयोवसुर्मुकद्दितवाद्यवादनंचकुरित्याहवादनप्रशंसापुष्पवृष्टयः तामससात्विकराजसरूपाउत्तमाः राज्ञांमध्ये येसाधवःअनेनतत्रापिदुष्टाः संतीतिज्ञापितम् ॥ ४५ ॥

"मस्मांतंशरीर"मितिश्रुतेःशरीरप्रपर्तिचक्रुरित्याहतस्येति निर्हरणंज्वलनंसंपरेतस्यशरीरस्यभीष्मात्मानंगृहित्वाभगवितिरोहितेमा रतोयुधिष्ठिरः मोहामावायकारियत्वेतिपदाभिषिकस्यस्वतः कारणमनुचितंमुहूर्त्तखेदोवेधः॥ ४६॥

भीष्मोक्तं कृतं चसर्वेषां हृदयेसमागतिमत्यभित्रायेणाहतुष्टुबुरिति तद्गुद्यनामभिः अद्भुतकर्मत्वादिभिः कृष्णाहृदयेनिवेश्यसर्वेगताश्त्याह् सतस्ते हितपुनरितिके चनभगवद्दर्शनार्थे स्वाश्रमेगत्विपसमागत्यकृष्णां हुष्ट्वापुनर्गता इत्यर्थः ॥ ४७ ॥

युधिष्ठिरस्यतुक्कानंवृत्तमित्याह स्वयंविशोकःशोकमन्येषांदृरीकरोतिपतरंधृतराष्ट्रंतपिस्तिनासंतप्तांचकारादन्यांश्च ॥ ४८ ॥

ततोभगवत्रुपयातस्यराज्यप्राप्तिरित्याहिपत्राचेति अधिकतैर्मित्रिभिः पित्राचअनुमतः स्वभावतपवराजामुख्यतयावासुदेवानुमोदि-तः पितृपतामहमावदयकंविभुः समर्थः अनेनसर्वेगुणाः सर्वदोषाभावश्चोक्तः॥ ४९॥

इतिश्रीभागवतसुवोधिन्यांलक्ष्मगाभद्दसुतश्रीवल्लभदीक्षितविरचितायां

प्रथमस्कन्धेनवमोऽध्यायः॥९॥

#### श्रीविश्वनायचकवर्ती।

्राह्मं मध्ये साधवोऽनस्यवः॥ ४५॥

निर्हरणादीनि संस्कारान्। सम्परेतस्येति नित्यपार्षदे भीष्मे वसोः प्रवेशात् तस्येव देहत्यागो भगवता दर्शितः। यावदिश्वकारमवस्थिति राधिकारिकाणाम् ॥३।३।३२॥ इति न्यायेन तस्येवांशेन वसुत्वे च स्थितिर्भगवछोके प्राप्तिश्च । अतः सम्यक् परं परमेश्वरम् इतस्य प्राप्त स्येति व्याख्येयम् । "तस्य सर्वेषुलोकेषु कामचारो भवती"ति मुक्तिविशेषप्रतिपादकश्चतेः। नित्यपार्षदभूतस्य भीष्मस्य त्वप्रकटलीलायां पार्थसारियप्राप्तिकक्तेव । अतप्व तत्र सो उन्तःश्वास उपारमदिति प्रयुक्तम् । अन्तरेव श्वासः प्राणो यस्य तथाभूतः सन्तुपारमत् प्रकट प्रकाशादुपरतोऽमूदिति तत्रार्थः सम्मतः देषु तत्याज प्राणांस्तत्याजेत्याद्यनुक्तेरिति । मृहूर्त्तं दुःखित इति लोकव्यवहाररक्षार्थम् ॥ ४६ ॥

तद्गुद्यनामिः हे भक्तवत्सल कृष्ण प्रेमाधीन नमस्त्वचातुर्यायैवेति ॥ ४७ ॥ पितरं धृतराष्ट्रम् ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिगयां मक्तचेतसाम् । प्रथमे नवमोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ ९ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रतस्मिन्महोत्सवेराशांतुन्दुमयः देवेमांनवेश्वभ्रष्ट्यादिभियोदिताः दास्रादयोनेतुःसाधवोभागवताः शशीसुःस्राद्देवदिविसुन्ताः पुल्पवृष्टयः पेतुः ॥ ४५ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

हेमार्गवसंपरेतस्यसम्यग्भगवन्तंप्राप्तस्यनिर्हरणादीनिदाहादिकमीि ॥ ४६ ॥ तस्यकृष्णास्यगुद्यहेंतुवादिभिर्दुर्हेयैरन्यार्थपरतयाप्रतीयमानैनीमभिः ॥ ४७ ॥ पितरंशृतराष्ट्रमः ॥ ४८ । ४९ ॥

ः इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कन्धीधेनवमाध्यायार्थप्रकाराः ॥ ९ ॥

#### ं भाषाटीका ।

तव वहा देवताओं की और मनुष्यों की वजाई दुंदुभी वजने लगी—राजाओं में भी साधु जन प्रशंसा करने लगे आकाश से पुष्प वृष्टि पड़ने लगी ॥ ४५ ॥

हे भागेव ! उन संपरेत भीष्म जी का निर्हरगादिक कराकर युधिष्ठिर मुहू ते मात्र वडेदुः खितहुए ॥ ४६ ॥

भीष्म जी के कथित सहस्र नामादिकस्तोत्रों से हर्षित मुनि जनोंने कृष्णे की स्तुति की और कृष्णाहृद्य सव मुनिजनों ने अपने आश्रमों को गमन किया ॥ ४७ ॥

्रतदनंतर युधिष्ठिर ने हस्तिनापुर जाय कर अपने पिता के समान पूज्य धृतराष्ट्र की सांत्वना की और तपिस्तिनी गांधारी की सांत्वना की ॥ ४८ ॥

पितृब्य धृतराष्ट्र और वासुदेव श्री कृष्णा के अनुमो दनसै राजा युधिष्ठिर धर्मसे अपना पितृपैतामह राज्य करने लगे ॥ ४९ ॥

प्रथमस्कंधका नवम अध्याय समाप्त हुआ ॥

## दशमोऽध्यायः।

| शौनक उवाच | हत्त्वा स्वरिक्यस्पृध स्त्राततायिनो युधिष्ठिरो धर्मभृतां वरिष्ठः ।

सहानुजेः प्रत्यवरुद्धभोजनः कथं प्रवृत्तः किमकारषीत्ततः ॥१॥

| स्त्रववाच | वंशं कुरोर्वशदवाग्निनिर्द्धतं संरोहयित्वा भवभावनो हरिः ।

निवेशयित्वा निजराज्य ईश्वरो युधिष्ठिरं प्रीतमना वभूव ॥२॥

निशम्य भीष्मोक्तमथाज्युतोक्तं प्रवृत्तविज्ञानिवधूत्विभ्रमः ।

शशास गामिद्र इवाजिताश्यः परिध्युपांतामनुजानुवर्तितः ॥३॥

कामं ववर्ष पर्जन्यः सर्वकामदुघा मही ।

सिषिचुःसम व्रजान गावः पयसोधस्वतीमुंद्वः ॥ ४॥

#### श्रीधरस्वामी।

दशमे कृतकार्यस्य हस्तिनापुरतो हरेः। स्त्रीभिः संस्तूयमानस्य वर्णयते द्वारकागमः॥०॥

राज्यं चकारेत्युक्तम् । तत्र पृष्ठिति हत्वेति खस्य ऋक्षे धने स्पर्धन्ते स्म ये ते तथा यद्वा खरिक्थाय स्पृधः (स्पृत्) संग्रामो येषाम् । अतप्य धनादिहरणाततायिनः तान् हत्वा । प्रत्यवरुद्धभोजनः वन्धुवधदुःखेन संकुचितमोगः राज्यलाभेन प्राप्तभागो वा । कथ राज्ये प्रवृत्तः । प्रवृत्तो वा ततः किमकार्षीत् ॥ १ ॥

राज्यप्रवृत्तः श्रीकृष्णास्य प्रीति पर्यालोच्य प्रवृत्त इत्याशयेनोत्तरमाह।वंदां कुरोः सरोहयित्वा परीक्षिद्रक्षणेन सरोह्य अकुरितं कृत्वा। कथमूतं वंदादवाग्निनिर्द्धतं वंदा एव दवो वनं तस्मादुद्भूतः कोधरूपोऽग्निस्तेन निर्द्धतं दग्धम्। निजराज्ये निवेदय च॥ २॥

श्रवृत्ती हेतुमुक्त्वा किमकार्षीदित्यस्योत्तरमाह निशम्येति । प्रवृत्तं यद्विज्ञानं परमेश्वराधीनं जगत न खतन्त्रम् इत्येवंद्धाः नेन विधूतो विश्रमः अहं कर्त्तत्येवम्भूतो मोहो यस्य सः । अनुजैरनुवर्त्तितः सेवितः सन् । अजितः श्रीकृष्ण एव आश्रयो यस्य सः । परिधिः समुद्रः तत्पर्यन्तां गां पृथ्वीं पालयामास ॥ ३॥

तस्य राज्यमनुवर्षायति काममिति त्रिभिः। मही सर्वकामदोग्ध्री वभूव। व्रजान् गोष्ठानि । ऊथखतीः ऊथखत्यः ऊथः क्षीराद्ययः (तद्वत्यः) स्थूलायस इत्यर्थः सिविचुरभ्यविचन् ॥ ४॥

#### दीपनी ।

०॥१॥२॥ परिधिरिति। परिधिमृत इत्यर्थः॥३॥ काममिति) इच्छानुसारमित्यर्थः॥४॥

#### श्रीवीरराघवः।

धर्मग्राराज्यचकारेत्युक्तंतदेवविस्तरतोषुभुत्सुरकानुवादपूर्वकंपृच्छितिशीनकः हृत्वेतिस्वरिक्यस्पृधः स्वदायिकप्पृन्सपृहइतिपाठे अपिम ह्वार्थःहकारस्यधकारआर्थःअतपवाततायिनोषुर्योधनादीन्हत्वाप्रत्यवरुद्धं प्रस्यधिगतं प्रतिप्राप्तंमोजनंराज्ययेनसधमभृतांवरिष्ठोयुधिष्ठिरः गविष्ठिरद्दितपाठेगविषचसिस्थिरोयुधिष्ठिरः अनुजैर्मीमादिभिःसहकथंप्रदृष्तः राज्यशासनइतिशेषः ततोराजशासनानंतर्रिकमकार्यदिति प्रदृतद्वयंरेफविक्षेत्रवआर्षः॥ १॥

तत्रतावत्कथंप्रवृत्तद्दतिप्रदनस्योत्तरीववश्चरपोव्घाततयामगवतः कृतक्रव्यत्वमाहवंद्दामिति वंदादवाग्निनावेणुवनसंघर्षण्यज्ञद्वास्मितुव्ये तत्रतावत्कथंप्रवृत्तदेशंतिवद्यस्योत्तर्वापरीक्षिद्रपेण्यज्ञत्यादयित्वामवभावनःमवोजगत्तमावयतिवर्धयतिमवभावनोद्देशुगर्भिर्दभवभावन मकुलकल्वेनदग्र्यविनष्टकुरोर्वद्यसंरोहियत्वापरीक्षिद्रपेण्यज्ञत्यादिवाप्रीतमनावभ्वकृतकृत्यत्वादितिभावः॥२॥ त्वावसरोहियत्वाहिरिशिष्टरः श्रीकृष्णोयुधिष्ठिर्रानजराज्येनिवेशयित्वाप्रीतमनावभ्वकृतकृत्यत्वादितिभावः॥२॥

#### श्रीवारराघवः ।

प्रदनस्योत्तरमाहिनराम्येतिचतुर्भिः भीष्मोक्तमच्युतोकंचिनराम्यप्रवृत्तेनसुप्रतिष्ठितेनविश्वानेनदेहात्माविवेकादिरूपेण्विधूतः विभ्रमो-देहात्मादिम्रमोयस्य अनुजर्भीमादिभिरनुवर्त्तितोयुधिष्ठिरः दंद्रद्दवाच्युतरावाश्रयोयस्य अच्युतमाश्रयतेसेवतेमजतद्दतिवातयाभूतः परि-ध्युपान्तादिगंताविधचतुःसमुद्रांतांपृथिवींदाद्यास ॥ ३ ॥

अजातशत्रौराक्षीत्येतत्कामिमत्यादिपूर्वश्रोकद्वयेऽप्यपकर्षगीयम्अजातशत्रौयुधिष्ठिरेराक्षिसतिपर्जन्यःकामयथेष्ट्ववर्षसर्वान्कामान्होग्धि प्रपूरयतीतितथामद्यभूत् नावः पगसाक्षीरेग्रऊथस्वतीरूथस्त्यः भूम्न्यत्रमतुपृष्यूधसङ्त्यर्थः मुदावजान्वजस्थान्प्रतिसिषिचुः क्षी-रंदुदृद्दुः॥ ४॥

## श्रीविजयध्वजः ।

हास्तिनपुराद्द्वारकायात्राकथन पूर्वकंभगवत्प्रसादलन्ध युधिष्ठिरराज्यसमृद्धिकथनेनहरेमेहिमैववर्यते ऽस्मित्रध्याये तत्रहारितद्भक्त कथायामवितृप्तमनाः शौनकः पुनरिपृच्छतीत्याह हत्वेतिस्वरिक्थंस्वराज्याख्यद्रव्यमस्माकिमिति स्पर्धतहितस्वरिक्थस्पृधस्तान् आतता यिनः प्रतिवार्रहत्वामर्मुकामान् दुर्योधनादोन्हत्वाभनुजैः सहप्रत्यवरुद्धभोजनः संक्षिप्तभोगः धर्मभृतांधमप्रवर्त्तकानां व्यासादीनांगिववा चिस्थिरोनिश्चलः युधिष्ठिरः कथंकनप्रकारेण राज्यपालनेप्रवृत्तः किकर्माकार्षीद्थकृष्णश्चतेनसह हस्तिनपुरमागतः किमकृततदस्माकं वृद्वित्येकान्वयः॥१॥

पांडवानां निरितशयहारिक्षपयैवराज्यादि लाभइति श्रापयन्पांडवस्थापनादिकृष्णमिहमानं तावदाह वंशमिति ईश्वरः जगश्चेष्टा यांसमर्थःहिरवंशलक्षणदवाद्वनादुत्पन्नाग्निनानितरांहृतंकुरोराक्षो वंशसरोहियत्वापरीक्षिदंकुरेणजनियत्वायुधिष्ठिरं निजराज्ये निवेशियत्वा प्रीतमनावभूवेत्येकान्वयः नित्यप्रीतस्यकादाचित्कप्रीत्युक्तिलौकिकापेक्षयेत्यतमर्थेहशब्देनप्रीसिद्धिद्योतनेनाह भवभावनइति पाठेसृष्टि वर्द्धनः अनेनसंरोहणशक्तिरदर्शि ईश्वरइत्यनेनराज्यस्थापनमाहात्म्यमसूचि भवतापनइत्यनेमसंसारोन्मूलनकर्नुः हरेः पांडविरपुनिवर्हे ग्रांकिमुवक्तव्यमितिन्यायोदर्शितः॥२॥

याजयित्वेत्येवमुक्तार्थः ॥ ३॥

किमकार्षीदितिप्रश्नंपरिहरति निश्चम्येति अथगुधिष्ठिरः भीष्मोक्तंधमसर्वस्वंतथा अच्युतस्यकृष्णस्योदितंवाक्यं चिनशम्यतदुभयं श्रुत्वाप्रवृत्तमुत्पन्नंयद्विज्ञानंतेनविशेषेणाधूतः निरस्तः विविधः भ्रमः तत्वे नानासंशयोयस्यसतयोक्तः श्रीकृष्णाश्रयः अनुजैः भीमादिभिर नुवर्त्तितः अमात्यादिसप्तप्राणिधिभिष्ठपान्तांप्राप्तांगामविन्द्यंगंदंद्रो यथाशशासेत्येकान्वयः भूमिस्वगसमानामपालयदितिद्योतनायगामि त्युक्तं अमात्यामंत्रिणोदूताः श्रेण्यश्चपुरोहिताः पुरंजनपदंचेतिसप्तप्रणिधयः स्मृताइतिवचनात् । परिधिः समुद्रः सप्वउपाते अवसाने यस्याः सापरिध्युपातामितिपाठो वादरायणमतापरिक्षानादुच्छ्वसितइतिज्ञातव्यम् ॥ ४॥

## क्रमसंदर्भः।

०॥१॥ वंशमित्यस्य टीकायां राज्यप्रवृत्तेरुत्तरमाहेत्यन्वयः॥२॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥

## सुवोधिनी ।

तैश्चित्यसिद्धयेविष्णौभीष्ममुक्तिर्निक्षपिता पेहिकेसर्वसौख्यं तुद्दत्त्वानितिक्ष्यते १ पाणडवानांयदूनांचतद्ध्यायद्वयेनहि निक्ष्यंप्रथमं तत्रपाणडवानांतवुच्यते २ कृष्णाधीनंसुखंयस्यससुखीतिनिगद्यते यतः कृष्णपरंचित्तंसर्वेषामञ्रवण्यते ३ पूर्वाध्यायांते युधिष्टरस्यराज्य प्राप्तिकक्तातत्रराज्यकरण्यांज्ञानाज्ञानाश्यांनघटतद्दितराज्यस्थितिपृच्छितिशौनकः हत्वेतिस्व कृष्टं यस्पर्द्धतेद्दित्तथारिक्षंघनं अत्यवभातता विनः धनावहान् अवध्येवधहेतुराततायित्वं अस्वार्द्भियेवास्पद्धांथेषां अनेनधनार्थिनोहत्वाधनंगृहित्वातेनराज्यकरण्यमुचितामिति आपितं नन्वेवमेवप्राकृताः कुर्वेतितत्राहध्यमेभृतांवरिष्ठ इतिनधमंज्ञानमात्रं कृतमात्रवाक्षित्यधर्ममेवगृहित्वातिष्ठंतितेषांमध्येश्वेष्ठः अनुजैः सहिति सर्वत्रवाञ्चवधर्यम्ञानेराज्यप्राप्तौचिति भावृणामेकमत्यमस्तिनवितिसंवधः प्रत्यवरुद्धं भोजनंयस्य भोजनंपाळनमश्यवहरणांवापूर्व माततायिभिः प्रत्यवरुद्धं मोजनंददानीवाअवरोधस्यप्रतिकूलत्वप्राप्तभोजनत्विसद्धित अस्तुस्वराज्येसर्वज्ञस्यक्षप्रवृत्तिः संतोषेण्यचराज्ञः राज्येस्थानुमदाकत्वात् ततोराज्यप्राप्यपुनःकलहादिअन्यद्वाक्रतिमितिप्रदनः॥ १॥

ततः स्वेच्छ्यायुधिष्ठिरेशानिक वित्रकृतिकतुमगवदिच्छ्येतितस्यनराज्येदोषोगुणोवाकितुभक्तत्वात् भगवदिच्छ्याराज्येकृतकानितिवर्कुमग वास्तस्मैराज्यंदस्वातुष्टोजातइत्याहवंशमिति द्वयंकृत्वाभगवान्प्रीतांजातः वंशांकुरंपरीक्षिद्रक्षश्चांयुधिष्ठिरायराज्यवानं वत्तरत्त्रभगवतं स्ताहशेनकार्येश किमित्याशंक्य स्वभक्तानांवंशरक्षास्वणाकर्त्त्वात्तर्यात्वेषाकर्त्त्रभगवतं स्ताहशेनकार्येश किमित्याशंक्य स्वभक्तानांवंशरक्षास्वणाकर्त्त्रभगवतेविधात्व्यस्वतः प्रतीकाराभावायाहवंशद्वागिनिकृतिमिति वंशद्वाभिः वंशाद्वाष्ट्र देत्यांशैहिभगवदीयानांद्वयंद्रतिक्षयतेवभगवतेवप्रतिविधातव्यस्वतः प्रतीकाराभावायाहवंशद्वागिनिकृतिमिति वंशद्वाभिः वंशाद्वाष्ट्र त्यादिश्चत्वात्वयं वंशाभावेषितृ अभवोमोक्षः तंभावयतीति अध्याद्वयात्वयं ॥ कृत्याद्वयः सर्वेषुः सर्वेषुः वंशाभावेषितृ शामाकोशात् मुक्तिकेस्यात् ॥ किच ॥ हरिः सर्वेषुः स्वाप्त्रक्षास्त्रकार्यास्विभयो स्वाप्त्रकार्यास्विभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्तिक्षया स्वाप्त्रकार्यास्वभयो स्वाप्तिक्षया स्वाप्त्रकार्याद्वप्रति स्वाप्त्रकार्याद्वप्रकार्याद्वप्रकार्याद्वप्रति स्वाप्तिक्षय स्वाप्तिक्याप्तिक्षय स्वाप्तिक्य स्वाप्तिक्षय स्वाप्तिक्यात्व स्वाप्तिक्याप

## सुवाधिनी।

ईश्चरधर्माविर्मावामावेतुच्छत्वंख्वस्मिन्स्फुरति राज्याद्भयंतत् युधिष्ठिरस्यक्षानादपगतमित्याह निशम्येति आवश्यकंतुकर्त्तव्यमेवन तेन किचिन्नइयतीतिम । प्राचाक्यश्रवणादेवराज्यभयं निवृत्तं अयभिन्नप्रक्रमेशाई इवर विचारेण नारायणपराः सर्वेनकुतश्चनविश्यतीतिन्याये ननारायगापरस्यभगवद्वाक्यमेवकर्त्तव्यं नतुविषयजन्यभयमिपसंभावनीयमित्यव्युतोक्तं एव मुक्तिअयां सर्वोऽपिशास्त्रार्थो ऽवगतः ततः प्रवृद्धविश्वानेनविधूतादूरीकृताविशिष्टाभ्रमायस्यगांपृथिवोमाश्वापूर्वकंपालितवान् अन्योऽपिराजादैवात्वृष्टीसंजातायांसस्येसंपन्नेचौरादिभिः फलंपालयीतअयंतुरृष्टिमपिनिष्पाद्य स्वधमंगापुष्टान् कृत्वापालयतीत्याहर्द्भद्दवेति मनुष्यस्यैवंपालनसामध्येंहेतुः नकेनापिजितो भगवानाश्रयोयस्यपरिधिः समुद्रः उपांतयस्यायद्यप्यन्येराजानः संतितथाप्येतदाक्षाकारिगाइतितथोक्तं अनुजैरनुवर्त्तितः प्रथमतोम्रातरपवकुर्वतिपश्चात्तत्त्वयकरोतिभ्रातृभिः सेवितोवा ॥ ३॥

तस्यधर्मेणपोषितस्यराज्यस्यगुगानाहित्रिभिः कामंववर्षेति आधिदैविकसीख्यंहितथाचैवाधिभौतिकं आध्यात्मिकंचतद्राज्येकृष्णे च्छातः क्रमोदिताः काममिच्छानुसारेगाक्षेत्रविदेश्यंः सस्यापेक्षंपृथोरिवपृथिवीसर्वतः कामदुव्राजातागावऊधखतीः स्थूलक्षीराशयाः धर्मा त्माअयंराजाभस्मत्परिपालकोजातइतिमुदापयसाम्रजानेवासिषिचुः यावदोग्धाभांडं वशमायातितावत् श्लीराधिक्यात् भूमिमेवसिषिचुः पर्जन्यः पृथ्वीगावोदेवताः नद्यः समुद्राजलमिथुनंवक्षालताश्चापरंस्थलमिथुनं एतद्द्वयमन्नातिरिक्तसर्वहेतुः ओषधयोवीह्यादेयः सर्वेषांसजी वत्वात्भूतत्वं कार्मामच्छानुसार्याद्द्यायामपिसत्यां अकालफलनेदोषनिमित्तत्वेन कदाचित् भयभवेत्तित्रवृत्त्ययमाह अन्वृतुऋ तुमनतिकम्य ॥ ४॥

#### श्रीविश्वनायचकवर्त्ती।

न्यस्य निष्कग्रदके राज्ये पागडवं स्त्रपुरीं हरेः। गच्छतः कुरुनारीभिः स्तुतिदेशम उच्यते॥०॥

वासुदेवानुमादंनैव राज्यप्रवृत्तिप्रजापालनादिकं सामान्यतो शात्वाऽपि विशेषजिश्वासुः पृच्छति हत्वेति । स्वस्य रिक्थे धने स्पर्छन्ते

स्म य तान् शत्रुभिरवरुद्धं यदासीत् तत् तंभ्यः सकाशात् प्रत्यवरुद्धं पुनश्च खवशोकृतं भोजने भोगो यन सः॥१॥

श्रीकृष्णस्य प्रीति पर्थालोच्येव प्रवृत्त इत्याशयेनोत्तरमाह । कुरोर्वेश वंशदवाग्निनेव निर्द्धतं निर्देग्धं संरोहयित्वा परीक्षिद्रक्षणेन वर्ग वर्ग वर्ग वर्ग वर्ग यथा खसंघर्षोत्येनाग्निना दह्यते तथैव कुरोर्वशमपि परस्परक्रोधोत्थयुद्धन हतमित्यर्थः। भवं महादेवमपि भावयति खळीळां ध्यापयतीति सः॥२॥

निशम्यति । प्रवृत्तं यद्विक्षानं परमेश्वराधीनं जगन्न स्वतन्त्रमित्येवम्भूतं तेन विधूतो विभ्रमः अहं कर्त्तत्यवम्भूतो मोहा यस्य सः । गा पृथ्वी स्वर्गेश्च । अजितः श्रीकृष्णाः रपेन्द्रश्च । परिधयः समुद्रा ऊर्द्धगं दिङ्मगडलञ्च । अनुजानाम् अनुवर्त्तिता अनुवृत्तिर्यस्मिन् । पक्ष

अनुजनापेन्द्रणानुवृत्ति प्रापिताः ॥ ३॥

ऊधस्ततीः स्थूलापीनवत्यः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

## सिद्धान्तप्रदीपः।

वासुदेवानुमोदितोधर्मेगाराज्यंचकारेत्युक्तंतद्विस्तरतोनुभुत्सुः पृच्छति हत्वेति स्वस्ययुधिष्टिरस्यरिक्षायधनायस्पृत्संप्रामोयेषांताना ततायिनः स्वधनादिलिप्सून्हत्वाप्रत्यवरुद्धंराज्यलाभेनप्रत्यधिगतंभोजनयेनसः अनुजैःसहराज्येकथंप्रवृत्तः प्रवृत्त्यनंतरंचिकमकारपीत् अकार्षीदितिवक्त व्येरेफविश्लेपश्छंदोऽनुरोधेन ॥ १॥

वंदारूपादवाद्वनाज्जातेनकोधरूपेगागिननानिर्द्धतंनिर्देग्धम् कुरोर्वेशंपरीक्षित्रागोनसंरोहियत्वा॥२॥ अनुजैरनुवर्सितः सेवितः प्रवृत्तेनविद्यानेनविध्तो विविधोभ्रमोयस्यसः विज्ञातात्मानात्मपरमात्मयाथात्म्यः परिध्युपातांसमुद्रं

कामयथेष्टंपर्जन्यो वृष्टेरिधपितिर्देवोववर्षे सर्वान्कामान्दोग्धिपूरयतीतितथाब्रजान् गोष्ठानि ॥ ४॥

## ः भाषाटीका ।

(शीनक उवाच) अपने रिक्थ (भाग) में स्पर्धा करने वाले अतएव आततायी (धनआदि के हरण कर नेवाले) शत्रुओं की मारकर प्राप्त भीग धर्मभृती में वरिष्ठ युधिष्ठिर किसतरह प्रवृत्तहुए और क्या किया॥१॥

(सूतडवाच) भूत भावन हरि वंश दावाग्निसे दग्ध कुरु वंश को संरोहण कर (परीक्षित की रक्षासे पुनर्जीवित कर) और युश्रिष्ठिर को निजराज्य में निवेश कर प्रसन्न मन हुए॥२॥ अवस्थित और अन्युतोक्त अवसा कर प्रवृत्त विज्ञान से विधूत विभ्रम राजा युधिष्ठिर अजिताश्रय होकर समुद्र पर्यंत पृथवी का शासन करने लगे ओरभीमादिक अदुज सव राजा के अनुवर्ती आक्षा पालकहुए॥ ३॥ मेघ योग वर्षने लगा पृथवी समस्त काम पूर्ण कर ने लगी गौआनंदसे बड़े बड़े पेनो सेद्ध सवा कर वर्जी को सीचने लगी॥ ४॥

नद्यः समुद्रा गिरयः सवनस्पतिवीरुषः ।
फलंत्योषधयः सर्वाः काममद्रन्वृतु तस्य वै ॥ ४ ॥
नाधयो व्याधयः क्रेशा दैवभूतात्महेतवः ।
त्राजातशत्रावभवन् जंतूनां राज्ञि कार्हीचित् ॥ ६ ॥
उपित्वा हास्तिनपुरे मासान् कातिपयान् हारेः ।
सुहृदाश्च विशोकाय स्वसुश्च प्रियकाम्यया ॥ ७ ॥
त्रामन्त्रय चाभ्यनुज्ञातः परिष्वण्याभिवाद्य तम् ।
त्राहरोह रथं कैश्चित् परिष्वकोद्भिवादितः ॥ ८ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

अन्तृत्र ऋतौ ॥ ५॥

आध्यां मनोव्यथा व्याध्यो रोगाः क्षेशाः शितोष्णादिकताः देवश्च भूतानि च आत्मा च हेतुर्येपाम् आधिदैविकादीनां ते । जन्तूना नाभवत् ॥ ६ ॥

इदानीं द्वारकागमनं निरूपयितुमाह उषित्वेति । खसुः सुभद्रायाः ॥ ७ ॥ तं युधिष्ठिरम् ॥ ८ ॥

#### दीपनी!

(कामिमिति। सामं तस्य युधिष्ठिरस्य इच्छानुसारं नद्यः समुद्राश्च स्थिता अनुकूला इत्यर्थः। सवनस्पतिवीरुधः वृक्षलतासहिताः गिरयश्च अन्वृतु ऋती सर्वकालमित्यर्थः फलान्ति। ओषधयी बीह्यादयः॥ ५-१६)

## श्रीवीरराघवः।

तस्ययुधिष्ठिरस्य संवंधिन्यः नद्याद्यः स्वधर्माञ्चतत्यज्ञरितिशेषः वनस्पतिभिः वीरुद्धिश्चसहिताः सर्वाभोषध्यथन्तृतुऋत्वनुकूरुं फलानिफेलुः॥ ५॥

अजातरात्रीराश्चिसतिजंतूनांप्राणिनांकदाचिद्वयाधयोमानसिकाब्याधयोदैहिकाश्चक्छेशाः तानेवाहदैवभूतात्महेतवः आधिदैविकाआ

धिमौतिकाआध्यात्मिका नाभवन् ॥ ६॥

किमकाषीत्ततद्दत्यस्योत्तरंविवक्षिष्यनपूर्वे प्रस्तुतस्यनिवृत्तप्रयागास्यमगवतोवृत्तान्तमाह उषित्वेत्यादिनायावदेकादशाध्यायसमाप्ति सुद्धदांयुधिष्ठिरादीनांविद्योःकायद्योकाभावायस्तसुश्च स्वभगिन्याः सुभद्रायाः प्रियकाम्यया च हास्तिनपुरेकतिपयानमासानुषित्वाऽव-स्याय॥ ७॥

तंयुधिष्ठिरमामन्त्र्यपृष्ट्वातेनाक्यनुज्ञातस्तंपरिष्वज्यााभिवाद्य च कैश्चिन्न्यूनवयस्कैः परिष्वकः आलिगितोऽभिवादितश्चहरिः श्रीकृष्णो रथमारुरोह ॥ ८॥

## श्रीविजयध्वजः।

कृष्णाश्रयफलमाह कामामिति पर्जन्योमेघाभिमानीदेवः सर्वेषामभिष्टंदोग्धीति सर्वकामतुघागावः सौरभेण्यः पयसाक्षीरेखगोष्ठं सिषिचुः सिक्तवत्यः अतिस्थूलंऊधः श्लीरपात्रंयासांताः अत्यूधसः॥ ५॥

नद्यादयः रत्नानिफलंति वनस्पतयः वीरुधोमातुलिंगादयः श्रोषधयोश्रीद्यादयः पर्जन्यादयः तस्ययुधिष्ठिरस्यकाममिच्छानुसारेगा अन्तृतम्ततावृती वृष्टचादिमंतोऽभूविन्नत्यन्वयः॥६॥

नकेवलिमप्रपादितरिनप्रिक्षस्त्रतरामित्याद्द नाध्यद्दति अजातशत्री युधिष्ठिरेजंतूनांराद्विरंजकेसति कदाचिद्द्याधिदैविकादिष्ठे तवः क्लेशानासुरित्येकान्वयः आधिः मानसीपीडाब्याधिः भगंदरादिः कथंभूताः दैवानिभूतानिस्र आत्माचद्देतुर्निमित्तयेषांतेतथोकाः अधिदेवदेतुः अनावृष्ट्यादिः अधिभृतदेतुः उन्मादादिः अध्यात्मद्देतुः कुष्ठादिः ॥ ७॥

इदानींकुरुपुरंप्राविष्टः रूप्णाः किमकापींदित्यभिप्रायिकंप्रश्नंपरिष्ठरति उपित्वेति सुष्ठदांपांडवानांविशोकायस्वसुः सुभद्रायाधाप्रियकाः स्ययाकतिचिन्मासान् हस्तिनापुरेउपित्वा ॥ ८॥

## सुवोाधेनी।

नद्यः समुद्राजलिमथुनंदृक्षालताश्चापरंस्थलामेथुनं पतद्वयमश्चातिरिक्तसर्वहेतुः ओषधयोत्रीह्यादयः सर्वेषांसजीवत्वात् भूतत्वंकामिम च्छानुसारेग्राइच्छायामपिसत्याम् अकालफलनेदोषनिमित्तत्वेनकदाचित् भयंभवेत् तिषवत्त्यर्थमाह् अन्दृतुऋतुमनतिकम्य ॥ ५॥

अध्या त्मिनर्गुगानांस्वतः सिद्धत्वात् दोषाभावायरोगाद्यभावमाह आधिर्मानसीव्यथाव्याधिः शरीरस्यक्लैशा अविद्यादयः इंद्रियसा वोगर्भपात व्यभिचारादयोऽपिदैवभूतात्महेतवः क्लेशानभवंतिराजधर्मेशैवसर्वसमाधानात् आदिमध्यावसानेषु राज्यमेकविधमित्याह कर्हिचिदिति ॥ ६॥

प्वंसामान्यतः सर्वसौख्यमुक्त्वाप्रेमसौख्यनिकपणार्थ भगवतोनिर्याणोत्सवमाह्उषित्वेत्यादियावद्घ्यायसमाप्ति वृथैवजीवनंलोके भिक्तिक्षानोत्सवैर्विना कृष्णोकतानिचत्त्वंमुकेरप्यधिकंमतम् हिस्तिनापुरमिति अलुक्तृतीयासमासः हिस्तिनानिर्मितंपुरामितिमध्यपदलोपात् हस्तीराजाहास्तिनः संवंधीतिहास्तिनम् अण्पत्ययः हिस्तिनिर्मितेपुरेवासस्तद्वंद्यानांविमुक्तये निरन्तरिक्यितियातुभुक्तिमुक्तिप्रदेतिच ॥१॥ कालस्याकारणत्वायतदंद्याः परिकार्त्तिताः बहुत्वगण्यानाभावात्ततेषांचाहेतुतामता ॥२॥ स्थित्वाद्योकापनोदेतुगमनेस्मरणाद्भवेत क्षेहस्ततः कृतार्थत्वमितिभावोहिर्मितः ॥३॥ सुहृदांचिविद्योकायचकारात्रराज्ञः प्रियार्थस्वस्तुःसुभद्रायाः शोकापनोदः पौत्रोत्पत्त्येतिभगवत्स्थितिः प्रीतिवर्द्धिका ॥ ७॥

आमंत्र्येति लौकिकंचकाराद्वरदानादि आलिंगनंसर्वदोषीनवृत्तये अभिबादनंबिहर्मुंबत्वंऽपिदोषाभावायचकारादुचितं दानादिकैश्चिदि तिस्वयपर्यतमागतैः प्रेम्णास्निग्धैवाकेश्चिदितितादशादुर्लभा इतिद्योतितम् ॥८॥

## श्रीविश्वनायचकवर्ती।

खिसुः सुभद्रायाः ॥ ७ ॥ तं युधिष्टिरम् ॥ ८ ॥

N.

## सिद्धान्तप्रदीपः।

तस्ययुधिष्ठिरस्यराज्ञः प्रजामृताः नद्याद्यः सर्वेसुखदावभूबुरितिशेषः ओषधयोचनस्पतिभिः वीरुद्धिसहिताः अनुऋतु ऋतौ फुलंतिफेल्डः॥ ५॥

अजातशत्रीयुधिष्ठिरेराक्षिसति देवभूतात्महेतवः दैवंभूतानि आत्माचहेतुर्येषांते आधिदेविकाधिभौतिकाध्यात्मिकाः आधयोमानसि का व्याध्यः शारीराः क्लेशाः जंतुनांकिहिचिदिपनाभवन् ॥ ६॥

का जात्र हैं। जात्र के प्रति के प्रति

ग्रेनान्वयः ॥ ७॥ यनपूर्वराश्वाप्रेम्णानिवारितस्तंयुधिष्ठिरम् अभिवाद्य केश्चित्स्वसमानवयस्कैरर्ज्जुनादिभिःपरिष्वकः आखिंगितःकेश्चिन्नयूनवयस्केनंकु-ल्लादिभिर्यभवादितः रथमाद्धोह द्वारकांगंतुमितिशोषः॥८॥

## माषादीका।

नदी समुद्र पर्वत वनस्पति वीरुध ऋतु ऋतुमै राजा के कामों को पूर्ण कर ने लगे और सब औषधि यथा काम फल ने लगीं ॥ ५॥ अजात शत्रुको राजा होने पर जंतुओं को देव मृत और आत्मा के क्लेश कमी भी नहीं होते थे और न आधि व्याधि होती थीं ॥ ६॥ अजात शत्रुको राजा होने पर जंतुओं को देव मृत और आत्मा के क्लेश कमी भी नहीं होते थे और न आधि व्याधि होती थीं ॥ ६॥ सुहुदों को विशोक कर ने को और अपनी भगिनों की प्रीति कामना सै हरि ने कतिपय मास हस्तिना पुर मैरह कर । युधिष्टिर सुद्ध कर उन की आज्ञा पाकर अभि वादन कर किन्हों को आलिगन कर किन्हों सै अभिवादितहों कर रथमें आरोहणा किया ॥ ७॥ ॥ ८॥

सुभद्रा द्रौपदी कुंती विराटत्तनया तथा ॥
गांघारी घृतराष्ट्रश्च युयुत्सुर्गीतमो यमौ ॥ ६ ॥
वृकोदरश्च धौम्यश्च स्त्रियो मत्स्यसुतादयः ॥
न सेहिरे विमुद्यंतो विरहं शार्क्रधन्वनः ॥ १० ॥
सत्तंगान्मुक्तदुःसंगो हातुं नोत्सहते वुधः ॥
कीर्त्यमानं यशो यस्य सकृदाकग्र्यरोचनम् ॥ ११ ॥
दर्शनस्पर्शनालापशयनासनभोजनैः ॥
तिस्मन्न्यस्तिधयः पार्थाः सहरन् विरहं कथम् ॥ १२ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

युयुत्सुर्धृतराष्ट्रात वैश्यायां जातः गौतमः कृपः। यमौ नकुलसहदेवी ॥ ९॥

अन्याश्च स्त्रियः मत्स्यसुता उत्तरा । तस्याः पुनर्प्रहृणं गर्भरक्षकष्टग्णस्य विरहेमोहाधिक्यात् । यद्वा मत्स्यसुता सत्यवती ॥ १०॥ तेषां पुनः श्रीकृष्णविरहासहनं केमुतिकन्यायेनाह सत्संगादिति द्वाध्याम् । सतां संगासेतोः मुक्तः पुत्रादिविषयो दुःसंगो येन सः। सद्भिः कीर्त्यमानं रुचिकरं यस्य यशः सकृद्य्याकगर्ये सत्संगं त्यकुं न शक्नोति ॥ ११ ॥

दर्शनादिभिः तस्मिन् श्रीकृष्णे न्यस्ता अभ्यस्ता धीर्येषां ते ॥ १२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तदासुभद्राप्रभृतयः विमुद्यंतोमोहिताः शार्क्रथन्वनः श्रीकृष्णस्यविरहंविश्ठेषंनसेहिरेनासहंत मत्स्युसुतासत्यवती ॥ ९ ॥ १० ॥ युक्तंचैतदित्यभिण्रयेणाहसत्संगादिति द्वाभ्यांसतांसाधूनांसंगाद्धेतोर्धुकः दुःसंगोदुरात्मसंयोगोयेनसव्धः पुमान्यस्यरोचनविद्यक्तं कीर्त्यमानयश्यवसकृदाकर्ग्यहातुंनोत्सहते ॥ ११ ॥

तस्मिन्भगवतिकृष्णोद्दर्शनादिभिर्निहिताधीर्येषांतेपार्थाः तस्यविरहंकथंसहेरस्रसहेरस्रेवेत्यर्थः॥ १२॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

आमंत्र्यद्वारकांगमिष्यामीतियुधिष्ठिरायोक्ताशिष्टाचाररक्षाणाय युधिष्ठिरंपरिष्वज्याभिवाद्यकैश्चिद्रक्रुंनादिभिः आलिगितोवदितश्चर यमारुरोहेत्यभ्वयः ॥ ९ ॥

सुमद्रादयः शार्क्रधन्वनोहरेर्विरहंनसेहिरेइत्यन्वयः युयुत्सुः धृतराष्ट्राद्वैश्यायांजातोदुर्योधनानुजः गीतमः कृपाचार्यः यमीनकुलसह देवी मत्स्यसुतादयः उत्तराप्रभृत्तयः विमुद्धांतः कर्तव्यतामजानंतः ॥ १०॥॥ ११॥

पार्थीमुकुंद्विरहंनसेहिर्दृत्येतदाश्चर्यनभवतीत्याह तत्संगादिति तस्यहरेः संगात्सेवालक्षणान्मुक्तः दुः संगः अन्यत्रपुत्रदारीद्येषु संगः येनसमुक्तदुः संगः बुधोविवेक्षीजनः तंहातुंनोत्सहतेतस्मादित्यन्वयः तत्रकेम्रत्यन्यायमाह कीर्त्यमानिमिति भागवतेः कीर्त्यमाने यस्यक्षणास्ययशः सकदाकपर्यपुं सारोचनंकविजनकम् दर्शनस्पर्शनादिभिरभ्यस्तिधियः पार्थोस्तस्यविरहंकथंसहेरश्चेवसहेराश्चितिकमु वक्तव्यमितिभावः॥ १२॥

## सुवोधिनी।

सुमद्राहयोनसेहिरेविरहमितिसंवधः देहसंवधपुरः सरःस्नेहःश्लीगामधिकहितआशंतयोश्रेहणं विरादतनयाउत्तराययामज्ञातथापुत्र मारगा रक्षगोऽपिचगांधायोउत्तरायाश्चतथेति समता राजाजुनयोक्तसवासत्त्वानविरहरूहितः धृतराष्ट्रश्लेतिचकारगावाग्रहगाम् अन्ययाच कारो धृतराष्ट्रस्यमीकवेषिकः तस्यमिकवेर्द्वकेमेति युगुत्स्वधृतराष्ट्रस्यमागश्चीपुत्रःगीतमः कृपःगोतमवेद्यौतपक्षत्वात् यमोनकुलसहदेवी॥६॥

वृकोदरश्चेति चकारादनुक्तसर्वेशत्रियप्रहृग्णं धीम्यश्चेति पुरोहितप्रहृणादनुक्तवाह्यगात्रवाह्यां श्चियस्तेषां मत्स्यस्तासत्यवती पूर्वोक्ताः यावाउत्तरायाकार्यार्थमनुषादः विमुद्धतहति पक्षशेषातपुद्धिगनिर्देशः शाक्ष्यन्वनहति कालकपंथनुहेस्तस्थापयतीति तद्विरहेकालमासः शक्तितः॥ १०॥ श

#### सुवोधिनी।

विरहासहनं लौकि कंसर्वयानमवतीत्य लौकिक बानेसतिमगवतों उतर्यामित्यविरहामावात् अयुक्तं विरहवर्यानमित्या शंक्यक्षानसत्त्वे अपि प्रकारविशेषेगापरमञ्जलदानात् विरहोयुक्तइत्याहसत्संगादितिसार्धेन । भगवद्विरहकथादूरेभगवत्सेवकानामपि विरहोदुस्त्यजः उपिदृष्ट पिश्वानेअंतर्यामितया मगवत्स्फूर्त्ताविषयोरसः सत्संगादुत्पचतेविहिभगवत्संवधनवासनाश्वानादिभिभेवति मानसदैहिकस्त्रीसंवधयोवैलक्ष ग्यात् स्त्रियाश्चस्तः सुसंस्य तिसर्वेषस्तुनिष्ठरसस्यस्तिष्ठ दोषस्फूर्स्येव अभिव्यक्तिदर्शनात् सायुज्यक्षानादाविषयदात्मसुखमभिन्यक्तं भवतितत्रापिमिश्वतयास्थितंशानप्रवे शेच्छादोषः अन्ययाफलोत्तरंतदपगमोनस्यातः ननुतयोर्गुगात्वमितिचेत्सत्यंलोकेबुभुक्षादीनामापिगुगा त्वकथनात् अन्यथातदर्थमुचमोनस्यात् तस्मात्भिष्ठतयाबीहस्थितएवविषयः रसजनकः अतएवयोगिनोऽपिकृष्णाख्येवस्तुनिप्रकटीभूते समाधिपरित्यज्यतदेवपद्यंति अन्यदातुसमाधिः किंच देहादीनांदोषत्वश्रवणात् प्रलयेतदभावात् मुक्तियोग्यान् जीवान् भगवान्देहसंवंधा नुकुर्यात् किंच परमक्रपालुत्वात् सृष्टिमेवनकुर्यात् अतोदोषोऽपिकचिद्गुगः काचिद्दोषः गुगोऽपितथेतिवहिव्यवहारपुरः सरमेवसर्वेवदाः सर्वाणिशास्त्राणित्रवृत्तानि शक्यव्यवहारस्यमुख्यत्वात्रज्ञानेऽपिसतिभगवद्विरहासहनंयुक्तं समुत्पद्यामः सतांसंगाद्रपकस्मिन्संगेविद्यमा नेऽपिसंगांतरमित्यक्तंनशक्यतइतिबद्धवचनंसतामिषबद्धत्वम् एकस्मिन्नपिबद्धधारसजननात्तेषामेवक्रपयामुकोदुष्टेः सहसंगोयेनतदनंतरं तत्कृपयैवबुधः श्रानसंपन्नोऽपिस्यात्तथासितपूर्वसिद्धान्सत्संगान् चितामिणवत्तत्यक्तुमिच्छामिपनकरोतीत्यर्थः कीर्त्यमानमितिउभयार्थ मित्ये केयस्यभगवतः कीर्तिसद्भिः कीर्त्यमानां सक्रदाकगर्यसत्संगात्त्यक्तंनोत्सहतइतिसंवंधः कीर्त्तेरुचिजनकत्वात्सत्संगस्यचतद्धेतृत्वात् यशःश्रवसाद्वातस्मित्न्यस्त्राधियः यथासमीचीनांपेटिकां रष्ट्वास्वस्योत् कष्टं वस्तुसर्वेस्थापयांति तथाभगवतः कीत्तिश्रुत्वावुद्धिरत्नंभगवितस्या पर्यंतीत्यर्थः सामान्यप्रहणंवैदिकलौकिकसर्वेबुद्धिप्रहणार्थम् । किच । पार्थाः पृथायाः पूर्वमुक्तत्वात्तत्वचनेनापिभगवितन्यस्तिधियः कथं विरहंसहेरत् असहमानास्तत्रगच्छेयुः प्रतिबंधकंशरीरंवात्यजेयुरिति भगवत्प्रवचनमयुक्तमितिभावः॥ ११॥

हस्र १५०० । तर्हिचलितेमगवति किजातंतत्राहदर्शनस्पर्शेति दर्शनादयःषद्कियामगव्द्योग्याः तेच्मगवत्सहभावेनपांडवनिष्ठाः आलापादयस्तुसह

वदर्शनस्पर्शनयोस्तुविषयत्वमिपसहभावाभावेविषयत्वासंभवात् पवंसहभावेनाभ्यस्तैरेतैः वशीकृताः॥ १२॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

युयुतसुर्भृतराष्ट्राह्मेश्यायां जातः। गौतमः कृपः॥९॥

सतस्यसुता उत्तरा तस्याः पुनर्प्रहणं गर्भरक्षणकृत मोहाधिक्यात् । यद्वा मत्स्यसुता सत्यवती ॥ १० ॥

बस्य यशोऽपि हातुं बुधो नोत्सहते तस्य विरहं पार्थाः कथं सहरिश्यन्वयः । रोचनं रोचकम् । बुधः कीहशः सत्सङ्गान्मुको द्वःसङ्गो येन सः। तेन सत्त्रसङ्गं विना दुःसङ्गो मदमत्सरादिहेतुनीपयाति तदपगमेन विना भगवद्यशो रोचकं दुस्य अञ्च न भवतीति

पार्थाः कीहशाः दर्शनादिभिस्तस्मिन् कृष्णे एव न्यस्तिथयः॥ १२॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

सुभद्राप्रभृतयोविरंहन्सेहिरे इतिद्वितीयेनान्वयः युयुत्सुः शतसंख्याकान् भातृन्गांधारीपुत्रान्युद्धप्रारंभेविहाययुधिष्ठिरंशरणांगतो भूतराष्ट्राद्वेश्यायांजातः गीतमःकृपः॥ ९॥

मत्स्यसुतादयः मत्स्योदरीमभृतयः॥ १०॥ वार्ङ्गिधन्वनोविरहंनसेहिरेइत्युक्तंतदेवकैमुत्यन्यायेनाह सत्संगादिति द्वाभ्याम सतांसाधूनाम तद्यशःश्रावियन्गांसगात्यस्ययशः सक्रदाकराये अत्रप्वमुक्तोदुष्टानांतद्यशःश्रवणविरोधिनांसंयोगोयेनसः अत्रप्वचबुधः हेयोपादेयशानवान् पुनःसिद्धः कीर्त्यमानंयशोहा

द्वानादिभिस्तस्मिन् कृष्णोन्यस्तिधयस्तस्यविरहंकथंसहेरन् ॥ १२॥

## भाषा दीका ।

सुभद्रा द्रीपदी कंती विराट तनया (उत्तरा (गांधारी भृतराष्ट्र युगुत्स कृपाचार्य नकुळ सहदेव भीमसेत धौम्य आहे मतस्य सुतादिक स्थियें यसव विमोहित होकर शार्क धन्वा कुष्णा के विरह को नहीं सह सके ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ सुतादिक स्थियें यसव विमोहित होकर शार्क धन्या के विरह को नहीं सह सके ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

सत्संगहेत से पुत्रादि कींके दुः संगसे मुक्त पुरुष सत्तपुरुष के कीर्तित रोचन जिनश्री कृष्णा के यश को एक वेर भी सन कर

सत्संग को नहीं छोड़ सके हैं॥ ११॥ धारमः। जा कृष्णमें दर्शन मापणादिकासे दरीन पाणादिकी से न्यस्त झुक्क पांडवसव केसे श्री कृष्ण के विरह की सह सक्षेण। १२। सर्वे तेऽनिमिषेनेत्रैस्तमनुद्भुतचेतसः । वीत्तंतः स्नेहसंबद्घा विचेलुस्तत्र तत्र ह ॥ १३ ॥ न्यरुंघन्नुद्गलद्वाष्पमौत्कग्रव्याद्देवकीसुते । निर्यात्यगारात्रोऽभद्रमिति स्याद्बान्धवस्त्रियः ॥ १४॥ मृदङ्गशङ्कभेर्यश्च वीगापगावगोमुखाः। धुन्धुर्यानकघगटाचा नेदुर्दुन्दुभयस्तदा ॥ १५ ॥ प्रासादशिखरारूढ़ाः कुरुनाय्यो दिदृत्तया । ववृषुः कुसुमैः रुष्णां प्रेमवीड़ास्मितेत्त्राणाः ॥ १६॥

#### श्रीधरखामी।

अतएवानिमिषेनेत्रैस्तमेव वीक्षमाणाः तत्र तत्रार्हेणानयनार्थे चलन्ति स्म । यतः स्नेहेन सम्यक् वद्धा अतएव तमनुदुतानि अनुगतानि चेतांसि येषां ते॥ १३॥

देवकी सुते अगाराश्चिर्याति निर्गेच्छति सति वान्धविस्रयः औत् कंठचा सेतोः उद्गलत् स्रवद्वाष्पम् अश्रूगयरुन्धन् नेत्रेष्वेव स्तम्भित्वत्यः तत्र हेतुः अभद्रं नो स्यात् अमंगलं माभृत् इत्येतद्र्थेम् ॥ १४ ॥

मृदंगादयो दश वाद्यभेदाः॥ १५॥

त्रेमवीड़ास्मितपूर्वमीक्षणं यासां ताः॥ १६॥

#### श्रीवीरराघवः।

तेपार्थ।दयःसर्वेस्नेहश्चसंवन्धश्चतयोः समाहार्स्तस्मात्स्नेहाच्छरीरसम्बन्धाचानुद्वुतमनुमृतंचेतोयेषांतथाभूताः संतोऽनिमिषेनिमेष रहितैरनन्यपरैरक्षेरिक्षिभिः अक्षक्षव्दद्वद्वियवाच्यप्यौचित्याचक्षुः परः तमेववीक्षंतः तत्रतत्रचेलुः परिवभूमुः॥ १३॥

तदावांघवाः कुन्तीप्रभृतयः स्त्रियः अगाराद्गृहादेवकीसुते निर्यातिनिर्यातेसत्यभद्रंनस्यादितिवुद्धचाप्रेमपूर्वकानुध्यानादुद्गलदिष

वाष्पॅन्यरुंधन् ॥ १४ ॥ मृदंगादयः समयुगपन्ने दुर्दध्वनुः॥ १५॥ कुरूणांनार्यः कृष्णंद्रष्दुमिच्छवः प्रासादिशाखरारूढाः प्रेमादीन्यासांसंतीतितथा द्वंद्वान्मत्त्वथीयोऽर्राआद्यच् ॥१६॥

## श्रीविजयध्वजः।

विरहमसहमानानांतेषांभक्तिप्रसरसंष्ठवातिरेकमाह सर्वइति अनिमिषेः पश्मव्यापाररहितैः अक्षेनेंप्रैस्तंवीक्षमाणाः कृष्णानुगत हृद्याः तेसर्वेस्नेहात्तत्रतत्रविचेरुरित्यन्वयः यावधावदूरंगतः तावत्तावतुत्तुंगं भूपृष्ठमारुह्यवीक्षमाणास्तस्थुरदर्शनंयातेतासमंश्चेतसा तमनुदुद्रवुरित्यर्थेहराष्ट्रः सूचयति ॥ १३॥

पांडवस्त्रियः देवकोसुते अगारात् नगारोनिगिरगांनाज्ञालक्षगांयस्मारसोऽगारः अगावृक्षापवाराग्यिवंशवंश्यलक्षगानियस्येतिवा अग मगमनंकांत्यतिशयादेररमलंयस्मादितिवा अगानांखर्शात्मकानांपर्वतानामारः प्रवेशलक्ष्यांगमनंयस्मिन्नितिवा तस्मासुरान्नियातिसत्य भद्रममंगलंनस्यादितिभावेनौत्कंठचादुद्ग तंबाष्पंनेत्रजलंन्यरुंधयन्स्तंभितवत्यइत्येकान्वयः॥ १४॥

मार्देगिकादिभिराहतामृदंगादयोनेदुरित्यन्वयः भेरीनामचमिपिहितादीर्घमहद्दारुक्ततेषाद्यविशेषः धुंधरिकाख्यात्मकंवाद्यं दुंदुभिः तिर

श्चीनवाद्यविशेषः आनकः पटहः पगावोढकाविशेषः ॥ १५॥

व्रम्णावीडेनस्मितेनचसहितमीक्षणं दर्शनंयासांतास्तथोकाः वीडाशब्दउभयलिंगः प्रेमब्रीडाभ्यांयत्सितंतत्पूर्वमीक्षणंयासामितिवा कुसुमः कुसुमानि व्यत्ययोभक्त्यतिशयधोतनार्थः पुष्पःकरणौरितिवा ॥ १६ ॥

#### क्रमसंदर्भः।

नियातीत्यश्चशोषकेगा भयेनेत्यर्थः॥ १४॥ १५॥ व्रमयुक्ताभ्यां बीड़ास्मिताभ्यामीक्ष्यां यासां क्रमेगा शृंगारमयशान्तमय स्त्रीयांताः। वियोगारम्भे वृत्तांसां स्मितासम्भवातः विविध्य व्याख्यातम् ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

#### सुघोधिनी ।

सर्वेखचित्तंभगवतिदत्तवंतः शयनादिभिर्वातस्मित्रनिमणदृष्योजाताः दृष्यातुभगवतम् अत्रत्तेचित्तम् एवंकायवाङ्मनावृत्तयः भगवत्यु काः चिवेकधैर्यादिकं नोत्पन्नमित्यर्थः ततः किंजातंतदा हवीक्षंत इतिविरहोगमनस्मरणा दुत्पन्नोऽपिभगवह शैना ब्रिस्मृतः यदा विरहस्तदातयाम विष्यतिब्यर्थमिदानीं परमानंदानुभवंपरित्यज्योद्वेगइति विचारयंतइवदेहेंद्रियांतः करणवृत्तीःभगवतियोजितवंतः तत्रेक्षणमिद्रियवृत्त्युपल क्षर्यास्नेद्देनसंबद्धाइत्यंतः करणस्यस्नेद्दोहिमगवंतमुपस्थापयतिहृदये वहिः स्थितेवामगवितजीवमानयतिजमयथाप्यत्रनिवरोधः विचेरु रितिशरीर क्रियासगवद्रमनोपयोगिकार्यार्थे तत्रतत्रशरीरंचालितवंतइत्यर्थः अतः प्रंपरयाशरीरस्थितिः साद्धतक्रमलीलयाभगवतः १३

अतएवमहद्तिरोद्नेकर्त्तव्येभगवदिच्छ्याअल्पमिपरोद्नं नरुतवंतइत्याह् न्यरुंधन्नितिपूर्वस्थित्याउद्गलदिपवाष्पंदेवकीस्रुते गृहान्निर्गच्छ तिसतिअमद्रममंगलस्चकं मामूदितिनेत्रेष्वेवस्तंभितवत्यः एवंहिभगविद्यच्छाप्रवलाखयंकुतः शरीरादिकंत्यक्ष्यंति यतः प्रेमीत्कंठचाद्वद्व तवाष्पमिपनिवारयंतिदेवकीसुत इतियुक्तमेवभगवद्गमनयतोमहत्तपस्यया देवक्यापुत्रत्वेनप्रार्थितः पुत्रोजातः कथंतांद्रध्दंनगच्छेत् अतप्वा स्माभिरपश्कुनंनविधेयमितिमावः अगारादितिअस्मद्गृहेभगवान्समागतः कृतश्चोपकारः तादशस्यखगृहगमने अपशक्कनकरण्यम्युकं स्यात् इहिहेतोः बांधवस्थियः न्यरुंधित्रितिसंवंधः वंधुत्वमिरिस्फुरितमितिभावः॥ १४॥

भगवतोनिर्यागोत्सवेदराविधवाद्यानिवादितवंत इत्याहमृदंगेति तत्रमृदंगभेरीपगावानकतुंतुभयः पंचनद्वभेदाः शॅखगोमुखौद्याषिर भेदीवीगी काततरूपाघंटाधुंधुर्यीघनभेदी एवंचतुर्विधवाद्यमुद्रतम् एतेषां उक्षगानिवाद्याच्यायप्रसिद्धानि ॥ १५ ॥

उत्सवेस्रीगांदरीनंवर्णनीयमितिपुष्पवृष्टिसहितं तदाहपासादेति शिखरमंतिमगृहंकुरुनार्यहतिकुलस्रीगांवहिगेमनामावः पुष्पवृष्टीस त्यांभगवानात्मानंपश्योदितिकुसुमैर्नृषु प्रेमवीडास्मितानिगुणकार्याणि ईक्षणसहकारीणि प्रेमादिपूर्वक मीक्षणंयासांभक्तिधर्मज्ञानप्रकारैः बहुविधैर्भगवान्द्रष्ट्रस्यथैः॥ १६॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

अतएव अनिमिषेरक्षेस्तमेव वीक्षमाणाः। अनु वीक्षणामन्तरं विकिल्यचेतसः ततः स्रोहेन सम्यग्वद्धा अतएव तत्र तत्र विचेलः यत्र यत्र स चळाते स्मेत्यर्थः ॥ १३ ॥

अगाराश्चिर्याति निर्गच्छति सति औत्कंठ्यासेतोरुद्रलंतं स्रवन्तं वाष्पम् अश्रूगयरुन्धन् स्तम्भितवत्यः। तत्र हेतुः अभद्रं नो स्यादमंगलं मामृदित्येतदर्थम् अत्रोद्रलदिति शतुप्रत्ययेन उदुपसर्गेगा च यानतो निरुद्धान्यप्यश्रूगि सस्रोव नेवलममंगलनिवारणार्थे पटांचलेन गोपयांचक्रिति लभ्यते ॥ १४ ॥

मृदंगादयो वाद्यभेदाः ॥ १५ ॥

कुसुमै: कुसुमानि । श्रेमबीड़ास्मितानि ईक्षगोषु व्यंजितानि यासां ताः ॥ १६॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

देहगेहव्यवहारपरित्यागपूर्वकातंत्रत्येवानुद्धतंचेतोयेषांते तत्रतत्राईगाद्यानयनार्थ ः अतएवतेसर्वेतमेवश्रीकृष्णमनिमिषेनेत्रेर्वीक्षंतः विचेल्धः परिवम्मुः॥ १३॥

तदाऽगाराद्देवकीस्रतेनिर्यातिनिर्गच्छतिसति अमद्रमाभूदितिहेतोः औत्कंठचात्स्नेद्दातिशयादुद्गलहाष्पंबांधवस्त्रियोन्यरुधन् ॥ १४॥

समयुगपत् ॥ १५॥

व्रमादिपूर्वकमीक्षग्रंयासांताः ॥ १६ ॥

#### भाषाटीका ।

वेसमस्त पांडव कृष्णमें है अनु प्रविष्टचित्त जिन का अनि मिष ने त्रोंसे कृष्ण को दर्शन करते स्नेह संवद्ध होकर यात्रा के कार्यों के निमित्त इधर उधर चलतेथे॥ १३॥

वांधवों की स्त्रियों ने उत्कंडा से निकल ते आँसुओं की धाराओं को रोकलिया कि देवकी सुत श्री कृष्णा की घर से यात्रा के समय अमंगल नहीं ॥ १४॥

मृदंग दांख भेरी पराव आनक गो मुख चुन्चुरी आनक घंटा दुन्दुभी आदि वाजे तब वजन छंगे॥ १६॥

कुठ नारी सब देखने की रच्छा से प्रासादों की शिखर पर चढी और प्रेम लजास्मित सहित देखती लच्यापर पुष्पों से वर्षा कर ने लगी॥ १६॥

सितातपत्रं जयाह सुकादामविभूषितम्।

रत्नदराडं गुड़ाकेशः प्रियः प्रियतमस्य ह ॥ १७॥

उद्धवः सात्याकिश्चैव व्यजने परमाद्भुते ।

विकीर्यमाणः कुसुमै रेजे मधुपतिः पथि ॥ १८॥

**ज्रश्रूयन्ताशिषः सत्यास्तत्र तत्र द्विजेरिताः।** 

नानुरूपानुरूपाश्च निर्गुगास्य गुगात्मनः ॥ १६ ॥

**ज्रान्योऽन्यमासीत् संजल्प उत्तमःश्लोकचेतसाम् ।** 

कौरवेन्द्रपुरस्त्रीणां सर्व्वश्रुतिमनोहरः॥ २०॥

#### श्रीधरस्वामी।

गुड़ाका निद्रा तस्या ईशो जितनिद्रोऽर्जुनः ( गुड़ाका धनुर्विद्या तस्या ईश इति वा धनुर्वेदपारग इत्यर्थः ॥ १७ ॥

व्यजने चामरे जगृहतुः। मधुपतिः श्रीकृष्णः॥ १८॥

सत्याः श्रीकृष्णे तासाम् अव्यभिचारात् किंतु नानुरूपाश्च ता अनुरूपाश्च निर्गुग्रास्य परमानंदस्य सुखीभवेत्यादयो नानुरूपाः गुग्गात्मनो मनुष्यनाट्यावतारे अनुरूपाश्चेत्यर्थः सन्धिराषेः॥ १९॥

सर्वासां श्रुतीनां मनोहरः उपनिषदोऽपि मूर्तिमत्यः सत्यः तं संजल्पमध्यनन्दिश्रत्यर्थः॥ २०॥

#### दीपनी ।

मुकादामेति । मुकादामिर्भिकुकालम्वैर्विभूषितम् रत्नघटितो दगडो यस्य तत् । एवंभूतं श्वेतच्छत्रमित्यर्थः ॥ १७ ॥ ३५ ॥

## श्रीवीरराघवः।

सितातपत्रं कथंभूतं मुक्तानांदामाभिः सरे विभूषितरत्नमयोदंडोयस्यतत् ॥ १७॥

उद्धवः सात्यिकश्चोभौपरमेश्रेष्ठेऽद्भुतेचव्यजनेजगृहतुः पथिकुसुमैर्विकीर्यमाणोमधुपतिर्यदुपतिर्यदूनामेवमधवइतिनामांतरंतचन वमेस्फुटीभविष्यतिरेजेरराज ॥ १८ ॥

ं निर्गुणस्यसत्वादिप्राकृतगुणरिहतस्यगुणात्मनः ज्ञानादिषाड्गुगयस्वभावस्य "सत्वादयोनसंतीशे"इतिवलेश्वर्यत्यादिवचनात् नानुरूपाः संवाप्तसमस्तकामत्वात् अनुरूपाः भक्तिस्नेहकारितत्वात् तत्रतत्राद्विजोरिताः अतप्वसत्याआशिषःअश्रृयंत ॥ १९ ॥

उत्तमक्लोकेक्वप्योपवचेतांसियासांतासांकौरवेंन्द्रपुरस्त्रीग्यामन्योन्यंसर्वेषांश्वतिमनोहरः सुस्रकरः श्रोत्रागिमनांसिचवशीकरोतीति तथावासंजल्पः सम्वादशासीत् ॥ २० ॥

## श्रीविजयध्वजः।

गुडाका "निद्रानिद्रागुडाकासंत्रोक्ताप्रमीलामृत्युरुच्यत" इत्यभिधानम् तस्याः ईशःगुडाकेशः जितनिद्रोऽर्जुनः इंद्रकीलकेविनिद्रोभूत्वातप्त तथाः पशुपतेरेतन्त्रामलक्ष्यवान् गुडवद्रक्तकेशोवा दीर्घस्तुच्छांदसः मुक्तादामिवभूषितं मौक्तिकमालालंकृतप्रांतमंडलंरत्नखिवतदंडिसितात पत्रंथ्वतच्छत्रं जत्राहेत्यन्वयः हरेरात्मादेरातिशयेनाप्रियत्वं "तदेतत्प्रेय" इत्यादिश्चतिप्रसिद्धं हश्च देनाह् अर्जुनस्यक्तकर्यातिशयदर्शीवास्यसार इयकरगालक्षगापराधपरिहाराधीवा ॥ १७ ॥

उद्भवसात्यकीचव्यजने जगृहतुरितिपूर्वगासंवधयवशब्दः स्वहस्ताश्यामेवजगृहतुनेत्वन्याश्यांस्वदासाश्यामित्यस्मित्रथे स्वधुनायाः दवगोत्रविद्येषागाांपतिः मुक्ताधीशोवा कुसुमैः कुरुपुरंभिकरकमलमुकैरितिशेषः पथिराजमार्गे ॥ १८॥

कुरुपुरतत्रतत्रतत्तनमा गेढिजवरमुखनिः मृताः दुष्टान्जहिसाधून्पालयपालयास्माननुगृहागोत्यादिकााशिषः शुभवाक्यप्रविधाः अश्रयं तत्यन्वयः कीहरयः सत्याः यथार्थविषयाः निगुगास्यसत्वादिगुगामवृत्त्युदासीनकायोडोस्थत्वासत्वादिगुगानातयितसन्तंप्रवर्तेयतीतिगुगा तत्यन्वयः कीहरयः सत्याः यथार्थविषयाः निगुगास्यसत्वादिगुगामवृत्तेयति। उगादिप्रत्ययनिमित्तमेतद्रूपं तस्यपालनादिकर्तुग्नुरूपाः पालनानुप्रहादिगुगात्मनोवा खराव्यः समुख त्मा अतसातत्यगमनइतिधातोः उगादिप्रत्ययनिमित्तमेतद्रूपं तस्यपालनादिकर्तुग्नुरूपाः पालनानुप्रहादिगुगात्मनोवा खराव्यः समुख विद्वार्थोवा ॥ १९ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

नकेवलंकुरुपुरस्थियोहरोपुष्पावकीर्णमकुर्वन्कितुस्तुतिमपीतिभावेनाह । अन्योन्यमिति उत्तमक्लोकचेतसांकोरवेद्रपुरस्थीर्णासर्व श्रुतीनांवेदाभिमानिनीनांदेवतानां मनोहरः सर्वेषांजंतूनांश्रुतीः श्रवणानिमनांसिचहरंतीतिवापरस्परसंजल्पः स्तुतिलक्षणः संलापशासी दित्येकान्वयः ॥ २० ॥

#### क्रमसंदर्भ:।

यद्यपि श्रीमगवति खरूपभूतानां गुणानां नित्यत्वमेव तथापि तत्तलीलासिद्धचर्यं तेषां कचित् कस्यचित् प्रकाशः कस्यचित् अप्र-काशश्च भवति । अतपवाह अश्र्यन्तेति । निर्गुणस्य मध्यपदलोपेन निर्गता गुणेश्यो गुणा यस्य तस्य प्राकृत गुणातीतिनित्यगुणस्य नानुरूपाः नित्यतत्परिपूर्णत्वेन लाभान्तरायोगात् । गुणात्मनः तदाशीवादांगीकारद्वारा तत्तद्गुणविशेष प्रवर्त्तकनिवर्त्तकस्यानुरूपाश्च । तदगीकारे हेतुः सत्या इति । तदेवं प्रकाशना प्रकाशनहेतोरेव श्रीभगवतश्चन्द्रपरपराद्वीज्जवलतादिके सत्यपि तत्तलीलामाधुर्यविस्तारक स्त्रामस्त्रादिव्यवहारः सिद्धचाति ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

## सुवो।धिनी ।

पुरुषाणांकृत्यमाहित्रिभिः सितातपत्रमिति आरक्तोदंडः श्वेतंछत्रंमुक्तादामानिपरितोछंवंतिगुडाकानिद्वातस्याईद्यः गतभ्रमोर्जुनः उप चारेषुसर्वेषुमहाराजत्वमुत्तमं तस्यचिन्हंहितच्छत्रमज्जनस्तेनबुद्धिमान् प्रियःप्रीतिविषयः अनेनभगवताबहुकृतमितिसृचितं प्रियतमस्यभग वतोयुधिष्ठिराद्ययेक्षयापिभगवान्प्रियतमः अतोमहाराजयोग्यं खस्यहीनत्वमपिवोधियत्वाधृतवानित्यर्थः हेत्याश्चर्यछौकिकत्यागात् ॥ १७॥

व्यजनेचामरव्यजनेपरमाङ्कृतेखतएवशीतलसुगंधवायुजनके पथिपुष्पैर्विकीर्यमाणः हृदिस्थितैः रेजेपरमशोभांप्राप्तवान् सर्वाग्येव पुष्पाग्निपुष्पवृष्टौसमागतानीवसंतपवायंभगवानाविर्भूतइतिमधुपितरित्यक्तं विष्णुपूजावातैः सर्वैःकृता माल्यार्थेपुष्पाग्निविनयुक्तानीति मधुपितरित्यक्तं "विष्णोः पदेपरमेमध्वः" इतिश्चतंःसिहासनोपवेशनापेक्षयापिपथिपरमाशोभाजाता ॥ १८॥

एवमन्यवर्णानांकृत्यमुक्त्वावाद्यणानामाह अश्र्यंताशिषइति व्राह्मणानामयंजातिधर्मः यदीश्वरेआशीर्दानमअविद्यमानार्थस्याशंसनरूपं तदैवतेषांवाक्यंप्रमाणांस्यात् अनिधगतार्थगंतृत्वात् प्रकृतेतुतदभावः आशिषांसिद्धत्वेनानुवादात् तथादृष्टार्थत्वपर्यवसानात् सत्याप्वाशिषः अतपवश्चताप्वनगृहीताः अनुवादांशेअनुरूपाः आशंसायामननुरूपाः उभयोः समासः चकारात्प्रत्येकरूपाश्चप्रत्येकरूपत्वेहेतुः निर्गुण स्यअनुरूपाः गुणात्मनोनुरूपाः अन्येचतद्विपरीताः सर्वभवनसमर्थत्वाद्भगवतः सर्वापवाशिषः सत्याः अतःश्चभाइत्यर्थः द्विजेतिवारद्वय जन्मनाव्यग्राः संतःनिर्धायवचनेअशक्ताइतिसूर्चितम् ॥ १९ ॥

प्वसर्वेषांकृत्यमुक्त्वाविरहादिसहनमेविक्तयाचभगवत्सांनिध्येविहर्मुखत्वंचभगविद्ग्छ्ययेवनाञ्चानादितिवक्तंतासाञ्चानमाविः करोतियन्यो न्यमासीदितियत्रस्त्रीणामेवद्यानंतत्रिक्तवक्तव्यमन्येषामितिभावःसम्यक्जल्पः स्वपक्षस्थापनपूर्वकपरदूषण्वाक्संदभाँजल्पः यद्यपिक्याक्षप जल्पस्यमध्यस्थाद्यपेक्षातयापि विचारक्षपजल्पस्यनान्यसापेक्षत्वमितिसुष्टुत्वम् अपिचकुः प्रवचनमेकिमितिन्यायोनात्रिकितुअन्योन्यसर्वेश्रो तारःस्वैवकारश्चेतिपताहराक्रथनेहेवः उत्तमदलोकचेतसामितिययालीिके स्त्रीणांनिपुणताभवित तिविक्तानांतथाभगवत्यपिद्दमित्यतयाज्ञा नंयुक्तमिव । किंच । कुरोमेहापुरुषस्यधर्मत्वेनपरिगतस्य वंद्याअपिधर्मत्वेनज्ञानवंतः तत्राप्ययंयुधिष्ठिरः परमेश्वर्यप्राप्तः पूर्णज्ञानादि मान्तस्यपुरिश्वीणांभगवत्परत्वं युक्तमेव नन्वन्यत्वेवमजानंतः श्रुत्वान्येश्यउपासतद्दिन्यायेनतास्यंज्ञानमस्तु नतुसंजलपस्तत्राहसर्वश्चितिम निहरद्दिसर्वोसांश्चतीनांमनस्तात्पर्यहरतीति सर्वेषांवाश्चित्तमनसीखवदोकरोतीतितथानह्येतादशः संजलपःयथाकथंचिद्भविति किंच भगवश्चतसामेवभवति ॥ २०॥

## श्रीविश्वनाथस्रकस्ती।

गुड़ाका निद्रा तस्या ईशो जितनिद्रोऽर्जुनः ॥ १७॥ १८॥

सत्याः कृष्णे तासामव्यभिचारात् । किन्तु ता नानुरूपा अनुरूपाश्च । सन्धिराषः । पेश्वर्यदृष्ट्या निर्गुग्रस्य परमानन्दस्य सुक्षी भन्वेत्यादयो नानुरूपाः माधुर्यदृष्ट्या गुग्रात्मनो ब्रह्मग्रयत्वप्रेमवद्यत्वाद्यप्रकृतगुग्रामयस्य तस्य अनुरूपाश्च युष्माकमाद्याभिरेव सम सद्य सुक्षमिति तत्वप्रतिवचनस्य मिध्यात्वानदृष्ट्यात् तस्य दास्यस्व्यवात्त्रस्वयादिरसंविषयाश्चयत्वे सति तत्तद्भक्तजनसंयोगविद्दात् स्य ग्रीकिकसुखदुःखादिमयत्वाच ॥ १९ ॥

सर्विवामेव श्रुतिमनसी हरतीति सः । शेषे सर्वासां श्रुतीनामपि मनोहरः। उपनिषद्देशिप सूर्तिमत्यः तं संजलपम् अध्यनन्द् ह्यर्थः॥ २०॥ स वै किलायं पुरुषः पुरातनो य एक आसीदविशेष आत्मिन ।
अये गुगोभ्यो जगदात्मनीश्वरे निमीलितात्मित्रिशि सुप्तशक्तिषु ॥ २१ ॥
स एव भूयो निजवीर्यचोदितां खजीवमायां प्रकृतिं सिसृत्वतीम् ।
अनामरूपात्मिनि रूपनामनी विधित्समानोऽनुससार शास्त्रकृत् ॥ २२ ॥
स वा अयं यत्पदमत्र सूरयो जितेन्द्रिया निर्जितमातिश्वनः ।
पद्यन्ति भत्तयुत् कलितामलात्मना नन्वेष सत्त्वं परिमार्ष्टुमर्हति ॥ २३ ॥
स वा अयं सख्यनुगीतसत्कयो वेदेषु गुह्येषु च गुह्यवादिभिः ।
य एक ईशो जगदात्मलीलया सृजत्यवत्यित्त न तत्र सज्जते ॥ २४ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

गुडाकेशोनिद्देशोऽर्जुनः ॥ १७ ॥ व्यजनेजगृहतुः रेजेरराज ॥ १८ ॥

निर्गुगस्यप्राकृतगुगारिहतस्य "यथात्माऽपहतपाप्माविजरोविमृत्युर्विशोकोविजिघत्सोऽपिपास "इतिश्रुतेः गुगात्मनः कल्यागागुगायुक्तस्य "अनन्तकल्यागागुगात्मकोसाविति "स्मृतेः नानुरूपाः पूर्णकामत्वात् अनुरूपाश्चभक्तकतिप्रयत्वात् संधिरार्षः॥ १९॥

सर्वश्रतीनांवेदवाक्यानांमनांसिहरतीतिसतथासंजल्पः ॥ २० ॥

#### भाषा टीका।

मुक्तादाम विभूषित रत्नदंड श्वेत छत्र प्रिय तम श्री रूष्णा पर प्रिय अर्जुन नै लगाया ॥ १७ ॥ उद्भव और सात्य की नै परम अद्भत व्यजन धारण किये। उससमय पुष्पों की दृष्टिसे मधुपित की मार्ग मै वडी शोभाहुई ॥ १८ ॥ वहां ब्राह्मणों के कियत सत्य आशी वार्द निर्भुण और गुणात्मा सुनाई पडते थे। कि जो भगवान के अनुरूप और अनुरूप थे॥ १९॥

उससमय उत्तम इलोक कृष्णमे निमिष चित कीर वेन्द्र पुर स्त्रियों का पर स्पर संलाप हुआथा। वह सब श्रुतियों के भी मन के

हरमा कर ने वालाहै २०॥

## श्रीधरस्वामी

अत्र तेजः सीन्दर्याद्यतिश्येन विस्मिताभ्यः सखीभ्योऽन्या स्त्रियः कथयन्ति नात्र विस्मयः कार्यः साक्षादीश्वरत्वाद्दस्येति स वे इति चतुर्भिः। वे स्मरणे। किलेति प्रसिद्धप्रमाण्योतनम् य एक एवाद्वितीयः पुरुष आसीत् स एवायं श्रीकृष्णः। कुत्रासीत् अविशेषे आत्मिन निष्प्रपंचे निजक्षे। कदा अत्रे गुर्गाभ्यः गुणाक्षोभात् पूर्वे तथा निशि प्रलये च। अन्य लक्षणं जगतामात्मिनि जीवे निर्मालिता तमिति लप्तस्त्रमयन्तं पदं जातावेकवचनम् ईश्वरं लीनक्षेषु जीवेषु सत्स्वित्यर्थः। ननु जीवानां ब्रह्मत्वात् कथं लयः तत्राद्धः सुष्तासु श्वित सतिषु जीवोपाधिभृतसत्वादिशिक्तलय एव जीवलय इत्यर्थः॥ २१॥ श्वित सतिषु जीवोपाधिभृतसत्वादिशिक्तलय एव जीवलय इत्यर्थः॥ २१॥

तदंवं सृष्टेरादो प्रलयान्तरंच निष्प्रपंचावस्थानमुक्त्वा स्थिती सृष्टिप्रलययोर्मध्ये सप्रपंचावस्थानमाहुः स इति। स एव अप्रच्युतस्वरू पिर्धातिरेव प्रकृतिम् अनुससार अधिष्ठितधान्। भूयः पुनः सृष्टिप्रवाहस्यानादित्वात् । कीहर्शी निजवीर्यचोदितां स्वकालशकिप्रेरितां स्वांश्वभूतानां जीवानां मायां मोहिनीम् अतएव सिसृक्षतीं स्रष्टुमिच्छन्तीम् । किमर्थमनुससार अनामक्षे आत्मिन जीवे कपनामनी विधातुमिच्छन् उपाधिसृष्ट्या जीवानां भोगायेत्यर्थः । कर्माणि च विधातुं वेदान् कृतवानित्याहुः शास्त्रकृदिति ॥ २२ ॥

अस्य दर्शनमित्त कुलमण्यस्मामिलेड्यमित्याहुः। स वै अयं यस्य पदं खरूपम् अंधि वा निर्जितो मातिश्वा प्राणो येः इखत्वमार्षे ते सूर्य एव प्रयन्ति । केन मस्त्रा उत्कितिः उत्केठितः अमलो य आत्मा बुद्धिस्तेन "इश्यते त्वग्य्या बुद्धचा" इति श्रुतेः । बुद्धि ते सूर्य एव प्रयन्ति । केन मस्त्रा उत्किलितः उत्केठितः अमलो य आत्मा बुद्धिस्तेन "इश्यते त्वग्य्या बुद्धचा" इति श्रुतेः । बुद्धि ते सूर्य स्वयं देव स्वयं विक्रा किन्तु अनेन सहैव (अस्माभिः ) गंतव्यमित्यर्थः ॥ १३ ॥ अहो एव सत्वं ज्ञानं परिमार्ण्डे नाशियते हे स्वयः स्वयं स्वय

थुगयश्रंतिकतामाहुः स इति । हे सिख यो वेदेषु रहस्यागमेषु च रहस्यनिकपकैः अनुगीतसत्कथः अनुगीताः सत्यः कथा बस्य स एवायम् । गानप्रकारमाहुः य एक ईश इत्यादि ॥ २४ ॥ 34.1

#### श्रीबीरराघवः।

संज्ञवपमेवाहसवैकिलेत्यादिमिर्दशिमःतावतप्रलयदशायांकृत्स्नजगदुपादानत्वेननिमित्तत्वेनचयपकोऽवस्थितः यश्चततो "बहुस्यांप्रजाये यनामरूपेव्याकरवाणि" इतिसंकलपपूर्वकंनामरूपव्याकर्तायश्च "तस्यहवापतस्यमहतोभूतस्यिनश्विक्षतमेतव्यद्यवेदःयोव्रह्माणंविद्यातिपूर्वयो वेवेदांश्चप्रहिणोतितस्मे" इतिवेदादिभिः कर्नृत्वेनतत्प्रवर्तकत्वेनचप्रसिद्धः यश्चमुमुश्चुभिर्धेयोद्ययचवेदांतवेद्यस्वरूपव्यावः यश्चजगत्स्मिरिधितलयलीलः सप्वायंकृष्णाइतिजलपन्तिचतुर्भिः निशिष्रलयदशायांगुणेक्ष्यः सत्त्वादिगुणोन्मेषाद्रप्रेपूर्वे सुप्तशक्तिष्ठकर्मक्ष्यितिलयलीलः सप्वायंकृष्णाइतिजलपन्तिचतुर्भिः निशिष्रलयदश्चायांगुणेक्ष्यः सत्त्वादिगुणोन्मेषाद्रप्रेपूर्वे सुप्तशक्तिष्ठकर्मक्षयिक्षित्रसुद्धान्ति स्वर्थाः आत्मिनस्वर्थः आत्मिनस्वर्थः स्वर्थानस्वर्थः सत्त्वादिगुणोन्मेषाद्येपूर्वे सुप्तशक्तिष्ठकर्मक्षयिक्षित्रसुद्धान्ति स्वर्थाः आत्मामितः निवृत्तसर्गोद्धिकलपेस्वरिमन्नविशेषाः द्विव्यादिभूतानि महदाद्याविशेषांता दित्रस्वर्थानात् तत्त्वप्रदर्शनार्थकार्यवर्गेरहितेसितिनामकपिवभागरिहतेसतीतिवाएकोऽद्वितीयः एकअविभक्तचिद्यविष्ठिर्थात्वाद्वितीयः इत्यनेनिमि स्वातरिविषेषः एवविधोयमासीत्सप्वायंकिलशिक्षण्यस्त्रतेनान्वयः ॥ २१ ॥

सण्वभूयद्दति यणकोऽद्वितीयोभूत्वाभूयः निजवीर्यचोदितांबहुस्यामित्यादिखसंकल्पप्रेरितांखजीवमायांखदेषभूतजीवितराधायिकांप्रक तिप्रतिसिमृक्षतींस्रण्डुमुन्मुखीमनुससारअन्तरात्मतयाप्रविद्यगामरूपेव्याकरोदित्यर्थः कथंभूतः अनामरूपात्मनिनिवधेतेनामरूपेयस्यत-स्मिन्नात्मनिजीवेरूपनामनीनामरूपोविधित्समानश्चिकीर्षुः शास्त्रकृद्धेदप्रवर्त्तकोयः सण्वायंश्रीकृष्णोवर्त्ततद्दत्यर्थः॥ २२॥

सवाइतिनिर्जितानीद्रियाग्यंतर्वाद्यानियैः निर्जितः मातरिश्वाप्रागोयैस्तेस्र्रयः भक्त्योत्किलतंसंयुक्तमतण्वामलंचेतस्तेनयस्यपदंस्व-रूपंपद्यन्तियोऽयंचसत्त्वमन्तः करगांपरिमार्ण्डुशोधियतुमईतिसप्वायंक्रण्याः॥ २३॥

सद्दित हेसिखः!गुद्धेषुवेदेषुवेदांतेषुगुद्धेष्वितिविद्येषगाद्वेदवादिभिवेदांतगुद्धक्षपस्वक्षपगुणायायातम्योपदेष्टृभिश्चानुगीयमानासतिविशुद्धा कथायस्ययश्चेकपवसम्भातमनः स्वस्यकीलार्थेजगत्मृजत्यवितरक्षत्यित्तं सहरतेतत्रजगतिनसम्भतेजगदंतरात्मतयास्थितस्तद्गतदोषेर्नसम्भते चनपञ्चपातीतिवासपवायंक्रणाः ॥ २४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

कोसावितितत्राह् सवाहति ह्यंपेक्षयाऽप्रधानत्वात्गुण्याध्यवाच्येभ्योमहदादितत्त्वेभ्योऽप्रोनिशिमहाप्रलयेसुप्तशक्षिषुशक्यत्वात्तद्धीन् त्वाच्छिक्तिशब्दवाच्यासुसत्त्वादिगुणाभिमानिनीषुश्रीभृदुर्गासुसुप्तासुजगद्वचापारा न्विहायहरीरममाणासुसतिषुपकः प्रधानोजगदात्मिन जगदादानकर्तरिजगत्संहर्तरिनविशेषोऽधिकोयस्मात्सोऽविशेषः तस्मिश्रीश्वरईशानादिशक्तिमति"सभगवः कस्मिन्प्रतिष्ठित"इतिश्रुतेः स्वरू जगदादानकर्तरिजगत्संहर्तरिनविशेषोऽधिकोयस्मात्सोऽविशेषः तस्मिश्रीश्वरईशानादिशक्तिमति"सभगवः कस्मिन्प्रतिष्ठित"इतिश्रुतेः स्वरू वाधारेस्थितः निमीलितात्मा"तुच्छचेनाभ्यपिहितंयदासीदि"तिश्रुतेर्गुणातोऽल्पत्तवातम्यादिक्रपयाप्रकृत्यानिगृहितआसीत्सपुरातनःपुच्षोवि क्षुर्यकृष्णाः किलपरमार्थः सत्यं नैवानयोः कश्चिद्विशेषइत्यन्वयः ॥ २१ ॥

स्परमपुरुषप्रवभूयः पुतः सृष्टिदशायांखजीवमायांप्रकृतिखभायोमहालक्ष्मीमनुससारतस्यांवीर्यमधादित्यन्वयः कथंभूतांनिजवी ये चोदितांखसामध्येंनेप्रेरितांसिसृक्षतीं सृष्टीच्छावतीं कथंभूतः सः अप्रसिद्धगुगात्वादप्राकृतकपत्वाच अनामकपात्मकपात्मसिमना धारकप्रतामनीविधित्समानः रूपनामात्मकंप्रपंचंस्रष्टुमिच्छन् शास्त्रकृत्सकलियमनकर्तायप्वंविधः सहरिरयंकिलेत्यन्वयशेषः॥ २२॥

अत्रक्षम्भूमोजितंद्रियाः प्राणायामेनिर्जितमातिरिश्वनः वशीकृतप्राणाः सूरयः भक्त्वाउत्कलितेनिवक्षसितेनउत्कणिठतेनवाअमलेनरा गादिमलरिहतेनात्मनास्वरूपांतः करणेनयंत्पदंयस्यस्वरूपंपश्यतिसवा अयंकृष्णः किलेत्यन्वयः एषकृष्णः सात्त्विकानामनुष्राहकः अस्माकंसन्त्वंस्वविषयक्षानंपरिमार्ण्डुनाशायितुंनाहित परिपूर्वोमार्ष्टिर्वर्जनार्थः निन्वत्यनेनअपपरीवर्जनहितसूत्रंप्रमाण्यति नित्वतिपाठः अस्माकंसन्त्वंस्वविषयक्षानंपरिमार्ण्डुनाशायितुंनाहिति परिपूर्वोमार्ष्टिर्वर्जनार्थः निन्वत्यनेनअपपरीवर्जनहितसूत्रंप्रमाण्यति नित्वतिपाठः सम्मागः कर्मणांऽतः करणाशुद्धः किनस्यादितितत्राह नित्वति एषकर्मणासन्त्वमंतः करणांपरितः सर्वतः मार्ण्डशोधियतुंनाहितिकितु सन्वाद्यवणाद्यपायसंस्कृतयायावदंतः करणांश्रुध्वति तावश्वकर्मणोतिभावः॥ २३॥

यंविद्वादिभिरनंतवेदेषुगुद्धेषुउपनिषत्सुचअनुगीतसत्कथः निरंतरोदितसच्चरितः यश्चेकपवर्दशः यश्चात्मलीलयाजगत्मृजित सृष्ट मवितत्त्वद्योग्यकर्मफलभुक्तयं असिसंहरति यश्चजगतिनसज्जते आप्तकामत्वात्फलंनादित्सिति द्वेसिक १ सवामयंकुष्णाइत्येकान्वयः गुद्ध वादिभिरितिपाठेउपनिषद्विचारकुशलैरित्यर्थः॥ २४॥

## सुवोधिनी।

तसंज्ञल्यमाहदश्विः सवैकिलायमिति "यस्मिन्विदितसर्वमिद्विदितंभवती" ति श्रुत्यामुलंभगवान्श्वातव्यः तत्रकोभगवानित्यपे श्वायायत्मात्रिश्यमात्रेग्रीवउपासनोपदेश विचारव्यतिरेकेग्रा अस्माकंसर्वञ्चतासभगवान् अतः अयभेवभगवान् किंच नकेवल श्वायायत्मात्रिश्च विचारव्यतिरेकेग्रा अस्माकंसर्वञ्चतासभगवान् अतः अयभेवभगवान् किंच नकेवल श्वायायत्मितः अपितृसर्वलोकवेदप्रसिद्धः वैनिश्चयेनतत्र बाद्यप्रकेकतान्तुतथापि वेदादिप्रमाग्रोन "आत्मेवदमप्रआसित्यु मस्माद्वत्याः पूर्वमेवाहमिहासमिति तत्युरुषस्यपुरुषत्वं पुरुषोहवेनारायग्रोऽकामयतः इत्यादिश्वभिः पुरुषातसृष्टिरुक्ता जन्माधस्ययत कृष्वियः पूर्वमेवाद्याये च योजगत्कत्त्रीस्मात्मभगवान् तहस्यतिनचात्रपुरुषश्चाद्यआकृतिवाचियेनेदानीतनरितव्यापित्रमिति ॥ १ । १ ॥ शातन्याय च योजगत्कत्त्रीस्मात्म सर्वस्मादिपपुरातनत्वेनत्रयाचव्याससमाधी "अपश्यतपुरुष पूर्णमिति । कितुपुरातनत्वेनयत्रिविचन्त्रमावच्याभावितुमर्दतित्याद्यक्याह अयपुरुषः पुरातनदित्रयोभवतिभिरुक्तः सोऽयमवः" "यस्मात्सर सस्मादः सदातनःपुरुषः समावाद्यान्योभवितुमर्दतीत्याद्यक्याह अयपुरुषः पुरातनदित्योभवतिभिरुकः सोऽयमवः" "यस्मात्सर सस्मादः सदातनःपुरुषः समावाद्यान्योभवितुमर्दतीत्याद्यक्याह्यस्य ।

## सुवोधिनी।

मतीतोऽहमझरादपिचोत्तमः अतोऽस्मिलोकेवेदेचप्रथितः पुरुषोत्तम"इत्ययमेवाह नन्वस्यवैकुंठवासिनोमायाद्यनेकसंचिवस्यकयंचिद्धपपत्या पुरुषत्वंभवतुनाम नतुमगवत्त्वमित्याशंक्याहयएकआसीदितियइति प्रसिद्धौ"सदेवसौम्येदमप्रआसीदेवकमेवाद्वितीर्याम"तियः श्रुत्यासजा तीयविजातीयस्वगतभेदराहित्येनीनेरूपितः मोप्ययमेवएकआसीत् ननुकथमेतत् घटतेअधिकरग्राकालस्थिति क्रियादिसापेक्षत्वात् अत आह अविशेषआत्मनीति नहायंक्षचि दन्यत्रस्थितः कित्वात्मन्येव नजुतथाप्याधारत्वादिधर्मपुरः सरआत्मनिस्थितोवक्तव्यः तत्रअपूर्वीक दोषइतितत्राह अविदेषेसर्वोधारादि धर्मविदेषरहिते आनेनकालादीनामपि सत्त्वंतदानीनिवारितं नन्वप्रतदातीमित्यादिराब्दाः कालवाचका यवसत्यंतदानींप्रमाणाभावात् वक्राद्यभावाचकेवलंहएं निह्नपयितुंनशक्यतेपश्चात् कालादिनिह्नपणपुरः सरंतज्जातमितितदानींतनव्यापा रमाश्चित्यतदानीमित्युक्तं नतुकालसत्त्वं प्रतिपाद्यते उभयप्रतिपादने वाक्यभेदप्रसंगात् ततःपूर्वप्रमाणेतरेणासिखत्वाकानुवादः एकमे वाद्वितीयमिति विरोधश्चकर्यवास्वयंस्वगतादिभेदम् निराकुवन्कालमनुवदेत् तस्मादिदानीवोधसमयानुसारेणवाग्व्यवहारात् लोकप्रती त्यर्थे सर्वाथारतयाप्रतीयमानकालोपरंजनतयानिरूपणंतदानीमिति आसनिकयापिस्वरूपमेवतस्मात् सुष्ठूकमिवशेषे आत्मनिएकएवा सीदिति एवंश्रीतप्रकारेण निरूप्यपुराणादिप्रकारेणनिरूपयति अग्रेगुणेश्यइतिगुणेश्यः सत्त्वरजस्तमोरूपेश्यः अग्रेप्रथमंतदागुणारूपेण स्वयंनाविभूतइत्यर्थः अथवा "पूर्ववद्या॥३।२।२९॥इतिसिद्धान्तानुसारेण्यमगवान् स्वधमेरूपःप्रथमंभवतिपश्चात्रशक्तिरूपः कार्यरूपश्चतदाह्अग्रे गुर्गोक्ष्यइतिस्वधर्मनिर्माणात् पूर्वमित्यर्थः सचसतः सत्तायाआनंगीकारात् जगतः पूर्वसत्त्वमंगीकर्त्तव्यमतआहजगदात्मनीतिकालनिराकरणार्थः माह ईश्वरइति जीवनिराकरणार्थमाह निमीलितात्मित्रिति नितरांमीलिताजीवरूपेणनप्रकटाः आत्मानोयस्मिन्छप्तसप्तम्यंतंपदं स्वश क्तिब्यावृत्त्यर्थमाह सुप्तशक्तिषुसत्स्वत्यर्थः अनादिरयंसंसारप्रवाहः नचमहाप्रलयएकएव ब्रह्माग्डभेदानांसृष्टिभेदानांश्चत्यादिसिद्धः त्वात् अतोयस्यां चित्रमृष्टौ वक्तव्यापिपूर्वोवस्थावकव्याततोऽपिपूर्वेमृष्टिरासीदितिश्चापयति सुप्तासुशक्तिष्वितिपूर्वमृष्टिःशक्तिभिरुपसं द्धता ततः ब्रह्मणोंऽतिमदिवसस्यसमाप्तौरात्रिकालेचापगतेब्रह्मागडभंगात तत्त्वानामपिलयात् दिवसोद्गमाभावेनरात्र्यपगमाभावात्सकालो रात्रित्वेनव्यपदिष्टः शक्तयश्चसुप्तप्रतिबुद्धन्यायेनभगवत्युद्गच्छंतिसुप्तानांचभगवत्त्वमेव अतःशक्तिशयनमारभ्यगुणोत्पत्तेः प्राक्मगवाने कएवासीदित्युक्तंभवति ॥ २१ ॥

एवंपूर्वावस्थांनिरूप्यमिक्त सहितामिदानींतनसृष्ट्यवस्थांवक्तुमादितः प्रकारमाह स एवभूयइति सएवपूर्वोक्त एवभूयइति पूर्वमण्येवं सृष्टिकृतवान् तत्रप्रथमंस्ववीर्यरूपंकालंसृष्टवान् तेनकालेनचोदितांसुप्तांसुख्यांमायाशिक्कालः प्रेरिवान्साचमायाद्विवधास्वप्रतिकृत्या संवद्धंभगवंतंजगद्भूपेणाकरोतिस्वेच्छ्याप्रादुर्भूतान् जीवांश्चव्यामोहयिततदेयंसृष्टिजींवार्थाभविव्यतोमायायाः इदानींतनायाः जीवमाये- तिनामतयासृष्टिप्रकारमापादितइतिप्रकृतिसिसृक्षतीमित्युकं ताहशींमायांभगवाननुससारतद्वचापारानंतरंस्वयं तदनुक्रलतयापितेविमिलित वानित्यर्थः अस्थांसृष्टीविशेषप्रयोजनमाह अनामरूपात्मनिरूपनामनीविधित्समानइतिपूर्वसृष्टीनभगवतोऽवतारः ननामानिनरूपाणिचइदानीं सृष्टेभिक्तप्रधानत्वात् भगवतोऽवताररूपनामान्यपेक्षंते अतः पूर्वमनामरूपात्मनिस्विस्मन् इदानींरूपनामनीविधित्समानइतिअतोजीवार्थः सृष्टेभिक्तप्रधानत्वात् भगवतोऽवताररूपनामान्यपेक्षंते अतः पूर्वमनामरूपात्मनिस्विस्मन् इदानींरूपनामनीविधित्समानइतिअतोजीवार्थः मेवस्वस्यापिरूपनामनीअकरोदित्यर्थः किंच शास्त्रकृतवेदकर्त्ताकेवलनामरूपकरणेयुगपदेवसर्वमुक्तिप्रसंगात् सृष्टिकालद्रासः प्रसल्येत मेवस्वस्यापिरूपनामनीअकरोदित्यर्थः किंच शास्त्रकृतवेदकर्ताकेवलनामरूपकरणेयुगपदेवसर्वमुक्तिपर्वामोविदित्यर्थः॥ २२॥ उत्पादितेतुवेदेखभावगुणभेदेनभिन्नतेनव्यामोहितेषुकिश्चिदेवमुच्यतद्दित क्रभेणार्थक्तिस्वन्तिस्तर्याभवेदित्यर्थः॥ २२॥ उत्पादितेतुवेदेखभावगुणभेदेनभिन्नतेनव्यामोहितेषुकिश्चर्याद्वाति क्रभेणार्थक्तिस्तर्यान्तिस्तर्याः॥ २२॥

प्रवस्तिप्रकारेण साक्षाद्भगवानेवायमित्युक्तेप्रपंचकर्तृत्वेनभोकृत्वादि भावापत्तोजीवतुल्यतास्यादित्याशंक्याहसवाअयमिति कर्तृत्वस् मानाधिकरणं भोकृत्वंकविदेवयत्रसार्थः क्रियते भगवांस्तुजीवार्षकरोतीति नभोकृत्वंतेनरूपेणदोषसंवधेनदोषः नहिदंतकशादीनां अभावाधिकरणं भोकृत्वंकविदेवयत्रसार्थः क्रियते भगवांस्तुजीवार्षकरोतीति नभोकृत्वंतेनरूपेणदोष्ट्र व्याविद्याचे क्रियानां नतुस्रयोजनमनुदिद्यमंदोपिनप्रवर्त्ततद्वति स्वप्रयोजनाभावेकवलपरार्थकयं कुर्यात्त्रवाह सल्यनुगीतसत्कयद्वतिहेसित । स्वप्रयोजनाभावेकवलपरार्थकयं कुर्यात्त्रवाह सल्यनुगीतसत्कयद्वतिहेसित । स्वप्रयोजनाभावेकवलपरार्थकयं कुर्यान्त्रवाह सल्यनुगीतसत्कयद्वतिहेसित । स्वप्रयोजनाभित्रवानंत्रवाह क्ष्यायस्यः भगवतः प्रयोजनंत्रवाह क्षित्रवाह क्षित्रवाह स्वप्रयोजमानित्रवाह क्ष्यान्त्रवाह क्ष्यावस्य स्वप्रयोजनानंत्रवाह क्ष्यानंत्रवाह क्ष्यानंत्रव

•

#### सुवोधिनी।

मिरितगृद्धोषुवेदषुपरमोपदिषत्यु "विष्णोःकर्माणिपद्यतयतोव्रतानिपस्पद्योआतमावावरेद्वष्टव्यः श्रोतव्य "इतिअंभस्यपार इत्यारभ्यसवात्तत् प्रकर्णोस्थिताम् भगवद्गुणानमूद्ययपवंविदुरमृतास्तेभवतीत्यंतेनभगवत्स्वरूपगुण्यक्षानानंतरं भगवत्स्वरूपंप्रतिपादितंतया "भक्त यामामाभि जानाति शृयवंतिगायंति सभाजयंतेमम पौरुषाणि "इत्यादिवाक्येश्चेन मेवकथयंतीति विद्यक्षितत्यानिरूपितं ननुनानाप्रकरणेषु निरूपितो भगवान्प्रकरणेषु भेदाद्विश्लोभवेत्द्यद्वांतराभ्यासवत्प्रक्रियायाथिभेदकत्वात्तवाह् यपक्रइतिसर्वप्रकरणेषुक्लोभगवानेकपव "सर्ववेदांत प्रत्ययंचोदनाद्यविद्येषात् ॥३।३।१॥ इत्यत्रनिरूपितं सर्वत्रप्रक्षियायाथिभेदकत्वात्तवाह् यपक्रइतिसर्वत्रपेदरेशहेतुमाहर्दशहिसर्वेरं प्रत्ययंचोदनाद्यविद्येषात् ॥३।३।१॥ इत्यत्रनिरूपितं सर्वत्रप्रति अत्यवेद्योत् अन्येषांदुःकरत्वेऽपिभगवतस्तुसालीलाशत्तिसंहरति आत्मिनस्थापयतिषा यद्यिगुणानुकथनद्वारासज्जतेतथापितत्रनसज्जते ॥ २४ ॥

## श्रीविश्वनायचक्रवर्त्ती।

तत्र प्रथमं शान्तिरतिमत्यः सिवस्मयं परस्परमाहुः। यः पुरातनः पुरुषः अविशेषो निष्मपञ्चः यद्वा न विद्यते विशेषो वैशिष्ट्यमुत् कर्षो यस्मात् तथाभूत एक एवासीत् व्यासादिमुखादस्माभिः श्रुतोऽभूदित्यर्थः स वै निश्चितम् अयमेवेति तर्जनीभिर्दर्शयामासुः। कदा गुर्गाश्योऽग्रे गुराक्षोभातः पूर्व तथा निशि प्रलये महाप्रलये च आत्मिन प्रकृत्यन्तर्यामिणि ईश्वरेऽधिकरणे जगदात्मिन सर्वजगज्ञीवे निमीलितात्मिन लीनस्वरूपे सित जात्या एकवचनम् स्वजीवेष्वीश्वरे लीनेषु सत्सित्यर्थः। ननु प्राकृतिकप्रलये जीवानामविद्यालया भावात् लयोऽप्रसिद्धस्तत्राह। सुप्तासु शक्तिषु सतीषु जीवोपाधीनामध्यात्मादीनां लय एव जीवलयोपचारः। यद्वा स एव पुरातनः पुरुषोऽयं यो गुर्गोश्योऽग्रे निशि प्रलये च आत्मिन स्वस्कूषे अविशेष एवासीत् यथा अधुना सपरिकरत्वेन विविधाद्भृतलीलस्त्रयेष तद्यापार्थाः। एकः अयमेव न त्वन्यो ब्रह्मादिरपीत्यर्थः। अन्यत् समानम् ॥ २१॥

एवं सृष्टेः पूर्वे प्रलयान्तरं चाप्रच्युतरूपगुग्रालीलत्वेनैवावस्थानमुक्तवा तन्मध्येऽपि तथैव नित्यावस्थिति वक्तुं सृष्ट्यारम्भे खांशांतरेग्रा लीलान्तरमप्याद्धः स एवेति । शास्त्रकृत श्वासनिष्क्रमप्रथमक्षण् एव वेदादिशास्त्राविभावकारी महाविष्णुः सन् प्रकृतिम अनुससार । लीलान्तरमप्याद्धः स एवेति । शास्त्रकृत श्वासनिष्क्रमप्रथमक्षण् एव वेदादिशास्त्राविभावकारी महाविष्णुः सन् प्रकृतिम अनुससार । निजवीर्येग्रा निजवलेन प्रेरितां खवशीकृत्य कस्मिश्चन कृत्ये नियुक्तां ज्वाक्रिक्षण्यां जीवानां मायां मोहिनीं वशियत्रीम् । किमथेमनुससार अनामक्षे आत्मिन जीवेक्षपनामनी देवतिर्थक्मनुष्यादिलक्षण्ये खात्मिन जीवेक्षपनामनी देवतिर्थक्मनुष्यादिलक्षण्ये विधित्समानः विधातुमिच्छन् स्थूलस्क्रमोपाधिसृष्ट्या जीवानां तदध्यासेनत्यर्थः । कर्मज्ञानयोगभिक्तसाधनसिद्धचर्थं तु प्रकृत्यनुगमनात् पूर्वमेव वेदशास्त्राण्यि कृतवानेवेति शास्त्रकृत् ॥ २२ ॥

ननु सृष्ट्यारम्भे पुरुषादयोऽवतारा लक्ष्यन्ते न त्वेष ईदशप्रकारः किन्तु वैवस्वतमन्वन्तरीयाष्टाविश्चतुर्पुगस्यद्वापरे संप्रत्येवेष उप लक्ष्यते । सत्यम् । असौ भक्तिगम्यो नित्यस्वरूपो नित्यलीलोऽस्मिन् द्वापर प्वावतीर्गोऽप्यस्य भक्तिमङ्किः सदैवायमुपलभ्यते इत्याह स लक्ष्यते । सत्यम् । असौ भक्तिगम्यो नित्यस्वरूपो नित्यलीलोऽस्मिन् द्वापर प्वावतिर्गा प्रागाः सव्वेन्द्रियागां प्रागाः वा इति । निर्जितो मातरिश्वा प्रागाो यैः । हस्वत्वमार्थम् । यद्वा निर्जितात् मातरिश्वनः प्रागाद्धितोनिर्जितोन्द्रयाः सव्वेन्द्रियागां प्रागाः चा इति । निर्जितोन्द्रया इत्यर्थः । तथाभूता अपि भक्त्या उत्करिरतोऽमलो य आत्मा वुद्धिस्तेनेव यस्य पदं सक्षपं चरणारविन्दं वा पद्यन्ति । "दृश्यते त्वप्रयया वुद्धे"ति श्रुतेः । बुद्धिवैमल्यस्याप्ययमेव हेतुरित्याद्वः । निन्विते । ननु निश्चितम् एष पव चरणारविन्दं वा पद्यन्ति । "दृश्यते त्वप्रयया वुद्धे"ति श्रुतेः । बुद्धिवैमल्यस्याप्ययमेव हेतुरित्याद्वः । निन्विते । ननु निश्चितम् एष पव चर्यात्वे वुद्धि परिमार्ण्डं सम्यक् शोधियतुम् अर्हति न तु योगादयस्तेन सूरित्वं जितोन्द्रियत्वं जितप्रागात्वं च तेषां भक्त्येव नतु प्रागाया- मादिमिरिति भावः । अत्र सूर्यो भक्त्यत्वक्रगरुद्वे सत्येव पश्यन्तिति वर्त्तमानिर्देशेन सार्व्वालिकदृष्टिगोचरत्वात् तस्य सार्व्वदिक- लिल्द्यम् । अतः न्पराद्धान्ते सोऽवुध्यते गोपवेशो मे पुरुषः पुरस्तादाविवंभूवे"ति गोपालतापनीश्रुतौ ब्रह्मवाक्यम् । तथा ब्रह्मसंहितायां सृष्ट्यारम्भेऽपि गोपवेशः कृष्ण एव दष्टः स्तुतश्च ॥ २३ ॥

प्रध्यास्य लीलाकथातिरहस्या रहस्यलोकैरेव वेद्येत्याह स वा इति । अयमर्ज्जुनस्य सखा नराकृतिः वेदेषु गुह्येषु शास्त्रेषु च गुह्य-वादिभिरतिरहस्य निरूपकैरस्यैव कैरिप लोकैरनुगीताः सत्यः कथा यस्य सः । यः खलु एक एव ईशः ईश्वरः सन् नतु साक्षादेतद्रूप इत्यर्थः ॥ २४ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

संजल्पंदर्शयति सङ्ति दश्मिःपरमाद्भुतालेकिकशांतिकान्तिगुण्मंदिरंभगवंतदृष्ट्वान्योऽन्यंजल्पन्ति निशिप्रलयेजगदात्मनिचिद्वि कल्लान्ति निशिप्रलयेजगदात्मनिचिद्वि कल्लाक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्ति क्रिक्तित्वात्मार्थिद्वि क्रिक्ति क

यदा द्याधर्मोगा तमोधियो नृपा जीवन्ति तत्रैष हि सत्त्वतः किल । धने भगं सत्यमृतं दयां यशो भवाय रूपागि दघद्युने युगे ॥ २५ ॥ ग्रिहो ग्रुलंश्वाध्यतमं यदोः कुलम् ग्रहो ग्रलं पुग्यतमं मधोर्वनम् ॥ यदेष पुंसामृषभः श्रियः पतिः खजन्मना चंक्रमगोन चाञ्चति ॥ २६ ॥ ग्रिश्वा वत स्वर्थशसस्तिरस्करी कुशस्थली पुग्ययशस्करीभुवः ॥ पश्यान्ति नित्यं यदनुप्रहेषितं स्मितावलोकं स्वपतिं स्म यत्प्रजाः ॥ २७ ॥ नूनं वत स्नानहुतादिनेश्वरः समर्चितो ह्यस्य गृहीतपागिभिः ॥ पिवन्तियाः सख्यधरामृतं मुहुर्बजिश्वयः संमुमुहुर्यदाशयाः ॥ २८ ॥

## सिद्धान्तप्रदीपः।

"आत्मावाथरेद्रष्टव्य"इत्यादिश्वतिसिद्धस्ययस्यपदंस्वरूपंभक्त्योत्किलितेनोत्किणिठतेनामलेनात्मनांतः कर्गोन"मनसैवानुद्रष्टव्यः इत्यते त्वग्यया बुद्ध्ये"त्यादिश्वतिप्रोक्तेन जितान्यंतर्वाद्यानीद्रियागियैस्तेनिर्जितोमातिरश्वाप्राग्रोयैस्तेद्रस्वत्वं छांदसंपश्यन्ति सोऽयंश्रीकृष्णः ननुअहो एषसत्व मंतः करगोपरिमार्ष्टुंपरितः शोधयितुमहिति ॥ २३॥

गुह्येषुचेवदार्थवोधकेषुशास्त्रेषुअनुगीतासतीशुद्धाकषायस्यहेसखि ! सोऽयंश्रीकृष्णाः ॥ २४॥

#### भाषाटीका ।

जो एकहि अद्वितीय पुरुष था वही यह कृष्णा है। कहां था अवि शेष आत्मा मैं अर्थात् निष्प्रपंच निज रूपमें था। कब था ? गुण क्षोम से अर्थात् मृष्टिसे पूर्व कालमें और प्रलय कालमें जब जगत्के आत्मा जीव सब ईश्वर में लीन थे और जीवों की सत्वादि शक्ति सव सुप्त थीं॥ २१॥

मृषि प्रलय में भगवान का निष्प्रपंच अवस्थान दिखला कर पालन समय में सप्रपंच अवस्थान वर्णन करती हैं।। भगवान फिर् निज पराक्रम प्रेरित और सृषि करने की इच्छा वाली अपनी जीव माया प्रकृति को अनु सरण किया । क्यों ? अनामक्रप जीव के रूपनाम विधान करने को और फिर सृषिद्वारा जीवों के कमें विधान करने को ॥ २२॥

प्रामायामादि के द्वारावायु रोककर जप करने वाले जितेन्द्रिय सूरी जन मक्तिसे उत्कंठित मनसे जिन का पद। चरमा वा स्वरूप (दर्शन करते हैं यह वहीं हैं योग यशादिकों द्वारा चित्त शुद्धि नहीं होती। यही सत्व शुद्ध कर सक्ते हैं ॥ २३॥

हेसिंख ! यह वहीहै जिस की सत्कथा रहस्य वादि यों नै वेदों में और रहस्य आगमों में गाई है। जो एकही ईश अपनी माया से जगत को सृजते हैं रक्षा करते हैं और भक्षण करते हैं परंतु उस में आसक्त नहीं होते हैं ॥ २४॥

## श्रीधरस्वामी

एवं भूतस्य नानावतारे कारणमाहुर्यदेति । तमोव्याप्ता धीर्येषां ते नृपा यदा अधर्मेण जीवन्ति केवलं प्राणान् पुष्णान्ति तत्र तदा पष एव भवाय स्थित्ये सत्त्वतः विशुद्धसत्त्वेन रूपाणि दधत् भगादीनि धत्ते प्रकटयति । युगे युगे तत्तदवसरे । भगम् पेश्वयम् । सत्य सत्यप्रतिज्ञत्वम् । ऋतं यथार्थोपदेशकत्वम् । दयां भक्तकृपाम् । यशः अद्भुतकर्मत्वम् ॥ २५ ॥

विशेषतः श्रीकृष्णावतारसीभाग्यं वर्णायन्ति अहो इति पंचिभिः । यद्यस्मात् एष पुरुषोत्तमः श्रियः पतिः खजन्मनायदोः कुलम् अचित पूजयित सत्करोति अतः इलाज्यतमम् तत् । चंक्रमणेन च मधोर्वनं मथुराम् अचिति सत्करोति अतस्तत् पुर्णयतमसिति । तमप्रत्ययार्थस्यापि अत्यन्तातिशये अलमिति। तत्राप्याश्चर्ये अहो इत्युक्तम् ॥ २६ ॥

अहो वत अत्याश्चर्यम् । कि तत् । कुलस्थली द्वारका स्वर्ग उत्कृष्ट इति यद्यशः तस्य तिरस्करी परिभवकर्षो मुनश्च पुण्ययशस्करी पुण्ययशःकर्षी भवति । यद्यतः यत्प्रजा यत्रत्याः सर्वाः प्रजाः स्वानुत्रहेण ईषितं प्रेषितं स्मितपूर्वावलोकं यद्वा अनुप्रद्वार्थमिषितम् इष्टं स्वस्थातमनः पति श्रीकृष्णं न तु पित्रादिवत् देहमात्रपति नित्यं पश्यन्ति स्म । उषितमिति पाठे स्वानुत्रहार्थमुषितं कृतनिवासं नैतत् स्वर्णे इस्तीत्यर्थः ॥ २७ ॥

उस्तात्वयः । हे सिख ! अस्य गृहीतपाणिभिः पत्नीभिः ईश्वरोऽयमेव जूनं जन्मान्तरेषु समर्चितः । यस्मित्रधरामृते आश्रपश्चितं यातां ताः समीहं प्राप्ता इति मनोहरत्वमुक्तम् ॥ २८ ॥

Company of the Second

#### श्रीवीरराघवः

नन्वेवंविधश्चेतिमार्थे यादवान्यतमरूपेणावतिष्ठतद्दयाशंकायांदुष्कृद्धिनाशायसाधुपरित्राणायचप्रतियुगमवतीर्यावतीर्याधुनैवं रूपेणा वतीर्गाद्दयमित्रायेणाजन्पंतियदेति यदातमोधियोनृपाः तमोजुषद्दितचपाठः तत्रतामसाभतपवाधमेणाजीवंतितदेषउक्तविधोमगवान्मवाः यदुष्कृद्धिनाशपूर्वेकंसाधूनामभ्युद्यायसत्त्वतः शुद्धसत्त्वमयानिरूपाणियुगेयुगेदधिक्ष्राणः भगमेश्वर्यसत्यंवाचिकमऋतंपुर्यकर्भदयां यदाश्चधत्तेस्वाभाविकेधमेरनपेतपवावतिष्ठतप्वेत्यर्थः ऋतशब्दःपुर्ययशब्दवाची"पवंपुर्यस्यकर्मणोदूराद्वंधोवातीत्यत्रपवमनृतादातमानंज्य गुष्सेदितिपुर्यप्रतियोगित्वेनानृतशब्देप्रयोगात् भगवत्कर्मणांपुर्यंतन्नामवदतांश्लोतृशांचपुर्ययावहत्वम् ॥ २५ ॥

यतामगवानुक्तविधःश्रीमन्नारायगाएवश्रीकृष्ण्रूपेग्ययुकुलेऽवतीर्यमधुवनेविद्धत्यद्वारकायामधिवसन्प्रजाःपालयन्नष्टिभमेहिषीभिरन्या भिश्चविद्धरत्यताययुकुलमधुवनद्वारकामहिष्यादीनांभाग्यं तपश्चैतावदितिवाचामनसावाऽवगंतुमशक्य मित्यभिप्रायेग्राजल्पंति अहोइत्या विभिन्न पद्भिः मधोर्वनमलंगितरांपुर्यतमंकुतः यद्यस्मात्पुंसांसात्वतामृषमोनायकः श्रियोलक्ष्म्याःपतिःएषःमगवान्श्रीकृष्णःस्वजन्मनाययुक्कुलंचक्रमण्यनपुनः पुनः संचारेग्रामधुवनंचांचितिप्रशस्तंकरोतीत्यर्थः ॥ २६ ॥

अहोवतेतिकुशस्य लीक्षारकास्त्रयेशसः कर्मणिषष्ठीस्त्रलोंकयशसस्तिरस्करीभुवोभूमेः पुण्यंयशश्चकरोत्यावहतीतितयातदेवव्यंजयितुं विशिषंतियत्प्रजाः यद्यस्यांकुशस्यल्यांप्रजायद्यस्मादनुष्रहेणोषितमिधवसंतंस्मितयुक्तोऽवलोकोयस्यतंस्वपतिमात्मनायकं नित्यंपश्यंतिस्म यद्नुप्रहार्थयत्प्रजाविषयकानुष्रहार्थमुषितमितिवान्वयः ॥ २७॥

नूनमिति अस्यकर्त्तरिषष्ठीअनेनकृष्णेनगृहीताः पाणयोयासांताभिः कर्त्रीभिन्नतैरुपवासादिभिः स्नानैःपुण्यजलस्नानहोमैरादि दाव्देनदानादिभिश्चव्रतादीनांसमाहारद्वंद्वेनैकत्वम् एभिःसाधनैर्नूनमीश्वरः समर्चितः पूर्वजन्मनीतिरोषः कुतएतद्नुमीयतेद्दत्यतोविद्रिाषंति याअस्यगृहीतपाण्यः स्त्रियःहेसित्व ! अधरामृतंमुहुर्मुहुः पिवंतिअनाराधितेश्वराणामतदुर्लमितिभावः कस्याधरामृतंयिसमारायोमनोया सांताव्रजस्त्रियः संमुमुद्दः तस्यश्रीकृष्णस्याधरामृतमित्यन्वयः ॥ २८ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

तमोऽधिकास्तामसाअसुरप्रकृतयोनृपाः अर्धमें गाधमीविरुद्धेनश्चितिसमृत्यविहितप्राग्गिष्टिसादिकमें गायदाजीवंति स्वशरीरयात्रांकुर्वेति तत्रतदेषहरिःसात्वतः सात्विकान्देवादीन् अनुगृह्णन्धर्मादिनामवंतिकपागिगुगेयुगेद्धत्दधानोवर्ततहितशेषः वराहमत्स्यादिकपस्यभू म्युद्धरगाक्षमेगाधर्माख्या किपलादेरिग्गिमाद्यष्टैश्वर्ययोगात् षङ्ग गाप्त्रीत्वाद्भगाख्या कल्क्यादेस्तमोविनाश्यसत्त्वगुग्गमिम संवध्यानंत गुग्गाभिव्यंजकतयाविशेषानंदकपत्वात्सत्याख्या व्यासादेशांनप्रवर्तकत्वेनशानविशिष्टत्वाहताख्या किमर्थे भवाय चरगाप्रगातजनामि वृद्धयेतस्मादिदानीमधर्मप्रवर्त्तकान्त्रजरास्त्रतादीन्निगृह्णन्देवावतारान्युधिष्टिरादीननुगृह्णन्दृष्ठागात्मनाऽवतीर्गाः किलेत्यर्थः॥ २५॥

प्रियश्रवाः मनोहरकीर्त्तिः पुंसामृषभः पुरुषोत्तमः एषः कृष्णाः यदोः श्लाध्यंस्तुत्यंमधुवनंचालमत्यर्थमतिशयेनपुगयमहोअहोआश्च-यीदण्याश्चर्य चशब्दः समुभ्यये ॥ २६ ॥

अनुत्रहइतितादर्थ्येसप्तमी भक्तानुत्रहार्थक्षितमुषितंमुखेिस्थितयत्स्मितंतेनयुक्तोऽवलोक्षोयस्यसतथोकः तं क्षिनिवासगत्थोरिति धातुः भक्तेष्वनुत्रहेण्यदीक्षितंगोपवधूरुदिश्यस्मितयुक्तावलोकश्चयस्यसतथोक्तः तंवा स्वपितस्खामिनंश्रीकृष्णायत्प्रजाःयत्रत्याः प्रजा नित्यपश्यतीतिययस्मात्तस्मात्कशस्थलीद्वारवतीस्वर्यशस्तिरस्करीस्वर्गकीर्तिनिरासिनीभुवः यशस्करीचेत्यन्वयः तदैक्षतेतीक्ष्याव्यपदे शादीक्षितमिन्छाभक्तानुत्रहेन्छयासहितौस्मितावलोकोयस्यसत्यातमितिवा॥२७॥

अस्यश्रीकृष्णस्यपाणिनागृहीताः पाण्योयासांताः तथाताभिरस्यभायाभिर्नूनंनिश्चयेनवतकानादिनेश्वरः पूर्वसम्यगर्चितः सत्कृतः याः व्रज्ञास्त्रयः यदाशयायस्याधरामृतमाधुर्यस्यास्वादनेच्छ्या सम्यक्मुमुद्धः हे सिख् । तदधरामृतमुद्धः पिवंतीतियत्तस्मादित्येकान्वयः हे सिख् । याः स्त्रियोऽस्याधरामृतंपिबंतिअनेनगृहीतपाणिभिस्ताभिर्नूनंव्रतादिनेश्वरः समर्चितः यदाशयाव्रज्ञस्त्रियोमुमुद्धरितिवान्व-यः॥ २८॥

## क्रमसंदर्भः।

अहो इति । पुंसामृषभः सर्वावताराचतारिशां मध्ये श्रेष्ठः ॥ २६ ॥ स्वपति पश्यन्ति । तत्र च स्मितावलोकं पश्यन्तीत्यर्थः ॥ २७ ॥

नूनिर्मित । अत्र पट्टमिहिषीणां माग्यश्लाघयापि श्रीव्रजदेवीनामेव हि परमोत्तकृष्टत्वमाखादाभिञ्चतरत्वमायातम् । यस्यामृतस्य माधुर्यस्मरणो देवाअपि मुद्धान्त तन्मनुष्येणाप्यनेनाखाद्यत इतिवत् । तस्मात्तासामेव सर्वोत्तमभावता । अत्र विशेषिज्ञ्ञासायां प्रीति सन्दभी हृश्यः । स वै किलायमित्यादी पिवन्ति याः सख्यधरामृतमित्यन्ते ज्ञानिववेकादिप्रकाशेन हि शान्तरस एवोपकान्तः उपसं सन्दर्भी हृश्यः । तेन चास्य वत्सलेनेव मिलने संकोच एवेति परस्परमयोग्यसंगत्या भासते । अत्र समाधीयते चान्येः स वै किलाय हृतस्य श्रेगारः । तेन चास्य वत्सलेनेव मिलने संकोच एवेति परस्परमयोग्यसंगत्या भासते । अत्र समाधीयते चान्येः स वै किलाय हित्यादिकर्मन्यासां वाक्यं नूनित्यादिकन्तवन्यासाम् । एवंविधा वद्दन्तीनामित्यादि सृतवाक्यंच सर्वानंदनपरमेवेति ॥ २८ ॥

#### सुवोधिनी ।

एवंसर्वप्रकारेगाभगवत्त्वेनिकापिते ताहशस्यात्रागमनेकोहेतुरित्यत्राह्यदेति स्थितिर्हिभगवत्कार्यासामान्यविशेषभेदेनदिविधा तत्रस त्त्वादयोगुगाअपिकताः तेच"रजस्तमश्चाभिभूयसत्त्वभवती"त्यादि अन्योन्योपमर्देनैवप्रादुर्भूताः तत्रयदासत्त्वेतिरस्कृत्यरजस्तमसीप्रादुर्भव तः तदास्थितावधिकृतं सरवस्वतोदुर्वलं सत्भगवंतं निवेद्यसमानयितरजस्तमसोः सकार्ययोरूपमईनार्धेतदासःवेनस्पाणिधन्तसःवस्य शरीरसमवायित्वंवाशरीरशोधकत्वं वाशरीरत्वंवाप्रादुर्भोवनिमित्तत्वंवाभवति तदासत्त्वस्यावयवाअपिपृथक्रूपाणिविभ्रति सर्वेयुगेष्वे वंज्यवस्थाअतस्सत्त्वसहायार्थभगवदागमनमित्यर्थः यदेतिनैमित्तिकमुक्तम् निमित्तेसंजातेनैमित्तिकस्यावश्यकत्वमितिहिशब्दार्थः धर्मस्य प्रतिच्छायारूपोऽधर्मः सवृतकज्ञलवत्प्रत्यह्मुपनीयमानः सर्वासांप्रजानांराजनिवर्त्तुलंभवति ततश्चाधर्मेगाबुद्धाविवेकेन भ्राम्यमागाचक्षु पापरिदृश्यमानघटादिवत् पापव्याप्तदृष्याचस्त्नां पायात्म्यंनप्रकाशते तदाह्यधाद्वपदार्थान् गृह्णंतिकेवलंजीवनार्थम् राजानोहिपालने भगवदंशास्तेषामंघत्वेनजीवनं निमित्तंनृन्पांतीतिपालितानामिषअधमीनष्ठतासूचिता एवं सर्वतोऽप्यधर्मेउत्थितः तत्रतन्निराकरणार्थमेष एव परमात्मासगुगास्यतत्रसामर्थ्यामावात् किलेति "यदा यदाहिधर्मस्ये"ति वाक्यानिप्रमागानि रूपागिदधद्वासत्त्वेन भगादिधत्ते भगादि वादधत्संत्वेनरूपाणिधत्ते तदाउत्पन्नोभगः ईश्वरोभावः अधर्मेग्रागृहीतोविपरीतफलःस्यात्यदावा भगंगृहीत्वारूपाग्रिन गृह्णी यात्तदाराज्ञांवधोनस्यात् मूलभूतत्वाचतेषाम् अधमीनिराकरणार्थेभगादीनां ग्रहणं राजानिराकरणार्थेचरूपाणां भगस्तुभगवदेश्वरोभावः ईश्वरधर्मः प्रमेयवलपोषकः ऋतमनुष्ठीयमानोधर्मः पूर्वकांडार्थः एतेहिपंचांशाविद्यायाः भगवदिच्छा धर्मोज्ञानंदयाभिकारिति पूर्वोक्ता-ना मुद्भवाय ॥ २५ ॥

एवं भगवद्यतारप्रयोजनमुक्त्वा प्रासंगिकानांफलमाह अहोइत्यादिपंचिभः अवतीशोहि कचिद्देशेभवति कचिद्देशे तिष्ठाति कैश्चित्सह्व्यवहरति तथापिनतेषुतात्पर्यतेषांतु भगवत्संवंधमात्रेणैवकृतार्थता तत्रप्रथमंजन्माधिकरणयोर्वेशदेशयोराह अहोइत्याश्चर्ये कुत्रयदु: शतः लोकैनिदितः कुत्रायमुत्कर्षः भगवत्यवतीर्गे तद्वंशीयंस्मृत्वालोकोनमस्यति अलंपूर्गमेतस्मादुत्कर्षाद्नयोत्कर्षान्वक व्यः अधिकशीर्यादिहेतुकः इलाध्यतमामिति अन्येषांहिवंशानांधर्माद्यर्थे कदाचिन्निरूपग्रमायाति भगवतस्तुसर्वेषामपोक्षितत्वात् तनि रूपगार्थयदुवंशः सर्वदास्तुतोभवतीति एवंमधोरपिवनंसतांनिवासाभावात् नमथुरानिर्दिष्टामधोदैत्यस्यवनं पश्चात्पुत्रादिभयोविभागः अतोवृंदावनादिकमपिमधुवनमेव तस्यदेशस्यपुरायतमत्वे ऽपि दैत्याक्रांतत्वाद्धमत्वं वनत्वाद्धयानकत्वं दैत्यभयाकांतेभगवत्समरगामपि दूरेकुतोभगवान्कुलिमितिनहोतस्मादन्यउत्कर्षःसंभवतिदेवऋष्यधिष्ठानेहिदेशस्यपुग्यतमत्वं भवतितत्रसर्वत्रदेवऋषीगांभर्त्तरिभगवातिकि वक्तव्यंतत्रवंशस्यसर्वोत्कर्षेहेतुः यद्यस्मात्कारणात्पुंसामृपमः खजन्मनाअंचतिपूजयतिगच्छतिवाअन्येहिस्रीणांभर्तारः पुरुषोत्तमस्तुन पुंसांतथाच जगतिसर्थेस्रीसहिताः पुरुषाः पतस्यभवंतिअतस्तस्यपूजनेसर्वैःपूजितंभवति तद्गमनेवासर्वैर्गतंभवतिमधुवनस्योत्कर्षहेतुः यस्मादेषः श्रियः पतिः चक्रंमग्रोनांचितिचकाराज्जन्मनाचवनिहसुंदरसुवर्णाद्यभावात्नऋधिष्ठंभवितभगवीततुसमागतेलक्ष्म्यपिसमागते तिलीकिकीमलीकिकींचशोभांप्राप्नोतीत्यर्थः चंक्रमणंवालगतिः श्रीपतित्वेनगोपिकाकीडाऽपिसूचिता॥ २६॥

इदंत्वत्याश्चर्ययत् कुरास्यल्याउत्कर्षः तदाह अहोवतेतिअहोहातिपूर्ववत्अधिकोऽत्रविरोषोवतेतिदेशप्रांतभूमिः दोषाकांतासिकतामयी-च साखर्यशसस्तिरस्करीजातातिरस्करणाशीलाखर्गीहि देवास्तिष्ठांतिद्वारकायांतुदेवाधिदेवः खर्गेत्वप्सरसः अत्रलक्ष्मीः तत्रत्याः पतंतिअत्रत्यामुच्यंतेसभापारिजातादयस्तुततएवआनीताः अपकृष्टादुत्कृष्टेहिसमानीयंतेइत्याद्यनंतोत्कर्षः किंच भुवोऽपिपुर्ययशस्तिरस्क-रीयथादेहेच्युः एकदेशोऽपिसर्वस्यौहिकामुध्मिकंफलंप्रयच्छतिद्वारकयासंवद्धासर्वापिभूः धन्यापृथिवीयस्यांद्वारकावर्त्ततहिष्ठतुदूरेऽयमु-त्कर्षः समाधिदृदयापेक्षयाइयमुत्कृष्टा तदाह पश्यंतीतिसमाधौकश्चिदेवकदाचिदात्मानं पश्यतिअतः सर्वदासर्वोऽपिसमाधौस्थितिरति कठिनावायुमनसाश्चं चलत्वात्प्रयासाधिक्यात्द्वारकायांतु भगवदनुत्रहेणास्थितिः अनुत्रहश्चसुखात्मास्थिरः तहर्शनार्थमेवभगवांस्त-त्रस्थितः स्मितावलोकइतिभक्तिज्ञाप्रदत्वंसर्वेदियाह्णादकत्वं च खपतित्वेननिः शंकतादोषाभावश्चप्रजापतिनाचपाल्यतापतिपदेनचतदे

प्वमचेतनानामुत्कर्षमुक्त्वाचेतनानांमध्येभगवत्पत्नीनामप्युत्कर्षमाहात्रीभिःनूनमिति स्त्रियोहिद्विविधाः मयोदयापुष्ट्याचतदीयाजाताः तासामुभयासांयत्सर्वपुरुषार्थनाशकमसाधनं च तदेवसर्वपुरुषार्थसाधकंजातम्पवंखक्पभेदद्वयंसाधनेचैकमितिअस्यगृहीतपाणिभिः नू नहरिरचितः गार्हस्थ्यफलंधर्मसाध्यं भगवत्फलंसाध्यंतदुभयमेकीभूतं तत्रप्राधान्यंगार्हस्थ्यस्यगोपिकावांछितार्थ भोगात् अतोधर्महेतून् प्राधान्येननिदिशतिव्रतंतामसंस्नानंराजसंहोमः सात्विकः आदिशब्देनत्रयागांभेदाः एभिः कृत्वापूर्वजन्मनिअयमेवभगवानीश्वरः सम्य-गर्चितः होतियुक्तोऽयमर्थः फलेनकारणानुमानंयुक्तंकारणोन कार्यानुमानंव्यभिचरत्यपियद्यप्यतैर्भगवान्प्रीणाति तथापिमहापुरुषपूजायाः सिद्धिः कार्य्यानुषंगिकीपूजैवोक्ता अथवावतादौपूजाविहिता तत्रवतमंगत्वेनकृत्वापूजामेवसुख्यत्वेनकृतवत्यः तत्र पूजावतयोधर्मभक्ति-त्वात् भगवतः पतित्वेनसंबंधः नजुकथमवंगम्यते अयमेवईश्वरः पूजितइति तत्राह याःहेसख्यः ! अधरामृतंपिवंति अमृतपानंहिईश्वरा-राधनपूर्वकथर्मकार्यम् अधरामृतंतुततोऽपितद्य्येवर्णायिष्यामः हेसखीतिस्पृहयातुल्यदुःखत्वमस्माकमपीतिवोधितम् अधरामृतमग्रेवर्णाय-व्यामः ननुधर्मभक्तिफलमेवैतदस्तुकिमेतदाराधनेनेतीत्यादांक्यप्रकारांतरेव्यभिचारमाहब्रजिश्चयद्दति गोप्योऽपिकात्यायनीव्रतेभक्त्यागान-पूर्वकंब्रतस्नानपूजादिकंकृतवत्यः परमर्चनंकात्यायन्याः कृतंतेनतासामिच्छानपूर्णा यतःयस्मिन्नधरामृते आशयोयासांताः 'केवलमोहम-वप्राप्तवत्यः ॥ २८ ॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती ।

साक्षादस्यावतारस्य कालदेशपात्रेषु जिज्ञास्येषु प्रथमं कालमाहुर्यदेति नृपाः कंसादयः। सत्त्वतः सत्त्वेनोत्तमस्वेन विशिष्टं भगादिकं धत्ते इत्यन्वयः । भगं षड्रेश्वर्यम् ऋतं सून्तवाक्यम् । रूपाणि ब्रजमश्रुराद्वारकोचितानि सीन्दर्याणि । भनाय भूत्ये । युगे युगे कृत्य कर्पे वैवस्त्रताष्टाविशचतुर्युगीये द्वापरे द्वापरे वा॥ २५॥

\* नोट १ लक्ष्मीरपीत्युचितः पाठः कृदिकारादाक्ति न इति ङीषि लक्ष्मीत्यपीति शेखरोक्त दिशावानिर्वोद्यम्॥ सुवोधिनी ॥ २६॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

पात्रदेशावाहुः अहो इति । यदोः कुलं ऋष्यतमं मधोर्वनं मथुरामगडलं पुगयतमम् । अत्र ऋष्यतममित्यनेनैव द्वयोरुत्कर्षे सिद्धे पुर्यतममिति पृथगुक्तिः देशस्य पुर्यदत्वेनैवोत्कर्षस्य प्रसिद्धः । तत्र तमप्प्रत्ययार्थस्याप्यत्यन्तातिशये अलमिति तत्राप्यतिशयाश्चर्ये अहो इति । यत् खजन्मना चंक्रमगोन गमनेन चकरादन्यैरिप विविधाद्भुतकर्मभिरंचित पूजयित सत्करोतीति यावत् । अत्रानंचेत्यनुक्तवा अञ्चतीति वर्त्तमाननिर्देशेन जन्मादिलीलानां नित्यत्वं वोधयामासुः । उपक्रमत एव य एक आसीदिति भूतनिर्देशेन तृतीयश्लोके पश्यन्ति भक्त्येति वर्त्तमाननिर्देशेन तासां तथाभिप्रायस्यावगतत्वात् । नतु कथं जन्मकर्मगोर्नित्यत्वं ते हि क्रिये क्रियात्वश्च प्रतिनिजांशमण्यारम्भ परिसमान्तिभ्यामेव सिद्धचतीति ते विना खरूपहान्यापत्तिः। नैष दोषः। श्रीभगवति सदैवाकारानन्त्यात् प्रकाशानंत्याज्ञनमकर्मलक्षरा ळीळानन्त्यात् अनन्तप्रपञ्चानंतवैकुण्ठगततत्त्वळीळापरिकराणां व्यक्तिप्रकाशयोरानन्त्याच । यत एव सत्योरिप तत्तदाकारप्रकाशगतयो स्तदारम्भसमाप्त्योरेकत्रेकत्र ते जन्मकर्मगारिशा यावत समाप्यन्ते न समाप्यन्ते वा तावदेवान्यतान्यत्राप्यारच्या भवन्तीत्येवं श्रीभग-वित विच्छेदाभावान्नित्ये एव तत्र ते जन्मकर्मणी वर्तेते। तत्र ते कचित् किश्चिद्विलक्षणत्वेनारभ्येते कचिदैकरूप्येण चेति क्षेयं विशेषण भेदाद्विशेषग्रीक्याच । एक ववाकारः प्रकाशभेदेन पृथक्तियास्पदं भवतीति चित्रं वतैतदेकेन वपुषेत्यादौ प्रतिपादियण्यते । ततः क्रिया मेदात् तत्तत्वियातमकोषु प्रकाशभेदेष्वभिमानभेदश्च गम्यते । तथा सत्येकत्रैकत्र लीलाकमजनितरसोद्रोधश्च जायते । नतु कथं ते एव जनमक्रमेशी वर्तते इत्युक्तम् पृथगारब्धत्वादन्ये एव् ते स्ताम् । उच्यते । कालभेदेनोदितानागपि समानरूपार्शा कियासामेकत्वम् । यथा शंकरशारीरके—द्विगीशब्दोऽयमुचरितो नतु हो गोशब्दाविति प्रतीतिनिर्णातं शब्दैकत्वम् । तथैव द्विः पाकः कृतोऽनेन नतु हो पाकाविति । ततो जन्मकर्मगोरपि नित्यता युक्तैव । अतपवागमादावपि भूतपूर्वलीलोपासनविधानं युक्तम् । तथा चोक्तं माध्वभाष्ये— परमात्मसंविधित्वेन नित्यत्वात् त्रिविकमत्वादिष्वण्युपसंहार्यत्वं युज्यते इति । अनुमतं चैतत् श्रुत्या "यजूतं भवस भविष्यष्चे"त्यनयैव । उपसंहार्यत्वमुपासनायामुपादेयत्वमित्यर्थः। तत्र तस्य जन्मनः प्राकृतात्तरमाद्विलक्षगात्वं प्राकृतजन्मानुकर्गोनाविभावमात्रत्वं कचित्त-दननकरगोन वेति भगवतसन्दर्भः । केचित्तु तद्भक्तधामादीनामिवानन्तप्रपंचनित्यधामसु जन्मकर्मगोरपि प्रकाशवाहुल्यान्नित्यत्वसिद्धि रित्याहुः ॥ २६ ॥

मधुवनं स्तुत्वा द्वारकां स्मरन्त्य आहुः । अहो कुशस्यली द्वारका स्वर्थशस इति लोकरीत्यैवोक्तिः नतु सिद्धान्तरीत्या स्वःशब्दे न वैकुंठाभिधानं वा । यद्यतः यत् प्रजा यत्रत्याः प्रजाः । स्वपति कृष्णाम् अनुप्रहेशीव ईषितं प्रेषितं सर्वसुखदानार्थे अन्तःपुरात् हस्तिनाप्रादिस्यलाद्वा प्रस्थापितमित्यर्थः । यद्वा अनुप्रह एव इषित इष्टो यत्र तम् अनुप्रहमात्रप्राप्त्यर्थमित्यर्थः अनुप्रहोषित्मिति पाठे स्वानु

त्रहार्थमुषितं कृतनिवासं नैतत् खर्गेऽस्तीत्यर्थः॥ २७॥

तत्रां विकरसीत सुक्यवत्य आहुः । नूनमस्य गृहीतपाशिभिः पत्नीभिः । या अधरामृतं मुहुर्भेहः पिवन्ति वयं त्वकृतताहरावताः सम्प्रत्येव सीन्दर्यामृतमेव किश्चिद्रेव पिवाम इति भावः । किंचास्मत्तः कोटिगुगातोऽप्यधिका अपि व्रजसुन्दरीक्ष्यः सकाशादित्न्यूना इत्याहुर्यदाशयाः यस्मिन्नधरामृते आशयश्चित्तं यासां तथाभूता एव सत्यः संमुमुहः रात्रौ पीतचरस्याधरामृतस्य प्रातःस्मरगोऽपि अनिन्दमू च्छी प्रापुः । न जाने पानकाले ताः कीहशी दशां प्रापुरिति तासां प्रेमाधिक्यादानंदाधिक्यं द्योतितम् ॥ २८॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

यदाकिलकेवलमधर्मेणानृपाअसुरमनुष्यादिरूपाः जीवंत्येवतदापष प्वश्रीकृष्णः भवायस्थित्येसस्वतोविशुद्धसस्वतः नियंतृरूपाण्यः वताराख्यानि तत्तदेशकालानुरूपाणियुगेयुगे दधिद्धश्राणोभगमेश्वर्यम् सत्यंयथार्थभाषणम् ऋतंस्नृतंत्रियंवाक्यम् दयांयशश्चाधत्ते २५ यःपुरुषावतारेणप्रकृतिप्रेरणादिनाजगद्धेतुः नारायण्रक्षेण ब्रह्मोत्पादनवेदोपदेशादिनाव्रह्मांडांतर्गतसृष्टिहेतुः मत्स्याद्यवतारैः धर्मत्राणादिहेतुःसपरमपुरुषपरब्रह्मादिपदवाच्यः सर्वावताराणांनिर्गमप्रवेशस्थानभूतस्यनारायण्ययात्यार्यवतारीस्वयंपदार्थोभगवान्यदुकुले मधुरायःमवतिर्णस्तत्सम्वन्धिकुलादिमाहात्स्यमाद्धः अहोअलामिति जन्मनायदोः कुलंचकमणोनमधोर्वनंमधुरामगुद्धस्य अंचिति पूज्यति ॥ २६ ॥

ै किंच अहोवतेतिमहदाश्चर्यम कुरास्यलीद्वारका ॥ २७ ॥

किंच हेसिख ! अस्यगृहीतपाणिभिरीश्वरः व्यविभिर्नूनंसम्यगाराधितः व्यविनांसमाहारद्वंद्वेएकत्वम् आदिनादानादेश्रहणम् याः अस्याधरामृतंमुद्धः पिवंति यदाशयाः तिसम्बधरामृते आशयश्चित्तयासांताव्रजित्रयः संसुमुद्धः ॥ २८ ॥

## ार्थिक । जिल्लामा के किया है कि क

जब तमो बुद्धि वाले राजा सब अधर्म से जीवित होते हैं तब यही भगवान जगत की स्थिति के अर्थ सत्वसे रूपों को धारण कर युग युग में भग सत्य ऋत दया और यश को धारण करते हैं ॥ २५ ॥

अही ! यतु कुल अत्यंत दलाच्यतम है और मधुवन अत्यंत पुगय तम है कि जो यह पुरुष ऋषभ अपने जन्म से और विचरण से

शो मित करता है। २१ " अही कि सारिका खर्ग के भी यहाँ को तिरस्कार करती है और पृथवी के पुगय यहा को विस्तार करती है। क्योंकि जहां अही कुरास्थली खारिका खर्ग के भी यहाँ को तिरस्कार करती है। क्योंकि जहां की प्रजा नित्यही अनुग्रह पूर्वक प्रेरित स्मित सहित छपा कटाक्षयुक्त अपने पति (इन श्रीकृष्ण) का दर्शन करती है। २७॥ की प्रजा नित्यही अनुग्रह पूर्वक प्रेरित स्मित सहित छपा कटाक्षयुक्त अपने पति (इन श्रीकृष्ण) का दर्शन करती है। २७॥

या वीर्यशुल्केन हृताः स्वयम्बरे प्रमध्य चैद्यप्रमुखान्हि शुष्मिणः ॥
प्रद्युम्नसाम्बाम्बसुतादयो ऽपरा याश्चाहृता भौमवधे सहस्रशः २६ ॥
एताः परं स्त्रीत्वमपास्तपेशलं निरस्तशौचं वत साधु कुवते ।
यासां गृहात्पुष्करलोचनः पतिर्न जात्वपैत्याहृतिभिर्हृदि स्पृशन ॥ ३०॥
एवंविधा गदन्तीनां स गिरः पुरयोषिताम् ।
निरीच्चगोनाभिनन्दन सास्मितेन ययौ हरिः ॥ ३१॥
न्य्रजातशत्रुः पृतनां गोपीथाय मधुद्दिषः ।
परेभ्यः शङ्कितः स्नेहात्प्रायुंक्त चतुराङ्गिणीम् ॥ ३२॥

#### भाषाटीका।

इन ( कृष्णा ) ने जिनका पाणि ग्रहण किया है उन स्त्रियों ने निश्चयही व्रत स्नान होमादिकों से ईश्वर समर्चन किया है । क्योंकि सन्धी ! जो इन का वार वार अधरामृत पान कर तीहैं । जिस अधरामृत की आशासे व्रज स्त्रियों मोहित हुई थीं ॥ २८॥

#### श्रीधरखामी।

एतत् प्रपंचयति द्वाभ्याम् । वीर्ये प्रभाव एव शुल्कं मूल्यं तेन । शुष्मिग्गो बलिष्ठान् । प्रशुक्तः साम्वः आम्बश्चसुता यासां रुषिमग्गीः ज्ञाम्बवतीनाग्रजितीनां ता आदयो यासां सत्यभामादीनां ताः । याश्चापराः । अस्य श्लोकस्योत्तरश्लोकेनान्वयः ॥ २९ ॥

एताः स्त्रीत्वमेव परं क्षेवलं साधु शोभनं कुर्वते । अपास्तं ( गतं ) पेशलं भद्रं खातंत्र्यं यस्मात् । निरस्तं शीचं शुचित्वं यस्मात् । तथाभूतमपि । जातु कदाचिदपि नापैति न निर्गच्छति । आहृतिभिर्व्यवहारैः यद्वा पारिजातादिप्रियवस्त्वाहरखेईदि स्पृशन् आनन्दयन् ॥ ३०॥

एवं विधाचित्रा गिरः सस्मितेन निरीक्षशोनाभिनंदन् हरिर्ययौ ॥ ३१॥

पव विवासित । गरे सिस्मति । गरे क्यां शिक्षते । गरे क्यां शिक्षते । सन् प्रायुंक "हस्त्यखरणपादातं सेनांगं स्थाचतुर्विधम्" इत्येवं चतुरंगिर्गां पृतनां सेनाम् ॥ ३२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

याइतियाइत्यस्यैताः इत्युत्तरेगान्वयः ग्रुष्मिग्रोमत्तान् चैद्यप्रमुखान् शिशुपालप्रभृतीन्स्वयंवरेप्रमध्यमथनपूर्वकं विजित्यवीर्यमेव गुल्कमुपायनत्वेनदेयंद्रव्यंतेनयाश्राहृताः प्रद्युम्नसांवप्रसवादयः स्त्रियःतत्रप्रद्युम्नप्रसवाधिकमणीसांवप्रसवाजांववती आदिशब्देनसत्य मामादिसंग्रहः तथापराक्षनयाश्चयाः स्त्रियोमोमवधेनरकासुरवधेसहस्रशः षोडशसहस्रसंख्याकाश्राहृताः॥ २९॥

पताः सर्वानिरस्तंशीचंपवित्रतायेन अवाप्तंपेशलंमाईवंयेनतथाभूतमिपिस्नीत्वंपरंकेवलंसाध्यथातथाकुर्वते कुर्वेतिवतइत्याश्चर्यतदेव पताः सर्वानिरस्तंशीचंपवित्रतायेन अवाप्तंपेशलंमाईवंयेनतथाभूतमिपस्नित्वं कमलनयनः श्रीकृष्णः कदाचिदिपिनापैतिनत्यजाति दर्शयितुंविशिषंतियासांस्निर्णागृहात्पतिर्जन्ममरण्केशाद्रस्रणकर्त्तापुष्करलोचनः कमलनयनः श्रीकृष्णः कदाचिदिपिनापैतिनत्यजाति कथ्मूतः सन्आहितिभिः हेरिक्मिणि ! पहीत्यादिभिराहतैः हिद्स्पृशन्हद्यंगमः सन्सोऽयं श्रीकृष्णोयातीत्यर्थः ॥ ३०॥

चूतः राज्याकातामः हराक्माणः पहार्याायाजाकः कर्तरहर्वे । । ३१॥ वदंतीनांजरुपंतीनांपुरयोषितामेवंविधागिरः उक्तीःसस्मितेननिरीक्षगोनैवामिनन्दन्सहरिययौ ॥ ३१॥

तदाऽजातराञ्चःपरेभ्यःराञ्चभयः शंकितःस्नेद्दान्मधुद्धिषः श्रीकृष्णस्यगोपीथायरक्षणायचतुरंगिणीं हस्त्यश्वरथपदातिकपाययंगान्यस्याः संतीतितथातांसेनांप्रायुंक्तसमयुंक्त ॥ ३२ ॥

## श्रीविजयध्वजः।

ताः काइतितत्राहुः याइति विशुष्मिगाः विशिष्टवलान्चैद्यप्रमुखान्शिशुपालादीन्प्रमध्यविलोडश्पराजित्यखयंघरेघीयंमेवशुल्कंउत्को चंतेनयाः स्त्रियोहृताः आनीतास्ताः प्रद्यमुश्चसांबश्चतौप्रमुखौयेषांतेत्याप्रद्यमसांवप्रमुखाः तेआत्मजायासांतास्तथोकाः स्विमगयाद्याः याश्चापराः सहस्रशः कशेवीदिशतोत्तरषोडशसहस्रसंख्याः भौमवधेश्राहृताः॥ २९॥

एताः पुराग्निपुत्रत्वेक्वष्णभार्यात्वायस्त्रीत्वमवाष्त्रयेथाप्तुंसमंसंभूयसाधुशोभनंतपथाख्यंकुर्वतेथकुर्वत बतहर्षे निरस्तशोकिमितिकि याविशेषणांवाकुतः पुष्करलोचनः पुगडरीकाक्षः पतिराकृतिभिराकारैश्चेष्टाविशेषेक्वेदिस्पृशभ्यासांगृहाज्ञातुकदाचिदापनापैतियस्मान् सस्मादित्यन्वयः॥ ३०॥ ३१॥

मा। देश्यः गोपीयायरक्षणायचतुरंगिणीहस्त्यश्चरथपदाातमतीपृतनांसेनांसेहातः सेहमात्रासदानीमाहात्म्यक्षानंनास्तीतिमानः॥ ३२ ॥ परेश्यः गोपीयायरक्षणायचतुरंगिणीहस्त्यश्चरथपदाातमतीपृतनांसेनांसेहातः सेहमात्रासदानीमाहात्म्यक्षानंनास्तीतिमानः॥

## क्रमसंदर्भः।

या इति युग्मकम् । तत्र एता इति एता एव नान्या इत्यर्थः स्त्रीत्वं स्त्रीजातिः। सा च श्रीकिष्मिर्ययाचवरतज्ञातिभेदत्वेनैवात्र गृहीता अपास्तपेशलत्वादिकं हि तज्जात्यन्तराश्चयं नतु श्रीरुक्मिगयाद्याश्चयं तामिस्तासामपि साधुत्व करणात् । ततश्चान्यां तत्तद्दोषयुक्तां स्त्रीजातिमपि या निजनीत्त्यादिना शुद्धां कुर्वन्तीत्यर्थः । तासां तत्तद्दोषरहितसर्वगुगालकृतत्वं तदवरासां साधुत्वविधाने च हेत्माह यासामिति । स्वयं तथाविधोऽपि आद्यतिभिः प्रेयसीजनोचितगुणसमाहरियां एव हृदि स्पृशन् मनस्यासज्जन् यासां गृहादपि न जात्वपै तीति । तस्मादत्रापि वीभत्ससङ्गतिः पूर्ववद्वचाख्यंया २९॥ ३०॥ ३१॥

तत्र राज्ञः प्रेममहिमानमाह । अजातरात्रुरपि परेभ्यः राङ्कितः । मघुद्विषोऽपि गोपीथाय । तत्र हेतुः स्नेहादिाते । एवमैश्वरेज्ञानस्य दुवंछत्वं वोधितम्। एवं श्रीबलदेवादिषु तथा दर्शनात्॥ ३२॥ ३३॥

## सुवोधिनी।

अस्त्वासांभाग्यंमितोऽपिरुक्मिग्यादीनांमहद्भाग्यं यदिकालवशात्प्रवाहेपतिताः अन्यत्रनीयमानाअपिवलाद्भगवान् स्वयमुद्यम्य आत्म-सीत् कृत्वाअमृतंपाययतिस्वसद्यान्पुत्रांश्चप्रयञ्छति तासामीश्वरपूजनंमहदित्याहुः यावीर्यशुल्केनेति वीर्यमेवशुल्कंकार्यनिर्वाहकंद्रव्यं-तेनहुताः तेनराक्षसोविवाहउक्तः स्वयंवरइतिगांधवेः "गांधवीराक्षसश्चैवधम्यीक्षत्रस्यतीस्मृती"इति मुख्यवित्राहेनपरिगृहीताः नन्वन्यस्मै-दीयमानाः कर्यंहृताः तत्राह प्रमध्येतिचैद्यः शिशुपालः तत्प्रमुखान् जरासंधादीन् शुष्मिगाः कामुकान् अयमर्थः क्षत्रियागांयुद्धजयेनापिसत्त्व-मुत्पद्यतेतेनधर्मादिकमपिसिध्यतिस्त्रियोधर्मभक्तियोग्याः स्वयंचिशशुपालादयोतुरात्मानः कामुकाब्राह्मण्यवत् प्रतिप्रहेणप्राप्तुमिरुछातिअतो ु अयुक्तंभगवतादृताइतिप्रद्युम्नः मांवः अंवश्चसुतायासांरुक्मिग्राजांववतीमित्रविदानां महांसएवअवः महानसोयस्यति यौगिकएवदाब्दोऽत्र ्र गृहीतः याश्चवोडशसहस्रंभौमवधेजातेआहृताः तासांगगानाऋषिभिरेवश्चायते नान्यैरितिसहस्रमित्युक्तम् ॥ २९ ॥

तासांभगवदाराधनेसाधनंस्रित्वमंवतदिपनभगवतोभोगमोग्यं भगवत्सीदर्यापेक्षयातासामपेशलत्वात् शापेनवंद्याअन्यपिग्रहेगाच निरस्तशीचंशुद्धिरिहतंवतेतिखेदे अस्मदादीनांतद्भावेऽपिनभगवत्प्राप्तिः अतोययाभगवतःसामर्थ्यमितिनिकृष्टमपि अत्युत्कृषंकुर्वते तत्र हेतुः यासांगृहादितिसतांहिभगवद्गृहेसमागत्यकदाचिदेवपश्यंतिआसांतुविपरीतंभगवानासांगृहात् कदाचिदिपनापगच्छितप्रत्युतपारि जाताबाहरणैः मानापनोदनमपिकरोतिनजुतर्हिदोषमेवसम्पादयतिनगुणंततः किंतासांभाग्यमित्याद्यंक्याह हृदिस्पृशिक्षितितासांहृदि भगवान् स्थित्वाताः स्पृशन्तासां हृदिभगवानस्तीतिनतासां दोषः ॥ ३०॥

एवंभगवद्रुपंप्रासंगिकंचफलंभगवान् श्रुत्वासंमत्यासत्यवादित्वं स्थिरीकृत्यमन्दहासेनचतावशीकृत्यभिक्षप्रदत्वासासांवचनंसत्यंकुर्वन् संतिस्त्रीसमृहानांवदुत्वात् सर्वाएवगिरोभगवताश्रुताःउच्नैः अयमेकःप्रकारः एवमन्येऽपिप्रकाराः द्वारकामगर्मादेत्याहएवंविधाइति कथनेहेतुःपुरयोषितामितिअभिनंदनंसत्यमुक्तमिति॥ ३१॥

नामविपरीतंकार्य्यभगविद्घ्याक्षानवत्स्वभावोऽपितथागोपीथायरक्षागार्थे राज्ञोहिज्ञानाद्रकिरिधकेतिज्ञापियतुमाहअजातरात्रुरिति मधुद्धिषद्दतिशंकामात्रः परेक्यःहतवन्युक्ष्यः चतुरंगिर्गाहिस्त्यश्वरयपदातिरूपाम् ॥ ३२॥

## श्रीविश्वनायचक्रवर्सी।

उक्तमेवार्थं प्रपञ्चयति द्वाभ्याम् । वीर्ये प्रभाव एव शुल्कं मृत्यं तेन । शुष्मिणः विष्ठष्ठान् । प्रधुमः साम्वः आम्बश्च सुता यासां ता क्षिमग्रीजाम्ववतीनाग्रजित्यः ता एव आदयो यासां सत्यभामादीनां ताः॥ २९॥

अपास्त पेशलं भद्रं खातन्त्रयं यस्मात् निरस्तं शीचं शुचित्वंयस्मात् तथाभूतमपि । जातु कदाचिदपि नापैति न निर्गच्छति।आहृतिभिः पारिजातादिप्रियवस्त्वाहरगाः हृदि स्पृशन् आनन्दयन् ॥ ३०॥

निरीक्षाग्रेन शान्तिरतिमतीः सस्मितेन उज्वलरसभाववतीरमिनन्दन् ॥ ३१॥

गोपीथाय रक्षगाय ॥ ३२ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

गृहीतपाशिमिरितिपदेनमगवत्पत्न्योनिर्दिष्टास्ताः काइत्याकांक्षायामाहुःयाइत्येकेन वीर्यमेवशुरुकंमूरुयंधनंतेन शुष्मिगाः प्रवलं

मन्यान् ॥ २९॥ भगवत्पत्नीनांसीमाग्यंकैमुत्यम्यायेनाहुरताहत्येकेन अहोएताः अंगुलिनिर्दिष्टाः दर्शनार्थेसमास्थिताः अपास्तंपेशलंभद्रंस्वातंत्र्यंयस्मा भगवरपराणाः । विरस्तर्शीचंपवित्रतायस्मासद्देपिखित्वमेवपरंकेषसंसाधुशोभनंकुवते अहोभाग्यमासामितिभाषः अथसासुआहृतिभिस्तत्तिप्रयपदा चत् । गर्रा मार्गामातमावः अध् थेहरग्रीहृदिस्पृशन्सुखयन् यासांगृहाज्जातुकदाचिद्पिनापैतिनापयातितासांभाग्यंकिंवगर्यतेहत्यर्थः ॥ ३०॥

त्र्य दूरागतान् शौरिः कौरवा न्विरहातुरान् ।
संनिवर्त्य दृढांस्निग्धान् प्राया त्स्वनगरीं प्रियै : ॥ ३३ ॥
कुरुजाङ्गलपाश्चालान् शूरतेना न्सयामुनान् ।
ब्रह्मावर्त कुरुत्तेत्रं मत्स्या न्सारस्वतानय ॥ ३४ ॥
मरुधन्वमतिक्रम्य सौवीराभीरयोः परान् ।
ज्ञानर्तान् भार्गवोपागाच्छ्रांतवाहो मनाग्विभुः ॥ ३४ ॥
तत्र तत्र ह तत्रत्यैहीरः प्रत्युद्यताहेगाः ।
सायं भेजे दिशं पश्चाद्वविष्ठो गां गतस्तदा ॥ ३६ ॥
इतिश्रीमद्रागवतेमहापुरागो प्रथमस्कंधेश्रीकृष्णप्रयागोनाम ।
दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

स्मितेनस्वाभाविकमंदहसितसहितेनिनिरीक्ष्णोनगदंतीनांजल्पन्तीनांपुरयोषितांगिरोऽभिनन्दन्हिरःसंसारहरः सःश्रीकृष्णोययौ एवंवि-धानिरहत्युक्तिःग्रंथविस्तरभयात्तासांस्तुतिः साकल्येनेहनोक्तेतिस्चयित ॥ ३१ ॥

परेक्यःशत्रुक्यःशंकितोऽजातशत्रुर्युधिष्ठिरः मधुद्विषोऽपिगोपीथायरक्षणायस्नेहात् चतुरंगिणीम् हस्त्यश्वरथपत्तिरूपाण्यंगानियस्या स्तांपृतनांप्रायुंक्तः ॥ ३२ ॥

## भाषादीका।

विलिष्ठ शिशु पाल आदि कों को प्रम थन कर स्वयं वरोंते वीर्यशुक्त से जिन को हराहै और प्रद्युम्न सांव आंध जिन के सुत है वह कि मिशी जांववती आदि स्त्रियें और जो सहस्रों भीम के वधमें हरी थी यही सब अपास्त पेशल (अस्व तंत्र (और निरस्त शीच (अपवित्र (स्त्री त्व कोभी शोभन कर रहींहैं। क्योंकि पुष्कर लोचन पति कभी भी जिनके घर से वाहर नहीं होतेहैं और पारि जातादिकों को ला कर उनके हृदय को प्रसन्न करते हैं। २९॥ ३०॥ जातादिकों को ला कर उनके हृदय को प्रसन्न करते हैं। २९॥ ३०॥

## श्रीधरस्वामी

पांडोः कुरुवंशजत्वात पांडवा अपि कौरवा एव तान प्रियेरुद्धवादिभिः सह ॥ ३३॥

कुरुक्षेत्रं कुरुदेशांतर्गतमेव क्रमोऽत्र न विवक्षितः ॥ ३४॥

महनिष्दको देशः धन्वोऽल्पोदकः आनर्ताख्यो द्वारकाप्रदेशः । स विभुः उपागात् प्राप्तः । हे भागव १। मनागीषत् धान्ता

वाहा यस्य सः ॥ ३५ ॥
तत्र तत्र देशे तत्रत्येजेनैः प्रत्युचतानि निवेदितानि अहंगानि उपायनानियस्मै सः सायम् अपराह्वे पश्चाहिशं पश्चिमां दिशं भेजे प्राप्तः
तत्र तत्र देशे तत्रत्येजेनैः प्रत्युचतानि निवेदितानि अहंगानि उपायनानियस्मै सः सायम् अपराह्वे पश्चाहिशं पश्चिमां दिशं भेजे प्राप्तः
तदा च गविष्ठः स्वर्गस्यः सूर्यो गामुदकं गतः प्रविष्ठः अस्तं गत इत्यर्थः "अद्भयो च एष प्रात्यदेत्यपः सायं प्रविश्वति"ित श्रुतेः यद्वा तदा
तदा च गविष्ठः स्वर्गस्यः सूर्यो गामुदकं गतः प्रविष्ठः अस्तं गतः सन् पश्चाहिशं सन्ध्याम् भेजे उपासितवानित्यर्थः ॥ ३६ ॥
सायंकाले जाते रयादवंतीर्थं गविष्ठः भूमो स्थितः ततो गां जलाश्चारं गतः सन् पश्चाहिशं सन्ध्याम् भेजे उपासितवानित्यर्थः ॥ ३६ ॥
सायंकाले जाते रयादवंतीर्थं गविष्ठः भूमो स्थितः ततो गां जलाश्चारं गतः सन् पश्चाहिशं सन्ध्याम् भेजे उपासितवानित्यर्थः ॥ ३६ ॥

दशमोऽध्यायः॥ १०॥

## दीपनी ।

अद्भ्यों वा एव प्रातस्वेतीतिश्रुतेरयमर्थः—सागरतीरस्थजनैः प्रातः सूर्यः सागरातुरेतीति लक्ष्यते अस्तसमये तस्मिन्नेव प्रविद्यातीति लक्ष्यते ॥ यद्वेति । नायं पक्षः पूर्वपक्षस्याखरसत्वेनोकः । अपितु श्रेवेगार्थद्वयमपि प्रकृतमुक्तमिति भावः ॥ ३६ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

अथविरहेगाविन्छेषातुरान्दुः खितानतपवदूरमागतान्कौरवान् युधिष्ठिरादीन्द्रदंस्निग्धमनुरागोर्येषातान्सम्यक् सांत्वननिवर्त्यप्रियैः सहस्वनगरींद्वारकांप्रायात्प्रययौ ॥ ३३॥

कुर्वादिमरुधन्वांतान्देशानातिकम्यततःसौवीराभीरयौः परान्पश्चादवस्थितानानर्त्तान्द्वारकाक्षेत्रजनपदान्विभुईरिः श्रीकृष्णः उपा

गात्कर्थभूतः हेभागेव ? मनागीषच्छ्रांतावाहाअश्वायस्य ॥ ३४ । ३५ ॥

तत्रत्येस्तदादेशस्थेस्तत्रतत्रप्रत्युद्यतेशिरस्याधायाभिमुखमानीतमर्हगां पूजासाधनयस्यतदाभृतः यावदानर्तानुपागासदागविष्ठः स्रयै:गोभिः किरगौहितष्ठतीतिन्युत्पत्तेः पश्चादिशम्प्रतिसायंभेजेप्राप्तः गांभूमिगतश्चउदकंगतश्चसायमप्सुप्रविशतीतिश्चतेः॥ ३६॥ इतिश्रीवीरराघव टीकायांप्रयमस्कंधेदशमोऽध्यायः॥ १०

## ्रश्रीविजयध्वजः ।

स्वनगरींद्वारवतींप्रियः पुरुषेः सह ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

हेभागेव ? शीनक कुरुजांगलप्रभृत्येकादश देशानतिकम्यागात् श्रांताश्वोविभुरानतीन् स्वाधिकृतान्देशानुपागादित्ययः॥ ३५॥ यदाहरिः सार्यसंध्यासमयेपश्चादिशंपश्चिमांदिशंभेजे कथंभूतः तत्रतत्रचस्वराष्ट्रंप्रतिपदं तत्रत्यैर्जनैः प्रत्युद्यतार्हणः प्रदत्तप्राज्यधनः तदागिवष्ठःदिविस्थितः आदित्यः गांसमुद्रोदकंगतः अस्तंगतइत्यर्थः "असौवागिवष्ठोऽप्सूदेत्यप्खस्तमेती" तिश्चतेः ॥ ३६॥

## क्रमसन्दर्भः।

कुरुजाङ्गलेति युग्मकम् । अत्र पन्थानमतिक्रम्य गमनं तत्तन्त्रिज्जनमिलनार्थम् । शूरसेनागमनं श्रीवृन्दावनादिदिदृक्षयैव ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ सायमिति । पश्चात्तदनंतरं सायं यस्मिन् दिने चिलितस्तस्यैव दिवसस्यान्ते दिशं द्वारकागन्तव्यकाष्ठां भेजे इत्यर्थः। एवं रथस्य शैच्यं दर्शितम् । अतएव भागवित्याश्चर्येण सम्बोधनं मनाक् श्रान्तवाह इति चोक्तम् तत्र तत्र ह तत्रत्यैहिरः प्रत्युद्यताहेण इत्यत्राशङ्कते— नु श्रूरसेनयामुनान्तर्गतवृन्दावनस्थानां श्रीमन्नन्दादीनां मिलनादिकं विशिष्य कथं न वर्शितं तत्राह । स एव गविष्ठो गोपाललीलः सन् दुन्तवक्रवधानन्तरं गां गोकुलमेव गतः। तदप्रकटप्रकाशे तैः सार्द्धमप्रकटं स्थित एवेत्यर्थः। प्रकटेन खप्रकाशेन प्रकटतत्प्रकाश विशेष षद्शेनकीतुकार्थमेव तदा तत्र गमनमिति भावः। तदिदं श्रीकृष्णसन्दर्भे विवृतमस्ति॥ ३६॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कं धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृतकमसन्दर्भे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

## सुवोधिनी।

प्तावत्कालं कौरवयादवामिलितास्थिताः अधोभयपश्चाद्भिन्नतयागताइत्याह अधिति उभयत्रापिभगवानेवहेतुः दूरपर्यतमागतान् शोरिरितिलोकव्यवहारार्थदाढर्थस्चितंश्ररः पागडवानांमातामहोभागवतः पितामहः अतउभयेएकएव नदूरागमनेनआतुराः किंतु॥ विरहे गातथापिह्यातुरैः सहगमनमनुचितम् अतआतुराश्चिवत्यंप्रियैःसहअगमत् कौरवाः स्वमनस्येववयंसहगमिष्यामः इतिविरहातुराः अतो भगवतानिवर्तिताः नन्वत्यंतमातुरागृहेऽपिनगच्छेयुः इतिनाशंकनीयंयतस्तेद्दढंस्निग्धाः नहिद्दढंस्निग्धः शीघ्रंनश्यति ॥ ३३॥

मार्गस्थदेशान् स्रोकद्वयननिर्दिशतिकुरुजांगलेतिकुरुजांगले शरसेनान्वटेश्वरदेशान् अन्यांश्रयमुनातीरदेशान्परपारस्थान्ततः कुरुक्ष भारत्य । भारत्य । भारत्य । अभ्वकावरादिः महरल्पोदकदेशः धन्वोऽनुदक्षदंशः भूमिसिकताभेदनिक्रपणायअणशब्दः सौवीरदेशः सुराष्ट्रदेशः आभीरदेशः कृतीपुरदेशः ततोऽपिपरानानत्तीन्द्वारका देशान्मध्येदेशानांनामभिष्विग्नंसंवोधयति हेभागेवे! ति युक्तमेवभृगु खुराण्ड्रयस्य किन्तुमगवानेवतान्देशानुपागात्एकेनैव दिवसेनता वत्द्रूरगमनेऽपिमनागेवश्रांतवाहोजातः नतुसर्वयाकिमित्येकेनैवदिवसे न तावत्इत्यत्रहेतुः विभुरिति॥ ३५॥

मध्येतत्रपूजामाहतत्रतत्रेति हइतिनिश्चयेकोऽपिदेशोभगवत्पूजारहितोनजातइत्यर्थः एवंपूजितोभगवान्सायंकालेपश्चाहिशंपश्चिमती रंभेजेतत्र विश्रामं कृतवान् गोधू लिकायांनगरप्रवेशः कर्त्तव्यइतिभगवान् यदासध्याप्रतीक्षयास्थितः तदासूर्येशानविलंवः कृतइत्याह गविष्ठो र मजाराजाः । अविकार विवासिक व

सुमुहूर्त्तेजातमित्यर्थः॥ ३६॥ 



#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

कौरवान् पांडवान् ॥ ३३ ॥

कुरुजाङ्गलेत्यादी कमो न विवक्षितः॥ ३४॥

मरुर्निरुद्को देशः। धन्वः अल्पोद्कः। आनर्तान् द्वारका प्रदेशान्। हे भागव !। मनाक् ईषत् श्रान्ता वाहा यस्य सः॥ ३५॥

महानहदक्ता देशः। धन्यः अवपादकः। जानपात् द्वार्यः प्रदेशाः । तेन तत्तद्भक्तमनोर्थपूरणार्थे तत्तद्देशं गत्वा गत्वेव तत्र तत्रेकेकानि विविदितानि विविद्या पुनर्वत्मां नुस्तारोति भावः । सायमपराह्ने पश्चाद्दिशं द्वारकाप्रदेशं भेजं प्राप्तः । तदा गविष्ठः सूर्योऽपि गां गतः पश्चिम् समुद्रजलं प्रविष्टः ॥ ३६ ॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । प्रथमेदशमोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १०॥

## सिद्धान्तप्रदीपः।

प्रियेरुद्धवादिभिःसह ॥ ३३॥

कुर्वादिदेशानतिकम्यआनर्तानुपागादिति द्वितीयेनान्वयः क्रमोऽत्रनिवक्षितः॥ ३४॥

इतिश्रीप्रथमस्कंधीये सिद्धांतप्रदीपे दशमाध्यायार्थप्रकाशः ॥ १०॥

#### भाषाटीका ।

तदनन्तर दूरतक चले आये बिरहातुर और इढ स्निग्ध पांडवों को निवृत्त कर प्रियजनों सहित शौरि (कृष्ण) अपनी नगरी

वा जान " रर "
हे भागेव ! कुरजांगल पांचाल श्रूरसेन यामुन देश ब्रह्मावर्त कुरुक्षेत्र मत्स्यदेश सार्व्वतदेश मरु धन्व देशों को उल्लंघन कर हे भागेव ! कुरजांगल पांचाल श्रूरसेन यामुन देश ब्रह्मावर्त कुरुक्षेत्र मत्स्यदेश सार्व्वतदेश मरु धन्व देशों को उल्लंघन कर सौवीर आभीर और और देशों में होकर जब आनर्तदेश के निकट पहुँचे तब वाहन अश्वों को थोड़ा श्रम हुआ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ सौवीर आभीर और और देशों में होकर जब आनर्तदेश करते सायंकाल को पश्चिम देश में पहुँचे तब ही स्वर्गस्थ मूर्य भी जल में वहां वहां उनहीं देशवासियों की अर्दशा पूजा ग्रहण करते सायंकाल को पश्चिम देश में पहुँचे तब ही स्वर्गस्थ मूर्य भी जल में अस्त हुए ॥ ३६ ॥

प्रथमस्कंध का दशम अध्याय समाप्त ॥ १०॥

१ ५ ५ ५ १ हाम्मीतः । १९०० । अस्तिकातिभाग्यामा गाउँ ।

# 

स्त्रतं उवाच ॥

त्र्यानर्ता न्सउपब्रज्य स्वृद्धान् जनपदा न्स्वकान् I दध्मी दरवरं तेषां विषादं शमयन्निव ॥ १ ॥ स उच्चकाशे धवलोदरो दरोऽप्युरुक्रमस्याधरशोगाशोगिमा । दाध्मायमानः करकञ्जसम्पुटे यथाव्जषगढे कलहंसउत्स्वनः ॥ २ ॥ तमुपश्चत्य निनदं जगद्रयभयावहम् । प्रत्युद्ययुः प्रजाः सर्वा भर्तृ दर्शनलालसाः ॥ ३ ॥ तत्रोपनीतवलयो रवेदीपमिवाहताः। श्रात्मारामं पूर्णाकामं निजलाभेन नित्यदा ॥ ४ ॥

आनर्त्तेः स्तूयमानस्य पुरी निर्विश्य वन्धुभिः। एकादशे रतिः सम्यक् यादवेन्द्रस्य वर्णयते ॥ उत्सवैरुचलत्पौरमुदश्चद्भवजतोरगाम् । उल्लसद्रत्नदीपालि खपुरं प्रभुराविशत् ॥ ० ॥ विकास व

स्वृद्धान् समृद्धान् । दरवरं पाश्चजन्यं राङ्कं दम्मी वादितवान् ॥ १॥ स इति । उच्चकारो अतिरायेन शुशुभे । दरः सङ्घः कर्यभूतो दरः करकञ्जसम्पुटे दाध्मायमानः आपूर्यमाणः (वाद्यमानः)। धवलम उदरं यस्य सः। तथापि उरुक्रमस्य कृष्णस्याधरस्य यः शोगागुणस्तेन शोगिमा यस्य सः। कथमुखकाशे अञ्जषेडे रक्तकमेळ समूहे कलहंसी राजहंस उचकारी यथा तद्वत्॥२॥

जगतो यद्भयं तस्य भयावहम् । प्रत्युद्ययुः प्रत्युज्जग्मुः भर्त्तुर्द्दशने लालसा श्रीत्सुक्यं यासां ताः ॥ ३॥ तत्र तस्मिन् श्रीकृष्णे उपनीताः समर्पिताः वलय उपायनानि याभिस्ताः निरपेक्षेऽपि तस्मिन्नादरेगा समर्पेगो दृष्टान्तः रवेदीपमिवेति पितरमभका इव तं सर्वसुद्धदमवितारमु चुरित्युत्तरेगान्वयः सुद्धत्वेनैव अवितारं नतु कामेन । तत्र हेतुः आत्मारामम् । तत्रापि हेतुः प्रमानंदनिजस्बरूपलाभेनैव पूर्णकामम् ॥ ४॥ ५॥

द्वीपनी ।

011 र 11 द 11

## श्रीवीरराघवः

सभगवान्स्वृद्धान्समृद्धान्स्वकानानक्तीन्जनपदानुपब्रज्यतत्रत्यानां विषादंस्वविद्यतेषज्ञामयश्रिवद्रवदंशंखश्रेष्ठंपांचजन्यंद्धमीध्वनया

तदासदाध्मायमानोदरवरः स्रतोधवलमुद्रंयस्यतथाभूतोऽपिंदामोदरस्यभगवतोऽधरशोगोनशोगिमायस्यसः सभगवत्करकमलयोः

संपुटउद्यकाशेययाऽब्जलगडे रक्तकम्लसमूहेउत्खनउद्येः खनोयस्यसहंसस्तद्वत ॥ २॥

जगतोभयंयेभ्यः तेषांभयमाषहतीतितथातंनिनदमुपश्चत्यसर्वाः प्रजाभर्सुभगवतोदर्शनेलालसाः आसक्तचित्ताः प्रत्युचयुः प्र

गण्डः । तत्राहृताआद्रयुक्ताः रवेदीपमिवात्मानंजगच्चप्रकाशयतः प्रकाशांतरानपेक्षस्यसूर्यस्यदीपमिव उपनीतः विलः पूजार्थद्रव्यं त्याजग्मुः ॥ ३ ॥

याभिस्ताः॥ ४॥

## श्रीविजयध्वजः ।

सकृष्णःस्वृद्धान्सुष्ठुसंपन्नान् स्वायान्नामनाञानर्तान् जनपदानुपगम्यइति दरवरंशंखश्रेष्ठंदध्मौषूरयामासतेषां विषादेराजकं भयंशमयन्परिद्दरित्रवेत्यन्वयः ॥ ३८ ॥

भर्तृदर्शनलालसाःश्रीकृष्णस्यदर्शनोत्सुकाःसर्वाःप्रजा जगतःभवः संसारःतस्माद्भयंहंतीतिजगद्भवभयापहःतं जगद्भयभयापहमिति पाठेजगद्भयानांदैत्यानांसकाशाद्यद्भयंतस्यनाशनः तंनिनदंशंखध्वनिश्चत्वा तंक्वप्णंप्रत्युद्ययुरित्यन्वयः॥ ४०॥

नित्यदानिजलाभेनस्वतोलन्धेनपूर्णकामं अतपवात्मारामं आसमंतात्रममाणं कृष्णंनत्वाहर्षेण्गद्भदयास्वलंखागिराताः प्रजाः प्रोचुरित्यन्वयः कीद्दयःप्रीत्युत्फुल्लंविकसितंमुखंयासांताः तथोक्ताः उपनीतःसमर्पितःविलः भागधेयः याभिस्तास्तथावालिःपूजासाधनंवा कथमिवतेजःपुंजस्यरवेदीपिमेवआत्मारामस्यवलिंदस्वेतिशेषः आहताःपरमादरयुक्ताःअभेकाःबालाःपितरमिवकथंभूतंहरि अन्नादिदानेन पातृंत्वात्पितरं सर्वस्मादात्मादेःसुद्धदमनिमित्तवंधुं ज्ञानादिदानेनावनकर्तृत्वाद्वितारम् ॥ ४१॥ ४२॥

## क्रमसंदर्भः।

011911

स उचकारो इति पद्यं चित्रसुखेन व्याख्यातमस्ति ॥ २ ॥ ३ ॥ तत्र श्रीद्वारकायाम् । रवेरुपहाररूपं दीपमादतवन्तो जना इवेत्यर्थः ॥ ४ ॥

## सुवोधिनी।

पवंकौरवभक्तानांसर्वसौख्यंनिरूपितं द्वारकास्थितभक्तानामेकादशब्दीर्यते ॥ १ ॥ प्रवेशेचप्रविष्टस्यस्थितस्याप्युत्सविश्वधा प्राप्ता नामिवचस्नेहशास्त्रार्थजानतामपि ॥ २ ॥ कृष्णोच्छातस्तिदित्युक्त्वाप्रत्यापित्तिर्निरूप्यते पूर्वाध्यायांतेभगवतोद्वारकाप्रवेशायसुमुहूंविनिरू पितम् अत्रप्रथमंप्रवेशोमंगलमाह शंखनादस्त्यास्निग्धदर्शनंस्तोत्रमेवच दूरान्मंगलमेतिद्विकलशादिस्तयांतिके दुःखितेनगरेकृष्णोनप्रवेशामिहाहिति अतःशंखिनगदेनसुखिनस्तान्करोतिहि द्वारकाजलदुर्गहितदंतनगरंमहत् आनर्जाख्यंतत्प्रवेशःपूर्वपश्चात्रपुरस्योह अतो भगवानानर्त्तपुरिनिकटेग्त्वापांचजन्यध्वनिकृतवानित्याह आनर्जानिति वहुवचनमवांतर्य्यामाभिप्रायंस्वद्वान् सुष्ठुऋद्वान् सस्य धनादिभिः स्वकान्स्वकीयान् द्वारिकानिवेशानंतरंवासितान् ॥ १ ॥

यस्यध्वनिर्दानवदर्पहेता, अमंगलक्षपदैत्यानां निराकरणार्थेदरवरंशंखश्रेष्ठंवादितवान् भगवतावाद्यमानः शंखःकेनचिद्विर्शितः सोऽप्युपनिवद्धः सच्छचकाशहति उर्द्वमत्यन्तंचकाशेधवलमुदरं यस्यपतादशोदरः उरुक्रमस्याधरशोगोनक्षपेण शोणिमाशोगायुकः करकमलद्वयस्य मध्येसंपुरेयथाकमलसमूहे उर्द्वशब्दायमानोहंसोभवति॥२॥

पांचजन्यध्वितिश्रुत्वासर्वेदेशनगरवासिनः निश्चयेनभगतंतमागतंज्ञात्वापरमानन्दिनिष्टृताअपि दर्शनार्थमग्रेगताइत्याह तमुपश्चत्येति यस्मिन्श्रुतेमृत्युभयमपिगच्छिति किमन्यद्भयमित्याह जगद्भयभयावहिमिति पांचजन्यंहिआयुधंशञ्चवधार्थेनिष्पादितं धातकस्वभावं तदत्रमंगळे कथमुपपुज्यतहत्याशंक्य अत्रापिघातकरूपेग्रीव मंगळत्विमिति जगतोयद्भयं तस्यभयं आवहतीतिउक्तं प्रत्युद्धयुःअन्योऽन्यंप्रति क्रूळत्याऊत्ऊर्द्ध्वभ्रेअयुः अयगतोअन्योऽन्योपमदेन अहमहिमहक्या अश्रेगताइत्यर्थः सर्वोहितनात्रावांतरज्ञातिनियामिका भर्तृत्वस्य तुल्यत्वात् शास्त्रार्थपरिपाळनायसर्वउपायनपाग्यः समागताः तत्रोधावचत्वसिद्धयेदिद्राअपि सम्भवन्ति ॥ ३॥

तेवामुपायनं भगवतः कोपयोगायेत्याशंक्याहरवेहींपमिति विलिःपूजा साधन द्रव्यंकयाचित्रिक्षययाहि मिन्नोभगवितसंवध्यतेतदैविहपरमानंदः तत्रहष्ट्याशंद्रियसंवंधेऽपिदेहसंवंधासध्यर्थमुपायनानयनंस्योद्देशेनदीपदानं विहितंनहिदीपेनस्यं हि किचित् कार्यसिध्यति
तथापि त्वत्परोक्षेवयमनेनजीवामइति दैन्यक्यापनेनदयोत्पचौहेनुभविति तथाभगवत्यपिस्वविद्यमानद्रव्येगोपढौकनंतदाभगवताताः
सर्वाश्रादराः शादरेगासुक्षिताः कृताः तेषापूर्णमनोरयानांयत्कार्यतदाह आत्माराममिति अथवापूर्वमेताः आत्मारामप्रत्युष्यसुरितसंवंधः स्तोत्रीपक्षमस्तुपीत्युत्पुत्वेति उत्कृष्टेरप्युपनीतेष्ठपायनेभगवतोऽपेक्षानास्तीति वक्तुतंविशिनष्टि आत्मारामपूर्णकाममिति उभयहि
विषयात्रापेक्षतेयेषांविषयापेक्षवनास्तियवापूर्णविषयाः तत्र विषयापेक्षामावः पर्दष्ट्यानवक्तित्रति वाक्यात् भगवति पेक्षाप्राप्तेभवति
भगवांस्तुप्राप्तं भगवानात्मारामः अतपवपूर्णकामः आत्माकामभाष्तकामइतिश्रुतः अथवाकामस्तुपूर्वभगवाति उत्पन्नः ससर्वसृष्टपदार्थो
भगवांस्तुप्राप्तं भगवानात्मारामः अतपवपूर्णकामः आत्माकामभाष्तकामइतिश्रुतः अथवाकामस्तुपूर्वभगवातिउत्पन्नः ससर्वसृष्टपदार्थो
भगवांस्तुप्राप्ते प्राह्मित्रयवेतसजीवेषु कदाचित्रपूर्णोभवति सर्वजीवार्यत्वात् विषयानांभगवतस्तुसर्व मगवतः प्राप्तमितिपूर्णत्वयन्त्रस्त्रापिहेतुः निजलाभितिनिजंसकपनिज्ञावासर्वेप्रापंचिकाः पदार्थाः सर्वेनित्यदेतितिरोभावान्चपप्तिद्यायामपिक्षव्यक्ताद्विनिधन

भयत्राप्य च भगवत्वात्विषयपश्चेसदेत्युक्तं अवतीर्णद्शायामिषस्यरूपप्यस्थितत्वात्नित्यदेति ॥ ४॥

प्रीत्युत्फुल्लमुखाः प्रोचुर्ह्ष गद्गदयागिरा ।

पितरं सर्वसुहृदमावितारामिवार्भकाः ॥ ॥ ५ ॥

नताः स्म ते नाथ सदाङ्किपङ्कजं विरिश्ववैरिश्वयसुरेन्द्रविन्दितम् ।

परायगां त्वमिमहेन्छतां परं न यत्र कालः प्रभवेत् परप्रभुः ॥ ६ ॥

भवाय नस्त्वं भव विश्वभावन त्वमेव माताथ सुहृत् पिता ।

त्वं सहुर्ह्मः परमञ्ज देवतं यस्चानुवृत्त्या कृतिनो बभूविम ॥ ७ ॥

त्रमहिमतिस्रिग्धनिरीत्वागाननं पर्यम रूपं तव सर्व्वसौभगम् ॥ ८ ॥

#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

एकादशे स्तुतः कृष्णः आनर्त्तेः खपुरं गतः। वन्धुभिर्मिलितः कान्ता अधिनोदिति वर्ण्यते॥०॥

दरवरं पांचजन्यंशङ्खम् । इवेति साक्षाद्दर्शनं विना सम्बग्विषादस्य शान्त्यजुत्पत्तेः ॥ १॥ स दरः शङ्खः उच्चकाशे शोभते स्म । अधरस्य शोर्षोन गुर्षोन शोिषामा यस्य सः । दाध्मायमानः अतिशयेन वाद्यमानः । अञ्जषगर्छे कमलसमूहे इति चतुर्भिः करैर्धृतत्वात् ॥ २॥

जगतो यद्भयं तस्य भयमावहात तम् ॥ ३॥ उपनीताः समर्पिता वलय उपायनानि याभिस्तथाभूताः सत्यः । निरपेक्षेऽपि तस्मिन्नादरेगा समर्पेगो द्रष्टांतः रवेदीपिमव (रवी द्रीपनीय रविपूजका इवेत्यर्थः) पितरमर्भका इव तम् अवितारं रक्षितारमूचुः। उपायनानपेक्षत्वमाह आत्माराममिति ॥ ४॥ ५॥ द्रीपनीय रविपूजका इवेत्यर्थः)

## सिद्धांतप्रदीपः।

अयद्वारावतीस्यभगवदीयजननांभगवितस्नेहाधिक्यंवकुंप्रथमंभगचोष्टितमाह आनर्तानिति स्वृद्धान्सुसमृद्धान्द्रवरंपांचजन्याख्यं अयद्वारावतीस्यभगवदीयजननांभगवितस्नेहाधिक्यंवकुंप्रथमंभगचोष्टितमाह आनर्तानिति स्वृद्धान्सुसमृद्धान्द्रवरंपांचजन्याख्यं इंग्लंश्रेष्ठम् स्विवयोगजीवषादंशमयन्निवद्ध्मावादितवान् सर्वथाविद्रलेषजन्मविषादिनवृत्तिस्तुतत्तत्त्संयोगोदेवभवतीत्यतः इवशब्दः ॥१॥ सदासपांचजन्याख्यः दरः शंखःखतोधवलोद्रोऽपि उरुक्षमस्यअधरशोणितरागेणशोणिमायस्यकरकंजसंपुटेदाध्मायमानोभगवताऽऽपू सदासपांचजन्याख्यः दरः शंखःखतोधवलोद्रेऽरुणपद्मसमृहे उत्स्वनउच्चशब्दः कलहंसोराजहंसः॥२॥ र्यमाणुड्यकाशेनितरांशुशुभे यथाऽव्जपणुडेऽरुणपद्मसमृहे उत्स्वनउच्चशब्दः कलहंसोराजहंसः॥२॥

जगद्भयस्यकालादेरिपभयमावहतीतितथातम् ॥ ३ ॥ तत्रपूर्णकामे श्रीकृष्णेरवेर्दीपमिवोपनीतावलयोयाभिस्तास्तेनचाहतानित्यदानिजलाभेनपूर्णकाममात्मारामं श्रीकृष्णेप्रोचुरित्युत्त देशान्वयः ॥ ४ ॥

## भाषा टीका ।

(सूत उवाच ) समृद्ध जनपद अपने आनर्त प्रान्त के देशों में प्राप्त होकर भगवान ने देश वासियों का विषाद शमन करते अपना द्वाद (शंख) वजाया ॥ १ ॥ वो धवलोदर (स्वेत मध्य) दर (संख) उठ कम के अधरों की लाली से लाल होकर जैसे कमल समृह में कलहंस शब्द करता वो धवलोदर (स्वेत मध्य) दर (संख) उठ कम के अधरों की लाली से लाल होकर जैसे कमल समृह में कलहंस शब्द करता प्रेसेही भगवान के करकंज संपुट में वजता शोभित हुआ ॥ २ ॥ जगत के भय को भी भय देने वाले उस शंख के निनाद को सुनकर भतृ दर्शन लालसा से सब प्रजा उद्यत हुई ॥ ३ ॥ जगत के भय को भी भय देने वाले उस शंख के निनाद को सुनकर भतृ दर्शन के समान आदर युक्त प्रजा सब विल (भेट) आत्माराम और निज लाभ से निल्पपूर्ण काम भगवान को सूर्य को दीप दर्शन के समान आदर युक्त प्रजा सब विल (भेट) लेकर प्रीति से उत्फुल्ल मुख आनंदगद्भद वाणी से "जैसे वालक पिता की स्तुति करते हैं " अपने रक्षक की स्तुति करने लगी ॥ ४ ॥ लेकर प्रीति से उत्फुल्ल मुख आनंदगद्भद वाणी से "जैसे वालक पिता की स्तुति करते हैं " अपने रक्षक की स्तुति करने लगी ॥ ४ ॥

## श्रीधरस्वामी।

किमुचुरित्याह । नता इति । विरिचो बद्धा । वैरिच्याः सनकादयः । इह संसारे परं क्षेमिमिच्छतां परायशं परमं शरणम । कुतः परेषां ब्रह्मादीनां प्रभुरिष कालो यत्र प्रभुने भवेत् ॥ ६ ॥ विश्वभावन । अनुवृत्त्यानुगमनेन (अनुवृत्त्यागमनेन ) कृतिनः कृतार्था वभूविम अतो भवाय उद्भवाय नोऽस्माकं त्वं भव । हे विश्वभावन । अनुवृत्त्यानुगमनेन (अनुवृत्त्यागमनेन ) कृतिनः कृतार्था वभूविम जाता वयम ॥ ७ ॥

#### श्रीधरखामी ।

कृतार्थत्वमेवाहुः। अहो भवता वयं सनाथाः स्म । यद्यस्मात्तव इतं प्रथमः । त्रैपिष्टपानामिप दूरे दर्शनं यस्य देवानामिप दुर्लभ मित्यर्थः प्रेम्गणा यत् स्मितं तद्युक्तम् स्निग्धं निरीक्षणम् यस्मिन् तदाननं यस्मिन् तद्रूपम् । सर्वे सर्वेषु वा अङ्गेषु सीभगं यस्मिन् ॥ ८॥

#### दीपनी।

उद्भवाय उत्तमस्थिताय यद्वा सन्ततं निजद्र्शनसमृद्धये इत्यर्थः॥ ७॥ ८॥

#### श्रीवीरराघवः।

पीत्याउत्फुल्लानिविकसितानिमुखांबुजानियासांतथाभूताः प्रजाहर्षेग्रागद्गदयाकुंठितयागिरातंत्रोचुः रविद्वष्टांताभिष्रेतंव्येजयन्विशिनािष्ट निजलाभेनित्यानिरविधकस्वानन्दानुभवलाभेनपूर्णकाममवाप्तसमस्तकाममात्मारामं स्वानुभवैकनिष्ठंवल्यनपेक्षमितिभावः केकिमवा चुः सर्वेषुपुत्रेषुसुहृदंसोहार्द्दयुक्तमवितारंरिक्षतारंपितरमभेकाः शिशवःपुत्राहव॥५॥

उक्तमेवाहुःनताद्द्यतिचतुर्भिः हेनाय! तवांत्रिपंकजंप्रतिनताःस्म क्यंभूतंविरंचिनाब्रह्मगावैरिच्येः सनकादिभिः सुरेन्द्रेरिद्रादिभिश्च वांदितनमस्कृतमद्दृहक्षेमंनिःश्रेयसमिच्छतांपरमुत्कुष्टंपरायगां क्षेमसाधनभूतं परिमितिक्षेमविशेषगांवायत्र ग्दारविदेपरेषांब्रह्मादीनामपिप्रभु स्तानिपवशीकुर्वन्कालोऽपिनप्रभवेत्रसमयोभवेत् यत्रत्वियिवषयेपरःप्रभुःकालोऽपिनप्रभवेत्तस्यतवपदाम्बुजमितिवान्वयः "सर्वस्यवशीसर्व स्येशानःनतस्येशेकश्चने"त्यादिश्रुत्यर्थोऽत्रानुसंधेयः ॥ ६ ॥

हे विश्वभावन!विश्वं जगत्भावयतिसत्तास्थितिप्रवृत्तिमत्करोतीतितथाभूतस्त्वनोऽस्माकंभवायाभ्युदयायभव"मातापिताभ्रातानिवासः शर्णं सुदृद्गितर्नोरायणःतदेवतानांपरमंचदेवतंपितपतीनांपरमंपरस्तात् नतस्यकश्चित्पितिरस्तिलोकेनचेशितानेवचतस्यिलगयोचेवेदांश्चप्र-हिणोति"इत्यादिश्चत्यर्थमनुसन्धायोचुः त्वमेवमातेत्यादि लोकिकस्तुवन्धुरेकपवत्वंतुस्र्वविधवंधुरितिभावः यस्य तवादुवृत्यासेवयावयं कृतिनः कृतकृत्यावभूविमसत्वंनोभवायभवेत्यन्वयः॥ ७॥

अहो! इतिभगवतात्वयावयमहोसनाथाः स्मइतियत्सुखप्रदनाथवंतोवभूविमकुतः यद्यस्मात्तवरूपं पश्येमकयंभूतंत्रेपिष्टपानानदिवानाम पिदूरदर्शनंदुईर्शनंप्रमपूर्वकस्मितिक्कान्धेसानुरागेईक्षणेचयस्मिस्तदाननंयस्यतत्त्तौभगंसुन्दरम् ॥ ८ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

हेनाय ! तवां व्रिपंक जंसदानताः स्मेत्यन्ययः की हरां विरिचवेरिच सुरेंद्रैश्चतुर्मुखरां करदे वेद्रैवेदितं इह चेतनराशिमध्येपरंक्षेमं मोक्षामिच्छ तां भक्तानां परायग्णम् उत्तमाश्रयं परस्यिहरण्यगर्भस्यप्रभुः समर्थो जननमरण्यमीपादको प्रिकालः यत्रपदारिवदेभक्तानां नप्रभवेज्जरादिश्वमी पादको नभवति परेषां भक्तानां प्रभुः कालः यत्रभक्तानां नप्रभवेदतस्तस्या व्रिपंक जस्थेनसमर्थे इति किवाच्यमितिवा ॥ ४३॥

हेविश्वभावन ! जगतः सत्तादिप्रद त्वंनोऽस्माकंमवायज्ञानभक्त्वादिकल्याणायभव यस्यतवासुवृत्त्यासेवालक्षणोनासुवर्तनेनकृतिनः सक्तिनोवभूविम सत्वंनः परमंदैवतमद्दृद्देवतानः सद्गुवर्निदेषगुरुस्थानीयश्च त्वमेवमाताऽभीष्टद्दानेनात्मनात्वयैवनास्मत्प्रत्नेनसुदृत् पिता पितः स्वमी ॥ ४४॥

हेनाथ ! तवरूपंपश्यमिति यद्यस्मात्तस्माद्वयंभवतासनाथाः स्म नाधवंतोभवाम अहोअसमद्भाग्यमित्यन्वयः कथंभूतंत्रैविष्टपानमिद्रा दिदेवानामिपद्रतः चिरकालतः चीर्णातपः संपत्त्यादश्यतइतिद्रुरदर्शनम् अनेनदर्शनसाधनसामग्येवाभिष्रेता नमुद्र्शना भावः तैः प्रार्थि तत्वेनतत्कार्यार्थमवतीर्णात्वादर्शनतारतम्याभिप्रायोवा प्रम्णास्मितंस्निग्धंनिरीक्षगांमधुरावलोकनंताश्यांयुक्तमान नंयस्मिस्तत्तथोक्तं सर्वे पूर्णासीभगंसीदर्ययस्मिस्तत्तथोक्तम् ॥ ४५॥

## क्रमसन्दर्भः।

एवं स्तुत्यादिकमपि तत् प्रीगानतामहंतीत्याह प्रीत्येति । पितरमभंका इवेति दृष्टांतः । तस्य प्रीतावसाधरगां गुगाविशेषमप्याह सर्व सुद्धदमिति सर्वसुद्धत्वे लिङ्गम् अवितारमिति । तथाहि तादशस्य राह्यः स्वसम्बन्धाभिमानिप्रीतिमत्पुत्रादिषु प्रीतिविशेषादयो यथा हृद्यते तथा तेषु तं प्रीतिमन्तमित्यर्थः । एवं कलपत्रवदृष्टान्तेऽपि भगवतो भक्तविषयिका रूपा यथार्थमेवोपपद्यते ये स्वस्त सहजतत् प्रीति मेवात्मिन प्रार्थयमाना भजन्ते तेश्यस्तद्दानयाथार्थ्यस्यावद्यकत्वात् । तस्मादस्त्येवानन्दस्वक्रपस्यापि भक्तावानन्दोस्तास इति ॥ ५॥६॥

भवायसन्तर्तानजदर्शनसमृद्धये॥ ७॥ ८॥

क्रिक्ट के अधीर के प्रतिकारिक कि

सर्वाः प्रजाश्चन्ति स्वीषु भेदेनप्रथमं द्विविधाः पुरुषा स्विविधाः क्षानिवैषयिक मक्षेत्रेन तत्राद्यानां ज्ञानिनां वचनमाहनताः स्मेति सर्वाः प्रजाश्चनुविधाः स्वीष्ठ प्रकानि सर्वाः प्रजाश्चनुविधाः स्विक्षत्र स्विक्षत्वे प्रविक्षत्वे प्रविक्षत्व विष्ठ स्विक्षत्व स्वाप्त्र विवाद्य त्व नित्र विष्ठ स्वाप्त्र नित्र स्वाप्त नित्र स्वाप्त नित्र स्वाप्त नित्र स्वाप्त नित्र स्वाप्त नित्र स्वाप्त स

प्रभुर्यस्य ॥ ६ ॥ विषयपराआहुः भवायनस्त्वमितिहेविश्वभावन!सर्वानेविषयसंविधनभावयसिअधिकानुकरोषिश्वतोऽस्माक्रमपिउद्भवायभवनस्त्विमिति यन्त इस्माकंत्वं खामीसर्वप्रार्थनायामनु चितत्वाभावायभगवातिषद्वमेत्वंप्रतिपीदयतिमतिखादित्वमेवनामातात्वद्वभावेवनिगतित्वात् भारपः उद्दरस्थानाजीवानामेववाहिः सृष्टेः ब्रह्मांडाख्येचोदरेसाँप्रतमपि स्थितः लोकप्रतीत्यातासांजरायुवरपोषकवंद्वाव्यतस्त्वमेलपालाः अतो रीदनेन्वलाद्वात्वमेवप्रार्थनीयः किंच अथसुद्धत् अविवेकद्शायांययात्वंप्रार्थनीयः अथतद्नतरं विवेकद्शायाम्पितंत्रमेवणाश्येः सत्तरं सुद्दिनं द्वासुपर्यासयुजास्यायावि दिश्वेतः सुद्धद्वयः सुद्धत्पक्षस्मिनेवद्वद्येष्ठभयोः स्थितत्यातः सुद्धरतातिवासविक्रव्योक्तवात् अत्रप्तंयुक्तापिमगवानेवप्रार्थनीयः सर्वफलदातृत्वात् किंचा असेवादांपराधेनदण्डनेऽपिमग्यानेवः प्रार्थनीयः सर्वफलदात् विवादाः गतिरसाकमस्तिययास्वयमनलंकृतोऽपिभायामलंकसोतिवहुभिराभरगौः अलंकृतेतुसंदेहग्वनास्त्भतस्वंमहानुस्मानलंक्वित्यथः किंच त्वमस्माकंपिताअतोजन्ममात्रेगौववयंतेदायभागिनः जगत्कर्तृत्वेनैवभगवतः श्रवगात्एवमैहिकसूर्वफ्लदान्।यभगवदूपमुक्तवापारलीकिक सर्वदानार्थमाहत्वंगुरुनः परमंचदैवतमितिप्रक्रियांतरत्वात् पुनस्त्वमितिग्रहगांपरलोकस्तुतदर्थविहितकर्मज्ञानभक्तिभिभेवतितत्रथज्ञाना दन्यथाज्ञानान्मोहनार्थवापां खंडादिवहवोमार्गाजाताः तत्रसन्मार्गवकादुर्लभः संदेहेनविश्वासाभात्राच्चत्वंत्वव्ययंज्ञानमितिवचनात्त्वमे-वगुरुः जीवास्त्वसद्गुरवः त्वमेवसद्गुरुरितिअतोगुरुश्रुश्रूषयेतिवाक्यात् स्वसेवामेवशिक्षयेत्रयः एवंकर्मगांफलमितिपक्षेगुरुसेवयेवरुतार्थ तादेवताफलदानपक्षे फलमंत्र उपपत्तः॥३।२।३७॥इतिब्रह्मदानपक्षेऽपित्वमेवफलदातित्यर्थः।परमंचदेवतमितिदेवतादानपक्षेऽपिन्नांगदेवताः फलं प्रयच्छंति किंतु सहकारिगोभवंतिअतः परसमित्युक्तंमध्ये चकारात्ब्रह्मपक्षेऽपिपरमात्मादेवताभवानेवदेवानांत्वदंशत्वात् ब्रह्मक्रपत्वाच अतस्तवाराधनमेवासमामक्त्रंकर्वव्यम् अन्यसुस्तत्त्वभाविष्यतीत्याह् यस्याज्ञ हुत्त्येतिकृतमस्यास्तीतिकृतीभगवद्वतु हुत्तिव्यति केताकृतेनान्येन धर्मोदिनानकतीत्वंभवति धर्मः सरतिकीर्त्तनात् कत्रवेनास्तिनिष्कृति रितिअतस्तवानु वृत्त्यर्थत्यास्पाद्वययथाकृतिनीवभू विमेत्यर्थः ॥ ७ ॥

मकाबाहुः अहोइति अहोइत्याश्चर्येवयंत्वद्धं स्वैवपूर्णमनोर्णाः इदानींत्वम्यिमिछित्दृद्रपुश्चर्यं अथ्वाअल्यायम्किः कृतास्माभिः फलमहजातित्याश्चर्यभवतावयंसनाथाः नारायण्पराः सर्वेनकुतश्चनिवश्चतित्यायेन अपेक्षाभावातः नियतानापेक्ष्यते भगवतस्तु मिकि क्ष्यत्वेनवर्ण्वत्येनवर्णम् प्रवम्पिभगवानेवस्त्रसम्भू कृतास्मापि विषयत्वेनवर्णम् प्रवम्पिभगवानेवस्त्रसम्भू कृतास्मापि विषयत्वेनवर्णम् प्रवमागत्यस्वंकार्यं निर्वाह्यस्तित्यथि कृत्र सर्वेजनीनगुष्तत्याभक्तानां सर्वेश्वर्णके विवृद्धं कृत्रस्तात्व क्ष्यत्याः स्वयमागत्यस्वंकार्यं निर्वाह्यस्तित्यथि कृत्रस्त्र विषयत्व विषयत्व निर्वाह्यस्त्र विषयत्व विषयत्व विषयत्व कृत्यस्त विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषयत्व विषय विषयत्व विषय क्षयाभ्यत्व विषय क्षयाम् विषयत्व विषय क्षयाम् विषय क्षयाम् विषयत्व विषय क्षया कृत्य क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य क्षया कृत्य क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य क्षया कृत्य क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य कृत्य कृत्य कृत्य क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य विषय क्षया कृत्य कृत्य कृत्य कृत्य क्षया कृत्य विषय विषय कृत्य विषय क्षया कृत्य कृत्य कृत्य क्षय कृत्य क्षय कृत्य विषय कृत्य विषय कृत्य क

# यह्य म्बुजात्तापससार भो भवीम् कुरून्मधून्वाय सुहृद्दिहत्त्वया।

मुकुळतासुब्बस्यनेपानश्चांनगडन्डुहुन। इरार्धाः 

जीवम ते सुन्दरहासशोभित मपश्यमाना वदनं मनोहरम् ॥ १०॥

<sup>ो के मुल्</sup>डेतिचेदिरिता वाचः प्रजानां भक्तवत्स**लः** ।

शृग्वानोऽनुम्रहं दृष्टचा वितन्वन् प्राविशत्पुरीम् ॥ ११ ॥

मृधु-भाज-देशा-र्हा-ई कुकुरा-न्धक-वृष्णिभिः।

ः का ऋगत्मतुल्य वर्छेर्गुप्तां नागैर्भोगवतीमिव ॥ १२॥

श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

वैरिच्याः सनकाद्यः । पूर्रे प्रायुगां प्रमाश्रयम् । यत्र अघि पंकजे परेषां ब्रह्मादीनां प्रभुरिष कालो न प्रभवेत् ॥ ६ ॥ भवाय क्षेमाय । "भवः क्षेमे च संसारे" इति मेदिनी ॥ ७॥

त्रैपिष्टपानां देवानाम् ॥ ८॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

पितरमर्भकावालाइवसर्वसुहृद्दम्बितारंरक्षकंश्रीकृष्णास्चः प्रजाइतिप्रकरणादन्वेति ॥ ५ ॥

काम वसद्वकारिक

तदेवाह नताःस्मेतिपंचिमः इहपांक्षेमिम्ब्छतांपरायग्रंसर्वोत्कृष्टंशरग्रम् तेपदारिवन्दंनताःस्म यत्रयस्मिन् शरगोकतेस्रतिशरग्रापन्नेषु परेषामशरणापन्नानांप्रभुरिषकाल्वोनप्रभन्नेत् कथमनुवर्ततांभवभयंतवयद्भृकुटिः सृजातिमुहुव्हिणामि रभवच्छरणोषुभयामितिवस्यमाणात् ६

हेविश्वभावन ! जगदुत्पादकयस्यानुवृत्योपासनयाकृतिनः कृतार्थावभूविमजातावयंसत्त्वंनोभवायोद्भवायभव ॥ ७॥

कृतित्वंवर्णायंति अहोदति वयंभवतासनायाः स्मः यतः अहोत्रीवष्टपानामपिदृरेदर्शनंयस्यतस्यतवरूपंपश्येम कथंमूतंरूपं प्रेमपूर्वस्मि-तमन्दहसितं क्रिग्धंसरसंनिरीक्षणं चयस्मिन्तदाननंयस्मिन्ततः सर्वेसंपूर्णसोभगंयस्मिन्ततः॥८॥

#### भाषा टीका ।

द्वारिका के सब प्रजा प्रीति से प्रसन्त मुख होकर हुषे से गद्रदवाशी से सबके सुहृद तथा रक्षक पिता के तुल्य श्रीकृष्ण की स्तुति

करते मंथे॥ ५॥ है नाथ ! हम आप के अंब्रि पंकज में सदा प्रशांत हैं । जिस अंब्रि पंकज को ब्रह्मा सनकादिक और सुरेन्द्र चंदना करते हैं जो े हैं। और अहां ब्रह्मा करते वाली का प्रम प्रायम है। और अहां ब्रह्मादिकों का प्रभु काल भी अपना प्रभाव नहीं कर सका है॥ ६॥ क्षेत्र करने वाली का प्रम प्रायम है। और

है विश्वमावन ! तुम हमार मङ्गालार्थ होही ? तुमही माता ही सुहत ही पति ही पिताही तुमही सहुरु और परम देवता ही जिनकी अनुवृत्ति से हम कतार्थ हुए हैं। उ

अहो ? हम सब आप से सनायहैं। कि जो देवताओं के भी दूर दर्शन, प्रेम स्मित युक्त स्निग्ध निरीक्षण, आप के सर्व सी मग रूप

## श्रीधरस्वामी।

अभेका इच सकरुगमाङ्कः। यहि येका । भो अम्ब्रुजाञ्च ! । नो भवानिति पाठ न इत्यनावरे पष्टी अस्माननाइत्य । अपससार अपहाय जगाम । कुरून् हस्तिनापुरम । मधून् मथुरां वा । तत्र तदा रावि विना आन्ध्यादश्योगेथा एवं तव नः त्यदीयानामस्माकमपी त्यार्थः ॥ १ ॥ १०॥

इति व विविधाः अन्यक्षिति विश्वः श्रम्बन् ष्ट्यासामिनन्दावलोकनेनानुग्रहं कुवंद (पुरं हारकां प्राविशत् ) ॥ ११॥ द्वारकां स्ताति पंचिमः खतुल्यवलैः मधुभोजाहिभिः गुप्तां रक्षितामः॥ १२॥

गोपुरदाण्डाणेषु इनदावक रा १६८८ । TO THE SECONDARY MEAN PROPERTY OF THE PROPERTY

मोअम्बुजाक्ष ! भवान्सुहृद्दिदक्षयायदाकुरूनमधून्वाजनपदानपससारजगामतत्रतदा हेथच्युत ! नोऽस्माकंत्वामपदयतां रवेर्विनार्राविव नाक्ष्णोः श्वराकालोऽव्दकोटिप्रतिमः सम्वत्सरकोटिकालतुल्योभवेत्॥९॥१०॥

इतीत्यंप्रजानामुदीरितावान्वः ऋगवानाभक्तवत्सलोभगवानवलोकनेनानुग्रहीवतन्वन्पुरंप्राविशत्पूः शब्दोऽयंनतुपुरशब्दः ॥ ११ ॥ क्षयंभूतांपुरंमध्वादयोयादवान्तरविशेषाः तैरात्मतुल्यवलैः कृष्णातुल्यवलैर्नागैःकाद्रवयादिभिर्मोगवतीमिवगुप्तांरिक्षतांभोगवतीनामना गानांपुरी ॥ १२॥

#### श्रीविजयध्वजः।

हेअंबुजाक्ष । अयुयर्हियदामाधवः श्रीवल्लभोभवान् मधुविषये भयः सुदृदांपांडवानांदि इक्षयादर्शने च्छ्या कुरून्कुरुविषयान् कुरुविषये **अयोमधून्वां ऋतिगच्छति हे अच्युत! तत्रतस्यामवस्थायांतवेतिषष्ठीद्वितीयार्थे त्वांविनाकुरूणांमधूनांचनोऽस्माकंयथारविविनाक्ष्णांतथैकः** क्ष्रगाः काल अब्द्कोटिप्रतिमः वृषेकोटिसमानः स्यादित्येकान्वयः॥ ४६॥

हप्रयाद शेनेन शृगवानः श्रृगवन् चराव्दाद्वंदिमागधादीनांगिरः॥ ४७॥

गुप्तांरक्षितां भोगवतीनामनागानांपुरी आत्मतुल्यवलैः परस्परमात्मनातुल्यवीर्येरिधकरष्टांतन्यायोषा ॥ ४८॥

## क्रमसन्दर्भः।

यहींति यदा यदेत्यर्थः तत्र तदा तदा क्षगोऽपि अन्दकोटिप्रतिमो भवति । तथा रवि विना अहगोर्यादश्यानध्यावस्था तास्त्रयपि भवतीत्यर्थः । नो भवानिति पाठे नोऽस्माकं स्वामी यो भवान् स त्वमित्यर्थः । तत्र मधून् मथुरां वेति व्याख्याय तदानीं तन्मग्डले सुद्धदो व्रजस्था एव प्रकटाइति तैरप्यभिमतम् । तत्र योगप्रभावेशा नीत्वा सर्वजनं हरिरित्यत्र सर्वशब्दप्रयोगात् । वलभदः कुरुश्रेष्ठ भगवान् रथमास्थितः । सुदृद्दिदक्षुरुत्कंठः प्रययौ नन्दगोकुलमित्यत्र प्रसिद्धत्वात् ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

## सुवोधिनी।

विषयक्तपो अपिख्यमेवजातद्दतितस्मादेतन्महदाश्चर्यमितिस्त्रियः स्त्रीप्रधानाश्चाहुः एतानभगवंतनवागुमान्जानंतिअपितुस्वानुभवंत क्षवस्तुसामध्योत्प्रजायतेतद्गुवदंतियहींबुजाक्षेति हेकमलनयन ! इष्टेचवामृतंपाययतीतितथासम्बोधनं नःअस्माननाहत्यिकमेताः मत्स्वरूपा विदः अतस्तत्रगामिष्यामियत्रमांजानंतीति इत्यपससारभवानितिगमनसमयायवयंसंमुखतयानदृष्टाः कुरून्हस्तिनापुरदेशान् अथततएवप्र विष्यांतरेगामीष्मादिदशैनार्यंकुरुक्षेतंतत्रतास्मन्समयएकःक्षगाःअब्दकोटिप्रतिमोभवेत् यातनास्वेवंश्र्यतेक्षगामध्येवर्षसहस्रकृत्वाभोजयंतीः तित्रधैवास्माकमनुभवः ननुसुखेऽपिश्चयतेक्षण्माश्रेकरपभोगान्भुंकर्ति तत्राह रवेर्विनाक्षणामिविषयसंस्कारकत्वेनअधिष्ठातृत्वन चय तित्यवारमाना अस्ति । अ दाराजा । श्रीप्रत्याहारेगा चक्षुर्निमीलनंकृत्वादेवतांस्ववदास्थापियत्वातिष्ठतिक्षग्रेश्वामुर्छितामवाम्हतिजीवनंत्वच्युतहतिसंवोधनात् यथात्वमच्युतः तथावयमप्यस्मित्रंशेजाताइतिद्योतितम् ॥ ९ ॥ १० ॥

एवंचतुर्विधानांवाक्यमगवान्सत्यत्वेनसमर्थियत्वासत्यवाक्यभ्रवणामङ्गलमनुभूयपुरंप्राविशदित्याहङ्तीति चकाराद्दन्यान्यपिवहुविधानि प्रवामामितिनात्रवचनेदोषप्रहण्ंतदाभगवतोमहतीक्रणाउद्गतेतिवोधयितभक्तवत्सलइतियथागीर्वत्संदृष्ट्वाच्याकुलाभवतितथाभगवान्जातद्दव भुजानाचाराः थः हुच्छ्यानुग्रहेवितन्वन्तथातासुरिष्टः पतिताभगवान्श्वानादिसंपन्नः यथावसासांहृद्येप्रविष्टः येमसुखितान किंचिदुक्तवत्यः ततः पुरी

द्वारकांत्रकर्षेणमहतासंभ्रमेणअविशत्॥ ११॥

प्रविद्यांतांपुरीवर्णायतिप्रचीमः मधुमोजेतिविद्यायथात्रणपुरीतिविद्यापयितुम् "अधिष्ठानेवहिश्योध्वमंतश्चांतार्विभेदतः सुंदरंभगवद्योग्य स्थानंनान्यत्कथंचन" तत्राधिष्ठातृनवर्णयतिमधुभोजेतिषड्विधायादवाः मधवोभोजाः दशाहेषुहोः कुकुराअधकावृष्णयश्चतेगुत्रोसत्यरूप मंतः करगांयदार्षांडद्रियः संरक्ष्यतेतदाभगवत्प्रवेशयोग्यंभवति इंद्रियैविषयाकुष्टिरितिवाष्यात् तैरेवनाश्रवणात् पुरीचगृहभेदेनश्यति भतः । अत्मत्व्यवलैः यथाआत्मदेहः तत्तुर्व्यवलंयेषाम् आत्मावायुर्वा "अहंमतुरमवसूर्यक्षे"तिस्के अहंदेवतायावायुभेदत्वात् मंडलमध्यत्वादस्य आरम्धः स्तावाभगवन्तुल्यसेना सर्वाप्रवेशेनरुष्टांतः नागैरितिशरिरिमवधानागैः प्रामीगनतीत्तुः प्रामायामैः संरक्षितियोगिततुं यधाभगवान् प्रविद्यातिभोगवतीगंगाप्रवाहोवारश्चाभावदेवरपि साहि येत ॥ १२॥

V

सर्वर्तु सर्वविभवपुग्य वृत्त्वेलताश्रमैः। उद्यानोपवना रामेवृतपद्माकर श्रियम् ॥ १३ ॥ गोपुरदारमार्गेषु कृतकौतुक तोरगाम्। चित्रध्वजपताकाग्रैरन्तः प्रतिहतातपाम् ॥ १४ ॥ संमाजित महामार्ग रथ्या-पराकचत्वराम् । सिक्तां मन्धजले रुप्तां फल पुष्पाञ्चताङ्कुरैः ॥ १४ ॥ हारि हारि गृहागां च दध्य चतफलेक्ष्मिः। ग्रालंकतां पूर्णा कुम्भैर्वलिभिर्धपदीपकैः ॥ १६ ॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

भो अम्बुजाक्ष !। नो भवानिति पाठे नोऽस्मान् अनादत्य । कुरून् हस्तिनापुरम् । मधून् मथुरामगड्ळं नन्दब्रजमित्यर्थः नंतु मथुरापुरी तदानीं तस्यां सुहदामभावात् । तत्र योगप्रभावेशा नीत्वा सर्वजनं हरिरित्यत्र सर्वशब्दात् । तन आयास्य इति दौत्यकैरिति ज्ञातीन् चो द्रच्दुमेष्याम इत्यादि यद्भगवता उक्तं वर्ज प्रत्यागमनं तत् पाद्मादिपुराशेषु स्पष्टं सदिपि (तदिपि ) श्रीभागवते त्वस्मिन्नन्नेव ज्ञापितम् । तदा नस्तव त्वदीयानामस्माकम् ॥ ९ ॥ १० ॥

इष्ट्या तान् प्रति दृष्टिक्षेपेगा ॥ ११ ॥ तां द्वारकां वर्गायति पश्चीभः॥ १२॥

## **सिद्धांतप्रदीपः।** का ५ की ती कुल अस्तर एक एक ५ ५ ५ की हो

कुरून्मधून्वादेशान् अपससारजगामतवतावकानांनोऽस्माकम्॥९॥ किंच तेवदनमपश्यमानाः कथंजीवेम॥ १०। ११॥ पुरीवर्णयतिमध्वितिपंचिभः गुप्तांपालिताम् ॥ १२ ॥

## माबादीका ।

हे अम्बुजाक्ष ? जब आप हम लोगी को छोडकर अपने सहदों के देखने की इच्छा से कुरुदेश वा मधुदेश में गमन करते हैं तब हम को एक एक क्षमा कोटि को के समान हो जाता है। हे अच्युत ? जैसे सूर्य के विना अन्धेकार में आणी को पल पल कठिन हो जाता है ॥ ९ ॥ है नाथ ? आप के चिरकाल विदेश रहने से शरगागत जनों का तृष्णा तथा सब ताप का शोषक सुंदर हास से शोभित पूर्व मनो

हर आप के श्रीमुख के दर्शन बिना हम लोग कैसे जीवेंगे॥ १०॥

भक्त वत्सल भगवान इन प्रजाओं के उदीरित वचनों को सुनते दृष्टि से सव पर अनुप्रह करते पुरी में प्रविष्ट हुए॥ ११॥ जो पुरी आत्मतुब्य बलवाले मधु भोज दशाह अहे कुक्कुर अन्धक और वृद्धिएओं से नागों से मोगवती के समान रक्षित है ॥ १२॥

## भी करी क्षण भी चन्त्रप्रसंभ भारतस्व । **भागी**नाम व्यक्ति विकार विकार स्वास्त्र स्वास्त्रस्य स्वयंत्रस्य स्वयंत्रस Reserved the contract of the c

सर्वेषु ऋतुषु सर्वे विभवाः पुष्पादिसम्पदो येषां ते पुरायवृक्षाः लताश्रमाः लतामगढपाश्च येषु तैरुधानादिभिः वृता ये पुषाकराः सर्वेषु ऋतुषु सर्वे विभवाः पुष्पादिसम्पदो येषां ते पुरावद्यानमः। आरामः क्रीड़ार्थं वनसः॥ १३॥ सर्वाति तेः श्रीः शीमा यस्या ताम । उद्यानं फलप्रधानमः। उपवनं पुष्पप्रधानमः। आरामः क्रीड़ार्थं वनसः॥ १३॥

गोपुरं पुरद्वारम । द्वारं गृहद्वारम । इतानि कीतुकैन उत्सर्वन तीरगानि यस्यां ताम् । गरुडादिचिह्नाकिता ध्वजाः जयप्रदश्रन्त्रांकिताः पताकाः चित्रामां ध्वजपताकानाम् अग्रेः अन्तःप्रतिहतः आतपो यस्या ताम् ॥ १७ ॥

सम्मार्जितानि नि सारितरजस्कानि महामार्गादीनि यस्याम् । महामार्गी राजमार्गीः । रथ्या इतरमार्गाः आपशाकाः परावदीययः। ध्वत्वराणि अङ्गनानि फलादिभिरुप्ताम् अवकाणिम् ॥ १५ ॥ १६ ॥

## श्रीवीरराघवः ।

सर्वर्तुषु । युगपित्रर्वतेषुयः सर्वोविभवः फलपुष्पादिसमृद्धिर्येषांतेषुगयावृक्षाश्चमन्दारपारिजातादयः लतास्तदधस्तनाभाश्रमाश्चयेषुते रुधानोपवनारामैः वृतानांपद्माकराणांश्चीःशोभायस्यांतत्रोधानंराक्षांकीढास्थानम्डपवनंवनसमीपस्थम्थारामःकृतकः ॥ १३ ॥

गोपुराकाराणांमार्गेषुकृतानिकौतुकानिमंगळार्थानितारणानिजम्वाम्रपछवादिनिर्मितानियस्यांचित्राणांध्वजानांपताकानांचाम्रेरन्तः प्रति इतोनिरस्तथातपोयस्याम् ॥ १४ ॥

संमार्जितामहामार्गादयोयस्यां महामार्गाराजवीथयः रथ्याउपवीषयः आपण्यकानिविण्जांक्रयविकयादिगृहाणिचत्वराणिगजाश्वा दिशालाः गन्धोदकैः सिक्तांफलादिभिरुप्तांविकीर्णाम् ॥ १५ ॥

प्रतिद्वारंदध्यादिभिजेलपूर्णकुम्भैः पूजाद्रव्यैः धूपैर्दीपैश्चालंकतामपवंभूतांपुरमितिपूर्वेगाान्वयः॥ १६॥

#### श्रीविजयध्वजः।

वसंतादिसर्वर्तृनांसर्वविभवेः पूर्णपुष्पसंपत्तिभिः पुरायेर्नृक्षे रश्वत्थादिभिन्धेत्रोधरुहाभिः कृष्पवल्लीभिर्वा । आश्रमेरुपवेद्दयस्थानैः । उद्यानैः प्रमदाभिः सहराज्ञांकीडाभूमिभिः उपवनैर्नगराज्ञातिदूरेआरोपितवृक्षसमुदायेरारामेः पुराद्वहिः रथ्योभयपार्श्वेरोपितवृक्षसमुदाये देतैः सर्वेर्तुसर्वविभवादिभिः धृतापद्माकराणांश्रीः शोभाययासातथोक्ताताम् ॥ ५९ ॥

गोपुरेषुपुरद्वारेषुअन्यद्वारेषुमार्गेषुकृतानिकौतुकतोरणानिउत्सवतोरणानियस्यांसातथाताम् अतः प्रतिहतः निवारितः भातपः यस्यां सातथाताम् ॥ ५० ॥

संमार्जितानिविधूतोपस्कराणिमहामार्गरथ्यापणकचत्त्वराणि यस्यांसातथात्। महामार्गोराजमार्गः रथ्यारथमार्गः । आपणाकानि कृणयविक्रयस्थानानिचत्वरंचतुष्पर्थगंधजलैश्चंदनादितोयैः सिक्तांप्रोक्षितांक्रमुक्फलपुष्पाक्षतांकुरैरुप्ताम् ॥ ५१ ॥

यहाणांद्वारिदध्यक्षतफलेक्षुभिः पूर्णाकुंभैर्बलिभिः पूजासाधनैर्घूपदीपादिकैरलंकताम्पविवधांपुरीप्राविद्यदितिपूर्वेगान्वयः ॥ ५२ ॥

## सुवोधिमी ।

एवमिश्रष्ठातृभिः सुरक्षितत्वसुक्त्वाविः शोभातिशयमाहसर्विर्विति सर्वेषुऋतुषुसर्वेभावाः पुष्पादिसंपत्तयोयेषाम्पतादशाश्चधमजन काश्चतेचतेवृक्षाः लताश्चतेषामाश्रयोयेषुतेउद्यानादयः उद्यानंपुष्पप्रधानवादिकाउपवनंफलप्रधानम्आरामाः क्रीडास्थानानिउद्यानानिउपव-नानिआरामाश्चतैःसर्वेतः आवृतांपद्माकराणांश्चियोयस्यांसापद्माकरश्चीः॥ १३॥

जानभारामाश्चरात्पताः नाट्या स्वाप्त्य प्रविद्धारंगोपुरम् अन्यानिद्वाराशिमार्गाः हट्टमध्योपिरभागाः तेषुकृतानिकौतुकतोरशानियस्यांवि-जपरिशोभातिशयमाहगोपुरेति पुरवहिद्धारंगोपुरम् अन्यानिद्वाराशिमार्गाः हट्टमध्योपिरभागाः तेषुकृतानिकौतुकतोरशानियस्यांवि-चित्राध्यकाः पताकाश्चगरुडादिचिहिताध्वजाः जययंत्रांकिताः पताकाः तेषामग्नेर्छवायमानविचित्रपटैः अंतः प्रतिहतोआतपो यस्यां मध्यान्देध्वजादेश छायाजनकत्वात् अग्नेरित्युक्तं यद्यष्यंतस्तापोनिवार्यतेतथापिशोभावहिरेवफलांशेनतूत्तरांगम् ॥ १४ ॥

अन्तःशों मामाहसंमार्जितेति महामार्गोराजमार्गः एथ्यान्याआपणः पर्यविधीयत्वरमङ्गणम्पतानिसंमार्जितानियस्यांगंधजलैः सिक्तां अन्तःशों मामाहसंमार्जितेति महामार्गोराजमार्गः एथ्यान्याआपणः पर्यविधीयत्वरमङ्गणम्पतानिसंमार्जितानियस्यांगंधजलैः सिक्तां संनिधानातपूर्वोक्तस्थानेषुअविशेषेणुसर्वत्रवामंगलार्थेफलानि पुष्पाणिअक्षताः यवांकुराश्चतैरुप्ताआञ्चफलसहितशाखाभूमोनिसातातथा पृष्पगुच्छानितयाअक्षताः उर्ध्वनिस्नाताः तथैवांकुराश्चततउप्तामित्युक्तम् ॥ १५ ॥

ं अंगालंकारमाह द्वारिद्वारीति चकारात् सभाहद्वनगरद्वारेष्विपगृहग्रहगुंमाग्रह्थाद्वष्टतयाथलंकाराभावात्संकानिवृत्त्यथैद्धिपात्रहथाः अक्षताराज्ञीभूताः फलानि च अतोनपुनराक्तिः इक्षवश्चउभयतः स्थापिताः तैः पूर्गाकुंभादिभिश्चअलंकृतामद्वारिद्वारिअलंकृतामितिवोधितं उत्सवार्थमैवंकरगुंस्पैवत् सर्वत्रभगवत्तेजसोव्याप्तत्वाद्वाअंतस्थैरिपभगवानंतर्नीतइति ॥ १६ ॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

सर्वेषु ऋतुषु सर्वविभवाः पुष्पादिसम्पदो येषां ते पुणयकपा दक्षाश्च स्ताश्च आश्चमाश्च तैः । उद्यानं फलप्रधानम् उपवनं पुष्पप्रधानम् आर्यामः कीड़ार्ये वनं तैर्द्वता ये पद्माकराः सरांसि तैः श्रीः शोभा यस्यां ताम् १३॥

गोपुरं पुरद्वारम् । द्वारं गृहद्वारम् । अन्तर्मध्ये मध्ये प्रतिहत् आतपः सूर्यज्वाला यस्याम् ॥ १४॥ प्रहामार्गाः राजमार्गाः । ११था इतरमार्गाः । आपग्रकाः प्राथवीथयः । चस्वराग्रि अञ्चननि । उप्ताम् अवकीर्गाम् ॥ १५॥ १६॥ निशम्य प्रेष्ठमायान्तं वसुदेवो महामनाः । ऋकूरश्चोग्रसेन श्च रामश्चाद्भुत विक्रमः ॥ १७॥

प्रद्युम्नश्चारुदेष्णश्च साम्वोजाम्ववतीसुतः ।

प्रहर्ष वेगोच्छशितशयना-सन-भोजनाः १८॥

वारगोन्द्रं पुरस्कृत्य पागिभिः स सुमङ्गलैः ।

शङ्खतूर्यानेनादेन ब्रह्मघोषेशा चाहताः ॥ १६ ॥

प्रत्युज्जग्मुरथैर्हष्टाः प्रगायागृतसाध्वसाः ।

वारमुख्याश्रशतशो यानैस्तद्दर्शनोत्सुकाः।

लसत्कुगडलनिर्भात कपोलवदन श्रियः ॥ २०॥

## सिद्धान्तप्रदीपः।

सर्वेर्तुसर्वेविभवाः पुरायवृक्षलताश्रमाःयेषुतैः उद्यानोपवनारामैः वृताः येपद्माकरास्तैः श्रीः शोभायस्यास्ताम् तत्रोद्यानंसर्वसा-धारगाम् उपवनंपृथक्षृयक्संगृहीतम् आरामःकीडावनम् ॥ १३॥

गोपुरागिपुरद्वाराणि द्वाराणिवेश्मद्वाराणिमार्गाःप्रसिद्धाः तेषु यथायोग्यंकृतानिकौतुकेन हर्षेगापुष्पपछ्ववस्त्रभौक्तिकादिमयानि तोरगानियस्यांताम चित्राणांत्रिकोणाद्याकाराणांगरुडादिचिन्हांकितानां ध्वजानांदीर्घाकाराणांपताकानांचाथ्रैरंतः प्रतिहतसातपो यस्यांताम ॥ १४ ॥

सम्यङ्मार्जितानिमहामार्गादीनियस्यांताम् तत्रमहामार्गाः राजवीषयः रथ्याउपवीथयः आपग्रकाः पगयवीषयः चत्वरागयंगना-निगंधज्ञकैः सिक्तांफलादिभिरुष्तांविकीर्गाम् ॥ १५॥

विलिभः पूजार्थैर्वस्तुभिः॥ १६॥

## भाषाटीका ।

सब ऋतुओं के सब संपत्ति के सहित पावित्र दक्ष लतायुक्तं आश्रम तथा पुष्पवाटिका क्रीडावन तथा उपवन कमलों करके युक्त सरोवरों की शोभावाली जो पुरी है ॥ १३ ॥

गोपुर ( वड़े फाटक ) द्वार और मार्गों में जहां कौतुक से तोरगा ( बंदनवार ) बांधे गये हैं । और चित्रविचित्र ध्वजाओं के अग्रों से जहां सूर्य का आतप निरस्त है ॥ १४ ॥

जहां सूर्य का जात । पार्टिंग । आप्राम्य (बाजार ) और चत्वर सब जहां सम्मार्जित हैं । सुगंध जल जहां सेचन कियागया महामार्ग (सड़क) रथ्या (गलियों ) आप्राम्य (बाजार ) और चत्वर सब जहां सम्मार्जित हैं । सुगंध जल जहां सेचन कियागया है फल पुष्प अक्षत अंकुर जहां आरोपमा किये गये हैं ॥ १५॥

ह जल उन्हों के द्वार पर दिध अक्षत फल इक्षु पूर्ण कुम्भ विल और धूप दीप से जो पुरी अलंकत हैं (उसमें भगवान प्रविष्ट हुए— यही सम्बन्ध यहांतक है)॥ १६॥

## श्रीधरखामी

प्रेष्ठमायान्तं निशम्य श्रुत्वा वसुदेवादयः प्रत्युज्ञग्मु रिति चतुर्घेनान्वयः॥ १७॥

प्रहुषविगेन उच्छिशतानि उछिथितानि शयनादीनि यस्ते । शश प्छतगतावित्यस्मात् ॥ १८॥

वारगीन्द्रं मङ्गलार्थे पुरतः कृत्वा । ससुमङ्गलैः सुमंगलं पुष्पादि तद्युक्तपागिभिः । ब्रह्मघोषो मन्त्रपाठः । प्रगायेन स्नेहेन आगतं साद्यसं संभ्रमो येषां ते ॥ १९ ॥

साध्वस सम्भा निर्मा । त्या वारमुख्या नटादयश्च प्रत्युज्जग्मुः । त्यात्रकुंडलैर्निर्भातानि यानि कपोलानि तैर्वदनेषु श्रीः (शोभा) यासां तास्तथा वारमुख्या नर्त्तक्यो वेदयाः ॥ २०॥

दीपनी।

संम्रमस्वरा इत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥

प्रेष्ठंनिरतिशयप्रियतमं भगवंतमायांतंनिशम्याकर्यमहामनावसुदेवः अक्रूरादयश्च ॥ १७॥ प्रकृष्टोहर्षस्तस्यवेगेन औत्कराठचेनउच्छुसितानिव्युदस्तानित्यक्तानिइतियावत्रशयनादीनियैस्तयाभूताःसंतः॥ १८॥ वारगोन्द्रंगजेन्द्रंपुरस्कृत्यपुरोवस्याप्यससुमंगलैः स्वस्तिवाचनसहितैः ब्राह्मणानांशसानांतूर्याणांच निनादेनब्रह्मघोषेगाचसहारताः

्रे<mark>ब्रह्मन् ? प्रगायेनहेतुना</mark>आगतंसाध्वसम्भयंयेर्षातथाभूताः संतोरथैर्गमनसाधनैः प्रत्युज्ञग्मुरभिमुखंययुः तथावारमुख्याः गग्गिकाश्रेष्ठा

अ लसद्भ्यांकुगडलाभ्यांनिर्भातौकपोलौयेषुतेषांवदनानांश्रीःशोभायासांतास्तिद्दिस्थयायानैर्गमनसाधनैःप्रत्युज्ञग्मुः॥२०॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

वसुदेवाक्रूरादयः आयांतंकृष्णांनिदाम्यूश्रुत्वाकरघृतमीकिकपूर्णघटंवारगोद्रंपुरस्कृतयपुरस्कृतेवीहाणेश्रसार्धरथैः साधनैः प्रत्युज्ञग्मरि त्यन्वयः किविशिष्टाः प्रहर्षवेगेनउच्छशितानिसहसापरित्यक्तानिशयनासनभोजनानियैस्तेतथा तूर्यकाहलं ब्रह्मघोषः वेदघोषः मय्यासन्नेऽपिमां ¦ नाभिजग्मुरितिहार्दोभावःसाध्वसंप्रणयेनागतंसाध्वसंयेषांतेपौरावारमुख्याःनर्तकीषुर्गाणकासुश्रेष्ठाःतस्यकृष्णस्यदर्शनोत्कंठावत्यः चलिद्रः कंडलैर्निभीतानिकपोलानियेषांतानितयोक्तानिचलःकुंडल निर्भातकपोलानिचतानिवदनानिचलकुंडलनिर्भातकोल वदनानितेषांश्रीः यासां तास्तथोकाः ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

# सुवोधिनी।

येषांदरीनार्थस्वयंगच्छेत्तेपित्रादयः स्वयमागताइतिसंबंधज्ञानापेक्षयाभगवद्धचानमेवतेषांविष्ठष्टमिति प्रदर्शयन्नाहानिशम्येतिसाधैंसि भिःअतएवसंवंधिशब्दमनुक्त्वाप्रेष्ठमित्युक्तंमनसोमहत्त्वंदेहादि विस्मरग्रापूर्वकभगवद्ग्रहगात्उत्रसेनोराजामक्तेर्मुख्यत्वान्नलौकिकमहत्त्वं कमितयामकं सर्वत्र चकारः सद्वर्गप्राह्कः ननुरामस्यकथमुद्रमनंजामात्राद्विधंकृत्वाभगवतः समागतत्वात् इत्याद्यंक्यनायरामः प्राकृतः भगवतद्दवअस्याप्यद्भुतएवपराक्रमः कौरवेषुस्नेहंख्यापयन्गदायुद्धादिकमपि शिक्षयन्तदिष्टमिववदन्दुर्योधनादीन्स्वयमेवमारितवानिति युद्धवोधनात्प्रतीकारादवगम्यतेलोकप्रतीतिस्वन्यथातद्युक्तमेवेत्याहअद्भुतविक्रमइति ॥ १७॥

जांववतीसुतइतिस्त्रीगामिवालंकरगामस्यप्रियमितियत्रताहशालंकारेगागच्छतितत्रव्यासस्तं तथाविशिनिष्ट "पितासंबंधिनश्चैवपुत्राश्च परिकीर्तिताः भगवदागमनंश्रुत्वायोहर्षोजातः तस्यवेगेनजातेनमहाप्रयत्नउच्छ्वसिताः श्वासवत्यकाः गमनव्यतिरिकाथन्योत्सवस्थाः

श्चयनास्त्रीजनादयः तमः सत्त्वरजोरूपायैः॥ १८॥

मङ्गळार्थवारणेंद्रं हस्तिश्रेष्ठंपुरस्कृत्यसुमंगळसाहितेत्राह्याणेरितियथैतेषांतदेकमनस्त्वंतणाबाह्यणानामिपविश्वापितंभगवतासहसर्ववाद्या नांसमागमनेऽपितूरीशंखयोर्मगलार्थ सन्मुखतयानयनं नतुस्वमहत्त्वख्यापकंमंगलघोषोवेदपाठः चकारात्मङ्गलाष्टकादिआहताः पूर्वमेव

सन्मुखतयागताः ॥ १९ ॥

रथयानेर्गमनेहेतुः प्रग्रायेनआगतसाघ्वसाः प्रग्रायेनआगतंसाध्वसंभयादियेषांठौकिकपदार्थसहितभगवत्स्मरग्रोहर्षः पश्चात्केवलस्म र्ग्रोसाध्वसिमतिविवेकः केवलवैषयिकसुखजनकाः अंतर्वहिभेदेनयेजीवाः तेतुभगवंतंप्रत्युज्जग्मुरित्याहवारमुख्याश्चितिवराणांसमूहोवारं तदेवमुख्यंयासामितिवेदयाः चकारादन्याअपिप्रागुक्ताः तास्ववांतरभेदोऽस्तीतिख्यापनायशतशद्रत्युक्तंतासामपियानानियानानांप्रयोजनमाह तद्दर्शनोत्सुकाइति वाहुल्येननगरयानानिस्वस्थानस्थितावपिद्शेनं संभवतितथाप्युत्सुकतयागमनं पुरस्कारार्थमंगलत्वख्यापनायतासामलं कारवर्गानं लसत्कु गडलेतिलसत्कु गडलैः नितरां भाताः कपोलयुक्त वदनानां श्रियोयासाम् ॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

प्रेष्ठभायान्तं निराम्येति वन्दिपर्यन्तम् वर्त्तनीयम् अतः प्रेष्ठपदं कचिद्योगार्थेन कचन रूढया च सङ्गमनीयम् ॥ १७॥ प्रहर्षवेगेन उच्छिशतानि उछिङ्घितानि शयनादीनि यैः। शशप्छतगती ॥ १८॥ साध्वसं सम्भ्रमः॥ १९॥ २०॥ २१॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

वंधूनांपीरागां च भगवतिस्नेहाधिक्यमाह् निशम्येतिसाधैः पंचिमः॥ १७॥ प्रहर्षवेगेनोच्छसितान्युर्छिघतानिश्चयनादीनियैस्तेशशप्लुतगतीधातुः॥ १८॥ वार्गोद्वंगजराजम् ॥ १५॥

नटनर्तकगन्धर्वाः स्नुतमागध्वन्दिनः । गायन्ति चोत्तमश्लोकचिरतान्यद्भुतानि च ॥ २१ ॥ भगवांस्तत्र वन्धूनां पौराणामनुवार्तनाम् । यथाबिध्युपसङ्गन्य सर्वेषां मानमाद्धे ॥ २२ ॥ प्रह्वा-भिवादना-श्लेष-कर-स्पर्श-स्मिते-च्चगौः । त्र्याश्वास्यचाश्वपाकेभ्यो वरेश्वाभिमतैर्विभुः ॥ २३ ॥ स्वयंचगुरुभिर्विभैः सदारैः स्थविरेरिप । त्र्याशीभिर्युज्यमानोन्यैर्वन्दिभिश्वाविशत्पुरम् ॥ २४ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

प्रगायागतसाध्वसाः स्नेहागतसंभ्रमाः लसद्धिः शोभितैः कुंडलैर्निभीतानिकपोलानितैर्वदनेषु श्रीः शोभायासांताः ॥ २० ॥ २१ ॥

#### भाषाटीका।

प्रिय श्रीकृष्ण को आते सुनकर, महा मना वसुदेव. अकूर. उग्रसेन. अद्भुत विक्रमराम. प्रद्युम्न. चारुदेष्ण. जांम्ववती सुत सांबेय स व आनंद के वेग से भोजन शयन आसन छोडकर मंगलार्थ गजेन्द्र को आगे छ मंगल पुष्पादि पाणि ब्राह्मणों के साथ. शंख तुर्द के श व्द और वेद शोष से आदर सिंहत आनंदित प्रण्य से जिनको साध्वस आगया है रथों में वैठकर प्रत्युद्धत हुए ( भगवान के छेने को प्र त्युद्धमन किया ॥ १७ ॥ १८ ॥ १८ ॥

हुन्या दर्शन के उत्सुक होकर यानों में बैठकर. कुग्डलां की दमक से चमकते कपोलों से मुख की शोमा बढातीं सैकडों वारमुख्याँ

(वेड्या) ओं ने भी प्रत्युद्गमन किया॥ २०॥

#### श्रीधरखामी।

नटा नवरसाभिनयनचतुराः तालाद्यनुसारेगा नृत्यन्तो नत्तेकाः । गन्ध्रद्याः गायकाः। "स्ताः प्रौराणिकाः प्रोक्ता मागधा वंदादांसकाः ॥ वन्दिनश्चामलप्रज्ञाः प्रस्तावसद्दशोक्तयः अद्भुतानि चेति चकारस्य वन्दिनश्चेत्यन्वयः । ते सर्वे गायन्ति चेति ॥ २१ ॥

यथाविधि यैः सह यथोचितं तैस्तथा समागमं कृत्वा सर्वेषां मानं कृतवानित्यर्थः ॥ २२ ॥ तदाह प्रह्णेति । प्रह्णत्वं शिरसा नतिः । अभिवादनं वाचा नतिः । आश्वास्य अभयं दत्त्वा । श्वपाकादीनभिव्याप्य वरेस्सीष्टदानेश्वः

मानं कृतवान् ॥ २३ ॥ अन्यैश्च वन्दिभिश्च ॥ २४ ॥

# श्रीवीरराघवः ।

नटादयोऽद्भुतानिउत्तमश्लोकस्यभगवतश्चारितानिविरागुः तत्रनटाश्रभिनेतारःनर्तकाः स्त्रीग्रांमृत्यशिक्षकाः गंधर्वागायकाः सूताः पौरा णिकाः मागधावंशाविलपाठकाः वंदिनः भंगलवादिनः स्तोत्रपाठकाश्च ॥ २१ ॥

तत्रभगवान्यथाविधिनमस्कारालिंगनकरस्पर्शस्मितावलोकनादिभिर्यशायाग्यंवसुदेवादिभिरुपसंग्रस्यसर्वेषां पौराणामनुवितिनाभृत्या नांचमानमाद्धेसन्मानचकार विश्वभगवान्श्वपाकपर्यन्तेभयः चतुर्थम्तिमदम्आश्वासोपच्छंद्याभिमतेर्वरेमानमाद्धेहत्यन्वयः॥२२।२३॥ स्वयंचसदारेर्गुचभिः स्थविदेर्नुद्धैवित्रैरन्यैर्वदिभिश्चकृताभिराशीभिश्चयुज्यमानःपुरमाविद्यातः॥२४॥

# श्रीविजयध्वजः।

अभिनयेनशृंगाराद्यनुकरणकर्तानदः गीतवाद्यानुसारेणनृत्यकर्तानर्तकः षड्जादिकुशलाः गंधवीः पुराणाद्यणेनुसारेणस्तावकाः म्ताः पराक्रमांकितस्तुतिकर्तारोमागधाः मंगलपाठकावदिनः ॥ ५७ ॥ तत्रतेषुवसुदेवादिष्वागतेषुसासु श्रीकृष्णोभगवान् सर्वेषांबंध्वादीनांवश्राविध्युपसंगम्य मानमाद्वभेचकारेत्यन्वसः ॥ ५६ ॥ तत्रतेषुवसुदेवादिष्वागतेषुसासु श्रीकृष्णोभगवान् सर्वेषांबंध्वादीनांवश्राविध्युपसंगम्य मानमाद्वभेचकारेत्यन्वसः ॥ ५६ ॥ किः प्रवहादिभिः ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥

# राजमार्ग गते कृष्णे द्वारकायाः कुलस्त्रियः। हुम्याग्यारुरुहुर्विप्रास्तदीचगामहोत्सवाः॥ २५॥

# सुवोधिनी।

नदाः शास्त्रानुसारमर्त्तकाः गंधर्वागायकाः सूताः पौराणिकाः मागधावंशशसकाः परिहारावंदिनोवैतालिकाः प्रस्तावसदशोक्त यः सर्वेऽपिगायंतः चक्रारात्स्मरंतश्चअद्भुतानांकथनंस्पष्टतयालोकेवक्तुमयुक्तंतदपिगायंतद्दतिचकारार्थः॥ २१॥

लौकिकप्रभुवत् ऋष्णेगतानांनपाक्षिकफलत्वमापितुसर्वफलमित्याहभगवानितिसर्वेहिसमुदायनित्रविधाबांधवाः पुरवासिनः सेवकाश्चे तिपुरवासित्वमविशिष्टमितिमध्येवचनंतेषांसन्मुखतया ॥ २२ ॥

यथागमनमुचितंतथाकृतवान् तदाह प्रह्वेतिप्रह्वोनम्रीभावः पित्रादिषुअभिवादनंब्राह्मग्रोषुआरक्षेषोमित्रेषुकरस्पर्शोमुख्यसेवकेषुस्मितेक्ष-ग्रानिसर्वत्रआश्वासनंस्वविरहखेदनिराकरग्रोनश्वपाकाश्चांडालावराःसाधनेनाप्राप्याविषयाःचकारादन्येविषयाःसर्वेदानेहेतुःविभुरिति ॥२३॥

ननुजीवेश्यःकथंभगवान्विषयान्प्रयच्छिति तत्राहस्वयमिति स्वयंचतैर्मानितःस्वयंसंमाननार्थमेवतेश्यःप्रयच्छतीतिभावः गुरवोविष्ठा अन्येचसदारैरितिसर्वत्रविशेषग्रंस्यविरेरन्यैरिपवृद्धेः आशीर्भियुंज्यमानः कर्तृकरण्योस्तृतीयेसन्तोषादिभनंदनस्वरूपाआशीरन्यैरिपवन्धु भिः कृतेत्याह अथवा नूतनपाशवद्धेः पुत्रश्वग्रुराद्दिभिः पूज्यमानःपुरमाविशत् अत्रक्षियेवसर्वोत्कृष्टेतिनव्यावर्त्तकत्वेन निरूप्यते केवस्रं भक्तिप्रधानत्वाश्वस्तोत्रतत्वादिनिरूपग्रम्॥ २४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्शी

नटा रसाभिनयचतुराः । नर्त्तकाः संगीतोक्तविविधतालोद्धाटनेन नृत्यन्तः । गन्धर्वोः गायकाः । सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा वैद्यशंसकाः । वन्दिनस्त्वमलप्रज्ञाः प्रस्तावसदक्षीक्तयः ॥ २१ ॥

यथाविधि यथोचितम् ॥ २२ ॥

तदेवाह । प्रहृत्वं शिरसा नतिः पित्रादिषु गर्गादिषु च । अभिवादनं बाचा नतिः यदुवंश्येषु स्थविरेषु।आश्वपाकेश्यः स्वपाकपर्यतानपि जनान आश्वास्य अभयं दत्त्वा । वरैरभीष्टदानैश्च ॥ २३ ॥

गुरुभिः पितामहादिभिः॥ २४॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रभगवश्वेष्टितमाह भगवानितित्रिभिः अत्रयथाविधीतिपदंसर्वत्रयोजनीयम् भगवान्त्रभुः तत्रतिस्मिन्समागमेबंघूनांवसुदेवा दीनाम् आश्वपाक्तेम्यः सर्वेषांपौराणां च यथाविधिसंगम्ययेनयथोचितंतेन तथासमागमंकृत्वा राष्ट्राविधिआश्वास्ययथाविधिप्रह्लादिभि इभिमतैर्वरिश्चमानमादधेसन्मानं चकारइतिद्वयोरन्वयः॥ २२॥

प्रह्नंसिरसाऽभिवादनंवाचाचनमनम् आस्रेषः आर्छिगनम् ॥ २३ ॥ अन्येरनुकैश्च ॥ २४ ॥

#### भाषादीका ।

नट नर्तक गंधर्व पौराणिक वंश कहनेवाले बंदीजन यह सवमिल के उत्तम स्रोक के अद्भुत चरितों को गातेभये॥ २१॥ भगवान ने वहां सब से यथा विधि मिलकर वंधु पुरवासी और अनुवर्तिओं का सब का सन्मान किया॥ २२॥

किसी को प्रवह (शिर से प्रणाम) कर किसी को अभि वादित (वाणी से प्रणाम) कर किश्री को आर्लिंगन कर किसी से कर स्पर्श कर किसी की ओर हंसकर। आचांडाल सब को अभिमत वर देकर सन्मान किया॥ २३॥

स्तयं गुरुजन सस्त्रीका बाह्यमा और दृक्षों की आशीर्वादों से अभि युज्य मान होते वंदीजनों की आशिष सुनते पुर में प्रविष्ट हुए ॥ २४ ॥

श्रीधरस्नामी।

नित्यं निरीत्तमाणानां यदिष द्वारकौकसाम्। नैव तृप्यन्ति हि दशः श्रियो घामाङ्गमच्युतम् ॥ २६ ॥ श्रियो निवासो यस्योरः पानपात्रं मुखं दृशाम् । बाह्वो छोकपालानां सारङ्गाणां पदाम्बुजम् ॥ २७ ॥

#### श्रीधरखामी।

यद्यस्मान्नित्यं सदा अच्युतं निरीक्षमाणानामपि दशो नैव तृष्यन्ति अत आरुरुद्धः । कथंभूतं श्रियः शोमाया धाम स्थानम् अनु यस्य तम् ॥ २६ ॥

एतदेवाभिनयेनाह । श्रियो लक्ष्म्याः यस्य उरः वक्षो निवासः । यस्य मुखं सर्व प्राणिनां दशां सौन्दर्यामृतपानाय पात्रम् । यस्य वाहवो लोकपालानां निवासः । सारं गायन्तीति सारङ्गा भक्तास्तेषां यस्य पदाम्बुजं निवासः । तं निरीक्षमाणानां दश इति पूर्वे ग्रान्वयः ॥ २७ ॥

#### दीपनी।

लसत्कुंडलैर्दीप्तकुंडलैरित्यर्थः ॥ २१ ॥ ऋद्वारवीरवीभत्सरौद्रहास्यभयानकाः । करुणाङ्गुतशान्ताश्च नव नाट्यरसाः स्मृताः इति रत्नकोषः ॥ २२—३२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

द्वारकायाराजमार्गेकृष्णेगतेसिततत्रतत्रियः तस्यकृष्णस्येक्षणेमहानुत्सवोहर्षोयासांताहेविम १ हर्म्याणिसौघान्यारुरहुः ॥ २५ ॥ नित्यंनिरीक्षमाणानांद्वारकोकसांद्वारका ओकः स्थानंयासांतासांस्रीणां हशोनवितुष्यंतितस्मात्तदीक्षणमहोत्सवाहर्म्याणिरुरहुरित्यर्थः हिशब्देनातुष्तेः प्रसिद्धिर्घोत्यते ॥ २६ ॥

उचिताचेषाव्युत्पत्तिरित्यभिप्रायेणाहिश्रियइतियस्येत्यस्यउरोमुखवाहुपदाम्बुजैः प्रत्येकमन्वयः यस्योरः श्रियोनिवासः स्थानम् उरोलावण्यानुभवायतदेषवासमाश्रितवतीश्रीरित्यभिप्रायः यस्यमुखंदशांपद्यज्ञनचक्षुषांपानपात्रंतल्लावण्यरसपानपात्रं यस्यचिद्वाहवो लोकपालानांपानपात्रंतल्लावण्यरसपानपात्रं यस्यचपदाम्बुजंसारंगाणांसारंगच्छतांसारप्राहिणांमुनीनांतल्लावण्यपपानपात्रं यस्यचपदाम्बुजंसारंगाणांसारंगच्छतांसारप्राहिणांमुनीनांतल्लावण्यपपानपात्रं यस्यचपदाम्बुजंसारंगाणांसारंगच्छतांसारप्राहिणांमुनीनांतल्लावण्यपपानपात्रं सारंगायन्तीति सारानाः सारतमार्थवकारद्दतिचतमच्युतंनित्यंनिरीक्षमाणानामपिदशोनवितृप्यंतीतियुक्तमेवत्यर्थः॥ २७॥

#### श्रीविजयध्वजः।

हर्म्याशिसीधानितदीक्षणंतस्य श्रीकृष्णस्यद्शेनमेवमहानुत्सवोयासांताः तथोक्ताः ॥ ६१ ॥
हष्टचरस्याद्वष्टपूर्वदर्शनवद्दर्शनेकिमित्युत्कंठातिशयदितत्रशह नित्यमिति श्रियोधामस्थानमंगंवपुर्यस्यसत्यातम् अच्युतंनित्यंनिरी
क्षमाणानांद्वारकानिवासिनामपिदशोनिवत्यंतिपुनःपुनर्दृष्ट्वाप्यलंदर्शनेनेतिभावंनप्राप्नुवंतियस्मात्तरमाद्यक्तउत्कंठातिशयोहीत्यन्वयः ॥६२॥
नैतदाश्चर्यमित्याह श्रियदित यस्यहरेः उरः वक्षस्थलंश्चियोलक्ष्म्यानिवासःस्थानं यस्यमुखंद्रष्टृणांलावणयंपातुंपानपात्रं यस्यवाह
वोलोकपालानांबलस्थानं यस्यपदांबुजंसांरगाणांसारप्राहिणांब्रह्मादीनांपरायणम् ॥ ६३॥

# क्रमसंदर्भः।

श्चियः प्रेयस्याः । याः सर्वेषामेक तत्तियवर्गागां स्वाश्चक्ष्मँषि तासाम् । लोकपालानां पाल्यानाम् । सारंगागां सर्वेषामेव मकानाम् निवास आश्चयः यथास्वं भावोद्दीपनत्वात् ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ३१ ॥

# सुबोधिनी।

मर्यादास्थितस्त्रीणांकृत्यमाहराजमार्गमिति स्त्रियोऽपिमार्गस्थाःमैगवानपिमार्गस्थइतिदर्शनमुचितमितिमाघः विषा! इतिसम्बोधहस्यमाः वताद्वारकायामपिसर्वेमार्गारिक्षताइतिक्षापियमुतदीक्षणमेवमहाजुत्सवीयासाम् धनेनस्त्रवीभरणभूषितत्वस् अन्यदर्शनस्त्रदीषा माबस्य निवारितः॥ २५॥

# सुवोधिनीः।

मनुदर्शनस्यक्षयमुत्सवत्वंनित्यत्वादित्याशंक्षयाहिनित्यमिति नित्योत्सवत्वाद्भगवतः नमगवद्दर्शनस्यधारावाहिकज्ञानत्वम् अलौकिका श्रेबोधात् पूर्वपूर्वदर्शनस्यतुब्युत्पादकत्वमेव निवयत्वंभगवतोविषयत्वाभावात् विषरतुविषयसामर्थ्यादीषधवत् अतपवतदापितृप्ति भगवद्द्रश्नेवोषात्परमग्रहणं यथामहादोषेऔषधमपिग्रहीनुंनहाक्यते तत्रहष्टतेजस्त्वात् विषयदोषेग्रीवदुष्टतापरमार्थनिर्णायधमंग्रानेतुक कृष्यमेसम्बन्धेप्रपि सचविषयदोषोद्धारकावासिनांनास्तीत्याह द्वारकोकसामिति अनेनेवस्वदेशेषानिवारिताः "परांचिक्षानिव्यतृणादि" त्यौत्पत्तिकदोषोभगवद्द्रश्नेनेन निवार्यते अनन्यशक्यत्वात् अभ्येतुद्धारकादिभिरितिनिर्णयः ननुमगवतोरसात्मकत्वात् अमृतौष धवत् कर्यनोभयसाधकत्वंतत्राह निवत्यतितिविशेषण्यनतृष्यन्तिहियुक्तोयमर्थः यदाहिदृश्यतेभगवान्तदातृष्ताभवते द्वितीयक्ष्यणेपूर्व नष्टद्रश्नेनेवद्येक्त्पादितत्वात् यद्यपिविषयः रुचिमुत्पादयति तथापिक्षानद्वारेतिक्षानन्तुविषयद्वारातृष्तिजनयतीतिवृष्तौविषयप्रधान्यः अत्रोविषयात् क्षानंप्रवलमिति निवशेषेणतृष्यनितिविशेष्यः दश्वतिस्रीवहुत्वानिदेशाद्यिपकस्माद्भगवद्रपाद्वितृष्तिः सूचिता किष्य यद्यप्येकंक्षपमनुभवयोग्यंतदिपिश्रयोधामांगंलक्ष्याः स्थानक्ष्यांगम् अतस्तयासिहतः मान्यस्रीग्रात्वित्वनकोभवति क्षिच यद्यिमम् प्रविद्यदित्रस्यान्तिक्रयः तदत्रप्रकृतेनास्तीत्याह अच्यतंयस्यअतोविषयविचारेग्रापिद्दिनांनतृष्तिसभावना॥ २६॥

नन्वंगांतरदर्शनेनतृण्यन्ताम् उरःस्थानमात्रंहिल्हस्याः तत्राह श्रियोनिवासद्दित कोऽपिभागस्ताद्दशोभगवितनास्तियोल्हस्यादिभिर्नपरि
गृहीतः तत्रोपरिभागोल्लस्येवगृहीतःस्थानदर्शनाभ्यांतदाह श्रियोनिवासः यस्यउरः वसस्थलंतस्यापवद्दशां भगवन्मुलंपानपात्रल्हस्याः
स्वरूपेनिविष्टत्वात् भिन्नतयास्थित्यमावात् भोकृत्वाभावात् लक्ष्मीनयनाभ्यां निर्गताद्द्ययप्वभोकृतयाजातः तासांकरणापक्षायायत्रव
लाव्ययामृतं तिष्ठतितदेवकरणं तत्रमुल्वस्यपानपात्रत्वं श्रुतिसिन्धम् "अवीग्विल्लश्चमसऊर्ध्वेषुभू"मितिश्रुतेः पात्रपद्मयोगाद्विहितत्वंवहूना
मेकपात्रत्वात्तासामेवत्वित्वं र्वुलंभाकुतोऽन्यासामितिश्रुतेभावः तिर्हेशंगांतरेद्दिर्धिनेवश्चतामित्याशंक्याद्द्यात् वात्रित्वाह्यः आलिगनयोग्याः
परमन्येः पुरुवैराकान्ताः नचतेदूरीकर्त्तुशक्यावहुत्वात् पुरुषत्वाश्चपकास्त्रीयत्रीवत्रपत्रमास्थानद्वयेतिष्ठति तत्रलेकपालाः कथं
शक्याः आवश्यकाश्चते लोकपालत्वात् तिर्हिततोष्यवागवयवेषुद्दिः पातनीयेत्याशंक्याद्दसारंगाणामितिमध्येथवयवयवास्तेवस्रादिभिरेव
वेष्टिताः दर्शनयोग्याप्यनभवंति अतःपरमवशिष्यतेचरण्णद्वयंतत्राप्येकश्चरण्णवर्णात्रवावद्यादिभिरेव वेष्टिताः दर्शनयोग्याप्यवनभवंति अतःपरमवशिष्यवेचरण्णद्वयंतत्राप्यकश्चरण्णवर्णात्रेवास्यते
गंगयाचगृहीतः ब्रह्यांडिवलेतिष्ठतिश्चरयाजलेनब्रह्यांडप्रणेनसर्वनाशःस्यात् अथावशिष्यत्वर्यस्यासेनवातेकर्मपत्वातिसरः तस्यसमुद्दः सारंपससमुद्द इतियावत् अक्षरव्यत्यासेनवातेकर्मपत्वातेसरंभावंतसुदर्शनंवा
सदाचारः कर्मनिष्ठाः पुनश्चसरतीतिसरः तस्यसमुद्दः सारंपससमुद्द इतियावत् अक्षरव्यत्यसिनवातेकर्मपत्वातेसरंभावंतसुदर्शनंवा
कालेनभीताः संतःगच्छितिगायंतिवातेसारंगाः सात्यताः सर्वेषामेकशेषः समानक्षरवात्सर्वेणवरसार्थेनः तस्मात्दर्शीनास्वतंत्रस्थाना
भावावत्रिक्युक्तर्यथः॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

हे विप्राः ?॥ २५ ॥ यद्यस्मान्नित्यं निरीक्षमागानामपि दशो नैव तृष्यन्ति अतः आरुरुद्धः । अच्युतं कीदशं श्रियः शोभाया धाम स्थानम् अङ्ग राम सम्राप्त १ २६ ॥

यस्य तम् १ २५ " यस्य मुखं पानपात्रं सोन्दर्यामृतपूर्गी दशां निवासः । इंद्रादीनां लोकपालानां यस्य वाहवो निवासः तद्वलमाश्रित्येव असुरेश्यो निर्भ-यास्ते सुखं वसन्तीति भावः । सारं तद्यशो गायंतीति सारङ्गा भक्तास्तेषां श्लेषेण भ्रमराणां पदाम्बुजं निवासः । तं निरीक्षमाणानां दश इति पूर्वेणान्वयः ॥ २७ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

तस्यकृष्णस्येक्षणेमहानुत्सवोविनोदोयासांताः ॥ २५ ॥ कुलक्षिबोऽपिद्दम्योगयारुरुहुरित्युक्तंतत्रहेतुमाह नित्यमिति द्वाभ्याम् भियोरमायाः धामवासस्थानमंगंयस्यतम् ॥ २६ ॥ यस्योरः श्रियः वाहवोलोकपालानांसारंगच्छतांसिद्धांतगानांपदांबुजंबासोमुखं च सर्वहशांपानपात्रंतमच्युतामितिपूर्वेगान्वयः ॥ २७ ॥

#### भाषाटीका ।

जिस समय श्री छच्णा राज मार्ग में चलने लगे तब द्वारका की कुल स्त्री उन के मुख निरीक्षण को महोत्सव मान महलों पर

क्यों चढ़ीं तहां उत्तर यद्यपि द्वारका वासी नित्य दर्शन करते हैं तथापि श्री शोमा का निवास जिसमें वह अच्युत के अंग को देख के से उनके नेत्र तृष्त नहीं होते हैं ॥ २६ ॥

न स उनमा गर् है जिनके वक्षस्थल में लक्ष्मी का निवास है जिनका मुख देखने वालों का लावगय पान का पात्र है जिनके सजा होकपालों क्योंकि जिनके वक्षस्थल में लक्ष्मी का निवास है जिनकों सुजा होकपालों के आश्रय हैं जिनके चरण कमल भक्त भ्रमरों के आश्रय हैं जिन श्रीकृष्ण के दर्शन से कैसे लुप्ति होंगी ॥ २७॥

सितातपत्र यजनेरुपस्कृतः प्रस्नवर्षेरिभवर्षितः पणि ।
पिशङ्गवासा वनमालया बभौ घनो पणार्कोड्डपचापवैद्युतैः ॥ २८
प्रविष्टस्तु गृहं पित्रोः परिष्वक्तः स्वमातृभिः ।
ववन्दे शिरसा सप्त देवकीप्रमुखास्तदा ॥ २६ ॥
ताः पुत्रमङ्गमारोप्य स्नेहस्नुतपयोधराः ।
हर्षविह्विकतात्मानः सिषिचुर्नेत्रजैर्जलैः ॥ ३० ॥
ग्रासादा यत्र पत्नीनां सहस्राणि च षोडश् ॥ ३१ ॥

#### श्रांधरखामी।

सितरातपत्रव्यजनैः उपस्कृतो मण्डितः । अर्कश्च उडुपो नक्षत्रसहितश्चम्द्रमाश्च चापमिन्द्रधनुश्च वैद्युतं विद्युत्तेजश्च तैः । अर्कश्कत्र स्योपमानम् । नक्षत्राम्या पुष्पवृष्टेः । चन्द्रः परिश्चमकृतमंडलाकारयोश्चामरव्यजनयोः । चापं वनमालायाः । विद्युत्तेजः पिशङ्गवाससोः अद्भुतोपमेयम्—यिद् धनस्योपरि सूर्यविम्वम् उभयतश्चनद्रौ सर्वतो नक्षत्राणि मध्ये च मिलितं चापद्वयं स्थिरश्च विद्युत्तेजः भवेत् तिर्दे स धनो यथा भाति तथा हरिर्वभावित्यर्थः ॥ २८ ॥

देवकीप्रमुखाः सप्त ववन्दे इति मातृसोद्योदादरविशेषशापनार्थमुक्तम् । अष्टादशापि पितुर्वसुदेवस्य भार्यो मातृतुल्यत्वान्नम-

सहस्राधि च षोड्शेति चकारादष्टोत्तरशताधिकानीति क्षेयम् ॥ ३१ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

सितेति पथिसितातपत्रं चव्यजनेचतैरपस्कृतः सितातपत्रेगावृतः व्यजनाश्यांचवीष्यमानइत्यर्थः पिशंगेवाससीयस्यसभगवान् वनमालयावभी क्रयंयथाकीदिभिः युगपत्समुदितैः घनीनीलांबुदस्तद्वत् अभूतोपमेषानद्यकोंबुपयोःसद्दावस्थानमस्ति तत्राकीदि स्थानीयामुकुटवनमालावस्त्रभूषगादयः विद्युदेववैद्युतमुबुपश्चन्द्रः यद्वाउडुपग्रहग्रांगुरुगुक्रयोरन्येषांनक्षत्राणामप्युपलक्षग्रांतत्रोडुपस्थानीयं स्थानीयामुकुटवनमालावस्त्रभूषग्रादयः विद्युदेववैद्युतमुबुपश्चन्द्रः यद्वाउडुपग्रहग्रांगुरुगुक्रयोरन्येषांनक्षत्राणामप्युपलक्षग्रांतत्रोडुपस्थानीयं स्थितातपत्रं गुरुगुक्रस्थानीयव्यजनेनक्षत्रस्थानीयानिप्रस्नानिद्रम्द्रमितिस्तातपत्राद्युपस्कृतत्वादिविशेषग्रसामर्थ्यात् ॥ २८॥

ततस्तुपित्रोर्देवकीवसुदेवयोर्ग्रहंपविष्टो भगवान्त्रमातृभिदेवकीरोहिषयादिभिः परिष्यक्तआर्छिगितः देवकीप्रमुखामातृर्मूर्ध्नोशिर सामनसाववन्दे ॥ २९ ॥

नारा पुर्वेक् प्राप्त । पुर्वेक प्राप्त मारोप्यस्तेहेनस्त्रतीपयोधरीस्तनीयासांहर्षेग्राविह्वलितआत्मामनी यासांतथाभूतानेत्रजलैरानंदवाष्पैः तादेवक्यादयः पुत्रेक प्राप्त मारोप्यस्तेहेनस्त्रतीपयोधरीस्तनीयासांहर्षेग्राविह्वलितआत्मामनी यासांतथाभूतानेत्रजलैरानंदवाष्पैः

स्तिषञ्च । २४ ॥ स्त्रभवनंत्वगृहंप्राविशत्कथंभूतंसर्वेकामाः काम्यमानाभोग्यमोगोपकरग्रास्थानादयोयस्मिन्नास्त्युत्तमंयस्मात् यत्रपत्नीनांषोडशसहस्ना-ग्रिप्रासादास्तथाभूतम् ॥ ३१ ॥

# श्रीविजयष्वजः।

सितातपत्रव्यजनादिभिरलंकृतोभगवांस्तथावभौयथाकोदिभिरन्वितोमेघोभातीत्यन्वयः अत्रायंविभागः मध्याह्नार्कस्थानीयंश्वेतच्छत्रं उ दुपस्थानीयंग्यजनम् इंद्रचापस्थानीयामाला पीतवस्त्रंविद्युत्स्थानीयं मेघस्थानीयोभगवान् अर्कस्थानीयंकिरीदम् उदुपस्थानीयंश्वेतच्छत्रं मंदारादिप्रस्नमालाइंद्रचापस्थानीयं विद्युत्स्थानीयंग्यजनिमितिवा ॥ ६४ ॥

पित्रोः मातापित्रोः खमातृभिः देवक्यादिभिः परिष्वक्तः आश्रिष्ठः ॥ ६५ ॥ तामातरः पुत्राम्नोनरकाञ्चायतइतिपुत्रः तंकृष्णांसिषुचुः अश्र्याषचन् हर्षेणाचिह्नलीक्वतः विवशीकृतः आत्मांतःक्ररखंयासां

तास्तयोक्ताः ॥ ६६ ॥ यत्रयस्मिन्भवनेवज्वेदूर्यमाणिमंडिताः षोडशसहस्राणिपुनरष्टोत्तरशतंपस्नीनांप्रासादाः संतितक्षुत्तमंस्वकामंस्वमवनमाविशदित्य कान्वयः काम्यंतश्तिकामाइच्छाविषयास्तेसर्वेयत्रसांतितत्तथोक्तम् ॥ ६७ ॥ **)** 

# सुवोधिनी ।

एवं समान्यतः पुरीतत्स्थान्भक्तांश्चनिरूप्यभगवात् कयंविशेषतयानवर्णितद्दत्याकांक्षायाम् उपमानाभावादित्युकेभकानांबुद्धाअभूती पमायावर्णनायद्दति सिद्धांतंवक्तुमाह सितातपंत्रिति सितातपंत्रंचव्यजनेचिसतातपत्रव्यजनानिप्रस्तवर्षः सर्वतः प्रवृत्तेः प्रस्तभेदा त्पुरुषभेदाद्वावहुवचनंपीतांवरनित्यमपिरूपवद्वर्णानीयानांहेतुत्वेननिरूप्यतेवनमालयाउपलक्षितः सहितोवा एवं सर्वसामग्यांसत्यांवनमाल येववभावितिवाययामध्येनीलोभेघोभवितउपरिस्पूर्यः परितोद्वीचंद्रीकोलोस्यिराविद्युत्किटितटेद्दंद्रधनुर्द्वयमुभयतोमिलितं तदाभगवानिवभ वेदित्यद्भुतोपमा॥ २८॥

एवंवर्गानांसमाप्यसंवंधिनांक्षेहातिशयमाहप्रविष्टशितुशब्दः पूर्णवर्णानांव्यावर्त्तयतिपित्रोरितिमातृत्वेनसर्वामातरण्वअपृथग्धमेशीलत्वा त्सर्वामांपितुश्चेकंगृहंभेदेकारणाभावाच्यप्रवेशमात्रेण्वेवभगवत्रिक्षयातः पूर्वताग्यपिष्टुंगादिकंकृतवत्यइत्याहपिष्टुक्तइति "येयथामांप्रपद्यंत" इतिवाष्यात्मातृः प्रतिवालकगवप्रतिभातिभगवद्धमापेक्षयालौकिकधर्मस्यविहरंगत्वात्नमस्कारापेक्षयापिष्टुंगः प्रथमः स्वमातृभिरिति पितुरिपमातरः संतिअतः स्वमातृभिरित्युक्तंसप्तदेवकीभिगिन्यः एकादशापराः एकजातासुकन्यासुएकस्मैवरायवहूनांदानम् अपृथग्धमे शिल्दवेनैववरस्यकन्यानांचतदैवपत्नीत्वम्अन्यथानार्थत्वं यास्तेशीलमनुष्रताइति वाक्यात्अयमेवहेतुः पतिवहुत्वेऽपिअतएवदेवकीप्रमुखाः सप्त एकस्वभावानमातरइत्युच्यंते एकदासर्वाववंदेशिरसेतिभगवद्धमेत्वं शब्देनसर्वासांसकृत् वंदनंसंभवतिनतुकायिकम् अतः शिरसातं वेति ॥ २९ ॥

भगवद्धभेप्राकट्यायनमस्कारानंतरंभगवितवालत्वमेवप्रकटिमतिवालकपुत्रेयत्कर्त्तव्यंतचक्रुरित्याह ताइतिसर्वापवपुत्रमंकमारोप्यवाल कस्नेहस्नुतपयोधराजाताः नतुतस्यपयसः कश्चनिवियोगोजातः भगवतोमहत्त्वं प्रौढत्वंजानत्योऽपिहर्षेगाविह्वलितात्मानः पूर्वसंस्कारस दशत्वात्नेत्रजैर्जलैः शिखाः सिषिचुः॥ ३०॥

भायां ग्णामवस्थामाह अथेतिएकिमम्नेवभवने विश्वकर्मगाषोडशसहस्रंप्रासादाः कृताः स्वचातुरीख्यापनार्थम् अतएवअनुत्तमंनविद्यते उत्तमंयस्मात् सर्वेकामायस्मिन् सर्वेकामनापूरकपदार्थसद्भावायास्मन्तवा ॥ ३१ ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

वैद्युतं विद्युत्तेजः। घनः कृष्णास्योपमानम्। अर्कदछत्रस्य उडुपौ परिभ्रमकृतमंडलाकारयोश्चामरव्यजनयोः। उडवः पुष्पवृष्टेः। चापौ वनमःलायाः। विद्युत्तेजः पिदाङ्गवाससोः। अङ्गुतोपमेयम्—यदि घनस्योपरि सूर्यविम्वम् उभयतश्चनद्रौ सर्वतो नक्षत्राणि मध्ये च मिळितंचापद्ययं स्थिरं विद्युत्तेजो भवेत् तर्हि स घनो यथा भाति तथा हरिवभाविति भावः॥ २८॥

सप्त ववन्द इति मातृसोदर्योदादरिवशेषज्ञापनार्थमुक्तम् अष्टादशापि पितुर्वसुदेवस्य भार्या मातृतुल्यत्वान्नमस्कृता एव ॥ २९ ॥ ३० ॥ स्वभवनं स्वपुरम् । सहस्राणि च षोडशोति चकारादष्टोत्तरशताधिकानीति ज्ञेयम् ॥ ३१ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

अधाभूतोपमानेनध्यानविशेषार्थभगवंतं वर्णयति सितातपत्रेति यथाश्यामवर्णोघनोयद्यकोंडुपचापवैद्युतैः शोभितः स्यात् उडु पराद्धेनसतारागगांचेद्रद्वयंगृद्यते वैद्युतहत्यत्रस्वार्थेऽण्तथासितातपत्रेगाकोपमेनव्यजनाश्यांचेद्रोपमाश्यांचेापस्कृतोमंडितः तारागगो पमानांप्रस्नानांवर्षेरभिवर्षितः पिशंगेवैद्युतोपमेवाससीयस्यभगवान्घनध्वश्यामः इंद्रचापोपमयावनमालयाचवभौहत्यन्वयः॥ २८॥

सन्तेत्यन्यासामुपलक्षगाम् ॥ २९ ॥ ३० ॥

अष्टोत्तरशतसंख्याकाअन्येप्रासादाश्चकारेगात्राह्याः ॥ ३१॥

# भाषाटीका ।

भगवार श्वेतछत्र चामरादिकों से शोभित पीतवस्त्र धारण किये मार्ग में जाते समय फूलों की वर्षा से तथा बनमाला से ऐसे शोभित भये जैसे चन्द्र सूर्य इन्द्र्घचुष बिज्जली इन्हों से मेघ शोभित होय यह अभूतोपमा कही है ॥ २८॥

भगवान् पिता माता के घरमें प्रवेश भये अपनी माताओं से आिंहिगित हो कर देवकी आदिक सात माताओं को मस्तक से बंदना करते भये॥ २९॥

वे सब माता स्नेहयुक्त, स्तमों से दुग्ध को गिराती हुई हर्षसे बिह्नल होकर नेत्रजलों से रुप्ण को सेचन करती हुई ॥ ३० ॥ इसके अनन्तर भगवान अपने महलमें अवेशहुँये जोकि महल सब वस्तुओंसे पूर्ण सर्वोत्तम है जहां पत्नियों के पोडशहजार महल बने हये हैं ॥ ३१ ॥ पत्न्यः पति प्रोष्य गृहानुपागतं विलोक्य सञ्जातमनोमहोत्सवाः । उत्तस्थुरारात् सहसाऽऽसनाशयात् साकं व्रतिविद्यां हितलोचनाननाः ॥ ३२ ॥ तमात्मजैर्दृष्टिभिरन्तरात्मना दुरन्तभावाः परिरेभिरे पतिम् । निरुद्धमप्यास्रवदम्बु नेत्रयोविल्ज्जतीनां भृगुवर्य वैक्लवात् ॥ ३३ ॥ यद्यप्यसौ पार्श्वगतो रहोगतस्त्रणापि तस्याङ्कियुगं नवं नवम् । पदे पदे का विरमत तत्पदाच्चलापि यत् श्रीनं जहाति किहिचित् ॥ ३४ ॥ एवं नृपाणां चितिभारजन्मनामचौहिग्गीभिः परिवृत्ततेजसाम् । विधाय वैरं श्वसनो यथाऽनलं मिथो वधेनोपरतो निरायुषः ॥ ३४ ॥

#### श्रीधरखामी।

प्रोध्य देशान्तरे उषित्वा। आरात दूरादेव विलोक्य । संजातो मनसि महोत्सवो यासां ताः । आसनादाशयाच आसनादेहेन च उत्तस्थुः आशयोऽन्तःकरगां तस्माद्प्यात्मना उत्तस्थुः श्रीकृष्णेनात्मनः संश्लेषे अन्तःकरगाव्यवधानमिष नासहन्तेत्य्थः । ब्रीइतानि लोचनानि आननानि च यासां ताः । अपाङ्गरेव वीक्षगाद्वीडितलोचनाः अघनतमुखत्वाद्वीडिताननाः । साकं व्रेतेरिति हास्यकीड़ा वर्जनादिनियमा अपि ताक्ष्य उत्तस्थुरित्यर्थः । धृतव्रता एव उत्तस्थुरिति वा । व्रतानि याह्मवल्क्येनोक्तानि—क्रीड़ां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम् । हास्यं परगृहे यानं त्यजेत् प्रोषितमर्तृका इति ॥ ३२ ॥

आरात् आयान्तं तं पतिं दर्शनात् पूर्वमात्मना बुद्ध्या परिरेभिरे ! ततो द्रष्टिभिरिन्द्रियैः । ततः समीपे आगतमात्मजैः पुत्रेर्गृहीतक्रण्ठ मालिङ्गयन्त्य इव खयमपि आर्लिगितवत्य इत्यर्थः । अत्र हेतुः दुरन्तभावाः गम्भीराभिप्रायाः । तदा च तासां नेत्रयोर्निरुद्धमप्यम्बु वाष्पं

वैक्लब्यात् वैवश्यादास्रवत् ईषत् सुस्राव । अतएव धैर्यहान्या विलज्जतीनाम् । हे भृगुवर्य ! चित्रं श्रागवत्यधेः ॥ ३३ ॥

पार्श्वगतः समीपस्थः। तत्रापि रहोगतः एकान्ते च वर्त्तते स्म । पदे पदे प्रतिक्षणं नवं नवमेव । अत्र केमुत्यन्यायः का विरमेतेति । चला चंचलखभावा अपि ॥ ३४ ॥

उक्तं श्रीकृष्णचिरतं संक्षिप्याह एविमिति द्वाभ्याम् क्षितेभीराय जन्म येषाम् । अक्षौहिणीभिः कृत्वा परिवृत्तं सर्वतः प्रसृतं तेजः प्रभावो येषाम् । श्वसनो वायुः वेणूनामन्योऽन्यसंघर्षणेनानलं विधाय मिथो दाहेन यथा उपशाम्यति तद्वत् ॥ ३५॥

#### दीपनी।

(पत्न्यः पतिमिति । पतेन यावत्यः पत्न्यस्तावन्मूर्तिः श्रीकृष्णो युगपदेव तासां गृहान् प्राविशदिति ज्ञायते सर्वासां तुरुयभावत्वा दिति व्याख्यालेशः । )॥ ३२—३७॥

#### श्रीवीरराघवः।

तदाप्रोष्यप्रवासंकृत्वागृहानुपा गतंप्रियंदूराद्विलोक्यपत्न्योधिकमण्यादयः संजातोमनीसमहानुत्सवाहर्षीयासांब्रीडिते लोचनेयेषुता न्याननानियासांत्रयाभूताव्रतेः सहासनाद्यायात्सहसाआशुउत्तस्थः तत्रव्रतेश्यः उत्याननामभर्त्रागमनार्थव्रतत्यागः आसनादुत्थानप्रास दस् आद्यायदिभिप्रायादुत्थानंदिदक्षीत्कंठचत्यागः दर्शनस्यजातत्वात् ॥ ३२॥

तमितिदुरंतोऽगाधोभावः स्नेहोयासांताः पत्न्यः समागतंतपितमात्मजैद्देष्टिभिरंतरात्मनाचपिररेभिरेआिलेगितवत्यः शरीरपिररंभस्य रहः कालिकत्वात्तंनसाक्षाचकुरपितुपुत्रैः प्रद्युम्नादिपुत्रद्वारेणोत्यभिप्रायेगापुत्रैरित्युक्तं मनसाचक्षुषाचसमंसाक्षादेवचक्र्रित्दिभिप्रायेगाांत

रात्मनाद्दाष्टिभिश्चेत्युक्तं हे भृगुवर्य ! विलज्जतीनांतासामतएवनेत्रयोरं बुनिरुद्धमापे विस्नवादघाष्ट्यीदस्रवत् ॥ ३३॥

व्रतः साकमासनाशयादुत्तस्थः तस्यात्मजेरित्यादिनाच तासांतद्विरहासिहिष्णुत्वंस्चितंतदेचोपपादयति यद्यपीतियद्यप्यसौभगवा-न्हृष्णास्तासांपार्श्वगतः रहोगतश्चतथापि तस्यांव्रियुगंतासांनवनवमेवाभूत् यतस्तत्पदात्तस्यपदारांवदात्काविरमेतिविश्वण्यावस्थातुस्य-तसहेतनकापीत्यर्थः तदेवदर्शयितुंविशिनष्टिचचलाश्रीर्लक्षमीरिपकदापियत्यदंधिनजहातितत्पदात्काविरमेतेत्यन्वयः तदापीतिपाठांतरतत्र यद्यपियदापिपार्श्वगतोरहोगतश्चतदापितस्यांव्रियुगंनवांकपुनः कदाचिदंतिरतंनवनविमितिकैमुत्यन्यायसिद्धामितिमावः उत्तराद्वतुयथाका श्रीव ॥ ३४ ॥

अथोपरितनंष्ट्रतांतसंगृद्धविवश्चरुक्तवृत्तांतंसमासतोऽनुवद्गि एवामिमिति क्षितेर्भूमेभीरस्यजन्मोह्योयेश्यः अक्षौहिर्णाभिः परिष्ट्रतेष रितीच्याप्तंतजः शोर्थयेषांतेषांनृपाणांकोरवाणांपाण्डवानांचामिथः वैरंश्वसनोवायुरनलमिप्तिमिवविधायवद्धीयत्वास्वयांनरायुष्टः एवतेषां मिथोवधनवधाद्यउपरतः उपररामउपसंहृतवान्सगण्डत्युत्तरेणान्वयः स्वयंनिरायुध्यवसन्तेषांमिथीवधंकारयन्यः स्वयंतूक्षणामविध्य सहस्यर्थः॥ ३५॥

#### श्रीविजयध्वजः।

पत्न्यः आराराद्र्रादेवविद्धोक्यसंजातोमनसिमहोत्सघोयासांतास्तथोक्ताः सहस्राह्मटितिउत्तस्थुरित्यन्वयः कथंभूतंप्रोज्यप्रवासंकृत्वा गृहाजुपागतं कीदृश्यः पत्न्यः साकंपिताश्चवीडितछोचनाननाश्चसाकंपितवीडितछोचनाननाः सहितमाकंपितंयाभिस्तास्तथावीडितानि छोचनानिञ्चानगानिचयासांतास्तथा ॥ ६८॥

दुरंतभावाः वळातीतस्तेहाः अनंतशृंगारावा अन्यैरक्षाताभिष्रायावा दृष्टिभिरात्मजैरंतरात्मनामनसाचतंपतिंपरिरेभिरे वैकुव्या

त्पारवद्याद्विलाज्जितानांतासांनेत्रयोर्निरुद्धम्यंवुअस्रवदित्यन्वयः॥ ६९॥

नैतत्तासांख्रहकार्यिकिमित्याह यदीति यद्यप्यसीकृष्णः रहोगतः एकांतगतः सदातासांपार्श्वगतः समीपस्यः तथाप्यनुपदंतासां तस्यांच्रियुगंनवंनवंनूतनान्नूतनं तथाहिकास्त्रीतस्यपादकमलादलमितिविरमेतिवरामंकुर्यात अन्यत्रचंचलिवभवप्रदायिनीश्रीः यंभगवं तंकिहिंचिन्नजहातीत्येकान्वयः॥ ७०॥

वायुर्यथावनदहनायवेणूनांमिथः संघट्टनेनाग्निमुत्पादयति तथाअक्षीहिग्णिभिः क्षितिमारजन्मनांभूमेर्भारभूतंजन्मयेषांतेतथोक्ताः तेवां परिवृत्तंपरिवृद्धतेज्ञोयेषांतेतथोक्तास्तेषामसुराग्णांधिनाशायकुरुषांडवपक्षपातिनांवृपाग्णांमियोवैराविधायस्वयंनिरायुधः परस्परविधनांवना

शंविधायचोपरतउदास्तइत्यन्वयः॥ ७१॥॥

# क्रमसन्दर्भः।

पत्न्य इति । विलोक्येव आसनात् तदावेशेनेकचेष्टतावस्थानात् आशयात् तत्समाधिलक्षगाच उत्तस्थुः (तौ ) तत्यजुरित्यर्थः । 💂 अतप्तव बीड़ितति ॥ ३२ ॥

तमिति तैः। तत्र स्वयमालिंगितवत्य इवेति योज्यम्। दुरन्तमावा उद्घटभावाः। अतपव निरुद्धमप्यास्रवत्। अत्रात्मजद्वारालिंगनेन कान्तमाव आमास्यते। तद्वारा तत्समभोगायोग्यत्वात् समाधानंच—प्रीतिसामान्यपरिपोषायैव तथाचरितं नतु कांतभावपोषाय। तत् पोषस्तु दृष्ट्यादिद्वारैव। तस्मान्न दोष इति॥ ३३॥

चिरविरहानंतरमेताहशानुरागोदययोग्यतायां तासामेवावस्थान्तरं कैमुत्येन दृष्टान्तयित यदीति । आसौ श्रीकृष्णाः । तासां श्रीपटम-हिषीग्णाम् । नवं नविमिति । तच्च तासां स्वाभाविकानुरागवतीनां नाश्चर्यम् यतः का वान्यापि तत्पदार्दावरमेत तदास्वादेन तृष्ता भवेत् । तत्त्रकेमुत्येनोदाहरणं चलापीति । जगति चश्चलस्वभावत्वेन दृष्टापि ॥ ३४ ॥

अय तथागतस्य तस्य ताददागाईस्थ्यलीलासुखोत् कर्षदर्शनार्थं निश्चिन्ततापूर्वकं ताभी रमग्रमेवाह पविमिति द्वाप्याम् ॥ ३५॥

# सुवोधिनी।

यथामातृषु पुत्रत्वेनस्वयं प्रविष्टः तथापत्नीष्वपिप्रविष्टः पितत्वेनप्रभुत्वेननथतस्तासां साधारगापितित्वेनकृत्यंयुक्तंदूरादागच्छंतंपितिविलो क्यसम्यक्जातोमनिसमहाजुत्सवोयासाम्आरादूरादेवद्दष्ट्वाउत्तस्थुः सहस्रेतिनसावधानभूताः यथैवस्थितास्तथैवउत्तस्थुः दहआत्माच क्यासनेचितायंनिमग्नोस्थितःतदिदानीद्विरूपाः आसनादाशयाद्ष्युत्तस्युः परंव्रतानिस्थितान्येवविशेषालंकाररिहतत्वादितिभावः अतएव ब्राह्मिक्या मुकुलितानि लोचनाननानियासाम् ॥ ३२॥

ताभिः कृतांभगवत्पूजामाहतमात्मजैरिति तमागच्छन्तमेवताः सर्वाः युगपदेवकायेनमनसाचार्लगनंकृतवत्यः तत्रप्रकारभेदमाह आत्मजैःहिष्टिभिरंतरात्मनेतिपुत्रान् हस्तेप्रयच्छंत्यइविकटसंवद्धाः कायेनपिरिभिरेतथाहिष्टिभिः हिष्टहिष्यायोजयत्यः पिर्म्भग्राभा- वाद्गिर्गोनभलसविलिताहिभिः परिरेभिरेअन्तरात्मनाभगवित्रिविष्टेनमनसाचपिरिभिरेतासांपरिरंभग्रपवमनोरथः समाप्तः नवाह्यकृत्यं कृतवत्यः तत्रहेतुः दुरंतभावाहितदुष्टः अन्तोभावोयस्यभावस्त्वांतरः तिस्मन्हिसमाप्तेविहः कियाभवित सचमानापनोदनाविधः अतोवैक्कव्यात्मानापनोदनात् सर्वभेवाश्चसमागतं तन्मानवतीभिर्निष्द्धमप्यास्वत् ईषत्सुस्नाव ननुमानवतीनामेतदनुचितं तत्राह हे भृगुवर्यं श्मगवन्माहात्स्यादित्युक्तंभवतिप्रत्युततासामेववैक्कव्यंजातम् ॥ ३३ ॥

प्वतासामितमावंभगवितिन रूप्यश्चर्यमितिशंकायांहेतुमाह्यद्यप्यसाविति यद्यपिरोदनमनुचितं वस्तुनः अलाभेतद्भवितस्वपाश्वेगतः तत्रापिएकांतेभावनानुसारेग्राभगवतैवक्वतत्वात् तथापितस्यांध्रियुगंनूतनंतासांहिमनोरथश्चरग्राद्वयंस्थाप्यमितिसच अत्यन्तरसावि
भावसम्बन्धादिभिजांतेकर्त्तुशक्यः प्रथमंचमक्त्राधमंग्रावालोकतोयाचरग्राक्षालनेकृतेसम्बाहनेचकृते पूर्वोक्ताभविततत्रश्चभगवतश्चरग्रार
विदस्यनित्यनूतनत्वात् प्रथमिकययैवजन्मसमाप्तिः अतोरोद्दनमनुचितिमत्याह पहेपदेश्वग्रोप्रातपदंवानूतनादिप नूतमेवअतः कावास्त्रीमनो
दश्यपूर्वभावात् सकृदिपिविरताभवेत् अथवा तद्भिक्तविषयात् प्रथमसेवातो विरतामवेत् तदाद्याग्रममनोरथारमः अतोरोदनमनु
चितिमितिभावः अत्रार्थेनिदर्शनमाह चलापीतिवस्तुतः श्रीश्चलातथाप्येकस्मिन् कार्येसमाप्ते अन्यत्रगच्छेत्तद्भगवत्येकमपिकार्येनसमाचितिमितिभावः अत्रार्थेनिदर्शनमाह चलापीतिवस्तुतः श्रीश्चलातथाप्येकस्मिन् कार्येसमाप्ते अन्यत्रगच्छेत्तद्भगवत्येकमपिकार्येनसमाक्विति नित्यनूतनत्वात् अतोभगवंतकदाचिद्गिमजहाति यथाएवप्रकारेग्रलक्ष्मीम् अन्याश्चभार्योअपरिसमाप्तकार्यो एवस्थाप्यति

ताश्चनजानात ॥ ३७ ॥ एवमेवभूभारहरणार्थप्रवृत्तोभगवान् एककिययैवमध्येशसमाप्तयाकार्यसमापितवानित्याहएवंनृपाणाभिति यवास्त्रियःस्वयमेवतिष्ठीत एवमेवभूभारहरणार्थप्रवृत्तोभगवान् एककिययैवमध्येशसमाप्तयाकार्यसमापितवानित्याहएवंनृपाणाभिति यवास्त्रियःस्वयमेवतिष्ठीत क्षणांतरकार्यार्थनप्रार्थ्यतेएवं भूभारहरणोप्रथमकार्यसमारुधेश्वतिमपर्यतंतदेवाजुवर्त्तते यथाप्रथममण्निसम्बन्धेसर्वहाहपर्यतस्वयमवाजुव

# सुवोधिनी।

र्तते एवमयमद्भुतकर्मानलोकसद्दशः भूमारार्थजन्मयेषांतत्रभगवत्कार्यमाह विधायवैरंमिथःवैरंविधायतस्यवैरस्यसामर्थ्यमाह श्वसनो 💉 यथानलमितिवायुर्निमित्तम् अग्निरेवदाहकः सतुवंशघर्षेग्रोनजातः सर्वदहतितथायमिपिमिथोवधेनसंपन्नेनउपरतः मिथोवधंकृत्वाउपरत इत्यर्थः जीवत्सुतेषुनोपरमेदितिभावः निरायुधइतिनिर्गतानि आयुधानि यस्यतस्यहिअन्योऽन्यमेवायुधम् अग्निरिधनमिव एवंसर्वसंहर्त्ता भगवान् महानयमञ्जुतकर्मातस्य सर्वकार्यसमाप्तम् ॥ ३५ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

यावत्यो महिष्यस्तावद्भिरेव प्रकाशैयुंगपदेव पृथक् तत्तन्मिन्दर प्रविष्टं कृष्णमालोकमानानां मामेव प्रथममयं प्राप्त इत्यभिमन्यमा-नानां तासां तात्कालिकी चेष्टामाह सञ्जातो मनसो महोत्सवः परिरम्भस्पृहा यासां ताः। अतपव आसनात् अन्तःकरणाच उत्तस्थुः ततश्च ब्रीड़ितलीचनाननाः अपाङ्गिरेव वीक्षणात् ब्रीड़ितलीचनाः अवनतमुखत्वादः ब्रीड़िताननाः। अयमर्थः — आसनं परित्यज्य प्रथमं देहेनैव परिरब्धुमुत्थिताः मध्ये लज्जया कृतं विघ्नमालक्ष्य लज्जोत्पत्तिस्थानमन्तःकरग्राञ्च त्यक्ता केवलमात्मनैव परिरेभिरे इति केव-लमुत्रेपक्षेव । कान्तमालोक्य सहसैव स्पर्शात्सुक्यपूर्णप्रेमानन्दमूर्चिछतास्ता वभूबुरित तत्त्वम् । मुर्च्छायां सत्यामेव सुषुप्तिप्रलययोरि-वान्तः करणाव्यवधानाभावसिद्धेः । सार्कं व्रतैरिति व्रतानि याज्ञवल्क्येनोक्तानि कीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम् । हास्यं परगृहे यानं त्यजेत् प्रोषितभक्तिंकिति । व्रतैः सहिता एव उत्तस्थुरिति तेषां व्रतानां पति दर्शयितुमनुचितानामपि सहसा त्यकुमशक्य-त्वात् तैः साकमेवोत्तस्थुः। तत्रश्च तेन दृष्टा तासामसंस्कृतशारीरपरिच्छदता स्नेहवर्द्धनायैवाभूदिति॥ ३२ ॥

लजाया कृतविच्नानामपि तासां तत्परिरम्भे प्रकारमाहतमिति । आत्मजैर्मनोभवेस्तद्दर्शनेनोद्दीपितैः कामैहेतुभिरित्यर्थः । "मकरध्वज आत्मभू "रित्यमरः। दृष्टिभिः परिरेशिरे इति प्रथमं चाक्षुषः सम्भोग उक्तः। ततो दृष्टिभिरेव नेत्ररन्ध्रैरेवान्तः प्रवेदय आत्मना अन्तर्देहे-नापि। यतो दुरंतभावा दुर्बेयाभिप्रायाः। अतएव वश्यते चायमेव प्रकारो भाववतीनाम--तं काचिन्नेत्ररन्ध्रेगा दृदिकृत्य निमीस्य च। पुलकांगुपगुहास्ति योगीवानन्दसंप्छतेति तदपि सूक्ष्मधिया प्रेयसा स्वाभिपायं शातमालक्ष्य विलज्जमानानां तासां नेत्रयोरम्बु निरुद्धमपि

वैक्लब्यात् वैवश्यात् आ ईषत् अस्रवत् सुम्राव । हे भृगुवर्य ! ॥ ३३ ॥

पदे पदे क्षगो क्षगो तासां नवं नवमेव भवति । अत्र कैमुलं का विरमेतेति । चला चंचलखभावा श्रीः सम्पत्तिरूपेति नित्यनूतनत्वं तस्योक्तम्॥ ३४॥

ताभिः सह रमग्रां निष्प्रत्यूहं वक्तुं तस्य कार्यान्तर्व्यय्रत्वाभावमाह एविमिति अक्षौहिग्राभिः सह परिवृत्तं विस्तीग्रां तेजो येषाम्। श्वसनो वायुर्वेगानाम् अन्यान्यसंघर्षेगा अनलं विधाय मिथो दाहेन यथोपशाम्यति तद्वत् ॥ ३५॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

प्रोध्यप्रवासंकृत्वागृहानुपागतंपतिमाराहूरादेवविछोक्यसहसैवातगववतैः साकंधृतव्रतागवासनात् आशयादंतः करगाचि देह भाष्यभुपार करण्य वर्षः वर्षः वर्षाच्या वर्षः वर्षानियाञ्चवल्क्येनोक्तानि"क्रीडांशरीरसंस्कारंसमाजोत्सवदर्शनम् हास्यंपरगृहेयानंत्यजेत्प्रोषित भर्तृके"ति॥ ३२॥

कात ॥ २८ ॥ हेभृगुवर्ष ? दुरंतभावाः अगाधस्नेहाः पत्न्यः तमागतंपतिमात्मजैस्तद्वारेगाद्दाष्टिभिरंतरात्मना च परिरेभिरे आलिंगितवत्यः वि•

लुखतीनांस्त्रीणांगुणविशेषरूपांलजांकुर्वतीनाम् निरुद्धमपिविक्रवाद्वेक्रव्यान्त्रत्रयोरं वुवाष्पमास्रवद्रीषत्सुस्राव ॥ ३३॥

तानास्त्राणाचुणाचरान्य नार्याणाच्या । तासांभगवातिस्नेहातिशयमाह यद्यपीति यद्ययसीश्रीकृष्णाः पार्श्वगतः रहोगतश्च तथापितस्योभयत्रसंदिलष्टस्यापि पदेपदेपति तासामगवातरगढातरायमाठ प्यपात प्रप्यात प्रप्यात विद्यात विद्यात पर्यात पर्यात पर्यात पर्यात पर्यात विद्यात किंचित्रविज्ञाति "देवत्वेचभवेदेवीममुष्यत्वचमानुषी विद्यारे वानुरूपांवैकरोत्येषात्मनस्तनु"मितिस्मृतेः तत्तस्यपदातकाविरमेतविदिलष्टतयास्थातुमुत्सहेत ॥ ३४॥

भगवद्गुण्यविशेषविवश्चरुक्तंभगवचेष्टितंसंक्षिप्यानुवदति प्विमिति ्श्वसनोवायुर्वेणुनाशहेतुमग्निविधाययथोपरतोभवातितथा क्षिति भारायजन्मयेषांतेषाम् अक्षीहिग्गीभिः परिवृत्तंपरितोव्याष्तंतेजः प्रभावोयेषांतेषांभिथोवैरंविधायोपरतः तेषांकर्मानुसारेग्रातान्हस्वोपरराम

यः सरेमेइत्युत्तरेगान्वयः॥ ३५॥

# भाषा टीका।

पत्नीगगा विदेश गयेहुये पति की घरमें आयेहुये देखकर अत्यन्त महोत्सव सम्पन्न मन हुई। पतिके आगमनकाल पर्यंत अत्यन्त नियम में स्थित वे सब पत्नियें कामिनियें उनकी दूरही से देखकर लिजतनयना और लिजतमुखी होकर अपने २ आसन और अपने २ कार्य परित्यागपूर्वक हगत उठकर खड़ी होगई ॥ ३२॥

हे भृगुश्रेष्ठ ! सुनौ कैसा आश्चर्य ! उन सब पत्नीगशोंने पतिको चाक्षुष प्रत्यक्ष करने के पूर्वही एकसाथ अन्तरात्मा के साथ आर्छ-गन किया। फिर जब दृष्टिगोचर हुए तब दृष्टिद्वारा भी छाभ किया ( किन्तु तथापि उस समय वे इतनी अधीर होगई थीं ) कि उनकी स एष नरलोकेऽस्मिन्नवतीर्गीः स्वमायया ।

रेमे स्वीरत्नकूटस्यो भगवान प्राकृतो यथा ॥ ३६ ॥

उद्याम-भाव-पिशुना-मल-वल्यु-हास-बीड़ा-वलोक-निहृतोऽमदनोऽपि यासाम् ।

संमुद्ध चापमजहात् प्रमदोत्तमास्ता यस्त्रेन्द्रियं विमिष्यतुं कुहकैर्न शेकुः ॥ ३० ॥

तम्रयं मन्यते लोको ह्यसक्तमपि सिङ्ग्नम् ।

श्रात्मोपम्येन मनुजं व्यापुण्वानं यतोऽज्ञुधः ॥ ३८ ॥

एतदीशनमीशस्त्र प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुगौः ।

न युज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया ॥ ३६ ॥

तं मिनिरेऽवला मौढ्यात् स्त्रेग्गं चानुव्रतं रहः ।

श्रप्रमागाविदो भर्तुरिश्वरं मतयो यथा ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्रागवते महापुरागो पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे

पारीत्तिते श्रीकृष्णादारकाप्रवेशो नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

#### भाषाटीका ।

बड़े गूढ अभिप्राय से पुत्रालिंगन के समान आलिंगन करडाला। उससमय उन सब लज्जावतीओं का चित्त इतना विवश हुआ था वे अपने २ नेत्रों से आसुओं की धारा को नहीं रोककर रखसकीं कुछ भूमि में पड़ने लगे॥ ३३॥

र्यादच वे सर्वदाही उन सब कामिनियों के पास एकांत अवस्थिती करती थीं तथापि उनके चरण युगल पद पद में भी नवीन नवीन हिष्टगोधर होतेथे। क्योंकि चंचला लक्ष्मी भी जिनको कभी त्याग नहीं करती उनके पादपद्मसे विरतहो ऐसी कौन स्त्री है ॥ ३४॥

वास्तव में । वायु जिस प्रकार वंश समुदाय में प्रविष्ट होकर परस्पर से घर्षण के द्वारा अग्नि उत्पादन पूर्वक उन सब को परस्परही में भस्मीभूत करदेता है किर वायु से दग्ध हुए वो सब वंश खगड आपही घातित होता है । इसी प्रकार युदु भी सबके विधाता कालपुरुष ने अक्षीहिशा सेना समूह के द्वारा चारों ओर फैला हुआ है तेज जिनका और पृथ्वी का भार जनमानेवाले राजाओं में परस्पर विरोधानल उत्पन्न कर दिया है कि जिससे वे परस्पर वध साधन द्वारा निरायुध और निस्तेज होकर अवशेष में प्रशान्त होगए हैं ॥ ३५॥

#### श्रीधरस्त्रामी

स्त्रीरत्नकृटस्थः उत्तमस्त्रीकदम्बस्यः॥ ३६॥

नन्ववं स्त्रीसङ्गादिभिः संसारप्रतीतेः कथं भगवानवतीर्गा इत्युच्यते तत्राह उद्दामेति द्वाभ्याम् । यासाम् उद्दामो गम्भीरो यो भावः अभिप्रायः तस्य पिशुनः सूचको योऽमलो वल्गुः सुन्दरो हासो वीडावलोकश्च ताभ्याम् निहतः अमदनः श्रीमहादेवोऽपि संमुद्यलज्जया आभिप्रायः तस्य पिशुनः सूचको योऽमलो वल्गुः सुन्दरो हासो वीडावलोकश्च ताभ्याम् निहतः अमदनः श्रीमहादेवोऽपि संमुद्यलज्जया ज्ञापं पिनाकम् अजहात् । एवंप्रभावाः (याः ) स्त्रियः इत्येतावद्विविक्षतम् । यद्वाभगवतो मोहिनीक्षपेण महेशोऽपि मोहित एव एताश्च ताद्दग्विलासा एवेति तथोक्तम् । ताः कुहकैः कपटैर्विभ्रमैर्यस्येन्द्रियम् मनः विमिधतुं क्षोभियतुं न शक्ताः ॥ ३७॥

तं श्रीकृष्णम् अयं प्राक्ततो लोक आत्मीपम्येन खसादश्येन सङ्गिनं मनुजं मन्यते । अत्र हेतुः व्यापृगवानं व्याप्रियमाणम् । यतोऽयम

बुधः अतत्त्वज्ञः ॥ ३८ ॥

कुत इत्यपेक्षायामैश्वयं स्था गर्मा एतदिति ईशस्येशनमैश्वयं नाम एतदेव। कि तब प्रकृतिस्थोऽि तस्या गुणेः सुखदुः खादिभिः सदा न युज्यते इति यत्। यथा आत्मस्थैरानंदादिभिरात्माश्रयापि बुद्धिर्न युज्यते तद्वत्। वैधम्येदणन्तो वा आत्मस्थैः सत्ताप्रकाशादि सदा न युज्यते इति । एवं वा असदात्मा देहः तत्रस्थेग्रेणैस्तदाश्रया बुद्धिस्तदुपाधिजीवो यथा युज्यते एवं प्रकृतिस्थोऽिप तद्गुणैनं युज्यते इति यत्। एतदीशनभीशस्येति ॥ ३९ ॥

तत्पत्नयोऽपि तस्य तत्त्वं न जानन्तीत्यासः । तं स्त्रेणम् आत्मवद्यं रह एकान्ते अनुवतम् अनुमृतश्च मेनिरे भक्तरप्रमाण्विदः प्रमाण् तिय्तां महिमानं अजानत्य इत्यर्थः । ईश्वरं क्षेत्रज्ञं मतयोऽहंवृत्तयो यथा स्वाधीनं स्वधर्मयोगिनं मन्यन्ते तद्वत् । यद्वा यथा तासां मतयः

मयता नावनाः तथा तमीश्वरं स्त्रेगादिरूपं मेनिरे इत्यर्थः ॥ ४०॥

इति श्रीमद्भागवतसारार्थेद्वीपिकायां प्रथमस्कन्धे एकादशीऽध्यायः ॥ ११॥

. द्विपनी<sub>स</sub>्

अजहात त्यक्तवानिति काचित् पुरागाप्रसिद्धाख्यायिकेति प्राञ्चः ॥ ३७ ॥ ब्याप्रियमागां व्यापारिवाशिष्टामित्यर्थः ॥ ३८—४० ॥

#### श्रीबीरराघव: ।

सराबद्दतिसराबः स्वमाययाआत्मीयसंकल्पेनआस्मित्ररलोकेऽवतीर्शोभगवान्स्त्रियगवरत्नानितेषांकूटस्थःसमुदायास्थतः रेमेचिक्र हेयथा प्राकृतः स्त्रीवदयस्तद्वत् प्राकृतोयथेत्यनेनस्त्रीवदयत्वानुकारमात्रमेवनतुपरमार्थतस्तदस्तीतिसुचितम् ॥ ३६ ॥

तदंवव्यञ्जयित्विशिनष्टिउद्दामेतिताः प्रमदोत्तमाः कुद्दकैर्वचनोपायैर्यस्योद्भियंप्रमाषितुंनशेकुः नाप्रभवन्तमपीत्युत्तरेगान्वयः सुतरांपा रवश्यत्वाभावस् चनायास्यप्रमदोत्तमाविशिनष्टियासामुद्दामभावादिभिर्निहतः सन्मदनोऽपिसंमुखमोहंप्राप्यस्वयंधनुरजहात्तत्याजताः प्रमदो त्तमाइत्यन्वयः उद्दामउदारोऽगाधइतियावत् भावोऽभिप्रायस्तेनपिशुनः सूचिताकर्षसूचकः अमलः सुन्दरश्चहासस्तेनचब्रीडापूर्वकावलो-कनेनचनिहतः अभिभृतः॥ ३७॥

एवंविधंतयःस्त्रीवर्यंमन्यतेसोऽश्रइत्याह तमिति मनुजंन्यापृगवानंमनुजवश्रेष्टमानंमनुष्यमावेनस्वयाथात्म्यमाच्छाद्यतामत्यर्थः वस्तु तोतिःसंगमपिसंगिनामिवभासमानंतिममंभगवंतंयोलोकोजनआत्मौपम्येनस्वतुल्यत्वेनमन्यतेसोऽयंलोकःअतोऽहेतोर्व्यःनितरामन्नः ॥ ३८ ॥

अथबिषयैरनाकृष्टत्वमीश्वरस्यनाश्चर्यमित्यभिप्राथेगोश्वरत्वंनिर्वक्तिएतदिति प्रकृतिस्थोऽपिमुलप्रकृतिन्यापकोऽपितद्वग्रीः सत्त्वादिभिरा त्मस्थैजीवगतैरविद्यास्मितारागद्वेषादिभिश्चगुणैः सदानयुज्यतेइतियदेतदेवेश्वरस्येशनमित्यन्वयः सदेत्यनेनमुक्तव्याद्यां सिहपूर्वतैर्युक्तः हैयगुगास्पर्शोदाहरगमाह यथेति तदाश्रयाईशाश्रयाबुद्धिस्तज्ज्ञानंयथासत्त्वादिभिन्युज्यतेनहि"स्वाभाविकी ज्ञानवलिकयाचे" त्युकाविधं स्त्रतः सर्वगतस्यशानं सत्त्वरजस्तमोऽन्वयाधीनसम्यक्त्वासम्यक्त्वयुक्तं सग्रवं सर्वप्रकारेगाचिद्दचिद्गतहेयरहितइति यत्तदेवहि ईश्वरस्येश्वरत्व मित्यर्थः ॥ ३९ ॥

यथैवमञ्जोलोकस्तमुक्तविधमीश्वरमात्मतुल्यंमन्यते तथास्त्रियोऽप्यन्नानादात्मवद्यममन्यंतेत्याहतमितिसंसारिग्रामिद्रियपस्तामतयो यथेश्वरंनजानंतिर्कितुमाँख्यादन्ययामेनिरे एवंभूतास्ताअवलाः स्त्रियोऽपितंभगवंतंरहः स्त्रैगांस्त्रीसमूहमनुव्रतं स्त्रीसमूहानुवर्तिनंमेनिर तत्रहेतुः भर्तुरप्रमाणविंदः प्रमीयतइतिप्रमाणंखक्रपंतत्ख्क्रपमजानंत्यः॥ ४०॥

इति श्री वीरराघव विरचितायां श्रीमद्भागवत टीकायां प्रथम स्कंधे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

स्त्रमाययास्वेच्छ्या प्राकृतः स्त्रीजितः स्त्रीरत्नकूटस्थः स्त्रीश्रेष्ठसमृहस्थः॥ ७२॥

स्त्रीश्रेष्ठसमूहगतः स्त्रीजिताननुकरोत्येवपरंनस्वयंस्त्रोजितइत्याह उद्दामित यासामुद्दामभावस्यउत्कृष्टशृंगारचेष्टितस्यिपशुनः सूचकः अमलः निर्व्यलीकः वल्गुः कोमलः हासः स्मितंबीडयाअवलोकः कटाक्षवीक्षण्मउद्दामभाविषशुनामलवल्गुहासेनवीडावलोकनेनचिहतः ताडितः मदनोऽपिसंमुह्यपुष्पाख्यंचापमजहात्मुक्तवांस्ताः प्रमदोत्तमाः कुहकैरुद्दामभावादिभिर्यस्य श्रीकृष्णस्यंद्रियंप्रमथितंवशीकर्तन शकुः तस्यकुतः स्त्रीजितत्वमित्यन्वयः॥ ७३॥

तस्यस्त्रीजितत्वपरिवादोऽज्ञसंमत्येत्याह मन्यतद्दति अज्ञलोकः खसुखानुभवेनैवाप्तकामतयास्त्रीष्वसक्तर्रापआत्मीपम्यनात्मानंदृष्टांती

क्कत्यस्त्रीसंगिनंतनमयंस्त्रीमयेमन्यतेहियस्मात्तरमादयंजनोऽबुधः अज्ञः कथंभूतंमतुजंपावृगवानम् आच्छादयंतम् ॥ ७४॥

तर्हिज्ञानिप्रवादः कीदृशद्दातितत्राहः यत्तादिति प्रकृतिस्थोऽपिसदात्मस्थैः स्वाधारैस्तद्भुगौः प्रकृतिगुगौः सत्त्वादिभिः शब्दादिभिध्यनयुः ज्यतेनसंव व्यतद्दतियत्तदीशस्येशनमीश्वगत्वं तत्रव्यत्यासदृष्टांतमाह यथेति यथाप्रकृतिस्थानांक्कानिनांतदाश्रयातस्यकृष्णस्याश्रयाबुद्धिः प्रकृतिगुर्गीः नवध्यतेकिमुतस्यप्रकृतिगुग्धसंबंधेनेत्यतोऽबुधजनप्रवाद इतिभावः॥ ७५॥

तथाविदोऽसुराइतिसोदाहरणमाह तमिति खलाइद्रियारामामुद्धाः शास्त्रार्थाविदः तामसराजसप्रकृतयाऽतएवाप्रमाण्विदोऽनंतगुरा त्वादिप्रमागाविदस्तंकृष्णमनुव्रतंभृत्यवद्नुगंतस्त्रगास्त्रीजितंमेनिरे वैशेषिकादिवादिनांमतयोयथेश्वरंयथामतिमेनिरेतथा तस्माकतस्या प्तकामस्यस्त्रीजितत्वमितिभावः॥ ७६॥

इतिश्री भागवतप्रथमस्कन्धस्य विजयध्वजटीकायां दशमोऽध्यायः॥ १०॥

# क्रमसन्दर्भः।

य एवमुपरतः स एव रेमे इति योज्यम् । स्वेषु निजजनेषु या माया कृपा तत्युष्विकीषीमयप्रेमा तथा लोकेऽवतीणी इति तस्या एव सर्वावतारप्रयोजनिमित्तत्वात् स्वीरत्नक्र्टस्थोऽपि तास्शरमंगाविशकारिप्रमिषक्रोषक्रपया तयैव रेमे न सु प्रसिद्धकामेनत्यर्थः। अत्र रतन सवायाः । अत्र स्वायाः । अत्र स्व स्व स्व स्व स्व स्व स्व स्व साम्य यदन ताराज्यप्राकृतत्वं दर्शयित्वा तद्वत् कामविषयत्वं (कामविशेषमयत्वं ) निराकृतम् ॥ ३६ ॥

# कमसंदर्भः।

पुनरिप तदेव स्थापयित उद्दामित । मदनश्च प्रक्कितः कामः उद्घटभावस्च किर्मिलमनोहराश्यां द्वासबीडावलोकाश्यां निहतस्तन्मिहमदर्शनेन स्वयमेवोक्तार्थीकृतस्वास्त्रादिवलोऽभूत् । अतपव संमुद्य चापमजहात् भूपल्लवं धनुरि। क्रतिकृतानि वाणा गुणः श्रवणपिलरिति स्मरेण । अस्त्राणि निर्जितजगन्ति किमर्पितानीतिवत् । तत्र निजास्त्रप्रयागं न क्रुरुते एवेत्यर्थः । तथाभूता अपि प्रमदोत्तमाः प्रमदेन
प्रकृष्टप्रेमानन्दिवशेषेण परमोत्कृष्टास्ताः स्ववृन्द एव याः स्वतोऽप्युत्कृष्टप्रेमवत्यस्तासां साम्यच्छ्या कुद्दकेस्तादशप्रेमाभावेन कपदांश
प्रयुक्तैः सद्भिः कटाक्षादिभिर्यस्येन्द्रियं विमिथतुं तिद्वशेषण मिथतुं न शेकुः । किन्तु स्वप्रेमानुकृपमेव शेकुरिति । तस्मात् प्रेममात्रोत्यायि
विकारत्वात्तस्य कामुकवैलक्षण्यामिति भावः ॥ ३७ ॥

तस्मादेतत्तत्त्वमविक्षायैव अयं साधारणो लोकः असक्तमपि प्राकृतगुगोष्वनासक्तमपि यतः आत्मीपम्येन मनुजं व्यापृगवानं कामादि

ब्यापारयुक्तम च मन्यते यथात्मनः प्राकृतमनुष्यत्वादि तथैव मन्यत इत्यर्थः । अतएवावुध एवासौ लोक इति ॥ ३८॥

प्राकृतगुगोष्वसक्तत्वे हेतुः एतिदिति । अवतारादौ प्रकृतिगुगामये प्रपञ्चे तिष्ठन्निप सदैव तद्गुगौर्न युज्यते इति यत एतदीशस्येश नमेश्वर्यम् । तत्र व्यतिरेके दृष्टान्तः यथेति । तदाश्रया प्रकृताश्रया चुद्धिजीवज्ञानं यथा युज्यते तथा नेति । अन्वये वा तदाश्रया श्रीमग-वदाश्रया परमभागवतानां चुद्धिर्यथा प्रकृतिस्था कर्यचित्तत्र पतितापि न युज्यते तद्वत् । एवमेवोक्तं तृतीये—भगवानिप विश्वातमा लोक वेदपथानुगः । कामान् सिषेवे द्वार्वत्यामसक्तः सांख्यमाश्रित इति ॥ ३९ ॥

नतु ताहशमेश्वर्यं तस्य ताः किं नजानन्ति यदि जानन्ति तदा रहोलीलायां शुट्येत्येव ताहशप्रेमेत्याशंक्याह तिमिति । ईश्वरमिप तं रह एकान्तलीलायां मौद्ध्यात् ताहशप्रेममोहात् भर्त्तुरप्रमाण्विदः ताहशैश्वर्यशानरिहताः स्त्रेणम् आत्मवश्यम् अनुव्रतम् अनुस्तंच मेनिरे । तत्र नायुक्तमित्याह । यथा तासां मतयः प्रेमवासना तथैव स इति । ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भज्ञाम्यहमित्यादेः खेच्छाप्रयस्ये-त्यादेश्च प्रामाण्यादिति भावः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकतक्रमसन्दर्भे एकाद्शोऽध्यायः॥ ११॥

# सुवोधिनी।

अतःपरंभक्तोद्धारकभागवताधिकारिदेहनिष्पादनमवशिष्यतेतदुत्तरत्रवश्यते मध्येतस्यविषद्धधर्माश्रयत्वंबक्तुंशृंगारकीडामाहसएषद्वि सएषनरलोकेऽस्मिन्नवतीर्गाः यथाकोऽिपनजानाति तथास्वमाययारमण्निमित्तेस्रीरत्नकूटेस्नीसमूहेस्वयमेवविद्यमानो भगवान्तद्वशमना पन्नः प्राकृतवद्गीतिकृतवान् यावद्रसेनप्रविष्टः तावत्तस्यरसंनजानातीति कामशास्त्रस्ववशेस्थितस्यनरसद्दति॥ ३६॥

प्वंभगवत्कृत्यांअगीकृताग्लानिनदोषायेतिन्यायेनभगवद्गमणं नतुविषयधमेंण्यत्यात्वमिति प्रतिपावियतुमाह उद्दामिति यद्यपिस्त्रियोर् तिसमर्थाः तथापिभगवन्मनोजेतुंनशक्ताः तासांसामर्थ्यमाह उद्दामस्त्यक्तशृंखलोयोभावः अज्ञापनीयेज्ञापयतीति पिशुनः असमये अस्थाने च एवमिपसन्नमलः स्वाभाविकत्वान्तिर्दुष्टः स्वच्छोवास्चितस्यहितकरणात्तत्रसामर्थ्यं वल्गुमनोहरः पुरुषस्यमनोहरतीति एताह्यो हासः प्रथमंप्रवृत्तः ततःकार्यानन्तरंत्रीडास्वतः प्रवृत्तत्वात् ततःस्ववंचितत्वसूचकद्शेनंतेनापिनिहतः मदनःकन्दर्पः सर्वव्यामोहनार्थे प्रवृत्तः हिन्दवलंज्ञात्वास्ययंचापमजहात् मत्कार्यमेतापवकरिष्यन्तीतिकिचापेनित यत्रमामिपमोहयंति तत्रकथमन्योनमुग्धोभवेदिति एवंकामाद्यविकाकामप्रतनातापवैताभगवत् स्त्रियः अथापि यस्यभगवतः इन्द्रियंमन् विमथित्वर्याकर्त्तेक्तं कपटैःनशेकुः नसमर्था जाताः दृष्टिमोहितत्वातं यक्तमितिभावः॥ ३७॥

प्रवमिषिखयंपराजिताः अशक्ताअपिअज्ञानात् स्वधर्मभगवति आरोपयन्तीत्याह तमयमिति लोकोभ्रांतः असंगमिपभगवन्तंसंगिनंमन्यते भगवान् संगी विषयसहचरितात्मत्वात् देवदत्तवत् इत्यनुमानेनउपाधिग्रहगासहितेनभगवंतमि संगिनंमन्यतेतत्रविचारकागामिपउपाध्य ग्रहेहेतुः मनुजंब्यापृगवानमिति आत्मानंमनुजंयथालोकोमन्यते तथाविशेषचेष्टाकर्त्तारम्थतस्तात्पर्योपरिज्ञानात् अज्ञत्वादिवोधनेविद्यमान

उपाधीजीवत्वरूपेतदज्ञानाचतयामन्ताअबुधइत्यर्थः ॥ ३८॥

# सुवोधिनी ।

इतिश्रीभागवत सुवोधिन्यांलक्ष्मण्यभद्वसुतश्रीवल्लभदिक्षितविरिवतायां प्रथमस्कन्धेएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

#### श्रीविश्वनायचक्रवर्त्ती।

स्त्रमायया योगमाययेव । स्त्रीरत्नसमुद्दे प्रकाशवाहुल्येन प्रत्येकमेव तिष्ठतीति सः । प्राकृतो यथेत्यनेन तस्य तथारमणकारणस्य कान् मस्य रमणस्य च अप्राकृतत्वात् निर्गुणत्वमुक्तम् ॥ ३६ ॥

निविन्द्रियेर्वियान् भुञ्जानस्य तस्य कथमप्राकृतत्वं तत्राह । यासाम् उद्दामः गम्भीरो यो भावः प्रेमा तस्य पिद्युनः स्चकोऽमलो वल्गुः सुन्दरो हासो ब्रीडासहितोऽवलोकश्च ताभ्यां कृष्णविषयकाभ्यां स्वरूपभूतकन्दर्पपीड़ोत्थाभ्यां निहतः अहो एता मञ्छराघातं विनेव सस्पृहं कान्तमालोकयन्ते इति विचारयञ्चव तद्विमाधुर्ण्यावलोकोत्थिवस्मयविवर्शीकृतः सन् मदनः प्राकृतकन्दर्पसन्मोहनायमागतोऽपि खयं संमुद्य चापम् अजहात् । आसां भ्रूचापाकृष्टानां ब्रीडावलोकशराणामग्ने किं मे चापेन सशरेणोति तं तत्याज । ताः प्रमदोत्तमाः अपि यस्येन्द्रियं मिथानुं खवशीकर्त्तुं कुहकैः कपटप्रयुक्तैवेल्गुहासादिभिन् शेक्कः किन्तु प्रेममयुक्तैः शेकुरिति तासां समअसरितन्त्वात् प्रेममयाः काममया अपि कटाक्षाद्यः सम्भवन्ति । तत्राद्याः भावपिशुनशब्देनोच्यन्ते । द्वितीयाः कुहकशब्देन । तत्राद्येवर्गीकृतेन्द्रियत्वेऽपि भगवतोऽप्राकृतत्वलक्षणं नैर्गुययमेव तस्य प्रेमवश्यक्षात् प्रेमण्यः चिच्छक्तिविलासविशेषत्वात्तन्मयानां कटाआदीनां वत्रयशब्देनाभिधानादिति । द्वितीयैः प्रेमरहितैर्वशिकारासम्भवात् यस्येन्द्रियं विमिथतुं कुहकैनं शेकुरित्युक्तम् । सर्वययेष्य तिविषयशब्देनाभिधानादिति । द्वितीयैः प्रेमरहितैर्वशिकारासम्भवात् यस्येन्द्रियं विमिथतुं कुहकैनं शेकुरित्युक्तम् । सर्वययेष तिविद्ययकाममयकटाक्षादिभिवशीकारामावेऽपि तेषां प्राकृतत्वं न बाच्यं परुमहित्रीणां सर्वासां चिच्छक्तित्वात् तदीयेषु कटावित्रकृतस्तदि।यकाममयकटाक्षादिभिवशीकारामावेऽपि तेषां प्राकृतत्वं न बाच्यं परुमहिषीणां सन्वीसां चिच्छक्तित्वात् तदीयेषु कटाभादिषु प्राकृतत्वप्रवेशाशकः । न च खक्रपभूतत्वेऽपि चिच्छक्तिसामान्यस्येव वशो भगवान् किन्तु चिच्छक्तिवशेषस्य प्रेमण् प्वेति सिद्धान्तादिति सर्वमनवद्यम् ॥ ३७ ॥

एवं वस्तुतो विषयसङ्गरहितमपि तम् अनिभिन्नो वहिर्दशीं छोको विषयसङ्गिनमेव मन्यते इत्याह तमयमिति । आत्मौपम्येन स्वसा-एवं वस्तुतो विषयसङ्गरहितमपि तम् अनिभिन्नो वहिर्दशीं छोको विषयसङ्गिनमेव मन्यते इत्याह तमयमिति । आत्मौपम्येन स्वसा-इश्येन । तत्र हेतुर्व्यापृण्वानं व्याप्रियमाणां सत्यभामायामासकरेव पारिजातार्थब्रह्वच्यापारदर्शनादित्यर्थः । अतोऽबुधः सदसद्विवेचनश्र

इश्यन । तत्र हतुव्यापृष्णान व्याप्त नाम्यासार्क्त निश्चिनोतीत्यर्थः ॥ ३८ ॥ न्यः नीलमिंग काचिमिव प्रेमाणमेव विषयासार्क्त निश्चिनोतीत्यर्थः ॥ ३८ ॥

नमु मवतु नाम तासां चिच्छिक्तित्वातः तद्रमणादेनिर्गुणत्वमः। तद्दि प्राक्तत्रपश्चमध्ये प्राक्तते एव यदुवंशे अवतीर्श्वस्य प्राकृतानान् मवतु नाम तासां चिच्छिक्तित्वातः विषयान् स्वचक्षुःश्रोत्रादित्विर्यराददानस्य गुणसंगः खलु दुर्वार एव इत्यत आह एतदिति। मेव जरासन्धादीनामसुराणां रूपशब्दादीन् विषयान् स्वचक्षुःश्रोत्रादीन्द्रियराददानस्य गुणसंगः खलु दुर्वार एव इत्यत आह एतदिति। ईशस्य ईशनमेश्वयं नामैतदिति यत् प्रकृतो स्थितोऽपि तस्या गुण्णैः न युज्यते। गुण्णैः कीहशैः आत्मस्थैः। अयमर्थः—स्वयं गुण्णेषु तिष्ठति गुणा अपि तिस्मिस्तिष्ठन्ति तदिप तस्य गुण्णैरसम्पर्क इति वस्तुतो भगवत एव सर्वप्रपंचस्याधिष्ठानत्वे चाधिष्ठातृत्वे चापि निर्गुणत्वगुणा अपि तिस्मिस्तिष्ठन्ति तदिप तस्य गुण्णैरसम्पर्क इति वस्तुतो भगवत एव सर्वप्रपंचस्याधिष्ठानत्वे चाधिष्ठातृत्वे चापि निर्गुणत्वग्वाक्तमः। "साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्चे"ति "सत्त्वादयो न सन्तीशे यत्र च प्रकृता गुणा इति हरिहिं निर्गुणः साक्षात् पुरुषः प्रकृतः पर"
इत्यादि श्रुतिस्मृतिभिः। यथा तदाश्रया स एवाश्रयो विषयो यस्याः सा तत्त्स्मरणवती परमभागवतानां वृद्धिः प्रकृतिस्थापि संतुष्टिस्तु तिनिन्दादिषु तृप्तिश्चतिपासा पीड़ादिषु जागरस्वप्रसुष्टित्व सत्वादिगुणेषु स्थितापि तेष्वीदासीन्यात् न तैर्युज्यते इति। तथैव प्राकृत्वात् विषयान् आददानस्यापि तस्य तेष्वासक्तिश्चत्वात् न तैर्योगः॥ ३९॥

तात् विचास तस्य सदैवासाक्तिस्ताः पट्टमहिष्य एवाभिज्ञास्तस्य तत्त्वं सामस्त्येन जानन्ति। मैवम् । रसपुष्टिसिद्धचर्थं तासां खरूपं भूतानामिपं योगमायया भगवतेव स्वसम्पूर्णाज्ञानावरणात् ता अपि तं न जानन्तीत्याह तमिति । तं स्वभक्तारं रहोऽपुव्रतं स्वप्नेमवर्गमिपं भूतानामिपं योगमायया भगवतेव स्वसम्पूर्णाज्ञानावरणात् ता अपि तं न जानन्तित्याह तमिति । तं स्वभक्तारं । यतो मूढा भगवतेवादिरसपुष्ट्यपं मूढीकृताः । अतः समुद्रे विहरन्तोऽपि यथा समुद्रस्ययक्तां न जानन्ति स्वर्णा अर्चाः प्रमाणां न विदन्ति । मतयः शास्त्रकृतां बुद्धिवृत्तयः ईश्वरनिरूपणे प्रवृत्ताः जगदुपाद्दानत्वमीश्वरत्वं जगिन्नयन्तृत्वं तथा जगत्त्वा भक्तः प्रमाणां न विदन्ति । मतयः शास्त्रकृतां बुद्धिवृत्तयः ईश्वरनिरूपणे प्रवृत्ताः जगदुपाद्दानत्वमीश्वरत्वं जगिन्नयन्तृत्वं तथा जगत्त्वा भक्ताः प्रभूति । स्वर्णान्तिमत्वंविष्यात् किचित्र किचित्रानंत्योऽपि वस्तुतो मृढा प्वति । गुश्च (सं ) पर्यचरत्र प्रमणित्याद्यक्तस्तासं विदिन्तत्वमीश्वरत्विमित्तवंविष्यात् किचित्र किचित्रानंत्योऽपि वस्तुतो मृढा प्वति । गुश्च (सं ) पर्यचरत्र प्रमणित्याद्यक्तस्तासं विदिन्ति । स्वर्णानाविष्यात् किचित्र किचित्रानंत्योऽपि वस्तुतो मृढा प्रविति । गुश्च (सं ) पर्यचरत्र प्रमणित्याद्यक्तस्तासं विद्यात् ।

विभिन्नत्वमार्वरत्वात् तासां प्राकृतत्वं न ब्याख्ययम् ॥ ४०॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । प्रकादशोऽपि प्रथमे सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ ११ ॥

100 mg

#### सिद्धांतप्रदीपः।

संप्रवोक्तिलीलः स्वमाययास्त्रकीयेषुनरलोकस्थभक्तेषुमायातयाअस्मिन्प्राकृतेनरलोकेऽघतीर्याः अतप्रविस्रियप्रवरलानितेषांकूरः सम्रुहस्तत्रस्थः । स्वयमप्राकृतप्रवप्राकृतवत् रेमेचिकीडेप्राकृतजनस्ययथाईस्थ्यादिवश्यस्तथायंकृष्णाद्यति प्रतीतिविषयोऽभ्दितिप्र-सितोऽर्थः ॥ ३६ ॥

भगवतोऽसंगस्यप्राक्तत्रनप्रतित्यासंगित्वमाह उद्दामेतिचतुर्भिः यासामुद्दामभावस्यागाधाभिप्रायस्यसूचकेन अमलेनवल्गुनासुंदरे-शाहासेनलीलावलोकेनच अमदनोभवोऽपिनिहतोऽभिभूतः संमुखमोहंप्राप्यचापमजहात् पिनाकंतस्याज ताः प्रमदोत्तमाः कुद्दकेवे-चनाप्रकारैयेस्येद्वियविमिथितुंनशेकुस्तिमित्युत्तरेगान्वयः॥ ३७॥

अयंत्राकृतलोकः यतोऽबुधः कृष्णामनभिक्षोऽतस्तमसंगिनमपि श्रीकृष्णांव्यापृणवानं व्यप्रियमाणं संगिनमञ्जमनुष्यं चारमौपम्ये

नमन्यते ॥ ३८॥

प्रकृतिस्थोऽपित्रकृतौ स्थितोऽपिव्याप्तोऽपि प्राकृतैर्गुगौर्नयुज्यतेनस्पृष्टोभवित सत्कार्थभूतैः रागक्वेषादिभिर्नयुज्यतेइतिकिमुवक्तव्यस् पतिहास्येशनमीशत्वम् तत्रद्वष्टान्तः यथात्मस्यैः परमात्मस्यैः कर्तृत्वादिभिर्नुद्धिर्नयुज्यते अन्यथावुद्धेःकरगास्यैवकर्तृत्वभोकृत्वेषं स्वेवंश्वमोक्षाह्ततास्यात् ॥ ३९ ॥

अवलास्तुयासांययामतेयाबुद्धयस्तदनुसारेण तास्ताः मेनिरेइत्यन्वयः तत्रश्रीरुक्मिगयाचाईश्वरंकाश्चिद्रहोऽनुत्रतमेकांतेनुसृतंस्वष-

स्नीगामिनं धार्मिकंकाश्चित्तुमृदार्भतुः प्रमाणमजानंत्यः स्त्रेणिमत्येवंदशमेस्कंधेस्फुटीभविष्टति ॥ ४० ॥

इतिश्रीभगविष्मवार्कपादपद्मीचतकशुकशुधीविरचितेश्रीमद्भागवतेसिद्धांतप्रदीपे प्रथमस्कन्धीयेपकादशाध्यायार्थप्रकाशः ॥११॥

#### भाषाटीका ।

वे हमारे वोई भगवान हैं। जो अपनी माया के द्वारा इस ममुख्य लोक में अवतीर्थ होकर स्त्री रत्न समुदायके मध्य में रहकर असंत

सामान्य मनुष्य के समान कीडा करते हैं ॥ ३६॥

जिनके गंभीर भाव के सूचक निर्मेल मनोहर हसन और लजा सहित अवलोकन, से निहत कंदर्प ने भी मोहित होकर अपना धनु म छोडिदिया वे प्रमदोत्तमा भी अपने कुहुक मय विला सों से जिनको मनके क्षुमित करने को समर्थ न हुई। अथवा अमदन शिवने भी जिनके विलासों से मोहित होकर अपना पिनाक (धनुष) छोडिदिया ऐसी स्त्रियें भी जिन के मन के क्षोभ करने को समर्थ न हुई॥ ३७॥

उन श्रीकृष्ण को भी यह सब प्राकृत लोक अपने समान संगवाले मनुष्य मानते हैं। क्योंकि कृष्ण इसी भांति व्यापार करते हैं और

ये लोक सव अबुध हैं ॥ ३८॥

यही ईश्वर की ईश्वरता है। के सदा प्रकृष्टियत होकर भी प्रकृति के गुगा से युक्त नहीं होते हैं असङ्ग रहते हैं। जैसे आत्मा के आ अय होकर भी बुद्ध आत्मा के आनन्दादि गुगा से युक्त नहीं होती। (यहा) आत्मा अया बुद्धि जैसे आत्मा के सत्ता प्रकाशादि गुगा से युक्त होती है ईश्वर एसे प्रकृति के गुगा से युक्त नहीं होता है (यह वैधम्भ दृष्टान्त है) (अथवा) असदात्मा देहस्य गुगा से जैसे बुद्धि और जीव युक्त है ईश्वर एसे प्रकृति के गुगा सुख दुःखादिकों से युक्त नहीं होते हैं - यहीं उनकी ईश्वरता है। ३९॥

सिमान्य छोगों की क्या बात है ) उनकी स्त्रियें भी मूढ, उनको स्त्रीया (आत्मवश्य ) और एकान्त में अपना अनुगत मानतीं थीं

वे भी अपने मर्त्ता का प्रमाण ( अर्थात तत्व ) नहीं जानती थीं । जैसे अहंमति जीवको अपना आधीन मानती हैं ॥ ४० ॥

प्रथमस्कंध का एकादशअध्याय समाप्त।

# ं विद्रीसार्वशंत्रस्य प्राप्तः यसम्बद्धाः । **५० द्वादशोऽध्यायः ।**

्शीनक उवाच ।

श्रश्वत्यात्रोपसृष्टेन ब्रह्मशीष्ग्रोंस्तेजसा । उत्ताराया हतो गर्भ ईशेनाजीवितः पुनः ॥ १॥ तस्य जन्म महाबुद्धेः कर्म्माणि च महात्मनः । निधनश्च यथैवासीत् स प्रत्य गतवान् यथा ॥ २॥ तदिदं श्रोतुमिच्छामो गदितुं यदि मन्यसे । बूहि नः श्रद्धानानां यस्य ज्ञानमदाच्छुकः ॥ ३॥ श्रपीपलद्धर्मराजः पितृवद्रश्चयन् प्रजाः । निस्पृहः सर्वकामेभ्यः कृष्णापादानुसवया ॥ ४॥

सृत उवाच।

# श्रीधरस्वामी।

पूर्वोक्तं यत्रसङ्गाय द्रौशिदगडादि विस्तरात्। द्वादशे तु तदेवाय परीक्षिज्ञन्म उच्यते॥ ०॥ "

परीक्षितोऽय राजर्षेजन्मकर्मेत्यादि प्रतिज्ञाय पागडवानां राज्यस्थितिरूपोद्धातरूपो सप्रसङ्गं सप्तमाध्यायमारभ्य निरूपिता। इस-नीमौपोद्धातिकमुक्त्वानुधादपूर्विकं पृच्छिति अश्वत्थाम्नेति । उपसृष्टेन विसृष्टेन ॥ १ ॥

सस्य जन्म इत्यादेर्बूहीत्युत्तरेगान्वयः। स परीक्षितः प्रत्य देहं त्यक्ता ॥ २ ॥

प्रार्थिय न त्वाज्ञापयामीत्याह । गदितुं यदि मन्यसे अनुप्रहेशा तर्हि ब्र्हीति । यस्य ज्ञानमदाच्छुक इति श्रवशोच्छयां कारशाम् ॥ ३ ॥ निस्पृहस्यापि राज्ञः श्रीकृष्णानुष्रहात् ताहक् पौत्रः समजनीति वक्तं तस्य श्रीकृष्णे भक्तयु द्रेकमाह श्रपीपछिदिति त्रिभिः । पितृष-त् अपीपछत् पाछ्यामास ॥ ४ ॥

द्यीपनी ।

परीक्षितोऽयेति एतत्स्कन्धीयसप्तमाध्यायस्य द्वादशक्लोकः ॥ १—३०॥

# श्रीवीरराघवः।

यद्यिपरीक्षिज्ञनमकमादिकं पुरस्तादेवपृष्टं यद्यपिचतद्वक्तुमेवतद्वपोद्धातक्रपोऽयंवचःकमः किमकाषीं सतद्दि प्रकृतप्रद्रनस्यो सर्वाश्वरं व्याविद्याद्वातक्ष्यो प्रतिविद्याद्वातक्ष्यो प्रतिविद्याद्वात्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्याद्वात्व प्रतिविद्यात्व क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र प्रतिविद्य क्षेत्र क्

ततउपरितनंतस्योक्तरातनयस्यमहात्मनः यज्ञन्मादितदिदं हेमहाद्यसं । श्रोतुमिच्छामिनिधनंमरखयथैवासीत्प्रेत्यसृत्वायथागतवान्यांग-तिप्राप्तवान्तदिदामित्यन्वयः ॥ २ ॥

तप्राप्तवान्ताद्वानत्वप्यवः॥ २॥

यदिगदितुंमन्यसेवक्तामिष्टंयोग्यं च मन्यसेचेत्तर्हिश्रद्धानानांनोऽस्माकंश्र्हि कृतोवस्तज्जन्मादिशुश्रूषाश्रद्धाचभूवेत्यतस्तंविशिनष्टिय

स्यपरीक्षितः शुकोज्ञानंपरमात्मयाणात्म्यज्ञानमदाबुपदिष्टवान्महाभागवतत्वाणज्जन्मादिशुश्रूषानः समभवदि तभावः अत्रजन्मेषप्राश्वान्यमपृच्छ्यते तस्यकम्दिकंतुयुधिष्ठिरादिवृत्तांतानंतरकालिकत्वाणच्छ्वणानंतरभेवावेशेषतः प्रष्टव्यमपिजन्मकालिकजातकद्वाराखा

मान्यतोबुभुत्सुनाजन्मनासहोपात्तम् अतपवात्तरेऽपिजातद्वारैवतत्कर्मादिकंपद्दर्यकरत्यवगंतव्यम् ॥३॥

परीक्षितेजनमप्रकारंवक्तंतावत्तादात्मिकयुधिष्ठिरावस्थानप्रकारमाह अपीपलदितित्रिभिः अपीपलदपालयत्कथंभूतः कृष्णस्थपाद-योर्द्धसेवयाऽनुष्यानेनहेतुनासर्वेभ्यः निर्गतास्पृहायस्यतथाभूतः कृष्णपादानुसेवकत्वाक्षिस्पृहः सिक्रत्यर्थः॥४॥

# श्रीविजय**घ्वज्ञ**ः।

वैराग्यमकारोहरेर्मकानुकंपित्वंचास्मित्रध्यायेर्मातेपाद्यते उपलेभेऽभिधावंतीमुत्तरामित्यादि श्रुतानुवादपूर्वकंपरीक्षिण्जन्मादिप्रवृत्ति पृच्छितिशौनकहत्याह अश्वत्थाम्नेत्यादिना उरुतेजसाश्वत्याम्नाविसृष्टेनब्रह्मास्त्रेग्यउत्तरायाहतोगर्भैः पुनरीशेनोज्जीवितहत्येकान्वयः ॥१॥ सरगांतिश्रतं वणाक्यां पेत्रामस्वापत्वतानकंलोक्तिमितिशेषः॥२॥

मरगांनिधनं यथाकथं प्रेत्यमृत्वागतवान्कंलोकामातिशेषः॥२॥ वक्तुंवायदिमन्यसङ्त्यनेनवक्तव्यस्यातिगोप्यत्वंस्चयति॥३॥

अपीपळत्अरक्षत्निस्पृष्टः सर्वकामेश्यदत्यनेनकृष्णपादसेवाया अतिस्वातुत्वंदर्शितंकामानातिकत्वंच ॥ ४ ॥

# क्रमसन्दर्भः।

०११।२१३१४१५१११७१८।९।

#### सुवोधिनी।

प्वमेकाप्रसिद्धार्थसर्वेकार्येनिकपितम् अधुनाश्रोतृदेहस्यरक्षणंविनिक्षण्यते ॥१॥ सर्वलक्षणसंपद्धः सर्वदोषविवर्जितः वीजसंक्कारसिहतःश्रोताभागवतेमतः ॥२॥ व्यवहितत्वाच्छेनकः पूर्वकथांस्मारयति अश्वत्थाम्नोपसृष्टेनेति द्वद्वाक्वानांसमिभव्यवहारात्
अस्माभिरेवनावगतम् अश्वत्थाम्नोत्राद्धाणोत्तमत्वात् तेननिकपितस्यचब्रह्मास्त्रस्यच्यस्रोघत्वात् उत्तरायागभौहतः पश्चादीशेनश्राजीवितः
अस्मामर्थात् पूर्वमिपदुर्विभाव्याभिः खशक्तिभः वीजेप्रवेश्यभाजीवितवान् इदानीमिषद्श्वविजं पुनस्तंप्रवेश्यभाजीवयतीतिपुनः
श्राम्हार्थः॥१॥

धनुवाहांशमुक्तवाश्रोतव्यांशमाह तस्यजनमेति महाबुद्धेरिति पूर्वमेवतस्य शानंसिद्धंमहात्मनइति शुभानिकर्माणि जन्मकर्मावदा सस्य द्वुत्युसंभावनाभावात् गर्भएवचमृत्योर्निवर्त्तितत्वात् केनप्रकारेण निधनमितिष्रद्दनः किंच यथापूर्वजन्मनिश्चानादिषु सिद्धेष्विप्रत द्वेद्धसंवधोजातः एवमुत्तरत्रापि भविष्यतीत्याद्यंक्चपृच्छिति,स्रेत्यगतवान् यथेति प्रेत्यशरीरंत्यक्त्वायंथति प्रष्टव्यार्थः॥ २॥

तत्पूर्वोक्तंत्रयमुत्पित्तिष्टिशितप्रतयाख्यिमिदं चलोकगमनंशास्त्रसंदेहात् श्रोतुमिच्छामिबहुकालिर्निधात् क्लेशेऽपियदिसर्वधैतद्वक्तव्य मिति मन्यसे तदाश्रद्धायुक्तावयं श्रोतुमिच्छामः इच्छयाकयनेभगवच्चरित्रमत्रास्तीति अवगम्यते अतप्रवमाहः गदितुंयदिमन्यसद्दति अन्य थाकयात्वेऽपिभगवदीयत्वाच्च अन्ययाशुकस्य ज्ञानदानं नसंभवेत् अतस्तस्य चरित्रंकथदित्यर्थः ॥ ३॥

जनमनिक्षपणार्थं वंशकालदेशानामुत्तमत्वमाहित्रिमिः अपीपलदिति, अपालयदित्यर्थः स्वधमेविष्णुभिक्तिश्यांमहान् सर्वोनचान्यथा विषयेषु चवैतृष्णयंसेवार्यभिक्तिसूचकं तत्रराष्ठः प्रजापालनंधमेः पितृवद्वंजयन् प्रजाइतिज्ञानसहितत्वमुक्तम् अन्ययाभगद्दष्ट्यभावेरंजनं नस्यात् निःस्पृहइतिनैरपेस्यंकृष्णपादानुसेवाशास्त्रानुसारेण फलजननात् सम्यक्कृतेति ज्ञायतेअन्येनराज्ञउत्तमत्वात् तद्वाज्यकालः वंशास्त्राक्षात्तमादिराजधमेपव प्रजाःकुर्वतीति तद्वाज्यसर्वत्रवैष्णावसेवैवप्रसृताअतोदेशउत्तमः ज्ञानभक्तिकर्मणांधर्माणांतिसमन्कालेविध-मानत्वात् कालोत्कर्षः॥ ४॥

# श्चीविश्वनाथचक्रवर्ती।

कृत्वा जन्मोत्सवं राजा पौत्रस्य श्रीपरिक्षितः। द्वादशे भावि तद्वृत्तं विश्वेष्कमुपाशृक्षोत्॥ मैव श्रुतचरो भक्तो राजा वा तावदीदशः। कृष्णं द्वशे यो गर्भे यश्च कालमद्गडयत्॥०॥

षरीक्षितो जनम वश्ये इति प्रतिक्षाय द्रौग्यसक्षेपगर्हभरस्राकुन्तीस्तवभीष्मनियाग्राभगवद्यात्राहारकाप्रवेशपहमहिषीरमणादिकथा-माधुरुर्येषु तत्त्रसङ्गात्थितेषु मज्जन्तं स्तं तदेव परीक्षिजन्म शुश्रृषुः शौनकः पुनर्विशेषतः पृच्छति अश्वत्थाम्नेति । उपसृष्टेन निक्षि क्षेत्रना १॥२॥३॥

ताहशपौत्रवादती राज्ञः कृष्णानुराग एव कारगामित्यक्ष्यूहयन् (अक्ष्यूदयं) तमेवाह त्रिभिः। अपीपलत् पालयामास ॥ ४॥ ५॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

अभिमन्युसुतंसृतप्राहुर्मागवोतमं तस्यजनममहाध्ययंक्रम्भाणिचयुणीहिन इतिपद्मप्रतिवचनार्थपरीक्षतोथराजहर्षेजन्मकर्मविलाप सम् संख्यांचपांडुपुत्राणांवस्यकृष्णकयोदयमिति सृतेनप्रतिकातंतदुपोद्द्यात्तरूपांतत्पितामहराज्यस्थिति अुत्याकानुवादपूर्वकतदेवपुर इछिति अश्वत्थाम्नेति ब्रह्माद्देशोनामकेनास्त्रेण उपस्रेष्टेन ईदोनश्रीकृष्णोन॥१॥

ति चार्यस्यस्तयातस्यमहात्मनोजन्मेत्यादेर्बृहीत्युत्तरेग्रान्वयः सपरीक्षत् प्रेत्यशरीरंविहाययागतवान् ॥ २ ॥ सहित्रंबृर्वोक्तम् ॥ ३ ॥ सम्पदः क्रतवो लोका महिषी भ्रातरो मही।
जन्बुद्दीपाधिपत्यश्च यशश्च त्रिदिवं गतम् ॥ ४॥
किं ते कामाः सुरस्पार्हा मुकुन्दमनसो दिज!
ऋधिजहुर्म्भदं राज्ञः क्षुधितस्य यथेतरे॥ ६॥
मातुर्गर्भगतो वीरः स तदा भृगुनन्दन!
ददशे पुरुषं कश्चित् दह्यमानोऽस्त्रतेजसा॥ ७॥
ऋङ्गुष्ठमात्रममलं स्फुरत्पुरटमोलिनम्।
ऋषीच्यदर्शनं श्यामं तिइद्दाससमच्युतम्॥ ६॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

श्रीकृष्णोभक्तीवकृतार्थानांपायडवानांसर्वत्रनिरपेक्षाणां कृष्णोच्छयाभागवतः पौत्रोजातइतिबक्ष्यन् पूर्वश्रीकृष्णोराजर्षः पायडवश्रेष्ठ स्यभक्त्युद्रेकमाह अपीपलिक्तित्रिभिः कृष्णापादानुसेवया कृष्णापादयोरनुवृत्त्यासर्वेश्यः ऐहिकामुष्मिकेश्यः कामेश्योनिस्पृष्टोगतस्यद्दः पितृवद्पत्यस्थानीयाः प्रजाःअपीपलद्यालयत् ॥ ४॥

#### भाषाटीका ।

शौनकवोले अश्वत्थामाके चलाये हुये अस्त्रसे उत्तरा का गर्भ नष्ट हुआ था ईश्वरने फिर जिवाय लिया ॥ १ ॥ उस महा बुद्धिमान् महात्मा परीक्षित का जन्म कर्म अंतर्धान होके परलोक जाना जैसा हुआ ॥ २ ॥ यह वृत्तांत हम सुनने चाहते हैं यदि आप कहना उचित समुझें तो जिसको शुकदेवजी ने ज्ञान दिया है उनकी कथा हम श्रद्धा- छुओं से कहिये ॥ ३ ॥

सूतजीवोले धर्मराज युधिष्ठिर पिता की नाई प्रजाका संतोष करते हुये श्रीकृष्या चरण सेवासे सव कार्मो से निःस्पृह होकर प्रजा

कों को पालन करते भये ॥ ४॥

#### श्रीधरखामी।

क्रतवस्तदुप जिता लोकाश्च ॥ ५ ॥

सुरङ्णाहीः सुराणां स्पृहणीयाः त सम्पदादयः कामा विषया राज्ञः कि मुदं प्रीतिमधिजहरुः न कृतवन्त इत्यर्थः । अत्र हेतुः मुकुन्दे

एव मनो यस्येति । श्रुधितस्य अन्नैकमनसः यथा इतरे सक् वन्दनादयः प्रीति न कुर्विति तेद्वत् ॥ ६ ॥

प्रस्तुतमाह मातुरिति । स परीक्षित् ॥ ७ ॥

पुरटं सुवर्णी स्फुरन् पुरटमौिल्यंस्यास्ति तम् । ब्रीह्यादिश्यश्चोति इनिप्रत्ययः । अपीच्यमतिसुन्दरं इश्यते इति दर्शनं रूपं यस्य तिङ् द्वत् वाससी यस्य तिङ्द्वाससमिति श्यामामिति च पदाश्यां विद्युद्धृषितमेघोपमा सूचिता । अच्युतमविकारम् ॥ ८॥

# श्रीवीरराघव ।

तत्सेवयास्पृहाभावहेतुत्वसेवसदृष्टांतमाहसंपद्दतिद्वाभ्यांयथाक्षुधितस्यअश्चनयायुक्तस्यपुंसद्दतेस्वक्वंद्नाद्यानसुदमावहंति कित्वशन
मेवतथाहेद्विज! येसंपदादयः तेतेकामाःसुरस्पार्हाःसुराग्धामिपस्पृहग्धीयाअपिमुकुंदगवमनोयस्यतस्यराक्षोयुधिष्ठिरस्यमुद्मिधिजहुःकिसंपा
हितवंतः नसंपादिवंतः पवत्यर्थः तत्रसंपदोभोग्यभोगोपकरग्धादिसमृद्धयः स्वर्गादिसुखसाधनान्यश्वमेधादीनिलोकाः करप्रदाजनाः
हितवंतः पतन्यः भ्रातरोहिग्विजयिनोभीमाद्यः महानिष्टंटकापृथ्वीत्रिदिवंगतंत्रिदिवंपर्यतन्याप्तंयश्रश्र ॥ ५ ॥ ६ ॥
भिद्याः पत्न्यः भ्रातरोहिग्विजयिनोभीमाद्यः महानिष्टंटकापृथ्वीत्रिदिवंगतंत्रिदिवंपर्यतन्याप्तंयश्रश्र ॥ ५ ॥ ६ ॥
भावत्राभीताः

स्वरगतः ब्रह्मास्त्रतेसाद्द्यमानः कंचित्युरुषंददर्श ॥ ७॥

# आस्त्राम्बर्गहं नेहिंसीहैं

कथंभूतमंगुष्ठपरिमितामात्राउत्राहोयस्य निव्यतेमुळ्देहुजंगस्यस्पुरत पुरदोहिरगमयोमीळिः किरीटंयस्यअपीच्यंहृष्टपुष्टांगतयास्पृह-गीयंदर्शनंयस्यअग्नितापनिर्मेळीकृतकांचनमयेकुंडळेयस्यक्षतजेरकेअक्षिणीयस्यगदापाणीयस्यत्मुरुक्कस्यांगारस्येवाभायस्यास्तांगदांमुहु मुद्दुः परितः सर्वतः दिशोग्नामयंत्रस्थातमांभ्यारकम् ॥ ८॥ १०॥ १०॥ १००० १००० १००० १००० १०००

# अविजयध्वजः।

पतंदवरूपष्टमाह संपद्दति॥ ५॥

कामातुरस्यार्थाः विषयाः विरक्तस्यमुकुंदमनसे।युधिष्टिरस्यार्थाः कि पुरुषार्थत्वेननार्थाः । कुतर्दाततत्राह नेति यथाश्चिषितस्येतरे वीगादियोनतृष्तिकुर्वति तथांऽतेदुः खहेतुत्वात्तेमुदंनाकुर्वित्रत्यर्थः । अननवैराग्यातिद्ययोमोक्षेसुस्नातिद्ययोदर्शितः ॥ ६ ॥

कंचिछोकविलक्ष्माम्॥७॥

स्फुरत्पुरटमौक्तिनंददीप्यमानस्वर्णमुकुटम्आपीच्यदर्शनंषोडशवर्षवद्दरयमानंमेघश्यामम् ॥ ८॥

#### सुवोधिनी।

ननुवैराग्यंकुत्रोपयुज्यते तस्यचराज्यस्यचविरुद्धत्वात् इत्याशंषयनसाधनत्वेनात्रवैराग्यं किंतुभक्तेरानुषीगक्षमिति तिन्निरूपयिति संपद्दति राज्यधनाश्वादीनांसम्पत्तयः आधिक्यंकतवोराजसूयादयः विष्ठा ! इतिसम्बोधनम् अस्मिन्नर्थेसंवादार्थेमहिषीद्रौपदीभ्रातरोभीमा स्यः महीसर्वापिराजत्वाच्छास्रतोमहीपौरुषेनाधिपत्यमितिभेदः अर्ज्जुनेनेद्रोऽपिजितइतित्रिदिवंगतंयद्यः एतेभगवत्रुपया स्वतः सिद्धाः ॥ ५॥

अतएव अकामाः हृदयेनागताइतितइत्युक्तंवस्तुतः एतेविषयादेवयोग्याः मनुष्यस्यकाम्याभवंति नतुविष्णुभक्तस्ययस्तुवहुकामयते बहुद्याप्तंभवति तस्यनश्चद्रेषुकामनाप्राप्तेष्वपि मुकुन्देमनोयस्यमोक्षएवयस्यमतः तस्याप्येतद्भवति किमुतद्दातरिद्विजाइतिपूर्ववत् सम्बोधनम् किमुदमधिजहुः अपितुनकृतवंतप्वेत्पर्यः विषयाग्रांस्वधर्माजननेदृष्टान्तमाह क्षुधितस्येतिइतरेस्त्र्यादयः॥६॥

पवंराक्षोमाहात्म्यमुक्त्वातद्वशेखभावत एवायमेतादृशद्दिविषयमाहात्म्यमेवाह मातुर्गभगतद्दित मातुरित्यसमासात् गृहद्वभिष्ठ तयास्तुतिरुच्यते अतोगभगतक्षेशोनिवारितः पूर्वमेवक्षानादिसहितः केवलंगभ्रेप्राप्तः वीरद्दितदाम्नानवद्धः पराक्रमसहितप्वतिष्ठति भगवतः साक्षात्परब्रह्मगाः दृष्ट्यादेवैद्दाम्नावधनस्याकृतत्वात् अत्रदेवावैराजन्याद्दिश्रुत्यथेऽनुसंधयः वीरःसद्दितसम्बधः अत्रविश्वासा विसम्वाधनम् तदादह्ममानप्वब्रह्मास्रतेजसावीरत्वात्तदवगगाय्यकंचित्रपुरुषंददर्शभगवात् सर्वकार्य्यनिष्पाद्यसर्वदैत्याप्रवेशायसर्वतस्य सहितः तद्रक्षार्थमुद्देपविष्टः परिभ्रमतिस्वोपकारक्षापनायतत्प्रत्यात्मानं प्रदर्शितवान्वदेप्रसिद्धानियानिक्षपाणि तत्रयत्प्रथमंभाविषतु मध्यशक्यंतेनक्षपेगाप्रकटः तितपः स्वधमसहितोददर्श"अतप्तत्वनुनतदाप्नोती"तिश्चतेःकंचिदितिविशेषणकारेगानिवर्चचनीयम् ॥ ७ ॥

तद्र्पमनुवर्णायति अंगुष्ठमात्रमिति "अंगुष्ठमात्रःपुरुषोऽगुष्ठंचसमाश्रितः ईशःसर्वस्यजगतः प्रभुःप्रीणातिविश्वभुगि"तिश्रुतेः ब्रह्म स्वादंव अमलमतिख्वच्छंगभेतिविध्वमानस्यतन्मलसम्बन्धः सम्भवतितद्वचाष्ट्रत्ययमुक्तंस्फुरत्पुर्द्यमौलनमिति दाहोत्तीर्णासुवर्णमुकुट युक्तम् अनेनेश्वर्यज्ञापितम् अपीच्यदर्शनम् अपीच्यक्षंदर्शनंयस्यप्रियः स्त्रीणामपीच्यद्यतिश्रुतेः सौंदर्यदर्शनस्यनिकषत्वात् अपीच्यवत् इर्शनंयस्यतिसर्वसुन्दरः अनेनलक्ष्म्याश्रयत्वं प्रतिपादितंद्रयाममितिवैष्णाविसद्धान्तसिद्धम् अनेनभक्ताश्रयत्वं निक्रिपतंतिद्धाससंस्थितं विद्युन्तिमवस्त्रम् अनेनपूर्वविशेषणासिहतेनसर्वकामवर्षत्वं प्रतिपादितंद्रयाममितिवैष्णाविसद्धान्तिसिद्धम् अनेनभक्ताश्रयत्वं शिक्षितंतिस्विकामवर्षत्वं स्त्रायांसामर्थ्यक्षापितम् ॥ ८॥

# श्रीविश्वनायचकवर्ती।

सम्पदादयस्तथा सुराणामपि स्पृहैव स्पार्हः स्वार्थे अग् स येषु ते सुरस्पार्हाः कामाः भोगाः राज्ञः कि मुद्दम् अधिजहूर्नेव कृतवन्त इत्यर्थः । तत्र हेतुर्मुकुन्दमनस इति । इतरे स्रक्चन्दनादयः ॥ ६ ॥

प्रस्तुतमाह मौतुर्गदर्भगतोऽपि वीर इति स्वाभाविकवीरत्वेनैवास्त्रतेजसस्तस्मात् ( न ) अविश्यदित्यर्थः । दद्दें।ति तन्मनोनयनाश्यां भगवद्वपे एव स्वविषयप्रहणारम्भः प्रथमतः कृत इति भावः ॥ ७ ॥

अङ्ग्रष्टमात्रमिति आत्मनः सर्वतो विश्वगर्मे तावन्मात्रस्थैवावकाशस्य स्थितत्वात तत्प्रमाणमेव भगवत्युपचरितम्। वस्तुतस्तु तावस्यपि देशेऽचिन्त्यशक्ता यथावतप्रमाणमेव भगवन्तं ददर्श न त्वन्यथा। गर्द्भो इष्टमनुध्यायन् परीक्षेतः नरेष्विह इत्युपरिष्ठादुक्तेनरलोकं
सत्परीक्षणान्यथानुपपक्तेः। अतपव अपीच्यमन्यूनातिरिक्तत्वादित्तुन्दरं इश्यत इति दर्शनं रूपं यस्य तम्। पुरद्रमोलिनमिति विद्यादिनस्वादितिः। श्यामं तिहद्वाससमिति पद्याद्र्यां विद्युद्भूषितमेद्यो वद्याख्यवानस्वव्यामान्परीक्षित्कलभन्नाणायः सहसैवोक्तराकुक्षिनमिति
प्रादुरभूदिति द्यातितम्॥ ८॥
प्रादुरभूदिति द्यातितम्॥ ८॥

# श्रीमद्दीर्घचतुर्वाहुं तप्तकाश्चनकुगडलम् । चतुर्जाच्चे गदापाशिमात्मनः सञ्जतो दिशम् ।

परिभ्रमन्तमुल्कामां भ्रामयन्तं गदां।मुहुशा ६ ॥ अवस्य विकास विकास

च्रस्रतेजः स्वगदया नीहारामिव गोपातिः ।

विधमन्तं सन्निकर्षे पर्येचित क इत्यसौ ॥ १० ॥

विधूय तदमेयातमा भगवान् धर्मगुब्विभुः।

मिषतो दशमास्यस्य तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥ ११ ॥

ततः सर्वगुगोदर्भे सानुकूलप्रहोदये।

जज्ञे वंशधरः पागडोर्भूयः पागडुरिवौजसा ॥ १२ ॥

#### सिद्धांतप्रदीप।

तेसम्पद्वादयां मुद्रमाधिजहुः सम्पादितवन्तः किनैवश्चिष्ठितस्येतरेस्रक्चन्दनादयोयथा॥६॥

अधभगवद्दर्शनपूर्वकंपरीक्षिज्जन्माहमातुरितिसार्द्धःषड्भिः सपरीक्षित्॥ ७॥

"अगुष्ठमात्रंपुरुषंमध्येआत्मिनिसंस्थितं तंज्ञात्वामृत्युमत्येतिनान्यःपंथाविमुक्तयं" इतिश्रुत्युक्तमप्राकृतंमंगळविष्रद्दंश्रीकृष्णम् पतेनविष्रद्द स्यैवसर्वत्रव्याप्तिर्गम्यते दर्शनंतुतद्नन्यभक्तानामेवेतिचज्ञेयम् ॥८॥

#### भाषा टीका ।

यक्कोपार्जित परलोक (हे विप्र) महिषी भ्राता पृथवी जम्बूद्वीप का आधिपत्य खर्ग पर्यंत व्याप्त यश. ये सब देववांछित संपद भी (हे द्विजगणा) मुकुन्द निष्ठ मन राजा युधिष्ठिर को आनन्द पद नहुए जैसे श्लुधित को माला चन्दनों से आनन्द नहीं होता है ॥ ६॥ ६॥ हे भृगुनन्दन ! वह वीर माता के गर्भ में ही अस्त्र तेज से दग्ध होता किसी पुरुष को दंखता था॥ ७॥ अगुष्ठ के प्रमाणा, निर्मल स्फुर त्पुरट मुकुट सुन्दर दर्शन तिंदत् सम वसन स्थाम वरणा अच्युत ॥ ८॥

#### श्रीधरखामी।

तप्तं दाहोत्तीर्गं यत् कांचनं तन्मये कुग्डले यस्य । क्षतजाक्षं संरम्भादत्यारक्तनेत्रम् । (अहो मद्गकस्यापि गर्ब्भास्त्रपीड़ा इति क्रोबि

नात भावः १००८ ॥ अस्रातेजो विश्वमन्तं विनाशयन्तम् । नीहारं हिमं गोपतिः सूर्य इव । ( एवंबिधं गर्ञ्भगतो वालः ) सिन्नकर्षे समीपे ददर्श । इष्ट्रा च असी क इति पर्यक्षत वितर्कितवान् ॥ १० ॥

अमेयात्मा कर्य तद्विधूतवान् इत्यवितक्र्येरूपः। धर्मे गोपायतीति धर्मगुए दशमासपरिच्छेचस्य तस्य मिषतः पश्यतः। यत्रदृष्टः तत्रैवान्तर्हितः न त्वन्यत्र गतः यतो विभुः सर्वगतः॥ ११॥

उदर्कम् उत्तरं फलम् । सर्वगुगानामुत्तरोत्तराधिक्यस्चके लग्ने । तत्र हेतुः अनुकूलैरन्यैश्रेहेः सहितानां शुभग्रहागामुदयो यस्मित् ॥ १२॥

#### श्रीवीरराघवः।

गोपतिःसूर्यःनीहारमियस्वगद्याब्रह्मास्त्रतेजोविश्रमंतंनाशयंतंसंनिकर्षेश्यितमेवविधंपुरुषंकोसावितिपर्येक्षतपर्योद्याचित्वान्यतः पर्यक्ष तक्षतप्वप्रवृत्तिनिमित्तात्परीक्षिष्ण्यस्वाच्यश्चसंवभूतेरितिभावः ॥ १०॥

तद्वहारास्त्रतंत्रीविध्यानरस्यापरिमयोतमा ऽपरिच्छित्रखेरूपस्त्रभावः धर्मगोप्ताविभुभगवान्हरिदेशमेमासितस्यगभस्यविशिमिशतः

पद्यतः सतंत्रवाताहतवान् ॥ ११ ॥ ततः सर्वगुगादिकं सर्वगुगाधिकेतदेषाहसानुकूलप्रहहोदये आनुकुल्येनसाहतानांप्रहागांश्विमारहोनामुदयोयहिमन्लेप्रहति विशे व्यमध्याहर्त्तव्यं सानुकूलाग्रहा यस्मिननुदयेलग्नेवापांडोर्वेशधरः वंशवर्छनः पुनराजसापाण्डुरिवपाण्डुसदेशांज्ञे ॥ १२ ॥

Hick

्रा क्षित्र क्षि<mark>तिन्युक्षेत्रक्षित्र स्थातिन्युक्षेत्रक्षित्र स्थातिक्षेत्रक्षेत्र</mark> स्थापन

श्वतज्ञवद्वयो अक्षिणियस्य सत्यातम् आत्मनः ख्रास्य नेतोदि श्रेप्त्रीदि द्वाविद्व विद्वाविद्व प्रित्र मित्र प्रति । उत्का भागगनात्पतसार काविदेशवस्त्वर्शी गोपितः सूर्यः नीहारहि मेविश्र मेत्र प्रति । ए ॥ १० धर्मगोपायतिनिरीक्षतीतिश्रमेगुए धर्मे अत्माधनति क्षेपः देशमास्य स्यद्शमासार मेस्य क्षेप्र मार्थस्य स्यतः सत्र तिदेश विशुः समर्थोद्दरिः सर्वपापकर्षणाशीलः भगवान् व हु गोपेतः ॥ ११ ॥ । ११ ॥ ।

ततोहरदेशीनानंतरंसर्वगुगादिकस्वकलगुगात्तरफलेसानुकूलायेत्रहास्तेषामुदयोयस्मिन्सतथोकः तस्मिन्कालेपांडोर्वेद्राधरः संतानानु

च्छेदकर्ताञ्चाजसाभूयः पुनरुत्पन्नः पांडुरिवास्थितः ॥ १२ ॥

# क्रमसंदर्भः।

मीहारं विधमन सूर्य इवासी क इति पर्यक्षतेत्यन्वयः विभक्तिविपरिशामात् ॥ १० ॥ १२ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

# सुवोधिनी।

श्रीमद्दीर्घचतुर्वां श्रीमन्तोदीर्घाश्चत्वारोवाहवो यस्यस्थमक्षे भाकारःसम्यगीमव्यक्तानभवेदितिशंकयाएवमुक्तम् आजानवाहुत्वमुक्तं भवति पुरुषार्थचतुष्टयदानायचतुर्णाप्रदर्शनंगतिपर्यतिक्रयेतिदीर्घत्व मुभयतोलक्ष्मीसिहतयारंवकार्यनिर्वाहात् श्रीमत्वम्अनेनीह्कामुप्ति क्षफलदानंसृचितं तप्तकांचनकुराडलं तप्तकांचनवर्णोकुराडलेयस्यितसांख्ययोगयोः कुराडलत्वातसर्वविद्याप्रदत्वं सूचितंतप्तकांचन पदात्संतप्तदशायामेव ज्ञानपाण्तिरितिसूचितंश्चतज्ञाक्षं श्वतज्वलोहितवत् अक्षिणीयस्यवाधकदूरीकरणायप्रकटितकोधलेशयुक्तम् अने नमकरश्चायामासिक्तः सूचिताउग्रत्वाद्वासावधानत्वंसूचितंगदापाणिम्भोजःसद्दोवलयुतंमुख्यक्षमंगदांदधादितवाक्यात् आसन्ययुक्तं अनेनतस्यप्राण्यमनभयाभावः सूचितः किंच तेजोग्रासेवायुतत्त्वमेवसमर्थम् अतप्वतंजोग्रासार्थेवायुमेवगदांहस्तेगृहीत्वातिष्ठतिश्चा-धिक्येनिर्वापयिष्यामीतिआत्मनःसर्वतोदिशंपरिभ्रमंतंजीवस्यसर्वत्राहमितिज्ञापयितुरक्षा च प्रकृतेविशेषमाहउरकाभागदांभ्रामयंतमिति यस्यतेजोहतुत्वंक्षापयंतीगदास्वांतस्थंतेजःप्राकटयत् अतउल्काभावादश्चतेदैत्यानिवारणार्थमुद्धः गदांभ्रामयंतम् ॥९॥

पवंसर्वकार्यकृत्वास्त्राभिष्रेतार्थसिस्त्रोमध्येभोगार्थमंतर्धांनप्राप्तवानित्याहिवधूयेतिर्ताहिपरीक्षिताकथनरिक्षतइत्याहअप्राक्तत्वायअंतर्ज्ञा केष्रमेद्रश्लाहेतुः नन्वेतावतैवकथसर्वकार्यसेत्स्यतीत्याद्यंक्याह विभुरितिसर्वसमर्थः यथेवेच्छाततथेवकरोतीत्यर्थः दशमासपर्यतिस्यत्वापश्चादं तिहितः दशमासस्यदशमास्यस्यतिवापाठः मिषतद्दति अन्यत्रगमनदांकावारिताअन्यतोभगवान्नागतः किंतुतत्रवेवप्रकट्दतिह्यापियतुंतत्रवेदां-तरश्चीयतपूर्णहानोत्पत्तीवधूनांदुःखंस्यादितिशुकतुच्यगवायंप्राकृतद्दवकृतदत्याहहरितिति ॥ ११ ॥

प्रवंभगवरक्रपांप्राण्यमुख्येनाधिकारिदेहेनमहापुरुषत्वज्ञापनार्थमुख्येकालेप्रादुर्भृतइत्याहततइति सर्नगुणाउदकेंउत्तरफलेयस्यताहरोकाले कालस्यहिवहवोगुणाः तेकदाचिदुपकुर्वति अस्यत्वग्रेउपकरिग्यंतीत्यर्थः सानुकूलेग्रहोदयेभनुकूललग्नमहितानांग्रहाणामुदयोयश्रथनेन महत्तक्ष्यादिवहविभावितस्यस्वेफलं ज्ञातुंशक्यमित्युक्तं वंशधरः एतस्याग्रपुत्राभविष्यतीतिक्षापितपागडांवेशोगतएवरिणतः अनेनशृतइतिनित्य महत्त्वादसमर्थसमासः यथापांदुः राजकामनायामेवावतीर्गाः अध्यस्यज्येष्ठस्य राज्यानहेत्वात् तथापांद्ववानां भगवतासहवेष्ठगुरु गमनावश्यकत्वात् राजत्वायायमवतीर्गाद्वर्यश्चः ओजसाप्ययंपांदुत्वयः॥ १२॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती

क्षतज्ञाक्षं ब्रह्मास्त्रं प्रति क्रोधादत्यारक्तनेत्रम् ॥ ६ ॥ नीहारं हिमं गोपतिः सूर्य इव सूर्या यथा विधमति तथास्त्रतेजो विधमन्तं विनाशयन्तं पर्यक्षत कोऽसो वीरासनेन मामेयुक्ते।ऽपि रक्ष-तीति वितर्कितवान् ॥ १० ॥

धर्म मक्तवात्सल्यक्रपं खधर्म गोपायतीति धर्मगुण् (दशमास्यस्य ) दशमासण्रिच्छं धस्य तस्य मिषतः पश्यतः (यत्र दष्टः ) तत्रैवा न्यदं में नत्वन्यत्र गतः यतो विभुः । हरिरिति तस्य मनोऽपहृत्य तस्मिन्नवदधाने सत्यन्तदधे । चौरस्य लक्षण्मिद्मेव यद्धनवत्यवदधा निऽन्तर्भते दिति क्रुह्मामिन्नवत् तन्मनो हार्नुमेच तत्र प्रविद्ध आसोदित्युत्पक्षां च द्यातिता ॥ ११ ॥ निऽन्तर्भते दिति क्रुह्मामिन्नवत् तन्मनो हार्नुमेच तत्र प्रविद्धान । अवस्य वर्षक्षा च द्यातिता ॥ ११ ॥

The state of the s

सर्वगुमा। पत्र वर्दकः कत्तरकालभवं फलं यत्र तस्मिम् । अनुक्लेबेरेः सह वसीमाने उदये लग्ने ॥ १२ ॥

# तस्य प्रीतमना राजा विष्रेद्धीम्यकृपादिभिः।

हिरग्यं गां मही यामान हस्त्यश्वान्त्रपतिवरान् ।

प्रादात स्वन्नश्र विप्रेम्यः प्रजातीर्थे स तीर्थवित् ॥ १४ ॥

तम् चुर्वाह्मणास्तुष्टा राजानं प्रश्रयानतम् ।

एष द्यास्मिन्प्रजातंतौ कुरुणां कौरवर्षभ ? ॥ १५ ॥

देवेनाप्रतिघातेन शुक्ले संस्थामुषेयुषि ।

रातो वोऽनुप्रहार्थाय विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ १६ ॥

सिद्धांतप्रदीपः।

क्षतजाश्रामित्यनेनभक्तकलेशासाहिष्णुत्वंसूचितम् ॥ ९॥

विधमन्तनादायंतम् असीकइतिपर्यक्षतआलोचितवान्॥ १०॥

भगवान् श्रीकृष्णस्तद् स्रतेजोविधूयनिरस्य तत्रैवगर्भेएवदशमास्यस्यपरीक्षितः पश्यतप्वांतदेधेंऽतर्हितवान् एतेन्भगवतस्त्दीया नांचायुधादीनांवित्रहस्यापिस्वेच्छयेवाविभीवतिरोभावसामर्थ्यकालसम्बन्धवर्जितत्वंचप्रतिपादितम् अप्रमेयः गर्भेकुतआगतः कुत्रपुनर्गतः किमात्मकहत्येवमनुमातुमशक्यः किंतुवदेकवेद्यः वदेकवेद्यत्वंतु वेदान्तकौस्तुभे प्रागाधिकरगोपूर्वैःप्रपंचितम् ॥ ११ ॥

ं ततःकृष्णान्तर्द्धानानंतरम् सर्वगुणोदर्केसर्वगुणानामुत्तरोत्तराधिक्यसूचकेलग्ने अनुक्लैरन्यैर्प्रहैःसहिताः सानुक्लास्तेषांशुमग्रह समुदायोयस्मिन्तस्मिन् वंशधरःवंशकर्तापागडुरिवतत्तुल्योजह्ये॥ १२॥

#### ः भाषादीका ।

ं शोभायमान चारभुजावालं तप्तसुवर्णकुंडलवाले लालनेत्रवाले पुरुषकों गदा हाथमें लिये अपने चारों और घुमते अग्निज्वालावद गदाको घुमाते देखाथा ॥ ९ ॥

अपनीगदा से अस्रकेतेजको सूर्य जैसे कुहिरको नाशकरे तैसे नाशकरते पासमेकीनहै इस प्रकार देखतेथे ॥ १० ॥ धर्म रक्षक अप्रमेय स्वरूप भगवान उसतेजको नाशकर दशमासिकवालके देखतेही वहीं अंतर्धान होगये ॥ ११ ॥ तदनंतर सब गुगा युक्त सुंदर ग्रहों केउदयकं कालमें पांडुराज कावशधर वलसे दूसरा पांडुसरीका पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ १२ ॥

#### श्रीधरस्वामी

जातकं जातकर्म । मङ्गलं पुरायाहम् ॥ १३ ॥

वरान् श्रेष्ठान् । खन्नं शोभनमन्त्रश्च । तीर्थवित दानकालज्ञः । यावन्न छिद्यते नालं तावन्नामोति सूतकम् । छिन्ने नालं ततः पश्चात् स्तकन्तु विधीयते । इति वचनात् नतः पूर्वमन्नं प्रादात् आमान्नं वा । प्रजातीर्थे पुत्रात्पत्तिपुरायकाले—पुत्रे जाते व्यतीपाते दत्तं भविति वाक्षयमिति स्मृतः । देवाश्च पितरश्चेव पुत्रे जाते द्विजन्मनाम् । आयान्ति हि नृपश्चष्ठ ! पुरायादमिति चान्नवन् । इति च । [ आयान्ति हि युहं तस्मात् सूर्य्यत्रहशताधिकम् । इति वा पाठः । ] ( स नृपतिः ) ॥ १४ ॥

हे पौरवर्षभ !। पुरूषां पुरुवंदयानाम् ॥ १५ ॥

शुक्ले शुद्धेऽस्मिन् प्रजातन्तौ । दैवेन कथम्भूतेन अप्रतिघातेन दुर्वारेगा । संस्थां नाशम् उपेयुषि गते सति । बोऽनुप्रहायीय यस्मात् प्रभवनशीलेन श्रीविष्णुना रातो दत्तः ॥ १६॥

# 

ततः प्रीतंतृष्टमनोयस्यसराजायुधिष्ठिरः धाम्यक्रमाविभिविष्ठैः खुमक्रछंखाशिषंबाचिरवाजातकंजातकर्मकारयामासः ॥११ ॥ ततोनृपतियुधिष्ठिरोहिरगयाश्ववरान्कामान्यथायोग्ययथाभिलाषंचकामं प्राद्याद्विष्ठियः मायक्छस्पतीर्थविद्यावपाविद्याजाप्रवाद्यीयोवे त्रितिमित्तदानकालेखत्रं सुमृष्टमकं च विषेष्ठ्यः प्रादात्॥१४॥ त्रितिमित्तदानकालेखत्रं सुमृष्टमकं च विषेष्ठ्यः प्रादात्॥१४॥ हिर्गयादिभिस्तुष्टाबाह्ययास्तं प्रश्रयेगविनयेनावनतंनम्रराजानम् सुः॥१५॥

#### . श्रीवीररा<mark>घव ।</mark>

तदंवाहएवहीतिसार्द्धद्रयेनपुरूणांभवतांप्रजातंतीप्रजासंतानेनिमिचेशुक्लेगर्भपिडेसंस्थासुपेयुषिसातिहियस्मादेषजातः अप्रतिघातेनप्रति हतिरहितेनदेवेनप्रमविष्णुनासमर्थीभवनशीलनविष्णुनावोऽनुप्रहार्थोऽयंरातोरक्षितः॥ १६॥

# श्रीविजयष्वजः।

जातकंजातकर्म मंगलंपुगयाहम् ॥ १३॥

तीर्थंशास्त्रपात्रवावेत्तोतितोर्थंवित पूजातीर्थेपुत्राख्यशुद्धजलेपुत्रजनमकालवासतीर्थविदित्यकवापदंसतीर्थंइत्यर्थः ॥ १४ ॥

प्रश्रयानतप्रावरायगुगावनतंकुरूगांकुरुवंशजातानाम् अस्मिन्कुलेप्रजातंतौपुत्राख्यसंतानसंस्थांविनाशमुपेयुषिगच्छतिसतिवोयुष्माषम् जुम्रहाख्यप्रयाजनायप्रभविष्णुनारातोदत्तर्शतयस्मात्तस्मात्रलोकेनाम्नाविष्णुरातर्शतेवृहच्छ्वाविख्यातयशाभाविष्यति ॥ १५ ॥ १६ १७ ॥

# सुवोधिनी ।

तस्यप्रासंगिकंकृत्यमाद तस्येति यद्यपिगाभिकवेजिकभेनोनास्ति तथापि अपूर्वपक्षमाश्चित्यअष्टाचत्वारिशत् संस्कारान् वदन् जातकर्माह सूर्द्धाभिषिकस्यस्वतः करणायोगात् विप्रेरित्युक्तंश्रोम्यः पाँडवपुरोहितः कृपःपरंपरागतः जातकंकमेनामधेयंमंगळंपुरयाह वाचनम् ॥ १३ ॥

जन्मात्सवमाह हिरग्यमिति महीवृत्तिकरीभूमि वरान् अभिमताशीन् खन्नंआमंगोधूमादिप्रजातीथे"देवाश्चिपितरश्चे"तिवाक्यात् पुत्र जन्मनिसर्वदेवतासांनिध्यात् प्रजातीर्थदत्युक्तं वैदिकेकमिणिज्ञानादेवफलमितिअस्यतीर्थत्वेनाप्रसिद्धत्वात्फलंनभवेदित्याद्यंक्याह् सर्वेतीर्थ विदितितीर्थविद्धिः सहितः अतस्तदुपदेशात् ज्ञात्वाकृतवानित्यर्थः॥ १४॥ 🕠

अस्मिन्वालकेद्वेधाप्युत्कर्षोऽस्तिभगवत्कृतः कालकृतश्चतत्रभगवत्कृतंयेवसिष्ठादयोत्राह्मणाः सर्वेद्धाः अतिदानेनसंतुष्टाः विनयेनन-म्रंगुह्यमूचुः एषद्दति प्रथमेनिर्दिशतियस्यगुणाअग्रेवक्तव्याः सएषेतिनिर्दिश्यते यथासोमिवकयएषद्दति इममर्थेद्धापयंतिहीति अस्मिन्नि-तिराजानं वालकंवेदयांश्चनिर्दिश्यप्रजातंतोषुत्रपौत्रादिरूपेवंशेकुरूणामिति कुरोभगवदीयत्वेनतद्वंशसंस्थायाअनुचितत्वाद्व प्रधानसं-स्थायामेव संख्याव्यपदेशाच्चपौरवर्षभेति पितृभक्तत्वाच्चपूरोः॥१५॥

तस्यापिवंशसंस्थानुचितेति उपघातहेतुमाह दैवेनेतिवंशजनका नामहण्टंसमाप्तमिति विच्छेदकाहष्टेनवाप्रसंवजनकाहष्टस्य विच्छे दकप्रतिवन्धकस्यचाभावात् संस्थाअवश्यभाव्या अहष्टचनास्तिभगवां अवतेर्तिकमत्रभविष्यतीत्याशंकायां यथाकथंचित् वंशेनउभयं समाहितं भविष्यतीति आशंक्यतिविधार्थशुक्ठहत्युक्त्वादेववळंवळमितवाक्यात्संस्थामुपेयुषिसित अहष्टकाळादीनामनुकूळत्वात् केवळं मगवान्पुष्टिमार्गमाश्चित्यभवतामनुप्रहार्थाय पूर्वयोभवत्स्वनुग्रहः कृतः तस्यार्थः प्रयोजनिमदिमिति नापुत्रस्यळाकोऽस्तातिश्रुतेः अमृत त्वसम्पादकत्वाचभगवतः सामान्यभूतत्वाद्वंशस्यप्रजामनुप्रजायन्तेतदुतमर्त्यामितिश्रुतेः भगवताअयंरिक्षतः किंच स्वार्थमप्ययंरिक्षतः मागवतादिक्रपेगाप्रकर्षेगाउरुभविष्णुना सर्वेषुभागवततद्वक्तेषुभगवद्वाराआविभावेकरसेन अतोऽर्थप्रतिपादकंनामभगवतीतिसंक्षाशब्दापे श्रुयायौगिकशब्दस्यअजहत्स्वार्थेनमुख्यत्वात् ॥ १६ ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

बातकं जातकमे ॥ १३ ॥ प्रजातीर्थे पुत्रोत्पत्तिपुरायकाले पुत्रे जाते व्यतीपाते दत्तं भवति चाक्षयमिति स्मृतेः ॥ १४ ॥ पुद्धग्रां पुरुवंदयानां प्रजातन्तौ संस्थां नाशम् उपयुषि प्राप्ते सति । शुक्ले शुद्धे रातो दत्तः ॥ १५ ॥ १६ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

सुमङ्गलपुरायाईवाचायित्वाजातकं जातकर्मकारयामास ॥ १३॥

सयुधिष्ठिरः प्रजातीर्थेपुत्रपौत्राद्युत्पत्तिकालेतीर्थवित् दानिकयाविषयेतीर्थानि देशकालपात्रदेयवस्त्वादीनिजानातीतिसतया ॥ १४॥ प्रश्रयानतंविनयेननम्रंतराजानमूचः हेकौरवर्षम । कुरुणांवंदयानांभवतांप्रजातंतौविषयेपषः रातद्दतिद्वितीयेनान्वयः ॥ १५॥

्र शुक्लेनिर्दोषेगर्भसंस्थांनाशमुपेयुषिसति अप्रतिघातेनस्वेष्सितकर्मसुप्रतिभदरिहतेनदैवेनप्रभविष्णुनाभक्तकार्यार्थसर्वत्रप्रभवनशिलेन विद्यानाश्रीकृष्योनवोऽतुत्रहार्थायरातोदत्तः॥ १६। १७॥ राजीवाच ।

तस्मात्राम्ना विष्णुरात इति छोके बृहच्छ्रवाः । भविष्यति न सन्देहो महाभागवतो महान् ॥ १७॥

त्र्रप्येष वंश्यान् राजधीन् पुरायक्षोकान् महात्मनः ।

त्र्यनुवर्त्तिता खिद्यशसा साधुवादेन सत्तमाः ॥ १८ ॥

ब्राह्मणा ऊचुः। पार्थ ! प्रजानि

पार्थ ! प्रजाविता साल्वादिक्षाकुरिव मानवः ।

ब्रह्मग्यः सत्यसन्धः रामो दाशर्राधर्यथा ॥ १६ ॥

एष दाता शरगयश्च यथा ह्यौशीनरः शिविः।

यशो वितनिता स्वानां दौष्यंन्तिरिव यज्वनाम् ॥ २० ॥

#### भाषाटीका ।

राजा युधिष्ठिर प्रसन्न मन होकर थीम्य कृपाचीर्य्य इत्यादि ब्राह्मगों से पुगयाह वाचन कराकर उस बालक का जात कमें करा ते भये॥ १३॥

दान काल के जानने बाले राजा युधिष्ठिर पुत्रोत्पत्ति पुगय काल में सुवर्गा गौ पृथ्वी श्रेष्ठ ग्राम हस्ती घोड़ा उत्तम अन्न ब्राह्मणों को

देते भये ॥ १४ ॥

वाह्यता सन्तुष्ट होकर विनय से नम्रीभूत राजा युधिष्ठिर से बोले कि हे कौरभर्ष ये बालक कौरवों के प्रजातंतु को ॥ १५ ॥ अनिवार्थ्य देव सें नारा होने पर आप के अनुग्रहार्थ प्रभवन शील विष्णु भगवान ने दिया है ॥ १६ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

तस्त्राव्लोके विष्णुरात इति नाम्ना भविष्यति महाभागवतश्च गुर्णेश्च महान् भविष्यति नात्र सन्देह इति तं राजानं ब्राह्मणा ऊचु-रिति त्रयाणामन्वयः ॥ १७॥

महाभागवतो भविष्यतीत्युक्ते हृष्टः पृच्छति । अपि खित (किं खित् ) साधुवादं न यशसा सत्कीत्यो अनुवर्त्तिता भविष्यति इति

पूर्वस्यवातः परमप्यनुषद्गः॥ १८॥

प्रजानामविता रक्षकः। मानवः मनोः पुत्रः। ब्राह्मगोषु हितः सत्यप्रतिज्ञश्च श्रीरामो यथा॥ १९॥

उशीनरदेशाधिपतिः शिविः येन स्वमांसं ( इयेनाय ) दत्ता शर्गागतः कपातो रक्षितः। स्वानां ज्ञातीनां यज्वनाश्च यशोविस्तारकः।

#### श्रीवीरराघवः।

तस्माद्विष्णुनारातत्वरूपप्रवृत्तिनिमित्तनाम्भावाचकेनशब्देनलोके विष्णुरातइतिप्रसिद्धोवृहच्छ्वाविपुलकीर्तिगुंगोमहान्महाभागवतश्च भविष्यतिनात्रसंदेहः॥ १७॥

विषेरेवमुक्तोयुधिष्ठिरः तस्यमाविनागुणान् बुसुन्सुः पृच्छतिअपिस्तिदित्येतद्वयंसमुदितंप्रश्नस्योतकं हेसंत्तमाः ! एपजातः शिशुः सा धुवादेनसाधूनामुपदशेनहतुनामहात्मनः पुगयश्योकान् वंश्यान् राजधीक्ष्पांड्वादीन् अनुवार्तितास्विद्युवार्तिध्यात किपांड्वादिवद्यशस्त्रीभविष्याति इति प्रदनः साधूनांवादोयस्मिन् विषयभूतेतेनयशसानुवित्तिवास्विदितिवान्वयः ॥ १८॥

पवमापृष्टाजातकोविदाबाह्यगास्तस्यभाविनोगुगान्वर्णयंतिपार्थत्यादिदश्यिः नकेवलिमतरसाधारगौकगुगामवानुवर्त्तिताअपितृतत्त दसाधारगागुगान् सर्वानपीत्याद्वः हेपार्थ! मानवः मनोर्वेवस्वतस्यसुतदृश्वाकुरिवसाक्षात्प्रजाविताप्रजानामवितारक्षितायथादाशरथिर्वश रथपुत्रः श्रीरामस्तद्वहृह्यगयःब्रह्मकुले साधुः सत्येयाचकेसंधाददाभिक्विर्यस्य तथाभूतस्यग्वदाताआत्मपर्यतदाताशरगयः शरगारक्षगो पायमहैतीति ॥ १९ ॥

यथौशीतरः उशीनरसुतः शिविश्वकवर्तीतद्वद्वाताशरणयश्चदीष्कृतिरिवभरतद्वयज्वनांयष्ट्यां यंशोवितनितायशसोविस्तारियता॥२०॥

#### श्रीविजयध्वजः।

ब्राह्मग्रावचनानंतरं युधिष्ठिरस्तामप्राक्षीदित्याह अपीति हैसन्तमाः । अपिशब्दस्यस्विदित्यनेनान्वयः साधुषुवादोयस्यसत्यासाधु-रितिवादेशवा ॥ १८ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

हेपार्थ ! पृथायाः सृत युधिष्ठिर मानवोमनुपुत्रः प्रजानामविता दाशर्राथः दशरणपुत्रः सत्यसंधः सत्यप्रतिज्ञः ॥ १९ ॥ श्रोद्यीनरः उद्योनरपुत्रः दौष्यंतिः दुष्यंतपुत्रद्वयज्वनांययाविस्तारकर्तातथायमपिखानांखवंशजन्यानांयशोवितनिता ॥ २० ॥

# क्रमसन्दर्भः।

अप्येष वंदयानित्यत्र द्वष्ठ इति टीकायां हर्षेणीव पुनः प्रक्रोऽयं न त्वपूर्त्येति भावः। वस्तुतस्तु तथात्वेऽपि राजश्रेष्ठताज्ञानार्थे पुनः प्रक्षः॥ १८—२३॥

# सुवोधिनी।

नाम्नाविष्णुरातइतिलोकप्रसिद्धोभविष्यतीत्यर्थः कारणोत्कर्षमाह वृहच्छ्वाइति भवदाद्यपेक्षयापि अधिककीर्तिमाः निहभवंतएवं रिक्षिताः नकालोनियुर्हातः नवाभागवतंप्राप्तमिति संस्थाप्रापककालादेः प्रतिवंधकत्वात् कथमेवंभविष्यतीत्याशंकायामाह नसंदेहइति तत्रहेतुः महाभागवतइतिभागवतस्यमहत्त्वं भगविष्यदेवेहतुः तद्दिमन्लक्ष्यणादिना अवगम्यते अत्रएवकालादीनांनात्रोपकारजनकत्वं तदुत्तरत्रप्रदनोत्तराश्यां निक्षपिय्थ्यते किंच यथाकालादिश्योभगवतावलंदत्तं तत्रोऽप्यस्मैवहुदत्तमिहनास्मिन्शंकाविषयहत्याह महानिति॥ १७॥

एवंमहद्भिरथैंनिकपितेकालाद्भयं मन्यमानः सर्वेकालकृतं मन्येइत्युक्तत्वात्कालकानंपृच्छति अप्येषइति भगवत्कपाव्यतिरेकेगापि यथाकालेनास्मद्धशारक्षिता यशस्विनश्चकृताः तथायंकिमविष्यतीतिषद्भनः वंशेष्वपियपुणयद्दलोकाः पुरूरवःप्रभृतयः तत्रापियमहात्मानः

कुरुशदृशाः यशः सर्वजनीनंसाधुवादः सद्भिरेवक्रियमागाः चरित्रस्यभावोत्कर्षीवावेदार्थसर्वज्ञाः सत्तमाः॥ १८॥

तत्रसर्वमेवकालोत्कर्षमाहपार्थेति यद्यपिभगवताएवंरिक्षतुंदेहोऽनुचितः तथापिहेपार्थे ? अयंसाक्षात्प्रजावितानमंत्रिद्वारास्वयमेवे शादिकरणात् यद्यपिमनोवेहवः पुत्राजाताः अथाप्यंतवंशकृत् इक्ष्वाकुरेवजातः तस्ययथाप्रजापालनमविच्छिन्नमेवमस्यापिशञ्चामित्रादि शादिकरणात् यद्यपिमनोवेहवः पुत्राजाताः अथाप्यंतवंशकृत् इक्ष्वाकुरेवजातः तस्ययथाप्रजापालनमविच्छिन्नमेवमस्यापिशञ्चामित्रादि अधिकरणात् यद्यपिमनोविच्छन्नमेवमस्यापिशञ्चामित्रादि अधिकरणात् सर्वश्ववद्यामित्र वन् अधिकरणात् स्वत्यस्थाप कालस्यापकारजनकत्वं स्वच्छयाभगवत्यपीति भगवदृष्टांतः ॥ १९ ॥

वासगमगात् वारापार्वा प्रति वारापार्वा प्रति प्रति वारापार्वा कियान्य उद्योगरवंद्योत्पन्नः शिविःतस्यसमुदायकीर्तिरेवप्रसिद्धा इन्द्राग्निसं-चादेदौष्कंतिभेरतः सर्वस्यापिस्रोमवंदास्ययदाः प्रदःयज्विनांचराताश्वमेधकरणात् सर्वत्रचकारेणपूर्वोक्तसंवंधः दृष्टान्तिकंदाष्ट्यीतिके

चावगन्तव्यः ॥ २० ॥

773.

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

वालस्य तादशयोग्यतायामश्रद्धानं राजानं प्रत्याह न सन्देह इति॥ १७॥ । त्रहाभागवतो भविष्यतीत्युक्ते राजैव सान्तश्चमत्कारं सगाम्भीयं पुच्छति अपि स्वित् प्रश्ने। अनु लक्ष्यीकृत्य वर्त्तिता। तेषां शदश भविष्यति न वेत्यर्थः॥ १८॥

तेषां सहशो यशसेति कि पुच्छ्यते यैरेव एकैकैर्गुगौस्ते सर्वे यशस्विनः आसन् ते सर्वे एव गुगा अस्मिन वालकेऽधुनैव सन्ति यथा 'वसरमाविभविष्यन्ति तस्मादेतज्ञुल्यास्ते न बभूबुरिति प्रतीयतामित्याशयेनाहुः पार्थेति । प्रजानाम अविता रक्षकः । सत्यसन्धः सत्य

क्षरण देश । उद्योनरदेशाधिपतिः शिविः यन स्वमांसं इयेनाय दत्त्वा शरगागतः कपोतो रक्षितः । दुष्यन्तपुत्रो भरतः ॥ २०॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

हेसत्तमाः ! एषविष्णुरातः साधूनांवादाः प्रशंसाशब्दोयस्मिन्तेनयशसाराजषीत् अनुवर्तिता अनुवर्तिष्यतिस्वित् ॥ १८ ॥ मानवःमनोःश्राद्धदेवस्यपुत्रः प्रजायाअवितारक्षिता ब्रह्मचयः ब्रह्मशब्दवाच्यानां ब्रह्मब्राह्मणवेदानांहितकृत् सत्येसंधामिसंधिर्य-स्यसत्र्या ॥ १९ ॥ उशीनरस्यापत्यमोशीनरः स्वानांक्षातीनांयज्वनांषष्टृगां यशोषितिनतायशसोबिस्तारियतादीष्कन्तिर्दुष्कंतपुत्रोभरतइति ॥ २० ॥

#### भाषाद्यीका ।

तिससे यह बडा यशस्वी महाभागवत महात्मा नामसे विष्णुरात होगा इसमें संदेह नहीं है॥ १७॥

धन्विनामग्रगीरेष तुल्यश्रार्ज्जनयोईयोः । हुताश इव दुर्द्धर्थः समुद्र इव दुस्तरः ॥ २१ ॥ मृगेन्द्र इव विक्रान्तो निषेच्यो हिमवानिव। तितिक्षुर्वसुधेवासौ सहिष्णुः पितराविव ॥ २२ ॥ पितामहसमः साम्ये प्रसादे गिरिशोपमः । **त्र्याश्रयः सर्व्वभूतानां यथा देवो रमाश्रयः ॥ २३ ॥** सर्वेसद्गुगामहातम्य एष कृष्णामनुव्रतः । रन्तिदेव इवौदार्य्ये ययातिरिव धार्मिमकः ॥ २४ ॥

#### भाषा टीका।

राजा बोले हे सत्तमो ! क्या यह बालक वंश के पूर्व राजधीं पुरायश्लोक महात्माओं को साधु शब्दसे यशपूर्वक अनुवर्तन करेगा १८ ब्राह्मगा वोले हे पार्थ ! यह बालक साक्षात इक्ष्वाकुमनु के तुल्य प्रजा का रक्षक होगा ब्राह्मगा सेवक सत्यप्रतिक्ष श्रीराम दाशरथी दाता तथा शरणागत रक्षक उशीनर पुत्रशिवि के तुल्य होगा अपने बंधुओं का तथा यज्ञकर्ताओं के यशका विस्तारकर्ता दीष्यंति

भरत के तुल्य होगा॥ २०॥

# श्रीधरस्वामी ।

अर्जुनयोः पार्थकात्त्रवीर्ययोः ॥ २१ ॥ हिमवानिव सतां बिषेव्यः अनन्यगतिकत्वेन वसुधेव तितिक्षुः क्षान्त्या । प्रीत्या मातापितराविव सहिष्णुः ॥ २२ ॥ पितामहो ब्रह्मा तेन समः। साम्ये समत्वे। रमाश्रयो हरिरिव ॥ २३॥ सर्वः सद्गुर्णोर्यन्माहात्म्यं तस्मिन् श्रीकृष्णातुल्यः॥ २४॥

#### श्रीवीरराघवः।

धन्विनांधनुष्मतामग्रग्तीः श्रेष्ठः तत्रद्वयोरप्यर्जुनयोः कार्त्तवीर्यपार्थयोस्तुल्यइत्यर्थः हुताशोऽग्निरिवदुर्द्धेषः प्रसोद्धमशक्यः समु-द्रइवदुस्तरः अगाधाशयः॥ २१॥ न्दुरुवरः स्तानास्त्रात्रः पराक्रमीपादविश्लेपवान्वा हिमवानिवनिषेव्यः भूतानामुपजीव्यः असौशिशुर्वसुधेवभूमिरिवतितिश्चः सिंहइवविकांतः कर्त्तरिकः पराक्रमीपादविश्लेपवान्वा हिमवानिवनिषेव्यः भूतानामुपजीव्यः असौशिशुर्वसुधेवभूमिरिवतितिश्चः

प्रसहिष्णुः पितराविवमातापितराविवसहिष्णुः परापराधसहिष्णुः॥ २२॥ हिन्युः प्रतिकार्याः सर्वेभूतामहेनव्रह्मणासमस्तुल्यः प्रसादेज्ञानप्रसादेअनुत्रहेवागिरिशोपमोरुद्रतुल्यः सर्वभूतानांपुरुषार्थ लिप्सूना साम्यसर्वभूतसमत्वेपितामहेनव्रह्मणासमस्तुल्यः प्रसादेज्ञानप्रसादेअनुत्रहेवागिरिशोपमोरुद्रतुल्यः सर्वभूतानांपुरुषार्थ लिप्सूना माश्रयआश्रयितुंयाग्यः यथारमाश्रयः श्रीनिवासोदेवस्तद्वत् ॥ २३॥

सर्वेसहुणानिर्दुष्टागुणास्तत्कृतंमाहात्म्यंयस्मिन् कृष्णांभगवंतमनुब्रतः अनुवर्त्तिताकृष्णानुल्यसहुणमाहात्म्ययुक्तइत्यर्थः रंतिदेवदवो दारस्त्यागीं॥ २४॥

#### श्रीविजयध्वजः।

द्वयोरर्जुनयोः कार्तवीर्यपागडवयोः तुल्यः दुर्धर्षः दुःसहः॥ २१॥ तितिश्चः क्षमावान् पितरौइवसहिष्णुः सहनशीलः ॥ २२ ॥ साम्येसामंजस्ये पितामहस्यविरिचस्यसमः प्रसन्नतायांशिवसमः रमायाआश्रयःपतिः॥ २३॥ सर्वैः सतांगुणैः माहात्म्यमहात्मत्वंयस्यतथोक्तः अथवासर्वसङ्गुणमाहात्म्याविषयेक्वणांयादवेद्रमनुगतः तथाभूतः कृष्णमर्जुनम्वा ॥२४॥

# क्रमसंदर्भः।

तथापि साधारगाजनचमत्कारार्थे पूर्ववदन्यद्पि किश्चिद्बूम इत्याद्यः रन्तीति । किंवा बहुभिर्यथा खन्नानमुक्तत्वात् पाठकमो नात्र विवक्षितः। औदार्यमत्र दात्रवं तेन कारुपयं स्वयते॥ २४॥ २५॥ २६॥

भृत्या विलित्तमः कृष्णे प्रहाद इव सद्ग्रहः।
ग्राहतीयोऽश्वमेयानां बृद्धानां पर्य्यपासकः॥ २५ ॥
राजर्षीयां जनयिता शास्ता चोत्पयगामिनाम्।
निग्रहीता कलेरेष भुवो धर्मस्य कारगात्॥ २६
तत्तकादात्मनो मृत्युं दिजपुत्रोपसर्पितात्।
प्रपत्स्यत उपश्चत्य मुक्तसङ्गः पदं हरेः॥ २७॥

# खुवोधिनी।

थन्विनांश्रञ्ज देरागामर्जुनः पितामहः कार्चेत्रीयोऽर्जुनश्चचकारादधिकश्चकालिनग्रहात् हुताशोऽग्निः घर्षग्रमितकमभाक्षोल्लंघनिमित्रै श्ववत्दुस्तरःयुद्धेसेनायाःस्वस्यपराजयाभावः तरग्रांतद्वानित्यर्थःविकान्तःपराक्रमवान् देहापेक्षयाअधिककौशलत्रान् ॥ २१॥

मृगेन्द्रः सिंहःनिषेव्यादेवादीनामण्याश्रयः यथाहिमवान्महादेवादेनिदीणस्थानम् अतएवऋषिवासस्तत्रैवगुगोण्वेवदृष्टान्ताःसर्वत्र तितिक्षुः अतिक्रमणसहनवान् वसुश्रासर्वेसहातद्रदेशपसहनशीलः खस्मिन्नपराश्रसहनंपृथ्वीवत् तस्यैवान्यत्रसहनंपितृवत्॥ २२॥

पितामहोत्रहासाम्यंदेवदैत्पनरेषुतुल्यताप्रसादेअविचारितदानेगिरिशोमहादेवः आश्रयःआधारः अवलम्बनमितियावत् सर्वथायथा स्रक्षम्याभगवान् निदर्शनंस्पष्टार्थतत्साम्यमित्यर्थः॥ २३॥

धर्मादीनामिपरक्षकत्वात् सर्वेयावन्तःसद्धुणाः सत्यशौचादयः तेषांमाहात्वयंपरमोत्कर्षः तद्र्धेक्वष्णंभगवंतमनुव्रतः यस्यउपासत्त याक्कपातत्तुल्यइत्यर्थःरंतिदेवः नवमस्कन्धेवक्ष्यते यस्तुपुष्कसायजलंदत्वासंतुष्टः उदारोऽत्यंतदातृस्त्रभावः यथाययातिदेवयान्यांशुक्रदु-हित्रिभनुक्तायामिपमनस्तुतद्वतंबुध्वाधर्मोऽयिमृत्यंगीकृतवान् ॥ २४ ॥

#### श्रीविश्वनाषचकवर्ती।

षर्जुनयोः पार्थकार्त्तं वीर्ययोः ॥ २१ ॥ सर्वे सहापि बसुधा परेषां बाक्शरज्वालां नानुभवति अयन्तु तामनुभवन्नपि न प्रतिकरिष्यतीति अत्र दृष्टान्तः पितराविवेति ॥ २२ ॥ पितामहो युधिष्ठिरः । साम्ये सर्वत्र द्वेषाभावे । रमाश्रयो नारायगाः ॥ २३ ॥ एकस्यैवोपमेयस्यास्य सर्व्वेर्गुगौरेकमेवोपमानीकुर्वन्नाह । सर्व्वेः सद्गुगौर्यन्माहात्म्यं तस्मिन् एष कृष्णामनुव्रतः श्रीकृष्णातुल्यः २८

# सिद्धांतप्रदीपः।

ह्रयीःपार्यकार्तनीर्ययोः ॥ २१॥ २२॥

रमाश्रयःश्रीपतिः ॥ २३॥

सर्त्रैःपूर्वोक्तेः सद्गुणैर्यत् माहात्म्यंतिसम् कृष्णंभगवन्तमनुबतोऽनुवर्तिता ॥ २४ ॥

# भाषादीका।

धनुर्धारियों में होनों अर्जुन के समान अग्राणी (प्रधान) होगा। अग्नि के समान दुर्थर्ष और समुद्र के समान दुस्तर होगा॥ २१॥ सिंह के समान विक्रमी और हिमाचल के समान साधुओं का सेवा करने योग्य होगा। पृथवी के समान तितिक्षु और माता पिता के समान सहनशील होगा॥ २२॥

ब्रह्मा के समान समदर्शी और गिरीश (शिव) के समान शीघ्र प्रसन्न होनेवाला होगा। रमानाथ श्रीमगवान के समान सर्वभूता-

समस्त सद्गुणों के माहात्म्यमें यह श्रीकृष्ण का अमुत्रत होगा। रंतिदेवके समान उदार श्रीर ययाति के समान धार्मिक होगा २४

#### श्रीधरखामी

( श्रुत्या धेर्येगा । सद्यहः ) सन् भद्रो प्रहोऽभिनिवेशो यस्य सः आहर्ता कर्ता ॥ २५ ॥ राजवीताां जनमेजयादीनाम ॥ २६ ॥ द्विजपुत्रेगा प्रेरितात् तक्षकात् आत्मनो मृत्युम् उपश्चत्यहरैः एवं प्रपत्स्यते मजिष्यति ॥ २७ ॥

जिज्ञासितात्मयाधार्थी मुनर्व्यासंस्तादसी हित्वेदं सूप ! गङ्गार्था यांस्यत्यद्वाकृताभयम् ॥ २८॥ इति राज्ञ उपादिश्य विमा जातककीविदाः क्षदेधोपचितयः सर्वे प्रतिजग्मः खकान् गृहान् ॥ २९ ॥ स एष लोके विख्यातः परीचिदिति यत् प्रभुः गर्भे रंप्टममुध्यायम् परीचेत नरेप्विह ॥ ३०॥

# श्रीधरखामी ।

तत्रश्च जिज्ञासितमात्मनो याथार्थ्य येन स इदं शरीरं गङ्गायां हित्वा अकुतोभयं ५दं यास्यति ॥ २८ ॥

लच्या अपन्तितिः फूजा यैः ॥ २९ ॥

परीक्षिदिति नाम निर्वक्ति स एक इति । यद्यस्मात् प्रभुः समर्थः सन् गर्व्भे इष्टं पुरुषमनुष्यायश्विह इश्यमानेषु नरेषु मध्ये सर्वमपि तरं परीक्षेत अयंग्रसी भवेदिति नी वेति विचारयेदतः परीक्षिदिति विख्यातः। पूर्व दृष्टमिति वा पाठः॥ ३०॥

# श्रीवीरराघव ।

भृत्याधैर्येगावलिसमः वैरोचनितुल्यः प्रह्णाद्दवकृष्णाभगवतिभक्तद्दतिशेषः सद्प्रहः सैतांप्राहकश्चेषशिशुरश्वमेधानामाहर्ताऽनुष्ठातानृ द्धानां झानेन समुद्धानां पर्युपासकः यथाचितसेवकः ॥ २५॥

राजवींगांजन्मेजयादीनांजनीयताउत्पथगामिनांधर्ममागीतिवर्तिनांशास्ताभुवः पृथ्टयहितोर्क्ष मेर्यचकारगाक्रिमित्राद्ध र्रार्थे चत्यथेः

एषकलेनियहीतानियहीप्यति॥ २६॥

द्विजपुत्रेगो।पसर्पिताच्छापद्वारानियोजितात्त्रक्षकादात्मनः खस्यमृत्युमरग्रामुपश्चत्याकगर्यमुक्तोदेहतद्दुवंधिषुसंगोयनतथाभूतोहरः पदंस्थानंप्रपत्स्यतेप्राप्स्यति ॥ २७ ॥

पतद्वीपपादयतिव्याससुतान्मुनेः शुकाजिङ्गासितंविचारितंनिर्शीनीमितियावत् आत्मयाथात्मयप्रतात्मपरमात्मस्वरूपस्वभावतत्त्वदेह त्राचनान्य विकास विकास के तृष ? इदंशरीरंगगार्थात्यक्तवानास्तिकुतिश्चिद्धयंयस्मात्तद्धरः पदंधामस्पुरंयास्यति ॥ २८॥ तह्नुवंध्यसंगहेतुभूतं येनसाऽसीपरीक्षित् हे तृष ? इदंशरीरंगगार्थात्यक्तवानास्तिकुतिश्चिद्धयंयस्मात्तद्धरः पदंधामस्पुरंयास्यति ॥ २८॥ -इत्थराज्ञेयुधिष्ठिरायतद्गुणकर्मादिकमुर्पादश्यावेद्यजातकमधिक्ठत्यप्रवृत्तेज्योतिःशास्त्रकोविदाअतिनिषुगाविप्राः सर्वेलच्याऽपचितिर्वहु

मतिर्थेस्तथाभूताः ख्वकान्गृहान्प्रतिजम्मुः॥ २९ ॥

सजातककोविदैरतुवर्शितेभाविशुगाराषडसरासुतः परीक्षिदितिलोकविस्यातः कुतः वद्यस्यात्रशुररम्स्यसुतोगभेमातृह्रहरेष्टप्रंपुर्व सजातककाविद्यवासारमा अवस्थित परीक्ष्यश्रीकृष्ण्यस्यवस्यदित्यर्थः ततः प्रवृत्तिर्गमत्तात्परीक्षिक्दद्याच्योविख्यातदत्य भ्यायिवहलोकेनरेषुतंपुरुषंपरीक्षितवानितियावत् परीक्ष्यश्रीकृष्ण्यस्यवस्यदित्यर्थः ततः प्रवृत्तिर्गमत्तात्परीक्ष नः भूजनवक्षतकारजन्माजातम्बद्धाः इत्यायादिकसूत्रे ईक्षतेर्ग्रहणाभावऽपिवाद्वलकादितिप्रत्ययेहरित्सरिदादिशद्धवत्साध्यः ॥ ३० ॥ ति च प्रायिकः पाठोद्दश्यतेद्वसृथिहयुषिभ्यः इत्यायादिकसूत्रे ईक्षतेर्ग्रहणाभावऽपिवाद्वलकादितिप्रत्ययेहरित्सरिदादिशद्धवत्साध्यः ॥ ३० ॥

# श्रीविजयभ्वजः।

धृत्योधर्ये गृह्णातीविष्रहोभक्तिः संतीभाक्तियस्यसंत्रधोक्तः "अंबुवदग्रह्णानुनतथात्वम् ॥ ३११८॥ इतिस्त्रात्॥ २५॥ राजधीर्यांकुमाराणांजनियताउत्पादकः उत्पथगामिनाम्असास्त्रविहितमार्गवर्तिनांशास्ता धर्मस्थमगवतः दुःस्वापादमकारणास् वरुनि ब्रहीतानिगृह्यशिक्षाकर्ता ॥ २६ ॥

क्रिजपुत्रीपसर्जितात क्रिजेकुमारप्रेरितासक्षकात् मुक्तसंगः पुत्राविसंगरहितः॥ १७॥ व्याससुताच्छ्रीशुकात मुनेर्जिल्लासितंचिचारितम्आत्मनः परमात्मनः वयाखक्षपसंवधिगुगाधिक्ययेनसत्योकः इदंशरीरम् अद्धासमी दीनम्अकुतोभयखरूपानंदाविभीवलक्ष्यामोक्षयास्यतीत्यन्वयः ॥ ३८ ॥

लञ्चाप्राप्ताऽपचितिःपूजायैस्तेथोक्ताः ॥ १९ ॥

यःप्रभुः सर्पहर्षितक्षका व्यसर्पदर्शनम् अनु च्यायन् निरंतरंचितयम् इत्तरेश्च समीपक्षागच्छत्तुप्रीक्षेत्रेतियस्मासस्मातस्य को केपसीक्षिदि तिविख्यातद्दतिपरीक्षित्रामनिकाकीरित्यम्बयः ॥ ३०॥

# क्रमसंदर्भः ।

हरे: श्रीकृष्णस्य पद्दै चर्णारिविन्दम् अतिन वैयासिकशिद्धतेन मेज सगेन्द्रध्वजपादमूलम् इस्फेः । तदेव सस्वकृतोमयम्-मत्यों मृत्युव्यालभीतः पलायन् सर्वोल्लोकान्त्रिभयं नाध्यगच्छत् । त्वत्पादाब्जं प्राप्य यहच्छयाचं खस्यः शेते मृत्युरस्मादपैती खादेः ॥ २७॥

ततो जिल्लासित इत्यन मात्मा हरिरेव ॥ २८ ॥ २९ ॥ स्य एष इति श्रीकृष्णाद्शेनात् पूर्वमतिवाल्यावस्थायामेव श्रेयम् ॥ ३० ॥ ३१ ॥

# स्रवोधिनी।

धैर्येवलिसमः सचाष्टमेवस्यतेसद्वहोभक्तिः समीचीनाग्रहोवायज्विनामित्यत्रयागांतरैरपि तथात्वसंभवात् अश्वमेधाहरगांपृथगुके स्त्रस्यसर्वापेक्षयाप्यधिकगुण्यवत्त्वेऽपिनगर्वेइत्याह वृद्धानामितिपुत्रद्वाराप्युत्कर्षः ॥ २५ ॥

राजणींगांजनमेजयादीनांजनियतापुत्रमिपदंडयति तदनंतरंशासनमुक्तम् असकृन्मयीदोल्लंघनेदंडः शासनंशिक्षापूर्वकंदंडः निगृही-

तानिग्रहंकरिष्यतिभुवोधर्मस्यचकारणात् चरित्रस्पष्टंभविष्यति ॥ २६ ॥

वैराग्यमंतिनिकटेफलपर्यवसायिभविष्यतीत्याह तक्षकादिति आत्मनोदेहस्यमृत्युंनाशाद्विजपुत्रः श्रंगीउपसर्जितात् प्रोषितात् उपश्च-

त्यमुक्तसंगः कृतन्यासः हरेः पदंगगातीरसत्सभांतत्रहिभगवत्पदमभिव्यक्तम् ॥ २७॥

निर्देशः प्रत्यापत्त्यर्थः एतावत्कालंमध्येकार्यार्थभगवतारक्षितः पुनरंतेवह्यास्त्रशैवव्राह्यस्योषेषततक्षकरूपेसा उपसंहतइतिइदंशरीरंनृपेति संवोधनराक्षांयुद्धनिष्ठानाममोहत्वक्षापनाय अद्धानिश्चयेनअकुतोभयंभगवश्चरगारविंदसुपादेशनम् ॥ २८॥

प्कांतेराजमंत्रज्ञानेहेतुः जातककोविदाइतिजातकंज्योतिः शास्त्रकदेशः प्रकृतोपयोगित्वादेतदुक्तं वस्तुतः सर्वीशनलब्धाउपचितिः प्रत्युपकारः धनादियस्तेस्रवेषूर्योक्तापतेचपूर्णमनोरथत्वात् स्वगृहानेवगतानान्यत्रभगवत्परितुष्टे पुरुषकालादिनाभगवत्सेवकेनपतावद्

क्रियतइत्युक्तम् ॥ २९॥

क्षमात्तदुक्तस्यसंवादमाह सएषइति योभगवतारक्षितः सइदानीमग्रिमकणार्थमनू यतेएषइति परीक्षिदितिविख्यातः ननुविष्णुरा-तद्रित विख्याताभविष्यतीति सर्वज्ञानांवचनंतत्कथंपरीक्षिदिति लोकविख्यातद्दतितत्राह यत्प्रभुरितियस्मात् कारणाद्द्यंप्रभुः भग-तहात । पर्याता । पर्याता । पर्याता । पर्यात् । रातनाम्नामतस्य क्रियोद्धोषकं परीक्षितमात्मानश्रुत्वापरितोभगवंतमीक्षतेपरितईक्षामितः परीक्षितः अथवाइतइतिइवार्थेअव्ययं सरइ स्मुखिमत्यत्रप्रसिद्धं परितःईक्षदर्शनम् अविभक्तिकधातुनिर्देशः परितोदर्शनिमितितकारांतः तनपतःसंगे अन्यस्यापिपरितोदर्शनं भवतीतिका भुवारा । अथवापरीक्षिदितिविख्यातः तत्रहेतुः यस्मात्प्रभुभगवान् एवं बातः वित्रहेता अथवापरीक्षिदितिविख्यातः तत्रहेतुः यस्मात्प्रभुभगवान् एवं बात मान् अपंचालकः अग्रेनरेषुपूर्वदृष्टं क्षपमनुध्यायन् परीक्षेतपरीक्षांकुर्यादिति "अङ्गुष्ठमात्रंपुरुष्तिश्चकप्यमोवलादि"ति जीवोऽप्यंगुष्टमात्रोभवति पाम जनवालका जनगर्वहरूपा । जन्म विश्वस्थात । मन्नेभगवत्स्वरूपंजानात्वित्येतद्र्थनामेलर्थः इहसंसारेभनागतस्यबुद्धिन्नं । प्रायेखाः परिमतरसामग्रीरहितः अनेनवैलक्ष्मग्येनजीवस्वरूपात् । मन्नेभगवत्स्वरूपंजानात्वित्येतद्र्थनामेलर्थः इहसंसारेभनागतस्यबुद्धिन्नं । प्रायेखाः भवतीति ॥ ३०॥

# श्चीविश्वमाथचऋवर्ती।

सद्ग्रहः सन् उत्कृष्ट एव आग्रहो यस्य सः। गुगाजुक्ता कर्माग्याह आहर्त्ति ॥ २५॥ २६॥ ह्यसर्जितात् प्रेरितात् ॥ २७॥

जिज्ञासितं विचारितम् आत्मनो युद्धार्थ्यं वास्तवं तत्त्वं येन सः। इदं शरीरम् ॥ २८॥

लुड्या अपचितिः पूजा येः॥ २९॥ परीक्षिदिति नाम निर्विक्ति स एव इति । इह दरयमानेषु नरेषु मध्ये गर्वेस दृष्टं पुरुषम् अनुसमरन् अयं स भवेश्व विति विचारयैत अतः परीक्षिदिति विख्यातः। पूर्वे सप्टमिति च पाठः॥ ३०॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

सत्समीचीतः प्रहोऽमिनिवेशीयस्यसः ॥ २५॥ १६॥ व्रिजपुत्रेशाचापद्वाराप्रदितात्तक्षकान्यत्युद्भुकोपदेशद्वाराहरेः पर्दप्रपत्स्यतेप्राष्ट्यति॥२७॥ गळण उण विकासितात्मयाथात्म्यहित जिल्लासितमात्मनः सर्वोत्मनः कृष्णस्ययाथात्म्ययेनसः ॥ २८॥ धतदेवाहुः जिल्लासितात्मयाथात्म्यहित जिल्लासितमात्मनः सर्वोत्मनः कृष्णस्ययाथात्म्ययेनसः॥ २८॥ मृत्येवमुप्रसिक्यतिर्दिश्यनिवेद्यलञ्जोपचितयः लब्धाउपचितिः पूजादक्षिमायैस्ते ॥ २९ ॥ मृत्यवसुना वर्षायन्तरेषुपरीक्षेत अतः सार्षः प्रमुः प्रजापालः लोकपरीक्षिदितिविख्यातः ॥ ३०॥ अद्यतोगभेदण्टभगवंतमनुष्यायन्तरेषुपरीक्षेत अतः सार्षः प्रमुः प्रजापालः लोकपरीक्षिदितिविख्यातः ॥ ३०॥

स राजपुत्रो ववृधे ऋष्यु शुक्क इवोडुपः ्राप्त प्राप्त । प्राप्त श्रापूर्यमागाः पितृभिः काष्ट्राभिरिव सोऽन्वहम् ॥ ३१ ॥ व्यवस्थाः व्य (वाल एव स धर्मात्मा कृष्णाभक्तो निसर्गतः प्रीतिदः सर्वलोकस्य महाभागवतः सुघीः॥ ३२॥ यक्ष्यमागाोऽश्वमेधेन ज्ञातिद्रोहजिहासया। राजाऽलद्धधनो दिध्यौ नान्यत्र करदग्रहयोः ॥ ३३ ॥ तदभिप्रेतमालक्ष्य भ्रातरोऽच्युतचोदिताः। धनं प्रहीगामाजाहुरुदीच्यां दिशि भूरिशः ॥ ३४ ॥

#### भाषा दीका।

धैर्य में विलिराज के समान और श्रीकृष्ण के सद्ग्रह में प्रह्लाद के समान होगा। अश्वमेध यज्ञ करेगा वृद्धों की उपासन करगा। २५॥

राजर्षि पुत्रों को उत्पन्न करेगा। उत्पचगामियों का शासन करेगा। धर्म और पृथ्वी के कारण कलियुग का निम्रह करेगा॥ २६॥

द्विज पुत्र के भेजे तक्षक सै अपनी मृत्यु सुनकर मुक्त संग होकर हिर के पद को प्राप्त होगा ॥ २७ ॥ व्यास पुत्र मुनि शुकदेव जी से आत्मयाथात्म जानकर गंगा तट पर इस दारीर को छोड़कर हे नृप ? ( युधिष्ठिर ) यह असुतो सम

पद को जायगा॥ २८॥

जातक फल के कहने वाले वित्र राजा को यह सुनाकर पूजन लेकर अपने अपने घर चलेगये ॥ २९ ॥ थह बालक प्रभू ( समर्थ ) हो गर्भ में देखे रूप का ध्यान करता सब मनुष्यों में उस रूप वालि की परिक्षा करता था इसी से रोक में परीक्षित नाम सै चिख्यात हुआ ॥ ३०॥

## श्रीधरस्वामी।

शुक्ले शुक्लपक्षे स प्रसिद्ध उडुपोऽन्वहं बचा काष्टाभिः पंचदशकलाभिरापूर्यमाणो वर्द्धते एवं पितृभिर्युधिष्ठिरादिभिः कामैश्चतुः षष्टिकलाभिश्च आपूर्यमागो वहुधे ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

पूर्वमपक्तरयोक्ताव अश्वमेधान स्वावसरे सप्रकारं कथयति । ज्ञातिद्रोहस्य हानेच्छया यक्ष्यमागाः । करद्यख्योरन्यत्र ताप्र्यां विना न लब्धधनः दध्यौ चिन्तयामास करदग्डधनस्य परिजनभरगामात्रोपक्षीगात्वात् ॥ ३३ ॥

प्रहीगां महत्तस्य यशे त्यक्तं खुवर्गापात्रादिकमानीतवन्तः ॥ ३४॥

# दीपनी 1

कामः विषयमोगैरित्यर्थः । चतुः षष्टिकलाभिः नृत्यगीतादिचतुः षष्टिविद्याभिरित्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ अवकृष्य संक्षिप्योक्तानित्यर्थः ॥ ३३—३७ 🛚

# श्रीबीरराघवः।

परीक्षिदितिप्रसिद्धोराजपुत्रः एकस्तच्छद्दः प्रसिद्धिद्योतकः अपरस्तुप्रकृतपरामशेकइत्यतोनपौनस्तर्धिपतृभिर्वद्वियत्भिर्देतुम्तर न्वहंहिमांशुरिवववृधे यथाशुक्लेपसेआपूर्यमाणाभिर्वृद्धिगताभिः काष्ठाभिरुदुपश्चंद्रोवद्धेतेतद्वदित्यर्थः॥ ३१॥ ३२॥

अथयहकार्षतितइतिप्रश्नस्योत्तरंसोपोद्धातमाह यक्ष्यमागाइत्यादिनायावत्पंचदशाध्यायसमाप्ति श्वातिद्रोहजिहासयाञ्चातिवधप्रयुक्त द्रोषपरिजिहीषयाऽश्वमेधेन"त्रतिव्रह्महत्यांयोऽश्वमेधेनयजत"इतिब्रह्महत्यादीनामापेपरिहारकत्याश्चतेन "व्रह्महत्याश्वमेधानांनापरं पुरुष पापयो "रितिनिरित स्यपुर्यत्वेनचप्रसिद्धेनाश्वमेधेनयध्यमागो।भगवंतमाराधियतुकामोराजायुधिष्ठिरः अन्यत्रकरद्रग्डयोः करः खामित्रा ह्योदगडःप्रसिद्धः तयोरन्यत्रताश्यांविनेत्यर्थः अलब्धधनः उपायांत्रेशाप्राप्तधनः मनोदध्यौचितितवान्करदंडाश्यांलब्धधनंनयागार्दमुपाया तरेगातुनवाद्तंधनवतः कथंयस्यामीतिचिन्ताच्याकुलोबभूवेत्यर्थः ॥ ३३ ॥

तस्य युधिष्ठिरस्याभिष्रेतमालक्ष्याच्युतेनाहृतेनश्रीकृष्णेनचोदिताआदिष्टाः भाहृतोभगवानितिवस्यमाण्यत्वातः स्नातरोभीमाद्यस्य स्वा

दिशिप्रहिशांपराजितैराजभिस्त्यकंधनंभूरिशः आजहूः॥ ३४॥

KI /EHOA

## श्रीविजयध्वजः ।

**ढडुपश्चंद्रः शुक्कपक्षेकाष्ठामिर्दिग्देवतासरस्रतीगोभिरन्वहम् यथातयासराजपुत्रोऽपिपितृमिर्युधिष्ठिरादि**मिरन्वहम्बक्कपानादिमिः पूर्यमा वापेश्वतेत्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

क्वातिद्रोहजिहासयामीष्मादिवधनिमित्रपापहमनेच्छयाधश्वमेधयद्देभगवंतंयष्ट्रकामोराजाकरदयस्योरम्यत्रकरंदंस्यवर्जयामस्य भनेयेनसोऽलम्बधनः दध्यावित्यन्वयः ॥ ३३ ॥

**ढदीच्याउत्तरस्याः दिशः भूरिशः बहुलंप्रहीर्णयहशिष्टमरुत्तेनपूर्वजेनस्थापितंधनम् ॥ ३५ ॥** 

# क्रमसन्दर्भः।

बाल प्वेति पद्यमिदं चित्सुखसम्मतम् ॥ ३२ ॥ यक्यमागा इति तत्तपरितोषार्थे श्रीभीष्मोपदेशेनैवेति क्षेयम् । अन्यथा भीष्मेऽप्यनास्था स्यात् ॥ ३३॥ ३४ ॥ ३५ ॥

#### सुवोधिनी।

दग्धशरीरत्वात्तीक्ष्णतामाशंक्याह शुक्लेशुक्लपक्षेचउडुपक्षितस्त्रीविलष्ठत्वमुक्तं तापविहिपोषगाभिष्ठाः पितृभिरापूर्यमाग्राः सर्वा भीष्टपदार्थदानात काष्ठाभिः कलाभिः प्रत्यहंवैलक्ष्ययदर्शनार्थहष्टान्तः॥ ३१॥ ३२॥

एवंतस्यचरित्रं सर्वमुक्त्वापूर्वभगवन्मानसकृतमश्वमेधंपुनःकालेकेवलंभगवतैवसम्पादितमिति वक्तंप्रकारमाह यस्यमागाइति कर इग्रहादिकंत्वकर्त्तव्यंद्रोहपरिहारार्थत्वादश्वमेधस्यउचितकरादेस्तुराज्यनिर्वाहकत्वम् अतः राजालब्धधनः कथंधनंप्राप्स्यामीतिदध्योकर इणयोक्कोत्रिनियोगः राजत्वादेवनप्रतिग्रहः देवताधिष्ठानान्नमेर्वादेः समानयनं पूर्वराज्यवर्गानेयउत्कर्षेडकः सप्रजानामर्थेराश्वस्तु कुतोऽपियाचनमयुक्तमतश्चिताभगवानपिनयाचितः अन्यथानूतनमेवदद्यात् ॥ ३३ ॥

किंतु तद्भित्रेतमालक्ष्यभ्रातरएवसमानीतवंतः तेऽपिचिताकुलिताः भगवतैवप्रेरिताः अनेनभक्तानामल्पचितामपि भगवाशसहत-इतिसूचितं प्रहीशांवहुअतिनिदितंवाबाह्यशानांतदिति आनयनंभगवत्पेरशात् द्वोहस्तेषांपीडावाह्यशादीनांदुःखदूरीकरशार्थप्रवृत्तोऽश्वमे चःब्राह्मग्रानामेवद्रव्येरुचितः उदीच्यांदिशिमरुत्तयक्षेद्क्षिगात्वेनप्राप्तंद्रव्यंभाराक्षेतुमशक्यम् उत्तरदेशेवहुपरित्यक्तमस्तितदानीतनमि-स्वर्धः ॥ ३४॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

शुक्ले शुक्लपक्षे उडुपश्चनद्र इव वर्ष्ट्ये । आपूर्य्मागा इति कलाभिः लालनैश्चेति क्षेयम् । काष्ट्रामिर्दिग्भिरिव पित्रमिर्युधिष्ठिरादिमि-राष्ट्रत इति रोषः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

करदगडयोरन्यत्र ताभ्यां विना धनालाभात् धनप्राखुर्यस्यापेक्षग्रायत्वात् दध्यौ चिन्तयामास ॥ ३३ ॥ प्रद्वीयां महत्तस्य यमे त्यक्तस्वर्यापात्रादिकमानीतवन्तः ॥ ३४॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

अन्वहंकाष्ट्राभिः कलाभिः उडुपइविपतृभिर्युधिष्ठिरादिभिरापूर्य्यमाग्गोववृधे ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ करदं द्वयोरन्यत्रिवनाऽलब्धघनाधनार्थेद्ध्यौ करदं द्वाभ्यामायस्यब्ययपर्याप्तत्वातः ॥ ३३॥

आश्वमिधिकोपर्विणिप्रसिद्धनसंवर्तमुनिक्रपालब्धेनभूरिधनेनमरुत्तोनामराजायश्चंकृतवान् उर्वरितंबहुधनंतेनोदीच्यांप्रहीग्रांत्यक्तंततोवहु मिर्गजादिभिराजहूरानीतवंतः॥ ३४॥

#### भाषाटीका ।

बह राज पुत्र युधिष्ठिरादिक पितृ वर्गों से समस्त कामों से पूर्य मागा होता शीघ्र ही बढा । जैसे दिशाओं से पूर्ण होकर शुक्र-पक्ष का चन्द्रमा बढता है॥ ३१॥

वह परीक्षित बालक अवस्था ही में स्वमाव ही से धर्मात्मा कृष्णभक्त सबको प्रसन्न करनेवाला महाभागवत बुद्धिवान् हुआ हा ॥ ३२॥

तेन सम्भृतसम्भारो लब्धकामी युधिष्ठिरः। वाजिमेधैस्त्रिभिर्भीतो यज्ञेशमयजद्भि ॥ ३५ ॥ ( च्याहूतो भगवान् राज्ञा याजयित्वा द्विजैर्नृपम् । उवास कतिचिन्मासान् सुहदां प्रियकाम्यया ॥ ३६ ॥ ) ( ततो राज्ञाभ्यनुज्ञातः कृष्णाया सह बन्धुभिः । ययौ द्वारवर्ती 🏶 कृष्णाः सार्ज्जुनो यदुभिर्वृतः ॥ ३७ ॥ ) इति श्रीमद्रागवते महापुराणो पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीचिते परीचिजन्म नाम द्वादशोऽध्याय ॥ १२ ॥

#### भाषाटीका।

क्षाति के द्रोह से उत्थित विकर्म से मुक्त होने की इच्छा कर अध्वमेध से यजन करने को वड़े चिन्तित हुए। क्योंकि यह को शुक्र श्वन चाहिये और यहां कर और दंड से भिन्न धन संग्रह का कोई उपाय नहीं है ॥ ३३॥ राजा का अभिप्राय जानकर श्रीकृष्ण के प्रेरित राजा के भ्राता उत्तर दिशा में मच्च राजा के यज्ञ का रखा धन बहुत ले आये ॥३४॥

# श्रीधरस्वामी ।

सम्भृतसम्भारः सम्पादितयक्षोपकरणः। भीते शातिद्रोहात्॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ इतिश्रीमद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कन्धे द्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

# श्रीवीरराघवः।

तेनधनेनसंभृताः संचिताभाराः योगसाधनानियस्यसोऽतगवलब्धकामायुधिष्ठिरः त्रिभिर्वीजिमेधैर्भीतोमंत्रतंत्रद्रव्यलेणादि प्योभीतः निधिछदं यथातथेतिभावः हरिसम्यगाराधितवान् ॥ ३५॥ रण्य वर्षाप्याप्याप्याप्याप्त्र । द्विजैर्नृषंयुधिष्ठिरंयाजयित्वासुहद्रांप्रीतिकर्तुमिच्छ्याकतिचिन्मासानुवास ॥ ३६॥ नगणाप्र प्राचा प्राचा का का प्राचा का तो प्रदेश स्थापादी पद्याचा नुकातोऽर्जुनेनसिहतो यदु भिश्चपरिवृतो हेवहान् ! हारवर्तीययो ॥ ३७ ॥ ततोवं घुभिः सहराक्षायुष्ठिष्ठिरेशाकृष्णायाद्रीपद्याचा नुकातोऽर्जुनेनसिहतो यदुभिश्चपरिवृतो हेवहान् ! हारवर्तीययो ॥ ३७ ॥ इतिश्चीवीरराघवटीकायां प्रथमस्कंधेद्वादशाऽध्यायः॥ १२॥

# श्रीविजयध्वजः

तेनद्रव्येग्यसंभृतः संपन्नः सभारीयज्ञसाधन्यनसत्योक्तः॥ ३५॥

७०२ अपार प्राप्त प्राप्त प्राप्त । १९ ॥ बंधुभिः सहक्रणायाद्रीपपद्याचाश्यगुज्ञातः सार्जुनः अर्जुनेनसहितः यदुभिश्चपरिवृतः कृष्णोद्वारवतीययावित्यन्वयः ॥ ३७ ॥ प्राचनवा जार ने अपन्य । ११॥ इतिश्रीमद्भागवतेमहापुराग्रीप्रथमस्कं त्रेविजयध्वजदीकायाम् एकादशोऽध्यायः॥ ११॥

# क्रमखंदर्भः।

अत्र-आहूतो भगवान तक्षा याजयित्वा द्विजैर्नृपम् । उवासं कतिचिन्मासान् सुहृदां त्रियकाश्यया ॥ ततो राह्माश्यसुक्षातः कृषा या सह वन्धुभिः। ययो द्वारवतीं कृष्णाः सार्ज्जुनो यदुभिः वृति काचित्कं पद्यद्वयं सम्वन्धोक्तिकारेण व्याख्यातमस्ति ॥३६॥३६॥ इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगास्वामिकृतक्रमसन्दर्भे द्वादशोऽध्यायः॥ १२ ॥

#### सुवोधिनी।

तेनसम्भृताःसाज्यंपरावः पुरोडाशीयादयः सम्भारायेनतस्यायुक्तत्वं निराकारोतिधमपुत्रशतित्यक्तंभूमौराजकीयमिति युधिष्ठिर त्वादश्वमेधसिद्धिः अश्वमेधेरेवयद्भैः यद्भेनयद्भमयजंतेतिश्चत्यर्थेख्यापनार्थमेवमुक्तंहरिमितिबाह्मग्रानामपि दुःखदुरीकर्त्तारमतोनपूर्वोक्त विरोधः आद्युतहतिद्दलोकद्वयंप्रक्षिष्तम् ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

इतिश्रीभागवतसुवेधिन्यांश्रीमलुक्ष्मगाभद्दात्मजश्रीवलुभदीक्षितविरचितायां

प्रयमस्कन्धेद्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

सम्मृतसम्भारः सम्पादितयद्योपकरगाः। भीतो ज्ञातिद्रोहात् ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिगयां भक्तचेतसाम् । प्रथमे द्वादशोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १२ ॥

### खिद्धांतप्रदीपः।

श्वातिद्रोहाद्गीतः तेनधनेनसंभृतः संपादितः यश्चोपकरग्रारूपः संभारोयेनसः॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ द्विश्चीमद्भागवतिसद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कंधीयद्वादशाध्यायार्थप्रकाशः॥ १२॥

#### भाषाटीका ।

उसी धन से यह का सब संभार संग्रह कर जाति द्रोह से भीत राजा धर्म पुत्र युधिष्ठिर ने तीन अश्वमेधों से मगवान का यजन किया ॥ ३५ ॥ राजा के बुलाये हुए मगवान श्रीरूष्णा ने ब्राह्मणों के द्वारा राजा का यह कराकर मित्रों के प्रीति के अर्थ कितनेक मास राजा के बुलाये हुए मगवान श्रीरूष्णा ने ब्राह्मणों के द्वारा राजा का यह कराकर मित्रों के प्रीति के अर्थ कितनेक मास निवास किया ॥ ३६ ॥ तहनंतर राजा युधिष्ठिर से तथा द्रीपदी से और बंधुओं स आहा लेकर यादवों तथा अर्जुन के सहित द्वारका पुरी को पधारे ॥३७॥

प्रथम स्टबंध का ब्रादश अध्याय समाप्त।

# त्रयोदशोऽध्यायः ।

सुत उवाच

विदुस्तीर्थयात्रायां मैत्रेयादात्मनो गतिम् ।

ज्ञात्वागाद्वास्तिनपुरं तयावाप्तविवित्तितः ॥ १ ॥

यावतः कृतवान् प्रश्नान् च्चता कौशारवाप्रतः ।

जातेकभिक्तगीविन्दे तेभ्यश्चोपरराम् ह ॥ २ ॥

तं बन्धुमागतं हृष्ट्वा धर्मपुत्रः सहानुजः ।

धृतराष्ट्रो युयुत्सुश्च स्तृतः शारद्वतः पृथा ॥ ३ ॥

गान्धारी द्वौपदी ब्रह्मन् ! सुभद्रा चोत्तरा कृपी ।

त्र्याश्च यामयः पाग्रडोर्ज्ञातयः ससुताः स्त्रियः ः

प्रत्युज्ञग्मुः प्रहर्षेशा प्रागां तन्व इवागतम् ॥ ४ ॥

#### श्रीधरस्वामी।

निर्गमो धृतराष्ट्रस्य विदुरोक्त्या त्रयोदशे। उक्तः पौत्राभिषेकेण वक्तुं राक्षो महापथम्॥०॥

इदानीं परीक्षितः कलिनिग्रहादिकर्माणि कथयिष्यन् विदुरागमनेन धृतराष्ट्रप्रस्थानं ततोऽज्ञुनागमनं ततः पांडवप्रस्थानंच निक्रपयित त्रिमिरध्यायैः। गति हरिम्। तया आत्मगत्या अवाष्तं विविदासितं ब्रातुमिष्टं सर्वे येन ॥ १॥

तदेवाह । यावतः कर्मयोगव्रतादिविषयान् प्रश्नान् प्रथमं कृतवान् । कौशारवस्य मैत्रेयस्य पुरतः । पश्चात् त्रिचतुरप्रश्नार्यक्षानमात्रेगा गोविन्दे जातैकमक्तिः कृतार्थः सन् तेश्यः प्रश्नेश्यः उपरराम ततः परं न जिल्लासितवान् ॥ २॥

स्तः संजयः शारद्धतः कृपः पृथा कुंती ॥ ३॥

कृपी द्रोगाभायो । यामयो झातिभायोः । अन्याश्च स्त्रियः । प्रांगा तन्व इव कुतश्चिनम् च्छीदिदोषतः प्रागाऽवसन्ने सति तन्वेः करांघ्रणा इयो निश्चेष्टा भवन्ति पुनस्तस्मिन्नाविभूते सति यथोत्तिष्ठन्ति तद्वत् ॥ ४॥

दीपनी।

2---

#### श्रीवीरराघवः ।

तयावाप्तविवित्सितइत्येतदेवोपपादयतियावतः । श्रत्ताविदुरः कौषारवोमैत्रेयः कुषारवगोत्रप्रस्तत्वात्तस्याग्रतः यावतः प्रश्नाव्छ-तवान्तत्रकतिपयानामेवप्रश्नानामुत्तरैगीविदेजातापकाऽव्यभिचारिययनन्यप्रयोजनाभक्तियेस्यतयाभूतः तेश्योऽविशिष्टप्रश्नेश्यउपररामभव विष्टप्रश्नानामुत्तराणिनशुश्रावेत्यर्थः जातेकभक्तिरित्यनेनकृतकृत्यत्वमुक्तम् ॥ २ ॥

तमागतंबंधुं क्षात्वासहानुजोधर्मपुत्रोयाधिष्ठिरः घृतराष्ट्रादयः स्तः संजयः शारद्वतः कृपः॥३॥

अन्याध्वजामयः अंतः पुरिक्षयः ससुताःपांडोक्षीतयश्च हेब्रह्मन् ! ॥ ४॥

#### श्रीविजयध्वजः।

विषयरागः संसाराय तदभावोविष्ठुक्तयेश्वत्यतोष्ठुष्ठुश्वाख्वतोवैराग्यंपरतावासंपादनीयमित्ययमर्थः प्रतिपाद्यतेऽ स्मिष्नध्याये तत्र शुद्धांतः करणस्यैवविषयविरागः सुदृढशितसचकमेणातीर्थसंवयावास्यादित्यभिष्ठेत्यविदुरस्यतीर्थसेवांकृत्यायुधिष्ठिरादिवंधुदिदक्षयाद्वा स्तिनपुरागितमाह विदुर्शतिविदुरोहास्तिनपुरमगादित्यन्वयः किंकृत्वातीर्थयात्रायांकृष्णादिष्टान्मैत्रयादात्मनः परमातमनोगतिज्ञानं जीव स्थगतिखर्यनरकादिविषयामितिवा तयापरमातमविद्ययात्रवाप्तविविवित्तित्वात्त्रतं ज्ञातुर्मप्रयेनसत्योक्तः॥१॥

नापृष्टः कस्याचित्र्ययादितिवचनात्प्रश्नप्रतिवचनाभ्यांतत्त्वमवगम्यालंबुद्धिरभूदित्याहः यावतइति क्षत्ताविदुरःकुषारवस्यापत्यस्य मैत्रेयस्यात्रतोयावतःप्रश्नान्कृतवान्तेभ्यः प्रश्नेभ्यामेत्रयेगापरिष्टतेभ्यउपररामज्ञातत्वादलंबुद्धिमानभृत् हशब्दः तृप्तिसूचकः चशब्द षवार्थे तत्त्वज्ञानेनफलमाहजातेति ततोज्ञानातिशयनजातापकाप्रधानामक्तियस्यस्तयाकःकुत्रगोविन्देश्रीकृष्णे अनेनमक्तिश्चानयोरन्योऽन्य हेतुत्त्रमसूचि॥ २॥

खुतः लंजयः शारद्वतः कृपः ॥ ३॥

अन्याः पांडोजोभयः पुत्रभायोः अन्यावाप्रसिद्धनामानः जामयः स्वसारोवा ॥ ४॥

#### क्रमसंदर्भः।

विदुर इति । सोऽयं तृतीयस्कन्धानुसारेण युद्धात् पूर्व्वे दुर्योधनाद्विच्छिय गत आसीदिति ज्ञयम् । आत्मनी गतिर्हरेभेकिः तयावाप्तविविद्धित इति तज्ज्ञाननैव सर्व्वे ज्ञातवानित्यर्थः सर्व्वाश्रयत्वात्तस्य ॥ १—८

# सुवाधिनी।

प्रवंभागवतश्रीतुर्देशोत्पत्तिनिकापिता पुरुषत्रयमुक्ति हितन्मुक्त्यर्थनिकत्यते ॥१॥ पितापितामहश्चेकोधृतराष्ट्रस्ततः परः प्रपितामहमुक्ति हिं पूर्वततउदीयंते ॥२॥ ततोऽध्यायद्वयेनेवद्विकपत्वातिपतामहे सिनामत्तांमुक्तिमाहहेतुकार्यविभेदनाम् ॥३॥ अमुक्तपितृकामुक्तिनात्त्रवन्तीतिवा यंते अतोनिश्चिततासिद्ध्येचिक्तशुद्धिरिहोच्यते ॥४॥ ततोद्वयेनेन्द्रियाणांराज्यशौर्यादिवर्णानैः ततोवैराग्यसत्संगावधिकारःफलोन्मुखः ॥ ५॥ ततोभवतिपुत्योपिनान्यथेलावमाकथा तत्रप्रथमधृतराष्ट्रमुक्ति रुच्यते साज्ञानसाध्येतिज्ञानसिद्धवर्षावदुर्प्रसंगउच्यते विदुरोऽवांतरच्यापान्दः धर्मराजत्वेनगुरुवीभगवतास्मृत इतितस्यदेषिनवृद्धिः विदुरमेत्रेयकथांस्कन्धद्वयवस्यते तद्दिममकथात्रप्रयोजनार्थनिकत्यतेवदुर्शतिश्चे यात्रायांसमागतायांचिक्तशुद्धौजज्ञवोपदेशात्र मेत्रेयपाप्यथात्मनोभगवतोगितचेष्टांलीलामितियावत तांश्चात्वान्तंत्रपत्रः हस्तिनापुरमगमन्त्रमाविक्रययेवतस्यात्मयाथात्म्यदेशुत्रते तदाहतयावाप्तविवित्सितर्शत तयागत्याविवित्सितोविशेषण्ञातः अयमर्थः मेत्रयसभिपेगत्वास्त्र स्यस्वेज्ञतासिद्धेवद्दुपृष्टवान्तत्रतस्तरम् विदित्सर्वमिदंविद्यंभवतितिक्वेवलंतदाश्चयत्वयात्रयायापेरयति तथासकरोतितिकर्वव्यतत्रम् स्यस्वेज्ञतास्त्रविक्ष्याभृतराद्ध्यस्त्रपत्रम् विदित्सर्वमिद्वित्यभाविष्यत्रत्रस्यत्यात्रयायापेरयति तथासकरोतितिकर्वव्यतत्रम् स्थमगविक्षयाभृतराद्ध्यस्त्रपत्रम् स्थमम् विद्वतेस्वत्रम्वात्वात्वात्तिक्षवल्यत्वात्त्रम्वत्वात्वेष्टिक्ष्याप्रति स्थासकरोतितिकर्वव्यतत्रम् स्थमगवदिक्षयाभृतराद्ध्यस्त्रते । १॥

अतपवपूर्वयेवहवः पदार्थाः पृष्टाः तानश्रुत्वैवसमागतइत्याह यावतइति क्षत्ताअन्तःपुराध्यक्षः अनेनातिनिर्पृगात्ववोधितंकौषारवः कुषारोः पुत्रः मैत्रेयः उत्तमाधिकारित्वात् चरित्रैषादेशश्रवगोऽपिभक्तिजाता अतः फलस्यजातत्वात् तेश्यः प्रश्नश्यः उत्तरमश्चत्वा विजयरगम् ॥ २॥

् व्वतस्यज्ञानवत्वात् पूर्वकथामन् यसमागतस्याप्रिमकृत्यंवदन् समयप्रतिक्षार्थिस्थितिसिद्धयेतस्यसत्कारमाहतंवन्धुमित्येकादशिमः सर्वे-द्वियप्रीतिनिभित्तंवध्यतं अनेनेतिबन्धुः सुखदुःखज्ञानमोक्षैः यथाधिकार्रनिर्णयः आगतंदृष्ट्वाअन्यार्थमागतत्वात् नदूरात्ज्ञापनं येनोद्धच्छेयुः स्ताःजायंतयःशारद्वतः कृपः शारस्तंवेज्ञातत्वात्वद्धान्नितिसम्बोधनम् ॥ ३॥

स्त्रिंगांगगानायांविकारामावायरुपीद्रोगापत्नीजामयः कुलस्त्रियः देवलक्षाभावार्थेपारडोरितिकातयः पुरुषाःसुतैःआसर्वतःस्त्रीभिश्च सिंहताःसकुदुम्वाक्षातयद्दरयर्थः ॥ ४ ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी ।

(परीक्षितो जन्म बक्तुं द्वीगयस्त्राहिकथा यथा। अभिषेकं तथा यक्तुं विदुरागमनाद्यभूत्॥) विदुरस्योपदेशेन धृतराष्ट्रस्य निर्गमः। राह्यो विषादः शान्तिश्च नारदोक्त्या त्रयोदशे॥०॥

परीक्षितो जनम उक्त्वा किलिमहादिकमांणि कथिष्यम् प्रथम राज्याभिषेकै वक्तं विदुरस्यागमनं तता वेराग्योपहरान धृतराष्ट्र ति क्ष्मि अताऽज्ञेनागमनं ततः पांडवप्रस्थानं च निक्ष्याति त्रिभिरध्यायैः गति । कृष्णम् । तया आत्मगत्यां अवाष्तम् आत्मनो विवित् सितं प्राप्तुभिष्टं येन सः । विद्तु लाभे ॥ १ ॥ [१०१] ग्राभिसङ्गम्य विधिवत् परिष्वङ्गाभिवादनैः ॥ ५॥ मुमुचुः प्रेमनाष्पीघं विरहौत्कग्रव्यकातराः । राजा तमह्याश्रके कतासनपरिग्रहम् ॥ ६ ॥ तं भुक्तवन्तं विश्रान्तमासीनं सुखमासने । प्रश्रयावनतो राजा प्राह तेषाश्च शृशाताम् ॥ ७॥ त्रपि स्मर्थ नो युप्मत्पक्षच्छायासमिधितान्। विषद्गशाद्विषाग्न्यादेमोंचिता यत् समातृकाः ॥ ८॥

युधिष्ठिर उवाच ।

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

तेक्यः प्रश्नेक्य उपरराम तदुत्तरं श्रोतुं नैच्छत् भक्तौ जातायामन्यस्य जिज्ञास्यस्य वैयर्थ्यादिति भावः ॥ २॥ सूतः संजयः। शारद्वतः कृपः। कृपी द्रोगाभार्था। जामयो ज्ञातिभार्थाः। जामिशब्दश्चवर्ग्यादिरन्तःस्थादिश्च कोषेषु दृष्टः। प्राग्धं मूर्च्छादिदांषेशा गतप्रायं पुनरागतं संलक्ष्य तन्वः करचरशादिकाः यथा प्रत्युद्गच्छन्ति धृतस्वस्वचेष्टा भवन्ति ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

# सिद्धांतप्रदोषः।

परीक्षितः कलिनिग्रहादीनिकर्माणिकथयिष्यन्धृतराष्ट्प्रस्थानकथनपूर्वकं संस्थां अपांडुपुत्राणांवक्ष्येद्दतिप्रतिज्ञातंपांडवप्रस्थानंतिरू पर्यातविदुरइत्यादित्रिभरध्यायैः आत्मनागतिपरमात्मविद्यांबात्वातयावासविविद्यतिवेत्तुमिष्टसंवियनसः यद्विद्यानसर्वविद्यातभवती

तयावाप्तरिवितिमतइतियद् कंतिद्ववृश्णाति श्रत्ताविदुरः कौषारवाग्रतामैत्रेयपुरतः प्रश्नान्कृतवान्तेषुकतिपयप्रश्नप्रत्युत्तरेगोविन्देजातैकभ किः गोविद् खरूपगुगारा त्यादियायात्स्यवेश्वेनजाताग्काऽव्यविचारिग्रीभक्तियस्यसः तश्याऽ विशिष्टश्यः प्रश्नेश्यउपर्याम ॥ २॥

सूतः संजयः ॥३॥

पांडोःज्ञातयः स्वसुताः स्त्रियः अन्याश्चजामयोऽतः पुरस्त्रियः॥ ४॥

# भाषा दीका।

(सूत उवाच') विदुर, तीर्थ यात्रा में मैत्रेय से आत्मा की गति जानकर हस्तिनापुर को चले गये। उन आत्मा की गति हरि है ही पूर्ण हो गया है सब ज्ञातव्य विषय जिनका॥ १॥

. या पार के पार कार्य विषय कि प्रश्न किये थे उनमें से कई प्रश्नों के उत्तर ही से उनको गोविन्द में एक भक्ति होगई। अतः विदुर ने कीशार्य (मैत्रय) से जितन प्रश्न किये थे उनमें से कई प्रश्नों के उत्तर ही से उनको गोविन्द में एक भक्ति होगई। अतः

उन आये अपने बंधु बिदुर जी की, अनुजों सहित धर्म पुत्र धृतराष्ट्र युयुत्सू सूत शारद्वान् पृथा गान्धारी द्रीपदी सुभद्रा उत्तरा वें और और प्रदनों से उपरत होगये॥ २॥ कृपी और हं बहान पांडु वंश की और आंर स्थिये पुत्र सहित इन सब न प्रहर्ष से प्रत्युद्गमन किया। जैसे मूर्छी के अनन्तर आय प्रास्था को शरीर की सब इन्द्रिये प्रत्युद्रमन करती हैं॥३॥४॥

# श्रीधरस्वामी ।

विरहेगा यत् औत्कंडचम् तेन कातरा विवशाः ॥५ ॥ ६॥

पश्चिमां हायत्यानि यथातिस्नेहेन पञ्चच्छायया वर्द्धयन्ति तद्वत् युष्मत्पक्षणातच्छायया समिधितान् नः अस्माद् कि स्मरथ। समेधित खमेबाह विपद्गगाद्यस्मान्मोचिताः स्म ॥ ८॥

# श्रीवीरराघवैः 🖼

प्रहर्षेशापत्मुज्ञम्मुरभिमुखंययुः यथाश्रागतंप्रार्णातवः शरीराशितहत्त्रार्यामागतिमवतंप्रत्युज्ञम्मुरित्यर्थः परिष्ट्रगाभिवादनंथिधवस्यो चितमभिस्गम्य ॥ ५॥

#### श्रीवीरराष्ट्रव ।

विरहप्रयुक्तोत्कंठयेनकातराः प्रेमवाष्पोधमानदाश्रुसम्हमुचुः कृतः आसमपरिप्रहोयनतंत्रिदुरंराजायुधिष्ठिरोऽहेयामासपूजयामास॥६॥ ततोशुक्तवंतविश्रांतमासनेसुखमासीनंतंबिदुरंखानांश्यग्वतांसतांप्रश्रयेगावनतः प्राह्॥७॥

तदेवाहअपीत्यादिभिश्चतुर्भिः युष्मत्तवपक्षयोः परित्रहरूपयोः छायायांसमेधितान्नोऽस्मानपिस्मरार्ग्यकम् आत्मनांतत्पक्षच्छायासमे-धितत्वंस्मारयतिसमातृकाः मात्रासहितावयंविषाग्न्यादिरूपाद्विपद्वगात्वयाविमोचिताः॥८॥

## श्रीविजयध्वजः।

आगतान्त्राणान्दञ्चातन्त्रः भोगायतनानिशरीराणीवतत्त्राणेप्रपन्नउद्तिष्ठदितिश्रुतेः ॥ ५॥

मियः प्रेमवाष्पीयंप्रेमनिमित्तनेत्रजलप्रवाहम्थर्हयांचकेपूजयामास औत्कंठचकातराः औत्कंठचेनपरवशाः कृतआसनस्यपीठस्यपरि-

ग्रहः स्त्रीकारोयेनसतथोक्तस्तम्॥६॥

स्वकीयानांचऋग्वतांसताम्॥ ७॥ नोऽस्मान्स्मरथयु्यमितिशेषः मात्रासहवर्तमानाःसमातृकाः विषाग्न्यादेर्विपद्गग्रान्मोचिताः यद्यनतस्मादितिशेषः॥८॥

## सुबोधिनी।

प्रत्युज्ञग्युः संमुखतयागताः तन्वद्वकरचरणादयद्व अभिसंगम्यविधिवत् शास्त्रानुसारेणायथायोग्यंकैश्चिदिभवादनम्॥५॥ प्रेम्गावाष्यसमुहं विरहेयदौत्कंठचंप्रेमातिभरत्वंतेनकातरादीनाः पूर्वेतस्मिन्गतेयत्प्रेमजातंभगवतः प्रेमण्वआनन्दरूपंनभवतीति तेनप्रेम्णादीनाः विषयालाभात् एवंसर्वेषुस्थितेषुमुख्यस्यपूजाधिकारात्राज्ञानंपूजयामास दत्तेआसनेस्वीकृतमासनंयेन अनेनपूजायांनि-

। सार प्राप्त प्राप्त प्रमापनोदनमाह तंभुक्तवंतमिति प्रत्येकप्रइनव्यावृत्त्यर्थतेषांचगृगवतामित्युक्तंचकारान्मध्येआगताः गतश्रमंपृच्छेदितिधर्मशास्त्रात् श्रमापनोदनमाह तंभुक्तवंतमिति प्रत्येकप्रइनव्यावृत्त्यर्थतेषांचगृगवतामित्युक्तंचकारान्मध्येआगताः

पूजानंतरमागताश्चर्पारगृद्यंते ॥ ७॥

प्रथमतोदयामुत्पादयति अपिस्मर्थति युष्मत्पक्षच्छायासमिधिताचः अस्मान्अपीतिसम्भावनायांस्मरथपूर्ववयंभवद्भिरेवपीरपालिताः पक्षःपक्षपातः तस्यच्छायाहिताचरगांपक्षिगामेषाच्यवस्थामातरपितरंपुत्रंकालांतरं तेनपीर्राचन्वंतितद्र्षेपक्षादिपद्रप्रयोगः स्मरगार्थपालन चिशेषंज्ञापयतिविपद्गणान्मोचिताइति आपदांसमृहात्तमेवगगांयितिविषाग्न्यादेरितिविषंमोदकदानं लाक्षागृहदाहश्चप्रत्येकंसमुदायनाशको समानुकाइतिस्त्रीगामिपवधेशत्रूगांनविचिकित्सासरश्रकामोचिताइतिवा ॥ ८॥

## श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

पक्षिगो छपत्यानि यथा अतिस्नेहेन पक्षच्छायया वर्द्धयन्ति तद्वत्।पक्षे पक्षच्छाया पक्षपातः।यद्यस्मान्मोचिता व्यं त्वयेत्यर्थेः ॥७॥८॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

केनापिनिमित्तेन्प्रागावरोधेतन्वः शरीरागिनिश्चेष्टानिभवंतितंपुनरागतंतानियथोत्तिष्ठंतितद्वत् ॥ ५॥ विरहजातीत्कंठचेनकातराज्याकुलाः प्रेमवाष्यीघंस्नेहजन्याश्रुसमृहंमुमुचुःराजायुधिष्ठिरः कृतः आसनपरिग्रहोचेनतम् अर्हयांचके अर्हया

मासपूजयामास ॥ ६॥ प्रश्रयाबनतः विनयेननम्नः तेषांभृतराष्ट्रादीनांश्टरावतांतंविदुरप्राह ॥ ७ ॥ सदेवाहापीतिचतुर्भिः युष्मत्पक्षपातच्छाययासमेधितान्संवर्द्धितानंडजोपमान्नोऽस्मानपिकिस्मरथयद्यतः समातृकाविमोचितास्तान् ॥८॥

## ा भाषाक्षका ।

आलिंगन अभिवान से यथा विधि विदुर से मिलकर विरह्नि, उत्कंटा से क्यांतर होकर सब जनों ने भेम के आंसुओं के प्रवाह आसन एर वैठाकर राजाने उनका पूजन किया। भोजन करने के अनंतर विगतश्रम विदुर जव सुखसे आसन पे वैठे तव राजाने सवके सुनतं विनीत होकर विदुर्जी से कहा॥ ७॥

क्या वृत्त्या वर्तितं वश्चरिद्धः चितिमगडलम् । तीर्यानि चत्रमुख्यानि सेवितानीह भूतले ॥ ६ ॥ भविद्धा भागवतास्तीर्यभूताः स्वयं विभो! । तीर्यीकुर्व्वन्ति तीर्यानि स्वान्तस्येन गदाभृता ॥ १० ॥ स्र्राप नः सुहृदस्तात ! बान्धवाः कृष्णादेवताः । दृष्टाः श्रुता वा यदवः स्वपुर्या सुखमासते ॥ ११ ॥ इत्युक्तो धर्म्मराजेन सर्व्वं तत् समवर्णयत् । यथानुभूतं अक्ष क्रमशो विना यदुकुलच्चयम् ॥ १२ ॥

#### · भाषादीका ।

( युधिष्ठिर उवाच ) आपकी पक्षछाया से वृद्धि प्राप्त हम सवको कभी आप स्मरण भी करते थे। आपने हमको माता सहित विष भक्षण और लाक्षा भवन के दाह आदिक बिपर्दों से बचाया था॥ ८॥

#### श्रीधरखामी

वो युष्माभिः कया वृत्त्या वर्त्तितं देहवात्तिः कृता। कानि च तीर्थादीनि सेवितानीति॥९॥
भवताश्च तीर्थाटनं न स्वार्थे किन्तु तीर्थानुत्रहार्थमित्याह भवद्विधा इति। मिलनजनसम्पर्केषा तीर्थानि अतीर्थानि मिलनानि सन्ति।
सन्तः पुनस्तीर्थीकुर्व्वान्ति। स्वान्तं मनः तत्रस्थेन स्वस्यान्तः स्थितेन वा॥१०॥
अपि कि सुखमासते। भवद्धिः कापि दृष्टाः श्रुता वा॥११॥१२॥

## दीपनी ।

स्वस्यान्तः स्थितेन वेति । एतेनात्र स्वान्तः स्थेनेति विसर्गमध्यपाठोऽपि प्रामाशिकः स्वस्यानुमृतश्चेति ध्वनितम् अन्यथा ईदशविष्रहा-नुपपत्तेरिति ॥ १०—२४ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

क्षितिमंडलंचरिद्धः क्यावृत्यावर्तितमिहभूतलेकानितीर्थानिभगवत्क्षेत्रमुख्यानिचभवद्भिः सेवितानि ॥ ९॥

क्तकत्यानां भवतां निर्देश वार्षा विश्व वि

अपीतिहेतात ! कृष्णाग्वदेवतायेषांतेनोऽस्माकंसुदृदांवांधवाश्चयदवः दष्टाः अथवास्त्रपुर्योद्वारकायांसुस्नमासतद्दतिश्वताः किम ॥ ११ ॥ इतीत्थंधर्मराजेनोक्तः विदुरोयदुकुलक्षयंबिनाऽन्यत्सर्वयथातुमृतंद्दष्ठश्वतंचातुकमदाः समवर्षायत् ॥ १२ ॥

## श्रीविजयध्वजः।

एक अन्यादिवतेनिकिमितिवेषः इहभूतलेक्षेत्रप्रधानानितीर्थानितानिसर्वाणिचसेवितानीत्यन्वयः ॥ ९ ॥
हेप्रभा ! खात्मस्थेनगदाभृताहरिणातीर्थभूताः भवाहशाः भागवताः गंगादितीर्थोकुर्वतिनस्वयमात्मशुक्रभपेक्षपातीर्थानिगर्छं
तीर्तिशेषः ॥ १० ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

क्रम्योदैवतंयेषांतेतथोकाः ॥ ११ ॥

भ्रमतापरिवर्तमानेनक्षितितलमितिशेषः स्वेनयथानुभूतंतथातत्सर्वमवर्णयत् किंतुयदुकुलक्षयंविना तीर्थयात्रायांयनुनायांभगवदामः साबदरींगच्छंतमुद्धवद्दष्ट्वातस्मात्विप्रशापाद्धेतोः षड्विंशद्वषोदुपरिनाशमध्यधदुकुलंभ्रुत्वातन्नावर्णयदितिभावः॥ १२॥

#### क्रमसंदर्भः।

तीर्थेषु भक्तिमतां भवतां तीर्थाटनंच तीर्थानामेव मङ्गलाय सम्पद्यते इत्याह भवद्विधा इति ॥ १० । ११ । १२ । १३ ॥

### सुवोधिनी।

एवंदयामुत्पाद्यक्लेशजनितंदुःखमनुवादेनगच्छतीति वृत्तिप्रद्रनः वृत्तिजीविकावण्शिमविभागविहितयायाद्दिष्टिकयाचेति वःयुष्मा भिः जीवनस्यानिभेष्रेतत्वात् तंप्रतिखातंत्र्याभावात् नकत्तितियाथिपेतुसम्बन्धमात्रेषष्ठी भूपर्यटनेतुविवक्षितत्वात् कर्तृत्वमतश्चर द्विरित्युक्तं क्षितिमग्रडलिमति अत्यन्तसंयागिद्वितीयातेनसर्वत्रेकविधानामावात् परित्यागभावनांवाकृत्वा जीवितिमितिप्रद्रनार्थः द्विती यपक्षेत्रतःपरमत्रस्थास्यंतीतिमनोरथः क्षेत्राणिमुख्यानियत्रजलप्रधानंतिर्थे स्थलप्रधानंक्षेत्रं कविद्वभयमेकीभवत् प्रयागवेणीविति तानिद्दस्भूतलेसेवितानि मुख्यानांसेवितत्वादतः परंनगतव्यिमितिभावः॥९॥

ननुफलस्यासिद्धत्वात् सम्यक्चित्तशुद्धिपर्यंतंतीर्थाटनंकर्त्तं व्यमितिचेत्तनाह भवद्विधाइति नहिभवतांतीर्थाटनेनकश्चिद्गुगोभवित तन्नश्चिकारिग्रास्त्वन्ये नन्वस्मद्विधाअपितीर्थेषुपर्यटंतीत्याशंक्याह भवद्विधाइति सत्यंपर्यटंतीतिनतुस्वार्थिक्तृतीर्थेकृपया "हरत्यवन्तेऽगसंगा संब्वास्तेद्यविभिद्धिरि तिवाक्यात् स्वयभेवतेतीर्थभूताः पापिनांस्पर्शदोषात् दुष्टानितीर्थानितेषां विष्ट्यंगृहीत्वा सम्रह्गात् पूर्वमती योनितीर्थीकुर्वति तर्हितेषांकागितिरित्यतआह स्वांतःस्थेनगदाभृतेतितेषांहृदयेभगवान् गदांगृहीत्वाप्रकटाहितष्ठति अतोगदायाआसन्यक्षप त्वात्मगवान् साध्यंच्यपहतपाप्मक्षं "तेहआसन्यंप्राग्राम् चु"रित्यत्रयथासितिपाप्मनाशःतथाप्रकृतेऽपीतितीर्थानामपिपापं भगवत्सभीपं प्राप्यगच्छतीत्यर्थः अनेनभगवदाक्षायामेवतीर्थाटनं कर्त्तव्यमन्यथाभगतःप्रयासजनगत् नकर्त्तव्यमितिभावः अतोऽत्रवस्थातव्यमिति फर्लति ॥ १० ॥

एवमागतंकु शलंपृष्ट्वाभगवद्गक्तत्वादयंभगवद् वृत्तांतंबास्यतीतिपृच्छितियपिनइति विदुरेगासहतथासम्बन्धाभावेऽपिभस्माभिः सहसं-बंधइतिनइत्युक्तं भवति विदुरमण्यात्मत्वेनस्वीकृत्यवासुद्वदोभित्रागितातेतिस्नेहेनसंवोधनंतेष्विष्सेनहवोधनायकृष्णदेवताइतिसुखवासेहेतुः असप्वत्वयादृष्टाः बंधुत्वेनकृज्जयाचेन्नदृष्टास्तर्हिभगवदीयत्वात्रश्चताः स्वपुर्योद्वारकायांस्वधाम्निथरपेनापिविषयेनसुस्नंभवतीति यद्वइति भक्तवंशत्वादिषसुखंसम्मावितम् अनेनित्रधापिदुःखंनिवारितम् कृष्णादेवतात्वान्नाधिदैविकं यदुत्वान्नाध्यात्मिकंस्वपुर्यामितिनाधिभौतिकम् प्रवंसंभावितकुश्वालाः मवन्मुखान्निश्चिताश्चेत्तदास्माकंसुखमिति प्रश्नाभिप्रायः ॥ ११ ॥

एवंस्यरणादिकुशलान्तैः प्रश्नैःपृष्टःसर्वमेव यथानुभूतमनुवर्णयति परंमौशलव्यतिरेकेण ॥ १२ ॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

ब्रुत्या जीविकया। वो युष्माभिः॥ ९॥

भवताश्च तीर्थाटनं तीर्थानामेव भाग्येनेत्याह भवद्विधा इति । तीर्थीकुर्व्वन्ति महातीर्थीकुच्वन्ति पावनं पावनानामितिवत् ॥ १०। ११। १२॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

श्चितिमंडलं चरिद्धवीयुष्याभिः कयावृत्यावर्त्तितं केनोपायेनदेहिनहीरः कृतः इहास्मिन्भूतलेतीर्थानि पुरायजलप्रधानानि क्षेत्रमुख्यानि भूमीप्रदेशमुख्यानिसेवितानिकिम् ॥ ९ ॥

भवद्विधानिष्पापत्वाशावत्स्वयंतिर्धभूताःविशेषतस्तुभागवताःस्वांतस्थेनस्वहिष्टेयभूतेनगदासृता च तीर्थभूताःतीर्थाटनेऽपिप्रयोजनेऽपि प्रयोजनमाह संसारिसंसर्गेगातीर्थान्यपिमलिनानिपुनस्तीर्थीकुर्वन्ति ॥ १० ॥

नोऽस्माकंसुह्रदोवांधवाः रुष्णोदेवतायेषांते भवद्भिषीद्वादद्याः कुतिश्चिच्छुतावाद्वारकां सुखमासतेकिम् ॥ ११॥ बदुकुलक्षयंतुजानन्निपनवर्णायामास ॥ १२॥ नन्वप्रियं 🏶 दुर्विषहं नृगां स्वयमुपस्थितम् । नावेदयत् सकरुणो दुःखितान् द्रष्टुमत्तमः ॥ १३ ॥ कश्चित् कालमणावात्सीत् सत्कृतो देववत् सकैः। भ्रातुर्ज्येष्ठस्य श्रेयस्कृत् सर्वेषां प्रीतिमावहन् ॥ १४ ॥ ऋविभ्रदर्यमा दर्गं यथाघमघकारिषु । यावद्यार शूद्रत्वं शापाद्वर्षशतं यमः ॥ १५ ॥ युधिष्ठिरो लब्धराज्यो दृष्ट्वा पौत्रं कुलन्धरम् । भ्रातृभिर्लोकपालाभेर्मुमुदे परया श्रिया ॥ १६ ॥

#### भाषादीका ।

आपने इस पृथवी मंडलमें विचरते किस वृत्तिसे निर्वाह किया था ? और कीन कीन मुख्य तीर्थ कीन कीन क्षेत्र सेवन किये ॥ ९ ॥ आपके समान भागवत जन खर्य तीर्थ रूपहें तथापि अपने दृदयस्थ गदाधर हरि से तीर्थी का भी तीर्थ करते हैं॥ १०॥ तात ! हमारे सुहद और बांधव श्रीकृष्णा ही जिनके देवता हैं वे यादव अपनी पुरी में सुख से हैं। आपने देखे वा सुने हैं ? ॥ ११ ॥ धर्मराज के ऐसे प्रश्नों से बिदुर जीने जोकुछ देखा और सुनाथा सो वर्णन किया। केवल यदुकुल का क्षय वर्णन नहा किया ॥१२॥

## श्रीघरखामी ।

यदुकुलक्षयावर्गाने कारगामाह नन्विति ॥ १३॥

श्रेयस्कृत् तत्त्वमुपदिशन् ॥ १४ ॥

नजु जूदोऽसौ कथमुपिदशेत्। न ह्यसी जूदः किन्तु यमस्तद्रूपेशासीत्। किं तज कारशं यम चात्रागतेऽमुत्र को दश्डधर इत्यंपेक्षा-यामाह अविभ्रदिति घृतवानित्यर्थः । शापात् माग्रङ्यस्य शापात् । तथाहि कचिक्षोराननुष्रावन्तो राजभटा माग्रङ्यस्य ऋषस्तप-श्चरतः समीपे तान् सम्प्राप्य तेन सह निरुध्यानीय शक्ने निवेद्य तदावया तान् सर्वान् श्लमारापयामासुः। ततो राजा तसुपि बात्वा श्रुलादवतार्थं प्रसादयामास । तता मुनिर्यमं गत्वा कुपित उवाच कस्म दहं श्लमारोपित इति । तेनाकं त्व वाल्ये शलसं कुशायेखावि-ध्य कोडितवानिति। तच्कृत्वा माग्डब्यस्तं शशाप वाल्येऽजानतो मे महान्तं दग्डं यतस्त्वं कारितवान् अतः श्रुद्दो भवति ॥ १५॥

इदानीं राज्यापकर्ष निरूपियतुम् उत्कर्षे निगमयति युधिष्ठिर इति । कुलन्धरं वंशधरम् ॥ १६ ॥

## श्रीवीरराघवः।

यदुकुलक्षयंकुतोनावर्णयदित्यत्राहनन्विति नबुहेशीनक? दुर्विषहंसोदुमशर्कयंखयमुपस्थितंखयमेवोपस्थास्यद्पियंयदुकुलक्षयात्मर्कनावे दयत् कृतः यतः सकरुणः दयावानतगवदुः खितान्दुः खिष्यमाणान्द्रष्टुमक्षमः असहिष्यमाणः॥ १३॥

अथदेववदीश्वरवत्सत्कृतोबहुमतः किंचित्कालंज्येष्ठस्यभ्रातुः भृतराष्ट्रस्यश्रेयस्कृत्सर्वेषांधर्भराजादीनांभ्रोतिमावहन्सुसमवात्सीदुवास श्रेयः कुर्वन्त्रीतिमवोद्वंचावात्सीदिलर्थः भ्रातुःश्रयस्करण्यमतस्यमरण्याचापनपूर्वकंमुक्त्युपायप्रवर्त्तनरूपविवासितम् ॥ १४॥

कथंतस्यतंद्रावनसामर्थिमितिशंकाव्युदासायसर्वप्राधिमृत्युकालकस्तदंडधरश्चयोयमः सगवाधिविवुरश्तिवदन्शंकांतरंचितराह अ-विभृदितिशापानमांडव्यशापाद्धेतोर्यमोयावच्छूद्रत्वं विदुररूपश्चद्रभावदधारतावद्वर्षशतमर्यमासूर्योऽघर्कारपुपापिषुयथाघंतत्पापानुरूपंदंद

युधिष्ठिरइतिद्वाभ्यांलव्यंराज्यंयेनसयुधिष्ठिरः कुलंधरंकुलनिर्वाहकंपौत्रेपरीक्षितंदक्षादंद्रादिलोकपालसदशैर्थालुभिः धरयाभियाच-मुमुहे ॥ १६॥

## श्रीविजयध्वजः।

तारिकमितिनावगांयवितितत्राह तत्विति॥ १३॥ बिदुरः किमकार्वादितितत्राह केचिदिति सुजलक्षगांश्रयः उग्रेष्ठस्यश्रातुर्धृतराष्ट्रस्य ॥ १४॥

स् तत्विष्रयमितिविज

 ।

## श्रीविजयभ्वजः।

एवंभगवद्गक्तिज्ञाना दिमानयंविदुरोदेवेषुकस्यावतारः तेतत्राहः अबिभ्रदिति योऽयमावैवस्ततोऽघकारिषुपापकृतसुयथाघंपापमनातिक म्यदंडमबिम्रत्रि श्रामासरोत्पापफलमभोजयदित्यथेः सयमोमांडव्यशापाद्यावद्वर्षशतंतावच्छूद्रत्वंबभारत्यन्वयः मांडव्योनामकश्चिद्दिषः करिमंश्चित्रदीतीरेतपश्चरस्तत्रकस्माचित्रगराखौर्यगृहीत्वागतैश्चोरैः सहानुधावद्भिनंगरपालैरब्रानादृहीत्वारांबनिवेद्यतदनुष्कयाञ्चलेसमा रोपितोऽभूत तत्रापिश्चलैतपः कुर्वतमपिजाज्वल्यमानदृष्टा जनैनिवेदितोराजाससंग्रममुपागम्यश्चलादवरोप्यप्रसाद्यप्रस्थापयामासकोपेनजा ज्वल्यमानेनयससमीपंगतेनमुनिनाक्षस्मादहंग्र्लमारोपितइतिपृष्टोयमः तस्मात्शापमादातुकामोबाल्यावस्थायांकाचिन्मक्षिकाश्ललसमारो पितातेनदेषिगाअयमवस्थाविशेषः प्राप्तइतिषाह तस्मैकुद्धोमुनिः शूद्राभवेतिशशापतिर्मितमांडव्यशापः ॥ १५ ॥

अथयुधिष्ठिरः किंचकोरीततत्राह् युधिष्ठिरइति इंद्रादिलांकपालसमानैभीमादिभ्रातृभिर्लब्धराज्योयुधिष्ठिरः कुलंघरंपौत्रहिष्टापरम

सम्पदासुमुदद्दत्येकान्वयः कुलंघारयतीतिकुलंघरः॥ १६॥

## क्रमसन्दर्भः।

निन्विति । अत्रान्योऽपि दुःखराङ्कया नाकथयत् इति क्षेयम् ॥ १३॥

श्रेयस्कृत् हितोपदेष्टा ॥ १४॥

तन्वसौ यम एव विदुरत्वेन जातस्तस्य चास्य लोकेऽस्मिन् श्रेयस्कृत्वमेव श्रूयते न तु यमलोके यमक्रपेशा दशाङकृत्वमपि। तर्हि तत्र दराडः कथमसैत्मीत् तत्राह अविभ्रदिति । वर्षाणि कतिचिद्धिकानि शतश्च वर्षशतम् ॥ १५॥ १६॥

## सुवोधिनी।

"अञ्जवन्विञ्जवन्वापिनरोभवतिकिल्विषी"तिसभारूपेसमाजेधमेराजेनपृष्टःकथंनोक्तत्रानित्याशंक्याह नन्वप्रियमिति सर्वपृष्टमेववकत्य नत्विषयं सत्येब्र्यात्रियंब्र्यासब्यात्सत्यमिषयं प्रियंचनानृतंब्र्यादेषधमेः सनातनः इतिवाक्यात् पृष्टोऽपिमत्यमपिअप्रियनवक्तव्यं तत्रापि कुर्विषद्धं यस्मिन् श्रुतेश्रोतापिश्चियेत अतोधर्मिनाशकं श्रवणनकारणीयामित तर्दिकथमित्रमकार्यसम्पत्तिरतआहरृगांखगमुपस्थित मिति खतपवजनमुखादेवज्ञास्यन्ति किखवचनेनेति किंच करुणावान् सर्वणानवदत् दः खित्रष्टृ खस्यापदः खसम्भवात् निष्धित् खदुःखार्थयतते अतोधमेशास्त्रात्नीतिशास्त्रात् युक्तेश्चपरस्मेदुःखंनवदेदितिभावः यतोदुःखितान् द्रष्टुमक्षमः खकार्यतेमाजानंतिवति

स्वावसरप्रतीक्षयात्रेवस्थितइत्याह् कंचित्कालीमिति अधप्रदनसमाप्यनंतरंदेववत् यथैववदन्तिकुर्वन्तितदेवमन्यते विश्वासार्थस्व सुसंक्षापयन प्रितिस्तष्ठतीत्यर्थः स्थितौहेतुमाह भ्रातुरुर्येष्ठस्यभृतराष्ट्रस्यश्रेयस्कृत् वराग्यादिसंसाधनेनमोक्षसाधकः सर्वेषांप्रीतिमा

बहन्नितिविश्वासार्यसम्भावितदुःखदूरीकरमार्थवा ॥ १४॥

नन्यस्यकनिष्ठस्यअयथाजातस्यकथंमोक्षसाधकत्वमनिधकारात्तत्राह् अविश्वदिति उत्तरोत्तराञ्चानात् पूर्वविष्ठहेतिदेहेदियमा-मान्तः करागानां व्यवस्थायद्यात्मनाक्षायन्ते अयमहमिति तदाअन्येधमीदुर्वलाः अतप्वभुक्तृरोदेरप्युपदेष्टृत्वेपूर्गाञ्चानवानिपसर्वत्रााव-चारितालभक्षगात्काकत्वंप्राप्तः देहत्यागसमयेकाकचर्ययाचतस्मान्नायंकनिष्ठभातानवाशृद्धः किंतुयमः "मागडव्यशाशात्भगवान्प्रजासंय मनोयमः भातुः क्षेत्रभुजिष्यायांजातः सत्यवतीसुतादि"तियध्यति तर्हिकइदानीयमलोकंअधिकारीत्याशंक्याह अविभादिति "विवस्वानर्यमापू वे"त्यादिद्वादशादित्याः तत्रद्वितीयोऽर्थमासयावच्छूद्रत्वंदधारमांडव्यशाशाह्रषेशतं तावदर्थमाअधिकारंकृतवान् यथावत् पापकारिषुशतव र्षानंतरंग्रद्धत्वमतउपदशेऽपिनदोषः॥ १५॥

युधिष्ठिरस्य विदुरविस्मरणार्थे किचिद्राज्यभोगमाह युधिष्ठिरइति युधिष्टिरोलव्धापौत्रंचराज्ययोग्यरष्ट्वामातुःभः इंद्रादितुल्यैः

सहितः श्रियापरयादंद्रदुर्लभयावामुमुदे"राज्यंवंशोभ्रातरश्च धनंचाह्नानहेतवः" ॥ १६॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवत्ती ।

न च धृतराष्ट्रादयं कनिष्ठत्वान्न्यूनो मन्तव्यः साक्षाद्धम्भैराजस्यैव माग्डव्यशापेन श्रुद्रतयावतीर्गात्वात् । ननु तावदमुत्र को दणन धर्हतत्राह । अविभ्रत् आर्षप्रयोगः भृतवानित्यर्थः । तथाहि कचित्रीराननुधाबन्तो राजभटा मागडन्यस्य तपश्चरतः समीपे तान् संप्रा-व्य तेन सह निवध्यानीय राज्ञे निवेद्य तदाञ्चया सञ्जीनेव श्रूलमारोपयामासुः। ततो राजा तमृषि ज्ञात्वा श्रूलादवतार्थ्य प्रसादयामास। त्य पार्मि गत्वा कुपित उवाच । कस्मादहं शूलमारोपित इति । तेनोक्तं त्वं वाल्यं कुशामेश्य शलाव्या माहितवानिति । तत् शुन तता प्राप्त विश्व क्षेत्र विश्व अजानतो में महान्तं द्यहं कारितवान् अतस्व भूद्रों भवेति ॥ १५ ॥ १६ ॥ १६ ॥

एवं गृहेषु सक्तानां प्रमत्तानां तदीहया ।

त्रित्यक्रामदिवज्ञातः कालः परमदुस्तरः ॥ १७ ॥

विदुरस्तदिनेप्रत्य धृतराष्ट्रमभाषत ।

राजित्रगिन्यतां शीघं पद्येदं भयमागतम् ॥ १८ ॥

प्रतिक्रिया न यस्येह कुतिच्चित् किहिचित् प्रभो ! ।

स एष भगवान कालः सर्वेषां नः समागतः ॥ १९ ॥

यन चैवाभिषन्नोऽयं प्रामोः प्रियतमैरिष ।

जनः सद्यो वियुज्येत किम्तान्यैर्धनादिभिः ॥ २० ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

तत्रकारण्याह नन्त्रित ॥ १३॥

भ्रातुष्ट्रितराष्ट्रस्यश्रयस्कृत्कल्यागाविवश्चः॥ १४॥

तादशसामर्थ्यतस्यसूर्यपुत्रत्वादस्त्येवेति सूचयति अविभ्रदिति मांडव्यशापाद्यावद्यमः शूद्रत्वंदधारतावद्वषशतमयमासूर्यो ऽघका कारिषुदं इंदधार ॥ १५ ॥ १६ ॥

#### भाषा टीका।

क्योंकि जो मनुष्यों को अप्रिय और दुःसह है वह अपने आप आगे आजाता है। यह विचारकर करुगामय बिदुरजीने वह नहीं कहा। क्योंकि वे दुःखितों को देखने में असमर्थ हैं॥ १३॥

देवताओं के समान सत्कृत होकर सुखसे विदुरजी कुंछ काल बसे। बडे, आता धृतराष्ट्र के कल्यामा करने की इच्छा थी। और

सबकी भी प्रीति विस्तार करते थे॥ १४॥

मांडव्य ऋषि के शाप सं जवतक (सीवरसतक) यमराज ने शूद्रत्व धारण किया (विदुर रूप में रहे) तबतक पितृपति अयंमा पापियों को दंड विधान करते रहे ॥ १५॥

युधिष्ठिर राज्य पाकर कुलंधर पौत्र को देखकर लोकपालकों के समान भ्राताओं से परम सम्पत्ति से आनंद मग्न होगये॥ १६॥

#### श्रीधरखामी।

तदीह्या गृहव्यापारेशा प्रमत्तानाम् अत्यक्तामत् आयुःकालोऽतिकान्तः । यद्वा तान् कालः अभ्यभवदित्यर्थः ॥ १७॥ अभिप्रत्य ज्ञात्वा ॥ १८॥ वत्यप्रतीकारः कियतां कि निर्गमनेन तत्राह प्रतिक्रियेति । सन्वैषामिति यैः प्रतिकर्त्तव्यं तेषामपीत्यर्थः ॥ १९॥ कथं धनादिवियोगः सोदुं शक्यः अतः आह येनेति । अभिपन्नः अभिग्रस्तः ॥ २०॥

## श्रीवीरराघव।

एवंगृहेष्ट्रासक्तानांतदीह्यागाहींयचेष्ट्याप्रमत्तानामविदितमृत्युकालानांकर्त्तरिषष्ठीतैरविज्ञातः परमः सर्ववशीकुर्वश्रतगवदुस्तरः कस्या व्यवद्यः कालोऽत्यकामत् अतिकांतवान् तदीह्याअविज्ञातद्दातवान्वयः युधिष्ठिरादीनांविषयानुभवकालोव्यितकांतोवभूवेत्यर्थः॥ १७॥ भ्रातुः श्रेयस्क्रियाप्रकारप्रपंचयतिविदुरहत्यादिभिर्दशाभिः तंकालातिकममभिष्रेत्यविदुरोधृतराष्ट्रमभाषत तदेवाहराजिन्नत्यादिसाद्धैं र्नवाभिः हेराजिन्नतः शीव्रंनिर्गम्यतांत्वयेतिशेषः आगतमुपस्थितामिदंभयंषद्यालोचय॥ १८॥

किंतत्तत्राहप्रतिकियेतिकुताश्चिद्पिहेतोः कदाचिद्पियस्यभयस्यप्रतीकारः निवारणंनास्तिसगषभगवान्भगविष्रयाम्यः सर्वेषांनोऽस्मा

कंकालोमृत्युकालः समागतः समुपस्थितः ॥ १९ ॥
गृह्यसिक्तित्याजयितुंकालिविशिषश्चाहयेनेतिअयंपरिदृश्यमानोजनः येनक्लिनाभिपन्नः अभिपद्यमानः प्रियतमैर्निरितशयप्रियेः प्राणी रिवसधीविमुच्येतत्यज्यतअन्येः प्राणानुवंधिभिर्धनादिभिर्मुच्येतेतिकमुवक्तव्यंसकालः समागतहस्यन्वयः॥ २०॥

4

### श्रीविजयध्वजः।

\*ययौद्वारवतीमित्युक्तश्रक्तिष्णाप्रयाणाशेषमाह अथेति अयविभुव्याप्तोऽच्युतकागामिष्यामीत्यामंत्र्यसंभाष्ययांतं अनुगतान्बंघून्निवर्ता र्ज्जनादियुक्तोहयैर्युक्तेनरथनद्वारवतीययावित्येकान्वयः ॥ १६ ॥

अधुनाघृतराष्ट्रस्यस्वर्गप्राप्तिप्रकारंवक्तुमुपक्षमते प्रविमिति प्वमुक्तप्रकारेगाद्दरिपरायगानांपांडवादिवदयः कःलप्कमपिक्षगामवं ध्यतांनेतुंशक्यः सकालोहरिविमुखानांगृहेषुपुत्रमित्रादिलक्षयोषुक्षेवलंशिक्षोदरंमरतयासक्तानांगृहपोषगाधनान्वेषगाप्रयत्नैः प्रमत्तानांवि स्मृतपरमात्मतस्वानामतप्वाविद्यातोऽत्यकामदितकांतोऽभूवित्येकाम्वयः॥१७॥

तत्कालस्यातिकमसां विदुरहतिनामसार्थसाधयन् निर्गम्यतां ग्रहादितिशेषः प्राप्तमिश्मरस्मायपश्येत्यन्वय ॥ १८॥

यस्यकालस्यकुतिश्चत्कारगात्कर्दिचिद्दिपिप्रतिकियानिवर्तनिकयानास्तिसएषभगवान्कालरूपोनः सर्वेषांसमागतः शरीरिवयोगकर गायप्राप्तइत्यन्वयः॥ १९ ॥

इतोऽपिनिर्गमनमुचितिमत्याह येमेति इहजीवलोक्येनकालरूपिगाहिरिगाश्रीभपन्नोग्रस्तः अयंजनोतिश्येमहृद्यंगमैः प्रागौरिपिवियुज्ये तान्येर्धनादिभिर्वियुज्येतहतिकिमुतेत्यन्ययः ॥ २० ॥

#### क्रमसंदर्भः।

पवं युधिष्ठिरस्य पालनलन्धसुखपकारेण गृहेषु सक्तानां प्रमत्तानां जनानां न तु पांडवानाम्—किं तेकामाः सुरस्पाही मुकुन्दमनसी द्विज । अधिजहुर्भुदं रोज्ञः क्षुधितस्य यथेतरे इत्यादेः—येऽध्यासनं राजिकरीटजुष्टं सद्यो जहुर्भगवत्पार्श्वकामा इत्यादेश्च । अतएव विदु-रोऽपि धृतराष्ट्रम् प्रत्येव तथोपदिदेश न तु तात्र प्रतीति ॥ १७ । १८ । १८ । २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ ॥

## सुवोधिनी।

ततः किमतआहएवंगृहेष्विति तेहिभगवतिविद्यमानएवपौत्रेप्रौढेजातेभगवंतं पृष्ट्वापौत्रेराज्येप्रतिष्ठाप्यनिरंतरंभगवाञ्चितकाः भगव-त्सत्रदीक्षिताभवितुंयुक्ताः तत्तुतेषांनराज्यदोषात्वृत्तामित्याह एवंगृहेषुसक्तानामिति षट्त्रिरात्वर्षपर्यतंराज्यंकृतं षोडरावर्षानंतरमे-वराज्ययोग्यः पुत्रः तथापिएवंपूर्वोक्तप्रकारेणगृहेषु आसक्तानांगृहेतिकर्त्तव्यतयाचप्रमत्तानांस्वकार्ये असावधानानामज्ञातएवकालोगतः तैर्क्षात्मधैवराज्येजपविष्टमिति ॥ १७ ॥ '

पतत्त्वरूपंकियत् फालवासेनविदुरोक्षातवान् पतेत्वार्थेप्रमसाः कालग्रस्ताभिष्यंतीति अन्येचेदेतेभक्ताभवेयुः तदाअयोध्यावत् सर्वमेवनगरंवेकुंठंगच्छेत् तदाश्रृतराष्ट्रस्यकर्त्तव्यंनाविद्यिततत्तुनास्तीति निश्चित्यक्तिप्रवेशेबुद्धिग्रंशे अन्योऽन्यमारणेनधृतराष्ट्रस्यचभी मसेनमहद्भयंभविष्यतीत्याशंक्य श्रृतराष्ट्रदेवोधार्थप्रवृत्तर्त्याह् विदुर्शति कालस्यपरमदुस्तरत्वकथनात् तादशानामपिकालांशानांबहूना मतिकमात् सर्वनाशककालग्रध्वेपातितोधृतराष्ट्रदत्यभिष्रेत्यतंप्रत्याह् राजिक्षर्गम्यतामिति राजानोहिकालस्यशीष्ट्रंभस्याः राज्येनाधर्मन् बाहुल्यात् शीघ्रिनिगमनहेतुः पश्येदंभयमागतिमिति ययाभगवतोऽधिकारीकालः तथाकालस्यभयनामाकश्चितः चतुर्थस्कंधेवक्तव्यः सन्द्रदानींभगवतिनिगतेतदीयानांस्वतोऽनिगमने अयमधिकारीसवीन् भक्षयतिपत्नीरिव अथवायेपूर्वभश्यत्वेनैवस्थिताः भगवदृदृष्ट्याचभिव्यतिनिगतितदीयानांस्तोऽनिगमने अयमधिकारीसवीन् भक्षयतिपत्नीरिव अथवायेपूर्वभश्यत्वेतैवस्थिताः भगवदृदृष्ट्याचभिव्यतिनिगतिन्दानींभक्षयितुमागतः अग्नेवेधहीक्षान्यायेनकानसंचारसामध्येवोधियतुंखसामध्ये वलेनतंत्रदर्शयकाह आगतिमिति ॥ १८॥

ति पूर्वविद्वित्ति प्रभो ! इतिसंवोधनेनअन्यश्रप्रशुत्वं कलिति । इतिसंवोधनेनअन्यश्रप्रहुत्वं कलिता भेत्युपहासः तिहिकिमस्मानेवभक्षियतुमागतः उतसर्वान् आद्ये यथा सर्वे नप्रतीकारं कुर्वितियास्माभिरिषेनकर्त्तेच्यः कथंनप्रतीकार् इत्याशंक्याहः सप्वेतियः पूर्वकृष्णाख्यः त्यत्पुत्रादी जुपसंहृतवान् सप्वेदानीं त्वामुपसंहर्त्तुमागतः नचसगतइति मंतव्यं भगवस्वात् पूर्वमन्येनक्षेपण्डियतः सांप्रतमन्येननामखक्षपतप्यआकृतिमाश्रीसद्यत्वत्याहः का लश्तिकलयतिसर्वानाकलयतीति नजुपूर्वयथा गण्डवाउविरिताः तथेदानीमिषेउविरिताभविष्यंति ततश्चत्वाश्रयेनवयमिषेजीविष्यामः इत्याशंक्याहस्वषानः समागतइतिपूर्वस्माद्वेलक्षण्यम् ॥ १९ ॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

गृहेषु सक्तानामिति युधिष्ठिरादिभ्योऽन्येषामेव निन्देयं तात्कालिकजनानां क्षेया। तेषां श्रुधितस्य यथेतरे इति स्टान्तेन तास्यासम्प-दाविष्वपि अनासक्तिः प्रपश्चिता ॥ १७ ॥ १८॥

<sup>#</sup> अथामन्याच्युतोबन्धून्निर्वर्त्यानुगताविभुः ॥ अर्जुनोक्ष्टैहोनेर्यययौद्धारवताहरैः ॥ १६ ॥ इतिविजयध्वजः ।

पितृ-श्रातृ-सुहत्-पुत्रा हतास्ते विगतं वयः ।

श्रात्मा च जरया प्रस्तः परगेहमुपाससे ॥ २१ ॥

श्रात्मा च जरया प्रस्तः परगेहमुपाससे ॥ २१ ॥

श्रात्मः पुरैव विघरो मन्दप्रक्षश्र साम्प्रतम् ।

विशीर्गादन्तो मन्दािमः सरागः कफमुद्रहन् ॥ २१ ॥

श्राहो महीयसी जन्तोर्जीविताशा यया भवान् ।

भीमापविज्तितं पिग्रहमादने गृहपालवत् ॥ २२ ॥

श्राद्मिनिसृष्टो दनस्तु गरो दाराश्र दूषिताः ।

हतं क्षेत्रं घनं येषां तहनैरसुभिः कियत् ॥ २३ ॥

तस्यापि तव देहोऽयं कृपगास्य जिजीविषोः ।

परैत्यनिच्छतो जीगों जरया वाससी इव ॥ २४ ॥

## श्रीविश्वनाथचऋवर्ती।

सर्वेत्रवामिति यैः प्रतिकर्त्तव्यं तेपामपीत्यर्थः ॥ १९ ॥ येन सृत्युद्धपेषा कालेनाभिपन्नो प्रस्तः ॥ २० ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

पर्वगृहेषुसक्तानां धृतराष्ट्रादीनांतदीहयागृहेहयाप्रमत्तानांकालः अत्यक्रामत् जीवनसमयः समाप्तप्रयोजनोजातइत्यर्थः कर्यभूतः अविज्ञातः दुर्लक्ष्यः परमदुस्तरः परमैर्ज्ञक्षादिभिरपिदुस्तरः॥ १७॥

अभिनेत्यालस्य ॥ १८॥

भगवात्भगवच्छितित्वाद्भगवच्छव्दवाच्यः॥ १९॥

अभिपन्नः अभिपद्यमानः॥ २०॥

## मापा टीका।

ऐसे गृह में आसक्त हुये तथा गृह चेष्टा में प्रमत्त हुये पाएडवों का अत्यंत दुस्तर अविश्वात काल चला गया ॥ १७ ॥ इस बात को जानकर विदुर जी घृतराष्ट्र से बोले हे राजन् ! इहांसे शीव्र निकलो देखो यह मय आगया है ॥ १८ ॥ हे प्रमो ! जिसका किसी प्रकार से कमी भी निवारण उपाय नहीं है सोई यह भगवान् काल हम सवों का आगया है ॥ १९ ॥ जिस काल से आकांत हुआ अत्यन्त प्रिय प्राणों से भी शीघ्र छूट जाता है तो धनादिकों की तो क्यां बात है ॥ २० ॥

## श्रीधरस्वामी।

अत्रावस्थानमतिदैन्यमिति दर्शयन् वैराग्यमुत्पादयति पितृम्नात्रिति सप्तिभिः। नातमा देहः॥ २१॥ २१॥ विश्व येन पुत्रा हताः तेन भीमेन दत्तं पिश्डम् (असम्।) गृहपालः श्वा (इव)॥ २२॥ विश्व भीमेन दत्तं पिश्डम् (असम्।) गृहपालः श्वा (इव)॥ २२॥ विश्व प्रयोजनं न किश्चिदित्ययः॥ २३॥ विस्थिप्तः। गरो विषम्। दूषिता अवमताः। तद्देरस्त्रादिभिः लब्धेरसुभिः कियत् प्रयोजनं न किश्चिदित्ययः॥ २३॥ तस्यापि एवं देन्यमनुभवतं ऽपि। परैति क्षीयते। (अतएव धीरो भवेति )॥ २४॥

## श्रीवीरराघवः।

विरक्तिनुत्य दियतुतस्यावस्थांत्रश्रांवितिषित्रित्यादिभिश्चतुर्भिः तविषत्रादयोहताः भृताः वये।यौयनंचापगतमात्मादेहोजरयाच्य्यस्तः तथापिपरेषांशत्र्याश्यांगेहमुपांससेजावनार्थामितिशेषः॥ २१॥ जित्विताशांत्याजियतुविस्मयमानआह अहाजतोजीविताशामिहायसीवर्णयाजीविताशयाभवान्मीमेनावितितंपरिभूयदसीवर्धक्ष जित्विताशांत्याजियत्वत्यहपालः श्वातद्वत् ॥ २२॥ स्वतं स्वीकरातोतियावत्यहपालः श्वातद्वत् ॥ २२॥

## श्रीबीरराघवः।

पिंडस्यमीमापवर्जितत्वख्यापनायभीमादीनांशञ्चत्वंप्रख्यापयंस्तदपवर्जितापिंडेनप्राग्राधारग्रामितिहीनिमत्याह अग्निरितियेषामित्यस्याग्या दिभिः प्रत्येकमन्वयः येषामाग्निनिषृष्टः लाक्षागृहेष्ट्रितिशेषः येषांगरोविषंदत्तंयेषांचदाराः द्रौपदीद्षेषताः कचप्रहण्यवस्रापहरणादिभिर्दूषि-ताः येषांचधनक्षेत्रराज्यंचापहृतंसर्वत्वयतिवोध्यं तत्रत्वत्पुत्रैरितिकर्तृपदंवोध्यतहत्त्रेस्तदपवर्जितेः पिंडदानायतत्वात्तद्वत्तित्युक्तम्भसु-भिः प्राग्नैःकियम्रकिविद्वतिहीनिमदंजीवनिमत्यर्थः॥ २३॥

विधिविधेयंप्रारब्धमनुभूयमेवेतत्रजीविताशांत्याजयितुमेविविशिषन्नाहतस्येतितस्यतद्त्तासोः कृपयाजीवितुमिच्छोरप्यानिच्छतः देह स्थागमनिच्छतोऽपितवहृदद्दतिशेषः जीर्गोवाससीदृवजरयादेहः परैत्यपगमिष्यत्येव ॥ २४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अस्तुमयापिमरशांततः किमितितत्राह पित्रिति तविपत्रादयोहताः वयश्चविगत मात्मादेहश्चजरयात्रस्तइतियत्तथापित्वंपरगेहमुपा ससे नश्चेयः साधनायेहसं सृतस्यतवातः परलाकेनसुखावाण्तिरित्यर्थः॥ २१॥

परलोकोसुखं नेतिचेदिहैवदीर्घजीवनमस्त्वित्यभिप्रायश्चेत्तर्हित्वं निरपत्रपहत्यभिष्रेत्याह अहोइतिजंतोर्जीविताशावहुकालंजीवामीत्या शाहच्छामहीयसीमहत्तराथहोअज्ञानातिरेकः ययाजीविताशयाभवान्भीमापवर्जितं भीमेनतिरश्चीनहरूतेनदत्तंपिडमादत्ते कद्दवगृह पालवत् स्मरमेयद्द्य ॥ २२ ॥ '

तनुविषमउपन्यासः किनष्ठपुत्रत्वेनमत्पुत्रत्वात्तद्दत्ताक्षेनशरीरपोषणामुचितमितिचेत्सत्यं विषदानादिना त्वयाऽपराद्धत्वात्तद्दत्तेविषो पमिमित्यभिमेत्याह अग्निरित अग्निदाहाद्यपराधाः त्वयायेषांकृताः तेषामन्नैः पुष्टेरसुभिः कियत्प्रयोजनं रुज्जा करत्वान्सृतिरेवगरीयस्यतो निर्गम्यतामित्यन्वयः ॥ २३ ॥

युधिष्ठिरादीनांसियतात्पर्याञ्चनिर्जिगमिष्यामीति चेत्तत्राह तस्येति जरयात्रस्तेवाससीइववस्त्रेइवयथातथाञ्चनिच्छतोजिजीविषोजीवि तुमिच्छोः कृपग्णस्यपरान्नादननिरतस्यापितवायंजीग्गोंदेहः परैतिनिरस्तासुः स्यादतोदेहस्यानित्यत्वाञ्चिगेच्छत्वितिवदामीतिभावः॥ २४॥

## सुवोधिनी ।

ननुतदेवत्यकव्यंकिमंतरागमनेन, विमुचेन्मुच्यमानेष्वितिन्यायात तत्राह पितृभातृहति एवंसवदेत्यस्य समीचीनाविषयाभवेयुः तवतुजीवनान्मरणामुत्तमंचिरप्रवासीरोगीपराञ्चमांजीपरावसयशायायजीवाततन्मरणां यन्मरणां सोऽस्यविश्रामःइति वाक्यात्तवेदानी मेवत्यागडचितः कथंतदुपपादयतिपिताभीष्पः भ्रातरः भूरिश्रवादयः शल्यादः सुहृदः पुत्रादुर्योधनादयः एकोऽपियत्रहन्यतेतत्रसल-ज्ञोनतिष्ठतिकिमुतसर्वे वयः आयुः आत्मादेहः जरा कालकन्यापवमिष परेषांदात्रूगांगह गृहपालवदुपाससेहति ग्लानिप्रदर्शनम् ॥ २१ ॥

सामान्यक्रयनेनविशेषमाह अहोइति यनपुत्रस्यरुधिरं पीतमर्थात् स्वस्यैवतेनअवज्ञयादत्तंविहर्भिटेदान पिडवत् तत्राप्यन्यः स-यायास्यतीतिभयात् तद्गृहपालः श्वाशीधंमक्षयतितद्वदादत्से ॥ २२ ॥

नतुनिरिभमानस्येतदुचितंतत्राह अग्निनिमृण्देस्रश्चेति स्यादेवंयदिभवद्भिरपकारः कृतोनस्यात्अतः भविद्भिरवशत्रतस्यिरियरीकृतत्वात् युक्तं भीमकृतं "नद्भिषतोत्रमश्चीयात् द्विषंतंनैवमोजयेत् द्विषताहिहविर्भुक्तंनहनामुत्रतद्भवेदि"तिश्रुतेः अग्निनिमृण्लेलाक्षागृहेचिपरीतकथनंसामान्यविशेषमावात्दाराः द्वौपदीचकारासंऽिपवल्कलादिपरिधानात् क्षेत्रमितिस्थितस्थानमपि अत्यवमपकृतेर्जीवरक्षमां
योगशास्त्रविरुद्धंकियदिति नतज्जीवनेनिकिचित् मयोजनंसेत्स्यतीतिभावः॥ २३॥

एवमिपसर्वविरोधेनपोषितोदेहः खयमेवनतिष्ठतीत्याह तस्यापीति पवंग्लानिमनुभवतोऽपिरुपणस्य दीनस्य"कृपणः सतुविक्षेयो-योऽनालोचितपाचक" इति भीमपाचकस्यवाजिजीविषोः जीवितुमिन्छोः परैति अपगन्छतितश्रहेतुः जरयाजीर्शाइति अव्यविद्रयमागोअप रियानोत्तरीयेवाससीस्पर्शमात्रेणैवजीर्गोगन्छतः प्रक्षालनगापिनइयतीत्यर्थः॥ २४॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्ता।

धैराग्यमुत्पादयति पित्रिति सप्तभिः॥ २१॥ थपवर्जितं दत्तम् । गृहपालः श्वा॥ २२॥

तद्दत्तरमादिभिर्लव्धेरसुभिः कियत् कि प्रयोजनिमत्यर्थः॥ २३॥

परैति श्लीयते। वाससी अन्तरीयोत्तरीये इति इष्टान्तस्य द्विचचनदृष्ट्या दार्षान्तिकस्य देहस्यापि सुश्मस्थूलभेदेन द्वितयात्मकस्य श्लीर्यात्वम् आन्ध्रवाधिर्योक्तिदं सुश्मदेहस्य जीर्यात्वेलक्ष्यां वलीपलितादिकं स्थूलदेहस्य च ॥ २४॥ गतस्वार्धिममं देहं विरक्तो मुक्तवन्धनः।
ग्राविज्ञातगतिर्ज्ञह्यात् स व धीर उदाहृतः॥ २४॥
यः स्वकात् परतो वेह जातिन्ववेद ग्रात्मवान्।
हृदि कृत्वा हिरं गेहात् प्रव्रजेत् स नरोत्तमः॥ २६॥
ग्राथोदीर्ची दिशं यातु स्वरज्ञातगतिर्भवान्।
इतोऽव्वीक् प्रायशः कालः पुंसां गुगाविकर्षगाः॥ २७॥
एवं राजा विदुरेगानुजेन प्रज्ञाचक्षुर्वोधित ग्राजमीदः।
क्रित्वा स्वेषु स्नेहपाशान् द्रिहिन्नो निश्चक्राम भ्रातृसन्दर्शिताध्वा॥ २८॥

## ' सिद्धांतप्रदीपः।

वैराग्योत्पादनायाह पित्रिति सप्तिभः आत्मादेहः॥ २१॥ भीभेनभवत्पुत्रक्तेन आवर्जितम् अवशापूर्वेकंदत्तंग्रहपालवत् ग्रामसिहवदादत्तेस्वीकरोति॥ २२॥

येषांचिनाशाय अग्निर्निसृष्टः प्रक्षिप्तः दारादृषिताः कचग्रहणादिभिरवज्ञाताः तद्दत्तेरस्नादि द्वारारिक्षितैरसुभिः कियम्निक-यदिपार्यायः॥ २३॥

अस्थापि एवंदैन्येनवर्त्तमानस्यापितवदेहः परैतिअपगमिष्यति ॥ २४॥

#### भाषाटीका।

पिता श्राता मित्र पुत्र नष्ट होगये अवस्था चली गयो देह जरा से प्रस्त होगया दूसरे के घरमें रहते हो यह उचित नहीं ॥ २१ ॥ पहिले ही अंध्र थे अव विधर होगये मंद्राधि होगये दांत भग्न होगये मंद्राधि होगये कफ् गिराते हो तथापि विषयानुराग नहीं छूटता है ॥ २१ ॥

आश्चर्य है कि मनुष्य की जीवन आशा बड़ी होती है जिससे आप भीमके दिये हुये अन्न ग्रास को कुत्ता की नाई ग्रहण करते हो २२ तुम्हारे पुत्रों ने जिनके निवास में आग लगाई जिनको बिष दिया जिनकी स्त्री को दूषित किया जिनके क्षेत्र को हरण किया उन पांडवों के अन्न से दिये प्राणों से क्या प्रयोजन है ॥ २३'॥

जा है ॥ २४ ॥ जी की इच्छा करने पर भी जी र्यावस्त्रवत् नष्ट हो जाता है ॥ २४ ॥

## श्रीधरखामी।

( किलक्ष्याो धीर इत्यपेक्षायामाह । ) गतस्वार्थे यशोधम्भोदिश्चन्यम् । मुक्तवन्धनः त्यक्ताभिमानः । क गत इति अविज्ञाता गतिर्थस्य । स धीरः प्राप्तदुः खस्य सहनेन मुक्तिप्राप्तेः । वै निश्चितम् ॥ २५ ॥

नरोत्तमस्तु ततः प्रागेव कृतप्रतीकारः । स्वकात् स्वत एव परतः परोपदेशतो वा ॥ २६॥

त्वन्तु पूर्व्व नरोत्तमो माभूः अत इदानीं धीरो भवेत्याह अथेति । अर्ब्वाक् अर्व्वाचीनः एष्यन्नित्यर्थः । गुगान् घेर्यदयादीन् विकर्षति आक्तिनत्तीति तथा ॥ २७ ॥

आजमीढः अजमीढवंशजः। प्रशाचक्षुः अन्धः। एवं वोधितः सन् । द्रढिम्नश्चित्तदार्ख्यात् । स्रात्रा सन्दर्शितः अध्वा वन्धमोक्षयो-मीगों यस्य सः॥ २८॥

#### द्योपनी।

प्राप्तेत्यत्र—यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषषेभ । समदुःखसुखं धीरं सोऽम्तत्वाय कल्पते । इति श्रीमञ्जगवद्गीतान्तर्गतद्वितीयाः ध्यायोक्तवचनेनार्थोऽनुसन्धेयः ॥ २५—४० ॥ 7

ħ.

### श्रीवीरराघवः।

तर्हिकातिसिष्टियावत्रेवपरैत्वित्यत्राह गतेतिगतः खार्थः खापेक्षितपुरुषार्थीयस्मात्तामिमंदेहंयोजह्यात्त्यजेत कथंभूतः विरक्तः देहादि षुरपृद्दारद्वितः मुक्तानिवंधनानिसंसृतिवंधकानिपुरयपापात्मकानियेन अविवाताक्षातिभिरश्चातागतिर्देहस्यागलोकांतरप्राप्तिरूपायस्यसः सरावधीरः योगीउदादृतः॥ २५॥

क्षिचस्वकात्परतथन्यस्मादन्योपदेशाद्वाइहजातोनिर्वेदोवैराग्यंयस्यसःयः पुमानात्मवान्जितेद्वियः हरिमाश्रितानांसंसृतिबंधहरंभगवं तंद्रृदिकृत्वाविधायध्यानेनसंन्निष्याप्यगेद्दात्प्रव्रजेत्सप्वनरेपूत्तमः त्वमवंकुर्वितिभावः ॥ २६ ॥

तदेवाह् अयहति अतः स्वैर्कातिभिरक्षातागतिर्यस्यसभवानुदीचींदिशंयातुतत्रहेतुमाह इतोऽर्वागितोनंतरंकालः प्रायशः पुंसांगुगाना त्मगुगान् अक्रेषादीन्विक्षवैत्यपनुदतशतितथाभूतः नंदादित्वाल्ल्युः यद्वाइतोऽनंतरकालात्अर्वागधरः निरुष्टः कलिकालः इतियावत् अर्वा क्त्वमंवाहगुगाविकषंगाः उक्तार्थः ॥ २७ ॥

एवमित्थमनुजेनविदुरेगावोधितआजमीढः अजमीढवंशजत्वात्तचनवमेस्फुटंप्रज्ञैवचश्चर्थस्यअंध्रहतिभावः यद्वांधत्वेऽपिप्रज्ञयाचश्चः 🗣 स्थानीययासर्वसाक्षात्कुर्वाग्यः राजाशृतराष्ट्रः म्रात्राविदुरेगासंदर्शितः अध्वागतत्त्रवेशाध्वायस्यसः अनेनविदुरोर्शपतेनैवसहनिरगादिति सुच्यते हिंदिमः नितरांहढान्हढम्लान्स्वेषुदेहतदनुवंध्यादिषुक्षेहाअनुरागास्तएवपाशाः पाशवद्वंधहेतुत्वात्तान्छित्वानिश्चकामगृहादि तिशेषः ॥ २८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

ननु प्रथममेवपतिष्यतीतिदेहमुपेक्ष्यमागास्य आत्महननाख्यदोषानुषंगइतितत्राह गतेति गतः स्वार्थः ऐहिकामुष्मिकसुखसाधनो यस्मात्सतथोकः तमिमंदेहंदहाभिमानं मुक्तस्तदनुभायोदिस्नेहानुबंधान्मुक्तः अविज्ञातगतिरन्यैर्जनैरनवबुद्धारणयादिगतिः जह्यात्सवै एवधीरो विवेकक्कान्यदाहृतः तस्मात्पुरुषार्थसाधनायोग्यदेहहानीदोषाभावात् निर्जनवनगत्वातपश्चर्ययाशरीरमिदं साधितस्वार्थ

इतोऽपिप्राप्तवनस्यतवतपःसाधनमेवश्रेयस्करमितिवक्तीत्याहयइति यःखतःखबुद्धचापरतः परवोधनेनवाजातिनर्वेदउत्पन्नवैराग्यः आत्मवान्वशीकृतमनाः हरिहृदिकृत्वागेहात्प्रव्रजेत्सनरोत्तमः पुरुषश्रेष्ठः इत्येकान्वयः॥ २६॥

अथतस्माद्भवानुदीर्चीदिशंयातुक्यंभूतः स्वैरक्षातगतिः नतुस्वैः पागडवैरविक्षातगितः पागडवानुक्षयैवतस्यवनवासायगत्युक्तेः क-थर्तीहराद्ययोजना स्वेरिग्रीशब्दार्थवत्स्वेच्छानुसारेग्रह्णातागतिर्यस्यनपरंच्छातः सतथोक्तइतिविवरग्रोपपत्तः अन्ययाअविज्ञातगतिरि त्येतदपहसितंस्यात् इताऽर्वाक्पूर्वतनः कालः पुंसामधिकारिणांश्चानभक्त्यादिगुणासामग्यापादकः इतउपरितनः कालः प्रायेणगुणाेषु-विषयेषुविकृष्यनाशयतीतिगुगाविकर्षमाः विविच्यदर्शयतीतिवा वेदस्यवाविकर्षगामित्युक्तः॥ २७॥

एवमुक्तप्रकारेगानुजेनविदुरेगावोधितोऽतः प्रज्ञानमेवचक्षुर्यस्यसतथा स्वतोज्ञात्यंधः प्रज्ञयाचष्टेपश्यति नतुमांसहप्रचेतिवाआजमीढः अजमीढवंशोद्भवः अन्जेनशानेनमीढः सिक्तइतिवा भिहसेचनइतिधातोः द्रिढम्नः इढतरान् खेषुस्नेहाख्यपाशान्छित्वाम्रात्राविदुरे-ग्रासम्यग्दर्शितउभयविधावैदिकलीकिकाख्योऽध्वामार्गीयस्यसतथोक्तः राजाधृतराष्ट्रः निश्चकाम निर्गतोबभूवेत्येकान्वयः गृहादिति-शेषः ॥ २८ ॥

## क्रमसंदर्भः।

गतस्वार्धिमिमं दहिमत्यादिद्वयम् पूर्व्व आतुरसन्त्यासी परस्तु सद्विवेकेन भगवच्छरणतया सन्त्यासीति तारतम्यं क्षेयम् ॥ २५ । २६ । २७। २८ । २९ । ३० । ३१ ॥

## सुबोधानी।

त्रिक्षिकर्त्तव्यमित्यत्राह गतस्वार्थमिमीमिति विषयद्योषदर्शनेमवैराग्यविवेकोत्पत्ती अधिमवाधासाधायवृक्षधर्मत्वादयंदेहः तत्रत्य क्तन्यः यत्रत्यक्तंकोऽपिनजानाति अपिरत्यागदशायामेवास्यापकारजनकत्वात् परित्यागोहिभर्जनवत् वीजस्यअंकुरोत्पत्तीप्रतिवंधकः ता-चद्यंरस्यः यावत्स्वस्यकार्यसिद्धातिसिद्धेकार्येत्यक्तब्यइति गतस्वार्थमित्युक्तं ज्ञातस्वार्थमित्यर्थः अथवापूर्वोक्तन्यायेनगताः स्वार्थाज्ञान-धर्मीदयोयेनअतोऽपकारिग्रामिममस्मिन् रागंप्ररित्यज्यतस्य श्रृंखलापुत्रादिभिः विमुक्तः सन्दृष्टत्वादस्य देहस्यज्ञह्यातः इसंदेहंपरित्यजेत नविशातागतिर्यस्यश्रं खलानांपुनः संवंधामायिकततः स्यात्तत्राह सवैधीरउदाहृतइति धीरस्ययत् फलंतत्फलंलभेत "द्वीसमताविहरू त्युदुरापाचि"तिधेर्यतत्फलं ननुताहशमेवफलंतत्फलप्रयुज्यतहत्यतथाह वैनिश्चयनयत्रफलार्थधेर्यगणनाकृतातत्रेताहशमपिधेर्यगणितं नि-श्चितफलत्वेन तस्मात् यथातयोधैर्ययोः फलंतथायस्यापीत्यर्थः॥ २५॥

एवमेकेनप्रकारेगादेहपरित्यागउक्तः प्रकारांतरमप्याह यःखकादिति खकीयात् वंधोर्हितकर्तुः परतः शञ्जवक्तृगतगुग्रीदेषराहि-्यमयअस्मिश्वर्येकार्यदृष्टिः सन्जातवैराभ्यः देहेद्रिवादिकमञ्चानादन्यार्थेविनियुज्यतेसर्वस्वनाशेतस्यागः प्रथमपक्षः प्रथमपवभोगार्थम॰

## सुबोधिनी।

कृत्वायादशैरिपतादशैर्वाक्येस्तृष्णाभावायजातवैराग्यः तेनदेहाहिनाभगवंतसपरिकरकात्वातं दृष्टिस्थाप्यदेहत्यागेरछांपरित्यज्यतेनदुर्छभ भगवत्समरणांकुर्वाणः गृहस्यवाधकत्वात् संवंधाभावायप्रव्रजेत् सन्यस्यगच्छेत् सनरोत्तमः सर्वेश्यः प्राणिश्यउत्तमहत्यर्थः ॥ २६ ॥

तार्हिमयाकिकर्तव्यं तदाद अधित भवतस्त्वन्यपवमार्गः नदेहपित्यागः नवान्यश्रविनियोगाभावः तस्मात्पतत्तस्थानपित्यागपवोत्तमः नन्वज्ञमयकपत्वात् किमेबंपित्यागेनतन्नात् उदीर्चीदिशंयात्विति महाप्रस्थानमप्येकोमार्गः उक्तः अदोषतैवसगुगाःविगुगाःदि न्यायात् अत्रिंद्यतौदोषसंभवात् "प्यावदेवमनुष्यागांशांतादिगि"त्युत्तरिशः उत्तक्तप्रवात् तत्रस्थितौवदेवाबुद्धिनाशंकुवेति नस्ततः परिसम्प्रथेस्किषयाप्रतिवंधकाद्दिति तैर्यथानद्वायंत्रथागंत्रव्यं तत्रोयथाधिकारमग्रवस्थामद्यतिभावः नजुदोषाभावार्थमेवचेद्रमनंतदात्रैवस्थि त्वादोषोद्दिकक्तंत्रव्यःकिगमनेन विवेकप्रथंसत्संगभगवद्भगानामत्रेवसंभवात् तत्राह इतोऽवागितिसवंत्रवप्रमपुरुषवचनं हीनत्ववोधनाय अयमेवकालः सर्वेषांवुद्धिनाशकत्वद्यांतात् इतोऽप्यवीक्त्यःकालःवाद्वव्येनस्तंत्रागांविवेकादिमतामिपिविवेकनाशकः तत्रक्रथंविवेको द्यितिभावः देशसापेक्षपवकालस्यदोषजननात् अतपवचोत्तरदेशस्यत्रद्वर्षागांनकलिकालादिनाबुद्धिस्रशः परित्यागवैयथ्योपस्य अतस्यवहेतोरित्यत्रसर्वोत्तकृष्टकलकालस्यदोषत्वपतिपादनदेशस्याप्रयोजकताउक्ताभयप्रमत्तस्यवनेष्वपिष्ट्यादित्यत्रतु ईश्वरेच्छायानियामक त्वात् नक्षवलेनविरोधः तिददानीमतत्वस्थानपरित्यज्यउत्तरदेशगंतव्यमितिसिद्धम् ॥ २७ ॥

तत्त्रथेवकृतवानित्याह एवमिति राजेतिकथाकरग्रोसामर्थ्यम्अनुजेनेत्यप्रतारकत्वप्रशाचश्चरितिउत्तमाधिकारित्वस्थाजसीढः आजमीढः वंशोत्पन्नः तस्यहस्तिनापुरपरित्यागोपितृकृतनगरपरित्यागेनसर्ववंशधर्भपरित्यागोवोधितः ततुक्तप्रकारग्रीवगतइतिज्ञापयितुमाह कित्वा-स्विमितिद्वढिम्नोद्यतरात् भ्रात्राविदुरेगासम्यक्दर्शितः वहिरंतरमार्गीयस्यकोचिदेवंप्रथमपक्षस्थंमन्यंते॥ २८॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

यतस्वार्यम् अकृतकृष्णाभजनत्वेन शोकभोहजराहित्याकुलम् । मुक्तवन्धनः त्यक्तधनपुत्रादिः । क गत इत्यविद्याता गतिर्यस्य सः । जह्यात् कापि तीर्थे देहं भक्तेवव यस्त्यजेत् स धीरः ॥ २५ ॥

नरोत्तमस्तु प्रागेव कृतप्रतीकारः । तल्लक्षण्यामाह खकात् स्वत एव परतः परोपदेशतो वा आत्मवान् विवेकी । धनं हृदि कृत्वा घणिक् यातीतिवत् हरिं हृदि कृत्वा हरिं प्राप्तुमिति भावः । स नरोत्तमः । तत्रातुरसंन्यासी धीरः भक्तिविवेकी नरोत्तम इति भेदः ॥ २६ ॥

त्वन्तु नरोत्तमो नाभूरेवातो घीरो भवेत्याह अथ इति । अर्वाक् अर्वाचीनः एष्यन् काल इत्यर्थः । गुणान् धेर्यदयादीन विकर्षति आच्छिनसीत्यर्थः ॥ २७ ॥

वोधितः मुत्त्वार्थे भक्तिभिश्रज्ञानोपदेशेनेत्पर्थः । आजमीढः अजमीढवंशजः । द्रढिस्निश्चत्तदाढशेक्देतोः । स्नात्रा सन्दर्शितः अध्वा वन्ध-मोक्षयोभीगी यस्य सः ॥ २८ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

र्घारलक्षग्रमाह गतस्वार्थामिति ॥ २५॥

नरोत्तमलक्ष्मामाह यहित ॥ २६ ॥ तत्रतवानुरूपोधीरत्वसम्पादनावसरोवर्ततेऽतोधीरत्वंसभ्पादयेत्याह अधेतिअथदेहस्यगतस्वार्थत्विभक्षणानन्तरमेवेतियातत् स्वैवैरा-ग्यविरोधिभिर्भातिभिरिवज्ञातगितरुदीचीमुत्तरांदिशंयातुविलस्वेदोषमाह इतोऽनन्तरम् प्रायशोऽर्वाक् अपकृष्टः अतपवगुगान्धेर्या-दोन् विकर्षयत्यारिक्वज्ञत्तितगुगाविकर्षगाःकालः ॥ २७ ॥

प्रशाचशुर्वेद्विगेत्रः आजमीहोऽजमीहवंदयः॥ २८॥

#### भाषादीका ।

बिरक्त पुरुष वंधनों को छोड़कर अपने जनों को अपनी गति न जनाकर स्वार्थ रहित इस देहे की छोड़ देने वाला धीर कहाता

जो पुरुष अपने से या दूसरे से बैराग्य को प्राप्त हो कर ज्ञान युक्त हो कर श्री हिर को शुद्य में स्थापन कर घर से निकल जाता है सो उत्तम पुरुष है ॥ २६ ॥

इसी से आप किसी को गति न जना कर उत्तर दिशा को जाओं इहां से आगे का काल पुरुषों का गुगा नाश करने वाला है ॥२७ (प्रज्ञाचश्च ) जन्मांध शृतराष्ट्र राजा (अजमीहवंशोद्भव ) छोढे स्नाता विदुर के उपदेश से अपने जनों में स्नेह पाश को छोड़कार स्नाता के दिखाये मार्ग को चले गये ॥ २८ ॥

पतिं प्रयान्तं सुवलस्य पुत्री पतित्रता चानुजगाम साध्वी ।
हिमालयं न्यस्तदराडप्रहर्षं मनस्विनामिव सन् सम्प्रहारः ॥ २९॥
ग्रजातशत्रुः कृतमेत्रो हुताग्निविप्रान्नत्वा तिलगोभूमिरुक्मेः ।
गृहं प्रविष्टो गुरुवन्दनाय न चापश्यत् पितरौ सौवलीश्र ॥ ३०॥
तत्र सञ्जयमासीनं पप्रच्छोदिग्रमानसः ।
गावलगणे ! क नस्तातो वृद्धो हीनश्च नेत्रयोः ।
ग्रावलगणे ! क नस्तातो वृद्धो हीनश्च नेत्रयोः ।
ग्रावलगणे मध्यकृतप्रज्ञी पितृत्यः क गतः सुहत् ॥ ३१॥
ग्रापं मध्यकृतप्रज्ञे हतवन्धुः स भार्यया ।
ग्राशंसमानः शमलं गङ्गायां दुःखितोऽपतत् ॥ ३२॥

#### श्रीधरखामी।

सुवलस्य पुत्री गान्धारी। साध्वी सुशीला। हिमालयं प्रयान्तं पतिमनुजंगाम। ननु कथं सा सुकुप्तारी हिमादिदुः खबहुलं हिमयन्तं गता अत आह न्यस्तदगडानां सन्न्यासिनां प्रहर्षो यस्मिन् तम्। दुः खदमपि कथश्चित् केषाश्चित् प्रहर्षहेतुर्भवतीत्यत्र हप्टान्तः मनन्तिनां शुराह्यां खुद्धे सन् तीत्रः संबहारो यथा। पाठान्तरे सन् संप्रहारं युद्धं यथेति॥ २९॥

कृतं मैत्रं मित्रदेवत्यं सन्ध्यावन्दनं येन । नत्वा सम्पूज्य । पितरौ विदुरघृतराष्ट्रौ ॥ ३० ॥

हे गावरगगास्य पुत्र ? सञ्जय ॥ ३१ ॥

अकृतप्रश्चे मन्द्यतौ । रामलम् अपराधम् आर्शसमानः आराङ्कमानः । भार्थ्या सह ॥ ३२ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

पतिमिति सुवलस्यपुत्रीगांधारीन्यस्तस्त्यको दंडोभ्तद्वोहोयैस्तेणांसर्वभूतसृहृदांयोगिनांप्रहर्षेकरहिमालयंपितयांत्रण्डंतपित्रमञ्जनगा सयुक्तं चतिर्द्याभप्रायेगातांविशिनष्टिपतिव्रतासाध्वीचेतिमनस्विनामिवेतिसधृतराष्ट्र निर्गमः इत्यध्याहारः सनिर्गमः मनस्विनाविवेकिनां-संप्रहारह्वस्थितः मनस्विनामुद्धोधकह्वावर्सनेत्यर्थः॥ २९॥

ततोऽज्ञातराञ्चर्षुताअग्रयआहवनीयादयोयनतयाभूतः अनेनराञ्चाववधृतराष्ट्रोनिरगादितिस्चितंतिलादिभिः सम्कृत्यविपाञ्चतकतमेत्रं येनसः अतपवगुर्वोगीधारीधृतराष्ट्रयोवीदनायतयोगीहंप्रविष्ठः पितरीधृतराष्ट्रविदुरीसीवलीगांधारीचनापश्यन्नदर्शपितरावितिविवचनेन

विदुरीविविक्षतः सौवरुषाः गांधार्थाःपृथगुपादानात् ॥ ३० ॥

ततस्तत्रशृतराष्ट्रगृहेष्वासीनमुपविष्टसंजयंशृतराष्ट्रस्यगीतापदेणारमजातशत्रुः पत्रच्छकथंभूतउद्विग्नंभीतंमानसंयस्यतथाभूतः ॥ ३१ ॥ त्रशामेवाहं गायलगण्डरत्यादिभिन्तिभिः हंगायलगण् ! संजय ! नोऽस्माकतातः पितानेत्रयोनित्राश्यांहानःरहितः वृद्धश्रकगतः हताः पुत्राः व्यस्याः साऽतप्यासोषुः विताचमातागांधारीचक्षगतातथापितृव्यः पितृभाता सृद्धविदुरः क्षगतः अपान्यपिराव्यः संभावनाचीतकः प्रश्नाद्योतकोवा ॥ ३२ ॥

र्था विकास यो प्राप्त विकास के प्राप्त के प

#### श्रीविजयष्यजः।

सुवलस्यपुत्रीगांधारी पतिशुश्र्षेववतंयस्याः स्नात्यांका प्रयांतपतिमञ्जनामत्यन्वयः चकारात्षुंतीच गत्वाकुत्रावस्दितितवाह हि-प्रालयमिति कायवाक्मनोभिन्यस्तः परित्यक्तः भूतद्रोहलक्षगोदंडोयस्तेषांप्रकर्षग्रहर्षजनयतीतिन्यस्तदंडवहषमतप्वमनाखनांवदीक तिद्वयत्रामागांसन्यासिनांसभ्यासिहारंकीडास्यानांहमालयांहमवतंपर्वतंगत्वा तत्रवदरिकाश्रमेऽवसदित्यन्वयः॥ २९॥

इहानींयुधिष्ठिरहयमनसितपस्तपतोधृतराष्ट्रस्यप्रायेग्रामृतिरभूत तथाविधश्कुनप्रतिभासादित्यिभेपत्याह अजातशङ्करिति मित्रः स्त्र्यां तिह्नपंकिभेप्नं संध्यापासनादितत्कृतंथेनसकृतमेत्रः गार्हपत्याद्यप्रिषुष्ठुत्यंनसङ्कृताप्तः तिह्नपोवस्वक्षेः विप्रांस्तपंचित्वाहक्षे स्त्र्यः तिह्नपंचित्रवाह्मे स्त्र्यः तिह्नपंचित्रवाह्मे स्त्रित्यः तिह्नपंचित्रवाह्मे स्त्रित्यः विष्रांद्रपंचित्रवाह्मे स्त्रित्यः स्त्रस्ति स्त्यस्ति स्त्रस्ति स्त्रस्ति स्त्रस्ति स्त्रस्ति स्त्रस्ति स्त्रस्ति

#### श्रीविजयध्वजः ।

मनसिप्रतीतिपतृस्वर्याग्रास्ययुधिष्ठिरस्यतन्मरग्रानंतरंतद्यसरेतत्रागत्यासीनंसंजयंप्रतिपारलैकिकगतिप्रश्नमाह तत्रेति गवलगग्रास्या पत्यंगावलगियाः तस्यसंग्राद्धः हेगावलगर्णे ! नस्तातःक कंलोकंप्रातिगतः कथंभूतः नेत्रयोरिततृतीयार्थेषष्ठी नेत्राभ्यांहीनः नेत्रयोर्योगेन वा वृद्धः जरयाचग्रस्तः अंवाकुंतीवा हतपुत्रत्वादार्तागांधारीचपरत्रलोकंकंप्रतिगते पितृत्योधृतराष्ट्रः क्वगतइतिपुनः प्रश्नस्तात्पर्यातिशयात् ३१ धृतराष्ट्रस्यमरगाकालेखस्मिन्वियाप्रयविवेकंतस्यमरगाप्रकारचपृच्छति अपीति अकृतप्रक्षेथशिक्षितबुद्धौमयिखभार्ययासहरामलंपाप मपराधमाशंसमानः इतवंधुर्दुःखितः सन्गंगायामपतदापिबंधून्सर्वोन्मारियत्वास्वयंराज्यमादायमांनिष्कासितवानितिशमलबुद्धिःनाभवत् कितदुः खातिरायादेवगंगायांपतित्वामृत्रोनान्वातभावः ॥ ३२ ॥

## क्रमसन्दर्भः।

अपीति । शमलम् अस्य महधात्मकमपि पापं भवत्विति वाञ्छयेत्यर्थः ॥ ३२ । ३३ । ३४ । ३५ ॥

## सुवोधिनी।

भार्यायामपितेनमोहस्त्यक्तप्वतथापिस्वधर्मत्वेनतयागत्तमित्याहपितिमिति सुवलस्यपुत्रीतिक्षत्रियाभिमानः तेजोजातिधर्मेगापिगमनसु क्तं नम्बतिदु खदेशेचित्तस्थैर्याभावात्परलोकार्थिनांकथंगमनंतत्राह न्यस्तदंडप्रहर्षमितिन्यस्तस्त्यकः भूतेषुदंडोयैः भूताभयदातारः ते-षांप्रकर्षेग्रहर्षोयत्रअन्यासर्वाभूजीवव्याप्तातत्रस्थितः अनिच्छ्यापिबहून्मारयितततोव्रतंभज्येतिहमेतुसर्वजीवपरिहारात् शरीरेऽपिकृमिसं-वंश्राभावात्परमहंसानांहिमस्थानमतिष्रियंसर्वपरित्यागीदेहपरित्यागार्थमपिष्रवृतः तत्रतुदेहपरित्यागसाधनानिसुगमानियथायुद्धेमनास्त्र-नां तत्रदेहपरित्यागेच्छूनांसत्सर्तृकसम्यक्ष्रहारो यत्रयुद्धशस्त्रस्यश्रृतांवास्यादिति स्मृतेः अथवावीररसांविष्टस्ययथायुद्धभूमिः तथा-वैराग्यरसाविष्टस्य सर्वविषयरहितहिमस्थानम् पवमुत्तमदेशपर्यतमुक्तम् अग्रिमकृत्यत्वनुवादात् स्पष्टीभविष्यति साक्षाद्विदुरोपदेशक-थनेमर्यादायांविराधभाषयंत यावत्कस्यापिहृद्यंयस्मिन् सर्वात्मनाभवेत् "सुहृदावंधसङ्गावात्नसमुच्यतकर्हिचित् अतप्वेष्टवर्गेच्छाः यथागच्छत्तयाचरेत् धृतराष्ट्रतथाबंधोमाभूदितिहरेःप्रियः युधिष्ठिरादिमोहस्यनाशमाहसनारदः मोहाभावःस्वतोनास्तितस्येतिप्राक्षथातता२९

एवमर्थरात्रसमयपृतराष्ट्रिनिर्गतेउदयानंतरप्रहरपर्यंतं जिङ्गासानाभूत्रतदाह अजातशञ्जस्ति नाम्नैववैराभावो निरूपितः कृतमेत्रइतिदेव पितृऋषिभूततपरोान सर्वत्रमैत्रीकृता अथवा प्रातःसंध्या मित्रदैवत्या"मित्रस्य चर्षगोधृत" इत्युपस्थानात् अनुद्धरगाञ्युदयेच मैत्रचरुविधा नाम्बभतः कृतसंध्यावंदनइत्यर्थः कृतावश्यकोवा गुदस्य मित्र देवत्यात् क्रमंगात्रयं ह्यातव्यं हुताग्निः कृताग्निहोत्रः राह्रोहिदानंनित्यं तत्रापि तिलपात्रं गोदानं खगादानामिति च आज्यावेक्षगां खगादानपवोक्तं "तिलेविष्णुगवारुद्रः भूम्याचैवप्रजापतिः सर्वेप्रीताः सुवर्गीनसत्पात्रेषु समपेगात्" इतिदानानिकत्वाबाह्यगोभ्यानम्स्कत्य परंपरागतं गृहंप्रविष्टः राजगृहंराजशब्दवाच्यत्वंच्घृतराष्ट्रेघृतमिति तद्गृहंप्रविष्टः गुर्वादिबन्दनमपिनित्यं नष्टाश्वदग्धरथन्यायेनधृतराष्ट्रस्यपितृत्वं युधिष्ठिरस्यचपुत्रत्वामिति गुरुषुमातुर्मुख्यत्वात् नचापद्यात्कुंतीनत्वा भृतराष्ट्रविदुरनमस्कारार्थप्रविष्टः तीसीवर्लाचद्रष्टवानपि ननमस्कारोदूरेमहानुद्रेगोजातः॥ ३०॥

भारतालु भारताला । अताविचार्यवसंजयपृष्टवान् गवलगगास्यपुत्रः गावलगगाः पित्रादिकमगात्वमतेषामेवसेवकः कथमप्रमत्तद्दि नस्तातद्दि परमपूज्यत्व

वृद्धइतिधर्मः नेत्रयोहींन्इतिद्या संबंधमात्रविवक्षयाषष्ठी ॥ ३१ ॥

भार्यासहितत्वेनसुखित्वमाशंक्याह अंवाचेतिगांधारी चपुत्रशोकेनभर्तृवतचर्ययाचआर्तापीडितागमनसंमावनाभावत्वेनेत्युक्तंपितृब्यो विदुरः सोऽपिचसुहत् शुद्धांतः करणः अतोवंचनंनकरिष्यतीतिभावः गमनाभावात् अद्शेनाचगंगोपर्येवगृहस्यअत्रजमयाभावात्शा-स्त्रतः पुत्रत्वेऽपियदिपुत्रत्वंनमृष्यतेतदास्मासुशत्रुत्वमेवस्थितमितिकदाचिदस्मानपिमारयेदितिशमलंपापमाशंसमानः अपमृत्युषुगंगामर गांश्रेष्ठांमति अपमृत्युमरणात्दुःखितः मारणापेक्षयामरणमुत्तममिति गंगायामअपतत् विदुरस्तुलज्जयाअनुक्त्वैवगतइतिभावः॥ ३२॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

सुवलस्य पुत्री गान्धारी । साध्वी सुशीला । ननु सा सुकुमारी हिमाद्रि दुःखबहुलं कथं गतेल्यत आह । न्यस्तदराडानां प्रहर्षो यत्र तं दुःख दमपि केषाश्चिदुत् साहवतां प्रहर्षहेतुर्भवतीति । अत्र इष्टान्तः मनस्विनां श्रूराणां परमसुकुमाराणामपि युद्धवीराणां सन् उत्कृष्टः संप्रराहो युद्धमिव । सत् संप्रहारमिति पाठे क्लीवत्वमार्षम् । "संप्रहाराभिसम्पातकलिसंस्फोटसंयुगा" इत्यमरः ॥ २९॥

कृतं मैत्रं मित्रदैवत्यं सन्ध्यावन्द्नाद्विं येन सः। नत्वा तिलादिभिः संपूज्येति प्रविश पिगडीमितिचदाक्षेपलब्धम्। नापश्यत् चकान

रात्र त ज्ञातवांश्च । पितरी धृतराष्ट्रविदुरी ॥ ३० ॥ [ज्ञानिकप्रगार्धमुपन्यासविशेषः पिग्डीत्युच्यते । ]

गवलगणस्य पुत्र सञ्जय!॥ ३१॥ भृतराष्ट्रः शमलं मत्कर्त्तृकमपराधम् आशंसमानः युधिष्ठिरेण मम् एकोऽपि पुत्रो न रक्षितस्तत् कि मे जीवितेनेति मनसाद्वरूपन् निर्विद्यमान इत्यर्थः। यद्वा अस्य मद्घश्रात्मकमपि पापं भवत्विति वाञ्छित्रत्यर्थः॥ ३२॥ ३३॥

នៃ ស្រែ ស្រាន់ សមាលា នេះ **ទៅ**មាន ប្រ<mark>ទ</mark>ាំមាន បានប

## पितर्युपरते पाग्डौ सर्घामे श्युहदः शिशून्।

र्शन संयासंगानिष्कु कर्णवर्थ वेष्ट्र भिरंतिशाक्तम द्वर्गिक क्रिक्षिक क्रिक्षिक विक्रिक्षेत्र विक्रिक्ष विक्रिक्य विक्रिक्ष विक्रिक्ष विक्रिक्ष विक्रिक्ष विक्रिक्ष विक्रिक्ष विक तंसांभनाश्याकाची कवार्रास्य ॥ ३६ ॥

स्त उवाच।

कृपया स्नेहवैक्रव्यात स्तो विरहकर्षितः ।

अतमेश्वरमचत्तागो तु प्रत्याद्वातिपीड़ितः ॥ ३४ ॥

्ण्याण्यस्यात्रम् विवर्णान्यः कर्मकार विकास कार के मिल्किक के मिल्किक के मिल्किक के मिल्किक के मिल्किक के मिल्किक के कि मिल्किक के मिल्किक के कि मिलक के कि मिल्किक के कि मिल्किक के कि मिल्किक के कि मिल्किक के कि मिलकिक के कि मिलक के कि मिलकिक के कि मिलक के कि मिलक के कि मिलक के कि मिलक के कि मिलकिक के कि मिलकिक के कि मिलक के ्यान्द्रपद्भावतम् । इत्यान्त्रप्तम् । इत्यान्त्रप्तम् । इत्यान्त्रप्तम् । इत्यान्त्रप्तम् । इत्यान्त्रपत्तम् । इत्यान्त्रपत्तिः । इत्यान्तिः । इत्यानिः । इत्यान्तिः । इत्यान्तिः । इत्यान्तिः । इत्यान्तिः । इत्यानिः । इत्यान्तिः । इत्यानिः । इत्यान गान्धार्या वा महावाहो ! सुषितोऽस्मि महात्मिभः ॥ ३६ ॥ ४६ ॥ ४६ ॥ १०००

लास्यायस्वयामा आनी चे २ भ्यासंस्था न्याया हिमाराप्रथ । ३६ ॥ एया एँ सन्याना मुक्तवंत को सन्यान्यका प्रदेश में माम्यान किसी हैं। से सिसी से से एंड्रिय की किसी किसी हैं। एक स

सुवलस्यपुत्रीगांधारी न्यस्तद्वडानांपरित्यक्तप्राणिद्रोहाणां प्रहणीयस्मिन्तम् नतुन्यस्तदेग्डानामपिहिमालयः प्रहपेकरः कर्षाकह चतत्राह मनस्विनांग्रूराशांसत्संप्रहारइव॥ २९॥

कृतंमेत्रसीचादिसंध्यावंदनांतंकर्मयंनसः पितरीविदुरधृतराष्ट्री ॥ ३० ॥

हेगावलगगोसंजय !॥ ३१॥

्र मृद्रिस्मलम् प्रराप्तमाद्वासमातः , स्वकीययासार्ययासहरांमायांकिसपतिहत्यन्वयः भि ३२०॥ ६ १ ००० १००० ६ ००० १०००

भाषा दीका । ्राह्मितिहरू

सुवलराजकी युवी पतिवता साध्वी गान्यारी भी पीछे जाती हुई जैसे युद्धोदमाही पुरुष संत्राम को जाते हैं तैसे विरक्तों का र्रथान हिमालये की सर्वे भिर्म हिर्म हिर्म

युधिष्टिर ने संध्यायन्दनादि करके होम करके तिल गउ सुवर्ण सहित बाह्यगों को नमस्कार कर गुरू धतराष्ट्र के बदन की धरमें गर्थ यही विदुर धृतरेष्ट्र गांधारी की नहीं देखा ॥ ३० ॥ विद्रा कि एक हिंद्र प्रति है कि प्रति है

दुखित माता तथा काका सहत कहां गरे ॥ ३१ ॥ अथवा वांधवोंके मेरन से शोकप्रस्त होकर मेरे को पाप लगाकर दुखित;हाकर गंगा से गिरम्से स्या ॥ ३२ ॥ जनकार मेरे के मान से शोकप्रस्त होकर मेरे को पाप लगाकर दुखित;हाकर गंगा से गिरम्से स्या ॥ ३२ ॥

ः हिः सारत्ये १५५ होप्यासः रैसक्षे**क्षकार्थः है** हा व्यासम्बद्ध<u>सीय तीर्थान वालास</u>स्यासाम् विस्तृतः १८५ के व्यासम्बद्धार वेपत्रो <del>भवित्रत</del>

ः रह्यांपर्धः हित्यमानार क्रमानाम् विकास कारणामाना कृतव प्रसन्धाः विकास कारणामानामान भूपरेष र राजनामानामाने के

तुर्वकार्यक्रम् स्ट्रिकेटी अवत्र व त्यावत्र वेद्योग्यायकार्याक्षक्रम् **श्रीधरस्थामी ग्रीते क्ष्मित्र विद्यालय विद्यालय विद्यालया विद्यालय** ्र १३ में १६ क्यान समें हैं मंत्रा प्रथम क्या महीत्र किया है त्या कर कर कर सम्बद्ध यो अरक्षतां तो इतः स्थानात् ॥ ३३ ॥ कृपया स्नेहवैक्लव्याचातिपीड़ितः । आत्मेश्वरं धृतराष्ट्रम् अपश्यन् विरहकर्षितः स्तः सञ्जयः न प्रत्युत्तरमाह ॥ ३४॥ आत्मना बुद्धचा आत्मानं मनो विष्टभ्य घैर्थयुक्तं कृत्वा। प्रभिष्टृतराष्ट्रस्य ॥ ३५ ॥ ब्यवसितं निश्चयम् । गान्धाय्याश्च । यतो मुषितो बश्चित्रोऽह्मिम् । ३६ मि

वात्सल्ययुक्तत्वात्सापराधेष्वपिदोषमनवेश्योपकारत्वेनचितयनपृच्छितिपतिरेपांडायुपरते सति सर्वान्नोऽस्मान्सुहृदःपुत्रान्दिराशून् तीपितृ व्योपितुर्मातरौधृतराष्ट्राविद्वरावितः कगतीछत्रिन्यायन . व्यस्ननतः आपद्भयः यावरक्षतां विदुराभिप्रायाद्वाध्यसनतो ऽरक्षता

मित्युक्तम् ॥ ३३ ॥ माजामा हो। एवमुकः सूतः संजयः आत्मनःखस्येश्वर्प्रभुंधृतराष्ट्रमचक्षाणः अपश्यमानः अतप्वातीवपीडितोदुःखितः तद्विरहेण्यर्षितःक्षणा देवकृषीमूतः सन्कृपयास्तेहवैक्छन्यात्थाष्ट्यीचतावन्नप्रत्याहः प्रत्युत्तरंथस्त्रम्यसूत्रेत्यणे । १९०० । १००० । १००० ।

ततः शनैः पाशिष्यामश्रुशिविमृज्यात्मनाविवेकात्मिकयाधियात्मनिः सक्तस्विकिस्पात्मकमनोविष्टप्रयवित्वध्यक्तियशैक्तियेशमार्थः तराष्ट्रस्यपादावनुस्मरभजातशत्रुंप्रत्यूचे॥ ३५॥ वसा अवस्थान माह्ना प्राप्त अस्य । वस्

\* अहंचव्यंसितोराजन्पित्रोर्वः कुळनंदन ॥ नवेदसाध्व्यागांघार्या सुषितोऽहिममहात्माभः ॥ इति विजन

## LEGISTATION OF THE PROPERTY OF

उक्तिमेवाहनेतिहेकुरुनंदन!बोयुष्माकं भित्रोविद्धारम्बाद्धयोगिकार्याक्षेत्रस्यातिकंतिविद्धानेतिहेकिदेविद्धानेतिहेविद्धान

## श्रीविजयध्वज्ञः ।

स्वस्याकृतप्रवातप्रत्याते पितरीतिनः अस्माकिपितरिपाग्द्रीउपरतेखर्गगतैस्ति योगांधारीधृतराष्ट्री शिशून्सवान्यसमताङ् स्रतां सुहृत्त्वंशिशुत्वंचरक्षणीयत्वेदेतुः तौपितृव्योगांधारीधृतराष्ट्रीमृत्वेतः अस्माह्योकात्परत्रकंलोकंगतावित्यन्थयः तयारमवरतश्च्रभूष षर्मादेवकृतप्रवातदभावादकृतप्रवातिमाषः॥ ३३॥

\* अतिपीडितः दुःखेनेतिशेषः खस्यर्थश्यरंखामिनंधृतराष्ट्रमचक्षाणः मृतत्वादेवापर्यम् अत्एवविरहेणवियोगेनकार्शितःघकुंनाशक दित्यन्वयः॥ ३४॥

आत्मनामनसाआत्मानंविए ज्यसंस्थाप्यप्रभोर्घृतराष्ट्रस्य ॥ ३५॥

प्रजारंजियत्वाकुलंनंदयति नत्वन्यथाइत्यतः पदद्वयंप्रायाजिनकेवलंत्वमेव्यंसितोऽहंवियोजितर्शतचार्थः पित्रोः कुंतीधृतराष्ट्रयोः परलो कगीतीमीतदेाषः मुक्तिः वंचितोऽस्मि ॥ ३६ ॥

## क्रमसंदर्भः।

सञ्जय उवाचिति क्विन्नास्ति । नाहं वेषीत्यादौ-कहं व्यवसितं राजन् पित्रोस्ते कुरुनन्दन । न वेद साध्व्या गान्धार्या मुपितोऽस्मि महात्मिभः । इति कवित पाठः ॥ ३६ ॥

## सुवोधिनी ।

तद्प्यसंभावितमितिमत्वाहिपतर्युपरत्हित वस्तुतस्तुषभाभ्यामेवरिक्षतीलाक्षागृहात् दास्याच्चपवमन्यद्पिक्षात्रव्यं तदाह अरक्षतां व्ययनतहति॥ ३३॥

संजयस्तुपूर्वमेवतदभावंशात्वाभयादिपमूर्िछतएवस्थितः अतीनोनूनंदत्तवानित्याह कृपयेतिदानत्वातकपास्नेहः सहजः क्रपयाचस्ने हाधिक्याद्वेक्छन्यमात्मेश्वरामितिनीतिः अतिपीड़ायांहेतुःयधिषयुधिष्ठिरः ईश्वरः तथापिखस्यधृतराष्ट्रएवअवचनेअतिपीडेवहेतुः नत्व ज्ञानादिः तथापीश्वरसांनिष्यात् तूष्णीभावोनुचितइति"वैक्छवश्चनवदेदि"तिस्मृतेः॥ ३४॥

निर्गतानिअश्रृशिपाशिनाविमृज्यअन्येषामिनगमार्थंचात्मानं विष्ठभ्यगुर्वतराभावेऽपि खयमेवगुरुभूत्वाप्रमादकथनेऽपिदं इंनकरिष्यतीति अज्ञातश्रृश्रेत्रतिशृष्टतीदासीन्यहेळनाधभावायप्रभो धृतराष्ट्रस्यपादावनुस्मरन्भक्त्वाभगवतो वादंडाभावायप्रस्यूचेप्रतिकूलमुक्तरंदक्तवान् ३५

महिनजानामित्युक्तेराञ्चः प्रियंभवातिभज्ञानेहेतुः आत्मव्यवसितमितिनकेनचित्सहमंत्रग्रांकृतं कितुआत्मन्येवव्यवसितमवसितं "विष्टिभागु निह्निजानामित्युक्तेराञ्चः प्रियंभवातिभज्ञानेहेतुः आत्मव्यवसितमितिनकेनचित्सहमंत्रग्रांकृतं कितुआत्मन्येवव्यवसितमवसितं "विष्टिभागु रिर्छोपिम"तिपित्रोवेदति कदाचिद्भवद्भिष्ठांयेतआत्मत्वात् कुलनन्दनन्वाच्यचिकीर्षितमितिकदाचित् सूचयेत् अथवाकुलनन्दनेतितवतु दोषोनास्तित्वर्थः महावाहो ! इतितवतुक्रियादाक्तेराधिकयेअपियदित्वनज्ञानासिकुतोममद्मानामितिभावः महात्मभिरितिमहानात्माअत्मिनिधा यस्यस्वत्यव्यचनसामर्थ्यभगवदीयत्वेनवादभयथाष्यहंवीचतहत्वर्थः॥ ३६॥

## श्रीविश्वनायचकवर्सी।

कृपया हा बृद्धयोगनाथयोः कि भविष्यतीति चेतीद्रवेगा सम्बन्धहेतुको यः क्रोहस्तेन वैकलव्याका ॥ ३४॥ आत्मना बुद्ध्या आत्मानं मनो विष्टश्य धैर्ययुक्तं कृत्वा ॥ ३५॥ विद्वा विद्या विद्वा विद्वा विद्वा विद्वा विद्वा विद्वा विद्व

#### 

हयसनतः आपद्भयः याचरक्षतांतीपित्तक्षांत्रभावितक्षांत्रभावितक्षांत्रभावितक्षांत्रभावितक्षांत्रभावित्यम्यमभावित्रभाव

🟶 त्र्राधाजगाम भगवात्रीरदेः सिहतुम्बुरुः ।

प्रत्यत्यायाभिवाद्याह सानुजोऽभ्यचयन मुनिम ॥ ३७॥

युविष्ठिर उवाच।

THIS IS STORED OF THE PROPERTY WE

नाहं वेद गतिं पित्रोभगवन् ! क गतावितः ।

श्रम्वा वा हतपुत्रार्ता क गता च तपित्वनी ॥ ३८ ॥

🖇 कर्गाधार इवापारे भगवान् पारदर्शकः।

त्र्राथावभाषे भगवात्रारदो मुनिसत्तमः ॥ ३६ ॥

नारद उवाच।

मा कश्चन शुचो राजन् ! यदीश्वरवशं जगत् ।

लोकाः सपाला यस्येम वहन्ति वलिमीशितुः

स संयुनक्ति भूतानि स एव वियुनक्ति च॥ ४०॥

#### भाषाटीका।

हमारे पिता पांडुके परलोक होजाने पर हम वालकों को सुदृद समुझ दुःखोंसे रक्षा करने वाले हमारे पितृब्य (काका ) दोनों इहां से कहां गये ॥ ३३ ॥

सूतजी वोले संजयजी रूपा तथा स्नेह से विह्नल विरह से दुःखित होकर अपने पति धृतराष्ट्र के स्नेहसे पीडा के मारे कुछ नहीं

बोले ॥ ३४ ॥

फिर दोनों हाथोंसे आंग्रुओं को पोछ कर बुद्धिसे मनको रोककर प्रभुके पादकों स्मरण करते हुये युधिष्ठिरजीसे बोले ॥ ३५॥ संजयजी बोले हे कुलनंदन मै आपके दोनों पिताओंके अभिप्रायकों और गांधारी का भी अभिप्राय को नही जानता हूं इन महा-रमाओं ने मरे को ठग लिया है ॥ ३६॥

## श्रीधरस्वामी।

एवं कञ्चित् कालं शोचित तस्मिन् अथ नारद आजगाम । अत्रास्ति कचित् पुस्तकं पाठान्तरं तदुलङ्कच यथासम्प्रदायं व्याख्यायते । शोकवेगादभ्यर्चयन्निवाह राजा न त्वभ्यच्च्यं ॥ ३७ ॥

नाहं वेद वेबि। (तपिखनी तुःखयुक्ता)॥ ३८॥

अपारे शोकार्याचे भगवांस्त्वभेव पारदर्शकः अतो ब्रहीति शेषः ॥ ३९ ॥

आदाबेव यथावृत्तक्षयने शोकेन मूर्जिछतः पतेदिति प्रथमं तावच्छोकमपनयति । कञ्चन माशुचः माशोचः । न केवलं तानेव । यदा-स्मात् ईश्वराधीनं जगत् । तदेवाह लोका इति ॥ ४० ॥ ४१ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

अवतिसम्भेवसमयेतुंबुरुगासिहतोभगवामारदः तत्राजगामतमवलोक्यसानुजोयुधिष्ठिरः प्रत्युत्थायाभिवाद्याभ्यचेयभ्रेवाह॥३७॥ उक्तिमेवाहनाहामितिद्वाभ्याम् भगवन् ! पित्रोगेतिनाहंबेदाहनजानेतावितःक्षगतीतथाहतपुत्राआर्ताचतपास्त्रनी पतिव्रताचांवा क्षगता॥३८॥

दिब्द्येत्यानंदद्योतकमन्ययंचाहेराकृतिगण्तवान्निपातसंज्ञायां स्वरादिनिपातमन्ययामे "त्यन्ययसंज्ञा न्यसनामीचे पितृविद्रलेषजवुःका मीवमन्नानामस्माकं कर्त्तरिषष्ठीनोऽस्माभिभेगवांस्त्वंदिष्ट्यादृष्टः त्वद्वर्दानेनन्यमनमपगतमेवानन्दश्चभविष्यात इतिमावः क्रयहृष्टः अपारेदुःप्रापतीरेमोहसमुद्रेतारियताकर्णाधारद्वेषनाविकद्वनस्त्वं पित्रोगितिवृहितवप्रीतिमावोच्दत्याभप्रायेणतंविश्वनिष्टपारदर्शनः सर्वन्स्यावप्यविषद्शेनः सर्ववद्विषद्शेनः सर्ववद्विषद्शेतिष्ठान्ति।

हमार्गव ! इत्यंधमपुत्रेणयुधिष्ठिरेणपृष्टः सर्वक्षोभगवान्मुनिश्रेष्ठोनारदः तमावभाषे ॥ ३९॥

भाषगामेवाहमाकंचनेतिविशत्यायत्पृष्टं पित्रोगितिबूहित्विमितितस्योत्तरंविवक्षुस्तावनतत्तत्रज्ञीवक्षमां जुगुशासुखदुः खादिफलप्रदानपृष्ट सत्वरायन्तत्वाकृत्स्नस्यजगतस्तदंतर्गस्त्वंकर्मायतादेहतदनुचन्ध्यादिसद्रतेषनिमित्तशोकं माकुर्वितिवैराग्योत्पादनायाहचतुर्भिः हराज्ञव !

 <sup>#</sup> एतस्मिन्नन्तरे विप्रानारदः प्रत्यदृश्यत । वीगांत्रितत्रीध्वनयन् मगवान्त्रसहतुंबुरः राष्ट्राद्दरोषनीतार्थप्रत्युत्थानाभिवदितम् । प्रमान्सन आसीनंकीरवेन्द्रमभाषत् ॥ इतिविज्ञ० ॥
 # दिख्यानेभिगवान् दृष्टोमग्रानांव्यसनार्थावे । कर्णधार० । इतिवीररात्रव शुक्रदेवी ॥

रवावारणां रहते । वर्षे अर्थिया हरते । १९

## क् अवाजगाम भगवां मिर्द्धानुरः।

कं अनदे हंतद नुविधिनं वा क्षित्व द्विमा शास्त्र क्षितं महत्त क्षितं क्षित्र क्षित्

अस्वा वा इतपुत्राची क गता ज तपस्तिती ॥ १६६ ।। िकार्दे इसीवित्यम्बज्ञाः प्राप्तास्य हो।

पतस्मिन्नतरेयुधिष्टिरतं जयसंवादमध्येत्रितं श्रीतंत्रीतसमेलनेषितां क्रीणां इन्ह्रायुक्तवाद्यतृतंतुरुणासहवर्तमानः भगवान्हरेः षडुणवेत्ता पुज्योवा ॥ ३७ ॥

त्रावा ॥ २५ ॥ राज्ञादरेगो।पनीतंदत्तमर्ध्ययस्मैसतथातेप्रत्युत्थानेहत्वाभिषदितं परमासनेसिहासनसमिनिपीठेशसीनमुपविष्टंनारदैकौरवेद्रोयुविष्टिरो

भाषतइत्यन्वयः॥॥ ३८॥ । १९०० क्ष्यिकिकि एक्ष्यिकि क्ष्यिक्ष्य १००० १००० । १००० व्यक्ति । स्वाप्य क्ष्यिक्ष्य १००० व्यक्ति । स्वाप्य क्ष्यिक्ष्य । स्वाप्य क्ष्यिक्ष्य विश्वक्षयां क्ष्यिक्षयां क्ष्येक्षयां क्ष्यिक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्षयक्षयां क्षयक्षयां क्ष्यक्षयां क्ष्यक्षयां क्षयक्षयां क्षयक्षये रोनाविकइव तस्मान्बंदुः लालंबेमझीनीपरिपरतीरद्वी खुशमनीपीयदेशीयतीतिपरिदर्शनः ॥ ३० ॥

धृतराष्ट्रादिषुकंचनयाद्युचः शोकंप्राकार्षाः कुतः जगदीश्वरवशमितियद्यस्मात्सएवेश्वरः भृतानिसंयुनिकस्वकर्मानुसारेणसंयोजयित ैस्रवस्त्रक्षकर्मावसानेवियुनक्तिवियाजयात एतस्मादस्ववशत्यान्मीश्रीविद्यतिमावः ॥ ४० ॥

की होंगे जिस्सा सम्दर्भी हो हो हो लोक से सहस स्टब्स सम्प्रकारी <mark>की सम्हर्ण स्थापन, ख</mark>र्मी र १९९८ है । १९५५ हो हो हिल्हर १५५ १४

एक केल के लिए में करेंग की कुणकड़ और वेलक प्रक्रि**कामसीदमें के करी**। शहार के करें क्षण पाएं विकास के आहे कि सु

अथाजगाम इत्याद्रौ-एत्स्मिश्रन्तरे विप्रा नारदः प्रत्यदृश्यत । वीगां त्रितन्त्री ध्वनयन् भगवान् सहतुम्बुरुः । राजद्वतीपनीतांच्य 

## ...सुवोधिनी ।

एवंपूर्वकथांनिरूप्यविवक्षितकथामारभते तज्ञगावलगणिवाक्यंश्रुत्वामुहामोहग्रस्तोराजाप्रमादंवाकुर्यादित्याशंक्यएतादशकार्येनियको नारदः तदासमागतइत्याहअथेति अथमोहानंतरंतदपगमार्थमागतइत्यर्थः तुंबुक्रन्योऋषिः शोकापनोदेहिसमितरपंक्षतेअधिकारिगाउद्वे यात्हीनत्वात् 'तदाप्रमादंकतुंविचार्यम् ॥ ३७॥ १८०० व्यक्ति । ५००० व्यक्ति प्रकृतिकारी के १०००० हरा

नारदंद्याअनेननिर्णायोभविष्यतीतिउत्यायपूर्वावस्थांत्यकत्वाऋषिमभिवाद्यस्वागता दिकमपृष्टेवश्रृतराष्ट्रपृच्छतिनाहंवेदेतिअमङ्गर्छसम्मा TO SHIP THE PROPERTY BESTON OF THE SE

गण्यापुराष्ट्रभाष्ट्रम् । प्रतिकासमुद्रेमग्रावयंतत्रसर्वज्ञनीकातस्यानिर्वाहेकोभवानेवकेवलनाविकवन्न किंतुपारदक्षेनः गतन्यादे राष्ट्रपायम् । जानासीत्यर्थः एवमर्द्धवचनस्थितः उपसंहाराकथनात्तदानारदः तस्याकथनहेतुंकात्वास्थ्यमेववभाषेक्षानेहेतुभ-गवानितिअनुवंधेवामुनिसत्तमतिसंवाधनपाठांतरेऽपिप्रकाराशामुकत्वात् आभासाध्रूहेनेनस्वयमूहनीयं मुनयः कृपालवोभवंतिअतः कृपया

नारदः अपृष्टमप्याहेत्यर्थः॥ ३९॥ र जरूटन वर्षे भगवान् संसारिजीवेषुयद्शानंकरोतितत्सहसाकृतिव्यावृत्त्यर्थम् अतस्त्वयापिसहसानिकिचित् कर्त्तव्यंप्रथमतोमोहंदूरीकुरुपश्चत् पृष्टंब-स्यामीत्यभित्रायेगाहमाकंचन शुचइतिशांकोहिअनिष्टशानसाध्यखन्यूनतादक अनिष्टपदार्थानदध्यासनविशेषः कोऽप्यनिष्टभावनयानचि त्वामार्यारायाः राजन्नितिसंवोधनात महाकुटुंवित्वसुक्तंतेनमहीतराज्येसर्वदेष्टानिष्टात्पत्तः शांकेकदाचिदिपराज्यसुखंनस्यात् अतोराजा नशाचित किंच शांकानिस्फलः विरुद्धश्चतत्रहेतुःतत्रयदीश्वरवशंजगदितियस्मात्कारणात्सर्वजगत् ईश्वरवश्यंभगवताहिसर्वःपदार्थः कि-यतं सचनकस्यविद्धिष्टः इष्टावासस्वार्णपरार्थकरोतितत्रपरार्थपक्षेभगवतातस्यहिते क्रियमाग्रेखयंचेच्छाचेत्तदानिषद्धं भगवतश्चकोपो यत स्वापा विकास के कार्याच्या के स्वापा मात्र के स्वापा मात्र के स्वापा मात्र के स्वापा स्वापा के स्वापा स्वाप सर्वेत् भगवछीलायां तुसुतरामेवको घोअनो चित्यं च स्वस्यापिममतास्पददृरीकरगोपूर्वोक्त एवन्यायः अतामगवद्धीनत्वात् आत्मानपर्विकि सवद पान्य विकास के किया पानियोगाभ्यां हुः खंजननात् स्वद्धः खेनशोकशति से ता संयुनकी तिभूतानिस्यवयोजयित च तर्सात् कृताविवसंयोगेऽपिसेवयुक्तिरनुसंधेयाउभयथापिसर्वयाभगवान्दितंबरोतीतिज्ञातव्यम् ॥ ४० ॥ ोक्तराविक्ति विवास विकास विकास

## ६ व रोट ने विश्वमायचेमचैनिक होते । विश्वमायचेमचैनिक के किल्ली

शीं किया विश्वविद्या न त्वेष्ट्यच्च्ये ॥ ३७ । ३८ ॥ विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या अपरि श्रीकार्याचे । भगवान् सब्वेशस्त्वमक्षो ब्रहीति भावः ॥ ३०॥ हिल्ली हिल्ली । क्षेत्रका का का का का का का का का आदांवय यथावृत्तकथने शोकेन मुर्चिछतः पतिदिति प्रथमं तावत शोकमुप्राम्यति माशुचः माशोचः तसोविष्ठेदेत सीवामीदि चे-द्यतिकार्यमेतत् संयोगिवियोगियारीश्वराधीनत्वादित्योहं स इति ॥ ४० ॥ o design to the control of the contr

यथा गावो निस प्रोता तन्त्यां बद्धाश्च दामिः ।

- १९१८ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४ - १९४

इच्छया क्रीडितुः स्यातां तथैवेशेच्छया नृगाम् ॥ ४२ ॥ यन्मन्यले घुवं लोकमधुवं वा नचोभयम् । सर्वथा नहि शोज्यास्ते स्नेहादन्यत्र मोहजात् ॥ ४३ ॥ तस्माजहाङ्ग ! वेङ्ग्यमज्ञान कृतमात्मनः ।

क्यं द्यनायाः कृपगा वर्त्तरन्वनमाश्रिताः ॥ ४४ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

मुनिमझ्यर्चयन्नाह ॥ ३७ ॥ वेद वेबि ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

तत्रसर्वभगवदधीनमितिवदन्शोकंनिराकरोतिमाकंचनेतिदशभिः हेराजन् ! कंचनमाशुचः कमिप्राकृतमर्थमुहिर्यशोकंमाकृथाः यद्य तोजगदीरवरवशंविष्ठपूजामः भूतानिदेवमनुष्यादीनि ॥ ४०॥

## भाषादीका ।

इस के अनन्तर तुंबुह्मुनि के सहित भगवान नारदजी आये युधिष्ठिरजी उठे प्रणामकर भ्राताओं के सहित पूजने' सर्विक बोले ॥ ३७ ॥

हैं भगवन ! में दोनों पिताओं की गति को नहीं जानता हूं कि वे इहां से कहां गये अपार शोक समुद्र में आपही पार लगाने वाले हो ॥ ३८॥

तदनन्तर भगवान् नारद मुनिश्रेष्ठ वोले हे राजद ! किसी को मत शोचो जिससे कि ईश्वर का वशीभूत संसार है ॥ ३९ ॥ जिस ईश्वरको यह सब लोक तथा लोकपाल भेंट देते हैं वही ईश्वर सब भूतों को मिलाता है वही छुडाता है ॥ ४० ॥

#### श्रीधरखामी।

प्रहतें। पारतन्त्रयमुक्ता संयोगिवयोगयोरप्याह यथेति। कीड़ोपरकराणां कीड़ासाधनानां (दाररचितमेषादीनाम् )॥ ४२॥ ईश्वराधीनत्वान्न शोकः कार्य इत्युक्तम् । लोकतत्त्वे च विचार्यमाणे निर्विषयोऽयं शोक इत्याह यन्मन्यस इति। यद्यदि लोकं जर्न भ्रुवं जीवरूपेण । अध्रुवं दहरूपेण । न वेति न ध्रुवं नाष्यध्रुवं शुद्धव्रह्मस्कूषत्वेन थनिवचनीयत्वेन वा उभयं वा चिज्जडांशतः। सर्वथा स्वतुर्विपि पक्षेषु ते पित्रादयो न शोरुपाः। स्नेहादन्यत्र स्नेह एव केवलं शोकहेतुः स चाज्ञानमूल इत्यर्थः॥ ४३॥ तस्मान्मां विना कथं ते चर्तरन् इति मनसो वैक्लव्यं व्याकुलतां त्यज ॥ ४४॥

## 

(वाक्त्रन्त्र्यामिति)। वाक् वयीक्ष्पेव तन्त्री तस्याम् । नामिभः ब्राह्मग्राक्षत्रियादिमिरिति प्राश्चः ॥ ४१। ४२॥ चतुर्विपीति । ध्रुवमध्रुवं वेति पक्षद्रयम् । न वेत्युभयमिति पक्षद्रयम् । अयमर्थः — ध्रुवस्य नाज्ञामाव एव । अध्रुवस्य विनाज्ञित्वमेव न ध्रुविमिति । ध्रुवमपि वक्तुं न शक्यते । अध्रवमपि वक्तुं न शक्यते । उभयमिति । चिद्रूपेण ध्रुवम् । देहाध्यासात् जडक्षेणाध्रुव भिति ॥ ४३। ४४ ॥

## श्रीबीरराघवः।

विवहनमेषसंदृष्टांतसुपपादयति तथिति ततितिरश्चीनामहतीरण्जुस्तत्रवद्धाः शुद्धरज्ञवउपदामानियद्वातस्तीनासारण्जुस्तत्सम्बद्धाः श्वाद्धर्वाचानियद्वात्तान्तीनासारण्जुस्तत्सम्बद्धाः श्वाद्धर्वाचानियद्वात्तान्तीनासारण्जुस्तत्सम्बद्धाः श्वाद्धर्वाचानियद्वाचानियद्वाद्धर्वाचानियद्वाचाचानियद्वाचाचानियद्वाचानियद्वाचाच्वाचाचानियद्वाचाचानियद्वाचानियद्वाचानियद्वाचानियद्वाचानियद्वाचाच्वाचाच्वाचाचानियद्वाचाच्वाचाच्यद्वाचाच्यद्वाचाचाच्वाच्वाचाच्वाचाच्यद्वाचाच्यद्वाच्वाचाच्यद्वाच्वाच्यद्वाचाच्यद्वाचाच्यद्वाच्वाच्वाच्यद्वाच्वाच्यद्वाच्वाच्यद्वाच्यद्वाच्वयद्वाच्वाच्वयद्वाच्यद्वचच्यद्वाच्वयद्वाच्यद्वाच्वयद्वाच्यद्वाच्वयद्वाच्यद्वाच्यद्वाच्वय

## श्रीवीरराघवः ।

किंदेहतदनुवन्ध्यादीकित्यानमत्वाद्योचितिक्वां जित्यानथवोमययातयापिनतेद्योकिविषया दितवकुं तावदेहादिइछेपिवइछोपैकि छार्थजगद्वयापारेप्रवृत्तेश्वरस्येच्छ्यातप्रक्रमां नुसुक्षेत्रकार्थे संपद्यतद्दिति सद्यां तमाहयथेहछोकेकस्यचित्की छितुः पुंसदच्छ्याकी छोपस्कराक्षां की छासाधनानां संयोगिवयोगावन्ययाचमवतः यथाकी छोपस्कराः की छितुरिच्छ्याकदाचित्संहिछच्यपुनस्ति दिख्छ्येवविद्दिछ द्याक्षम वित्र तथेश्वरच्छ्यानृश्यामिपिसंयोगिवयोगीस्याताम् ॥ ४२॥

उक्तंशिरस्वयमनुवादपूर्वकं प्रतिक्षिपित यदिलोकं धुर्वस्थिरंप्रन्यसेयद्वाऽध्रुवमथयोभयं तत्रतावजृतीयः करपोऽसम्मवादेवनिरस्तः इत्यमिप्रायगाद्द नचोमयमितिनिहद्वयात्मकंवस्तुष्टृंश्रुतंवेत्यथः परस्पर्रावरुद्वयोध्रुवत्वाध्रुवत्वयोरेकत्रसमावेशोऽसम्भवनिरस्तइतिमादः द्व्यम्यग्रियग्रियग्रितेनसहेतराशिरोद्वयं प्रतिक्षिपित सर्वथेति ध्रुवत्वेचोभयविध्रत्वेचतेदेहादयः तत्त्वमेवितनशोच्याः नहिवस्तुनोयावदात्म सम्बद्धिमःकेनाप्यपनेतुंशक्यइतिमावः प्रवस्तितच्छोकहेतुः केवलंदेहात्मभ्रमम्लकोदेहादिष्वनुरागपवेत्यमिप्रायग्रस्तेहादन्यत्रमोद्द्वा दिति मोहजादेहात्मभ्रमज्ञात् स्नेहादन्यत्रान्यस्मिन् शोकमोहहेतुत्वंनास्तीतिशेषः॥ ४३॥

तस्त्राखेराजस्त्रज्ञानकृतंदेहात्मभ्रमकृतमात्मनः स्वस्यमनसोवावैक्लव्यंदैन्यंज्ञह्यपनय तदिभिष्रतं प्रश्नान्तरंस्रवेद्यत्वात्स्ययमेवाविष्कृत्य प्रातिवाक्तं कथिमितिसार्द्धद्वयेन तत्रकथिमित्यर्द्धेनप्रश्नाविष्कारः ततः श्लोकद्वयेनतस्यप्रतिवचनिमिति विवेकः सांविनाऽनाथार्रक्षितृहीना प्रातिवाक्तं कथिमितिसार्द्धद्वयेन तत्रकथिमत्यर्द्धेनप्रशाध्याहर्त्तव्यः कथिजीवेरित्रविष्ठव्छिसिचेदित्यर्थः॥४४॥

## श्रीविजयघ्वजः।

ईश्वरजीवस्वातंत्र्यपारतंत्र्येसोदाहरणांदर्शयति यथेति यथागावोबलीवर्दाः निस्नासिकायांत्रिष्टत्कृततंतुदामभिः प्रोताः स्यूतानासि काच्छिद्रस्यूतद्रस्वदामभिः आधारभूतायांदीर्घायांतत्यांबद्धाः ईशितुः स्वामिनोत्रीह्यादिगोणीर्वहेति तथाब्राह्यणाञ्चत्रियद्भव्यवारि काच्छिद्रस्यूतद्रस्वदामभिः आधारभूतायांदीर्घायांतत्यांबद्धाः द्वितिक्षणायांवद्धाः स्ववर्णाश्रमविद्यितकमेभिरीश्वरस्यविर्यक्षादि गृहस्थवानप्रस्थयतयद्दति नामात्मकदामभिर्वाक्तंत्र्यांविधिनिषेधात्मकवेदलक्षणायांवद्धाः स्वविद्यितकमेणापूज्यद्दतिभावः॥ ४३॥ स्वश्रणपूजांवहंतिकुर्विति तस्मात्सप्वस्वतंत्रोजीवास्तद्धीनाद्दिश्चोक्तपरिहारायसर्दशः स्वविद्यितकमेणापूज्यद्दतिभावः॥ ४३॥

वेदस्यानेकाथित्वेनतात्वर्थस्य दुर्क्षेयत्वाद्धीरेयागांचगोगयादिपातनेनस्वामिकाश्वावक्षानदर्शनाद्विषमोयमुपन्यासहत्यतो निदर्शनांतरमाह वेदस्यानेकाथित्वेनतात्वर्थस्य दुर्क्षेयत्वाद्धीरेयागांचगोगयादिपातनेनस्वामिकाश्वावक्षानदर्शनाद्विषमोयमुपन्यासहत्यतो निदर्शनांतरमाह यथेति यथाकीडोपस्करागांळीळासाधनानांसंयोगविगमोकीडितुः पुरुषस्येच्छ्या तथैवेशेच्छ्यापितृपुत्रादिक्रपागांनृगांमिथः संयोग यथेति यथाकीडोपस्करागांळीळासाधनानांसंयोगविगमोकीडितुः पुरुषस्येच्छ्या तथैवेशेच्छ्यापितृपुत्रादिक्रपागांनृगांमिथः संयोग विगमीस्यातामित्यन्वयः अनेनवेदस्यमुख्यार्थः श्रीनारायणप्वेतिनिरगायि तस्मात्पराधीनत्वात्रशोकेनप्रयोजनंतवेतिभावः॥ ४२॥

"यस्तर्केणानुसंधन्तेसधर्मवेदनेतर"इतिस्मृतेक्कार्धनिर्णयेकेयंगुक्तिरितितत्राह यदिति यत्यिदिलोकंशरीरंधुवंमन्यसेअधुवमनित्यंवा "यस्तर्केणानुसंधन्तेसधर्मवेदनेतर"इतिस्मृतेक्कार्थनित्यंवान्तियांवित्यानित

तस्माज्जातस्तिहाद्ययम्बद्धाराः । । । । । । वितिश्रुतेः गुरुविषयस्तेह् लक्ष्याभक्तेः पुरुषार्थहेतुत्वेनोपयोगात् वर्थतस्यमोहजन्यत्वमित्याशंक्यः नतु "यस्यदेवेपराभिक्तर्ययदेवेतयागुरा"वितिश्रुतेः गुरुविषयस्तेह् लक्ष्याभक्तेः पुरुषार्थहेतुत्वेनोपयोगात् वर्थतस्यमोहजन्यत्वमित्याशंक्यः नतु "यस्यदेवे व्याप्तमान्ययाभिमानिमित्तकातर्यत्व तस्यवलक्ष्यायान्ममतत्त्रपोषणाकर्तृत्वेनमन्नाथत्वान्महते जीवनमेवनास्ति तेषामाश्रिक्षानेनजातंवेष्ठव्यंजहित्यजेत्यन्यः परमात्मनः स्वातंत्र्यपरामश्रीनेतिशेषः ॥ ४४ ॥ यात्यक्तव्यमित्याहः तस्मादिति आत्मनः परमात्मनोऽक्षानेनजातंवेष्ठव्यंजहित्यजेत्यन्यः परमात्मनः स्वातंत्र्यपरामश्रीनेतिशेषः ॥ ४४ ॥ यात्यक्तव्यमित्याहः तस्मादिति आत्मनः परमात्मनोऽक्षानेनजातंवेष्ठव्यंजहित्यजेत्यन्यः परमात्मनः स्वातंत्र्यपरामश्रीनेतिशेषः ॥ ४४ ॥

## कमसंदर्भः।

यथा गाव इति पद्यं किवलास्ति यथा कि देवादेरवतारिकानुसारेगा तुं खामिसम्मतिमिति लक्ष्यते। मा कश्चनेत्यादी हि पारतन्त्र्य मात्रमुक्तं तत्रश्चेदं विना प्रवृत्ती पारतन्त्र्यमुक्त्वेति पारतन्त्र्यविशेषोक्तिनं घटते। स संयुनकीत्याद्यईं च किचलास्ति। किन्तु वहन्ति मात्रमुक्तं तत्रश्चेदं विना प्रवृत्ती पारतन्त्र्यमुक्त्वेति पारतन्त्र्यविशेषोक्तिनं घटते। स संयुनकीत्याद्यईं च किचलास्ति। किन्तु वहन्ति चित्रमीशितुरिति स्थानद्वयपाठेनैय प्रथमलेखकभ्रमोऽयं किचित् सम्प्रदायेऽनुवृत्त इति लक्ष्यते॥ ४१। ४२। ४३। ४४॥

## सुवोधिनी ।

## सुवोधिनी।

अपगतश्वानाग्निनापकाः कांचनत्वंसंपद्यंतेनामभिवंदाः बाह्यगोऽथंस्वियोऽयंब्रह्मचारीगृहस्थइतियेयत्रयोजितास्तेतत्रैवपरिभ्रमंतेकार्येतुप्रभोः कुर्वतिनतुप्रेरकस्पतस्मादिद्वियागांभगवदर्थसृष्टत्वाद् तैर्भगबत्कार्येकियमाग्रीखयंदृथाध्यासं कृत्वाशोकोनकर्तव्यइत्यर्थः॥ ४१॥

किंच मगवताहिकीडार्थेमृष्टाः यथावालः प्रतिमादिभिः क्रिडतिसययासुखंप्रतिमांस्थापयतिकुतश्चिद्योजयति तथासर्वेपुरुषाः भगवतः क्रीडाप्रतिमाः ते फ्रेनिचित्मं पुरुषंतेवियुरुषंते च अतप्रवंद्यात्वासंवंधिषुममतयाशोकहर्षोनविधेयः कदंतिसमुदायेनविधेकः पूर्वेतुतत्त्वानांप्रत्येकं

विवेकः ॥ ४२ ॥

पूर्वतत्त्वानांविवेषाउक्त एवमीश्वरार्थमृष्टपक्षेशोकोऽनुचितइत्युक्तंनिरीश्वरादिमतेऽपिवाद्यमतेषुकुत्रापिशोकःसार्थोनभवतीत्याह यन्मन्य सद्दिसर्वेहिवादिनश्चतुर्धां सांख्याः सर्वेधुवंमन्यंतेआविभीवतिरोभावावेवोत्पत्तिप्रलयौवाश्चास्तुसर्वमनित्यंकृतकत्वादितिअधुवंमन्यंतेवाश्च मेदापवकेचन माध्यमिकादयोनासीन्नास्तिनभविष्यतीतिभ्रुवंनाभ्रुवंमिण्येतिमन्यंतेनैयायिकास्तुउभयंमन्यंतेआकाशादयः परमागावश्चभ्रुवाः अन्येअभ्रवाइति चतुर्श्विपक्षेष्ठुसर्वथातेनशोच्याःनहिनित्यःशोकमहितिनवाबुद्धदरूपेअनित्येशोकः संभवतितत्राप्युत्तरमुच्यतेशत्रुमरशोकधं मशोचितिमित्रम रखेशोचितितत्कुतइतिप्रष्टयः स्नेहादितिचेत्स्नेहणवशोकहेतुरपकारी सत्यक्तव्यः नतुकदाचित्सुखंप्रयच्छतीतिकथंत्य कुंशक्यतइतिचेत्तत्राह मोहजादिति अज्ञानाज्ञातःस्नेहःकयंसुखंप्रयच्छेद्र।नहिसंनिपाताज्ञातंशैत्यंतापापनोदनंकरोतितस्मानमुच्छीयांमोहात् दुः खंसुख मिवमन्यते अन्यणातनिराकरणार्थनयतेत ॥ ४३ ॥

फलितमाहतस्मादिति हेअंग ! वैक्लब्यम्इंद्रियागामंतः करग्रास्यचिकलतांकोवलंपदार्थोक्षानेनजातंत्वंविदिततस्वार्थोजहिनाशोयत्यर्थः

अधमेकांशेनापिस्थितः पुनर्दुःखंदास्यतीतिभावः॥ ४४॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

लोका वर्लि वहन्ति स एव संयुनकीत्युक्तमर्थद्वयमुक्तपोषन्यायेन सहष्टान्तं क्रमेगाह । गावस्तन्त्र्यामेकस्यामेव दीर्घायां रज्जां सन व्यं एव बद्धाः तत्र पृथक् पृथक् दामभिनंसि प्रोताः । ननु प्रकृते का वा तन्त्री दामानि वा कानीत्यपेक्षायामाह वाक् वेद एव तन्त्री त-र्यां नामभित्रीह्मणक्षत्रियद्दित ब्रह्मचारी गृहस्य इत्यादिभिरेवदामभिर्वद्वा चलिम् "अहरहः सन्ध्यामुपासीतेत्या"दिलक्ष्मां शासनम् ॥४१॥

क्रीडोपस्कराणां क्रीडासाधनानाम् अक्षादीनाम् ॥ ४२॥ इंश्वराधीनत्वास्त्र शोकः कार्य इत्युक्तम् लोकतत्त्वे तु विचार्यमाग्गे निर्विषमोऽयं शोक इत्याह । यद्यदि लोकं जनं ध्रुवं जीवरूपेगाः अधुवं देहरूपेगा न उभयं न धुवं नाप्यधुवं ब्रह्मरूपेगा वादाब्दादुभयंच चिज्जडांशरूपेगा। सर्वधा चतुष्वंहि पक्षेषु ते पित्रादयो न शोच्याः स्नेहादन्यत्र विवेकादी सित स्नेह एव केवलं शोकहेतुः स चाँकानमूल इत्यर्थः। मोहजादित्यनेन भगवद्भक्तिसम्बन्धी स्नेही व्यावृत्तः।

तदुत्थं शोकं तु करुगारसस्थायिभात्रं परमोपादेयं मन्यते ॥ ४३ ॥

तस्मानमां विना कथं ते वर्त्तेरिकाति मनसो वैक्कव्यं त्यज्ञ ॥ ४४ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

यथागायोवलीवदाः निस्नासिकायांदामभिः क्षु द्ररज्जुभिः प्रोताः पुनदिर्घतंत्यांवद्धा ईशितुः स्वनियंनुर्वेलिवहीत तथाभूतानिनामिकः श्चुद्भरज्जुस्थानीयदेवदतादिभिः प्रोतानिविधिनिषेथरूपायांवाक्तंत्यांदीर्घतंतिम्थानीयायांवद्धानिपरमेश्वरस्यवित्वहंतीत्यर्थः ॥ ४१॥

क्रीडायाउपस्कराणामुपकरणानाम् ॥ ४२॥ लोकंयद्युपादानमात्रानुसंधानेनध्रवंनित्यंमन्यसे उपादेयमात्रानुसंधानेनाध्रवमनित्यंवामन्यसे किंवाध्रुवंवाऽध्रुवंवा चमन्यसेग्कदेशित्व

प्रसंगादिपत्भयविश्रंमन्यसेस्वैथापक्षत्रयेऽपिक्षेहजान्मोहादन्यत्रतेलोकप्रवाहपतिताधृतराष्ट्रादयोनहिशोच्याइत्यर्थः॥ ४३॥ तस्माञ्जिष्वपिपक्षेषुतच्छोच्यत्वामावात् अञ्चानकृतम् भगवदायत्तज्ञानाभावकृतम् माविनाऽ नाथाः अर्थवर्तरन् जीवेरिश्चितिमनसो वैक्रव्यंजिहिअपनय ॥ ४४॥

## माषा टीका

जैसे गऊ वैल बड़ी रस्सी में वधी छोटी रस्सियों से नाक में वधे रहते हैं तैसे वेद रूप रस्सी में कम्मों से वँधे

हुए देश्वर की आज्ञा रूप मेंट को देते हैं ॥ ४१॥ जैसे क्रीडा के साधन मेषादिकों का मिलाना अलग करना खिलाडी के आधीन है तैसे ईश्वर के आधीन जगत है ॥ ४२॥ यदि लोकको जीव रूपसे भ्रुव मानते ही यदिवा देह रूपसे अभ्रुव मानते ही अथवा न भ्रुव न अभ्रुव अनिवेचनीय ब्रह्मरूप मानते ही याप क्षाना प्रमुख आध्रुव मानते ही चारोही पक्षोंमे अपने पितृध्यादिकों का शोक करना नहीं वनताहै। मोह जात छेह के विना धर् चिकार लगा उत्तर ने निर्मारा अज्ञान कत वैक्लब्य है कि "वे अनाथ क्षपण चन का आश्रय कर कैसे वर्तिंगे" इसे छोड़दो । ॥ ४४॥

काल कर्म गुणा धीनो देही ऽयं पाश्रभौतिकः।
क्षियम्यास्तु गोपायेत् सर्वेथ्रस्तो यथा परम् ॥ ४५॥
ग्रहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम् ।
फल्गूनि तत् महतां जीवो जीवस्य जीवनम् ॥ ४६॥
तिददं भगवान् राजनेक ग्रात्मात्मनां खदक् ।
ग्रन्तरोऽ नन्तरो भाति पश्य तं माययोरुधा ॥ ४७॥
सोऽयमद्य महाराज! भगवान् भूतभावनः।
काल्रह्मोऽवतीर्गोऽस्यामभावाय सुरहिषाम् ॥ ४८॥

## श्रीधरखामी।

तत्र त्वदेहतस्तेषां वृत्तिरित्येतत् तावन्नास्तीत्याह । कालो गुगक्षोभकः । कर्म जन्मनिमित्तम् । गुग् उपादानम् । सद्धीनः पाश्चर्मीनः तिको जडुः । तद्विमागे नारावांश्च । सर्पत्रस्तः अजगरगिलितः यथा अन्यं न एक्षति तद्वत् ॥ ४५ ॥

ईश्वरंगा विहिता वृत्तिः सर्वतः सुलभैवत्याह । अहस्तानि पश्वादीनि । अपदानि तृगादिनि । तत्र तेषु अहस्तादिष्वपि । फलगुनि

अरुपानि । एवं जीवः सर्वोऽपि सर्वस्य जीवनं जीविका । एतेनैव सर्व्वतो सृत्युत्रासत्वश्चोक्तम् ॥ ४६ ॥

सोहिनिवृत्त्यर्थं द्वेतस्यावस्ततामाह । तिद्दम् अहस्तसहस्तादिरूपं जगत् खड्क् भगवानेव न ततः पृथक् । स चैक एव न तु नाना । नतु सजातीयविजातीयभेदे प्रत्यक्षे कुत एतत् तत्राह । आत्मनां भोकृष्णाम् आत्मा खरूपम् अतो न सजातीयभेदः अन्तरोऽनन्तरस्य अ-न्तर्वहिर्भोग्यरूपश्च भाति अतो न विजातीयभेदोऽपि । नतु एकः कथं तथा प्रतीयेत तत्राह मायया उरुधा वहुधा तं पर्यति ॥ ४७ ॥

कासावस्तीदशो महामायाची । द्वारकायामित्याह सोऽयमिति । अस्यां सूम्यास । अभावाय नाशाय ॥ ४८ ॥

## दीपनी ।

सजातीये वन्यो उन्यतः तथा अहस्तैरपि सहस्तानां नाशदर्शनादाह फल्गूनीति ॥ ४६—५५॥

#### श्रीवीरराववः।

तवतत्तु ह्ययोगक्षेमे खर्स्मिस्तद्र श्रकत्याभिमानंत्यजेत्याभिप्राचेगाहकालेति कर्माहण्टम् गुणाः सत्त्वाद्यः पृथिव्यादिपंचभूतारव्धोऽयदेहः कथमन्यान्गोपायद्रक्षेत्र रक्षेत्रे वेत्यषः यथास्वयं सप्त्रस्तोऽन्यास्तद् मस्तान्नगोपायतितद्वत् ४६ कालावधीनः अविभित्यने नत्वदे हो ऽप्येवविध्यदेहः कथमन्यान्गोपायद्रक्षेत्र रक्षेत्र वेत्यं यथास्वयं सप्ति हे विध्यतानामस्माकम् जीवनं सुरुक्त कथमतोगतानाम् तेषांजीवनम् स्यादित्यतथाह् अहस्तानीति अहस्तानिभूतानि सहस्तानांत्रेषां जीवनं यथालामं यथायोग्यमीपधिफलम् लप्युम्यादीनिजीवनिमत्यर्थः तथाहस्तरीहतानामपिचतुष्पदामपदा स्तानिभूतानि सहस्तानांत्रेषां जीवनं यथालामं यथायोग्यमीपधिफलम् लप्युम्यादीनिजीवनिमत्यर्थः तथाहस्तरीहतानामपिचतुष्पदामपदा स्तानिभूतानि सहस्तानिजीवनिमत्वावन्यपदेष्वपिमहतामजगरादिनां भूतानांकल्यूनिक्षद्वाणिभूतानिजीवनिक्षिवद्वनाजीवस्यभूतस्यजीवः जीवनं जीवनव्यवदेष्यपरः ॥ ४६ ॥

सर्वत्रवनेगृहेवाभगवानेवरिक्षतेत्यभिप्रायेगातदुपयुक्ततयाभगवतः सार्वात्म्यंग्रत्स्नजगतस्तदात्मकतयातद्दनन्यत्वंचाह् तदिति हे राजत् ! तदीश्वरवगत्वेनोक्तमिदंपरिहर्यमानंचिदविदात्मकम्जगद्भगवानेकण्य मृदयंघदृदित्वत्स्वरूपाभेदशंकांवारियतुविशिनष्टिशात्मम् नांद्वमगुष्यादिदेहभृतांजीवानामात्मांऽतः प्रविद्यप्रशासनधारकत्वाभ्यामविद्यतःआत्मश्चेत्रतदेवीहप्रवृक्तिंगमिक्तंवदतिःप्रविद्यप्रशासन धारकत्वाभ्यामवस्थानम् अनेनशरीरात्मभावनिबन्धनंजगद्वश्चांगारनन्यत्वमित्युक्तंभवति शरीरात्मभावनिबन्धनश्चानन्यत्वव्यपदेशोदृष्ट चरः आत्मादेवोज्ञातः मृत्याजातद्दिव्याप्यवस्तुगतदोष्यंस्पर्शशक्तं कांनिराकुर्वन्विशिनिष्टिस्वृगात्मनामात्मतयाविद्यते।ऽपिस्वातमयाथात्म्य चरः आत्मादेवोज्ञातः मृत्याजातद्दिव्याप्यवस्तुगतदोष्यंस्पर्शशक्ति।विश्वाक्ष्याति।तिविद्यस्त्राधानिम्यदोष्यंस्पर्थात्मन्तरे।भातिविद्यश्चम्याविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वान्यविद्यते।विश्वानिद्यते।विश्व

तमाना नकेवलंत्वित्याः खार्थमेवनिर्गता अपितुयुष्माभिरवमेवनिर्गतंद्यमितिभवतां प्रदर्शनार्थमपीत्यभिप्रायेगाह सोऽयमिति द्वाभ्यां नकेवलंत्वित्यत्यः खार्थमेवनिर्गता अपितुयुष्माभिरवमेवनिर्गतंदयमगवान् श्रीकृष्णः भूतानिखाञ्चानुवर्त्तानि भावयत्यम्युद्ययुर् हमहाराज ! सः निखिलजगदन्तरात्मा वर्शाकृतलाक्त्रयःकालशार्थमगवान् श्रीकृष्णः भूतानिखाञ्चानुवर्त्तानि भावयत्यम्युद्ययुर् कानिकरोतीतितथाहेतुगर्भमिदं साधुपौरत्रातृत्वादितिभावः सुरेद्विषांतुष्कृतीमभावायमाशायकालकपो सृत्युक्षपोऽस्यांभुव्यवतीयाः ॥४८॥

## श्रीविजयंश्वकः ।

किंच तवायंदेहः स्वाधीनः पराधीनोत्रा स्वाधीनत्वेभागयोग्यदुः सनिवारणाक्षमता कथं नहिक्किद्धिदुः संग्रेस्यादित्याकां श्वतिविचक्षणः तस्मात्पराधीनहितचवक्तर्यं तथाचतस्यपररक्षणसामध्येनघटतहत्याहः कालेति कालः पक्षमासादिलक्षणः कर्मफलपाचकंपुरायपाप लक्षणमहृष्टं गुणाः सस्वादयः निमिस्रोपादानकारणजन्यत्वेनकालाधिक्षीनः सजीवोऽयंदेहः पंचिमः भूतैरारब्धः खळातिरिकान्कथं मोपायेत्रक्षेत् तत्रदृष्टांतः सर्पप्रस्तोमंदृकः सर्पप्रस्तंपरंरिक्षतुंनसमर्थः तथिति तुशब्देनानुभवसिक्षमेवेदमितिद्योत्वयतितस्मादृष्टीपत्रादि रक्षाकर्तत्यक्षानंत्यजेतिभावः ॥ ४५ ॥

गतुम्मयवन् ! सत्यमेतस्यापितृद्धानामंधानांचासादिरोह्यासङ्जीवनेममसंदेहृद्दति बेसत्राद्ध अहस्तानीति हेतात ! वत्सअहस्तानिशश पारावतपक्षिप्रभृतीनिसस्वानिसहस्तानांमञुष्यायांजीवनंदेहथारणसाधनं द्विचतुष्पदांचासंतृगाह्यः तत्राद्विपत्स्वापेशणूनिमञुष्यादीनिमह

तांराक्षसादीनांजीवनिमत्यनुवर्तते एवंजीवस्यजीवनंविधात्राविद्यितमतोनतान्प्रतिचिताकर्तन्येत्यर्थः ॥ ४६ ॥

इतोऽपिनशोकः कर्तव्यः किंतुअबिलस्यहर्यधीनत्वास्त्रजनभेवावश्यंकर्तव्यमित्याह तहिति एवमिदंहरेरितरत् सर्वमिनत्यमस्वतंत्रंचे तितस्वस्मात्हेराजम् । भगवानात्मनांजीवानाभात्माऽदानादिकर्ताएकोऽ द्वितीयः स्वर्षस्वयंप्राकाशः विवेकशानिनामंतरः अस्यजगर्तो ऽतः स्थित्वारितकृत्यनंतरोगुणगुणयादिभेवरिहतोभाति तस्मारवमिष्ठेवोस्त्रमावतारत्वेनिश्चितविक्षत्वानमाययास्वेच्छयाकृतामुकतामने कावतारताम्भंतर्याम्यादिमकांनिभेवांहरेर्विभूतिपश्यंश्चतमेवभजेतिवाष्यशेषः स्वरक्षभगवानात्मासपक्षप्वेदंजगङ्गातिकथंभोक्तृक्षपेणां तरःभोग्यकपेणानंतरः नित्यस्यानेकत्वंकथंतत्राह पश्येति तंपरमेश्वरमाययाबहुधावतमानंपश्येतिकविच्याजयंति एकस्यभोकृभोग्यकपत्वा ज्ञुपपन्तरिनिवाच्यग्रायायाअप्रामाणिकत्वेनानंगीकार्यस्वादनादरणीयमेवर्तादिति॥ ४७॥

ननुभनघतेश्वरवदांजगिदत्युक्तंतमीश्वरंवयंक्षयंबुध्यामहद्दतितत्राह सोऽयमितियः सक्कंस्वघदांविधायास्तेसोऽयमधदेवैः प्रार्थितोऽस्या मुर्ची यदुकुले ऽवतीर्गोद्दत्यन्वयः कथंभूतः भूतानांभावनावधनः कालकपःसहारह्मपःकिमधे सुरिह्मपामभावायविनाद्याय ॥ ४८॥

### क्रमसंदर्भः।

ममार्ग पित्रादिर्मया रक्ष्य इत्यभिमानो न कर्त्तव्य इत्याह कालेति ॥ ४५ ॥ व्याचाहिभिभेक्षिते च तस्मिन् तुःखं न कर्त्तव्यमित्याह अहस्तानीति ॥ ४६ ॥

एता जगत भगवद् वृधितक्येशिक भयकार्यत्वात् तद्धीनमेवेत्याह तिहेदिमिति । मायया वृधितक्येशक्ता भगवानेव इदं माति एत-क्रिया परिशामते स्वयं तु स्वरूपेशीव तिष्ठति चिन्तामशिवत् ॥ ४७॥

सोऽयमधेति "वर्षमानसामीप्येवर्षमानवव्वा ॥ ३ । ३ । १३१ ॥ इति न्यायेन सुरद्विषामभावायेव कालक्षपः स्वयं तु परमानंदक्रप ष्यवेत्यर्थः ॥ ४८ ॥

## सुबोधानी।

मध्येराजाशंकतेष्वयंत्वनाथाइति रक्षकरिहताः वनेहिरक्षाभपेश्यतोविषयामावासकपणाः यस्यवाश्रयंकतवंतः तक्षपुंसकमचेतन मिति ॥ ४४ ॥

उत्तरमाहकालकर्मगुणाधीनइति कि त्वमेवरक्षकः तत्रनतिष्ठतीतिशोकः आहोहिषत्रक्षकमात्रामाषात तत्राधिनराकरोतित्वंरक्षक
इतिपक्षस्त्वयुक्तः राजशब्दस्यवेहवाचकत्वात्नह्योकेनगृहेणगृहांतरंरिक्षतुंशक्यतेकिचव्यवहारानुसारेणापिरक्षकत्वेथन्याधीनः कथरक्षेत्
अयंदेहः कालाधीनः कालप्रेरणांविनाकथरक्षेत्रकालस्तुनिमित्तमित्यस्मिन्पक्षेऽपिकर्माधीनः कालप्रेरणयायत्कर्मकृतवान् तत्फलभोगस्या
बह्यकत्वात् कर्मापिनित्यमेवाहष्ट सापेक्षत्वादितिचेत्तत्रापिकर्मवचेत्रहष्टसामग्रीमिपसंपादयति तदापिपूर्वोक्तप्वदोषः अथात्यश्चेत्रह्यमा
बम्तास्तगुणाः अतिश्वदोषव्यासः स्वयंपंचभूतिवकारः भूतानितुमक्षकानियेरात्मेवमिक्षितः तिहकारः कथमन्यान्गोपायत् अन्यत्वेतद्वचिति।
रिकादेहाद्यध्यासरिहताः तुशब्देनकालाधीनाः भवदीयाजाताः वित्व कालग्रस्तः सर्वथा नरक्षतीतिहष्टांतमाहसर्पग्रस्तइतिअजगरिका विद्वः परविहःस्थितमतस्त्वांघृतराष्ट्रः शोचितुमहेतिनतुत्वंघृतराष्ट्रिमत्यर्थः ॥ ४५ ॥

मध्याभावस्तुनशंक्षनीयः सर्वश्रेवभगवताभध्यंकलृप्तमिति वदन्कोऽपिरक्षकोनास्तीतिपक्षंद् पर्याते अहस्तानीति आदीक्षष्ट व्यत्वेनजीवा एवोपस्थिताः तेषांसृष्टिनीमदेहनिर्मायोनतश्रप्रवेशनंतश्रोत्तरश्रह्याद्यर्थम् अश्वसंगेकर्षव्यजीवातिरिक्तमलभमानः सर्वमवाश्रमत्तारं चक्रतबाव तक्षसामान्यप्रकारोविशेषश्चसामान्यं को किकः विशेषोविदिकः तश्रसामान्यप्रकारे व्यवस्थामाह अहस्तानिसहस्तानामिति उपलक्ष
स्वामतत्वलवतां वुर्वे लंभव्यं तद्व लंकिययोति हस्तपादीक्षियायां कार्यावितितयो प्रह्यां सहस्ताव्यवहस्तानां भश्याभवंति यथामनुष्याः अञ्चनग्रदीनां महाते । प्रह्मताविद्याभवंति यथापिपीलिकानां सर्पाः अतोवलाभिप्रायेष्यप्त दुक्तं प्रायिकाभिप्रायेष्यायाव्यवहस्तानिमत्स्यादी
निभवदानितृ यादीनि यत्पुनर्जीवाधिष्ठानं नास्तितदेवनास्ति भावेवाघटादे रिवनभक्ष्यता अतप्वभगवतासर्वत्रभक्षयं कलृप्तामिति निवताकार्यानीवारकलादे र र यथे प्रिसत्त्वात्॥ ४६ ॥

मनुक्यमेवंभगवान्करोति खसृष्टमन्यंकादयित तत्राह तहिवंभगवानिति वैषम्यनैर्भृगयेमगवतोन्हतः खात्मानमेवकरोतीति तथा-ह इदंजगत्भगवान् तत्रहेतुः तदिति यस्मात् कारणात् सर्वसर्वस्यमध्यंतस्मात् नहान्यमन्योमस्यितुंशकोराजिक्तिसंघोधनम् अन्याय वंडार्थे तत्रयद्यन्यमन्योभक्षयत्राजवंडादिः स्यात् ननुमगवतोऽत्यत्विति यस्ख्यंकृत्वाख्यंमस्यतीति तत्राह आत्मेति अतिव्याप्नोती-वंडार्थे तत्रयद्यन्यमन्योभक्षयत्राजवंडादिः स्यात् ननुमगवतोऽत्यत्विति वस्ख्यंकृत्वाख्यंमस्यतीति तत्राह आत्मेति अतिव्याप्नोती-वंडार्थे तत्रयद्यन्यमन्योनितविहःस्थितमंतः प्रवेशयतिवंतःस्थितं तष्वविहःस्वस्मिनेवख्यमः संतर्वहिभैवतीतिवस्तुवृत्यं तत्रमध्यादिन्यव-त्यात्मा सर्वमेवख्यमः संतर्वहिभैवतीतिवस्तुवृत्यं तत्रमध्यादिन्यव-

## मुवोभिनी ।

हारस्तुर्लीकिकः अथवाश्रात्अभजनातः मानिवेधातमकोभवितनिह्नमृष्टस्यमक्ष्यां मार्गेषावतिष्ठतं नजुर्जावाश्रिष्ठितं लर्थभक्षयति तत्राहः आत्मनामारमेतिस्व कपमित्यर्थः नजुर्तवापिजीवदययानभक्षयं दित्यत्याहः स्वर्हिगितिस्विक्षेत्रभेवपृष्टियस्य मन्यानप्यात्मनेवजानातिस्वभोगार्थै-वामन्यान्पर्यतित्यर्थः नजुसकास्तित्याशंष्याहः श्रेतरोभतिति अंतरःश्रानेसरञ्चवाह्याश्र्यं तरभावेनस्य वभातिस्विः श्रे स्वर्षेत्रभक्ष कृतेनोप्रस्थितः हितभावः । उपदेशंभद्यकारेखाफलपर्यवसितंमन्यमानश्राहः पश्यतिमितः तमवस्वेत्रभासमानं व पश्येदित्यर्थः मन्त्रक्ष-स्यव्यमनेकप्रकारत्वताहः माययोद्धिति मायायाः प्रतिकपत्वनोक्तत्वात् तत्रसंवंधः जलचंद्रवद्यायवा वनेकधाभातीत्वर्थः ॥ ४७ ॥

प्वरक्षकत्वाभावमाशंक्यमणवतः सर्वकपेशारक्षकत्वमुष्त्वातस्येदानीसंसारलीलापरत्वमाहः सोऽयमद्यति महाराजितसंवीधनात् न-भयंकर्त्तव्यम्हतोऽत्यधिकस्वाराज्यंत्रस्यतीतिभावः सोऽयमितिश्रानदृष्ट्यावद्शैयस्याहर्द्ययस्यान्यत्वद्यार्थाते भगवानिति नन्वागतस्यक्षिप्रयोजनंतत्राहः भृतभावनहितभृतानिभावयित्यालयतीति योषदृरीकरशोनेतिस्वयंस्रतंत्रतयासंहर्त्वाणिविशेषाधिकारत्वातस्यक्षालस्यक्षत्रन्तिति शापनार्थे भक्तिसिद्धयेकालस्यकप्रस्थक्षप्रस्थावति ॥ ४८ ॥

## भ्रीविश्वनाथस्त्रस्र स्मा।

नहि कश्चिद्यि कमिप वृश्विदानादिना राक्षितुं प्रमवतीत्याह । कालः सामान्यती निमिश्वम् । कर्म जन्मनिमिश्वम् । गुराण उपाद्यानम् तदश्रीनः पांचमोतिक इति तद्विभागे सद्य पव नाशवानित्यर्थः । एकः स्पेदहोऽन्यं सर्पदृष्टं गोपायितुं नैव शक्कोतीत्यर्थः ॥ ४५ ॥

अतो जीविकामिप ईश्वर एव सर्वेषामेव प्रथममेव व्यवस्थापितवानित्याह । अहस्तानि मृगाहीनि । अपदानि तृगादीनि । तत्राषि महतां मत्स्यादीनां फल्गूनि मत्स्यादीनि । अतो जीवस्य जीव एव जीविका साहजिकी । तेन त पिखनां पत्रपुष्पफलादिरीश्वरकारिपते वानिषिद्धा जीविकास्ति । किमर्थे त्वं विषीदसीति भावः ॥ ४६॥

नतु यदीश्वरवशं जगिंदित्याविना त्वयोक्तं भगवहधीनं सर्वे चेत् कयं कालकर्मगुगाधीनां देह इत्युच्यते। सत्यम्। कालकर्माहिकस्य सर्वस्य जगतो भगवच्छिककार्यत्वात् सर्वे भगवानेवेत्याह तिदिवमिति। खक्षपशक्त्या आत्मनां जीवानाम् आत्मा अन्तर्यामिकपेगा। स्वहक् खप्रकाशः। अन्तरो भोकतृकपेगा जीवः। अनन्तरो चहिर्भीग्यकपेगा सुखदुःखादि। भाययति। भगवानेव शक्तिश्रयक्षपेगा आति अतस्त मेवैकं मायया शक्ता उरुधा देवतिर्यगादिदेहक्षपेगा बहुधा॥ ४७॥

कासावस्तीरशो प्रायाची। द्वारकायामित्यार सोऽयमिति। अस्यां भूमी खुरद्विषाम् अमवाय नाशाय कालकपस्तैरेव कालकपत्वेनाजु भूयमानः स्वयं तु परमानन्दरूप एवेत्यर्थः॥ ४८॥

## सिकांतप्रदीय:।

पित्रादे:- पाछनंतुरेहद्वारेवमवतिसोऽयंदेहः भगविषयम्यकालाधधीमोऽन्यात् क्षयंगोपायेककणमपितवर्धातः सर्पप्रस्तइति ॥ ४५॥
वृश्वितोऽपिसर्वेभगवद्धीनाः वृत्तेः सर्वत्रभगवत्कृतत्वादित्याद अहस्तानीति अहस्तानभूतानिसहस्तामांमजुष्यादिलाम् अपदानि चतुष्पदां गवादीनाम् तत्रतेषुक्षस्युनिमहतामेवंजीयस्यजीवोजीवनम् ॥ ४६॥

अयिचिविचात्मकस्यसर्वस्यविश्वस्यभगवव्यीनत्वंचकुं खाभाविकंभेदाभेदसंध्यमाद्द हेराजन् ! इदं खिविचिदात्मकं विश्वस्य अगवान् म सर्वदिक्षित्रम् "सर्वेखिववद्वेद्वश्चे"तिश्चतेः कथंभूतोभगवान् आत्मनां जीवानामुपलक्षयां चैतत् प्रकृतिकालादेः आत्मा स्थितिप्रकृषित्रास्मादि हेतुः यतिश्चिद्विच्छके जीवश्वकृतिकालादयोभावाः पृथक्नसंति सः अतपवपकः तत्तस्मादेवकार्यस्यकार्यात्मकत्वादेवहेताः अतरोऽतंत् दः वाद्याप्रयंतरः प्रकृपवभगवान् भीति यथाकां चनंकुं उलादे।पृथ्वीगिरिवृक्षादे। सुमः शाखापत्रादोकार्यकार्यात्यांऽ तरोतंतरो मातितद्वत् अने नपदेनस्वरूपतो मेदोऽपिद्धितः विद्वित्वदार्थयोः शक्तिभूतयोः स्वरूपण्याभाविको भेदोऽपिश्विमतः पृथक्षियतिप्रवृत्त्याद्यभावाद्यमे होऽविस्ताभाविकः प्रवृत्त्यपिनेदाभेदः कारणावस्थायांकार्यवस्थायांच्यवंत्रयोध्यः अधकार्यकार्ययोगिष्यामाधिकोभेदाभेदोहर्याति तभक्षवचननिर्विष्टकारणानेकभेवमाययाचिष्ठकिनगर्भयाचिष्ठक्षत्वीवधानाग्यक्षांद्वस्थायावद्वभावद्वावस्थान्यक्षांक्षस्थावद्वावस्थान्यक्षां स्थावद्वावस्थान्यक्षां कर्षावस्थान्यक्षां कर्षावस्थान्यक्षां स्थावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्याचिष्ठकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यकारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यकारणावस्थानेकं वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यके वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यकारके वार्यके कारणावस्थानेकं वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यके वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यके वार्यके वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं वार्यके कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्थानेकं कारणावस्यक्षेत्रके वार्यकेकं कारणावस्यक्यके कारणावस्यक्यक

भगवन्नेवंभूतोभगवान्कद्रत्यपेक्षायामाह कहति यस्यप्रभाषीषाधितः सोऽयमस्यांपृथिव्यांकाळकपः काळात्माऽसुरक्किषामभवायावतीर्धाः श्रीकृष्याः ॥ ४८ ॥

## माषाटीका।

काल कर्म और गुणों के आधीन यह पांच मौतिक देह औरों की कैसे रक्षा करेगा इसे अपना ही संभालना कित है। जैसे क्यें सर्प ग्रस्त दूसरे की रक्षा में असमर्थ होता है ॥ ४५॥

(ईश्वर विद्वित द्वित सर्वेत्र खुल्मता दीकती है) विनाहस्तवाले जीव इस्तवालों की और विनाधाम के जीव चतुःपत्ती की और छोटे जीव चड़े जीवों की जीविका हैं॥ ४६॥ और छोटे जीव चड़े जीवों की जीविका हैं॥ ४६॥

निष्पादितं देवकृत्यमवर्शेषं प्रतीत्वते ।

तावयूयमवेद्यवं भवेद्यावदिहेश्वरः ॥ पूट्ट ॥

धृतराष्ट्रः सह श्वाता मान्यायो च समापया ।
दिवागोन हिमवत ऋषीगामाश्रमं गतः ॥ ५०॥

स्रोतोभिः सप्तभिर्यत्र खर्युनी सप्तथा व्यथात ।
सप्तानां प्रीतये नाम्ना सप्त स्रोतः प्रचत्ते ॥ ५१॥

स्नात्वानुसवनं तस्मिन् हुत्वा चाद्रीन् यथाविधि ।

श्वव्भच्च उपग्रान्तात्मा तत्रास्ते विगतेषग्राः ॥ ५२॥

#### भाषादीका ।

हे राजन् । एकही खड़क् भगवान् समस्त आत्माओं के आत्मा अन्तर वाहर जगद्रप माया से उहां प्रतीत होते हैं वह तुम देखो ४७ हे महाराज ! वही यह भगवान् भूत भावन अब सुरद्वेषियों के विनाश के अर्थ काळकप होकर इस भूमि में अवतीर्था हुए दें ॥ ४८॥

#### श्रीधरस्त्रामी।

तर्हि श्रीकृष्योऽजास्तीत्यजैवास्यां मा कृथा इत्याह निष्पादितिसिति। तथा देवानां कार्य्ये तेन निष्पादितम्। केवलम् अवशेषं प्रती-श्राते। यदुकुलक्षयमिति इहिस्यम्। ततो निजं धाम यास्यति। ततो यूयमपि गच्छतेत्यर्थः। तथा भूतमपि विदुरवदेव नावर्णयत्॥ ४९॥ संदेवं शोकमास्याख्य निवार्ये जिश्वासवे तस्मै यथावृषं कथयति धृतराष्ट्र इति षड्भिः। हिमवतो दक्षियो भागे॥ ५०॥

या वे प्रसिद्धा स्वर्धुंभी गङ्का सा आत्मानं राष्ट्र सप्तधा व्यथात् । किमर्थ माना पृथक् सप्तभिः स्रोतोभिः प्रवाहैः सप्तानाम् ऋषीयां जीत्ये । सत्तप्त्र तत् तीर्थं सप्तस्रोतो वदन्ति ॥ ५१ ॥

तंत्र तेन हतमहाङ्गयोगमाह स्नात्वेति चतुर्भिः। तत्र स्नानं होमोऽब्मस्याञ्च (इति) नियमा उक्ताः। मक्षस्थानेऽपां स्नीकारात् अच्-सक्षः। उपशान्तः आत्मा यस्य सः। विगताः पुत्रायेषणा यस्मात् इति यमा उक्ताः॥ ५२॥

## श्रीवीरराघवः।

तेनचरेवकृत्यदेवार्थकर्त्वव्यंकृत्यप्रयोजनं तद्विपक्षक्षपग्रारूपंनिष्पादितम् अधुनात्वयं भगवानवद्रोषंस्वकुलीवनाशात्मकमितिगृहािय सन्धिः प्रतीयतेअतोयावदिहभूलोक्सभगवानिश्वरः कृष्णोभधेद्वकेतेतावदेवयूयमप्यवेक्षध्वन्ततः पितृविद्यिभेच्छतंतिभावः॥ ४९॥

माश्रमंगतः हिमवतोदक्षिणपश्चिनंतरविष्नमाश्रमंगतहत्यथेः एतवन्यतरस्यामदूर्पवन्याः॥५।३।५५॥ इत्यवधिमतः सामीप्येपनप्रत्ये स्युत्पमिवदक्षिणोनेत्यद्यपम् ॥ ५० ॥

कोऽसावाश्रमइत्यत्राह कोतोभिरितियंसप्तकोतइतिप्रचक्षतेतमाश्रमंगतइत्यन्वयः तत्रात्मतः प्रवृत्तीनिमत्तमाह यत्रेतिप्रसिद्ध स्वर्धुनीस्तर्गनहोगंगासप्तानामृत्रीयांप्रीतयेयतः सप्तभिःस्रातोभिः प्रवाहनागवहुत्रासुविभक्तावस्त्रवातहतंदेशंसप्तकोतहत्याचक्षतेयम् समाजक्षतेत्रनताहत्यर्थः॥ ५१॥

तत्रक्षिकरिष्यतिक्रणंवावर्षिष्यतेष्टत्यत्राहः तत्राज्ञस्वनंत्रिसंध्यंसात्वाद्यनीम्यणाविधिष्ठत्वाचाव्मक्षः अपएवभक्षयतिशांतःरागाद्य कछ वित आत्मामनीयस्थविगतार्ष्यगादारेषगात्रनेषगापुत्रेगायस्यतयाभूतः आस्तेशासिष्यते ॥ ५२ ॥

#### श्रीविजयम्बनः।

अवतारप्रयोजनं चसंपद्मप्रायमितिष्ट्रस्याह निष्पादितमिति भूभारदैत्यमंहाराज्यहे वकायितेनिष्पादितं सपुनरवरोषमविश्रष्ट्रयहुकुछ अवतारप्रयोजनं प्रधाद्धेकुं हमेष्यतीतिरोषः श्रीकृष्णः इहभूतलेयावंतंकालंतिष्ठतियूयमितिर्वातंत्रसमयमञ्चतं द्विमत्यन्वयः ॥ ४९ ॥ अत्राह्यविद्यातिमितिप्रश्रंपरिहारिष्यन् धृतराष्ट्रस्यतप्रधाराणाश्रमतार्थनामचक्तित्याहः धृतराष्ट्रहितश्रात्राविदुरेणाः चराव्दात्कुत्यासहगतः नाहं वेदगतिमितिप्रश्रंपरिहारिष्यन् धृतराष्ट्रस्यतप्रधाराणाश्रमतार्थनामचक्तित्याहः धृतराष्ट्रहितश्रात्राविदुरेणाः चराव्दात्कुत्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यासहगतः विद्यासहगतः विद्यास्य विद्यास्य

# । हर्ने हिम्मिविजयभ्वजः।

कस्मात्सस्रकोतस्वंतस्येतितत्राद्द कोतोभिरित तत्रयस्मिषाश्रमेखर्षुनीमानीरयीसतानामृषागांप्रीतयेसप्तभिः कोतोभिः जळ स्यंदन धाराभिः सप्तधासप्ताभिः द्रोग्रीभिरभ्यगात्ससुद्रमितितिशेषद्वियस्मासनिवस्तगाः सप्तकोतद्दतिसंद्धांप्रचक्षतद्दयन्ववार्थः॥ ५१॥ उपशांतआत्माअतः करगायस्यसतयोक्तः विगतेषगाः नष्टमांसद्वष्टिः, वीपरमात्मिनगतंप्राप्तमिश्रग्रंनिरंतर्श्वितनंयस्येतिवा अन्भ क्षः कृतजलाहारः सधृतराष्ट्रस्तिसम्बाश्रमेस्नात्वायथिविधिअग्नाश्चदुत्वाऽ स्तद्दयन्वयः आस्तद्दतिलद्भृतार्थे अन्थयोक्तार्थविरोधः स्यात्॥ ५२॥

## क्रमसंदर्भः।

अवसेषं भवतामाकर्षगापूर्धमिति इत्रस्थम् ॥ ४९ । ५० । ५१ । ५२ । ५३ ॥

## सुवोधिनी ।

एवंकृष्णचित्रमुक्त्वाउपसंहरत् राजानमुपिदशितिंगिष्पादितमिति "मयानिष्पादितंश्चत्रदेवकार्यमशेषत" इति वाष्यात् अवशेषं भार हारकभारदूरीकरणं मोहांतराजुत्पस्येतयोक्तं वस्तुतस्तुतदिपजातमेव तावस्त्र ज्ञापर्यतं मवस्यमावित्वादवेश्वध्वंयावद्भगवानिहिनेषा रकत्वेनाधिगच्छेत् नन्वस्मान् स्थापयित्वागतः कथंनिवारयेस्त्र त्राह्म ईश्वरहित सर्वकरणसमर्थः ॥ ४९ ॥

एवंभगवद्वचनेनमोहाभावंभयंचोत्पाद्यपृष्टेउत्तरमाह धृतराष्ट्रहित हिमवतोहे क्षियोनहिमालयस्य दक्षियोभागेपूर्वमेवसिद्धम् ऋषीया। माश्रमंगतः गंगादक्षियाभागात्राजग्रहात् दक्षियाभागेऋषिगृहेगतहत्याधिक्यं गांगंकरिकराद्ध्र्षेवायुनापछ्वीकृतं पुरायवंतविद्धिरायवे-तिवाक्यात् हिमसंमुखतयाशीतेनातिपीडितश्चतिष्ठतीत्यर्थः॥ ५०॥ः

तत्रऋषीणामनुभावंगगांचाह स्रोतोभिरिति तस्याश्रमस्यसप्तस्रोतइति नामतत् सार्थेकमित्याह्, यात्राश्रमऋषाणामुत्कषेस्याप-नाय प्रत्येकंऋषीणांसभीपेप्रवाहरूपेणागतावकतयागमनेतुउचैनींचतास्यात् ऋषीणांवैमनस्यंच अतः स्रोतोभिः सप्तभिरित्युक्तं व्यथात् जाताआत्मानंवा स्रोतोभिरितितृतीया"वहुठंछंदसीतिकमीर्थेतृतीयातेनस्रोतांसिव्यधादित्यर्थः स्व धुनीतिस्वतंत्रतयाआकाशगंगासमागतिति ज्ञायते तेनजळांतरामिश्रणोगातिपावित्रयमुक्तं नाम्नासप्तस्रोतइति नामेतिपाठे सप्तानां प्रीतयेनाना अनेनयणासंख्यंज्ञातम्॥ ५१॥

तत्रतस्यकृत्यमाह तूष्णिभावव्यावृत्त्यर्थस्नात्वेति स्नानाद्योनियमाः उपशांत्याद्योयमाः अनुस्वनंत्रिकालं स्वनानुकल्पत्याचाअग्नीन्गाईपत्यादीन् अंधस्यापियथागाईस्थ्यंहोमइतिचादोषः होमेनाग्नयप्यसंहिक्कयंतइति संस्कायत्वेनकर्मतायाधानंकृत्वेत्यर्थः चकाअग्नीन्गाईपत्यादीन् अंधस्यापियथागाईस्थ्यंहोमइतिचादोषः होमेनाग्नयप्यसंहिक्कयंतइति संस्कायत्वेनकर्मतायाधानंकृत्वेत्यर्थः चकाराद्गिनहोत्रमिष्टुत्वा यथाविधिपंचाग्निविधानमन्तिकम्यअपप्यभक्षयतीत्यन्मक्षः चानप्रस्थाभ्रमेशकृष्टपच्यादिवायुभक्षांतमाहाराविद्विताः
राद्गिनहोत्रमिष्टुत्वा यथाविधिपंचाग्निविधानमन्तिकम्यअपप्यभक्षयतीत्यन्मक्षः चानप्रस्थापिष्ठ्यापित्रताचिधाः आत्माअतः आत्माअतः कर्यायस्यक्षानार्थं भगवद्याविभीवार्थं चाप्पयापरित्यागेनमुक्तियोग्यता
तत्रउपांतमन्भक्षः उपभगवत्समीपेप्रतीचिवाशांतः आत्माअतः कर्यायस्यक्षानार्थं भगवद्याविभीवार्थं चाप्पयापरित्यागेनमुक्तियोग्यता
स्विता आस्तदितसत्तातिरिक्तधर्मराद्वित्यस्वितं लोकेषणात्रमुख्या ॥ ५२ ॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

के बलमवरोपं प्रतीक्षत इति यदुकुलानामन्तर्थापनमिति हृदिस्यम् । तथ भूतमपि विदुववदेव नावर्णयत् । अवेक्षण्वमि कर्मा प्रयोगा दहन्तास्पदं समतास्पदं च सर्वमेव लक्ष्यते । तदन्तर्काने श्रुते साति सर्वमेवोपेक्षध्वमिति भावः ॥ ४९॥

तदेवं शोकं निवायं जिज्ञासवे तस्मै यद्यावृत्तं कथयति श्रृतराष्ट्र इति षड्भिः। दक्षिग्रोन दक्षिग्रास्यां दिशि॥ ५०॥

या वै प्रसिद्धा खर्धुनी गंगा सा आत्मानं सप्तथा व्यथात्। किमर्थे सप्तानाम् ऋषीगां प्रतिये। अतस्तत्तीर्थे सप्तकोतं एवं नाम मरीचिगंगा अत्रिगंगत्यादि नाना नाम्ना चदन्ति ॥ ५१ ॥

तेन कृतमष्टांगयोगमाह स्नान्वेति चतुर्भिः तत्र स्तानं होमोऽब्भक्षगांच नियमा उक्ताः उपशान्तात्मा विगतेषगा इति यमः । जितासन इत्यासन इत्यादिना थासनप्रागायामप्रत्याहाराः । हरिभावनयेति धारगाः याने उक्ते ॥ ५२ । ५३ ॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

तनदेवकृत्यंदेवद्विद्श्वयक्षपं निष्पादितम् अवशेषमीश्वरः प्रतीक्षतेनिजलोकेस्थितस्तवमहाप्रस्थानंप्रतीक्षते तावस्यमवेश्यष्वयावि हहिन्नापुरेभवेत् प्राप्तोभवेत्तत्वंदेशहरहित्वेषः अर्जुनरहागत्यस्पुरंयदुकुलक्षयंभगवत्प्रयागां च प्रतिपादिष्यति तदाभवद्भिष्पिगं तथ्यभितिगृहोऽधेः राक्षानावधारितः अपितुर्श्वरः यावदिहलोकंभवेत्तावस्यायम्बद्धिष्यमित्यववाष्यार्थोक्षातः॥ ४९ ॥ ४९ ॥ ४० ॥ वर्षातिगृहोऽधेः राक्षानावधारितः अपितुर्श्वरः यावदिहलोकंभवेत्तावस्यव्यक्षित्राधिक्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं अर्थम्भवतः वर्षात्रभावस्यविद्यार्थिकं अर्थम्भवतः वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं अर्थम्भवतः वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं अर्थम्भवतः वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं अर्थम्भवतः वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थिकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्षेत्रभावस्यविद्यार्थेकं वर्यार्येकं वर्यार्थेकं वर्यार्येकं वर्यार्थेकं वर्यार्थेकं वर्याय्येकं वर्याय्येकं वर्याय्येकं वर्याय्येकं वर्याय्येकं वर्यार्येकं वर्याय्येकं वर्यायः वर्यायेकं वर

जितासनो जितश्वासः प्रत्याहृतषाडीन्द्रयः ।
हिरभावमयाध्वस्तरजः सत्त्वतमोमवः ॥ ५३ ॥
विज्ञानात्मनि संयोज्य चेत्रज्ञे प्रविवादयं तम् ।
ब्रह्मग्यात्मानमाधारे घटाम्वरमिवाम्वरे ॥ ५० ॥
ध्वस्तमायागुणोदको निरुद्धकरगाशयः ।
निवर्त्तिताखिलाहार त्र्यास्ते स्थागारिवाधना ॥ ५५ ॥
तस्यान्तरायो मेवामः संन्यस्ताखिलकम्मगाः ।
स वा त्र्राचतनाद्राजन् ! परतः पश्चमेऽहानि ।
कलेवरं हास्त्रति स्वं तच्च भस्मीभविष्यति ॥ ५६ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

यत्रस्तर्धुनी सप्तभिः स्रोतोभिः प्रवाहैः सप्तानामृषीगांप्रीतयेसप्तधाव्यधादात्मानमितिशेषः अतस्तमाश्रमं नाम्नासप्तस्रोतिरिते प्रचक्षते ॥ ५१ ॥

अनुसवनंत्रिसंध्यं स्नात्वाअनेनस्नानादयोनियमाउक्ताः उपर्शातः रागाद्यनभिभूतः आत्मामनोयस्यविगताईपगापुत्रधनादिपिपासा

यस्यइतियमोक्तिः॥ ५२॥

#### भाषाटीका ।

देव कार्य तो उन्हों ने निष्पादन करदिया है। अब शेष कार्य की प्रतिक्षा करते हैं। जब तक यहां ईश्वर हैं तबही तक तुम भी अ विक्षा करना (पृथ्वी पर रहना)॥ ४९॥

श्वतरष्ट्र भ्राता और अपनी भार्या गान्धारी सिंहत हिमाचल के दक्षिण भाग में ऋषियों के आश्रम में गया है ॥ ५० ॥ भात ऋषियों के प्रीति के अर्थ जहां स्वर्धुनी सात स्नोताओं से सप्तधा हुई है वह सप्त स्नोता नाम का तीर्थ है ॥ ५१ ॥ वहां प्रति समय स्नान कर यथा विधि अग्नि में होंम कर जल मात्र भक्षण करता उपशान्त चित्त समस्त ईषणाओं से मुक्त होकर भूतराष्ट्र वहां स्थित हैं ॥ ५२ ॥

#### श्रीधरखामी।

जितासन इत्यादिना आसनप्राणायामप्रत्याहारा उक्ताः। हरिभावनयेति धारणोक्ता ध्वस्ता रजःसन्वतमोरूपा मला यस्येति फ-

लता स्थापनु पान । तर । समाधिमाह विज्ञानेति हाक्ष्याम् । आत्मानमहंकारास्पदं स्थूलदेहाद्वियोज्य । विज्ञानात्मनि बुद्धौ संयोज्य एकीकृत्य । तं विज्ञानात्मानं हृद्यांशाद्वियोज्य क्षेत्रज्ञे द्रष्टरि प्रविलाप्य । तश्च क्षेत्रज्ञं द्रष्ट्रंशाद्वियोज्य आधारे आश्रयसंग्ने ब्रह्माण प्रविलाप्य । यथा अम्बरं घटोपा-धिर्वियोज्य महाकाशे प्रविलाप्यते तद्वत् ॥ ५४ ॥

व्युत्यानाभावमाह ध्वस्तेति । अन्तर्गुग्रक्षोभाद्विहिरिन्द्रियविक्षेपाद्वा व्युत्यानं भवेत् तदुभयं तस्य नास्ति यतो ध्वस्तो मायागुग्रा मामुदक्षे उत्तरफळं वासना यस्य निरुद्धानि करणानि चक्षुरादीनि आशयो मनश्च यस्य अतपव निवर्त्तितः अखिल आहारो भोज्यं इंद्रि-चैर्विषयाहरणं वा येन सः स्थाणुरिव निश्चल आस्ते ॥ ५५ ॥

तथाभूतमप्यानेतुमुद्यतं प्रत्याह तस्येति । अन्तरायो विष्नः मैवाभूः इत्यडागमञ्छान्दसः । दर्शनमपि तावत् कुर्यामित्युद्यतं प्रत्याह ।

स्य अद्यतनाद्व । स्वं स्वाधीनम् । तर्हि तद्दाहार्थे गमिष्यामि नेत्याह तभाति॥ ५६॥

## द्वीपनी ।

## दीपनी (१०००)

भावे न भवन्ति। पूर्वोक्ताश्चित्तवृत्तयः व्याधिर्धातुरसकरेगावैषम्यमः स्त्यानमुक्तमेग्रसता वित्तस्य। संशयः उभयकोटिस्पृग्विकान स्यादिदमेवं नैवं स्यादिति । प्रमादः समाधिसाधनानामभावनम् । आलस्यं कायस्य चित्तस्य च गुरुत्वादप्रवृत्तिः । अविरतिश्चित्तस्य विषयसंयोगातमा गर्हः । भ्रांतिदर्शनं विपर्ययक्षानम् । अलब्धभूमिकत्वं समाधिभूमेरलामः । अनवस्थितत्वं यलुब्धायां भूमौ चित्तस्या प्रतिष्ठा समाधिप्रतिलम्मे हि सति तदवस्थितं स्थादिति । एते चित्तविक्षेपा नव-योगमला योगप्रतिपक्षा योगान्तराया इत्यमिधीयन्ते ( भा० ) इति ॥ ५६—५९ ॥

## श्रीवीरराघवः।

जितमासनंयेनसः चिरमासीनोऽपिक्लमरहितइत्यर्थः जिताः श्वासाः प्राशादिवायवीयेवसप्रत्याहृतानि शब्दादिविषयेभ्योनियभिता नियडिद्रियाशियेन हरिभावनयाभगवद्र्याचुस्मृत्याध्वस्तानिनिरस्तानिरजञादिगुशात्रयकार्याशिमुक्तिप्रतिबन्धकानिपुशयादिऋपाशिमङा

विज्ञानात्मनिविज्ञानस्य छपेक्षेत्रकेषेत्रक्षेत् इन्द्रियाशिसंयोज्येंद्वियरनाकृष्टिकत इत्यर्थः तमात्मानंक्षेत्रश्रमावरेधारकेवसाणिबिलाप्यविलीनंकृत्वापाधिविधूननेनवसमानाकारतयाऽनुसंधायेतियावत् तत्रदृष्टांतमाह् घटां-वर्मियांवरहति महाकाशेवटाकाशमिवब्रह्मण्यात्मानंप्रविलाप्यस्थाणुरिवास्तइत्युत्तरेणान्वयः अम्बरदृष्टांतेनजीवब्रह्मणोः स्वरूपेक्यम नुसंधायोति न भ्रमितव्यंत्रटाद्युपाध्यपगमेनघटनारास्यमहाकारा संश्लेषऽपित्वक्रपभेदसङ्गावात् पंचीकरणादाकाशेऽप्यंशभेदस्यवेदांतिभि र्वश्यमगीकृतत्वात् वद्याकार्शेऽशमेदोनाभ्युपगम्यततदाकृत्स्नस्याप्याकाशस्यवटाद्यपहितत्वप्रसंगः नचेष्टापात्तिः घटण्काशयावर्यापक तायांचैपरीत्यापातात्कात्स्त्येनाकाशस्यघटोपहितत्वहितत्परिच्छिन्नस्याकाशस्यव्याप्यत्वेसुस्पष्टम्अतः संश्लेपदशायामपिघटाकाशमहाकाश योःप्रदेशभेदोऽस्त्येवउपाध्यपगमेनसमानाकारत्वमात्राभिप्रायकण्वायंद्रष्टांतइत्यवगंतव्यम् ॥ ५४ ॥

ध्वस्तमायागुगानांरजआदीनामुदर्कोरागद्वेषादिकार्ययस्यनिरुद्धानिकरगानि इंद्रियागयाद्यवासनांतः करगांवायनिवर्तिताअखिला अद्भक्षणाद्योऽपियेनतथाभूतः स्थाणुरिवाचलोनिश्चलआस्तेआद्दिाष्यतेप्रत्यादृतषडिद्रियइत्यनेनेद्रियाणांविषयेश्यः आकर्षग्रमात्रमुक्तंनि रुद्धकरणाशयइत्यंननतुषुनिवषयेषुप्रवृत्तिप्रतिबंधउक्तः अतोनपीरुक्तंवतथाध्वस्तरजस्तमोमलइत्यनेनपुर्ययपापाद्यभावउक्तः ध्वस्तमायागुः

गांदिकंइत्यनेनपुरायापुरायमूलकरागद्वेषाद्यभावउक्तः तथातावदन्भक्षस्तंतोनिवर्त्तिताखिलाहारइति ॥ ५५॥

कथंचित्तमानयिष्यामीतियुधिष्ठिराभिप्रायमालक्ष्याहतस्येति सन्यस्तानित्यक्तान्यिखलानिदेहधारगार्थान्यपिकर्मेशिययेनतस्यधृतराष्ट्र-स्यांतरायोविद्यभृतस्त्वं माभूः नभव हेराजन् ! सधृतराष्ट्रः अद्यतनः द्विमानदिनादारभ्यपरतः पंचमहनिस्वंकळेवरंहास्यतिवेजुनंत्यक्ष्य तित्रचक्रलेवरंयोगाग्निनेवमस्मीमविष्यतीति ॥ ५६ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अपिमयीतिमृत्युकालीनवमनस्यीववयंप्रश्रंपरिहरतीत्याह जितासन्दति भृतराष्ट्रवक्तविधिनातपः कुर्वेष्ठभ्यासपाटवनजितासनः स्वस्ति काद्यासनजयवानिर्जितभ्वासः प्राण्जयवान्विषयेभ्यः प्रत्याहृतश्रोत्रादिषडिद्रियः सन् हरिभावनयाहरिनिरंतरध्यानेनध्वस्तंसन्वरजस्त मोनिमित्तं उनोमलंयेनस्तथा ॥ ५३ ॥

स्त्रहर्णानेनस्त्रस्त्रहर्णमार्थ्यपस्तत्त्वपर्यतानि अद्रोषतत्त्वान्यपरोक्षीकृत्यसर्वजगद्विज्ञानात्मनिविज्ञानतत्त्वाभिमानिनिविदिचेसंयोज्यतत्र स्व अपनापन स्व अपनापन व अपनापन प्रविलाप्यलयमेष्यतीतिध्यात्वातंविरिचंक्षेत्रश्चेस्वहृदिस्थिते हरावंतयांमिः गित्रविलाप्य घटांबरमंबर इवउत्पद्यमानघटवर्तिमहाकादास्वरूप सर्वगतेप्रविछाप्यैकीभावेनचितयन् ॥ ५४॥

अत्रविष्यस्तमायागुगोद्देवइतिहेतुगर्भे निरस्तप्रतिसत्त्वादिगुगोद्देकत्वाद्धरावेवनिरुद्धादोषकरग्रामनाअत्रप्यनिवर्तिताविलाऽ शनोऽ भुतास्थाणुरिवाचळ्थास्तेतदामृतिकाळेथासीहित्येकान्वयः तस्मान्नत्वियम्ळमाशंसमानीनापिदुः खितोगंगायाम्भ्यपर्तादतिमावः व्रह्णा-

पेता बुद्ध गासंन्यस्तसमस्तकमेगाः तस्यशृतराष्ट्रस्यतपोविष्नोमाभूदित्यन्वयः॥ ५५॥

इदानीं भृतराष्ट्रमृतिकालं वक्तीत्याह सवाहति संभृतराष्ट्रः अद्यतनादहः परतः पूर्वस्मिन्पंचमेऽहनिकलेवरहास्यति जहीत सामस्माभ विष्यतिभस्मसादभूत हशब्दन"सुर्णतङ्खपप्रहलिंगनरासामितिव्याकरसास्त्रभत्रप्रमासीकरोतिहतिहासंवासूचयित वाहत्यनेन"तास्तदाना रदेविद्वाङ्ग्रमयामास्थ्रमवित् । उक्त्वोत्तमांगतितेषांनिष्ठांतात्कालिकीतथं "ति स्कंदपुरागोक्तंवाक्यंस्चयति चशब्दएवार्थेतत्कलेवरमे वभस्मीमविष्यति नतुसः स्वयंशुन्यतामेण्यति चतनस्यनित्यत्वात्॥ ५६॥

## क्रमसन्दर्भः।

आत्मानमहंकारास्पदं सूक्ष्मदेहं स्थूलदेहाद्वियोज्य क्षेत्रके देहद्वयाभिमान्यवस्थजीवे प्रविद्याप्य तं च क्षेत्रकं विकानात्मिनि शुक्रजीव खहरे प्रविलाप्य सं च ब्रह्मिण संयोक्य घटाम्बरमिति चिद्रपरवेतेवाभेदांशे ह्यान्त इति क्षेत्रम् ॥ ५४। ५५। ५६। ५७॥ The state of the s

## भारतात्रक परि**काषिको**ल प्रसंहतीयी स्तित्रम्

एवंयमनियमानुक्त्वाथष्टांगयांगंबुकुः मृस्तिनाद्विस्माहः जितासनदिति आसृतिज्ञयः प्रायाग्यामुज्यः प्रत्याहारश्रक्षमेणोकः षडिद्रिष-इति कमिद्रियाणानियमप्यप्रत्याद्वर्तान ध्यानमाह हरिभावनर्यात ध्यानधार्या एकोकृत्याक एक्देशसमुदाय भेदनतयोभेदात गुराष्ट्र यमलानि रागादीनियस्य ॥ ५३ ॥

निर्विकरपसमाध्यथमाह विज्ञानातमनीति अंतेसएवकत्तेव्यः अत्रह्युत्तरोत्तरंपचातमानः उत्क्रांतिगत्यागितकर्ताजीवः प्रथमः देश्यमान-समदेनिमन्नएकएयसव्यक्ष्यात्माततोमहान् ब्रह्मांडाभिमानः विज्ञानात्मासम्बद्धः तस्मात्परः प्रकृत्यिधिष्टातापुरुषः ततोऽपिमहान् अक्षरात्मा ततः पुरुषद्दति तत्रस्वात्मानंप्रथमंक्षमविलापनेनब्रह्मपर्यतं गतद्द्याह स्वात्मानविज्ञानात्मिनिसंयोज्यतंचक्षेत्रज्ञे अथवाविज्ञानात्मामहत्तत्त्वं चित्ताविभूतचैतन्यतंक्षेत्रज्ञेषुरुषे तंब्रह्माण्याक्षरंतस्यानात्मत्वेप्रलापनव्यवामित्यतआह् आत्मानमिति नचुपुरुषाक्षरयोः स्वरूपेवेलक्ष्यपामावा त्र किप्रविलापनेनत्यतआह् घटांवरमिति घटेभिन्ने यथाआकाश्यमकाश्वरात् अतः प्रकृत्यिष्ठष्ठातृत्वंदुरीकृतमित्यर्थः॥ ५४॥

तस्याक्षरधर्मात्रिमीवनदोषिनद्विमुपसंहरति ध्वस्तेति मायागुणानामुदर्कः प्रकृतौव्यामोहेनसंबंधः नितरांरुद्धाः पुनरुद्गमनसाम-ध्वरहिताः इंद्वियातः करणानिकरणाशयायस्य निवर्तिताखिलाहारशति प्राण्यवृत्तिनिवारणम् एवं वतुर्णादेहेद्वियप्राणांतः करणानांवीज भूतमायागुणासहितानांव्यापारं निवृत्तं अक्षररूपप्राप्तस्यातमनः खतोव्यापाराभावातस्थाणुरिवासीवित्याह आस्तर्शतविहः स्थितवाय्वाद्य-चालनेहृष्टांतः "बृक्षइवस्तव्धोदिवितिष्टत्येकस्तेनदंपूर्णं पुरुषेणासविभि"ति श्रुतःतत्तुल्योवाजातहत्यर्थः ॥ ५५ ॥

तर्द्यांवर्षुकालंस्थास्यतीति विचार्यसमाधिविरतौसमानेयद्त्यादांकायामाह तस्यांतरायद्दति परपुरुषार्थसंनिहितस्य विद्वक्षपत्यंमाभः त्वदर्शनादिनामोहउत्पन्नेसर्चनाशोभविष्यति किंच त्वयागतेनविषयसंपादनंकर्त्तव्यं तच्च सन्यासिनोनिषद्धिमत्याह संन्यस्तानिथकिलानिकर्माश्चियंन अनेनकर्मार्थमपिविषयप्रहर्गानिचारितंतार्दिरक्षार्थप्रयत्नः कर्तव्यद्त्याशंक्याह सवाद्दति प्रथमंबद्धकालंस्थितिरेचनाःस्ति विनियोगश्चस्वतः सिद्धः अद्यतनान् पंचमेऽहिराजिन्नति संवोधनाद्गमनसंभूताविपतावान् कालोगिमण्यतीति स्वितं परतद्वि
अद्यदिनंपरित्यज्यपंचिदनानि तत्रपंचमेऽहिनकलेवरंहास्यति॥ ५६॥

## शीविश्वनायचक्रवर्ती।

विक्षानिति स्वदेहगतानि भूतानि क्रमेशा कारशोषु प्रवेदय आत्मानमहंकारे विक्षानात्मनि महत्तर्व संयोज्य संयुक्तं भावियत्वा तंच विक्षानात्मानं क्षेत्रक्षं जीवे प्रविठाण्य संयुक्तं विभाव्येत्यर्थः तंच क्षेत्रक्षं ब्रह्मशिष्णस्य आत्मानं स्वदेहस्थमन्तर्यामिशाम् आधारे आश्चयत्त्वे भगवत्यंशिनि संगुक्तं विभाव्य । नन्यन्तर्यामिभगवतोरेक्यमेच प्रसिद्धम् । संत्यम् । पेक्येऽपि औपचारिको भेदो विवक्षित एवेति सद्धांत आह घटाम्बरिमवाम्बर इति । उपाधिस्थमाकादां निरुपाधावाकाशे इव । तयोश्च घटाकाशमहाकाशयोर्वस्तुतः सर्वव्यापकत्वादैक्यमेच त्यर्थः । व्यत्थानाभावमाह ध्वस्तेति । अन्तर्भुगाक्षोभाद्या चिहिरिन्द्रियविक्षेपाद्या व्युत्थानं भवत् । ततुभयं तस्य नाहित । यतो ध्वस्तो मायायागुगानामुदर्क उत्तरफळं वासना यस्य सः । अत्यव निरुद्धत्यादि ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

तयाभूतमप्यानेतुमुद्यतं प्रत्याह तस्येति । अन्तरायो विष्नो सैवाभूः। अडागमङ्कान्दसः । तद्दर्शनमपि तावत् कुर्यामित्युचतं प्रत्याह स्र वा इति । तर्हि तदाहार्थं गमिष्यामि नेत्याह तच्चेति ॥ ५६ ॥

#### सिद्धांतबदीपः।

जितमासनंयेनेत्यासनंकिः जितः श्वासीयेनेतिप्राशायामोक्तिः प्रत्याहृतानितियमितानिशब्दादिश्यः श्रोतादीनीन्द्रियाशियेनेति प्रत्याहारकथनम् हरिभावनयेतिधारशाद्दिता ध्वस्तारक्षआदयोमलायस्येतिफलतोध्यानंसूचितम् ॥ ५३ ॥

समाधिमाह विज्ञानात्मनीति आत्मानंबुद्धीदियाद्यचेतनवर्गप्रकाशक्षध्रभ्भतंविज्ञानमचतनवर्गादियोज्यविज्ञानस्यात्मनिधर्मिशाक्षेत्रक्षेत्रयोज्यतंक्षेत्रवंदेहादिभोक्तारमंशभूतंघटांवरमिवनित्यमात्मस्वरूपंदेहादेविष्ठक्षणां निर्मर्छसंचित्यवद्धाणिअशिनिनित्य निर्मर्छेऽवरस्थानीये
प्रविलाण्यसर्वदानिर्मरुस्यवद्धाणेऽश भूतस्तद्धदेवनिर्मरुद्धाति संचित्यास्ते इत्युत्तरेणान्वयः नचघटांवरशुद्धांवरयोः स्वरूपेक्यवद्धाः
व्यवद्धाणेरिवस्व हपैक्पमितिवाच्यम् जीववद्धाणोन्नेर्मरुवेजीवस्यारुपत्वेवद्धाणोऽतरुपत्वेचद्धरातसंभवात् अन्यशांऽवरवद्धविणाज्ञात्वमांतिकत्वप्रसंगापत्तेश्च वस्तुतस्तुवटांवरशुद्धां वरयोः पंचीकृतपदार्थत्वेनस्वरूपेक्यमपिनास्तीतिविज्ञयम् ॥ ५४॥

नित्यसमाधितोऽत्यसमाधिविशेषतामाह ध्वस्तोष्ठायागुगानांरजभादीनामुदर्कः उत्तरोत्तरप्रसृतोवासनाप्रवाहोयस्योतिगुगातोव्युत्था नाभावउक्तः निरुद्धकरगाशियइतिवाह्याभ्यंतरेदियनिमित्तकव्युत्थानाभावउक्तः भतोनिवर्तिताभिक्ता अवभक्षगादयोपिऽभाहारायेनसः अतः स्थाणुरिवाचळभास्ते ॥ ५५ ॥

कच्यावशानदानयनंमाकुर्वित्याशयेनाह तस्येति॥ ५६ !!

#### भाषारीका ।

आसन को जीतकर श्वास को जीत कर पिक्टियोंको प्रत्याहरण कर हरि भावना से रजसत्वतमो गुणा का ध्यस्त कर अमल होरहा है॥ ५३॥ वहामानेऽग्निभिद्देहे पत्युः पत्नी सहोटजे।
वहिःस्थिता पति साध्वी तम्मिमनु वेध्यति ॥ ४७॥
विदुरस्तु तदाश्चर्यं निशाम्य कुरुनन्दन ?।
हषेशोकयुतस्तस्माद्गन्ता तीर्थनिषेवकः ॥ ४८॥
इत्युक्तवाधारुहत् स्वर्गे नारदः सहतुम्बुरुः ॥
युधिष्ठिरो वचस्तस्य हदि कृत्वाऽजहाञ्छुचः ॥ ४९।
गवते महापराशो पारमहंस्यां संहितायां वैयांसिक्यां प्रथमस्कन्धे

इति श्रीमद्रागवते महापुरागो पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीचिते नारदवाक्यं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

## भाषा टीका।

आत्मा—अहंकारास्पद सूक्ष्मदेहको स्थूल देह से वियुक्तकर क्षेत्रक्षको देह अभिमानी जीव है उसमै मिलाकर और उसक्षेत्रक्ष को विज्ञानात्मा शुद्ध जीव तत्त्व में मिलाकर और शुद्ध जीव को आधार स्वरूप ब्रह्म मैं घटाकाश को महाकाश में मिलाने के सहश मिलाकर ॥ ५४॥

माया के गुगामय फलों को ध्वस्त कर इन्द्री और आशा को निरोध कर समस्त भोगों से निवृत्त होकर धृतराष्ट्र स्थाणु के

समान अचल होरहा है उस अखिल कर्म सन्यासीके तुम अन्तराय मनहोओ ॥ ५५॥

। ज ज है । वह आज से परे पांचवें दिन अपने कलेवर को त्याग करेगा और वह कलेवर भस्म होजायगा ॥ ५६॥

## श्रीधरस्वामी।

ति गान्धार्यानयनाय गमिष्यामीति नेत्याह दश्चमाने इति । पत्युर्देहे सहोटजे पर्गाशालासहिते योगाग्निना सह गाईपत्यादिभिः दश्च-माने तस्य पत्नी विहःस्थिता सती तं पितमनु अग्नि वेश्यति प्रवेश्यति ॥ ५७ ॥ माने तस्य पत्नी विहःस्थिता सती तं पितमनु अग्नि वेश्यति प्रवेश्यति ॥ ५७ ॥ तिहं विदुरानयनार्थे गन्तव्यमेव नेत्याह । विदुरस्तु तिश्वशाम्य दृष्ट्वा भ्रातुः सुगत्या हर्षः तन्मृत्युना शोकश्च ताश्यां युक्तः तस्मात्

स्थानात् तीर्थानिनिषेवितुं गन्ता गमिष्यति॥ ५८॥

शुचः शोकान् ॥ ५९॥

इति श्रीमद्भागवतभावार्थदिशिकायां प्रथमस्कन्धे त्रयोदयोऽध्यायः॥ १३॥

## श्रीवीरराघबः ।

तदासहोटजेपर्णशालासहितेभर्त्तृर्देहेऽग्निभिर्दह्यमानेसतितस्यसपत्नीसाध्वी पतिव्रतागांधारी वहिःस्थितातमग्निमसुवेश्यत्यसुप्रवे

स्यति ॥ ५७ ॥ हेकुरुनंदन!ततस्तदाश्चर्यं निशाम्यदृष्ट्वावितुरः हर्षशोकाश्यांम्रातुर्मुकिविश्लेषजाश्यांयुक्तः तस्मादेशात्तीर्यनेषेवकः सेवितुर्मिन्छन्गंताग

मिष्यात ॥ ५८ ॥ इतीत्थमुक्त्वासहतुंबुरुर्भगवान्नारदः स्वर्गमारुरोहस्वरीप्रत्यूर्ध्वजगामेत्यर्थः युधिष्ठिरस्तुतस्यनारदस्यवचः हृदिकृत्वानिधायग्रुचः

शोकान्अजहात्तत्याज ॥ ५९ ॥ इति श्रीमद्भागवत श्रीवीरराधवटीकायाम् प्रथमस्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः समाप्तः ॥१३॥

## श्रीविजयद्वजः।

उटजेनपर्गाशालयासहवर्तमानः सहोटजः तस्मिन्प्रवेश्यति प्राविशत् साम्बीशब्देनकुंतीच साचाग्निमाविशत् तस्मादुत्तरगाति

## श्रीविजयध्वजः।

भिश्वनात्त्वसुनर्भृतराष्ट्रपरिसरमागतोऽभवतः धृतराष्ट्रविदेष्क्षयावनंगतेषुभवंतप्रविदयः एकत्वमागतोदितसम्भतस्यगतिर्भेयावर्णानीय तिमावः पुराविदक्षार्यवनमागतेषुपांढवेषुराज्ञानंप्रविदयएकत्वमागतइतिस्कांदकीयतार्थभेदेवावर्ततइतितुद्राब्दः ॥ ५८ ॥ स्तृंबुद्धरितिवक्तव्येसहतुंबुद्धरितिनारदः सर्वदातुंबुद्ध्यासहैववर्ततेनतंविद्यायितिद्योतनार्थः कुत्यादिविषयाः ख्रुवः॥ ५९ ॥ दिश्रीभागवतेष्रयमस्कंधेविजयभ्वजदीकायांद्वादशोऽभ्यायः॥ १२ ॥

## क्रमसंदर्भः।

वितुर इति । हर्षोऽयं घृतराष्ट्रस्य सद्गतिप्राप्तेः हर्षप्राय एव श्वेयः । शोकस्तु मुळतो यः स एव श्वेयः ॥ ५८ । ५९ ॥ इति श्रीमञ्जागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकतक्रमसंदर्भे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

## सुचोधिनी।

अहनीतिशुक्कपक्षादिकमिपस्चितं कलेवरपरिखागेहेतुः खमिति दग्धपटम्यायेनअभिमानशेषस्य विद्यमानत्वात् "भस्मोर्तिमदेशरी रिम"तिश्चतेः तस्यप्रतिपत्तिमाह तचेति ब्रह्माग्रिस्थितोऽपिप्रयत्नशेषेण प्राण्यदेहादिकंधृत्वातिष्ठति तस्यत्यागसमये आग्नेयीधारणांकृत्वा स्यक्तवान् अतस्बद्धस्मजातिमत्यर्थः आधानप्रभृतियजमानोऽप्रयोभवंतीतिश्चतेः अंतःस्थिताग्निप्राकट्येवहिः स्थितरिपसंसगीत् महत्य-ग्रीसंजातेपर्धशालायामिपदग्धायां पातिव्रत्यधर्मेण्"प्रविशेद्वाहुताशनामि"तिवहिः स्थितापिपत्नीअग्न्युपयाता भावाय साध्वीतमेवाग्निम-जुष्रवेशंकरिष्वतीत्यर्थः॥ ५७॥

प्वंदंपखोर्विनियोगमुत्कात छेतुभूतिवदुरिवनियोगमाह विदुरिक्तिति तुशब्देनतयोर वस्थांतस्य निवारयित न सुसहागतानां मध्येद्व-योरेवसागितिनेतृतीयस्येत्यतथाह तदाश्चर्यमिति पूर्वेतुतत् क्रियायामेवभासक्तं चित्तमासीत् कि भविष्यतीति निष्पन्नेतुकार्ये तदाश्च यैत्वेनस्पुरितंनक र्त्तव्यत्वेन नहा झुतंसवेस्यसंभवतीति तर्हिकि कृतवानित्यतभाह गंतेति कुरुनंद नेति संवोधनंतवैत क्रक्तिव्यमिति स्-चयति सर्वोद्धादकरत्वात् पारलोकिको हिकविचार ग्रोहर्षशोक युतस्तस्मादे हपातनपर्यतंपरिभ्रमेदितिविध्य नुसारे ग्राप्य मध्येप्रा-संगिकंसमाप्यप्रकांत्रभेव कृतवानित्याह तीर्थनिषेवक इति ॥ ५८॥

पतावताराज्ञः शोकोनिवृत्तइति नारद्गमनेपूर्बोक्तस्य समाप्तिमाह इतीति अधेतिभिष्मप्रक्रमेगापूजितः संतुष्टहृदयः श्रतः परंभूमौतस्य कार्यनास्तीति ज्ञापयति आरुहत्स्वर्गमिति तुंबुरुगाकथांतरसूचनमाश्चंक्यसहतुंबुरुरिति उपाख्यानफलमाह युधिष्ठिरइति शुचः
श्रोकानुवाक्यस्यशेषकवाधकत्वाद्वाक्येस्थितेशोकाविगतानीत्यर्थः॥ ५९॥

इतिश्रीमद्भागवत सुवोधिन्यां श्रीमद्रलभदीक्षितविरचितायां प्रथमस्कंघ विवर्गो स्रयोदशोऽध्यायः समाप्तः ॥ १३॥

## श्रीविश्वनाथचऋवर्ती।

तर्हि गान्धार्योनयनाय गमिष्यामि नेत्याह । पत्युरेंहे सहोटजे पर्णशालासहिते अग्निभिः योगाग्निगाहेपत्यादिभिर्दश्चमाने तस्य पत्नी बहिःस्थिता पतिम्रतु अग्नि वेस्पति प्रवेस्पति ॥ ५७ ॥

ति विदुरानयनार्थं गन्तव्यमेव नेत्याह । विदुरस्तु तिन्निशाम्य दृष्टा । तन्मुत्तवा हर्षः लोकव्यवहारेगा शोकश्च । तस्मात् स्थानात् तीर्थानि निषेवितुं गन्ता गमिष्यति । अत्र मक्तापराधिनि भृतराष्ट्रे विदुरस्य तादशकृपाभाषान्मुक्तिरेवामूत्र तु प्रेमभक्तिरिति क्षेथत् ॥५८॥ इत्युक्तवा समादंधे अथावहत् । शुचः शोकान् ॥ ५९॥

> इति सारार्थदिशिन्यां हिर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । त्रयोदशोऽपि प्रथमे सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १३॥

## शिक्षांतप्रदीपः।

अग्निभिः सहै। देजपर्शाशालासहिते भर्तुदेहे बद्धमानेवहिः स्थितापिसाध्वीपतिव्रता पत्न्नीगांधारीपतिमन्वग्निषेश्यतिप्रवेश्यति॥ ५७॥ सभार्थस्यश्रातुः सुरहस्यतो देहत्यागदर्शनात् हर्षेशाकारुगयाञ्छोकेनचयुतः॥ ५८॥ ५९॥ इतिः श्रीमन्द्रागयतसिकांतमकीपेत्रथमस्कंधीयेत्रयोदशाऽभ्यायार्थप्रकाशः॥ १३ engli<del>d</del> na saga

ราบ (ค.ศ. 19 รอ**งรักส**ายใ**ส**ร์เกติสาร

grade the transfer of the contract of the cont

and property of the first territory of the transport of the

#### ! **सामाद्योका**ी ः

ा गान्यार्पः अपने पति के देहकी छटज (अपर्राशाला) सहित जलते देखकर वह वही विश्वतासाखी पति का अनुगमंत कर छस्ति असि में प्रवेश करेगी ॥ ५७ ॥ ः २००१ को एक विकास कुंचे के एक किया किया किया है। एक ए हे कुखनन्दन !विदुर उसे आश्चर्योको देखेमर हर्ष और शोक युक्त होकर तीर्थ निष्का करने को चेलेजॉय ने ॥ ५८ गार्गि के श नारद यह कहकर तुंबुरु सहित खेंगे को चलेंगये युश्चिष्ठिर ने उनका बचन हृदयमें लेकर सेव शोक त्याग दिया ॥ ५९ ॥ प्रथम स्कन्ध का अयोदश अध्याय समाप्त ॥ १३ ॥

> A POLICE A CONTRACT TO MAKE THE PROPERTY OF TH CONTRACTOR OF THE STATE OF THE

and the compact of the self-term of electric explainable and a self-control of the compact flatter, and the security of these configurations of the competition for the control of the configuration of the configurat omen salitation de la cidade de la colonia de la cidade de la colonia de la colonia de la colonia de la colonia

्रक्षान् संगानिका, १९५८ - प्रायम**गु**णायके नकी**तामनी अधिकारी** कर समागुणा रहिते की **प्रायम कराने प्रायम के नकी स**निर्देश

e kiloverovej se ilo rovije pregije pr<del>okuseš ekk</del>oličio koje il marovi Oslavajičaro i osmigos k**liššiekšši s** er i de del medice di el giocomonia del mentre con estación de la militar en conserva en el mission de and a fill and was the color of the specific programme for a figure of fill from the color of the color

त्र प्रकार कर कर प्रकार कर का का के <mark>प्रकेश के अधिक प्रकार समाम अधिक के क</mark>िया है के लिए का का का का का का किया कि to a company of the state of the well-billion of the company of the state of the company of the state of the company of the state of the company of the comp

and office on the construction of the properties of the construction of the construction of the construction of า เดอ โดยเด็ก เรียก เรียกเลี้ยน เรียกโดย กับ

and the proper street and relative to the temperature service of the co n ger a toppes in the engaging

a transfer space of the 

er e despers d'apprès à l'appresque l'éx marjone à , l'eller e les mètés de l'on e l'appe e dissemble de l'été

CONTRACTOR OF THE PROPERTY OF

ELL THE WAS DEED TO BE WITHOUT

· GAR SANGER

and the contraction of the contr

कि ने हैं है है के एक्ट्रक एके रोफ कर सम्बंध स<sup>मान</sup> के किए हो है कहा है। के के **बेर्फ्र** के के किए हुई है की किए हैं

BE A SECURIAL OF BOXISE FROM SUPERIOR PROPERTY WINDOWS TO THE PARTY OF THE PARTY OF

## चतुर्दशोऽध्यायः।

सूत उवाच

संप्रस्थिते द्वारकायां जिष्णी बन्धुदिहत्त्वया । ज्ञातुश्च पुण्यश्लोकस्य कृष्णास्य च विचेष्टितम् ॥ १ ॥ व्यतीताः कतिचिन्मासास्तदा नायात्ततोऽर्ज्जुनः। ददर्श घोररूपाशि निमित्तानि कुरुद्रहः॥ २॥ कालस्य च गतिं रौद्रां विपर्यस्तर्नुधर्मिगाः। पापीयसी नृगां वानीं कोधलोभानृतात्मनाम् ॥ ३॥ जिह्मप्रायं व्यवहृतं शाठ्यमिश्रश्च सौहृदम्। पितृ-मातृ-सुहृद्-भातृ-दम्पतीनाश्च कल्कनम् ॥ ४ ॥

# श्रीघरस्नामी ।

... वृत्वदुईशे त्वारप्टानि हृष्ट्वा राजा विशङ्कितः। अश्वाोद्दुर्जुनात् कृष्यतिरोधानामितीर्थते॥ ०॥

कृष्णस्य चेति चकारेगामिश्रायश्च ज्ञातुम् ॥ १॥ कतिचित् सन्त । तदा कालातिक्रमेऽपि । ततः द्वारकायाः नायात् नागतः । निमित्तानि उत्पातादीत् । कुरूद्वहो युधिष्ठिरः॥ २॥ रौद्रां घोराम् । तदेवाह विपर्यस्ता ऋतुधम्मी यस्मिन् तस्य । वार्त्ता जीविकाम् । क्रोधलोभानृतैर्युक्त आत्मा येषाम्॥ ३॥ जिह्मप्रायं कपटवहुळं व्यवहृतं व्यवहारम् शाठ्यं वंचनं तन्मिश्रं सौहृदं सख्यम् । पित्रादीनां स्वप्रतियोगिभिः कल्कनं कलहादि ॥ ४

अश्वाोत् अनुमितवानित्यर्थः धात्नामनेकार्थत्वात् । अनुमानं तु चरमक्रोके द्रष्टव्यम् ॥ १-९॥

#### श्रीवीरराघवः।

संप्रस्थितइतिवंधूनांयदूनांदिदक्षयापुणयश्लोकस्यपुणययशसः श्लीकृष्णस्यविचेष्टितंज्ञातुं च जिष्णावर्जुनेद्वारकायांसंप्रस्थितेप्रस्थानपूर्व कंद्वारकायांत्रविष्टेसतिद्वारकायांवंधूनांदि दक्षयेतिवान्वयः ॥ १ ॥

कतिचिन्मासाव्यतिकांतावभू युः तथापिततोद्वारकातोऽर्जुनोनागच्छत्तदाकुरूद्वहो युधिष्ठिरः घोररूपाणि निमित्तान्यरिष्टानिद्दर्श ॥२॥ विपरीताऋतूनांचस्तादीनांधमीयस्यतस्यरौद्रांघोरांगतिच द्वितीयांतानांपूर्वेगादष्ट्वेत्युत्तरेगान्वयः क्रोधादिप्रवगाआत्मामनोयेषांनृगाां पापीयसीवात्तांजीवनार्थप्रवृत्तिम् ॥ ३॥ 🕡

जिह्यप्रायंकौदिल्यप्रचुरंव्यवहृतं व्यवहारंशाठ्यमिश्रंमौर्ष्ययुक्तं सोहृदंचिपत्रादीनां परस्परं कल्कनंरागादिदोषंच ॥४॥

श्रीविजयध्वजः।

दुर्निमित्तादिसंसारयात्राप्रतिपादनात्तस्यानित्यत्यज्ञापनेनहरोपराभक्तिजोयतं इत्यर्थोनिक्षण्यते ६ स्मिन्नध्याये तत्राबदोषप्रतीक्षतदृत्यु क्तययुकुलसंहारकथनपूर्वकंश्रीकृष्णस्यस्त्रधामप्राप्तिवक्तुमुपक्रमते संप्रस्थितइति नारदोक्तपरामशैनवीतशोकतयाराज्यंपालयशृपः स्वा नुमतेनजिष्णावर्जुनेद्वारकायांस्थितानांवंधूनांदर्शनेच्छया माययेच्छयागृहीतमनुष्यवेषस्यवासुरेवस्यर्रहितंचेष्टितंचक्षातुंद्वारकांप्रतिसंप €िथतेगते ॥१॥

यदाकातिचिन्मासाः दिवसाः व्यतीताः अतिकाताः तदाशतशः सहस्राणिधोरद्भपाणिभयंकराणिनिमित्तान्याध्यात्मिकाधिभौतिकाधि

देविकानुत्पातान्ददर्शेत्यन्वयः "अहस्तुमासराव्दोक्तंयत्रचितायुतंत्रजेवि"त्यभिधानं तुराव्देनगृहीतम् ॥ २॥

autorija pravija i prijasti p

उत्पातं दृष्ट्वाकिचकारनृपद्दतितत्राह कालस्यति कालगत्यादिकं दृष्ट्वानुपोऽ जुजंभीमसेनमित्यभाषतेत्यन्वयः विपर्यस्ताः वसंतादीनामृ त्नांधर्माः पुष्पेद्रमाः अस्यसंतीतिविपयस्तते धर्मस्यकालस्यरोद्वामितिपाठात् गतेरपरिहार्यत्वंवक्ति क्रोधादिष्वात्मामनोयेषांतेतयोकाः रिंग्नियांवानीश्रुत्वाजीत्रनोपार्गप्रवृत्तिपापीयसीपापभूतियष्ठांदृष्टा ॥ ३॥ तियांवान्तिश्रुत्वाजात्रनापागप्रवृत्तिपापायसापापभूषिष्ठांदृष्ट्वा ॥ ३ ॥ इयवहृतंदानोपादानादिव्यवहारंजिद्धप्रार्थकापटचप्रचुरसीहृदस्नेहसाठचीमश्रस्वप्रयोजनोपेतपित्रादीनांकव्कितांकलंकतांकलहेवा॥४॥

## क्रमसंदर्भः।

संप्रस्थित इति अश्वमेधार्थे श्रीकृष्णस्य पुनरागमनानन्तरमिति क्षेत्रम् ॥ १॥ ददर्शेति । विदुरागमनात् पूर्व्व परश्च वृत्तमिदं क्षेत्रम् ॥ २॥ ३॥ ४॥ ५॥ ६॥ ७॥

## सुवोधानी।

पवंतांधृतराष्ट्रस्यमुक्तिमुक्तवात्रयोदशे पांडवानामतोद्वाभ्यांहेतुपूर्वमुदीर्यतं॥तेगांनेष्टोब्रह्मभावःसायुज्यंपरमीप्सितम् तत्तरमास्तलेक्ष्यो सिखभावेगवंधनात्॥ अतथ्यतुईशेहेतुंभगवद्गमनंमहत् योवदेत्तरयसंदर्शः प्रइनश्चविनिद्धव्यते॥संभावनायांहेतुत्विनश्चयेषिमुतांतच भगव द्रमनंतरमादुभयत्रोच्यतेद्विधा ॥ एवंपूर्वाध्यायेतावध्यमवेक्षध्वमितिवाक्याद्भगवित्रयाद्यावश्यकत्वेश्वत्वा धृतराष्ट्रगमनकतक्केशंपरिहत्यस्वगमनहेतुभूतं भगवद्गमनंप्रतिचिताकुलितः पर्यालोचनंकरोतीति वक्तंतस्य पीठिकामाह संप्रस्थितइति शापात्पूर्वभगवान् कि
करोतीति ब्रानार्थमर्जुनः प्रेषितस्तिसम्प्रपिगतेवहचोमासाजाताइति विल्वेकारग्राभावाधितानिमित्तदर्शनाच तत्राधंद्वाभ्यामाह गम
नागमस्यनिद्धपणात् द्वारकायांगतस्य नकापिचितातत्रापि सम्यगागतस्यस्वसुगृहेसमाद्वानात् तत्रापिस्वयंजिष्णुजयशीलस्तत्रापि वंधूनां दर्शनार्थेनकलहाय्ये॥ १॥

तत्रापिसर्वानिष्टानिवारकस्य कृष्णस्यविशेषचरित्रं चेष्टितंशातुंकतिचित्सप्तमासाः सनायात्पाग्रहुसुतः दीर्घसहशविचारावश्यक त्वायचनृपः आगमनेअपशक्तनानिदृष्टवान्धोराणिकपाणियेषांफलतोभयजनकत्वंदूरेतेषामेयदर्शनेभयंभवतीत्यर्थः नचतावन्मात्रत्वं सानिपुन निमित्तानिअदेष्टसुचकानिशकुनशास्त्रेतयाप्रतिपादनात् स्वतोऽपिक्षानंसंभवति महापुरुषवंशोत्पन्नत्वादित्याह कुरुद्वहद्दीत ॥ २ ॥

 ज्योतिःशास्त्रात्कालगतिश्चकृराजाताकलेर्दुष्टस्यप्रवेशात् किच विपर्यस्ताऋतुष्यमायत्रअनेनापिकालगतिर्दुष्टेतिज्ञातम् अनापप्रिप्राशिनां जीविकापापीयसीसाधुज्जगुिसता कर्तृष्रमेषुकोषलोभावेवप्रकटौयितकचिक्रियते तत्राधिकारिविशेषग्रामेतद्वयं ताश्यामाद्यतःआत्मायेषाम् ३

कालस्यकालस्थानां च दोषाउक्ताः ज्यवहारेवुद्धिदोषमाह बुद्धिर्द्धिश्राहिसमीचीना व्यवसायात्मिकासवैप्राग्निषुसौहाईजनिका च तत्रोभयत्रापिकौदिल्यंचंचलता च प्रविष्टा बुद्धिर्हिवहिः चेष्टाभिरजुमीयतेसाकुदिलस्यनशक्या चंचकस्य च सौहाईतस्मादेतहयं लोकोभीतिमित्यर्थः लौकिकधर्मेदोषमाह पित्रादिभिः कलहः येषुसहजः स्नेहः धर्म्यः तैः सहकलहः पित्रादीनांसंबंधिभिः सह कलहः दंपतीनांपरस्परम् ॥ ४॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ती।

चतुईशे नृपोऽपश्यदिशानि वहूनि यत्। विवेद तत्फलं हथ्वेवार्ज्जनं खिस्रमागतम्॥०॥

कृष्णस्य चेति चकारेगाभित्रायश्च ज्ञातुम् ॥ १ ॥ कितिचित् सप्त । निमित्तानि दुःखकारणानि ॥ २ ॥ विपर्यस्ता ऋतुधर्मा यस्मिन् तस्य । वात्ती जीविकाम् । पापीयसीमितिपापवतीम् ॥ ३ ॥ कल्कनं कलहादि ॥ ४ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

द्वारकायांबंधूनांवसुदेवादोनांदिदक्षयापुगयकीतें: कृष्णस्यचिचेष्टितंज्ञातुंजिष्णावर्ज्युनेप्रस्थिते ॥ १ ॥

कतिचिन्मासाः व्यतिक्रांतास्तदिषकितिचिन्मासेषुव्यतिकांतेष्विपतितोद्वारकातोऽज्ज्ञेनोनायाभागच्छत् तदानींकुरुद्वहोयुधिष्ठिरः घोररूपाणि अप्रियकराणिनिमित्तानिवदर्शः॥२॥

विपर्यंस्ताः विपरीताः ऋतुधर्मायस्मिन् तस्यरीद्रांगतिंदष्ट्वानुजमुवाचेत्यिप्रमेनान्वयः क्रोधादिभिर्युक्त आत्मामनोयेषातेषावाचींशृत्तिम ३ जिह्यप्रायंकपदवहुलम् व्यवहृतंव्यवहारम् शाठ्यमिश्रंमौट्यमिश्रम् पित्रादीनांकरुकनानर्हाणांकरुकनंकलहादि ॥ ४ ॥

#### ्भाषाटीका ।

स्तजीबोले—द्वारिका में बंधुओं के देखने को तथा पुरायकीर्ति श्रीकृष्ण के चरित्र जानने को जब अर्जुन खलेगये थे ॥ १॥ तब सात महीना बीतने पर भी अर्जुन के नहीं आने से युधिष्ठिर जी घोर अराकुनों को देखने लगे ॥ २॥ काल की मयंकर गति ऋतुओं के धर्मों का वैपरीत्य कोध लोभ झूठ वाले महुष्यों की पाप वाली बुक्ति ॥ ३॥ कापट युक्त व्यवहार राठता युक्त मित्रता पिता माता सुकृत स्त्री पुरुषों का परस्पर झगडा ॥ ४॥

युधिष्ठिर उवाच ।

# निमिन्नात्यारिष्ठानि काले त्वनुगते नृगाम् ।
 लोभाद्यधर्मप्रकृतिं दृष्ट्वीवाचानुजं नृषः ॥ ४ ॥
 संप्रेषितो द्वारकायां जिष्णुर्वन्ध्रदिदृद्धया ।
 जातुश्र पुग्यश्लोकस्य कृष्णास्य च विचेष्ठितम् ॥ ६ ॥
 गताः सप्ताधुना मासा भीमसेन ! तवानुजः ।
 नायाति कस्य वा हेतोर्नाहं वेदेदमञ्जसा ॥ ७ ॥
 ऋषि देवषिणाऽऽदिष्टः स कालोऽयमुपस्थितः ।
 यदात्मनोऽङ्गमाङ्गीढं भगवानुत्सिसृच्वित ॥ ८ ॥

### श्रीधरस्वामी।

अत्यरिष्टानि अत्यन्तमञ्जभानि रष्ट्रा नृगां लोभाद्यधर्मप्रकृतिश्च रष्ट्रा। अनुजं भीमम् ॥ ५ ॥ ६ ॥ वेतिं वितर्के । कस्माद्धेतोनीयातीति नाहं वेद्मि ॥ ७ ॥ अपि किम्र । यदा आत्मन आक्रीड़ं क्रीडासाधनम् अङ्गं मनुष्यनाट्यम् उत्स्वष्टुनिच्छति स कालः किं प्राप्तः ॥ ८ ॥

## श्रीवीरराघवः।

कन्यांविक्रीगातीतितया सातं पितरंपित्रोरपोषकंसुतंचवेदेभ्यो विमुखान् ब्राह्मणान् ब्रह्मवादिनोवेदपाठकान् श्रद्धांश्च॥५॥ तथात्यिरिष्टानिनिमित्तानिःदुःखसूचकानिकालेत्वनुगतेनिमित्तभूतविपरीतकालानुसारिणीत्यर्थः नृगांलोभाद्यधर्मस्वभावंच रप्ट्वा लोभादीत्यादिशब्देनकोधादिसंब्रहःनृपोयुधिष्ठिरः अनुजंभीमंप्रोवाच॥५॥

तदेबाहसम्प्रेषितइतिषोडश्चामः द्वारकायांयेवांधवास्तेषांदिदक्षयाकृष्णस्य विचेष्टितंज्ञातुंचिजिष्णुः संप्रेषितः प्रस्थापितः ॥ ६ ॥ हेभीमसेन ! सप्तमासाः व्यतिक्रान्ताः अधुनापिकस्माद्धेतोस्तवानुजोऽर्जुनोनायाति इदमनागमनिमित्तमंजसानवेदअंजसेत्यव्ययंतत्त्व श्चीघ्रार्थयोवेर्तते ॥ ७ ॥

अपीत्यिपशब्दः सम्भावनाद्योतकः देविष्णानारदेनादिष्टः स्चितः सकालोऽधुनाऽनुपिश्यितोऽप्युपिश्यितः स्यात्किमित्यर्थः कोऽसौयिसम् न्कालेभगवान्द्वष्णाआत्मनः स्वस्याक्रीडंक्रीडांगमुत्सिसृक्षितित्यक्तृभिच्छितिसकालः आंक्रीडंक्रीडार्थमनुष्यसंस्थानभागंशुद्धसत्त्वमयमप्रा कृतंशरीरमुत्सिसृक्षितभूमेविश्लेषियनुमिच्छतीत्यर्थः ॥ ८॥

#### श्रीविजयध्वज्ञः।

अरिष्टानिअशुभानि "अरिष्टंपापशुभयोरिष्टमशुभेऽपिचे"त्यभिधानमिपशब्देनाम्राहि पूर्वकाळवेळक्षगयद्योतकस्तुशब्दः लोभादिनाअध मेस्वभावम् ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

अत्रापिमासाः दिवसाः अहमंजसेदंकारग्रानवेदत्वमिदंवेत्थाकिमितिवाक्यशेषः ॥ ७ ॥ आत्मनः स्वस्याक्रीडंक्रीडास्थानमंगेनिजांभूमि "यस्यपृथिवीशरीर्राम" त्यादेः यद्यदादेवर्षिग्रानारदेनयूयंताबद्वेक्षध्वमितिनिर्दिष्टः सः

कालः प्रत्युपस्थितः आसन्नः अपिकिस ॥ ६॥

## क्रमसन्दर्भः।

अपीति । अङ्गं खधामगमनेन विराड्रूपं त्यक्ष्यतीत्यर्थः ॥ ८॥

## सुवोधिनी ।

एवमेतानिनिमित्तानिशन्यानि च अत्यनिष्ठसूचकानिसमूलानिचेत्याह कालेत्वतुगतइतिदोषेषुकालः सानुकूलः किंच नृतांप्राणि नांसर्वेषांपूर्वयुगेषुवाह्मणादिनांक्षानादयद्दवलोमाधधर्माः स्वामाविकाजाताः प्रकृतित्वेचविगानमपिनास्तीतिभावः अनुनोभीमः॥५॥ गंसर्वेषांपूर्वयुगेषुवाह्मणादिनांक्षानादयद्दवलोमाधधर्माः स्वामाविकाजाताः प्रकृतित्वेचविगानमपिनास्तीतिभावः अनुनोभीमः॥५॥

\* कन्याविक्रियमं तातं सुतंपित्रोरपोषकम् । ब्राह्मणान् वेदिवमुखाष् ग्रुद्धंश्च ब्रह्मवादिनः ॥५॥ इत्यिषकः पाठो वीरराधव सिद्धांत-प्रदीषयोः ॥ [११०] यस्मानः सम्पदो राज्यं दाराः प्रागाः कुलं प्रजाः । स्रासन् सप्त्नविजयो लोकाश्च यदनुप्रहात् ॥ ९ ॥ पद्योत्पातान्नरव्याद्य ! दिव्यान् भौमान् सदैहिकान् । दारुगान् शंसतोऽदूराद्भयं नो बुद्धिमोहनम् ॥ १० ॥ ऊर्व्विचाह्यो महां स्फुरन्त्यङ्ग ! पुनःपुनः । वेपथुश्चापि हृदये स्राराद्दास्त्रन्ति विप्रियम् ॥ ११ ॥ शिवैषोद्यन्तमादित्यमभिरोत्यनलानना । मामङ्ग ! सारमेयोऽयमभिरेभत्यभीरुवत् ॥ १२ ॥

## सुवोधिनी।

ंआसन्यस्त्वपहतपाष्माञ्जतः कालादिदोषसंभ्रमाभावात् तेनसहिवचारोयुक्तइति भीमेनसहिवचारयित संप्रेषितइति चकारादिभिप्रायं द्वितीयचकारादन्येषामिपकालादीनाम् ॥ ६ ॥

तस्यखतोऽऽनिष्टंनास्तीत्याह भीमसेनेतिभीमासेनायस्यअनुपश्चाज्ञातत्वात्सोऽपितादशः जिज्ञासितसंदेहेऽपिथागमनाभावेहेत्वभावात्

कुतोनायातीत्याह ॥ ७ ॥

शुद्धांतःकरण्यत्वात् खस्यैवनिमित्तंस्फुरितंसंभावनायामाहअपीति आसमंतात्कीडासाधनमाक्रीरासाधनंवायन्यया एवंनभवेदिति भावः॥८॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

सर्वित्र हेतुः अनुगते काले खसमये अनुप्राप्ते सित लोभाद्यथमीरूपां प्रकृति खभावम् । अनुजं भीमम् ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ यदात्मनोऽङ्गमिति युधिष्ठिरस्य वन्धुशोकानुरूपैवोक्तिर्घतु सिद्धान्तस्पर्शिनी । सरखती तु तन्मुखे समुचितमेवाह । यदात्मनोऽङ्गम् अंशरूपं नारायग्राम् उत्तिसमृक्षति अर्द्धे वैकुग्ठं प्रति सिसृक्षति प्रस्थापयितुमिक्कति । कीदशमङ्गम् आईषदेव कीद्रा यस्मिस्तम् ॥ ८ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

तातं पितरं कन्याविक्रियशम्॥५॥ अनुजं भीमम्॥५॥६॥ नवेद नवेदि॥७॥

नवद नवाकः॥ ४ ॥ यद्यास्मिन्भगवान् अंगस्नेहास्पदमंगतातादिपदवाच्यमस्मदादिजनम् आक्रोडम् क्रीडास्थानंहोकंच उत्सिसृक्षतिसदेवर्षिगादिष्टः नि-प्यादितंदवकृत्यमवशेषप्रतीक्षते इत्यादिनासृचितः कालः समुपस्थितः संप्राप्ताप्रपिकिम् ॥ ८ ॥

#### भाषादीका।

पिता कन्या का वेचने वाला पुत्र पिता माता का नहीं पोषने वाला ब्राह्मण वेद से विमुख शुद्र ब्रह्मवादी ॥ ५ ॥ इत्यादि निमित्तों को मनुष्यों के काल बीतनेपर देख तथा लोभादि अधर्म में प्रवृत्ति को देखकर युधिष्ठिर जी भीमसेन से वोले ॥ ५ ॥ वंधुओं के देखने को पवित्र कीर्ति कृष्णा के चरित्र जानने कों अर्जुन कों द्वारका में भेजा है ॥ ६ ॥ हे भीमसेन ? अय सात महीना बीतगयं तुम्हारा अर्जुन किस हेतु से नहीं आता है यह बात हम नहीं जानते हैं ॥ ७ ॥ क्या नारदजी का कहा हुआ वहीं किल आगया जब कि भगवान की डा कलेवर कों अन्तर्धान करेंगे ॥ ८ ॥ •

## श्रीघरखामी।

अस्माकं सर्वपुरुवार्यहेतुः श्रीकृष्णाः । अतस्तिद्वियोगं विना अनिष्टं नस्यादित्यारायेनाह । यस्मात् श्रीकृष्णाखेतोः । एत्योपिक्वाद्विनः स्पष्टीकारिष्यति । लोकाश्च यद्यकरणारूपात् यस्यानुश्रहात् ॥ ९ ॥ अद्भूरात् सिद्धिहितम् । नोऽस्माकं भयम् आशंसत उत्पातान् ॥ १० ॥

# ा गरिका है । अधिरस्वामी।

दैहिकानाह उर्विति । उर्वादयो वामाः स्फुरन्ति । वेपथुः कम्पश्चहृदये वर्त्तते । एते महाम आरात् सन्निहितं विप्रियं दास्यन्ति ॥११॥ भौमानाह सार्खित्रिभिः । शिवा क्रोष्ट्री उद्यन्तम् आदित्यमभिरौति उद्यतसूर्याभिमुखं क्रोशति । अनलानना अग्नि मुखेन वमन्तीत्यर्थः अङ्ग हे भीम ! मामभिलक्ष्य सारमेयः श्वा अभिरेभति प्लतं भषति । अभीरुवत् निःशङ्कवत् ॥ १२॥

#### दीपनी।

मूलस्थ-शंसतः इत्यस्यैचार्थमाह आशंसत इति ॥ १० । ११ ॥ उद्यन्तम् उद्गच्छन्तं प्रकाशमानमिति भावः प्छतं दीर्घ भषति स्वजातीयशब्दविशेषं करोतीत्यर्थः ॥ १२—१४॥

#### श्रीवीरराघवः ।

भगवंतंविशिनष्टि यस्माद्भगवतोहेतोः नोऽस्माकंसम्पदादयोवभूचु यस्यचानुग्रहात्पुगयलोकाभविष्यन्तिसभगवानुतिससृक्षतीत्यन्वयः संपदःमोग्यभोगोपकरणादिसमृद्धयः सपत्नविजयः शत्रुविजयः॥९॥

हेनरव्याघ्र!दिव्यान्दिविभवान्भौमान् भूमौभवान्देहेचभवान्दारुणान्घोरानद्र्रात्समनंतरमेवनोऽस्माकंबुद्धिमोह्यतीतितथाभूतंभयं इांसतःसूचकानुत्पातान्पस्य ॥ १० ॥

तावहै हिकानुत्पातान्दर्शयति उविति अगहेभीम ! ममवामोर्वोदयः पुनःपुनःस्फुरंतिचलंतिहृद्येवेपशुः कंपश्चभवतितान्येतान्युर्वोदि स्फुरग्रानिआरात्समनंतरकालमेवमह्यमप्रियंदास्यंतिममविप्रियस्चकानिभवंतीत्यर्थः ॥ ११॥

्र एषाशिवाश्टगालविशेषः अनलज्वलदाननंयस्याः साआदित्यमभि आदित्याभिमुखंरौतिअंग! हेभीमायंसारमेयः श्वाथिममुखमभीरूषदभी तवद्रोदितिरोदनंकरोति ॥ १२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

यस्यकृष्णस्यानुत्रहात्येषामस्माकंसंपदादययासंस्तेषांनः सकालः आसन्नइत्यन्वयः दाराभार्याः सपत्नानांशश्रूणांविजयोलोकाः स्वर्गादयः प्रजाः पुत्राः ॥ ९ ॥

कुतः आशंकसहितित्राह पश्येति दिन्यान्सूर्यप्रकाशादीन्भौमान्भूकंपादीन्देहभवादैहिकास्तेत्रे। घस्फुरणादयः तैः सहवर्तमानाः सदैहिकास्तान्इतित्रिाविधान् द्रष्टव्यातिरिक्तकारणण्यन्यानशुभस्चकानुत्पातान्पश्येदत्यन्वयः कीदशान्बुद्धिमोहनंभयमद्रादिदानीमेव आशंसतः कथयतस्तस्मादाशंकहितभावः ॥ १०॥

देहिकान्वक्तित्याह अर्वक्षीति ममोत्संगादयः पुनः पुनः स्फुरंतिकंपंते प्रतेआरात् क्षिप्रंधििषयंमह्यदास्यतीत्यन्वयः॥ ११॥ अनलोऽग्निराननेयस्याः सातथोक्तामुखादग्निज्वालामुद्गिरंतीत्यर्थः पषाशिवासृगालीउपगच्छन्तमरुगामदित्यमभिमुखंरौतिरटति रटः सृगालाकोशेकाकाह्वानेच सारमेयःश्वा॥ १२॥

# क्रमसंदर्भः।

यस्मादिति । यस्यानुम्रहमत्रात् लोकाश्च वशीकृता आसन् ॥९॥ भयं शंसतः कथयत उत्पातान् ॥१०।११।१२॥

# सुवोधिनी ।

तत्रहेतुमाह् यस्मादितिलोकाः स्वर्गादयः राजसूयादिकरगादवगम्यते ॥ ९ ॥

हेनरव्याद्रीतिहर्शनमात्रेणनभयामितिस्चितम् उत्पाताः अनिष्टस्चकानिनिमित्तानित्रिविधान्यपिस्वतःक्र्राणि अतः आरात्द्र्रादेवभयं इांसंतिबुद्धचाहिभयंनिवर्त्तियतुंशक्यते इदंतुभयंबुद्धिमेवमोहयति ॥ १० ॥

तत्राध्यात्मिकंनिमित्तमाह उर्वर्क्षातिप्राययंगत्तेऽपिनैकवद्भावः भिक्षस्त्रभावत्वेनदोषस्यापनार्थः वेपशुः कंपः चकारास्त्रितादयः सा

भौतिकमनिष्टमाह शिवेतिपषाइदानीमपिदृष्टिगोचरा अनलाननास्त्रभावत प्रवाशिमुखाअभितोरौतिपरीत्यपरीत्येत्यर्थः सारमेयः श्वाअ भिपरितः रोदितिदृष्टशब्दंकरोतिमत्तोभयंनमन्यते॥ १२॥

इस्ताः कुर्वन्ति मां सर्वा दक्षिगां पशवोऽपरे । वाहांश्च पुरुषव्याच्च ! लत्त्वये रुदतो मम ॥ १३ ॥ मृत्युद्तः क्योतोऽयमुल्कः कम्पयन्मनः। प्रत्युलूकरच कुह्वानैर्विश्वं वै शून्यमिच्छतः ॥ १४ ॥ धूम्रा दिशः परिधयः कम्पते भूः सहाद्रिभिः । निर्घातरच महांस्तात ! साकश्च स्तनयित्नुभिः ॥ १५ ॥ वायुर्वाति खरस्पशों रजसा विसृजंस्तमः । ऋमग्वर्षन्ति जलदा वीभत्समिव सर्वतः ॥ १६ II

#### श्रीविश्वनायचकवर्त्ती।

श्रीकृष्णवियोगं विनेतादशमरिष्टं न स्यादित्याशयेनाह यस्मादित्यादि । लोकाः यज्ञादिप्राप्याः ॥ ९ ॥

भयं शंसतः सूचयतः ॥ १०॥

देहिकानुत्पातानाह ऊर्विति। वामा इत्यर्थः बहुबचनमार्थम् ॥ ११ ॥

भौमानाह । शिवा कोष्ट्री आदित्यम् अभि उद्यत्सूर्याभिमुखं कोशति । अनलानना अग्नि मुखेन वमन्ती । अक्रहे भीम ! । मामभिवी-ह्य सारमेयः श्वा प्छतं रौति रोदिति ॥ १२ ॥

### स्द्रिद्धांतप्रदीपः।

यस्माद्भगवतः ॥ ९ ॥

ने।ऽस्माकमदूरात् अल्पेनकालेन ॥ १० ॥

तत्रदैहिकानुत्पातानाह उर्वर्क्षाति आरात्त्वरितम् ॥ ११ ॥

मीमान्दर्शयति शिवेतिसार्द्धेस्त्रिभिः अनलवद्दीद्राः शब्दा आननेयस्याः एषाशिवाफेरः उद्यतमादित्यमभिउधदादित्याभिमुखंरौति अंगहेभ्रातः ! सारमेयः श्वा अभीरुवदभीतवत् मामभिमुखंरोदितिरोदनंकरोति ॥ १२॥

जिससे हमारी संपत्ति राज्य स्त्री प्रागा कुल प्रजा राष्ट्रओं का विजय सब लोक भी जिस के कृपा से भये हैं॥९॥ हे पुरुष ? ज्याघ्र दैविक दैहिक भौतिक बुद्धि के मोहक घोर भय को दूरही से दिखाते हुये उत्पातों को देखो ॥ १० ॥ हे भीम मेरे वाम उरु नेत्र वाहु फरकते हैं हृदय में कम्प होता है थोड़े देर में भय प्रदान करेंगे॥ ११॥ यह श्रमाली मुख से अग्नि को निकालती हुयी उदय होते सूर्य के सन्मुख रोदन करती है हे भीम ! मेरे सन्मुख निर्भय होकर यह कुत्ता रोदन करता है ॥ १२ ॥

### श्रीधरखामी।

शस्ताः गवादयः मा सत्यं वामं कुर्वन्ति । अपरे गर्दभादयः प्रदक्षिणं कुर्वन्ति । वाहान् अश्वान् ॥ १३॥ अयं कपोतो मृत्युदूतः मृत्युसूचकः। उल्रुकः पेचकः। प्रत्युल्कः तत्प्रतिपक्षो वकः काको वा। कुह्वानैः कुत्सितशब्दैः। विश्वं शून्य 🤈 मिच्छतः ॥ १४ ॥

धूम्रा धूसराः दिशः परिधय इव अग्नि लोकमावृरवन्ति । दिव्यानाह सार्छद्वाभ्यामः । निर्धातो निरभ्रवज्ञपातः । स्तनयित्नवोऽभ्रगार्ज तानि तैः सह ॥ १५॥

तमो विशेषेगा सृजन्॥ १६॥

#### दीपनी।

पश्चिय इति । अग्नि यज्ञामि यथा परिभयः यज्ञानिनवेष्टनास्तृतकुद्या आवर्गा कुर्वन्ति तदिव तक्षदिसर्थः ॥ १५—१७॥

בות כנו ביי

# ्रिक्ष क्षेत्र **श्रीवीरराधवः ।** एक केस्प्रताह विस्तृह

प्रशस्तागवाश्वादयः पश्चोमांसन्यमात्मतां सङ्यप्रश्चित्रथेकुर्वत्यपरेकप्रशस्ताः स्वरमिद्दिश्यादयः तुदक्षिणंकुर्वतिहेपुरुषन्यात्र!ममवा-हान्गजाश्वादीन्रुदतोरोदनंकुर्वाणान् छक्षये ॥ १३ ॥ अस्य अस्ति । १००० । १००० । १००० । १००० । १००० ।

दिशोधूम्राः परिधयश्चहश्यन्ते इतिशेषः अदिभिः सहभूः पृथ्वीकस्पतेस्तनायित्तुभिर्मेषैरकाछिकैः सहमहान्निर्घातोऽशनिनिर्घा-तश्चासीत् ॥ १५ ॥

खरःकठिनःस्पर्शोयस्यसवायुर्धूळिबद्धराः विसृजन्तविशेषेर्यसृजन्वातिजलदामेघाः सर्वतोवीभत्सामिवासृग्राधिरंवमंतिसुचंति ॥१६॥

# श्रीविजयभ्वजः ।

शस्ताः भारद्वाजादयः मां सन्यमप्रदक्षिणम् अपरेपश्चो यस्तगदेभादयः मांप्रदक्षिणंकुर्वेति वाहानश्वादीश्चरोदनंकुर्वतः मन-सानिरूपयामि ॥ १३ ॥

मृत्युदृतः मरगास्चकः कपोतः शिलाकगाशनपक्षित्रग्रीपदंकरोति यत्कपोतः पदमग्रीकृगोतीतिमंत्रात् इदंखप्नेदर्शनमिति श्वातव्यं मे मनः कंपयन्नुल्कःप्रत्युल्कश्चमिथोहुंकारैजेगच्छ्न्यमिच्छतः सर्वनाशेयथातथाह्वानंकुरुतहत्यर्थः कुह्वानमितिकेचित्पर्टति कुह्वानंनामतज्जातिध्वनिविशेषः॥१४॥

परिधयः दिशः घुम्राः घूम्रवर्गाः ज्वलिताः परिवेषा वा स्तनीयत्त्रिभिरश्चितिम् स्विधैर्वासाक्ष्मेष्ठवितः निर्मेष्ठगितिम् ॥ १५॥ वायुः शंसत्यपक्षषेकालिमत्याह वायुरिति रजसाधूल्यातमीष्ठ्यकारंविसृजिक्षिण्ठरस्पर्शः वायुर्वाति अर्थोद्व्यानाह् अर्धृगिति जलदाः सर्वतोदिशंवीभत्सिमवभीषकमिवअसृष्ठिघरंवर्षति ॥ १६॥

#### क्रमसंदर्भः।

शस्ता इति । मम बाहानित्यन्वयः ॥ १३ ॥ उल्लब्तया तत्प्रतिपक्षोऽन्य उल्लब्ध यो यो मनः कम्पयन् वर्तते ती द्वावनिद्री सन्ती ॥ १४ ॥ दिशः सूर्योदिपरिधयश्च धूम्राः ॥ १५ ॥ वीभत्तसं वीभत्तस्तित्वं यथा स्यात् तथा । इवेति वाक्यालंकारे ॥ १६ ॥

# ार विका**स्त्रवीधिनी (**किंग्याने कुल के एक स्वर्तेक वाहु के अस

को । <del>प्राप्त</del> ने केन्द्रपार्थक्त को प्रकार के प्रकार के स्वरूप के प्रकार के प्रकार के प्रकार के प्रकार का का

द्यास्ताः अश्वादयः अपरेगर्दभादयः वाहाः अश्वाः खकाराद्रचादयः पुरुषद्याद्येतिसंवोधनंतस्यराकाभावसुचकं ममापिअश्वाः सर्वसुखेनविद्यमानाअपिरोदनंकुर्वतद्वलक्ष्यंते ॥ १३ ॥

अयंकपोतोम्हत्युद्तः मृत्युसमीपेआकारणार्थमागतः दक्षिणिदिशामागत्यशब्दकरणादवसीयते कपोतोऽयमितिभिन्नवाक्यम् उल्कादि भिन्नेष्ठत्युल्कः काकजातिविशेषोवा व्यकारादन्येऽिपयेषांशाश्वातिकोविरोधः कुद्धः कुत्तितशब्दैः नविद्यते निद्रायाश्यांतीभून्यंजगदि-च्छतः ॥ १४ ॥

आधिदैविकानाहभूम्रादिशइति धूमयुक्तादिशस्वपरिधयः मध्येत्रैहोक्यंज्वहद्भिरित्यर्थः निर्धातःनिरम्रविद्युत्पातः मेघाभावेऽपिगर्जि वानिच ॥ १५॥

स्तरस्तीक्ष्याः स्पर्शीयस्यरजसापांसुवृष्ट्यातमः अंधकारम् अस्क्ष्रिधरं वीमत्सिमवविष्टारूपामवपद्यति ॥ १६॥

# श्रीविश्वनायचकवर्ती।

शस्ताः गवादय-। सव्यं वामम्। अपरे गर्दमाद्याः प्रवृक्षिणम् । वाहान् अश्वान् ॥ १३॥ प्रत्युलूकः उलूकं प्रतिपक्षो घूकः काको वा॥ १४॥ धूम्रा धूम्रवर्गा दिशः परिधयः परिश्रतुल्याः । निर्धातः आकस्मिकधोरशब्दः । स्तनियत्नवो निरम्रगर्जितानि ॥ १५॥ तमोऽन्त्रम् । विशेषेण मृजन् । असृक् रक्तम् ॥ १६॥

सूर्यं हतप्रभं पश्य ग्रहमई मिथो दिवि । ार विकास माम्या पूर्ण में क्षिक समिश्व समिश्व स्थापन कि समिश्व के स्थापन के प्राप्त के कि समिश्व के समिश्व के स नद्यो नदाश्च क्षुभिताः सरांसि च मनांसि च । न जुलत्यग्रिराज्येन कालोऽयं किं विधास्यति ॥ १८॥ न पिबन्ति स्तनं वत्सा न दुद्यन्ति च मातरः। हदन्त्यश्चमुखा गावो न हृष्यन्त्यृषभा ब्रजे ॥ १६ ॥ दैवतानि रुदन्तीव स्विद्यन्ति प्रचलन्ति च । इमे जनपदा ग्रामाः पुरोद्यानाकराश्रमाः । भ्रष्टिश्रयो निरानन्दाः किमघं दर्शयन्ति नः ॥ २०॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

हे पुरुषच्याच्र ! शस्ताः गवादयः मां सञ्यंवामं कुर्वति अपरे अशस्ताः खरादयः ॥ १३॥

अयंसमीपेकपोतः क्षुद्रकपोतः मृत्युदूतइति मममनः कंपयन्वर्त्तते उलूकोयूकः प्रत्युलूकस्तदिभमुखंप्रतिपक्षोयूकश्चतावेतावनि

द्रीनिद्वारहितौकुद्वानैः कुत्सितैः शब्दैर्विश्वंश्चन्यीमच्छतः॥ १४॥

भूमाः भूसराः परिधयः परिध्याकाराः दिशोलक्ष्यंते दिव्यानाह निर्धातहित सार्द्धद्वाभ्याम स्तनिष्रत्तुभिरकालिकेमेंबैः सह निर्घाताबज्रपातआसीत् ॥ १५ ॥

खरस्पर्शः कठिनस्पर्शः॥ १६॥

#### भाषादीका ।

प्रशस्त पशु मेरे बांये तरफ जाते हैं अशुभ पशु दाहिने तरफ जाते हैं हे पुरुषव्याघ ? हमारे घोड़ों को रोते हुए देखता हूं ॥ १३ ॥ मृत्यू का दूत यह कबूतर और उलूक काक यह सब पक्षी मन को कम्पाते हुये सोते नहीं हैं दुष्ट शब्दों से संसार को शून्य करना चाहते हैं॥ १४॥

दिशा सब धूम्र वर्ण होगई हैं चन्द्र सूर्य के मंडल होगये हैं पर्वतों के सहित भूमि कांपती है हे तात! मेघों के सहित महा वजा

भूली से अंधकार करता हुआ कठिन स्पर्श वायु बहता है मेघ सब रक्त की वर्षा करते हैं सब ठिकाने घिनाइन है ॥ १६॥

# श्रीधरस्वामी ।

अहाणां महे युद्धम् । भूता रुद्रानुचराः तेषां गणैः संकुलैः व्यामिश्रेः प्राणिभिः सहितैः रोदसी द्यावापृथिव्यो ज्वलिते प्रदीप्ते इव पश्येति ॥ १७॥

पुनर्मीमानाह नद्य इति सार्द्धेस्त्रिभिः। प्राशानां मनांसि च ॥ १८ ॥ न दुद्यन्तीति कर्मकर्त्तर्यार्षे न प्रस्तु वन्तीत्यर्थः॥ १९॥

दैवतानि प्रतिमाः। अधं दुःखम् ॥ २०॥

# दीपनी।

(सरांसि च मनांसि चेत्यत्र भ्रुभिता इत्यस्य लिङ्गव्यत्ययेन श्रुभितानीति प्रयोज्यम् । किंचात्र पुनर्भीमानाहेति खाम्युत्तवाभासेन मनसः पार्थिवत्वेद्शितेऽपि शास्त्रान्तरेगा तत्विरोधो नाशक्कनीयः। मनसः अपचिक्तपंचमहाभूतसत्त्वकार्यत्वेऽपि अन्नमशितं ब्रधा विश्रीयते इत्यारभ्य अन्नमयं हि सौम्य मन इत्यन्तेन छान्द्रोग्योपनिषद्यिषष्ठप्रपाठकान्तर्गतपंचमखग्डस्थमाह्याच्चतुष्ट्येन तस्यासीपचि तत्वेन भौतिकत्वद्शेनादिति॥१८--१४॥

# ्र अविरायवः।

हताप्रभायस्यतथाभूतंस्यंपदयदिविग्रहाणांसुग्वंगीरादीनां प्रस्परंविमर्देकलंहपद्यसुनितरांसंकुलेभूतानापिदााचानांगिण रोदसीस्य ब्ययंद्याचापृथिब्योर्वर्त्ततेज्बलितेइवइद्येते॥ १७॥

तदाप्राक्क्रोतसः सरांसिभूतानांमनांसिचक्षुमिताः संचिलतामवंतिशुष्काभवंतीतिवा अग्निराहवनीयादिराज्येननज्वलत्ययंकालः कि

दुःखंविधास्यत्यहंनवेद्यीतिभावः ॥ १८ ॥

वत्साः स्तनस्तन्यनिपवन्ति मातरश्चवत्सान्प्रतिनदुद्यन्तिस्तन्यमितिशेषः गावः अश्रूगिमुखेयासांताः रुदान्तवजेगोष्ठेऋषभान

दैवतानिदेवप्रतिमारुदन्तीवस्विद्यन्तिगात्रप्रस्वेदंमुंचंति उच्वतीतीवउत्प्छत्यपतन्तीवदृश्यन्ते पुरादीनामाश्रयाद्दमेजनपदादेशाः ग्रामाश्च म्रष्टाश्रीर्येक्ष्योनिर्गतआनंद्येयेक्ष्यः तथाभूतादृश्यंते नोऽस्माकंकिमघंदुःखंदशियण्यंतिवयंतु न विवाहतिभावः॥ २०॥

#### श्रीविजयध्वजः।

दिविब्योम्निपरस्परंत्रहमर्देत्रहयुद्धं भगगोनक्षत्रसमूहेससंकुलेक्षांकर्यसहिते भावप्रधानत्वद्योतनायससंकुलइत्युक्तं तेनापिभयप्राप कत्वमाह तुराब्देनैवंचेदेवंस्यादितिज्योतिः शास्त्रंप्रमाणीकरोति रोदसीद्यावापृथिज्यौज्वालाकुलेइवभातः ॥ १७॥

पुनश्चभौमानाह नद्यइतिस्वर्नद्यादीनांदिव्यत्वसंग्रहार्थमत्रनापाठि नदाःपुत्रद्यःशोखादयः श्चुमिताःनिमित्तमंतरेखकलुषाः नित्यमाज्ये

नज्वलनस्वभावोवन्हिः आज्येननज्वलतीतियस्मादतोऽयंकालः किंशमलंविधास्यति ॥ १८॥

व्रजेगोष्ठे अश्रुमुखेयासांतास्तथोकाः नद्दृष्यन्तिनाविष्किरन्तितटाघातं नकुर्वन्तीत्यर्थः देवतानिप्रतिमाः रोदनादौयोभावःतंकुर्वन्ति ॥१९॥ श्रष्टिश्रयः अतपविनरानन्दाः समृद्धिरिहताः सुखमुक्तावा अधंव्यसनम्॥ २०॥

#### क्रमसंदर्भः।

स संकुलैरित्यत्र स इति स एव त्वमित्यर्थः १७ । १८ । १९ । २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २६ । २७ ॥

### सुबोधिनी।

नात्रतिरोहितमिवग्रहाणां शुक्रादीनांयुद्धंपश्येत्युभयत्रसंवंधः दिविआकाशेनतुशास्त्रमात्रे सम्यक् संकुलैः भूतप्रेतिपशाचा दीनां-गर्गौः हेतुभिर्चावापृथिवीज्विलतेएव तेहिमध्येस्थिताघातुकारुद्रगगाः उपर्यध्यक्षज्वालयंतीत्यर्थः वाद्यादिहेतुव्यतिरंकेगापि श्रुधिताः पंकिलावर्त्तमानजलाः भनांसिवास्मदादीनाम् ॥ १७॥

अग्निः आज्येननज्वलित जलेनेवएवं सर्वस्यान्यथाकत्तीकालः कि विधास्यतीति नन्नायत इत्यर्थः॥१८॥ तेषांनिमित्तानामवांतरफलमपि जातमित्याह निपवंतीति श्लुधिताअपिवत्सास्तनंनिपवंतीत्यर्थः मातरः गावः सर्वेषामेवदुग्धीपजी वनात् नदुद्यंतिदोहनंनकारयंतीत्यर्थः अश्रूगिमुखयासांऋषभापुष्टावलीवद्दीः ॥ १९ ॥

दैवतानिप्रतिमाः खिद्यतिखेदयुक्तानि भवंति उश्वलंतिदेशांतरे गच्छंति भ्रष्टाश्रीर्येषांनिर्गतः आनंदोयेश्यः अघंदुः खंजनकंषापंतः

अस्मभ्यम् ॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

पुनर्भीमानाइ नद्य इति ॥ १८॥ ससंकुलैः प्रागयन्तरसहितैः। रोदसी द्यावापृथिव्यौ ॥ १७॥ न दुश्चन्तीति कर्मकर्त्तर्यार्षे न प्रस्तु वन्तीत्यर्थ-॥ १९॥ देवतानि प्रतिमाः॥ २०॥

# सिद्धांतप्रदीयः।

ग्रह्मईग्रहयुद्धम सुसंकुलैर्नानाजातितयान्यामिश्रेभूतगर्णैः रोदसीत्यव्ययंद्यावापृथिव्योज्यलितेप्रदितेद्वपद्य ॥ १७॥ पुनर्भीमानाह नद्यइतिसार्द्धेस्त्रिभिः अग्निरावहनीयादिः॥ १८॥ वत्साः स्तनंनिपवंतिवलात्त्रेयेमागान्वत्सान्त्रीतमातरोऽपिनदुश्चंतिस्तन्यमितिशेषः ॥ १९॥ देवतानिप्रतिमाह्नपाणिस्विद्यंतीवपस्वदंमुंचंतीवदृद्यंते जनपदादयोनिर्गत आनन्दोयेश्यस्तेऽतोम्रएश्चियोदृद्यंते अतपवनोऽस्मार्किक्मयं दु:खंदर्शयंति दर्शयिष्यंति॥ २०॥

मन्य एतेर्महोत्पातेर्न्नं भगवतः पदैः ।

ग्रमन्यपुरुषश्रीभिद्दीना भूहतसौभगा ॥ २१ ॥

इति चिन्तयतस्तस्त दृष्टारिष्टेन चेतसा ।

राज्ञः प्रत्यागमद्बद्धनः ! यदुपुर्याः किपध्वजः ॥ २२ ॥

तं पादयोर्निपतितमयथापूर्व्वमातुरम् ।

ग्रधोवदनम्बिन्दून् सृजन्तं नयनाज्ञयोः ॥ २३ ॥

विलोक्योद्दिमहदयो विच्छायमनुजं नृपः ।

पृच्छति स्म सहन्मध्ये संस्मरन्नारदेरितम् ॥ २४ ॥

#### भाषाटीका ।

देखो सूय का प्रभाइत होगई है आकाश में परस्पर शहों का युद्ध होता है प्राशियों के सहित भूमि आकाश जलतेसे हैं ॥ १७॥
नदनदी सरोवर मन श्रुमित होगये हैं घृत से अग्नि नहीं जलती है जाने क्या करेगा ॥ १८॥
बछरा दूध नहीं पीते हैं गऊ दूध नहीं देती हैं गऊ अश्रु मुख से रोती हैं बज मे वृषभ हृष्ट नहीं होते हैं ॥ १९॥
देवताओं की प्रतिमा रोती सी हैं पसीना देती हैं उछलती हैं यह सब देश श्राम वगीचा आकर आश्रम भ्रष्ट श्री होगये हैं ॥ २०॥

#### श्रीधरखामी।

पतैः कृत्वा न विद्यते उन्येषु पुरुषेषु श्रीर्वज्ञंकुशादिशोभा येषां तैभैगवतः पदैर्हीना भूरित्यहं मन्ये ॥ २१ ॥ तस्य राज्ञ इत्येवं द्रष्टानि अरिष्टानि येन तेन चेतसा चिन्तयतः सतः ॥ २२ ॥ अयथापूर्वे निपतितम् । तदेवाह आतुरिमत्यादि । अन्विन्दून् अश्रूणि नेत्राश्यां विसृजन्तिमत्यर्थः ॥ २३ ॥ उद्विमं किपते हृदयं यस्य विच्छायं विगतकान्तिम् ॥ २४ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

इदंत्वहमुद्भावयामीत्याहमन्यइतिपतेर्भहोत्पातेरिद्रत्वहंमन्येउद्भावयामिकिमसन्यपुरुषश्चीभिनीवेद्यतेऽन्यपुरुषेषु श्रीर्येषुतेरन्यपुरुषेष्व सम्भावितकान्तिभिर्भगवतः श्रीकृष्णस्यपदेः पादविन्यासैर्हीनारहिता अतप्वहतंस्रीभगंसीदर्ययस्यातयाभूताभूः पृथ्वीनूनंभिकित्याः ष्यतीति ॥ २१ ॥

म्यतात ॥ २६ ॥ इत्यंद्दष्टानिक्षातान्यरिष्टानियेनतेनचेतसाराक्षोयुधिष्ठिरस्यचितयतः सतःहेत्रह्यन् ? कपिष्वजोऽर्जुनः यदुपुर्याः द्वारकायाः प्रत्यागमत् बागतवान् ॥ २२ ॥

तमागतंपादयोर्निपतितमनुजंनृपोयुधिष्ठिरः विलेक्योद्विग्नंभीतंहृद्यंयस्यतयाभूत्वानारदोक्तं संस्मरत् सुहृदांमध्येषृच्छितस्मापृच्छत् कथंभूतं यथापूर्ववदनवास्थितमातुरंदुःखितमधोवदनमवाङ्मुखं नयनान्जयोरश्चविन्दून्मृजन्तंमुचन्तं विच्छायंचिगतकान्तिम् ॥ २३ । २४ ॥

#### ा १५ - का **्रीट** कुँका ५७४६ इंड ४ - १५ ५ ५ ५ **श्रीविजयब्बजः।**

एषामुत्पातानांफलंख्यमेवानुमिनोमीत्याह मन्यइति एतैर्महोत्पातैः प्रायेणयादवेद्रस्यभगवतः पदैहींनात्यक्ताअतएवहतसीभगाभू-र्महीतिमन्ये कथंभूतैःपदैःअनन्यपुरुषस्त्रीभिनीन्येपुरुषाः स्त्रियश्चसीन्दर्यसाम्येआधिक्येचवर्ततेयेषांतान्यनन्यपुरुषस्त्रीिणतैः दीर्घर्छादसः अनन्येभगवदेकशर्योः पुरुषेःस्त्रीभिश्चहीनेतिवा॥२१॥

ह्यारिष्टेनदृष्टाशुभेनव्यस्तमनुमिमानेनचत्सातस्य युधिष्ठिरस्यरा इद्दृतिचितयतो उनुजंप्रतिकथयतश्चस्तद्दितशोषः कपिष्वजोऽर्जुनः युद्ध पूर्योःद्वारकायाः हस्तिनपुरंप्रत्यागमदित्यन्वयः॥ २२॥

िद्वारकायाः हास्तनपुरप्रत्यागमाद्त्यन्वयः ॥ २२ ॥ अयथापूर्वपूर्वप्रधातयानभवतीति आतुरंसुभ्रांतृंस्गिकरूपेवा अधोवदनमवाङ्मुखंअपविन्दून् जलविन्दून् ॥ २३ ॥ विद्वार्यविगतश्रीकमनुजंनिरीक्ष्योद्विमहद्भयः त्विरितमनःपुच्छतिस्मअपुच्छदित्यग्वयः॥ २४॥ युधिष्ठिर उवाच ।

किच्चानर्तपुर्यो नः खजनाः सुखमासते ।
मधुभोजदशाहि । सात्वतान्यकवृष्णयः ॥ २५ ॥
शूरो मातामहः किच्चत् स्वस्त्यास्ते वाय मारिषः ।
मातुलः सानुजः किच्चत् कुशल्यानकदुन्दुभिः ॥ २६ ॥
सप्त स्वसारस्तत्पत्न्यो मातुलान्यः सहात्मजाः ।
ग्रासते सस्नुषाः चेमं देवकीप्रमुखाः स्वयम् ॥ २७ ॥
सिच्चान्यको जीवस्यमनानोक्या नात्वः।

कचिद्राजाहुको जीवत्यसत्पुत्रोऽस्य चानुजः।

हृदीकः समुतोऽक्रूरो जयन्तगदसारखाः ॥ २८ ॥

# सुवोधिनी।

एतेषांपापंसंभावयतिमन्यइति महोत्पातैहेंतुभिः कृत्वाभूः पदैहींनेतिमन्ये निवचते सम्यपुरुषेषुश्रीः ध्वजवज्रादिरूपायेषाम् ॥ २१ ॥ एवमन्वयव्यतिरेकाभ्यांसामीचीन्यंसर्वभगवदन्वयात् सर्वमेवानिष्टतत्सांनिध्याभाषादिति निरूपितं सूचकानांशीव्रफलमाह इति चितवत्वदिति दृष्टमालांचनेनश्ररिष्टयेनतादशचेतसाराज्ञः सतः यदुपुर्याः द्वारकायाः किपन्तदिति शीव्रागमनस्तिचतम् ॥ २२ ॥

प्रतिकूलतयाभागमनेभागत्यवचनादिकमनुक्त्वैवपादयोः पतितंसर्वदायणायाति नतयेत्यस्थापूर्वमातुरंविच्छायंकुशं दुःखविकाराभा-

विऽिपवहुकालाभ्यासात् स्वतप्वाव्विद्वः नेत्रकमलाभ्यांपतंतिकमलप्दंजलावतरगासुचकम् ॥ २३॥

विगताच्छायाकांतियस्य एताइशेनसहसंभाषण्स्यानुचितत्वमि अनुजत्वात्त्रथानृपत्वाह्युनिमित्तज्ञानं तेनदर्शनमात्रेणभाव्यर्थ निश्चयद्वानमिति पृच्छिति सुहदांमध्येएकांततुल्येद्दष्टश्चताभ्यामनुमानशंकीअनेनार्जुनतुल्योऽयमपीत्युक्तं भवति स्मेतिप्रसिद्धे अनेनसर्वज-नीनंतस्यभगवत्परत्वमित्युक्तम् ॥ २४ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

पतैः कृत्वा न विद्यते अन्येषु पुरुषेषु श्रीर्वज्ञांकुशादिशोभा येषां तैर्भगवतः पर्वेहींना सूरित्यहं सन्ये ॥ २१। २२। २३॥ विच्छायं विगतकान्तिम् ॥ २४। २५॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

नास्त्यन्यपुरुषेषुश्रीः शोभायेगांतैभगवतः पर्देभूहींना ऽतएवहतसीभगेति एतेर्महोत्पातैरहंमन्ये ॥ २१ ॥ इष्टान्यरिष्टानियेनतेनचेतसा ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ विच्छायम् विगतकांतिम् ॥ २४ ॥

#### भाषांटीका ।

भ्रष्ट श्रीवानन्द रहित यह देशादिक हमारे किस पाप को दिखाते हैं हम जानते हैं कि इनमहा उत्पादों से अक्ट अनन्यपुरुष श्री जो भगवान के पदतिनों से हीनहत सीभग यह भूमि होंगी ॥ २१ ॥

हे ब्रह्मन् ! ऐसे अरिष्ट ६ खे चित्त से युधिष्ठिर को चिता करते ही में द्वारिका से अर्जुन जी आगये है ६२ ॥ तिनकों पादों में पड़े दुये पूर्व से अन्यया रूप दुखित अधो मुख नेत्र कमलों से जलबिंदु गिराते दुये विगत कांति छोटे भ्राता को देख कर दक्किंग हृदय राजा नारद के बचन को स्मरण करते सुहृदों के मध्य में पूछने लगे ॥ २३ ॥ २४ ॥

# श्रीधरखामी ।

स्वजनाः बान्धवाः ॥ २५ ॥
कि वस्यतीति शङ्कया व्यवहितकमेगा पृच्छति धर इत्यादिना । मारिषः मान्यो मातामहः आनकतुंदुभिषंसुदेवः ॥ २६ ॥
स्वसारः परस्परम् । वसुदेवक्षेमात् तासामपि क्षेमं पृष्टमेव पृथगपि पृच्छति स्वयमिति ॥ २७ ॥
स्वसारः परस्परम् । वसुदेवक्षेमात् तासामपि क्षेमं पृष्टमेव पृथगपि पृच्छति स्वयमिति ॥ २७ ॥
आहुक उग्रसेनः । असन्द्रपुत्रो यस्य । अतपव जीवनमात्रमेव पृष्टम् । अनुजः देवकः । हदीकसुतः हतवमी । जयन्तादेवः सीहच्या
आहुक उग्रसेनः । असन्द्रपुत्रो यस्य । अतपव जीवनमात्रमेव पृष्टम् । अनुजः देवकः । हदीकसुतः हतवमी । जयन्तादेवः सीहच्या

ૠ**ૢૼૺૺૡ૽ૼ૽ૻ૱**ૢૺ૽ઌ૽૽ૡ૽

महाराज्य के स्थापिक के विकास मुख्यमा ।

विधिष्ट उचाप ।

मधुभोजादयः सन्वे यदुवंशजाताः । व्यतेषां संशिक्षण्यिक्षणे ज्वमस्कन्धीयक्षयो विशाध्याये विशेषस्त महाभारते द्रष्टव्य इति २५-३६

ा या यह क्षेत्र चल्लाको या स्राधितः ।

भारता हा है। अधिकारमुम्बारकातकातुन्तुकि । इसे भ

प्रश्नमेवाहकिचिदित्यादिनायावह्रध्यायसमाहित्क्रिङ्किद्धिकिष्टप्रश्नक्षेत्रिकिष्ट्ययं तावत्सामान्यतः सर्वानिष्टान्यन्धृन्पृच्छिते किचिचिद तिमध्वादयोयादवांतरिवशेषाः तच्चनवमेस्फुट्नोऽस्माकंखजनवन्ध्रवः आनर्तपुर्योद्वारकायांसुखंयथातथा आसतेकिच्चिद्वासते कितच्च मदिष्टमितिकाच्चिच्छद्यंप्रद्यंजनास्यभावः प्रवसुत्तरंत्रीयिङ्ग्यन्यम् ॥ २५॥

अथोक्तिविधार्जुनदर्शनेनकृष्णानिर्धाणंसम्भाष्ट्रम्बद्धम्बद्धार्जुनिष्ट्रम्बद्धम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिसम्बद्धिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षिद्धार्थिः स्विसर्गपाठेश्वर्षेत्राति तथाभूतं आस्तेष्ठिचत्वस्यानुआस्तु देवभागो देवश्रवा आनकः संजवः सामकः कंकः समिको वत्सरो वृकश्चेति नव ॥ २६ ॥

सप्तेतिस्वसारउग्रसेनस्यातिशेषः सप्तभिनयः तस्यानकार्वन्दुभैः पत्न्यःमातुलान्यः अस्मन्मातुलस्यवसुदेवस्यस्त्रियः इन्द्रवस्णाभव शर्वच्द्रेत्यानुगागमेङीषिचमातुलानीतिशस्त्रोद्ध्याद्वित्रक्षेक्षात्मजैः सहिताः स्नुषाभिः सुतभाषीभिः सहितादेवकीप्रभृतयः देवक्रीश्रुत देवाशान्तिदेवोपदेवाश्रीदेवीदेवरक्षितासहंदेवीष्ट्रिश्राप्ट्रास्त्रमेश्रेष्ट्रेष्ट्राप्ट्रास्त्रमेश्रेष्ट्रेष्ट्र

असन्दुरात्माकंसः पुत्रोयस्यस्याहुक्षाः उद्योतेनोराजाजीत्रतिकिचित् अस्याहुकस्यचानुजोदेवकश्चजीवति किच्चिद्रितस्य अस्याहुकस्यचानुजोदेवकश्चजीवति किच्चिद्रितस्य अस्य हुकस्यचानुजोदेवकश्चजीवति किच्चिद्रितस्य अस्य हुकस्यचानुजोदेवकश्चजीवति किच्चिद्रितस्य अस्य हुकस्यचानुजोदेवकश्चजीवति किच्चिद्रितस्य अस्य हुकस्य चानुजोदेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजोदेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजोदेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजोदेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य अस्य हुकस्य चानुजेवकश्चजीवति किच्चित्रस्य स्वति स्वति किच्चित्रस्य स्वति स्व

आनतेषुर्योद्वारवत्यांमधवश्चभोजाश्चद्दाहांश्चिश्वहांश्चसात्वताश्चश्चमध्वमश्चमधुभोजद्दाहांहिसात्वतांधकवृष्ण्यः॥ २५॥ मारिषःआर्यःमातामहः मातुः सहोदरः आनकदुंद्वभिवसदेवः किच्चच्छदः प्रदनार्थे कुश्रलीसुखी॥ २६॥ वसुदेवस्यसप्तस्वसारःसहोदर्यः कुशलवत्यः कि तस्यवसुदेवस्यपत्न्यः अस्माकंमातुलान्यः मातुलभार्याः आत्मजैःसहवर्तमानाः अनेनतत्पुत्राणांचकुशलप्रदनःकृतहिह्यात्वां हैचुष्मिः पुत्रभार्याभिःसहिताः॥ २७॥ असन्दुष्टः पुत्रः कंसनामायस्यसोऽसत्पुत्रः आहुकउप्रसेनोऽस्यानुजादेवकः ससुतः कृतवर्माच्यपुत्रसहितोत्हदीकः, प्रतिः सहिताः असन्दुष्टः पुत्रः कंसनामायस्यसोऽसत्पुत्रः आहुकउप्रसेनोऽस्यानुजादेवकः ससुतः कृतवर्माच्यपुत्रसहितोत्हदीकः, प्रतिः सहिता

अक्रुरोवा ॥ २८ ॥

क्रमसंदर्भः।

असन् कृष्णाद्वेषी पुत्री यस्य सः । तादशपुत्रत्वात् अद्यापि लिज्जितोऽसी कदाचिद्देशं वा त्यकवानित्यभिप्रायेण जीवतीत्युक्तम् ॥३८॥ २०॥ ३१॥ ३२॥ ३३॥ ३४॥

# सुवोधिनी।

आनतेपुरीद्वारकियनपूर्वरक्षिकत्वेनपश्चिधाउक्ताः तेसुबिनः कश्चित्तेचेत्सुखिनः तदासम् लत्वात्स्यार्थ्यस्यमेवज्ञानंभविष्यताितिष्ठसः २५ तान्सामान्यतः प्रश्नविशेषेग्रापुच्छितिश्चरद्विमारिषः स्रः संवोधनंवावाशब्देनवृद्धत्वात्तदकौशालेऽपिनचितेतिस्चितम् अत्यवपूर्वदैः लक्ष्ययाय अध्अग्रिमाग्रांकुशिक्षम्भवेषस्व प्रवेशनकद्वंदुभिरितिस्चितम् ॥ २६ ॥

सहातमजाइतिसम्बद्धिक्वित्वाः । २७॥ अहुकः पितृनाम्नानिकपितः अप्रस्तिः असन्पुत्रोयस्यअविद्यमानपुत्रोवा अतपवदुःखापनोदनार्थसञ्चेऽधिकृतः इद्दिकः स्ससुतः अकूरोऽपिजयंतादयोष्ट्रातरः सर्वेनवमेस्पष्टाभविष्यंति ॥ २८॥

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

मारियो मीन्यः २६ ॥ १७॥ । स्वसारः परस्परं भगिन्यः ॥ २७॥ । स्वसारः परस्परं भगिन्यः ॥ २७॥ । अतुको देवकः । हर्दाकल्याः कत्वमा । जयस्त्वद्याः कत्वाः । अतुको देवकः । हर्दाकल्याः कत्वमा । जयस्त्वद्याः कार्याः आतरः ॥ २८॥ २९॥ १९॥

त्रामते कुशृहं क्रिबिद्धे व शक्तिदादयः।
कित्रपत्ते सुखं रामो भगवान सात्वतां प्रभुः ॥ १९॥
प्रकृत्ते सुव्वंद्वप्रानां सुखमास्ते महारथः।
गम्भिक्ष्योश्रीकृतिह्हो वर्षते भगवानुत ॥ ३०॥
सुषेशाश्राहदेशाश्र सान्वो जान्ववतीसुतः।
त्र्यवानुचराः शोरेः श्रुतदेवोद्धवादयः।
सन्दर्भाद्धार्थां स्रुत्रो व्याद्यः।
सन्दर्भाद्धार्थां स्रुत्रो व्याद्यः।
सन्दर्भाद्धार्थां स्रुत्रो वाद्ये सात्वतर्षभाः॥ ३२॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

किचिदित्यव्ययमिष्टप्रश्नद्योतकम् ॥ २५ ॥

मारिषोमान्यः ॥ २६ । २७ ॥

)x.

10-

#### भाषाटीका।

क्या द्वारिका पुरी में बंधु लोग मधु भोज दशाई अई सात्त्वत अंधक वृष्णि यह सब यादव सुखी हैं ॥ २५॥
हमारे मान्य माता महश्रूरजी हमारे मामा वसुदेव जी भाताओं के सहित सुखी हैं क्या ॥ २६॥
उन वसुदेव जी की पत्नी सात वहिन हमारी मामी देवकी आदिक पुत्र तथा पुत्र वधुओं के सहित सुखी हैं क्या ॥ २०॥
इष्ट पुत्र वाला उपसेन तथा उसका छोटा भाता देवक जीते हैं क्या सुतों सहित अकूर जयंतादि कृष्णा भाता सब कुशल से हैं क्या ॥ २८॥

#### श्रीधरस्वामी।

सर्ववृष्णीनां मध्ये महारथः। गम्भीररयः युद्धे महावेगः। वर्द्धते मोदते इत्यर्थः॥ ३०॥ श्रीकृष्णस्यापत्यानि कार्ष्णायः तेषु प्रवराः॥ ३१॥ सुनन्दनन्दौ शीर्षगयौ मुख्यौ येषां ते॥ ३२। ३३॥

#### श्रीवीरराघवः।

सात्वतांभक्तानांपतिः सात्वर्व्छन्दोभक् वाचकः सात्त्वतशद्धस्तुय।दववाचकः इतिविवेकः भगवान् बल्गामः सुलमास्तेकिर्विते ॥ २९॥ अथश्रीकृष्णापुत्रान्पृष्ठ्वितसर्ववृद्धाते । ५०॥ अथश्रीकृष्णापुत्रान्पृष्ठ्वितसर्ववृद्धते ॥ ५०॥ । जांववतीस्तुत्रदिसांवस्यविशेषणास्यः अन्येचऋषमादयः कार्षिणप्रवराः श्रीकृष्णस्तश्रेष्ठाः सपुत्राअपिसुलमास्त इत्युप

रिष्टादन्वयः ॥ ३१ ॥ तथैवशौरेर्भगवतोऽनुचराः श्रुतदेवोद्धवादपः येचान्येसात्वतर्षभाः याद्वश्रेष्ठाःसुनन्दाद्यः ॥ ३२ ॥

क्रिका । जाहरू एक ह

#### श्रीविजयध्वजः।

येशत्रुजिदाद्यः तेचसुखमासतेर्किरामोवहभद्रः॥ २९॥ सर्ववृत्यानामध्येमहारथः गंभीररयउप्रवेगः अगाधक्षानीवा रयगतीगतिक्रीनम्॥ ३०॥

कार्ग्मानांकृष्णस्रतानांप्रवराः कार्ष्णिप्रवराः ॥ ३१ ॥ श्रुतसेनोद्धवादयः शोरेरनुचराः भृत्याः सुनन्दनन्दीशिषेगयीप्रधानीयेषांतेसुनन्दनन्दप्रधानाद्द्यर्थः नन्दशीर्षाद्याद्विपाठसुनन्दः मन्द्रशिषेश्चआद्यीयेषान्तेतथोक्ताद्दियोजनीयंशिषेशब्दः प्रधानवाची पाषेदेषुप्रधानीसुनन्दनन्दीआद्येयान्तेत्रयोक्तादित्वा ॥ ३२ ॥ ३२ ॥

นไปเสียนสมเด็จและเหมือน ค.ศ. 5 การกระการ

A. L. L. Lolling

with Military

P. GTIPELLY

Machine Same

त्र्यपि स्वस्त्यासते सर्वे रामकृष्णभुजाश्रयाः ।
त्र्यपि स्मर्रान्त कुशलमस्माकं बद्धसौहृदाः ॥ ३३ ॥
भगवानपि गोविन्दो ब्रह्मण्यो भक्तवत्सलः ।
किच्चत पुरे सुधर्म्भायां सुखमास्ते सुहृद्वृतः ॥ ३४ ॥
मङ्गलाय च लोकानां क्षेमाय च भवाय च ।
त्र्यास्ते यदुकुलाम्भोधावाद्योऽनन्तसखः पुमान् ॥ ३५ ॥
यहाहुद्दश्डेर्गुप्तायां स्वपुर्यां यद्वोऽर्चिताः ।
क्रीडन्ति परमानन्दं महापौरुषिका इव ॥ ३६ ॥

# सुवोधिनी ।

रामोबलभद्रः सर्वेषांसीख्यंतन्मुलकमितितेत्रयोभिन्नतयास्वातंत्रयेगानिरूप्यंते ॥ २९ ॥

वक्रभद्रः प्रचुम्नः अनिरुद्धश्चभगवानितिमहारयइतिभगवानितिच ॥ ३०॥

सुषेगादियः पुत्राः कार्षिगप्रवराः कृष्मापुत्राः प्रवरायेषांप्रद्युम्नादिमित्राणि ऋषभादयः कार्षिणुवाप्रवराः ॥ ३१ ॥

शीरेर्भगवतः सुनंदनंदीशिष्ययी श्रेष्ठीयेषाते ॥ ३२ ॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

गम्भीररयः युद्धे महावेगः ॥ ३०। ३१ ॥
सुनन्दनन्दी शीर्षगयी मुख्यी येषां ते ॥ ३२। ३३ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

भगवत्पुत्रपौत्रकुरालंपृच्छतिप्रद्युम्नइत्यादिना गम्भीरयोगम्भीरवेगः वर्ङतेमोदते ॥ ३० । ३१ ॥ सुनन्दनंदौरीर्षेगयौशिरोमणीयेषान्तेतथा ॥ ३२ । ३३ । ३४ ॥

#### भाषा टीका।

जो शत्रु जिदादिक यादव सो कुशली हैं यादवों के पित भगवान वलरामजी कुशली हैं क्या ॥ २९ ॥ सब वृष्णि में महारथ प्रद्युम्नजी सुखी हैं बड़े वेगवाले अनिरुद्धजी वृद्धियुक्त हैं क्या ॥ ३० ॥ सुषेण चारु देष्ण जांववती के पुत्र सांव और भी कृष्ण के पुत्रों में श्रेष्ठ ऋषभादिक कुशली हैं क्या ॥ ३९ ॥ तैसे ही शीरी के शृत्य श्रुत देव उद्धवादिक सुनन्दनन्दादिक यादव श्रेष्ठ कुशली हैं क्या ॥ ३२ ॥

#### श्रीधरस्वामी ।

भगवति सुसमास्ते इति प्रश्नस्यानीचित्यमाशंक्याह पुरे इत्यादि ॥ ३४ ॥ भगवतोऽत्रावस्थाने लोकानां मङ्गलं नान्यथत्याशयेनाह चतुर्भिः । मंगलाय शुभाय क्षेमाय लब्धपालनाय । अस्य उद्भवाय । अनन्त सक्षः बलभद्रसहायः ॥ ३५ ॥ अर्थिताः सर्व्वैः पूजिताः । परमानन्दं यथा भवति तथा । महापौरुषिकाः वैकुगठनाथानुचराः ॥ ३६ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

कृष्णाराममुजाएवाश्रयायेषांतेसर्वेऽपिश्रासतेवद्धसीहृदाः तेऽस्मक्रमपिकुशलस्मरातिकिमित्यर्थः ॥ ३३ ॥ अध्यमगवतः कुशलंपृच्छतिभगवान्कृष्णोऽपिपुरेसुधर्मायांसुहृद्भिर्धृतः सुखमास्तेकाचित् ॥ ३४ ॥

# ૢ૽ૢ૱૱૽ૼ૽૽ૢ૽૽૽૽ૢ૽૽૽ૢ૽૽ૢ૿ૢૢ૽ૢૢૢૢૢૢૢૢૢ૽૱ૢ૽ૢૻ૽ૢ૾ૢૢૢૢ૽ૢૢ૽૽૽ૢ૽૽૽ૢ૽<mark>૽૽ૢ૽૱ૢ૽૽૽૽ૢૺ૱ૢ૱૽</mark>૽૽૽

ब्रह्मायोभक्तवत्मलं तिविशायाह्माभिन्ने तपुन्छिति मंगलासेतिलोकानां मक्त्रानामां मंगलायमनंतस्यसंखा आद्यः पुमान्परमपुरुषः यदु कुळांभाधावास्तेकचित् अनंतस्य इत्यानवलरामसहित्यास्तेकिमितिपृष्टंभवातिक्षेमोल्ध्यस्यपरिपालनंयोगः सचलब्धसुखलाभरूपः तदु भयविश्रायमंगलायेत्यर्थः ॥ ३५ ॥

तदेवप्रपंचयतियञ्चाह्वितित्रिभिः यस्यकृषास्यभग्यतोबाह्यदंडगुप्तायांखपुर्योद्धारकायामार्चिताः सर्वेकोकैर्वहुमताः यादवाः परमानं दंययातयाकीडंतिमहापौरुविकाद्द्ययक्षादव ॥ ३६ ॥

# भ 🖖 🖟 🕖 अोबिजयध्वजः । 🤺

सुधर्मायांसभावां ब्रह्मणावेदेनगम्यतइतिब्रह्मण्यः विप्रिप्रयोवानित्यसुखस्यहरेः कुराकोहेशे न मे प्रश्नः किंतुलोकसुखकरत्वोदेशइत्य यमथोंऽपिशव्देनदर्शितः ॥ ३४ ॥

यमथाऽपिशव्हनद्दशितः ॥ ३४ ॥

एतमेवार्थदर्शयति मंगलायेति सःअनतःशेषःसम्बायस्यंसोऽनंतसखःआद्यःषुमान्लोकानांमगलायशुमायक्षमायप्राप्तपरिपालनायभवाष बृद्धयेयदुकुलसमुद्रेआस्तेकिचिदित्यन्वयः चशब्दाःमिथःसमुच्चयार्थाःमंगलाद्यनेकप्रयोजनार्थाः ॥ ३५ ॥

यदवायस्यक्रणास्यवाहुदंडैः रक्षितायांस्वपुर्याक्रीडंतीत्यम्बयः कदवपरमानंदंप्राप्यमहापौरुषिकादव मुक्ताद्वपरमानंदापरपर्यायंवा वैश्ववाावाहुद्गाहर्युप्तचेत्रस्थप्राप्यमहापौरुषिकायक्षाद्ववा ॥ ३६॥

# १८२५ वर्षा १८१ वर्षा १८५५ वर्षा १५५५ वर्षा १ क्रमसंदर्भः ।

मङ्गलायेति तैः ॥ ३५ ॥ यदिति । इवेति लोकिकदृष्ट्या । एवमग्रेऽपि ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

# सुवोधिनी ।

ः भगवदीयत्वेनतेषांत्रश्रहत्यभित्रायेणाहः तेषामिपस्वस्त्यासत्द्वति रामपदंशाधेशाभित्रायेणप्रतिच्याभित्रायेणवा यथातेषांकुशळमस्माभिः स्मर्थ्यतेतेऽप्यस्मत् कुश्चळंस्मरंतीति संभावनाथनेनकुश्चसंसकामास्पृष्टंस्वयमतिकुशळाः परकुशळंस्मरंतीति॥ ३३॥

भगवतः प्रश्नकुशालस्य कर्तुमयुक्तत्वेऽपि बहूनांरक्षग्रायित्वेनोपस्थितत्वात् आराध्यानांत्राह्यग्रानांकालवशेनोत्पथानांरक्षग्रावेयग्यसंभ वात् भक्तानामपि तथात्वाच शत्रुवधार्थमन्यत्रगमनसंभावनात् यहिष्ठुकानांयाद्वानां परस्परंकलहसंभावनाच गोविंदोऽस्मदादी-नामिद्रः ब्रह्मग्यः ब्राह्मग्राहितः भक्तेषुबत्सलः पुरेद्वारकायांसुधर्मायांसभायांसुहद्वृतः सुखमास्तइति सुदृदांसुकंकुर्वन् आस्तइत्यर्थः ॥३४॥

स्यमंतकप्रसंगवत असुलसंभावनात किमनेनप्रश्नेनत्यतथाह संग्रहायचेति भगवतीयत्द्वारकायां निवसनंतत्सर्व प्राणिनां विशेषतोद्वारकावासिनां निविष्टपदरक्षणाय च आधिषयाय च नजुयदितेषांभाग्यंमगळजनकंनभवेत तदा कि भगवात्स्थत्याइत्यतथान् हुआद्यहित मूळकारणाभूतहत्यथेः काळंकमेंस्वभावंचेतिवाक्यात सृष्टिसमयेभगवताकार्यार्थं परिगृहीताः काळादयः ततोजीवान् हृष्टान्तं क्योऽहृष्टक्षंफर्मविभक्तं अतस्तेताह्याएव अथवाययापूर्वविभक्ताह्वानीमपि स्वेष्ट्याविभक्यंते तस्यविभाजकत्वात् नजुकाळेनयथान्त्र्याहिताः क्वेऽपछ्ष्यते तद्भगवताकथंक्षेमस्तत्राह् अनंतसखद्दाते अनंतः क्वाळस्तरस्यस्थायनेनभगवद्दिभेतत्वयस्थानेनापक्षेती स्युक्तं नजुपाछतस्योद्धवा पूर्वमविस्द्रायथाप्रकृतिपरिग्धामंकथिमद्द्रानीमुद्भवोभवत्त्राह पुमानिति पूर्वाधिष्ठानेनेवनित्याप्रकृति स्तथापरिग्धमितं तस्यदानीमपिविद्यमानत्वादुद्भवनपरिग्धानाभविष्यतीत्यर्थः अत्रोभावत्रस्थितेष्रत्वत्र्यत्वात् कार्यकुर्वन्तिष्ठतीतिप्रश्नः नह्य-स्वकिदित्वाक्यातिद्वितीयः पक्षः स्थितौक्ष्ठितात्रक्षः विद्यतीन्तर्यास्य कित्रस्थावनंतसखद्दितियास्यातिद्वितीयः पक्षः स्थितौक्ष्ठितात्वास्यावित्रस्थात्रस्थावान्ति स्थितोत्रस्थान्त्रहित्यायासमुद्रतिष्ठतीत्वर्यः॥ ३५॥

ण्तस्मिन्नर्थेनिद्दश्नमाह पुरुषाणांस्रीणांश्रोकद्वयेनक्रमेण्याद्वारकायांसर्वयादवाः खर्चिताप्वितष्ठंतिचौरहशिशत्रभयाभावात् खदित कार्यातराभावात्कीडंतिभोजनशयनादिकमापिकीडनंकुर्वेति परमानंदोभवितिया यथापरस्परंकीडाकर्देणांखरूपंकीडयाव्यव्यते तथा परमानन्दम्परस्परार्थेविनियुंजतहत्यथः भगवत्यात्मीयत्वस्यहृद्धत्वात् भगवत्कृतमात्मकृतभेवमन्यमानाः महापौरुषयुक्ताद्वितः द्वांकाः क्रिडंतित्यर्थः ॥ ३६ ॥ १६ । १९०० विकास स्वाति विकास स्वात

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

भगवति कुशलप्रश्रस्थानोश्वित्यमार्शक्याह पुर इति ॥ ३४ ॥ मञ्जलाय प्रेमप्रहानाय । क्षेमाय केषाश्चित् मुक्तिदानाय । भवाय सम्पदे च । अनन्तसस्यः बलमद्गसहायः ॥ ३५ ॥ अश्चिता देवेरिप । महापीरुश्विकाः वैकुंठनाथामुचरा इव महद्भिः पीरुवैर्विजयिन इवेति वा ॥ ३६ ॥ यत्पादशुश्रूषणामुख्यकर्म्मणा सत्यादयो द्वयष्टसहस्रयोषितः।
निर्जित्य संख्ये त्रिदशांस्तदाशिषो हरन्ति बज्जायुधवछभोचिताः॥ ३७॥
यद्वाहुदग्रहाम्युदयानुजीविनो यदुप्रवीरा ह्यकुतोभया मुहुः।
ग्राधिक्रमन्त्यिङ्किभिराहृतां वलात् सभां सुधम्मी सुरसत्तमोचिताम्॥ ३८॥
किचित्रेऽनामयं तात! श्रष्टतेजा विभासि भे।
ग्रालब्धमानोऽवज्ञातः किं वा तात! चिरोषितः॥ ३६॥
किचित्राभिहतोऽभावैः शब्दादिभिरमङ्गलेः।
न दत्तमुक्तमर्थिभ्य ग्राशया यत् प्रतिश्चतम्॥ ४०॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

आद्यःसर्वेभ्यःपूर्वोभगवान् श्रीकृष्णःमंगलायतत्रकेषांचित् क्षेमायमोक्षरूपायमंगलायकेषांचिद्भवायभोगरूपायमंगलाय यदुकुलां भोधावास्ते॥ ३५॥

परमानंदंयथास्यात्तथा यद्वाहुमुलदगडगुप्तायांक्रीडंतिसयदुकुलांभोधावास्तेइतिपूर्वेगासम्वन्धएवमश्रेऽपिमहापौरुषिकाइवजयविज-यादयइव यद्वाअनन्वयालंकारः॥ ३६॥

#### भाषाटीका।

क्या रामकृष्ण के भुजों के आश्रित मित्रता वाळे यादव हमारे खुशल कों स्मरण करते हैं ॥ ३३ ॥ भक्त वत्सल ब्राह्मण रक्षक गोविंद भगवान द्वारका के सुश्रमी सभा में सुखपूर्वक हैं क्या ॥ ३४ ॥ जोकि लोगों के मङ्गल योग क्षेम संपत्ति के लिये वलभद्र जी जिहत यदुकुल समुद्र भे स्थित हैं ॥ ३५ ॥ जिनके भुजों से पालित द्वारिका में पूजित होकर बैकुण्ठ वासियों के तुल्य यादव परमानन्द से कीडा करते हैं ॥ ३६ ॥

#### श्रीधरखामी !

यस्य पादशुश्रूषगामेव मुख्यं तपशादिश्यः श्रेष्ठं यत् कम्मे तेन । सत्यभामादयः संख्ये युद्धे श्रीकृष्णवलेन निर्जित्य । तदाशिषः देव-भोग्यान् पारिजातादीन् । वजायुत्रवह्यभा शची तस्या उचिताः ॥ ३७ ॥

बद्वाहुदग्रडप्रभावोप्रजीविनः सुधम्मीमङ्ब्रिभिर्धिकामन्ति स गोविन्दः सुखमास्ते इति गतपश्चमश्लोकेनान्वयः॥ ३८॥

इदानीं तस्यैव कुरालं पृच्छिति किचिदिति षड्भिः। अनामयमारोप्यम्। न लब्धो मानो येन बन्धुक्यः सकाशात्। किंवा तैः प्रत्युत अवज्ञातः तिरस्कृतः। यतश्चिरोषितः बहुकालं तत्र स्थितः॥ ३९॥

अभाविरिति छेदः । प्रेमज्ञ्चरमङ्गलैः परुषेः शब्दादिभिनीभिहतः न ताडितोऽसि किम् । यद्वा अर्थिश्यः किमपि दास्यामीति नोकं किम् । यद्वा आशया सह यथा आशा भवति तथा दास्यामीति प्रतिश्चतं यत् तन्न दत्तं किम् ॥ ४०॥

### दीपनी।

मूलस्थितसत्याशब्दः सत्यभामावाचकः "विनापि प्रत्ययं पूर्व्वोत्तरपदयोर्वा लोपो वाच्य" इति ठाजादावूर्ध्वं द्वितोयादचः (पा० ५।३।८३) इति सूत्रस्थवार्त्तिकेन भामेत्युत्तरपदस्य छप्तत्वादिति ॥ ३७—४४ ॥

#### श्रीबीरराघवः।

यस्यभगवतः पादयोः शुश्रूषणंपरिचरग्रंमुख्यंकमितनेहतुनासत्यभामादयः षोडशसहस्रयोषितः संख्येयुद्धित्रदशाद्देवार्यनिक्षित्य वज्मायुद्धयस्यसद्देद्दोवल्लभः प्रियोयासांतासांसच्यादीनामुचिताःअशिषः अभीष्टार्थोःपारिजातादयः भगवताआहताद्दिशेषः तद्दित्यच्ययं सामान्याभिप्रायमेकंत्वंनपुंसकत्वंया ताआशिषः हर्रतिस्तीकुर्वेति ॥ ३७ ॥

# श्रीवीरराघकाः हे 🔆 🔻

यस्यभगवतोवाहुदंडएवाभ्युद्यायेषांतेतदुपजीविनः सङ्गृत्यायदुप्रवीराः नविद्यतेकुतोऽपिभवयेषांतथाभूताः संतः सुरसत्तमानामिद्रादी नामुचितांतान्निर्जित्यवळादामृतांसुधर्माख्यांसभामंब्रिभिर्मुहुर्मुहुराधिकमंति ॥ ३८ ॥

तस्यनिस्तेजस्कत्वादिहेतून्विकल्पयम्पृच्छतिहेतात ! तवानामायमारोग्यंकिचित् मेममभ्रष्टंतेजीयस्मात्तवाभूतो विभासिलक्ष्यसे हेतात ! त्वंतत्रचिर्म्चवितः हेतुगर्भमिदं चिर्मुवितः विभासिलक्ष्यसे हेतात !

अभावैरितिच्छेदः निवद्यतभावः सद्भावोयेषांतैरमंग्लैः वाश्व्दादिविषयैनीभिहतः आशयाऽ धिंश्योयाचकेश्यः यत्प्रतिश्रुतंदास्या मीतिप्रतिज्ञातंत्रत्तेश्यः किंवानदत्तम् ॥ ४० ॥

#### श्रीवेजयघ्वजः ।

यस्यहरेः पादयोः शुश्रूषगांसेवालक्षगांतदेवमुख्यंकर्मतेनसाधनेनसत्यादयः सत्यभामापुरः सराः द्वचष्टसहस्रयोषितः शोडशसह स्रसंख्याः स्त्रियः संख्येयुद्धेत्रिदशानिद्रादीनिर्जित्यवज्ञायुधस्येद्रस्यवल्लभायाः शच्याः उचितास्तदाशिषस्तेषामिद्रादीनामाशिषः पारिजातादिकाः हरंतिआच्छियस्त्रीकुर्वतीत्यन्वयः॥ ३७॥

यस्यहरेर्वाहुदंडानामभ्युदयोदिग्विजयश्रीस्तामनुजीवितुंशीलाअतएवाकुतोभयाः युदुप्रवीराः सुरसत्तमस्येद्रस्यउचितांवाहुवलात्ह-तामानीतांसुधर्माख्यांसभामंब्रिभिरनुदिनमधिक्रमंत्याक्रम्यतिष्ठंतीत्वन्वयः॥ ३८॥

तविक्रमेतादशदुःखनिमित्तिमितिपृच्छतीत्याद किचिदिति हेतात ? तेतवअनामयं किचित्रसुखंकि कुतः कुशलप्रश्नद्दतितत्राह अष्ट-तेजस्त्वेकारग्रांपृच्छति अलब्धेति अलब्धोमानोयेनसतथोकाः नकेवलंमानाभावः कितुअवज्ञातश्चकिमित्याद अवज्ञातद्दति पूर्विचिरोषि तोऽद्यिकवाक्षिप्रमागतः तत्रब्रूहीत्यर्थः॥ ३९॥

अवज्ञाचइंगितैः किययावाचावास्यात्तत्रवविषेनसर्वैः किवेत्यभित्रेत्यपृच्छति किच्चिदिति आदिशब्देनेगितिकियेगृहीते शब्दादिभिर वज्ञानेकारगां स्वदोषः परदोषोचा तत्रस्वदोषोनास्तिहीतिपृच्छति नदत्तामित वित्ताशयाप्रातेश्योऽर्थिश्योयुक्तंयोग्यदास्यामीतिप्रतिज्ञा-तंतस्रदत्तंकिमितीयंवैस्वदोषात् दत्वापितदाशापूर्तिपर्यतंनदत्तमितीयंपरदोषात् उभयंचनप्राप्तंहीतिवावाक्यार्थः॥ ४०॥

#### क्रमसंदर्भः।

कचित् ते इति । तेषां भवत्वमङ्गलं किश्चिदस्यैव वा भवत्वित्यपेक्षायां प्रकरस्मिदम् ॥ ३९ ॥ नाभिहतः किम् अपि त्वभिहत एवेत्यर्थः ॥ ४० । ४१ । ४२ । ४३ । ४४ ॥ इति श्रीमद्भागवतप्रयमस्कन्यस्य श्रीजीवगोस्वामिकृतक्रमसंदर्भे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

# सुवोधिनी ।

स्त्रीमामिषतथाः वमाह यत्पादेतिपादशुश्रूषमोमवमुख्यंकमेश्रन्यसुलौकिकं लौकिकापेश्रयाविहितस्यैवसुख्यतयाकरणात्स्वर्गभोक्तव्ये धर्मपरित्यागेनभोगोमाभवत्वितिविषयवलात् अत्रैवस्वर्गमानयंतिसत्यासत्यभामातस्याः प्रियत्वप्रसिद्धेः तद्भावमेवान्याअपिशिश्नंतीति सत्यादयद्वसुक्तंद्वचष्टानांसहस्राणांसमाहारः स्त्रीविवक्षाभाषाद्यञ्जीप्तिदशान्स्वयंनिर्जित्येतिस्वेच्छ्यागरुद्धेरण्याश्रवगम्यते स्त्रीणां स्त्रीकतृंकसेगाः स्वर्गपववांछितद्दिवज्रायुध्ववस्त्रभोचितादत्याह वज्रायुधस्यद्दन्द्रस्यवस्त्रभाद्दन्द्राणीतस्याः उचित्रपारिजातादि॥ ३७॥

एवमैहिकामुर्ष्मिकेएकत्रभुंजतइत्युक्तं पुरुषाणांत्वामुष्मिकस्यअनुक्तत्त्रात् सत्यादिवदेकीछत्यभोगासंभवात् आमुष्मिकंपृथगाहयद्वा हुदंडाभ्युदयानुजीविनइतिअन्यः स्वर्गतुल्योविषयः स्वतः सिद्धः सभापरंन्यूनेतितद्भोगमाहवाहुदंडयोरभ्युदयः सर्वोत्कर्षस्तमनुजीवनं यस्ययेषांतेयदुश्रेष्ठत्वेनस्वर्गेहिदेवाः सकत्स्नाताः तस्यांसभायांसकृतुपविद्यांतिपादावस्पर्शयित्वातादशींसभामुहुः अधिभिराक्रमांति तत्रापिवलात् नहिलीकिकिवययासालभ्याशताश्वमेधकर्वलभ्यत्वात् तदाह सुरसत्तमोचितामिति सुरसत्तमाइन्द्रादयः॥ ३८॥

प्वंसर्वात्पृष्ट्वाअर्जुनगतवैक्कव्यहेतुमुद्भावयितकाश्चित्तेनामयिमिति अनामयमारोग्यंकाश्चित्रोगेगाप्येवभवति किंच तेजोऽपितवगतिमिति लक्ष्यतेतत्रममहिरोवप्रमागामित्याह विभासीतितेजोगमनमंतः शोकात्पापाश्चभवित तत्रप्रथममंतः शोकहेत्र्गगग्यितअलब्धमानइतिपरग्र हेमानाभावःअतस्तापेहेतुःअवज्ञाचसुतराम् अवज्ञायांहेतुःचिरोषितइति श्वशुरगृहेवहुकालवासेभवज्ञाभवितअवज्ञातः किवेतिसंवंधः अथवाचिरवासप्वशोकहेतुः॥ ३९॥

एवमंतः करण्यारिकतदेषिण्तापउपपादितइन्द्रियकतदोषमाह किच्छाभिहतइतिअभावैः स्नेह्णून्यैः रूक्षेः अमंगलैबीगालिदानैः आदिश्वदेनपंचापिगृहीताः इदानीमधर्माणिसंभावयतिनदत्ति। वाशायत्प्रतिश्रुतं चतुर्थयेषवद्धुरुं छंद्सि ॥ २॥ ३॥ ६२॥ इति आशाय दास्यामीतिप्रतिज्ञातंतदाशामंगहेतुत्वाददानं सर्वमिष्टंदत्तवृत्ताभितितेतेजोहर्तृभवति॥ ४०॥

कचित्वं ब्राह्मगां वालं गां वृद्धं रोगिगां स्त्रियम्। शरगोषसृतं सत्त्वं मात्याचीः शरगाप्रदः ॥ ४१ ॥ किच्चतं नागमोऽगम्यां गम्यां वाऽसत्कृतां स्त्रियम् । पराजितो वाऽय भवान् नोनमैर्नासमैः पथि ॥ ४२ ॥ त्र्यापिस्वत् पर्यभुङ्कथास्त्वं सम्भोज्यान् वृद्धवालकान् । ज्गुप्तितं कम्मं किश्चित् कृतवाम यदस्तमम् ॥ ४३ ॥ कचित् प्रेष्ठतमेनाऽय हृदयेनात्मबन्धुना । शून्योऽस्मि रहितो नित्यं मन्यसे तेऽन्यथा न रुक् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्रागवते महापुरागो पारमहं स्वां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीचिते युधिष्ठिरप्रभो नाम चतुईशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

#### ्रश्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

निर्जित्य कृष्णावलेनैवेत्यर्थः त्रिदशान् देवान् तदाशिषः पारिजातादीन् वजायुधवलुभा शची ॥ ३७ ॥

अभ्युद्यं प्रभावमनुजीवितुं शीलं येषां ते । आहृतां खर्गलोकादित्यर्थः ॥ ३८ ॥

इदानीं किञ्चिदप्यवदतस्तस्येव कुशलं पृच्छति कचिदिति पड्मिः। अनामयमारोग्यम् । वन्धुभ्यः सकाशादलब्धादरः प्रत्युतावज्ञातः चिरोषितः वहुकालं तत्र स्थितः ॥ ३९ ॥

अभावैः प्रेमशून्यैः नाभिहतः न ताङ्ति। इसि किम् । अर्थिश्य आशया प्राप्त्याद्यया वर्त्तमानेश्यो यहातुं प्रतिश्चतं तन्न तत्तं न च उत्कं किमपि मौनं कृतमिति भावः॥ ४०॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

सत्यादयः सत्यभामादयः तत्तेनश्रीकृष्गोनभन्नीहेतुभूतेनसंख्येत्रिद्याचिक्षित्येन्द्रपत्नयुचिताः आज्ञिषःपारिजातादीनिष्ठार्थोन् यस्यकृष्ण स्यपादशुश्रुषगामुख्यकर्मगा हरंतिकुर्वति ॥ ३७॥

यस्यवाहुदगडयोरभ्युदयः प्रभावस्तदनुजीविनः॥ ३८॥

ម៉ា 😍 ្លាស់ស្រក

तदानींतिनस्तेजस्कंद्रष्ट्वातमेवपुच्छिति कचिचदितिषद्भिः हेतात!मेममत्यमपि तावऋष्टतेजाविभासिलक्ष्यसे अष्टतेजस्कत्वेहेतुंपृच्छिति किचत्तेऽनामयमारोग्यम् वम्धुभ्योऽलब्धमानः किंवातैरवज्ञातोऽसिकिवायतश्चिरोषितस्तत्र ॥ ३९ ॥

अभावभीववीजातैरतएवामंगलैः शब्दादिभिर्वचनक्षमेप्रेक्षणादिभिनीभिहतोनताडितोऽसिकिम् असीदात्समर्थं इत्या वाशार्थि भिरुक प्रार्थितंभवतानदत्तंकिम कदान्वित्खतएवप्रतिश्चतिमदेदास्यामीति प्रतिकातंनतदत्तंकिम् ॥ ४०॥

# भाषा टीका।

जिनके चरमा सेवा मुख्य कम से सत्यभामादिक षोडश हजार स्त्री युद्ध में जीतकर इन्द्र स्त्री के अचित संपत्ति को भोगती हैं॥ ३७ जिनको भुजदंड आश्रित यदुवीर छोग निर्भय होकर जोरी से हरगा करी हुई देवताओं के योग्य सुधर्मा सभा को पादीं से आक्रमण

ह तात ! तुम्हारा आरोग्य है मेरे को तेजहीन मालूम देते हो हे तात ! आधिक दिन रहने से मानहीन होने से अवज्ञात भग्ने क्या ३९ क्या अमंगळ शब्दादिक अभावों से अवज्ञात हुये अथवा आशा से मांगनेवाळों को प्रतिज्ञा किया हुआ नहीं दिया है ॥ ४०॥

### श्रीधरखामी ।

अन्यद्वा दारगागर्त सस्य प्राणिमात्रे न त्यक्तवानसि कि यस्त्वं पूर्व दारगामदः आश्रयप्रदः॥ ४१॥ अगम्यामिति छेदः निन्दितां स्थियं नागमः कि न गतवानासि । असत्कृतां मिलनवस्तादिकां नागमः किम । नीसमैरनुस्तमेः समेरि त्यर्थः । असमैरधमैर्वा कि न पराजितोऽसीत्यर्थः ॥ ४२ ॥

क्ष<sub>री</sub> इत्यार प्रदेशका है जह विकास स्थार कर कार्या कर कर

# श्रीघरस्त्रीसीन

नित्यं सदा प्रेष्ठतमेन हृदयेन अत्यन्तरङ्गेण स्वनन्धुना श्रीकृष्णेन रहितः शून्योऽस्मीत्यात्मानं मन्यसे। यहा स्वहृदयेन शून्योऽस्मीत्याः तमानं मन्यसे। यहा स्वहृदयेन शून्योऽस्मीत्यन्त्रयः। अन्ययाः ते क्ष्य् मनः प्रोड्डी क्रिश्चहते ॥ ४४॥ विकास स्वहृदयेन

इतिश्रीमद्भागवतमावार्थदीपिकायां प्रथमस्कत्धे चतुईशोऽध्यायः॥ १४॥

### श्रीवेग्रराघवः।

ARTON BUTTON

बाह्यसादीनन्यंचदारसोपमृतंदारसागतंजंतुंदारसापदः रक्षकस्त्वंनात्याक्षीः कचित् ॥ ४१॥

ce o folkat **sin sin keja men** 1000 û <u>li samê kalê</u>.

अगम्यांस्त्रियंत्वनागमः नगतवान्किचित्गम्यामप्यसत्कृतांवानागमः किच्चत् अथनतुमवान्पथ्युत्तमैरधमैर्वाजनैः पराजितोवाकिम् ४२ संभोज्यानसहभोत्तुंयोग्यान्वृद्धान्वालकांश्चपरीत्यव्ययं वर्जनार्थपरित्यज्यत्वम् अभुक्याः अपिभुक्तवान्किनोऽस्माकमसमसद्धांकि चिक्तिद्तंकमकृतावान्किम् ॥ ४३॥

हृद्रयेनहृद्यंगमेनित्यंप्रियतमेनात्मबंधुनाश्रीकृष्णेनरहितः अतपवशून्योनिरानंदोऽस्मीतिमन्यसेकिश्चत्अन्यथाउक्तहेतूनामन्यतमस्या मावेतवरुत्रोगः आधिर्नस्यात्यद्वारुग्दीप्तिरन्यथानप्रागिवनास्त्यतः केनचिदुक्तान्यतमेनहेतुनाभावितव्यामित्यर्थः॥ ४४॥

इति श्रीभागवतेश्रीवीरराघवटीकायां प्रथमस्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः॥ १४॥

#### श्रीविजयध्वजः।

्र ब्राह्मगादिसस्वंजीवजातंशरणयोपसृतंशरगार्थितयाप्राप्तं शरगाप्रदस्त्वंनात्याक्षीः रक्षामकृत्वात्यक्तवानासिकिम् अरक्षितैस्तैरवज्ञातद्दिति वाक्यार्थः ॥ ४१ ॥

अगम्यांविधवांपरिश्चियंवा गम्याम् असत्कृतांवास्नानादिसंस्काररिहतां प्रदानकर्मरिहतांवास्त्रियंनागमः नगतवानिसिकिद्द्यंचपार्थपवं विधक्रमकरोतीतिकाचित्स्वदेषिनिमित्तावज्ञा ॥ ४२ ॥

आवृद्धबालकान्बालावधिसर्वान् अभोज्यान् भोजयित्वापर्यभुंङ्थाः भुक्तवानिसिक्षंभोज्यानितिपाठेसहभोक्तंयान् वर्जयित्वाभुक्तवा नसीत्यर्थः अक्षमंकर्तुमशक्यंतादशं किंचित्शास्त्रानिषिद्धंकर्भकृतवान् किम् एकादशीभोजनस्वर्धास्तयं निधानोद्धरणभित्यादि जुगुप्सितं कर्म ॥ ४३ ॥

उक्तं संविवच्छायत्वे नपूर्णमितिमत्वाकारणांतरंषृच्छिति अयोति अययंनित्यंप्रेष्ठादिगुण्यत्वेनमन्यनेतेनसर्वतः प्रेप्तेनिप्रयतमेनद्वदयेनमनो हारिणाऽन्मबंधुनास्वाभाविकवंधुनारुष्णोनरहितोवियुक्तः सन् ग्रुन्योऽमङ्गलोऽसिकाच्चित्तेतवरुक्शरिपप्रभाऽन्यथा नपूर्ववदि यस्मात्तस्मा सेनवियुक्तोऽमंगलोभवितुमईसीतिमन्ये नित्यंप्रेष्ठतमेनरहितः भ्रून्योऽस्मीत्मात्मानंद्वदयेनमन्यसे सर्वयातवशरीरकांतिस्त्वन्यथानपूर्ववदि-तिवा प्रेष्ठेनतेनरहितः ग्रुन्योऽस्मीतिमन्यसेअन्ययातया मननाभावेरुक्रोगोमनोव्ययाक्षयमितिवा त्वंमित्रष्ठत्वादात्मेकनिष्ठत्वाच्चरुष्णप्रेष्ठ त्वाच्चलोकशास्त्रानिषद्धनकरोधिहि तस्मासेन्द्रप्णोनवियुक्तत्वाक्तविच्छायत्विमित्तमन्यइतिहिश्चार्थः॥ ४४॥ त्वाच्चलोकशास्त्रानिषद्धनकरोधिहि तस्मासेन्द्रप्णोनवियुक्तत्वाक्तविच्छायत्विमित्तमन्यइतिहिश्चार्थः॥ ४४॥

इतिश्रीभागवतेप्रयमस्कंधेविजयष्वजटीकायांत्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

### हुने हुए । के राजने किएक १४० व्हें अंक्ष्म राष्ट्र का है है के लिए के लिए के रिवर्ट के प्रतिकार के स्थापन हैं सुवोधिनी ।

दानंशरणागतरक्षाचक्षत्रियस्यमुख्यं शरणागतानामपिमध्येत्वमेतासकाधित्परिपालितवानसीत्याहकाचिति ब्राह्मणाः सर्वावस्था भुपरिपाल्यः स्त्रियश्चअन्येवृद्धवालरोगिणाः अन्यदर्पिशरणोपसृतंसत्त्वंहरिणादिनात्याक्षीनेत्याजितवानसिअन्यैः पीडायांसमुपस्थिता यांततस्त्याजनमक्रतमित्यर्थः॥ ४१॥

धर्मसूक्ष्माभावमाह त्वन्नापुरुषोभूत्वाअगम्यामगमः कामवद्दोनअगम्यागमनंकृतंगम्यांवाअसत्कृतामअपमानंकृत्वाअगम्यामगमइतिराष्ठ्र पराजयोऽप्येतद्धेतुरितितमाह पराजितइतिअस्यपूर्वोक्तानुरूपत्वात् अथेति नोक्तमैनसमासःनासमैःअधमैः समैर्वाअधमैर्वापराजितदः त्यर्थः ॥ ४२ ॥

मिष्टामादिवंपाचकेश्योवालादिश्यमदत्वाभोजनेऽप्येवंभवतीतिलीकिमाशंकते अपिसिदितिपरिवर्जनात्संभोज्यान्वस्यालकानिति-पाठेभोज्याः स्मिन्याःअथतावुत्तरेविभागद्दतिन्यायेनह्म्यःआवृद्धवालकान्या अन्यद्पिजुगुप्सितंपश्चाज्जुगुप्साजनकम्असमचप श्चाह्मोद्दुमशक्यंच ॥ ४३ ॥ श्चाह्मोद्दुमशक्यंच ॥ ४३ ॥

# सुसीधिनी ि

ि सुर्थकारणमुत्र्यक्षतेकाधिवितिः इययेनदृद्धस्यतैप्रविकततीतिहृद्धः अतयामि अयेतिपूर्यव्यानृत्यर्थः धारमत्वेनसंधुरहितः लाहदोन विर्वितः स्थाप्तिकार्यम् स्थापति स्थापत

इतिश्रीमद्भागवतसुबोधिस्यांश्रीमद्रस्क्रभदीक्षितविराचितायांप्रथमस्कंधविवरगोचहर्तुःग्रोऽध्यायः ॥ १४ ॥ 🕬 🖟 💯 🕬

ii kiji a ki a **v**irovikoja di <u>ka miratika, mi</u>liji kurupaa <del>viroja k</del>asiji

### श्रीविश्वनाथयकवर्ती

शरखोपसृतं शरखागतं सत्त्वं प्राखिनम् ॥ ४१ ॥

अगम्यामिति छेदः। असत्कृतां मिलनवस्त्रादिकाम्। असमैर्घलेनातुल्यैन्धूनैरित्यर्थः। तत्रापि नोत्तमैर्जात्यापि न श्रेष्ठैर्नीचजातिभि-रित्यर्थः॥ ४२॥

🖽 परिवर्जने वृद्धादीन् वर्जियत्वा भुक्तवानसि । अक्षममनुचितम् ॥ ४३ ॥

natistica anticas establistica especiales de la compositoria della com

े किश्चैता आशङ्कास्त्वयि न सम्भवन्ति । सम्भवति चेदामिति नारदाकं स्मरकाह किचिदिति । नित्यं सदा प्रेष्ठतमेनात्मनो बन्धुना क्र-ष्णोन रहितोऽहं हृदयेन चेतसा ग्रन्यो मुर्च्छितोऽस्मीति मन्यसे आत्मानमिति शेषः । सत्यं सत्यमेतदेव कारणं सत्यमिति भावः । अन्यश ते रुक् मनःपीड़ा न घटते ॥ ४४ ॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिणयां भक्तचेतसाम् । चतुर्दशस्य प्रथमे सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १४॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

नात्याक्षीर्नत्यक्तवानसिकिम् ॥ ४१॥

नात्याक्षानल्यायात्राचार्यः । ५९ ॥ त्वमगम्यांस्त्रियंनागमः नगतवानसिकिकिकित् गम्यांवाप्यसत् कृतांदूषितांनागमः किचत्रवरत्तमाःनोत्तमाःइत्यर्थः तथाचसमेरसमे वाकिनपराजितोभवान् ॥ ४२ ॥

ः सम्भोज्यान् सहैवभोक्तुमर्हान् त्वमिषित्रित्पर्यभुक्षाः वर्जियत्वाभुक्तवानिसपीरवर्जनार्थमव्ययम् ॥ ४३ ॥

अयवानित्यंप्रेष्ठतमेनहृद्येनहृद्यंगमेन आत्मवन्धुनाश्रीकृष्णेनरहितस्तस्मादेवग्रन्योऽस्मिनिरानन्दोऽस्मीतित्वंमन्यसेकाचित् अन्ययोक्त हेत्वन्यतमाभावेतरुङ्मनः पीडा नभवेत् ॥ ४४ ॥

> इतिश्रीभागवतेसिद्धान्तप्रदीपेप्रथमस्कन्धीये चतुर्दशाऽध्यायार्थसमाप्तः॥ १४॥

#### आषात्रीका

क्या तुमने ब्राह्मण गर्फ बालक वृद्ध रोगी स्त्री शरणागत को शरणय होकर भी त्यागे तो नहीं हो ॥ ४१ ॥ क्या तुमने अगम्य स्त्री का गमन किया अथवा असत्कृत स्त्री का गमन किया अथवा असम अनुत्तम अधम पुरुषों से पराजित मये हो ॥ ४२ ॥

क्या भोजन कराने योग्य वृद्ध बालकादिकों को छोडकर भोजन किया है अथवा अयुक्त निदित कोई कर्म किया है ॥ ४३ ॥ अथवा प्रियतम हृद्यरूप आत्मवंधु श्रीकृष्मा से रहित होने से अपने को शून्य मानते हो अन्यथा तुमको चिंता का संभव नहीं है ॥ ४४ ॥

१९८९ वर्षेत्रक अध्याप्त । अवश्याक्षेत्रक १००६ वर्षा व **चतुर्देश क्षणार्थ समाप्त ॥ १६॥** १९८९ वर्षेत्रक वर्षेत्रक १६० वर्षेत्रक १००६ वर्षेत्रक १००६ वर्षेत्रक १००६

a did na production de la completa del completa de la completa del completa de la completa del la completa de la completa del la completa de la completa de la completa del la completa de la completa del la completa

भागित्र नियम्भाषा

# uringan jaran pagangan pagangan pangangan pangangan pangangan pangan pangan pangan pangan pangan pangan pangan Pangangan I dan banan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangan pangangan pangangan pangangan p Pangangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan pangangan

स्तं उवाच।

ស្នាក់ក្រុម ស្រីស៊ីដៅស៊ីស៊ីស៊ី សាស្ត្រាស់ស្ត្រីអស្សាស្ត្រី ស្ត្រី ប एवं रुष्णासयः रुष्णो भ्रात्रा राज्ञाविकल्पितः ।
नानाशङ्कास्पदं रूपं रुष्णाविश्ठेषकिशितः ॥ १॥
शोकेन शुष्यद्वदनहत्सरोजो हतप्रभः ।
विभुं तमेवानुध्यायत्राशकोत् प्रतिभाषितुम् ॥ २॥
रुष्णेण संस्तभ्य शुचः पाणिनामृज्य नेत्रयोः ।
परोच्चेण समुत्रद्वप्रणयौत्कण्याकातरः ॥ ३॥
सख्यं मैत्रीं सौहदश्च सार्थ्यादिषु संस्मरन् ।
नुपमम्रजमित्याह वाष्पगद्गदया गिरा ॥ ४॥

### श्रीधरस्वाम्ही।

कालिप्रवेशमालक्ष्य धुरं न्यस्य परीक्षिति । आहरोह नृपः खर्गमिति पश्चदशेऽत्रवीत् ॥ ०॥

कृष्णोऽज्ज्जेनः । आविकल्पित इति छेदः । नानाशङ्कास्पदं रूपमालक्ष्य विकल्पित इत्यर्थः । प्रतिभाषितुं नाशक्रोदित्युत्तरेखान्वयः। तत्र द्वेतवः श्रीकृष्णविश्वेषेण कर्शितः कृशः कृतः ॥ १ ॥

शोकेन हेतुना वदनश्च हम्म ते एव सरोजे शुष्यांती वदनहत्तसरोजे यस्य । हता प्रभा तेजो यस्य ॥ २॥

शुचः शोकाश्रूणि यान्युद्गच्छन्ति तानि नेत्रयोरेच संस्तृभ्य गिलतानि च पाणिना आमृज्य । परीक्षेण दर्शनागोचरेण श्रीकृष्णेन हे-तुना समुन्नद्मम् अधिकं यत् प्रेमीत्कगठचं तेन कातरो व्याकुलः नृपमित्याहेत्युत्तरंगान्वयः ॥३॥

सख्यं हितेषिताम् । मैत्रीम् उपकारिताम् । सीहृदं सुहृत्वं सम्वन्धिताश्च । वाष्पेग करावरोधाद्गद्गद्या ॥ ४॥

दीपनी।

भ्रुरमिति । विषुळराज्यभारमित्यर्थः ॥ ० ॥ १—-३० ॥

#### श्रीबीरराघवः।

्र प्रवमिति कृष्णस्यभगवतः सखाकृष्णोऽर्जुनोभ्रात्राराज्ञायुघिष्ठिरेगानानाविधानांशंकानामास्पदंनिमित्तंरूपंतेजोहीनंस्वकीयंरूपंप्रतिविक-लिपतः कृष्णस्यभगवतो विद्यलेषेणवियोगेनकर्षितः ॥ १॥

विद्दलेषज्ञशोकेनशुप्यद्वद्दनंद्वद्यकमलंचयस्यसोऽतएवहताप्रभायस्यतथाभूतः तमेवविभुंश्रीकृष्सभभिष्यायन्प्रतिभाषितुं प्रतिवक्तुंना

ततःकृञ्क्रेग्रामहताप्रयत्नेनशुचः शोकान्संस्तभ्यनेत्रयोर्नेत्रेकर्मग्रिषष्ठीपाग्रिना आमुज्ययद्वासंस्तभ्यमनइतिशेषः नेत्रयोःशुचःशोका श्रृग्रिपाग्रिभ्यांसमृज्यपरोक्षेग्रातिसमुन्नद्धः उत्कटः प्रग्रायः स्नेह औत्कग्ठचंप्रेमपूर्वकानुध्यानं विरहासहत्वदशावा ताभ्यां कातरःअधीरः ३ वाद्येगंद्रदयाकुण्ठीभृतयागिराऽप्रजंनृपतिमितीत्थंवक्ष्यमाग्रायारीत्याहेत्यम्बयः कथंभूतःसन्सारथ्यादिषुकर्मसुसख्यादीन्संस्मरन्तत्र सोह्यहितीयत्वं मित्रत्वंप्रियेषिता समानशीलत्वंसखित्वं नियोगादिकरग्राहित्वंवामेत्रत्वम् ॥ ४ ॥

#### श्चीविजयध्वजः।

भगवतिभक्तिविधानार्थेषुः सक्तवनव्याजेनतन्त्रहिमाप्रतिपाद्यतेऽस्मित्रध्याये कृष्णस्यविश्वेषेण्वियोगेनकर्षितः उक्तनानारांकायाः आस्प दंशीकाग्निनाद्युष्यतीवद्नहृत्सरोजेयस्यतत्त्रथोक्तः अतप्वहतप्रभनष्टकांतिरूपंथाकारंदश्च आत्राराज्ञाविकविपतः एवंवापवंवेतिबहुकादि विषयीकृतः तमेवविशुमनुध्यायन्तिरंतरंत्रितयनकृष्णस्यसमार्जुनः प्रतिभाषितुंनादाक्रोदिरयकान्त्रयः॥१।२॥

holder fresh

#### श्रीविजयध्वजः।

शोकहेत्नामनेकंत्वाद्यद्ववचनं शुचः शोकान्कच्छ्रेणसंस्तप्रयशिकानेत्रजमश्रुवामुख्यक्रण्णस्यपारोक्ष्येणाप्रत्यक्षत्वेनसम्बद्धेनप्रण्येन कदानुपर्येयमित्योत्कण्ठचेनकातरः विवशः ॥ ३॥ अस्ति स्वर्णाः

सारध्यादिषुकर्मसख्यादिकंसम्यक्स्मरत् अर्जुनोबाष्पेगानिमित्तेनगद्गदयास्वलंखागिरा अप्रजंनृपमितिवश्यमाग्राप्रकारेखा हेत्यका-न्वयः॥४॥

क्रमसंदर्भः

०।१।२।३।४।५।६।७।८।९॥

# . सुवोधिनी ।

पवंचतुर्द्शेहेतुंसंभाव्याथविनिश्चयात् कृतकार्यः शास्त्ररीत्यामुक्तोऽभूदितिवर्णयते ॥१॥ भार्याभ्रातृभिरत्रैवसहितोमुक्तिमेयिवान् पंचदशे महाराजकृष्णभाक्तिनिरूप्यते ॥२॥ प्रमोपकारक्षानानिजिष्णौराजार्थमाहिह एवंद्रष्ट्वैवराजापितथावाभूद्यतः परः ॥३॥ प्रथममर्जुनभेमौत्क-गृठ्यमाह एवमितित्रिभिः एवंकृष्णोऽर्जुनः नानाशंकास्पदरूपंविकारिपतोऽपिनाशक्रोदितिसंवंधः कृष्णस्यभगवतः सखासिस्मर्णोनव्या-कुळ्हतिएतद्वारावाभगवानेतानुपसंहर्त्तुमागतइतिकृष्णपद्ययोगः अत्यवकृष्णस्यः अन्यथातत्यवगमनमुचितंस्यात् अर्जुनेनानिताः सर्वहतिभगवद्वाक्येऽपिततएवगमनमुचितंस्यात्तावद्ययमवेक्षध्वभितिनारद्वाक्यं च सत्यस्यातकृष्णौयदुकुरूद्वहाविति च अवस्थापकटनंतु विश्वासार्थभगवतवक्रीळाअन्यथामगवतः सावशेषकार्यकर्तृत्वंस्यात्वर्ज्ञनस्यतेजः शोकस्यायुक्तः स्यात्अत्यवकृष्णग्वार्ज्जनसमाविष्टः समागतहतियुधिष्ठिरमुक्तिकिचतानानाशंकानांपूर्वोक्तानामास्पदंद्भपंत्रतिकिष्पतः क्रपमेवार्ज्जनहितवाप्रतिभाषितुनाशक्रोदितिवासंवंधः कृष्ण स्ययोविश्लेषोवातेनकार्शितः क्षीणः॥ १॥

अनुत्तरेदृष्टउपायउक्तः शोकेनशुष्यत्शोषमयत्शोषंप्राप्नुवत्दृत्सरोजंवदनसरोजं च यस्यअतप्वहतप्रभः अंतस्तापेवाहिः कांतेनीशनात्

उत्तरध्यानयोर्युगपदुपस्थिताविपतमेवध्यायन् उत्तरंवक्तंनाराक्षोत् तत्रहेतुः विभुमिति ॥ २ ॥

उत्तरापेक्षया निवध्यस्य समर्थत्वात् शोकसहकृतंध्यानंजायतद्दित शोकंदूरीकरोतीत्याह कृच्क्रेगोति शोकस्तुस्मरगाहेतुकद्दित स्मरमिविद्यमानेशोकिनिवृत्तिः शक्या तथापिताद्दशधमीविशिष्टंभगवंतिभ्योधमेभ्यः पृथक्कृत्यपूर्वधमेः सहसंयोज्यशोकदूरीकरगात्
कृच्क्रेगोत्युकं शुचः शोकाश्र्रिगा अभ्यंतरात्समागच्छंति तश्रेवस्तंभितानितेत्रयोः समागतानितानिपाणिना मृज्यआसमंतात् मृष्ट्राप्वंकृते
पूर्वोक्तधमयोजनात् गतकालसहितः परोक्षशब्दवाच्यः अर्ज्जनस्यांतः प्रविष्टद्त्याह परोक्षेगोति अक्षात्परः परोक्षः स्वेच्छयेवपूर्वमिदिपूर्वोक्तधमयोजनात् गतकालसहितः परोक्षशब्दवाच्यः अर्ज्जनस्यांतः प्रविष्टद्त्याह परोक्षेगोति अक्षात्परः परोक्षः स्वेच्छयेवपूर्वमिदिपर्वोक्तिपांप्रतिमच्छायाश्रमावात् सौख्यप्वतेनसमुश्रदः आविष्टः सम्यङ्नस् अयोगोलकंविह्नवेवश्रनेनांतः कथनेवलमुकं मिक्तप्रप्
पर्वेप्रविष्टास्वकार्यकरोतित्याह प्रगायोत्कगठचकातरद्दि प्रगायेनस्रोहनयदौत्कगठचंउद्गतकगठताकगठाभावः कगठमुद्रगामितियावत् तेनकापर्वेप्रविष्टास्वकार्यकरोतित्याह प्रगायोत्कगठचकातरद्दि प्रगायेनस्रोहनयदौत्कगठचंउद्गतकगठताकगठाभावः सगठमुद्रगामितियावत् तेनकातरः कदावावस्यामीत्याकुलः भगवान्वतंतेद्दिवक्तवंशिक्ताविष्टाक्रगतेश्रमेश्रमेश्रम्य प्रविद्याक्तिमम्बद्धिः अपगृतेउद्गतेनवाष्पेगाकगठउद्गतवाजाता ॥ ३॥
समरगोन भगवति पृष्टेततेजसाकगठमुद्रगो अपगृतेउद्गतेनवाष्पेगाकगठउद्गतवाजाता ॥ ३॥

स्तरणा नगपात उद्यापात । विकास प्रतिकृत्यपूर्वधर्मयोगात नातिस्मरश्नाहेत्याह सख्यमिति समानशीलव्यसनत्वंसख्यंगुह्मगोपनगुगाप्रक-ततोभिक्तिदूरीकृत्यभगवंतमेवोररीकृत्यपूर्वधर्मयोगात नातिस्मरश्नाहेत्याह सख्यमिति समानशीलव्यसनत्वंसख्यंगुह्मगोपनगुगाप्रक-टीकरगाआपद्गतात्यागादिधर्मवत्वंमैत्री सार्थ्यादिषुभगवताद्वयंकृतंसीहृदंचसुहृदोभावः सतामिवकृत्यंवंधुकृत्यंवाइद्मापि प्रकटीकृत्य-चकारात स्वामित्वगुरुत्वेआदिशब्देनपार्वदसेवनदीत्यंशित्यासेवनश्रनुगमनादि असमासानिद्वेशः पृथक्स्मरगार्थइति वस्यमागांप्रकारंगि-

रान्त्वभिनयेनशोकतस्यापिसंभवात्॥ ४॥

# श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ।

श्चुत्वा नृपः पञ्चदरो विलापं धनञ्जयस्याय कलेः प्रवेशम् । विश्वास्य । विश्वास्य प्राप्ते । विलापं धनञ्जयस्याय कलेः प्रवेशम् । विश्वस्य प्राप्ते । विश्वस्य । विश

कृष्णोऽरुर्जुनः विकल्पितः एवंभूतो वा त्वमेवंभूतो वा इति विकल्पविषयीकृतः । तत्र हेतुः नानाशङ्कास्परं रूपं द्धान इति शेषः। क-

्शुंचः शोकाश्रृणि यान्युद्रच्छन्ति ताति नेश्रयोरेव संस्तुश्य गिलतानि च पाणिना आमृज्य परोक्षेण परोक्षीभूतेन कृष्णेन हेतुवेसर्यः ३ प्रेम्गणा परस्परप्राण्यत्वं ( परस्परहितेषित्वं ) संख्यमा मेश्री दास्त्रमिश्रं संख्यमा सोहदं व्यत्सख्यमिश्रं संक्यम् ॥ ४॥। अस्ति हास्त्रमिश्रं

# सिद्धांतप्रदीपः।

प्रविद्वात्रामानाशंकारपदिनस्ते जर्भक्षक्षेत्रपेप्रति जिस्सी विद्यान्य वियोगेकि दितः कृष्णोऽ जुनः सम्बात् ध्यायन्त्र तिमाचितु नाहाने ने विद्याप्त विद्यापत विद

चित्रतोऽहं महाराज हरिगा बन्धुरूपिगा। थेन मेऽपहृतं तेजो देवविस्मापनं महुत् ॥ ५ ॥ यस्य त्त्रगावियोगेन लोको ह्याप्रियदर्शनः। उक्षेन रहितो होष मृतकः प्रोच्यते यथा ॥ ६ ॥

यत्संश्रयाट् द्रुपदेगे हमुपागतानां राज्ञां स्वयंवरमुखे स्मरदुर्म्भदानाम् । तेजो हतं खलु मया निहतश्च मत्स्यः सज्जीकृतेन धनुषाधिगता च कृष्णा ॥ ७॥

यत्रसन्निधावहम् खाण्डवममयेऽदामिन्द्रश्च सामरगगां तरसा विजित्य।

लब्धा सभा मयकताद्धृतशिल्पमाया दिग्भ्योऽहरन्तृपतयो विलिमध्वरे ते ॥ ८॥

#### सिद्धांतप्रदीपः 🔝

कुच्छ्रेगासंस्तर्भयआत्मानमितिरोषः नेत्रयोरशुचः शोकाश्रृशिपागिनामुज्यपरोक्षेगाकृष्गोनहेतुनासमुन्नद्वाश्यांवृद्धाश्यांवर्णयोत्करेठया **क्यांस्नेहवेक्लब्याक्यांकातरोविब्हलोऽम्रजमित्याहेत्यमिगान्वयः॥३॥** 

सारथ्यादिषुसारथ्यदौत्यानुगमनादिषुकर्मसुसख्यंसमानशीलत्वं मेत्रीमुपकारित्वेसतिप्रत्युपकारानेपक्षतांसौद्वदंहितैषित्वंवाष्पेसाक्-ग्ठावरोधहेतुनागद्गदयास्खल्ठिताक्षरया अत्रजंयुधिष्ठिरमाह ॥ ४ ॥

#### भाषाटीका ।

सूतर्जी वेलि इस प्रकार से युधिष्टिर राजाके नानाशंके प्रश्न करनेपर कृष्णासखा अर्जुनजी कृष्ण के वियोग में क्लेशित थे शोकसे मुख कमल हृदय कमल सूख गये थे कान्तिहत होगई थी उसी प्रभु कृष्ण का ध्यान करते थे तिससे बोलने की समर्थ न हुए॥१।२॥

बड़े कए से आंसुओं को रोक कर नेत्रों को हाथ से पोंछकर अन्तर्हित कृष्ण के प्रेम से अधीरज होकर सार्थि आदि ळीळाओं में सखाभाव मित्रता सुदृद्धनाको स्मरण करते हुए वाष्प गद्गद कण्ठ से ज्येष्ठ राजा के प्रति 💳 व्चन बोले ॥३।४॥

#### श्रीधरस्वामी।

येन मां वैचयता। देवान् विस्मापयति यत्॥ ५॥

यस्य क्षणवियोगेनेत्यादि यच्छव्दानां तेनाहमद्य मुणित इति सहमक्षोकस्थेन तच्छव्दंन सम्वन्धः। प्रियस्याप्यप्रियत्वे द्रष्टांतः। उक-श्चेत प्रागीन एव पित्रादिः॥६॥

श्रीकृष्णोपकारान् अनुसमरित यत्संश्रयादिति दशिः यस्य संश्रयात् वलात् । स्मरेगा कामेन दुर्मदानाम् अतिमत्तानाम् । तेजः श्रभावः हृतं धनुर्ग्रहरानैव । पश्चात् तद्धनुः सज्जीकृतश्च तेन मत्स्यो यन्त्रोपरि भ्रमन् विद्धः। ततस्तान् विजित्य द्रौपदी च प्राप्ता ॥ ७॥

उ इति विस्मय । खांडवम इन्द्रस्य वनम् अहां दत्तवानिस्म खागडवहाहं रक्षितेन मयेन कृता सभा च लब्धा । अद्भृतशिरपरूपा माया यस्यां सा। ति अध्वरे राजसूये ॥ ८॥

#### श्रीवीरराघवः।

उक्तिमेवाहवंचितइतित्रयोविंशत्याहेमहाराज! अहंवेधुरूपिणावंधुरूपतांप्राप्तेनहिरणाथाश्रितार्तिहरेणसाक्षाद्भगवतावीचतोऽस्मिरहि-तोऽस्मीत्यर्थः येनत्यादीनायच्छद्धानांतेनाहमस्मिमुषितः पुरुषेशाभूम्नेत्युपरिष्टादम्बयः देवानामिपविस्मापनमाश्चर्यकरंयन्महन्मत्तेजोयेनापद्ध तंद्वेतिराष्ट्रः सम्बोधनंवा॥ ५॥

यस्यचभगवतः क्षग्रामात्रवियोगनाप्यप्रियंदर्शनं यस्यतथाभूतोऽयमत्प्रभृतिलोकोभवतितथैवलोकः उक्थेनप्राग्रोनरहितः सृतकःशबः

प्रोड्यतेष्रिवाब्दादद्श्वनयोग्यश्चप्रोच्यतेतद्वत् ॥ ६॥

यत्संश्रयादिति अस्मदोवसीर्यादिकंयदधीनंतेनवंचितोऽस्मीतिसमुदायार्थः द्वुपदगेहेद्रीपद्याः स्वयंवराख्येश्वयंवरप्रारम्भेस्मरग्राकामे-महेतुना दु द्वीमहोत्रेषाम्यागतानाराक्षान्तेजोमयायस्यभगवतः संश्रयाद्वेतोरपद्वतंबछत्यासज्जीकृतेनसमारोपितज्याग्रयाकेनधञ्चामत् न्यकारायत्रविशेषश्चामिहतिह्छन्नः कृष्णाद्रीपदीचामिगतारुधाच ॥ ७॥

# श्रिकृतको अञ्चर**श्रीकीरराधिवः ।**

यत्संनिधाविति यस्यमगवतः स्निध्रहेह्न्भूतेऽम्द्रग्रेहिः सहित्मद्भुजवेन्विजित्ससागडवाष्यंवनमहमग्रयेऽदामदत्तवानिस्म अहमुद्द तिछेदः उश्रव्दः निपातोविस्मयद्योतकः अत्याश्चयमयमेवविध्वक्षम् कृतवानस्यातिभावः तथामयकृतामयेनिर्मिताअद्भुतान्याश्चर्यभूतानि शिल्पानिप्रतिमादीनिमाया अन्यान्यप्याश्चायाशियस्यास्मामयास्त्रभ्याभद्भुतानिशिल्पानिपाश्चपादादिनेपुगयानियासुतामायाआश्चर्य स्वाःप्रतिमादयोयस्यामितिवातथायःस्वृतिभौतेत्वाध्वरेऽश्वमेधेनृपतयोदिग्भयोविस्मुपाहरस्राहत्यसमर्पयामासुः॥८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

देवानिपविस्मापयतीतिदेवविस्मापनंमहत्तेजः सामर्थ्यं लक्षणां येनकृष्णोनापद्धतं सहैवनीतंतेनवं धुरूपिणाप्रधानवं धुनाहिरणाथर्जुनोऽहं वंचित्रहत्येकान्वयः वंचितहतिहरीनदोषथारोप्यते किंतुतेनवियुक्तहतितद्वियोगमात्रं वियोगोऽपिगृहीतमानुषाकारेणनसाक्षात्सर्वद्वाद्दर्सान्न हितत्वात्तस्यंत्यभिप्रायेणवं धुरूपिणत्युक्तं तस्माच्छोकाच्छून्योऽस्मीतिभावः॥५॥

एतमधंसदृष्टांतमाह यस्येति यथोक्थेनप्राग्णेनरहितएषदेहोमृतकः कुण्णप्रतिप्रोच्यते तथायस्यकृष्णस्यक्षणावियोगेनलोकोऽप्यप्रिय समंगलंप्रयतित्यिप्रयद्यित्व समान्तस्माच्छून्यत्वभित्यर्थः प्राग्णत्यागेपित्रादिशरीरमिष्पुत्रादेरिष्रयत्वात्वहिभूमौर्निक्षप्यतयथातथाह मिष्वेश्वभिर्दाप्रयत्वादवज्ञातद्वदृष्ट्वतभावः ममायंलोकोदेहोऽिष्रयद्शेनोजातद्दतिवा प्रथमहिशब्देनप्राग्णिनयुक्तदेहस्यकुण्णपत्वंश्वितिस्म मितिदर्शयित नक्षेवलमहमवािप्रयद्शेनः कित्वयंलोकोवंधुजनोद्वारवत्यादिप्रदेशोवा उक्थेनिपत्रादिनावियुक्तएवंवंधुजनोऽपीतिदृष्टांतयोन्यना ॥ ६॥

यत्संश्रयात्सिश्रावित्यादियदनुभावित्रस्तिचित्ताइत्यंतानांश्लोकानांतेनाहमद्यसुषितइतिमध्यगतेनश्लोकेनमध्यकुलकन्यायेनान्वयः यन्यत्संश्रयाद्यस्यक्षणास्यसेवावलातद्वपदगृहेपांचालपुरे स्वयंवरसुषेख्यंवरश्लेष्ठउपागतानां मिलितानांस्मरकारगोनजातोदुष्टामदोयेषांतेत तेतयोक्ताः तेषांराज्ञांजरासंश्रादीनांतेजोऽभिमानलक्षणामयेहरोनहतं किचसज्ञीकृतेनश्रनुषायंत्रविहितोमत्स्याविहतः पातितश्च किचमयाक क्याद्वीपदीचाश्रिगतावेदाध्ययनवदादरणायामेत्येकान्वयः॥ ७॥

यस्यसिश्रावहमेवायरगर्गैः सहवर्त्तमानियन्द्रचतरसिवेगनवलेनच विजित्यखांडवाख्यंवनमिपयाचमानायअस्येशदांदत्तवानिस्म अद्भुतानिशिष्टपानिस्यलेजलप्रत्ययादीनिमायाश्चयस्यांसितिसातयोक्तामयनाय्नातहणाकृतासभामयालब्धा यत्सिश्चानिक्शेषादितियोज्यम् तेतवाध्वरेयक्षेराजसूयलक्ष्रणादिग्प्रयक्षागतनृपतयोबलितेतुप्रयमहरन्ददुरित्यन्वयः॥८॥

# सुवोधिनी।

राबाद्ययंपृष्टेयादवानांकु शलमञ्जेनशोकहेतुश्च तत्र सिलिहितत्वात् उक्तन्यायेनभक्ति हितरं।हितत्वाच्च शोकहेत्नाह वंचितहत्यादि भसमन् हुतंकु हकराद्धिमवाप्तपुष्यामित्यनेनभगवतावंचितस्यमभयंगतिरित्यर्थः वचनप्रकारमाह येनेति ननुभगवान् परमक्रपाछः कथंवंचयित तत्राह हरिशातिसर्वदुः खहर्त्तायदिइदानीमर्जुनस्यतेजोहरशा निमित्तसांनिष्यंकिमर्थकृतिमत्याशंक्याह वंधुक्रिपशोतितत्रापि भगवतावंचनंकृतंवंधुक्रपमस्यास्तीति वंधुक्रपामातुलपुत्रइवततोलीकिकव्यवहारेशानिकटेतेजोऽपहृतमित्यर्थः ननुस्थितेऽरितर्जासद्वानांरक्षकत्वात् किमननानिष्टभवेदित्यतआह देवविस्मापनिमिति देवान् विस्मापयतीति ननुवामन्यमानत्वात् नशंकत्यतआह महदिति॥ ५॥

ननुतेजिसगतेमत्रादीनांविद्यमानत्वात् कातविद्यतंत्यतथाह यस्येति यस्यतेजसः क्षणिवियोगेनसवीऽपिहोकः अप्रियदर्शनाजातः अप्रियद्शनयस्य तेजिसगतेजगत्द्र व्हमिपनरोचतिकमंत्रादिनाक्षुद्रभावेऽक्षमिवकामामावेकामिनीमिव कि व तेजसाहीनः मह्यक्षणः पुरुषः उक्येनप्राणेनरितः प्राणकार्यदिवकंतद्रतमेव तास्मन्गतेवृक्षादाविवप्राणः अकिचित्करश्त्यर्थः कि च होकप्रतीत्याप्यहंतयेवजातः तदाहम्त्रकः प्रोच्यतेयथित यथामृतकः होके प्रोच्यतेनायमत्रस्यापनीयः ज्वाहनीयोद्दरीकर्त्वव्यक्षितं तथामह्यक्षणोऽपिजनोहोके क्रित्वव्यक्षः प्रविज्ञोपहर्योनमृतकः होके प्रोच्यतेनायमत्रस्यापनीयः ज्वाहनीयोद्दरीकर्त्वव्यक्षितं तथामह्यक्षणोऽपिजनोहोके क्रित्वव्यक्षः प्रविज्ञोपहर्योनमृत्रत्याद्यव्यक्षमम् विव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्षित्वव्यक्ष्मित्वव्यक्षित्वविष्ठिक्षेत्वविष्यक्षित्वविष्ठिक्षेत्वविष्ठिक्षेत्वविष्ठिक्षेत्वविष्यक्षित्वविष्ठित्वविष्ठिक्षेत्वविष्वक्षित्वविष्वविष्ठिक्षेत्वविष्यक्षित्वविष्यक्षित्वविष्वविष्ठिक्षेत्रिक्षेत्वविष्वविष्वक्षित्वविष्यक्षित्वविष्वविष्यक्षित्वविष्यक्षित्वविष्यक्षितिविष्यक्यक्षितिविष्यक्षितिविष्यक्षितिविष्यक्षितिविष्यक्षितिविष्यक्षितिविष

तत्रवर्थमंसत्त्वगुणभेदान् वंकुरज्ञामिश्रत्वनभगवतायः कतः रज्ञामिश्रितात् दूरस्थेनउपकारफलं बस्नीप्राप्तिरितितदाह यत्सं श्रयादिति सम्यगाश्रयात् कृष्णस्योतनद्यतीदियाश्रयव्यतिरेकेण अतीदियार्थज्ञानं भवति तत्रहिएक बक्रनगरात् पलायिताः ब्रह्मचान्दिरूपेणस्थिताः तत्रद्दीपदी स्वयंवरप्रस्तावेशद्दयराधावेधप्रतिज्ञायामस्मतप्राप्त्यर्थमेवभगवताकृतायां सर्वेसमाहृताः अस्मतेजसः प्राक्तव्यार्थभगवतेवततस्ततक्षप्यात्रयंप्राप्तंतेषांतेजः लक्षाज्ञानं कृष्यि चत्रयाः कृष्णोतिनामतः स्वसाम्यमन्यमानः स्विष्वस्मासुतांयोन् जितवान् अतीदियं च तेषां च तेजः स्वकीयमपितदपि च अतस्तेनेवतेज्ञोदत्तंप्रथमे अतितेनेवाषहृतमितिज्ञसांमध्यसर्वापहर्योगसर्वे नाद्यश्चर्यवरस्य मुख्यार्थनेतदाहि सर्वेमिलितं नजुपरब्रह्मस्वस्त्रप्रमण्यवास्त्रम् अय्योक्षयंवास्त्रमानिष्कर्यातदाहि सर्वेमिलितं नजुपरब्रह्मस्वस्त्रप्रमण्यत्रस्य स्वविकतिराज्ञः संमतिः अभिद्वस्त्रभिक्तिः मिति स्मर्गाद्वप्रमुष्ठोऽपिसज्ञोकर्यां तेत्रत्वज्ञादेवस्त्रम् स्वाद्यस्य । ७ ॥

यत्तेजसा नृपशिरोऽङ्किमहन्मखार्धमार्ग्योऽनुजस्तव गजायुतसत्त्ववीर्गः।
तेनाहृताः प्रमणनायमखायः भूपा यन्मोचितास्तदनयम् वित्तमध्वरे ते ॥ ६ ॥
पत्न्यास्तवाधिमखक्लप्तमहाभिषक्ष्णाधिष्टचारुकवरं कितवैः सभायाम्।
स्पृष्टं विकीर्य पदयोः पतिताश्रुमुख्या यस्तत्स्त्रियोऽकृत हतेशविमुक्तकेशाः॥ १०॥

### सुवोधानी।

सत्त्वमिश्रसत्त्वेनोपकारमाह यत्सिवधावितिसत्त्वमिश्रणात् भगवत्सांबिध्यम्उइति वितर्केकुत्राहंकुत्रतत्कर्मेतिखांडवंबनंसवीं षिश्रसिहितमग्नयेपावकायदंद्रस्यवनमिति तंविजित्यसभाराजस्यसभा तत्र दुर्योधनमोहः खांडववनित्यतस्य मयस्यप्राण्यस्थात् स्वप्राण्यपिवर्त्तनक्षपंसर्वमायामयम् अद्भुतिद्दिरचनाक्षप चं कायदत्त्वान् विश्वकर्माशिरूपमेवजानाति मयस्तुमायामपि अत्रापि प्राप्तदानसामर्थ्यमगादि इंद्रादीनातजःस्वभावः ततस्तवाष्युपकारोजातद्दत्याह दिग्भ्योऽहरिवितेवध्वरेराजसूयेविद्युजामुपद्यो कनद्रव्यक्षपम्॥८॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्त्ती।

वश्चितस्त्यक्तः येन मां त्यक्तवता मम तेजोऽपहतं तेन तदत्तमेव तेज इति भावः॥ ५॥

यस्य क्षाण्वियोगेनेत्यादियच्छव्दानां तेनाहमच मुणितः इति सप्तमश्होकस्थेन तच्छव्देनान्वयः। त्रियस्याप्यप्रियत्वे दष्टान्तः उक्थेन प्रामोन । एप पित्रादिः ॥ ६ ॥

यस्याश्रयात् स्वयंवरे रार्जा तेजो हत्वा द्रौपदी प्राप्ता ॥ ७ ॥

उ इति विस्मये। खागडविभन्द्रस्य वनम्। खागडवदाहे रिक्षितेन मयेन कृता सभा लब्धा। अङ्गुते शिल्पमाये यस्यां सा अध्वरे रा-जस्रुये॥ ८॥

#### मिद्धांतप्रदीपः।

तदेवाहवंचितोऽस्मीतिचतुर्विशतिरलोकैः हरिगाविश्चितोऽस्मियेनेत्यादियच्छद्धानांतेनाह मुषितइत्यनेनाम्वयः॥५॥ उक्यन प्रामान ॥६॥

खर्यवरस्यमुखेपारम्भे उपागतानांराज्ञांयत्संश्रयात्तेजोद्धतमपद्धतं तथासज्जीकृतेनश्रतुषामयाभिहतः क्रिनः तथाकृष्णाद्रीपदी अधि गता लब्धा ॥ ७ ॥

यथामिशिविशेषसंनिधावयोनुत्यति तथायस्यसंनिधिमात्रतोमयेदंकतिमिति विस्मिततयाह यदिति यद्यस्यसंनिधौ उइतिविस्मये अहमग्रयेविप्रकृषेणायाचमानायखाग्डवमिद्रवनमदांदत्तवानस्मि तत्राग्निदाहभयत्रातमयकताद्भृतशिल्पेमीया आश्चर्यतायस्यांसासभा चलव्धा ॥ ८॥

#### ् भाषाटीका ।

है महाराज ! बन्धुरूप हरि ने मेरे को ठग लिया है जिसने कि देवों का विस्मय कारक मेरे तेज को हर

जिसके अग्रामात्र वियोग होने से संसार अप्रिय होजाता है जैसे प्राण के नहीं रहने से सृतक दारीर ॥ ६॥ जिस कृष्ण के आश्रय से दुपद राजा के घर से स्वयम्बर में आये हुये कन्द्रे वाल राजाओं के तेज को मैने हरण किया था धनुष चढा मत्स्य वंध करके द्वीपदी का लाम किया था॥ ७॥

जिसके संविधि सं मैने अग्नि को खांडववन दानिकया देवों सिंहत इन्द्र को जीतकर अद्भुतिशिख्प माया वाली मय दानव की सभा की लाम किया आपके यद्यमें दिशी से राजा लोग भेट लाये॥८॥

## श्रीधरस्वामी।

अगन्तरः श्होको विगीतः तथापि व्याख्यायते । मृपशिरःस्विधिरेस्य तं जरासन्धं तवानुको भीमः मखार्थम् अहन् हतवान् तिकिर्जयं विना राजसूयमखानुपपत्तेः । गजायुतस्येव सत्त्वम् उत्साहशक्तिः वीर्ण्ये चलश्च वस्य सः । तं हत्वा प्रमथनायो महाभैरवः तस्य ससाय ये राजानः तेनाहृताः ते यद्यस्मान्मोचिताः तत् तस्मात् ते अध्वरे चलिम् आनीतवन्तः ॥ ९ ॥

### श्रीधरखामी।

यैः कितवैः दुःशासनादिभिः तय पत्न्याः कवरं विकीर्य उन्मुच्य स्पृष्टम् आकृष्टं तेषां स्त्रियो हते द्धाः अतएव वैधव्यात् विमुक्तके शाश्च अकृत चकार् । क्यंभूतं कवरम् अधिमखं राजस्यमधिकृत्य क्लृष्तो रिचतो यो महाभिषेकः तेन स्नाध्यतमं चारु रम्यं तच्च तच्च स्मरगात् तदानी मेवास्मत्कृषया प्राप्तस्य श्रीकृष्णस्य नभने। पदयोः पतितानि अश्लूणि मुखाद्यस्याः पत्न्याः । पद्शब्दसापेक्षस्यापि पतितशब्दस्याश्चपदेन समासो नित्यसापेक्षत्वात् ॥ १० ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तवानुजोममार्योऽय्रजः गजानामयुतस्यसःचंवलंतत्तुरुयंवावीर्यचयस्यभीमः तवप्रखार्थयश्चार्थयस्यभगवतः संश्रयाद्धतोर्नृपस्यजरासंध स्यशिरोऽघ्रिमिति प्राग्यंगत्वात्समाहारद्वन्द्वेक्येनशिरोऽघ्रिचाहतंनवृषेग्णाहृताः नृपास्ततोविमाचिताः संतोयत्प्रमथस्यरुद्रस्यभैरवस्यवां मखायमंखार्थसंभृतंथनंतवाध्वरेवलिकरमनयन्नानीतवन्तः नृपाग्णाशिरस्सुअघ्रियस्यतंजरासंश्रमितिवा॥९॥

पत्न्याइतितवपत्न्याद्रौपद्याः अधिमलंराजस्याख्येयक्षेविभक्तां थेंऽव्ययीभावः कलृष्तःकारितोयोमहाभिषकः तेनरलाधिष्टमत्यन्तरलाष्यं चारुसुन्दरंधिमिलंविकीर्यविक्षिष्ययैर्दुःशाशनादिभिः स्पृष्टंतयांख्रियः स्त्रीः हतासृताईशाःपतयोयासांताश्चविमुक्ताः केशायासांताश्चतया भूताः योअकृतकृतवान्सतवानुजोनृपशिरोंऽधिमहन्नितिपूर्वेगान्वयः कथंभूतायाःपत्न्याः पादयोर्दुःशाशनस्यभगवतोवास्वस्यवापद्योः पतितानि अश्चांग्रमुखाद्यस्याश्चतथाभूतायाः॥ १०॥

### श्रीविजयध्वजः।

गदाख्यमायुधंचसत्त्वंचद्दयसारश्चवीर्यवीरभावश्चसत्त्वंमानसवळंचवीर्यकायवळंचवायस्यसगदायुधसत्त्ववीर्यः तवानुजोममज्येष्ठोभी मसेने।नृपशिरःखंब्रियस्यसतयोक्तः तंजरासंधंयत्संनिधावहन्हतवानित्यन्वयः किमर्थमखार्थराजसूययञ्चमुद्दिश्यजरासंधेनतेनप्रमथना-थमखायरुद्रमुद्दिश्यपुरुषमेधाख्ययज्ञायाद्दतागृहीतायेनकृष्णोनमोचिताः जरासंधवधनेनितिशेषः भूयस्तेतवाध्वरंबिळिऽयुद्नयन्अभिगम्या नीतवंतदृत्यन्वयः "विश्मागुरिरह्शोपमवाष्योद्यपसर्गयो"रित्यचा"भरण्यपसंख्यानंकतेत्यम्"॥ ९॥

कुरुसभायांतवपत्न्याद्वौपद्याअपिराजस्यनाम्निमखेक्छ प्तेनकृतेनमहाभिषेकेण्काधिष्टमतिशयेनकाध्यतममतएबचारुरिचरंकवरंकेश वंधन्यैरक्षिकतचेद्वैः शासनाहिभिः रुषृष्टयत्तत्तत्कवरं विकीययत्पदयोः पिततायाः अश्रुमुख्याः अश्रुप्रधानोयःसःतत्पदयोः पिततत्वा देवतिस्त्रियः तेषांकितवानांश्चियोभार्याः विमुक्तकेश्यः भीमाविद्धगदाभग्नोरुदंडान्स्वपतीनास्त्रिग्यरुदतीर्विकीर्शकेशपाशाः न्यकृतनित-रामकार्षीदित्येकान्वयः अश्रुशब्दउभयस्तिगोऽप्यस्तिधनुः शब्दवत् ॥ १०॥

#### क्रमसंदर्भः।

यस्तव पत्न्याः सम्बन्धे तेषां कितवानां स्त्रियो हतेशविमुक्तकेशा अकृत। की दश्याः पत्न्याः कवरं विकीर्ये पश्चाइनान्तर्गतस्य कृष्णस्य पद्योः पतिताश्चमुख्याः। की दशं कवरं कितवैः स्पृष्टं चूतसभायामा कृष्णिति योज्यम् ॥ १० ॥ ११ ॥

# सुवोधिनी।

यत्तेजसेति विगीतक्षोक्षोमध्येअधिकः सोऽिपव्याख्यायतेतस्य भगवतस्तेजसानृपशिरोऽघ्रि नृपशिरस्सुअंघ्रियस्य जरासंधस्यतवम-बार्थमहन् आर्योममज्येष्ठभाताभीमः तवअनुजः येचमोहिताः यस्मात्तेमोचिताः तस्मात्तेअध्वरेवलिमनयत् आनीतवंतः अहमपिभी-मोऽिपभगवत्सांनिध्यात् क्षेत्रोकोक्तंफलंप्राप्तवानित्यर्थः॥९॥

तमोप्रिश्वसर्वनोपकारमाइपल्यास्तवेति रजसातस्यतमसानाशाचितः तथापिसस्वेनतस्योपकारः कर्नुश्चीषुदत्तः तथाकरगेहेतुः अधिमस्वेतिराजस्यमध्येमहाभिषेकप्रस्तावयजमानपत्याः क्लृप्तोयोऽयंमहाभिषेकः तेनश्लाधिष्टं सर्वसभास्तृत्यंचारमनोहरं च वदलोन् क्योग्रत्कृष्टंयत् कवरंतत् कितवैर्वचकेः दुर्धृतेः अपितामिपिणात्वमारोप्यभीष्मादिस्थितसभायांपापप्रावद्याययैः स्पृष्टंतत्श्चियः हन्तेशविमुक्तकंशाः कृताः हतः ईशायोभतीतेनमृतभर्ज्ञाविमुक्ताः केशायासां नजुभगवतः एवंकर्णोकोहेतुस्तत्राह विकीयंपदयोः पितता- अश्चमुख्याः हति दुष्टस्पर्शेनदोषस्वंधात् तत्निराकरणार्थगार्दभिक्तिदृद्येन हानाथद्वारकावासिन्नित्रूपेणसमरणे तदानीमेवोपस्थितस्य भगवतः अन्येषांमहापाताकत्वात् द्वीपदीमात्रप्रथसस्य पदयोद्वेष्टस्पृष्टंकवरंविकीर्थपिततायाश्चमुखीतस्याः इदानीभगवान्द्वारिकातः समागत्यतस्याअग्रेस्थितः सोऽपितंद्वातस्याः पादयोः पितत्वा अश्चग्यवर्तयत् अत्यव "यात्वराद्रीपदीत्राण्य" इति वाक्यंसंगच्छते प्रवित्वायापिसर्वदासर्वकरोतित्यवगंतव्यम् ॥ १०॥

यो नो जुगोप वन एत्य दुरन्तकच्छ्राद्दुर्व्वाससोऽरिरचितादयुताप्रभुग्यः। शाकान्नशिष्टमुपयुज्य यतस्त्रिलोकी तृप्ताममंस्त सिलले विनिमन्नसङ्घः॥ ११॥ यत्तेजसाथ भगवान् युधि झूलपाशार्विस्मापितः सगिरिजोऽस्त्रमदान्निजं मे। स्त्रन्येऽपि चाहममुनैव कलेवरेशा प्राप्तो महेन्द्रभवने महदासनार्द्रम्॥ १२॥

#### श्रीविश्वनायचकवर्ती।

नृपासां तत्सजातीयानां प्राकृतानां शिरःसु अंधिर्यस्य तं जरासन्धम् । तवानुजो भीमः । मखार्थं तन्निजंयं विना राजसूयमखानुप नोः गजायुतस्येव सत्त्वम् उत्साहशक्तिः वीर्थं वलं च यस्य सः । प्रमथनाथो भैरवस्तस्य मखायये राजानः तेनाहृताः यद्यस्मान्मोचिताः तत्त्वसमान्तेऽध्वरे वलिम् आनीतवन्तः ॥ ९॥

यै: कितवैर्दुःशासनादिभिः तय पत्न्याः अधिमधं राजस्ये कृतमहाभिषेकेण प्रशस्तं कवरं विकीर्यं उन्मुच्य स्पृष्टम् आकृष्टम् । तेषां स्त्रियो हतेशा अतप्रव वैधव्याद्विमुक्तकेशाश्च अकृत यस्तवाजुज इति पूर्वस्यवाजुषद्गः। कीहरूयाः स्मरणात् प्राप्तस्य कृष्णस्य नमने पद्योः पतितानि अश्रूणि मुखाद्यस्याः। पद्शब्दसापेक्षस्यापि पतितशब्दस्य अश्रुपदेन समासो नित्यसापेक्षत्वात्। पद्योः पतिता चासौ अश्रुमुक्षी चेति तस्या इति वा ॥ १० ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

यद्यस्यश्रीकृष्णस्यतेजसाममार्योऽय्रजस्तवानुजोभीमः नृपसिरःस्त्रिर्यस्यतंजरासंधंमखार्थराजस्यार्थराजस्याद्ययज्ञार्थम् अहन् हतवान् किंचप्रमथनाथमस्यमहाभैरवमसायतेनजरासन्धनयेभूपाशहृताः यद्यतोमोचितास्तत्ततोहेतोस्तेभूपास्तवाध्वरेराजसूयेविहम अनयन् आनीतवन्तः॥९॥

तवपत्याः कृष्णायाः अधिमसंमखीवमक्तार्थेऽव्ययीभावः कलृतेनमहाभिषेकेणहेतुनास्त्राविष्टचारुपवंभूतम् कवरम् यैःकितवैदुःशा सनादिभिर्विकीर्य्यविक्षिप्यरुप्षम् तर्लणां हतेशविमुक्तकेशाः हताईशाविमुक्तावैधव्यस्चनार्थकेशायासांताः एवं भृताः स्त्रियः यः श्रीकृष्णः अकृत कृतवान् कर्यभूतायाः पत्न्याः तदाद्रौपवास्मरणोनसभायांप्राप्तस्य अन्यैरहष्टस्यद्रौपदीसमीपेस्थितस्यपदयोः पति-तान्यश्रूणिमुखाद्यस्याः तदुक्तं केशग्रहणानन्तरंवस्त्रापर्कषणावसरं सभापविण्णा "आकृष्यमाणेवसनद्रौपद्याश्चितिवोहिषः गोविन्द द्वारिकावासिन्द्रुष्णागोपीजनिपय कारविर्विभूतांमांकिनजानासिकशव ! याज्ञसेन्यावचः श्रुत्वाश्चीकृष्णोगद्वितोऽभवत् त्यक्तवाशय्यासने पद्मत्वैवकृपयाभ्यगादि"त्यादि ॥ १०॥

#### भाषादीका।

जिस के तेजसे अयुत गर्ज के बलवाले राजमुकुट जरासंध को यशके लिये भीमसेन ने मारा उसके लाये हुए भैरव यश के लिये जो राजा छुटाये तब आप के यह में भेट लाये ॥ ९ ॥

आप के राज्यामिषक में किंवित उत्तम आपकी पत्नी द्रौपदी के केशों को सभा के मध्य में घूर्तों ने पकडा था अश्रु सिंहत पांदों में पड़ने में भी नहीं छोड़ा उन दुधों को मारकर उनकी स्त्रियों के केशों को खोल दिया॥ १०॥

### श्रीधरखामी।

शिष्याणामयुतस्याश्रे तत्पङ्को भुङ्कं यस्तरमात् दुर्जाससो हेतोः अरिणा रचितं यत् दुरन्तं छ्रुङ्गं शापलक्षणं तस्मात् सकाशात् नोऽस्मात् वनं आगत्य जुगोप। कि छत्वा शाकमेवाधं तस्मिन् पात्र प्रविधिम उपयुष्य भुक्षा। यत उपयोगात् सिलले विनिमनो मुनीनां संघः त्रिलोक्षां तृप्ताम् अमस्त। एवं हि भारतकथा—कदाचित् दुर्ज्वाससो दुर्ज्योधनेनातिथ्यं कृतमः। तेन च परितृष्टेन वरं वृणीक्वेत्युक्ते दुर्ज्वाससः शापात् पायड्वा नश्येयुरिति मनसि विधाय दुर्ज्योधनेनोक्तं युधिष्ठिरोऽस्मत्कुलसुख्योऽतस्तरयापि भवतेवं शिष्या
युत्तसहितेनातिथिना भाव्यमः। द्रौपदी यथा क्षुध्या न सीदेत् तथा तस्यां मुक्तवत्यां तद्गृहे गन्तव्यमिति। तत्रश्च तथेव दुर्ज्वासिसं प्राक्ति परमादरेण युधिष्ठिरेण माध्याहिकं छत्वा आगम्यतामिति विज्ञापितो मुनिसंघोऽधमपैणाय जले निममजा। तत्र चिन्तातुरया द्रौपदा
स्मृतमात्रः श्रीकृष्णाः अङ्कस्थां किमगीं हित्वा तत्रक्षणमेव भक्तवात्सख्येनागतः। तथा चावेदिते ह्सान्ते भगवतोक्तं हे द्रौपदि! अहञ्च
दुर्भक्षितोऽस्मि प्रथमं मां भोजय। तथा चातिलज्जया अहो मदीयमभाग्यं भाग्यञ्च यतः त्रेलोक्यनाथो यज्ञपुरुषो भगवात् सद्गुद्दमागतः
योजनं प्रार्थयतीति मनसि विधायोक्तं भीः। स्वामिन् ! मद्गोजनपर्यन्तमक्षयमश्च स्वर्थवत्तस्थात्यामः भाग्यं भाग्वं सार्थाक्तं भाग्वं स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे स्वर्णक्षे भाग्वं स्वर्णक्षे स्वर्ण

### श्रीश्ररस्वामीः।

अय भीमश्च प्रहितवान् । भीमेन गत्वोक्तं स्वामिन् ! भोजनार्थमागस्यतां कथं विलम्बः क्रियते । स च तावतातितृप्तः वृथापाकभयेन प्रप-लाच्य गत इति ॥ ११ ॥

गिरिजासहितो विस्मापितः सन् निजं पाशुपतमस्त्रम् अदात् । अन्येऽपि लोकपालाः निजान्यस्त्राणिः ददुः । अन्यद्प्याश्चर्यमाह अमु-नैवेति । महतः इन्द्रस्यासनार्द्धम् ॥ १२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

योनइतियोऽयुतात्रभुगयुतेनवित्रागामयुतेनसहात्रेभुंकोइतितथाभयुतस्यात्रेवातस्मादरिगादुर्योधनेनविहितात् दुर्वाससः हेतोरागतात् दुरन्तऋच्छ्राद्पारसंकटाद्योभगवान्नोऽस्मान् शाकात्मकान्नावशिष्टमवलेपमुपयुज्यभुक्त्वाजुगोपशाकावशिष्टमुपभुक्तवतोभगवतोहेतोः सिलिलेनिमन्नः संघोभूतसंघरूपोदे शेयस्यसदुर्वासाः त्रिलोकीमपितृप्ताममंस्तामन्यततेनभगवतामुपितोऽस्गीत्यन्वयः एषाचान्यत्रकथास् च्यते "दूर्वासामुनिवर्योऽथदुर्योधनगृहंगतः तंराजापूजयामाससार्घ्यपाद्यासनादिभिः निमंत्रयामाससतंभोजनायनराधिपः तंवाढिर्मिति नामं ज्यकृत्वानित्यादिकाःक्रियाः वुभुजेऽन्नंबहुगुगांब्राह्यगैः सहधर्मवित् अववीच्चसराजानंभुक्त्वातुष्टमनामुनिः वरंवरयभद्रंतेवरदोऽस्मिनराभि-प्।याचयाम्यद्यकिमहंवरमेतंमुनीश्वरम् इतिचितासमापन्नोराजादुर्योधनस्तदा सुहूर्तचितयित्वाथप्रतिपेदेमनोगतम् वनवासंगतायेतुपांडबाः शंशितब्रताः तेषामस्यमुनेः शापंजनयेयं लवान्नृपः महृहेभुक्तवान्सर्वयदावां छतिभोजनम् तन्नदातुं शक्तुवन्तितेवनेकलेशभागिनः तदाकोपप रीतात्माशापंदास्यत्यसंशयम् इत्येवदुरिभिशयोवरंववसुदारुग्यम् बनमेभ्रातरः सन्तिपांडवादुःखभागिनः भोक्तव्यंतद्वहेगत्वामद्रहेभुक्तवा न्यया तथेतिमुनिरुक्त्वातंगत्वायाचतभोजनम् अयुतबाह्यगात्रेमांभोजयाद्युय्धिष्ठिर! श्रुत्वैतद्वचनंराजाहृद्दिसंजातवेपथुः भुक्तमस्माधिरधुना शिष्टमन्ननविद्यते तथानब्राह्मणाः सन्तिसामग्रीचकदाचन यद्यहंनददाम्यन्नं शापंदास्यतिकोपतः तथाप्येनंनिमं इयैवसुपायंमुगयेऽधुना इत्येवसन साध्यायन्।जामुनिमथात्रवीत् भगवन्नित्यकमीदिकृत्वास्नानादिकमेच शीघ्रमागमनेकार्यसिद्धसर्वतथामम ततओमित्ययुक्षायगत्वाचाप्सुविवे शह तत्राघमर्थगांकुर्वन्द्ध्यौतद्रह्मानिष्कलम् एतिस्मिन्नेवकालेतुभगवान्यदुनन्दनःआजगामकुरुश्रेष्ठसन्निधौक्लेशनाशनःविषरगावदनान्दष्ट्या पांडवान्मधुसूद्रनः उवाचराजन् ! किंदीर्घध्यायसेक्छेशभागिव सोऽसौन्यवेदयत्सर्वसुनेरागमनादिकम् श्रुत्यैतद्भगवान्रहण्णोदुर्योधनविचेष्टि तम् श्रुत्वावाचावशिष्टंतदत्रंकिकिचिदस्तिवै शाकमात्रावशिष्टोमेपाकइत्यव्यवित्रृपः उवाचभगवान्शिष्टंशाकमानीयतामिति अनीतंभक्षयामा-सराज्ञोदुःखोपशांतये दुर्वासास्तुमुनिर्मेनेतृप्तंस्थावरजंगमम् इत्यादिकाकथावर्तते ॥ ११॥

यत्तेजसेति यस्यभगतस्तेजसामयाहितेनहेतुनाभगवान् शूळपाणिः शम्भुःकिशतस्पोयुद्धेविस्मापितः मयोतिशेषःविस्मयंप्राप्तः सच गिरिशोरुद्रः मेमह्यमस्त्रंपाशुपताख्यंददीतथाष्यन्येचशक्त्यादयोविस्मापिताः इत्यर्थः तथाहममुनैवाश्रुनातेजोहीनकलेवरेशैवमहेन्द्रस्य भवनेमहदासनस्यार्द्धप्राप्तः इन्द्रासनस्यार्थमधिष्ठितवानस्मीत्यर्थः महदितिपृथक्पदम् अन्यथाआन्महतइत्यात्वापितः आर्वत्वात्तदभावे महत्यासनेइत्यप्यन्वतुंशक्यम् ॥ १२ ॥

#### श्रीविजयध्यजः।

यस्यतेजसायुधिवराहिनीमत्तयुद्धेविस्मापितः विस्मयंगमितः शूलंपाणौयस्यसश्लपाणिः सिगरिशः निजमस्रंपाशुपताख्यंमेमस्य मदादित्यन्वयः अन्येलोकपालाअपिस्वस्मस्रदंदुरितिशेषः अपिचार्जुतोऽहमसुनैवकलेवरेणमान्येनमहेंद्रभवनेअमरावृत्यांमहतोदेवेंद्रस्या-सनार्धप्राप्तदृत्येकान्वयः अयान्यस्रश्रीकृष्णमाहात्म्यंवश्चामिविशेषत्दृत्यथशब्दार्थः॥ १२॥

क्रमसंदर्भः ।

यत्तेजसेति पूर्ववछौकिकलीलामयत्वेनैव ॥ १२ ॥

### सुबोधिनी।

रजोमिश्रतमसायउपकारः इतस्तमाह योनइति एवंद्याख्यायिकाकदाचितवुर्वासाःषरमासोपवासीपारसादिवसेसवंदेत्यप्रार्थनया दुर्योधनगृहेगतः तेनचाितथ्येनसंतोषितः अयुतिशिष्यसहितः वरंवृण्णिष्वत्याह तदाभगवताव्यामोहितोवुर्योधनः सहसापां इनांनाशः प्रार्थयितमशक्यहितम्ब्यमानः व्याजेनप्रार्थयिष्यमािति संचित्ययथास्मद्गृहेसमागतंशिष्यः सहतयास्मज्ज्येष्ठभातुर्युधिष्ठिरस्यगृहे गतव्यपरंद्रोपदीभोजनानंतरम् अन्ययासाखेदप्राप्त्यतीित वरम्याचत ततस्तयत्युक्तवातथेवगतोवुर्वासाः पांडवानांचारगयेभोजनाभावभगः वदुर्पदेशात् सूर्यप्रार्थनायांसर्वात्रपूर्णस्यालीद्दत् सूर्यआहद्रोपदिभोजनाविध अक्षय्यमन्त्रभविष्यतीति ततः प्रभृतिस्तिवध्यागमनकाल्य मितकम्यभुक्ते । एवंजातेसितपहरराज्यतरंद्रोपदिभोजनयोगेनज्ञात्वातथेवागतः तदापांडवाः द्रौपदीचसर्वनाशंमिनरेतदाध्यावः कृष्याः मितकम्यभुक्ते । एवंजातेसितपहरराज्यतरंद्रोपदीभोजनयोगेनज्ञात्वातथेवागतः तदापांडवाः द्रौपदीचसर्वनाशंमिनरेतदाध्यावः कृष्याः समागतः विहरेवद्रौपदीमहर्ष्ट्रवन्नकृषिप्रत्युक्तवान् जातः पाकः स्नानिक्रयतामिति तिथत्यावद्यकं कर्त्युद्वांसासिगतंत्रतः प्रविद्योगगवान् समागतः विहरेवद्रौपदीमहर्षेवन्तवान् जातः पाकः स्नानिक्रयतामिति तिथत्यावद्यकं कर्त्युद्वांसासिगतंत्रतः प्रविद्योगगवान् समागतः विहरेवद्रौपदीमहर्षेवन्तवान् जातः पाकः स्नानंक्रियतामिति तिथत्यावद्यकं कर्त्युद्वांसासिगतंत्रतः प्रविद्योगगवान् समागतः

# सुवोश्विनी।

द्रौपदीवैक्कव्यंद्रश्वाकवलमात्रावाशिष्टेमोजनेस्थाल्यामपि ताविच्छ्षंशाकाश्चंपाद्यत्रिलोक्कीमेवतृष्तामकततदाह योनोज्ञगोपेतियोभगवान् वनमत्यं नः अस्मान् जुगोपदुर्वासमः तथाहेतुत्वात्पंचमी दुरतंक्षच्छंयस्मात् अरिविहितात् दुर्योश्चनेनप्रेरितात् योदुर्वासाः अयुतंब्राह्मणाः अत्रेभुंजतेयस्यशाक्षेनिशिष्टमन्नमुष्टिप्रथमतप्वभगवदर्थस्थापितांनियतक्तत्यंहितत् तदुपयुज्यस्वीकृत्यञ्चगोपितसंबंधः कथमेतावतागो पनंतत्राह् यतः सिल्लेनिमग्नऋषिसंघः यः पूर्वमावश्यकंकर्त्तुगतः सिल्ले निमग्नउत्थानसमयेत्रिलोक्कीमेवतृष्ताममंस्तिकमुतआत्मान मित्यर्थः॥ ११॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

शत ॥ ३२ ॥ निरिज्ञवा दुर्गया सहितः विस्मापितः सन् निजं पाशुपतमस्त्रम् । अन्येऽपि लोकपालाः निजास्त्रागयदुः । महत इन्द्रस्य आसना-द्विम् ॥ १२ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

योमुनिः शिष्यायुतस्याग्रेगुरुत्वाद्भंकेतस्मादिरिभिर्दुर्यायनादिभिर्विविहिताद्द्वोससः हेतोरुपस्थिताद्द्र्रंताद्दपारात् छच्छातंसकरात् यः श्रीकृष्णाः वनमेत्यशाकाकशिष्रशाकमेवाक्षमदनीयंतदेवशिष्टमविश्वांत्यांत्रग्नंतदुपयुज्यनोऽस्मान्जुगोप यतःशाकलेशोपयुक्तवतः श्रीकृष्णात्सिलिलेविनिमश्रोमुनिसंघिश्वलोकीमपितृप्ताममंस्त्रश्मन्यत् अस्यार्थस्यविस्तरीवनपर्वणिद्वष्टव्यः॥११॥

शृतिकरातवेदाः सिमिरिजः सोमः मगवान् शूलपाशाः दिावः वनपर्वशा प्रसिद्धेऽर्ज्जुनिकरातीयेयुद्धेयस्य श्रीकृष्णस्यतेजसा हेतुम्नेनमयाविस्मापितः निजंपाशुपतमस्त्रमदात् तदनन्तरमेवान्येलोकपालाअपिनिजास्त्रायपिददुः किंचामुनैवकलेवरेण लोकपालास्त्र प्राप्त्यतनन्तरमहेद्दं भवनेमहतः स्विपतुरिन्द्रस्यासनार्धे प्राप्तः प्राप्तवानास्मि चकारादिद्वद्त्तास्त्रादिकंच प्राप्तवानस्मिनि स्चितम् ॥ १२॥ लेत्रेव मे विहरतो मुजदग्रदयुग्मं गाग्डीवलत्तग्रामरातिवधाय देवाः ।
सिन्द्राः श्रिता यदनुभाविनमाजमीह ! तेनाहमद्य मुषितः पुरुषेग्रा भूम्ना ॥ १३ ॥
यद्यान्धवः कुरुवलाव्धिमनन्तपारमेको रथेन ततरेऽहमतीर्यसत्त्वम् ।
प्रत्याहतं पुरुधनश्च मया परेषां तेजास्पदं मिग्रामयश्च हतं शिरोभ्यः ॥ १४ ॥
यो भीष्म-कर्ण-गुरु-शल्य-चमूष्वदश्च-राजन्य-वर्य-रथ-मण्डल-मण्डितासु ।
स्रोधेचरो मम विभो ! रथयूथपानामायुर्मनांति च दशा सह स्रोज स्राच्छेत् ॥ १५ ॥
यदोःषु मा प्राग्राहितं गुरुभीष्मकर्गानप्तृतिगर्त्तश्चन्धववाहिकाद्येः ।
स्रास्त्राण्यमोधमहिमानि निर्द्धितानि नोपस्पृशुर्नहरिदासमिवासुराग्नि ॥ १६॥

#### भाषाटीका।

जिसने रात्रु के भेजे हुये दुर्वासा से रक्षा किया जिसने अयुत ब्राह्मणों के पहिले भोजन करने को शाक का अविशय अन्न को भोजन करके जल में मग्नऋषि समूह को त्रिलोकी को नृष्त समुझा दिया॥ ११॥

जिसके तेज से युद्ध में विस्मय कराये महादेव ने मेरे को निज अस्त्र देदिये और भी इसी शरीर से मैं इन्द्र का पुर में जाकर महा आसन के अर्घ को प्राप्त हुआ ॥ १२ ॥

#### श्रीधरखामी।

तत्रेव स्वर्गे कीड़तः। गाग्डीवं रुक्षग्रां किहं यस्य तत्। अरातयो निवातकवचादयो दैत्याः तेषां वधार्थमाश्रितवन्तः। येनानुभावितं प्रभावयुक्तं कृतम्। हे आजमीढ ! युधिष्ठिर । तेन मुषितो विञ्चतोऽस्मि । कयम्भूतेन भूमा निजमहिमावस्थानेन ॥ १३॥

यद्वान्ध्रव इत्यादि श्लोकत्रयस्यापि तेन मुिषतोऽहमिति पूर्वेशीव सम्बन्धः। श्लीकृष्णवान्ध्रव एक एवाहं कौरवसैन्याविध नास्त्यन्तो यद्वान्ध्रव इत्यादि श्लोकत्रयस्यापि तेन मुिषतोऽहमिति पूर्वेशीव सम्बन्धः। श्लीकृष्णवान्ध्रव एक एवाहं कौरवसैन्याविध नास्त्यन्तो गाम्भीर्थेशा पारश्च देशतो यस्य तं ततरे तीशीवान् उत्तरगोशृहे अतार्याशा दुस्तराशा सत्त्वानि तिमिक्किलाहोनि भीष्मादिक्षपाशि गाम्भीर्थेशा पारश्च देशतो यस्य तं ततरे तीशीवान् उत्तरगोशृहे अतार्याशा दुस्तराशि सत्त्वानि तिमिक्किलाहोनि भीष्मादिक्षपाशि गाम्भीरथेशा परेतीतं गोधनश्च प्रत्याहृतम्। परेषाश्च शिरोक्ष्यः सकाशात् तेजास्पदं प्रभावस्यास्पदमुष्णीषक्षं मिशामयं मुकुटरत्नक्षपश्च यस्मिन् । परेषाश्च परिवासिक परिवास

.वहुधनं तान् मोहनास्त्रेशा मोहियत्वा हृतं यहान्धवन मया ॥ १४ ॥ अद्भा अनुवा ये राजन्यवर्ग्यास्त्रेषां रथमगडलैर्मागडतासु भीष्मादीनां चमूषु सार्थिक्षपेशा ममात्रेत्ररः सन् हे विभो ! तेषां रथयूथपा-जनम् आयुरादीनि हृशा हृष्ट्येव आर्च्छत् हृतवान् । मनांसीत्युत्साहादिशक्तिम् । सहो वहम् । तेजः शस्त्रादिकोशसम् ॥ १५ ॥

नाम आयुरादानि दशा ६८यव आण्छप रूपनार । यस्य दोःषु भुजेषु मा मां प्रशाहितं स्थापितं तेनैव गुर्वादिभिर्निक्षिपतानि प्रयुक्तानि श्रस्ताशि न रुप्तान्ति स्म । गुरुद्रौगाः । नहा स्मूरिश्रवाः । त्रिगर्त्तदेशाधिपपिः सुश्चरमी । सलः सल्यः । सन्धवः सिन्धुदेशाधिपतिः जयद्रथः । वाह्णाकः शान्तनोश्चीता । अमोधीः महिमा येषां तथाभूतान्यपि । महितानीति पाठेऽपि स एषार्थः । प्रतीकाराकरगाँऽप्यस्पर्शे दृष्टान्तः नुहरिदासं प्रहादमिवेति ॥ १६॥

### श्रीवीरराघवः।

तत्रेवमहेन्द्रभवनेविहरतोसमगागडीवलक्षणां गागडीवेनसहलक्ष्यतेद्दातितथायेनभगवताऽनुभावितंप्रभावंप्रतिनीतंभुजदंडयोर्युग्मंसंद्रादेवा अरातिवधायकालेयनिवातकवचाद्यसुरवधार्थाश्रिताः सहायत्वंनाश्रिताः हेथाजमीढ ! तेनभूम्नाऽपरिमितानन्द्रूपेणपरमपुरुषेणाश्रीकृष्णे नाहंमुषितोऽस्मिवंचितोऽस्मिमांविहायस्वलोकजगामेत्यर्थः ॥ १३ ॥

यहान्धवइति यच्छद्धानामध्याद्धततच्छद्धवतालुठंतिहृद्धयमममाध्यस्यत्यनेनान्वयः योभगवान्वान्धवोयस्यसोऽहमेकएवातीर्थमतार्थं सत्त्ववलंयस्यतमंततपार्रीनरविधकंकुरूगांवलक्षपमिध्यरेषनमाधनेनतैतरतीर्गावानिस्म अर्थत्वात् "तृफलभजत्रपश्च । ६ । ४ । १२२ । इत्ये-स्वावलंयस्यतमंततपार्रीनरविधकंकुरूगांवलक्षपमिध्यत्यांवात्र्यांवात्र्यांवात्र्यात्याद्वतंत्रयात्वात्रेषात्र्याः तेजस्पदंतेजःसुपद्माश्चयमिण्मन् व्यमग्यात्मकंचधनंप्रत्याहृतम् ॥ १४ ॥

यइति हेविभो ! अदभ्राणामनल्पविष्यां गांबहुनांराजन्यश्रेष्ठानांरयजालैः मण्डितासुभीष्मादीनांसेनासुयोभगवान्ममाग्रेचहः अवस्थितः

ह्याहिष्टमात्रेगारथयूथपानामोजसासहितमायुर्धनांसिचाच्छेत्हतवान् तेनाहंमुषितोऽस्मीतिसम्बन्धः॥ १५॥

यहोः विविति यस्यभगवतोदोः श्रुवाहु श्रुवाणिहितं प्रशायाधितंत्वयेतिशेषः त्वयायद्भुजैकशरणत्वेनकतंतमामित्यर्थः गुरुभिर्द्वीणिप्रशृत् तिभिर्निकिषितानिष्रयुक्तान्यप्रतिहतमिहमान्यस्राणिनीपारपृशक् यथाशासुरान्यसंरेण कशिपुनाकारिताणयस्रवाताकीनिस्सिहतासंग्रहार्वे तिभिर्निकिषितानिष्रयुक्तान्यप्रतिहतमिहमान्यस्राणिनीपारपृशक् यथाशासुरान्यसंरेण कशिपुनाकारिताणयस्रवाताकीनिस्सिहतासंग्रहार्वे नास्पृशंस्तद्वत् ॥ १६ ॥

## श्रीविजयध्यजः।

येत्रुम्योनातुभावितंत्रवृद्धवरकृतं गांडीमध्याघातलांकाभुजदंडयुम्मंश्चिताः इन्द्रेग्रासहवर्तमाताःदेवाःअरातिवधायनिमातकवच नाम्नांश्रत्यांहननाय कस्यभुजदंडयुग्मं तत्रमहेंद्रभवनएवविहरतः क्रीडमानस्यमेमम् ॥ १३॥

वर्षाबांधवोऽहंकुरुमिर्विरादगोत्रह्योवनंतपारमस्वयतीरांतरं अनंतः अपरिन्छित्रः पारः पूर्तिर्यस्यसत्यातंकुरुसेनासमुद्रंरथेनतरसावेगे नातरंतीर्यावानस्मित्यन्वयः कथंभूतः एकोऽसहायः आर्यसत्तः पूज्यबलःकिच यद्बांधवेनमयाविरादपुरेगोधनंचप्रत्याहृतंषुनरानीते तथापरेषांशत्रुभूतानांभीष्मादीनांशिरोक्ष्योमियामयंधनसुष्णीषलक्षगांनकेवलंहतं किंतु परंकेवलंतेजोऽभिमानलक्षगांसामर्थ्यमेवापहतमित्य म्बयः ॥ १४॥

राजन्यवर्यागांश्रेष्ठानांरथानांमंडलैः समृहैर्मेडितासुअलंकतासुभीष्मश्रकग्रंश्रगुरुश्चशल्यश्चतेतथोक्ताः तेपांसेनापतीनांचमूबुसेनासु मध्येमम योरथः तस्मिन्रथेयः अग्रेचरः सार्थित्वात्युरोभागवर्तीतेयामेवरथयूषपानांभीष्मादीनामभायुर्मनांसिचसहसाद्यीवंदशादर्शने नार्क्वत्रवाहरदिस्येकान्वयः चराव्ययवार्थं यदार्क्कत्तद्दरीवनायुभादिना समुख्यवा ॥ १५॥

गुक्सिभीष्मादिभिनिकिषवानिषयुक्तानिमेमयमसिमानिअचित्यसामध्यानिअस्त्राणि यस्यदोःषुभुजेषुप्राणिहितंनिक्षिप्तंमानोपस्पृशुः न-नापंचकुरित्यन्वयः स्पृत्राउपतापेश्तिधातुः कानिकमिवभासुरागिहिरगयकशिपुप्ररितानिभसुरप्रयुक्तानिनृहरिदासंप्रहादंयथानव्यथयात त्रथेति ॥ १६ ॥

भूमा सर्विमहत्तमेन ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

# सुवोधिनी ।

तमोमिश्रतमसातत्त्वमाद तत्रेषेति तत्रेयसर्गएवविहरतोभुजदंडयुग्मंस्वयंचतुर्भुजाशपि केचनाधिकभुजाः केचनततोऽप्याधिकभुजा आश्रयगोहेतुः गांडीवलक्षगामिति गांडीवलक्षगांचिन्हं यस्य अनेनउभयोश्चिन्हतायुधधनुष्टंकार करगादौहस्तद्वयंसर्वदाच्यापृतामिति ज्ञापितंनवैतावताकारीसिध्यति महेंद्रपुत्रत्वात् वलंखवायुजन्यत्वात् गांडीवस्य च आग्नेयत्वात् इंद्रादीनांमूलभूतानामेव तत्रसत्वात हेत्वंतरंवक्तव्यमित्याकांक्षायामाह यद्नुभावितमिति आजमीढेतिवेक्रव्याभावाय सहित्रिभिः पुरुषेः सहयुक्तः तमसामिलिततमसावंचित-क्याभिन्नेतत्वात् उपकारासमाप्तावेवकारणगुगानिकपणादाह मोषहेतुः पुरुषेगोतित्रह्मांडवित्रहत्वात् रोगनाशेशीषधत्यागवत् तेजोहरगोऽपि-भगवतोब्यापकत्वात् शानद्वारामोक्षंदास्यतीतिनानातत्वमित्याह भूम्नेति वस्तुतस्तु यत्तेजसानृपसिरोऽधिद्वोकवत् पत्न्यास्तवथानोज्ज गोपेत्येताविपविगीतीअर्ज्जनविषयत्वाभावात् कुदिलष्टत्वाश्व अतः सत्त्वतमोभिरेवइलोकणयप्रतिपाधैभैगवश्चरित्रमुक्तवाभोषश्चतुर्धेप्रतिपाधिते लोकत्रयजयस्यैव अभीष्टत्वात् दैत्यजयःसाधनप्राप्तयानिकपणीयोऽपिभोग्यस्यप्राधान्यात् सपवनिकपितः अर्थाप्रिकपितोऽपिसंहारेअनुब द्वनंचनशेषतयानिकपितः दैत्यानांतत्प्राधान्यात् मायेत्यसुराइतिश्रुतः यत्पुनरप्रेभगवचरित्रकथनं तद्वतारकार्यमितिनात्यन्तम-ज्जुंनानुत्रहः सिद्धचतिभूभारहरगास्यस्वापेक्षितवात् "मयैवतेनिहताः पूर्वमेवनिमित्तमात्रभवसव्यसाचित्रि"ति भगवद्याक्याच अतोऽज्जैन नभगगतः उपकारत्रयमेवानुगुणानुरूपंदीषाभावादाग्रेत्रयंवस्यते सीत्येष्टतदत्यादिभिस्त्रिभिः कार्गांकरणंचेवप्रतिबन्धश्चकथ्यते स्वक्रतत्व श्चापनायमाहात्म्यश्चापनायतत् दोषाभावेनसीहतंदावेनापिविमिश्चितम् कृष्णमाहात्म्यश्चापनंत्रिभिः त्रिभिश्चदोषाभावः इयेनदैन्यमिति अन्तर्वहिः साधनहरखात इतियुक्तमुत्पदयामः॥ १३॥

ततोसिश्चरज्ञसाचिरित्रमाह यहान्धवद्दति हेतुत्वेनकारगांवा यस्यभगवतोवान्धवः भगवहन्धुत्वेनवभजनसांनिध्याभावेऽपि कुरु-वलाव्यितरग्रांसेनायानित्यन्तनत्वायभाष्यत्वमनन्तपारमिति दशकालानवाच्छन्नन्तत्रत्याभवध्याद्यतिकालानवच्छिन्नताअनुलुंख्याद्रति दे-शानविष्ठिश्वता तत्रएकः असहायः उत्तरंष्रहणाउत्तरस्यभीतस्यदर्शनार्थस्यापितत्वात् रथतेतिष्ठवनशंकानिवारितातनिकीयगमनंपरास्ते अतार्याः कर्णादयः तपवसत्त्वानिजलचरादयोयस्मिन् अनेनतेस्तत्रपतितस्यपुनरनावृत्तिः स्चिताकुतस्तरग्रामितिभावः नकेवस्रतरग्रां कृतंकितुतत्रत्यानिरत्नान्यपाहतानीत्यभिपायेगाह प्रत्याहतंपुरुथनंचेति वस्तुतस्तुतत् भव्यम्जैनस्यैवराज्यस्वामित्वात् तैःपरंघलात् गुहीतं तत्तपुनः प्रत्याहृतमितिप्रतिशद्धार्थः चकाराह्मस्रागितज्ञस्पदन्तेजसंस्थानंतत् व्याजनतेजोऽप्यपहृतमित्यर्थः मणिमयममृख्यं स्रविपुरुवार्थसाध्यकंवाअनेन वसर्वसंसर्वे चपुरुवार्थाहताइतिज्ञापितं चकारात विरोरतंतरतानिचमहजानिविरोशयइतितत् ब्याजेमशिरां-स्यवापहतानीत्यर्थः संमोहनास्त्रेगामोहियत्वा सर्वहतमत्रवन्धुत्वमेवानिमित्तम् ॥ १४॥

सस्वमिश्ररजसाहतमाह योमीध्मकर्षिति पूर्वपरीक्षार्थगतत्वात् असावधानेर्गतमिदानीयुद्धार्थशस्त्रात्वास्यादेसम्पन्नाः मेत्रादियुक्तकव-व्यादिमंतः कालेवापिमार्यितुमशक्याः कालकामपरशुरामाहिजेतारः अशक्याहितमत्वास्वयमप्रेसरोभूत्वातेषामाशुमनांसिचरत्साह वार्षःचकारात् विवेकप्रेयीविकंचहशाद्दाष्ट्रमात्रेगीवआच्छत् आहततवान् बोजसासहत्यर्थः अथवासहः अतः करगाशकिः बीजःइदिय कणाः तद्पिहृतवातित्यर्थः गुरुद्वांगाः चत्वार्पवसेनापतयोजाताः तपांचमुपुशीयमगुष्ठमध्येकगांकथनमातिसामध्येधोततार्थमद्वमाय या पर्मा क्षेत्रापिमारणार्थिकिष्ठराहिताः तेषांर्थमंडलानितमिडितासुअनेनतासुप्रविष्टोषशीकरोभवतीतिस्चितमः एवंसेनास्क प्रथंपि राजन्यवर्थाः कुत्रापिमारणार्थिकिष्ठराहिताः तेषांर्थमंडलानितमिडितासुअनेनतासुप्रविष्टोषशीकरोभवतीतिस्चितमः एवंसेनास्क प्रथंपि अगबतेवसर्वेकृतं नमयेखुक्तम् अमेनस्वयंकरणमुक्तम् ॥ १५॥

[ ११७ ]

्रस्मार्थि हे-

#### स्वोधिनी ।

ाः रजोमिश्रेरजसाक्रेतमाहपरंशतप्रतिवधवायदीः षुमामिति प्राणिहितस्थाचितंशीणिरश्वत्योमात्रिणस्थित्वश्वास्य स्थितः स्थिति स्थितः स्थितः स्थितः स्थितः स्थिति स्थितः स्थिति स्थितः स्थिति स्थितः स्थिति स्थितः स्थिति स्थिति स्थितः स्थिति स्थ

# क्षुणां भूत्राको राज्या अनेपति । गुल्लाहरू निवासक्षक राज्य **श्रीविश्वनायं चक्रवर्ती ।** अन्य सर्वेषणां स्वर्णकारणां सम्बद्धां सम्बद्धां सम्बद्धां सम्बद्धाः

र का के **यां का स्कूलान संस्थान कर के मान का प्रमाण कर कर मान कर के ले हैं है है है है है जो का मान के के किए हैं कि मान कर है कि मान कि मान कर है कि मान कर है कि मान कि** 

अरातयो निवातकवचादयो दैत्यास्तेषां वधाय । येन छुणोन अनुभावितं प्रभावयुक्तं छतम्। भूमा अतिशयनाहं सुषितस्त्यक्तः ॥१३॥

यः श्रीकृष्ण एव वान्ध्रवो वस्य सोऽहमेक एव कुरुसैन्याहिंध ततरे तीर्शवान उत्तरगोप्रहे । नास्त्यन्तो गाम्भी व्येशा पारश्च देशतो यस्य तम् । अतार्थाणि दुस्तराणि सत्त्वानि भीष्मादितिमिङ्गिलादीनि यस्मिस्तम् । गोधनं प्रत्याहृतम् । तथा तात् माहनास्त्रस्य माहिय-त्वा शिरोङ्यः सकाशात् तेजस्पदमुर्णाषश्च हृतम् ॥ १४॥

अग्रेचरः सार्थिक्षेपणाग्रे स्थितः सन् हे विभो ! खाचिन्त्यप्रभावेशा आयुः प्रारब्धकर्मा खर्मोन्द्र्येशा भीष्मादीनां तेषां मनांसि ख़सामर्थ्यक्षापनेन सहो मनःपाटवलक्ष्यां युद्धोतसाहम् तेज इन्द्रियपाटवलक्ष्यां शस्त्रादिग्रहणसामर्थ्यं ह्या खहप्रचेव आर्च्छत् ज-हार ॥ १५ ॥

यस्य दोः बु भुजेषु मा मां प्रशिहितं स्थापितं तेनैवेत्यर्थः । गुर्व्यादिभिर्निक्षितानि प्रयुक्तानि, अस्त्राशि न स्पृशन्ति स्म । गुरुद्राशाः नप्ता भूरिश्रवाः । त्रिगर्त्तः त्रिगर्त्तदेशाधिपतिः स्म । गुरुद्राशाः । त्रिगर्त्तः सम्प्रशिक्तः स्म । गुरुद्राशाः । त्रिगर्त्तः त्रिगर्त्तदेशाधिपतिः सम्पर्देशाः । त्रिगर्त्तः सम्पर्देशाः । त्रिगर्त्तः सम्पर्देशाः । त्रिगर्त्तः सम । गुरुद्राशाः । त्रिगर्तः सम । गुरुद्राशाः । त्रिगर्ताः । त्रिगर्ताः सम । गुरुद्राशाः । त्रिगर्ताः सम । गुरुद्राशाः । गुर

# សន្នានាស្តេច នៅស្ថានស្រួនសស្រស់ ស្ថិតនៅ គ្នាស្រី**ការពីស្ត្រស្រែស្រែសិសសំគេសំគេសំគេសំគេ សំខ័ត** បានបានសារការសំពិសិស

किचईद्रसहिताःदेवाःतत्रैवमहेन्द्रभवनेविहरतःमेममयेनश्रीकृष्णेनानुभावितसवेपराभवशक्तियुक्तकृतगागडीवधनुर्दक्षणं चिन्हंयस्य तद्भुजदग्डम्थरातयोहिरगयपुरादिगताथसुरास्तद्वधायश्रिताःथाश्रितवंतः तेनसुपितोऽस्मि असुमन्द्र्यस्यक्तंऽस्मि ॥ १३ ॥

तद्भुजद्गडम् अरातयोहिरगयपुरिवाताअसुरास्तद्धधायिश्वताः आश्वितवंतः तेनमुपितोऽस्मि असुमन्द्रयेयुक्ताऽहिम ॥ १३ ॥
यद्धांधवद्दत्यादिदलोकत्रयगतानांयच्छन्दानांतेनाहमद्यभुषितद्दिपूर्वेशिवसम्बन्धः यः अस्तिभूष्यः वाह्यस्थायस्यसोऽहमः एकोऽसहायः उत्तरगोग्रहे अर्तायाशिवुदलेष्यानिभीष्मद्रोशादिरूपाशिस्त्वानितिमिगिलादीनियस्मित्वतः अनुक्तमस्विष्ठुलम् कुरुवलार्ष्यस्यन्ततरे त्रीश्वावानस्मि तन्नीतंवहुष्यनं चमयायद्वांधवेनप्रयाद्धतम् परेपांशिरोऽयस्तेजस्पद्वन्ते सामाश्रयं माश्रिस्यः मुक्तदादिकं चहतम् ॥ १४ ॥ द्वाविक्षे । यः श्रीकृष्णः अनुलपराजन्यश्रेष्ठरम् सम्बन्धित्वस्याद्धनाम् विवादिनाम् विवादिनाम् अश्विक्षास्य अनुलपराजन्यश्रेष्ठरम् सम्बन्धितास्याद्धनाम् विवादिनाम् अर्थम् । यः श्रीकृष्णः अनुलपराजन्यश्रेष्ठरम् सम्बन्धित्वस्य । १४ ॥ विवादिनाम् अर्थम् । स्वादिक्ष्याद्वसम्बन्धः स्वर्णास्य स्वर्णेक्षयः स्वर्णेक्षयः

्यद्यस्यचतुर्भुजस्य दोःषु भुजेषुयद्भयात्त्वयाप्रशिहितम् निधिवत्स्थापितंमांतैर्गुवादिभिनिद्धपितात्यमोधमहिमान्यस्त्राणि आसुरिखि बेह्हीद्भिवनोपस्पृशुः नस्पृशंतिसम त्रिगर्तस्त्रेगर्तः सुशर्मा सैंधवोजयद्भथः॥ ११६॥ १००० विकास

# भाषाद्वीका । े १०४० अस्तार्वेष्टर.

हे आजमीढ युधिष्ठिर वही इन्द्रभवन में बिहार करते हुए मेरे गांडीव लक्षण युक्त अज़दराड को जिन श्रीकृष्ण के प्रभावयुक्त होने से शञ्ज वध के लिये इन्द्र सहित देवता आश्रयण करते हुए तिन श्रीकृष्ण करिके आज हम वांचत होगये हैं॥ १३॥

जो श्रीकृष्ण वांधव जाके ऐसा में उत्तर गो गृहमें असहाय भी होकर अपार और दुर्छ्य हैं मीष्म द्रोगादि सत्व जिस्में ऐसे कीरकों के सेना रूपी सगुद्र को एक रथ से उतर गये और शत्रुओं का बहुत धन और शिरों से मांग अय मुकुटादिक हरण करि लिये उन श्रीकृष्ण से आज हम मुषित होगये॥ १४॥

हे विभो । जो श्रीकृष्ण अनेक क्षत्रियवर्थ रच मगडल से मण्डित और भीष्म कर्ण द्रोणाचार्य शल्यादि की सेनाओं मे हमारे अंग्रेचर होकर दृष्टि से रययूय के पालन करने वाले भीष्मादिकों की आयु और मन और वृद्धि सामर्थ और इंद्रिय सामर्थ हरम करते भये॥ १५॥

हे विभो ! जिन श्रीकृषण के सुजाओं में स्थापित जो में हूं तिसकी द्वीणाचार्य भीष्य कर्णों अश्वत्थामादि बीरों करि के प्रक्षिम अख्य अमोध महिमा वाळे नहीं स्पर्श करते मये जैसे देख प्रहाद को नहीं स्पर्श करसके भये ॥ १६ ॥

राज्या क्रियम जेवलंक्य श्रम्भूष्ट्रे स्वयंत्रीयो हे एवस्ताहर

# सौत्ये वृतः कुर्मातनात्मद ईश्वरोः मे स्यत्पादपद्मभवाय भजन्ति भव्याः।

्यां श्रान्तवाहमस्यो रुथिनो भुविष्ठं न श्राहरक्ष्यदनुसावनिरुक्ति चित्राः ॥ १५० ॥

-गार्शिया विकास विकास निर्माण्युदारु स्वर्शिसत्राभितानि हे पार्थ ! ह जिन् सूर्व कुरुनेन्द्रनाते ।

॥ ६३ ॥ 📨 🐃 संजल्पितांनि नरदेव ! हदिस्पृशानि स्मर्नुर्लुठन्ति हदयं सम्माधवस्था। १८ 🎁 ా

इाया-सना-टन-विकत्यन-भोजनादिष्वेक्याद्वयस्य ऋतवानिति विष्रल्ब्धः ।

सार्वे सार्वे प्रतिवत् तनयस्य सर्वे सहे महान् महितया कुमतेरघं से ॥ १६॥

कि प्रकार के कि स्वादित स्वादित प्रचीत्ते प्रचीत्ते सुरुषोत्तमेन सुरुषा प्रियेशा सुहुद्धा हृद्येन शून्या ।

ा व्यापार के अध्यान स्वत्य स्वत्य

# श्रीघरखामी ।

ा च्यापु व्यक्तिकार भागाता सुने ५ । अस्ति वि २ व्यूष्ट अर्थिका वेट अर्थनाकोसीमार्थ । व्यूष्ट <del>व्यूष्ट व्यूष्ट</del> प्राच्यापराधमनुस्तरेन् सन्तप्यमान अहिं। सीत्ये सारथ्ये कुमातिना मे मया स वृतः। कुमतित्वमेवाह आत्मद्र इत्यादिना । अभवाय सोक्षाय । भव्याः श्रेष्ठाः । श्रान्ताः वाहा अश्वा यस्य तं माम् । जयद्रथवधे हि जलपानं विना अश्वाः श्रान्ताः ततो स्थाद्वतीय्ये वार्षेश्च-वं भिरवा जलं सम्पादितं मया। तदा यस्यानुभावेन निरस्ति चित्रा अर्यो न प्रहृतवन्तः। स सीस्य वृत इति कुमातित्वम् ॥ १७॥

हे नरदेव। उदारं गम्भीरं रुचितं यत् स्मितं तेन शोमितानि नम्मीशि परिहासवाक्यानि तथा कार्यप्रस्तावेषु हे पार्थेत्यादीनि मधुराणि मंजिल्पतानि च हृद्दिस्पृशानि मनोज्ञानि । माधवस्य यान्यतानि तानीदानीं स्मर्त्तर्भम हृद्यं छठन्ति क्षोभयन्ति । शिजभाव आर्थः ॥ १८ ॥ •

विकत्यनं खगुगाश्राधनम् । शय्यादिषु ऐक्यात् अव्यतिरेकाहितोः कदाचित् व्यभिचारं रष्ट्वा हे वयस्य ऋतवान् सत्ययुक्तस्वम् इति वक्रोक्त्या विद्राह्यक्ष्रितरस्कृतोऽपि ऋभुमानिति पाठे ऋभवो देवाः सेनकाः सन्ति यस्य असी महानपि मया वयस्य इति मत्वा विद्राह-विकास्त्रा विकार क्षारत र कार्या कार्या । में अवस् अपराधम् असहत । महित्या महत्त्वेन । महामहित्येति पाठे एकपरे वैवास्तरस्कृत इत्यर्थः ऋतमानिति पाठे वत्वभाव आर्थः । में अवस् अपराधम् असहत । महित्या महत्त्वेन । महामहित्येति पाठे एकपरे अतिमहत्त्वेनेत्यर्थः । सच्युरघं सखेव । तनयस्याघं पितव ॥ १९ ॥

त्वयाशिक्कतं पराजयश्च प्राप्तोऽहमित्याह । तेन सख्या रहितः अतो हृदयेन शून्यः । अङ्ग हे राजन् ! उरुक्रमस्य परित्रहंषोडशसहस्र

स्त्रीलक्षणम् । असद्भिर्नीचैः । अवला योषव ॥ २० ॥

৽৽৽৽ৼয়য়ৢড়য়ড়ড়৾য়য়ড়৻৽ৼয়ড়ৢঀয়ড়৸ড়৻ড়ড়৾৽৽৽৻ঢ়৽ঀ৾ড়ড়৾৽ড়ড়৾৽ৼ৻য়৻৻৽৽

कण सौत्यइति यस्यभगेवतःपादपद्मां सब्याः साधवोभवायमुक्तथेभजन्तित यश्चात्मद्भात्मपर्यन्तवसान्यः पश्चात्मदे।वलदायकपको बद्धनां योचि द्यातिक्रांमानि''तिश्रुतेः ईश्वरः सर्वनियंताकुबुद्धिनामेमयासात्येसार्थ्येतिमित्तेवृतः श्रांतेर्वाहेः सहित्मत्पवश्रविष्ठम्पिमायस्यभगवतः प्रभावेग्ग्विरस्तंविमोहितंचित्तंयेणंतेनुपानप्राहरश्रप्राष्ट्रतवन्तः॥१९॥ अस्य स्टब्स्यामा स्वीक्षां प्राप्ता हर्

क्षणनर्मागितिहेनरदेव ! तस्यमाधवस्यश्रीकृष्णस्यउदारेगाक्चिर्णासुन्दरेगाचिस्मतेनशोभितानिनुर्माणापरिहासचाक्यानिहेपार्थेत्याहि क्रपात्तिः संम्वोधनात्मकानिज्ञिष्पतानिज्ञस्मरतोसमहृद्यंखुठन्तिष्ठिदन्ति ॥ १८ ॥ १८ ॥ १८ ॥

शुरुयेतिश्चयादिव्यापारेष्वैक्यंसाधारएयं साम्यमितियावत् तनन्विद्यतेद्वयंद्वेविध्यमन्यत्रस्यद्यापारांतरयस्यतस्यकुमतेर्मेममस्ख्युर्घ संखेवतनयस्याधिपतृवतिपतेवत्युक्तप्रकारेगाविष्ठव्याधिऽक्षिप्तः ऋभुमान्ऋभवदिवास्तद्वान् धनुवानितिवत् देवानांखामीत्यर्थः महितयामहामहिमत्वात महान्महितयेति पाठमहितामाहात्म्यं तेनमहान्सर्वमयुमपराश्रुसहेस्हित्त्वत्त्रकृतवानितिपाठेऋतंसत्यंवाचिकं

काकुगर्भविवक्षितंत्वंसत्यवादीक्षिलेत्येवमादिरूपेण्यावित्रलब्धोऽपीत्यर्थः॥ १९ ॥ १९ ॥ १००० । १०० । १००० । १०० । १०० । १०० । १००० । १०० । १००० । १००० । १००० । १००० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० सुद्धदाहितैषिगापुरुषात्तमेनश्रन्योरहितः अंगहेराजन् । अध्वनिउरुक्तमस्यश्रीकृष्णस्यपार्यहक्तुल्ल्ल्यमेड्ल्रसन् गौपैरप्यसद्भिदुर्जनेरवलेवयो षिद्विनिर्जितोऽस्मीति॥ २०॥

ः हेनरेंद्र ? दर्शीसर्वश्रीयईशोरणमूर्धिथलव्यसपंक्षेनाप्यशातपूर्वरूपंमेभवद्भतः सुन्नाद्यः सुन्यप्राणमुखादेवास्तनविदुरिति यद्यसास्त स्मादीशोऽतक्यंविहारः अचिलकीडश्यन्वयः लब्धक्षमानन्दक्पमितिवा क्रयंभूताःसुत्रादयः यस्यमाययामे।हक्रशक्तां आवत्रहाः पिहितनेत्राः नष्टशानाइतियावतः कथमावतदशहतितत्राहं अहमहमिति भट्याः शातुंयोग्यतावतः सकलमङ्गलकपाइतिवा ॥ १६ ॥

 # यन्मेनृपेंद्र!तदतक्यंविहारईशोषोऽलब्धक्षमवद्द्रग्रामृधिनद्रशी।यन्माययावृत्तदक्षोनिवदुःपरतंस्त्रत्रादयोऽद्महमिमममेतिभव्याः १६ इति विजयध्वजः॥

#### श्रीविजयध्वजः।

मत्यामुमुक्षवीयत्पादपग्रममवायमजेति यस्यश्रीकृष्णस्यानुमावनमहिम्नानिरस्तंषुण्धंवित्तंथेषांततथोकाः अरयः कर्णादयोमांन प्राहरन्नायुध्यन् कर्यभूताः रिथनः रथादियुद्धसाधनोपेताः किविशिष्टमांभुविष्ठंभूमीस्थितं सम्यक्श्रांताः वाहाः अश्वायस्यस्तरथोक्तः तं श्रांतानांवाहानांजलपानायरथादवरुद्धयुद्धसाधनमन्तरेणभूमितलेस्थितमित्यर्थः सोऽयमीश्वरः कुमतिनामयामेमत्संषधिनिसीत्येसार-ध्यकमिणावृतः किविशिष्टः आत्मानंददातीत्यात्मदः "यथात्मदाबलदा"इतिश्रुतेः अद्यतेनभूम्नापुरुषेणसुपितोऽस्मीतिपरमोऽन्वयः॥१७॥

हेनरदेव! माधवस्यद्वदिस्पृशानिमनोहरागि हेपार्थअर्जुनत्यादीनिगोष्ठगांसंजिल्पतानिनमागिपरिहासलक्षगानिस्मर्तुर्ममद्धदयंछठांति

परिवर्ततेहृदयान्नानिर्गच्छतिकथंभूतानि उदारंगंभीरंशचिरं यत्स्मतंतेनशोभनानिमङ्गलानि ॥ १८॥

ममायंक्षणोवयस्यः अहमेताहरानक्षणोनसमानवयस्कत्वाहभुमान्सदेवहति भावेनपरमेष्टदेवनश्रीकृष्णोनराय्यादिष्वेक्यात्तेनवंचितः ताहराबुद्धस्तद्धीनत्वात्परदेवतयाराय्याद्यैक्यमपराधोहियस्मात्तसाद्वंचितोऽस्मि राय्यारायनंविकत्थनंगालीवचनस्तवनंवा तथापिसकृष्णो महतोमहित्वेनसख्युर्घमपराधंसखेवपुत्रस्याघंपितेवकुत्सितवुद्धेर्मेऽवंमयाविप्रलब्धोऽपिसंबंचितोऽपिमहामहितयाकुमतेर्मेऽघंसेहर्दातवा श-य्यादिषुऋभुमान्महात्मामयाविप्रलब्धस्तिरस्कृतः किमिति वयस्यः सखेत्येक्यव्यवहारात्तथापि महामाहात्म्यनममापराधंसेहहतिवा ॥१९॥

श्चन्याऽस्मीतिविक्तल्पंपुनः स्पष्टंपरिहरतीत्याहसोऽहामिति हेनृपंद्र!सख्याजनमप्रशृतिसहवर्तमानेनप्रियेणविषयादिसुस्रमापकेणसुद्धदाश्र-निमित्तवंश्वनाहृदयेनातिस्त्रिग्येनश्रतिकातेनचापुरुषोत्तमेनक्षराक्षरमतीत्यवर्तमानेनकृष्णोनरिहतः शून्योऽमङ्गलोऽस्मीत्येकान्वयः येनमपहृतं तेजहत्येतद्विवृणांतिश्रध्वनीतिश्रंगराजन्!उरुक्तमस्यहरेः परिग्रहंकलत्रंरक्षन्नागच्छन्नसद्धिरसाशुभिगोपैरवलायोषेवविनिर्जितोऽस्मि तस्माश्वे नममतेजोपहृतमितिभावः॥ २०॥

### क्रमसंदर्भः।

सोऽहमित्येकादशक्रमन्याख्यायां त्वं तु मद्धर्ममास्यायेत्यादी राजन् परस्येत्यादी मायिकलीलामयत्वेनैवेति दशयिष्यते । व्रक्षपुराग्रास्यात्रेवाथे तात्पर्यमवगम्यते । अर्ज्जुनं प्रति व्यासवचनम् यथा—तत् त्वया न हि कर्त्तन्यः शोकोऽल्पोऽपि हि पागडवः । केनाप्यश्विलनायेन सर्व्वे तदुपसंहतमिति । अखिलः पूर्ण एव नाथः पतिः कृष्णस्तेन तत् सर्व्व खाप्रयावृन्दम् उप निकट एव सम्यक्पकारेण
हितम् अर्ज्जुनात् सकाशात् गृहीतमित्येव व्याख्यम् ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

# सुबोधानी ।

किंच पताहरोऽण्यपकारिशिपीरहासदशायामीपवचनेनापिनापकारःकृतहत्याहनभौशीति अपराधाभावेऽपिस्मरशार्थसर्वावस्थासुतथा वक्षनान्युक्तवात् यथाहृदयेप्रविद्यानहृद्वयं हुंद्वांत होठयान्त लुनन्तीतिपाठः नर्भाशिसंखकराशिपिरहास बचनानि अर्था गुसन्धानाभावेऽपि स्वरूपतः सुखकराशित्याह उदारंथत् रुचिरंस्मितं सर्वपुरुषार्थदानायोदारं रुचिरंरसोत्पत्यारसानुभोवपुरुषार्थारामत्वायस्मितं नाहपद्यामोहनंस्चितं स्वभावसुन्दराशांस्मितेनशोभातिशयः वशीकरशार्थोभवित तत्रानेकांतिकं दृष्ट्वाहेपार्थोत्तसम्बोधयितधार्थ्यदन्ति व्याद्वातिवृद्धवाचकत्वात् वंचनाकरशादिदृष्ट्वा हेसस्तिव्यवानुर्यदृष्टुाकु रुनन्दनेतिक्षेत्रकर्षकत्वात् कुरोः अत्यवभगवद्यान्यासंजित्यत्व व्याद्वातं स्वभावस्थानां सम्बद्धित्वात् मर्मस्पर्शत्वात् द्वादिस्पृशानीत्युक्तं मरहद्वेद्दयंमममाधवस्य वस्तित्वत् स्वाद्यानः संजित्यित्वात् द्वादिस्पृशानीत्युक्तं मरहद्वेद्दयंमममाधवस्य वस्तित्वत् स्वाद्यानः संजित्यितानीतिसम्बन्धः॥ १८॥

एवमपराधापनीदनार्थप्रतिकारेकृतेतस्तेत्का अन्येऽप्यपराधाः कृतास्तानिपद्रीकृतवानित्याह दाय्येति द्राय्यायांदाय्याविषये आस्वादिविषयेषुतामसाहिस्थानानिद्राय्यासनादनानिविकत्थनानिसंनिपातकार्यश्चन्त्राधाक्रपमाजनादीन्यावद्यकलोकिकादिष्वेक्यात् कश्चित्
स्वादिविषयेषुतामसाहिस्थानानिद्राय्यासनादनानिविकत्थनानिसंनिपातकार्यश्चन्ताक्षपमाजनादीन्यावद्यकलोकिकादिष्वेक्यात् कश्चित्
नाह्यस्मात् कश्चित् कदाचित् दंक्तिरेक्यकर्णां भगवदुपकारः दुष्टस्यततोभदात् विप्रलस्भः वक्षोत्त्वावचनं तत्रवचनद्यस्माह
हेवयस्यति वयसातुत्ययोर्भप्येषुत्रस्तवाधिक्यं कर्यवामित्रीमीतवाकिवाद्भतवानितिसत्यवानित्यर्थः असत्यकर्णं कृत्वातयावचनं सर्व
हेवयस्यति वयसातुत्वययोर्भप्येषुत्रस्तवाधिक्यं कर्यवामित्रीमीतवाकिवाद्भतवानितिसत्यवानित्यर्थाभविमितिसहनेप्रयोजकंकपमाह महानिति
चनमनिसरोषम्लापनेनसञ्चदेषेप्रात्यद्यान्तः असञ्चविष्ठित्यितिस्मिहिम्नेवहत्वतरमाह कुमतिरिति ॥ १९॥
नहिषिपीलिकादीनामपरार्थनजोमन्यते उपहोक्षनाधभावायमहित्यितिस्मिहिम्नेवहत्वतरमाह कुमतिरिति ॥ १९॥

नाह। पर्या विश्व स्वासर्वोपसंग्रहाधैतत् कृतांजिलनाजुरमरितसो इहिमति सुपेद्रेतिसम्बोधनं अस्यविचारस्वयावस्यंकर्तव्यावस्यंकर्तव्या विश्व विश्

# প্রত ৪০ প্র**্থিতী বিজ্ঞানি স্থা** প্রতিষ্ঠ সাল্ভ

पसंहारः विवेगोति विवजनःपरः विवस्यनिक्रद्रमपिष्दरोति एवं खालिखेकार्यामावदेत् तुक्तवामगविष्ठष्टाभावायाह तद्राहित्यस्यफलमाह हदये ' नज्ञन्यहति उत्कृष्टिश्रमाणातत् सहभावात् तदपगश्रेस्रवमप्यणगतमिति ज्ञन्यजातमित्यर्थः तेनान्यदपिकार्यजातमिति वदन्पराजितोषा-यभवानिति संभावनासत्याजातेत्याह अध्वनीतिपरिष्रहेः स्त्रीवृत्तः अज्ञातसम्बोधने प्रतीकरिकरणामावाय अवलास्त्रीसेव ॥ २०॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवत्ती ।

तद्विरहेण तदैश्वर्थ्यस्मृत्या दास्यभावस्यैवोदयात स्वाभाविकस्य सख्यभावस्यापलापात् ततकार्यसारथ्यादिकमपराधत्वेन निश्चि-·न्वन् अनुतप्यमान आह । सीत्ये सार्थ्ये अभवाव मोक्षाय भज्या भजन्ति अहन्त्वभव्यस्तमेव भजनमकारयम् । एतावदपराधवत्यपि मयि तस्य दयां श्रागित्याह । श्रान्ता वाहा अश्वा यस्य तं मां जयद्रयवधे हि जलपानं विना अश्वाः श्रान्ताः ततो रयादवतीर्य वाशेर्धुः वं भिरवा जलं सम्पादितं मया तदा यस्यानुभावेन निरस्तिचित्ता अरयो न प्राहरत् ॥ १७ ॥

मधुराक्षरत्वात् हृदिस्पृशानि छठन्ति लोठयन्ति ग्रिजभाव आर्षः ॥ १८ ॥

पेक्यात् परस्परप्रामीक्यादतवांस्त्वमेव सत्यवादीति वकोक्त्या विष्ठक्यस्तिरस्कृतोऽपि । ऋभुमानिति पाठे ऋभवो देवाः सेवकाः

स्रन्ति यस्य असाविपि तिरस्कृतः । तद्यपि महितया स्वमहत्त्वेन ॥ १९ ॥

त्वयाशिङ्कतं पराजयश्च प्राप्तोऽस्मीत्याह । तेन सख्या रहितः अतो हृदयेन मनसा शून्यः मूर्जिछतप्राय इत्यर्थः उरुक्रमस्य परिप्रहं बोड्शसहस्रस्त्रीलक्षग्रम् असद्भिनींचैः वस्तुतस्तु न विद्यन्ते सन्तो येश्यस्तेगी पृथी दाश्च पान्तीति तैः गोपजातित्वाच गोपैः ताः स्वप्रेयसीरप्रकटप्रकाशे प्रवेशनार्थं तत्तद्रूपेगा भगवतैव तासामाकर्षगात् । न वयं साध्वि साम्राज्यमित्यादी कामयामह एतस्येत्यनेन व्रजस्त्रियो यद्वाञ्छन्ति पुलिन्दस्तृगावीरुघः। गावश्चारयतो गोपाः पादस्पर्शे महात्मनः॥ इति तासां वाक्येन व्रजस्त्रीवाञ्छित एव भगवत् स्तरूपः तासां मनोरथोऽवगतः । अन्यथा तासां भगवदुपभुक्तदेहानां साक्षाल्लक्ष्मीरूपाणां नीचस्पर्शे सद्य एवान्तर्धानं स्यादित्यतः प्रका-शान्तरेण तासां व्रजस्त्रीत्वप्राप्तिरिति श्रेयम् । विष्णुपुराण्वह्मपुराण्योरप्यत्रेवार्थे तात्पर्यमवगम्यते । यथा तत्र तत्रार्ज्ज्तं प्रति ब्यास वचनम् । एवं तस्य मुनेः शापादष्टावक्रस्य केशवम् । भर्तारं प्राप्य ता याता दस्युहस्ता वराङ्गनाः । इति । पुरा देव्योऽष्टावक्रमुनि स्तुत्वा विष्णुर्वः पतिभविष्यतीति तस्माद्वरं प्राप्य तदङ्गविक्रमदर्शनीत्यादुपहासाद्दस्युहस्ता भियष्यय इत्यभिशापश्च प्राप्य पुनःप्रसादिताख तस्माच्छापान्तश्च प्रापुरतो भत्तीरं प्राप्य दस्युहस्तं गता इति मुनेः शापप्रसादयोरमोघत्वाहस्युहस्तगतत्वं भर्तुः प्राप्तिश्च तासां तन्त्रेगा-वाभूत स्वभक्तः कृष्णस्यैव दस्युरूपत्वात अतस्तत्रैव पुनर्वचनान्तरश्च यथा। तत् त्वया न हि कर्त्तव्यः शोकोऽल्पोऽपि हि पागड?। तेना-प्याखिलनाथेन सर्वे तदुपसंहतमिति। अखिलः पूर्ण एव नाथः पतिः कृष्णस्तेन तत् सर्वे खिप्रयावृन्दम् उप निकट एव सम्यक्षका-रेगा इतम् अरुर्जुनात् सकाशात् गृहीतमित्येव व्याख्येयम् ॥ २०॥

## सिद्धांतप्रदीपः।

पकाह्साध्येजयद्रथवधे आदित्यास्तमनात्पूर्वकालेजयद्रथमहत्वासरथोऽग्नौप्रवेशंकरिष्यामीतिप्रतिकायपरसैन्यप्रविष्टंमध्यान्हेजलादिना श्वश्रमापनोदनांचेदित्यास्त्राभिमंत्रितैर्घाग्रीजलाशयंकर्तुरथादवतीर्गामतएवसुविष्ठमांयदनुभावेनप्रभावेग्रातिरस्तचित्ता**ं भरयोनप्राहरन्**नप्रह तवंतः सर्देश्वरः "यंबातमदोवलद्" इतिश्रुतिविधवात्मदः मेमयाकुमितनासीत्यस्तकर्माग्रावृतः॥ १७॥

हेनरदेव!माधवस्य उदारेगागम्भीरेगारुचिरेगामन्दतरेगाचस्मितनशोभितानिनमौगिपरिहासवाक्यानिहेपार्थेत्यादीनिसंजिर्दिपतानिप्रति कार्यमिमुखीकरणार्थकानिसंबोधनानिच हृदिस्पृशानिश्रोत्हगांहृदयंगमानिस्मर्तुर्ममहृदयं छुठंतिश्लोभयंति ॥ १८॥

श्चारयादिष्येक्यात्साम्याद्धेतोः हेवयस्यऋतवांस्त्वंसत्यवानिस इतिविव्रलब्धोऽपि उपहसितीऽपिकुमतेर्मेऽघमपराश्वंसर्वसहेशसहत बतामहितयामाहात्म्येनमहान् अक्षाप्रयः ॥ १९॥

हेनृपेंद्र ! योमहारथतयासर्वगुणसंपन्नतयालोकंप्रसिद्धः सोऽहंपुरुषोत्तमेनसंख्याप्रियेगासुहृदाहृद्येनहृद्यंगमेनरहितः अतपवश्नयः ते जोवीर्यादिवार्जितोऽस्मि अतएवहेअंग!उरुक्रमपरिग्रहंरक्षन्गांपैरसद्भिरवलेवयोर्षिदवाऽध्वनिमार्गेविनिर्जितोऽस्मि॥ २०॥

#### भाषाटीका ।

भव्य जन जिनके पाद पक्ष को अभव (मुक्ति) के निमित्त भजन करते हैं उन आत्मद ईश्वर को मुझ कुमति ने सारथी बनाया ! जिनके प्रभाव से निरस्त चित्त रथियों ने श्रान्त बाहन और भूमिस्थित पर भी प्रहार न किया ॥ १७॥

हे नरदेत्र! माधव के, उदार, रुचिर स्थित शामित, "हे षार्थ! अर्जुन! सखे! क्रुवनन्दन इत्यादिक हदयस्पर्शी नर्स (परिहास ) जिल्पत बचन स्मरण करते मरे हृदय को घिछिठित करते हैं॥ १८॥

श्चार्या में आसन में भोजन में पर्यटन में एकत रहते के कारण में उनको ऐसे विप्रष्ठम सी करता था कि "है वर्यस्य ! तुम बड़े

तदै धनुस्त इषवः स रथो हयास्ते सोऽहं रथी नृपतयो यत ग्रानमान्त । सर्वे क्षरोान तदभूदसदीशरिक्तं भस्मन् हुतं कुहुकरा द्विमिवोप्तम् व्याम् ॥ २१ ॥ राजंस्त्वयानुपृष्टानां सुहृदां नः सुहृतपुरे । विप्रशापावम्ढानां निघ्नतां मुष्टिभिर्मिणः ॥ २२ ॥ वारुगीं मदिरां पीत्वा मदोन्मणितचेतसाम् । त्रजानतामिवान्योऽन्यं चतुःपश्चावशेषिताः ॥ २३ ॥ प्रायेगातद्रगवत ईश्वरस्य विचेष्टितम् । मियो निव्नन्ति भूतानि भावयन्ति च यन्मियः ॥ २४ ॥

#### भाषाटीका।

सत्यवक्ता हो" परंतु उन्होंने सखा के अघ को सखा के समान पुत्र के अपराध को पिता के समान अपने महत्व से मुझ कुमति के सब अर्थों को सद्य किया ॥ १९ ॥

हे तरन्द्र ! सो मैं अपने प्यारे सुदृद सखा पुरुषोत्तम से रहित, दृदय से शून्य हूँ, हे अंग ! मैं मार्ग में उरुक्रम कृष्ण के परग्रह को रक्षा कर छिये आता था कि दुष्ट गोपों ने मुरं स्त्री के सभान जीतलिया ॥ २० ॥

#### श्रीधरखामी।

श्रीकृष्ण्वियोग् एवात्र हेतुः नान्य इत्याह तष्टे इति । यतो येश्यः । ईक्षेन रिक्तं श्रह्यम् । असत् कार्याक्षमम् । सन्मन्त्रविधानैरिष भस्मति द्वतिमव । भस्मिति छुप्तसप्तम्यन्तं पदम । अतिप्रीतादपि कुहकानमायाविनः सकाशात् राखं छण्धं यथा । सम्यक्कर्षमादि नापि ऊषरभूमी उप्तं वीजमिव ॥ २१ ॥

सुहृत्पुरं त्वया पृष्टानां नः सुहृदां मध्ये चत्वारः पश्च वा अवशेषिताः। तत्र हेतुः विप्रशापेत्यादि ॥ २२ ॥ वारुग्शिमन्नमयीम् । अजानतामिवान्यो ऽन्यम् एरकामुधिभिर्निष्नताम् ॥ २३॥ अवशेषिता इत्यनेनोक्तं हेतुकर्तारमाह प्रायेग्रोति त्रिभः भावयन्ति पालयन्ति ॥ २४ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

तदिति येभगवतासदावस्थानदशायांधनुरादयस्तपवाधुनापिरथीचाहंसपवाधुनापियतोयेश्योधनुरादिश्योनुपतथोबानमंति चलिष्ठ रियनंमांमन्यंतइत्यर्थः यद्यप्येवंतथापितत्सर्वधनुरादिकमीशरिक्तंश्रीकृष्णारहितं सत्वश्रोगासदसत्प्रायमभूत्यथाभस्मनिद्धतं यथाकुद्वकराद्ध दोषविद्यप्रस्थरासंराधनंदानादिसत्कारः यथाचोष्यामृषरभूमाबुष्तंवीजंतहत् ॥ २१॥

हेराजन् ! सुहृत्युरेद्वारकायांत्वयाभिपृष्टानांनोऽस्माकं सुहृदांमध्येचतुः पंचावशेषिताः चत्वारःपंचवावशिष्टाः

इस्ययः तत्रहेतुंवदन्विशिनष्टिविष्रागासृषीगांशापनिवमोहितचित्तानाम् ॥ २२ ॥

वार्र्गीमदिरांसुरांपीत्वातेनोन्मथितंविभ्रांतंचेतोयेषामतप्वान्योऽन्यमजानतामिवमिथोमुष्टिमिनिष्नताम् ॥ २३॥ तिम्यथोनिद्दननमपि प्रायशाईश्वरस्यकृष्णस्यविचेष्टितमेतत्संकल्पमुलकमेवेतिभावः तदेवसद्दष्टांतमाद्द्यद्यथायत्संकल्पान्मिथोभूतानि भावयंतिवर्द्धयामासुः तथातत्सङ्गरुपादेवमिथोनिष्नंतिविनिजेष्तुः॥ २४॥

# श्रीविजयध्वजः।

तदेवस्पष्टयतीत्याह तदिति धनुस्तद्वेतदेवतद्यवः ताह्याः शराः सरशः ताह्योरथः तह्याः ताह्याअभ्वाः रथीसीऽहंनान्यः यतः यस्मेनृपतयः आमनंति तत्सवेमीशरिकंश्रीकृष्णातं जसाविधीनंश्रगोनअसत्तनाशवत्अप्रयोजकमभूत्कथमिव सस्मनिष्ठतमिषकुद्दकेवराञ्च चीरेग्रासिस्मिवऊषेऊखरेउप्तमिव भस्मिनिद्वतस्यमंत्रीचारगादिना किचित्फलस्यादित्यतः कुष्टकित पंद्रजालिकनकुदुस्वभरमामु हिइयद्रव्याहर्ग्यास्क्रीवनेनेहिकफलदर्शनादित्यतं कसुप्तम् वद्दति नतंत्रकिचित्यीतं प्ररोहतीत्यभिप्रामेग्यनिदर्शनम्यमुक्तिविवि सब्यम् ॥ २१ ॥ क्षिदान नेषुर्यामिस्मादिवां प्रवक्तरमभंपरिद्यतीसाह राजितिस्मृहत्युरेहारवस्माम् । १२०१० वर्षा । १०००

# श्रोविजयुष्यज्ञः ।

नाम्ना प्रारुणींवरुणनिर्मित्रांमदिगांमदकरींसुर्रोषीत्वाः अन्यस्निमित्तमस्तीत्वाहः विषयाप्रीतिः ब्राह्मणादाविमृहानांहृत्याहृत्यहान रहितानामतप्रवातमानमज्ञानताम् ॥ २३ ॥

इदंयादवनिधनमपिश्रोक्तष्णकृतमित्यभिष्ठेत्यवूतइत्याह प्रायेगिति भूति निभिधानिध्नतिभावयंति उत्पादयंति चेतितियसदीश्वरस्यभगव तोविशिष्टचेष्टितमितिमन्यप्रायः दाब्दस्यप्राखुर्यायवास्तिवेऽप्यश्रावधारगार्थिएव चक्काद्यः समुख्यार्थः॥ २४॥

#### क्रमसन्दर्भः।

प्रायगोति । दुःखोक्तिरियं तादशळीलाइष्ट्यनुसारेगीय ॥ २४ ॥ २५ ॥

### सुवोधिनी।

सर्वनाशमाह तद्देशनुरिति गांडीवलक्षण्यामित्युक्तंतद्द्यवः अर्ज्यनस्यद्दमेवाग्याद्दति सरयः अप्रतिहताः तह्याः सर्ववर्गतारः सोऽहर्योभोष्माविहंता आनमंतिसर्वतोनमंति आमनन्तीतिवापाठः कीर्त्यतीतिवातत्रगारेश्याश्र्युपगमेदमालध्यसम्पद्यते तदाकपद्दातंद्दाः
हकत्वंसर्वमेवापगच्छिति तथापूर्वोक्तंषुर्दशः प्रविष्टः नदातत्मर्वकार्यानिष्पन्नं तद्दपगमेसर्वनष्टमिति अन्वयन्यतिरेकाश्र्याप्राप्ताप्ताप्त्रः
विवेकेतत्सर्वभगवत्कतामितिसद्धभवति केवलान्वयविशेषण्यतदेकसाध्यानिनियामकाभावात् इदानींतृतदाराधकत्वेनान्ययासिद्धमित्यभिप्रायेग्याह् असदितिर्दशरिकंसर्वमसदभूदित्यर्थः कार्याकर्त्तृत्वेनासत्त्वतेषांकलसाधकत्वमेवकपमिति तदभावोवातत्ववत् प्रसिद्धेः
अत्रासाधकत्वेदष्टान्तमाह लोकभेदेनद्वयंवेदेतृतत् समुदितमेकत्रेवद्यप् अतोद्द्यान्तत्रयमाह तत्रवैदिकोद्द्यान्तः भस्मिनद्वतियदि
पूर्वस्यामाहुतायायज्ञमानोम्नियेत दक्षिणतः शतिभस्मन्युत्तरामाहुतिनिनयेत् भस्मोत्करंवागमयेदिति भस्मिनद्वोम्यज्ञः सयणास्थित
इतिभसितिविनयुत्तमस्मोत्करंवागमयेदिति भस्मत्यज्यते तथागोष्ठेष्वस्माभिविनयुक्तद्रत्यर्थः नवार्श्वराराधननवाधर्मः लोकेर्द्शवरा
राष्ट्रनमहित्तेनकार्यस्मिद्यति तत्कार्यमीश्वराराधनमित्युच्यते सचेदिश्वरः कुहकोभवेत् तत्कललमसत् मवेत् कुल्माषदानवत् अने
भाजिकतृदेवानांविपरीतकलदानेशसत्त्वमुक्तम् पर्वकलवैष्यसाध्यवेकलयंचोकंसाधनवेकल्यमाह दवोष्तत्वम्यामिति उपाउषरक्रपापृथवी
गौरादित्वान्त्रोष् साहिवोजशक्तिह्ना तत्रगतंवीजस्वक्रपतोऽपिविनक्रयतितथात्रापिलोकिकष्टिवमस्य ॥ २१॥

एवंद्वितीये उत्तरमुक्त्वाप्रयमस्योत्तरमाह राजांद्वति सुदृदांयत् कुशळंपृष्टंसुद्धृत्पुरेतत्रोत्तरंशापोजातः॥ २२॥

ननुविवशापविमुहान्दिशान्तरेगत्यामुष्टिभिर्विनिस्ततांमियोयुद्धेहेतुः वाहणींमिदिरांपीत्वेति अमृतमथनादुद्भूतामिदिरावाहणीं सातालाद्यश्चिष्ठितातालप्रसूतावाहणीत्युच्यते तेनमदेनउन्मीयतचेतसांगतिवेवेकानांमध्येचतुः पंचावशेषिताइतिसम्बन्धः चतुर्नियुक्ताः पंचावतुःपंचाव्यसुयादवशरीरसंवातं प्रविष्टेषुवत्रविवेः गरमाणुभिः सहभाकाशादयः पंचावविरताः ननुस्तेहकत्वात्कथमेवमतभाहभजा नतामिति युद्धार्थज्ञानमन्यार्थमञ्चानित्यर्थः ॥ २३ ॥

अत्रकत्तीरंसम्भावयतिप्रायेगोति सर्वकर्तृत्वेनरक्षकत्वेनचभगवत्कर्तृकत्वं।नश्चीयते कालेनापिसम्भावयतीतिप्रायप्रह्णांतत्रापिभगव-तोविद्यमानत्वात् उत्कटकोटिः दृष्टार्थमन्ययात्वेनव्यास्यास्यन् सर्वत्रेवलोककर्तृककार्य भगवत्वार्यमित्याह मिथोनिक्नंतीति तुल्यानां मार्गालक्षगोप्रयाजककारेम्बतउत्कर्णात् चकारादुत्पादयति पुत्रगृहस्ययमुत्पन्नः ।पतापुत्रत्वमापद्यते ॥ २४ ॥

#### श्रीविश्वनायचक्रवर्ता।

श्रीकृष्णवियोग प्वात्र हेतुनीन्य इत्याह तदिति। यतो धनुरादिश्यो हेतुश्यो माम् आनमन्ति तत् सर्वभ् ईशेन रिक्तमसत् कार्या-श्रमम् । भस्मनि हुतिमिति निष्फलत्वे कुहकान्मायाविनः स्काशात् राद्धं प्राप्तिमत्यवस्तुभ्तत्वे ऊष्याम् ऊषरभूमौ उप्तमिति नश्यदय-स्थात्वं हृष्टान्तः॥ २१॥ २२॥

प्रकामुधिभिर्मिश्यो निष्नतां सुद्धदां मध्ये चात्वारः पञ्च वा अवशेषिताः ॥ २३ ॥ केनावशेषिता इत्यपेक्षायामाह प्रायंगोति । एतच दुकुलसंहरणाम् । प्रायग्रहणां लोकोक्तिरीत्येव न तु सिद्धान्तरीत्येत्याह मिथ इति । यत् यतो निमित्तभूताद्वावयन्ति पालयन्ति ॥ २४ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

श्रनुराद्यात्मपर्यंतस्यसर्ववस्तुनोनेस्फल्यंतत्संनिधिविनाभूबित्याह तबाइति बतोबेश्योषितुरादिश्योनृपतयभानमिति सविद्यनुकात्मपर्यं त्रवस्तु ईशोनश्रीकृष्णोनिरिक्तंश्रणेनासदभूत् स्वस्वकार्याक्षममभूत् यथाभस्मनिविधिवदिषहुतमसद्भवति यथाचकुहकायपुत्रेश्वन्दान् स्वामीतित्रीत्रिकार्थपरश्रनमादातुंप्रवृत्तायराद्वंविभिवद्दसमसद्भवति श्रथान्धेषरभूतायामुर्व्यासस्यगु तंवीजमसद्भवतित्वा ॥ २१ ॥ BOMASS STORY

जलौकसां जले यहन्महान्तोऽदन्त्यशायसः।
दुर्व्वर्ज्ञान् वित्ते। राजन्महान्तो वित्ते। मिथः ॥ २४ ॥
एवं वित्तिष्ठैर्यदुर्भिमहद्भिरितरान् विभुः ।
यदून् यदुर्भिरन्योऽन्यं भूभारान् संजहार ह ॥ २६ ॥
देशकालार्थयुक्तानि हत्तापोपशमानि च ।
हरन्ति स्मरतिश्चतं गोविन्दाभिहितानि मे ॥ २७ ॥
एवं चिन्तयतो जिष्णोः कृष्णपादसरोरुहम् ।
सौहार्देनातिगाढेन शान्तासीद्विमला मितः ॥ २८ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

े हेराजन् ! त्वयासुहृत्पुरेद्वारकाख्येपृष्टानांनः सुहृदांमध्ये चत्वारः पंचवाअवशेषिताः भगवदिच्छ्यातेषुविप्रशापोनप्रादुरभूदित्यर्थः बदितरविनाशेहेतुगर्भविशेषगामाह विप्रशापाभिमुढानामिति ॥ २२ ॥

विप्रशापजां मुढतामाह वारुगीमिति मुष्टिभिः परकामुष्टिभिः॥ २३॥

भगविद्क्यैतदभूदित्याहः प्रायंगोतित्रिभिः एतन्मिथोमुष्टिभिनिहननम् प्रायेगाभगवतः श्रीकृष्णस्यविचेष्टितम् कर्मसापेक्षत्वाभि प्रायेगाप्रायग्रहगाम् यद्यतोहेतुभूताद्भगवतस्तत्संकल्पाङ्कृतानिमिथोभावयंतिपालयतिच अदंतिभक्षयंति ॥ २४ ॥ २५ ॥

#### भाषादीका ।

वही धनुष वही बागा वही रथ वेही घोड़े और वही में राथी कि जिसको बड़े बड़े राजा नमन करते थे, किन्तु ईशरिक्त वह सब क्षगा भरमें असत् होगया। जैसे भस्म में होम कुदुक का दिया धन और ऊषर का बोया बीज वृषा जाता है ॥ २१॥

हे राजन् ! हमारे सुहृत्पुरसे जिन सुहृदों को तुमने पूँछा है वे विषशाप से मृढ वारुगी पीकर मदसे उन्मथित चित्त हो परस्पर मुष्टिओं से मारने लगे परस्पर परस्पर को नहीं जानने से लडते लडते सब नष्ट होगये चार पांत्त बचे हैं ॥ २२। २३॥

यह सब प्रापकर ईश्वर ही का चेष्टित हैं कि जीव सब परस्पर एक का एक पालन करते हैं और एक को एक हनन करते हैं ॥२४॥

#### श्रीधरखामी।

जलोकसां मत्स्यादीनाम् मध्ये महान्तः स्थूलाः अग्णीयसः सूक्ष्मान् यथा भक्षयन्ति ॥ २५ ॥

भुवी भारभूतान् यदुन् संहतवान् ॥ २६ ॥
अतः परं वक्तुं न शक्नोमीति सूचयन्नाह । देशकालंचितार्थयुक्तानि मनःपीड़ोपशमनकराणि च गोविन्दस्य वचनानि स्मरतो मम
विक्तं हरन्ति आकर्षयन्ति ॥ २७ ॥

र हरान्त जानुवान्त ॥ २७ ॥ एवमिति सूतोक्तिः । अतिद्देन स्नेहेन चिन्तयतो मितिः शान्ता विशोका विमला विरक्ता चासीत् ॥ २८ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

युक्तं चैतत्तस्यम्भारावतारायावति ग्रास्येत्यभिष्ठायेगास्वयमुदासीनएवसन्भारं संजहारेत्याहजलीकसामितिद्वाश्यांतत्रविवक्षितार्थोप योगितवाहष्टांतमाहजलेजलीकसांमत्स्यादीनांमध्येयथाऽग्रीयसःसूक्ष्मान्जलीकसोमहांतस्तअदांतिमक्षयंति यथाचदुर्वलांस्तान्विलनोहंति यथाचहेराजन् ! महांतोवलिनश्चतेमिथोनिस्नति॥ २५॥

एवंविभुविलिष्ठैमेहद्भिश्चयदुभिरितरान्दुर्वलानन्यांश्च भूतान् ततोऽन्योन्ययदुभिर्यदूनेविमयोभुवोभारकपान्संजहारसंहतवान् ॥ २६॥
देशकालार्थः देशकालानुगुणकर्त्तव्यं प्रयोजनंतद्यक्तानितत्प्रकाशकानिशृणवतांहृद्यगतदुः खोपशमानिगोविदस्याभिहितानिभावेकः
भाषगानिगीतादिकपाणिस्मरतोममचित्तंहरंति॥ २७॥

इत्यमितिगाढेनापरेगासीहार्देनकृष्णस्यपादसरोठहंचितयतोऽर्जुनस्यातपविमलाशांतारागाद्यकल्विताचमितिषेशूचे॥ २८॥

# भीविजयम्बनः ।

इममर्थसोदाहरगांस्पष्टयतीत्याद्वः जलीकसामिति जलोपसांयादसांमधीमहतिं शाियसं श्युत्तरानदंति विद्यने। दुवैद्यान् भस्याति यम हांतः ये चब्रक्तिनः तेमियोऽन्योन्यंभक्षयंतिषया ॥ ३५ ॥

पवंविमुवंलिष्ठैमहिद्धियंदुभिरितरान् हत्वायदुभिरेवयदूनन्योऽन्यहत्वाभूमारंदैत्यकुलेसंजहरित्यकान्वयः भूभारहरणभेवावतारप्रयोज नामित्यतत्हशब्देनाह यद्वाहुद्यडाभ्युद्यानुजीवितः प्यदून्यदुभिरन्योऽन्यमित्याह्यक्रंपालनंसंहरग्राचहरेविषममितिचेत्रत्राह द्रयमिति तत्तरकर्मानुसारिफलदातुरीश्वरस्याप्तकामस्यतेषांसंजीवनंगरगांचेतिद्वयंसममेव जीवनेनोपादयाभावान्मरगोनहान्यभावाश्वातः द्वयंनविष ममितिभावः ॥ २६ ॥

खदुः खकारग्रं यूतइत्याह देशेति देशकालार्थयुकानितत्तदेशतत्त्रकालतत्त्रव्यस्तूचितानिहत्तापोपशमनानि अहं काराश्रितसंसारसमुद्र शोषगाकारगानि गोविंदस्याभिहितानि व्चनानिस्मरताममचित्तं हरंतीतियस्मात्तसात्तद्रहितत्वेनशोचामीत्येकान्वयः॥२०॥

बांथविनिमित्तस्नेहलक्षाम् त्त्वतिशयेनतश्चरगास्मरग्रामाह पविमिति अतिगाढेनातिशयेनदढेनतत्रैवातिशयेनमग्नेनवा सीहार्येनप्रेमलक्षग्र भक्तिसाधनेनकृष्णपादपद्ममवमुक्तप्रकारेण्हमर्दितिष्णोनिर्मलामितिर्मनेन्त्रसम्बीबुद्धिः शांतासुखपूर्णापूर्वस्मादतिशयेनभगविष्ठष्ठावती आसीदित्यकान्वयः॥ २८॥

इतिश्रीभागवतेमहापुराग्रेप्रथमस्कंश्रीविजयभ्वेजहतदीकायांचतुर्दशोऽध्यायः॥ १४॥

एपामधार्मिकत्वेन भारत्वं च भूभारराजपृतना यदुभिर्निरस्येत्यत्रेकाद्दो परिहरिष्यते ॥ २६ ॥ २७ ॥ एवमिति । शान्ता चेतिस चशुपीव भगवदाविभीवेन दुःखरिहता । अतएव विमला तकृत्तिभूता ये कालुष्यविशेषास्तरिप रहिता २८

#### सुवोधानी ।

ननुप्रकृतेकथंभगवत्कायत्वश्चुत्यप्रतिपादितत्विद्याशंक्याहः जलीकसामिति यथामत्स्यानामग्निशापविमुद्धानामन्योऽन्यधातकत्वंमान त्स्योन्यायः महातोऽदंत्यगाियसइति तथाप्रकृतेवुर्वेलान् वलिनः राजिन्नितिसंमत्यर्थमहान्तस्वन्योऽन्यंपरस्पराधातेनमृताः तत्राहिवसुरिति सर्वेकरणसमर्थः तैरेवतानुमारितवान् महानुसाभनैः करांति महत्तरस्वाश्चयाविभुरिच्छ्या अन्योऽन्यमितिच यथाविवाहेउत्सवादिषु अन्योऽन्यपरिवेपग्रंजातिमत्यर्थः एवंसामान्याकारेगासंक्षेपतः कथामुश्त्वाविस्तरेगाकयनीयमित्याकांक्षायां पुनस्त्यक्तधर्मविशिष्टभगवत् स्मरगोनवैक्लब्येजातेवकुंनशक्यतइत्याह देशकालाभ्यां विशेषितायेथर्थाः तेतत्युक्तानिइति वाक्यानिहत्तापे।पशमानिचकारात भगवन्माहात्म्यवोधकानिएवंत्रिविधान्यपिवाक्यानि भगवतावोधितानिदेशकालानुसारेगासर्वेकर्त्वव्यमितिनीतिः आत्मनिष्ठतयावाह्यध मीस्त्यक्तव्याः भगवद्विषयकमोदः भगवन्माहात्म्यज्ञानात् एतानिवाक्यानि भगवतुकानिसाप्रतस्मृतानिसन्तिचित्तंहरतिअर्थानुसंधाने हिशोकापनीदः खरूपेगौवशोकजनकत्वं भगवदीयत्वात् तस्मात्शब्दप्रावल्यात् शोकेनत्र्णींभावः एवंधर्मपुरः सरेग्राभगवताभकि जननात् भक्त्वाचभगवश्वरणारविन्दस्मरणेद्रढप्रेमोत्पस्रो जीवभगवतोः सांनिध्येसतिसस्वगुणावेशात् परमानन्दाविभावाश्वरजस्तमा दोषेष्वपहतेषुशांतांविमलाचबुद्धिरासीत् शान्तासत्त्वेनविमलान्ययोरपगमेनमतित्वात् स्वभावत्वात् प्रवंशानकपत्वम् ॥ २५ । २६ । २७ ॥

एतत्सर्वजातमित्याह एवमिति नद्यापाततः शोकापगमेऽपिसुपुर्शाविवसर्वेषानापगतइतिश्चानप्रकाशमाह आत्मकप्रश्नानंभगवत्स्वकप श्चानंचनोपदेशसापेक्षकं प्रमाणवस्तुपरतंत्रत्वात् परंप्रमाणवस्तुनोरावरणंदूरीकर्तव्यं तत्रप्रमाणावरणंदूरीकृतमेवरजस्तमसोरपगमेन सत्वतमः प्राकट्यात् जीवात्मावरगामाया भगवदिच्छातत्रजीवावरगां भक्तिसहितज्ञानेनापगच्छति भगवन्माहात्म्यज्ञानपूर्वकभगव-द्विषयकपरमप्रेम्गाभगवत्सेवायांभगदावरगामपगच्छति तदानिर्मेलदृष्टः सवितृप्रकाशसाक्षात्कारद्रव भगवत्स्वकपयोर्मनसासाक्षात्का रोभवति ॥ २८ ॥

# श्रीविश्वनायचकवर्ती ।

जलीकसां मतस्यादीनां मध्ये महान्तः स्थूलाः अग्रीयसः सुक्तात् यथा मझग्रन्ति । वलिनस्तुल्यवलास्तु मिथः परस्परमेष ये यात् शक्तु वस्तीत्यर्थः॥ २५॥

भूभारान् भूभारभूतान् यदून् संजहार इत्यञ्जेनादीन् प्रति भगवता तल्लीलायास्त्रप्रेन प्रत्यायितत्वात् । तत्कार्शां तथेव एकादशा-न्ते व्यक्तीभविष्यति । किश्च तदपि भूभारभ्तान् यद्नित्यर्ज्जुनोक्त्या न तु भुवोऽलङ्कारभूतान् यद्न् तिकारयपरिकरानित्ययस्तपलभ्यत एवं। नारी खल्वलङ्काराणां भारं भारं न मन्यते यथा तथैव भूनित्यपरिकराणां यदुनाम । ये तु देवास्तत्रेष यदुष्वशावतारेण प्रविध्या स्व । प्राप्त रजस्तमोरहितानां भारत्वेन वक्तुमचुचितानामपि खखपद्रप्रापणाय तिम्मपेश्वाचीपसंहारार्थम् अष्टाद्शाक्षीहिशाकासदंशै रास्ते वर्णं वृर्विपहं चद्नामित्युक्तपता सगवता भारत्वारोपः इतः ॥ २६॥ [ ११९ ]

न्या वर्षा वर्षा व्यापाल स्थापन

# वासुदेवाङ्गवनुध्यानपरिवृहितरेहिसा ।

इति अधिक विकास के विकास समित्र विकास से स्वार सिर्मिश्व स्वार्थ के स्वार सिंग्सिश के स्वार्थ के स्वार्थ के स्व भारत भगवता ज्ञातं यत्तत् संयान्यस्टिनि । अस्ति भगवता । १००० । हांदी इं इम्लाहर के विकास कालकर्मतमोरुद्धं पुनरध्यमादिशुः गणिश्का अधिक विकास विकास विकास विकास विकास विशोको ब्रह्मसम्परया संछिन्नदेतसंशयः। लीनप्रकृतिसौर्ग्सयादलिङ्गत्वादसम्भवः ॥ ३१ ॥ निशम्य भगवन्मार्गं संस्थां यद्कुलस्य च । स्वःपणाय मतिश्रके निभृतात्मा युधिष्ठिरः ॥ ३२ ॥

# ्रात् व्यास्त्रात् अभिवश्वनाथचम्बर्सात् ।

अतः परं वक्तुं न शक्नोमि त्वमिष किश्चिन्मा पृच्छेत्याह देशेति। यस्मिन्-देशे यस्मिन् वा काले थस्मिन् वा अर्थे युक्तानि समु-चितानि यानि यानि गोविन्दस्याभिहितानि वचनानि तानि समरतो मम हृदयं हरीन्त छम्पन्ति ॥ २७ ॥

मतिस्तद्विरहसन्तव्तापि शान्ता निरन्तरतिश्चन्तनजनितस्पूर्णतिल्वधेन तेन निर्वापितदाहत्वात शीतलेत्यथः। अतएव विमला अस्थे-र्घ्यकक्षणमालिन्यमपि तस्या विगतमित्यर्थः॥ २८ ॥ १००० व्यापार्थः । १००० विष्यापार्थः । १००० विषयः

#### 'सिद्धांतप्रदीपः ।'

and a <del>residential and a primary and a series of the serie</del>

A AS A LINE OF THE COURSE OF THE SECOND SECO

क्रमण्डिमा स्टब्स्ट महिल्ला स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स्टब्स्ट स

विमुर्जापकः श्रीकृणाःसंजद्यारसंहतवान् देशकालानुरूपर्ययुक्तानि गोविन्दस्यअभिहितानिभाषणानिस्मरतोग्नेचित्तंहराति एकाश्र ति ॥ २६ ॥ २७ ॥ जिथ्योरज्जेतस्य अतिगाढेनाचलेनसीहाईनस्नहेन शांतापादसरोहहेकनिष्ठा अतप्यविमलातदितररागमलरहितामतिरासीत् ॥२८॥ क्रविति॥ २६॥ २७॥

्र कारण सम्बद्धानी विकास साथ काले काले काले काले काले काले काले काल के सुन्ताल को काले काले काले काले काले काले का क्राय क्ष्यां सामग्री है । अस्ति क्ष्यां के अस्ति क्ष्यां के अस्ति क्ष्यां के अस्ति क्ष्यां के अस्ति क्ष्यां के

अप्राम्भार प्रमुख्य । क्रिक्ट के ब्रह्म की वलवान वह साथ जाते हैं ॥ २५ ॥ इस राह्म । जलमें जैसे दुवल और छोटों की वलवान वह साथ जाते हैं ॥ २५ ॥ इस राह्म । जलमें जैसे दुवल और छोटों की वलवान वह साथ जाते हैं ॥ २५ ॥ का से से कि विक्रिय के बाद वों से उत्तर छोटे लोगों की और वादवों को अत्योन्य यादवों है। के बारा विवादा कर मुभार का संहार प्रमण्ड प्रकारण राज्यमा मान्य में स्थान के स्थान के लिए स्थान के स

िदेशं कोल के अर्थ से युक्त हृदय के ताप को शमतकोधीनोविद केल्वंबद सम्मणा मारते मेरे चित्रको हरगा करते हैं। २०॥ स्व छ मार्क स्मित कृष्ण पाद सरोहह चिन्तवन करते जिल्ला (अर्जुनः) की मिति विमल हो कर अति गाढ सीहाद से शान्त हो गई ॥ २६॥ ministration of the control of the c

दिश्यक्षण गण्यकाराम्य लेखाण । गण्यकार्यं चर्मांवयेत्रक्षः विभिन्न गण्यकार्यं भावतास्त्रक्षत्रमात्रात्र

मितिवैमल्यकलमाह । वासुरेवाङ्ब्यतुत्वानेन परिवृहित रही वैगी यस्याः तथा निम्मीथता उन्मूलिताः अरोपाः कषायाः कामाद्यो यस्याः सा धित्रणा बुद्धियस्य सः ज्ञानं पुनरध्यगमदित्यु त्रहेणान्त्रमः॥ २६॥

काल्न करमंभिस्तम्सा भोगाभिनिवेद्यन च रुद्धम् आवृतं सत् पुनः प्राप ॥ ३०॥

हा क्रिक्ट के प्राप्त प्रमाण प्रमाण क्रिक्ट के क्रिक्ट के क्रिक्ट के स्थाप के स्थाप क्रिक के स्थाप क्रिक के स्थाप क्रिक के स्थाप के स्थाप क्रिक के स्थाप क्रिक के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप क्रिक के स्थाप के स्याप के स्थाप क तेवाम अविद्या । तत्र ब्रह्मसंपरया ब्रह्माहमिति ज्ञानेन लीना प्रकृतिरविद्यायस्मिन तश्चेरीययं भवति न तु सुबुद्धि प्रलययोदिनाविद्याव-त्मान्नेगुरायात् गुराकार्यिलिङ्गाद्योः । बालङ्गत्वाच असम्भवः स्थापमिगियं मधति पुनःपुनिस्ति सम्भवः स्थालकार्यित् तत्र्य तत्परिक्वेदाभावात् संधिको द्वेतलक्षमाः संशोधा प्रमान्यस्य सः विशोको जात इति ॥ ३६॥ १९०० । १००० । १००० । भगवता मार्गम आलक्ष्य यद्वकुलस्य संस्था नारी श्रुत्वा नारहात्तमनुस्मृत्य। सःपथाय सर्गमार्गायः। तिभूतातमा निश्चलि वर्ष

#### । :हापन्

्विशोक्तश्रातिशोसों रज्जुंतं विशोकोः जाते हाति योजना ५ मध्ये विशोक्तवं हो बुबस्सास्य दिनि वर्षस्य ति । व्यवस्य स्था व्यवस्य प्रदेश हो विशेष लीना प्रकृतिरविद्या यस्मिन् तारक्तेष्ट्रियात् अलिङ्गत्वं लिङ्गदेहराहित्यं लिङ्गदेहासायादसम्भवः सम्भवः स्थूलदेहस्तदभिमानराहितः। यद्वा पुनरेहान्तरब्रह्णाभावः। यतो लिङ्गहेहादेव पुनःपुनः स्थ्लदेहो भवति तद्वीजरहितः। ततश्च स्थ्लदेहाभिमानाभावात संछित्रः संशयों द्वेतभ्रमो यस्य । स्थूलदेवाभिमानेन द्वेतभ्रमादिति व्यख्यालेशः॥ लिङ्गनाश इति । सम्बद्धावयवात्मकस्य लिङ्गशरीरस्य पूर्वे-वत् कार्यकाहित्वनाशः इत्यंषः ॥ तद्ववितं इति । स्थूलशरीसभिमानरहित इत्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

#### श्रीवीरराधवः।

वासुद्देवस्यांच्योरतुभ्यानेनपरिवृद्धितंवृद्धितंविद्धतंरयोवेगःपावगयंयस्यास्तयावासुदेवभक्तवाऽविच्छित्रसृतिसंतानरूपयाप्रीत्यात्मिकया

निमयितानिरस्ताः अशेषाः कषायाः कपायवृद्दमे च्यारागादयोयस्याः साधिषशाबुद्धियस्यसोऽर्जुनः ॥ २९ ॥

संग्राममृद्धीनयुद्धारंभेयद्भगवनागीतंगीनोपनिषद्पेगोपिदष्रंशानं स्वात्मपरमात्मतत्प्राप्तिसाधनगरियाधात्मयगोचरंशानंतन्महताकालेन क्रमेणातुमागुण्येनचावरुद्वेतिरोदितमपिविभुस्तत्त्वात्रधारणासमर्थः अत्रनिर्मिथिताशेषकषायत्वेहेतुःपुनरप्यध्यगमद्ध्यवस्यत् ॥ २० ॥ व्यासंप्रद्यापत्ळ गतौगत्यथां चवुद्धयांब्रह्माचेष्यकसम्यग्ह्यानेनस्य कुनस्तदानीं मुक्तः तेनोपलक्षितः यद्वातेनहेतुना व्छित्रद्वेतसंशयः आन्मिन देहगतदेवाविभवभूम्राहितइति गीतोपनिषत्पूर्वषद्कोत् बुद्धुनमेषः अग्रमंपत्यातमध्यप्रकार्थक्षानोन्मेयउक्तः यहाब्रह्ममंपत्यासंछित्रं द्वेतसंशयः ब्रह्मज्ञानेनसंछिन्नदेवादिद्वेतस्वनिष्ठद्वेतस्वायदृत्यर्थः अल्झित्वादिति स्थ्लदेहविरहानुसंधानमुक्तलीनप्रकृतिनेशुंगयाद्विनष्ट सूक्ष्मप्रकृतित्यागुगात्रयविरहात्तवनवुसंयानादित्यर्थः देहेवत्तीमानत्यादर्जनस्यासंभवः अतिपवपुनर्जन्मरहितः ततोविशोकोऽभवादित्यर्थःवि शोकप्रहर्णमपहतपाप्मत्वादिगुणाष्टकयुक्तस्वद्रपोपलक्षणम् ॥ ३१ ॥ A STATE STATE OF THE STATE OF T

भगवतोमार्गस्वलोकगमनप्रकारं यदुकुलसंस्थारातंनाशंचेतियावच्छुत्वायुप्रिष्टिरः निभृतात्मासमाितः स्वःपथाय स्वः शब्दःसुख

परः निर्वित्रायसुखद्भपलोकमार्गायमतिचके ॥ ३२॥

en en sooi en de per de

्रेशिवजयंध्वयः। १८५८कृतुम्हरोक्षकंक्षक्रकृतुम् कृत्रकार्थकक्षण्यासम्बद्धाः । अस्य स्वत्रक्षण्याम् । वृत्यस्य स्वतः । इक्ति सक् नन्वज्ञुनस्यनानाविश्रक्षत्रहत्यापापोपरक्तायास्तामस्याव्द्वेनैभेल्यंकथेयुज्यतेदृत्यांद्राक्यजीवन्मकेष्वेकत्वात् भगवद्पेगाकुत्रवृष्ट क्षत्रहत्यस्यतस्य मतेनैंमेल्यंयुक्तमिति दर्शयति बासुदेवेति ब्रह्ममंपत्या ब्रह्माग्याबद्धापरोक्षक्षानेन विशोकस्तस्मादेदछिल्रानिवृ चांद्वेतसंशयोयस्मात्सयोकः द्वेदतेद्वीतंद्विधागतंशानंतस्यभावः द्वेतमन्यथाञ्चानमितियावत्संशयद्देवाऽदोवेत्यभयकारिविषयंशानं विष्ट श्राजीवब्रह्मभेदविषयः संश्रयोयेनेतिवा लीनाअपसारिनाप्रकृतिरहंकारात्मिकायस्मात्स्तयोक्तः भावप्रधानोनिर्देशः तस्मालीनप्रकृति त्वाश्चिगतानिसत्वादिगुगाकार्यागियस्मात्सतयोकः तस्यभावोनेगुगयंतस्मान्तिगत्वात्स्स्मशरीररहितत्त्वाश्वसमवो ऽनारव्यकममुलायन पुनुहत्याचित्रतयावाजितः अनारव्यकर्मगाञ्चानादयंगनाशादारव्यकमगामियोवरितत्वाज्ञानादयकालपवंभूतः सम्नर्जुनोरगामुर्थन्यारव्यकम भास्त्रिमें अर्थमें बुद्धयस्त्रीत्में मगवतायत् ज्ञानगातमुपाद्य तदारब्धकमेम् केः कालकमेत्रमाभाः कद्ध कालेनकमंगातमसाचावृत्तर्नर ध्यामद्यगत्वानावर्तित्वानित्वन्वयः कीद्रशः वासुर्यस्योध्यासभिरतः सम्पक्ष्याने ग्रारताब्हितंवृद्धरहोत्रेगोयस्याः सान्धाकात्व्या मत्त्वी निर्मार्थती अशेषाः समूलाःकवायाः पापलक्षमाः रागलक्षमात्वायस्याः स्मानथोक्तानिर्माधताशेषकपायाधिषमा। बुद्धिर्यसतथा अञ्चलकार्वारव्यकर्मसानिमेथनभाभिपतं किंतुमहताभगवत्कारुसयादनाकार्यात्वक्षांचिदेव अन्यया 'भोगेनदिवतरेक्षपियत्वाथ संपत् स्यति'॥छोश्।१०।॥तस्यतावदेवचिरमित्यादिस्त्रश्चितिवरोधः स्यात् 'महताकार्योनेवप्रारव्यान्यपिकानिचित् कर्माशिक्षयमागातिब्रह्रदृष्टिमतः कचिदि "त्युक्तत्वाच अतोत्रारोषशब्दोनिर्मयनयोग्याशेषप्रार्व्यविषयहतिभावः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

कि एवंचीद्वसंस्थांश्रीकृष्णस्वधांमप्राप्तिचाभिधायपंडिवस्वर्याग्रासुपक्षमते विकाम्यति भगवतःश्रीकृष्णस्यस्वधामगमनप्रकार्यपुकुलस्य संस्थाविनारांचेश्वत्व निवृत्तात्माराज्योदि भ्योच्यावृत्तमनाः नितरांवृत्तेसदाचारेशात्मायस्येतिवायुाधाष्ठरः कामको धादिजयलक्ष्यायुद्धरिषरः स्वः प्रधायस्वर्गमार्गायं वीराध्वनेमतिचक्रदृत्यन्वयः ॥ ४॥ अत्राद्धः । अत्राद्धः ) अत्राद्धः

# which was and the first and the action of the first of the

बिल्ब्यस्य तस्यान्तेक्षपि तथा तत्रपासे पुनम्भिन्नेन्यसीत्येतद्वात्यं यथार्थत्वेनात् मृत्वान् ॥ ३० ॥

ततथा कर्तायोऽभवदित्वाद विशोक बत्यावि । बह्मान्यद्वा श्रीमन्द्राकारपद्वा सामान्यविकारेगा संविक इयं मम चति स अभिन्य स्थासित्यारस्वन्य इति हैतसंशयो यन सः । तहा भगवत्रप्रांशी नान्यवज्ञन्मान्तरप्राप्तिकालसन्धिर्व्यन्तरायोऽभवित्याह लोगति । साराप्त्रे प्रकृतिगुंगाकारमां यस्मात् प्रवस्मृतं यद्गेगुंग्यं तस्माकेताः गुमात्वकारमातितःवादित्यर्थः । तथेवालिक्रत्वात् प्राइत-

#### क्रमसंदर्भः।

शरीररहितत्वाच असम्भवी जन्मान्तररहितः। तस्मीवनन्तरं चक्षुण्याविभीवष्यनीत्येव स्फूर्लिविशेषः (विशेषः) इति आवः। अतएव किं प्रति श्रीपरीक्षिद्धचनं—यस्त्वं कृष्णां गते दूरं सह गायडीवधन्वनिति। एवं—येऽध्यासनं राजकिरीटजुष्टं सद्यो जहुर्भगवत्पाश्चका-मा इति श्रीमुनिवृन्दवाक्यश्च। तस्मात् सर्वेषां पागडवानां तदीयानां च सेव गतिव्यांख्येया॥ ३१ ॥

भगवन्मार्गे निशम्य वितक्षे । यदुकुलस्य च संस्थां निशम्यं श्रुत्वा । श्रीकृष्णस्य नित्यसामीष्येन सम्यक् स्थिति वितक्ष्येति वास्तवोऽषः । सः श्रीकृष्णधाम येऽध्यासनिमत्याची सद्यो अदुर्भगवत्पार्श्वकामा इत्यंनन तद्यमेव कृतप्रयत्नत्वात् ब्रह्माद्यो लोकपालाः

स्ववं समिकाङ्शिण इति श्रीभगवद्वाक्याच ॥ ३२॥

# सुवोधिनी।

तत्राज्ञं नस्यद्वयं जातिमत्याद स्रोकद्वयेन वासुदेवेति शांतापिबुद्धिः सवासनेतिपुनरुद्धमनानिराकरणार्थवासुदेवां व्यवस्थात परि वृंदितमालिंगनं तदेवरं हां वेगोयस्याः तादशभ त्यानिर्मिथिताः उद्धृतसाराः स्वरूपेणनाशितावा अशेषकषाया यस्याः तादशिधिषणायस्य सोऽज्ञुंनोजातद्वय्यः ॥ २९ ॥

अनेनसवासनंबुद्धरावरणंगतिमत्युक्तंजीवावरणदूरीकरणार्थमुपायमाहगीतिमिति शुद्धेश्वंतःकरणेप्रमाणेनोत्पदितंक्षानम् आत्मावरणं अनेनसवासनंबुद्धरावरणंगतिमत्युक्तंजीवावरणदूरीकरणार्थमुपायमाहगीतिमिति शुद्धेश्वंतःकरणेप्रमाणेनोत्पदितंक्षानम् आत्मावरणं दूरीकरोतिनत्पूर्वमेवगीताख्येनप्रमाणेनभगवताउपदिष्टेनक्षानंजातमेवास्ति परंकालकर्मतमेशिक्षगुणात्मकेः सक्षानावुद्धिरावृता तरिद्दानं माबरणापगमेख्यमेवक्षानंजातिमत्याह शीतिमितिगीतायांभगवताउक्तंक्षानं यत्तत् पुनरध्यगमदितिसम्बन्धः नजुवृत्तिक्रपंक्षानंत्रिक्षणावस्था माबरणापगमेख्यमेवक्षानंजातिमत्याह शीतिमितिगीतायांभगवताउक्तंक्षानं यत्तत् पुनरध्यगमदितिसम्बन्धः नजुवृत्तिक्रपंक्षानंत्रिक्षणावस्था योतिसकारणस्थरवतिसम्बन्धः नजुवृत्तिक्षणं ॥ ३०॥ योतिसकारणस्थरवतिस्तरोहितत्वात् कथंप्राप्तवान् तत्राह विभीतिसमर्थत्वात् क्षानितरोभावंदूरीकृतवानित्यथः ॥ ३०॥

ततीययात्मावर्णं दूरीभूतंतदाह क्रमेणिविशोकद्दिक्षानेनब्रह्मसंपत्तिजाताब्रह्मवंदब्रह्मवभवतीतिशोकाहिविषयाप्राप्तीभवित्रब्रह्मस्ये नस्वविषयप्राप्तीसत्यांशोकाभावद्दिस्वविषयप्राप्तिमाह संिछ्बद्धेतसंशयद्दिसम्यक्छिन्नाद्धेतप्रपंचेदहादी सशयायस्यस्वस्येवसर्वेत्रपं नस्वविषयप्राप्तिसम्यक्छिन्नाद्धेतप्रयोद्देहाते सशयायस्यस्वस्येवसर्वेत्रपं त्वे नको ऽपिसंदेहोभवतीति अथवाअद्धेतसर्वत्रात्मनःप्रवेशात्त्रस्वस्यात्मनास्वरूपनाश्चर्यात्मनास्वरूपनाश्चर्यात्मनास्वरूपनाश्चर्यात्मनास्वरूपनाश्चर्यात्मनास्वरेतिस्वर्यस्वरं स्वर्यस्वर्यस्वर्यस्वर्यस्वर्यस्वरं स्वर्यस्वर्यस्वरं स्वर्यस्वर्यस्वरं स्वर्यस्वरं स्वर्यस्व

वनलम्बन्यः । छन्तर्वः चान्यः प्रतिवादः स्वत्तवयाः । स्वत्यवस्यवसायमाष्ट्रः भगवन्मः गिक्षात्वावेकुग्रटेगतद्गति यदुकुळस्यसंस्थांमृत्युंखःपथा एवमज्ज्ञेस्यकृतार्थत्वमुक्त्वाराक्षः कृतार्थत्ववक्तुंतस्याध्यवसायमाष्ट्रः भगवन्मः गिक्षात्वावेकुग्रटेगतद्गति यदुकुळस्यसंस्थांमृत्युंखःपथा

यरेवमागायिनभृतात्मादढांतः कर्गाःगतुमितचक्रद्रस्यर्थः ॥ ३२॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ता

नतु कामाद्यः कषाया अपि मलशब्देनोच्यन्ते सत्यम् । अर्ज्जुमस्य भगवित्यपरिकरत्येन साक्षाकरावतारत्वेन च तदसम्भव एष महेद्रांशत्वेन कषायः सम्भवति चेत् तदिप नैवेत्याह वासुदेवेति । जन्मारभ्येवोत्पन्नया भक्त्या प्रथमत एव निम्मेथिता उन्मूलिता अशे-षाः कषायाः कामादयो यस्या सा धिषया। बुद्धियस्य तथाभूत एवार्ज्जुनः ॥ २९ ॥

किन्तु "प्रियस्य विच्छेदद्वे प्रियाक्तिस्मृत्येव संघुश्रगामातुरस्थे"ति रीत्या तन्मुखचन्द्रविनिर्गतं सर्व्यसन्तापोपदामनं गीतामुतमेव पानुमारेमे इत्याह गीतमिति । कालादिभिरवरुद्धमविस्मृतम् । तत्र तमोऽन्धकारसमस्तद्विरह् एव ॥ ३०॥

पृथाप्युपश्चत्य धनक्षयोदितं नाशंण्यदूनां भगवद्गतिश्च ताम् । ाक्ष्य प्रकेश का का का **एकान्तभन्तया भगवत्यधोक्षजे निवेशितात्मोपर्शम संस्**तेः ॥ ३३ ॥ १ कार्यका ययाहरद्वो भारं तां तनं विजहावजः ।

अन्तिकारिक केल्विक्या **कार्टकं कार्टकेनेव दयञ्चापीशितुः समम्** ॥ ३४ ॥ भवार केल्वा वर्षा वर्षा यथा मत्स्यादिरूपाणि धने ज्ह्याद्यथा नटः। भूभारः चापितो येन जहाँ तच कलेवरम् ॥ ३५ ॥ यदा मुकुन्दो भगवानिमां महीं जहीं स्वतन्वा श्रवणीयसत्कथः। तदाहरेवाप्रतिबुद्धचेतसामभद्रहेतुः कलिरन्ववर्ततः ॥ ३६ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

मार्गे पदवीं चातुर्य्यपरिपाटीमिति यावत् । संस्थां वक्ष्यमाण्सिद्धान्तानुसारेण् अप्रकटप्रकाशगतत्वेन सम्यक् स्थिति स्वान्तर्दशायां तद्वहिर्दशायान्तु नाशञ्च । स्वः श्रीकृष्णधाम । येऽध्यासनं राजिकरीटजुष्टं सद्यो जहुर्भगवत्पार्श्वकामा इत्युक्तत्वात् । तथां सम्पदः कतवो लोका इत्यादिभ्यश्च । युधिष्ठिर इत्युपलक्षणम् पश्चैव भ्रातरः स्वःपथाय श्रीकृष्णधामपथं गन्तुं मति चकुः । निभृतातमा अन्याल-क्षितचित्तव्यापारः ॥ ३२ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

पादसरोरुहैकनिष्ठायाः फलमाह वासुदेवेतिद्वाभ्याम् बासुदेवांच्युनुध्यानेनपरिवृहितसंविद्धतंरयोगङ्गाप्रकाहवद्वेगीयस्यास्तया मक्त्याऽखंडयानिर्मथिताः निर्मृतिताः अशेषाः कषायाः रागादयोयस्याः साधिषणावुद्धिर्यस्यसोऽर्जुनः ज्ञानमध्यगमदित्युत्तरेणान्वयः २९ संग्राममूर्द्धनितदारंभेभगवतायद्गीतमुपेदिष्टम् "झरः सर्वाग्रिभूतानिकूटस्थोक्षरउच्यतेउत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृत"इतितत्त्व त्रयविषयकंकालेनवहुसंवत्सरात्मकेन अश्वमेघादिकमीभिनिवेशेनतदर्थे दिग्विजयादिवशादुत्पन्नेनतमसाक्षत्रियोचिततमोगुगोनरुदंशानं तत्पुनर्विभुस्तत्त्वावधारगासमर्थः अध्यमगत् अध्यवस्यत् तत्रक्षरशब्दवाच्यमनात्मभूतंत्राकृतंतत्त्वम् कृटस्यंप्रकृतिभिष्ममात्मतत्त्वम् उत्तमपुरुष स्तदुभयनियंताचिदाचिच्छाक्तिमान् तत्रस्वातमपरमात्मनोः स्वरूपतोभिन्नत्वेऽपिसर्वयांशांशिनोः पृथगवस्थानाभावादभेदोऽपीतिविवेकः॥३०॥

उक्तज्ञानभक्तिभ्यांकृतार्थस्यास्थितिमाहः विशोकदित लीनातत्पृयक्कूटस्यस्वरूपाध्यवसायेनविस्मृताप्रकृतिः शरीरादिसकलक्षरेपदा-र्थमूलभूतायस्यसलीनप्रकृतिः कार्यकारगारूपप्रकृतिभिन्नस्वरूपवित तस्यनैगुंग्यंसत्वादिगुगाशून्यत्वंतस्मात् अतएवालिङ्गत्वाचि सूक्ष्मश रीरभिन्नत्वाच असंभवः नास्तिसंभवः पुनर्जन्मयस्यसः कार्यकारगारूपप्रकृतिभिन्नस्वरूपोऽहंनपुनः प्राकृतदेहवान् भविष्यामीत्यध्यव सायवान् ब्रह्माग्रिभगवतिवासुदेवेसंपत्तिक्षानेतादातम्बलक्षग्रांपूर्वन्छोक्षेसंक्षेपतः प्रतिपादितंतयाचछित्रद्वैतसंशयः ब्रह्मात्मकोऽस्मीतिक्षान संपन्नः इत्यंविशोकोज्यतइतिदिक् ॥ ३१ ॥ ""

तथैवयुधिष्ठिरनिश्चयमाह निशम्येति भगवतः श्रीकृष्णस्यमागैनिजधामगमनप्रकारं यदुकुलस्यसंस्थांसंहारंचिनशम्यश्रुत्वा सःपणाय

स्वरित्यव्ययंसुखवाचकंपरमसुखात्मकथामपथायमीतचक्रे ॥ ३२ ॥

## भाषादीका ।

वासुदेव के चरणों के अनुध्यान से वृद्ध वेग भक्ति से निर्मिथत हुए हैं अद्योष कषाय जिसके ऐसी बुद्धि युक्त अर्जुन संग्राम के आरम्म में भगवान के गीत उस ज्ञान को जो काल कर्म तम से रुद्ध होगया था फिर प्राप्त हुआ ॥ २९ ॥ ३० ॥

द्वेत संशय जिसका छित्र होगया है प्रकृति के लीनहोजाने से और निगुंगा होने से और लिङ्ग के अभाव से ब्रह्म सम्पत्ति से अर्जुन विशोक होगया ॥ ३१॥

मगवान के मार्ग को और यदु कुलके नाधकों सुनकर निशृतात्मा युधिष्टिर ने भी खर्ग के मार्ग को मित की ॥ ३२॥

#### श्रीघरसामी।

तां भगवद्गति वुक्षयां वस्यति हि—सीदामन्या यथाकाशे यान्त्याहित्वान्भ्रमगढलम् । गतिने लक्ष्यते मन्यस्तथा कृष्णस्य देवतेरिति । संस्तिरुपरराम जीवन्मुका बभूव देहं जहाविति वा॥ ३३॥

तदेवमुक्तमपि यादवेश्यो भगवद्वेलक्षगयम् अबुद्धातत्साम्यं वदतो मन्यमतीन् प्रतिचैलक्षगयं स्पष्टयति द्वाश्याम् । यया यादवसप्या बन्या भुवो भारं कग्रटकेन कग्रटकमिवाहरत्। यादवतनुर्भूभारतनुर्धित इयमपि ईश्वरस्य संहार्यत्वेन सममेव ॥ ३४॥

#### े शुक्त के स्वेत्र्य पाट प्रा**क्षीधर्स्तामी ।**

श्रीकृष्णस्य मृत्तेर्विशेषमाह् यथेति। तान्यपि यथा धत्ते जहाति च । तदाह यथा नटो निजरूपेण स्थित एव रूपान्तराणि धत्ते अन्तर्थते च तथा तदाप कलेवरं जहाँ अन्तरधादित्यर्थः ॥ ३५ ॥

युधिष्ठिरस्य खर्गारोह्णप्रसङ्गाय कलिप्रवेशमाह यदेति । खतन्वा जही खतनोरेव वैकुगठारोहात् । श्रवणाही सती कथा यस्य । तदा यद्हस्तस्मिन्नेव । अहारिति छप्तसप्तस्यन्तं पद्मः । अप्रतिबुद्धधेतसामिति विवेकिनान्तु न प्रभुरित्युक्तम् । अन्ववर्षतेति पूर्वमेषांशेन प्रविष्टस्य खेन रूपेणानुवृत्तिरुक्ता ॥ ३६ ॥

#### दीपनी।

सौदामन्या इति । एकाद्शस्कन्धीयैकार्त्रशाध्यायस्य नवमश्रोकः ॥ ३३ ॥

यादवतनुर्भूमारतनुश्चेति । यादवाः प्रद्यस्थात्यक्यादयः तद्रूपा तनुः मूर्तिः । भूभाराः शम्बरादयः तद्रूपा तनुः । ईश्वरस्य सर्व्ध-मयत्वात् । तत्र संहार्यातनुरसुरादयः देयतनुः प्रद्युम्नसात्यक्यादिमूर्त्तिः द्वयमेव समं त्याज्यत्वेन । तत्र द्वश्चान्तः कर्यटकमित्यादि । यथा कर्यटकविद्धपादः कर्यटकान्तरमानीय पादस्थकर्यटकमुखृत्य द्वयमि प्रक्षिपति तथा यादवमूर्त्या भूभारमुर्त्तिमसुरसमूदं हत्वा द्वयमिष त्यक्तवान् इति व्याख्यालेशः ॥ ३४ ॥

(यथा मत्स्यादीति। येन श्रीकृष्णरूपेण भूभारः क्षपितः। तधिति। चकारस्त्वर्थे। तस्तुतत् पुनर्नराकृतिरूपं जही अन्तरधात् यदुवंशनाशानन्तरं चतुर्भुजरूपमाविष्कृत्यान्तर्धानात् न तु देहं त्यस्त्वागतः हष्टान्तस्यासम्भवात् एकादशस्कन्धोकतत्संवादाश्च। इति व्याख्यालेशः॥ ३५—३८॥)

#### श्रीवीरराघवः।

थर्जुनोदितं यदूनांनाशंतांभगवतोगतिंच श्रुत्वाकुंत्यपिभगवत्यधोक्षजे ऽनन्यप्रयोजनयाभक्त्वानिवेशितवात्मामनोययातथांभूतासंसृते हपररामविरक्तावभूव ॥ ३३ ॥

भगवन्मार्गिमित भगवद्गतिमित्यनेनचोक्ताभगवतः खलोकं प्रतिगतिः किंकृष्णस्यतं त्यागपूर्विकाउततयैवेतिशौनकाभिप्रेतंविशद्यति ययेति अजोभगवान्ययातन्वाभुवोभारमहरत्तांतवुंविजहोमनुष्यसंस्थानंविजहो खासाधारणयाचतुर्भुजादिमत्यातन्वावतीर्यपित्रोः प्रार्थन यायांमनुष्यसंस्थानस्थितांतनूं भूभारमपनेतुं जग्राहतांतनुं तिरोधाय्यखासाधारणतन्वाजगामेत्यर्थः भनुष्यसंस्थानस्यभूभारापनोदन्ते प्रार्थि कत्वेनयावतुपाधितत्संस्थानमपनुद्यखासाधारणयेवजगामेतिभावः भनुष्यसंस्थानेनविकिनजगामेत्याकां क्षायांतत्रद्रष्टांतमुखनोत्तरमाहयथा कंदकविद्यचरणः पुमान्यावत्तद्यनोदककंद्रकांतरंपरिगृद्ध तेनतद्यनुद्यतते।पनुत्तमपनोदकमिकंटकद्वयं जहातितद्वदिशिनुभ्रावतः द्रयमित्ममपनोद्यं कृष्टितभावः प्रविद्यपित्रम् मेनविक्ष्यमित्यनेनदुष्टितभावः प्रविद्यपित्रम् विविद्यनियं कृष्टितभावः द्रितिभावः द्रितिभावः द्रितिन्यमित्यनेनदुष्ट च्छित्यां प्रविद्यनियं तुर्भगवतः तान्यपिश्यिगाणाभावतप्यस्वस्यवेतिस् चितं कंटकद्यां क्षेत्रवद्यां प्रविद्यनियं स्थानियाचतः स्थानियाचिक्षयोः कंटकद्यां कंटकद्यां कंटकद्यां स्थानयापिश्रित्याः स्वश्रितंत्रम् विश्रिष्टमिति ॥ ३४ ॥ विद्यमित्रवेत्रयोभयोः कंटकत्रयोः कंटकत्त्वमित्रविश्रित्तम् विश्रिष्टमिति ॥ ३४ ॥

इदमेवप्रसिद्धं दृष्टांतांतरेगाप्याह्यथेतियथानटोनाट्योपयुक्तानिवेषांतरागि परिगृह्यनाट्यानंतरंखेनरूपेगीवावतस्थेतथायेनदारीरेगुभू

इद्मवभासक दशतातरका ज्यादेव पात नाम स्वासाधार मानेवजगामेत्यर्थः ॥ ३५॥

यदेतिश्रोतव्याः सत्याः कथायस्यसमगवान्मुकुंदः स्वतन्वास्वाधारगादिव्यमंगळविष्रहोपेतः महीयदायस्मिश्नहनिजहोत्तहहरेवतस्मि श्रहन्येवविवेकिनामभद्रहेतुरशुभहेतुः कळिरवर्तत ॥ ३६॥

### श्रीविजयध्वजः। \*

\* स्वर्याग्रानिर्गायेकारगामाह यदेति यदाश्रवणीयसत्कयोमुकुन्दः स्वतन्वास्वाभिमतयामृत्योद्दमांमहीजहीत्यक्तवांस्तदहरेवपातिबुद्ध चेतसां हिरिविषयवोधरहितबुद्धीनांपुंसामभद्रहेतुः पापकारगाकालरम्बक्ततेत्यन्वयः॥ ५॥

# क्रमसन्दर्भः।

नाशं लोकरच्या वस्तुतस्त्वदर्शनमेव । भगवत्यधोक्षजे निवेशितारमेति भगवतः पृथाध्यानालम्बनत्वं दर्शयित्वा पृथयानुभूतां दिश्वि मेव दर्शयति । तत्र सीदामिन्या रत्याद्यकादशस्कन्धपद्यात्मकं शास्त्रं सीदामिन्या अपिनाशं निवेधयति चेत तक्षेत्रापि तद्वृष्ट्या सुतरामेव तन्मन्तव्यम् । तदुक्तं तत्रैव—देवादयो ब्रह्ममुख्या न विशन्तं स्वधामिन । अविद्यातगति कृष्णां दरशुश्चाति।विस्मिता इति । संस्तेः मध्या वतारात् ॥ ३३॥

<sup>\*</sup> त्रयिक्षशत्त्रभृतिपेचित्रिशदेताः क्षोकाविजयम्बजीयेनसंति॥

#### क्रमसंदर्भः ।

्ययेति । तनुरूपक्लेवरशब्देरत्रं श्रीमग्यतो मुमारजिहीर्पालस्याो देवादिषिपालयिषालक्ष्याश्च भाव प्रवोच्यते । यथा तृतीये विश्वति तमेळ्याये तत्त्वच्छव्देश्वसाो मनिप्योक्तः । यदि तत्रैव तथा व्याख्येयं तदा सुतरामेव श्रीमग्यतीति । ततश्च तस्य भारस्य भगवति तदा भासरूपत्यात् कंटकरष्टातः सुसङ्गते प्या तथा द्वये एव इशितुः साम्यमपि ॥ ३४ ॥

निर्मात्स्यादिक्षपाणि मत्स्याचेवतारेषु तनद्भावात् । यथ नटहरान्तेऽपि नटः अव्यक्षकाभिनेता । व्याख्यातं च तैः प्रथमस्यैकादशे नटा नवरसामिनयचतुरा इति । ततो यथा अव्यक्षपकाभिनेता तटः खक्षपेण खवेशेन च स्थित एव पूर्व्वत्तमिनयेन गायन् नायकना यिकादिमावं भन्ते जहाति च तथेति । यथवा "नाहं प्रकाशः सर्व्वस्य योगमायासमावृतः" । इति श्रीगीतावाक्येन गोगिभिर्वृद्धये भक्त्वा नामक्त्या हश्यते कचित् । द्रष्टुं न शक्यो रोषाच भत्सराच जनाईनः ॥ इति पामोत्तरखण्डनिर्ण्येन मह्यानामशनिरिति श्रीभागवत- हर्शनेन आत्मविनाशाय भगवद्यव्यकांशुमालोज्ज्ञलमक्ष्यतेजःखक्षपं परमबद्धभूतमपगतद्वेषादिद्योषो भगवन्तमद्राक्षीत् इति शिशुपाल- मुद्दिश्य श्रीविष्णुपुराणाग्येन चासुरेषु यद्रपं स्पुरति तत्तस्य खक्षपं न भवति किन्तु मायाकित्पतमेव । खक्षपं दृष्टे द्वेषश्चापयातीति । तत्रश्चासुरेषु स्पुरत्या यया तन्ता भुवो भारक्षपसुरवृत्वस्य वक्षपं न भवति किन्तु मायाकित्पतमेव । खक्षपं दृष्टे द्वेषश्चापयातीति । तत्रश्चासुरेषु स्पुरत्या यया तन्ता भुवो भारक्षपसुरवृत्वसम्बर्णत तां तनुं विजदी पुनस्तत्प्रसायानं न चकारत्य्यः । भक्तिहश्चा तत्रस्य वित्या निर्यक्षित्रकालिकः कश्चित् समक्षकाणां वकादीनां नियहाय मतस्याधाकारान् धत्ते खस्मिन् प्रत्याययति तिश्चयदे सित्या च तानि जहाति तथा सोऽयमजोऽपि येन मायिकेन लक्ष्यतां प्रापितेन क्षेणा भूभारक्षपः असुरवर्गः क्षापतः तद्वर्गं क्षापतवानित्यर्थः । किन्तु गीतापये योगमायासमावृत्दत्वि सर्पक्षक्चकवन्मायारचितवपुराभाससमावृतद्वयर्थः ॥३५॥

यदेति । त्यागोऽत्र स्वतनुकरण्क इति न तु स्वतन्वा सहेति व्याख्येयं सह इत्यध्याहार्थ्यापेक्षागौरवात् उपपदाविभक्तेः कारकविभ-क्विर्व्विठीयसीति न्यायाच ॥ ३६ ॥

# सुवोधिनी।

क्रमेशासुक्तिवक्तुंपृथायामुक्तिमाहपृथापीति ॥ ३३ ॥

भगवतोयादवोषसंहारेआत्मत्वात् दोषाभावइतिवर्त्तुंययायादवतन्वासहायार्थमानीतयाभुषोभारमहरत् तांतनुंविजहो क्षेत्राभावार्थं माह अजहतिनहितेनजातोऽस्तितवर्ष्यांतमाह कटकमितिसर्वथात्मीयाभावः स्चितः तथापिअभिमानिनांजीवानांक्षेत्रात् कथमेवमतआह इयंचापीतितः समामिति॥ ३८॥

भगवतिविद्याषमाह यथेति यथानदाः खरूपमेवनानाविधकीडार्थेस्त्र्यादिरूपेगाप्रद्शेयंतिनिवृत्तेचकार्येक्षानिरूपाग्युपसंहरंतिप्यमिद्य

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती

तां प्रसिद्धाम् अन्तद्धांनलक्षणाम् । संसृतेः सम्यक्सरणात् प्रपञ्चेऽवतारात् उपराम सद्य पवंवांतदेधावित्यर्थः । तच्छ्रवण्यसण् एव तद्वियोगजनितां दशमीमपि दशां दर्शयामासिति वा ॥ ३३॥

याद्वादीनामन्तिमदशाश्रवणेन विषीदतः शौनकादीनाश्वासयम् सिद्धान्तरहस्यमाह् ययेति। यथा याद्वादितन्वा भुवः खपादभून्ताया (खपादम्लायाः) मारं कण्टकेन सुच्यमेणं कण्टकविम अहरत् तामेव ततुं विज्ञहो । देवदत्तो वसनं विज्ञहावितिवत् खसङ्गाद्वि-च्युतीचकारेत्ययः। न तु यया नित्यं कीइति तामपीति भावः। तेन असावतरणसमये ये देवा नित्यभूतेषु यादवादिषु प्रविष्टासते एवं त्रुवी योगवलेन निष्काद्य प्रभासं गमितास्तदेहत्यानं लोकान् माययेव दर्शयता भगवता मधुपानानन्तरं देवक्षपीकृत्य खंगं प्राप्यामा तिरे इत्येकादशान्तव्याख्यातुसृत्या वयम् । नित्यलीलापरिकरा यादवास्तु प्रापश्चिकलोकालक्षिताः श्रीकृष्णेन समं द्वारकायामेव यक्षा तिरे इत्येकादशान्तव्याख्यातुसृत्या वयम् । नित्यलीलापरिकरा यादवास्तु प्रापश्चिकलोकालक्षिताः श्रीकृष्णेन समं द्वारकायामेव यक्षा विवर्षमेव केलन्तीति भागवतासृतोक्तसिद्धान्तव्यम् । द्वयमिति । भूभारभूता असरो यादवादिक्षा देवाश्चेति द्वयम् इतिष्ठः परमे- चूर्वमेव केलन्तीति भागवतासृतोक्तसिद्धान्तव्यम् । द्वयमिति । भूभारभूता असरो यादवादिक्षा देवाश्चेति द्वयम् इतिष्ठः परमे- चूर्वमेव किन्तु द्वान्ते कर्यदक्तवेन साम्येऽपि करणाभृतस्य सुच्यम् स्वयम् इत्यम् इत्यम् । इत्यम् । विवर्षेत्रपि विद्यस्वयम् अप्यमे क्षुद्वयमेव ख्वाप्तमः ॥ इति व क्ष्यप्रमः ॥ इति ॥ इति साम्येऽपि विद्यस्ति। स्वयमेव ख्वाप्तमेव ख्वापितम् । "सूच्यमे क्षुद्वयमेव विवर्षेत्र व क्षयमः इत्यम् ॥ इति ॥ इति साम्येऽपि विद्यम् इति इत्यमेव ख्वाप्तमेव व लोमहर्षे च क्षयप्तः । इति ॥ इति ॥ इति साम्येऽपि विद्यमेव साम्येऽपि विद्यमेव ख्वापेतम् । स्वयमेव ख्वापेतमेव व लोमहर्षे च क्षयप्तः ॥ इति ॥ इति साम्येऽपि विद्यमेव साम्येऽपि विद्यम् साम्येऽपि विद्यमेव साम्ये साम्ये

# श्रीविश्वनायज्ञक्रवर्ती।

कृष्णस्तेन्द्रजालिकन्द्र इत खदे हत्यागं मिथ्याभृतमेत मत्याययामासंत्याह यथेति । अमनान् प्रचे ज्ञाह्यात् तु भृत्या ज्ञाह्याति तनुत्यागालेऽपि तन्त्र तुअरार्यामस्येव । ननु कथमेतहो द्वाद्यमित्यत् आह । यथा नद्ध-पेन्द्रजालिकः केद्रबाहमूलकेदिभिः खदे हं त्युजित तस्य त्यागं सञ्जान दर्शयति प्रत्याययति श्र अथच खदे हं धत्ते पव न नु च्रियते । तथेव मतस्यादिकप्राध्य मत्स्यादिशिराधि स्वीयानि भगवान् घत्ते ज्ञाति दथान पव जहाति । तेन नदस्य खश्ररीरधारणं सत्यमेव तत्त्यागस्तुः मिथ्येव अथा तथेव भगवतोऽपि मतस्यादिशिराधारणं सत्यमेव तत्त्तत्त्रयागो मिथ्येवेत्यर्थः । यथा च मतस्यादिशरीराणि दथान पव जहाति तथेव यन भूभारः अपितस्त्रध कलेवरं जहाविति श्रीकृष्णकलेवरत्यागो मिथ्येवेति । नराकृतिपरव्रहात्वादिकमपि नटक्षपनरधर्ममेवं भगवान् करोति न तु तत्त्वेन । खदेक्ष्याभौतिकत्वेन नाशासम्भवात् । यदुक्तं महाभारते—न भूतसंघसंस्थानो देहोऽस्य परमात्मन इति । वृहकेष्णवेऽपि—यो वेत्ति भौतिकं हस्याभौतिकत्वेन नाशासम्भवात् । यदुक्तं महाभारते—न भूतसंघसंस्थानो देहोऽस्य परमात्मन इति । वृहकेष्णवेऽपि—यो वेत्ति भौतिकं देहं कृष्णस्य परमात्मनः । स सर्व्यस्माहिः कार्यः श्रोतस्मान्तिविधानतः । मुखं तस्यावलेक्यापि सचैलः स्नानमाचरेहिति । वैशम्पान्यनसङ्गामित च—अमृतांशोऽम्यतवपुरिति । अमृतं मरण्याहितं वपुर्यस्यति तत्र श्रीशङ्गराचार्यव्यास्यान्तं प्रसिद्धा । अत्र श्रवेषा विद्यस्यागार्यत्वात् त्यागस्य च दानार्यत्वात् वेकुण्यादिधामस्येभ्यो भक्तेभ्यः स्वश्ररीरप्रविष्टवरं नारायणादिक्रपं तेषां पालनार्थं ददावित्येकादशान्ते व्याख्यास्यते ॥ ३५ ॥

तनुत्यागस्यावास्तवत्वं स्पष्टयन्नाह । यदा स्वतन्वा जहीं स्वतनोरेव वैकुएठारोहादिति श्रीस्वामिचरणाः त्यागोऽत्र स्वतनुकरणाक एव न तु स्वतन्वा सह महीं जहाविति कुव्याख्याया अवकाशः "उपपदिविभक्तेः कारकविभक्तिर्वेळीयसी"ति न्यायात् । प्रदश्योतस्तपसाम , वितृष्तहर्शां नृणाम । आदायान्तरधाद्यस्तु स्वविम्वं लोकलोचनित्यत्रापि लोकलोचनरूपं स्वविम्वं निजमूर्तिः प्रदश्यं पुनरादायेव च अन्तरधात् न तु त्यक्वेति सन्दर्भश्च । तदा यदहः तद्भिव्याप्यत्यर्थः । अप्रतिवुद्धचेतसामिति विवेकिनां तु न प्रभुरित्यर्थः । चौरो हि निद्वितस्यैव धनमपहरति प्रतिवुद्धान्तु विभेतीत्यर्थः ॥ ३६ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

. कुन्त्यामुक्तिमाह पृथापीति संसृतेः संसारात् ॥ ३३॥

ननुभूमारराजपृतनायदुभिनिस्येतिवचनाङ्कभारहरणौपियकान् तस्यैवतेमुस्तनैविस्रलोक्यांशांता अशांताउत्तम्हृयान्यः शांताः वियास्तेह्यविनुम्तांस्यानुश्चतेथ्रभेपरीप्सयेह तद्दिवस्यमाणात्स्वकीयशांततनुभूतान्यदून्यदुभिरन्योऽन्यंभूभारान्संजहारहेतियदुक्त तद् कथंसहतवान्तत्राह ययेति अजदिति नित्यशरीरः स्वरूपतस्तु भूभाररूपाराजन्याः तदुपसंहारायसंविधिताः यादवाश्चसवैभिज्ञा एव विश्वज्ञचतुर्भुजशतसुज्ञसहस्रभुजाकारेणस्यातुंसमर्थेनिगिर्याद्याकारेण्यालतस्याद्याकारेण एकधादशधाशतधासहस्रधाविश्वरूपण्य हस्यत्वेनाहश्यत्वेनचभवितुमहेण् श्रीविश्वहेणाप्यज्ञहृत्यथं सचिवश्वहश्चतुर्भुजो द्विभुजोभवित नतत्रमुख्यत्वकरपनावकाशः एवंभूतः अजो वित्यानन्दाचिन्त्यस्याभाविकविश्वहः श्रीकृष्णः ययायादवभृतयाशांतयाभुवोभारमशांतशरीरंकटककंटकेनेवाहरतः तांतुतुं विजहीशान्ता यादवतनुरशान्ताभूभारतनुश्चेतिद्यमणीशितुभौतिकतयासंहार्यत्वेसमम् यादवानामपि भगवल्लीलादश्चनव्यतिरिक्तंभौतिकदेहैनेकिमपि कृत्यम् यथामुनीनांभगवल्लीलादश्चनिव्यत्यत्रमाणास्त्रस्त्रात्विद्यमणीशितुकौतिकत्यासंहार्यत्वेसमम् यादवानामपि भगवल्लीलादश्चनिकमिपित्रयोजनंतद्वदितिभौविः कृत्यम् यथामुनीनांभगवल्लीलादश्चनायावच्यमुनयोविद्यावनेऽस्मित्रत्यादिवस्यमाणेषुविद्यातात्रस्त्रस्यणिवस्यमाणा वोष्यम् ॥ ३४ ॥ श्रीतिक्रत्यात्वस्यात्वातिक्रियात्वस्त्रस्यात्वस्यमाणाद्वस्यमाणात्वस्यमाणाद्वस्यमाणात्वस्यमाणात्वस्त्रस्तिक्रस्ति स्वरूपेश्वरस्त्रस्त्रस्तिक्रमानेष्यत्वक्रमित्रस्त्रस्त्रस्त्रस्त्रस्त्रस्तिक्रमाणात्वस्यमाणात्वस्त्रस्त्रस्तिक्रमाणात्वस्तिक्रमाणात्वस्त्रस्त्रस्त्रस्तिक्रमाणात्वस्त्रस्तिक्रमाणात्वस्तिक्रस्तिक्रमाणात्वस्तिक्रस्तिक्रस्तिक्रमाणात्वस्तिक्रस्तिक्यस्तिक्रस्त

गार्यता रूपव राजधान्य तयक गद्द गयुन गर्पा । प्रति अवाणीया अवाणीया अवाणीया यस्यसः यथा चराणेपा दुकांजनो जहा नितद्वत्यदा पांडवानां गृहा चिर्गमनं वक्कं कि छप्रवेशकालमाह यदेति अवाणीया अवगाहि सितीकथा यस्यसः यथा चराणेपा दुकांजनो जहा नितद्वत्यदा स्वतन्वाश्रीमूर्त्यो इमां महीं जहोतदेव अहरहनिकलिएन् वर्तत ॥ ३६॥

# भाषादीका ।

धनंजय कथित यादवों का नादा और भगवान की उस गति को सुनकर कुंती भी एकान्त भक्ति से अधोक्षज में मन लगाकर संसार से उपरत हुई ॥ ३३ ॥

अज भगवान ने जिस बादव कुल रूप अपनी तन्न से पृथवी का भार दूर किया या उस यदुकुल का भी संहार किया क्योंकि ईश को दोनों ही समान हैं। जैसे पद मैं कांटा लगने से उसे दुसरे कांट्रे से निकालकर होनों ही कांट्रे फेंक दिये जाते हैं॥ ३४॥

जैसे भगवान मत्स्यादि रूप धारा करते हैं और अन्तर्ज्ञान करते हैं ऐसही जिस अपनी निज मूर्ति से भूमार क्षय किया था उस श्रीकृष्णा रूप को भी अंतर्ज्ञान करित्या॥ ३५॥

अवशायि सत्कथ मुकुन्द भगवान ने जिस समय अपनी श्रीमूर्ति से इस पृथवी को छोंड़ा उसी दिन से अप्रतिबुद्ध (अज्ञान) विक लोगों में अधर्म हेतु कलियुग ने प्रवेश किया॥ ३६॥

# युधिष्ठिरस्तत्परिसर्पगां बुधः पुरे च राष्ट्रे च गृहे तथात्मनि ।

१९० विभाश्य सोमानतेजिहाहिंसनाद्यभ्रमचक्रं गमनायेखंखंयात्। १९७ गण्य व्यापे

क्षित्रहार होते । अक्षा प्रति के स्वार्थ के स्वार्थ के स्वार्थ के स्वार्थ के स्वार्थ के कि स्वार्थ के कि स्वार स्वार्थ के समित्र कि स्वार्थ के स

तोयनीव्याः पतिं भूमेरभ्यषिश्चद्रजाह्नये ॥ ३८०। १०० । १००० । मथुरायां तथा वजं शूरसेनपतिं ततः।

प्राजापत्यां निरूप्येष्टिमभीनापबद्धाश्वरः ॥ ३६ ॥

विसृष्यः तत्र सर्विद्वान्तः । स्वाप्ति सर्विद्वेद्वकूलंबस्यमाहिकस्य । स्वीपीत् विकार्यकार्यः स्वीपानकारण्या विक निम्मेमो निरहङ्कारः संछित्राराषवन्यनः ॥ ४०॥ विक्रीयाक की विकास सम्बद्धाः

. १९९१ १९०५ वर्षां क्षेत्रेण वर्षाका वर्षाका १९०६ १० १०० वर्षाका प्रापंत्र एक्षेत्र १ वर्षाका वर्षाका १९०८ वर्षा श्रीश्चरवामी । १० देशकोष १ वर्षाका समाध्येक वर्षाको है १५ वर्षाका वर्षाका वर्षाका १५० वर्षाका हो वर्षाका वर्षाका है १० वर्षाका बुधो युधिष्ठिरः तस्य कलेः परिसर्पणं प्रसरण विलोक्य । कथम्भूतं लोभादि अधम्भेचकं यस्मिन् । जिह्नं कौटिल्यमः। प्रस्थेधावः तुद्धचितं परिधानमनरोत् ॥ ३७ ॥ ँ १००० वर्षे वेत् व्यवस्थितः । तुस्य प्रवासन्य सम्बद्धांभाव वर्षे वेत्र विद्यांभावतीयः प्रवासन

आत्मनः खस्य गुगाः सुसमम् अतिसदशम् । तायं सर्वतं एव स्थितं समुद्रोदकमेनः नीवी परिधानविशेषो यस्याः तस्याः भूमेः र कार्यकार हुई। एउटी एटीट क्षिक्षणायात क्षुप्रमान रहिनेमाना प्राप्त कार्यक **कीर्त** 

पतित्वेनाभिषिकवान् ॥ ३८॥ वज्म अनिरुद्धस्यपुत्रम् । निरूप्य कृत्वेत्यर्थः । अपिबत् आत्मन्यारोपयामासः। ईश्वरः समर्थः ॥ ३९ ॥ सिंहिन्नानि अरोपासि वन्धनानि उपाधयो येन ॥ ४०॥ विकार Profit with a common triple common consist state of

# द्योपनी ।

《तथा—अझ्यपिश्चिदिति क्रोषः । हरसेनः खनामकदेशिवशेषः तस्य पतिम अधिपतिमित्यर्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ) ann shear nigha e<u>ar an ar ar ar an l</u>ua desk gair shika na ke garshinga ar a lan naoith shea

# ราวกับ เพราะ และ 1 (ค. 25) การสมองเหมือ และสมาร สมองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมืองเหมื १९७७ कृति हुन्<mark>श्रीवीदराघत्रः ।</mark> १५५३ क्षण्डेल स्टिम्बलकामान्यः स्ट

ततोयुधिष्ठिरः पुरेराष्ट्रेगृहेआत्मान जनानांदेहेषुचतस्यकलः परिसपेगामनुवस्तिनंबुधः जानन्तनमुलके लोमाधधमीगां चक्रजाल

मवलोक्यगमनाय गृहान्निर्गमनायपर्यधात्परिहितउद्युक्तोबभूवेत्यर्थः॥ ३७॥ ततः खराद्राजायुधिष्ठिरः गुणौरात्मनः खरूयसमंतुल्यं विनिधनं चपौत्रंपरीक्षितं हस्तिनपुरेतोयनीव्याः समुद्रमेखलायाभूमेः पविमध्यिष

अदिभिषिक्तवान् विनिमयमितिषाठेविनिमयंविनिमयाई सद्द्यमनवममन्यूनमित्यर्थः ॥ ३८ ॥

तथामथुरायां चजारुयंयदुकुलकुमारं भूरसेनानांजनपदानांपतिमध्यपिश्चत्ततः प्राजापत्यांप्रजापतिदेवताकामिष्टिनिरूप्यकृत्वाईभ्वरो युधिष्ठिरोऽग्नीनाहवनीयाद्दीनिपवत् आत्मन्यारोपितवान् ॥ ३९॥

तत्रस्वगृह्यवतस्त्रसिद्धं दुक्लादिकस्यक्त्वांवाचेजुह्यित्यन्ययः कर्थभूतः निर्ममः हिहाधमुबिश्रिषुस्वकीयत्याभिमानरहितः निरहंकारः देहातमभ्रमरहितः संक्रिन्नान्यशैषाणि वंधवानिवकृत्यादीनियनतथाभूतः प्रकृत्यादिमोक्षमनुसंहितवानित्यर्थः॥४०॥ विकास र दशक्त रहार हो हो हो राज्य है। अस्त्राणीय स्थान का का का कार्य का स्थापित है अस्ति के स्थापनी है। इस राज्य

# थीविजयध्वजः।

वुधः विवेकज्ञानीयुधिष्ठिरः राज्येपुरेचगृहेभार्यादौचत्रयात्मनिस्वास्मन् तस्यकलेः परितः सर्पग्रव्यापिविमान्यज्ञात्वा कलिन्याप्ति मुलंलोमाध्यमसमुद्रायं स्विकायग्रमसायंवीराध्यगमताय्येशंथाविक्षित्वातित्वेमात्वयः "प्रशािभानंतुतिश्चय्" इत्यभिभानं लोमश्चानृतेच जिहांकीटिल्यंचिहिंसनंचलोभानृतजिहाहिंसनानि आदियस्यपुरुषादेस्तन्तथोक्तम् ॥ ६॥

स्वराट्चकवर्ती खपैत्रंतंगुणैरतवसंयोग्यंगौत्रमभिमन्योः स्वतंप्रीक्षितंतोयसेवतीबीवसनंयस्याः सात्रशेकात्स्याः॥ ७॥ मधुपुर्यामनिरुद्धपुत्रंनाम्नावज्ञवारसन्विषयपतिमध्यविश्ववितिशेषः प्राजापत्यांप्रजापतिवैवत्यामिष्टिनिरुप्यसर्वस्वदाक्षेगामिष्टिकृत्वा श्रीताग्रीनिषिवत् आत्मिनिसमारोपयामासं सकीद्दश्यरः राज्यादिषुनिर्विद्यसनसमर्थः॥८॥

तदेवाह विसृज्येति संछित्राशेषपापादिवन्धनः॥ ९॥ म नार्य वर्षः ॥ ५ ॥ इक्काम्पर्कतम् नेत्वस<u>्थामः अञ्चलेकाम</u>क्ष्यम् स्थानको स्थानको स्थानको । विद्यानी स्थानको स्थानको स्थानको ।

खराट्पीत्रं विनयिनमात्मनस्सदशं गुगौः इति बीरराज्यवादिपाठः॥

LESTON SE E GIT WHEETS WAS WARDENESSED IN

युधिष्ठिर इत्यत्र तस्य र्यागे क्लिप्रहिस्क्षेण्यस्तिष्ठनस्तित्रम्या सस्तत्वत्वक्षंभ्येत्वत्विकामिर्वसेक्कार्या क्षेयम् ॥ ३७ ॥

विनियतं समर्थादम् । टीकायां सुसममतिसद्श्रामिति ब्याख्यानात् सोः पुजायां बत्वनिषेष्ट्यः। सुः पुजायाम् इति कर्मप्रवचनीय-ंविधेः ॥ ३८ ॥

# प्रदेश **समिति।** अस्ति विकास

Property of the Charles

तर्हिस्तस्यनकाचित्चिन्तेत्याशंक्याह युधिष्ठिरहित विकलत्वाभावेनदृढ्दिथत्यांअविकाशंमन्यतेकालः सन्युधिष्ठिरादीनिपतथाम-न्यते अतस्तद्देशेष्विप महदल्पप्रभेदभिन्नेषुराष्ट्रनग्रगृहशरीरेषुप्रविष्टः अल्पविकाशास्तत् ज्ञातवानित्याह युधइति तत्रापिविचारः किस्थातुमागतः द्रष्टुंचेति तत्रापियुधिष्ठिरस्यनिश्चयोजातइत्याह विभाव्यइतिससामग्रीकस्य समागतत्वात् ततोऽगमनंकलेः तस्यसा मत्रीप्रथमतोलोभः सर्वदोषाणामाश्रयः अन्तःकरण्यमेः अनृतंवाग्दोषः प्रायेणस्वरूपनाशकः प्रामाण्यकोटेः स्वरूपनिर्वाहकस्यनाशात् कुटिलताबुद्धिदोषः हिंसाशरीरस्यअत्रक्रमेशिष्टंखयमूह्यम् आदिशब्देनरोगादयोऽपिहिंसाद्यधर्भचक्रंविभाव्यगमनायपूर्वोक्तामेवगतिपर्यधा

अशकस्यपरित्यागोऽनुचितः त्यकानांवासनाजनकत्वात् अतः कलिभयात् युधिष्ठिरगमनमनुचितमित्याशंक्याह स्वराट्पौत्रमिति नहिकलिनिराकरणसम्यो युधिष्ठिरोगंतः तत्निराकरणार्थं पौत्रस्यस्थापितत्वात् कितुशास्त्रस्यशामाग्यात् इत्यभिष्रेत्याहस्वराद्पौत्र मिति भ्रातृशामेकजातानामिति न्यायात् राजदानाभ्यस्वेति पौत्रग्रहशांपुत्रनामस्यापनार्थगुशौभगवदीयत्वादिभिः आत्मनः अनवममन्यूनं अनेनदोषामावस्तत्रागतइत्युक्तंभवति हिनर्थापनेप्रजाशापः प्रसज्येत तोयनीव्याः समुद्रावरणागाः अन्येतुराजानस्त्रियोवस्त्ररहिता मिषिस्रियेकदेशचरणसम्वाहनादिनापतित्वंमन्यन्ते इतिस्चितंनीवीपदेनपतिमित्यगुवादः भगवतैवतदर्थकतत्वात् पतित्वार्थमितिलक्षणा चस्यात् अतः खयमभिषेकमात्रं कृतवान् ॥ ३८॥

ेष्वमेववज्रमपिकृतवान् अनिरुद्धपुत्रोवज्ः शूरसेनदेशस्यापि,पतित्वज्ञापनायाह श्रूरसेनपातिमिति अनेनमर्यादायांयाबान्देशः तावान् दत्तद्दयुक्तंततस्तेषांराज्यस्वीकारानन्तरंप्राजापत्यामि।धिनिक्ष्यप्रवाजंकतवानित्याह वैश्वानरीप्राजापत्यावाविकल्पेनविहिता ईश्वरद्दति तथावारणसमर्थः यथशिक्षकरणात्' गृहप्वसर्वपरित्यागस्योक्तत्वात् अश्रपरित्यागस्याशास्त्रत्वाचा ३०॥

सर्वपिरत्यागानिरूपसार्थमाह विभृज्योति देहातिरिक्तपरित्यागः सुगमः तदाह आदिशब्देनदुकूलवलययोर्विद्यमानत्वेनप्रहर्सा मनुः द्वीषाभ्यनुज्ञापकत्वेनवारयामासेति यद्त्रेवक्ष्यतेनतत्परित्यागतुल्यत्वेनतत्ज्ञापनार्थत्यक्तानामात्मीयत्वंनिराकरोति निर्ममइति परित्यागाभि मायाभावायैतदुक्तम् अन्तरत्यागायत्राउभयोः कर्तव्यत्वात् अन्योऽन्यंहेतुमत्भावाश्वदेहस्यसपरिकरस्यत्यागमाह निरहंकारहति देहेअहंतः त्यक्त्वाममतायाः खरूपतोनाशात् मध्येतिष्ठतिदेहादिः तस्यत्यागप्रकारमाह संछित्राशेषेवन्थनः इतिवाह्यावरणं सम्यक् छित्रमित्याह संछिन्नेतिपुत्रादीनामुपकारित्वबुद्धिरघुनानिवृत्ता अतप्यनप्रतिबन्धकः ॥ ४० ॥

# Maaaneaaail Maaaneaaail

पर्यधात् तदुचितिपधानमकरोत् ॥ ३७ ॥

The section of the territory and the section of the

कितियमं रोजोत्रितिविशिष्ट्रनियम्युक्तम् आत्मनः ख्रीस्य गुणी खुसममः अतिसद्द्यं तोयं समुद्रोदकमेव नीवी परिधानविशेषो यस्या-स्तस्या भूमेः पतित्वेनाशिक्षक्रवान्हः॥[३८॥[३८ ॥] क्षेत्रकारिकारण १८५० एक विकेशिका १७०० वर्षा

वज्रमनिरुद्धपुत्रम् । निरूप्य कुत्वा । अपियत् आत्मन्यारोपयामास । ईश्वरः समर्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥

Three store the transform characters in the first of the first parties of the first parties of the confidence of the con

#### The second section सिद्धांतप्रदीपः।

युधिष्टिरः पुरादीतस्यकळः परिसर्पग्रांग्रसरगांगुधःजानन् लब्दक्तिष्ठोभानृतिज्ञिक्षित्तनाद्यधर्मचर्कचविभाव्यविलोक्षयगृहािकाग्रमनायुप र्यधात निर्गमना चुक्रपंपरिधानमकरोत्॥ ३७॥ १० १० १० १० १० १० १०

ग्रीत्रं परीक्षितम् तीयनीच्याः जळिषवेखात्त्तायाः मूमेः पतिगजाह्वयेऽभ्यपिचदिमिषिक्तवान् ॥ ३८॥

र्देश्वरःसमर्थः तथैवमथुरायाम्निरुद्धात्मजंश्चरसेनानापातमभ्यषिश्चत् ततःमजापतिदेवताकामिष्टिनिरुप्यकृत्वाऽग्रीनिपवदात्मन्यादी पयामास ॥ ३९॥

मंछिन्नानिअशेषाशिदेहगेहादिष्वहंममेत्यादिरूपाशिवन्धनानियेतसः वार्चजुहावेत्युत्तरेगान्वयः॥ ४० ॥

# वाचं जुहाव मनिस्तित् प्रांशा इतरे च तम्।

त्रित्वे हुत्वा च पंचत्वे तश्चैकत्वेऽजुहीन्मुनिः ।

सर्व्वमात्मन्यजुह्वीद्वह्यस्यात्मानमध्यये ॥ ४२ ॥
चीरवासा निसहारो बद्धवाङ्मुक्तमूईजः ।
दर्शयत्रात्मनो रूपं जडोन्मनिषशाचवत् ॥ ४३ ॥
ऋतेपक्षमास्यो निरगादशृश्यत् विधिरो यथा ।
इदीचीं प्रविवेशाशां गतपूर्वी महात्मिनिः ॥
हृदि ब्रह्म परं ध्यायन्नावर्तेत यतो गतः ॥ ४४ ॥

#### ः भागादीका ।

बुद्धिमान उधिष्ठिर महाराज ने पुर में राह में गृह में और मन में कलिबुगका प्रवेश देखकर और लोभ अनृत कपट हिंसा आदिक अधर्म चक्र देखकर राज त्याग कर वन गमन करने के उच्चित वेष परिधान किया॥३७॥

स्वराट् युधिष्ठिर ने विनीत और गुगों से समान अपने पौत्र को तोय नीवी (समुद्रान्त) पृथवी का राजा हस्तिन पुर मैं अभिषिक किया ॥ ३८ ॥

और बज़ (श्रीकृष्ण के प्रपोत्र) को मधुरा में शूरसेन देश का राजा अभिषिक्त कर, प्राजापत्य इष्टि कर अग्नि को अपने में आरो-

वहीं वह सव वस्त्र वलयादिक सालङ्कार छोंडकर निर्मम निरहङ्कार समस्त वंधन उपाधियों को संख्यिकर वाणी को अर्थात ततुप लक्षित समस्त इंदियों को मनमें होमकर अर्थात लयकर, मनको प्राण में और प्राण को अपान में उत्सर्ग सहित अपान को मृत्यु में और मृत्यु को पंचत्व में होम किया पंचत्व को त्रित्व में त्रित्व को एकत्व में अर्थात अविधा में, सर्वारोपहेतु अविद्या को जीव में और जीव को अव्यय ब्रह्म में होम किया ॥ ४० । ४२ । ४२ ॥

# श्रीधरस्त्रामी ।

तदेव दर्शयित द्वाश्याम् । वाचिमित्युपलक्षणं सन्वेन्द्रियाणि मनसि प्रविलापितवानित्यर्थः तच्च मनः प्राणे प्राणाधीनवृत्तित्वात् तं प्राणामितरे अपाने तेनाकर्षणात् । अपानव्यापार उत्सर्गस्तत्सिहितमपानं सृत्यो तद्विष्ठातृदेवतायाम् । अनेनैव वागादिष्विप तत्तत्-कम्मसाहित्यं वेश्विम । तं मृत्युं पश्चत्वे पश्चभूतानामैक्ये देहे । देहस्यव मृत्युर्नातमन इति भावितवानित्यर्थः । अजोहवीदिति यङ्ख्गन्तात् छुङ्कि सपम् ॥ ४१ ॥

जित्वे गुगात्रये। तम्ब जित्वं एकत्वे अविद्यायाम्। सर्व्वे सर्वारोपहेतुमविद्यां आत्मनि जीवे। अजोहवीदिति वक्तव्येऽजुहवीदित्या-

र्षम् । एवं शोधितमात्मानं ब्रह्माि। अञ्चये कूटस्थे । न तस्यान्यत्र लय इत्यर्थः ॥ ४२ ॥

तदेवमात्मप्रतिपत्तिमुक्ता वाह्यास्थितिमाह चीरवासा इति सार्द्धद्वाश्याम्। बद्धवाक् मीनी । अनपेक्षमाणाः अनुजादिप्रतीक्षामः कुर्व्वन् ॥ ४३ ॥

आशां दिशम् । गतपूर्वी पूर्वप्रविष्यम् । यतो यां दिशम् ॥ ४४ ॥

, Transport to the Control of the Property of the Control of the C

#### ម៉ូនក្រុមទៀត ជាស្ថិត ស៊ីនិក្សាទីនេះ ប៉ុន្តែការប្រជាជាក្នុង ស្រាន់ និងស្រាន់ និងស្រាន់ និងស្រាន់ ប្រើប្រើប្រើបា ការប្រកាសនា ស្រាន់ ស្រាន់

दीपनी । प्राची इति। प्राम्भमनविति नासाप्रस्थानविति वायावित्यर्थः ॥ ४१ ॥ (मुनिः मननशीली युधिष्ठिरं इति यावत् ॥ ४२—४८॥ )

# The second as a second of the second of the second second

तत्त्रकारमाह्याचिमत्यादिनावाचेवागादिकमेशानोभयेद्वियध्यापारमन्सिजुहावमनोधीनममन्यत मनसहिद्वयप्रकृतित्वाभावादित्यर्थः तत्त्रकारमाह्याचिमतः प्रवृत्तिप्रागाधीनांमेनेतयाप्रागासंवादादिषुदर्शनादतप्रवाहितस्यमुखप्रागात्वं प्रागादीनांलयानुसंघानप्रकृतिमाह तन्मनः प्रागोजुहावमनः प्रवृत्तिप्रागाधीनांमेनेतयाप्राग्यसंवादादिषुदर्शनादतप्रवाहितस्यमुखप्रागात्वं प्रागादीनांलयानुसंघानप्रकृतिमाह तत्त्रचतमृत्यावपानं सात्संगमितितप्रागामितरेइतरस्मिन्नवानस्यानम्यानमुद्यानद्रतिद्रोपः उत्सर्गग्राब्दोकृतिप्रवाह

# वानं जुहान सन्ति। कार्याका हान न वस्त

विशिष्टानामेवतेषुतेषु लयमनुसंहित्रस्तिम्प्रमानेत्रहर्त्तवानम्त्योमान्यसम्भित्तम्।तित्रसम्भित्तायादिपंचककारयोवायावित्यर्थःअव स्थाविशेषवायुर्हिपाणः नवायुमात्रंसचैकोऽपि प्रांगानादिवृत्तिपंचकविधः अवोवृत्तिपंचकिरोधनपाणस्यतत्कारणे वायौलयानुसंधान प्रकार उक्तः॥ ४१॥ प्रकार उक्तः ॥ ४१ ॥

पविमिद्रियवर्गेत्रागतदृत्त्वितिरोधातुम्बभावम् अथवायुनास्त्रित्वभूतातिर्वत्रभूताति हेद्वियवर्गेश्चाहंकारकार्यमितितवुभयंत्रित्वेसात्विक राजसतामसरूपत्रिविधाहंकारेजुहावेत्यर्थः सर्वत्रत्वप्रत्ययः खार्थिकः यथायधीमद्रियाणां सात्त्विकाहंकारेलयः भूतानांतामसङ्गतिविवेकः तचाहंकारत्रयंपकत्वेपकस्मिन्प्रकृतितत्त्वमहत्त्तत्त्वंद्वाराजुँहोवत्यर्थः सर्ववागादिष्रकृत्यतमात्मनिजीवेऽजुहवीचेतनोह्यचेतनप्रकृतिः अतप्रव मुक्तंनहिजीवः प्रकृतेरुपादानमात्मानंजीवमञ्ययेषद्धारायजुहोत् जीवस्यवद्याधीनवृद्धिस्वास्तिस्तर्थापितवानित्यर्थः॥४२॥

ततश्चीरवहकलंवासोवस्रंयस्यसनिराहारः चक्रवाग्मानीमुकाचिक्षिप्तामुर्द्धजाः केशाः येनसःजड़ादिवदात्मनः स्वस्यरूपमाकार

द्रशयन्लोकस्येतिशेषः॥ ४३॥

यथावधिरस्तद्वदश्यवन्नन्धद्वानवेक्षमाणः निरगाद्गृहादितिशेषः पूर्वेगतांगतपूर्वीयतोयांगतः पुनर्गावर्तेततांमहात्मभिर्विरक्तैःगतपूर्वा उदींचींदिशंहदिपरंब्रहाध्यायन्प्रविवेशः ॥ ४४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

स्वमरगाकालपतच्चितनीयमित्यमिप्रत्यतत्कृतमित्याह वाचमिति वाचंचवागिमानिनीमुमांमनिसमनोभिमानिनिरुद्रेऽजुहोत् अस्या अस्मिन् लयोभवतीत्यचित्यत्नतुतदानीकृतवानित्यर्थः तत्मनः प्राग्यो मनः कारणेजुहाव मनसः परंउत्तमंप्राग्रंहतरेहतरस्मिन् अपाने धृत्यामनस्रपकात्रतया सोत्सर्गसन्तिकमपानंतत्परत्वेतस्माद्यानात्पूर्वभाविनिव्यानेअज्ञोहवीक्षितथाहि उत्सगकर्माभिमानिनिज्जहाव त्रन्थांतरप्रसिद्धिः॥ १०॥

अथव्यानापानचितनानंतरमत्रविष्टाबुदानसमानौत्रित्वेत्रित्वसंख्याविशिष्टेषुखकारगोषुप्रागापानव्याः नेषुद्धत्वालयंविचित्यतश्चपंचत्वं पंचत्वसंख्याविशिष्टान्प्रागापानव्यानादानसमानांश्चेकत्वे एकत्वसंख्याविशिष्टेपंचानांकारगो भूलप्रागोअजुहोन्मुनिर्मीनीतत्पूर्वोक्तंसर्वेतस्य मूलप्रागास्यापिकारगोआत्मनिखहृदिस्थितेविष्णावजुहोत् तंचात्मानमव्ययेविनाशरहितेवद्यागिसर्वगते तद्मिव्यक्तिकारगोविष्णावजुहो दित्येकान्वयः अत्रवागादीदियाणांतदभिमानिदेवानांदेवशरीराणांचाग्नावाज्यलय वत्स्वकारणेषुविलयपवेतिश्चातव्यम् ॥ ११ ॥

चीरवासाः वरुकलवस्रः निराहारः मनुष्याश्रवर्जितः वद्भवाग्वचनवृत्तिर्विधुरः मूर्धजाः केशाः जडादिवदात्मनोरूपंदर्शयन्बिधरोयथा

तथाअशृगवन्नतएवानपेक्षमागाः स्वयंगेहान्निरगादित्येकान्वयः॥ १२॥

यावच्छरीरपातंभुवंपदक्षिणीकृत्य निरंतराटनमेवसंकल्यहृदिपर्वद्यायन्क्षत्रियैमेहात्मभिः गतपूर्वामुदीचीमाशामुत्तरांदिशंप्रवि वेशवीरगीतगीमण्यन्यतोगतानावर्तेत यांचीरगतिगतः पुनर्नावर्तेततामिखन्वयः॥ १३॥

्र**क्रमसंदर्भः।** १९७० व्यापना ने स्थानसम्बद्धाः । प्रत्या केल्यासम्बद्धाः । क्षेत्रकारम् केल्याना विकास विकास । विकास विकास विकास विकास समिति । क्षेत्रकारम् । क्षेत्रकारम् । क्ष्माः । क्ष्माः । क्ष्माः विकास । वाचमिति। तत् मनः व्यवहारात्मकं मनोहंसं न तु परमार्थात्मकमपि अग्रेऽनुसन्धानान्तरिवधानात्। पञ्चत्वे पञ्चभूतानामैषयक्षपो यो देहस्तिसम् न तु श्रीकृष्णपापदरूपं खदेहे इत्यर्थः ॥ ४१॥

एकत्वे अव्यक्ते । तदेवमयोग्यं तत् सर्व्यम् अव्यक्ते एव भावियत्वा योग्यं यत् सर्व्यं तत् आत्मिति भगवत्पार्थद्वपे अजुह्वीत् धारवामास । तञ्चात्मानं नराकृतिपरव्रहार्शि समर्पयामास ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४५ ॥ ४५ ॥ ॥ ४० ॥ ४० ॥ ४० ॥ ४० ॥ ४० ॥

# सुद्योधिनी।

্ৰতি ক্ৰান্ত বিভাগ কৰে। কৰে স্থানিক ক্ৰান্ত কৰিছে বিভাগ কৰে কৰে। কৰে বিভাগ কৰে কৰে কৰে কৰে কৰে কৰে কৰে কৰে কৰে

इदानीमुर्वेरितस्यशरीरमात्रस्यज्ञानकमैक्ष्यांलयंवक्तं प्रथमतोज्ञानेनलयमाह अध्यासस्याज्ञानसाध्यत्वात्।निवृत्त्यर्थेतस्वादिप्रकारेगाज्ञान इदाणानुनारतर्वनारारमात्रस्यज्ञानकमञ्चालवन् । विकास विकास में पादितं क्रमकथनं चित्तप्रवोधनार्थमुचितं साध्यत्वात् तत्रप्रकारेणीवनिवर्तते भगवत्कृतत्वंपक्षेतदाज्ञयार्पारत्यागः तत्रापियेनक्रमेणाभगवतासम्पादितं क्रमकथनं चित्तप्रवोधनार्थमुचितं साध्यत्वाप्रसार्वाच्यात्र्यात् मावत्कतत्वव्याः पुरंजनोपाच्यातेत्थाति स्पर्णात् मनसोहिभार्यावाक् प्राकृतासाआत्मनोहिबाचः तया तदाह्वाचानायः नार्याप्यावगाह्यरारसभ्यायः उ वाचासम्बन्धात् नपृथग्निरूपगाम् अस्यानिवृत्तायांसास्वेनिष्ठास्वतपवभविष्यति तस्यानिवन्धः प्रश्लादक्तव्यः यस्वागित्यनेनद्श्वरकर्तुः काह अवाग्य गाउँ पारा विश्व पारा मणसाय उप काहि अवाग्य निवास के तथा मनसोऽपिप्राणा धीनत्वं तत्गत्या गति श्यांनि रूप-निकृष्टत्वं मन्यते तत्प्व निवासते प्रजापतिरिवनह्यस्मादिपिनिवर्त्तियिष्यन्तिमितिभावः तथा मनसोऽपिप्राणा धीनत्वं तत्गत्या गति श्यांनि रूप-ानश्रध्यमान्यः व्यापित्राण्यानिरोधेनमनसः कारण्यवं तथाप्यप्रेनिरोधकत्वात् तद्धीनत्वं तन्निरोधेन विरुद्धत्वाद्वातथाचदेहवन्धकापगमः अतएव खाप्त मुलत्वकथनंदेहस्यहत्रेचतं इतर्अपानेइतरस्मिश्चितिचक्त इतर्इतिकथनमस्वनामत्वश्चापकतेनम्छत्वेनपरित्यातकथनातः थागरा अगवस्वमयुक्तमिति प्रायानियामकत्वेशि भगवत्रहाँ क्रतंत्येतिस्चितंहोमकथतं पंचाग्निविद्ययोगित्रस्यमहाविद्योगयोगात् भगवरपाने नाकर्षमात्रपानिकां साम्यापानाधीनं त्वं सांसर्गिकरत्वायुः श्वासेनवहिर्निर्गे दक्षति अन्यथासोऽपि तिरोइकेस् अपात्रस्त्रप्रयाधीन

#### सुवोधिनी ।

गतिकः तस्यमृत्युरेवनियामकइति मृत्योतस्यलयमाहमृत्यावपानमिति मृत्युनैवसऊ विक्रियतिकचन योगप्रमाणंवलिष्ठंविधायअपानेनपा गापकर्षणोक्तेपुनः प्राणोत्कर्षणोसीपानमुत्कर्षति वहिगमनाभावायचअन्योऽन्यवलिष्ठत्वात् गतिद्वयनिरोधंचकुर्वति तस्यप्रकारस्यफलार्थ त्वात् नचप्रकृते निरूप्यते अतःसहजासुरेअपानेप्राणमञ्जदोत् अपानंतुमृत्याविति ननुतेनप्रकारेणमृत्युनागृहीतेऽपानेदुर्गतिश्रवणात् किमित्यज्ञहोत् तत्राह सोत्सर्गमिति मृत्युरप्यत्रैवलीयते "मृत्युर्यस्योपसेचनिम"ति श्रुतेःमृतकदेहोमृत्युनागृतमिति तत्रहिमृत्युरपानश्रसोत्सर्गगच्छतः तत्रउत्सर्गसहितस्यापानस्यमृत्योहोमात् मृत्योस्तेनमार्गणागमनाभावः अतोनाभीष्टदातृत्वम् अतोमृत्युरप्रविविद्यदेहार्थेनभवति पश्चा रेवितिश्रुतेः सर्सर्वप्राणिषुवर्सते तस्यप्राणापानौपोषकौ आहारदान मलापकर्षणाप्रयातौचतत्रनिकद्वौदेहमात्रपरिविष्ठौदेहार्थेनभवति पश्चा देहंभक्षयितुमारभते तदातस्यानियामकानि पंचमहामृतानितंनिवन्नति अतोयोगिनोदेहोनवध्यतेनश्चीयते ॥ ४१ ॥

प्रधाननमार्गेणवहुतयानवाग्नयः ततः खकीय क्रमेणहुत्वासर्वभगवितसम्पेत्यक्तमलांशंदेहमरण्येत्यकुंविहः स्थितिमाह चीर वासाइति अतः परंयद्यस्यदेहः उत्पद्यतेपार्षदवदुत्पद्यते पंचाग्नौत्रक्षविद्याप्योगिदेहिवत् प्यमर्थस्यत्र्णीपित्यागः सर्वनाशकः देहे प्रतितानिवस्माणिचीरवासांसि प्रताहरोऽपिरसाविधेयेतित्रिदण्डमाह निराहारइतिमाणदग्रः वस्त्वागितिवाग्दग्रः मुक्तमूर्धज्ञहाति देहदग्रः चित्तदग्रहोवा म्रान्तत्वाद्यापनात् अनेनवीजस्यापहारे अंकुरोत्पादकत्वंस्चितम् प्रताहशस्यस्वसाध्यसहितस्यप्रकारे गीतदगरित्यागेपुनः सर्वदोषः संभवति कृञंकषाप्रवाहपतितनौकोत्तरण्वत् देहोत्तरणंकर्त्तव्यमिति तत् प्रकारमाह दर्शयन्निति आत्मनो देहस्यजङोऽतःकरण्यविकक्तृन्यः जडमरतवत् उन्मत्त इदियविकलः मदिरामत्तवत् पिशाचोभूतप्रस्तः देहविकलः एवं देहदियातः करण्यानियथानपरेराक्रम्यते तथाविधेयानि अन्यथाऽन्यत्रप्रविद्यानिवीजभावमापद्यरत् ॥ ४३॥

अनिप्रयमाणाइति अनेवस्यमाणाः इतेस्ततोऽनवलोक्तयन् तस्मिन्नेवदत्तिचतः स्वभावतप्वान्यवचनमञ्चयवन् सर्वथामात्मितदत्त चित्तस्तत्त्वश्चापनायविधरोयथोति दग्धपटवत् तस्यगमनसंस्कारः इयमेवावस्थावस्यविद्वविधिरिद्वयाणांविषयात्रहणमयतिशुकवत् तदुकं गंतव्यदेशमाहउदीचीमितियद्यपिसवेदेशेषुनास्यनाशः तथापिमयाद्यातत्रेवगतः महात्मिभिरिति पतदपेक्षयापितेमहांतहति तेषाम्ज-गमनंयुक्तमितिभावः शून्यवत्गमनंवारयतिहृदिब्रह्मपंरभ्यायित्रिति यद्यपिवाह्यानित्यक्तानिताहशस्यभ्यानंनापेक्ष्यतेस्वतपवस्फुरितिवाण्य गमनंयुक्तमितिभावः शून्यवत्गमनंवारयतिहृदिब्रह्मपंरभ्यायित्रति यद्यपिवाह्यानित्यक्तानिताहशस्यभ्यानंनापेक्ष्यतेस्वतपवस्फुरितिवाण्य निभव्यक्तिद्दशायांभ्यानंकर्त्तव्यंनतृष्णीभावायुक्तइतिकियत्दृरगतिमत्याकाक्षायामाहगतः प्राणीयतोनावर्ततेकंपर्यतिहमेजलेवातावत्रदूरं गतइत्यर्थः॥ ४४॥

# है पर १ क्षेत्र हैं कर है है कि एक एक शिविध्वनाथ चेक्रेवर्सी। है के एक एक एक एक एक एक एक एक हैं है है है

अञ्जीनवद्युधिष्ठिरोऽपि वहिरनुसन्धानिवृत्यये प्रयततेस्मेत्याह । वाचिमित्युपलक्षणं सन्वेन्द्रियाणि मनसि मनोऽधीनवृत्तित्वात् तश्च मनः प्राणे प्राणाधीनवृत्तित्वात् तस्मिन्नेव जुहाव समर्पयामास जुहोतेदीनार्थत्वात् । हे मनस्तुभ्यमेवेन्द्रियाणि दत्तानि तवैवैतानि सन्तु साम्प्रतं ममैतैः प्रयोजनं नास्तिति धारयामास । तेषु स्तत्वाभावेन वस्तुतः सम्प्रदानाभावात् न चतुर्थी । एवमग्रेऽपिसन्वंत्र क्षेयम् । नन्वहं कस्य भवामीत्यत् आह् । तन्मनः प्राणे जुहाव । तं प्राणम् इतरे अपाने तेनाक्ष्णात् । अपानव्यापार उत्सर्गस्तत्सहितमपानं मृत्यी तदिधिष्ठातृदेवतायाम् । अनेनैव वागादिष्वपि तत्तत्कममसाहित्यं क्षेयम् । तं मृत्यं पञ्चत्वे पञ्चभूतानामैक्ये देहे । हे मृत्यो त्वं देह-स्वैव भव इति भावितवानित्यर्थः ॥ ४१ ॥

ततश्च पृथिव्यादिभूतपश्चमं क स्थास्यतीत्यत्राह । त्रित्वे गुगात्रये तच्च त्रित्वम एकत्वे व्यष्टिक्षे मायांशे तत् सर्वमात्मिन जीवे अजुहवीदित्यार्थम् अजोहवीदित्यर्थः । हेजीव तवैतन्मायांशकृतमुपाधित्रिकम् एतस्मात् त्वं पृथग्भृत एव विराजस्व नैतस्याधीनो भवेति भावः तश्चात्मानं ब्रह्माग्रा । एवं परीक्षिति स्वराज्यभावं वज्रे च मथुरां समर्प्यं तत्सम्बन्धमात्मनो दूरीकृत्य वहिनिश्चिन्त इव इन्द्रियादी भावः तश्चात्मानं ब्रह्माग्रा । एवं परीक्षिति स्वराज्यभावं वज्ञे च मथुरां समर्प्यं तत्सम्बन्धमात्मनो दूरीकृत्य वहिनिश्चिन्त इव इन्द्रियादी निष तत्त्वद्रश्चिति योग्ये समर्प्यं अन्तर्निश्चिन्तो वभ्व । तथाहि ब्रह्मागः कृष्णास्यव जीवो जीवस्यव व्यष्टिमाया तस्या एव गुगात्रयं गुगात्रयस्यव पश्चभूतात्मको देहः देहस्यव मृत्युमृत्योरेवापानः अपानस्यव प्रागाः प्रागास्यव मनः मनस एव इन्द्रियागि इन्द्रियाणामेव गुगात्रयस्यव पश्चभूतात्मको देहः देहस्यव मृत्युमृत्योरेवापानः अपानस्यव प्रागाः प्रागास्य । किन्तु भगवित्रत्यपरिकरत्वाित्रत्यवित्रहागाः मिष्य राज्यादिभोगाः तेषाश्च भोका संपति परीक्षिदेव न तु अहमिति विचारयामास । किन्तु भगवित्रत्यपरिकरत्वाित्रत्यवित्रहागाः मिष्य तदानीमात्मानं प्राकृतशरीरं मत्वैवायं विचारोऽप्यकिश्चितकर प्रविति ह्वयम् ॥ ४२ ॥

तदेवं सञ्वधा निश्चिन्तस्य तस्य वाह्यस्थितिमाह चीरेति । बद्धवाक् मौनी । अनपेक्षमाणः अनुजादिप्रतीक्षामकुर्वन् ॥ ४३॥ अधुना न्यस्तसमस्तभारोऽहमव्यत्रः कापि विविक्ते देशे श्रीकृष्णप्राप्त्यथे "मन्मना भव मद्भक्त" इति भगवदुपदिष्टमेवोपायं करिष्याः अधुना न्यस्तसमस्तभारोऽहमव्यत्रः कापि विविक्ते देशे श्रीकृष्णां प्रायन् धातुम् ॥ ४४॥ मिति निश्चिन्वतस्तस्य चेष्टामाह उदीचीमिति । परं ब्रह्म श्रीकृष्णां ध्यायन् धातुम् ॥ ४४॥

सर्वे तमनुनिर्जग्मुश्रीतरः क्रतनिश्चयाः ।
किल्नाधर्म्भमिनेगाः स्ट्रष्टाः प्रजा भुवि ॥ ४४ ॥
ते साधुकृतसर्वार्था ज्ञात्वात्यन्तिकमात्मनः ।
मनसा धारग्रामासुर्वेकुगठचरगाम्बुजम् ॥ ४६ ॥
तद्भ्यानोद्रिक्तया भक्षा विशुद्धधिषग्गाः परे ।
तिस्मन्नारः।यगापदे एकान्तमतयो गितम् ॥ ४७ ॥
श्रवापुर्देरवापां ते त्र्यसद्भिविषयात्मभिः ।
विधूतकत्मपास्थानं विरजनात्मनैव हि ॥ ४८ ॥

# production of the content of the con

वंधनसंछेदनप्रकारमाहं वाचमिति द्वाश्यीवाचवागुपलिश्वतानिसविषयाग्युभयेन्द्रियाणिमनस्ति अजोहवीत् जुहाव मनोऽधीनानि भावितवान् लयस्विद्रियाणांमनिसनशंक्यस्तेषांतत्कार्यत्वाभावात् मनः प्राणितीमत्रेऽपाने सोत्सर्गेणस्वकीयनव्यापारेणसंहितमपा नमृत्यो अधिष्ठातृदेवतायाम् तदेहनाशकंमृत्युपञ्चत्वेपञ्चभूतेषयदेहभावितवान् ॥ ४१ ॥

पश्चत्वपश्चमृतैक्यंचसं तन्मात्रपंचभृताहं कारादिद्वाराययाकमंत्रित्वेगुगात्रयेकारगोहुत्वामविलाप्यतं कत्रित्वमेकत्वेप्रकातितः वेज्ञहाव सर्वे स्थानितपहार्थस्यजीवभीग्यत्वमावनयाऽऽत्मनिजीवे अज्ञहवीदजोहवीत् अज्ञहवीदिलापेपदम् तेजीवात्मानेनियम्यभूतम् नियंतप्ये व्ययेष्ठद्वाणि अजीहवीत्समप्पेयामास ॥ ४२ ॥

व्ययेश्रहाणि अजाहवात्समण्ययामास ॥ ४२ ॥ एवंचतनाचेतनभृतंवस्त्व्यद्यात्मकमित्यनुसंद्धानस्य भ्रात्भिःसहितस्यभगवत्स्भानप्राप्तिमाह श्रीरवासेतिसाईःवर्भिः वसवाग् मौनी निरगादित्युसरेगान्वयः ॥ ४३ ॥

नाबेह्यमाणः भगविद्वतरपदार्थमात्रापेक्षात्रद्यः निर्णात गृहादितिरोषः महात्मिममहातुभावेगैतपूर्वो यतःयश्यादिशिगतोसावति ततामुदीचीमाशांपरंत्रमाश्रीकृष्णाष्यंहदिध्यायन्प्रविवेश ॥ ४४ ॥

# माण्रा दीका ।

चीर वस्त्र धारण कर निराहार होकर मीन होकर बाल खुले हुए हैं, जड़ उन्मत्त पिशाच के समान अपना कप दिखाते किसी की अपेक्षा न कर विधर के समान सुनी अनसुनी करते घर से निकल गये। और पूर्व २ महात्मा जिस दिशा में गये हैं उसी उत्तर अपेक्षा न कर विधर के समान सुनी अनसुनी करते घर से निकल गये। और पूर्व २ महात्मा जिस दिशा में गये हैं उसी उत्तर विशा में प्रवेश किया। हृदय में परब्रह्म का ध्यान करते, जहां से गया हुआ कोई फिरकर नहीं आता है। ४३।४४॥

# श्रीधरस्वामी।

अध्रमों मित्रं यस्य तेन ॥ ४५ ॥

साधुकताः सन्वेऽशी धर्मादयो यैः । अतएव वैकुग्ठस्य चरगाम्बुजमेव आत्यन्तिकं शरगां श्रात्वा मनसा धारयामासुः ॥ ४६ ॥४०॥ कथम्भूते पदे विधूतकल्मषागाम् आस्थानं निवासस्थानं यत् तस्मिन् । विरजेनात्मनेव प्रापुः न तु षोड्शकलेन लिङ्गन । गतेव्वी विश्वामा विरजेनात्मनेवावस्थानरूपं गति ते विधूतकल्मषाः प्रापुरिति ॥ ४८ ॥

## श्रीवीरराघवः।

त्युधिष्ठिरमनुसृत्यतद्भातरः सर्वेकृतनिश्चयागमनायकृतोनिश्चयोयैस्तेकृतविवेकावानिर्जग्मुः तेभ्रातरःयुधिष्ठिरादयोवायधर्मः मित्रं यस्यतेनकाळिनास्पृष्टाः प्रजाभुविद्दष्ट्वा ॥ ४५ ॥

असाधुकतास्तुच्छीकताः सर्वेअर्थादेहतदनुवंध्यादयोयैस्तथाभूताः आत्मनोदेहस्यात्यंतिकंमरगांशात्वाभगवसरगाम्बुजंमनसाधार बामासुःयुधिष्ठिरादयः॥ ४६॥

तस्यवैकुग्ठपद्दाम्बुजस्यध्यानेनोदिक्तयाभक्त्याविद्युक्षधिषगाबुद्धिर्येषांतेनारायगापदवाच्यपरमपुरुषेएकान्तागतिर्मतिर्येषांमतेरैक्यंनाम तस्यवैकुग्ठपद्दाम्बुजस्यध्यानेनोदिक्तयाभक्त्याविद्युक्षधिषगाबुद्धिर्येषांतेरसाद्धिर्दुरात्मभिद्देःखेनाप्यवाप्तुमशक्यांगतिमुक्त्यात्मिकामवापुः तद्वो

# १ (१) वर्ष १९७५ **श्लीवीखाध्यक्त**ार है ए प्रतिकार है

पपादयतिबिधूतानिनिरस्तानिकृत्मकृतिस्भगवत्प्रार्षिक्षतिबन्धकानिपूर्वोत्तराघाणिः येष्ठातिवरजेन्छजस्तमोरहितेनआत्मनास्वरूपेण्स्यान श्रीनारायग्रास्यपदमवापुरित्यनुषंगः ॥ ४७ । ४८ ॥

# HER BELLEVINE TO BE SEE SHEET श्रीविजयध्वजः।

भ्रातरः भीमसेनादयः अधर्मामित्रेगाअधर्मप्रधानेन ॥ १४

भ्रातरः मामसनादयः अधमामत्रगाअधमप्रधानन् ॥,४४ आत्मनः परमात्मनः खरूपमात्यंतिकंसर्वातिशयमथवात्मनः खस्यथात्यंतिकमंतकालेकतेव्यंशत्वासाधुसम्यक्कतोऽ नुष्ठितः सर्वा थों धर्मादियें स्तेतथा साधुनाकर्मे गापु गयलक्ष गोनक चादिकक्षानिरस्ताः सर्वे अर्थाः शब्दादिविषया येस्तंतथो काइतिवा कृती छेद् नइतिधातुः अत्रहरामनोधारगांनामाखंडस्मरगामितिज्ञातव्यम् ॥ १५॥

इत्थंनारायग्राचरगांवुजंहदिसंविधायतद्वयानेनोद्धिक्तयाभक्त्याविशुद्धमतयोऽ होभिः सप्ताभिभुवप्रदक्षिग्राहित्यगंधमादनगिरिविवरे बदर्यां ख्यंनारायणाश्रमंत्राप्यतास्मन् परेमनोहरेनारायगापदेनारायगाश्रमपकातमतयः एकातिनारायगांच्यायंतस्तेपांडवाः अपतब्छरीरागि

तत्यज्जरित्यन्वयार्थः एकमनस्कावा ॥ १६ ॥ श्चादिविषयमनस्केरसद्भिरमंगलैः पुरुषेर्दुरवापंगतुमराक्यंनिरस्तजरामरणादिकलमषस्थानंस्वस्वमूलकृपंविरजेनरजआदिगुगात्मक लिंगशरीराभिमानरहितेनात्मनामनसाउपलक्षितास्तेप्राप्ताइत्येकान्वयः एवकारस्तुदेवदूत्द्दित्तमाययायुधिष्ठिरहृष्ट्भीमादिरोदनापादक लोकंबापुरित्यस्मित्रचेत्तुरजोमिश्रितात्मनेत्यत्रहिशन्दस्तुनदोषातदेहपातः कितुपारन्धकर्मनाशादित्यस्मित्रधेश्रुतिप्रसिद्धियोतयति श्रुति रिपसकलसुरोत्तमालिपुरंसरगर्गोराराधितचरगाःश्रीभगवत्पादैःसकलपुरागासारसंग्रहग्रहेश्रीमहाभारततात्प्रयुनिग्वियउद्गतस्तानास्माभिर

त्रोदाहियंतेष्रंशवाहुत्यभयादिति विदुरोऽपिपरित्यज्येतिमक्षेपरकोकः ॥ १७ ॥

### क्रमसंदर्भः।

ते इति । ते पार्डवाः साधु यथा स्यामथा कृतसन्त्रीर्थाः वशीकृतधम्मीर्थकाममोक्षा अपि वैकुर्यटस्य श्रीकृष्णस्य चर्गाम्बुजमेव आत्यान्तिकं परमपुरुषार्थं झारवा तदेव मनसा धारयामासुः ॥ ४६॥

नारायगाः श्रीकृष्णः ॥ ४७ ॥

पुनर्गतिमेव विशिनष्टि । विधूतकल्मषंयत् आस्थानं नित्य-श्रीसंध्याप्रकाशास्पदं तदीया सभा । । आत्मना खशरीरेगीव । तत्र हेतुः विरजेनाप्राकृतेन । हिराब्दोऽसम्भावनानिवृत्यर्थः ॥ ४८ ॥

# सुबोधिनी।

अन्येषांनिर्गममाहसर्वदितअनेनैवप्रकारेगासेवषांगमनमाहतम्वित्वतिलीकिकशास्त्रीयसमितमाहभातरः कृतनिश्चयाद्दिमानृगाांयदन्यः करोतितत्सर्वेषुवैतीतिलोकः शास्त्रेतुनिश्चितंषुवैतीतिमुख्येशास्त्रार्थसंभवइतिन्यायेनसर्वेषुयदिशास्त्रार्थसंभवः स्यात्सर्वेमुख्याः स्युः अय लोकवद्वेदेऽपितेगी गार्डितितत्क्षथंतद्वद्विदेशहत्याशंक्यतथाशास्त्रार्थनिद्धीरेऽपित्यलप्रकारेगातेषांनिर्धारोऽस्तीतितदाह भगवद्वके खुविषया गांवाधकत्वाभावेऽपिदुःसंगसहितानांतेषांकथात्वात्कालेनदोषसम्भवात्कलिनाधर्मभित्रेगासर्वाःप्रजाः हृष्ट्वागंतुं कृतिधयोजाताहति ॥ ४५॥

े वैराग्यंसाधनमाहतेसाधुकृतसर्वार्थाङ्तिधर्मार्थकाममोक्षाश्चत्वारःपुरुषार्थाःसाधुयधार्मवतितथाकृताःचतुर्गोपुरुषार्थानां स्वसाधनसा ध्यन्तेषुचभगवत्सेवासाध्यताप्यस्तितत्रापिभगवत्सेवयासाधितानिःप्रत्यूहमुत्तमाभवंतिअतस्तैःसर्वै पुरुषार्थाःसाधिताःअथवासाधुषुकृताः सर्वपृह्णार्थाःसिद्धाःअतस्तिद्वरोधित्वेनअसन्संगोहेयइतिपूर्वेगासम्बन्धःअथवामक्तिःपंचमःषुरुषार्थःचत्वारस्तैरनुभूताःभक्तिश्चपंचमःतत्र तार्तस्यविचार्यमाणेअत्यन्तंसुखंसुखहेतुश्चभिक्तरेव अतुआत्यन्तिकंजात्वाश्रीकृष्णाचरणारविन्दमेवमनसाधारयामासुः॥ ४६॥

ततः किंवृत्तमित्या तद्वचानेनउद्दिकायाभिकः सर्वागेपूर्णावहिरपिनिर्गतातेनअतःस्थान्दोषान्द्रेचहिः करातिअताविशुद्धधिषणाः ततः परेपुरुषोत्तमेअनन्यशब्दवाच्ये तस्मिन्प्रसिद्धे नारायगापदेनारायगोब्रह्मांडरूपः पदयस्य अनेनशास्त्रार्थरूपेएकांतमतयो भृत्वादीया देवव्यभिचारव्युत्पत्तेः गतिर्गमनसामर्थ्यगमनमेवअवापुः पूर्वशास्त्रतः साधनान्युक्तानिनफलमेतेषांतुफलमप्युक्तम् अथवाज्ञानमार्गेण्यक्षोगतिः अन्येषांभक्तिमार्गेगोति अथवालोकेऽप्यस्तिभोगपर्यतमसाधारगयेनगमनमुक्त्वापश्चात् सर्वेषांसाधारगयेनगमनंसाधनंफलम् अतःसर्वएव शास्त्रमार्गेपरित्यज्य केवलविषयात्मभिः दुरवाषांगतिमापुरिति सर्वेषांभगवत्प्राप्तिः फलम् असन्निरित्याचारराहित्यं सिद्धेऽपिक्षाने अभिमानशेषस्यविद्यमानत्वात् तत्कृतोदोषः स्यादेवविषयात्मभिरिति अंतःकरगादोषः प्रत्येकगमनेहेतुः पाषंडिविषयब्यावृत्यर्थततोगित प्रतिपद्यसमीपेगच्छंतः क्रमेगातस्वांशातिक्रमेगा यदासर्वाशातिक्रमः तदाविधूतकल्मषत्वमात्मापेक्षयाअन्यस्यसर्वस्यैवकल्मषत्वात्स्यानस्य स्वस्यचएकरूपत्वंतदाहिवरजेनेति हियुक्तोऽयमर्थः नहाशुद्धाःशुद्धे गंतुमहिति शुद्धानांवाअशुद्धंस्थानंभवतितस्मात् यथायोग्यंस्थानम्प्राप्त वंतइत्यर्थः ॥ ४७ । ४८ ॥

र्वे १ रहा व स्थल कुण्या प्रकृतिक प्रकृतिक हैं र लीते हैं

विद्रोऽपि परित्यज्य प्रभासे देहमात्मवान् । कृष्णावेशेन तिचनः पितृभिः स्वक्षयं ययौ ॥ ४६ ॥ द्रौपदी च तदाजाय पतीनामनपेक्षताम् । वासुदेवे भगवति हाकान्तमतिराप तम् ॥ ५०॥ यः श्रद्धयैतद्भगवत्प्रियागां पाण्डोः सुतानामिति सम्प्रयाणम् । शृगोत्यलंखस्त्ययनं पवित्रं लब्ध्वा हरौ भक्तिमुपैति सिद्धिम् ॥ ५१ ॥ इति श्रीमद्रागवते महापुरागा पारमहस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्वे पारीक्षिते युधिष्ठिरादिस्वर्गारोह्णां नाम

पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती ।

श्रीकृष्णं प्राप्तुं वयमपि तन्मनस्का एव भवामेति कृतो निश्चयो यैस्ते ॥ ४५ ॥

साधु यथा स्यात तथा कृता अनुष्ठिताः सर्वेऽथी धर्मादयो यैस्तथाभृता अपि आत्यन्तिकं तेश्योऽप्यत्यन्ताधिकं श्रीकृष्णाचरणा-म्बुजमेव मनसा निर्द्धारयामासुः। साधुकृता धम्मीर्थकाममोक्षा यैरतएव चरुणाम्बुजमेवात्यन्तिकमिति श्रीस्वामिचरणाः॥ ४६॥

विद्युद्धा ज्ञानयोगाद्यमिश्रा धिषगा बुद्धिर्येषां ते। अतएव एकान्तमतयः। गति कीहर्शी विधूतकलमषागाम् आस्थानं निवासस्थान नम् । यद्वा विधूतकल्मषागाम् आस्थानं सभा सुधर्माभिधाना यत्र तत् कृष्णाधामैव गतिम अवापुः। केन प्रकारेगोत्यत आह । विरजेन निर्मलेन गुगामयधर्मेन्द्राद्यंशराहित्याद्पाकृतेनात्मना स्वश्रीरेगीव न तु देहभङ्गेनेत्यर्थः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

#### धन्तकार के प्राप्त कर के किया के अने किया है।

अधर्ममित्रेगाकलिना स्पृष्टाः प्रजाः दृष्टा ॥ ४५ ॥ ते सर्वे युधिष्ठिर प्रमुखाः असाधुकृताः सर्वेपेहिकामुभिकाअर्थायैस्तेआत्मनः आत्यंतिकंपरंप्राप्यं वैकुंठचरणावुजंबात्वाम्बन्धाधा

तस्मित्रारायग्रस्यपदेचरगांबुजेपरेसर्वत उत्कृष्टे एकांतातदैकविषयामितर्येषां ततस्यचरगांबुजेस्यध्याननादिकया तिष्ठयीभक्त्या असद्भिर्दुरवापांगातेंमुक्ति "योऽस्याध्यक्षः सपरमेव्योमित्र" तिश्वतिप्रोक्ते परमव्योमाख्यं स्थानंच विरजनकार्यकारणसंवंधरिहतेनात्मना अवापुरितिद्वयोरन्वयः ॥ ४७ । ४८ ॥

पृणिवीं में अधर्म मित्र कलियुग ने स्पर्श करी प्रजा को देखकर भीम आदिक सबै भाताओं ने भी निश्चय कर युधिष्ठिर महाराज का 

साधु कृत सर्वार्थ युधिष्ठिर आदिक सव अपना आत्यंतिक समय जानकर मन से वैकुगठ चरणाम्बुज का ध्यान

करने लगे॥ ४६॥ भगवान के ध्यान से उद्रिक्त भक्ति से विशुद्ध बुद्धि युधिष्ठिरादिक सब एकान्त मित उसी नारायगा के परमपद में गत प्राप्त हुए उस गति को प्राप्त हुए जो विषयात्मा असत्य पुरुषों को दुष्प्राप है। किन्तु ये युधिष्ठिरादिक से विधूत कल्मण, विरज आत्मा से उसी ≠थान को प्राप्त हुए॥ ४७। ४८॥

#### श्रीधरखामी।

तीर्थान्यटन् प्रभासे कृष्णाविशेन श्रीकृष्णे चित्तमावेश्य देहं परित्यज्य तिचित्तः एव सन् तदानी नेतुमागतैः पितृभिः सह स्वक्षयं स्वाधिकारस्थानं ययौ ॥ ४९ ॥

आत्मानं प्रत्यतपेक्षतां तदा शात्वा तमाप ॥ ५० ॥ इत्येवं यत् सम्प्रयागां अलम् अतिशयन स्वस्त्ययनं मङ्गलास्पद्यमलं पवित्रश्च ॥ ५१॥ , इति श्रीमद्भागवतभावार्षदीपिकायां प्रथमस्कन्धे पश्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

#### दीपनी।

स्वाधिकारस्थानं यमलोकमिति प्राञ्चः ॥ ४९ ॥

अनपेक्षताम् अपेक्षाराहित्यमित्यर्थः । तं श्रीकृष्णम् ॥ ५० ॥ ५१ ॥

# श्रीवीरराघवः।

विदुरोऽिपिकिंचित्कालतीर्थान्यिदित्वापांडवादीनांगितिमाकगर्यात्मवान्भगवितसमाहितिष्यःप्रभासेदेहंपरित्यज्यकृष्णाचेशेनकृष्णासमा धानेनतिष्यतः कृष्णोकविषयकचित्तः पितृभिः पितृदेवताभिः सहस्वयंखस्थानंययौ पुनर्यमप्वभूत्वाखलोकंययावित्यर्थः कृष्णोपदेश हितपाठेयतुकुलसंहाराययत्रश्रीकृष्णाः प्रविष्टस्तिस्मन्देशेप्रभासेहत्यर्थः पुनर्धः प्रतनाभावात्पायद्ववादीनांमुक्तत्वकथनंतिहिपारम्थकर्मा वसानेविमोक्ष्यन्तेप्वातोनविरोधः ॥ ४९ ॥

तद्राद्रीयद्यपिपतीनामनपेक्षतामाद्यायद्यात्वावासुदेवेभगवतिपकान्ताविजातीयप्रत्ययान्तराज्यविह्नतमितर्येस्यास्तयाभूतातंबासुदेवम-वाप ॥ ५० ॥

श्रीकृष्णादीनांत्रयाणश्रवणादिफलमाहयरति रतित्यमतितरांखस्त्ययनंशृण्वतांपठतांचशुभावदंपवित्रंचभगवतः प्रयाणंपांदोःसुतानां संप्रयाणंचयःपुमानश्रद्धयाशृणोतिहरोभिक्तिल्ध्वासिद्धिमुक्तिमुपैति॥५१॥

इतिश्रीवीरराघवटीकायांप्रयमस्कन्धे

पंचदशोऽध्यायः॥ १५॥

#### एक क्षेत्रक ग्रांतिक में विकास <mark>श्रीविजयभ्वजः ।</mark> १९४१ के १९४८ वर्षा १९७० वर्षा १८३६ वर्षा के स्थापक मान्यक विकास मान्यक हो।

अनपेक्षतांदेहाचनसिमानवतामेकांतमतिरेकाप्रचेताः ॥ १८॥००० व्यविक १४० व ४० व्यविक १४० व विकास वार्धि क्रिकेट

श्रीकृष्णपांडवानांस्वधामप्रवेशश्रवणादिनार्किप्रयोजनंयेनात्रावश्यंवक्तव्यंस्यादितितत्राद्यः यद्दति यपतद्भगवस्त्वधामप्रवाणंभकानां चपांडवानांचप्रयाणादिकंश्रृणोतिसहरोभक्तिलब्ध्वाशांतिमुक्तिमुपैतीत्यन्वयः अलंत्रिकरणशुक्रया ॥ १९ ॥

इतिश्रीभागवतेप्रथमस्कंधेविजयध्वजटिकायांपंचद्शोऽध्यायः॥ १५॥

#### क्रमसंदर्भः।

विदुरस्य यमलोकगतिः खाधिकारपालनार्थे लीलया कायन्यूहेनेति श्रेयम् । तदित्थमेव श्रीभागवतभारतयोरिवरोधः स्यादिति ४९ आत्मानुं प्रति अनपेक्षमाणानां तत् श्रीकृष्णसङ्गमनम् आश्वाय सम्यक् श्वात्वा।वासुदेवे श्रीवसुदेवनन्दने । हि प्रसिद्धौ । यस्मिन्नेकान्त मितिस्तमेव प्राप्तवती । अत्रान्येन पथा गच्छतोऽप्येवान् श्रीद्वारकानाथः खयं खदाक्त्वा खसमीपमेवानीतवानिति गम्यते । नित्यं सिन्निहित हृत्याद्युक्तेः ॥ ५० ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकृतकमसन्दर्भे पञ्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

# सुवोधिनी।

अधिकारिणांभक्तानामपि"यावदिधिकारंत्वाधिकारिकामि" तिन्यायेननभगवत्प्राप्तिः किंतुस्वस्थानप्राप्तिरेवेति विदुरेतदाहिवदुरो ऽपीति प्रभासोह्यधिकारस्थानमार्गः आत्मवान्द्रनिद्रयादिसहितः पूर्वदेहसहितोवामोक्षार्थमाश्रयकरणेहेतुः रूष्णावेदोनेति तिस्त्रपवभगवदाश्रया अधिकारंकरोतीति पितृभिरिति समानयनार्थमागतैः स्वक्षयंवैवस्तत पुरंक्षयपदप्रयोगस्तुतत्रगतानांतथात्वात् ॥ ४९ ॥

द्रीपद्याभिन्नांगतिमाह द्रीपदीति सापूर्वमेवभगवदीयाभगवत्राप्रवेशार्थमुद्यतापिभगवतापितश्योदसत्वात् तत्रहितांधिस्थता तेषांचानपेश्चतांबात्मास्वद्वयुप्पवप्रकटेभगवति एकांतगतित्वादस्याः देहेंद्रियादिसंघातादुत्कम्यभगवति भापतदित्यर्थः॥५०। ५१॥

इतिश्रीभागवतसुवोधिन्यांश्रीलक्ष्मगाभद्दात्मजश्रीवल्लभदीक्षितविरचितायां

प्रथमस्कन्धेपंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

ब ्राह्म सुन्द्रकारी । वेह्नुसारक पद्रावेश स्वयंक्षीरी दशका

#### श्रीविश्वनायुत्तकवर्सी।

देहं परित्यज्येति । देवतारूप एव न तु पार्षदरूप । अतएव पितृभिस्तदानीं नेतुमागतैः सह । खक्षयं खाधिकारस्थानम् ॥ ४९ ॥ द्रीपदीति । सुभद्रादीनामप्युपलक्षणम् । तम् आपेति देहत्यागांचुर्त्तेवाः दारीरेगीविति ॥ देवाः विकास स्वापास । तम् इति एवं संप्रयागामेव न तु प्रकारान्तरम् । सिद्धिं सिद्धिदशाम् ॥ ५१ ॥

> इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिगुयां भक्तचेतसाम् । प्रथमेऽयं पंचदर्शः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १५ ॥

# 

कार सामा बिन्दा । एको कार कार कार मारा है तक व ता है है । व्यवस्था संभावना संभाव के कार कार कार के समाचे के वा

૧૯૭<del>૦ કાર્યા કર્માં કરવામાં એક એક કેઇ કેઇ કરાવામાં આપાલે આપાસ કરવામાં માને કરે માને માને કરાવામાં કે સામાન</del> કરાય

खक्षयंखाभीष्टस्थानम् ॥ ४९ ॥

द्रीपदीतद्वापतीनामात्मानं प्रत्यनवेक्षतामाञ्चायशात्वाभगवतिएकातमतिः सतीतंभगवंतमाप ॥ ५० ॥

यः सुकृतिः एतत्पूर्वोक्तं श्रीकृष्णस्यभगवतोनिजलोकगमनं तथाभगवत् प्रियाणांपांद्धोः सुतानां कुंत्यादिसहितानाम् इतिपूर्वोक्तंप्रया गाम अलमत्यर्थेखस्त्ययनंपवित्रम् ऋगोति सहरोभिक्तिलब्ध्वासिद्धिमुपैति ॥ ५१ ॥

इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्कंधीयेपंचद्शाऽध्यायाथेप्रकाशः॥ १५॥

### desta antrocomo de s भाषाटीका ।

विदुर्जी भी श्रीकृष्णके आवेश से प्रभास में अपना देह परित्यान कर पितृगर्णों के सहित अपने स्थान को चले गये ॥ ४९ ॥ द्वीपदी भी पतिओं की अनपेक्षता जानकर वासुदेव भगवान में एकातमतिहोकर उन्हीं वासुदेव को प्राप्त हुई ॥ ५० ॥ भगवत प्रिय पांडवों के पवित्र स्वस्त्ययन इस प्रयाग को जो श्रद्धा पूर्वक सुनता है वह हरि मै मिक को प्राप्त होकर को प्राप्त होता है। अश्रीकारण विकास कार को विकास के प्राप्त किया है के अपने कार्य के किया कार कर के कार कार की कार की अ

प्रथम स्कंध का पंचदश अध्याय समाप्त ॥ १५ ॥ मा रहे है। अनुसर्व के ते के ले का स्थानिक का के सामित है के के के कि ता है के कि

्रा केन्द्रवेश **र्शक्त प्रमा**क्षणकार भेष्ठ के वेश मेर्ड अस्पर्व <del>हैं के लिए क्षेत्र के लिए क</del>

क्ष महास्मित्र विकासीक्षा करी व **क्षींसम्बद्धा**रीक्ष स्थानिक में स्थानिक स्थानिक स्थानिक कार्या के किया है के किया . Tatia (enel 1 Geres continuado nomitro en encorrer men intermentada de perío e um com continuo e el membro esta

क्षा के कार्यकार कि कार्यकार है। जान कार्यकार के कि कार्यकार के कि कार्यकार के कि कार्यकार के कि

gar Bergira roma (m. 8). Producija prantim moniska rodeni opisa pravira do 2001.

ន្តក្នុងស្វាស់ស្រាស់ ប្រៀ**ន** ក្នុងនៃស្វា**ក្នុងស្វាស់ ក្រុងស្រុសស្រាស់ ស្វាក្**នេះ ប្រ<mark>ងាព្ធស្វាស់ ស្វាស់ ក្រុងស្វាស</mark>្វាស់ ស្វាស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស់ ស្វាស g neigh a kanggran geograp, legge grand fra grand kopenske grand kommen a geograp kom til til gr

्यु भोर्ता लेक्षित्र । कार कार मार्केन्द्र भोज क्षता प्रकार कार्य के तथा है। कि को कार्य कार्य कार्य कार्य के a particle single service district and property and the files are considered as a sec-

इसका पुर्ने स्थापन पुर्व प्रता विकासीता प्राव्यक्त स्थाप क्षेत्रकारीका विवास व

over the property of the property of the

र्याजीय तथाल्या ।

्रे े । १ व. १ व. १ विवास वेले एक स्थान एक एक एक एक मान्य महिन्या कुल्यमहै मागु प्राप्त प्राप्त के समान महिन्य के स्थान के स्थान के स १ ६ १ अक्षणकोश्यास्य नामस्य क्रमणम्य स्विद्धाः विवादः ।

स्ति उवाच।

ततः परीचिद्विजवय्यशिचया मही महाभागवतः शशास ह । यथा हि सूत्यामभिजातकोविदाः समादिशन् विप्र ! महद्गुग्रास्तथा ॥ १ ॥ स उत्तरस्य तनयामुपयेमे इरावतीम्। जनमेजयादीश्चतुरस्तस्यामुत्पादयत् सुतान् ॥ २ ॥ ्र भारत स्राजहाराश्वमेधांस्रीन् गर्झायां भूरिदान्तिगान्। शारद्वतं गुरुं कृत्वा देवायत्राऽ क्षिगोचराः ॥ ३ ॥ निजयाहौजसा वीरः कार्लि दिग्विजये कचित् । क्षा का का का का के कि का के का कि का क का का का का का का कि क्षात्र विश्वासीय स्थापीय स्था ्रे एक्ट<mark>ारामीक्षेत्रको स्वत्रम्</mark>यक्षाः इत्यारक्षाः हेन्स्य

**នេះ ស្រាស់សំខេត្តក<del>ារប្រភព្</del>ជាការ សេ**ខាធាតិសាយសមាជាមែន សមាជាមែន សុខាធិន្តិភេស នេះ សេចប្រើបាន នេះ អ្

वर्षा कि विकास के कि विकास कि विकास के लिख में में मिश्र में यो कि लिख में यो है। And the state of the second क्षेत्र विकास कार्य के विकास करते । स्मिन्नां दे वर्णयते प्राप्तिः पालकस्य परीक्षितः ॥ ० ॥

द्विजवर्थीमां शिक्षया । सूर्त्या जन्मनि । अभिजीतकोविदाः जातकम्मेविदः । हे विप्र ! । महतां गुगा यस्मिन् सः ॥ १ ॥ ्रजनमेज्याद्वानित्ये प्रकाशनाधिक्यं छान्द्रसम्। इतपाद्वयद्वित्यद्वाग्रमामावः आर्षः ॥ २ ॥. आजेहार कृतेवानित्यर्थः । शारद्रते कृपम् । यह वेष्वश्वमेधेषु ॥ ३॥। हाराके एक एक वर्ण हो। तिजग्राह् निग्रहीतवान् । कंलिमेले निर्दिशांति नृपेति ॥४ ॥ ार के प्रति हो। हो है के विकास के कार्या के किस्ता के किस्ता के किस के कार्या के किस के कार्या के किस के किस क किस के किस क

के वर्षकाम्म हृद्रक्षम् विष्याम हिन्द्रमा कार्यक्रमात्रं स्थितः साथा स्थानमात्रकात्रः अवीत्र मानाव्यकारकात्रका २००५० - वि<mark>ष्टेक्ट के राज्य स्टाइस से १८१५ सम्बोध में १८५ के एक में १८५५ विष्टी प</mark>्रियोग के अनुसार से एक कार्य के व

तदेवसंप्रस्थानपाग्रहपुत्रामान्वस्ये ह्यास्यक्षेत्रमातिप्रतिज्ञातंपाग्रहपुत्रसंस्थानंपरीक्षिज्ञन्मोपेतमुपपाद्यपरीक्षितोऽधराजर्षेजेन्सकर्म विलापनमितिप्रतिकातांनिवर्णायाति तञ्चक्रान्मपांडवपुत्रवसांतपवांतभाव्याभिहितं विलापनंद्वादशेस्कन्धेवस्यति इतः परंचतुरध्यायैःकर्मा शिवगर्यतेइतिविवेकः तत्रतिततःपितृनिर्गमनानंतरंमहांतागुगायस्यसपरीक्षितहेद्विज ! जन्मस्त्यांजन्मदिनेजातककोविदाःविप्राःयथा समादिशन् तथैवद्विजवर्यशिक्षयामहाभागवतः सन्महासशासपाळयामास् ॥१॥

संपरीक्षितुत्तरस्यमातुलस्यतन्यामिरावतीमुपयेमे इतुवाहतस्यामिरावत्यांजनमेज्ञयादीश्चतुरः स्रुतानुद्रपाद्यत् अहभावआर्षः आगम शास्त्रस्यानित्यत्वाद्वा ॥ २ ॥ <u>्रतार्थामं प्रत्यकृतिकारी पूर्ण</u>ी पूर्णालकानुस्तिकः स्टब्लाई खाक्रम् सारकार्यक्रम् स्टब्स्ट्रेस्ट्री । कारणा

शारमतिकेषं गुरुं कृत्वावृत्वागुकायांगुकातीरेत्रीनश्वमेधानाजहारयत्रयेष्वश्वमेधेषुदेवाद्ददादयः अक्षिगोचरावभूषुः तथाविधाना जहारेत्यर्थः ॥ ३॥

कहा चित्रिद्दि विजयेनिमित्ते चरन्वीरः परीक्षित्कचिद्देशयदो पार्देनगो मिथुनंस्त्रीपुं सयोगेवोर्युग्मं इनंतंश्रद्रमापेनृपचिह्रधरंकि स्मोजसापरा-भिभवसाम्रथात्मकोननिजग्राहनिगृहीतवान् ॥ ४॥ का प्रथम में किए राज्य का मार पर्या क्रमा भी की एक राजिका करें में का अनुसार की भी राज्य का मार्थ के जा राज्य

२, १८ व्योगोर्भ सम्मारी केल्या १० अस्तर स्थान सम्मान सम्मान केल्या केल्या केल्या केल्या काला स्थान स्थान स्थान स्थान व्योगोर्भ सम्मान सम् ्रस्य कृत्य**श्रीविजयभ्वजः।** । व १००० वर्षा

अन्नभवतिभक्तिविधानार्थे भगवद्भक्तपरीक्षितःकित्वधनादिमाद्दात्म्यवर्गानेनहरिमिदिमैवप्रतिपाद्यतद्दिन तन्महिमाप्रतिपाद्यतेऽस्मित्र ध्याये तत्रप्रथमेराज्यपालनादिमहिमोच्यतइत्याह ततइति ततः पांडवस्वयीगानंतरंद्विजवर्यशिक्षयाद्वपादिब्राह्मग्रश्रेष्ठसदुपंदशेनिश

#### श्रीविजयध्वजः।

क्षाविद्योपादानम् अभिजातकोविदाः जातकज्ञानपटवः सूत्यामुत्पत्तीयथामद्द्रुगानुपादिशंस्तथातदनुसारेगामहींशशासेत्यत्ययः॥१॥ उत्तरस्यविराटपुत्रस्यपुत्रींनाम्नेरावतीमुपयेमे उपयमनम्बिवाद्यः उत्पादयत् उदपादयत् अजनयत् चतुरद्दतिपाठः॥२॥

शारद्वतंक्रपंयत्रयेषुअश्वमेधेषुदेवाइंद्रादयः अक्षिगोचराः प्रत्यक्षास्ताहशानितिशेषः ॥ ३ ॥

सधीरः दिशांजयेओजसास्वाभाविकशक्त्वाकिंगिगृहीतवानित्यन्वयः नृपाणांशिंगंरुक्षण्यारयतीतिनृपार्छगथरः तंकर्मणाश्द्रतदे वाह पदेति पदागोमिथुनंघनंतताडयंतकिचिदेकांतप्रदेशे ॥ ४ ॥

# क्रमसंदर्भः।

0 11 9 11

स उत्तरस्य तनयामिति पूर्विकया (राज्याभिषेकात् प्राक्) ब्रह्मचर्ये राज्याभिषेकायोगात् ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

# सुबोधिनी ।

प्रवमध्यायत्रयस्थमासंगिकतांशापितुं चरित्रश्रवगाफलमाहमगवतः सर्वाश्रवग्रसाहितस्यसर्वश्रवग्रेसवंफलमितिशेश बग्रदशः फलम न् यतेक वित्रपूर्वसहितम् अतानान्यान्य स्येषणावत्वा सेषुश्रकातेषां सावातंत्रयादिगुग्रावन्य सुतेऽपीतियोतापितुंपाग्र होरित्युक्तं पेहिकफलं स्वस्त्र्य यनंपवित्रमिति इष्ट्रपाप्य निष्ठ निष्ठ स्वाप्य स

इदानीतस्यकृतस्यभूरक्षणस्यानुवृत्तिसिद्धंयेषुत्रानुत्पादितवानित्याह सउत्तरस्योति मातुलकन्यापरिण्यनंलोकिविहितंस्मृतौनिषिद्धं लोकिकधमीणांद्रष्टांतीकरण्यप्रस्तावमानुलस्यदंयोषाभागइत्यत्रनिरूपणात् "मानुलस्यस्तामृद्धामानृगोत्रांत्रथैवच समानप्रवरांचेवत्यक्त्वा लोकिकधमीणांद्रशित्रस्तिः अतः केवलधमाणे ताहशोविवाहोनकर्त्तव्यः लोकिकवलशौर्याद्यपेक्षायांतुकर्त्तव्यप्वअतः उत्तरस्यमातुलस्यवः वाद्रायणांवरिद्धैत्रस्तिः अतः केवलधमाणे ताहशोविवाहोनकर्त्तव्यः लोकिकधनात् भगवत्परिपाल्यत्वंचतस्याः पुत्राजाताः सुतानिति स्वतः चनुर्विश्चरक्षाचनुर्विधपुरुषार्थिसिद्धिश्चतावतेवभविष्यतीतिनाधिकोत्पादनम् ॥ २॥

आधिदैविकप्रकारेणाश्वमेधकरणंपूर्ववदाह आजहारेतित्रिविधोऽपिदोषस्तावतैवनिवृत्तइतिनामकरणंगायामितिगंगागर्भभूमौभूरिद्क्षि णानितिसभार्यादक्षिणाः पृष्टाइतिज्ञापनार्थधौमस्यपाग्डवैकनिष्ठत्वात् कुलाचार्यः कृपप्वअनेनगुरुत्वेनस्वीकृतइत्याह शारद्वतमिति शरस्तं वजातः कृपःभुविदक्षिणाबाह्मणसम्पत्तीयागआधिदैविकोजातदृत्याह देवायत्राक्षिगोचराइतिहविभागभुजोदेवाः भगवदंशभूताः आधिदैविकाः तप्ववैदिकमन्त्रे प्रतिपाद्यामन्त्रप्रधान्यपक्षेण्याध्यात्मिकाः तप्वज्ञानरिहतैः उत्तमास्तुभगवदंशभूताःभगवानिवप्रत्यक्षाः॥३॥

एवंसामान्यधर्मचोक्तवाआधिदैविकत्वख्यापनार्थधर्मप्रतिपक्षानिग्रहमाह निजग्राहोजसेतिअन्यथापाग्रख्यानामिवास्यापि गमनमुचितं स्यात् पाग्डवैः किलभीतेगतंतुअपगतमपिनिजग्राहद्दि पुरुषोत्कषः किचिदितिकुरुक्षेत्रे कलेरवस्थानक्रपमाह नृपिलगधरमितिकलेः कप् अयेपापः शूदः उभयविशिष्टोराजाआधिदैविकरूपः तदाह नृपिलगधरमिति सुपुत्रेगापिसहितागौर्मिथुनत्वेनव्यपदिद्यते मातरमभि गच्छतीतिश्रुतेः अत्यवकिपतस्पर्शयोग्यंक्रपंप्रदर्शितं शक्षसम्बद्धागंत्रलीवर्द्वच्योजियत्वालवमानपादेनम्रतम् अथवाविजिल्यगोमिथुनस्व विश्रयेनयंतराजायशिष्ठातृचोरान् भूवाक्यानामनुश्रवसादर्शनंचानु ग्रहसामर्थ्यम् ॥ ४॥

श्रीशौनक उवाच ।

कस्य हेतोनिजयाह कालें दिग्विजये नृपः।

तृदेवचिन्हघृक्शूद्रकोऽसौ गां यः पदाहनत् ॥ ५ ॥
 तृत्वध्यतां महाभाग ! यदि कृष्णाकथाश्रयम् ॥
 ऋथवास्य पदान्भोजमकरन्दिलहां सताम् ॥ ६ ॥
 किमन्यैरसदालापरायुषो यदसद्वययः ।
 अद्भायुषां नृग्णामङ्ग ! मर्त्यानामृतमिञ्क्रताम् ॥ ७ ॥
 इहोपहूतो भगवान् मृत्युः शामित्रकर्माग् ।
 न कश्चिन्म्यते तावद्यावदास्त इहान्तकः ॥ ८ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

परीक्षितो दिग्बिजयो धर्मप्रश्नः श्चितिप्रति । तस्याः कृष्णवियुक्तायाः शोकांक्तिः षोड्शेऽभवत् ॥ ० ॥

हे विप्र !। तथैव महतां गुगा यस्मिन् सः अभृत् ॥ १॥ जनमेजयादीनिति । "प्रधाने कर्मग्यभिष्ये न्यादीनाहुर्द्धिकर्मगा"मितिवन्नवाक्षरैकपादोऽनुष्टुब्विशेषोऽयम् ॥ २॥ शारद्वतं कृपम् ॥ ३॥ ४॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

"संस्थांचपार हुपुत्राणांवस्येकृष्णकथोदय"मितियत्प्रतिक्षातंतत्प्रतिपाद्य "अभिमन्युसुतंस्त्पाहुर्भागवतोत्तमं तस्यजनममहास्थ्यंकर्माणि चगुणीहिन" इति चतुर्थाध्यायप्रदनः कतःपुनः "अश्वत्थाम्नोपमृष्टेनब्रह्मद्यीष्णीकृतेजसा उत्तरायाहतोगर्भईशेनाजीवितःपुनः तस्य जनममहाबुद्धःकर्माणि चमहात्मनः निधनं चयथेवासीत्सप्रेत्यगतवान्यथा तिद्दंश्रोतुमि च्छामिगदितुंयदिमन्यसे ब्रह्मनः अहधानानां यस्यज्ञानमहाच्छुक" इतिद्वादद्याध्यायप्रदनः कतः तत्रद्वादद्याध्यायपरीक्षितोजनमवर्णितंनिधनंसक्षेपतोऽष्टादद्याध्यायविस्तरतोद्वादद्यस्कन्धे वस्यतिद्दानींतस्यकर्माणिवर्णायति तत्रहतिचतुर्भिरध्यायैः ततोऽभिषेकानन्तरं महात्रोद्वादद्याध्यायोक्तागुणायस्मिनसः परीक्षित् हेविप्र ! यथास्त्यांजनमवेलायामभिजातकोविदः जातकर्मविदः शमादिशन्तरथेवद्विजन्नवर्णाम् एत्रप्रदेशन्तर्यास्य ॥ १॥

सः उत्तरस्यवैराटेस्तनयामुपयेमेउवाह तस्यांजनमेजयादीन् उत्पादयत् जनान्शत्रून् एजयतेइतिजन्मेजयः ॥ २ ॥ शरद्वतोऽपत्यंकृपंगुरुंकृत्वागङ्गायांगङ्गाटतेयत्रयेषुदेवाःइन्द्रादयःअक्षिगोचराःप्रत्यक्षाःबभूद्यः तानश्वमेधान्आजहारैकृतवान् ॥ ३ ॥ क्रचित्स्थलेगोमिथुनंस्रीपुंरूपयोर्गवोर्युगलम् ॥ ४ ॥

#### भाषाटीका।

सृतजीवोले हेविप्रशौनक! तिसके अनन्तर महाभागवत परीक्षितजी ने ब्राह्मणों की शिक्षा से पृथिवी का पालन किया जैसे जन्म कालमें जैसे दैवन ब्राह्मणों ने कहे थे तैसेही महागुगा उनके हुए॥ १॥

उन परीक्षितजी ने उत्तर की पुत्री इरावती से विबाह कर उस में जन्मेजयादिक चार पुत्रों को उत्पन्न किया॥२॥
कृपाचार्य को आचार्य वनाकर गङ्गाजी के तीर पर वहुत दक्षिणा सहित तीन अश्वमेध यज्ञ किये जिनों में देवता
दुर्शन देते थे ॥३॥

बीरपरिक्षितजी ने दिग्विजय में कहीं पर राजचिन्ह धारि वस्तुतः ग्रद्ध होकर गऊ तथा वैल को पाद से प्रहार करते कलियुग को वल से पकड़ा॥४॥

#### श्रीधरखामी।

कस्य हेतोरिति। अयमर्थः। कस्माछेतोः किलं केवलं निजमाह न तु हतवात्। यतोऽसौ श्रुद्रकः अतिकुत्सितः श्रुद्रः। श्रो गां पदाहित्रिति ॥ ५ ॥

अस्य विष्णोः पदाम्भोजयोर्यो मकरन्दस्तं लिहन्ति आस्वादयन्ति ये तेषां सतां महतां वा कथाश्रयमिति समासाधिषकृष्यानुषङ्गः । तर्हि कथ्यताम् । नी चेत् किमन्यैरसद्भिरालापैः । यत् यैरायुषो वृथा क्षयः ॥ ६ ॥

श्रुद्र:कोऽसाविति वीरराघवश्रीवल्लभाचार्यादिसंमतःपाठः ॥

#### श्रीधरखामी।

अस्माकमयं सत्रप्रयत्नोऽपि हरिकथामृत गनार्थ पवेत्याह सार्द्धहाश्याम् । क्षुद्गमल्पमायुर्येषाम् अतो मर्त्यानां मरण्यवतां तथापि ऋतं सत्यं मोक्षमिच्छतां यो मृत्युः स इह सत्रे शमितुरिदं शामित्रं कम पशुहिसनं तदर्थमुपदूतः ॥ ७ ॥

ततः किमत आहन कश्चिदिति। ततो प्रि किमिलाह। अहो नृलोके हरिलीलामृतं वचः पीयेतेत्येतदर्थम्। हरिलीलैवामृतं यस्मिन्॥८।९॥

#### दीपनी।

कुत्सिते (पा॰ ५।३।७४।) इत्यधिकारे संज्ञायां कन् (पा॰ ५।३ ७५) इति सूत्रेगा कुत्सितार्थे श्रुद्रशब्दात् किन श्रुद्रकशब्दः साधनीय इत्याशयेनाह श्रुद्रकः अतिकुत्सितः श्रुद्र इति ॥ ५--७॥

( अष्टमश्लोके--"यतेत बुद्धिमान् मृत्योरभावाय पुरैव हि ॥" इति तृतीयचतुर्थचरगौ कचित् इद्येते ॥ ८--१२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तत्रलब्धप्रश्नावसरः पृच्छितिशौनकः कस्यहेतोरितिनृपः परीक्षिद्विचजयेकस्माद्धेतोः किलिजग्राहेत्येकः प्रश्नःयोगांपदाहनत्तता डासीनृपचिन्हधारीग्रदः कहत्यपरः यद्यपिनृपलिङ्गधरंग्रदंकिलिमितिसामानाधिकरण्यनिर्देशेनेव किलेरेवनृपदेविचन्हधृक् ग्रद्रइतिज्ञातः एवेतिप्रश्नानुपपन्तिस्तथापिकइत्यस्यिकिगुणकइत्यभिप्रायः अतः प्रश्नोपपन्तिः॥ ५॥

तत्किलिनिवित्रहादिकंकेवलमस्माभिःपृष्टमित्येववर्णयिकहेमहात्मन् ! यदिविष्णुकथाश्रयंभगवत्कयोपेतमधवास्यविष्णोःपदाम्बुजमक-रन्दास्वादिनांसाधूनांकथाश्रयंस्यात्तर्हिकथ्यताम् ॥ ६॥

तत्रहेतुंवदन्विष्णुतद्भक्तकथानाश्रयाणामश्रोतन्यत्वमवर्णणीयत्वंचाहिकमन्यैरिति अङ्गहेसूत ! यद्येश्यआयुषोऽसद्वचयः निरर्थकः क्षयोभवितिः क्षुद्रायुषामल्पायुषामृतंकर्मफलमिच्छतांमर्त्यानां मरण्यालानांनृणांसम्वन्धिमरन्यैर्विष्णुतद्भक्तजनाकथाश्रयैरतोऽतप्वा सिद्धिरालापैः किवर्णितैर्वानिकिचित्प्रयोजनंकितुकेवलमायुर्व्ययप्वेतिभावः यद्वात्रातंसत्यंपरंब्रह्महच्छतांतत्प्राप्तिकामयमानानांमरण्यीला नामल्पायुषांनृणामस्माकमन्येरसदालापैः किनिकिचित्प्रयोजनमस्तियतोयेश्यः केवलमायुषोऽसद्वययोभवतीत्यन्वयः॥ ७॥

ननुश्चद्रायुषांमत्यांनामस्माकंयावस्वत्प्रश्नवर्णानश्रवणाजीवनमप्यवसातुंशक्यमित्यत्राहइहोति इहनैमिषक्षेत्रेशामित्रकर्माणास्त्रकर्माणाः शमिच्छद्धः पशुसंज्ञपयितृत्ववाचीशमयिताचभगवानास्त्वितिश्चतेः सचेहपापापनोदकभगवद्गुणाजुभवितृपरः तत्सम्बन्धेकर्मणासत्रकर्मा णिभगवद्गुणात्मकब्रह्मसत्रदृत्यर्थः भगवान्मृत्युराहूतः सचान्तकोयावदिहास्तितावदत्रनकश्चिन्ध्रियतेनमरणमेति ॥८॥

#### श्रीविजयध्वजः।

नृपछिगधृग्यः शूद्रः पदागामहनत्तंकछिदिग्विजयेनिजग्राहअसौकः कष्टकमोइत्याक्षेपः नप्रदनः किलिमित्युक्तशाक्षातत्वेनसिद्धप्रदनत्वा पातात् ॥ ५ ॥

भातात् ॥ ५ ॥ विष्णुकथाआश्रयोयस्यतत् पतादृशंकिवन्धनंचेत्तार्दिकथ्यताम । अथपक्षांतरे वा यदिअस्यहरेः मकरन्दकरंभावंददातीतिमकरदः तंलिहंतिआस्वादयंतितेषांकथाश्रयंतर्हिकथ्यतामित्यन्वयः॥ ६॥

किमितिविष्णुवैष्णुवक्षयाकथनामितितत्राह किमन्यैरिति असदालापैरमंगलसंगै. किंप्रयोजनंनिकमिप कुतः आयुषोऽसद्वयः व्यर्थ अयुद्दित्यद्यस्मादत्वद्वर्यथः यद्यैरसदालापैरायुषोऽसमीचीनोव्ययद्दिवा इताऽपीतरप्रसङ्गानापक्षितद्दित्वत्वत्वर्त्याह श्चुद्रायुषामल्पायुषां मत्यानांमरण्यमाणामतप्व मृतिमिच्छतांनृणांमारकः मृत्युः भगवान्नरसिंहः शामित्रकर्माण पशुसंज्ञपनकर्मकर्ताशिमता तस्य कर्मशामित्रंतादर्थ्यस्पतमी शामित्रकर्मार्थमृषिभिनीमिषारण्यवासिभिरिहोपहृतः आहूयप्रसाद्यस्थापितः अंतकरोतीत्यंतकः सभगवान् यावदिद्वास्तेनतावद्कश्चिन्मियतद्वयन्वयः॥ ७॥ ८॥

# क्रमसंदर्भः।

यदि कृष्णाकणाश्रयं भवति तर्हि तदन्यदि कथ्यतामित्यर्थः ॥ ६॥

ऋतं परमसत्यं श्रीभगवन्तिच्छतां शुद्धायुषामन्यैः किम् । नतु ताहशानां श्रीभगवत्कथाश्रवणामपि सम्पन्ने न स्यादित्याशङ्कचाह

याविद्द हरिकथायामास्ते ताविद्द कश्चित्र ज्ञियत। तथैषां श्रोतृगां मरगानित्रारगाकारगां मृत्याह्वानं निर्धिकहरिकथामृतपाना-थेमवेत्याह एतदर्थमिति ॥ ८। ९॥

#### सुवोधिनी ।

इदानींतनवत्भाषापरिज्ञानेऽपिदर्शननियमादिकंसंभवति अस्मिन्वाक्येशीनकस्यसंदेहोज।तइतिकालिरन्यः शूद्रस्वन्यइति तस्मिन्वा आविष्टः किलिरिति अन्यायिनंवामारयति अवध्यमानेऽपिचकारेपदार्थद्वयकथनेएकिकयायांसमुच्चयप्रतीतिः अतः पृच्छिति कस्यहेतोरिति दिम्निजयेहिराज्ञांजयः कर्त्तव्यः नजुकालस्यस्वाधारत्वात् व्यर्थश्चकिलिग्रहः कालस्यसाधारणानिमित्तत्वात् कालिनिमित्तेचराज्यस्यप्रा- सत्वात् अतोहेत्वभावात् अशक्यत्विवग्रहनिग्रहेकालिग्रहाभावात्प्रदनः ॥ ५ ॥

तथापिनृपः कालाविच्छन्नराजातिद्वशेषगात्वनभूद्रमजानन्नाहनृदेवचिन्हध्नितिश्द्रस्यकथंसवेशंकुतोवाप्राप्तः तथाभूतस्यवाकंथेपदागोताडनम् अतः संदेहिनवारगार्थतत्कथयेत्याहतत्कथ्यतामिति किमन्थेरसदालापेरायुषोयदसद्वचयः निषेधार्थसंवोधयतिमहामागोति महत्तवभाग्ययत्भगवत्कथायांनियुक्तः तदिभिन्नश्च अतः स्वार्थाविरोधित्वेकथनीयमन्यथानेत्याह यदिकृष्णकथाश्रयमिति कृष्ण
कथायाआश्रयः तत्कथायां भगवत्कथावर्त्ततेयदितदाकथ्यतां भगवत्कथाधारत्वाभावेऽपिवस्तुतोभगवदीयायतत्सवधिनी अन्यथा
पियाकथातदाश्रयत्वेऽपिकथ्यतामित्याह अथवेतिभक्तिरसास्वादनीमत्येनभिक्तरसस्पर्शाभावेकथाराहित्यंतषांस्चितं सतामित्येननव्या
मोहनार्थमण्यन्याकथानिवारितापुरुषसुखंवद्वसुखमर्थसुखंददातीतिमकर्रदः गमेश्च,इतिसंज्ञायाखश्चसभगवचरणार्थिदैकनिष्ठः प्रेमसेवा
यामाविभीवकपः भक्त्वेकभोग्यः विशेषतोनिवचनाशक्यः यदर्थसर्वोऽपिभक्तिमार्गः शास्त्रं च तथास्वादनयुक्तानांकथयाशास्त्रार्थपरि
ज्ञानंभवति अतः प्रमाग्यकथायमयकथावातदाश्रिताचेत्र कथनीयाअन्यथा अस्यापिसंदेहापादकत्वादसत्वभदालापः उभयस्याभयं
प्रतियोगिताहरौः किप्रयोजनंनचोच्छिष्टलेपः पुष्टिकरहतिकालगमनमेवप्रयोजनं तत्राह आयुष्ययदसद्वचयहित कोटीसुवर्गेपरियदायुः
स्रग्रमात्रमलक्ष्यताहशस्यायुषः असद्वचयः अन्यायव्ययः अत्वआयुः स्रयकरत्वात् तत्रवक्तव्यम् ॥ ६॥

सत्रारंभस्त्वायुर्वध्यर्थमेवेत्याह क्षुद्रायुषामिति अल्पायुषांप्राणिनांमरणाव्ययकत्ववर्ती मरणकलेशनिवृत्त्यर्थममृतिमच्छतामर्थेमृत्यु रिहोपहृतइतिसम्बन्धः क्षुद्रायुषांकिमन्येरसदालापेरिति सहस्रसम्बत्सरसत्रैः अमृतमाविभवतीर्ति। विद्यमानानांचमृत्युर्वाधक्रपः आधिदेविकश्चसः अतोयश्चमागभोगार्थमिहोपहृतः अवस्थाभदेनपञ्चनांतद्भागत्वात् मृत्युरेवोपनीयतेयत्पशुरितिश्रुतेः रौद्रंगवीतिन्या येनअवस्थाभदेनापिहविभाक्तशामित्रंपशुर्हिसनं तत्रकर्मणिदेवमायापेक्षास्चिता अधमकादित्वाभावायभगवानिति॥ ७॥

किमतीयद्येवं तदाह नकश्चिदितिततोऽपिकिम एतदर्थमिति अहोनुलोकेपीयतहरिलीलीमृतंवचः ततोऽपिकिमएतदर्थमितिलोकेकोऽपिनिम्न
यतामस्मत्सत्रेगाविभूतेनामृतेनपीतेनअमराएवभवंतुसर्वेमध्येऽपिनिम्नियंतामिति अर्थनिश्चित्यतिक्रवेहार्थपरमिष्मिराहृतः समर्थेः भगवानि
हाहृतः सचाहर्यः कथाक्रपेगासमागतः अतएवअहोइत्याश्चर्ययतः लोकेहरिलीलामृतंवचः पीयेतअयमर्थः अस्माभिः सत्रंसमारव्धंखाप
कीर्तिनिवारणार्थसत्रेहिसमारव्धंसर्वेम्नियंतेयामात्रापागुरतइतिश्चतेः किमेतेसित्रग्गइति तहोषपिरहारार्थमृषिभिरेवंविचारितमत्रभगवाना
नेतव्यः योगश्चतत्रसमर्पणीयः मृत्युश्चशामित्रकमिणततश्चास्मदपकीर्तिर्गामध्यतीति तत्रभगवित्तर्थवसंपादितं खयमागतः कथाक्रपेगाः
चसमागतस्तद्वरप्रदत्वंत्वाश्चर्यम् अतोहष्टद्वारेवप्राणिनाममृतंभविष्यतीति अन्यथावतारादिद्वारे अदृष्टाद्वातत् सिद्धेत् अतआश्चर्यस्य
सिद्धत्वात् भगवचरित्रमेववक्तव्यंत्वयानान्यादिति ॥ ८ । ९ ॥

#### श्रीविश्वनायचकवर्ती।

निजग्राह न तु हतबान्। यतोऽसी श्रुद्रकः अतिकुत्सितो हन्तुमेवोचितः॥ ५॥

तत् कलिनिग्रह्यां सतां कथाश्रयमित्यनेन समासगतेनाप्यन्वयः॥ ६॥

ऋतं सत्यवस्तु श्रीकृष्णमित्यर्थः । ननु मश्वरदेहानां कृष्णकयामाग्यलाभोऽपि कथं सेत्स्यतीति अत आह । इह क्षेत्रे शमितुरिदं शामित्रं कर्म्म पशुहिंसनं तत्र तदर्थं मृत्युरुपहूतः ॥ ७॥

ततः किमत आह न कश्चिदिति । ततोऽपि किमत आह अहो इति ॥ <॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

कस्यहेताः कस्माद्धेतोः किलिजग्राहकेवलम् योगांपदापादेन अहनत् ताडितवान् किचग्रदःसन् नृदेविचन्हधृक् अतोविपरी-तकारितयावध्यः अतोऽसीकः केनगुणविशेषेणोपेक्षितइतिभावः॥ ५॥

तत्कलिनिग्रहादिक्रध्यास्युकथाश्रयंकथोपतम् अथवाऽस्यक्रध्यास्यपदांभोजयोभकरन्दः सीद्यरमस्तीलहत्याश्वादयंतियेतेषांसाधूनां

कथोपेतंस्यात्तिकथ्याताम् ॥ ६॥

हेअङ्गस्त ! क्षुद्रायुवामल्पायुवामत्यांनांमरगाधिमगांमध्ययेञ्चतंसत्यंभगवत्पदिमक्क्वितिवेषामृतमिक्कतांमुस्यूगाम् अन्यैःकृष्णातद्दाः सक्षयाविज्ञितेरसदालापैः किनिकमपीत्यर्थः यत्यैरसदालापैः आयुवाऽसद्वययः असाधुक्षयः तस्मात् कृष्णतद्दासकयाश्रयचेत्तिः किथ्यताम् ॥ ७॥

इहसत्रेशामित्रकर्मग्रिशिवामित्रिदिशामित्रपश्वालंभनंकर्मतदर्थे मृत्युभैगवानुपहूतआहूतः अतोऽतकोयावदिहास्तेतावत्कश्चिदिष स

एतदर्थीह भगवानाहूतःपरमर्षिभिः । अहो नुलोके पीयत हरिलीलामृतं वचः II E II मन्दस्य मन्दप्रज्ञस्य वयो मन्दायुषश्रवे । निद्राया हियते नक्तं दिवा च व्यर्थकर्मभिः॥ १०॥ यदा परीचित्कुरुजाङ्गलेऽगृगोत्काले प्रविष्टं निजचक्रवार्तिते । निशम्य वार्तामनीतीप्रयां ततः शरासनं संयुगशौगिडराददे ॥ ११॥ स्वलङ्कृतं इयामतुरङ्गयोजितं रथं मृगन्द्रध्वजमाश्रितः पुरात्। वृतो रथाश्वदि ।पत्तियुक्तया स्वलेनया दिग्विजयाय निर्गतः ॥ १२ ॥

सूत उवाच

#### भाषादीका ।

शौनकजी बोले किस हेतु से दिग्विजय में राजा ने कालि का ग्रहाा किया वह राज चिन्हधारी कौन शूद्र था जो कि गऊ को पाद से मारता था। । ५ ॥

हं महाभाग ! सो कहिये यदि कृष्णा कथा का आश्रय होय अयवा कृष्णा चरण कमल मकरन्द पीने वाले सत्पुरुषों का कथा

होय तो ॥ ६ ॥

और असत्कथन से क्या है जिन से व्यर्थ असत् आयु काव्यय होता है हे सूत ! अल्पाय मनुष्य हैं मरने वाले अमृत इच्छा वाले उनको हार कथाही सार है। ७॥

ऋषियों ने यज्ञ कर्म में इहां भगवान काल रूप का अवतारन किया है जबतक काल इंहाँ रहैगा तब तक कोई नहीं मरैगा॥८॥

#### श्रीधरस्वामी ।

तदभावे वृथैव जीवनमित्याह। मन्दस्य अलसस्य। नक्तं रात्री यद्वयः आयुस्तान्निद्रया दिवा अहि यद्वयः तत् व्यर्थकर्मभिः अपहियते १० तत्र तावत् किलिग्रहप्रसङ्गमाह । यदा निजन्नकवर्त्तिते स्वसेनया परिपालिते देशे किल प्रविष्टं शुश्राव । तदा ताम अनितिप्रया वार्त्ती किञ्चित् वियाञ्च युद्धकौतुकसम्पत्तः निशम्य ततः शरासनं दुष्टनिष्रहार्थमाददे । संयुगशौरिंड युद्धे प्रगल्भः । संयुगशौरिरिति पाठे युद्ध शौरितुल्यः ॥ ११ ॥

ततश्च दिग्विजैयाय निर्गतः ॥ १२ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

किमर्थमाहूतइत्यत्राहएतदर्थमितिएतद्रथमत्रावस्थितानामस्माकंमरणार्थमेवहिपरमर्षिभिर्भगवान् मृत्युराहूतः इत्यर्थः मृत्युर रिष्वव्यापार्यवहायभगवद्गुगाश्रवगायेहनिकविद्विद्विन्यादित्यभिश्रायंगाहूतइतिभावः तत्कथ्यतांमहाभाग ! इत्यादिश्लोकद्वयंनतद्भक्तक-थाश्रवगास्यैववर्गानीयत्वंश्रोतव्यंत्वंचें कंतदेवसहेतुकमुपपादयति अहोइतिसार्द्धेननृलोकेहरेलीलायास्मिन्प्रतिपाद्यास्तद्धरिलीलंतदमृततुल्यं वचः पीयेतपावकंश्रोतव्यमितियावत् येपिवंतितानिमनन्दतिअहोइतितेषांभाग्यमेतावदितिवक्तुमशक्यमितिभावः॥९॥

रात्रीनिद्रयाह्रियतेह्रस्यतेदिवाहनितुव्यर्थैः पुरुषार्थश्रून्यैः क्षमिः सांसारिककर्मभिः ह्रियतेहरिलीलामृतंवचः पिवतस्तुवयः सफल

मितिभावः ॥ १० ॥ इत्थमापृष्टः सहेतुकंकंलिनित्रहादिकंवर्णायितस्तः यदेत्यादिनायावत्सप्तदशाध्यायसमाप्ति यदापरीक्षिद्दिग्विजयार्थेगतः कुरूणांजांग लेषुचजनपदेवसित्रजचकेगास्त्राचकेगा्वर्तितेऽनुशिष्टदेशेस्त्रसेनाधिष्ठितेदशे वाप्रविष्टंकलितत्प्रवेशक्षपामत्यन्तमाप्रयांवार्त्तानिशम्याकग्य ततः संयुगेयुद्धेशौंडिः प्रवीगोराजासरासन्धनुराददेजग्राहनिजचक्रवर्तितेकुरुजांगलेवसन्नितिवान्वयः॥ ११॥

ततः सुष्टुलंकतं स्यामैस्तुरंगैः संयोजितमृगन्द्रः सिंहोंकितोध्वजोयस्मिस्तंरथममाश्रितोऽधिष्ठितः तथाचतुरङ्गयुक्तयासेनयापरिवृतोदि

विजयायनिर्गतः कुरुजांगलादिष्वितिरोषः॥ १२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अनेनप्रकृतिकिमायातमितितत्राह पतदर्थमिति अतःसंप्रतिनृक्षोकेमृत्युभयाविधुरतयास्थितैर्मत्यैर्लीलामृतंवचःपीयेतैतदर्थहिपरमञ्ह विभिरिहाहूतः अहोआश्चर्यमरगाधर्मिग्णामपिहरिलीलाऽमृतत्वपदंहियसमात्तरमाद्विष्णुवैष्णावकथाश्चरंचेत्तत्कथ्यतामितिमाषः ॥ इ

#### श्रीविजयध्वजः।

यथामत्र्यस्यासत्त्रसंगात् आयुषोत्रैय्यर्थं तथानिद्रार्थादिपरस्यापीत्याह् मंदस्येति अवपस्यापिप्रज्ञाबाहुव्यादनेकवेदशास्त्रतदर्थं प्रह्मांस्यादित्यतोमंदप्रज्ञस्येति मंदप्रज्ञस्यकव्पायुषस्तत् स्यादित्यतोमंदायुषद्दतिअव्पायुषोऽपिभाग्यवशात्तत्स्यादित्यतोमंदस्येदि मंदस्य निर्माग्यस्यपवंविधस्यमत्यस्य नक्तंराित्रःनिद्रयाहित्यते हिरग्याद्यर्थान्वेषगाकर्मभिदिवादिनमपिहित्यते चशब्दोहेत्वर्थे तस्मािषद्रादि-ज्येनहितित्परायगाकथाऽत्रत्वयाकथ्यतािमातिभावः वैद्दत्यनेनानुभविसद्धमेतदितिदर्शयति सत्रदिदक्षयात्रागतेर्मत्यश्चाकगर्यतां । मृत्याव त्रसद्भिवेत्यस्मित्रर्थेआद्यश्चश्चश्चादः॥ १०॥

कुरुजांगलेकुरुविषयेहस्तिनपुरेवसन्परीक्षियदानिजचकवर्तिते निजचकेगास्वानुक्यानिजानांपांडवानामाक्षयावर्तितेराष्ट्रेप्रविष्टकालिशुश्रा वेतिशेषः ततस्तदासंयुगरोचिर्युद्धेच्छुःग्राष्ट्रविष्ठवरूपामनतिषियांवार्तानिशम्यश्चरासनमाददश्त्यन्वयः संयुगरोचियतीति धनुर्विशेषगांवा ११

इयामैनेवसुवीथिषुविशिष्टगतिभिः नीलवर्षीवी तुरंगैयोजितंमृगेद्रोध्वजेयस्यसतथा तेसिहलांछनध्वजंरथाश्चअश्वाश्चद्विपाश्चपत्तयश्च रथाश्वद्विपपत्तयःतैर्युक्तयापुरान्निर्गतोऽभूदित्यन्वयः॥ १२॥

#### क्रमसंदर्भः।

अनितित्रियाम् अतिशयनाित्रयािमत्यर्थः । टीकायां दुष्टनित्रहार्थमादद इति तिन्नित्रहेग्रीच कलिनित्रहः स्यादित्यिभप्रायात् ॥ ११ ॥ अतएव दिग्विजयाय तत्त्तिहरूिस्यतदुष्टराजािदवशीकाराय ॥ १२ ॥

#### सुबोधिनी।

ननुतेस्वतग्वस्वमृत्युंनिवार्यिष्यंति किंभवत्त्रयासेनेत्यतआहमन्दस्येति मंदस्यअलसस्यअनेनकर्मोभावः सूचितः मंदाप्राज्ञायस्येतिज्ञा नाभावः मंदआयुर्यस्येतिभक्त्यभावः तस्यनक्तंवयःरात्रिसंबंधिआयुः निद्रयाहियतेदिवाचायुःव्यर्थकर्मभिरितिअतःसर्वस्याप्थायुषोऽन्यत्रविनि योगात् नतेषांसामर्थ्यम् ॥ १० ॥

मगवत्कथाश्रयत्वंकिलिनग्रहस्यमत्वातस्यप्रस्तावनामाह यदापरीक्षिदिति कुरुजांगलेदेशेहस्तिनापुरेअवसत् तदानिजचकवर्तिते कुरुजांगलेदेशेहस्तिनापुरेअवसत् तदानिजचकवर्तिते कुरुजांगलेदेशेहस्तिनापुरेअवसत् तदानिजचकवर्तिते कुरुजांगलेदेशेहस्तिनापुरेअवसत् तदानिजचकवर्तिते कुरुजांगलेदेशेहस्तवापुरं वेदेवराज्यस्यसाधितत्वात् निष्कंटकेराज्ये स्वयमुपविद्यानाममात्रेणराजेतिहृदयेषुः खमासीत् तत्किलिप्रवेशेश्वतिशेषतः शिक्षणेसमागत इतिप्रोत्साहोजातः तथापिराज्यअधमः प्रविद्यद्वित्यानामात्रेणराजेतिहृदयपूर्वकालोल्लेश्वनासामध्योत् प्रविद्यत्वित्यावर्ताराजाङ्गाकरणेक्षित्रत्यप्रवेशित्राक्षित्रत्यविद्यान्ति संयुगशोगितः युद्धश्वरः शरासनमाददेदूरिवतान् मारिविष्यामीति देवाभ्वानांदैत्याभिमुखतानसंभविष्यतीति स्यामतुरङ्गयोजतंरथमारुवहे ॥ ११ ॥

राजत्वश्वापनायस्वलंकतमिति रथादिघटितंमृगेंद्रध्वजइति स्वस्यासाधारग्रांचिन्हंकलिश्चगजरूपइतिगर्देभयुक्तेवासिहरूपेगाभगवता दैत्येद्रवधाद्वा पुमानिति असहायशूरत्वंपुरादितिपाठेनगरात् युद्धार्थभेवनिर्गतः नतुविचारंकतवानितिदिग्विजयेकतेऽन्यदांतरालिकंस्वयमेव अविष्यतीति दिग्विजयायेत्युक्तम् अस्यजंबूद्वीपाधिपत्यंतस्यनवखगडाः॥ १२॥

### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

अन्यथा आयुषो वैयर्थ्यमित्याह मन्दस्येति ॥ १०॥

यदा निजचक्रवर्तिते स्वसेनया पालिते देशे किल प्रविष्टमेव अनितिष्रयां वार्त्ती तिज्ञिघांसया किञ्चित् प्रियांच निश्चम्य शरासनम् आददे तदेव पुरात् दिग्विजयाय निर्गत इत्यन्वयः। अत्र प्रविष्टः कलिरेवानतिष्रिया वार्तेत्यज्ञवादविधेयभावो विषक्षिता क्षेयः। शीयिदः (शीयदः) प्रगत्मः। संयुगशीरिरिति पाठे संयुगे शीरितुल्यः॥ ११ । १२ । १३ । १४ । १६ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

मृत्युप्रतिकारप्रयोजनमाह एतदर्थमिति अर्थमाह हरिलीलैबामृतंयस्मिन्तद्वचः अहोनृलोकेपीयेतेति॥९॥

अन्याथातु जीवनं निष्फलमित्याहमन्द स्येतिमन्द स्यप्रक्षोत्पाद नेशिथलप्रयत्नस्यमन्द्र प्रक्षस्यमन्दाश्चोतव्याः ऽश्चोतव्यविवेकहीनाप्रक्षायस्य मन्दायुषः अल्पायुषः ताहरवचोऽगृगवतः चयभायुर्नकं राजीनिद्रयादिवाऽहिनन्यर्थकर्मभिर्हियते ॥ १०॥ अल्पायुषः सन्दायुषः

isa dingkara ngambaling ng sasining pamb

भद्राश्वं केतुमालंच भारतं चोत्तरात् कुरूत् । किम्पुरुषादीनि वर्षाणि विजिन्य जगृहे वलिम् ॥ १३ ॥ तत्र तत्रोपशृण्वानः स्वपूर्वेषां महात्मनाम् ।

प्रगीयमागांच यशः रुष्णमाहात्म्यसुचकम् ॥ १४ ॥

श्रात्मानंच परित्रातमश्रव्याम्नोऽस्रतेजसः।

स्नेहंच वृष्णिपार्थानां तेषां भक्तिंच केशवे ॥ १५॥

तेभ्यः परमसन्तुष्टः प्रीत्युज्जृम्भितलोचनः।

महाधनानि वासांसि ददौ हारान् महामनाः ॥ १६ ॥

### सिद्धांतप्रदीपः !

निजचकवर्तितेनिजचकेगासेनात्मकेन आज्ञात्मकेनवावर्तितेपालिते यदाकिष्ठप्रविष्टमगृगाोत् शुश्रावतदाऽनितिप्रयांवार्त्तानिशम्यततः हेतोःसंयुगशौंडिः युद्धेप्रगरभः शरासनमाददे ॥११॥

ततोदिग्विजयायनिर्गतः ॥ १२ ॥

prince from the continuous for the continuous from the continuous for the continuous from the continuous f

### भाषा टीका।

इसीके लिये परमर्षियों ने भगवान का आवाहन किया है यह वडा आश्चर्य है कि जो मनुष्य लोकमें हरिलीलामृत बचन पान किया जाता है ॥ ९ ॥

स्वयं मंद मंद बुद्धिवाला मंद आयुवाला जो यह जन तिसकी अवस्था में रात्रि सोने में चली जाती है और दिन व्यर्थ कामी में चला जाता है॥ १०॥

स्तडवाच जव परीक्षित राजा कुरुजाङ्गल देश में निवास करते थे तब उन्हों ने अपने चक्रवर्तित (राज्य) में किलि-युग को प्रविष्ट सुना, इस अनितिप्रिया (युद्ध कौतुकमात्र से थोरीप्रियभी )वार्ताको सुनकर संग्राम शौंड (कुशल) राजा ने शराशन प्रदेश किया ॥ ११ ॥

सुन्दर अलंकत इयाम तुरंक योजित सृगेन्द्र ध्वज रथ मै पुर से आरोहगाकर रथ अश्वद्विप पदाति युक्त चतुरंक्षिगी अपनी सेना से आवृत दिग्वजय को निकले॥ १२॥

#### श्रीधरस्वामी।

भद्राश्वादीनि पूर्वपश्चिमदक्षिगोत्तरतः समुद्रलग्नानि वर्षाणि मेरोः सर्वतः इलावृतं ततउत्तरतो रम्यकं हिरएमयंच दक्षिणतो हरिवर्षे किंपुरुषंच तानिविजित्य॥ १३॥

प्रगीयमार्गा यशः। यश आदीनि श्रावन् तेश्यो ददाविति तृतीयेनान्वयः॥ १४। १५। १६॥

# दीपनी ।

भद्राश्वादीनीति । अत्रादिपदात् केतुमाल-भारतवर्ष-उत्तरकुरुवर्षाणां प्रहणाम् । पूर्व्वपश्चिमदक्षिणोत्तरतः मेरोरिति शेषः । समुद्र-लग्नानि पार्श्वे इति शेषः । ततः इलावृतात् इति भावः । एतद्विशेषः पश्चमस्कन्धीयषोड्शाध्यायादौ द्रष्टव्य इति ॥ १३—१६॥

# श्रीवीरराघवः।

भद्राश्वादिवर्षागिनिजित्यविकरेजगृहे ॥ १३ ॥ तत्रतत्रदेशेषुखपूर्वेषांयुधिष्ठिरादीनांमहात्मनांकृष्णस्यभगवतोमाहात्म्यसूचकंप्रगीयमाग्रायशः ॥ १४ ॥ अश्वत्थाम्नोबद्धास्त्रतेजसापरिश्रास्तमातमानंचन्नुष्णीनांपार्थानांचकेशचे कृष्णेरनेहमनुरागंचतथातेषांतस्मिन् भक्तिचोपशृणवन् ॥ १५ ॥

STATE OF STA

£.

त्रकृत्यः १५४**के हम्मारकाका <b>श्रीबाहराविवः** १०१५-५०५ । ५५ कार्यन् ५५ स्थान

नितराहृष्टः प्रीत्याउज्ज्ञेभितेक्ज्ञिन्यस्यभ्रमहामनाउद्गार्खा द्विदाल्योराजातेश्य श्रावीयतुश्यःमहाधनानिवहुम् व्यद्रव्यागिवासांसिहा

# श्रीविजयभ्वजः ।

सपरीक्षित् भद्राश्वादिवर्षाग्रिउत्तरकुर्वादिजन्पदान् चान्निजित्यवार्लकरंजगृहद्दन्यन्वयः॥ १३॥

समहामनास्तत्रतत्रवर्षेषुविषयेषुचखपुरतोगायकैरुपंगियमानंकृष्णमाहात्म्यसूचकं महात्मनांखपूर्वेषांपांडवानांमाहात्म्यसुपश्चगवानः उपश्चगवन् ॥ १४ ॥

क्यमाहात्म्यंसुच्यत्रहतितर्दिकचिदाहः ः आद्धान्।सिति अश्वत्थाम्नोऽस्त्रतेजसः कृष्णेनपरिरक्षितमात्मानंचवृष्णीनांपांडवानांमिथःस्नेहं चडभयेषांकृष्णेभक्तिच श्रयवन् ॥ १५ ॥

्र तेश्योगायकेश्यः परमसंतुष्टोऽतएवप्रीत्याउज्जृंभितेविकसितेलोचनेयस्यसतथोक्तः महाधनानिअनर्घाणिवस्राणिहारान्**मोक्तिक** मालास्तंश्योददावित्यन्वयः ॥ १६ ॥

# क्रमसंदर्भः।

ततश्च तत्त्रमावेगा निन्दुतश्वप्रभावे सति भारतवर्षमात्राधिकारिगा कली प्रसङ्गतो भद्राश्वादीन्यपि जेतुं गतः। क्रमस्त्वत्र न विवाक्षतः॥ १३॥ १४॥ १५॥ १६॥ १७॥

# सुवोधिनी।

and we have a few allowings of the control of the control of the second of the control of the co

तत्रप्रथमंपरितः परिम्नमणंकतवान्तत्रपश्चिमभागेमद्राश्वंनामव्यकेतुमालंपूर्वभागेभारतदक्षिणतः उत्तराः कुरवः उत्तरभागेअन्ये मध्यस्थाः किंपुरुषादयः नवलगड्जयंकृत्वास्वाक्षांप्रचारितवान् तत्रप्रमाणंविलगृहीतवानितिकिल्यतंतरालिकहति क्षापनार्थे प्रथमं तत्र भगवद्भिकः स्थितेतिनिरूपयित यत्रैवगच्छितित्रेव रथेनार्जनस्यगतिश्वणोति तत्रत्याः कृष्णंद्वष्टवंतः महित्मयं व नायित्पिष्टवभगवत्स्वं भगवद्भिवं व जानंति अतः परमेनं च तेजानंति वह्यास्रतोभगवतापरिपालितंस्नेहं च यावत्जानंतितावत्सर्वगायंतिश्रतः प्रगीयमाणं श्रणवानः धं च जानंति अतः परमेनं च तेजानंति वह्यास्रतोभगवतापरिपालितंस्नेहं च यावत्जानंतितावत्सर्वगायंतिश्रतः प्रगीयमाणं श्रणवानः सहष्टः तेश्योददावितिसंवंधः अनेनप्राप्तस्यभागस्यतत्रैवविनियोगउक्तः मात्सर्याभावश्चगुण्पूर्वधर्मस्थापनंचोक्तंप्रतिसुंज्ज्ञभित लोचनहित सहष्टा तेश्योद्दावितसंविष्टा सहामनाहित सकृतार्थतावापवंचक्तमानेकिचित्रश्चर्यवृत्तंतत्वस्यतिमध्येसार्थ्यतिश्लोकःप्रायेण् विगीतःतं केचनश्चरवित्यस्य सिवादीनिकृतवानित्यर्थव्याख्याययोजयंति जगत्कर्तृकांप्रणातिचश्चरवित्रगत्तप्रणातस्येतिपाठः प्रवेकलिकार्यदूरी कृत्यजगतिवर्धमस्थापित्वाविष्णुमक्ति च कलिनग्रहार्थम् ॥ १३ । १४ । १५ । १६ । १७ ॥

# १८५८ ५८ ४ व १८८ के छार ५७४६ ५५० । अर्थे, ्रेक्**स्वित्रयंतप्रदीपः ।**

आदिनाहरिप्रभृतिवर्षप्रहराम् ॥ १३ ॥ तत्रतत्रयशआदिशृणवानस्तेभ्योददावितितृतीयेनान्वयः ॥ १४ । १५ ॥ महामनाः आतिवदान्यः ॥ १६ ॥

#### भाषाटीका ।

The control of the co

and the configuration of the company of the configuration of the configu

भद्राश्व केतुमाल भारत उत्तर कुरु और किम्पुरुषादिक वर्षों को जीतकर सबसे बलिग्रहण किया ॥ १३॥ वहां वहां अपने पूर्वपुरुष महात्माओं से कृष्णा माहातम्य सूचक गीयमान यश श्रवणा किया, अश्वत्थामा के अस्त्र तेज से अपना श्रीकृष्णा ने परित्राणा किया, यह और पांडवों की वृष्णिओं का स्नेह और उनकी श्रीकृष्णा मिक सुनकर प्रीतिपुछ लीचन राजाने परम सन्तुष्ट होकर बस्न हार और महाधन उनकी दिये । क्यांकि राजापरीक्षित महात्मा है ॥ १४।१५।१६॥ लीचन राजाने परम सन्तुष्ट होकर बस्न हार और महाधन उनकी दिये । क्यांकि राजापरीक्षित महात्मा है ॥ १४।१५।१६॥

सारध्य-पारषद-सेवन-सख्य-दौत्य-वीरासनानुगमन-स्तवन-प्रगामान् ।
स्निग्धेषु पाग्रुषु जगत्प्रगातिंच विष्णोर्भिक्तं करोति नृपतिश्वरगारिवन्दे ॥१७॥
तस्यैवं वर्त्तमानस्य पूर्व्वषां वृत्तिमन्वहम् ।
नातिदूरे किलाश्चर्यं यदासीत् तिन्नबोध मे ॥१८॥
धर्माः पदैकेन चरन् विच्छायामुपलभ्य गाम् ।
पृच्छति स्माश्चवदनां विवत्सामिव मातरम् ॥१६॥
किच्छद्रेते ! ऽनामयमात्मनस्ते विच्छायासि म्लायतेषन्मुखेन ।
त्रालच्चये भवतीमन्तराधिं दूरे बन्धुं शोचिस कंचनाम्व !॥२०॥

#### श्रीधरखामी।

स्निग्धेषु पाग्डवेषु विष्णोर्यानि सारथ्यादीनि कर्माणि तानि शृग्वन् तथा विष्णोर्जगत्कर्तृकां प्रण्तिच शृग्वन् नृपतिः परीक्षित् विष्णोश्चरणारविन्दे भक्ति करोति स्म । पारषदमिति रेफसकारयोर्विश्लेषदछान्दसः । तत्र पार्षदं सभापतित्वम् । सेवनं चित्तानुवृत्तिः । वीरासनंरात्री खद्गहस्तस्य तिष्ठतो जागरणम् ॥ १७ ॥

वृत्तिमनुवर्त्तमानस्य । नातिदूरे शीघ्रमेव ॥ १८ ॥

धर्मी वृषद्भपः विच्छायां इतप्रभाम् । गां गोद्भपां पृथ्वीम् । विवत्सां नष्टापत्याम् ॥ १९ ॥

ते आत्मनो देहस्य । यद्यपि वहिरामयो न लक्ष्यते तथापि अन्तर्मध्ये आधिः पीडा यस्यास्तां त्वामालक्षये । केन यतः विच्छायासि । अतः ईषन्म्लायता वैवर्ग्य भजता मुखेन लिङ्गेन । तत्र कारणानि कल्पयन् पृच्छति दूरे बल्धुमित्यादि पंचिभिः । दूर स्थितम् ॥ २०॥

#### द्यीपनी ।

छान्दस इति । छान्दसत्वाश्रयगां प्रायशक्छन्दोऽनुरोधेनेति चिन्त्यम् ॥ १७—३४॥

#### श्रीवीरराघवः।

क्षिण्धेष्वतुरक्तेषुपागडुषुयुधिष्ठिरादिषुविष्णोः श्रीकृष्णस्यसार्थ्यादिकं जगत्कृतंत्रगामश्चस्मृत्वेतिशेषः नृपितःपरीक्षिद्विष्णोद्यरगार विन्देभिक्तकरोतिस्मचकारेत्यर्थः तत्रसार्थ्यंप्रसिद्धंपारिषदंसभ्यत्वंसेवनंभृत्यकर्मदौत्यंद्तकर्मवीरासनातुगमनंनृपासनाधिष्ठितंप्रत्यनुवर्त्तनं स्तवनंस्तुतिकर्मप्रणामोनमस्कारः विष्णुकर्तृकान्यविषयानेतान्स्मृत्वेत्यर्थः ॥ १७॥

तस्यपरीक्षितः पूर्वेषां युधिष्ठिरादीनां वृत्तिमन्वहं वर्त्तमानस्यसतः तस्यनाति दूरंसिन्न कृष्टदेशेयन्महदारचर्यमासीत्कथियवामेमसः निवोध शृणु ॥ १८ ॥

धर्मइतिधर्मः धर्माधिदेवोनुषरूपधरः एकेनपदेनचरन्विच्छीयांनिस्तेजस्कांगांगोधरूपधरांवत्सरहितांमातरमिवाश्रागावदनेयस्मास्तां पुच्छतिस्मापृच्छत् ॥ १९॥

प्रश्नमेवाहकि चिदित्यादिभिः षड्भिःहेभद्रे ! तवात्मनः हेहस्यानामयमारोग्यमस्तिकचित् ईषन्मलायताहर्षक्षयमुपगतेनमुखेनविच्छायानि स्तेजस्काभविस अहंतुभवतीत्वामन्तराहृदयमध्येआधिः ष्लेशोयस्यास्त्याभूतामालक्षये म्लानविच्छायामुत्पश्यामिहेशस्व ! कंचनद्ररस्यं वस्धुशोचिस ॥ २०॥

# श्रीविजयध्वजः ।

तृपतिःपरीक्षितः कृष्णोस्निग्धेषुपांडुपुत्रेषुमुक्तामुक्तप्रपंचप्रणातस्यविष्णोः सार्थ्यादिनाअहोहारिश्चरणानत जनतासुकरुणार्थावोनान्वि ति तस्य चरणार्पविदेविशेषतोमिकिकरोतित्येकान्वयः सार्थेःकमेसार्थ्यं पार्षदंसभापतिकमे द्वाःस्थत्वेवा परिषदंकमेतिवा सेवनमुक्तकमेकरणं संख्युःकमेसख्यं दृतस्यकमेसंदेशकरत्वंदौत्यं। वीरासनंरात्रोखद्गपाणिःस्थित्वास्वामिरक्षार्थजागरणांचीरोविता सर्वं गच्छतःपृष्ठतोगमनमनुगमनं स्तवनंस्तुतिः। प्रणामोनमस्कारः प्रहृत्वंवा वीरासनानुगमनंसिष्टासनोपसर्जनत्वाउपवेशनंवा॥ १७॥ पूर्ववापित्रादीनावृत्तमाचरितमनुदिनमेवंवर्तमानस्य नातिदृर्वश्चमदृष्टिगोचरेयदाश्चर्यमासीत्तिव्रवोधत्येकान्वयः॥ १८॥

### श्रीविजयध्वजः ॥

कितदितितत्राह धर्मेद्दति सत्याख्येनैकेनपदेनचरन्धर्मः दृषमोभूत्वावत्सरिद्दतिमत्दिमयाश्चवदनामत्तपवविच्छायांचिगतकांतिगो-क्रिपिर्गागांभूमिमुपलक्ष्यापृच्छदित्येकान्वयः॥ १९॥

"मद्रागोर्गोमतिक्षके"त्यिभधानं हेमद्रे ! तेतवात्मनः देहस्यानामयमारोग्यंकि चित्रिकं म्लायताम्लानिगच्छतामुखेनविच्छायाविगतकांति रसीति यद्यस्मात्तस्माद्भवतीमंतराधिमनः पीडावतीमालक्षयपद्यामि किंचकंचनदूरेवंशुंपरोक्षप्रदेशेस्थितंवंशुंप्रतिशोचसीवेति ॥ २०॥

#### क्रमसंदर्भः।

जित्वा च निवृत्तिसमये कचित्रिन्दु त्य भ्रमन् खराज्यस्य नातिदूर एव साक्षात् किं ददर्श । तद्दूरगमने पुनः कृतधार्धेयत्वादिति क्षेयम् । तथैवाह तस्येति ॥ १८ ॥

# सुवोधिनी ।

आधिदैविकधर्मेउपकारमाह तस्यैवमिति एवंवर्त्तमानस्यतस्यसतः निकटएविकश्चित्जातंतत् निवेधितिसम्वन्धःवर्त्तमानस्यनातिद्रेवा कियापेक्षया देशनैकट्यंकालनैकट्यंत्कमेवधर्मः पृथिवीचराजानंवोधियतुमेवतादशक्ष्पेणसमागता स्वस्वावस्थामन्योऽन्यमुखतोनिक्षप्यति कलिख्याध्यात्मिकेक्षपेनिराकृतेस्थानंप्रार्थयितुंतद्रूपेणप्रकटः ॥ १८ ॥

राजान्वेषगार्थमेवप्रकृतिमध्येमिलितौतदाह्यमेइति एकेनपदाचलन्सत्यात्मकेनअंशतोब्याख्यानेभुतंदेवताकपत्वाच लौलिकानुपपिः पादानांनामतश्चकपतश्चभदः युगभदेनकल्पभदेनचन्यवस्थापनीयः विच्छायांविवर्णाचरणेपुरुषस्याधः छायातिष्ठतितदभावेविच्छायगवगां पृथिवींगोक्षपांकेचनकृष्णाद्यभावात्छायाभावमाद्यः कालेनभीतांवाअश्चवद्यनामितिअश्चिगवदनेयस्याः अनेनांतस्तापोभूमौवाष्पजलमेवजलं नवृष्टिजलंक्यरिदागौरिवकेवलंपितृणा मुपयोगिनीतथा पृथिव्यपिमरगार्थमेवोपयुज्यतेनजीवनार्थमितिमातृपदंव्याख्यातम् ॥ १९ ॥

आमयं झात्वाव्यवहारा नुसारे गाण्वेच्छितिकचिदितिभद्रे ! इतिसंबोधनंपरीक्षिदास्तिपालक इति शापनार्थवे कुंठेभगवद्भाया सुक्षेनित छिसतथा वितवात्मनः पृथिवी रूपस्यअनामयं काचित् रोगस्तुतवनास्तिआधिः संभाव्यते तदाह ईशषन् स्नायतामुखेनयतो विच्छायासि अतो भवती मंतराधि लक्ष्येअंतरा आधिर्यस्याः सातांतत्राधिहेत् नुत्वेक्षते दशेदिया गयंतः करणाचतुष्टयंतत अतुर्देशशोकहेत् नुत्वेक्षते दृशेव ! स्वाप्यंतः करणाचतुष्टयंतत अतुर्देशशोकहेत् नुत्वेक्षते दृशेव ! स्वाप्यंतः करणाचतुष्टयंतत अतुर्देशशोकहेत् नुत्वेक्षते दृशेव ! स्वाप्यंतः करणाचतुष्टयंतत अतुर्वेश शिक्षते दृशेव ! स्वाप्यंतः करणाचतुष्टयंतत अतुर्वेश स्वाप्यंतः करणाचतुष्टयंति अत्याप्यंतः करणाचतुष्टयंति अत्याप्यंतः करणाचतुष्टयंति अत्याप्यंतः करणाचतुष्टि स्वाप्यंतः करणाचत्रे स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः करणाचत्रे स्वाप्यंतः स्वप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंतः स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंत्रं स्वाप्यंतः

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

किंच्र स्निग्धेषु पांडवेषु विष्णोर्यानि सारथ्यादीनि कमीणि तानि शृगवन् । तथा विष्णोर्जगत्कर्मृकां प्रणातिच शृगवन् । तत्र पार्षदं सभापतित्वम् । सेवनं चित्तानुहत्तिः । बीरासनं रात्री खद्गहस्तस्य तिष्ठतो जागरणम् ॥ १७॥

अन्विति दोषः। अन्वहमनुवर्त्तमानस्य ॥ १८॥

धर्म इति । युगारम्भक्षगात एव धर्मपृथ्वीकलयस्तथाभूतीभवन्तो लोकेरहङ्या अपि दिहक्षगीयत्वादनुष्यायतः परीक्षितो योगजनेत्रा क्यां हष्टा क्षेयाः । धर्मो वृषक्रपः । विच्छायां हतप्रभाम् ॥ १९ ॥

बात्मनो देहस्य। अनामयमारोग्यम्। किंच अनुर्मध्ये आधिःपीडा यस्यास्ताम् तत्रकारणानि कल्पयन् पृच्छति दूरे वन्धुमिति॥ २०॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

स्त्रिग्धेषुस्तेहवत्स्विष्णोर्वासुदेवस्यसारथ्यादीनिकर्माणिगृर्गवंस्तथाविष्णोर्जगत्कर्षुकांप्रणातिचगुगवसृपतिविष्णोश्चरणारिषदे म-किकरोतिसमचकारेत्यर्थः तत्रसारथ्यंसीत्यंपारिषदंसभ्यत्वंदीत्यंद्रुतकर्मे॥१७॥

अन्वहंपूर्वेषांराजवींगाांवृत्तिवर्तमानस्यानुवर्तमानस्यसतः नातिदूरशिव्रमेवयहास्त्रयमासीत्तन्सेमत्तोनिवोध शृणु ॥ १८॥

धर्मोवृषद्भपः विच्छायांविगतप्रभांगोरूपधरांपृथ्वीवत्सहीनांमातरमिवपुच्छतिसम् अपुच्छिदित्यथैः॥ १९॥

तदेवाह कि बिदितिषड्भिः हेमद्रे । कि बत्ततव आत्मनःदेहस्यानामयमारोग्यमस्ति अहंतुयतोविच्छायासि अतः र्वन्यसम्बद्धाय तदेवाह कि बिदितिषड्भिः हेमद्रे । कि बत्तिमालक्षये तत्रवहुन्हेतून्तक्यन्युच्छति हे अम्ब । दूरेस्थितंकश्चनबन्धुंगोचिस २० पादैर्न्यूनं शोचित मैकपादमुतात्मानं वृष्टिभांक्ष्यमागाम् ।
ग्राहो सुरादीन् हृतयज्ञभागान् प्रजा उत स्विन्मघवत्यवर्षति ॥ २१ ॥
ग्ररक्ष्यमागाः स्त्रिय उव्वि ! वालान् शोचस्यथो पुरुषादैरिवार्तान् ।
वाचं देवीं ब्रह्मकुले कुकर्म्भग्यब्रह्मग्ये राजकुले कुलाग्यान् ॥ २२ ॥
किं क्षत्रबन्धन् किलिनोपसृष्टान् राष्ट्रागि वा तैरवरोपितानि ।
इतस्ततो वाशनपानवासःस्नानव्यवायोन्मुखजीवलोकम् ॥ २३ ॥
यद्यान्व ! ते भूरिभरावतारकृतावतारस्य हर्र्धरित्रि ! ।
ग्रन्तिहितस्य स्मरती विसृष्टा कर्मागि निर्वागिविलिन्वतानि ॥ २४ ॥

#### भाषादीका ।

समस्त जगत् जिनको प्रशाम करता है वे विष्णु पांडवों का सारध्य करते हैं पार्षद वनते हैं सेवन करते हैं सख्य करते हैं दौत्य करते हैं वीरासन से उनकी रक्षा करते हैं स्तुति करते हैं प्रशाम करते हैं यह सुनकर राजा परीक्षित कृष्ण चरणारिवन्द में भिक्त करते थे॥१७॥

प्रतिदिन पूर्व पुरुषों के वृत्त में वर्तमान उस राजा परीक्षित को शीघ्रही जो आश्चर्य हुआ वह मुझसे छुनौ ॥ १८॥

धर्म ( वृषक्प ) एक पादसे चलता विना बछडा की मा के समान अश्रुमुखी कान्ति बिहीन गौ ( पृथिवी ) को प्राप्त होकर उससे पुँछने लगा॥ १९॥

े भद्ने ! तेरे आत्मा का अनामय (आरोग्य) तो है ? छोटे से मिलन मुखसे तुम कान्तिहीन सी हो तुम अन्तर में कुछ चिन्तायुक्त दीखती हो । अम्ब ! क्या किसी दूरस्थित बंधु को सोचती हो ॥ २०॥

#### श्रीधरस्वामी।

त्रिभिः पादैर्नृनम् अतएनैकपादम् । मा माम् । वृष्टैरत ऊर्ध्व भोक्ष्यमागां पुंस्त्वमात्मनो विशेषगात्वात् । हता यश्वभागा येषां यश्वाद्य करगात् ॥ २१ ॥

हे उर्वि पृथ्वि ! । भर्नृभिररक्ष्यमाणाः स्त्रियः । पितृभिररक्ष्यमाणान् बालान् । प्रत्युत तैरेव पुरुषादैरिव निर्देयैरासीन् क्लिष्टान् । वाचं देवीं सरस्वतीं कुकर्मणा दुराचारे स्थिताम् । कुलाग्यान् बाह्मणोत्तमान् सेवकान् ॥ २२ ॥

उपसृष्टान् व्याप्तान् । अवरोपितानि उद्घासितानि । व्यवायो मैथुनम् । निषेधानादरेखा सर्वतोऽशनादिष्नुसुखं प्रवर्शमानं जीव स्रोकं वा ॥ २३ ॥

अम्ब ! हे मातर्थिति ! ते तब यो भूरिभारः तस्य अवतारणार्थे कृतावतारस्य कर्माणि स्मरन्ती तेन विसृष्टा सती शोचिस । निर्वाणं विलिम्बितम् आश्रितं येषु तानि । निर्वाणविङम्बितानीति पाठे निर्वाणं विङम्बितम् उपहस्तितं यैः । मोक्षाद्प्यधिकसुकानीत्यर्थः ॥ २४॥

#### श्रीवीरराघवः।

किवापादैकिभिन्यूनमएकः पादोयस्यतंमांप्रतिशोचिसि उत्रवृष्णैः श्रद्धपायेराजभिमोक्ष्यमाग्रांखात्मानंप्रत्येवशोचिस आहोखियुतः श्रुत्यः यश्चीयद्दविभागोयेषांतान् देवान्प्रतिउतिखतमधवतींद्रेऽवर्षतिसतिवुर्भिक्ष्यपाडिताःप्रजाःप्रति ॥ २१ ॥

यद्वाहेउर्वि ! पुरुषादैराक्षसैरिवनृसंसैरार्शान्पीडितान् वालकान्रक्षमाणाः स्त्रियःस्त्रीः प्रतिशोचिसिक् ब्रह्मकुलेकुकर्मणिषु हुंसेसिति देवस्यविष्णोः सम्बन्धिनीवाचंत्रयीं प्रतिउतराजकुलेऽब्रह्मणयेब्राह्मणेष्वसाधुनिसितकुलाग्यान्ब्राह्मणान्प्रति ॥ २२ ॥

किंवाकिलोपसृष्टान् श्रीत्रयाधमान्त्रतियद्वातैःक्षत्रवन्धुभिरवरोपितान्युपद्भुतानिराष्ट्राशिप्रति उत्तइतस्ततः निषिद्धदेशेजनेष्वशमाधुन्मुख मदानाद्यभिलाषिगांजीवलोकंप्रति ॥ २३ ॥

यद्वाहेशम्व ! हेथरित्रितवभूरिभारस्यावतारायहरणायकतः अवतारोयेनतस्यहरेरधुनांतहितस्यश्रीकृष्णस्यहरेरितिकसेरिषष्ठीतेनावि सृष्टात्यकासतीतस्यकर्माणिचेष्टितानिनिर्वाण्यविल्यास्यतानिस्मरतीत्वंशोचिसिनिर्वाणेमोक्षेविशेषणलिस्वतानिसानिहतानिसाक्षात्कतानीति स्वत् यद्वातित्रीणांसुक्षेविल्यम्बितमधुनांतरितयेभ्यस्तानि ॥ २४॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

े अपिचित्रिभिः पादैर्न्युनंहीनमेकपादंमामांप्रतिशोचसि उतपक्षांतरेआहोस्वित् वृषंघर्मेलीनंनष्टंकुर्वतीतिवृषलाः राजाभासाः शुद्रप्राया स्तैभीक्ष्यमागामात्मानंशोचेसि अथोअथवा हृतोयक्षेभागोयेषांतेतथोक्तास्तान्सुरादीन्शोचसिकिम मघवतींद्रेऽवर्षतियक्षाभावाद्वर्षमकुर्व तिसतिसस्यादिसमृद्धचभावेनदरिद्धाः प्रजाउद्दिश्यशोचस्युतस्वित् आपिस्वित् ॥ २१ ॥

अथवाहे उर्वि ! भूः राजकुले अब्रह्मण्ये अरस्यमाणास्त्रिय उद्दिश्य शोचिस अथवापुरुषादै में नुष्यभक्षकेरिविस्थंतैरुपद्रवकरेरातीन्दुः खितान् व्रह्मकुलेब्राह्मग्राकुलेकुत्सितकमीग्रादुष्प्रीतप्रदेखिखनिदक्ममुर्वितसति राजकुलेअब्रह्मग्येब्राह्मग्रावहुमानमकृत्वा तस्मात्करादि।नाददानेसितचकुलाग्न्यांश्रेष्ठांकुलीनर्वतमानिमितिवादेवींद्यातमानांवाचेवेदवागीामाचारकुलँहीनाअध्येष्यंतीतिशोचिसिस्वित् । "बिभेत्यरपश्चताद्वेदोमामयंप्रचालिष्यतीति" वचनात् ॥ २२ ॥

कलितोपस्पृष्टानुपहतान्श्रत्रबंधून्शोचिस तैःश्रत्रवंधुभिः अवरोपितानिविनाशितानिराष्ट्रागिवाशोचिस यद्वा पवंवाहतस्ततः अनि अमेनाशनंचपानंचवासः स्नानंचव्यवायोग्राम्यधर्मश्चतेतथोक्ताः तेषूत्सुकमुत्कंटावंतंजीवलोकंप्राणिसमूहंकिशोचासि ॥ २३ ॥

अथोतिपक्षांतरारंभः ततवभूमेर्महतोभारस्यावतारोऽवरोपणतस्मैभूरिभारावतारायकृतोऽवतारः खरूपप्रकाशोयेनसतथोक्तः तस्यांत हितस्यनिर्वाणं खखयोग्यं मोक्षंविद्योषे गालंबयंतिपुरः स्थितंकारयंतीतिनिर्वाशाविलंबितानिर्निर्वाणं विलंबयंत्यपहरंतीतिवाहरे :कर्माणिचरिता-निस्मरंतीहरिगाहमद्यविसृष्टानन्वितशोचस्यपिकिम ॥ २४॥

#### क्रमसंदर्भः।

निर्वागाविडिम्बितानीत्यत्र निर्वागां विडिम्बतं थैरिति विष्रहः। निर्वागास्य सुखादित्वातः पूर्वनिपातः । डलयोरेकत्वात् पाठद्यमिप समानार्थम् ॥ २४॥

#### सुवोधिनी।

शोकेहेतुः पादैर्न्यूनमिति आत्मानशरीरंवापृथिवीरूपरसोऽत्रशोकहेतुः वृषकैः शूद्रैः हृतयक्षभागादेवाः बहवः मधवतिअवर्षतिअन्न रहिताः प्रजाः ॥ २१ ॥

यादाअरक्षमागास्त्रियः वालाश्चहेउर्वि ! संतोषाभावेमनोवैक्कब्यंमलमोक्षोचा पुरुषादैः राक्षसैरिवआर्त्तान् पीडितान्वालान्वाचंदेवींवेद

क्षपांचक्षरेषांकुकर्माण्यवाह्मण्यकुलेबाह्मणाहितराजकुलेकुलाग्यान्वाह्मणान्श्रोतृक्षपान्॥ २२॥

क्षत्रवंधून्क्षत्रियाधमान्कालिनोपसृष्टानितिसर्वदोषसिहतान्ब्राह्मग्राह्मणन् तैरवरोहितानिउद्वासितानिराष्ट्राग्रिदेशाः बहुशःइतस्ततःवि

धिनिवेधपालनव्यतिरेकेगाभोजनपानास्थातिस्नानसंभोगोन्मुखंजीवलोकंबुद्धिरूपम् ॥ २३ ॥ तवभूरिभारावतारार्थकतावतारस्यभगवतोवासुदेवस्यसर्वदुः बहर्तुः हेधरित ! सांप्रतमंतर्हितस्यतेनैवाविसृष्टाकर्माशिउदारचरित्राशि अनीधकारिषुर्वत्तमानानिवारगार्थैविलंवितानिर्वाग्रप्रदत्वातत्र्योगिस्थता\नीचत्तरूपागिस्मरतीतानिशोचिस् ॥ २४ ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

मा माम् । वृष्ठिम्लें कौरत ऊर्द्धम् आत्मानं भोक्ष्यमागाम् । पुंस्तमात्मपद्विशेषगात्वात् ॥ २१॥

भर्त्तृभिररक्ष्यमागाः स्त्रियः । पितृभिररक्ष्यमागान् वालान् प्रत्युत तैरेव पुरुषादैरिव ।नर्द्यैरार्त्तान् क्लेशितान् । वाचं पागिडत्यल-क्षगां सरस्वतीम कुकम्मेणि दुराचारे। ब्राह्मग्राभिक्तिहीनेऽपि राजवंदी उत्पन्नान् कुलाग्यान् कुलीनत्वेन ख्यापितान्॥ २२॥

उपसृष्टान् व्याप्तान् । अवरोपितानि उद्धासितानि (भूमेः ) भुवो (भरः ) भारस्तस्य अवतारणार्थे कृतोऽवतारो येन तस्य कर्माणि स्मरन्ती। यतस्तेन त्वं विसृष्टा त्यक्ता। निर्वाण कैवल्यं विडम्बितं स्वमाधुर्येण उपहासास्पदीकृतं यैस्तानि। डलयोरैक्यात् पाठद्वय मपि समानार्थम् ॥ २३ । २४ ५

#### सिद्धांतप्रदीपः।

किंवाित्रभिः पादैन्यूंनम् एकः पादोयस्यतथाभूतंमामांशोचिसि अथवातः परमात्मानंतृष्ठेः श्रद्धप्राधैराजन्यभाष्यमागांशोचासिआहो स्तित हतानष्टाहिछन्नायश्वभागायेषांतान् सुरादीन्देवर्षिपितृन्द्योचिस उत्पूजाःदुर्भिक्षकर्तिताः॥ २१॥

हेउविषसुंधरे ! अरक्षमाणाभर्षादिभिरितिशेषः स्त्रियःशोचिस अथोअथवापुरुषादैरिवातिनिर्देयैः पित्रादिभिर्वालान् आर्तान्थिल-हुउ।वन्छन् । प्रशासिक्तिकर्मपरंदेवीं द्योतमानां वाचं सरस्वतीं किंवाशों चिस्न अद्वार्यमध्यानामाहितकारिशिकुलान्यान् विज्ञोत्तमान् हान्शों चिस्तिक्तिक्तिकारिशिकुलान्यान् विज्ञोत्तमान् जीविकार्थस्थितान्शाचिस ॥ २२॥

भरण्य वाच।

इदं ममाचक्ष्व तवाधिमूलं वसुन्धरे ! येन विकार्शतासि ।
कालेन वा ते विलनां वलीयसा सुरार्चितं किं हृतमन्व ! सौभगम् ॥ २५ ॥
भवान् हि वेद तत् सर्व्व यन्मां धर्मानुपृष्क्रित ।
चतुर्भिर्वर्त्तसे येन पाँदेर्लोकसुखावहैः ॥ २६ ॥
सत्यं शौचं दया चान्तिस्त्यागः सन्तोष ऋार्जवस् ।
शमो दमस्तपस्ताम्यं तितिच्चोपर्रातः श्रुतस् ॥ २७ ॥
ज्ञानं विरक्तिरैश्वर्यं शौर्यं तेजो वलं स्मृतिः ।
स्वातन्त्रयं कौशलं कान्तिर्धेर्यं मार्द्वमेव च ॥ २८ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

किंवाकिलिनोपसृष्टात्व्याप्तात् आहोस्रित्तैः किलिनोपसृष्टैरवरोपितानि उद्वासितानि किम्बाइतस्ततः योग्यतामनपेक्ष्यैष अज्ञना सुन्मुसंजीवलोकंशोचिस ॥ २३ ॥

यद्वाहेश्रम्व ! मातः धरित्रि तेतवयोभूरिभरस्तस्यावतारायक्वतोवतारोयेनतस्यहरेः प्रत्यन्तिहितस्यनिर्वाग्रांमोक्षंविलिम्बतमाश्रितंयपु

तानिकर्माग्रिस्प्ररतीसतीत्वंशोचिसिकियतोविसृष्टातेनत्यकासि ॥ २४ ॥

#### भाषाटीका।

क्या तीन पादों से रहित मुझ एक पाद को सोचती हो ? वा शुद्ध राजाओं करके भोक्ष्यमाण अपने को सोचती हो ? वा हत (नष्ट) यज्ञभाग देवतादिकों को सोचती हो ? वा अवर्षा सं दुःखी प्रजा को सोचती हो ?॥ २१॥

हे उर्वि ! पुरुषों से अरक्षित स्त्रियों की सोचर्ता हो ! वा राक्षसों के समान निर्दय माता पिताओं से पीडित बालकों को सोचर्ता हो | वा दुराचारी ब्राह्मणों के कुल में सरखती देवी का सोच करती हो वा अब्रह्मणय राजकुल में उत्तम ब्राह्मणा दास्य करते हैं उने सोचती हो ! ॥ २२ ॥

क्या कलियुग से व्याप्त क्षत्र वंधुओं को सोचती हो ! वा क्षत्र वंधुओं ने उछित्र किये देशों को सोचती हो ! किम्वा जहां चाहें सहां (निषध विधिन मानकर) भाजन करना पान करना वास करना स्नान करना. इन में उन्मुख जीव लोक को सोचती हो ॥ २३ ॥

यदा हे अम्व ! धारित्रि ! तुम्हारे भूरि भार के उतारने को कृतावर हिर के निवार्ग विडम्बित कर्मों को स्मर्गा करती ही ! क्योंकि वे तुमको छोड़कर अन्तर्ध्यान होगये है ॥ २४॥

#### श्रीधरस्वामी।

्हे अम्ब ! ते सौभाग्यं कालेन वा इतम् ॥ २५ ॥

भवान जानात्येव। तथापि वस्यामीत्याह। येन हेतुभूतेन त्वं चतुर्भिः पादैर्वत्तंसे यत्र च सत्यादयो गुगा न वियन्ति (न श्लीयन्ते स्म) तेन श्रीनिवासेन रहितं लोकं शोचार्माति षष्ठेनान्वयः॥ २६॥

सत्यं ययार्थभाषणाम् । शौंचं शुद्धत्वम् । दया परदुःखासहनम् । क्षान्तिः क्रोधप्राभौ चित्तसंयमनम् । त्यागोऽर्थिषु मुक्तहस्तता । सन्तोषः अलंबुद्धिः । आर्क्जवम् अवकता । शमो मनोनैश्चल्यम् । दमो वाद्यन्द्रियनैश्चल्यम् । तपः खधम्मः । साम्यम् अरिमित्राद्यभावः ! तितिक्षा परापराधसहनम् । उपरितः लाभप्राप्तावीदासीन्यम् । श्रुतं शास्त्रविचारः ॥ २७ ॥

क्षानम् आत्मविषयम् । विरक्तिवृष्ण्यम् । ऐश्वर्यं नियन्तृत्वम् । शौर्यं संप्रामोत्साहः । तेजः प्रमावः । वसं दक्षत्वम् । स्मृतिः कर्त्तव्यार्थानुसन्धानम् । स्वातन्त्र्यम् अपराधीनता । कौशलं क्रियानिपुगाता । कान्तिः सौन्दर्थम् । धैर्यम् अव्याकुलता । माईवं चित्तान् क्राठिन्यम् ॥ २८ ॥

# श्रीवीरराघवः।

हेवसुन्धरे ! तवाधेर्मूलिमरमुपास्थतंमसमाचस्वाक्याहियेनत्वंविकर्षिताक्रपत्वंप्राप्तासितस्याधेर्मूलिमरयर्थः हेवस्व ! सुरेर्गिवहुमन्त ह्यंतवसीभगंस्पृह्याियंसीदर्यविजनामिपवलीयसाकालेनिकवापद्धतम् ॥ २५॥

#### श्रीबीरराघवः ।

एवमुक्ताधरणयाहभवानित्यादिदशभिःतन्ममाधिमूलंसर्वेनूनंभवान्वेदजानास्येवकुतः यद्यस्मासमीन्पृच्छसिअजानतोधर्भप्रश्लोनोपपन्न इतिभावः अथापिकितदितिचेधेनकारणेनत्वंलोकानांसुखावहैश्चतुर्भिः पादैर्वर्तसेऽवर्तयाः अधुनायेनकारणेनिवनैकपादेनवर्तसेतदेवममा प्याधिमूलमित्यर्थः॥ २६॥

कारणिवशेषिजश्वासायांतदुपपादयतिसत्यित्यादिपंचिभः सत्यादयोऽन्येचवहवोमहत्त्वमिच्छद्भिजेनैःप्रार्थनीयागुणाःनित्याःकदाचिद पियस्मिश्रवियंतिनव्ययंति तेनगुणानांपोत्रणमुख्याश्रयेणश्रीनिवासेनश्रीकृष्णोनसांप्रतमधुनारहितमतप्वपाप्मनापापेनकिलनांशितंलोकं प्रत्यहंशोचामीत्यन्वयःतत्रसत्यंभृतिहतत्वंवाचिकंवा शौचंहेयप्रतिभटत्वं द्यापरदुःखासहिष्णुत्वं क्षांतिःपरापराधसहिष्णुता त्यागअनादरः पूर्णकामत्वप्रयुक्तः तथाचश्र्यते "सर्वमिदमभ्यात्तोवाक्यनादर" इति आत्मपर्यतवदान्यत्वंवात्यागः संतोषः किहिचिदिप कलेशराहित्यम् आर्जवंमनोवाकायानामैक्यक्षपम् शमोमनोनिग्रहः दमोवाह्यद्वियनिग्रहः तपआलोचनजगद्वशापारोपयुक्तं साम्यमरिमित्रादिराहित्यं तितिक्षाद्वद्वप्रतिहतत्वम् उपरितर्वृथाव्यापारोपरितः श्रुतंसर्वश्वाश्याथाशत्म्यवित्वम् ॥ २७ ॥

श्वानमाश्चितानिष्टपरिहारेष्टप्रापणोपयुक्तं विराक्तिविषयेषुनिस्पृहत्वं विषयानाकृष्टाचित्तत्वंवा पेश्वर्यस्वातिरिक्त सर्वनियंतृत्वं शोर्येयुरे विषयानाकृष्टाचित्तत्वं पेश्वर्यस्वातिरिक सर्वनियंतृत्वं शोर्येयुरे विवेसु विषयं तेजोधृष्टता वलंप्रसिद्धं स्मृतिः सत्स्विपिविषुलेषु "अहंप्रजापतीनांचसर्वेषामीश्वरः प्रभुः ममविष्णुर्राचित्यात्मेतिव्रह्मवचनम् उपकार विषयस्मरणांस्वातंत्र्यमन्यानपेक्षत्वं कौशलंनेषुग्यं कांतिः "नत्त्रसूर्योभाती"ति श्रुत्युक्तविधादीप्तिः धेर्यवीर्यं तव्ययुद्धस्वप्रदृद्धवप्रवेशसाम

र्थम् माईवमक्रूरत्वंखातंत्र्यमन्यानपेक्षकौशलमेवखातंत्र्यं सौभगंकांतिरितिपाठेसौभगंस्पृहश्वीयत्वम् ॥ २८ ॥

### श्रीविजयध्वजः।

येनमनोदुः खेनविकर्शिताकृशतरासिहेवसुंधरे!तिदिदमाधेर्भनः पीडायाम् लंगमाख्याहीत्यन्वयः अथवासंप्रतिप्रभुगासमयेनविजनासर्वीग पुष्टनकालेनतवसुरार्चितंसीभाग्यमवलीढंग्रस्तंचेत्यन्वयः ॥ २५ ॥

धर्मेग्रापृष्टाभूमिः तंत्रतिव्रूतइत्याह भवानिति हेधमे ! यदाधिमुलंत्वंमामनुपृच्छसितत्सर्वेभवान्वेदहि तथापिवक्ष्यद्रतिशेषः येनश्रीकृष्ये

नत्वंलोकसुखावहैः तपःशोचदयासत्याख्येश्चतुर्भिः पादैःकलाविपवर्तसभवतित्यर्थः॥ २६॥

द्वानंसर्वज्ञतान्यत्रअपरोक्षापरोक्षभेदेनपरमार्थविषयं विरक्तिःस्वेतरिवषयेअसारतावुद्धिः अन्यत्रशब्दादिविषयरागरिहत्यम् । ऐश्वरं समस्तजगदीशितृत्वसामर्थयम् अन्यत्राग्रमादिकं शौर्यसंग्रामेष्वपलायित्वसुभयत्रसमानं तेजःपरेरप्रघृष्यत्वम् अन्यत्रश्रद्धावर्चसं घृतिः सर्वधारणम् "एषसेतुर्विघृतिरि"तिश्रतेः विकारहेतावविकारित्वंवा अन्यत्रजिह्णोपस्थजयः स्मृतिरतीतानागतानंतब्रह्माग्रहादिस्मरणम् अन्यत्रावगतपदार्थानुसन्धानं स्वातंत्र्यमपराधीनत्वम् अन्यत्रस्वतन्त्रोविष्णुःतद्धीनत्वंकुमारीकंकण्यवदेकािकत्वंवा कौशलंसर्वकर्माणिवैचि इयकरणावृद्धिः अन्यत्रशिवल्यावृद्धिः अन्यत्रशिवल्यावृद्धिः अन्यत्रशिवल्यावृद्धिः अन्यत्रशिवल्यावृद्धिः अन्यत्रशिवल्यावृद्धिः अन्यत्रसमानं स्वाप्तिः अन्यत्रसमानं स्वप्तिः अन्यत्रसमानं स्वप्तिः अन्यत्रसमानं ॥ २८ ॥

#### क्रमसंदर्भः।

विकर्शितासि विशेषेगा कृशीकृतासि ॥ २५ ॥ २६ ॥
तत्र सत्यिमित्शादि । सत्यं यथार्थभाषगां (१) शीचं शुद्धत्वं (२) द्या परदुःसासहनम् (३) अनेन शरगागतपालकत्वं (४)
भक्तसुद्धत्त्वश्च (५) श्लान्तिः क्रोधोत्पत्तौ चित्तसंयमः (६) त्यागो चदान्यता (७) सन्तोषः स्वतस्तृतिः (८) आर्जवमकृरवा (९)
अनेन सर्वशुभद्भरता (१०) शमो मनोनैश्लास्यम् (११) अनेन सुद्दव्यतत्वमिष (१२) दमोवाह्यन्द्रियनैश्लस्यं (१३) तपः श्लियत्वादि-

<sup>\*</sup> अनेन उंरुद्रंपातीतिउपः मुख्यप्रागाइत्यस्चि।

#### क्रमसन्दर्भः।

लीलावतारानुरूपः खबर्माः (१४) साम्यं शत्रुमित्रादिवुद्ध्यभावः (१५) तितिक्षा खस्मिन् परापराधस्य सहनम् (१६) उपरितर्लाभ प्राप्तावौदासीन्यं (१७) श्रुतं शास्त्रविचारः (१८)॥ २७॥

ज्ञानं पश्चिविशं बुद्धिमत्त्वं (१९) इत्तर्व्वं (२०) देशकालपात्रज्ञत्वं (२१) सर्व्वज्ञत्वस् (२२९) आत्मज्ञत्वश्च (२३) विरक्तिरसिंद्धषयवेतृष्ण्यम् (२४) ऐश्वर्यं नियन्तृत्वं (२५) शौर्यं संप्रामोत्साहः (२६) तेजः प्रभावः २७) अनेन प्रतापश्च स च प्रभावविष्यातिः (२८) वलं दक्षत्वं तच्च दुष्करिक्षप्रकारित्वं (२९) स्मृतिः कर्त्तव्यार्थानुसन्धानं श्रृतिरितिपाठं क्षोमकार्ग्ण प्राप्तेऽप्यव्याकुलत्वं (३०)
स्वातन्त्रयमपराधीनता (३१) कोशलं त्रिविधं कियानिपुग्णता (३२) युगपद्भूरिसमाधानकारितालक्षग्णा चातुरी (३३) कलविलास
विद्वत्तालक्षग्णा वैदग्धी च (३४) कान्तिः कमनीयता एषा चतुर्विया अवयवस्य (३५) हस्ताद्यङ्गादिलक्षग्णस्य (३६) वर्गारसगन्धस्पर्शशब्दानां तत्र रसश्चाधरचरग्णस्पृष्टवस्तुर्विष्ठो श्वयः (३७) वयसश्चेति (३८) एतया (कान्त्या) नारीगग्रमनोहारित्वमपि (३९)
धैर्यमव्याकुलता (४०) मार्द्वं प्रेमार्द्वचत्त्वम् (४१) अनेन प्रेमवद्यत्वश्च (४२)॥ २८॥

## सुबोधिनी।

इदंबस्यमागांभवत्येवतवाधिम्, तंत्रसंमितिमेवआचस्वहेवसुंधरे! सर्वरत्नीदसहितेश्टगारिप्रयेयेनरहितेनत्वविकर्षितासिततः स्वयमे वाह यत्किलनाकालेनविलनासुरार्चितंतवसीभाग्यम् भगवत्रस्थितिरूपंतदद्यरूपमितिकालनचिन्हादीनामिपहरणात्॥ २५॥

तत्रधर्मोक्तं सर्वमेवहेतुमंगीकृत्यसर्वेषांयूलमगवद्गमनमितियत्रैवतद्गाहित्यंतमेवशोचामीत्याह भवान्हिवेदेतियुक्तिरुक्तेव धर्मस्यज्ञानमपि प्रमागामुत्प्रेक्षितमितिप्रमितमेवस्वात्मनिप्रमितत्वात्अतस्तदाह चतुर्भिवर्त्तसेयेनेतिद्वापरांतेस्वभावतप्वपादत्रयंगच्छति तदापित्वयनभगवता कृत्वाचतुर्भिः पादैर्वर्त्तसंतेपादाःसर्वसुखहेतवः ॥ २६ ॥

तेचभगविष्ठष्ठाःतत्संवंधादेवान्यत्रभवंतितेनगुगापात्रेगारहितंसर्वभेवशोचामीतिवकुंगुगान्गगायितभगवदीयान् सत्यमित्यादिनासत्यं यथार्थभाषगांशोचंशुद्धत्वंदयापरदुःखप्रहागांच्छा क्षांतिः क्रोधप्राप्तीचित्तस्यमनत्यागः अर्थिषुमुक्तहस्तता संतोषः अलंबुद्धिः आर्जवमव कताशमोममोनेश्चर्यं तपःस्वधमेः साम्यमरिमित्राद्यभावः तितिक्षाअपराधसहनम्उपरितःलाभप्राप्तावीदासीन्यं स्मृतंशास्त्रविचाः॥ २७॥

ज्ञानमात्मविषयं विरक्तिर्वितृष्णतापेश्वर्यनियंतृत्वंशीर्यसंग्रामोत्साहः तेजः प्रभावः बलंदश्चत्वं स्मृतिःकर्त्तव्यार्थानुसंघानं स्वातंत्र्यम् पराधीनताकौशालंकियानिषुणता कांतिः सौन्द्रयेधेर्यमव्याकुलतामार्द्वंचित्ताकाठिन्यम् ॥ २८॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

विकर्शितासि विशेषण कृशीकृतासि ॥ २५ ॥

ननु यद्यप्यहं जानामि तदिप त्वनमुखात् श्रोतुमिच्छामीत्यत आह चतुर्भिरिति। येन हेतुभूतेन त्वं चतुर्भिः पादैर्वर्त्तसे इति वर्त्तमान सामीप्ये वर्त्तमान प्रयोगः। तेन श्रीनिवासेन रहितं लोकं शोचामीति षष्ठेनान्वयः॥ २६॥

सत्यं यथार्थभाषगाम् । शौचं शुद्धत्वम् । दया परदुःखासहनम् । अनेन शरगागतपालकत्वं भक्तसुद्धत्वंच । क्षान्तिः क्रोधोत्पत्तौ चित्तसंयमः । त्यागो वदान्यता । संतोषः स्वतस्तृष्तिः । आर्जवमवक्षता । शमो मनोनैश्चल्यम् अनेन सुद्दब्वतत्वमपि । दमो वाह्येन निद्रयनैश्चल्यम् । तपः क्षंत्रियत्वादिलीलारूपः स्वधमेः । साम्यं शत्रुमित्रादिवुद्धयभावः । तितिक्षास्वस्मिन् परापराधस्य सहनम् उप रतिभौगप्राप्तावौदासीन्यम् । श्रुतं शास्त्रविचारः ॥ २७ ॥

क्षानं सर्वक्षत्वं कृतक्षत्वादिकंच। विरक्तिवैतृष्णयम्। ऐश्वर्थे नियन्तृत्वम्। शौर्थं संग्रामोत्साहः। तेजः प्रभावः। वलं दक्षत्वम्। स्मृतिः कर्त्तव्यार्थोनुसन्धानरूपा। स्वातन्त्र्यम् अपराधीनता। कौशलं कलाविलासादिवैदग्धी। कान्तिः कमनीयता। धैर्यमञ्याकुलत्वम्। मार्द्वं सुकुमारत्वं प्रमार्द्रत्वच्॥ २८॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

हेवसुन्धरे! येनआधिमुलेनत्वमाधिद्वाराविकार्षितासितदिदमाचक्ष्वभाष्याहिहेथम्व ! सुरार्चितंसुरैरपिपूजितंतवसौभगंकालेनिकवाह तम ॥ २५॥

एवमुकाधरगयुवाचभवानित्येकादशिमः यन्मामाधिमृलंपृच्छसितत्सर्वभवान्वेदजानात्येवतथापिशृगु येनभगवताहेतुभूतेनलोकसु-खावहैश्चतुर्भिःपादै त्ववर्तसेयत्रचसत्यादयोगुगानिवयंतितेनश्चीनिवासेनरहितं लोकशोचामीतिषष्ठेनान्वयः॥ १६॥

सत्यमाप्ततमत्वम् यथार्थवोधकवेदपवर्तकत्वात् ॥ १ ॥ शौचंनित्यशुद्धाविगृहाहिमत्वम् ॥ २ ॥ हयापरदुःकासिहच्युत्वम् ॥ ३ ॥ भांति जितकोधत्वम् ॥ ४ ॥ त्यागावदान्यत्वम् ॥ ५ ॥ सन्तोषानित्याप्तकामत्वं ॥ ६ ॥ आर्जवमवक्रत्वं ॥ ७ ॥ शमःस्थिरमनस्कत्वम् ॥८॥ दमी वाहेंद्रियस्थैर्यम् ॥ ९ ॥ तपःआलोचनम् ॥ १० ॥ साम्यमरिमित्रोदासीनराहित्यम् ॥ ११ ॥ तितिक्षाद्वेषशून्यत्वम् ॥ १२ ॥ अयुक्तव्यापारी वाहेंद्रियस्थैर्यम् ॥ १३ ॥ श्रुतंसर्ववेदशास्त्रार्थयाथात्म्यावित्त्वम् ॥ १४ ॥ २७ ॥ व्यापारी द्वुपरितः ॥ १३ ॥ श्रुतंसर्ववेदशास्त्रार्थयाथात्म्यावित्त्वम् ॥ १४ ॥ २७ ॥

िया के प्राप्त के किया है। जा किया के किया है

प्रागल्भ्यं प्रश्रयः शीलं सह त्रोजो वलं भगः ।
गाम्भीर्यं स्थैर्यमास्तिक्यं कीर्निम्मानोऽनहंकृतिः ॥ २६ ॥
एते चान्ये च भगवित्रत्या यत्र महागुगाः ।
प्रार्थ्या महत्त्वमिन्कृद्धिनं वियन्ति स्म किहींचित् ॥ ३० ॥
तेनाहं गुगापात्रेगा श्रीनिवासेन साम्प्रतम् ।
शोचामि रिहतं लोकं पाष्मना किलेनेक्षितम् ॥ ३१ ॥
त्रात्मानश्चानुशोचामि भवन्तश्चामरोत्तमम् ।
देवानृषीन् पितृन् साधून् सर्वान् वर्गास्तथाश्रमान् ॥ ३२ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

ज्ञानंभूतभविष्यवर्तमानसर्वपदार्थविषयकम् ॥ १५ ॥ विरक्तिविषयेषुवैराग्यम् ॥ १६ ॥ ऐश्वर्यसर्वचेतननियंतृत्वम् ॥ १७ ॥ द्यौर्यसर्व विजयसामर्थ्यम् ॥ १८ ॥ तेजःसर्वब्रह्मादिस्तंवयर्यतैरजेयत्वेसतिपराभिभवनसामर्थ्यम् ॥ १९ ॥ वर्लविश्वधारमसामर्थ्यम् ॥ २० ॥ स्मृतिः यथापूर्वविश्वरचनातुसन्धानम् ॥ २१ ॥ स्वातत्र्ययम् सर्वनियंतृत्वेसतिस्वायत्तत्वम् ॥ २२ ॥ कौशव्यंविश्वसृजनपालनादिकियातेषुरायम् ॥ २३ ॥ कान्तिर्निरतिसयसौदर्यम् ॥२४॥ धेर्यमञ्याकुलत्वेसतिप्रतिज्ञापालकत्वम् ॥२५॥ मार्दवस् मनोवाकायव्यापारसाम्यम् ॥२६ ॥२८॥

#### भाषादीका।

े वसुन्धरे ! यह अपनी आधि का मूछ तुम मुझसे कहा जिस से तुम इतनी कुश हो । किस्वा बळवानों से भी बळवान काळ ने आज तुम्हारा सुरगग्राचित सीभाग्य हर्राळया है ॥ २५ ॥

पृथ्वी बोली हे धर्म ! तुम जो मुझ से पूछते ही सो खयं सब जानते ही। जिस से तुम लोक खुबद चार पादों से धर्तते ही। २६॥ और सत्य शीच दया क्षान्ति त्याग संतोष ऋजता शम दम तप साम्य तितिक्षा उपरित शुभ ज्ञान वैराज्ञ पैथ्वर्थ श्रूरता तेज वल स्मरण खातन्त्र्य कौशल कांति धेर्य माईव प्रागलभ्य प्रश्नय शील सद ओज वल भग गांभीर्य स्थेर्य आस्तिक्य कीर्तिमान और अनहङ्कार उनतालीस तो ये और अन्य भी ब्रह्मग्यत्व शर्गयत्वादि महद् गुण जिन में नित्य खामाविक है कि जिनका कभी क्षय नहीं जिनके इन गुणों को महत्त्व इच्छा करने वाल प्रार्थना करते हैं॥ २७। २८। २८॥

#### श्रीधरस्वामी ।

प्रागल्भ्यं प्रतिमातिशयः । प्रथयो विनयः । शीलं सुस्वभावः । सहओजोवलानि मनसो शानेन्द्रियाणां कम्मेन्द्रियाणाश्च पाटवानि । भगः भोगास्पदत्वम् । गाम्भीर्यमक्षोभ्यत्वम् । स्थैर्यमचश्चलता । आस्तिष्यं श्रद्धा । कीर्तिर्यशः । मानः पूज्यत्वम् । अनहङ्कतिर्ग-व्वीभावः ॥ २९ ॥

एते एकोनचत्वारिंशत अन्ये च ब्रह्मण्यत्वशरणयत्वाद्रयो महान्तो गुणा यस्मित्। नित्याः सहजाः। न वियन्ति न क्षीयन्ते सम ३० तेन गुणापात्रेण गुणालयेन। पापमना पापहेतुना॥ ३१॥ ३२॥

#### श्रीवीरराघवः।

प्रागल्भयंसभासुधाष्ट्यंप्रश्रयोमहत्सुविनयः शीलंसद्बृतिः सहः प्राग्णस्यस्वाभाविकसामध्यं ओजइंद्रियादिजनितवंधनधारगासामध्यं भगोक्षानासुत्कर्षः गाम्भीयंदुःखप्राह्याभिप्रायत्वंस्थैर्यकोधिनामित्तौराविकारः आस्तिक्यंशास्त्रार्थविश्वासः कीर्न्तिर्यशःमानः पूजाईताअन हंकृतिर्देहात्माभिमानराहित्यम् ॥ २९ । ३० ॥

श्रीयतेब्रह्मादिभिरितिश्रीःलक्ष्मीःतस्याः निवासःश्रीनिवासइत्यभिष्रेतम् ॥ ३१ ॥ अत्मानमानवतंचानुशोचामीत्यर्थः ॥ ३२ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

प्रागलभ्यं घाष्ट्रयेमुभयत्रसमं प्रश्नयोविनयः समं शिलंलोकमनोहरस्वभावत्वं समं सहःसहनशक्तिः प्राग्णस्यसाभाविकसामर् वास मम् ओजःपराभिभवशक्तिः अन्यत्रमानसवलं । वलंस्वेच्छाकरणशक्तिः अन्यत्रशरीरादिधारणसामर्थ्यवा भगःषड्गुणवन्त्वं भाग्यं वा अन्यत्रोत्पत्त्यादिक्षानं गाम्भीर्यपरैतनवगाद्यात्वम् अन्यत्रस्तिमितत्वं स्थैर्यनित्याकंपनम् अन्यत्रधर्मादचलनम् आस्तिक्यं वेदासुक्तमस्तिति बुद्धिः अन्यत्रगुरुवाक्येषुश्रद्दधानताकीर्तिर्दिश्चष्यातिः मानःपरेषां अमाननम् अन्यत्राभिमानः अनहंकृतिः सरूपभेदादहमितिबुद्धराहित्यम् अन्यत्रनाहंकर्ताहरिरेवमियिस्थित्वासर्वकरोतितिबुद्धिः ॥ २९ । ३० । ३१ ॥

नकेवलंभवंतंशोचामिकितुदेवादीनपि॥ ३२॥

#### क्रमसंदर्भः।

प्रागल्भ्यं प्रतिभातिशयः (४३) अनेन वावदृक्तत्वं (४४) प्रश्रयोविनयः (४५) अनेन हीमत्त्वं (४६) यथायुक्तसर्व्वमानदातृत्वं (४१) प्रियम्बदत्वञ्च (४८) शीलं सुस्त्रभावः (४९) अनेन साधुसमाश्रयत्वं (५०) सहः मनःपाटवम् (५१) ओजः ज्ञानेन्द्रियपाटवं (५२) वलंकम्मेन्द्रियपाटवं (५३) भगस्त्रिविधः भोगास्पदत्वं (५४) सुन्तित्वं (५५) सर्व्वसमृद्धित्वञ्च (५६) गाम्भीर्थं दुव्वोधाभि प्रायत्वं (दुर्विरोधाशयत्वं) (५७) स्थैर्थम् अचञ्चलता (५८) आस्तिक्यं शास्त्रचक्षुष्ट्वं (५९) कीर्तिः साद्गुगयख्यातिः (६०) अनेन रक्तलोकत्वं (६१) मानः पूज्यत्वं (६२) अनहंकृतिः तथापि गर्ब्वरहितत्वम् (६३)॥ २९॥

चकाराद्वद्याययत्वं-(६४) सर्व्विसिद्धिनिषेवितत्व-(६५) सिद्यदानन्दिवग्रहत्वादयो (६६) क्षेयाः । अत्र सन्तोषादयः कतिचिद्गुग्गा मक्तसम्बन्धादन्यत्र क्षेयाः । महत्त्विमच्छद्धिः प्रार्थ्यो इति महागुग्गा इति च वरीयत्त्वमापि गुग्गान्तरम् (६७) प्रतेन तेषां गुग्गानामन्यत्र खल्पत्वं चलत्वश्च अत्रेव तु पूर्णत्वम् अविनश्चरत्वञ्चोक्तम् । अत्र प्रच सूत्वाक्यं—नित्यं निरीक्ष्यमाग्गानां यदिप द्वारक्षेकसाम्
न वितृष्यन्ति हि इराः श्रियो धामाङ्गमच्युतामिते । तथा नित्या इति न वियन्तीति सदा खरूपसंप्राप्तत्वमिष गुग्गान्तरम् (६८) ।
अन्ये च जीवालश्या यथा—तत्राविभावमात्रत्वेऽपि सत्यसङ्गल्पत्वं (६९) वशीकृताचिन्त्यमायत्वम् (७० आविभाविवशेषत्वेऽपि अखगंडसत्त्वगुग्गस्य केवलख्यमवलम्बन्तत्वं (७१) जगत्पालकत्वं (७२) यथा तथा हतारिगतिदातृत्वम् (७३) आत्मारामगग्गाकार्षत्वं
(७४) ब्रह्मरुद्यादिसेवितत्वं (७५) परमाचिन्त्यखरूपशक्तित्वम् (७६) आनन्त्येन नित्यनूतनसौन्दर्याद्याविभावत्वं (७७) पुरुषावतारत्वेऽपि मायानियन्तृत्वं (७५) जगत्मान्व्यादिकर्तृत्वं (७९) गुग्गावतारादिवीजत्वम् (८०) अनन्तब्रह्माग्रहाश्चरोमविवरत्वं (८१)
वासुदेवत्वनारायगाङ्गत्वादिलक्षग्रमगवत्वाविभावेऽपि स्वरूपभूतपरमान्वन्त्याखिलमहाशक्तिमत्वं (८२) स्वरं भगवलुक्षग्रकृष्णत्वेन
हतारिमुक्तिमिक्तदायकत्वं (८३) खर्यापि विस्मापकरूपादिमाधुर्य्यत्वम् (८४) अनिन्दियाचेतनपर्यन्ताशेषसुखदातुस्याधिध्यत्वं
(८५) तदेतदिङमात्रदर्शनम् । यत आह श्रीब्रह्मा—गुग्गात्मनस्तेऽपि गुग्गान् विमातुं हितावतीर्गस्यकर्वशिरेऽस्येत्यादि ॥३०।३१॥

आत्मार्नामत्यादाविप तेन रहितमित्यादि योज्यम् ॥ ३२ ॥

### स्ववोधिनी।

प्रागतम्यंप्रतिभातिशयः प्रश्रयोविनयः शीलंसुखभावः सहओजेवलानि मनइन्द्रियशरीराणांपाटवानि भगः सौभाग्यास्पदत्वं गांभीर्यमक्षोक्ष्यत्वं धेर्यमचञ्चलताआस्तिक्यंश्रद्वा कीर्तिर्यशः मानः पूज्यत्वम्अनहंक्षतिः गर्वाभावः॥ २९ ॥

अन्यचत्रह्मगयत्वभक्तवत्सलत्वादयः नित्याःसहजाइमेचान्येचेतिचकारद्वयंसांसर्गिकदोषनिवृत्त्यर्थेमहागुगाइतिपरकाष्ठापन्नाः यथाज्ञानं निरतिशयंवलंनिरतिशयमिति एकस्मिन्नपिहिगुगोजातेजगतिमहत्त्वलभतेजीवः तेनविनानसर्वथामहत्त्वं भक्तिस्तुभगवद्भूपेतिनतयाव्यभि चारः अतपत्रसर्वैरेतेगुगाः प्रार्थ्यातेभगवतिब्ययमपिनप्राप्तुवंतिईषदपिनश्रीयंते ॥ ३० ॥

एवंगुणिनरूपणस्यप्रयोजनसाह तेनाहमिति सर्वेगुण।एकतः लक्ष्मीचैकतः अतस्तांभिन्नतयानिरूपयति श्रीनिवासेतिभगविन्नर्गमनेसर्वे भगवद्गुणाः लक्ष्मीः तद्गुणाश्चिनिवृत्ताः अतः शोचामीत्याह किंच तत्प्रतियोगिनोदोषाः सर्वेसमागताहत्याह पाप्मनाकलिनेक्षितिमिति सर्वेषांपापानांहेतुभूतेनकलिनाईक्षितंदष्टम् ॥ ३१॥

आत्मीयोऽयमितिकेतदीक्षिताइत्याकांक्षायांत्वदुक्ताः सर्वष्वेतितान्गणयितहेश्रमरोत्तमदेवश्रेष्ठधर्मे ! द्वितीयांतपाठोवादेवपितृऋषयः ऋग्रापकरणकत्रभावात्सदाचाराः नसंतीतिसाधुशोकः वर्णाश्रमाः स्वधर्माभावात् ॥ ३२ ॥

# श्रीविश्वनायचकवर्ती ।

प्रागलभ्यं प्रतिभातिशयः। प्रश्रयो विनयः। सहत्तजोवलानि मनसी श्रानेन्द्रियाणां कर्मेन्द्रियाणांच पाटवानि। भगो भोगास्पदः स्वम्। गाम्भीर्यम् अक्षोभ्यत्वम्। स्थैर्यमचंचलता। आस्तिक्यं श्रद्धा। कीर्त्तिर्यशः। म्रानः पूज्यत्वम्। अनहंकृतिर्गवीभावः॥३९॥

श्रारदादीनांक्रियमागाःसम्मानः।

ब्रह्मादयो बहुतिथं यदपाङ्गमोत्तकामास्तपः समचरन् भगवत्प्रपन्ना । सा श्रीः स्ववासमरविन्दवनं विहाय यत्पादसौभगमछं भजतेऽनुरक्ता ॥ ३३ !! तस्याहमञ्जकुलिशांकुशकेतुकेतैः श्रीमत्पदैर्भगवतः समलङ्कताङ्गी । त्रीनत्यरोच उपलभ्य ततो विभूतिं लोकान् स मां व्यसृजदुत्तस्मयतीं तदन्ते ॥३४ ॥ यो वै ममातिभरमासुरवंशराज्ञामचौहिणीशतमपानुददात्मतन्त्रः । त्वां दुःस्थमूनपदमात्मिन पौरुषेशा सम्पादयन् यदुषु रम्यमिवश्रदङ्गम् ॥३४ ॥ का वा सहेत विरहं पुरुषोत्तमस्य प्रेमावलोकरुचिरस्मितवल्गुजल्पैः । स्थैय्यं समानमहरन्मधुमानिनीनां रोमोत्सवो मम यदाङ्किविदङ्कितायाः ॥३६ ॥ तयोरवं कथयतोः पृथिवीधम्भयोस्तदा ।

म हुरीचित्राम राजर्षिः प्राप्तः प्राचीं सरस्वतीम् ॥ ३७ ॥ इति श्रीमद्रागवते महापुरागा पारमहस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीक्षिते धर्मपृष्टीसंवादो नाम षोड्शोऽध्यायः ॥ १६ ॥

#### श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

इमे च अन्ये च सत्यसंकल्पत्वब्रह्मगयत्वभक्तवात्सल्यादयो नित्याः सर्वकालवर्तिनो महागुणाः। मां भजन्ति गुणाः सर्वे निर्गुणं निर्पेक्षकमिति भगवदुक्त्वा गुणातीतस्यापि तस्य गुणावत्त्वान्महागुणाः अप्राकृताश्चिन्मयाः खरूपभूता इत्यर्थः। कर्हिचिन्महाप्रलयेऽपि न वियन्ति न विगता भवन्ति। तथाहि सत्यं यथार्थभाषण्य । तदादीनां गुणानां तदैव नित्यत्वं स्यात् यदि ते महाप्रलयमभिव्याप्य नैरन्तर्येण तत्र श्रीकृष्णे तिष्ठन्ति। तेषां नित्यत्वे सति यान् प्रति भाषणादिकं तेषां तद्वासस्थानानामपि नित्यत्वमुपपन्नमतो लीलानां लीला परिकराणां पार्षदानां धाम्नांच तदीयानां सर्वेषां नित्यत्वं सिद्धम्॥ ३०। ३१। ३२॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

प्रागल्फ्यंप्रतिभातिशयः ॥ २७ ॥ प्रश्रयोविनयः ॥ २८ ॥ शीलंसुखभावः ॥ २९ ॥ सहोमनः सामर्थ्यम् ॥ ३० ॥ ओजः ज्ञानेद्रियाणांसर्वे श्रवणादिसामर्थ्यम् ॥ ३१ ॥ वर्लकर्मेन्द्रियाणांसर्ववन्तृत्वादिसामर्थ्यम् ॥ ३२ ॥ भगोऽत्रोक्तेश्वयोत्कर्षः ॥३३॥ गांभीर्यमनवगाह्यत्वम्॥३४॥ स्थैयंयुद्धादौस्थिरत्वम् ॥ ३५ ॥ वास्तिक्यंवेदोक्ततत्त्ववादित्वम् ॥ ३६ ॥ कीर्तिर्यशसोऽतिशयः ॥ ३७ ॥ मानःसर्वपूज्यत्वम् ॥ ३८ ॥ अनर्हं कृतिःसर्वेश्वरत्वेऽपिगर्वाभावः ॥ ३९ ॥ २९ ॥

एतेएकोनचत्वारिशत अन्येचसौंदर्थमाधुर्थ सौकुमायवात्सल्यशांतत्वशरगयत्वादयोमहागुगानित्यायावदात्मवृत्तयोमहत्त्वं भगव-द्भाविमच्छद्भिः प्रार्थ्यास्तत्रकेचिद्भगवदसाधरगातयाक्षेयाअन्ये यथावस्थमात्मनिसम्पादनीयत्वेनप्रार्थाइतिविवेकः यत्रकर्हिचित्कदाचि दिपनिवियन्तिनच्यवन्ति ॥ ३० ॥

तेनश्रीकृष्णेनगुगापात्रेगागुगाश्रयेगाश्रीनिवसितयस्मिस्तेनरिहतम् अतपवपाव्मनापापहेतुना ईक्षितम् लोकंशोचामि ॥ ३१ । ३२ ॥

#### भाषाटीका ।

उन गुगा पात्रश्रीनिवास से रहित इस लोक को में शोच करती हूं। अब यह लोक पाप हेतु कलिकी दृष्टिसे दग्ध होरहा है ॥ ३१॥ अपने को शोचती हूं। हे अमरोत्तम ! आपको भी शोचती हूं। देवता पित्र ऋषि साधु और सब बर्गा आश्रमाको सोचती हूं॥ ३२॥

#### श्रीधरखामी।

तस्य विरहो दुःसह इत्याह चतुर्भिः। ब्रह्मादयो यस्याः श्रियः अपाङ्गमोक्षः खस्मिन् हिष्टिपातः तत्कामाः सन्तः वहुषितं वहुकालं तपः समचरन् सम्यक् चरन्ति स्म। भगविद्धिरुत्तमैः प्रपन्ना आश्रिता अपि। सा श्रीयेस्य पादलावर्यम् अलमजुरका सती सेवते॥ ३३॥

#### श्रीधरखामी।

तस्य भगवतः श्रीमद्भिः पदैः केतुर्ध्वजः अञ्जादयः केताश्चिह्णानि येषां तैः । यद्वा अञ्जादीनामाश्चयैः सम्यगलंकृतमङ्गं यस्याः साहं ततो भगवतो विभूतिं सम्पदमुपलभ्य प्राप्य त्रीन् लोकान् अतिकम्यारोचे शोभितवत्यस्मि । पश्चात् तस्या विभूतेरन्ते नाशकाले प्राप्ते सित उत्समयन्तीं गर्ब्वं कुर्घ्वाणां मां स व्यमृजत् त्यक्तवान् ॥ ३४ ॥

किश्च यो वै आसुरो वंशो येषां तेषां राज्ञाम् अक्षौहिस्सिशतरूपं ममातिभरं भारम् अपनीतवान् । त्वाश्च ऊनपदत्वात् दुःस्थं सन्तं पौरुषेसा पुरुषकारेसा आत्मिन स्वास्मिन् सम्पूर्णपदं सुस्थं सम्पादयन् । "लक्षसाहेत्वोः क्रियाया" इति हेती शतुप्रस्यः । सम्पादियतुमित्यर्थः अविम्रत् धृतवानित्यर्थः ॥ ३५ ॥

तस्य विरहं का वा सहेत प्रेमावलोकश्च बिरिह्मतश्च वल्गुजल्पश्च तैर्मधुमानिनीनां सत्यभामादीनां समानं गर्व्वसहितं स्थैर्य द्युद्धत्वं योऽहरत् । यस्यांत्रिणा रजस्युत्थितेन विटङ्कितायाः अलंकतायाः शब्पादिमिषेणा रोमोत्सवो भवति ॥ ३६॥

कथयतोः सतोः। प्राचीं पूर्ववाहिनीं कुरुक्षेत्रे॥ ३७॥

इति श्रीमद्भागवतभावार्थदीपिकायां प्रथमस्कन्धे षोड्शोऽध्यायः॥ १६॥

#### दीपनी।

लक्षगोति। इदंच सूत्रं पाणिनीयतृतीयाध्यायस्य द्वितीयपादीयषड्विंशत्यधिकशततमम्। अस्यार्थः—क्रियायाः परिचायके हेती चार्थे वर्त्तमानाद्वातोर्लटः शतृशानचौस्तइति ॥ ३५—३७ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

तदेवविशद्यतिब्रह्माद्यइतिचतुर्मुखप्रभृतयः यस्याअपांगमोक्षः ईषत्तिर्यक्षमतारस्तद्विषयत्वमात्मानंकामयमानाःवहुतिथंवहुकालंतपः समचरन्चकुः साश्रीरिपकमलवनं स्वनिवासंविद्यायभगवंतमेवप्रपन्नाचसतीयस्यपादयोः सौभगंसौंदर्यमेवालंनितरांभजतेसेवते॥ ३३॥

तस्यभगवतअन्जादीनांकेतूनांचिन्हानांकेतैराश्रयभूतैःपदैः पादिवन्यासैरलंकृतमङ्गयस्याः साहंततः अतपविवसूतिलक्ष्मामण्युपलक्ष्य त्वयाप्येवंभाग्यंनलन्धमित्यभिक्षिप्यविभूतिसर्वसमृद्धिप्राप्येतिवात्रीनापिलोकानत्यरोचेत्रिलोकीमातिकम्यततोप्यधिकं दीप्तिमत्यस्मिपवसु त्स्मयन्तींगर्वितांमां सभगवान् तदंतेअवतारप्रयोजनांतेव्यसृजत्तत्याज ॥ ३४ ॥

योवाइतिममातीवभाररूपमसुरवंशोऽसुरसंपद्युक्तवंशोजातानांराङ्गामक्षोहिश्शीनांशतमपानुददपनीतवान्तथायश्चात्मतंत्रःस्वतंत्रःऊनपद्द मूनंपदंपादद्वयंयस्यतमतएवदुःस्यंदुःखितंत्वामात्मनिस्वस्मिन्यत्पौरुषंसामर्थ्यतेनसम्पादयन्पादचतुष्टयसम्पन्नं कर्तुमिच्छुर्यदुषुरमश्चीयमङ्गं शरीरमविभुद्धृतवान् ॥ ३५ ॥

यश्चप्रेमपूर्वकावलोकनेनरुचिरेगासुन्दरेगास्मितेनसुन्दरैभाषग्रीश्चमधुमानिनीनांयादवस्त्रीगामितरावश्यत्वं सम्यक्हतवान्यस्यचांच्रि भ्यांविटंकितायाः अलंकतायाममरोमोत्सवोरोमोद्गमोबभूव तस्यपुरुषोत्तमस्यश्रीकृष्णस्यविरहंकामादशी सहेतनकापीत्यर्थः॥ ३६॥ दृत्थतयोःपृथिवीधर्मयो कथयतोर्मिथःसंभाषामाग्रयोःसतोःतदापरीक्षिन्नानामराजर्षिः प्राचीसरस्वती प्रभासतीर्थप्राप्तःगतः॥ ३७॥

> इतिश्रीवीरराघवटीकायां प्रथमस्कन्धे षोडशोऽध्यायः॥ १६॥

#### श्रीविजयध्वजः।

श्रीकृष्णाविरहएवममाधिमुलमित्याख्याति ब्रह्मादयइति यस्याःश्रियःअपांगःकटाक्षःतस्यमोक्षउन्मीलनविशेषः तंकामयंतइतियदपांग मोक्षकामाः खेषुश्रियःकटाक्षनिपातमाकांक्षमाणाइत्यर्थः शास्त्रोक्तप्रकारेणभगवत्प्रपन्नाः ब्रह्मादयोवहुतिथवहुकालंभगवतीमभजिन्नतिशेषे श्रीन्वयः साश्रीरनुक्तासद्गक्तिमतीखनिवासमरिवन्दवनं पद्मवनंविहाययस्यश्रीकृष्णस्यपादयोः सौभगसौभाग्यमलंभजतइत्यन्वयः॥३३॥

उपलब्धातपोविभृतिर्ययासातयातपसाविविधफलंप्राप्तासतीतस्यभगवतः अब्जंचकुलिशंचांकुशश्चकेतुर्ध्वजश्चभव्जकुलिशांकुशकेतवः लेखारूपापतेकेताश्चिद्गानियेषांतानितैः श्रीमद्भिःपदैःसम्यगलंकतसर्वांगा ऽहंत्रीन्लोकानितकम्यारोचंशोभितवती सःश्रीकांतःतदंतेतपो विभूतेरवसाने उत्समयन्तींकानुमत्सदशीस्त्रीत्यहंकुर्वाणांमांव्यमृजदित्येकान्वयः तदंतहतित्वितरापेक्षयोक्तं नतुभूभेःपुणयावसानमस्ति भगवत्पत्नीत्वात ॥ ३४ ॥

योवेअसुरगांसम्बन्धविञ्च आसुरवंशः तिस्मन्जातानांराज्ञामश्लीहिग्गीशतंममातिभरमपानुददपाहरत् शतमितिशद्धः सहस्रादिणा चीत्वयिचतुरपदत्वनपूर्णपदंसम्पादयन् आत्मतन्त्रोयदुषुरम्यंरमग्गीयमङ्गमविभ्रत्॥ ३५॥

アウ

### श्रीविजयध्वजः ।

यश्चिमगावलोकश्चरुचिर्रस्मतंचवलगुर्मधुरोजलपश्चतेतयोक्तास्तैर्मधुमानिनीनांसमानमभिमानेनसहवर्तमानंस्थैर्यमहरत् यस्यांविश्यांवि दंकितायाश्चिह्नितायाअलंकृतायावा ममरोमोत्सवः रोमांचोऽभूदितिशेषः तस्यपुरुषोत्तमस्यविरहंकावास्त्रीसहेत नकापीत्यन्वयः॥ ३६॥ तद्वसरेतत्रपरीक्षितोगमनमाह तयोरिति परीक्षिन्नामराजश्रेष्ठः कुरुक्षेत्रेप्राचीदिशमुद्दिश्यस्यन्दमानांनाम्नासरस्वतीं नदींप्राप्तइत्य न्वयः॥ ३७॥

इतिश्रीभागवतेप्रथमस्कन्धे विजयध्वजदीकायां षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

# क्रमसंदर्भः।

मगवन्तं प्रपन्ना अपि तस्या अपि प्रेयसीत्नात् यस्याः कृपाकटाक्षकामा ब्रह्मादयो बहुतिथं बहुनां कालानां पूरगां कालं व्याप्य तपः समचरन् । सा खवासमरविन्दवनं विहायेति तत्पादयोः सर्व्वार्रावन्दजातिशोभातिक्रमेतात्पर्य्यम् । सापि भजत इति ॥ ३३ ॥

तत्सम्बन्धेन खविभृत्यतिशयो युक्त पवेत्याह तस्य इति ॥ ३४॥

पूर्वे ये आसुरवंशा आसन् त एव राजानस्तेषाम् । छिन्नप्रहृढादिवत् समासः । पाठान्तरे आसुरवेशाः आसुरभावं प्रविष्टा इत्यर्थः । ऊनपदं त्वामात्मनि आश्रये सति सम्पादयन् सम्पन्नं पूर्णपदं कुर्वन् ॥ ३५॥

तस्य विरहं का वा सहेत । प्रेमावलोकश्च रुचिरं स्मितं च वल्गुजल्पश्चः तैर्म्भधुमानिनीनां मधुवन्मादको मानः पातिव्रत्यादिगव्वौ यासाम् अस्ति तासां सत्यभामादीनां समानं गर्व्वसहितं स्थैर्यं शुद्धत्वं यः अहरत् । यस्यांब्रिशा रजस्युत्थितेन विटङ्कितायाः अलंक-तायाः शष्पादिमिषेशा रोमोत्सवः भवति ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोखामिक्तक्रमसन्दर्भे षोड्शोऽध्याय ॥ १६॥

# सुवोधिनी।

अलमेतैर्निक्रिपेतैः मुख्यतयात्वात्मानमेवानुशोचामीत्याह ब्रह्मादयइतिद्वाश्याम् अतः केचित इमेगुणाः प्राकृतकार्यगुण्कपाः गुणसंबं धादेवभगवतिवर्त्ततेनसहजाइत्याहुः तेप्रष्टवाः कस्यैतेगुगाइति सत्त्वादीनामात्मनोवा आद्यसातंत्र्यादीनांतदीयत्वेगुगात्वमेवछुप्यतेबस्यत्वं वामवेत् संयोगजत्वेऽपिप्राप्ताप्राप्तविवेकेनगुगासंवंधकताश्चेत् गुगानामेवउत्पत्तिपक्षस्तुवैनाशिकप्रक्रियायाथनंगीकारात् नघटतेइत्यादिवा-क्यविरोधश्चसगुगोभगवानितितुपक्षः निराकृतो निराकरिष्यते च किंच यामजुपपित्तिपरिहरर्तुभगवातिसत्त्वादीन् कल्पयंति तत्र सत्त्वादेः काशकिः ययाभगवद्नुपपत्तिमपिदूरीकुर्युः यथायावानर्थोऽस्माभिर्वह्मगयुच्यते तावान्गुगोषुमायायांचमन्यतेचेत् मायेत्यसुराइति पक्षं तुव्यभिचरेयुरित्यलंविस्तरेगावहुतिथंवहुकालंभगवत्यागस्यपरमानिष्टत्वंशास्त्रार्थः तत् किस्वभावतपवहेतुनावेतिविचार्थते तत्र भगवदी यानांभगवत्त्यागः सर्वानर्थायतदपेक्षयाअन्येषांहीनत्वात् संघातप्रवेशेनसापेक्षत्वात् हीनापेक्षयाखरूपनाशापत्तिः अतोभगवदीयानांमध्येमु-ख्यालक्ष्मीः ततः सामर्थ्यमिपतस्या अकिंचित्करिमिति तिन्निर्वाहार्थे च कार्यकारग्राचउदासीनाभगवंतमेवभजते अन्ये च पुनः तत्सेवकाः अहंचसपत्नीततोभगवस्यागेमहाननर्थइति वक्तुंलक्ष्म्याः कृत्यमाह तस्याअपिकार्यवृत्तांत उच्यते यदपांगमोक्षकामायस्याः लक्ष्म्याः अपांगः कटाक्षः तस्यमोक्षः तत्कामाब्रह्मादयः अत्रकटाक्षपदेनभगवात्रिष्ठा रागसहितभगवद्विषककामभावसहितस्वसामर्थ्यभावोद्धिरणसहिता र्थेद्दष्टिरुच्यते ततः तस्यांदृष्टीभगवान्भगवद्धिषयकामः भगवतःस्नेदः लक्ष्मीसृष्टिरितिपचपदार्थाः संतितेहितुर्छभाः एकत्रसमुदिताः अतोद्दृष्टिविषयतासिद्धचर्थभगवत् प्रपन्ना भगवतिशरगागता भगवतंद्धदयेस्थापयित्वेत्यर्थः तादशाः संतस्तपः कुर्वतिएतादशाः कटाक्षाः लक्ष्म्याः प्रतिक्षगंसहस्रंभवंति एवं माहात्म्ययुक्तापिसालक्ष्मीः चरगारविंदंभजतेभगवस्यागेतस्यैवहेतुत्वात् तस्यापिदुर्लभश्चरगाः सर्वणा मेचरगाप्राप्तिस्तुसुतरांदुर्लभाषवंतस्याः कार्यमुक्त्वाकरगापरित्यागमाह स्ववासमरविंदवनंविहायेति शतांशेनाप्यन्यासकौचरगासेवा दुर्छभेतिस्वस्यजनमस्यानमपि अरविंदवनंविहायवनपदेनवास्तव्यत्वंस्चितं चरगासीभाग्यंभजतेभक्तिनिष्ठाभवतीत्यर्थः एतावताममचरगा-त्वात् मत्सेवांसापिकरोतीति अहंभगवदीयानामुत्तमेतिभावः ॥ ३३ ॥

# ् सुवोधिनी।

विभूतिमुपलक्ष्यभगवानिपमियशेतेउपविश्वतिभुक्तेकीडितिपेश्वर्ये च करोतिएवंपूर्वसौभाग्ययुक्तांमामिदानींव्यमृजत्त्यागेहेतुः उत्समयंती मिति भूमिस्थानांयादवानां भूम्युत्पन्नभोजनगर्वदर्शनात् कारणगर्वातुमानम्अन्नेनैवसर्वभावानामुद्भवात् अतस्तदंतेउत्समयनाशार्थमां व्यजमृदित्यर्थः ॥ ३४ ॥

एवं मूलभूतामुपपित्रिक्षोकद्वयेनोक्त्वालैकिकीमुपपित्रिक्षोकद्वयेनाह्योवैममेति ममातिभारक्षपमक्षौहिणीशतमपानुदत् भूम्युत्पन्ना नांतद्वारकत्वेहेतुः असुरेतिवंशपदेनतेषांगोत्राणयत्रसंतीतिज्ञापितं स्वस्यसाधनापेक्षायामाह्यात्मतंत्रइति अनेनयादवक्षपभारहरणमपि सूचितंवंशोपकारमंप्याहत्वांदुःस्थमितिरोगादिव्याप्तिवत् अधमेप्राप्तादुस्थताजनपदत्वंकालात् आत्मिनिपौरुषेणोतिस्वयमंतः प्रविश्यसपु- रुपेणागतानंशान्सम्यक्संपादितवानित्युक्तंत्वांसंपादयित्रातिसंवंधः त्वंहिप्रयमतःपूर्णाइति त्वद्र्यमद्रथमेवयदुषुअगमविभ्रत् आवयोरेवरम् ग्रायोग्यभगवदीयाधर्मात्मानश्चरमंते ॥ ३५ ॥

फलितमाहवेत्यनादरेयाभगवत्विरहंसहते सानकापीत्यर्थः पुरुषमात्रविरहोऽपिसोद्धुमशक्यः किंपुनः तस्यइति उपकारपक्षोद्द्रेतिष्ठतु अकामेनापि विरहासहनिमत्याह प्रेमेतित्रिभिःससाधनैः सर्वापववशीकृताःसात्त्विकाः तामसाराजसाद्द्य तत्रसात्त्विकाः प्रेमावलोकेन वृशीकृताः तामसास्तुरुचिरिस्मतेनमनोहारिमोहनेनराजसास्तुवल्गुजल्पैः मनोहरजल्पैः सात्त्विकेश्योभक्तिश्चानंदत्वावशीकृतवान् ताम संश्यः मोहाभाववैराग्यंचदत्वाराजस्तिश्यः युक्तिप्रमागोदत्वाअतपव मधुमानिनीनांसमानंस्थैर्यमहरत् मथुरास्थानांमानिनीनांयेनमानेनस्थि रोज्ञतताकामेमार्गेवा वेदेनज्ञानेनवा आत्मिस्थितिःमधुद्दितिभिन्नवापदं मानिनीनांरसस्थैर्यादिवत् किंच ममापियदं प्रिचिह्नितायाः सर्वदारो मोत्सवः ॥ ३६ ॥

एवंभगवद्विरहेगाक्लिष्टयोःसम्वादेशायमाने अदूरेश्रुत्वादेवताधर्मसांनिध्यंबुद्धा विश्वामित्रप्राचींकुरुक्षेत्रस्थामऋषित्वादावश्यकंकर्तुं गतइत्याह तयोरिति ॥ ३७ ॥

इतिश्रीभागवतसुवोधिन्यांश्रीलक्ष्मग्राभद्दात्मजश्रीवल्लभदीक्षितविरचितायां

प्रथमस्कन्धेषोडशोऽध्यायः॥ १६॥

## श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

वहुतिथं वहुकालं । भगवन्तं प्रपन्ना अपि ब्रह्मादयः सकामभक्तत्वात् यद्पाङ्गेत्यादि ॥ ३३ ॥

तस्य श्रीकृष्णस्य । केतंश्चिह्नम् । त्रीन् लोकान् अतिक्रम्य अरोचे शोभितवत्यस्मि । ततः श्रीकृष्णाद्विभूति सम्पद्म उपलक्ष्य प्राप्य तदन्ते विभूतेर्नाशकाले प्राप्स्यमाने उत्समयन्तीं मत्तुल्यो वैकुगठोऽपि न भवतीत्यन्तर्गव्वंबतीम् ॥ ३४ ॥

पूर्व्वे ये आसुरवंशा आसन् त एव राजानस्तेषाम् । छिन्नप्रहृदिवत् समासः । पाठान्तरे आसुरवेशाः आसुरभावं प्रविधा इत्यर्थः । ऊनपदंत्वामात्मिन आश्रये सितं सम्पादयन् सम्पन्नं पूर्णापदं कुर्विन् ॥ ३५ ॥

मधुमानिनीनां सत्यभामादीनां स्थैर्थ्यमचाश्चल्यं मानसहितम् । विटङ्किताया अलंकताया इति तेन तस्य सर्व्वास्त्रपि प्रेयसीषु मध्ये अहं सदैव साधीनभर्त्तृका विरहरिहैतैवासमिति भावः ॥ ३६॥

प्राचीं पूर्ववाहिनीम् ॥ ३७॥

इति सारार्थदर्शिन्यां हर्षिग्यां भक्तचेतसाम् । प्रथमे षोड्शोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १६ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

तद्विरहस्यदुःसहत्त्वमाह ब्रह्मोतिचतुर्भिः ब्रह्माद्यः यस्याः अपांगमोक्षः खेषुदृष्टिपातस्तत्कामाः वहुतिथं वहुकालंतपः समचरन्सम्यक् चक्रुः साश्रीः भगवत्प्रपन्नासती खवासमर्गवद्वनं विहायतस्यभगवतः पादयोः सौभगंसौन्दर्यम् अनुरक्तानित्योद्युका अलमत्यर्थभजते । सेवते ॥ ३३ ॥

तस्यश्रीकृष्णस्ययुक्तैः पदेः कथंभूतैः अञ्जकुिकशांकुशोपलक्षितानांयवधेनुष्वजकुम्भादीनांकेत्नांचिन्हानांकेते राश्रयैः अलंकृतमंगं यस्याः साऽहंततः पविभूतिसमृद्धि मुपलभ्यप्राप्यत्रीन्लोकानत्यरोचम् तानितकम्यशोभितवत्यस्मितदित्थमुत्स्मयंतीमांसः श्रीकृष्णस्त दंतसमृद्धिक्षयकालेव्यसृजत्तत्याज ॥ ३४ ॥

यः श्रीकृष्णाः असुराणामयमासुरः सवंशेयेषांराज्ञांराजच्छ्यासुराणाम् अक्षीहिणीशतरूपंममातिभरमपानुद्दपनीतवान् तथात्वांचीन पदमतप्यदुःस्थंसंतंपीरुषेणासामध्येन आत्मनिस्वस्मिन् संपूर्णापदंसंपादयन् संपादीयतुम् हेतौशतायदुषुरम्यंरमणीयमंगं श्रीविष्रदम्विश्र द्वतवान् आविश्रकारद्दतियावत् तस्यपुरुषोत्तमस्यविरद्दंकावासद्देतेत्युत्तरेणान्वयः ॥ ३५॥

### सिद्धांतप्रदीपः।

प्रेमपूर्वकेणावलोकेनावलोकनेनरुचिरेणस्मितेन वल्गुजल्पैः मधुरसंभाषणेश्वमधुमानिनीनांमधुवंशराजन्यभार्याणांमानेनसहितंस्थैर्ये स्तन्धत्त्वम् अहरत् यदंग्निविदंकितायाः यस्यचरणाभ्यामलंकतायाः समुख्येमहिसवः रोमोद्रमोवभूवतस्य श्रीपुरुषोत्तमस्यविरहंमाहशी कावासहेतनकाचिदपीत्यर्थः ॥ ३६ ॥

एवंतयोःपृथिवीधर्मयोः मिथः कथयतोः संभाषमाणयोः प्राचींपूर्ववाहिनींसरस्वतींप्राप्तः ॥ ३७ ॥ इतिश्रीमद्भागवत्सिद्धांतप्रदीपरीकायां प्रथमस्कंथीये षोडशोऽध्यायार्थप्रकाशः ॥ १६ ॥

## भाषाटीका ।

HIS RESTRICTION AND AND THE COURSE

ब्रह्मादिक देवगर्या ने बहुत काल पर्यन्त जिस के रूपा कटाक्ष की कामना कर तप किया था, वही भगवत्प्रपन्ना श्री अपने निवास कमल बन को छोड़कर अनुरागवती होकर जिनके चर्गा कमल सौभाग को भजन करती है ॥३३॥

उन भगवान के अन्त कुलिश अंशुक, ध्वज आदि चिन्हों से शोभित श्रीमत्पदों से अलंकताङ्गी होकर उन से वैभव प्राप्त हो में तीनों लोकों को अति कम कर शोभित होती थी। जब उस वैभव के अन्त का समय आया तब मुझै गर्व हुआ. और भगवान मुझै छोड़गये॥ ३४॥

जिन्हों ने असुर वंश राजाओं की शत शत अक्षीहिस्मिक पैमेरे अति भार अपनोदन किया था । और दुःस्य ऊन पद तुमको अपने पौरुष से सुस्थ सम्पादन करते यदुकुल में रम्य अङ्ग धारमा किया था ॥ ३५ ॥

पुरूषोत्तम तिसके विरह को कोंन सह सक्ती हैं। जिस के प्रेमा बलोक रुचिर स्मित,मनोहर भाषण से मान सहित मधु माननीयों का स्थैर्य हरण होता था जिनके चरणों से शोभित मुझको रोमांच होता था॥ ३६॥

पृथवी धर्म की इस प्रकार बातें होती थीं कि वहीं प्राची सरखती पर राजर्षि परीक्षित भी आय पहुंचे ॥ ३७॥

THE WARE COME WHELESTERS OF THE TOTAL STREET STREET STREET

(स्थार क्षार के रोग्य के का को का कार का किए का किए का को देश अध्याय समाप्त । का का का का का का का

# सप्तदशोऽध्यायः।

सूत उवाच

तत्र गोमिथुनं राजा हन्यमानमनाथवत् । दण्डहस्तश्च वृषलं ददृशे नृपलाञ्छनम् ॥ १ ॥ वृषं मृगालधवलं महन्तमिव विभ्यतम् । वेपमानं पदैकेन सीदन्तं शृद्रताडितम् ॥ २ ॥ गाश्च धर्मादुघां दीनां भृशं शूद्रपदाहताम् । विवत्सामश्चवदनां चामां यवसमिन्छतीम् ॥ ३ ॥ पप्रच्छ रथमारूढ्ः कार्नस्वरपरिच्छदम् । मेघगम्भीरया वाचा समारोपितकार्म्मुकः॥ ४ ॥

# श्रीघरस्वामी ।

ततः सप्तदशे राज्ञा कलेनिव्रह उच्यते। 

ह्यमानं ताड्यमानम् ॥ १॥

मृगालं पद्मकन्दः तद्वत् धवलम् । भगान्मेहन्तं मूत्रयन्तम् इवेत्यनेन पादावशेषो धम्मौ भयानमूत्रयन्निव प्रतिक्षगं श्रीयमाणांशः तस्याप्यनिव्वीहात् कम्पमान इति दर्शितम् ॥२॥

धर्मादुघां हविद्िग्धीम् । क्षामां कृशाम् । यवसं तृगाम् । अत्र शस्यादिप्रसवक्षयात् विवत्सेव । यक्षाभावात् कृशा । अतएव यक्ष-भागमिच्छती पृथ्वीति सूचितम् ॥ ३॥

कार्त्तस्वरं सुवर्गी परिच्छदः परिकरो यस्य स्वर्गानिवसमित्यर्थः। सज्जीकृतकार्मुकः ॥ ४ ॥

#### दीपनी।

( नृपाग्रामिव लांछनं चिह्नं यस्य स नृपलांछनस्तं नृपवेशधारिग्रामिति यावत् ॥ १—१४ )

## श्रीवीरराघवः।

तत्रेतितत्रप्राच्यांसरस्वत्यांपूर्वोक्तमनाथवद्धन्यमानंगोमिशुनंनृपस्येवलांछनानियस्यदगडोहस्तेयस्यतं वृषलंचराजापरीक्षिद्ददर्श ॥१॥ तत्रगोमिथुनेपुमांसंविशिनाध्टिवृषमिति वृषंमृगााळवधवळंमेहंतमिव मूत्रंमुचंतमिवविश्यतमुद्धिजंतमेकेनपादेनकम्पमानंशुद्रेगाताहित मतः सीदंतिक्लइयंतम् ॥ २॥

स्त्रियंविशिनिष्टिग।मिति धर्मदुघांघृतपयोद्धपक्षरगाष्ट्रध्यदोग्ध्रांश्चद्रस्यपादेनताडितामतपवभृशंदीनांवत्सरहितामश्चसहितंवदनंयस्या

स्तांक्षामांकृशांयवसंतृगामिक्वन्तींकामयमानांचचकाराद्वृषलंचपप्रच्छेलन्वयः॥३॥

कार्त्तस्वराः स्वर्णमयाः परिच्छदाः परिकरायस्मिस्तंरथमारूढः समारोपितंसज्जीकृतंकार्मुकंधनुर्येनसपरीक्षिन्मेधगर्जितवहस्भीर यागिरापप्रच्छ ॥ ४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।''

अत्रापिभगवद्भक्तप्रधानस्यपरीक्षितः कलिवंधनादिमाहाम्यवर्शाननहरेमेहिमैववगर्यतहतितन्महिमोच्यते तत्रनातिदूरहतिकथितमा श्चर्यमाद्द तत्रेति तत्रकुरुक्षेत्रेप्राच्याः सरखत्यास्तीरे अनाथवत्नाथः स्वामीतेनरदितायणाद्दन्यंतेतथातास्यमानगोमिथुन्म ॥ १ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

मिथुनंत्रित्वचाह वृषमिति सृग्रालधवर्लकमलनालसूत्रवद्धवलंगुक्लवर्णं विभ्यतंभीतमिवमेहंतंशकृन्मुंचंतंवेपमानमेकेनपदास्थित स्वात्सीदतमग्नांगवित्तव्रंतंशूद्रेगाकलिनापीडितंबुषमद्राक्षीत् ॥ २ ॥

यवसतृगामानांक्षमागामतप्वकृशामश्रुवद्नामश्रुमुखाँ विवत्सांवत्सरहितामिवस्थितांशूद्रस्यपदाताडितांभृशमत्त्यर्थहीनांकुपगाांधर्मेतु घांयश्रयोग्यपयोदोग्धांगांचैवंविधामपद्यदित्यन्वयः॥३॥

रष्ट्वाचताराजापप्रच्छेत्यन्वयः कथंभूतः कार्तस्वरपरिच्छदंसुवर्णपरिकरपरिष्कृतंरथमारूढःसमारोपितकार्सुकः सज्जीकृतधन्वा ॥ ४॥

# क्रमसंदर्भः ।

तत्रैवाकस्माद्वृष्ठे समागते राजा समागत इत्याह तत्रेति ॥१॥२॥३॥४॥

# सुवोधिनी ।

i in familia a A

ततः सप्तदशेषमेपृथिविसांत्वनिवदः भीतस्यस्थानदानं चकलेःशिक्षाचक्रप्यते प्रथमंगरग्रोभीतिः तयोः खास्थ्यस्य चक्षयः अतः सांत्वनमग्रेचस्यानदानं विचारतः विवेकस्थापनायैवधर्मवाक्यंततां स्यवि सर्वसामध्यं संवोधवैराग्यं बक्षमद्भुतं मृतींभूतास्रयोराक्षे खावद् ख्यापं नायतौ वेषांतरेऽपितत्पीडाख्यापनायसमारकः संधानवस्तुभूतस्यकतन्ते नास्यचेख्यम् कृतंभूमेस्तुहेत् नांशोकस्यविनिवारगात् ॥ एवंपूर्वा ध्यायांतेपूर्ववाहिन्यां सरस्वत्यां सातुं गतद्रस्य कृतं त्रितायां विचाहिन्यां सरस्वत्यां सातुं गतद्रस्य कृतं त्रितीयार्थेवितः नाथभावयुक्तं वाभगवतोऽप्रकटत्वात् वृष्ठं ग्रह्मं हतां व्यक्तिदर्शने वेवजातिपरिक्षानात् चिन्हानितुराक्षः नृपलां छनीमवलां छने यस्यप्वपाखग्रस्थमं चहुष्ठवानित्यर्थः ॥ १॥

मिथुनस्यदीनत्वज्ञापनायतीवर्णयितवृषद्दति अन्ययापक्षपातोऽपिदोषःस्यात् प्रथमंवृषंवर्णयितमृणालधवलमिति अञ्जादिवत्कांति युक्तश्चतम्यनेनस्वभावतः शुद्धदत्युक्तम् अन्यानिपंचांगानिविकलानीत्याद्दतत्रप्रत्यद्वंवाद्यक्षयः मेहनमृत्रणंकमेक्षयउक्तः विश्यंतमिति भये नद्यानाम्वदक्तः दस्येवमञ्जकरणातः अथवामृत्रस्थानातिरिक्तस्थानेऽन्यमृत्रद्वनिःसरितिनेरोगः स्वितः पक्षेनपदत्रयस्यगमनेपकपाद-स्थितीकम्पोभवत्येवज्ञानसद्विततपः प्रभृतीनामभावात्केवलसत्येधमिस्थितिश्चपलाभवति जाङ्येनवेपंतपदार्थापरिक्षानेनधर्मकृतिनेतिःकपः स्वताद्वितिमितिकालवद्येनस्यूदकर्षकर्षमस्यपास्रिद्वन्वधर्मकथाजननात् ताद्वनदंद्वेनताद्वनंवृषस्यपदाताद्वनंपृथिव्याः कलिः मूमिर्वधाय तिष्ठतिपासंद्वमार्गव्ययंतद्ददाद्दयेवसम्बन्धः॥ २॥

गांचवर्णायतिचकारात्भयकंपोऽस्याइति स्वभावतउत्तमेत्याहधर्मद्वामिति धर्ममित्रहोत्रादिकंदोग्धीतिधर्मदुहामिति पाठेप्रवर्ग्यदुग्धं दोग्धीतिअस्याः षडङ्गविकलत्वमाह देशाः संपन्ना दुष्टाभवंति तद्दभावविकलादेशानामुत्तमानां कालदुष्टस्थित्यानाशात्दीनाकाले नापिपीडितापाखंडैरुपनुद्यमानत्वात्कलेःप्रथमपादत्वात् पदेत्येकवचनम् एवंदेशकालदोषीनिक्वितौववत्सामिति कर्त्रभावः वत्साःस्वधमें मुख्याः पृथुदोहेनिक्वित्वास्तेषांसांप्रतमभावः अतप्वसाधुवदनामश्चिभःसहितंवदनंयस्याः अनेनमन्त्राभावउक्तः हर्षक्रपास्तेअपशब्दाः अश्रूशिकशांद्रव्याभावात् यत्रयक्षः तत्रनयान्निकानिद्वव्याशियवसमिन्द्वंतीयन्नादिषुभागमिन्द्वंतीपवमस्याःषडंगविकलत्वंस्चितमत्रापि पृवंवत्रियासम्बन्धः ॥ ३॥

एवं हृष्ट्वामारकस्यपूर्वत्वात् तंपृच्छितिमारियतुम् अन्यथाअविचारितकर्तृत्वंस्यात् अतपवससामग्रीकः पृच्छतीत्याहपप्रच्छोते कार्त्त स्वरेतिस्वाराजत्व ख्यापनंकार्त्तं स्वरं सुवर्गोतस्यपरिच्छदानियस्य अनेनमहत्त्वक्षानात्सहसाअनितकमः स्चितः मेघगम्भीरयेतितप्तानां कृपा वर्षगात् गम्भीरेतिशब्दश्रवर्गोनेवशत्र्गांमज्जनम् एवंवाक्येदुष्टनिग्रहिष्टिपरिपालनेस्चिते समारोपितकार्मुकद्दति॥ ०॥

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

परीक्षिद्धमेयोः प्रोक्तमुक्तिप्रत्युक्तिकौतुकम् । निष्रहानुष्रही राज्ञा कलेः सन्तदशे ततः ॥ ० ॥

ः हत्यमानं ताड्यमानमः। नृपलांछनमिति सत्यत्रेताह्यापरहित्युगमर्यादानां भक्के खातन्त्र्यस्चकम् ॥ १॥

मेहन्तं मूत्रयन्तामिवेति पादाविशिष्टोऽपि धर्मः प्रतिक्षगां क्षरित्रवेत्युत्प्रेक्षायां नइयदवस्थ इत्यर्थ। वेपमानमिति सोऽपि नानाविष्नेर निष्पन्न इव कलिनाकियते इति सूच्यते ॥ २॥

धर्मादुवां हिवहींग्ध्रीं शस्यादिप्रसवक्षयाद्विवत्सां धर्माश्र्येगाश्रुवदनां यञ्जाभावात श्रामां छशाम्। यवसं यञ्जभागम्॥ ३॥ कार्त्वस्यं सुवर्णम्। सज्जीकृतकारमुकं इति कलेः पलायनाशङ्कया ॥ ४॥

कस्त्वं मच्छरगो लोके बळाद्धंस्यवलान् बली ।

ः वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र कार्याच्या क्रिक्त क्रिक्त क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र कार्या क्षेत्र कार्या क्षेत्र कार्या के विकास क्षेत्र कार्या के विकास क्षेत्र कार्या के विकास क्षेत्र कार्या के विकास कार्या कार्या के विकास कार्या कार्या

पुरुषं कार्या के कार्या के कार्या विश्व के कार्या मते हुई सह गाँगिडीवधनवना ।

शोच्योऽस्यशोच्यान् रहिस प्रहरन् वधमहिसा । ६ ।।

त्वं वा मृंगांबधवलः पादैन्यूनः पदा चरन्।

वृषरूपेशा किं कश्चिद्देवों नः परिखेदयन् ॥ ७॥

न जातु कौरवेन्द्रागां दीईग्रहंपरिरम्भिते ।

भूतलेऽनुपतन्त्यसिमंन् विना ते प्राशिनां शुचः ॥ ८॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

ततः प्राचीसरस्वतीतरे हन्यमानंताडचमानम् गोमिथुनंगवोः स्त्रीपुंभूतयोर्थुगलम् दहरोदहर्शः ॥ १ ॥
तत्रपुमांसंविधिन्छि इष्टमिति मृंग्रालिवतः पद्मकंदवस्यस्य मेहतमिवस्योर्थेगलम् दहरोदहर्शः ॥ १ ॥
तत्रपुमांसंविधिन्छि इष्टमिति मृंग्रालिवतः पद्मकंदवस्यस्य मेहतमिवस्योत्सगरम् एकंतप्रयानुकर्गाः कुर्वतनतुम् प्रयंतिमत्यः यंतदेन्यंसुचितम्
यतः श्रद्धेग्राताडितम् अतप्रविक्षयंतुमुद्धिजेतम् वेपमानकंपमानम् एकंतपदास्तिदेतंतिकस्यतंत्रच ॥ २ ॥ । ।

्ख्रियंविवित्राहरू ग्रामिति धर्मेदुंघांध्रमार्थपयोष्ट्रतरूपंहत्रिदींग्ध्रीमःयवसंतृग्राम् ॥३॥% क्रियानस्य १००० ।

# ក្រុមក្នុងស្ថិត មា **សំ**នៅមាមសម្រេស់សំនៅសៀលសំនួន់មាន ក្រុម**អាចដែរ សែកស**ស្រាន់មាន សំនៃស្រែសំនៅមានការប្រជាជាតិស្វារិ

स्तजी बोले तहांपर अनाथ की तरह मारे जाते गऊ बैल को दंडहस्तवाले शुद्र को नृपिचन्ह सहित राजा ने देखा ॥ १ ॥

कमल केंद्र की नाई वृषम को मृतते हुये छरते शूद्र से ताडित होने से एक पाद से कांप्रते दुखित देखा ॥ २ ॥

धर्म को दुहनेवाली शूंद्रपाद से ताडित दीन वत्स रहित आंसु मुखवाली अति क्रश घास चाहती गऊ को देखा ॥ ३ ॥

सुवर्शा परिकरवाले रथमें चढे हुये राजा ने मेघ गंभीर बाग्री से धनुष चढाकर पूँछा ॥ ४ ॥

# 

हैंसि घातयसि। राजाहमिति चेत् तत्राह। नट इव वेशमात्रेश नरदेवोऽसि। कर्मशा अद्विजः शुद्रः॥ ५॥ अशोच्यान् निरंपराधान् रहसि यस्त्वं प्रहरसि स शोच्यः सापराधोऽसि। अतो वधमहेसि॥ ६॥ वृषं प्रत्याह त्वं वा कः। स्वयमेव सम्भावयति कि कश्चिदेवो वृषक्षपेशास्मान् परिखेदयन् वर्त्तसे॥ ७॥ दोर्द्गाहैः परिरम्भिते परिरम्भितवत् सुरक्षिते। ते शुचः अश्वश्या विनान्येषामश्राण नानुपतन्तीति खेदहेतुत्वं दार्शितम्॥ ८॥

#### श्रीवीरराधवः।

# र कामनाम १ का १८६ लाह के दिन र तमा विसास **श्रीविजयध्येजः।** <sup>स्टिस</sup> मिला है राष्ट्रात्र के विदेश के किया र वेला र

तत्रप्रधमंशूद्रंप्रतिप्रदनप्रकारमाहं करूविमिति यर्द्वनटचद्वेषेणानरदेवोऽसिनतुराजा कर्मणाश्रद्धिजः शूद्दोऽसि अद्विजहत्युक्ताशृद्धत्वेक थंज्ञातिमितिचेत्कर्मणोत्यनेनक्षात्रियवैश्ययोः परिहृतत्वात् मच्छरणोअहमेवरक्षकोयस्यसतथातास्मन् "द्यारणांगृहरक्षित्रो"रित्यभिधानं

### श्रीविजयध्वजः।

बलीत्वमबलौदुर्वलौगोवृषौवलात्प्रसद्यहंसिपीडयसित्वंकः ॥ ५ ॥

गांडीवधन्वनासहकृष्णोदूरंगतेसातयः शोच्योरहसिअशोच्यान्त्रहरन्नसिसत्वंवधमईसीत्यन्वयः ॥ ६॥

इदानींवृषभंपृच्छति त्वंवेति हेवृषभ !पादैर्न्यूनः यथाचरासितथात्रिभिः पादैर्न्यूनः पक्षेनचरन्मृगालवद्मवलस्त्वंकोवावृषभरूपेगास्मान् परिखेदयन्अस्मद्भुद्धेः परिघातंकुर्वन्गतस्त्वंकश्चिद्देवः किम् ॥ ७ ॥

कुतः परिखेदकत्वमितितत्राह नजात्वितिकार्वेद्राणांदोर्देष्ठैः परिरंभितेरक्षिते ऽस्मिन्भूतलेपाणिनांशुचः शोकिनिमित्ताश्चिदिवः जातुकचिदिपिर्नानेपतंतित्वांविना त्वंतुवाष्पकलाक्षः शोचिसियस्मात्तस्मात्परिखेदयसीतिभावः ॥ ८॥

# क्रमसंदर्भः।

अद्विजः द्विजविरोधी ॥ ५॥

यस्त्विमत्यत्र सह गाग्डीवधन्वनेति। तथैव प्रतिक्षातं तं प्रति श्रीभगवता—मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिज्ञाने प्रियोऽसि मे इति। खर्ग-पर्वशा तु तत् साक्षादेव निर्दिष्टम्। ददर्श तत्र गोविन्दं ब्राह्मचेगा वपुषान्वितं। तेनैव इष्टपूर्व्वेगा साहद्येनोपस्चितम् ॥ दीष्यमानं स्वयपुषा दिन्यैव्वक्षेष्ठपस्कृतम्। उपास्यमानं वीरेगा फाल्गुनेन सुवर्षसा ॥ यथास्वरूपं कौन्तेयस्तथैव मधुसुद्दनिमिति। अत्र कौन्तयो युधिष्ठिरः ॥ ६॥ ७॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥ १५॥ १६॥ १७॥

# सुवोधिनी।

अयुक्तवचनमात्रेगीवपरिश्वातोमारग्गियहति प्रश्नमाह कर्त्वमितिद्वाभ्याम् अञ्चानिश्चयभेदात् अधिक्षेपार्थोवाद्वितीयः अहमेवशरग्रं रक्षकोयस्यताहशेलोकेवलात् विधिव्यतिरेकेग्राअवलान् अशत्रुभूतान् दीनान् चलित्यनेनआपदभावः सृचितः चिन्हैरेवपरिश्वायतामिन् रक्षकोयस्यताहशेलोकेवलंनरदेवोऽसि नराजात्वंसामर्थ्याभावात् प्रसिद्धत्वाच नटविद्वि राश्वामुपहासार्थताहशंक्रपंकृत्वाधर्मभूरक्षायांक चैव्यायांविपरीतकरग्रांनभवतित्याह कर्मग्राआद्विजाःगांपदाताद्वयंति अद्विजहत्यनेननद्वितीयजन्मिनजातेकचेव्याकर्त्वविवेकोभवेत् कथं कृष्यायांविपरीतकरग्रांनभवतित्याह कर्मग्राआद्विजाःगांपदाताद्वयंति अद्विजहत्यनेननद्वितीयजन्मिनजातेकचेव्याकर्त्वविवेकोभवेत् कथं कृष्यायांविपरीतकरग्रान्यकर्त्वः अतः धर्मकर्त्तरिकारयितिरिच प्रचिलितेत्वंकःकुत्सितप्वतद्वमनानन्तरमयमहामित्यागतस्तर्दिचारोमचिति वाभ्याराज्येआनिक्षपग्रात्वलात्वेत् राजामवितुमिच्छसितदाशोच्योऽसिसापराधोऽसि किच अशोच्यान्अनपराधान् एकतिप्रहरन्सुतरां सापराधोऽसि अतोवधमहसिनान्यदग्रदग्रितिभावः॥ ५।६॥

एवंमारियतुंविचारयन् उत्तराक्षयनात्सिन्दिग्धः तयोःसापराधत्वमाशंक्यसांत्वनार्थसम्पृच्छति त्वंवामृगालधवलइति प्राकृतवृषभ कांतियुक्तत्वेशुभ्रतादुर्लभाएकपदाचगमनम् अतइदंपाकृतपशोरसंभावितिमितिकश्चित् देवएविकभवान्निहिपशुरूपादेवाएताहशाभवातिहि तर्हिवृषक्षपेगानः अस्मान् खेदयन्किदेवः पूर्वमिपश्चयतेशिविप्रभृतिषुअग्न्यादयोक्षपांतरेगागताहति ॥ ७॥

कथमयंराजाअस्मान् शास्यतीतिपदाभूस्पर्शात्नायंदेवइतिनिश्चित्याद नजात्विति त्वद्वचितरेकेणअन्योऽस्मद्राज्येश्वतोद्दष्टोवानकस्य चित्रअश्रृणिपतन्ति तत्राप्यस्मिन्कौरवेन्द्राणांकुरुवंशराश्चांदोर्द्यदपरिरंभिते आलिङ्गितेभूतलेनिहमहाराजोपयुज्यमानाभूः क्षिष्टाभवति तवतुस्वरूपंनशायतद्दिभावः खेदोवाभनेनिवृत्तः॥८॥

# श्रीविश्वनाथचकवर्ती।

कस्तं रे मदग्रे हंसि नरदेवोऽहमिति चेन्मिय नरदेवे विद्यमांने त्वं कुतस्त्यो नरदेवः नटवद्वेरोनेति चेन्नहि कर्मगा त्वम अद्विजः ग्रुद्रः। नटो हानुकार्य्यस्यैव कर्म्म अभिनयतीति भावः॥ ५॥

ननु यथा त्वं देशस्य राजा तथे वाहमपि संप्रति कालस्य राजेति मिय तब विक्रमो न भविष्यतीत्यत आह यस्त्वमिति । गागडीवध-न्यना अर्ज्जनेन सह कृष्णे दूरे गते सतीति पताविद्दनं त्वं कासीरिति भावः । नन्वासमेव किन्तु ताक्ष्यां भयेन न प्राभूवम् । अधुना तु कस्माद्विभोमि इति सत्यम् । शोच्योऽसि अधुना त्वं मर्जुमेवेच्छसीति भावः ॥ ६ ॥

भवतु क्षगां तव प्रथममपराधं विमृशामीति मनसि कृत्वा वृषं प्रत्याह त्वं विति । नोऽस्मान् खेदयितुं कि कश्चिदेवोऽसि । नैतादशः कृशो ( वृषो ) दुःखी मया खप्नेऽपि दृष्ट इति भावः ॥ ७॥

त्वय्येव राजनि सति वयमेव दुःखिनः सांप्रतं समभूमेति चेत् तत्र सानुतापं साद्येपं चाह न जात्विति । परिरम्भिते परिरम्भित-वत् सुरक्षिते तव शुचः अश्रूगी विना अन्येषामश्रूगि न पतन्ति ॥ ८॥ मा सौरभेयात्र शुचो व्येतु ते वृषलाद्भयम् ।

मा रोदीरम्व ! भद्रं ते खलानां मिय शास्तरि ॥ ६ ॥

यस्य राष्ट्रे प्रजाः सर्व्वास्त्रस्थन्ते साध्यसाधिभः ।

तस्य मत्तस्य नद्भयन्ति कीर्त्तिरायुर्भगो गितः ॥ १० ॥

एष राज्ञः परो धर्मो ह्यार्तानामात्तिनित्रहः ।

त्रात एनं विधिष्यामि भूतद्रुहमसत्तमम् ॥ ११ ॥

कोऽवृश्चत्तव पादांस्त्रीन् सौरभेय ! चतुष्पदः ।

माभूवंस्त्वादृशी राष्ट्रे राज्ञां कृष्णानुवार्तनाम् ॥ १२ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

प्रश्रप्रकारमाह कहत्यादि द्वादशभिः अरेत्वंकोऽसि वेषेणाखर्णमयमुकुटादिपरिच्छदेननटवन्नरदेवः नतुवस्तुतः तत्रहेतुमाह यतःवली-सन् अवलान् हंसिघातयसि अनेनकमेणाऽद्विजः द्विजभिन्नः प्रतीयसे ॥ ५ ॥

दूरंप्रकृतिमंडलतोदूरतरंनिजलोकंदीनानुकंपिनिकृष्णे गांडीवधन्वनाप्रवलदुर्जनदमनेनानुकंपिनिकृष्णेगांडीवधन्वनाप्रवलदुर्जनदमनेना

र्ज्जनेनसहगतेसति शोच्यः सापराधस्त्वंकोऽसि अशोच्यान् निर्दोषान्रसहिसप्रहरन्वधमहिसि ॥ ६॥

मृगालिधवल ? त्वंवा त्रिभिःपादैन्यूनः पदापकेनपादेनचरन् नोऽस्मान्वृषक्षपेगापरिखेदयर्निककश्चिद्देवोऽसि ॥ ७ ॥

खद्देतुमाह कौरवेंद्राणांदोर्देडेंभुजदंडेः परिरंभितेऽस्मिन्भूतलेतवशुचोऽश्रूणिविनाऽन्येषां प्राणिनामश्रूणिजातुकदाचिदपि नानु पताति ॥ ८॥

# पर न वि**भाषादीकाँ।** स्वर्णने विश्वयक्षित हैं सह उद्दार्शक के सार्वकार वार

The factor is a facilities of the contraction of the factor factor factor of the contract of the contract of

मेरे रक्षित लोकमें बली होकर जबरी से दुर्वलोंको मारता है वेषसे राजा सानट के तुल्य कमें से ग्रद तू कौन है ॥ ५ ॥ गांडीव धमुवाले अर्जुनके रूप्णा सिहत दूर चले जाने पर अशोच्य जीवों को एकांत में प्रहार करताहुआ तू बधके योग्य है ॥ ६ ॥ हेवृष ! मकलकंदवत धवलवर्णा तीन पादों से हीन एक षाद से चलता कोन है किया वृषक्ष से हमारी बुद्धि को मोहन करता हुआ कोई देवता है क्या ? ॥ ७ ॥

कोरवों के भुजदंडों से पाछित भूमी में कभी भी तुम्हारे बिना और किसी के आंसु नहीं गिरते हैं॥ <॥

# श्रीघरस्वामी ।

पवमुक्ते पुनरिप शोचन्तं प्रत्याह । भोः सुरभेः पुत्र ! अत्र मा शुचः शोकं मा कुरु । व्येतु अपयातु । गां प्रत्याह । अम्ब ! मातः शास्तरि मयि जीवति सित ते भद्रमेव अतो मा रोदीः ॥ ९ ॥

मैंद्धितार्थमेवैनं हनिष्यामि न तवोपकारायत्याह यस्येति द्वाक्ष्याम् । हे साध्वि !। सब्बीः याः काश्चिदपीत्यर्थः । असाधुभिः त्रस्यन्तेः

पीड्यन्ते । भगो भाग्यम् । गतिः परलोकः ॥ १० ॥ ११ ॥

पुनरिप शोचन्तं वृषभं प्रत्याह । कोऽवृश्चत् चिच्छेद । त्वाहशास्त्वद्विधा दुःखिताः ॥ १२ ॥

## श्रीवीरराघवः ।

हेसीरभेय! मानुशुचः शोकंमाकाषीः तेतववृषलादस्माच्छूद्राद्भयमत्येतुनश्यतुगामाश्वासयन्नाहमेति हेअम्व!खलानांदुरात्मनांशास्तरि दंडधरेमियितिष्ठतिसतित्वंमारोदीः रोदनंमाकाषीःतेतवभद्रं सुखमेवभविष्यति ॥ ९॥

हेसाध्व ! यस्यराष्ट्रेदुरात्मिः सर्वाःप्रजास्त्रस्यंतेविश्यति असाधुभिदितिकरणत्विवक्षयातृतीयाप्रयुक्ताऽतोन "भीत्रार्थानाम"इत्य पादानत्वंतस्यमत्तस्यराञ्चः कीर्त्यादयोनश्यन्तिभगोमाग्यंगितः पुगयलोकगितः॥। १०॥

7

## श्रीविजयघ्वजः।

हेसीरभेय! सुराभिवंशोद्भव माशुचः शोकंमाकार्षाः तेतववृषलाद्भयंत्र्येतुनश्यत्वित्यन्वयः इदानींसौरभीं पृच्छिति मारोदीरिति हेसीर-भेयि! त्वमपिकासीत्यध्याहारः कर्तव्यः कस्त्वमित्युक्तत्वात् हेथम्ब! मोरोदीः अश्रुविमोक्षग्रांमाकार्षाः तेतुभ्यंभद्रमस्तु कुतः मियदृष्टा नांशास्तरिसति॥९॥

यस्यराष्ट्रेराज्येऽ साधुभिर्दुष्टैः प्रजाः साधुह्रिस्यंतेपीडचंतेमत्तस्यतस्यकीत्त्यादयोनद्यंतीत्यन्वयः गतिः परलोकः ॥ १०॥

यः आर्त्तानामार्त्तिनित्रहः एषः राज्ञः परोधर्मोहियस्मादार्तिनित्रहस्यस्वधर्मत्वादसत्तमंभूतद्रहमेनंदृष्ठंवधिष्यामीत्यन्वयः अनेनकस्य हेतोर्निजत्राहेतिचोद्यंपरिद्वतम् ॥ ११ ॥

हेसौरभेय! चतुष्पद्स्तवत्रीन्पादान्कोऽ दृश्चत्छोदितवान्सकः श्वातश्चेत्परिहरिष्यामीतिशेषः कुतइतितत्राह माभूवान्निति त्वाहशाः त्वद्विधाः॥ १२॥

# सुवोधिनी।

नतुराक्षाकथनमेवमनुचितमित्याशंक्याह हेसौरभेय!सुरभ्याःपुत्रअनेनास्यमध्यमाभावोनिरूपितःनायंदेवोनप्राकृतइति अतस्त्वंमाशुचःते वृषलात्भयमपगच्छतु वृषलंमारियण्यामीतिभावः एवंवृषभसांत्वनमुक्त्वासुरभीसांत्वनमाह मारोदीरिति हे अम्व ! सर्वदात्वदुण्धपानात् मातृत्वंस्नेहेनवातेभद्रं मदागमनंतवकल्यासामित्यथेः अतएवमारोदीः तर्हिएतावत्कालंनकातंतत्राहमयीतिशास्तरिसतियदाहमस्यशासनां करिण्यामीति तदातवभद्रनिमित्ताभावात्पूर्वं नजातमितिभावः॥ ९॥

नन्वस्मित्रिमित्तंत्वयाकिमर्थमारणीयः तत्राहस्वार्थमेवायंमारणीयः अस्मदपकारित्वादितितस्यापकारमाह हे साध्वि ! यस्यराष्ट्रेअसा धुभिः प्रजानश्यंतेतस्यचत्वारिनश्यंतिनाशाननुसंधानेहेतुमाहमत्तस्येति चत्वारिगण्यतिकीर्त्तिरितिभगोभाग्यंगतिः पुरलोकोक्षानंवा ॥१०॥

किंच नकेवलमेतदरक्षणादौदोषद्दित एतद्रक्षणं तथासितकाम्यतास्यात् किंतुएतद्रक्षणंविहितमपीतिनित्यतातस्मात् नियतिविहितत्वा देवकरिष्यामीत्याह एषराञ्चद्दित एषअंगुल्यानिर्दिशतिएतादृशानांरक्षणंराञ्चः परोधमःप्रजारक्षापेक्षयाअयमेवपरोधमेः यदार्जानामार्त्तिनित्रहः आर्तेश्योधनाद्यपेक्षाया अपिआर्त्तिनित्रहः परोधमेः ततःकिमतआह ततःस्वधमेपरिपालनार्थमेवैनंवधिष्यामि ननुसाक्षात्वधेअधमेः तत् कथंहिन्ध्यसीत्यतआहमृतदुहिमिति सर्वेश्योभूतेश्यो दुद्धतीतिएतद्वधेभूतानांजीवनंभवति एतदवधेषद्वनांमरणम् अतोलाघवादेकस्यैवमरणं विरं ननुसाक्षात्वविधविषयोऽयम् अन्येतुनस्वकर्त्वकिसाविषयाअतोवद्वत्वमप्रयोजकमित्याशंक्याह् असत्तममितिनद्यस्यवधःअधमो स्तितुष्टिनित्रहादिविहितत्त्वात् अत्यवतद्वधेत्रयंसिद्धचितदुष्टिनित्रहविधिपरिपालनंभूतद्रोहिनिष्धविधिपरिपालनमार्त्तीनामार्त्तिनित्रहविधि परिपालनंभूतद्रोहिनिष्धविधिपरिपालनंभूतद्रोहिनिष्ठविधिपरिपालनंभ्या ॥ ११॥

इतिसुरिमसांत्वनिविधिप्रस्तावेनतद्वधमुक्त्वासौरभेयार्थमिष तद्वधोभवित्वितिषुनः पृच्छितिकोऽनुश्चिदित पादान्कःअनुश्चत्अच्छिनत् यथापराधंदगडःकर्त्तव्यःसुरभ्यास्ताडनमात्रमनेनकृतंतिश्चिवारगणपूर्वकताडनेनािषप्रतीकारोभवित पादत्रयच्छेदेतुअस्यािपपादद्वयंहस्तश्चच्छे त्रव्यः ततःकथयेत्यर्थःचतुःपदेतिसम्बोधनात् अवश्यपुर्वपादचतुष्टयंस्थितिमितिज्ञािपतंननुतस्यािपपादच्छेदेनममकःपुरुषार्थःस्यात् तत्राह्य यथाभवान्जातःतथाअन्येऽप्यस्मिन्जीवितमाभूवित्रतिपवित्रहःकर्तव्यःननुत्रिविधाराज्येभवंतिकोऽयमात्रहःसर्वयाअयंमारग्रीयइतितत्राह्य राज्ञांकृष्णानुवर्तिनामिति अन्येषांराज्येभवन्तुनामभगवत्सेवकानांराज्येनयुक्ताःयतोऽत्रत्यः सर्वेरवभगवान्सेव्यः॥ १२॥

## श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

नन्वलीकमिदमिति खमिव रुदन्तीं गां दर्शयन्तं वृषं साश्वासमाह । भोः सुरभेः पुत्र ! मा शुचः मा शोचः । भयं व्येत्विति अधुनैवेमं हन्मीति भावः । गां प्रत्याह मेति । मिय जीवृति सति ॥ ९ ॥

नन्वस्मत्संवंधेनैनं घातयन्नेतद्वधभागिनावावां मा कुर्वित्यत आह यस्येति । अतः खहितार्थमेवैनं हान्म न चात्र युष्मदनुरोध इति भावः ॥ १० । ११ । १२ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः ।

पुनर्वषमाश्वासयन्नाह हेशीरभेय ! माशुचः शोकंमाकार्षाः वृषलात्रह्मात्तेभयंव्येतु अपयातु गामाश्वासयन्नाह हेअंवमातः ! खलानां दुर्वृत्तानांशास्तरिमयिसतितेभद्रमेवभविष्यति अतोमारोद्दीरोदनंमाकार्षाः ॥ ९ ॥

हेसाध्वि ! भगोबुद्धाद्यैश्वर्येपरलोकगतिश्च ॥ १०॥

आत्तीनांकलेशाक्रांतानामात्तिनिग्रहः क्लेशपरिहारः ॥ ११-॥

पुनर्वृषंपृच्छन् खर्थममाह कहतिपंचिभः अवृश्चद्भिनत् त्वाहशास्त्वद्विधातुः बितामाभूवन्मासन्तु ॥ १२ ॥

त्राख्याहि वृष! भद्रं वः साधूनामकृतागसाम्। त्रात्मवैरूप्यकर्तारं पार्थानां कीर्तिदूषगाम् ॥ १३ ॥ जनेऽनागस्त्रघं युक्षन् सर्व्वतोऽस्त्र च मद्रयम्। साधूनां भद्रमेव स्वादसाधुदमने कृते ॥ १४ ॥ त्रानागःस्विह भूतेषु य त्रागस्कृतिरङ्कुशः। त्राहर्त्तास्मि भुजं साक्षादमर्त्त्रयापि साङ्गदम् ॥ १४ ॥ राङ्गो हि परमो धर्माः स्वधर्मस्थानुपालनम्। शासतोऽन्यान् यथाशास्त्रमनापद्युत्पथानिह् ॥ १६॥

#### भाषाटीका।

हे सीरभेय ! तुम मत शोचो इस शूर्द्र भय छोडो है गो माता ! मत रोदन करो तुम्हारा कल्यागा होगा क्योंकि में खली का दंखदाता हूं ॥ ९ ॥ हे सच्चि ! जिस प्रमत्त राजाके राज्यमें असाधुओं से साधु पीडित होते हैं उस राजा का कीर्ति आयुः भाग्य गतिः नष्ट होती हैं १० यह राजा का परम धर्म है कि दुखियों का दुःख नाश करना इसी से इस भूतद्रोही असाधु को में माकँगा ॥ ११ ॥ हे बुषभ ! तेरे तीन पादों को किसने काटा है छुष्णभक्त राजाओं के राज्य में तुम से जीव नहोने चाहियें ॥ १२ ॥

# श्रीघरस्वामी ।

वो भद्रमस्तु । आत्मनस्तव पादच्छेदेन वैरूप्यं कृतवंन्तम् कीर्त्ति दूषयतीति तथा तम् आख्याहि ॥ १३ ॥
नतु तदाख्याने कृते कथं भद्रं स्यादित्यत आह । यस्मादनागिस जने यः अघं दुःखं युअन् कुर्वन् भवति । अस्यैवंभूतस्य मत्तः
सकाशात् सर्वत्रापि भयं भवति । ततः साधूनां भद्रं भवेदिति ॥ १४ ॥
पतस्य दग्रेडेप्समर्थ इति माशंकीरित्याह । अनागःसु य आगस्कृत् अपराधकर्ता तस्यामर्त्यस्य देवस्यापि भुजम् आहर्त्तास्मि आह
रिष्यामि । साङ्गदमित्यनेन मूलतं उत्पादचाहरिष्यामीति दर्शितम् ॥ १५ ॥
नन्वकस्य विश्रहेण अन्यस्यानुग्रहे तव कि प्रयोजनं तत्राह राक्षो हीति । अन्यान् अधर्मिष्ठान् शासतो दग्रहयतः ॥ १६ ॥

#### दीपनी।

( निरंकुद्याः इति काकाक्षिगोलकन्यायेन राज्ञोऽपि विशेषग्रामिति ॥ १५ ॥ ) ( उत्तपथान् मार्गमुत्सृज्य वर्त्तमानान् । इति विजयध्वजः ॥ १६ ॥ )

# श्रीवीरराघवः ।

हेवृषभ! भद्रभेवभविष्यतिक्तित्वकृतागसांनिरपरिधनांसाधूनांयुष्माकमात्मवैरूप्यकारिग्रांपार्थानांकि। दृषयतीतितथातमा स्याहि॥१३॥ यथनागिसिनिरपरिधननेद्रोहंयुजन्नास्तेतस्यसर्वतः सर्वत्रमममत्तोभयंभविष्यति ॥ १४ ॥ योऽनागस्सुजनेषुनिरंकुद्याःउत्पयःसन्नागस्कृद्रोहकुद्भवति तस्यसाक्षादमर्त्यस्यदेवस्याप्यंगदयुक्तं भुजमाहर्त्तास्मिआहरिष्यमाग्रोऽस्मि १५ स्वर्थमस्यानांपालनमेवरान्नः परमोधर्मः कथंभूतस्येहलोकेऽनापद्युत्पथान्दुर्वृत्तानन्यानसाधून्द्यासतः दंडयतः अनापद्युत्पथानित्यनेना पदिदुर्वृत्तिनेद्राषावहेतिसूचितम् ॥ १६ ॥

# श्रीविजयध्वजः।

अकृतागसामकृतापराधानांनिद्धिणाांचोयुष्माकंभद्रमस्तु पार्धानांकीर्तिदृषगाम्थात्मेवक्ष्यकर्तारंपुरुषमाख्याद्दीत्यन्वयः हेगळेसुर्दाम ! योऽ नागस्तिअधमपराधयुंजन्मयुंजानावर्ततेअस्यतत्तरमाद्पराधात् सर्वतद्ददपरलेकिचभयभवत्येवेतिशेषः "सौरभयीगलाधेनुर्भवानदाऽ मृतस्रवे" त्यिभिधानम् ॥ १३ ॥

# श्रीविजयावजः । १९११ १० १० १०

निरंकुदाः अनिवारितः अंगदेनबाहुभूषशोनसहवर्तमानम्अमृत्यस्यादेवस्यापियाहर्तसम्बन्धासम्। १४। १५॥ सुतर्तितत्राह राज्ञद्दति स्वविहितधर्ममनुतिष्ठतामनुपालनंतत्त्रधोग्यतयारस्यग्राहाः प्राधिमाहि किविशिष्टस्य इहानापदिभापदभावेऽ पिउत्पथान्मार्गमुत्मृज्यवर्तमानानन्यान्दुष्टान्यथाशास्त्रशासतः ॥ १६ ॥

# सुवोधिनी।

इन्द्रियविकलास्तुसेवितंनाईति अतस्तादशानयुक्ताः अतःसर्वयात्वयावकव्यसित्याद् आख्याद्दीति वृषत्वात्तवनानीविद्यंततुचास्म दीयाद्वाक्यात्कथितेमारियव्यतीतिशंकानिवधेयत्याशक्याह भद्रंवहति युष्माक्षमद्रमेव भन्वस्मिन्जीवतिकथंभद्रंतत्राह साधूनामिति एतस्य शिक्षार्थंदगडकरगापक्षेऽपिधर्ममार्गवर्त्तिनामपराधरिहतानां देहवैक्ष्यक्रेग्रामद्भिवतं तथापिकरगोक्षेद्देतुस्तत्राहपागडवानामेवायमधकारी सर्वोन्द्रगडयतीतिलोकापवादजननात्पूर्वसिद्धांनिःकलंककीित्तंदूषयति अतोभवतामप्येतदांख्याने कीित्तंस्थापनधमाभवति॥ १३॥

मत्प्रतिक्षाचिसद्भाभवतीत्याहजनइति अनागसिजनेअपराधंयुंजन्सर्वतोमत्तोभयंप्राप्नोतिदेहिधनैहिकामुष्मिकप्रकारैः मत्कतंभयंप्राप्नो तिअस्यसम्बन्धीपुत्रादिभयं प्राप्नोतित्यध्याहारःकरातीयः अनागसिजनेअधंयुंजन्भवति तस्यमत्तःसर्वतोभयंभवतीतिभवति द्वयमध्याहर्जेव्य बस्तुतस्तुधर्ममात्रपूर्ववत् अग्रिमस्रोकेनोक्तार्थत्वात् ते १४॥

आख्यातेकिकरिष्यतीत्याकांक्षायामाह अनागस्खिति नजुसोऽप्यधिकारीकथत्वयामारगायस्तत्राह निरंकुशहति नियमिकरहिति अति प्वीत्वयगामीकयक्षेमस्त्यवेक्षायामोहं आहुनीस्मीति अमर्स्यस्यस्यस्यापिकार्द्वमुत्याय्यामीत्यथेः साक्षादिति खयमेवमत्वानियाभिचार द्वार सांगदैसितिः अगदाद्यायन्योः सहितंस्वैः ्रेपूजितंसिपाणाः १६ मा १६ मा १६ मा १६ मा १५ मा १५ मा १५ मा १५ मा १५ मा १५

ननुभवानत्रननियुक्तः अतिनियोगानुसार्गापालनंकर्त्तृत्यं वयंतुम्तः क्रुतिभित्वद्वाष्ट्रसमात्ताः नत्वदीसाहत्यानं स्थादि राह्मोद्विधर्म द्वयंसहजोधमेः अधिकतस्तुसहजधमेस्तु आर्त्तातिनिग्रहः समुख्यः अन्यस्तुगुणैः तत्रखराष्ट्रादिनियमोनास्तिभायोमिपमारयन् निवार ग्रीयः परमशक्त्यातूर्णाभावः राश्वस्त्वशक्त्यभावात् समुख्याघमैःस्वधमीनुपालनमेवअन्यान् स्वधमरिहतान् अनापादेउत्पथान्शासतः नतुविरक्तस्यअतोममार्तिहरगांस्वधर्मः अतोवक्तव्यमिति कलिनिग्रहोवहिर्मुखेनकर्त्तुमशक्यः अभगवदीयेनवा॥ १६॥

# 

🖫 ५० ॥ एनंबरी हुन्साई कि कियम राज्यक के बाक्षीयान्ह्र

किन्तु तब मुखात किञ्चित् श्रावेवैनं वधिष्यामि इत्यव आह् आख्याद्वीति । नज मम् किमपि विवक्षितं तास्तीति तथाह । हे क्ये । की युष्माकं साधूनां निर्पराश्चानां महं सुबेऽपि तु बेऽपि सदा महमेव । किन्त्वस्माकं पार्थानां कीप्ति द्वयति यस्तम् आख्याहि । तमेव कम् आत्मनस्तव पादच्छेदंन वैरूप्यं कृतवन्तम् ॥ १३॥

आत्मनस्तव पादच्छेदेन वेसप्यं कृतवन्तम् ॥ १३ ॥ त च कथिते सति त्वत्त प्रवास्य भयं किन्त्वकथनेऽपि सन्वत प्रवेता । निरागिस जने थाऽधं युजन भवेत् अस्य सन्वत प्रव

हेतुप्रयो मत्सकाशाद्भयम् ॥ १४ ॥ नजु बहि त्वचोऽपि महाप्रभावी वलवांश्च स्यात तदा कि भवेदत आहे अनागः खिति। साक्षादमधीस्यापि देवस्यापि । साक्षादमधीस्यापि मूलत एवं कित्वा आहरिष्यामीति देवासुरनरादिषु मत्तुल्यो बलिष्ठः ममाबी वा कोऽपि नास्तीति भावः॥ १५॥

नतु एकस्य निम्नहे अन्यस्यानुम्रहे तव कि प्रयोजनं तत्राह राक्षो हीति। अन्यान् अधर्मिष्ठान् शासतः दगडयतः॥ १६॥

# 

हेन्नुष वो भद्रं भवतु अकृतागुसांनिरपराधिनांपापवितितानींसाधूनींपुराववतांयुध्माकमात्मवैरूप्यकर्तारपादच्छेदनेनशरीरवैरूप्यकर्तारम अत्यवपार्थानां की जिल्लायिततः वीत्रपालयप्राणिपाडाजननद्वारालोपयतीतितमाल्याहि॥ १३॥

अनागसिनिर्पराधेजनेयोऽधेतुः खंयुंजन्कुर्वन्वर्तेतास्य चकारात्तत्पक्षप्।तिनोमत्तः स्वकाशाद्धयंभवति सर्वतःसर्वेश्योयमादिश्यश्चम्यं मवति नजुविरोधिन्यपिजनेदगङ्यमानेसाधूनांकोलाभइत्यत्याहः साधूनामिति ॥ १४॥

यदिनिरपराधिष्वपराधकर्ताकश्चिदमानुषोऽपिस्यासाहिसाऽपिमदुङ्यपवित्याह अनागस्स्वितिसृतेषुपाशिमाञ्चषुकिपुनः शिष्टोष्वितिसावः निरंकुराः शासनातिमः दगडदानेआत्मनः कौशलंसूचयति।यःसाक्षादागस्कृषिति आगस्कृसयासाक्षात्परिकातक्र्यथेः संस्थेसुजनसाण द्वेत अपराधेकते भुजमेवतत्राप्यंगदमण्यपरित्यज्येवाहारिष्यामि तत्रमित्रावयोवज्यहितितृ किवकण्यम् यजनाहै:सुरोऽपिनवजनीयोऽपितृहें इय प्वत्याह अमर्त्यस्यापीति ॥ १५ ॥

तादृतानिवन्धेकारणमाहराहद्विअन्यानधार्मिकान्उत्पथान्ध्रममागातिगान् अविद्वितकर्तृत्रविद्वितोपेक्षकान्ययाकास्त्रेणसात्विराज्य तीराधः स्वयमेस्यानुपालनंपरमोधमेः आपवित्वविद्यतिहत्ववेपरीत्यकारिणांच्यतिक्रमः सोढव्यद्दतिस्वयकाद्द्यनापदीति ॥ १६॥

धर्मा उवाच।

एतद्रः पाण्डवेयानां युक्तमार्क्ताभयं वचः।

॥ १९ । **मेषां गुगागगोक्षक्रमाके दोत्यादो स्ममवास् वृतः ॥ १७** ॥ १०० ॥

ने वर्य क्लेशवीजानि यतः स्युः पुरुष्पेन !।

पुरुषं तं विजानीमो वाक्यभेदविमोहिताः ॥ १८॥

केचिद्विकल्पवसना ऋाहुरात्मानमात्मनः।

दैवमन्ये परे कर्म्म स्वभावमपरे प्रभुम् ॥ १६ ॥

अप्रतक्योदानिहेश्यादिति केष्वपि निश्चयः।

अत्रानुरूपं राजर्षे ! विमृशः स्वमनीषया ॥ २० ॥

# ការប្រើប្រធានជាតិភាព នៃរំប្រឹក្សាសន្តែ សមិនម្នាំ**មានមែលក្នុងស្រុកសង្គ្រា** សាក្សា និង

है वृष ! आपका कल्यामा ही होगा निरपराध साधुओं के स्वरूप को विक्रम करनेवाले पांडवों के की दीष लगाने को आप कहरोंथा १३ में

ा जो कोई निरप्राधी जन को उन्छ देता है उसको मेरेसे तथा सबसे भय है क्योंकि उच्के दंड देने से सजनों का सका होगा॥१३॥

# I DE L'ART DE L'ART L'ART L'ART PROPERTY DE L'ART L'AR

के हैं कि है है है है के सम्बद्धि है के कि है के लिए हैं के कार्य के स्वयं के स्वयं के सम्बद्धि है के कि कि कि

आर्जानामभयं यस्मात् तद्वचो वो युक्तमुचितमेव ॥ १७ ॥ वयं तु यतः पुरुषात् प्राणिनां क्लेशहेतवो भयेयुः तं पुरुषं त विज्ञानीमः । युतो वादिनां वाक्यभेदैर्विमोहिताः ॥ १८ ॥

वाक्यभेदानेवाह । विकल्पं भेदं वसते आच्छादयन्ति ये योगिनस्ते आत्मानमेव आत्मनः प्रभुं सुखदुःखप्रदमाहुः । तदुक्तम् अत्मित्रं ह्यात्मना वन्धुरात्मेव रिपुरात्मन इति । यहा विकल्पेः कृतके विस्ताः प्रापृता नास्तिका ये पर्वे ते वदन्ति न ताबहेवताहीनां प्रभुत्वं कर्माधीनत्वात् न च कर्मगाः खार्थानत्वात् अतः खयमेव प्रभुः न चिन्यः कश्चिदिति । अन्ये देवका देवं प्रहादिक्षणं देवताम् ॥ परे सीग्रांसकाः कर्मा । अपरे लोकायतिकाः खभावम् ॥ १९ ॥

किञ्चपि सेश्वरेषु । केञ्चपीति बुरुभत्वं दर्शितम् । निश्चय इति सिद्धान्तत्वम् । अप्रतक्यीत् मनसोऽगोचरात् अविद्देशात् वचसौऽगो-

वकात परमेश्वरात सर्व्व भवतीति विमृश विचारय खंडद्वा ॥ २० ॥

refrancia de la companya de la compa

# भारतिक हो। भारतिक स्थापन के स्थापनी है।

( वृत इति पाठो विजयम्बजसम्मतः स एव प्रामागिकः ॥ १७ ॥ १८ ॥ लोकायतिकाः चार्क्वाका इत्यर्थः ॥ १९—२३ ॥

## श्रीवीरराधवः।

प्वमुक्तंत्रमाहत्त्वः ण्ववितित्रिभिः लावद्वचोभिनंदिति प्ववितिपांडवंशज्ञानांयुष्माकमेतदात्तोनांनभयंयस्माश्चद्वचोयुक्तमेवपीडवेया निविधनिष्टि येषांपाँडवेयानांगुगामोदितुसिभेगवान्दक्षणादीत्यादीक्षमिणिवृतः दौत्यादिकमार्थवृतदृत्यर्थः येषामितिकत्तिरपष्टीयेः वृतदृत्यर्थः प्रविविधगुगामगाश्रयागामितव्यवायुक्तमवितिमावः ॥ १७ ॥

एवं वश्रासाम्भाग्यस्थान्यामावद्यसायाः ॥ १५ ॥ गाराडीव्यक्ववार्जुनेतसद्श्रीक्वमाद्रुरस्वलोक्प्रतिगतस्यतित्वमेवशोक्षीनदितिरद्सिपद्यरन्वधमद्दीसं अतःशोक्योऽसिख्यजने कोद्वश्रावित यत्पृष्टतत्रोत्तरमाद्रहेषु व्यर्थम् । यस्मात्रुस्ताः क्रेशबीजातिद्युः बकारसानिस्युस्तपुद्धवयमजानामः तत्रद्देतुवद्शासमन् विशिनाष्ट्रवास्यभद्धिमा

हिताः क्लेशकारगानिवदतांवाक्यभेदैनांनाविधवाक्येविमोहिताः ॥ १८॥ वाक्यभेदानवदर्शयतिकिचिवितिसार्धेनक्लेशकारगार्धादिनीमध्येकिचिवेवेचेवेवेवेद्यवेविको विकल्पएववसनवसनविधार्गातव्यार्थापादकं वर्षात्र्याभूतावात्मनः स्वस्यात्मानमेवक्लेशकारगामाहः सन्यपुदैवंपपैरतुक्रमेशाकानेक्षतमित्रशतुस्यभावेपरतुमभुतपदेव जावाहष्टसभावः वर्षात्र्याभूतावात्मनः प्रभुगिश्वरः॥ १९॥ प्रकृतेः परिग्रामस्यभावः प्रभुगिश्वरः॥ १९॥

#### श्रीवीरराधवः।

ंश्व क्षेत्रिस्त्रप्रतेक्यो तक्किमिवराद निर्देश्यो छक्ति शक्ष्यात्कस्मी खिल्का छ्यागिद्धिया हिर्पाक्षेत्र प्रमिति छ्या हिर्पाक्षेत्र प्रमित्र हिर्पाक्षेत्र प्रमित्र हिर्पाक्षेत्र प्रमित्र हिर्पाक्षेत्र प्रमित्र हिर्पाक्षेत्र हिर्पाक्षेत्य हिर्पाक्षेत्र हिर्पाक्य

# งเดิดตากสัตว์ ภูกตายเพราะ วันการการอาดังทุ้งก็เพราะ แบบการตามสำนักการตามสามานสามานการตากหน้า การการการการการกา การตามการการการตามสำนักเกิดการการการการการการการการใช**่งโดกจะสุดทุ้**นได้การใช้สุดที่วิชา เพลิสเสอกราชการการการที่ การการการก

श्रीकृष्णोभगवान्येषांपांडवानांक्षानभक्तिविरक्त्यादिगुणगणैदीत्यादीवृतः तेषांपांडवियानांपण्डवंशोद्धवानांवः एतदात्तानामभयंकरंब चः युक्तमुचितमित्यन्वयः ॥ १७ ॥

हेपुरुषर्षम् । यतोजीवानांकलेशबीजानिस्युर्वयं तपुरुषमयमेवेतिनजानीमः अनेकशोकबीजप्रतिपादकवेदवाक्यविमाहिताः ॥ १८॥

वाक्यमेदमेवाद केचिदित्यादिना केचिद्रकर्णविकल्पसमृहोपेतंवचोयेषांतेत्योक्ताः संदिग्धवचसङ्त्यर्थः आत्मनः स्वस्यक्छेशबीज मात्मानस्वयमेवाहुः केचित्सांख्याआत्मानमतः करणातत्कारणमाहुः वैकल्यवचसः प्रकृतिपुरुषयोविवेकाग्रहवचनापकेसम्यक्षानिनः देवंस्वदेवप्रधानंहरिक्छेशबीजमाहुः "सर्वेनिमेषाजिक्षरेविद्य<u>तः पुरुषा"दितिश्</u>चतेः स्वशब्दवाच्याद्विष्णोभीवः यस्यसः स्वभावः ॥ १९ ॥

अनंतत्वात्सर्वातमना ऽप्रतक्योत्तर्काविषयादिनिर्वाच्यात्प्रधानात्क्छेशपरंपरात्सेषांजीवानांप्रकृत्यापिहित्वादितिकेष्वपिनिश्चयः अथ बाऽ प्रतक्योत्प्रकृषेगातकोयोग्यात्सत्त्वेनासत्त्वेनवानिर्वस्तिभावस्थात् भावस्त्रप्रक्षोनादितिकेषुमायावादिषुनिश्चयः भोराजश्रेष्ठ ! एषुपक्षेष्वतु ' कपुश्चतिस्त्रत्यतुक्छंविस्त्रास्ववुद्धवाछोच्यानिश्चिन्वित् ॥ २० ॥

# i un entro qua dell'ung f**erm**e della colorio della partici della della della della della della della qua esta colorio della della

तत्र साक्षाद्धिसाकनृगतः प्रश्नोऽयमिति श्वात्वापि सूचकता न युक्तिति तस्यापि गौशात्वं मत्वा तत्प्रयोजककनृगतत्वेन सिद्धान्त-यक्षप्यनिद्धारितमिवाह न वयमिति त्रिभिः। वयमीश्वरवादिनो ये च वाक्यभेदविमोहितास्ते सन्वेऽपि तं पुरुषमीश्वरं न यिजानीमः सन्वीयोचरत्वाव ॥ १८ ॥

वाक्यभेदिवमोहितान्: गंगायति, केविद्यक्त । पते संब्वे विद्यका प्रव श्राद्याः । वेदवाक्यस्यव प्रामाग्रकातः । परे कर्मोति । अपरे

स्त्रामीश्वरवादित्वं निश्चयेन दर्शयति अप्रतक्योदिति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

# The state of the s

यद्यप्यसनुभयक्षपः तथाप्यभिमानात्तथाभातिथतीतभुषः कंत्रिद्धार्यभिषाधेगाउत्तरंवक्तंप्रथमप्रोत्साहयति भगवदीयत्वकानाय एतक इतिपतत्परदुः बहुरीकरगापरमञ्चणञ्चाभवतामुचितमेवआत्तीनामभययस्मात्ताहर्शवचः यद्यपिरदंवचनमभिमानसूचकंभवति तथापि परदुः बनिवारगार्थमुक्तेनतुस्वोत्कवेष्यापनार्थकतिस्त्वयुक्तेवितभावः निह्यन्यपीड्याकतः पदार्थोधमीभवति आर्त्तिनवारगारूपंमगवदीर्थं धर्मपुरम्कत्यभगवान्वदीजातः ताद्वराः गुगाः भवत्यसहस्रद्धाः येः कृत्यापरमानन्दः साक्षात्पुरुषार्थः सर्वप्रमागार्थः अनेनम्रातत्वमप्याक्षिप्तमतो द्रश्यक्तविद्वरिक्षविद्यक्तव्यतिभावः ॥ १७॥

इतिमगववत्परत्वमुपदिश्यभ्रमेनुश्ममुपदिश्वित्तवयमिति सयमर्थेः प्रतेत्रयोऽपियदा शहरवैक्तेनेवहताः कितुसलादिभिः खलित्स्या हेहिअमीपादोपजीवकाः खर्यनिवर्त्तमानाः धर्मस्यैकैकम्पादमाद्रयिवज्ञेते हाप्रतेत्रप्रते प्रतेत्रयोज्ञातः प्रमाणानाहेराश्यात् अतिनिर्णायक प्रमाणामावाववस्तुतः केनाप्यक्रतत्वातकालेनसगवतावाकृतत्वात तादश्क्षमात्रधं क्रियतः प्रतेनदिकालेवाभगवितवाभयं कित्ति कर्षुश्चः तस्मावप्रमाणावीभवित्वाभयं क्रियत्व कर्षुश्चः तस्मावप्रमाणावीभवित्व प्रतेत्रयाप्रकारण्यता स्वाद्रप्रमाणावीभवित्व कर्षुश्चः तस्मावप्रमाणावीभवित्व कर्षुश्चः तस्मावप्रमाणावीभवित्व कर्षुश्चः तस्मावप्रमाणावीभवित्व हित्रयाप्रकारण्यता व्यवस्त्र क्षेत्रयाप्रकारण्यत्व कर्णावाद्व कर्णाव्य कर्णावाद्व कर्णावाद्व कर्णावाद्व कर्णावाद्व कर्णाव्य कर्णावाद्व कर्णाव्य कर्ण

# सुवोधिनी ।

तथापिनतथोर्नियामकत्वंसम्मवति अन्यत्वात् साधारग्रात्वाधतस्मात्कर्मसहितःपुरुषः क्लेश्चीज्ञहेतुः अन्येपुनः कालमेवहेतुत्वंनमन्ये तेद्वारत्वेनस्यावं सिहमकृत्यादीन् प्रेरयितस्यमावेनपरिग्रामंतेस्यमावदिवप्रेरयंति सुखंदुःस्विमित कालक्षपस्य भगवतोवाध्यास्यप्रपि पुरुषोत्तमप्रवसःतथापिसर्वरूपत्वत् तस्मन्यकरग्रोकालक्ष्पं स्थापितवानिति तद्वाध्यानन्तव्र्रेषत्वं "सकालेयद्वाग्नेश्वाद्याप्रविद्याप्रवाद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्याप्रविद्यामावात् वेषम्यनेष्ट्रंग्येप्रसञ्ज्येयातं कालात्मनोश्चविव्यामावात् वेषम्यनेष्ट्रंग्येप्रसञ्ज्येयातं कालात्मनोश्चविव्यामावात् स्थाप्रतित्वस्यस्ति वर्षाप्रवाद्याप्रविद्यामावात् सेष्ट्रं त्याप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्याम्यविद्याप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्यामावात् स्थाप्रविद्याम्यविद्याम्यविद्याम्यविद्याम्यविद्याप्रविद्याम्यविद्याम

# श्रीतिश्वनाथज्ञकवर्त्तीः।

येषां गुगानगौरिति प्रेमात्मकेरित्यर्थः । कृष्णस्य प्रेमैकवश्यत्वात् तस्याजीनस्य पौत्रत्वं तन्तुल्य एव तवापि गुगारथीन एव कृष्णी वर्षतक्ति त्ववशक्यं किमपि नास्तीति भावः ॥ १७ ॥

किश्च यतः पुरुषात् क्लेशवीजानि स्युस्तं पुरुषं वयं न जानीमः। नतु कथमेवमपलपिस त्वतक्लेशवायी पुरुषोऽयं मया इदयत प्व। सत्यमसी मम क्लेशवः किन्तु मम क्लेशस्य वीजं किचिदवर्षयं भविष्यति। यतोऽयं ममेव क्लेशदोनान्यस्य। अतः क्लेशवीजं यतो भवति तं पुरुषं न जानीम इत्यर्थः। नतु शास्त्रक्षा यूयं कयं न जानीय सत्यम्। वहुशास्त्रक्षानमेव तदनिर्कारे कारणस् इत्याहः॥ वादिन वाक्यभेदैविमोहिता इति ॥ १८॥

वाक्यमेदानेवाह । केचिद्रिकल्प मेदं वसते आच्छादयन्ति ये यागिनस्ते आत्मानमेवात्मनः प्रभु सुखेदुः खप्रदम् आहुः । यदुक्तम्— आत्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव द्यात्मेव रिपुरात्मनः इति । यद्रा केचिद्रिकल्पं जीवेश्वरादिभेदं चसते आच्छादयन्तीति तथाभूता भवन्तीत्यन्वयः । अत्रार्थे अद्वेतवादिनस्ते हि सुखदुः खादेरात्माज्ञानिवज्ञाम्भतस्य द्वेतस्य मिथ्यात्वात् न कोऽपि सुखदुः खप्रदो भवतीत्याद्वः । केचिक्च्यतार्किका आत्मनः सुखदुः खवीजम् आत्मानमेवाद्वः । एवं ते वदन्ति न तावद्दवतानां प्रभुत्वं कम्मोधीनत्वात्र च कम्मेगः खादीन् नत्वादतः खयमेव प्रभुतं चान्यः कश्चिदिति । अन्ये देवजा देवं प्रहादिक्षां देवताम् । पर मीमासकाः कम्मे । अपर लोकायतिकाः स्वभावम् ॥ १९ ॥

# सिक्रांतप्रदीपः।

A CONTROL OF THE PROPERTY OF T

वृषोराज्ञायत्पृष्टकोऽत्रुख्य तजपादानितितदुत्तरतद्वचोमिनम्दनपूर्वकमाह चतुर्मिः पागडवेयानापागडुवंद्यानीमवताम् आर्जानासमययस्मा तद्वचोयुक्तंयोग्यमेव आदिनासाक्षात्वादादश्रहगामः॥ १७॥

हेपुरुषर्थम । यतः प्राणिनांक्लेशबीजानितुःखनिदानानिक्युक्तं पुरुषंत्रयंतीयजानीमः यतोबाक्यभेदेनीनावाक्यीर्विमोहिताः॥ १८॥ "कालःखमाबोनियतिर्यहक्तामृतानियोजिः पुरुषद्दतिचिन्त्य"मिति वेदान्तवाक्यमुपहृद्दयन्तानेववाक्यभेदान् दृरीयतिकेचिदिति श्रुतौ ताबितिकारणमितिकारणमुपन्नस्यवद्पक्षाः कृशिताःपञ्चमूर्वपक्षत्वेवहेयतयेकः सिकान्तत्वेनोपादेयतया तथादि कालायोनिःकारणमिति एवं धर्मे प्रवदित स सम्राड्द्रिजसत्तम !।

चेतसो वचसश्चापि भूतानामिति निश्चयः ॥ २३ ॥ तपः शौचं दया सत्यमिति पादाः कते कताः । त्रायम्मीशैखयो भद्राः समयसङ्गमदैस्तव ॥ २४ ॥

# 

देवहाः स्वमावः प्रकृतेः परिगामस्वमावीयोनिरित्यवद्वातमकप्रधानपरिगामवादिनः सांख्याः नियतियोनिरितिकमेवादिनोभीमांसकाः यह स्वायानिरित्यमियमवादिनवाहिताः भूतानियोनिरितिलोकायिकाः सिद्धांतपक्षमाह पुरुषोऽचिन्त्यानितर्शिकः परव्रद्वादिशव्दामध्यः परमात्मेवजगयोनिरितिवेदांतिनहित अत्रतुक्ते राप्रदेपुरुषमुपकम्यतेपक्षाउच्यन्ते तत्रसिद्धान्तपक्षप्रयममाह किचिद्धिकलपं वदानाः विकलपं नानाकारमावादः "तेहनानास्तिकिचनमृत्योः समृत्युमापनोतियहहनानेवपद्य" तीत्यवेवस्ततेशाच्छादयन्ति वेवद्यान्ति विकलपं नानाकारम् सात्र्यप्रदेश्य आत्मानंतत्पदार्थम् सुवद्यान्ति समृत्युमाद्धः तथाचश्चित्रविवद्याच्याच्याक्षम् कारम् विकलपं व्याप्यासाद्धः वथाचश्चित्रविवद्याच्याच्याच्याक्षम् व्याप्यानेविवद्याच्याच्यान्ति प्रयाप्यानसाद्धः कर्मकारयितित्यमेश्योलोकस्याच्याक्षम् अवद्यात्मकप्रधानस्य कर्मकारयितित्यमेश्योलोकस्याद्धः विकलप्रधानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानस्य स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानं स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानस्य स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानस्य स्वाप्यानस्य परिगामित्वक्षपं स्वाप्यानस्य स्वाप्य स

हिन्दिकार स्थापन्न स्थापन स्यापन स्थापन स्यापन स्थापन स्य

## भाषाटीका ।

मानिका ने योग्ये निर्देश करने योग्य ने होने से किसी में निर्यय नहीं होता है है राजवें ! इस में जो युक्त होयें सी अपने बुद्धि से विनार करों । इस में जो युक्त होयें सी अपने बुद्धि से विनार करों । इस मानिका कार्यात कार्यात कार्यात कराव कार्यात कार्

### ক্ষাকুৰ্ব বিভাগ বিভাগ বিভাগ কৰিবলৈ ক্ষাৰ্থ কৰিছে বিভাগ বাহু হৈ প্ৰ**াম্য কৰিবলৈ নি**ৰ্মাণ কৰিবলৈ কৰিবলৈ কৰিবলৈ কৰিব

विखेदः गतमोहः। पर्य्येचष्ट प्रत्यमाषत ज्ञातवानिति वा॥ २१॥

अनिद्धीरितमित ब्रुवन घातकं जानश्रपि न स्चयत् इत्येवं रूपं धर्मी ब्रवीचि अती धरमीऽसि । स्चने को दोष इत्यत आह यदिति। स्थानं नरकादि ॥ २२ ॥

यश्ची अञ्चानाद्वयकथनं सम्भवतीत्याह अथवेति । देवस्य मायाया गतिः वध्यवतिकलक्ष्या वृत्तिः मूतानां चेतसो वचसश्च सगीचिन् रा सुक्षेया न भवतीति निश्चयः ॥ २३॥

कार्यम्मीऽसाविति शास्त्रा तस्य पादानुवादेन व्यवस्थामाद्य तप्यक्ति द्वाप्रयाम् । अधम्मपादैस्तवत्रयः पादाक्षिभिरंशैभेगाः । स्मयो विस्मयः ॥२४ ॥

## The first course that the first section is the

अधरमंपादैरिति । त्रिमिरंशैः स्मयसङ्गमदलक्षगौः अधरमंपादैस्तव त्रयः पादा मग्नाः तपोलक्षगौकः शौचलक्षगौको द्यारमकैकश्चेति स्व पाद्वत्रयो बिनष्टा इत्यथः । तपः शौचं द्या सत्यमिति चतुर्गो धर्मपादानां कलौ चतुर्गचतुर्गाशमात्रत्वेन अवस्थानाईत्वेऽपि ताः [१३२]

# in the later of the parties of the p

स्वानी वक्षस्थाणि भृतानतीसीन विश्वयः ॥ २२ ॥ नाः तीर्थं द्या स्राम्धितिकिताः लोग कताः ।

इत्थंघर्मेप्रवदतिमातिहेद्विजसत्त्वमार्धसम्बद्धस्योमंः प्रतिक्षिक्षित्रत्यं समाहितेन्स्नृत्यास्याभिप्रायंप्रत्यचष्टचक्षिङ्दर्शनेऽपिव तेतेरष्ट्वालोच्यनिर्गातवानित्यर्थः ॥ २१ ॥

निणातिमेवतदिभिषायंप्रत्याहभ्रमीमित्यादिभिः षड्भिः तत्रवंश्वतिज्ञांविषुरुषेसंनिहितेऽपियदुक्तंवश्चावीज्ञानियतः स्युस्तंपुरुषंनजानीम् इतितत्रतद्भिष्ययं निर्णातिमाहभ्रमीमिति हेथ्रमेश्च । साक्षात्वंद्भषद्भप्रभ्रमेग्वतिक्षित्र अत्यवापद्यपिपुरुषंतनिक्जादीमहतिथ्रमेम् वर्षाद्भिष्यप्रमे कारिणिपुरुषंसनिहितेयुद्धमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रकेष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रपिष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमेन्द्रमेन्द्रविष्ठमेन्द्रमे

मग्रास्थ्य मिर्मिक्र क्षेत्रमणित्रये कित्रये केतदिभयायमा है अथवेतिदेवमायाया है श्वरूपसङ्गर वस्यः "मायावयुनेङ्गानम्" इतिङ्गानपर्यो यो प्रमासाद्याद्य है श्वरूपसङ्गर विषय स्वाद्य केति कित्रयो माद्याद्य कित्रयो माद्याद्य केति कित्रयो माद्याद्य केति कित्रयो माद्याद्य केति कित्रयो कित्रय कित्रयो कि

धर्मोऽसीत्यनेनत्वस्याद्धमाध्यदेवतापेवत्यक्तं यत्पवसत्पवत्वपादाश्चिपन्तीकिकवृषसपादसाजातीयश्चिपतिविद्याद्धमाध्यम क्रिकान्त्रविद्याद्वीत्र्यस्यत्वपादास्तपं विद्याद्वयस्यत्वारः प्रकातिकाः तत्रत्रयःपादाः अधिस्याद्वीत्र्यस्यत्वपादास्तपं विद्याद्वयस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्र्यस्य विद्याद्वात्रस्य स्वत्यात्रस्य विद्याद्वात्रस्य स्वत्यात्रस्य स्वत्य प्रति स्वत्य स्वत्य

1.00 30 10 110

धूमें प्रवेशवद्दित्तात्ते समझाद्दसमाहिते नएका स्राम्यात्र लाहित क्षेत्र स्वार्धिक क्षेत्र क्ष

किम्बनीदितित्र विश्वमिति हे भ्रमेशि । भ्रमेशनी बियरमा तरमात्सधमें ऽसि नव्यः अपितु अश्वजनमोहनायवृषक पंथत्से यह कमात्मके प्य कर्तार निविज्ञानी महतित्र विश्व संत्कृतमध्यमेतुवदन् भ्रमेमेवा ज्यादितिव चनाद स्यवृष्ठ स्यात्मवैक प्यक्तित्वात्म् चने वद्येषा भावे ऽपि स्व चर्माः कृतः सिद्धिने स्वाच्यः कथ् चने "तिवाक्यात्सज्ञते व्यभक्तो थत्स्था वंतरकादिलक्षणां तत्स्य वक्षस्यापित्रस्था ने भवेदि विश्वापना स्वया अस्य वैक्षण्यकतान शापित हत्यता धर्मविवित्यर्थः ॥ २२ ॥

िक्षतः मलेकार्वाजाति राजविजानीमदार्ज्वद्वः समाभिसंधिरयंवे तिवक्तीत्याहः सम्बोहिमाद्यान्। गोचरापिनूनंपायेमा भूतीनोचनसंग्यस्य अविवमायायाः सर्वजीवानांमुख्यामुख्यकलेशवीजस्यदंवस्यहरेरिच्छायागतिस्थितिर्धमेगाधर्मद्योचामीत्यादिकामगोचरेतिसायायिनुसर्वकेनी अवतानविज्ञानीमदत्युक्तमितिसावः अभिमायनिश्चयद्वति ॥ २३ ॥

तवतप्रशादिचत्वारः येपादाः छतयुगेकृताः पूर्गाअवर्तततेषांमध्येषुयः पादास्तपः शौचदयाख्याः अधर्मागैरधमेषादेस्मयसंगमेदभैकाः स्मयनतप्रोभगः स्त्रीसंगेनशौचम्रंगः मद्देनदयाभगः॥ २४॥

The state of the s

# ा :हाइक्टिनिड**ि म्सम्बर्भन्ड**का ! क्रेक्स्स निवास

नतु यत्र कुत्रचिद्धम्मे विशेषत् कुन्द्रचेश्वम्मेरक्षायाः प्रमागितिकतस्य यथार्थवान्त्रमेन युक्ति क्रिया च वयमीश्वरवादिनोऽपि तं न विज्ञानीम इति क्यमुक्तवन्तस्तत्राह अथवेति । तस्माद्युना देवमायाकृते कलेः प्रभावे तेवाप्ययं संशयो युक्त इतिभावः । देवपदं त्वत्र तथापि द्योतमानत्वात्तस्य मायादोषास्पृष्टत्वनिगमनार्थे कृतम् ॥ २३ ॥ ११० ॥ १३ ॥ ११० ।

माया च धर्माधर्मलक्ष्यां क्रिक्किति सिमुद्रितीं मर्चदाः जीवानी क्रम्मिविशेषमनुमृत्य तत्त्वद्युगे तत्तत् प्रवर्त्तयतीति तस्याश्च न वैषम्यमित्याह तप इति द्वाप्रयाम् । समयो गर्च्यः । गर्वद्वारा तपोनाशकत्वेनेति वस्यमाण्यदीकासङ्गतेः । सङ्गः स्त्रीभिः । मदस्तु पाना-दिजः । अभ्यर्थित इत्यत्र वस्यमाण्यतत्त्त्तेसङ्गतेरव । अधर्माशैः समयाद्यशस्त्रेः । त्रय इति त्रयस्त्रयोऽशः भग्नाः । ततश्चतुर्थचतुर्थाशैरेक-पव पादोऽवशिष्यते । तथ्न च सत्यम्यविद्याक्षित्विष्यते इत्यर्थः ॥ २४ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २०॥

ा अपन्य कार्या केंद्र के विकास के प्रकार के किन्द्र की किन्द्र की किन्द्र की किन्द्र की किन्द्र की किन्द्र की कि

# श ने । विकास स्वीधिन कि विकास कार्या

एवंधर्मवाक्यंश्रुत्वावाच्यवचनकर्तृनिर्धारंकृतवानित्याह्यवसितिः नहिश्वर्मेद्यतिरेकेगान्यः एवंवक्तुंशक्तः सचसम्राद् विचारकः हेद्विज्ञचन्त्रमिति सम्बंध्यनंस्कृतिस्कृति सम्बंध्यनंस्कृति सम्बंध्यनं सम्बद्धारं तस्यैविचार्यत्यः व्यवहाराजसारेग्रापृष्टेयद्यमन्यथोत्तरयति अस्मत्परीक्षार्थपरे स्वाक्ष्यनेस्वर्वा व्यवस्थिति विचित्र प्रतिविचार्यः पक्षविचारायचित्रते त्र प्रतिविचार्यः विचित्र विचित्र प्रतिविचार्यः पक्षविचार्यचित्र त्र प्रतिविचार्यः विचित्र विचित्र प्रतिविचार्यः विचार्यः विचारः विचार्यः विचारः विचारः विचार्यः विचा

पूर्वव्यवस्थायाः श्रुतत्वात् युगनिरूपग्राप्रस्तावे अतःस्वप्नयोज्ञनस्वात् स्वाचिवार्यनिर्धारितत्वात् तमर्थपर्यचण्टइतितमेवाह धर्मे व्रवीषीति त्वंतुधर्मःधर्मत्वात् नहिअन्योऽन्यस्वरूपंजानासीतिहेतोः स्वरूपसिद्धिमाद्यव्यथर्धधर्मकः धर्मवक्तृत्वादिति किंच वृषद्भपष्ट्रस् अलैकिकेवाधर्मस्यवृषद्भित्तं धर्मकथ प्रत्वसमर्थापतत् स्वर्धमेक्तं स्वर्धमित्रस्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्यास्वर्यास्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्धमेक्तं स्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यस्वर्यास्वर्यास्वर्यास्वर्यास

मन्त्रयुक्तोयंनिर्धारः वाक्यानां सार्धपरित्यागात् इदानीतनमीमां सकवत् तस्मात्वाक्यार्थेपुरस्कृत्यविद्यार्थीयमित्याका सार्वाक्यक्ति विद्यार्थित विद्याय्या विद्यार्

प्रचित्रां प्रयोग्यवीयक्तिरयामिति जित्रयनिश्चिः त्यात् उर्ज्ञ क्ष्मि प्रयोग्या विकार विद्या प्रयोग्या प्रयोग्य प्रयोग्या प्रयोग्या प्रयोग्य प्रयोग प्रयोग्य प्रयोग्य प्रयोग्य प्रयोग प्रयोग्य प्रयोग प

# भाग क्षेत्रकार के जिल्ला के जिल्ला

समाहितन लेक्समाधानेन मनसा पर्येवष्ट प्रत्यकाषत ॥ २१ ॥ अयं मां निरपराधमपि ताड्यतीति मयि राजनि वक्तमर्हेश्वपि पृष्टोऽपि यस व्रवीसि तसमी वदीषि । यतोऽध्रमेकार्तुर्थेस स्थापी सुचकस्यापि तत् कि पुनरभिधायकस्य अवस्ति साक्षाद्धरमे एव मयानुमितः ॥ २२ ॥

स्वार्याः । त्वया सर्वमुक्तमेवेत्यर्थः । देवमायेत्यादिना अप्रतक्यादिति तकुक्तमनुमीदितम् ॥ देवस्य सगवतो मायायाः सर्वजनात् वालनसंहारकारिगया गतिः भूतानां चेतसोऽगोचरेति अप्रतक्येत्यर्थः । वचसोऽगोचरा इति आवेदेवयत्यर्थः । मायायास्तव्यक्तित्वादः स पालनसंहारकारिगया गतिः भूतानां चेतसोऽगोचरेति अप्रतक्येत्यर्थः । वचसोऽगोधरा इति आवेदेवयत्यर्थः । मायायास्तव्यक्तित्वादः स पालनसंहारलक्ष्यो सुखदुः खे भृतेश्यः कथं ददातीति बातुं वक्षुश्च कः शक्नोतीत्यर्थः ॥ २३॥ देवः पालनसंहारलक्ष्यो सुखदुः खे भृतेश्यः कथं ददातीति बातुं वक्षुश्च कः शक्नोतीत्यर्थः ॥ २३॥

# इदानीं धर्मा ! पादस्ते सत्यं निर्वेत्तेययतः ।

क ते चेटाने के कार्यात्मक का कार्यातं विषयुत्तत्यधममें **ऽयमनृतेनैधितः किलिश्यि २५**भीकार्यने किल्लाके किल्लाक स्व क्षाता वर्ष मानवा मानवा करण है। जा कार्य के कार्य इयश्च भूभगवता न्यासितोरूभूम, सती वर्षा कार्याक्षण के कार्य के भूभगवता न्यासितोरूभूम, सती वर्षा कार्याक्षण कार्यक कार्याक्षण के कार्याक्षण कार्याक्षण के कार्याक्षण

क इराहरण विकेष्टरेगाव हरणक मं**श्रीमाद्रिस्तत्पदन्यांसेः सर्वतः कृतकीतुका ॥५२६॥** करावन्यांमहरू क प्रांक भाग के पात्र । प्राप्त के प्राप्

त्र्यब्रह्मस्या नृपद्यां जाः शृद्राः भोक्ष्यन्ति मामिति ॥ २७ ॥ 💖 🕬 🕬

इति धर्म महींचैव सांत्वयित्वा महारथः।

निशात माददे खड्गं कलयेऽधर्महेतवे ॥ २८॥

अहन्त त्वया अकथितमपि तव भद्राभद्रं सर्व जानाम्येव तत् शृशिवत्याह तप इति द्वाश्याम । अधमस्य अंशः पादैः समयाविभिः। स्मयो मर्तः । संगः स्त्रोभिः । मद्दो मञ्जूपानजः । उपलक्ष्यामति स्त्यादरिष । ततः सत्यादिनाशकत्वं श्रेयम ॥ २४ ॥

# स्वीत्रान् स्थाप्याः व्यापित्राच्यातः वर्णान् स्थापन्ति । स्थापन्ति । स्थापन्ति । स्थापन्ति स्थापन्ति । स्थापन

ववीषीं संतुषंतावर्षणाय विश्वार्थाः वस्त लवं वातान्ति वैताः देशार्थाः अयेषव्यः अयेषम् वर्षावितः विवा त्रुपर पञ्च 

स्देवताह्मपोऽसिस्चनेदोषमाहः अधर्मकृतोऽधर्मकृतिस्यात्यवहकृतिस्यात्त्वस्यापिसवेवता न्दर्मा न्दर्मा । राष्ट्रपोर्णकृता क्षा अध्यवितिदेवस्यविष्णोर्मायायाः प्रकृतिर्गतिः वित्सोवचसञ्चागोचराः अविषयाविष्णुमायामोहिताः सर्वेसर्वनजाननीतिभाषः तथाक महाभारते सर्वेसर्वनजानंतिसर्वज्ञोनास्तिकश्चने "ति वैश्णवे "ब्रह्माद्याः सक्लादवामनुष्याः पश्चनस्तथा विष्णुमायामहावर्तमा हार्यतमस्विद्या इतियद्वा भगवदि च्छयाप्यकथनं संभवतीत्याह अथवेतितस्यभगवतः वयुनात्मिकायाः गतिः प्रवृत्तिः सर्वेद्यानामिकित्वत्मोहहेत् भतास्य स्वि षुकेषु सर्वे हो पुक्तिस्म कार्रे प्रतिस्तानां जनानां गोच रात्राह्यान सवतीतिनिश्चये त्रिगुगादिमकयामाययास्वजगद्धताञ्चीमामिदिवाः

भगवदीयानांतुकचिनमोहश्चेत्रभगवदिरुक्टेवकारणामितिभावः॥ २३॥ भगवदीयानांतुकचिनमोहश्चेत्रभगवदिरुक्टेवकारणामितिभावः॥ २३॥ १९४१ । १९४१ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | १९४४ | भगवदीयानांतुक चिन्मोहश्चेत्त्रभगवदिन्छेवकार्गामितिभावः॥ २३॥ क्षांसचेकाः अत्र एत एकः यसए एवस्तियम् १० हेत्रस्य वितासिक्ष्यक्षितं सम्बन्धान्यस्थान्यस्थ हेदः स्थातभूतिः चर्तोषस

कार मानिक स्वास्त्र के किया स्वास्त्र के किया है के बोळनेपर वह राजा एकात्र चित्र होकर हित होकर सुका है स्वास्त्र के स्वास

भागपा करा है। अपने के प्रमुख ! आप धर्म कथन करते हो सो धर्म ही हो अधर्म करनेवाले को जो नरकादि स्थान होता है सोई स्थानसुचक पुरुष को भी होता है ॥ २२ ॥

अथवा परमेश्वर की माया की गति भूतों के चित्त के तथा बचन के अगोचर है यह बात निश्चित है ॥ २३॥ आपके सत्ययुग में तपः शीच दया सत्य यह चार पाद किये थे अब अधर्म के गर्ब आसक्ति मद इन तीनों पादों से तीनों पाद द्रह गये हैं ॥ २४ ॥

# ्श्रीघरस्वामी ।

इदानीं कली हे धर्म ! ते पादश्चतुर्धीशः । तत्रापि सत्यमेवास्ति । युतः सत्याद्भवान् आत्मानं निर्वर्त्तयेत् कर्थचिद्धारयेत् । यद्वा पुरुषस्त्वां साधयेत् । तमपि पादम् अनृतेन सम्वर्द्धितः कलिरूपोऽयमधर्मो ग्रहीतुमिच्छति । तत्रेयं स्थितिः कृतयुगे प्रथमं सम्पूर्णचतु-ध्याद्धर्मः। त्रेतायां चतुर्गामपि मध्ये समयेन तपः सङ्गेन शीचं मदेन।दया अनृतेन सत्यमिखेर्व चतुर्णीशोहीयते। द्वापरे त्यर्द्धम्। कठौ चंत्रधीशोऽवशिष्यते सीऽप्यन्ते नस्यतीति॥ २५॥

न्यासितः अन्योग्यद्वारेगावतारित उद्दर्भारो यस्याः। कृतं कीतुकं मङ्गर्छं यस्याः॥ २६ ॥ अश्रुति। कलयाति मुंचतीत्यश्रुकला । तेत त्यका सती श्रुद्धा भोध्यन्ति मामिति शोचिति । २०॥ क्र किशात निशितम्। अधमेस्य हेर्तुसः क्रिकः तं हन्तुमित्यर्थः॥ २८॥ हेर्नाः वर्षः nederland to the second the body the state of the second to the second t

的自己可以出版的主持,經濟學

तेन भगवता इत्यर्थः ॥ २७—३७ ॥

े १, अस्ति प्रमित्रीचीरराधवः । िर्देशास्त्र के लिए

अथवृषलंति चिति चिति चति दिवत्या है। इदानी मिति हे धर्म । यन्तवतुरी येपादं सत्यम् यद्यती निवर्णयेत् यस्मा देतो निष्पायेत्ति मदानी मनुते नैधितः प्रवृत्तो ऽयमधर्म रूपः कलिर्जि दृक्षाति प्रहित् प्रवादी नोक्षेत्र महानुतानां भावाः सन्त्यपिहितप्रवादी निवर्णयादि भिने व्याज्यन्ते ॥ १५॥

अथगांतत्वकेरोहेतुंचिनिश्चित्याहर्यमितिद्वाभ्याम्रद्यंगीः सीक्षाद्भः पृथ्वीभगवताश्रीकृष्णीनन्यासितोपनीतः उरुभरोयस्यास्तथाभूता श्रीमद्भिरन्जादिविग्रहेः श्रीः शोभाग्नेषामस्तीतितैस्तस्यभगवतः पादन्यासैः सर्वत्रकृतंकोतुकमुत्सवोयस्याः साबभूव ॥ २६ ॥

इतीत्थंधमैमहिचसांत्वियत्वामहारथः परीक्षिदधर्महेतवेकलयेतद्वधार्थेनिशांततीक्ष्णांखद्गमादधेउद्भृतवान् ॥ २८ ॥

दीपनी।

इदानीमस्मिन्युगेयतोयेनपादेननिर्वतेसे हेधमे ! तेसपादः सत्यस्तयात्मकस्त्वविशिष्ठोऽनृतेनाधमेपादेनपिधतोविधतो ऽधमीत्मकः किछः वसत्याख्यंपादंजिघक्षतितंत्रहीतुमिच्छति ग्रसितुमाकांक्षतेदत्यन्वयः ॥ २५ ॥

सेयंसाध्वीअधुनातत्पद्न्यासैरुझ्झितादुर्भगेवभाग्यहीनास्त्रीवशोचंतीआश्वकलासंतत्स्नुतनेत्रजलघाराऽऽ स्तइत्यन्वयः हिस्त्रत्वाअब्रह्म ग्याब्राह्मग्राभक्तिरहितानृपव्याजाः श्रद्रामांभोश्यंतिपालकव्याजेनभुंजतंइति॥ २७॥

अवसे देवने अधिकारणाय नियानं ते जितं हेव मितिशेषः ॥ २८ ॥ हिन्दे विकास माना विकास विका

भी को कार्यकार के में कार्य के किया है। जो कार्य के किया कार्य के किया के किया

इतीति । नेनु जीवानामधर्म पव तत्तद्दाषद्देतुरिस्युक्तम् क्य किल हिन्यात् तत्राद्दा। अध्यास्य देतवे सहायायत्यथः । बस्यते च त्वमधर्मवन्धुरिति ॥ २८ । २९ । ३० ॥

सुवोधिनी ।

एवंधमेस्वरूपमुक्तवामूमिस्वरूपशानमाविःकरोति इयंचेतिचकारादातिरिक्तःक्षिःतस्यविशेषतःअनिरूपणंचकारेणशापितम् अस्यागुण अयंशोषत्रयम्द्रयंहिषदंशापूर्वमग्वतान्यासितः उत्तारितः उष्ट्रअधिकीमारोयस्याः भगवत्कृतोपकारत्वंगुणः ततः सतीमगवदेकनिष्ठामगवते अस्वांशैरलंकृताच तदाह श्रीमद्भिरिति न्यासःस्थापनं सर्वतःकृतं अनेनशृङ्गाररसत्वंचस्चितम् ॥ २६॥

दोषानाहशोचतीति भगवत्पित्यागेनशोकवुर्भगात्वम् अब्रह्मगयभोगेनपूर्वावस्थात्यागश्चअश्र्णाकलयतीत्यश्चकलास्वकृतदोषाभावार्थं माह साध्वीतिभाग्यनाशपवहेतुः तदाहवुर्भगति अधुनितित्यागनैकर्ट्यम्चितम् नतुराज्ञांभगवद्गपत्वात्भोगेकोदोषहितं तत्राह अव्रह्मगया इति भगवद्गग्वेष्ठपत्ति अब्रह्मग्वेतित्यागनैकर्ट्यम्चितम् नतुराज्ञांभगवद्गपत्वात्भोगेकोदोषहितं तत्राह अव्रह्मगया इति भगवद्गित्यम् अब्रह्मगयपदेनस्वितम् नृपत्ववक्तंयोगाभावात् ज्ञद्गाहितभगवद्विरोधिनः असुर्थः श्रद्धहितश्चतेः तेभोक्ष्यतीति श्रीकोरोदनं अनेनस्वरसाविभीवात् नतेषायोगः सेत्स्यतीतिभावः स्चितः ॥ २०॥

उपसंहरतीतीति चकारं कसमुच्यार्थः एवकारः कलिनिवेधार्थः महार्थहितिग्रहसामर्थ्ये कालस्यदेवतात्वात् तीक्ष्णाखद्गेनदिरहछेदी नयुक्तहत्याद्यंक्याह अधमेहेतवहतिअधमेकरणिनवृत्त्यर्थेचतुर्थीमदाकेश्योधूमहतिवत् अहदयतयागमनेनप्रयोजनं नवानिस्तारः ॥ २८॥

### श्रीविश्वनाथचक्रवत्ती।

इदानीं कली है धर्म ते पादश्चतुर्गोमेव तप-आदिपापानां समयादिभिभागत्रश्रवंसात् अवशिष्ठेश्चतुर्भेश्चतुर्थेश्चरेकः । स न प्राधा न्येन व्यपदेशा मवन्तीति न्यायेन सत्यम् । तप-आदिषु सत्यस्येव प्राधान्यात् । यतः सत्याञ्चवानात्मानं निवेत्तेयेत कर्याचिकारयेत् । यदा पुरुषस्त्वां साध्येत् । तदिप पादमनृतेन संवादितः कलिक्षोऽयमधर्भः ब्रहीतुमिन्छति । तत्रयं द्वादशस्कन्धरस्या स्थितः । कत्युगे तं जिघांसुमिभप्रेत्त्य विहाय नृपलांक्कनम् ।
तत्पादमूलं शिरसा समगाद्रयविहुलः ॥ २६ ॥
पतितं पादयोवीरः कृपया दीनवत्सलः ।
शरगयो नावधीच्छ्लोक्य त्र्याह चेदं हसन्निव ॥ ३० ॥
न ते गुड़ाकेशयशोधरागाां बद्धाजलेवी भयमस्ति किश्चित् ।
न वर्त्तितव्यं भवता कथंचन चेत्रे मदीये त्वमधर्मबन्धुः ॥ ३१ ॥
त्वां बर्त्तमानं नरदेवदेहेष्वनुप्रवृत्तोऽयमधर्मपूगः ।
लोभोऽनृतं चौर्यमनार्यमंहो ज्येष्ठा च माया कल्रहश्च दम्भः ॥ ३२ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

प्रथमं संपूर्णश्चतुष्पाद्धमः । त्रेतायां चतुर्णोमपि पादानां मध्ये स्मयेन तपः सङ्गेन शौचं मदेन दया अनृतेन सत्यमित्येवं चतुर्थोऽशोही यते । द्वापरे त्वर्द्धम् । कलै चतुर्थोऽशोऽत्रशिष्यते । सोऽप्यन्ते नंक्ष्यतीति ॥ २५ ॥

्रियासितः अवतारितः खेनान्यद्वारा च उरुर्भरो भारो यस्याः सा ॥ २६॥

अश्रुगि कलयति दधातीति ॥ २७ ॥

कल्ये किं इन्तुं खड़म् आददे इत्यत्र राज्ञोऽयमभिप्रायः—मत्पाणिस्यखड्डदर्शनेनायमपि नृपचिह्नधारी मया सार्खे इन्द्रशी योङ्क मायातु ततश्चेन शोधमेव इनिष्यामीति ॥ २८॥

# हुत्य के स्वतान है। यह स्वतान के स्व सुर्वेद के स्वतान के स

हेधर्म ! इदानींकलै।सत्यंतेपादोऽ स्तियतोमवानात्मानंनिर्वर्तयेद्धारयेत्तमपियधर्मोऽधर्महेतुरयक्तिः अनृतेनैधितोजिघृक्षाति प्रहीतु-मिच्छति ॥ २५ ॥

गोरूपधारिशा भूरियमिति ज्ञात्वातांत्रत्याह इयमितिहाज्याम इयंगोरूपधराभूः भगवताश्रीकृष्णेनन्यासितः अवतारित उरुर्भरोयस्याः साश्रीयुक्तैस्तत्पदन्यासैः सर्वत्रकृतंकोतुकमुत्सवोयस्याः सापूर्वमेवभूतापि ॥ २६ ॥

अधुनातुभगवतो ज्ञितात्यकाऽ तोश्रुगांकलाः विद्वोयस्याः सासाध्वीसदाचारादुर्भगेवात्रद्वायसम्बद्धाद्वाद्वाद्वाद्वाद जाः वृत्त्यर्थनृपवैश्वरार्थाः मामोक्ष्यतीतिशोचिति ॥ २७ ॥

अधर्महेतवइति निशातं निशितम् ॥ २८॥

# भाषाटीका ।

है धर्म । अब तुम्हारा एक सत्यपाद रहा है जिससे तुम अपना निवर्तन करते हो परंतु यह अनृत से वर्धित किलयुग क्या अधर्म उसे भी लेना चाहता है ॥ २५ ॥

यह भूमि है भगवान ते इसका सब भार दूर कर दिया था. और उनके श्रीमत्पदन्यासों से सर्वतः कृतकोतुका थी। अब दुर्भगाके समान उन्हों ने छोंड़ दी है अश्रु कला युक्त होकर विचारी यह शोचती है कि अबहायय नाम मात्र के राजा श्रद मुझे भोग करेंगे॥ २६। २७॥

शह मुझे भोग करेंगे॥ २६। २७॥
महारण राजा ने ऐसे धर्म और मही को शांत कर. अधर्म हेतु कलियुगको मारने को निशात (पैना) खड़म होता में
लेलिया राजामारना चाहता है यह जान कर किल, राज लांछन (चिन्ह—वेष) छोंड़कर भय से विहुल हो शिर से राजा
के चरणों में गिरपड़ा॥ २८। २९॥

# ...... श्रीधरखामी **।**

अभिप्रेत्य ज्ञात्वा ॥ २९ ॥.

शरगयः आश्रयहिः । श्रीक्यः सुकित्यहेः॥ ३०॥ गुड़किशोऽन्जीतः तस्य यशोधरा ये वयं तेषाम् । तान् प्रति वद्धोऽञ्जलियन तस्य तथ । किन्तु फण्ञान केनाप्यंशन न विचित्रव्यमः॥ यसमञ्जनभध्यमेस्य बन्धुः॥ ३१॥

रे किए क्यों में एक अधिकार सिकार की है। विक्र

#### श्रीघरस्वामी।

तदैवाह । राजदेहेषु वर्त्तमानं त्वामनु सब्वेतः । प्रवृत्तः । अनार्य्य दौजेन्यम् । अहः खधर्मस्यागः । ज्येष्ठा अलक्ष्मीः । माया कपटम् ॥ ३२॥

# श्रीवीरराघवः।

तंपरीक्षितंजिवांसुंहंतुमिच्छुममिप्रेत्यालस्यकालिः मृपलांकनानिकिरीटादीनिविद्यायापनीयभयेनाविद्वलगात्रः शिरसातस्यपरीक्षितः पादगो मुंलंसमगात्पपातत्यर्थः ॥ २९ ॥

पादयोः पतितंकिंवीरोदीनवत्सलः शर्णमर्दैः शर्गयः स्होक्यः प्रशस्तोराजाक्रपयानावधीन्नहृतवानुर्कितुहसान्निवेदंवस्यमाणमाह ३० तदेवाहनेत्यादिभिश्चतुर्भिः गुडाकेशयशोधाराणामज्जेनकीर्त्तिवर्द्धनानामस्माकंसन्निधावितिशेषः वद्धांजलेस्तेतविकिचिदीपभयंनास्ति अस्मदीयेक्षेत्रे कथंचनभवतानवर्तितव्यं कुतः यतस्त्वमधर्मस्यवंधुरजुवंधी ॥ ३१ ॥

तदेवप्रयंचयतित्वामितिनरदेवानांदेहेषुवर्त्तमानंत्वामनुसृत्यप्रवृत्तोभवत्ययमधर्मसमुदायःकोऽसावधर्मयूथइत्यन्नाहलोभइतिअनार्थशाहक मंहः पापंज्येष्ठाऽ लक्ष्मीः मायागुगाकार्थरागद्वेषादिकम्अपन्ह्वीवादंभोवचनम् ॥ ३२ ॥

# १९९४ में क्षेत्र १८९ वर्ष के लेक प्राप्त कर के अस्ति के **श्रीविजयस्वजः**।

जिर्घासं ते तुकामंपादम् लंसमगात् अष्टांगविशिष्टतयाऽ सीदिखन्वयः ॥ २९ ॥

स्ठोक्यः कीर्तिकामः॥ ३०॥

गुडाकेशयशोधारागामर्जनकीर्तिविभ्रतांकौरवागामस्माकमर्थवद्धोऽजलियेनस्तथोकस्तस्यगुडाकेशयशोधरागांसकाशान् भयेनास्ती तिवाकितुहेकलेत्वयामद्यिक्षेत्रेकथंचिदपिनवर्तितव्यमित्यन्वयः देहमारभ्यराष्ट्रपर्यतस्थानविवक्षयाक्षेत्रइत्युक्तम् कुतहतितत्राह् त्वमितिक अर्थयवर्वभ्रयस्यस्तरथोकः अधर्मवंभ्रत्वादितिभावः ॥ ३१ ॥

तत्रश्राकिमितितत्राह त्यामिति नरदेवानांधर्मपालकानांराह्यांदेहेषुवर्तमानंसिकधानंत्वामन्वनंतरम्थ्यंलोभाद्यधर्मयूथः प्रवृत्तोभवतीति वस्मान्तस्माद्धर्मवंधोहेकलेसत्येनधर्मेणचवर्तित्व्येव्रह्मावर्तिविधाती व्यक्तान्त्रसम्बद्धर्मवंधोहेकलेसत्येनधर्मेणचवर्तित्व्येव्रह्मावर्तिविधाती व्यक्तिक्षान्त्रसम्बद्धावर्तेत्व्यमित्यन्त्रयः लोभाध्यद्वति धाती लोभः परवित्ताभिलावः सद्वचयेप्राप्तेस्ववित्तापरित्यागोवा ज्येष्ठाश्रलक्ष्माः मार्यानिकृतिः यत्रयस्मिन्वह्मावर्तेस्वाच्यायादिक्रह्मयक्ष्मकपुरो हामादिद्वत्यलक्ष्मण्यवितानयक्ष्मययेषांतेव्रह्मवितानयक्षाः मुनयः यक्षेयेक्षेश्वरंयज्ञति ॥ ३२ । ३३ ॥

# क्रमसंदर्भः।

गुडाकेशस्य यद्यशस्तस्य रक्षांगुव्यत्रागामित्यर्थ ॥ ३१ । ३२ ॥

# सुवोधिनी।

धर्मवाक्यानांश्रवणान् तदर्थपर्यालोचनयाराजानि अभिमानादिः स्वकुदुम्बमस्तीतिज्ञात्वास्वनाशभयं परित्यज्यतच्छरगांगतइत्याहतं जिवांसुमिति राजचिन्हं छत्रादिलोकेश्राज्ञापनंत्यक्त्वेत्यर्थः पादमूलमिति स्वस्यराजशेषत्वंज्ञापितंशरणागतः भवत्सेवकइतिभयिबङ्गलङ्गति धर्मदचेत् प्ररयेत्तदामारियण्यतीति भयकापर्थ्यवाज्ञास्यतिचरणपातद्याजेनराजानमिष्टिच्छितितेनतस्याप्यग्रेदुर्बुद्धिरुत्पश्यते धर्मसानिष्या दियम्थेज्ञास्यतीतिभयम् ॥ २९॥

चरणापातानन्तरंयज्ञातंतदाह पतितमिति पादयोशितगितनाशः सूचितः शोऽपिवुद्धेरुपकारायभिविष्यति इहैवभगवत्सायुज्याद्वीर इतिस्वधमनाशः प्रकृतइतिविचारः धर्मसानिध्यात् द्यादिप्रवेशः धर्मसानिध्यात् अर्थातिष्यात् वदाह रूपयेतिइयंदयालीकिकीत्याह् दीन बत्सलइतिवरसंलातीतिपशुः दानविषयेनविचारः कृतइत्यर्थः पूर्वजकीतिरक्षार्थनास्यवुद्धिजीतास्वधमेपवजातितशरगयइत्युक्तंलोकाप वादभयादिपतदाह भ्लोक्यहति इदंवस्यमाणाम्आह च अनिष्टंतुन्द्यमिष्टंच प्रयक्तित्यर्थः हसिवविति मुखप्रसादः सर्वक्रशसम्बन्धी वाकलैः॥ ३०॥

कर्णदृष्ट्वाकालान्तरेमारियण्यतीतिशंकास्यवर्ततदृत्यनुमायतित्रवृत्यर्थमाद्दः नतेगुड्गकेशइति गुड्गकानिद्रातस्यार्दशोऽङ्कुनः अनेनसायो मोहाभावात्रत्वत्कतमस्माकंभयमिति स्वितं यशोधरागामिति यशोऽर्धमध्यधमनकरिष्यामिदातिभावः सत्यप्रतिकार्थवाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वाश्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्राक्षेत्रप्रवेत्वात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्यवात्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्यवेत्वत्रप्रवेत्वत्रप्रवेत्वत्यव

## **स्त्रुवोधिनी**ः

पारिपालनीयेत्याहः नवर्तितव्यमिर्तिकथंचनकेनाप्यंशेनतस्यज्ञम्बद्धीपराज्यमहप्रमिवनिकप्रयतिक्षेत्रामितिष्ठस्यन्ति स्थानंवाअतोयदेववीजंपित ष्याति तदेवोत्पत्स्यतइतित्वयानस्थातव्यंतत्रहेतुः अधर्मवंधुरितिवधर्मेनिवार्यदग्रहेवाअपकारंकरिष्यतीतिसूचितम् अतपवेदानीपाप्रियद्वता निराकरगोनिराकर्त्तुर्भयम् ॥ ३१ ॥

ननुराज्ञयतत्कार्ययत्रजाशिक्षां दग्रद्धअतोलाभहेतुंमांकुतोनिवार्यसीत्यतआह त्वांवर्त्तमानमिति यदिराजानस्त्यात्यकास्युस्त दातेषांलोभोभवेत तेषामप्यधर्मत्वेस्वरूपनाशःस्यात् किलाभेनस्वस्यापितथात्वेतदनुमोदनादलाभश्च अत्यवनरदेवदेहेषुवर्त्तमानंत्वामनु अधुमेसमुहोऽपिप्रविष्टः सचप्रत्यक्षोऽस्मास्वपिवर्त्तत इतिद्दमानिर्दिशतितमधर्भपूग्मेवगग्र्यति भवतस्यप्राग्राःलोभः परद्भव्याभिलाषः ततस्तित्तिस्वर्थमनृतं मिथ्यैवंत्वयैवकृतमितिवाच्यतापादनादिप्रतियागिनोवलत्वेचौर्यगुप्तत्यावित्तहर्ग्यदीर्वे व्येतुअनार्यप्रतप्वस्तिप्त्यापित्वादिष्ठतियागिनोवलत्वेचौर्यगुप्तत्यावित्तहर्ग्यदीर्वे व्येतुअनार्यप्रतप्वस्तिप्त्यापित्वादिष्ठत्याम् अधिवरुद्धशिलत्वात्तर्भम्यादनंचकारात्स्वस्यापि दिहरग्रम् आर्थविरुद्धशिलावात्रिमायातेतः कलहःपुनः विश्वासार्थदेभश्च चकारात्कलहादनंतरंगारग्रीवा ॥ ३२ ॥

# ्यार्थं वर्षात्रकारिक विकास के क्षेत्रकार का विकास का स्वास का स्वास के कार्य के कार्य के कार्य के कार्य के का में कुट का बेट के कार्य के सम्बन्ध का स्वास के कार्य का सम्बन्ध के किस का कार्य के कार्य के कार्य के कार्य के क

विहाय नृपलांछनमिति । तदा किलनाप्येवं विचारितमः अनेत सह योद्धं न मे शक्तिने च क्षत्रियस्य शरणापत्तिकचिता अतो नृपचिह्नं विहायैव पादयोरस्य पतामीति ॥ २९ ॥

नावधीत इलोक्य इति । राज्ञापि विचारितं—शर्गागतिष्ठि सन्तुमेनेहैं तदपि दुष्टमेवं यदि हन्मि तर्हि शरगागतवधाज्ञातमधर्मेन मालम्य मच्येवासी प्रवेक्ष्यति न मरिष्यतीति हसिवविति कोपानपगुमात् ईश्वरेगा ताहश्च एव विधिनिम्नतो यिज्ञधाँसीरपि मम इस्तात् त्वमद्य रक्षितोऽभूरिति मनोऽनुलापाद्य ॥ ३०॥

स्वकार्यं विचार्याह्—गुड़ाकेशोऽर्जुनस्तद्यशोधरामामसम्बग्नम् विद्याञ्चलेस्तव । किन्तु क्यचन केनायशीन न वितित्यं न रियम्॥ ३१॥

त्वत्प्रवृत्तो दोषान् श्रीषुत्याह—त्वामिति । नराणां देवानांच देहेष्विति । देवा अपि त्वदाकान्तदेहा लोगाधधमिमष्ठा मवन्ति कि पुनर्नरा द्वाते भावः । वर्त्तमानं त्वामनु सन्वतः प्रवृत्तः । अनार्य्ये दोर्जन्यम् । अहः स्वधम्मत्यागः ज्येष्ठा अलक्ष्मीः । माया कपटम् । दम्भोऽहङ्कारः ॥ ३२ ॥

# हा कर । होते हा किया है है हा उस हुन अवस्थात है । विकास कर के विकास कर है । विकास कर है । विकास कर है । विकास सिद्धांतप्रदीपः ।

was the filter and the second of the second

जिघांसुहंतुमिच्छुम् अभिप्रेत्यज्ञात्वापादयोर्मुलंसमगात्पपात॥ २९॥

कृष्णदारगयःदारग्रमाश्रयस्तद्देः श्रोक्यः श्लोकाः यदास्तित्द्देः ॥ ३०॥

तद्यशीधरागामस्माकमञ्जवद्धांजलेस्तेतविकिचिदिपभयंनास्ति तथापित्वमधर्मस्यवद्यरज्ञक्लः अतोमदीयेक्षेत्रेक यंचनकेनाण्यंशेन अवतानवर्तितव्यम् ॥ ३१ ॥

कलेरधर्मवं घुत्वदश्यति नरदेवदेहेषुवर्तमानंत्वामनु अधर्मपूगोऽयंप्रवृत्तःकोऽसावित्याकांक्षायामाह लोभोऽन्यायेनाऽयौभिलाषः अनुतमा ययार्थभाषग्राम् अनार्थ्यशाठ्यम्अंहःपापाचरग्राम् ज्येष्ठाऽलक्ष्मीः मायातवसंवंधनिवधनाऽऽत्मपरमात्माचनिभिन्नताकापाट्यंवाकलहःपित्रा दिभिर्विवादः दंभः धर्मध्वजित्वम् ॥ ३२ ॥

# The said of the state of the st

् दीनवत्सल शरगागत पालक राजा ने चरगां में गिरे कलि को देखकर वध न किया छपा कर इसता यह वोला। क्योंकि राजा क्लोंक्य अर्थात यशस्त्री है ॥ ३०॥

राजोबाच—तु अंजली वांधकर चरगोर्मे गिराहै अब तुझै गुड़ाकेश के यशींधरी से कुछ भय नहीं है। किन्तु तुमको मेरे राज्य में नहीं रहना चाहिये क्योंकि तुम अधर्म के वंधु हो ॥ ३१ ॥

तुम्हारे यहां रहते से लोभ, अनृत, चौर्य, दुर्जनता, खघमेलाग, अलक्ष्मी, कपट, कलह और दम्म आदिक अधमे समूह राजाओं के देह में प्रवृत्त होता है ॥ ३२॥

के विकास जिल्ला है। जिल्ला स्वाप

महायोग्डनेर संभएनान्य व्यापार्याच्या । इ. १

# न वर्त्तितव्यं तदधर्मबन्धोः प्रमेगा सत्येन च वर्त्तितव्ये ।

क्ष्मकर्त्ता के विकास के अन्य क्रिक्ट के स्वासी स्वास क्रिक्ट स्वासी स् यस्मिन् हरिभगवानिज्यमान इज्यात्ममूर्तियज्ञता श्रं तनीति । क्रहार क्रिकेष्ट (५७) स्टाएकर इंग्लिक का लाईगान पना एक्स ्रवरका विकास विकास का का मानमोधान् स्थिरजङ्गमानामन्तर्विहेर्वायुरिवैष्ये श्रातमात्रा **३७**०० विकास 

तस्यतासिमाहेदे दण्डपाणिमिवोयतम् ॥ ३५ । विकास विकास विकास विकास *वं*क्षमान्त्रीभूतिया कृताहर हिन्दुये क्रिक्स के **यह रहा र**हिन यत क वाय वतस्यामि साव्वभीम तवाइाया।

त्रकेल एवंक्यून लेक्स एक एक ले**ब्स्ये तत्र त्त्रापि त्वामात्तेषुशरासनम्**भूण**्ट्रिण्या** प्रति

क्तरमधीलाम्बर्गासन् **कानमधानां त्रो**णकण्य । विशेष्ट्रास्य सम्बर्**शीधारसामीत्रीक**न्नाम नोकोसीलेलेले स्वयन्त्रा ।

विकास करते । प्रतिस्थान के विकास करते । प्रतिस्थान के विकास क्षेत्र के विकास करते । विकास करते । विकास करते । तस्त्र स्थादा चेतित्व विकास करते हैं से । यशस्य वितास विस्तार तत्र विकास विषया। ॥ ३३ ॥

इन्या यागः तद्वपाः मुर्तिर्गस्यः। शंनक्षेमं कामांश्चः। निन्तन्द्रादयो तेलाः इन्यन्ते तात इदिस्तवादः। एष स्थानसदीनामात्मेति तत्रापि जीववत्र परिन्तित्र इत्याद अन्तर्वदिस्ति। यथा वायुः प्रामाह्रपेगाह्यः दिश्रतोऽपि वहिरूपास्त तद्वत् सर्वान्तर्यामीश्वदो ककुद्वसांबाकीव्यक्ताक तम क्राया होता के व्यक्ति है का विकास अवस्था है कि विकास के कार्या है कि है हैं। होति

उद्यतासिम् उद्धतबङ्गम् । द्येडपागि यमम् । उद्युक्तम् ॥ ३५ ॥

ः अयोग वस्तेन्यभिति या तेवाक्षा तया यत्र कापि वतस्यामि । किन्तुः तंत्र तत्रापि आसी गृहीतः इष्टः श्रांसनेच येन से स्वामेव माना से सम्मान के स्वास के स्वास के स्वास के सम्बद्ध के सम्बद्ध के स्वास के स्वास के सम्बद्ध के स्वास कराती हैं से बिक्क धिक्रारियंक्षिण्य हार्यशेव ॥ १६ ॥

# श्रीवीरराषवः ।

तत्त्रसमाद्धेऽधमेवंधो!धमेगासत्यनचवर्तितव्येऽस्मिन्वद्यावर्तेक्षेत्रत्वयानवर्तितव्यं सरस्वतीहषद्धत्योदेवतरं तहस्यावर्तत्यायत्रय इसिन्नानिकाः यक्षानुशाद्दानकोविदाः यक्षेयक्षेत्र्वरंपरमेपुरुषमाराधयतित्रव्यक्षावर्तनवर्तितव्यस्वतत्यर्थः ॥ ३३ ॥ किवहुनायस्मिनदेशेहरिभेगवानिज्यात्राराध्यादेदादयस्तेमृतिः श्रूरीरयस्ययक्षार्ज्यमानावायुरिवस्यावरागाजगमानांचभूतानामत्वाह

मन्याच्यतिशेषः आत्मातःप्रविश्यप्रशासन्धरण्कुवेन्यजतामाराध्ययनुगाममोद्यान्कामानिष्टार्थाश्रम्भाक्षास्यं चतनोतिप्रयच्छतितश्रस्वे बापिनसर्वतावतितस्यम् ॥ ३४ ॥

पनमवतावाततन्यमः॥ ३४॥ इत्यंपसिक्षतानुशिष्टः, किर्जातवेषयुः संजातगात्रकंपः उचतः उद्धतोऽसिः सङ्गोयेनतंदंइपाणियमभिवीधंतमुचुक्तमिदं सस्यमा

यामाह ॥ ३५ ॥ तदेवाहयत्रेतिद्वाप्त्याहेसावमीम। तवाह्यायत्रकचित्रवृत्स्यामियत्स्थानंभवान्निर्दिशतितत्रकचिद्धस्यामिकितुतत्रत्वामेवगृहीतशरासनेहः मालक्षेत्र, । हैं दें भी कर एक के लाव है के हैं कि एक क्षेत्र के किया है है कि के किया कि के किया है कि का है के

## श्रीविजयध्वजः।

यस्मित्रिच्छात्ममृतिः इच्छाततुः इज्यमानोहरिभेगवान्यजतांपुंसांशंसुखेतनोतिप्रपंचयति अमोघान्कामानपितनोतीति किविशिष्टो हरि: स्थिरजंगमानामंतर्वेहिश्चवर्तमानः करववायुरिवात्माव्याप्तः ईशः प्रवर्तकः ॥ ३३ ॥

उद्यतसम्बद्धवाणियममिवस्थितमुचतासमुद्धतसङ्गम् ॥ ३४॥ गत्रकेवारवदुक्तस्यलेवरस्यामीरयन्वयः लक्षयेपश्यामि ॥ ३५॥

丁克斯坦特的 國際軍士不開發的美國一部衛門的門子

हेयमें मृतांश्रेष्ठ । तत्स्थानंनिर्देष्ट्रम् सित्यन्वयः आतिष्ठत्रवत्स्येवसामि ॥ ३६ ॥

क्रमसन्दर्भः ।

ब्रह्मावसं रत्युपलक्षयो यशीयदेशानाम ॥ ३३ । ३४ । ३५ । ३६ । ३० ॥

# । प्रदेशकी इस मार्किक क्षाप्तिक के किया है कि किया है कि

उपसंहरितनवितृत्यसिति अध्येष्ठित्यो तिस्मिह्नेनोन्नितित्वयम् अधिकर्गास्यतिहरोष्ट्रित्यम्बद्धयतिधर्मेगोति धर्मेगाकायिकेनसत्ये नवाचिकेनचकारात्मान्सिकेन क्षायवाङ्मनोमिध्मेकस्रोरस्तेष्वामि स्थानयोग्येत्रप्रापिदेशविद्देशित ब्रह्मावर्षहति तिद्ध्यम्भेत्रं तत्रवादिनिर्दुष्टोधर्मेउत्पन्नात्रेत्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्ति विद्वापत्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्राप्तेष्ट्रप्ति विद्वापत्रप्ति विद्वापत्ति विद्वापति विद्

ननुक्षियक्षैः एहिकेसिद्धिस्त्ययेवमार्गं व्याप्रकोक्ष्ति विचारग्रीयस्त त्राह्यस्मित्रितियस्मिन्देवयजनेहिरित्यनुमानउद्देशयक्षपुरुषोविष्णु रेवसाक्षाद्भगवान् ननुदंशएवइन्द्रवाय्वाद्यः तत्रइज्यत्त्राह्य इज्यातममुर्तिरिति इज्यानामात्मामुर्तिश्च ततः कमतश्च भजतां शंतनोति मिक्तमार्गानुसारिश्वस्तिवेवकंक्षायते तत्रनाहर्ण्यद्वाराक्षेत्रविद्यात्मिन्ति इज्यातमार्गानुसारिश्वस्तिवेवकंक्षायते तत्रनाहर्ण्यस्ति विद्यार्गानिकेषु भूनसंस्कारद्वारास्त्रे अवश्वमान्यस्त्रव्यात्मिन्ति अमेपक्षे विस्तारमावः अमोधास्त्रनकामाः स्थिरजङ्कमानां चेत् फलसम्बन्धः अनायथावदं यक्षकरण्यस्त्रवेवकं किंच यक्षेः संतुष्टा मगवानुकानुमप्ति प्रयच्छातिश्चनविद्यात्मान् अन्तर्वहिद्याति एकस्याभ्यत्वस्तर्वात्मात् वायुरिविति ननुहर्ण्यात्मेष्यस्त्रवात् अतहत्त्रवाद्यस्त्रस्त्रवाद्यस्त्रवाद्यस्त्रस्त्रस्त्रस्त्रस्त्रस्तिकेष्यस्त्रस्त्रस्त्रस्तिकेष्यस्तिवेवस्त्रस्त्रस्त्रस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्त्रस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्टस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस्तिकेष्यस

्रिवंबासेजीवनिविश्ववंबार्ययितुंपुनर्यत्रभावज्ञिकित्वविश्वयितुंमारभतइत्याहपरीक्षितेविमित्वविद्वयित्वेविषयुःप्रतिक्षित्यांकरित्य तीति व्याख्यारिग्रीमिवति वित्रमेवस्तूष्मीभावविद्वर्याद्येक्याहर्ष्यतामिति । क्षृत्रपूर्वोपराधस्यअवश्यदेग्रुवेकित्वकापयितिहेख प्राणीमिवति । सक्रदपराधःसोद्धव्यः ततःपरमारायष्यतीत्याह उद्यतमितिविक्षोपनामाह यत्रोति हसावसीम् । सर्वाभूगिस्तवैद्वं अहमपि त्वद्वयाः अति । मद्रिविद्यतः भूमरविश्वरद्यतिक्षापितम् ॥ ३५ ॥

हिपूर्वमस्माकं स्वातः हमें स्थितमञ्जनात्वे बुक्षाकः चित्रमाहः अथेति भिक्षप्रक्रमेत्ववात्र बाह्यसम्बद्धाः महत्वया रोषोनिवधातःयः जीवताचकचित्रस्थातः यंजीवनंत्वयैवदत्तम् अतः स्पष्टतयात्वदाश्चाः यतिरेकेऽपि जीवनरक्षमात् क्षेत्रकार्यद्धशैना स्वक्री भंचकरिष्यतीत्याहः लक्षयदात् ॥ ३६॥

#### ्राह्मणाडिक्षेत्रं श्रीविश्वनायचक्रवसी ।

्निन्बन्द्वादया देवता अपीर्वन्त ते कवल भगवनिव तेत्राह—इज्यानाम इन्द्राविनाम आत्ममूचियन्त ग्रामकप् ॥ ते आत्ममूचयो वस्याति वो स्थिरजेक्षमानामस्मत्प्रजानां कामानहिकार शे पश्चिक सुर्ख च तनाति वायुरिवान्तविहस्य साक्षादनुभूयमानः सिम्नत्यकः। स्वाय वर्तमाने त तथा नेव स्थादिति भावः ॥ ३४ ॥

प्रदेशतासिम उच्चीकृतलङ्गम्। जीतविष्शुरित वर्षणार्थे बहुतरं बुद्धिचलं प्रकाशितम्। तद्यपि मर्म वर्धे प्रवीपस्थित रात भावः। राष्ट्रोश्यमभिप्रायः —यदीमां मदाज्ञां न पालयति तदा स्दर्भोष्टमस्य वधमधुनेव करिष्यामि यदि च पालयति तदास्यावधेऽपि मस् कापि क्षितिन्द्रोति । वर्णेडपाणीः संगम्॥ ३५॥

हैं सार्वमीम ! सर्वस्या आपि भूमे राजन् । लक्षये साक्षादेवमेव त्वां पश्यामि । तेन सर्वेषां स्थावरजंगमानां युष्मत्प्रजात्वात् सर्वेस्याः अपि भूमेस्तवाधिकारात् मम वस्तुं स्थानाभावात् सम्प्रति त्वदग्रे वर्तमानं त्वत्पादयोः पतितं मां खहस्तेनैव जहीति भावः ॥ ३६॥

# COUNTY PRODUCTION OF THE STATE OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY

तत्तस्मात् धर्मेगासत्यनचवार्तित्यवार्तिमहे ब्रह्मावर्ति ब्रह्मावर्ति व्यवस्थिते स्मापिशाल्येस्तलेयत्रव्यक्षश्चरस् अहंहिसर्वयद्याज्ञां काच प्रभुरेवचं "ति जिजवाक्यां कं श्रीकृष्णम् यञ्चवितानस्य यञ्जेश्वरयजनिक्तारस्यविज्ञाश्रीम्बाः यञ्चेयेजातिश्चाराधयतितस्मिन्तवयानवर्ति । सत्यम् ॥ ३३ ॥

यस्मिन्बह्यावर्तीपलक्षितेभूमंडलेइज्यामृतिःइज्यारूपायागरूपा मृतियेस्यसः यथावायुः प्रामारूपेमातिश्चरोऽपिवहरिपध्यमानोऽस्तित्या स्थिरजगमानांस्थावराणांजगमानांच अंतरात्मावहिरिपेवतेमान्षपहरिः यजतांशंमोक्षार्ण्यस्यममोघान्सत्यानीप्सितान्कामांश्चतनाति ॥३४॥ दंडपाणिप्रमेराजमिवोद्यतमुद्युक्तमुद्यतासिम्द्रुतखड्गमिववश्यमाणमाह ॥ ३५॥

तदेवाह द्वाभ्याम हसावभाम ! सर्वभूभियत नवतित्रयंभवताक्षंत्रवाक्षंत्रम्यीयेइतियात्वसावभीमस्याद्वात्त्रयायत्रक चनवतस्याभि आज्ञावलात्कांश्चिनमुख्यान्विहायस्थानीवतावासासभवात्सावभीमस्यभवतपवर्यासमन्त्रहेन्द्रभात्यावासंकरिष्यामि एवंचाह्यार्थस्या मामत्वाप्रवृत्तत्वाम् आत्तागृहीतहषुः श्रारानाच्येनतंलसये ॥ ३६ ॥

2.46 h

# तन्मे धर्मभृतां श्रेष्ठ ! स्वार्त निर्देष्ट्रमर्हित ।

चत्रेव मिथतोर वत्स्ये त्रातिष्ठंस्तेऽनुकासनम्।। इंश्वासानम् ।।

स्त उवाच।

म्राभ्यर्थितस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददी।

यूतं पानं स्त्रियः सुना युत्राधर्मश्चतुर्विधः ॥ ३८ ॥

पुनश्च याचमानाय जातरूपमदात् प्रभुः।

ततोऽतृतं सदं कामं रजो हैं च पंचमम् ॥ ३६ ॥

च्यामृति पंच**्यानानि हाधमे प्रभवः कलिः ।** विवास

त्र्योत्तरयेण दत्तानि न्यवसत् तत्रिदेशकृत् ॥ ४०॥

हे अधर्म बन्धो ! इसी सै तुम्है यहां न रहना चाहिय बद्धावर्त में धर्म और सत्य से रहना होता है जहां यह वितान के विश्वासन विश्व कर की यंत्री से पूर्वन करते हैं। ३३% ंक कि मार्गिक करते हैं। एक कि विश्व के कि

कि जिस ब्रह्मीबुर्न में येजन किये गये इंज्यामूर्ति भगवान यजन करनेवाली का मंगल विधान करते हैं स्थावर जंगम में वायु के समान 

ार्मित्वांच - प्राक्षित किर्तुमा इस प्रकार । आदिष्ट किलि किपता, म्हण्ड प्राधि के समान त्रव्यत । बचतासि हाजा हिसे जालता कारणा हितात । एकी एक को में ६ ्र हे पहु सुक्की जोवत स्थि तुभारत वेसा हाता । सिर्धापुना, चेस गर्स वेर एक भोजकार

हे साबमीम ! तुम्हारी आज्ञा से में जहांश्रीकासामकामा विद्या विद्यालयामा आजी देखता है ॥ देश में का कि का का का का

विवयः न्याण्याचे वृत्र स्वः किस्याका विष्ठववानियाः अयुवीक्षि । पादाण्यभाषद्या विद्यार्ग्य सिकावकेत कर्ण्य I SAH SAH DARE

िक है। इस इस सामा विकास के लिए के लिए के साम है है।

पूर्वपार्टीय स्थापंड विकेल १५५

प्रत तस्मात्। नियतो निश्चलो वतस्यामि ॥ ३७॥ पान भद्यादेः। सुनाः प्राशिवधाः। द्युतेऽनृतम्। पाने मदः। पूर्वि मदो दयानादाक्रत्वेनोक्तः अत्र तु गर्वेद्वारा तपानाद्यकत्वेन। सीषु सक्तः विस्थानं कीर्यं च द्रयानाशकामिति केयम् । यशिष्र सन्वे सन्वे च स्थानित तथापि, पाधान्येनानृतादीनां यतादिष् यथासंख्य न्त्र भेषम् । बाद्र युक्तन्थे तु मुसं इया तपे वात्तिमितिः पादा विभानेपति अत्र वात्रशहेत शीलमेवीकं मन शुक्र कपत्वात मृतास्यदा-नह्य भेष्त्रामां भाषपादानां तुर्योगोः हीयते सहितः । अधममपादैर नतिहसास-तोषविष्ठ विभावति अस-तोषशब्दन तस्य हैतर्गन्वी स्वयते । विश्वदशन्त च तकेता स्वीमुङ्ग इत्यविरोधः ॥ ३८ ॥

मा चतु विश्वस्थाप्येकवावस्थानं देहीति पुनर्योचमानाय जातस्य सुवर्धी च दचवात्। ततः सुवर्धादानातः अनुतं सदं काममिति स्वीतक्ष स्ज इति रजोस्त्रां हिंसाम प्रताति चत्वारि पंचमं बैरच अदादिति॥ ३९॥

ि अमृति समिषु स्यानेषु त्यवस्यवित्त्रर्थः ॥ ४० ॥

क्षित्र हो के विकास मार्थित है के के किया है कि कार्य के किया करते हैं कि किया है कि किया है कि किया है कि किय

# द्वीपनी ।

त्रकेरीको इंस्कृति भी क्षत्रिक केल्या है। कुर्वा केल्या समान क्षत्रिक केल्या है। पुर्विमिति अस्याध्यायस्य पंचितिशक्तिकः इति शेषः॥ सत्यमिति हादशस्कन्धीयतृतीयाध्यायस्याष्ट्रादशक्तेकः। त्रेतायामिति हेरियास्कर्णीयस्तिवीविध्यायस्य विशेषकोकः ॥ ३८ ॥ ३ राजाले । अस्तामिकार्णका माणिकार्णका । अस्तिविध्यायस्य ।

सुवर्गादानादिति । सुवर्गादानादेव तन्त्रमुलकानृतमदादिपञ्चानां दानं सिद्धमिति भावः ॥ ३९ ॥ ४० ॥

#### श्रीवीरराघवः।

सतस्त्वामेवंविधंनयत्रलक्षयेदेधमें मृताश्रेष्ठ ! तवालुकां सनमाकामातिष्ठं जेतुपालयित्रयमेनवत्सेतत्स्थानं निर्दे ग्हुंत्वमहेसि ॥ ३७॥ दृश्यमञ्ज्ञ थितीरा जाततस्तरमेकलयेत्रामस्थानानिददीतान्येत्राहण्युतामात्येषुस्थानेषुद्वतानिकप्रभृत्विशोदः अर्मस्तानिद्वतीहस्यर्थः तत्रप् ं पूर्वश्चिमानायकत्रप्रेष्ठशुः ापरीक्षिजातक्रपंसुवर्धीस्थानमदाच्याः स्पुत्रपरिस्थानंतयाशियाचमानामानृतावीनिधेवयेष्ठतानिस्थाना निद्शे ॥ ३९॥

ि म्यानामा विश्वविद्याचित्रम् । विश्वविद्याचित्रम् । विश्वविद्याचित्रम्

रजः क्रोधः प्रभवत्यस्मृदिःतिप्रभवः अध्रम्भम्बः कृष्टिः ग्रैन्तियेगापिशिताद्वतात्यम् निपंचन्ध्रम् ज्ञान्यनृतादीविप्वोक्तानिच्त स्योतरेयस्याद्यात्वर्तीसकार्ळन्यवसंत् ॥ ४० ॥

मृत उवान श न्य । १९९१ में उन्हें श्रीविजय विजय । इसमें निष्ण हें इस

अस्य समान्य किलोसी विकास हमान्या है।

कानितानिस्थानानीतितत्राह चूतमिति चूतदेवन पीयतहतिपानमध्यस्नापाणिहिसनयत्रयेषुस्थानेषुचतुर्विधोऽधर्मःपापंस्यादितिशेषः ३७ जातकपंसुवर्ण तत्फलमाह तत्किति तत्तियुतादिश्योऽ नृतादिनिपोपसाधनीनिभवेतितिशेषः ॥ इट ॥ तस्यराक्षोनिदेशकदाक्षाकृत् अधर्मप्रमवः अधर्मोत्पादकः अमूर्निष्ट्रतादीनिष्चक्रयानानि ॥ ३९॥ बुभुषुः पुरुषार्थकामः लोकपृतिलीकपालः गुरुरुपदेख्या धर्मस्येतिशेषः ॥ ४० ॥

# क्रमसंदर्भः ।

के अध्ये के हैं। इसी है एक सहरे हैं रहते हैं पहले हैं पाइक पानं सौत्रामग्यादिविद्दितव्यतिरिक्तम् । स्त्रियः कामस्त्रियः न तु धर्मपत्न्यः । सुनाश्चः धर्मव्यतिरिकाः । सत्र द्वीकायाः पानेन अदगन्वीं गृहीतीं। मदे गव्वींअप इंदयत इति एतदेवाक नागर्ने अधित। ततः पूर्वविद्येष दयातपस्तोतीशकरवेन ती विविश्वती । यूतेनानृतं गृष्टीतं तचा पूर्ववदेव सत्यनाशकम् । स्त्रीभिः सङ्गो विविधितः स च पूर्ववदेव शौज्जाशकः । यत्तु सनाभिः कौर्यो पूर्वतोऽधिकः ष्ट्रहाते तहि में बतु ह्रयानाशकिति व पूर्वेशा विरोध इस्पर्यः। एत्देवाह क्रांच्येचेति । हादशस्कन्धवान्यं तु मतान्तरं वा क्षेत्रम् ॥ ३८॥

जातकपं सुवर्णादिकम् । पूर्ववसम्मार्थे विना । तत्र पूर्वोक्तचतुर्गी स्थानकपेगादात् । विशेषतः पंचमस्य वैतस्य चेति । तदेवाक सतस्तद्दानदेतोरनृतादिपंचाप्यदेविति स्थानानिशीयन स्थानिनः प्राप्ततुं क्ष्यतावि स्थादिति भाष्यः ॥ ३६ ॥ व वे विकास विकास

ततम्य तत्रभगादेव तत्र तत्र गतः किल्तान्यधिष्ठितवानिखाद अमुनीति । कालाध्यभावदेशानामिखादिकारिकावलेन कर्म-त्वस् ॥ ४० ॥ ४१ ॥

# िष्णाता व प्रति कार्यक्षेत्रक क्षेत्रकेत्रक व्यवस्थित । स्वति क्षेत्रकेत्रक । अनुसन्ति क्षेत्रकेत्रकेत्रकेत्रके

यत्रैवस्यास्यामितत्रैवत्यामान्तरारासनंपर्यामिभतोयत्रिरियतःत्यामान्तरारासनेनद्रस्यामितस्र्यानदेहीत्याहतन्मरति चतिर्वेगाक्राधितत्वा द्रश्यामिशरासनरहितम् अतोमद्रशनमात्रेगीवशासनत्यकेव्यमितिमावः धर्मेभृताश्रेष्ठीतयाचितदानदस्परिपालनचस्चितम् यर्थप्यहत्त्र स्यास्यामिप्रत्वयानिदेष्टव्यत्वदाश्याचितःस्थितिःस्यात्वदाशास्यारियाछितास्थात्वश्राप्विचन "शास्त्रफलेप्रयोक्तरि॥१ रि १३॥ इति म्यायेन तत्पापंतवैवसविष्यतीतिसावः नियतद्वियचनात्रधर्मार्थेष्विपद्यतादिश्वमेर्मवासदिक्षिपितम् ॥ इ० ॥ अस् विकारित

तत्तरीयकृतवानित्याहतयेतिअस्यावद्यस्थानदेयमितियूतमक्षकीडाअनाधानविषयपानमादरायाः ख्रियःसाधारपयः बहुवेचनातसना हिंसापतेषुयत्राध सो सवतितदस्यस्थानं नतुस्वभावतः शास्त्रतोवायत्रति ति निमवति तानिकिलिस्यानीनिमवति किच चतुर्विधोधमाः 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तयोगुर्वगनागमः" स्तयं यूतेप्रविष्टम् अतोमहापातकस्थानभूतमेतत् चतुष्टयंकलेः स्थानमित्यर्थः कलिनास्वप्यगृहीताः यपतातिकरो तियन्नेतिपद्यत्यधर्मस्यापदेश्यत्वमेव ॥ ३८ ॥

ननुममपंचस्थानानिश्चतिवोधितानि अंतपकमधिकं देयमित्याकांक्षायामाह एकवारस्थानचतुष्ट्यंदसंपुनर्याचमानायजातकपंसुवर्याम कात्रक्तियेसामान्यावेनसुवर्णमागतम् अधुनासुवर्णास्तयत्वेनस्वरूपेणस्वर्णकिल्स्यानंनन्वयंमहाननर्थः क्रथंसुवर्गातस्मेदत्तवानितितत्राहृविभु रितिलकारात्स्वतंत्रत्यापितानिस्थानानियाचितानिएषांस्थानानांपुनः प्राप्तानांनसक्षपेगास्थानत्वं कितुकार्यत्रहितानिकार्याग्रामा यतिततइतियस्मात् अधमेइतिवर्त्तते अतः अनृतरूपंचूतंमदरूपंपानेकामरूपाः स्त्रियः रजः क्रोधः तद्रूपासूनासुवर्गावेररूपंचकारादुभयविष् गृहीतंतत्पंचमंसुवर्गेऽपिवैरहिंसायांचवैरामिति॥ ३९॥

अमृनिपंचस्थानानिअधर्मप्रभवःअधर्मोत्पादकः औचरेयेगाउत्तरायाः पुत्रेगाअविषेकः सूचितः तेषुन्यवसदित्यर्थः तान्नदेशकृतपरीक्षिदा श्वाकर्ता॥ ४०॥

# श्रीविश्वनायचकवर्ती ।

दारशागतं त्वामदं न इन्मीनि चेत् तदा हुधर्मवालकानां श्रेष्ठ । । ३७॥

国际生产的特殊的 英语 生物、如此的

द्यूतं स्पष्टम् । पानं मद्यादेः । स्त्रियोऽविचाहिताः । स्ताः प्राणिवधाः । यत्र चतुर्विधोऽधमे इति । द्युतेऽनृतं सर्यनाहाकं पाने मही बयामाशकः स्त्रीर्षं सन्नः शीमनाशकः माशिदिसायान्त समुदित एव चतुर्विधो प्रथमेन न हि माशिदन्तुत तपः शुचित्वं द्वमा वा स्यवचनंतु तेषु नास्त्यवैति ॥ ३८॥

विद्यास्तरिक्षः क्रावार्तिकाम्बाहर्त्वात्वायस्थाकः इक

e as a minus com

# अथैतानि न सेवत बुभूष् पुरुषः कचित्।

प्रतिसन्द्ध त्राश्वास्य महीश्च समवर्द्धयत् ॥ ४२ ॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवसी।

मो राजन्नेतद्वृत्तान्तं श्रुत्वा द्यूतादिकं कोऽपि नानुशीलयिष्यति । किंच प्रथमं मनसि मत्प्रवेशस्तत एव लोकाः प्रायो स्तादिकं भजन्ते इति । तत्र भवता दीयमानमपि स्थानचतुष्टयमदत्तमेवाभूति ितस्मादेवं किमपि स्थानमहं प्राप्तुयां यह्नोकेर्दुस्त्यजं स्यादिति याचमानाय कलये जातक्रपं खर्गोपलक्षितं रजतादिकं द्रव्यमात्रमेव तद्वासस्थानत्वेन अदात्। तत एव हेतोधनवत्सु अनृतं मिथ्या मदः पानादिजनिता मत्तता कामः स्त्रीसङ्गः रजो गर्व इति चतुर्विधोऽधर्मः तथा पंचमं वैरंच स्यात् । मदकामयोः स्त्रीवत्वमार्षम् ॥ ३९ ॥ अमृनि अमीष्वित्यर्थः । यद्वा कालभावाध्वदेशानामिति कारिकावलातु कर्मत्वम् ॥ ४० ॥

### सिद्धांतप्रदीप: i ासद्धातप्रदापः।

THE REPORT OF LIVERSHIP TO THE PROPERTY.

्र तत्त्रसमाद्धर्मभृतांमध्येश्रेष्ठ ! शरगागतपालक ! यत्रनियतोनिश्चलस्तवानुशासनमनुतिष्ठन्पालयम् वत्स्यामितत्स्थानंत्वंतिर्देष्टु महीसि॥ ३७॥

यत्रयेषुचतुर्विधोऽ धर्मस्तानिद्यतादीनिस्थानानिददौ तत्रधूतेऽक्षादिभिद्वनेसत्यनाद्यकमनृतम् मधादिपानेतपोनाद्यकोविस्मयः क्रीषुशौचनाशकः संगः सूनायांप्राणिपीडनेदयानाशकोमदः ॥ ३८॥

चतर्विधस्याधर्मस्यैकत्रवासंयाचमानायंजातरूपंसुवर्णमदाद्वत्तवान् प्रभुः स्थानपंचकदानसमर्थः ततस्तिसमन्जातरूपेतद्दानद्वारेष अंतर्तमहकामशब्दवाच्यंसगरजदशब्देनविस्मयमेवचतुर्विधमधर्मचतुर्विधाधममूळवेरचस्थापयामासेतिशेषः॥ ३९॥

श्रीत्तरेयेगाउत्तरापुत्रेगादत्तानिसम्निवृतादिजातकपांतानिपंत्रस्थानानि अधर्मप्रमतः अधर्मस्यमस्यिक्तस्य स्थानस्य स्येतिवानिदेशकृत्काळिन्येवसत् "काळचकंजगचकंयुगचकंचकेशवः अनादितिधनोदेवः परिवर्तयतेऽनिशमि"तिस्मृतेश्च ॥ ४०॥

# भाषाठीका ।

इस से है धर्म भूतों में भेष्ठ । आप मुद्दी स्थान निर्देश करदीजिये कि जहां में आप का अनुशासन पालन करता नियत होकर निवास करं॥ ३७॥

कालियुग कर्तक अभ्यर्थित राजा में कलियुग को ये स्थान दिये धूत (जूआ) पान (मधे) छी सूना (हिंसा) जहाँ खार व्यकारका अधर्म हैं ॥ ३८॥

फिर जब काले ने प्रार्थनाकी तब उसे जातरूप ( सुवर्ण ) दिया जिससें अनृत ( मिथ्या भाषण ) मद काम रज (रजो मूलक हिंसा ) और पांचवां वेर है ॥ ३९ ॥

अध्यम प्रभव केलि, उत्तरानन्द्रत (परीक्षित ) प्रदत्त इन्हीं पांची स्थानों में । बसा है । उनकी आह्या पाळन करने 是一种企业的基础的。

# क्रिकेटी में प्रकार करते हैं के प्रतिकार के क्रिकेट के क्षित्र का की प्रकार के उन्हें के किए कि के किए कि किए के

अयोति हेती । बुभूषुकद्भवितुमिञ्छुः । स्त्रीसुवर्यायोरसेवनं नाम तयोरनासकिः ॥ ४१ ॥ एवं काळ निगृह्य वृषस्य पादान् प्रतिसन्द्धे तप-आदीनि प्रवर्शितवानित्यर्थ: ॥ ४२ ॥

# 这种"我们的是一种,其一种的人种类。不可以是种种的一种。"

दीपनी । ( गुरुः धरमापदेश दति विजयभ्यतः ॥ ) उन्नितुमिच्छः अत्यर्थे सन्नायं प्रान्तुमिष्युदित्ययः ॥ ४१ । ४३ । ४४ ॥

# खेतानि न तेवत स्वयंगिकः हिन्त !

यतोचूतार्वानिकलेरावासस्यानान्त्रसात् व्यस्त्रभृतिति विक्रुंसत्य अपूर्ण विश्विति स्त्रामिति । विक्रिक्ति विक्रिक्ति विक्रिक्ति । विक्रिक्ति विक्रिक्ति विक्रिक्ति । विक्रिक्ति लोकपतिलोंकानांपितः पालियताशन्यर्थोरीजिनिमेनलियम्बलांगिपत्रे विक्रिये विक्रिया विक्रिया विक्रिया विक्रिया विक्रिय

वर्द्धयत्पूपोष ॥ ४२ ॥

भीविजयध्वज्ञः।

मृष्ट्यधर्मस्य ॥ ४२ ॥

राजा तु तस्मिन् वञ्चनामेव कृतवान् यतो गते तस्मिन् तत्तत्स्थानाभावमाचरितवान् । जातक्रपंच धर्मार्थे प्रयोजितवानित्यिमिष्रे-त्याह वृषस्येति । पादस्य त्रिभिस्त्रिभिरंशैस्त्रीन् प्रतिसन्दधे भगवद्भक्तिवलेनेति शेषः । साक्षात्तन्मुर्त्तेः सन्धानेन सर्वत्रापि प्रतिसंहित-वानिति भावः। सत्यं तत्प्रभावेन न ताहरां तदा नष्टमिति तथोक्तम्। द्येति वक्तव्ये द्यामित्यार्षेम् ॥ ४२ ॥

# क्षा कृति विकास के तो प्रक्रिया है। जिस्सा क्षा कर का कि कि **स्थापित है।** इस

एवंकलेः स्थानानिनिर्दिश्यप्रसंगात्रधर्मवर्त्तिनःउपदिशतिअथेति अनुतादिकपाययेतानिनसेवेतव्युक्तृविष्णुः कवितप्रमासदिनु पाक्षिकोऽपिदोषःपरिहरणीयानिपदार्थेत्रहेणसेवमानेकद्वाचित्रक्रिक्यानमेवसेवतततोमद्दाननथीभवत्तरमात्रपतानिपंचापिद्रतपवपरिहर ग्रीयानि कलिस्थानशंक्यायत्रपुनर्व्यतिरेकनिश्चयः तत्रविधिनेप्रतिषेधः सम्भावितमेतत्रश्चइतिविशेषाकारेगानिषेधं विशेषतइतिधर्म शीलोराजातस्यार्थमप्रीतपक्षत्वात्लोकगुरुः अन्यभ्यउपदेशकत्त्रीशिष्याणांतदाचाराशिक्षणात् पतिरितिपरिपालकराजध्मीःप्रजादति ॥ ४१॥

एवंकलिप्रस्थाप्यराजायतकत्वान्तत्पकृतमाहरूषस्यति कालेनधर्मस्यत्रयःपादाःपूर्वोक्तागताः तानन् चपुनःप्रतिसद्धसम्बद्धः सन्धान कृतवान् चतुर्विधमपिधमे प्रवर्तितवानित्यर्थः पृथिव्याःसांत्वनमाह् आश्वास्येतिसमवर्द्धयत् सर्वत्रभक्तिमार्गप्रकारेग्यकृष्यादिनाचपाषंडद्री करगोन चकारात् धर्ममप्यवर्द्धयत् ॥ ४२॥

# विस्ति एक्टी अन्य प्रत्या प्रकार प्रकार हुए एक श्रीत श्रीविश्वनार्थनेकेचनी गरीने व्याप्त की तथा । इसे विसे के कि

स्त्रियं परकीयामेव न सेवेत । बुभूषुः खक्षेमिनच्छुः । सुवर्गास्यासेवनं नाम तत्रानासकिरित्येके ॥ ४१ ॥

पर्व किं निगृह्य वृषस्य पादान् प्रतिसन्द्धे तप-आदीनि प्रवर्तितवानित्यर्थः ॥ ४२ ॥

(भागानी केल्ल्यू केल्ल्य) उन्हें लाक क्रम्प (१०० डे उन्होंने) है ही

राजाविशेषतोनसेवेतति द्विभ्रंशेप्रजाभ्रशप्रसंगात् तथाऽ न्योपिलोकपतिः तथागुरुश्चविशेषतोनसेवेत ॥ ४१॥

इत्थंकिलिगृद्यतदनंतरं वृषस्यतप्रवादीन्त्रीत्पादान्त्रतिसंद्धेसंयोजयामास तथामहीसमवर्द्धयत् अत्रपादत्रयस्यनष्टत्वंसंयोजनंत्रक थासोंद्र्यार्थमुक्तंवस्तुतस्तुत्रेताप्रभृतिषुत्रिषुयुगेषुचतुर्यापादानांप्रत्येकतुर्याचीनाशाञ्चयस्त्रयोशानष्टास्तेपवराक्षासंयोजिताद्दतिक्षयम् ॥ ४२ ॥

त वह त : में का । में प्राप्त के वार्त के वार के वार्त के वार के वार्त के वार्त के वार्त के वार्त के व पु इप्र प्र किलाविकार है कि इ किलान नाम के क्या को का लाइ का का किला क्रिक क्रिक भाषादीका ।

हैं के**र बारा** आंधी ने बार के लगा है। यह पूर्वी साराष्ट्रपार्थ है एक हो के <del>किस किस</del>

्रियाचे व्याप्त विश्वास्त्र

इसी से बुभूषु पुरुष इनका सेवन न करें। विशेषतः धर्म शील, राजा, लोकपति और गुरू ती और कुभी भी इन वांचों का सेवन न करें॥ ४१॥

धर्म रूप वृषको आश्वासनकर उसके विनन्द तीनों पाद अर्थात तप शीच और दया को प्रति संधानकिया अर्थात स्वको पुनः प्रवृष्टि किया और पृथिवी की भी सम्वर्धन वियोगा प्रश्वान का हो हो हो हो है ।

# स एष एतर्ह्यध्यास्ते श्रीसने पार्थिवोचितम्।

भी व्यवस्था है। के काम वितास है नोपन्यस्त राज्ञारण्य विविधता ॥ अप भी विवधता । विवधता । विवधता । विवधता । विवधत

क्षिण्याचा व्यक्तिया व्यक्तियां स्याजिक को बेन्द्रियोहस्त् ।

गजाह्नये महाभागश्चकवर्ती वृहच्छ्वाः ॥ १४ ॥

इत्यम्भूतानुभावोऽयमभिमन्युसुतो नृपः।

यस्य पालयतः क्षोगीं यूर्यं सत्राय दीचिताः ॥ ४५॥

इति श्रीमद्रागवते महापुरागो पारमहंस्यां संहितायां वैयासिक्यां प्रथमस्कन्धे पारीक्षिते कलिनित्रहोनाम

सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७॥

# श्रीधरस्वामी।

युष्मदीयसत्रप्रवृत्तिरिप तत्प्रभावादित्याह त्रिभिः। एत्हिं इदानीं युधिष्ठिरेगारगर्यं प्रवेष्टुमिच्छता उपन्यस्तं समर्पितम् आसन-

अधुना आस्ते पालयते इति च वर्त्तमानसामीप्ये वर्त्तमानविश्वर्देशः। स्मेत्यध्याद्वारो वा ॥ ४४॥

सुत्राय सत्रं कर्त्तुं दीक्षिताः दीक्षां कृतवन्तः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभावार्थेदीपिकार्था प्रथमस्कन्धे सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

#### श्रीवीरराघवः।

सइतिसउक्तविधममावएषपरीक्षिदेतर्छोधुनाअनितकालेविमकृष्टकालेविविश्वताप्रवेद्धमिन्छतापितामहेनराज्ञायुधिष्ठिरेगा सपन्यस्तंप्रदर्त पार्थिवस्यसार्वभौमस्यौचित्यंसिंहासनमध्यास्तवर्तमानवद्वेतिमूतेलट् ॥ ४३॥ -

कौरवश्रेष्ठः श्रियासार्वभौमश्रियोल्लसन्त्रकाशमानोविपुलकीर्तिश्रकवर्तीन्त्रकभूमंडलंवर्तयति पालयतीतितशाभूतः राजिर्भेहाराजः

परीक्षिद्रजाह्मयेषुरेऽधुनावर्तमानसान्निकृष्टेभूतकालेथास्तेथास्ते ॥ ४४ ॥

ी नकेविलमुक्तप्रवर्तस्येपभावः कित्वित्यंभूताश्रंन्येचप्रभावायस्यत्याभृतीऽयमाभ्रमन्योःस्तानृपः परीक्षित् अत्पवाधुनातस्याभावेऽपित्र यात्कलेर त्रदेशेप्रवेशाभावादेवभवतामिदंस त्रंप्रवर्ततस्याहयस्येतियस्यपरीक्षितः क्षांग्राणिलयतः अवापिर्वतमानसाभीष्यभूतेल्दः सञ्जात्र देशाव्यक्तिस्य स्वामित्र स्वामित्र

# १९३ । स्थानस्योगस्य विकास विकास विकास विकास विकास के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप

> ६ २१ । एक्स्स्या स्वाच्छा १८५५७७ कमसंदर्भः।

अध्यास्त इति प्रभावक्रपेगोति क्षेयम् । प्रवसुत्तरत्रापि ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ यस्य पालयतः इत्यत्र सत्रं श्रीवलदेवद्दष्टादन्यज्क्षेयम् ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगीस्वामिकतक्रमसद्भै सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७॥

# त एए एत्र प्रत्याहर जीर्रिन पारिवाचित्रच ।

तस्यशांतस्यापिकीर्त्यनुभावयोर्विद्युमानत्वात् वर्तमान्वद्वतित्यायुनश्चातित्रायुन्तम्बार्वेद्वरक्षयाञ्यावृत्तये विद्यमानत्वेननिक्षयवित्त सप्पद्दति भगवत्सायुज्यप्राप्तस्यसर्वत्रभगवतः स्पुर्रेणात्पपद्दित्राः अतप्ताद्दिद्दानीमप्पार्थिवोचितमासनमध्यास्ते किंतुजनमेजय स्तत्स्थानेतद्य्यासन्उपविशति सप्वभगवद्वपोभूत्वात्त्रवास्त्रवितिह्नवेषाप्रतितिः अतप्तप्रार्थिकेवित्तराज्ञामुचितम द्दानीमप्यास्तद्त्यर्थः अन्यथापार्थिवोचितमपिन्यर्थस्यात् सिद्दासन्।न्तरमपिनाध्यास्ते किंतुपितामद्दन्राज्ञायुधिष्ठिरेगापरित्यागचकत्वावनविवश्चताउपन्यस्तम् ४३

नजुकिमेत्रुपचारादुच्यते नेत्याहै आस्तेंअर्धुनार्ति अर्धुनारितेथैर्वस्ति निजेदहीन्तर्रिधीर्वनितिहै सराजिः राश्वपवराजिर्षरेव साहर्य भ्रमंबारयति कौरवेन्द्रश्रियोल्लसदितिकौरवेन्द्रागांश्रियाराजुल्हस्यार्जल्ह्यस्यामन्तित्रण्याभाननेत्रत्रापिगजाह्वयेमहाराजइतिराजिश्वया जुष्टपवचकंवर्त्तयति आशाप्यति,तथैववृहती कीर्त्तिर्थ्यस्य ॥ ४४ ॥

प्वंभगवत्क्रपयाभागवतेनचं अंजर्गमरः ब्रह्मभूतप्वभगवानिवरमत् इत्युक्त्वातत् दिद्दश्चयानिवृत्त्येतस्यालौकिकमेवरूपमुक्तं नतुलाकिक मित्यभिप्रायेग्योपसंहरति इत्यंभूतानुभावोऽयमिति मृतोऽपिजीवन् तिष्ठति तित्यं,भूतानुभावः कलिनिग्रहादिद्वारा अभिमन्युस्रतद्दति महा श्रूरत्वमुक्तं तद्राज्यप्वभवद्भिः सत्रमारव्धमित्याह यस्यपालयतद्दति अन्यथाभवन्तोऽपि भागवतस्यश्रवणार्थगच्छेयुः सम्वत्सरदिक्षायाः कृतत्वात्नकश्चिन् प्रियतेतावदितिवाक्येननिवरोधः अग्नीषोमीयप्रभृत्येवहिंसायामितिविधानात् क्षोग्रीपालयतः सतः सत्रायसहस्रसम्बत् सरायेव अन्यथाअलपराजनिमहत् कर्मारम्भोनघटते अनेत्वक्लोमहायोग्रनिष्ठेशेऽपिसमर्थितोभवति ॥ ४५ ॥

इतिश्रीमल्लक्ष्मगाभद्दात्मजश्रीवल्लभदीक्षितिवरिचतायांश्रीभागवतसुवोधिन्यां

प्रयमस्कन्धेसप्तद्शोऽध्यायःसमाप्तः ॥ १७॥

# श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

युष्मदीयसत्रप्रवृत्तिरपि तत्तप्रभावादेवेत्याह स एष इति त्रिभिः। अध्यास्ते आस्तेऽधुना पालयत इत्येषु वर्समानसामीप्ये वर्समान निर्देशः॥ ४३। ४४॥

सत्राय सत्रं कर्तुम् । सत्रमिदं श्रीबलदेवदद्यद्यदेव क्षेत्रमः ॥ ४५ ॥

इति सारार्थेदर्शिन्यां हर्षिगयां भक्तचेतसाम्।

प्रथमेऽयं सप्तदशः संगतः संगतः सताम ॥ १७ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

सप्यक्तप्रमावः परिक्षित् अरग्यंप्रवेष्टुमिच्छतापितामहेनयुधिष्ठिरगोपन्यस्तंसमर्पितं पर्धिवस्यपृथिवीपतेषिचतमासंनपतहींदानाः मध्यस्तिवर्तमानवद्वेतिभूतेलर् ॥ ४३ ॥

राजाचासीऋषिश्चराजिषः कौरवेदः कौरवश्चेष्ठः श्रिया महाराजिश्चयाज्वलसत्त्रशोभमानः चक्रमाक्षांवलंवर्तयतिप्रतिवर्तयतीतित्वक वर्तीवृहच्छूवः वृहतीकीर्तिर्यस्यस्यवंभूतः यः परीक्षित् गजाह्नयेशासीत् संश्चुनाशास्त्रमुक्तरूपेगाद्दतिशेषः ॥ ४४॥

वताबृह्ण्ड्यः वृह्ताकातियस्यस्यप्राप्तः वर्तमानसामियेव्यः शत्रादेशः पालितवतः सत्रायसन्नकर्तुंश्यंदीस् इत्यंभूतानुभावः अयंबुद्धिस्थोनृपोऽभवदितिशेषः यस्यपालयतः वर्तमानसामियेव्यः शत्रादेशः पालितवतः सत्रायसन्नकर्तुंश्यंदीस् ताःदीक्षांकृतवतः ॥ ४५ ॥

इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतप्रदीपेप्रथमस्केश्रीयसम्दशाध्यायार्थप्रकाशः॥ १७॥

# त्रिक्षेत्रके विकास के किन्द्रके के किन्द्रके के अन्य कार्य के किन्द्रके के किन्द्रके के किन्द्रके के किन्द्रक स्टब्स के किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके किन्द्रके

बन में जाते अपने पितामह युधिष्टिर के दत्त पार्थिवीचित आसन पर वह राजा अभी विराजमान है ॥ ४३ ॥ कीरबेंद्रोंकी राज्य श्री से उच्छसित वह वड़ा यदाखी महाभाग चकवर्ती राजार्षि अब गजाह्य (हस्तिनापुर) मैविराजमान है ॥४४॥ जिसके पृथिवी पाछन समय में तुम सब सब में दीक्षित हुए ही, वह अभिमन्य द्वत राजा ऐसा प्रमाववाला है ॥ ४५॥

सत्रवा अध्याय समात्र ॥ १७ ॥

ราง (18 เพาร์ ตอกตัวสำนัก การร้องการกรียกตัว**หน้า**พยธร 6 ก มหัวได้เลื่อ

-----**\*:----**- พ.ศ. - รถอย์ที่สมัยใหม่เหมืานสมัยละยุ รมละสมันส์ บลุกยุรักษณะสมัย

: E: 153 18 16 16 16 18

# K They don't come to the country of the confidence of the confidence of the confidence of the confidence of the country of the confidence of the country of the confidence of the country of the country

स्त उवाच ।

यो वै द्रौण्यस्त्रविष्ठुष्टो न मातुरुदेरे मृतः।
त्रानुप्रहाद्रगवतः कृष्णस्याद्धृतकम्भेगाः॥ १॥
त्रह्मकोपोत्थिताद्यम्तु तत्त्वकात् प्राण्णविष्ठवात्।
न संमुमोहोरुभयाद्रगवत्यिताशयः॥ २॥
उत्सृज्य सर्वतः सङ्गं विज्ञाताजितसंस्थितिः।
वैयासकेर्जहौ शिष्यो गङ्गायां स्वं कलवरम्॥ ३॥
नोत्तमःश्लोकवार्तानां जुषतां तत्क्षणमृतम्।
स्यात् संभ्रमोऽन्तकालेऽपि स्मरतां तत्पदाम्बुजम्॥ १॥

#### श्रीधरस्वामी।

राइस्वष्टादशे तस्य ब्रह्मशापो निरूप्यते। स चानुत्रह प्वास्य जातो वैराग्यमावहन्॥०॥

परिक्षितो निर्याग्रामस्याश्चर्यं वकुं तत्सम्भावनाय जन्माश्चर्यमञ्ह्यारयति यो वा इति । विष्छष्टो निर्देग्धः सन् ॥ १ ॥ ब्रह्मकोपादुत्थिताच् तक्षकात् यः प्राणाविष्ठवः प्राणानाशस्तस्माद्यदुक्षभयः तस्माब्यः संयुक्षेष्ठः । अत्र हेतुः यस्तु भगवत्यपिताश्च इति ॥ २ ॥

किन्तु उत्सृज्येति। वैयासकेः शुकस्य शिष्यः सन् । विश्वाता अजितस्य श्रीहरेः संस्थितिस्तन्वं येन सः॥ ३॥ न चैतच्चित्रमित्याह । उत्तमःश्लोकस्येव वार्त्ता येषु अतएव नित्यं तत्कथाक्रपममृतं ज्ञुषतां संभ्रमो न स्यात् ॥ ४॥

दीपनी।

0 11 2-0 1

#### श्रीवीरराघवः।

अधैतत्प्रवंधिपपृच्छिषामुद्धोधियतुंपारीक्षितमवशिष्टं वृत्तान्तं समासतोवद्धुपसंहरति यहति दशिमः योवैपरीक्षिनमातुरुदरेष्ट्रीयद स्रोग विष्छुष्टोदग्धोऽप्यञ्जतकर्मगाः कृष्णस्यभगवतोऽनुप्रहान्नमृतः ॥ १॥

यश्चवसकीपेनब्राह्मणाशापात्मकेनद्धत्थितात्समुपस्थितात्प्राणानांविष्ठवोनाशोयस्मादुष्भयं यस्मात्तक्षकाष्ट्रसंसुमोह्दमोह्दनप्राप्तः। नावि भोदित्यर्थः कथंभूतः भगवत्येवार्षितः आशयोऽतःकरगांयेनतथाभूतः सन् ॥ २॥

सराजासर्वतःसर्वत्रदेहतद्वुवंध्यादिषुसंगमुत्सृज्यवैयासकेःशुकस्यशिष्यो भूत्वाविकातेऽजितेभगवतिसंस्थितिनिष्ठायस्यस्थानकेवरं गंगायां जही तत्याज ॥ ३ ॥

मोहामाव मेवसहेतुकमुपपादयति नेति उत्तमः श्लोकस्यमगवतीवार्तायेषांतेषांतभयमोहोवास्तीत्यथेः किमुत्तमस्योत्तमश्लोकस्यकथा मृतंज्ञुषतांसेवमानानांतत्त्पदांबुजंस्मरतामंतकाळऽपिसंभ्रमपवस्यात् ॥ ४॥

श्रीविजयम्बनः।

पुनरिपमगवितमाकि विधानार्थीतन्माहात्म्यमुञ्यतेऽस्मित्रच्यायेतदर्थेपारीक्षितस्त्रयीणमुपक्रमते यहित योऽ सुतक्रमेशाः श्रीकृष्णस्यातु ब्रह्मत् द्रीययस्त्रदग्धोऽपिमातुरुत्तरायाउदरेनमृतः॥१॥ [१३६]

## श्रीविजयुष्वजः।

यश्चब्रह्मशापोत्थितात्ब्राह्मण्यापेरेरितात्त्तक्षकनागात्प्राण्यविष्ठवेविनाशेप्राप्तेसतिभगवत्पर्पितचिसत्वाग्मरणाख्योद्दभयाष्ठसंमुमोह २ सपरीक्षित्सर्वतः सर्वेषुराज्यविष्ठस्नेहळक्षणंसंगमुत्सृज्यवैयासकेः श्रीशुकस्याशिष्योभृत्वातदुपदेशेनात्मयोग्यंविक्षानंस्वरूपविषपरत स्वापरोक्षक्षानं तेनअर्जितासंपादितासांस्थितिमुक्तियेनसतयोक्तः गंगायांप्रासादेस्वकळेवरंजहावित्यन्वयः॥ ३॥

नैतदाश्चर्यमित्याह नेतिज्ञमश्लोकस्यवार्ताप्रसंगोयेषांतेतथा उत्तमश्लोकस्यवार्ताजीविकायेषांतेतथेतिवा। तेषांश्रवणापुटेनतस्यहरेः कथामृतंज्ञुषतांश्रवणाव्याजेनसेवमानानांतस्यपद्भपद्भांचस्मस्तामंतकालेसंग्रमोनस्यदित्यन्वयः निरंतरंहरिचरणानिषेवणोनात्यंतिकप्रलेषस षेदेहविरहमिच्छतांदैनंदिनमरणभयंनास्तितिषिवर्णनीयमित्यपिशब्दार्थः। उत्तमश्लोकवार्तादिष्वेकमेवालंमिलितंकिमुवर्णनीयमितिषा॥४॥

क्रमसंदर्भः।

०॥१॥२॥३॥४॥

# सुवोधिनी।

"अथाध्यायद्वयेनास्यवृत्तमुत्तरमीर्यते शापात्प्रायस्ततोराज्येशापोवैराग्यबोधकः संक्षेपकथनं पूर्वश्रोतृप्रीत्यनुसारतः विस्तारोत्त्री तयोः श्रद्धान्धाधाचान्योऽन्यमीर्यते तादशंफलवत्तान्यदितिस्थापियतुद्धिजात् भापस्तुहरिग्णाप्रोक्तस्तक्षकाग्नेरलोकिकात् शानिनोदेहनाशाय नान्यथासृतवर्षगात् यादवेश्यस्तयोत्कर्षःशापमुग्धेश्यईर्यते" प्रवंतस्यराज्यहिथितिमुक्तवाडत्तरस्थितिसंक्षेपेगाह योवैद्रौग्यस्त्रेति येन भगवतापूर्वसंरक्षितः तेनैव चेदानीमुपसंहतदिवोधयित अद्भुतकर्मग्राहति प्रष्ठ्षोनसृतः असृतंपीत्वासृतद्दिभगवतः कृष्णस्यति प्रकटा प्रकटवद्यनाम्निमातुरुदरेनमृतःगंगायांतुमृतद्दिति ॥ १॥

इहानीमरणेविशेषमाह बहाकोपौत्यितादिति तक्षकोऽप्यथस्तात्स्यातुमशकः ब्रह्मास्त्रमत्रागत्यसफलंजातमितिब्रह्मशब्दप्रयोगःप्राह्मानं बिप्रबोयस्मात्इतिनिरुद्धानामप्रौपवेशात् महानुपद्भवः सर्वत्रप्राह्मानाप्रिस्पृशितिकत्रस्पर्शोद्धाविष्ठवः अत्रप्रवोद्धमयात् संमोहामावेहेतुः भगवत्यर्पिताशयइति आशयस्यतस्रकात्रहणार्थमगवितसम्पर्णाम् ॥ २॥

तस्यदेहत्यागप्रकारमहिंउत्सृज्येतिप्रथमतःपरित्यागस्ततोगुरुक्कपातस्यतत्सम्प्रदायात् भगवत्स्वरूपविद्यानंततोगंगायांदेहत्यागइतिविद्या-विग्राह्मतिर्वाजितस्यसंस्थितिर्यनसम्यक् स्थितिवर्यवस्था ॥ ३ ॥

क्यंमहाभ्रमेनसम्भ्रमहत्याकांक्षायामाहउत्तमश्रोकस्येववार्तायेषांभगवतसम्बन्धिनांसर्वदातत्कथामृतंज्ञुषतामुपनिवद्धांसद्धिः कथ्यन्मानांकिचतत्पदाम्बुजंसवमानानांभ्रमस्तुस्त्रिपातकार्यदोषागुणाश्चपकीभृतायदेकत्वं सम्पद्धते "वयासंनिपातस्वहमिति ममत्युद्धवयाता मितः" व्यवहारश्चसंनिपातः तेनयावत्संनिपातव्यवहारः अन्तेऽपितत्कार्यप्राप्नुवति दहेन्द्रियातःकरणोः भगवद्यिकार्यकरणोपूर्वसंनिपातो निवर्तते तत्रलोकिकीवार्त्तातामसीआवश्यकरिग्जसीभगवज्ञनंसात्तिकं विपरीतम्वा आद्यमानसं यद्धिमनसाध्यायतीतिश्रुतेः अतोनिरं तरंकार्यद्वियांतःकरणोः सवीजदोषेनिराकृतेत्रयाणांस्वभावपरावृत्तीसंस्पर्शमणेलीहादेरिवसर्वस्यअसंकिलष्टभगवतस्वरूपाभिनिवशात्तम् मजनकत्वित्यर्थः यद्यप्यतकालेदेहिन्द्रयांतःकरणानांवैक्लव्यंसम्भवतित्यापितेषांकालस्यनांतकत्वमंतकसम्वधित्वंवाअमृतपानेनित्यत्वा वितिभावः॥ ४॥

# श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

अष्टादशे मुनेः कर्राठे सर्पे वश्वा गृहागतः । कार्वकार्यम् नुपरतस्य पुत्राच्छापमथाश्चराति ॥ ०॥

परीक्षितः कलिनिग्रहश्रवग्रानातिविस्मितान् मुनीन् पति तस्य जन्माविध भगवत्प्राप्तिपर्यन्तं सन्वेमेव वरित्रमस्यद्भृतं संक्षेपेग्रा ग्रायिश्राह यो वा इति। विष्हुद्दी निर्देग्धः ॥ १ ॥ २ ॥

वैयासकेः ग्रुकस्य शिष्यः सन् विश्वाता अजितस्य हरेः संस्थितिस्तर्स्य येन सः । विश्वातोऽनुभवगोचरीकृतोऽजितः संस्थिती मरग्रा-

नैतिश्चित्रमित्याह नोत्तमेति। उत्तमश्लोकस्य वार्त्तव वार्त्ती जीवनहेतुर्येषां तेषाम् ॥ ४॥

# . विद्धांतप्रदीपः।

अवशिष्टंपरीक्षिद्वतांतमास्कंधसमाप्तेर्वक्तम् तद्वतुतजनमरहस्यसमदगापूर्वतं तदुपाख्यानंतिधनपर्यतम् संक्षिप्यदर्शयति ब्रह्तिनसमिः द्रीगयक्षेगाविष्लुष्टोनिर्वग्धोऽपिनसृतः ॥ १ ॥ तुत्राब्रह्तत्रभृगाजनेश्यः परिक्षतोषेलस्यायंग्रीतस्रति त्रस्तुश्रद्धीसुनिक्षोपेनोत्सितास्त्रभाषः प्रात्यविष्ठपः प्राग्यम्यायस्ततो वर्ष

TERRETORIES (1997年) (

नार्के मानावध्यात्रहार श्रीवरद्वान

तावत् कलिर्न प्रभवेत् प्रविष्टी प्रशिह सञ्वतः ।

यावदीशो महानुव्योमाभिमन्यव एकराँट् ॥ ५ ॥ . एक्टर विकेश प्रकारिक के लागे का**यास्मिन्नहानि यहींयां भगवानुत्सर्तर्ज, गाम्** का कार्य का कारी कार की कार के उपनि

तदैवेहानुवृत्तोऽसावधर्मप्रभवः कलिः ॥ ६ ॥

नानुदेष्टि कलिं सम्राट् सारङ्ग इव सारभुक्।

कुशलान्याशु सिध्यन्ति नेतराशि कृतानि यत् ॥ ७ ॥ किन्नु वालेषु शूरेगा कलिना घीरभीरुगा। ग्रप्रमत्तः प्रमत्तेषु यो वृको नृषु वर्तते ॥ ८ ॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

ः पताद्विदृग्गोति सर्वतःसर्वेषुदेहगेहादिषुसंगमुत्सृज्यवैयासकेः शिष्यः सन् तहनुत्रहाद्विक्षातेगुग्राचन्यादिविद्येषविवेक्षेनस्रुष्ठाते इजितेकाळकर्माच स्पृष्टस्वभावेश्रीकृष्णोसम्यगातमभरन्यास इत्पास्थितिर्यस्यसः गंगायांतसीरस्वकलेवरंजहीतत्याज॥३॥

युक्तं चैतदित्याह उत्तमश्रोकस्यवार्त्तायेषुतेषाम तस्योत्तमश्रोकस्यकणात्मकममृतंज्ञुषताम् ध्यानमार्गेगातस्योत्तमश्रोकस्य श्रीकृष्ण स्यपदांबुजंस्मरतांचसम्भ्रमोंऽतकालेऽपिनस्यादत्रोत्तरोत्तरकेमुत्यिकन्यायोऽपिक्षेयः॥ ४॥

### भाषाटीका ।

सुतडवाच जो परिक्षित अश्वत्थामा के अस्त्र से दग्ध होकर भी अद्भुतकर्मा भगवान श्रीकृष्ण के अनुश्रह से माता के उदर में नहीं मरे थे ॥ १ ॥

जो कि भगवान में मन के अर्पण करते से प्राणनाशक ब्राह्मण कोष से उत्पन्न तक्षक रूप महा भय से मोहित न मुखे थे ॥ २ ॥ जिनने ईश्वर की मर्यादा कूं जानकर शुकदेव जी का शिष्य होकर सर्वत्र संग छोड़कर अपने देह की गङ्गाजी में त्यांगु दिया ॥ ३॥ क्योंकि मगवद्भकों को मगवत्कथा मृत सेवन करने से भगवत्पदांबुज सेवन से अन्तकाल में मी सम्भ्रम नहीं होता है ॥ ४॥

#### 

तस्मिन् राह्मि सुतरां तम्न चित्रमित्याशयेनाह तावदिति । अभिमन्योः पुत्रः । एकराट् चकवर्ती । ईशः पतिस्तावत् ॥ ५ ॥

नतु तदा कलेरपवेश एवास्तु प्रविष्टोऽपि न प्रभवेदिति कुतः तत्राह । यस्मिश्रहनि यहि यस्मिश्रव क्षगो । गां पृथीम् । अनुवृत्तः प्रविष्टः । अधुर्मस्य प्रभवो यस्मिन् ॥ ६॥

ननु अध्यम्भेद्देतुं फलि सब्वेथा कि न हतवान् तत्राह नानुद्रेष्टीति । सारङ्गो भ्रमर इव सारप्राही । सारमाह । यत् यस्मिन् कुशलानि पुरायानि आशु सङ्कलपमात्रेगा फलन्ति। इतरागि पापानि आशु न सिध्यन्ति । यतस्ताति कृतान्येव सिध्यन्ति न तु सङ्किष्यत 

्र नतु दोषाधिक्यातः तद्क्षेत्र एवं युक्तः न धीरेषु तस्याकिचित्करत्वातः स्याहः। कि उत्तेन भवेतः। वालेषु अधीरेषु । अप्रमत्तः सावः धानः सम्यो वक्रश्वः वर्तते ॥ ६॥ वर्षाः ।

वृकः ग्रींघ इति स्थातः। वर्तसादन इति राजनियगृहः ॥ ८॥ ९ ॥

# Application of the second seco

The state of the s ्िसिहाबलोकनन्यारेनयस्थ्यालयतः क्षोग्रािमित्यनेनाभिजेतगुपमावयति ताबदिति इत्लोकसवैत्रमविष्ठोऽप्रिकलियोखदुर्व्यास्थिमन्युखन वकराय्स्त तुत्वराजांतररिद्यतं श्वरोऽधिपतिर्वभ्वतदाक्षाचायाववतु इत्तावभ्वतावत्कालिनेभवेशसम्भोवभूव ॥ ५ ॥

# श्रीवीरराघवः।

कदाप्रविष्टदत्यत्राहः यस्मिष्ठहित्यश्चेवक्षयोमगवात् कृष्योगांभूमिमुत्ससर्जतत्त्याजतस्मिषेवाहिनक्षयोचासावधमेप्रभवः किंहरनुप्र-ब्रुत्तः प्रविष्टोबभुव ॥ ६ ॥

न्जुकिंकुतोनहतवानित्यत्राह नेति सम्राट्सार्वभौमःपरीक्षित्किंनानुद्वेष्टितन्मरग्रापर्यते हेपैनकृतवानित्यर्थः वर्तमानसामीप्येलट्कुतः यतःसारंगइवभूगवत्सारभुक्सारानुभवितासारश्राहीतियावृत्सारंगोयथाकमलगतंसारंमकरंदंगृह्वातिनतुतन्नादायति तद्यत्कलिगतसारब्रा हित्वाश्वतंजघानेत्यर्थःकोऽसौतद्वतसारः यज्जिषृश्चस्तनानुद्वेष्टीत्यत्राह कुशलानीतियद्यस्मिन्कलौकतानिकुशलानिभगवश्वामकीर्त्तनादिकपा श्चिपुरायकर्मारायाद्यसिम्यंतिमगवत्प्राप्तिमावहंति इतरारायकुशलकर्माशिपापानीतियावत् तान्याशुनासिध्यंति नफलदानिभवंतिपतत्सार भुङ्नानुद्वेष्टि अनेनकृतादियुगेषुकुशलानांचिरेण फलदृत्वमितरेषांत्वाश्वितिस्चितम् ॥ ७॥

नतुकिनाभिभूतेर्जनैः कुशलानिनकृतान्येवस्युः येनाशुसिध्येयुरित्यत्राह कित्वितिवालेषु मूर्खेषु विषयभूतेषु श्रूरेगाधीरेषु विवेकिषु तुमीरुगाक्तिनिक्तिनुकृतंस्यात्रकोऽप्यनर्थः कृतः स्यादित्यर्थः तदेबद्दृष्टांतेनदर्शयम् विशिनष्टि यः कलिरधीरेषु वृकद्वस्रमतेतेष्वेवजनेषुसर्वे

तोवर्तते ॥ ८॥

#### श्रीविजयध्वजः ।

मदीयेराष्ट्रेनवर्तितव्यमित्यस्याभिप्रायः कलेः सामर्थ्यप्रकटनाभावः नतुप्रवेशाभावद्दत्यभिप्रेत्याहः तावदिति आभिमन्यवअभिमन्योः पुत्रः परीक्षिदेकराट्चक्रवर्तीयावद्यावंतंकालमुर्व्यामास्तइत्यन्वयः कीह्यः महानीशः सप्तद्वीपवत्याः भूमेरिघपतिः नमंडलेशइत्यर्थः तार्व चावंतकालमिहसंप्रविद्योऽपिकलिः नप्रभवेत्स्वराक्तिप्रकटनसमर्थोनाभृदित्यन्वयः॥ ५॥

कदानुव्यीकिलः प्रविष्टइतितत्राह यस्मिन्निति ॥ ६ ॥

सारंगोमधुकरइव सारभुक्सारप्राहीसम्राट्किंनद्वेष्टीत्यन्वयः कुतइतितत्राह कुशलानीति कुशलानिसुकृतानि इतरागिपापानिय द्यस्मात् ॥ ७॥

इतोऽप्युदास्तइत्याह निम्विति धर्मञ्चानादिकंवृग्गोतीत्यावृग्गोतिनादायतीतिवृक्षः शूरेषुभीरुगाबालेषुशूरेगाकलिनाकिमुर्किप्रयोजनम्॥ ८॥

# क्रमसंदर्भः।

तावत् कलिनं प्रभवेदिति दत्तानामपि तेषां स्थानानां तत्प्रभावेनानुद्भवात् ॥ ५ ॥

प्रवेशकालमाह यस्मिन्निति॥६॥

सारमेवाह कुशलानीति। लोको विकर्मनिरतः कुशले प्रमत्त इत्याद्य सुस्रोरेश सर्विमङ्गलमयानि भगवत्की सनादीनि आशु सङ्करप-मात्रेगा कलावपि सिध्यन्त्येव कर्लि समाजयन्त्यार्थो इत्यादेः कृष्णाचरितं कलिकलमण्डनमित्यादेः श्रुतोऽनुपरितो ध्यातः इत्यादेः सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृतिभिः शुश्रृषुभिस्तत्क्षणादित्यादेः यस्यां वै श्रूयमाणायामित्यादेश्च । इत्रणाण कम्माणि तु कृतान्यपि न सिध्यन्ति । "अतः कली तपोयोगिवद्यायज्ञादिकाः क्रियाः । साङ्गा भवन्ति न कृताः कुशलैक्वीपि देहिमि"रिति ब्रह्मवैवर्तात् । ततो महाफलानां तत् कीर्त्तनादीनां सिद्धिश्चेनमा सिद्धान्त नाम तुच्छफलान्यन्यानीति तदमिप्रायः॥ ७॥

बालेषु तद्बुधेषु । धीरास्तत्र बुधाः । तद्बुधत्वादेव प्रमत्तेषु ॥ ८। ९॥

# सुवोधिनी ।

मञुक्तर्थकाळनियासकःवंतेषांतत्राहतानःकळिरिति तस्यराज्येऽधिकाळसम्बन्धोनास्ति तत्रकथतदायुषिसम्बन्धः आधिदेविकत्वा द्रस्यकालस्यननुगुगानांगुग्यपेक्षयाहीनत्वात्भगवत्कृतंकालंकथमयंनिराकृतवानित्यत्थाह प्रविष्टोश्पीति मणिनायथाग्निस्तम्भः तथा राजनिविद्यमानेकलेः प्रतिष्टंभः भगवदीयत्वात् विशेषेऽिपकार्यापेक्षयागुगानामुत्कृष्टत्वात् प्रतिष्टंभएवराक्षाकृतः नमुख्यदेशात् दृतीः कर्गातदाह इहसर्वतः प्रविष्टोऽपीति अनेनकालस्यदेशपरिच्छेदीनिवारितः ननुप्रविष्टोऽपिवशीकर्तुकणंशक्यःतत्राहर्दशहति भगवत् प्रवेशादिश्वर्यदानाद्वार्दशत्वंसहिकर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुस्मर्थः किंचभूगवताकालोऽप्यिष्ठितः राजाचतयोः पुनाराजामहान्कृतः अतः प्रतिवन्धा युक्तएव किंच अयंभागिनेयपुत्रः व्यवहारमान्यःसतुवाहनरूपः अतोऽप्यस्यमहत्त्वं किंच किलःषडंशःप्रवर्ततदेशाविषये अन्येष्वष्टवर्षे पुत्रेतायुगसमः कालोवर्ततकतिवजनात् अयंच्यक्तराट् अतः खगडमगडलाधिपतिः महाखगडमंडलेश्वरात्प्रातिकहाः॥ १०००

नतुभगवत्यवकाल्एवकलिनंप्रवृत्तकतिकुतोनांगीकियते तस्यतेयःक्षणोनीतस्तिवाक्यातुरोधात् सूर्यगत्यागणनायांकालप्योत्कृष्टः कस्मान्नोच्यतद्वयाशंक्याह यस्मित्रहनीति सत्यमेताश्यामुत्कर्षकर्णुशक्यतेपरंनसम्पन्नःतत्रमापरातेभगवानवतीर्याः कलिश्चनप्रविष्टः तथाच भगवतासूर्यगतिरुत्तकुष्टैव अध्यचलितेभगवति उत्कर्षकाभावात प्रीक्षितश्चाप्यधिकारात्प्रविष्टः अतः प्रप्रविष्टस्यच्छेर्नेमयदिष स्वदेशा सनिराकरणा पश्चादागत्यपुनस्तावन्तकालमनुभवेत ततश्चकल्ययवतारकालेवाध्येतथतोमगवतासहस्रभ्यस्यमानवलत्वामावातनासी उत्कर्षहत्यभित्रार्यगाहरः यसिमग्रदिवसेयस्मिन्क्योभगवानत्यक्तवान् तदैवायङ्गिल्प्यस्यः तद्येक्षयास्थितप्रथमग्वति विकित्स्वयमुपिष्टः तस्मिन्नु पविष्टेप्यसर्वेअधर्माः प्रवृत्ताः ॥ ६ ॥ the spirit the state of the sta

# उपवासीतवनडः पुर्वाचिनिक्तं ज्या ।

मनुत्यापितुष्टत्वात्मारणमेवोचितंनिप्तकरणंताम्भावां सम्प्रांनीप्त स्वेतं नेप्ति विक्र स्विक्ष्यतीत्याचे नानुद्देष्टीतियद्यपि राजा सर्वेकन्तिस्यंः तथापिकिलिनानुद्वेषिनन्वधर्मप्रभवत्वात्मयुक्तिदेषः तथाहसारभगितिवीष्टित्वत्यः सन्तीतितेनिराक्तियन्ते अपितुत्व विमोक्षेनतुतुद्यंते तथायमिपराजासारमेवभुक्ते सार्वेवविद्यां असीरत्वनेषिष्टित्ते भविति अतिकिनाप्यं शेननिष्देष्टि ननु विषमधुसंयुक्ता स्वागवत् गुणादोषयोन्तुत्वयत् द्वेषस्यत्विप्तकात्रकृतित्वयां स्वागवत् गुणादोष्ट्रवाद्वात् द्वेषस्यत्वेषक्र स्वागवत् गुणादोष्ट्रवाद्वात् द्वेषस्यत्वेषक्र स्वागवत् तथायाति तथायाति अतिकित्वयादिष्ठविद्यात् स्वागवत् तथायात् तथायात् स्वागवत् स्वागवत् स्वागवत् तथायात् स्वागवत् स्वागव

किंच नायंकिलिई शेवर्तते किंतुपुरुषेषुतत्रापिपमत्तेषु अतिशिक्षकत्वेनृतस्यास्यकृतवात् उपेक्ष्यैवतत्रनद्वेषदृत्याद किंत्विति तुद्याद्देन पूर्वपक्षोद्देशिस्यत्रूपोनिवारितः वालेषुधर्मार्थप्रवृत्तेषुशीष्ठमेवफलिस्द्रौप्रपंचित्रलयःस्यात् धर्मेणांतःकरणशुद्धोद्धानोद्येनसर्वत्याग् प्रसंगात् अतपवतत्प्रतिवन्धार्थश्ररेणयेतुमोक्षाधिकारिणोधिराः तेश्यस्तुविभेति किंच वैराग्यहेतुश्चायंयतः प्रमत्तेषुअप्रमत्तः आयुः स्रत्वात् अतपवकलावल्पायुषोभवति ननुकथमेवंस्वभावस्तत्राह योवृक्षदिति अयंतुवृक्षद्भपः सरात्रीश्चयानात् अरिक्षतान्याल्लानेष स्रद्धाति नत्याव्यवत्सर्वभक्षकः अतपवतद्वधार्थमहतांप्रवृत्तिः एकवचनेनासहायताम् विता तत्रापिविशेषः नृषुवर्षतेननरोत्तमेष्वनृत्येषुवा

श्रुषिषु अतुउपेक्षगीयहत्यर्थः ॥ ८॥

## श्रीविश्वनाथचकवर्सी।

राज्ञा निगृहीतस्य कलेस्ततः परं कीहशी स्थितिरभूदित्यपेक्षायामाह तावदिति ॥ ५॥

कलेः प्रवेशकालमाह यस्मिन्निति । गां पृथ्वीम् ॥ ६ ॥

निगृहीते कली राज्ञः कीहरोा भाव आसीदित्यपेक्षायामाह । सारङ्गो भ्रमर इव सारग्राही । सारमाह । यत् यस्मिन् कुशलान पुरायानि आशु सङ्गल्पमात्रेगा फलन्ति इतराग्ति पापानि आशु न सिद्धान्ति । कृतान्येव सिध्यन्ति न त्वकृतानीति । तेन कुशकान्यकृतान्यि सिध्यन्ति लक्ष्यते । अकृतत्वं खल्विह सङ्गलिपतत्वं व्याख्यातम् ॥ ७॥

मन्योऽपि राम्रोऽभिप्राय आसीदित्याह वालेष्वविवेकिषु ग्रुरेगा कलिना कि न किमप्यनिष्टम्। यती भीरेषु विवेकिषु मक्जनेषु च

मीरुगा। वालकेष्वेव वृक्तः ग्रुरः ॥ ८॥ ९॥

# सिद्धांतप्रदीपः।

इहास्मिन्छोकेसवेतः सर्वत्रप्रविद्योऽपिकालियावदिभमन्युपुत्रः पकराद्खसमनरॅद्रांतरवर्जितः सन्सम्राद् रेशः प्रजानियंताऽऽसीचावस जमवेत्सम्योनवभूव ॥ ५ ॥

किल्प्रवेशकालमाह यस्मिकहिनयिहियस्मिन्क्षणोमगवान् गांभूमिमुत्ससर्जतन्याजतिसम्बहिनतिसम्बद्धायेऽसावधर्मप्रमुखः कि

रदुप्रवृत्तः प्रविष्टोबभूव ॥ ६॥

तन्वेवंभूतमन्थेहेतुकालकृतोजीवंतमेवोत्ससर्जेत्यत्राह नेति सम्राट्कालनातुद्वेषितस्मन्द्वेषंनकृतवान् प्रत्युत स्थानपंचकवानेनातुप्रहे इतवान वर्तमानसामाप्येलदे थतः सार्गदवसमरद्वसारभुक्गुगात्राही सारमेवदर्शयति यद्यास्मनकलेखाशुद्धाद्धोऽन्यकालपरस्त वुपलक्षितमनोनिवेत्त्योनिकुत्रलानिपुपयानि सिद्धचंति मनसापिकतोनिफलंतोतियावतदत्तराधि अपुपयानिवाशुनिसंद्वंतिमनोनिर्वत्योनि वात्रिनफलंतिकितुकतानिरारीराविभिरतुष्ठितान्येवफलंति ॥ ७ ॥

सीतन्य धीरेषुपरमपुरुषध्यानेलन्धस्थैर्येषुभीरुगावालेषुअतस्यक्षेत्रेरगाकिन्वपकतेत्यनीकमपीत्यर्थः पतदेवरश्रांतेनोपपादयति यः

कि: वृक्दवाध्यम्यः सन्प्रमस्यविनविद्वतेषुनुषुवस्ति ॥ ट ॥

#### माषादीका 🁃

हिंदी विशेष के प्रतिक विशेष के प्रतिक के विशेष कि विशेष के

# उपवाशीतमेतदः पुर्शयापिकिक्षतं मया।

न्तुतयांपशुष्टवात्मारणमेशीयतंनिष्कृत्यं । अत्याष्ट्रमा । अत्याप्त । अत्याप्त । अत्याप्त विश्वयं । अत्याप्त विश्वयं । अत्यापिकार्तिन । अत्यापिकार्ति शासामा कार विवास मार है है। हिस्सिक मार किस्सिक हैं कि है र्वेश्यापानिक अधिकतानिकालेन्य तार्थासंस्वता ेराको सम्बद्धाः विकास क्ष्मापाययति गोविन्द्पदिपद्मासर्वं मधुः ॥ १२ ॥ विकास विकास कर्णा । अस्य सम्बद्धाः स्वर्णाः स्वर्णाः स्वर्णाः सम्बद्धाः स्वर्णाः सम्बद्धाः स्वर्णाः स्वर्णाः स्वर्णाः स्वर्णाः स्व एक काली का क**्षीधर्यसामी (**1950ने कालोह देश ५ ५०) कि बहुनी नरिरताबर्टेव कर्सव्यमिति सर्वेशास्त्रसार कथ्यति या या इति । कथनीयानि उरुगि कम्मांगि यस्य तस्य । गुगाकस्म-विषयाः । वभवभिः सद्भावमिच्छद्भिः ॥ १० ॥ **ब्रिषयाः । बुभूषुभिः सन्दावमिच्छन्निः ॥ १० ॥** पुनर्विवस्तारेगा कथनार्थ स्तोकि तत्सङ्गं चाभिनन्दन्ति स्तैति त्रिभिः। शाश्वतीः समाः अनन्तान् वत्सरान् जीव। अत्यन्तसंयोगं द्वितीया। विद्युद्धं यशः कीर्त्तयसि यश्वास्माकं मर्त्यानाम् अमृतं सर्व्यानिवर्त्तकम् ॥ ११ ॥ किंच अस्मिन् कर्मिशा सत्रे अनाश्वासे अविश्वसनीये वैगुरायवाहुल्येन फूलनिश्चयाभावात । धूमेन धूमः विवर्श आत्मा शरीरं येषां तानस्मान् । कर्मिशा षष्ठी । आसवं मकर्ग्न्दम् । मञ्जू मचुरम् ॥१३०॥१३०॥१३०॥॥१३०॥॥१००० । भिक्रेग्रीने कारी विषय कीन की बांच कावी विषयानामात्र कावती क्रवार एवं भारतारी। सारमाह । यह मस्मिन् कुरासाल दुमार्गानि आसु सञ्चलकारण सर्वाण के एवं र प्राणीन व्यक्त मुक्किन । कराण्येन विकासन में रचकरानीति । तेन कुचलानपक्र **न्यापि** विकास स्वीतीन स्वरूप के विकास सामित स्वारी के स्वारी के स उरुणि महान्तित्यर्थः ॥ १० ॥ इतिहास प्रकारित गर्भाव ताम प्रकार काला कि विकास एक्ट्रीय एक्ट्रीय काला काला के काला काला के काला काला के काला अत्यन्तिति। सालाध्वनीरत्यन्तस्यांने (पाँ २ । ३ । ५ ) इति सुत्रेग्रीति यावत् ॥ ११ ॥ ॥ ६॥ ५॥ व्यव् काला काला काला

ास्य तिवस्या ।

इन्सी महिनो तसबैतः सर्वेयम् विनामिक कियोवस्थान स्मार्थ के स्तर्राहर्षित सम्बन्धित स्वाप्त के स्वाप्त है सामियं तार स्वापियं तार स्वापिय

यथूर्यमामप्रच्छततदेतद्वासुदेवस्यक्योपेतम्तुएवशृगवृतांवदतांचुपुग्यावहमेतत्प्रीक्षितःसंवधाष्यानमयावाधुक्षे देवस्पनितित्व हिंगी 

ग"हतिवितीयाकतप्रवमास्त्राद्याद्यत्रतंविशिन्धियुद्धलं कृष्णास्यवियुक्तं विषयममृततुत्ययुगोमन्योतांनो समध्येशस्तिकश्रमस्त्रियत्तिकाति। श्रीयादाशसिक्षितिमावः ॥ ११॥

क्वकिः वृज्यवीरामियः चाराः म् वेक्वनविष्युः प्रचिति ॥ दे ॥ तदेवव्यनक्तिकर्मगाितिथनाश्वासे ऽविश्वासनीयेनिर्भयेनिर्भयत्विनिर्मते ऽस्मिन्यक्षादिकर्मगािनिष्ठानामितिशेषः धूमधूम्रात्मनामकाना वृतमनसां यद्वाधूमेनयह्मियनधूम्रभात्माशरीरयेषांकेवलकर्मजडानामितिभाषः भवानगोविन्दस्यपादपद्मयोरासवसमृतमधुमधुरेपाययात १२

1 12 STOTE

कां कियुग इद्धां प्रवेश सोतेष्ट् सी सवतक समय एपः समा होतिहाँ राज करते से तलतम कुछ प्रमाय दहीं जिया ॥ ५ ॥ विल विस क्षा मनवात से प्रविधी की स्थान क्षिया उसी क्षाप अध्ये का ऐतु काँछ प्रश्नि श्रीकिमिक्रिक वित मधुयंगद्रिकितीयम्भातवोद्धाकुम्हित्यक्षात्रेम् कित्राह्मात्रोद्धात्रे स्वाहित्यक्षात्रे स्वाहित्यक्षात्यक्षात्रे स्वाहित्यक्षात्रे स्वाहित

सुमारीमहर्षभार्या ग्राभ्यतीः समाः बहुवर्षान्जीवशतवर्षानुपर्यस्थान्यान्यान्याः॥ ११॥

कर्मग्रीति। उभयप्राप्ती कर्माग्रा (पां २।३।६५) इति सूर्वेग्रोति यावत् ॥ १२—४८॥

क्षरी**णप्रभा**ष्ट्रका । जुलकानकाशिकाशी जन्मकाले ज

## त्रस्यास लवनाणि कम्हर्यकेशिष्ट्रनर्भवस् ।

कर्मगाज्ञानमातनोतीत्यादिश्रुतिप्रत्यादंतीः प्रत्याशिक्षित्राचिक्षात्रकार्यमात्राप्रदेशाचिक्षात्रात्रात्रात्रात्यात्र सरविश्वरेवाऽतपवहरिक्षणावर्णानेसान् सर्वासम्भापवश्चातेस्त्र प्रत्येकर्माण हर्यकेशेनसङ्गत्वहित्रात्याद्यस्त्र भूमेनधूम्रभारमामनभादीद्रियज्ञा तयेषांततयोकाः कर्मग्रिषष्ठीदर्शनात् तनधूमनधूमृतयापविश्वीकृतश्रीरानस्मानमधुमधुमाधुमानिद्रपदिपद्मासर्वभाषाययतीत्यन्वयः पादपद्मा 

एको अवास्त्रे अन<del>्यामान र</del>ूपासिस संस्थान ॥ 😢 । । एक क्रमणे हु अंग में प्राप्त **केंग्सिंद भे**ंग के प्राप्त करें।

या यास्ताः सन्वी अपि किमुत् श्रीवसुदैवनन्दनसम्बन्धिन्य इत्यर्थः। गुंगीकर्म्मीश्रयास्त्यद्गुगासूचककरमाश्रयाः॥ १०॥

जीव मर्त्यलोके क्र्न्स्वेत्यर्थः ॥ ६६ ॥ १८ । अनेन अनेन भक्ति विश्वसनीयत्वं ध्वनितम् । धूमेन धूम्री विर-क्षितौ आत्मानौ शरीरचित्ते येषाम् । कर्माणा षष्ठी । तानस्मानित्यक्षेत्री अपदाय यशोक्षपम् आसवं मकरन्दं मधु मधुरम् । अत्र सम्रवत् कर्मान्तरं यशः श्रवगावद्भक्त्यन्तरं च श्रेयम् । तदेव भक्तिं विना भूतानां कर्मादिभिरस्माकं दुःखमेवासीदिति व्यतिरेकित्वमान्नं गम्यते । ततुक्तं—यशः श्रियामेव परिश्रमः पर इत्यादि अतो वै कवयो नित्यमित्यादि च । ब्रह्मवैवर्से च श्रीशिवं प्रति श्रीविष्णुवादयं— यदि मांश्रापेतुमित्कत्ति प्राप्तिवत्त्येव नात्यथा । कली कलुपचित्तानां वृथायुःप्रसृतिनि च । भवन्ति वर्गाश्रिमिगानं तु मच्छरगार्थिना-मितिसार्थेश्वारिकारमञ्जूष्ट योगक करमार २००० वर्षे व्याव ग्रीकार कार्याक्ष्मकर्त ।

एवंस्वरूपात्किलस्वरूपंनिरूप्यतत्कथामुपसंहरतिउपवर्शितामिति एवंषोडशेनिरूपेतस्यप्रकृतोपयोगित्वाभात्तपुर्<del>श्यमित्याह स्</del>यानिस्त्र स्नामदिकंधर्मः तथेतसुप्राख्योनमपिपरीक्षित्सम्बन्धिकथनेहेतुःवासुदेवकथपितिमिति॥ ९॥

भिक्षिक यदारमानमपूर्व्यक्तिकथ्यतामिति वाक्येनस्पष्टत्वादुत्तरंदत्तमस्यथासंश्लेपश्चयचनुत्तः प्रश्ने साक्षाद्भगवत्कथा अनिहरूपेकत्विति तदावयंतदैववयंकथंननिवारिताः किंपासंगिकेगोति तत्राह यायाःकथाइति नात्यंतंकथाअनुपयोगिनीभगवत्कथायाआधारित्वात् उत्तमी श्रयत्वमेवाधिकारित्वमतोयाःकाश्चनकथाभगवतोगुगाकमीश्रयाःगुगाःकमीगिचआश्रित्यप्रवृत्ताःताःभातव्याः तत्रहेतुः कथनीयोरकर्मगा इतिकथनीयानिउरुअधिकानिकर्माशियस्यभगवत्कथायाआधिक्यंतिक्ष्यक्रक्थायाः सद्भविभवीततेदवभीक्तजनकत्वमन्यथासद्द्रनामपाठ वत्धर्मीपयोगित्वंस्यात् कथनीयानिउरुयथाभवति तथाकर्माणियस्यकेवलनिईशिनभगवत्कर्माणिनकथ्नीयानि किंतुसाधारणानिसप्रति ष्ठानिकथनीयानीत्यर्थः पुंभिरिति स्वतन्त्रेस्तत्रापिबुमूषुभिःभिषिदुभिच्छति उद्भविष्णुः गृतसहितस्यन्निस्यैवपोषकत्वात्।। १६ साह हरू

एवंनिवृत्तं मृतंप्रतिबुध्यस्वेऋषयः अभिष्रेतार्थकानार्थतंत्रोत्साहयंति मृतः। जीव्रेति ब्राह्मगानाहिसम्ताषदानवाशिष्णवद्ध्यं तिहाह है सुत्रा। र्रा क्वेत्रीं संमान्त्रं जीवन भवतांकोपयोगस्तत्राङ्कः है सीम्य । हेर्नु घं उत्पन्ति हार्ध्व वर्गती वेर्डु फे लिक्की वने धंस्मा क्षेत्र हिस्सा य मितिमानः समाःसम्बर्धाराकः शाध्वते। नित्याः तेहिबहासो मर्वासा अर्थेपविजित्ताना पदीर्थानाम् अर्वेनपिरिमितेका रुपेनिस् क्षेत्रवाति । माशीर्वोदेहेतुमाहुःयस्मात् कारगात् विशदंकृष्णस्ययशःशंसीस ॥ ११ ॥

प्रोगादिशंसनवत् नेदंकर्ममात्रोपयोगिर्कितुअस्माकममृतंतत् मरगानिवर्त्तकंसुखकरं परमानन्दरूपंचतदर्थहेत्नाह विशदंयशःकृष्णा-स्येतिविशदंनिर्मलं विषेधतीतिवा संसारप्रवेशंद्रीकरोतीति अनेतमरगांतिवित्तं यशश्चसर्वेषांसुखजनकंकृष्णश्चपरमानन्दः सदानन्द्वा चकत्वात "कृषिभूवाचकः राज्दोनश्चनिर्वतिवाचकः सद्दानन्द्श्चभगवान् कृष्णाद्द्यभिधीयते" अनेनपरमानन्दत्वंपरीक्षित्कृषाश्चवगामात्रेगाय-दाचमुक्तिनिक तदापार्यप्रवृत्तिमस्मदीयां देश्वानवक्यतीत्यादाक्याहुं? कंमिएय्स्मिश्चिति अस्मिन् यक्षास्यक्मिशिकिलिश्चियामिचिति। नाहितकोहितदेवयद्यमुस्मिन्लोकेऽस्तिवानवेति दिश्वतीकीशाम् करीतिनिश्चतः च्यात्त्रसदेहवचनमवर्मश्रापीत्यर्थः । सतिएवधू मधूसात्मनी भूमेमधूर्प्रवरिमहिले थेषा यक्तितिषः। मुकुटःगुग्रेस्तिसिकः एत्।हरीमहितिकप्रेगीविन्दपादपर्यामधु वापाययति सहित्रसमयोगनकीऽपि रसानापु सूतर स्वयाचापु म्यते अनिनयोगी पक्षयाभवामी देशतायः असिमतात पानिस्क्यप्रदेशपय नेत्राविनदेति श्रीत्र गारिसिक्ति पदिपेगीत मिक्तमार्गप्रचारः अनेनअग्रेऽपिपापंस्चितम् आस्वंदिदेद्दविस्मारकम् अनेनद्वानमात्रानुपंगिकमिति शात्वाउत्सेषःसृचितः मध्वितिमिद्धे स्वद्यात्रामिद्धे । इति । इति

इत्याच्या यस्य लख् । खगन्तु ध्वजाह्य दशः पाद्धि अने ॥ १६ ॥ श्रीविश्वनायचकवर्ती।

बुमूषुमिः खसत्तामिच्छद्भिः। अन्यया जीवन्मृतत्वं स्यादिति भावः॥ १०॥ ११॥ कर्माग्यस्मिन् सत्रे अनाश्वासे अविश्वसनीये वैगुग्यवाहुस्यन फेलिक्शियामाचातः। तेन भक्तेविश्वसनीयत्वमुक्तम् । धूमेन धूमा विवारी असानभक्षाम् वस्त्रे वेशां केशाः वेशां केशाः मुक्तांकि हार्ये अस्ति अस्त ELAGGERALD IL CO. H

## तुलयाम लेवनापि निष्सिष्युनर्भवम् ।

असेवा अस्ति होती है के लिए हैं हैं के स्वार्थ के कार्य हैं के लिए हैं के किस्ति हैं के किस है के किस है के किस न्यां बनुष्य होते कथा वर्षो स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं होते हैं । ज्यां क्ष्यं स्वयं स्ययं स्वयं स्ययं स्वयं स नान्तं गुगानाम गुगास्य जण्मुर्योग्नेश्वरायेभवयान्य्रख्याः ।। १३८-॥ व्यवस्था

तन्नो भवान्वै भगवत्प्रधानो महत्तमैकांत परायगास्य । हरेरुदाराचरितं विशुद्धं शुश्रूतांनो वितनो तु विद्दन्श्रूष !॥ १५ ॥ सवै महाभागवतः परीत्तियेनापवर्गाख्य मदभ्रबुद्धिः। ज्ञाननवैयासिक राव्दितेन भेजखगेद्र ध्वजपादमूलम् ॥ १६॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

य्यंयदपृच्छतपृष्टवंतस्तत्पारीक्षितंपरीक्षिदुपाल्यानंवोयुष्मभ्यमुपवर्गितंमया ॥ ९॥

तत्कथ्यतांमहाभागयदिक्रण्याकयाश्रयमित्यादिमुनिवाक्यृनैवतेषांश्रीकृष्याक्यायांप्रीत्यतिश्चयास्वमतेनापिता एवषुभृषु।भिःश्रोतष्या इत्याह्यायाद्ति कथनीयान्युक्तियावहूनिकमीशियस्यतस्यभगवतः यायागुंगाकमीविषयाः कथास्तास्ताः सवीः षुभूषुभिरुद्भवितुमिञ्छाभः युंभिः सम्यक्सेव्याः ॥ १०॥

रवंवादितंस्तंशीनकोविस्तरतः श्रीकृष्णकथाकी त्तेनप्रार्थयश्रीमनंदतिस्त्तोतिसप्ताभिः हेस्त ! त्वंशाश्वतीः समामनंतान्संवत्सरान्जीव कालाध्वनोरस्यंतसंयोगेद्वितीया हेसीम्य ! यस्त्वं छ प्णास्यविश्वदं विपुलंगत्योनां मरण्यभवताममृतममरस्वसंपादकं मोधस्यशः नोऽस्म अयं शंसिस कीर्चयसि॥ ११॥

सत्यंतोपकर्तृत्वेनाभिनंदतिअनाश्वासेविद्यशंकयावैगुग्यशंकयाचसमाप्तौफलेचाविश्वसनीये**पूमेनपूजोविवर्गामारमा** क्रमस्मिन्कर्मशिसत्रेगोविन्दपादगयासवंमकरन्दं मञ्जमञ्जरमापाययति कर्मशिव्यमा पतेहरिचेष्टितमवणानहोहत्येवसुपेक्षांनकगोसीति भावः ॥ १२ ॥

#### भाषादीका ।

यह बासुदेव कथायुक्त प्रवित्र प्रीक्षित चरित्र जोकि आपने मुझसे पूछा या सो मैंने कह दिया है । ९ ॥ कीर्तन करने योग्य गुर्गोवाली जो जो गुर्गा कर्म युक्त भगवत कथा है वह सब मुस्कु जनों की सेवनीय है ॥ १०॥ शीनक्रजी बोले हे सूतजी । आप अतंत वर्षतक जीतेरहो जोकि निर्मेल यशक्रपी श्रीकृष्ण कथामृत मरनेवाले हमलोगों को देते ही ॥११॥ इस अविश्वासनीय यह कर्म में धुआं से धूम्रात्मा इस लोगों को आप गोविंद पाद प्रम मकरन्द पान कराते हो ॥ १२ ॥

#### श्रीधरखामी ।

मगवत्सङ्गिनी विष्णुमकाः तेषां सङ्गस्य यो लवः अत्यल्पः कालः तेनापि खर्गे न तुलयाम न समं प्रमाम न खापवर्गमः। सम्माम-नामां लोट् । मर्योनां तुन्छा आशिषो राज्याद्याः न तुल्यामहति किमुत वक्तव्यम् ॥ १३॥

एवं सत्सङ्ग्रमिनन्छ श्रवणीतसुक्यमाविष्कुर्विति को नामिति । इसवित रसकः । महत्तमानामेकान्तेन परमयनमाश्रयी यः तस्य कथायास् । अगुगास्य प्राकृतगुगारहितस्य कल्यागागुगातामन्तं ये योगेश्वरास्तेऽपि त जग्मः प्रतावन्त इति न परिगगायांचकः । अवः ब्रियः प्रायो महा। च सुरुर्गी येषां ते ॥ १४ ॥ ..

तकोऽस्माकं मध्ये मगवान् प्रधान संद्यी यस्य स मवान्। नः शुक्रूषतीं हरेखरितं विस्तारयतु ॥ १५॥

तम शुक्रपरीक्षित्संवादेन कथय इत्याहुः स वा इति हाज्याम । वैयासिकना शब्दिन कथितेन येन शानन शानसाधनेन । अपवर्ष इत्याख्या यस्य तत् । खगेन्द्र खजस्य हरेः पादमुळं भेजे ॥ १६ ॥ 1、1995年,中国的1995年的198

The contraction of the second । में वित्यवस्तिपवस्तिमा क्षावयो प्रिन्दानवास्ति।संग्छेशेना पितुल्या रत्यामिमा येशावतुल्यामातिमगवरस्ति।नः स्वापवस्थयः सार्गतस्यलवे वलेशमात्रेगापिखर्गमपुनमेवमोक्षचापिनतुरुधामनतुर्व्यमन्यामद्दृद्धवेः यसस्तेनस्त्ररीमोक्षावेवनतुरुधामः विपुनमस्योजावाशिक्षकामा बीबत्रख्यामिति॥ १३

#### श्रीवीरराम्यः।

ं न चश्रुतमगद्भवृत्युत्यक्रमेविक्षिपृष्ठक्रीसत्त्रार्हकदतिः महत्त्वमानाभेकाति पण्नुत्कर्णमयनं मान्यः आपक्रवासकदेयतेद्रस्ययनमीयत्यनेनेस्यय गमीयस्यस्मित्रित्ययनिर्मितिविध्यांस्युत्पन्नामायमसम्बानांतेत्रेत्तानिर्देशान्तस्यभगवतः कंशायांविषयभूतायांवर्तक्रवेत्कोनामपुमान्तृत्येतनकी इप्रीत्यक्षेः श्रुतानामेवसम्मव्द्गुर्यानांकमेयाांयुन**ःभवयांनकीयायसोनिम्पचति**दत्यादीकौनिराकुर्वेन्भगर्यतं विदिनिष्टियस्यागुर्यास्यदेयगुर्याति बङ्गंशुंशानां मंतमविष्ठंद्रन्वतुं शुंबादयोयोगम्बरार्काष्ट्रनानं मुक्ष्यसुतानाममितुगाक्रमेशामानंत्याच्छ्रतीनामिषनवायमानंत्याचनकीऽपित् प्येक्षि विश्वां अपने प्रस्कायम् १० १० १० १० स्थान विश्वायस्य विश्वयाः स्थापित असीत्र । १९५० १ १५५० १ १५५० विश्वास्थित

ं यत्रणवमतोम् इसिम्बातपर्ययणस्यहरेषदारं विपुलमाचरितचेष्टितविशुद्धं <sup>त</sup>र्शृणवेतिविद्याचित्रिशुद्धाविद्यमाचानेवप्रधानो**मुच्यः अष्ठ**्रि यस्यसभवान्द्रविद्वन् । भगवद्गुणस्यहरेख्दारंश्रोतुमिच्छतीनोअस्मश्र्यवितनीतुविस्तरियतुक्थयतुद्वति याचित् ॥ १५ ॥

संप्रतिप्रष्टव्यपृच्छतिसवाइतिद्वाप्रयांसचक्कविधोमहामागवतोऽनव्पविद्विः परीक्षिचनवियासिकशब्दितेनशुकौपदिष्टप्रागाजेनज्ञानेनगर डघ्वजस्यसगवतः पादमुळभेजेपातः ॥ १६ ॥ which, despite a period of the

# श्रीविजयध्वजः।

क दर्शिकालीनसत्रकरगामंतरेगाव्यकोलीनयक्षकरगोनशुद्धातः करगाजन्यक्षानान्मोक्षः सुकरहत्याद्यांक्याहः तुलयामेति भगवत्सांगि नांवैष्णवानांसंगस्यसेवालक्षणस्यसकाशाचत्सुस्रंतस्यलवेनापिलवलक्षणकालाविङ्कन्नभागेनसहस्वर्गे दुःसासंभिन्नप्रदेशनाकलक्षणमपुन भैवकैवर्णसम्यक्षकपामिज्यक्तिजननाभावलक्षगानतुलयाम तुलियतुनप्रभवामः लड्थेलोट्प्रार्थनायांवा मत्यानामत्येशरीरभोगराज्या दिसंपदः किमृत नतु लयामेति किवकव्यं सायुज्यादि विशिष्टफल हेतुत्वेनांतरंगत्वाक्षसमङ्ख्ययः क्षिप्रमुक्तौतदनंतरंपूर्वस्मादितिरिक्षकेल्य श्रेषाभावाचिरसमयस्यसंचीर्णं महत्सेवादिलक्षणसंगस्यातिसुबहेतुत्वेनतस्यचेहदीर्धसत्रकरणव्याज्ञेनसंभवादिदमेवसर्वेरनुमंतव्यामत्यु-क्रमनेनेतिमावः ॥ १३ ॥

श्रुतभगवत्कथानामप्यस्मार्कनतत्कथायामलंबुद्धिरित्याशयवंतः आहुरित्याहः कोनामेति येभवपावामुख्याः भवः शिवः पाषोशसातीम् क्योयेषांतेतथोक्ताः योगेश्वराःतत्तदधिकारियोग्यमोक्षोपायोपदेष्ट्रप्रधानास्ते अगुगास्यसत्त्वादिगुगारहितस्यसर्वकार्येषुप्रधानस्यवा यस्य श्रानादिशुकानामंत्रमवसानंनजग्मुःकोनामपुमांस्तस्यमुक्तामुक्तवधादीनांमहत्तमानामेकांततोनियमेनपरीयग्रस्यस्यमाध्यस्यमहत्तमेश्यःएकां त्तः प्रायाज्यक्ष्ययाः श्रियोऽप्ययनस्यवाहरेः कयायांतुष्येद्रलंबुकिमाण्डुयादिखन्तयः कीहराः रसविनसारकानीविद्यान्॥ १४॥

िततः किमितितत्राहः ततहति अलंबुधिर्नोस्तीतियतस्ततोद्देविद्वन् ! भगवतांसीभाग्यवतांपुंसांप्रधानीभवान्हरेहदारंचरितसस्माकवितनीः तुविस्तारयतु इत्यन्वयः भगवानेवप्रधानोयस्यमतेसत्रथेतिवा मङ्तमश्चएकातश्चपरायसाश्चितिमङ्त्तमेकातपरायसः मङ्तांब्रह्मादीनामतिः द्यायेनश्रेष्ठः अंतेप्रलयेएकएवनद्दितीयोऽस्तिपरामुकास्तिपामाश्रयः श्रुश्रूपतामित्यनेनश्रवणशीलनंखाभाविकमितिवर्शयति ॥ १५ ॥ 🕬 💮

हरेख्दाराचरितानामनंतत्वात्तेषांमध्येभिषश्यामीतिप्रश्रीमाभूदित्यभिलेषितचरितमिद्मित्याहुरित्याहु तन्नहति तदाख्यानमस्मार्भभा ब्याहीत्यन्वयः परमुत्कृष्युग्यंपुनानं असंवृतः स्पष्टीर्थः पुरुषार्थीयस्माज्ञवतित्योकतत् अत्यञ्ज्ञतानायोगानांभक्तिकानादिलक्ष्मणानांतिष्ठा भीतपाँचतयानितरास्थितिय स्मिस्त तथाक 'तत्कालतोदेशतश्चानंतस्या परिच्छित्रस्यहरेश्चरितनोपपकं सहितंतथापरीक्षित्संवेषिभागवता नामभिरामें मनोहरे भागवताः अभिरमेतेयस्मिन्नितिवा भगवत्सैवधित्वाद्वार भिरामम् ॥ १६॥

#### क्रमसन्दर्भः

तुल्यामीत तैः । तत्र सम्मावनायां लाहिति । तुल्यितुं सम्भावनामपि न कुर्मः किमृत तुल्नां न कुर्म इत्यर्थः ॥ १३ ॥ कांत्रस्य मिक्तियोगस्य देश्वराः कावमबातुत्र्य समयोः । १४।१९ । १६ ॥

and the state of t विक्रयायामत्याव गर्भक्षवाति समावतामाति समावतासां संयोगह्यता इपी समावतासां संगात्त स्थेक देशेना विस्वर्गन तुल्यामः प्रथा त्वतसङ्गेनकथास्त्रपानेसुखंजातं त्त्रशास्त्रभैमविष्यतीतिनकवपयामः स्वासमानत्वापादनेनश्वनादरः स्यातः स्वगीहि "यप्तवुःस्रेनसिप्तप्तः सितिवाक्यात्रं दुःवासंशिष्टः सुविविशेषः सचनीवीपभाष्यः जीकात्मान्दातन्त्रनः तस्येवजीवासर्गातिवृत्तिक्यः अपूर्वभवः यतो नपुनर्भवतीतिः सन्त्रमातुषानन्दापेश्रयाज्यामोऽपित्रमानन्दापेश्रयासपत्रवाक्तभव्यापि आतन्दमयस्यमगवतस्त्रव्योनअवतीति संस्थ्यपदि विहरतेत्तिकप्रणातः अपितितिहिभगवदान्तः विहरस्यास्य अन्ययात्रीतस्यक्षास्यानोत्ते च्येत असभूतस्यवासग्यत्पवेदः नहिम्रोगु माने पिरिययाके मिन्निक्षित्मात्रसक्षियायता समामाने असामन्देवस्याहिरिययोगानवते हिर्मितकाहेः भगवदानन्दाकांभ्रणात् वनो श्चानहासम्बत्ताप्रवर्गयोग्रहस्यता आन्तरत्रव्यामसब्यतनत्व्यमः अत्यानामाधिष्यित्ववातः प्रमधानीः आत्रापर्गतिवर्गमध् भावतास्य विष्यां क्षेत्रिक्षतंत्रावर् विशेषातः क्षेत्रिक्षविष्यागिषस्याधी स्मागिक्रस्य स्था । १६॥ । वचततास्य विषयं क्षेत्रिक्षतंत्रावर् विशेषातः क्षेत्रिक्षविषयागोषस्याधी स्मागिक्रस्य स्था । १६॥ ।

18

#### । सुन्दोधिनी छि

प्रश्निक् भोत्तावन्यक्तास्वकीयम्यातिवायम्यात्वाते स्वयं विश्वात्वे स्वयं विश्वात्वे स्वयं विश्वात्वे स्वयं विश्वात्वे स्वयं स्ययं स्वयं स

तज्ञननत्वेनतत्वं प्रमाण्यमेयप्रमानृणामात्यंतेनयोग्यत्वात्गुणान् कथमत्याद्धः तक्षोभवाभिति तवचैतदेवकृत्यंयतोभगवान्विति स्वीयतेयेनभगवदीयानांमध्येप्रधानोमुख्यः प्रधानशब्दः प्रकृतिवाचकएवित्रियनपुंसकः भगवान्प्रधानंयस्यतिवा किंच महस्तमानांभगवन् कानामेकांततः प्रायणांपरमप्राप्यफलम् अतस्तवापिमहस्वसिद्धयेभगवद्गुणाक्ष्यनभावस्यकामित्युक्तं कथनक्लेशोऽपिनास्तीत्याद्दं हरोरिति भगवद्भचितिर्वेणापिगुणोरेवसर्वे पुरुषार्थादीयंतद्दतिउदारं चरितमित्युक्तंविशुद्धमिति विशुद्धमेवहिसर्वेप्रयासाः सर्वेचमत्काराःचित्रं मगवद्भचित्रात्वार्योग्राचित्रं प्रविच्यत्वार्याद्देशं प्रविच्यत्वार्याद्वार्याच्याद्वाराद्वार्याद्वारायाद्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वार्याप्ताराव्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वारायाद्वार्याद्वाराव्वार्याद्वार्याद्वार्याद्वारायाद्वाराव्वार्याद्वाराव्वार्याद्वाराव्वार्याद्वाराव्वाराव्वार्याद्वाराव्वार्याद्वाराव

प्वंसामान्यतः कथनार्थपार्थयित्वाश्चोत्वचंविद्येषाकारेणपृच्छति सवैमहामागवतहति साधनफलयोर्थंशनव्यभिचारः तत्श्चीतव्यं तत्रश्चीत्वयं तत्रश्चीतुर्धिकागिविद्येषांग्महाभागवतहति भगवद्भक्तोभागवतः यस्तुभागवतानासुत्तमत्वेनगृहीतः सफलमुख्योमहामागवतः अत्यन्तं भगवत्कृपावलोकितः श्रोतामुख्यद्वत्युक्तंभवति तस्यत्यात्वेहेतुमाहपृतिक्षिति पूर्वभृष्टमतुष्यायश्चितिनवत्त्वायत्विक्षत्वं येनोपदंद्ये भगवत्कृपावलोकितः श्रोतामुख्यद्वय्यक्षेमवति तस्यत्यात्वेद्वयाद्वित्ते प्रतिकृष्टि प्रतिकृष्टि विद्यते तदेवास्मिन्द्रशास्त्रविद्यते तदेवास्मिन्द्रशास्त्रविद्यते तदेवास्मिन्द्रशास्त्रविद्यते तदेवास्मिन्द्रशास्त्रविद्यते तदेवास्मिन्द्रशास्त्रविद्याद्येक्षात्रविद्यति विद्याप्तिकृष्टि स्वयति स्वयत्व स्वयत् स्वयति स्वयत्व स्वयत्व

#### श्रीविश्वनायज्ञकृतर्सी ।

तस्मात व्याद्धासाञ्चसङ्गमहानिथेमाद्दात्म्यमस्मदन्त्रभृतगोचिकितं क्रियत्यम् प्रत्याहः । भगवतसङ्गिते मकास्त्रकां सङ्गस्य यो छवाऽत्यव्यः कालस्तेन स्वर्ग करमेफलम् अपुनर्भवं मोश्चंच आनफलं न तुल्यामः मर्त्यानां तुल्छा आशिषो राज्याचाः किमुत वक्तव्यं न तुल्यामित । यतः साधुसङ्गन परमदुलेमाया भक्तेरंकुरोः दृषुद्भवतीति मावः । तत्र भक्तेः साधनस्यापि साधुसङ्गस्य लवेनापि कर्मन् आनादः फलं सम्पूर्णमपि न तुल्याम किमुत वहुकालव्यापिना साधुसङ्गन किमुततमं तत्फलभूत्या भक्त्या किमुततमां मिक्किलेन प्रमाति च केमुत्यातिशयो द्योतितो भवति । तथात्र सम्भावनार्थकुल्योदा तोलने सम्भावनामेव न कुर्मः । न हि मेर्गा सर्पपं कश्चित्तुन लयतीति द्योत्यते । यहुवचनेन वहूनां सम्भाया नेषोऽष्ठः केनचिद्यमाणीकर्न् शक्यते हति व्यल्यते । भगवतसंगिसंगस्य इत्यनेन—न त्रवास्य मिन्नेत्र केलेशो विद्यसंगतः प्रविद्यसंग्रह्मा पुर्वास्त्र स्वानेन न त्रवास्य मिन्नेत्र केलेशो विद्यसंगति । योषित्संगादिप पोषित्संगति संगो प्रविद्यसंगति क्रिकेशो विद्यसंगति । स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगित स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति संगो प्रविद्यसंगित सम्भवति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति सम्भवति स्वानित्रसंगति संगो प्रविद्यसंगति सम्भवति सम्भवति सम्भवति स्वानित्रसंगति सम्भवति सम

नतु सन्तर्भव प्रशस्यते साधुसमा वतस्त विना कृष्णिकयास्तरी न लेक्यते स युष्माभिलेक्य प्रवेति कि पुनस्तस्यव प्रीमाधुम्यक्रियति कि वास्तर्भव प्रीमाधुम्यक्रियति के नामति। रसविद्यसम्बद्धाने तथा का नाम महसमिनाम प्रकारित प्राप्त विषय क्रिया प्रस्तर्भ क्रिया प्रस्तस्य क्रियायी कृष्यकितिप्रशामाधुम् विक्रम । महिष्यव्यवास् मोस्तर्भिति । यतः क्रियास्य प्राप्ति । विक्रम्य विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य विक्रम्य प्राप्ति । विक्रम्य प्

माउरमाकं मध्ये भगनानं प्रधान सेच्या यस्य सं: धर्षात् । नाऽस्याक श्रेष्ठ्यता सम्बन्धन । विश्व सायातीतम् ॥ १९ ॥ भर्तु द्वानादेव माक्ष रति श्रानाय तत्रफल्य मोक्षायं च क्यं न रुप्ट्ययिति चेवस्माक मकानां मगणारतास्वादनं नाने तत्रप्रध मनुद्रमावत्त्रवमादितरेव मोक्ष रति परीक्षित्रवचेषाहुः । तथारितं भवान वितनोत्त चेन सं वे परीक्षित्र सनेन्द्रव्यवस्य मगणतः चावसूत्र भाव ।

## तन्नः परं पुरायमसंवृतार्थं मिल्यानमत्यद्भुतयोगनिष्ठम्।

ानण हु भार अपने विभिन्न स्वाचिरितोप्पेन्न पारिक्षिति भागवताभिरामम् भा १७ ॥ भार अपने अपने अपने अपने अपने अपने अ

क्षण एवः सेरहारेकानेतः । योग वृत्ता युक्तिका स्थापनि विश्वकारी विश्वकारी स्थापनि विश्वकार्यः । असन्य सम्बद्धा य असर्य स्थापन पर विश्व व सहस्य क्षित्री स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि स्थापनि

कृतः पुनर्गुणतो नाम तस्य महत्तमैकान्तपराय्णास्य के एक विकास यो उनन्तशक्तिभगवाननन्तो महद्गुणत्वाद्यमनन्तमाहुः ॥ १६ ॥

एतावतालं ननु स्चितेन गुगौरसाम्यानतिशायनस्य।

हित्वेतरान प्रार्थयतो विभूतिर्यस्याङ्किरेणुं जुषतेऽनभीप्सोः॥ २०॥

#### े शक्त के प्रतिकृतिक के स्थापन के अपने के प्रतिकृतिक के प्रतिक के प्रतिक के प्रतिक के प्रतिक के प्रतिक के प्रति श्रीविश्वनाथ चक्र विश्व के प्रतिक के प्रति

मनु द्वादशस्कन्धे परीक्षिदपवर्ग प्रापेति प्रसिद्धिः सत्यम् । अपवर्ग इत्याख्या यस्य तज्ञक्षेभगवत्पादम् लमेवापवर्ग उच्यते । वस्यते च पंचमस्कन्धे न्ययावर्माविधानमपवर्गम्य भवति ये। स्मी भगवित भक्तियोग इति । येन कथम्भूतेन वैयासिकशब्दितेन । यथैव तत्पादमुळ म वर्षाविद्यते तथैव तच्चित्रतम्पि क्षानशब्दन वैयासिकाच्यते । अतो क्षानेन परीक्षिदपवर्ग प्रापेति प्रसिद्धिनानृतत्यर्थः । एतेन स प्रत्यातवान यथेति प्रश्नस्योत्तरमुक्तमः ॥ १६ ॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

भगवत्संगिनांसंगस्यळवेनळेशमात्रेशानखर्गनचा ऽपुनर्भवमोक्षंतुळयामसम्भावनायांळोड् किंपुनर्भत्योनामाशिकः साम्राज्याचाः नहुः ळयामेति ॥ १३ ॥

सत्सञ्जमाहात्म्यस्वत्वातत्परुभूते भगवत्कयाश्रवणे आत्मातःश्रद्धातिशयंस् चयंतिकदृति "यशात्माविरजोविसृत्युर्विशोकोविजियत्सो प्रिपास" इत्यादिश्रुतिश्योऽग्रणस्यदेयगुणरिद्वतस्यश्चतंत्रकल्याणगुणात्मकोऽसावि "त्यादिश्रुतिशोकानांगुणानासतमविभ्रवणग्रमुख्याः रुद्रपाद्यप्रधानानजग्राःयद्यपितयापि महत्तमानामेकांतिनरितशयाविधभूतंपरमृत्कृष्टमीयते इत्ययनंप्राप्यवद्यातस्यकथायांयथाश्चित्रयापदेशं गुणोकदेशवर्णन्द्रपायांरसिवचेत्कोनामृतृत्येतनकोऽपीत्यर्थः ॥ १४॥

तत्त्तस्मात हेविद्यत् । नोऽस्माकमध्येभगवत्प्रधानः भवात् शुश्रूषतांश्रोतिकित्तांनोऽस्स्यश्र्यंहरेश्चरितंवितनोतिवस्तारयत् ॥ १५ ॥ शुक्रपरीक्षित्संवादद्वाराहीरचेष्टितंश्चावयेत्याह सहतिद्वाश्याम सउक्तभावः प्रदीक्षित येनवैयासकिशव्दितेनशुकोपदिष्टनशानेनश्चान ध्यानादिसाधनपरिणाण्यानेनापवर्गाण्यंगढड्ध्वजपादमूळंभेजेप्राप्तः तम्रभाष्याहीत्युत्तरेणान्वयः ॥ १६ ॥

#### भाषाटीका।

भगवद्भकों के संग के छेश के तुल्य स्वर्ग और मोक्ष भी नहीं है तो मनुष्यों की संपत्ति तो क्या तुल्य होंगी ॥ १३ ॥
देस है ऐसा कीन है कि जो महत्पुरुषों के आश्रय श्रीकृष्णा की कथा में तृति मानगा जिस निगुण भगवान के गुणों के अन्त को
योगेश्वर ब्रह्म रुद्रादि कभी नहीं प्राप्त हुये ॥ १४ ॥

ा आप सको से श्रष्ट हो सी वह महत्परायम हरि के उदार विशुद्ध चरित को शुंध हमलोगों से विस्तार करेंगे ॥ १५ ॥ अबह पराक्षित महा भागवंत है जिन्होंने शुक्रोक्त क्षान से निर्मल बुद्धि होकर मोक्षेद्ध मगर्वेद्धरमा कु प्राप्त हुये ॥ १६ ॥

क्षा किया होते हुए विश्व मित्र के किया है किया है किया किया है किया है किया है किया है किया है कि किया है किया

## THE DESIGNATION OF THE PROPERTY OF THE PROPERT

तत् असंवृतार्थे यथा स्थात् तथा आख्यावि । तदेव निर्द्दिशति । परीक्षिते कथिते प्रतिक्षितम् । आख्यानं श्रीभागवतं पुराशास् । पर पुराशं सत्त्वत्रोधकम् । अखब्दते योगे निष्ठा यस्य । अनन्तस्याचितिरुपपर्श्व युक्तम् । अतप्य भागवतानामितरामं प्रियम् । पतिविद्यापर्थे युक्तम् । अतप्य भागवतानामितरामं प्रियम् । पतिविद्यापर्थे । क्षित्राम् । अत्याप्ति स्थापर्ये । पतिविद्यापर्थे । क्ष्रियानमिकियोगिकाश्चरिकाम् । १७॥

क्षामाणवत्या एयान एकप्रसङ्घ महत्तामावरपात्रवातमान क्षाचित हिन्द्याम् । अहा अत्याक्ष्यचै । ह इति हवे । च्यामिति विद्वान क्षाचार्याम् । विद्यामजाता आपि अथ जन्मश्रृतः सफल्डान्सातः आस्म जाताः इक् लामनुबन्धा आवस्या । बालाकः युकस्तस्य सेवया इति या । यतो तुष्कुलस्वं सिक्षमित्रमाधिक्षं धनापीक्षस्य । महर्समानामाभिक्षानयोगः छोषिकोऽपि सभावश्राक्षस्य सेन्द्रियाः । विद्युनीति अपनयति ॥ १८ ॥

## त्रयः एव प्रायमानुहार्यः भीशनाष्ट्राष्ट्राच्यामान्यम् ।

कुतः पुनः कि पुनर्वक्रव्यं, तस्यातम्तुस्य नाम पुरातः पुंसे महस्त्रमानामिश्रातयोगे दे कित्यं विश्वतेप्रीति । यहा नाम पुरातः कुतः पुनः दौष्कुल्यं विश्वतेप्रीति । यहा नाम पुरातः कुतः पुनः दौष्कुल्यं विश्वतेप्रीति । यहा गणतः पुसर्तस्य नाम दौष्कुल्यं विश्वनोतीति कि वक्तव्यमिति केमुत्यमेवीह । अनन्ताः शक्तयो यस्य । स्वतोऽप्यनन्तः । किच महत्सु गुणा यस्य से महर्द्गुणाः तस्य मार्चस्तत्त्वम् । तस्मात् य गुणातोऽप्यनन्त्रमहः ॥ १९ ॥ 🐬 🕫 🦰

एतत् प्रपंचयति एतावतेति त्रिभिः तस्य यद्देशास्यं अनितिशायनं व गुशीस्तृत्त्त्तास्यं तद्दाधिकां वास्तित्यं नास्तीत्यथस्य शानाय एतावता सुचितेन अलं पर्याप्तम् । कस्तद्वकुं विस्तरतः शक्नोति । तदेवाद । इतरान् ब्रह्मादीन् प्रार्थयमानान् दित्वा विभूतिः श्रीः अनमी प्सोरपि यस्यांत्रिरेगुं सेवत इति हिरेजी विकास

#### श्रीवीरराघवः।

तदाख्यानंपुराग्गंनोऽस्मक्ष्यमाख्याहिकथयकर्थभूतं वदतांशृगयतांचपरंपुगयं निरतिशयपुगयावहंयद्वापरमुत्कृष्टंखतुल्याधिकपुराग्गांतर रहितमसंवृताअसंकुचिताः स्पष्टावाअर्थामुसुसूर्यामुपादेयाः शास्त्रार्थाः प्रतिपाद्यायस्मिन्अत्यद्भुताभगवद्गक्तियोगनिष्ठायस्मात्अनंतस्या परिच्छित्रखरूपसमावस्यभगवतः आचरितैःचेष्टितैःप्रतिपाद्यैरुपपन्नमतप्वभागवततानामिसरामंश्रीभागवतमितिभावः भागवतश्रवस्या न्यगांसित्वव्यदासायविशिनष्टिपारीक्षितंपरीक्षिताश्रुतम् ॥ १७॥

कृत्यंभगवद्गुणानुवर्णनेप्रवर्त्तितस्तावदात्मानंकृतार्थमन्यतेगहोइति स्वभाग्यंशिरःकम्पेनाविःकरोति तद्भाग्यमित्यत्रतदेवदशैयतिवयं विलोमजाताअपित्राह्मण्यांक्षत्रियाज्ञाताअपि वृद्धानांक्षानेनवयसाजन्मनाचवृत्कानां भागवतानामजुवृत्त्याहेतुभूतयाअधुनाजन्मभृतःप्रदास्तदेह धृतः स्मःभवामःहेत्याश्चर्येहर्षेवाविलोमजानामपिहत्वंतरेगाप्राशस्त्यमूलकोहर्षः आश्चर्यचयुक्तमेवत्यभिष्रायेगाहदौष्कुल्यमितिमहत्तमाना त्वादशानामभिधानयोगः श्रवणव्याख्यानसंवधः दौष्फुल्यंदुष्कुलप्रमत्वप्रयुक्तंहीनत्वमाधिमनः क्षेत्रंवाशुधुनोतिनिरस्यति ॥ १८ ॥

यतोमहत्तमानामभिधानयोगप्याधिदौष्कुल्यंचविधुनोतिकुतः पुनः साक्षान्महत्तमेकांतपरायग्रास्यमगवतोनामगृगातःकीत्तेयतःपुसो दी ब्लुल्यमाधिश्चसंभाव्येतनतुकोऽसीमहत्तमैकांतपरायग्राभूतः केतस्यमहिमानः तन्नामग्रहग्रामात्रस्यैनकथंदीव्युल्यादिपरिहारकत्वंकथंत-द्भक्ताभिश्रानयोगस्यतत्त्वमित्यतः तेविश्चिषप्राहयोभगवान्पूर्याषाद्भग्यायस्यानतदाकिरनेताः दाक्तयोयस्यतयाभूतः पावकस्यदाहकत्वदाकि वन्नामाभिधातृगतद्वीष्कुल्याद्यपनोद्धाराक्तिरस्तीतिमाषः यश्चस्कपेगानंतः यंचमहद्गुगात्वादनंतगुगत्वादनंतमाहुःसत्येशानमतत्रितया दंयोवेदांतास्तस्यनामगृण्तद्वरयन्वयः अनंतो ऽनंतगुण्तवाश्चेत्यनेनतस्मिन्स्वरूपतोगुण्तश्चानंत्यम्नतपद्रप्रवृत्तिनिमित्तमिति स्चितम्यनेन भक्ताभिधानयोगस्यदौष्कुल्याद्यपनोद्दकत्वयुक्तानेकगुणाश्रयत्वमुक्तमगुणानामहत्त्वनामानन्त्यमनितरसाधारगयेवानतुसाधारणोऽनवधिक गुगात्वादित्यर्थः ॥ १९ ॥

महदूगुगाशब्दाभिप्रेतमेवविश्वद्रयस्तत्संगुग्रदश्यामीत्यभिप्रायेगाहपतावतितगुगोर्नेविद्यतसाम्ययस्यतेनेविद्यते ऽतिशायनमतिशयीय-स्यसास्यश्चासावनतिशायनस्तस्यनिःसमाभ्यधिकगुगस्यित्यथेः सूचितेनदिङ्नात्रदर्शितेनैतावतामहिम्नालंबहुनाकितद्दर्शनीयमितिसावः कियताविसूतिलक्ष्माः प्रार्थयमानानपिइतरान्त्रसादीन्दित्वानभीष्सोरकामयमानस्यापियस्यभगवतीं अधिरेणुंजुपतेसेवतद्दातयथा।अयःपति त्वमेवतन्मात्रप्रदर्शनायालमित्यर्थः ॥ २०॥

#### श्रीविजयध्वजः।

तदितिकित्रवाह स्वाहीत अदभ्रवृद्धिः पूर्णवानः महाभागवतः प्रीक्षित्रयास्यिकताश्चेत्रवाहित्रवेत्।पदिष्टेनश्चतेनवात्रवापुद्धग्रीक्यं स्रोद्धश्वजस्यगरुडश्वजस्यपादम्लभेजद्रत्यन्वयः वादत्यनेनाच्यानस्यद्रष्टसाधनावबोधकत्वेनापादयःवंदर्शयतीति ॥ १७ ॥

हेमहात्मन्द्रीन्क । विलोमजाताःहीन्जन्मानोऽपिवभंगानव्यानामन्द्रमासेवयाजन्मभृतः सफलजन्मानोऽभूमेत्यस्वयः अहोबाद्यये मस्मद्भाग्यंकुतः, महत्तुमानामभिधानगोष्ठीतस्ययोगः, संबंधः आभिधानेतनामनायोगस्तिवा तुष्कुलोत्पत्तिसितंदौकुल्यमाधिमनोतुसंः श्रीग्रंविधुनातीत्येकान्वयः॥ १८॥

केमृत्यमाह कुतहति महत्तमेकांतपरायगास्यहरेनीमगृगातः पुंसः आधिविधुनोतीतिकुतः पुनः किंवकव्यमित्यन्त्रयः अनंतासम्बिध ताः शक्तयोयस्यसत्या देशादितः परिच्छेदोनविद्यतेयस्यसोऽनंत् योसग्याननंतशक्तिरनंतश्च नक्षेत्रलंताश्यामानंत्यंगुगानंत्यमध्यस्तीत्याह ताः शक्तवाष्ट्राप्ताः महद्रगाः त्रषामानः महद्रगारवं तस्मारकांदसत्यात्महत्र्व्यस्यमहादेशामानः यंभगवंतमनंतंगुणतःपरिच्छेदगृहितं संविधातमत्तिमित्याविवेदाताबाहुरित्यन्वयः॥ १९॥

प्रशासमाधारितशेषः इतरान्त्रह्मादितिहित्याकटाश्रवीशामकत्वाविभृतिमेहालक्ष्मीः स्वरतत्वादसभीप्सोरनिष्कार्यस्यहरेत्व रेणुमत्वरतंज्ञक्तसेवते तस्यास्यहरत्साम्येमद्वितीये तथागुगौरनतिशायतेयावित्यावित्यरहितसवीत्तमत्वेचसुचितेनसस्मीपतिरित्येतावत वन्त्रित्यकान्वयः । अहमवस्ययमिद्ववयाभिज्ञाधेरविभिवतमातुषेभिः भ्रीयन्मरकराक्षकः धविभववस्यागाप्रसमित्याविभितिस्मतिस्रविधित् रवामश्रेषाणां अभ्याभवतारत्माञ्चस्मीप्रतित्वविष्णाः सर्वोत्तमस्वयुक्तिरितिसायः ॥ २०॥

#### भागतिवासी ह

्रातिकः परमित्यक्षं अन्तर्गारीतात्पक्षेया। अभेकात्रवक्षात्रकांनेऽवि। सुक्ष्यतात्वक्षेया अनेतेवः प्रकाशकत्वसीकः कारोवताभिरामसिति। शति प्रतत्वत्रागुक्तंुन्तुः के सहाभागवकक्षत्यावि। अवसः पर्दे प्रणग्रे प्रतक्षक्षेत्रकं स्तर्वकारो अक्तिकोसस्तकिष्ठमित्यावि ॥ १७॥। एटः स्

ताहशब्द्वार्शन् प्रति खर्यं ताहशमहापुरायामुपदेण्डुं संकुचंस्तत्र तन्मिद्यानमेवालम्बते अहो इति युग्मकेन । विलोमजाता अपि वयमध्येव जन्मभृतः उत्तमजन्मान्तरं लन्धवन्त आसम् द्विजत्ववत् । कथं वृद्धानां महत्तमानां भवतामनुवृत्त्या पतन्महापुरायाक्षयनपव-त्तेनात्मकेनांगीकारेगा । यदा केन कदा वृद्धानां श्रीशुकदेशाद्धितां मवतामनुवृत्त्या पत्नमहापुरायाक्षयनपव-तेनात्मकेनांगीकारेगा । यदा केन कदा वृद्धानां श्रीशुकदेशाद्धितां महत्तमानामिश्रीवान्योगो, नामश्रवणामिप दीष्कुव्यं तदाशिक विधुनीतीति । तद्वेव सिति तस्य महत्तमान्योगवतः पुनिमिहत्तमिनीमेकन्तिपरायागिक्यं गाहवत्तपरस्य सतः । अतपव गृगातः तथा महत्तमानां नाम कित्तेयतः पुंसः कीत्तितं नाम कर्नु दौष्कुव्यादिकं विधुनोतीति कृतः पुनिविक्यं सतः । अतपव गृगातः तथा महत्तमानां नाम कित्तेयतः पुंसः कीत्तितं नाम कर्नु दौष्कुव्यादिकं विधुनोतीति कृतः पुनिविक्यं सतः । अतपव गृगातः तथा महत्त्रमानां नाम कित्तेयतः पुंसः कीत्तितं नाम कर्नु दौष्कुव्यादिकं विधुनोतीति कृतः पुनिविक्यं सतः । अतपव गृगातः तथा वृद्धाः विद्धाः व

भे अर्थ तस्योतन्ति गुर्गास्य देशयात पता बेति ति । असि स्थि असि विनिति श्री यिन अति । गुर्गा देशा स्थापिक यस्य पता बेती कि स्तृति ने साहात्स्य सुवनेन अल न अयोजनमस्तीत्यर्थः । तदंव योजयित हित्वेति । विभूति व्वहिरंगसम्पत्ति स्थापिक स्थापिक

#### सुवोधिनी।

यत्पादमुलेकतकतनइतिवाक्यात् भुवनांत्रिपात् प्रवेशार्थवातत्क्ययेत्याद्वःतक्षदित द्वमाख्यानंसर्वैः श्रोतव्यंधमीर्थकाममोक्षभक्तिनेष्ठेः अत्रत्यंधमीर्थकाममोक्षभक्तिनेष्ठेः अत्रत्यत्वात्धमिनिष्ठेः श्रोतव्यं तत्सर्वतः अर्थोयस्मात् अस्मिन्श्रुतेअर्थोऽि।सिक्षपतिः अनुतत्वात्कामःअद्भुतायोगनिष्ठायत्रभनेन सोक्षार्थिकिः श्रोतव्यक्तिस्य अप्यानंत्रव्यवानिभाजित्यानिक स्थानिक स्थितिक स्थानिक स्था

प्रवेशास्त्राहितश्रोतृत्यात्साह्यतियहोहाते अवस्वद्रलाघापरस्तृत्येथः । अस्याद्रहिमितियतं अहीहत्याद्रचयेवयमिति दलाघायाजनसञ्चतः सम्कृत्वनमानः अवेत्याद्रचयेवयमिति दलाघायाजनसञ्चतः सम्कृत्वनमानः अवेत्याद्रच्याद्रमाहेत्यद्रभुतत्वं स्थाति अवस्व स्थाति अवस्व सम्भाव सम्

अतापरमुक्तरेषिभविष्यतीति मजानेप्रभावेतता भिष्टिपरियाह क्रतणुनिति तस्यनामगृगातः सोक्वयाधिः क्रवतिष्ठतीति संसंधः इतंतुत स्मित्रम्भित्यान्य स्वरुविधानित्य स्वरूविधानित्य स्वरुविधानित्य स्वरूविधानित्य स्वरुविधानित्य स्व

वर्तमाहात्म्यात्यतंतात्यपीतिस्चितं माहात्म्यांतरं विशेषाकारेण्यक् व्यमित्याकांकायामाहः पतावतालमितिस्वभावतोमाहात्म्यानि वर्तमहात्म्यात्येतं प्यनंपएंकर्तद्यम् अन्ययामहार्वाजाश्चिराजस्यवरूपंस्पष्टतयाक्तियाप्रपाश्चायमप्रतिस्वनमाप्रवृक्षकर्त्वयं तकाह पता वतालमिति पतावविषस्वनंतकर्त्तंव्यमित्यर्थः नत्वितसंवोधनसंमत्यर्थमतःकर्णां सेवमाहात्म्यरसामितिवष्टश्चवदितमहात्मिहत्तद्व ममावेन निरूपणीयं तक्तजातीयविज्ञातीयत्रावर्त्ताप्रतिसंमावेत्यांभवति तद्भावतिनसंभवतित्याह गुणौरसाम्यातिहा।यन्यस्वतिग्रणौ हेतिः क्रत्वानसाम्यमतिशयश्चयस्यपवंस्वरूपशक्तिमञ्चतथापिकिचित् स्वववद्याहः हिस्वेतरानिति स्वाधिनाक्वेद्यमित्यावि

#### स्रकेथिनी ।

भिष्ठकंग्रम नेतं तन्नापिश्रनमिश्नोश्वशंक्रिकेणुंकरंग्रमनेत्व क्रीमार्थकायवितदोक्षांथयत्वाक्षन्यविद्याक्ष क्रेतरा अधिरेगोरिपमाहारम्यंतद्पेक्षया षान्यपातस्मानसाङ्कीतम्यनिकुप्रयोजकार्वेश्यं नहिंसर्कप्राद्यमेश्वर्मेद्वानितिकश्चिद्धदतिग्सामितवाप्रकृतिसेपरवाद्स्याटः स्थात्वासाबुद्धासायः ॥२०१३

मंदर्गमणीत एति स्वयं नाष्ट्रामणापुराम् त्रोत्र संभावस्त्र तन्माहियानभेवातस्वते सद्दो एति मुध्यंषय । तिलोसजासः सचि एएए येन हे लाग है। है है है है विकास से कि कि मान कि से बच्च । जयं बुद्धानां सहलसानां सबताहनुष्टां प्रस्मादार् स्थापनाय । लंगानप्रदेशीमीलालेखा । यह । जेन कहा बुद्धामी हो गालको **मिन्नेकन्यांनिक्तिरम्गानिस्तया ऐत्ता । यद्य अ**प्यपेष तार यामण्डा है-

असंबतार्थ यथा स्थात तथाख्याहि । अत्यहते योगे सकी निष्ठा यस्य । आख्यानं श्रीभागन्तम् । यद्गो मागवतानां अकानाम अभि-रामं प्रियं पारीक्षितं पुराक्षितं कार्थतम् ॥ १७ ॥ श्रीभागन्तां खाने ऋषिभिदेश्ययायताकुमातम् निर्म्हति । विलोमज्ञा निर्म्हा अपि यद्म निर्म्हतः सफलजन्मानः सास्म काताः इ स्पष्टम । वृद्धानां शानवदस्य शकस्य वा अववद्धा । यतो दुःकुल्लं तृष्टिमिस्ममाधि च मन् प्रीडां महस्मानामभिधानयोगः लोकि-को भि संसापगालक्षणासम्बन्धः विधुनीति। कृतः पुनः कि पुनः पुक्तान् यहातः कि सेयतः पुनः नाम कृते दी कुल्यं विभुतोति । नु बीक्कुल्यारम्भकं पापं प्रारम्भमेव तस्य नाईं विना क्ष्यं दीक्कुल्यभूनतं प्रारम्भस्य त मोगेनैव नाम हित प्रसिक्तः नासतः क्यं स्वरम् यत्वित्यतं आहं। यो भगवाननन्तशक्तिरिति। शक्तीनामानन्त्याद्भक्तप्रातिभनाभिन्यपिकाचित्रः शक्तिस्टरसेवेति भावः तथाच अहत्सु समकेषु गुमा यस्य स, महद्वापास्तस्य भावस्त्रत्वम् । तस्माधमनलमाद्वितिः। लेल तक्केषु लक्षीपसमास्क्रमातः विस्कृतिय तक्केषि

मारक्षं न तिष्ठति ॥ १८,॥ १९ ॥ १७०० । १००० । १००० । निर्माति । निर धव नास्ति अधिकः कुतो भविष्यतीत्यर्थः। एवम्भूतस्य यस्यानभीष्सोरुषि अंबिरेणुं विभूतिर्छक्ष्मीः सर्व्युगापूर्णमन्विष्यन्ती जुवते सेवते इतरान् बहाादीन् प्रार्थयमामानपि त्यक्ता ॥ २० ॥

#### मुनंतिन्त्र ।

ा तहोत्व्यातका अस्यक्तिवेक्नोंपाक्षनमञ्जनव्यानाक्ष्येयोमेमणवद्भावापासिक्षाधमोनिष्ठायस्थतत् परंसर्वेदयः शास्त्रित्रयउत्हृष्टम् पूर्वयंपूर्यया वहम् असंवृतार्थमसंदिग्धसाध्यसाधनबोधकम् अनंतस्यापरिन्छिन्नस्याचरितैरुपपर्श्वयुक्तम् अतपवनागवतानामाभिराममतिप्रियम् परीक्षिति भोक्षातिक्षतम् श्रीमञ्जानक्षिभिधंमहापुरासमाख्याहिकथयः ॥ १७ ॥

्रध्यश्रीमद्भागवताच्यानेमस्तावरेख्महारमाभः प्रवर्तितस्यात्मनः कतार्थतामाह अहोद्दतिद्वाश्याम् "ब्राह्मर्याक्षेत्रियाञ्चातः सर्वेद्यत उदावृत्र क्षित्मितिप्रसिद्धोविलोमजा अपिवृद्धानां ज्ञानादिभिःस्थितिराशामनुवृत्त्यासेवयाऽचजन्मभृतः आस्मद्द्रतिवर्षेस्यकुजन्मानाभवामः अहोद्द्याश्चर्ये अहोमहत्त्रमानामभित्रानयोगः अवगावधनाविनियन्धनः सम्बन्धः दोन्कुल्येदुन्कुलजत्वेतिक्रमित्तमाधिमनी व्ययाचरिकि 

ाय शुनारत विद्यासरगासरगासन्यामो विद्युल्यमाधिचविद्युनोतिकुतः पुनस्तस्यमद्दसमैकांतपरायगास्यनामगुगातः कीर्तयतः पुसीदीप्कुल्य तिमित्तिं विश्वितिक्वितिक्वित्यक्यः नजुयन्नामगृगातीदी कुल्यादिनस्यात्तादशी अयोपिकश्चिदस्त्येवत्यतीनिः समानातिश्चत्वमाहं योऽनत शासित अनेता शोक्योयस्यसा । प्रास्यशक्ति विविधेवश्र्यते साभाविकीक्षानयल किया चे "तिश्रुतेः वश्रसामाविकपडेश्वयसंपक्षी मगवान् सतिऽज्यनंतः "सत्यंद्वानमनंतंब्रह्मे"तिश्रुतेः महांतः "अनंतकल्यागागुगात्मकोऽसीतेजोवलेश्वर्यमहाववीध"इत्यादि श्रुतिप्रोक्ताःगुगायस्य सताअयनतः वार्यसाम्यात्राच्याः । जात्राचारात्राक्षां वियमनंतमानुर्भुनयोचेदावातस्यसमानातिरायग्रुत्यस्यनाममृशातद्दयन्वयः॥१९०॥

निःसमानातिशयत्वेप्रपंचयतित्रिभिः गुगौरसाम्यान्तिशायनस्य गुगौरित्युपलक्षणैशक्तिस्वरूपयोःगुगातःशक्तितः स्वरूपतस्ययदसाम्य में समित्यम्नातिशार्यनेपनातिशयत्वचतस्येतावतासू चितनमाहात्म्यलेशमात्रेगाद्धितिनालम् तलेशमेवदशेयतिविभूतिः श्रीःइतरान्श्रह्मादीन्त्रा र्थिती प्रपिष्टत्वी विस्थानित गुणारी सिमतो इन भीणती रकामयमानस्थापिमगवती प्रविश्णमजतेसेवते ॥ २० ॥ व्यवाभिक्षां विकास के विकास के कार के किए के किए के किए के स्वास के किए के स्वास के किए के किए के किए के किए क इस के किए किए किए के किए क

ातिकार समायानी । अर्थना विकास समायानिक स्वार्थना । अर्थना सायानिक स्वार्थना । अर्थना स्वार्यना स्वार्यना । अर्यना स्वार्यना ।

र्वेषण् रावश्यास संस्थात् स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वांत्रा स्वां ्र विस्थारमा से अमर अति अङ्गुत योगनिष्क मगवश्रादित्र से युक्त मनोहर पवित्र प्रतिक्षत जीके व्यक्तिक की कथन करो ॥ १७ ॥ अहो आश्चर्य है कि हम विलोमज हो के भी नृद्धों के अनुवर्तन से आज धन्य जन्मवाले होगये क्योंकि महात्माओं का नाम कीर्तन मी क्रिकुलन मा। पीड़ी का मारा करता है भार हो। पड़िंग करते हैं के के के का कार करते हैं के कि

मा अहि महित् पुरुषी के प्राथ्या अनंतराकि चाले अतंत ममसात महब्गुमा होते से जितको अनंत ऋहते हैं उनका नाम छेने से क्यों म 

उत्तक ब्रामा ही गुण क्यन करना कर है जोकि गुणों से खब के अधिक ही है उस्ती की अपने सेवस ग्रामिकों की साम करने a particular and an analysis of the second s

## म्रथापि यत्पादनखावसृष्टं जगहिरिश्चोपहृतार्हगाम्भः ।

व्रजन्ति तत् पारमहंस्यमन्त्यं यस्मित्रहिंसोपशंमः स्वधक्षेता रशाहर वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र वर्षात्र त्राहर हि पृष्टी द्रियमा स्वादिराचन्त्र त्राहमा वर्षात्र यावान् ।

१८५८ करणहोत्तेहक हो हा**म्यावल्यात । आल्लाक श्वाचितरतृषितो भूकास्यो। १८४** वीकी हार्य प्रकार हो।

#### 'श्रीधरखामी'।

अथेलर्थीन्तरे । यस्य पादनसायसृष्टं निःसृतमपि विरिचेमीपेईति समर्पितम् अर्हगाम्मः अर्घोदकम् रेहासेहितं जगत् पुनाति । विरिचोपहृतं संद्युमिति च त्योर्प्यपासकत्वमुक्तम् । तस्मात्मक्त्वस्य तिरिक्तः को नाम भगवतपदस्यार्थः सर्वेश्वरः स प्रवेत्यर्थः ॥२१॥ श्रीराः सन्तः । ऊढं भृतम् । अन्त्यं परमकाष्ठापन्नम् । तदाह यस्मिन्नहिंसा उपशमश्च खाभाविको धर्माः ॥ २२ ॥

पर्व स्वसार्यसभिनन्यः प्रारीक्षित्रोप्रास्याने वरहसाह अहं ही वित्त अन्त्रेम्याः वे स्वर्थाः त्रशिक्षंत्रः अत्रः याचानात्मावरामः सस् ज्ञानं तावत आचक्के प्रवक्षासि व्यापि प्रथा प्रक्षिणो तभः आत्मसमं खशक्षाच्चक्ष्यसेवीतपतन्ति न कर्तसं तथा विपश्चित्रीर्रेषि विष्णासीत कीलां समं स्वमत्यनुरूपमेव वदन्तीत्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥

महरूपा न संस्ता के लिखे के कार्य समाद्<del>रे महिल्ला कर के</del>

्यक्ष कृष्णकार व व रहा स्थापन क्षण्या व व स्थापन है।

## कार्यकार के वार्त मार्थित होता है। इस स्वाप्त के कि वार्त के कि अभिनेत्र होता है। असे कि कि असे कि कि असे कि क असीरियाद्य: ]

अन्यंप्रपितन्माहात्म्यदिशंदरीयामीत्यभिप्रायेगाह अथापीतिष्ठाप्रयाम्अथाप्यपिचपुनग्पिवेत्यर्थः यस्यभगवतः वामपादागुष्ठनस्य मृष्टमबीक्प्रस्तुतंबिरिचेनब्रह्मग्रोपहृतंसमार्पतमईग्रांभोऽर्घ्यजलंगगातमकंक् कृंसहामिन्द्र।हिलोकपाकुःसहितंजगत्युनातीत्येतात्स्वितेनमहि म्नालमित्यर्थः एवंविधमहागुगागगुकाच्छीनिवासात्तीर्थपदानमुक्षदादन्यः कोवालोकमगवत्पदार्थः मगवत्पदामिधेयः बान्यक्तिवलैश्चर्य तेज्ञः प्रश्वत्यसंक्ष्येयकव्यागागुगापौष्कव्यवद्यभिक्षामकेतभगच्छल्देनप्रदृश्चितिमित्तानामाश्रयः पुरुषोत्तमादन्यः कोवाभिधीयवेनकोऽपीत्यर्थः पतिनुष्योऽनंतर्भक्तिक्षेम्बानित्याकांक्षाशामिताना हरूना वर्षे वर्षे वर्षे वर्षे वर्षे वर्षे

अस्योतियश्रमस्मिन्भगवतिमुकुन्देशमुरागयुक्ताः संतोधीराः जितेन्द्रियाः सहसाऽकस्मादेवदेहेशादिशद्धान्तदयुवंध्यादिषुचोढंकढंमुकं संगमपोद्यतत्पारमहंस्यमंत्रांतुरीयंपरमहंसाश्रमंत्रजातियास्मन्पारमहंस्याश्रमेऽहिसाउपरामश्रंखातुरूपोधमेः दयादिसस्त ॥ २२ ॥

ि एवं विधानत्यमाहोत्स्यहोालिनो मनवतीमाहोत्स्यवर्गायितुमहंनवर्गीयाभीत्वभिप्रयिगाह सहिमितिवर्यमणः हेशानाधिकाः श्रिकातीयत्यर्था बुद्धार्थो १ अञ्चनम्बद्धमाहित्यमेवद्भिः पृष्टोऽहयद्वाहे अर्थममाः सूर्याः त्रयामूस्यः यावानात्मनावुद्धरवगमः प्रसरः यावान्सहिमामद्वद्धिविष-योभवतितावतंमिक्षमानमान्यक्षेवर्गायामितवाहियवापतात्रिगाः पक्षिगोत्तागावासारमसमस्ववलानुरूपमेवनमः प्रतिपतंतिउद्ग व्हेतितवाविप श्चितोऽपिसमस्तवुद्धिवलानुरूपंविष्णुगति भगवन्महिमानंपतंतिविषधीकुर्वति नहिपतित्रिगोनभसिउद्गच्छंतो नभसोऽभावान्निवर्ततेस्ववल क्षराज्ञिनक्षेत्रपर्वनिपश्चित्रोमितिश्चवाद्विनिवर्तते नतुभगषन्महिननः अयादिखर्यः तचीक्तमन्यत्रापि 'दषुक्षयान्निवर्त्तते नतिरक्षीक्षतिक्षयात् (2)。 \$P\$\$P\$\$P\$《美国新疆南京,第66·57 श्रतिसमामि व ते तेनसोविदगुरासयादि"ति ॥ १३ ॥

र क्षेत्र तत्पृष्टमागवताच्यं पुरागापरीक्षिच्छुकसंवादकपं शुश्रावयिषुस्तावत्सवादप्रवृत्ति तदुपोद्धातकपं परीक्षिच्छुकयोः संगमंपरीक्षितः भ्रायोगवर्शं वतन्म् छविष्रशापंतिमित्तं चोहः एकदेत्यादिनायावत् स्कंधसमाप्तिः तावच्छापनिमित्तमाहषड्भिः एकदेतिकदाचितपरीक्षिक्त व स्यास्यश्रक्षत्यवनसृगयां वरन्पदयमानः श्रांतः नितरांतुषितः तृषासंजाताश्चरस्य संजातेतितथातारकादित्व।दितच् ॥ २४ ॥

न्तिकारिकार का व्यापाल का विकास के विकास है। विकास के विकास के अपने का विकास के विकास के विकास के विकास के विकास

ा अश्वसंबी समरवादितीयत्वसमेथनस्य बहुयुक्ति संस्कृत्वप्रकष्टनियसमिपमवतीत्वाहः अर्थापीति यस्यपादनेका वसृष्टेगिल्सेविरियेनप्रका शाउपहर्तसमापति महेगामाः अध्येजलंश्रीपोदायनेजनावकमितियावतः रुद्रेगासहवर्तमान्यजगञ्चतुंदरामुवनपुनातियसमाद्यतस्माहाकेश्र वनमुकुद्गिमोक्षप्रदेशकारीयगादिन्यतमः अन्यं। साथितमप्रत्ययः कोनामभगवत्वदार्थः निर्तिरायक्षानादिगुगावस्थाभगवानितिनामना च्योऽस्तिसर्वेषांतदविक्तंतिविक्तं कीऽप्यस्तीत्यर्थः अनेनिधारिवयूज्यत्विचिवयुज्यत्विचिवद्विक्तंतिविक्षेणवर्षाम् विकामकाच्यत्वाद्वितीयावानिसर्वोत्तमत्त्रस् चकानीतिश्वातव्यम् १ २१ म्हण्याति होत् हिल्ला होत् । विक्रिकालिक विक्रिक्त विक्रिक्त विक्रिक्त विक्रिक्त विक्रि

अवसरी यहराइस्कावस्**एं लग्नेहिनिक्षे**वद्रात्रस्था

मुकुंदत्वंविवृग्णोतिग्रेत्रेति। यत्रेमुकुंद्रभ्जुद्धकाः वित्रांताः श्रीदाविश्ववार्तायां तिवृज्ञार्यां क्रिकेट्यताः संतोदेदाविश्वंदंपद्रदं संगंस्नेहलक्षगां सह साविमर्शकानेनव्यपोद्यानिरस्यतत्परमृहंसाश्चमप्राप्यं सत्यं साधुगुगायुक्तं व्यामुकुंद्रां व्याति यस्मिन्परमृहंसाश्चमे अहिंसाविहितातिरिकाहि सावजनमुपरमम् उं हदं पातिपिवतिहिनस्तितिवाउपाविष्णुः सर्वाधिकस्तिस्तिन्द्रिरोरम्पितिविषयिविद्यतिविधर्मे।विहतइतिशेषः अनन मुक्तिदानमिपसर्वोत्ताम् त्वयोत्ताम् मितिष्क्र विश्वविष्ठ कि विश्वविष्ठ कि विश्वविष्ठ कि विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विश्वविष्ठ विष्ठ विश्वविष्ठ विष्ठ विश्वविष्ठ विष्ठ विष्ठ विश्वविष्ठ विष्ठ विष्ठ

आख्याहीतिशौनकप्रश्लोत्तरं वृक्ति अहंहीति अस्यहरेशुंगाववक्तं भवद्धिः पृष्टोऽहम् अत्रहस्यिगेषुयावानात्मावगमआत्मनोममभवगमः श्लानतावत्आचक्षेत्र्याकरिष्ये गुर्गानामनतत्वत्किस्यापसर्वतिमनाश्लातुंशकिनीस्तीत्यतवर्थहिशब्देनाहं नकेवलमहमेवाशकः कितुअताता नागतवर्तमानावृद्धाद्वप्रः स्वेऽप्रयेव्यमेवक्रियंग्राविष्ययक्रिसोक्ष्यरप्राम्भद्दत्तम् यथाप्तविग्राः प्रक्षिणः नमः आत्मसमस्वरात्त्रयस्य सार्याप तंति शक्त्यभावादेवीपरमातिननभोऽ वसानादनंतत्वादस्य तथावसाद्योविपश्चितोम्।निनोविष्णुगतिविष्णुगतिविसममात्मशक्त्यनुसारे ग्रायतंते शक्त्यभावादुपरमंति नगोविदगुगानांमितत्वादितिभविः ॥ १३॥

पारीक्षितमाख्यानंवश्यंस्तस्यनिवेदनिक्षि सर्वस्यिपिकस्तिप्रकार्वे म्कद्ति ध्युरुक्षस्य क्रिके क्रिक्वप्रमुख्य सुद्धिम्

अप्रेयस्थानस्थ । सक्ता अध्यक्षकात् क्षिण्य स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक अध्यक्षकार्थ

तस्य चानन्तगुणस्य महत् स्वभिन्यकत्वं दर्शयति अयेति । सेशं पुनातीत्यत्रशस्यापि पवित्रीकरणमस्यखतमागुणाधिष्ठानत्वेऽपि विश्वसम्बद्धतं क्षेत्रम् ॥ २१ ॥ १९ ॥ तदावेशस्वगडनं क्षेयम् ॥ २१ ॥

कर्मात् तमेव मजेदित्यमिर्परयाह यत्रेति। अन्त्य पार्रमिर्दस्य भागवतपरमहेसत्वमे मुकानामिष सिकाना निर्धियापरायग्राः। सुदु लेम: प्रशान्तातमा कोटिष्यपि महामुने इत्युक्तेः। यस्मिन् यदर्थम् अहिसया मात्सर्योदिराहित्येन उपवामी भगविषष्ठाविधीयत करते समे खमलायुक्तवय वर्णनीयार्थः । १५ इत्यर्थः ॥ २२ ॥

नन्वनन्तगुगास्य तस्य कथं गुगागगाने प्रवृत्तोऽसि तत्राह अहं हीति॥ २३॥

अय श्रीभगवानेव खपार्श्व नेतुं ब्रह्मशापद्वारा तं विरक्तं सम्पादितवान्। तत्र च श्रीमद्भागवतं प्रकाशितवानिति वक्तुं तचारितांतर माह एकदेत्यादिना ॥ २४। २५। २६ । १०॥

कार्यमधिमस्तास्त्र विक्रोतिमधासम्बद्धाः ए । संवक्तास्त्रमानात्रस्थानात्रस्थानात् । सस्याप्तात्रस्था वास्राव्यक

म्प्रमांष्यक्षुर्वीद्याः संगारकारा इत्या गी के काला व्यासम्बद्धाः सम्बद्धाः । ज्योषेत्र स्वास्त्र स्वास्त्र महाभागाः । स्वासम्बद्धाः स्वासम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः स्वासम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः स्वासम्बद्धाः स्वासम्बद्धाः स्वासम्बद्धाः । स्वसम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः । स्वसम्बद्धाः । स्वासम्बद्धाः । स्वसम्बद्धाः । स्वस्वद्धाः । स्वस्वद्धाः । स्व ं स्त्रीचि गत्मिहतीविचारपूर्वकेमजनस्तवतार्थकेसाव्यमितिचेसेत्राह थणपिवभूतित्वात् अस्मान नस्रीत्वादिकत्वीण समयति युक्ति स्त्री काअथापितुष्यतुरुक्तेनइतिन्यायनप्रकारांतरेगामाहात्म्यस्चनंनिरूप्यतंत्रयोहिमहांतःब्रह्मानिष्णुः रहेन्या तत्रवहााचरणहालनकतीशिव भ्रद्रशादकंशास्त्रकः परकोमहाम्भवेत्तवाहः यत्पादनसावसृष्टमहेणांभः चिदंबिरंच्येनव्रह्मशाउपहतंसमर्पितमहेणांभः पुजासा धनोदकंगंगेलियावलसेशमहादेवसहितंतगत्पुनाति नखावसृष्टिवितिभिश्चवानेनवद्यांडसेदेनयदिवाचरगाज्ञकमागतंनंदासपंतदसंगृहीतंभवति अथवाभगवद्वपश्चयातुलस्याहीनत्वंशापयति, नखावसुष्ट्मितिनखोद्दकंद्यतिहीतं ,ईशस्यपाविष्यमभेवस्यते सेशंपुनातीतिपादेभग्नस्यति रिकं आवद्यात्र्याम्बंवपर्यतंपुनातिनस्रोदककत्वेकगावनामसायदान्यसात्रात्पदार्थः कोवाभवेत् ननुकोऽपिमास्तुअक्षरात्परस्यैक्षभाव स्वात्त्वाहुलोक्ष्रितिवदेतुसभगवान्भवत्येवलोक सिद्धोऽपिवक्कव्यः लोकस्तुव्रक्षांखमात्रवद्या अतोव्रक्कांखनायकः सभगवानित्युक्तभवित भगवच्छ्रक्रीनरतिशयबद्धानाचकः ॥२१॥

एवयुक्त्याप्रमागीनचभगवस्वस्थापयित्वानुभवेनापिभगवस्वमाहः यथानखोदकं अन्यदीयंसर्वार्थं नाशकंतदेवभगवदीयं सर्वपुरुषार्थ साधकं तथान्यत्रानुरागः आत्मनाशकः भगवतितुअल्पोऽपिरागः सर्वपुरुषार्थसाधकस्तदाह यत्रभगवति अनुरक्तायेकेचनवासाधनी तरापेक्षाःतदाङ सहसेतिएकमञ्जवाधकंयत्कामनावलावागतविषयभोगोवातत्वपिहारार्थमाह धीराइतिआपाततः सुबकरत्वंतेषां अतोविवेक क्षेर्यक्तेत्र्यमः श्रयवाधीराइतिविभजंतिनतुरागपवशसहायः स्ताधनमधेक्षितंफलसाध्यंचसाधयतीत्यर्थः रागोद्यन्तः करग्रधमेः सहवार्व पुच्यातिभगवतसम्बन्धंतुपाप्यभगवतासंस्कृतः ,स्ववर्गसर्वभेवनाभगति यतोयवेवनाभकं संसारहेतुभ्तंतदेववर्गनामाध्यस्यासम्बन्धं यतीति उपलक्षणत्वाद्रागस्यनद्वेषादिभिन्यंभिचारः देहादिषुक्रदः संगःअहंताममतालक्षणः तारशमूढंसंगंभ्यपोश्च ऊढपदेनवेदनादि बाधितत्वंस्चितम् यथाविवाहितस्त्रीयोनपरित्यागः तद्वत्वेहाविषुसङ्गेनत्यागृहति आत्मानंसततंरक्षेन्शरीरमार्थंबछधमसाधनमिति पुरुष स्याखिलार्थदश्च प्वविधेवीक्येजैनितामिषबुद्धित्यजन्तीत्यर्थः सजहातिमृतिलीकेवदेचपरिनिष्ठितामितिवाक्यात् शानेतुतावानेच पुरुषार्थः अञ्चतुसःअवान्तरच्यापारकृत्याद्य वजन्तीतियत्रातुरक्ताः तत्वजन्तीत्यर्थः मत्मकायातिमामपीतिवाक्यात् नन्यस्यगौगाफलन्वंसविष्यती त्यार्थक्याह पारमहंस्यमिति आनन्द्रमानेद्रमग्रोतसान्दितिवाक्यंप्रतिपादितं अतःपरमन्यतः प्राप्तस्योगस्तिक्यभे नन्यस्यधर्महेतुत्वासा वात अवद्यतिप्राव्यत्वेनअप्रामाशिषस्यात् अतः पूर्विविक्षितः अस्तमार्गः इत्यार्थाप्यात् यस्मिक्षित्तोष्ट्यः स्वधमेशतिपूर्वकिष्वर्मः प्रति पाद्यः उत्तरकाग्रहेकानसाभातपरतिः अविद्यायापततवयम् अनुरागस्यस्वासाविकोधर्भः यथाजलस्यस्यः अतीमकिधर्मप्रतिपादकः त्वालसवेवदानांनभक्तविद्यविगोधःश्रेकनीयः विद्यापदेनचमुख्योधमीनिद्धपतः वालभत्तदतितिहिसार्थद्वयवीचाम वतः सद्द्रात्वाङ्क प्रतिविधिशाक्तिरविक्वारिठता नतुविरोधक्षतिभावः प्रतावतासगवन्माद्दारम्यमनतेनकस्यापि वर्क्कयोग्यसित्युक्तम् ॥ २२ ॥

WHICH HARD

## PRESTA SAME DIFFERENCE

तर्हिभवान्कर्यवस्यतीत्याशंक्याह् अहंद्रीति अर्थेमणः । सूर्यसेकांशः अक्तिपित्रहिर्देतीशोहिताः स्मारिताःभगवद्गुणाःस्वमाद्यात्म्येन वाबोधिताः तेभवद्भ्योवक्तव्याः अतोनममापूर्वेकृत्यं कित्वजुवादकत्वमितिनब्राह्मणोपदेशेक्ति अप्तप्योषः अतपवाहहीति अहंपृष्टः भगव-द्गुगावर्गानेआहारः भवद्भिरेवआचक्षे भवद्भिरित्युभयप्रसम्बध्यते िपरसिवुध्यसुसिरिग् तिर्हि आत्मावगमोऽत्रयावानिति यद्यप्य र्थेबु व्यावाक्यरचनमितिन्यायेनवाक्याबुसम्सम्।युन्स्यृत्वे त्यापिवेदेयावत्क्यभंव्यावित्तं द्वाप्तास्ययोववोधनंस्यादिति नतुकिमेता वतास्यात् भगवद्गुगानांसर्वेषामनिकपर्णात् नभःपतन्तीतिपतित्रिगाः गरुडाद्यःनभः अपनाश्चमात्मसममेवोत्पतितनत्वाकाशविशाल तानुरोधेनतथापिसेचरत्वंसिद्धचिति तथापिममैभगवद्गीचिकृत्वंसित्स्यतीमितिभावेः नर्नुविषमीदेखीन्तः क्रियातुपरिच्छिन्नभवति शानं परिच्छिन्नविषयकमपि इत्यादांक्याह तथासमृमिति विस्थितोन्नानिकोऽपिविष्याोर्ग्यापुक्रम्यगृहिन्नुहिन्नेखयोग्यतानुसारेगीवामनन्ति अन्यथा किचिद्द्वत्वंनस्यात् भगवसुल्यताचस्यात् गतिमित्यंकवर्चनं सर्वीऽपिगुंगाः आकारातुल्यद्दतिपकोऽपिगुगाः नकेश्चित् सम्यक् गम्यत अल्बन्यम् माभूष्या हिँग्स्या वाष्ट्र हुनः । इत्युक्तम् ॥ २३ ॥

sस्यापिसंजातः आरगयाःपरावःकनीयांसः श्रुताइतिश्रुतेः ॲतएवश्रान्तःदेहवैक्ळव्यंजातंश्चुधितः तुषितोजातः दोषश्रयमुत्पश्चमित्यर्थः अन्यथा महावीरस्यनिरन्तरं युद्धकरणेऽप्यक्षीणवलस्यक्षयंश्रमादिस्याक्कृतस्मान्तवधानुगमननविधेयम् ॥ २४ ॥

क्काकां आ वर्षस्य में मिसेस्याजनंत्रं मिल्ला मुधि बासीकवि । एवं ॥

टसमाभिन्न के किन्न मारिजन प्रया १ १९

े बिसिडबार प्रमाहनाः पश्चित्रात्रां भेर अत्याप चर्पार्यम्बद्धिकिक्वाहिगावेलामान वर्षे मुर्तिर एवं मामके । व्यावक ब्रावहिक व्यक्त क्रिकियम् ॥ इइ 🗓

अय इत्यर्थान्तरे । यत्पादनखावसुष्टं निःसूतमपि विश्विनोपहतं सम्पित्सर्दंगास्य अर्थोहक् में रेशो सहाहेत्रस्ति सर्वे अगत् पुनाति तस्मान्सुकुन्दन्यतिरिक्तः को नाम भगवत्पदस्यार्थः सर्वेश्वरः स प्रवेत्यर्थः । प्रवेश्व जगति सर्वेत्रिक्ष छक्ष्मी-ब्रह्म श्रिया स्व

तत्पदं सेवमानास्तस्य महोत्कर्षे सूचयन्तीति वाक्यार्थः॥ २१॥ तथा दृश्यमाना मनीषिगोऽप्यत्रार्थे प्रमाग्रामित्याह यत्रति। ऊढं धृतमः। अन्तयं परमकाष्ठापक्षमः। यस्मित् बजने॥ २२॥

एवं खुभार्यमभिनन्य पारीक्षितोपाख्यानं वक्तुमाह अर्थमगाः । हे सुर्योस्तेनुल्यास्त्रयीमूर्त्तयः अत्र यावानात्मावगमः मम बानं तावदा चक्के प्रवस्यामि । यथा पक्षियाः आत्मसमं स्वर्गच्चनुरूपमेव नम उत्पतन्ति न तु रुवसं तथा विपश्चितोऽपि विष्णोगेति छीलां समे स्त्रमत्यनुरूपमेव ॥ २३। २४॥ 

िनिःसमानातिज्ञयत्वलेशांतरंदर्शयति अथेति यस्यभगवतः पादनखादवसूर्खनःसृतीवरिद्युनबद्धाणोपहृतंसमर्पितमदेशांमोऽप्येजलेसे भेद्राशिकेज पह प्रनाहर को सके कार मनतो इन्यू जम्मो भग्न महार का तामतम् उपीत्य हो। भार १ भी विकास के विकास के कि कि कि कि कि कि कि

यत्रश्रीमुकुदेऽ तुरकाः संतोधीराः स्थिरस्वभावा देहादिपूर्वधृतसंगंसंघोर्धेसहसेतियादवः सहसासध्यववापोद्ययस्मिनहिस्यासहित उपरमास्त्रभूमें स्वास्त्यात्रमोधर्मस्त्रंत्रां धर्माश्रमेक्यों इत्रामक्रमात्रमधं स्यंवजीति ॥ १२ ॥ १०० विकास विकास विकास विकास

शुक्रपरीक्षित्सेवादवारामुनिप्रशासुसारतोभागवतंवक्तमाह अदंदीति देअर्थमगाः! स्योः अज्ञानतिमिरघ्नाःभवाद्धः पृष्टीबर्द्धावदात्मनी <u>इब्रामीश्रानितीवदाचक्षे यथापतित्रिणः आत्मसमस्बद्धानुक्रपंनभःपतीते तथाविपश्चितोविविक्रागोर्गतिलीलामात्मसमैवदंति एवमहम</u> विवर्धायामीत्यर्थः ॥ २३ ॥

शुक्रपरीक्षित्संवादंवक्षेतिक्षिमित्तभूतवैराग्योदयकार्गाविमद्यादंदर्शयति एकदेत्यादिनाश्चदस्यसंजाताश्चितः तृषास्यसंजातातृषितः वाश्रमप्रविवेदोत्युत्तरेगान्वयः॥ २४॥ THE CHARLES OF THE PROPERTY OF

निक्र के प्रतिकार के किए के

तथापि वहा का समिति जिनके पात सक से निःस्त कल महावेज सहित जगत को मित्र कहता है उन मुक्त से दूसरा कीन भगवान होसकता है ॥ २१ ॥ जिस मुक्तन में अनुरक्त बानी जन देहादिकों में आसक्त मन की छोड़के जहां अहिसा शांतकप धमे है उस प्रमण्डली जाते है ३९

हें मुर्भ तुल्य मिन हो आपके पूजने में मेरी जहांतक बुकि है वहां तक कहाँगा जैसे आकाय में पक्षी वल के अनुसार जाने हैं तैसे Carrie and all week and and the state of the परीक्षितजी एक दिन घनुष लेकर यतमे चुन आरने गये थे मुनों के पीछे अमित होकर क्षुचा सुपायुक्त भरे श्रायका से ॥१२४॥। ११।

राहीत यज्ञत्व

हरू, दिस्कार संस्थित स्थास

fore him

The same of the same

TTUEP JUNE

TO PEAD!

जलाशयमचत्तागाः प्रविचेश तमाश्रमम् ।

दह्शं मुनिमासीमं शान्तं मीलितलोचमम् ॥२५॥

प्रतिरुद्धेन्द्रियप्राग्णमनोबुद्धिमुपारतम् ।

स्थानत्रथात् परं प्राप्तं ब्रह्मभूतमविक्रियम् ॥२६॥

विप्रकीर्गाजदान्क्रवं गैरवेगाजिनेन च ।

विश्वालुरुद्दं तथाभूतमयाचत् ॥२७॥

त्रिशुष्यताळुरुद्दं तथाभूतमयाचत् ॥२७॥

त्रिशुष्यताळुरुद्दं तथाभूतमयाचत् ॥२७॥

त्रिशुष्यताळुरुद्दं तथाभूतमयाचत् ॥

त्रवज्ञातिमिवादमानं मन्यमानश्चुकोष है ॥ २८ ॥

## ्र **श्रीवरस्तामी ।** यह व तरस्य कर्तना देखन एउनक्रम् केला हेला हेला है।

मचक्षायाः अपर्यत् । तं प्रसिद्धमाश्रमम् । तस्मिन् मुनि रामीकम् ॥ २५ ॥

न्यायात स्वास कार्य प्रान्त कार्य कार्य कार्य कार्य वास्त्र वास्त्र वास्त्र कार्य

the life white of control of the

प्रतिकृताः प्रत्याहताः इन्द्रियादयो येन अतपव उपारतं । स्थानश्चयात् जामदादिलक्षणात् परं तुरीयं परं प्राप्तमः । अतपव महाभूत-स्वात् अविकियम् ॥ २६ ॥

मिनम् विश्वी मिनिन विश्वी के प्रति के स्वाधि के स्वाधि के स्वाधि के स्वाधि के स्वाधिक क

न लम्धं तुर्गा तृगासनं भूमिरुपवेशस्थानंच येन सः। न सम्प्राप्तोऽस्यैः सुनृतं प्रियवचनं च येन सः॥ २८॥

#### श्रीवीरराघवः।

कचिदपि जलाकरमप्रयंस्तमाश्रमंप्रविवेश आंगिरसस्याश्रमंप्रविष्टवानित्यर्थः तत्र मुनिमांगिरसंददर्शकथंभृतमासीनमुपविष्ट्यांतंप्रसर्व मीलितेलोचनेथेनतम् ॥ २५ ॥

भूतायज्ञात्रकारण ज्ञात्रकारण ज्ञात्रकारण विश्व स्विधनायमेगा व्यक्तिम् । स्विधनायमेगा व्यक्तिम् विश्व स्विधनायमेगा व्यक्तिम् विश्व स्विधनायमेगा व्यक्तिम् । स्विधनायमेगा व्यक्तिम् विश्व स्विधनायमेगा व्यक्तिम् । स्विधनायमेगा । स्विधनायमेगा व्यक्तिम् । स्विधनायमेगा । स्वधनायमेगा । स्वधनायमेगा

मुवापणप्राप्ता राज्या राज्या राज्या राज्या राज्या येन नसंप्राप्तमध्येस्तृतं च मधुरवाचस्ययेन तथाभूतोऽतएवावसातमधहेसितीमवात्मानमस्य नलब्धंत्यामुस्यादिशब्दादन्यसोपवैशार्थे येन नसंप्राप्तमध्येस्तृतं च मधुरवाचस्ययेन तथाभूतोऽतएवावसातमधहेसितीमवात्मानमस्य मानोराजाञ्चकोप ॥ २८॥

#### श्रीविजयभ्वजः।

जलाशयंजलाधारंतटाकविशेष मचक्षागोऽ पश्यन्सपरीक्षित्याश्रममालस्यपरिहारकारग्रंस्थानविशेषप्रविवेशेत्यन्वयः शांतमसंप्रहा तसमाधिस्थंकिचिन्मीलितनेत्रम् ॥ २५ ॥

प्रतिरुद्धाः परमात्मन्येवसित्रधापिताः श्रोत्राद्धियाणिचमाग्रश्चासमञ्ज्ञबुक्तिश्चयनस्तर्थोकः तं प्राण्योधः कुंभकेश्वासरोधाः चेष्टा निवृत्तिर्वा अत्प्वशन्दादिश्वानेभ्यउपारतं तदेवस्पष्टयति स्थानिति जाप्रदादिस्थानत्रयातपरमतीतंतुरीयहरिप्राप्तम् अत्प्वश्चर्याम्भूतंप्रय स्नियतर्गाक्षितपर्वमनसार्धिविवद्यपेपरमात्मानमनुभवतं अत्प्वावित्रियं निश्चिष्टनिवातस्थदीपोपमविशद्धितया। २६॥

विमकीर्गामिजेटामिः छत्रंसद्तं हरोः छत्पासुगस्यविधमानेनाजिनेनचसंवृतमासीतंबा विशुप्यत्नीरसं तालुजिहामूलंग्रहजिहायस्य सतथा संवर्गक्षिततथामूतमेवविधिष्टेमुनिसुदकमयाचतप्रार्थितचानित्यन्वयः॥ २७॥

सत्या प्रतिविद्यम्वयः तस्माइतिशेषः अल्ब्धंतृशाभृग्यादियमसत्योकः आविशब्देनमञ्जूपकीक्षिगृशक्ते स्नागतीयस्यादिपियस्यनंस् इतं "तृशानिभूमिरुद्कंवाक्चतुर्थांचसुनृते"तिस्मृतेः आत्मानंमुनिनाऽवद्यातमिवमन्यमानः श्रुषादिनिमित्तीऽयंकापदस्यसिम्पर्यद्वसम्बद्धाः

## - कसरेंद्रकें भेग कुल्ड संस्थानिक !!

अलब्धेत्यादि । अत्र तस्येदश्रमाचो भगवद्युबद्यायः श्रीभगवदिक्तयेवेति वयम तस्यैव मेड्यस्येत्यादि वश्यमागात् ॥ २८। २९ । ३०। इर् । इर । इर । इस । इद । इत । इट । इद । इद । छर । छर । छर ॥

#### सुवोधिनी ।

मृशमिति सोदुमहाक्यंद्रोषोत्पन्नस्यश्रमादेः द्रोषज्ञनकत्वमेवनगुगुजनकत्वमितिवकृतंताद्रशस्यकोषजनकत्वमेवनगुगुजनकत्वमितिवक्तं तादशस्यदोषांतरमपिजातमित्याद जलादायमितिअसमागाः जलादायानामिपिदैवत्वादपतीतोऽपितिरोद्दितद्दतिमात्रः प्रकृषेग्रप्रवेदाः अपृष्टा "अननुकाच्य अन्तःस्थानपर्यन्तगमनं तमितिप्रसिद्धं प्रशासतद्वीशिर्मित्रस्थानं सतोद्दोष्ट्याप्तस्यसद्देशेनेऽपिनसर्वुद्धिरुत्पेन्नायथासामिपा तव्याप्तः इविषापिन्नियतेतथाजात्मित्याह द्वर्शेतित्रिमिःसार्थैः तत्रहथेन्युनेःस्वरूप्तर्गायति तस्यदोषाधिषया्य सनिरितिअवग्रामनने ब्रह्मविषयंकेसिक्केतस्येतिकापितम् आसीनिमितिनिदिध्यासनपरत्यंयोगेचासनिस्तियिमगम्बतः पूर्वव्यमेपि वर्षातुक्तं महतिह्यान्तमिति प्राक्त यामेनमनोनियमनमुक्तं मीलितलोचनमितिप्रत्याहारः ध्यानधारगोचक्तुंप्रत्याहारमेचदर्शयति प्रतिरुद्धति अथवामीलिनेलीचकामुहिविषया ग्यामप्रतिवन्धकत्वं स्चितंप्रतिलोमतयारुदाः अन्तर्नीताःइन्द्रियप्राग्यमनीबुद्धयोयेन एवंवाह्यविषयश्रान्तविषयं विष् मानेभगवति मासभाताद्रकः तेनस्त्रक्षपेताभगवत्स्त्रक्ष्यक्ष्यः अनेनञ्चानश्चारम् अपित्वचिते समाधिमाहस्थात्रश्यात्परसमाधिशाप्तः स्यस्वरूपमास्तरत्यथेः नक्षेवलंगानमाशं किंतुक्लस्पिजातिमत्याद महामूतामिति वहावदब्रह्मवभवती तिश्रुतेः असंप्रधातसमाथित्वद्यापुना याह अविक्रियमितिसर्वितकाररहितम अनेनदेहायुर्विसम्बादिसमिपिनवित्तं मनोव्यापाराऽपिनिराकृतः केवुल्स्वरूपेगीवसगवतस्वते इत्युक्तंभवति विद्योपधातिनराकरगाप्रकारं पूर्वमेवकृतवानित्याह विप्रकीर्सीतिविप्रकीर्गामिक्किटाभिष्कृतं रुखेवेहुर्र्धगम्गः सेर्वेद्वाचमे गाकुप्ताजिनेनचउपरिक्षाच्छान्नम् एतावतावहिरन्तव्यवस्थायास्तुनप्रार्थनीयदृत्युक्तं तादशमियाचितवानित्याक् विशुप्यसाखिरितिवशिष ग्राशुष्यत्ताल्यस्यशोकेनैवतालशोषगां तथाभूतमितिपूर्वोक्तधर्मयुक्तं याचनप्रपिदोषपव ॥ २५ । २६ । १५ ।

तेनदोषेगादोषान्तरमप्युत्पन्नमित्याह "तृगानिभूमिरुदर्भवाक्चतुर्थीचसुनुता एतान्यपिस्तागेहेनोल्डिश्रंहेतेकदात्राने विसम्प्रभागस्त दिमश्रद्धास्वस्यशिक्षकत्वंसमृत्वाशिक्षार्थमपिकृतवान् नलन्धातृगांभूमिः आदिशब्देनोदकंतृगांभूमिः आदिर्थस्यतिजलस्यापेक्षितत्वाहेवसुकं राजनिक्यां विद्याप्यमें व्यव्यादिनसम्पाधाः विद्यादिनस्तृतांतायेन राजसुत्राह्मम्। पाद्यस्यास्त्राह्माद्वात्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रक्षांत्रकात्र हेत्वतरंकरप्यति अवश्वातमितिनिषेधामावाश्वद्वप्रयोगः यदिख्यमेचज्ञलादकगुङ्खायात् तदापिनदोषः स्यात स्थापकर्मस्यात् प्रदर्भ भिमाननतद्यिनकृतवान्तदाह आत्माननमन्यमानइतिदोषेगादृष्टेः प्रतिरुद्धत्वात तत्त्वकृत्वमिन् विवासिनके अपनिवासिन विवासिन र्थमिपभवतिमन्युस्तुद्विष्टपव ॥ २८ ॥

## िक्षण्याम् कु**र्णा**कृतस्य केष्ट्रात्ता स्थानम् । भीविश्वनायज्ञकस्यां । 化沙克尼克克瓦 经产品

अख्यासार्गोऽपश्यम् ॥ २५ ॥

Party State of the Party State o

de la companya de la

हिर्देशकार्य कुर्व केंग्रा नार्य भारत प्रदेश विकास सामा है।

THE RESERVE OF THE PROPERTY OF मुर्नि शमीकम् । स्थानत्रयात् जात्रतत्स्वमसुषुप्तितः परं तुरीयं समाधि प्राप्तम् अत्यव व्रग्नमूतम् ॥ २६ ॥ इस्क्रेमविशेषस्तस्य चर्ममा च थान्क्यम् ॥ २०॥ A Commence of the second secon इस्स्रीयविशेषस्तस्य चर्मगा च आञ्छन्नस् ॥ २७॥ अलब्बेति। ममातिथ्यमनेन किमपि न कृतमिति चुकोप॥ २८॥

#### सिकांतप्रदीपः ।

जलाशयम् अचक्षागाः कचिदपि अपरपमातः तंप्रसिद्धमाश्रमप्रविवेश सत्रचमुनिशमीकंद्दर्श ॥ २५॥

क्रिक्याः विषये १यः प्रत्याहताः इदियावयोथेनसत्यातम् अत्यवोपरतम् स्थानत्रयात् आप्रवादेः परंतुरीयस्थानप्रास्तत्रवस्य यंभूतप्राप्तयेनतमित्यथेः विप्रकार्याभिः परितोलंबमानामिजंदाभिद्द्वसम्जिनेन्द्रद्वं क्रम्याचार्यक्षम् तथाभृतम् निविध्यापाञ्च यस्यसमृपः उद्दक्षमयाचत् ॥ २७॥

न्छ वर्षेतृत्यं तत्मयमासनंभूमिरुपवेशस्थानमादिनाजलादेशे हताम नसंप्राप्तमातृताशिदेगीऽस्थीस्तृतंप्रियं घाक्यं चेमसः॥ २८॥

#### सावादीका।

कहीं जल न मिलने से शमीक ऋषि के आश्रम म जाकर नेत्र बंद किये मये बेठे मुनि को देखा ॥ २५ ॥ यह ऋषि इंद्रिय प्राणा मन को रोकेड्रये निवृत्त तीन अवस्था से अतीत क्षत्रभूत अविकारी होगये थे ॥ २६ ॥

11.22 TOURDIESE METHORISE

a se in all provided to

ग्रमूतपूर्वः सहसा क्षुनृद्भ्यामिदितात्मनः।

等,《京·中等》 B含(F等) 电弧流导流(罗鲁州温度 स तु ब्रह्मऋषेरंसे गतासुमुरगं रुषा।

विनिर्गच्छन् धनुष्केाद्या निधाय पुरमागतः ॥ ३० ॥

एष किं निभृताशेषकरणी मीलिते चाणः।

श्रासमाधिराही स्वित् कि न स्यात त्रत्रवन्ध्राभैः । विशेषाकां विकास राह्मयमीनवयम्ब्रु सं वीरितासंस्थायां नयायाहारः स्थानयायां प्रमुखायायमे इत्रां हो अधि

जात्रस्थ सियान्य के स्तिमांगरियास्य मान्याः जन्मसीताः इत्य प्राप्तास्य के स्ति विकास जुटा उनके फेले थे म्हणचर्म आहे थे ऐसे मुनि को देखकर जिले बिना शुक्त तालुकलेखाजा के उनसे जिल मांगाना १९०॥ हो हाणक हो ह 

मान्यानार्याकार्याकार्याकार्याच्या व्यवस्था हिन्द्रात्र । अस्यान्य व्यवस्थान्य । अस्य व्यवस्थान्य विभिन्न नि<sup>ं</sup> **अधिरस्तामी ।** विकास के विकास क्षिति क्षिति

- प्रमत्स्वरः तेवुत्कषीसहनम् ॥ २९ ॥ विकास विकास । १९ ॥

ः गतासुं मृतम् । यानुष्मीट्या चापाप्रेशा ॥ ३० ॥

A STATE OF THE PROPERTY OF THE ं संग्रीतिधाने राक्षोऽभित्रायमाह एकं किमिति। एक कि मसाहतसर्वेन्द्रियः सन् मीलितेक्षणः स्थितः। यहा क्षत्रवन्धुभिरागतेर्गतेर्वा

**किंग्ड स्यात् बस्यवश्या मृषासमाधिः सन्निति जिश्वासयेत्युर्थः ॥ ३१ ॥** ३५०० । १८४५ । १८५४ । १८५४ । १८५४ । १८५४ । १८५४ ।

को**त्रेय पुत्रः मृङ्गी नोम**ेश **संब**िद्धार्षेक्य भित्राकोक्यमध्ये ॥३२॥३४० १००००० १०००० १०००० । स्वीतिक स्वरूपने हस्तर सम्बन्ध

श्रीवीरराघवः।

श्च चुड्ड्यामर्दितःपीडितआत्मारारीरंबस्यतस्यराज्ञोऽतप्वाभूतपूर्वःपूर्वभूतोभूतपूर्वःकदाचिदपिपूर्वनजातस्यर्थः मत्सरोमत्युश्चहेब्रह्मन् । ब्राह्मणामुनिप्रद्वभूवभूव मन्युः क्रोधः अमर्षइतियावत्मत्सरीद्रोहोऽपचिकीर्षेतियावत्॥ २९॥

ततः सत्त्राज्ञानिर्गच्छात्ररातुमुचुक्तो ह्याब्यार्षरस्यभूद्धः कोस्याभ्युषोऽयभागेषागतपायांसपैनिघायपुरंययौ ॥ ३०॥

किमर्यनिद्धित्यानित्यत्रराष्ट्रस्तात्पर्यमाविःकरोतिएवद्दि किमेषमुनिनिव्दत्तानिनयमितान्यशेषाणि करणानिद्धियाणियनमीलितेदक्षणे मास्तेइत्यभिद्वार्थियानिधायगृतइत्यर्थः ३१॥

ततस्त इर्गमुनेः पुत्रः अतितज्ञस्तिष्ठाद्यतेजःसंपन्नः बालकोऽभेकेः सहक्रीडंस्तातंपितरंराश्चाऽधंप्रापितमपराधविषयीकृतं श्चरवात्रभेवेदं

वस्यमागामवद्याता॥ ३२॥

## 

तस्यपरीक्षितः वासर्गापतिमन्यूरभूतन्भेवलमन्यः कितुमन्त्राभदित्यन्वयः मन्युरवनप्रसादश्रयेवशस्याशेः मन्सरीनायमद्वराद्य प्रीतिश्च की दशः अमृतपूर्वः इतः पूर्वमनुत्पन्नः की दश्चिम् असुद्धामार्दितात्मनः पीडितमानसस्य ॥ २०॥

वापनिष्यतमाह, सहित सराजातस्यवसर्वेः स्कंबनता संमृतंसप्धितः कोट्यानिधायपुरमागमदित्यन्वयः ॥ ३० ॥

पुरमागच्छतस्तस्यालीचनप्रकारमाह एवहति एवम्रीनः विषयुक्ष्यः प्रत्यङ्मुखतयानिभृताशेषकर्गाः परतस्यविषयीकृतस्कलेद्वियः मीलितक्ष्याः किनोऽस्माकक्षत्रवेषुमिः किस्यादितिमुधासमाधिमीलितेक्ष्याः आहोसिदिति मनसापितकेयन्पुरमगादितिपूर्वेगान्वयः॥३१॥

तस्यब्रह्मवेः पुत्रः शृंगीनामकः तन्नेदमब्रजीदित्यन्वयः इदामितिवस्यमायां किकत्वा राज्ञापरीक्षिताध्रमपरार्धप्रापितिपितरंश्रत्वाअगुचि तांवापितमितिवा अतितेजस्वित्यनेनशापदानुसामध्येमस्यास्तीतिदार्शितम् अभेकैः बालैः सहविद्यत्वयसायाकः नतुसामध्येनसेतद्वशितेक प्रस्थिम ॥ ३२ ॥ A SERVE STORE OF STREET AS A SERVE STORE OF THE STREET AS A SERVE STORE OF THE SERVE STREET AS A SERVE

## इस्पेक्ट विकीती है। हिस्स के किस्सू

तदातस्यान्यत् दोषद्वयमुत्पन्नमित्याह् अभूतपूर्वदृति कदाष्येतादशोदोन्नोतपन्नः यस्तुत्राह्मग्रेमस्पर्द्धः सहस्रोतिवचारोत्पन्तिनेन्नाः रिता देहधर्मापवंप्रवलाजातादृत्याद्व श्चुनृद्धश्यामितिआत्मायन्तः कर्णा यस्यपवंद्राह्मग्रातिकमंश्रुत्वाशीनकस्यक्षोभोजातद्दतिब्रह्मान्नीते सम्बोधनं ब्राह्मपवमत्सरोमन्युश्चजातः परोत्कर्षासहनंमत्सरः पवंद्रशहीनाःस्मृत्यनाः वकरिंगांसर्मुचिताः॥ २९॥

उपसंहारायदोषाणांफलमाहसतुबद्धान् भोरिति तुद्धान्देनपूर्वभानंनिवारितं कार्यस्यकात्वात्मलेः स्थानप्रदानाद्धिबाद्धाणातिक्रमेमतिः ब्रह्मभूतस्यऋषेरितिप्रमेयप्रमाणावलवत्त्वंस्चितं तिष्ठित्यं सहितनीयमानः सर्पः शिरसः साक्षात्वद्धात्वं सप्वपतितः तस्यवाहस्तोऽप्रेनत्र लितः सर्पेहत्वामरणानंतरंगतास्रंतम् उत्थायविनिर्गच्छन् धनुः कोट्याउत्थाद्धवस्य सिनिधायस्यपुरमागतः स्रृणयागतः धनुषः स्वस्य स्वकार्यक्रत्वा समागतः तत्रविनिक्षदेतिष्ठेश्चेत्सांत्वयेदिष्वालक्षम् ॥ ३०॥

नतु तथाकरगोराञ्चःकोऽभिप्रायस्तत्राहएषिकिमितिनिभृतानिअशेषागिकरगानियस्यताहशोभूत्वार्षिमीलितेक्षगाः आहोस्विद्शानार्थमृष्। समाधिशापकोमीलितेक्षगारितनत्रतथाशापनिकिप्रयोजनंतत्राहिकेतुस्यादितितुर्दतिवितकीनिश्चयैवाक्षत्रविधामः किस्यात्आगतेर्गतेर्वाक्षत्रविधु त्वेक्षानयोगात्यद्यपिमृषासमाधित्वेनिकिविदनेनकर्तुशक्यतेत्वयापिचित्तसमाधानार्थमेषुविचारउत्पन्नहत्यर्थः ॥ ११॥

प्वमविचारितकृतेः अनर्थपर्यवसायित्वमाहतस्येति पुत्राम्नोनरकात्तायतहतिपुत्रः सचेदस्मान्तत्रार्थतेपुत्रते प्रगतः स्यात्वातितेजस्ति अनेनसामर्थ्यद्योतितम् अविवेकहेतुमप्याह अभकैः सहवालकप्तवंशाश्रमणातिवचरत्राकाभपराधंपप्रिमापितह्युत् प्रगतः स्यात्वातितेजस्ति प्रापम्बाति प्रापानम् प्रापानम्यम् प्रापानम् प्रापनम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम्यम् प्रापानम् प्रापनम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम् प्रापानम्यम् प्रापानम् प्राप

## श्रीविश्वनायुचक्रवृत्ती ।

मत्सरस्त्दुत्वर्षासद्दनम् ॥ २९ ॥

भावः॥ ३०॥

निर्मनसमये राजा परामृशति एव इति । निशृताशेषकरणः प्रत्याहृतसन्वेन्द्रियः अतः सत्यसमाधिकः ब्राह्मा सिन्मुणसमाधिस्तत्र हेतुः कि न्विति । वात्र राज्ञो विकर्मेदमभाग्योत्यं न क्षेयं किन्तु तं शीघं स्वपार्थं नेतुं वस्त्राप्रहारा विरक्षं विधाय शुक्रदेनेन् संज्ञतं कृत्वा तत्र श्रीभागवत् होणा स्वयमाविष्यं व्याद्धक्षेत्रं कृत्वा तत्र श्रीभागवत् होणा स्वयमाविष्यं वार्ष्यं मागवत एवयिमच्छेति मनीषिणा वाहुः । तस्यव मध्यस्य त्यादिवस्यमाणात् । मच्छुद्धभक्षस्य देवाद्विक्रमीषि श्रुभावक्षम्वति क्षाप्रायतु यदा यदा हि धम्भस्य ग्लानिभवति भारत । वाश्युत्यानमधम्मस्य तदात्मानं सृजाम्यद्विमिति श्रीभागवत् होणा स्वाविभावे कारणाभासं वोत्थापयितुं भगवतेव तस्य तथा भाव उद्घावतः । न च तस्य स्वप्रेष्ठि स्वभावः अभृतपूर्व इत्युक्तेः । न च देवादभाग्यविशेषोत्थो- अयोपयति भावतेव तस्य तथा भाव उद्घावतः । न च तस्य स्वप्रेष्ठि स्वभावः अभृतपूर्व इत्युक्तेः । न च देवादभाग्यविशेषोत्थो- अयोपयति भावतिव भावतिव स्वप्राप्ति । व तस्य पिपास्तातिशय एव हेतुरिति वाच्यं तत्रभ्रणानन्तर- भव जलम्पीतवत एवाजुनाप्रातिविद्यमाग्रास्य गृहागतस्य सद्य एव आयोपवशाति । इत्येवंस अन्मान भरगो च ब्रह्मतेजसो सञ्ज्ञयन्ति स्वाल्ययं व विजयति तस्य एक्षे भगवत्वस्य महावल्यविद्यामाग्रास्य सद्य पत्र भायोपवशात्व । इत्येवंस अन्मान भरगो च ब्रह्मतेजसो सञ्ज्ञयनः सि स्वाल्ययं व विजयति तस्य एक्षो भगवत्वस्त्रपामहावल्यवंसाधारग्रामेष्ठं द्ववस्त्र ॥ ३१ ॥ ॥

्र तस्य पुत्रः श्रृङ्की ॥ ३२ ॥

#### 

बर्दितः पीडितआत्मारेहोयस्यतस्यपूर्वमृतोमृतपूर्वस्तक्षिपरीतोऽ भृतपूर्वः मत्सरस्ततुत्कर्पोसहनात्मकश्चित्तविकारः मन्युःकोधनं सहसाऽभृतं सद्यप्वत्रमृत्वः॥ २९ ॥

सतुमस्तरमन्युभ्यांयुक्तस्तुरुवाकोश्चेनमत्त्वरेशाच्यवद्यात्रहुवेः पूर्व्यस्यनिरप्राधिनः गतासुंगतप्राशासुरगंधनुवोऽप्रेशानिधायपुरमागतः ब्राह्मः अत्याश्चर्यकपातकोथादेखरपत्तिः प्रदृत्तिश्चेतिमानः॥ ३०॥

क्तिमेषनिभृतानिप्रत्याहतान्यशेषाधिकरणानियेनमीलितेईश्वग्रीयेनसत्याभूतः सन्तसत्यसमाधिः आहो।सित्सप्रचंघुभिः किन्रस्याद इत्येव सस्यदुषेक्षयामृषासमाधिः इतिसपिनिधानतवाशयः॥ ११॥

पुत्रः श्राणीयाचेतुः सम्माणितत।तेणितरेशुन्विद्यमञ्जाति ॥ ३२ ॥

#### क्षित्र । अस्ति कार्य का

the state of the s

खुवा तुषा से पीड़ित होने से राजा को बीहाती बाहाया मुनि पर अपूर्व मत्सर तथा क्रोध हुआ ॥ २९ ॥ वह राजा जलते समय उस बाहाति के कान्धे पर धतुष से मरा हुआ सर्प को डालकर बाम को जला तथा॥ ३०॥ राजा का बांभवाय था कि यह सबि सब धन्त्रियों की रोककर नेव मुनुकर क्षत्रियों से क्या होगा यह जानकर झूँठी समाधि द्याया है क्या ॥ ३१ ॥

## त्रहो त्रधर्मः पालानां पीवनां विस्तिभुजामिव।

किली लोग के किले के किल स्वासिन्यं यहासानी द्वारपांगी शुनामिवी विश्वास के किल के किल के किल र्षेत्रः प्रार्थितासम्बद्धार्थसम्बद्धार्थः

पीतिक विकास के विकास के विकास के विकास के किया है। जिल्ला के किया के किया के किया के किया के किया के किया किया अस्तिक के बाह्य के बाह्य के किया के कि

ी व्यापक के किल्ला क्यां तद्गृहे द्वाःस्थः स्माण्डं भोक्तुमहिति।। ३४ ॥ हरणाया विकास स्थापक व कृष्णि, गृते भगवति शास्त्रस्थित्पथगामिनास्य । क्रिकेट क्रिकेट क्रिकेट क्रिकेट क्रिकेट

तदिवसेतमका हं शास्मि पश्यत मे वसम् ॥ ३४ ॥ इत्यक्त्या रोषताम्राची वयस्यान्षिवालकः ।

कोशिक्याप उपस्पृष्य बाग्वज् विसंसर्ज ह ॥ ३६॥

#### भाषादीका ।

उस अहि का ्रिया तेजली बालक वालकों के साथ केलता हुआ राजा का किया पिता के अपराध को सुनकर वशी यह चंचन बोला १३३।

#### श्रीधरस्वामी ।

पालानां राष्ट्राव्य । पीलां पुरालाय । अध्यमेनेव निर्दिशति खामिनि दासानां गृहशं पापाचरसम् बलियुजां काकानामिव शुक्तिपव नेति ॥ ३३ ॥

कासायं दर्शयति ब्राह्मसेरिति। समागडं मागड पव स्थितम् ॥ ३७॥

सत् सदनस्तरम् । अहं शास्मि देगुड्यामि ॥ ३५ ॥

इति वयस्त्रातुक्त्वा रोवेगा ताम्रे अक्षिगी यस्य । कौशिकी नदी तस्या अपः । सन्धिराषैः । वागुवजं शापम ॥ ३६ ॥

#### श्रीवीरराघवः ।

सदैवादअहीदतिपंचामः विलेशुजीशुनीवायसानामिववापीक्षीविजितानीपालानाराक्षामहीवयर्भः प्रयतीकीऽसावधर्मः द्वारपालानीशना मिवदासम्तानांदाक्षांखामिनिवाहागीऽ घमपराध्रशतियद्देवपवाध्रभैः॥ ३३॥ विकास स्वासी

तदेवोपपाद्यविक्षित्रवंधुर्हित्राह्मणैद्वरिपालत्वेनश्वेवतियोजितः सद्धाःस्यः क्षत्रवंधुस्तहृहेत्राह्मणगृर्हश्वेवकथंसभाउमेकपात्रयधात्रयामो क्रमहितियोग्योभवेत् 📗 ३४॥

उत्पयप्रतिप्रशानांशास्तरिदंडियतरिकृष्णोभगवितस्वलोकंप्रतिगतेस्तित्त्वत्तिम्त्रमर्यादानहमद्यशास्मिशिक्षयेममवलंपश्यत ॥ ३५ ॥ 

## thister was the first the same of the same श्रीविजयध्वेज । १६६ में राज्यात से के कि कि ता राज्यात कर के पर विकास कर के विजय के

कारिका है। विकास मारिका मारिका मारिका के मानिका के किमाहेतितत्राह्यहोइति बलिभुजांकाकानामिवपृथ्वाः पालानांराज्ञामधर्मीद्भवस्थोऽसास्माभिदेष्टायहोकप्रतास्कृतिस्वास्माभिदि। शुनांखामिन्यधमिवबाह्यणदासानांतद्रृहद्वारपानांराक्षांसंप्रतिखामिनिबाह्यणे व्यवस्थात्तरमाविति। विकास

राज्ञांविपदासत्वंकथमितितत्राह ब्राह्मगौरिति ब्राह्मगौदांसतयाद्वारपालोनिकापतः सराजातस्यविपस्यगृहे द्वाः स्थोद्वारपालः कथंस भांडमांडेनसहवर्तमानंगृहंभोक्तुंनाशयितुमहेतिनाहेत्येवहियस्मात्तस्मात् असीखामिनादं अवस्यर्थः ॥ ३४॥

ति संप्रतिकोदंडकतेतेषामितितत्राह कृष्णाइति उत्पर्यगामिनांविहितमार्गेपरित्यष्यगञ्छतांशास्तरिक्षणीभगवातिगतिभिन्नसेत्वस्रोधित मर्यादांस्तानद्याहंशास्मिदंदयामीत्यन्वयः मेवलंसामध्यपद्यतदेवाला । इतिशेषः ॥ ३५ ॥

स्वदंदः कीदशहतितत्राह इतीविर्णयतामामः रक्ततेत्रः क्रीशिक्षीकुगुपाणाः अपउपस्पृद्यमा वस्यवाग्वज्ञा पळ्यमाविससजेदच कत् राहर्शिकोषः रितिहासधातकेन्द्रगञ्चनकोश्चिकातदीतस्याअपचप्रदेपस्यप्रसाल्यान्यपदिस्ततामितिकातस्यम् ॥ ३६ ॥

## 

अमेदगडिनक्रपणार्थेदग्रेडग्रीम्बतामाहित्रीमिः अभूमैः स्वामिद्रोहोदगडिनिमित्तं राजनिष्ठं दग्रहनुसामध्योयस्विनष्ठं तत्रप्रथमेदोषमाह अहोइति आश्चर्येपालानामध्यमे ध्रमेपालका धर्मिन्दाक्वंन्ति नतुकुर्वन्तीत्याश्चर्यक्षाश्चर्यनिविष्ठोध्यायन्तेदमाश्चर्यमितिवातवान् अतोअधमे हेतुंवदन् स्थानिवशेषप्राप्यतस्यहेतुत्वं वापयन्देष्यान्तेमाहे पीव्नामितिवलवत्त्वमेव अध्यमेक्द्रणाहितः नीचाराज्यनपुष्टा अधर्मकृतवन्त इत्यर्थः यथाभ्वानोवलिनापुष्याः विल्वातासमेवनस्यन्तिग्धृतं व्यविक्षात्राम्बद्धार्थानां राज्यद्वयं स्वराप्यविद्यार्थान्त्र वहीराज्यं स्वभाग्यनम् वतीतिस्वराज्यसाधकत्वेनिवनियुक्ताः अतप्वस्वित्याः स्थापिताः व्यवणानिमित्ताम् कश्चर्यन्वद्याः तथापरशुरामेणर्थन्वत्याः वित्यविद्यासितिवासित्यविद्यामिन्यविम्यराधकर्यात्राप्यं तच्छुनामिवजाति विषय् व्यविद्यान्त्र स्वामिन्यविम्यराधकर्यात्र यहामिव्यविम्यराधकर्यात्र प्रहेमाप्रविशतिवासित्याः स्वामिन्यविम्यराधिकम्यराति गृहंमाप्रविशतिवासित्याः समाध्ययमेव राजाविनियुक्तः समाधिमाकरोतु अस्मत्युजाकरोत्विति ॥ इत्र ॥

पतावताशुनस्तुव्यताराक्षोनिकपिता विषमस्ष्टांतशैकासाद विद्यासीकित सनिनद्धामिहोहः सामर्थ्यतेहीति चतुर्थानिकपर्या वोधित शारिरादिवाह्यपदंद्वारंवस्तुतोऽत्र विकपकाश्चमवः अतोयिनिकपितं तेषामवगुहेद्वाःस्यः सर्वदाद्वारपालकः सभांद्रभोजनं पाकंपाकस्थमन्ने भोकुमहेति ब्राह्मग्रामाक्षापपितुंनाहिति तेषामवरूपयाराज्यकरणात् ब्रह्मग्राहिन्द्वव्यक्षितं तत्र सर्वपुरुषार्था मोगस्थानानि ब्राह्मग्रामां त दुपद्यातक निराकरणात् हारपालकोराजा राज्यं विलस्थानं ब्राह्मग्रामि कृषीवलवत् विलस्थापत्नात् सभांद्रभोजनं समाधिस्थापताः

धात् गृहप्रवेशेनसभांडभोजनम् ॥ ३४॥

प्रमाणां धंसमर्थितवाखस्य दंउनसामध्ये वदन प्रकारांतर ज्यावर्तयति कृष्णेनतेमगवतीति सहानंदनकृषेखातुमवार्थमेव माद्य-गाणियुज्यखस्थानगते मगवरवात् खानंदातुमवस्य संपादनार्थ पूर्वश्रद्धाग्रीरेवदंडःकर्त्तव्यः कोटिहयस्यस्थापितंत्वात् अतोद्वयमस्मा भिरेवकर्त्तव्यमित्याह भिन्नसेत्नितिभिन्नाः सेतवोमयादायैः अनेनखार्थपरित्याग्राउकः नतुक्दापिसेतुवंधनं नश्चतं तुत्राह असे अर्थे वजातमधैवदंडनं कर्त्तव्यमित्यर्थः खमामध्ये तथाविधमस्तीति वालकान्द्रोधयाति पश्यतेति अविभूतवद्यातेकः खरिमन्ख्यप्रकृत्व खमित्रत्वात् तानाप्रवर्शयति ॥ ३५ ॥

प्वमध्यवसायंकृत्वायत्कृतवान्तदाष्ट्र इत्युक्त्येति राजभावनयापालकत्वाभावाद्रोषः वेनताम्रेशिक्षायिस्य अनेनपुनर्विचारांतरंनकृत वानितिक्षापितं कौशिकोनदीतस्याः अपउपस्पृत्य आचम्यस्यस्यम्यावमाविभीव्य वामूपं वर्जनिससर्जवषद्भद्वसीत्यादि मंत्राद

न्त्वाद्धीच्यस्थिनिर्मितः सवज्ः अयंतुब्राह्मगानांमूलभूतोवाग्वज्ः ॥ ३६ ॥

## ा १८ विश्वनाथयम् वर्षा । १८ विश्वनाथयम् । १८ विश्वनाथयम् । १८ विश्वनाथयम् ।

पालानां राज्ञाम् । पीव्नां पुष्टानाम् । वलिभुजां काकानाम् ॥ ३३ ॥ पृहपालः श्वा गृहं प्रविदय सभागङं भागङ्सहितं वृतादि वस्तु । तेन राज्ञां मुनीनामाश्रममध्य सहसा प्रवेशे तत्र जलादिप्रार्थने च

का योग्यतेति भावः ॥ ३४ ॥

तत् तदनन्तरमद्दं शास्मि दगडयामि ॥ ३५ ॥ वयस्यानुका । कीशिक्याप इति सन्धिराषेः ॥ ३६ ॥

**影響的學術學的學術學**。可是自然的學術學的學術學的

#### सिद्धांतप्रदीपः ।

द्वारपालशाहर्यदर्शयति ब्राह्मग्रीरिति तद्गृहेयैनिकपितस्तेषांगृहेसः क्षत्रियः द्वाः स्थः सन्सभांद्धमोत्तुं कथमहोतियोग्यामचेत् ॥ ३४ ॥ तत्त्वसमादुत्पथशास्तुरिहाविद्यमानत्वात् अहमेवशास्मि शिक्षये ॥ ३५ ॥ विद्यानिक विद्यमानत्वात् अहमेवशास्मि शिक्षये ॥ ३५ ॥ विद्यानिक विद्यमानद्वाः अपः संधिरात्रेः अपरक्षित्र अपने विद्यमानद्वाः अपः संधिरात्रे । अपने विद्यमानद्वाः अपः संधिरात्रे । अपने विद्यमानद्वाः अपने संधिरात्रे । अपने विद्यमानद्वाः । अपने विद्यमानद्वाः अपने संधिरात्रे । अपने विद्यमानद्वाः । अपने संधिरात्रे । अपने विद्यमानद्वाः ।

#### सामाईका ।

अही आश्चर्य है कि पालक राजाओं का पुष्टविक पाने हों करते हैं ३३ वार्की ने राजा की द्वारपाल राजा है वह की धर्म पेडकर पान सहित वार्की मक्षण कर सकेता ॥ ३६॥ वार्की ने राजा की द्वारपाल राजा है वह की धर्म पेडकर पान सहित वार्की मक्षण कर सकेता ॥ ३६॥ उत्पर्थगामियों के शासन करनेवाल के पंचा मंगान के चल जाने से मंगीरी हांडनवाल के में शासन करता है केता प्रलेख हैं भी शासन करता है केता प्रलेख हैं भी शासन करता है केता प्रलेख हैं भी प्राप्त करता है केता प्रलेख केता है अने की प्राप्त करता है केता प्रत्य करता है के प्रत्य का प्रत्य का प्रत्य की की प्रत्य करता है के प्रत्य का प्रत्य का प्रत्य का प्रत्य की की प्रत्य की शासन करता है के प्रत्य की शासन करता है केता प्रत्य की प्रत्य की प्रत्य की स्थाप का प्रत्य की प्रत्य की स्थाप साम का प्रत्य की प्रत्य की स्थाप साम का प्रत्य की प्रत्य की स्थाप साम की प्रत्य की प्रत्य की स्थाप साम करता है भी प्रत्य की स्थाप साम की की प्रत्य की साम की स्थाप साम की साम की

magnification of the medical contract of the particular of

A single formation of a selection of the second

Albert Alle Galler

इति लङ्कितमर्यादं तत्त्वकः सप्तमेऽहनि । दङ्क्ष्यति स्म कुलाङ्गारं चोदितो मे ततद्वहम् ॥ ३७ ॥ ततोऽभ्येत्याश्रमं वालो ग्रहेसपंक्लेवरम्। पितर वीक्ष्य दु:खार्ची मुक्तकण्ठी रुरोद हा। ३८॥ स वा ग्राङ्गिरसो ब्रह्मन ! श्रुत्वा सुतविलापनम । उन्मील्य शनकैर्नेत्रे हृष्ट्रा चांसे मृतोरगम् ॥ ३६ ॥ विसृज्य तथा पण्छ वत्स ! कस्माद्धि रोदिषि । केन वा तेऽप्यपकृतमिन्युक्तः स न्यवेदयत् ॥ ४० ॥ निस्त्रीतिक के जन्मिता विभागतिक विश्वास ।

de a alla protection properties and रति यत्रं सर्पनिक्षेपेशा । देह्यति अध्ययिष्यति । घष्ट्यतिति पाठे अस्मीकरिष्यति । स्मेति पादपूर्णाः । कुल्स्याकार्वज्यम् । मेम्पा 

गले मर्पकलवरं यस्यत्य छक्समासः मुक्तकगठ उचैरित्यर्थः॥ ३८॥ ः विकास आंक्रिंसो अद्भिरागानोज्जवत ॥३१॥

तं सर्वे विस्तृत्यः। कर्नापंतारः सुत्रे ॥ ४०॥

श्रीवीरराधवः ।

वान्वज्ञमेवद्शयतिइतीत्थंउल्लें वितामर्यादायनतंमेततत्रहृद्ततस्तातः पितातस्यापकारिगांकुलनाशकराजानमितः सप्तमेऽहनिमयाचोदि

तः प्रेरितस्तक्षकः सर्पोदंश्यतीति ॥३७॥ ततोवालःपितुराश्रममागत्यगलेकंठेसपीयस्यतत्कलेवर्यस्यतंपितरमालोक्यदुःखपीडितोमुक्तः कंठोयनसः उच्चैः स्वर्युक्तइत्यर्थः ररो

दरोदनंकृतवान् ॥ ३८॥

वतोहेब्रह्म-सवैशांग्रिरसः सुतस्यविलापेश्वत्वाशतेर्नेत्रेषुन्मील्यांसेमृतमुरगंदद्वा ॥ ३९ ॥ तंपरिहृत्यपुत्रपप्रच्छप्रदेनमेवहिहेवत्सं । कस्माद्धतास्त्वमितिहोषः विरोदिषिरोदनकरोषिकनवातेतवापक्रतंभविकः इतीत्यमुक्तोवास्त्रकः सर्ववृत्तंन्यवेद्यत्कथयामास् ॥ ४० ॥ में जीवानी कीने केवामी प्रशेषण ने ए निन्त्रीत हैं।

इतोऽधतुनाद्कः सप्तमेऽहनिमेमयाचोदितः प्रेरितस्तश्चकः सर्पविशेषः लेघितमयदिकुलांगार्रकुलनाशकं ममपितृदुईपरीक्षितनामराजा न्ध्रहयतिसमद्भ्यक्तयोदित्येकान्त्रयः धक्ष्यतीतिलद्समद्याञ्यसामध्येल्लाङ्येबोद्धव्यः भागचतप्रधानराजदहनेऽपिसामध्येणतिनायवायंज्य And the state of the second property of the second property of the second party of the त्ययः ॥ ३७०॥

माध्रमगतः ततः गलेसपैकलेवरंकंटस्थितसपैशरीरंपितरंहष्ट्रामुक्तकंटः उच्चैक्रोदेत्यम्बयःसमाधिस्थितोवाचातोबोधसीयस्त्रकोरोदक् मुखे कृतीमृत्यर्थधीतको हर्शान्द ॥ १८॥

वैअपिअगिरसकुलोत्पन्नः सः शमीकोऽपिस्रुतस्यविलापितरोदनमः॥।३६॥

उरगंविसृज्य परिदृत्यकस्माद्धेतोः विरोदिषातिपुर्वपमञ्जेत्यन्वयः विप्रकृतंविपरीतंश्चतम् ॥ ४० ॥

## ्र सुवोधिनीः।

तस्यवाग्वज्रस्य अर्थमाद्द्वति एवमकारेता वकमयोदतक्षकः सप्तमेविनेजकातिसमञ्ज्ञांगारंनोदितोमेपितृवृहं विस्यति असमसाव कारिज्यातस्मेति प्रसिक्षसर्वप्रसिक्षातं मझिण्यतीत्वर्थः सनेनतस्यप्रतीकारोनमविष्यतीति सुचितं "सहवैशीर्षणयाः प्राणा"इतिश्रुतेः शिर सीरक्षितत्वात प्राणामातकत्वेऽपितावत् कालंजीवनमुक्तं यदिशिरसिस्थापयेत् तदैविधयेत वचुपडिवकुलोत्पर्भं कथं धस्यतितस्रकः तत्राह कुलांगारमिति वृद्धिवानीनद्वाम् प्तादशाप्याभांतरकत्यो कुलमेवनाद्यायिष्याति यादव्यत् अतः पोडवानामुपकाराधिमेवं धस्यतीत्यर्थः क विकाशितीन प्रश्यतीत्याशंक्याह चौदितीम्हति युद्रप्रदितीनान्यशाकिरिष्यतीत्यथेः अन्यशातमप्रिष्यस्योमीतिसायः प्रथमाझापनेहेतुः पिछ्डु-द्भिति अस्मत्पित्रदृद्धतीति॥ ३७॥

agranta arradagar nakada

निशम्य शप्तमतदर्ह नरेन्द्रं स ब्राह्मणो नात्मजमभ्यनन्दत् । अहो वतांहो महद्रज्ञ ! ते कृतमल्पीयसि द्रोह उरुद्देमो धृतः ॥ ४१॥ न वै नृभिर्नरदेवं पराख्यं समातुमहस्यविपक्षबुद्धे ! । यनेजसा दुर्विषहेण गुप्ता विन्दन्ति भद्राग्यकुतोभयाः प्रजाः ॥ ४२॥ अलक्ष्यमाणे नरदेवनाम्नि रथाङ्गपाणावयमङ्ग ! लोकः । तदा हि चौरप्रचुरो विनंक्ष्यत्यरक्ष्यमाणोऽविवरूथवत् क्षणात् ॥ ४३॥ तद्य नः पापमुपत्यनन्वयं यत्रष्टनाथस्य वसोविलुम्पकात् । परस्परं व्रन्ति शपन्ति वृद्धते पश्चा स्त्रियोऽर्थान् पुरुदस्यवो जनाः ॥ ४२॥ परस्परं व्रन्ति शपन्ति वृद्धते पश्चा स्त्रियोऽर्थान् पुरुदस्यवो जनाः ॥ ४२॥

#### सुवोधिनी।

पर्वश्रप्रवातिसम्तेजिस्शातेमानुषभावेनगृहमागृत्यरोदनंकतवानित्याहततद्दति गलेहत्यलक्समासः वालत्वातमृतोजीवतिवेतिनशातः वान्तादशापितर्रविषयदुः बनार्तः मुक्तकंठः प्रावितेनखरेण पितातुस्पकंठः ख्यंमुक्तकंठद्दति निश्चयोजातः ॥ ३८ ॥

प्रावित्व संतदाह सवादिते आंगिरसः तद्गोत्रेजुर्पन्नः सिंह कुळीनत्वं स्वावितं बद्याविति शंकात्वं वार्तिनहित्रह्यम्ताजन्यथाकुवेति अति स्वरावातेनस्यापितं स्वरावित्व स्वरावातेनस्यापितं स्वरावतेनस्यापितं स्वरावतेनस्यापितं स्वरावात्वास्य स्वरावतेनस्य स्वरावते स्वरावतेनस्य स्वरतेनस्य स्वरावतेनस्य स्वरतेनस्य स्वरावतेनस्य स्वर्यस्य स्वरावतेनस्य स्वरावतेनस्य स्वर्यस्य स्वरावतेनस्य स्वरतेनस्य स्वरावतेनस्य स्वरावतेनस्य स्वर्यस्य स्वरतेनस्य स्वर्यस्य स्वरत

#### श्रीविश्वनाय्चक्रवर्ती ।

इति यतो मत्पितुर्देहे मृतस्पी निक्षित्तस्माजीवश्रेव स्पेश्रष्टस्तक्षकस्त वर्ग्यति भक्षियेष्यति॥ ध्रम्यतीति पार्ठ भस्मीकरिष्यति । मे मया प्रेरितः । ततदुहं तातदुहम् ॥ ३७ ॥

गले इत्युलुक् समासः ॥ ३८ । ३९ । ४० ॥ 💛 🦻

TOWN IN LAND OF THE WAR

Faller G. Carlon

#### सिद्धांतप्रदीपः।

्रहतीत्थंसप्तिक्षेपेग्रालंघितामय्यादायेनततद्वष्टं ततस्तातस्तदपक्तिग्रामितः सप्तमेऽहनिमेमयाचोवितः प्रेरितस्तक्षकः धर्यतिस्म ॥ ३७॥ श्राकेसप्तियस्त्रतद्वलेसप्तित्कलेवरंथस्यसगलेसप्कलेवरहत्यलक्समासस्तंबिध्यमुकः कंटोयेनसरुपेद्व ॥ ३८॥ सद्यमीकः वांगिरसः विल्लाप्तिश्रुत्वानेबेद्धमील्यस्वांसे मृतोरणंद्वष्टाविसुच्यपुत्रंपप्रच्छेत्युत्तरेगान्वयः ॥ ३९॥ सचमृतोरणंपरिहत्यपुत्रंपप्रच्छहेवत्स । तेकेनविप्रकृतमपकृतंभावेकः ॥ ४०॥

#### भाषाटीका ।

इस प्रकार से मर्यादा उल्लंघन करनेवाळे कुलांगार राजा हमारे पिता के द्रोही को हमारा प्रेरित तक्षक आज से सप्तम दिन में दंशन करेगा॥ ३७॥

तदनन्तर बालक आश्रम में आकर पिता के गले में सर्प को देखकर दुःखित होकर कंठ खोलकर रोने लगा॥ ३८॥ हे बहात ! शौनक वह आंगिरस सुत के बिलाप को सुनकर धीरे से नेत्र खोल गले में मरा सर्प देख उसको फेंककर पूँछने लगा है बत्स ! क्यों रीता है किसने तेरा अपकार किया है पेसे कहनेपर उस बालक ने निवेदन किया॥ ३९। ४०॥

#### श्रीघरस्वामी ।

अनिमनन्दनवाक्यम् अही इति । वतं कष्टम् । ते त्वयाभाइत् पापं कृतम् । अन्यीयसि द्रोहे अपराध्रे । द्मो द्वारः ॥ ४१ ॥ परी विष्णुरित्याख्या ख्यातिर्पस्य ते नरदेवम् । नृभिः समातुं सम द्रष्टुम् ॥ ४२ ॥ अलक्ष्यमाणो अदृश्यमाने । अविवद्भयवत् मेषसंघवद् ॥ ४३ ॥

LO LATOR DAD

## ा ३ श्रिधाखामी । जे जिल्ला महाराज्ञी

नष्टी नाथो यस्य लोकस्य तस्य वसोर्वस्ता धनस्य विख्यपकादपहर्त्त्रश्चीरादेईतोयेत पार्प मुविष्यति तदस्मिक्षिमित्तत्वात अस्मानुपै-स्यति । अनन्वयं सम्बन्धश्रूत्यमेव । तदेव पापं दर्शयति परस्परमिति । हापन्ति पर्षे वदन्ति । पश्चादीन् वृजते अपहरन्ति पुरुदस्य बस्रीरवद्यलाः ॥ ४४॥

### ्राप्ति है के कि **श्रीवीरणध्यः।** कि कि कि कि कि कि कि कि

मुतोऽतद्रहेंशापानहराजानंशसमाकर्यवाद्याः आंगिरसः पुत्रंताभ्यनंदत्तदेवदर्शयतिअहोशतिसाद्धैः सन्ताभः हेअब ! त्वयामहदंहः

पात्रमहोकृतंचतिकत्वत्यां विद्यादेश्वर्षाचनम्बद्धानिमिसे उर्क्षद्भीदं डोधूनः कृत्रद्धत्वत् ॥ ४१ ॥ अपकृतेना पराजानापकार्यद्धस्यादनहाक्तिहेश्वविपक्षबुद्धीनृभिरपकृतैर्नरदेवोनापकार्यः अतस्त्वनरदेवपराष्ट्रयपरमपुरुषमितिसामर्थ्यल-क्षांऽधेः नहर्देवनाहिनरर्षामपामितिवस्यमासाहित्यान्त्नरदेवहत्यास्यामात्रमेवसतुसाक्षादीश्वरपवेतिभावः तसमातुम्बाईःनत्वपकर्तुतत्र हेतुमाह्य यस्माद्य हैप्यातपकाराततस्यदुर्विषद्वणाणे त्रुभिरसोढन्येनतेजसागुप्ताः प्रजाःकुतश्चिदपिमयरहिताः भद्राशिमंगलानिसुखानीति ्यायत्।विद्वित्रं सतेतस्थालां सुख्यां स्तान्यद्वान् इते व्यहार्तभावः ॥ ४२॥

विष्युंग्रेड नर्थमाङ्ग्रेज्यमाग्राहतिति अभिः नरदेवाख्यचक्रपागीविष्णावलक्ष्यमाग्रेड विद्यमानेसत्यगर्हेपुत्र!तदाह्ययंलोकः मरक्षमाग्रः भता जीर्ष्योयेष्ठः सन्दृक्षप्रचुराविसंघः वश्वणमात्रणनंस्यतिन्छोभविष्यति ॥ ४३ ॥

कार्यस्काहानिरित्यंत्राहरादितितः गापुमुमञ्जयमस्मत्संतानना शक्तमधाधुनानो ऽस्मासुपैतिकितत्पापयदिश्वंपकास्र तोर्वसोद्धनस्यनप्रनाथ क्ष्यरक्षकरहितस्यसतः पुरवायहर्वासुर्वे विषयित्रानाः परस्परंग्नितिद्यापतिचाक्पारच्यंकुर्वेतित्रुं जतेष्ठित्यर्थान् वृंजतेष्ठरंतीत्येतत्। ४४ ॥

#### श्रीविजयध्वजः।

अतदहितस्यशापस्याहाँयोभ्योतशक्तिः वतद्वहर्तं । नकेवलनाक्यनंददनिद्चत्याह् अहोइति । अहःपापं वतखेदे अल्पीयसिअणुतरेद्वोहे अपराधलक्षां उत्त्रमोमहार्वेडः ॥ ४१/॥ 🛴

कुतवनिददितितत्राह नवाइति नरागादिवाराजा तदधीनेनृभिः नापराध्यद्दति दुविषहेगायस्यराहस्तेजसागुप्ताः रक्षिताः नकुतोऽविभय यासांताः अकुतोभयाः प्रजाः भद्राणिविदंतिलभंतः तिवैयतः बहुश्रेयोविवश्रयाभद्राणीतिबहुत्वनम् ॥ ४२ ॥

बाधकंचाह अरस्यमागाइति नरदेवांतर्यामित्वान्नरदेवनाहिनरथांगपागाविष्गाविष्माभाषालनमकुर्वाग्रसिति तद्वानीमेवायमरस्यमा मोड पाल्यमानः चोरपचुरः लोकोजनोऽविवक्षयवत्रक्षारहित्सनावत् क्षणाद्विनंस्यतिहीत्येकान्वयः "सेनारक्षावरूयः स्यादवरीघोनिवेश

े नष्टनायबुद्धयपुद्धकराहितस्यपद्योराच्यूस्यचीरादेयाचिखपक्षाः नाद्यकाः इतियद्यसमान्त्रसमाद्यानोऽस्माकमनन्वयम्भुप्रमार्गे संन्त्रयविरो धिसंतितनार्शकरंबापीपमुपैतीत्यम्बर्थः उक्तमेवविवृश्वाति परस्परामितिवृजतेअपवृत्तिविवेतिविवेतितिवा वस्वविकायामितिवातोः नगरनासकाः पुरगतावितिधातोः इतस्ततीयात्राविध्नकरावा पश्नकंतिक्षियः दापंतिउपाक्षभेतिवर्णतिवर्णनिवर्ववर्षाविववेषः ॥ ४४ क्षेत विश्व । कि रिकारिक के प्रतिकारिक विश्व के विश्व

कमसंदर्भः ।

मळक्येति । तदा हि तदेवेत्यर्थः ॥ ४३ । ४४ । ४५ ॥

#### मुनोधिनी।

तवाशमीकः श्टंगिवचनंश्वत्वाविकार्यनामाञ्चकतवानित्याह निशम्येति अयुक्तत्वेहेतुःनरेन्द्रमितिनन्वप्राधिषुवण्डमेवकुतीनाव्यनस्यतः तत्राह् सबाह्यगादित बाह्यगाश्रमवाहेतांगताः क्षमाभावेबाह्यग्यंगच्छतीतिभावः नतुयथाराजाउपेक्षग्रीयः आत्मंजत्वात्वप्रतिविक्रमनु मतंभवतीतिन्यायेनराष्टः परलोकोऽपिगच्छेत् पितुरतुमत्यातक्षककृतमितिराद्धार्थमात्रेगासत्यतानपर्यावसानतस्तथाफलस्वि पुत्रस्या।पिमन्य त्याजयतियुक्तिभिः अन्ययातस्यदुमैरगाभेवस्यात् अतीययास्यामुतापोभवति तथावचनान्याह अहोद्यतिराद्यःशापःपुरुषार्थपंचकेनापि हानिर्भाविष्यतीतिभयप्रदर्शनेन अनुतापवचनंप्रथमतः अधमे कतस्याह अहाआश्चर्यवतेतिस्वेदकृतंमहद्देहः स्वयाकृतंमहत्वापरूपंपरमञ्जानाव अन्ययात्रायश्चित्तमपिनस्वात्तदेवाहः अल्पीयसिद्धाहेअपराधेमहान्दग्रहः इतः पर्यवसानिव वार्यमाग्रीः अस्मास्वरपोऽपराधः आश्चास्ययकः सर्वोहतःसर्वस्पर्शः स्नानहतुःकारितः अयंच जातितंत्व जस्यतुषाणाण्यवहताः महिस्पर्राणाः बस्तुन्यतामयति नहिस्पर्धनिवपयन्यान र प्रतानह्यापातताभयनिकदोपस्थितप्राग्णदारिसद्दाभयस्यतस्माख्यापराघदगढाभावात् वर्धमः ॥ ४१ ॥ इतुह्यतानह्यापातताभयनिकदोपस्थितप्राग्णदारिसद्दाभयस्यतस्माख्यापराघदगढाभावात् वर्धमः ॥ ४१ ॥

## त्यारमंबरमंब निनीयते सुमेरिनीस्स अयानसम्बद्धाः ।

नन्वस्माभिस्तुल्यभ्रेवस्त्रतंमार्थोत्मार्थोत्मार्थोत् भ्रयमयमितितयाहः नुनेतृभितिति हे अनिप्कक्षहें । तृहिपदार्थानांतुल्यतावर्सतेमनुष्ये रेवराजातुल्योनमवति किंपुनःश्चद्रजीवैःननुत्रहाविदानदेवचनंयुक्तं "शुनिचैवश्वपाकचपद्भिताः समद्शिनः" इतिवाक्यात्तत्राह पराख्यमिति इंदेरवक्षरविचारेगाजीवेषुब्रह्मतुल्यमित्युक्तं ननुभगवतासहजीविनितिहर्णतामग्वतीगुर्गावितारत्वात्रीक्षीणस्थानेथधममस्यमन्वमरावनीद्या"

इतिवाक्यात् "नाविष्णुःपृथिवीपति"रितिच नतुतत् भाकासंमानुनार्थमुकामिति चेत्रुआह्यसंज्ञुसेतिनीवातांसवेत्रसमत्वेनराजानियसेजः बावाबाबाराक्तिः खरूपमात्रेगौवसर्वेषांमयनिवर्त्तनम् एते नुजीवधर्माः वितानीपचारदृत्यधेः ॥ ४२ ॥

एवमधर्मकरगोनधर्मविरोधमाह अलक्ष्यमागोद्दि एकस्मिक्षिपिदिवसरिजिनिअलक्ष्यमागोक्षपदिवसितिनेरदेवदिनाममाश्रेवस्तुतस्त सचकपाशिःतदादः, अङ्गपदार्थक्षानभवत्वितिभाग्रहपरित्यागेन्श्रवृशीश्चेक्षुस्त्रम्भृत्वेत्वत्वस्त्रम्भव्यक्ष्मम्भवत् प्रायंगासर्वेचौरापवमवन्ति विनइयन्तिच बुद्धिभ्रश्यभवतीत्याह जनीमेषसमूहवर्त पार्छकामावसवेतीगतान्देयतीत्यर्थः अतःसर्वेषामयीदा नाशात् अर्थविरोधः 🛭 ४३ ॥

नजुतेषामर्थविद्योधेकानोहानिस्तत्राह तद्यीति तस्माद्वितोः अद्यपापमन्त्रवृत्युति वस्मान्यतिनिष्कारशामेव यस्माभिरकतमेवपापमुपति मनुकथमकारगामुपैति अन्यवासर्वद्वैवस्यात तत्राह यक्तवनायस्यति यस्मादस्मित्रिमित्तनद्वीतायां प्रस्यत्रां कस्यतस्य चोरिनिमित्तातं यद्यपिसाक्षादस्मामिनेकते तथापि अस्मतकतेनकार्येगातथाजातिमिति पापसम्बन्धः नर्भवलम्बनिक्। पेव कितुकामनाहारे ऽपीत्याहपरस्परमिति अन्योऽन्यमेवहनंतिमारयन्तिशपंतिगालीः प्रयक्कान्तिस्त्रियादिपदार्थान्तृतंत्रमपहरातिपासिनःसेर्वस्वंत्रयंपुर्धावःस्त्रियः अर्थास्य मुख्यादीनामेतत्साधकत्वम् एतदमावसर्वमेवकामनोपभोग्यनद्वयतीत्वाहतदार्यधमे अति आर्थाणांसतांधमेः सदाचारकपः सामान्य कपप्चवर्षाध्रमसंहितःविशेषकपः सप्चपुनर्वेदश्रयेप्रतिपाद्योयक्षकपः प्रतावताश्रमीनष्टरत्युक्तम् ॥ ४४ ॥

#### श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती।

अतदह शापायोग्यम्। अनिमनन्दमवाक्यमाह अही इति, देमी देपहा ॥ छ१ ॥ पूरो विष्णुरित्याख्या ख्यातियस्य तं नृभिः संमातुं समं द्रष्टुम् ॥ ४२ ॥ 🕠 अलक्ष्यमार्गो अहर्यमाने । अविवस्ययत सेषसङ्घवतः॥ ४३ ॥

नृष्टी नाथो यस्य तस्य लोकस्य वसोवसुनो धनस्य विखम्पकादपहर्जुब्धीराद्वेतीर्यंत पार्व भविष्यति तदसम्बामस्यत्वादसमासुपैन्याते । अवन्त्रम् सम्बन्ध्यस्यमेव । तदेव पापं दर्शयति परस्परमिति । विशेषमाह वृजते अपहर्गन्त ॥ ४४॥

# व्यक्ताराध्वयर्गना स्थाप स्थाप स्थाप विकास के विकास के स्थाप के प्राप्त के स्थाप के स्थाप के स्थाप के स्थाप के

त्रवनहें जापायो ग्यनरे हं चाप्तिनियाच्याकरायीत्म जनाभ्यनदत्ते अनिभनेदनप्रकाहदर्शयति अहोङ्तिकहंगायांवलेतिकछेपेअङ्गितिहेनेयामहदंहः वापकृतम् अस्तीयसिद्रोहे अपराधेड्हर्तस्यः दमोदंडः भूतः॥ ४१॥

कृतम् अहंगीयसिद्धोहे अपराधेडहरन्हपः दमोदंडः घृतः ॥ ४१ ॥ हवपक्षत्रुद्धः । प्रश्नेवासुद्धवहत्याच्यात्वयस्यतनरद्ववन्धाः समातुसमेनस्त्रतार्हस्य ॥ ४२ ॥ अलक्ष्यमागोपरलोक्षगते अविवस्यवत् विनक्ष्यतिन्धोभविष्यति ॥ ४३ ॥

with the first of the state of

सरकारम् संतन्त्रमम् तन्त्राव्येतरमञ्ज्ञान्यम् अयुक्तानाः स्मानुपैतिक्षितत्वापंयतः तप्तायस्यलोकस्यभातेनः सवीधेनस्यविद्वपका बोद्योदे तोभीवष्यति पुरत्येदस्यनायेषुतेज्ञताः परस्यदेवतेतिहिसंतिश्यातिचाकपादसंक्वेति प्रभादीन्त्रंजतेहर्गततत्सचपापमस्य। नुपौत् ४४ अगवंत्रण के के के विश्व के मार्थ के मार्थ के मार्थ के मार्थ के मार्थ के मार्थ के किए के मार्थ के किए के मार्थ के मार्य के मार्थ के मार्य के मार्य के मार्य के मार्य के मार्थ के मार्य के मार्य

#### भाषाठीका ।

राजा को शाप दिया सन कर बाह्मण ने पुत्र पर असंतुष्ट होकर कहा है अहा ! तेने बड़ा पाप किया जो कि थोड़े दोष पर बड़ा THE PERSON BEAUTIFFED THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE PERSON OF

ा के अपका वृद्ध । क्षेत्रकार के लुक्य याजा को सनुष्या के तुन्य मन समझो जिसके कठिन तेज से रक्षित हुए प्रजा तिसंग

होकर कथागों की प्राप्त होते हैं ॥ ४२ ॥। हे पुत्र विष्णु रूप शजा के न रहते से यह सब लोक अधिक बोर्ड साला होकर अरिश्व सेन्द्र स्मार की नार्र समासाय The same of the sa में मष्ट होजायगा॥ ४३॥

तव अताय अतियों के अने ब्रह्नेवाले जो से जो कर प्रजा को होगा स्थे पाप हमही को प्राप्त होगा क्यों के विश्व वीरी के होने के मतुष्य महस्पर भारते हैं नाही इते हैं पशु तथा लियों को हरते हैं ॥ ४४॥ I consider the company of the constraint of the

तदार्घ्यभभिश्च विलीयते नृशां वर्शाश्रमाचारयुतस्त्रयीमयः ।
ततोऽर्थकामाभिनिवेशितात्मनां शुनां कपीनामिव वर्शसङ्गरः ॥ ४४ ॥
धर्म्भपालो नरपितः स तु सम्राड्बृहच्छ्रवाः ।
साचान्महामागवतो राजिर्षिदयमेषयाट् ।
शुनुदश्रमयुतो दीनो नैवास्मच्छापमहिति ॥ ४६ ॥
ऋपापेषु स्वभृत्येषु वालेनापक्षबुद्धिना ।
पापं कृतं तद्भगवान् सर्व्वात्मा चन्तुमहिति ॥ ४७ ॥
तिरस्कृता विश्वलब्धाः शप्ताः क्षिष्ता हता ऋषि ।
नास्य तत् प्रतिकुव्विह्ति तद्भक्ताः प्रभवोऽपि हि ॥ ४८ ॥

#### श्रीधरुखामी

विमे सदाचारः । शुनां कपीनामिव चारे ामयीरेवाभिनिवेशितावितानाम् ॥ ४५॥
एतं राजमात्रस्य शापानदेत्वसुक् के रेउति तिविशेषमाह धर्मपाल इति सार्द्धेन। हयमेधयाट् अश्वमेधयाजी ॥ ४६॥
जस्य महापायस्यान्यत् प्रायंश्चित्तने दृष्ट्वा प्रत्यमावेदयन् भगवन्तं प्रार्थयते अपापेष्विति ॥ ४७॥

राजा चेत् प्रतिशापं रुद्यात तर्हि निष्कृतिर्भवेदपि तत्तु न सम्भवति तस्य भागवतत्वादित्याह । तिरस्कृताः निन्दिताः । विष्रलब्धा विश्विताः । क्षिप्ता अवश्वाताः । हतास्तादिताः । अस्य तिरस्कारादिकाः न तत्प्रतीकारं कुर्वत्ति तद्भक्ताः विष्णुमकाः प्रभवः समर्था अपि ॥ ४८ ॥

#### अविरिश्चवः।

किंच तदानरदेवनाम्निर्थांगपाणावलस्यमागासितवर्याश्रमाचारयुतः त्रय्याथागतस्ययिमयःततथागतइत्यधिकारे "मयद्च॥ ४१३।८२॥ इतिमयद्वैदिकइत्यर्थःनृगामार्थ्यमेःसर्तांधर्मश्रविलीयतेनंध्यतिततोधर्मलयाद्थकामयोर्निवेदिातःअभिनिविष्टःआत्मामनोयेषांनृगांशुनामिव-चसंकरोमविष्यति॥ ४५॥

पर्वसामान्यनरदेवस्यानियाद्यात्वमुपत्वायप्रकृतंपरीक्षितंनिदिश्याद्वयमेपालदृतिसतुनृपतिः परीक्षिद्धमेपालः वर्णाश्रमधमेमयादापालक पर्वसामान्यनरदेवस्यानियाद्यात्वमुप्तत्वायप्रकृतंपरीक्षितंनिदिश्याद्वयमेपालदृत्यांतारातिरेवनास्ती।तिमावः राजर्षिः केवलंगाजश्राषि स्तयात्वेनविश्वतः विगुलकीर्तिः सार्वभीमश्रतवापिमहामारावतः अनेनवस्यविद्यकर्तृग्यांतारातिरेवनास्ती।तिमावः राजर्षिः केवलंगाजश्राषि रेवनहयमेध्याद्वद्वयमेधेनदृष्ट्वान् ॥ ४६ ॥

रवन्त पाय अमस्तेनयुतः अतएवदीनश्चतथाभूतः सर्वेशाऽ समञ्ज्ञापंनाहितिएवमात्मजमनिभनेष्यतव कृतादघादात्मनोऽनर्थमाशंक्य श्चनृद्ध्यायः अमस्तेनयुतः अतएवदीनश्चतथाभूतः सर्वेशाऽ समञ्ज्ञापंनाहितिएवमात्मजमनिभनेष्यतव कृतादघादात्मनोऽनर्थमाशंक्य भगवंतस्रमाप्यतिअपापेष्विति सर्वोत्मासर्वोतरात्माश<sup>द्</sup>त्र शाप्तियोरप्यतरात्मतयावस्थितहतिभावः भगवंतनपापेषुस्यभक्तेष्वनेनापक्रवादिना विवेकरहितेनकृत्पापिमदेश्वंतमहेति ॥ ४७ ॥

शास्त्रानम्बिषयापराधः कथाचिनमञ्छरणवरणादिनासद्यः स्यानमञ्जक विषयापराधस्तुनकथिचदपिकितु'तैरेवसद्यः इत्येवंविधंमगवदमि प्रायमालाञ्यत्वविद्यमापयतितिरस्कृताश्तितिरस्कृताः परिभृताः अपित्रलब्धाः प्रतारिताअपिक्षिप्तानिदिताअपिक्षतास्ताछिताअपितञ्जकाः भगवञ्जकाः प्रमवोऽपित्रत्युपकर्तुसमधीअप्यस्यितरस्कारकर्तुः नितरस्कारादिकर्तृन्प्रतिकुर्वतिकितुकेवलंक्षाम्यन्ति ॥ ४८ ॥

## श्रीविजयभ्वजः।

医多种种种 中的人的 地名美国人

तस्यपरिपाकमाह तदेति यदापश्चादिहंतृशिक्षानिकयतेतदाआयोगांशिष्टानांसंमतोधमीधमेऽधिकतानामनुष्ठातृगांविलीयतेकसेगाइ सितादितरोमवित्यकोहशः त्रथ्यात्रिभिवदेशीयतेकायतेप्रतिपाद्यतहितत्रयीमयः अत्यवत्रयाचित्रश्चेमाचारेश्चयुतः धर्मल्यपरिपाकमाह ततहित ततः वर्गाश्रमाचारयुत्वेदिकार्थधर्मनाशानंतरंकनकाद्यधेषुस्रक्चंदनवनितादिभोगलक्षगाकामेषु अभिनिवेशितआत्मामनोयेषां तित्योक्ताः तेषांपुंसांयथाशुनांकपानांचमक्षगाभोगादावनवस्थातथाहीनजातीनामुत्तमजातिभिकत्तमजातीनांद्दीनजातिभिभोगसंभोगादिनाव वानांसंकरः कलुपीभावाभविष्यतीन्येकान्वयः॥ ४५॥

परीक्षितोऽ दुष्टत्वैनन्विदंत देवकशमितितत्राह धर्मपालइति अत्रधमेपालगिदिविशेषणानिहेतुगर्भाणि धर्मपालत्वान्महामग्वतत्वात राजर्षित्वाद्वयमेधयाजित्वाद्यसम्मद्वदुष्टेऽतः श्रुंजृद्श्रमान्वितत्वेनबुभुक्षािपपासयादीनोऽ समदाश्रममागतोऽध्योदिपुजायोग्योतैवास्मद अस्मतः शापमहेति तस्मादनिवार्यमधमापन्नमितिभावः ह्यमेधैरश्वमेधिरिष्टवानितिह्यमेधयाद् ॥४६॥

Collingual Colling Col

## । : নিল্লান্তম**শনিদ্যুদ্রর্গ**্য দর্ঘাদক্রম নীর

इस्थमवस्यसिखत्वमापायातुनापुर्श्वेकंत्रद्युनिएकार्तिमञ्जेति जापापेष्यिति। सर्वोद्धमानार्वीनप्रीमञ्ज्ञीनारायगाः बालेनस्वभृत्येपुकृतंतत्पापं **भं**तुमईतीत्यन्वयः ॥ ४७ ॥

अस्मदाश्रममागतोऽ वद्यातः परीक्षितप्रमुरपिनतत्प्रतिचक्रद्रत्यारायेनीह तिरस्कृतारात तिरस्कृतानिविताः विप्रलब्धावंचिताः शप्ताः उपालब्धाः क्षिप्ताः अधिक्षिति। इतिहिताङ्क्तिः अपिराह्दः अत्येषाम्भि सम्बद्धाः मृभनि प्रीमितिष्ठति हिमर्था अपिप्रतिशापं कर्तुवातन्त्रकास्तस्य हरेर्भकाः अस्यतिरस्कारादिकतुं संवंधितत्तिरस्काराद्युद्दिश्यनप्रतिक्षत्रेति अतिक्रियांनैवकुर्वतीत्यर्थः दिशब्देन "क्षमावलमशक्तानांशका मांभूषणंक्षमें तिप्रसिविदर्शयति॥ ४८॥ १०१० विकास विकास

### क्रमसंदर्भः।

धर्मपाल इति । व्यवद्वारतोऽपि महानित्याह ह्यमेधयाङिति ॥ ४६॥ सर्वात्मेति । अत्र महतोऽपि तदात्मकत्वात् तद्द्वारा क्षमान्यां युक्तमेवत्यर्थः ॥ ४७ । ४८ । ४९ । ५० ॥ इति श्रीमद्भागवतप्रथमस्कन्धस्य श्रीजीवगोस्वामिकतकारसन्दर्भे अष्टादेशोऽध्यायः॥१८

will be the winding the first

#### सुवोधिनी।

किमतोयद्येवंतत्राहततहति ऐहिकेत्रयमेवधमार्थकामार्थं तत्रधर्मगतेवर्धकामेश्रीमनिविष्टाप्य वित्त तत्रधाधमहेतुर्वर्धसंक्रोमविष्टिका निर्वक्रिकाम्य क्रिकाचा क्रिकाच क्रिकाचा क्रिकाच क्रिकाचा क्रिकाचा क्रिकाच क्रिकाच क्रिकाच क्रिकाच क्रिकाच क्रिकाच क्रिकाच क्रि किंचवानरावृक्षजीविकयाजीवंतः मातृभगिनीविवेकरहिताबुद्धिमंतोऽपि पक्षस्यांदातंवर्ततंततपकाईमक्ष्मप्रपुरुषेवग्रीत्वनाहितमान्यारगयपग्र पलक्षके द्रष्टान्तद्वयंतस्मात्समुलकामोगच्छतीत्युक्तम् ॥ ४५ ॥

प्वंपरंपरयादोषमुक्तवासाक्षात्दोषमाह धर्मपालइति एकेकोऽपिगुगाः अस्माभिःस्वीत्मनापुज्यः अस्यतुसर्वेगुगाः धर्ममानिशायं पुज्य तदाह्यमेवालहति हातमार्गेगाएययंपूज्यः नरवितिवित कामार्थमप्ययंपूज्यःसम्राडिति साम्राज्यश्रियाजुष्टःसर्वेदातुंसमर्थहति प्रसिद्धिरिपप्रजाहेतुःवृह्दच्छ्नाइतिवृह्द्अन्।कीर्विर्थस्य मिकमार्गेणाण्ययपूर्वः चार्शात्महामागवतहति अस्येतुगुरुद्वाराभगवताअङ्कीकता महामगव्ताभवन्ति अस्यतुभगवानेवगुरुःअतःसाक्षात्महाभागवतत्वं वैदिकविचारेगाप्ययंपूज्यः वेदार्थपालकत्वात्मंत्रद्वप्यत्वासक्तह राजविरितिकर्मगाप्ययंपूज्यःहयमेथयाहितिहयमेथेनहष्टवान् किंच धर्मादिविचारव्यतिरकेगापिकेवललीकिकविचारेगापिपुजियित्यकः तदाह क्षतत्तृद्शमहति तेपूर्वमुक्तायोगाद्शाताः विद्युष्यताख्यात्वीनः एवंसर्वेगाप्रकारेगापूज्यः शापंनाहति तस्मात पूज्यपूजाव्यति क्रमाद्ध्यमद्भिषदशैनात् जीवितत्वंद्याजातमित्यर्थः ॥ ४६॥

किंच अक्तद्रोहेभगवान् कुध्यतितेनसर्वनाशोभविष्यतीतिभीतः सन्भगवन्तप्रार्थयते अपापेष्विति हेभगवन् ! स्वशृत्येषुतवशृत्येषु पाल्यभृत्येषुत्वयाविकार्यमास्रोअपापेषुअपक्षवुद्धिनाअपूर्वदार्शिना"नविशिश्चनांगुसाद्दोषयोःपदमि"तिकापनार्थमाहः वालेनेतिपापसापक्रप्रक्षमा यांहेतुःसवीत्मेतिसवैषामेवत्वमात्मा अतःस्कीयकृतवैषम्यासावःननुवाद्यागानांकिस्यंतप्राहः भगवानिति अनेतमोश्चविरोधेङकः ॥ ४७॥

मकिविश्वेवदन्तेनापिशापेद्रशेसमः समाधिभेविष्यतीत्याशंकांपरिष्ठरतितिरस्कृताद्यति गाहित्यतादिनातिरस्कृताः वक्षीस्वावि लब्धाः संचिताः राष्ताः द्वानीमेवक्षिपताः अधिक्षिपताः हतास्ताडिताः गुर्गाक्रियास्त्रकपाईकारदेहनारोऽपिनप्रतिकारंकुवैतीत्यर्थः प्रतिकृत्वतया कर्यातुद्रुरापास्तंतत्रहेतुः तद्भकाइतिमतपवसमर्थाइतिहियुक्तोध्यमर्थः शक्तीक्षमायाउचितत्वात् ॥ ४८॥

## श्रीविश्वनाथसम्बद्धाः हिन्द्र स्वीयहरू

आर्यधर्मः सदाचारः ॥ ४५ ॥

एवं राजमात्रस्य शापानईम्बमुक्त्वा प्रस्तुतेऽतिविशेषमाहधर्मपालइति ॥ ४६॥

अस्य महापापस्यान्यत् प्रायश्चित्तमस्ष्ट्वा पापमेवावेदयन् भगवन्तं प्रार्थेयते अपापेविवति ॥ ४७॥

राजा चेत् प्रतिशापं दधात् तर्हि निष्कृतिमेवदिष तस्त न सम्मवति तस्य महाभागवतत्वादित्याह । तिरस्कृता निन्दिताः विप्रलब्धा विताः। विता अवश्वाताः । हतास्ता हितार । विता वितार । विता क्षिण स्तार । अस्य स्वर्थन स्तार । विता अवश्वाताः । विश्वाताः । विता अवश्वाताः । विश्वाताः । विश्व

वर्णाश्रमाचारयुतः त्रयीमयः त्रव्यामातः तत्रभागतृक्त्याधिकारे मयद्वनाष्ठ्र। ३॥८२॥ इतिमयद्यत्ययः आर्थेमेन्याविभिनिवृत्तिप्रकृति भेरेमीपवृहितत्यादायांचातिषांधर्मः तदानरदेधनामिनरधांगपाचाव क्रियमाचीस्तिविलीयते ततोशमेविलयादेतोः अर्थेकामयोरवाभिनिवे श्वतिविचानांशुनांकपीनामित्रवर्धसंकरः मिक्यति॥ ४५॥

[ {88} ]

ा के अन्यानिक । क्षेत्र संस्थानिक स्वाप्त । व्यक्ति स्वाप्त

## इति पुत्रकृताघेन 'स्रोडनुतप्तीं महामुनिः।

इन्यम बस्या प्रवासावाजामा कुर्यमा क्रिकेमा के मिलके स्वासाय कि कि कि स्वास्था कि कि स्वास्था का थे महास्था कि क क्षेत्रपह्नतीत्पन्वषः ॥ ४३ ॥

र्फाणांनात्मात्रका विकार के कार्निक के कार्निक के किया परिमहेंस्यां संहितायां वैयासिक्यी क्रिक्ति के अपने

प्रथमस्कन्वे पारीचिते विप्रशापोपलम्भो नाम

त्रप्रादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ क्ष महत्राहरू की विक्रिमार्काल है है विक्रिया की

## सिद्धांतप्रदीपः।

हथमेश्रयाद् हर्यमेश्रयाद्ती अस्यमहापापस्यकायत्ववितिरंगायश्चित्तपपश्यमानस्तप्रार्थयते भगवान् सर्वातमाश्चेतुमईतीति ॥ ४६ । ४७ ॥ प्रतिकापरूपेप्रायश्चित्तंशुनप्राप्ट्यामीत्याह तिर्स्छत्।इति तिर्स्कृताः निरादताः विप्रलब्धाः वंचिताः क्षिप्ताः निदिताः हतास्ताखिताअपि तस्यभूगवत्मिकाः प्रभवः प्रतिकर्तुसमर्थाअपि अस्यति स्कारादिकर्तुः नतत्प्रतिकुर्वति ॥ ४८ ॥

#### भाषादीका ।

सबतो मनुष्यों का वर्णाश्रमा चारयुक्त चेदिस आर्य धर्म नष्ट होजाता है तब अर्थ काम परायण मनुष्यों का वांदर कुक्कुरों की निर्दे वर्गासांकर्य होजाता है॥ ७५ ॥ वह परीक्षित राजा तो अर्थ पालक है महाकी तिमान हैं माश्चाक महाभागवत हैं राजानि है अश्वमेश मती हैं खुधा तृषा अमयुक्त होते पर केस्ट करने से हमारे शाप के थो।य नहीं हैं ॥ ४६ ॥

का जो पाप किया है तिसको सर्वीन्तर्यामी नारायमा अमा करेंगे।। ४७।। ाहजन भगवान के मक्त तोश्रतिग्रहकार करने परा ठगने परा शार्ष होने पर गाली हेने पर भी प्रतिकार के समर्थ होकर भी उसका प्रतिकार नहीं करते हैंगा छटगारिका करने के कि किस कर कि किस कर कि किस के किस के किस के किस के किस के किस कर कि स्याज अर्जन्य कार्यक सिंग्य कार्यक क्षेत्रक कार्यक कार्यक कार्यक कार्यकार महाने कार्यक महाना मुख्यक महाना प्रकार

ा राज्य । विश्वपूर्णी जातामार्थिक स्वारी है । विश्वपूर्ण के विश्वपूर्ण के विश्वपूर्ण के विश्वपूर्ण के विश्वपूर्ण प्रकार के विकास के मार्ग के मा एक विवस्ता संभावती के विवस्त के अवस्ता है कि कार के किए के किए के किए के किए के किए के किए किए किए किए किए किए

भ ्युक्त चेतादत्यहरूप्रायश्र इति मि हम्हेषु सबदुःसाहिषु मि अगुगाश्रयः संसद्धःसाधाश्रयी न भवतिमा ६० ॥ मिल्योगरी स्ट्र म अक्त चताबुद्धार्था वर्षा । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्था । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्था । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्थित । वर्षा अवस्था । वर्षा अवस कार्यक्षक वर्ण संस्थान व हेन्या साहर्यन या विकास को प्रति के सु<del>वास कार्य कार्य कार्य के अ</del>

(महामुनिवाब्दोऽत्र यौगिकः महामननशील इति यावते ॥ अक्षान्यकारिकी

व नेष्यीः गहानारः ॥ ४३॥ वंत्र राजसः बह्य सामान्त्रवस्थाता प्रस्तुते धीराधिकाम्पादप्राणास्त्रात ॥ एव १

अस्य सहाजापस्यान्यत् आयाधित्यत्यस्या पापस्यान्ययं। स्वातिकारिया विषावित्वाति ॥ ७३॥

कृतीनाचितयदित्यत्राहं प्रायशहतिलाकेपरेर्न्यद्वेद्ववुशीतोचासुखतुः खादिषुयोजिताःसंयोजिताअपिसाथवः प्रायगानव्यथातनहृष्यं तिच यथासुखेयोजितानहः वितियादुः खेयोजितानव्यवंतीत्ययैः कृतः यतः आत्मातेषामनः गुगाश्रयः शीलाश्रयः यद्वाअगुगाश्रयः तिच्छेदः गुगाकायरागद्वेषाधनाश्रयः॥ ५०॥

इतिश्रीवीरराघवटीकार्याप्रथमस्कंधे

व्याच्याचां के व्याचन विकास विकास के वि To the original complete and the principle of the original control of the orig

#### श्रीविसयध्वज्ञः।

तद्वतेनराक्षाक्रतमपराथं महर्मुनिरितिहेतुगर्भविशेषणां सर्वेशतमत्वाच्छरीसिभानिनप्रवदुः साविधाप्त्याकोपोत्पर्द्यानस्यक्षातस्यमा थेस्तस्यपद्मसप्रपानीयवदश्चिष्ठदुरितत्वादित्यादिविशेषत्वहित्युर्थः ॥ ४९ ॥

। ः े इतिमार्भ प्रथमस्कं झेविजयक्वेज्दी क्षायामधीयको उत्याया ॥ १६८ ॥ विकार

#### सुवोधिनी।

पर्वापतुरत्रतापनिक्षपंग्रीनराक्षोनिर्दुष्टत्वे निक्षण्यसदुष्टस्यसदुष्टानुमोदन्युक्तमेवेतिरमात्माशंकांपारेहतुमृदिस्तोतिरतीति अन्यकतिनाचि पापेनसोऽनुत्ततोजातः तत्रहेतुः मुनिरितिभगवताप्यनुचितंक्षात्मात्मग्रवद्भवप्यपिक्षानात्मुनित्वम् किच सर्वेश्याप्रनेनस्वयंविष्रकृतःत्द्र पराधंमगसापिनधृतवान् अतःपरंपरयापिपापानिकपकत्वात्भगवद्भवयेषानात्वापदारित्वास्त्रमहोत्मानेः॥ ४९ ॥ १०

उमयोस्तुस्यतयाउपसंहरतिपायशहति साधवः राजामुनिश्चापक्षतेसामान्यतस्तुसर्वलोकसर्वक्षेवपरेरसाधुभिः तदानीतन् राषाऋषि वालकेतचसाधरगयेश्वन्येः द्वंद्वेषुस्वदुः सादिषुयोगंप्रापितादुः सेत्रयोजितान्त्ययाति सुसेत्योजितान्द्वः यन्ति तस्माधदेतयोः पुत्रात्कामा भावः तद्यक्तमेवतत्रोपपत्तिमाह यतथारमाभगुगाभयहति गुगाहपादयः तपामाभयः अतःकर्णामेवनभातमा अतस्तेषामुक्तररेगाध्यासा भावातक्षोभाभावदिवत हतिभावः ॥५०॥

> इतिश्रीभागवतस्रुवोधिन्यांश्रीमलस्मगाभद्दात्मजश्रीवलभदीक्षितिवरीचतायां प्रथमस्कन्धाऽष्टादशाध्यायः॥१८॥

## कि । की पर पर पर पर का पर का अधिश्वनाय वक्रवर्ती ।

र क्षेत्र सुकारा प्राप्त <mark>भिन्न भा</mark>त होता है सकती सक्साय ह

कारमं सार करी वार्ममणा है व भेर

्य हेर्स्टी इस्प्राध्या का हो है है रहत द्वाराष्ट्राध्या है क

यहिप्रकृतस्तिरस्कृतस्तात्तरस्करमो अध्य अपगर्ध न अभावयत् ॥ ४९ ॥ युक्तं चेतदित्याद्द प्रायश इति । इन्द्रेषु सुखदुः ब्रादिषु । अगुगाश्रियः प्राकृतसुखदुः ब्राधीश्रयो न भवति ॥ ५० ॥ इति साराथदिशिन्यां हिषेगयां भक्तचेतसाम् । प्रथमेऽष्टादशोऽध्यायः सङ्गतः सङ्गतः सताम् ॥ १८ ॥

क्षा अनुस्तर के जिल्ला के किस के जिल्ला के किस इस किस के कि

राजास्त्रयंविप्रकृतोऽ पकृतोऽपितस्याघमपराधंनैवाचितयत् ॥ ४९ ॥ अचितनेहेतुमाह प्रायशहति अगुगाश्रयः रागद्वेषाद्याश्रयोनभवति ॥ ५० ॥ इतिश्रीमद्भागवतसिद्धांतप्रदीपप्रथमस्कंषीयेऽहाव्शाऽध्यायार्थप्रकाशः ॥ १८ ॥

#### भाषाटीका।

THE PROPERTY OF

इस-प्रकार से पुत्र कत अपराध से दुखित अये मुनि ने राजाते जो अपना अपराध किया या उसका विचारही नहीं किया ॥ ४९ ॥
प्रायः कर के महारमा लोग अन्य पुरुषों से सुख दु:ख युक्त होनेपर भी न हुई की प्राप्त होते न दु:ख की प्राप्त होते हैं क्योंकि आत्मप्रायः कर के महारमा लोग अन्य पुरुषों से सुख दु:ख युक्त होनेपर भी न हुई की प्राप्त होते हैं क्योंकि आत्मसक्त्र तो सुख दु:ख युगा से रहित है ॥ ५० ॥

त्नांशोकात्वराष्ट्रवरेतमधानिकात्वां किर्मानी में किर्माणकात्वां किर्माणकार्यं मार्गानी किर्माना किर्म

of the control of the

वर्षात्र है। एको कार्याको सामग्रीका वसा १० वर्षा वस्त्र वस्त्र है।

औ जिल्ला प्रमा: 1

# म्थ्रणीयराजाकारपराधे रहामाधिमधिक्षेत्रणार्थिकाम्या स्थितायाम्बास्य (शारियामिकस्तृत् का विभागमा वा वो वो वो राज

स्रुत उवाच

महीपृतिस्त्वथ तत् कर्म गर्ह्य विचिन्तयत्रात्मकृतं सुदुर्मनाः। अहा मया नीचमनार्थवत कृतं निरागित ब्रह्माि गृढतेजिति ॥१॥ ध्रुवं ततो मे कतदेवहेलनाद्दुरत्ययं व्यसनं नातिदीर्घात्। तदस्तु कामं ह्यानिष्कृताय मे यथा न कुर्या पुनरेवमद्रा ॥ २॥ अद्येव राज्या वलमृद्धकोशं प्रकापितब्रह्मकुलानलो मे । हिहत्वभद्रस्य पुनर्न मेऽभूत् पापीयसी धीर्डिजदेवगोभ्यः॥ इं॥ स चिन्तयन्त्रित्यमयोशृशीचथा मुनेः सुतोक्तो निर्मृतिस्तचकाल्यः। स साधु मेरे च चिरेगा तत्त्वानलं प्रसक्तस्य विरक्तिकारगाम् ॥ ४ ॥

#### श्रीधरखामी।

श्री श्रीराष्ट्रविष्टे भगायां राश्चि योगिजनावृते। शुर्कस्यीगमनं तन्न प्रोक्तमकोनविश्वके ॥ ० ॥

सकृतं तत् कमें मुनिस्कन्धे संपत्तिक्षेण्या, गर्ह्य निन्द्यं विचिन्तयन् सुदुमेना जातः चिन्तामेवाह सार्स् द्वराश्याम् अहो इति । नीचं षापम् अमीवमिति पाठे स एवार्थः । ब्रह्मीता ब्राह्मतो । गूढं गुप्तं तेजो यस्य ॥१॥

कृतं यहेवहेलनम् ईश्वरावद्यापापमित्यर्थः । तस्मात् ननं मे व्यसनं भविष्यति । तत्तु नाति दीर्घात् कालात् अचिरादेवास्तु । तत्रापि अक्षा साक्षात् न पुत्रादिद्वारगोति प्रार्थना । कामम् असंको चतः । एवं प्रार्थनायाः प्रयोजनम् अघस्य निष्कृताय प्रायश्चित्राय यथा पुनरेवं न कुर्यामिति च॥२॥

एवं साक्षात खस्येव न्यसनं संप्रार्थ्य ततः प्रापेव किचित प्रार्थयते अधैव मे राज्यादि दहतु प्रकापित ब्रह्मकुलं तदेवानलः। पुनर्हि-

जादीन पीडियितं सा धीमें माभूत न मनदित्यर्थः ॥ ३॥

इत्यं चिन्तप्रवृक्षि सजा मुनेः सुतोक्तः सप्तमेऽहति निर्श्वतिर्मुर्यथा मविष्यति तथाशृग्गोत्। शमीकप्रेषितात् शिष्यात् श्रुत्वा च सः तक्षकस्य विवास साधु मेने । यतो विषयेषु प्रसक्तस्य विरक्तिकारगाम ॥ ४॥ हा के 5 में अबेब्बर में 14 विधि प्रकार बावकुष्ट करने की कार्य के एक हैं। एक बाद

I an artification and a company of the company of the

िराजानाम वि श्रीवीरराधवः ॥

महीयतिरिति अथस्यपुरम्बद्यानंतर्महोषाति परीक्षिद्वात्मकतंत्वदुक्यतित्रानस्यमिन्तवयस्युमेनाः आत्मनिदापरोवभूवत्यये तदेव द्रशयतिसार्देवयेन अहोमयाम् बेवन्निरागासंनिरपराधिनि गृहमनिययक्तेत्वः साम्थ्ययस्मन् महायामास्यानिष्य प्रीयानक्ष्यमञ्जत मस्विपापम् ॥ १ ॥

ततीनी जारकता देपहेलनक पारकमें यो निमित्ताल मर्कवर्णमया अधिकारितः कितुसाक्षादेवो अगवाने वेत्यभिप्रायेगादेवहेलना दित्युक मेममनातिर्दार्घात्सममनतरकालमेव दुरत्ययमतिवर्तितुमशक्यव्यसनं दुःसंधुवन्तिपविष्यति तत्स्वस्यहितमेव मन्यतेतिदिति तद्वरसन प्रमाद्यनिष्कृतायपापनिशुक्त्येकामेपकाममस्तु किमतिष्टंप्रार्थयसहत्यन्नाह याषापुनरंपंचिधमधनकुर्यामकानकुर्यामेव अकेतिस्प्राटावकारण योद्यातकमव्ययंशिक्षार्थमस्वितिमावः अस्त्वद्धाऽस्वेवेतिवान्ययः॥ २॥

अधितिमकोषितंकोपेम।पितंयद्रहाकुलंबहाकुलतत्कर्तुकानिप्रहात्मकोऽनलोऽभिरधेव ममराज्येवलसैन्यप्रमृतधनकोरांच बहुतुय्यापुन्ह भद्रस्य ममहिज्ञर्थोदेवेत्र्या गोश्यक्षापांचकीषायुक्ताचैवं विधापापाद्यसीसुद्धिमीभूजथा शिक्षावंदद्वितमावः॥ ३॥

#### श्रीवीरराष्ट्रवः।

इत्यंसंचित्तवनुराजायथायेन प्रकारेणतक्षकाख्योनिर्ऋतिमृत्युर्मुनेः स्रुतेनोक्तःशापात्मकोक्त्वाप्रचोदितस्त्रयेव सुश्रावततः सराजाप्रसक्त स्य विषयेष्वितिशेषः विषयासक्तस्य स्वस्य विरक्तिकारणं हेतुगर्भमिदंविरक्तिकारणत्वाद्विरेण तक्षकक्षप्रमन्त्रंसाधुयथातथामेने ॥४॥

#### श्रीविजयध्वजः।

विमुक्तिसाधनेषुप्रथमापाद्यसाधनत्वेनवैराग्यमवश्यमापाद्यमुश्चुणेतिपरीक्षिचिताकथनापदेशेनतत्प्रतिपाद्यते सिमक्षध्याये ननुपरी क्षितोधमपालत्वादिक्तंनयुज्यते नृशंवक्रीचक्रमंकरणात्पश्चाचापानुदयाच्चत्याशंकापरिहारत्वेनाह महीपितरिति मुनेः स्कंधेमृतस्पैश रिरापंणुलक्षणमात्मनाथनुष्ठितंयत्कर्मतिच्चत्यन्सुदुर्मनाः सुप्दुदुः खितमनाः अभूदितिशेषः तुशब्दईश्वरेच्छाधीनत्वदर्शयति "श्वपच्यद् पिकष्टतंबब्रेसशानादयः सुरा" इतिस्मृतेः किमान्वषये अनुष्ठितंयनमहतीचितासंभाव्यतहित मयानिरागसिनिरपराधेगृहते जस्मित्रप्रकाशित ते जोलक्षणमहिनिनब्रह्मणिवास्यायवत्म् खेवत्नीचंकर्मकृतमहोकष्टमिति । महीपतेः कर्मणोगर्श्वत्योतनायब्रह्मणीति सोऽप्यप्रगधीचे त्कथंचिद्धरत्वस्यतोनिरागसीति प्रतिक्रियासामर्थ्यप्रकटनायगृहते जसीति अद्यवेदस्तप्रस्तत्त्वब्रह्माविपः प्रजापिति रित्यक्षिधानाते ब्राह्मणो नावमंतव्योनिरागस्तुविशेषत" इतिवचनात् ॥ १॥

तच्यकुक्तमपरिहायेविपित्तकरमितिवितयतीत्याह ध्रुवमिति बाह्यग्रस्यभवज्ञाविष्णोरवज्ञैवयतस्त समाद्देवस्यहरेई छनादव भूनात् ध्रुवमवद्यं दुरत्ययमत्येतुमशक्यं व्यसनंदुः खंनातिदीघांदि चिरान्मममभविष्यतीत्यन्वयः तद्वचसन्मनसाध्युपगच्छतीत्याह तदिति अधिनष्क तायपापप्रायाश्चित्तायतद्वचसनंकाममस्तु कुतः अद्यानिरंकुशतयाअद्देपुनरेवविधमधंयथानकुर्योत्यादित्वतिशेषः ॥ २ ॥

नौपचारिकमिदमांतरमेवत्यभिष्रत्यतदेवाह अद्यैवेति प्रकोपितब्रह्मकुलमेवानलः बहुदाहेऽ येले द्वित्तास्तीत्यनलः मेमदीयत्वेनअभिम्ति राज्यादिकमद्यैवकालक्षेपमंतरेणदहतु भूयः अभद्रस्यमेद्विजदेवतासुपापीयसीबुद्धिनीभृतनभूयादित्यन्वयः अभूदितिव्यत्ययोराज्ञोमहातु तापसूचनायेतिकातव्यं द्विजाश्चदेवताश्च द्विजदेवताः द्विजेषुसिनिहितादेवतावा द्विजकपदेवतावा तासुन विद्यतेभादीप्तिर्येषांतेभभा स्तान्द्रातिकुत्सयतीत्यभद्रः द्वाकुत्सायामितिधातुः तद्वतद्राणम्बानयस्यस्त्रश्चेतिवाद्वानिद्रायामितिधातुः तस्य ॥ ३ ॥

अथेत्थंचितयन्सपरीक्षित्तक्षकाख्यान्मुनेःसुतोक्तात्सुतेनप्रेरितात् विकृतिकृतापराध्यरिहारंदेइवियोग्रहक्षणंयथावदशृणोदित्यन्वयः आकर्णयेकिमकाषीदितितत्रहाह सद्दति सर्वाकग्रयेतक्षकाद्विरेग्रामरणंराज्यादिषुअलंप्रस्कस्य विरक्तिकार्ग्यममूदितिसाधुमेनइत्यन्वयः॥४॥

#### क्रमसंदर्भः।

0121211

अद्यैवेति । दहतु (प्रकोषितब्राह्मग्राकुलं निमित्तीकृत्य राज्यादिकमधैव ) मे मत्तः सकाशाद्दग्धवदपयात्वित्यर्थः । राज्यादी अपरेषां द्विजादीनां सद्भावेन तथाभिवेतुमयुक्तत्वात् ॥ ३ । ४ । ५ ॥

#### ' सुवोधिनी ।

"सर्वदोषनिवृत्तिक्ष्वित्वाचार्यनिक्षिता प्रमोदेपीश्वरेच्छायाच्यामोद्दाभाववर्णाता अधुनापूर्णेगुरातिरायद्वानभक्षिषु यद्दाक्षमेख भावेषुभावेषुव्वनिक्ष्यित एकानिविद्येवस्यात्प्रायमुनिग्णागमः तत्रपृष्टार्थसंद्देश्चकागमहतीयते मुनयोभगवद्धक्तयान्द्रह्रात्र्द्धाम श्रोनुवभावित्वकानातिवाद्द्यगुक्षकाती वेराग्यस्यप्रकर्षेण्यक्षेरित्रविद्यान्ति । श्रुक्षेप्यविद्यान्ति । श्रुक्षेप्यान्ति । श्रुक्षेप्याने । श्रुक्षेप्

ति किंक् केंद्र्यमित्याकांश्वायां विषयपवकरिष्यति नमयाचित्रकर्ते व्यमित्याहः श्रुवमिति नगुवेष्यावस्यतवनिकि विद्यमित्यारां-क्याह देवहेलनादिति अन्तः स्थितीमगवानेवतेन व्यायमानः सदेवाल्यस्पः अतोदेवालयापकारेदेवण्यापकृती भवतीति सक्ती अपिभगव

#### सुवोधिनी 🕞

द्वोद्मा च्यान्तरक्षंत्रजोदे जिल्लामान् धुनंत्रम् सतंभविष्यानिज्यसतं नामन्दिकीर्षितसर्वपुरुषार्थप्रतिवन्धकः सर्वापारसहिताचिसवया कुरु ता. सुचित्रिक्षाः स्ताक्षयदेसदिनागुकः उपायितवृद्योतातत्रकुरव्ययंस्ताश्चयनाथकः व्यसम्बंद्वभ्वेनात्ययोयस्यति असुपनस्पनस्कृत्वर ऽत्येतीत्यर्थः अत्युत्कटत्वातः शोघ्रमेवभविष्यतीत्याहनातिदीर्घादिति तदैवनजातइत्यपिपदंप्रतीकारग्रानंतरमेवसर्पस्याप्यप्रताकार्यतापिर ज्ञानात्प्रतीकारः कियतामित्याद्यंक्याह तदस्त्वितयस्यदेहादिः प्रियोमवितयस्यभगवदपराधेर्ऽापप्रियादः रक्षगीयताभर्वाततस्यप्रतीकार प्रयत्नः अस्यापियदनुष्ठेयमिति न्यायेनास्माकंतदभीष्टमेव अतः प्रार्थयतेत्वरूरतुकामामिति व्यसनस्यसंकोचोमास्तुदेहादिनाशस्यअस्मा भिर्वचिकीर्षितत्वात् तथाप्रार्थनायांहेतुःअघनिष्कृतायेतिपापापनोदायेतिमेइतिसाक्षात् ममैवास्तुनन्वपराधोधमः तदर्थधर्मिनाशोऽन्चितः अक्षमानत्वात्**तत्राह** यथानकुर्यामिति शरीरेविद्यमानेसाक्षात्करणसम्मवति शरीराद्यभावेतुराज्यपुत्रद्वारा अतः अद्धासाक्षाद्वा-रिस्वत्यर्थः ॥ रू॥

🗸 नस्वतिराग्निगोऽप्येवमुक्तिः सम्भवतीतितद्धचावृत्त्यर्थेपाक्षिकदोषपरिहारार्थेचाह अद्यैवेति शेषरक्षार्थनात्मनिपार्थनाकिन्तुसाक्षात्सम्ब न्धाभावार्थमतीब्राह्मणापरोधार्थनीमित्तिकदेशनीयः साक्षातप्रकोपितोब्राह्मण्कुलानलः राज्यसेनांधनचनाशयेत् सात्विकराजसतामस सुकतात एतन्त्रयं अवतित्तः ततेक्र्रिणाहष्टस्यसमात्रत्वात् निष्पत्यूहंदहतुतत्रसाधकमाह अभद्रस्येतिनविद्यतेभद्रयस्येति नहिकल्यासा क्ष्टिप्रयुद्धे विद्यमानेपीपीर्मुसीधीर्भवति अतीसदीर्पनैविद्याणस्यगुगाइतिन्यायेनपुगयाभावेराज्यादीनांदोषजनकत्वातः तदभावप्रार्थेनायुक्ते रथाह्युनर्नमे भूदिति असञ्चलजातंत्रस्मिलिमित्तदाहार्थेषुउपपुज्यते अतःशमनंजातमितिविचारेगानैभ्रित्यंश्लोकत्रयार्थः महताहिफलप्राप्ती 👣 हो भावप्यविलम्बहेतुः ॥ ३ ॥

वतः र्ष्ट्रहायांकातस्वातत्वकदाभविष्यतीति चिन्तप्रन अग्रतदनन्तरमेवशापमशृगोदित्याह सचिन्तयन्ति इत्यमितिपूर्वोक्तप-कारेगार्शमीकप्रैन्तिवाह्यमामुखातः तक्षकोष्ट्राविऋतिगित्रं अशृगोत्तयद्यपिइतिपदंनास्तिनवातथापदंतथापदस्यसम्बन्धिनः विद्यमानत्वात् युक्तानिर्द्धतिस्तवाअशृक्षोदित्यथेः खरूप्तिः पदार्थस्यकातत्वात् प्रकारस्यैवाज्ञानात् अनिधगतार्थगतृत्वेनप्रकारस्यैवश्रोतव्यत्वंसर्वस्यमु-स्यवीनेष्टाइतिशतः सुर्खतरामावादादुत्ततस्यकर्णुहेतुत्वमपितुमृत्युत्वमेवत्यादृससाधुमेनइतितूर्वोक्तोराजा अन्यथेदामीविचारस्यकर्तव्य त्वेशीव्याचुमेनत्वसम्मवेत तत्रथकत्व्यानिधाराभावात परिमितिकालेविलम्बोभवेत तदाह निवरेगोतिसनिवरेगासाधुमेनोकत्रीव्र मेवेश्यर्थः तक्षकानलस्यसःभुत्वेतिः प्रसक्तर्यविरक्तिकारणमिति विषयेषुप्रसक्तस्यविषयभोगस्याहेह्नत्वंज्ञापयन् असमासमाहः निःस सापेक्षत्वादसमर्थसमासः ॥ ४॥

#### श्रीविश्वनायचक्रवर्ती।

राज्ञानुतप्य निर्धिन्य कृते प्रायोपवेशने। क्नविशे मुनीन्द्रागां सदिस श्रीशुकागमः ॥ ०॥

अथ स्वगृहागमनकाल एव सुदुर्मना अभूत्। विन्तामाह साईद्वाभ्याम्। नीवं निन्दां कर्मा। अमीवमिति पार्ठ पापम् । वद्यागा वाह्यसे॥ १॥

अद्या साम्राहेकोस्त न तु पुत्रादिद्वारेगा ॥ २॥

ब्रिजदेवगा दुःखयितुं धीनं मेऽभूत्र भवेत ॥ ३॥

मते: स्तिनेकिः सप्तमेश्हिन तक्षकाच्यो निर्श्वतिर्मुर्थेशा-भविष्यति तथा अश्यकोतः। शमीक्षेषिताच्छिप्यात् गौरसुसात्। यथा-भी राज्ञन् ! अबानेन वालकोन दत्तमाभिशाम अत्वा मुहुर्वतव्तस्तंच सन्तन्यांसमद्गुष्यः मतीकारमप्रयन् विद्यन् त्विया कारणयपूर्णीमां प्राहिगोद्धाज्ञां कार्वा परलोकार्थ किमपि यततामित्यहंदर्थम् । इत्युक्ता गते तस्मितः राजा खापरार्थं क्षमयन तत्र जिगमितुरपि मुतर्जनिष्य मार्गा लेका सङ्गाचादिक खस्य च शापान्तानिन्द्रां विविध्ये न जगाम । यहः स तक्षकस्य विवासि साधु मेने । कीइश विवये प्रसक्तस्य Die Der Ausgeschaften der Ausgescher und der Ausgesche der Ausgeschaften der Aufgeschaften der Aufgeschaften d Die Laufer der Ausgeschaften der Aufgeschaften der Ausgeschaften der Ausgeschafte मम् विरक्तिकार्याम् ॥ ४ ॥

# The property of the state of th

Andrew The Transfer of the Control o ार हार्यों ने अंग्रेस के में किया है जिसके स्थापन किया है। जिसके स्थापन के किया है जिसके हैं कि किया है। अधापुरप्रवेशातन्तरम् महीपतिस्त आत्मकृतंग्रन्थसे सर्पप्रक्षेप्रसंपद्भितशंक्षमिविज्ञत्तयम् । सङ्ग्रेतासभूतः विन्तामाद् अध्यातिसार्थः हा त्याम अहो मार्थेगामयाऽनार्थेन दुवसा गिवासणे अमिनंपापंकतम् ॥ १ ॥

त्वात्वस्माचिमित्यस्तात्कताहे वहेल्दनात्मारहा वाचेत्रभृतमावदवकाकमात्पामात्रकृत्व मंसुनिमोर्ग्यस्यस्नं सुवंसविष्यतितदीर्घाः त्कालाचीबास्त् कित्रात्योगस्त्तवभाषि अकासाक्षादेवास्त्वत्य पचारेगासाक्षात्मक्षेत्रीपकामंत्रथोग्दसस्तुनज्ञसङ्कोचेव सम्प्रयोजनग्राक्षमेश्रयकिपकः तायपापप्रक्षालनायइति यद्यानकुर्योपुनितिच ॥ २॥ WAS A CONTROLLED TO

वलंसेन्यमुह्यकोशंमगुङ्गंत्रनागारम् प्रकोपितः, सरीवण्यालितः ब्रह्मकुलमेशानलः सश्चित्रकृत्वपुनर्भूयोमेशसद्वहस्याजर्वित्रये महोतिः तस्यक्तिमादिश्यः पानीयसीपापनिकीर्यामतिकीर्यामानुद्धः॥३॥

त्रियो विहायेमममुश्र लोकं विमिश्ति हैयतया पुरस्तात्।

कृष्णाङ्किसेवामधिमन्यमान उपाविशत प्रायममन्यनद्याम् ॥ प्रावास्य वे बसच्छ्रितुबस्ताविमिश्रक्षणाङ्किरेगवभयधिकान्तुनेत्री ।

पुनाति सेशानुभयत्र बोकान कस्तां न सेवेत मिर्ध्यमाणाः ॥ ६॥

इति व्यवच्छिय स पाग्रुवेयः प्रायोपवेशं प्रति विष्णुप्रयाम् ।

दथ्यौ मुकुन्दाङ्किमनन्यभावो मुनिव्रती मुक्तसमस्तसङ्गः ॥ ७॥

तत्रोपजग्मुर्भवनं पुनाना महानुभावा मुनयः सशिष्याः ।

प्रायेशा तीर्थाभिगमापदेशैः स्वयं हि तीर्थानि पुनन्ति सहतः ॥ ८॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

सपरीक्षित इत्यं चिन्तयन्मुनः सुतेनतक्षकाख्योनिऋतिर्मृत्युः तक्षकःसप्तमेऽहिन्धस्यतिसमकुलांगारमित्यवय्योक्तस्त्रमः शामीकप्रेन् वितातः गौरमुखाख्यां चिन्छिष्यादेशृगोतः अयश्रवगानन्तरंसः परीक्षितः तक्षकद्यविषानलंगसक्तस्यराज्याद्यासक्तस्यात्मनोविद्किकारणे साधुमेने स्वीकृतवातः नतुतत्प्रतिकारचिन्तितवानितिभावः सप्तमेऽहिनघस्यशातिचिरेगानुसाधुत्वेमेने ॥ ४ ॥

#### भाषाटीका ।

स्तजी बोले इसके अनन्तर राजा परीक्षित अपने किये निदित कमें को विचारकर दुखित हो बोले मैंने गुन्त तेजवाले निरपराध बाह्यमा के विषय में बड़ा अकर्म किया है ॥ १॥

अब निश्चय से इस देवता अवद्या से अल्पकाल में अखन्त दुःच होगा वह दुःख मेरे पाप मा प्राथित होगा जिससे फिर में ऐसा न कहाँ ॥ २॥

प्रकोपित ब्रह्मकुलक्षप अग्नि आजही मेरे समृद्ध राज्य खजाना आदि को जलावै जिससे फिर मेरी मती पापवाली ऐसी मो ब्राह्मण देवताओं में न होय ॥ ३॥

उस राजा ने ऐसे चिंता करतेमात्र मुनिपुत्र का प्रेरित तक्षकरूप कोल को अवग किया उसने द्वाप को अपने वैराग्य का कारण समुद्रकर अच्छा मानलिया ॥ ४॥

#### ा श्रीधरस्वामी।

अयो अनन्तरम् । उभी लोको पुरस्ताद्वाज्यमध्य पव हेयतया विचारिती विहाय । श्रीकृष्णां विस्वामवाधिमन्द्रम् । सर्वेपुरुषार्थं भयोऽधिका जानतः। प्रायमनदानं तहिमन्नित्यर्थः तत्सङ्गल्पेनीपाविद्यादिति यावतः । यदा प्रायं प्रकृष्टमयनं द्यार्थां प्रथा भवति तथा। ५॥ अमन्द्रमेनद्यामिति विद्योष्ट्रम् फलमाहः। या गंगा लसन्ती श्रीयेग्याः तया तुयस्या विमिश्रा ये कृष्णां विरेणावस्तरभ्यधिकं सर्वोत्कृष्टं यदम्ब तस्या नेत्री तद्वादिनी । उभयत्र अन्तर्वहिश्च संद्यात् १देशेः लोकपालैः सहितात् लोकात् पुनाति । मरिष्यमाणा असिक्रमरणाः मरणास्यानियतकालत्वात् सर्वोऽपि तथा ततस्तां को न सेवेत ॥ ६॥

्र इति पर्वः विष्णुपद्यां गंगायां प्रायोपवेशं प्रति व्यविञ्ज्ञ तिश्चित्यं । प्रांडवेयं इति तत्कुलीचित्यं दर्शयति । नास्त्यन्यस्मिन् भावो यस्य सः । कुतो मुनिवतः उपशान्तः । तत् कुतः मुक्तः समस्तसङ्गो येन सः॥ ७॥

तत्र तदा तहरीनार्थ मुनय उपागताः न तु तीर्थस्नानार्थे कृतार्थत्वात् । ततु ताहरानामपि तीर्थयात्रा हर्यते तत्राहर् वर्षस्थिति।

#### े अपने प्रदेश के क्षेत्र के **श्रीवीरसम्बद्धाः**।

अधोततः इमममुंजलोकविद्यायलंक्यतइतिलोकः कलंकुविमितियाचत देशिकामुचिक सुखरपुर्शिवहायल्थः इमममुंचलोक अधि नष्टि, खेनपुरस्तातपूर्वभवद्येयतयाविमिश्चिती विचारपूर्वकह्यत्वनिविधिती विचारपूर्वकमें इमममुंचलीकविद्यायत्वये ततः कृष्णास्यभ गवतीऽप्रिक्षवामधिमन्यमानः निरविधुरुषार्थसाधनत्यामन्यमानः अमत्येनद्यदिवतद्यौगार्थामे प्राथमन्द्रीनिवसमुपाविद्यावनद्यानम्बन्धान्यस्ति। श्वितोवभूवेत्यर्थः ॥ ५ ॥

#### श्रीवीरराघवः।

स्वगृहेऽन्यत्रवाप्रायसुपिचातुर्किविशेषग्रामत्येनद्यामेव तदुपाविशदित्यत्र तांविशिषकाह यावाइतिलसंत्या श्रीतुलस्यामिश्रोयः कृष्णस्यांग्रिरेणुस्ततोऽभ्यधिकस्य प्रशस्तस्यां वुनोऽभसोनेत्रीप्रवद्वंतीयाऽमर्त्यनदीलभयत्रेष्ठासुत्रवसेशाँ लोकाले सिहताँ लोकान्यनान्युना तितांनदीमरिष्यमाग्यः कोवापुमात्रसेवेतवापितुसर्वेदत्यभिप्रायेगा तस्यामेव प्रायसुपाविशदित्यर्थः लसच्छीतुलसीश्रीकृष्णाांग्रिरेणुनाहेतुना व्यक्ष्यधिकस्वाधिकरहितमं वृतस्य नेत्रीतिवार्थः॥ ६॥

सपृंडवेयः परीक्षिदित्यंविष्णुपद्यां गंगायांप्रायोपवेशंप्रतिब्यवच्छिद्यविनिश्चित्यसंकल्पान्युकः समस्तेषुदेहतद्नुवंध्यादिषु संगोयेनमुनी

नांत्रतंयस्यनिवद्यतेऽन्योभावःचितायस्यसः कुमुंदांब्रिद्ध्योध्यातवान् ॥ ७ ॥

तदातत्रराज्ञः संनिधौमहानुभावाः सिशाष्यामुनयोलोकंपुनानाः पवित्रीकुर्वतः आजग्मुः भुवनंपुनानाइत्येतदेवोपपादयति प्रायेगासंतः तदातत्रराज्ञः संनिधौमहानुभावाः सिशाष्यामुनयोलोकंपुनानाः पवित्रीकुर्वतः आजग्मुः भुवनंपुनानाइत्येतदेवोपपादयति प्रायेगासंतः साधवः तीर्थयात्राच्योकेः स्वयमवतीर्थानिपुनंतिद्वि यथाचपुनंतितथोपपादितं पुरस्तात्तीर्थोकुर्वतिर्तार्थोनीत्यत्रेत्यर्थः ॥ ८ ॥

#### ्रश्रीविजयध्वजः ।

ससम्राद्कस्यवाहेतीरितिशीनकप्रश्नंपरिहरेतिभयोशहातिथयोशहाशापाकर्णनसमनं सममायंशापोऽपिविरक्तिहेतुत्वात्साधुरितिमन्वा ससम्राद्कस्यवाहेतीरितिशीनकप्रश्नंपरिहरेतिभयोशिवश्चादिनाहेयतयाविमृश्याधिराद् श्रीयुत्ताममेमूलोकतयाथमं खाँलोकिविधावि मः पुरस्तात्श्रयमंताविहलोकपरलोकाविनेत्यत्वदुः खिनश्चित्राधनत्वात्कर्तव्येतिर्चावमृश्य तामेविम्रयमाणस्यात्मनः कर्तव्यामभिमन्यमा हायाधिमन्द्रसारेश्वर्णादिसेवेविधाविश्वराधाविश्वराधाविश्वराधाविश्वराधाविश्वराधाविष्ठायात्वस्य । ५॥

तः पर्धा व्या प्रमुख्य प्रमुख्य क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त स्थादिति हुआह यावाइति लसंतीश्रीमतीतुलसीलसच्छीतुलसीब्रह्म क्रिक्त विकास क्रिक्त क्रिक्त मित्र क्रिक्त क्रिक्त

अतोमिरिष्यमाणोऽहँतीथोत्तमत्वाद्धिषणुप्रद्यांग्रेणायामनशनब्रह्मकरिष्यहतिप्रायोपविद्याप्रतिष्ययनिश्चित्यानन्यभावाऽ नन्यचेताराज्य मारादिचितारिहतांतः करणोविष्यदेक् चेतां व्यामिनीनांनिवृत्तानां क्षानिनांवतिमवव्रतंयस्यसमुनिव्रतः वाचालत्वरिहतोवा अतप्वमुक्ताःसम स्ताः संगाः पुत्रादिविषयस्नेहायस्यसमुक्तं समस्तसंगः श्रोत्रादींद्रियरन्यप्रसंगमंतरेणातत्कथाश्रवणादिप्रसंगोयस्यसतथेतिवा सपांडवेयः परीक्षित्वविष्णुपद्यां प्रायोपवेशंप्रतिस्थितः मुक्तंदतदेभिचएवंद्यवित्येकान्वयः चः समुख्येऽ वधारणेवा ॥ ७ ॥

यत्रपरीक्षितिष्ठातितत्रोपजग्मुः॥८॥

#### क्रमसन्दर्भः।

प्रायोपवेश आयुद्धिस्यामर्थनद्यामेव युकः। यतस्तस्यां तद्भीष्टस्य श्रीकृष्णस्य सम्बन्धः सर्वेषांपावनत्वं चस्फुटं दृश्यते दृत्यास्ताम् तस्य ब्राह्मणाप्ति उष्मीतस्य श्रीकृष्णस्यां विस्वामेव च सर्वाधिकपुरुषार्थतया लिप्सोवां सर्वस्यापि जीवस्य तत्राप्यासम्मरणस्य तस्य ब्राह्मणाप्ति उप्पाद्धि व द्वि । या व तादशत्वेन ख्यं प्रसिद्धा पुनर्लसर्त्रश्चित्रयं प्रचुरतया वृन्दावनजाता यास्तुलस्यस्तामि सेवाश्चायतं यो व द्वि । या व तादशत्वेन ख्यं प्रसिद्धा पुनर्लसर्त्राचित्रयावस्तामिरश्यधिकं यमुनारूपमम्बु तस्यापि नेत्री विमिश्चा पूर्व विमिश्चामृता प्रस्य प्राप्ता यावृन्दावनिध्यताः खयं भगवतः कृष्णस्याविरेणवस्तामिरश्यधिकं यमुनारूपमम्बु तस्यापि नेत्री विद्यास्याः । अञ्च्यधिकत्वं चोक्तमादिवाराद्वे—गङ्गा शतगुणा पुगया माथुरे मम मगडले। यमुना विश्वता देवि! नात्र कार्या विचारणा वोद्धीत्यर्थः। अञ्च्यधिकत्वं चोक्तमादिवाराद्वे—गङ्गा शतगुणा पुगया माथुरे मम मगडले। यमुना विश्वता देवि! नात्र कार्या विचारणा विद्यास्याति । अञ्च्यधिकत्वं चोक्तमादिवाराद्वे तादगम्बु। ततो भिन्नश्वमेवोपपद्यत इति नेत्रीति सदैव तन्नयनं लक्ष्यत इति च तथा व्याक्यातमः। कृष्णशब्दश्च रुत्या श्रीगोपाल प्रवाधिकं प्रसिद्ध इति तु तथा व्याक्यातमे । अभेदे हि तादगम्बुरूपेत्येवावस्यदिति ॥ ६॥ व्याक्यातमः। कृष्णशब्दश्च रुत्या श्रीगोपाल एवाधिकं प्रसिद्ध इति तु तथा व्याक्यातमेव। अभेदे हि तादगम्बुरूपेत्यवावस्यदिति ॥ ६॥

कीहराः सन् इध्यो तत्राह मुक्तेति अनन्यति च ॥ ७ ॥ तत्रेति । साक्षाच्छ्रीभगवत्पादसम्बन्धीनि गंगादीनि विनेति छेयमः। तेषु तेषामपि परमादरातः। कि वा उत्प्रेक्षामात्रमिदं न तु तेषामप्यभित्रायः। तामेवाह प्रायेगोति ॥ ८ ॥ ९० ॥ ११ ॥

#### सुवोधिनी।

出 中华 增强的不够

## भाजीबाबीधवन्यवाः सरहाम**न्त्रोन्छम**्यार्थाः स्व

वैक्लब्येनसर्वाभावमारांक्यअमत्यातांभिदित्ति।त्रमविद्यतिमस्त्रीयष्ट्रांदिवानांतेषांनदीष्ट्रतस्त्रम्यक्रिमीमदेहेन्द्राह्यस्त्रययोजीयमानत्वातः पूर्वसाधन त्वेनगृहीतस्यदेहस्यनाशात्देहान्तर्स्यचसाधकत्वमन्द्रहात् मङ्गायाश्चयथावस्त्रस्यापकत्वात् राङ्गार्तारेप्रायः अमत्यत्वेनदीकृतमेवतत्तीरे आताअमर्स्याभवन्तीति अत्रद्दमपिशैरीरमुत्तरानरकेवळनेवसानिष्णुचिमान गङ्गासम्बन्धात् अमर्स्यत्वमापञ्चम् भगवत्सेवायाः फलापका रिमविष्यतीतितयायत्नः इदानीतनानामाधिभौगिवकत्वार्त् अपिमीगितकारेणामा आमध्यक्रात्वात्रकां साध्यति ॥ ५॥

एवंयोग्यदेहसाधकत्वेनगंगायाः प्रदेपरोपयोगमुक्तवाभक्तौसाक्षात्कलक्ष्ययोज्ञमाहस्वित्वहस्ति अधिकारिशरीरप्राप्यभगवतसेवायां प्रथमतश्चरगाप्रश्नालनंभावनायांतस्यांकियमागायाप्रश्नालनेजातीमत्याभू ज्ञापिकार्गगायुर्देयांअभिकापक ्रूपमाह्याब्रह्मस्दनेब्रह्मकर्तृकचरगा क्षालनात् पूर्वनित्यपूजायां लक्ष्मीस्मृष्टितत्लस्य साम्यागित्वेद स्थिताम् कार्याय स्थान्तस्य मृगवतः चर्गास्परीभूतसंस्कारपक्षमाश्रित्य "तदं तरप्रतिपत्तीरंहतिसंपरिष्वकः॥ ३।३।१ ॥ इतिन्यायेनकत्पुग्यपुंजस्यसंविधनां भक्तत्वस्ति भगवदीयशरीरिनिष्पादनार्थभगवश्वरगासंविधे ताहराशरीरंनिष्पादे यितुंस्थितस्य चर्गापासे पूर्ववर्त्यातिसार्थकत्वर्गामायावदातिकृष्णाम् रेतिवतिश्रीतुलस्याविमिश्रःयोऽघिरणुः अनेनतिसम् शरीरेभक्तभक्ताः सहज्ञां वे वे दे तु क्क बहु गं मूमो स्थितानां नाह श्रीष्ट्रानिष्ट्राहिनार्थक प्रमाविष्ट्राह्मा विकायस्यता इशमं बुनयती ति अंबुनेत्रीपरिमितंचगंगाजलंपरिमितंचकमंडलुजलमपरिमिताश्चरगारेगावडाविनसम्यक्षेत्रलनपर्याप्तमंबुभवति अतोरेगावएवअधिकाः इदा नीतनजलेऽपिभक्तंप्रत्येवतदभिव्यक्तीर्वरणंगान्यंप्रतीतिनेतपदेनस्चितं तस्त्रीमासंगिक्तकहृयमाहपुनातीतित्रीन्पिल् कान्उभूयत्रअतवेहिः सेशान पुतातिसेशत्वपालकमहाँदेवसहितान्थनगर्भकानांभमावुत्पन्नानामधिकदौषसंवैधाभावः स्वितः अतु वर्गमारेग्यमागाः पुववह त्यागिङ्छु ताहरादारीरात्पादिकागिगिकावानसर्वेत ॥ ६॥

पुरुष्ट्रिताहरावाद्याप्तराचा विकास स्वाप्ति । पुरुष्ट्रिताहरावाद्याप्ति । पुरुष्ट्रिताहरावाद्याहरावाद्याहरावाद्य प्रविद्यामातीरप्रायोगवेशनकत्तेव्यामिति युत्त्वाानिश्चत्यसस्यामकत्वसर्वमत्यथास्यादिति तहाववत्त्वनप्रदिहरावश्चमक व्यविक्रियेति विष्णुनद्यांप्रायोपवेशनप्रतिपूर्वोक्तप्रकारेगापक्षांतरानराकर्गापूर्वकविशेषे निर्देशस्त्रवीक्वयद्वयावितिसंवश्रार्यातः सपांडवे य:कदाचिद्याध्यात्मिकस्यवलिष्ठत्वेनपूर्वोक्तं नभविष्यतीतिपूर्वेसहायत्वेनमुकुदां विमेवद्धे क्रिकेट्या विनावदातृतयाध्यानस्योपयागेवार्यात अंब्रिमित्येक्तवसंख्यां अविवक्षिता प्रहव दुतरत्रयोगार्थ तेनसीनधानात पूर्व के बत्वफेलिप्यति वर्ती पिकि पुरुषार्थसाधिकातितांवस्ह मनन्यभाव इतिन्तिव यत्तेमनय दिमन मानो यस्यमायोगं पार्क्तिसामे हिल्लिक विक्रिते व कमने ने मनो इंडो अस्यकः या च विक्रं का यिक्रमा इस्ति मतोमुक्त समस्तसंगइति मुनिवत्वतंयस्यवृथालापपारवर्जनंमीन मुनिव्यतिरिक्तेः सह यसाष्ट्रसाविष्यः अन्यसायकी समस्तरंत सत्ताःसर्वेसंगायेनप्रनमित्रादिभिः मनसम्बंगाः परित्यकाः सामया गरीरचित्रकर्णवित्राः ॥ भः॥ हेर्। । । । । । । । ।

प्वंसकर्त्त व्यक्ते विष्टंभगवानेवकरिष्यतीति भागवतं चशुक्तं चयोजयन्त्रं मिल्लियं स्वतं क्रिक्ति क्रिक्त मानार्थियनमाण्डत त्रोपक्षण्यक्रिता उपेतिकील सामीर्थ्यमणैतिनांस्थेलगायताआहरतास्त्रेखंमाशाताहातिन्तित्रितुप्तेमयलोकेतीश्रीपीविद्धीर्थिकास्त्रतानि युक्ताःतथाकुर्वतित्याह अवनेपुनानाइतियन्यथामुनीनामेतत्रशेषत्वस्यान्यावनसाम्प्रयम्हिमहानुभावाहितिरुखनाहुनानामधि अववस्यान्या भाजहेतः सुनयहतिस्र शिष्ट्राशां शिष्ट्राशां श्रीतवीध संक्षा वृत्त्यक्षि हिस्सिकवयेहा करणार्थि शायोगितः स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्रास्पर स्वतंत्रतयातीर्थापित्र स्वतंत्रत्यातीर्थापित्र स्वतंत्रत्यात्र धमकतृत्वावृत्त्वर्थं यद्यपियद्यदाचरतिश्रेष्ठदति न्यायेनलोकशिक्षार्थतीर्थाभिगमनंभवति तथापितन्नमुख्यप्रश्लोजनंतदाहात्राश्रद्धिविद्याद्वी रित्यर्थः ॥ ८ ॥

I WILL DUT

भाविश्वनाथचकवर्ता ।

क्षेत्रकार का क्षेत्रकार का क्षेत्रकार का का का क्षेत्रकार का का का क्षेत्रकार का क इमम् अमुंच लोकं विहाय कुतः पुरस्तात् शापात् पूर्वमेव हेयतया उभी विमर्शितौ विचारिती अतः अकि स्वेषु आधाधिकां 

अमर्चनद्यां गंगायामेव कुतस्तजाह । अश्यधिकं सब्वीत्कृष्टं यदम्बु तस्य तेत्री तदाहिनी । उभावत्र क्रवाचीऽन्तविद्धा। इभावत्र ब्यविक्किय निश्चित्य । प्रायोपवेश प्रति लक्ष्यीकृत्येत्यर्थः। न अन्यस्मिन् कर्म्मशानदेवतान्तर भावो यस्य सः ॥ १॥

तत्र तदा तद्दीनाथ मुनय आगता न तु तीर्थस्तानार्थ कृतार्थत्वात्। नतु तादशातामपि तीर्थयात्रा दर्यते वत्राह प्रथियोति तीर्थ यात्राव्याजीस्तन तीर्थे प्रयोजि परीक्षिती दर्शन ते हाधिकं इढं (गूढं) निर्त्योषुरिति भावः । सकस्मादद्भुतप्रतिघानन्दान्यथासुपपस्या सर्वेश्वत्या माबि क्वान्वं शात्वा श्रीमार्गकतास्त्रपां नार्थभिति भावा ॥ दे ॥ १ व हर्वा ।

## 

अयोविरिक्तकारगात्तक्षकानलस्वीकारनन्तरमपुरस्तात्पूर्वजेवहेयत्याविमहिति।चिन्तिते इमममुचलीवमहिकाम्धिकमीर्गायतनीवि-द्वायतदीयभोगवासनामपनीयकृष्णां विसेवामधीत्यधिकां सर्वो चमांमन्यमानः अमहीनचां देवनदीतीरे पायमनशनास्ये अत्युपाविशत ॥ ५ ॥ द्ववनद्तिरं उपाविशादित्युक्तं तत्रहेतुमाहयावैद्दति लसाञ्च्यातुलस्याविमिश्रीःकष्णां प्रिरेणुसिरेश्यधिकस्याम्बनीने कत्याविनी डमयत्रवाद्यामभ्यन्तरं च्यानपानादिनासेशान् ईशसहितान्लोकीन् देवमनुष्यातीन्तुनातिया तांभरिष्यमाशाः आस्त्रमृत्युः कानसेवता ॥ ६ ॥ संश्वादमेयमहोमागनतकुलोनपमःपरीक्षितम्येनंविष्णुपयांगभागांग्रीपर्वेशमतिस्य विस्तिनिधस्य विस्तिनंदी छेणीनविषये

मकियेस्यमुनीनांशमदमादीनिवतानियस्यत्यकाःसमस्तोदेहतदनुवन्धिविषयकाःसयोगीयेनसःमुकुन्दाधिन्दव्यक्षिकाकवान्।॥ १०॥०००

## ऋत्रिर्वशिष्ठश्च्यवनः शरद्वानस्रिनेमिर्भृगुरङ्गिराश्च ।

स्याप्तरेष अपन्यत्र ग्रेस्**अस्याहो आधिकुलोऽय राम उत्थय इन्द्रेप्रमदेश्मवाहोत्ता है ॥** वर्षात्राहरू वर्षा

मेशातिथिदेवल न्याष्ट्रियेगो भरहाजी गौतमः पिप्पलादः। ः गान्त्रं स्थाया क्लावका

॥ २ । स्मेत्रेय ज्योद्का कवणः कुम्भयोनिर्देषायनो भगवात्रारदश्य ॥ १० ॥ । १० ।।

स्त्रन्ये च दैविषिब्रह्मिविय्या राजिषिवय्या स्त्रह्माादयदच ।

नानार्षेयप्रवरान् समेतानभ्यर्थ राजा शिरमा ववन्दे ॥ ११ ॥

सुखोपविष्ठेष्वय तेषु भूयः कतप्रशामः स्वचिकीर्षितं यत्।

विज्ञाषयामारा विविक्तचेता उपस्थितोऽयेऽभिगृहीतपाणिः ॥ १२ ॥

#### ि सिद्धांतप्रदीपः।

उपजन्मः कथम्भताः भुवनम्पुनीमाः लोकम्पवित्रीकुर्वन्तः यतःसन्तःसाधवः प्रायेगातीर्थाभिगमापदेशैः सचात्रा का के स्वयन्तिषीनिपुनन्ति श्रीगङ्गास्नानव्याजेनतद्गातज्ञकतापापानिनाशयितुं परमभागवतराजर्घ्यवुष्रहार्थेचागताइत्यर्थः॥ ८। ९। १०॥

अवनतर इसलीक तथा घरलोक दोनी की पहिले व्योगने योग्य विचारे थे उनको छोडकर श्रीकृष्णसेवाको हो। बिधिक प्रानकर क्षांगाजी में अन्यस बत लेकर राजा वेड गये ॥ ५ ॥

जो श्रीगंगाजी प्रकाश मान तुल्ही मिश्चित श्रीकृषी चरणरेणुसे पवित्रित जल की धारणकरती हुई श्रीमहदिव जी सहित होनी छोषों को पविश्व करती है तो उसकों महतेवाला कीने नहीं सेवन करेगा । इस

होत् पृथ्व पर्नाहित्त पर्का विकास कर क्रानिनी में प्रायोगवेश करके समस्त आंसक्ति कों छोड मुनिवत से अनन्य भाव होकर श्रीमुकुंद चर्या के ध्यान फरनेलगे २ ७ ॥

एक तहाँ पर भुवतों की पवित्र करतेवाले महार्विभाव मुनिगण शिष्यों के सहित आये क्योंकि महात्मा लोक तीर्थों के निमित्त से खर्य भी की अधिक फरते हैं ॥ देख

#### श्रीधरस्वामी।

अठ्याद्रियाः क्यापुर्हिद्विद्विद्वार्था पृष्टकः निर्दिष्टाः। नामा याग्यार्षेयाचि ऋषीचाां गोत्राचि तेषु प्रवरान् श्रेष्ठान् । शिरसा असं Stablication than the contraction of the contractio स्तृत्वा स्वत्ते । श विक्षापनार्थं कृति करियात्मः । विक्रितं शुद्धं चेतो यस्य । अभिगृहीती संयोजिती पाणी येन सः । खचिकीर्षितं प्रायोपवेशनादि

िक्रिकार के बहुत ने प्रकार का जिल्ला है, तक देश है जो है, जिल्ला के के कार्य का स्टूबर के का कार्य है, जो कार्य

रक्तम्यको विकित्विकार्यसम्बद्धाः हे ।

H PROPERTY BORNES OF THE SAME

## श्रीवीरराधवः।

के बत्रमुत्रथर्यमतान् करायति सन्तिरितसाई द्वयेनग्धिमुतोविश्वामित्रः रामोभागेवः कंभयोतिरगस्त्रः॥ १ । १० । अन्यचंद्रवरिक्षेष्ठावस्त्रियावस्त्रियावस्त्राह्मस्त्रियावस्त्राह्मस्त्राह्मस्त्राह्मस्त्राह्मस्त्राह्मस्त्राह्म

अथतेषुद्धसंयथातथोपविष्टेषुसत्सुपुनरिकृतः प्रशामोयेनसराजाउपस्थितस्तेषांसमीपेतिष्ठश्रीमगृहीतपाशिः वदांजिकः विषेकपुक बेलोयस्यत्यमभूतः खांचकिर्वितंकर्नुमिष्टयत्तिव्वापयामास ॥ १२ ॥

## 松高1至多年的四种100种100种。100元之间,100元的100万万万

॥ ह ॥ हार्भक्षात्र अपनित्र हार्भक्षात्र । अस्ति भूति अस्ति । ि मुनीसंतिमानिमिर्दिशतीलाई सिमिरिति गाधिकुतोविश्वामिषः ग्रामः परशुरामः इप्रमतिखर्थमबादश्वदेवप्रमहीव्यवादी । ९० CHANGE CONTROLLED TO THE PROPERTY OF THE PROPE

ता प्रमा-

ि : १७०५ है। जिल्हा मिनिजयण्यनः ।

अम्ये चप्रसिद्धाः प्रसिद्धानामुन् विद्धानुन् विद्धान्त्यो विद्धानियः विश्वामित्रादयो राज्येयः विश्वामित्रादयो विद्धानियः विश्वामित्रादयो विद्धानियः विश्वामित्राद्या विद्धानियः विद्धानियः

ऋषीयामग्रेडपस्थितः अष्ट्रयृष्ट्रहृतिवासाय्येतस्त्य्यः विकार्यातिकाष्ट्रयातिकाष्ट्रयासिकाष्ट्रयासिकाष्ट्रयासिकाष्ट्र

११ % है। अध्यक्तिक के किस**संबर्धः**।

maken iller of the term of the first back

विद्यापयामासेति चक्ष्यमाश्वामित्येव हियमि॥ १

E Statement Sine

खुवोधिनी <sub>। इ</sub>

क्षित्रां प्राप्त नक्षत्रं त्वं साधुत्वेतेवति तत्वाह वात्राद्यायेषु मुख्यहति प्रथमे वाद्धियोतः सिक्षः । परशुरामः उत्रच्योगौतम्पिता धिक्षिण्यादिभगवद्भक्तां तागिताः वयस्यताः धर्मप्रतिपादकाः मैत्रयादिनारदांतामाकः प्रतिकाः मिकः पश्चिषा च कारात् नारदिशियास्तर्ये तानाहः सन्येचिति अत्यवऋषित्रयप्रहर्णं अन्ति किञ्चिष्टाषः ॥ ९।१०॥

ितेष्वागतेषुराक्षः कृत्यमाह तावतानिति येषु ऋषिवंशेषुप्रवराः श्रेष्ठाः यतत्वा एक है अभीगतिष्ठित समुद्दायन्षपुजन यथा योगतत्समत्या वंदनातापुजति पुजासमापि यिस्वच्छ्याकृतद्दति दोषपित्वार्यभ्याष्ठेषु विकापनः विशेषणामे कृत्वास्विजिकीर्षिते कर्त्तव्यंचेति निर्द्वार्यविद्विष्टेष्ट्याउत्तरनिराषार्थेच अनन्यनिष्ठः सन् विनयार्थमुण्यतः ॥ ११ ॥

- अंजिलियं वाविज्ञापयामासेत्याह सुस्रोहिष्यति अधित पूजासमार्क्यन्तरिष्टिकः संयातान् पृथक्तते आत्मानिचेतीयस्यमाम मुख्यनग्रहीतीपाणीयन ॥ १२ ॥

श्रीविश्वनाथचक्रवर्सी।

अरुसादयः कागडार्षत्वाविशेषसा पुद्धादिष्टाः ॥ ११ ॥

कक्षी व्यवस्थिति । कालकार स्थिति । विकास समिति

💯 अभिगृहीतपागिः स्रताञ्जलिः ५१

បីលេខម៉ាញ់ស៊ីនិងស្ថិត សិក្សីលិក្ខាការ ខេ

Ng Mangapatan a

सिद्धांतप्रदीपः ।

अन्य सदेव विष्णुत्रहाचिषु चवर्याः श्रे राजिषिश्रेष्ठाश्च अरुगादयोत्रहिषिविशेषाश्चोपजग्मः नानाविश्वानिवाषयागित्रहेषात्रीतेषु अवरान्सुख्यान्समेतान्संघीभूतान्शिर ववन्दे ॥ ११ ॥

अध्यस्य विश्व प्राप्त श्रीपिक हे चुन्न विकितिमें ले चेताय स्यसः अभिगृही ती संयोजिती पार्शीयनसः अभे उपस्थितः विश्व प्रमाणिक विश्व प्रमाणिक प्रमाणिक

Line of the last of the same of the last of the

भाषाटीका ।

सित्र विशेष्ठ च्यवन शरद्वान् रिष्ट निम भृगु अंगिरा प्राज्ञार विश्व।सित्र प्रशुराम उत्तथ्य इंद्रप्रमद रूष्मवाह ॥ ९ ॥

मेधातिथि देवल आर्ष्टिवंगा म्हाज गौनम पिप्पलाद मेश्रेय और्व कवष अगस्य श्रीत्यास नारदजी ॥ १० ॥

सीरमी अरुगादिक देविथे र विश्व होषि लोग आये नाना गौत्री उन मुनियों को राजा ने शिर से बंदन किया ॥ ११ ॥

उनके सुखपूर्वक वैद्रनेपर र । फिर प्रशाम कर शुद्ध विश्व से हस्त जोड़कर अपना कर्जन्य निवेदन करने लगे ॥ १२ ॥

राजोवाच।

ऋहो वयं घन्यतमा नृपांगां महत्तमा पहणीयशीलाः।

TORIO ATERINATIONE PROPERTY AND A PROPERTY OF THE PROPERTY OF

तस्यव भेऽघस्य परावरेशो व्यासक्तिचत्त्री गृहेष्वभीक्ष्याम् । व्यासक्तिवत्त्री

त्रि शिक्षेदमूलो हिजशापरूपो यत्र प्रसक्ती प्रमाशु घने । १९७० व्यापक प्रकार

दिजोपसृष्टः कुहुकस्तक्षको बाद्धशान्वलं गे विष्णुगाथाः॥१५॥

पुन्ध भ्याद्रगवत्यनन्ते सतिः प्रसङ्गद्रच तदे विष्णु । १० ।।

सहत्र या यामुपयामि सृष्टिं मैत्र्यस्तु सर्वि ामो दिजेभ्यः ॥ १६॥

#### थी धरसामा ।

अन्त अहा दति। नृपागि मध्ये । महत्तिमेरतुश्री गायि शिल् हेन् येषामा गतास राक्षामितितु ले-प्रभावनीदकातः। ''दूरादु विवेधविणमुक्षपादाम्भावि समृतः दूरे हि ते स्तक्षिमृत्यते। प्रभावनादकारा । गद्यी कम्मे यस्यत्यात्मानमुक्ति योक्तम् ॥' १३ ॥

भगनित्रस्वाहोद्द्व जात इत्योह । तस्य गहाँकरमेगा । सतोऽधस्य पापात्मनः गृहे ज्वासक्तिकस्य स्विमान्त्रये पराविष्णामीको एवं । अस्य य सम्बद्धः वापे सतिः गृहेणु सक्ति। संस्था । स्विमान्त्रये पराविष्णामीको एवं । अस्य य सम्बद्धः वापे सतिः गृहेणु सक्ति। संस्था । स्विमान् । स्वस्य वापाप्तकोति । स्वस्य वापापति । स्व

तान प्रार्थियत हाश्याम । तं मा माम उपयातं शर्थागतं प्रतियन्त जानन्त । देवी देवता विगंगा व प्रत्येत । वाश्यः प्रतिकियाना-

क्ष्मण्यों येथां तेश श्रुकृष्टः संगो भूयात्। तङ्गी तस्यो मुग्ने जन्मनि ॥ १६ म

#### श्रीवीरराघवः।

सदेवाहमहोद्दातिचतुर्भिः नृगांमध्येवयमहोधन्यतमाः उत्तमाः खलुःधन्यतमत्वेदैतुं वदेश्वासिनीचिद्दानिष्टमहेत्तमेनविद्धिरस्याम मनुष्रदितुयोग्यद्द्यालयेवायद्वामहत्तमानुष्रदृशीयंमहत्तमानुष्रदलभ्यंद्द्यालयेषांतथाभूताः अनेवभूतंश्रतक्ष्वेत्वद्वित्राक्षामिविद्यास्यानांभव तांपादशीचारपादस्वाम्लकविद्युद्धेर्द्धाद्वमृष्टद्रातत्यक्तंयद्वात्राकुलंतद्वर्श्वविद्यक्तम्यस्यतथाभूतंभवतिचतद्दतिखेदे॥ १३॥

नतुमहत्त्रमानुप्रहणायशालस्यत्व रथमधुनातिष्त्रप्रविश्वाचित्यत्रतिष्ठाश्चार्ययुत्रहरूपपवेत्यहतस्यति तस्यैवमहत्तमानुप्रहणायशी लस्यैवाभिक्षणाचेत्र पुनः गृहेषु व्यासकावित्त यस्यतस्यमभाद्यप्रकृतब्रह्मविद्यप्रचारकप्रस्थपरिहारकातिशेषः निर्वेदमुलः देहतद्जुवंध्या लस्यैवाभिक्षणाचेत्र पुनः गृहेषु व्यासकावित्त यस्यतस्यमभाद्यप्रकृतब्रह्मविद्यप्रचारकप्रस्थितिशेषः निर्वेदमुलः देहतद्जुवंध्या विष्वेराग्यं वृक्ष्यलेहत् प्रविद्यात्र विज्ञापक्षयः प्रविद्यात्र प्रविद्यात्र विश्वह्मविद्यप्रचारम् विद्यात्र प्रविद्यात्र प्रविद्यात्य प्रविद्यात्र प्रविद्यात्र प्रविद्यात्र प्रविद्यात्र प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्य

अस्तवेन प्रकृतिकि मित्याह तिमितिहे विपाः । भवतः इयंदेवी गंगाचे हो भगवित्य युतिच त्रेयेन तथा भृतेत कि विश्वसुपायांतरानु वितिव्यतियंतु हे योपादेव स्थापादेव स्थापादेव विश्व प्रकृति प्रकृति स्वतः तक्षकः कुहकः विस्मापकः मावंचयत्वकृति विश्वताहिष्येमीतिभावः कितुर्यं विश्वामिथिः कथाः गायतकथयत अलगायतेतिवान्वयः ॥ १५॥

युनः कि जममभगत्रत्यनंतेऽतिमक्तिस्तदाश्रयेषुमगवद्गकेषुसंगश्चस्यादेवमञ्चरहितेतिभावः किचयामस्यिषकान्मपापनोभितत्रसर्वत्रक नमनिमहत्सुभगाइशेषुसैत्रीथानुकृत्यमस्तुद्धिजेश्योवीनमः ॥ १६ ॥

## ा । भारत्य में भारत कारण कारण के **श्रीविजयम्बन्धः।** कि ते एक भी व जो में हैं के प्रदेश कारण

महत्तमैः महापुरुषेरञ्ज्यस्यायिकीलयेषांतेतथोकाः वसंनुपाणांमध्येष्ट्रस्यतमाः अहो अस्मज्ञागधेर्यः क्षाः राह्यक्रसंनिधक्रमेषात तत्कष्टं येनराजकुलेनब्राह्यण्पादशीचमारातद्रराद्धिसृष्टिवरहितंतदितिशेषः ॥ १३॥

स्त्रिकीर्तितमाहः तस्येति परावर्शमुक्तामुक्तम् वनायस्रीह्यास्काचित्रस्ययन्तिकवृत्ते वृत्तिवृत्तिक्षेत्रम् विवर् ग्राहितिवृत्तिक्षेत्रम् विवर्षेत्रम् वर्षेयपुर्वत् वर्षेयपुर्वत् स्त्रिम्बद्धाः संसारभयभेवश्चने वर्षयस्मिन्भगवित्रमक्षेत्रम् समेववन्ते स्त्रिम्बद्धाः संसारभयभेवश्चने वर्षयस्मिन्भगवित्रमक्षेत्रम् समेववनेप्राच्नोति तस्मिन्द्रपा वितिवा ॥ १४ ॥

ខ្មារ ៖ 🗸 🛊

বিভিচ

षस्यत

#### श्रीविजिय<sup>ु</sup>वज*्*।

योऽहमेवंमहत्त्वमानुप्रहेशीयंशिलः तमामाद्विजीपसृष्टः द्विजकुमारगप्रितिः वेषात्रधारीयथातग्राकुहकः क्षपटासपेजातिविशिष्ठोवा तक्ष्मकः दश्कुमक्षयतु युस्माभिरेतत्कर्तेव्यमित्याह् यक्षमिति यूर्यदवकीनद्वमित्यादिकाविष्णाविषयागाथाश्चरगात्रयाहपकक्षितान्यकोका नर्जदेहिवियोगप्यतंगायतषद्जादिस्वरेरितिशेषदृत्यन्वयः॥१६॥॥

नक्वेंचलमार्देमम्बद्धान्यस्योदीमनीरितप्रसंगीऽपितुजन्मातरेऽपीतिमार्थयस्याहः पुनश्चिति तद्वाश्चयेषुमगवद्भतेषुयुष्माद्वघेषुते विस्तु

#### कमसंदर्भः

अहो आश्चर्यम् । किमाश्चर्यं तत्राह् । नृपाणां मध्ये वयं पागडुवाः महत्त्वमानां सक्तामनुश्रहे । कि विह्नियं खावण्डाः प्रकृतिकाः सन्तो धन्युतमा जाता इति देखः । खतस्तु नृपाणां कुलमीदरामिलाह् राज्ञामिति । ग्रेता गर्ग कुण्यास्ताहलक्ष्मणं कृत्यताः विद्या ॥१३॥

त्रश्रीदमाश्चेषिमत्याहः । तस्यैव भगवद्दस्य ह्यालानां विशे गणानीयस्व वि मभाभीकः ताहरामाह्यापियाम् विशेषि मे मभाभीकः ताहरामाह्याप्य विकास विकास । यदं स्व प्रदेशित विशेषाम् स्व विकास । विकास विकास विकास । विकास विकास । विकास विकास विकास । विकास

च श्रीशुक्तदेवमुपलस्य अपि मे भगवान् श्रीतः इत्यादिद्वाभ्याम् ॥ १४ ॥ विकास विकास । श्रीक विकास । श्र

## सुर्वाधिनी ।

प्रथमतः खहत्तांतं कथयन् श्रोकद्वयेन ऐहिकामुध्मिकं च साधनद्वयं प्रार्थयतेशतंद्वयं मग्रवत्कृता महत्तकृता त्रकाषि महत्त कृतायाहेतृत्वात प्रथममाहं अहाँदित आश्चर्यवयमित्श्राघायांधन्यतम्। धनुपुरुषार्थमिति श्रन्याः त्रवाहमहत्त्वायः सर्वपुरुषार्थेकारितः मन्त्रव्याः सर्वपुरुषार्थेकारितः त्रवाह महत्त्वमित्रगवदंतरंगाः अनुप्रहृत्याः मन्त्रश्चपुरुषार्थेकारितः त्रवाह महत्त्वमित्रगवदंतरंगाः अनुप्रहृत्याः वर्त्वाह्ययाः त्रवाह महत्त्वमित्रगवदंतरंगाः अनुप्रहृत्याः वर्त्वाह्ययाः त्रवाह महत्त्वमित्रगवदंतरंगाः अनुप्रहृत्याः वर्त्वाह्ययाः वर्षाह्ययाः अनुप्रहृत्याः वर्त्वाह्ययाः अनुप्रहृत्याः वर्षाह्ययाः अनुप्रहृत्याः वर्षाह्ययाः वर्षाद्वाह्ययाः वर्षाद्वाह्ययः वर्षाद्वाह्ययाः वर्वाह्ययः वर्वाह्ययः वर्वाह्ययः वर्वाह्ययः वर्वाह्ययः

एवंतर्षांकृपासुक्त्वा सगवत्कृपामाह तस्यैविति राह्यांकुलेकस्य चित् गर्ह्यकर्मनभवदिति अहंतुस्पव्यवस्तस्य गर्ह्यकर्मस्यामित्त्राप्य घरम्बेवलं पापक्पस्य पूर्वेक्षत्रियत्वमपि अधुनाकुलांगारत्वाद्वयत्वमेताहरास्याधित्वेदसूलः द्वित्रशापक्षप्रभगवानेवज्ञातः तस्यैवति भग वतस्त्रधाभवनेहेतुः परावर्षशहित अन्यधापरावर्शपवनस्यात् अन्यधाअवद्गृत्यस्मदादांनामनुद्धारकः स्थात् ननुशापस्य कृथंभगव-द्वत्वत्रवाह निवेदसुल्हात्वेषाग्यसूलः षड्गुणानांमध्यप्यवसानक्ष्यस्य वैराध्यस्यत्वाहान्यो सूल्भवित्रमहेति अतपक्षत्राद्धिज्ञद्वाणां इत्यवं निवेदासुल्हात्वेषाग्यसूलः षड्गुणानांमध्यप्यवसानक्ष्यस्य वैराध्यस्यत्वाहान्य सूल्भवित्रहेत्वापि इत्यवं निवेदास्य विराधिक्षत्रप्रसानक्ष्यत्वाहार्थाः सूल्यास्य विराधिक्षत्रप्रसानि विराधिक्षत्रप्रसानि विराधिक्षत्रप्रसानि विराधिक्षत्रप्रसानि विराधिक्षत्रप्रसानि विराधिक्षत्रप्रसानि स्थापिति समयेऽपिश्रविद्याभागवः नतस्यतत्त्वप्रसाक्षाद्वितन्यायात् अतः कास्यासानाम्यक्षेत्रत्वप्रसानि सर्व समर्थत्वात् भगवतः तत्राह यत्रप्रसानक्षति येषुण्यदेषुप्रमकः शीघंहद्यभयभवधन्ते नतुभया परित्रामतोभयनिष्टस्यये तथाजातिमत्वर्थः ॥ १४॥

प्तमुभयोरुपकारमुक्ताइदानीं स्वक्तं व्यमाह तमोपयातमित प्रवसुपकारविषयंवामामुप्यातंभव स्वरणमागच्छन्तं प्रतियंतुकानंतु हे विप्राः । विशेषणपुरकाः मामपिपुरिप्रवंतीतिभावः दे वतारुपागुङ्गाचमांशरणागतंज्ञानातुहे विप्राः । गङ्गायाजलप्रकृतित्वंलोकस्विक्रमिति भनेनशरणागतेरयुक्तत्वात्वेवीत्युक्तं भक्त वर्गोदिकशरणागतिः नभगवन्मागिविद्यिनीननुर्विद्यापविमोश्राधिप्रार्थयसेनेत्याहर्दशे भगवतिभृतं विद्यांगातिः विद्यांगातिः विद्यां व

प्रविमेदिकप्राधीयत्वावामुध्मिकं प्राधियतेषुनश्चेति मुक्तिक्तुनसंभावितानापृक्षिता राज्यरसमिकरसयोग्वन्यत्रवेळक्षरायाविकम्धानेश्च यत्वाद्य भगवित्रवित्रेवास्तुनराज्याविजन्मत्ववद्रयंभाविषद्वज्ञातिगुणिकियासुनक्षोपिक्षः अतः यांग्रामेव सृष्टिसुप्रयामित्रभत्रभगवित्रिति रस्तुनवुसर्वस्यापिभगवत्त्वातपुत्राविषुरतिः सिक्षेचतद्रलंशाधनयत्यत्वाद्वदेशकालवस्त्वपरिच्छिकेपसादद्यत्विष्ठतस्यारते।कारणमपि प्रार्थयतेप्रसंगभ्चेतिअन्ययासकद्दतिक्षित्तमुत्पाद्यकार्यायमाक्षिण्तसाधनभुपक्षिक्तंस्यातनचसर्वदेवरतिःप्रार्थ्यारतेभेनाधर्मत्वेतस्युर्गिके

#### ः सुवोषिनी ै

हादि निर्वाहोऽपिनस्यात् गर्गातीप्रमाणास्य व्यवस्थितस्य व्यवस्थितस्य व्यवस्थितस्य स्थानात् व्यवस्थित स्थाना स्थाना

अविश्वनाथचकवर्ती।

्र वाह्यापाल ६० निश्चेष्या अवसाननात एवं पतितपावनत्वेष्यापतार्थे प्रावरेशो अस्मानेव शिकान अने शार्थिक पूर्व कारमामित्यर्थः । पुस्त्वसार्थम् । भवद्विधसूहतसुमागमाद्गुमीयते अव तीव्यया यत्र परावरेशे प्रसक्त आसक्तो जन आशु श्रीव्यम्य स्यासिल कृति ॥ १५ ॥ । तोन शार्थिक मा मा । ति शरमागद मृतियन्तु जान्तु । देवी देवताक्ष्पा गङ्गान्य प्रत्येत । विशेष्ट श्रीव्य

कुनक्ष पुनराप यां यां कृषि है में प्रामिति कर्या के जात रिति तृद्धकेषु प्रकृष्टः संगः सन्वेजीवेषु मैत्रीति महाविक्तत्रयं भूयात् इति ब्रोक्य प्रणामकाह नम इति । यहा ब्राह्मकार्वकानार्यकात् जिताप आहे ब्राह्मणेश्यो नमो भूयादिति वाव्कितचतुष्ट्यंच ॥ १६ ॥ '

#### सिद्धांतप्रदीपः।

सिद्धान्तेस्ववृत्तस्वेनतद्गुत्रहभाजनमात्मानं स्वाऽऽतमभाग्यनिवेदयन्नाह् अहोइति नृपासांवयंथन्यतमास्रतिभाग्यवन्तः तञ्रहेतुसाह् महत्त्वस्मिवद्भिर्तुत्रहर्गायम्तुत्रहीतंयोग्यंशिलंबतं वैद्याते महत्त्वसम्बन्धन्यराजकुलंवयुक्तामत्याह राज्ञांकुलं ब्राह्मसामविद्धानांसाह्य स्वाचात्र पादप्रकालनतायात् भारात् दूरातः विस्पृष्टदेवेनापनीतिवसुक्षीकृतंचेत् वतित्वदेतिविष्क्षक्रमंभवति विस्वानिव्यक्ष्मसम्बन्धाः मृत्तस्रवति ॥ १३ ॥

महत्तमानुब्रह्णात्रत्वमातमा उत्तत्वाद्विज्ञापोऽध्यनुब्रहायेवजातहतिवदन्भगवदनुब्रहणात्रत्वदशेयति तस्येतितस्यतद्भगानिष्ठमुनि स्कथमृतोरगनिष्ठपक्तिः अतप्वाघस्यपापवुद्धेः अभीक्षांपुनः पुनः गृहेषुव्यासक्ति चत्त्रयस्यस्वात्मभावापत्तयपरावराणांपरे अवरयेष्ठयस्ते षात्रह्यादीता यहापरे केष्वरचेतिद्वंद्वस्तेषांत्रह्यादिपिपीलिकातानामाशानियता शिक्षणाः द्विज शापरूपः द्विजशापप्रवर्तकोऽभूत् यत्रयस्मिन् परावरेशेष्ठसक्तोऽभियतत्वापिसाधनंनिवेदमाशुशीव्रधत्तिविष्णाभवति यतः स्वयमपिनिवेदमुलः निवेद्रोमुलंब्राप्तिसाधनयत्रसः स्वात्म मावप्राप्तयेविकाग्यार्थशापप्रवर्तकोऽभूत् ॥ १४॥

मुनीन्त्रार्थयते त्रिमितिद्राभ्याम् हेविष्ठाः। भवतः मामुक्तविष्ठम् ईशेश्रीकृष्णिवृत्वित्तमामुपयातंशरणागतप्रतियंतुज्ञानंतु देवीगंगाचप्रत्येतुः विजनापमुष्ट्रहेत्स्य साक्षात्कुहुकः वंचकः सन्वादशतु यूयमलमत्यर्थविष्णागिषाः कथाः गायतक्षययत ॥ १५ ॥

किचमग्रवित्रितिक्षिक्त स्तदाश्रयेषुभगवानाश्रयोयपातेषुप्रकृष्टः संगश्चभूयात पुनश्चयांयांसृष्टिमुपयामितस्यांसृष्टीजन्यनिमहत्सुमेश्रीहि तामुवर्तित्वश्रम्तु संकृष्णिसद्धियमुनीन्त्रगामितिक्षेत्रभोनमः॥ १६॥

## भाषादीका ।

राजा बोले अहो हमलोग धन्य हैं जोकि महात्माओं के अनुब्रह पात्र होगये नहीं तो राजों का कुल ती ब्राह्मणों के पाद शोच जल

में अपराधी हूँ निरन्तर गृहादिकों में आसक चित्रवालों हूँ तिस मेरे कूँ ब्राह्मण शाप वैराग्य का हेतु हुआ घर में आसक पुरुष बीब्रही भययुक्त होता है ॥ १४ ॥

हे वित्रो! में शर्गागत आया हूं सो देवी गङ्गाजी और आप लोग भगवत चित्त वाले मेरे को जानो ब्राह्मण का भेजा कपटी तक्षक बैदान करों आप लोग विष्णु क्या का गान करोगा १५॥

किर भी अनन्त भगवान में तथा तिनके मको में महर्व पुरुषों में मेरा लग होंय जिन २ जन्ममें में जीउं सर्वेष मकी से मित्रता होय बाप ब्राह्मणों को नमस्तोर है ॥ १६ ॥

l n Theimme

ારિક ા પુરુષ્યાસા

इति स्म राजाध्यवसाययुक्तः प्राचीनमूलेषु कुशेषु धीरः। उद्गार्थों दक्षिणकूल श्रास्त समुद्रपत्न्याः समुतन्यस्तभारः॥१७॥

। १९ वर्गा की उप्**एवश्चरतस्मित्ररदेवदेवे आयोग विष्टे** दिवि देवसङ्घाश्चर

प्रशस्य भूमौ व्यक्तिरन प्रस्तेर्मुदा मुहुर्दुन्दुभयइच नेदुः॥ १८॥ महर्षयस्तं समुपागता ये प्रशस्य साध्वित्यन्मोदमानाः।

उचुः प्रजानुष्रहशीलमारा यहुत्तमःश्लोकगुगाभिरूपम् ॥ १६॥ न वा इदं राजिषवर्य ! चित्रं भवतस्त कृष्णां नमन्ववेष्

ेय अध्यासनं राजिकरीटजुष्टं सद्योः जहुमेगवत्पश्चिकामाः ।भिष्या

#### ं के के कि अधिरखामी हो।

अध्यवसायो निश्चयः। प्रागग्रेषु कुशेषु आस्ते स्य । खसुते जनमेजये न्यस्ता आसी महा न्यक्रिका दिवसंघेट्यांटिताः नेदः॥ १८॥ ा मुद्दा न्यक्तिरन्। देवसंघैठ्यदिताः नेदुः॥ १८॥

्रभुकानुग्रहे शील सारो वलंब येषास । उत्तमः खोकगुणैरमिरूपं सुन्दुस्मित् ॥ १० ॥ अवत्रस्त पार्वहर्विद्येष्ठ । य जहिति युधिष्ठिराद्यामेप्रियेशा ॥ २०॥

#### श्रीवीरराघवः।

इतीत्यंतिश्चययुक्तोराजाकीरः खद्धतेजनमेजयन्यस्तीनिहितीराज्यमारोचेवतयाभृतः स्पुरिपत्यार्गपायादक्षिणकुलेदक्षिणतीरप्राची नक्लेषुप्राचीनाश्रेषुकु रोष्वास्तेसमञ्जावष्टवान् ॥ १७॥ 👙

इत्थंतस्मित्ररदेवानांदेवेपरीक्षितिप्रायोपविष्टेसतिदिविसर्वदेवसंघाः तंप्रशस्यप्रस्तुयुग्धार्यस्त्रे कुसुमैः धुनः पुनर्भूमै।व्याकरन्द्रंदुस्य **अनेदुर्द्**घ्वनुः ॥ १८ ॥

वसमागतामहर्षयस्तेसर्वेउन्तेमः श्लोक्याः प्रशंसनीयागुणास्तैसभिरूपंराजान्प्रशस्यसाधुसाध्वीत्यनुमोद्धः अहत्। सहा यद्यतस्ते प्रजासनुप्रहण्वशीलंखभावः सण्वसारीयेषांतेतथाभूतत्वात्प्रशस्यानुमोदमानाः ऊर्ह्वरित्यर्थः ॥ १९४॥

उक्तिमेबाहनबाहतिहेणजिबिवर्य ! नित्यंश्रीकृष्णमनुवतेष्वनुवर्तिषुभवत्स्वदेविचित्रंनवैनुभवतिकितत्येभवति भगवतः पार्विसामीर्थः कामयमानाः सर्ताराक्षां किरीटेजुं इसे वितमध्यासनसार्वभीम सिहासनसद्योज हुस्तन्यज्ञिरत्येतत् ॥२०॥

#### श्रीविजयभ्वजः।

क्षुत्रगंगायां स्थितहतितत्राह हित्सेति खसुतेजनमेजयेन्यस्तोनिहितोराज्यमारीयेनसत्योक्तः शत्युक्त प्रकारेगान्यमारीधात्यसन योगयुक्तः निश्चययुक्तीवा राजापरीक्षित्समुद्रपत्न्यागगाख्यायानद्याउदक्पविक्वदिक्षिग्राक्तिसम्प्राप्तादास्यानाभेषुदुर्शक्ष दङ्मुखंशास्तद्दयन्वयः मृत्युचितारहितत्वाचीरहत्युक्तंकूलशब्दस्यलक्ष्मार्थिमनाश्चित्यमुख्यार्थागीकारेभारतहाः स्थाद्यथारागपदेश तीर्रलक्ष्यते क्लपदेनापिजलेलक्षणोपपत्तेः आस्तइतिलड्डप्येवंविधिविशेषयोतनार्थः॥१७॥

श्वेतच्छत्रचामरादिनरदेवचिन्हंनकेवलंतावदेव किंतुकेय्राद्धितरस्यत्यक्त्वा अर्भ कृष्णाजिनादि मुनिवे

व्यक्तिरन्वर्षितवंतः॥ १९॥

यदुत्तमश्राकस्यहरेर्गुगानुरूपंगुगाप्रकटनानुकूलंतहषयऊचुरित्यन्वयः प्रजानुब्रह्मंतरेगान्यस्वभावोनास्तियेषांतेतथोकाः॥ ३०॥

#### **क्रमसंदर्भ**ः

मुल्मन्तः ( कुलमन्तः ) अन्तुक्षाग्रेऽपि । तस्मालक्ष्याया प्रामग्रेश्वित्येव स्याख्यातमः ॥ १७ ॥ प्रस्तैः प्रस्तानीत्यर्थः ॥ १८ ॥

मन्दरमिवेति दीकायामियशब्दी वाक्यालंकारे॥ १९॥

## द्भामारंदर्भः । काष्ट्रामान्या । विष्

ब्याख्येया। तत्प्रीतिविद्योषातिशयवतां हि तेषां तत्कृतार्तिभरेगीव तत्रस्पूर्तोव भगवत्पार्श्वकामा इत्यन्न तत्सामी प्यकामनापि प्यतृप्तौ सत्यां तत्सामीय प्राप्तेः तत्प्राप्तिविद्यातकसंसार्त्रन्धनत्रोटनस्य चप्रार्थनं रचयते पितृमात् प्रीत्येकसुखिनां विदूरवद्धानां वाल कानामिव। पवमेवोक्तं श्रीप्रहादेन-त्रस्तोऽसम्यहं कुप्रावृत्स्वित्यादी तेऽग्रिसूलं भीतोऽपवर्गम्यणं ह्वसे सदा तु इति॥ २०। २१॥

# ' सुवोधिनी 1

महतांप्रियापात्रप्त, अपराध्यमनेहेतः तस्मात्त्वनिष्प्रत्यूहामसाधनामग्वतिरतिःप्राधितात्वासमितिमुखचेष्टामुपलभ्य पवमेवमविष्य नित्मर्यवसायनिनिधि रे रात्रुद्वाह दतिति स्मेतिप्रसिद्धसर्वेरेवकातमेवति निधित्यस्यितहति अध्यवसायोतिश्चयः भूमौसर्वत्रराक्षसानां क्ष्यात्वनतद्याचेशोमार्थः त्वातं चुनिष्पविषः विस्तात्वेदवाशिकारिगाइति पितृत्वन्यात्रत्यर्थे दवत्वसिद्ध्यर्थे पूर्वाप्रेषुदर्भेषूपिवष्टः प्तत मुलीन बुले दि जगरे नाति ए शिष्टा कि मानि मुलानियेषांतक्षकादि कुत्रस्यामावायाह धीरहतिउदक्मुं खोगगायाउदेक्म् सः विश्वः रुट्येयोगः विमुद्धान्य हाति इदानीसग्रवासिष्ठत्वार्तः नान्यवहिष्टिरितिसगत्रचरणारविद्दोदकत्वेपरित्यज्य भू श्यमात् त प्रतीद् क्षिमाक् लेस्थितामग्रवंतं नासमानयेत् इम्वातत्रनयेत् ॥ १७॥

त्रस्यसंद हो निवासितः नगद्वत्वादिन्द्रेत्त्यता अनेनैव्मिलीग्रुवेकुंठंगमिल्युतीति महाराजाग ेदेववास्यातिने के बादयामासुः च्यागिटन्यान्यपितत्रोत्स्वीजातदृत्य्येः सनेनतस्यशापादि

ाजीतः प्रजाः साम्रभग् । 🐯 यक्ति सं जन्यप्रवर्ताः येखाह उपानिकारणान्य श्राम्माप्रवेगायि

मित्र राज्ञियां सपर्यति द्वितपूर्कत्वेनसम्गिताः तेऽपिप्रशासां कृत्वाविप्रशास्ति निर्गमिप कृतत्ववाषानिवारितः तेषांकथाकथनेहतुमाहप्रजानुप्रहश्र्लस्यराहति तेषास्प्रणामिते त्रभूतवातदेवसारार्थेषामननतेयदानुग्रहेनकुर्युः निभ्नाराण्यमवैद्युरितिस् वितिकचपरम मन्द्रीकगुगानुरूपमिति उत्तमश्रोकस्य गुगाषु अवगार्थमभिक्षः योग्यः अथवा-तथापतह शैनोर्थमपि प्रथमपक्षेमुर्क् ऽधिकारीति श्रोतृत्वात तस्य प्रशंसनंकर्भव्य

मित्यर्थः ॥ १२ ॥ प्रशंसनमेवाहुः नवाहति हेराजिषिवर्य। इदंसर्वपरियायेन भगवत्त्वर भवत्स् चित तत्रहेतुः क्रणासमज्जनति संवोधनेनमर्यादायाः वरमसीमास्चितां कृष्णामनुब्रत्येष्विति यथानगवान् सर्वकार्यकत्वाप्रचलितस्तदीयरिपतथा कृत्तेव्यमिति तृत्रनिदर्शनं भवतापितामहाः येपांडवाः अध्यासनं सिंहासन् राजिकरिष्टेः जुष्टसार्वभीमासनमप्रतिद्वंद्वभगवत्पार्श्वगमतेच्छयासद्यप्यज्ञहुः तथात्वयापिभगवत् पार्श्वगं तर्व्यामित्यर्थः॥ २०॥

#### श्रीविश्वनायचक्रवत्ती ।

समुद्रप्रक्या गंगायाः ॥१७॥

ब्याकरन वृष्टिमंकुर्वत । नेतुः स्वयमेव् ॥ १८॥ थकोतः प्रजानुमेहे शीलं सारो बलंच येषां ते। तस्मान उत्तमः श्लोकस्येव श्लोकष्णस्येव गुणौरशिकपंसुन्दरं राजानमृत्रः। यदा यदु-त्तमः श्लोकगुर्गाहित्वपं भवेत तदेवोचुः॥ १९॥

ये यशिष्ठरायाः ॥ २०॥

#### सिद्धांतप्रदीपः।

इत्यम्यान सार्ययुक्तानिश्चययुक्तः स्वसुतेजनमज्यन्यस्तोराज्यसारोयनसः प्रागप्रेषुकुरोषुआस्तरम् ॥ १७ ॥ वनतिसम्तर्गाज्ञित्रायोपनिष्टेसाविदेवसंधास्तंप्रशास्यप्रस्त्यप्रस्तेः स्यक्तित् देवसंघेषादिताः युदुभयोऽभिनेतुः ॥ १८ ॥ प्रजातुर्गहेशीलेखेभावा सुप्रवसारायेपतिमहर्षयः उत्तमश्रोकानांथेगुगास्तेरभिक्षपेसुंदंरगजानंप्रशस्यसाधुसाध्वत्यनुमोदमानाः अनुः १९ भगवतपार्श्वकामाः भगतसामीप्यकामाः जहस्तस्य अ। २०॥

धीर राजा इस प्रकार निश्चय करके राज्य भार पुत्र पर रखकर श्रीगंगा जी के दक्षिण तटपर पूर्वाग्र कुशों पर जन्म मुख होकर

इस प्रकार उस राजाके वेटने पर देवस मूह ने अकाशमे प्रसंशा करके भूमिमे पुण्य वर्षा किया और बुंदुमि वजने लगे ॥ १८ ॥ जी महर्षि लोग उहाँ आयेथे वे सब साधु साधु शब्द से प्रसंसी करके प्रजाक छपा करने वाले उत्तम स्रोक गुगाके अनुक राजा

हे राज विवर्ष' कृष्ण के अनु वर्त न करने वाल आप लोगों की यह वात आधर्य नहीं है जो आपके पूर्वजलांग अगवत्याओं काम नावाले होकर राज किरोटों से सेवित सिहासमुद्ध शीव्रही छोड़िये॥ २०॥

सर्वे वयं तावदिहास्महेऽथ कलेवरं यावदसौ विहाय। बोकं परं विरजस्कं विशोकं यास्यत्ययं भागवतप्रधानः ॥ २१ ॥ **त्राश्चत्यिगगावचः परीचित् समं मधु**च्युद्गुरु चाव्यलीकम्। श्राभाषतैनानभिबन्य युक्तः शुश्रूषमागाश्चरितानि विष्णोः॥ २२॥ समागताः सर्वत एव सर्वे वेदा यथा मृत्तिभराश्चिष्षे। नेहाय ! नामुत्र च कथनार्थ ऋते पराच्यहमात्मशीलम् ॥ २३ तत्वच वः पृच्छ्यमिदं विपृच्छे विश्रभ्य विषा ! इतिकृत्यतायाम् ॥ सर्वात्मना चियमाणेश्च कृत्यं शुद्ध तत्रामृश्ताभियुकाः!

ं भीधरस्वामी।

षरस्परं संमन्त्रये बाश्चरय आकर्ण्य श्रयागां कोकामां। जर पराज्यह वि

त । पर श्रेष्ठं लोकम् । तत्र हेतुः वि रातझम्यम् मधुच्युत् वमृतसावि सत्यलोके वेदा यथा मुप िसर्हि स एवार्थः स्या

पृच्छा प्रष्टम् । विश्वक्र विशेषतक्ष स्नियम सीः तथा शुक्

रक्षाज्ञानमुक्त्वाऽयमिष्रभाषुः सर्वद्तियाकाः। गवनायवप्रधानां निवनायस्यसोऽसीना जाकलेपर्वितायविरजस्केशुक्रसः धान्यविको भागरस्य अक्ष्रग्रम् पहलपाप्मत्वाविगुगाएकप्रासुभावप्रशंपरलाकाष्ट्रभविभूत्याख्यंयास्यतित(वत्सर्ववयमिहेवराष्ट्रः समिधायेशस्महेकाली

यत्समंवैषम्यरहितमसृतस्राविगुर्वोद्यायगंभीरमञ्यलीकंनिष्कपटंचमुनीनांवचनमाकगर्येपतान्युक्तान्हितानात्महिताचरग्रोशिकामृषीताम् 416 # 28 H नंखाविष्याभिश्चरितानिश्रोत्कामः परीक्षिद्रभाषत्॥ २२॥

तदेवाह समागताइति तदेवव्यनिकसमागतानांवः परातुप्रहमात्मश्लिवनाइहामुत्रचलोकेऽथः प्रयोजनंकिश्वहिपनाहितहिपरेषुमार

शेष्वनुमहरूपमात्मशीलंखस्वभावंखवृत्तंवाविनाऽन्यथागमनकारगांपृच्छामिनास्तिहीत्यर्थः॥ स्रेड्णाः बोयुष्मान् विश्वक्यविश्वस्यतिकत्यतायामितिकते स्पतामा प्रदर्शियं प्रस्थामा पृच्छामिकसैन्यन्यापारप्रकारहतिकत्यतातस्यांनिमिसभूतायामितिकसेन्याताझानार्धप्रष्टव्यपृच्छामीत्यर्थःपृच्छांद्रशायस्तरस्यक्षिम्यक्षयः यतत्याद्दम्यमागौर्भम्भेभिजेनैः सर्वोत्मनासर्वप्रकारेगाकरगात्रयेगाकर्तन्यंशुं समृत्यनित्मसंचयमत्कर्मतत्राभियुक्तार्दासम्बन्धारेग्रहस्य युकाः संतोय्यंम् शतिवमृश्यलपदिशत हेऽ भियुक्ताइतिसंवोधनवा ॥ २४॥

#### श्रीविजयध्यजः।

अध्यासनिसिद्दासनंराष्ट्रांमंडलपतीनांकिरीटैर्जुष्टंसेवितं कालक्षेपराहित्यधोतनायः सद्यः बाब्दः॥ २१॥ बसावयं विशोकंनित्यनिर्दुः सं कुतः विरजस्कम्अशोमनेशोमनाष्यासंबुद्धिदहितंकुतः परंत्रिगुगातीतंपूर्यो य कता वर्णजन्मकरामक

खरहितंहरियास्यतीत्यन्वयः ॥ २२॥ मधुअमृतं च्युत्श्रवणासुसमतपवगुरोब्राह्मणासुमारस्यशापं व्यलीक्षयति अनृतं करोति फलतइति गुरुशापव्यलीक्षय ने विवन्

परिद्वारीलक्ष्यते नतुतक्षकदंशनामावः तत्कृतदंशनदर्शनात् ऋषिगगावच्याभूत प्रतान्ऋषीनाभाषतेत्यन्वयः॥ २३-॥ त्रिपृष्ठेसत्यलोकेशीलसमाधाविति धातोः परमात्मसमाधिमंतः बोयुष्माक्रमिहलोकेशयवाश्रमुत्रचपरलोकेकश्चनार्थः साध्यंप्रयोजनंना स्वीतियतस्ततः परानुप्रदक्षरगास्त्रमाचात् वायुष्मानिमंप्रदनिविपृष्ठिपृष्ठ्यामीत्यस्त्रयः किकृत्वाद्दीतकृत्यतायामित्थंकतेव्यतायांविप्राविदिष्टमा निनः अकुटिलबुस्यः सात्विकप्रकृतयश्ति विश्वश्यविश्वस्यकोऽसावितितत्राह् सर्वात्मनेति तत्रकृत्यशतेषुत्रियमाग्रीः पुरुषैः सर्वप्रकारम शुद्धंतिदींपंपुरुषार्थपर्यवसायिक्वत्यंकर्तव्यंचामियुक्तामाग्रहणुकास्तात्पर्योपेतामानृहातमालोचयत आलोक्यवास्माकंश्रूतेतितुराच्यः २४।१६ इतिश्रीप्रयमस्कन्धेविजयध्वजदीकायामकोनविद्योऽस्यायः॥ १९॥

- क्रेससंदर्भे : 12 श्री प्रशासिक के कि

- %सस्वः

मधुच्युत् मनोहर्रशब्दम् । ,गुरु महतार्थेन युक्तम् ॥ २२ ॥

अर्थः प्रार्थनीयं वस्तु । परानुग्रहश्च न विचारपूर्वक इत्याह आत्मशीलुमिति ॥ २३ ॥

विश्रभ्येति । कृष्णाङ्घिसेवामेवत उपदेश्यन्तीत्यभिप्रायातः । शुक्रमिति कनिष्ठमञ्चमसाधनिमिश्रतारहितं सर्व्वोत्तममित्यर्थः । तृष

कृष्णाङ्चिसेनारुप्सेवेति गृहोऽभिप्रायः ॥ २४—६१ ॥

#### सुवोधिनी ।

त्रिमेन केंप्येतोगुद्धाभिसंध्रानेनाद्धः सर्वेनयमिति अस्मामिः खोक्तंनिनीश्चगतेन्यं तानतस्थानंदयशिक्षेत्रतेनाः शिञ्चिति तानदिवेनासमहस्थाम्यामैः किञ्चत्वाकुत्रगमिष्यतीत्याकांक्षायामाद्द्र अधितिसमदिनानसरकेन्यरं वि-त्रिकः परिलोक्षेट्याप्रिनेकुगठं यज्ञरजः संबंधएननास्तितक्ष्टेतुः आगनतेषु प्रधानः आगनक्षः प्रभानयस्यति

> भ्यम्भयासर्वेसंदेशनिवारग्रीयाद्यति तद्यं ६ एलं आस् पर-संतिषुरुषार्थचतुष्ट्यहेतवः तत्रहस् तति अतेल्यक्षणस्मागुरुचअयमे स्यास्य वित वस्तिस्तिस्तिस्तिस्यिक्षणताय्वेसं

शास्त्र तदाह श्राश्चरयति

े तुरुषतयाहितांचतन्

श्रास्यामहति सर्वहित्

(तेषांचचनश्चरवापति

ताः व्यामभक्तमञ्जून हेव निर्यात

्यम् भर्ताहः वैदेविषित्र -

क्रांकि । जन्म

## भीविश्वनाथचकवत्ती ।

राक्षीड्यवसार्य श्रुत्वा खेषीमध्य यवसार्य राजान श्रुवियन्तः परस्परं सन्त्रयन्ते सब्वे इति ॥ २१॥

समें प्रस्तातक्ष्व चयमारमहे हिति। महिन्युत अमृतकावि भागवतप्रधान इति। गुरु गम्भीराधै विरजस्कं लोकमिति। अन्यलीकं सत्य लोकं याद्वातीति। ऋषिगगाय चक्रविष्यम आश्रुत्य। विरजस्कं लोकं भगवलोकमैवेति पूर्वेश्रोकोक्ताभ्यां भवतस्विति भगवत-पार्थकामा इति पदाभ्यां व्याख्येयम्॥ २२॥

त्रयाणां लीकानाम उपरि पृष्ठे सत्यलोके जानातिशयतामुक्ता कपालतातिशयतामाह नेहेति। परातुश्रहं विना । तहि स पवार्थः

स्थात न प्रिक्षित्र विष्टु कि माकारः स चिकीर्षितव्य इति प्रच्छामि । प्रच्छचं प्रष्टुमई तत्रैवाध्यवसायार्थमिति भावः । विश्वप्य तत्रैव में दिश्वार्थन भाविति जानीतिति भावः । इतिकृत्या प्रवृंकर्त्तव्यास्तपोयोगज्ञानाद्यस्तेषां भाव इतिकृत्यता यस्यां सत्यां विश्वप्याधानिक ने अप्राप्ति भावः । विश्वप्याधानिक ने अप्राप्ति भावः । विश्वप्याधानिक ने अप्राप्ति भावः ॥ विश्वप्याप्ति भावः ॥ विश्वप्ति भावः ॥ विश्वप्याप्ति भावः ॥ विश्वप्रपति भावः ॥ विश्वप्ति ॥ विश

#### सिद्धांतप्रदीपः।

्रिह्य क्यास्त्राह्यभाद्व । २१॥ द्विह्य क्यास्त्राह्यभामित्रि ॥ २१॥

प्रीक्षित तेत्रांमुर्तीनां सममाविषमम् मधुच्युद्मृतस्तावि गुरुतंभीराद्मायम् अन्यलीकोनिष्कपरम् वचनमाश्रुत्याक्रार्ययुक्तान्समाहिता नश्चित्रं अभावतः॥ २२॥

त्रयागां लोकानां पृष्ठेसत्यलोके यथावेदामृतिष्यसम्बंति तथासर्वज्ञाः यूर्यसर्वतः सर्वोऽयोद्धिरुषः मदनुष्रहार्थसर्वेगवसमागताः खार्थः निरपेक्षपरार्थपरत्वंतेषां हर्शयति परेष्यनुष्रहरूपमात्मद्यालंखकृतमृते इद्दलोकेऽथवामुत्रलोकेमवतां कश्चनार्थः कोऽप्यर्थः प्रयोजनंनास्ति १६

digration

तत्राभवद्गगवान् यासपुत्री यहच्छ्या गामटमानोऽनपेचाः। अलक्ष्यालङ्गो निज्लाभतुष्टी वृत्तर्ग वाले रवधूतवेशः ॥ २५ ॥ तं ह्य द्वर्षे सुकुमारपादकरोह्नाहरकपोलगात्रम् चार्वायताचो वस्तुल्यकर्णासुभवाननं क्रम्युसे जातकाठस् ॥ २६॥ निगृहज्ज्ने प्रभुतुङ्गवक्षसमावर्तना मि वलिवकुण्डास्य । दिग्रम्बरं बक्रविकार्शकेशं प्रलण्यवाह्यं प्राम्पराधायायस्य ॥ २७ ॥

इयामं सदापीच्यवयोऽङ्गलक्ष्म्या स्रोगाां मनोहां रुचिरस्थितन प्रतियतियतास्ते सानयः स्वासनेभ्यस्त्रहत्त्वाहा अपि गृ

सिद्धांतप्रदीपः। 🗥 🏌

यतीभवंतः संवेकाः पर गतना स्वाद्यासम्बद्धाः सन्। वस्यमार्गापुरुक्त्येष्ठण्यः सन्ति स्वाद्यानासर्घावस्थासुविद्योषत्यम्यस्य प्रमुख्यः अरु ्श्रे प्रसन्तः शीवसेनासर युन्दर्भ विद्यानीसंघावस्थासात्र्वयः प्रविद्धाः विद्यानीसंघातः॥ २४॥ कु रालायुर्यावस्थात

भाषादीका ।

मां गुहेषु व्यक्ति

ष्टः तद्पह्याः सन्।

त्या सन् मन्यरण्येच जातमिति

ऋषि लोग आएस में घोले यह भागवत प्रधान इस देहकूं त्याग कर जेवतप अ शोकरहित वैकुंड लोककुँ जायगा तथ 🕬

प्राप्त सन आज इहां ही पर वैंट हैं ॥ २१ ॥ भनिश्चित जी सुवियों के साम अल्हर में भीट किया है किया मिसा सिया की एक से सुवियों के संस्त करके.

बाल ॥ २२ ॥ हे मुनियो ! आप छोग सब दिशाओं से आये ही जैसे वहा छोकमे मूर्तिमान वेद ६ तैसे आप छोगही आप छोगों की उउछा कमें वा क्षा के केवल दयालुता के विनादुसरा कोई प्रयोजन नहीं है ॥ २३॥

निसासे हे विशो कर्तव्याता में आपका विश्वास करके आपसे प्रष्टि पृष्टता हूँ परनेवालों कूँ जो कर्तव्य होयसी आपयुक्त लो ही विकार करके कहोगे॥ २४॥

## श्रीधरखामी ।

तत्र तेषु योगयागतपोदीनाविभिर्विवदमानेषु सत्सु यहच्छया गां पर्यटन् व्यासपुत्रस्तत्राभवत प्राप्तः। न लक्ष्यमाश्रभादिलिक् यस्य अवध्तः अवक्षया जनस्त्यको प्रस्तस्येव वेशो यस्य ॥ २५ ॥

विमित्यादीनां पत्युत्थिता इति तृतीसङ्खोकनान्वयः । द्विगुगान्यधौ वर्षाता ग्रस्थ । सुकुमारी पादी करी कर वाह मिनी कपोली गात्रश्च यस्य तम् । चारुगी आयते च बह्मिगी यस्मिन् । उन्नता नासा यस्मित् । लम्बन्खादिवेषभ्य विनो दुर्गी केर्गी धिस्मिन शोभते सूबी यस्मिन् । एवम्भूतमाननं यस्य तम् । कम्बुद्देखात्रयाङ्कितः सुष्ठु जातः कण्टोत्यस्य ॥ २६ ॥

क्राटस्याश्रामागे स्थिते अस्थिनी जञ्जाि मांसेन निगृहे जञ्जाि यस्य । पृश्च विस्तीर्गी तुङ्गमुष्रतं वक्षो यस्य । आवर्षवक्षामियस्या विजिमिस्तर्थेक्निम्नरकाभिवेल्गु रम्यमुद्रां यस्य । दिश एवाम्वरं यस्य । वक्ता विकीगाश्च केशा यस्य । प्रस्ती विह एस्य । समरेषु श्रेष्ठेषु देवषु उत्तमो हरिः तद्वदामा यस्य ॥ २७ ॥

प्रमुख्या अभी अयम अत्यन्तोत्तमं यद्ययो योचनं तेन या अञ्चलक्षमीः देहकान्तिस्तया रुचिरस्मितेन च । गृहचर्छसमपि प्रत्युत्थिताः सं रष्ट्रा प्रत्युक्रमं कतवन्त इत्यर्थः ॥ २८ ॥

#### श्रीवारराघवः।

तंत्रविष्टुच्छतोराकः संनिधीमगवान्ध्यासस्यपुत्रः श्लीशुकीभवदागत्यतस्यो कर्वभूतः यहच्छयागांभूमिमदमानः तत्रहेत्रतेपक्षः सन्य विक्षारिहतः तत्रहेतुः निजलाभेनवद्यात्मकस्वात्मानुभवेनेवतुष्टः अलक्ष्यमृषितिवतिवतुम्भक्षपेयस्यतत्रहेतुरवधूतवेषः अभिभाष्य वेदाः अतएववालेर्वृतः परिवृतः॥ २५॥

#### श्रीवरराघवः।

तिमिति तमार्गतंग्रहमिपसंवृतमिण्विचिदेविचे विद्यायस्यत्थभृतम्पितस्यशुक्षस्यच्छाभिक्षामुनयः स्वासनेभ्यः प्रत्येत्थितावभूषुरित्य न्वयः कथंभृतंद्वचावर्षवेद्वयस्कमिवस्थितंद्विस्वत्यस्य विद्यायस्य कथंभृतंद्वचावर्षवेद्यस्कमिवस्थितंद्विस्वत्यस्य विद्यास्य कथंभृतंद्वचावर्षवेद्यस्य विद्यायस्य व

निग्हें मां सलतेना प्रकाशे अञ्गानिस ह यसंधिगता स्थिनी यस्याधानिशी लंते गमुत्रतं चक्षी यस्य आवर्ता आवर्तवहर्ते लविविकारं प्रयुक्ता चना भिर्यस्था लिभिक्षित्र वेलगु सुंदर मुद्द रेयस्य हिगेवां वर्षे विद्याची राधरत्वेन प्रशस्तां बरराहेत मित्यर्थः उपरिवास सारहितं वा अन्यया। मोक्षाप्रमादिष्क प्रकारिक विद्या पात् वका विकाणीं अपनित्य स्थिति का अविवास विद्या विद्या स्थान स्थान

जपाच्यंकमर्ना वर्षे पि सिम्सतस्यंगस्यलक्ष्म्याकांत्यासुद्दरिम्भिनचसतास्त्री गांमनोश्रंसपृद्दगीयम् ॥ २८ ॥

र्थ विजयध्यजः।

ादि स्थातुमन्तुः । मात्याचन्दिमाक्षध्यायेतभादी शुकाणमनंतिकते ए प्राक्तिस्थितिमध्यस्थितते । सात्याचनस्य प्राचित्रं स्थातुमन्तुः । निहु नेद्दे । मात्याचनस्य प्राचित्रं प्राचित्रं स्थात्मनस्य मत्यक्षित्रं । निहु नेद्दे । चिहु नेदि । चिह

्रित्रित्तं स्थानाने भ्यः प्रत्युश्य ताइत्यस्त्र्यः च्याद्रावन्ये चत्रप्राद्धिणताय सम्युषितियाद्यं शृहवर्चसं आङ्क्वितिनिवतेषीतिश्वामित्रि । अभित्रावाधाः किविशिष्टेद्वचेष्टविश्वित्तं प्रदेश्वाधाः किविशिष्टेद्वचेष्टविश्वेद्वच्याद्यांशियस्यसत्योक्तः तेषोद्धवाद्यांश्वक्षसाराशिक्षां नियस्यसत्योक्तः तेषोद्धवाद्यां सुद्धवाद्यां स्थाने स्याने स्थाने स्थाने

ति पत्रभाग । १ । अश्वक्षम्पलयोमेध्यंजभूतिस्यंप्रितिविवरं पीवरंजभ्रयस्यसत्यातं पृष्ठतिस्तीर्गीतुंगमुन्नतंवश्रोयस्यसत्यातं भावतेःप्यसीम्रभत्तिः।

भारताष्ट्रभागां वर्षा गरेका कार्य वर्षा भारता है वर्षा विश्व ता वर्षा वर्या वर्षा वर्षा वर्या वर्षा वर

ति वात्रामस्याम् भवत्युकुष्यव्यवस्यास्य । । । भारतास्य स्वार्थात्वार्थात्रम्थलक्षम्यास्य ग्रिक्षांत्रं सर्वार्थः विद्यप्तिमत्रम्य महिरोगः ॥ ४ ॥

#### स्वीप्रधनी ।

प्रविश्वास्ति । श्रेषित्यागीश्वर्णमवनीति अग्वत्येरगायाश्वाक्षः समागरस्याद तत्रामविति तत्रेवश्यमवत्पादुर्भृतः तथा
सामध्येति । स्वाप्ति साध्यत्वेद्देश सामग्रहित्विति अन्यपाप्रदर्शनमाहगामरमानद्दति पृथिवीपयेटनंपरमद्देसा
सामध्येति । स्वाप्ति साध्यत्वेद्देश सामग्रहित्विति अन्यपाप्रदर्शनमाहगामरमानद्दति पृथिवीपयेटनंपरमद्देसा
सामध्येति । सामग्रहित्विति । प्रतेशत्राज्ञवित्र विद्याप्ति विद्याप्ति । अवस्यागि । अवस्यागि । अवस्यागि । अवस्यागि । सामग्रहित्वित्र प्रति । सामग्रहित्वित्र सामग्रहित्वित्र सामग्रहित्वेद्वित्र सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्वेद्व सामग्रहित्व सा

# ी एक विशेषिती।

प्वंषद्तिशास्त्रअगानिउक्तानिमध्येतस्यहोकोपकारकंकार्यद्वयमाहः वक्तविकीर्याकेश्वामिति तस्यहिश्रदिश्रह्यमावात्भगवतहवव्यापकं तस्यवह्निद्वश्राप्तवित होकिकपरिधानेकन्तरापरिच्छेदोलोकपिड्रांचस्यांत् अतोदिगम्बर्ग्वंवकाःविकीर्याः केशायस्यव्यक्षकेशात्मकास्तर्य केशान्तव्यव्यक्तियाः विकार्याः विकार्याः केशायस्यव्यक्षकेशात्मकास्तर्य केशानिविक्तियाः विकार्यव्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्रियत्यक्तियाः विकार्यक्तियाः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः विकार्यक्तियः व

#### श्रीविश्वनापञ्चनवर्ती ।

्रहर याग्योगतपातावा। द्राप्तिक्षमत्यभानेक सञ्चासीलपु वर्षेत्र स्वस्था शोषु सतस्त्र व्यासपुष्टस्तरभिवत् के एतः ॥ देशु ॥

योड्यसप्तया कि जाकारी आये हैं अक्षियों यश्मित के कता नासा यसि भुवी यस्मित तर है दि सम्बद्ध तहा । कम्बुः शङ्करतग्रहे लायेशी होता स्वजात

-नियुर्दे आंसरी

यतः सदा स्थानमेन यनपीच्यम् अत्युक्तमं नयः नवयीवनं तेन या अङ्गस्य क् भनोक्षं मनोहरं गृहवर्ष्णसमपि ते स्था ॥ २८ ॥ अभाविकेत सिवेर्वसीर्वा

#### स्तिक्तीलाग्यांचाः।

त्रजतेषुनामापतासुसारिषुस्तरसुमगत्रातः व्यासपुत्रोऽ संबन्धाप्तः यरच्छ्यामापृथ्धात्रहे,पामः वनपेत्रः प्रास्तरपर्ववपेसास्त्रस्य सरुस्य माश्रकविशेषस्त्रस्यक्षिणंगस्यसः निर्वालाभेनक्रम्णध्यानेनेवनुष्टः अवध्ताः विकातः दिन्द्रोद्दरपराविक्षाः व्यायस्मारसः अतल्यक्षित्रा भाश्रकविशेषस्त्रस्यक्षिणंगस्यसः निर्वालाभेनक्रम्णध्यानेनेवनुष्टः अवध्ताः विकातः दिन्द्रोद्दरपराविक्षाः व्यायस्म

त्र विकास कार्या स्वासने प्रयाः त्रश्रीशुक्षप्रस्तुत्रियता इतितृतीयेनान्वयः क्रथभूतम् विगु प्रन्यष्टीवर्षाणियस्यतम् सुकुमाराणिषादादीः नियस्यतम् वार्र्याशियोभने आर्यतेविद्यालेशक्षिणीयस्मित्रुत्रतातिल्युष्पाकारानासायस्मिन्तुः योसमीक्यायस्मिन्द्रामनसुवीयस्मिन्तदान्त नियस्यतिबद्धवीदिः कंषुवच्छं खवदे खात्रययुक्तः गुष्टुजादः कंठोयस्य ॥ २६॥

निगृहेजञ्ज्यार्थिस्यपृष्ठिकाळंतुगमुस्रतंवसायस्य आवर्तवसामिग्रेस्य विश्विभिर्वत्गुसुंदरमुदरयस्यदिगेवांवरंवस्रंयस्यवकाविकीर्याः विगृहेजञ्ज्यार्थिस्यपृष्ठिकाळंतुगमुस्रतंवसायस्य आवर्तवसामिग्रेस्य विश्विभिर्वत्यास्तिष्यमाविष्णुः "अग्निवेदेवानामवमोविष्णुवेदेवानांपरम"द्रस्यादिश्रतेः तस्रदामा श्रक्षेशायस्य मळंत्रीकरिक्योपमीबाह्ययस्य स्वमरादेवमुख्यास्तिष्यमोविष्णुः "अग्निवेदेवानामवमोविष्णुवेदेवानांपरम"द्रस्यादिश्रतेः तस्रदामा श्रस्य ॥ २७ ॥

इयामंघनश्याममः सदापी यंकमनीयंयद्वयोयीवनंतेन अंगेषुरुषमीः कांतिस्तयाराचिरेण स्मितेनचस्त्रीग्गामने बेह्य प्रिति गृहंवर्ची यस्यतंते पूर्वीक्तामुनयः स्वासनेक्यः उत्यिताः बभूजी॥ २८॥

#### भाषारीका ।

सुतजी वोले उहाँ देवयोग से पृथिवी में घूमते हुये निरपेक्ष ग्रुप्त विन्ह ताले अपने लाभसे संतुष्ट खीवाल को संयुक्त अवधूतवेश वाले भगवान श्रीशुकदेव जी आगये ॥ २५ ॥

षोडरा वर्ष के सुकुमार पादकर वाहुजंघास्कंध कपोलादि गांजवाले काई विधाल नेजवाले उन्नत नासायाले तुरुष कर्या वाले मुख वाले सुंददकंठवाले पुष्टस्कंधवाले पृष्ट उच्च वक्षस्थल बाले आवर्त गम्भीर क्षेत्री वाले सुन्दर उदर वाले दिगंवर विद्योर केशोवाले लंबे भुजावाले उत्तम देवेसदद्या रुचिरहास वाले स्थाम वर्णी सुंदर अवस्था वाले केशोंके शोभासे खियों के मनोहर ऐसे उन श्रीशुकर्जी को देखकर सर्व मुनिजन अपने आसनी सेउठ वैठे॥ २६॥ २७॥ २८॥ स विष्णुरातोऽतिथय श्रागताय तस्मै सपर्या शिरसा जहार । तसो तिवृत्ता हाबुधाः स्त्रियोऽर्भका महासने सोपविवेश पूजितः ॥ २६॥

स संवृतस्तत्र महान्महीयसां ब्रह्मार्थराजार्षदेवर्षिसङ्घैः। व्यरोचतार्वं भगवात् यथेन्दुर्महर्चतारानिकरैः परीतः ॥ ३०॥ प्रशान्तमासीनम्पुर्गेष्ठमेशसं मुनिं नृपो भागवतोऽभ्युपेत्य।

र मूर्ज्ञावहितः कृताजिलिनित्वा गिरा सूनृतयान्वपृच्छत् ॥ ३१॥

ग्रं व्यान् ! सत्सेग्याः तत्रबन्धवः ।

बिद्रस्तीर्थकाः कताः ॥ ३२ ॥

श्रीधरस्त्रामी ।

न सहागताः स्ट्यांकावयो निवृत्ताः । । त उपाविवेश स्ट<sup>्रिट</sup>ेः ॥ २० ॥ 'तम् र्गतं । अत्रिटि शुकावयः । महसाययध्विन्यो द्वीनं । स्ट्रिट

तांऽतिथिरुपेगा देवना तीर्थका योग्याः स्ताः ॥ ३८॥ ३०%

ताथ लोगों ने हिए।

श्रीवीखायन्ह ।

क्ष्य निष्णुरातः परीक्षिदागनायातिथयेतः, क्ष्मीशुक्षायशिरसान्द्रेगोतिशेषः सपर्योपुजांजसार बकारशिरसायगामः । स्यातक्ष्युं मुल्लागेसाथक्षावालकाः प्रतिनिवृत्तावभुं युःतत् सपूजितः युक्तः महासनेमहतिराद्यासमर्पितेआसतेवपीववेदा ॥ २०

क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र विकास सिमार्ग का कार्यक अस्ति का अधार्ष प्रस्ति कार्यक विकास कार्यक स्वामी कार परित्र के क्षेत्र कार्यक के कार्यक कार्यक कार्यक कार्यक के अधिक कार्यक कार्यक कार्यक कार्यक कार्यक कार्यक कार्य

्रिसारियकमेष मध्यायायायायित धार्थायस्यायात्यात्र क्रिस्मित्र प्राप्तिक्षेत्र । १००० । १२२ । १२२ । १२२ । १२२ । १२२ । १२२ । १२२ । १२२३ । १२२२ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १२२४ । १४४ । १४४

तद्वेषादंशहोद्वियावतसमाध्ति तावतसमागमनेनात्मनः कृतार्थतामाविःकरोति अहोइतिहेब्रह्मन् ! वयंक्षत्रवंघवोऽप्यद्याहोस्त्सेव्याः संसः वेद्यायेषांतथाकृताःअभूम यद्या स्त्रांसेव्यामनुत्राह्यात्रभूमनुत्रहेतुमाह कृपयाभवद्भिर्णतिष्किपेणातिष्टियाजेनवयंतीर्थकाः कृताः प्रवित्रीकृताः ॥ ३१ ॥

श्रीविजयध्यजः।

हानाहिनेव तत्स्रीयत्यामकलपापस्योभवतीतिप्रतिपाद्यतेऽस्मिछ्य त्रित्रादौशुकागमनंवक्तितत्रेतियत्रपरीक्षितामुनिभिश्चस्थितत्त्र त-स्यामबस्थायांकान्यासपुत्र द्युक्षोभगवान् यद्दच्छयादेवेच्छ्यात् ।ति यः पूर्वस्मात्कांतिविशेषद्योतनायाभवदित्युक्तम् आगमनस्यतावना

विष्णुरातः थिष्णुपृश्तः प्रतिथिदिनिधिक्षे । रायस्यस्तयातर्भे आजहार वकार हिराब्रोबुधत्वेहेतः अनेनक्यमास्रक्षितः पौरैःकथंवापाँउवे ध्रुट्यंतिमक्षः परिक्रमर्श्वकतत्त्र्यस् ॥ ५ ॥

सः परीक्षित्महीयसांमहत्तवाणांमध्येमहान्संवृतः गृढः महत्त्वप्रकाशनायराजाब्रह्मध्यादिभिः परीतीच्यरोचतेत्युक्तं तक्षकान्मरिष्यक्षि सरमाभियामुखांगकांतिम्लानिर्भास्तीतियस्मातस्माादेत्यर्थ । १॥

स्वृत्यागिराप्रियवचनेन ॥ ७॥

हब्रह्मन् । ब्रह्मक्षानिन्श्रत्रवंधवीवयमधसद्भिः सेव्याअभूमश्रहोभाग्यंकुतः अतिथिकपेगाआगतेभवद्भिस्तीर्थकाः तीर्धेषुप्रशस्तास्तीर्थाः कृताः यथाभवंतीनिष्कछपत्वायर्तार्थानिभवंति तथावयमपिश्रपत्संगत्यसर्थः तत्रकृषेवकारगामित्यतः कृपयेत्युक्तम् ॥ ६॥

oun: emeal i ( अञ्चलः ) लग्धासभः तती सदाचाराणां संख्या आयरकोत्याः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ सुचोधिनी ! वंप्रदनसमयेसमागतद्वतिराजाङ्ग्यिकः एवंदियतः तरपदेनपरामुद्यते विष्णुरातद्वति पतदर्थमेव सचितियःआगमनेनियतकालरहितः तस्मैकिदयमित्याकोक्षायांस्यातमानमेवहितितितस्मैखप्योगि मित्यर्थः ततोऽस्ययामासंनार्थपरिगृहीतानांपदार्थानांत्यागेकतवानित्याहः ततहतिगुगाःकार्यास्त्ररी • बेशरंडपविषेशः॥ २८॥ रितः संग्रीपेउपविष्टाइत्याद्यं ससंवृत्यति तसःसर्वे र्व्यर्थेनाभगकानेवतद्वेषेणसमागतः तदावस्यः प्रकाशिके तारा निकरिश्च स्पास दर्शतस्राहीतः वहतिभगवादच्छाँबेत्वर ८ <sup>प्</sup>य भेव प्रपट प्रमादि अक्रांज्वतातिकाणे र हिंचु गुरा<sup>ह</sup> र्थिप्रधम ग्स् होते. ताइत किंच केद्भिरिसेधावरें ोंक्षञ्चियवंशोपरबुश्पन्नाः नहीधर्मेषन्तः नेवर्ताः रेपापाय तीर्थत्वंस्नातृक्षपेगा तथावयंगृहस्थाः अति। पुनीपचारिकंतिर्थत्वम् ॥ ३२ ॥ ं श्रीविश्वनाथककवर्ती । कार्यो युवतयः साक्षाः समर एवायमिति अध्भेका विक्षिमीऽयमित्रबुधा निवस् चूजा गर्था जित्रमा। मप्रथयप्रशायपारी चङ्गकुशलप्रशादिलक्षमा। मुनिसनक्ष्मेका मुनितने तक्। तेन मुन्दे मुनयः प्रमोमुः। व्यासनाद्दाद्यास्तु सास्त्रं सगल्धं प्रमायपरिव्यक्षः शिर्य जामति भ स्तिम । एकस्य कियाको गुरुगा द्याविचा स्तायित्या सुक्ता। ३९ ॥ प्रहाश्चित्यः । प्रशासि क वित्रस्थातीनि नस्त्रतामि । तत्व्यार् नामः । अञ्च व्यास THE RESIDENCE IN PARTY. स ज्यारा सञ्जायेषु मेथा यस्य स्म । प्रश्नाच क्रुननेत्या ॥ ३१ ॥ किन्दी सहारतः सेच्या येषां ते शहब जीवांग भइत्सेवायाम्यिकार्थम्। प्रातेत्युवः विधिका इति यह भाष ती हैं जनताश्वनं भवतीति वयं जिल्हा आणि तीर्थका तीर्थां के प्रमास्त्र में मार्थिकाः प्रस्ति । स्वार्थिकाः प्रस्ति । स्वार्थिकाः प्रस्ति । स्वार्थिकाः प्रस्ति । garam u St ll भिदासम्बीपः। किल्युरातः येरोहत् (तस्त्रासपर्योमाजदेशः अतिवृधिनं पूर्णाणकाद्धाततः रहणाक्ष्योनिवृशायमूष्ठः सचनुक्रीमहाकिविष्णुरातहण्याः भीताचित उपांक्षिण निविधीक । २०. १ विभागिकात्राक्षां गृहित्य सहित्यसामधिमहान्समगवान् गुका गण्यतिकि अन्तर ययाधिकिसः परिवान्यस्तरहेल्यातिक श्रहाः अवस्थायाः व्यवस्थाः व स्थानीति तारास्तदस्याः प्रद्धार्थयात्रावः एकः व्यवस्थार्थवेतात्रयः देशास्यानाय्यास्यः ॥ १०० ह दर्भ पुनक्ता का अध्यक्ष्यमाभिनाड प्रतिभवस्तिकं प्रत्याचिष्या अध्यक्षयकं मु तदेवाह अहे इत्प्रध्निः हेब्रह्मत् । क्षत्रवंधवीवयंस्तांसेव्याः आद्रशीखाः जाताः वतोऽ तिथिकपेशाभवाद्गस्तिर्थकाः कृताः कृताः ॥ ३२ ॥

